

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का साप्ताहिक मुखपत्र

तार—'आर्यमित्र' आगरा] वार्षिक मूल्य ६), विदेश में ८) एक प्रति का मूल्य ≈) [वर्ष—५३ अङ्क—१

पत्र-व्यवहार का पता— आर्यमित्र आगरा | आगरा पौष कृष्णा ११ संवत् २००७ वि० ता० ४ जनवरी १९५१ दयानन्दाब्द १२६ सृष्टि संवत् १९७२९४९०५० | संपादक— पं० धर्मदेव, विद्यालङ्कार

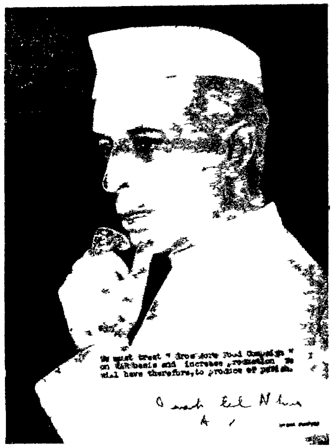
प्रधान मन्त्री का भाषण

★

३१ दिसम्बर को रेडियो से राष्ट्र के नाम नये साल का सन्देश देते हुए प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने नये साल की बधाई दी और आशीर्वाद मांगा जिससे उन्हें लम्बे सफर में राष्ट्र का नैया खेने में सफलता प्राप्त हो। श्री नेहरू ने कहा कि आज वर्ष का ही नहीं बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध का आखिरी दिन है। आज ठीक बीचों बीच खड़े होकर हम देखते हैं तो हमें कोई रोशनी नजर नहीं आती। चारों ओर अन्धकार है, युद्ध की चर्चा चल रही है। इस युद्ध को कोई चाहे न चाहे सब पर एक साथ तबाही आयगी और कहर बरसेगा। हम आज युद्ध और शान्ति के बीच तलवार की धार पर खड़े हैं। इस तबाही को रोकने के लिये दुनिया की हर ताकत को शान्ति का सहारा लेना पड़ेगा। अकेले हम कुछ नहीं कर सकते। इस भयंकर विनाश को सब मिल कर ही रोक सकते हैं।

कांग्रेसी दलबन्दी खत्म करने की अपील करते हुए आपने कहा कि आज पारस्परिक नुकताचीनी की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है उस आग की जो हमने स्वातन्त्र्य युद्ध के बीच पैदा की थी। प्रधान मन्त्री ने अपनी तटस्थता की नीति को सही बताते हुए कहा कि इसकी नुकताचीनी करने वाले सही हालत समझ नहीं पाये हैं। उनका यह विचार गलत है कि हम भयभीत हो गये। हम डरे नहीं—हमारे पास सेना है शानदार जहाज हैं। अपने घर पर हमला करने वाले का हम डट कर मुकाबला करेंगे। तटस्थता की यह नीति हमें महात्माजी ने सिखाई है। 'बुराई के सामने कभी सिर न झुकाओ और दुश्मन से भी दोस्ती की कोशिशें करते रहो।'

इसके पश्चात् श्री नेहरूजी ने अपने कामनवैल्थ में जाने की चर्चा की और देश से विदा मांगी।



हमारे प्रधान मन्त्री
माननीय श्री जवाहरलाल नेहरू
आपने हाल ही में कामनवैल्थ में सम्मिलित होने के लिये प्रस्थान किया है।

★★
★

कोटा हिन्दी साहित्य-सम्मेलन

२६ से २८ दिसम्बर तक कोटा में अखिल भारतीय हिंदी साहित्य-सम्मेलन श्री प० जयचंद्र विद्यालङ्कारकी अध्यक्षतामें हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन राजस्थानके उप-राजप्रमुख श्रीमान् कोटा-नरेश ने किया। सम्मेलन के प्राण राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन ने कहा कि आज देश एक मत से यह चाहता है कि हिंदी की समृद्धि किया जाय। आपने कहा केवल हिंदी ही देश में एकता स्थापित कर सकती है। इस बात का पूरा ध्यान रखा गया है कि हिंदी के कारण अन्य किसी प्रांतीय भाषा को किसी प्रकार क्षति न पहुँचे। परन्तु यह उचित नहीं है कि प्रादेशिक भाषाएं अपनी मनमानी करने लग जॉय जिससे हिंदी तथा राष्ट्र के हित को आघात पहुचे।

सम्मेलन के अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए श्री जयचन्द्र विद्यालंकार ने कहा कि भारतीय संविधान सभा ने अंग्रेजी को १५ वर्ष के लिये कायम रख कर भारत के अंग्रेजी पढ़े लिखे वर्ग के द्वारा एक चुनौती दी है, यह ४०० वर्ष पुरानी चुनौती न केवल समस्त भारतीय भाषाओं के लिये है, प्रत्युत समूचे राष्ट्र-जीवन के लिये है।

आपने कहा कि हिंदी भाषा को समृद्ध करके और उसका अपनी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति की मूल धारा से सम्बन्ध स्थापित करके उसे राष्ट्रीय स्फूर्ति का प्रतीक बनाकर ही इस चुनौती का मुकाबला किया जा सकता हैं। श्री जयचन्द्र विद्यालंकार ने यह भी कहा कि सम्पूर्ण देश के लिये एक लिपि होना आवश्यक है और वह लिपि देवनागरी ही होनी चाहिये।

२७ दिसम्बर को श्री कृष्णदेव प्रसाद गौड़ साहित्य-परिषद् के सभापति ने साहित्य को लोकहित भावना से प्रेरित बनाये रखने पर बल दिया। २८ दिसम्बर को समाज शास्त्र परिषद् के अध्यक्ष श्री जयप्रकाश नारायण ने इस बात पर बल दिया कि समाज विज्ञान को प्रत्येक विश्व विद्यालय में स्वतन्त्र विषय के रूप में पढ़ाया जाय।

राजगुरुजी का तूफ़ानी दौरा

मध्यभारत में प्रचार की धूम

व्याख्यानों की अमृत-वर्षा

(संवाददाता द्वारा)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा के प्रधान राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री ने ४ से २१ दिसम्बर १६५०ई० तक मध्यभारत में वेद-प्रचार-यात्रा की। ४ दिसम्बर को आर्यसमाज ग्वालियर सिटी में 'वर्त्तमान समय में आर्यसमाज की आवश्यकता' विषय पर प्रभावशाली व्याख्यान दिया। ५ दिसम्बर को प्रातःकाल ग्वालियर के डी० ए० वी० स्कूल में, कालेज में, कालिज और स्कूल के अध्यापकों में व्याख्यान हुए। उसी दिन रात्रि को आर्यसमाज लश्कर में व्याख्यान हुआ। समाज की ओर से ५०१) की थैली तथा अभिनन्दन पत्र भेट किये गये। ६ दिसम्बर को प्रात कार द्वारा राजगुरुजी शिवपुरी पहुचे। श्रीयुत बाबूलाल गुप्त, डिपुटी डाइरेक्टर शिक्षा विभाग मध्यभारत साथ थे। हाई स्कूल और समाज में व्याख्यान हुए। अभिनन्दन पत्र और २०१) की थैली भेंट की गयी। ७ दिसम्बर को शास्त्रीजी गुना पहुचे। वहाँ इण्टर कालिज और आर्यसमाज में भाषण हुए। कालिज के व्याख्यान का विषय था 'विद्यार्थियों के लिये तीन रत्न'। ८ दिसम्बर को ब्यावरा, पचवाड़ी, शाजापुर और सारंगपुर आदि स्थानों में १२६ मील की यात्रा पूरी कर चार व्याख्यान दिये। ९ दिसम्बर को आगर ट्रेनिंग स्कूल, हाई स्कूल और नगर में व्याख्यान देकर रात्रि को उज्जैन पहुचे और वहा भी उसी दिन रात्रि को व्याख्यान दिया। १०-११ दिसम्बर को इन्दौर में व्याख्यान हुए। १२ को महू के आर्यसमाज और हाईस्कूल में, १४ दिसम्बर को भूपाल में, १६ को नीमच में, २० को रामपुरा इण्टर कालिज और आर्यसमाज में, २१ दिसम्बर को गरोठ के हाईस्कूल और आर्यसमाज में व्याख्यान हुए। प्राय सब ही स्थानों में राजगुरुजी का बड़े उत्साह से स्वागत हुआ। अनेक नगरों मे शानदार जुलूस निकाले गये, अभिनन्दन पत्र भेंट किये और लगभग तीन सहस्र की थैलियां अर्पित की गयीं। राजगुरुजी के स्वागत में कई स्थानों में तो मुसलमानों ने भी भाग लिया। व्याख्यानों में नगरों के प्रतिष्ठित पुरुष और राज्य अधिकारी-गण भी भाग लेते रहे। छात्र-छात्राओं ने भाषणों से विशेष लाभ उठाया। समीपवर्ती ग्रामों से भी श्रोता लोग बड़ी संख्या में आते रहे। गुरुजी के इस तूफ़ानी दौरे का सर्व साधारण पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा और आर्यसमाज के प्रति श्रद्धा की भावना उमड़ पड़ी।

आवश्यक सूचना

आर्यमित्र के ग्राहकों के पते नये रजिस्टरों में लिखे जा रहे हैं। कृपया सब ग्राहक महानुभाव अपने पूरे पते शुद्ध सुन्दर अक्षरों में अपने ग्राहक नं० सहित लिख कर नीचे लिखे पते पर शीघ्र भेज दें।

व्यवस्थापक—आर्यमित्र कार्यालय, आगरा।

[पृष्ठ ४ का शेष]

समाज की वेदी पर बातें करते देखे जाते हैं।

आर्यसमाज जो विश्व के उस महान् क्रांतिकारी ऋषि दयानन्द की सर्वतोमुखी क्रांति की ज्वाला को प्रज्वलित करने वाली भट्टी थी, आज उसको बुरी तरह से शान्त किया जा रहा है, जो क्रांति की भावनाएं आर्यसमाज में १५ अगस्त सन् ४७ ई० से पूर्व थीं, आज वह भी लुप्त हो चली हैं। जो कुछ शेष हैं उनको कांग्रेस में आर्यसमाज को दीक्षित कराके अन्त करना ही एक मात्र लक्ष्य प्रतीत हो रहा है। अतः मैं आर्य जनता से अनुरोध करूंगा कि वह आखें खोलकर चले। यदि उन्नति के शिखर पर चढ़नेकी उसकी क्षमता जाती रही है तो अवनति के गत में गिर कर अपनी अन्त्येष्टि तो न करे। मुझे यदि कोई पूछे तो मैं कहूँगा कि आर्य-जनता में आज भी भावनाएं हैं, उत्कट संस्कृति एवं राष्ट्र-प्रेम विद्यमान् है, आन पर मर मिटने की चाह है, किंतु उसको मार्ग दिखलाने वाला कोई नहीं। आर्यसमाज के नेता प्रायः लखलखा सुघाने का ही कार्य करते हैं। क्रांति की बूँटी घोंट कर पिलाने की क्षमता उनमें दिखाई नही देती। ईश्वर कृपा करें कि आर्यसमाज का नेतृत्व ब्रह्मवर्चस्वी ब्राह्मणों के हाथ में हो, और निस्तेज ब्राह्मणों अथवा नामधारी ब्राह्मणों के हाथ से उसका निस्तार हो।

(पेज ३ का शेष)

अपने लेखों में 'तोड़फोड़' भाषा का प्रयोग कर देश की एक इतनी पुरानी और प्रतिष्ठित साहित्य-संस्था को जनता की दृष्टि में गिराने का प्रयत्न न करें। व्यक्ति और संस्था दोनों में हो त्रुटि हो सकती हैं। उन त्रुटियों को दूर कराने की विधि सौम्य समीचीन और सहानुभूतिपूर्ण होनी चाहिए। सम्मेलन सबकी चीज है। हिन्दी का उससे बहुत हित हुआ है। परीक्षाएँ व्यापक हो चुकी हैं, ऐसी संस्था में सुधार के लिए सद्भावना अपेक्षित है, उग्रता या कटुता नहीं।

ओ३म्

आर्यमित्र

४ जनवरी, १९५१

आर्यसमाज और शुद्धि

आर्यसमाज का शुद्धि के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। शुद्धि शब्द के कान में पड़ते ही आर्यसमाज की याद आ जाती है। इस युग में सबसे पहले शुद्धि-आन्दोलन को आगे बढ़ाने वाला केवल आर्यसमाज है। विरोधियों ने बड़ा विरोध किया, परन्तु शुद्धि-आंदोलन आगे बढ़ता ही गया। शुद्धि का अर्थ है, विधर्मियों या भिन्न धर्मियों को भी वैदिकधर्मी - आर्य-हिन्दू बनने का अवसर देना। ईसाई, मुसलमान आदि के दिमाग से यह बात निकाल देना कि वे अपना मत छोड़ कर हिन्दू नहीं हो सकते; अथवा यदि किसी हिन्दू को ईसाई-मुसलमान बना लिया जाय तो फिर वह अपने धर्म्म में वापस नहीं आ सकता। आर्यसमाज ने हजारों मलकानों की शुद्धि करके उन्हें उनके पुराने धर्म्म में मिला दिया, सैकड़ों मुसलमानों को भी हिन्दू धर्म्म में सम्मिलित होने का अवसर दिया। आर्यसमाज के शुद्धि-आंदोलन की प्रगति देख कर सनातनधर्मी भाइयों ने भी शुद्धि का सबल समर्थन किया। काशी के बड़े-बड़े पण्डितों ने भी शुद्धि की व्यवस्था दी, खान-पान सम्बन्धी छूत-छात प्रायः समाप्त हुई, परंतु विवाह-शादी की समस्या—विशेष कर जन्म के शुद्ध हुए मुसलमानों की—ज्यों की त्यों बनी रही। ऐसे विवाह हुए, पर बहुत ही कम। इससे शुद्धि के कार्य को धक्का लगा। इस समय आवश्यकता इस बात की है कि शुद्धि-आंदोलन बड़े जोर से चलाया जाय, और डंके की चोट प्रत्येक विधर्मी से कह दिया जाय कि आर्य-हिन्दू धर्म्म का विशाल द्वार सबके लिये खुला हुआ है। जो चाहे वह उसमें प्रसन्नतापूर्वक प्रवेश कर सकता है, कुछ भी रुकावट नहीं है। हमारा ख़याल है कि अभी देश में करोड़ों ऐसे विधर्मी हैं जिनको यह नहीं मालूम कि वे चाहें तो हिंदू धर्म्म में प्रवेश कर सकते हैं। इस भ्रम को दूर कर देना या वस्तुस्थिति ठीक-ठीक समझा देना आर्यसमाज का काम है। यदि आर्यसमाज ऐसा नहीं करता तो अपने कर्त्तव्य से च्युत होता है। देश में कई शुद्धि सभाएँ भी हैं, परन्तु वे शिथिलता-साम्राज्य की सम्राज्ञी बनी हुई हैं। निर्वाचन कर लेना या कभी कभी कोई मीटिंग बुला लेना यही उनका कार्य रह गया है। देहली की बड़ी शुद्धि सभा तो, ऐसा प्रतीत होता है, अपनी सारी प्रगति को अकर्मण्यता के गहरे गढ़े में धकेल कर चैन की वंशी बजा रही है। आगरा शुद्धि सभा भी प्रायः इसी प्रकार की है। उसमें भी जीवन-जागृति के लक्षण दिखाई नहीं देते। जिन लोगों को शुद्धि-आंदोलन में 'साम्प्रदायिकता' के कीटाणु दिखाई देते हैं, वे भ्रांति की दुनिया में भ्रमण करते हैं। हजारों-लाखों हिंदू भाई ईसाई-मुसलमान हो गये और हो रहे हैं, इसमें तो उन्हें साम्प्रदायिकता नहीं दीखती, परंतु यदि कोई ईसाई-मुसलमान आर्य-हिन्दू धर्म में प्रसन्नता से आता या आदरपूर्वक बुलाया जाता है तो उनके दिमाग में सम्प्रदायवाद की सनक सवार हो जाती है। इस विवेक या बुद्धि-कौशल को क्या कहें, यह बात हमारी समझ में नहीं आती। हिंदू धर्म्म का दरवाजा सदैव सबके लिये खुला रहा है। जब से वह बंद हुआ, तभी से इस धर्म्म में संकीर्णता और सड़ायंद के चिह्न दिखाई देने लगे। जो लोग शुद्धि को साम्प्रदायिक आंदोलन कहते हैं, वे विशाल हिंदू धर्म्म का अपमान करते और उसकी महत्ता को हीन बनाते हैं। अस्तु,

अब तो सबसे बड़ी बात यही है कि हम लोग पहले आत्म शुद्धि करें और फिर दूसरों को अपने विशाल धर्म्म में सम्मिलित करने के लिये निमंत्रण दें और स्पष्ट कह दें, कोई भी हो, बड़ी प्रसन्नता से हिंदू धर्म्म को स्वीकार कर हिंदू बन सकता है।

—

राजगुरुजी की प्रचार-यात्रा

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान राजगुरु श्री प० धुरेन्द्रजी शास्त्री का सारा जीवन अपने देश और धर्म के लिये है। वे बाल ब्रह्मचारी और महान् सन्त वीतराग पूज्य श्री स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज के पट्ट शिष्य हैं। जब से शास्त्रीजी ने धर्म-सेवा का महान् व्रत लिया है, निरन्तर अपने पवित्र कार्य में लगे हुए हैं। कड़कती ठंड और तड़कती गर्मी उनके पुरोगम में कोई बाधा नहीं डाल सकती। मूसलाधार वृष्टि में भी वे प्रचार-यात्रा करते और रुग्णावस्था में भी व्याख्यान देते हैं। उनके व्यक्तित्व का जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। वह भले प्रकार जानती है कि राजगुरुजी जो कहते, जन-हित के लिये कहते हैं, और जो मांगते धर्म-सेवा या धर्म-प्रचार के लिये मांगते हैं। उन्हें अपने लिये न कुछ मांगना है न कुछ जांचना। वे देश के लिये जेल गये और धर्म के लिये कारागारवासी बने। उन्होंने अपनी प्रभावपूर्ण वाणी से छोटे-से छोटे ग्रामों को प्रभावित किया और बड़े से बड़े शहर को गुंजाया। वे अंग्रेजी, फारसी-उर्दू नहीं जानते, केवल देववाणी उनका आश्रय और वैदिक धर्म्म जीवनाधार है। इन्हीं दो सबल सम्बलोंके सहारे वे सारे देशमें वेद-प्रचार करते और आर्य संस्कृति का निर्भय नाद सुनाते हैं। अभी पिछले दिनों राजगुरुजी ने मध्य-भारत में वेद-प्रचार यात्रा की। ४ से २१ दिसम्बर तक इस पचसठ वर्ष के वयोवृद्ध युवक ने सैकड़ों मीलों की यात्रा कर एक एक दिन में चार-चार पाँच-पाँच व्याख्यान दिये। सारा मध्य भारत आपकी गम्भीर वाणी से गूंज उठा। मुसलमान तक प्रभावित हुए बिना न रहे। जनता और राज्याधिकारी दोनों ही वर्गों पर वैदिक धर्म की अमिट छाप अंकित हुई। परमात्मा से यही प्रार्थना है कि वह राजगुरुजी को वेद-प्रचार के लिये उत्तरोत्तर बल प्रदान करे और उन्हें अपने पवित्र व्रत-पालन में अधिकाधिक सक्षम बनावे।

—

सहयोग-भिक्षा

गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी वृन्दावन गुरुकुल-महोत्सव सानन्द सम्पन्न हुआ। वर्षा तथा शीत के कारण जनता अधिक संख्या में एकत्र न हो सकी; फिर भी काफी थी। आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वानों के भाषण हुए, प्रभावशाली भजन हुए और कई सम्मेलन भी हुये। सब कुछ ठीक था, परन्तु बाहरी और भीतरी सारी परिस्थिति उत्तर प्रदेशीय आर्य जनता से पुकार-पुकार कर कह रही थी—सहयोग-सहयोग-सहयोग दान दो। गुरुकुल के अणु-अणु की मांग थी, आर्य-जनता आगे आवे और उन्मुक्त हृदय से गुरुकुल को अपनावे, उसकी प्रबंध-परक कमियाँ दूर करे और विशेषताओं को जन्म दे। इस समय कुल के कुलपति, मुख्याधिष्ठाता और आचार्य तीनों ही गुरुकुल की दो हुई विभूतियाँ हैं, फिर क्या कारण है कि जनता सहयोग-दान देने में संकोच कर रही है। जब हमारे माननीय राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रप्रसादजी गुरुकुल-प्रणाली की आवश्यकता अनुभव करते हैं, जब शिक्षा-कमीशन इस पद्धति को सराहता है, तब गुरुकुल-संचालिका आर्य-जनता उदासीन हो रही है, यह कितने आश्चर्य और दुःख की बात है। हम आर्य-जनता से धन की अपील नहीं करते, गुरुकुल के लिये सहयोग माँगते हैं। जहां सच्चा सहयोग है, वहां सब प्रकार के साधन सरलता और स्वाभाविकता से उपलब्ध हो जाते हैं।

—

हिन्दी साहित्य-सम्मेलन

हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का महाधिवेशन हाल ही में कोटा में होकर चुका है। सम्मेलन के सम्बंध में कुछ लोगों को शिकायत है। ये शिकायतें समाचार-पत्रों के स्तम्भों में भी स्थान पाने लगी हैं। सबसे बड़ी शिकायत 'गुटबन्दी' की बताई जाती है। हम नहीं जानते कि यह शिकायत कहाँ तक ठीक है। यह भी कहा जाता है कि सम्मेलन पर पुस्तक-प्रकाशकों का प्रभाव बढ़ता जाता है। इसके सम्बन्ध में भी हमारे पास आंकड़े या प्रमाण नहीं हैं। ऐसी दशा में हम तो सम्मेलन के संचालकों से यही प्रार्थना करना चाहते हैं कि वे एक विस्तृत विज्ञप्ति प्रकाशित करें और भले प्रकार इन शिकायतों पर प्रकाश डालें जिससे लोगों का समाधान हो सके। साथ ही हम शिकायत करने वालों से भी कहेंगे कि वे

(शेष पेज २ पर देखिये)

कांग्रेस-निमन्त्रण

श्री प० शिवदयालुजी

★

आज आर्यसमाज के मंच एवं समाचार-पत्रों से यह ध्वनि आती है कि उसे सामूहिक रूप से कांग्रेस में सम्मिलित हो जाना चाहिये। माननीय बाबू पुरुषोत्तमदास टंडनजी ने प्रयाग में आर्यसमाज की भूरि-भूरि प्रशंसा की, और उसको यह उपर्युक्त निमन्त्रण दिया।

आर्यसमाज के वह कार्यकर्त्ता जो संसदादि के सदस्य हैं अथवा कांग्रेस के किसी पद पर आरूढ़ हैं, उनके श्रीमुख से भी प्राय यही बात सुनने म आती है—तथा आर्यसमाज के उन कर्णधारों द्वारा भी, जो सदासे और स्वभाव से सरकारपरस्त रहे हैं, इस प्रस्ताव का समर्थन किया जारहा है। किन्तु उनके इस समर्थन का कोई विशेष मूल्य आंका नहीं जा सकता। हमें आज गम्भीरतापूर्वक इस समस्या पर विचार कर लेना चाहिये, जिससे आर्य-जनता में अवांछनीय बुद्धि-भेद उत्पन्न न हो।

यह सत्य है कि आर्यसमाज के अधिकाधिक कार्यकर्त्ताओं ने कांग्रेस मे कार्य किया है और उत्तरीय भारत मे कांग्रेस को शक्तिशाली बनाने में सबसे अधिक भाग आर्यसमाजियों का रहा है। यह भी सत्य है कि आर्यसामाजिकों ने कभी पद-प्रतिष्ठा की विशेष कामना भी नहीं की है, और वह धड़ेबन्दी से भी प्राय: दूर रहे हैं। और यही कारण है कि कांग्रेस के ऊँचे स्तर पर आर्यसमाजी नहीं के बराबर ही पहुंच पाये हैं।

यह भी नग्न सत्य है कि कांग्रेस में कार्य करते हुए आर्य-सामाजिकों के हृदयों में सदा अपने राष्ट्र की स्वाधीनता के साथ-साथ उसको अखण्ड बनाये रखने की भी उत्कट अभिलाषा रही है। आर्य-हिन्दू जाति के मान को जीवन दान करके भी नष्ट न होने देने, भारतीय संस्कृति के उत्थान, अनार्य भावनाओं के विनाश प्राचीन वैदिक ज्ञान के अभ्युदय, भारत के प्राचीन इतिहास के सम्मान, भारत की पुरातन अन्तर्राष्ट्रीय भाषा-संस्कृति के चरमोत्कर्ष, भारत के पुरातन वर्ण-धर्म के राष्ट्र में पुनः प्रचलन की भारी कामना को मन में रख कर आर्यसामाजिकों ने कांग्रेस में काम किया। कारागार की अंधेरी कोठरियों में तपस्या की, डंडा-बेड़ी व खड़ी बेड़ियां लगवाईं, चक्की पीसी व गर्म कोल्हू खींचे, बेंत और बायनेट के वार सहे, और फांसी के झूले झूले।

भारत के स्वतन्त्र होने से पूर्व उसको खंड खंड कर दिया गया, और भारत जननी के इस विभाजन को न चाहते हुए भी आर्यसामाजिकों को सहन करने का उपदेश दिया गया। भारत की नारी जाति पर पाकिस्तान में जो घोर अत्याचार एवं अनाचार किये गये हैं वे भारतीय इतिहास की अनोखी और अश्रुतपूर्व घटना है। इस अत्याचार को भी यहां के मान-मर्यादा एवं धर्म-संस्कृति-शून्य, शौर्य-वीर्य-शून्य शासन ने सहन करने का उपदेश आर्यों को दिया। छली, कपटी, अन्यायी, अत्याचारी पाकिस्तानी हकूमत से पेक्ट करने की घृणित कार्यवाही यहाँ के शासकों ने की, और युद्ध का हौआ दिखा कर राम, कृष्ण, शिवाजी, प्रताप, बप्पा रावल की वीर सन्तति को पथभ्रष्ट किया गया।

लगभग एक करोड़ से अधिक आर्य हिन्दु नर-नारी तबादले से अधिक पाकिस्तान से भारत खदेड़े गये। इनके खाने-पीने, रहने-सहने, आजीविका आदि की कोई व्यवस्था कांग्रेसी शासन ने नहीं की। किंकर्तव्य विमूढ़, कायर, कापुरुष की भांति इस भीषण समस्या की ओर से मुख फेर कर बैठ जाने का क्रियात्मक पाठ जनता को पढ़ाया गया। शरणार्थियों को राम भरोसे ही प्रायः छोड़ दिया गया। अब दुखित होकर जो शरणार्थी हिन्दू पूर्वी पाकिस्तान में वापिस जा रहे हैं, वे मुसलमान बनने के लिये जा रहे हैं, यह भी ध्रुव सत्य समझना चाहिये। आर्यसमाजी जो संसार को आर्य बनाने का स्वप्न देखा करता था, आज उसकी अपनी आँखों के सामने और स्वतन्त्र भारत में उसके भाई-बहिन मुसलमान बनने पर विवश किये जा रहे हैं।

पंजाब आर्यसमाज का गढ़ था। लाखों-करोड़ों रुपये की उसकी वहाँ सम्पत्ति थी, बड़े-बड़े मंदिर व शिक्षा-संस्था-भवन आदि समाज ने वहाँ बनाये हुए थे। आज उन सबको पाकिस्तान ने हथिया लिया है, और उनके बदले में भारतीय सरकार ने आर्यसमाज को न कुछ दिया, और न दिलवाया।

आज सर्वहारी होकर सिंध, पंजाब, सरहद का आर्यसमाजी शरणार्थी बन कर जीवन व्यतीत कर रहा है, और शेष भारत का आर्यसमाजी कायर नपुंसकों की भाँति उनके दुख-दर्दों को देख-देख कर चुप्पी मारे बैठा है। यह आज इस स्वतंत्र भारत में इन पापी नेत्रों के देखने में आरहा है। परतंत्र भारत में जिस आर्य-समाजी के हृदय में दूसरों की चोट का दर्द पैदा होता था, एक टीस-सी दिल में उसके उठा करती थी, आज स्वतंत्र भारत में वही आर्यसमाजी अपने सगे, सम्बंधी की दारुण दीन, दयनीय दशा को देख कर भी राष्ट्रीयता के नाम पर पत्थर की तरह बैठा रहे इसे सिवाय भाग्य की विडम्बना और घोर दुर्दिन के भावी आगमन की सूचना के क्या कहा जाय। जिस आर्यसमाजी ने कभी अपने घर के दोष को भी गुण नहीं कहा और कड़ाई के साथ उसका खंडन किया, आज स्वतंत्र भारत का आर्यसमाजी अन्याय-अत्याचार के विरुद्ध मुख खोले तो उसे साम्प्रदायिक, अराष्ट्रीय आदि कह कह कर रोका जाता है। इस थोथी, झूठी राष्ट्रीयता के नाम पर उसे अपने इन पापी नेत्रों से अन्याय-अत्याचार को देखते रहने का पाठ पढ़ाया जाता है। जिस आर्यसमाज ने कभी अन्याय, अत्याचार, छल, दम्भ, पाखण्ड एवं अनृत से समझौता नहीं किया उसे आज छली, दम्भी, पाखण्डियों के साथ अराष्ट्रीय पंचमांगियों के साथ मिल कर रहने का आदेश दिया जाता है। जो आर्य-समाजी मानव-जीवन की प्रत्येक समस्या को धर्म के पावन आलोक में हल करने की सोचा करता था, उसे आज सिक्यूलरिज्म एवं कम्पोजिट कलचर का पाठ पढ़ाया जाता है। और अन्याय, अनृत से समझौता करने का उपदेश दिया जाता है। जो आर्यसमाजी परतंत्र भारत में आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य की स्थापना के सुख स्वप्न देखा करता था और उसके लिये जीवन में तप तपता था, आज भारत स्वतन्त्र होने पर उसको आर्यों अर्थात् श्रेष्ठ मानवों के चक्रवर्ती साम्राज्य का तो बात ही क्या, उसके सीमित प्रचलित रूप हिन्दू राष्ट्र का नाम भी लेने पर दुतकारा जाता है, और अपने ही देश में आर्यसमाज को आज आर्यत्व-विस्तार एवं हिन्दुत्व-उत्कर्ष-कार्य से रोका जाता है।

आज की कांग्रेस तिलक कालीन वह कांग्रेस नहीं रही, भारत की खातिर आजन्म काले पानी, देश निकाले की यातना भुगतने वाले लाला लाजपतराय, लाला हरदयाल, वीर सावरकर की कांग्रेस नहीं रही; महात्मा गांधी के युग की सरकार नहीं रही। ७ अगस्त सन् ४२ ई० का "करो या मरो" का निर्णय करने वाली कांग्रेस भी नहीं रही। भारतीयता एवं भारत की आन पर, नारी जाति के सम्मान पर मरने वालों की, राष्ट्रीयता के लिये फांसी पर झूलने वाले वीर भगतसिंह आदि की कांग्रेस नहीं रही। आज तो कांग्रेस कुछ व्यक्तियों को छोड़ कर पद-प्रतिष्ठा-परमिट-प्रसाद प्राप्तकर्ताओं की साधना-स्थली बन गई है। इसी कारण धड़ेबंदी का बीभत्स, बोलबाला वहाँ दृष्टिगोचर हो रहा है। पुराने सरकारपरस्त आज खद्दर पहन और गांधी टोपी लगा कर देशभक्त बने हुए हैं। और जिस कांग्रेस को अब से कुछ वर्ष पूर्व फूटी आँख भी न देख सकते थे आज वह उसके गीत गाते नहीं अघाते। इन चापलूस खुशामदी जनों की आज दुर्भाग्य से आर्य-समाज में कमी नहीं। अपितु पद-प्रतिष्ठा-परमिट-प्रसाद के उपासक कांग्रेसी भी आज आर्य-

(शेष पेज २ पर देखिये)

विश्व-शान्ति के साधन

श्री सुवेदार्यसिंह एम० ए०

★

समाज का आधार विकास है। आज विश्व एक कुटुम्ब के रूप में पदार्पण कर चुका है। ग्राम-राज्य का प्रथम स्वरूप नगर-राज्य के द्वार से होता हुआ राष्ट्र अथवा देश-राज्य के द्वार पर आकर खड़ा हो गया है। उसका विश्व-राज्य के मन्दिर में प्रविष्ट करने का प्रयत्न भी प्रारम्भ हो गया है। लीग आफ नेशन्स (राष्ट्र-संघ) तथा यू० एन० ओ० (सयुक्त राष्ट्र संघ) की स्थापनाएँ इसी की ओर संकेत करती हैं। आज मानव-मस्तिष्क की उवरता से विज्ञान को उत्थान मिला और उसकी सम्पन्नता ने समाज को भौतिक प्रगति प्रदान की। राष्ट्रों की प्रकृति-प्रदत्त दूरी अर्थहीन हो गई। आविष्कारों ने मनुष्यों को अगणित हाथ और पर प्रदान किये। उत्पादन के साधनों में वृद्धि हुई। कहीं-कहीं उनका एकत्रीकरण भी हुआ। व्यापारों का आकार भी समयानुकूल भीमकाय होता गया। व्यापार का अन्तस्तल भी रोंदा गया। गगन के भी प्रांगण में प्रवेश किया गया, धन की लिप्सा में आकाश पाताल एक किया जाने लगा। परन्तु हाय रे, मानव के मनोरथ! तू उसे कहाँ ले गया?

साधनों की सम्पन्नता, उत्पादन का आधिक्य, विभव का वैशिष्ट्य सब मिले परन्तु मनुष्य को शान्ति न मिल सकी। साम्राज्यों की लिप्सा में अन्तर की अशान्ति भी बढ़ती गई, शोषण की वेगवती धारा में एक ओर उन्मत्त मानव की पिपासा बढ़ी तो दूसरी ओर कोटि-कोटि मानवों के अन्तर की अनन्त अग्नि-शिखा में यथोचित विस्तार हुआ। सुख-शान्ति के खोज में समाज निकला, तो पाया क्या? आर्त्त-नाद, दारिद्र्य और असन्तोष तथा विद्रोह।

२० वर्षके थोड़े समयमें विश्व की कोमल छाती पर दो दो महायुद्धों के भीषण दर्शन हुए। समस्त वसुन्धरा विकम्पित हो उठी, समाज सन्तप्त हो गया, ज्ञान विज्ञान विनाश के बीज हो कर-अङ्कुरित होकर दिखलाई दिये। आज भी पृथ्वी का अञ्चल रक्त-रञ्जित है। युद्ध की अग्नि यहाँ-वहाँ सुलग रही है। मानव के कोमल अन्तर में स्वभावतः चतुर्दिक उद्वेलन है। परन्तु शांति का मार्ग अब भी स्पष्ट है। सन्तोष यही है कि संसार के मनस्वी भले ही उनकी संख्या नगण्य है इसकी प्राप्ति के लिए भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं।

शान्ति के उपासकों के सम्मुख एक ही प्रश्न है कि विश्व में शांति कैसे स्थापित की जाय? युगदर्शी और युगप्रवर्तक परम पूज्य महर्षि दयानन्द ने इसका समुचित उत्तर आर्यसमाज के छठे नियम के रूप में विश्व के त्रस्त और विकल मानवों को दिया। उन्होंने बतलाया कि संसार का कल्याण उसकी शारीरिक, आत्मिक तथा सामाजिक उन्नति में ही हो सकता है अर्थ की अनन्त उपासना सर्वथा विनाशिनी है। मनुष्य की मनुजता उसकी सामाजिकता में निहित है न कि उसकी आर्थिक पशुता में। मनुष्य को सामाजिक प्राणी बनना है न कि आर्थिक पशु। उन्होंने अर्थ की इस उपासना के अंकुर को युग की आंखों से पहले देखा और मनुष्य की मिटती हुई सामाजिकता को पहचाना। समाज में अर्थोपासना के परिणाम स्वरूप स्वार्थ की अपावन प्रवृत्ति बढ़ी और शोषण का प्रचलन भी फलीभूत होने लगा। स्वामीजी के पवित्र हृदय में खतरे की घण्टी की उस समय ही यह मन्द ध्वनि प्रकट हुई। स्वभावतः उस द्रष्टा ने हमारा पथप्रदर्शन किया। संसार के कल्याण के लिये, विश्व-शान्ति की प्राप्ति के लिये, हमें अपनी आर्थिक उन्नति को शारीरिक, आत्मिक तथा सामाजिक उन्नति का साधन बनाना है। अर्थ साधन है न कि साध्य। साधन के रूप में अर्थ सर्वथा ग्राह्य है, परन्तु साध्य के रूप में उसका ग्रहण घातक है।

रोटी मनुष्य के लिए सर्वस्व नहीं है। उसकी प्रधानता वहीं तक है जहां तक वह शरीर-रक्षण के लिये उपादेय और आवश्यक है। उसके उपरान्त अर्थ का अर्थ उसके त्याग में है न कि अनावश्यक संग्रह अथवा एकत्रीकरण में। शरीर का रक्षण इस लिये आवश्यक है कि यह शरीर धर्म का साधन है। अतः धर्म के उपरान्त अर्थ है।

शारीरिक उन्नति सर्वथा आवश्यक है। मनोविज्ञान का एक साधारण सिद्धान्त है 'स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन।' व्यक्ति का उत्थान मन की शुद्धता और स्वस्थता पर निर्भर है। समाज के उन्नयन के निमित्त व्यक्ति का विकास परमावश्यक है। दुर्बल शरीर मानसिक दौर्बल्य का भी कारण होता है। मन की अस्वस्थता विचारों की पवित्रता को खो देती है। विवेक भी ऐसी अवस्था में विपाक्त हो उठता है। दुर्बल विचार पाप के कारण होते हैं। यही कारण है संसार के उपकार के लिए संसार के रहने वाले मानवों की शारीरिक उन्नति की ओर ऋषि ने हमारा ध्यान आकर्षित किया। विश्व का उपकार नहीं हो सकता जब तक क्षणों में सहस्रों मानवों के जीवन की कहानी की इति होती रहेगी। संसार जीवन-अवधि के आयस्तर को प्राप्त करे। "जीवेम शरदः शतम्" का गान सर्वत्र पाठ हो। संसार आश्चर्य से देखेगा कि उसकी परम प्रणीता शान्ति उसके द्वार पर खड़ी है। स्वास्थ्य के लिये शोषण का अन्त हो, सम्पन्नता का समान वितरण हो, एक को दूसरे का ध्यान हो, एक का पालन दूसरे का रक्षण हो, 'संगच्छध्वं-संवदध्वं' की पवित्र प्रवृत्ति हो, स्वयं जीवित रहे तथा दूसरों को जीवित रखने के लिए प्रयत्नशील हो। मानव समाज को इसी सामाजिक उन्नति का ज्ञान ऋषि ने दिया। जब तक संसार के सामाजिक जीवन से संकीर्णता और गुट-बन्दी का अन्त नहीं होता, साम्राज्यवादिता अथवा विस्तारवादिता की भित्ति गिर नहीं जाती, संसार का उपकार नहीं हो सकता। पारस्परिक सहिष्णुता सामाजिक जीवन की आधार शिला है। त्याग सम्पन्नता की अपच का सुन्दर पाचक चूर्ण है। आर्य संस्कृति का यही आधार रहा है। त्याग, तपस्या और तपोभूमि हमारी संस्कृति के तीन पुनीत स्तम्भ रहे हैं।

विश्व के उपकार का तीसरा मार्ग आत्मिक उन्नति का है। समाज का निर्माण व्यक्ति की इकाई से होता है। संसार का संगठन राष्ट्र की इकाई से होता है। संसार के उपकारार्थ राष्ट्र को-प्रत्येक राष्ट्र को अपनी उन्नति करना है, व्यक्ति को अपना आत्म-विस्तार आवश्यक है। सत्य का संरक्षक शक्तिमान हो है। यदि प्रत्येक राष्ट्र अपनी पूर्ण उन्नति के लिए स्वतंत्र हो, अपने चरम उत्थान के लिए प्रयत्नशील हो, कोई किसी के उन्नयन में अवरोध न पैदा करे, स्वभावतः अखिल विश्व में वैभव की प्रचुरता होगी, शान्ति की स्थापना होगी, सुख का सुन्दर स्वप्न पूर्ण होगा।

"संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, सामाजिक और आत्मिक उन्नति करना"। ऋषि की इस अमर वाणी को यदि राष्ट्रों के नायक समझ लें तो यू-एन-ओ का स्वप्न साकार हो उठे। सर्वाधार सर्वेश्वर संसार के राष्ट्र चालकों को विवेक दे तथा उनका मार्ग प्रदर्शन करे, यही आर्यसमाजों तथा आर्यों की उस सच्चिदानन्द स्वरूप न्यायकारी प्रभु से प्रार्थना है।

'शास्त्रार्थ महारथी'

उक्त नाम से मेरी रची एक बृहत् पुस्तक छप रही है, इसमें पौराणिक विद्वानों के आर्यसमाज पर किये गये आक्षेपों के उत्तर दिये गये हैं। जहाँ तक मैं प्राप्त कर सका हूँ, विरोधियों के विरोधी ग्रन्थ प्राप्त कर लिये हैं। और भी किन्हीं महाशय के पास ऐसी सामग्री हो तो मेरे पास भेज दें, मैं उन आक्षेपों के भी युक्ति युक्त और सप्रमाण उत्तर अपने उक्त ग्रन्थ में छपा दूँगा।

शिवशर्मा आर्यमहोपदेशक,
सम्भल

वृन्दावन-गुरुकुल-महोत्सव

संवाददाता द्वारा

गुरुकुल विश्व विद्यालय वृन्दावन का ४६ वॉं महोत्सव २५ से २८ दिसम्बर तक बड़े समारोह के साथ मनाया गया। यद्यपि प्रारम्भ में प्रबल शीत के प्रकोप एवं मेघों के घटाटोप से यही प्रतीत होता था कि उत्सव फीका-सा रहेगा, परन्तु प्रथम दिवस के संस्कृत-सम्मेलन से ही सरसता एवं सजगता प्रतीत होने लगी। संस्कृत-सम्मेलन का सभापतित्व आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् श्री प०नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ ने किया था। उनका भाषण संस्कृत के पंडितों की तरह शुष्क न होता हुआ सरस था। उन्होंने अपने भाषण में बतलाया कि संस्कृत भाषा में क्लिष्टता नहीं है अपितु सरलता एवं सरसता है। अतएव वही व्यावहारिक भाषा बनने के योग्य है। ब्रह्मचारियों के निबन्ध-पाठ, भाषण एवं संवाद भी उत्तम रहे।

उसी दिवस के अन्य व्याख्याता श्री प० गंगादत्तजी वानप्रस्थी, गुरुकुल के कुलपति श्री आचार्य वृहस्पतिजी, श्री बा० पूर्णचन्द्रजी एवं श्री स्वामी ब्रह्ममुनिजी महाराज थे। जिनके व्याख्यान आर्य सिद्धान्तों के परिपोषक एवं सामयिक थे।

द्वितीय दिवस का पुरोगम विद्या-परिषद् के आयोभाषा अधिवेशनसे प्रारम्भ हुआ जिसके सभापति श्री प० गंगाप्रसादजी उपाध्याय मन्त्री, सार्वदेशिक सभा थे। इसके अन्तर्गत एक वाद-विवाद प्रतियोगिता भी हुई जिसमें अनेक शिक्षा संस्थाओं के प्रतिनिधियों के भाषण हुए। विजयी प्रतिनिधि गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन के रहे।

इस दिवस का उल्लेखनीय सम्मेलन 'आर्य संस्कृति सम्मेलन' था जिसके सभापति सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री थे। वक्ताओं में प्रमुख सर्वश्री नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ, प० बाबूरामजी एम० ए०, पंडित धर्मपालजी विद्यालंकार, आचार्य वृहस्पतिजी, प० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री, प० हरिशंकरजी शर्मा एवं प० रामदत्तजी शुक्ल एडवोकेट आदि थे। वक्ताओं ने बड़े सुन्दर ढंग से संस्कृति और सभ्यता का भेद प्रदर्शित करते हुये आर्यसंस्कृति का किस प्रकार संसार में प्रसार हो सकता है, विवेचन किया।

तृतीय दिवस मेघाच्छन्न न होने से सुहावना रहा। श्री प० रामदत्तजी शुक्ल एम० ए० एडवोकेट का 'धर्म और राजनीति' विषयक भाषण अपने ढंग का अनोखा था। आपने अनेक वैदिक प्रमाणों को देते हुए सिद्ध किया कि धर्म और राजनीति का अभिन्न सम्बन्ध है। बिना धर्म के राजनीति पंगुवत् रहती है और आर्य संस्कृति में धर्म के बिना कभी राजनीति में एक पग भी नहीं उठाया गया। इस समय भी राजनीतिक वातावरण यदि धर्म से प्रभावित न होगा तो देश का अभ्युत्थान होना असम्भव प्रतीत होता है।

मध्यान्होत्तर श्री प० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल वृन्दावन का आर्य संस्कृति विषयक एक सुन्दर भाषण हुआ। तदनन्तर सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री प० धुरेन्द्र शास्त्रीजी द्वारा अपील की गई।

इसी समय विहार प्रान्तान्तर्गत खुसरूपुर पटना निवासी श्री सेठ रामदासजी आर्य और उनकी धर्मशीला पत्नी श्रीमती राजकुँवर देवी ने गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन में भारतीय दर्शनशास्त्र की शिक्षा की स्थायी व्यवस्था के लिए तीस सहस्र रुपये की धन-राशि प्रदान की।

रात्रि में 'राजनैतिक सम्मेलन' हुआ, जिसके मनोनीत सभापति श्री प० अलगूरायजी शास्त्री रुग्ण होने के कारण स्वयं न उपस्थित हो सके परन्तु अपना सन्देश इस रूप में भेजा कि सम्प्रति आर्यसमाज को राजनीति से पृथक न रह कर अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए अवश्यमेव राजनीतिक वातावरण में प्रवेश करना चाहिए। उनके स्थान की पूर्ति श्री मदनमोहनजी सेठ कार्यकर्त्ता प्रधान आ० प्र० सभा उत्तर प्रदेश ने की। वक्ताओं में श्री प०धर्मपालजी विद्यालङ्कार, श्री प० गंगाप्रसादजी उपाध्याय, स्नातक नरदेवजी एम० पी०, स्नातक ब्रह्मदत्तजी सम्पादक 'पुण्यभूमि', स्ना० भूदेव शास्त्री, श्री प० वृहस्पतिजी, श्री प० द्विजेन्द्रनाथजी, श्री प० बाबूराम जी एम० ए०, श्री प० रामदत्तजी शुक्ल एडवोकेट एवं आचार्य प० नरदेवजी शास्त्री वेदतीर्थ प्रमुख थे। दो प्रस्ताव स्नातक ब्रह्मदत्तजी द्वारा प्रस्तुत किए गए। भाषणोपरान्त बहुसम्मति से वे पास हुए।

चतुर्थ दिवस श्री प०नरदेवजी शास्त्री का भाषण हुआ, जिसमें उन्होंने आर्य संस्कृति का महत्त्व प्रदर्शित करते हुए सार्वभौम उन्नति के लिए राजनीति में प्रवेश करने का मुख्य रूप से प्रतिपादन किया। मध्यान्होत्तर श्री प० हरिशंकर शर्मा कविरत्न के सभापतित्व में बृहत् कवि-सम्मेलन हुआ जिसमें अनेक कवियों ने कविताएँ पढ़ीं। कविताएँ सरस, सुन्दर एवं हृदयग्राहिणी थीं।

रात्रि में श्री प० सुरेन्द्रजी शर्मा गौड़ वेदतीर्थ के भाषण के साथ उत्सव की समाप्ति हुई।

इस उत्सव की विशेषता यह रही कि २७ दिसम्बर को प्रातः चिर प्रतीक्षित आयुर्वैदिक प्रयोगशाला लिमिटेड का उद्घाटन श्री प० धुरेन्द्र शास्त्रीजी के कर-कमलों द्वारा हुआ। आशा है कि प्रयोगशाला कम्पनी के रूप में अपना विस्तार करके गुरुकुल की आर्थिक कठिनाई को हल करने में सहायक सिद्ध होगी।

— —

आर्यमित्र के सम्बन्ध में

आवश्यक निवेदन

गत १ दिसम्बर से 'आर्यमित्र' "आर्यमित्र प्रकाशन लिमिटेड" ने ले लिया है। 'आर्यमित्र प्रकाशन लिमिटेड' का कार्यालय यथापूर्व ५, मीराबाई मार्ग, लखनऊ में रहेगा, परन्तु 'आर्यमित्र' तीन अङ्कों से आगरा से ही प्रकाशित हो रहा है। अभी वह बाहर के प्रेस में ही छपेगा, परन्तु निज के नये प्रेस की व्यवस्था भी शीघ्र ही होगी।

पाठकों को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि ११ जनवरी से 'आर्यमित्र' का सम्पादन उसके पुराने, परिचित और अनुभवी सम्पादक—

श्री हरिशंकर शर्मा

करेंगे। ११ जनवरी से 'मित्र' के बाहरी-भीतरी रूप में ऐसा परिवर्तन किया जायगा, जिससे पाठकों को सन्तोष और हर्ष होगा। यानी उस समय से 'आर्यमित्र' अपने पुराने सम्पादक द्वारा नये रूप में निकलेगा।

'आर्यमित्र' में प्रकाशित होने के लिये सारी सामग्री—(लेख, कविता, कहानी, समाचार आदि), समालोचनार्थ पुस्तकें, बदले के पत्र इत्यादि **"सम्पादक, आर्यमित्र, आगरा"** के पते पर भेजे जाने चाहिएँ। विज्ञापन, ग्राहक बनने की सूचनाएं, प्रबन्ध सम्बन्धी पूछ गछ या शिकायत, मनीआर्डर, चेक या पोस्टल आर्डर आदि, **'व्यवस्थापक, आर्यमित्र, आगरा'** के पते पर भेजिए।

हमने 'आर्यमित्र' को परिष्कृत रूप देने का प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया है, आशा है, आपको उससे प्रसन्नता होगी। आप भी कृपया अभी से 'मित्र' की ग्राहक-संख्या बढ़ाने और उसका अधिकाधिक प्रचार करने के लिये प्रयत्नशील हो जाय। हमारे और आपके दोनों के सहयोग से ही यह आवश्यक कार्य सुचारु रूप से सम्पन्न हो सकेगा। कृपया 'आर्यमित्र' के ग्राहक बढ़ाइये और कम्पनी के हिस्से बिकवाने में मदद कीजिए।

मदनमोहन सेठ,
मैनेजिंग डाइरेक्टर,
आर्यमित्र-प्रकाशन लिमिटेड,
लखनऊ

हमारी शिक्षा की दुर्दशा

आचार्य श्री नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ

अंग्रेज गये किन्तु उनकी पीछे छोड़ी हुई उनकी माया छाया की तरह हमारे पीछे पड़ी हुई है भगवान् जाने इस माया से कब पिण्ड छूटेगा। अंग्रेजों के समय में उनकी अपनी एक निर्धारित शिक्षाप्रणाली थी जिसका उद्देश्य यह था कि उनके शासनचक्र चलाने के लिए हाथ और कल पुर्जे मिलते रहें दूसरा उद्देश्य यह भी था कि भारतवासी अधिक से अधिक काल के लिए दासता में फँसे रहें तीसरा उद्देश्य यह था कि भारतवासी अपने पूर्वजों के चरित्र इतिहास धर्म कर्म सभ्यता संस्कृति से अपरिचित रहें जिससे इनमें स्वाभिमान और स्वगौरव उभरने न पावे आश्चर्य यह है कि वे गये किन्तु वही शिक्षा प्रणाली अभी तक हमारा पीछा कर रही है और ऐसा प्रतीत हो रहा है कि हम अपनी शिक्षा प्रणाली को निर्धारित करने में दस बीस वर्ष लग जायें तो आश्चर्य नहीं। प्रति दिन के ग्रन्थ परिवर्तन प्रतिदिन के पाठ्यप्रणाली का परिवर्तन हमारे बच्चों का नाश कर रहे हैं।

भारत में भारतीय ढंग की शिक्षा प्रणाली न होगी तब तक हमारे बच्चों का उद्धार नहीं हो सकता। खैर शिक्षा जैसी भी हो पर हमारे बच्चों को अपने धर्म में प्रतिपादित नैतिक उदात्त तत्त्वों की शिक्षा न दी जायगी तो इस वर्त्तमान शिक्षा से कुछ नहीं बनेगा। स्कूलों और कालेजों के पाठ्यग्रन्थों में से ऐसे भाग सर्वथा निकाल दिये जावें जो हमारी संस्कृति तथा हमारी सभ्यता के विरुद्ध हों। जैसे वेदों के विषय में अनेक भ्रान्तियुक्त बातें लिखी गयी हैं। जैसे इतिहासों में हमारे पूर्वजों के सम्बन्ध में अनेक ऊटपटांग बातें लिखी रहती हैं ऐसे ही आर्यों के खानपान आहार विहार रहन सहन आदि के विषय में अनेक विपरीत बातें दिखलायी पड़ती हैं जिनको पढ़ कर बच्चों के हृदय तथा मस्तिष्क पर उल्टा प्रभाव पड़ता रहता है। लोग कहते हैं कि जब हमारी सरकार धर्म्म निरपेक्ष (निधर्मी) है तब स्कूलों और कालेजों में धार्मिक शिक्षा कैसे दी जा सकती है, फिर तो सभी धर्म वाले अपनी-अपनी बातें करेंगे और शिक्षा विभाग एक झमेला हो जायगा।

हमारे नेता भारतीय संस्कृति की प्रशंसा करते हुए नहीं अघाते किन्तु कहते हैं कि राज्य प्रणाली का किसी भी धर्म विशेष से सम्बन्ध नहीं है इसलिए स्कूलों और कालेजों में धर्म शिक्षा का प्रबन्ध नहीं हो सकता क्योंकि उसको धर्म से पृथक कर नहीं सकते हमारे नेता हमारे धर्म को नहीं, संस्कृति को स्वीकार करते हैं सर्वोच्च हमारी संस्कृति के उच्च स्वर से गीत गाते रहते हैं पर हमारे धर्म को पृथक रखना चाहते हैं। संस्कृति को स्वीकार करना और धर्म को छोड़ देने की बात करना क्या परस्पर विरोधी बात नहीं?



लेखक

कोई विचित्र नेता यह भी कहते सुनायी दे रहे हैं कि संस्कृति का धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है। आर्य धर्म में तो धर्म के तीन स्कंध माने गये हैं। धर्मरूपी वृक्ष के तीन स्कन्ध हैं। स्कन्ध अर्थात् (तना) वृक्ष के मूल से लेकर जहाँ शाखाएँ फूटती हैं वह भाग सामान्य वृक्ष का एक ही स्कन्ध रहता है पर धर्मरूपी वृक्ष के तीन स्कन्ध हैं—

१ यज्ञ २ अध्ययन ३ दान। यज्ञ की व्याख्या अत्यन्त विस्तृत है उसको हम यहाँ छोड़ते हैं। अध्ययन का अर्थ है शिक्षा दान तो स्पष्ट है ही। इसलिये आर्य धर्मानुसार हम शिक्षा को धर्म का अङ्ग मानने के लिए बाध्य हैं संस्कृति का धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं ऐसा कहना अपने आपको तथा संसार को माया जाल में फँसाये रखने की बात है धर्म को छोड़ कर वे भारतीय संस्कृति की रक्षा किस प्रकार कर सकेंगे यह भी एक निगूढ़ प्रश्न है कोई कहेंगे कि वर्त्तमान धर्म्म निरपेक्ष राज्यचक्र को अपनी संस्कृति के साथ कैसे समन्वय करोगे? हम कहते हैं इस पाश्चात्य प्रजातन्त्र पद्धति में ऐसे परिवर्तन किये जायँ जिसमें वह भारतीय शासन पद्धति के बहुत कुछ समीप आ जाय यही समन्वय है। ऐसा नहीं किया गया और प्रत्येक बात में पाश्चात्यों का अन्धानुकरण होता रहा तो फिर यह पाश्चात्य ... भारत भी सच्चा भारत न रह सकेगा और इस प्रकार हमारी संस्कृति की पोषक राज्यनीति न होने के कारण हम वे सच्चे भारतीय स्वतंत्र कहे न हो सकेंगे। इस प्रकार भारत भले ही स्वतन्त्र रहता रहे ... भारतीय ... देश अन्य अनेक स्वतन्त्र राष्ट्रों के समान यह भी एक स्वतन्त्र राष्ट्र होगा सही पर अभारत राष्ट्र होगा।

इस विषय में आर्यसमाज बहुत कुछ कर सकता है। पर कर सकेगा भी कि नहीं समय ही बतलायेगा। सारांश यह है मेरा कथन यह है कि कम से कम भारत की वर्त्तमान शिक्षा प्रणाली में यदि ऐसे अभीष्ट परिवर्तन न किये गये जिससे वह शिक्षा प्रणाली हमारी प्राचीन शिक्षा प्रणाली के उदात्त तत्वों से परिपूर्ण न हो सके तो समझ लेना चाहिए कि हमारे बच्चों का तथा भारत का भविष्य उतना उज्ज्वल नहीं रहेगा नितान्त कि हम चाहते हैं भारत के शिक्षाशास्त्री गम्भीरता पूर्वक सोचें और ऐसे उपाय काम में लावें जिनसे हमारे देश की शिक्षा हमारी संस्कृति के सर्वथा न होती हुई कम से कम अधिक से अधिक अनुरूप हो।

राजनैतिक घटनाचक्र

श्री प० धर्मपालजी विद्यालंकार

युद्ध के अपराधी

गत संसार व्यापी महायुद्ध के अनन्तर विजेता देशों द्वारा विजित देशों के तत्कालीन शासनारूढ़ प्रधान व्यक्तियों को अपराधी घोषित करके दण्ड देने से अन्तर्राष्ट्रीय जगत् के राजनीतिक न्यायाधीश विचारकों के सम्मुख यह प्रश्न उपस्थित हो गया है कि "युद्ध के अपराधी किन्हें घोषित किया जावे?" क्या विजयी होने मात्र से किसी देश को पराजित देश के शासकों को युद्धापराधी घोषित कर उन्हें दंडित करना उचित है? न्यूरेम्बर्ग के मुकद्दमे में तथा जापान के जनरल तोजो आदि के मुकद्दमे में यह प्रश्न उठा था और टोकियो के प्रसिद्ध मुकद्दमे में भारतीय न्यायाधीश श्री विनोदपाल ने तो स्पष्ट ही उन्हें निरपराधी घोषित किया था।

तृतीय विश्वव्यापी महायुद्ध की तैयारियां हो रही हैं। इस समय जहां ठंडा युद्ध हो रहा है, वह स्थान शीत-प्रधान देशों से दूर है। सुरक्षा कौंसिल आदि में भी रूस द्वारा जो प्रस्ताव प्रस्तुत किये जाते हैं, वे न केवल जानबूझ कर उत्तेजनात्मक ढंग से ही प्रस्तुत किये जाते हैं, प्रोपेगंडा की दृष्टि से भी इतने चातुर्यपूर्ण ढंग से उपस्थित किये जाते हैं, जिससे अनिश्चयात्मक मति वाले देशों के सम्मुख पश्चिमीय देशों का गृह दोषपूर्ण स्थिति में लक्षित होने लगे। इतना होने पर भी यदि वस्तुस्थिति को ठीक-ठीक न समझा गया और रूस द्वारा प्रस्तुत सभी प्रस्तावों और राजनैतिक समस्याओं के हलों को शीघ्रता से बिना विवेक के निरन्तर अस्वीकार किया जाता रहेगा तो उससे वस्तुस्थिति को भी न समझा जा सकेगा और धोखे में पड़ जाने की भी संभावना है।

गत सितम्बर मास में अमेरिका के जापान में प्रतिनिधि जनरल मैकार्थर द्वारा जापान के कुछ युद्धापराधियों को अपनी सजा समाप्ति से पूर्व ही छोड़ देने पर रूस ने एक विरोध-पत्र भेजा था। गत महायुद्ध के अपराधियों के संबंध में अन्य मित्र देशों की अपेक्षा तथाकथित अपराधियों से रूस ने अत्यंत कठोर व्यवहार किया था। रूस के निरोध शिविरों (Extermination camps) में गेस्टापो द्वारा मनुष्यों पर किये गये परीक्षणों से इंगलैण्ड और अमेरिका में सनसनी फैल गई थी। परन्तु संभवत युद्ध की विशेष अवस्थाओं के कारण इस विषय पर गम्भीरता से विचार नहीं किया जासका था।

वर्तमान प्रजातन्त्रवादी देशों और कम्यूनिस्ट प्रभाव वाले रूस आदि के विरोधीदलों में अपराधियों के संबंध में एक समान नीति अंगीकार नहीं की जा रही है। रूस ने भी जिसका जर्मनी के पूर्वी भाग पर प्रभावपूर्ण आधिपत्य है, भूतपूर्व नाजी व्यक्तियों की (East German People's Police) पूर्वीय जर्मन जनता की पुलिस के नाम से एक शुद्ध सैनिक संगठन की स्थापना की है, इस पर प्रजातन्त्र वादी पश्चिमी देशों को आक्षेप है। इसी प्रकार इटली के सुप्रसिद्ध जनरल मार्शल ग्रेजियानीको जिन्हें युद्ध-अपराधी घोषित कर १६ वर्ष की सजा दी गई थी, गत अगस्त में मुक्त कर दिया गया है। इण्डोचाइना में फ्रांसीसियों ने भी अनेक जर्मन कैदियों को फारेन लीजन (विदेशी स्वयंसेवक दल) के नाम से अपनी सेना में भर्ती कर लिया है। गत महायुद्ध में भी युद्ध कैदियों को उनके अपने देश के विरुद्ध सैनिक संगठन किये जाने के अनेक उदाहरण पाये गये हैं।

प्रश्न यह है कि स्वतन्त्रता के लिये युद्ध करने वालों के लिये भी उनसे भिन्न अन्य व्यक्तियों को स्वतन्त्रता की कोई मर्यादा नियत करना उचित है अथवा नहीं? अपने आप को सभ्य कहने वाले पश्चिम के देशों ने अपने समीप के निर्बल देशों पर किसी न किसी बहाने से विशेष आक्रमण को रोकने का बहाना लेकर जिस प्रकार शस्त्र-प्रयोग द्वारा सैनिक कार्यवाहियों का परीक्षण किया है, यदि वह परीक्षण असफल होता हुआ प्रतीत होता है तो संसार की चिंतनीय समस्या का हल होना संभव नहीं है।

वस्तुतः बात तो यह है कि जनसाधारण में संयम और त्यागपूर्वक जीवन बिताने की भावना के स्थान में केवल भोग भोगने के आदर्श का प्रचार हो गया है। राजनैतिक क्षेत्र में भी संयम व मर्यादा स्थापित किये बिना केवल दंड से शांति और व्यवस्था स्थापित नहीं हो सकती। ऐसी कोई संभावना नहीं है कि धर्म व नैतिकता के आधार को बिना ग्रहण किये राजनीति मात्र से शांति स्थापित की जा सके, अत: भारत के कल्याण के लिये भी पश्चिमीय देशों की राजनैतिक परम्परा को स्वीकार करना उसको संकट से बचा न सकेगा।

जमींदारी प्रथा की समाप्ति

धारा सभाओं में किसी एक बिल पर आठ मास का दीर्घकाल व्यतीत हो जाना बहुत पर्याप्त समझा जाता है। परन्तु जमींदारी विनाश जैसे अत्यन्त गम्भीर, व्यापक प्रभाव उत्पन्न करने वाले क्रान्तिकारी कानून के निर्माण में इतना समय व्यतीत होना अधिक नहीं है।

उत्तरप्रदेश की धारा-सभा के सदस्यों ने जमींदारी समाप्ति के कानून को पारित करने में जिस धैर्य का परिचय दिया है वह भी प्रशंसनीय है। यद्यपि इस कानून के बनाने की बहुत सी रुकावटें समाप्त हो गई हैं, तथापि इस कार्य में वे अभी सर्वथा मुक्त हुये प्रतीत नहीं होते। बड़ी कौन्सिल में कुछ साधारण परिवर्तन हो जाने से यह बिल पुनः असम्बली में वापस आ जायगा। धारा सभाओं की पालियामेंटरी विधि-विधान से पारित हो जाने पर भी यह कानून, सम्भवत, न्याय की तुला पर तोले जाने के लिये न्यायालय तक पहुँचेगा। इसके अनन्तर जमींदारी प्रथा की समाप्ति के प्रसंग में शासन द्वारा कार्यप्रणाली के सुव्यवस्थित होने तक समय की अपेक्षा तो रहेगी ही परन्तु उसके साथ ही-साथ समय-समय पर संशोधनों की अनिवार्य आवश्यकता के कारण अधिक समय लग जाने की सम्भावना से अत्यन्त विवाद-ग्रस्त यह विषय जनसाधारण के सम्मुख बहुत समय तक उग्र रूप से रहेगा और पक्ष-विपक्ष के उत्तेजनात्मक विवाद का विषय बना ही रहेगा।

कांग्रेसी दल द्वारा गत चुनावों में की गई अनेक प्रतिज्ञाओं और घोषणाओं में से जमींदारी प्रथा को समाप्त करने, की मुख्य घोषणा की पूर्ति कर देने के प्रोपेगैण्डा का लाभ, आगामी साधारण चुनाव में, कांग्रेस को स्वभावतः ही प्राप्त होगा।

प्राक् ऐतिहासिक काल से विकसित भारतीय संगठन व्यवस्था के विशेषज्ञों को जमींदारी प्रथा की समाप्ति से देश का विशेष लाभ होने में बहुत कुछ संदेह हैं अनेक व्यक्तियों का तो यह दृढ़ मत है कि कांग्रेस का यह कार्य न केवल कृषकों को फुसला कर वोट प्राप्त करने के उद्देश्य से ही किया गया है, अपितु समाज की परम्परागत नैतिकता की भित्ति को सर्वथा नष्ट कर देने वाला, अतः अत्यन्त हानिकारक भी सिद्ध होगा।

जमींदारी-प्रथा की समाप्ति के लिये निर्मित प्रारम्भिक कमेटी की रिपोर्ट तथा प्रान्तीय सरकार द्वारा स्वयं प्रस्तुत प्रारूप में बहुत कुछ भेद हैं। इस भेद और परिवर्तन का कारण यह है कि वे कांग्रेसदलके अन्दर विभिन्न मतोंमें सामञ्जस्य रखने के उद्देश्य से किये गये हैं। इन परिवर्तनों पर भी बहुत से समालोचकों का मत है कि ग्रामों की वर्गजन्य सामाजिक व आर्थिक व्यवस्था में इस कानून से बहुत ही न्यून परिवर्तन होगा, केवल यही कि भूमिधर वर्ग जमींदारों का स्थान ले लेंगे। कानून से 'साझेदारी' की छूट देना रूपान्तर से किसानों को जोतियाना भूमि देने की प्राचीन प्रथा को प्रचलित रखना ही है। इसका स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि मध्यवर्ती वर्ग अधिक फले-फूलेगा और एक नवीन प्रकार की जमींदारी प्रथा का पुनर्जन्म हो जायगा। अनेक महानुभावों की यह भविष्य वाणी है कि इस कानून को उन धाराओं के प्रचलित होने पर बड़े भयंकर परिणामों का होना निश्चित ही है। देश में ईमान-

दारी की नींव हिल जायगी, वर्ग संघर्ष स्थायी हो जायगा और ग्राम के भूमिरहित मजदूरों तथा इसी प्रकार के अन्य ग्रामीणों में वर्ग संघर्ष की अग्नि प्रज्वलित हो उठेगी। बहुतसे अन्य व्यक्तियों का कथन है कि अब जमींदारी प्रथा समय के अनुकूल नहीं रही है। यदि उसे रहने दिया जायगा तो उससे न केवल जमींदारों को ही हानि होगी, अपितु उससे अनावश्यक रूप से वर्ग संघर्ष बहुत समय तक होता रहेगा, शान्तिपूर्वक देश की प्रगति में बहुत समय लग जायगा और बाधा निरन्तर होती रहेगी।

अभी यह कहना कठिन है कि इस कानून से हमारा प्रान्त एकदम स्वर्ग में पहुंच जायगा या नहीं, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि आर्थिक आधार पर समाज व्यवस्था निर्माण के योरोपीय देशों के सिद्धांत का यह एक नवीन परीक्षण, सम्भवतः अंधेरे में बड़ी छलांग मारने के समान है।

'जमींदारी विनाश फंड' में भी बहुत कम धन एकत्र हुआ है। यह धन मुआविजे के रूप में जमींदारों को दिये जाने के उद्देश्य से एकत्र किया जा रहा है। इस योजना की सफलता में बहुत संदेह है। गवर्नमैन्ट के अधिकारियों द्वारा १० गुणा धन एकत्र करने में सभी प्रकार के उचित अनुचित साधनोपायों के व्यवहार में लाये जाने की शिकायत प्रायः अत्यन्त अधिक सुनी गई है। इसलिये इस बात की आवश्यकता है कि गवर्नमेंट एतत्संबंधी कार्यप्रणाली और व्यवस्था को अत्यंत स्पष्ट और सरल रूप में व्यवहार में लावे। मुआविजा आदि देने की व्यवस्था उच्च श्रेणी के अधिकारियों द्वारा ही सम्पादित की जावे। यदि कोई न्यूनतायें उत्पन्न हो जावें तो उनकी पूर्ति की उचित व्यवस्था शीघ्र हो।

अनुमान किया गया है कि जमींदारी विनाश से इस पर आश्रित लगभग १॥ करोड़ से अधिक व्यक्तियों के शरणार्थियों की संख्या में परिवर्तन हो जाने और जीविका रहित हो जाने से, उत्तरप्रदेश की जनसंख्या में प्रत्येक ६ व्यक्ति में से १ व्यक्ति पर प्रभाव होगा। प्रान्त की जनता के इतने अधिक भाग में असंतोष फैल जाना कुछ अस्वाभाविक नहीं है। भारत के इस संक्रान्तिकाल में, जबकि परिस्थिति निरंतर बिगड़ती हुई प्रतीत होती है, इस कानून के कारण उत्पन्न अत्यंत व्यापक परिणाम भावी इतिहासकारों की चर्चा और विवेचन का विषय होंगे, इसमें संदेह ही क्या है।

विविध सूचनाएं

ब्रह्मपारायण यज्ञ

आर्यसमाज लखीमपुर के उपप्रधान श्री० हरिश्चन्द्रजी ने अपने स्थान शिवाला पुरवा (लखीमपुर) में १० दिसम्बर से १६ दिसम्बर १९५० तक सम्पूर्ण यजुर्वेद से ब्रह्म पारायण यज्ञ कराया, जिसमें श्री स्वामी ब्रह्मानन्द दण्डी एटा वालों ने ब्रह्मा का पद ग्रहण करके समस्त विधि वैदिक रीति से कराई। एटा गुरुकुल के सात ब्रह्मचारी तथा आचार्य सस्वर मंत्रों का पाठ करते रहे। उनके साथ श्री स्वामी शान्तिप्रकाशजी, स्वामी परमानन्दजी तथा श्री मोहनलालजी पोद्दार वानप्रस्थी भी थे। प्रत्येक दिन प्रातःकाल १० बजे से ११ बजे तक और रात्रि में ७ बजे से ९ बजे तक श्री दण्डीजी तथा अन्य साधु महात्मा वेदों की कथा कहते थे। निकटवर्तीय जनता में बड़ा उत्साह रहा। १६-१२-५० को पूर्णाहुति के दिन यजमान श्री हरिश्चन्द्रजी तथा उनकी विदुषी धर्मपत्नी ने वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश किया और अन्य कई यज्ञोपवीत तथा वेदारम्भ संस्कार भी हुए। यजमान ने यज्ञ की समाप्ति पर ५००) गुरुकुल एटा को तथा उनके पुत्र, पुत्रियों और सम्बन्धियों ने भी मुक्त हस्त से लगभग ४००) दान दिया। वेदों का सस्वर पाठ और सामवेद गान सुनकर जनता में श्रद्धा का समुद्र उमड़ पड़ा।

शिवनारायण शुक्ल एडवोकेट

कांगड़ी गुरुकुल

सदा की भांति इस वर्ष भी २३ दिसम्बर को कांगड़ी गुरुकुल में श्रद्धानन्द-दिवस समारोह पूर्वक मनाया गया। प्रातः जुलूस निकाला गया। आचार्य प्रियव्रतजी ने ध्वजारोहण किया। फिर आचार्यजी के सभापतित्व में एक बड़ी सभा हुई। श्री स्वामीजी की जीवनी पर ब्रह्मचारियों तथा अन्य विद्वानों के भाषण हुए। अन्त में सभापतिजी का बड़ा प्रभावशाली और विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान हुआ। गत वर्षों की भांति टूर्नामेंट भी हुआ। आचार्यजी के सभापतित्व में आचार्य रामदेव-दिवस भी मनाया गया। प्रो० सुखदेव प्रो० लालचन्दजी आदि के भाषण हुए। आचार्य प्रियव्रतजी ने आचार्य रामदेव-सम्बन्धी अपने संस्मरण सुनाये।

वेश-भूषा

१४ दिसम्बर १९५० ई० के 'मित्र' में "स्वतन्त्र भारत और आर्यसमाज" शीर्षक लेख में जो यह कहा गया है कि शेरवानी और पाजामा मूलतः विदेशी वस्त्र हैं वह भूल है। दोनों वस्त्र भारतीय हैं, तथा पाजामे का विपुल रूप शलवार भी भारतीय है। हां, यह सम्भव है पूर्वी भारत में इतने प्रचलित नहीं रहे हों, परन्तु उत्तर पश्चिम में दो हजार बरस से तो मूर्ति आदि में ये वस्त्र अंकित मिलते हैं। जो विदेशी देश हम मानेंगे उनमें आज भी जन साधारण इनको नहीं पहनता। स्मरण रहे अफगानिस्तान तो क्या ईरान को भी विदेश क्षेत्र में नहीं समझना चाहिये। लेख में जो तत्व पुष्ट किया गया है वह सर्वथा मान्य है।

—नेहपालसिंह

धार्मिक परीक्षाएँ

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की सिद्धान्तरत्न, भास्कर, शास्त्री आदि सभी परीक्षाएँ आगामी २८ जनवरी तथा ४ फरवरी रविवार को भारत के दो सौ से अधिक केन्द्रों में होंगी। जिन केन्द्रों ने अभी तक आवेदन-पत्र नहीं भेजे हैं, वे भी तुरन्त भेज दें। इस वर्ष इन धार्मिक परीक्षाओं में गत सभी वर्षों से अधिक छात्र बैठ रहे हैं। धर्म-प्रचार का यह सर्वोत्तम साधन है।

डा० सूर्यदेव शर्मा,
एम० ए०, डी-लिट०
परीक्षा मन्त्री, भा० व०
आर्यकुमार परिषद्, अजमेर

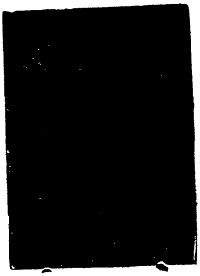
सरदार पटेल और ऋषि दयानन्द

माननीय सरदार पटेल की मृत्यु पर कौन ऐसा भारतीय होगा जिसे दुःख न हुआ हो। मेरा ऐसा अनुमान है कि सरदार पटेल से अधिक तो क्या उनकी टक्कर का भी कोई दूसरा व्यक्ति वर्तमान समय में ऐसा नहीं है जो उनके स्थान की पूर्ति कर सके। सरदार पटेल ने जिस दृढ़ता, संलग्नता तथा बुद्धिमत्ता से आड़े वक्त में भारत का नेतृत्व किया उसका उदाहरण वह स्वयं ही थे। भारतीय रियासतों का एकीकरण तथा विलीनीकरण जिस सरलता व शीघ्रता से उन्होंने किया तथा स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् जो काली घटायें भारत पर छाई थीं, उनको छिन्न-भिन्न करने में जो अपूर्व कार्य उन्होंने किया उससे उनकी बुद्धिमत्ता, कार्य-कुशलता तथा साहस की मात्रा का सहसा पता चल जाता है। इतना ही नहीं, वह भारतीय सभ्यता के पूरे पुजारी थे, तथा ईश्वर और वेद में अटल आस्था रखते थे। महात्मा गांधी के वे अनन्य भक्त तो थे ही, परन्तु अन्त समय में वह देश को ऋषि दयानन्द के बताये हुए मार्ग पर चलाने में प्रयत्नशील थे। उन्होंने इस सचाई का अनुभव कर लिया था कि देश का वास्तविक कल्याण ऋषि दयानन्द के पद-चिन्हों पर चलने से ही हो सकता है। जैसा कि गत ऋषि-निर्वाणोत्सव पर दिये उनके वक्तव्य से भी प्रकट होता है। देश का दुर्भाग्य है कि पूज्य सरदार पटेल जब इस परीक्षण के करने के निमित्त प्रयत्न करने वाले थे तभी दैव ने उनको हमसे छीन लिया।

रामबहादुर, पूरनपुर

कवि सम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुर

[यह लेख किसी प्रवासी भाई का है, उस पर लेखक का नाम नहीं है।



रवीन्द्रनाथ ठाकुर

कविसम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुर उन महान् साहित्यकारों में से थे जो अपनी धाक एक प्रान्त या देश पर ही नहीं, अपितु सारे संसार पर जमा लेते हैं। दिवाली की रात्रि को अपने प्राण त्यागने वाले एकता के पुजारी दयानन्द सरस्वती की इच्छा थी कि अपनी कृतियों से भारतीय अपने देश का मान बढ़ावें। इस इच्छा को कवीन्द्र रवीन्द्र ने पूर्ण किया। इस इच्छा की पूर्ति होते देख हम इस बात का अफ़सोस करते हैं कि महर्षि दयानन्द इस समय तक जीते क्यों न रहे। दयानन्द के परलोक सिधारने के समय ठाकुर की उम्र २३ वर्ष थी। जवानी चढ़ रही थी।

उनकी कविताएं सुन्दर गाने हैं। जिस ग्रन्थ के लिए उन्हें प्रसिद्धि मिली है, उसका नाम 'गीतांजलि' है। संसार को यह ग्रन्थ देते हुए मानो ठाकुर यह कह रहे थे कि मैं गीतों की अंजलि चढ़ा रहा हूँ। हम मौरीशसवासी ऐसी श्रेष्ठ पुस्तकों को हिन्दी में या अंग्रेजी में पढ़ने से पहले उनका फ्रेंच अनुवाद पढ़ लेते हैं। जिस लेखक ने इस पुस्तक का अनुवाद किया है उसे सन् १९४६ ई० में नोबुल पुरस्कार प्राप्त हुआ है। किसी वर्तमान काल के विचारक ने कहा है कि ३०० वर्ष के बाद हम ठाकुर को अच्छी तरह से समझेंगे।

यदि वेद का ज्ञान पश्चिमीयों की समझ में आ जाय तो वे ठाकुर को समझने लग जायेंगे। ठाकुर ने पं० गुरुदत्त विद्यार्थी की तरह वेदों के मन्त्रों की व्याख्या नहीं की, बल्कि मौलिक ग्रन्थों में उपन्यासों और काव्यों में उन्होंने वेद और उपनिषद् का सार इस उत्तम ढङ्ग से रख दिया कि बच्चा-बच्चा भारतीय धर्म तथा सन्देश से परिचित हो जाय। वे कच्चे विचारक जो समझते थे कि भारतीय ग्रंथों में कुछ है ही नहीं, भारत के महत्व को समझने लगे हैं। मनु ने कहा है कि भारत के ब्राह्मणों ने संसार-भर के लोगों को शिक्षा दी। नवीन भारत के इस ब्राह्मण ने संसार को जताया कि अब भी भारतीय विद्वानों में लोगों को पढ़ाने की शक्ति शेष है।

आज जातीयता का नारा लगाने पर तुले हैं। सबको यह प्रवृत्ति पसन्द नहीं है जब पश्चिम में किसी उच्च आत्मा को शान्ति नहीं मिलती, तब वह भाग कर बापू के आश्रम में या कविसम्राट के शान्ति निकेतन में पहुंचता है। मानो बालक बन कर माता की गोद का आश्रय पाता है।

प्राचीन ऋषियों का आदर्श सामने रख कर रवीन्द्रनाथ ने जंगल के बीच अपना गुरुकुल बनाया। विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों से ठाकुर कहा करते थे "मैं कुजात हूँ।" मैंने अर्थात् उन्होंने स्वयं किसी विश्वविद्यालय में अध्ययन नहीं किया, परन्तु वे विश्वविद्यालयों के लोगों को पढ़ाने के योग्य थे। उनका शान्ति-निकेतन एक आदर्श विश्वविद्यालय है। जब ऑक्सफोर्ड ने उन्हें डी० लिट्० की उपाधि से अलंकृत किया, तो उस विश्वविद्यालय को अपना प्रतिनिधि शान्ति निकेतन में भेजना पड़ा। ठाकुर उपाधि लेने इंगलैण्ड नहीं गये। कविसम्राट ने अपने जीवन में एक ऋषि-युग का काम किया।

पश्चिमीयों को जो शान्ति शान्ति निकेतन में आने से मिलती है, वही कविवर के ग्रन्थों का अनुशीलन करने से उपलब्ध होती है। शरीर को अधिक महत्व देना मशीनों से मनुष्यों की अपेक्षा अधिक प्रेम करना आदि कार्य पश्चिमीयों को बेचैन कर रहा है। रवीन्द्रनाथ शिक्षा देते हैं कि शरीर तो साधन मात्र है। शरीर एक बांसुरी है, इसको बांसुरी का काम करना चाहिए। मालिक जिस तरह चाहे इसमें हवा फूंक सकता है। मनुष्य एक फूल के समान है। यदि समय पर माली फूल को तोड़ कर माला में सम्मिलित कर दे तो वह देवताओं, विद्वानों और जनसेवकों के गले की शोभा बढ़ा सकता है। मुरझा जाने पर उसके दल ज़मीन पर बिखर जाते हैं और वे मनुष्यों के पैरों के नीचे आ जाते हैं।

ये शिक्षाएँ दलबन्दी के दलदल में फंसे हुए लोगों को अब भी बचा सकती हैं। रवीन्द्रनाथ द्वारा भारत माता संसार को एक महान् सन्देश पहुंचा रही है।

कवियों की तुलना चिड़ियों के साथ की जाती है। इस बीसवीं सदी में कोई ऐसा कवि विद्यमान नहीं है जिसके गाने से संसार मुग्ध हो सकता है। संसार में सूनापन आ गया है। जब सब वृक्षों के पक्षियों ने बोलना बंद कर दिया था, तब यह पक्षी अपना मधुर स्वर सारे संसार में सुना रहा था।

भारतीय रवीन्द्रनाथ अपनी धार्मिकता, दया, कर्मण्यता और स्वाध्यायशीलता की दृष्टि से अब भी जीवित हैं। मैं जान बूझ कर 'भारतीय' शब्द का प्रयोग कर रहा हूँ। बंगाली होने पर भी रवीन्द्रनाथ प्रान्तीयता को मिटा देने में देश की भलाई देखते थे। सोलह वर्ष की अवस्था में उन्होंने एक पत्रिका निकाली, जिसका नाम था 'भारतीय'। हिन्दी को अपनाने में वे अन्य नेताओं से पीछे न थे। शान्ति-निकेतन के द्वारों पर जो वाक्य हैं वे सब के सब नागरी लिपि में हैं। जब लोग भारतीय को हीन बताते थे, और हर एक को सुनाते थे कि भारत अनेक प्रकार की जातियों, भाषाओं तथा धर्मों का घर है, तब उन्होंने एक सुन्दर कविता लिखी जिसमें बताया गया कि अनेक चोटियों के होते हुए भी यह न समझना चाहिए कि हिमालय पर्वत अनेक हैं। सारी की सारी-चोटियाँ एक ही पर्वत की हैं।

एक कविता दूसरी को स्मरण करा देती है। कवि-सम्राट् की एक अन्य कविता से मालूम होता है कि उन्होंने अपने हृदय में संकुचित भाव को कभी स्थान नहीं दिया —

रथ-यात्रा लोकारण्य महा धूम धाम,
भक्तरा लुटाये पथ करिछे प्रणाम।
रथ भावे आमि देव पथ भावे आमि,
मूर्ति भावे आमि देव, हासे अन्तर्यामी।

'रथयात्रा के समय लोगों की भीड़ जमा हुई है, धूम-धाम के साथ उत्सव मनाया जा रहा है। भक्तगण भूलुंठित होकर प्रणाम कर रहे हैं। रथ सोचता है, मैं ही देवता हूं, पथ सोचता है, मैं ही देवता हूं, मूर्ति सोचती है, मैं ही देवता हूँ, अन्तर्यामी देख-देख कर हँस रहे हैं।'

जब गुरुदेव का नाम लिया जाता है तो मेरी उस समय की स्मृति जाग्रत् हो जाती है, जब हमारे विद्यालय—डी० ए० वी० कालिज, लाहौर में गुरुदेव ने अपने बचपन में महर्षि दयानन्द के दर्शन करने का प्रभावशाली वर्णन किया था।

रवीन्द्रनाथ एक ऋषि (महर्षि देवेन्द्रनाथ) के पुत्र थे और दूसरे (महर्षि दयानन्द) के स्नेह-प्रेम-भाजन। अपने पिता के धर्म, ब्रह्म समाज के धर्म को स्वीकार कर उन्होंने अपने पिता की इच्छा पूरी की। साथ-साथ वेदों की शिक्षाओं को प्रचलित कर उन्नीसवीं सदी के दूसरे महर्षि की इच्छा भी पूरी की।

विश्व आर्य कैसे बनें ?

प्रो० श्री रमेशचन्द्र त्रिवेदी, एम० ए०

'कृण्वंतो विश्वमार्यम्' आर्य समाज का ध्येय है। प्रारम्भिक वर्षों में आर्यसमाज का प्रचार विद्युत गति से हुआ था, उसको देखकर ऐसा लगता था कि एक दिन अवश्य ही आर्यसमाज अपने इस उद्देश्य में सफल हो सकेगा। उत्तरी भारतवर्ष में शायद ही कोई ऐसा नगर हो, जिसमें आर्य-समाज की स्थापना न हुई हो। बहुत बड़ी संख्या में लोग आर्य समाजी बने। और अपने चरित्र-बल से उन्होने समाज में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया। मुसलमान भी बहुत-से शुद्ध हुए, और उनमें से कई व्यक्तियों ने उच्च तथा सम्मानपूर्ण स्थान भी प्राप्त किया। आर्यसमाज के प्रचार के फलस्वरूप विभिन्न मत-मतान्तरों की नींव हिल गई और वे पथ-प्रदर्शनके लिये आर्य-समाज की ओर देखने लगे। किंतु आगे चलकर हमारी प्रगति रुक सी गई। और यह कटु सत्य है कि न तो हम आर्यसमाज को सिक्खों के समान एक शक्तिशाली सम्प्रदाय ही बना सके और न वैदिक धर्म को विश्वधर्म ही बना सके।

यह ध्येय आज भी बना हुआ है। किन्तु अब आर्य-समाज के नेता गम्भीरता पूर्वक इस पर विचार नहीं करते। वस्तु स्थिति को देखने से ऐसा लगता है कि अब आर्य समा-जियों की संख्या-वृद्धि रुक-सी गई है। इसका मुख्य कारण यह है कि पाश्चात्य शिक्षा के फल-स्वरूप अब नवयुवकों की आस्था शास्त्रों पर नहीं रही है। अब उन्हें अपने कर्त्तव्याकर्त्तव्य के निर्णय के लिये शास्त्र प्रमाण की आवश्यकता नहीं रही है। पहले समुद्र-यात्रा, अन्तर्जातीय विवाह, छूआछूत इत्यादि छोटी-छोटी बातों के लिये हिन्दू जाति से बहिष्कृत कर दिये जाते थे। ऐसे लोगोंको विवश होकर आर्य-समाज में आना पड़ता था। किंतु आज पौराणिक धर्म का प्रभाव इतना कम हो गया है कि लोग पौराणिक धर्म में रहते हुए भी उसके परम्परागत सिद्धान्तों के विरुद्ध आचरण कर सकते हैं। वास्तव में बहुत-से सामाजिक तथा धार्मिक सुधार जिनको आर्यसमाज लेकर चला था, अब हिन्दू समाज ने अपना लिए हैं। पहले बहुत से जिज्ञासु सत्यासत्य के निर्णय के लिये आया करते थे। अब धर्म के प्रति जिज्ञासा न रहने से उनका आना भी बन्द हो गया है।

हमारा खण्डनात्मक पुरोगम कम से कम नगरों में बहुत हद तक सफल हो चुका है किंतु मण्डनात्मक पुरोगम उतना सफल नहीं हुआ है। आर्य समाज के प्रचार के फलस्वरूप शिक्षित लोगों ने मूर्ति-पूजा तो छोड़ दी, किन्तु निराकार परमेश्वर की उपासना करनी प्रारम्भ नहीं की। जातियां आज उस रूप में नहीं रहीं, किन्तु वैदिक वर्ण-व्यवस्था आर्यों में भी स्थापित न हो सकी। यही बात अन्य सुधारों के विषय में भी है। सबसे अधिक दुःख की बात यह है कि बहुधा आर्यसमाजियों की संतान भी आर्यसमाजी नहीं बन पाती क्योंकि हमने परिवार सहित सत्संग में जाने का नियम पालन नहीं किया। आश्चर्य की बात यह है कि एक ओर तो ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों की विजय हो रही है दूसरी ओर आर्य समाजकी शक्ति का ह्रास हो रहा है। आज देश के शासन-प्रबन्ध में आर्यसमाज का कोई हाथ नहीं। तथा राष्ट्रिय अन्तर्राष्ट्रिय मामलों को प्रभावित करने में आर्यसमाज सर्वथा असमर्थ है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि जिस वैदिक धर्म का ऋषि ने प्रतिपादन किया है, वह सर्वथा वैज्ञानिक, तर्क सम्मत, पक्षपात-रहित तथा असाम्प्रदायिक है। उसे हम चाहें तो मानव धर्म भी कह सकते हैं, संसारके अन्य मत-मतान्तर उसकी तुलना में नहीं ठहर सकते। फिर भी हम वैदिक धर्म को विश्वधर्म न बना सके और अपने देश में भी अपनी संख्या बहुत ही कम है। इसका प्रथम कारण तो यह है कि सन् १६२१ से स्वतन्त्रता के लिये जो संघर्ष प्रारम्भ हुआ, उसने नव-युवकों को ऐसा आकर्षित किया कि उन्हें धार्मिक तथा सामाजिक विषयों की ओर रुचि ही नहीं रही। द्वितीय कारण यह है कि आर्यसमाज को राज्याश्रय प्राप्त नहीं हुआ। बहुत से व्यक्ति आज यह कहने लगे हैं कि धर्म और राजनीति का कोई सबंध नहीं होना चाहिए। किंतु यह ऐते-हासिक सत्य है कि बिना राजा-श्रय प्राप्त किए संसार का कोई भी मत विश्वधर्म नहीं बन सका।

ईसा की मृत्यु के समय उनके केवल तेरह शिष्य थे। किंतु जसे ही उन्होने रोम के सम्राट् कान्स-टेनटाइन को ईसाई बनाया, उसने ईसाई धर्म को राजधर्म घोषित कर दिया, जिससे उसकी सारी प्रजा सामूहिक रूप से ईसाई हो गई। फिर धीरे-धीरे कई शताब्दियों में पादरियों ने उन्हें ईसाई धर्म के सिद्धान्तों का ज्ञान कराया। इसी प्रकार से बौद्ध धर्म भी भगवान् बुद्ध के निधन के चार सौ वर्ष बाद तक एक साधा-रण सम्प्रदाय बना रहा। किन्तु अशोक के बौद्ध धर्म स्वीकार कर लेने पर, सामूहिक धर्म परिवर्तन के कारण कुछ ही समय में विश्व धर्म बन गया। फिर गुप्त राजाओं के हिन्दू धर्म स्वीकार कर लेने पर भारत में बौद्ध धर्म के स्थान पर हिन्दू धर्म स्थापित हो गया। मुसलमानों की संख्या-वृद्धि भी इसी प्रकार से हुई है। आज चीन में साम्यवादियों के हाथ में राज-सत्ता आ जाने से, बौद्ध धर्म का अन्त हो गया है। इससे स्पष्ट है कि जब तक राजसत्ता आर्य-समाज के हाथ में नहीं आती, तब तक वैदिक धर्म विश्व धर्म नहीं बन सकता।

यदि हम विश्व को आर्य बनाना चाहते हैं तो हमें कोई उपाय ऐसा करना चाहिये, जिससे समस्त हिन्दू सामूहिक रूप से आर्य बन जाय। व्यक्तिगत धर्मपरिवर्तन के द्वारा तो हम देहली जैसे नगर में भी जहां आर्य समाज का अच्छा प्रचार है, एक लाख हिन्दुओं को भी वर्षों में आर्य नहीं बना सकते आज राजसत्ता आर्य समाज के हाथ में नहीं है। निकट भविष्य में आने की सम्भावना भी नहीं क्योंकि आर्य समाज राजनीति में भाग नहीं लेता। ऐसी स्थिति में क्या करना चाहिये, यह विचारणीय प्रश्न है। पिछले कई वर्षों से मैं इस प्रश्न पर विचार कर रहा हूँ। आर्य समाज के माने हुए नेताओं से इस विषय पर चर्चा भी कर चुका हूँ। इस सम्बन्ध में मेरा मत यह है कि आर्य समाज को कुछ ऐसे व्य-क्तियों के द्वारा जो आर्य समाजी भी हों तथा हिन्दू महासभाई भी जैसे डाक्टर गोकुलचन्द नारंग, कुँवर चाँदकरण शारदा—हिन्दू महासभा से बात-चीत चलानी चाहिये और उसे इस बात के लिये तैयार करना चाहिये कि एक प्रस्ताव द्वारा वह यह घोषित करदे कि हम हिन्दू नहीं आर्य हैं तथा हम वैदिक धर्म को मानते हैं। फिर हमें उनके सहयोग से धार्मिक तथा सामाजिक सुधारों की एक पंचवर्षीय योजना बनानी चाहिये। आज एक ऐसी योजना की बड़ी भारी आवश्यकता है क्योंकि शास्त्रों का अंकुश हट जाने से आज समाज विशृंखल हो रहा है। *हमारी परम्परागत मान्यताएँ नष्ट हो रही हैं,* तथा अनैतिकता की वृद्धि हो रही है। इस प्रकार हम बहुत अल्प समय में ही भारत के समस्त हिन्दुओं को आर्य बनाकर वैदिक धर्म को विश्व धर्म बना सकते हैं।

कुछ लोगों को मेरे इस सुझाव पर आपत्ति हो सकती है कि हिन्दू महासभा ऐसा प्रस्ताव क्यों पास करने लगी। इसका उत्तर यही है कि प्रयत्न करने पर यह कार्य कठिन नहीं है, क्योंकि आज आर्य शब्द तथा वैदिक धर्म से किसी भी शिक्षित हिंदू को परहेज नहीं है। दूसरे यदि आर्यसमाजी चाहें तो थोड़ा-सा प्रयत्न करके स्वयं हिन्दू महा-सभा के हाई कमाण्ड में अपना बहुमत कर सकते हैं। दूसरी आपत्ति कुछ सज्जनों को यह हो सकती है कि इस प्रकार से पौरा-णिक धर्म के मानने वाले भी आर्य कहलाने लगेंगे। इस सम्बन्ध में मेरा निवेदन यह है कि आर्य तो वे हैं ही। और केवल वे ही नहीं अफ़गानिस्तान, ईरान तथा पश्चिमी योरप के अधिकांश निवासी भी आर्य हैं। आर्य कह-लाने पर वे आर्यसमाज की ओर आकृष्ट होने लगेंगे। तब हम उन्हें धीरे-धीरे आर्यसमाज के दस

नियमो को स्वीकार कराके सच्चे अर्थों में आय बना सकते हैं। फिर अन्य देशो में निवास करने वाले आर्य नस्ल के लोग भी बिना हमारी ओर आकृष्ट हुए नही रह सकते। कुछ लोग यह आपत्ति कर सकते हैं कि राजसत्ता हस्तगत करने से कोई लाभ न होगा क्योकि आज कान्सटेनटाइन की तरह से सामूहिक धर्म परिवर्त्तन करना असम्भव है। यह ठीक है, किन्तु अशोक की तरह राज्य को सैक्यूलर रखते हुए तो धर्म-प्रचार हो ही सकता है। राजसत्ता हाथ में आने से उचित उपायों द्वारा प्रचार करने की अनेक सुविधाएं अनायास प्राप्त हो सकती हैं। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि यदि हमने हिन्दू समाजको आर्यसमाज के रूप मे परिवर्त्तित नहीं किया तो हिन्दू समाज आर्यसमाज को निगल जायेगा तथा आर्यों का पृथक अस्तित्व मिट जायेगा।

मैंने जो सुझाव रखा है वह नवीन है। अपनी मौलिकता के कारण सम्भव है कुछ व्यक्तियो को अटपटा भी प्रतीत हो। किन्तु इसमें कोइ सदेह नहीं है कि विश्व को आय बनान का इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नही है। व्यक्तिगत धर्म-परिवर्त्तन के द्वारा न कोई मत आजतक विश्व धर्म बन सका न भविष्य में बन सके। आशा है। आर्यसमाज के नेता इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार करेंगे तथा इस सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करने की कृपा करेंगे।

—

सार्वदेशिक सभा के प्रधानजी का दौरा

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मान्य प्रधान श्री राजगुरु पंडित श्री धुरेन्द्रजी शास्त्री आज कल मध्य भारत की रियासतो का दौरा कर रहे हैं। अभी तक वे ग्वालियर, शिवपुरी, गुना की यात्रा कर चुके हैं। विभिन्न आर्य-समाजो के प्रतिनिधि श्री प्रधानजी के स्वागत और उनको थलिया भेंट करने के लिये आयोजित सभाओं मे उत्साहपूर्वक भाग ले रहे हैं। अब तक लगभग १२००) की थैलियाँ उनको भेंट की जा चुकी है। ग्वालियर में श्री प्रधानजी के आगमन के उपलक्ष्य में चाय-पार्टी का आयोजन किया गया, जिसमें राज्य के प्रधान मत्री भी सम्मिलित हुए। उनकी यात्रा जो ५ तारीख से प्रारम्भ हुई, लगभग २० प्रसिद्ध स्थानो के भ्रमण के पश्चात् २० दिसम्बर को समाप्त हो गयी।

मन्त्री
सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा
दिल्ली

——

श्री अरविन्दजी का शव क्यों गाढ़ा गया ?

समाचारपत्रों के अनुसार श्री अरविन्दजी के शव को गाढ़ा गया है। इस युगमें जबकि बर्नार्डशा तथा जार्ज स्मट्स के शवो का दाह कर्म हुआ, प्राचीन वैदिक संस्कृति के प्रचारक श्री अरविन्द जी के शव का गाढ़ा जाना विचित्र जान पड़ता है। क्या उस महापुरुष ने इस विषय में कोई स्वीकार पत्र लिखा था ? क्या कोई सज्जन इस पर प्रकाश डालेंगे ?

गगाप्रसाद उपाध्याय
सार्वदेशिक आ०प्र० सभा, दिल्ली

आर्य-जगत्

—आर्यसमाज कायमगंज (फर्रुखाबाद) अपने पुराने कार्यकर्त्ता श्री लक्ष्मीनारायणजी की भगिनी की मृत्यु पर शोक-सहानुभूति प्रकट करता है।

—६ दिसम्बर को आ० स० कुसुमुरा (मैनपुरी) के सदस्य म० राजारामजी गुप्त के पुत्र का नामकरण संस्कार हुआ। ५) दान दिये।

—आ० स० सिंगापुर में दिवाली के दिन ऋषि-निर्वाण-उत्सव समारोहपूर्वक मनाया गया। सभापति का आसन श्री रामनाथ काश्यप ने ग्रहण किया। सर्वश्री हरिहर शर्म्मा, डा० छोटासिंह, पी० वी० चारी, एम० ए०, बार-एटला, डो० एन० आनन्द एम० ए० (इण्डिया आफिसर) के हिन्दी और अंग्रेजी मे प्रभावशाली भाषण हुए।

—आर्यछात्र-परिषद् ताहरपुर भबीसा (मुजफ्फरनगर) ने २३ दिसम्बर को श्रद्धानन्द-दिवस मनाया। स्थानीय आर्यसमाज द्वारा २८ छात्रों के यज्ञोपवीत हुए,

—प० धर्मवीरजी झंडाधारी के उद्योग से बलिया जिले के निम्नलिखित स्थानों में आर्य समाजों की स्थापना हुई—करीमपुर, भरथांव, बड़ा गांव, ऐलख, सिपाह।

—आ० स० अहमदनगर में २३ दिसम्बर को श्रद्धानन्द-दिवस मनाया गया प्रोफेसर कोपरकरजी और डा० मंगलसिंहजी के भाषण हुए। तीन ईसाई लड़कियों की शुद्धि हुई।

—१८ नवम्बर १९५० को कटरा प्रयाग आ० स० को स्वर्ण जयन्ती पर श्री प्रभुदयाल आर्य ने संन्यास ग्रहण किया। नाम धर्म्मानन्द रखा गया।

—आ० स० गोरखपुर श्रीब्रजनन्दन वानप्रस्थी (विहार) के देहावसान पर शोक-सहानुभूति प्रकट करता है।

—आर्यसमाज अकबरपुर ने श्रद्धानन्द-दिवस बड़े समारोहपूर्वक मनाया। प्रो० जनमेजय विद्यालंकार और पं० श्रीनिवासजी के भाषण तथा प्रभावशाली भजन हुए।

—शोक है कि गत २० दिसम्बर को आ० स० जरवल (बहराइच) के संस्थापक श्री रामेश्वरप्रसादजी आयुर्वेदालंकार का विसवां में देहान्त हो गया। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति तथा दुःखी परिवार को धैर्य प्रदान करे।

—शोक है कि शाहपुर (शाहजहाँपुर) निवासी ठा० साधुसिंहजी पूर्व एम० एल० ए० का २४ दिसम्बर को देहान्त हो गया आप बड़े कर्मण्य थे।

—पं० धर्मवीर ने आ० स० नगरा (बलिया) में प्रचार किया। धार्मिक शिक्षा में उत्तीर्ण होने वाले बालकों को पुस्तकें उपहार में दीं।

—२५ दिसम्बर को आर्यसमाज गाजियाबाद ने करीम नामक मुसलमान को वैदिकधर्म में प्रविष्ट किया। उसका नाम कर्मवीर रखा।

निर्वाचन

—आ० कु० सभा नानपारा—प्रधान - म० मनोहरलालजी और मन्त्री—म० राजेन्द्रप्रसादजी आर्यवीर।

—आर्यकुमार सभा शेरकोट—प्रधान—श्री बलवन्तार्य सिद्धान्त भास्कर और मन्त्री—श्री किशोरी लालजी सिद्धान्त-रत्न।

—देहली प्रान्तीय आर्यकुमार परिषद्—प्रधान—श्री देवव्रतजी धर्मेन्दु और प्रधान मंत्री - श्री देवदयालुजी आर्य्य।

—आ स० राज नगर (छतरपुर) प्रधान—श्री रामप्रसाद यादव और मन्त्री—श्री जगन्नाथजी।

—आ० स० सिंगापुर प्रधान—श्री रामनाथ कश्यप और प्रधान मंत्री—श्री कामतारायजी

—आ० स० गंजडुंडवारा (एटा) प्रधान—श्री अचलबहादुरजी आर्य और मन्त्री— श्री बाबूरामजी आर्य

—आ० स० करीमपुर (बलिया) प्रधान—पं० इन्द्रासन शर्म्मा और मंत्री—श्री शिवप्रसादसिंहजी।

—आ० स० भरथांव (बलिया) प्रधान—पं० सम्पति पाठक और मंत्री—पं० विश्वनाथ पाठक

—आ० स० बड़ा गांव (बलिया) प्रधान—श्री नर्मदालालजी और मन्त्री श्री रामधारीरामजी

—आ० स० ऐलख (बलिया) प्रधान प० मारकण्डेय मिश्र और मन्त्री—श्री रामकुंवरसिंहजी

—आ० स० सिपाह (बलिया) प्रधान सेठ किशनलालजी और मन्त्री—श्री स्वामीनाथजी

—आ० स० बेला (इटावा)-प्रधान सेठ भगवानदीनजी और मन्त्री—सेठ रामस्वरूपजी गुप्त

—आ० स० बाल्टर गंज (बस्ती) प्रधान—श्री व्रजराज वर्म्मा और मन्त्री श्री रंगबहादुरचन्द्रजी

—आर्यसमाज सिकन्दरपुर (गाजीपुर)—प्रधान श्री जयकृष्ण रामजी और मन्त्री - श्री अकलू रामजी।

सार सूचनाएँ

—आर्यसमाज नागल (बिजनौर) द्वारा संस्थापित गांधी ग्रामोद्योग विद्यालय नागल में सब प्रकार की बुनाई और रंगाई की शिक्षा अनुभवी तथा योग्य कलाकारों द्वारा निःशुल्क दी जाती है। धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक शिक्षा भी दी जाती है। नियमावली मँगा कर देखिये।

—व्यवस्थापक

—उत्तरप्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रचारक श्री ठा० श्रीपाल सिंहजी फतेहपुर जिले में प्रचार कर रहे हैं, जो सज्जन या समाज उन्हें बुलाना चाहें वे निम्न पते पर पत्र व्यवहार करें। सभा से सम्बद्ध जिले की सभाओं में तो वे स्वयं ही जायेंगे। -उपमन्त्री, आर्यसमाज, खागा (फतेहपुर)

—ग्राम ताईजोत पचीसा (बस्ती) में एक पुराने कुएं के खोद जाने पर कुछ सांचे मिले हैं; जो पुराने सिक्के ढालने के प्रतीत होते हैं। अनुमान से यह एक सहस्र वर्ष पुराना कुआ है।

—मंगलदास बाबा जिज्ञासु

—जैसा कि २१ दिसम्बर के 'मित्र' में छपा है, सहतवार नहीं डुमरिया आर्यसमाज का जीर्णोद्धार और निर्वाचन हुआ है। सहतवार की दयानन्द वैदिक प्रौढ़ पाठशाला का जीर्णोद्धार हुआ।

—१० दिसम्बर को आ० स० मन्दिर बस्ती में जिला आर्य उपप्रतिनिधि सभा की स्थापना हुई। श्री हरिहरप्रसादजी प्रधान और श्री सूबेदारजी मंत्री चुने गये।

—पंजाब आर्यप्रतिनिधि सभा ने मायापुर (हरिद्वार) में स्थानीय बालकों की शिक्षा के लिये आर्य-हायर सेकेंडरी स्कूल की स्थापना की है। यह संस्था आर्थिक सहायता की अधिकारिणी है।

—प्रबन्धक

उत्सव-सूचनाएं

निम्नलिखित आर्यसमाजों के वार्षिकोत्सव निम्नलिखित तारीखों में मनाए जायंगे।

गोंडा—६ से १२ फरवरी। मेस्टन रोड कानपुर—३ से ६ मार्च बस्ती २० से २३ अप्रैल। बहादराबाद (सहारनपुर) ६ से १२ फरवरी। नगरा (बलिया) २२ से २४ जनवरी, २४ जनवरी को जिला आर्यसम्मेलन। दुबारी २८ से ३० जनवरी। गजियापुर (आजमगढ़) ३१ जनवरी तथा १ फरवरी।

स्व० सरदार पटेल
आर्यजगत् की श्रद्धाञ्जलियां

निम्न लिखित स्थानों के आर्यसमाजों में भारत की महान् विभूति श्री सरदार पटेल के देहान्त पर शोक-सहानुभूति प्रकट कर उनके प्रति श्रद्धाञ्जलियां अर्पित की गयीं:—कायमगंज, नजीबाबाद, बलरामपुर अवध, इगलास, रानी की सराय (आजमगढ़), मंगलौर टाउन, पीलीभीत, बड़ौत, आ० स० पूरनपुर, शङ्करगढ़ (प्रयाग), अलीगढ़ नगर के समस्त आर्यसमाज, बस्ती, नोनापुर (कानपुर), फर्रुखाबाद, दातागंज, खातौली, फीरोजपुर छावनी, भोइवाड़ा (बम्बई), खड्डपुर (फर्रुखाबाद), गाजीपुर, गोवन्दनगर, कानपुर, रांची, बीसलपुर, मुरादाबाद, फीरोजाबाद, नयी मण्डी मुजफ्फरनगर, निरपुरा (मेरठ), ज्वालापुर, बांसी, कालेवाला माधोवाला, खडवा, सुभाष नगर बरेली, धरमपेठ नागपुर, सम्भल (मुरादाबाद), पिपराइच गोरखपुर), हलद्वानी, बारीकपुर, शाहजहाँपुर, कटरा प्रयाग, आजमगढ़, गया, गोरख-

पुर, याकूतगंज (फतेहगढ़), गोंडा, पहासू, रंजीतपुरवा (उन्नाव)।

डी० ए० वी० हायर सेकेण्डरी स्कूल आगरा, आर्यकुमार सभा सरायतरीन, आर्य स्त्रीसमाज मुरादाबाद, आर्य स्त्रीसमाज मेरठ शहर, आर्यकुमारी सभा तथा आर्यपुत्री पाठशाला सुभाष नगर बरेली जंक्शन, आर्यकुमार सभा आजमगढ़, दयानन्द महाविद्यालय गुरुकुल डौरली (मेरठ), आर्य-जिला सभा मैनपुरी, आ० कु० सभा शेरकोट, गुरुकुल कांगड़ी।

——

योगिराज श्री अरविन्द

नीचे लिखे स्थानो के आर्य-समाज योगिराज श्री अरविन्द के देहान्त पर दुःख प्रकट करते हैं। कायमगंज (फरुखाबाद), नजीबाबाद (बिजनौर), निश्शुल्क गुरुकुल महाविद्यालय, आ० स० हलद्वानी, आ० स० कटरा प्रयाग, आ० स० गोरखपुर।

——

राजगुरुजी की यात्रा

राजगुरु श्री धुरेन्द्र शास्त्री प्रधान सार्वदेशिक सभा आजकल मध्यप्रदेश का तूफानी दौरा कर रहे है। प्रोग्राम के अनुसार राजगुरुजी ६ दिसम्बर को शिवपुरी पहुंचे। आपका धूमधाम से स्वागत हुआ कार में बैठाकर बैण्ड बाजे के साथ नगर में जलूस निकाला गया। मार्ग में स्थान-स्थान पर शास्त्रीजी का जनता ने स्वागत किया। उसी दिन संध्या समय स्थानीय विद्यालय में नैतिकता उत्थान पर आपका विद्वत्तापूर्ण भाषण हुआ। फिर समाज-मन्दिर में 'वैदिकधर्म' पर भाषण हुआ जनता पर्याप्त सख्या में उपस्थित थी। अन्त में समाज के प्रधान ला० लाजपतराजी ने २०१) की थैली, वेदप्रचारार्थ श्री शास्त्रीजी को भेंट की। दूसरे दिन शास्त्रीजी ने गुना के लिये प्रस्थान किया।

मन्त्री आ० स०

——

सभा का बृहदधिवेशन

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का साधारण अधिवेशन (बृहदधिवेशन) आर्यसमाज गणेशगंज लखनऊ का निमन्त्रण-पत्र स्वीकार करते हुए २५ व २६ मार्च १६५१ को लखनऊ में करना निश्चित किया गया है और २४ मार्च ५१ को सभा की अतरंग रखी गई है।

पीतमलाल सभा-मंत्री

——

शोक सभा

महामान्य सरदार पटेल के शोक में लखनऊ में उत्तरप्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का कार्यालय आर्यमित्र प्रकाशन लिमिटेड का कार्यालय, भगवानदीन आर्यभास्कर प्रेस १५ दिसम्बर को बन्द रहे। समस्त कर्मचारियों ने एक सभा द्वारा हार्दिक शोक प्रकट किया। आर्यसमाज लखनऊ की समस्त संस्थाएँ दो दिन तक बन्द रहीं। शोक-प्रस्ताव पास किये गये।

संवाददाता

——

आ० स० कटरा प्रयाग

उक्त आर्यसमाज का स्वर्ण-जयन्ती महोत्सव १२ से १८ नवम्बर तक बड़ी सफलता से सम्पन्न हुआ। १२ नवम्बर को चल समारोह का वहां की जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ा। हरिजन-उद्धार, जाति-पांति-निवारण, शुद्ध, आर्य संस्कृति-प्रचार, शिक्षा-पद्धति-सुधार, ग्रामों में वैदिक धर्म प्रचार व वैदिक छात्रावास-निर्माण आदि संबंधी प्रस्ताव पास हुए। प्रयाग विश्व-विद्यालय के छात्र-छात्राओं में आर्यसंस्कृति तथा वैदिक धर्म प्रचार के लिए एक विस्तृत योजना बनायी जा रही है।

——

संस्था-निरीक्षण

श्री देवीप्रसाद जौहरी अधिष्ठाता शिक्षा विभाग तथा उपमंत्री आर्यप्रतिनिधि सभा यू० पी० ने २१ तथा २२ नवम्बर १६५० को फीरोजाबाद के डी० ए० वी० हायर सेकण्डरी स्कूल आर्य-कन्या पाठशाला और आर्यसमाज का निरीक्षण किया तथा भाषण दिये। २३ नवम्बर को इटावा के कन्या इण्टर कालिज तथा वहां के आर्यसमाज का निरीक्षण किया और व्याख्यान दिये। २६ नवम्बर को रामपुर (एटा) के रामभरोसे आर्यविद्यालय तथा आर्यसमाज का निरीक्षण किया, २८ नवम्बर को गुरुकुल गंगाघाट कानपुर के सबंध में अन्वेषण किया, २६ नवम्बर को आर्य-समाज ग्वाल टोली कानपुर का का निरीक्षण किया। उपयुक्त सुझाव दिये।

मैंने १६-१२-५० को आर्य-समाज फतहाबाद जिला आगरा का निरीक्षण किया। समाज का कार्य बड़े सुचारु रूप से हो रहा है। सभा के रजिस्टर सब प्रकार पूर्ण हैं। कार्यकर्ता बड़े उत्साही और धर्म-प्रेमी हैं।

२५-१२-५० को आगरा छावनी (नामनेर) समाज का निरीक्षण किया। सभा के सत्संग नियमित रूप से होते हैं। कागजात सब ठीक रक्खे जाते हैं।

मोहनलाल आर्य

——

आर्य शिक्षण संस्थाओं का नामकरण

बालकों की शिक्षण-संस्थाओं का नाम डी० ए० वी० कालेज, डी० ए० वी० हायर सेकण्डरी स्कूल, व आर्य जूनियर हाई स्कूल हैं। इन नामों में महर्षि दयानन्द का नाम केवल अक्षर 'डी०' से प्रकट किया गया है जो आर्य-जगत् के लिये शोभा नहीं देता। इसी लिये 'ए०' ऐंग्लो शब्द के लिये प्रयोग करना अनुपयोगी है, क्योंकि अब हमारा देश स्वतंत्र है। बालिकाओं की शिक्षण संस्थाओं के नाम में अन्य प्रकार की अशुद्धियां हैं। उनको बहुधा 'आर्यकन्या पाठशाला इण्टर कालेज' अथवा 'आर्यकन्या पाठ-शाला हायर सेकण्डरी' स्कूल के नाम से पुकारा जाता है। प्रांतीय आ० प्रतिनिधि सभा की अन्तरङ्ग सभा ने विचार करने के पश्चात् निश्चय किया है कि इन समस्त आर्यशिक्षण संस्थाओं का नाम-करण निम्न प्रकार से हुआ करे।

अष्टम श्रेणी तक अर्थात् जूनियर हाई स्कूल के स्थान में 'पाठशाला'।

दशम श्रेणी तक अर्थात् हायर सेकण्डरी स्कूल के स्थान में 'विद्यालय'। द्वादश श्रेणी तक अर्थात् इण्टरमीजियट कालेज के स्थान में 'उच्च विद्यालय'।

द्वादश श्रेणी के ऊपर एम० ए० वाले डिग्री कालेज के स्थान में 'महाविद्यालय'।

डी० के स्थान में 'दयानन्द' पूर्ण नाम लिखा जावे और 'ए०' का अक्षर अथवा 'एंग्लो' शब्द नितांत ही निकाल दिया जावे अर्थात् उसका प्रयोग बंद किया जावे।

—कन्याओं के शिक्षणालयों के नाम के पूर्व 'आर्य कन्या' शब्दों का प्रयोग तो उचित ही है और वह अवश्य रहे।

—आशा है आर्य शिक्षणालयों के संचालक गण अथवा अन्य आर्य बन्धु ऊपर लिखित निश्चय के अनुसार अपनी अपनी संस्थाओं के नामों में आवश्यक संशोधन अथवा परिवर्तन कर लेंगे।

देवीप्रसाद जौहरी
अधिष्ठाता शिक्षा विभाग
आ० प्र० सभा यू० पी०

——

—आर्यमित्र के ग्राहक महानुभाव पत्र-व्यवहार करते समय ग्राहक नम्बर अवश्य लिखा करें।

—व्यवस्थापक

अदालती समन

ओमप्रकाश आदि बनाम सुमित्रादेवी मौजा अखईपुर तह० हाथरस जिला अलीगढ़।

मुकदमा नं० ३६ सन् ५० ई०

वादी—ओमप्रकाश, सत्य-प्रकाश, प्रेमप्रकाश नाबालिग पुत्र श्यामलाल व वली मुसम्मात महारानी माता खुद आर्य साकिन ग्राम मदापुर तहसील सिकन्दरा-राऊ जिला अलीगढ़।

प्रतिवादी—मुसम्मात सुमित्रा-देवी बेवा कुंवरपालसिंह आर्य साकिन अखईपुर तहसील हाथ-रस जिला अलीगढ़।

वादी ने तुम्हारे विरुद्ध पर-गनाधीश द्वारा पचायती अदालत फरौली तहसील हाथरस जिला अलीगढ़ में एक दावा तुम्हारे नाम किया है कि तुमने अपनी पुनः शादी ठाकुर रामलालसिंह आर्य गौव साकिन अरनिया तह० खुर्जा, जिला बुलन्दशहर के साथ करली है।

तुम ता० १४-१-५१ को पचा-यती अदालत फरौली में आकर यह साबित करो कि तुम्हारा नाम खतौनी से खारिज क्यों न किया जावे।

ह० छिद्दूसिंह अ० सरपच
पंचायती अदालत फरौली,
तहसील हाथरस जिला अलीगढ़
ता० २४-११-५०

——

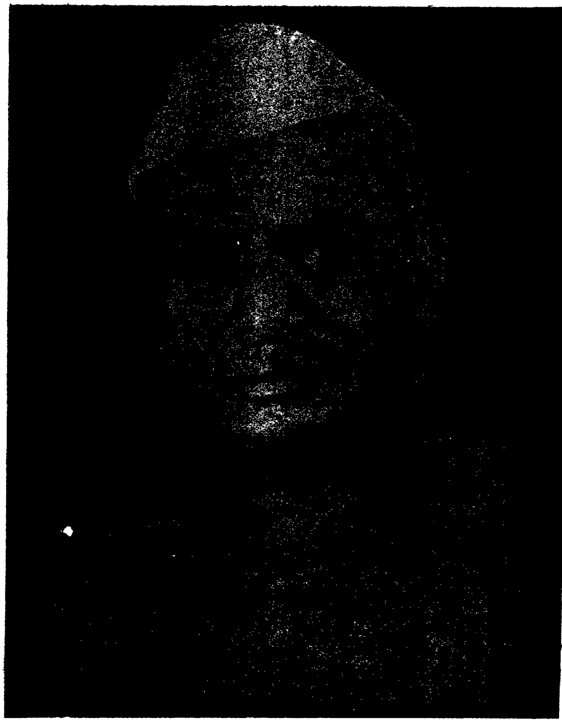
मुद्रक और प्रकाशक—यज्ञदत्त शर्मा, निराला प्रेस, आगरा।

ओ३म्

आर्य्य-मित्र

• ARYA-MITRA, AGRA •

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक—आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ
२५ जनवरी १९५१



हे प्रभो, महामति राष्ट्रपति, सुख-सम्पन्न शतायु हों,
राजेन्द्र लोक-कल्याण-हित, जुग-जुग जियें, चिरायु हों।

जीवन-ज्योति

स्वर्गीय ठक्कर बापा

श्री ठक्कर बापा का जन्म १८६९ ई० में भावनगर में हुआ था। आपका पूरा नाम श्री अमृतलाल विट्ठलदास ठक्कर था। आपके पिता श्री विट्ठलदासलालजी पक्के वैष्णव थे। ठक्कर बापा अपने छह भाइयों में दूसरे थे। मैट्रिक पास करके आपने पूना के इंजीनियरिंग कालेज में शिक्षा पाई और पढ़ाई समाप्त करके रेलवे में ओवरसियर का काम करना शुरू कर दिया। वे अपना काम बड़ी ईमानदारी से करते थे ईमानदारी तो उनका विशेष गुण था। फलतः शीघ्र ही वे ओवरसियर से असिस्टेण्ट इंजीनियर हो गए। कुछ दिनों बाद अपने अधिकारियों से मतभेद होने के कारण आपने सरकारी नौकरी से इस्तीफा दे दिया। इसके पश्चात् पोरबन्दर राज में चीफ इंजीनियर हुए। फिर अफरीका में युगाण्डा रेलवे के इंजीनियर होकर गये। वहां तीन वर्ष काम करके स्वदेश लौट आए। इन दिनों ठक्कर बापा को अनेक पारिवारिक संकट सहने पड़े। आपने अपनी पहली पत्नी का देहान्त हो जाने पर दूसरा विवाह किया परन्तु यह पत्नी भी चल बसी। माता और पिता की भी मृत्यु हो गई।

ठक्कर बापा जब गुजरात काठियावाड़ की बम्बई नाइट रेलवे का निरीक्षण कर रहे थे तब उन्होंने उन नगरों के महतरों और भंगियों की दरिद्रता देखकर बड़ा दुख हुआ और उस समय आपने पीड़ित प्राणियों की सेवा करने की प्रतिज्ञा की। स्वर्गीय गोखले ने बापा की अशेष सेवा भावना के कारण ही लोक-सेवक संघ में सम्मिलित कर लिया। संघ में सम्मिलित होकर बापा ने अपना सारा जीवन दीन दुखियों और पीड़ितों की सेवा में लगाया। पंचमहाल के भीलों का सुधार किया। हरिजन भाइयों की सेवा की और उनके लिए सहकारी संघ की स्थापना कराई। देश में जहाँ जहाँ दुर्भिक्ष पड़ा या कोई संकट आया वहाँ-वहाँ आप सेवा-सहायतार्थ पहुंचे। खादी कार्य तथा भीलों व हरिजनों की सेवा के लिए आपने जो कुछ किया वह कभी भुलाया नहीं जा सकता। बापा रियासती प्रजाजनों की सुख सुविधा के लिये बड़े प्रयत्नशील रहे। साम्प्रदायिक निर्णय के विरुद्ध जब महात्मा गांधी ने अपने जीवन की बाजी लगा दी थी तब ठक्कर बापा ने पूना पैक्ट के लिये प्रशंसनीय प्रयत्न किया। हरिजनोद्धार के लिए आपने १७८ जिला केन्द्र स्थापित किये। हरिजन सेवक संघ के प्रधान मंत्री आप ही थे। १९४५ ई० में आप महादेव देसाई कोष के भी मंत्री चुने गये। मार्च १९४७ ई० तक नोआखाली में बापा महात्मा गांधी के साथ रहे। १९४८ में आप संविधान सभा के सदस्य बनाए गए। इस प्रकार १९१४ से १९५० ई० तक ३६ वर्ष लगातार आपने जन-सेवा व्रत निबाहा। गत वर्ष राष्ट्र की ओर से आपको एक स्मृति ग्रन्थ समर्पित किया गया था। शोक है कि मानवता का इतना बड़ा सेवक और दीन-दरिद्रों तथा पीड़ितों का महान् मित्र गत १९ जनवरी को ८२ वर्ष की आयु में भावनगर में चल बसा। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शांति प्रदान करे।

—

'आर्यमित्र' के पचास ग्राहक

आगामी दो महीनों में मैंने 'आर्य मित्र' के पचास नये ग्राहक बनाने का निश्चय किया है। आर्य मित्र प्रकाशन लिमिटेड के हिस्से बेचने के लिये भी मैं पूरा प्रयत्न करूंगा। देश की प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं को भी 'आर्य मित्र' को दैनिक बनाने में पूरा सहयोग देना चाहिये। कम से कम एक आर्य पत्र तो दैनिक हो जाय। इससे सारे देश के आर्यसमाजों की सेवा हो सकेगी।

मोहनलाल आर्य
प्रधान नगर आर्यसमाज आगरा

आर्य-महा सम्मेलन मेरठ में होगा

अस्थायी समिति बन गयी

आर्य जनता सहयोग-दान दे

गत ११ जनवरी के 'आर्य मित्र' में आर्य महासम्मेलन के सम्बन्ध में सम्पादकीय लेख पढ़ा। सम्पादकजी ने मेरठ के आर्य कार्यकर्ताओं से मेरठ में महा सम्मेलन बुलाने की अपील की है। आर्य जनता को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि मेरठ नगर के आर्य भाइयों ने सार्वदेशिक महा सम्मेलन को अपने यहां निमन्त्रित करना निश्चित कर लिया है और वे सम्मेलन का समस्त कार्यभार अपने ऊपर लेने को तैयार हो गये हैं। मेरठ वालों ने अपनी इस सहमति और स्वीकृति का प्रार्थनात्मक पत्र भी सार्वदेशिक सभा को भेज दिया है।

महा सम्मेलन का कार्य आरम्भ करने के लिये इक्कीस सदस्यों की अस्थायी कार्य समिति भी बनादी गई है। इस समिति को अधिकार दिया गया है कि वह अपने में दस सज्जनों को और सम्मिलित करले। अब तक नगर के प्रमुख आर्य भाई बहनों की दो बैठकें हो चुकी हैं और कार्य प्रारम्भ कर दिया गया है।

स्वागत-समिति की सदस्यता का शुल्क दस रुपया रक्खा गया है। विद्यार्थियों तथा आर्य कुमार सभाओं के सदस्यों से पांच रुपया ही लिया जायगा। ढाई सौ रुपये या अधिक देने वाले महानुभाव 'दानी सदस्य' समझे जायगे।

यह सार्वदेशिक महा सम्मेलन उत्तर प्रदेश में हो रहा है, अतः इस प्रान्त के प्रत्येक आर्य पर उसकी सफलता का उत्तरदायित्व है। आशा है, प्रान्तीय आर्य-समष्टि इस शुभ कार्य में मेरठ के भाई बहिनों को पूर्ण सहयोग और सहायता प्रदान करेगी।

इसमें सन्देह नहीं कि आज कल देश पर कई प्रकार के संकट हैं। इन संकटों से त्राण पाने के विचार से ही यह सम्मेलन किया जा रहा है। इस आर्य महा सम्मेलन में यही सोचा जायगा कि आर्यसमाज विश्व और विशेषकर भारत में सुख समृद्धि तथा शान्ति स्थापित करने के लिए किस प्रकार उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

आर्यसमाज की ओर ही सब की दृष्टि लगी हुई है, अतएव उसका उत्तरदायित्व उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। मैं चाहता हूँ कि आर्य विचारक गण अभी से सम्मेलन की क्रियात्मक योजनाएं प्रस्तुत करनी प्रारम्भ करदें। योजनाएं ऐसी हों जो कार्य रूप में परिणत हो कर सफल हो सकें। योजना और कार्यक्रम पर पहले ही से ऊहा पोह होजाना श्रेयस्कर है, जिससे महा सम्मेलन के समय सरलता हो।

कालीचरण आर्य
संयोजक,—अस्थायी कार्य-समिति
आर्य-महासम्मेलन
मेरठ।

—

श्री राजगुरुजी का प्रोग्राम

जनवरी—२५ २६ लश्कर ग्वालियर। २७ २८ पहासू। ३१ जनवरी या १ फरवरी सभा भवन लखनऊ। फरवरी—२ ३ बहराइच ४ गोरखपुर। ५—सिसवा बाजार। ६—घुघली। ७—कप्तानगंज और ८—पिपराइच। सभा मन्त्री

—

पाँच पाँच ग्राहक बनाइये

मैं आर्यमित्र का बहुत पुराना ग्राहक हूँ। मेरी प्रार्थना है कि 'मित्र' का प्रत्येक प्रेमी और ग्राहक पांच पांच ग्राहक अवश्य बनावे। मैं बना रहा हूँ

लेखराम गुप्त दातागंज, (बदायूं)

—

आगरा कालिज की शतोत्तरीय जयन्ती

आगरा-कालिज आगरा के १२५ वर्ष समाप्त होने पर शतोत्तरीय जयन्ती २६ से २९ जनवरी तक बड़े समारोह पूर्वक मनाई जा रही है। देश के प्रसिद्ध विद्वान और नेता इस महोत्सव में भाग लेने के लिए पधार रहे हैं। २९ जनवरी को माननीय राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रप्रसादजी पधारेंगे और उस समय आपको कालिज की ओर से अभिनन्दन-पत्र भेंट किये जायेंगे। शतोत्तरीय महोत्सव का प्रोग्राम बड़ा प्रभावशाली और आकर्षक रखा गया है।

'तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु'

आर्य ॐ मित्र

आगरा, माघ कृष्ण २ संवत् २००७ वि०, गुरुवार ता० २५ जनवरी
दयानन्दाब्द १२६ सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५०

'धर्म' और 'राजनीति'

धर्म के विना राजनीति लगड़ी है, जब-जब राजनीति-रमणी ने धर्म-धनी से सम्बन्ध-विच्छेद किया तभी तब वह अशान्ति और अनर्थ की जननी बन गयी। पूर्व कालीन इतिहास पढ़ जाइये, हमारी बात की पुष्टि हुए विना न रहेगी। आधुनिक युग तो उपर्युक्त कथन का प्रत्यक्ष प्रमाण है। आज संसार जितना धर्म से दूर होता जाता है, उतना ही अशान्तिपूर्ण प्रपचों के मायाजाल में फँसता जाता है। शान्ति के पुण्य-पादप की जड़ तो काट डाली गयी, परन्तु उसे हरा-भरा बनाये रखने को पत्तों पर पानी की पिचकारियाँ छोड़ी जा रही है। कैसा प्रबल पाखण्ड और कितनी बड़ी विडम्बना है!

लोग कहते हैं, धर्म ने नाश किया, हम कहते हैं, राजनीति ने हत्याए कराईं, बड़े-बड़े युद्ध छेड़े और समुदाय-समुदाय में वैमनस्य तथा फूट के बीज बोये। कोई बतावे तो सही, जिस धर्म का अर्थ है, न्याय, सत्य, अहिंसा, दया, क्षमा, सदाचार, नैतिकता, निःस्वार्थता, सौजन्य और शान्ति वह संसार का कैसे नाश कर सकता है! उसके द्वारा विद्रोह की अग्नि किस प्रकार भड़क सकती है। धर्म का अस्तित्व प्राणि-रक्षा, मानव-मंगल, विश्व-कल्याण और सार्वत्रिक शान्ति के लिये है। फिर उसे अनिष्ट का कारण क्यों बताया जाता है।

महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी दोनों ही धर्महीन राजनीति के विरोधी थे। वे कहते थे कि राजनीति से धर्म अलग हुआ तो वह घोर अकल्याणकारिणी और अनर्थमयी बन जायगी। स्वतन्त्रता देवी उच्छृंखलता और उद्दण्डता का रूप धारण कर लेगी। महापुरुषों की वाणी व्यर्थ नहीं जाती, जो स्वतन्त्रता धर्म के मुख्य अंग सत्य और अहिंसा द्वारा प्राप्त हुई थी, वही आज सत्य और अहिंसा के विना बड़ी ही विषैली और विघातक दिखाई दे रही है। छल-प्रपंच भ्रष्टाचार, चोरी जारी, ठगई आदि कुकर्मों का बोलबाला है, बाजार गर्म है। कहा जाता है, ये दोष तो पहले भी थे, हम कहते हैं, अब जब ये दोष घटने चाहिए थे उल्टे बढ़ गये हैं। रामराज्य-क्यों नहीं हुआ? इसलिये कि राजनीति ने धर्म का साथ छोड़ दिया! अन्य देशों की राजनीति तो पहले ही धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं रखती थी। महात्मा गांधी कहते हैं—

'जो कहता है कि धर्म का राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं है, वह न तो धर्म को समझता है, न राजनीति को।"

अपनी उच्छृंखलतापूर्ण अन्धाधुन्ध धुन में राजनीति से धर्म को धक्का देने वाले धींग-धसोड़ राजनैतिक नेता महात्माजी के उक्त शब्दों को जरा आँखें खोलकर ध्यान से पढ़ें और सुनें, आगे और देखिये, महात्मा गांधी एक स्थान पर फिर कहते हैं—

'मेरा यह विश्वास है कि जब तक हम लोग धार्मिक भावना से राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश नहीं करते, तब तक भारत का सच्चा और वास्तविक अभ्युदय नहीं हो सकता'।

धर्म-विरोधी राजनीतिज्ञ नेता तनक सोचें और विचारें कि भारत के त्राता-विधाता विश्ववन्द्य महात्मा गांधी धर्म के लिये कैसी अटल आस्था रखते थे। जनता गान्धीजी की बात माने या धर्म-विरोधी राजनैतिक नेताओं की जिन्हें धर्म का नाम सुन कर ही कँपकँपी आजाती है।

धर्म को संकीर्ण सम्प्रदाय का पर्याय या स्थानापन्न समझना मोहनभोग को गोबर का पिण्ड कहकर पुकारना है। जो धर्म और सम्प्रदाय में अन्तर नहीं समझते उन्हें अवश्य ही अपनी बुद्धि की चिकित्सा करानी पड़ेगी। धर्म्म वह है, जो सारे संसार की मानवता को ऊँचा उठाकर शान्ति-सुख की विपुल और विमल वर्षा करता है। दो और दो चार की तरह धर्म-सिद्धान्त निर्विवाद है। आर्यसमाज का कर्त्तव्य है कि वह निर्विवाद वैदिक धर्म के प्रचार पर अपनी सारी शक्तियाँ केन्द्रित कर दे। मुक्ति और पुनरावृत्ति पर विचार करना बड़ा आवश्यक है, परन्तु पहले सामयिक समस्याओं पर विचार होना चाहिए। धर्मविहीन राजनीति के कुचक्र पाश में पड़ कर मानवता बुरी तरह छटपटा रही है, पहले उसका उद्धार करना परम आवश्यक है। इस उद्धार के लिये आर्यसमाज को पूर्ववत् त्यागी तपस्वी और क्रान्तिकारी बनना पड़ेगा। क्रान्ति का अर्थ है, भ्रम-भ्रान्ति और भ्रष्टाचार का समूलोन्मूलन।

ठक्कर बापा का देहान्त!

अत्यन्त दुःख से लिखना पड़ता है कि प्रसिद्ध देश-सेवक श्री अमृतलाल विट्ठलदास ठक्कर का १९ जनवरी की रात्रि को ८२ वर्ष की आयु में, भावनगर में, देहान्त होगया। आपको बहुधा लोग प्यार से 'ठक्कर बापा' कहा करते थे और इसी नाम से आप प्रसिद्ध भी थे। आप इंजीनियर थे। अफरीका भी गये थे। वहाँ आपने एक घटना से प्रेरित होकर यह प्रतिज्ञा की थी कि भविष्य में अपना सारा जीवन पीड़ित मानवों की सेवा में लगाएंगे, और फिर जीवन-भर आपने यही काम किया। सबसे पहले आपने भीलों के सुधार के लिये अपनी सारी शक्तियों का प्रयोग किया। कितनी ही बार दुर्भिक्ष पीड़ितों की सेवा-सहायता की। हरिजनों के लिये आपने जो महान् कार्य किया वह तो इतिहास के पृष्ठों पर स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा। इसके लिये बापा ने सारे देश का भ्रमण कर १७८ जिला-केन्द्रों का संघटन किया। आप हरिजन-सेवक-संघ के प्रधान मंत्री थे। आदिवासियों के हित में की गयीं आपकी सेवाएं सदैव स्मरणीय रहेंगी। आपको विश्व-वन्द्य बापू का पूर्ण विश्वास प्राप्त था। १९४७ ई० तक आप नोआखाली में बापू के साथ रहे। बापा की आयु पर्याप्त थी, फिर भी वे युवकों से बढ़-चढ़ कर सेवा-कार्य करते थे। ऐसे मानवता-पोषक सच्चे समाज-सेवी का उठ जाना वास्तव में दुर्भाग्य की बात है।

आर्य्य-महासम्मेलन

११ जनवरी के अंक में हमने मेरठ के आर्य भाई-बहनों से प्रार्थना की थी कि अबकी बार वे सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन को अपने यहाँ आमन्त्रित करें, और उसे सब प्रकार सफल बनावें। हमें प्रसन्नता है कि हमारी यह प्रार्थना स्वीकार कर ली गयी और आर्य-महासम्मेलन के लिए एक स्थायी प्रबन्ध-समिति का निर्माण हो गया, जिसके मन्त्री कर्मवीर श्री बा० कालीचरणजी आर्य हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि मेरठ आर्य-महासम्मेलन आर्य-जनता का उचित पथ-प्रदर्शन करता हुआ उसे ठोस कर्तव्य-पालन की ओर प्रेरित कर सकेगा। इस समय आर्यसमाज को कार्य करने की बड़ी आवश्यकता है। देश से भ्रष्टाचार दूर करने में उसे पर्याप्त सफलता प्राप्त हो सकती है। इससे जनता का अपार हित होगा और सरकार को भी पूरी सहायता मिलेगी। आर्य महासम्मेलन के लिये विजया दशमी का अवसर सर्वथा समुचित होगा, तब तक तैयारी भी काफी हो सकेगी। इस महासम्मेलन में अधिकाधिक जनता को भाग लेना चाहिये। आर्यजनता ही नहीं, जो भाई-बहन देश में शान्ति, सदाचार और नैतिकता की वृद्धि चाहते हैं, उन सब के लिये इस महा सम्मेलन में भाग लेना अनिवार्य होना चाहिये।

'गणतन्त्र'—दिवस

२६ जनवरी भारतीय स्वतन्त्रता का संस्मरणीय दिवस है। उस दिन भारतीय स्वतन्त्रता की घोषणा हुई थी, और उसी दिन गणतन्त्र की स्थापना भी की गयी थी। आज हमारा देश स्वतन्त्र है, अतएव २६ जनवरी हमारी स्वतन्त्रता का पुण्य पर्व है। स्वराज्य तो हमें प्राप्त हो गया है, परन्तु सुराज्य प्राप्त करना अभी शेष है। —सुराज्य उस दिन प्राप्त हुआ समझा जायगा जब देश में भ्रष्टाचार और अनाचार का अन्त हो जायगा। शासक-सत्ता और जनता दोनों का लक्ष्य सत्य, नैतिकता और लोक-कल्याण की भावना होगा। सुराज्य के होने से ही स्वराज्य की शोभा है। या यों कह सकते हैं कि सुराज्य ही स्वराज्य को सफल और स्थायी बना सकता है। परमात्मा हमें और हमारे गणतन्त्र को बल प्रदान करे जिससे हम स्वराज्य के साथ सुराज्य स्थापित करने में भी समर्थ और सफल हो सकें।

चमत्कार का चीत्कार !

एशिया के विभिन्न स्थानों में दो बालकों के कारण निर्दोष भाव से, उत्तेजना उत्पन्न हो गई है। एक सिंगापुर में वर्थाहर्टिंग और दूसरे उड़ीसा में नैपाली बाबा द्वारा वितरित शक्तिशाली आश्चर्यजनक जड़ी-बूटी के औषध-चूर्ण से स्वास्थ्य-लाभ करने के लिए लाखों व्यक्ति उनके चारों ओर इकट्ठे हो गये हैं। प्रथम तो यह कठिनाई थी कि रेल अथवा अन्य मार्गों से यात्रा करने वालों की व्यवस्था यकायक अत्यन्त दुष्कर हो उठी, परन्तु अब हैजा से सैकड़ों व्यक्तियों के मृत्यु-ग्रस्त होने का समाचार प्राप्त हुआ है।

नेपाली बाबा द्वारा दी जाने वाली जड़ी-बूटी की जाँच के लिये सरकार ने एक समिति बनाई थी, जिसने इस औषध को निष्फल घोषित किया। प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक श्री रमण ने भी इसे साधारण जनता का पागलपन बतलाया। अब २२ दिसम्बर की घोषणा से औषधि-वितरण आदि पर सरकार को प्रतिबंध लगाना पड़ा। गवर्नमेन्ट प्रयत्न कर रही है कि वहाँ एकत्रित जन-समूह को किसी प्रकार वापिस भेजा जावे और आस-पास के क्षेत्रों में बाधित रूप में टीका लगाने की व्यवस्था द्वारा बीमारी फैलने को रोका जाय।

सभी समस्याओं में मनुष्यों का चमत्कार में विश्वास हो रहा है। धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक चमत्कारों का इतिहास बहुत प्राचीन विस्मयजनक और शिक्षाप्रद है। आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति के अत्यधिक हो जाने पर भी मनुष्य के हृदय में से चमत्कारों की भावना को नष्ट नहीं किया जा सका है! इस प्रकार के चमत्कारों का घोर विरोध करने वाले आर्यसमाज जैसी संस्थाओं के अनेक पुरुष भी चमत्कारों में विश्वास करते देखे जाते हैं, और जादू या चमत्कारों से स्वास्थ्य-लाभ करने में इस देश के अधिकतर व्यक्ति तो अब भी विश्वास करते ही हैं। यह ठीक है कि दृढ़ विश्वास स्वास्थ्य-लाभ करने में कभी-कभी अत्यन्त प्रभावजनक दृष्टिगोचर हुआ है। अनेक धर्मों में ईमान लाने की भावना भी आत्मिक स्वास्थ्य के लिये बहुत आवश्यक समझी गई है। और कहीं-कहीं तो स्वयं बीमारी ही एक प्रकार की अवास्तविक और काल्पनिक माया के समान समझी जाती है। ऐसी अवस्था में वैज्ञानिक औषधोपचार करने वालों के अतिरिक्त और सभी व्यक्तियों की धोकेबाजी की डिग्री यकायक नहीं दी जा सकती। अतः साधारण जन चालाकी और आश्चर्यजनक गुण वाली वस्तुओं में सरलता से भेद नहीं कर सकते हैं। अतः इस प्रकार की बातों पर विश्वास करने से बचना ही उत्तम मार्ग है। यदि कोई महानुभाव भेद कर सकने की अपनी योग्यता में दृढ़ विश्वास रखते भी हों तो भी उन्हें अत्यन्त सावधान रहने की आवश्यकता इसलिए है कि प्रायः यह देखा गया है कि इस तरह के कार्य कुछ प्रच्छन्न प्रपन्ची, स्वार्थी जनों के द्वारा सहज ही संचालित किये जाते हैं। एक प्रसिद्ध कहावत है कि 'विश्वास से पहाड़ हिल जाते हैं।' इसी प्रकार अत्यन्त बृहद् जन-समूह अन्ध-विश्वास द्वारा और भी अधिक सरलता से प्रभावित किया जा सकता है, जिसका प्रभाव उतना ही अधिक हानिकारक भी सिद्ध हो सकता है।

अध्यात्म धारा

बुराई-भलाई

श्री पूर्णचन्द्र, एडवोकेट

"विश्वानि देव सवितुर्दुरितानि परासुव यद्भद्रंतन्न आसुव।" इस वेद-मन्त्र में बुराइयों से बचने और भले बनने के लिए, एक अचूक मार्ग बताया गया है। यदि मनुष्य विचार करते समय और आचरण करने से पूर्व तथा दूसरों से व्यवहार करते समय यह बात ध्यान में रक्खे कि ईश्वर सर्वव्यापक, अन्तर्यामी और सर्वज्ञाता है, उससे कोई बात छिप नहीं सकती, और उसकी व्यवस्था कितनी दृढ़ है कि किये हुए कर्म का फल अवश्य मिलेगा, तो मनुष्य ऐसा कोई कर्म नहीं करेगा, जो उसको नहीं करना चाहिये और जिसके करने से उसको दुःखित होने की सम्भावना है। ईश्वर देव है, सर्वगुण युक्त है, और संसार के समस्त पदार्थों का रचयिता है। मनुष्य भोग करते समय यदि यह ध्यान कर ले कि जिस पदार्थ का वह उपभोग करने जा रहा है, उसका रचयिता ईश्वर है, तो वह उस वस्तु का दुरुपयोग करने का साहस न करेगा। समस्त बुराइयों से बचने का उपाय ईश्वर की सत्ता में विश्वास रखना है, और इसी का नाम व्यावहारिक आस्तिकता है।

भलाई क्या है, यह बात भी ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव से ही समझ में आ सकती है। ईश्वर आदर्श स्थापित करने वाला है, और दण्ड-विधान भी उसके अधीन है। सदाचार के दो मुख्य अंग और आधार—अर्थात् आदर्श और दण्ड-विधान दोनों ईश्वर की सत्ता में विश्वास रखने से पूरे होते हैं। इसलिए इस मन्त्र में ईश्वर से बुराइयों से बचने और भला बनने की प्रार्थना की गयी है। आश्चर्य तो यह है कि स्वयं तो भला बनने की चेष्टा करते हैं, परन्तु दूसरों की बुराई की शिकायत करते हैं। ये लोग यह नहीं जानते कि बुराई या भलाई है क्या चीज ? और न यह जानते हैं कि व्यावहारिक रूप में कैसे भला बना जाय। जिसे देखो प्रत्येक क्षेत्र में चाहे वह राजनैतिक है या व्यापारिक, व्यावहारिक है या अन्य, सबको यह शिकायत है कि दूसरों ने वह किया जो उन्हें नहीं करना चाहिये था; परन्तु इस बात पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है कि जो उन्होंने किया या जिसे वे करने जा रहे हैं, वह करने योग्य भी था या नहीं।

राष्ट्रपिता की याद !

यों तो राष्ट्र-पिता बापू के संस्मरणों से जननी-जन्म-भूमि का अणु-अणु गूँज रहा है, और सदैव गूँजता रहेगा, परन्तु ३० जनवरी, जिस दिन साम्प्रदायिकता के पोच प्रहार से बापू के भौतिक शरीर का अवसान हुआ, हमारे लिये एक विशेष श्राद्ध-दिवस बन गयी है। ऐसा श्राद्ध-दिवस जिस दिन हम अपने उद्धारकर्त्ता बापू के विशेष रूप से गुण-गान करें, और उनके आदेश-उपदेशों को अपने चरित्र के साँचे में ढालें। यह ३० जनवरी प्रति वर्ष आएगी और हमें एक विशेष सन्देश दे जायगी, जो राष्ट्र के जीवन में अनन्तकाल तक गूँजता रहेगा। यह सन्देश होगा सत्य और अहिंसा का सन्देश, तप तथा त्याग और बल-बलिदान का सन्देश केवल रस्म अदायगी के लिये भाषण देना या कविताएं सुनाना तो एक दिखावा मात्र है। जो न उचित ही है, और न ऐसा करना बापू को ही पसन्द था। परम प्रभु परमात्मा हमारे राष्ट्रिय जीवन में बापू की आत्मा को अनुप्राणित करे जिससे हम मन, वचन और कर्म से बापू के सच्चे भक्त और अनन्य अनुयायी बन सकें।

उच्च चारित्र्य और स्पृहणीय नागरिकता : कुछ उदाहरण

श्री शङ्करदेव विद्यालङ्कार

इंगलैण्ड में खांड की तंगी थी। सरकार ने घोषित किया कि तीन औंस से अधिक खांड जिसके पास हो वह सरकारी भण्डार में लौटा दे। दूसरे दिन लोगों की टोलियां भंडार की ओर उमड़ पड़ीं, और खांड लौटाने के लिए पड़ापड़ी होने लगी। यह दृश्य है इंगलिस्तान के ईमानदार, देश-पूजक और नागरिक भावना के परिपालक लोगों का।

हमारे देश में आज भ्रष्टाचार, चोरबाजारी, मक्कारी और अनीति के कारण सारी सामाजिक व्यवस्था विशृंखल हो उठी है। तथाकथित भले-भले आदमी सरकारी कर से बचने के लिये दो दो प्रकार की हिसाब-पोथियां रखते हैं—सरकार को दिखाने की अलग और अपने सच्चे हिसाब की अलग। जब शहर में नेहरूजी या अन्य किसी सरकारी नेता की सवारी आती है, तब खादी के शुभ्र वस्त्रों से सजकर फूलमालाओं से स्वागत के लिए अधीर हुए जाते हैं। नेता के अभिनन्दन के लिये जयघोषों से आकाश गुंजा देते हैं। नेता के चले जाने पर वे कपड़े उतार कर पेटी में रख दिए जाते हैं। बनावटी घी और मिलावट वाले तेल बना कर जनता को अशुद्ध माल बेखटके बेचा जाता है। व्यापार और व्यवसाय की नीतिमत्ता मानो भारत से बिदा ले चुकी है। मुकाबले में दुनिया में स्वाधीन और सच्ची देशनिष्ठा वाले राष्ट्रजन अपने नागरिक कर्तव्यों का किस ईमानदारी से पालन करते हैं। उनके कुछ स्पृहणीय उदाहरण नीचे प्रस्तुत किये जाते हैं।

× × × ×

यह घटना न्यूयार्क की है। एक सामान्य-सी स्थिति का एक मनुष्य अपनी कमाई के सत्तर डॉलर हाथ में लेकर उतावली के साथ अपने घर की ओर जाने का विचार कर रहा था। इतने में एकाएक घनघोर घटाएं घिर आईं, आंधड़ चलने लगा। वातावरण भयंकर तूफान में परिवर्तित हो गया। आंधी के झपेटे में बेचारे मनुष्य के नोट उड़कर बिखर गए। वह मनुष्य तो विस्मय-विमूढ़ बन गया। आस पास खूब खोज की पर कुछ पता न चला। वह शीघ्र ही समीप के पुलिस घर में अपना समाचार लिखाने गया। वहां जाते ही यह ज्ञात हुआ कि २५ डालरों के नोट एक नाई अपनी दूकान के सामने से उठा कर थाने में सौंप गया है। यह आश्चर्य आगे बढ़ता है, इतने में एक अन्य व्यक्ति दस डॉलर के नोट लेकर थाने में आ पहुंचा। और थोड़ी देर बाद एक महिला २५ डालरों के नोट लेकर आ पहुंची और कहने लगी, सड़क पर ये नोट उड़ते फिरते थे। व्यक्ति का आश्चर्य शान्त होने से पहले ही पूरे ७० डॉलरों के नोट सुरक्षित मिल गए।

× × × ×

यह बात स्पेन देश की है। स्पेन देश की एक लाटरी प्रतिवर्ष लाखों का पारितोषिक बांटा करती है। उसका पहला इनाम चारलाख रुपये के बराबर होता है। स्पेन की राजधानी मेड्रिड का निवासी एक व्यक्ति अपने मित्र को स्टेशन पर विदा करने आया था। उन दिनों लाटरी भरने का समय था। बातों के सिलसिले में वह मित्र से कहने लगा कि इस बार वह लाटरी की टिकट लेने वाला है। गाड़ी में जाने वाले मित्र ने भी अपने नाम से एक टिकट लेने की सलाह दी।

थोड़े दिनों के बाद वह मित्र लौट कर आया तो उसको पहले मित्र ने बताया कि 'तुमको पहला इनाम मिला है।'

दूसरे मित्र ने आश्चर्यपूर्वक पूछा "तुम्हें किस प्रकार ज्ञात हुआ।"

उसने कहा यह तो सीधी-सी बात है। मैंने दो टिकटें खरीद कर जुदे-जुदे लिफाफों में रख दी थीं। एक लिफाफे पर तो तेरा नाम लिखा था और दूसरे पर अपना नाम। तेरे नाम वाले लिफाफे की टिकट को इनाम मिला है। सो तुझे खूब-खूब बधाई देता हूँ।

× × × ×

इंगलैण्ड की एक घटना तो बहुत ही प्रेरणा-प्रद बन गई है। दोतीन वर्ष पूर्व वहां पर भयंकर आर्थिक संकट विद्यमान था। परन्तु सरकार और जनता के पारस्परिक सहयोग से देश विपदा से उभर गया।

वहां की मजदूर दलीय सरकार ने एक कानून बनाया था कि व्यापार के सिवाय अन्य कार्यों के लिये परदेश जानने वाला कोई भी व्यक्ति ३० पौण्ड से अधिक के सिक्के अपने साथ नहीं ले जा सकता।

उन्हीं दिनों इंगलैण्ड के महान् राजनीतिज्ञ विंस्टन चर्चिल को स्विट्जरलैण्ड में रहने वाले उसके चित्रकला के गुरु ने बहुत वर्षों के पश्चात् स्विट्जरलैण्ड आने का निमन्त्रण दिया। उसने लिखा कि यहां ऋतु बड़ी रमणीय है, हिम नदियां तथा घाटियां सुहावनी हो उठी हैं। प्रकृति के इन मनोरम दृश्यों के चित्र अंकित करने का अपूर्व अवसर है, यहां आ जाओ।

द्वितीय महायुद्ध के विजेता और इस सर्वमान्य नेता को अपवाद रूप में रुपये पैसे की वांछित सुविधा प्राप्त हो सकती थी। सरकार को प्रार्थनापत्र लिखकर वह सभी प्रकार की अनुकूलताएं प्राप्त कर सकता था। तो भी उसने राष्ट्र के कानून को सर्वोपरि माना। निमत्रण आकर्षक और आनंदप्रद था तो भी इन्कार कर दिया। क्योंकि बाहर जाने की अवस्था में तीस पौंड से अधिक द्रव्य ले जाना आवश्यक था। स्वयं मजदूर दल का कट्टर विरोधी होने पर भी कानून के प्रति सन्मान रखना वह अपना धर्म समझता था।

× × × ×

नागरिक भावना का इंगलिस्तान का एक और सुन्दर उदाहरण सुनिए।

एक रोगी किसान सड़क पर जा रहा था। वह बैठ कर मार्ग का खड्डा भरने लगा। किसी ने पूछा यह क्या कर रहे हो? उसने उत्तर दिया—"अभी इसी मार्ग से लड़के कवायद करने को निकलने वाले हैं। संभव है किसी लड़के का पैर इस खड्डे में गिरकर मोच खा जाय। इसीलिए यह खड्डा भर रहा हूँ। बीमार हूं अतः और क्या कर सकता हूं? आगन्तुक व्यक्ति ने इस रोगी के शरीर का स्पर्श किया तो ज्वर से वह तप्त हो रहा था। देश की नवीन आशा रूप उन बालकों की सुरक्षा और स्वास्थ्य का ध्यान उसे इस सत्कार्य की प्रेरणा दे रहा था।

× × × ×

भारत के दो यात्री जापान गए थे और वहां से एक जापानी जहाज द्वारा अमेरिका जा रहे थे। एक भारतीय बैंक की भूल से स्टीमर में बैठने से पूर्व उनको अपने पैसे नहीं पहुंच पाए। उन्हें यह आशा थी कि अगले बन्दरगाह पर पहुंचने तक हमारे पैसे आ जायेंगे। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। दोनों भारतीय स्वाभिमान शाली थे। उन्होंने स्टीमर में किसी से उधार लेना उचित न समझा और बिना खाए ही समय बिताने लगे। जहाज में अनेक जापानी भी थे। एक जापानी यात्री का ध्यान एकाएक उनकी ओर आकर्षित हुआ। वह उनकी कठिनाई को जान गया और कहने लगा कि मेरा यह भोज्य पदार्थ स्वीकार कीजिए। परन्तु उस खाद्य को स्वीकार करने में दोनों भारतीय यात्रियों ने संकोच अनुभव किया। जापानी कहने लगा, आपकी परेशानी का कारण बैंक की भूल हो सकती है, परन्तु भारत जाकर आप सहज रूप से यही कहेंगे कि जापानी स्टीमर में हमको भूखा रहना पड़ा था। इस बात में जापान देश की तथा जापानियों की अपकीर्ति होती है। मैं यह नहीं चाहता कि यह अपयश होवे। अतः आप हमारी भेंट को अवश्य स्वीकार कीजिए। दूसरे की कठिनाई में सहायता करना जापानी रूप में मेरा प्राथमिक कर्त्तव्य है।

× × × ×

युद्ध के दिनों में जर्मनी के सैकड़ों विमान इंगलैण्ड पर आकर बमबारी किया करते थे। विमानों द्वारा बम फेंके जाने पर लन्दन नगर की तीन किशोर वयस्क महिलाएं इस बात की प्रतियोगिता करती थीं कि रेती की एक बोरी द्वारा कौन अधिक से अधिक बम बुझा सकती है। बम बुझाने में वे अतिशय तत्पर रहती थीं और कम से कम रेती का प्रयोग करके, क्योंकि रेती भी दूर से लानी पड़ती थी, रेती का भी मितव्यय होना चाहिए इसका भी विचार रखती थीं। जीवन के एक-एक क्षेत्र में राष्ट्रिय हित और स्वदेश के कल्याण की भावना वहां की स्पृहणीय नागरिकता को व्यक्त करती हैं।

साहित्य-सौरभ

'ऋग्वेद-रहस्य'

श्री पं० अलगूराय शास्त्री जहां राजनैतिक क्षेत्र के निपुण और निर्भय नेता हैं, वहां आपके द्वारा वैदिकधर्म और आर्यसमाज की भी प्रशंसनीय सेवा हुई और हो रही है। मेरठ में रह कर आपने राजनैतिक कार्यक्रम-पूर्ति के अतिरिक्त हरिजनोद्धार के लिए भी बहुत बड़ा काम किया। मेरठ का डौरली गुरुकुल आप ही के चिन्तन और प्रयत्न का प्रत्यक्ष प्रमाण है। आजकल शास्त्रीजी उत्तर प्रदेशीय कॉंग्रेस के प्रधान मंत्री हैं। राजनैतिक वातावरण में रह कर भी आपको वैदिक धर्म और साहित्य-सेवा की लगन निरन्तर लगी रहती है। आप कितनी ही बार कारागार-यात्रा कर चुके हैं, और कारागारों से पाठकों को अपने कुछ न कुछ चिन्तन-सामग्री अवश्य दी है। 'ऋग्वेद-रहस्य' नामक उपर्युक्त ग्रन्थ भी कारागार में ही लिखा गया है। यह ग्रन्थ उत्तर प्रदेशीय आर्य-प्रतिनिधि सभा द्वारा लखनऊ में छपाया जा रहा है। लगभग ७०० पृष्ठों पर समाप्त होगा। ६०० पृष्ठों के लगभग छप भी चुके हैं।

ऋग्वेद-रहस्य के प्रत्येक पृष्ठ से श्री पं० अलगूरायजी शास्त्री के वेद सम्बन्धी विस्तृत ज्ञान और व्यापक पाण्डित्य का पूरा परिचय मिलता है। ऋग्वेद के सम्बन्ध में विद्वानों की प्रतिकूल-अनुकूल सभी स्थापनाओं और धारणाओं का इस ग्रन्थ में विशद विवेचन और उचित उल्लेख किया गया है। ऋग्वेद सम्बन्धी भ्रान्त धारणाओं का खण्डन और स्पष्टीकरण करने में शास्त्रीजी सम्यक् रूप से सफल हुए हैं। यों तो वेदों का अक्षर-अक्षर वशिष्ट्य गुण सम्पन्न है, ऋग्वेद की महत्ता का वर्णन बड़े-बड़े विदेशी विद्वानों तक ने मुक्त कण्ठ से किया है। फिर भी प्रत्येक वेद की कुछ न कुछ विशेषता और गम्भीरता पृथक् है, जिसका रहस्य 'ऋग्वेद रहस्य' में बड़ी सुन्दर रीति से प्रकट किया गया है।

'ऋग्वेद-रहस्य' में वैदिक आधार पर राजनीति-शासन-व्यवस्था के सम्बन्ध में भी काफी विचार किया गया है, और स्पष्ट रूप से यह बताया है कि धर्म के आधार पर ही की गई शासन-व्यवस्था कल्याणमयी हो सकती है। संसार में जितनी शासन-व्यवस्थाएं हैं, और जो लोग शासन-व्यवस्था के सूत्रधार समझे जाते हैं, उन सबसे बहुत पहले-सृष्टि के आदि में-धर्माधार वेदों ने शासन सम्बन्धी मौलिक सिद्धान्तों की व्यापक शिक्षा दी। 'ऋग्वेद-रहस्य' में राष्ट्र या राजनीति का वर्णन करते हुए, विदेशी विद्वानों के विचारों की भी मीमांसा की गई है। अलौकिक साहित्य क्या है, वेद के नूतन व्याख्यान, एकेश्वर वाद, वैदिक-आचार-विचार-धर्म, वेदाङ्ग, रसायन शास्त्र, प्राण-गति, कला-कौशल, भूगोल, भूगर्भ विद्या, वनस्पति शास्त्र, प्राणिशास्त्र, मानव विज्ञान, मनोविज्ञान, भौतिक विज्ञान आदि अनेक विषयों का 'ऋग्वेद रहस्य' में सुन्दर विवेचन करते हुए, उनका मूल स्रोत वेदों को ही सिद्ध किया गया है। चतुर्थ अध्याय में ऋषि दयानन्द और उनके द्वारा वर्णित एवं विवेचित वैदिक सिद्धान्तों की बड़ी अच्छी विवेचना-पूर्ण चर्चा है। हम समझते हैं, यह ग्रन्थ आर्यसमाज ही नहीं, वैदिक साहित्य के लिए शास्त्रीजी की एक अद्भुत देन है। विद्वद्वर अलगूराय शास्त्री ने अपने इस गम्भीर चिन्तन-जन्य विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थ द्वारा वैदिक धर्म की प्रशंसनीय सेवा की है, जिसके लिए वे बधाई के पात्र हैं।

पुस्तक का मूल्य ५) रखा गया है, परन्तु जो ग्राहक प्रकाशित होने से पूर्व ही मूल्य भेज देंगे, उन्हें ४) में ही यह ग्रन्थ-रत्न मिलेगा।

पता—मंत्री, प्रकाशन विभाग,
आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तरप्रदेश,
५, मीराबाई मार्ग, लखनऊ।

'बापू'

हरिशङ्कर शर्मा

विश्व की व्यापक विमल विभूति,
आत्म संयमता की अनुभूति,
भद्र भावों की पुण्य प्रसूति,
सरलता-शुचिता के शृङ्गार—
तुम्हारा जग में जय-जयकार।

राम का धैर्य, बुद्ध की शान्ति,
कृष्ण के कर्मयोग की कान्ति,
भीष्म की अविचलता-अक्लान्ति,
धन्य गुण गरिमा के आगार—
तुम्हारा जग में जय-जयकार।

अडिग अङ्गद निर्भय हनुमान,
शूर शिवराज प्रताप समान,
त्याग-तप-मूर्ति विनय वरदान,
प्रवञ्चकता के प्रबल प्रहार—
तुम्हारा जग में जय-जयकार।

हिमालय से उत्तुङ्ग महान,
धीर-गम्भीर समुद्र समान,
वायु सम व्यापक वितत वितान,
कर्म के सार धर्म ध्रुव-धार—
तुम्हारा जग में जय-जयकार।

असंख्यों भुजदण्डों की शक्ति,
करोड़ों हृदयों की अभिव्यक्ति,
प्रेम-सम्पन्न विभूषित भक्ति,
आत्म बल के अक्षय भंडार—
तुम्हारा जग में जय-जयकार।

जगत् की ज्योति अमर आदर्श,
उच्च स्थान अमिट उत्कर्ष,
प्रगतिमय गतिमय भारतवर्ष,
सभ्यता संस्कृति के आधार—
तुम्हारा जग में जय-जयकार।

प्राण हीनों के रक्त-प्रवाह,
शिथिलता के असीम उत्साह,
व्यथित हृदयों के अन्तर्दाह,
दलित-दुखियों की करुण-पुकार—
तुम्हारा जग में जय-जयकार।

राष्ट्र-मन्दिर के देव उदार,
क्रान्ति के केन्द्र शान्ति साकार,
प्रेम के पुञ्ज दया-आगार,
राष्ट्रमाता के हिय के हार—
तुम्हारा जग में जय-जयकार।

किसानों-मजदूरों के त्राण,
निर्बलों-निधनों के प्रिय प्राण,
पीड़ितों-पतितों के निर्वाण,
भारती वीणा की झङ्कार—
तुम्हारा जग में जय-जयकार।

शुद्ध खादी के वरद विधान,
चारु चर्खे की तन्मय तान,
धन्य स्वातन्त्र्य-यज्ञ-यजमान,
राष्ट्र की नौका के पतवार—
तुम्हारा जग में जय-जयकार।

उत्तम कहानियां (चार भाग)

लेखिका—श्रीमती सीतादेवी श्रीवास्तव। मिलने का पता—श्री हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव, भरतपुर। मूल्य क्रमशः छह आने, सात आने, बारह आने और एक रुपया।

ये कहानियां छोटे-छोटे बालकों के लिए सरल भाषा में लिखी गई हैं। कहानियाँ प्रायः उन महापुरुषों की हैं, जिनके चरित्रों से परिचित होना प्रत्येक बालक के लिए अति आवश्यक है। चित्र भी प्रायः दिये हैं। छोटे बालक-बालिकाओं के लिए ये भाग उपयोगी हैं।

सुझाव और सम्मतियाँ

"दयानन्द-विश्वविद्यालय"

श्री पीतमलाल, एम० एस-सी०, एडवोकेट

[विद्वान् लेखक महोदय एडवोकेट ही नहीं शिक्षा-शास्त्री भी हैं। आप वर्षों आगरा कालिज में उपाध्याय रहे हैं 'दयानन्द-विश्वविद्यालय' की इन स्तम्भों में अनेक बार चर्चा होती रही है आशा है, अबकी बार यह विचार अवश्य ही कार्यान्वित होगा। स०]

कुछ सज्जनों का विचार है, कि आर्य शिक्षा-संस्थाएं बन्द कर देनी चाहियें अथवा इनकी ओर उपेक्षा दृष्टि रखनी उचित है। मैं इस विचार से सहमत नहीं हूं। मेरी सम्मति में आर्य-शिक्षा-संस्थाओं से बहुत लाभ हुआ है। हाँ, वैदिक धर्म-प्रचार के लिये जितना लाभ अभीष्ट था, उतना अभी नहीं हो पाया। इसका कारण यह है, कि आर्यगण शिक्षा-विभाग के कर्णधार नहीं रहे। हमारा कोई विश्व-विद्यालय नहीं है। अतः सरकारी अधिकारियों के अधीन रहना पड़ता है। इस त्रुटि को आर्यजनता ने अनुभव किया और दिसम्बर सन् १९३० ई० में मेरठ नगर में आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की स्वर्णजयंती के शुभ अवसर पर यह निश्चित किया गया कि 'दयानन्द-विश्व-विद्यालय' की स्थापना अवश्य की जावे।

तदनन्तर विश्वव्यापी युद्ध ने जनता का ध्यान किसी रचनात्मक कार्य में नहीं लगने दिया। देश की परिस्थिति भी अनुकूल न रही। फलस्वरूप इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय कोई कार्य न हो सका।

अब देश स्वतन्त्र है, देश और जाति की उन्नति के लिये हमारी सरकार अनेक उपयोगी कार्य कर रही है। यह विचार भी फैला हुआ है कि जब तक भारतीय संस्कृति तथा भारतीय सभ्यता का प्रचार न होगा, देश और जाति का कल्याण नहीं हो सकता। इस अवसर पर नवीन परिस्थिति के अनुकूल आर्यसमाज को भी 'दयानन्द विश्वविद्यालय' की स्थापना के लिये कटिबद्ध हो कर शीघ्र से शीघ्र यह महत्त्वपूर्ण कार्य कर डालना चाहिये।

यद्यपि यह कार्य दुष्कर है, तथापि असम्भव नहीं है। यह कल्पना करके कि समस्त आर्यजनता ऐसे विश्वविद्यालय के लिये सहमत है, हम उसकी निर्माण-विधि पर अपने विचार प्रकट करते है। इस कार्य के लिए सर्वप्रथम आर्य शिक्षा-संस्थाओं को दयानन्द-विश्वविद्यालय के लिये दीक्षित होना चाहिए अर्थात् जितनी भी आर्यशिक्षा संस्थायें है, वे अपना नया नामकरण करके दयानन्द-विश्व-विद्यालय में दीक्षित होने की प्रतिज्ञा करें। हमारे डी० ए० वी० कालेज और हाई स्कूल अपने नाम इस प्रकार रखें – आठवीं, दसवीं, इण्टर और डिग्री कक्षा तक की संस्थाएँ क्रमशः दयानन्द विद्यालय, दयानन्द उच्च विद्यालय, दयानन्द मध्यम महाविद्यालय और दयानन्द महाविद्यालय। इसी प्रकार कन्या-पाठशालाएँ भी दयानन्द कन्या विद्यालय, दयानन्द कन्या उच्च विद्यालय इत्यादि। गुरुकुल और संस्कृत पाठशालाएं अपने नाम दयानन्द संस्कृत विद्यालय तथा संस्कृत महाविद्यालय रखें। ऐसे ही प्रस्ताव को आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की अंतरंग सभा ने स्वीकृत भी किया है, जिसकी सूचना श्री देवी प्रसाद जौहरी अधिष्ठाता-शिक्षा विभाग ने 'आर्यमित्र' में प्रकाशित भी कराई है। यह ध्यान रहे कि यदि कोई शिक्षा संस्था दानदाता के नाम पर हो, तो उसके नाम में भी परिवर्तन होना चाहिये। दानी का नाम अन्य प्रकार से स्थिर और जीवित रखा जा सकता है।

नामकरण होने पर हमको समस्त आर्यशिक्षा-संस्थाओं की एक ऐसी सूची बनानी पड़ेगी, जिससे यह जाना जा सके कि आर्यसमाज के अधिकार में भिन्न-भिन्न कोटि के कितने महाविद्यालय, संस्कृत महाविद्यालय इत्यादि है। विद्यार्थी-संख्या, अध्यापक-संख्या, वार्षिक चालू व्यय, स्थिर सम्पत्ति, भवन आदि की लागत, पुस्तकालय में पुस्तकें इत्यादि कितनी-कितनी हैं। ऐसी सूची से हमको और सरकार को आर्यसमाज द्वारा शिक्षा-कार्य के विस्तार और उसकी शक्ति का प्रत्यक्ष परिचय मिलेगा, और हम उसके आधार पर दयानन्द-विश्वविद्यालय का निर्माण सहज में ही कर सकेंगे। नामकरण और उपरोक्त सूची तैयार करने के पश्चात् 'दयानन्द-विश्व-विद्यालय' समिति का निर्माण करना उचित होगा। आर्यजनता की भावना है कि आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर-प्रदेश के आगामी साधारण वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर प्रान्तीय आर्य-सम्मेलन किया जावे। हम इस विचार का स्वागत करते है। हमारी बलवती इच्छा है कि इस महा सम्मेलन में दयानन्द-विश्व-विद्यालय के प्रस्ताव पर भी विचार किया जाय।

आर्य-जगत् से स्वीकृति मिलने के पश्चात् सरकार द्वारा स्वीकृति मिलने, पर्याप्त धन-राशि एकत्र करने, तथा आवश्यक संगठन बनाने इत्यादि के कार्य कुछ दुष्कर नहीं होंगे। कारण, आज भारतवर्ष ही नहीं सम्पूर्ण संसार वैदिक धर्म के लिये व्याकुल हो रहा है। दयानन्द-विश्वविद्यालय संतप्त संसार को आर्य-संस्कृति और वैदिकधर्म की शिक्षा देगा।

हमारी वेश-भूषा

४ जनवरी के 'आर्यमित्र' में श्री नेहपालसिंहजी ने 'स्वतन्त्र भारत और आर्यसमाज' शीर्षक लेख में आए हुए मेरे इस कथन को, कि शेरवानी और पायजामा भी सूट के समान ही विदेशी है, मेरी भूल बतलाया है, किंतु यह भूल नहीं ऐतिहासिक सत्य है। मेरे कथन के पक्ष में सबसे प्रबल प्रमाण यह है कि संस्कृत भाषा में इन दोनों वस्तुओं के लिए कोई शब्द ही नहीं है। प्राचीन काल में हमारे पूर्वज केवल एक अधो-वस्त्र (धोती) और उत्तरीय पहना करते थे जो धोती के समान ही बिना सिला हुआ वस्त्र होता था। प्राचीन संस्कृत साहित्य में जहां कहीं पुरुषों की वेश-भूषा का वर्णन आता है, वहाँ इन्हीं दो वस्त्रों का वर्णन है। इसका यह अर्थ नहीं कि आर्यों को सिलने की कला नहीं आती थी। स्त्रियां सिले हुए वस्त्र पहनती थीं। प्राचीन मूर्तियों में सिले हुए वस्त्रों के मिलने का कारण यह है कि सिथियन लोगों के द्वारा जो बहुत पहले यहाँ आ चुके थे, सिले हुए वस्त्रों का किसी सीमा तक प्रचार हो गया था। इस सम्बन्ध में काशी विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विभाग के अध्यक्ष डा० अलटेकर ने गुप्तकालीन वेश-भूषा के विषय में जो कुछ लिखा है, उससे मेरे कथन की पुष्टि होती है। वे लिखते हैं—

प्राचीन भारतीय वस्त्र उत्तरीय और धोती जिनमें से किसी को भी सिलने की आवश्यकता नहीं थी, बहुसंख्यक लोगों की पोशाक बनी रही। सिथियन लोगों के द्वारा कोट और पायजामे का प्रचार हो चुका था और कभी-कभी यहां के राजा भी उन वस्त्रों को पहनते थे। फिर भी राजकीय वस्त्र जिन्हें राजा पहन कर दरबार में जाते थे वही पुराने राष्ट्रिय वस्त्र (धोती और उत्तरीय) बने रहे।

आगे चल कर मुसलमानों ने शेरवानी और पायजामे को विशेष रूप से अपना लिया, अतएव वे मुस्लिम वस्त्र माने जाने लगे। इस विषय में, मैं इतना और निवेदन कर देना चाहता हूँ कि वस्त्रों के सम्बन्ध में, मैं पूर्ण स्वतन्त्रता का पक्षपाती हूं। यह बात भी स्पष्ट ही है कि बिना सिला हुआ कपड़ा पहने आज कल हमारा काम नहीं चल सकता। उस शेरवानी और पायजामे को राष्ट्रिय मानने से क्या लाभ जिसे पहन कर हमारे प्रधान मन्त्री योरप नहीं जा सकते। यदि सूट को राष्ट्रिय मान लिया जाता, तो वह कहीं अच्छा था क्योंकि सूट आजकल अन्तर्राष्ट्रिय वेश-भूषा है। किंतु धोती का, राष्ट्रिय वेश-भूषा से, बहिष्कार करना, जो कि आर्यत्व का चिह्न होने के साथ-साथ यहाँ की जलवायु में सबसे उपयोगी तथा एक मात्र राष्ट्रिय वस्त्र है किसी भी दशा में उचित नहीं कहा जा सकता। यही मेरा आशय था।

(प्रोफेसर)–रमेशचन्द्र त्रिवेदी।

महिला-मण्डल

सिनेमा और महिला-समाज

सुश्री सुभद्रादेवी विदुषी, बी० ए०

आजकल देश में दिनोदिन अनैतिकता तथा अनाचार का प्रसार होता जा रहा है। इनकी वृद्धि के प्रमुख कारणों में सिनेमा के वर्त्तमान गन्दे खेल भी हैं।

चल-चित्र-प्रदर्शन-पद्धति स्वतः कोई बुरी चीज़ नहीं है। सच पूछा जाय तो ज्ञान प्रसार के लए सिनेमा विज्ञान की एक अमूल्य देन है। पर आजकल उसका जो उलटा और अनुचित उपयोग किया जा रहा है, वह बुरी चीज़ है। जहाँ इस कलित कला का उपयोग ज्ञान-विज्ञान के प्रचार और सद् शिक्षा-विस्तार में होना चाहिये था, वहाँ इसके द्वारा अश्लील खेल दिखा कर अनाचार और दुराचार का प्रचार किया जाता है। फलतः अनुदिन राष्ट्र के सम्पत्ति और स्वास्थ्य के साथ ही नैतिकता का भी सर्व संहार होता जा रहा है। इस राष्ट्रिय विनाश की ओर हमारे देश के कर्णधारों का ध्यान न गया हो, ऐसी तो कल्पना नहीं की जा सकती। जो हो, पर सरकार की ओर से अभी तक इस दिशा में कोई मजबूत क़दम नहीं उठाया गया। अस्तु;

गवर्नमेण्ट इस सम्बन्ध में कुछ करे या न करे, पर अपनी नैतिकता, पूँजी और तन्दुरुस्ती की रक्षा करना हमारा प्रधान कर्तव्य है। पुरुष-समाज भी इस आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य कार्य की ओर से आँखें चुराये तो चुराया करे, पर महिला-समाज को इस राष्ट्रिय विनाश को रोकने के लिए तुरन्त अग्रसर होना चाहिये। मातृ-शक्ति ही राष्ट्र की निर्माण कर्त्री है। मेरा तो विश्वास है, महिलाएं इस शुभ कार्य को बड़ी सुन्दरता और सुचारुता से कर सकती हैं, और हमें ही करना भी चाहिये। कारण कि वर्तमान सिनेमाओं के खेलों द्वारा जहां हमारे पति, पुत्र, पिता और दूसरे सम्बन्धियों का पतन होता है, वहाँ महिला-समाज का अपमान भी कम नहीं होता। आजकल कुछ पूँजीपति कम्पनियों ने नारी के अमूल्य धन, सतीत्व और सौंदर्य को पैसा बटोरने का साधन बना लिया है। सिनेमा कम्पनियां पैसे के प्रभाव से नारी को अपने रूप का अनुचित और घृणित प्रदर्शन करने के लिये विवश करती है। फलतः बहुत-सी भौतिक भोगों की भूखी, भूली बहिनें, चाँदी के चन्द चदोकड़ों के बदले सिनेमा-तारिकायें बनने को तैयार हो जाती हैं।

मैं समझती हूं, नारी जाति की सम्मानरक्षार्थ और अपने पति-पुत्रादिकों को भ्रष्टाचार और पतन के गहरे गर्त में गिरने से बचाने के लिए प्रत्येक महिला को प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिये कि वह स्वयं तो कभी अश्लील और आपत्तिजनक सिनेमा देखेंगी ही नहीं, साथ ही अपने परिवार वालों को भी न देखने देंगी।

जब घर के मालिक मालकिन बुरा समझ कर अश्लील सिनेमा देखना त्याग देंगे, तब बच्चों या अन्य पारिवारिक जनों का प्रश्न तो स्वतः ही हल हो जायगा।

सिनेमा द्वारा शिक्षाप्रद चित्र दिखाये जाय तो उनसे बड़ा लाभ हो सकता है। आर्यसमाज में कई बार ऋषिदयानन्द की जीवनी सम्बन्धी चित्र सिनेमा पर दिखाये जाने की चर्चा चली है। मैं समझती हूँ, यह बात बहुत अच्छी है। ऐसे सिनेमा-चित्र अवश्य बनाये जाने चाहिए। मैं उन भाई बहनों से सहमत नहीं हूं जो कहते हैं कि सिनेमा में ऋषिदयानन्द के चित्र दिखाने से ऋषि का अपमान होगा। संसार के बड़े से बड़े पुरुष जब चित्र-पट पर आ रहे हैं, ऋषिमुनियों तक के कल्पित चित्रों का प्रदर्शन हो रहा है तब ऋषि सम्बन्धी चित्रों का दिखाया जाना क्यों अनुचित है। ऋषिदयानन्द विश्व की विभूति थे। उनका वर्णन और उल्लेख तो अधिक से अधिक करने की आवश्यकता है, जिससे उनके आदर्श चरित्र से जनता का उपकार हो। मेरी राय में तो यह काम शीघ्र ही एक कम्पनी बना कर तुरन्त कर डालना चाहिए। बहुत सोच-विचार की जरूरत नहीं है। स्त्री-शिक्षा सम्बन्धी चित्रों का भी आयोजन होना चाहिए। बालकों के लिये भी।

——

ग्राम जीवन

ग्राम–पंचायतें

श्री प्रेमकुमार वर्मा, एम० ए०

सरकार के आदेश से ग्राम-पंचायतों का निर्माण हुआ है। ये पंचायतें निष्पक्ष, निर्भय और निःस्वार्थ होकर काम करें तो ग्रामों का बड़ा हित कर सकती हैं। परन्तु देखा यह जाता है कि चुनाव के कारण ग्रामों में भी दलबन्दी और गुटबन्दी का ज़हर पहुंच गया है। बहुत-सी गुटबाज़ी तो बिरादरियों के आधार पर हैं। एक बिरादरी वाले अपनी बिरादरी के गुट का ही समर्थन करते हैं, चाहे उनमें कितना ही अन्याय और अत्याचार क्यों न होता हो। यह बुरी आदत छोड़ देनी चाहिए। इससे इन्साफ़ का गला घुटता है। जो सही और सच्ची बात है, उसी पर जोर देना जरूरी है।

ग्रामों की सफ़ाई पर पूरा ध्यान देना चाहिए। ग्रामों के अन्दर और बाहर भी बड़ी गन्दगी रहती है, जो थोड़ा ध्यान देने से ही दूर की जा सकती है। लोग कुओं और तालाबों के पास, जिनका पानी आदमी या पशु पीते हैं, टट्टी जाते और बुरी तरह गन्दगी फैलाते हैं। ग्रामों की गलियों में भी कूड़े-करकट के ढेर लगे रहते हैं। यही घरों का हाल है। सफ़ाई के लिये थोड़ी-सी मेहनत जरूरी है। गृहस्थ के स्त्री-पुरुष सुबह उठकर अपने घर-आंगन और गलिहारे की सफ़ाई कर लिया करें तो कैसा अच्छा हो, इसमें कोई दिक्कत नहीं होगी। घर-मुहल्ला साफ़-सुथरे रहेंगे।

गाँव वालों में मुकदमेबाज़ी बहुत होती है, इसकी समाप्ति होनी चाहिए। प्रथम तो मुकदमे का मौका ही न आवे, आ भी जाय तो उसका फैसला आपस में या गाँव की पंचायत द्वारा करकरा लिया जाय। ऐसा करने से मुकदमेबाज़ी में कर्ज़ लेकर जो रुपया खर्च करना पड़ता है उससे छुट्टी मिल जायगी। गाँवों में विवाह-शादी या तेरहवीं आदि के समय भोज देने का रिवाज है। एक ग्राम-निवासी अपनी बिरादरी के दूसरे आदमी से होड़ बद कर बड़ी-बड़ी दावतें देता है। इस होड़ा-होड़ी के लिये ऋण लेना जरूरी होता है। अतएव आवश्यकता है कि विवाह-शादियाँ बड़ी सादगी से की जायें। उनमें अपनी शक्ति से अधिक व्यय करने की कल्पना करना भी ठीक नहीं है। तेरहवीं की दावत तो बिलकुल उड़ा देना चाहिए। आदमी का आदमी गया, और तेरहवीं करो, कैसी मूर्खता है। इस प्रकार की मूर्खताओं को त्यागने से ही काम चलेगा। अगर किसी की मृत्यु के समय कुछ दान ही करना है, तो अनाथों और ग़रीबों की सहायता करनी चाहिए। व्यर्थ रुपया क्यों लुटाते हो।

बीमारी के दिनों में गाँवों की बड़ी बुरी हालत हो जाती है। योग्य चिकित्सक के अभाव में न जाने लोग कैसी-कैसी दवाएं कर डालते हैं। इसके लिये हर गाँव में एक अनुभवी वैद्य रहना चाहिए। दो-चार गाँवों पर भी एक वैद्य रह सकता है। इसके लिए गाँव वाले मिलकर उद्योग करें और सरकार से भी मदद लें। पंचायत भी सहायता देगी। ज़िला बोर्ड भी कुछ कर सकेगा। इस प्रकार रोगियों के लिए बड़ी सुविधा हो जायगी, और इन सब बातों को काम में लाकर गाँव वाले खुद अपनी अच्छी सेवा करेंगे।

प्रौढ़ शिक्षा

ग्रामों में प्रौढ़-शिक्षा के लिये रात्रि-पाठशालाएँ अवश्य खुलनी चाहिये। इनमें उन बड़े-बूढ़ों को

चयनिका

[मधुप]

सुख-शान्ति-साधन

यदि जगत् में सुख-शान्ति फैलाना है, तो जीवन का ढंग बदलना होगा। जीवन में भौतिकवाद को प्रधानता न देकर आध्यात्मवाद को प्रधानता देनी होगी, और यह तभी हो सकता है, जब जनता को आध्यात्मिकता के उच्च सिद्धान्तों से परिचित कराया जाय।

जगद्गुरु श्री शङ्कराचार्यजी

जनता की आवाज़

दुर्भाग्य से आज हिन्दुस्तान का प्रेस पूँजीपतियों तथा सिण्डीकेटों द्वारा नियन्त्रित किया जाता है। भारतीय समाचार-पत्रों में जनता की आवाज तथा उसकी आवश्यकताओं को एक विशेष प्रकार से रक्खा जाता है। पूँजीपति अखबारों की नीति बनाते हैं, न कि जनता की आवाज। वास्तविक जनमत पिछड़ा जाता है। पाठकों को अपने इस प्रकार के संगठन बनाने चाहियें जिनके द्वारा वे अपनी सम्मति और विचार-धारा को महसूस करा सकें।

श्री देशबन्धु गुप्त, एम० पी

शिक्षा का लक्ष्य

शिक्षा का मुख्य लक्ष्य हमारे मस्तिष्क का विकास करना है; परन्तु हमने अपने मस्तिष्क के विकास के लिये प्रयत्न न करके शिक्षा को एक रोजगार बना लिया है। इसके कारण हमारे समाज का भी विकास रुक गया। अन्य देशों में जीवन के प्रत्येक भाग को सफल बनाने के लिये शिक्षा दी जाती है, परन्तु हमारे विद्यार्थी इन बातों की ओर ध्यान देना हीनता समझते हैं।

श्री श्रीप्रकाशजी वाणिज्य-मन्त्री

देशी दवाएं

वर्तमान विज्ञान तथा नवीन शोध के फलस्वरूप चिकित्सा-प्रणाली में जो परिवर्तन हुए हैं, उनका पूरा ज्ञान भी वैद्यों तथा हकीमों को होना चाहिये। देश की वर्तमान आर्थिक अवस्था में केवल देशी औषधियाँ ही चिकित्सा को जन-सुलभ बना सकती है। सेवा को आदर्श बना कर हमें चलना चाहिये।

श्री चन्द्रभानु गुप्त

विश्व-शान्ति

राष्ट्रमण्डल को अपना मुख्य उद्देश्य विश्व-शान्ति नहीं भूलना चाहिये। शस्त्रीकरण मानवता के लिए अभिशाप है। दुःख है कि अधिकतर राष्ट्र अपना अधिकाधिक धन जो मानव-कल्याण के लिये काम आ सकता था, युद्ध की तयारियों में फूंका रहे है। इस समय भारत ही ऐसा देश है, जिसने अपना रक्षा-व्यय पन्द्रह प्रतिशत कम किया है।

श्री जवाहरलाल नेहरू

जात-पांत

जब तक जात-पाँत तोड़ कर विवाह-प्रथा चालू न होगी, तथा खान-पान में छूत-छात की भावना को समाप्त न किया जायगा, तब तक हरिजन-उद्धार के कार्य को सफलता नहीं मिल सकती।

चौ० चरणसिंहजी

शाश्वत नियम

सत्य ही असत्य को, प्रेम ही क्रोध को, आत्म-कष्ट ही हिंसा को शान्त करता है। यह शाश्वत नियम सन्तों के लिये ही नहीं, बल्कि सब के लिये है। उसका पालन करने वाले थोड़े भले ही हों, किन्तु पृथ्वी-रत्न वे ही है। समाज को संगठित वे ही रखते है, न कि ज्ञान और सत्य के विरुद्ध आचरण करने वाले।

महात्मा गांधी

नौजवानों का काम ?

मुल्क की हालत खराब है! तो सुधारे कौन? किसी मुल्क को बर्बादी से बचाने की जिम्मेदारी तो वहाँ के नौजवानों पर ही होती है। अतः यह जरूरी है कि भारत के नौजवान आज की परिस्थिति का विचार कर उसके समाधान में लग जाय।

—श्री धीरेन्द्र मजूमदार

बाह्य प्रकृति पर विजय

जिन समस्याओं ने मानव जाति को पीड़ित किया है, उनका हल तो केवल अन्दर का राज्य जीतने से ही किया जा सकता है। प्रकृति की शक्तियों को आराम और विलास के काम में लाने से नहीं, परन्तु बुद्धि और आत्मा की शक्तियों का स्वामी बनने से मनुष्य की बाह्य तथा आन्तरिक स्वतन्त्रता को स्थापित करने से और बाह्य प्रकृति पर अन्दर से विजय पाने से।

—योगिराज अरविन्द

सच्चे सेवक

आज हमारे अनेक सार्वजनिक कार्यकर्त्ता इधर-उधर दौड़ते फिरते हैं। जो अपने गांव की सेवा नहीं कर सकते, वे जिले की सेवा करने का दम भरते हैं। सेवा-धर्म सचमुच बड़ा गहन है। उसके बारे में यूँ ही नहीं कहा गया कि वह योगियों के लिए भी दुर्लभ है। वह घनचक्कर की तरह इधर-उधर भागने मात्र से पूरा नहीं होगा।

—भदन्त आनन्द कौसल्यायन

विश्व संकट टला

मैं आशा करता हूं कि विश्व संकट टल गया है। काले घने बादल हलके होकर छितरा रहे हैं। नये विश्वास और सामान से आसमान साफ होता जा रहा है। हमारे प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू का लम्बा शान्ति-युद्ध विजय के रूप में परिवर्तित होने वाला है।

—श्री राजगोपालाचार्य

काश्मीरी बहक नहीं सकते

पाकिस्तान-सरकार को कान खोल कर सुन लेना चाहिए कि काश्मीर में भेड़-बकरियां नहीं रहतीं, बल्कि आदमी रहते हैं, जो अपने दोस्तों और दुश्मनों को अच्छी तरह पहचानते हैं। अतः पाकिस्तान-सरकार इस्लाम के नाम पर अपील करके काश्मीरी जनता को फुलावा नहीं दे सकती। अगर काश्मीर पाकिस्तान के साथ शामिल हुआ, तो तबाह हो जायगा।

—शेख अब्दुल्ला

मत-भेद और प्रेम

मत-भेद होना स्वाभाविक और आवश्यक है, किन्तु मतभेद होते हुए भी एकता स्थापित करना, यही प्रेम है, यही मानवता है। सभी में मतभेद है। यदि हम सब परस्पर मतभेद रखते हुए भी परस्पर मिलें और अपने भावों को प्रेम-पूर्वक प्रकट करें, तो संसार का बड़ा कल्याण हो।

--ब्रह्मचारी प्रभुदत्तजी वीतराग

विश्व कवि टैगोर के अज्ञात लेख मिले

शान्ति निकेतन की विश्व भारती को पूर्वी बंगाल के टिपरा के सुप्रसिद्ध शिक्षा विशेषज्ञ श्री शरत्चन्द्रदत्त से ५०-६० वर्ष पुरानी साधना साहित्य और बंग दर्शन की फायलें प्राप्त हुई है। इनमें विश्व कवि रवीन्द्र ठाकुर के अब तक बहुत से अज्ञात लेखों का पता लगा है।

—नव भारत टाइम्स

भाषा और लिपि

हिन्दी को समृद्ध करके अपने प्राचीन ज्ञान व संस्कृति के साथ उसका सम्बन्ध फिर से स्थापित किया जाय और उसे राष्ट्रिय स्फूर्ति का प्रतीक बनाया जाय। भाषा के आधार पर प्रान्तों का विभाजन स्वीकार कर लेना चाहिए। इससे प्रान्तों में ईसाइयों की संख्या घट कर १८ रह जायगी। समस्त भारत की एक ही लिपि होने में हित है।

—श्री जयचन्द्र विद्यालंकार

पढ़ाया-लिखाया जाय जिन्हें दिन में मेहनत-मजदूरी से अवकाश नहीं मिलता। ऐसे लोगों को अक्षर-ज्ञान कराने के साथ-साथ समाचारपत्रों से देश-विदेशों के समाचार भी पढ़कर सुनाने और समझाने चाहियें, जिससे उनका साधारण ज्ञान बढ़े। भूत-प्रेत और टोना-टनमन सम्बन्धी मिथ्या भ्रमों को दूर करने के लिये भी प्रौढ़ पाठशालाओं में उचित व्यवस्था होनी चाहिये। अभिप्राय यह है कि ग्रामीण भाई जहाँ शरीर से हृष्ट-पुष्ट होते है, वहाँ वे मानसिक रूप से भी सक्षम और कुशल हों। उन्हें कोई बहकाने न पावे, वे अपने आप अपने हिताहित पर विचार करने में समर्थ हों।

सिंहावलोकन

रचनात्मक कार्यक्रम

श्री प० विहारीलाल शास्त्री, काव्यतीर्थ

★

मेरे समधी श्रीमान् पं० व्रजकिशोरजी मिश्र, रिटायर्ड हैडमास्टर ने जो कि वर्षों तक आर्यसमाज के मन्त्री रहे हैं, अपनी आँखों देखी एक घटना सुनाई, जो इस प्रकार है:—

आर्यसमाज बदायूँ का वार्षिकोत्सव हो रहा था, जिसमें एक भजनोपदेशकजी ने अपने भजन के साथ हुक्के पर टिप्पणी करते हुए एक लतीफ़ा सुनाया:—

कोई बूढ़े सज्जन बैठे हुक्का पी रहे थे। उन्हें खाँसी उठी। खाँसी के धक्के से कफ़ निकल कर हुक्के की नाल में चला गया। इतने ही में उनके एक मित्र आये, और सलाम के बाद हुक्के का आतिथ्य स्वीकार करने लगे। पहले ही दम खींचने में वह नली का कफ़ उनके मुँह में चला गया। तब थूकते हुए बोले—

"क्यों, कैसा तमाखू है ?"

इस वीभत्स लतीफ़े से जनता खिल-खिलाती हुई "थू थू" 'कह कह" करने लगी। श्रोताओं में से एक मुसलमान सज्जन उठकर शीघ्र अपने घर को चल दिये। घर कहीं पास ही था। कुछ देर बाद आये तो, उक्त मिश्रजी ने पूछा आप क्यों उठ गये थे!

मुसलमान सज्जन बोले कि हुक्का तोड़ने गया था। अब कभी हुक्का पीऊँ तो हराम खाऊँ। इन मुसलमान सज्जन से मिश्रजी का खूब परिचय था। उन्होंने फिर कभी हुक्का नहीं पिया।

इस प्रकार की सैकड़ों घटनाएं हैं कि आर्यसमाज के भजनों और व्याख्यानों से किसी ने शराब छोड़ी, किसी ने मांस, किसी ने रिश्वत लेना! एक तो पेशेवर जुआरी थे, उन्होंने जुआ छोड़ दिया।

जो सज्जन उत्सवों को व्यर्थ बताया करते या उत्सवों पर भजन-गान को समय की बर्बादी समझते हैं, उनको यह भी ध्यान रखना चाहिये कि उत्सवों में सब श्रोता दार्शनिक और विद्यापारंगत नहीं आते। साधारण जनता इन महान् विद्वानों की अपेक्षा कहीं अधिक होती है। उनके लिये भी तो कुछ सामग्री होनी ही चाहिये। आर्यसमाज के उत्सवों में प्रचारित विचारों से जनता के चरित्र-निर्माण की कुछ सहायता मिलती है। बौद्धिक दृष्टि से आर्यसमाज के उत्सवों पर जो सामग्री मिलती है वह अन्यत्र बहुत कम प्राप्त होती है। विचार की दृष्टि से आर्यसमाज का प्रचारक उपाधियों की आड़ में अपने बुद्धूपन को छिपाये हुए फिरने वाले बहुत-से विद्या के बैलों को नयी बातें सिखा सकता है। वस्तुतः इन पिछले वर्षों की राजनैतिक आँधियों में हम आर्यसमाज की ज्योति को सही तौर पर देखना भूल गये हैं। राजनैतिक होहल्ले में आर्यसमाज के वीणा के स्वर जनता को मन्द सुनाई पड़ने लगे। उस समय शोर था अंग्रेज़ों को निकालने का। अब द्वन्द है अधिकारों को हथियाने का। यह सब शोर जनता के हित के नाम पर होता है। राजनैतिक गुलगपाड़े वालों ने जनता को भ्रम में डाल दिया है। जनता की विचार-धारा को अपने स्वार्थमय प्रचार की धूल से धूसरित कर डाला है। आर्यसमाजियों को तो अपने उत्सवों पर इन राजनैतिक मदारियों को एक मिनट भी नहीं देना चाहिये। यह आयें तो इन्हें अपने उपदेश सुनवाने चाहियें, ताकि इनका भी कुछ कल्याण हो सके। पर ये तो उलटे उपदेशक बन कर पवित्र वैदिक वेदी पर आ धमकते और मनमाना प्रचार कर डालते हैं। इनका ज्ञान एकदेशीय है। एक ही प्रवाह में ये बहे जा रहे हैं। हमारे विद्वानों, संन्यासियों, उपदेशकों और भजनोपदेशकों को आत्मविश्वास-धारण करके सत्यार्थ के प्रकाश में जनता का पथ-प्रदर्शन करते रहना चाहिये, और इसका जरिया सबसे अच्छा है वार्षिकोत्सव। आर्यसमाज के वार्षिकोत्सवों से हिन्दू-मुसलमान असवर्ण-सवर्ण सब को ही प्रेरणा मिली है। सब ने बौद्धिक और चारित्रिक लाभ उठाया है। लीग ने आर्यसमाज में जाने से मुसलमानों को रोका और कांग्रेस ने हिन्दुओं को आर्यसमाज के प्रति उदासीन बनाया। इसका परिणाम आज सामने है—जनता के चरित्र-बल का ह्रास और नैतिकता का घोर पतन!!

आर्यसमाज का प्रचार बुद्धिवाद के साथ शास्त्रों की ओर से चलता है। तर्क के साथ श्रद्धा-सरोवर में स्नान कराता है। जाग्रत् आध्यात्मिकता के प्रति भक्ति उत्पन्न करता है। आर्यसमाजी न तो भोंदू आस्तिक होता है, न सूखा नास्तिक। वह बुद्धियुक्त आस्तिक बनता है।

अतः किसी सम्प्रदाय विशेष के लिये ही आर्यसमाज के प्रचार की ज़रूरत हो, ऐसा नहीं, किन्तु सब ही सम्प्रदायों और वर्गों को आर्यसमाज की शिक्षा समान लाभदायिनी है। प्रत्येक दल को इससे लाभ पहुँच सकता है। इसीलिये आर्यसमाजी अपने को असाम्प्रदायिक होने की घोषणा करता है।

इस स्वतन्त्र भारत के लिये इस समय आर्यसमाज की शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है। ग्राम ग्राम और नगर-नगर में वेदों का नाद बजाना ज़रूरी है। विचार बदलना कुछ कम ठोस काम नहीं है। विचार ही तो सब भलाई-बुराई की जड़ है। विचारों की शुद्धि का काम आर्यसमाज बहुत अच्छे ढंग से करता रहा है और आगे भी कर सकता है। आर्यसमाज को ज़रा चेतना चाहिये, और रचनात्मक काम करते रहना चाहिये। शिक्षा-प्रसार में आर्यसमाज ने बहुत ही प्रशंसनीय कार्य किया है। विशेषकर नारी-शिक्षा और दलितवर्ग की शिक्षा में आर्यसमाज का स्तुत्य भाग है। पर अब इन कार्यों को जनता ने अपना लिया है और अपनी सरकार होने के कारण अब पृथक् शिक्षणालयों की ज़रूरत नहीं है। जो संस्थाएं चल रही हैं, उन्हें चलाइये और नयी खोलने के चक्कर में न पड़िये।

हाँ, रात्रि पाठशालायें जिनमें 'सत्यार्थप्रकाश' तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थों की शिक्षा दी जाय खोलनी चाहिये। इनमें आर्यविद्वान् अपना अवैतनिक समय देकर शिक्षा दिया करें। ऐसी पाठशाला आर्यसमाज विहारीपुर, बरेली में थी, जिसमें श्रीमान् डा० श्यामस्वरूप, सत्यव्रतजी आदि कई आर्यविद्वान् अपना अमूल्य समय देते थे।

इस समय आर्यसमाज अमरोहा ऐसी ही रात्रिपाठशाला चला रहा है। इसमें हिन्दी साहित्य और धार्मिक ग्रन्थों की शिक्षा दी जाती है। आर्यसमाज के सुयोग्य प्रधान श्री सत्यप्रकाशजी तथा अन्य कई नवयुवक अपना अमूल्य समय देते हैं।

दैनिक 'आर्यमित्र'

शीघ्र प्रकाशित हो

मैं वर्षों से दैनिक 'आर्यमित्र' की आवश्यकता अनुभव कर रहा हूँ। दैनिक सम्बन्धी आन्दोलन भी बड़े ध्यान से सुनता-पढ़ता आ रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि 'आर्यमित्र' का दैनिक संस्करण आर्य महासम्मेलन से पूर्व प्रकाशित किया जाय, जिससे महासम्मेलन सफलतापूर्वक हो सके और फिर उसमें निश्चित कार्यक्रम को क्रियान्वित करने में भी सरलता और सफलता मिले। आजकल समाचार-पत्र बड़ी शक्ति हैं। आर्यसमाज की प्रगति एक दैनिक के अभाव में बुरी तरह रुकी हुई है। पंजाबी भाइयों के साहस की मैं प्रशंसा करूँगा। ऐसे संकट काल में भी उनके 'प्रताप' और 'मिलाप' बड़ी सफलता से प्रकाशित हो रहे हैं। दैनिक 'मिलाप' एक नहीं तीन स्थानों से निकलता है। 'आर्यमित्र' की वर्षों से भी कोई योजना पूरी नहीं हुई। 'आर्यमित्र' का दैनिक संस्करण सारे देश के आर्यसमाजों के लिये उपयोगी होगा, अतएव इसके लिये सब आर्य प्रतिनिधि सभाओं और सारे देश के आर्यसमाजों को सहयोग देना चाहिए। सहयोग यही है कि 'आर्यमित्र' प्रकाशन लि० के हिस्से जल्द से जल्द खरीदे जायं। मैं स्वयम् इस कार्य में क्रियात्मक सहयोग देने की पूरी चेष्टा करूँगा।

—रामस्वरूप शास्त्री
रिवाड़ी

बाल-विनोद

ज्ञानू दादा के नाम

१

एक दिन हमारे बाबूजी और एक दूसरे भले-से आदमी बातचीत कर रहे थे। मैने बाबूजी को उनसे कहते सुना—'अरे भाई, तुम अखबार वाले हो। तुम से तो डरना ही चाहिये।' दादा, अखबार वालो से क्यों डरना चाहिये? आप भी तो अखबार वाले हैं। क्या आप से भी लोग डरते हैं? मैं तो नहीं डरती।

सुनीतादेवी, झाँसी,

[अखबार वाले खराब काम करने वालों की पोल अखबार में छाप देते हैं, इसीलिये जिनकी कुछ पोल होती है वे लोग अखबार वालो से डरते हैं। वैसे अखबार वाले कोई कटखने या मरखने थोड़े ही होते हैं। तुम कभी ऐसा काम न करना जो किसी से डरना पड़े।]

२

मैं सुबह जब स्कूल का काम पूरा करने बैठता हूँ. तब माताजी छोटी मुन्नी को मेरे पास खेलने छोड़ देती है। वह मेरी किताबें उलटती-पलटती और कभी उन्हे फाड़ भी देती है। पढ़ने भी नहीं देती। अगर माताजी मुन्नी को खिलाती रहे तो खाना न बन सके, मुझे विना ही खाए स्कूल जाना पड़े। दोनो तरह मेरी मुसीबत है। मैं क्या करूं?

सुबोधचन्द्र, पटना

[तुम अपनी पढ़ाई का काम रात को ही पूरा कर लिया करो, दूसरे दिन सुबह को मत छोड़ा करो।]

३

हमारे अध्यापकजी ने कहा था-'बच्चो, तुम्हें बुरे कामों से हमेशा दूर रहना चाहिये।' पर उन्होने यह नहीं बताया कि बुरे काम कौन-से होते हैं और अच्छे कौन-से। क्या आप कोई ऐसी तरकीब बता सकते हैं, जिससे अच्छे और बुरे काम की पहचान हो जाया करे।

सुमन, मेरठ

[बुरे काम की बड़ी सीधी-सी पहचान है। जिस काम के करने में तुम्हे शर्म, झिझक या डर लगे, बस समझलो वह बुरा काम है। जिसमें ये बातें न हो वह अच्छा काम है]

४

मेरी कक्षा में एक लड़का है, जो पढ़ने में मन ही नहीं लगाता, खेल-कूद में बहुत रहता है। मुझ से भी कहता है-दिन-रात किताबों में ही चिपटे रहते हो, बीमार पड़ जाओगे। मेरी तरह खेला-कूदा करो तो मेरे जैसे ही तगड़े हो जाओगे। क्या उसका कहना ठीक है? वह लड़का क्लास-भर में तगड़ा तो है, पर परीक्षा में सदा फेल होता है।

दिनेश, दरभंगा

[न तो ऐसा पढ़ना ही ठीक है कि जिसके पीछे स्वास्थ्य की बिल्कुल परवा ही न की जाय। और न ऐसा खेलना ही अच्छा, जो पढ़ाई-लिखाई चौपट हो जाय। पढ़ने के समय मन लगा कर पढ़ना और खेल के समय खेलना भी चाहिये।]

भारतवर्ष हमारा है

विनोद कुमार शर्मा

प्राणो से भी बढ़ कर प्यारा,
हमें हमारा भारत देश।
जहाँ जन्म लेते आये हैं,
जाने कितने शेष, महेश।
गौतम, कपिल, कणाद, व्यासने,
किया यहीं वह ज्ञान प्रचार।
जिसकी मान-बड़ाई के नित,
गाता गीत सभी संसार।
लिया राम ने जन्म यहीं पर,
प्रकटे यहीं कृष्ण बलराम।
बुद्ध और शंकर आदिक ने,
इसे बनाया अपना धाम।
शिवा-प्रताप यहीं पर जन्मे,
यहीं अवतरे गुरु गोविन्द।
तन-मन-धन अर्पण कर जिनने,
काटे पराधीनता-फन्द।
इसी देश की पावन रज से,
प्रगटे दयानन्द ऋषिराज,
यहीं जन्म लेकर बापू ने,
हमें दिलाया सुखद स्वराज।
अगणित महापुरुष जन्मे हों,
ऐसा देश न कोई और,
भारत एक तुही पृथिवी पर,
है सब देशो का शिरमौर।
इसी लिए हमको तो यह,
निज प्राणो से भी प्यारा है।
जग मे सब देशो से बढ़िया,
भारतवर्ष हमारा है।

—

स्वास्थ्य-सुधा

तुलसी की चाय

कविराज केशवदेव मिश्र, शास्त्री

आज कल चाय पीने की प्रथा बहुत बढ़ती जाती है। जहाँ जाइये वहाँ सबसे पहले चाय द्वारा ही सत्कार किया जाता है। चाय एक प्रकार से सर्व व्यापक-सी बन गयी है। घर चाय, बाहर चाय, रेल में चाय, जेल में चाय, खेल में चाय और मेले (सम्मेलनो) में भी चाय। सब जगह चाय ही चाय। विशेषज्ञो का कहना है कि चाय स्वास्थ्य के लिये उपयोगी नहीं है। इसके पीने से कुछ स्फूर्ति-सी तो आ जाती है, परन्तु अन्य कई प्रकार से हानि पहुँचती है। चाय को एक व्यसन-सा माना गया है। आदत पड़ जाने पर इसकी बुरी तरह तलब लगती है। कुछ लोगो को तो चाय की ऐसी कुटेव पड़ जाती है कि यदि समय पर चाय न मिले तो वे व्याकुल हो जाते हैं—हाथ-पाँव ढीले कर देते हैं। प्राचीन समय में चाय के स्थान पर तुलसी के पेय का प्रचार था। इस रूप में न सही अन्य प्रकार से अब भी पचामृत और भोजन में तुलसी का प्रयोग किया जाता है। आयुर्वेद शास्त्र तुलसी की महिमा से भरा पड़ा है। तुलसी की उपयोगिता को चरक और सुश्रुत पुकार पुकार कर बता रहे हैं। मलेरिया के लिये तो तुलसी बड़ी ही उपयोगी है। मौसमी रोगो के कीटाणु नष्ट करने की इसमें अपार शक्ति है। मौजूदा चाय के स्थान पर यदि तुलसी की चाय पी जाय तो स्वास्थ्य के लिये वह बड़ी उपयोगी हो। पीने की विधि इस प्रकार है, कि तुलसी की पच्चीस-तीस पत्तियां लेकर उन्हें धो लीजिए, फिर उन्हें पानी में डाल कर उबालिये। जब इन पत्तियों का रंग पानी में आजाय तो छान और दूध-शक्कर मिला कर चाय की भांति पीजिए। इससे बड़ा लाभ होगा। जायका भी बड़ा सुन्दर होता है। यदि उबालते समय थोड़ी दालचीनी और पन्द्रह-बीस काली मिरचें और दो चार इलायचियां और डाल दी जाय तो और भी अच्छा। यह पेय बड़ा रुचिकर और स्वास्थ्यकर है। प्रत्येक ऋतु में वह पीया जा सकता है। इन पंक्तियों के लेखक को इस पेय का व्यक्तिगत अनुभव है। उसने तथा उसके पारिवारिकों ने महीनों इसका सेवन किया है। एक बार बड़े जोर का ज्वर जाड़ा फैला, परन्तु इस पेय का प्रयोग करने के कारण लेखक का परिवार उससे सर्वथा मुक्त रहा। हम चाहते हैं, देश में इसी प्राचीन पेय का अधिकतर प्रचार होना चाहिए। दो-चार बार इस पेय के पीने से फिर "चयक्कड़" को चाय की याद भी न आएगी।

बहुत दिनों की बात है एक बार इस प्रान्त के राजपाल सर जेम्स मेस्टन वृन्दावन गुरुकुल पधारे। आपको दावत दी गयी। दावत में तुलसी की चाय की भी व्यवस्था थी। राजपाल महोदय को यह चाय बहुत पसन्द आई, और उन्होंने इसे फिर मांगा।

तुलसी का एक नाम 'वृन्दा' भी है। वृन्दावन का अर्थ ही है, जहाँ तुलसी बहुत होती हो। सम्भव है, प्राचीन समय में वृन्दा=तुलसी की अधिकता और उपयोगिता के कारण ही उस नगर का नाम वृन्दावन पड़ा हो। जो हो. परन्तु यह निःसन्देह है कि तुलसी के पेय कितने ही दृष्टियों से पीने वालों का बड़ा उपकार करेगा और वे थोड़े ही दिनों में उसके भक्त बन जायगे। तुलसी के हरे पत्ते न मिलें तो सूखे पत्ते भी उबाले जा सकते हैं। इनका चूर्ण भी चाय के काम आ सकता है। परन्तु उत्तम चाय हरे पत्तों की ही बनती है।

—

संस्था-परिचय

साप्ताहिक 'आर्यमित्र'

श्री शङ्करानन्दन भारद्वाज

'आर्यमित्र' का जन्म १८९६ ई० में मुरादाबाद में हुआ था। सबसे पूर्व यह उर्दू में निकला और नाम 'मुहर्रिक' रक्खा गया। सम्पादक थे श्री मुंशी नारायणप्रसाद (महात्मा नारायण स्वामी) जो उस समय वहाँ मुलाजिम थे। उस समय स्वर्गीय मुंशीजी ही सारे लेख लिखते थे। दिन में कचहरी में काम करना, फिर आर्यप्रतिनिधि सभा के कार्यालय में जाकर मंत्री की हैसियत से सब काम सँभालना और स्वयम् ही सब चिट्ठियाँ लिखना। फिर रात को 'आर्यमित्र' के लिये लेख लिखना। इतना काम करते-करते जब मुंशीजी का एक हाथ बेकार हो जाता, तब वे दूसरे हाथ से लिखते। मुंशी नारायणप्रसादजी को हाथों से लिखने का बड़ा अच्छा अभ्यास था। अर्थात् वे दायें-बाए दोनों हाथों से लिखते थे।

कुछ महीनों के बाद उर्दू 'मुहर्रिक' ने हिन्दी रूप धारण किया, और उसका नाम 'आर्यमित्र' रखा गया। सम्भवतः यह १८९७ ई० की बात है। 'मित्र' के पहले सम्पादक श्री बद्रीदत्त जोशी हुए, और वह मुरादाबाद से ही प्रकाशित होता रहा। तत्पश्चात् शायद १९०२ में 'आर्यमित्र' आगरा आया। इसके लिये स्व० श्री पं० भगवानदीन मिश्र, तत्कालीन प्रधान आर्यप्रतिनिधि सभा अपना आर्यभास्कर प्रेस पहले ही प्रदान कर चुके थे। उसी में वह छपने लगा। पं० बद्रीदत्त जोशी पहले सम्पादक हुए। इसके बाद सम्पादकाचार्य पं० रुद्रदत्त शर्मा, पं० शिवशङ्कर शर्मा काव्यतीर्थ, पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी, पं० भवदेव शास्त्री, पं० धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री, पं० हरिशंकर शर्मा, पं० मधुसूदन चतुर्वेदी, पं० बाबूराम गुप्त, पं० उमेशचन्द्र स्नातक, पं० धर्मपाल विद्यालङ्कार आदि सम्पादकों ने आर्यमित्र का सम्पादन किया। स्वर्गीय कु० हुक्मसिंह जी ने भी कुछ दिनों 'मित्र' का सम्पादन किया। आगरा में प्रेस और मित्र ने अच्छी उन्नति की। स्व० श्री प० तुलसीरामजी स्वामी ने अपना प्रेस दिया तथा दो सिलेण्डर और एक ट्रेडिल मेशीन और खरीदी गयीं। यहाँ 'मित्र' और प्रेस कुछ काल तक अजमेर के आर्य साहित्य-मण्डल के द्वारा भी संचालित हुआ।

आर्यप्रतिनिधि सभा ही 'मित्र' और प्रेस की सदैव स्वामिनी रही। उसकी ओर से देखभाल और व्यवस्था करने के लिए 'मित्र' और 'प्रेस' के लिये अधिष्ठाता भी नियत होते रहे। इनमें सर्वश्री भोलानाथजी, शालग्रामजी, श्रीरामजी शोभारामजी, नाथमलजी, धर्मेन्द्रनाथजी आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। बा० पूर्णचन्द्र एडवोकेट तो लगातार वर्षों 'मित्र' और प्रेस के अधिष्ठाता रहे।

प्रेस और 'आर्यमित्र' को अपने जीवन में कभी आर्थिक लाभ हुआ और कभी हानि हुई, परन्तु इनके द्वारा वैदिकधर्म और आर्यसमाज के प्रचार तथा विस्तार में बड़ी सहायता मिली। 'आर्यमित्र' को आर्यसमाज के विरोधियों से जबरदस्त टक्कर लेनी पड़ी और वह भयंकर आर्थिक हानि उठाकर भी कार्य-क्षेत्र में निर्भयतापूर्वक डटा रहा। आर्यसमाज के लिये सजीव उपदेशकों ने जितना काम किया उससे पचासों गुना अधिक काम इस अर्जीव और अकेले उपदेशक द्वारा हुआ तथा हो रहा है।

कहने को 'आर्यमित्र' उत्तरप्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का मुखपत्र है, परन्तु उसका प्रचार सारे देश में है, और वह देश के सब आर्यसमाजों के समाचार प्रकाशित करता और आर्यसमाज-सम्बन्धी अखिल भारतीय समस्याओं पर भी सोचता-विचारता है। भारत के उपनिवेशों में भी 'आर्यमित्र' का प्रचार और आदर है।

सन् १९२५ ई० में श्रीमद्दयानन्द जन्म शताब्दी के अवसर पर 'आर्यमित्र' को दैनिक करने का प्रश्न बड़े जोर से उठा। दस-बारह दिन तक वह दैनिक रूप में निकाला भी, परन्तु अर्थाभाववश प्रकाशन स्थगित कर देना पड़ा। और भी दो एक बार दैनिक का आन्दोलन चला, परंतु वह भी उपेक्षा की अँधियारी में विलीन हो गया।

गत १ दिसम्बर से 'आर्यमित्र' विशेष रूप से निर्मित 'आर्यमित्र प्रकाशन लिमिटेड' के संचालकत्व में प्रकाशित हो रहा है। यह कम्पनी साधारणतः आर्यसाहित्य प्रकाशित करने तथा विशेषतः 'आर्यमित्र' का दैनिक संस्करण निकालने के विचार से स्थापित की गयी है। इस कम्पनी का प्रत्येक हिस्सा २५) का है। संचालक-समिति के अध्यक्ष राजगुरु श्री धुरेन्द्र शास्त्रीजी और प्रबन्ध-संचालक श्रीयुत मदनमोहन सेठ, एम० ए०, रिटायर्ड डिस्ट्रिक्ट जज हैं। कम्पनी की ओर से 'मित्र' को दैनिक बनाने के लिए पूरा प्रयत्न हो रहा है।

आर्यजनता और दैनिक 'आर्यमित्र' के प्रेमियों का कर्तव्य है कि वे कम्पनी के हिस्से बेचने-बिकवाने का पूर्ण प्रयत्न करें, जिससे 'मित्र' अति शीघ्र दैनिक होकर धर्म, देश तथा समाज की यथेष्ट सेवा कर सके। 'आर्यमित्र प्रकाशन लिमिटेड' का मुख्य कार्यालय, ५, मीराबाई मार्ग, लखनऊ में है।

विज्ञान-वार्ता

विश्व-विख्यात जादूगर

श्री रामेन्द्रसिंह, एम० एस-सी०

प्रोफेसर पी० सी० सरकार का जन्म बंगाल के एक प्रसिद्ध संगीतज्ञ के कुटुम्ब में हुआ था। आज भारत के इस प्रतिभाशाली जादूगर के लोमहर्षक चमत्कारों ने संसार को विस्मित और मुग्ध कर दिया है। गत मई मास में शिकागो की विश्व-जादू-परिषद् के अधिवेशन में भारत का प्रतिनिधित्व श्री सरकार ने ही किया था। अमरीका में आपने जादू का नोबेल प्राइज (स्फिक्स गोल्ड एवार्ड) प्राप्त किया, जो संसार के सर्वश्रेष्ठ जादूगर को प्रदान किया जाता है। ब्रिटेन में श्री सरकार ने टेलीविजन द्वारा अपने चमत्कारों का प्रदर्शन किया। पेरिस की एक आम सड़क की भीड़ में अपनी आँखों से पट्टी बाँधकर आपने बड़ी तेजी से साइकिल चलाकर जनता में सनसनी पैदा कर दी। लोगों का अनुमान है कि सरकार की आँखों में एक्स-रे की शक्ति है।

एक मेज पर एक महिला को लिटा दिया गया और प्रोफेसर सरकार ने बिजली से चलने वाला लकड़ी काटने का गोल आरा उस महिला के शरीर पर पूरी गति से चलाया, किन्तु महिला को कुछ भी हानि नहीं पहुँची। प्रोफेसर सरकार के चमत्कार को नमस्कार करने के लिये उनके कमालों के ऐसे अनेक उदाहरण आपको मिलेंगे।

हाल ही में जर्मनी की जादू-परिषद् के प्रमुख सदस्यों के सम्मुख अपनी कला के प्रदर्शन द्वारा प्रोफेसर सरकार ने 'विश्व के सर्वश्रेष्ठ जादूगर' की उपाधि प्राप्त की है। भारत के दर्शक यद्यपि जादूगरी के चमत्कारों को देखने के काफी आदी हैं, किन्तु श्री सरकार के कमालों को देखकर तो उन्हें भी कहना पड़ा है कि ऐसे काम उन्होंने जीवन में कभी नहीं देखे। जापान, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, अमेरिका और अनेक अन्य देशों ने भारत के इस जादूगर की मुक्तकंठ से सराहना की है।

सोयाबीन

सोयाबीन के दूध के प्रयोग के सम्बन्ध में सरकार ने विशाल पैमाने पर अनुसंधान आरम्भ कर दिये हैं। ५१० सैनिकों को बंगलोर की भारतीय विज्ञानशाला में तैयार किया हुआ सोयाबीन का दूध दिया जा रहा है। इन सैनिकों का स्वास्थ्य उन सैनिकों के स्वास्थ्य से कुछ अच्छा है जिनको सामान्य दूध दिया जा रहा है। पिछले कुछ वर्षों के अनुसंधानों से यह प्रमाणित हो गया है कि सोयाबीन के दूध में वे सब गुण मौजूद हैं जो सामान्य दूध में होते हैं।

सामयिक समस्याएँ

जन-गणना में 'आर्य' लिखाइये
आर्यसमाजों को आदेश

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा ने अपने अधीन आर्य-समाजों के मन्त्री महाशयों को भ्रमण पत्रिका संख्या २ द्वारा निम्नलिखित आदेश दिया है—

१९५१ में इस देश की जन-गणना होगी जो ९ फर्वरी १९५१ से प्रारम्भ होकर १ मार्च को सूर्योदय के साथ समाप्त होगी। सरकार ने इस गणना में धर्म शीर्षक में हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों, सिक्खों और जैनियों के लिये पृथक्-पृथक् उप शीर्षक रक्खे हैं, और इनके अतिरिक्त कोई व्यक्ति अपना जो धर्म बतायेगा वही लिखा जायगा। सार्वदेशिक सभा की विज्ञप्ति सं० १ दि० १ सितम्बर १९५० को दृष्टि में रखकर, इस सभा की अन्तरङ्ग सभा दिनाङ्क २६ दिसम्बर १९५० ने हमारा धर्म वैदिक होते हुए भी सरकार के जन-गणना के कार्य पर विचार करके तथा सम्पूर्ण स्थिति को दृष्टि में रख कर निश्चय किया है कि आर्य-समाजियों को अपना धर्म 'आर्य' लिखाना चाहिए और इसको बिना किसी तर्क अथवा ननुनच के मान लेना चाहिए। यत्न ऐसा होना चाहिए कि प्रत्येक आर्य-समाजी अपने को 'आर्य' ही लिखाये, चाहे वह आर्यसमाज का रजिस्टर्ड सदस्य हो या न हो। वैदिक धर्म में अन्य जो भी आस्था रखता हो, उसको भी 'आर्य' ही लिखाने का पूरा-पूरा यत्न होना चाहिये। इस बात का भी विशेष ध्यान रखना होगा कि गणक लोग ठीक ठीक रीति से आर्य लिखानेवालों को 'आर्य' अङ्कित करते हैं या नहीं। यदि न करें तो उच्च अधिकारियों का ध्यान आकृष्ट करके ठीक ठीक लिखने के लिये बाध्य करना होगा। आप इस कार्य को महत्व-पूर्ण समझते हुये अभी से इसके लिये यथोचित व्यवस्था करें। यह अच्छा होगा कि इस कार्य को किन्हीं विशेष व्यक्तियों या उपसमिति के अधीन करके करायें। इष्ट यह है कि यह कार्य उत्तम रीति से और व्यवस्थित रूप से सम्पादित हो, और इसके लिये आप जो भी व्यवस्था उचित समझें करें। इस कार्य को संगठित रूप देने और 'साम्य' लाने के लिये यह भी आवश्यक है कि एक स्वर होकर सभी अपने को केवल 'आर्य' लिखावें। इस शब्द के साथ कोई और शब्द या शब्दांश आगे-पीछे न जोड़ा जावे। थोड़ा-सा भी भेद मात्र बहुधा अकथनीय हानियों का कारण बन जाता है। कृपया इस बात पर विशेष ध्यान दीजिये।

निवेदकः—राजगुरु धुरेन्द्र-शास्त्री प्रधान, पीतमलाल, एम० एस० सी०, एल० एल० बी० मंत्री।

मेरठ में आर्य महा सम्मेलन
(श्री विसम्भर सहाय प्रेमी)

मेरठ जिले के आर्य भाइयों ने इस बार मेरठ में आर्यसम्मेलन करने का निश्चय किया है। गत मास सार्वदेशिक सभा के प्रधान राजगुरु श्री धुरेन्द्र शास्त्रीजी मेरठ पधारे थे। आपने मेरठ के आर्य भाइयों को प्रेरणा की थी कि इस वर्ष आर्यसम्मेलन उत्तर प्रदेश में किया जाय तथा मेरठ ही इस कार्य के लिये सबसे उपयुक्त स्थान होगा। आपने यह सुझाव रखा था कि मेरठ के आर्य-बन्धु इस महासम्मेलन का समस्त भार ग्रहण करते हुए इसे पूर्ण रूप से सफल बनाने का उद्योग करें। यहाँ के प्रमुख आर्य-बन्धुओं तथा बहिनों ने उनके इस सुझाव का स्वागत किया और सर्व सम्मति से निश्चय किया कि दशहरे के अवसर पर यह सम्मेलन धूम-धाम से मेरठ नगर में किया जाय।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि आज आर्यसमाज के प्रचार की अत्यन्त आवश्यकता है। नैतिक पतन के कारण हमारा मानव-समाज अवनति की ओर जा रहा है। मनुष्यों की धार्मिक प्रवृत्तियों में बराबर परिवर्त्तन होता जा रहा है। खान-पान, आचार-विचार की नींव हिल रही है। पारस्परिक प्रेम तथा सहानुभूति का अभाव होता जा रहा है। आर्यसमाज ने ५० वर्षों के त्याग, बलिदान तथा वैदिक धर्म-प्रचार के द्वारा जो वातावरण उत्पन्न किया था, वह अब परिवर्तित होता जा रहा है। मनुष्यों की रुचि वैदिक ग्रन्थों के स्वाध्याय की ओर आज उतनी नहीं दिखाई देती, जितनी आज से दस वर्ष पूर्व थी।

इस स्थिति को सम्मुख रखते हुए प्रत्येक आर्य भाई यही कहेगा कि इस दशा की उन्नति करने के लिये प्रयत्न किया जाय। ऐसा करने के लिये जन साधारण तक आर्यसमाज के विचार पहुंचने आवश्यक हैं। इसके लिये इस प्रकार के महा सम्मेलन बड़े सहायक सिद्ध हुए हैं। अतः मेरठ में होने वाले आर्य महा सम्मेलन से जनता में जागृति होने की पूरी आशा है।

मेरठ में सम्मेलन किये जाने में सब प्रकार की सफलता प्राप्त हो सकती है। आर्यसमाज के क्षेत्र से बाहर के अनेकों नेता देहली से मेरठ आकर सम्मेलन को सफल बनाने में योग दे सकते हैं, तथा अपने विचारों से आर्यसमाज को लाभ पहुंचा सकते हैं। इस प्रकार नेताओं में राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसादजी, भारत के उपप्रधान मंत्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य, माननीय श्री के० एम० मुंशी, स्वास्थ्य-मन्त्रिणी राजकुमारी अमृतकौर आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त मेरठ जिले में आर्यसमाज के कार्य का अच्छा क्षेत्र है।

मेरठ स्वागत-सत्कार करने में अपना एक विशेष स्थान रखता है। उसका पुष्ट प्रमाण हिन्दी साहित्य सम्मेलन का २६ वां बृहद् अधिवेशन कहा जा सकता है, या आर्य-जगत् में १९३७ में आर्य प्रतिनिधि सभा की स्वर्ण जयन्ती का महोत्सव। अतः हम आशा करेंगे कि मेरठ जिले के ही नहीं किन्तु कमिश्नरी-भर के आर्य इस महोत्सव को पूर्ण सफल बनाने में पूरा योग प्रदान करेंगे।

आर्य शिक्षण-संस्थाएं

उत्तर प्रदेश में, राज्य तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्डों व म्यूनिसिपल बोर्डों के द्वारा स्थापित शिक्षणालयों के अतिरिक्त, केवल जनता द्वारा स्थापित अथवा संचालित शिक्षण-संस्थाओं की संख्या एक सहस्र है। इसमें से एक तिहाई अर्थात् ३०० के लगभग आर्य-समाज की है। इन ३०० आर्य-सामाजिक संस्थाओं में आर्य-बन्धुओं की गाढ़ी कमाई का लाखों रुपया तथा निःस्वार्थ परिश्रम लगा है। इतना होते हुये भी आर्यसमाज की आवाज नहीं गूंजती। हमारी सम्मति शिक्षा-प्रसार अथवा शिक्षा-सम्बन्धी सुधार-योजना और नीति निश्चय करने में नहीं मांगी जाती। क्यों? केवल इसलिये कि हमारी शिक्षण-संस्थायें असंगठित हैं। एक दूसरे से कोई सम्पर्क नहीं रखतीं। ३०० आर्य शिक्षण-संस्थाओं में से केवल ५० प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के शिक्षा-विभाग से अब तक सम्बद्ध हुई हैं।

प्रान्तीय गवर्नमेंट ने अभी एक यह कानूनी अधिकार प्राप्त किया है कि किसी भी शिक्षणालय की प्रबन्धक-समिति को शिथिल करके उसके स्थान में वह किसी भी व्यक्ति को प्रबन्धक (एडमिनिस्ट्रेटर) नियुक्त कर दे। सरकार के अधिकारी वर्ग का कथन है कि गवर्नमेंट ने परिस्थितियों से बाध्य होकर ऐसा अधिकार प्राप्त किया है। बहुधा देखा जाता है कि आपस की दल-बन्दी अथवा वैमनस्य के कारण प्रबन्धक समितियां निर्जीव अथवा शक्तिहीन हो जाती हैं और प्रबन्धक परेशान होकर कार्य करना त्याग देता है। ऐसी दशा में सम्बन्धित शिक्षणालयों में अव्यवस्था अथवा दुर्व्यवस्था हो जानी स्वाभाविक ही है। अध्ययन-कार्य बिगड़ जाने अथवा बन्द हो जाने से विद्यार्थियों का समय नष्ट होता है। विद्यार्थियों के कुछ संरक्षकों अथवा अन्यों को न्यायालय द्वारा प्रबन्धक नियुक्त करना पड़ता है ताकि अधिक सरकारी सहायता मिलती रहे। जनता को इस सारी कठिनाई से बचाने के लिये गवर्नमेंट ने प्रबन्धक (एडमिनिस्ट्रेटर) नियुक्त करने का अधिकार प्राप्त किया है।

अब आर्य जनता के सामने विचारणीय प्रश्न यह है कि किसी दुर्व्यवस्था होने की दशा में गवर्नमेंट द्वारा उसकी प्रबन्धक समिति का शिथिल किया जाना और उसके स्थान में एक अन्य उपयुक्त प्रबन्धक नियुक्त किया जाना उत्तम अथवा शोभाजनक है या

—आर्यसमाज छावनी नीमच का वार्षिकोत्सव १८ से २० दिसम्बर तक समारोह पूर्वक मनाया गया। राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री, स्वा० नारायणानन्दजी, प० रामसहायजी आदि के भाषण हुए। प्रभाव अच्छा पड़ा।

—आर्यसमाज सहपऊ (मथुरा) माननीय सर्दार पटेल और योगिराज श्री अरविन्दजी के देहावसान पर शोक-महानुभूति प्रकट करता है।

—शोक है कि गत ११ जनवरी को आ० स० पुरैनी (बिजनोर) के श्री म० छज्जूसिंहजी का ८५ वर्ष की आयु में देहान्त हो गया। आप आर्यसमाज पुरैनी के स्तम्भ थे। जीवन-भर आर्यसमाज की सेवा करते रहे और प्राण त्यागते समय भी आपको आर्यसमाज की ही चिन्ता थी। पुरैनी आ० स० दिवंगत आत्मा की शान्ति के लिये प्रार्थना तथा शोकाकुल परिवार के साथ शोक-सहानुभूति प्रकट करता है।

निर्वाचन

- आ० स० बरसाना-प्रधान-श्री भीमसिंहजी और मंत्री-श्री रोशनलालजी आर्य।

—आर्यसमाज शाहाबाद (हरदोई)-प्रधान—श्री ज्वालाशंकर वकील और मंत्री—श्री राधाकृष्ण गुप्त।

—आ० स० फतेहाबाद-प्रधान-श्री राजारामजी वकील और मंत्री-श्री निन्नूमलजी।

—भारतीय आर्यबन्धु संघ देहली-प्रधान-श्री देवव्रत जी धर्मेन्द्र और प्रधान मंत्री—श्री देवीदयालुजी आर्य।

प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान द्वारा। जो आर्य सज्जन इस विचार के हों कि प्रबन्ध में अव्यवस्था अथवा दुर्व्यवस्था होने की दशा में हस्तक्षेप करने का पूर्ण अधिकार प्रान्तीय सभा के प्रधान को हो, उन्हें चाहिये कि आर्य शिक्षण संस्थाओं के वर्त्तमान नियमोपनियमों में उचित संशोधन अथवा परिवर्तन कराके तुरन्त उसकी रजिस्ट्री करा दें और उसकी सूचना प्रदेशीय सभा के कार्यालय को दें ताकि प्रान्तीय सभा की ओर से इस सम्बन्ध में सरकार को लिखा जा सके।

देवीप्रसाद जौहरी,
अधिष्ठाता-शिक्षा-विभाग

आर्य्य जगत्

—आर्यसमाज पुरानी मण्डी सहारनपुर—प्रधान-श्री मगनलालजी और मंत्री-श्री कृष्णलालजी।

—आ० स० नागल (बिजनोर) प्रधान-श्री सीतारामजी आजाद और मंत्री-श्री सागरचन्द पवार।

—आ० स० गाजियाबाद-प्रधान-श्री सागरमलजी और मंत्री-प्रो० रत्नसिंहजी एम० ए०।

—आर्यसमाज लालगंज (रायबरेली)—प्रधान—श्री राममोहन और मंत्री-श्री जगेश्वरसिंह आर्य 'विशारद'।

—आ० स० जलालाबाद (शाहजहाँपुर)—प्रधान-बा० जानकीप्रसादजी और मंत्री-म० लक्ष्मीचन्दजी।

—आ० स० रामनगर (कानपुर) प्रधान—श्री व्रजमोहन त्रिपाठी और मंत्री-श्री सत्यनारायणजी पाण्डेय।

—आ० स० इटारसी-प्रधान-श्री मातादीन अग्रवाल और मंत्री-मास्टर कृष्णरावजी।

उत्सव-सूचनाएं

—गुरुकुल घासीपुरा (मुजफ्फरनगर) का वार्षिकोत्सव ९, १० तथा ११ फरवरी। नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश भी होगा।

—आ० स० जलालाबाद (शाहजहाँपुर) ३ से ६ मार्च तक। श्री सुलभा यतीजी तथा स्वा० ज्ञानानन्दजी (महता जैमिनी) कृपया अवश्य पधारें।

सार-सूचनाएं

—४ जनवरी १९५१ के 'आर्यमित्र' में प्रो० रमेशचन्द्र त्रिवेदी ने 'विश्व आर्य कैसे बने' शीर्षक लेख में जो सुझाव दिया है, वह महत्वपूर्ण है, उस पर विचार होना चाहिए।

पन्नालाल नागर, उज्जैन।

- पं० लक्ष्मण देवजी उपदेशक सभा, लखनऊ-मण्डल के अन्तर्गत उन्नाव तथा सीतापुर जिले में प्रचारार्थ भ्रमण कर रहे हैं। इन जिलों के आर्यसमाजों से प्रार्थना है कि उक्त उपदेशकजी के प्रचार-कार्य में पूर्ण सहयोग प्रदान करें। वीरसेन आर्य, लखनऊ-मंडलाधीश।

- गत ३१ दिसम्बर को मैंने आ० स० राजा का ताल (आगरा) का निरीक्षण किया। समाज की दशा शिथिल है। सदस्यों को उत्साहित किया। आशा है शिथिल दशा शीघ्र ठीक हो जायगी। प० क्षेत्रपालसिंहजी वैद्य, म० सुरेन्द्रसिंहजी और म० भँवरसिंहजी बड़े उत्साही हैं।

—गत ७ जनवरी को आ० स० पैंतखेड़ा (आगरा) का निरीक्षण किया, व्याख्यान दिया। यहां एक बार पुनः जाऊंगा तब समाज की शिथिलता दूर होगी।

मोहनलाल आर्य, निरीक्षक सभा, आगरा।

—सत्यज्ञान-निकेतन ज्वालापुर में अखिल भारतीय आर्यकुमार परिषद् की परीक्षाएं २८ जनवरी तथा ४ फरवरी १९५१ को होंगी। प्रत्येक दिन दो पत्र होंगे।

—केन्द्र-व्यवस्थापक

—श्रीयुत लाला गनेशीलालजी भूतपूर्व मन्त्री आर्यसमाज बयाना ने ३ दुकानें जिनको उन्होंने ६-७ हजार रुपये की लागत से स्थानीय मन्डी में निर्माण कराया था, दान देकर बयाना जिला भरतपुर में श्री दयानन्द सेवा सदन की स्थापना की है जिसका उद्देश्य महर्षि श्री दयानन्द द्वारा प्रतिपादित धर्म-शिक्षा तथा साहित्य का प्रचार करना है।

—मेरठ कालिज द्वारा आयोजित अन्तः कालिज भाषण प्रतियोगिता में गुरुकुल कांगड़ी विजयी रहा। विजयोपहार 'ट्राफी' के अतिरिक्त गुरुकुल कांगड़ी के वक्ताओं को प्रथम तथा द्वितीय श्रेष्ठ वक्ता होने के पुरस्कार भी मिले। ये वक्ता ब्र० श्रुतिकान्त और ब्र० नारायणदत्त थे। दोनों छात्र त्रयोदश श्रेणी में पढ़ते हैं।

आ० प्र० सभा की सूचनाएं

दयानन्द सप्ताह

सदा की भाँति इस वर्ष भी दयानन्द-सप्ताह ऋषि-बोधोत्सव २८ फरवरी से ६ मार्च तक मनाया जायगा। विस्तृत कार्यक्रम शीघ्र भेजा जायगा। सभास्थ आर्यसमाजों को अभी से उत्साह-पूर्वक आयोजना करनी चाहिये।

पीरमलाल सभा मंत्री

महिला-प्रचार मण्डल

२५ दिसम्बर १९५० की अन्तरंग सभा के निश्चयानुसार श्रीमती लक्ष्मीदेवीजी के स्थान पर श्रीमती शकुन्तलादेवीजी उक्त मण्डल की मन्त्रिणी नियुक्त हुई हैं। महिला-प्रचार-विषय में पत्र-व्यवहार उन्हीं के निम्न पते पर करना चाहिये—

श्रीमती शकुन्तलादेवी गोयल,
खैरनगर-दरवाजा, मेरठ शहर।

भूसम्पत्ति विभाग

श्री कालीचरणजी अधिष्ठाता भू-सम्पत्ति विभाग के प्रस्तावानुसार श्री देवीप्रसाद जौहरी उक्त विभाग के सहायक अधिष्ठाता नियुक्त किये जाते हैं।

कार्यकर्त्ता प्रधान

प्रविष्ट शिक्षा-संस्थाएं

निम्नलिखित आर्य शिक्षण संस्थाएँ उत्तरप्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा में प्रविष्ट की गई हैं।

बालकों की—डी० ए० वी० हायर सेकेण्डरी स्कूल मैनपुरी और अलीगंज (एटा), हायर सैकेण्डरी स्कूल धोरों (बरेली); डी० ए० वी० हायर-सेकेण्डरी स्कूल बलरामपुर (गोंडा), विज्ञानानन्द वैदिक जूनियर हाईस्कूल बदायूँ, आर्य जूनियर हाईस्कूल राजा का रायपुर (एटा)

बालिकाओं की—आर्य कन्या पाठशाला सुभाष नगर बरेली, पार्वती आर्य संस्कृत कन्या विद्यालय बदायूँ, आ० क० पा० गोला गोकरननाथ (खीरी) आ० क० पाठशाला हायर सेकेण्डरी स्कूल शाहजहांपुर, आर्य महिला विद्यालय कटियाटोला शाहजहांपुर, आर्य कन्या पाठशाला पुरानीमंडी सहारनपुर, आ० क० पा० लुकसर

देवीप्रसाद जौहरी, अधिष्ठाता-
शिक्षा-विभाग।

—

हीरक जयन्ती

आ० स० चौक, प्रयाग

उपर्युक्त आ० स० की हीरक जयन्ती ७ से १४ फरवरी १६५१ तक समारोह पूर्वक मनाई जायगी। आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध संन्यासी-महात्मा विद्वान् और देश के सुप्रसिद्ध नेता इस महोत्सव में पधारेंगे। अनेक विदुषी देवियाँ भी पधारने की कृपा करेंगी। सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ और भजनोपदेशक अपने सुमधुर एवम् शिक्षा-प्रद गायन से महोत्सव को सफल बनावेंगे। शारीरिक बल प्रदर्शक आश्चर्यजनक खेलों की भी व्यवस्था की गयी है। महोत्सव का उद्घाटन ७ फरवरी को होगा। सर्व साधारण से पधारने के लिये प्रार्थना है।

खजानसिंह मंत्री—
हीरक-जयन्ती

—

स्वतन्त्रता दिवस पर आर्यवीर-दल

समस्त आर्यवीर-दलों को आदेश दिया जाता है कि वह इस पवित्र दिन को पूरे उत्साह से मनायें। प्रत्येक नगर में सामूहिक रूप से राष्ट्रिय गान, ध्वजारोहण (अपने ध्वज के साथ राष्ट्रिय ध्वज) तथा राष्ट्र के प्रति हमारा कर्तव्य इस विषय पर एक व्याख्यान भी अवश्य होना चाहिये।

ओमप्रकाश पुरुषार्थी
प्रधान सेनापति

—

श्री प्रकाशचन्दजी बीमार हैं

अजमेर निवासी कविवर श्री प्रकाशचन्द्रजी कुछ दिनों से बीमार हैं। मैं उनसे गत २ जनवरी को अजमेर में मिला। उन्हें वात-व्याधि से पीड़ित देख कर मुझे बड़ा दुःख हुआ। दोनों घुटनों में सूजन और भयंकर दर्द है। उठना-बैठना, चलना-फिरना बड़ा दुष्कर हो रहा है। आजकल आप कर्मवीर श्री जियालालजी की संरक्षता में, केसरगंज अजमेर आर्यसमाज-मन्दिर में रह रहे हैं। उनकी चिकित्सा और परिचर्या उत्तम प्रकार से हो रही है परन्तु लाभ के लक्षण दिखाई नहीं दे रहे। प्रकाशजी ने जीवन-भर आर्यसमाज की सेवा की है और अच्छे होते ही फिर समाज-सेवा में संलग्न हो जायंगे। वे सेवा करने के लिये छटपटा रहे हैं परन्तु विवश हैं, परमात्मा उन्हें शीघ्र आरोग्य प्रदान करे, यही प्रार्थना है।

सुरेन्द्र शर्मा गौर शाहदरा देहली

[श्री प्रकाशजी बड़ी लगन से पूर्वक गद्य पद्यात्मक प्रचार करते रहे हैं। उनकी वाणी में प्रभाव और रस है। उनकी पीड़ा से हमें दुःख और चिन्ता है। कर्मवीर जियालालजी बड़े सहृदय हैं। वे प्रकाशजी के कष्ट-मोचन के लिए पूरा प्रयत्न करेंगे। आवश्यकता पड़ने पर अन्य आर्य भाइयों को भी प्रकाशजी की सेवा-शुश्रूषा के लिये सादर-स्नेह आगे आना चाहिये। अपने उपदेशकों और प्रचारकों की आवश्यकता के समय उचित सेवा करना हम सब का विशेष कर्तव्य है।

सम्पादक]

—

आर्य-मित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

सचालक—आयमित्र प्रकाशन लि० लखनऊ

१ फरवरा १६५१

साकार

सत्य और अहिंसा

जन्म
२ अक्टूबर ८५६



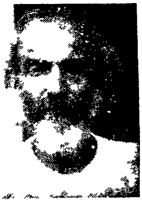
निधन
२ जन । १६४

राष्ट्रपिता



राष्ट्रपति

वतमान ।शत्ता पद्धति म चारत्र गठन क ।लय वाइ थ न नहा हे। आधुनिक शिक्षा विधि में म स्तष्क का न्नति तो हा जा ती हं परन्तु चरित्र का निमाण नहा हो पाता। ।वश्व वद्य लया क शिक्षा में चरित्र ।नमाण क लिय भी पूर आयोजन होना चाहिए सा व्यत जीवन क लिय अत्यन्त आवश्यक हं। महा मा गाधी सा नक भावना स ही सार दश को जगा गय। स य आर अ हसा का मूल तत्व सात्विकता ही ह। नवयुवका को दश का काय भा आर उत्तरदायत्व सभालने क लिय पूण रूप स तयार हाना चाहिए इस तया का मूलाधार चरित्र गठन स्वाथ त्याग अनुशासन आर स्वा वलम्ब हं स्वत त्रता प्राप्ति क लिये जितना तप याग करना पड़ा स्वतन्त्रता का रक्षा क लिए उससे भी अधिक तपस्या का आवश्यकता ह पहल दश क सामने एक कठिनाइ थी — विदेशी सत्ता को समाप्त करना अब अनेक कठिनाइयां आर समस्याए है जिनम सफल होने के लिये ईमानदारी और सचाइ स हमें तयारी करनी पडगा।



राष्ट्रिय सभाध्यक्ष

[२६ जनवरी १६५१ को आगरा कालिज क शतात्तराय रजत जयन्ता-महोत्सव में दिये गय माननीय राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र प्रसादजी क भाषण का साराश]

आर्यमित्र प्रकाशन लि० लखनऊ

डाइरेक्टरों की रिपोर्ट

डाइरेक्टरों की रिपोर्ट तीसरी वार्षिक जनरल मीटिंग के समक्ष प्रस्तुत्यर्थ, जो कम्पनी के रजिस्टर्ड कार्यालय, नारायण स्वामी भवन ५, मीराबाई मार्ग, लखनऊ में रविवार ११ फरवरी १९५१ को १ बजे मध्याह्नोत्तर होगी।

१— २६ सितम्बर १९५० की वार्षिक जनरल मीटिंग के नि० सं० ४ के अनुसार कम्पनी ने १ दिसम्बर १९५० से भगवानदीन आर्यभास्कर प्रेस तथा आर्य-मित्र का चार्ज आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश से मूल्यांकन (Valvation) के अनुसार २३०००) के ९२० Paid up हिस्से प्रेस के लिये और १००००) के ४०० (Paid up] हिस्से साख (Good will) के लिए देकर ले लिया है। उपर्युक्त निश्चय के अनुसार ही प्रेस का पुनर्संगठन लखनऊ में किया जा रहा है तथा 'आर्य-मित्र' साप्ताहिक का सम्पादन और प्रकाशन पं० हरिशंकर शर्मा द्वारा सुचारु रूप से आगरा से हो रहा है। दैनिक पत्र निकालने की सम्भावना २ लाख रुपया एकत्र होने पर निर्भर है। अतः कम्पनी के चेयर-मैन श्री राजगुरु पं० धुरेन्द्र शास्त्री इसके लिए अथक प्रयत्न शीघ्र ही प्रारम्भ करेंगे।

२—१ दिसम्बर १९५० से कम्पनी ने व्यवसाय आरम्भ किया है। इस वर्ष हानि-लाभ (Profit and loss) के लेखानुसार ६२१॥=) का लाभ हुआ है, जो व्याज के कारण है। व्यवसाय से हानि लाभ का अनुमान आगामी वर्ष के अन्त में हो सकेगा। प्रेस के जीर्णोद्धार और आर्य मित्र की सुव्यवस्था में अधिक व्यय हो रहा है, प्रेस में अब तक एक नई कटिंग मशीन, एक नया ट्रेडिल और नये टाइप आदि आ चुके हैं।

३- ३ जुलाई १९४९ से ३१ दिसम्बर १९५० तक ५८१४ हिस्सों की बिक्री से ६५१७५ नकद धन जमा हुआ, इसके अतिरिक्त भगवानदीन आर्य भास्कर प्रेस के सामान के रूप में (Valuation) के अनुसार २३०००) तथा साख के रूप में १००००) मिला जिसके प्रतिरूप १२२० हिस्से आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश को दिए गए। हिस्सों की बिक्री से तथा अन्य प्रकार १०१४०४।≡)। की आय अब तक हुई है। व्यय में गत वर्ष के प्रारम्भिक १८५५॥≡) व्यय और शेयर कमीशन ७५८॥।=)॥। तथा इस वर्ष के व्याज उचन्त १७२२≡) को छोड़कर अधिकतर प्रेस की मशीनों के व्यय तथा आर्य-मित्र और नई मशीनों के लिये दिए हुए उचन्त ६६१२) का लेखा है। १ दिसम्बर से ३१ दिसम्बर तक आर्य मित्र के व्यय का हिसाब नहीं मिला था। शेष धन बैंक और विश्वस्त स्थान पर जमा रहा, जिसके २८६३) इस वर्ष के व्याज से २२४८॥।=) व्यय निकाल कर (Profit and loss) के अनुसार ६२१॥=) का लाभ हुआ। इस प्रकार व्यवसाय प्रारम्भ होने तक मूलधन पर कोई भार नहीं पड़ा।

४—इण्डियन कम्पनीज ऐक्ट के नियमानुसार इस वर्ष डाइरेक्टरों की १।२ संख्या अवकाश प्राप्त करती है और वे नये चुनाव के लिए पुनः उपस्थित हैं।

५—श्री जगदीशप्रसाद एण्ड कम्पनी चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट्स, पिछले आडिटर नए चुनाव के लिए अपने को पुनः प्रस्तुत करते हैं।

डाइरेक्टर-मण्डल की आज्ञानुसार
मदनमोहन सेठ,
मैनेजिंग डाइरेक्टर

सूचना

श्रीमान्जी, नमस्ते।

आर्य-मित्र-प्रकाशन लि० की Statutory Meeting तथा द्वितीय जनरल मीटिंग कम्पनी के रजिस्टर्ड कार्यालय नारायण स्वामी भवन ५, मीराबाई मार्ग लखनऊ में रविवार ता० ११ फरवरी १९५१ को मध्याह्नोत्तर १ बजे से प्रारम्भ होगी। कार्यक्रम निम्न है—

१. प्रथम मीटिंग—

(क) Statutory Report की स्वीकृति।

२. द्वितीय मीटिंग

(क) पहली जनवरी से ३१ दिसम्बर १९५० तक के आडिट हुए हिसाब की स्वीकृति।

(ख) डाइरेक्टरों का चुनाव।

(ग) आडिटर की नियुक्ति तथा पारिश्रमिक का निश्चय।

(घ) अन्य विषय प्रधानजी की आज्ञानुसार।

भवदीय
लखनऊ — मदनमोहन सेठ,
२०-१-५१ — मैनेजिंग डाइरेक्टर

जनगणना के संबंध में

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा देहली के अन्तरंग सभा दिनांक २१ जनवरी १९५१ के निश्चयानुसार उत्तर प्रदेशीय समस्त आर्यसमाजों और आर्यों को प्रेरणा की जाती है कि आगामी जनगणना में जो ९ फरवरी सन् १९५१ से प्रारम्भ होने वाली है, धर्म के खाने में प्रत्येक आर्यसमाजी हिन्दू के आगे कोष्ठ में अपने को "आर्य" ही अंकित करावे। सार्वदेशिक सभा ने इस सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रश्नों पर विचार कर लिया है और परिणाम-स्वरूप यह अन्तिम सूचना प्रकाशित की है। आशा है, आर्यजनता तदनुसार कार्य करने की कृपा करेगी।

पीतमलाल, प्रधानमन्त्री, सभा

[उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधिसभा का इस विषय में यह अन्तिम आदेश है। समस्त आर्यसमाजों और आर्यों को इसी के अनुसार कार्य करना चाहिए। सभा को अपने पहले आदेश में इसलिये परिवर्तन करना पड़ा कि आर्य सार्वदेशिक सभा ने अपना अन्तिम निश्चय उक्त आधार पर किया है। —सम्पादक]

महात्मा श्रीरामजी बीमार हैं

आगरा आर्यसामाजिक जीवन के प्राण, वृन्दावन गुरुकुल के पूर्व मुख्याधिष्ठाता महात्मा श्रीरामजी आजकल सख्त बीमार हैं। आपको 'कैंसर' रोग हो गया है। मूत्र-अवरोध के कारण मूत्राशय में छिद्र करना पड़ा है। आजकल महात्माजी स्थानीय बड़े अस्पताल में हैं। एक तो ८६ वर्ष की आयु, फिर रोग की भयङ्करता, अतः आप अत्यन्त निर्बल हो गये हैं। आदमियों को पहचान तो लेते हैं, परन्तु बोल-चाल की शक्ति अत्यन्त क्षीण होगयी है। आप 'ओम्' और गायत्री के जाप में ही समय बिताते हैं। २६ जनवरी को राजगुरु श्री पं० धुरेन्द्र शास्त्रीजी अस्पताल में महात्माजी को देख कर बड़े करुणार्द्र होकर बोले— आगरा आर्यसमाज के एक महारथी श्री ठा० माधवासहजी तो पहले ही चले गये अब यह दूसरे भीष्म पितामह भी मरण-शय्या पर हैं! परमात्मा महात्मा श्रीरामजी को इस भयङ्कर कष्ट के सहने की शक्ति-सामर्थ्य और आरोग्यता प्रदान करे। यही प्रार्थना है।

सभा के वार्षिक चित्र

उत्तर प्रदेशीय समस्त आर्यसमाजों को सूचित किया जाता है कि वार्षिक प्रतिनिधि चित्र (फार्म) सभा-कार्यालय से १६ व १७ जनवरी ५१ को प्रत्येक समाज में भेज दिये गये हैं। जिस समाज में न पहुँचे हों, कृपया सभा से मंगा लेवें, और नियमानुसार चित्रों की पूर्ति करके दशांश, प्रतिनिधि-शुल्क आदि के साथ भेजने का कष्ट करें।

भृगुदत्त तिवारी,
सभा-मंत्री

हार्दिक धन्यवाद

श्री पं० धर्मपालजी विद्यालङ्कार ने अवैतनिक रूप से 'आर्य-मित्र' का गत कई वर्षों तक सुयोग्यता पूर्वक सम्पादन किया, इसके लिये मैं उत्तरप्रदेशीय आर्य-प्रतिनिधि सभा की ओर अपनी ओर से पण्डितजी को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। सभा पण्डितजी की इस महती कृपा के लिये अत्यन्त आभारी है।

मदनमोहन सेठ,
का० वा० प्रधान, सभा

तेजोऽसि तेजोमयि धेहि।

आगरा, माघ कृष्ण १० संवत २००७ वि० गुरुवार ता० १ फरवरी १९५१
दयानन्दाब्द १२६ सृष्टि संवत् १९७२९४९०५०

'रामराज्य' कैसे हो ?

महात्मा गांधी भारतवर्ष में 'रामराज्य' स्थापित करना चाहते थे। 'रामराज्य' से उनका मतलब उस राज्य से था, जिसमें जनता 'दैहिक', 'दैविक' और 'भौतिक' दुःखों से मुक्त हो जाय। सब लोग सुख-सम्पन्न और समृद्धिशाली बनें। इसके लिये उन्होंने कहा था कि यह सब उसी समय सम्भव होगा, जब शासक और जनता दोनों के कार्यों तथा व्यवहारों में आध्यात्मिकता प्रवेश करेगी। लोगों के मन, वचन और कर्म तीनों में समता, सचाई तथा ईमानदारी परिलक्षित होगी। अब हमें अपने अन्तःकरण से दरियाफ्त करना चाहिए कि क्या हम वास्तव में सच्चे और ईमानदार हैं, क्या हम सचमुच अपने अन्तरात्मा के संकेत पर काम कर रहे हैं ? नहीं ! फिर 'रामराज्य' का स्वप्न क्यों देखते हैं, क्यों एक दूसरे की शिकायत करने में वक्त बरबाद करते हैं। सरकारी मन्त्री जनता में से ही बने हैं, वे सत्ता की बागडोर सँभालने के कारण 'देवता' नहीं बन गये और न बन सकते हैं। पद का मद उनमें भले ही आजाय। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि जैसी जनता है, वैसे ही शासक है, क्योंकि उसी के वे अंग हैं। एक टंकी में जैसा रंग भरा है, वह वैसा ही रहेगा। चाहे उसे टट्टी के तामलोट में भरिये, चाहे पूजा के पात्र में। चाहे टीन के कनस्तर में रखिये, चाहे सोने-चांदी की प्यालियों-थालियों में। रंग वही रहेगा। हम क्यों समझते हैं कि कोई साधारण व्यक्ति किसी उत्तरदायित्वपूर्ण उच्च पद पर प्रतिष्ठित होकर महामानव बन जायगा।

जिन लोगों की कारगुजारी से जनता भली भाँति परिचित हो चुकी है, जिनके अनैतिकतापूर्ण नाटक को पबलिक ने अच्छी तरह देखा है, उन्हें मेल-मिलाप, धौंस-धमकी, प्रलोभन-प्रतारण या बिरादरी अथवा सम्प्रदाय के कारण बार-बार अपना मत दान देकर राजनैतिक संस्थाओं में भेजना महा मूर्खता ही नहीं देश का घोर अहित करना है। जो मत-दाता जानबूझ कर अपने मतों का दुरुपयोग करते हैं, उन्हें शासन की सुव्यवस्था के लिये दुखड़े रोने का क्या अधिकार है और वे किस लिये कहते हैं कि 'रामराज्य' क्यों नहीं हो पाया।

आजकल आर्य्यसामाजिक जगत् कुछ राजनैतिक नेताओं के मुँह से अपनी प्रशंसा का आलाप सुनकर बड़ा प्रसन्न है और कहता है कि कॉंग्रेस तो बीत गयी अब सारा देश मेरी ओर ही आशा-भरी टकटकी लगाये बैठा है। जी हाँ, कॉंग्रेस जरूर बीत गयी, परन्तु खुद आर्य्यसमाज की अवस्था भी तो देखिये, उसमें कितना जीवन शेष है। उसे भी गया-बीता क्यों नहीं कहा जाय। जिस समाज का संघटन बुरी तरह ढीला हो, जिसमें अपनी-अपनी संस्थाओं के लिये धन बटोरने में ही पुरुषार्थ की पराकाष्ठा समझी जा रही हो, फिर भी संस्थाएँ भूखों मर रही हों, जिसकी लेखनी और वाणी अत्यन्त मन्द गति से काम कर रही हो, जो पद-लोलुपता और अधिकार-लिप्सा पर प्राण दे रहा हो, जिसकी कार्य-क्षमता कुछ समाजों के सत्संगों और वार्षिकोत्सवों तक ही सीमित हो, जो अपने को संकीर्णतापूर्ण रस्मी ढाँचे में ढाल रहा हो, जिसके सैकड़ों आर्य-समाजों से वार्षिक अधिवेशनों में केवल कुछ सौ प्रतिनिधि एकत्र होते हों, नैतिकता की दृष्टि से भी जिसका विशेष महत्व न हो, आचार-सम्पन्नता की धाक भी जिसकी धीमी पड़ गयी हो, वह आर्यजगत् किस बल-बूते पर देश का उद्धार कर सकेगा, वह कांग्रेस की शुद्धि करने में कैसे समर्थ होगा। प्रशंसा के गीतों से प्रसन्न होना और बात है, कर्त्तव्य-परायणता दूसरी। किसी ने ठीक कहा है, अरे चिकित्सक, तू दूसरों के ज्वर की चिकित्सा पीछे करना, पहले अपना बुखार तो दूर कर ले। आर्यसमाज की भी यही हालत है। यदि आर्य-समाज अपने अन्दर घुसी हुई बीमारियों का इलाज नहीं कर सकता, तो उसमें कौन चिकित्सा करायेगा और उसे दूसरों के इलाज करने का हक भी क्या है। 'स्वराज्य' कांग्रेस के प्रयत्नों से प्राप्त हुआ, 'सुराज्य' या 'रामराज्य' की स्थापना चाहे तो आर्यसमाज कर सकता है। लेकिन उसी समय जब वह स्वयम् अपने में नैतिकता, सदाचरण, कर्तव्यनिष्ठा, और तप-त्याग के भाव भरले। अपनी प्रशंसा से खुश होने या आत्म-श्लाघा को दुहराने-तिहराने से न तो स्वयम् आर्य-समाज का भला होगा और न वह देश का ही हित कर सकेगा। हाँ, थोड़े दिनों में वह संकीर्ण सम्प्रदाय अवश्य बन जायगा।

सार्वदेशिक और प्रान्तीय सभाएं

हम इन स्तम्भों में कई वार लिख चुके हैं कि आर्यसमाजों का संघटन बहुत शिथिल है। संघटन की यह शिथिलता प्रान्तीय और सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभाओं में भी पहुच रही है। दोनों सभाओं के दो-चार अधिकारी ही अपनी शक्ति-भर काम करते रहते हैं, शेष सब सदस्य कभी-कभी कार्य समितियों के अधिवेशनों में सम्मिलित होजाने को ही अपने कर्त्तव्य की चरम सीमा मान लेते हैं। कितने ही कम-कम-रियों का उत्साह तो सभाओं में अपने को निर्वाचित कराकर ही समाप्त हो जाता है। फिर न कभी वे 'मीटिंग' में आते हैं, और न कोई काम करते हैं। ऐसे आलंकारिक कार्यकर्त्ताओं और सदस्यों की ही भरमार सभाओं और समाजों में दिखाई देती है। ये लोग दूसरे लोगों की तो आलोचना करने में आनन्द अनुभव करते हैं, परन्तु स्वयम् अपने सम्बन्ध में किसी प्रकार की आलोचना या शिकायत सुनने को तैयार नहीं रहते। आर्यसमाज अब तक दूसरों की आलोचना करता रहा है, पर आज वह स्वयम् आलोचना का विषय है। हमारी लेखनी और वाणी बँधी गत बजाने वाली है। वे प्रशंसा तो बड़ी सरलता से कर डालती है, पर फावड़े को फावड़ा कहना नहीं जानतीं। हम समझते हैं कि यह गति बहुत दिनों तक जारी नहीं रह सकती। हमारी शिरोमणि सभाओं के सतर्क और सचेष्ट होने से ही काम चलेगा, उन्हें स्वयम् अपने में जीवन-जागृति लाकर आर्य जनता को भी कर्मण्य बनाना होगा। केवल प्रथा-पूजा या रस्म अदायगी से काम नहीं हो सकती। आर्यसमाज कई दृष्टियों से रूढ़िवादी बन गया है। निःसन्देह उसकी रूढ़ियाँ अन्य रूढ़ियों से भिन्न हैं। प्रत्येक नगर, तहसील और जिले में आर्यसमाजों के संघटन का कार्य शुरू कर देना चाहिए। संघटन होने पर ही शिरोमणि सभाओं के आदेशों पर अमल हो सकेगा। शिरोमणि सभाओं से भी हम बड़ी विनम्रता से निवेदन करेंगे कि वे जरा अपनी शक्ति-सामर्थ्य और प्रभाव को अधिक व्यापक रूप दें, जिससे आर्यजनता अधिकाधिक प्रभावित होकर अपने कर्त्तव्य-पालन की ओर सचेष्ट हो सके।

तरुण रक्त से

आर्यसमाज में तरुण रक्त की बहुत कमी है। बेचारे पुराने लोग ही आर्यसमाज के कार्य को ज्यों-त्यों चला रहे हैं। देश के तरुण रक्त को वैदिक धर्म की ओर आकृष्ट करने का उत्तर-दायित्व आर्यकुमार-सभाओं और आर्यकुमार-परिषदों ने अपने ऊपर लिया था। हम चाहते हैं कि ये सभाएँ और परिषदें अपनी गति में प्रगति लाने के लिये अधिक प्रयत्नवान् हों। उनकी गति कुछ मन्द-सी पड़ गयी है, उसमें तीव्रता लानी चाहिए। यह काम छोटा नहीं है, इसके लिये बड़े प्रयत्न और पुरुषार्थ की आवश्यकता होगी। हमारे जो भाई यह समझते हैं कि केवल मई और जून के ग्रीष्मावकाश में दो-चार सप्ताह 'कृण्वन्तो-विश्वमार्यम्' की घोर घोषणा करने से ही तरुण रक्त आर्यसमाज में

आ जायगा वे मूल में है। इस कार्य के लिए शिक्षण-संस्थाओं में पढ़ने वाले छात्रों को वैदिक सन्देश सुनाने के लिये लगातार प्रयत्न करना होगा, उनके मस्तिष्कों और हृदयों में आर्य-संस्कृति की पवित्र भावना भरनी होगी। अनैतिकता और नास्तिकता से उनके मुँह मोड़ कर नैतिकता और आस्तिकता की ओर करने होंगे। यह सारी गुत्थी लेखनी और वाणी के प्रचार से ही सुलझ सकती है। कैसे दुःख की बात है कि हमारी उपेक्षा-जन्य अकर्मण्यता के कारण छात्र तो छात्र अध्यापकों तक पर वैदिक धर्म की सत्ता और महत्ता का प्रभाव नहीं पड़ पाया। बिना सोचे-समझे प्रायः लोग कहते रहते हैं, अजी धर्म में विज्ञानमूलकता नहीं है। वह तर्क के तीरों की तीव्रता नहीं सहन कर सकता। ऐसे लोगों को समझाने और धर्म को विज्ञानमूलक सिद्ध कर दिखाने का बहुत कम क्रियात्मक प्रयत्न हुआ है। जितना हुआ है उससे हमारे अध्यापक और विद्यार्थी प्रभावित नहीं हो पाये। अतः आवश्यकता है कि वैदिक धर्म की प्रभुता से सारा शिक्षा संसार प्रभावित किया जाय और तब तरुण रक्त को आर्यसमाज में प्रवेश करने से कोई न रोक सकेगा। यह काम विशेषतः आर्य कुमार-परिषदों और आर्यकुमार-सभाओं के आशांकुर नवयुवकों के करने का है। क्या हमारे प्यारे आर्य कुमार इस कार्य क्षेत्र में अवतरित होना अपना पवित्र कर्त्तव्य समझेंगे। क्या वे परीक्षाओं को ही जीवन की एकमात्र साधना न समझ कर धर्म-प्रचार के लिये भी कुछ करेंगे।

कांग्रेस और जनता.

देश में २६ जनवरी को 'गणराज्य-दिवस' मनाया गया, परन्तु जनता में उस दिन बहुत ही कम उत्साह दिखाई दिया। जिन राष्ट्रिय दिवसों को कभी जनता मेले, पर्व या त्योहार के रूप में मनाती थी, आज वे एक प्रकार से रस्मअदायगी के सरकारी जलसे बनते जा रहे हैं। हम देखते हैं, जनता के ऊपर से कांग्रेस का प्रभाव कम होता जा रहा है, कांग्रेस सरकारें भी जनता को प्रभावित नहीं कर रही। इसका मुख्य कारण है नैतिकता की उपेक्षा या अवहेलना। जहाँ बड़े-बड़े उत्तरदायित्वपूर्ण क्षेत्रों के नैतिकता-निकेतनों में खुशामद, सिफारिश और तिकड़म की पूजा होती हो, स्वार्थ-सिद्धि के राग अलापे जाते हों, वहाँ सौजन्य या सद्भावना को कैसे स्थान मिल सकता है। जिन्होंने तिकड़म शास्त्र का सम्यक् अध्ययन किया है, जो चोर-बाजारियों में चतुर-चूड़ामणि बन गये हैं, चलता पुर्जापन जिनके बाएँ हाथ का खेल है, आज वे ही सुख सम्पन्नता की जिन्दगी बिता रहे हैं। परन्तु जो सात्विक सज्जन, सुशील व्यक्ति सद्भावनाओं से भरे हुए हैं, वे दुःखमय जीवन भोगते हुए मारे मारे फिरते हैं। हम ऐसे कितने ही तपस्वियों को जानते हैं, जिन्होंने देश के स्वतन्त्रता-संग्राम में बड़े से बड़ा त्याग किया, और अब भी तपस्वी का जीवन व्यतीत कर रहे हैं, परन्तु उन्हें पूछने वाला न कोई मंत्री है न 'सन्त्री'। ये तपस्वी भी पेट दिखा-दिखा कर अपनी सेवाओं का प्रत्युपकार या उपहार नहीं चाहते। इसके विरुद्ध जो लोग ब्रिटिश शासन की मशीन के पुर्जे रहे, जिन्हें कांग्रेस-आन्दोलनों का विरोध करने में ही आनन्द आया, आज वे खादी की चाँदनी सी सफ़ेद पोशाक पहन कर मिनिस्टरों से मिलते, उन्हें दावत खिलाते और अपना मतलब साधते हैं। ऐसी दशा में जब जनता भ्रष्टाचार और अत्याचार के सर पर सवारी गाँठकर सफल होता देखती है, तो जहाँ उसे इन भ्रष्टाचारियों और भ्रष्टाचार को सहायता देने वालों से घृणा होती है, वहाँ भ्रष्टाचार करने का प्रोत्साहन भी मिलता है। उफ़! जो मेंड़ खेत की रक्षा के लिये लगाई जाती है, यदि वही खेत को खाने लगे तो क्या किया जाय। जिन लोगों को जनता ने अपना सेवक, सहायक, नेता, पथ प्रदर्शक, रक्षक और संरक्षक समझा यदि उनमें ही भ्रष्टचारिता की अभद्र भावना पैदा होने लगे तो जनता किसकी होकर रहे। अगर आज जनता के संरक्षक स्वयम् निर्लिप्त और निष्पक्ष रहकर निःस्वार्थ और निर्भय भाव से भ्रष्टाचार का भण्डा-फोड़ करते और अनैतिकता का गला घोंटते तो देश की यह दुर्दशा न होती, जो हो रही है। कानूनों का प्रभाव अवश्य होता है, पर ऊपरी, बाहरी और क्षणिक। कठोर कानूनों की कड़ी कड़ियों से जकड़ा हुआ 'कंट्रोल' भी चोरबाजारी से कैसी

अध्यात्म धारा

शान्ति का सच्चा मार्ग : आध्यात्मिकता

स्वामी श्री ब्रह्मानन्दजी दण्डी

"आत्म-रति अर्थात् आत्म-चिन्तन में संलग्न ऋषि-मुनि, अर्थात आध्यात्मिक तत्व के जानने वाले तपस्वी ब्राह्मण जिस राष्ट्र के शासन-संचालक होंगे, वह राष्ट्र बलवान् ओजस्वी और विद्वानों द्वारा अभिनन्दनीय होता है।" यह वेद भगवान् का उपदेश और आदेश है, जिसे हम राजनीति के इतिहास से अक्षरशः चरितार्थ होते पाते हैं। भारत वर्ष के शासन की व्यवस्था जब तक उपर्युक्त लक्षणों से युक्त त्यागी-तपस्वी ब्राह्मणों द्वारा–राजगुरुओं के रूप में–संचालित होती रही, तब तक देश सब प्रकार के सुखों का भण्डार और आनन्द का आगार बना रहा। उन दिनों के इतिहास में न तो दुःखदायी दुर्भिक्षों का दुर्नाम ही सुन पड़ता है, और न मारक महामारियों का उल्लेख पाया जाता है। और भी किसी प्रकार के असन्तोष या अशान्ति की चर्चा हम उस समय के इतिहास में नहीं देखते। सर्वत्र सुख-समृद्धि का साम्राज्य था। परन्तु जब से देश की शासन-सत्ता स्वार्थ-परायण मायासक्त मायावियों के हाथों में गई, तब से, दुःख-दारिद्रय का प्रकोप बढ़ता जा रहा है। आये दिन महामारियों का अकाण्ड ताण्डव होता दिखाई देता है। चारों ओर त्राहि-त्राहि मची है। संसार में सुख-शान्ति स्थापना के वैयक्तिक और समष्टि रूप से अनेक प्रयत्न किये जाने पर भी, "मर्ज बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की" वाली कहावत चरितार्थ हो रही है।

वस्तुतः रोग का निदान ठीक नहीं हो पाया, इसी लिए कोई इलाज कारगर नहीं होता। आवश्यकता है देश में आध्यात्मिकता के प्रसार की। यही रोग की सच्ची दवा है। जब तक व्यक्तियों में आध्यात्मिकता का उदय नहीं होता, लोगों में 'आत्मवत् सर्व भूतेषु' की भव्य भावना पैदा नहीं होती, तब तक संकटों का अन्त भी असम्भव ही समझना चाहिए। बिना "वसुधैव कुटुम्बकम्" का व्रत अपनाए सुख-शान्ति की कल्पना कोरा स्वप्न है।

आध्यात्मिकता-प्रचार के लिए आध्यात्मिक शिक्षणालयों की स्थापना की जानी चाहिए, जिनमें वीतराग, त्यागी-तपस्वी, भारत की पुरातन संस्कृति की शिक्षा और आध्यात्मिकता की दीक्षा देकर सच्चे ईश्वर विश्वासी लोक-सेवक तयार करें। परमात्मा की सत्ता में विश्वास और उसके वास्तविक स्वरूप का ज्ञान ही मनुष्य को अकर्म करने से रोक कर कर्त्तव्य कर्म करने की ओर प्रेरित करता है। इसीलिए ब्रह्मवेत्ता वीतराग विद्वान् स्वयं सुख शान्ति प्राप्त करते हैं, और दूसरों को उसका उपदेश करके आनन्द-प्राप्ति का अधिकारी बनाते हैं। आनन्द तो परमात्मा का ही नित्य गुण है। ज्ञान और प्रयत्न जीवात्मा के गुण हैं। प्रकृति (माया) के गुण प्रकृति में नित्य हैं। जीवात्मा के पास न आनन्द नित्य है और न प्रकृति-जन्य सुख-दुःखादि नित्य हैं। वह तो परमात्मा से सम्बन्धित होने पर आनन्द और प्रकृति (माया) से सम्बद्ध होने पर सुख-दुःखादि का अनुभव करता है। जैसे वायु स्वयं न शीतल है न उष्ण। जल और अग्नि के सम्पर्क से उसमें शीतलता और उष्णता आ जाती है। इस सिद्धान्त को हृदयंगम करके ही मानव माया-जाल से मुक्त हो सकता है। माया-मुक्त आत्म-वेत्ता महापुरुष ही स्वयं आनन्द उपभोग करते हुए लोक को कल्याण-मार्ग पर लेजा सकते हैं।

चुहलबाजियाँ करता फिरता है। कानून के बन्धनों को काट कर सुन्दरी सिफारिश कैसी उच्छृंखलता से फल फूल रही है। आवश्यकता नैतिकता-प्रसार और सद्भावना के प्रचार की है। इसमें उसी समय सफलता मिल सकती है, जब नेता या रक्षक संरक्षक सभी एकस्वर और एक हृदय से नैतिक बनने का पवित्र और प्रौढ़ व्रत लें। कोरी व्याख्यानबाजी से कुछ नहीं होगा। भावुकता-पूर्ण भाषण की भव्यता अब किसी तरह का प्रभाव या जादू नहीं बखेर सकती।

ग्राम जीवन

सोने की खान : घूरा

श्री शिवरामसिंह बी० एस-सी० (कृषि)

खेती-बारी सम्बन्धी अनेक सुझाव और सम्मतियां वर्तमान पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित किये जाते हैं। सरकारी ग्राम-विकास आदि विभागों की ओर से भी कृषक-उपयोगी बातें लघु पुस्तिकाओं के रूप में छपा कर बांटी जाती हैं। परन्तु भारतीय किसान इन सब चीजों से पूर्ण लाभ उठाता नहीं देख पड़ता। वह तो अपनी जिस परम्परा प्राप्त क्रियात्मक शिक्षा के आधार पर शताब्दियों से खेती करता रहा है, उसी लीक पर आज भी चल रहा है। वह कुछ तो अपनी निराशावादी मनोवृत्ति और कुछ अज्ञता वश न तो स्वयं कृषि सम्बन्धी नयी खोजों और परीक्षणों के लिए उत्सुक दिखाई देता है, और न दूसरों के नवीनतम अनुभवों से लाभ उठाने के लिये उनमें कुछ दिलचस्पी लेता है। अधिक क्या, वह अपने पुरखाओं के पुराने अनुभवों से भी पूरा-पूरा लाभ नहीं प्राप्त करता। उदाहरण के लिये गोबर की खाद को ही ले लीजिये। भारतीय कृषक यह जानते हुए भी कि भूमि को उवरा बनाने के लिये सड़ाया हुआ गोबर और पशुओं का मूत्र सर्वोत्तम खाद हैं, अपनी लापरवाई और उदासीनता के कारण इन चीजों को खाद के काम में नहीं लाता। गोबर को वह कण्डे बना कर या तो थोड़े पैसों के लालच में बेच डालता है अथवा स्वयं जलाने के काम में ले आता है। मूत्रादि के सम्बन्ध में तो शायद वह यह सोचता भी नहीं कि इनका भी किसी तरह खेती के काम में उपयोग हो सकता है। उसकी यह मनोवृत्ति उसके लिए अत्यन्त विघातक है। सच तो यह है कि किसान उपलों के रूप में अपने सोने के ढेर को फूंक देता है।

उपले जलाने की प्रथा कृषकों को तुरन्त बन्द करके गोबर को खाद के काम में लाना चाहिए। मूत्र इकट्ठा करने के लिये सीधा-सा उपाय यह है कि पशुओं के बाँधने की जगह थोड़ी-थोड़ी मिट्टी बिछा दी जाय, जिससे पशुओं का मूत्र उसी में इकट्ठा होता रहे। आठ दिन बाद या पहले भी उस मिट्टी को उठाकर खाद के उसी गढ़े में जमा कर दें जिसमें गोबर जमा किया जा रहा है। और पशुओं के नीचे नयी मिट्टी बिछा दें। इस प्रकार पशुओं के मल-मूत्र दोनों गढ़े में इकट्ठे होने और सड़ने दिये जायें। इसमें और भी घर का कूड़ा करकट डाला जा सकता है। बरसात में खेतों में का खर-पतवार जो यों ही खेतों की मेंड़ों पर डालकर नष्ट कर दिया जाता है, इन खाद के गढ़ों में डाल देना चाहिये। साथ ही यह ध्यान रखना चाहिये कि खाद में कंकड़ पत्थर, ईंट रोड़े आदि न पड़ने पावें। इस प्रकार सड़ा कर तयार की गई गोबर-कूड़े की खाद भारतीय भूमि और जल वायु के लिए सवथा अनुकूल है। साथ ही किसान को इसकी तैयारी में कुछ खर्च भी नहीं करना पड़ता। कृषकों को इससे लाभ उठाना चाहिये। घूरा ही किसान के लिये सोने की खान है। इसकी उसे पूरी परवा करनी चाहिये।

अब तक किसान भूमि को उर्वरा बनाने के लिए इस लिए भी विशेष प्रयत्न नहीं करता था कि उसे जमींदार द्वारा चाहे जब भूमि छीनने का भय बना रहता था। पर अब तो सरकार ने किसानों के इस भय को पूरी तरह समाप्त कर दिया है। अब कृषकों को अपनी भूमि का सुधार और परिष्कार करने में तनक भी भूल नहीं करनी चाहिये। उसे वर्षा द्वारा मिट्टी बहने से रोकने के लिए अपने खेतों की मजबूत मेंड़ें बनवा कर और पशुओं से फसल की रक्षा के लिए खेत के चारों ओर बाड़ लगाना या ढोरे डालना भी आवश्यक है। किसानों को उचित है कि वे खेतों में गहरी जुताई करके उनमें उगने वाली कॉस आदि हानिकारक घासों को जड़ से नष्ट कर दें और खूब खाद डाल कर भूमि को उर्वरा बनाएं। भाग्य के भरोसे पूर्ण परिश्रम न करने की बान को छोड़ कर उत्साह के साथ आशावाद का पल्ला पकड़ें। इसके साथ ही कृषि-विशेषज्ञों द्वारा जो सुझाव समय-समय पर दिये जाते हैं, अपनी सुविधा और सामर्थ्य के अनुसार उनसे भी लाभ उठाएं। फसल की अदल-बदल पर भी पूरा ध्यान दें और अच्छी जाति के बीज व्यवहार में लाएँ। फिर देखेंगे कि कुछ ही दिनों में उनकी वही भूमि, जिसमें आजकल बहुत कम पैदावार होती है, सोना उगलने लगेगी।

साहित्य-सौरभ

अम्बोद्गार

श्री० अम्बादत्त शर्मा 'अम्ब'

दैनिक आर्यमित्र

वैदिक समाज सारे विश्व का हितैषी होगा,
'अम्ब' इस ध्येय को न ध्यान से हटाइये।
वाणी से विशेष है प्रभाव कुछ लेखनी का,
अनुभव द्वारा ये इशारा जान जाइये।
वेदों के प्रचार का यही तो श्रेष्ठ साधन है,
'राजगुरुजी' का उपदेश अपनाइये।
आर्यवीरो, तीन लाख रुपयों का योग देके,
शीघ्र अब 'आर्यमित्र' दैनिक बनाइये।

नगर-निवास

कूड़े युक्त राशन के अन्न से गुजारा करें,
पुष्टिकर, शुद्ध खान पान मिलता नहीं।
बालक बिचारे फटे चिथड़े लपेटे फिरें,
सुविधा से खद्दर का थान मिलता नहीं।
पड़े रहें गन्दी गली वाली तंग कोठरी में,
रहने को स्वच्छ-सा मकान मिलता नहीं।
मध्यम परिस्थिति के नगर-निवासियों को,
'अम्ब' कहीं सुख का निशान मिलता नहीं।

पाखण्डी परोपकारी

बालकों की मण्डली बनाते, बन जाते नेता,
नगरों में जाते, ढाग-ढोल को बजाते हैं।
गीत गढ़ गाते, भक्त भोंदुओं से दान लाते,
चन्दे का चबोर चारा खाते हैं-अघाते हैं।
धर्म से कुकर्म को कमाते, हा, लजाते नहीं,
दीन, दुखियों के 'अम्ब' काम भी न आते हैं।
बातें यों बनाते हैं कि हम हैं परोपकारी,
अबला, अनाथों को ठिकाने से लगाते हैं।

भली भावना

आदमी से आदमी घृणा के भाव त्याग दें तो-
तोप, तलवार, तीर, बरछी न भाला हो।
उड़ते जहाजों से गिरें न फिर बम, गोले,
जहरीली गैस हो न पल्टन, रिसाला हो।
हानि और लाभ में अनीति, नीति 'अम्ब' सोचें,
पूँजी-पतियों का मजदूर न निवाला हो।
सारे सुख सरसें, मनुष्य 'देव' तुल्य बनें,
प्रेम के प्रभाकर का जग में उजाला हो।

आर्यसमाज का विलीनीकरण

(श्री पं० गंगाप्रसादजी उपाध्याय)

२१ जनवरी १९५१ की सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा ने, जिसमें अन्तरंग सभा के अतिरिक्त प्रान्तिक आर्यप्रतिनिधि सभाओं तथा परोपकारिणी सभा के प्रतिनिधि भी उपस्थित थे, यह निश्चय किया है कि जनगणना में मज़हब के खाने में आर्यसमाजियों को हिन्दू के आगे कोष्ठक में आर्य लिखना चाहिये। इस विज्ञप्ति का दूसरे ही दिन दैनिक पत्रों में जो प्रकाशन हुआ उसने भ्रम और कुछ क्षोभ उत्पन्न कर दिया। कुछ पत्रों ने शीर्षक में लिख दिया कि आर्यों को हिन्दू लिखाना चाहिये। उसने जनता में और भी क्षोभ उत्पन्न किया और सभा के कार्यालय में कई प्रतिरोध-सूचक पत्र आये। गत जनगणनाओं में ६० वर्ष से आर्यों के लिए एक अलग कालम होता था। अबकी बार सरकार ने उसको उड़ा दिया। अब दो सूरतें रह गईं, या तो आर्य अपने को हिंदू लिखायें या अतिरिक्त के खाने में आर्य लिखायें। सभा कठिनाई में पड़ गई, क्योंकि आर्यसमाजी राजनीति, सामाजिक सुधार, आर्थिक तथा कानूनी मामलों में अपने को हिंदुओं से अलग नहीं समझते। परन्तु उसके साथ-साथ ही वे आर्यसमाज को कभी हिंदुओं का एक सम्प्रदाय स्वीकार नहीं करते, और न वे अपने शुद्ध वैदिक धर्म को अन्य सम्प्रदायों की भाँति हिंदुओं की गोलमाल में विलीन करना चाहते हैं। इस द्विविधा से निकलने का सभा के अधिकांश सभासदों को एक मार्ग दिखाई पड़ा। दिल्ली और पंजाब के गणनाध्यक्ष ने अपने एक पत्र में लिखा कि आर्यसमाजी उनके प्रान्त में हिंदुओं के आगे ब्रेकेट में अपने को आर्य लिखा सकते हैं। 'डूबने को तिनके का सहारा।' यह प्रस्ताव बहुमत से पास हुआ। मैंने सभा में यह स्पष्ट कर दिया था कि भारतीय गणनाध्यक्ष की बातचीत दृष्टि में रखते हुए पंजाब प्रान्तीय अध्यक्ष के लिखने का कोई मूल्य नहीं है। परन्तु सभा के बहुमत ने इस बात की आशा दिखाई कि अधिक आन्दोलन करने से पंजाब की सुविधा समस्त भारत को मिल जायगी। यह आशा पूरी नहीं हुई। अतः जो प्रस्ताव पास हुआ था उसके शब्दों पर अमल कराना भी कठिन है और प्रस्ताव की वह स्प्रिट सर्वथा लुप्त होगई। मेरी समझ में अभी तक यह नहीं आया कि इस कठिनाई को कैसे दूर किया जाय। आर्यसमाज पर एक बात ने बड़ा क्षोभ उत्पन्न किया है कि आर्यों का अपने को हिंदू लिखाना अपने को हिंदुओं का एक सम्प्रदाय बनाना है। या दूसरे शब्दों में आर्यों का विलीनीकरण है। यदि सरकार मज़हब के खाने को बिल्कुल उड़ा देती तो आर्यों को भारतीयता में विलीनीकरण करने में कोई आपत्ति नहीं थी। परन्तु विलीनीकरण हुआ और सम्प्रदाय बनकर यह आर्य जनता के लिये भी असह्य है और व्यक्तिगत रूप से मेरे लिये भी। मुझे आश्चर्य है कि किस प्रलोभन ने मुझे इन ६ दिनों से मन्त्री-पद के त्याग देने से रोक रक्खा है। इस विलीनीकरण से मुझे तो ऐसा आभास होता है कि ७५ वर्ष पहले ऋषि दयानन्द ने जिस आर्यसमाज को इस उद्देश्य से बनाया कि वह हिंदुओं का सुधार करता हुआ विश्व-भर को वैदिकधर्मी बनावे उसके नाम और रूप दोनों का ७५ वर्ष के बाद विलीनीकरण होना आर्यसमाज की मृत्यु से कम नहीं है। अब कोई आर्य नाम पर जीने-मरने को तैयार नहीं हो सकेंगे। वे हिंदुओं की गोलमोल गाड़ी के पहिये के पीछे बंधे हुए हैं। परिणाम क्या होगा ईश्वर जानता है। इस विषय में आर्यसमाज के नेता और आर्य-जनता की भावनाएं भिन्न हैं। मेरी भावना जनता के साथ है। मैं समझता हूं कि आर्य नेता जिस राजनैतिक प्रपंच में फंसकर चुप्पी लगा रहे हैं वह आर्यसमाज के तात्विक रूप के लिये अत्यंत हानिकारक है।

—लोगों की वाह-वाह सुन कर प्रसन्न मत हो, क्योंकि वे सदा सच्ची प्रशंसा नहीं करते। अपनी बुद्धि को अपना मार्ग-दर्शक बनाओ। ——

सामयिक समस्याएँ

दलबन्दी का दल-दल

(श्री पूर्णचन्द्र, एडवोकेट)

वर्तमान राजनीति का दलबन्दी आवश्यक अंग बन गया है। कुछ लोगों की धारणा है कि जिस दल के हाथ में बहुमत के आधार पर राज्य की सत्ता हो, उसके विरोध में एक दूसरा दल बनना ही चाहिए, जिससे सत्ता रखने वाला दल सचेत रहे और मनमानी न कर सके। दलबन्दी का यह सिद्धान्त एक अंश में सत्य है, परन्तु राष्ट्र की उन्नति एक से अधिक दल होने में नहीं है। राष्ट्र की उन्नति इसमें है कि राष्ट्र का संचालन ऐसे धार्मिक और स्वार्थ भावना से मुक्त व्यक्तियों के हाथों में हो, जो सार्वजनिक हित की दृष्टि से राष्ट्र का संचालन करें और अन्य लोग उनका अनुकरण करें तथा उनके प्रदर्शित पथ पर चलें। इस दृष्टि से दलबन्दी राजनैतिक जगत् में फैले हुए स्वार्थ-सिद्धि-रोग का इलाज नहीं है। यह तो उस रोग का लक्षण है। दलबन्दी के साथ-साथ बहुमत और अल्पमत का प्रश्न भी जुड़ा हुआ है। बहुमत के आधार पर राष्ट्र की व्यवस्था सुरक्षित नहीं रह सकती। ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में संसार की सब समस्याओं और प्रश्नों पर विचार किया है, जिसके अन्तर्गत राजनीति भी आ जाती है। राजा और प्रजा का सम्बन्ध मर्यादित रहे, इसकी जो नीति है, उसी का नाम राजनीति है। राजनीति के मौलिक सिद्धान्तों में मुख्य सिद्धांत यह है कि राजा, राष्ट्रपति, मन्त्रिगण अन्य राज्याधिकारी यज्ञ-भावना से युक्त और स्वार्थ-भावना से मुक्त हों। नियम बनाने का कार्य निःस्वार्थ भावना रखने वाले ब्राह्मणों का है। जिनका अपना कोई स्वार्थ नहीं वे जो नियम बनाएंगे वह सार्वजनिक हित के लिए होगा; और ब्राह्मणों के बनाये हुए नियमों का पालन और संचालन क्षत्रिय करेंगे। ऐसी दशा में आदर ब्राह्मणों के लिए रहेगा और अधिकार क्षत्रियों के लिए। अधिकारों के पालन करने में कर्तव्य का प्रश्न मुख्य रहेगा। ऋषि दयानन्द यह चाहते थे कि वैदिकधर्म के राष्ट्र-निर्माण सम्बंधी सिद्धान्त आर्यसमाजद्वारा प्रकाशित और प्रचारित हों जिससे उनके प्रकाश में स्वार्थ-सिद्धि रूपी अन्धकार मिट जाय। यह बहुत अच्छा हुआ कि आर्यसमाज ने सामूहिक रूप से कोई विशेष दल बना कर राजनीति सम्बन्धी अधिकार प्राप्त करने का उद्योग नहीं किया। अब कांग्रेस वालों के हाथों में राजनैतिक अधिकार आ जाने से और उसके द्वारा स्वार्थ-सिद्धि का अवसर मिलता देख कर कुछ आर्यसमाजी भाइयों के मुंह में भी पानी आने लगा है। यदि आर्यसमाज विशेष दल बनाकर राजनैतिक निर्वाचन के दंगल में कूदेगा, तो सम्भव है इस रूप में उसे सफलता मिल जाय। इसके बहुत-से उम्मेदवार निर्वाचन में कामयाब हो जायं, परन्तु यह दल बनते ही, दूसरे दलों वाले भी सार्वजनिक सिद्धान्तों का विरोध करेंगे और फिर कोई शक्ति या संस्था ऐसी न रहेगी, जिसका प्रभाव सब पर पड़ सके और जो पथ प्रदर्शन कर सके।

संस्कृति और धन

भारत के सामने सबसे बड़ी समस्या यह है कि संस्कृति और धन की दौड़ में, अन्य देशों में और हम में जो अन्तर पड़ गया है, उसे शीघ्र से शीघ्र दूर कर दें। यदि हमने इस बारे में कोई ढील की या इसको पूरा न कर सके, तो हमारी स्वतन्त्रता तो खतरे में पड़ेगी ही, हमारा अस्तित्व भी खतरे में पड़ जायगा। इस अन्तर को दूर करने के लिये हममें से हर एक को पूर्ण एकाग्रता और लगन से कार्य में जुट जाना चाहिये। डा० राजेन्द्रप्रसाद

धार्मिक शिक्षा का महत्व

धार्मिक तथा सांस्कृतिक शिक्षा की देश में बहुत बड़ी आवश्यकता है। बिना धार्मिक शिक्षा के कोई भी नागरिक समुचित विकास नहीं कर सकता। हमारे विश्वविद्यालयों तथा विद्यापीठों को चाहिए कि वे अनैतिकता से दूर रह कर संस्कृत भाषा पर दृढ़ विश्वास करें और उससे लाभ उठावें।

—राज्यपाल श्री अणे

सिंहावलोकन

शासन-व्यवस्था कैसी हो ?

प्रो० बाबूराम गुप्त, एम० ए०

प्राचीन काल में प्रजा वर्ग को नित्य राष्ट्र की चिन्ता नहीं करनी पड़ती थी। अपने-अपने कर्त्तव्यों का पालन करते हुए प्रजाजन राष्ट्र की समृद्धि करते रहते थे। राजकीय निग्रह और अनुग्रह लोगों को निज-निज कर्म में रत रहने के लिये प्रेरक होता था। दुष्ट शासकों और मूर्ख राजाओं के कारण आज प्रजा के प्रत्येक व्यक्ति पर राष्ट्र-चिन्ता का भार भी आ पड़ा है। आज का नागरिक तुलसीदास की मन्थरा की भाँति केवल यह कह कर निश्चिन्त नहीं हो सकता कि 'कोउ नृप होइ हमहिं का हानी, चेरि छांड़ि अब होब कि रानी।' आज हम जिस किसी के राजा होने पर सन्तुष्ट नहीं हो सकते। आज हमें अपना राजा आप बनाना है। और यह भी देखते रहना है कि राजा ठीक प्रजाहित करता है या नहीं। पर क्या राजा बनाना हसी-खेल है ? जो राजा का निश्चय करे, क्या उसमें किसी प्रकार की योग्यता होना आवश्यक नहीं है ? यदि प्रजा का अधिकांश अयोग्य है तो उसकी दशा उन मेंढकों की-सी होगी, जिन्होंने भगवान् से राजा राजा की पुकार मचाई, जब राजा मिला तो उसे बदल डाला और अपने लिये सर्वनाश उत्पन्न किया। आज देश के प्रत्येक नागरिक को राज-शासन के सिद्धान्तों के समझने की आवश्यकता है, उसके बिना निर्वाह नहीं। अतः यहां इस प्रश्न पर विचार किया जायगा कि भारत में राज-शासन किन नियमों पर चलता था और वे नियम कहाँ तक आज भी उपयोगी हैं।

आज राजकीय नियम बनाने के लिये जिन व्यक्तियों का निर्वाचन किया जाता है, उनकी योग्यता वही होती है जो निर्वाचकों की। और जब निर्वाचन वयस्क मताधिकार-प्रणाली पर होगा तो कोई भी व्यक्ति जो किसी भी प्रकार— भय अथवा लोभ के द्वारा ही क्यों न हो—कुछ व्यक्तियों को अपने साथ कर लेगा, वह उस सभा का सदस्य हो जायगा जो विधान का कार्य करती है। इस प्रकार अधिकांश व्यक्ति ऐसे ही चुने जायगे जो कोई विशेष योग्यता नहीं रखते और न जिन्हें राष्ट्र सम्बन्धी कुछ ज्ञान है। बल्कि कुछ व्यक्ति तो अपना स्वार्थ-साधन करने के लिये ही उस पद को हथियाएगे। अभी उस दिन भारतीय संसद की लोक-सभा में यह प्रश्न उठा कि जो व्यक्ति विधान-मण्डलों अथवा संसद के लिये चुने जाय उनमें कुछ विशेष योग्यता निर्धारित की जाय। पर, प्रश्न यों ही उड़ा दिया गया।

प्राचीन भारत में विधान बनाने वाली सभा परिषद् कहलाती थी। वह परिषद् आज की तरह पांच-पाँच सौ अज्ञों का जमघट न होता था, उसमें विद्वान् लोग ही रह सकते थे। मनु कहते हैं कि 'जिन्होंने नियमपूर्वक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन नहीं किया, जो संयम का जीवन व्यतीत नहीं करते, जो विद्या और विचार से रहित हैं, जो जन्म के बल पर ही जीवन बिताते हैं, ऐसे व्यक्ति यदि हजारों इकट्ठे हो जाएँ तो भी परिषद् नहीं हो सकती। दस हजार मूर्ख जो बात कहें वह मान्य नहीं है, और एक पूर्ण विद्वान जो कहे वह मान्य है।' प्राचीन विधान-परिषद् त्यागी और तपस्वी व्यक्तियों से बनाई जाती थी, जो सदा प्रजा के कल्याण की बात छोड़ कर और कोई विचार ही न करते थे। न वे पूँजीपति मिल-मालिक होते थे, न व्यापारी और न जमींदार। इस प्रकार पूँजीवाद का प्रभाव राज-शासन पर बिलकुल नहीं होता था। आज हम चाहें तो ऐसे नियम बना सकते हैं कि जनता की सेवा करने वाले विद्वान् लोग जो पूँजीपतियों की श्रेणी में नहीं आते, वे ही विधान-मण्डलों और संसद् के सदस्य हो सकते हैं। ऐसा होने से अज्ञों और स्वार्थियों का शासन हमारे ऊपर न होगा। आज अनेक उत्तम योजनाएँ और विधेयक इसीलिये खटाई में पड़ जाते हैं कि उनसे कुछ स्वार्थी अर्थ-दासों की हानि होती है। वे अपने प्रभाव से उन्हें स्वीकृत नहीं होने देते। राज्य की ओर से जब सदस्यों को नियमित वेतन और भत्ता मिलता है तो कोई आवश्यकता नहीं कि वे दूसरे धंधों में फँसे रहें। अधिवेशनों के समय विधान-मण्डलों में तथा शेष समय में प्रजा-हित का निरीक्षण करने में उसके लिये पर्याप्त काम है।

राज्य-शासन का दूसरा अङ्ग कार्य-पालिका है जिसमें राजा से लेकर प्रधान सेनापति, प्रधान मंत्री, तथा जिन पर भी राज-नियमों को कार्य रूप में परिणत करने का भार है, वे सब अधिकारी गण आते हैं। इन सब में भी विशेष गुणों का होना आवश्यक है। विद्या और विज्ञान में चाहे वे प्रथम श्रेणी के व्यक्तियों से कुछ कम भले ही रहें, पर उनका जीवन विलासिता से दूर होना चाहिये। उनमें कार्य-कुशलता, निर्भयता, तेज, धैर्य आदि गुणों का होना परम आवश्यक है। यदि वे विषय-भोग में फंसे हुए, साधारण मनुष्य होंगे तो उनके भ्रष्ट होने का सर्वदा भय रहेगा। अतः राजकर्मचारियों की नियुक्ति करते समय, उनके जीवन का दृष्टिकोण क्या है यह देखने की परम आवश्यकता है। नियुक्ति होने के पीछे भी उनके पतन का सदा भय रहता है, अतः उन पर कड़ी दृष्टि रखने की आवश्यकता है। इनकी ओर मनु भगवान् ने स्पष्ट संकेत किया है। वे कहते हैं कि 'राजा नगरों में सब कार्य की व्यवस्था रखने वाले अधिकारी नियुक्त करे और उनके चरित्र के सम्बन्ध में गुप्तचरों द्वारा सदा वृत्तान्त पाता रहे तथा गुप्तचर-विभाग का एक उच्च अधिकारी सदा पर्यटन करता रहे।' ऐसा करने का कारण भी मनु महाराज ने स्वयं बताया है—

राज्ञो हि रक्षाधिकृताः
परस्वादायिनः शठाः
भृत्या भवन्ति प्रायेण
तेभ्यो रक्षेदिमाः प्रजा।

"प्रजा की रक्षा के लिये नियुक्त किये हुए राज्याधिकारी प्रायः दुष्ट होकर दूसरों का धन अपहरण करने लग जाते हैं, उनसे प्रजा की रक्षा करना परम आवश्यक है।" फिर उनके लिये कठोर से कठोर दण्ड की व्यवस्था की है—

ये कार्यिकेभ्योऽर्थमेव
गृह्णीयुः पापचेतसः,
तेषां सर्वस्वमादाय
राजा कुर्यात् प्रवासनम्।

"जो राज्याधिकारी अपने पास काम से आए हुए प्रजाजन से रिश्वत लेते हैं, उनकी सारी सम्पत्ति जब्त करके उन्हें देश से निकाल देना चाहिये।"

आज प्रत्येक छोटी बात के लिये पश्चिम की ओर ताकने वाले क्या यह विचार करेंगे कि हमारे शास्त्रों में राष्ट्र की सभी समस्याओं पर कितनी गम्भीर दृष्टि डाली गई है, और ऐसे-ऐसे नियम दिये गये हैं और व्यवस्था की गयी है जो प्रत्येक देश और प्रत्येक काल में उपयोगी है ? राज-कर्मचारियों के भ्रष्टाचार की समस्या कोई अभूतपूर्व वस्तु नहीं है। यह तो स्वाभाविक है। केवल उच्च शासक वर्ग के कठोर नियन्त्रण और दण्ड द्वारा ही दूर हो सकती है।

जन-गणना सम्बन्धी निश्चय

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा का अधिवेशन २१ और २२ जनवरी १९५१ को श्री राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री की अध्यक्षता में दिल्ली में हुआ। उस बैठक में कई महत्वपूर्ण विषयों पर विचार हुआ। जिसमें जन-गणना का विषय अत्यन्तावश्यक था। सभा ने निश्चय किया कि आर्यसमाजी नर-नारी आगामी जन-गणना में धर्म के खाने में हिन्दू के आगे ब्रेकिट में अपने को 'आर्य' लिखायें। सभा के कार्यालय से आवश्यक निर्देश समाजों को भेजे जा रहे हैं।

इन बैठकों में उत्तर प्रदेश, पंजाब, मध्य-भारत, राजस्थान आदि प्रान्तों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। जन-गणना के विचार के समय विशेष रूप से आमन्त्रित श्री राजाधिराज श्री उम्मेद्सिंहजी शाहपुराधीश, प्रधान परोपकारिणी सभा अजमेर, श्री आनन्द स्वामीजी प्रादेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा पंजाब, श्री

महिला-मण्डल

श्रृंगार और स्वास्थ्य

सुश्री शकुन्तला शास्त्रिणी, गोंडा

श्रृंगार करने की प्रवृत्ति महिलाओं में स्वाभाविक होती है। इसकी प्रथा प्रत्येक देश और प्रत्येक समाज में प्रचलित है। हमारे यहाँ इसका वर्णन चौसठ-कलाओं के साथ-साथ मिलता है। यह भी एक कला ही है। इस कला का जानना प्रत्येक नारी के लिए आवश्यक है, क्योंकि यह स्वास्थ्य और सौन्दर्य की रक्षा के लिए अति उपयोगी है। श्रृङ्गार में स्नान, केश-प्रसाधन, ओठों और नखों को रंजित करना, वस्त्रालंकार धारण करना आदि कई कामों का समावेश होता है। श्रृङ्गार का उद्देश्य केवल शरीर को आकर्षक बना लेना-भर नहीं है, स्वास्थ्य रक्षा के लिए भी यह आवश्यक और उपयोगी है। इनमें से स्नान और केश-प्रसाधन ये दो कार्य तो स्वास्थ्य-रक्षा के उद्देश्य से ही किये जाते हैं, और किये जाने चाहिए।

सौन्दर्य की वृद्धि और रक्षा के लिए सबसे पहले स्वास्थ्य-रक्षा की आवश्यकता है। स्वस्थ शरीर तो स्वभावतः सुन्दर होता है। स्वस्थ युवक या युवती के चेहरे पर जो नैसर्गिक लालिमा और स्निग्धता होती है, वह क्रीम-पाउडर आदि से उत्पन्न नहीं की जा सकती। तपेदिक की रोगिणी के पिचके और पीले चेहरे पर चाहे जितना पाउडर पोता जाय, उसमें आकर्षण नहीं लाया जा सकता। शृंगार की चीजें तो स्वाभाविक सौन्दर्य को कुछ निखार-भर देती हैं, अतः हमें स्वास्थ्य-रक्षा को दृष्टि-पथ में रख कर ही शृंगार करना चाहिए और यह ध्यान रखना चाहिए कि जिन वस्तुओं का उपयोग हम कर रही हैं, वे स्वास्थ्य के लिए विघातक तो नहीं हैं।

शृंगार-साधनों में सबसे पहला स्थान स्नान का है। स्नान का उद्देश्य शरीर पर जमे हुए मलों को हटा कर रोम कूपों को स्वच्छ कर देना है। इसके लिए खूब मल-मल कर न्हाना और अन्त में किसी मोटे और नरम वस्त्र से शरीर को रगड़-रगड़ कर पोंछना आवश्यक है। स्नान करते समय साबुन के व्यवहार का बहुत प्रचार हो चला है। इसका उपयोग प्रत्येक परिवार में किया जाता है। परन्तु हममें से बहुत-सी बहनें साबुन के प्रयोग का उद्देश्य नहीं जानतीं, केवल फैशन समझ कर अन्धानुकरण के रूप में उसे इस्तेमाल करती हैं। यह ठीक नहीं। साबुन त्वचा और बालों के मलों को छुड़ाने में सहायक होता है। इसके लिए हमें अच्छी श्रेणी का साबुन ही बरतना चाहिए। बाजार में प्रायः सस्ते चारों और घटिया तेलों द्वारा तैयार किये साबुन बिकते हैं, जिन्हें भड़कीले रंगों से रञ्जित और मनोमोहक गन्धों से सुवासित कर आकर्षक बना दिया जाता है। ऐसे साबुनों का व्यवहार शृंगार के उद्देश्य को पूरा नहीं करता, बल्कि उलटा शरीर की त्वचा को रूखी और कड़ी बना देता है। भारतीय परम्परा तो 'उबटन' का प्रयोग करने की है, जो तेल, हल्दी, बेसन आदि मिला कर बनाया जाता है। यह सर्वोत्तम वस्तु है, परन्तु इसके तैयार करने और व्यवहार करने में समय लगता है। वर्तमान काल के व्यस्त जीवन में इतना अवकाश कहाँ? अतः स्नान के लिए हमें सदैव उत्तम साबुन ही काम में लाने चाहिए। ये कुछ महगे अवश्य मिलेंगे, पर सावधानी से बरतने पर अधिक खर्चीले सिद्ध न होंगे। अनेक घरों में देखा है, स्नान करने के बाद साबुन को वहीं पड़ा छोड़ देते हैं, जो पानी में घुल-घुल कर बहता रहता है। जो भी वस्तु हम व्यवहार करें उसे सँभाल के रखना भी हमें जानना चाहिए। इससे वस्तु की रक्षा तो होती ही है, साथ ही घर के प्रबन्ध और हमारे स्वभाव में सुव्यवस्था एवम् सुन्दरता का समावेश होता है।

स्नान के पश्चात् केश-प्रसाधन का नम्बर आता है। इस कार्य के लिए भी सस्ते बाजारू खुशबूदार तेलों का व्यवहार बालों और मस्तिष्क को हानिकर है। वैसे तो स्वास्थ्य के लिये सरसों का तेल सर्वोत्तम है, परन्तु उसकी उग्र गन्ध के कारण उसका प्रयोग नहीं किया जाता। उसकी स्वाभाविक गन्ध को हटा कर उसे सुगन्धित भी नहीं बनाया जा सका; फलतः शृंगार-सामग्री में उसको स्थान प्राप्त नहीं। इस कार्य में आँवला, नारियल या तिल का तेल ही बरतना चाहिए। साबुन और तेल दोनों के व्यवहार का स्वास्थ्य से घना सम्बन्ध है, अतः इनके चुनने में बड़ी सावधानी की आवश्यकता है।

केश-प्रसाधन के लिए स्थान भी नियत होना आवश्यक है। बाल काढ़ चुकने पर कंघा और शीशा को साफ करके यथा स्थान रखना न भूलें। काढ़ने में जो बाल टूटे हों उन्हें इकट्ठा करके कूड़े के पात्र में डाल देना चाहिए। स्नान और केश-प्रसाधन विषयक इन मोटी-मोटी बातों पर ध्यान रखने से ही शृंगार का वास्तविक उद्देश्य पूर्ण हो सकता है।

प्रकाश स्वरूपजी आर्यप्रतिनिधि सभा सिन्ध, श्री रामप्रसादजी बिहार आर्यप्रतिनिधि सभा तथा श्री पं० भगवानस्वरूप जी राजस्थान आर्यप्रतिनिधि सभा तथा श्री बा० पीतमलालजी एडवोकेट मन्त्री आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश भी सम्मिलित हुये। सभा के बृहदधिवेशन की तिथि ६ मई १९५१ नियत हुई है।

सार्वदेशिक आर्य महा सम्मेलन के सप्तम अधिवेशन के लिये मेरठ का निमंत्रण सभा ने स्वीकार किया। स्वागत-कारिणी ने इसकी तिथियाँ ६ से १२ अक्टूबर १९५१ नियत की है।

गंगाप्रसाद उपाध्याय,
मन्त्री

संस्था-परिचय

आगरा कालिज

श्री विद्याशङ्कर शर्मा, एम० ए०

आगरा कालिज उत्तर प्रदेश की प्रमुख और पुरानी शिक्षा-संस्था है। इसकी स्थापना १८२३ ई० में पं० गंगाधर शास्त्री द्वारा प्रदत्त भू-सम्पत्ति की आय से हुई थी। यह भू-सम्पत्ति शास्त्रीजी को दान के रूप में सिन्धिया सरकार से मथुरा और अलीगढ़ जिलों में प्राप्त हुई थी। काशी के क्वींस-कालिज को छोड़ कर, उत्तर भारत में यह महाविद्यालय सबसे प्राचीन है। उत्तर भारत को सर्व-प्रथम बी० ए० तथा उत्तर प्रदेश को सर्व-प्रथम एल-एल० बी० के स्नातक प्रदान करने का श्रेय इसी कालिज को प्राप्त है। देश में कदाचित् ही कोई ऐसी शिक्षा-संस्था हो, जो इस कालिज के ख्याति-प्राप्त छात्रों की विशाल-तालिका से बढ़ कर छात्र-तालिका प्रस्तुत करने का गौरव प्राप्त कर सके। आगरा कालिज की इस तालिका में अनेक प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ, शिक्षा-विशारद, साहित्यिक, डाक्टर, सिविल सर्विस सदस्य, लोक-सेवक, समाज-सुधारक एवं मध्यभारत तथा राजपूताना की भूतपूर्व रियासतों के दीवान तथा सचिव सम्मिलित हैं। सर सुन्दरलाल, सर तेजबहादुर सप्रू, डा० सतीशचन्द्र बनर्जी, राजा परमानन्द, डा० हृदयनाथ कुंजरू, डा० एस० एस० नेहरू, डा० पन्नालाल, डा० नारायणप्रसाद अस्थाना, सर लक्ष्मीपति मिश्र आदि इसी कालिज के शिक्षा-प्राप्त विद्वान् हैं। आर्य-समाज के प्रसिद्ध नेता और विद्वान्, स्वर्गीय श्री पं० घासीराम एम० ए०, श्री पं० गंगाप्रसाद एम० ए० (रिटायर्ड चीफ जज), श्री मदनमोहन सेठ, एम० ए० (रिटायर्ड डिस्ट्रिक्ट जज), स्व० पं० कृपाशंकर एम० ए०, श्री बा० घीसूलालजी, श्री बा० पीतमलाल एडवोकेट, कुंवर चांदकरण शारदा आदि की शिक्षा भी इसी कालिज में हुई है। इनके अतिरिक्त आगरा कालिज में शिक्षा प्राप्त और भी अनेक आर्य विद्वान् और नेता हैं। साहित्य-निर्माताओं में पं० श्रीकृष्णदत्त पालीवाल, पं० बना-

चयनिका

[मधुप]

श्रमिक-समस्या

श्रम-समस्या विश्व समृद्धि तथा विश्व-शान्ति की बड़ी समस्या का एक अनिवार्य अंग है। क्योंकि बिना करोड़ों श्रमजीवियों की स्थिति में सुधार किये उसका हल नहीं किया जा सकता। हम न केवल अपने देश के इतिहास में, वरन् संसार के इतिहास में एक बड़ी नाजुक घड़ी में से गुजर रहे हैं। क्षितिज पर युद्ध की काली छाया दिखाई दे रही है, जिससे चारों ओर भय का वातावरण छाया हुआ है। वस्तुओं के अभाव से पीड़ित संसार में इस विभीषिका ने समाज विरोधी तत्वों को छिपाने और जमा करने के लिये और उकसा दिया है। इससे श्रमजीवियों तथा मध्यम वर्ग के लोगों की और भी कठिनाइयों बढ़ गई हैं।

श्री जगजीवनराम, केन्द्रीय मंत्री

अस्पतालों के नाम

जिन-चिकित्सालयों के नाम से ही रोगियों में भय पैदा होता हो, जैसे क्षय रोग का अस्पताल, असाध्य रोगों का चिकित्सालय, छूत के रोगों का अस्पताल इत्यादि, उनके नामों को तुरन्त बदल देना चाहिये। कारण कि ऐसे नामों वाले अस्पतालों में दाखिल होते समय रोगियों के हृदय पर भय और निराशा का आधिपत्य हो जाता है। मृत्यु की विभीषिका रोगी के आगे नाचने लगती है।

'लेसेंट' पत्रिका

हिन्दू-समाज की संकीर्णता

हिन्दू समाज प्रगतिशील है। वह समय के अनुसार बदलता रहा है। जब इसमें समयानुकूल बदलने की शक्ति नहीं रही, तभी इसने अपनी स्वतन्त्रता गवा दी। इस समाज पर जो भी संकट आये हैं, वे इसीलिए कि इसने दूसरों को अपने में घुला-मिला लेने की शक्ति को खो दिया है।

डाक्टर केसकर

कोडबिल विघातक है

हिन्दू समाज विशाल और गम्भीर है। इसने गौतम बुद्ध और महात्मा गांधी जैसी विभूतियों को जन्म दिया है। यदि कोडबिल द्वारा इस समाज को तितर-बितर कर दिया गया तो आने वाली संतानें ही निबल न हो जाएगी बल्कि समाज बिल्कुल नष्ट-भ्रष्ट हो जायगा। जहाँ तक जात-पाँत का सम्बन्ध है, वह तो केवल कार्य-विभाजन के लिये बनाई गई थीं।

श्री आयंगर

हिन्दू कौन ?

हिन्दू अपने को हिन्दू तभी कह सकते हैं, जब उन्हें अपनी संस्कृति तथा उच्च आदर्शों का अभिमान हो। देश की एकता के लिये प्रत्येक भारतीय को प्रयत्न करना चाहिये तथा देश की समस्या के सामने सारी विवाद-ग्रस्त वस्तुओं को भूल जाना चाहिये। मैं भाषावार प्रान्त-रचना से सहमत नहीं हूँ।

श्री गोलवलकरजी

सुझाव अनुपयोगी हैं

राष्ट्र-मंडल के प्रधान मन्त्रियों की अनौपचारिक बैठकों में, काश्मीर के सम्बन्ध में जो कुछ अजीब-से सुझाव पेश किए गए है, उनमें मुझे यह भावना दिखाई नहीं देती कि काश्मीर की जनता के साथ न्याय किया जायगा। राष्ट्र-मंडल की रक्षा में भारत और पाकिस्तान संयुक्त रूप से सहयोग दे सकें, इस चिंता में जो स्थायी हल ढूंढने की कोशिश की गई है, उसमें बुनियादी सिद्धान्तों की बलि दे दी गई है, जिसका परिणाम उलझनों को और बढ़ाना होगा।

शेख अब्दुल्ला

भारतीय संस्कृति

भारतीय संस्कृति एक और अभिन्न है। वह तीन विभिन्न धाराओं के मेल से बनी है। एक तो मौलिक संस्कृति आर्य-सभ्यता, दूसरी मध्य कालीन मुस्लिम सभ्यता और तीसरी पाश्चात्य सभ्यता। ये तीनों अब मिल-जुलकर अभिन्न होगयी है।

मौलाना आजाद

ईमानदार बनो

पूँजीपतियों और व्यापारियों को जनता का शोषण नहीं करना चाहिये। यह खतरनाक काय है। अपने कारोबार में नैतिकता को स्थान देना चाहिये।

श्री पुरुषोत्तमदास टंडन

स्थायी शान्ति

समस्त शान्ति-प्रेमियों की आँखें भारत और उसके प्रधान मन्त्री नेहरूजी की ओर लगी हुई है। यदि निकट भविष्य में ही कोरिया में युद्ध रुका तो वह भारत के प्रयत्नों का ही भाग होगा।

जब तक उद्देश्यों के साथ ही साथ हमारे साधन भी उतने ही पवित्र नहीं होते, जब तक स्थायी शान्ति सम्भव नहीं।

श्री होरैस अलेक्जैण्डर

लोक-परलोक

हम अपने दैनिक कार्य पेट भरने की दृष्टि से ही न करें, बल्कि देश, समाज, आत्मा तथा इहलोक एवं परलोक की सेवा की भावना से भी करें तो हमारे कार्य पूर्ण व सुन्दर तो होंगे ही, हमारा देश प्रगतिशील व समृद्धिशाली भी बनेगा।

श्री मनोहरसिंह मेहता
मध्यभारत-शिक्षा-मन्त्री

विश्रृंखलता

जिस प्रकार से शरीर का कोई भी अंग दुर्बल हो, तो सारे शरीर को वह दुर्बल कर देता है; एक छोटी-सी कड़ी की कमजोरी से सारी शृंखला कमजोर हो जाती है, उसी प्रकार देश के किसी अंग के पिछड़ रह जाने से सारा देश ही पिछड़ जाता है। हमारा भारतीय समाज इसका ज्वलंत उदाहरण है।

श्री श्रीप्रकाशजी
केन्द्रीय मं

रसीदास चतुर्वेदी, पं० श्रीराम शर्मा (विशालभारत-सम्पादक), बाबू गुलाबराय एम० ए०, श्री वृन्दावनलाल वर्मा, श्री बदरीनाथ भट्ट, डा० सत्येन्द्र आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। यानी आगरा कालिज ने विद्वान् नेता, वैज्ञानिक, साहित्यकार, समाज-सुधारक, राजभक्त और क्रान्तिकारी सभी तरह के व्यक्ति दिये।

२६ जनवरी १९२४ को इस कालिज ने अपना शताब्दी महोत्सव बड़े समारोहपूर्वक मनाया था और भारत के तत्कालीन वायसराय स्व० लार्ड रीडिंग ने उस महोत्सव का सभापति पद सुशोभित किया था।

अनुसन्धान (रिसर्च) क्षेत्र में आगरा कालिज ने देश की अच्छी सेवा की है। सरकार द्वारा परिचालित अनेक अनुसन्धान-योजनाओं में आगरा कालिज ने सक्रिय भाग लिया है। इनमें 'अन्न के कीटाणु रोग' विषयक अनुसन्धान-कार्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह अनुसन्धान-कार्य चार लाख रुपयों से सम्पन्न हुआ, जो सरकार से सहायता-रूप में प्राप्त हुए थे। कालिज ने स्वर्गीय प्रिंसिपल डा० कर्मचन्द महता के तत्वावधान में यह काय सम्पन्न हुआ। भारतीय तेलों का अध्ययन, भू-रसायन तथा एसिड क्लोराइड्स की रासायनिक क्रिया आदि क्षेत्रों में आजकल भी अनुसन्धान हो रहा है। इस कालिज की प्रयोगशालाएँ आधुनिक साधनों से सुसज्जित होने के कारण उच्च कोटि की हैं। उपाध्याय वृन्द भी अपने-अपने विषयों के विशेषज्ञ है। कुछ तो ऐसे हैं, जिन्होंने अनुसन्धान कार्यों में विशेष रूप से दक्षता और उपाधि प्राप्त की है अन्य विषयों की तरह यहाँ हिन्दी में एम० ए० परीक्षा की बड़ी सुन्दर व्यवस्था है। संस्कृत में भी एम० ए० की शीघ्र व्यवस्था होने वाली है।

आगरा कालिज अपनी प्राचीनता, महत्ता और उत्कृष्टता के कारण इस बात का पूर्ण अधिकारी है कि उसे शीघ्राति शीघ्र शिक्षा प्रदायक या साश्रम विश्वविद्यालय के रूप में परिणत कर दिया जाय।

गत सप्ताह (२६ से २९ जनवरी तक) इस कालिज के १२५ वर्ष सम्पन्न होने पर शतोत्तरीय रजत जयन्ती महोत्सव मनाया गया। इसमें देश के बड़े-बड़े विद्वानों और नेताओं ने भाग लिया। कालिज के अनेक पुराने विद्यार्थी भी सम्मिलित हुए। २९ जनवरी को हमारे राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रप्रसादजी पधारे। इस महत्वपूर्ण अवसर पर आपको कालिज संघ और ट्रस्टियों की ओर से मानपत्र भेंट किए गए। बड़े आकर्षक और प्रभावपूर्ण प्रोग्राम की पूर्ति हुई। कालिज के वर्तमान आचार्य श्री निहालकरण सेठी वस्तुतः ऐसी प्रतिष्ठित, प्राचीन और बड़ी शिक्षण संस्था के सर्वथा उपयुक्त और अनुरूप आचार्य हैं।

बाल-विनोद

ज्ञानू दादा के नाम चिट्ठियाँ

१

आप अपना अखबार सातवें दिन क्यों भेजते हैं ? उसे तो मैं एक ही दिन में पढ़ लेता हूँ। छह दिन क्या पढ़ा करूँ। क्या आप रोज अखबार नहीं भेज सकते ?

नवीनचन्द्र भाटिया, मथुरा

[अखबार रोज तुम्हारे पास भेज सकें इसके लिए कोशिश कर रहे हैं। तुम भी इसमें कुछ सहारा लगाओ। अपने पिताजी से कहो—वे "आर्यमित्र प्रकाशन लिमिटेड" के कम से कम एक हजार के शेयर खरीद लें। फिर बहुत जल्द प्रतिदिन अखबार तुम्हारे पास पहुचने लगेगा।]

२

बालविनोद में जो चिट्ठियाँ आप छापते हैं, उनके लिखने वाले ही चिट्ठियों में नमस्ते-प्रणाम आदि नहीं लिखने या आप छापते में उसे छोड़ देते हैं। मैं तो बिना नमस्ते की चिट्ठी किसी को नहीं लिखता। सबसे मिलते समय भी नमस्ते करता हूँ।

जगत्बन्धु, अलीगढ़

[चिट्ठियाँ छापने में हम ही नमस्ते प्रणाम आदि छोड़ देते हैं। और भी उनमें क्या क्या सुधार करते हैं, यह तुम अपनी छपी चिट्ठी देख कर समझ सकोगे। तुम सबसे मिलते समय नमस्ते करते हो, यह बड़ी अच्छी बात है। जो बच्चे नित्य अपने बड़ों को नमस्ते करते हैं, उनके आयु, विद्या, यश और बल की वृद्धि होती है।]

३

आप बालविनोद में कोई कहानी क्यों नहीं छापते। कहानी भी छापा करो। मुझे एक कहानी याद है। आप छापें तो लिख भेजूँ।

मञ्जुला चटर्जी, आगरा

[जरूर लिख भेजो, अवश्य छापेंगे। अभी तक किसी बाल साथी ने कहानी नहीं भेजी, इसीलिए नहीं छापी। पर देखो, कहानी छोटी भेजना।]

४

मेरा छोटा भाई सुनील ५ र्ष का है। वह काम तो कुछ नहीं करता, न पढ़ता ही है, पर मिठाई मेरे बराबर ही ले लेता है। मैं बड़ी हूँ, पढ़ती हूँ और काम भी करती हूँ। मुझे मिठाई ज्यादा मिलनी चाहिए कि नहीं ?

शकुन्तला, लशकर

[मिठाई पढ़ने का इनाम या काम करने का मजदूरी थोड़े ही है, जो तुम्हें अधिक मिले। उसमें तो छोटे-बड़े सब भाई-बहनों का समान भाग है। तुम्हें छोटे भाई से अधिक लेने की इच्छा न करनी चाहिए।]

५

हमारे पड़ोस में एक पण्डित जी कथा कहा करते हैं, वे एक दिन कह रहे थे—भगवान् कृष्ण माखन चुराकर खाजाते, और ग्वालवालों को साथ लेकर दूध दही बेचने जाने वाली ग्वालिनों का दूध दही लूट कर अपने ग्वाल सखाओं को बांट देते थे। दादा, भगवान् कृष्ण क्या लूट और चोरी करते थे। चोरी तो बुरा काम है।

हरिप्रपन्न, देहली

[कृष्ण चोरी या लूट नहीं करते थे। वे स्वयं वीर थे और सब ग्वाल वालों को भी बलवान् बनने का उपदेश देते थे—खूब घी-दूध खाओ और तगड़े बनो। घर में माता के न होने पर अपने आप मक्खन लेकर खा लिया तो क्या यह चोरी है। इसी तरह जिन साथियों की माताएं दूध दही बाजार में बेचने ले जातीं उनसे वे कहते थे, इसे अपने बालकों को खाने दो, बेचो मत। इतने परभी जो न मानतीं तो ग्वाल-बालों की टोली साथ ले उन्हें मार्ग में जा घेरते और उनका दही छीन कर उन्हीं के बालकों को बांट देते। यह लूट नहीं, चेतावनी थी।]

रामू का घोड़ा

दस रुपये में मेले से—
आया है मेरा घोड़ा,
खूब दौड़ता है जब इसको—
दिखलाता हूँ कोड़ा।
खाता घास न पीता पानी,
नहीं लीद यह करता,
दादा, जीजी या मुन्नी से,
तनक नहीं यह डरता।
देखो सरपट भाग रहा है,
करता बात हवा से,
बद सकता हूँ होड़ दौड़ की-
अजगर से कछुआ से।
हटजा जीजी रस्ते में से,
पास न आ तू मेरे,
देख कहीं यह नटखट घोड़ा,
मारे लात न तेरे।
रोज इसी पर चढ़ कर अब मैं
पढ़ने को जाऊँगा,
अपने साथ गुरूजी से
इसको भी पढ़वाऊँगा।

—रमेश, कानपुर

स्वास्थ्य-सुधा

गुड़ में बहुत गुण हैं।

आचार्य श्री सत्येन्द्रनाथ वैद्यराज

आजकल शीतऋतु है। इस ऋतु में जठराग्नि तीव्र रहती है, इसलिये खाया-पिया शीघ्र पच जाता है। आहार के ठीक-ठीक परिपाक (पाचन) होने से शरीर में आरोग्य और बल की वृद्धि होती है। इसलिये इस ऋतु में स्निग्ध (चिकना), उष्ण और मधुर पदार्थों का व्यवहार हितकारी है। स्निग्ध पदार्थों में घृत, तेल आदि से बने पदार्थ खाने चाहियें। मधुर पदार्थों में दुग्ध, दुग्ध से बने पदार्थ और गुड़ का व्यवहार करना उचित है। यहां हम अन्य पदार्थों के विषय में न लिखकर केवल "गुड़" के सम्बन्ध में कुछ जानकारी पाठकों को कराना चाहते हैं, जिससे वे इसके गुणों को समझ कर लाभ उठावें।

अब से कुछ वर्ष पूर्व पढ़े-लिखे लोग गुड़ को गवारों और जानवरों के खाने की वस्तु समझते थे। परन्तु जब से महात्मा गान्धी ने अपने लेखों में इसकी प्रशंसा की है, तब से कॉंग्रेसीजन तथा अन्य शहरी लोग भी इसका व्यवहार करने लगे हैं। कुछ समय से चीनी के कंट्रोल की कठिनाई के कारण भी लोगों में गुड़ का व्यवहार बढ़ गया है। अतः अब गुड़ के गुणों को लोग समझने लगे हैं।

ईख के रस को बड़े-बड़े कढ़ावों में पकाकर दृढ़ कर लेते हैं, उसी को 'गुड़' कहते हैं। कुछ ढीला रह जाने पर 'राव' कहलाती है। 'राव' और 'गुड़' के गुणों में बहुत अन्तर है। राव से खाँड़ और खाँड़ से मिसरी बनती है। इन सबके पृथक्-पृथक् गुण हैं। यहाँ हम सिर्फ गुड़ के गुणों का ही वर्णन करेंगे।

आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार गुड़ बल-वीर्य-वर्द्धक, स्निग्ध, मधुर, वातनाशक, सारक (दस्त लाने वाला), मूत्र-शोधक, किञ्चित् पित्त-कारक, भारी तथा मेद (चरबी) और कफ को बढ़ाने वाला है। जब गुड़ एक वर्ष या उससे अधिक पुराना हो जाता है, तब वह अत्यन्त पथ्यकारी, जठराग्नि-वर्द्धक, हलका, त्रिदोषनाशक और रक्तशोधक बन जाता है।

लोग अधिकतर बाजारू मिठाई खाते हैं, जो अति हानिकारक होती है। एक तो बाजारू मिठाई शुद्धता से नहीं बनती, दूसरे बनी हुई मिठाई बहुत दिनों तक थालों में खुली रखी रहती है, जिस पर बाजार की धूल पड़ती और मक्खियाँ भिनकती रहती हैं। अतः इन बाजारू दूषित मिठाइयों को त्याग करके गुड़ का उपयोग करना अधिक लाभप्रद है।

(१) साफ धुले हुए सफेद तिल अथवा काले तिलों को कूट कर उसमें गुड़ मिला लिया जावे तो यह 'तिलकुटा' बड़ा ही गुणकारी होता है। इसमें थोड़ी-सी बादाम की मींगी और पिस्ता कूट कर मिला दिये जावें तो यह अति स्वादिष्ट, वृष्य (वीर्य वर्द्धक) अग्निवर्द्धक, हृद्य (हृदय को प्रिय) वस्तु हो जाती है। इसको प्रातःकाल प्रातराश (कलेवा नाश्ता) में और रात्रि को सोते समय दूध के साथ सेवन करना चाहिये।

(२) मध्याह्न (दोपहर) और सायंकाल के भोजन के साथ थोड़ा-थोड़ा गुड़ खाने से शक्ति बढ़ती, खाना हज्म होता और शीत के प्रकोप से बचाव होता है। दाल-साग में थोड़ा-सा गुड़ मिला कर खाना भी लाभदायक

सुझाव और सम्मतियाँ

कांग्रेस-शासन और 'रामधुन'

श्री राजेन्द्रजी

कांग्रेस और शासन, दोनों ही अपने आपको असाम्प्रदायिक कहते हैं। कांग्रेस ने भारतीय शासन विधान में राजभक्ति की शपथ लेते समय 'ईश्वर' शब्द तक का जानबूझ कर प्रयोग नहीं किया और उसका प्रयोग तक साम्प्रदायिक मान लिया गया है। 'जान-बूझ कर' मैं इसलिए कहता हूँ कि हमारे प्रधान मंत्री महोदय ने आज से तेरह वर्ष पूर्व, १९३८ ई० में, डा० आलम के मानहानि-अभियोग में लाहौर के न्यायालय में, जहाँ वह एक साक्षी के रूप में उपस्थित हुए थे, शपथ लेते समय 'ईश्वर' शब्द का प्रयोग करने में अपनी असमर्थता प्रकट की थी। शासन-विधान के प्रमुख निर्माता डा० अम्बेडकर तो आज बौद्ध धर्म ग्रहण करके खुले रूप में अनीश्वरवादी बन चुके हैं। ऐसी ही बातों को देख कर देश के लोग 'सेक्यूलर' के अर्थ असाम्प्रदायिक न करके अधार्मिक एवं अनीश्वरवादी करने लग जाते हैं। परन्तु जहाँ एक ओर कांग्रेस तथा वर्तमान कांग्रेस-शासन अपने को असाम्प्रदायिक घोषित करते हैं, वहाँ दूसरी ओर रेडियो विभाग, स्कूलों, जेलों तथा कांग्रेस द्वारा संगठित सार्वजनिक सभाओं में 'रामधुन' का संकीर्तन किया जाता है। फलस्वरूप आज सर्वत्र रामधुन का प्रचार बढ़ता जा रहा है। मैं पूछता हूँ कि क्या 'रामधुन-प्रचार' साम्प्रदायिक नहीं है? रामधुन का सीधा सम्बन्ध वैष्णव सम्प्रदाय से है, यह निर्विवाद है। केवल, "अल्लाह ईश्वर तेरे नाम" मिला देने से वह असाम्प्रदायिक नहीं हो जाती। भारतीय शासन-विधान की दृष्टि में ईश्वर-अल्लाह का प्रयोग भी तो साम्प्रदायिक है।

महात्मा गान्धी का जन्म एक वैष्णव कुल में हुआ था और यही कारण था कि राम और रामधुन उनकी प्रार्थना का एक मुख्य अंग बन गया, और प्रायः वह अपनी प्रार्थनाओं में इनका संकीर्तन किया करते थे। किन्तु महात्माजी अपने उदार धार्मिक विचारों के कारण 'राम' का अर्थ दशरथ का पुत्र न करके सर्वव्यापक ईश्वर ही करते थे। रघुपति, राघव, राजा और सीता आदि अनेक विशेषणों के होते हुए उसे दशरथ का पुत्र न मानना और सर्वव्यापक ईश्वर के साथ उसकी संगति लगाना एक विचित्र बात थी, जिसका उनके पास भावुकता के अतिरिक्त अन्य कोई तर्क-संगत समाधान नहीं था। कदाचित् इसी उद्देश्य से, कि लोगों में भ्रम उत्पन्न न हो, 'ईश्वर अल्लाह तेरे नाम' का इसमें उन्होंने समावेश कर दिया था। किन्तु इतने पर भी राम के ईश्वरावतार की साम्प्रदायिक भावना, जो इस देश के हिन्दुओं में सर्वत्र विद्यमान है, बनी रहती है। परिणामतः करोड़ों हिन्दू आज भी इस रामधुन में प्रयोग हुए राम को दशरथ-पुत्र ही समझते हैं, जो महात्मा गांधी के विचारों और मन्तव्य के सर्वथा प्रतिकूल है।

महात्मा गान्धी दशरथ के पुत्र राम को न ईश्वर मानते थे और न उनका अवतारवाद में विश्वास था। अनेक पाश्चात्य विद्वानों और लेखकों की भाँति वह राम और कृष्ण को ऐतिहासिक पुरुष भी नहीं मानते थे। रामायण और महाभारत को ऐतिहासिक ग्रन्थ मानने में भी उनका विश्वास नहीं था। उन्होंने अपने गीता-भाष्य में इसका स्पष्ट शब्दों में उल्लेख किया है। वह लिखते हैं—

'गीता के कृष्ण मूर्तिमान् शुद्ध सम्पूर्ण ज्ञान हैं, परन्तु काल्पनिक हैं।' "जो पुरुष अपने युग में सर्वश्रेष्ठ धर्मवान् होता है, उसे को भावी प्रजा अवतार रूप से पूजती है।' अन्यत्र राम के संबंध में भी उन्होंने ऐसे ही विचार प्रकट किए हैं:—"हम राम के गुण गाते हैं, वह वाल्मीकि के राम नहीं। तुलसी रामायण के भी राम नहीं हैं, जिनका नाम लेकर हम भवसागर से पार हो सकें या जिनका नाम दुःख के अवसर पर लिया करें। असह्य दुःख से दुखी मनुष्य से मैं कहता हूँ कि लो राम का नाम। लेकिन यह राम तो दशरथ के पुत्र और सीता के पति नहीं, यह तो देहधारी राम नहीं हो सकते। अंगूठे की तरह छोटा सा तो हमारा हृदय और उसमें समाये हुए सब देहधारी कैसे हो सकते हैं? यह तो न जन्मते हैं और न मरते हैं।"

महात्माजी के धार्मिक विचार चाहे जो रहे हों, परन्तु उस शासन को जो अपने आपको निरपेक्ष उद्घोषित करता है, इन विचारों के प्रचार करने का कोई अधिकार नहीं है। इसी प्रकार कांग्रेस अथवा शासन-द्वारा महात्माजी के चित्र और समाधि पर फूल चढ़ाने और हाथ जोड़ने की प्रथा को प्रोत्साहन देना भी असाम्प्रदायिक नहीं कहा जा सकता। यह प्रकार मूर्तिपूजा का प्रारम्भिक एवं प्रच्छन्न रूप है जो कालान्तर में गांधी-मूर्ति-पूजा का रूप धारण कर सकता है। बौद्ध धर्म में मूर्तिपूजा और उसके साथ उसके पतन का इतिहास भी ठीक इसी प्रकार प्रारम्भ हुआ था। गान्धीजी अपने नाम से कोई सम्प्रदाय भी नहीं चलाना चाहते थे किन्तु आज सर्वोदय समाज—जिसे राज्य का आश्रय किसी न किसी रूप में प्राप्त है—उनके नाम पर एक नवीन सम्प्रदाय की सृष्टि कर रहा है। दुःख है कि गांधीजी की मृत्यु के थोड़े ही दिनों पश्चात् उनके भक्त ही उनकी इच्छाओं के प्रतिकूल आचरण करने में संलग्न हैं। महात्माजी के सिद्धान्तों—जो किसी भी रूप में नवीन नहीं हैं—के प्रचार का साधन उनके चरण-चिन्हों पर चलना है, बाह्य आडम्बरों से, जिन्हें कि अपनाया जा रहा है, देश का अहित ही होगा।

आशा है राज्य-शासन तथा कांग्रेस इस सम्बन्ध में अपने अधिकारियों को उचित आदेश देकर शासन और कांग्रेस के नाम पर होने वाले इस साम्प्रदायिक कृत्य पर उचित प्रतिबन्ध लगाएगी। इसके साथ ही हम देश की उन संस्थाओं और विचार धाराओं को, जो इस प्रकार की साम्प्रदायिक प्रवृत्तियों से मतभेद रखना है, सचेत करते हैं कि वह शासन का ध्यान इस ओर दिलाए और उसे उचित कार्यवाही करने के लिए प्रेरित करें। अन्यथा राज्य के प्रोत्साहन द्वारा उनके सुधार-कार्य में प्रबल बाधा पहुँचने का भय है। सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा, प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं, आर्यसमाजों तथा आर्यसंस्थाओं का यह कर्तव्य है कि वे इसका व्यापक रूप से विरोध करें और ऐसे कार्यों में न केवल मनोयोग न दें अपितु उनसे असहयोग करें।

—

है। हरा धनियाँ, पोदीना, अदरख, हरी मिर्च, नमक, जीरा, हींग और थोड़ा-सा गुड़—इनकी चटनी बनाकर भोजन के साथ सेवन करने से गरिष्ठ (भारी) भोजन पचता, जठराग्नि की वृद्धि होती और ऊपर-नीचे से वायु खुलकर पेट हलका होता है।

(३) सोंठ पिसी हुई १ तोला और गुड़ १ तोला लें, इन दोनों को कूटकर तीन-तीन माशे की गोली बना लें। दो-दो गोली जल से तीन-तीन घंटे बाद लेते रहने से दो दिन में पेचिश-मरोड़ के दस्त और पेट का दर्द दूर होता है।

(४) सोंठ, हर्र की छाल और नागरमोथा प्रत्येक एक-एक तोला लेकर चूर्ण करें। इस तीन तोले चूर्ण में ६ तोला गुड़ मिला दें और कूटकर तीन-तीन माशे की गोलियाँ बना लेवें। इन गोलियों को मुख में रखकर रस चूसने से कफ, खाँसी, श्वास रोग दूर होते हैं।

(५) हरड़ (बड़ी) का बक्कल, बहेड़े का बक्कल, आमले सूखे, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और सेंधा नमक ये सात प्रत्येक एक-एक तोला लेकर कूटपीसकर चूर्ण बनालें। इस सात तोले चूर्ण में चौदह तोला गुड़ खूब कूट कर मिला दें। कुटकर औषधि जब एक दिल होजावे तब इसमें से तीन-तीन माशे की गोलियाँ बना कर रखलें। इन गोलियों के सेवन करने से अजीर्णविकार, अर्श (बवासीर), मन्दाग्नि, श्वास, खाँसी, उदरविकार आदि कितने ही रोग दूर होते हैं। दो-दो गोलियाँ प्रातः और रात्रि को दूध से अथवा गर्म जल से व्यवहार करें।

नोट—उपर्युक्त जो औषध-प्रयोग हमने लिखे हैं, उनमें सदैव पुराना ही गुड़ डालना चाहिये।

—

सुप्रसिद्ध अंगरेज कवि वर्डसवर्थ ने बच्चे को मनुष्य का पिता सिद्ध करके (Child is the father of man) एक गहन सत्य का उद्घाटन किया था। बचपन निश्चय ही मानवता की बुनियाद है। अतः विकसित मानव की इस प्रारम्भिक अवस्था का अध्ययन तथा उचित निरीक्षण आवश्यक है। मा के निकटतम सम्पर्क में रहने के कारण बच्चे की बुद्धि को सुचारु रूप से अंकुरित होने देने का दायित्व प्रधानतः मा का ही है। मनोविज्ञान के ज्ञाताओं ने बच्चों की स्वाभाविक प्रवृत्तियों तथा उनके सदुपयोग के विषय में जो विचार प्रकट किये हैं, उनका यहां संक्षेप में उल्लेख किया जाता है।

बच्चों के व्यक्तित्व की उन्नति तथा उनके चरित्र-निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि हम उनकी मानसिक प्रवृत्तियों का अध्ययन ध्यान पूर्वक करें और देखें कि उनका झुकाव किस ओर है। अन्य जीवधारियों के बच्चों की भांति हमारे बच्चों के अन्दर भी कुछ स्वाभाविक प्रवृत्तियां होती हैं, जिन्हें उचित शिक्षण के द्वारा उन्नत और संयत किया जा सकता है। यह स्वाभाविक प्रवृत्तियां समयानुसार विशेष अवस्थाओं में विकसित होती हैं। इनके स्वभाव और गुणों के अनुसार इन्हें उभारना अथवा दबाना माता पिता या शिक्षक के ऊपर है। वैसे तो मनुष्य तथा पशुओं की यह सब प्रवृत्तियां एक-सी ही हैं, जैसे जीवरक्षा की प्रवृत्ति, भोजन करने की प्रवृत्ति, योनि सम्बन्धी प्रवृत्ति आदि, परन्तु 'हँसी की प्रवृत्ति' एक ऐसी प्रवृत्ति है, जो मनुष्यों में ही पाई जाती है। जानवर इसके अधिकारी नहीं हैं। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक मैकडूगल के विचारानुसार इन प्रवृत्तियों की संख्या १२ है। लेकिन यह ध्यान देने योग्य है कि यह सब प्रवृत्तियां एक साथ ही प्रकट नहीं होतीं, प्रत्येक का अपना एक विशेष समय होता है। किसी एक विशेष अवस्था में एक प्रवृत्ति अपना रूप दिखाती है तो दूसरे समय में अन्य प्रकट होती है।

दूसरी बात इन प्रवृत्तियों के संबन्ध में यह है कि यदि इनका उचित रूप से उपयोग न किया जाय तो कुछ समय के पश्चात् या तो वे नष्ट हो जायेंगी, अथवा यदि

मनोविज्ञान

बाल-प्रवृत्तियों की परख

श्रीमती शान्ति शर्मा, एम० ए०

उन्हें विकास होने का अवसर न मिलेगा तो वे बालक के चरित्र के ऊपर गुप्त रूप से अत्यन्त दूषित प्रभाव डालेंगी। इसीलिये बालक के अभिभावकों को ध्यानपूर्वक यह देखना चाहिये कि किस समय में कौनसी प्रवृत्ति कार्य कर रही है। उसी के अनुसार उसे शिक्षा देना लाभप्रद होगा। यहाँ संक्षेप में उन प्रवृत्तियों का वर्णन किया जाता है, जो विशेष रूप से बच्चों में पाई जाती हैः—

(१) कुतूहल अथवा जिज्ञासा की प्रवृत्तिः—यह बच्चे की सर्वप्रथम तथा साथ ही महत्वपूर्ण प्रवृत्ति है। छोटे बच्चे के मन में, अपने चारों ओर की वस्तुओं को देख कर प्रत्येक के बारे में जानने की जिज्ञासा होती है। घर में कोई नयी वस्तु आयेगी तो वह प्रश्न करेगा कि 'यह क्या है?' 'कहाँ से आई है?', 'इसका क्या होगा'? इत्यादि। उसके इन प्रश्नों को सुनकर अक्सर उसकी मा झल्ला कर कह देती है, 'चुप रहो, क्यों कान खाए जाते हो? तुम्हें इससे क्या मतलब?' बेचारा बच्चा सहम कर रह जाता है। लेकिन ऐसा करना उचित नहीं है। यदि बच्चा प्रत्येक नवीन वस्तु के संबन्ध में प्रश्न करता है तो समझ लेना चाहिये कि उसकी जिज्ञासा की प्रवृत्ति जाग उठी है, और अब सुअवसर आ गया है कि उसे नूतन विषयों की जानकारी कराई जाय। एक बार मैंने देखा कि एक बच्चे ने एक चींटी को देखकर अपनी मा से पूछा कि 'यह कहाँ जा रही है? कहाँ रहती है?' मा ने बात टालने के लिए कह दिया कि 'रामजी न ऊपर से बरसाई हैं।' कितना बेढ़गा उत्तर था। बच्चे के मस्तिष्क पर क्या प्रभाव पड़ा होगा। उचित तो यह था कि वह अत्यंत रोचक ढग से उसे चींटियों के जीवन, रहन-सहन आदि के विषय में बताती कि वे किस प्रकार बिलों में संगठित रूप से रहती है। कैसे भोजन प्राप्त करती हैं—इत्यादि।

बचपन में बताई हुई बातें जीवन-भर के लिये अमिट हो जाती हैं। अतः बच्चे की इस कुतूहल की प्रवृत्ति से लाभ उठा कर उसे नयी-नयी बातों की शिक्षा दी जा सकती है।

(२) संग्रह-प्रवृत्तिः—एक विशेष आयु पर बच्चे के अन्दर इस प्रवृत्ति का जन्म होता है। यदि किसी बच्चे की जेब अथवा उसके खिलौने रखने की जगह का निरीक्षण किया जाय तो वहाँ चूड़ियों के टुकड़े, चमकीली पन्नी, घर की अन्य छोटी-मोटी वस्तुएं जिन्हें रद्दी समझ कर फेंक दिया जाता है, मिलेंगी। यह उसकी संग्रह-प्रवृत्ति का चिह्न है। उसकी यह प्रवृत्ति लाभदायक कार्यों की ओर प्रेरित की जा सकती है। उसके अन्दर प्राचीन सिक्के, टिकटें, सुन्दर प्राचीन चित्र आदि संग्रह करने का शौक उत्पन्न किया जाय जो उसके भविष्य जीवन में हितकारी हो सके।

(३) सृजनात्मक प्रवृत्ति—जब बच्चा किसी नवीन एवं आकर्षक वस्तु को देखता है तो उसे अपने हाथ में लेकर ध्यानपूर्वक उसका निरीक्षण करता है। उसमें वह कुछ नवीनता तथा परिवर्तन लाना चाहता है। यदि वह ऐसा करता है तो उसे रोकना न चाहिए, उसे अच्छी तरह निरीक्षण करने का पूरा अवसर देना चाहिए, भले ही वह वस्तु उसके हाथ से टूट जाय। नष्ट होने पर उसे डांटना एवं दण्ड देना भी न चाहिए, क्योंकि यह तो उसकी प्राकृतिक प्रवृत्ति के अनुकूल है। वह उस वस्तु को तोड़कर, उसके अंग-प्रत्यगों से परिचित होना चाहता है। वरन् इस समय उसके लिये मिट्टी, कागज, पट्ठा आदि वस्तुएं एकत्र की जायें, जिनसे वह भाँति-भाँति के खिलौने, गुड़िया, जहाज, घर आदि बनाने का प्रयास कर सके। उसके अभिभावक उसे इस समय यदि सहारा दें तो वह इन खेलों से मनोरंजन के अतिरिक्त भविष्य के लिये कुछ सीख भी सकता है।

(४) आत्मप्रदर्शन की प्रवृत्तिः—प्रायः देखा जाता है कि बच्चा जब थोड़ा बड़ा हो जाता है, तो उसके अन्दर आत्मप्रदर्शन की प्रवृत्ति का उदय हो जाता है। वह अपने कार्यों द्वारा अपने मा-बाप, कुटुम्बियों तथा साथियों को अपनी ओर आकर्षित करना एवं उनसे प्रशंसा पाना चाहता है। अपने मामूली-से कार्य को वह घर-भर में सबको दिखाता फिरता है, प्रशंसा पाने की आशा से। यदि वह किसी कागज अथवा स्लेट पर कुछ टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएं भी खींचेगा तो सबको दिखाता फिरेगा। यदि उसे इस समय उत्साहित किया जाता है तो वह दूने वेग से उस कार्य को करेगा। इसलिये बच्चों के प्रत्येक अच्छे कार्य के लिये उसकी प्रशंसा करते रहना चाहिए, उसे बढ़ावा देते रहना चाहिए। इसके विपरीत यदि उसे डांट दिया जायेगा "क्या पेन्सिल खराब कर रहे हो?" अथवा उसकी उपेक्षा की जायेगी तो वह ऐसे शैतानी के कार्य करना प्रारम्भ कर देगा जो बरबस हमें उसकी ओर ध्यान देने को बाध्य करेंगे। इसलिये अच्छा यही है कि हम उसके प्रत्येक कार्य को देखें, उसकी प्रशंसा करें तथा उसे प्रोत्साहन दें। उसकी टेढ़ी मेढ़ी रेखाओं को देखकर हसें नहीं, वरन उससे कहें, "बहुत अच्छी! और बनाओ। पर जरा ऐसी फूल-पत्ती, जानवर आदि का चित्र बनाकर बनाओ।"

इन सब प्रवृत्तियों के अतिरिक्त एक विशेष आदत भी बच्चों में पाई जाती है। वह है, अनुकरण करना। इसकी गिनती यद्यपि प्रवृत्तियों में नहीं की जाती, तथापि है यह बड़ी ही महत्वपूर्ण आदत। बच्चे अपने घर में, पड़ोस में, साथियों में जो कुछ देखते व सुनते हैं, वैसा ही करने का प्रयत्न भी करते हैं। जैसे यदि कोई बच्चा स्टेशन के पास रहता है तो वह दिन-भर रेल ही चलाया करता है। शिकारी पिता का पुत्र शिकार सम्बन्धी खेल ही खेलेगा जैसे—'वह मारा शेर', 'बन्दूक चली ढाँय' यद्यपि ऐसा होता तो कुछ संस्कारवश भी है, परन्तु अधिकतर बच्चे इसीलिये यह सब करते हैं कि वह घर में देखते ही ऐसा हैं। इसलिये कहना अनुचित न होगा कि हम बच्चे का वातावरण ऐसा बनायें जो उसको शिक्षाप्रद तथा लाभदायक हो। घर में बच्चे के सामने लड़ाई-झगड़ा पारस्परिक बुराई, अनुचित बर्ताव आदि

आर्यजगत्

—मसेवी (मुरादाबाद) के श्री कन्हैयालालजी की मृत्यु के बाद उनके आदेशानुसार तरहवीं आदि अवैदिक कर्म न कर १३ जनवरी को बृहद् यज्ञ किया गया। इस अवसर पर २५०) विविध संस्थाओं को दान दिये।

—आ० स० कायमगंज में श्री विशुद्धानन्दजी सरस्वती ने गत १७ जनवरी से एक सप्ताह तक आध्यात्मिक कथा कही। गणतन्त्र दिवस मनाया गया।

—सिमिरिया हरदोई में पांच कन्याओं के यज्ञोपवीत संस्कार श्रीमती सत्यभामाजी आदित्य ब्रह्मचारिणी की अध्यक्षता में हुए। श्रीमती प्रियंवदादेवीजी का प्रशंसनीय अनुग्रह था।

—आ० स० बछरजा (बलिया) में प्रौढ़-शिक्षण के लिये रात्रि-पाठशाला स्थापित की है। राजकीय हरिपुर (बलिया) पाठशाला में समाज-सेवा-सप्ताह १५ से २० जनवरी तक समारोहपूर्वक मनाया गया।

—उचरॉव (बलिया) में १५ जनवरी को प० धर्मवीरजी आर्य झण्डाधारी के प्रयत्न से आर्य-समाज की स्थापना हुई।

निर्वाचन

—आ० स० उचरॉव (बलिया) प्रधान—श्री हर्षनारायण सिंहजी और मन्त्री- श्रीकृष्णसिंहजी

—आ० स० मवाना (मेरठ) प्रधान-श्री माधवशरणजी और मन्त्री—श्री ज्योतिःप्रसादजी

—आ० स० शिवपुरी (ग्वालियर) प्रधान-श्री जसर मजी और मन्त्री-श्रीबाबूलाल गुप्त।

—आ० स० दयानन्दनगर (फैजाबाद) प्रधान-ठा० भगवती सिंहजी और मन्त्री-ठा० शीतला-प्रसादसिंहजी

सार-सूचनाएं

—'वेद-पथ' और 'दयानन्द-संदेश' मासिक पत्र कहां से प्रकाशित होते हैं। आर्यसमाज के और मासिकों के नाम तथा पते ?

हरदयालु आर्य,पाली (हरदोई)

—स्व० श्री स्वामी दर्शनानन्दजी महाराज द्वारा संस्थापित गुरुकुल बदायूँ गत ४७ वर्षों से समाज-सेवा का कार्य कर रहा है। इनकी ओर से श्री रामचन्द्रजी उपदेशक प्रचार करते हैं। जो लोग भ्रम फैला रहे हैं कि यह गुरुकुल टूट गया, उनसे सावधान रहिये।

रघुनन्दन स्वरूप, मन्त्री

—लाहौर का दयानन्द-उपदेशक-विद्यालय, पंजाब के बटवारे के समय १६४७ ई० में बन्द कर देना पड़ा था। अब उसका पुनर्निर्माण ६ मार्च को दीना नगर में होगा। प्रवेशार्थी की आयु कम-से-कम १८ वर्ष और योग्यता प्राज्ञ की होनी चाहिये। मंत्री, आ० प्र० सभा, पंजाब, जालधर

—नगर आर्यसमाज आगरा का वार्षिक चुनाव २५ फरवरी को होगा।

उत्सव-सूचनाएं

महिला विद्यापीठ कुसावर (भरतपुर) १७, १८ तथा १६ मार्च।

—आर्यमहाविद्यालय किरठल (मेरठ) १६,१७ तथा १८ फरवरी। इसी समय नवीन ब्रह्मचारी प्रविष्ट किये जायगे।

—आर्यसमाज जमलार्जुनपुर कैसरगंज (बहरायच) १७, १८, १६ तथा २० मार्च

—गुरुकुल विद्यापीठ हरियाना भैंसवाल कलां (रोहतक) ३१ वॉ वार्षिकोत्सव १६, १७ तथा १८ मार्च।

—नगर आर्यसमाज आगरा का उत्सव १ से ७ अप्रैल तक

—गुरुकुल वासीपुरा (मुजफ्फर नगर) का उत्सव ६, १० तथा ११ फरवरी

—आ० स० विवाया (सहारनपुर) का पांचवाँ उत्सव २२, २३, २४ तथा २५ मार्च।

—आ० स० दयानन्दनगर (अक्षोरा) फैजाबाद की रजत-जयन्ती १६ से २१ अप्रैल तक मनायी जायगी।

—राजस्थान प्रान्तीय आर्यकुमार परिषद् का पंचम वार्षिकोत्सव चित्तौरगढ़ में ११ फरवरी को मनाया जायगा। आगन्तुक महानुभाव गुरुकुल में ठहरेंगे।

दयानन्द सप्ताह

आचार्यदेव ऋषिवर दयानन्द महाराज की पावन स्मृति में सदा की भाँति इस वर्ष भी ऋषिबोधोत्सव दयानन्द-सप्ताह, बुधवार फाल्गुन कृष्णा सप्तमी से मगलवार फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशी संवत् २००७ वि० तदनुसार २८ फरवरी से ६ मार्च १६५१ तक मनाया जायगा। सप्ताह का संक्षिप्त कार्य-क्रम निम्न प्रकार है—

संकीर्तन—प्रति दिन सूर्योदय से दो घड़ी पूर्व नगर-नगर और ग्राम-ग्राम में टोलियां बनाकर संकीर्तन करना चाहिये।

यज्ञ—कीर्तन के पश्चात् आर्य-मन्दिर में सार्वजनिक यज्ञ किया जाना चाहिये। यथासम्भव इस सप्ताह में सम्पूर्ण यजुर्वेद संहिता से बृहद्यज्ञ का आयोजन किया जाय।

प्रचार—प्रत्येक दिन सायंकाल ग्रामों में तथा नगर के भिन्न-भिन्न मुहल्लों में अथवा आर्य-मन्दिरों में कथा के द्वारा तथा अन्य प्रकार वादिक सिद्धान्तों के प्रचार की विशेष योजना करनी चाहिये।

दलितोद्धार—इस सप्ताह में न्यून से न्यून एक दिन अछूत कहे जाने वाली जातियों में विशेष प्रकार से प्रचार तथा उनके उठाने और अस्पृश्यता का निर्मूल करने का प्रयत्न करें।

शुद्धि—इस सप्ताह में शुद्धि का कार्य विशेष रूप से किया जावे।

सहभोज—यथासम्भव सहभोज की भी उसी दिन योजना करनी चाहिये।

दयानन्द जन्म-दिवस

दयानन्द जन्म-दिवस अथवा ऋषिबोध-पर्व ६ मार्च १६५१ मंगलवार को मनाया जायगा। उसका कार्यक्रम इस प्रकार है—

प्रातः स्मरण आर्य सज्जन तथा देवियां मन्दिर में एकत्र होकर कुछ काल वेदपाठ करें। २-सामूहिक यज्ञ तथा पर्वेष्टि विधान किया जाय। ३-आत्मोद्धार सम्बन्धी भजन-गान किये जायें। ४-प्रत्येक व्यक्ति आत्मोन्नति, स्वाध्याय और वैदिक धर्म प्रचार करने का अनुष्ठान करे। मध्याह्न-आर्य पुरुषों, कुमारों और देवियों की टोलियां बना बना कर स्वयं भजन गाने चाहियें। सायं-दीप-मालिका के उपरान्त समाज-मन्दिरों में वेदोपदेश तथा ऋषि-जीवन पर प्रकाश डालने वाले उपदेश एवं व्याख्यान होने चाहियें।

नोट—इस सप्ताह में टोलियां बनाकर प्रान्तीय वेद-प्रचार के लिये धन-संग्रह का विशेष प्रबन्ध होना चाहिये। संगृहीत धन सभा के कोष में लखनऊ के पते पर भेजना चाहियें।

पीतमलाल, एम० एस-सी, एडवोकेट, सभा-मंत्री

—

आवश्यकताएं

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के कार्यालय के लिये लेखकों की तुरन्त आवश्यकता है। प्रार्थना-पत्र, प्रमाण-पत्र सहित नीचे लिखे पते पर स्थानीय आर्यसमाज के प्रधान अथवा मन्त्री की सिफारिश के साथ आने चाहियें।

१—कोष विभाग के लिये एक एकाउन्टेन्ट, जो एकाउन्टेन्सी-परीक्षा में उत्तीर्ण और हिसाब-किताब हिंदी भाषा में रखने की योग्यता रखता हो। वेतन ग्रेड ७५)-४)-१५१) और महगाई एलाउन्स ३०) प्रतिशत दिया जावेगा। टाइप जानने वाले को विशेषता दी जायगी।

२—कार्यालय के लिये एक हिंदी व अंग्रेजी टाइपिस्ट की जिसकी योग्यता इंटरमीजियट से कम न हो, आवश्यकता है। वेतन ग्रेड ६७)-३)-११२) मँहगाई एलाउन्स २७॥) प्रतिशत दिया जावेगा। शार्ट हैण्ड जानने वाले को विशेषता दी जावेगी। प्रार्थी किसी आर्यसमाज के सभासद् हो तो अच्छा है।

भृगुदत्त तिवारी, उपमंत्री
५, मीराबाई मार्ग, लखनऊ।

उचित कार्य नहीं है। यदि हम अपने बच्चे का भविष्य उज्ज्वल बनाना चाहते हैं तो हमें अत्यन्त सतर्कता एवं सावधानी से काम लेने की आवश्यकता है। इस प्रकार बच्चे की रुचि तथा प्रवृत्तियों का ध्यान रखते हुए हमें उसे उचित मार्ग पर अग्रसर करना चाहिए।

—

जाति-भेद-निवारक सप्ताह

उत्तर प्रदेशीय आर्यकुमार-परिषद् द्वारा आयोजित उक्त सप्ताह प्रान्त की आर्यकुमार-सभाओं में यथाशक्ति सफलता-पूर्वक मनाया गया। बिजनौर, शेरकोट, अमरोहा, नजीबाबाद आदि आर्यकुमार सभाओं की प्रगति इस दशा में विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। सभाओं को परिषद् की ओर से जो टिकट भेजे गये थे, उनका आधा धन परिषद् के पास शीघ्र भेज देना चाहिये। श्री रघुवरदयालुजी आर्य और श्री अमीचन्द शर्मा ने निरीक्षण-कार्य किया। सभाओं को चित्र (नकशे) यथा स्थान प्रति मास भेजने चाहियें। शेरकोट समाज ने "कुमार" मासिक प्रकाशित करना प्रारम्भ कर दिया है। अन्तरंग सभा का अधिवेशन २७ फरवरी के बदले ११ फरवरी को होगा।

आर्यसमाजों का निरीक्षण

प्रान्तीय आर्य प्र० नि० सभा में प्रविष्ट आर्यसमाजों की संख्या लगभग साढ़े आठ सौ है और प्रांत में अप्रविष्ट आर्यसमाजों की संख्या डेढ़सौ से कम न होगी। अर्थात् कुल आर्यसमाजों की संख्या एक सहस्त्र मान लेनी चाहिये। इन आर्यसमाजों को जीवित रखने के लिये यह आवश्यक है कि प्रांतीय सभा की ओर से कोई न कोई व्यक्ति वर्ष में एक बार अवश्य उनमें जावे, उनका निरीक्षण करे, उनकी त्रुटियों को बतावें तथा उन्हें उचित परमार्श दें और उनकी कठिनाइयों को दूर करने में सहायता प्रदान करें। कम से कम पचास ऐसे उत्साही कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है जो न्यूनातिन्यून २० आर्यसमाजों का निरीक्षण वर्षान्तर्गत करने का सकल्प करें। जो आर्य सज्जन इस अवैतनिक सेवा के लिये उद्यत हों वे कृपया अपने-अपने नाम शीघ्र स्थानीय आर्यसमाज के जिसके वे सभासद हों, मन्त्री महोदयों द्वारा भिजवाने या भेजने का कष्ट करें। यदि कोई महाशय किसी आर्यसमाज के अधिकारी रहे हों तो उसका उल्लेख अवश्य करदें क्योंकि वे अपने अनुभव के कारण कदाचित् अधिक लाभदायक सिद्ध होंगे।

देवीप्रसाद चौधरी, स० मंत्री
यू० पी० आ० प्र० सभा, लखनऊ

जन-गणना में 'आर्य' लिखाइये आर्यसमाजों को आदेश

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा ने अपने अधीन आर्यसमाजों के मन्त्री महाशयों को भ्रमण पत्रिका संख्या २ द्वारा निम्नलिखित आदेश दिया है—

१९५१ में इस देश की जनगणना होगी जो ९ फर्वरी १९५१ से आरम्भ होकर १ मार्च को सूर्योदय के साथ समाप्त होगी। सरकार ने इस गणना में धर्म शीर्षक में हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों, सिक्खों और जैनियों के लिये पृथक् पृथक् उप शीर्षक रक्खे हैं, और इनके अतिरिक्त कोई व्यक्ति अपना धर्म बतायेगा वही लिखा जायगा। सार्वदेशिक सभा की विज्ञप्ति सं० १ दि० १ दिसम्बर १९५० को दृष्टि में रखकर, इस सभा की अन्तरङ्ग सभा दिनाङ्क २६ दिसम्बर १९६० ने हमारा धर्म वैदिक होते हुए भी सरकार के जन-गणना के कार्य पर विचार करके तथा सम्पूर्ण स्थिति को दृष्टि में रख कर निश्चय किया है कि आर्यसमाजियों को अपना धर्म 'आर्य' लिखाना चाहिए और इसको बिना किसी तर्क अथवा ननुनच के मान लेना चाहिए। यत्न ऐसा होना चाहिए कि प्रत्येक आर्यसमाजी अपने को 'आर्य ही लिखाये, चाहे वह आर्यसमाज का रजिस्टर्ड सदस्य हो या न हो। वैदिक धर्म में अन्य जो भी आस्था रखता हो, उसको भी 'आर्य' ही लिखाने का पूरा-पूरा यत्न होना चाहिये। इस बात का भी विशेष ध्यान रखना होगा कि गणक लोग ठीक ठीक रीति से आर्य लिखाने वालों को 'आर्य' अङ्कित करते हैं या नहीं। यदि न करें तो उच्च अधिकारियों का ध्यान आकृष्ट करके ठीक-ठाक लिखने के लिये बाध्य करना होगा। आप इस कार्य को महत्वपूर्ण समझते हुये अभी से इसके लिये यथोचित व्यवस्था करें। यह अच्छा होगा कि इस कार्य को किन्हीं विशेष व्यक्तियों या उपसमिति के अधीन करके करायें। इष्ट यह है कि यह कार्य उत्तम रीति से और व्यवस्थित रूप से सम्पादित हो, और इसके लिये आप जो भी व्यवस्था उचित समझें करें। इस कार्य को संगठित रूप देने और 'साम्य' लाने के लिये यह भी आवश्यक है कि एक स्वर होकर सभी अपने को केवल 'आर्य' लिखावें। इस शब्द के साथ कोई और शब्द या शब्दांश आगे-पीछे न जोड़ा जावे। थोड़ा-सा भी भेद मात्र बहुधा अकथनीय हानियों का कारण बन जाता है। कृपया इस बात पर विशेष ध्यान दीजिये।

निवेदकः—राजगुरु धुरेन्द्र-शास्त्री प्रधान, पीतमलाल, एम० एस० सी, एल० एल० बी० मंत्री।

गुरुकुल काँगड़ी की चिट्ठी

२६ जनवरी १९५१ को कुल-भूमि में गण-राज्य-दिवस बड़े समारोह के साथ मनाया गया। ठीक सवा आठ बजे कार्यालय के सामने श्री आचार्य प्रियव्रतजी द्वारा ध्वजारोहण किया गया। इसके पश्चात् श्री आचार्यजी ने एक छोटा-सा शिक्षाप्रद वक्तव्य दिया। इस कार्यक्रम के साथ साथ गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी का बैंड भी बजता रहा। अन्त में जन-मन-गन के गायन के पश्चात् यह समारोह समाप्त हुआ। इसी उपलक्ष्य में सारा दिन ब्रह्मचारियों के खेल अथवा हाकी, फुट-बाल के मैच हुए।

अदालती समन

नोटिस निसबत दिखाने वजह के नमूना आम

ब अदालत जनाब सेल अफसर साहब बहादुर लखनऊ

ब मुकाम कलक्टरी लखनऊ

मुकदमा नं० १२। ३८। १०६ सन् १९५१ ई०

उमाप्रसाद पुत्र गंगादीन साकिन मौजा पिंडसावां परगना कुरसी तहसील फतेपुर जि० बाराबंकी—डिगरीदार

बनाम

गंगाप्रसादसिंह आदि······ मदयूनान

(१) गंगाप्रसाद पुत्र मुन्नूलाल साहु साकिन टिकैतगंज परगना कुरसी तहसील फतेपुर जिला बाराबंकी।

(२) श्रीमती बड़को बेवा गंगाप्रसाद सिंह (३) शिवचरनसिंह पुत्र ज्वालावरशसिंह साकिनान मौजा रेवामऊ

(४) गोपाल कृष्ण (५) रामविलास (६) दयाकृष्ण पुत्र प० पुत्तूलाल (७) श्रीमती बड़को बेवा प० पुत्तूलाल साकिनान मौजा कुम्हरावां परगना महोना तहसील मलिहाबाद जिला लखनऊ मदयूनान

हरगाह मुसम्मी उमाप्रसाद ने एक दरख्वास्त इस अदालत में गुजारी है, लिहाजा आपको इत्तिला दी जाती है कि आप असालतन या मारफत वकील जो कि हालात मुकदमा से बखूबी वाकिफ हो, ब वक्त १० बजे ब तारीख २१ माह फरवरी सन् १९५ ई० इस अदालत में हाजिर होकर दरख्वास्त के खिलाफ वजह दिखाइये। अगर ऐसा न करेंगे तो दरख्वास्त मजकूर आपकी गैर-हाजरी में समाअत की जायगी।

ब तारीख १७ माह जनवरी सन १९५१ मेरे दस्तखत और मुहर अदालत से जारी किया गया।

वक्त हाजरी दफ्तर १० बजे से ४ बजे तक।

मुन्सरिम

परोपकारिणी सभा का अधिवेशन

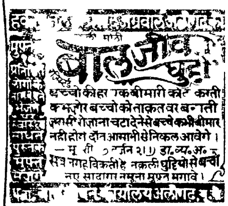
७, ८ जनवरी को अजमेर में परोपकारिणी सभा का अधिवेशन श्रीमान् शाहपुराधीश, श्री उम्मेदसिंहजी के सभापतित्व में हुआ। वयोवृद्ध नेता लाला नारायणदत्तजी के देहान्त पर एक शोक-प्रस्ताव स्वीकार किया गया। उनके रिक्त स्थान पर श्री देशबन्धुजी गुप्त एम० पी० प्रधान अ० भा० सम्पादक-सम्मेलन को सभासद चुना गया। निम्नलिखित चुनाव हुआ—१ श्रीमान् महाराज उम्मेदसिंहजी शाहपुराधीश प्रधान, २ सर्व श्री महाशय कृष्ण उपप्रधान, ३ हरविलासजी शारदा मंत्री ४ धर्मचंदजी कोषाध्यक्ष। अधिकारियों के अतिरिक्त अन्तरंग सदस्य प्रायः वे ही रहे जो गत वर्ष थे। सिर्फ लाला देशबन्धु गुप्त और महाशय कृष्णजी नये सभासद चुने गये। एक प्रस्ताव द्वारा श्रीमान् पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु का यजुर्वेद भाष्य अप्रामाणिक ठहराया गया। ऋग्वेद भाष्य के प्रकाशन के लिये श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी महाराज नियुक्त किये गये।

मैं अस्वस्थ हूं

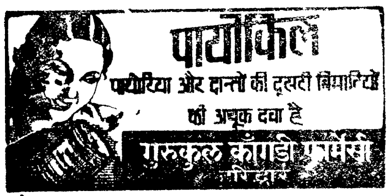
बहुत काल से स्वास्थ्य अच्छा न रहने के कारण मैं समाजों के उत्सवों में नहीं जा रहा हूं और आगे भी नहीं जा सकूंगा, जब तक स्वास्थ्य ठीक नहीं होगा। अतः श्री पं० ओमप्रकाशजी शास्त्री जो खतौली रहते हैं, उनको अपने उत्सवों में बुला लिया करें।

रामचन्द्र देहलवी





अ ग्राम र
जित १०
द ४१
ला॰
उठाइर



—आर्य मित्र के ग्राहक महानुभाव पत्र-व्यवहार करते समय ग्राहक नम्बर अवश्य लिखा करें

— व्यवस्थापक



आर्यमित्र में विज्ञापन दीजिए

मुद्रक कृपाशङ्कर शर्मा, एम॰ ए॰ निराला प्रेस आगरा। आर्यमित्र प्रेस के लिए यज्ञदत्त शर्मा द्वारा प्रकाशित।

ओ३म्

आर्य्य-मित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक—आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ
१५ फ़रवरी १९५१

आगरा के कर्म्मवीर



स्व० महात्मा श्रीरामजी



स्व० श्री ठा० माधवसिंहजी



स्व० श्री बा० नाथमलजी

उपर्युक्त तीनों कर्म्मवीरों ने आगरा में आर्यसमाज के प्रचार और वैदिक धर्म के विस्तार तथा समाज-सुधार के लिये जो अमूल्य सेवाएं कीं वे कभी नहीं भुलाई जा सकतीं।

उपाध्यायजी की जन्म-जयन्ती

सुप्रसिद्ध साहित्यकार मंगलाप्रसाद पारितोषिक-विजेता वयोवृद्ध आर्य नेता श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय एम. ए. की सत्तर वर्षीय जन्म-जयन्ती गत ८ फरवरी को आर्यसमाज चौक प्रयाग की हीरक-जयन्ती के अवसर पर समारोहपूर्वक मनायी गयी। अध्यक्ष का आसन राजर्षि श्री पुरुषोत्तमदास टन्डन ने सुशोभित किया। जयन्ती के अवसर पर जिन महानुभावों ने अपनी शुभ कामनाएं भेजीं उनमें से कुछ के नाम नीचे दिये जाते हैं—

स्वामी अभेदानन्दजी, राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री, श्री मदनमोहन सेठ, श्री घनश्यामसिंह गुप्त, श्री पूर्णचन्द्र एडवोकेट, कु० चन्द्रकरण शारदा, श्री विनायकराव विद्यालंकार, पं० धर्मदेव विद्यावाचस्पति, आचार्य्य नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ, राजकुमार रणञ्जयसिंह, आचार्य्य प्रियव्रतजी, पं० रामदत्त शुक्ल एडवोकेट, प्रिंसिपल महेन्द्रप्रताप शास्त्री डा० सूर्यदेव शर्मा, पण्डित सत्यव्रतजी वेदविशारद। पण्डित रामनारायण मिश्र, पण्डित शुकदेव विहारी मिश्र, डाक्टर धीरेन्द्र वर्मा डाक्टर बाबूराम सकसेना, डाक्टर रामकुमार वर्मा, ठाकुर श्रीनाथसिंह श्री बच्चनजी, श्री हरिशङ्कर शर्मा।

डा० गोरखप्रसाद, प्रो० एस. सी. देव, प्रो. एस. सी. मुकर्जी, महामहोपाध्याय डा० पी. के. आचार्य प्रो. ए. सी. बनर्जी, आर. सी. एस. प्रो. के. के. भट्टाचार्य, मा. न्यायाधीश श्री शङ्करशरण, मा. न्यायाधीश श्री चन्द्रभानु अग्रवाल, डाक्टर नारायणप्रसाद अस्थाना इत्यादि।

उपाध्यायजी का जन्म १८८१ ई० में एटा जिले के नदरई ग्राम में हुआ। १९०८ में बी० ए० पास किया। १९१२ में अंग्रेजी में और १९[illegible] ई० में दर्शनशास्त्र में एम० ए० पास किया। १९१८ ई० में सरकारी नौकरी से सामाजिक क्षेत्र में भाग लेने के लिये त्याग-पत्र दिया। फिर १९१८ से १९२१ ई० तक डी० ए० वी० हाई स्कूल प्रयाग के प्रिंसिपल रहे। १९२२ ई० में हिन्दी साहित्य-सम्मेलन द्वारा श्री मंगलाप्रसाद पारितोषिक प्रदान किया गया। उसी वर्ष भारतीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन में दर्शन परिषद के सभापति हुए। १९४[illegible] से ४५ ई० तक उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान निर्वाचित हुए। १९४७ से अब तक



उपाध्यायजी

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री हैं। १९५० में वैदिकधर्म प्रचारार्थ आपने दक्षिणी अफ्रीका की यात्रा की। आपने १९१० से लेकर अब तक हिन्दी और अंग्रेजी में लगभग ३ दर्जन पुस्तकें लिखीं, अर्थात् लगभग आठ हजार पृष्ठ। इन पुस्तकों को विद्वत्समाज ने बड़ी रुचि और आदर से अपनाया। ऐसे साहित्यकार और विद्वान् की ७० वर्षीय जन्म-जयन्ती मनाकर उन्हें सर्वथा उचित सम्मान दिया गया है।

सभा का वृहदधिवेशन

उ० प्र० आर्यप्रतिनिधिसभा का वृहदधिवेशन पूर्व प्रकाशित तिथियों पर न होकर २०, २१ तथा २२ अप्रैल को लखनऊ में होगा। सभा-मन्त्री

स्व० महात्मा श्रीरामजी के प्रति

श्रद्धाञ्जलियाँ

आगरा में आर्यसमाज के तीन स्तम्भ थे। ठाकुर माधवसिंह, बाबू नाथमल और म० श्रीरामजी। पूर्वोक्त दो पहले ही समाप्त हो चुके। अब ये तीसरे भी चल बसे। म० श्रीरामजी ने ६६ वर्ष आर्यसमाज की जो महती सेवा की वह आर्यसमाज के इतिहास में बड़े सम्मान के साथ अंकित होगी। उनका शरीर वृद्ध हो गया था, परन्तु धर्म्म के प्रति उत्साह किसी भी युवक से कम न था। मैं २६ जनवरी को उन्हें अस्पताल में देखने गया तो मुझे आशंका हुई कि अबकी बार इस बूढ़े सिपाही का उभरना कठिन है। अन्त को वही हुआ। परमात्मा की जो इच्छा।

—धुरेन्द्र शास्त्री

जब मैं आगरा कालिज का विद्यार्थी था, तभी से महात्मा श्रीरामजी से मेरा परिचय था। वे उन दिनों नवयुवकों और विशेषकर विद्यार्थियों में आर्यसमाज का प्रचार करने के लिए बड़ा प्रयत्न किया करते थे। उनके कारण आगरा समाज का गौरव था। फिर तो वे अपनी सेवाओं के कारण प्रान्त भर के आर्यसमाजों में प्रसिद्ध होगए। आर्यसमाज के विविध क्षेत्रों में की हुई उनकी सेवाएं सदैव स्मरणीय रहेंगी।

—मदनमोहन सेठ

श्रीरामजी का जीवन परोपकारी जीवन था। ऐसा कर्मवीर हम से जुदा हो गया इसका हमें हार्दिक दुःख है। परमात्मा करे वह आगामी जन्म में भी समाज और देश की सेवा करें।

—स्वामी परमानन्दजी

महात्मा श्रीरामजी की मृत्यु से आर्यसमाज की ही नहीं, हमारे नगर की एक विभूति उठ गई। हम एक महान सेवक से वंचित हो गए। भगवान् करे महात्माजी की भावना के नये जन-सेवक आगे आकर उनके स्थान की पूर्ति करें।

—श्रीचन्द दौनेरिया

म० श्रीरामजी से मेरा बहुत पुराना सम्बन्ध था। मैं उनका बड़ा आदर करता था। उन्होंने आर्यसमाज की प्रशंसनीय सेवाएं की। समाज-सुधार सम्बन्धी कार्यों में आपने बड़ा सहयोग दिया। आपके निधन से नगर का एक सच्चा सेवक उठ गया।

रामेश्वरनाथ टंडन,
(अध्यक्ष, आगरा नगर-पालिका)

महात्मा श्रीरामजी ने आर्यसमाज के विविध क्षेत्रों में जो सेवाएं की वे अनुपम हैं। वे परिश्रमशीलता, संयम और सद्भावना के सच्चे प्रतीक थे।

—मथुराप्रसाद, एडवोकेट

महात्मा श्रीरामजी आजन्म आर्यसमाज तथा वैदिक धर्म के सच्चे सेवक रहे। आपकी मृत्यु से नगर की एक बड़ी विभूति उठ गई।

—श्रीराम गुप्त, एडवोकेट

महात्मा श्रीरामजी बड़ी लगन के दृढ़ विश्वासी और अथक कार्यकर्ता थे। उन्होंने आर्यसमाज की जिस तत्परता से सेवा की वह सबके लिए अनुकरणीय है।

पूर्णचन्द्र एडवोकेट

महात्मा श्रीरामजी के निधन से आर्यसंसार की जो हानि हुई है, उसकी पूर्ति बहुत कठिन है। वे आर्यजगत् के आदर्श व्यक्ति थे।

—ब्रजमोहन झा

साधारण स्थिति का कोई भी व्यक्ति केवल हृदय की लगन के कारण कितनी महान् सेवा कर सकता है, इसका उदाहरण महात्मा श्रीरामजी हमारे सामने उपस्थित कर गए हैं। समाज-सेवा आपका प्राण थी। जब आप समाज-सेवा से विरत हुए तभी आपने प्राण त्याग दिये। दीर्घ जीवन के लिए भी वे सदा आदर्श रहेंगे।

— बाबूराम गुप्त प्रोफेसर

महात्मा श्रीरामजी की मृत्यु से आर्यसमाज की बहुत बड़ी क्षति हुई है। परमात्मा इस क्षति की शीघ्र पूर्ति करे।

—गोविन्दप्रसाद चतुर्वेदी

महात्मा श्रीरामजी के निधन से आर्यसमाज की बड़ी हानि हुई है। उन्होंने वैदिक धर्म प्रचार के लिये बड़ा काम किया। उनकी सेवायें हमारे लिए सदैव अनुकरणीय रहेंगी।

मोहनलाल आर्य
(प्रधान, आ० स०, आगरा नगर)

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः

आर्य मित्र

आगरा, माघ शुक्ल ६ संवत् २००७ वि० गुरुवार ता० १५ फरवरी १९५१
दयानन्दाब्द १२६ सृष्टि संवत् १९७२९४९०५०

उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकः कृणुष्व सलिले सधस्थे
तत्रत्वं पितृभिः संविदानः संसोमेन संस्वधाभिः

अथर्ववेद का० १८ सू० ३।८

उठकर आगे बढ़ शीघ्र सखे, जलवत् प्रवाहमय वेग बना
तद्वत् ही शान्ति-प्रदायक हो, गुरु, मातु, पिता प्रति महामना
पावेगा इष्ट फलों को तू आनन्द तृप्ति तज मत्सर को
कर भली भाँति सत्संग ज्ञान का लाभ ध्यान सर्वेश्वर को
—दिव्यानन्द

'आर्यसमाज और राजनीति'

हमने १८ जनवरी के 'मित्र' में 'आर्यसमाज और राजनीति' शीर्षक लेख लिख कर यह बताया था कि आर्यसमाज में सभी राजनीतिक दलों के लोग सम्मिलित हैं, अगर वह राजनीति में भाग लेता है तो किस दल को अपनावे और यदि वह अपना कोई पृथक दल बनाता है तो साम्प्रदायिकता के संकीर्ण साँचे में ढलता है, उसकी सार्वभौमता समाप्त होती है। ऐसी दशा में समाज क्या करे, वर्तमान राजनीति में किस प्रकार सहयोग या सहायता दे-दे भी या नहीं। हमने बताया था कि आर्यसमाज उस दल को अवश्य सहयोग और सहायता दे जो आर्यसिद्धान्तों के समीपतर है। जो राजनैतिक दल धर्म और ईश्वर को नहीं मानते वे आर्यसमाज के सहयोग को कैसे प्राप्त कर सकेंगे। साथ ही जिन दलों का उद्देश्य केवल एक समुदाय के हाथ में शासन-सूत्र सौंप देना है, उनसे भी संसार का उपकार और मनुष्यमात्र का हित सोचने वाले समाज की नहीं पट सकती। अब वह दल रह जाता है, जो सत्य और अहिंसा को मानता तथा ईश्वर पर विश्वास रखता और मनुष्य-मात्र में कोई भेद-भाव न मान कर सब का स्वराज्य चाहता है। यही दल सिद्धान्त की दृष्टि से आर्यसमाज के समीपतर है। आर्यसमाज इस दल से कहे कि वह आगामी चुनाव में ऐसे उम्मेदवारों को खड़ा करे जो प्रपंची या दम्भी न होकर अपने सिद्धान्तों के सुदृढ़ समर्थक हों, जिनमें भ्रष्टाचार की विभीषिका को दमन करने की पूरी शक्ति हो, जो धर्म और नैतिकता के सिद्धान्तों के पक्के प्रेमी और प्रसारक हों, जिनका उद्देश्य परमिट की प्रसादी बाँट कर, अपने प्रेमियों और अनुयायियों से वोटों का सदावर्त लेने की तैयारी करना न हो। जो रू-रियायत और पक्षपात से दूर हों, जो अपने को जनता का शासक नहीं सेवक समझें, जिनके दिमाग पद के मद में आसमान पर न चढ़ गये हों, जिन्होंने अपनी प्रभुत्व-भावना के कारण मनुष्य को मनुष्य समझना न छोड़ दिया हो, जिनका उद्देश्य देश-सेवा के नाम पर सभा-संसदों में जाकर अपना उल्लू सीधा करना मात्र न हो। हम समझते हैं, खोजने पर ऐसे त्यागी-तपस्वी अनेक उम्मेदवार मिल जायगे जो सेवा-भाव से प्रेरित होकर चुनावों के लिए भी खड़े हो सकेंगे। यदि आर्यसमाज इस प्रकार के सुयोग्य, सच्चे, निःस्वार्थ और निष्पक्ष व्यक्तियों को आगामी चुनाव के लिये नामजद करा कर उन्हें सभा-संसदों में भिजवा सका तो यह उसकी सबसे बड़ी देश-सेवा होगी। इससे बढ़कर उसका राजनैतिक सहयोग और क्या हो सकता है। सुयोग्य उम्मेदवारों के लिये ही मत प्रदान करने के लिए मतदाताओं को तैयार कर देना सबसे बड़ी राजनैतिक सेवा है। उम्मेदवारों को खोजते समय इस बात को बिल्कुल भुला देना चाहिये कि उन्हें जेलयात्रा का प्रमाणपत्र प्राप्त हुआ है या नहीं, उम्मेदवार की कसौटी केवल उसकी सद्भावना और योग्यता होनी चाहिये। अगर वह जेल भी जा चुका है तो यह सोने में सुगन्ध है। भले-बुरे की परख इससे नहीं होती। पिछली सेवाओं से ही किसी की भलमनसाहत और योग्यता जानी जा सकती है। कौन कितनी सेवा और सद्भावना से भरा है, इसे जानने वाले लोग भले प्रकार जानते हैं। अभिप्राय यह है कि आर्यसमाज को चुनावों के उम्मेदवार खड़े कराने और उन्हें मत प्राप्त कराने में एक सम्मतिदाता और नैतिक सहायक के रूप में ही रहना चाहिये। इस विधि से बड़ा काम हो सकता है। सच्चे सेवक और देशभक्त आर्यसमाजी भी सभा-संसदों के लिये चुने जा सकते हैं, और ऐसे ही अन्य निःस्वार्थ लोग भी वहाँ भेजे जा सकते हैं।

× × × × × ×

हमारे पास ऐसे लेखों की भरमार है, जिनमें इस बात पर बल दिया गया है कि आर्यसमाज को राजनीति में भाग लेना चाहिए। हम भी कहते हैं, अवश्य और शीघ्र लेना चाहिये। इस बात को हम इन स्तम्भों में भी कई बार लिख चुके हैं और अब फिर बड़े जोर से यही कहते हैं। परन्तु प्रश्न तो यह है कि आर्यसमाज राजनीति में किस प्रकार भाग ले, उसका इस दशा में कैसे सहयोग हो। इस विषय पर प्रकाश डालने की आवश्यकता है हमने इस दिशा का दर्शन उपर की पंक्तियों में किया है। विचारशील विद्वानों को इस विषय में अपना मत प्रकट करना चाहिये। केवल भावुकतापूर्ण बातें राजनैतिक आकांक्षाओं की पूर्ति नहीं कर सकतीं। यदि वास्तव में आर्यसमाज को प्रचलित राजनीति के साथ सहयोग करना है तो उसे ठोस और क्रियात्मक योजना बनानी पड़ेगी और साथ ही यह भी देखना होगा कि उसके कारण आर्यसमाज के विश्वजनीन विराट् और व्यापक रूप में तो किसी प्रकार का अन्तर नहीं आता।

महात्मा श्रीरामजी

शोक है कि आगरा में आर्यसामाजिक जीवन के प्राण-प्रेरक महात्मा श्रीरामजी का गत ६ फरवरी को ८६ वर्ष की आयु में देहान्त हो गया। आपने लगातार ६६ वर्ष आर्यसमाज की महती और निःस्वार्थ सेवा की। वे एक सच्चे मिशनरी थे, उन्हें आर्यसमाज के प्रारम्भिक युग में समाज की सेवा करते हुए जिन विघ्न-बाधापूर्ण संघर्षों का सामना करना पड़ा, उनका आज अनुमान भी नहीं किया जा सकता। आगरा में धर्मनिष्ठ समाज-सेवकों की 'त्रिमूर्ति' थी। श्री ठा० माधवसिंहजी, श्री बा० नाथमलजी और श्री महात्मा श्रीरामजी। पूर्वोक्त दोनों सेवक तो पहले ही दिवंगत हो गये; और अब ये तीसरे सेवक भी चल बसे! तीनों ही सेवा-कार्य करते करते गये। जब शरीर ने साथ न दिया तभी तीनों ने प्राण त्याग दिये। मानो सेवा ही उनका प्राण थी। महात्मा श्रीरामजी का जीवन नियमित और संयत था। वे मरने से सवा महीने पूर्व तक लम्बी दौड़ लगाते रहे। रोग से भी उन्होंने संघर्ष किया। एक सप्ताह तक तो मौत से भी लड़ाई लड़ी। महात्माजी ने पर्याप्त आयु पाई, फिर भी आपके न रहने से समाज की बड़ी क्षति हुई है, ६६ वर्ष का एक सजीव इतिहास नष्ट हो गया। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति तथा आर्यों को उनका अनुकरण करते हुए कर्म-पथ पर अग्रसर होने की शक्ति प्रदान करे। यही प्रार्थना है।

अम्बेडकर साहब का 'फतवा'

माननीय श्रीमान् डाक्टर भीमराव अम्बेडकर कभी-कभी बड़ी बेतुकी और बेढंगी बातें लिख डालते हैं। आपने अंग्रेजी में एक किताब लिखी है—Who were the Shudras. इसका हिन्दी अनुवाद 'शूद्रों की खोज' नाम से प्रकाशित हुआ है। शूद्रों की खोज करते-करते डाक्टर साहब आर्यसमाज पर अकारण ही बरस पड़े हैं। कहते हैं—"आर्यसमाज ने हिन्दू समाज का बड़ा अनहित किया है।" जो बात आर्यसमाज के किसी कट्टर से कट्टर विरोधी ने भी आज तक नहीं कही उसे हुजूर अम्बेडकर साहब ने अपनी किताबे-मुबारक

में बड़ी निर्भयता और निश्चिन्तता से लिख डाला। परन्तु उनके पास अपने दुर्बल दावे को साबित करने के लिये कोइ सबूत या दलील नहीं है। होती तो वे उसे अवश्य पेश करते। अम्बेडकर साहब के इस कोरे दावे के सम्बन्ध में तो हम यही कह सकते हैं कि उनका यह कथन नितान्त निराधार, निपट निर्मूल और अत्यन्त असत्य है। किसी प्रतिष्ठित समुदाय के सम्बन्ध में ऐसी ऊटपटांग बातें मुंह या कलम से निकालना कानून के प्रकाण्ड पण्डित श्री अम्बेडकर को जरा भी शोभा नहीं देता। यदि उन्हें स्वयं आर्यसमाज की कृतियों और प्रगतियों का कुछ ज्ञान नहीं था तो वे अन्य अछूत कहे जाने वाले भाइयों से ही पूछ लेते कि आर्यसमाज द्वारा उनकी कोई सेवा हुई है या नहीं। हिन्दू समाज से भी दरियाफ्त कर सकते थे कि उसका आर्यसमाज द्वारा हित हुआ है, अथवा 'अनहित'। हम समझते हैं, अम्बेडकर साहब में औचित्य और कृतज्ञता की भावना उचित मात्रा में होनी चाहिये। आर्यसमाज की सारी गति-विधि जान कर ही उन्हें उसके सम्बन्ध में कोई राय कायम करनी उचित थी। और नहीं तो डाक्टरसाहब को गत १६ नवम्बर को देहली की रामलीला-भूमि पर दिये गये स्वर्गीय सरदार पटेल के उस भाषण को ही पढ़ लेना चाहिए था जिसमें उन्होंने महर्षि दयानन्द और उनके द्वारा संस्थापित आर्यसमाज की मुक्त कंठ से भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए उन्हें राष्ट्र के लिये परम उपयोगी बताया है। जिस आर्यसमाज ने अस्पृश्यता क्षेत्र में इतना बड़ा काम कर सैकड़ों-सहस्रों अछूतों को सुरक्षित बना दिया जिस आर्यसमाज ने हिन्दू समाज की सेवा में अपने प्राणों तक की बाजी लगा दी, उसको अम्बेडकरसाहब द्वारा 'अहितैषी' या 'अनहितकारी' होने का 'फतवा' दिया जाना कृतज्ञता की कोमल भावना का क्रूरतापूर्वक गला घोंटना है।

———

श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय

आर्यसमाज चौक प्रयाग ने सुप्रसिद्ध आर्य नेता विद्वद्वर श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय की सत्तर वीं जन्म-जयन्ती मनाकर बड़ा प्रशंसनीय कार्य किया है। उपाध्यायजी आर्यसमाज के ही नहीं, देश के प्रमुख विद्वानों में से हैं। आपका सारा जीवन शिक्षा-प्रसार, धर्म-प्रचार और साहित्य-साधना में ही व्यतीत हुआ है। आपकी लेखन शैली जैसी प्रौढ़ और गम्भीर है, वैसे ही भाषण शैली भी। आपने देश को उच्च कोटि का धार्मिक और दार्शनिक साहित्य दिया है। अंगरेजी में भी कितनी ही महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखी है। सत्यार्थप्रकाश का प्रामाणिक अंगरेजी अनुवाद किया है। आपकी विचार शैली बड़ी परिष्कृत, परिमार्जित और विश्लेषणात्मक है। पाठकों और श्रोताओं पर आपकी लेखनी और वाणी का प्रचुर प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता। आपकी विमल विचारधारा भावुकता के काल्पनिक कुंजों की ओर न जाकर वास्तविकता के विमोहक एवम् विशुद्ध वन में विहार करती है। वे स्वयं गड्डुलिका-प्रवाह में न बह कर युक्ति-प्रमाण-प्रदर्शित पथ पर अग्रसर होते हैं। उपाध्यायजी की प्रतिभा-प्रभा ने गद्य-गौरव को ही चमत्कृत नहीं किया, प्रत्युत वह पद्य पद्माकर को भी प्रभापूर्ण बनाते जा रही है। आर्यसमाज ही क्यों हिन्दी भाषा भाषी मात्र को उपाध्यायजी की साहित्य-देन के लिये उपकृत होना चाहिए। उपाध्यायजी की इस सत्तरवीं वर्षग्रन्थि पर हम उन्हें हार्दिक बधाई देते है। साथ ही प्रार्थी हैं कि अब वे अपनी सारी शक्तियों का सदुपयोग साहित्य-साधना के लिए ही करें, जिससे देश को उनके द्वारा अमूल्य ग्रन्थ-रत्नों की प्राप्ति हो सके। स्वतन्त्र भारत में किसी साहित्यकार को सम्मान देना सर्वथा स्वाभाविक ही है। हम तो समझते हैं एक सच्चा साहित्यकार शासकीय उच्च से उच्च पद पर प्रतिष्ठित हुए व्यक्ति की अपेक्षा कहीं ऊँचा है। उपाध्यायजी उच्च कोटि के साहित्यकार है, अतः हम उनका इस रूप में पुनः पुनः अभिनन्दन करते है।

———

सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी में सब स्वतन्त्र रहें।

—महर्षि दयानन्द

अध्यात्म धारा

'सारथि' मन का निग्रह

आचार्य श्री हरिदत्त शर्मा शास्त्री एम० ए०, नव तीर्थ

मन को सारथि क्यों कहते हैं। उक्त प्रश्न प्रायः सब ही विचारकों को चिन्तित करता रहता है। मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार इन सांख्योक्त चारों श्रेणियों को कुछ व्यक्ति मन की ही विभक्तियाँ मानते हैं ? अंगरेजी में इसे 'माइण्ड' (Mind) नाम से पुकारा जाता है। यह एक प्राचीन आभाणक है कि "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः" अर्थात् मन ही बन्ध (जन्म-मरण के प्रवाह में आना) और मोक्ष (ईश्वरीय सुख की प्राप्ति) का कारण है। सच पूछो तो बात भी ऐसी ही है। मन प्रसन्न है तो सब कुछ ठीक अतएव मन को सारथि कहा गया है। रथ का अर्थ है 'रमण' करने वाला—सुख-दुःख भोगने वाला। यद्यपि भोक्ता तो आत्मा है, तथापि बिना शरीर के वह कुछ नहीं कर सकता। फिर भी शरीर की मुख्यता के कारण शरीर ही रथ है। शरीररूपी रथ में इन्द्रियाँ आदि सब आगई। रथ सहित सर्वदा शरीर के साथ रहने वाला शरीरी जीवात्मा है। उसके अपत्य के समान रहने वाला—अर्थात् सरथ का जो अपत्य उससे भिन्न उसके सदृश और उसका होकर रहने वाला "सारथि" हुआ। मुण्डकोपनिषद् में आता है—"आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथ मेव च। इन्द्रियाणि हयानाहुः मनः प्रग्रहमेव च। इस रूपक में सवारी में बैठने वालों को—सवारों को जितना मोह सवारी से होना चाहिए, उतना ही हमें भी अपनी सवारी से होना चाहिए, यह भाव दर्शाया गया है। इसी प्रकार गीता में लिखा है—

"तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्।"

अर्थात् मन का रोकना ऐसा असम्भव है, जैसा वायु को कपड़े के पल्ले में बांधना। आजकल के वैज्ञानिक वायु को भी यन्त्रों द्वारा पकड़ने लगे है, पर उक्त गीता-वाक्य भी यह नहीं कहता कि वायु कभी पकड़ने में नहीं आता। वायु पकड़ा जा सकता है, पर यह कार्य "सुदुष्कर"—अत्यन्त कठिन है। अतः वायु को जैसे यन्त्रों द्वारा पकड़ा जाता है वैसे ही मन को भी शरीर रूपी यन्त्र से पकड़ा जा सकता है। पर इसका पकड़ना तब हो सकता है, जब यह विदित हो जाय कि मन कहां रहता है ? चोर को पकड़ने के लिये उसके रहने के स्थान पर छापा मारा जाता है। घेरने पर भी वह मौका पाकर भाग जाता है। उसके लिए महर्षि व्यास लिखते हैं, मन की वृत्तियों को रोको तो मन रुके, क्योंकि—"योगश्चित्त वृत्ति निरोधः" अर्थात् चित्त की वासना—यह करो, वह करो उसे मारो, उसको काटो, यह ले लिया, उसे घेर लो, ये वृत्तियाँ—दस प्रकार की है। पहले इन्हें रोकना चाहिए। गौतम मुनि के मत से दुःख इक्कीस प्रकार के हैं। अतः वृत्तियाँ भी इक्कीस प्रकार की है। इन वृत्तियों के निरोध के लिए ही राजयोग और हठयोग ये दो मार्ग बने। राजयोग वाले कहते हैं कि जैसे खिलाड़ी बालक खेल में मन रखता हुआ भी पिटने के डर से पढ़ता है, और मौका पाते ही फिर खेल में जा लगता है, ठीक उसी प्रकार मन को उधर परतत्व-चिन्तन में लगाये रहो। जब वह मौका पाकर भागे तब ही फिर रोको, और फिर लगाओ। पर हठ योगियों का कहना है कि मन को गोला-लाठी लगाकर पटक दो, भागेगा ही कैसे, धीरे-धीरे स्वयं निष्क्रिय हो जायगा। यही दो उपाय प्राचीन लोगों ने बतलाए है, जिनका अभ्यास प्रत्येक व्यक्ति को रुचि के अनुसार करना चाहिये।

———

एक निष्कपट व्यक्ति का आत्म-बलिदान उन लाखों व्यक्तियों के बलिदान की अपेक्षा लाख गुना शक्तिशाली है जो दूसरों के प्राण लेते हुए अपनी जान देता है।

—महात्मा गाँधी

सुझाव और सम्मतियाँ

इस समय देश को सब से अधिक आवश्यकता है राष्ट्रिय एकता की, और प्रत्येक नेता अपने भाषणों में जनता से एकता की अभ्यर्थना भी करता रहता है। पर एकता-सूत्रों का ध्वंस सब से अधिक इन नेताओं की विचार-धारा द्वारा ही होता है। और तमाशा यह है कि जिस विचार-धारा द्वारा एकता की भावना को बल मिलता है, उसे ही ये लोग साम्प्रदायिकता कह कर बदनाम करते रहते है। खिलाफत-आन्दोलन का परिणाम निकला पाकिस्तान का निर्माण, और हरिजन आन्दोलन ने हिंदुओं के दो वर्ग बना दिये! खेद है, योरोपियनो की सिखायी हुई वही विचार-धारा अब भी जनता में फैलाई जा रही है।

साम्प्रदायिक विष-वर्षा

श्री पं० विहारीलाल शास्त्री, काव्यतीर्थ

माननीय डा० श्री भीमराव अम्बेडकर ने अंग्रेजी में एक पुस्तक लिखी है "Who were the Shudras" अब उसका अनुवाद हिन्दी में निकला है—"शूद्रों की खोज" नाम से। इस पुस्तक की भूमिका में कुछ पंक्तियों द्वारा डाक्टर महोदय ने आर्य-समाज पर भी कृपा-कटाक्ष किया है। सुनिये—"आर्यसमाज ने हिंदू-समाज का बड़ा अनहित किया है। उन्होंने इस बात का प्रचार किया कि वेद अनादि, अनन्त और अचूक है। अतएव इसका भी प्रचार हुआ कि वेदों के आधार पर जो संस्थायें बनी हैं वे भी अनादि, अनन्त और अचूक हैं। ऐसे विश्वास को फैलाना समाज का सब से बड़ा अनहित करना है। जब तक आर्यसमाज का यह सिद्धान्त कायम है हिन्दू-समाज सुधार की ओर कभी नहीं जा सकता।"

डाक्टर महोदय की सारी पुस्तक हमने पढ़ी, पर उपर्युक्त दावे की दलील का कहीं पता न लगा। सम्भवतः उनके मन का भाव यह हो कि वेद के विश्वास से वर्णव्यवस्था पर विश्वास रहेगा और वर्णव्यवस्था पर विश्वास रहने से हिन्दुओं में जात-पॉत के झगड़े बने रहेंगे। यदि यही विचार है तो वे स्थिति से सर्वथा विपरीत हैं। वेदों पर विश्वास ढीला होने से ही हिंदुओं में मत-मतान्तर, जात-पॉत तथा अन्धविश्वास फैले हैं। वेदों के शुद्ध अर्थों से हट कर ही विशाल आर्य जाति का पतन हुआ है। वैदिक वर्णव्यवस्था को हिन्दुओं की वर्त्तमान जाति-बिरादरी-छूआछूत के समान बताना तो वेदादि शास्त्रों से अनभिज्ञता प्रकट करना है। लेखक महोदय का सबसे बड़ा आक्षेप पुरुष सूक्त के ऊपर है। आपका कहना है कि यह सूक्त ब्राह्मणों ने रच कर वेदों में मिला दिया, ताकि ब्राह्मणों की महत्ता बनी रहे। वस्तुतः उपर्युक्त धारणा वेदार्थानभिज्ञ जन ही कर सकता है। पुरुष सूक्त में ब्राह्मणादि नाम किसी वर्ग के नहीं है, किन्तु गुण-वाचक नाम है। इस मंत्र में समाज-रूप विराट् पुरुष को गुण कर्मानुसार चार भागों में विभक्त करते हुए भी एकात्मरूपता का उपदेश दिया है। गणना में मुखादि अवयव पृथक् होते हुए भी शरीर-रूप में सब एक है। जीवात्मा के लिये सब ही प्रिय हैं। गुण-कर्म-विभाग से समाज चार भागों में होता हुआ भी एक है। प्रत्येक अंग पुष्ट, सुन्दर, नीरोग और अशुष्क रहे, यही सब चाहते है। सब ही अंगों का समान हित अभीष्ट होता है। इसी प्रकार सम्पूर्ण समाज का कल्याण और सुख अभिप्रेत होना चाहिये। कैसा सुन्दर आध्यात्मिकता भरा हुआ साम्यवाद इस मंत्र में विद्यमान है। कर्मेन्द्रियों के उदाहरण भी यहाँ इसलिये आये हैं, कि वर्णव्यवस्था कर्म से अभीष्ट है।

इतने सुन्दर भावपूर्ण मंत्र में भी अम्बेडकर साहब को ब्राह्मणों के स्वार्थ की गन्ध आ रही है! ऐसा क्यों है? वह स्वय ही भूमिका में स्वीकार करते है कि मैंने संस्कृत नहीं पढ़ी। अंग्रेजी अनुवादों के आधार पर शास्त्रों की आलोचना करने का अधिकार रखता हूँ। हम कहते है कि आप अंग्रेजी चश्मा उतार कर वेद पढ़िये। अंग्रेजों की दी हुई विकृत सूझ के आधार पर भारतीय संस्कृति सदा विकृत रूप में ही दीख पड़ेगी। अंग्रेज ने स्वार्थवश भारतीयों की बुद्धि भ्रष्ट की थी ताकि विशाल हिन्दू राष्ट्र एक न हो सके। डाक्टर साहब, हिन्दू जाति का आर्यसमाज ने तो अनहित नहीं किया है, परन्तु आप अवश्य स्थायी अनहित कर जायेंगे। आपकी इस पुस्तक से हिन्दुओं में वर्ग-विद्वेष की अग्नि सदा प्रज्वलित होती रहेगी।

जो गलती जन्म मूलक वर्ण-व्यवस्था चला कर पौराणिकों ने की वही आप कर रहे है। पौराणिकों ने कहा ब्राह्मणत्व जन्म से है, और ब्राह्मण बड़े है। आप कहते है, शूद्रत्व जन्म से है, शूद्र बड़े है। इस पुस्तक में अम्बेडकरजी ने शूद्रों को सूर्यवंशी क्षत्रिय सिद्ध किया है, और बताया है कि ब्राह्मणों ने द्वेष वशात् इन क्षत्रियों को 'उपनीत' नहीं किया, अतः ये शूद्र होगये। डाक्टर साहब का यह विचार आर्यसमाज के सिद्धान्त की पुष्टि करता है या नहीं? आर्यसमाज भी तो मनु के शब्दों में यही कहता है कि धीरे-धीरे संस्कारों के अभाव से ये क्षत्रिय जातियाँ वृषल या शूद्र बन गयीं। हॉ, भेद केवल इतना है कि आप कहते है कि ब्राह्मणों ने विद्वेषवश इन्हें शूद्र बना डाला और आर्यसमाज कहता है कि वेदों के अध्ययन से मुख मोड़ने के कारण ये लोग स्वयं ही शूद्र बन गये। आर्यसमाज जिसने कि दलित वर्ग का अपार हित किया है, उसे आप हिन्दू समाज का "अनहितकर्ता" बताते है! इससे बढ़कर सत्य का तिरस्कार और क्या हो सकता है। आप भी पौराणिक ब्राह्मणों की तरह ही हिन्दू-समाज में दो वर्ग बनाये रखने के लिये प्रयत्नवान् है। आर्यसमाज हिन्दुओं में ऐसे द्वेषमय वर्ग भेद नहीं रखना चाहता। आर्यसमाज में कोई अछूत नहीं। सब आर्य है। वर्णव्यवस्था होते हुए भी वेद में सब एक हैं।

उत्तरीय भारत में जिस आर्य-समाज ने सैकड़ो दलितों को शास्त्री, आचार्य, बी० ए०, एम० ए० बना दिया, कुरीतियाँ छुड़ा कर उनकी आर्थिक दशा उन्नत की, सारे देश के हिन्दुओं को एक भावना देकर एक दृढ़ संगठन का निर्माण किया, छुआछूत के वर्ग-भेद दूर किये उन आर्य-समाज को डाक्टर अम्बेडकर हिन्दुओं का अनहितकर्त्ता बताते हैं! क्या खूब। वेदों के विश्वासी रहते हुए आपकी सम्मति में हिन्दुओं में सुधार नहीं हो सकेगा। न जाने आपका वह कौनसा विलक्षण सुधार है, जिसमें वेद बाधक हो रहे है।

विद्वान अम्बेडकरजी की इस पुस्तक में सारे ही विचार असंगत, हेत्वाभास-पूर्ण और उलझे हुए है। इन विचारों के फैलने में ब्राह्मण, अब्राह्मण, सवर्ण-असवर्ण के विद्वेष की अग्नि तीव्र हो जायगी।

एक जगह आप लिखते हैं:—"हिन्दुओं की धार्मिक पुस्तकों के प्रति श्रद्धा तो ब्राह्मणों के लिये स्वाभाविक है, परन्तु अब्राह्मण के लिये अस्वाभाविक है।"

कितना बड़ा वर्ग-विद्वेष, संकीर्ण साम्प्रदायिकत्व है उक्त भाव में। क्या साहित्य और शास्त्र भी किसी वर्ग के होते है? फिर वैदिक साहित्य जो कि देश-काल की अवधि से परे सार्वभौम और सार्वकालिक है। अमरीकन लेखकों के ग्रन्थों में डाक्टर साहब आस्था रख सकते है। इंगलैण्ड के और फ्रांस के लेखकों के ग्रन्थ इनके श्रद्धापात्र बन सकते हैं, पर ऋषियों के लिखे ग्रन्थ नहीं। फ्रांस और जर्मन के विद्वान् वेदान्त और उपनिषदों की मुक्त कंठ से प्रशंसा करें और भारत माता का पुत्र अपने भारतीय ग्रन्थों के प्रति ऐसे संकीर्ण भाव रक्खे! जनता को देखना चाहिये, ऐसे लोगों के हाथ में है भारत की शासन-रज्जु!

लेखक महोदय ने अपनी पुस्तक में बड़े-बड़े प्रमाण इस बात के दिये है कि वेदमंत्रों का कई शूद्रों ने भी रचा है। बस जब ऐसी बात है तो वेद साफ के हुए न? फिर उनमें श्रद्धा क्यों नहीं? फिर यह क्या लिखते हो.—

"मैं अछूत हूँ, अतएव इन पुस्तकों के प्रति मेरी श्रद्धा न होना कोई आश्चर्य जनक नहीं"।

आश्चर्य, घोर आश्चर्य! जब आपके लेखानुसार बहुत-से वेद-मंत्र सुदास शूद्र और कवष ऐलूष-शूद्र के रचे है, तो इन पर आपको श्रद्धा क्यों नहीं? वस्तुतः आप तो अछूत होने का बहाना करके

अश्रद्धालु बनते हैं, पर आपके साथी अनेक ब्राह्मण क्यों अश्रद्धालु हों?

इसका कारण केवल यह है कि अंग्रेज आप लोगों को आत्म-हीनता का पाठ पढ़ा गया है। अपनी संस्कृति, अपने साहित्य अपने समाज से घृणा और विदेशी अराष्ट्रिय तत्वों से प्रेम!

अम्बेडकरजी की इस पुस्तक को उलट-पलट कर आद्योपान्त पढ़िये, हिन्दुओं में फूट डालना ही इस पुस्तक का उद्देश्य दिखाई देगा। ऐसी ही पुस्तकों के कारण मद्रास और महाराष्ट्र में ब्राह्मण-अब्राह्मण का संघर्ष बढ़ता रहता है। ऐसे ही विचारों के प्रचार से मद्रास में संस्कृत और हिन्दी का द्वेष किया जा रहा है। आर्यसमाज ने उधर ब्राह्मणों के संकीर्ण साम्प्रदायिक भाव निकालने का यत्न प्रारम्भ ही किया था कि ऐसी पुस्तकों ने अब्राह्मणों में वही रोग फैलाना प्रारम्भ कर दिया, जो ब्राह्मणों में था। मूल पुस्तक अंग्रेजी में थी अतएव इसका प्रभाव थोड़े ही लोगों पर हो सकता था, परन्तु अब हिन्दी में अनुवाद होने से तो सर्व साधारण में यह पुस्तक विष-वर्षण करेगी।

इस पुस्तक में कई ऐसे भी प्रमाण हैं, कि जिनसे सिद्ध होता है कि प्राचीन काल में वर्णव्यवस्था गुण कर्मानुसार थी। जैसे कि दो प्रमाण इस पुस्तक में स्मृतियों के दिये गये हैं कि शूद्र का पिता यदि ब्राह्मण हो तो उस पिता की लाश को शूद्र पुत्र नहीं उठा सकता और ब्राह्मण पुत्र अपने शूद्र पिता की लाश को नहीं छू सकता। इन प्रमाणों से स्पष्ट सिद्ध है कि ब्राह्मण का पुत्र शूद्र और शूद्र का पुत्र उस समय ब्राह्मण हो सकता था। यदि तब हो सकता था तो इस समय अम्बेडकरजी जबरदस्ती क्यों अछूत बनते हैं? आर्यसमाज तो आज उन्हें ब्राह्मण घोषित करने को तयार है। परन्तु इस दशा में उन्हें जो "विशेषाधिकार" प्राप्त है, वह जाता रहेगा। हा अधिकारवाद! हा स्वार्थ!

दो शब्द हम जन्मत वर्णाभिमानी भाइयों से भी कहते हैं। क्या आप अब भी आँखें बन्द किये रहोगे? क्या जाति-पांतियों के झमेले के होते हुए यह विशाल हिन्दू जाति संघटित हो सकेगी? समझो, और समय को पहचानो। रोग कहाँ तक बढ़ चुका है, इस पर ध्यान दो। ———

राजनैतिक सहयोग

श्री बाबू पूर्णचन्द्र एडवोकेट

सम्प्रति यह बड़ा महत्वपूर्ण प्रश्न है कि आर्यसमाज वर्तमान राजनीति में भाग ले या नहीं। इस प्रश्न का उत्तर देने से पूर्व यह समझने की आवश्यकता है कि ऋषि दयानन्द ने 'सत्यार्थ-प्रकाश' में संसार को वैदिक सभ्यता के साँचे में ढलने के लिये पूर्ण विधि-विधान लिखा है, और उसके अन्तर्गत राज्य-व्यवस्था किस प्रकार की हो, यह भी भले प्रकार बताया है। जब राष्ट्र-निर्माण सम्बन्धी कोई प्रश्न या समस्या उपस्थित हो, तो उसे समाधान के लिए जनता के सामने रखा जाय। इसके दो साधन हो सकते हैं।

१—आर्य सिद्धान्तों और वैदिक धर्म में विश्वास रखने वाले अनुभवी कार्यकर्ता भिन्न भिन्न निर्वाचन-क्षेत्रों से धारा-सभाओं में पहुँचने का प्रयत्न करें। इस उद्देश्य-पूर्ति के लिये वे स्वतन्त्र रूप से निर्वाचकों के सामने अपना दृष्टिकोण रखें। यदि उन्हें कॉंग्रेस या अन्य किसी दल का सहयोग प्राप्त हो सके तो वे उससे भी लाभ उठावें, परन्तु आर्य सिद्धान्तों के विरुद्ध किसी प्रकार की प्रतिज्ञा न करें। आर्यसमाज के पत्र और प्रचारक अपने लेखों और भाषणों द्वारा उक्त नीति का युक्तियुक्त समर्थन करें। इस प्रकार आर्यसमाज का दृष्टिकोण रखने वाले व्यक्ति धारा-सभाओं में अधिक संख्या में पहुँच कर वैदिक सिद्धान्तों के आधार पर कानून व नियम बनवा सकेंगे। उदाहरण के लिये शिक्षा का प्रश्न है। ऋषि दयानन्द अनिवार्य और निःशुल्क शिक्षा चाहते थे, वे मातृभाषा के माध्यम द्वारा शिक्षा देने के पक्ष में थे। उनकी सम्मति में धार्मिक शिक्षा साधारण शिक्षा का आवश्यक अंग थी। वे सह-शिक्षा के विरोधी थे। आर्यसमाजी विचारों वालों को शिक्षा सम्बन्धी प्रश्न पर उपर्युक्त विचार-धारा का समर्थन करना चाहिये। इसी प्रकार विवाह, व्यवसाय इत्यादि के सम्बन्ध में भी महर्षि के सिद्धान्त स्पष्ट और युक्ति-युक्त हैं। कला और विज्ञान के सम्बन्ध में भी महर्षि की नीति अपना एक विशेष स्थान रखती है। कलोन्नति की आड़ में कोई ऐसी बात प्रचलित नहीं होनी चाहिये, जिसका आचार-विचार पर बुरा प्रभाव पड़े। सिनेमाओं के सम्बन्ध में आचार-शास्त्र को लक्ष्य में रख कर ही विशेष प्रकार का कानून बनवाने की आवश्यकता है।

उपर्युक्त कार्य वैदिक धर्मानुसार उसी समय हो सकते हैं, जब वैदिक धर्म और आर्यसमाज का दृष्टिकोण सबल युक्तियों सहित जनता तक पहुँचे और उसकी पुष्टि करने वाले व्यक्ति धारा-सभाओं में जाय। निर्वाचन से पूर्व मुख्य-मुख्य विषयों पर आर्यसमाज अपनी निश्चित नीति घोषित कर सकता है, और जिन व्यक्तियों से उस नीति को कार्यान्वित होने में सहयोग या सहायता मिले उनकी पुष्टि कर सकता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि आर्यसमाज भिन्न-भिन्न विषयों पर प्राचीनता, तर्क और उपयोगिता को लक्ष्य में रख कर समय-समय पर अपनी नीति घोषित करता रहे और उसकी पुष्टि में तीव्र आन्दोलन जारी रखे। इस प्रकार आर्यसमाज सामूहिक रूप से राजनैतिक दल-दल से अलग रहेगा और अपने सिद्धान्तानुसार कुछ काम भी करा सकेगा। आर्यसमाज किसी एक प्रकार के कार्यक्रम से अपने को सम्बन्धित नहीं कर सकता। क्योंकि ऋषि दयानन्द आर्यसमाज को सार्वभौम संस्था बनाना चाहते थे, अतः उनकी नीति किसी देश या राष्ट्र विशेष से सम्बन्धित नहीं है। जो लोग उसे 'सम्प्रदाय' कह देते हैं वे अज्ञ हैं। उन्हें वास्तविकता नहीं मालूम। इस समय देश के सामने नवीन राष्ट्र-निर्माण का प्रश्न है। ऋषि दयानन्द ने राष्ट्र-निर्माण की जो विधि बताई है, वह भारत ही नहीं संसार-भर के लिए उपयोगी हो सकती है, परन्तु उसका सब से निकट और घनिष्ठ सम्बन्ध भारत से ही है। अतः उसी विधि को हमें कार्यरूप में परिणत कराने की आवश्यकता है। आर्यसमाज को अपने सार्वभौम रूप की रक्षा करते हुए इस कार्यक्रम को अपनाना चाहिए। यदि आर्यसमाज इस समय अपने कर्त्तव्य पालन में उदासीन रहा तो निश्चय ही वह एक उपलब्ध अवसर को खो देगा। ———

महात्मा श्रीरामजी का स्वर्गवास!

आर्यसमाज के पुराने नेता तथा प्रसिद्ध कार्यकर्ता महात्मा श्रीरामजी का देहान्त उनके निवास-स्थान माईथान आगरा में ९ फरवरी को सन्ध्या-समय हो गया। आपका अन्त्येष्टि संस्कार १० तारीख को वैदिक रीति से हुआ। शव-यात्रा-जुलूस बड़ी गम्भीरतापूर्वक निकाला गया। आपका मुंह सर्व साधारण के दर्शनार्थ खुला रक्खा था। शव फूलों से लदा हुआ था। आगे-आगे ओ३म् के झंडे थे। आर्य भाई वेदमन्त्र पढ़ते चलते थे और वैराग्य के भजन गाए जा रहे थे। मार्ग में कई स्थानों पर शव के चित्र लिए गए। अन्त्येष्टि के समय आगरे के आर्यसमाजी बहुत बड़ी संख्या में उपस्थित थे। नगर के अन्य प्रतिष्ठित पुरुष भी मौजूद थे। सेठ श्रीचन्द दौनेरिया, श्री गोविंदप्रसाद चतुर्वेदी, श्री मथुराप्रसाद एडवोकेट, श्री श्रीराम गुप्त एडवोकेट, श्री पूर्णचन्द्रजी, प० ब्रजमोहन झा, श्री स्वामी परमानन्दजी, श्री हरिशङ्कर शर्मा, प्रो० बाबूराम गुप्त, बाबू मोहनलाल आर्य इत्यादि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। श्मशान भूमि में श्री स्वामी परमानन्दजी और बाबू पूर्णचन्द्रजी एडवोकेट ने दिवंगत के प्रति श्रद्धाञ्जलियाँ अर्पित कीं। महात्माजी के शोक में डी० ए० वी० स्कूल तथा आर्य कन्या पाठशालाएं बन्द रहीं। श्रीमद्दयानन्द अनाथालय, विधवाआश्रम, शुद्धि-सभा और आर्य मित्र-कार्यालय बन्द रक्खे गए।

एक सहस्र के हिस्से खरीदे

राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री की अपील का तत्काल यह प्रभाव हुआ कि श्रीमती भगवती देवी दीक्षित धर्मपत्नी श्री गिरिजाशङ्कर दीक्षित, सेक्रेटरी रेलवे नोटीफ़ाइड एरिया कमेटी झाँसी ने श्री स्वा० दिव्यानन्दजी द्वारा एक हजार नक़द भेजकर आर्यमित्र प्रकाशन लिमिटेड के हिस्से खरीदे हैं। अन्य भाई-बहनों को भी उक्त देवीजी का अनुकरण करना चाहिए। जितनी शीघ्रता से कम्पनी के हिस्से खरीदे जायंगे, उतनी ही जल्दी दैनिक आर्यमित्र का प्रकाशन हो सकेगा।

—मदनमोहन सेठ

सिंहावलोकन

कोल्हापुर-नरेश 'साहु'

[संस्मरण]

श्री नेहपालसिंह, [रिटाइर्ड डिपुटी डाइरेक्टर शिक्षा-विभाग]

देश के उत्थान में कई राजा-महाराजाओं ने भी समुचित भाग लिया। ऐसे राजाओं में बड़ौदा-नरेश की विशेष ख्याति हुई, परन्तु उनके सहकारी कोल्हापुर-नरेश साहु छत्रपति को बहुत कम लोगों ने जान पाया! यद्यपि उनकी सेवाओं का विशेष महत्व रहा है। साहु के सम्बन्ध में, मैं व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर, अपने कुछ संस्मरण लिखना चाहता हूँ।

१९-२० के आस-पास की बात है। साहुजी ने वायसराय को एक पत्र लिखा था, जिसमें लोकमान्य तिलक की बुराई की गई थी, और राजनैतिक आन्दोलन शमन करने के लिए सरकार को अपनी सहायता देने का वचन दिया था। किसी मनचले पत्रकार ने यह पत्र खोज निकाला। पूना तथा बम्बई के पत्रकार-संसार में एक आँधी-सी उठ खड़ी हुई, इस आँधी के मुख्य कारण थे—राजा का सिद्धान्त-विरोध और स्वार्थ-युक्त वैयक्तिक चिढ़। यह मैं शिक्षा-प्राप्त वर्ग के विषय में ही कहता हूँ। इन शिक्षा-प्राप्तों का सम्बन्ध उस समय उधर एक जाति विशेष से ही था।

जिस दिन समाचार-पत्रों में टिप्पणियों सहित यह समाचार छपा, उस समय श्री साहुजी ने मुझे बुलाया। वे बड़ी खिन्न दशा में बैठे थे। बोले-देखो, मेरी राजनैतिक मृत्यु तो आज हो गई, पर गाँधीजी को कोई यह समझावे कि वह परिस्थिति क्या थी, जब मैंने यह पत्र लिखा था। साहु के इस भाव से सन्तोषमिश्रित आश्चर्य हुआ, क्योंकि १९२० में गाँधीजी के अहिंसा-सिद्धान्त को अंगरेज लोग एक चाल समझते थे। गाँधीजी केवल विद्रोही समझे जाते थे। एक विद्रोही के प्रति उत्तरदायित्व की भावना किसी सत्ताधारी नरेश के लिए कोई साधारण साहस की बात न थी।

अस्पृश्यता दूर करने में तो साहु सम्भवतः सब शासकों में अग्रणी थे। कोल्हापुर-राज्य में उन्होंने अस्पृश्यता-सम्बन्धी सब प्रतिबन्ध एक साथ हटा दिये थे। अपने निजी सेवकों और भृत्यों में अन्त्यजों को रख कर आपने एक आदर्श उपस्थित किया था। उन्हें शिक्षा-सम्बन्धिनी सुविधाएँ दी थीं, और वे गाँवों के मुखिया तथा प्रधान आदि बन सके थे। सवर्ण सनातनियों में इस अस्पृश्यता-निवारण की ऐसी प्रतिकूल प्रतिक्रिया हुई कि वे अनीति और ओछेपन पर उतर आए जिसके लिए राजकीय नियन्त्रण का प्रयोग करना पड़ा।

अछूतोद्धार की लहर में साहु ने एक बार यह आज्ञा दे डाली कि सब अछूत अपने नामों के साथ चौहान, शिंदे, यादव आदि क्षत्रियों की-सी उपाधियाँ लगावें। यहाँ यह कहना अप्रासंगिक और अनुचित न होगा कि श्री भीमराव अम्बेडकर को अमरीका आदि भेज कर शिक्षा दिलाने का श्रेय साहु को ही है। साहु कभी-कभी अन्तर्जातीय विवाह भी कराया करते थे, और ऐसे विवाहों में प्रायः स्वयं भी सम्मिलित होते थे। जात-पाँत के कट्टर पक्षपातियों का इस प्रकार की क्रान्तिपूर्ण सुधारणाओं से सन्तुष्ट न होना स्वाभाविक ही था। कभी-कभी तो इन लोगों का विरोध उग्र रूप धारण कर लेता था। इस विरोध में और भी अनेक कारण आ मिलते थे। फलतः साहु वर्ग द्रोही और अंगरेजों के चाटुकार ही जीवन-भर कहे जाते रहे। इतना होने पर भी वे अपने लक्ष्य से नहीं डिगे। कहने का अभिप्राय यह नहीं है कि सारे विरोध का कारण केवल देश-भक्ति और समाज-सुधार था, उनके शासन या गृह-व्यवस्था में कोई दोष ही न था। नहीं, मतलब यह है कि विविध बाधा-विरोधों के होते हुए भी साहु ने असाधारण साहस से काम लिया और उनको अपने उज्ज्वल आदर्श की कल्पना से ही सदा प्रेरणा मिलती रही।

साहु की एक बात मुझे विशेष रूप से स्मरण है। एक दिन अपनी ही मण्डली के कुछ सज्जन उनके पास बैठे हुए थे, उस समय साहु बड़ी मार्मिक वाणी में कहने लगे—यदि श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी मेरे कार्यों से परिचित होकर यह कह दें कि बेटा, मैं तुमसे प्रसन्न हूँ, तो मैं कृतार्थ हो जाऊँ। स्वामीजी उस समय धार्मिक नेता ही नहीं थे, प्रत्युत राजनैतिक क्षेत्र के भी महारथी बन चुके थे। कोल्हापुर नरेश साहु छत्रपति शिवाजी की परम्परा में से थे। अंग्रेजी शासन में उनकी मनोवृत्ति और कृति क्या थी, इसकी झलक दिखाना ही इन पंक्तियों का उद्देश्य है।

——

विज्ञान-वार्ता

'एक्सरे'—'रौंजन-रे'

श्री प्रो० रामस्वरूपसिंह, एम० एस-सी०

[लेखक महाशय आगरा कालिज में भौतिक विज्ञान के अध्यापक हैं। आप इस राज्य के डाक्टरों को प्रतिवर्ष 'एक्स-किरण' की भी शिक्षा देते हैं। सम्पादक]

१८९५ ई० की बात है, जर्मनी का प्रसिद्ध वैज्ञानिक रौंजन (Rontgen) अपनी प्रयोग-शाला में बैठा हुआ कुछ वैज्ञानिक प्रयोग कर रहा था। उसी कमरे में फोटोग्राफ के कुछ प्लेट भी रक्खे थे। ये प्लेट अचानक काले पड़ कर बेकार होगए। रौञ्जन ने समझा कि जिस दूकानदार से वे प्लेट खरीदे गए हैं, उसने खराब प्लेट दे दिये होंगे। दूकानदार से यह बात पूछी गई। उसने बड़ी नम्रता से कहा—"मैंने तो आपको बड़े अच्छे प्लेट दिये थे, खैर, दूसरे ले जाइये।" प्रयोग-शाला में आकर ये प्लेट भी काले पड़ गये। तीसरी बार फिर प्लेट लाये गये, फिर भी ऐसा ही हुआ। तब तो रौञ्जन के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। कारण खोजने पर उसे मालूम हुआ कि प्रयोगशाला में प्रयोग करते समय कुछ अति सूक्ष्म पारगामिनी किरणें प्लेटों के आवरण को पार कर उन्हें काला कर देती हैं। इन किरणों को उस समय तक किसी ने न जाना था, अतएव उनका नाम 'एक्सरेज' = एक्स किरण अर्थात् अज्ञात रश्मियाँ रक्खा गया। पीछे ये ही किरणें अपने आविष्कारक के नाम पर "रौञ्जन-रेज" कहलाईं।

आधुनिक चिकित्सा-पद्धति में 'एक्स-किरण' का बहुत बड़ा महत्व है। एक्स किरणें प्रकाश की-सी रश्मियाँ हैं, जो आँखों से नहीं देखी जा सकती। हमारी दर्शन-शक्ति केवल प्रकाश-किरणें देखने तक सीमित है। यह प्रकाश क्या है? जिस प्रकार तारों को छेड़ने से वीणा में ध्वनि होती है, और वह ध्वनि वायु में तरंगित होकर स्थानान्तरित हो जाती है, ठीक उसी प्रकार प्रकाशवान् वस्तुओं से लहरों के रूप में शक्ति निकल कर एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाती है। इन लहरों में से कुछ प्रकाश की लहरें होती हैं और कुछ गरमी की। भेद केवल लहर की लम्बाई का है। बड़ी लहरें गरमी की होती हैं और छोटी प्रकाश की। छोटी लहरें ही हमारी आँखों से टकरा कर हमें प्रकाश का अनुभव कराती हैं। एक्स-किरण की लहरें प्रकाश-किरणों की अपेक्षा पाँच हजारवाँ हिस्सा सूक्ष्म होती हैं। ये बातें अटकल-पच्चू नहीं बल्कि वैज्ञानिक यन्त्रों द्वारा सिद्ध हो चुकी हैं।

एक्स-किरणें अति सूक्ष्म होने के कारण बहुत-सी वस्तुओं के पार चली जाती हैं। जब किरणें फोटो-प्लेट या फ़िल्म पर पड़ती हैं, तो उसे काला कर देती हैं। जब हमारे शरीर के किसी भाग को फोटोग्राफ की प्लेट पर रख कर एक्स-किरणें डाली जाती हैं, तो वे वहाँ के माँसल कोमल अङ्ग को पार कर भीतरी हड्डी वा अन्य किसी कठोर भाग पर रुक जाती हैं अथवा पहने हुए आभूषणों का चित्र प्लेट पर अङ्कित

[शेष पृष्ठ १४ पर]

सामयिक समस्याएँ

संगठन की भावना कैसे पैदा हो ?

श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम० ए०

श्री सम्पादकजी ने १ फर्वरी के आर्यमित्र में संगठन की आवश्यकता पर एक महत्वपूर्ण टिप्पनी दी है और किसी पिछले अङ्क में भी उनका प्रस्ताव था कि आर्यसमाज में एक 'संगठन-दिवस' मनाया जाय। मैं सोच रहा था कि श्री प्रधानजी की आज्ञा लेकर सब समाजों में एक संगठन-दिवस मनाया जाय जिसमें सगठन के महत्व पर आन्दोलन हो। परन्तु इसके लिये एक पृष्ठ-भूमि भी तैयार करनी होगी। मेरा समाजों, प्रतिनिधि सभाओं और सार्वदेशिक का भी कुछ कुछ अनुभव है। संगठन के शिथिल होने या भङ्ग करने के कुछ हेतु होते हैं। जब तक उनको दूर न किया जाय संगठन सुदृढ़ हो ही नहीं सकता। आयसमाज की अब तक दो विशेषतायें रही हैं, एक तो हिन्दुओं को असंगठित होने के लिये फटकारना और हिन्दू-संगठन पर बल देना। दूसरा स्वयं असंगठित रहना और ऐसा यत्न करना कि संगठन होने ही न पावे।

आर्यसमाज में वह बड़ा दुर्भाग्य का दिवस था जिस दिन आर्यसमाज की दो पार्टियाँ हुईं। कई बार यत्न किये गये, परन्तु आज तक दो पार्टियाँ एक नहीं हुईं। इसमें जनता का दोष नहीं है। जनता के बहुत से अंश ने कई बार चाहा कि एक हो जाय परन्तु हमारे नेताओं ने इसको होने न दिया। कभी सिद्धान्त का प्रश्न रहा और कभी सम्पत्ति का। इस दलबन्दी के कारण पंजाब के जोश ने भी समाज को आगे नहीं बढ़ाया। उस दलबन्दी का कारण थे हमारे उच्च श्रेणी के नेता। त्रुटि अवश्य थी, कहीं हो। इसमें स्वार्थ और असहनशीलता दोनों ही कारण होते हैं। और छोटा-छोटी बात बड़ी हो जाती है।

संगठन के शैथिल्य का मुख्य कारण है संगठनशीलता पर अविश्वास या अधविश्वास। यों तो कोई यह कहने के लिए उद्यत नहीं है कि मुझे संगठन का मूल्य नहीं मालूम या संगठन भंग के दोष ज्ञात नहीं। परन्तु यदि व्यवहार को देखिये तो शीघ्र ही पता लग जायगा कि लोगों का ऐसा विचार है कि यदि संगठन को थोड़ा-सा भंग करके काम निकाल लें या अपने विरोधी को परास्त करदें। तो कोई हानि नहीं हो सकती।

संगठन के भंग का आरंभ छोटी चीजों से हो जाता है। प्रत्येक पुरुष में कुछ त्रुटियाँ होती हैं। मनुष्य को दूसरों की आँख का तिनका अपनी आँख के शहतीर से बड़ा दृष्टिगोचर होता है। हम अपना बहुमत करने अथवा कोई और कार्यसिद्धि के हेतु अपने सहयोगी की छोटी सी त्रुटि को सहन नहीं करते। और वह मतभेद की अग्नि का छोटा-सा कारण असहिष्णुता के वायु से प्रेरित होकर भयङ्कर अग्निकाण्ड होजाता है। संगठन तोड़ने के मुख्य कारण हैं, बड़े लोग जो नेता कहलाते है।

कुछ लोगों में यह भी विश्वास है कि मतभेद से काम बहुत होता है। बहुत-से आर्यसमाजी पंजाब का उदाहरण देते हैं, जहाँ दो पार्टियों ने स्पर्धा में बड़ी-बड़ी संस्थायें स्थापित करदीं। परन्तु ईंटों का नाम तो उन्नति नहीं है। इस दलबन्दी ने आर्यसमाज के भविष्य को जितना बिगाड़ा है, उतना शायद ही किसी ने बिगाड़ा हो। पंजाब के आर्यों पर जो विपत्ति आई वह इसी दलबन्दी का परिणाम थी। छोटे समाजों में छोटी-छोटी संस्थायें दलबन्दी का कारण बनी हुई हैं। प्रान्तीय सभाओं पर भी इसका प्रभाव है। हम जब प्रतिनिधि सभाओं में जाते हैं, तो कार्य करने के लिये नहीं, अपितु छिद्रदर्शन के लिये। एक और बात है, जिसको हमने अब तक बिल्कुल नहीं सीखा। न छोटों ने न बड़ों ने। वह यह है कि यदि मैं प्रयाग का सदस्य हूँ, और प्रयाग समाज मुझे प्रान्तीय सभा में भेजता है, तो मैं समझता हूँ कि प्रयाग समाज ने मुझे अपना वकील करके भेजा है। वस्तुतः यह बात नहीं है। प्रयाग समाज ने मुझे प्रान्तीय सभा में इसलिये भेजा है कि मैं प्रान्त का होकर रहूँ और प्रान्त के स्तर से विशाल दृष्टि होकर देखूं। वहाँ मैं प्रयाग का वकील नहीं हूँ। प्रयाग ने मुझे इसलिये चुना कि प्रान्त के कार्य में आंशिक भाग प्रयाग को भी लेना था। इसी प्रकार जब सार्वदेशिक में मैं पहुंचा तो वहाँ मेरा स्तर और ऊंचा हो गया परन्तु सर्वत्र मैंने इस भावना का अभाव देखा। सार्वदेशिक में हर प्रान्त का पुरुष समझता है कि मैं अपने प्रान्त का वकील हूँ। इससे सदैव कोई न कोई ऐसी समस्या बनी रहती है, जिससे संगठन के शिथिल होने की आशङ्का हो जाती है। मैं यह मानता हूँ कि ऐसी भावना कठिन है, परन्तु आवश्यक है और विचार से उत्पन्न की जा सकती है।

एक और भावना है जिसको कह सकते हैं "समरथ को नहिं दोष गोसाईं।" जो समाज या सभा बलिष्ठ हैं वह संगठन की परख नहीं करते। वह समझते हैं कि समस्त समाज हमारे महत्व को मानेंगे और हम जो चाहेंगे कर सकेंगे। इसका प्रभाव बुरा ही रहता है।

जब समाज में दो दल हो जाते हैं, तो पराजित दल प्रायः नया समाज बना लेता है या धमकी देता है। यह ठीक है कि नया संगठन बनाया जा सकता है, परन्तु उससे उत्पन्न हुई हानि से बचना कठिन हो जाता है। संगठन के नियम संगठन नहीं बना सकते। संगठन की भावना संगठन बना सकती है। भावना कैसे पैदा की जाय यह प्रश्न है।

—

शिक्षा-पद्धति

(श्री सुदर्शनसिंह वर्मा, एम-ए०, एल० टी०)

आज स्वतन्त्र भारत में भी लगभग वही शिक्षा-पद्धति चल रही है जिसे अंगरेज छोड़ गए हैं। उसमें कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं हुआ। हम उत्तर प्रदेश में ही देखते हैं, शिक्षा-विभाग में और अनेक उलट-फेर किये गए जिनका महत्व विशेषज्ञ ही समझ सकते हैं, परन्तु पाठ्य पुस्तकों में आवश्यकतानुरूप परिवर्तन नहीं हुआ। आज भी अधिकांश वे ही अथवा उनके आधार पर गढ़ी गई पुस्तकें पढ़ाई जा रही हैं, जिन्हें अंगरेजों ने अपने उद्देश्यानुरूप तैयार किया कराया था। आवश्यकता इस बात की है कि हमारे बच्चों तक उन मन्दमनोरथता या हीनत्वभावनापूर्ण विचारों की गन्ध तक न पहुंचने पावे, ऐसी व्यवस्था शिक्षा-विभाग द्वारा शीघ्रातिशीघ्र की जाय। पाठ्य-क्रम में ऐसी पुस्तकों का तुरन्त समावेश होना चाहिए, जिनके द्वारा अपने पूर्वजों का वास्तविक इतिहास ज्ञात हो सके। उसमें विदेशियों द्वारा जो मिथ्या स्थापनाएँ की गई हैं, उनका युक्तियुक्त खण्डन भी किया जाना चाहिए। अपने भारतीय ज्ञान-विज्ञान के आगार वेदादि शास्त्रों का महत्व, जिसको आज सारा संसार स्वीकार कर चुका है वह भी किसी न किसी रूप में बच्चों तक पहुंचाना आवश्यक है। वेदों का ज्ञान मनुष्यमात्र के लिए है। उसमें हिन्दू-मुसलमान या भारतीय, अमरीकन आदि का कोई भेद-भाव नहीं किया गया। अतएव उसे साम्प्रदायिक बता कर टाला नहीं जा सकता। उनके सम्बन्ध में वास्तविक ज्ञान कराना जरूरी है, जिससे हम अपनी उस अमूल्य निधि को पहचान सकें। गज-मुक्ता को गुञ्जा समझ कर उपेक्षापूर्वक त्याग न दें। यदि हमें इतने तप-त्याग और बलिदानों के बाद प्राप्त हुई स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखना है, तो सबसे पहली आवश्यकता है, शिक्षा-पद्धति में आवश्यक परिवर्तन कर आगामी पीढ़ी में भारतीयता की भव्य-भावना भरने की। जब तक हममें अपनी संस्कृति के प्रति श्रद्धा की भावना का उदय न हो, तब तक हम उसे सुरक्षित रखने को क्यों उद्यत होंगे। जब तक बालकों में नैतिकता की उदात्त भावनाएँ न भरी जायेंगी, देश में से भ्रष्टाचार, चोरबाजारी, आपाधापी किसी भी उपाय से दूर नहीं किये जा सकते। कानूनी बन्धन इन्हें त्रिकाल में भी नहीं रोक सकते।

—

चयनिका

[मधुप]

भयावह स्थिति

कांग्रेस पर्वत पर से नीचे गिरने लगेगी। हमें एकमात्र निर्वाचन में विजयी होने की ही दृष्टि से विचार नहीं करना है। कांग्रेस निर्वाचनों में सफल हो या न हो; किन्तु वह कांग्रेस जिसने एक दिन अपने कार्यों, बलिदानों और सेवा-भाव से सुयश अर्जन किया था; कठिन परिस्थितियों और आपत्तियों से संघर्ष कर विजय प्राप्त किया था आज अकर्मण्य बन रही है-काम करने का विचार भी नहीं करती। यह परिस्थिति एक संस्था के लिये अति भयावह है। यदि ऐसा ही होता रहेगा, तो कांग्रेस निरन्तर गिरती जायगी।

श्री जवाहरलाल नेहरू

विचार-धारा बदलिये

मनुष्य की वृत्ति में रजोगुण और तमोगुण की अधिकता के कारण एक देश दूसरे देश पर अपना शासनाधिकार जमाना चाहता है, और अपनी लोक-वासना की पूर्ति के लिए अन्य देशों की प्रजा का संहार करने को उद्यत है। यदि किसी देश में सुख-शान्ति का प्रसार करना चाहते हो तो विचार-धारा में परिवर्तन की आवश्यकता है। अब तक मनुष्य की बुद्धि में रजोगुण और तमोगुण की न्यूनता और सत्वगुण की वृद्धि न होगी तब तक विश्व-शान्ति की आशा दुराशामात्र है।

जगद्गुरु श्री शंकराचार्य
(ज्योतिर्मठ)

चरित्र-बल

नवयुग की सबसे पहली मॉग यह है कि देश के छात्रों को प्रारम्भ से अन्त तक अन्य सब प्रकार की शिक्षा के साथ-साथ अनिवार्य रूप से नागरिकता की शिक्षा दी जाय। नागरिकता की सबसे बड़ी मॉग यह है कि देश का प्रत्येक निवासी अपने देश और देशवासियों के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझे। उत्तरदायित्व की भावना उसकी नस-नस में व्याप्त हो जाय। चरित्र-बल की भी बड़ी आवश्यकता है। स्वतन्त्र मनुष्य का तो एकमात्र सहारा चरित्र-बल ही रहता है।

प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति, एम० पी०

स्वतन्त्र लेखक

चाहे भाषा का निर्माण हो, चाहे साहित्य का, स्वतन्त्र लेखक ही उसे सुचारु रूप से सम्पन्न कर सकते हैं। उन्हीं की कृतियाँ ही वे सपने दे सकेंगी, जिनके आधार पर हमारे समाज का नव निर्माण सही ढंग से हो सकता है। स्वतन्त्र लेखक से अर्थ उस लेखक का है, जो किसी बाहरी प्रभाव में न हो और जो लेखन की वृत्ति से ही अपना जीवन यापन करता हो।

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी

वह मार्ग

भारतीय प्रजातन्त्र को उस प्रकार उस रास्ते से चलाने का प्रयत्न करना चाहिये जिस प्रकार और जिस रास्ते से उसे गांधीजी चलाना चाहते थे। जिस सॉचे में प्रजातन्त्र शासन को सबसे पीड़ित और शोषित किसानों और मजदूरों का प्रजातन्त्र शासन बनाना चाहते थे।

माननीय जगजीवनराम

वृक्ष काटना पाप है

हमारी सारी संस्कृतियां वन-प्रधान हैं। ऋग्वेद जो हमारी सनातन शक्ति का मूल है, वन-देवियों की अर्चना करता है। मनुस्मृति में वृक्ष विच्छेदक को बड़ा पापी माना गया है। उसके लिये दण्ड का विधान किया गया है। तालाबों, सड़कों या सीमा के पास वृक्षों को काटना बड़ा गम्भीर अपराध समझा जाता था।

श्री के० एम० मुंशी

ईंटों का कमल

आधुनिक सभ्यता-लक्ष्मी जिस कमल पर विराज रही है, वह ईंट और लकड़ी से बना है। वह है नगर या शहर। उन्नति-सूर्य जैसे जैसे मध्य आकाश में आरहा है वैसे-वैसे शहर रूपी कमल के दल खिल-खिल कर क्रमशः चारों तरफ व्याप्त हुए जा रहे हैं। बेचारी वसुन्धरा इस बढ़ते हुए सुर्खी, चूने के गारे को रोकने में असमर्थ हो रही है।

श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर

जात-पांत

जात-पॉत मिटाने के लिये एक नया ही प्रचण्ड सामाजिक आन्दोलन चलाना पड़ेगा। लोगों को यह स्पष्ट समझाना होगा कि जात पॉत रखनी है तो स्वराज्य खोना पड़ेगा। और अगर स्वराज्य मजबूत करना है तो जात-पॉत शीघ्र दफनानी होगी।

काका कालेलकर

गांधीजी का भारत

मैं तो ऐसे भारत की कल्पना करता हूं, जिसमें गरीब से गरीब व्यक्ति यह महसूस करे कि यह उसका अपना देश है, और जिसके निर्माण में उसका बोल-बाला रहे। ऐसा भारत जिसमें कोई बड़ा या छोटा न होगा, जिसमें सारे संप्रदाय प्रेम के साथ रह सकेंगे। ऐसे भारत में अस्पृश्यता और मद्यपान के अभिशाप को स्थान न होगा। महिलाएं पुरुषों के समान अधिकारों का उपयोग करेंगी। चूंकि हम सारे संसार के साथ शांति और प्रेम से रहते हैं, जहां न कोई शोषक होगा और न शोषित इसलिये हमें कम से कम सेना की आवश्यकता होगी। दूसरे के ऐसे हितों का, जिनसे हमारा कोटि-कोटि मूक जनता के हित से संघर्ष न होगा, हम आदर करेंगे, भले ही वे विदेशी हों या देशी। व्यक्तिगत रूप से मैं विदेशी और देशी के भेद से घृणा करता हूँ। यही मेरे सपनों का भारत है।

महात्मा गाधी

आर्यसमाज की आवश्यकता

पहले की अपेक्षा अब आर्य-समाज की अधिक आवश्यकता है। आज संसार भोगवाद के परिणाम स्वरूप विनाश की ओर दौड़ा चला जा रहा है। चरित्र-हीनता मानव-समाज को निगले जा रहा है। दूसरी ओर कम्यूनिज्म के रूप में नास्तिकता की लहर संसार में बड़े वेग से फैलती जा रही है। इन समस्याओं का समाधान सरकार नहीं आर्य-समाज कर सकता है। जब तक प्रजा के प्रत्येक व्यक्ति को चारित्रिक दृष्टि से ऊंचा नहीं उठाया जायगा, तब तक देश से घूंसखोरी, चोरबाजारी इत्यादि दूर नहीं हो सकती।

राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री

हिन्दू कोडबिल

हिन्दू कोडबिल स्वीकृत हो तो वह देश के सभी नागरिकों पर लागू होना चाहिये, चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान। जब हिन्दू स्त्रियों पर हो रहे अन्याय को हटाया जा रहा है, तब मुस्लिम स्त्रियों के साथ हो रहे अन्याय को क्यों न हटाएं। यदि सरकार यह समझती है कि वैसा करना मुस्लिम धर्म पर हस्तक्षेप होगा, तो वह हिन्दू धर्म पर भी होगा। लेकिन मैं समझता हूँ, सामाजिक सुधार के सम्बन्ध में हस्तक्षेप करना बुरा नहीं है और इसीलिए सभी पर लागू होना चाहिये। यदि उसूल सच्चा है तो वह सब के लिए सही होना चाहिए।

प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति
[संसद में भाषण]

भाषा हिन्दी लिखाइये

आपको पता होगा कि जन-गणना अब शीघ्र ही होने वाली है। आपका कर्त्तव्य है कि उसमें अपनी मातृभाषा हिन्दी लिखाएँ। शायद आपको पता नहीं, जन-गणना के समय ऐसा होता आया है कि आपकी मातृभाषा तो है हिन्दी, पर कर्मचारियों की धांधली के कारण उर्दू या हिन्दुस्तानी लिख दी जाती है। हिन्दुस्तानी का अर्थ भी किया जाता है उर्दू, यह भी न भूलें। अतः आप सावधान रहें। आपकी मातृभाषा नागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी ही है। यह हिन्दी भाषा भारत की राजभाषा भी घोषित हो चुकी है। अब आप स्वयं समझ सकते हैं कि अपनी असावधानी से अपनी मातृभाषा हिन्दी के अतिरिक्त और कुछ लिखाकर अपनी कितनी बड़ी हानि करेंगे। अतः आप से निवेदन है कि अपनी मातृभाषा अवश्य हिन्दी लिखाएं।

कृष्णदेवप्रसाद गौड़
प्रधान मंत्री, ना० प्र० सभा काशी

——

बाल-विनोद

उलझन सुलझाइये

हम नीचे एक वाक्य दे रहे हैं। वाक्य में शब्दों का क्रम तो ठीक है, पर कम्पोजीटर की असावधानी से शब्दों में अक्षरों का क्रम उलट-पलट गया है, इस कारण वाक्य का अर्थ समझ में नहीं आता। बड़ी उलझन पड़ गई है। तुम लोग इस उलझन को सुलझाने में मदद करो। जो बालक सबसे पहले वाक्य को ठीक लिख कर भेजेगा, उसका नाम अगले अंक में छापा जायगा। वाक्य यह है—

' मह तरआ से ताकतिनैक को कज से टामि रक हीं मद गेले।

झानू दादा के नाम पत्र

१

मैं अपने हिस्से की मिठाई मेज की दराज में रखती हूँ, तो वहाँ चींटियाँ आ जाती हैं। आलमारी में रखती हूँ तो चुहिया खा जाती है, छींके पर चिड़ियाँ नहीं छोड़तीं। आप बताइये मैं अपनी मिठाई कहाँ रक्खा करूं जहाँ से न कोई ले सके न खा सके।

कृष्णकुमारी मेरठ

[लो, हम तुम्हें बड़ी बढ़िया जगह बताते हैं। तुम अपनी मिठाई झानू दादा के मुंह में रख सकती हो। वहाँ से चुहिया-चींटी तो क्या तुम भी न ले सकोगी। झानू दादा इस कामके लिये अपने मुंह का किराया भी नहीं लेंगे।]

२

आप बाल-विनोद में तसवीरें क्यों नहीं छापते। मेरी एक तसवीर है। उसमें मैं तीन पहिये की साइकिल पर बैठा हुआ हूँ। आप उसे अपने अखबार में छाप दीजिये।

प्रभात, पीलीभीत

[अरे भाई, तसवीर भेजो तो सही, छाप देंगे। तसवीर तुम्हारे घर रक्खी रहे और हम उसे यहाँ बाल विनोद में छाप दें, ऐसा जादू झानू दादा नहीं जानते।]

३

मेरे गाँव का नाम 'पनहटी' है। गामो में 'पनहा' जूते से कहते हैं। जूते के नाम से मिलता-जुलता अपने गाम का नाम मुझे पसन्द नहीं है। क्या हमारे गाँम का नाम बदला नहीं जा सकता। अगर बदल जाय तो आप कोई अच्छा-सा नाम भी बताइये।

रामेश्वरदयाल

[तुम्हारे गाँव का नाम तो बड़ा अच्छा है। उसका शुद्ध रूप 'पान हट्टी' (पानों का बाजार) है। लोगों ने बिगाड़ कर पनहटी कर लियौ है। तुम उसे शुद्ध 'पानहट्टी' लिखा-बोला करो। दूसरा नाम बदल कर क्या करोगे।]

४

आने वाली बसन्त पंचमी को मेरी वर्षगाँठ होगी। उस दिन मैं 'आर्य-मित्र' पढ़ने वाले अपने बाल साथियों को दावत खिलाना चाहता हूँ। आप सबके पते बता दीजिये, तो मैं न्यौता भेज दूं।

बसन्तलाल कपूर

[तुम्हें मालूम होना चाहिए कि गवर्नमेण्ट ने २५ आदमियों से अधिक की दावत करने को मना कर रक्खा है, क्योंकि देश में अन्न की कमी है। 'आर्य-मित्र' पढ़ने वाले बाल साथी सैकड़ों हैं। तुम सबकी दावत कैसे कर सकते हो। बस अकेले झानू दादा को बुला लेना और किसी को नहीं।]

५

कहानियों में आता है—गीदड़ ने यों कहा और हिरन यों बोला। तो क्या दादा, ये जानवर भी हमारी तरह आपस में बातचीत करते हैं। हमने तो कभी किसी चूहे, बिल्ली, मुर्गा आदि को बातें करते नहीं सुना।

शशिकान्त झा, मुंगेर

[जानवरों को बातें करते देखा सुना तो होगा, पर यों कहो कि तुम उनकी बातें समझ नहीं सकते। सभी पशु-पक्षी अपनी बोली में अपने भाव प्रकट करते हैं। तुमने गलगलनामक चिड़ियों को लड़ते देखा होगा। वह कैसी दो टोलियों में आमने-सामने बैठ हाथ चमका कर और मुंह मटका कर गाली गलौज करती हैं और फिर गुत्थमगुत्था लड़ने लगती हैं। पशु पक्षियों के संकेत ही उनकी बोलियाँ हैं।]

६

मैंने बसन्त पर एक कविता भेजी थी। आपने वह बसन्त से पहले ही छाप दी। अब बसन्त आरहा है, इस समय छापनी चाहिए थी। अच्छा अब उसे दुबारा छाप दीजिए।

कुमारी ज्योत्स्ना पाठक

[कहती तो ठीक हो। बसन्त की कविता बसन्त के समय छपनी चाहिये थी। पर उस समय न तुम्हें बसन्त की खबर थी, न हमें। तुमने भेज दी और हमने छाप दी। अब उसे दुबारा छापना तो ठीक नहीं, तुम ऋषिबोधोत्सव के सम्बन्ध में कविता भेजो, हम शिवरात्रि पर छापेंगे।

महिला-मण्डल

कोड बिल और आर्य महिलाएं

श्रीमती जानकीदेवी पाठक

कोड बिल को लेकर आजकल देश में बड़ी हल-चल मची हुई है। इसकी तलाक और दाय भाग दो धाराओं से स्त्रियों का भी सम्बन्ध है, अतएव स्त्रियाँ भी इसमें विशेष दिलचस्पी ले रही हैं। कुछ लोग इसे देश के लिए विघातक समझते हैं, और कुछ हितकर। उधर अनेक संस्थाओं (जिनमें आर्यसमाज भी है) और अगणित व्यक्तियों द्वारा विरोध किये जाने पर भी सरकार उसे पास करने पर तुली हुई-सी जान पड़ती है। जो हो, आर्य संस्कृति के मानने वालों को उससे भयभीत होने की कोई बात नहीं है। हमारे यहाँ का विवाह-सम्बन्ध दूसरे लोगों की भाँति व्यावहारिक समझौता या ठेका नहीं है, जिसे थोड़ी-सी दिक्कत उपस्थित होने पर उसे तुरन्त तोड़ दिया जाय। आर्य-संस्कृति में तो विवाह संस्कार के पश्चात् पति-पत्नी दोनों मिलकर एक रूप-कहिये कि दो शरीर और एक आत्मा हो जाते हैं। उनमें स्वार्थों की भिन्नता नहीं रहती। वैदिक विवाह-पद्धति में सबसे पहली प्रतिज्ञा जो वर वधू करते हैं, वह है-"समापो हृदयानि नौ—हम दोनों के हृदय जल के समान मिलकर एक हो जायें।" क्या कोई वैज्ञानिक है, जो दो जगह के पानियों को एकत्र मिलाने के पश्चात् फिर विश्लेषण करके अलग-अलग कर दे। फिर जल के समान मिले हुए दो हृदय भी कैसे अलग हो सकते हैं। वैदिक संस्कृति में पति-पत्नी का सम्बन्ध धार्मिक और अटूट है, वह दोनों के जीवन-काल में तो अचल और अटल रहता ही है, जीवनान्त में भी कई पीढ़ियों तक उसका प्रभाव रहता है। पति-पत्नी में से किसी एक में कुछ दोष या निबलता आजाने पर, दूसरा उसे उसी प्रकार अलग नहीं करता, न करना चाहता है, जिस प्रकार एक हाथ में फोड़ा हो जाने पर कोई भी उस हाथ को काट कर नहीं फेंक देता, न फेंक देना चाहता है। विपरीत इसके उसकी चिकित्सा कराके उसे स्वस्थ और नीरोग बनाने के लिये प्रयत्न करता है। फोड़े के कारण अपने शरीर के अंग को काट कर फेंक देना समझदारी का काम नहीं कहा जा सकता। फिर न जाने कुछ लोग क्यों वैवाहिक सम्बन्ध में तलाक के अविवेकपूर्ण कार्य को अच्छा समझ रहे हैं।

वैदिक विवाह-पद्धति में तो संस्कार के समय पति-पत्नी दोनों सर्वव्यापक परमात्मा और उपस्थित-नाते-रिश्तेदारों अथवा विद्वज्जनों के साक्ष्य में वेदमन्त्र द्वारा प्रतिज्ञा करते हैं—"मया पत्या जरदष्टिर्यथा सः—हम पति-पत्नी दोनों साथ रहते हुए वृद्धावस्था को प्राप्त हों।" फिर क्या हमें किसी भौतिक क्षुद्र स्वार्थवश इस प्रतिज्ञा को भुला देना चाहिए? मैं समझती हूँ कोई भी आर्य महिला इसके लिए तैयार न होगी। विवाह-संस्कार के समय लाजाओं की आहुति देती हुई वधू परमात्मा से प्रार्थना करती है—"सनो अर्यमा देवः प्रेतो मुञ्चतु मा पतेः—वह न्यायकारी परमात्मा मुझे इधर पिता के कुल से तो छुड़ाए, परन्तु पति के कुल से कभी न छुड़ाए।"—तब मैं समझती हूँ, वह बड़े-से-बड़ा कष्ट आने पर भी तलाक जैसे घृणित मार्ग का अवलम्बन न करेगी। फिर हमारे वाले 'कोड-

संस्था-परिचय

वैदिक आश्रम, ऋषिकेश

श्री प० यज्ञदत्त शर्मा

ऋषिकेश प्रसिद्ध और पुरातन तीर्थस्थान है। पुण्य-तोया भगवती भागीरथी के दक्षिण तट पर बसा, हिमगिरि की गोद में अवस्थित यह क्षेत्र अपनी निराली शोभा रखता है। यहाँ अनेक संस्थाओं और सम्प्रदायों के आश्रम, मठ, धर्मशालाएं और क्षेत्र बने हुए हैं। क्षेत्रों में साधु-संन्यासियों और विद्यार्थियों को भोजन दिया जाता है। यह सब कुछ होते हुए भी यहाँ पर आर्य-संन्यासियों, वानप्रस्थों, गृहस्थों और विद्यार्थियों के ठहरने के लिये उपयुक्त स्थान का अभाव ही था, जिसकी पूर्ति उक्त वैदिक-आश्रम के बनने से होगई।

सन् १९३४ ई० में १४ फरवरी को स्वर्गीय स्वामी शुक्रानन्द जी के प्रयत्न से, श्री प० गंगाप्रसादजी, रिटायर्ड चीफ जज के पवित्र हाथों द्वारा इस आश्रम की आधार-शिला रक्खी गई थी। तब से लेकर अब तक इस आश्रम में छोटे-बड़े २१ कमरे बन चुके हैं। सब कमरों के आगे बरामदा और चबूतरा है। ऊपर छत पर भी दो कमरे बने हैं। एक ओर समाज-मन्दिर, यज्ञशाला और कुआ हैं। दो भूगर्भस्थित गुफाएँ भी बन गई हैं, जिनसे अभ्यासीजन लाभ उठा सकें। दो रसोईघर भी बने हैं। आश्रम में अब तक जितना भी निर्माण-कार्य हुआ है, उसके लिए न कभी चन्दा माँगा गया और न किसी पत्रादि में अपील छपाई गई। केवल कुछ आर्यसंन्यासियों और विद्वानों की प्रेरणा से दानी सज्जनों ने कुटियाँ बनवादी हैं। अब तक बने मकानादि की लागत २५०००) है। आश्रम की कुल सम्पत्ति की रजिस्टरी सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा दिल्ली के नाम होगई है, और इसकी प्रबन्ध-व्यवस्था आर्य वान-प्रस्थाश्रम ज्वालापुर की प्रबन्ध-समिति के अधीन है। श्री प० नरदेवजी शास्त्री, वैद्यराज श्री प० अमरनाथजी प्रधान आर्य-समाज देहरादून और श्री आनन्द स्वामी (पूर्व महात्मा खुशहालचन्दजी) की आश्रम पर विशेष कृपा रहती है।

इस आश्रम में बिना किसी भेद-भाव के आश्रम के नियमों और मर्यादा का पालन करते हुए प्रत्येक व्यक्ति ठहर सकता है। ठहरने वालों को आवश्यकतानुसार तख्त, चारपाई, बाल्टी और भोजन बनाने के पात्र भी दिये जाते हैं। कुछ समय के लिए बिस्तर तथा लालटेन भी दी जा सकती है। यहाँ से बाजार, मोटरों का अड्डा, डाकघर, गंगा-घाट सब पाँच-पाँच मिनट के रास्ते पर हैं। रेलवे स्टेशन का दस मिनट का मार्ग है।

आश्रम मे नियमपूर्वक समाज के सत्संग, हवन और कथादि होते हैं। अन्य प्रकारों से भी समाज के सिद्धान्तों का प्रचार किया जाता है जिनमें ट्रेक्ट बाँटना भी एक प्रकार है। अब तक आश्रम की ओर से सात-आठ प्रकार के ट्रेक्ट हजारों की संख्या में बाँटे जा चुके हैं। पहले सत्यार्थ-प्रकाश और संस्कार-विधि भी बिना मूल्य बाँटे जाते थे, परन्तु अब मूल्य से दिए जाते हैं। अन्यान्य संस्थाओं, स्कूलों आदि मे आश्रम की ओर से व्याख्यान भी कराए जाते हैं। प्रत्येक मत और सम्प्रदाय के प्रतिष्ठित व्यक्ति वैदिक आश्रम को सम्मान की दृष्टि से देखते हैं।

आश्रम के अध्यक्ष श्री स्वामी देवानन्दजी, आश्रम की बड़ी सुन्दर व्यवस्था रखते हैं। प्रायः दिन रात आश्रम की उन्नति के लिये प्रयत्नशील रहते हैं। आय विद्वानों और साधु-संन्यासियों को तो आप बड़े प्रेम और प्रसन्नता के साथ आश्रम मे ठहराते और बड़ी उदारतापूर्वक उनका स्वागत-सत्कार करते हैं। आपकी पूरी शक्ति वैदिक धर्म के प्रचार और आगत अतिथियों के आतिथ्य में व्यय होती है। आपके कारण वैदिक आश्रम वस्तुतः उपयोगी आश्रम बना हुआ है।

बिल' पास हो तो, न हो तो, हमें तो अपनी प्राण-प्रिय वैदिक संस्कृति पर स्वयं दृढ़ रहते हुए, उसके महत्व का अधिकाधिक प्रसार और प्रचार करना चाहिए। हमें अपने विचारों पर दृढ़ रहने की आवश्यकता है, कोई भी कानून हमें बलपूर्वक तलाक देने को बाध्य नहीं कर सकता। हाँ, इतना जरूर है कि जो लोग इस दिशा में निर्बल हैं, इस कानून के बनने से उन पर से समाज का नियन्त्रण ढीला अवश्य हो जायगा। सो देखा जाय तो ऐसे लोग अब भी उस निंद्य प्रथा का अनुसरण करते ही हैं। आशा है, आर्य बहनें हिन्दू कोड बिल के इस अंश के विरोध में शक्ति न लगा कर अपने उच्च सिद्धान्तों के प्रचार तथा उनके सम्बन्ध में रचनात्मक कार्य करने में ही शक्ति का सदुपयोग करेंगी।

स्वास्थ्य-सुधा

गाजर का उपयोग

श्री प० सत्येन्द्रनाथ आयुर्वेदाचार्य

स्वास्थ्य-सुधार के लिए जाड़ों की ऋतु अत्यन्त उपयुक्त है, क्योंकि इन दिनों मनुष्य की जठराग्नि स्वाभाविक रूप से प्रदीप्त होकर उसकी कार्यक्षमता बढ़ जाती है। अतः इन दिनों जो कुछ खाया जाता है, वह भले प्रकार पच जाता है, और उसमें से अधिकाधिक पोषक तत्व शरीर प्राप्त कर लेता है।

जो लोग साधन-सम्पन्न हैं, वे शीतकाल में पौष्टिक पाक, घी, दूध और मेवा आदि का सेवन कर स्वास्थ्य-सम्पादन करते हैं। मध्यम स्थिति के लोग भी अपनी शक्ति अनुसार मूंग, मालवागनी आदि के लड्डू गोंद आदि सस्ती पौष्टिक चीजें डाल कर खाते हैं। परन्तु निम्न श्रेणी का निर्धन वर्ग अपनी असमर्थता के कारण शीतकाल रूप ईश्वरीय आशीर्वाद से कुछ लाभ नहीं उठा पाता।

परमात्मा ने जहाँ शीत ऋतु बनाई है, वहाँ इसके साथ ही ऐसी अनेक वस्तुएं उत्पन्न की हैं, जिनसे धनी-निर्धन सभी समान रूप से लाभ उठा सकें। ऐसी चीजों में गाजर भी एक है। गाजर मनुष्य और पशु सबके लिए अति लाभदायक सस्ता खाद्य है।

आयुर्वेद में गाजर की बड़ी प्रशंसा की गई है। निघण्टुकार के मत से यह मधुर, तीक्ष्ण और कुछ गरम है। रक्त को बढ़ाने और शुद्ध करने में अद्वितीय है। इसमें लौह तत्व विशेष मात्रा में होता है। गाजर जठराग्नि को प्रदीप्त करती, मल को बाँधती और वीर्य को बढ़ाती है। रक्त-पित्त, अर्श (बबासीर) और संग्रहणी का नाश तथा कफ और वायु का शमन करती है। आमवात और गठिया रोग में भी अति हितकर है। गाजर का हलुआ जो घीयाकस में कसी हुई गाजरों को दूध में उबाल कर और फिर उसे घी में भून तथा खाँड और मेवा मिला कर तैयार किया जाता है, अत्यन्त पौष्टिक एवं हृदय को बल देने वाला है। इसे प्रातःकाल प्रातराश के रूप में दूध के साथ सेवन करना चाहिये। गरम प्रकृति वालों के लिए तो उक्त हलुआ अति अनुकूल और शक्ति बढ़ाने वाला होता है। इस प्रकार गाजर में अनेक गुण हैं, परन्तु उनसे अपरिचित होने के कारण हम इसकी कद्र नहीं करते।

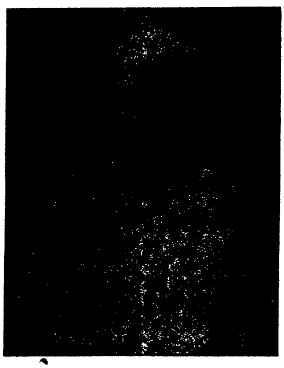
जाड़े के दिनों में गाजर का अधिक से अधिक उपयोग करके लाभ उठाना चाहिये। पीछे बताए प्रकार के अतिरिक्त इसे अन्य तरीकों से भी खाया जा सकता है। प्राकृतिक रूप में कच्ची खाने से भी लाभ पहुँचाती है। इसका शाक और रायता बना कर भी खा सकते हैं। गाजर का अचार भी अत्यंत स्वादिष्ट और लाभप्रद होता है। राई और पानी के योग से तैयार किया गया गाजर का अचार तिल्ली और जिगर के लिए अत्यन्त लाभदायक होता है। गाजर के हलुआ का सस्ता रूप गजरभत्त है, जिसे कसी हुई गाजरों को पका कर और गुड़ डालकर बनाते हैं। यह हलुआ के समान अधिक दिनों रक्खा नहीं जा सकता। रोज का रोज ही

जीवन-ज्योति

स्व० महात्मा श्रीरामजी

पाठकों को यह पढ़ कर दुःख होगा कि आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता महात्मा श्रीरामजी का ८६ वर्ष की आयु में ६ फरवरी १९५१ को सन्ध्या समय सवा महीना की बीमारी के बाद देहान्त हो गया !

आर्य-संसार में ऐसे बहुत कम कार्यकर्त्ता होंगे, जिन्होंने लगातार ६६ वर्षों तक आर्यसमाज की सेवा की हो। बाबू श्रीरामजी को इस प्रकार की सेवा का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वे २० वर्ष की अवस्था में आर्यसमाजी हुए और तब ही से वैदिकधर्म प्रचार-कार्य में लग गए। छात्रावस्था में आप निरन्तर आर्यसमाज का कार्य करते रहे। पढ़-लिख कर जब सरकारी नौकरी की तो उस समय भी प्रचार-कार्य में जरा भी शिथिलता न आने दी। आप वक्ता और लेखक न थे। वार्तालाप और प्रेरणा द्वारा ही नवयुवकों को आर्यसमाज की ओर आकृष्ट करते थे। सब से बड़ा आकर्षण आपके चरित्र का था। कचहरी में काम करते हुए भी कभी रिशवत न ली और न किसी का अनुचित कार्य किया। कचहरी से निवृत्त होकर आप चार बजे साइकिल पर सवार होते और आर्यसमाज के प्रचार तथा आर्य-संस्थाओं के निमित्त धन संग्रह करने के लिए रात्रि के नौ बजे तक बराबर नगर के विविध व्यक्तियों के पास जाते। इसी प्रकार प्रातःकाल चार बजे नित्य-क्रियाओं से निवृत्त होकर समाज-सेवा में संलग्न हो जाते। आगरा में आर्यसमाज के अत्यधिक प्रचार का अधिकांश श्रेय बाबू श्रीरामजी को है। वे आगरा आर्यसमाज के वर्षों प्रधान मन्त्री और मुख्य संचालक रहे। उत्तर प्रदेशीय आर्य-प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान,मन्त्री, उप मंत्री तथा उपदेश-विभाग के अधिष्ठाता आदि पदों पर प्रतिष्ठित रहे। सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा तथा अखिल भारतवर्षीय शुद्धि सभा के भी सदस्य रहे। आर्यमित्र और आर्य-भास्कर प्रेस के अधिष्ठाता की हैसियत से भी वर्षों काम किया। आगरा की स्थानीय आर्य-संस्थाओं के तो आप प्राण ही थे। श्रीमद्दयानन्द अनाथालय को कई वर्षों तक आपने बड़ी सफलता से चलाया। आजकल आप विधवा-आश्रम के मन्त्री थे। वृन्दावन-गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता-पद पर भी कई वर्षों तक अधिष्ठित रहे। आपने उसके लिए धन-संग्रहार्थ देश के विविध भागों में यात्रा भी की। आगरे के मुरारिलाल इण्टर कालेज के स्थापन और संचालन में भी आपका प्रमुख हाथ रहा। बाबू श्रीरामजी का पवित्र आचार, संयत जीवन, निश्चित कार्यक्रम, और सच्चा सेवा-भाव देख कर लोग उन्हें उचित रूप से महात्मा कहने लगे थे। पीछे आर्य-जगत् में वे महात्मा श्रीरामजी के नाम से प्रसिद्ध हुए।



महात्मा श्रीरामजी

अकेले म० श्रीरामजी ने अपने जीवन में इतना अधिक प्रचार-कार्य किया जितना कितने ही उपदेशकों की सम्मिलित शक्ति भी न कर सकती थी। न जाने कितने आबाल-वृद्धों को उन्होंने आर्यसमाज का प्रशस्त पाठ पढ़ाया। किसी समय आगरे की आर्यमित्र-सभा बहुत प्रसिद्ध थी। इसमें प्रायः छात्र ही सम्मिलित थे। उस समय के इन छात्रों में से कितनों ही ने बड़े होकर आर्य-समाज और देश की प्रशंसनीय सेवा की तथा अब भी कर रहे हैं। इस आर्यमित्र-सभा की स्थापना में भी म० श्रीरामजी का बहुत बड़ा हाथ था। वे उन मिशनरी आर्य कार्य-कर्त्ताओं में से थे, जिन पर आर्य-समाज उचित गर्व कर सकता है। एक बार आर्यसमाज के विमल आकाश पर राजनैतिक सन्देह की घनघटा घहराई अर्थात् अंगरेज़ सरकार को यह भ्रम हुआ कि आर्यसमाजी बाह्य रूप से कुछ भी हों, परन्तु वास्तव में वे एक गुप्त क्रान्ति द्वारा उसकी शासन-सत्ता को पलट देना चाहते हैं। इस सन्देहपूर्ण वातावरण से भयभीत होकर कितने ही भीरु सरकारी नौकरों ने आर्यसमाज छोड़ दिया, परन्तु म० श्रीरामजी निःसंकोच रूप से आर्यसमाजी रहकर निर्भयतापूर्वक आर्यसमाज का प्रचार करते रहे। म० श्रीरामजी के अफसर उनकी ऐसी दृढ़ता देख कर असन्तुष्ट होने के बदले बड़े प्रसन्न हुए और सदैव उनकी ईमानदारी की प्रशंसा करते रहे। म० श्रीरामजी ने अपने प्रशंसनीय उद्योग द्वारा वृन्दावन-गुरुकुल तथा प्रतिनिधि सभा को सहस्रों रुपया एकत्र करके दिये। स्थानीय आर्य्य संस्थाओं की अलग सेवा सहायता की-कराई।

अब से साठ वर्ष पूर्व जब कोई व्यक्ति सार्वजनिक सेवा के लिए कठिनता से ही प्रवृत्त होता था, म० श्रीरामजी इस दिशा में सोत्साह संलग्न थे। उस समय आर्यसमाज ही एक ऐसी प्रगतिशील संस्था थी, जो जन-सेवा का कार्य करती थी। अपने क्रान्तिकारी विचारों के कारण उसे विरोधियों के कोप-कोदण्ड का दुर्लक्ष्य बनना पड़ा। म० श्रीरामजी सब विघ्न-बाधाओं और प्रहारों को सहते हुए अटल रूपसे जन-सेवा में निरत रहे। आज के आर्य लोग जिनका कार्य-पथ निरापद और प्रशस्त है, उस समय की कठिनाइयों का अनुमान भी नहीं कर सकते। ऐसी परिस्थिति में म० श्रीरामजी ने कार्य किया।

म० श्रीरामजी की आर्थिक स्थिति बहुत साधारण थी। जो मिल जाता उसी में गुज़र कर लेते, परन्तु आर्यसमाज की सेवा में कभी कमी न आने देते। वे बड़े विनम्र और मिलनसार थे, परन्तु यदि किसी को अनुचित, अनियमित या सिद्धान्त-विरुद्ध कार्य करते देखते तो बुरी तरह क्रुद्ध हो जाते। उनका यह क्रोध क्षणिक होता था। आर्य-समाज के इस निर्भय नेता अथवा सच्चे सिपाही ने पर्याप्त आयु पाई और वे मरने से प्रायः डेढ़ महीना पूर्व तक अपना समस्त नैत्यिक कार्य-क्रम नियमित और संयत रूप से करते रहे। आर्य-समाज की महती सेवा करता

काम में लाना चाहिये। हलुआ के सिवा अन्य सब रूपों में गाजर का उपयोग निर्धन व्यक्ति भी कर सकते हैं। आजकल राशन की कमी के समय में सभी लोगों को गाजर का अधिकाधिक उपयोग करना चाहिये, इससे राशन की पूर्ति के साथ ही स्वादु और पौष्टिक भोज्य पदार्थ भी प्राप्त होगा।

गाजरों को सुखा कर इनको अन्य मौसमों के लिए संग्रह भी किया जा सकता है। इसे घीयाकस में कसकर या चाकू से लम्बी-लम्बी फाँकें बना कर दोनों ही रूप में सुखाते हैं।

आशा है, पाठक आजकल अपनी भोजन-सामग्री में गाजर को प्रमुख स्थान देकर आगामी शीतकाल तक के लिए शक्ति का संग्रह तो करेंगे ही, साथ ही अपनी राशन की समस्या भी सुलझाएँगे।

—

आर्य जगत

—आर्यसमाज भरकुइया (बदायूं) का वार्षिकोत्सव २९ और ३० जनवरी को समारोहपूर्वक मनाया गया। अनेक साधु-संन्यासियों और विद्वानों के भाषण तथा भजनोपदेशकों के भजन हुए।

—आ० स० फेराहेड़ी (सहारनपुर) के श्री राजारामजी आत्मज श्री जयप्रकाश त्यागी के पुत्र का नामकरण संस्कार वैदिक रीति से हुआ।

—आ० स० बड़ा गांव (आजमगढ़) का समाज-मन्दिर श्री धर्मवीर आर्य भण्डाधारी के दान द्वारा प्रायः निर्मित हो चुका है।

—शोक है कि आ० स० दरियागंज देहली के प्रमुख कार्यकर्त्ता तथा कोषाध्यक्ष श्री ला० कुन्दनलाल जी का गत ६ फरवरी को अकस्मात देहान्त हो गया। आप बड़े कर्मण्य और सच्चरित्र आर्य थे। आ० स० दरियागंज शोक-सहानुभूति प्रकट करता है।

—शोक है कि लखीमपुर खीरी के प्रसिद्ध और वयोवृद्ध आर्य श्री बा० सीतारामजी एडवोकेट का २१ जनवरी १९५१ को देहान्त हो गया। आप प्रान्तीय आर्य-प्रतिनिधि सभा के प्रधान भी रहे थे। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति तथा दुखी परिवार को धैर्य प्रदान करे।

- आ० स० औरिहा (अलीगढ़) का उत्सव गत जनवरी मास में उत्साहपूर्वक मनाया गया। स्वा० सत्यव्रतजी, स्वा० शान्तानन्दजी, प० धर्मपाल शास्त्री, कु० सुखलालसिंहजी, ठा० आत्मारामसिंहजी आदि के भाषण हुए। नगौला, छोटा जवां, बड़ा जवां और औरिहा में जुलूस निकाले गये। श्रीमती हरिप्यारीदेवी धर्मपत्नी कुंवर रणवन्तसिंहजी ने उत्सव का सारा व्यय दिया और पधारे हुए सज्जनों का भोजनादि से स्वागत-सत्कार किया।

—आर्यसमाज भमपुर म० छज्जूसिंहजी रागी के देहावसान पर शोक-सहानुभूति प्रकट करता है।

हुआ यह बूढ़ा सिपाही चल बसा और अन्तिम श्वास तक वर्तमान तथा आने वाली पीढ़ी से पुकार-पुकार कर यही कहता रहा—प्यारे भाइयो उठो, आगे बढ़ो और आर्यसमाज की सेवा में संलग्न रहो। ——

– गुरुकुल वृन्दावन के उपदेशक श्री प० शमानन्दजी सिद्धान्त-शास्त्री ने अगस्त से दिसम्बर १९५० तक गुरुकुल के लिये धन प्राप्त किया।

—३ फरवरी को डुमरिया में वेदप्रचारिणी सभा की स्थापना हुई जो समीपवर्ती ग्रामों में प्रचार करेगी।

—प० सुवर्णसिंहजी आर्य सिद्धान्त-मनीषी मन्त्री आर्य भ्रमण सभा अलीगढ़ अपना निज का व्यय करके ग्रामों की जनता में वैदिक धर्म प्रचार कर रहे हैं। आपने आठ आर्यसमाजों की स्थापना कराई तथा कई उत्सव कराये। २९ ग्रामों में प्रचार किया। पिलखना (बुलन्द शहर) में एक यवन परिवार की शुद्धि की। स्वा० सत्यव्रतजी, स्वामी शान्तानन्दजी, प० ज्ञानेन्द्रजी आर्य-मुसाफिर ने भी आपके कार्य में सहयोग दिया।

—अत्यन्त दुःख से लिखना पड़ता है कि आगरा के अग्रवाल इंटर कालिज के प्रिंसिपल श्री अमीचन्द गोयल का हृदय-गति बन्द हो जाने से ३० जनवरी को देहान्त हो गया। आप आर्य-समाज आगरा नगर के सदस्य थे। समाज ने शोक-समवेदना प्रकट की।

—शोक है कि पाटन आर्यसमाज के उत्साही सदस्य श्री श्रीरामजी का गत १६ जनवरी को देहान्त होगया। परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति एवं दुखित परिवार को धैर्य प्रदान करे।

निर्वाचन

– आ० स० उरई—प्रधान-श्री रमाशङ्करजी सकसेना, मन्त्री—श्री दशरथजी श्रोत्रिय।

—आ० स० अनूपशहर-प्रधान—श्री विक्रमसिंह जी, मन्त्री—श्री अनन्तरामजी।

—आ० स० बादशाह नगर लखनऊ—प्रधान-श्री रामसिंह शर्मा और मन्त्री-श्री रामेश्वर सहायजी

- आ० स० बस्ती—प्रधान श्री जगदम सहाय मुख्तार और मन्त्री-श्री रामचरित वैद्य।

—आ०स० शाहजहांपुर—प्रधान-श्री चोखेलालजी सत्यपाल और मंत्री-श्री तिलकूलालजी।

—आ० स० खड्गपुर (फर्रुखाबाद) प्रधान-श्री बाबूरामजी और मन्त्री-श्री काशीरामजी।

—आ० स० नजीबाबाद-प्रधान—श्री श्रीचन्द्रजी और मन्त्री-श्री देवेन्द्रकुमार आर्य।

—आ० स० शिवपुरी (ग्वालियर)-प्रधान-श्री जमपतरायजी और मन्त्री-श्री नाथूलाल गुप्त।

– आ० स० लावड़ (मेरठ)-प्रधान श्री प्रह्लादसिंहजी और मन्त्री-श्री श्यामलालजी पथिक।

— आ० स० अलीगढ़—श्री मोहनलालजी बारिस्टर-एट-ला और मन्त्री-श्री प्रेमशङ्करजी पचौरी एडवोकेट।

—आर्यसमाज सिविल लाइन्स सहारनपुर-प्रधान-मास्टर रामप्रसादजी वानप्रस्थी और मन्त्री—श्री केदारसिंहजी के०।

—आर्यसमाज जबलपुर-प्रधान—श्री सूरजबलरामजी सेठी और मन्त्री-श्री परमानन्दजी।

—आर्यसमाज पाली (मेरठ)-प्रधान-महाशय भरतसिंहजी और मन्त्री-महाशय सूर्यपालसिंहजी।

—आर्यसमाज चिलकाना-(सहारनपुर) प्रधान-डा० विश्वम्भरदयालु जवाल, और मन्त्री-म० सुमेरुचन्द्र।

सार-सूचनाएं

—वैदिक प्रेस, गया से 'विश्व-सन्देश' नामक मासिक पत्र ऋषिबोधोत्सव से प्रकाशित होगा।

—२८ जनवरी को आर्य-उपप्रतिनिधिसभा लखनऊ का सातवां मासिक वाद-विवाद आर्यसमाज नरही लखनऊ में, श्री विश्वम्भरनाथजी की अध्यक्षता में हुआ। विषय था—'द्वैतवाद ठीक है या अद्वैतवाद'। आगामी वाद-विवाद २५ फरवरी को आर्यसमाज गणेशगंज, लखनऊ में होगा। विषय—'मानव-उन्नति के लिये शाकाहार उपयुक्त है, न कि मासाहार।'

—दभौरा (अलीगढ़) में विश्व-शान्ति लाभार्थ १७, १८ तथा १९ फरवरी को श्री स्वा० हीरानन्दजी की अध्यक्षता में यज्ञ-महोत्सव होगा।

—शाहजहांपुर में १९२४ ई० से श्रीमद्दयानन्द अनाथालय स्थापित है, रजिस्टर्ड है। जहां अनाथ, बालक-बालिकाएं अथवा असहाय स्त्रियां मिलें, उक्त अनाथालय में भेज दी जाएं।

—२० फरवरी को रात्रि को पौने आठ बजे वृन्दावन गुरुकुल के आचार्य श्री विश्वेश्वरजी सिद्धान्त शिरोमणि का दिल्ली रेडियो पर अथर्ववेद के सम्बन्ध में भाषण होगा।

—जिला संगठन-समिति बिजनौर की प्रथम बैठक १८ फरवरी १९५१ को आ० स० मन्दिर बिजनौर में होगी।

आवश्यकताएं

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के कार्यालय के लिये लेखकों की तुरन्त आवश्यकता है। प्रार्थना-पत्र, प्रमाण-पत्र सहित नीचे लिखे पते पर स्थानीय आर्यसमाज के प्रधान अथवा मन्त्री की सिफारिश के साथ आने चाहियें।

१—कोषविभाग के लिये एक एकाउन्टेन्ट, जो एकाउन्टेन्सी-परीक्षा में उत्तीर्ण और हिसाब-किताब हिंदी भाषा में रखने की योग्यता रखता हो। वेतन ग्रेड ७५)-४)-१५१) और महँगाई एलाउन्स ३०) प्रतिशत दिया जावेगा। टाइप जानने वाले को विशेषता दी जायगी।

२—कार्यालय के लिये एक हिंदी व अंग्रेजी टाइपिस्ट की जिसकी योग्यता इंटरमीजियेट से कम न हो, आवश्यकता है। वेतन ग्रेड ६७)-३)-११२) महगाई एलाउन्स ३७॥) प्रतिशत दिया जावेगा। शार्ट हैन्ड जानने वाले को विशेषता दी जावेगी। प्रार्थी किसी आर्यसमाज के सभासद् हों तो अच्छा है।

भृगुदत्त तिवारी, उपमंत्री
५, मीराबाई मार्ग, लखनऊ।

आवश्यकता

सुधारवादी पक्की कोठी २००) मासिक आय, विद्वान व मालिक, ब्राह्मण वर के लिये कन्या चाहिए। दहेज आदि न लगे। पता:—

ब्रह्मेश्वर वैद्य, पो० नौतनवां बाजार
(गोरखपुर)

—'आर्यगजट' जालन्धर का 'ऋषिबोध अङ्क' बड़ी सजधज से प्रकाशित होगा। मूल्य पाँच आने।

प्रबन्धक

उत्सव-सूचनाएं

—आर्ष गुरुकुल आय्युला का २५ वाँ वार्षिकोत्सव ४, ५ तथा ६ मार्च १९५१ को मनाया जायगा अनेक आर्यविद्वान् पधारेंगे। बाहर से आने वालों के लिये निवास और भोजन की व्यवस्था निःशुल्क होगी। ८ ब्रह्मचारी प्रविष्ट होंगे इनमें से ४ उपदेशक-कक्षा में लिये जायगे।

—ज्वालापुर महाविद्यालय का महोत्सव २२, २३, २४ तथा २५ मार्च को मनाया जायगा। अनेक सम्मेलन होंगे। अनेक आर्य विद्वान तथा देश के नेता पधारेंगे। प्रवेशार्थी छात्रों को प्रार्थनापत्र भेजने चाहिएँ। -मुख्याधिष्ठाता

—आ० स० हल्द्वानी (नैनीताल) का उत्सव ३, ४ तथा ५ अप्रैल को मनाया जायगा।

—आर्ष गुरुकुल टटेसर (रोहतक) का उत्सव १६, १७ तथा १८ फरवरी को होगा। कई सम्मेलन भी होंगे।

—आ० स० घुघली (गोरखपुर) का उत्सव २३, २४ तथा २५ फरवरी को मनाया जायगा।

—आर्यसमाज जबलपुर और इस नगर के अन्य तीन आर्यसमाजों का वार्षिकोत्सव २ से ४ मार्च तक मनाया जायगा।

—आर्यसमाज दादरी का उत्सव पूर्व प्रकाशित तिथियों पर न होकर पुनः किसी अवसर पर होगा।

निरीक्षण

श्री देवीप्रसाद जौहरी अधिष्ठाता शिक्षा-विभाग-सभा ने मैनपुरी आर्यसमाज और डी०ए०वी० हायर सेकेण्डरी स्कूल का ४ तथा ५ फरवरी को निरीक्षण किया। ६ फरवरी को तिवारी आर्य कन्या इण्टर कालिज इटावा का निरीक्षण किया। सब जगह व्याख्यान भी दिये।

राजगुरुजी का स्वागत

अम्बाला नगर के समस्त आर्यसमाजों द्वारा दिये गये मानपत्र के उत्तर में सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री राजगुरु धुरेन्द्रजी शास्त्री ने अपने निम्न उद्गार प्रकट किये। उन्होंने कहा कि लोग पूछते हैं कि 'आर्यसमाज की अब क्या आवश्यकता है? परन्तु मेरी दृष्टि में तो पहले की अपेक्षा आज ही आर्यसमाज की अधिक आवश्यकता है। संसार और मुख्यतः अपने देश की वर्तमान परिस्थिति पर प्रकाश डालते हुए आपने बतलाया कि आज संसार भोगवाद के परिणाम स्वरूप विनाश की ओर दौड़ चला जा रहा है, चरित्र-हीनता मानव-समाज को निगले जा रही है। दूसरी ओर कम्यूनिज्म के रूप में नास्तिकता की लहर संसार में बड़े वेग से फैलती जा रही है। इन समस्याओं का समाधान सरकार नहीं, आर्यसमाज कर सकता है, क्योंकि प्रजातन्त्र में प्रजा राजा को बनाती है न कि राजा प्रजा को। जब तक प्रजा के प्रत्येक व्यक्ति को चारित्रिक दृष्टि से ऊंचा नहीं उठाया जायगा तब तक देश से घूसखोरी, चोरबाजारी इत्यादि दूर नहीं हो सकती। इसलिए आज मानवता के मानदण्ड को ऊँचा करना ही राष्ट्र के सम्मुख मुख्य प्रश्न है। श्री राजगुरुजी ने आर्यसमाजियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि राष्ट्र के इस उत्तरदायित्व को आप लोग तभी निभा सकते हैं जबकि आर्यसमाज में नैतिकता तथा उत्साह की दृष्टि से वही ४० वर्ष पुराना समय आ जाय। मानपत्र भेंट करने के अतिरिक्त वहाँ की केन्द्रीय आर्यसमिति ने श्री प्रधानजी को एक थैली भेंट की, और अम्बाला नगर के समस्त आर्यसमाजों का निरीक्षण कराया। अम्बाला जाते समय मार्ग में सोनीपत, पानीपत, करनाल, कुरुक्षेत्र इत्यादि स्टेशनों पर वहाँ के आर्यसमाजों ने श्री प्रधानजी का बड़े उत्साह से स्वागत किया और उन्हें अपने यहाँ आने को निमन्त्रण दिया।

[आठवें पृष्ठ का शेष]

कर देती है। पीछे उस प्लेट को फोटो प्लेट या फिल्म के समान धो-छाप कर उस चित्र का उपयोग डाक्टर लोग शरीर के भीतरी अङ्गों के विचार जानने के लिये करते हैं। जब कभी बच्चे पिन, पैसा या अन्य कोई कड़ी चीज निगल जाते हैं, अथवा किसी के अङ्ग में बन्दूक की गोली आदि प्रवेश कर जाती है, तो डाक्टर लोग एक्स-किरण फोटो की सहायता से ही उक्त वस्तुओं का शरीर के अन्दर ठीक ठीक स्थान जानते हैं। टूटी फूटी हड्डियों का वास्तविक ज्ञान भी एक्स-किरण के चित्रों द्वारा ही होता है। और ठीक कर देने के पश्चात् वह अंग ठीक हुआ या नहीं, यह भी इन चित्रों के द्वारा ही जाना जाता है। इस आविष्कार के फल-स्वरूप चिकित्सा संसार में क्रान्ति हो गई है। युद्ध-क्षेत्रों में तो मृत्यु-मुख हुए अगणित लोगों की इसकी सहायता से प्राण-रक्षा हुई है।

एक्स-किरणें शरीर के भीतरी अवयवों में परिवर्तन भी कर सकती हैं, इनसे चर्म-सम्बन्धी तथा अन्यान्य अनेक रोगों का इलाज भी होता है। असावधानी से बरतने पर ये किरणें शरीर पर फफोले डाल देती हैं। इसीलिए एक्सरे विभाग में काम करने वाले लोग राग से भेदित कपड़े पहनते हैं। रांग को एक्स-किरणें पार नहीं करतीं।

एक्स किरणों से परमाणुवाद को बड़ा सहारा मिला है। इनके द्वारा वैज्ञानिक लोग धातुओं तथा अन्य वस्तुओं के भीतरी परमाणुओं का ज्ञान प्राप्त करते हैं। सोने-चाँदी आदि के बने आभूषणों के भीतर यदि कोई विजातीय धातु भरी गई हो, जैसा कि प्रायः होता है, तो एक्सरे द्वारा उसका पता लगाया जा सकता है।

सरकार ने प्रायः बड़े बड़े अस्पतालों में एक्सरे यन्त्र की व्यवस्था की है, और उनपर काम करने के लिए योग्य कार्यकर्त्ता ट्रेनिंग देकर तैयार किये जा रहे हैं। आशा है, इस आयोजन से देशवासियों को पूरा पूरा लाभ मिलेगा। एक्सरे के अद्भुत आविष्कार के लिए संसार विज्ञानाचार्य रोन्जन महोदय का अत्यन्त आभारी रहेगा।

आवश्यकता

एक २२ वर्षीय सुन्दर, सुशील, स्वस्थ, सुशिक्षित आय कायस्थ वर के लिये सुन्दर सुशील, सुशिक्षित, स्वस्थ और गृह-कार्य में दक्ष कायस्थ कन्या की आवश्यकता है। दहेज का कोई प्रश्न नहीं है। सम्बन्ध कायस्थ मात्र में हो सकता है।

पताः—डा० हेमचन्द सक्सेना
पो० उसैत, जि० बदायूँ

आर्य-भजनोपदेशक

कुंवर जोरावरसिंह कवि रत्न

अफ्रीका महादेश में वैदिकधर्म का सफल प्रचार करके फिर भारत में आगये हैं। उनसे पत्र-व्यवहार का पता—

कुंवर जोरावरसिंह आर्य "सिंह-निवास"
डा० बरसाना जि० मथुरा।

आर्य्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

संचालक—आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ

२२ फरवरी १९५१

"आर्य्यमित्र" शीघ्र से शीघ्र दैनिक होना चाहिए

आर्यजनता अपना कर्त्तव्य-पालन करे : अवसर चूकना भयङ्कर भूल होगी

'आर्यमित्र' को दैनिक करने का आन्दोलन बहुत पुराना है। **जब से लखनऊ में आर्यमित्र-प्रकाशन लिमिटेड की स्थापना हुई है, तब से तो इस आन्दोलन में** बहुत ही दृढ़ता और निश्चितता आगयी **है। हम अच्छी तरह जानते और मानते हैं** कि प्रत्येक आर्य की प्रबल **अभिलाषा है** कि वह 'आर्यमित्र' को दैनिक रूप में शीघ्र से शीघ्र **देखे,** परन्तु प्रश्न तो यह है कि केवल बलवती इच्छा से क्या 'आर्य-मित्र' दैनिक हो जायगा। आज आर्य जनता देश से भ्रष्टाचार मिटाने **का** दावा करती है, राजनैतिक आन्दोलन में भी, किसी न किसी रूप **में, भाग लेने को तैयार है,** विश्वभर में वैदिकधर्म की ध्वजा उड़ाना **चाहती है,** परन्तु उसके पास न वाणी की सन्तोषजनक शक्ति है और **न लेखनी की। दैनिक पत्र** तो अलग रहा, अच्छा साप्ताहिक और **मासिक तक नहीं है।** कितनी लज्जा की बात है कि लाखों आर्य-**समाजियों की सम्मिलित शक्ति भी** अब तक एक भी ऐसे दैनिक पत्र को **जन्म न दे सकी** जो राजनैतिक दलबन्दियों से दूर रह कर, देश-विदेश **के ताजा समाचार** देता हुआ, जनता में विश्वव्यापी वैदिकधर्म, **आर्य संस्कृति,** सदाचार और नैतिकता का प्रचार तथा प्रसार करता। **वस्तुतः** हम लोग प्रतिज्ञाएँ तो लम्बी-चौड़ी करते हैं, परन्तु उनकी **पूर्ति की ओर** बहुत ही कम ध्यान देते हैं। आर्यसमाज का बड़े से **बड़ा आन्दोलन** उठता है, परन्तु प्रचार के साधनों की कमी से वह **आगे नहीं बढ़ पाता।** दूसरे दैनिकों की दया पर ही आर्यसमाज को **अब तक** जीवित रहना पड़ा और पड़ रहा है।

पंजाबी भाई बड़े प्रशंसनीय हैं, जिन्होंने पंजाब में उर्दू-हिन्दी के **कई दैनिक पत्र प्रकाशित कर देश और समाज की स्तुत्य सेवा की है। और अब उनकी इस घोर संकटपूर्ण** परिस्थिति में भी कहीं न कहीं से **उनके दैनिक पत्र प्रकाशित हो रहे हैं। जहाँ तक हमें मालूम है,** दैनिक उर्दू 'मिलाप' तीन नगरों से निकलता है। **हैदराबाद** जैसे सुदूर नगर **से भी उन्होंने 'मिलाप' प्रकाशित कर दिया। क्या इन आपत्तिग्रस्त पंजाबी भाइयों के पुरुषार्थ से 'आर्यमित्र'** के सम्बन्ध में कुछ शिक्षा नहीं ली **जा सकती? क्या लाखों** आर्यभाई-बहन एक हिन्दी पत्र को दैनिक **करने में असमर्थ हैं?** याद रखिये, इस युग में समाचारपत्र एक बहुत **बड़ी शक्ति है। इसको** प्रचुर मात्रा में संग्रह न कर साधनहीन **अवस्था** में कठिनता से ही कुछ काम किया जा सकता है।

साप्ताहिक 'आर्यमित्र' विचार-पत्र है, उसमें छपे समाचारों का **ताजगी की दृष्टि से कुछ भी महत्व नहीं है। जो समाचार या आन्दो-**लन दैनिक पत्रों द्वारा पाठकों के सामने आज होता है, वही साप्ता-हिकों द्वारा दस बारह दिनों बाद पहुंचता है। इतने विलम्ब से उन्हें पढ़ने और जानने के लिये भला कौन उत्सुक होगा। **आन्दोलन** की व्यापकता और समाचारों की ताजगी दैनिक पत्र के बिना कदापि सुरक्षित नहीं रह सकती।

कुछ पाठक पूछेंगे आखिर आपकी इस भूमिका का **अर्थ क्या है,** आर्यमित्र-प्रेमी आर्यजनता क्या करे, जिससे सफलता हो। **इसका** उत्तर स्पष्ट है, वह आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ के इतनी पूँजी के हिस्से खरीद ले जिससे उसके पास कमसे कम तीन लाख रुपये हो जायँ। इतने रुपये काफी नहीं हैं, परन्तु उनसे काम जरूर चल सकता है। साप्ताहिक मित्र निकलता ही है, दैनिक और मासिक उक्त पूंजी द्वारा और निकलने लगेंगे। आर्य-साहित्य सम्बन्धी सुन्दर, शुद्ध और उपयोगी पुस्तकों का भी प्रकाशन हो सकेगा।

यदि प्रत्येक आर्यमित्र-प्रेमी व्यक्ति कमसे कम एक **सप्ताह भी** इस क्षेत्र में काम करे तो वह अभीष्ट धनराशि एकत्र करने में **अवश्य** सहायक या साधक हो सकता है और आगामी आर्यमहासम्मेलन से बहुत पूर्व ही दैनिक प्रकाशन का अवसर आ सकता है। आर्य-मित्र के ग्राहक और अनुग्राहकों को इस दिशा में अपना कर्तव्य-पालन करने के लिये सोत्साह सन्नद्ध हो जाना चाहिये। दैनिक पत्र निकलते ही आर्यसमाज की गति विधि में आशातीत उन्नति होगी, और जिन क्षेत्रों में वह अब उपेक्षित-सा हो रहा है, उनमें शीघ्र ही आदर का पात्र समझा जायगा।

आर्यमित्र-प्रकाशन लिमिटेड की संचालक-समिति के अध्यक्ष राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री और प्रबन्ध-संचालक (मैनेजिंग डाइरेक्टर) श्री मदनमोहन सेठ, एम० ए०, (रिटायर्ड डिस्ट्रिक्ट जज) हैं। अतएव हिस्से खरीदने वालों को कम्पनी की विश्वस्तता में पूरा विश्वास रखना चाहिये।

एक हिस्सा पच्चीस रुपये का है, जिसे कोई भी खरीद सकता है। एक हजार रुपये के चालीस हिस्से होंगे। पहले आधा धन देना पड़ेगा। यदि एक-एक सहस्र के हिस्से खरीदने वाले तीनसौ व्यक्ति भी हो जाय तो तीन लाख रुपये के शेयर बड़ी आसानी से बिक सकते हैं। क्या यह इतनी बड़ी धन-राशि है, जो पूरी न की जा सकेगी।

वार्षिक मूल्य ८) विदेश में १०)

एक प्रति- तीन आने

सम्पादक : हरिशङ्कर शर्म्मा

वर्ष—५२ अङ्क—८

जन-गणना की उपयोगिता

जनगणना बहुत महत्वपूर्ण काय है। यह प्राचीन भारत में भी होती थी। सम्राट् चन्द्रगुप्त के शासन में इसका उल्लेख मिलता है। जनगणना से जनों की गणना तो हो ही जाती है, साथ ही यह भी मालूम हो जाता है कि कितने आदमी बेकार और कितने बाकार है। कितने आश्रित और कितने स्वावलम्बी हैं, कितनों को मत देने का अधिकार है। विवाहित, अविवाहित, विधुर, विधवा, साक्षर, शिक्षित अशिक्षितों की भी संख्या जानी जाती है, यह भी जाना जाता है कि खाद्य उत्पादन करने वाले कितने है, और खाद्य का प्रबन्ध कितने व्यक्तियों के लिये करना पड़ेगा। श्रम-सम्बन्धी तथा सैनिक शक्ति का पता भी जनगणना से लग जाता है। विविध आयु, स्थिति और धर्मों के कितने कितने आदमी है, किस भाषा को कितने जन जानते है, इत्यादि अनेक बातें जनगणना से जानी जाती है। अब सोचने की बात है कि यह गणना इतनी उपयोगी होने के कारण कितनी ठीक होनी चाहिए, जरा-सी असावधानी से बहुत बड़ा अनर्थ हो सकता है। गणकों और जनता दोनों को बड़ी सावधानी और विशुद्धता से अपना-अपना कर्तव्य-पालन करना चाहिए, आर्यसमाजियों को चाहे वे किसी आर्यसमाज के सदस्य हों या न हों, अपने को आर्यसमाजी ही लिखाना चाहिए, जिससे उनकी ठीक संख्या ज्ञात हो सके। भाषा के खाने में हिन्दी लिखाना चाहिए।

श्री खुर्शीदलाल का देहान्त !

अत्यन्त दुःख से लिखना पड़ता है कि सरकारी वाहन-विभाग के उपमन्त्री श्री खुर्शीदलालजी का हृदय की गति रुक जाने से अचानक देहान्त हो गया। आपका शोक सारे देश में छा गया है। सरकारी भवनों के झण्डे आधे झुका दिए गये है। आपकी मृत्यु से सरकार और लोक दोनों की बड़ी हानि हुई है। श्री खुर्शीदलालजी के शव का अन्त्येष्टि सस्कार १८ फरवरी को देहली में हुआ। उस समय प्रधान मन्त्री, अन्य मन्त्रिगण तथा कितने ही उच्च अधिकारी भी उपस्थित थे।

महात्मा श्रीरामजी

श्री महात्मा श्रीरामजी के निधन से आर्य-जगत् की बड़ी हानि हुई है। अब ऐसे लगन के आर्यवीर, कर्मवीर कहां मिलते हैं जो हंसते हुए आघातों को सहते जाते हैं और आघात करने वालों का भला भी करते जाते हैं। आर्यसमाज के गौरव को ऐसे ही लोगों ने प्रस्थापित किया है। आर्यसमाज में अपर्ना ऐसे लोगों की संख्या कम होती जाती है। चाहे व्याख्याताओं और विद्वानों की संख्या भले ही बढ़ी हो। म० श्रीरामजी प्रचार-युग के महारथियों में से एक हैं। जब प्रचार-युग का स्थान संस्थाओं ने ले लिया, तब आपने गुरुकुल वृन्दावन की भी अनथक आमरण सेवा की। मुझे आशा थी कि गत गुरुकुलोत्सव पर वृन्दावन में उनसे मिलना हो सकेगा पर वे तो आगरा में रुग्ण थे। आज 'आर्यमित्र' में पढ़ रहा हूं श्रीरामजी का नश्वर शरीर समाप्त हो गया। ससार में कौन स्थिर है ?

नरदेव शास्त्री

(२)

मैं बाबू श्रीरामजी से अपने बालकाल से ही परिचित था, वे पूज्य पिताजी स्व० ठा० माधवसिंह जी के सहयोगी थे। अतः उनके दर्शन प्रायः होते रहते थे। आर्यसमाज के कार्यों में उन दोनों का इतना अधिक साथ रहता था कि वे वर्षों तक प्रतिदिन एक दूसरे से मिलते रहते थे। मैं तो बाबूजी को चलती-फिरती आर्यसमाज समझा करता था। उनको कहीं भी देखकर यही अनुमान होता था कि वे समाज के कार्य से ही वहाँ आये होंगे। उनका मुख्य कार्य समाज और उसकी संस्थाओं के लिए आर्थिक सहायता प्राप्त करना था और इसमें उन्होंने पूरी सफलता प्राप्त की थी। बाबूजी कर्मण्य एवम् उच्च चरित्र के एक भावुक व्यक्ति थे। मैं उनके प्रति अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि वह उनकी आत्मा को सद्गति प्रदान करें।

महेन्द्रप्रताप शास्त्री

प्रिंसिपल, डी. ए. वी. कालिज, लखनऊ

आगामी जन-गणना

उत्तर प्रदेशीय सरकार ने 'जन-गणना सम्बन्धी नई हिदायतें' एक पुस्तिका के रूप में प्रभात प्रिन्टिङ्ग प्रेस रामपुर से मुद्रित कराकर प्रकाशित की है। उस पुस्तिका में पृष्ठ-संख्या ७ के नीचे हिन्दू तथा मुसल्मान जातियों की सूची दी गई है। उस सूची में मुसल्मानों की जाति-सूची संख्या ४ व ६ में कोरी तथा लोनियाँ दिखाए गए हैं। यद्यपि ये दोनों जातियाँ हिन्दू जाति के अन्तर्गत है। और इसी प्रकार हिन्दू जाति की सूची संख्या में १० व ११ में भिश्ती, फकीर व गद्दी दिखाए गए हैं जो कि हिन्दू जाति के अन्तर्गत न होकर मुसल्मान जाति में होते हैं और संख्या में बहुत थोड़े होते है। अतः जन-गणना अधिकारियों से प्रार्थना है कि यदि सेक्युलर स्टेट होते हुए भी यह जाति-भेद कायम रखा गया है तो उपरोक्त जातियों की सूची भी ठीक करा दी जावे।

शिवनारायण वकील, आ० स०
फतेहपुर।

[इस सम्बन्ध में फतेहपुर के प्रसिद्ध आर्य नेता श्री बा० उमाशङ्करजी वकील और वहाँ के आर्यसमाज के मन्त्री श्री शिवनारायणलालजी वकील, जनगणना के उपाध्यक्ष श्री एन० एस० माथुर से फतेहपुर कैम्प में मिले और सारी स्थिति उन्हें समझाई। उपाध्यक्ष महोदय ने १२ फरवरी १९५१ इ० को एक स्थानीय सरकुलर प्रकाशित कर गणकों को आदेश दिया है कि वे जातियों को उसी धर्म में लिखें जिनसे कि उनका वस्तुतः सम्बन्ध है। इसके विषय में आपने और भी ध्यानपूर्वक निरीक्षण करने का वचन दिया है। सम्पादक]

'डाक्टर' की उपाधि

आगरा विश्वविद्यालय ने सुप्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री प्रिंसिपल दीवानचन्दजी को, अपने एक विशेष अधिवेशन द्वारा, जो कानपुर डी० ए० वी० कालिज में हुआ, 'डाक्टर' की आनरेरी उपाधि प्रदान की है। बधाई !

बृहदधिवेशन की तिथियाँ परिवर्तन

आर्यमित्र द्वारा यह घोषित किया जा चुका है कि उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का बृहदधिवेशन २४, २५ तथा २६ मार्च को लखनऊ में होगा, किन्तु ईस्टर-अवकाश होली के अवकाशों के साथ-साथ होने तथा उन्हीं दिनों में शिक्षा-बोर्ड की परीक्षाएं आदि कारणों से सभा के साधारण अधिवेशन की तिथियों में परिवर्तन करना अत्यावश्यक हो गया है। सभा ने विचार करके २४, २५ तथा २६ मार्च के स्थान में अब २०, २१ तथा २२ अप्रैल १९५१ को सभा का बृहदधिवेशन बुलाना निश्चित किया है। स्थान पूर्ववत् लखनऊ ही रहेगा। अतः प्रान्त के समस्त आर्यसमाजों को सूचित किया जाता है कि उपर्युक्त तिथियों को नोट करने की कृपा करें। और वार्षिक चित्र सभा के प्राप्तव्य दशांश के साथ भेजने का कष्ट करें।

पीतमलाल, सभा मन्त्री

[चौथे पृष्ठ का शेष]

की सेवा की है, उसे लाभ पहुंचाया है। धन तो डाकू भी एकत्र कर लेता है, क्या वह धनी होने के कारण बड़ा कहा जा सकता है। हमारे कथन का मतलब यह नहीं कि धनी सब ही बेईमान होते हैं या धन कमाना बुरा है। जो लोग सचाई और परिश्रम से धन एकत्र करते हैं, वे देश के लिये गौरव है। उनके प्रति सब की श्रद्धा स्वाभाविक रूप से हो जाती है। धन कमाना ही क्यों, अनुचित साधनों से जो भी काम किया जाता है, वही निन्दनीय है, और वह इस बात का द्योतक है कि हम आस्तिक नहीं—हमारा परमात्मा से ३६ का सम्बन्ध है। अगर हम बेईमान बने हुए धर्म का ढोंग दिखाते हैं तो हम जहाँ संसार की आंखों में धूल झोंकते हैं, वहाँ अपने आपको भी धोखा देते हैं। भला घटघट-वासी परमात्मा को तो कौन धोखा दे सकता है।

आवश्यकता आडम्बर की नहीं, सच्चा ईश्वर-भक्त बनने की है, ईश्वर-भक्ति के लिए आत्म-चिन्तन, स्वाध्याय और भजन-पूजन अपेक्षित हैं। भजन-पूजन का अर्थ है परमात्मा को साक्षी देकर अपने जीवन पर गम्भीरता पूर्वक विचार करना और भूल-भ्रम या प्रमाद से जो दोष अथवा दुर्गुण जीवन में आगये हैं उनसे छुटकारा पाना। यही सच्चा धर्म और यही वास्तविक आस्तिकता है।

'आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः'

आर्य ॐ मित्र

आगरा, फाल्गुन कृष्णा १ संवत २००७वि० गुरुवार ता० २२ फरवरी १६५१
दयानन्दाब्द १२६ सृष्टि-संवत् १६७२६४६०५०

नाम नाम्ना जोहवीति पुरा सूर्यात् पुरोषसः। यदजः प्रथम संबभूव।

"हर रात के पिछले पहरे में इक दौलत लुटती रहती है
जो जगता है सो पाता है जो सोता है, सो खोता है।"

आर्यों का मुख्य कर्त्तव्य

कुछ सप्ताह पूर्व इन स्तम्भों में लिखा गया था कि कार्य में प्रगति या तीव्रता लाने के लिए, आर्यसमाज का संघटन सुदृढ़ करने की बड़ी आवश्यकता है। यह बात बिल्कुल ठीक है कि संघटन के लिए क़ायदे-कानूनों या नियम-उपनियमों से उतना काम नहीं हो सकता, जितना सद्भावना से। संघटन के लिये सद्भावना की ही आवश्यकता है। सद्भावना से प्रयोजन उस विचार-धारा से है, जो सचाई और स्नेह के साथ, परस्पर मिल-जुल कर कार्य करने की ओर प्रेरित करती रहती है और जिसमें पद-लोलुपता, अधिकार-लिप्सा अथवा अन्य कोई वैयक्तिक कारण बाधक नहीं हो पाता। इस प्रकार व्यष्टि समष्टि में विलीन हो जाती है। व्यक्तिगत या संस्थागत स्वार्थ विराट् समुदाय के विकास, कल्याण और संवर्द्धन में समा जाता है। आर्यसमाज के प्रारम्भ में ऐसी ही भावनाएं काम करती थी, अब भी उन्हीं भावनाओं की आवश्यकता है।

प्रत्येक ज़िले के आर्यसमाज संघटित होकर अपनी एक इकाई बनावें, फिर ये ज़िले की इकाइयाँ प्रान्तीय सभाओं में विलीन हों, और प्रान्तीय सभाएं सार्वदेशिक सभाओं में समा जाय। होता अब भी यही है, परन्तु शिथिलता के साथ। इस कार्य के लिये सबसे पहले व्यक्तियों में सद्भावनापूर्ण सहयोग होना चाहिये। व्यक्तियों का सच्चा सहयोग ही समाज, सभा और संस्थाओं में संघटन की सुदृढ़ भावना पैदा करेगा। वैयक्तिक सहयोग का परिणाम यह होगा कि आर्यसामाजिक लोग अधिक से अधिक संख्या में एकत्र होंगे और प्रचार के नये-नये साधन सोचकर उन्हें काम में लावेंगे। जो व्यक्ति मिलजुल कर एक स्थान पर बैठ भी नहीं सकते, वे विश्व को 'आर्य' बनाने की घोषणा करें, यह कैसे आश्चर्य की बात है। हमें संख्या-वृद्धि में उतना विश्वास नहीं, जितना सद्भावनापूर्ण सहयोग-नीति में है। उत्तर प्रदेश में जिस समय ढाईसौ से कम आर्यसमाज थे, उस समय बड़ी जागृति थी। अब आठसौ से अधिक समाज होते हुए भी सन्नाटा-सा छाया हुआ है। क्यों?

कुछ क्रियात्मक सुझाव—प्रत्येक ज़िले में ज़िला-उपप्रतिनिधि सभाएं बननी चाहिएँ, जिनका काम अपने-अपने ज़िले में प्रचार करना हो, अर्थात् वे प्रत्येक बड़े ग्राम और नगर में आर्यसमाज स्थापित करें, और जो समाज पहले से स्थापित है, उनमें जीवन-ज्योति जगावें। साथ ही प्रचार की अलग थलग नीति छोड़कर ऐसी विशद विधि अपनावें जिसका प्रचार और प्रभाव अधिकाधिक जनता पर हो। आज आर्यसमाज की ऐसी कौन-सी बात है, जिसका किसी न किसी रूप में सार्वत्रिक समर्थन नहीं हो रहा। फिर हमारे व्यापक और विस्तीर्ण प्रचार में बाधा ही क्या पड़ सकती है। नगर और ग्राम के बहुसंख्यक लोगों को अपने साथ लेना चाहिये। ज़रूरत है समय देने की। अगर आर्य कार्यकर्ताओं के पास प्रचार के लिये समय नहीं है, तो वे लम्बी-चौड़ी बातें करना छोड़ दें। कोरे कार्यक्रमों और थोथी योजनाओं से कुछ न होगा। सुसंघटित होकर हमें भ्रष्टाचार का किला ढाने और अनैतिकता का पर्वत गिराने के लिये तुरन्त कार्य प्रारम्भ कर देना चाहिये। अपने अवकाश का सारा समय प्रचार-कार्य में ही लगाना चाहिये। यदि किसी समाज के पचास व्यक्ति दो घंटे रोज भी दें तो, सौ घंटे नित्य काम हो सकता है। व्याख्यान देना या लेख लिखना ही प्रचार के साधन नहीं हैं, जिनमें पढ़े-लिखों की ज़रूरत हो, और भी अनेक साधन हैं जो संघटित रूप से काम में लाए जा सकते हैं। यदि कार्यकर्ता लोग रचनात्मक कार्य करने के क्रियात्मक साधन सोचेंगे, तो निश्चय ही स्थानीय परिस्थिति के अनुसार उन्हें पचासों साधन सूझने लगेंगे। सबसे बड़ी आवश्यकता संघटित होकर समय देने की है। जो लोग एक घण्टा रोज भी समाज-सेवा के लिए न देकर अनायास ही 'आर्य-युग' उपस्थित करना चाहते हैं, वे आदर्शवाद की आंधी में उड़ने अथवा कल्पना-कानन में विचरने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकते। आजकल वानप्रस्थ और संन्यास-आश्रम में प्रवेश करना तो हिमाचल को डगमगाने के समान समझा जाता है, परन्तु दिन में एक-दो घंटे समय देना तो कुछ विशेष कठिन नहीं है। इसके लिए तो तैयार हो ही जाना चाहिए।

'दयानन्द-सप्ताह'

महर्षि दयानन्द के प्रादुर्भाव ने देश की परिस्थिति में वह समयोचित सुखमूल परिवर्तन किया कि भारतवासी उसके लिये सदैव उनके ऋणी रहेंगे। आज देश स्वतन्त्र है, परन्तु इस स्वतन्त्रता का सर्व-प्रथम स्वप्न महर्षि दयानन्द ने ही देखा था। उन्होंने ही कहा था कि विदेशी राज्य कितना ही अच्छा क्यों न हो, परन्तु वह 'स्वराज्य' की समता नहीं कर सकता। महर्षि को जन-जागृति के लिये बहुत तेज़ 'डोज़' देना पड़ा, गहरा नश्तर लगाना पड़ा। इसके बिना उस समय काम भी न चलता। आश्चर्य तो यह है कि इस सद्भावना पूर्ण चिकित्सा को भी कुछ लोगों ने बुरा समझा और वे ऋषि के विरोधी बन गये। परन्तु आज तो सर्वत्र स्वामीजी का जय-जयकार है। दशों दिशाओं से उनके असीम उपकार के लिये कृतज्ञता प्रकट की जा रही है। जिस व्यक्ति को ज़रा भी समझ है, वह ऋषि गुण गान करने में निमग्न है, और सारे देश की दृष्टि ऋषि दयानन्द द्वारा प्रवर्तित आर्यसमाज की ओर लगी हुई है। प्रत्येक क्षेत्र से यही आवाज़ आ रही है कि आर्यसमाज स्वयम् सावधान और सचेत होकर इस भयंकर भ्रष्टाचार का नाश और नैतिकता का प्रकाश करे। उसी के द्वारा देश में सदाचार का संचार किया जा सकता है। वही जनता को सद्भावना की समुज्ज्वल ज्योति के दर्शन करा सकेगा।

गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी शिवरात्रि आ रही है। —वही शिवरात्रि जिस दिन भगवान् दयानन्द को वास्तविक बोध हुआ था। वह बोध जिसने देश को प्रबुद्ध कर दिया और आर्यजाति को नष्ट होने से बचा लिया। यह ऋषि-बोध ही वस्तुतः ऋषि का जन्म-दिवस है। यह जन्म-दिवस स्वतन्त्र भारत के गण-तन्त्र में बड़ी धूमधाम से मनाया जाना चाहिए। उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा ने आगामी २८ फरवरी से ६ मार्च तक दयानन्द-सप्ताह मनाने के लिये अपने अधीनस्थ आर्यसमाजों को आदेश दिया है। सब समाजों को भ्रमण-पत्रिका संख्या ३ भेजी गयी है, जिसमें सप्ताह का विस्तृत कार्य-क्रम उल्लखित है। 'आर्यमित्र' में भी यह पत्रिका प्रकाशित हो चुकी है। इस 'दयानन्द-सप्ताह' में संकीर्तन, यज्ञ, वेद-प्रचार, दलितोद्धार, शुद्धि, सहभोज आदि सभी कार्य 'सोत्साह' सम्पन्न होने चाहिएं और ६ मार्च को शिवरात्रि के दिन 'दयानन्द जन्म-दिवस' (ऋषि-बोध-पर्व) भी बड़ी श्रद्धा और प्रसन्नता पूर्वक मनाना चाहिए। इस पर्व का भी पूरा प्रोग्राम उक्त पत्रिका में दिया गया है।

देश के प्रति आर्यसमाजों और आर्यसमाजियों का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है। यदि यह उत्तरदायित्व ठीक-ठीक पूरा न किया गया तो अवश्य ही हमारा अस्तित्व खतरे में पड़ जायगा, रविवार के साप्ताहिक अधिवेशनों में घंटे-डेढ़ घंटे के लिये जा बैठना ही पर्याप्त

नहीं है। अब तो हमें अपने कर्तव्य पालन के लिये प्राण-पण की बाजी लगानी होगी, यह दिखा देना होगा कि हम ऋषि दयानन्द के सच्चे शिष्य, अनुयायी और भक्त हैं। जो व्यक्ति अपने को ऋषि का शिष्य, अनुयायी और भक्त कहता है, उसे ऋषि-बोध पर्व्व पर 'दयानन्द-सप्ताह' मनाते हुए, सचाई के साथ कार्य करने की प्रतिज्ञा करनी चाहिए।—ऐसी प्रतिज्ञा जिससे अपना, देश का और सबका सुधार तथा कल्याण हो, और देश कुपन्थ-गामी न बन कर सत्पथ पर अग्रसर होना सीखे।

—

साहित्य-साधिका होमवतीजी का देहान्त

शोक है कि सुप्रसिद्ध कहानी-लेखिका, कवयित्री तथा साहित्य-साधिका श्रीमती होमवतीजी का ४४ वर्ष की आयु में गत ३ फरवरी को मेरठ में उनके निवास-स्थान पर्ण-कुटी में देहान्त हो गया। आपके निधन से हिन्दी जगत् की बहुत बड़ी हानि हुई है। परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

—

परोपकारिणी और सार्वदेशिक सभा

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द की प्रतिनिधि-स्वरूप है। इसमें आर्यसमाज और आर्यसमाज से बाहर के भी अनेक आदरणीय प्रतिष्ठित सदस्य और पदाधिकारी रह चुके हैं। अब भी हैं। परोपकारिणी सभा का केन्द्रीय कार्यालय अजमेर में है, वहाँ का वैदिक यन्त्रालय इसी सभा की देखरेख में चल रहा है। महर्षि रचित साहित्य-प्रकाशन करने के अतिरिक्त यह यन्त्रालय बाहर का भी काफी काम करता है। राजस्थान के मुद्रणालयों में वैदिक यन्त्रालय का बहुत ऊँचा स्थान है, यह सन्तोष की बात है। परन्तु परोपकारिणी सभा को अपनी शक्तियों का और अधिक विस्तार करने की आवश्यकता है। वह हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं में नवीन, सुन्दर और उपयोगी पुस्तकें विद्वान् सुलेखकों से लिखवा कर प्रकाशित कर सकती है। एक सर्वाङ्ग-सम्पन्न उच्चकोटि का मासिक-पत्र भी निकालना उसके लिये कुछ कठिन बात नहीं है। बहुत दिन हुए, आचार्य श्री पद्मसिंह शर्मा के सम्पादकत्व में परोपकारिणी ने 'परोपकारी' नामक मासिक पत्र प्रकाशित किया था। वही अब पुनर्जीवित किया जा सकता है। इस कार्य में यदि दो तीन वर्ष कुछ घाटा भी देना पड़े तो प्रचार की दृष्टि से वह नगण्य है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मंगलाप्रसाद पारितोषिक की तरह वह 'दयानन्द-पारितोषिक' की व्यवस्था कर सकती है। यह पारितोषिक दो सहस्र रुपये से कम का न होना चाहिए। हमारी प्रार्थना है कि परोपकारिणी सभा यदि सम्भव हो तो इन सुझावों पर विचार करे और उपयोगी साहित्य-निर्माण में प्रयत्नशील हो। इस समय इन तीन कार्यों की बहुत बड़ी आवश्यकता है।

दो-तीन बातें हम सार्वदेशिक सभा से भी निवेदन करनी हैं। एक तो पहले ही कही जा चुकी है अर्थात् सभा 'संघटन-सप्ताह' मनाने का आयोजन करे, जिससे समाजों की शिथिलता दूर हो। दूसरी बात यह है कि लोक-सेवक समिति की तरह 'दयानन्द-सेवक-समिति' की स्थापना का समारम्भ किया जाय। हम समझते हैं इस समिति में अनेक आर्य विद्वान् सम्मिलित होकर वैदिक धर्म-प्रचार में संलग्न हो सकेंगे। सार्वदेशिक सभा को एक 'व्याख्यान विद्यालय' भी स्थापित करना चाहिए, जिसमें आर्यसिद्धान्त-शिक्षण के साथ-साथ वक्तृत्व-कला की भी शिक्षा दी जाय। विश्वविद्यालयों और शिक्षा केन्द्रों में विशेष व्याख्यान करने की ओर भी सभा को पूर्ण रूप से सचेष्ट होना चाहिए। परोपकारिणी और सार्वदेशिक सभा हमारी शिरोमणि सभाएँ हैं, स्वराज्य-सूर्योदय के इस सुहावने युग में इन्हें अधिक उत्साह, अधिक प्रगतिशीलता और अधिक दृढ़ता के साथ कार्य क्षेत्र में अवतरित होने की आवश्यकता है। यदि ये सभाएँ और अधिक उत्साह से कार्य-पथ पर अग्रसर हुईं तो आर्य प्रतिनिधि सभाओं और आर्यसमाजों में एक बार फिर नव जीवन संचार हो सकेगा। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

—

अध्यात्म धारा

आस्तिक कौन ?

श्रीशङ्करानन्दन भारद्वाज

भजन और प्रार्थना का आध्यात्मिक जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। जब हम सबके उत्पादक परम पिता परमात्मा से अपना आत्मिक सम्बन्ध स्थापित करते हैं, तभी हम में आध्यात्मिक भावना उदय होती है। आध्यात्मिक कौन है, इस बात को जानने के लिये चरित्र-बल देखने की आवश्यकता है। जो व्यक्ति छल-प्रपंच, असत्य-अन्याय, धूर्त्तता-मक्कारी, अनाचार अत्याचार आदि से दूर रह कर सद्गुण और सदाचार को अपनाता है, वही सच्चा, धार्मिक और आध्यात्मिक तत्व को अपनाने वाला है।

आज आस्तिकवाद या आस्तिकता का ढोल तो बहुत पीटा जाता है, परन्तु वास्तव में आस्तिक कितने लोग हैं यह कहना कठिन है। आस्तिक वह मनुष्य है, जो पापाचार और अनर्थों से डरता है। जीवन-यात्रा के पग पग पर परमात्मा का ध्यान करता हुआ चलता है। जो आस्तिक दिन में दस दस बार भजन-पूजन और प्रार्थना करता, परन्तु अनर्थों और अनाचारों से नहीं डरता वह न आस्तिक है, न धार्मिक और न भगवान् का भक्त। आडम्बर या ढोंग का नाम आस्तिकता नहीं है। राम-राम की रटन लगाने या बार बार ओम् का जाप करने से भी कोई आस्तिक नहीं हो सकता। परमात्मा के अर्थ की सच्ची भावना ही वास्तविक परमात्म भक्ति और आस्तिकता है। हम एक ऐसे महाशय को जानते हैं जिन्होंने अनेक अनुचित साधनों से काफी धन कमाया है, मोटर और कोठी भी खरीदी है, रिश्वत ली है और बड़े-बड़े अनर्थ किये हैं। परन्तु अब उनमें धर्मभाव फूट निकला है। कोठी के चारों ओर चींटियों को चीनी चटाते रहते हैं, कभी कभी बाजार में खड़े होकर कुत्तों को भी रोटी के टुकड़े डाल देते हैं। कोई साधु-संन्यासी आजाता है तो उसको भी भीख देने लगे हैं। हाँ, खड़ाऊँ पहन कर, पीताम्बर धारण किये, सुबह-शाम दोनों समय खट-खट करते हुए भगवान की पूजा करने भी जाते हैं। परन्तु आमदनी के अनुचित साधन ज्यों के त्यों बने हुए हैं, बल्कि पहले की अपेक्षा वे और भी अधिक गन्दे हो गये हैं। स्वार्थी, चाटुकार लोग उन्हें अन्नदाता और धर्मावतार कहकर पुकारते हैं। प्रशंसा के गीत गा गाकर आकाश को गुंजा देते हैं। मैं यह सब पाखण्ड देख-देखकर मन ही मन सोचता रह जाता हूं कि क्या सचमुच यही धर्म है, क्या आस्तिकता इस प्रकार की घृणित कार्यवाहियों में भी अपना अस्तित्व देख सकती है।

बात असल में यह है कि धर्म के तत्व को न समझ कर, ढोंग को ही धर्म का रूप दे दिया गया है। इस ढोंग की आड़ में ही लोग स्वार्थ सिद्ध करते हुए अपनी धार्मिकता का सिक्का जमाना चाहते हैं। इन ढोंगियों का हित तो क्या होगा परन्तु हाँ, इनके कुचक्र में पड़ कर धर्म अवश्य बदनाम होरहा है। कुछ भोले-भाले भाई बेईमानों से धन कमाने वालों को देख कर कहा करते हैं, देखिये, अमुक व्यक्ति कैसे ठाठ से रहता है, किस शान से जिन्दगी बिता रहा है। जनता में कितनी प्रतिष्ठा है। परन्तु वे यह नहीं समझते कि बेईमान की प्रतिष्ठा संसार तो क्या करेगा, स्वयं उसका आत्मा उसे निन्दनीय और घृणित समझता रहता है। जरा उसके हृदय में घुसकर देखिये तो सही। जो लोग ऐसे लोगों की शान देखकर उनसे प्रभावित होते हैं, वे बतावें कि क्या सचमुच उनकी निगाह में बेईमानी से धन कमाने वालों की प्रतिष्ठा है। नहीं, तो फिर कोठी या कार के कारण ही कोई प्रतिष्ठित कैसे हो सकता है। गीता में लिखा है कि जिनकी संसार में अपकीर्ति है, वह जीवित ही मृतक के समान है। आज तक किसी बेईमान को बड़ा बनते देखा है। धनी आदमियों को भूल से बड़ा आदमी कहा जाता है। बड़ा आदमी तो वही है, जिसने संसार

[शेष पृष्ठ दूसरे पर]

संस्था-परिचय

गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी

गुरुकुल के लिये पहले पहल आन्दोलन सन् १८६७ में प्रारम्भ हुआ। उन दिनों महात्मा मुंशीराम जी जालन्धर से 'सद्धर्म-प्रचारक' प्रकाशित करते थे। 'सद्धर्म-प्रचारक' में इसके लिए प्रबल आन्दोलन किया गया। नवम्बर १८६८ के आर्यप्रतिनिधि सभा के साधारण अधिवेशन में गुरुकुल खोलने का प्रस्ताव उपस्थित किया गया और यह प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

गुरुकुल खोलने का प्रस्ताव स्वीकृत हो गया, पर धन के विना गुरुकुल खुलना कैसे सभव था। धन एकत्रित करने का कार्य महात्मा मुंशीरामजी ने अपने ऊपर लिया। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि जब तक तीस हजार रुपया एकत्रित नहीं कर लेंगे, अपने पैर घर में नहीं रखेंगे। महात्माजी गुरुकुल के लिये धन एकत्रित करने निकल पड़े और आठ महीने घूमने के बाद ३० हजार रुपये एकत्रित करने में सफल हो गये।

अब प्रश्न यह था कि गुरुकुल कहाँ खुले, इस सम्बन्ध में अनेक विचार थे। महात्मा मुंशीरामजी गुरुकुल को गंगा-तट पर स्थापित करना चाहते थे, उनकी दृष्टि रह रह कर हिमाचल के दामन में गंगा-तट पर जाती थी। महात्माजी कई बार वहाँ गये और निराश लौटे। आर्यप्रतिनिधि सभा के कुछ सदस्य पंजाब से बाहर आने को उद्यत न थे। अन्त में यह समस्या हल हो गई। गंगा-तट पर एक उपयुक्त स्थान गुरुकुल के लिए प्राप्त हो गया।

नजीबाबाद (बिजनौर) निवासी मुंशी अमनसिंह ने अपना कांगड़ी ग्राम जो हरिद्वार के सामने गंगा के पूर्वीय तट पर स्थित था गुरुकुल के लिये प्रदान कर दिया। मुंशीजी बड़े त्यागी, धर्मपरायण और सत्यनिष्ठ रईस थे। उनकी कुल सम्पत्ति कांगड़ी ग्राम थी। इस ग्राम के साथ ३०० बीघा भूमि थी।

गुरुकुल की स्थापना १९०० ईस्वी में हुई थी, वह प्रारम्भ में पंजाब के गुजरांवाला नामक नगर में स्थापित हुआ। वहां से दूसरे वर्ष ही उसे हरिद्वार के समीप गंगा के दूसरे पार, कांगड़ी ग्राम की भूमि में लाया गया। जहां वह गुरुकुल कांगड़ी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। गुजरांवाला से लाकर जो नन्हा-सा पौदा गंगा के उपजाऊ तट पर लगाया गया वह शीघ्र ही अंकुरित और पल्लवित होकर महान् वृक्ष के रूप में परिणत हो गया। १२ वर्ष व्यतीत हो जाने पर उस पर फल भी लगने लगे। अब तक इस विद्या-तीर्थ से ५३७ स्नातक निकल चुके हैं।

१९२४ में अति वृष्टि के कारण देश-भर में भयंकर बाढ़ें आईं, इनमें धन-जन का अपरिमित नाश हुआ। गुरुकुल पर भी बाढ़ का बुरा प्रभाव हुआ। उस की बहुत-सी इमारतें जलमग्न होकर नष्ट हो गईं। तब गुरुकुल की संचालिका आर्यप्रतिनिधि-सभा पंजाब ने निश्चय किया कि गुरुकुल कांगड़ी की नयी इमारतें गंगा के पश्चिमी किनारे पर बना ली जाय, जिससे वह जल के उत्पात से बची रहें। तदनुसार गुरुकुल की सारी इमारतों का दूसरी बार उस भूमि पर निर्माण किया गया जहाँ वह इस समय विद्यमान है। यह भूमि हरिद्वार से लगभग ४ मील दूर गंगा की नहर के किनारे एक हरे-भरे सुन्दर प्रदेश में होने के कारण विश्वविद्यालय के सर्वथा योग्य है। उस भूमि पर खड़े होकर हम उत्तर में हिमालय की उत्तुंग शिखाओं को देख सकते हैं, तो पूर्व और पश्चिम से आते हुए गंगा-जल के सम्पर्क से शीतल वायु का अनुभव कर सकते हैं।

शिक्षा के केन्द्र क्षेत्र में प्राचीन भारतीय और आधुनिक वैज्ञानिक विषय साथ-साथ पढ़ाये जाते हैं। अध्यापन तुलनात्मक दृष्टि से होता है। शिक्षा और परीक्षा का माध्यम मातृभाषा हिन्दी है।

गुरुकुल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि विद्यार्थी को अर्वाचीन के साथ अपनी प्राचीन संस्कृति का भी ज्ञान हो जाता है। वह इससे प्रेम करता है, उसके गुणों और दोषों को पहचान लेता है और उसके जीवन का आधार सांस्कृतिक तथा भारतीय बन जाता है। साथ ही वह पश्चात्य विज्ञान को भी प्राप्त कर लेता है। स्वत्व पर दृढ़ रहते हुए भी उसका दृष्टिकोण संकीर्ण नहीं होने पाता। ——

ग्राम जीवन

द्वितीय 'पशु-प्रदर्शिनी'

श्री विजय बात्र

उत्तर प्रदेश की द्वितीय पशु-प्रदर्शिनी १०से १६ फरवरी तक आगरा के पोलो मैदान में बड़े समारोह पूर्वक हुई। १० जनवरी को प्रदर्शिनी का उद्घाटन राज्य के प्रधान मन्त्री माननीय श्री प० गोविन्दवल्लभ पन्त ने किया। आपका भाषण बड़ा भावपूर्ण था। प्रदर्शिनी-समिति के स्वागताध्यक्ष श्री प० श्रीराम शर्मा ने अपने मुद्रित स्वागत-भाषण में पशुओं की उन्नति के सम्बन्ध में अनेक क्रियात्मक और महत्वपूर्ण सुझाव उपस्थित किये। उद्घाटन के समय मुख्य-मुख्य नागरिक और मुख्य-मुख्य सरकारी अफसर उपस्थित थे। इस विराट् प्रदर्शिनी के व्यय के लिये सार्वजनिक सभा-समितियों और सज्जनों ने उन्मुक्त हाथ से आर्थिक सहायता दी। रोडवेज की ओर से दर्शकों के यातायात की विशेष रूप से व्यवस्था की गयी थी। नाम मात्र का भाड़ा लेकर बीसियों बसें दौड़ती रहीं।

प्रदर्शिनी-क्षेत्र सुप्रसिद्ध ताजमहल और आगरा किले के अति निकट सरकिट हाउस से बिलकुल सटा हुआ था। इससे उनका आकर्षण बहुत बढ़ गया था। प्रदर्शिनी की व्यवस्था बड़े ही कलापूर्ण ढंग से की गयी थी। सहस्रों नर-नारी नित्य देखने आते और उससे कुछ शिक्षा ग्रहण करके जाते थे। दर्शकों में सभी प्रकार और स्थिति की जनता थी। पशुओं की नस्ल बढ़ाने और उनकी उन्नति के अनेक साधन जुटाये गये थे। वैज्ञानिक साधनों के प्रदर्शनों की भी समुचित व्यवस्था थी। कृषि-उन्नति के साधन भी समझाये तथा प्रदर्शनों द्वारा दिखाये जाते थे।

इस प्रदर्शिनी में आये हुए पशुओं की संख्या आठ सौ से अधिक थी। गाय, भैंसें, घोड़े, बैल, गधे, बकरी-बकरे, सूअर, सांड, बछड़े, कुत्ते, पक्षी आदि सभी देखने लायक थे। सब की अच्छी से अच्छी नस्लें दिखाई गई थीं। यू० पी० सरकार हरियाणा नस्ल की उन्नति पर बड़ा ध्यान दे रही है। प्रसन्नता की बात है कि हरियाणा की गाय ने भी दूध देने में माहीवाल और सिन्धी गायों को पछाड़ दिया। दुग्ध-दोहन प्रतियोगिता १३ फरवरी को हुई। जीतने वाली गाय मेरठ जिले की थी, इसने ३२.६ पौंड और आगरा जिले की जीतने वाली भैंस ने ४५ पौंड दूध दिया। बकरियों में इटावा की बकरी जीती। जिसने ६.२६ पौंड दूध दिया। शुद्ध नस्ल की और दोगली पहाड़ी तथा देशी भैंसे और बकरियों की भी प्रतियोगिता हुई और उनके निर्णय भी दिये गये।

इन्हीं दिनों फल-फूलों, शाक-भाजी और पत्ते-पत्तियों की भी प्रदर्शिनी की गयी। इनकी प्रतियोगिता के निर्णय में इस विषय की विशेषज्ञ कई महिलाओं ने भी भाग लिया। उपयोगी फिल्में भी रोज दिखायी जाती थीं, जिनसे दर्शकों का ज्ञान बढ़ता था। ये फिल्में पशु उन्नति, स्वास्थ्य-रक्षा और कृषि से सम्बन्धित थीं। स्वास्थ्य-रक्षा-विभाग, कृषि-उद्योग-विभाग और फल फूल की प्रदर्शिनियों पर बड़ी भीड़ रहती थी। एक दिन केन्द्रीय मंत्री माननीय श्री अजितप्रसाद जैन भी पधारे और प्रदर्शिनी को देखकर बड़े प्रसन्न हुए। १६फरवरी को श्रीमती सईद जहां बेगम 'मुखफी' शेरवानी ने पारितोषिक वितरण किया। १५ तथा १६ फरवरी को उत्तर प्रदेश के कृषि तथा पशु-पालन विभाग-सचिव माननीय श्री निसार अहमद शेरवानी ने गोशाला-सम्मेलन का उद्घाटन किया। यू० पी० के

[शेष पृष्ठ १९ पर]

एक ऐतिहासिक पत्र

आचार्यप्रवर-दिद्वद्वर श्री प० पद्मसिह शर्मा के जीवन के कवल दो लक्ष्य रहे। आयसमाज-सेवा और साहित्य-साधना। हिन्दी साहित्य संसार में यदि तीन-चार साहित्य-महारथी चुने जाय तो उनमें स्वर्गीय आचार्य्य प० पद्मसिहजी शर्मा का नाम अग्रगण्य होगा। वे हिन्दी, सस्कृत, उर्दू, फारसी, प्राकृत तथा व्रजभाषा साहित्य के साधारण ज्ञाता नहीं, महान् विद्वान् और माने हुए आचाय थे, परन्तु आयसमाज ने उन्हे न उनके जीवनकाल में ही जान पाया और न मृत्यु के बाद ही। जिस तरह इस समाज ने किसी तुक्कड़ और किसी महाकवि को एक ही पलड़े में रखा, उसी प्रकार आचाय पद्मसिह शर्मा की भी उसने कद्र न की। यह बड़े दुःख की बात है। यहाँ हमें एक पुरानी घटना याद आती है। एक दिन गुरुवर श्री प० पद्मसिह शर्मा को मै एक बड़े नगर के आर्यसमाज में ले पहुँचा। साप्ताहिक अधिवेशन हो रहा था। 'नेता' लोग अपनी शान में बेठे थे, किसी ने पण्डितजी की बात भी न पूछी। अन्त में चलते समय उस समाज के मन्त्रीजी बोले—"आपका परिचय?" मैंने कहा—"आप हैं, साहित्य-महारथी पूज्य प० पद्मसिह शर्मा!" मन्त्रीजी, जो अच्छे पढ़े-लिखे थे, कहने लगे—"हाँ-हाँ, हम जानते हैं, आप तो करताल पर बड़े अच्छे भजन गाते हैं, यदि आपने पहले बताया होता तो, आज इनके भजन कराते।" मन्त्रीजी की यह कद्रदानी देखकर मेरा सिर लज्जा से झुक गया और गुरुजी के मुख-मण्डल पर हास्य की एक हलकी-सी झलक दिखाई देने लगी। हम दोनो चुपचाप वापस आए! मैं मन ही मन इस कद्रदानी को कोसने लगा। यह थी श्री प० पद्मसिह शर्मा के सम्बन्ध में एक बड़े आर्यसमाज के दिग्गज मन्त्रीजी की जानकारी।

आचार्य पद्मसिह शर्मा 'दाद' देने में बडे दक्ष थे। किसी की कोई रचना उन्हे पसन्द आ जाती तो तुरन्त उसे प्रशसा पूर्ण पत्र लिखते, सभव होता तो उससे मिलने भी जाते। चाहे लेखक कितना ही अप्रसिद्ध होता। आज के राष्ट्रपति माननीय श्री राजेन्द्र प्रसादजी का लेख ज्वालापुर-महाविद्यालय से प्रकाशित और आचार्य जी द्वारा सम्पादित 'भारतोदय' नामक पत्र में छपा था। आचायजी को यह लेख बहुत पसन्द आया तो आपने श्री राजेन्द्र प्रसादजी को उसकी 'दाद' दी। इस 'दाद' के उत्तर में (राष्ट्रपति) श्री राजेन्द्र प्रसादजी ने जो पत्र पूज्यवर प० पद्मसिह शर्मा को लिखा वह नीचे दिया जाता है। बात पुरानी है, परन्तु उसकी नवीनता और महत्ता जितना समय बीतता जायगा, उतनी ही बढ़ती जायगी।

७,१ बेचू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता,
१४ शु० पौष १६६७।

परम पूजनीय श्रद्धेयवर,

प्रणतय: सादरम्-सस्नेहम्।
कृपापत्र पाकर अत्यन्त अनुगृहीत हुआ। आपने जो मुझे लोकोत्तर विरदावलियो से विभूषित किया है वह केवल आपकी कृपा और दाक्षिण्य का अविकल प्रमाण है। मैं तो स्वयम् अपने को अत्यन्त अल्पज्ञ जानकर आपकी सहायता का सदैव अभिलाषी हूँ। बात असल में यह है कि मुझे इतने शब्दो से भूषित कर आप सहायता देने के परिश्रम से अलग नहीं हो सकते। 'सरस्वती' में जो लेख देने की आज्ञा की गयी सो अनुल्लघनीय न होने पर भी लेख के अशामर्थ्योपहत होने से विलम्ब साध्य होगी। 'सतसई-संहार' लिखकर आपने 'सरस्वती' के पाठकों का जो आर्शीवाद ग्रहण किया है, सो उसकी पुष्टि मेरे-से अल्पज्ञ के लेख से कैसे हो सकती है? प्रथम तो ऐसा विषय नहीं सूझता, जिस पर हिन्दी रसिको का अनुराग हो, द्वितीयतः हिन्दी लेख में भी सामर्थ्य नहीं। आप कुछ विशेष निर्देश करें तो कुछ यत्न हो। समाज-संशोधन वाला लेख आपको इतना पसन्द होगा, यह मुझे कभी धारणा नहीं थी। यदि उधर 'भारतोदय' कृतार्थ हुआ तो इधर मैं भी हुआ। हिन्दी-लेखन का जन्म सफल हुआ। आशा है, अपने समुचित उपदेशों से आप मुझे कृतार्थ करते रहेंगे।

आपका परम सेवक
राजेन्द्र

साहित्य-सौरभ

'अपना आंगन लीप'

प्रो० गोकुलचन्द्र शर्मा, एम० ए०

पुजारिन अपना आँगन लीप

मदिर में जाने के पहले अपना द्वार बुहार,
प्रेम पपीहा को करने दे 'पिउ पिउ'-भरी पुकार।
संजोले स्नेह-सुहाता-दीप।

खुलने दे इस तन की उलझी मलिन ग्रंथि के बंध,
बहने दे उर की क्यारी से भीनी भीनी गध।
पुलक ले महके मनका नीप।

अधरो की लाली पर टपक सरस स्वाँति की बूँद,
झलके अमल ज्योति के मोती नयनो को मत मूँद।
दमकने दे शुचि सुधि की सीप।

तूही बन उपहार चली जा क्यो पूजा का थाल,
कैसे अक्षत, कैसी रोली, गूथ रही क्यो माल।
तुझे ही जाना सजन-समीप,
पुजारिन अपना आँगन लीप।

ऋतुराज से

श्री ओङ्कार मिश्र 'प्रणव'

पधारो हे ऋतुराज, महान्, तुम्हारा है स्वागत-सन्मान,
तने अवनी में सौरभ वितान, दुखो का हो जाए अवसान।
चल रहा वायु विनाशक घोर, रहा तरु देशो को झकझोर,
हो रहा पतझड़ ही सब ओर, विकासो नव दल-सुमति सुजान।
न फूली संस्कृति-सरसो आज, गिर रही गौरव-गिरि पर गाज,
लुट गई धर्म-धनी की लाज, नही कृति-कुसुमो में मुसकान।
उजड़ते उपवन जाते हैं, बिगडते वन वन जाते है,
नही पर शोषित पाते हैं, कहीं भी त्राण-प्राण-कल्याण।
नही हे मेल मञ्जरी गन्ध, न विकसे भावो के अरविन्द,
मन्द हैं, भावक भक्त-मिलिन्द, न गाते गुण-गरिमा का गान।
नही जन आज अशोक अशोक, शोक से भरे हुए हैं ओक,
न भ्रष्टाचार सके हैं रोक, देश के शासन सबल विधान।
देखकर कलाकार को क्लान्त, हो रही कला-कोकिला शान्त,
रो रहे नीरस हृदय-वनान्त, मधुरिमा होती जाती म्लान।
करो कुछ यत्न सुधी तत्काल, सघन-घन विघ्न हटे इस काल,
सत्य-रवि की किरणो का जाल, प्रकाशित करदे भूतल-भान।
प्रकृति पट पहने पुनि प्राचीन, नियति हो मानव के स्वाधीन,
न दीखे कोई दीन-मलीन, विजय का पाकर वर-वरदान।
बहे शुचि-साहस मन्द समीर, 'प्रणव' प्रभु भारत धीर सुवीर,
क्यारियाँ कुंकुम की, कश्मीर, सीच कर पावे ख्याति महान।

हम जो कुछ भी रखते हैं, वह चोरी का माल है। जब हमारे पास चोरी का माल पड़ा है तो दूसरे चोर उसे लूट ले जाय, इसमें आश्चर्य की क्या बात है।

—बापू

पुरातत्व

हस्तिनापुर के प्राचीन खँडहरों में अतीत गौरव

श्री विश्वम्भरसहाय प्रेमी

पांडवों की प्राचीन राजधानी हस्तिनापुर के खंडहरो की खुदाई का कार्य केन्द्रीय सरकार के पुरातत्व विभाग द्वारा दिसम्बर १९५० में आरम्भ किया गया। लगभग दो मास के प्रयत्न से जो वस्तुएँ तथा भवन आदि के निर्माण में प्रयोग की गई सामग्री प्राप्त हुई है, उसके आधार पर इन खंडहरो का महत्व बहुत अधिक बढ़ गया है।

इस समय तक की खुदाई के आधार पर हम हस्तिनापुर में चार विभिन्न युगो में वहाँ निवास होने के प्रमाण पाते हैं। खुदाई के दृष्टिकोण से सबसे ऊपर हमें मुगल काल से पहले के मुस्लिम शासन काल के अवशेष प्राप्त हुए हैं। मुगलों से पहले की सभ्यता तथा उस युग के रहन-सहन के जो चिह्न इस खुदाई में उपलब्ध हुए हैं, उनमें प्रधान मिट्टी पर रोगन की हुई वह सामग्री है जो तश्तरियो, प्यालों, सुराहियो अथवा अन्य प्रकार के मिट्टी के बर्तनों के रूप में पाई जाती है। एक स्थान बलबन शासन काल १२६६ से १२७८ तक के नाम का एक तॉबे का सिका भी प्राप्त हुआ है जिसके एक ओर बलबन का नाम उर्दू भाषा में अङ्कित है और दूसरी ओर अरबी भाषा में लिखित कलमे का अंश प्रतीत होता है। इसी युग की एक लम्बी तलवार, एक तलवार की मूठ तथा एक छोटी कृपाण के बराबर की तलवार भी उपलब्ध हुई हैं। इस प्रकार से हम ईसा की १३.वी शताब्दी में हस्तिनापुर में मुस्लिम युग की झलक पाते है।

इस काल की सभ्यता से आगे चलकर हम दूसरे भाग में ईसा से १२५ वर्ष बाद कनिष्क के शासन-काल के आस-पास की सभ्यता के समीप पहुच पाते है। इसका पुष्ट प्रमाण उस काल के कुछ सिको का पाया जाना है। इन सिकों में-से कुछ ऐसे है, जिनमें एक व्यक्ति की खड़ी हुई मूर्ति तथा उसके हाथ में त्रिशूल जैसा चिह्न एक ओर अङ्कित है तथा दूसरी ओर एक स्पष्ट मूर्ति अङ्कित है। इस चिह्न को पुरातत्व-विभाग वाले कुशान काल के सिक्कों का प्रतिनिधि-चिह्न मानते हैं। इस युग में प्रयुक्त मिट्टी के बर्तन और उनकी कला की अपनी विशेषता है और जहाँ-जहाँ कुशान कालीन सभ्यता के अवशेष पाये जाते हैं, उनसे यह भले प्रकार मेल खाने वाली वस्तुएँ हैं, जिनसे स्पष्ट प्रकट हो जाता है कि हस्तिनापुर कुशान-काल में भी समृद्ध रहा होगा।

लगभग ३० फुट की खुदाई पर जो दीवारें प्राप्त हुई हैं, उनकी चौड़ाई लगभग तीन फुट है और उनमें जो ईंट प्रयोग की गई हैं उनका आकार-लगभग १८ इंच लम्बाई, ११ इंच चौड़ाई तथा ३ इंच मोटाई है। सभी ईंटे बहुत उम्दा पकाई गई है। इनके सम्बन्ध में भी ऐसा विचार है कि इस प्रकार की ईंटें अन्य स्थानो में भी प्राप्त हुई है। इनके समय के सम्बन्ध में दो प्रकार की धारणाएं की जा रही है। एक धारणा के अनुसार यह ईंटें कुशान-कालीन है और दूसरी धारणा के अनुसार इनका समय अशोक-काल का ठहराया जा सकता है।

लगभग इसी काल की एक विचित्र वस्तु खुदाई में मिली है, यह है एक प्रकार के गोल मिट्टी के घेरे जो चौड़ाई में लगभग ६ इंच है और जिनका व्यास लगभग ३ फुट है और जो एक के ऊपर एक रखे हुए है। इनमें इस समय मिट्टी भरी हुई है। पुरातत्व-विभाग वाले अभी तक यह निर्णय नही कर पाये है कि यह कुंए थे या गन्दे पानी के सोख्ते, अथवा इनका कोई अन्य प्रयोग था। इन्हे अभी तक 'रिंग-वैल' घेरे वाले कुएं का नाम दिया जा रहा है, परन्तु कुंए से इनका कोई सम्बन्ध प्रतीत नही होता। अब तक की खुदाई में इस प्रकार के समान रूप के घेरे दो स्थलो पर प्राप्त हुए हैं। दोनो जगह एक ही सम धरातल पर प्राप्त हुए है। इनको २५ फुट तक खोदा जा चुका है। जैसा कि कुछ पत्रो में प्रकट किया गया है कि यह दो खोखले खम्भे हैं—ऐसा उन्हे देखने से अनुमान नही बनता, इनकी खम्भो से कोई किसी प्रकार की समता नहीं हो सकती।

"घेरे वाले कुंए" के बिल्कुल समीप एक के ऊपर एक दो बड़े पेट वाले विशाल मटके रखे हुए मिले है। इनके अन्दर भी इस समय मिट्टी भरी हुई है जिसे अभी तक बाहर नही निकाला गया। एक मटके की ऊंचाई लगभग चार फुट होगी।

तीसरे भाग में हम ईसा से २६७ वर्ष पूर्व शासन करने वाले अशोक के शासन काल मे पहुचते है। इसका प्रधान संकेत हमे बोधिसत्व की एक मूर्ति से मिलता है जो लगभग ४० फुट नीचे की गहराई पर प्राप्त हुई है। यह मूर्ति किसी विशेष मिट्टी से बनाकर पकाई गई है। इसका सिर उपलब्ध नहीं हो सका है। यह मूर्ति लगभग एक फुट ऊंची है और इसका एक हाथ ऊपर उठा हुआ है जैसा कि अशोक-काल में पाई जाने वाली बोधिसत्व की मूर्तियो में मिलता है। इस प्रतिमा पर अंकित कई अन्य चिह्न भी उसी काल की प्रतिमाओ से मिलते-जुलते है। उस काल की एक स्त्री की प्रतिमा भी इसी प्रकार की मिट्टी की बनी हुई प्राप्त हुई है। कुछ और प्रतिमाओ के भी टुकड़े हस्तगत हुए है।

प्रतिमाओं के साथ एक प्रकार की माला के दाने भी मिले है जो कांच जैसे प्रतीत होते है, परन्तु यह एक प्रकार का मूल्यवान श्वेत रंग का पारदर्शी चमकीला पत्थर है, जिसके बीच में छेद भी है, जिनसे उन्हे माला में पिरोया जा सके। इस पत्थर के सम्बन्ध में निश्चित सम्मति उसी समय प्रकट की जा सकेगी जबकि यह पता चल जाय कि ऐसा चमकीला पारदर्शी पत्थर अधिक से अधिक किस काल में उपलब्ध हुआ है।

इससे पूर्व के काल में—अब तक की गई खुदाई में सबसे नीचे के धरातल में— हम उस युग में पहुंच जाते हैं जिसका समय इतिहासवेत्ता अभी तक निश्चित नही कर पाये है। परन्तु वह ईसा से कम से कम एक हजार वर्ष पूर्व का जरूर रहा होगा इस अज्ञात युग का महाभारत कालीन होना एक महत्वपूर्ण संयोग से सिद्ध होता है। जहाँ-जहाँ महाभारत कालीन सभ्यता का विकास होना माना जाता है, वहाँ-वहाँ की खुदाई में सबसे नीचे की सतह में एक विशेष प्रकार के भूरे रंग की मिट्टी के बर्तनों के टुकड़े मिले है। ठीक वैसी ही मिट्टी के बर्तनों के टुकड़े यहा भी सबसे नीचे के धरातल में खुदाई करने वालो को प्राप्त हुए है। इन टुकड़ो पर सुनहले चमकीले रोगन से चित्रित कला का प्रदर्शन किया गया है।

अब तक की खुदाई में किसी स्थान पर भी किसी भी युग में पत्थर द्वारा निर्मित कोई कार्य प्राप्त नही हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह स्थान गंगा के तट पर और पहाड़ियो से दूर था और इसी कारण यहाँ पत्थर का उपयोग किसी भी युग में नही किया गया। नीचे से नीचे की गहराई तक यही प्रकट कर रही है कि यहाँ पकी हुई ईंटो का ही प्रयोग मकान बनाने में किया गया था।

खुदाई में एक विशेष बात यह मिली है कि एक ही धरातल पर लगभग ३ फुट ऊंचाई में ऐसी मिट्टी प्राप्त हुई है जिसका रंग जली हुई मिट्टी के समान है जो यह प्रकट करता है कि इस अमुक ऊंचाइ पर यह सारा स्थल किसी समय जल गया होगा। अब तक की खुदाई का कोई भी ऐसा स्थान नहीं जहाँ इस प्रकार की जली हुई मिट्टी प्राप्त न हुई हो, एक अन्य धरातल पर भी जली हुई मिट्टी मिलती है, जिसका रंग काली मिट्टी से भिन्न चूल्हे की जली हुई हल्की गेरुई मिट्टी जैसा है।

अब तक की सम्पूर्ण खुदाई में किसी स्थल पर भी कोई सोने का सिका प्राप्त नहीं हुआ है। कुछ सिक्के चांदी के मिले हैं, तथा शेष सभी ताम्र या ताम्र-मिश्रित धातुओं के है।

ईसा से चौथी और पांचवीं शताब्दी पूर्व में पाई जाने वाली काली चमकदार मिट्टी के बर्तनो के टुकड़े इस खुदाई में भी प्राप्त हुए है। अन्य अनेक स्थानों की खुदाई में इसी के समान टुकड़े उपलब्ध हो चुके है और उनको ईसा की चौथी तथा पाचवी शताब्दी पूर्व का ठहराया जा चुका है। उसी आधार पर यहाँ खुदाई करने वालो का कहना है कि हम

सुझाव और सम्मतियाँ

आर्यसमाज में तरुणरक्त

श्री उमेशचन्द्र स्नातक

आर्यसमाज की उपयोगिता के सम्बन्ध में सन्देह करने वाले व्यक्ति चाहे आर्यसमाज के सैद्धान्तिक दृष्टिकोण को न समझते हों, परन्तु आर्यसमाज की वर्तमान निष्क्रियता सम्बन्धी उनके आक्षेप में बहुत सत्यता है, इसे हमें स्वीकार करना ही चाहिए।

प्रत्येक संस्था की कर्मशीलता के लिये उसमें तरुणरक्त के सतत सम्पर्क की आवश्यकता हुआ करती है। १ फरवरी के आर्यमित्र में उसके विद्वान् सम्पादक महोदय ने इस ओर आर्य जनता का ध्यान आकृष्ट किया है, और तरुणरक्त को आर्यसमाज में नव-जीवन देने के लिये निमन्त्रण दिया है।

आर्यसमाज में तरुणरक्त की कमी क्यों है, जब इस प्रश्न पर गम्भीरतापूर्वक विचार करते हैं, तब हमें पता चलता है कि तरुणरक्त में सदैव नवीनता की ओर आकर्षण तथा प्राचीनता की ओर अनास्था की भावनायें रहा करती हैं। एक समय वह था जब आर्यसमाज के कर्णधार सामाजिक क्रान्ति के नवीनतम विचारों को लेकर समाज का निर्माण करने के लिये अग्रसर हुए थे। इस सामाजिक क्रान्ति के आकर्षण में अगणित भारतीय युवकों ने अपने परम्परागत रूढ़ि-बन्धनों को तोड़ आर्यसमाज का नेतृत्व स्वीकार किया था। आज के अधिकांश नेता उस समय की तरुण पंक्ति के ही व्यक्ति हैं। वे आर्यसमाज में क्यों आये? क्योंकि उस समय के आर्यसमाज के कर्णधारों के पास क्रान्तिकारी पुरोगम था परन्तु आज की तरुण-पंक्ति के आकर्षण के लिये कर्णधार किस क्रान्तिकारी पुरोगम को लेकर आगे बढ़ना चाहते हैं।

जब शिरोमणि सभाओं के नेतृत्व में आकर्षण नहीं है, काम करने के लिये किसी के पास समय नहीं है, उच्च श्रेणी के आर्य-नेताओं के परिवारों में आर्य सिद्धान्तों का प्रचलन नहीं है, तब आदर्शवादी सिद्धान्तों के आकर्षण मात्र से भारतीय युवक आर्यसमाज में क्यों आवें। युवक की प्रगतिशील चेतना अपने विकास के लिये देश की अन्य सामाजिक और राजनैतिक संस्थाओं का आश्रय ग्रहण कर लेती है।

अब प्रश्न रह जाता है उन युवकों का कि जिन्होंने आर्य-संस्थाओं में शिक्षण प्राप्त किया है, या कर रहे हैं, वे आर्यसमाज के विशाल मन्दिर के निर्माण में अधिक सहायक क्यों नहीं हो रहे या हो पाते हैं। इस प्रश्न का उत्तर यद्यपि कटु है, तथापि है सत्य और वह है अपने निर्माण के प्रति हमारी अश्रद्धा—आर्यसमाज की शिक्षण-संस्थाओं में शिक्षित-दीक्षित युवकों के प्रति आज तक जिस नीति का समाज में व्यवहार होता आया है, उसके अवश्यम्भावी परिणाम से कैसे बचा जा सकता है।

आर्य संस्थाओं से शिक्षा-प्राप्ति के बाद जब युवक जीवन के चतुष्पथ पर खड़े होते हैं, उस समय कितने आर्यसमाजी हैं या कितनी आर्य संस्थायें हैं जो उन्हें अपने मार्ग की ओर खींच ले जाने का प्रयत्न करती हैं। शिक्षण-संस्था के दल संघर्ष तथा अपने व्यक्तियों के प्रति झुकाव आदि की अधिकारियों की प्रवृत्ति एवं उपर्युक्त प्रकार के युवक यदि संस्था में आ जाय तो उनके प्रति उनके संकुचित विचार आदि ऐसे मानसिक कारण हैं, जिनके कारण वह अपने को समाज के घेरे से अलग रखना ही अधिक उत्तम समझते हैं। फलस्वरूप वह अपने जीवन की दिशा का अर्थ तन्त्र के आधार पर निर्णय कर हम से छूट जाते हैं। ऐसे एक नहीं अनेकों युवकों को हमने अपनी असावधानियों से खोया है। आज समाज के कर्णधार उनके अभाव के लिये हाथ-पैर पटका करें; क्या होता है।

इसी प्रकार आर्य-परिवारों के युवकों में भी अपने अभिभावकों के सिद्धान्तों और संस्था के प्रति आकर्षण न होने का कारण भी हम स्वयं अपने में ही पायेंगे। आर्यों में आपसी संघर्ष, पार्टीबाजी का रुद्ररूप तथा संस्थावाद का अधिक मोह आदि ऐसे कारण हैं जिनके कारण आर्य सन्तानों में इस प्रकार के जीवन के प्रति अश्रद्धा पैदा हो जाती है और तब वे यही उचित समझते हैं कि जहाँ तक सम्भव हो इस प्रकार के सामाजिक जीवन से बचा जाय। और इस प्रकार दूसरी पीढ़ी में पहुचते-पहुचते आर्यसमाज की परम्परा नष्ट होती चली जा रही है।

इस प्रकार आज आर्यसमाज के चिर स्थायित्व के लिये उसमें तरुणरक्त का पूर्ण सञ्चार नहीं हो पा रहा है। आर्यकुमार परिषद् आदि की असफलता का भी यही रहस्य है। जब तक युवकों के क्रान्तिकारी मनोभावों को नहीं समझा जायगा, तब तक इन सभाओं से भी किसी प्रकार की सफलता कैसे प्राप्त हो सकती है।

युवकों के इस अभाव को दूर करने के लिये आज गम्भीरतापूर्वक सोचने का समय आ गया है। इस दिशा में कुछ सुझाव दिये जाते हैं। आशा है, इन पर विचार किया जायगा।

(१) आर्यसमाज की ओर से वेदप्रचार में जितना धन व्यय होता है, उसका चौथाई युवकों पर प्रचारार्थ व्यय किया जाय।

(२) भारत के प्रत्येक विश्वविद्यालय तथा अन्य महाविद्यालयों के अधिकारियों से पत्र-व्यवहार कर वहाँ उच्च कोटि के विद्वानों की व्याख्यान-मालाओं की व्यवस्था की जाय। यह कार्य शिरोमणि सार्वदेशिक सभा के द्वारा शीघ्र सम्पन्न होना चाहिए।

(३) युवकों में प्रचार के लिये साप्ताहिक, मासिक परिपत्रक केन्द्रीय एवं स्थानीय कार्यालयों से निकला करें, और उदीयमान युवकों के पास भेजे जाया करें—इन परिपत्रकों में आर्यसमाज के नवीनतम कार्यों, देश की समस्याओं पर विचार और सुझाव, राष्ट्र के सांस्कृतिक एवं नैतिक उत्थान के सम्बन्ध में चिन्तन आदि हुआ करे।

(४) प्रत्येक स्थान के आर्य-समाज अपने सदस्यों द्वारा शिक्षण-संस्थाओं के युवकों से परिचय प्राप्त करें। मुद्रित साहित्य मूल्य से; अल्प मूल्य से आवश्यकतानुसार विना मूल्य जैसे भी सम्भव हो उनके अध्ययन के लिये उन तक पहुचाया जाय।

आर्यसंस्थाओं में शिक्षित युवकों को सामाजिक क्षेत्र में संव्याप्त करने के लिये आकर्षक एवं सम्मानित जीवन-दिशा का निर्माण किया जाय। शिक्षा-समाप्ति के अवसर पर युवक की इच्छाओं की जानकारी प्राप्त कर उसे उस दिशा में बढ़ने में सहायता दी जाय। प्रथम तो वह आपकी सामाजिक योजना में ही खप जायगा अथवा अगर आर्य-समाज की सहायता से उसे बाहर काम मिला तो भी वह आर्य-समाज का उपकार तो अवश्य मानता रहेगा।

यह सब हो कैसे, करे कौन? यही व्यावहारिक प्रश्न है। युवकों का निर्माण निर्माता के विना कैसे हो सकता है। कल तक हमारे पास श्रद्धानन्द, नारायणस्वामी, सर्वदानन्द और हंसराज जैसे निर्माता थे पर आज उनके समान हमारे बीच कौन है। आज उनकी वे संस्थायें उसी प्रकार अपितु उस समय से भी अधिक साधन-सम्पन्न रूप में विद्यमान हैं, पर उनके निर्माण में वह प्रेरणा और वह लगन कहाँ है, जो इन महा-

[शेष पृष्ठ १४ पर]

ईसा से चार-पाच शताब्दी पूर्व तक पहुँच गये हैं।

खुदाई इस समय लगभग ५० फुट गहरी हो चुकी है, पुरातत्व-विभाग के परिश्रमी, उत्साही कार्यकर्ता तथा मद्रास, कलकत्ता, बनारस, इलाहाबाद, पटना तथा बम्बई के विश्वविद्यालय के छात्र मनोयोगपूर्वक खुदाई के काम में लगे हुए हैं। उनका कहना है कि खुदाई यह स्पष्ट प्रकट करती है कि हस्तिनापुर अग्निकांड तथा बाढ़ के प्रकोपों का भिन्न-भिन्न समयों पर क्षेत्र रहा होगा। अग्निकांडों का प्रमाण तो वहाँ की जली हुई मिट्टी में मिल जाता है, बाढ़ का पता इस बात से चलता है कि कई धरातलों पर एक प्रकार का पीला बालू निकला है। कार्यकर्ताओं का निश्चय है कि वे पानी के धरातल तक इन समूहों की गहराई को खोदेंगे।

——

चयनिका

[मधुप]

हृदय और बुद्धि

यदि हृदय और बुद्धि में विरोध उत्पन्न हो तो तुम हृदय का अनुसरण करो, क्योंकि बुद्धि केवल एक तर्क के क्षेत्र में काम कर सकती है, वह उसके परे जा ही नहीं सकती। लेकिन वह केवल हृदय ही है, जो हमें उच्चतम भूमिका पर आरूढ़ करता है। हृदय ही ज्ञान का आलोक पाने पर स्फूर्तियुक्त बन जाता है। बुद्धिमान किन्तु हृदयहीन मनुष्य स्फूर्तिमान पुरुष नहीं बन सकता। प्रेममय पुरुष की समस्त क्रियाएं उसके हृदय से ही अनुप्राणित होती है।

श्री स्वामी विवेकानन्द

—

गोदुग्ध

भारत में एक करोड़ गायें प्रति वर्ष मारी जाती है जिससे गोमास मिल सके। योरोप में प्रत्येक मनुष्य सवा सेर दूध उपयोग में लाता है, और भारत में साढ़े सात तोले।

एक विशेषज्ञ

—

सच्ची शान्ति

सुख-शान्ति की स्थापना के लिये लोग बड़ी-बड़ी स्कीमें बनाते है। विश्व-शान्ति के लिये बड़ी-बड़ी बातें कही जाती हैं। अपनी-अपनी सूझ के अनुसार सभी देश सुझाव पेश करते है। परन्तु भौतिक पदार्थों और भौतिकवादी दृष्टिकोण में न कभी किसी को सुख-शान्ति मिली है और न मिलेगी। भौतिकवाद का क्षेत्र ही अशान्ति का क्षेत्र है। यदि अपनी आनन्द-पिपासा की तृप्ति करना चाहते हो तो मन को आनन्द-स्वरूप परमात्मा में लगाओ। जब मन को वह आनन्द-सागर मिलेगा, तभी वह सन्तुष्ट होगा।

श्री स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती
(जगद्गुरु शंकराचार्य)

—

आयु का ब्यौरा

कोई भी व्यक्ति १२० वर्ष तक जी सकता है, अधिकाश स्थायी रोग ३५ और ४५ वष की आयु के बीच होते हैं। पादरी और मजदूर के सौ वर्ष जीने के सबसे अधिक लक्षण होते हैं। और डाक्टरों तथा पत्रकारो के सबसे कम।

डा० मार्टिन गमपर्ट (आयु-विशेषज्ञ)

—

भाषा-निर्माण

वह भाषा कमजोर हो जाती है जो नये शब्द नहीं लेती। जो भाषा नये शब्द लेकर उन्हें अपने कपड़े पहनाती है, वह भाषा जिन्दा रहती है। लेकिन नये शब्द भी जिन्दा और जीवित रहने चाहियें।

श्री जवाहरलाल नेहरू

—

बड़े-बड़े भोज

जब हम जनता से संयम, त्याग, उपवास, कोरकसर आदि की अपेक्षा करते है तब बड़े-बड़े भोजो का आयोजन करना योग्य नहीं है। हम राशन के अनाज का उपयोग न करें, या अन्न का भी उपयोग न करें. तब भी एक व्यक्ति के पीछे दस रुपया खर्च हो, ऐसा भोज इस गरीब देश के लिये उपयुक्त नहीं है

श्रीमशरूवाला

—

हमारे प्रतिनिधि

हमें ऊंचे आदर्श सामने रखने चाहिएं, और योग्य तथा ईमानदार व्यक्तियों को ही प्रतिनिधि चुनना चाहिये। हमें भ्रष्टाचार, काला-बाजार और इसी प्रकार की अन्य बुराइयों को, जो हमारे सामाजिक जीवन को नीचे गिराती है, समाप्त कर देना चाहिये। प्रजातन्त्र की, जैसा कि उसे सर्वसाधारण रूप में समझा जाता है, सफलता इसी पर निर्भर है कि हम अपने प्रतिनिधि किस प्रकार और किनको चुनते है।

× × ×

गाधी टोपी से अधिक महत्व उसे धारण करने वाले सिर का है। आज मस्तिष्क की आवश्यकता है, न कि गांधी टोपी की।

श्री जवाहरलाल नेहरू

—

देवियाँ कुशल बनें

छात्राओ को कुशल देवियां बनना चाहिये, ताकि उनका भावी दाम्पत्य एव पारिवारिक जीवन सुखपूर्ण हो सके। पढ़ी-लिखी लड़कियो को धनी पतियों से शादी करने के सपनो से दूर रहना चाहिये।

श्री गोविन्दवल्लभ पन्त

—

विदेशों में गांधीवाद

अमरीका में क्या, इंगलैंड में क्या, जर्मनी, फ्रास, स्केण्डनेविया, के देशों में क्या, हर एक जगह मैंने देखा कि लोग आतुरता से महात्मा गाधी और उनके बताये रास्ते की तलाश में है। जापान ने अपने नये विधान में युद्ध को स्थान ही नहीं दिया है। जर्मनी के लोग फिर से हथियारबन्दी के विरोधी है, जर्मनी में मैंने देखा कि पुराने जमाने के कई नाजी भी उस मार्ग से हट कर दूसरे मार्ग की तलाश में है। उन्होने देख लिया था कि शस्त्र-बल कहीं नहीं ले जाता। वह दूसरा बल क्या है, जिसके द्वारा गाधीजी ने अंग्रेजों को हटाया, यह जानने की धुन उनको लगी थी। वे लोग अहिंसक बन गये है, ऐसा नहीं, मगर वे इतना समझ गये है कि हिंसा से कोई समस्या हल नहीं होती। और वे हिन्दुस्तान की तरफ देखते है। हिन्दुस्तान और हिन्दुस्तानियो का भाव आज विदेश में बेहद बढ़ा हुआ है, क्योंकि हिन्द ने महात्मा गाधी पैदा किया है।

डा० सुशीला नैयर

—

संकटों का स्वागत

दुनिया के दुःख समाप्त नहीं हुए, और जब तक परमेश्वर को सेवा का मार्ग रखना है, तब तक इन दुःखो का अन्त होगा भी नहीं। दुःख दीखते है. इसलिये निराश नहीं होना है। उल्टे उनमे उत्साह लेना है, और चुनौती स्वीकार करनी है। ये दुःख हमें बुलाते है। हमें सेवा का सुख सदा मिलता रहे। इसीलिये मानो परमेश्वर ने ये दुःख चिरजीवी कर दिये है, ताकि हम सब व्याकुल होकर सेवा में लग जाय। अपने दुःख भूल जाओ और दुनिया के दुःख दूर करने का उत्साह कायम रखो।

-श्री विनोवा भावे

—

आयुर्वेद-पद्धति

आयुर्वेद एक वैज्ञानिक चिकित्सा-प्रणाली है। अनेक कारणो से यह प्रणाली देश के लिये सबसे उपयोगी है।

-श्री अनन्तशयनम आयंगर

—

आर्यसमाज का कार्य

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भारत के नवयुवकों का बड़ा उपकार किया है। ऐसे समय में जब यहाँ के शिक्षित-समाज में भारतीय संस्कृति के प्रति अश्रद्धा की भावना हो चली थी, आर्यसमाज की सेवाए विशेष कर शिक्षा के क्षेत्र में-चिरस्मरणीय रहेंगी। आर्यसमाज की मै हृदय से सफलता चाहता हूँ।

— डाक्टर अमरनाथ झा

—

नैतिकता की आवश्यकता

हमें जीवन-यात्रा में केवल अन्न की ही आवश्यकता नहीं, नैतिकता की भी बड़ी आवश्यकता है। आज भारत के बाजारों में विदेशी माल बहुत भरा है, इससे तो बेकारी बढ़ती है। विदेशी माल हमारे भाइयों के मुँह का कौर छीन लेता है।

—राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन

—

ग्रामों की अशिक्षा

जो भी ग्राम का चतुर विद्यार्थी अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त कर लेता था, वह अपनी अंगरेजी मनोवृत्ति के कारण भारतीय ग्राम में रहने की बात सोच ही नहीं सकता था। फल यह हुआ कि जैसे सोख्ता पानी को पूरी तरह सोख लेता है, उसी तरह अंगरेजी विश्वविद्यालय ग्रामो की बुद्धि और कुशाग्रता को सोखने लगे और वहाँ केवल वे ही लोग बच गए जो बुद्धि में या चातुरी में पिछड़े हुये थे। इस प्रकार इस शिक्षा-प्रणाली के कारण हमारे गाव अंधेरे और अशिक्षा के घर बन गए है।

—डा० राजेन्द्रप्रसाद

—

पूंजीपतियों का रवैया

अगर पूंजीपतियो ने अपने स्वार्थ-साधन के लिए रुपये बटोरने की आदत न छोड़ी तो उनको समाज में कोई जगह न मिलेगी।

-श्री रविशङ्कर शुक्ल

—

महिला-मण्डल

जापान की स्त्रियां

श्री आनन्दीप्रसाद मिश्र 'निर्द्वन्द्व'

थोड़ा समय हुआ, जापान के एक पत्र में वहाँ की स्त्रियों के विषय में एक अत्यन्त मनोरंजक समाचार प्रकाशित हुआ था। उसमें लिखा था कि जापान में विज्ञापन दिया गया कि स्त्रियों को जो वस्तु सबसे अधिक प्रिय हैं, उनसे सूचित करें। इसके सहस्रों उत्तर उपलब्ध हुए। जब उन्हें तरतीब दी गयी, तो ज्ञात हुआ कि ६८ प्रतिशत स्त्रियों को अच्छे और नये फैशन के वस्त्र प्रिय हैं। ७२ प्रतिशत स्त्रियाँ सिनेमा और खेल-तमाशों की शौकीन हैं। १५ प्रतिशत ने उत्तम और स्वादिष्ट भोजन का शौक, प्रकट किया। १० प्रतिशत के नजदीक मालदार और खुशहाल घराना न्यामत है। ५ प्रतिशत घुमक्कड़ निकलीं और सैर-सपाटे को पसन्द करती हैं। एवं ३ प्रतिशत ने धन-दौलत की अधिकता की इच्छा प्रकट की।

इस सूची को देखकर यदि मस्तिष्क पर तनक भी जोर दिया जाय, तो जापान की स्त्रियों के विषय में कितने अद्‌भुत और विचित्र चित्र नेत्रों के सामने फिरते दिखाई देते है। स्त्रियों की एक बहुत बड़ी संख्या के विषय में ख्याल आता है कि कहीं वे दूकानों पर कपड़े खरीद रही है, कहीं दर्जियों के पास नये-नये फैशन के वस्त्रों के एलबम् देखकर अपने शरीर के नाप दे रही हैं। कहीं नये वस्त्र पहन कर शीशे के सामने खड़ी, इन वस्त्रों पर फबने वाली अदाओं का निश्चय कर रही है, और कहीं सड़कों पर, वाटिकाओं में, पार्कों में, सिनेमा-तमाशों में इस विचार से घूमती दृष्टिगोचर होती है, कि उनके बहुमूल्य वस्त्र, लोगों के इशारों के द्वारा, उनकी काना-फूसी के ज़रिए, वाह-वाही लूटें।

द्वितीय श्रेणी पर विचार कीजिए, कहीं घर के नौकरों को बार-बार भेजा जा रहा है, कि वे मालूम करें, आज सिनेमा में क्या तमाशा है? कहीं शाम को जाकर सीटें रिजर्व हो रही हैं। कहीं क्लब में मित्रों से एक्टरों की अच्छाई-बुराई पर बहस हो रही है। और कहीं तमाशे के वक्त की प्रतीक्षा में बेचनी प्रकट की जा रही है। आखिर, रात्रि के समय महिला-समाज का एक बहुत बड़ा भाग, सिनेमाघरों में अपनी तड़क भड़क दिखाता हुआ दृष्टिगोचर होता है। वहाँ कोई अपने पखे हिला रही हैं, और कोई बार-बार झुक-झुक कर, मुस्करा-मुस्करा कर, नाक चढ़ा-चढ़ा कर एक्टरों के विषय में भली बुरी राय प्रकट कर रही हैं।

शेष श्रेणियों की संख्या इतनी थोड़ी है कि उन पर विचार करने में भी परेशानी होती है। परमात्मा ने, धर्म ने और संसार ने स्त्रियों के जो कर्त्तव्य निश्चित किए हैं, नेत्र उन्हें इस सूची में ढूँढते हैं और नहीं पाते। स्त्री, जिसका उत्तम वस्त्र, शील, लज्जा और पवित्रता है, सब इससे दूर दिखाई देती हैं। स्त्री, जिसकी समस्त प्रसन्नता घर में, जिसका बढ़िया तमाशा उसके घरेलू काम, और जिसके देखने को सबसे अच्छे एक्टर उसके बालक है, कोई इस ओर ध्यान नहीं देती। यह देखकर कितना दुःख होता है कि यह उस देश की दशा है, जो पूर्व में सबसे अधिक उन्नति प्राप्त समझा जाता है।

वह देश, जहाँ की स्त्रियाँ धर्म से इतनी गाफिल हों, जहाँ जाति से प्रेम करने वाली १ प्रतिशत भी न हों, जहाँ वस्त्रों और सजावट को, माता-पिता, पति और बालकों से अच्छा समझा जाय, जहाँ घरेलू कामों से परेशानी होती हो, क्या वह देश उन्नति प्राप्त कहा जा सकता है? उनके घरों में फूट होगी। पति-पत्नियों में कभी न बनेगी। बालक बिगड़ेंगे और भावी नसल तबाह होगी।

जापान, व्यापार-तिजारत-में बढ़ गया, उसने शक्ति प्राप्त करली, तो क्या हुआ? उसके देश की स्त्रियाँ, भावी सन्तान की माताओं को देख कर एक मामूली से मामूली समझ का आदमी भी कह सकता है कि जापान की उन्नति का मार्ग बन्द हुआ और भावी सन्तानों से अवनति आरंभ होने को है, और उसका मूल-कारण वहाँ की स्त्रियाँ होंगी।

बाल-विनोद

नटखट 'अम्बुज'

अध्यापक श्री मुरारिलाल शर्मा,

[अध्यापकजी श्री मुरारिलाल शर्मा हिन्दी जगत् में बाल-मनोविज्ञान के पारखी और विशेषज्ञ माने जाते हैं। आपने बच्चों के लिये कई उपयोगी पुस्तकें लिखी हैं। आपने 'मित्र' के बाल-विनोद के लिये यह लेख लिख भेजने की कृपा की है।]

—सम्पादक

अम्बुज हमारे विद्यालय का सबसे अधिक चंचल और नटखट छात्र है। नटखटपन में उसकी जान बसती है। इसलिये उससे क्या शिक्षक और क्या विद्यार्थी सभी बड़े तंग रहते है। यहाँ तक कि विद्यालय के मुख्याध्यापक को भी अम्बुज को देखते ही चिन्ता होने लगती है। यह क्यों? इसी लिए कि न जाने, यह नटखट बालक आज क्या रंग खिला दे। उन्हें आये दिन अम्बुज की शिकायतें सुननी और उन पर फैसला देना पड़ता है।

एक शाम को मैं दूध लिए घर आ रहा था। नटखट अम्बुज बाइसिकिल पर विद्यालय से खेलकर जा रहा था, मुझे देखते ही अम्बुज ने साइकिल पर ही दोनों हाथ जोड़ कर कहा—'पंडितजी, प्रणाम।' साइकिल का सन्तुलन बिगड़ गया और धड़ाम से अम्बुज जमीन पर और बाइसिकिल उसके ऊपर। बेचारे के पैरों और कनपटी पर बड़ी चोट आयी। किन्तु वह रोया नहीं, चट से खड़ा हो गया। मैंने कहा—'अम्बुज, तू ने यह क्या किया?' वह मुस्करा कर बोला—'पूज्य पण्डितजी को प्रणाम।'

मैंने कहा—'भैया, साइकिल पर से पण्डितजी को इस प्रकार प्रणाम नहीं किया करते। जब दोनों हाथ घिरे हुए हों तो हाथ न उठाकर केवल नतमस्तक होकर निकल जाते हैं। मेरा घर सड़क से लगभग सौ क़दम होगा। मैं अम्बुज को घर लाया। उसके दवा लगाई और श्रीमतीजी से दूध गरम करने को कहा।

इसी बीच में मैं बोला—"अम्बुज, कदाचित् तुम्हें मालूम नहीं, स्कूल के शिक्षकों ने तुम्हारा नाम 'नटखट नं० १' रक्खा हुआ है।" अम्बुज ने हाथ जोड़ कर कहा—"सो तो मैं आप लोगों की कृपा से हूँ हाँ, पंडितजी, मैं बच्चा हूँ; बुड्ढा नहीं।" 'यह तो तुम ठीक कहते हो अम्बुज, किन्तु तुम्हारी कई बातें बड़ी अनुचित है—मैं बोला।

वे क्या, पंडितजी?

एक तो तुम बहुधा अपने साथियों के कंधों पर हाथ रक्खे हुए स्कूल में घूमा करते हो। दूसरे तुम प्रार्थना के समय इधर-उधर फिरते रहते हो। तीसरे तुम रास्ते में गन्ना चूसते या खाते फिरते हो और जहाँ तहाँ गन्ने के छिलके या कागज गिराकर सड़कों और स्कूल के अहाते को गंदा कर देते हो।

अम्बुज ने पूछा—'पंडितजी, इसमें दूसरों का क्या हर्ज है? भंगी उन्हें साफ कर लेता है।'

मैंने कहा—'अम्बुज, ऐसा समझना ही तो तुम्हारी भूल है। किसी के कंधे पर हाथ रखकर घूमना शिष्टाचार (शऊर) के विरुद्ध है। जो मनुष्य शिष्टाचार से काम नहीं लेता उससे लोग घृणा करने लगते है। प्रार्थना में सम्मिलित होना हमारे लिए अत्यावश्यक है। कारण, पहले तो हमें प्रार्थना में उस परम पिता परमात्मा को धन्यवाद अवश्य देना चाहिए, जिसने हमारे लिए प्रतिदिन प्रयोग में आने वाली वस्तुएं—अन्न, जल, वायु आदि विना मूल्य दी हैं। जब हम छोटी-छोटी चीजों के लिए लोगों को धन्यवाद देते हैं तो ईश्वर को धन्यवाद देना तो हमारा कर्तव्य ही हो जाता है। दूसरे एक साथ

प्रार्थना करने से अनुशासन और आनन्द की वृद्धि होती है। जहां-तहाँ छिलके या कागज फेंकने से हमारे विद्यालय अथवा नगर में गंदगी फैलती है और साथ ही इन स्थानों की शोभा को भी बड़ा धक्का लगता है।

खेद के साथ कहना पड़ता है कि हम भारतवासी इन छोटी-छोटी, किन्तु अत्यावश्यक बातों की ओर उचित ध्यान नहीं देते। दूसरे देशों के लोग अपने स्थानों की सफाई पर बड़ा गर्व करते हैं। यूरोप में स्विटजरलैंड नामक एक बड़ा ही सुन्दर देश है। वहाँ के बर्फ से ढके हुए पर्वतों, निर्मल झीलों तथा झरनों की शोभा संसार-प्रसिद्ध है। उस देश की राजधानी 'बर्न' नगर संसार में सबसे स्वच्छ नगर है। हमारे एक मित्र स्विटजरलैंड का भ्रमण करने गये। वहाँ उन्होंने बच्चे-बच्चे को बड़े गर्व से यह कहते सुना—'हमारा नगर संसार में सबसे अधिक स्वच्छ है।' हमें भी अपने रहने के स्थानों, सड़कों, विद्यालयों तथा नगरों को स्वच्छ रख कर अपने देश भारत को गर्व करने योग्य सुन्दर बनाना चाहिए।

इतने में श्रीमतीजी दूध गम करके ले आयीं। मैंने अम्बुज को गर्म दूध पिलाया। दूध पीकर अम्बुज बोला—'पंडितजी, यदि इस प्रकार गाय का दूध पीने को मिले तो जी चाहता है, हर रोज बाइसिकिल पर से गिरा करूँ।' मैंने कहा—'अम्बुज, तुम सचमुच 'नटखट नं० १' ही हो।' चलते समय अम्बुज बोला—'पंडितजी, यदि आप बुरा न मानें तो एक बात कह दूँ?'

मैंने कहा—'अवश्य, अवश्य, बुरा मानने की क्या बात है।'

मुस्कराते हुए अम्बुज बोला—पंडितजी, जिस प्रकार आप लोग हम बच्चों के नाम गुणों के अनुसार रखते हैं, उसी प्रकार हम बच्चों ने भी शिक्षकों के नाम गुणों के अनुसार रख छोड़े हैं। देखिये अमुक, पतले-दुबले और लम्बे शिक्षक को हम आपस में 'हेल्थ आफीसर' कहते हैं बच्चों को बात बात पर फटकारने और मारने-पीटने वाले अमुक शिक्षक को हम 'एटम बम' कहते हैं और अमुक काले रंग के नाटे शिक्षक का नाम हमने 'नारू बैंगन' रख छोड़ा है।

मैंने कहा—'वास्तव में बच्चों की वानर-सेना बड़ी ही नटखट होती है।'

अम्बुज प्रणाम कर बाइसिकिल ले चलता बना और बाइसिकिल पर चढ़ने से पूर्व बोला—'पंडितजी, आप का यह नटखट शिष्य आज से आपकी शिक्षा के अनुसार चलने की चेष्टा करेगा, प्रणाम।'

मैंने कहा—'जीते रहो, दीर्घायु हो।'

सामयिक समस्याएँ

गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली तथा वर्धा शिक्षा-पद्धति

प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति

आजकल लोग गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली तथा वर्धा-शिक्षा-पद्धति की विभिन्नता को नहीं समझते, यह उनका भ्रम है। हमारे स्वतन्त्र देश के भावी विकास के लिये गुरुकुल-शिक्षा प्रणाली ही लाभदायक सिद्ध हो सकती है। महात्मा गांधी ने अन्य शिक्षा-शास्त्रियों की सहायता से वर्धा शिक्षा-पद्धति का निर्माण किया है। इसका उद्देश्य उद्योग-धन्धों द्वारा बालकों को प्राथमिक शिक्षा देना है, जिसका परिणाम यह होगा कि शिक्षार्थी क्रियात्मक शिक्षा प्राप्त कर लेने के कारण देश की वर्तमान गरीबी और भयंकर आर्थिक संकट का सामना करने में समर्थ हो सकेगा। सन्देह नहीं कि इस शिक्षा-पद्धति की योजना देश और जाति की मौजूदा जरूरियात को ध्यान में रख कर हुई है। नहीं कहा जा सकता कि यह 'डाक्टर्स डोज' की तरह घरेलू उद्योग-धन्धशाला के रूप में सफलता प्राप्त करेगी या एक स्वतन्त्र शिक्षा-पद्धति के रूप में।

गुरुकुल-प्रणाली के पोषकों का कहना है कि क्या प्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य बालक की उत्पादन-शक्ति क्रियात्मक रचनात्मक को प्रेरित करना मुख्यतया कहा जा सकता है अथवा बालक की बौद्धिक मानसिक तथा हस्त-पादादि संचालित ऐन्द्रियिक रचनात्मक शक्ति को जाग्रत कर देना मात्र है। इन दोनों पद्धतियों की समानता तथा विभेद प्रकट हो जायगा। पहले में कहा तो यही जाता है कि उद्योग-धन्धों द्वारा बालक को शिक्षित करना है। अर्थात् इस के हाथ-पाँव और आंख-कान का रचनात्मक उपयोग लेते हुए उसके बौद्धिक केन्द्रों को प्रेरित अतएव शिक्षित करना है। परन्तु लेखक का विचार है कि वर्धा-पद्धति का ध्येय स्वयं शिक्षाशास्त्र का ध्येय नहीं क्योंकि वर्धा-पद्धति स्वयमेव जिस मूलतत्व अर्थात् उद्योग-धन्धों द्वारा बालक को रचनात्मक शिक्षण देने की प्रतिष्ठा करती है, परिणाम में वही 'मूलतत्व शिक्षा को केवल स्वावलम्बन का हेतु बनाकर यान्त्रिक कठोरता और कला के ढांचे में जकड़ लेता है। इसका स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि शिक्षा का साध्य और साधन अभिन्न होकर मानव के चौमुखी विकास की जगह स्वावलम्बन व उपजाऊ होना ही रह जायगा। गुरुकुल-प्रणाली में गुरु-शिष्य-परम्परा, संस्कृति, धर्म, सभ्यता आदि केन्द्र हैं। समय की आवश्यकतानुसार मानव का दैशिक व जातीय शरीर में सदुपयोग इसकी प्रक्रिया है, शैली है। अतः इसमें शिक्षा का यान्त्रिक उपयोग होने की कदापि संभावना नहीं हो सकती।

शिक्षा का ध्येय दाल-भात की समस्या को सुलझाना नहीं है। चूंकि शिक्षा से प्रायः यह समस्या हल हो जाती है इस लिये शिक्षा की व्यावहारिक उपादेयता बढ़ जाती है। आजकल की शिक्षा से तो यह समस्या भी हल नहीं होती। इसलिए यह शिक्षा का अनानुषंगिक प्रयोजन हुआ। मुख्य प्रयोजन तो फिर भी यही कहा जावेगा कि शिक्षा मनुष्य को मननशील बनावे, सभ्य बनावे, सुनागरिक बनावे, धार्मिक बनावे, कर्तव्य-पालन का अभ्यासी और संयमी बनावे और देश-जाति की सामयिक मांग का पूरा करने के योग्य बनावे। इस दृष्टिकोण से यदि हम इस विषय पर विचार करते हैं तो गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली में न केवल प्राच्य और प्रतीच्य शिक्षा के नाना उपयोगी तत्वों को समाविष्ट होता देखते हैं, अपितु वह भारत में प्रचलित शिक्षा-पद्धतियों की उपयोगिता तथा अच्छाइयों को सजीव और उदार भावना से ग्रहण करने में तत्पर हुआ देखते हैं। गुरुकुल-पद्धति के मूलतत्व जो कि बहुत सुन्दर और उपादेय हैं, अपने आप में आधुनिक शिक्षाशास्त्र की विशेषता हैं। गुरु-शिष्य का, पिता-पुत्र की तरह का आश्रमवास विद्यार्थियों में समानता का व्यवहार, आश्रम के सब सम्बन्धों में पवित्र भावना, श्रम, तपस्या, ब्रह्मचर्य स्वाध्याय तथा नैत्यिक अनुष्ठान शिक्षा को कितना दिव्य बना सकते हैं, यह कल्पना की बात नहीं अपितु क्रियात्मक तौर पर अनुभव करने का विषय है। शिक्षा-विज्ञ कहता है, मैं शिक्षा से बालक की नाना प्रसुप्त शक्तियों को जाग्रत कर दूंगा, विकसित कर दूंगा। ठीक है, उसी की धारणा। लेखक पूछता है कि क्या गुरुकुल-से सुन्दर वातावरण, इससे अच्छी प्रयोगशाला उसे कहीं प्राप्त हो सकती है, जहाँ जाकर वह प्रयोग करे, सिखाये और स्वयं सीखे जंगल में, एकान्त में, शहर के पड़ोस में जहां चाहे वहाँ जीविन-जाग्रत पिण्डों में शिक्षा की रूह फूंक सकता है, जिससे कि उसके बनाये पिण्ड चलते-फिरते, खेलते-पढ़ते, गाते-ज्ञानामृत पीते और पिलाते, नव-नव रचना और क्रियात्मक शक्ति का उपयोग करने वाले मानव बन सकें। गुरुकुल-शिक्षा का उद्देश्य इन्हीं भावनाओं को धर्म, देश, समाज तथा विश्व-मानव के नाते यथाशक्ति पूरा करना है। यही इसका उद्देश्य है यही इसकी जान है और यही इसका सर्वस्व है।

आर्य जगत

—सैथा (कानपुर) में आर्यसमाज स्थापित हुआ है। अधिकारी तथा सदस्य बड़े उत्साह से कार्य कर रहे हैं।

—बहरायच के श्री व्रजमोहनलाल जी आर्य की पुत्री का नामकरण संस्कार ६ फरवरी ५१ को वैदिक रीति से हुआ। ५) दान दिए।

—गत ४ फरवरी को आ० स० मेरठ शहर का निर्वाचन हुआ ११ फरवरी को अभिषेकयज्ञ हुआ। निर्वाचित पदाधिकारियों और अन्तरग सदस्यों ने ईश्वर को साक्षी देकर अपने-अपने पदों का कार्य न्याय-पूर्वक तथा उत्तरदायित्व से करने की प्रतिज्ञा की।

—स्वामी शिवानन्द तीर्थ ऊपर घाट जगल पहाड़ के अनेक ग्रामों में आर्यसमाज का प्रचार कर रहे हैं, अनेक स्थानों में पाठशालाएं खोलने की भी व्यवस्था की है।

—शोक है कि आ० स० रामपुर (मथुरा) के कर्मठ कोषाध्यक्ष श्री होतीलालजी आर्य की माताजी का देहावसान हो गया। उक्त आ० स० शोक-सहानुभूति प्रकट करता है।

—आ० स० तमकुही रोड देवरिया का प्रथम वार्षिकोत्सव तथा स्थापना-दिवस गत ३१ जनवरी से ४ फरवरी तक समारोहपूर्वक मनाया गया। प० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, ब्र० अखिलानन्दजी आदि विद्वानों के भाषण तथा भजनोपदेशकों के भजन हुए। बड़ा प्रभाव पड़ा।

—आ० स० पाटन (उन्नाव) का सातवाँ वार्षिकोत्सव ११, १२ तथा १३ फरवरी को मनाया गया। श्री प० गौरीशंकर चुतुर्वेदी, श्री श्यामप्यारेजी आदि के व्याख्यान और प० विनायकप्रसादजी के भजन हुए।

—गत ११ फरवरी को रुड़की आ० स० मन्दिर में वसन्तोत्सव मनाया गया। प० लक्ष्मीनारायण जी का व्याख्यान हुआ। शाम को वसन्त-मेला बड़ी धूमधाम से मनाया गया। आर्यकुमार और कुमारियों के खेल हुए। कुश्ती और रस्साकशी हुई। वसन्त पर कविता-पाठ किया गया। आर्य-कुमारों ने मेले में तरह-तरह की दूकानें लगाई थीं, जीतने वालों को श्री श्यामलालजी जैन एक्जीक्यूटिव आफिसर म्युनिसिपलटी द्वारा पारितोषिक दिये गये। आ० कु० सभा की पुनः स्थापना हुई।

—गत ११ फरवरी को चाँदपुर (बिजनौर) के हरिजन महल्ले के श्री छोटेलालजी नगर-पालिका-सदस्य के यहाँ यज्ञ हुआ। श्री राजेश्वरप्रसादजी शर्मा का भाषण हुआ। ५) दान दिया गया। १० फरवरी को श्री डा० रामेश्वरप्रसादजी की बहन का पाणिग्रहण संस्कार राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री ने कराया। चाँदपुर आर्यसमाज की ओर से राजगुरुजी की सेवा में अभिनन्दन-पत्र तथा २०१) वेद-प्रचारार्थ भेट किये गये। शास्त्रीजी का प्रभावशाली भाषण हुआ। आपने जनगणना में 'आर्य' लिखाने की प्रेरणा की और अनुशासन पर बल दिया।

—श्रीमान् बा० पूर्णचन्द्रजी ऐडवोकेट आगरा के सुपुत्र डाक्टर सर्वेश्वर सिंह सूद, एम० बी०, बी० एस० का शुभ विवाह झाँसी आर्यसमाज के प्रधान श्री बा० अलखप्रकाशजी एडवोकेट की विदुषी पुत्री आयुष्मती हिरण्यरूपा के साथ वैदिक विधि से सम्पन्न हुआ। दोनों पक्षों की ओर से विविध संस्थाओं को समुचित दान दिया गया।

—आगरा नगर आर्यसमाज में डाक्टर ज्ञानचन्द आर्य का ११ फरवरी को प्रभावशाली भाषण हुआ। आपने आर्यसमाज की उन्नति के उपाय बताये।

—आर्यसमाज हसनपुर (मुरादाबाद) ने 'घर-घर में हम यज्ञ करेंगी' की भावना के अनुसार एक योजना बनाई है जिसे क्रियात्मक रूप देने का उद्योग किया जा रहा है। समाज की मन्त्रिणी श्रीमती सत्यवती देवी बड़े उत्साह से काम कर रही है।

—श्रीमान् बा० केशवचन्द्रजी रईस मुरादाबाद (जो आर्यसमाज काँठ के प्रधान श्री ला० तोताराम जी के अनुज हैं) के सुपुत्र चि० राजेन्द्रजी का यज्ञोपवीत संस्कार राजगुरु श्री प० धुरेन्द्रजी शास्त्री के आचार्यत्व में वसन्त पंचमी को समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ। बा० केशवचन्द्रजी ने पाँच सौ रुपये विविध आर्य संस्थाओं को दान दिये। संस्कार का शिक्षित समाज पर बड़ा प्रभाव पड़ा।

—आ० स० भटपुरा (मुरादाबाद) की ओर से प० शान्तिस्वरूपजी तथा स्वा० अमृतानन्दजी आदि ने ८ तथा ६ फरवरी को असमौली बूढ़े बाबू के मेले पर सफलता पूर्वक प्रचार किया।

—१४ फरवरी को आगरा के चारों आर्यसमाजों ने मिलकर हींग की मण्डी आर्यसमाज मन्दिर में, श्री बा० शालग्रामजी वकील की अध्यक्षता में, म० श्रीरामजी के देहान्त पर शोक-सहानुभूति प्रकट करने के लिये एक सम्मिलित शोक सभा की। व्याख्यान रूप में अनेक श्रद्धाञ्जलियाँ अर्पित की गयीं। परम प्रभु परमात्मा से दिवंगत आत्मा की शान्ति के लिये प्रार्थना की गयी।

—गुण्डों से छुड़ाई हुई एक लड़की का विवाह आ० स० शाहगंज (जौनपुर) द्वारा प० प्यारेलालजी आर्य सभासद के साथ ११ फरवरी १६५१ को हुआ।

—२४ जनवरी को ठा० श्रीपालसिंहजी ने तेदुआ (इलाहाबाद) में भजनों द्वारा प्रचार किया, ६) दान में मिले।

उत्सव-सूचनाएं

—आ० स० सहपऊ (मथुरा) का चतुर्थ वार्षिकोत्सव पूर्व प्रकाशित तिथियों पर न होकर आगामी १, २ तथा ३ मार्च को होगा।

—आ० स० अगवानपुर (मुरादाबाद) का वार्षिकोत्सव आगामी १६, १७ तथा १८ मार्च को मनाया जायगा।

—आर्यस्त्रीसमाज हसनपुर (मुरादाबाद) का वार्षिकोत्सव १ से ७ मई १६५१ तक मनाया जायगा।

—आर्यसमाज आजमगढ़ का वार्षिकोत्सव १६ से १६ मार्च १६५१ तक मनाया जायगा।

—आ० स० फतेहपुर का वार्षिकोत्सव २८ फरवरी से ४ मार्च तक मनाया जायगा।

—आ० स० दयानन्द-नगर अछोरा (फैजाबाद) की रजत-जयन्ती १६ से २२ अप्रैल तक मनायी जायगी। स्वा० ब्रह्ममुनि जी महाराज कृपया अपना पूरा पता लिखें और पधारने की कृपा करें।

—पंचम जिला आर्य सम्मेलन (मैनपुरी) सिरसागंज में १५, १६, १७ तथा १८ मार्च को होगा। कई सम्मेलन भी होंगे।

—आ० स० रुड़की का ७२ वाँ वार्षिकोत्सव ३, ४, ५ तथा ६ मार्च को मनाया जायगा, २ मार्च को नगर-कीर्तन होगा। दयानन्द-सप्ताह २८ फरवरी से मनाया जायगा, श्री स्वामी वेदानन्दजी महाराज की कथा २५ फरवरी से शुरू होगी।

—आ० स० नीमचाना (बुलन्दशहर) का १६ वाँ उत्सव १७, १८, १६ तथा २० मार्च को मनाया जायगा।

निर्वाचन

—आ० स० मेरठ शहर—प्रधान—प० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री और मंत्री—श्री ब्रह्मस्वरूपजी।

—आ० स० हाथरस—प्रधान—म० प्रेमचन्दजी और मन्त्री—श्री गुलाबचन्दजी।

—आ० स० अगवानपुर (मुरादाबाद)—प्रधान—चौ० शेरसिंहजी रईस और मन्त्री—बा० जालिम सिंहजी।

—आर्य स्त्री-समाज हसनपुर (मुरादाबाद)—प्रधाना—श्रीमती सुशीलादेवीजी और मन्त्रिणी—श्रीमती सत्यवतीदेवीजी।

[पाचवे पृष्ठ का शेष]

निर्माण-मन्त्री श्री हाफिज मुहम्मद इब्राहीम भी प्रदर्शिनी देखने आये। मनोरंजन के लिये मशहूर पहलवानों की कुश्तियाँ भी करायी गयीं थीं। इनमें जनता ने बड़ी रुचि दिखाई। और भी मनोरंजक खेल-तमाशे और सम्मेलन होते रहे।

इस प्रदर्शिनी का मुख्य उद्देश्य पशु-पालन की शिक्षा देना, पशु-उन्नति और उत्तम कृषि के सुलभ साधन प्रदर्शन करना तथा स्वास्थ्य रक्षा के उपाय बताना और उनकी ओर सर्वसाधारण का ध्यान आकृष्ट करना था। शहरों के लोग प्रायः इन बातों को बड़े कौतूहल से देखते थे। पशुओं की प्रदर्शिनी में विविध नस्लों की पशु-प्रतियोगिता द्वारा उनका अच्छा चुनाव करने में भी बड़ी सहायता मिलती है। अर्थात् जहाँ इस प्रकार की प्रदर्शिनियाँ मनोरंजक होती हैं, वहाँ उनसे शिक्षा भी खूब मिलती है।

———

—आ० स० आजमगढ़—प्रधान-श्री ब्रजवासीलाल वकील और मन्त्री-श्री मधुसुदनदास ।

—आ० स० बलरामपुर—प्रधान-श्री कर्तादयालुजी और मन्त्री-श्रीतीर्थराजजी शर्मा।

—आ० स० श्री सर्वदानन्द साधु-आश्रम हरदुआगंज—प्रधान-डा० नेत्रपालसिंहजी और मन्त्री-ठा० रामस्वरूपसिंहजी ।

—आ० स० भटपुरा (मुरादाबाद) —प्रधान-श्री लेखराजजी और मन्त्री-श्री रविदेवजी।

—आ० स० पुर्वाया—प्रधान-म० कालिकाप्रसादजी और मन्त्री-म० धर्म्मेन्द्रनाथजी ।

सार-सूचनाएं

—अखिल भारतीय आर्य उपदेशक महासम्मेलन का तृतीय महाधिवेशन आगामी मई के प्रथम सप्ताह में बम्बई में होगा । तैयारियों प्रारम्भ हो गयी है। इस अवसर पर एक विशाल प्रदर्शिनी भी होगी और विराट सर्व धर्म-सम्मेलन किया जायगा।

—भारतीय लोक-संघ के केन्द्रीय कार्यालय का उद्घाटन गाजियाबाद में पूज्य श्री आनन्द स्वामीजी महाराज २५ फरवरी को करेंगे।

—श्री देवीप्रसाद जौहरी सहायक मन्त्री सभा, आ०स० चौक प्रयाग की हीरक जयन्ती में ७ से १० फरवरी तक सम्मिलित हुए। आपने आ० स० कटरा तथा आ० स० रानी मण्डी का ६ तथा १० फरवरी को निरीक्षण किया।

आर्य उपदेशक-विद्यालय

इस समय आर्य-उपदेशक-विद्यालय की बड़ी आवश्यकता है।-ऐसा विद्यालय जिसमें आर्य-समाज के उपदेशक तैयार किये जायें और उन्हें व्याख्यान-कला की शिक्षा दी जाय। आर्यसिद्धान्तों का भी ज्ञान कराया जाय। ऐसे समय में जब कि पुराने और वयोवृद्ध उपदेशक अवकाश प्राप्त कर रहे या समाप्त हो रहे है, इस प्रकार के उपदेशक-विद्यालय की अत्यन्त आवश्यकता है। उपदेशकों ने वैदिक धर्म-प्रचार में बड़ी सहायता की है। ट्रेण्ड उपदेशक तो इस दिशा में और भी अच्छी प्रगति कर सकेंगे। आशा है, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा इस महत्वपूर्ण कार्य को शीघ्र ही प्रारम्भ कर देगी, यह विद्यालय किसी गुरुकुल के साथ रहे तो अच्छा है। वहाँ अन्य अनेक सुविधाएं होंगी। इस कार्य के लिए आर्यसमाजों तथा आर्य-पुरुषों से धन एकत्र किया जा सकता है। आगरा नगर आर्य-समाज अपनी शक्ति-भर इस पवित्र कार्य में आर्थिक सहयोग देने के लिये सहर्ष तैयार रहेगा।

मोहनलाल आर्य,
प्रधान, नगर आर्यसमाज, आगरा।

श्रद्धेय म० श्रीरामजी

मुझे अत्यन्त दुःख है कि मेरे पुराने मित्र श्री बा० श्रीराम-जी का देहान्त हो गया। उनसे मेरा परिचय अब से पचास वर्ष पूर्व, इलाहाबाद में, प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के बृहदधिवेशन के समय हुआ था। उस समय मैं म्योर सेन्ट्रल कालिज में पढ़ता था। उसके दो-तीन वर्ष बाद ही मैं भी सभा की वार्षिक बैठक में प्रतिनिधि होकर जाने लगा। तब मैं बाबूजी के सम्पर्क में अधिक आया। उनकी प्रेरणा से मुझे सभा-सेवा के लिये बड़ा उत्साह मिला। बाबूजी का जीवन एक व्रती प्रचारक का जीवन था। उन्होंने लगातार ६६ वर्ष आर्य-समाज की सेवा की। मैं अपने स्वर्गीय मित्र के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पण करता हूँ। पुराने आर्य नेताओं में से क्रमशः लोग उठे चले जा रहे है। नवयुवकों को अब आगे बढ़कर इन रिक्त स्थानों को अपनाने की आवश्यकता है। भयानक भ्रष्टाचार और जात-पाँत के भूत के विरुद्ध प्रचार करने की इस समय बहुत बड़ी जरूरत है। आर्य युवकों और वृद्धों को इसके लिये कटिबद्ध हो जाना चाहिए। म० श्रीरामजी जीवन-भर समाज-सेवा में लगे रहे। उनका उदाहरण अनुकरणीय है।

गजाधरप्रसाद,—
मुट्ठीगंज, प्रयाग।

वृन्दावन-गुरुकुल में शोक-सभा

आर्यसमाज के वयोवृद्ध नेता एवं गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली के अनन्यतम भक्त श्री महात्मा श्रीरामजी के देहावसान के समाचार को जानकर समस्त गुरुकुल में शोक छा गया और शोक सहानुभूति में गुरुकुल के समस्त विभाग बन्द रहे तथा समस्त कुलवासियों ने मिलकर परम पिता परमात्मा से दिवंगत आत्मा की सद्गति एवं संतप्त दुखी परिवार को एवं आय बन्धुओं को धैर्य धारण करने की शक्ति प्रदान करने की प्रार्थना की गई।

द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री, मुख्याधिष्ठाता

—

[आठवें पृष्ठ का शेष]

पुरुषों में थी। इस अभाव की पूर्ति के लिये आज समाज को रचनात्मक नेता की आवश्यकता है।

युवकों की महान् शक्ति का उपयोग करने के लिये ऊपर की पीढ़ी को ही अपने सिंहासन से हिलना होगा—युवक तो पथप्रदर्शक चाहते हैं। वे उमंग आ जाने पर परीक्षा जैसी चीज का कोई मूल्य नहीं समझते। और ध्येय की पूर्ति में "कार्यं वा साधयेयम् देहं वा पातयेयम्" के आदर्श का पालन करने लगते हैं। जब कोई दिशा युवकों के सामने न हो उनको कोई सच्चा पथप्रदर्शन न प्राप्त हो तब वे या तो एक मात्र परीक्षा को अपना आदर्श मान बैठते हैं, या पथ-भ्रष्ट हो ध्वसात्मक प्रवृत्तियों में जुटे रहते हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि युवक-समाज की उदीयमान प्रतिभा और चेतना को अपने अनुरूप बनाने का प्रयत्न किया जाय। क्या आज हमारे बीच इस प्रकार का नेतृत्व किसी के पास है? यदि है तो युवक-समाज आदर के साथ उनकी ओर दृष्टि लगाये देख रहा है, वह उसका पथ-प्रदर्शन करें। और यदि किसी में ऐसी शक्ति नहीं है तो अपने मिशन की अन्त्येष्टि अपने सामने ही देखने के लिये हमें तैयार रहना चाहिये।

—

मैसूर में विस्तृत कार्यक्षेत्र

आर्य कार्यकर्त्ता ध्यान से पढ़ें

मैंने सुना कि मैसूर के शिमोगा जिले में कुछ हिन्दू मुसलमान हो गये हैं। मैंने आर्य-समाज मैसूर को लिखा। उन लोगों का एक लम्बा पत्र आया है, जिसमें उन्होंने निम्नलिखित बातों का उल्लेख किया है:—
१—मुसलमान और ईसाई हिन्दू स्त्रियों को किसी न किसी बहाने से बहका कर अपने में मिला लेते हैं। यह काम बहुत दिनों से बड़े जोरों से चल रहा है। २—हिन्दू सभा और राष्ट्रिय स्वयंसेवक-संघ चिल्लाते तो बहुत हैं, परन्तु कोई रचनात्मक कार्य नहीं करते। ३—यहाँ कोई हिन्दू-अनाथालय नहीं है, एक जबरदस्त मुस्लिम अनाथालय है। ४—यहाँ का आर्य-समाज अत्यन्त कमजोर है, इतने पैसे भी नहीं कि यदि कोई बाहर से उपदेशक आ जाय तो उसका व्याख्यान सुगमता से करा सकें। ५—शिमोगा मैसूर से २०० मील दूर है, अतः मैसूर-समाज वहाँ कोई काम नहीं कर सकता। ६—मैसूर समाज के सभासद हाथ-पैर मार के यदि किसी को बचा भी लेते हैं, तो उसके रखने के लिए उनके पास कोई अनाथालय या आश्रम नहीं है। मैं देखता हूँ कि उत्तर भारत में संस्थाओं की भरमार है। नित्य नयी संस्थाएँ खुलती जा रही हैं। जहाँ संस्था खुलनी चाहिएं, वहाँ कोई नहीं खोलता। मैसूर में एक अनाथालय की बहुत आवश्यकता है, और कुछ यहाँ से काम करने वाले भी जाने चाहियें। यदि कोई सज्जन इस काम को अच्छी तरह से कर सकते हों और उनमें त्याग-भाव भी हो तो वे मुझे लिखें।

गंगाप्रसाद उपाध्याय,
मन्त्री सा० आ० प्र० सभा
बलिदान-भवन, देहली

महर्षि दयानन्द सरस्वती

के १५ व्याख्यान

आर्य बन्धुओं को यह जानकर हर्ष होगा कि हमने आर्यसमाज के प्रवर्तक, वेदोद्धारक, प्रकाण्ड पंडित, नवयुग-निर्माता, सर्वश्रेष्ठ-सुधारक, स्वतंत्रता के पुजारी, सच्चे देशभक्त, जगद्गुरु महर्षि दयानन्द सरस्वती के १५ व्याख्यान जो उन्होंने जुलाई सन् १८७५ को पूना में दिये थे, हिन्दी भाषा में 'उपदेश मञ्जरी' पुस्तक के नाम से प्रकाशित किये हैं। जबकि उपदेशकों, प्रचारकों, एवं सन्यासियों के व्याख्यान आप बड़े शौक से सुनते हैं, तो आप अन्दाजा लगा सकते हैं कि आर्यसमाज के प्रवर्तक के व्याख्यान कितने सारगर्भित, बहुमूल्य और हमारे लिये पथ प्रदर्शन का काम देने वाले होंगे।

इस ग्रन्थ-रत्न की भूमिका में हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज लिखते हैं—"हमें दुःख है कि ऋषिवर के केवल १५ व्याख्यान ही हम लिपिबद्ध कर सके। यह १५ व्याख्यान सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका का काम देंगे। वैदिक धर्म के अनुयायी विद्वानों को भी कई बार शङ्काओं के कारण सिद्धान्तों के समझने में कठिनाई पैदा होती है। इस ग्रन्थ को पढ़ जाने से स्वयं उनका समाधान हो जाता है। १५ व्याख्यानों में गुरुवर ने अपने जीवन के संबन्ध में कई ऐसी घटनायें वर्णन की हैं जो ऋषि के किसी अन्य जीवन चरित्र में नहीं मिलती।"

कई आर्य संस्थाओं को मैंने 'उपदेश मंजरी' का संस्करण प्रकाशित होजाने की सूचना पत्र द्वारा दी थी। उन्होंने १०-१५ और कई संस्थाओं ने २० प्रतियों की मांग भेजी है। इस प्रकार यह सुन्दर संशोधित, और सस्ता संस्करण बहुत ही शीघ्र समाप्त हो जाने की संभावना है, बाद में दूसरे संस्करण की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। कई आर्य महानुभावों की प्रेरणा से ग्रन्थ की अत्यावश्यकता को अनुभव करते हुए इसे प्रकाशित किया गया है।

पुस्तक मोटे अक्षरों में प्रकाशित की गई है, कागज बहुत बढ़िया लगाया गया है, टाइटल के ऊपर महर्षि की असली फोटो दी गई है। साइज $\frac{२० \times ३०}{१६}$ और २२४ पृष्ठ हैं। मूल्य प्रचारार्थ केवल २) रक्खा गया है। डाकखर्च ।≈) आर्य संस्थाओं के अधिकारियों को चाहिए कि इस बहुमूल्य पुस्तक की अधिक से अधिक प्रतियां मंगा कर देश-विदेश में ऋषि वर के विचारों का प्रचार एवं प्रसार करें।

पुस्तकों का सूची पत्र बिना मूल्य के मंगायें।

आर्य प्रकाशन मण्डल १७६ लाजपतराय मार्केट, दिल्ली।

आर्यमित्र में विज्ञापन देकर लाभ उठाइये

आवश्यकता

एक २२ वर्षीय सुन्दर, सुशील, स्वस्थ, सुशिक्षित आर्य कायस्थ वर के लिये सुन्दर सुशील, सुशिक्षित, स्वस्थ और गृह-कार्य में दक्ष कायस्थ कन्या की आवश्यकता है। दहेज का कोई प्रश्न नहीं है। सम्बन्ध कायस्थ जाति के किसी भी वर्ग मात्र में हो सकता है।

पताः—डा० हेमचन्द सक्सेना
पो० उसैत, जि० बदायूँ

उत्कृष्ट पुस्तकें

१ उपनिषद् प्रकाश	३।।)
२ दृष्टांतसागर सजिल्दभाग १,३)	
३ „ „ „ भाग २	२।।)
४ धरत्लूविज्ञान सजिल्द	७।।)
५ वेदरहस्य	२)
६ चाणक्य नीति	।।।)
७ सत्यनारायण की कथा	।≈)
८ आर्यसत्सङ्ग	।≈)
९ प्राणायाम विधि	।)
१० धर्मशिक्षा	≡)
११ राष्ट्रिय तराने	।≈)
१२ कल्याण मार्ग	१)
१३ मनुस्मृति (स्वा. तुल.) स.	५)
१४ स्वास्थ्य और योगासन	१।।)
१५ मुसाफिर भजनावली	१।)
१६ दयानंद चरित्र २।।) तथा	।≈)
१७ जनेऊ १।।) ह०सामग्री १।।)सेर	
१८ हवनकुण्ड लोहा १।) तांबा	३)

इसके अलावा हर प्रकार की पुस्तकों के लिए बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मगाइये। कमीशन काफी दिया जाता है। अपना पता और डाकखाना साफ लिखियेगा।

श्यामलाल वासुदेव भारतीय
आर्य पुस्तकालय बरेली

सुयोग्य वर की आवश्यकता

एक १६ वर्ष की सुघड़ कुमारी के लिए किसी भी जाति के एक सुयोग्य, सच्चरित्र, शिक्षित एवं किसी उद्योग में लगे हुए ऐसे वर की आवश्यकता है, जो दृढ़ आर्य विचारों के और जाति-पाँति में कतई विश्वास न रखने वाले हों। कन्या ने 'विद्या विनोदिनी' तक की पढ़ाई की है। साधारण अंग्रेजी ज्ञान है। सीने-पिरोने, कसीदे-कढ़ाई-बुनाई तथा भोजन-कला में सुदक्ष है। एक क्षत्रिय वर्ग की है। पिता पशानर और मध्यप्रदेश के रहने वाले हैं। इस पते से पत्र व्यवहार करें।

श्री पी० एल० वर्मा, श्री चौहान साहब का मकान,
कम्पूरोड, लश्कर, ग्वालियर।

६) रुपये भेज कर तीस प्रतियां

पुत्र कैसे प्राप्त हो

पण्डित एण्ड कम्पनी पो० बो० ४६ बड़ौदा से मंगालें। एक प्रति ।≈)

कैसे भी दाद व खुजली के — लिये —
दादमार
— संसार की — सर्वश्रेष्ठ मरहम.

हकीम तुलसी प्रसाद अग्रवाल अलीगढ़
असली-मीठी
बालजीवन घुट्टी
बच्चों की हर एक बीमारी को दूर करती
कमजोर बच्चों को ताक़तवर बनाती
जरासी रोजाना चटा देने से बच्चे कभी बीमार नही होंगे, दाँत आसानी से निकल आवेंगे।
— मू० शी० ।≈) दर्जन २।।) डा. व्य. अ. —
सब जगह बिकती है नकली घुट्टियों से बचें।
नए सौदागर नमूना मुफ्त मगावें।
पता. बालजीवन कार्यालय अलीगढ़

भारी रियायत—स्वास्थ्य-वर्द्धक दोनों औषधियों पर २५ फीसदी छूट—आज ही आर्डर भेजें

च्यवन प्राश (अष्टवर्ग युक्त)

हिमालय की ताजी वनस्पतियों एवं शुद्ध गंगाजल से तैयार

श्वास, कास, क्षय, दिल-दिमाग व फेफड़े की कमजोरी, कफ व पुराने जुकाम में लाभकारी पौष्टिक। मूल्य ६।।) सेर। रियायती ४।।।≈) पोस्टेज पृथक्।

सिद्ध मकरध्वज वटी

स्थायी स्वास्थ्य-वर्द्धक उत्तम रसायन

नपुंसकता, प्रमेह, वीर्यदोष, बल व पौरुष की कमी व कमजोरी में अतीव लाभकारी। मूल्य ३२ गोलियों का ८) रियायती ६) पोस्टेज अलग।

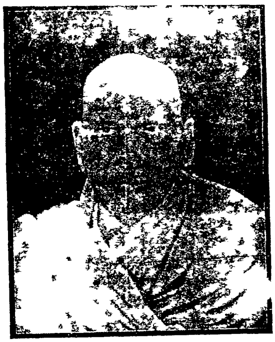
नोट :—इन दवाइयों को बीमार व तन्दुरुस्त दोनों ही सेवन कर सकते हैं।

विशेष सूचना :—संग्रहणी, जीर्णज्वर, पेट व जिगर-रोगों के प्रसिद्ध चिकित्सक मेरठ निवासी श्री प० हरिशङ्करजी वैद्य-शास्त्री तथा प० मातृदत्त पाण्डेय आयुर्वेदाचार्य से इलाज के लिये म० वि० में या चौक बाजार कनखल में मिलिये या लिखिये। (सभी पत्र-व्यवहार गुप्त रखा जाता है)।

पता गुरुकुल महाविद्यालय फार्मेसी ज्वालापुर, जिला सहारनपुर (सूचीपत्र मुफ्त)

ओ३म्
आर्य-मित्र
• ARYA-MITRA , AGRA •
उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
सचालक—आर्यमित्र प्रकाशन लि० लखनऊ
८ मार्च १९५१

तीन-विभूतियाँ



निभय नता न्श क
गुरु ल गारव कन्द
आयजा त क प्राणाप्रय
स्वामी श्रद्धानन्द



ताकिकता क मुकुट-मणि
भव-बन्धन-स्वच्छन्द
शास्त्रार्थ गज कसरी
स्वामि दशनानन्द '



स्वावलम्ब का मति मृदु
पारुष क अवतार
नारायण स्वामी सधा
गुण गरिमा आगार

वापक मू य
विदश में)
तीन आन
सम्पादक हरिशङ्कर शर्म्मा

लेखराम—वीर तृतीया

श्री विहारीलाल शास्त्री



स्व० प० लेखरामजी

फाल्गुन सुदी तृतीया वह दिन है, जब साम्प्रदायिकता के कटीले विष-वृक्ष को समूल उखाड़ने वाले आर्यपथिक पूज्य प० लेखरामजी का एक साम्प्रदायिक मदोन्मत्त व्यक्ति ने बलिदान कर डाला था। इस व्यक्ति से पण्डितजी की कोई शत्रुता न थी, और न इसके सम्प्रदाय वालो का पण्डितजी ने कुछ बिगाड़ा ही था। पण्डिजी केवल इन लोगो के उन्मादक विचारो को दूर करना चाहते थे। उन विचारो को जिनके कारण योग्य से योग्य और भले से भला व्यक्ति भी इस लिए बध योग्य ठहरा दिया जाता है, कि वह परोक्ष-विषय में एक वर्ग से विचार-विभिन्नता रखता है। अल्लाह का कुरानी स्वरूप, मुहम्मद साहब, जिब्राईल कुरान ईश्वरीय ज्ञान, फरिश्ते, कयामत, दोजख, बहिश्त इत्यादि सब ही परोक्ष विषय है। इनको मानने और समझने में भेद रहना आवश्यक ही है। युक्ति-प्रमाण की सबलता और अपना ग्रहण करने की शक्ति के बिना ऐसे विषय पर सबकी एक-सी आस्था कैसे हो सकती है। पर कुरान ऐसे लोगो को बध योग्य ठहराता है, कि जो कुरान की मान्यता से शत-प्रतिशत सहमत नहीं। इन्ही विश्वासों और व्यवहारो के कारण मुस्लिम राज्यों में ग़ैरमुस्लिम प्रजा नहीं रही, और रही तो बहुत कम दुर्दशा-ग्रस्त और अपमानित। हैदराबाद, भूपाल, रामपुर तो कल की ही बात है। बहुसंख्यक होते हुए भी हिन्दुओं की वहाँ धार्मिक दशा क्या थी और अब पाकिस्तान में क्या है। बादशाही जमाने की सुदशा का कभी कभी वर्णन करके कुछ मुस्लिमपरस्त हिन्दू मुस्लिम-शासन की सफाई दिया करते है। पर वे यह भूल जाते हैं कि उस काल में भी हिन्दू बिल्कुल मुर्दा नहीं हो गए थे। उनके बाहुओं में बल था और तलवारो में पानी। अपने बल वीर्य से ही वह मुस्लिम शासको की सफलता को रोक रखते थे। वस्तुतः पारलौकिक बातो को लेकर इस्लाम ने बहुत ही वैर भाव फैला दिया है। यो मुसलमान भी मनुष्य है, उनमे भी हृदय है। मुसलमानो की सहृदयता की सैकड़ो घटनाएं है। पाकिस्तानी हत्याकाण्ड के समय भी मुसलमानों ने सहानुभूति और सहृदयता के सैकड़ो मानवोचित उदाहरण उपस्थित किये।

शिक्षा का बहुत प्रभाव पड़ता है, और यदि यह शिक्षा ईश्वर के नाम से हो तो ईश्वर से डरने वालो के ऊपर तो यह जादू का असर डालती है। ईश्वर के नाम पर दी गई असहिष्णुतापूर्ण क्रूर शिक्षाओं से कितने ही दयालु मुसलमानो का चित्त भी बदल जाना स्वाभाविक है। मानवता को जीवित रखने और सहृदयता का विनाश रोकने के लिये आर्यपथिक पण्डित लेखराम ने बीड़ा उठाया था। क्रूरतापूर्ण हिंसात्मक शिक्षाओ को वे तर्क से उखाड़ फेंकना चाहते थे। उन्होने निर्भय घोषणा की कि वैर-विरोध फैलाने वाली शिक्षाएं कदापि ईश्वरीय नहीं हो सकतीं। वे सम्प्रदायवाद और मतान्धता के विरोधी थे। उद्दण्ड मतान्धता ने इस सहृदयतापूर्ण प्रशंसनीय कार्य के 'अपराध' में उनके पेट में छुरा भोंक दिया। परन्तु ईश्वर के सच्चे विश्वासी, दया के स्वरूप, मनुष्य-मात्र को अविद्या से बचाने के इच्छुक, आर्यपथिक ने छुरा खाकर भी कहा - 'कातिल पकड़ा जाय तो उसे फाँसी न कराना जिससे वह कभी समझ सके कि मैं भूल पर था।"

—

सभा की सूचनाएं

आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का वार्षिक साधारण अधिवेशन (बृहदधिवेशन) २०, २१, २२ अप्रैल १९५१ को लखनऊ में होना निश्चित हुआ है। अधिवेशन की तैयारियाँ प्रारम्भ हो गई हैं। प्रतिनिधि महोदय कृपया उपर्युक्त तिथियाँ नोट कर लें। स्थान आदि की सूचना शीघ्र दी जावेगी। प्रतिनिधि वार्षिक चित्र सभा कार्यालय में अब तक केवल ५० आर्यसमाजो के भी नहीं आये। उत्तर प्रदेशीय समाजो को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये और शीघ्र ही दशांशादि के साथ चित्र भेजने की कृपा करनी चाहिये।

जिला उपसभाओ को सूचित किया जाता है कि अपने-अपने वार्षिक वृत्तान्त सभा की रिपोर्ट मे सम्मिलित करने के लिये शुल्क सहित शीघ्र भेजने की कृपा करें।

पीतमलाल सभा मन्त्री

—

आर्य वीर दल-सूचना

उत्तर प्रदेशीय समस्त आर्यवीर दलों के सचालको से निवेदन है कि सभा का वर्ष समाप्त हो गया। रिपोर्ट बनना प्रारम्भ हो गई है। अतः आर्यवीर दल सम्बन्धी कार्य की रिपोर्ट सभा-कार्यालय में १० मार्च तक भेजने की कृपा करें।

रामदत्त शुक्ल,
अधिष्ठाता आर्यवीर दल

—

भ्रमण प्रोग्राम

राजगुरु श्री प० धुरन्द्र शास्त्री प्रधान सार्वदेशिक सभा का मार्च मास का भ्रमण-प्रोग्राम इस प्रकार है।

३ मार्च आर्यसमाज नयाबास देहली।

४-५ मार्च गुरुकुल झज्झर रोहतक।

६ मार्च ग्वालियर।

८ मार्च जबलपुर।

१४-१५ मार्च मण्डी धनौरा (मुरादाबाद)।

१८-१९ मार्च भुसावर (भरतपुर)।

२५, २६, २७ मार्च आर्यसमाज लातूर (हैदराबाद)

—

व्याख्याता या 'पुस्तक-विक्रेता'

हमारे पास ऐसी अनेक चिट्ठियाँ आ रही हैं, जिनमें उन उपदेशकों और व्याख्याताओं की शिकायत की गयी है, जो आर्यसमाजों में व्याख्यान देते समय अपनी रची पुस्तकों का बार-बार उल्लेख करते, उनके हवाले देते और जनता से उन्हें खरीदने को आग्रहपूर्वक कहते हैं। परिणाम यह होता है कि ये व्याख्यान दुकानदारी के व्याख्यान समझे जाते हैं, और उनका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। दुकानदारी की यह लत छोटे उपदेशको तक ही सीमित नहीं, बड़े-बड़े व्याख्याताओं में भी है। हमारा स्वयं भी कुछ ऐसा ही अनुभव है। ऐसे पुस्तक-विक्रेता व्याख्याताओं से हमें यही प्रार्थना करनी है कि वे तो निस्वार्थ भाव से प्रचार का ही काम करें, शुद्ध भावना से व्याख्यान दें। अपनी पुस्तको की सूचना देने का काम, यदि आवश्यक ही समझें तो, समाज के मन्त्री या प्रधान महाशय से करा लिया करें। यह तरीका ठीक है। अपने आप अपनी कृतियो का बखान करना न तो अपने लिये उचित है, और न उस क्षेत्र के लिये जहाँ प्रचार किया जारहा है। आशा है कि हमारे इस निवेदन पर विद्वान् व्याख्याता अवश्य ध्यान देने की कृपा करेंगे।

—सम्पादक

धर्म और राजनीति

मनुष्य जाति का कल्याण इसी में है कि राजनीति को धर्म के अन्तर्गत रक्खा जाय। परन्तु धर्म से तात्पर्य आत्मज्ञान से है न कि साम्प्रदायिकता से। दुर्भाग्य की बात तो यह है कि जब लोग अपनी प्रशंसा करते हैं तो धर्म के बड़े उदार अर्थ लेते हैं। परन्तु जब व्यावहारिक क्षेत्र में आते हैं तो उनका अर्थ सकुचित ही होता है।

श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय

—

आर्यसमाज बम्बई की

हीरक जयन्ती

आर्यसमाज बम्बई अपने ७५ वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में हीरक-जयन्ती महोत्सव मना रहा है। उत्सव को सफल बनाने के लिए एक प्रभावशालिनी कार्यकारिणी का निर्माण किया जा चुका है। तिथियाँ शीघ्र ही निश्चित की जायंगी।

—

'तपसाऽनाशकेन'

आर्य ॐ मित्र

आगरा, फाल्गुन शुक्ल १ संवत २००७वि०, गुरुवार ता० ८ मार्च १९५१
दयानन्दाब्द १२६, सृष्टि-सवत् १९७२९४९०५०

ओ३म् तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। ऋ० १-२२-२०
ज्यों लोग सूर्य को देख मग्न होते हैं
त्यों ज्ञानी प्रभु-दर्शन-निमग्न होते हैं

नयापग

'सहयोग-योजना'

महर्षि दयानन्द का विचार, आर्यसमाज की स्थापना द्वारा, किसी सम्प्रदाय विशेष को जन्म देना नही था। वे तो संकीर्णतामूलक सम्प्रदायवाद के कट्टर विरोधी थे। मानवता, एकता, समता, स्वतन्त्रता और भ्रातृभाव के सबल समर्थक होने के कारण ही ऋषि ने आर्यसमाज की स्थापना की। आर्यसमाज के सिद्धान्त क्रान्तिकारी थे, उसने धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक और राजनैतिक जगत् में क्रान्ति की भावना भरनी प्रारम्भ की। हिन्दू-समाज तथा अन्य मत-मतान्तरों को घोर निद्रा से जगाया, उन्हे यह तन्द्रा तोड़ने वाली नीति बुरी लगी और वे समाज के विरोधी बन गये। परन्तु आर्यसमाज बड़ी लगन और तत्परता से अकेला ही कार्य करता रहा। घर-बाहर जहाँ भी उसका विरोध हुआ सबका उसने सहर्ष स्वागत किया, पर, कार्य करना नहीं छोड़ा।

वर्षों बाद जनता को होश आया और अब उसने समझा कि जिस आर्यसमाज को उसने अपना अहितचिन्तक और वैरी-विरोधी समझा था, वस्तुतः वही उसका सच्चा शुभचिन्तक और सेवक-सहायक है। आज मूर्तिपूजा, श्राद्ध आदि दो-तीन बातो को छोड़ कर, शेष सभी बातों में हिन्दू जनता आर्यसमाज से सहमत है। शुद्धि और विधवा-विवाह को तो वह अपना चुकी, अछूतोद्धार में भी उसे कोई आपत्ति नहीं। छुआछूत का प्रश्न भी बहुत कुछ हल हो गया है।

ऐसी दशा में आर्यसमाज का कर्तव्य है कि वह अपना अस्तित्व और संघटन-सूत्र ज्यों का त्यों कायम रखता हुआ, उन सब बातों में हिन्दुओं से मिल-जुल कर स्नेह और सहयोग मे काम करे जिनमें किसी प्रकार का मतभेद शेष नहीं है, सब सहमत हैं। मद्य निवृत्ति, अपराध-निवारण, भ्रष्टाचार-विरोध, शिक्षा-प्रचार, भारतीय संस्कृति प्रसार, हिन्दी-विस्तार, अछूतोद्धार, शुद्धि आदि अनेक ऐसे कार्य है जिनमें कन्धे से कन्धा भिड़ा कर काम किया जा सकता है। इस प्रकार सहयोगपूवक कार्य करने से एक-दूसरे के साथ सम्पर्क में आना स्वाभाविक होगा और बहुत-से भ्रम सरलता से दूर हो जायेंगे। सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि काम करने की शक्ति में एकता और दृढ़ता का समावेश होगा।

इन पंक्तियो का लेखक इस विषय में अपने निजी अनुभव के आधार पर यह उल्लेख कर देना आवश्यक समझता है कि दो वर्ष पूर्व आगरा के चारों आर्यसमाजो ने मिलकर ऋषि-उत्सव मनाया। शहर के अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति भी आमन्त्रित किये गये। इनमें सभी वर्गों के सज्जन थे। सभी ने ऋषि दयानन्द का गुणगान किया और अपनी श्रद्धांजलियाँ अर्पित कीं। इसी प्रकार राजामण्डी-(आगरा) आर्यसमाज के उत्सवो पर विविध सम्मेलनो के अध्यक्ष और वक्ता अधिकतर आर्यसमाज से बाहर के विद्वान् ही होते हैं। ये विद्वान् और वक्ता उन उद्देश्यो से सहमत होने के कारण वेही बात कहते हैं, जो आर्यसमाज को अभीष्ट हैं। परिणाम यह होता है कि व्याख्यानों और उत्सवो की लोक-प्रियता बहुत बढ़ जाती है और बहुसंख्यक उपस्थिति उनसे लाभ उठाती है। आर्यसमाज का कोई ठोस विद्वान् व्याख्याता आगरा या लखनऊ अथवा प्रयाग या काशी आदि शिक्षा-केन्द्रों में विश्व-विद्यालयों के तत्वावधान में व्याख्यान दे तो उसकी उपयोगिता और महत्ता कितनी बढ़ सकती है। इन व्याख्यानों का विशेष रूप से प्रबन्ध हो और नगर का कोई प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित नागरिक अध्यक्ष का आसन ग्रहण करे। इसी प्रकार यदि आर्यसमाज से बाहर का कोई विद्वान् आर्यसमाज के तत्वावधान में, सर्वसम्मत विषयो पर व्याख्यान दे तो इससे आर्यसमाज का प्रचार-क्षेत्र बहुत व्यापक और विस्तीर्ण होगा। आर्यसमाज पर संकीर्णता या साम्प्रदायिकता का जो मिथ्या आरोप लगाया जाता है वह भी दूर हो जायगा। मिल-जुल कर कार्य करने से सहयोग और स्नेह में तो वृद्धि होगी ही।

जिन दो-चार उद्देश्यों से आर्यसमाज औरों से सहमत नहीं है, उनका प्रचार वह अकेला ही बड़ी सफलतापूर्वक कर सकता है। हम समझते हैं आर्य विद्वान् इस सहयोग-नीति पर गम्भीरतापूर्वक विचार करेंगे और उचित समझेंगे तो उत्साहपूर्वक अपनाने की सलाह देंगे। इस योजना की क्रियात्मकता और सम्भावना में तो कोई सन्देह ही नहीं किया जा सकता।

श्री बा० सीतारामजी का देहान्त

शोक है कि लखीमपुर-खीरी के आर्यनेता श्री बा० सीताराम एडवोकेट का देहान्त हो गया। आप वयोवृद्ध थे, आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान व उपप्रधान पदो पर भी प्रतिष्ठित रह चुके थे। प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभा के सदस्य भी रहे थे। आपके जीवन का अधिकाश वैदिक धर्म की सेवा में ही व्यतीत हुआ। आपके सार्वजनिक जीवन का संक्षिप्त परिचय शीघ्र ही इन स्तम्भों में प्रकाशित करने का उद्योग किया जायगा।

गन्दे 'सिनेमा'

सिनेमाओं की सृष्टि का मुख्य उद्देश्य, जहाँ तक हम समझ सके हैं—मनोरंजन और ज्ञान-वर्द्धन होना चाहिये। परन्तु क्रिया इसके विपरीत हो रही है। ये सिनेमा प्रायः अपने गन्दे गानों और अश्लील प्रदर्शनो द्वारा दर्शकों की कामुकता को ही उत्तेजित करते दिखाई देते हैं। जिस प्रकार किसी देश में दूषण बड़ी तीव्रता से फैलते हैं, उसी प्रकार सिनेमाओं की वृद्धि द्रुत गति से हो रही है। रोज कई-कई 'शो' होने पर भी दर्शको की तृप्ति नहीं हो पाती। छोटे-छोटे बच्चे सिनेमा-सुन्दरियो के गन्दे से गन्दे गाने गुनगुनाते फिरते हैं। आज के सिनेमा मनोरंजन और ज्ञान-वर्द्धन के बदले कामुकता और चरित्रभ्रष्टता में सहायक हो रहे हैं। आश्चर्य और खेद तो यह है कि रामराज्य-स्थापना का स्वप्न देखने वाली स्वराज्य-सरकार का सैंसर विभाग भी इन गन्दगियो को आँखें मीच कर घर-घर में बिखरने के लिये स्वीकृति दे देता है। कुछ चित्र और गाने अच्छे भी हैं, परन्तु अधिकतर कुरुचिपूर्ण ही हैं। हम स्वतन्त्र भारत के 'सैंसर विभाग' का ध्यान इस गन्दगी की ओर बड़े जोर से आकृष्ट करना चाहते हैं, साथ ही सुधारको और सुधारक संस्थाओं से हमारा निवेदन है कि वे दर्शकों को इन गन्दे सिनेमाओं के दोष दिखाकर उन्हे उनमें जाने से रोकें। नैतिकता के नाम पर यह एक बड़ा उपयोगी और श्रेयस्कर पग होगा। बहुत-से दर्शक सिनेमा की गन्दगी के गढ़े में गिरने से बच जायगे और जहाँ उनका चरित्र सुरक्षित रहेगा, वहाँ उनके पैसे भी बरबादी से बचेंगे।

'शिक्षा' की दुर्गति

माननीय राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रप्रसादजी ने अपने हालके भाषण में वर्तमान शिक्षा-विधि की निरर्थकता के सम्बन्ध में कितने ही महत्वपूर्ण संकेत दिये हैं। वास्तव में स्कूलो और कालिजों में जो

शिक्षा-विधि प्रचलित है, उससे नवयुवकों का शारीरिक, मानसिक और आत्मिक विकास बहुत ही कम होता है। साल-भर तक मोटे पोथे रट कर परीक्षा के समय परीक्षा-पत्रों पर उन्हें उगल आने का नाम ही शिक्षा मान लिया गया है। हम तो समझते हैं, सच्ची शिक्षा वह है जो मनुष्य को मनुष्य बनाकर उसे नैतिकता और सदाचरण की ओर अग्रसर करती है। आज देश में अनैतिकता का बोलबाला है, सर्वत्र भ्रष्टाचार की विभीषिका दिखाई दे रही है। क्यों? उचित शिक्षा के अभाववश। यदि आज विद्यालयों और महाविद्यालयों में पाठ्यक्रम के साथ-साथ छात्रों के चरित्र-निर्माण पर भी पूरा ध्यान दिया जाता तो यह दुर्गति क्यों होती। 'सीनियर' 'जूनियर' 'लोअर' 'हायर' यह और वह योजना तो शिक्षा-शालाओं के सम्बन्ध में बहुत सुनाई पड़ती हैं, परन्तु शिक्षा में उपयोगिता लाने के लिये विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। पाठ्य पुस्तकें तो शीघ्र-शीघ्र बदलती हैं, परन्तु उनकी उत्कृष्टता और उपयोगिता उपेक्षित होती रहती है। अब से चालीस-पचास वर्ष पूर्व विद्यार्थीगण जितनी ठोस रीति से ज्ञान-संपादन करते थे, कदाचित् उतना ठोसपन अब उनमें नहीं दिखाई देता। हम तो समझते हैं, सरकारी शिक्षा-विभाग को शिक्षा-समस्या की मुख्यता मानकर उसे अधिक से अधिक उपयोगी बनाना और भारतीय दृष्टिकोण से सुलझाना चाहिये। 'सीनियर' 'जूनियर' 'लोअर' 'हायर' से कुछ नहीं बनेगा। शिक्षणालयों में नैतिकता और मानवता पैदा करने वाली शिक्षा-विधि प्रचलित करने की आवश्यकता है। पौधे की जड़ में पानी देना चाहिए, पत्तों पर छिड़कने से कोई लाभ न होगा।

आर्य-ध्वज का स्वरूप

कुछ लोग अब भी ऐसे लेख प्रकाशनार्थ भेज रहे हैं, जिनमें 'आर्यध्वज' का स्वरूप निश्चित करने की मीमांसा है। ऐसे लेखों का प्रकाशित करना अनावश्यक ही नहीं व्यर्थ भी है, क्योंकि सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा ३ अगस्त १९४७ के निश्चय संख्या १३ द्वारा इस विषय में अपना अन्तिम निर्णय कर चुकी है और उसी के अनुसार आर्य-ध्वज प्रचलित है। निश्चय का सार यह है—ध्वज का रंग अरुण हो। ध्वज के मध्य में चौड़ाई का एक तिहाई भाग घेरे हुए सूर्य हो। किरण सफेद रंग की हों, बीच में 'ओ३म्' सफेद रंग का हो। ध्वज की लम्बाई, चौड़ाई से डेढ़ गुनी हो।' फिर भी इस विषय में जो सुझाव हों वे सार्वदेशिक सभा को भेजने चाहिएं, पत्रों में छपाने से कोई लाभ नहीं।

प्रिंसिपल साहब की अनभिज्ञता

सीतापुर आर्यसमाज के मन्त्री श्री मातादीन आर्य ने हमारा ध्यान A hand book of general knowledge नामक पुस्तक के पृष्ठ-संख्या ६६ पंक्ति १३ की ओर आकृष्ट किया है, जिसमें श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती के जीवन पर प्रकाश डालते हुए लेखक ने लिखा है—

"उनके (स्वामी दयानन्दजी के) माता-पिता ने उन्हें बन्धन में डालने के लिए २० वर्ष की अवस्था में, एक सुशील कन्या से विवाह कर दिया था।"

इस पुस्तक के लेखक हैं, श्री शिवकुमारलाल श्रीवास्तव प्रिंसिपल डी० ए० वी०, हायर सेकेण्डरी स्कूल कानपुर। एक प्रिंसिपल और फिर डी० ए० वी० स्कूल के प्रिंसिपल की लेखनी से बाल ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द के सम्बन्ध में ऐसी अज्ञता से भरी बात लिखी जाय, इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या हो सकता है। खेद है कि श्रीवास्तव साहब को इस विश्व-विख्यात घटना का भी पता नहीं कि ऋषि दयानन्द बाल ब्रह्मचारी थे। इस बात को देश का बच्चा-बच्चा जानता है। यह किताब हाईस्कूल के कोर्स में नियत है, अतः शीघ्र से शीघ्र इसका संशोधन हो जाना चाहिये, नहीं तो पढ़ने वाले बालकों की कोमल गति-मति पर इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा। प्रिंसिपल साहब को चाहिये कि वे भविष्य में जो कुछ लिखें, खोज और जिम्मेदारी के साथ लिखा करें, यों ही बिना देखे-भाले लिख मारना ठीक नहीं।

अध्यात्म धारा

अध्यात्म क्या है?

श्री वेदतीर्थ

"अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते"—(गीता ८-३)

वह अविनाशी परं ब्रह्म अध्यात्म है, जीव का अपना स्वरूप भी अध्यात्म है। इसका स्पष्ट सरल अर्थ यह हुआ कि जीवात्मा और परमात्मा सम्बन्धी जो कुछ है वह सब अध्यात्म में आ जाता है। और स्पष्ट करना हो तो जीवात्मा और जीवात्मा से सम्बन्ध रखने वाला देह, इन्द्रिय, मन बुद्धि ये सब अध्यात्म में आजाता है, और जीवात्मा को अपने स्वरूप का यथार्थ ज्ञान नहीं होता तब तक वह परं ब्रह्म को प्राप्त कर नहीं सकता। आनन्द के स्रोत परमात्मा को प्राप्त किये विना केवल पशुवत् संसार के कीडे बने रहने में क्या सुख है। सांसारिक जितने भी सुख हैं, वे सस्पर्शज सस्पर्श से उत्पन्न होने वाले सुख हैं। इसीलिए अनित्य हैं, अधिक काल तक टिकने वाले नहीं हैं। यह शरीर भी अनित्य, शरीर को टिकाने वाले सभी पदार्थ, सभी साधन अनित्य हैं। उसी का जन्म सफल है, जो इन अनित्य साधनों द्वारा पालित, पोषित, संवर्धित होकर जीवात्मा के स्वरूप को समझ कर परमात्मतत्व की ओर बढ़ता चले। यह परमार्थ तत्व ही संसार से पार करने वाला है, परमार्थ ही धार्मिकों का परलोक साधक है, परमार्थ ही जन्म को सार्थक करने वाला है, परमार्थ ही तपस्वियों का आधार, परमार्थ ही साधकों का आश्रय, परमार्थ ही भवसागर का पार कराने वाला, असली राजा वही जो परमार्थी, नहीं तो सब भिखारी। इस परमार्थ की समता करने वाला संसार में कौनसा पदार्थ है? कोई नहीं। अनन्त जन्म का पुण्य जुटता है तब परमार्थ सधता है, तब परमात्म-दर्शन होते हैं। जिसने इस परमार्थ को पहचाना उसने जन्म को सफल किया समझिए। नहीं तो वह पापी, जन्म-मरण के चक्र में फसा हुआ समझिए। वह तो कुल-कलङ्की ही है। भगवत्प्राप्ति के विना वह संसार के यातायात में ही फँसा रहेगा। ऐसे मूर्ख-शिरोमणि का मुख नहीं देखना चाहिए। भले पुरुषों को चाहिए कि संसार को साधते हुए परमार्थ साधें। अपने जन्म को सफल करें, अपने पूर्वजों तथा अपने कुल का उद्धार करें परमात्म-भक्ति द्वारा।

है तो यह शरीर नश्वर जिसका स्वामी है जीवात्मा और दोनों का स्वामी है, परमात्मा। इस नश्वर शरीर का चमत्कार देखो। इसको जैसे-जैसे परमार्थ का लाभ होता जायगा, वैसे-वैसे उसी अंश में सिद्धि भी शीघ्र मिलती जायगी। कोई भक्ति से चलेगा, कोई वैराग्य से बढ़ेगा, कोई तप से आगे सरकेगा, कोई ज्ञान बल पर चलेगा, कोई योगाभ्यासी बनेगा, कोई खाली नामस्मरण में उलझा रहेगा, कोई जप ही करता रहेगा, कोई वेदशास्त्र-उपनिषदों का आश्रय लेगा। कोई शरीर को विविध पीड़ा देकर हठयोग साधने लगेगा। इस प्रकार नाना साधनों से लोग परमार्थ तत्व को प्राप्त करने का प्रयत्न करते रहते हैं।

चरित्र-बल

जो आचार से हीन है, उसे वेद भी पवित्र नहीं कर सकते। आचार पहला धर्म है। इसलिये पूरी सावधानी से अपने चरित्र की रक्षा करो। यह संसार फिसलनी घाटी है। यदि जीवन-यात्रा में कभी पाँव फिसल जाय और न चाहते हुए भी चरित्र में कमजोरी आने लगे तो प्रभु के चरणों में झुक कर निवेदन करो—"जो मेरी आँख का छिद्र (दोष) है, अथवा मेरे हृदय या मन का जो गहरा गढ़ा है, बृहस्पति भगवान्। उसे तू भरदे।"

—श्री आनन्द स्वामी

सुझाव और सम्मतियाँ

दैनिक आर्यमित्र का स्थान

साप्ताहिक 'आर्य मित्र' आगरा से प्रकाशित हो रहा है, श्री हरिशंकर शर्मा के उद्योग से उसकी दशा बहुत उन्नत हो गयी है; और उसके आकार-प्रकार में भी सुन्दर परिवर्तन हो गया है। अब यह आशा की जा सकती है कि यदि इसी प्रकार कार्य होता रहा तो, दैनिक 'आर्यमित्र' का निकलना भी सुगम हो जायगा। इस समय विशेष आवश्यकता इस बात की है कि आर्यमित्र-प्रकाशन लि० अपना निज का प्रेस आगरा में अति शीघ्र स्थापित करदे और यह भी घोषित करदे कि दैनिक तथा साप्ताहिक 'आर्यमित्र' कम्पनी द्वारा आगरा से ही प्रकाशित होंगे। ऐसा करने से स्थान सम्बन्धी अनिश्चितता दूर हो जायगी। जब से दैनिक 'आर्यमित्र' निकालने का निश्चय हुआ है तभी से यह भी निश्चित है कि दैनिक 'आर्यमित्र' आगरा से निकलेगा, परन्तु यह आशा अभी तक पूरी नहीं हो पाई। दैनिक 'मित्र' के आगरा से प्रकाशित होने की घोषणा होते ही और उसके लिये यहाँ प्रेस स्थापित होते ही, धन एकत्र करने का कार्य तीव्र गति से प्रारम्भ कर दिया जायगा। कम्पनी की रजिस्टरी हुए तीन साल हो गए। तब से स्थान के सम्बन्ध में कोई निश्चित नीति न होने के कारण विशेष प्रगति नहीं हो सकी। पूर्ण आशा है कि अब स्थान के विषय में कम्पनी अपनी निश्चित घोषणा शीघ्रातिशीघ्र कर देगी। कम्पनी के मैनेजिंग डाइरेक्टर श्रद्धेय श्री मदनमोहन सेठ, एम० ए० मेरे पुराने मित्र हैं, उनको दैनिक 'आर्यमित्र' निकालने की बड़ी लगन है। सेठजी को अपनी दृढ़ता का परिचय देते हुए कम्पनी के कार्य को स्थायी रूप देने के लिये केवल स्थान सम्बन्धी घोषणा ही न कर देनी चाहिये, बल्कि उसे कार्य रूप में परिणत करने के लिए भी पूरी व्यवस्था करनी चाहिए। कम्पनी के प्रधान राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री से भी यही प्रार्थना है। स्थान सम्बन्धी अन्तिम निश्चय से कम्पनी के कार्य में प्रगति होना स्वाभाविक है। मेरी राय में अब तो दैनिक 'मित्र' के सम्बन्ध में निश्चित नीति द्वारा कार्य में जुट पड़ने की आवश्यकता है, जिससे वह शीघ्र से शीघ्र प्रकाशित हो और आर्यसमाज की एक बहुत बड़ी कमी पूरी हो सके।

मथुराप्रसाद एडवोकेट, आगरा

——

'आर्यमित्र'-पक्ष

स्वतन्त्र भारत में वैदिक धर्म-प्रचार के निमित्त जहाँ सैकड़ों उपदेशक तथा प्रचारक अथक परिश्रम से काम कर रहे हैं, वहाँ समाचारपत्रों द्वारा भी वैदिक ज्योति जगाने में बहुत बड़ी सफलता प्राप्त हो सकती है। प्रायः आर्यसज्जनों को शिकायत थी कि 'आर्यमित्र' का सम्पादन सुन्दरतापूर्वक नहीं होता। जब साप्ताहिक 'मित्र' ही ठीक नहीं निकलता तो दैनिक कैसे निकलेगा। एक-दो नहीं, सैकड़ों आर्य भाइयों की ऐसी धारणा थी, परन्तु अब तो 'आर्यमित्र' का बड़ी सुन्दरता से सम्पादन हो रहा है। पूर्वीय जिलों में आर्यसमाजी तथा आर्यसमाज के बाहर के अन्य लोग 'आर्यमित्र' को खूब पसन्द कर रहे हैं। यह मैं अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर लिख रहा हूँ। अब लोगों का दैनिक 'मित्र' के लिये आग्रह है। इस सम्बन्ध में मैं एक सुझाव रखना चाहता हूँ। मेरा विचार है कि उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा 'आर्यमित्र-पक्ष' की एक योजना बनावे। उस पक्ष में आर्यमित्र प्रकाशन लि० के हिस्से वेचे जावें। सभा के अन्तरंग-सदस्य, अधिकारी, उपदेशक, प्रचारक आदि सभी इसके लिये पूरा-पूरा उद्योग करें। प्रत्येक आर्यसमाज शक्ति-भर अपने नगर में हिस्से बेचे तो बड़ी आसानी से हजारों हिस्से बिक सकते हैं। सभा के ३२ उपदेशक हैं। अगर प्रत्येक उपदेशक 'आर्यमित्र-पक्ष' में दो-दो हजार रुपये के शेयर भी बेचे तो ६४ हजार रुपये के शेयर बिकने में कोई कठिनाई नहीं। सभास्थ उपदेशक और प्रचारक इस पक्ष में स्वतन्त्र कर दिये जायें। जहाँ उनकी इच्छा हो, वहाँ वे शेयर बेचने का काम करें। कुछ उपदेशक कम हिस्से बेच पायेंगे तो कुछ अधिक बेचेंगे। औसत ठीक रहेगा। 'आर्यमित्र-पक्ष' में उपदेशकों को वेतन और मार्ग-व्यय के अतिरिक्त यदि कुछ कमीशन भी दिया जायगा तो वे अधिक उत्साह से काम करेंगे। मैं अपने उपदेशकों तथा प्रचारक भाइयों से विशेष रूप से प्रार्थना करता हूँ कि वे जिस प्रकार अनेक असुविधाएँ और कष्टों के होते हुए भी वैदिक धर्म-प्रचार में संलग्न हैं, उसी प्रकार दैनिक 'मित्र' के हिस्से बिकवाने में भी योग देना अपना कर्तव्य समझें। आर्य-प्रतिनिधि सभा के अधिकारी, अन्तरंग सदस्य और सदस्य भी इस दिशा में अवश्य अपना कर्तव्य-पालन करें।

शिवनारायण वेदपाठी,
उपदेशक, सभा

——

राजनीति में सहयोग

आर्यमित्र द्वारा जो सुझाव आर्यसमाज के प्रति राजनीति में सक्रिय भाग लेने के लिए प्रकट किये गए हैं, उनसे कोई बिरला ही आर्य सदस्य सहमत न होगा। नहीं तो देश के अन्दर जो असन्तोष आज फैल रहा है, उससे क्षुब्ध होकर आज प्रत्येक विचारशील आर्य इस निश्चय पर पहुँच रहा है, कि अपनी शुद्ध-शान्तिपूर्ण भारतीय संस्कृति के आधार पर राष्ट्र-निर्माण कराने के लिए सामूहिक रूप से आर्यसमाज को आज राष्ट्र के कर्णधारों को बाध्य करना होगा और उसके लिए सांविधानिक उपचार को ग्रहण करके यह आवश्यक होगा कि सभाओं में निर्वाचित करके इस प्रकार के ही प्रतिनिधि भेजे जावें जो केवल वैदिक संस्कृति से परिचित ही न होवें प्रत्युत अपने सामाजिक व दैनिक जीवन में उसको कार्यान्वित भी करते रहे हों। और यह तभी सम्भव हो सकता है, जब कि सार्वदेशिक सभा या प्रान्तीय सभाएँ अधिवेशन में विचार-विनिमय करने के पश्चात् अपनी निश्चित नीति की घोषणा करके समस्त आर्यसमाजों को तदनुकूल कार्य करने के लिये आदेश दे दें। यदि भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न आर्यसमाज अपने यहाँ की नीति अलग-अलग ग्रहण करें, तो सफलता मिलना तो दूर रहा, उलटा जगहँसाई का एक साधन होगा। मेरे विचार से आर्यसमाज ही एक ऐसी जागरूक संस्था है, जो कि समाज की इस जटिल समस्या को सुलझाने में सहायक हो सकती है। यह कहना तो व्यर्थ ही होगा कि आर्यसमाज के द्वारा अपना चरित्र-निर्माण करके कितने आर्यवीरों ने केवल देश-प्रेम के नाते दूसरी संस्थाओं में जाकर अपना नाम उज्ज्वल किया है। चाहे सैनिक बन कर कार्य किया, चाहे शासक बन कर राष्ट्र की बागडोर अपने हाथों में ली। लेकिन वे अपनी सच्ची धार्मिक भावनाओं के कारण सांसारिक प्रलोभनों से अलग रहे। उनके ऊपर पद के मद का प्रभाव नगण्य ही-सा रहा। उन्होंने पदलोलुपता के कारण नहीं, कर्त्तव्य के नाते ही कार्य किया। इस लिए ऐसे महान् आदर्शों को व्यावहारिक जीवन में ढालने का जो कार्य आर्यसमाज में होता रहा है, उस आधार पर मुझको पूर्ण विश्वास है कि जनता का पूर्ण सहयोग आर्यसमाज द्वारा प्रस्तावित निर्वाचित प्रतिनिधियों को प्राप्त होगा। जिस समय हम अपने राष्ट्रपति की इन सद्भावनाओं को सुनते हैं कि वर्त्तमान शिक्षा-प्रणाली में घोर परिवर्त्तन होने की आवश्यकता है, वर्त्तमान सिनेमाओं के चलचित्र समाज के नैतिक पतन में सहायक हैं, तो हृदय में एक मीठी टीस होती है कि उनके सन्देश को कार्यान्वित करने के लिए आज कोई संस्था इस प्रकार का जनमत बना कर क्षेत्र तैयार नहीं करती। यदि इस संकट-काल में भी आर्यबन्धु नहीं चेतेंगे, तो इसके कटु परिणाम का उत्तरदायित्व भी उन्हीं के कन्धों पर होगा। इस वर्ष सम्भवतया आर्य-महा-सम्मेलन की योजना उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर में होने को है, और उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का वार्षिक निर्वाचन अप्रैल में होने को है, इसलिए आर्यसमाज के एक क्षुद्र सेवक के नाते मेरी यह प्रार्थना है कि, इन दोनों सम्मेलनों में भले प्रकार निश्चय कर लेने के बाद आर्यसमाज के कार्यकर्त्ताओं

[शेष पृष्ठ १३ पर]

विज्ञान-वार्ता

विचित्र वृक्ष

प्रो० बाबूराम गुप्त, एम० एस-सी०

[प्रो० गुप्त आगरा कालिज में वनस्पति-शास्त्र के अध्यापक है। अपने-अपने विषय में प्रशसनीय 'रिसर्च' की है। हमें हर्ष है कि वनस्पति शास्त्र-सम्बन्धी लेख आपकी लेखनी से 'आर्यमित्र' के पाठकों को पढ़ने को मिलते रहेंगे।
—सम्पादक]

केशर—केशर का नाम तो सब ही जानते है, क्या आपने उसे कभी ध्यान से देखा है ? वह लाल रंग के छोटे-छोटे धागे के टुकड़े जैसे होते है। उन्हें पानी के साथ घिसने से गहरा, पीला रंग हो जाता है। केशर सुगन्धित होती है और कई रोगो में काम आती है। केशर कश्मीर से आती है। ससार में और कहीं वह नहीं होती। इसका पौधा प्याज के पौधे से मिलता-जुलता है। केशर की खेतो में जब फूल खिलते है तब चारो ओर अत्यन्त मधुर सुगन्ध फैल जाती है। पूरा फूल केशर नही होता, उसका छोटा-सा भाग जो लाल धागे के सदृश होता है, केवल वही केशर कहलाता है। एक छटाक केशर के लिए दस सहस्र फूलों की आवश्यकता होती है। इसीलिए केशर का मूल्य अधिक होता है। बाजारो में जो सस्ती केशर मिलती है वह वास्तव में केशर नहीं होती। केवल उसकी सुगन्ध केशर की-सी होती है। कश्मीर में नदी-नाले बहुत है, इसलिए वहा पानी में तैरने वाले खेत भी बनाए जाते हैं, जिन पर केशर की खेती होती है। ये खेत लकड़ी के बनते है, और उन पर मिट्टी बिछी रहती है। केशर के पौधे उसी मिट्टी में लगाए जाते है। केशर की खेती करने का प्रयत्न कश्मीर से बाहर भी किया गया, परन्तु वह सफल नहीं हुआ। कश्मीर का जल-वायु कैसा विचित्र है !

बिच्छू बूटी—पहाड़ी स्थानो में बिच्छू बूटी के पौधे जगली होते है, और बहुतायत से पाये जाते है। यह पौधा लगभग दो फुट ऊँचा होता है। कुछ पौधे इससे बहुत छोटे अथवा बड़े भी होते हैं। इनकी पत्तियो और डंडियो पर सफेद रंग के बहुत-से बाल होते है। इन बालों में बिच्छू जैसा डंक मारने की शक्ति होती है, क्योकि वह एक प्रकार के विष से भरे रहते है। जब कोई बिच्छू बूटी के पौधे को छूता है, तो यह बाल शरीर में घुस जाते है, और वह जहर भी शरीर में पहुच जाता है, जिसके कारण दर्द होने लगता है। कभी-कभी यह दर्द घटों रहता है, और बहुत दुःख देता है। पर प्रकृति का नियम देखिए, संसार में भले-बुरे साथ-साथ रहते है। बिच्छू बूटी के आसपास बहुधा एक और जगली पौधा होता है, जिसकी पत्ती पालक के शाक जैसी होती है। यदि इसके पत्तो को बिच्छू बूटी के काटे हुए स्थान पर रगड़ दिया जाय तो थोड़ी ही देर में दर्द बन्द हो जाता है।

चन्दन—चन्दन का वृक्ष भारतवर्ष को छोड़ कर संसार में और कहीं नही होता, भारतवर्ष में भी मैसूर रियासत में। वास्तव में मैसूर रियासत को सहस्रो वर्ष से चन्दन द्वारा अच्छी आय रही है। यह छोटा सा वृक्ष होता है पर इसका लगाना कठिन है। जब यह छोटा होता है तब किसी दूसरे पौधे के बिना नहीं रह सकता, क्योंकि उसके द्वारा वह अपने लिए खाना-पानी अपनी जड़ों की सहायता से खींच लेता है। यदि चन्दन को इस प्रकार की सहायता न मिले तो वह छोटा-सा चन्दन का पौधा मर जाय। यदि आपने चन्दन का वृक्ष देखा है तो आपको एक विचित्र बात ज्ञात हुई होगी। वह यह कि हरे-भरे वृक्ष से सुगन्ध बिल्कुल नहीं निकलती, परन्तु जब लकड़ी सूख जाती है तो उससे सुगन्ध आने लगती है। महाकवि रहीम ने भी कहा है—

जो रहीम उत्तम प्रकृति
का करि सकत कुसंग
चन्दन विष व्यापत नहीं
लिपटे रहत भुजंग

और भी कितने ही कवियो का ऐसा ही कथन है, कि चन्दन पर सर्प लिपटे रहते है, परन्तु यह सब कल्पना मात्र है। चन्दन की सुगन्ध का कारण है एक प्रकार का तेल जो सूखी लकड़ी में होता है। यह तेल कई रोगो में काम आता है। हम लोग चन्दन की लकड़ी को पवित्र मानते हैं। वास्तव में चन्दन संसार का एक विचित्र वृक्ष है।

—

महिला-मण्डल

सद् गृहस्थिन बनो

श्रीमती कैलाशवती बी० ए०, साहित्यरत्न

प्रसन्नता की बात है कि विगत दशाब्दो में महिला समाज ने शिक्षा की दिशा में आशातीत उन्नति की है। शहरो की तो बात ही क्या, आज कस्बो और बड़े-बड़े ग्रामो तक में ग्रेजुएट महिलाए मिलेंगी। पढ़ने-लिखने के साथ ही स्त्रियाँ स्वावलम्बन की दिशा में भी बहुत आगे बढ़ी है। शिक्षा विभाग में तो अध्यापिकाएँ बहुत समय से कार्य करती थी, परन्तु अब तो कौंसिल-असम्बलियों में, दूतावासो में, चिकित्सा-क्षेत्र में, टेलीफोन और टेलीग्राफ में, रेलवे में, स्थानीय ट्राम और बस सरविसों में, रेडियो स्टेशनो पर यहा तक कि पुलिस और सेना-विभाग तक में अगणित स्त्रियाँ कार्य करती देखी जाती है। परन्तु दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि आज की नारी अध्यापिका, डाक्टर, लेखिका, सम्पादिका, कवि आदि सब कुछ होते हुए भी सद्गृहस्थिन नहीं है। वह ऊपर लिखे सब कार्य बड़ी सुन्दरता से कर सकती है, वे अन्तर्राष्ट्रीय समस्या तक सुलझाने का साहस करती है, पर अपने गृहस्थ रूपी छोटे से राज्य की, जिसकी कि वे साम्राज्ञी है—सुव्यवस्था करने में उतनी कृतकार्य नहीं दीख पड़तीं, जितनी होनी चाहियें और जैसी कि आज से तीस-चालीस वर्ष पूर्व की वृद्धाएं थीं। हमने शिक्षित होकर पश्चिमीय देशो के अनुकरण में तो बहुत उन्नति की, परन्तु अपनी भारतीय परम्परा और वैदिक संस्कृति को बिल्कुल भुला दिया, जिसके कारण हमने मानवी से देवी की पदवी पाई थी। हम पुरुषो के समान धनोपार्जन की दिशा में अग्रसर न होकर अपने मातृत्व गुण का पूर्णतः विकास कर अपने बालकों को सच्चरित्र और स्वदेशभक्त बना सकती, तो उससे हमारा तथा देश का अधिक कल्याण होता। परिवार के पालन-पोषण का कार्य पिता का है। अर्थोपार्जन की चिन्ता उसे होनी चाहिए न कि माता को। हमने पढ़ लेख कर अपने कर्तव्य को निभाया होता, अपनी सन्तान को सुसंस्कृत और सुशिक्षित बनाया होता, तो आज न तो देश भ्रष्टाचार की भट्टी अथवा अनैतिकता की अग्नि में धू धू कर जलता होता और न पुरुष-समाज द्वारा नारी जाति के बुरी तरह अपमानित और लाञ्छित किये जाने की शिकायत ही करनी पड़ती।

मैं तो समझती हूँ, हम बड़ी-बड़ी डिगरी प्राप्त करने वालियो की अपेक्षा हमारी माताएँ वस्तुतः शिक्षिता कही जाने योग्य थी। उन्होंने स्कूलो में किताबें नहीं रटी थी, परन्तु उन्हें वह शिक्षा पूर्णरूप से प्राप्त हुई थी, जो कि एक भारतीय नारी को सद्गृहस्थिन बनने के लिए जरूरी है। फिर वह शिक्षा उन्हें गुड़ियो के खेलो द्वारा मिली हो, या अपनी माताओं के मौखिक और क्रियात्मक उपदेशों द्वारा। मैं अपनी बहनो से बड़ी विनम्रतापूर्वक प्रार्थना करती हूँ कि वे मेरे कथन पर गम्भीरता से विचार करें और अपने पुराने आदर्श, संस्कृति और परम्परा को अपनाकर दुर्गा, सरस्वती, सीता और सुभद्रा बनें तथा अपनी सन्तानो को भरत, ध्रुव, प्रहलाद, राम, कृष्ण, शिवा प्रताप, महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी बनावें। तभी देश सुख-समृद्ध और सम्पन्न बन सकेगा। पश्चिमी देशो के अनुकरण से भारत भी वैसा ही अशान्तिपूर्ण बनता जा रहा है, तथा और भी बनेगा।

—

उपदेश-मंजरी

इस पुस्तक में महर्षि दयानन्द के १५ व्याख्यान दर्ज हैं, जो उन्होंने पूना में दिये थे। पुस्तक की भूमिका के लेखक हैं, श्री महात्मा मुन्शीरामजी जिज्ञासु। महात्माजी ने यह भूमिका २४ जनवरी १८९८ ई० में लिखी थी। यह पुस्तक बहुत दिन हुए तब प्रकाशित हुई थी, परन्तु वह संस्करण दुलभ हो गया, मिलता नहीं, अतएव आर्यप्रकाशन मण्डल, लाजपतराय मारकेट, दिल्ली ने इसे पुनः बड़ी सुन्दरता से प्रकाशित किया है। महात्मा मुंशीराम जी ने इस पुस्तक की भूमिका में लिखा है—

"इन व्याख्यानों में नवीनतम विषय ऐसे हैं, जो कि सत्यार्थप्रकाश के कई रहस्यपूर्ण विषयों पर प्रकाश डालते हैं, और आर्यसमाज के कई सिद्धान्तों को अधिक सरल बना देते हैं। मेरे विचार में ये व्याख्यान सत्यार्थप्रकाश की भूमिका का काम देंगे और आर्य नरनारियों को संजीवन बूटी का काम देंगे।"

इन पन्द्रह व्याख्यानों में ईश्वर, धर्माधर्म, वेद, यज्ञ, संस्कार, इतिहास, नित्यकर्म, मुक्ति आदि विषयों पर प्रचुर प्रकाश डाला गया है। इसी में ऋषि का स्वयं कथित जीवन-चरित्र भी है। महर्षि ने व्याख्यान १८७५ ई० में ४ से १८ जुलाई तक भिड़े का बाड़ा, बुधवार पेठ पूना में दिये थे। सभी व्याख्यान बड़े महत्वपूर्ण हैं। कोई भी आर्य-गृह और आर्य-पुस्तकालय इस पुस्तक के बिना न रहना चाहिये। क्याही अच्छा होता कि महर्षि के सभी व्याख्यान लिपि-बद्ध हो गये होते। परन्तु खेद है कि ऐसा नहीं हो सका, जितना हो सका वह ठीक है। अस्तु, ऐसी अच्छी पुस्तक प्रकाशित करने के लिए, प्रकाशक लोग धन्यवाद के अधिकारी हैं। मूल्य २)। प्रकाशक से प्राप्य।

— —

प्रभुदर्शन

ले० श्री महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती, प्रकाशक—श्री देशराज, अधिष्ठाता महात्मा हंसराज वैदिक पुस्तकालय, जालन्धर। पृष्ठ संख्या २४३, मूल्य २॥)

म० श्री खुशहालचन्दजी आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता हैं। आप ही संन्यास-आश्रम में प्रवेश कर अब श्री आनन्द स्वामी सरस्वती हैं। श्री आनन्द स्वामीजी ने संन्यास लेकर गंगोत्तरी में साधना पूर्वक स्वाध्याय, चिन्तन और तप किया, उसी के प्रसाद-स्वरूप आर्यसमाज को आपकी यह देन है। प्रभु-दर्शन की तैयारी कैसे होती है, दर्शन का कौन अधिकारी है, किस को किस प्रकार दर्शन होते हैं, साधना क्या है, आत्मा की खोज कैसे की जाय, मार्ग की कठिनता, अनुभव तथा ब्रह्मज्ञान आदि कितने ही महत्वपूर्ण विषयों पर अन्य अनेक ग्रन्थों का आधार लेकर इस पुस्तक में विचार किया गया है। आजकल जबकि भौतिकवाद की विभीषिका के कारण सारा संसार अशान्त और 'किं कर्तव्य विमूढ़' हो रहा है, इस प्रकार के साहित्य की बड़ी आवश्यकता है। श्री आनन्द स्वामी प्रसिद्ध वक्ता तो हैं ही, साथ ही सुलेखक भी हैं। वर्षों पत्रकार रहने के कारण आप लेखनी द्वारा विचार प्रकट करने की कला में खूब दक्षता प्राप्त कर चुके हैं। अतएव आपकी पुस्तक का उपादेयता तो निर्विवाद है। हम चाहते हैं कि ऐसी उपयोगी पोथियों का इस स्वार्थान्ध युग में अधिकाधिक प्रचार हो, उन्हें प्रत्येक शान्ति-प्रेमी पढ़े और प्रभु-दर्शन की तैयारी में संलग्न हो। आज समय की पुकार आध्यात्मिकता है। अध्यात्मवाद ही सारी शान्ति का जनक है।

आर्यसमाज चौक प्रयाग

उक्त आर्यसमाज हालही में अपनी हीरक जयन्ती मना कर चुका है। इस अवसर पर उसने अपने ७५ वर्षों का सुन्दर और सचित्र इतिहास प्रकाशित किया है। इतिहास-लेखक हैं श्री विश्व प्रकाश, बी० ए०, एल०-एल० बी० और प्रकाशक श्री प० बुद्धदेव शास्त्री, मन्त्री, आ० स० चौक। ऋषि दयानन्द का प्रयाग से जो सम्बन्ध रहा उसका इसमें विशद वर्णन किया है। उल्लेखनीय कार्यों और कार्यकर्त्ताओं का परिचय है। प्रायः आर्य इतिहास लम्बे-चौड़े नक्शों और आय-व्यय के अरुचिकर आंकड़ों से भरकर निरे शुष्क और अपाठ्य बना दिये जाते हैं, परन्तु यह इतिहास ऐसा नहीं है। इसमें आर्यसमाज सम्बन्धी अनेक बातों का ज्ञान होता है। मूल्य।)

साहित्य सौरभ

बीसवीं सदी

कुंवर हरिश्चन्द्रदेव वर्मा 'चातक' कविरत्न

मेरा क्या अकाल मृत्यु सकती बिगाड़ कुछ—
मैं तो हूँ शतायु किसी का न मुझे डर है?
मेरी अर्ध आयु बीती आज से दो मास पूर्व—
किन्तु थोड़े लोगों को ही इसकी खबर है।
मेरे अंतराल में छिपे हैं सुख-दुख क्या-क्या?
कितनी सुधा है, और कितना जहर है?
किन्तु कोई भी न इसे जान सकता है कहीं,
मेरी ही लहर तो जमाने की लहर है।

अब तक मैंने देख लिया है जगत सभी—
ज्यादा ओस-बिन्दु से किसी की नहीं सत्ता है।
बड़े-बड़े गढ़-पति पल में ढुलक जाते—
खाली रह जाता हाय जीवन का पत्ता है?
वैभव की दीपावली जलती जहां थी नित्य—
वहीं जाके खोजो, मिलता न एक लत्ता है।
धोखे से अधिक अस्तित्व किसी का भी नहीं—
क्षुद्रता से चारों ओर लिपटी महत्ता है।

लाती हर उषा है नया प्रभात जगती में—
और हर शाम नये सपने सजोती है।
कवि कहता है किन्तु सचमुच में तो यहाँ—
दिन जलता है और रात नित्य रोती है।
युद्ध और अकाल महामारी का प्रकोप सदा—
गोले-गोलियों से शान्ति की भी शान्ति खोती है।
एक की नहीं है बात किन्तु जाति की ही जाति—
जीवित-मृतक आसुओं से मुंह धोती है।

पक्षियों की भांति उड़ते हैं नभ-मंडल में—
बीसियों तरह के वायु-यान बना डाले हैं।
मछली की भांति सिन्धु-सतरण करने को—
सैकड़ों अपूर्व जल-यान भी निकाले हैं।
पल में ही शब्द ध्वनि भेजते हजारों कोस—
रजत पटों के चल-चित्र भी सभाले हैं।
यंत्रमय जीवन हुआ है सब भांति तो भी—
जीवन में शान्ति के पड़े ही रहे लाले हैं?

एक देश दूसरे के स्वत्व है हड़प रहा—
एक रंग दूसरे पै शासन जमाता है।
पाशविक शक्तियों का नग्न नाच हो रहा है—
आँखें किये बन्द क्या न देखता विधाता है?
बीसवीं सदी का नाम लेके सब कहीं कोई—
मानव के सुप्त उद्वेग को जगाता है।
फिर भी अचेत रहते हैं सुनते ही नहीं—
जागरण बीसवीं सदी का क्या सुनाता है।

"कोई अब किसी का गुलाम रहने का नहीं—
कोई अब किसी के लिये नहीं कमायेगा।
अपने ही देश में विराना रहेगा न कोई—
सात सिंधु पार किसी का न धन जायेगा।
अपनी कपास से शरीर अपना ढकेंगे—
अन्न खोड़ अपनी किसान आप खायेगा—
अपना गगन होगा अपनी ही भूमि होगी—
दूसरे के हाथ भूल के न कुछ जायेगा।

———

जीवन-ज्योति

स्वर्गीय म० श्रीरामजी

कुछ संस्मरण

श्री प० गंगाप्रसाद एम० ए०, रिटायर्ड चीफ जज

श्री महात्मा श्रीरामजी जिनका गत ९ फरवरी को आगरे में देहावसान हुआ आर्यसमाज के एक उज्ज्वल रत्न थे। मेरा उनसे परिचय ६० वर्ष से अधिक समय से था। सन् १८८७ ई० में मैं आगरा कालिज में प्रविष्ट हुआ और सन् १८९३ तक वहाँ पढ़ता रहा। आगरा जाते ही स्थानीय आर्यसमाज का सभासद हो गया था, और कुछ वर्षों तक उसका मन्त्री भी रहा। स्व० श्रीरामजी पहले से ही आर्य सभासद थे। मैंने आगरा जाने पर विद्यार्थियों में आर्यसमाज का प्रचार करने के उद्देश्य से बोर्डिंग हाउस में एक आर्ययुवक सभा स्थापित करने का यत्न किया था, जो सुपरिटेंडेण्ट बोर्डिंग हाउस के विरोध के कारण सफल न हुआ। तब राजामंडी में, जो बोर्डिंग हाउस के समीप ही है, एक आर्य विद्यार्थी के घर पर 'आर्यमित्र सभा' के नाम से सभा स्थापित की गई। उसमें अधिकांश विद्यार्थी ही थे। परन्तु कुछ अन्य आर्य युवक भी थे। स्व० श्रीरामजी का भी उसमें सहयोग रहा।

(३) सन् १९१९ में मैं डिप्टी कलक्टरी के पद पर आगरे में रहा। स्व० श्रीरामजी उस समय खजाने में काम करते थे। अपने सहयोगी कर्मचारियों से भी उनका प्रेम का व्यवहार था।

(४) स्व० श्रीरामजी और उनके सहयोगी स्व० माधवसिंहजी आगरा आर्यसमाज के प्रमुख कार्यकर्त्ताओं में थे और वहाँ के समाज-सम्बन्धी सभी कार्यों में उनका प्रमुख हाथ रहता था।

(५) म० श्रीरामजी ने कई बार बहुत समय तक गुरुकुल वृन्दावन में मुख्याधिष्ठाता का कार्य किया जिसको आर्यसमाजी बहुधा जानते हैं। परन्तु आर्यसमाज का एक और महत्वपूर्ण कार्य जिसमें उन्होंने वर्षों तक बहुत परिश्रम व उद्योग किया, कोओपरेटिव बैंक की रक्षा का कार्य था। उक्त बैंक का मुख्य स्थान पहले लखनऊ था। सन् १९३५-३६ में बैंक की दशा बहुत हीन हो गई। महकमे के अधिकारी उसको तोड़ने का विचार करते थे। परन्तु आर्यप्रतिनिधि सभा उ० प्र० ने जिसकी संरक्षकता में बैंक काम कर रहा था यह निश्चय किया कि वह न तोड़ा जाय। उसके सुधार व संचालन के लिये एक कमेटी बनाई गई जिसका कुछ वर्षों तक मैं अध्यक्ष रहा। मेरे व मेरी सहधर्मिणी के पीछे चौदह हजार रुपये के डिपाजिट भी उस समय बैंक में थे। स्व० श्रीरामजी उस कमेटी के अवैतनिक मन्त्री नियत हुए। जिस लगन के साथ उन्होंने इस कार्य को किया उनकी प्रशंसा नहीं हो सकती। यह योजना की गई कि नये कर्ज न दिये जाय। वसूली का भरसक प्रयत्न किया जाय। जो वसूली हो वह सब डिपाजिटरों में हिस्सा रसदी से तीसरे या चौथे मास में बाँट दी जाय। पहले ३ वर्ष में अर्थात् सन् १९३९ तक ३३ प्रतिशत तक सूद छोड़कर सब डिपाजिटरों को मिल गया। १० वर्ष के भीतर ८५ प्रतिशत असली कर्ज का सब ने पा लिया। तब ३१ जनवरी १९४६ को सब हिस्सेदारों व डिपाजिटरों की सलाह से यह निश्चय हुआ कि शेष १५ फी सदी पिछले सूद के बदले में (जो अदा नहीं हुआ था) जोड़कर १५ फी सदी बकाया कर्ज की नई रसीदें ३ वर्ष के लिये २ प्रति सेकड़ा सूद पर दी जायं। लगभग सब डिपाजिटरों ने इसको स्वीकार करके नई डिपोजिट रसीदें ले लीं, जिनकी मियाद हाल ही में १ फरवरी १९५१ को समाप्त हुई। जो डिपाजीटर ऐसा पसन्द करेंगे उनको फिर २ वर्ष के लिये डिपाजिट नये हो जावेंगे। इस प्रकार आर्य को० बैंक चलने लगा। इसका श्रेय अधिकांश में स्व० श्रीरामजी को ही है जिनके उद्योग से बैंक चलता रहा, अन्यथा दिवालिया होकर बैंक का टूट जाना निश्चित ही था।

इस प्रकार लगभग सारी उम्र धर्म की सेवा में व्यतीत करने वाले बिरले ही मनुष्य होते हैं। वास्तव में स्व० श्रीरामजी एक आदर्श आर्य थे। ईश्वर उनकी आत्मा को सद्गति प्रदान करे।

स्वास्थ्य-सुधा

ओषधियों का बाहुल्य

प्राणाचार्य श्री रमाकान्त गुप्त, शास्त्री, बी० ए०

मैं वैद्य हूँ, वर्षों चिकित्सा करते बीत गये। सैकड़ों रोगियों को ओषधियाँ दीं और देता हूँ। परन्तु मुझे अनुभव से ज्ञात हुआ है कि ओषधियों का अधिक प्रयोग स्वयम् एक रोग है। बहुत ओषधियां सेवन करने से स्वास्थ्य पर अच्छा असर नहीं पड़ता। कुछ रोगी तो ऐसे होते हैं, जो दवाओं की पेटी साथ लेकर चलते हैं, और यात्रा में भी उनकी मात्राओं का सेवन करते रहते हैं। यदि भूल से किसी दिन ओषधि न लें तो फिर रोग का आक्रमण हो जाय। ऐसे रोगी नीरोग तो कहे ही नहीं जा सकते, ओषधियों के सहारे जीने वाले समझे जायंगे। जिन रोगियों को जरा-जरा-सी बात पर दवा खाने की आदत पड़ जाती है उन्हें शारीरिक विकार तो उतना नहीं होता जितना मानसिक विकार या वहम होता है। ऐसे रोगियों को पहले अपना वहम दूर करना चाहिए, क्योंकि कहा भी है कि वहम की दवा लुकमान के पास भी नहीं है।

आयुर्वेद डंके की चोट कहता है कि जितने रोग होते हैं, उनका मुख्य कारण मिथ्या आहार-विहार है। अर्थात् जीवन का अनियमित और असंयत होना। कभी भूखे रहे, कभी भूख से भी अधिक खा लिया। कभी किसी समय खाया और कभी किसी समय। खाने का कोई समय ही निश्चित नहीं। कभी रात को ढाई बजे सोये और कभी शाम होते ही खुर्राटे भरने लगे। कभी हफ्तों कुछ काम न किया और कभी रात-दिन काम में लगे रहे। जो खाद्य पदार्थ प्रकृति के लिये अनुकूल नहीं, उन्हें स्वाद के लोभ से खा लेना भी रोग का कारण बन जाता है। भोजन का सन्तुलित न होना भी स्वास्थ्य-विघातक है। यानी भोजन में वे सब तत्व आजाने चाहिएं, जिनसे स्वास्थ्य ठीक रहता है।

सब से बड़ी कमी व्यायाम की की जाती है। प्रायः मनुष्य सब कामों के लिये समय निकाल लेते हैं, परन्तु व्यायाम के लिये उन्हें अवकाश नहीं मिलता। वे भले ही बिस्तरे पर पड़े-पड़े सुबह सूर्योदय तक करवट बदलते रहें, परन्तु खुली हवा में भ्रमण करने न जायंगे। यह आलस्य जीवन में शिथिलता लाकर रोगों की उत्पत्ति करता है। जिस प्रकार स्वास्थ्य के लिये व्यायाम आवश्यक है, उसी प्रकार प्राणायाम भी। व्यायाम में कसरत, खेल, कबड्डी, टहलना आदि सब ही आजाते हैं। स्त्रियों के लिये चक्की चलाना, चरखा कातना, घर के काम-धन्धे करना आदि अच्छे व्यायाम हैं।

जो पुरुष या स्त्रियां व्यायाम से दूर रहते हैं, आहार-विहार में संयम से काम नहीं लेते, वे ही अधिकतर बीमार रह कर दवाएं खाते पीते रहते हैं। जो लोग दण्ड-बैठक नहीं कर सकते उनके लिये आसनों की बड़ी सुन्दर और सरल कसरतें हैं। इन्हें यौगिक आसन कहा जाता है। ये आसन स्त्रियों और पुरुषों दोनों के लिये समान रूप से हितकारी और स्वास्थ्य-साधक हैं। धनी घर के स्त्री पुरुष कुछ काम न करने में ही अपना बड़प्पन समझते हैं। खूब पौष्टिक पदार्थ खा लिये, और पड़े रहे। मेद बढ़ा और सारा शरीर चर्बी से लदबदा गया। फिर क्या है अनेक रोग पैदा हो गये, और ओषधियों के प्रयोग होने लगे। यदि ये लोग जरा भी संयम से काम लें और शारीरिक श्रम करने की आदत डालें तो बहुत स्वस्थ रह सकते हैं, क्योंकि उन्हें अच्छे पौष्टिक भोजन की कमी नहीं है।

[शेष पृष्ठ १४ पर]

चयनिका

[मधुप]

भारतीय गौरव

जन्म से कोई व्यक्ति ब्राह्मण या अन्त्यज नही होता, अपितु कर्म से ही वह इनमें से कोई भी स्थान ग्रहण कर लेता है। हम पश्चिम के लोग अपनी विशुद्ध जड़वादी सभ्यता के कारण बिल्कुल दिवालिए हो गये है। मैं अधिकाधिक शीघ्रता से इसी परिणाम पर पहुँचता जा रहा हूँ कि भारत से हमको कोई विलक्षण वस्तु प्राप्त होनी चाहिये। संसार-भर में भारत के निवासी ही ऐसे है, जिन्होने समस्त बाहरी परिस्थितियों का मुकाबला कर अपनी ईश्वरीय भावना को सुरक्षित रक्खा है।

श्री लेवेडफ़ (रूसीविद्वान्)

गुरुकुलों का कर्तव्य

प्राचीनकाल में हमारे देश में जो गुरुकुल थे, उनका ध्येय अपने विद्यार्थियो को नेतृत्व की क्षमता देना था। समाज-रथ के संचालन का भार शिक्षित-दीक्षित व्यक्तियो का और विशेषतया उनमें से ऐसे व्यक्तियो का ही होता है, जिनकी नसो में यौवन का रक्त बहता है, और जिनके मन में भविष्य को सुन्दर बनाने का अदम्य उत्साह होता है। अतः गुरुकुलों का धर्म है कि समाज के इन भावी सारथियो के मन में यह भावना और श्रद्धा कूट-कूट कर भर दें कि उनके अपने जीवन का चरम विकास इसी बात में है कि वे प्रत्येक मानव के जीवन को सुन्दर, सुखद और सफल बनाने में अपने को उत्सर्ग कर दें।

राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद

परिश्रम की आवश्यकता

चाहे जितने क़ायदे-कानून बनाए जायं तब तक मुल्क आगे नहीं बढ़ सकता जब तक कि जनता में खुद काम और परिश्रम करने की ख्वाहिश न हो। अमरीका क्यो इतना बढ़ा है, क्योंकि वहाँ की पैदावार बहुत ज्यादा है। हमारे किसान होशियार है, किसी से कम नही, पर मेरी समझ में नहीं आता कि हम निकम्मे हो गये हैं, या यह समझने लगे हैं कि आजादी में बिना काम किये खाना मिल जायगा। मुल्क को इस समय सख्त मेहनत की जरूरत है, लेकिन हम लोग बहस मुबाहिसे में लगे हुए है।

श्री जवाहरलाल नेहरू

त्याग और क्रान्ति

हम सब अपने जीवन में त्याग करते है, क्रान्ति नही करते और चाहते हैं कि हमारे जरिये समाज में क्रान्ति हो जाय। ऐसा नही हो सकता। जीवन का स्तर नीचा करना है त्याग, और जीवन के तर्ज बदलने का नाम हैं क्रान्ति। हम कितना ही त्याग करें, हमारी निजी तथा पारिवारिक जिन्दगी का तर्ज शहराती तथा देहाती शोषक वर्ग के अनुरूप तथा अनुकूल ही रहता हैं। जीवन की आकांक्षाए तथा तृष्णाए उसी ओर दौड़ती है। इस तर्ज को बदलकर सेवको की जिन्दगी को उत्पादन यानी मजदूरो की जिन्दगी के तर्ज पर लाना है।

धीरेन्द्र मजूमदार

सच्ची ईश्वर-भक्ति

सच्चा ईश्वर-भक्त तो कभी पाप की ओर नही जायगा। उसके मन में दुर्विचार आ ही नही सकते। ईश्वर-भक्ति से परिपूर्ण पुनीत हृदय में अशुद्धि के लिये स्थान नहीं हो सकता।

चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

भारत का जीवन—भारतीयता

हमारी प्राचीन भारतीय संस्कृति हमें मानव-जीवन में सदैव शास्त्रो का आश्रय लेने का प्रबल उपदेश करती है। देश स्वतन्त्र हो गया है, भारतीयता से ही भारत जीवित रह सकता है। भारतीयता के विना भारतीय स्वतन्त्रता का कोई भी मूल्य नही, अर्थात् भारतीय स्वतन्त्रता उसकी संस्कृति, साहित्य तथा सभ्यता के आधार पर ही सुरक्षित रह सकती है।

श्री ब्रह्मदत्त जिज्ञासु

एकता का साधक संगीत

संगीत मानव-जीवन में एकता और सामञ्जस्य उत्पन्न करने का एक साधन है। साथ ही संगीत की सहायता से मानव के व्यक्तित्व और चारित्रिक विकास में भी यथेष्ट सहायता मिलती है। संगीत की सहायता से देश के सभी लोगों को सूत्र-बद्ध किया जा सकता है।

श्री मावलंकर

कल के भाग्य-विधाता

मैंने कुछ छात्रों से यह पूछा कि आपके जीवन का ध्येय क्या है, किसी ने कहा मैं लेफ्टीनेएट बनना चाहता हूँ, किसी ने कहा मैं नेता बनना चाहता हूँ, परन्तु देश की सेवा तुच्छ पदों पर रहकर ही नहीं की जाती। सिपाही का महत्व सेना में सबसे अधिक है। विद्यार्थियों में सिपाही बनने की भावना होनी चाहिये। उन्हे देश का सच्चा वफादार सेवक बनना है। विद्यार्थी कल के भाग्य-विधाता है। उन पर देश का भविष्य निर्भर है। उन्हे अपना उत्तरदायित्य अनुभव कर पूर्णतया निभाना चाहिये।

श्री करियप्पा

(प्रधान सेनापति)

वैदिक धर्म

वेद का धर्म किसी खास मानने वाले के लिये नहीं, मनुष्य मात्र के लिये है। वेदों में मानवधर्म का वर्णन किया है। उसमें मनुष्य मात्र के हित एव अभ्युदय के लिए उपदेश दिया गया है, यदि शुद्ध रूप में हमने धर्म को जानकर उस पर आचरण किया होता तो हमारा इतना पतन कैसे सम्भव था। जितने सच्चे रूप में हम वैदिक धर्म का आचरण करेंगे, उतनी ही अधिक हमारी उन्नति होगी।

श्री मुरारजी भाई देसाई

सरदार का स्वरूप

असल में सरदार पटेल धर्मात्मा पुरुष थे। बहुत ऊहा-पोह में न पड़कर जिसे वे धर्म-विहित कार्य समझते, उस पर दृढ़ रहना उनके सारे जीवन का मूलमन्त्र था। बुद्धि निश्चयात्मक थी इसलिए किसी निर्णय पर पहुचने में देर नहीं लगती थी। मित्रता की तो अन्त तक निबाही। जो संकल्प बाँधा उसे पूरा किया। अपनी बात पर से कभी हटे नहीं। दुनिया की आलोचना की परवा नहीं की। हृदय कोमल और फूल-सा विकसित। इतनी बड़ी सत्ता पर आरूढ़ पर उसके प्रति मोह नहीं। पैसे को भी सदा तुच्छ समझा। ऐसे थे वे सरदार यानी धर्मात्मा पुरुष।

श्री वियोगी हरि

संस्कृत की अनिवार्यता

संस्कृति की प्रवृत्ति महाफल देने वाली होती है। सांस्कृतिक कार्य के छोटे-से बीज से बहुत फल देने वाला बड़ा वृक्ष बन जाता है। सांस्कृतिक कार्य कल्पवृक्ष की तरह फलदायी होते है। अपने ही जीवन की उन्नति, विकास और आनन्द के लिये हमें अपनी संस्कृति की सुधि लेनी चाहिए, आर्थिक कार्यक्रम जितने आवश्यक है, उनसे कम महत्व संस्कृति-सम्बन्धी कार्यों का नहीं है। दोनो एक ही रथ के दो पहिये है, एक-दूसरे के पूरक है। एक के बिना दूसरे की कुशल नहीं रहती। जो उन्नत देश है, वे दोनो कार्यो को एक साथ संभालते है। वस्तुतः उन्नति करने का यही एक मार्ग है। मन को भुला कर केवल शरीर की रक्षा पर्याप्त नहीं है।

श्री डा० वासुदेवशरण

खाद्य-समस्या

खाद्यान्न की समस्या के सम्बन्ध में सरकार को एक राष्ट्र-व्यापी व्यावहारिक योजना निर्धारित करनी चाहिये और उसको कार्यान्वित करने के लिये देश के सभी दलो तथा पक्षो का एक सम्मेलन बुलाना चाहिये। चोरबाजारी को आमूल नष्ट करने के लिये काम में लाए जाने वाले उपायो को और कठोर करना चाहिए। केवल कागजी योजनाओं से खाद्य-संकट दूर नहीं हो सकता।

श्री गोलवलकर

सन्ध्योपासन

सन्ध्योपासना करने का निश्चित स्थान होना चाहिये। प्रति दिन एक ही आसन पर बैठना चाहिए। सन्ध्या प्रारम्भ करने से पूर्व यह दृढ़ संकल्प करना बड़ा लाभ देता है कि मेरा इस समय बाह्य दुनिया और दुनिया की वस्तुओं से कोई सम्बन्ध नहीं। मैं तो अब केवल प्रभु के द्वार पर बैठा हूँ, उसी से वार्ता करूँगा। अपनी टेर सुनाऊँगा और आशीर्वाद लूंगा।

महात्मा आनन्द स्वामी

——

सिंहावलोकन

१८५७ के गदर में स्वामी दयानन्द

श्री प० गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम० ए०

भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई। इस शुभ समाचार को सुनते ही प्रसन्न-चित्त भारतीयों में स्वतन्त्रता की उमंगे जागने लगी हैं और उन्होंने स्वभावतः कल्पनाओं के करने में भी स्वतन्त्रता प्रकट की है। १८५७ इ० का ग़दर क्या था इस विषय की आलोचना का यह स्थल नहीं है, परन्तु हम यही विचार करना चाहते हैं कि स्वामी दयानन्द का ग़दर में क्या भाग था!

हम सुनते थे कि इतिहास घटनाओं का उल्लेख है। परन्तु कुछ इतिहासज्ञों ने अनुमान और कल्पनाओं को भी इतिहास में स्थान दिया है। यदि यही हाल रहा तो किसी पुरुष विशेष के विषय में तथ्य जानना सुगम न होगा।

मेरी समझ में आर्यसमाज के प्रवर्त्तक ऋषि दयानन्द के विषय में जिनका 'सत्यार्थप्रकाश' ही सत्य-प्रियता का द्योतक है इस प्रकार की कल्पनायें करना सर्वथा अन्याय है। ऋषि दयानन्द की अपनी कृत्ति इतनी उज्ज्वल है कि उनके मान या कीर्ति को बढ़ाने के लिये किसी कल्पना या अनुमान की आवश्यकता नहीं और यदि कोई भक्त अपनी कल्पना-शक्ति को इतिहास के नाम से सम्बद्ध करता है तो वह संसार का अहित ही करता है।

अभी कुछ दिनों से यह बात बड़े वेग से फैलायी जा रही है कि ऋषि दयानन्द ने १८५७ के विद्रोह में बहुत बड़ा भाग लिया। इसका श्रेय दो प्रमुख सज्जनों से आरंभ होता है। एक तो है श्री पृथिवीसिंह मेहता जिन्होंने "हमारा राजस्थान" लिखा है और दूसरे श्री जयचन्द्रजी विद्यालंकार। ये दोनों आधुनिक इतिहासज्ञ समझे जाते है। इतिहास की अन्य खोजों के विषय में मैं कुछ नहीं कहता, परन्तु ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों को मैं पढ़ता रहा हूं और उनकी विचार-धारा तथा उनके मंतव्यों तथा कार्य-प्रणाली का मुझे उनके ग्रन्थों से आभास मिला है। उनकी स्वयं बताई जीवनी भी अभी मिलती है। उनके आधार पर मुझे इन कल्पनाओं को देख कर आश्चर्य और खेद होता है। जो ऐसी गाथायें प्रचारित करके ऋषि के यश को बढ़ाने का श्रम कर रहे है वे भूल करते हैं। ऋषि को उतना ही रहने दो जितने वे हैं। इससे अधिक की चेष्टा मत करो।

श्री पृथिवीसिंहजी ने जो कुछ लिखा है वह सर्वथा अनिश्चित है, और श्री जयचन्द्रजी ने उनको आशीर्वाद दिया और कल्पना को खोज के नाम से सुशोभित किया। इस पर मैंने श्री हरविलास सारडाजी को लिखा कि आपकी क्या राय है। उन्होंने मुझे लिखा कि यह "Hoax" मात्र है, अर्थात् झूठी कल्पना है। श्री महेशप्रसादजी ने 'आर्यमित्र' में भी ऐसा ही लिखा है। उस समय तक मैंने "राजस्थान" पुस्तक पढ़ी नहीं थी। श्री प० धर्मदेवजी ने 'सार्वदेशिक' में मेरा लेख यह कह कर रोक लिया था कि वे श्री जयचन्द्रजी को लिख रहे है। क्योंकि उपदेशकों और प्रचारकों ने तो लम्बी डींगे मारना और नमक-मिर्च मिला कर स्वामी दयानन्द की जीवनी को मजेदार कचालू बना डाला। हमारे वक्तागण तो विचित्र बात के लिये उधार खाये बैठे रहते है और फ़ारसी की "परीं नमें परन्द मुर्गीदा मी परानन्द" की कहावत को चरितार्थ करते है।

श्री महता पृथिवीसिंहजी के 'राजस्थान' का ऐतिहासिक मूल्य क्या है, यह इस लेख का विषय नहीं है। परन्तु जो कल्पनायें ऋषि दयानन्द के विषय में की गई है वे न इतिहास है न इतिहास की खोज! मस्तिष्क की उपज अवश्य हैं। हम उसके कुछ उद्धरण देते हैः—

(१) १८५६ के मई मास में वह नाना के नगर कानपुर गया और आगे पाँच मास तक कानपुर इलाहाबाद के बीच चक्कर काटता रहा।

(२) फिर बनारस, मिर्जापुर चुनार होकर मार्च १८५७ में जब क्रान्ति की तयारिया लगभग पूरी हो चुकीं और नानासाहब के सैकड़ों संदेशवाहक साधुओं, फ़कीरों आदि के रूप में पूरब, पच्छिम, उत्तर, दक्खिन देश के हर एक कोने में क्रान्ति का सन्देश लेकर रवाना हुये और स्वयं नानासाहब और अज़ीमुल्ला भी क्रान्ति आरंभ करने की तारीख निश्चय कर उसकी सारी तैय्यारी अपनी आँखों से देखने को तीर्थ-यात्रा करने निकले तब दयानन्द भी बनारस से मिर्जापुर, चुनार होकर नर्मदा के स्रोतों के लिये दक्खिन की ओर निकल पड़ा। (पृ० २६८–६९)

भाषा रोचक है और कल्पना की साधक है। परन्तु इसमें इतिहास की कौन-सी बात है। स्वामी दयानन्द बहुत दिनों से गंगा के तट पर घूमते रहे। हरिद्वार के कुम्भ से ही, परन्तु क्या वह क्रान्तिकारियों के साथ थे। कानपुर का सम्बन्ध नानासाहब से है। परन्तु नाना और दयानन्द की प्रवृत्तियाँ इतनी भिन्न-भिन्न थीं कि स्वामी दयानन्द का नाम नाना के साथ जोड़ना बड़ा अनर्थ है। स्वामी दयानन्द के जीवन की किसी घटना से यह सिद्ध नहीं होता कि वह "नाना साहब के सैकड़ों संदेशवाहक साधुओं और फ़कीरों आदि के रूप में" भ्रमण करते रहे हों। उनका गंगा के तट पर फिरने का प्रयोजन ही और था। केवल साहसी और निर्भीक होने के नाते यह नहीं कहा जा सकता कि वह नाना के एजेण्ट रहे हों। और यदि वह नाना के एजेण्ट न थे तो और थे भी क्या जिसकी ओर श्री महताजी का संकेत है। स्वामी दयानन्द जो चाहते थे, उसके लिये क्रान्ति का वायुमण्डल सर्वथा अनुपयुक्त था। क्या यह संभव नहीं है कि इसीलिये वह नर्मदा की ओर चले गये हों, या यह संभव नहीं है कि उनको क्रान्ति से कोई सम्बन्ध न हो। गदर के बाद का स्वामी दयानन्द का जीवन पूरा विश्वास दिलाता है कि उनका क्रान्ति से सम्बन्ध नहीं था, चाहे वह क्रान्ति उचित थी या अनुचित। महताजी की क़लम से एक वाक्य तो निकल ही गयाः—

"यह कहना कठिन है कि क्रान्ति युद्ध या उसके संगठन के प्रति उनका रुख क्या रहा और उसने भी उसमें कोई भाग लिया या नहीं"।

(पृ० २६८–२६९)

यदि यह कहना कठिन है तो यह कल्पना करना भी कठिन होना चाहिये था, और विशेष कर उत्तरदायित्वपूर्ण इतिहासकार के लिये। उपन्यासकार को तो पूर्ण स्वतन्त्रता है। आकाश-पाताल को जहाँ से चाहे मिला दे। परन्तु मालूम नहीं कि महताजी ने इस कल्पना को करने की क्यों जरूरत समझी और उस कल्पना पर बहुत बड़ा भवन कैसे बना दिया गया। स्वामी दयानन्द ऐसे भीरु या उत्तरदायित्व-शून्य न थे कि फुलझड़ी छोड़ कर स्वयं अलग हो जाते और आयुभर कभी उसका उल्लेख भी नहीं करते। राजनीति के विषय में भी उन्होंने जो कुछ सोचा स्पष्ट लिख दिया। एक बात भी छिपाई नहीं। और न किसी को इस प्रकार का काम करने की शिक्षा ही दी। परन्तु महताजी स्वामी विरजानन्द को भी इसमें शामिल किये बिना नहीं रहते। कैसा मजेदार वाक्य हैः—

"उस समय शास्त्रों के अध्ययन के अतिरिक्त देश की दशा पर भी दोनों गुरु-शिष्य का संवाद एकान्त में होता था, जिसमें उन दोनों के सिवाय वहां तीसरा कोई व्यक्ति रहने नहीं पाता था"।

(पृ० २७०)

हमने उपन्यासकारों को प्रेमिक और प्रेमिकाओं की गुप्त वार्ताओं का हाल लिखते देखा है, मानो लेखक तो अदृष्ट रूप से वहाँ ही छिपा हुआ था। परन्तु आज तक किसी इतिहासज्ञ ने यह दावा करने का साहस नहीं किया कि जहाँ कोई तीसरा न जा सका वहाँ वह तो अवश्य ही सुनता रहा। यदि वहां कोई तीसरा न जा सका तो श्री महताजी कैसे पहुंच गये और उनको कैसे मालूम हो गया कि गुरु-शिष्य क्रान्ति की ही योजना करते रहे। यह सब पर विदित है कि स्वामी विरजानन्द राजाओं द्वारा शास्त्रार्थ कराना चाहते थे। शास्त्रार्थ ही उनको प्रिय था। स्वामी दयानन्द को भी उन्होंने आर्ष-अनार्ष-ग्रन्थों के विषय में शिक्षा तथा दीक्षा दी थी। वही उनका विषय था, क्रान्तिकारी लोगों का दृष्टिकोण सर्वथा भिन्न था। उन्हें आर्ष अनार्ष से क्या प्रयोजन? यदि विरजानन्द में नैतिकता न होती तो वे कभी

स्वामी दयानन्द को कौमुदी पर जूता लगाने को न कहते। और स्वामी दयानन्द की विचारधारा ही और प्रकार की होती। क्रान्ति का मार्ग इतना चक्करदार नहीं होता। क्रान्ति के लिये संगठित करने के लिये मूर्ति-खण्डन और पीढ़ितों से शास्त्रार्थ की आवश्यकता न थी। ग्वालियर जाकर भागवत का खण्डन करने वाला सामयिक संगठन को कैसे कर सकता था।

मैंने श्री जयचन्द्रजी से पूछा कि आपके पास इसके लिये कुछ ठोस प्रमाण भी है। तो वह कहने लगे कि "कि क्रान्ति के सम्बन्ध में शिला लेख नहीं हो सकते।" परन्तु यह तो नकारात्मक प्रमाण हुआ। क्या जहाँ शिला लेख न मिल वहाँ इस युक्ति के आधार पर मनमानी कल्पना करना उचित है। इतिहास तो सर्वथा सत्य पर आश्रित होना चाहिये। मालूम नहीं कि जो लोग इतिहास में झूठ मिलाने के लिये अंगरेजों को दोष दिया करते हैं, वे देशप्रेम से प्रेरित होकर स्वयं कल्पनायें करने में क्यों संकोच नहीं करते। नीचे के वाक्य पढ़िये:—

"यह बात मान लेना आसान नहीं कि दयानन्द के सदृश भावनाप्रवण और चेतनावान हृदय और मस्तिष्क का युवक उसके प्रभाव से अछूता बचा रहा हो।" "अतः उसकी उन तीन वर्षों के बारे में यह पूरी चुप्पी भी कम अर्थ-भरी प्रतीत होती"।

(पृ० २६६)

'प्रभाव से अछूता बचने' का क्या अर्थ? जब देश में कोई बहुत बड़ी घटना होती है तो कोई अछूता नहीं बचता। परन्तु क्या यह बात मान लेना आसान है कि स्वामी दयानन्द जैसे साहसी भावनापूर्ण और चेतनवान युवक-प्रवृत्ति और इच्छा होते हुये किसी आन्दोलन में केवल गौण भाग ही लेते और केवल 'चुप्पी' साध जायं।

स्वामी दयानन्द स्पष्टवादिता में प्रमुख थे। उन्होंने अपने विरोध में क्या कुछ नहीं सहा। फिर भी वह सच कहने से न चूके। यदि उनको यह अभिमत होता कि उनको उस क्रान्ति में भाग लेना चाहिये तो मेरा विश्वास है कि वे कभी पीछे नहीं रहते। किसी का संदेशवाहक बनना उनको प्रिय न था। शायद सह्य भी न था। साधारण राजनीतिज्ञों के समान वह पगडण्डी पर चलना भी अच्छा नहीं समझते थे। उनका दृढ़ विश्वास था कि परतंत्रता महारोग होते हुये भी यह अन्य दोषों के कारण उत्पन्न होती है। भारत में उस समय तक परतंत्रता नहीं आने पाई जब तक वह धर्मपरायण रहा और इसीलिये उन्होंने मौलिक सिद्धान्त का प्रचार सब से पहले करना आवश्यक समझा। साधारण राजनीतिक समझौते के लिये सदा उद्यत रहते हैं, परन्तु ऋषि दयानन्द सत्यता में किसी से समझौता नहीं करना चाहते थे। इस विषय में स्वामी दयानन्द की नीति महात्मा गांधी आदि नीतिज्ञों की नीति से सर्वथा भिन्न थी। इसलिये उनकी रुचि, प्रवृत्ति, वचन, तथा क्रिया किसी से भी श्री महताजी या श्री जयचन्द्रजी की कल्पनाओं की पुष्टि नहीं होती। ऋषि जो कुछ थे उतना उनके पक्ष और गुरुत्व के लिये पर्याप्त था। जो वह नहीं थे उनको वैसा दिखाना केवल इसलिये कि किसी विशेष मनुष्य-समूह में उनका यश बढ़ जाय उनके साथ घोर अन्याय है। सत्य के पोषक गुरु के अनुगामी भी सत्य-प्रिय होने चाहियें।

श्री महताजी के दो और इतिहासज्ञतापूर्ण उद्धरण पढ़िये:—

(१) १८७३ में बनारस जाकर वहां के सभी चोटी के पौराणिक पण्डितों को उसने शास्त्रार्थ में हराया। (पृ० २६७)

हमारा इतिहास का ज्ञान अत्यन्त अल्प है, अतः हम यह नहीं समझ सके कि १८७३ का वर्ष जिसमें श्री महताजी स्वामी दयानन्द का बनारस के चोटी के पण्डितों को हराना बताते हैं, वह विक्रमी संवत् है या ईसवी या श्री महताजी कल्पित किसी अन्य युगान्तर-प्रेरक का। ऋषि दयानन्द की वर्त्तमान जीवनियों से तो प्रकाश मिलना कठिन है।

दूसरा उद्धरण लीजिये। वह भी अपनी खोज की विशेषता में अद्वितीय ही है:—

(२) उसके छठे राजधर्म-सम्बन्धी समुल्लास में निबद्ध विचारों को चिन्तन सम्भवतः महाराणा सज्जनसिंह को दिये राजनीति और धर्म-सम्बन्धी पाठों के सिलसिले में ही हुआ।

(पृ० २७६)

क्या हम इनको खोज कह सकते हैं? यह बात तो ऐसी है जो महताजी से पहले किसी को नहीं सूझी। पहला सत्यार्थप्रकाश सन् १८७४ में लिखा गया और १८७५ में छपा। उसमें छठा समुल्लास विद्यमान है। जब मैंने श्री महताजी का इतिहास पढ़ा तो मुझे अपनी स्मृति पर से श्रद्धा उठ गई, और मैंने आदिम सत्यार्थप्रकाश को निकाल कर छठे समुल्लास को फिर पढ़ा। वह महाराणा सज्जनसिंह की भेंट से बहुत पूर्व लिखा जा चुका था। श्री महताजी यदि उसे देख लेते तो 'सम्भवतः' शब्द की आड़ न लेनी पड़ती।

मैंने यह सब इसलिये लिखा है कि सत्य की स्थापना के लिये असत्य का आश्रय लेने की प्रवृत्ति आर्यसमाज के लिये हितकर नहीं है। यद्यपि बहुत-से लोग हैं जो व्यवहार में मेरे साथ सहमत नहीं है।

—

आ० स० चौक प्रयाग की

'हीरक जयन्ती'

[संवाददाता द्वारा]

आर्यसमाज चौक, प्रयाग की 'हीरक जयन्ती' ७ से १४ फरवरी १९५१ तक बड़े समारोह पूर्वक मनायी गयी। सर्वश्री मा० घनश्यामसिंह गुप्त, मा० राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन, पं० सत्याचरण शास्त्री पूर्व हाई कमिश्नर वेस्ट इण्डीज़, पं० जयचन्द्र विद्यालंकार, युवराज रणञ्जयसिंह (अमेठी), स्वा० अभेदानन्दजी, स्वा० त्यागानन्द, स्वामी विवेकानन्द ब्रह्मचारी उषर्बुध, आचार्य विश्वश्रवा, पं० बुद्धदेव विद्यालंकार, पं० प्रियदर्शन सिद्धान्तभूषण, डाक्टर दीवानचन्द्र, प्रिंसपल महेन्द्रप्रताप शास्त्री, म० केदारनाथ आर्य, पं० विद्यानन्द, श्री नटवरलाल, ठा० जोरावरसिंह, पं० देशराज, ठा० महिपालसिंह आदि विद्वानों, सन्यासियों और प्रचारक महोदयों ने सम्मिलित होकर महोत्सव की शोभा बढ़ाई तथा अपने व्याख्यानों द्वारा जनता को प्रभावित किया।

७ फरवरी को एक बड़ा जुलूस निकाला। मा० श्री घनश्यामसिंह गुप्त ने 'ओम् ध्वजा' का अवरोहण किया। बालक बालिकाओं की ओर से आपको 'गार्ड-आव् आनर' दिया गया। माननीय घनश्यामसिंह गुप्त ने, श्री नटवरलाल महता (ए० जी० इलाहाबाद) की अध्यक्षता में महोत्सव का उद्घाटन किया। पं० सत्याचरण शास्त्री ने गुप्तजी का स्वागत करते हुए, उनकी सेवाओं का वर्णन किया। दूसरे दिन श्री घनश्यामसिंह गुप्त की अध्यक्षता में आर्य सम्मेलन हुआ। अनेक आर्य विद्वानों के भाषण हुए। लगभग दस हजार जनता एकत्र थी। निम्न आशय के प्रस्ताव स्वीकृत हुए—'हिन्दू कोड बिल' स्थगित किया जाय। संस्कृत-निष्ठ हिन्दी का प्रचार हो, अङ्क भी देवनागरी में लिखे जायं। वैदिकधर्म का द्वार सब को समान रूप से प्रवेश करने के लिये उन्मुक्त किया जाय। ९ फरवरी को १ से ४ बजे तक यती सुलभादेवी की अध्यक्षता में स्त्री आर्यसमाज प्रयाग ने अपनी स्वर्ण जयन्ती मनायी। छोटे-छोटे बालकों की वाद विवाद-प्रतियोगिता हुई। पांच बजे श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम० ए० की सत्तर वर्षीय जयन्ती मनायी गयी। देश के प्रतिष्ठित व्यक्तियों के सन्देश पढ़ कर सुनाये गये। उसी दिन रात्रि को आर्य संस्कृति सम्मेलन हुआ जिसमें राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन ने अपने प्रभावपूर्ण भाषण में भारतीय आर्य संस्कृति अपनाने पर बल दिया। १० फरवरी को श्री स्वामी अभेदानन्दजी की अध्यक्षता में 'समाज-सुधार-सम्मेलन' हुआ। ११ फरवरी को स्त्री आर्यसमाज का उत्सव मनाया गया। सन्ध्या को श्री सुरेन्द्र शर्मा ने व्यायाम तथा वायुयान-सम्बन्धी आश्चर्यजनक प्रदर्शन किये। इस सम्मेलन में दाखिला टिकट से होते हुए भी पन्द्रह बीस हजार की भीड़ थी। १२ फरवरी को आचार्या लज्जादेवीजी की अध्यक्षता में महिला-सम्मेलन हुआ। शुद्धि-सम्मेलन कु० रणञ्जयसिंह की अध्यक्षता में हुआ। इसी दिन एक ईसाई मिश्नरी की शंकाओं का समाधान पं० कालीचरण ने बड़ी सुन्दरता से किया। विषय था—'वैदिकधर्म में मुक्ति।'

बाल-विनोद

प्यारे बाल साथियो,

पिछले दिनों रसीले रसगुल्लों और खस्ता कचौड़ियों का आकर्षण ज्ञानू दादा को कई दावतों में खींच ले गया, इसी लिये गत सप्ताह वह तुम लोगों से बात-चीत नहीं कर सके। किया क्या जाय, मिठाई तो बच्चों को ही नहीं बूढ़ों को भी अच्छी लगती है, खैर।

कुछ बाल साथियों को शिकायत है कि उनके बाल-विनोद स्तम्भ के लिए मित्र में केवल आधा पेज दिया गया है, जो बहुत थोड़ा है। भाई आजकल कागज और छपाई बहुत महगी है। आप लोग अपने उद्योग से 'आर्यमित्र' का एक-एक ग्राहक बना दीजिये, जिससे उसमें और पन्ने बढ़ा दिये जाय। फिर बाल-विनोद के लिए काफी स्थान ले लेना।

ज्ञानू दादा

पहेली बूझिए

सुमन में रहूं फूल में नहीं,
भानु में वसूं सूर्य में नहीं,
पुरुष में रहूं मर्द में नहीं,
चन्द्र में पूर्ण इन्दु में नहीं।
फूल में से पहले तीन,
फलों में से पीछे तीन,
छह अक्षर का मेरा नाम,
खाने के मैं आता काम

सत्यपाल, देहरादून

[पहेलियों के उत्तर अगले अंक में छापे जायगे।]

ज्ञानू दादा के नाम पत्र

१

मेरे यहाँ वसन्तोत्सव पर यज्ञ हुआ। परन्तु मेरी समझ में नहीं आया कि हवन क्यों किया गया और यज्ञकुण्ड के आस-पास आटे और हल्दी से वेल-बूटे क्यों बनाए गए।

शीतलप्रसाद आर्य

[हवन से वायु में के विषैले तथा रोगोत्पादक कीटाणु नष्ट हो कर वायु शुद्ध और सुगन्धित हो जाता है, जो हमारे स्वास्थ्य के लिये आवश्यक है। इसीलिये हमारे शास्त्रों में प्रतिदिन और पर्वों पर विशेष रूप से हवन करने की आज्ञा है। यज्ञ-कुण्ड के आस-पास आटा और हल्दी की रेखाएँ चींटी आदि छोटे-छोटे जन्तुओं के झुण्ड रोकने को बनाई जाती है। लोग उन रखाओं को वेल-बूटों की शकल में बना देते हैं जिससे उनमें सुन्दरता भी आ जाय।]

२

मैं अपने गाँव से अलीगढ़ पढ़ने जाता हूँ। मेरी नानीजी मुझे एक आना प्रतिदिन किराए को देती हैं, परन्तु मैं उससे अखबार खरीद लेता हूँ, जिसे स्वयं पढता और दूसरों को भी सुनाता हूँ। क्या नानीजी को पता लगेगा तो वे मुझे मारेंगी।

ईश्वरचन्द्र विद्यार्थी

[हरगिज नहीं मारेंगी, बल्कि वह प्रसन्न होकर एक आना रोज अखबार के लिए अलग देने लगेंगी। अखबार पढ़कर तुम अपना तो ज्ञान बढ़ाते ही हो, अन्य लोगों को समाचार सुनाकर देश की सेवा भी करते हो। परन्तु अखबार की पढाई में अपनी कक्षा की पढ़ाई न छोड़ देना, वह मुख्य है।]

'आर्यमित्र' के 'बाल-विनोद' में प्रकाशित कुछ प्रश्नों और उलझनों के सुलझाने में निम्न बालक-बालिकाओं के उत्तर हमें प्राप्त हुए है, जो बिलकुल ठीक है:—

सर्व श्री धर्मेन्द्र बलिरामनगर

---

१३ फरवरी को प० बुद्धदेव विद्यालङ्कार की अध्यक्षता मे युवक-सम्मेलन हुआ। ब्र० उषबुंध का प्रभावशाली भाषण हुआ। ईसाई मिश्नरी की शंकाओं का समाधान आज फिर किया गया। १४ फरवरी को प० जयचन्द्र विद्यालङ्कार की अध्यक्षता में शिक्षा-सम्मेलन हुआ। अनेक विद्वानों के विद्वत्तापूर्ण भाषण हुए। डा० दीवानचन्द्रजी का अध्यक्षीय भाषण बड़ा प्रभावशाली था। अन्त को श्री प० सत्याचरण शास्त्री ने सब को धन्यवाद दिया और महोत्सव की कार्यवाही समाप्त की। प्रति दिन प्रात. यज्ञ, भजन और आचार्य विश्वश्रवा के उपदेश होते रहे। जनता पर इस महोत्सव का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा।

आर्यजगत

—आर्यसमाज बिल्हौर ने १० से १४ फरवरी तक मेला मकनपुर में प्रचार किया। पं० रूपनारायणजी उपदेशक, पं० रामदेवजी, पं० रामलाल शर्मा, श्री सरयूप्रसादजी आदि के प्रभावशाली भजन और व्याख्यान हुए। श्री कृष्णचन्द्रजी ने मेजिक लालटेन द्वारा मद्य-निषेध सम्बन्धी चित्र दिखाए।

—२२ फरवरी को फ़ैज़ाबाद में आर्यवीर दल द्वारा वाणवर्षा, आसन, प्राणायाम आदि के प्रदर्शन किए गए। भाषण भी हुए।

—बहरायच निवासी श्री दुर्गाप्रसादजी आर्य के पुत्र का चूड़ाकर्म संस्कार १८ फरवरी को हुआ। ५) दान दिये। श्री विद्यार्थीजी के गृह पर पौर्णमासेष्टि यज्ञ २१ फरवरी को हुआ। २) दान दिये।

—शोक है कि आ० स० भोजपुर खेड़ी के पूर्व मन्त्री श्री दामोदरप्रसादजी वैद्य की धर्मपत्नी का देहान्त हो गया। आ० स० शोक-सहानुभूति प्रकट करता है।

—२३ फरवरी को बाराबंकी में आर्यकुमार सभा की स्थापना हुई। यज्ञ और व्याख्यान भी हुए।

एटा, रामकुमार, सुभाष बाजार मेरठ, वीरेन्द्रकुमार चंदोसी, विष्णुगोपाल शर्मा देहरादून, विश्वदेव त्रिवेदी, राजा का रामपुर (एटा), नन्दकिशोरलाल आर्य, चुनार। सत्यदेवशरण आर्य, सम्भल, नरेन्द्रप्रतापसिंह, रायपुर, शिवकुमार शर्मा बाल, फतेहपुर (जयपुर), सत्यदेव शर्मा आर्य, चम्पारण; राजेन्द्रप्रकाश सक्सेना, हापुड़, त्रिधाप्रकाश आर्य, बहरायच, कुमारी पुष्पलता, मुजफ्फरनगर, प्रतिभादेवी पुरदिलपुर (अलीगढ़), जूहीराम आर्य, चुनार, सत्यनारायण पोद्दार, कुचामण, उमेशचन्द्र गुप्त, लखनऊ, शिवदत्त शर्मा, ताजगज, आगरा, देवेन्द्रकुमार त्रिपाठी, लखना (इटावा), विद्याभूषण त्रिपाठी, जलालाबाद (फर्रुखाबाद), विनोदकुमार आर्य धामपुर, आत्मप्रकाश, जालन्धर, श्यामभरोसेलाल बहादुरगज (शाहजहाँपुर), सत्यप्रकाश गुप्त, अलीगंज, हरिराम आर्य, नरेन्द्रमोहन आर्य, सिकन्दराराऊ, हर्षपालसिंह, मथाणा (गढ़वाल), सरलादेवी आर्य्या कायमगंज, धनसीराम चौदिया, रायगढ़, ओमप्रकाश खरगौन, विद्यालाल आर्य पतारी (कानपुर)।

—आ० स० कुरैया खुर्द कलाँ (शाहजहाँपुर) द्वारा वैद्यराज श्री सुरेशचन्द्र आर्य के विवाह में श्री सर्वगुणप्रसादजी का प्रभावशाली भाषण हुआ। वैद्यजी ने ५०) वेद-प्रचारार्थ प्रान्तीय आ० प्र० सभा को दान में दिये।

—२१ फरवरी को साँभर झील (राजस्थान) में श्री रामप्यारेलाल सोठानी की पुत्री कान्तादेवी का पाणिग्रहण संस्कार झांसी निवासी श्री शान्तिप्रसादजी माहेश्वरी, मंत्री आ० स० सदर के पुत्र श्री महेशचन्द्रजी माहेश्वरी के साथ वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। कई संस्थाओं को दान भी दिया गया।

—आर्यसमाज लखीमपुर खीरी में प्रस्तावित हिन्दू कोडबिल का विरोध किया गया।

—आर्यसमाज फलावदा महात्मा श्रीरामजी की मृत्यु पर शोक-सहानुभूति प्रकट करता है।

—२५ फरवरी १६५१ को प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री पीतमलालजी की अध्यक्षता तथा श्री देवीप्रसाद जौहरी सहायक मन्त्री सभा की उपस्थिति में आर्यसमाज बुलन्दशहर का वार्षिक साधारण अधिवेशन और पदाधिकारियों का चुनाव हुआ। समाज के सदस्यों में कुछ मनोमालिन्य था जो सभा के उपर्युक्त अधिकारियों के उद्योग से दूर हो गया।

—आर्यसमाज बहादराबाद (सहारनपुर) का ३२ वाँ वार्षिकोत्सव ६ से १२ फरवरी तक समारोहपूर्वक मनाया गया।

—स्वामी हरिहरानन्द के उद्योग से दभौरा (अलीगढ़) में १७ से १६ फरवरी तक यजुर्वेद से यज्ञ किया गया तथा प्रचार भी हुआ। ग्राम में आर्यसमाज की स्थापना हुई। यज्ञ में अनेक साधु-सन्त और विद्वान् पधारे थे। एक दिन कविसम्मेलन भी हुआ। स्वामी आत्मानन्दजी तथा स्वामी रामेश्वरानन्दजी का सहयोग प्रशंसनीय था।

— अलवर निवासी पं० लक्ष्मणजी का विवाह पं० पाँचूरामजी मालाखेड़ा निवासी की पुत्री के साथ हुआ। सादगी का बहुत ध्यान रक्खा गया। वर-बधू ने स्वयं मन्त्रों की व्याख्या की।

उत्सव-सूचनाएं

—आर्यसमाज उरई—३०-३१ मार्च तथा १ अप्रैल।

—आर्यसमाज सहतवार (बलिया) का उत्सव जो १२ से १५ मार्च तक होने वाला था, अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दिया गया।

—आर्यसमाज आज़मगढ़ का ५७ वाँ वार्षिक उत्सव १६ से १६ मार्च तक मनाया जायगा।

—आर्यसमाज रुहालकी किशनपुर (सहारनपुर) का उत्सव २१ से २३ मार्च तक मनाया जायगा।

—आर्यसमाज गंज डुंडवारा का उत्सव २६ मार्च से १ अप्रैल तक समारोहपूर्वक मनाया जायगा। श्रीआनन्दस्वामीजी अवश्य पधारने की कृपा करें।

—आर्य जिला-सम्मेलन मैनपुरी १५ से १८ मार्च तक सिरसागज में बड़े समारोहपूर्वक मनाया जायगा। सिरसागज शिकोहाबाद रेलवे स्टेशन से ६ मील दूर पक्की सड़क पर है। सम्मेलन के साथ भारतीय संस्कृति-सम्मेलन, राजनैतिक सम्मेलन, महिला-सम्मेलन, संस्कृत सम्मेलन, वैदिक शिक्षा-सम्मेलन, कवि-सम्मेलन, आर्यकुमार-सम्मेलन, नशानिवारण-सम्मेलन आदि सम्मेलन प्रसिद्ध विद्वानों की अध्यक्षता में होंगे।

—आ० स० बड़ा बाजार कलकत्ता का वार्षिकोत्सव २३, २४, २५ तथा २६ मार्च को मनाया जायगा।

—गुरुकुल महाविद्यालय रायकोट (लुधियाना) का वार्षिकोत्सव २३, २४ तथा २५ मार्च को मनाया जायगा। नवीन छात्रों का प्रवेश भी होगा। नियमादि मँगा लीजिए।

निर्वाचन

—आर्यसमाज हलद्वानी—प्रधान पं० शंकरलालजी और मन्त्री—ला० श्यामलालजी।

—आर्यसमाज दभौरा (अलीगढ़) प्रधान—पं० शिवशङ्करजी और मन्त्री—श्री सरदारसिंहजी।

—आर्यसमाज बहादराबाद—प्रधान श्री महेन्द्र वर्मा और मन्त्री—मुंशी हृदयरामजी।

—आर्यसमाज बुलन्दशहर—प्रधान श्री रिछपालसिंहजी और मन्त्री—श्री हिम्मतसिंहजी वकील।

—आर्यकुमार सभा बाराबंकी—प्रधान—श्री रामसजीवनलाल चतुर्वेदी और मन्त्री—श्री माताप्रसाद आर्य।

—आ० स० पुरैनी (बिजनौर)—प्रधान—श्री राजपालसिंहजी वैद्य और मन्त्री—श्री मुकन्दीसिंहजी अध्यापक।

—आर्यसमाज अजमेर—प्रधान—रायबहादुर पं० मिट्ठनलाल भार्गव और मन्त्री—डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए०।

—आर्यसमाज अजीतमल (इटावा)—प्रधान—स्वामी मुनीश्वरानन्दजी और मन्त्री—महा० रामकृष्णजी आर्य।

—आर्यसमाज चाँदपुर (बिजनौर)—प्रधान—लाला भूषणशरणजी और मन्त्री—चौ० सोमदेव त्यागी।

—आ० स० राजामण्डी आगरा—प्रधान—श्री हरिशङ्कर शर्मा और मन्त्री—श्री प्रो० बाबूराम गुप्त एम० ए०।

—आर्य स्त्री समाज मुरादाबाद—प्रधान—श्री गोपीदेवीजी और मन्त्राणी वेदवतीजी।

—आ० स० आगरा नगर—प्रधान—श्री मोहनलाल आर्य और मन्त्री—श्री ओमप्रकाशजी आर्य।

—आ०स० जवाहर नगर कानपुर—प्रधान—प० रमेशचन्द्र शास्त्री, एम० ए०, स्नातक गुरुकुल वृन्दावन और मन्त्री—श्री रामचन्द्र गुप्त एम० ए०।

—आर्यसमाज भोजपुर खेड़ी—प्रधान—श्रीनत्थूसिंहजी और मंत्री—आनन्दप्रकाश शर्मा।

[पाँचवें पृष्ठ का शेष]

को उसी लगन से जुट जाना चाहिए, जो कि हैदराबाद के सत्याग्रह में दिखाई दी थी। केवल सम्मेलनों में सुन्दर भाषण करा कर, अथवा समाजों के साप्ताहिक सत्संगों में अधिक उपस्थिति दिखा कर आर्यसमाज के महान् कर्त्तव्य की इतिश्री नहीं होगी। इस सम्बन्ध में यदि आवश्यक समझें तो अन्य कार्यकर्त्ताओं से सम्मति ली जा सकती है।

प्रेमशंकर पचौरी, एडवोकेट

सार सूचनाएं

—देहरादून आर्यकुमार सभा द्वारा आयोजित एक वाक् प्रतियोगिता में काँगड़ी गुरुकुल के ब्रह्मचारी ओमप्रकाश और ब्रह्मचारी सत्यव्रत विजयी हुए। गुरुकुल को विजयचिह्न (चांदी की ढाल) भी मिला।

—शोक है कि १० फरवरी १९५१ को शिवपुरी (गवालियर) के श्री-राम-जानकी मन्दिर में तिलकधारी पण्डितों ने वेश्या नृत्य कराया। ४०-४५ रु० उसे दिये। परमात्मा उन्हें सुबुद्धि प्रदान करे।

मन्त्री आ० स० शिवपुरी

—श्री अम्बादत्त शर्मा 'अम्ब' द्वारा आयोजित अलीगढ-कवि सम्मेलन-कार्यालय का प्रथम मासिक अधिवेशन २५ फरवरी को हुआ। श्री वैनी कवि सभापति थे। अनेक कवियों ने कविताएँ पढ़ीं।

—इटावा निवासी कविराज रत्नाकर शास्त्री की पुत्री कुमारी विन्दुमती ने २५ फरवरी को सनातन धर्म कालेज इटावा में आयोजित देवस्मारक वाद-विवाद-प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया।

—आर्यसमाज नॉगल (बिजनौर) द्वारा संस्थापित गांधी ग्रामोद्योग विद्यालय सफलतापूर्वक कार्य कर रहा है। इसके लिए टीन के छप्पर और छात्रावास बनाने की आवश्यकता है।

मन्त्री आ० स० नॉगल

—भारतीय लोक संघ का उद्घाटन-समारोह गत २१ फरवरी को गाजियाबाद में हुआ। महात्मा आनन्द स्वामीजी का जुलूस निकाला गया। प० बुद्धदेव विद्यालंकार, प० रामचन्द्र देहलवी, प० जियालालजी, प० शिवदयालुजी, प० बालदिवाकर हंस, स्वामी आत्मानन्द आदि के भाषण हुए। प्रारम्भ में यज्ञ हुआ। इस संघ का उद्देश्य भ्रष्टाचार और अनतिकता के विरुद्ध युद्ध की तयारी करना बताया गया है।

—कानपुर से यू० पी० कंम्पाउण्डर एसोसियेशन का मासिक मुखपत्र शीघ्र ही प्रकाशित होगा। सम्पादक होंगे श्री कमल मिश्र। पत्र का उद्देश्य है कम्पाउण्डरों की हित-रक्षा और राम राज्य की स्थापना।

चोखेलाल शर्मा

[आठवें पृष्ठ का शेष]

मेरा अभिप्राय यह है कि हमें औषधियों की भरमार न कर प्रकृति पर अपने को छोड़ देना चाहिए, और मिथ्या नहीं मिताहार-विहार की आदत डालनी चाहिए। प्रायः अनेक रोग पेट की खराबी से होते हैं, सो पेट को ठीक रखना पहला काम है। हम मिताहार करें, भूखे न हों उस समय न खायें। जो खायें उसे खूब चबा-चबा कर खाया जाय, जिससे आमाशय को बहुत काम न करना पड़े। दांतों का काम आँतों को करना पड़ता है, इससे भोजन पचने में बड़ा विलम्ब होता है। यही बात पानी के संबंध में है। पानी को धीरे धीरे पीना चाहिए। एक दम और डट कर नहीं। एक विद्वान् का कहना है—'भोजन पियो और पानी खाओ' अर्थात् भोजन को चबा-चबा कर रस की शक्ल में करलो जिससे वह पानी की तरह पेट में उतर सके। उसी तरह पानी को घूंट घूंट कर के पिओ जिस तरह कि एक-एक कौर मुंह में देते हैं। ऐसा करने से बड़ा लाभ होगा।

भोजन में दूध और फलों का उपयोग अधिक होना चाहिए। मठा और दही भी बहुत उपयोगी है। फलों से मतलब कीमती फलों से नहीं है। गाजर, मूली, मैथी, पालक, बथुआ आदि भी फलों की गणना में आ सकते हैं, जो सबके लिये सुलभ हैं। भोजनों में ऋतु की चीजों का विशेष स्थान है। परमात्मा ऋतु में खाद्य पदार्थ खाने के लिये ही पैदा करता है, इन पदार्थों को अवश्य खाना चाहिए।

कहने का मतलब यह है कि जब तक ओषधियों से बचा जाय, तब तक ओषधियां कदापि सेवन न करनी चाहिएं। प्राकृतिक चिकित्सा या प्राकृतिक नियम-पालन ही नीरोगता की पहली सीढ़ी है। जो लोग नियमित जीवन बिताते और उचित मात्रा में खाते पीते हैं, वे बहुत ही कम बीमार पड़ते हैं। उन्हें ओषधियों का भी बहुत कम सेवन करना पड़ता है। इसी सिद्धान्त को सब अपना लें तो चिकित्सक के आश्रित न रहना पड़े और न दिन में बार-बार वार दवाएं ही खाने-पीने की नौबत आवे।

—कु० जयपालजी मानव अलीगढ़ में प्रचार-कार्य कर रहे हैं। उनसे पत्र-व्यवहार का पता है—उपप्रान्तीय आर्य कुमार परिषद अलीगढ़।

—मैं अखिल भारतीय श्रद्धानन्द-स्मारक ट्रस्ट देहली से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर अब स्वतन्त्र प्रचार-कार्य कर रहा हूँ। जो सज्जन या समाज मुझे बुलाना चाहें, नीचे लिखे पते पर पत्र-व्यवहार करें। ओम्प्रकाश शास्त्री, विद्याभास्कर आर्य-मिश्नरी, खातौली (मुजफ्फर नगर)।

श्री देवीप्रसाद जौहरी, अधिष्ठाता शिक्षा विभाग आ० प्र० नि० सभा ने क्रमशः १७ व २० फरवरी को आर्यकन्या विद्यालय भूड़ व आर्य पुत्री-पाठशाला सुभाष नगर (बरेली) का निरीक्षण किया। उक्त दोनों विद्यालयों तथा आर्य-समाज बिहारीपुर में भाषण दिये। आ० स० भूड़ (बरेली) का भी निरीक्षण किया। ——

आवश्यकता

आर्य अनाथालय पाटौदी हाऊस दरियागंज देहली के बालिका-विभाग के लिए एक अनुभवी संस्कृत एवं हिन्दी की अच्छी योग्यता रखने वाली तथा वैदिक सिद्धान्तों की पण्डिता अधिष्ठात्री की आवश्यकता है। जिनकी आयु ३० और ५० वर्षों के अन्तर्गत होगी तो उनको विशेषता दी जाएगी, रहने के लिए स्थान आदि का सुप्रबन्ध होगा एवं वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा। पता—

मन्त्री
आर्य अनाथालय, पाटौदी हाऊस, दरियागंज, देहली।

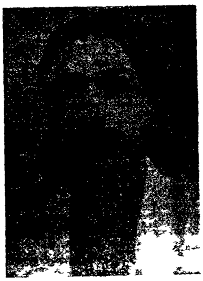
ओ३म्

आर्य्य-मित्र

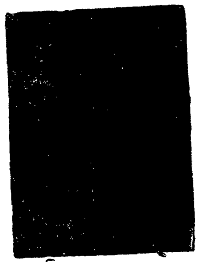
• ARYA-MITRA, AGRA •

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक—आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ
१५ मार्च १९५१

बंगाल की देन



योगिराज श्रीअरविन्द



महाकवि श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर



विज्ञानाचार्य श्रीजगदीशचन्द्र वसु



समाजसुधारक श्रीकेशवचन्द्र सेन

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०), एक प्रति- तीन आने सम्पादक - हरिशङ्कर शर्म्मा

वर्ष—५३
अंक—११

देहली में ऋषि-बोधोत्सव

माननीय मावलंकर की श्रद्धाञ्जलि

"कैसी भी परिस्थितियाँ आयें उनका निर्भीकता से सामना करो और मानव-जाति के उद्धार के लिए सतत कर्ममय जीवन व्यतीत करो—यही ऋषि दयानन्द का सन्देश है।" ये शब्द दिल्ली के समस्त आर्यसमाजो की ओर से आर्य केन्द्रीय सभा के तत्वावधान में मनाये गये ऋषिबोधोत्सव के अध्यक्ष-पद से भारतीय पालिमामेंट के अध्यक्ष श्री गणेश वासुदेव मावलंकर ने कहे। ऋषि दयानन्द की पृष्ठभूमि का दिग्दर्शन कराते हुए श्री मावलकर ने कहा कि जिस समय ऋषि दयानन्द अवतीर्ण हुए उस समय हमारा देश राजनैतिक दृष्टि से अंगरेजो का गुलाम तो था ही किन्तु हमारे धर्म और संस्कृति पर भी विदेशियों का आक्रमण जारी था। ऋषि दयानन्द ने धर्म का आधार आचरण को रखकर और धर्मग्रन्थों की बुद्धिसगत व्याख्या करके विधर्मियो और विदेशियो के आक्रमण से हिन्दू जाति की रक्षा की। स्वामीजी समस्त मानव समाज को एक मानते थे, किन्तु उसके साथ-साथ वह देश, राष्ट्र और धर्म का ध्यान रखते थे। शिक्षा के क्षेत्र में आर्यसमाज ने जो कुछ किया है, उसकी समता भारत में और कोई संस्था नहीं कर सकती।

श्री प० रामचन्द्रजी देहलवी ने ईश्वर भक्ति, वर्ण-व्यवस्था, वेद पढने का अधिकार, खान-पान आदि के विषय में आर्यसमाज के दृष्टिकोण को अत्यन्त युक्तिपूर्ण ढग से प्रस्तुत किया, जिससे श्री मावलकर बड़े प्रभावित हुए।

आर्य केन्द्रीय सभा के प्रधान मन्त्री श्री प० लक्ष्मीदत्तजी दीक्षित ने अपने भाषण में पाश्चात्य विद्वानों और उनके अनुगामी भारतीय विद्वानों द्वारा फैलाई जा रही भ्रान्तियों की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करते हुए ऋषि दयानन्द द्वारा प्रस्तुत वेद के वास्तविक स्वरूप को दर्शाने की प्रेरणा की।

संसद-सदस्य श्री प० ठाकुरदास भार्गव ने कहा कि जीवन का कोई पहलू ऐसा नहीं जिस पर ऋषि की दृष्टि न गई हो। यदि ऋषि दयानन्द न होते तो आज हिन्दुत्व पर गर्व करने वाले भी न होते। वह एक दूरदर्शी क्रान्तिकारी थे। १९ वी सदी में उन्होंने देश की विभिन्न समस्याओं का जो हल बताया था वह आज भी पूरा उतर रहा है।

राजस्थान के प्रमुख राजनैतिक नेता श्री गोकुल भाई भट्ट ने स्वामीजी के प्रति श्रद्धाञ्जलि भेंट करते हुए कहा कि स्वामीजी ने जो कुछ कहा और किया उसकी सचाई का हम धीरे-धीरे अनुभव करते जा रहे हैं।

श्री ला० देशबन्धु गुप्त ने अपने भाषण में कहा कि स्वराज्य का शब्द और स्वराज्य की भावना सबसे पहले ऋषि दयानन्द ने ही दी थी। इसलिए स्वराज्य की रक्षा का भार भी सबसे अधिक आर्यसमाजियों पर ही है। देश के नैतिक पतन को आर्यसमाज ही दूर कर सकता है। पजाब के भूतपूर्व प्रधान मन्त्री श्री ला० भीमसेन सच्चर, प्रोफेसर चारुदेव शास्त्री तथा प० बृहद्दल शास्त्री ने भी ऋषि दयानन्द की महत्ता पर प्रकाश डाला।

राज्य प्रतिनिधियों से भेंट

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की एक नवीन योजना है कि भारत में जो विदेशी दूतावास हैं उनके प्रमुख व्यक्तियों से मिल कर उन्हें अंग्रेजी सत्यार्थप्रकाश व धर्म का आदि स्रोत आदि पुस्तकें भेंट की जाएँ तथा वैदिक धर्म और आर्यसमाज के विषय में उन्हें परिचित कराया जाय। इसके अनुसार अफगानिस्तान और बर्मा के राज्य प्रतिनिधियों से मिला जा चुका है। २६ फरवरी को प्रातः १० बजे सार्वदेशिक सभा के सं० मंत्री प० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति ने इन्डोनेशिया के राज्यप्रतिनिधि डा० विनोल और २७ फरवरी को सायकाल ४ बजे अमेरिकन दूतावास के राज्यप्रतिनिधि डा० लायड स्टियर से आध घंटा भेंट की और उन्हें वैदिक धर्म तथा आर्यसमाज विषयक परिचय देने के अतिरिक्त उन्हें अंग्रेजी सत्यार्थप्रकाश 'फौंटेन हैड आफ रिलीजन' आदि पुस्तकें भेंट की जिस पर उन दोनों ने बड़ी प्रसन्नता प्रकट की और उन पुस्तकों को अध्ययनार्थ अन्य मित्रों को देने का वचन दिया। डा० विनोल ने भेंट में इस तथ्य का समर्थन किया कि इन्डोनेशिया की भाषा में संस्कृत के बहुत-से शब्द है तथा वहा के निवासियों में रामायण, महाभारत आदि की कथाएँ अब भी बहुत लोकप्रिय हैं। डा० लायडस्टियर को जब वैदिक धर्म के सार्वभौम वैज्ञानिक तथा युक्तियुक्त सिद्धान्तों के विषय में संक्षेप से बताते हुए आर्यसमाज के विषय में परिचय दिया गया तो उन्होंने उसके अनुयाइयों की संख्या दक्षिण अमेरिका के ट्रिनिडाड आदि प्रदेशों में आर्यसमाज की शाखादि के विषय में भी प्रश्न किये तथा इस प्रकार के सम्पर्क पर बड़ा हर्ष प्रकट किया। अन्य दूतावासों के अधिकारियों को भी पत्र लिखे जाचुके हैं। उनके उत्तर आते ही उनसे मिल कर इसी प्रकार साहित्य भेंट किया जायगा। —मंत्री, सा०सभा



श्री रामदासजी आर्य्य श्रीमती राजकुँवर देवी

उक्त आर्य्य दम्पती ने वृन्दावन-गुरुकुल विश्वविद्यालय के गत महोत्सव पर, गुरुकुल में दर्शन शास्त्र की शिक्षा की स्थायी व्यवस्था करने के लिये तीस सहस्र रुपया प्रदान कर 'श्री रामदास दर्शन पीठ' की स्थापना की है।

वैदिक विवाह

स्वर्गीय मास्टर राजकुमारजी अग्रवाल के द्वितीय पुत्र श्री वीरेन्द्रकुमारजी का विवाह शारदा कुमारी के साथ चाँदपुर स्याऊ में वैदिक विधि से सानन्द सम्पन्न हुआ। विवाह के उपलक्ष्य में विविध संस्थाओं को १००१) दान दिया।

(छठे पृष्ठ का शेष)

उससे सामयिक क्षुधा की निवृत्ति हो सकती है, किन्तु शरीर की विशेष उन्नति नहीं हो सकती। भूख के समय पेट भर कर पानी पी लेने से अथवा शाकपात को उबाल कर गले से नीचे उतार लेने से यद्यपि क्षुधा की ज्वाला कुछ शान्त हो सकती है, तथापि उससे शरीर का पोषण नहीं हो सकता। और मनुष्य न स्वास्थ्य-सुख का ही अनुभव कर सकता है।

सुस्वादु और पुष्टिकर खाद्य के द्वारा क्षुधा की निवृत्ति करना प्रकृत आहार है। इस समय निर्धन ही नहीं मध्यम श्रेणी के लोगों को भी प्रायः ऐसा भोजन प्राप्त नहीं होता। अकृत्रिम, साधारण और पुष्टिकर खाद्य मिलना भी आजकल कठिन है। बाजार में इस समय सभी खाने-पीने की चीजों में मिलावट की जाती है। सभी जगह कृत्रिमता प्रपंच की उन्नति होरही है। घी में मिलावट, दूध में पानी, मक्खन निकाला दूध, आटे में मिट्टी, दालो में छोटी-छोटी कंकड़ियाँ आदि स्वास्थ्य नाशक पदार्थ मिलाये जाते हैं। अत बाजार में इन चीजों का असली मिलना कठिन है। ऐसे दूषित पदार्थों के सेवन करने से हमारा स्वास्थ्य और भी खराब होता जाता है। विशेष कर साधारण और ग़रीब लोगों को अच्छी चीजों का प्राप्त होना और भी कठिन हो गया है।

इसलिए यह मानी और जानी हुई बात है कि रोगों का कारण देश की वर्तमान दरिद्रता ही है। अतएव जब तक इस देशकी दरिद्रता दूर न होगी तब तक रोगों का दूर होना भी असम्भव है।

'अप नः शोशुचदघम्'

आर्य मित्र

आगरा, फाल्गुन शुक्ल ७ सवत २००७वि०. गुरुवार ता० १५ मार्च १९५१
दयानन्दाब्द १२६, सृष्टि-सवत् १९७२९४९०५०

ते स्याम देव वरुण ते मित्र सूरिभिः सह । इषं स्वश्च धीमहि
ऋ० ७।६६।९

हम आपका ही हे वरुण, श्रद्धा सहित पूजन करें
विद्वान् मित्र-मिलापियों के साथ नित अर्चन करें
हो आपकी करुणा सदा सुख-शान्ति से भरपूर हों
हे नाथ ! हम दुःखादि दुर्गुण-व्याधियों से दूर हों

अपराध-चिकित्सा

'अपराध' का अर्थ है, कार्य-सिद्धि के बुरे साधन अथवा वे साधन जिनके द्वारा बुरी तरह काम निकाला जाय। जिस प्रकार शारीरिक और मानसिक रोग होते हैं, उसी प्रकार अपराध भी एक प्रकार के रोग हैं, जो आज महामारी की तरह विश्व-भर में फैले हुए हैं। आज जितने अपराधी क़ानूनी शिकजे में कसकर जेल भेज दिये जाते हैं, उनसे कितने ही सौ-गुणे अधिक अपराधी स्वच्छन्दतापूर्वक घूमते-फिरते और क़ानून की आंखों में धूल झोंक कर बड़े विश्वसनीय और प्रतिष्ठित बने हुए हैं। जो लोग जेल में बन्द हो जाते हैं, वे इतने खतरनाक नहीं होते, जितने ये सफेदपोश अपराधी, ईमानदार अपराधी, या पुण्यात्मा अपराधी हैं। शारीरिक रोग बुरे जल-वायु, अस्वास्थ्यकर खान पान और असंयत रहन सहन या मिथ्याहार-विहार से होते हैं, उसी प्रकार अपराध रोग की उत्पत्ति के राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, साम्प्रदायिक आदि कारण हैं। कुछ अपराध आनुवंशिक, प्राकृतिक और मानसिक रूप से भी उत्पन्न होते हैं। इस युग में अधिकतर अपराधों का मुख्य कारण आर्थिक है। झूंठी सभ्यता भी अपराधों को जन्म देती है। साम्प्रदायिक कारणों से आए दिन हत्याएँ और ठगाई होती रहती है। राजनैतिक कारणों से भी बड़े-बड़े उत्पात हुए तथा हो रहे हैं। सामाजिक कारण भी चोरी, जारी आदि के उत्पादक हैं। आर्थिक कारण–अभाव के जनक होने से–सबसे अधिक अपराधियों को पैदा करते हैं।

इन अपराधों की रोक-थाम करना प्रत्येक अच्छी सरकार का मुख्य कर्त्तव्य है। परन्तु अब सरकारें अपराधों की रोक-थाम की अपेक्षा अपराधियों को दण्ड देने पर अधिक तुली हुई हैं। यानी वे रोगियों का चिकित्सा न करके उन्हें जेलखाने में बन्द करती हैं। जेलखानों में अपराधियों का सुधार तो होता नहीं, उल्टा उनका बिगाड़ होता है। जो नवयुवक पहली वार एक घड़ी चुराने के अपराध में जेल भेजा जाता है, वह वहाँ से पक्का और पूरा चोर बनकर निकलता है। चोरी के सब हथकण्डे और दाव-पेच उसे "अनुभवी" और 'सिद्धहस्त' कैदियों से मालूम हो जाते हैं। वहाँ सुधार के बदले उसे अपराध करने का प्रशिक्षण मिल जाता है। जब बेचारा जेल से छूट कर आता है, तो पुलिस और पड़ौसी उसे महा भयानक व्यक्ति समझते हैं, वह भले ही भला मानस बनकर रहे परन्तु फिर भी उसका विश्वास नहीं किया जाता। समाज की सारी सहानुभूति उसकी ओर से काफूर हो जाती है। इसलिये वह बार-बार अपराध करता और पुनि-पुनि जेल जाकर अपनी मण्डली में मिलना चाहता है।

अपराध-निरोध के लिये जितने कड़े क़ानून बनते गये, उतनी ही अपराधों की और वृद्धि हुई। और इस दिशा में "जस-जस सुरसा बदन बढ़ावा, तासु दुगुण कपि रूप दिखावा" की उक्ति चरितार्थ होती गई। प्राचीन युग में अपराधों के लिये ऐसा क्रूर दण्ड-विधान न था। उस समय अपराधियों से घृणा नहीं की जाती थी, अपराधों से घृणा करने की प्रथा थी। अपराधियों के साथ स्नेह, सहानुभूति और सद्भावना का व्यवहार किया जाता था। भला रोगियों के साथ भी कभी किसी ने क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया है। वे तो सदैव दया, सहानुभूति और स्नेह के पात्र रहे हैं। कैदियों को कोड़े लगाने आदि अमानुषिक दण्ड देने से अपराधियों में शासन के विरुद्ध घृणा और विद्रोह की भावना जाग्रत होती है, और वे उसे अपने लिये एक चुनौती समझते हैं। प्राणदण्ड से बढ़कर बर्बर दण्ड तो शायद दूसरा कोई हो ही नहीं सकता। इस दण्ड से फांसी पाने वाले का तो कोई लाभ होता नहीं, उलटी दूसरे अपराधियों में फांसी देने वालों के प्रति घृणा और अवमानना पैदा हो जाती है। रोज बीसियों आदमियों को फांसी दी जाती है, और रोज सैकड़ों हत्याएँ होती हैं, फांसी का किसी पर कोई आतंक नहीं होता।

अर्थ दण्ड का भी यही हाल है। किसी ने बेईमानी से दस हजार रुपया कमा लिये और पचासों जुरमाने में दे दिये। बड़ा सस्ता सौदा रहा !

फांसी भी ठीक नहीं, कैद भी ग़लत, जुरमाना भी व्यर्थ आखिर अपराध रोकने के लिये कुछ इलाज भी है। है और अवश्य है, यह इलाज है, अपराधी को सद्भाव, स्नेह और सहानुभूति से समझाना-बुझाना। उसमें विश्व-बन्धुत्व तथा मानव-प्रेम की सद्भावना भरना। पराई स्त्रियों को मा-बहन समझने की शिक्षा देना। अर्थात् धर्म और नीति के मौलिक सिद्धान्तों का प्रचार करना। ये काम सरकारों को करने चाहिए और जनता को भी। आज देश में बड़ी-बड़ी धार्मिक सभाएं हैं, परन्तु वे इन अपराधों के निरोध की ओर ध्यान नहीं देती। अपराध का वास्तविक कारण जान कर उसकी चिकित्सा करनी चाहिए। शान्ति-सुव्यवस्था का दम भरने वाली सरकारें पुलिस और जेलों, अदालतों और सेनाओं पर जितना व्यय करती हैं, यदि उसका सहस्रांश भी अपराध-निरोध पर खर्च करें तो जेलों और अदालतों, पुलिस और सेनाओं का व्यय बहुत ही कम होजाय और अपराधों की संख्या घटकर संसार में सुख-शान्ति की वृद्धि हो।

पवित्र होली

नवान्नेष्टि का नाम ही लोक में 'होली' या 'होलिकोत्सव' हो गया है। जिस प्रकार दिवाली की पवित्रता जुए से नष्ट करदी गयी, उसी प्रकार होली को गन्दगी, नशेबाज़ी और अश्लीलाचार ने दूषित बना दिया। आर्यसमाज वर्षों से होली-दिवाली तथा अन्य उत्सव-त्यौहारों की विशुद्धता पर बल देता आरहा है, जिसका कुछ न कुछ अच्छा परिणाम अवश्य निकला है। एक समय था जब आर्यसमाज द्वारा त्यौहारों के संशोधन को हिन्दू धर्म में अनुचित हस्तक्षेप माना जाता था, परन्तु आज त्यौहार-सुधार के नाम पर वही काम किया जा रहा है, जिसे आर्यसमाज अपने जन्म-काल से कहता और करता आरहा है। आगरा म्युनिसिपिल बोर्ड के शिक्षाध्यक्ष श्रीमहेन्द्रजी का होली सम्बन्धी लेख इसी अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित किया जा रहा है। पाठक उसे अवश्य पढ़ें और अपने-अपने नगरों तथा ग्रामों में ऐसी ही योजना बनावें, जिससे आगामी होली गन्दगी तथा अन्य दोषों से मुक्त रहकर एक स्वच्छ, सुन्दर और सुहावने सांस्कृतिक मेले का रूप धारण कर सके। श्रीमहेन्द्रजी के प्रशंसनीय उद्योग से जो सफलता आगरा में हुई है, वही अन्य सब नगरों में भी हो सकती है। इस योजना का अनुकरण करना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है।

ऋषि की 'लुक-छिप-नीति'

कुछ दिनों से यह चर्चा चल पड़ी है कि महर्षि दयानन्द ने १८५७ ई० की जन-क्रान्ति (ग़दर) में लुक-छिप कर भाग लिया। यह धारणा जहाँ किसी ऐतिहासिक तथ्य के आधार पर नहीं है, वहाँ ऋषि का गौरव बढ़ाने वाली भी नहीं कही जा सकती। ऋषि का सारा जीवन स्पष्टवादिता, निर्भयता और सत्य से भरपूर है। जिसने अपनी लेखनी और वाणी द्वारा डंके की चोट धार्मिक, सामाजिक,

साहित्यिक और राजनैतिक क्रान्ति का उपदेश दिया, जिसको कारागार की कठोर-यातना का विचार तो क्या मृत्यु का भय भी सत्य कहने से विचलित न कर सका, वह 'लुक-छिप कर' कोई काम करे, यह बात बहुत सोचने पर भी समझ में नहीं आती। ऋषि दयानन्द ने स्वयम् क्रान्ति की और स्पष्ट रूप से क्रान्ति की। उस क्रान्ति के परिणाम-स्वरूप ही आज भारत स्वतन्त्र है और भारतीय स्वतन्त्रता के सर्व प्रथम सूत्रधार वही थे। उन्होंने जीवन-भर किसी 'लुक-छिप-नीति' या 'षड्यन्त्र' का आश्रय नहीं लिया। वे सत्य के निर्भय सेवक और समर्थक थे, और इसीलिये उनका इतना बड़ा महत्व है।

त्रिपाठीजी का कोप-कोदण्ड

सुलतानपुर के किन्हीं श्री शिवबालक त्रिपाठी, एम० ए० ने लखनऊ के दैनिक 'स्वदेश' में 'तनिक आर्यसमाजी सोचें' शीर्षक एक लम्बा लेख लिख कर एड़ी से चोटी तक सारी शक्ति यह कहने में लगाई है कि जनगणना में आर्यसमाजी अपने को हिन्दू क्यों नहीं लिखाते, वे तो हिन्दू ही हैं। हजार बार कहा जा चुका है कि राजनैतिक दृष्टि से आर्यसमाजी अपने को हिन्दुओं से भिन्न नहीं समझते, और न उनकी इस दिशा में कोई अलहदा मांगें हैं, केवल अपनी गणना के लिये अपने को आर्यसमाजी लिखा रहे हैं। ऐसे लाखों आर्यसमाजी हैं, जो आर्यसमाजों के सदस्य न होते हुए भी आर्यसमाजी हैं। त्रिपाठी साहब के विस्तृत लेख का विस्तृत उत्तर इसी अङ्क में आर्य विद्वान् श्री प० रामदत्त शुक्ल, एम० ए० ने दिया है, उसे वे ध्यान से पढ़ें। यदि त्रिपाठी साहब हिन्दुत्व सम्बन्धी अपने अन्धे आवेश को ज्ञान-चक्षुओं से देखेंगे तो उन्हें पता चलेगा कि हिन्दुत्व की रक्षा के लिये आर्यसमाज ने जो प्राणों की बाजी लगाई है, वह हिन्दू नाम धारिणी या हिन्दू हित-समर्थिका किसी संस्था ने नहीं लगायी। अपने को 'हिन्दू' 'हिन्दू' कहने से कोई हिन्दुत्व का रक्षक नहीं हो सकता। सच्चा रक्षक आर्यसमाज है, जिसने हिन्दुत्व की रक्षा कर त्रिपाठीजी जसे हिन्दूहित-रक्षक पैदा किये, नहीं तो हिन्दुत्व आज न जाने कहाँ होता। त्रिपाठीजी को चाहिये कि वे ऐसे ऊल-जलूल लम्बे लेख लिखने से पूर्व कुछ सोच-विचार भी लिया करें। इस प्रकार के वृथा पुष्ट लेख बिना युक्ति-प्रमाणों के कभी आदर-दृष्टि से नहीं देखे जा सकते।

अन्न-संकट

आज देश पर अन्न-वस्त्र का संकट आया और छाया हुआ है। जहाँ जाइये और जिधर देखिये सर्वत्र 'हाय रोटी', 'हाय कपड़े' की हाय-हाय हृदय को विदीर्ण किये डालती है। भारत के इतिहास में संवत् १९५५ और ५६ का दुर्भिक्ष बड़ा भयकर-प्रलयङ्कर समझा गया था। तब दुर्भिक्ष पीड़ित नर-नारियों का एक ही गीत था--

"छप्पनियाँ साल, फिर मत आओ मेरे भारत में" अब से कुछ काल पूर्व ५५ और ५६ के दुर्भिक्ष को याद कर-करके बूढ़े-बड़े लोग कानों पर हाथ रख कर उस समय को अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण बताते थे। परन्तु आज उस स्वतन्त्रता के 'सुकाल' ने तो छप्पनियाँ अकाल के मुखड़े पर भी थूक दिया। महाकवि शङ्कर ने अपनी एक कविता में छप्पनियाँ अकाल का वर्णन करते हुए लिखा था—

'बिकें डेढ़ पैसेरी गेहूं, जिनमें कड़ें तीनपा सेहूँ'

डेढ़ पैसेरी के हुए साढ़े सात सेर। इनमें से 'तीनपाव' नहीं पूरे सेर-भर सेहूँ निकाल दीजिए फिर भी साढ़े छह सेर गेहूँ—खालिस गेहूँ रहे। यानी छप्पनियाँ अकाल में रुपये के साढ़े छह सेर खरे और खालिस गेहूँ मिलते थे। और अब! पुड़ियों में अन्न और कुल्हियों में दूध! पशुओं के चारे का वह भाव है जो कभी मनुष्य के भोजन का था। इस घोर सङ्कट को वे ही लोग जानते हैं जिन पर कि वह पड़ रहा है। जिन लोगों ने बेईमानी से लाखों रुपये कमा लिये या कमा रहे हैं, उन्हें इस दारुण दुष्काल की हवा भी नहीं लगने पाती। जो लोग मोटी-मोटी तनख्वाहें पाकर चैन की छानते हैं, उनके लिये यह संकट कल्पनातीत-सा है, वे नहीं जानते कि जनता पर विपत्ति का कैसा भयङ्कर पहाड़ खिसल रहा है। हमारे मिनिस्टरान महाशयान तो अपने सेक्रेटरियों के आंकड़ों पर खेलने वाले निर्लिप्त और विरीह महानुभाव हैं। उन्हें न वस्तुस्थिति के मूल में जाने की आवश्यकता है, और न परिस्थिति को परखने का अवकाश। बहुत हुआ तो एक प्रभावशाली भाषण झाड़ दिया अथवा भावी आशा के अंकुर उगाने का वादा कर दिया। बहुत चीख-पुकार सुनी तो दमन-दुनाली का दब-दबा दिखाकर शान्ति-रक्षा की दुहाई दे दी। जो शासन जनता के सामान्य अन्न-वस्त्र का संकट भी दूर नहीं कर सकता, उससे दूध के दरिया बहाने और घी के झील भरने की तो आशा ही कैसे की जा सकती है। वही उर्वरा भूमि है, वे ही नहर और नदियाँ हैं, वे ही खेत और खलियान हैं; परन्तु फिर भी 'भुखमरी' और दुर्भिक्ष। आज की जनता स्वराज्य-सूर्योदय में अन्न-वस्त्र न पाकर, उसे स्वराज्य कहने में आनन्द अनुभव नहीं करती। उसकी रामराज्य की आशा प्रायः नष्ट हो चुकी है। उसे नेता-प्रणताओं की कोमल कान्त पदावलियों में कुछ आकर्षण या प्रभाव दिखाई नहीं देता। सरकार चाहती है कि सारी जनता महर्षि बन जाय तब 'रामराज्य' का दृश्य दिखाया जाय, और जनता कहती है कि कार्य-भार सँभालते ही सब शासक भगवान राम के अवतार क्यों नहीं बन गये। दोनों ओर गलत फहमी हैं। दोनों को ही सुधारना है। जनता में नैतिकता की कमी है, शासकों ने तप-त्याग को तिलांजलि दे दी। आज भी सहयोग-पूर्वक सच्चाई के साथ काम किया जाय और कन्ट्रोल का कोड़ा तोड़ कर फेंक दिया जाय तो निश्चय ही अन्न-वस्त्र का संकट दूर हो जाय और जनता को कुछ चैन मिले।

अध्यात्म

नश्वर शरीर का चमत्कार

श्री वेदतीर्थ

कोई परमार्थ तत्व की ओर बढ़े तो जरा-सा नाम होते ही उसी में कृतकृत्य हुए आगे न बढ़ सके। भक्त लोग भक्ति में ही मस्त रहे, आगे न बढ़ सके। कोई वेद शास्त्रों में ही उलझे रहे, शब्द ज्ञान-भण्डार में ऐसे फसे कि परमार्थ तत्व दूर ही रहा। कोई योग की नाना प्रकार की सिद्धियों में ही ऐसे फँसे कि वहीं के वहीं रह गये। किसी ने जल-सिद्धि, किसी ने स्थलसिद्धि, किसी ने आकाशसिद्धि प्राप्त करली और समझ लिया कि परमार्थ पा गये। ऐसे नाना प्रकार के सिद्ध हो गये पर परमार्थ से दूर ही रहे। कोई मनो सिद्ध हो गये, कोई वाचासिद्ध हो गये, कोई अधकचरे अल्पसिद्ध और कोई अपने को स्व सिद्ध ही समझने लगे। परमार्थ की दृष्टि से यह सब अज्ञान ही है। ये सब शरीर के चमत्कार हैं, सही पर इन्हीं में जो फसा रहेगा उसको परमार्थ, तत्व नहीं मिलेगा। परमार्थ तत्व तो यथार्थ ज्ञान के पश्चात् ही मिलेगा। सब दुःखों का मूल क्या है--(१) अज्ञान (२) मिथ्याज्ञान और (३) विपरीत ज्ञान। मिथ्या ज्ञान, विपरीत ज्ञान भी अज्ञान ही है। सुख को दुःख समझना, दुःख को सुख समझना, शरीर को आत्मा समझना, नश्वर को नित्य समझना इत्यादि ही तो अज्ञान है। इस अज्ञान को दूर करने के लिए यह जानना आवश्यक है कि यह सृष्टि क्या है? किसने बनायी, क्यों बनायी। यह शरीर क्या है? मन क्या है, बुद्धि क्या है? ये इन्द्रियाँ क्या हैं। इनका क्या-क्या काम है। ये किसके अधीन हैं? जिसके अधीन हैं, उसका क्या स्वरूप है, उसके गुण क्या हैं। उसका और शरीर का सम्बन्ध क्यों जुड़ा, कैसे जुड़ा? सुख-दुःख का कारण क्या है, क्या संसार में सुख है? यदि है तो कितना? सच्चा आनन्द कहाँ है? जिसके पास वह आनन्द है उसका स्वरूप क्या है? इत्यादि बातों को सोचना यही तो अध्यात्म है। इन प्रश्नों को सुलझाते-सुलझाते सैकड़ों बीच के बीच में ही रह गये। एक जन्म नहीं, अनेक जन्म टक्करें मारीं तो भी परमात्म तत्व को प्राप्त न कर सके। जिनके पूर्वजन्म के उत्कट संस्कार थे, वे इस जन्म में थोड़े-से प्रयत्न से पार हो गये। जिनके मध्यम संस्कार थे किन्तु इस जन्म में आकर प्रबल प्रयत्न किये वे परमार्थ तत्व के पास-पास पहुचे, इसी तरह कोई बहुत आगे कोई बीच में; कोई पीछे, कोई बहुत पीछे रह गये।

चयनिका

[मधुप]

अटल ईश्वर-विश्वास

सच पूछिये तो मुझे यह कहते हुए बड़ा आनन्द आता है कि मुझे अनेक संकटों के अवसर पर ईश्वर ने सहसा बचा लिया है। जब चारों ओर से आशायें छोड़ देने का अवसर आ जाता है, हाथ-पैर ढीले पड़ने लगते हैं, तब कहीं न कहीं से अचानक सहायता आ पहुंचती है। स्तुति, प्रार्थना, उपासना ये अन्ध विश्वास नहीं, वल्कि उतनी ही अथवा उससे भी अधिक सच बातें हैं, जितना कि हम खाते हैं, पीते हैं, चलते हैं, फिरते हैं, बैठते और उठते हैं। सच तो यह है कि यही एक मात्र सत्य है, दूसरी सब बातें असत्य है।

महात्मा गांधी

शिक्षा का उद्देश्य

शिक्षा किसी खास उद्देश्य को लेकर चलती है। यह उद्देश्य व्यक्तिगत अथवा सामाजिक हो सकता है। सामाजिक उद्देश्य का अभिप्राय समाज का वह चित्र है, जिसका हम निर्माण करना चाहते है।

श्री जवाहरलाल नेहरू

गोरक्षा

हिन्दुस्तान किसानों का मुल्क है। खेती का शोध भी हिन्दुस्तान मे ही हुआ है। गाय-बैलों की अच्छी हिफ़ाज़त पर हिन्दुस्तान की खेती निर्भर है। हिन्दुस्तान की सभ्यता का नाम ही गोसेवा है। लेकिन आज गाय की हालत हिन्दुस्तान में उन देशों से भी कहीं अधिक ख़राब है, जिन्होने गो-सेवा का नाम नहीं लिया था। हमने नाम तो लिया पर काम न किया। जो कुछ हुआ सो हुआ, लेकिन अब तो चेतो।

आचार्य विनोबा भावे

धार्मिक एकता

विश्व वास्तव में एक है। भौतिक रूप में तो लोग मिल गये हैं, परन्तु आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक रूप में वे नहीं मिल पाये हैं। वर्तमान पीढ़ी के सामने यह समस्या है कि सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक आधार पर एकता किस प्रकार स्थापित की जाय। बस एकता के प्रति धर्म का क्या योग है। धर्म इस विश्वास को आवश्यक समझता है कि वह भावना का विषय है न कि प्रकार का। धर्म के प्रति भक्ति एक समाज के सदस्यों की नहीं, बल्कि सारे विश्व की है।

श्री राधाकृष्णन

अपराध-निरोध

मेरा विश्वास है कि यदि बचपन मे ही बालक के पालन-पोषण और शिक्षा-दीक्षा का उत्तम प्रबन्ध हो, सरकार उसकी शारीरिक और मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति करके उसे सन्तुष्ट और सुखी बना सके और शिक्षित समाज-सेवकों एव मनोरोग चिकित्सकों की सेवाओं को उसे पूरा लाभ मिले तो मनुष्य की अपराधोन्मुखी प्रवृत्ति रोकी जा सकती है। अब अपराधियों को नृशंसतापूर्ण शारीरिक दण्ड देने का समय नहीं रहा। दण्ड इस लिए दिया जाता है कि अपराधी अपराध करना छोड़ दे। यदि वह दूसरे किसी ढग से सुधारा जा सकता है तो दण्ड देने की क्या आवश्यकता है।

राजकुमारी अमृतकौर

पश्चिमी सभ्यता

पश्चिमी सभ्यता नास्तिकता की भयानक चट्टान पर स्थित है। वह,ज्वालामुखी पवत की नाईं एक दिन फट जायगी और पश्चिम का नाश कर देगी। यदि पश्चिम विनाश से बचना चाहता है, तो उसे वैदिक सभ्यता अपनानी चाहिए।

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ

जनगणना

हमारे देश का जनगणना का काम बहुत ही विशाल है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि और देशों के मुक़ाबले में हमारा इतना बड़ा काम बहुत ही सस्ते ढग से हो जाता है। संसार के किसी भी देश में इतने कम खर्च में जनगणना नहीं हो पाती। जनसंख्या के विचार से हमारा देश संसार के बड़े से बड़े देशों में से है और ऐसे महादेश की जनगणना सफलता के साथ कर लेना एक खूबी की बात है।

श्री गोविन्दवल्लभ पन्त

ज्ञान और रूढ़ियां

शरीर में कहीं फोड़ा-फुन्सी हो तो जब तक वह कच्चा रहता है, उसकी पीब एक ढक्कन की तरह घाव के ऊपर लगी रहती है। घाव के ठीक होने पर वह सूख कर गिर जाती है। ज्ञान के प्राप्त हो जाने के बाद रूढ़ि-रिवाज सब अपने आप हट जाते हैं।

चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

भारतीय संस्कृति

प्राचीन भारतीय संस्कृति का पालन और संरक्षण करना प्रत्येक व्यक्ति का मुख्य कर्तव्य है। प्राचीन भारतीय संस्कृति को सजीव रखने वाली एकमात्र भाषा संस्कृत है। धर्म और संस्कृति ने ही जनता को युगो तक एक सूत्र में बाँध रखा है। हिन्दू धर्म गगा के प्रवाह की तरह पवित्र है।

श्री कैलाशनाथ काटजू

समाज-सेवक

सामाजिक कार्यकर्त्ता का प्रथम और प्रमुख कार्य उन सामाजिक बुराइयों के कारणों को ढूंढना है, जिनका वह अन्त करना चाहता है। प्रत्येक सामाजिक कार्यकर्त्ता से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह निष्काम मिशनरी भावना से समाज-सेवा करेगा। समाज-सेवकों का अधिकतर भाग स्वभावतः उन लोगों में से ही आयगा, जो समाज-सेवा का परीक्षण प्राप्त किये हुए हैं और वे पैसे या किसी अन्य रूप में अपने कार्य का प्रतिफल चाहते हो।

मा० श्री जगजीवनराम

सच्ची नागरिकता

नवयुग की पहली मांग यह है कि देश के छात्रों को प्रारम्भ से अन्त तक अन्य सब प्रकार की शिक्षा के साथ-साथ अनिवार्य रूप से नागरिकता की शिक्षा दी जाय। नागरिकता की सब से बड़ी मांग यह है कि देश का प्रत्येक निवासी अपने देश और देशवासियों के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझे। उत्तरदायित्व की भावना उसकी नस-नस में व्याप्त हो जाय।

प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति

सच्ची शान्ति

राजनीतिक विश्व - शान्ति उच्चतर आध्यात्मिकता शान्ति का प्रतिविम्ब है, और सब प्रधान सत्य के बिना असम्भव एवम् अर्थहीन है। बाह्य शान्ति इसका प्रतिविम्ब है।

प्रो० फ्रेडरिक स्पिगलवर्ग

अन्न-वस्त्र की कमी नहीं

देश के भीतर न कपड़े की कमी है और न अन्न की। सरकार की ग़लत नीति के कारण ही लोगों को भूखा रहना पड़ रहा है। आज देश के अन्दर काफी अन्न है। अगर सरकार सही नीति पर चले तो देश के प्रत्येक व्यक्ति को पेट-भर खाना मिले, और कोई भूखा न रहे।

प० श्रीकृष्णदत्त पालीवाल

गांव और साहित्य

विद्यार्थियों को चाहिये कि वे छुट्टियों में गाँव-गाँव में जाने का प्रोग्राम बनावें और वहाँ बूढ़े व्यक्तियों से मिलकर उस गाँव की ऐतिहासिकता, विशेषता, लोकगीत, लोकोक्तियो, अप्राप्य ग्रन्थों आदि की जानकारी प्राप्त कर उन्हे संगृहीत करें। गाँव-गाँव में साहित्य परिषदें खोली जाय और उनके द्वारा साहित्यिक एवं भाषा-सम्बन्धी अनुसन्धान किये जायं।

श्रीलक्ष्मीधर वाजपेयी

रेलवे-भाड़ा

रेलवे-विभाग को दुधार गाय मान कर रेलवे का किराया बढ़ाना सर्वथा अनुचित है। रेलवे को व्यापारिक आधार पर ही चलाना चाहिये, जबकि इस उद्योग से अत्यधिक लाभ है, तब किसी व्यापारिक दृष्टि से रेल भाड़े की वृद्धि को उचित नहीं कहा जा सकता।

श्रीजयप्रकाश नारायण

स्वास्थ्य-सुधा

रोगों का मूल—दरिद्रता

श्री आनन्दीप्रसाद मिश्र "निर्द्वन्द्व"

आज-कल अनेक विपत्तियों के साथ-साथ भारतवर्ष में रोगों की संख्या भी बढ़ती जारही है। प्लेग, हैजा, इन्फ्लुएंजा, मलेरिया, क्षय आदि सैकड़ों भयंकर व्याधियाँ बड़ी भीषणता से प्रतिवर्ष भारतवासियों का ध्वंस कर रही हैं। वैद्य, डाक्टर उक्त रोगों के अनेक प्रकार के कारण निर्द्धारित कर रहे हैं। किन्तु वास्तव में देखा जाए तो रोगों का एक मात्र कारण भारत की दरिद्रता ही है। दरिद्रता ही के कारण देश में आज इतने रोगों की विभीषिका फैल रही है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। नीचे उसकी विशद व्याख्या की जायगी।

हमारे खाद्य-पदार्थों के सार भाग से रक्त बनता है। रक्त ही शरीर का मुख्य पदार्थ है। रक्त के द्वारा ही हमारे समस्त शारीरिक यंत्रों का संचालन होता है, और हम जीवन धारण करते हैं। रक्त ही हमारे शरीर का सार भाग है। रक्त की उन्नति और अवनति के ऊपर ही हमारे शरीर की एवं समस्त जीवन की उन्नति और अवनति निर्भर है। वर्तमान डाक्टरों के मत से बीजाणुओं के द्वारा ही रोग उत्पन्न होते हैं। ये बीजाणु श्वास-वायु के साथ, जल के साथ और अन्यान्य नानाप्रकार से हमारे शरीर में प्रवेश करते है। यद्यपि ये बीजाणु हमारे शरीर में हर समय प्रवेश करते हैं, तथापि हम हर समय रोगी रहते हों, ऐसा नहीं होता। इसका कारण यह है कि ये रोग के बीजाणु जब हमारे शरीर में प्रवेश करते हैं, तब हमारे शरीर में एक प्रकार की क्रिया होती है, अर्थात् हमारे रक्त स्थित बीजाणुओं के साथ इन आगन्तुक रोगों के बीजाणुओंका एक प्रकार का युद्ध होता है। पहरे वाले सिपाहियों और चोर-डाकुओं में जैसी लड़ाई होती है, इनमें भी प्रायः वैसी ही लड़ाई होती है। इस लड़ाई में जो जीत जाते हैं उन्हीं का प्रभाव फैल जाता है। हमारे रक्त के बीजाणुओं के विजय प्राप्त कर लेने पर ही हमारा मंगल है। कारण कि उनसे सम्पूर्ण रोगों के बीजाणु पराजित होकर भाग जाते हैं, अथवा नष्ट हो जाते हैं। यदि ऐसा न होकर हमारे रुधिर के बीजाणु पराजित होजाएं तो हमारा विशेष अनिष्ट होने की सम्भावना है। ऐसा होने से शत्रुओं के द्वारा हमारा शरीर रूपी दुर्ग शत्रुओं के अधिकार में आ जाता है और हम रोगी हो जाते हैं।

हमारे रुधिर के साथ स्वास्थ्य का घनिष्ठ सम्बन्ध होने से रुधिर की उन्नति करना हमारा प्रधान कर्तव्य है। हमारा रुधिर यदि शुद्ध और शक्तिशाली हो, तो सहज में कोई भी रोग हमारे ऊपर आक्रमण नहीं कर सकता। हम सदैव इसके उदाहरण देखते हैं। एक स्थान में और एक ही अवस्था में होने पर भी एक मनुष्य अस्वस्थ और दूसरा स्वस्थ पाया जाता है। उपर्युक्त कारण के विना ऐसा नहीं हो सकता। इससे स्पष्ट जाना जाता है कि जिसका रुधिर दूषित और तेजहीन होता है, वह रोगी रहता है। जिसका रुधिर शुद्ध और बलवान होता है, वह आरोग्य रहता है। रोग का आक्रमण और चोर-डाकुओं का आक्रमण एक ही प्रकार का होता है, जिसके पहरेदार सावधान हों, और दरवाजे के किवाड़ आदि खूब मजबूत हों, उस घर में सहज ही चोर प्रवेश नहीं कर सकते। किन्तु जिसके प्रहरी लोग कमजोर और शिथिल हों, और घर के दरवाजे आदि टूटे-फूटे हों, उसके घर में चोर सहज ही प्रवेश कर सकते हैं।

यह पहले कहा जाचुका है कि आहार के सार भाग से हमारे शरीर में रुधिर उत्पन्न होता है। इस कारण हमारे आहार के ऊपर ही रुधिर की सब प्रकार की उन्नति, अवनति अवलम्बित है। हमारा आहार उत्तम और पुष्टिकारक होने पर हमारा रुधिर भी शुद्ध और शक्तिशाली होगा। और यदि हमारा आहार थोड़ा और बुरा है तो हमारा रुधिर भी निकृष्ट और बलहीन होगा। मगर उत्तम आहार का प्राप्त होना अर्थ के ऊपर निर्भर है। यथेष्ट पैसों के न मिलने से मनुष्य उत्तम भोजन-सामग्री संग्रह नहीं कर सकता।

तृप्ति कर, स्वादिष्ठ और पुष्टिकारक भोजन करने की किसकी इच्छा नहीं होती। किन्तु बिना अधिक आयके उसको प्राप्त करना असम्भव है। उत्तम और पुष्टिकारक भोजन प्राप्त करने के लिए हमें अधिक धन चाहिए परन्तु हमारा देश अतिशय दरिद्र है। इस देश के प्रत्येक मनुष्य की दैनिक आय, अन्यान्य सभी देशों की अपेक्षा बहुत कम है। इस दरिद्रता के कारण हमारे देशवासी पर्याप्त मात्रा में पुष्टिकर खाद्य नहीं खा सकते। अल्प और बुरे भोजन करने से दिन-दिन हमारा शरीर कृश होता और रुधिर की भी अवनति होती है। जैसे-तैसे पेट भर लेने को ही प्रकृताहार नहीं कहा जासकता।

[शेष पृष्ठ दूसरे पर]

महिला-मण्डल

आर्य्य महिलाएं

श्री कुन्ती शर्मा, बी० ए०

देश के प्रति महिलाओं का भी बहुत बड़ा कर्तव्य है। स्वतन्त्रता के युद्ध में वीर नारियों ने जो महान् कार्य किये वे आज किससे छिपे हैं। नारियाँ चाहे तो नरों से अधिक काम कर सकती हैं। वे गृहस्थ की संचालिका हैं। गृहस्थ भी छोटा-सा शासन है, जिसमें प्रत्येक प्रकार के विभाग होते हैं। इन सभी विभागों का कार्य-सम्पादन महिलाओं को ही करना पड़ता है। आवश्यकता होने पर वे अपने पति आदि की सहायता भी ले लेती हैं।

महिलाओं में प्रायः संघटन नहीं होता। उन्हे गृहस्थ के काम धन्धों से ही बहुत कम अवकाश मिल पाता है। परन्तु रात-दिन चूल्हे-चक्की के फेर में ही पड़े रहना उचित नहीं है। कुछ समाज-सेवा की भी चिन्ता करनी चाहिये। यदि प्रत्येक मुहल्ले में एक-एक स्त्री-समाज स्थापित की जाय तो इससे बड़ा लाभ हो सकता है। इस समाज द्वारा स्त्रियों में ज्ञान-चर्चा हो, अच्छे-अच्छे उपदेशप्रद गीत गाए जायं, बालकों को घरेलू शिक्षा देने के साधनों पर विचार हो। बेपढ़ी-लिखी बहनों को साक्षर बनाने का उद्योग किया जाय और उन्हे प्राचीन तथा नवीन भारतीय गौरव की अच्छी और उपयोगी बातें सुनाई-समझाई जावें। स्त्रियों में भयङ्कर मिथ्या भ्रमों ने घर कर लिया है, इनको दूर करना सबसे बड़ी समाज-सेवा है। टोना-टनमन और मियां-मदार की पूजा कितनी मूर्खता है। इन सबसे स्त्री-समाज को मुक्त करना चाहिए। आजकल पढ़ी-लिखी बहनों का अभाव नहीं है। खोजने पर प्रत्येक मुहल्ले में ऐसी बहनें मिल जायेंगी जो इन स्त्री-समाजों का संघटन कर सकें। स्त्रियाँ बहुत पिछड़ी हुई हैं, इनमें ज्ञान-भानु का प्रकाश करने की बड़ी आवश्यकता है। यदि माताएँ सुधर गयीं तो उनकी सन्तान का सुधार निश्चित है।

मा की गोद किसी भी विश्वविद्यालय से कम नहीं होती। विश्वविद्यालय की शिक्षा नौकरी दिलाने में सहायक होती है, माता की गोद में घुटी के साथ जो सद् शिक्षा दी जाती है, वह मनुष्य को मनुष्य बनाती है। अब आप सोचिये कि जो शिक्षा विश्वविद्यालयों से भी बढ़ कर है, वह कितनी उत्तम और उपयोगी होनी चाहिए। इसके लिये आवश्यकता है कि महिलाएँ किसी स्थान पर एकत्र होकर अपनी दशा पर विचार करना सीखें। विद्वानों और विदुषियों के विचारों को पढ़ें, उनसे लाभ उठावें और अपनी सन्तानों को भी वैसी ही शिक्षा दें।

सुझाव और सम्मतियाँ

हमारी शिक्षा-विधि

वर्तमान समय में चारों ओर से यह विचार गूंज रहे हैं कि शिक्षा-पद्धति में सुधार होना परमावश्यक है। मैंने इस अभिप्राय से कोटा-सम्मेलन के समय एक सुझाव पृथक् पृथक् रूप से श्रीमान् राजर्षि टंडनजी, सभापतिजी तथा स्वागत मंत्रीजी की सेवा में प्रस्तुत किया था। श्री प्रधान मंत्रीजी ने सुझाव पर विचार करने का वचन दिया और उस पर विचार-विमर्श हुआ भी। श्रीमान् राजर्षि का पत्र प्राप्त हुआ जिसका आशय यह है कि कोटा-सम्मेलन में शिक्षा की पद्धति पर आपस में बातचीत हुई और एक प्रस्ताव भी सम्मेलन में स्वीकृत हुआ। मेरे हाथ में तो इस समय कई दूसरे काम हैं, देश-भर में किस प्रकार शिक्षा दी जाय यह बड़े महत्त्व का विषय है। आवश्यकता यह है कि कुछ विचारवान् और त्यागी व्यक्ति इस काम को उठावें। मेरी सहायता ऐसे लोगों को मिलेगी ही।

युग-प्रवर्तक महर्षि दयानन्द ने शिक्षा, समाज-सुधार और स्वराज का मूल मंत्र फूंका। महात्मा गाँधी ने स्वराज दिलाया, स्वतन्त्रता प्राप्त कराई। श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी ने महर्षि के संकेतानुसार आदर्श प्रणाली के आधार पर गुरुकुल कांगड़ी स्थापित किया। आज के दिन गुरुकुलों के स्नातक प्रत्येक क्षेत्र में प्रशंसनीय सेवा कर रहे हैं। अब राजर्षि के विचारानुसार आवश्यकता इस बात की है कि कुछ विचारवान् और त्यागी व्यक्ति इस कार्य में संगठित रूप से लग जावें और एक आदर्श शिक्षा-प्रणाली की रूप-रेखा सर्वसाधारण के सम्मुख रखें।

इस कार्य की सफलता के हेतु निम्नलिखित कार्य करने की आवश्यकता है। नवीन शिक्षा-प्रणाली की रूप-रेखा निर्धारित करने के अभिप्राय से समाचार-पत्रों द्वारा आन्दोलन किया जावे और शिक्षा-विशारदों की सम्मतियां संग्रह की जावें।

किसी एक केन्द्र स्थान पर शिक्षा-विशारदों का सम्मेलन करके आई हुई सम्मतियों पर विचार-विमर्श किया जावे और समयोपयोगी आदर्श शिक्षा-प्रणाली की रूप-रेखा सर्वसम्मति अथवा बहुमति के आधार पर निर्धारित की जावे। उपर्युक्त शिक्षा-प्रणाली को डी० ए० वी० कालेज, स्कूल, सनातन धर्म व विभिन्न धर्मों तथा जातियों के प्रचलित कालेज, स्कूल, हिन्दू-विश्वविद्यालय, हिन्दी-विश्व-विद्यालय शान्ति-निकेतन, गुरुकुल आदि सभी स्वतन्त्र शिक्षा-संस्थायें व पाठशालाएँ आदि अपनाएँ आदर्श शिक्षा का उदाहरण सरकार व सर्व साधारण के समक्ष रखने की चेष्टा करें।

इस भांति शिक्षा प्रणाली निर्धारित होने पर सरकार से इस विषय पर स्वीकृति लेने की आवश्यकता होगी कि जो सहायता वर्तमान समय में जिन शिक्षा-संस्थाओं को मिल रही है वह नवीन शिक्षा-पद्धति अपनाई हुई शिक्षा-संस्थाओं को पूर्ववत् मिलती रहे। यह कार्य कोई कठिन नहीं है। आने वाली सन्तान को मानव व सुशिक्षित बनाने का अपना कर्तव्य समझने वाले शिक्षा-विशारदों को केवल संघटित रूप से कार्य-सम्पादन करने की आवश्यकता है। जब ब्रिटिश सरकार के समय में एक महात्मा मुन्शीरामजी ने गुरुकुल-प्रणाली चला कर शिक्षा का आदर्श सब साधारण के सम्मुख रखा और सफलता प्राप्त की तब यदि भारतवासी एक मत होकर सच्चे त्याग व लगन से इस अभाव की पूर्ति में जुट जावें तो सफलता प्राप्त होने में सन्देह नहीं।

—मथुराप्रसाद, बांदा

—

गंदे गाने और गंदी फिल्में

कैसे दुर्भाग्य की बात है कि वर्तमान युग की सबसे अधिक प्रभावशालिनी कला 'सिनेमा' अपना कर्त्तव्य पालन करने के स्थान पर आज देश की पीठ में छुरा भोक रही है। प्रतिदिन जिस चारित्रिक व नैतिक बल के आधार पर कोई भी राष्ट्र संकट को पार करने की आशा रख सकता है, उसी की आज 'सिनेमा-संसार' के द्वारा धज्जियां उड़ाई जा रही हैं। यहाँ के नवयुवकों और नवयुवतियों के मस्तिष्कों में भूल कर भी देश की वर्त्तमान् दयनीय अवस्था इसलिए नहीं आने पाती कि उनको फिल्मी गन्दे गाने और दृश्य ऐसा सोचने का अवसर ही नहीं देते। उनके कमरों में देश के नेताओं के नहीं फिल्मी अभिनेत्रियों तथा अभिनेताओं के चित्र टंगे होते हैं।

इतना ही नहीं इन गन्दी फिल्मों द्वारा ट्रेनिंग पाए नवयुवक प्रतिदिन गली-मुहल्लों में ऐसी दूषित घटनाएं कर रहे हैं कि वह भारतीय संस्कृति पर कलङ्क सिद्ध हो रहे हैं। चरित्रहीनता की अवस्था इतनी सीमा पर पहुँच गई है कि आज एक बहन अपने सिनेमा जाने वाले भाई पर विश्वास नहीं कर सकती। सड़कों गलियों व घरों में रेडियो पर बज रहे गन्दे फिल्मी गानों ने ऐसी अवस्था उत्पन्न करदी है कि इसकी गन्दगी से भले व्यक्ति भी नहीं बच पाते। चरित्रहीनता के प्रचार में भारतीय गन्दी फिल्मों व गानों से जो कमी रह जाती है उसकी पूर्ति विदेशों से आई वे फिल्में कर देती हैं, जिनमें भारतीय संस्कृति के नितान्त विरोधी चित्र व दृश्य दिखलाये जाते हैं।

इसलिए सिनेमा-कला की वर्त्तमान् देशद्रोही नीति की यदि तुरन्त शुद्धि न की गई तो देश का बड़ा अहित होगा। मुख्यतः भारतीय संस्कृति पर इसका बड़ा बुरा आघात पहुंचेगा। यदि सरकार चाहे तो इसका सुधार क्षण-भर में हो सकता है। परन्तु आश्चर्य तो इस बात का है कि हमारे राष्ट्रपति माननीय श्री डा० राजेन्द्रप्रसादजी तथा राजर्षि श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन स्पष्ट रूप से सार्वजनिक मंच पर इन गन्दी फिल्मों की निन्दा कर चुके हैं, न जाने फिर भी क्यों इस दिशा में लेशमात्र भी सुधार नहीं हो पाया। हो सकता है कि चरित्रहीनता के इन प्रचारकों ने राज्य शासन में भी कहीं पैर जमा रक्खे हों।

ऐसी अवस्था में आर्यसमाज को आवश्यक है कि वह अपना कर्त्तव्य पालन करे। यह बात सर्व-विदित है कि महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना ही इसलिए की थी कि वह देश के ही नहीं अपितु संसार-भर के धार्मिक व राजनैतिक क्षेत्र की गन्दगी साफ करके उसका शुद्ध भारतीयकरण करे। आज संसार का प्रश्न तो दूर रहा हमारे घर में ही इन चरित्रहीन लोगों ने आर्यसमाज को चेलेंज दे दिया है। मेरी दृढ़ धारणा है कि आर्यसमाज इस चुनौती को अवश्य स्वीकार करेगा और सर्वत्र इस प्रकार का आन्दोलन करेगा कि इन गन्दी फिल्मों का नगरों में चलना ही असम्भव हो जाय और साथ ही सरकार को भी तुरन्त अपना कर्त्तव्य पालन करने पर विवश होना पड़े।

रामगोपाल, उपमन्त्री
सार्वदेशिक सभा

—

ऋषि का कृत्रिम पत्र

अजमेर से प्रकाशित होने वाले पौष कृष्णा ८ सं० २००७ के 'आर्यपरिवार' के मुख पृष्ठ पर 'महर्षि दयानन्द और जाति-भेद' शीर्षक से एक पत्र छपा है, जो ऋषि दयानन्द का बताया गया है। पत्र इस प्रकार है—

"गुणकर्मानुसार वर्ण व्यवस्था के विषय में यह आवश्यक है कि वर्तमान जन्ममूलक जात-पात के बन्धनों को तोड़ कर विवाह हों। इस कार्य की सिद्धि के लिये प्रत्येक प्रान्त की समाजें मिलकर यत्न करें। जन्ममूलक जात-पात जब तक विद्यमान है, देश तथा आर्यों की उन्नति नहीं हो सकती। जात-पात के तोड़े बिना वर्ण व्यवस्था का क्रम ठीक न हो सकेगा।" इस पत्र के विषय में 'आर्य-परिवार'-सम्पादक ने जो परिचय दिया है, वह इस प्रकार है— 'स्वामी कल्याणानन्दजी नामक नेपाली साधु को कार्तिक बदी १ सं० १९४० को अजमेर से लिखे पत्र से उद्धृत।' ऋषि दयानन्द के नाम से 'आर्य-परिवार' में जो उपर्युक्त पत्र छपा है, वह ऋषि दयानन्द का नहीं है। इस पत्र को प्रथमबार जात-पात तोड़क मंडल, लाहौर के कार्यकर्त्ताओं ने १६ दिसम्बर सन् १९२६ को कानपुर के हिन्दी 'प्रताप' में छपवाया था। पता नहीं 'आर्य-परिवार' के सम्पादक ने उक्त पत्र कहाँ से लेकर छापा या उन्हें उसकी प्रतिलिपि किसने भेजी। यदि सम्प

होली का आन्दोलन

श्री महेन्द्रजी, शिक्षाध्यक्ष, आगरा म्युनिसिपल बोर्ड

आगरा में भी होली के अवसर पर १५ दिन पहले से इतना हुल्लड़ मचता था कि लोग परेशान रहते थे। १९४६ की होली पर यहाँ दो आदमी मारे गये, बीसियों जख्मी हुये और पच्चीसों गिरफ्तार हुये थे। सैकड़ों रुपये का माल लुटा था और हजारों का सामान चुरा कर जलाया गया था। उस वर्ष होली के एक सप्ताह बाद आगरा म्युनिसिपल स्कूलों के दस हजार बच्चों का एक जलूस होली की उक्त गन्दगी और बुराइयों के विरोध में निकाला गया था। इस में सैकड़ों पोस्टर थे और बच्चे नारे लगा रहे थे। इस जलूस का जनता पर असर तो पड़ा, परन्तु इस बात पर संयोजकों की हंसी उड़ाई गई कि होली बीत जाने पर यह जलूस निकालने में लाभ? १९५० की होली के अवसर पर एक महीने पहले से यह आन्दोलन फिर शुरू किया गया। एक एक सप्ताह बाद चार दिन स्कूलों के दस-बारह हजार बच्चों के जुलूस शहर-भर में घुमाए गये जिसमें बच्चों ने सुधार की धूम मचा दी।

तीन दिन के अन्दर म्युनिसिपल स्कूलों और दूसरे सभी स्कूलों के लगभग २० हजार विद्यार्थियों ने निम्न पांच प्रतिज्ञाओं के एक फार्म पर स्वयं हस्ताक्षर किये और जनता से हस्ताक्षर कराए। एक छात्र ने औसतन दस-दस हस्ताक्षर कराए जिसके फलस्वरूप तीन दिन में लगभग डेढ़ लाख व्यक्तियों के हस्ताक्षर प्राप्त किये गये। प्रतिज्ञा पत्र में यह पाँच प्रतिज्ञायें थी—

१—होली के अवसर पर या उसके पश्चात् गाली न बकेंगे न गन्दे गाने गायेंगे तथा न कोई भद्दा मजाक करेंगे। २—हम होली के अवसर पर कीचड़ और धूल आदि निन्दनीय वस्तु न फैंककर चन्दन और केशर आदि सुगन्धित वस्तुओं का प्रयोग करेंगे। ३ हम किसी भाई को नीच न समझ कर सभी से प्रेमपूर्वक मिल-भेटेंगे। ४—हम शराब आदि त्याज्य वस्तु न खुद खायेंगे-पीयेंगे न दूसरों को देंगे ५—हम होली में चोरी की कोई वस्तु न जलायेंगे न कोई दूसरा ऐसा काम करेंगे कि जिससे किसी का दिल दुखे।

उक्त पांच प्रतिज्ञाओं को कार्यरूप में परिणत करने के लिये मुहल्ले-मुहल्ले और स्थान-स्थान पर सार्वजनिक सभाओं का आयोजन किया गया। एक सप्ताह में लगभग १०० स्थानों पर सभायें की गई। इन सभाओं में हजारों लोगों ने भाग लिया और इस बात की प्रतिज्ञा की कि वे होली को पवित्रता के साथ मनावेंगे। इन सभाओं में शहर के अनेक प्रतिष्ठित लोगों ने भाग लिया।

स्थानीय ८-९ सिनेमा घरों से भी होली के इस आन्दोलन में मदद ली गई। चार प्रकार के स्लाइड बनवाये गये और ये स्लाइड इन सिनेमाओं के प्रत्येक खेल में दो-तीन बार दिखलाये गये। लाउड स्पीकर का प्रयोग करते हुये एक जीप गाड़ी में तीन-चार दिन तक कई-कई घंटे शहर के मुहल्ले २ में प्रचार किया गया और जनता को प्रेम और पवित्रता के साथ होली मनाने का उपदेश दिया गया। प्रत्येक मोहल्ले में वहाँ के प्रतिष्ठित व्यक्तियों से मिल कर कोई उपद्रव न होने देने के लिये प्रेरणा की गई। लड़कों की भी टोलियाँ बनाई गईं जिन्होंने हुल्लड़बाजी को रोकने और स्वयं हुल्लड़ न मचाने की प्रतिज्ञा की। सभी से इस काम में मदद ली गई और सब ने मदद दी।

इस आन्दोलन के फलस्वरूप गत वर्ष होली पर आगरा की जो काया-पलट हुई उसे देख कर सभी लोग दंग रह गये। कीचड़ तो कहीं उछाली ही नहीं गई, रंग के दर्शन भी होली की पड़वा को ही हुए, गुलाल का प्रयोग बहुत कम किया गया, चन्दन केशर की धूम रही। गन्दे गाने कहीं नहीं सुने गए। अश्लील वाक्यों को तो मानो लोग भूल ही गये। मार पीट की एक भी शिकायत नहीं सुनी। होली पर किसी का सामान जलाने की शिकायत भी नहीं हुई। सब जगह प्रेम और आनन्द की हिल्लोर दिखाई देती थी। पुलिस में जहाँ पहले विभिन्न प्रकार की पचासों रिपोर्टें होती थीं, वहाँ गत वर्ष एक भी रिपोर्ट किसी प्रकार की भी नहीं लिखाई गई, जिसके लिये पुलिस अधिकारियों ने बड़ा आभार माना।

जिलाधीश की कृपा से तीन दिन तक शराब की दुकानें बन्द रखी गईं। इतना ही नहीं उन दुकानों पर सील लगा दी गई, जिससे उन्हें छिप कर चोरी से भी न खोला जा सके। इससे बड़ा लाभ हुआ। प्रतिवर्ष शराब के नशे में लोग जो ऊधम करते थे, वह न हो सका।

जो बच्चे होली पर हुल्लड़ मचाते थे वे इस प्रचार में अगुआ होने के कारण स्वयं तो शान्त रहे ही औरों को भी कोई गड़बड़ी उन्होंने नहीं करने दी। सच पूछिये तो इस आन्दोलन की जड़ में यह छोटे-छोटे बच्चे ही थे। इस प्रकार यह आन्दोलन पहले ही वर्ष के परिश्रम से ८०, ८५ प्रतिशत सफल रहा, जब कि इस आन्दोलन के प्रारम्भ करते समय यह आशा नहीं थी कि इसमें २५ प्रतिशत भी सफलता मिल सकेगी।

पहले होता यह था कि होली में दस-पन्द्रह दिन पहले से बेचारे ग्रामीणों की दुर्गति की जाती थी, उन्हें बहुत परेशान होना पड़ता था। उनको शहर में आना दूभर हो जाता था। इस वर्ष उन्हें ठीक होली के दिन भी ऐसी कोई कठिनाई नहीं पड़ी। यहाँ के प्रचार की खबरें गाँवों में भी पहुँची, उसके प्रभाव से आगरा और आस-पास के जिलों के अनेक गाँवों में भी गतवर्ष होली पवित्रतापूर्वक मनाई गयी और वहाँ भी गन्दगी से दूर रहा गया। गाँवों से आने वाले लोगों ने बच्चों को इस आन्दोलन के लिये बड़े आशीर्वाद दिये।

होली के इस आन्दोलन में ऐसी सफलता देखकर शहर भर का एक मेला ही वेटपार्क में मनाया गया। यद्यपि यह मेला सर्वथा नया था फिर भी इसमें बड़ी सफलता मिली। इसमें लगभग बीस हजार जनता ने भाग लिया। खेल-तमाशे, रोशनी और गानों से मेला गूंजता रहा। शहर-भर के लोगों से एक स्थान पर मिलने-भेटने का सुयोग पाकर लोग बड़े प्रसन्न हुये।

आगरे के म्युनिसिपल स्कूलों के बच्चों तथा अध्यापकों द्वारा जो प्रयोग आगरे में किया गया और जिसमें ८०, ८५ प्रतिशत सफलता मिली, वैसा प्रयोग यदि अपने देश या प्रदेश के सभी शहरों में किया जाय तो विश्वास है कि उसमें अवश्य सफलता मिलेगी। ——

दक महोदय इसका भी स्पष्टीकरण कर देते तो अच्छा होता। उपर्युक्त पत्र के बनावटी होने के तीन प्रधान कारण हैं—पत्र के लिये कहा गया है कि यह कार्तिक बदी १ सं० १९४० को अजमेर से स्वामी कल्याणानन्द नामक नपाली साधु को लिखा गया था, परन्तु कार्तिक बदी १ सं० १९४० अर्थात् १७ दिसम्बर सन् १८८३ को श्री स्वामीजी महाराज अजमेर में नहीं थे। जोधपुर में अत्यन्त रुग्ण होकर महाराज ने आबू जाने की इच्छा से आश्विन पूर्णिमा सं० १९४० तदनुसार १६ दिसम्बर १८८३ को जोधपुर से प्रस्थान किया और कार्तिक बदी १ सं० १९४० तदनुसार १७ दिसम्बर १८८३ को वे रोहट पहुँचे। यह स्थान 'जोधपुर' और 'पाली' के मध्य में है। उन दिनों जोधपुर तक रेल चालू नहीं हुई थी। महाराज जोधपुर से पाली तक पालकी में गये थे। स्वामीजी महाराज जोधपुर से आबू और आबू से अजमेर कार्तिक बदी १२ तदनुसार २७ अक्टूबर सन् १८८३ को पहुंचे थे, अर्थात् निधन से केवल ४ दिन पूर्व अजमेर पधारे थे। यह ऋषि दयानन्द के सब जीवनचरित्रों से स्पष्ट है। २—पत्र की सूचना में जिस कल्याणानन्द नामक नपाली साधु का उल्लेख है वह भी बनावटी व्यक्ति है। ऋषि दयानन्द के जीवनचरित्रों, ग्रन्थ तथा पत्र-व्यवहार में उक्त नाम के व्यक्ति का या किसी नपाली साधु का कहीं उल्लेख नहीं मिलता। ३-पत्र की जो भाषा है, वह ऋषि दयानन्द की नहीं है। इसमें अनेक पद ऐसे हैं जो ऋषि के समस्त ग्रन्थों तथा पत्र-व्यवहार में कहीं प्रयुक्त नहीं हुये। इसी प्रकार पत्र की वाक्य-रचना भी सर्वथा आधुनिक ढंग की है।

—युधिष्ठिर मीमांसक

——

सामयिक समस्याएँ

आर्यसमाज का संगठन

श्री पीतमलालजी एम० एस-सी० एडवोकेट

वर्त्तमान समय में देश में महत्वपूर्ण परिवर्तन होजाने और विश्व में अशान्ति का वातावरण होने से आर्यसमाज के ऊपर देश, जाति तथा धर्म-सम्बन्धी सुधारकार्य में अधिकतर शक्ति जुटाने का उत्तरदायित्व आगया है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। आर्य समाज को भी इसका स्वागत करना उचित है। महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना विश्व में वैदिक धर्म-प्रचार करने, विश्व को आर्य बनाने तथा विश्व में शान्ति का राज्य स्थापित करने के उच्चतम उद्‌देश्य की प्राप्ति के लिये ही की थी। इस उत्तरदायित्व को चुकाने के लिये आर्यसमाज अपनी शक्ति को बढ़ाने और सुदृढ़ बनाने पर विचार कर रहा है। उच्चकोटि के विद्वानों के मस्तिष्क इसमें व्यस्त हैं। हम भी अपने तुच्छ अनुभव के आधार पर विद्वानों के विचारार्थ अपने विचार रखते हैं।

आर्यसमाज की शक्ति से हमारा अभिप्राय जन-शक्ति तक ही सीमित रहेगा। धनशक्ति का बढ़ाना आवश्यक अवश्य है, परन्तु जनशक्ति पर आधारित होने से वह गौण है। अतः सम्प्रति उस पर विचार नहीं किया जाता। जन-शक्ति के दो मुख्य अङ्ग हैं। एक उच्चकोटि के विद्वान् कार्य-कर्त्ता अधिक संख्या में उत्पन्न करना, और दूसरा कार्यकर्त्ताओं का संगठन इस प्रकार का बनाना जिससे शक्ति का कोई अंश व्यर्थ नष्ट न हो, अपितु उसका सदुपयोग ही हो।

हमको प्रारम्भ में ही यह विचार लेना चाहिये कि आर्य-समाज की वर्तमान स्थिति अब पचास-साठ वर्ष पूर्व की अपेक्षा नितान्त भिन्न है। पहले आर्य-समाजी थोड़े से थे। उनकी संख्या कम थी, परन्तु उनमें से प्रत्येक उपदेशक, प्रचारक, सिपाही, कार्यकर्त्ता था और तप और त्याग के साथ धर्म-कार्य के लिये कष्ट सहने को उद्यत रहता था। इसके विपरीत आज आर्यों, आर्यसमाजों, आर्य-संस्थाओं, उपदेशकों, संन्यासियों, प्रचारकों की संख्या बहुत बढ़ गई है, परन्तु अब सब में, नहीं-नहीं अधिकांश में भी पुराने आर्यों की-सी लगन नहीं है। कुछ तो स्वार्थ, पदलोलुपता आदि दूषित भावों से प्रेरित होकर ऐसे कार्य कर रहे हैं, जिन से संगठन में शिथिलता, शक्ति का ह्रास, और सफलता में बाधा दृष्टिगोचर होकर आर्य नेताओं को चिन्ता उत्पन्न हो गई है।

अब हम शिथिलता उत्पन्न करने के कारणों पर विचार करते हुए उसके निवारण के उपाय प्रस्तुत करते है।

हमारे विचार में आर्य संन्यासी का मानव समाज में वही स्थान और कर्तव्य है जो किसी राज्य में पुलिस के सिपाही का है। पुलिस का सिपाही स्वयं राज्य-नियमानुसार चल कर जनता को राज्य-नियमानुसार चलाने और नियम-विरुद्ध आचरण करने वाले को न्यायाधीश से दण्ड दिलाने में प्रयत्नशील रहता है। इसी प्रकार आर्य संन्यासी भी परमात्मा के नियम जो वेदों द्वारा प्रतिपादित हैं, उनके अनुसार स्वयं चलने और जनता को वैदिक धर्मानुसार आचरण करने का सदुपदेश करने के लिये होते है। एक सिपाही सर्दी और वर्षा की चिन्ता न कर स्वयं जाग कर रात्रि में सोती हुई जनता की रक्षा करता है, ठीक इसी प्रकार आर्य संन्यासी का कर्तव्य है कि वह स्वयं कष्ट सहकर भी जनता के उपकार-कार्य में व्यस्त रहे। आत्म-सम्मान, धन इत्यादि उसके लिये दूर की वस्तु है। उसको किसी स्थानविशेष या व्यक्ति-विशेष से मोह नहीं होता। ऐसा नियम होने पर भी आज हम देखते हैं कि कुछ आर्य संन्यासी अपना कर्तव्य पालन नहीं कर रहे। वे स्थान विशेष से मोह कर के अपनी निवास-सामग्री एकत्र करने में ही जुटे रहते है और एक प्रकार से मठधारी बन रहे हैं। ऐसे संन्यासी संगठन को शिथिल बना रहे हैं। हम उनके सामने स्वर्गीय पूज्यपाद श्री स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज का अनुकरणीय आदर्श उपस्थित करते हैं और प्रार्थी है कि वे अपने आश्रम के उत्तरदायित्व पर ध्यान दें अन्यथा समय दूर नहीं है जब जनता उनको इस ओर ध्यान देने के लिये बाधित करेगी। जनता का भी कर्तव्य है कि जिस प्रकार अत्याचारी वा कर्तव्य-विमुख पुलिस के सिपाही की शिकायत उच्च अधिकारी से कर के सुधार उद्योग किया जाता है, उसीप्रकार धर्मच्युत सन्यासी का मान न कर के उसको अपने कर्तव्य-पथ पर लाने का उद्योग करे। संन्यासी तथा जनता का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है।

आर्य समाज में अनेक उत्साही, परिश्रमी, विद्वान् कार्य-कर्ता हैं। वे जनता के धन्यवाद के पात्र हैं। इनमें से कुछ में हम यह त्रुटि देखते हैं कि वे अपनी परिमित शक्ति पर ध्यान न देकर अनेक संस्थाओं और पदों के कार्य-भार को ले लेते हैं। कोई-कोई तो एक संस्था के तीस, चालीस, पैतालीस, वर्ष तक भी निरंतर अधिकारी बने रहने में कुछ दोष नहीं समझते। इस प्रकार के व्यवहार से एक ओर उपर्युक्त अधिकारी का विरोध होने लगता है, दूसरी ओर नवीन कार्य-कर्ता कार्य करने का अवसर न पाने से प्रोत्साहित नहीं होते। हमारे विचार से कार्यकर्त्ता को अधिकार की लिप्सा त्यागनी चाहिये, और किसी भी दशा में एक से अधिक का भार स्वीकार नहीं करना चाहिये। अनुभवी कार्यकर्त्ता को उत्तरोत्तर उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर निर्वाचित करना चाहिये और नवीन कार्य-कर्त्ताओं को उसके संरक्षण में कार्य करने का अवसर और शिक्षण देना चाहिए। इस सम्बन्ध में हम श्री पं० गंगाप्रसादजी उपाध्याय का अनुकरणीय जीवन प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने आर्यसमाज प्रयाग, आर्य-प्रतिनिधि सभा उत्तर-प्रदेश तथा गुरुकुल वृन्दावन के अधिकारी न रहते हुए अब सार्वदेशिक सभा के उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य-भार को स्वीकार किया है, और आ० स०, प्रान्तीय सभा, तथा गुरुकुल *का कार्य अन्यों को छोड़ दिया है। यदि हम इस सिद्धांत पर* कार्य करेंगे तो हमको दलबन्दी, ईर्ष्या और पदलोलुपता के दूषित भाव दृष्टिगोचर न होंगे, और स्थान-स्थान पर अपनी-अपनी योग्यतानुसार अनेक नवीन कार्य-कर्त्ता उत्पन्न होते दिखाई देंगे।

आर्यसमाज की शक्ति का ह्रास करने और संगठन में शिथिलता लाने के कुछ अंश तक हमारी आर्यकन्या पाठशालायें, विधवा आश्रम, कालिज, हाईस्कूल, अनाथालय आदि अनेक संस्थायें भी हैं। इनके प्रबन्ध में उचित संशोधन और नियत्रण की आवश्यकता है। इसमें सन्देह नहीं कि इन संस्थाओं से आर्य-जाति को लाभ पहुचा है, अतएव इनके संचालक धन्यवाद के पात्र हैं। परन्तु यह भी मानना पड़ेगा कि अनेक स्वार्थी, पदलोलुप कार्य-कर्त्ताओं के आचरण से आर्य-समाज के संगठन को ठेस पहुँची है। इन संस्थाओं का प्रबन्ध ऐसा हो कि तपस्वी, अनुभवी, योग्य आर्य ही अधिकारी हो सकें। तब ही इन संस्थाओं से धार्मिक लाभ पहुँच सकेगा।

आर्यसमाज की शक्ति के ह्रास का कारण आर्य परिवारों का अभाव है। हमको यह लिखते हुए दुःख होता है कि अनेक आर्य कार्य-कर्त्ताओं के परिवार आर्य नहीं, अपितु पौराणिक है। इस कारण शक्ति का विकास न होकर ह्रास हो रहा है, और कर्तव्य-परायणता में त्रुटि आ रही है। यदि सार्वदेशिक आ० प्रतिनिधि सभा तथा प्रान्तीय सभाएं अपने नियमों में आवश्यक संशोधन करके आर्य-जनों के धार्मिक स्तर को उच्च बनाने की चेष्टा करें तो जगत् का बड़ा उपकार हो सकता है। इसके बिना कार्य में आडम्बर दीख पड़ता है और उसका प्रभाव अच्छा नहीं पड़ता। आर्य-जन जब तक क्रियात्मक रूप से अपने परिवार को आर्य न बनावेंगे, वैदिक-धर्म प्रचार में बल उत्पन्न न होगा।

हमने ये कुछ विचार आर्य-समाज की हित-दृष्टि से आर्य-जनों के विचारार्थ रखे हैं। हमारा किसी व्यक्ति विशेष से राग-द्वेष नहीं है। आर्य विद्वान् इन पर विचार करें और त्रुटियों के लिये क्षमा करें। ——

राजनीति और सदाचार

श्री कालिकाप्रसाद आर्य

राजनैतिक जीवन-क्षेत्र में किसी राजकीय सभा का सदस्य होना बड़ा ही महत्वपूर्ण है, परन्तु सदाचार द्वारा नियन्त्रित जीवन के क्षेत्र में सदस्यता बहुत पिछड़ जाती है। आचारशास्त्र मनुष्य के 'हित' अथवा 'कल्याण' का अध्ययनमात्र है, परन्तु केवल वहाँ तक, जहाँ तक कि वह 'कल्याण' मनुष्य के औचित्यपूर्ण कर्मों द्वारा ही प्राप्त किया जाय। आचारशास्त्र में मनुष्य-जाति के शाश्वत कल्याण के लिए कुछ सिद्धान्त निर्धारित कर एक आदर्श अथवा लक्ष्य उपस्थित किया गया है और बताया है कि 'कर्त्तव्य क्या है?' अतः राजनैतिक सिद्धान्त और आदर्श आचारशास्त्र से ही प्रारम्भ और ग्रहण किये जाने चाहिए। राजनीति केवल प्रचलित राज्य-प्रणाली की व्याख्या करने के लिए ही नहीं होती, बल्कि इस लिए भी कि राज्य कैसा होना चाहिए। राजनीति को इन प्रश्नों पर भी विचार करना है कि मनुष्यों का नैतिक उद्देश्य क्या है? तथा एक राजनैतिक संगठन के सदस्यों के रूप में किन राजनैतिक संस्थाओं द्वारा वे आदर्श वस्तुतः उस उद्देश्य को प्राप्त करते या कर सकते है। यद्यपि राजनीति-शास्त्र मनुष्यों का एक राज्य के सदस्यों के रूप में किसी राजनैतिक संगठन से विशेष सम्बन्ध का अध्ययन मात्र है, तो भी, जैसा कि आचारशास्त्र के सिद्धान्तों से प्रकट होता है, मनुष्य का अन्तिम लक्ष्य आचार-सम्बन्धी ही होना चाहिए, क्यों कि यह स्पष्ट है कि सम्पूर्ण राज्य का कल्याण राज्य के उन सब व्यक्तियों (सदयों) का वास्तविक कल्याण करके ही प्राप्त किया जा सकता है, जो उस राज्य के निर्माता है। मनुष्य के बिना राज्य की कल्पना ही असंभव है। आचारशास्त्र के सिद्धांत बताते है कि समाज में प्रत्येक व्यक्ति का कल्याण होना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि इन सिद्धान्तों में तर्क अथवा अनुभव के आधार पर, संशोधन तथा परिवर्धन किया जा सकता है, परन्तु तो भी इन सिद्धान्तो को सर्व-स्वीकृत सिद्धान्त मानना चाहिए, क्योंकि कुछ समय तक तो वे सिद्धान्त उन सिद्धान्तों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिनके आधार पर मनुष्य का वास्तविक नैतिक जीवन चल रहा है। इस प्रकार राजनीति-शास्त्र के विद्वानों को दो प्रश्नों पर विचार करना चाहिए। प्रथम, जो नैतिक व्यवहार वे देखते हैं, उनके आधार पर मनुष्य अपने लिए आदर्श-रूप में किन उद्देश्यों को रखना चाहता है। द्वितीय, किन संस्थाओं द्वारा सुचारु-रूप से उन उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है! इस प्रकार राजनीति का एक विद्यार्थी मनुष्य-जाति के कल्याण को ध्यान में रखते हुए किन्हीं सिद्धान्तों को लेकर चलेगा और उन्हें सर्व-सम्मत समझते हुए उन्हें तर्क से भी सिद्ध करेगा। इन सिद्धान्तों से वह अनेक निष्कर्ष निकालेगा और बतावेगा कि कौन-सी संस्थाएं समाज के संचालन, कल्याण तथा उन्नति में सहायक हैं तथा कौन-से राजनैतिक अधिकार उसके लिए सुरक्षित हैं।

यूनान का प्रसिद्ध विचारक अरस्तू अपनी पुस्तक 'पोलिटिक्स' में लिखता है कि 'प्रत्येक राज्य किसी न किसी प्रकार का एक समुदाय ही होता है और प्रत्येक समुदाय किसी न किसी अच्छे उद्देश्य के लिए बनाया जाता है, क्योंकि यह मनुष्य का स्वभाव है कि जिसे वह अच्छा समझता है उसे ही ग्रहण करता है। समस्त कलाओं और विज्ञानों का उद्देश्य अच्छा ही होता है और विशेषतया तथा सबके ऊपर, मनुष्य का चरम लक्ष्य जीवन का सुखी होना है—एक ऐसा जीवन जिसमें मन और इन्द्रियों पर बुद्धि का नियंत्रण होता है।' अरस्तू इस सिद्धान्त को सर्व-सम्मत मानता है क्योंकि यह सिद्धान्त ऐसे विचारों का प्रतिनिधित्व करता है जिन पर उस समय के यूनान-निवासियों का जीवन आधारित था। इस सिद्धान्त के द्वारा वह राजनैतिक संस्थाओं को जन्म देता है। वह कहता है कि बुद्धि संगत राजनियम ही राज्य का वास्तविक अधिकारी होता है और मनुष्य के रूप में शासक लोग तो राजनियम के चलाने में यन्त्र रूप तथा व्याख्याता-मात्र होना चाहिए।

राजनीति-शास्त्र का आधुनिक विद्यार्थी, सिजविक पुराने विचारकों बेन्थम तथा मिल के उन उपयोगितावादी विचारों को ग्रहण करता है जो उन्नीसवीं शताब्दी की राजनीति के अन्तर्गत आते हैं। वे विचार ये हैं कि मनुष्य का अन्तिम उद्देश्य जीवन का अधिक से अधिक सुखी होना है। उसका दूसरा सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने सुख, अधिकारों तथा हितों का संरक्षक है। इसी लिए वह कहता है कि प्रत्येक राजनैतिक समुदाय का उद्देश्य 'अधिक से अधिक व्यक्तियों का अधिक से अधिक हित करना' है और राज्य का एक मात्र कर्त्तव्य व्यक्तियों को एक दूसरे के अधिकारों तथा हितों में अनुचित हस्तक्षेप करने से रोकना है।

एक अन्य विचारक ग्रीन महोदय का सिद्धान्त है कि प्रत्येक व्यक्ति को वह कार्य करने तथा वह सुख उपभोग करने का अधिकार होना चाहिए जो कार्य वह करना चाहता है तथा जो सुख वह उपभोग करना चाहता है। राज्य में प्रतिबन्धों को हटाकर तथा आपत्तियों पर विजय प्राप्त करने के उपाय जुटा कर सब को अपने अधिकारों का स्वतन्त्रतापूर्वक उपभोग करने का अवसर दिया जाना चाहिए। उपर्युक्त विचारों से प्रकट होता है कि राजनीति के सिद्धान्त आचार-शास्त्र के द्वारा ही व्यवहार में लाये जा सकते हैं, क्योंकि राजनीति शास्त्र वास्तव में सामाजिक आचार या सदाचार का ही नाम है।

आर्यसमाज और जनगणना

श्री प० रामदत्त शुक्ल एम० ए०, एडवोकेट

लखनऊ से प्रकाशित होने वाले राष्ट्रिय स्वयम् सेवक संघ के दैनिक पत्र 'स्वदेश' ता० २४-२-५१ के अङ्क पृष्ठ २ पर 'तनिक आर्यसमाजी सोचें' शीर्षक से श्रीशिवबालक त्रिपाठी, एम० ए० सुल्तानपुर निवासी का एक विचित्र लेख प्रकाशित हुआ है। विचक्षण सम्पादक महोदय ने लेख के आरम्भ में ही नोट दिया है कि 'यह जनमत है हमारा मत नही, । इस पत्र की बहुतसी बातों से हम सहमत नहीं है, किन्तु आर्यसमाजी बन्धुओं के सम्मुख यह दृष्टिकोण भी आवे इसलिये हम उसे प्रकाशित कर रहे है।'

पत्र के लेखक ने एक हिन्दू के नाते से आठ बार हिन्दू समाज और चार बार हिन्दू जाति का प्रयोग किया है, किन्तु आश्चर्य की बात है कि आपने एक बार भी "हिन्दूधर्म" शब्द का प्रयोग नहीं किया। आर्यसमाज और आर्यसमाजियो से आप इसलिए कुपित है कि जनगणना पर्चियों के "धर्म कोष्ठक" में उन्होंने वैदिक, आर्यवैदिक, आर्यसमाजी इत्यादि अंकित कराने का, आपकी धारणानुसार घोर अपराध किया है। लेख में अभव्य और अशिष्ट शब्दो का उपयोग सम्भवतः आप जैसे महानुभाव के अनुरूप ही हो परन्तु न जाने 'स्वदेश' ने ऐसी भाषा वाले लेख से अपने पत्र को संमलंकृत करना क्यो उचित समझा।

धर्म-सम्बन्धी प्रश्न पूछे जाने पर यदि कोई आयसमाज, सनातनधर्मी या हिन्दू अपना धर्म 'वैदिक' या 'आर्यवैदिक' अंकित करावे तो उसके लिए इन सब अपशब्दों का भी अनायास प्रयोग किया जा सकता है कि जो त्रिपाठी जी ने किये है। आलोच्य लेख में भी 'हिन्दू धर्म' शब्द का एक बार प्रयोग स्वयं लेखक महोदय ने भी जान-बूझ कर नहीं किया है, क्योंकि वह जानते हैं कि 'हिन्दू धर्म' नाम का कहीं कोई धम नहीं है। हाँ, उन्होने 'हिन्दू-समाज' और 'हिन्दू जाति' इत्यादि शब्दो का प्रयोग किया है। परंतु समाज या जाति के लिए जनगणना में कोई कोष्ठक ऐसा नहीं है कि जिसमें हिन्दू लिखा जा सके, तथापि सज्जनतोष न्यायानुसार यदि एक क्षण के लिए यह मान भी लिया जाय कि 'हिन्दू नाम का कोई भी धर्म है तो भी यह जानने की आकांक्षा अवश्य होगी कि 'हिन्दू धर्म की धर्म पुस्तक क्या है' और उसकी परम्परागत सस्कृति एव धार्मिक साहित्यिक सामग्री क्या है? स्पष्ट है कि वेद से लेकर रामायण पर्यन्त अथवा अन्य किसी संस्कृत ग्रन्थ में हिन्दू धर्म अथवा हिन्दू संस्कृति का नाम तक उपलब्ध नहीं होता है। यह भी स्पष्ट है कि विदेशी और विधर्मियों ने आर्यावर्त या भारतवर्ष निवासियों के लिए 'हिन्दू' या 'इण्डियन' शब्दो का प्रयोग किया। ये दोनों शब्द ही आर्यों या भारतीयो को राजनैतिक दासता-काल में अनेक अन्य दोषो के साथ दिये गये हैं।

स्वतन्त्र राष्ट्र बनते ही हमने अपने राष्ट्र का नाम 'भारत' रक्खा, हिन्दुस्तान नहीं। सनातन काल से हमारी जाति का नाम 'आर्यजाति' ही रहा है। यही कारण है कि इस समय तक सकल्प वाक्योच्चारण करते समय प्रत्येक वैदिक धर्मावलम्बी 'आर्यावर्ते' 'पुण्यक्षेत्रे' कहता है 'हिन्दुस्ताने' कभी नहीं। काशी के सुप्रसिद्ध विश्वनाथजी के मन्दिर में स्पष्ट पाषाणअक्षर में अङ्कित है कि 'आर्यधर्मेतराणां प्रवेशो निषिद्धः' आर्यधर्मावलम्बियों के अतिरिक्त अन्यो के लिए प्रवेश निषिद्ध है। क्या त्रिपाठीजी उपर्युक्त वाक्यो का संशोधन करने का स्वप्न में भी साहस कर सकेंगे? 'अरे अपनी मा को मा कहने में क्यो छाती फट रही है।' त्रिपाठीजी की तूणीर से अनायास निकला हुआ यह विचित्र वाक्यवाण आर्यसमाज और आर्यसमाजियो को वेधने के लक्ष्य से चलाया गया है। प्रत्येक भारतीय सांस्कृतिक परम्परावित् यह जानता है कि 'अनन्ताः वै वेदाः' 'वेदोऽखिलो धर्म मूलं' 'सर्व वेदात् प्रसिद्धतिः' 'यत वेदेषु अभिहितम् तत्सत्यम्' और 'न वेद बाह्यो धर्मः आदि इन प्रमाण-वाक्यो के आधार पर धर्म-तत्व की माता 'वेद' है या 'हिन्दू ? ऋषि, मुनि, त्यागी, तपस्वी आदि की परम्पराओं एवं समस्त आचार्यों के लिये स्वतः प्रमाण 'वेद' या 'हिन्दू', इस विषय में अब तक किसी भी विचारक को लेशमात्र भी सन्देह नहीं है। किसी समय इस आर्यावत देश में भी 'त्रयो वेदस्य कर्त्तारो भाण्डधूर्त निशाचरः' के अनुसार भाड, धूर्त और निशाचर वेदों के कर्ता हैं ऐसा मत रखने वाले भी हो चुके है। आज भी यदि किन्हीं को वेद या वैदिक धर्म के प्रति अनास्था, अश्रद्धा, अरुचि और अमान्यता हो और वे इसका प्रचार भी करें तो कोई विस्मय की बात नहीं है। वरदा वेदमाता के पूज्यतम प्रतिष्ठामय आसन को अन्य कोई उपलब्ध नहीं कर सकता है।

"त्यागी, विरागी, योगी, महर्षि दयानन्द का नाम जपने वाला आर्यसमाज भी आज क्यों विचलित हो उठा ?" भावावेश में आकर यद्यपि त्रिपाठीजी ने ऋषि दयानन्द के सम्बन्ध में अनेक विशेषणों का प्रयोग तो कर डाला किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होने कभी भी आयसमाज के वैधानिक नियमो अथवा ऋषिकृत धार्मिक साहित्य-ग्रन्थो के अवलोकन करने का कष्ट नहीं किया। आयसमाज के १० नियमो में से छटे नियम में स्पष्ट ही अङ्कित है कि "संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।" इसी प्रकार तृतीय नियम में लिखा है कि "वेद सब सत्य विद्याओ का पुस्तक है, उसका पढ़ना-पढ़ाना, सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।" इन दो नियमो का मानने वाला कोई भी व्यक्ति अपने को 'वैदिक धर्मी' न कहकर 'हिन्दू धर्मी' कहने का साहस कैसे कर सकता है ? इसके अतिरिक्त ऋषि दयानन्द की सबसे बड़ी देन तो 'आर्य' नाम और 'वैदिक धर्म' की ही है। यही कारण है कि उन्होने इन दो शब्दो के स्थान में कहीं भी 'हिन्दू' या 'हिन्दू धर्म' नहीं लिखा न कभी 'आर्यसमाज' शब्द का परियायवाची 'हिन्दू समाज' ही लिखा या कहा। फिर भी त्रिपाठीजी आर्यसमाज से रुष्ट हैं। इसी प्रकार ऋषि ने 'आर्यजाति' के स्थान पर कभी कहीं 'हिन्दू जाति' भी न लिखा ही और न कहा ही।

गत ७५ वर्षीय जीवन में आर्यसमाज ने समष्टि रूप से प्रचलित राजनीति में कभी भी भाग नही लिया और न इस नीति में अब तक किसी प्रकार का परिवर्तन ही हुआ है। इसका एक मुख्य कारण आर्यसमाज का सार्वभौम आदर्श ही है, तथापि त्रिपाठीजी की नेक राय में आर्यसमाज 'व्यक्तिगत सम्मानार्थ, संस्थाभिमानवश, अन्य दुर्बलताओं के वशीभूत होकर, चाँदी के टुकड़ों की चकाचौंध में, इनकी (आर्यसमाजियो) उछलकूद चाँदी की शृंखला में बाँध दी गई है, इस देश में हिन्दू से सम्बन्ध-विच्छेद करके आर्यसमाज राजनैतिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में पनप नही सकता, यदि उसे जीना है तो उसका अभिन्न अंग बन कर रहना पड़ेगा, अपने स्वार्थवश किसी भी व्यक्ति अथवा संस्था को हिन्दू जाति के घर में आग लगाकर तापना पाप है।

कदाचित् त्रिपाठीजी अथवा उनके समान लोग ही आज स्वतंत्र भारत में 'रामराज्य' अथवा 'वैदिक आर्य राज्य', के स्थान में 'हिन्दू-राज्य' की स्थापना के लिये उत्सुक प्रतीत होते है। आर्यसमाज की प्रवृत्ति और प्रगति एकान्ततः धार्मिक और सास्कृतिक ही है। महर्षि दयानन्द तो ब्रह्मा से लेकर जैमिनी पर्यन्त अविच्छिन्न परम्परा के प्रवर्त्तक थे। आर्यसमाज की स्थापना भी इसी महान् आदर्श की पूर्ति के लिये की। इसलिये किये गये इन आक्षेपो का लक्ष्य आर्यसमाज किसी प्रकार नही बनाया जा सकता। भय और प्रलोभनो की चट्टानो को चीरते हुये ऋषि ने पाखंड, मिथ्याचार, ढोंग, संकुचित साम्प्रदायिकता, असत्य आचार-विचार, रूढ़िवाद और नाना प्रकार की धार्मिक एवं सामाजिक कुरीतियो का समूल विध्वस कर वैदिक धर्म, वैदिक संस्कृति, वैदिक आचार-विचार और वैदिक परम्पराओ को पुनः आर्यावर्त में स्थापित कर वैदिक आर्यों के चक्रवर्ती साम्राज्य का स्वर्णिम स्वप्न देखा और अपने ज्योतिष्मान अनुकरणीय जीवन

की आहुति देकर आर्यसमाज को अनुप्राणित किया। महर्षि की भांति आर्यसमाज ने सैकड़ों धर्म-वीरों की प्राणाहुतियां देकर सार्वजनिक सेवा-कार्य तो किया, परन्तु कभी किसी के रक्त से अपने हाथों को कलंकित नहीं किया, अतः साक्षात मृत्यु को निर्भय होकर आलिंगन करने वाले आर्यवीरों के सम्बन्ध में कुछ सीटों, नौकरियों और चाँदी के टुकड़ों की चर्चा करना विवेक-शून्यता नहीं तो और क्या है।

'आज आर्यसमाज कांग्रेस सरकार का ध्वनिवर्धक यन्त्र बना हुआ है' इस कपोलकल्पना का भी कोई आधार नहीं है। धर्म निरपेक्ष कांग्रेस सरकार का ध्वनि-वाक यन्त्र धर्मनिष्ठता का सदैव का दृढ़व्रती आर्यसमाज कभी हो सकता है, यह कल्पना तो विकृत मस्तिष्क के अतिरिक्त अन्य किसी के मस्तिष्क में होनी सम्भव नहीं है। वैदिक धर्म के अनुयायी आर्य-समाजी सिक्खों की भांति साम्प्रदायिकता के उपासक बनकर अपने पृथक् राजनैतिक अधिकारों की याचना करेंगे या अनीश्वरवादी और वेद-विरोधी बौद्धों की भांति वैदिकता के विरुद्ध आचरण करेंगे यह बुद्धिहीनता की बात है और आर्यसमाज की प्रवृत्ति और प्रगति के स्वभावतः विपरीत है।

हिन्दूकोड आदि अन्य अप्रासंगिक बातों के विषय में उल्लेख यद्यपि अनावश्यक है, तथापि स्मरण रखना चाहिये कि आर्यसमाज अपनी कर्त्तव्यनिष्ठा को सार्वजनिक कल्याण-क्षेत्र में यथाशक्ति प्रवृत्त होता रहा है और भविष्य में भी होता रहेगा। एतदर्थ उपालम्भ उत्क्रोश और उद्बोधन की आवश्यकता नहीं है।

आर्यसमाज के कार्यकर्त्ताओं ने व आर्यजनों ने अपना धर्म 'वैदिक' अंकित कराने में उचित ही किया है, इसका अन्य कोई प्रयोजन समझना गलत है। प्रत्येक आर्य का वैदिक धर्म है और उसका देश आर्यावर्त या भारत है।

———

आर्य्यजगत

—आर्यसमाज नजीबाबाद दयानन्द-जन्म दिवस धूमधाम से मनाया गया। श्रीमती राजकुमारी जी की अध्यक्षता में सार्वजनिक सभा हुई। सर्वश्री शिवचरणदास जी, देवेन्द्रकुमारजी तथा श्रीचन्द्र जी के प्रभावशाली व्याख्यान हुए। सीताष्टमी-उत्सव भी मनाया गया।

—इसलाम नगर (बदायूँ) निवासी म० रामनारायणजी आर्य की पुत्री का विवाह एटा निवासी बा० फूलचन्दजी वकील के पुत्र श्री रमेशचन्द्रजी के साथ वैदिक रीति से हुआ। संस्कार प० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु द्वारा सम्पन्न हुआ। १०१) संस्थाओं को दान दिया गया।

—आ० स० औरैया महात्मा श्रीरामजी के देहान्त पर शोक-सहानुभूति प्रकट करता है। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

—बहराइच निवासी श्री बाबूलाल शर्मा इंजीनियर के पुत्र का नाम-करण संस्कार ४ मार्च को श्री सत्यमित्र स्नातक द्वारा सम्पन्न हुआ। ५) दान दिये। नाम विश्वबन्धु रखा गया।

—आ० स० भटपुरा (मुरादाबाद) के सदस्य पं० जगजीतसिंहजी ने कुरकावली में श्री चौ० रामप्रसाद जी त्यागी की माताजी का अन्त्येष्टि संस्कार वैदिक रीति से कराया। ५१०) दान दिये। समाज की ओर से स्वा० अमृतानन्दजी ने प्रचार किया। कूप-निर्माण-यज्ञ हुआ। एक नामकरण संस्कार कराया, यहाँ आ० स० स्थापित हो गया है।

—आ० स० साण्डी (हरदोई) उत्साहपूर्वक कार्य कर रहा है। दयानन्द-सप्ताह में प० केशवदेव शास्त्री द्वारा दयानन्द-दिग्विजय की कथा बड़ी रोचक और प्रभावशाली हुई।

—दयानन्द माध्यमिक विद्यालय गोपालगंज में ऋषिबोधोत्सव मनाया गया।

—आ० कु० सभा अलीगढ़ ने ऋषिबोधोत्सव के अवसर पर प० रामदयालु शास्त्री की अध्यक्षता में अन्त्याक्षरी और वाक प्रतियोगिता का आयोजन किया। अन्त्याक्षरी में श्री प्यारेलालजी और प्रतियोगिता में श्री ब्रजनन्दन जी प्रथम रहे।

—आ० स० बिजनौर ने दयानन्द-सप्ताह स्थानीय आर्यकुमार सभा के सहयोग से समारोह पूर्वक मनाया। ऋषिबोध के दिन महर्षि के जीवन पर व्याख्यान, कविता-पाठ और यज्ञ की व्यवस्था हुई। यज्ञ-प्रसाद बांटा गया, समाज सोत्साह सफलता से काम कर रहा है। वेद-भवन-निर्माण का काम जारी है।

—आ० स० बोरना (अलीगढ़) में दयानन्द-सप्ताह में श्री कु० सुखलालजी आर्य का सारगर्भित भाषण हुआ।

—आर्यप्रतिनिधि सभा मध्य-भारत की ओर से आगर शुद्धि-केन्द्र के ग्रामों में चिकित्सा-कार्य सफलतापूर्वक चल रहा है। श्री धर्मेन्द्रनाथजी चिकित्सक हैं।

—शोक है कि ४ फरवरी १६५१ को श्री कुलेन्द्रपालजी भजनोपदेशक के पूज्य पिता श्री तुलासिंह जी का ६० वर्ष की आयु में देहान्त हो गया। अन्त्येष्टि संस्कार वैदिक रीति से हुआ। ३०) दान दिया। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति-प्रदान करें।

—आर्यकुमार सभा हिण्डोन नगर की ओर से श्रीमद्दयानन्द-सप्ताह समारोहपूर्वक मनाया गया। जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

—शोक है कि आ० स० दुवारी (आजमगढ़) के कर्मठ आर्ययुवक कु० जगन्नाथसिंहजी 'जुगनू' प्रचारक की माता का देहान्त ६ मार्च को हो गया। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

—श्री बा० श्यामसुन्दरलालजी उपप्रधान आ० स० बेवर के पुत्र श्री हरिश्चन्द्रजी आर्य एम० एस-सी का विवाह इटावा निवासी श्री बा० ज्योतिः स्वरूपजी के पुत्र श्री बा० दयास्वरूपजी बी० काम० प्रधान आर्य जिलोपसभा इलाहाबाद को आयुष्मती पुत्री राधादेवी सिद्धान्तरत्न के साथ १६ जनवरी को वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। वर पक्ष की ओर से ५०) दान दिया गया। संस्कार श्री प० भूदेव शास्त्री सिद्धांतशिरोमणि द्वारा सम्पन्न हुआ।

—कागारोल (आगरा) निवासी ठा० कीर्तिसिंहजी रिटायर्ड सब इन्सपेक्टर पुलिस ने अपने अनुज ठा० देवेन्द्रसिंहजी के पुत्र कु० गोपालसिंह को माघ शु० १३ सं० २००७ वि० को गोद लेकर अपनी सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बनाया। आ० स० कागारोल को दान दिया।

—आ० स० कायमगंज ने ऋषि-बोधोत्सव समारोहपूर्वक मनाया। स्वामी आत्मानन्दजी की महल्ले-महल्ले में कथा हुई। श्री रामस्वरूप वानप्रस्थी के व्याख्यान हुए। जुलूस निकाला, रोशनी की गयी।

—कानपुर प्रान्तीय आर्य उप-प्रतिनिधि सभा का निर्वाचन ६ मार्च को हुआ। प्रत्येक तहसील में तहसील आर्यसमाज तथा मण्डलाधीश नियुक्त किये गये। सामाजिक कार्य को प्रगति देना निश्चित हुआ।

—आ० स० बाँकीपुर (पटना) में ४ मार्च को एक ईसाई महिला की शुद्धि हुई। नाम मालामाला रखा गया। तत्काल ही एक नवयुवक के साथ विवाह कर दिया गया। परमानन्द आर्य

—शान्ति आश्रम लोहरदगा में ऋषि-बोधोत्सव-सप्ताह समारोह पूर्वक मनाया गया। स्वामी शिवानन्दजी, स्वा० दुःखदमनानन्द तीर्थ और श्री हरिस्वामी के व्याख्यान हुए। इस आश्रम में आर्यवीरदल के शिक्षण का कार्य प्रारम्भ हो गया है। आदि वासियों में प्रचार कराया गया।

—दभौरा (अलीगढ़) में १७, १८ तथा १६ फरवरी को स्वामी हरिहरानन्दजी की अध्यक्षता में यजुर्वेदीय यज्ञ सम्पन्न हुआ। अनेक विद्वान् सन्यासियों तथा आर्यमहानुभाव इस अवसर पर पधारे। हजारों की उपस्थिति होती थी। जनता पर खूब प्रभाव पड़ा।

—शोक है कि दवथला (अलीगढ़) निवासी प० ज्ञानेन्द्रजी शर्मा की धर्मपत्नी और उनके युवक दामाद तथा आर्यसमाज नगौला के कु० शिवराजसिंहजी का देहान्त हो गया। आर्यसमाज नगौला सबके प्रति शोक-सहानुभूति प्रकट करता है। परमात्मा दिवंगत आत्माओं को शान्ति प्रदान करे।

—आ० स० प्रतापगढ़ ने ऋषि-बोधोत्सव के अवसर पर ऋषि

जीवन-सम्बन्धी चित्रों की एक प्रदर्शिनी की। जिलाधीश श्री विद्याप्रसाद शुक्ल की अध्यक्षता में कवि-सम्मेलन हुआ, जिसमें श्री चन्द्रिकाप्रसाद सकसेना हेडमास्टर डी० ए० वी० हाई स्कूल ने भी अपनी कविताएँ पढ़ीं जो बहुत पसन्द की गयीं।

—आर्यसमाज लखीमपुर में २८ फरवरी से ६ मार्च तक ऋषि-बोधोत्सव के उपलक्ष्य में सात दिन तक यजुर्वेद से यज्ञ हुआ और सायंकाल श्री स्वामी ब्रह्ममुनिजी की कथा होती रही, जिसका शिक्षित समुदाय पर अच्छा प्रभाव पड़ा। अन्तिम दिवस ६-३-५१ को आर्यसमाज के सदस्यों, कालिज की अध्यापिकाओं और कन्याओं का जुलूस निकला जिसमें ईश्वरभक्ति और ऋषि के जीवन-सम्बन्धी भजन गाये गये।

उत्सव-सूचनाएं

—आर्यसमाज बोरना (अलीगढ़) का ३९ वाँ वार्षिकोत्सव १८, १९, २० तथा २१ मई को मनाया जायगा। कई सम्मेलन भी होंगे।

—आ० स० बादशाहनगर, लखनऊ का वार्षिकोत्सव २६ मार्च को मनाया जायगा। २५ मार्च को एक मेला होगा। १७ और १८ मार्च को 'राजमुकुट' तथा 'श्रवणकुमार' नाटक होंगे।

—आ० स० नवाबगंज (गोंडा) का २७वाँ वार्षिकोत्सव १६ से १६ अप्रैल तक मनाया जायगा। ऋषि-बोधोत्सव बड़ी सफलता से मनाया गया।

—आ० स० इसलामनगर की ओर से संन्यासी-सम्मेलन २५, २६ तथा २७ अप्रैल को होगा।

—आ० स० औरैया का चौथा वार्षिकोत्सव २७, २८ तथा २९ मार्च को मनाया जायगा।

—आ० स० जलाली (अलीगढ़) का ३८ वाँ वार्षिकोत्सव २४, २५, २६ तथा २७ मार्च को मनाया जायगा। २४ मार्च को नगरकीर्तन होगा।

—आ० स० खातौली का वार्षिक उत्सव ३०, ३१ मार्च तथा १ अप्रैल को मनाया जायगा।

—आ० स० लखीमपुर-खीरी का पूर्व प्रकाशित उत्सव अनिश्चित काल के लिये स्थगित कर दिया गया।

निर्वाचन

—आ० स० नवाबगंज (गोंडा)-प्रधान-श्री हरिश्चन्द्रजी अष्ठाना और मन्त्री-श्री शिवकुमार सिद्धांत शास्त्री।

—आ० स० बेवर-प्रधान-श्री साहबसिंह वैद्य और मन्त्री-श्री सूबेदार आर्य सिद्धान्तशास्त्री।

—आ० स० इसलामनगर-प्रधान-श्री यमुनाप्रसादजी और मन्त्री-श्री रामनारायणजी आर्य।

—आ०स० भटपुरा (मुरादाबाद)-प्रधान-श्री मुकुन्दरामजी और मन्त्री-म० रामफलजी।

—आ० स० अमरोहा-प्रधान-डा० सत्यप्रकाशजी और मन्त्री-श्री हरिश्चन्द्रजी।

—आ० स० सांडी (हरदोई)-प्रधान-प० बनवारीलालजी और मन्त्री-प० केशवदेव शास्त्री।

—आ० स० रायबरेली-प्रधान-श्री सत्यनारायणजी शुक्ल और मन्त्री-श्री हरप्रसादजी।

—आर्यसमाज बिजनौर-प्रधान-श्री महेशदत्त शर्मा एम० ए० और मन्त्री-श्री विद्यासागर शर्मा एम० ए०।

—कानपुर प्रान्तीय आर्य उपप्रतिनिधि सभा-प्रधान-श्री महेशप्रसादजी और मन्त्री-श्री रामलाल शर्मा।

—आर्यसमाज लखीमपुर-खीरी-प्रधान-श्री हरिश्चन्द्रजी वानप्रस्थी और मन्त्री-श्री शिवनारायणजी आर्य।

सार-सूचनाएं

—म० करतारसिंहजी उपनाम विजेन्द्रकुमार का गुरुकुल विरालसी (मुजफ्फरनगर) से कोई सम्बन्ध नहीं है। जनता इन्हें गुरुकुल के लिये धन न दे। शुकदेव शर्मा शास्त्री, मंत्री गुरुकुल

—श्री चन्द्रिकाप्रसादजी आर्य भजनोपदेशक को प्रचारार्थ बुलाने वाले व्यक्ति मंत्री, आर्यसमाज कुर्रे या खुर्द कलाँ, पो० जोगराजपुर (शाहजहांपुर) के पते पर पत्र-व्यवहार करें।

—जिला अलीगढ़ के जो आर्यसमाज और स्त्री आर्यसमाज प्रान्तीय आर्यप्रतिनिधि सभा से सम्बद्ध हैं, के प्रतिनिधि सदस्य ८ अप्रैल ५१ को दिन के ११

बजे तक शुल्क सहित वैदिक आश्रम अलीगढ़ में पहुँच जावें। अलीगढ़ जिलोपसभा का वृहद्-धिवेशन उसी दिन १२ बजे से प्रारम्भ होगा। १) अधिक लेते आवें।

नाहरसिंह मंत्री, जिलोपसभा

अधिकारियों का अभिषेक

इस वर्ष आर्यसमाज मेरठ नगर का चुनाव ४ फरवरी ५१ को हुआ। ११ फरवरी को हवन के पश्चात् आगामी वर्ष के लिए निर्वाचित प्रधान, मन्त्री तथा अन्तरंग सदस्यों का अभिषेक हुआ। अर्थात् प्रधान, मंत्री तथा अन्तरंग सदस्यों पर जल-सिंचन किया गया। फिर प्रधानजी का रोली और अक्षत का तिलक करके यह प्रतिज्ञाएँ पुरोहित ने कराई "मैं द्विजेन्द्रनाथ यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि जो आपने प्रधान पद मुझको दिया है, मैं परमात्मा को साक्षी करके न्याय, सत्य तथा धैर्य पूर्वक उसका पालन करूंगा" तत्पश्चात यही प्रतिज्ञाएँ उप, प्रधानों, मंत्रियों, उप मंत्रियों, अन्य अन्तरंग सदस्यों से कराईं। और सबको रोली अक्षत का तिलक पुरोहितजी ने किया। चावल तथा फूलों की वर्षा भी उनके ऊपर की गई।

श्री प० छुट्टनलाल स्वामी का देहान्त

अत्यन्त दुःख से लिखना पड़ता है कि मेरठ निवासी श्री प० छुट्टनलाल स्वामी का देहान्त २ मार्च ५१ को हो गया। आप साम-वेद-भाष्यकार श्री प० तुलसीरामजी स्वामी के छोटे भाई थे। स्वयम् भी बड़े अच्छे लेखक तथा वक्ता थे। आपने कितनी ही पुस्तकें लिखी हैं। भागवत-समीक्षा के सम्बन्ध में आपकी पुस्तक बहुत प्रसिद्ध है। श्री प० तुलसीरामजी के देहान्त के पश्चात् आपने "वेद-प्रकाश" मासिक पत्र का सम्पादन बड़ी योग्यता से किया। पण्डितजी के निधन से एक और वयोवृद्ध आर्य विद्वान् की कमी हो गई। हम स्व० पण्डित छुट्टनलाल स्वामी के परिवार के साथ शोक-सहानुभूति प्रकट करते हैं। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

आवश्यक निश्चय

२५ दिसम्बर १९५० को वृन्दा-वन-गुरुकुल में हुई उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधिसभा की साधारण अन्तरंग सभा के आवश्यक निश्चय—

१—सर्दार श्री माननीय पटेल, योगिराज श्री अरविन्द, श्री ला० नारायणदत्त ठेकेदार देहली, श्री डा० लहनासिंह आर्य पंजाब, श्री जगतचन्द्र रमोला टेहरी मुख्तार और श्री व्रजनन्दन वान-प्रस्थ पटना के देहावसान पर शोक-सहानुभूति प्रकट कर दिवंगत आत्माओं की शान्ति के लिये परमात्मा से प्रार्थना की गयी।

२—नीचे लिखे आर्यसमाज सभा में प्रविष्ट हुए—थाना दरियागंज (एटा), २—आर्य स्त्री समाज अतरौली (अलीगढ़)। ३—मड़ियाहू (जौनपुर)। ४—लहुवरिया आजमगढ़। ५—मेलूपुर वार्ड (बनारस)।

३—नि० स० ६ श्री मोहन-सिंहजी ने राजा का रामपुर आ० स० मन्दिर-निर्माण के लिये जो भूमि-भाग सभा के नाम प्रदान किया है, वह धन्यवादपूर्वक स्वीकार किया गया। नि० स० ११ शम्भुनाथ रामेश्वरी देवी सार्व-जनिक पुस्तकालय भुवाली के प्रबन्धकर्त्ता श्री बद्रीप्रसादजी का स्वास्थ्य सुधर गया है। अतः उनके सहायक रूप में श्री बाँके-लालजी को मन्त्री नियुक्त करना निश्चित हुआ।

४—नि० स० ३३-अन्तरंग सभा ता० २५ जून १९५० के नि० स० १३ के अनुसार आर्यमित्र और प्रेस का कार्य आर्यमित्र प्रकाशन लि० ने दिसम्बर १९५० से ले लिया है, और भगवानदीन आर्यभास्कर प्रेस के २३,०००) मूल्य के और आर्यमित्र के १०,०००) की ख्याति मूल्य (गुड-विल) कुल ३३ सहस्र रुपये के शेयर कम्पनी ने देना स्वीकार कर लिये हैं, और उनका भागीदार प्रमाण पत्र सभा को दे दिया है, सूचनार्थ प्रस्तुत हुआ। सभा सूचित हुई। श्री कर्णसिंहजी ने

आपत्ति की कि सभा और आर्य-मित्र प्रकाशन लिमिटेड के मध्य में नियमानुसार एग्रीमेंट डीड भी होना चाहिए। निश्चय हुआ कि कम्पनी एक्ट मेमोरेंडम आफ एसोसियेशन और आर्टीकिल्स के अनुसार कार्यवाही की जावे।

५—नि० स० ४१ के अनुसार सभा की रिपोट, बजट तथा प्रवेशनीय विषय सूची बनाने के लिये निम्न सज्जनों की उपसमिति का निर्माण किया जावे। सर्व श्री मदनमोहन सेठ, श्री रामदत्त शुक्ल, श्री सुरेन्द्र शर्मा, श्री धर्मपाल विद्यालंकार, श्री प्रीतमलाल।

६—नि० सं० ४५—श्री प० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री जी मैनेजिंग डायरेक्टर गुरुकुल आयुर्वैदिक प्रयोगशाला लि० कं० वृन्दावन का १८-१२-५० का पत्र कि कार्य प्रारम्भ करने के लिए प्रमाण-पत्र प्राप्त हो गया है, प्रस्तुत हुआ। ज्ञात हुआ कि गुरुकुल आयुर्वेदिक प्रयोगशाला का चार्ज देने के लिये सभा के श्री प्रधानजी ने श्री कुलपतिजी व श्री मुख्याधिष्ठाताजी गुरुकुल वृन्दावन को आज्ञा देदी है। सभा सूचित हुई।

पीतमलाल, सभा-मंत्री

छपते-छपते

समाचार मिला है कि 'तपेदिक' रोग की भारत विख्यात महौषधि, "जबरी" (JABRI) ने हजारों ऐसे-ऐसे रोगियों की जान बचा दी जिनको X-Ray आदि के बाद डाक्टरों-वैद्यों ने जवाब दे दिया था। यदि आप सब तरफ से नाउम्मेद हो चुके हो तो भी परमात्मा का नाम लेकर एक बार "जबरी की जरूर परीक्षा करलें। परीक्षार्थ ही नमूना रखा गया है, जिसमें तसल्ली हो सके, तुरन्त आर्डर देकर रोगी की जान बचावें। मूल्य जबरी नं० १ सोना, मोती भस्मो युक्त पूरा ४० दिन का कोर्स ७५) रु० नमूना १० दिन २०) रु० जबरी नं० २ पूरा कोर्स २०) रु० नमूना १० दिन ६) रु० महसूल आदि अलग है। हमारा तार का पता (JABRI JAGADHRI काफी है।

रायसाहब के० एल० शर्मा रइस एण्ड बैंकर्स (२१) जगाधरी (E.P.)

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए यज्ञदत्त शर्मा द्वारा निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ओ३म्

आर्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक—आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ
१२ अप्रैल १९५१

विक्रम और दयानन्द

आज से प्रायः दो सहस्र वर्ष पूर्व भारतीय सभ्यता और संस्कृति पर शकों द्वारा भयङ्कर अत्याचार और भीषण प्रहार हुआ था। देश में सर्वत्र अनाचार की प्रलयङ्कर अग्नि धधकने लगी थी। पीड़ितों के आर्तनाद और करुण क्रन्दन सुन कर हृदय विदीर्ण हो रहे थे। सर्वत्र 'त्राहि-त्राहि' मची हुई थी, ऐसे संकट काल में परम पराक्रमी वीर विक्रमादित्य ने देश की सारी शक्तियों को संगठित कर, नृशंस शकों का साहस से सामना किया और उन्हें देश से भगा कर भारतीय धर्म, सभ्यता और संस्कृति की रक्षा की। महाराज विक्रमादित्य के इस परम कल्याणकारी कृत्य से उपकृत होकर विक्रम संवत् का प्रचलन हुआ, जिसे आज २००८ वर्ष होते हैं।

महाराज विक्रमादित्य शासक होते हुए भी प्रजा के सेवक थे। चटाई पर सोते, मिट्टी के बर्तनों में तथा पत्तलों पर खाते, और अपने सारे काम अपने आप करते थे। यहां तक कि अपने लिये नदी से पानी भी स्वयं ही भर कर लाते थे। ऐसे थे वे आदर्श और अनुकरणीय नरेश।

आज से पौन शती पूर्व महर्षि दयानन्द ने भी भारतीय धर्म, भारतीय सभ्यता और संस्कृति को विरोधियों के प्रबल प्रहार से बचाने का पूर्ण प्रयत्न किया। वे भी देश भर में घूमे-फिरे संगठन किया, अपनों को समझाया-बुझाया, झिड़का और घुड़का भी, परन्तु धर्म और संस्कृति-सभ्यता को नष्ट होने से बचा लिया। जिस प्रकार अचेत होकर गाढ़ निद्रा में सोने वाला व्यक्ति अपने जगाने वाले पर नाराज होता है, उसी तरह ऋषि दयानन्द से भी लोग क्रुद्ध हुए, परन्तु उन्होंने इसकी कुछ भी परवाह न की और वे देश को निरन्तर जगाते रहे। इसी लिए उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना की। देश जाग गया और उसकी सभ्यता-संस्कृति पर आक्रमण करने वाले विरोधी हिम्मत हार कर बैठ गये।

विक्रम और दयानन्द दोनों नवयुग के प्रवर्त्तक थे। एक शासक थे और दूसरे संन्यासी। दोनों भारत त्राताओं की जय हो।

सर्वे भवन्तु सुखिनः
सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु
मा कश्चिद्दुःख भाग्भवेत

आर्य महासम्मेलन को सफल बनाइये

[श्री मदनमोहन सेठ, प्रधान, आ० प्र० सभा, उत्तरप्रदेश]

सप्तम सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन इस बार मेरठ में होने जा रहा है। उत्तर प्रदेश के लिये साधारणतयः तथा मेरठ के लिये विशेषतः यह बड़े सौभाग्य और गर्व का विषय है, परन्तु प्रत्येक अधिकार के साथ कुछ कर्त्तव्य भी सम्बन्धित होते हैं। उत्तर प्रदेश को एक बार फिर आर्यजगत् के आतिथ्य का सुअवसर प्राप्त हो रहा है। अपनी उज्ज्वल परम्पराओं के अनुकूल उसे देश के आर्य प्रतिनिधियों को सत्कृत करना ही होगा। यद्यपि आर्यसमाज के संस्थापक की जन्म-भूमि होने का श्रेय काठियावाड़ प्रान्त को है, आर्यसमाज की प्रथम स्थापना का श्रेय बम्बई प्रान्त को और आर्यसमाज के महान् कार्य का श्रेय पंजाब के स्वनामधन्य नेताओं को, तथापि मथुरा की जन्मशताब्दी आदि विराट आर्यसम्मेलनों का केन्द्र उत्तर प्रदेश ही रहा है, और यह उचित ही है, क्योंकि आर्य-संस्कृति के आदिम क्रीड़ास्थल में ही जहाँ मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम और योगिराज भगवान् कृष्ण ने लीला की, इस युग में महर्षि दयानन्द के उर्वर मन में गुरुवर विरजानन्द ने विशुद्ध आर्य संस्कृति का बीज बोया, जो कालान्तर में अंकुरित और पल्लवित होकर आर्यसमाज के रूप में पुण्य-भूमि भारत की त्रिताप पीड़ित आर्यसन्तान पर वरदान बनकर छा गया, जिसकी शीतल छाया में अन्य नेताओं ने स्वातन्त्र्यादि संग्राम लड़े और देश ने परतन्त्रता से मुक्ति पाई, उसी अखिल भारतीय धर्म क्षेत्र में आज फिर आर्यमहासम्मेलन होगा। पुनः जब देश को नैतिक नेतृत्व की आवश्यकता पड़ी है, जब देश के कोने कोने से भ्रष्टाचार के विरुद्ध त्राहि-त्राहि की पुकार उठ रही है, जब ऋषि दयानन्द के अनुयायियों की ओर जनता पथ प्रदर्शन के लिये चातक के समान देख रही है, आर्यजनता का कर्त्तव्य बड़ा गम्भीर हो जाता है। उस दुर्वह उत्तरदायित्व के अनुरूप ही आर्य महासम्मेलन की तैयारियां हों, उस दुरूह भार को वहन करने के लिये पधारे हुये देश के आर्य नेताओं को समुचित सत्कार प्राप्त हो, इसके लिये यह परमावश्यक है कि उत्तर प्रदेश की आर्यजनता तथा यहां के आर्यसमाज जागरूक हो कर अपने कर्त्तव्य को समझें। स्वागत-समिति के लिये अधिक से अधिक सदस्य शीघ्र बनें और बनायें। २९ अप्रैल १९५१ को स्वागत-समिति के अधिकारियों का चुनाव होगा। समय थोड़ा है और कार्य महान्। आशा है, आर्यत्व की परम्पराओं के अनुसार ही आर्यजनता इस कार्य को सफल बनायेगी।

सभा के बृहदधिवेशन

साधारण और असाधारण

साधारण—१

उत्तरप्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभान्तर्गत आर्यसमाजों के मन्त्रीगण तथा आर्यप्रतिनिधि महोदयों की सेवा में

श्रीमान् महोदय नमस्ते,

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का ६२ वों वार्षिक साधारण अधिवेशन बृहदधिवेशन तिथि सौर ८ व ९ वैसाख संवत् २००८ वि० तदनुसार २१ व २२ अप्रैल सन् १९५१ ई० दिन शनिवार तथा रविवार को स्थान दयानन्द कालेज लखनऊ में होगा। प्रथम दिवस की बैठक २ बजे मध्याह्नोत्तर से प्रारम्भ होगी। आशा है, आर्यसमाजो के प्रतिनिधि महोदय नियत समय पर अधिवेशन म सम्मिलित होगे।

विषय-सूची

(१) उपस्थिति गणना। (२) ईश्वर प्रार्थना। (३) शोक-प्रस्ताव। (४) वार्षिक वृत्तान्त १ जनवरी १९५० से ३१ दिसम्बर १९५० तक आय व्यय सहित स्वीकारार्थ। (५) आगामी वर्ष सन् १९५१ के लिए बजट स्वीकारार्थ। (६) सभा क पदाधिकारियों एव अन्तरङ्ग सदस्योंका निर्वाचन (७) निरीक्षक (आडीटर) की नियुक्ति। (८) नियम स० ३८ (इ) क अनुसार विद्यासभा क लिये दो सदस्यों का निर्वाचन। (९) अन्तरङ्ग सभा ता० ७-४-५० क निश्चय स० १८ क अनुसार प्रान्तीय सरकार द्वारा इस प्रान्त (स्टेट) का परिवर्तित स्वीकृत नाम "उत्तर प्रदेश" क सभा के कागजात में स्वीकार किये जाने की स्वीकारी। (१०) अन्तरङ्ग सभा ता० २६-१२-५० क निश्चय स० ४१ के अनुसार सार्वदेशिक सभा देहली के लिये १० प्रतिनिधियो का निर्वाचन करने पर विचार। (११) अन्य आवश्यक विषय जिन्हें सभा क श्री प्रधानजी प्रस्तुत करने की आज्ञा द, प्रस्तुत हो सकेंगे।

१ नोट—आर्यप्रतिनिधि सभासदो के निवास आदि की व्यवस्था आर्यसमाज लखनऊ द्वारा डी० ए० वी० कालेज, जो चारबाग स्टेशन की समीप व आर्यनगर मुहल्ला में है, की गई है। स्टेशनो पर स्वयसेवकों का प्रबन्ध रहेगा।

२ नोट — २०, २१ तथा २२ अप्रैल १९५१ को "प्रदेशीय आर्य सम्मेलन" भी होगा। प्रोग्राम निम्न प्रकार है—

कार्यक्रम—

२० अप्रैल १९५१

प्रातःकाल ७ से ९ तक यज्ञ भजन कथा। मध्याह्नोत्तर ११ से ३ तक अन्तरङ्ग का बैठक। ३ से ६ तक जुलूस दयानन्द कालेज से अमीनाबाद)। सायकाल ७ से ८ तक सन्ध्या सभापति व स्वागताध्यक्ष क भाषण।

२१ अप्रैल १९५१

प्रातःकाल ७ से ११ तक यज्ञ, भजन, कथा। मध्याह्नोत्तर ११ से २ बजे तक भोजन विश्राम, २ से ६ तक साधारण अधिवेशन। सायकाल ६ से ७ तक नित्यकर्म, भोजनादि। रात्रि ७ से १० तक प्रन्तीय आर्य सम्मेलन।

२२ अप्रैल १९५१

प्रातःकाल ६ से ८ तक यज्ञ, भजन, कथा। ८ से ११ तक द्वितीय बैठक साधारण अधिवेशन। मध्याह्नोत्तर ११ से १ तक भोजनादि। १ से ३ तक अन्तरङ्ग की बैठक। ३ से ५ तक आर्य शिक्षा सम्मेलन।

३ नोट—अधिवेशन की समाप्ति पर सुविधानुसार अन्तरग सभा का प्रथम अधिवेशन होगा।

असाधारण २

उत्तरप्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभान्तर्गत आर्यसमाजों के मन्त्रीगण तथा आर्यप्रतिनिधि महोदयों की सेवा में—

श्रीमान् नमस्ते!

आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का असाधारण अधिवेशन तिथि सौर ८ व ९ वैशाख स० २००८ वि० तदनुसार दिनाक २१ व २२ अप्रैल १९५१ दिन शनिवार व रविवार को स्थान दयानन्द कालेज भवन लखनऊ में होगा। प्रथम दिवस की बैठक २॥ बजे मध्याह्नोत्तर से प्रारम्भ होगी। आशा है, आर्यसमाजों के प्रतिनिधि महोदय नियत समय पर अवश्यमेव सम्मिलित होकर कृतार्थ करेंगे।

विषय-सूची

१—उपस्थिति गणना। २—ईश्वर-प्रार्थना। ६—सभा के नियमो में आवश्यक सशोधन विचारार्थ।

१ नोट—अन्तरंग सभा २०-४-५१ में सभा के नियमों में जो परिवर्तन किए जावेंगे उसकी सूचना असाधारण अधिवेशन (नैमित्तिक बृहदधिवेशन) के आरम्भ में देदी जायगी।

२ नोट—निवास आदि की सूचना कृपया ऊपर पढ़िये।

नारायणस्वामी भवन, लखनऊ
दिनांक १७। ३। ५१

पीतमलाल
मन्त्री
आर्यप्रतिनिधि सभा, उत्तर-प्रदेश

ज्वालापुर-महाविद्यालय

गत २२ से २५ मार्च तक ज्वालापुर महाविद्यालय का ४३ वाँ महोत्सव बड़ समारोहपूर्वक मनाया गया। सब श्री स्वामी अभेदानन्द जी, स्वा० आनन्दजी सरस्वती, स्वा० विवेकानन्दजी, आचार्य विद्यानन्दजी विदेह आचार्य विश्वनाथजी, उत्तरप्रदेशीय कांग्रेस कमेटी के प्रधान प० अलगूरायजी शास्त्री, एम एल० ए०, कर्मवीर प० जियालालजी (अजमेर) प० विश्वनाथजी त्यागी बी० ए०, एल० एल० बी०, प० विहारीलालजी शास्त्री काव्यतीर्थ आर्यपथिक प० सुखलालजी आदि महानुभावों के विद्वत्तापूर्ण भाषण हुए। दीक्षान्त-भाषण २४ मार्च को भारत सरकार क उद्योग तथा वाणिज्य मन्त्री माननीय श्री हरकृष्णजी महताव ने दिया। माननीय मन्त्रीजी ने उपाधि वितरण करत हुए महाविद्यालय के वातावरण की प्रशसा की और कहा कि राजनीति प्रधान देश को धार्मिक भावनाओं का अत्यन्त आवश्यकता है। राजनीति और धर्म के समन्वय में ही देने की वास्तविक उन्नति निहित है। आपने गुरुकुल प्रणाली की मुक्त कण्ठ से सराहना की। अन्त में आपने नवीन स्नातको को आशीर्वाद दिया। इस अवसर पर महाविद्यालय के आचार्य विद्वद्वर श्री हरिदत्त शर्मा शास्त्री नवतीर्थ एम० ए० ने नव स्नातकों को समयोचित आदेश और उपदेश दिये।

चौधरी साहब की माता की मृत्यु

सभा का विज्ञप्ति

दुःख से लिखना पडता है कि मुजफ्फर नगर क एडीशनल डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट श्री चौ० मल्वीराम जी की पूज्य माता जी का गत १७ मार्च को देहान्त हो गया। श्री प० रामचन्द्र जी देहलवी ने वैदिक विधि से अन्त्येष्टि सस्कार कराया। परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति तथा चौधरी साहब को धैर्य प्रदान कर।

श्री प्रकाशवीर शास्त्री

आर्यजनता और आर्यसमाजों को सूचना दी जाती है कि श्री प० प्रकाशवीर शास्त्री पूर्व महोपदेशक सभा पर उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपना प्राप्तव्यधन प्राप्त न होने के कारण सभाधीन आर्यसमाजों की वेदी से उपदेश करने का अवसर न देने का प्रतिबन्ध लगाया था जो आर्यमित्र १० नवम्बर १९५० क पृष्ठ ६ पर प्रकाशित हुआ है। वह प्रतिबन्ध उक्त शास्त्री जी से सभा का प्राप्तव्यधन प्राप्त होने से हटा दिया गया है।

पीतमलाल, सभा-मन्त्री

ग्राहकों से

जिन ग्राहक महानुभावो को मूल्य समाप्ति की सूचना दी गई है वे कृपया अपना मूल्य मनीआर्डर द्वारा भेज दें या वी० पी० भेजने की आज्ञा दे।

व्यवस्थापक

पुनन्तु मां देवजनाः

आर्य ॐ मित्र

आगरा, चैत्र शुक्ल ६ संवत २००८ वि०, गुरुवार ता० १२ अप्रैल १९५१
दयानन्दाब्द १२६, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५०

यस्तु विज्ञानवान् भवति युक्तेन मनसा सदा
तस्येन्द्रियाणि वश्यानि सदश्वा इव सारथेः

जो जन मन पर पूरा संयम रखता है
वह इन्द्रिय-निग्रह का सुस्वाद चखता है
ज्यों सारथि अश्वों को वश में करता है
त्यों संयम मन की चंचलता हरता है

अनर्थों की जड़

संसार में अपराधों और पापों को रोकने के लिये जितने उपाय काम में लाये जाते हैं, उतने ही अपराध और पाप बढ़ते जाते हैं। अपराध और पाप का प्रायः एक ही अर्थ है। क़ानूनी परिभाषा में चोरी-जारी आदि की अपराध संज्ञा है, और धार्मिक जगत् में उन्हें पाप कहते हैं। क़ानून में किसी बुरे काम को करने या उसकी चेष्टा करने को अपराध माना गया है, परन्तु धार्मिक जगत् में बुरी बात का मन में भी लाना अपराध या पाप है। राजसत्ता द्वारा अपराध-निरोध का एक मात्र उपाय है, दण्ड ! परन्तु धर्म में अपराध-निरोध की सफल विधि है सच्चे हृदय में पश्चात्ताप और अटल ईश्वर-भक्ति। दण्ड पाकर अपराधी फिर भी अपराध करता है, परन्तु चालाकी और मक्कारी के साथ, जिससे वह पकड़ में न आसके। धार्मिक दृष्टि से तो सच्चे पश्चात्ताप के पश्चात् पापी को पाप करने की हिम्मत ही नहीं होती। राज-दण्ड के पीछे शासन का भय है और पश्चात्ताप की पीठ पर परमात्मा की भक्ति। कारागार में दण्ड भोग चुकने वाला व्यक्ति पुलिस या शासन की आंखें बचाकर फिर अपराध करने पर उतारू हो जाता है, परन्तु ईश्वर के बिना कोई स्थान ही नहीं जहां ईश्वर भक्त पाप या अपराध कर सके। अतएव यह स्पष्ट है कि राजकीय दण्ड का भय अस्थिर और कृत्रिम होने के कारण अनर्थ रोकने में बहुत ही कम सहायक होता है। किन्तु अटल ईश्वर-विश्वास मनुष्य को स्थायी रूप से अपराध करने से बचाता है। अब प्रश्न यह है कि वास्तव में ईश्वर भक्त कौन है ? क्या वह व्यक्ति ईश्वर-भक्त हो सकता है जो दिन-रात में पचास-पचास मालाएं जपता, तीर्थ-व्रत करता, मन्दिर-मस्जिद में जाता, सन्ध्या हवन में समय बिताता और कुछ दान-दक्षिणा भी देता है, परन्तु उसका व्यावहारिक जीवन भ्रष्टता से भरपूर और पापाचार से परिपूर्ण है ? ऐसा व्यक्ति न आस्तिक है न धार्मिक। उसे तो दम्भी या पाखण्डी ही कहा जा सकता है। ये लोग झूठी आस्तिकता के आवरण या पाखण्ड के पर्दे में अपनी पापाचारिता को छिपाने का पोच प्रयत्न करते रहते हैं। सच पूछिये तो ऐसे लोगों के कारण ही धर्म बदनाम हो गया है।

एक ओर दम्भी आस्तिक हैं और दूसरी तरफ़ स्पष्ट नास्तिक जो ईश्वर और धर्म का नाम सुनते ही चिंघाड़ उठते हैं; परन्तु ये नास्तिक उन आस्तिकों से कम खतरनाक हैं जो ईश्वर और धर्म्म के नाम पर ढोंग रचते रहते हैं। नास्तिकों को सब जानते हैं कि वे ईश्वर और धर्म्म को नहीं मानते, अतएव उनसे वैसी आशा भी नहीं की जाती और इतने अंश में वे दम्भी भी नहीं कहे जा सकते, क्योंकि उनका स्वरूप स्पष्ट है।

इस समय संसार को उन व्यक्तियों की आवश्यकता है, जिनके मन शिव संकल्पों और सद्भावनाओं से भरे हुए हैं। जिनके क्रिया-कलाप में सत्य के सिवा और कुछ है ही नहीं। जिनकी वाणी स्नेह-सुधा और सत्यामृत में स्निग्ध हो चुकी है। जिनका जीवन लक्ष्य स्वार्थ-सिद्धि नहीं दूसरों की सेवा भी है। जो अभ्युदय और निःश्रेयस् के सच्चे साधक बन चुके हैं। जो संसार में शान्ति के अंकुर उत्पन्न करने में ही आनन्द अनुभव करते हैं। ऐसे ही लोग वास्तव में ईश्वर-भक्त और धार्मिक हैं, उन्हें ही असली अर्थ में आस्तिक कहा जा सकता है। ऐसे ही आस्तिकों से संसार का हित या कल्याण होगा।

क्रियात्मक 'कार्य-क्रम'

कुछ लोग बिना ही सोचे-समझे यों ही कह डालते हैं कि अजी, अब आर्यसमाज की कोई आवश्यकता नहीं रही, उसे बन्द कर देना चाहिये। ऐसे लोगों को जानना चाहिये कि यदि आर्य-समाज की कभी सबसे अधिक आवश्यकता थी, तो वह यही समय है। आज भारत स्वतन्त्र है, राजनैतिक दृष्टि से उसकी स्वतन्त्रता अवश्य ही सौभाग्य की बात है, परन्तु अभी उसे सामाजिक दूषणों से मुक्ति नहीं मिली, आर्थिक समस्याएं पहले से भी अधिक कठिन हो गयी है, और उनके कारण देश में जो भ्रष्टाचार बढ़ा है, वह बड़े दुर्भाग्य की बात है। जाति-पाँति या बिरादरीबाज़ी का भूत स्वतन्त्र भारत में पहले की अपेक्षा अब और भी भयंकर हो गया है। वोट बटोरने के लिये बिरादरी वालों की सहायता प्राप्त करने को जैसे षड्यन्त्र आज रचे जाते हैं वैसे पहले न दिखाई देते थे। रिश्वतखोरी का बाज़ार भी पहले से अब अधिक गर्म हैं, अपराधों की संख्या में भी कोई कमी नहीं हुई, बल्कि वह बढ़ी ही है। नशेबाज़ी और व्यभिचारों में कमी नहीं जान पड़ती। फिर कैसे कहा जा सकता है कि आर्यसमाज का काम समाप्त हो गया।

आर्यसमाजियों में एक अजीब मनोवृत्ति है, वे इस सीमा पर रहते हैं, या उस पर। बीच का कोई मार्ग उनकी दृष्टि में नहीं है। या तो वे विश्व को आर्य बनाने की घोर घोषणा करेंगे, या अपने पुत्रों को भी आर्य नहीं बनाएंगे। या तो वेद-भाष्य करने की बात सोचेंगे, या साधारण पुस्तकें भी प्रकाशित करना पसन्द न करेंगे। या तो हरिजन भाइयों के यहाँ ही विवाह करने की बात कहेंगे, या अपनी उपजातियों को भी न तोड़ेंगे। या तो गुरुकुलों द्वारा महर्षियों को पैदा करने का ही गीत गाएंगे, या अपने बालकों को देववाणी-संस्कृत की सूरत भी न देखने देंगे। उनकी समझ में अपने घर, नगर, तहसील या ज़िले को कार्य-केन्द्र बनाने की बात कठिनता से ही आती है। यही कारण है कि आर्यसमाज में विचार तो बहुत हो जाता है, परन्तु प्रचार बहुत ही कम हो पाता है।

आर्यसम्मेलन होते हैं तो उनका प्रायः सारा समय 'दिमाग़ी कसरत' में ही चला जाता है। कोई क्रियात्मक कार्य क्रम निश्चित नहीं हो पाता। अगर सिद्धान्तशास्त्रियों की बहस छिड़ गयी तो फिर और बातों के लिए गुंजायश ही नहीं रहती। सिद्धान्तों से ग्रन्थ के ग्रन्थ भरे पड़े हैं। महर्षि दयानन्द उन पर अधिकाधिक प्रकाश डाल गये है, अब तो उन सिद्धान्तों और उद्देश्यों को कार्यान्वित करने की आवश्यकता है। हम चाहते हैं कि लखनऊ में उत्तरप्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के बृहदधिवेशन के अवसर पर एक प्रान्तीय आर्यसम्मेलन अवश्य हो और वह केवल तमाशा या कोरा वाग्विलास बन कर ही न रह जावे। कुछ ठोस एवम् क्रियात्मक चिन्तन भी करें और उचित रीति से यू० पी० के आर्यों को कार्य करने की दिशा का बोध करावें। प्रत्येक नगर, तहसील और ज़िले के लिये कार्यक्रम बनाया जाय, जिसकी पूर्ति एक साल के अन्दर अवश्य हो। बहुत-सी बातों को लेकर प्रस्ताव पास कर देने से कोई लाभ नहीं होता, दो तीन बातें लीजिये और उन्हें ही पूरा कीजिये। मान लीजिये आगामी वर्ष भ्रष्टाचार के

विरुद्ध प्रचार करना है, शिक्षण-संस्थाओं के विद्यार्थियों को आर्य-सन्देश सुनाना है, तो इन्हीं दो बातों को लक्ष्य में रखकर एक क्रियात्मक और व्यावहारिक कार्यक्रम तैयार कीजिए। शक्तियों या अधिकारों को पूंजीपतियों की पूंजी की तरह केन्द्रीभूत करने की उतनी आवश्यकता नहीं है, जितनी अधिकारों के विभाजन की है। यदि यू० पी० के आर्य भाई आगामी वर्ष सारे प्रदेश में साल भर तक भ्रष्टाचार मिटाने और विद्यार्थी-जगत् में धर्म-प्रचार करने का ही काम अपने हाथों में ले लें तो यह एक बड़ा ठोस काम होगा और इसे सचमुच क्रियात्मक कार्य-क्रम कहा जा सकेगा।

उत्तरप्रदेश की जनगणना

हाल में ही हुई उत्तर प्रदेशीय जनगणना के सरकारी आंकड़े प्रकाशित हो गये। कुल जन-गणना ६,३२,५४,६२४ हुई जो १९४१ की जनगणना की अपेक्षा ६७,३१,५३६ अधिक है। अर्थात् इन दस वर्षों में आबादी में लगभग १२ प्रतिशत उन्नति हुई। प्रदेश के ५१ जिलों में सबसे अधिक संख्या-वृद्धि देहरादून जिले में हुई यानी ३६·२९ प्रतिशत और सबसे कम हमीरपुर की। इस जिले में, दस वर्षों में केवल ८६१७ व्यक्ति ही बढ़ पाये। देहरादून के बाद जन-वृद्धि में कानपुर का नम्बर है, वहां २४ प्रतिशत संख्या बढ़ी। आगरे में १६·१२ प्रतिशत अलीगढ़ में १२·१८, लखनऊ में १८·६७, प्रयाग में १३ और बनारस में १८·७६ प्रतिशत जन-संख्या बढ़ी। इस वृद्धि का मुख्य कारण पुरुषार्थी भाई-बहनों का इस प्रदेश में अधिकता से आबसना है। जनगणना सम्बन्धी विस्तृत विवरण विस्तृत रिपोर्ट प्रकाशित होने पर ही जाना जा सकेगा।

एक और मूर्खता

इन स्तम्भों में दो तीन सप्ताह पूर्व एक प्रिंसिपल साहब की ऋषि दयानन्द विषयक अनभिज्ञता का परिचय दिया जा चुका है। अब जोधपुर से श्रीमती शान्ताकुमारीजी आर्या ने "सामान्य ज्ञान तथा विज्ञान" नामक लगभग ३०० पृष्ठों की पुस्तक हमारे पास भेजी है। इसके प्रकाशक हैं, बनारस के नन्दकिशोर एण्ड ब्रदर्स। यह पुस्तक एक नहीं अनेक "अनुभवी तथा योग्य अध्यापकों द्वारा" लिखी गयी है और नार्मल स्कूलों के चतुर्थ पत्र के लिये, नवीन पाठ्य क्रमानुसार नियत है। पुस्तक के पृष्ठ सौ से ऋषि दयानन्द सम्बन्धी पाठ प्रारम्भ होता है। उसमें "अनुभवी तथा योग्य अध्यापकों" ने लिखा है—

"इनके (स्वामी दयानन्दजी के) मा-बाप ने पारिवारिक बन्धन में डालने के लिए इनका (स्वामीजी का) विवाह भी कर दिया, फिर ये एक रात को चुपचाप बाहर निकल गये।"

स्वामीजी का विवाह उनके माता-पिता ने अवश्य कर दिया होगा, क्योंकि यह बात आंखों पर पट्टी बांध और अपनी जानकारी की जान मसोस कर "सामान्य ज्ञान तथा विज्ञान" के रचयिता "अनुभवी तथा योग्य अध्यापकों" ने लिखी है! फिर शिक्षा विभाग की स्वीकृति की उस पर छाप मौजूद है। महर्षि दयानन्द के प्रति कैसा ही भयङ्कर भ्रम क्यों न फैले, नार्मल स्कूल के छात्र-छात्रा भले ही स्वामीजी को विवाहित समझ लें, इसमें अनभिज्ञ लेखकों, स्वार्थी प्रकाशकों और असावधान शिक्षा-विभाग के खुदाओं को क्या? वे तो "सामान्य ज्ञान और विज्ञान" बढ़ाने के लिये इस सम्बन्ध में अपने अज्ञान का ढोल पीट चुके! अगर किसी ऐतिहासिक तत्व या तथ्य की गर्दन टूटती या जान निकलती है, तो इन भले आदमियों को क्या! महर्षि दयानन्द की सबसे बड़ी विशेषता उनका अखण्ड बाल ब्रह्मचारी होना है, उसी को ये 'आचार्य' और अनुभवी तथा योग्य अध्यापक अपनी अज्ञता के कुदाल से खुरच कर फेंक देना चाहते हैं। कैसे आश्चर्य और कितने दुःख की बात है! पाठ-विधि की पुस्तकों में ऐसी बेहूदा भूलों का होना शिक्षा-विभाग के लिये शर्म की बात है। जो छात्र छात्राएं स्वामीजी का विवाह होना पढ़ेंगे उन के हृदय पर यह झूठी धारणा बद्धमूल हो जायगी और उत्तरोत्तर उसकी वृद्धि होती रहेगी। हम तो कहते हैं, स्वामीजी ही नहीं, किसी के भी सम्बन्ध में ऐसी भयङ्कर भूलें न होनी चाहिएँ। कोर्स के करतारों का कर्तव्य है कि वे उपर्युक्त पुस्तक में से उक्त आपत्तिजनक वाक्य शीघ्रातिशीघ्र खुरच कर फिकवा दें। इसी पाठ के अन्त में लिखा है, स्वामीजी को एक 'वैश्या' ने विष दिलवाया। महाशय गण, 'वैश्या' ने नहीं 'वेश्या' ने। आप तो 'अनुभवी तथा योग्य अध्यापक' हैं, इतना साधारण शब्द-ज्ञान तो आप लोगों को होना ही चाहिये। 'वैश्या' और 'वेश्या' में क्या अन्तर है, इसे भी समझ लें तो कोई बुरी बात तो है नहीं, इससे तो आपका 'अनुभव' और 'ज्ञान' बढ़ेगा ही, कम न होगा।

अध्यात्म धारा

अध्यात्म तत्व क्या है

श्री वेदतीर्थ

जैसे नदियों तथा तीर्थ-स्थानों में हम देखते हैं कि स्नान करने वालों में जिनका ढेर होता है, जो तैरना जानते हैं वे आगे बढ़ कर गहरे पानी में डुबकी लगा कर आनन्द उठाते हैं। कोई गले तक पानी में जाते हैं, कोई कमर तक पानी में खड़े रहते हैं और कोई घुटनों तक जल में ही स्नान करते हैं। कोई किनारे पर बैठ कर ही लोटे से स्नान करते हैं—यही गति परमार्थ के साधकों की रहती है। इसलिये ज्ञानी पुरुषों या आप्त पुरुषों के पास जाकर उनसे यथार्थ ज्ञान प्राप्त करो। श्रद्धा पूर्वक जाओ, उनकी सेवा करो। इस संसार में तीन प्रकार के पुरुषों का जन्म वृथा ही है, एक प्रकार से वे नष्ट ही हैं।

(१) अज्ञ अज्ञानी,
(२) अश्रद्दधान-अश्रद्धालु,
(३) संशयात्मा-संशय में पड़ा हुआ।

अज्ञानी तमोगुण में ही पड़ा रहेगा, उसका तमोगुण का आवरण जब तक दूर न होगा तब तक उसे एक प्रकार से बोलता-चालता पशु ही समझिए। ज्ञानी आप्त पुरुष ही अज्ञान के परदे को हटा सकते हैं।

अश्रद्धालु—श्रद्धा-विहीन पुरुष जब गुरुओं में, ज्ञानियों में, आप्त पुरुषों में श्रद्धा नहीं करेगा तो वह क्या खाक ज्ञान प्राप्त करेगा। गुरु लोग ऐसे नास्तिक अश्रद्धालु को उपदेश क्यों देंगे, ज्ञान क्यों बतलायेंगे? संशयात्मा—तो संशयों में ही डूबे रहेंगे, इनको ज्ञान अथवा यथार्थ ज्ञान सात जन्म में भी न हो सकेगा। गीता ने कहा ही है—

"अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति"—

मनुष्य को इस जन्म में आकर, समझ आने पर वेद शास्त्रों द्वारा, ज्ञानियों द्वारा, तीन बातें को जानना चाहिए—(१) मुझे क्या करना चाहिए (२) क्या-क्या नहीं करना चाहिए (३) विशेष रूप से क्या-क्या करना चाहिए। गीता के शब्दों में कहना हो तो (१) कर्म (२) अकर्म (३) विकर्म के तत्व को जानना चाहिए, क्योंकि समस्त सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति तथा प्रलय ही जीवात्माओं के कर्म-बन्धन के कारण है। यह सृष्टि जीवात्माओं के (१) भोग तथा (२) अपवर्ग के लिए बनी है, इसीलिए यह शरीर, यह जीवात्मा, यह सृष्टि, यह नाना योनियाँ इनका परस्पर सम्बन्ध है। संसार में नाना योनियों में अपने कर्मानुसार आना उनका फल भुगतना और यदि प्रवृत्ति में ही फंसे रहे तो जन्मबन्ध के चक्र में उलझे रहना, यदि संसार में आकर भोगों को भुगतते भुगतते धीरे-धीरे संसार से हटते हुए परमार्थ तत्व की ओर बढ़ते-बढ़ते अन्त में अपवर्ग अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करना यही तो तत्व है। यह सब यथार्थ अध्यात्म ज्ञान द्वारा ही हो सकता है।

स्वास्थ्य-सुधा

'गर्भावरोध'

प्रो० एम० एल० शारिडल्य, एम० ए०

संयत जीवन स्वास्थ्य के लिये अति आवश्यक और लाभदायक है। असंयत रहने से ही सारे स्वास्थ्य का ध्वस हो जाता है। इस दिशा में सन्तान-निग्रह या गर्भावरोध का विषय बड़ा आवश्यक है। इस ओर ध्यान न देने से स्त्रियो का स्वास्थ्य दिनो-दिन बिगड़ रहा है और सन्तान भी बहुत निर्बल होती जाती है। इस 'बला' से बचने के लिये समाचार पत्रो में प्रायः प्रतिदिन 'गर्भावरोध' सम्बन्धी चिट्ठिया निकलती रहती हैं जो कि अधिकतर कृत्रिम प्रयोगो द्वारा जन-संख्या की वृद्धि रोकने के पक्ष में होती हैं। कभी-कभी तो बड़े-बड़े लीडर भी, जो अपने को एक प्रकार से महात्मा गांधी के अनुयायी मानते हैं, कृत्रिम उपचारो और प्रयोग-शालाओ के पक्ष में अपने विचार प्रकट करने में नही सकुचाते। बापू ने इस विषय पर पूर्णता से विचार किया था और अपने परिपक्व विचारों को जनता के सामने रखा था। उन्होने अपना 'Self Restraint Vs. Self Indulgence' में इस प्रश्न के प्रत्येक पहलू पर प्रकाश डाल कर जनता का बहुत उपकार किया है। गर्भावरोध के पक्ष-समर्थक एक प्रकार से भारतवर्ष मे भी असंयत जीवन बिताने का प्रचार कर रहे है। वे यह नहीं विचारते कि ऐसे जीवन से सामाजिक सुव्यवस्था के निर्माण करने की आयोजनाओं को अन्त में कितना धक्का लगेगा। वे भूल जाते हैं कि असंयत जीवन से हमारे देश की जनता में पतले-दुबले, रोगी और निर्बल मनुष्यों की वृद्धि होगी जो कि शारीरिक दुर्बलता, मानसिक निर्बलता नैतिक पतन और आध्यात्मिक गिरावट का कारण बन कर अन्त में भारतीय संस्कृति को नष्ट-भ्रष्ट कर राष्ट्र को रसातल मे पहुचा देगी। भारत के और पश्चिमी देशों के अनुभवी चिकित्सकों और योग्य डाक्टरो की सम्मति है कि कृत्रिम प्रयत्नों और प्रयोगो द्वारा गर्भावरोध होने से स्त्रियों की आरोग्यता पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है। किसी कार्य को संलग्नता से करना, पर उसके फल से डरना—या उसके फल को नष्ट भ्रष्ट कर देना उचित नहीं कहा जा सकता। मेरे विचारों मे तो ऐसा करना अमानुषिक कृत्य ही है।

मेरी प्रार्थना है कि अपने संकुचित और वैयक्तिक विचारो को छोड़कर और "खाओ-पीओ-मौज उड़ाओ" वाली मनोवृत्ति को तिलांजलि देकर, समाज की सुदृढ़ व्यवस्था के निर्माण पर ही ध्यान देना चाहिए। गर्भावरोध के कृत्रिम प्रयोगों को त्याग देना अति आवश्यक है।

मनुष्यमात्र का कर्तव्य है कि वह संयम से काम लेकर अपनी स्थिति-सुधार का पूरा प्रयत्न करे और उच्च भावनाओ द्वारा आगे बढ़े। हमें भूल नही जाना चाहिये कि सर्वव्यापक परमात्मा ही सब को पैदा करता है—वही सबका पालन पोषण करता और वही सबका संहार करता है। ऐसी दशा में हम सब का क्या कर्तव्य है, यह भले प्रकार समझ कर ही किसी कार्य में हाथ डालना चाहिये। महर्षि दयानन्द ने जीवन को यज्ञमय और संस्कारमय बनाने का प्रशंसनीय प्रचार किया था।

गर्भावरोध की समस्या पर, जिसका पश्चिमी सभ्यता के रंग में रंगे हुए नवयुवको और गृहस्थियो पर बड़ा प्रभाव पड़ा हुआ है, सबको और खासकर आर्यसमाज को बहुत ध्यान देना चाहिये। इसे साधारण रीति से एक छोटी-सी बात समझ कर ही नहीं टाल देना चाहिये। कृत्रिम प्रयोगों के समर्थक लोग पुस्तको, व्याख्यानो और समाचार-पत्रों द्वारा बहुत प्रचार कर रहे हैं। आर्यसमाज को इस प्रश्न पर पूर्ण प्रकाश डालने की आवश्यकता है। भारत सरकार को चाहिये कि वह राष्ट्र-निर्माण में महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी के मन्तव्यों का पूर्ण रूप से अनुगमन करे। उनके सिद्धान्तों के किसी एक अंश पर चलना और शेष पर उदासीन रहना ठीक नहीं है। इससे न तो व्यक्ति-विशेष को ही लाभ होगा और न समाज ही सुदृढ़ बन सकेगा। संयमी जीवन ही सब प्रकार की उन्नति की कुंजी है।

संस्था-परिचय

आर्यकन्यागुरुकुल, पोरबंदर

इस संस्था की स्थापना ५ दिसम्बर १९३७ ई० को हुई। यह संस्था महात्मा गांधीजी की जन्मभूमि पोरबदर (सुदामापुरी) मे राजवाड़ी के पास समुद्र की खाड़ी के तटपर एकान्त स्थान में अपने ही विशाल भव्य भवनो में स्थित है। प्रधान ट्रस्टी राज्यरत्न सेठ श्री नानजीभाई कालिदास मेहता, एम० बी० इ० पोरबदर और संचालिका ट्रस्टी तथा आनरेरी आचार्या स्नातिका श्री सविता कुमारी नानजीभाइ मेहता, भारती समलकृता है। मुख्याध्यापिका हैं श्री सती बहन भोजवाणी बी० एस-सी०, बी० टी०, विद्यालय का प्रथम सत्र १५ जून से प्रारम्भ होता है। महा गुजरात और कच्छ, सौराष्ट्र, पूर्व-दक्षिण आफ्रिकादि की लगभग २५५ कन्याए अध्ययन कर रही है।

शिक्षण-विषय

संस्कृत, हिन्दी, गुजराती, अंग्रेजी, गृहविज्ञान, आरोग्य-शास्त्र, शरीरविज्ञानादि विषय। इसके उपरांत संगीत, चित्रकला, सीनापिरोना, पाककला, कातना इत्यादि कलाओ का भी अभ्यास कराया जाता है। व्यायाम सीखना आवश्यक है।

प्रवेश-व्यय

आठ से बारह वर्ष की कन्या, जिसने गुजराती प्रथम कक्षा तक अभ्यास किया हो और शरीर से स्वस्थ हो, प्रविष्ट हो सकता है। प्रवेश-शुल्क ५०) अमानत ८०) और मासिक शुल्क २५) के हिसाब से ६ मास का एक साथ सत्रारंभ में ही लिया जाता है. जिसमें भरणपोषण, तेल साबुन, चिकित्सादि का खर्च समाविष्ट है। कपड़े, पुस्तकादि, शिक्षण, और व्यवस्था का खर्च ट्रस्ट फंड की आय में से किया जाता है। जो मासिक शुल्क के अतिरिक्त प्रत्येक कन्या पर मासिक ४०) के लगभग आता है।

उपाधि

श्रेणी १ से ४ तक प्राथमिक, ५ से १० तक माध्यमिक, और ११ से १२ तक महाविद्यालय। श्रेणी १० उत्तीर्ण कन्या को 'भारती' और श्रेणी १२ उत्तीर्ण कन्या को 'स्नातिका' पदवी दी जाती है।

भोजन

प्रातःकाल ७ बजे दूध, दोपहर दालभात, रोटी, शाक, कढ़ी, आदि, सायंकाल ४ बजे ऋतु अनुसार फल, चने, मूंगफली, मुरमुरे, मेवा इत्यादि, संध्यान्तर रोटी, खिचड़ी, शाक, दूध। पर्व, उत्सव, खास त्यौहार एवं विशिष्ट प्रसंगो पर मिष्ठान्न भी दिया जाता है।

व्यायाम

प्रातः प्राणायाम, योगासन, सूर्यनमस्कार, संघ कवायद, दौड़ना, वगैरः। सायंकाल लाठी, लेजिम, मुद्गर, भाला, छुरी, तलवार, बन्दूक, धनुषबाण, साईकिलिंग, तैरना आदि का शिक्षण दिया जाता है।

गृहकार्य

बड़ी ब्रह्मचारिणिया छोटी कन्याओ की देखरेख, सेवा-शुश्रूषा और व्यवस्था करती हैं। आश्रम के कमरो की स्वच्छता और कपडे धोना आदि कार्य स्वयं कन्याए करती है। पर्यायक्रम से ७ वीं से १२ वीं तक सभी श्रेणियाँ रसोई भी करती है।

अवकाश

वर्ष में एकवार ग्रीष्म ऋतु में, मई मास में, डेढ मास की घर जाने की छुट्टी मिलती है।

प्रवास-प्रथा

वर्ष में एकवार भिन्न-भिन्न प्रान्तो में (और बम्बई प्रांत में)

व्यवस्थानुसार प्रवास और प्रचार के लिए जाते हैं।

विशेषताएं

यह संस्था प्राचीन गुरुकुल के ढंगपर और इंग्लैंड के पब्लिक स्कूल के ढंगपर गुरुकुल रूप में चलती है। आश्रम में रहने वाली कन्याएं ही यहाँ विद्याध्ययन कर सकती हैं। गुरुकुल का स्थान शहर के वातावरण से दूर एकांत स्थल में है। आश्रमजीवन द्वारा, कन्याओं को स्वाश्रयी स्वावलंबी, गृहपरिचर्या, अन्योन्य सेवा सभावृत्ति, व्यायाम-शिक्षण, लेखन कार्य, व्याख्यान आदि में प्रवीण करने का प्रयत्न किया जाता है। तपमय जीवन द्वारा शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक प्रगति पर विशेष ध्यान दिया जाता है। पर्व एवं उत्सवों पर संमेलन, नाट्य प्रयोग और अभिनय का शिक्षण प्राप्त करती हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दी और गुजराती भाषा माध्यम के तौर पर प्रयुक्त होती है। देश की संस्कृति के अनुकूल अभ्यासक्रम होने से उत्तम नागरिकत्व और स्वतन्त्र मानस प्राप्ति होती है। स्थान की विशालता, स्वच्छ एवं खुली हवा, अच्छा प्रकाश, सात्विक आहार, नियमित व्यायाम और जीवन आदि वस्तुएं स्वास्थ्य अच्छा रखने में मदद करती हैं। धार्मिक वातावरण और शिक्षण से व्यक्तिगत जीवन उच्च और सदाचारी होता है। संस्था अपना विद्यापीठ बनाने में प्रयत्नशील है। वेदोक्त आर्य संस्कृत की पद्धति पर धार्मिकशिक्षण दिया जाता है।

संस्था के नियम और कन्याओं के प्रवेशार्थ प्रार्थनापत्र मंगाने के लिए पत्रव्यवहार आर्य कन्या गुरुकुल पोरबंदर (सौराष्ट्र) से करना चाहिए।

सुझाव और सम्मतियाँ

जनगणना के पश्चात्

स्वतन्त्र आर्य्यावर्त की प्रथम जनगणना हो चुकी। एक गणनाकार के रूप में कार्य करने पर जो कटु अनुभव हुए हैं, उन्हें लिखने और प्रकट करने की आवश्कता नहीं। समय पर सावधान न होने पर परिणाम अनुकूल नहीं हुआ करता। आर्यसमाज के नेताओं और विद्वानों को अपनी नीति की स्पष्ट रूप से घोषणा करनी चाहिए कि वे जनगणना के समय ही आर्य वा वैदिक धर्मी हैं अथवा उस से पहले और पश्चात् भी।

यह नहीं हो सकता कि आप जनगणना से और उस के समाप्त हो जाने पर व्यवहार रूप से हिन्दू बने रहे और हिन्दुओं के सुधारक अङ्ग के रूप में अपने आप को मानने में अभिमान दिखाए, और जब समय आए तो आर्य और वैदिक धर्म का जयघोष उद्घोषित करना प्रारम्भ कर दें। यह नीति अवसरवादियों को तो शोभा दे सकती है, पर वैदिक धर्मावलम्बी आर्यों को कदापि नहीं।

भारत के स्वतन्त्र होने के पश्चात् ही यह मांग जनता की ओर से हुई थी कि देश का नाम हिन्दुस्थान से बदल कर "भारत" रखा जाय। इस पर बहुत कुछ विवाद भी हुआ, पर अन्त में भारत नाम ही स्वीकार करना पड़ा। हिन्दुस्थान नाम इस देशका शुद्ध नहीं है और इस से विदेशीपन की गन्ध आती है, तो पुनः हिन्दू नाम से प्यार करने का कुछ भी तात्पर्य नहीं दीखता। आर्यसमाज को तो गरम लोहे पर पूरे बल से चोट लगानी चाहिए जिस से प्राचीन और शुद्ध नामों का अधिक प्रचार हो। महर्षि दयानन्द की घोषणा को कि—"न जाने यह हिन्दू और हिन्दुस्थान नाम कहां से आ पड़ा आर्यों का निवास-स्थान होने से इसका नाम आर्य देश वा आर्य खण्ड होना चाहिए था। अरे भाई कर्म-भ्रष्ट तो हुए सो हुए नाम-भ्रष्ट क्यों हो गए" तीव्र गति देने की आवश्यकता है। आर्य समाज के सुन्दर संगठन को सुदृढ़ बनाए रखने के लिए भी एक ही प्रकार की नीति का अवलम्बन हितकर होगा और फिर इस में तो विशेष वादों में पड़ने की आवश्यकता ही नहीं। महर्षि दयानन्द पथ-प्रदर्शन कर ही गये हैं, उनकी घोषणा ही हमारी घोषणा होनी चाहिए। आशा है विद्वज्जन इस ओर ध्यान तथा मार्ग प्रदर्शन करने की कृपा करेंगे।

ओम्प्रकाश उपमन्त्री,
आर्यसमाज, मसूरी

धर्मशिक्षा अनिवार्य हो

यदि आर्यसमाज में तरुण रक्त उत्पन्न करना है तो विद्यार्थियों में धर्मशिक्षा का प्रचार करना चाहिए—लेखनी से और वाणी से भी। आर्य शिक्षा-संस्थाओं में धर्मशिक्षा अनिवार्य होनी चाहिए। आर्य-कुमार परिषद् की परीक्षाएं भी इस कार्य में सहायक हो सकती हैं। आर्यसमाज की शिक्षा संस्थाओं में अनेक अध्यापक तक आर्यसमाजी नहीं हैं। वे आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द के सम्बन्ध में बहुत ही कम जानते हैं। फिर वहाँ के विद्यार्थी कैसे ये सब बातें जानें। मेरी राय में प्रत्येक शिक्षण-संस्था में आर्य अध्यापकों को सब से पहले अवसर देना चाहिए, यानी उनकी नियुक्ति करते हुए उन्हें प्राथमिकता दी जाय। 'आर्यमित्र' भी प्रत्येक शिक्षण संस्था में मगाया जाना चाहिए। इससे समाज की प्रगति का बोध होता रहेगा।

सीताराम आर्य
मुजफ्फरनगर

प्रदेशीय आर्य-सम्मेलन

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के आगामी वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर २ अप्रैल ५१ को लखनऊ में प्रदेशीय आर्य सम्मेलन का भी आयोजन किया गया है। यह सम्मेलन गाजीपुर तथा अलीगढ़ में भी गत वर्षों हुआ था, परन्तु कुछ कारणों से अधिक उपयोगी सिद्ध न हो सका। इस बार यह सम्मेलन आर्य प्रतिनिधियों तक ही सीमित रखा जाय। जिस में कि जिलों के कर्मण्य प्रतिनिधि गण ही अपने अनुभवों को सब के समक्ष रखें, जिस के आधार पर कि प्रान्त में वैदिक धर्म प्रचार की योजना बनाई जा सके। इस सम्मेलन में हम अपनी त्रुटियों तथा नवीन योजनाओं पर स्वतन्त्रतापूर्वक विचार कर सकेंगे जब कि साधारण जनता के समक्ष कमजोरियों पर विचार करना उचित न होगा। अतः मेरा सुझाव है कि इस सम्मेलन का संचालन इस प्रकार किया जाय कि हम क्रियाशील प्रतिनिधियों के अनुभवों से अधिक से अधिक लाभ उठा सकें।

रामेश्वर सहाय, प्रधान
आ० स० बादशाह नगर,
लखनऊ

आर्य शिक्षण-संस्थायें

अनुमान किया जाता है कि उत्तर प्रदेश में डी० ए० वी० स्कूलों व कन्या पाठशालाओं जैसी ३०० शिक्षण संस्थायें हैं। उनमें से लगभग ६० संस्थाओं का निरीक्षण मैं कर चुका हूँ। कहीं-कहीं सचालकों ने मुझ से कहा कि स्थानीय अधिकारियों की दुर्भावना अथवा विरोधी मनोवृत्ति के कारण संस्थाओं को सरकारी मान्यता (रिकगनी शन), आर्थिक सहायता अथवा भूमि प्राप्त करने में बड़ी कठिनाइयां होती हैं। स्थानीय अधिकारी गण ऐसी अड़चनें डाल देते हैं कि अवैतनिक कार्य कर्ताओं का सारा उत्साह भंग हो जाता है। इन कठिनाइयों व अड़चनों की ओर राज्य के शिक्षामन्त्री व उच्च अधिकारियों का ध्यान सभा की ओर से आकर्षित किया गया है। राज्य की ओर से पूछा गया है कि कहां-कहां ऐसी कठिनाइयाँ अथवा अड़चनें उपस्थित हुईं उनके उदाहरण दिये जावें ताकि उनके निवारणार्थ उचित कार्यवाही की जा सके।

आर्य शिक्षण-संस्थाओं के प्रबन्धकों व संचालकों से प्रार्थना है कि वे अपनी-अपनी कठिनाइयों को शीघ्र ही सभा के नोटिस में लावें। सभा को लिखते समय पत्रों की प्रतिलिपियाँ भी अवश्य भेजें। जिन शिक्षण-संस्थाओं को मान्यता (रिकगनीशन) प्राप्त करने में विलम्ब हो रहा हो वे तुरन्त ही सूचित करने का कष्ट करें।

देवीप्रसाद जौहरी
अधिष्ठाता-शिक्षा विभाग
आ० प्र० सभा, उत्तरप्रदेश

साहित्य-सौरभ

श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय

[एक शायर के रूप में]

श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय के सम्बन्ध में १८ जनवरी १९५१ ई० के अङ्क में कुछ पङ्क्तियाँ लिखी जा चुकी है, हमने उन पङ्क्तियो को लिखते हुए उपाध्यायजी की 'शायरी' के सम्बन्ध में चर्चा करने का वादा किया था, उसी के अनुसार उनकी कुछ नज्मो के नमूने नीचे दिये जाते हैं—आशा है पाठको का उनसे मनोरंजन होगा तथा यह भी जाना जा सकेगा कि उपाध्यायजी उर्दू कविता में अपने भाव किस सुन्दरता से व्यक्त करते है।

एक अवसर पर उपाध्यायजी ने कैसी सुन्दर बात कही है—

वो दिल में मेरे उनके मैं दिल में हूँ हमेशा
आशिक हूँ कि माशूक हूँ मालूम नहीं है

१९३९ ई० में निज़ाम हैदराबाद ने अपनी एक गज़ल में जनेऊ की खिल्ली उड़ाई थी। उस समय उपाध्यायजी ने लिखा था—

तीन धागे थे फकत सूत के कच्चे लेकिन
बाज़ी ज़ुन्नार ने ली हैदरी तलवार पै भी

आपने जगत् की क्षणभंगुरता को लक्ष्य करके मुरझाते हुए फूलों से इन्सान के कान में कहलवाया है—अरे, अज्ञानियो दुनिया दो दिन की है, इसके चाकचिक्य को देखकर कहीं तुम अज्ञान में मस्त न हो जाना—

कान में कहते गये हैं फूल मुरझाते हुए
फूल मत जाना ख़ुशी के साज़ोसामाँ देखकर

मौत और मोह का आपने किस सुन्दरता से वर्णन किया है ज़रा मुलाहिज़ा हो—

मौत के पहले मोह टूट गया
कुफ़्र का यह घड़ा भी फूट गया
ख़्वाहिशें सारी होगयीं पूरी—
एक बन्धन था वो भी टूट गया

❀ ❀ ❀

एक बार स्व० पं० घासीरामजी एम० ए० प्रयाग पधारे। उपाध्यायजी अपनी आँख दुखने के कारण उनसे न मिल सके और यह क़ता लिख कर भेज दिया—

आगयीं आँखें, आगयीं आँखें
एक करिश्मा दिखा गयीं आँखें
था न किस्मत में देखना उनका—
वो जो आए तो आगयीं आँखें

❀ ❀ ❀

शौक अन्धेरे से, नूर से नफरत
मुझको उल्लू बना गयीं आँखें

श्रीस्वामीश्रद्धानन्दजी के बध पर आपने लिखा था—

शहादत की हमारी पुख्ता रंगी इससे साबित है
न धोया जा सका दागे-लहू कातिल के दामन से

परमात्मा की सर्वशक्तिमत्ता और सर्वव्यापकता की ओर संकेत करके उपाध्यायजी कहते है—

निहाँ है ज़र्रे-ज़र्रे में अयाँ है ज़र्रे-ज़र्रे से
मुनव्वर परदा है परदानशी के रूए रौशन से

लन्दन से साइमन कमीशन जब इस देश में आया तो आपने लिखा था—

यकुम अप्रैल को आते तो बेशक हक़ बजानिब थे
पुलिन्दे हक़ के नाहक़ आरहे हैं आज लन्दन से

अंग्रेजों की ऐसी ही झूठी-सच्ची बहानेबाज़ी या कोरी तसल्ली की बातों पर खीझ कर उपाध्यायजी ने नीचे लिखा क़ता लिख डाला—

सच सही झूठ सही आधी सचाई ही सही
कुछ खबर चाहिए लोगों की तसल्ली के लिये
सिदक़ से इश्क़ नहीं, किज़्ब से नफरत क्यों हो
छोड़ देते हैं शिगूफा नया दिल्ली के लिये।

उपाध्यायजी की आँखों में मोतियाबिन्दु है, कुछ कम दीखने लगा है—आपसे एक मित्र ने आँखों का हाल पूछा तो आप बोले—

अब तो बीनाई बढ़ गयी इतनी
मौत नज़दीक नज़र आती है।

कु-मार्ग के पथिकों को सचेत करते हुए उपाध्यायजी फरमाते हैं—

ऐ, रहरवे राहे बदकारी
मुवकरवी का खयाल रखना
गुनाह तुझसे जो होगा सरज़द
वो तेरी गर्दन पै बार होगा

मरने पर जब कफन डाला गया तो रूह चीख उठती है। अरे, यह कफन नहीं, मेरे पापों पर परदा डालना है—मैं तो पापी हूँ, भला इस परदे से मेरे पाप छिपेंगे। मुझे तो यों ही नग्नावस्था में जाने दो—

बरहना रहने भी दो कफन की हाजत क्या है
मेरे गुनाहों पर क्यों आप परदा डालते है

❀ ❀ ❀ ❀

मेरे गुनाहों की परदादरी न थी मंजूर
इसी लिये तो अहब्बा कफन को लाये हैं।

हिन्दू मुसलमानों के झगड़े झंझटों पर आपने कहा था—

उनके ज़ुल्मों ने सिखाया मुझे ख़ुश दिल रहना
वो बुरा करते हैं, और मेरा भला होता है
आए दिन मन्दिरो मस्जिद के हैं झगड़े रहते
दिल में ईंटें हैं मगर लब पै ख़ुदा रहता है।

राष्ट्रियता के लिये सम्प्रदायवाद कितना विघातक है, इस पर उपाध्यायजी की उक्ति है—

तफ़रक़ाबाज़ी व फ़िरक़ाबाज़ी से जिस तरह कौमियत बनगी
जो शाख नाज़ुक पै आशियाना बनेगा न पायादार होगा

मौत नज़दीक दिखाई दे रही है, देखने की शक्ति कमाल की बढ़ गयी है, इसी ओर संकेत करते हुए उपाध्यायजी कहते हैं—

क्यूँ बनाये खड़े है मुद्दत से
रेल कुछ लेट नज़र आती है
अब तो बीनाई बढ़ गयी इतनी
मौत नज़दीक नज़र आती है

आत्मचरित लिखने वालों की ओर संकेत करते हुए आप लिखते है—

बात मेरी कोई करे न करे
याद मेरी तुम्हें रहे न रहे
मरसिया मै ही अपना लिख जाऊँ
कौन जाने कोई लिखे न लिखे

गुण-ग्राहकता के अभाव से दुखी होकर उपाध्यायजी ने कहा है—

गरम बाज़ारी है यहाँ पर गुंजों की हरसू
मैं वो गौहर हूँ कि दहली में ख़रीदार नहीं

एक स्थान पर आपने अपने सम्बन्ध में बड़ी विनम्र भावना से कहा है—

शेरगोयी मेरी खसलत में नहीं है लेकिन
कह गुज़रता हूँ अगर लब पै कुछ आजाता है।

❀ ❀ ❀ ❀

भाव किसी भी भाषा में क्यों न व्यक्त किये जायँ परन्तु उनकी सुन्दरता और गम्भीरता बराबर बनी रहती है। यही बात ऊपर की उर्दू की पङ्क्तियो में है। भारतेन्दु श्री हरिश्चन्द्रजी ने कहा है—'भाव अनूठे चाहिए भाषा कोई होय'।

अभिप्राय यह है कि उपाध्यायजी जहाँ सफल लेखक, गम्भीर वक्ता और विमल विचारक है, वहाँ उर्दू की कविता भी बड़ी सुन्दर करते है। संस्कृत में छन्दोबद्ध एक काव्य भी आप लिख रहे हैं। ऐसे विद्वान और कलाकार से देश तथा समाज का गौरव है।

चयनिका

[मधुप]

भारतीय संस्कृति

हम इस देश में प्रजातन्त्र की स्थापना कर चुके हैं, जिसका अर्थ है व्यक्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता जिसमें वह अपना पूरा विकास कर सके और साथ ही सामूहिक और सामाजिक एकता। व्यक्ति अपनी उन्नति और विकास चाहता है, और यदि एक की उन्नति और विकास दूसरे की उन्नति और विकास में बाधक हो तो संघर्ष पैदा होता है। और यह संघर्ष तभी दूर हो सकता है जब सबका विकास के पथ अहिंसा का हो। हमारी सारी संस्कृति का मूलाधार इसी अहिंसा तत्व पर स्थापित रहा है। जहाँ तक हमारे नैतिक सिद्धान्तों का वर्णन आया है। अहिंसा को ही उनमें मुख्य स्थान दिया गया है। अहिंसा का दूसरा नाम या दूसरा रूप त्याग है और हिंसा का दूसरा रूप या दूसरा नाम स्वार्थ है, जो बहुत करके भोग के रूप में हमारे सामने आता है। पर हमारी सभ्यता ने तो भोग भी त्याग से ही निकाला है और भोग भी त्याग में ही पाया है। श्रुति कहती है-'तेन त्यक्तेन भुंजीथा' इसी के द्वारा हम व्यक्ति के बीच का विरोध, व्यक्ति और समाज के बीच का विरोध, समाज और समाज के बीच का विरोध और देश और देश के बीच के विरोध को मिटाना चाहते हैं। हमारी सारी नैतिक चेतना इसी तत्व पर ओत-प्रोत है।

राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद

— —

हम अपनी भाषा में ही सोचें

हमें सोचना ही अपनी भाषा में चाहिए। अगर हम परकीय भाषा में सोचते हैं, तो हमारी आत्मा का आविर्भाव नहीं होता। यही देखो न कि, अपने स्वतन्त्र भारत का एक 'संविधान' हम लोगों ने, महीनों चर्चा करके अंग्रेजी में बनाया है। लेकिन यह 'संविधान' किस खेत की चिड़िया है, अशिक्षितों की बात ही नहीं, बहुत सारे शिक्षित भी नहीं जानते। अगर मूल विचार अपनी भाषा में हुआ होता तो हमारे संविधान की सूरत ही दूसरी होती। और उस की हरारत हर एक तक पहुँच होती। आज तो वह किताब में रह गयी है और उसके अनुवाद और तरजुमे मूल से भी क्लिष्ट और दकीक बन गये है।

श्री सन्त विनोबा भावे

— —

काश्मीर-समस्या

भारत सरकार ने काश्मीर की सच्ची जनता की मांग पर ही अपनी फौजें काश्मीर की रक्षा के लिये भेजी हैं। इन फौजों को काश्मीरियों की मांग पर ही भारत वापस बुलायेगा अन्यथा नहीं। अतएव यदि कोई विदेशी ताकत यह चाहे कि भारतीय सेनाएं काश्मीर से हटा ली जाय तो उनकी मंशा भारत सरकार हरगिज पूरी नहीं होने देगी। सुरक्षापरिषद् ने काश्मीर पर जिस आंग्ल अमरीकी प्रस्ताव को पास किया है, उसका विरोध मेरी सरकार शुरू से ही करती रह है। अतएव इस प्रस्ताव को भारत स्वीकार करे यह प्रश्न तो उठता ही नहीं। एक काश्मीरी के नाते मैं बखूबी समझता हूँ और यह भी जानता हूँ कि किसी भी काश्मीरी को यह बात मान्य नहीं है कि काश्मीर को जम्मू से अलग किया जाय। यही कारण है कि मैं डंके की चोट एलान किये दे रहा हूँ कि काश्मीर को जम्मू से अलग किसी भी हालत में नहीं किया जा सकता।

माननीय पं० जवाहरलाल नेहरू

——

ऋषि और राष्ट्रियता

आजकल लोगों का ऐसा खयाल है कि ऋषि लोग जंगल में एकान्त सेवन करके, अध्यात्म-चिन्तन ही करते थे। पर यह विचार अशुद्ध है। वे अध्यात्म ज्ञान में रत रहते थे, इसमें तो सन्देह ही नहीं है, परन्तु उनका अध्यात्म-सिद्धान्त, राष्ट्र अभ्युदय के लिये ही होता था। अध्यात्म विद्या की बुनियाद पर ही उनका राष्ट्र शासन चलता था। यही बात आज बहुत से विचारक भूल गये। इसी लिये कहते हैं कि यह कार्य धार्मिक है और यह राष्ट्रिय है। ऐसे विभाग ऋषि जीवन में नहीं थे। उनका जीवन एक ही अखण्ड रूप से मानव-सृष्टि के हित के लिए अर्पण हुआ होता था। इसमें धर्म और राज कारण मिला-जुला था।

पं० दामोदर सातवलेकर

———

एकता का स्रोत

भारतवर्ष में वही शिक्षित कहा जा सकता है, जिसने संस्कृत भाषा पढ़कर संस्कृत साहित्य का सम्यक् अध्ययन किया है। संस्कृत भाषा ही हमारी शक्ति, सामर्थ्य और एकता का आदि स्रोत है।

श्री क० मा० मुन्शी

—

शानदार विरासत

संस्कृत भाषा और संस्कृत साहित्य ही भारत की बहुमूल्य सम्पत्ति और विरासत है। इस शानदार विरासत का जब तक अक्षुण्ण प्रभाव रहेगा, तब तक भारत की आत्मा जीवित रहेगी। मैं संस्कृत के अध्ययन को प्रोत्साहन देना चाहता हूँ और देश के विद्वानों को इस गड़े हुए खजाने की खोज कर भूले हुए रत्नों को प्रकाश में लाने के काम में लगाना चाहता हूँ।

माननीय पं० जवाहरलाल नेहरू

——

अरब पर भारतीय प्रभाव

भारतीय विद्वान् ही अरब नहीं गये, वरन् बहुत-से अरब के यात्री भी भारत-भ्रमण के लिए आए और भारत के समस्त भागों की यात्रा की। उनमें से प्रधान रूप से उल्लेखनीय अलबरूनी है, जो भारतवर्ष में ४० वर्ष तक रह कर संस्कृत का अध्ययन करता रहा। अरब लौट कर, उसने दो प्रसिद्ध ग्रंथ लिखे, एक 'किताबुल-हिन्द' और दूसरा 'कानून मसौदा' इन ग्रन्थों में उसने भारतीय संस्कृति, परम्परा एवम् रीति-रिवाजों का बड़े विस्तार के साथ वर्णन किया है।

श्री प० जनार्दन भट्ट, एम० ए०

——

संस्कृत अनिवार्य

मेरा पूर्ण विश्वास है कि प्रत्येक नागरिक को संस्कृत पढ़ना आवश्यक है। इसके बिना वह भारतीय संस्कृति से परिचित नहीं हो सकता। बिना संस्कृत को जाने स्वतन्त्र भारत का कोई भी निवासी अपने को पढ़ा-लिखा नहीं कह सकता।

डाक्टर कैलाशनाथ काटजू

———

वृक्षारोपण और वृक्षमरण

फिर से वन-महोत्सव मनाने की बात अखबारों में देखने में आयी। होली दीवाली की तरह क्या यह भी वार्षिक उत्सव बनने वाला है? क्या इसकी आवश्यकता है? इसमें सरकार को पड़ना चाहिए? 'अनाज बोओ' और 'वृक्ष लगाओ' की बातों के पीछे इतना अनुचित खर्च उठाने की क्या आवश्यकता है? इस खबर के साथ पिछले वर्ष के वृक्षारोपण का एकन्दर हिसाब भी पढ़ने को मिला। खाद्य-मन्त्री की अपील को मानकर पिछले वर्ष तीन करोड़ से ऊपर वृक्ष रोपे गये थे। राज्यों से रिपोर्ट मिली है कि उनमें से लगभग साठ लाख वृक्ष यानी बीस फीसदी वृक्ष बचे है। अस्सी फीसदी बाल वृक्षों का मरण क्या बहुत ज्यादा नहीं कहा जायगा।

और इतने वृक्षों के रोपन में खर्च कितना हुआ? सरकारों ने इस हलचल को हाथ में लिया, उसमें कितना पैसा खर्च किया, ऐसे खर्चों से सरकारें क्या बच नहीं सकतीं। मन्त्रियों को इस ओर भी ध्यान देना चाहिए कि इस तरह के कामों को लोग ज्यादातर विज्ञापनबाजी और बेकार का लहरीपन ही मानते हैं।

श्री म० देसाई
[हरिजन-सेवक]

— —

आत्म समीक्षा

प्रत्येक आर्य नर-नारी को चाहिए कि वह प्रति वर्ष अपने जीवन की भले प्रकार पड़ताल करता हुआ यह जाँचने का यत्न करे कि गत वर्ष उसने अपने जीवन को धार्मिक दृष्टि से कितना ऊँचा उठाया या वह गिरावट की ओर किस अंश तक गया। मिथ्या भाषण' ईर्ष्या, द्वेष, क्रूरता, व्यापारिक धोखेबाजी, रिश्वत लेना इत्यादि आसुरी वृत्तियाँ कहाँ तक त्यागी हैं और साथ ही सत्य भाषण, सब मानवों में समता-भाव, स्नेह, दयालुता, आत्मसंयम इत्यादि का कहाँ तक व्रत-साधन किया हैं। अन्तःकरण की पवि-

शैक्षिक समस्याएँ

शिक्षा-संस्थाओं का संगठन

श्री पीतमलालजी, एडवोकेट

यों तो आर्यसमाज का कार्य शिक्षा-प्रसार के महत्व को दृष्टि में रख कर आरम्भ हुआ, और भारतवर्ष में स्थान-स्थान पर गुरुकुल, डी० ए० वी० कालेज आदि अनेक शिक्षण-संस्थाएं खोली गईं। परन्तु पंजाब और उत्तरप्रदेश में इस कार्य को विशेष प्रगति मिली। फलतः इन प्रदेशों में आर्य शिक्षा-संस्थाएं पर्याप्त संख्या में सफलतापूर्वक कार्य कर रही हैं और उनसे देश तथा जाति की सेवा हुई है। इन पंक्तियों में हम अपने विचारों को केवल उत्तरप्रदेशीय आर्य-शिक्षा-संस्थाओं तक ही सीमित रखेंगे और यह दिखाने की चेष्टा करेंगे कि अब भी इनके संचालन में क्या-क्या त्रुटियाँ शेष हैं और ये त्रुटियाँ दूर करके ही संस्थाओं को किस प्रकार अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है। साथ ही मैं अपने आर्यबन्धुओं से प्रार्थना करता हूँ कि वे इन सुझावों पर निष्पक्ष बुद्धि से विचार करें। और अपने सत्परामर्श से कृतार्थ करें।

हम इन संस्थाओं के उज्ज्वल-पक्ष को छोड़कर उनकी कुछ त्रुटियों को अपने अनुभव के आधार पर बतलाते हैं।

१—इन संस्थाओं के प्रबन्ध की नियमावली दोषपूर्ण है। किसी संस्था का प्रबन्ध एक स्वतन्त्र रजिस्टरी शुदा अथवा बिना रजिस्टरी शुदा समिति के अधीन है, जिनमें आर्यों की अधिक संख्या नहीं है, अथवा नामधारी कमली आर्यों का आधिक्य है। फलस्वरूप नाम के लिये आर्य संस्था होते हुए भी वस्तुतः उनमें आर्यसमाज से बाहर वाले व्यक्तियों का प्रबन्ध है। कुछ संस्थाओं का प्रबन्ध किसी आर्यसमाज द्वारा निर्मित उपसभा के अधीन है, जिसमें आर्यसमाज से बाहर के लोगों को भी प्रबन्ध में भाग दिया जाता है। इससे आर्यसमाज और प्रबन्ध उपसमिति में कलह तथा दलबन्दी बनी रहती है। इत्यादि।

२—प्रबन्ध सम्बन्धी दोषों के कारण, संस्था का मान, जनता और सरकारी कर्मचारियों की दृष्टि में गिर जाता है, जिससे आर्यसमाज की कीर्ति को ठेस पहुँचती है, और वेद-प्रचार के कार्य में भी बाधाएँ उपस्थित होती हैं।

३ धार्मिक शिक्षा देने का उचित प्रबन्ध नहीं है। या तो धार्मिक शिक्षा दी ही नहीं जाती, यदि दी जाती है तो एक रूढ़िवाद के रूप में।

४—शिक्षा-संस्थाओं में आर्यकुमार सभा, आर्यकुमारी सभा आदि धार्मिक संस्थाओं का होना और उनका संचालन करना एक आवश्यक कार्य होना चाहिये था, परन्तु आर्यकुमार परिषद् के वर्णन से स्थिति इसके विपरीत प्रकट होती है।

५—धार्मिक प्रचार न होने से जनता का जो धन, समय और शक्ति इन संस्थाओं के संचालन में व्यय हो रहे हैं, उनका अपव्यय ही समझना चाहिये।

६—इन संस्थाओं के अध्यापक वर्ग भी गुरुभाव से कार्य नहीं करते। न उनको ऐसे पवित्र विचारों को ग्रहण करने का तथा तदनुसार कार्य करने समुचित प्रबन्ध ही है। पश्चिमी सभ्यता के अनुसार कार्य होता है, गुरु-शिष्य-भावना का अभाव है।

७-अध्यापक वर्ग की सुविधाओं का ध्यान नहीं है। इस कारण वह भी अपने कर्त्तव्य का यथोचित पालन नहीं करते।

८—आर्यसंस्थाओं को सरकारी सहायता प्राप्त कराने, परीक्षाओं को मान्य कराने, विशेष विषयों को पढ़ाने की स्वीकृति प्राप्त करने, पाठविधि में आर्य विचारों और पुस्तकों का समावेश कराने इत्यादि का कोई समुचित प्रबन्ध नहीं है। इससे संस्थाओं को अपने उचित अधिकार और कार्य करने के अवसर से वंचित रहकर हानि उठानी पड़ती है।

इसी प्रकार की और भी त्रुटियाँ हैं जिनको न तो हम पूर्ण रूप से गिना ही सकते हैं और न वे उचित ही हैं। अनुभवी बन्धुओं के लिये ये ही पर्याप्त हैं। इन त्रुटियों को दूर करने और संगठन को दृढ़ और सुव्यवस्थित बनाने से ही आर्यसमाज का हित है। इस कार्य को सफलतापूर्वक करने का प्रकार निम्नलिखित है।

१—उत्तर प्रदेश की आर्य-संस्थाओं के सञ्चालकों, अध्यापकों, हितैषियों और आर्यबन्धुओं को अपने विचारों को प्रकट करने तथा समुचित संगठन बनाने के लिये एक शिक्षा सम्मेलन की आवश्यकता है। हर्ष का विषय है कि आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर आर्यसमाज गणेशगंज लखनऊ की ओर से डी० ए० वी० कालिज लखनऊ में एक शिक्षा-सम्मेलन किये जाने की योजना है। परन्तु उसमें किन विषयों पर विचार हो सकेगा, यह अज्ञात है। फिर भी इस को यत्न करना चाहिये कि किसी उचित अवसर पर, यदि अब न हो सके तो फिर एक सम्मेलन किया जावे।

२—इस सम्मेलन में उद्देश्य तथा साधारण नियम निर्धारित करने के पश्चात् एक समिति बनाई जावे, जो संगठन के नियम निश्चित करे और भावी कार्यक्रम पर विचार करे।

३—हमारी सम्मति में कार्यक्रम में ऐसे कार्य रखे जावें, जो हितकारी हों और पारस्परिक सहयोग से पूरे हो सकें। विवादास्पद विषयों को भविष्य के लिये स्थगित रखा जावे। उदाहरणार्थ, संस्थाओं के शुद्ध नाम एक क्रम से रखना, जैसे-दयानन्द विद्यालय, उच्च विद्यालय, मध्य-महाविद्यालय, महाविद्यालय, हाई स्कूल और कालिजों के स्थान पर हों। इसी प्रकार गुरुकुलों, संस्कृत पाठशालाओं के नाम महर्षि दयानन्द के नाम पर श्रेणी के अनुकूल रखे जावें।

४—संस्थाओं से सामान्य विवरण लेकर एकत्रित किया जावे, जैसे-छात्र संख्या, अध्यापक संख्या, वार्षिक आय-व्यय, भवन आदि अचल सम्पत्ति का मूल्य, सामान का मूल्य, पुस्तकालय की पुस्तक-संख्या, प्रबन्धक समिति रजिस्टरीशुदा है अथवा नहीं? अधिष्ठाता और मुख्याचार्य के नाम इत्यादि।

इस विवरण के एकत्रित होने से प्रदेश में आर्यसमाज के शिक्षा-कार्य का महत्व प्रत्यक्ष रूप में राजकीय अधिकारियों और जनता के समक्ष प्रकट होगा। आर्यसमाज को अपनी शक्ति और कार्य का अनुभव तथा उत्तरदायित्व प्रकट होगा।

५—छात्रगण के लिये कक्षा-क्रम से धार्मिक शिक्षा की पाठविधि निर्धारित की जावे। उसके पठन-पाठन की उचित व्यवस्था की जावे। यदि सम्भव हो तो वार्षिक परीक्षा में एक ही प्रश्नपत्र एक कक्षा के लिये रखे जावें।

६—प्रत्येक संस्था में आर्यकुमार सभा अनिवार्य रूप से हो। कुमारों को आर्यकुमार परिषद् की परीक्षाएं देने की प्रेरणा की जावे।

७—अध्यापकवर्ग आर्यसमाजी ही रखे जावें, उनके लिये स्थानीय आर्यसमाज का सदस्य होना अनिवार्य हो। उनको ऐसी प्रेरणा की जावे कि वे गुरु-भाव से कार्य

व्रता के लिये उनसे दान आदि किस अंश तक किये हैं। इस प्रकार की समीक्षा प्रत्येक व्यष्टि और समष्टि दोनों रूपों में होनी चाहिए। इस से बड़ा लाभ होगा।

प्रिंसिपल साईं दास, एम० ए०

अ-यान्त्रिक साधन

प्राकृतिक या मनुष्यकृत उत्पातों के कारण कल कारखानों का प्रबन्ध एका-एक और बड़े पैमाने पर नष्ट हो जाने का धोखा रहता है। इसलिए यह जरूरी है कि उत्पादन के अ-यान्त्रिक सरल साधन हमेशा दुरुस्त रखे जायं और उनका यथा सम्भव विकास भी किया जाय। सरकार का चाहे जो रूप हो—वह पूंजीवादी हो, समाजवादी हो, या साम्यवादी, अ-यान्त्रिक साधनों की रक्षा उस को हमेशा के लिए स्वीकृत नीति होनी चाहिए। क्योंकि सर्वोदय अर्थात् सब के कल्याण के लिए यही नीति उपयुक्त है।

श्री कि० घ० मशरूवाला

विशेष लेख

वेद-वीथी

[१३]

विद्वद्वर श्री प० रामदत्त शुक्ल, एम० ए०, एडवोकेट

ओम् परिमाग्ने दुश्चरिताद् बाधस्वामासुचरिते भज । उदायुषा स्वायुषोदस्थाममृतां२ अनु ।

यजु० ४-२८

अमृत तत्वों से ओत-प्रोत वेद वाङ्मय-मन्दाकिनी में अवगाहन करने वाले आर्षप्राण तपोधन अमृतत्व प्रदान करने वाले सोम को अधिगत करने में समर्थ होते हैं। सुसम्पन्न हो कर उपलब्ध सोम शक्ति को अपने जीवन में पचाकर, उसका सदुपयोग करने में सक्षम होने के लिये अग्निदेव के अनुग्रह का भाजन बन कर अपनी परिपूत संकल्प शक्ति से प्रार्थना करने के निमित्त प्रस्तुत होते हैं। किन्तु जिस सर्व देव अग्नि की प्रार्थना अभिलषित है, उसका परिचय अथवा स्तुति भी अप्रासङ्गिक विषय नहीं है । क्योंकि स्तुति के बिना पृथ्वी-पति अग्नि देव का स्वल्प ज्ञान भी सम्भव नहीं है । पुरोहित, यज्ञदेव, ऋत्विक्, होता, रत्नधातम इन पाँच विशेषणों के द्वारा कल्पारम्भ में भगवती ऋक् श्रुति ने सर्व प्रथम 'अग्निमीडे' इस लघुतम वाक्य में स्तुति की है। इस स्तुति या परिचय को ऋ० १-१-१ अधिकार सूत्र रूप में स्वीकार कर वेद महर्षियों, ऋषियों मुनियों, यतियों, धीरों, सूरियों, कवियों, मनीषियों, देवों, पितरों, विद्वानों, आचार्यों और पण्डितों ने "एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति" [ऋ० १-१६४-४६] और "एकं सद् कवयो बहुधा कल्पयन्ति" [ऋ० १०-११४-५ इन ऋग्वेदीय अधिकार सिद्धान्तों तथा "ऋषिभिर्बहुधागीतम" १३-४ गीता के इस स्मार्त अनुवचनानुसार उसी एक विराट् विश्वव्यापी अविनाशी तत्व की विशद स्तुति की है। परन्तु श्रुति के इस वाक्य "स ओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु" [यजु० ३२-८] में तो उस पूर्ण तत्व की भूमा का उत्कृष्टतम प्रतिपादन किया गया है।

स्तुति के द्वारा अग्नि देव का परिचय अत्यन्त संक्षेप से कराने के लिये कतिपय अग्नि के गुणों को प्रकट करने वाले विशेषण शब्द देना मात्र पर्याप्त होगा। रुचि रखने वाले स्वाध्यायशील पाठक विषद वर्णन सम्बद्ध ग्रन्थों में ही देखने का प्रयत्न करेंगे तो विशेष लाभ होना सम्भव है। पृथिवी पति, पवित्र, वीय, प्राण मन, पुरुष, व्रतपति, तप, पाप्मनामपहन्ता, रक्षोहा, तेज, वाक् सवत्सरः, पृथिवी, वाजानापतिः, अन्नादः, सवमायम, आत्मा, हिरण्यहस्तः, स्वराज्यः, स्वराट् गोमगोमः, सुश्रीः, सुशर्मा, सुशासः, सुवेदः सुवीरः, सुवर्चाः, सुमेधाः, सुब्रह्मा, सुभगः, सुबन्धुः, सुदत्र., सुत्रामासः, सहस्राक्षः, सविता, सरस्वती, सत्पति, श्रोता, श्रेष्ठः, श्रियंवसानः शदः, शुक्रः, वैश्वानरः, विश्वायुः विश्वस्यनाभिः दिश्वस्य केतुः, विश्ववेदाः, विश्वा रः, विश्वरूपः, विश्वकर्मा, विराट, विप्रवीरः, विद्म न. विचक्षणः वायुः वामः, वाजी, वह्नितमः, वसुपतिः, वयोधाः, वज्रहस्तः, वरुणः, रुद्रः, राष्ट्रभृत, राजा मर्त्यानाम्, राजा भुवनानाम्, राजा कृष्टीनाम्, रयिपतिः, रयीणां राजा, रथः, यशस्तमः, यशः, यज्ञाना पिता, यज्ञानां नाभिः, यज्ञाना केतुः यज्ञः, मित्रः, प्रिय., मातरिश्वा, महिव्रतः, महाशयः, मर्य श्रीः, भ्राता, विश्वस्य भोजनः, भेषजः, भूमा देवानाम, भुवनस्य गर्भः, भिषक्, भारती, भर्गः, भद्रशीलः भद्रम्, ब्रह्मणस्पतिः, बृहस्पतिः, प्रभुः, प्रथमजाः ऋतस्य, प्रथमः, अमृतानाम, प्रजापतिः, पूषा, पूतदक्षः, पुष्टिवर्द्धनः, पुरन्दरः, पाञ्चजन्यः, परिभूः, परमेष्ठी, नेता इयाम्, नृपतिः, नाभिः यशानाम् नाकः, नराशंसः, नभस्यः, ध्रुवः, धृतव्रतः, धीरः धीः, धर्मः, धनञ्जयः, द्विजन्मा, द्रविणोदा, द्राघेणः, देवतमः, प्रथमोदेवः, विश्वस्यदूतः, दूतः विशाम्, दक्षपतः त्वष्टा, माता, तपिष्ठा, तनूपाः, ज्योतिरमृतम्, ज्योतिषःपतिः, ज्योतिर्धुवम, जातवेदाः, चित्ररथः, चर्षणीना सम्राट्, घृतश्रीः, गोपाः ऋतस्य, गृहपतिः, गर्भःअदितेः, गणश्रीः, क्षत्र भृत्, क्षत्रः, कवितमः ऋतावान्, ऊर्जांपतः, इन्दुः, इन्द्रः, आयुः, आपः, अहिः, असुरः, अर्यमा, अमृतानां प्रथमः, अमृतः, अपागर्भः, अपराजितः अनाधृष्टः, अतिथिः। इन १६० परिचायक अग्नि देव के गुणों को प्रकट करने वाले वैदिक नामों से पाठकों को पर्याप्त परिज्ञान हो जायगा। इनमें से एक-एक की विस्तार के साथ व्याख्या इस लघुकाय लेख में सम्भव नहीं है।

वेद ज्ञान-ज्योति से ज्योतिष्मान् होने की कामना रखने वाले वेद प्राण मानव "सुअग्नयो वो अग्निभिः स्याम सूनो सहस ऊर्जांपते। सुवीरस्त्वमस्मयुः। ऋ० ८-१९-७" हे बल-पुत्र! हे ओजपते, आपकी अग्नियों के साथ हम भी अग्नि बन जाना चाहते हैं। आप सुवीर हमारे अनुकूल हों। प्रार्थना करने वाला मानव उपासक अग्निदेव की उपासना इस उद्देश्य से करता है कि वह भी अग्निरूप हो जाय। अग्नि के गुणधर्मों को अपने में धारण कर सके। क्योंकि राष्ट्र का सर्वाङ्गीण सुसमृद्धि के हेतु अमर श्रुति का कितना विस्पष्ट आह्वान हो रहा है—'अभिप्रयन्तु नरो अग्निरूपाः" [ऋ० १०-८४-१] अग्नि रूप नर सब ओर से राष्ट्र को प्राप्त हों। प्रत्येक जागरूक राष्ट्र का नागरिक अग्नि रूप धारण कर राष्ट्रोन्नति की साधना कर सब प्रकार की अभ्युदय परक सिद्धिलाभ करना चाहता, साथ ही वह अपने जीवन के परम लक्ष्य निःश्रेयस सिद्धि के लिये भी सतर्कता के साथ सलग्न रहने के निमित्त इस ब्राह्मण श्रुति की महिमा को भी अपने हृदय में दृढ़ता के साथ प्रतिष्ठित करने में सावधान रहता है कि "तस्मादनूचानमाहुः अग्निकल्प इति" [श० ६-१-१-१०] इस लिये वेदज्ञान सम्पन्न विद्वान् को "अग्निकल्प" इस नाम से सम्बोधित किया जाता है।

अभ्युदय सिद्धि के लिये अथवा ऐहिक जीवन को सफल बनाने के लिये अग्नि देव का परिचय प्राप्त कर उनके गुण-धर्मों को अपने जीवन में धारण करने की कामना उद्बुद्ध होते ही हृदय में संकल्प उठता है कि अग्नि रूप धारण किया जाय। इसी संकल्प को जब इच्छापूर्वक एवं निश्चित विचार के साथ शब्दों के द्वारा व्यक्त किया जाता है, तो उस को प्रार्थना कहा जाता है। प्रस्तुत लेख के आरम्भ में दिये मन्त्र में न केवल अभ्युदय-सिद्धि परक अग्नि देव के गुण धर्मों की ओर संकेत प्राप्त होता है, वरन् निःश्रेयस सिद्धि भी उस के गर्भ में निहित प्रतीत होती है।

उपर्युक्त गुण धर्मोपेत अग्नि देव के समक्ष उपासक भक्त की प्रार्थना का स्वरूप अत्यन्त श्लाध्य और महत्वपूर्ण है। क्यों कि प्रार्थना करने वाला वेद प्राण उपासक आर्ष प्राण जिज्ञासु प्रवर नचिकेता की भाँति यमाचार्य के द्वारा प्रस्तावित समस्त ऐहिक, सुखैश्वर्य-प्रद प्रलोभनात्मक वस्तुओं के प्रति अभिरुचि नहीं प्रकट करता है। यमाचार्य ने जिन-जिन सुखद वस्तुओं के सम्बन्ध में प्रस्ताव किया है, वह सब सदा ही मानव-स्वभाव धारी प्राणी को प्रलोभन में फँसाती ही

करें। सुविधा के लिए उनका परिवर्त्तन एक स्थान से दूसरे स्थान के लिये किया जावे। उनको परीक्षाओं का परीक्षक नियत कराने का उद्योग हो।

८—समिति अपनी कार्यशैली और योग्यता से सरकारी कर्मचारियों पर अपना प्रभाव डालने का उद्योग करे। यदि हो सके तो शिक्षा-विभाग में धार्मिक वायुमण्डल उत्पन्न करे। इत्यादि इत्यादि—

९—अनुकूल स्थिति होने और अपना संगठन दृढ़ होने पर समस्त आर्य-संस्थाओं के नियम एकमें हों—संशोधन करके उनकी त्रुटियों को पृथक किया जावे।

१०—उपर्युक्त कार्य में सफलता प्राप्त होने पर 'दयानन्द विश्वविद्यालय' स्थापित किया जावे।

ऐसा करने से आर्यसमाज का भविष्य उज्ज्वल होगा। पारस्परिक दलबन्दी, झगड़ेबाजी, जिससे शक्ति और समय का ह्रास होता है, दूर होंगे। नवयुवकों में आर्यसमाज और वैदिक धर्म का ज्ञान, उनके लिये प्रेम और प्रचार के लिये लगन तथा त्याग उत्पन्न होंगे। वैदिक धर्म का सन्देश ग्राम-ग्राम, नगर-नगर और प्रत्येक परिवार में पहुचेगा, जिससे प्रभावित होकर महर्षि दयानन्द की आशा, कि आर्य-समाज द्वारा वैदिक धर्म प्रचार होकर विश्व आर्य बनेगा, पूर्ण होगी

——

रहती है। समुत्सुक जिज्ञासु नचिकेता से यमाचार्य कहते हैं:—

"शतायुषः पुत्रपौत्रान्वृणीष्व बहून्पशून्हस्तिहिरण्यमश्वान्। भूमेर्महदायतनं वृणीष्व स्वयं च जीव शरदो यावदिच्छसि। एतत्तुल्यं यदि मन्यसे वरं वृणीष्व वित्तं चिरजीविकां च, महाभूमौ नचिकेतस्त्वमेधि कामानां त्वा कामभाजं करोमि। ये ये कामा दुर्लभा मर्त्यलोके सर्वान्कामांश्छन्दतः प्रार्थयस्व, इमा रामाः सरथाः सतूर्या नहीदृशा लम्भनीया मनुष्यैः। कठोप न० अ० १, व० १-२३-२५।

हे नचिकेता! तू सौ वर्ष पर्यन्त जीवित रहने वाले पुत्र और पौत्र मांग। बहुत से पशु मांग। हाथी सुवर्ण और घोड़े ले। भूमि का बड़ा भाग मांग। और जितने वर्ष चाहे आप स्वयं जीवित रह। इसके समान यदि कोई और वर मांगना हो तो मांग ले। धन और आजीविका मांग। हे नचिकेता तू विशाल भूखण्ड का अधिपति बन जा। तुझे मैं कामनाओं का उपभोग करने वाला बनाता हूं। जो-जो कामनायें मनुष्य लोक में दुर्लभ हैं, उन उन सब कामनाओं को अपनी इच्छा से मांग ले। ये स्त्रियां, रथ और बाजों के साथ मांग मनुष्यों को ऐसी स्त्रियां नहीं मिल सकतीं। किन्तु कठोपनिषद् से परिचय रखने वाले जानते हैं कि ब्रह्मनिष्ठ व्रती नचिकेता ने किस प्रकार उपर्युक्त समस्त भोग्य वस्तुओं को ठुकराते हुए आचार्य यम से दृढ़ता से कहा कि, "वरस्तु मे वरणीयः स एव" मेरे वरने योग्य वर तो वही है [मृत्यु के उपरान्त जीवात्मा की क्या गति होती है।]

आश्चर्य है कि नचिकेता की भांति समस्त ऐहिक सुखोपभोगप्रद वस्तुओं को ठुकराते हुये नचिकेता ने जिस परम रहस्य ज्ञानमय वर को मांगा, उसके अनुरूप प्रस्तुत मन्त्र में प्रार्थना नहीं की गई है। वस्तुतः इस प्रार्थना के द्वारा तो पृथ्वी लोक निवास करने वाले मर्त्य भावापन्न मनुष्य की ओर से व्यावहारिक प्रपञ्च पूर्ण संसार में सफल जीवन व्यतीत करते हुये देवत्व की उपलब्धि करने की योग्यता प्राप्त करने के हेतु प्रार्थना की गई प्रतीत होती है। क्यों कि, "सत्य वै देवाः अनृतं मनुष्याः" [श. १-१-१-४] इस ब्राह्मण श्रुति वाक्य के अनुसार देव सत्य रूप होते हैं और मनुष्य अनृत युक्त हैं। इसलिये अनृत से मुक्त होकर सत्य को अपने अन्दर प्रतिष्ठित करके देव बनने की साधना परम्परा का नाम ही यज्ञ विज्ञान रहस्य आप प्राण मानव के लिए विहित है। यही कारण है कि यज्ञ परम्परा में दीक्षित होने वाले यजमान व्रत धारण करते समय याजुषी श्रुति-मुख से अपने संकल्प को इस प्रकार विस्पष्ट करते हैं, "इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि" यजु० १-५ इस प्रकार मैं (अमुक नामा यजमान) अनृत से विमुक्त होकर सत्य को प्राप्त हो जाऊं।

विवेचनीय मन्त्र में 'दुश्चरित' और 'सुचरित' यह दो शब्द बड़े महत्वपूर्ण हैं। इनके ठीक अर्थों को हृदयगम करने में अणुमात्र भूल हो जाने से मन्त्रार्थ समझना अति कठिन हो सकता है। इसलिये इन दोनों का पारिभाषिक अर्थ इस प्रसङ्ग में देना ही उचित प्रतीत होता है। प्रसिद्ध तैत्तरीय ब्राह्मण श्रुति वाक्य के अनुसार "वृजिनमनृत दुश्चरितम्" [तै० २-२-७-१०] और "ऋजुकर्म सत्य सुचरितम्" [तै० २-२-७-१०] इन दो वाक्यों के अनुसार कुटिलता जिह्मता और अनृत को दुश्चरित और ऋजुकर्म एव सत्य को सुचरित कहा जाता है। वृजिन को दुरित भी कहा जाता है और अनृत को असत्य या अतथ्य भी कहते हैं।

अग्नि देव से प्रार्थना की जाती है कि हे देव! हमको सब ओर से दुश्चरित से निवृत्त कीजिये और सब प्रकार की देश कालिक अवस्था की सीमा तक सुचरित में स्थापित कीजिये। दुश्चरित से निवृत्त हुए बिना मानव की प्रवृत्ति सुचरित में होना किसी प्रकार से भी सम्भव नहीं है, इस तत्व को वेद महर्षियों ने जितनी समझदारीपूर्वक समझा था, उतनी दूरदर्शिता के साथ सदाचार शास्त्र के अन्य मनीषियों ने हृदयङ्गम करने का कदाचित् यत्न नहीं किया है। क्योंकि "ऋतस्य पन्थां न तरन्ति दुष्कृतः" [ऋ० ९-७३-६] विश्व व्यापी ऋत मार्गों पर चलने के अधिकारी दुष्कृति जन नहीं होते हैं। इसके विपरीत, "सत्यस्य नावः सुकृत अपीपरन्" [ऋ० ९-७३-१] सत्य की नौकाएं सुकृति को भवसागर से पार ले जाती हैं। दुश्चरित और सुचरित परक इन्हीं दोनों को सुप्रसिद्ध याजुषी श्रुति में इस प्रकार प्रकट किया गया है—

"विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव, यद्भद्रं तन्न आसुव" [यजु० ३०-३] हे सविता देव! समस्त प्रकार के दुरित हम से दूर हों और जो कुछ भद्र हैं, वह हमको प्राप्त हों। "विश्वं तद्भद्र यदवन्ति देवाः [यजु० ३४-५८] वह सब कुछ भद्र है जिसकी देवजन रक्षा करते हैं।

दुश्चरित से सर्वतः निवृत्त होकर सुचरित की ओर ही सर्वथा प्रवृत्त होने वाले तपः पूत साधक के लिये ऋत का आश्रय लेना अत्यावश्यक है। क्योंकि "ऋतस्य धीतिर्वृजिनानि हन्ति" [ऋ० ४-२३-] ऋत के ध्यान द्वारा वृजिन या दुरित नष्ट हो जाते हैं। दुरित का ही पर्यायवाची शब्द पाप या आगस भी है। जब तक पाप या आगस से विमुक्त होकर प्राणी निष्पाप या अनागस नहीं हो जाता तब तक विश्वव्यापी वरुण के पाशों से त्राण नहीं पा सकता है। क्योंकि, "वरुणो वा एत गृह्णाति यः पाप्मना गृहीतो भवति" [श० १२-७-२-१७] जो पाप से ग्रस्त होता है, उसको ही वरुण (अपने पाशों में) जकड़ लेता है। "अनृते खलु वै क्रियमाणे वरुणो गृह्णाति" [तै० १-७-२-६] जहां कहीं अनृत का आचरण कोई करता है, वहीं वरुण उसको पाशबद्ध कर लेता है। इस प्रकार वृजिन अथवा अनृत इन दो में से किसी से ग्रस्त मानव दुश्चरित कहलाता है और इसलिये ऋजुकर्म या आर्जव या धर्म कृत्यों में यथा यज्ञानुष्ठान में प्रवृत्त होने में सर्वथा अयोग्य हो बन जाता है। व्यावहारिक जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिये व्यावहारिक ऋजुता [मन, वचन और कर्म में समता] और सत्यनिष्ठा अनिवार्य हैं। इनमें से यदि किसी में भी कोई त्रुटि शेष रहती है, तो सदाचार शास्त्र (Ethics) के मानदण्ड से उसी मात्रा में मानव के चरित्र में दोष माना जाता है। इसी प्रकार दुश्चरित मानव में भी जब कभी वृजिनपन या वक्रता अथवा अनृत (असत्य) की मात्रा में न्यूनता होने लगती है और ऋजुता या सत्य की मात्रा अधिक होती है तो उनको भी आत्मोद्धार की ओर अग्रसर होता हुआ माना जाता है।

वृजिन (पाप) और अनृत (असत्य) के विषय में संक्षेप विवेचन हो जाने के उपरान्त प्रसंगागत ऋजुकर्म (धर्म) और सत्य का पारस्परिक सम्बन्ध क्या है, इस विषय का स्वल्प दिग्दर्शन भी उचित ही प्रतीत होता है। सनातन वैदिक परम्परा के शिथिल हो जाने और विपरीत विपाक विचारों के झंझा वातों से बौद्धिक विकृति के कारण वैदिक शब्दों के पारिभाषिक और यौगिक अर्थों के समझने में अक्षम अनेक महानुभाव प्रायः मर्जीवाद के आधार पर नितान्त निर्भर रहते हुए अपने क्षेत्र और अधिकार के बाहर पर जो विषय हैं, उनकी सीमा को भी मापने का साहस करते देखे जाते हैं। उदाहरण के रूप में यहां हम धर्म शब्द को ही लेते हैं। स्वतन्त्र भारत राष्ट्र के कर्णधारों ने देश में धर्म निरपेक्ष (Secular) गणतन्त्र राज्य की स्थापना नवविधान के आधार पर की है। राज्यमुद्रा में "सत्यमेव जयते" अंकित किया गया है। राष्ट्रध्वज में अशोक का 'धर्मचक्र' शोभायमान हो रहा है। राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी जी के आधार सिद्धान्त सत्य एवं अहिंसा को भी सर्व सम्मति से स्वीकार किया गया है। ऐसी अवस्था में सत्य और अहिंसा को आधार सिद्धान्त मानने वाले धर्म से निरपेक्ष किस प्रकार रह सकते हैं। वस्तुतः वैदिक परम्परा के अनुसार तो सत्य और धर्म दोनों ही पर्यायवाची समानार्थ द्योतक शब्द हैं। इसी सिद्धान्त को सुप्रसिद्ध ब्राह्मण श्रुति कितने स्पष्ट और सुन्दर शब्दों में कहती है:—

"यो वै धर्मः सत्यं वै तत् तस्मात्सत्यं वदन्तमाहुर्धर्मं वदतीति, धर्मं वा वदन्तं सत्यं वदतीति" [श० १४-४-२-२६] जो धर्म है, वही सत्य है। इसलिये सत्य बोलने वाले के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह सत्य बोलता है। इस प्रकार सत्य बराबर है धर्म के और धर्म बराबर है सत्य के। इसलिए सत्य को जो सिद्धा-

न्ततः स्वीकार कर ऐहिक अथवा पारमार्थिक कर्तव्यानुष्ठानों में प्रवृत्त होते हैं, वह निश्चय ही धर्म को सिद्धान्ततः स्वीकार करने में और तदनुसार प्रवृत्त होने में अणुमात्र संकोच कर ही नहीं सकते हैं। इसी प्रकार जो सिद्धान्ततः धर्म को स्वीकार कर तदनुसार ऐहिक और पारमार्थिक व्यवहारों में प्रवृत्त होते हैं, वह भी सत्य को तद्वत् सिद्धान्ततः स्वीकार कर तदनुसार प्रवृत्त होने में किञ्चिन्मात्र संकोच नहीं कर सकते हैं। वस्तुतः सत्य और धर्म दोनों परस्पर अभिन्न हैं। इनके स्वरूप का विपरीत ज्ञान, सन्दिग्ध परिचय, भ्रमात्मक ज्ञान अथवा अज्ञान सर्वथा अहितसाधक हैं।

दुश्चरित से सर्वतः निवृत्त होकर सुचरित में और पूर्णतः प्रवृत्त होने पर 'आयुषा उत्तस्थाम्' "स्वायुषा उत्तस्थाम्" जीवन काल पर्यन्त उन्नति को प्राप्त होता रहूं और जीवन मुक्त पुण्यश्लोक देवजनों की भांति उत्कृष्ट जीवन में समुन्नत हो सकूं। आयु शब्द से अभ्युदय परक जीवन विषयक उन्नति करते रहने में प्रवृत्त और सु+आयुषा से पारलौकिक समुन्नति करने के सम्बन्ध में संकेत किया गया है। पारमार्थिक उन्नति करने वाले ही वस्तुतः अपने जीवन-विकास से जीवन मुक्त होकर मोक्षानन्द के भाजन बनते हैं। इस प्रकार के अनुष्ठान की संसिद्धि का परिणाम जहाँ एक ओर अनुकरणीय लोकक जीवन के यशस्वी बनाने का योग्यता प्राप्त होती है, वहाँ उत्तम और उत्कृष्ट गुणों का विकास होने पर परमानन्द मोक्ष भी उपलब्ध हो जाता है। इसी तत्व का प्रतिपादन, "अमृतों-अनु" इस मन्त्रांश में किया गया है। अमृत शब्द के अनेक अर्थ होते हैं। प्राण, आप, ब्रह्म, हिरण्य, आदित्य, अग्नि, प्रजापति इत्यादि। जिस प्रकार यह सनातन शक्तियाँ विश्व-प्रपञ्च-संचालन करती रहती हैं और न क्षीण होती हैं न अपने नियत स्वधर्मों से विचलित होती हैं, उसी प्रकार उपासक भक्त भी अपनी प्रार्थना की साधना में सिद्धि प्राप्त कर उपास्य देव अग्नि के गुण धर्मानुसार ही अपने स्वरूप को अमर बनाने में सुसमर्थ हो जाता है। मानव-जीवन-विकास की इस उत्कृष्ट भूमामयी अवस्था को ही परमानन्द या मोक्ष-सुख कहा जाता है। क्योंकि, "अल्पं हि मृत्युः भूमा वै अमृतम्" इस औपनिषदिक तत्व के अनुसार अल्पता ही मृत्यु है और भूमा ही अमृत है। भूमा की इस परमोच्च शिखर पर आरूढ़ होने वाला सिद्ध महर्षि आनन्दविभोर अवस्था में लोकानुग्रह के निमित्त ही इस आथर्वण श्रुति का अनायास उद्घोष करता हुये दशों दिशाओं को ध्वनित और प्रतिध्वनित करने लगता है,

'असन्ताप मे हृदय अर्वी गव्यूतिः समुद्रोऽस्मि विधर्मणा" (अथर्व १६-३-६.)

—आ० स० सुरजन नगर का वार्षिकोत्सव २८, २९ तथा ३० मार्च को उत्साहपूर्वक मनाया गया। श्रीमती प्रभावती देवी के भाषणों का अच्छा प्रभाव पड़ा।

—आ० स० खड्गपुर का वार्षिकोत्सव १७ तथा १८ मार्च को मनाया गया। व्याख्याताओं के प्रभावशाली भाषण तथा श्री अभिमन्युजी के धनुर्विद्या-सम्बन्धी खेल हुए।

—आ० स० खायरा (मथुरा) में दयानन्द-सप्ताह उत्साह पूर्वक मनाया गया। चैत्र कृष्णा ५ को स्थानीय मेले पर भी प्रचार हुआ। प्रभाव अच्छा पड़ा।

—घिरोर (मैनपुरी) निवासी ला० रामस्वरूप वशीवर के यहाँ पुत्र और पुत्री का कर्णवेधन संस्कार प० शङ्करदेवजी ने कराया। २२) दान दिये। होलिकोत्सव पवित्रता से मनाया गया। एक जुलूस निकाला गया। सारी बस्ती पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा।

—गत २८ फरवरी को मई (मथुरा) में ठा० यशवन्तसिंहजी और श्री खुशीलालजी विजय के उद्योग से आर्यसमाज की स्थापना हुई। बा० खचेरमलजी ने ११) दान दिये।

—आ० स० नगोला (अलीगढ़) में २० तथा २१ मार्च को होलिकोत्सव समारोहपूर्वक मनाया गया। स्वा० सत्यव्रतजी, प० देवप्रकाशजी शास्त्री प० सुवर्णसिंह आर्य आदि के भाषण हुए। प्रभाव उत्तम पड़ा।

—आ० स० जवां (अलीगढ़) का ११ वाँ वार्षिकोत्सव होली के दिन मनाया गया। स्वा० सत्यव्रत जी, प० देवप्रकाशजी, कुँवर गजराजसिंहजी, कु० रणवीरसिंह जी, प० सुवर्णसिंहजी आदि के भाषण हुए। आर्यकुमार सभा नगौला ने बड़े उत्साह से भाग लिया।

—आ० स० गोठा (आजमगढ़) का उत्सव २० से २२ मार्च तक समारोहपूर्वक मनाया गया। प्रो० सत्यचरण शास्त्री, स्वा० सत्यानन्दजी, स्वा० विशुद्धानन्द सरस्वती, स्वा० प्रणवानन्दजी, प० शिवनारायण वेदपाठी आदि के व्याख्यान और भजनोपदेशकों के भजन हुए।

—आ० स० ढकिया (बरेली) का उत्सव ९ से ११ मार्च तक समारोहपूर्वक मनाया गया। प० जयप्रकाश, प० मुकुन्दरामजी, म०

आर्यजगत

धर्मराजजी, म० लोकमणिजी आदि के व्याख्यानों तथा भजनों का अच्छा प्रभाव पड़ा।

आर्य उपप्रतिनिधि सभा लखनऊ का नवां मासिक वाद-विवाद २९ मार्च को डा० त्रिलोकनाथजी की अध्यक्षता में आ० स० सदर बाजार लखनऊ में हुआ। विषय था वर्तमान परिस्थिति में भी वर्णव्यवस्था की आवश्यकता है या नहीं? आगामी विचार इस विषय पर होगा—आधुनिक भारत के लिये गणतन्त्र राज्य उपयुक्त है अथवा एकतन्त्र राज्य।

—आ० स० बादशाह नगर लखनऊ ने गत २७ तथा २८ मार्च को दो शिक्षाप्रद तथा मनोरञ्जक नाटकों का सफलतापूर्वक अभिनय किया, २५ मार्च होली सम्मेलन किया। श्री रामसिंहजी की यौगिक कलाओं को जनता ने बहुत पसन्द किया। २६ मार्च को श्रीमती शान्तिदेवी की अध्यक्षता में महिला-सम्मेलन हुआ और शाम को वार्षिकोत्सव मनाया गया। अभिनेताओं को पुरस्कार दिये गये।

—आ० कु० सभा फर्रुखाबाद की ओर से २० मार्च को श्री सच्चिदानन्दजी राय के सभापतित्व में होलिकोत्सव मनाया गया।

आर्यसमाज जसपुर द्वारा एक नव मुस्लिम की शुद्धि हुई। नाम

महर्षि दयानन्द सरस्वती की

विचार धारा

आर्य बन्धुओं को यह जान कर हर्ष होगा कि हमने महर्षि दयानन्दजी के १५ व्याख्यानों को हिन्दी भाषा में "उपदेश मञ्जरी" के नाम से प्रकाशित किया है। अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज इस ग्रंथ की भूमिका में लिखते हैं—'हमें दुःख है कि महर्षि के हम केवल १५ व्याख्यान ही लिपिबद्ध कर सके, यह १५ व्याख्यान गुरुवर के सभी ग्रंथ का भूमिका का काम देंगे सिद्धान्तों के समझने में प्रायः आर्य विद्वानों को भी शङ्काएँ उत्पन्न हो जाती हैं, इस ग्रंथ के पढ़ने से स्वयं उनका समाधान हो जाता है, आर्यों के लिये यह ग्रंथ रत्न पथ-प्रदर्शन का काम देगा।' आपने उपदेशकों, प्रचारकों संन्यासियों के सैकड़ों व्याख्यान सुने होंगे आर्यसमाज के प्रवर्तक जगद्गुरु, सर्वश्रेष्ठ सुधारक, वेदों के उद्धारक, प्रकाण्ड पण्डित, अखण्ड ब्रह्मचारी नवयुग-निर्माता, स्वतन्त्रता के पुजारी, सच्चे देशभक्त, महर्षि दयानन्द सरस्वती के सारगर्भित व्याख्यानों को भी जरा पढ़ कर देखें, कि वे क्या चाहते थे, उनका उद्देश्य क्या था। इस पुस्तक में ईश्वर सिद्धि, धर्म-अधर्म, वेद-शास्त्र, राजनीति, इतिहास, नित्य कर्म, संस्कार, आदि मुख्य विषय कोई नहीं छोड़ा। १५ व्याख्यानों में अन्तिम व्याख्यान में महर्षि ने अपनी जीवन घटनाओं के सम्बन्ध में वर्णन किया था, इसमें कई विचित्र और महत्वपूर्ण घटनाएँ हैं जो पढ़ने से विशेष सम्बन्ध रखती हैं। कई आर्य महानुभावों की प्रेरणा से इस पुस्तक की अत्यावश्यकता अनुभव करते हुए बहुत सुन्दर रूप में प्रकाशित किया है। विवाह तथा अन्य शुभ अवसरों पर एक दूसरे को भेंट करने के योग्य है, जिल्द के ऊपर महर्षि की सुन्दर फोटो दी गई है। सब विशेषताओं के साथ मूल्य प्रचारार्थ केवल २) डाकखर्च ।≈) अन्य पुस्तकों का सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये।

आर्य प्रकाशन मण्डल, लाजपतराय मार्केट, दिल्ली।

ओम्प्रकाश रखा गया। शुद्ध हुए के हाथ से जलेबी का प्रसाद बांटा गया।

—२६ मार्च को नागपुर में मध्यप्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा-भवन का शिलान्यास म० प्र० विधान सभा के अध्यक्ष श्री घनश्यामसिंह गुप्त ने किया। इस अवसर पर गुप्तजी ने कहा कि ऋषि दयानन्द के ऋण से उऋण होने के लिये हम उनके आदर्श को कार्यान्वित करना होगा।

—आ० स० हापुड़ में २३ मार्च को होलिकोत्सव समारोहपूर्वक मनाया गया। प० रामचन्द्र देहलवी का ओजस्वी भाषण हुआ। प० द्वारकानाथ शर्मा के भजन हुए। बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा।

—आ० स० पड़री लालपुर (कानपुर) का तृतीय वार्षिकोत्सव २२ से २४ मार्च तक मनाया गया। स्वा० शिवानन्दजी, श्री शिवस्वामी आदि के व्याख्यान और कुँवर महिपालसिंहजी के भजन हुए।

—गत १० मार्च को बेरावली (मैनपुरी) में श्री ललिताप्रसादजी के पुत्र विनयकुमार का चूड़ाकर्म संस्कार प० रामचन्द्र शर्मा ने कराया। होली के अवसर पर ग्राम में यज्ञ हुए। आर्यसमाज की स्थापना हुई।

—अलीगढ़ जिले में प्रचारार्थ एक आर्यश्रमण सभा बनी हुई है। नगोला निवासी ठा० सुवर्णसिंहजी मुख्य कार्यकर्ता हैं। यह सभा भिन्न भिन्न ग्रामों में भिन्न-भिन्न तिथियों में प्रचार करती है। जवां ग्राम में प्रत्येक पूर्णमासी को हवन होता है। कुछ कट्टर सनातनी इस सभा के प्रचार को सहन न करके तरह-तरह के विघ्न डालते रहते हैं। उन्हें उक्त सभा की ओर से शास्त्रार्थ के लिये खुला चेलेंज छपा कर दिया गया है।

उत्सव-सूचना

—आर्यसमाज सिविललाइन्स आर्यनगर सहारनपुर का २१ वाँ वार्षिकोत्सव २८ अप्रैल से १ मई तक।

दयानन्द विश्वविद्यालय देहली का १६ वाँ उत्सव पूर्व प्रकाशित तारीखों पर न होकर १३, १४ तथा १५ अप्रैल को होगा।

—आ० स० दयानन्द नगर (आछोग) फैजाबाद का रजत जयन्ती १९, २० २१ तथा २२ अप्रैल को मनायी जायगी।

—आर्यभ्रमण सभा जिला अलीगढ़ द्वारा सोमना (अलीगढ़) म विश्व शान्ति-यज्ञ का आयोजन किया जा रहा है। अनेक सम्मेलन भी होंगे। विद्वान् आर्य याज्ञिक पधारेंगे।

—आ० स० बरौठा-हरदुआगज का वार्षिक उत्सव १५, १६ तथा १७ मई को मनाया जायगा।

—आ० स० मिनगा का आठवाँ वार्षिकोत्सव ·७ से ३० अप्रैल तक मनाया जायगा।

निर्वाचन

—आर्यउपप्रतिनिधि सभा हरदोई प्रधान-श्रीमती प्रियम्वदादेवी और मन्त्री-श्री रामस्वरूप शुक्ल।

—आ० स० घिरोर—प्रधान-श्री वंशीधर आर्य और मन्त्री-श्री रामकुमार आर्य।

—आ० स० कैरावली (मैनपुरी) प्रधान-श्री बल्देवसिंहजी और मन्त्री श्री रामस्वरूप आर्य।

—आ० स० कनखल—प्रधान-पं० धर्मदत्तजी वैद्य और मन्त्री-पं० छन्नामलजी।

—आ० स० चतरा (हजारीबाग) प्रधान-श्री महावीरराम मास्टर और मन्त्री-श्री हरिहरप्रसाद आर्य।

—आ० स० ढकिया प्रधान-श्री नारायणदास आर्य और मन्त्री-श्री युधिष्ठिरदेवजी आर्य।

—आ० स० मई (मथुरा) प्रधान बोहर खचेरमलजी और मन्त्री-बोहर हरिप्रसादजी।

—आ० स० बासलपुर प्रधान-श्री गोपीरामजी वर्मा और मन्त्री-श्री हरिचन्द्रजी।

सार सूचनाएं

—वीर प्रिंटिंग प्रेस फिरोजाबाद से 'लोकमित्र' नामक साप्ताहिक शीघ्र प्रकाशित होगा।

व्यवस्थापक

—मुझे प्रचारार्थ बुलाने वाले सज्जन या समाज निम्नलिखित पते पर पत्र-व्यवहार करें।

धर्मानन्द- ४५८, कटरा, प्रयाग।

—दिव्यजीवन संघ के संस्थापक श्री स्वामी शिवानन्दजी का जीवन चरित्र और अभिनन्दन श्री अखिल विनयजी लिख रहे हैं। जिनके पास इस सम्बन्ध में कुछ सामग्री हो वे नीचे लिखे पते पर उसे भेजने की कृपा करें।

संयोजक अभिनन्दन समिति
सारस्वत सदन पिलानी

चिरगाँव में—

शुद्धि-समारोह

९ अप्रैल ५१ को सायंकाल ४ बजे चिरगाँव (झाँसी) में हिन्दी के प्रतिष्ठित कवि और संगीताचार्य स्व० मुंशी अजमेरी जी के दो पुत्रों (श्री गुलाबराय और जङ्गबहादुर) तथा पौत्रों ने (श्री विद्यासागर, ज्ञानसागर तथा गुणसागर) जो जन्म से मुसलमान थे उन्होंने अपने समस्त परिवार के साथ जिसमें कि १८ व्यक्ति थे हार्दिक श्रद्धा तथा विश्वास के साथ हिन्दू धर्म में प्रवेश किया, संस्कार को कराने में सनातन धर्मी पण्डितों ने भी उत्साह पूर्वक सहयोग दिया, संस्कारोपरान्त श्री स्वामी दिव्यानन्दजी सरस्वती मंत्री आर्योप्रतिनिधि सभा झाँसी ने बड़ा ही ओजस्वी एवं भावपूर्ण व्याख्यान दिया, जिसका प्रभाव जनता पर बहुत ही उत्तम पड़ा। तदनन्तर प्रसाद बाँटा गया। संस्कार में नगर के सभी प्रतिष्ठित व्यक्ति उत्साह पूर्वक सम्मिलित हुए।

शारदाजी को पत्नी-वियोग

दुःख से लिखना पड़ता है कि परोपकारिणी सभा के प्रधान मंत्री श्री हरविलासजी शारदा की धर्म्मशीला पत्नीजी का गत २१ मार्च को अजमेर में देहान्त हो गया। आप बड़ी विदुषी महिला थीं। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति और शारदा-परिवार को धैर्य प्रदान करे।

आर्यकुमार परिषद्

उत्तर प्रदेशीय आर्यकुमार परिषद् का मुख्य कार्यालय बिजनौर में है। परिषद् के मन्त्री श्री रघुवरदयालुजी समय समय पर अपनी परिषद् की प्रगति बोधक एक मुद्रित विज्ञप्ति प्रकाशित करते रहते हैं। इसके द्वारा प्रान्त की कुमारसभा सम्बन्धी सब गति-विधियों पर प्रकाश डाला जाता है। ३१ मार्च १९५१ की विज्ञप्ति में बिजनौर आजमगढ़, गाजियाबाद, बाराबंकी गुलावठ, आगरा, काँठ, जलाली, नजीबाबाद, इस्माइलपुर में कुमारसभाओं की विविध अवसरों की प्रगतियों का संक्षिप्त वर्णन है। आगामी सम्मेलन का निर्णय मई में होगा।

५० निरीक्षक चाहियें

एक विज्ञप्ति द्वारा यह प्रकाशित किया गया था कि उत्तर प्रदेश के एक सहस्र आर्य-समाजों के वार्षिक निरीक्षण के लिये न्यूनातिन्यून ५० ऐसे व्यक्ति चाहियें जो किसी न किसी आर्यसमाज के सभासद हों तथा पदाधिकारी रहकर आर्यसमाजों की कार्यशैली का अनुभव भी प्राप्त कर चुके हों प्रत्येक व्यक्ति को वर्ष में २० आर्यसमाजों का निरीक्षण करना होगा। इस विषय में अभी तक केवल दो सज्जनो ने पत्रों द्वारा अपनी स्वीकृति की भेजी है। उन दोनो पत्रों को सभा के प्रधान मन्त्री श्री पीतम लाल जी की सेवा में अलीगढ़ उचित आज्ञा के लिये भेज दिया गया है। अन्य आर्य बन्धु जो आर्यसमाज की अवैतनिक सेवा इस प्रकार से करना चाहें शीघ्र ही लिखने का कष्ट करें।

आ० स० मुरादाबाद

आर्य समाज गंज मुरादाबाद व उसके अन्तर्गत दो संस्थाओं अर्थात आर्य कन्या विद्यालय तथा आर्य अनाथालय का निरीक्षण २१ व २२ फर्वरी १९५१ को किया। आर्य कन्या विद्यालय में भाषण भी दिया। यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि आर्यसमाज गंज मुरादाबाद एक प्रगतिशील संस्था है। श्री मन्त्री जी नित्य ही एक-दो बार समाज में आते रहते हैं। उन्हीं की देखरेख में तथा उन्ही के उद्योग से समाज के मुख्य द्वार के दोनों ओर दुकानों का तथा उनके ऊपर कमरों का निर्माण होरहा है। यह निर्माण पूर्ण होजाने पर आ० स० को केवल किराये से निश्चित आय चार या पाँच सौ रुपये मासिक हो जावेगी। निकट की और भूमि भी प्राप्त करने का उद्योग हो रहा है। यदि इस उद्योग में सफलता हो गई जैसी कि पूर्ण आशा है तो उस से भी आ० स० को न्यूनातिन्यून ५००) मासिक की आय हो जावेगी। श्री मन्त्रीजी का विचार इस सारी आय को वेद-प्रचार ही में व्यय करने का है। ईश्वर उनको तथा उनके सहकारियों को सफलता प्रदान करे।

देवीप्रसाद जौहरी

आर्यो, खादी-सप्ताह का अनुकरण करो।

हमने देखा है कि कांग्रेस इस बात पर बल देती है कि खादी सप्ताह में हर एक देशभक्त अधिक से अधिक खादी की बिक्री करे। स्थापना दिवस के अवसर पर हम हर आर्यसमाजी भाई-बहन को होड़ लगाकर आर्य साहित्य की बिक्री करनी चाहिये। समाजों को चाहिये कि वह पहले से उच्च साहित्य की पुस्तकें मँगा कर रक्खें और अपने सदस्यों को प्रेरणा करें कि वह उसको जनता के हाथों बेचें। जितना साहित्य हम दूसरों के हाथों में देंगे उतना ही हमारा प्रचार होगा। साहित्य अपने स्थान की आवश्यकतानुसार होना चाहिये। जो सज्जन विशेष परिश्रम करें उनकी उत्सव के अवसर पर प्रशंसा करके उनका उत्साह बढ़ाया जा सकता है।

मंत्री, सार्वदेशिक सभा

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ॐ
आर्यमित्र
ARYA-MITRA, AGRA
उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक—आयमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ
१६ अप्रैल १९५१

उद्बोधन !

श्री हरिशङ्कर शर्मा

वज्र गिरे, तारागण टूटें, धरा-धाम फट जाने दो
बरसे आग, तलातल डूबें, सिन्धु अटे अट जाने दो
दारुण कोप सहो कष्टों का, कोष घटे घट जाने दो
भ्रष्टाचार असुर के आगे किन्तु युद्ध ठट जाने दो

वही वीर जीवित रहते हैं, जो कटु कष्ट उठाते हैं
बलि प्रदान करने के कारण वेदी पर चढ़ जाते हैं
प्राण त्यागते हसते हसते मोह न मन में लाते हैं
उपजाने को अगणित सैनिक बीज-रूप गल जाते हैं

मर कर अमर करें जीवन को, ऐसे वीर बढ़ो, आओ
धर्म-क्षेत्र में कर्मठता की निभय भेट चढ़ो आओ
अटल प्रतिज्ञाधारी योधा, बन चट्टान अड़ो आओ
कर्मयोग की प्रबल वह्नि में आहुति-रूप पड़ो आओ

सम्प्रदाय का पाठ पढ़ाकर जिसने जन-संहार किया
पापाचार प्रचार पूर्वक निधड़क पोच प्रहार किया
उस शिक्षा के कुटिल किले को वैदिक तोपों से ढाओ
एक बार इस कलियुग में भी फिर से सतयुग दिखलाओ

वैदिक धर्म विश्व व्यापी है, क्यों सकीर्ण बनाते हो
कल्याणी वाणी वेदों की सब को क्यों न सुनाते हो
आर्यसमाज प्रेम का प्रेरक, वैर वृक्ष का नाशक है
वैदिक धर्म-दिवाकर का वह उज्ज्वल ज्ञान-प्रकाशक है

विश्व-प्रेम से भरो हृदय को, सदाचार की ओर बढ़ो
वैदिकता के उच्च शिखर पर सुदृढ़ धारणा धार चढ़ो
जो चरित्र की कड़ी कसौटी पर पहले कस जाता है
वही वीरवर भ्रान्त जनों को शुभ सन्मार्ग सुझाता है

ब्राह्मण ज्ञानी उठें देश का मोह-तिमिर 'अज्ञान' हरें
क्षत्रिय 'अत्याचार' मिटाकर सत्याचार प्रचार करें
वैश्य 'अभाव' मिटावें सबका, जीवन-वस्तु प्रदान करें
शूद्र लोक की सच्ची सेवा करने में अभिमान करें

धर्म-मार्ग में हस-हस संकट सहना तप कहलाता है
तजना पड़े धर्म-हित जो कुछ वही त्याग पद पाता है
त्याग-तपस्या रुष्ट हो गये आओ इन्हे मनाए सब
त्यागी और तपस्वी बन कर एक बार दिखलाए सब

पदलोलुपता ने समाज का बढ़ता गौरव नष्ट किया
'कानाफूंसी' की कटुता ने भद्रभाव भी भ्रष्ट किया
दलबन्दी के दावानल से प्रेम-वाटिका झुलस गयी
सुदृढ़ संगठन शिथिल होगया, कर्मवीरता नही रही

उठो, उठो हे आर्यवीरगण कमर बाँध कर काम करो
सच्चे आर्य कहाकर जग में फिर पहला-सा नाम करो
भ्रष्टाचार नष्ट कर डालो, शिष्टाचार प्रचार करो
दुख-दुर्भाव-भरे हृदयों में, शुचि, सुखमय सद्भाव भरो

शुभ संकल्प युक्त सब मन हो, तन परिपुष्ट निरोगी हो
धन का स्रोत धर्म-ध्रुवता हो जन न विलासी-भोगी हो
अनाचार का भूत भयंकर कभी न विश्व-विघातक हो
दानवता का दम्भ न मौलिक मानवता का पातक हो

स्वय जगो हे आर्य वीरवर, जीवन-ज्योति जगाओ तुम
जो सो रहे मोह-निद्रा में उनको पकड़ उठाओ तुम
सुधरा जो न स्वय औरों का क्या सुधार कर सकता है
शुद्ध हृदय ही शुद्ध भावना जन-मन में भर सकता है

जगतीतल पर रहे न कोई सुने न जो वैदिक वाणी
भद्रभाव भरपूर यही है, सुखदा-सरला कल्याणी
वेदों की गम्भीर गूंज से दशों दिशाएँ भर जाएँ
ज्ञान यान पर बैठ भक्त जन भव-सागर से तर जाएँ

उठे होम की ऊंची ज्वाला सबको शुद्ध बनाने को
अत्याचारी आततायियों को सन्मार्ग सुझाने को
तन-मन-धन सर्वस्व समर्पण करके जग को दिखला दो
धवल धर्म-धारा में मज्जन करना सबको सिखला दो

ऋषि शोणित से सिंचित होकर जो फुलवाड़ी फूल रही
वैदिक वायु विकम्पित दरसो झुक झूमर-सी झूल रही
जिसकी सुखद सुगन्ध विश्व को बना रही है मस्ताना
मिटने कभी न देना उसको चाहे तुम खुद मिट जाना

ऋषिवर दयानन्द ने हमको पुण्य मार्ग दिखलाया है
फिर महात्मा गांधी जी ने भी सब कुछ समझाया है
इतने पर भी चेत नहीं तो हमें कौन चेताएगा
सोता जाग सकेगा, पर जगते को कौन जगाएगा

वार्षिक मूल्य ८) | एक प्रति | सम्पादक हरिशङ्कर शर्मा | वर्ष—५०
विदेश में १०) | तीन आने | | अङ्क—१४

राजगुरूजी का

कृतज्ञता-प्रकाशन

गत १६ मार्च को प्रातः काल ५ बजे भुसावर (भरतपुर) में एक पागल कुत्ते ने मेरे बाएं पैर की पिंडली में काट लिया। यद्यपि मैं इसके उपचार के लिये उद्यत नहीं था, तथापि लोगों के अत्यधिक आग्रहवश मुझे उपचारानुकूल अपना मत बनाना ही पड़ा। २१ मार्च को प्रातः काल मैं बम्बई पहुंचा और उसी दिन हैफकिन इन्स्टीट्यूट' अस्पताल में डाक्टर गोखले ने पेट पर इञ्जेक्शन लगा दिया तथा काटे हुए स्थान पर विशेष औषधि-युक्त पट्टी बांध दी। पूरा कोर्स १४ इञ्जेक्शनों का था। प्रतिदिन एक इञ्जेक्शन लगा। २१ मार्च से २४ मार्च तक इञ्जेक्शन लगे थे कि २४ मार्च की रात्रि को मैं लातूर चला गया परन्तु वहाँ का इञ्जेक्शन कुछ गड़बड़ा गया और उसने मुझे अत्यधिक कष्ट पहुँचाया। पेट पर सूजन होगयी वेदना बढ़ गयी और कुछ ज्वर भी रहने लगा। इसीलिये २७ मार्च को इञ्जेक्शन के लिये मैं फिर बम्बई आया और ३ अप्रैल को इञ्जेक्शन समाप्त होगये। अब ज्वर नहीं है, थोड़ी-सी सूजन शेष है, परन्तु कोई विशेष चिन्ता की बात नहीं रही। भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रान्तों से मेरे इस आकस्मिक कष्ट में पत्रों और तारों का तांता लग गया है जिनमें मेरी अवस्था जाननी चाही है। मैं सबका अत्यन्त आभारी हूं। सबको पृथक् पृथक् उत्तर देना इस अशक्तावस्था में कठिन है, अतएव इन पंक्तियों द्वारा ही सबकी सेवा में हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। चौदह अप्रैल को मुझे डाक्टर महाशय ने बम्बई से जाने की अनुमति देदी है। अतएव मैं भूपाल, झाँसी और कानपुर ठहरता हुआ १६ अप्रैल को लखनऊ पहुंचूंगा। परम प्रभु परमात्मा के असीम अनुग्रह और शुभचिन्तकों की शुभ कामना से आशा है कि मैं शीघ्र ही कष्ट मुक्त हो जाऊंगा।

धुरेन्द्र शास्त्री

समय देने की आवश्यकता

(श्री मदन मोहन सेठ, का० प्रधान, सभा)

५ अप्रैल के 'आर्यमित्र' में सभा का निर्वाचन शीर्षक जो अग्रलेख लिखा गया है वह बड़ा उपयोगी और समयोचित है। इस समय सभा की आर्थिक दशा कुछ शोचनीय-सी हो रही है। आर्थिक समस्या देश-भर में कठिन हो गई है। मध्यम श्रेणी के आदमियों के पास धन की कमी है, इसका प्रभाव यह पड़ा है कि दान की आय बहुत कम हो गई है। व्यय अधिक हो गया है। जो कार्य पैसे में होता था वह अब ४ पैसे में भी होना कठिन है। यह समस्या सभा के सम्मुख है। आवश्यकता यह है कि इस समय कुछ ऐसे सज्जन जो अपना अधिक समय दे सकें और सभा के निमित्त धन एकत्र कर सकें, सभा के अधिकारी बनाये जाय।

इस सम्बन्ध में आर्यसमाज का भी कुछ कर्त्तव्य है। अब वह समय नहीं रहा है कि लोग अपनी जीविका भी पूरी कर लें और पर्याप्त समय सामाजिक कार्य के लिये भी दे सकें। आर्यसमाज में कुछ ऐसी परिपाटी चल गई है कि यदि कोई कार्यकर्त्ता अपने निर्वाहार्थ लेकर काम करना चाहे तो उसे अच्छी दृष्टि से नहीं देखते, यह बड़ी भूल है। आरम्भ में ऐसी बात आर्यसमाज में न थी। धर्मवीर प० लेखरामजी का पद आर्यसमाज के प्रवर्त्तक के पश्चात् ही आता है। आर्यसमाज को यह परिपाटी बदलने की नई आवश्यकता है। हम देखते हैं कि ईसाई मिशनरी किस प्रेम और तत्परता से कार्य करते हैं, उसका कारण यही है कि ईसाई संसार उनको निर्वाह व रहन सहन की चिन्ताओं से निश्चिन्त रखता है। क्या आर्यसमाज की भी प्रवृत्ति ऐसी होगी। मैं समझता हूँ, यदि कुछ व्यक्ति भी सच्चे भाव से सभा का कार्य करने के लिए उद्यत हो जाय तो सभा की कठिनाई बहुत कुछ दूर हो सकती है।

मेरा 'वेदभाष्य'

'आर्यमित्र' आदि कई पत्रों में परोपकारिणी सभा अजमेर की ओर से छपवाया गया है कि "एक प्रस्ताव के द्वारा श्रीमान् प० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु का यजुर्वेद भाष्य अप्रमाणिक ठहराया गया।" इस विषय में परोपकारिणी सभा ने पूरा प्रस्ताव इस प्रकार स्वीकृत किया है—

"(क) यह परोपकारिणी सभा की ओर से प्रकट किया गया है, कि सभा ने प० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु को श्री स्वामी दयानन्दजी कृत यजुर्वेद भाष्य के सम्पादन करने का कोई अधिकार नहीं दिया, और न इस कार्य के विषय में किसी प्रकार के निर्देश ही दिये, परन्तु श्री जिज्ञासुजी ने अपने इच्छानुसार जो विवरण के साथ यजुर्वेद के १० अध्यायों का भाष्य श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती के नाम से रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित कराया है, और जिसके प्रकाशित होने से आर्यसामाजिक जगत् में अनेक प्रकार के सन्देह वा भ्रम उत्पन्न हुए प्रतीत होते हैं। अतः इस समिति का यह निश्चित मत है कि जिज्ञासुजी के द्वारा प्रकाशित विवरण सहित यजुर्वेद भाष्य व्यक्तिगत उत्तरदायित्वपूर्ण है, अतएव अप्रमाणिक घोषित किया जावे।"

सभा का उपर्युक्त निश्चय पढ़ने से पाठकों को विदित होगा कि मेरा कोई यजुर्वेद भाष्य नहीं है। मैंने तो मन्त्री परोपकारिणी सभा के विशेष अनुरोध पर अपने 'विवरण' सहित ऋषि दयानन्द कृत यजुर्वेद भाष्य के १० अध्यायों को रामलाल कपूर ट्रस्ट की ओर से वैदिक यन्त्रालय अजमेर में छपवाया है। मेरे दिये 'विवरण' को सभा भले ही प्रामाणिक न माने, परन्तु ऋषि दयानन्द का भाष्य कैसे अप्रमाणिक ठहराया जा सकता है। यद्यपि मैंने अपना 'विवरण' सुदृढ़ आधार पर दिया है। वेदभाष्य के ये दस अध्याय ऋषि दयानन्द के समय के पुराने हस्त लेखों से मिला कर ही छपवाये हैं। पुराने हस्तलेखों और मुद्रित भाष्य को मिलाने पर जो अन्तर मुझे मिला है, उसे अपने 'विवरण' में प्रकट कर दिया है। यानी मुद्रित भाष्य को ऋषि दयानन्द के समय के असल हस्तलेखों से मिला दिया है। मैं तो समझता हूँ, यह कार्य मैंने उचित ही किया है। इससे मुद्रित भाष्य की कितनी ही त्रुटियाँ दूर हो गयी हैं। विद्वान् लोग मेरे इस परिश्रम की सराहना ही करेंगे। परन्तु परोपकारिणी सभा ने उपर्युक्त निश्चय किया है। इसे दुर्भाग्य ही समझना चाहिये। सभा के उक्त प्रस्ताव के पक्ष में ४ और विरोध में तीन मत थे। मैं भी सदस्य था, परन्तु मैंने अपना मत नहीं दिया।

ब्रह्मदत्त जिज्ञासु

श्री स्वामी सर्वदानन्द-निर्वाण-दिवस

प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी १० अप्रैल को श्री स्वामी सर्वदानन्द साधुआश्रम पुल काली नदी पर 'श्री स्वामी सर्वदानन्दजी' का निर्वाण-दिवस मनाया गया। प्रातः ८ बजे से बृहद्यज्ञ हुआ, पश्चात् श्रीस्वामी सत्यानन्दजी संयमी के सभापतित्व में श्री सुवर्णसिंहजी सिद्धान्त-मनीषी, श्री स्वामी सत्यव्रतजी महाराज, डा० नेत्रपालसिंहजी प्रधान आर्यसमाज साधुआश्रम तथा श्री धर्मपालजी शास्त्री ने स्वामीजी के जीवन पर प्रकाश डाला। विद्यार्थियों तथा समागत सज्जनों में मिष्टान्न वितरित किया गया।

आवश्यक सूचना

आर्यमित्र के ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वे आर्यमित्र-कार्यालय से प्रत्येक प्रकार का पत्र-व्यवहार करते समय पत्र में अपना ग्राहक नम्बर जो अखबार के पते की चिट पर शुरू में ही लिखा या छपा रहता है, अवश्य लिखा करें। बिना नं० के उनके पत्र के सम्बन्ध में शीघ्र कार्यवाही करना अति कठिन होता है।

जिन ग्राहकों का मूल्य इस मास में समाप्त हो रहा है, उन्हें दो सप्ताह पूर्व सूचना दी जा चुकी है। वे कृपया अपना वार्षिक मूल्य मनीआर्डर द्वारा भेजदें, अथवा वी० पी० भेजने के लिए हमें आज्ञा भेजें।

—व्यवस्थापक

विष्णोः कर्माणि पश्यत

आर्यमित्र

आगरा, चैत्र शुक्ला १३ संवत् २००८ वि०, गुरुवार ता० १९ अप्रैल १९५१
दयानन्दाब्द १२६, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५०

यथा द्यौश्च पृथिवी च न बिभीतो न रिष्यतः। एवा मे प्राण मा बिभेः।

पृथिवी द्युलोक जिस भाँति न भय खाते हैं
अतएव न वे हिंसित भी हो पाते हैं
उस भाँति प्राण मेरे भयभीत न होना
सद्धर्म-कर्म कर बीज पुण्य के बोना

— —

सभा का वार्षिक वृत्तान्त

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का ६४ वाँ वार्षिक वृत्तान्त इस समय हमारे सामने है। यह वृत्तान्त १ जनवरी १९५० से ३१ दिसम्बर १९५० को समाप्त होने वाले १२ महीनों से सम्बन्ध रखता है। वृत्तान्त के प्रारम्भ में उन आर्य कार्य-कर्ताओं की शोक-सूचनाए हैं जिनका देहान्त उक्त अवधि में, या उसके कुछ आगे पीछे हुआ। इन परलोकगत आर्य सज्जनों में सर्वश्री ला० नरायन दत्तजी, महात्मा श्रीराम जी, बा० सीताराम एडवोकेट, चौ० मुख्तारसिंह एम० पी०, बा० रामचन्द्र एस० डी० ओ०, प्रिंसिपल होतालाल व्रत, आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। सभा का पिछला बृहदधिवेशन ८ तथा ९ अप्रैल १९५० को अलीगढ़ आर्यसमाज-मन्दिर में हुआ था। उक्त अधिवेशन में सभास्थ ८८६ आर्यसमाजों में से केवल २४१ आर्यसमाजों ने ३७५ प्रतिनिधि चुने और इनमें से भी केवल १९१ प्रतिनिधि महाशय अधिवेशन में सम्मिलित हुए! सभा के अन्तर्गत २१ आर्य उप प्रतिनिधि सभाएं हैं। इस वर्ष ३६ आर्यसमाज सभा में और प्रविष्ट हुए। इस प्रकार उप-प्रतिनिधि सभाओं और आर्यसमाजों को मिलाकर सभा में प्रविष्ट सब समाजों की संख्या ९२० हुई। अलीगढ़ अधिवेशन में ८८६ आर्यसमाजों से १९१ प्रतिनिधि सम्मिलित होने का अर्थ यह हुआ कि लगभग ५ समाजों के पीछे एक प्रतिनिधि आया। समाजों की इससे अधिक शिथिलता और संघटन विषयक उदासीनता और क्या हो सकती है!

अलीगढ़ जिले में ७२ आर्यसमाज, मेरठ में ५२, सहारनपुर में ४६, मुजफ्फरनगर में ३४, बरेली, बिजनौर, बदायूँ और फर्रुखाबाद में ३०-३०, मुरादाबाद में ३३, कानपुर में २९, आगरा में २६ और मैनपुरी तथा एटा में २४-२५ हैं। शेष जिलों में इनसे बहुत कम हैं। कितने ही पूर्वीय जिलों में तो दो-दो, चार-चार ही समाज हैं। इससे प्रचार विषयक भयंकर शिथिलता का बोध हुए बिना नहीं रह सकता। अगर आर्य जनता उचित रूप में उत्साह पूर्वक यथेष्ट सहयोग देती, तो सभा के ६४ वर्षीय सुदीर्घ जीवन में इस प्रान्त में कई सहस्र आर्यसमाज होने चाहिए थे। सभा की अन्तरंग सभा के पाँच अधिवेशन हुए। कई सदस्य तो दो अधिवेशनों में सम्मिलित हुए और कई केवल एक में ही!

आर्यसमाजों के दशांश द्वारा गत वर्ष सभा को ६५३५) प्राप्त हुए थे, परन्तु इस वर्ष ६५८५) प्राप्त हुए। यदि ९२० समाजों में से प्रत्येक समाज के दशांश का औसत २५) भी मान लिया जाय तब भी २३ हजार रुपये से अधिक धन प्रति-वर्ष सभा के कोश में आजाना चाहिए। जो समाज दशांश और प्रतिनिधि भी नहीं भेजते, उनका तो अ भत्व सन्दिग्ध अथवा अन्यथासिद्ध ही समझना चाहिए। कोटि-धन तथा सूद कोटि मध्ये २४७०) आय हुई, जो अत्यन्त स्वल्प है। रुपया व चार आना फंड में गत वर्ष ९ मास में २४८०) प्राप्त हुए थे, और इस वर्ष १२ मास में ५७३०) प्राप्त हुए। इस वर्ष कार्यालय पर ६४७७) व्यय हुआ। सभा-भवन में एक बृहत् यज्ञशाला बनाई जा रही है, जिसपर २००००) के लगभग व्यय होगा। भवन में "आर्य प्रतिनिधि सभा" के नाम से डाकघर भी खुल गया है। दुर्जीवी जातियों के लिए आर्यनगर सेटिलमेण्ट सन्तोषजनक कार्य कर रहा है। सभा के उद्योग से गत जनगणना में सरकार ने आर्यसमाजियों के लिए 'आर्यसमाजी', 'वैदिक' या 'आर्यवैदिक' लिखाना स्वीकार किया। इस सम्बन्ध में सभा की ओर से आर्यसमाजों के लिए एक विज्ञप्ति भी भेजी गयी। आर्य प्रतिनिधि सभा का इतिहास प्रकाशित करने के लिए भी उद्योग हो रहा है। सभा की ओर से विविध अवसरों तथा विषयों पर बारह भ्रमण-पत्रिकाएं समाजों को भेजी गईं। सभा की ओर से विविध आर्य कार्यकर्ताओं द्वारा आर्यसमाजों का निरीक्षण भी कराया गया। इस कार्य में अच्छी सफलता हुई। श्री देवीप्रसाद जौहरी ने इस दिशा में सम्भवतः सबसे अधिक प्रयत्न किया। मथुरा में स्थित स्वामी विरजानन्द दण्डी की कुटिया प्राप्त करने के लिए उद्योग जारी है। हिन्दू कोड बिल वैदिक धर्म और आर्य परम्पराओं के विरुद्ध घोषित किया गया। सभा की ओर से हरिद्वार-कुम्भ-प्रचार में भी सहयोग दिया गया। रिकार्डों और मोटर लारी द्वारा वैदिक धर्म-प्रचार की योजनाओं पर विचार हुए। और भी कई योजनाएं सभा के सामने आईं। १ दिसम्बर १९५० ई० से 'आर्यमित्र' और आर्यभास्कर प्रेस "आर्यमित्र प्रकाशन लिमिटेड" को सौंप दिये गए। आर्यभास्कर प्रेस का मूल्य २२०००) और आर्यमित्र का [illegible] यांति-मूल्य १००००) निश्चित हुआ था, जो कम्पनी ने सभा के १३०० हिस्सों का मूल्य मान कर, उसके नाम से अपने हिसाब में जमा कर लिया।

सभा की शिक्षा केन्द्र-प्रचारयोजना के अनुसार व्याख्यान देने को जिन छह-सात विद्वानों ने वचन दिये थे, उनमें से केवल श्री स्वामी सत्यदेवजी ही कुछ कार्य कर सके। ऐसी आवश्यक और महत्वपूर्ण योजना के सम्बन्ध में शिथिलता या उदासीनता उचित नहीं कही जा सकती। सभा-भवन में सभा की ओर से डाक्टर राजेन्द्रकुमार वर्मा ने वर्षान्तगत १५११ रोगियों को ओषधियां बाँटीं। सभा की ओर से आसाम-भूकम्प पीड़ितों की सहायता के लिये २००) भेजे गये।

सभा ने आर्यसमाज-अधिकार-रक्षा और आर्यसमाजों के वैमनस्य दूर करने के लिए भी उचित उद्योग किया। खेद है कि आर्यसमाजों का यह आन्तरिक वैमनस्य शान्त होने के बदले कुछ बढ़ ही रहा है। पदलोलुपता और अधिकार लिप्सा ही प्रायः इस कलह की जननी है। न जाने हमारी यह मलिन मनोवृत्ति कब दूर होगी!

इस वर्ष १४ उपदेशकों और १८ प्रचारकों ने वेद-प्रचार का काम किया। गतवर्ष इनकी संख्या क्रमशः १९ और २२ थी। इतने बड़े प्रान्त के लिए इतने कम उपदेशक और प्रचारक अत्यन्त न्यून हैं। इनकी अल्प संख्या आर्यों की वेदप्रचार विषयक उदासीनता की स्पष्ट द्योतक है। केवल दो सन्यासियों और दो उपदेशकों ने अपने अवैतनिक कार्य की सूचना सभा में भेजी। शुद्धि और दलितोद्धार-कार्य भी हुआ। लगभग १५० शुद्धियां हुईं और कुछ लोग विधर्मी होने से भी बचाये गये।

वृन्दावन-गुरुकुल की आर्थिक दशा अच्छी नहीं रहती, इस वर्ष उसमें ब्रह्मचारियों की संख्या १२८ रही। बिहार प्रान्त निवासी सेठ रामदासजी आर्य और उनकी धर्मशीला पत्नी श्री राजकुँवरिदेवी जी ने २००००) देकर गुरुकुल में "श्री रामदास-दर्शन पीठ" की स्थापना की। उत्तर प्रदेशीय शिक्षाबोर्ड ने गुरुकुल की शिरोमणि उपाधि को हाई स्कूल तथा इण्टरमीजिएट तक संस्कृत तथा हिन्दी पढ़ाने वाले अध्यापकों की योग्यता-सूची में सम्मिलित किया। आगरा विश्वविद्यालय ने शिरोमणि उपाधि तो बी० ए० के समकक्ष पहले ही मान ली थी। गुरुकुल की

आयुर्वेद-शिरोमणि उपाधि भी सरकारी स्वास्थ्य-विभाग द्वारा नियुक्ति आदि के लिए स्वीकृत हो चुकी है।

सभा के अधीन छोटे मोटे कई ट्रस्ट भी है, जिनकी वह उचित व्यवस्था करती है। सभास्थ घासीराम प्रकाशन-विभाग की ओर से श्री प० अलगूराय शास्त्री एम० एल० ए० रचित 'ऋग्वेद-रहस्य' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। इसके लिये सरकार ने ११००) की सहायता प्रदान की। दूसरी पुस्तक 'सन्ध्योपासन तथा अग्निहोत्र विधि प्रकाशित हुई। महिला-प्रचार-मण्डल-विभाग की ओर से १० देवियों ने प्रचार-कार्य किया।

उपर्युक्त वार्षिक वृत्तान्त पढने से एक साधारण पाठक के हृदय पर यही प्रभाव पड़ेगा कि वर्तमान आर्थिक परिस्थितिमें प्रादेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा मे जो कुछ बन पड़ा, वह उसने किया! परन्तु उसे इतने बड़े प्रदेश में जो कुछ करना चाहिये था और जिसकी उससे आशा की जाती थी, वह धन की कमी और आर्यजनता के उत्साह तथा सहयोग के अभाववश नहीं हो पाया। इसका उत्तरदायित्व चुने हुए कुछ लोगों पर ही नहीं, बल्कि सारी आर्यजनता यानी नौ सौ बीस आर्यसमाजों पर है। यदि आर्यसमाजो का शिथिल संघटन सुदृढ़ न बनाया गया और उनके विघटित शिथिल शरीरों में नव जीवन जागृति का संचार न हुआ तो सभा के वार्षिक वृत्तान्त के आँकड़ों की चमक उत्तरोत्तर धीमी या मन्द पड़ती जायगी। यह बात हम बराबर कहते आये हैं कि सब समाजो को सजीव, सतर्क और सक्रिय होने की आवश्यकता है। ऐसा होने से सभा की गतिविधि अवश्य ही अधिक आशापूर्ण और उत्साहवर्द्धक बन सकती है। किसी कार्य की सफलता के लिए तन, मन और धन तीनों की आवश्यकता होती है, परन्तु आज आर्यों में इन तीनों की कमी है। फिर काम कैसे चले और प्रचार किस प्रकार हो?, यदि सचमुच तन, मन, धन लगा कर कार्य किया जाय तो आर्यसमाज वैसा ही कर्म-केसरी और शक्ति-पुंज बन सकता है, जैसा वह कभी था, और जिसके स्वागत के लिये सारा देश आज भी उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहा है।

आशांकुर विद्यार्थी

हमारे आशाङ्कुर विद्यार्थियों की परीक्षाएँ प्रायः समाप्त हो गयीं, अब वे ढाई-तीन महीने पढ़ाई से छुट्टी पावेंगे। परन्तु हम समझते है, विद्यार्थियों पर देश का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है। पराधीन देश में विद्यार्थियों की जितनी जिम्मेदारी थी, उससे कहीं बढकर अब आज़ाद मुल्क में है। नवयुवकों के लिये छुट्टी या अवकाश कहाँ? आराम या अवकाश तो असमर्थ और अपाहिजों के लिए है। जिस देश में बड़े-बड़े वयोवृद्ध नेता रात दिन देश की चिन्ता में घुल रहे हो, उसके बालक छुट्टी मनाएँ यह कैसे सम्भव हो सकता है। आशांकुर विद्यार्थियों को ही आगे चलकर शासक और देश-सेवा का कार्य सभालना है। अतएव उनका कर्तव्य है कि वे अपने इस ग्रीष्मावकाश का बहुत सोच समझकर उपयोग करें। इन दिनों जनता से सम्पर्क स्थापित करें, उनके अभाव-अभियोगों को सुनें। पीड़ितों के कष्ट मोचन में सहायता दें। बुराई और भ्रष्टाचार दूर करने का उद्योग करें। पोथ पढन्त से जानकारी तो बढ़ जाती है, परन्तु बिना क्रियात्मक साधना के उसका कोई अर्थ नहीं होता। सच्चा अर्थशास्त्री अर्थशास्त्र के सिद्धान्त या आँकड़े रटने वाला नहीं होता, बल्कि वह है जो व्यापार द्वारा देश की समृद्धि में वृद्धि करने की विधि जानता है। समाज सेवा पुस्तकें घोकने से नहीं आती, सेवा करने से ही उसकी आदत पड़ती है। विद्यार्थियों को आगे चल कर जो कुछ बनना है, उसका अभ्यास उन्हें अभी से करना चाहिये।

गुरुओं पर पोच प्रहार!

भारतीय सभ्यता में गुरुओं का बहुत बड़ा स्थान माना गया है। माता-पिता के पश्चात् आचार्य या गुरु का ही पद है। यह ठीक है कि गुरु पहले-से गुरु नहीं रहे, साथ ही शिष्य भी पहले से शिष्य नहीं हैं। या यों कहिये कि जिस अनुपात से गुरुओं को आँका जाता है, उसी अनुपात से शिष्य भी आँके जा सकते हैं। कहीं-कहीं इस गये-बीते युग में भी आदर्श गुरु शिष्य-परम्परा प्रचलित है। जो हो, अभी पिछले दिनों घटी दो तीन घटनाओं ने तो इस दिशा में बड़ी ही गन्दी मिसाल पैदा की हैं। अलीगढ़ में बारह श्रेणी कालिज के सुयोग्य और सज्जन प्रिंसिपल पर कुछ उद्दण्ड विद्यार्थियों द्वारा घातक प्रहार किये जाने से सारे विद्यार्थी-जगत् का मस्तक लज्जा से नीचा हो गया है! प्रिंसिपल साहब का अपराध यह था कि उन्होंने कुछ परीक्षार्थियों को परीक्षा-भवन में अनुचित एवं अवैध कार्य करने से रोका। इसी के कारण उन्हें अपनी जान से हाथ धोने पड़े। एक संवाद के अनुसार आगरे में भी कुछ विद्यार्थियों द्वारा एक स्कूल के दो अध्यापकों पर प्रहार किया गया। अब १३ अप्रैल को दैनिक 'हिन्दुस्तान' में छपा है कि गत रविवार को देवरिया जिले के कुशी नगर के बुद्ध हायर सेकेण्डरी स्कूल के हैडमास्टर पर विद्यार्थियों द्वारा भयङ्कर प्रहार किया गया, जिससे बेचारे की हड्डियाँ टूट गयीं और वह देवरिया के जिला अस्पताल में है। आखिर यह सब क्यों हो रहा है? स्कूलों का अनुशासन क्यों इतना शिथिल होता जाता है? गुरु-शिष्य परम्परा क्यों समाप्त हो रही है? इन बातों पर भी शिक्षा-विभाग ने कभी विचार किया है या नहीं। यदि यह उद्दण्डतापूर्ण अनतिकता आगे बढ़ी तो किसी का भी गौरव या जीवन निरापद न समझना चाहिये। आज अध्यापकों पर प्रहार होता है, कल पत्रकारों पर होगा, परसों न्यायाधीश प्रहार या आक्रमण के लक्ष्य बनाये जायगे। न इस उच्छृंखलता से वकील बचेंगे न बैरिस्टर। जिसने जरा भी सचाई या दृढ़ता के साथ कुछ कहा, लिखा या किया, वही उद्दण्डतापूर्ण प्रहारों का शिकार बन जायगा। सरकार को चाहिये कि वह ज़रा इन बातों की ओर भी ध्यान दे। उसने जनता में नैतिकता प्रसार करने के लिए क्या उपाय किये या करना चाहती है। धर्म के तो नाम से ही सरकार बिदकती है, पर नैतिकता या 'मारेलिटी' का प्रचार तो उसे अभीष्ट होना ही चाहिये। अनुशासन की शिक्षा देने के लिए तो उसे उद्योगशील होने की ज़रूरत है। केवल अभिनन्दन पत्र स्वीकार करने और भव्य भाषण झाड़ देने से अपराध-पूर्ण कार्यवाहियाँ नहीं रुक सकती। इनको रोकने के लिये कड़ाई और दृढ़ता से काम लेना पड़ेगा और अनुशासनशीलता तथा नैतिकता की शिक्षा देने के लिये भरपूर उद्योग करना होगा। नहीं तो अवस्था दिनोदिन बद से बदतर होती चली जायगी।

शास्त्रीजी का विरासत

स्व० डाक्टर केशवदेव शास्त्री आर्यसमाज के गौरव तथा रत्न थे। उन्होंने जीवन भर आर्यसमाज की सेवाएं कीं। सुदूर अमरीका देश तक वैदिक धर्म की पवित्र ध्वनि पहुँचाई। उन्होंने अपना अन्तर राष्ट्रिय विवाह कर आज से प्रायः चालीस वर्ष पूर्व, 'बिरादरी-विदारण' का एक उदात्त उदाहरण उपस्थित किया। दुर्भाग्य वश शास्त्रीजी अपनी प्रौढ़ावस्था में ही चल बसे और बड़ी कठिनता तथा सावधानी से संगृहीत अपना वृहद् पुस्तकालय विरासत की शकल में छोड़ गये। आर्यसमाज में किसको फिक्र थी जो इस बहुमूल्य पुस्तकालय की सुधि लेता। अन्त में फ़िरोज़ाबाद के एक प्रतिष्ठित जैन सज्जन उसे खरीद लाये और वे बिना किसी प्रकार के लाभ लोभ के इस पुस्तकालय को आर्यसमाज के सुपुर्द करने को तैयार हैं। प्रश्न सिर्फ डेढ़ दो हज़ार रुपये मूल्य का है। हमारी राय में सार्वदेशिक सभा या उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा को उसे तुरन्त खरीद लेना चाहिए। सुप्रसिद्ध साहित्यकार बन्धुवर श्री पं० बनारसी दास चतुर्वेदी ने इस विषय में एक लेख लिखा है, जो इसी अंक में अन्यत्र प्रकाशित किया जा रहा है। आशा है, पाठक उसे ध्यान पूर्वक पढ़ेंगे।

बाल-विनोद

ज्ञानूदादा के नाम पत्र

१

मैंने अखबार में पढ़ा कि अलीगढ़ में एक कालेज के विद्यार्थी परीक्षा में नकल कर रहे थे। कालेज के प्रिंसिपल ने उन्हें पकड़ लिया और परीक्षा से निकाल दिया। इस पर उन विद्यार्थियों ने प्रिंसिपल साहब की हत्या कर डाली। विद्यार्थियों के इस काम को आप कैसा समझते हैं?

रमाशङ्कर शुक्ल, कन्नौज,

[विद्यार्थियों का यह कार्य घोर घृणित और अत्यन्त निन्दनीय है। चोरी और सीनाजोरी इसी को कहते हैं। ऐसे लड़कों को विद्यार्थी कहना विद्यार्थी शब्द का अपमान करना है।]

२

गत शिवरात्रि को हमारे यहाँ चन्दौसी में आर्य कन्या पाठशाला के भवन की नींव रक्खी गई थी। इसमें पूज्यपाद श्री स्वामी ब्रह्मानन्दजी और श्री पं० प्रकाशवीरजी शास्त्री ने चारों वेद रक्खे। इसका क्या कारण है?

सुरेन्द्रकुमार आर्य, चन्दौसी

[पाठशाला-भवन की नींव में वेदों के रखने का यह प्रयोजन है कि सब लोग जानें कि इस विद्यालय का मूल आधार वेद है। अतः इनका मुख्य कार्य वेदों की शिक्षा का प्रचार होना चाहिए। दूसरे यह भी है कि बहुत दिनों बाद यदि कभी यह जमीन खोदी गयी तो वे वेदों की पुस्तकें खोदने वालों को मिलेंगी। जैसे अब सिक्के या अन्य चीजें खुदाई करने पर मिलती हैं और बहुत सी ऐतिहासिक सचाइयाँ सिद्ध करती हैं। विशेष विस्तार में जानना चाहो, तो श्री प्रकाशवीर शास्त्री से ही पूछ लो। वे तो चन्दौसी में ही रहते हैं।]

३

मुझे आर्यसमाज के उत्सवों से बड़ा प्रेम है। उनमें विद्वानों के उत्तमोत्तम उपदेश सुन कर मुझे बड़ा आनन्द प्राप्त होता है। अपने यहाँ के गत उत्सव में एक स्वामीजी ने बताया था—बालकों की उन्नति के दो साधन हैं, "सत्संग और तपस्या"। परन्तु हमें संग तो अधिकतर ऐसे बालकों का मिलता है, जो प्रायः हर समय सिनेमा के गन्दे गीत गाया करते हैं। ऐसे समय में मुझे क्या करना चाहिये।

हरीशचन्द्र, आजमगढ़

[सिनेमा अधिक देखने और उनके गन्दे गीत गाने वाले बालकों का संग निश्चय ही कुसंग है। तुम्हें विवश स्कूल या खेल में ऐसे लड़कों के साथ रहना पड़ता है, यह दिक्कत अवश्य है। परन्तु तुम उतने समय उनके साथ वैसे ही रहो, जैसे सुबह-शाम जरूरत के लिए टट्टी में जाते हो, और उनकी गन्दी आदतों से टट्टी की गन्द के समान ही घृणा रक्खो। तुम प्रयत्न करो कि उन लड़कों के वास्ते तुम्हारा संग सत्संग सिद्ध हो और उनकी गन्दी आदतें दूर हों।]

४

पाँच अक्षरों से बना कोई ऐसा शब्द बताइए, जिसे सीधी ओर से पढ़ें चाहे उलटी ओर से, परन्तु वह एकसा ही पढ़ा जाय।

महावीरप्रसाद, कुचामन

[एक शब्द तो ज्ञानू दादा बताए देते हैं, वह है "नवजीवन" इससे भिन्न शब्द और बालसाथी बताएं। जो बालक नए शब्द भेजेंगे उनके नाम सहित वे शब्द प्रकाशित किये जायगे।]

❀ ❀ ❀

गत ५ अप्रैल के अङ्क में जो गणित पहेलियाँ छपी थीं, उनमें पहली का उत्तर—१ सेर ३ सेर ९ सेर और २७ सेर, तथा दूसरी का ३ लड़के और ४ कुर्सियाँ हैं। सही उत्तर भेजने वालों के नाम—वेदप्रकाश, मक्खनपुर। जगदीश्वर दयालु आर्य, बहराइच। विजयकुमार आर्य, बहराइच। सत्यनारायण पोद्दार, कुचामन। इन्द्रपाल वार्ष्णेय, काजिमाबाद। विश्वकान्तसिंह, फीरोजाबाद। सुरेन्द्रकुमार आर्य, चन्दौसी। नवीनचन्द्र पाठक, येवला। विनयशङ्कर शर्मा, मोदीनगर। टीटू, अलीगढ़। विश्वबन्धु, आगरा। आशुतोष, कलकत्ता। धीरेन्द्र तिवारी, लखनऊ। व्रजभूषण माथुर, हाथरस। जयशङ्कर, इटावा। कुमारी निर्मला, आगरा। ज्योतिस्वरूप दुबे, बनारस। श्रीकान्त, नागपुर। चन्द्रप्रभा अजमेर। गुरुदास लाल, दिल्ली। कुमारी उषा, इन्दौर।

देवदत्तजी, कोषाध्यक्ष, आर्यकुमार सभा बहराइच ने नीचे लिखी पहेली भेजी है। साथ ही लिखा है, जिस १४ वर्ष तक की आयु के विद्यार्थी का उत्तर सबसे पहले उनके पास पहुँचेगा, उसे वे एक पुस्तक पुरस्कार में देंगे। उत्तरदाता अपना पूरा पता लिखें।

पहेली

वाही की रोटी, वाही की दार,
वाही की टटिया लागे द्वार,
वाहि देत चूल्हे में वार।

—

संस्था-परिचय

उत्तर प्रदेशीय आ० प्र० सभा

अब से प्रायः ६४ वर्ष पूर्व इस प्रदेश में आर्यप्रतिनिधि सभा की स्थापना हुई थी। सभा का मुख्य उद्देश्य था वैदिक धर्म-प्रचार और आर्यसमाजों का संस्थापन एवम् संघटन। इस दिशा में सभा ने खूब काम किया और उसे सफलता भी मिली। लेखनी और वाणी दोनों प्रचार के साधन रहे। अर्थात् सभा ने पत्र और पुस्तकें भी प्रकाशित किये और उपदेशकों तथा भजनोपदेशकों द्वारा प्रचार भी कराया। इन प्रचारकों में कुछ तो ऐसे रहे जिन्होंने निर्वाह मात्र लेकर अपना सारा समय प्रचार के लिए लगाया और कुछ लोग बिना कुछ लिये ही आवश्यकतानुसार काम करते रहे। परन्तु आर्यजनता ने कुछ लेने या कुछ न लेने वाले दोनों सेवकों को श्रद्धा-भक्ति तथा आदर से देखा। लेने वालों के प्रति अब की तरह जरा भी उपेक्षा नहीं दिखाई। सभा को अपने प्रारम्भ काल में बड़े-बड़े विरोधियों का सामना करना पड़ा। सरकारी विघ्न-बाधाओं से भी टक्कर लेनी पड़ी, परन्तु वह अटल रही। सभा का मुखपत्र 'आर्यमित्र' गत ५३ वर्षों से निर्भयता पूर्वक वैदिक धर्म की सेवा करता चला आ रहा है। सैकड़ों सजीव प्रचारक जितना काम कठिनता से कर पाते, उतना इस अजीव प्रचारक ने बराबर किया। सभा की ओर से गुरुकुल स्थापित किया गया, जिसने भारत देश को सुयोग्य स्नातक दिये जो विविध क्षेत्रों में रह कर वैदिक धर्म की सेवा कर रहे हैं। आर्यसमाजों की अधिकार-रक्षा के प्रश्न पर सभा ने अपनी जान लड़ाई और उन पर आँच न आने दी। जब-जब देश पर कोई आपत्ति आई, सभा अपने अधीनस्थ आर्यसमाजों के सहयोगपूर्वक आगे बढ़ी और सङ्कटमोचन को यथाशक्ति पूरा प्रयत्न किया। सब से अधिक सेवा उन तपस्वी उपदेशकों या प्रचारकों ने की जो अपने परिवार तक की सुधि भूल कर, वैदिक धर्म के मतवाले बने हुए रात-दिन प्रचार कार्य करते रहे और प्रचार कार्य करते हुए उन्होंने अपने कष्टों का जरा भी परवा न की। स्व० मुन्शी नारायण प्रसाद (महात्मा नारायण स्वामी) और स्व० पं० भगवानदीन मिश्र ने प्रतिनिधि शिशु सभा को परिपुष्ट करने में जो तप किया वह कभी नहीं भुलाया जा सकता। और भी अनेक अधिकारी और कार्यकर्त्ता धन्यवाद के पात्र हैं।

प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभाओं का संघटन देश के गिने-चुने बड़े संघटनों में से है। जितना अच्छा और व्यापक आर्यसमाजों का संघटन है, उतना कदाचित् दूसरा नहीं। आर्यप्रतिनिधि सभा की शक्ति आर्यसमाजों की शक्ति है, अब से कुछ पूर्व प्रदेश में ढाई सौ आर्यसमाज थे, परन्तु वे सबल सशक्त और सुसंगठित थे। सभा भी सबल थी। अब ६२० आर्यसमाजों के होते हुए भी सबलता नहीं है। कुछ लोग कहते हैं कि प्रचार के पुराने साधन अब काम नहीं देंगे, परन्तु काम पुराने साधनों से ही चलेगा। पुराने साधनों में धन को इतना महत्व नहीं था जितना तन

गुरुकुल को सँभालिये

श्री प० भूदेव शास्त्री, सिद्धान्त-शिरोमणि

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का बृहदधिवेशन आगामी २१ और २२ अप्रैल को लखनऊ में होने जारहा है। इस अवसर पर सम्पूर्ण प्रान्त के आर्यप्रतिनिधि एकत्र होंगे और नवीन वर्ष के लिये पदाधिकारियों एवं अन्तरंग सभासदों का निर्वाचन करेंगे। गतवर्ष बृहदधिवेशन के अवसर पर मैंने एक पत्रक के द्वारा आर्यजनों का ध्यान कुछ समस्याओं की ओर आकृष्ट किया था। उस समय मेरे अनुभव में यह बात आई थी कि आय-व्ययक पर विचार एवं निर्वाचन की भड़भड़ में किसी व्यक्ति को इतना समय नहीं मिलता कि वह किसी पत्रक को ध्यान से पढ़े और उसमें उठाये प्रश्नो पर गम्भीरता पूर्वक विचार कर सके। फलतः बृहदधिवेशन में एकत्र होने वाले आर्य-प्रतिनिधियों की सेवा में पहले ही से कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ। आशा है, सभी उनपर गम्भीरता पूर्वक विचार करने की कृपा करेंगे।

गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में चलने वाली एक प्रमुख शिक्षा संस्था है। आगरा विश्वविद्यालय द्वारा उस के स्नातकों को इण्टर कक्षाओं तक हिन्दी एवं संस्कृत पढ़ाने के लिये योग्यता सम्पन्न मानता है। उसकी अधिकारी परीक्षा बाहर की हाईस्कूल परीक्षा के समकक्ष मानली गई है। जहाँ तक सरकार का प्रश्न है उसने अब तक विदेशी सरकारों द्वारा गुरुकुल के प्रति दिखाई हुई उदासीनता का एक बड़ी सीमा तक परिमार्जन कर दिया है।

परन्तु यह बात किसी से छिपी नहीं कि गुरुकुल का संचालन निरन्तर घाटे पर किया जा रहा है। उसकी स्थायी निधियाँ क्रमशः समाप्त होती जारही हैं। यदि यही स्थिति बनी रही तो अगले दो-तीन वर्षों में क्या होगा, इसकी कल्पना भी बड़ी दुःखदायिनी है। मेरा निवेदन है कि सभी आर्यजन इस भयंकर परिस्थिति पर गम्भीरता से विचार करें। आज देश में शिक्षा संस्थाओं की बाढ़ आरही है। स्कूल पीछे खुलते हैं परन्तु छात्रों की भीड़ पहले जमा हो जाती है। ऐसी परिस्थिति में गुरुकुल जैसी उपयोगी संस्था में छात्रों की कमी रहे, आखिर इस का भी कुछ कारण होना चाहिए इस पर विचार करना आर्यप्रतिनिधियों का प्रधान कर्त्तव्य है।

इसे आर्यसमाज का दुर्भाग्य ही कहता हूँ। क्यों ? इसलिये कि आज जो आर्यसमाज में शिथिलता है उसका एक मात्र कारण नवीन रक्त का अभाव है। वह नवीन रक्त आर्यसमाजों को गुरुकुलों से ही अधिक परिमाण में मिल सकता है यदि वे व्यवस्था पूर्वक चलाये जायें। उत्तर प्रदेशीय सभा का एक गुरुकुल जिस का पचासहज़ार प्रतिवर्ष का थोड़ा सा व्यय और उसमें से भी एक बड़ा भाग छात्रों पर लगे शुल्क से पूर्ण होजाता है। फिर भी वह संस्था ज्यों-त्यों कर घाटे पर चले। ऐसी संस्था आर्यसमाज को क्या नया रक्त दे पाएगी !

मेरा विश्वास है कि आर्यप्रतिनिधि सभा जैसा प्रभावशाली संगठन इस स्थिति को सुधार सकता है। इतना ही नहीं अपितु उसे सुधारना चाहिये। आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश में गुरुकुल विषयक समस्त अधिकार केन्द्रित हैं। वही उसके लिये स्वयम् अथवा अपनी अन्तरंग सभा द्वारा अधिकारियों एवं विद्यासभा का निर्वाचन करती है। संसार के सभी अधिकारों के साथ कुछ न कुछ कर्त्तव्य-पक्ष होता है। आश्चर्य है कि हम आर्य-प्रतिनिधि गण अधिकार-पक्ष के साथ अपना कर्त्तव्य-पक्ष कुछ नहीं समझते। गुरुकुल की समस्या का सभा के वर्तमान ढाँचे में एक ही हल है कि सभा गुरुकुल के समस्त व्यय और शुल्क की आय के अन्तर को अपने कोष से पूरा किया करे और इस प्रकार देय धन को अपने तत्वावधान में समाजों अथवा व्यक्तियों द्वारा संग्रह कराने की व्यवस्था करे। प्रतिवर्ष सभा के वार्षिक आयव्ययक के साथ गुरुकुल की देय राशि भी स्वीकृत होनी चाहिये और जो आर्य-प्रतिनिधि गण उस राशि को स्वीकार करते हैं, उन्हें उसे पूरा करने का उत्तरदायित्व भी लेना चाहिये। यदि यह नहीं किया जाता तो आर्य प्रतिनिधियों द्वारा बजट स्वीकार करने का कोई अर्थ ही नहीं है।

इन पंक्तियों को मैंने इस आशा के साथ लिखा है कि आर्य प्रतिनिधि गण इस समस्या पर गम्भीरता से विचार करेंगे। गुरुकुल में हजारों आर्यों की श्रद्धा एवं धन का उपयोग हुआ है। यदि हमारी असावधानी से गुरुकुल की और अवनति हुई तो हमारे लिये बड़ी लज्जा की बात होगी।

और मन को। उस समय लोग तन और मन प्रचार के लिये देते थे, धन तो अपने आप ही आ जाता था। आज तन और मन तो अलग रहते हैं केवल चन्दे या दान की शुक्ल में कुछ धन दिया जाता है। सो भी बहुत थोड़ा। इससे सफलतादेवी दूर खड़ी-खड़ी हमारी अकर्मण्यता पर हसती रहती है।

अगर वास्तव में देश-विदेश में वैदिक धर्म की धूम मचानी है तो आर्यप्रतिनिधि सभा को शीघ्र सुदृढ़ बनाना होगा। सभा तभी सुदृढ़ बनेगी जब आर्यसमाजों में दृढ़ता आएगी। दृढ़ता लाने के लिए तन और मन देने की आवश्यकता है। ऐसे कार्यकर्त्ता तैयार हों जो अपना सारा, आधा, चौथाई या इससे भी कम समय नियमित रूप से धर्म-सेवा के लिये दें। यदि प्रत्येक आर्यसभासद एक-एक घण्टे रोज भी धर्म-सेवा के लिये दें और ऐसे पचास सभासद हों तो पचास घण्टे रोज काम हो सकता है। जिस प्रचार और संघटन के लिये हमारे पूर्वजों ने अपने जीवन खपाये क्या हम उसके लिए थोड़ा समय भी नहीं दे सकते। याद रखिये, कोरे दावों से काम नहीं चलेगा। सभा और समाजों की उन्नति, अभिवृद्धि रक्षा और सफलता के लिये हमें कुछ तप-त्याग भी करना पड़ेगा। कोरे वाग्विलास का समय न अब है, न तब था।

आर्यसमाज-स्थापना-दिवस

चौपाटी पर विराट् आयोजन

आर्यसमाज बम्बई के तत्वावधान में नगर तथा उपनगरस्थ समस्त आर्यसमाजों की एक सम्मिलित सभा आर्यसमाज-स्थापना-दिवस के उपलक्ष्य में श्री स्वामी अभेदानन्दजी सरस्वती की अध्यक्षता में हुई। नगर के आर्य भाइयों के अतिरिक्त प्रतिष्ठित नागरिक भी सभा में उपस्थित थे। वक्ताओं में पूज्य स्वामी आनन्दजी महाराज, राजगुरु श्री प० धुरेन्द्रजी शास्त्री प्रधान आर्य सार्वदेशिक सभा, श्री प० चन्द्रकान्तजी वेदवाचस्पति आचार्य गुरुकुल सूपा आदि प्रमुख थे। वक्ता महानुभावों ने अपने भाषण में आर्यसमाज की स्थापना का उद्देश्य, आर्यसमाज की आवश्यकता और आर्यसमाज-विश्व की वर्तमान परिस्थिति को किस प्रकार सुलझा सकता है, आदि विषयों पर विस्तृत प्रकाश डाला। इसका जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा। अन्त में सभापति महोदय ने अपने भाषण में बताया कि आर्यसमाज को स्थापित हुए ७५ वर्ष हो गये। इस पौन शताब्दी में आर्यसमाज ने धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्रों में राष्ट्र की जो सेवा की वह किसी से छिपी नहीं है। इसी कारण आज भी कतिपय नेता आर्यसमाज से देशव्यापी चोरबाजारी, रिश्वतखोरी, अनाचार आदि बुराइयों को दूर करने की आशा करते हैं। आपने कहा यदि चाहते हो कि देश से अनाचार दूर हो और रामराज्य स्थापित होकर सुख-शान्ति का प्रसार हो तो ओ३म् की पताका के नीचे एकत्रित हो जाओ और प्रतिज्ञा करो कि आज से हम देश में से सम्पूर्ण अनाचार का अन्त कर रामराज्य की स्थापना होने तक सदा प्रयत्नशील रहेंगे। सर्व-प्रथम आर्यसमाज की स्थापना मुंबई नगर में ही हुई थी और स्थानीय समाज इस उपलक्ष्य में इस वर्ष अपना हीरक महोत्सव मनाने का आयोजन कर रहा है और इसी अवसर पर इसी नगर में आर्य उपदेशक में सम्मेलन भी हो रहा है। हमारे उपदेशक इस प्रान्त में भ्रमण करेंगे। अतः आप लोग सहयोग देने की कृपा करें।

सामयिक समस्याएँ

प्रचार की समस्या

प्रो० रमेश चन्द्र त्रिवेदी, एम० ए०

एक दिन था जबकि आर्य-समाज संगठन और प्रभाव की दृष्टि से एक अद्वितीय संस्था थी। समस्त आर्यों में एकता तथा सहयोग की भावना इतनी प्रबल थी, कि विपक्षी उनसे घबराते थे। उस समय प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में उत्साह और लगन इतने प्रबल थे कि वह अपना अधिक से अधिक समय प्रचार में लगाता था। यही कारण है कि चारों ओर से विरोध होने पर भी आर्य-समाज देश की कुछ ठोस सेवा करने में समर्थ हो सका है। किन्तु आज हम लोगों में संगठन का अभाव हो चला है। कर्त्तव्य परायणता का स्थान पदलोलुपता तथा स्वार्थपरता ने ले लिया है। इसी से स्थान स्थान पर पारस्परिक ईर्ष्या, द्वेष तथा दल-बन्दी की बातें देखने में आती हैं। कारण यह है कि आज आर्य-समाज के सामने कोई निश्चित लक्ष्य नहीं रहा जिसकी ओर सब मिलकर उत्साहपूर्वक अग्रसर हो सकें।

जब आर्यसमाज ने अपना कार्य आरम्भ किया था, तब उस के सामने एक महान् ध्येय था, जिससे उसको प्रेरणा मिलती थी। वह था विदेशी सभ्यता-जनित समस्त बुराइयों को दूर करके आर्य संस्कृति की पुनः स्थापना करना, तथा वैदिक धर्म को विश्व-धर्म बनाना। इसी आशा और विश्वास को लेकर उस समय के आर्य अहर्निश प्रचारकार्य में लगे रहते थे, किंतु राजनीति की ओर से उदासीन रहने का फल यह हुआ कि पिछले ७० वर्षों से प्रयत्न करने पर भी हमें अपनी उद्देश्य-प्राप्ति की लेश मात्र भी सम्भावना नहीं दिखलाई देती। इस समय के बढ़ते हुए अनैतिकता और भ्रष्टाचार निराशा की ही भावना उत्पन्न करते हैं। इतना अधिक समय हो जाने पर भी आर्यसमाज ऋषि-कृत वेदभाष्य तथा अपनी अन्य मान्यताओं को देश और विदेश के विद्वानों से नहीं मनवा सका। आर्य नवयुवक जब यह देखते हैं कि ईश्वर, धर्म और वेद का तिरस्कार करने वाले तो संसद के सदस्य और मन्त्री बने बैठे हैं, तथा उनके मानने वालों को कोई पूछता भी नहीं, तब ईश्वर और धर्म का महत्व उनकी दृष्टि में बहुत कम हो जाता है और वे यह सोचने लगते हैं कि धर्म की जिस महत्ता का ऋषि ने वेदों के आधार पर प्रतिपादन किया है, क्या वह वास्तव में ठीक है? शास्त्रों में तो कहा गया है 'यतो धर्मस्ततो जयः' और धर्म को निःश्रेयस् नहीं अभ्युदय की सिद्धि का भी कारण माना गया है।

ऋषि ने तो ठीक ही लिखा है। वास्तव में दोष हमारा ही है। हम धर्म के व्यापक स्वरूप को समझने में असमर्थ रहे। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में धर्म को स्थान न देकर हमने उसे सन्ध्या और हवन तक ही सीमित रखा है। सन्ध्या और हवन साधन है, साध्य नहीं। जब तक हमारा सम्पूर्ण जीवन धर्ममय नहीं होगा, हम दूसरों को प्रभावित नहीं कर सकते। यह ठीक है कि आज राज-सत्ता ऐसे व्यक्तियों के हाथ में है, जो धर्म का नाम लेना भी उचित नहीं समझते, परन्तु उस का फल भी प्रत्यक्ष है। हमारा देश ही नहीं, समस्त संसार आज विनाश की ओर जा रहा है। और यह भी स्पष्ट है कि जब तक शासन की बागडोर धर्मनिष्ठ व्यक्तियों के हाथ में नहीं आती, तब तक संसार में सुख और शान्ति की स्थापना नहीं हो सकती। अतएव धर्म की उपयोगिता में संदेह करना भूल है। हम चाहिए कि हम उस निश्चित लक्ष्य की फिर से घोषणा कर दें और जनता से सम्पर्क स्थापित करने में लग जायें।

आज की बदली हुई परिस्थितियों में हमें आर्यसमाज के कार्यक्रम तथा प्रचार-प्रणाली में समुचित परिवर्त्तन करना आवश्यक है। अब तक हमारा मुख्य कार्य वेद विरुद्ध मत-मतान्तरों के प्रभाव से जनता को मुक्त करना था, क्योंकि इन सम्प्रदायों के कारण अनेक प्रकार के अन्ध-विश्वास तथा कुरीतियाँ फैली हुई थीं। आज भिन्न-भिन्न 'वाद' (isms) जनता को पथ-भ्रष्ट कर रहे हैं। इसके लिए हमें ऐसे शास्त्रार्थ-महारथियों की आवश्यकता है जो इन 'वादों' की धज्जियां उड़ा कर शासन-व्यवस्था की स्थापना करने के लिए जनता को तैयार कर सकें। सबसे पहले आर्यसमाज को वेदों का सर्व-सम्मत भाष्य हिन्दी तथा अंग्रेजी में प्रकाशित करना चाहिए। वास्तव में यह आर्यसमाज के लिए बड़ी लज्जा की बात है कि वह अब तक इस कार्य को न कर सका। दूसरा कार्य है ऋषि की मान्यताओं को देश विदेश के विद्वानों से मनवाने का प्रयत्न करना। आज विदेश के बहुत-से दिग्गज विद्वानों ने ऋषि प्रतिपादित सृष्ट्युत्पत्ति आर्य संस्कृति का प्राचीनतम होना एवं आर्यों के चक्रवर्ती राज्य सम्बन्धी बहुत-सी धारणाओं को स्वीकार कर लिया है। तथा यह भी मान लिया है कि बहुत-से वैज्ञानिक तथ्य जैसा कि पृथ्वी का गोल होना, और सूर्य के चारों ओर घूमना, ध्रुव प्रदेश में छह मास का दिन तथा रात होना, धातुओं का प्रयोग आदि आर्यों को उस समय ज्ञात थे, जब कि संसार के अन्य देशों के निवासी इस संबंध में कुछ भी नहीं जानते थे।

किंतु दुःख की बात यह है कि हमारे देश में, स्कूल और कालेजों में जो इतिहास पढ़ाया जाता है, उसमें आज भी यही लिखा है कि आर्य अर्ध सभ्य थे, सूर्य, अग्नि, वायु इत्यादि प्राकृतिक शक्तियों की पूजा करते थे। वेदों को सैकड़ों व्यक्तियों ने कई सहस्र वर्षों में बनाया तथा यहाँ के निवासियों ने ज्ञान विज्ञान की बातें विदेशियों से सीखीं। विश्व-विद्यालयों में जो थोड़ा-सा वेद का अंश पढ़ा-पढ़ाया जाता है, वह सायणाचार्य तथा योरोपीय भाष्यकारों के आधार पर ही पढ़ाया जाता है। इसका कारण है मानसिक दासता। निष्पक्ष पाश्चात्य विचारकों के यह स्वीकार कर लेने पर भी कि भारत जगद्गुरु है, हमारे अंग्रेजी पढ़े-लिखे भाई यूरोप को ही गुरु माने बैठे हैं। यदि यह मानसिक दासता न मिटी तो जिस प्रकार से आज पश्चिम का अन्धानुकरण हो रहा है, उसी प्रकार होता रहेगा। प्रगतिशील कहलाने वाली संस्थाओं की ओर से इस मनोवृत्ति को और भी प्रोत्साहन मिल रहा है।

खेद की बात है कि प्रचार के इस अत्यन्त आवश्यक क्षेत्र की ओर आर्य नेताओं का ध्यान नहीं है। आज आर्यसमाज को अपनी पूरी शक्ति इस मानसिक दासता को मिटाने में लगा देनी चाहिये। या तो यह कार्य विद्यार्यसभा को करना चाहिये या इसके लिए आर्य विद्वत् परिषद् की स्थापना करनी चाहिये। यह परिषद् पत्र-व्यवहार अथवा व्यक्तिगत बात-चीत के द्वारा भिन्न-भिन्न विश्वविद्यालयों के अधिकारियों के सामने यह रखें कि आर्य-संस्कृति के सम्बन्ध में जो बातें असत्य सिद्ध हो चुकी हैं वे पाठ्यक्रम से हटा दी जायें। साथ ही भिन्न-भिन्न प्रतिनिधि सभाओं को कुछ उच्च कोटि के उपदेशक ऐसे रखने चाहियें जो केवल शिक्षा-संस्थाओं में घूम घूम कर प्रचार कर सकें। यदि विद्यार्थियों में प्रचार की व्यवस्था न हुई तो तरुण रक्त का आर्यसमाज में आना असम्भव है।

आज हमारा प्रचार मुख्य रूप से वार्षिकोत्सवों द्वारा होता है, किन्तु आजकल इसमें विशेष लाभ नहीं होता। यह देखने में आता है कि जिन स्थानों में आर्यसमाजें नहीं हैं, वहाँ प्रचार की व्यवस्था नहीं हो पाती। और जिन समाजों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है, उन्हें एक भी उपदेशक नहीं मिल पाता, क्योंकि वे अच्छी दक्षिणा का प्रबन्ध नहीं कर पातीं। इसका परिणाम यह है कि अनेक स्थान आर्यसमाज के प्रचार से वंचित रहते हैं। रही उन समाजों की बात जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी है, वे अधिक से अधिक उपदेशकों के बुलाने का प्रयत्न करती हैं। उपदेशक आ भी जाते हैं। प्रातः ६ बजे से रात्रि के १२ बजे तक प्रचार रहता है। तीसरे

महिला-मण्डल

नारी की शत्रु नारी

श्रीमती सावित्री शर्मा, बी० ए०

अभी दो-चार दिन की बात है, जबकि मैं शीघ्रतापूर्वक अपने कालिज से वापस आ रही थी, तो रास्ते में आर्य समाज-मन्दिर' में से स्त्रियों का एक झुंड मुझे निकलता दिखाई दिया। मेरी समझ में नहीं आया कि इतनी भीड़-भाड़ का क्या कारण है। तभी अकस्मात मुझे ध्यान आया कि आज इस मन्दिर में "महिला-सुधार-सभा" की प्रधाना का भाषण होने वाला था। भाषण का विषय था "नारी-सुधार के उपाय।" मुझे यह जानने की बहुत उत्सुकता हुई कि देखें प्रधानाजी ने क्या उपाय बतलाए हैं। मैं अपनी चाल धीमी करके सभा में से आने वाली कुछ शिक्षित स्त्रियों की बातें बड़े ध्यान से सुनने लगी। वे कह रही थीं—ठीक ही तो कहा था प्रधानाजी ने कि पुरुष ही हमारी उन्नति में बाधक है, वे हमको कूपमंडूक ही बनी रहने देना चाहते हैं। आज ही देखो न, मैं कितनी कठिनता से निकल कर आ सकी हूँ घरसे। मुन्नू के पिताजी एक न एक बहाना बनाये ही जा रहे थे। भला यह भी कुछ बात है कि पुरुष आप तो जहाँ जी चाहे घूमें-फिरें, चाहे कुछ करें लेकिन स्त्रियाँ कहीं जायें भी तो आज्ञा लेकर व घर का सब प्रबन्ध करने के पश्चात्।

इतने में दूसरी महिला बोल उठी, "ठीक कहती हो जीजी, अब हमें क्रांति करनी ही होगी तभी ये पुरुष मानेंगे। कितनी अच्छी-अच्छी बातें विदेशों की स्त्रियों के विषय में प्रधानाजी बता रहीं थीं। वहाँ की भी तो स्त्रियाँ हैं। कितनी खुश होंगी वे! एक हम हैं कि बस प्रत्येक बात पर पुरुषों का मुंह ताकना पड़ता है। लेकिन जीजी, सच जानो, यदि हम नहीं तो कमसे कम आने वाली पीढ़ी तो अवश्य ही इन पुरुषों से बदला लेगी। मुझे तो कभी कभी बहुत ही क्रोध आता है सम्पूर्ण पुरुष जाति पर, स्वार्थी कहीं के।" बस मैं अधिक न सुन सकी। शीघ्र कदम बढ़ा कर घर आई। बार-बार मेरे मस्तिष्क में उन्हीं की बातें चक्कर काट रहीं थीं। मैं सोच रही थी कि क्या यह बात ठीक है कि पुरुष ही नारी का शत्रु है? क्या सचमुच नारी जाति की उन्नति क्रान्ति चाहती है? यदि चाहती भी है तो किस प्रकार की क्रान्ति? अपने भाई, पिता व पति के विरुद्ध? हे भगवान्, क्या ऐसा कर सकेंगी भारत की नारियां? जिन नारियों के हृदय में ममता का स्रोत बहता है, वे नारियाँ जो अपने पिता, पुत्र और पति की शुभ कामना के लिये महान् से महान् कष्ट उठाने के लिये तत्पर रहती हैं! लेकिन फिर मुझे ध्यान आया कि वे भी भारतीय कोमलांगिनी स्नेह-शीला नारियाँ ही थीं, जिन्होंने हाथों में खड्ग लेकर शत्रुओं का संहार किया था, जिन्होंने अपने पतियों का बध अपने ही हाथों से कर दिया था, अपने पुत्रों को अपने ही हाथों से मृत्यु के घाट उतार दिया था केवल इस लिए कि उन्होंने अपने कर्तव्य-पालन में कायरता दिखाई थी। ठीक है, भारतीय नारियों के हृदय में यदि उसी प्रतिकार की भावना जाग्रत् हो जायगी तो सचमुच वे चण्डी का रूप धारण कर लेंगी। लेकिन प्रश्न तो यह है कि क्या वास्तव में पुरुष ही नारी की अवनति के लिये उत्तरदायी हैं? क्या नारी स्वयं नारी की शत्रु नहीं है? सम्भव है, यह वाक्य पढ़कर अधिकांश महिलाएँ चौंक उठें कि भला कोई अपना शत्रु आप भी होता है? लेकिन यदि शान्तिपूर्वक निष्पक्ष भाव से विचार किया जाय तो ज्ञात हो जायगा कि बात कहाँ तक ठीक है!

किसी गृह में कन्या का अप्रिय आगमन सर्व प्रथम उसकी मा, दादी, बुआ व नानी आदि को ही खलता है। पुरुषों को तो अधिकतर यही कहते सुना जाता है, "चलो जी, जो कुछ हो गया सब ठीक है, कन्या ही क्या बुरी है। सब भगवान् की देन है। लेकिन स्त्रियाँ सदैव यही कहती हैं कि "अरे क्या हुई है लड़की, उह, अजी लड़का बड़े भाग्य से होता है।" किसी-किसी गृह में तो कन्या को जन्म देने वाली माता का इतना अनादर होने लगता है कि उस दिन से उसे पौष्टिक भोजन, जो कि प्रसूतिगृह में मिलना चाहिए, बन्द कर दिया जाता है। उसकी देख-भाल समुचित रूप से नहीं की जाती। क्या यह नारी जाति के द्वारा ही नारी का अपमान नहीं है?

वही कन्या कुछ बड़ी होती है, उसकी शिक्षा-दीक्षा का प्रश्न उपस्थित होता है। पिता चाहता है कि किसी कन्या-पाठशाला में उसे पढ़ने भेजा जाय, लेकिन माता तुरन्त कहती है, 'वाह, यह स्कूल चली जायगी तो 'मुन्नू' को कौन खिलावेगा। इसे कौन-सी नौकरी करनी है, फिर पढ़ लेगी।" क्या करे बेचारा पिता, यदि अधिक ज़ोर देकर कहता है तो घर में 'महाभारत' मचने का डर है। यदि किसी प्रकार कन्या स्कूल जाने भी लगती है, तो जहाँ वह कुछ बड़ी हुई कि उसकी मा अथवा घर की अन्य बड़ी-बूढ़ियों की ओर से फरमाइश होने लगती है कि अब उसे स्कूल से उठा लेना चाहिये, स्यानी हो गई है। अब उसका बाहर निकलना ठीक नहीं। नवयुवक भाई चाहता है कि उसकी बहन और पढ़े, उच्च शिक्षा प्राप्त करे, लेकिन घर की स्त्रियाँ उसके विरुद्ध खड़ी हो जाती हैं। कहती हैं, "तुझे क्या पता कि आजकल ज़माना कितना खराब है। तू तो बस यह कहकर छूट जाता है, हमें तो दुनिया-भर की बातें सुननी पड़ती हैं।" आदि आदि। यदि फिर भी हम कहें कि नारी का शत्रु पुरुष है, तो कम से कम मेरे विचार से तो यह पुरुषों के प्रति अन्याय ही है।

इतना ही नहीं, लड़की का विवाह हो जाता है। वह ससुराल जाती है। उसका पति चाहता है कि वह उसे (पत्नी को) घुमाये-फिराये, घर की चहार दीवारी के अन्दर ही बन्द न रहने दे। बाहर की दुनिया से भी परिचित कराये। चाहे उसमें पुरुषों का स्वार्थ ही क्यों न निहित हो लेकिन तब भी वह चाहता अवश्य है। परन्तु कौन-सा भारतीय घर ऐसा होगा

(शेष पृष्ठ ११)

दिन सब धूमधाम समाप्त हो जाती है, और कार्यकर्तागण एक वर्ष के लिए प्रचार-सम्बन्धी समस्याओं से निश्चिन्त हो जाते हैं। उपदेशकों को यह शिकायत रहती है कि उन्हें अपनी बात कहने के लिए पूरा समय नहीं मिला। अधिकारी कहते हैं, समय दें तो कहाँ से दें। तीन दिन में जो दुनिया-भर की बातें कह दी जाती हैं, उनसे कोई लाभ नहीं होता, क्योंकि श्रोताओं को मनन करने के लिए अवसर ही नहीं मिलता। लाभ न होते हुए भी यह क्रम चल रहा है। इस सम्बन्ध में कुछ सुझाव प्रस्तुत करता हूँ। आशा है प्रतिनिधि सभाएँ ध्यान देंगी।

(१) उत्सव वार्षिक के स्थान में त्रैमासिक होने चाहियें तथा इन उत्सवों पर केवल दो उपदेशक और दो भजनीक बुलाए जाने चाहिए। (२) उत्सव तीन दिन के स्थान में ६ दिन होना चाहिए। जिस नगर में उत्सव हो, वहाँ रात्रि में केवल ७ से १० तक पुरोगम रहना चाहिये। दिन में उन विद्वानों को आस-पास के ग्रामों में ले जाकर प्रचार की व्यवस्था करनी चाहिये। प्रतिदिन यदि एक ग्राम को भी लिया जाय तो कमसे कम ६ ग्रामों में प्रचार हो सकता है, तथा नवीन आर्य-समाजों की स्थापना भी हो सकती है। उत्सव प्रचार की किसी निश्चित योजना को लेकर मनाए जाने चाहिये।

इस पद्धति से कई लाभ हैं। पहली बात यह है कि वर्ष में एक बार की अपेक्षा चार बार प्रचार हो सकता है। अब प्रचार का क्षेत्र उस नगर तक ही सीमित रहता है, किंतु इस विधि से आस-पास के ग्रामों में भी प्रचार हो सकता है। छह दिन, तक प्रचार रहने से एक निश्चित विचारधारा जनता को मिल सकेगी। रही व्यय की बात, जितना व्यय हम आजकल अपने एक वार्षिकोत्सव और दो कथाओं पर करते हैं, उतने में चार उत्सव भली भांति हो सकते हैं।

स्वास्थ्य-सुधा

मेदवृद्धि (मुटापा)

श्री रामदेवी गुप्ता, विशारदा

मैं अपनी बहनों को आपबीती कहानी सुनाना चाहती हूँ। आशा है, इस कहानी से उनका कुछ भला होगा। मेरी बहुत सी बहनें आज कल स्थूलता अर्थात् मेद वृद्धि रोग से बुरी तरह व्यथित हैं। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों के शरीरों में मेद (चर्बी) स्वभावतः अधिक होता है। इसीलिये थोड़ा भी अवसर मिलने पर स्त्रियाँ शीघ्र ही मोटी हो जाती हैं। मेरी भी यही दशा हुई। मैं बचपन में बहुत दुबली-पतली थी। उसके बाद विवाह होने पर कुछ साधारण मोटी हो गयी, परन्तु जब मैं तीस वर्ष के लगभग पहुँची तो मेरा मुटापा इतना बढ़ गया कि, चलने-फिरने और उठने-बैठने तक में तकलीफ होने लगी। इस उम्र में पहुँच कर एक तो स्त्रियाँ प्रायः वैसे ही मोटी हो जाती हैं, परन्तु मुझे तो खान-पान की बहुत सुविधा थी, घी-दूध खूब मिलता था। मिठाइयां खाने का भी बड़ा शौक था। इसलिये मेरी स्थूलता का तो ठिकाना ही न रहा। सारा शरीर चर्बी से थल-थल करने लगा। मेरी साथिन-संगिनें मेरे शरीर को देख-देख कर हँसती और दिल्लगी उड़ातीं। घर में सास थी नहीं। मेरी माता को मेरे इस रोग के साथ बड़ी सहानुभूति थी। वह कहा करतीं, जाने इसकी बादी क्यों बढ़ गयी है, खाती-पीती तो कुछ है नहीं, न जाने क्यों फूलती जाती है।

मेरे पतिदेव ने मेरी स्थूलता के अनेक इलाज कराये, परन्तु मरज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की। अन्त में एक दिन पूज्य श्री स्वामी परमानन्दजी महाराज से मैंने अपनी सारी कष्ट-कथा कही। उन्होंने बड़े ध्यान से मेरे इस स्थौल्य-रोग की सारी कहानी सुनी और वे बोले—बेटी, निराश या दुखी होने की कोई बात नहीं है। तुम प्रातःकाल शीघ्र उठकर जंगल में टहलने जाया करो। कम से कम एक मील जाओ और एक मील आओ। धीरे-धीरे चार मील रोज घूमने का अभ्यास करलो। इसमें तुम्हें थोड़ी तकलीफ होगी, परन्तु उसकी परवा न करना। एक चक्की मँगाओ, उस पर रोज आटा पीसो। तुम्हारे घर में तो कुआं है, उससे सारे घर के लिये पानी भरना अपना कर्त्तव्य समझो, अपना कोई काम किसी नौकर से न कराओ। अपने कपड़े भी अपने आप ही धोया करो।

खान-पान के सम्बन्ध में उन्होंने बताया कि कुछ दिनों के लिये घी-दूध खाना छोड़ दो। मिठाई भी बहुत ही कम खाओ। अगर घी-दूध बिलकुल बन्द न हो तो कम जरूर करदो। ऐसी चीज न खाओ जिनसे शरीर में चर्बी बढ़ने की अधिक सम्भावना हो।

मैंने पूज्य स्वामीजी के आदेशों का पालन शुरू किया। और नियमपूर्वक सारे काम करने लगी बताया था कि आलू, गेहूँ और चावलों से भी चर्बी बढ़ती है, उनका खाना भी मैंने बन्द कर दिया। जौ-चने की रोटी खाने लगी। और भी स्निग्ध (चिकने) पदार्थ खाने छोड़ दिये। फलतः तीन-चार महीने में मेरी फालतू चर्बी कम होकर शरीर सुडौल और सुन्दर बन गया। मेरी साथिन-संगिन देख कर आश्चर्य करने लगी। सब से अधिक लाभ मुझे शारीरिक श्रम से हुआ। टहलने, चक्की पीसने और कुए से पानी खींचने से चर्बी क्रमशः कम होने लगी और मुझे अपना शरीर हलका-सा प्रतीत हुआ। इस समय मेरी आयु चालीस वर्ष के लगभग है। इस आयु में मैं किसी भी युवती से अधिक काम करती हूँ। लगभग चार मील रोज घूमने का क्रम बराबर जारी है, चक्की चलाये विना तो मुझे चैन ही नहीं पड़ता। खान-पान में पूरे सयम से काम लेती हूँ। प्रायः पौष्टिक भोजन खाना और श्रम न करना ही स्त्रियों को मोटा बना देता है, यह बात मैंने अपने ऊपर देख ली है। यदि मेरी अन्य स्थूल (मोटी) बहनें भी मेरी तरह ही अपनी दिनचर्या बना लें तो वे इस महारोग से शीघ्र ही मुक्ति पा सकती हैं।

जीवन-ज्योति

स्वर्गीय श्री गणेशप्रसाद शर्मा

डाक्टर श्री चन्द्रशेखर शर्मा
[रिटाइर्ड मेडीकल आफीसर]

मेरे स्वर्गीय पूज्य पिता श्री प० गणेशप्रसाद शर्मा ने आर्यसमाज फर्रुखाबाद में रहकर वाणी और लेखनी द्वारा आजन्म वैदिक धर्म की सेवा की। वे मासिक और साप्ताहिक 'भारत सुदशा प्रवर्तक' नामक पत्र का चिरकाल तक सुयोग्यतापूर्वक सम्पादन करते रहे। उस पत्र का नामकरण महर्षि दयानन्द ने ही किया था। स्वर्गीय पिताजी हिन्दी के सुयोग्य लेखक थे, अतएव महर्षि ने चाहा कि वे उनके साथ रहकर वेद-भाष्य के प्रूफ संशोधन करें और वैदिक धर्म प्रचार में सहायता दें। परन्तु पिताजी गृहस्थ भार से दबे होने के कारण इस अलभ्य अवसर से लाभ न उठा सके। श्री स्वामीजी महाराज ने पिताजी को उक्त आशय का पत्र १० दिसम्बर १८८० ई० को लिखा था। आर्यप्रतिनिधि सभा यू० पी० द्वारा गुरुकुल को सिकन्दराबाद से फर्रुखाबाद लाया जाने पर, पिताजी ने बड़े मनोयोग व तत्परता से स्वर्गीय प० भगवानदीन मिश्र, बा० गुलराज गोपाल गुप्त, ला० सूर्यप्रसाद ठेकेदार तथा अन्य कार्यकर्ताओं का हाथ बटाया।

फर्रुखाबाद आर्यसमाज के स्वर्गीय मन्त्री लाला नारायणदास मुख्तार-प्रदत्त दान के ट्रस्टियों में से एक ट्रस्टी पिताजी भी थे। पिताजी ने उस सम्पत्ति द्वारा यज्ञशाला और नारायण आर्य कन्या पाठशाला की स्थापना में पूरी सहायता दी थी तथा उसके संचालन में भी भाग लिया था। यह पाठशाला अब स्थानीय कार्यकर्ताओं के प्रशंसनीय प्रयत्न द्वारा गर्ल्स इण्टर कालेज में परिणत हो गई है। पिताजी ने अपने पचास वर्षीय आर्यसामाजिक जीवन में कई आर्यसमाजों की स्थापना की और अनेक पुस्तक पथा ट्रेक्ट लिखे। उनकी लिखी पुस्तकों में से निम्नलिखित पुस्तकें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं—

होमयज्ञ, द्रोपदी कीचक उपन्यास, नामकरण, ब्राह्मण को भिक्षा-निषेध, पुराणोत्पत्ति, स्त्री-शिक्षा के लाभ, वैदिक विजय, वेद महिमा, आर्य धर्म का महत्व, जीव-विचार, प्रणव-व्याख्या, ईश्वर-सिद्धि, धूम्रपान-दोष और फर्रुखाबाद का इतिहास। इस बृहद् इतिहास में महर्षि के फर्रुखाबाद में रहने का वृत्तान्त और उनका पत्र व्यवहार भी छपा है। पूज्य पिताजी हिन्दी-साहित्य सम्मेलन में भी आमन्त्रित होते थे। उनका सारा जीवन ही सेवामय था। १९३९ ई० में ७५ वर्ष की आयु में उनका देहान्त हुआ।

[ऊपर जिन श्री प० गणेशप्रसाद शर्माजी का परिचय दिया गया है, वे वास्तव में जीवन-भर समाज-सेवा में संलग्न रहे। उनके पुत्र डाक्टर चन्द्रशेखर शर्मा भी, जिन्होंने यह परिचय लिखा है, निरन्तर आर्यसमाज की सेवा में रत रहे। करते सरकारी सेवा हुए जहाँ रहे, वहाँ आर्यसमाज की सेवा भी अवश्य की। अंग्रेज अधिकारियों की आर्यसमाज विषयक क्रूर दृष्टि की उन्होंने कभी परवा नहीं की। अनुचित साधनों से धन लेने की बात कभी उनके मस्तिष्क में नहीं आई। वे लेखक और वक्ता भी अच्छे हैं। यानी सुयोग्य पिता के सुयोग्य पुत्र हैं। —सम्पादक]

सुझाव और सम्मतियाँ

पाकिस्तान के हिन्दू

श्रीकृष्णलाल एडवोकेट

पाकिस्तान में हिन्दुओं पर जो बीत रहा है, उसके बारे में जो समाचार अखबारों में छप रहे हैं, उनको पढ़ने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि पाकिस्तान में हिन्दुओं का हिन्दू बन कर रहना असम्भव है। श्री मण्डल तथा अन्य व्यक्तियों की भी यही राय है कि यह केवल समय का प्रश्न है कि हिन्दू आज मुसलमान हों या कल। उनके लिये पाकिस्तान में रहने के लिये मुसलमान होना अनिवार्य ही है। हिन्दुओं पर जो कुछ पश्चिमी पाकिस्तान में बीता है, वह किसी से छिपा नहीं है। बीसियों हजार हिन्दू स्त्रियों के अपहरण व बलात्कार आदि की कहानी अभी भूली न थी कि उसी प्रकार का हत्याकाण्ड पूर्वी बंगाल में किया गया। जसे पश्चिमी पाकिस्तान के हिन्दुओं ने लुट-खुसट कर और हजारों बच्चों, स्त्रियों, नर-नारियों की भेंट देकर यहाँ (भारत में) शरण ली, उसी प्रकार पूर्वी पाकिस्तान के लोगों को भी करना पड़ा। पर पश्चिमी पाकिस्तान में तबादला आबादी करके इस समस्या को किसी हद तक सुलझा दिया गया था। लेकिन अभागे पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं को यह भी प्राप्त न हुआ। भारत सरकार ने जो 'नेहरु लयाकत' समझौता किया है उसके आधार पर और उसको सफल बनाने की आकांक्षा से वहाँ के आये हुए हिन्दू क साथ भारत में वह सलूक भी न हुआ, जो पश्चिमी पाकिस्तान के हिन्दू को प्राप्त हो सका था।

इनको स्थान की भी यथोचित सुविधा न मिली। न खाने की सुविधा न रोजगार की सुविधा और न वोट देने का अधिकार प्राप्त हुआ। न जाने कितने बच्चे, मर्द और नर-नारी भारतवर्ष में आकर बीमारी और भूख आदि के ग्रास बन गये। हमारे व्यवहार को असहनीय देख कर जैसा कि श्री श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने लिखा है। न जाने कितने हिन्दू यह भावना लेकर पाकिस्तान लौटे कि वहाँ जाकर इसलाम धर्म ग्रहण कर, हिन्दुओं को इनके इस व्यवहार का मजा चखावें। फिर भारत में आवेंगे। यानी वे इस युग के "काला चाँद" बन कर वापस गये। यह अनुमान किया भी जा सकता है कि कितने आदमी खुशी से उन आदमियों में लौट कर जाना पसन्द करेंगे कि जिन्होंने उनकी आँखों के सामने उनकी बहू-बेटियों की बेइज्जती की हो, उनके मकानों को लूटा हो, उनमें आग लगाई हो, उनके बच्चों का कतल किया हो, और वह बिना किसी कानूनी कार्रवाई के आनन्द से विचरते हों। उनमें जाकर घुसना, उनकी खुशामद करना एक आदमी की गिरावट की सीमा है। पर वे क्यों जा रहे हैं? केवल यही बात ध्यान में आती है कि उनके लिए भारत में स्थान नहीं है। १७ जनवरी १९५१ ई० की 'अमृत-बाजार-पत्रिका' की सम्पादकीय टिप्पणी में लिखा था कि उड़ीसा में २० हजार से से केवल १० हजार बसाये जा सके हैं बाकी वहाँ से दुःखों के कारण भाग रहे हैं या भाग गये हैं। ८०० के लगभग मर गये हैं, बहुत-से कैम्प छोड़कर रेल के स्टेशन पर जा पड़े है। १४ दिसम्बर १९५० की 'अमृतबाजार पत्रिका' में पृष्ठ २ के अन्तिम कालम में जो पूर्वी बंगाल सेण्ट्रल सहायता समिति कानपुर के मन्त्री ने पूर्वी बंगाल के शरणार्थियों का हाल छपवाया था उससे पता चलता है कि बहुत-से शरणार्थी जो अच्छे घरानों के थे और किसी से माँग नहीं सकते थे कई-कई रोज से भूखे मर रहे हैं, पर सरकार की ओर से कोई सहायता न मिली और उनके नाम तक रजिस्टर में दर्ज न हो सके। ७ जनवरी १९५१ की 'अमृतबाजार पत्रिका' सफे ५ पर छपा है, शरणार्थियों के लिये १९५१ ई० में मकान बनाने की स्कीम के सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार ने बंगाल, बिहार व आसाम को छोड़कर और सब प्रान्तों की सरकारों से यह माँग की है कि जो शरणार्थी आपके यहाँ कैम्पों, धर्मशालाओं और सार्वजनिक मकानों में या सड़कों के किनारे पड़े हैं उनके लिये मकान बनाने की स्कीम तैयार करें। इससे पता चलता है कि बंगाल, बिहार व आसाम जहाँ अधिकांश पूर्वी बंगाल के शरणार्थी हैं उनको उचित स्थान प्राप्त न हो सका। यह तो भारत में उनकी दशा है। उधर पाकिस्तान में हमारे हिन्दुओं पर कैसी बीत रही है उसकी एक मिसाल देहली के अंग्रेजी अखबार (साप्ताहिक) 'ऑर्गनाइजर' ११ दिसम्बर १९५० ई० के सफा १३ पर श्री शिवदास बनरजी ने छपवाई है। उसको पढ़ कर पत्थर का हृदय भी मोम बन जाता है और आँखों से खून के आँसू बरसने लगते हैं। इस अवस्था को देखते हुए आर्य-सार्वदेशिक सभा देहली से प्रार्थना है कि वह सरकार पर जोर दे और आन्दोलन करे कि पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं को भी तबादला आबादी द्वारा भारत में रक्खा जावे। जिससे उनकी मान-मर्यादा व धर्म की रक्षा हो सके। सम्भव हो तो पूर्वी बंगाल दिवस सारे भारतवर्ष में मना और प्रस्ताव पास करा कर सरकार की सेवा में भेजें ताकि जनता की आवाज का पता सरकार को लगे।

—:—

'पार्टीबाजी'

श्री रामबहादुर मुख्तार

मनुष्य-समाज में विचारों की विभिन्नता के कारण अनेक वर्गों का बन जाना स्वाभाविक है। उन्हीं अनेक वर्गों को पार्टी भी कहा जा सकता है। परन्तु पार्टीबाजी एक दूषित शब्द समझा जाता है। ऐसा क्यों? वर्ग, समुदाय या पार्टियों में कुछ तो मनुष्य मात्र, देश विशेष या जाति विशेष के कल्याण के निमित्त होती हैं, और किन्हीं से अहित या हानि होती है। डाकुओं के समुदाय, चोर या ठगों के गिरोह सहज में समझ में आने वाले अहितकर हैं। परन्तु हमारे देश में इस से भी अधिक भयंकर हानिकर विचार वाला समुदाय है, जिसका प्रत्यक्ष में कोई संगठित रूप प्रतीत नहीं होता, परन्तु बिना विधान, बिना प्लेटफार्म, तथा बिना किसी निश्चित योजना के अपने देश में वह हानिकारक समुदाय निरन्तर कार्य कर रहा है। फलतः हमारा देश दिन-प्रतिदिन अवनति के गर्त में गिरता चला जाता है। ऐसे दूषित समुदाय के कार्यकर्ता देश के उन उपयोगी वर्गों, समुदायों तथा संस्थाओं में घुस कर पार्टियां बना लेते हैं जो देश हित के लिये संगठित हुई हैं और जिन्होंने देश-कल्याण के लिये महान तप-त्याग किया है।

ऐसा वर्ग देश को उन्नति-पथ पर लेजाने वाले अच्छे से अच्छे साधन को असफल कर देता है, त्यागी व तपस्वियों के स्वच्छ मस्तिष्कों से निकली सुन्दर से सुन्दर योजनाओं को, भी अव्यावहारिक बना देता है। ऐसे समुदाय का एक मात्र मोटो है 'स्वार्थ' 'व्यक्तिगत-स्वार्थ'। आज की पार्टियाँ स्वार्थ-परायण हैं, इसी कारण पार्टीबाजी दूषित शब्द समझा जाता है।

व्यक्तिगत स्वार्थ में अन्धे व्यक्ति और स्वार्थ में लीन पार्टियाँ देश, जाति तथा मनुष्य मात्र के कल्याण की बात सोच ही नहीं सकते। स्वार्थ के ही कारण हमारा देश परतन्त्र हुआ था, इतिहास साक्षी है। कैकई के व्यक्तिगत स्वार्थ के कारण राम लक्ष्मण और सीता को चौदह वर्ष वन में रहना पड़ा और देश की जनता दुखी रही। रावण के व्यक्तिगत स्वार्थ के कारण लंका-दहन हुआ, कौरवों के स्वार्थ के कारण महाभारत युद्ध हुआ, पृथ्वीराज के व्यक्तिगत स्वार्थ के कारण जयचन्द देशद्रोही बना और जयचन्द के स्वार्थ के कारण भारत देश ने परतन्त्रता की बेड़ी पहनी। ब्राह्मण वर्ग के स्वार्थ के कारण देश में सामाजिक ह्रास हुआ, छूतछात का जन्म हुआ, अविद्या बढ़ी, संकीर्णता उत्पन्न हुई और अनेक जातियों व उप-जातियों ने जन्म लिया, क्षत्रियों के स्वार्थ से देश में छोटी छोटी रियासतों का जन्म होकर राज-नैतिक पतन हुआ, वैश्यों के स्वार्थ से देश में मंहगाई बढ़ी तथा अन्न और कपड़े की न्यूनता प्रतीत होने लगी। जिन्ना व मुसलिम लीग के स्वार्थ के कारण देश का बंटवारा हुआ।

फिर भी महर्षि दयानन्द के पुण्य प्रताप, विश्व वन्द्य महात्मा गांधी के तपत्याग, सुभाषचन्द्र का

महा बलिदान तथा अनेकों वीरों की आहुतियों के फल-स्वरूप जैसे तैसे देश को स्वतन्त्रता देवी के दर्शन हुए। परन्तु देश के स्वतन्त्र होते ही स्वार्थ के पूर्व संस्कार, जो गुलामी के कारण बने थे और जिनके कारण देश कई शताब्दियों तक परतन्त्रता की यातना सहता रहा एक बार फिर उभर आये और देश में स्वार्थ पर अवलम्बित पार्टीबाजी का साम्राज्य हो गया जिसके कारण अभी तक सुख-शान्ति तथा समृद्धि के दर्शन कठिन प्रतीत होते हैं।

पार्टीबाजी से जहाँ देश तथा जाति की हानि होती है, वहाँ वह संस्था स्वयम् भी नष्ट हो जाती है जो पार्टीबाजी का शिकार होती है। किसी पार्टी की उन्नति का मूलमन्त्र यह समझा जाता है कि अपनी पार्टी के व्यक्ति की ही हर प्रकार से तरफदारी की जावे, चाहे वह व्यक्ति कितना ही अयोग्य, पतित अथवा गिरा हुआ हो। और पार्टी से बाहर का व्यक्ति कितना ही योग्य, सदाचारी, परोपकारी व विद्वान हो, उसको प्रोत्साहन न दिया जावे। परन्तु जरा विचारपूर्वक देखने से प्रतीत होता है कि यही सिद्धान्त अत्यन्त घातक है।

स्वार्थ परायण पार्टी में धीरे-धीरे प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थी हो जाता है जिससे पार्टी में धीरे धीरे अनेक पार्टियाँ जन्म ले लेती है। और कुछ स्वार्थपरता को देखकर अलग हो जाते हैं। इस प्रकार की हर पार्टी में शनैः-शनैः अयोग्यता का मान और योग्यता का अपमान बढ़ने लगता है। क्योंकि यह मानी हुई बात है कि जन-समुदाय में अनुपात में योग्य व्यक्ति कम होते हैं। नेता अपनी पार्टी को शक्तिशाली बनाने तथा अपने व्यक्तिगत स्वार्थ-निमित्त अपने नेतृत्व को कायम रखने के लिये हां में हां मिलाने वाले अयोग्य व्यक्तियों को अपने समुदाय में मिलाया करते हैं। और ऐसे व्यक्तियों की सहानुभूति प्राप्त करते रहने के लिये और उनको खुश रखने के लिये देश व जन-हित को न्योछावर करके उनको ऐसे पदों पर आसीन करना पड़ता है कि जिसके वे सर्वथा अयोग्य होते हैं। फल यह होता है कि शनैः-शनैः काम बिगड़ते चले जाते हैं और जनता में असन्तोष फैलता जाता है। आपस में फूट बढ़ने लगती है, और एक पार्टी में अनेकों पार्टियाँ बन जाती हैं। अपनी-अपनी पार्टी और अपने-अपने नेतृत्व को कायम रखने के लिये जो-जो अनैतिक कार्य किये जाते हैं वे अत्यन्त ही घृणित होते हैं। परिणाम यह होता है कि इस प्रकार उपयोगी से उपयोगी तथा अत्यन्त शक्तिशाली पार्टी भी विनाश को प्राप्त होजाती है।

होना क्या चाहिये ?

यदि कोई वर्ग, समुदाय या पार्टी जीवित रहकर मनुष्य समाज की सेवा करना चाहती है तो उसको अपनी शुद्धि करनी होगी। शुद्धि करने के लिये उसे योग्यता का मान और अयोग्यता का अपमान करना होगा। अर्थात् योग्य व्यक्तियों का संगठन करना आवश्यक है, और अयोग्य व्यक्ति को अपने में से निकाल फेंकना ही श्रेयस्कर है। योग्यता की कसौटी तो सत्यता, सदाचार, परोपकार, न्याय, विद्वत्ता आदि गुण हैं जिनको एक शब्द में धर्म के नाम से पुकार सकते हैं। धर्म वही है जिस पर चल कर एक व्यक्ति व समाज अपने को मनुष्य मात्र, देश व जाति का हितैषी सिद्ध कर सके, जो स्वार्थ से परे है। अतः प्रत्येक पार्टी जो अपने को पार्टीबाजी के दूषित नाम से बचाना चाहती है और वास्तव में देश, जाति के कल्याण के लिये जीवित रहना चाहती है उसका कर्तव्य हो जाता है, कि झूठे, अनाचारी, स्वार्थी, भ्रष्टाचारी आदि अवगुणों वाले अर्थात् अधर्मी व्यक्तियों की निसंकोच, तथा निर्भीकता से अपने में से छटनी कर दें, चाहे वे व्यक्ति कितने ही बड़े पद पर हों, और धर्मात्मा व्यक्ति जहाँ भी मिलें उनको अपनाना चाहिये। अन्यथा मनु महाराज के निम्न श्लोक के अनुसार हमारे देश की वर्तमान हीन दशा बनी है, रहेगी।

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते,
पूज्यानां च विमाननम्
त्रीणितत्र भविष्यन्ति
दुर्भिक्षम्, मरणम् भयम्।

जहाँ न पूजने योग्य व्यक्तियों की पूजा की जाती है और पूजने योग्य सद्गुणी जनों का अनादर तक होता है, वहाँ दुर्भिक्ष, मरण और अनेक प्रकार के त्रासों का होना निश्चय ही समझिये।

[आठवें पृष्ठ का शेष]

जिसमें घर की स्त्रियाँ लड़के के इस विचार की आलोचना न करती हों? यदि लड़का कुछ स्वतन्त्र विचार वाला हुआ व किसी की आलोचना की परवा न कर उसने अपने विचार कार्य रूप में परिणत कर दिये तो बस व्यंग्यों की और कटूक्तियों की इतनी झड़ी लग जाती है कि उस दम्पती के लिये वह घर अशान्ति का केन्द्र बन जाता है। इस पर भी विशेषता यह कि व्यंग्य या आलोचना का केन्द्र बेचारी वधू ही होती है, पुरुष को कोई दोष नहीं देता। चाहे एक बार घर के पुरुष अर्थात् लड़के के पिता आदि इस बात को स्वीकार कर भी लें कि उनका लड़का ही बहू की स्वतन्त्रता के लिये अधिक उत्तरदायी है, तथापि लड़के की मा सदैव बहू को ही दोष देती है। सदैव यह कहती है "इसी बहू ने मेरे बेटे को बिगाड़ दिया"। कोई-कोई अशिक्षित सास वो ऐसे-ऐसे अपशब्द बहू के लिये प्रयोग करती है कि सुने नहीं जाते। "कलमुँही, जादूगरनी है। जादू कर दिया है, मेरे बेटे पर आते हीं"। अब बताइये नारी नारी का अपमान करती है अथवा पुरुष? मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं कि बहू का दोष बिलकुल नहीं होता। नहीं, अपराध चाहे किसी का हो, परन्तु झगड़ा सदैव सास बहू का ही होता है, ससुर-बहू का नहीं। इसी प्रकार देवरानी-जिठानी, नन्द-भोजाई, सौत-सौत आदि का झगड़ा भी कम प्रचलित नहीं है। सम्मिलित परिवार-प्रथा तोड़ने में भी अधिक हाथ घर की स्त्रियों का ही रहता है। एक घर में चार चार चूल्हे जलते देखे जाते हैं, जिसके फल स्वरूप न जाने कितने घर बर्बाद होगये हैं। वे थोड़ी आमदनी वाले प्राणी जिनके लिये घर से पृथक् रहकर निर्वाह करना कठिन है, सम्मिलित रहने पर खूब प्रसन्नतापूर्वक जीवन-यापन कर सकते हैं, लेकिन घर की स्त्रियाँ मेल में रह सकें तब न। कहाँ तक गिनाया जाय, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्त्रियाँ ही स्त्रियों के मार्ग में, रुकावट डालती हैं। इतने पर भी यह कहना कि स्त्रियाँ को पुरुषों के विरुद्ध क्रान्ति करनी चाहिये कहाँ तक ठीक है, यह मेरी समझ में नहीं आता।

मैं मानती हूँ कि स्त्रियाँ वास्तव में इतनी अधोगति को पहुँच चुकी हैं कि हम प्राचीन नारी की आधुनिक नारी से तुलना करें तो आकाश-पाताल का अन्तर दिखाई देगा। आज की नारी प्राचीन नारी की प्रतिच्छाया मात्र मालूम होती है। कहाँ वह शिक्षिता, समाज में पुरुषों के बराबर की अधिकारिणी, प्राचीन आर्य नारी, जिसका आदर करना धार्मिक सामाजिक व राजनैतिक प्रत्येक दृष्टि में सर्व प्रथम समझा जाता था; और कहाँ आज की असहाय, पैरों की जूती से तुलना की जाने वाली, केवल पुरुषों के मनोविनोद की सामग्री नारियाँ। कितना महान् अन्तर है! अपनी इस अधम स्थिति को देखकर रोष आना नारी जाति के लिये स्वाभाविक है। यह ठीक है और यह भी ठीक है कि नारी को इस दशा में पहुचाने का बहुत कुछ उत्तरदायित्व पुरुषों पर भी है, लेकिन फिर भी केवल पुरुषों का विरोध करने से काम नहीं चलेगा, उनका सहयोग पाना होगा। हमें अपने आपको नहीं बल्कि अपनी पुत्रियों को व अपनी छोटी बहनों को सुधारना होगा, उनके लिये उन्नति का मार्ग बनाना होगा तभी आने वाली नारी जाति की उन्नति हो सकती है। नारी ही जब तक नारी की मित्र हितैषिणी न बनेगी तब तक वह अपने ऊपर से यह कलंक न मिटा सकेगी कि "जहाँ चार स्त्रियाँ बैठती हैं वहीं लड़ती हैं।'

स्व० शास्त्रीजी का पुस्तकालय

श्री पं० बनारसी दास चतुर्वेदी

किसी भी साहित्यिक के लिये उसके पुस्तकालय की बिक्री बड़ी भारी दुर्घटना है । भुक्तभोगी होने के कारण हम उस हार्दिक वेदना का अनुमान कर सकते हैं, जो अपनी लाइब्रेरी के वियोग से किसी साहित्यप्रेमी को होती होगी। सुप्रसिद्ध अमरीकन लेखक वाशिंगटन इर्विंग ने अपनी रेखाचित्र विषयक पुस्तक 'स्कैच बुक' में एक छोटी-सी कविता उद्धृत की है, जो एक विद्वान् ने (शायद उसका नाम रास्को था) अपने पुस्तकालय के वियोग पर लिखी थी। बड़े दुःख के साथ उसने लिखा था—"स्वर्ग में एक बात तो अच्छी होगी कि इस प्रकार के वियोग तो न सहने पड़ेंगे जैसा अपनी प्रिय पुस्तकों के बिकने पर मुझे सहना पड़ा।"

अभी उस दिन अपने नगर फ़ीरोज़ाबाद में ही आयसमाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् और प्रचारक स्वर्गीय डाक्टर कशवदेव शास्त्री का पुस्तकालय देखकर हृदय में नाना प्रकार के भाव उत्पन्न हुए। शास्त्रीजी के दर्शन करने का सौभाग्य हमें इसी नगर में प्राप्त हुआ था। उनके द्वारा सम्पादित 'नवजीवन' में ही हमारा प्रथम लेख सन १९१२ में प्रकाशित हुआ था और 'अमरीका में कशवदेव शास्त्री' नामक एक पुस्तक भी हमने लिखी थी। कभी राजपुर पहुंचकर इस पुस्तकालय को देखने की हमारी अभिलाषा भी थी, पर वह पूरा नहीं होपाई और अब वह पुस्तकालय अपने नगर में ही आगया। बन्धुवर हजारीलालजी जैन के हम हृदय से कृतज्ञ हैं। उन्होंने शास्त्रीजी के पुस्तकालय की रक्षा तो करली। दूसरा भाव हमारे हृदय में यह आया कि क्या आयसमाज इतना निर्जीव, कल्पनाविहीन और कृतघ्न होगया है कि वह इस पुस्तकालय को लेकर उसे डाक्टर केशवदेव शास्त्री के स्मारक के रूप में स्थापित न कर सके! खुद फ़ीरोज़ाबाद में एक डी० ए० वी० हाईस्कूल है, यहां का आर्यसमाज बहुत प्राचीन और काफी प्रतिष्ठित भी माना जाता है. और यह नगर भी कोई निर्धन नगर नहीं है।

क्या यह असम्भव है कि आर्यसमाज इस पुस्तकालय को श्री जैन महोदय से प्राप्त कर ले? स्वयं श्री हजारीलालजी उसका सकल्प कर चुके हैं और वह एक पैसा भी उससे नहीं लेना चाहते। हाँ, उनकी हार्दिक अभिलाषा यह अवश्य रही है कि नगर में एक आधुनिकतम अंग्रेजी लाइब्रेरी भी हो। सर्वोत्तम उपाय तो यह होगा कि स्थानीय आर्यसमाज इस पुस्तकालय को श्री जैन महोदय से लेले और इसमें उनका जितना व्यय हुआ है उतना भारतीभवन पुस्तकालय की अंग्रेजी शाखा के लिए प्रदान कर दे। इस प्रकार हमारे नगर में दो अंग्रेजी पुस्तकालय हो जाएंगे। जबतक अंग्रेजी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बनी हुई है, तबतक उसका अध्ययन अनिवार्य है और साहित्य की दृष्टि से तो अभी बहुत वर्षों तक अंग्रेजी का सहारा हमें लेना ही पड़ेगा। सव श्री राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री, मदन मोहन सेठ, चाँदकरण शारदा, रामनारायण मिश्र, गंगाप्रसाद उपाध्याय, पूर्णचन्द्र एडवोकेट इत्यादि प्रतिष्ठित आर्य नेताओं से हमारी करबद्ध प्रार्थना है कि वे इस पुण्य कार्य को यथासम्भव शीघ्र ही सम्पन्न करदें। डेढ़ दो हजार रुपए इकट्ठे कर लेना उन के लिए कोई कठिन काम न होगा। शास्त्रीजी का वह चित्र भी, जिसका उद्घाटन महात्मा गाधी ने किया था इस पुस्तकालय के साथ ही है। शुभस्य शीघ्रम्।

——

साहित्य-सौरभ

वोट भगवान तेरी जय हो

श्री हरिशङ्कर शर्मा

तेरी विभुता का छाया विश्व पै प्रभाव अति
तेरी प्रभुता से कभी लोक को न भय हो
तेरी सम्पदा से ही मिनिस्टर बने हैं सब
वही 'राष्ट्रपति' जिस पर तू सदय हो
तू ही रोपता है युद्ध, तू ही रोकता है युद्ध
तेरी ही दया से कीर्ति-कोष का न क्षय हो
देता मुँह-माँगा फल भक्त नर-नारियों को
धन्य धन्य वोट भगवान्! तेरी जय हो

———

वेदवाणी

सम्पादक—विद्वद्वर श्री प० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु. वार्षिक मूल्य ४॥) प्राप्ति-स्थान वेदवाणी-कार्यालय, पो० अजमतगढ़ पैलेस, बनारस नं० ६

'वेदवाणी' का जन्म अब से तीन वर्ष पूर्व बनारस में ही हुआ था। इसके सम्पादक थे अरबी-फारसी और उर्दू के मशहूर आलिम प्रो० श्री प० महेशप्रसादजी। अब यह पत्रिका श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट ने लेली है और श्री जिज्ञासुजी ने उसका सम्पादन-भार सँभाला है। जिज्ञासुजी वेदों के प्रसिद्ध विद्वान् हैं। शिक्षा-क्षेत्र में वे आर्ष प्रणाली के सबल समर्थक और प्रौढ़ प्रवर्त्तक हैं। अत एव 'वेदवाणी' में उनकी इस विमल विचार-धारा की अव्याहत गति के स्पष्ट दर्शन होते हैं। जिज्ञासुजी के सम्पादन में पत्रिका के कई अङ्क प्रकाशित होचुके हैं। सब ही वेद सम्बन्धी विशुद्ध विचारों से परिपूर्ण हैं। वेदवाणी की लेखक मण्डली में आर्यसमाज के प्रायः सभी वैदिक विद्वान् सम्मिलित हैं। यह पत्रिका प्रत्येक दृष्टि से आदरणीय अत-एव अपनाने योग्य है। हम आर्य-साहित्य-पत्रिका का अभिनन्दन तथा उनकी उन्नति की शुभकामना करते हैं।

——

'गुलदस्ता'

सम्पादक—श्री बूलचन्द बी० राजपाल और संयुक्त सम्पादक श्री विद्याशङ्कर शर्मा, वार्षिक मूल्य १०) मिलने का पता—गुलदस्ता-कार्यालय, आगरा।

हिन्दी में 'गुलदस्ता' अपने ढग का निराला पत्र है। उसी शैली पर जिस पर अंग्रेजी में 'डाइजेस्ट' निकलते हैं। गुलदस्ता का प्रथम अंक ही बहुत सुन्दर और समीचीन है। छपाई, सफाई और सुन्दरता की दृष्टि से तो यह नयनाभिराम है ही, लेखों के विचार से भी बहुत महत्वपूर्ण है। देश-विदेश के अनेक विद्वानों के विविध विषयों पर लेख हैं। सब ही लेख उपयोगी, ज्ञानवर्द्धक और मनोरंजक हैं। बीच-बीच में सुन्दर चित्र हैं। शीर्षकों के आकर्षक ब्लाक विशेष रूप से बनवा कर छापे गये हैं। मुख पृष्ठ पर 'गुलदस्ता' का तिरंगा चित्र है। हिन्दी में हम ऐसे अभिनव साहित्यिक पत्र का अभिनन्दन करते हैं। आशा है, यह शीघ्र ही लोकप्रिय सिद्ध होगा। गुलदस्ता के सम्पादक श्री राजपाल जी पुराने और अनुभवी पत्रकार हैं। वे सिन्ध में 'पत्रकार के रूप में अच्छी ख्याति प्राप्त कर चुके हैं, अतः उनके सम्पादकत्व में इस प्रकार के पत्र की सफलता एवम् उन्नति निश्चित है। हम चाहते हैं कि 'गुलदस्ता' के सुयोग्य सम्पादक महाशय अपने पत्र में बंगला, मराठी, गुजराती, तैमिल, तेलगू, उर्दू आदि भारतीय भाषाओं के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध साहित्यकारों का विचारधारा देने का प्रबन्ध करें। इससे जहाँ पारस्परिक साहित्यिक सम्बन्ध स्थापित होगा, वहाँ एक भाषा वाले दूसरी भाषाओं के विद्वानों से परिचित भी हो सकेंगे। हम 'गुलदस्ता' की सफलता के हृदय से अभिलाषी है। आशा है, वह उन्नति-पथ पर उत्तरोत्तर अग्रसर होगा।

——

आर्य्यजगत

—नगर आर्यसमाज आगरा का वार्षिकोत्सव १ से ८ अप्रैल तक समारोहपूर्वक मनाया गया। २६ से ३१ मार्च तक नगर के विभिन्न महल्लों में प्रभातफेरी हुई। रात्रि को प्रचार हुआ। १ अप्रैल को नगरकीर्त्तन-जुलूस निकला। सर्व श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय, प० ज्ञानेन्द्रजी सूफी, प० वाचस्पति शास्त्री, प० रामदयालु शास्त्री, प० ओङ्कार मिश्र शास्त्री, बा० पूर्णचन्द एडवोकेट आदि विद्वानों के व्याख्यान और श्री धर्मदत्त 'आनन्द' आदि के भजन हुए। सम्मेलन हुए। आगरा जिलोपसभा का निर्माण हुआ उपस्थिति बहुत काफी होती थी।

आ० स० वृन्दावन द्वारा शिवरात्रि-महोत्सव तथा दयानन्द-प्रचार सप्ताह धूम-धाम से मनाया गया। आ० स० का उत्सव ३० ३१ मार्च को हुआ। कुं० जसवन्त सिंहजी और स्वा० प्रेमानन्दजी के भजनों तथा उपदेशों का अच्छा प्रभाव पड़ा।

—आ० स० नजीबाबाद द्वारा आर्यसमाज स्थापना-दिवस बड़े उत्साहपूर्वक मनाया गया। श्री बनारसी दासजी के सभापतित्व में सार्वजनिक सभा हुई, जिसमें सर्वश्री श्रीचन्द्रजी देवेन्द्र कुमारजी आर्य, क्रान्तिकुमारीजी आदि के भाषण हुए। समाज का कार्य बड़े उत्साह से चल रहा है।

—आ० स० तिवाया (सहारनपुर) का पाँचवां वार्षिकोत्सव २२ से २५ मार्च तक मनाया गया। प० श्याम शर्मा, कुं० जोरावरसिंहजी, चौ० कबूलसिंहजी, स्वा० सदानन्द जी आदि के प्रभावशाली व्याख्यान और भजन हुए।

—आ० स० नगर (बम्बई) का वार्षिकोत्सव ३, ४ तथा ५ अप्रैल को बड़े समारोहपूर्वक मनाया गया। श्री प० लक्ष्मण राव ओगले के महत्वपूर्ण भाषण तथा प० पन्नालाल पीयूष के सुन्दर भजन हुए। बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा।

—शान्ति आश्रम लोहरदगा (राँची) में ७ अप्रैल को आर्यसमाज-स्थापना-दिवस तथा विक्रमोत्सव उत्साहपूर्वक मनाया गया। होलिकोत्सव भी मनाया गया। हिमापीढ़ी राँची में आदि वासियों में प्रचार किया गया।

—आ० स० कासगंज में आ० स० स्थापना-दिवस मनाया गया। हवन और भजन हुए। आ० स० के पुरोहित प० श्यामलाल शास्त्री सख्त बीमार हैं। परमात्मा उन्हें आरोग्य प्रदान करें।

—आ० स० औरंगाबाद (सहारनपुर) का उत्सव समारोहपूर्वक मनाया गया। श्री प० अलगूराय शास्त्री की उपस्थिति का जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ा।

—सुल्तानपुर में श्री एच० पी० वारस जज ने अपने बंगले पर राजकीय अधिकारियों तथा नगर के प्रतिष्ठित पुरुषों को आमन्त्रित कर होलिकोत्सव मनाया। यज्ञ हुआ और प० विन्ध्यादीनजी का भाषण हुआ। जज साहब ने स्वयं गीता-पाठ किया और आगत सज्जनों के चन्दन लगाया। जनता पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा।

—६ अप्रैल को टीकरी (झाँसी) में जन्म के मुसलमान-परिवार की शुद्धि श्री स्वा० दिव्यानन्दजी सरस्वती द्वारा सम्पन्न हुई। श्री बाबू गंगाराम आर्य का प्रभावशाली भाषण हुआ। इस शुद्धि में जनता ने काफी दिलचस्पी ली। झाँसी से ७० व्यक्ति साइकिलों द्वारा सम्मिलित हुए थे।

—आ० स० अरनियां (बुलन्दशहर) का वार्षिकोत्सव १५, १६ तथा १७ मार्च को धूमधाम से मनाया गया। महात्मा आनन्दस्वामीजी, कु० सुखलालजी आर्य मुसाफिर, प० देवप्रकाश शास्त्री, कु० भद्रपालजी, ठा० आत्माराम जी, ठा० सुवर्णसिंहजी, स्वा० सत्यव्रतजी आदि के प्रभावशाली व्याख्यान तथा मनोहर भजन हुए। इसी अवसर पर स्थानीय वेदविद्यालय का उत्सव मनाया गया। इसके संस्थापक शास्त्रार्थ महारथी श्री प० अमरसिंहजी हैं।

—आ० स० अजीतमल (इटावा) में ७ अप्रैल को आर्यसमाज-स्थापना-दिवस मनाया गया। प० रामलखनजी, प० जगननारायण जी और बा० लक्ष्मीदत्तजी के भाषण हुए।

—आर्यसमाज रम्पुरा (फतेहगढ़) ने दयानन्द-सप्ताह तथा होलिकोत्सव समारोहपूर्वक मनाये। यह समाज चौ० अंगदसिंहजी की मृत्यु पर शोक-सहानुभूति प्रकट करता है। परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

—आ० स० अतिसूया प्रयाग ने होलिकोत्सव, नव सवत्सर तथा आर्यसमाज-स्थापना-दिवस समारोहपूर्वक मनाये। विदुषी महिलाओं के भाषण और भजन-गान हुए। बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा।

—शोक है कि २५ मार्च ५१ को कु० खड्गपालसिंह उपदेशक लुहारा (अलीगढ़) की माताजी का देहान्त हो गया। अन्त्येष्टि संस्कार वैदिक रीति से हुआ।

—आ० स० सिमरिया (हरदोई) कुछ शिथिलता के पश्चात् पुनः अपना कार्य उत्साहपूर्वक करने लगा है।

—आ० स० हलद्वानी का वार्षिकोत्सव ३ से ५ अप्रैल तक उत्साहपूर्वक मनाया गया। सर्व श्री ठा० अमरसिंहजी, प० अमरनाथजी, कु० सुखलालजी आदि विद्वानों के प्रभावशाली भाषण तथा प० देवरामजी, प० ज्ञानेन्द्र जी, प० शालग्रामजी आदि के भजन हुए।

—हनुमानगढ़ (बीकानेर) निवासी श्री भारतकुमारजी वकील ने कौटुम्बिक सम्बन्ध त्याग कर आर्यसमाज की सेवा का पवित्र व्रत लिया है। आप अब सारा जीवन समाज-सेवा में ही अर्पण करेंगे।

निर्वाचन

—आगरा जिला उपसभा-प्रधान—श्री पूर्णचन्द जी एडवोकेट और मन्त्री श्री बा० मोहन लाल जी आर्य।

—आ० स० दातागज (बदायूँ)- प्रधान श्री बा० सियाराम गुप्त और मन्त्री-श्री स्वा० स्वरूपानन्द जी।

—आ० स० फुलैरा (जयपुर)- प्रधान-श्री शम्भुनाथ एडवोकेट और मन्त्री - श्री जोरावरसिंह भदौरिया।

—आ० स० अलमोड़ा-प्रधान- ठा० रतनसिंह एम० ए० और मन्त्री-प० टीकमसिंह जी।

—आ० स० बृन्दावन-प्रधान-श्री आर्येन्द्रजी वेदशिरोमणि और मन्त्री-श्री शिवदत्त शास्त्री।

—आ० म० राजा का ताल (आगरा)-प्रधान-म० महाराजसिंहजी और मन्त्री-म० महताबसिंहजी।

—आ० स० नवाबगज-प्रधान-श्री रामकिशोरजी और मन्त्री-श्री रामकृष्णजी।

—जिलोपसभा अलीगढ-प्रधान- ठा० साहबसिंहजी और मन्त्री- ठा० नाहरसिंहजी।

—आ० म० कमालगज-प्रधान- डाक्टर हरासिह राठौर और मन्त्री-श्री सियाराम गुप्त।

— आ० स० याकूतगज (फतेहगढ़)-प्रधान-श्री रामदास आर्य और मन्त्री-श्री रामचन्द्रजी।

—आ० स० रम्पुरा (फतहगढ)- प्रधान-चौ० माखनलाल जी और मन्त्री-श्री रामप्रसाद आर्य।

—जिला आर्य उपप्रतिनिधि सभा, लखनऊ, प्रधान-श्री दवीप्रसाद जौहरी और मन्त्री-श्री वीरसेन आर्य।

आ० स० मिटौली (बदायूँ)- प्रधान- म० कोमलसिह जी और मन्त्री-म० मोहनलाल आर्य

सार-सूचनाएं

—'राजधम' पुस्तक के पृष्ठ ८१ पर आर्यसमाज की स्थापना सर्व प्रथम १८७५ ई० राजकोट मे हुई छपी है, परन्तु 'सार्वदेशिक, बम्बई में सर्व प्रथम स्थापना लिखता है, कौनसी बात सत्य है ?

रामकृष्ण आर्य,
मन्त्री आ० स० अजीतमल।

—आ० स० पुरवा (उन्नाव) को श्री स्वा० अमृतानन्दजी के पते की आवश्यकता है।

—सिकन्दराबाद गुरुकुल मे संस्कृत,हिन्दी तथा अंग्रेजी पढाने की सुन्दर व्यवस्था होगयी है।

मुख्याधिष्ठाता।

—मेरे पास फ़ारसी की पुरानी पुस्तकें है। सौ वर्ष से भी अधिक पुरानी। कुछ पुस्तकें अश्व-विद्या की हैं। यदि कोई संस्था या सज्जन चाह तो मुझे लिखे।

गगाप्रसाद आर्य, भवानी-भवन,
बलिरामनगर (एटा)

—अशोकपुर से श्री आर० एन० शर्मा ने मुझे एक पत्र लिखा है। अशोकपुर का डाकघर और जिला क्या है ?

देवीप्रसाद जौहरी,
आ० प्र० सभा, लखनऊ।

—ब्र० श्री उषर्बुध के पते की आवश्यकता है।

मन्त्री, आर्यसमाज फतेहगढ।

उत्सव-सूचनाएँ

—आ० स० बोरना (अलीगढ़) का ३६ वाँ उत्सव १९, २० तथा २१ मई को होगा।

—आ० स० जमलार्जुनपुर (बहराइच) का उत्सव १६ से २२ मई तक मनाया जायगा।

—आ० स० फतेहगढ़ का उत्सव २६, ३० अप्रैल और १ मई को मनाया जायगा। २६ अप्रैल को नगर कीर्तन होगा।

आर्य शिक्षा सम्मेलन

उत्तर प्रदेश में लगभग ३०० आर्य - शिक्षण - संस्थाये अर्थात् डी० ए० वी० कालेज व स्कूल तथा आर्य कन्या महाविद्यालय व पाठशालाएँ हैं। इन सब के सचालकों तथा शिक्षकों का एक सम्मेलन शिक्षण सम्बन्धी समस्याओं पर विचार करने के लिये २२ अप्रैल १९५१ को श्री दयानन्द महाविद्यालय (डी० ए० वी० कालिज) लखनऊ में होगा, श्री चुन्नीलाल साहनी पूर्व संचालक शिक्षा विभाग से सभापति का आसन ग्रहण करने के लिये प्रार्थना की जा रही है। आर्य समाजो के प्रतिनिधि इस सम्मेलन में भाग ले सकगे।

देवीप्रसाद जौहरी
अधिष्ठाता शिक्षा विभाग

भारतवर्षीय आ० कु० परिषद् परीक्षा विभाग

सन् १६४६ में जब मेरे पास देहली से कार्यालय आया था तब कुल भारत में १०६ परीक्षा-केन्द्र और लगभग २५०० छात्र थे। अब इस वर्ष केन्द्रों की संख्या २४४ और छात्रों की संख्या लगभग ५६०० हो गई है। दक्षिण अफ्रीका और मारीशस टापू में भी परीक्षा-केन्द्र खुल गये हैं। इस धर्म-कार्य में योगदान के लिये समस्त केन्द्र-व्यवस्थापक, परीक्षकगण तथा अन्य सहयोगी सज्जन हमारे धन्यवाद के पात्र हैं। इस वर्ष की परीक्षाएं २८ मार्च से शुरू हुईं।

सिद्धान्त-सरोज-परीक्षा—इस वर्ष कुल आवेदन-पत्र २०४१ आये। परीक्षा में २२६५ छात्र सम्मिलित हुये, उनमें से १८०४ उत्तीर्ण हुये। परीक्षाफल लगभग ८० प्रतिशत रहा। सर्व प्रथम टेकराम (गु० कु० घरोंडा)। सर्व द्वितीय वीरेन्द्रसिंह (बिजनौर)। सर्व तृतीय-महावीरसिंह (बिजनौर) कन्या सर्व प्रथम-गायत्री (इन्दौर) तथा आदर्श बाला, आर्य कन्या पाठशाला, प्रयाग।

सिद्धान्त-रत्न परीक्षा—कुल आवेदन पत्र ७०८ आये। परीक्षा में सम्मिलित ११२७ छात्र हुये। उनमें से ६५५ उत्तीर्ण हुये। परीक्षाफल लगभग ८५ प्रतिशत रहा। सर्व प्रथम-उग्रसेन (नगीना)। सर्व द्वितीय-लीलावती देवी (सैदपुर)। सर्व तृतीय-बाबूराम (नगीना) तथा यादराम (अतरौली)।

सिद्धान्त-भास्कर परीक्षा कुल ६४४ आवेदन-पत्र आये। ५३८ छात्र सम्मिलित हुये, उनमें से ४४७ उत्तीर्ण हुये। परीक्षाफल लगभग ८३ प्रतिशत रहा। सर्व प्रथम-अविनाशचन्द्र (तुलसीपुर)। सर्व द्वितीय-बैजनाथ (लशकर)। सर्व तृतीय-मिथिलेश कुमार (अजमेर डी० ए० वी०)। कन्या सर्व प्रथम-दयावती (देहरादून, डी० ए० वी०)।

सिद्धान्त-शास्त्री परीक्षा—कुल ४८३आवेदन-पत्र आये। ४८३ सम्मिलित हुये, उनमें से ३२७ उत्तीर्ण हुये। परीक्षाफल लगभग ८० प्रतिशत रहा। सर्व प्रथम-प्रेमनारायण (बरेली)। सर्व द्वितीय-सविता बहन (रा० क० वि०, नई दिल्ली) तथा मानवेन्द्र कुमार (अजमेर डी० ए० वी०)। सर्व तृतीय-विमल कुमार (इन्दौर, गांधीरोड)। सिद्धान्त-शास्त्री का पूरा परीक्षा परिणाम अगले अङ्क में छपेगा।

डा० सूर्यदेव शर्मा
परीक्षामन्त्री, अजमेर

——

योग्य क्षत्रिय वर चाहिए

क्षत्रिय कुलोत्पन्ना १८ वर्षीया कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हाथरस (सासनी) की 'विद्याविभूषिता' उपाधि अलंकृता, विद्याविनोदिनी परीक्षोत्तीर्ण स्नातिका के लिए आर्य विचार वाला क्षत्रिय वर चाहिए। पत्र-प्रेषक महाशय योग्यता एवं आयु का पूर्ण विवरण दें।

रामचरण शर्मा, साहित्यरत्न
ए० वी० पी० हायर सैकेण्डरी स्कूल,
कासगंज (एटा) यू० पी०

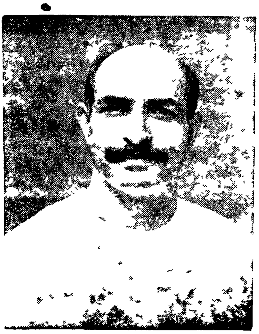
——

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

आर्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक—आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ
२६ अप्रैल १९५१



राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री
पूर्व प्रधान-आ० प्र० सभा, उत्तर प्रदेश



श्री मदनमोहन सेठ
प्रधान-आ० प्र० सभा, उत्तर-प्रदेश



श्री पीतमलाल एडवोकेट
पूर्व मन्त्री-आ० प्र० सभा, उत्तर प्रदेश



श्री रमनाज व ालङ्क
मन्त्री आ प्र सभा उत्तर प्रदेश

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०), एक प्रति- तीन आने
सम्पादक हरिशङ्कर शर्म्मा
वर्ष—५३
अङ्क—१६

नव-निर्वाचित पदाधिकारी तथा अन्तरंग-सदस्य-सूची

१६५१

१ श्री मदनमोहन सेठ एम० ए०, एल-एल० बी०, रि० डि० एण्ड सेशन्स जज, गोखले मार्ग, लखनऊ प्रधान
२ ,, रामदत्त शुक्ल एम० ए०, एल-एल० बी०, एडवोकेट, गौतमबुद्ध-मार्ग, लखनऊ उपप्रधान व अधिष्ठाता घासीराम-प्रकाशन-विभाग व वेद-संस्थान-विभाग।
३ ,, नरदेव स्नातक एम० पी०, गुरुकुल-विश्वविद्यालय वृन्दावन, (मथुरा) उपप्रधान
४ ,, रणञ्जयसिंह युवराज अमेठी राज्य, अमेठी (सुल्तानपुर) उपप्रधान
५ ,, धर्मपाल विद्यालंकार टिकैतगंज, बदायूं मन्त्री
६ ,, जयदेवसिंह बी० ए०, एल-एल० बी० एडवोकेट मेरठ, उपमन्त्री
७ ,, भृगुदत्त तिवारी एम० ए०, एल-एल० बी०, एडवोकेट लखनऊ, उपमन्त्री व अधिष्ठाता आर्यनगर सेटिलमैन्ट।
८ ,, कर्णसिंह ठाकर गवर्नमैण्ट कन्ट्रैक्टर, डेम्पीयर नगर मथुरा, उपमन्त्री
९ ,, केशवराम, रामतीर्थ-मार्ग, लखनऊ कोषाध्यक्ष
१० ,, फूलनसिंह आर्यसमाज शिकोहाबाद, (मैनपुरी) स० कोषाध्यक्ष
११ ,, जगनन्दनलाल एडवोकेट, २२ एटमास्टन रोड, प्रयाग ,, ,,
१२ ,, रामप्रसाद, आर्यसमाज मैंडू (अलीगढ़) ,, ,,
१३ ,, द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री, आनन्दपुरी, मेरठ पुस्तकाध्यक्ष व मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल वृन्दावन।
१४ ,, विश्वम्भरनाथ वाजपेयी, ओंकार प्रेस, प्रयाग स० पुस्तकाध्यक्ष
१५ ,, ज्ञानेन्द्र स्नातक, डी० ए० वी० हायर से० स्कूल प्रयाग, सहायक पुस्तकाध्यक्ष
१६ ,, रत्नसिंह एम० ए०, आर्यसमाज गाजियाबाद (मेरठ), सहायक पुस्तकाध्यक्ष

अन्तरंग-सभासद—

१ श्री आचार्य बृहस्पति शास्त्री वेदशिरोमणि, कुलपति, वृन्दावन गुरुकुल विश्वविद्यालय, देहरादून
२ ,, कालीचरण आर्य अधिष्ठाता भूसम्पत्ति विभाग, मेरठ
३ ,, मती लक्ष्मीदेवी कन्या गुरुकुल हाथरस, सासनी (अलीगढ़)
४ ,, पीतमलाल एम० ए० एल-सी०, एडवोकेट, अलीगढ़
५ ,, गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए० कला प्रेस, जीरो रोड, प्रयाग
६ ,, मती, कलादेवी कला प्रेस, जीरो रोड, प्रयाग।
७ ,, स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती, आर्यसमाज सदर बाजार, झांसी
८ ,, मदनमोहन वकील, मंठ (झांसी)
९ ,, आचार्य विश्वश्रवा वेद-मन्दिर, ६६ बाजार मोतीलाल, बरेली
१० ,, प्रकाशवीर शास्त्री आर्योपदेशक चांदौसी (मुरादाबाद)
११ ,, शिवनारायण शुक्ल एडवोकेट लखीमपुर (खेरी) संयोजक आर्यसमाज रक्षा-विभाग
१२ ,, मती प्रियवदादेवी मन्त्रिणी, महिला-प्रचार-मण्डल-विभाग हरदोई।
१३ ,, केदारनाथ आर्योपदेशक, आर्यसमाज फैजाबाद
१४ ,, लालकुमार सिंह, मु० पिरथीगंज, (प्रतापगढ़)
१५ ,, देवदत्त शर्मोपाध्याय, आचार्य्य, आर्यसमाज, काशी
१६ ,, रणधीर लाल जी ,, ,,
१७ ,, हरिहरप्रसाद मुख्तार आर्यसमाज बांसी (बस्ती)
१८ ,, अक्षयवर नाथ, आर्यसमाज आजमगढ़
१९ ,, हीरालाल ब्रजपाल, आर्यसमाज अल्मोड़ा
२० ,, राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री, सर्वदानन्द साधुआश्रम (अलीगढ़)
२१ ,, मोहनलाल आर्य, मंडी सईदखाँ-आगरा
२२ ,, चन्द्रनारायण एम० ए०, एडवोकेट, बरेली
२३ ,, पूर्णचन्द्र एडवोकेट, माईथान, आगरा
२४ ,, हरिशंकर शर्मा, सम्पादक आर्यमित्र, लोहामंडी, आगरा
२५ ,, उमाशंकर एडवोकेट, फतेहपुर
२६ ,, ईश्वर दयालु आर्य, प्र० भाटान, बिजनौर
२७ ,, दयाराम, आर्यसमाज, शिकोहाबाद (मैनपुरी)
२८ ,, रामबहादुर मुख्तार, आर्यसमाज पूरनपुर (पीलीभीत)
२९ ,, साहबसिंह अर्योपदेशक, आर्यसमाज, अलीगढ़
३० ,, आत्माशरण एम० ए०, एडवोकेट, अन्दरकोट, मेरठ शहर

लखनऊ में चहल-पहल

गत सप्ताह उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के बृहदधिवेशन के कारण लखनऊ में बड़ी चहल-पहल रही। बृहदधिवेशन में निर्वाचन के अतिरिक्त सभाके नियमों में भी कुछ संशोधन हुआ। यानी अब प्रत्येक प्रतिनिधि को प्रवेश-शुल्क २) के बदले ४) देना पड़ा करेगा। आर्यसभासद् का कमसे कम मासिक चन्दा ।) होगा। प्रत्येक समाज को न्यूनातिन्यून १५) वार्षिक दशांश प्रतिनिधि सभा में भेजना होगा।

बृहदधिवेशन के अवसर पर आर्य-सम्मेलन और शिक्षा-सम्मेलन भी हुए। आर्य-सम्मेलन के अध्यक्ष आचार्य श्री पं० द्विजेन्द्रनाथ जी शास्त्री थे और शिक्षा-सम्मेलन के अध्यक्ष श्री प्रिंसीपल महेन्द्रप्रताप शास्त्री, एम० ए० दोनों सम्मेलनों में महत्वपूर्ण भाषणों के अनन्तर अनेक उपयोगी प्रस्ताव स्वीकृत हुए जो आगामी अंक में प्रकाशित किये जायगे। राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री की सभा के प्रधान की हैसियत से की हुई पिछली पांच वर्ष की सेवाओं के लिए उपस्थित प्रतिनिधि महोदयों ने एकस्वर से धन्यवाद पूर्वक कृतज्ञता प्रकट की। श्री पीतमलाल जी एडवोकेट को भी मन्त्री-पद से योग्यतापूर्वक सभा की सेवा करने के लिए धन्यवाद दिया गया।

दैनिक आर्य्यमित्र

आगरा से प्रकाशित होगा

दैनिक आर्यमित्र के प्रकाशन-स्थान के सम्बन्ध में निश्चित रूप से जानने के लिये प्रायः पत्र और लेख हमारे पास आते रहते हैं। आगरा के सुप्रसिद्ध एडवोकेट श्री मथुराप्रसादजी ने भी इस आशय का एक लेख 'मित्र' में छपवाया था। स्थान के सम्बन्ध में, आर्यमित्र-प्रकाशन लिमिटेड के मैनेजिंग डाइरेक्टर श्री मदनमोहन सेठ, एम० ए० ने जो विज्ञप्ति प्रकाशनार्थ भेजी है, वह इस प्रकार है—

श्रीमान् सम्पादकजी, आर्यमित्र, आगरा

आर्यमित्र के स्थान के सम्बन्ध में प्रतीत होता है कि कुछ आर्य पुरुषों को सन्देह हो गया है और यह कहा जाता है कि इस सन्देह के कारण ही कुछ महानुभाव जो कि आगरे के पक्ष में हैं, आर्यमित्र-प्रकाशन कम्पनी के हिस्से लेने में संकोच कर रहे हैं, ऐसे महानुभावों को ज्ञात होना चाहिए कि मेमोरेण्डम आफ एसोसिएशन में यह बात पूर्व ही से अङ्कित की जा चुकी है कि दैनिक आर्यमित्र आगरा से प्रकाशित होगा। यह तो स्पष्ट ही है कि आर्यमित्र के दैनिक रूप में प्रकाशित न होने का मुख्य कारण यही है कि अब तक उपयुक्त धन-संग्रह नहीं हो सका है।

दैनिक समाचार पत्रों के अनुभवी संचालकों का तो यही मत है कि हिन्दी दैनिक पत्र-प्रकाशन के लिये न्यून से न्यून पाँच लाख धनराशि की आवश्यकता है, परन्तु यदि इस समय दो लाख रुपया भी और एकत्र हो जावे तो आगरे से दैनिक पत्र निकाला जा सकता है।

लखनऊ मदनमोहन सेठ,
२३ अप्रैल १६५१ मैनेजिंग डाइरेक्टर

जातवेदः पुनीहि माम्

आगरा, वैशाख कृष्णा ५ संवत २००८ वि० गुरुवार ता० २६ अप्रैल १९५१

दयानन्दाब्द १२६, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५०

सभा का बृहदधिवेशन

उत्तरप्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का बृहदधिवेशन डी० ए० वी० कालिज लखनऊ में २१ तथा २२ अप्रैल १९५१ को सानन्द सम्पन्न हुआ। प्रथम दिवस आर्यसमाजों से आए हुए आर्यप्रतिनिधियों की सख्या २४० के लगभग थी। कितनी ही देविया भी प्रतिनिधि-रूप में उपस्थित थीं। प्रदेश के ९२० आर्यसमाजो से केवल ढाई सौ के लगभग प्रतिनिधियो का आना अवश्य ही खेदजनक था, परन्तु फिर भी जो सज्जन और देवियों पधारीं उनमें आर्यसमाज के प्रति प्रेम और उत्साह दिखाई देता था। डी० ए० वी० कालिज भवन में २० अप्रैल से ही चहल-पहल प्रारम्भ हो गयी थी, क्योकि उस दिन दोपहर से सभास्थ अन्तरंग सभा का अधिवेशन था। गत वष की भाँति इस वष भी आर्यप्रतिनिधियो में सन्यासी-अध्यापक, जज, एडवोकेट, सरकारी सेवक, पत्रकार, उपदेशक, व्यापारी आदि सभी प्रकार के प्रतिष्ठित पुरुष सम्मिलित थे। बृहदधिवेशन प्रथम दिन दो बजे से और दूसरे दिन ९ बजे से प्रारम्भ हुआ। विचारणीय विषयों के विचार करने में काफी गम्भीरता और उत्साहशीलता दर्शा गयी, सभा के पदाधिकारियो और अन्तरंग सदस्यो का निर्वाचन हुआ। चुने हुए व्यक्तियों की सूची इसी अङ्क में अन्यत्र दी जाती है। इस वर्ष राजगुरु श्री प० धुरेन्द्रशास्त्री ने कोई पद लेना स्वीकार नहीं किया। श्री पीतमलालजी एडवोकेट भी, प्रतिनिधियो की इच्छा होने पर भी, पुनः मन्त्री पद के लिये खड़े नहीं हुए। सभा के प्रधान सुप्रसिद्ध आर्य नेता श्री मदनमोहन सेठ एम० ए० रिटायर्ड जज चुने गये। श्री सेठजी आर्य जगत् में अखिल भारतीय ख्याति के विचारशील विद्वान् हैं। आपके मस्तिष्क से निकली हुई कितनी ही योजनाएँ विराट् रूप धारण कर चुकी है। मथुरा की श्रीमद्दयानन्द जन्मशताब्दी की सृष्टि श्री सेठजी की सूझ-बूझ और योजना के आधार पर ही रची गई थी। सेठजी बड़े ही स्नेहशील और विनम्र महानुभाव है। आपने विद्यार्थी-काल से लेकर अबतक का सारा जीवन आर्यसमाज और वैदिक धर्म की सेवा में व्यतीत किया है। सरकारी उच्च पदों पर प्रतिष्ठित रहते हुए भी आपने समाज-सेवा में कभी शिथिलता नहीं आने दी। अंगरेजी शासन में, जब आर्यसमाजी लोग सशंक दृष्टि से देखे जाते थे, सेठजी निर्भयता पूर्वक समाज का काय करते रहे। सभा के नव निर्वाचित मन्त्री श्री प० धर्मपालजी विद्यालङ्कार बिना किसी प्रसिद्धि की इच्छा के शान्त और सुदृढ़ भाव से समाज-सेवा करने वाले प्रसिद्ध विद्वान् हैं। आप वर्षों से किसी न किसी रूप मे प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा की प्रशसनीय सेवा कर रहे हैं। इस वर्ष प्रतिनिधि गण ने मन्त्रित्व का भारी भार आपके सुदृढ़, सबल और सक्षम कन्धो पर रक्खा है। हमें आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि आप इस भार के वहन करने में सर्वथा सफल और समर्थ सिद्ध होंगे।

डी० ए० वी० कालेज में आगत आर्य प्रतिनिधि महानुभावो का जिस प्रेम और आदर भाव से स्वागत-सत्कार और आतिथ्य किया गया, उसके लिए श्री प० रामदत्त शुक्ल एडवोकेट और श्री प० भृगुदत्तजी तिवारी एम० ए०, एडवोकेट तथा उनके सहयोगी अन्य आर्य भाई विशेष धन्यवाद और प्रशसा के पात्र हैं।

'स्वराज्य-सूर्य की गर्मी'

हाल ही में आचार्य विनोबा भावे ने अपनी पैदल यात्रा में कहा—'हमारे देश को स्वराज्य प्राप्त हुए अब तीन वर्ष हो चुके, सब तरफ स्वराज्य का उदय सूर्योदय की तरह माना गया है। सूर्योदय होने पर अंधेरा नहीं रह जाता। स्वराज्य आते ही जनता जिम्मेवार हो जाती है। सब लोग उत्साह से काम करते है, एक दूसरे के कन्धे से कन्धा लगाते हैं और पारस्परिक सहयोग बढ़ता है। अधिक से अधिक लोग काम कैसे करेंगे, मेरे देश की लक्ष्मी कैसे बढ़ेगी, मेरे देश का सौभाग्य कैसे प्रकट होगा—इसकी चिन्ता सब लोग करते हैं। परन्तु दुःख की बात है कि अब तक वह अनुभव इस देश में नहीं होता।" सन्त विनोबा का कथन सर्वथा सत्य है। स्वराज्य-सूर्योदय तो हो गया, परन्तु न उसकी गर्मी अनुभव होती है और न उसका प्रकाश दिखाई देता है। हम स्वतन्त्र हैं, निस्सन्देह हम स्वतन्त्र हैं। परन्तु किस लिए ? उद्दण्डता के लिये, भ्रष्टाचार के लिए, चोरबाजारी करने और रिश्वत लेने के लिए, दूसरो को ठगने और धोखा देने के लिये। क्या यही स्वराज्य-सूर्य का प्रकाश है ? क्या अब स्वराज्य में जनता का कुछ कर्तव्य नहीं रहा। मिनिस्टर या मन्त्री कैसे ही सही, परन्तु जनता को तो सत्याचरण-युक्त होना चाहिए। जनता के ईमानदार रहने पर कोई भी भ्रष्टाचारी अधिकारी या मन्त्री एक क्षण के के लिये भी नहीं ठहर सकता। जब हम स्वयं पाप-पंक में फंसे हुए हैं, तब स्वराज्य के स्वप्न भी कैसे देख सकते हैं, और किस मुंह से हम सत्ताधारियो को उनके दोषो और अपराधो को चुनौती दे सकते हैं। पहले हम स्वयम सुधरें तब दूसरो के सुधार की बात सोचे और कहें। यही सुधार या सशोधन का तत्व है।

'प्रकाशजी' अस्वस्थ हैं

आ० स० अजमेर के मन्त्री बन्धुवर डा० सूर्यदेव शर्मा, एम० ए० के पत्र से विदित हुआ है कि आर्यजगत् के प्रसिद्ध प्रचारक कविरत्न प० प्रकाशचन्द्रजी गत दो वर्षो से गठिया रोग से पीड़ित हैं। कर्मवीर प० जियालालजी तथा उनके अन्य मित्र इस संकट में यथाशक्ति सहायता कर रहे है। फिर भी अभी सहायता की आवश्यकता तो है ही। इस सम्बन्ध में एक बार पहले भी 'आर्यमित्र' में लिखा जा चुका है और अब प्रार्थना है कि अन्य आर्यसमाजों और आर्यसज्जनो को भी अपने इस प्रसिद्ध और प्रभावशाली प्रचारक की पुरानी सेवाओ के उपलक्ष्य में अपना कर्तव्य-पालन अवश्य करना चाहिये।

टंकारा में ऋषि-स्मारक

महर्षि दयानन्द का जन्म टंकारा में हुआ था, उसमें एक स्मारक बनवाने के लिये सेठ श्री नानजी भाई कालिदास मेहता विचार कर रहे है। उनका इरादा है कि टङ्कारा में बाल-मन्दिर, पुस्तकालय, अतिथि-गृह, स्त्रियो और बालको के लिये उद्यान और यदि आवश्यकता हो तो एक पुत्री पाठशाला भी बनानी चाहिए। सेठजी कहते हैं कि टङ्कारा में रहने के लिये ऐसे सच्चे साधु-सन्यासियो की आवश्यकता है जो वर्ष में आठ महीने तो आर्य संस्कृति का प्रचार करें और वर्षा-काल के चौमासे टङ्कारा के संन्यासाश्रम में बितावें। उपर्युक्त सब मकान और आश्रम बनवाने में जितना रुपया व्यय होगा उसे स्वयम सेठजी देंगे। भवन-निर्माण होने पर यह संस्था सेठजी ट्रस्टिया को सौंप देना चाहते है। सस्था-संचालन के लिये आर्य जनता को लगभग दो लाख रुपये और एकत्र करने होंगे जिसके सूद से यह काम चलता रहे। सेठ नानजी भाई कालिदासजी उपर्युक्त भवन-निर्माण में डेढ़ लाख रुपया व्यय करेंगे। सचालन के लिये दो लाख रुपया और चाहिये। ३१ मार्च को परोपकारिणी सभा ने इस काय के लिये एक स्मारक-समिति बना दी है, जिसके संयोजक श्री चांदकरण शारदा हैं और सदस्य श्री प० आनन्दप्रियजी और श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी महाराज हैं। आशा है, यह समिति नानजी भाई से मिलकर स्मारक सम्बन्धी सब बातो पर पूर्णतः विचार करेगी और महर्षि की जन्म भूमि में शीघ्रतर एक अच्छा स्मारक बनवाने में सफल होगी।

उपदेशक-महाविद्यालय

आर्यसमाज में, एक बड़े परिमाण में एक उपदेशक महाविद्यालय स्थापित करने की बड़ी आवश्यकता है। इसमें विद्वान् नवयुवकों को वक्तृत्व-कला की शिक्षा दी जाय, शास्त्रार्थ करना सिखाया जाय, वाद विवाद-शिक्षण की भी व्यवस्था हो। स्वाध्याय और अनुसन्धान के लिए एक बड़ा और व्यापक पुस्तकालय भी इस महाविद्यालय में रहना चाहिए। वक्तृत्व-कला के अभाववश हमारे बड़े-बड़े विद्वान् भी अपने भाव-प्रकाशन में असमर्थ-से रहते और श्रोताओं पर अभीष्ट प्रभाव नहीं डाल पाते। कुछ वक्ता व्याख्यान तो दे लेते हैं, परन्तु उनके भाषण से विद्वत्ता का बोध नहीं होता और न अध्ययनशीलता ही जानी जाती है। अधिकतर व्याख्यान कहानी किस्से या यात्रा-विवरण सुनाकर ही समाप्त कर दिये जाते हैं। कुछ व्याख्यान तो ऐसे होते है, जिनमें खोजने पर भी कोई सार या जानकारी नहीं दिखाई देती। वक्तृत्व कला कोई साधारण चीज नहीं है। इस कला पर पोथे के पोथे रचे पड़े हैं। दूसरे देशों में तो इस कला को विकसित करने के लिये अनेक महाविद्यालय है। आर्यसमाज का अधिकतर काम व्याख्यानों और लेखों पर ही निर्भर है. अतएव चाहिए तो यह कि वह जहाँ व्याख्यान-विद्यालय की स्थापना करें, वहाँ एक पत्रकार विद्यालय भी खोले, जिसमें लेखक भी तैयार हो सकें। पत्रकारों की माँग दिनोंदिन बढ़ती जाती है। यदि आर्यसमाज का विद्यालय अच्छे वक्ता और पत्रकार दे सका तो वे चाहे जिस क्षेत्र में काम करें, सर्वत्र वैदिक सिद्धान्तों का समर्थन और प्रचार तो करेंगे ही।

डी० ए० वी० संस्थाएं

देश में डी० ए० वी० शिक्षणालयों की कमी नहीं है। डी० ए० वी० कालिज भी हैं, और डी० ए० वी० हाईस्कूल भी। परन्तु ये संस्थाएँ आर्यसमाज के लिये कितनी उपयोगी सिद्ध हुई हैं, यह प्रश्न गम्भीरतापूर्वक विचारणीय है। कितने ही डी० ए० वी० हाइस्कूल या इण्टर कालिज तो पार्टीबाजी के पाटों में पिस कर नाममात्र के ही 'डी० ए० वी०' रह गये हैं। उनका प्रबन्ध और सचालन ऐसे व्यक्तियों के हाथों में है जिनका आर्यसमाज से कुछ भी सम्बन्ध नहीं है, बल्कि किसी अंश में तो वे आर्य सिद्धान्तों के विरोधी है। इसे उन संस्थाओं के विधान की बलिहारी ही कह सकते है। डी० ए० वी० संस्थाओं का सारा लक्ष्य प्रायः पाठक्रम की पूर्ति और परीक्षाओं में सफलता दिलाने पर ही होता है, धर्म-प्रचार पर बहुत कम। परीक्षाओं में उत्तीर्ण होना भी आवश्यक है, परन्तु उससे भी अधिक महत्वपूर्ण काम धर्म-मार्ग में प्रवृत्त होना है। परीक्षाएं नौकरी दिलवाने में सहायक होती है, और धार्मिक प्रवृत्ति देश तथा समाज में धर्म-भावना, नैतिकता एवम् सदाचार की वृद्धि करती है, जिसकी कि इस समय सबसे अधिक आवश्यकता है और जिसके लिए ये डी० ए० वी० संस्थाएँ स्थापित की गयी है। जिन संस्थाओं से 'दयानन्द' और 'वैदिक' शब्द जुड़े हों, वे दयानन्द की अनुयायी न बन कर वेद-पथ से पृथक् रहें यह कम दुःख की बात नहीं है। हम ये पंक्तियाँ संस्थाओं पर आक्षेप करने की दृष्टि से नहीं लिख रहे, हमारा मतलब केवल यह है कि वस्तुतः यदि संस्थाओं में उपर्युक्त त्रुटियाँ है, जैसा कि हमने लिखा है, तो वे शीघ्र से शीघ्र दूर हो जानी चाहिएँ, और उन संस्थाओं को उस लक्ष्य और उद्देश्य की पूर्ति करनी चाहिए, जिनके लिये कि उनकी स्थापना हुई है।

वैतनिक और अवैतनिक

एक समय था जब आर्यसमाज में कुछ लेकर या कुछ न लेकर दोनों प्रकार के प्रचारकों का समान आदर किया जाता था। सब लोग लगन और धर्म-भावना से प्रेरित होकर ही समाज-सेवा करते थे। परन्तु ज्यों ज्यों समाज में सत्तावाद की वृद्धि हुई और पद मद पनपा, त्यों त्यों बेचारे पेट-पूर्ति के लिये कुछ लेकर काम करने वाले 'नौकर' समझे जाने लगे। परिणाम यह हुआ कि आर्यसमाज की सेवाओं से लोगों ने 'किनारी कशी' की और अनेक अच्छे-अच्छे मस्तिष्क दूसरी संस्थाओं में चले गये! डी० ए० वी० कालिजों में तो लोगों ने सेवा करना पसन्द किया, परन्तु सभा के व्याख्याता अथवा गुरुकुल के अध्यापक-पद पर प्रतिष्ठित होने की उनकी इच्छा न हुई। अब आर्यसमाज में जिधर देखो एक ही आवाज है, 'अच्छे कार्यकर्त्ता नहीं मिलते।' मिलें कहाँ से? बेचारे कुछ लेते हैं तो उन्हें स्वार्थी समझा जाता है, नहीं लेते तो परिवार-पालन के लिए उनके पास रखा ही क्या है? जब तक आर्यसमाजियों में यह गन्दी प्रवृत्ति रहेगी, तब तक उन्हें अच्छे कार्यकर्त्ता या प्रचारक मिलने कठिन हैं। जिनके पास काफी धन है, उन्हें और धन कमाने की लालसा लगी हुई है। अगर ऐसे लोग सौ-दोसौ, चारसौ रुपये किसी धर्म-कार्य में दे देते हैं तो अपनी 'वदान्यता' के आगे सबको हेच और हेय समझने लगते हैं। हम ऐसे अनेक व्यक्तियों को जानते हैं जिन्होंने भूखों मर कर सर्वथा निःस्वार्थ भाव से अपना सारा समय-समस्त जीवन धर्म सेवा में लगाया, परन्तु उनके त्याग का मूल्य सौ-सवासौ रुपये देने वाले किसी फसली दानी की अपेक्षा अत्यन्त न्यून समझा गया। उस गरीब के तप का किसी ने उल्लेख तक करना उचित न समझा, परन्तु चन्द चाँदी के चट्टोकड़े देने वाले दानी की प्रशंसा के पुल बाँध दिये गये। यह है आर्य कार्यकर्ताओं की कद्र या प्रतिष्ठा। और इस विरते पर ही हम कहते हैं कि आर्यसमाज में काम करने वाले क्यों नहीं आते। आर्य-संन्यासी अब भी घूम-घूम कर प्रचार करते रहते हैं, परन्तु जब वे बीमार पड़ जाते हैं तो उनकी सेवा-शुश्रूषा तक की परवा नहीं की जाती। अगर उनका कोई व्यक्तिगत मित्र या सम्बन्धी होता है तो वह भले ही कुछ टहल चाकरी अथवा परिचर्या कर दे। जहाँ ऐसी भावनाएँ काम कर रही हों, वहाँ क्या आशा की जा सकती है। अगर आर्यसमाज को कुछ करना-धरना है तो निश्चय ही उसे अपनी उस अरुचकर प्रवृत्ति में परिवर्तन करना होगा।

शिक्षा-केन्द्रों में प्रचार

प्रदेशीय शिक्षा-केन्द्रों में वैदिक धर्म-प्रचार की विशेष व्यवस्था करने के लिये वर्षों से योजनाएँ बन रही हैं, परन्तु इस दिशा में कुछ होता-जाता दिखाई नहीं देता। वही ढाक के तीन पात होकर रह जाते है। हमारे प्रदेश में काशी, प्रयाग, लखनऊ, कानपुर, आगरा, अलीगढ़, बरेली आदि ऐसे नगर हैं, जहाँ प्रचार की बड़ी आवश्यकता है। इनमें से कई स्थानों में तो विश्वविद्यालय हैं। इन नगरों में कई कई सहस्र विद्यार्थी रहते हैं। अगर इन विद्यार्थियों तक वैदिक धर्म की पवित्र ध्वनि पहुंचेगी तो उसका कुछ न कुछ प्रभाव पड़े बिना न रहेगा। प्रत्येक नगर में एक-एक विद्वान् व्याख्याता के रहने की आवश्यकता है।—ऐसा व्याख्याता जो अंग्रेजी और संस्कृत का ठोस पण्डित हो, जिसने दर्शनों और धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन किया हो। जो वक्तृत्व-कला का अच्छा अभ्यास रखता हो। सबसे बढ़कर उसमें तत्परता, लगन और धर्म प्रचार की प्रवृत्ति हो। हम समझते हैं, ऐसे आर्य विद्वानों की अब कमी नहीं है। खोजने और प्रोत्साहन देने पर काफी प्रचारक प्राप्त हो जायगे। ऐसे विद्वानों को सांसारिक चिन्ताओं से मुक्त कर देना आर्य जनता का काम है। प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा को चाहिये कि इस दिशा में वह अवश्य सफलतापूर्वक क्रियात्मक पग बढ़ावे। शिक्षा केन्द्रों में प्रचारार्थ 'वचन' मात्र देने वालों पर धन्यवाद की वर्षा करने से काम नहीं चलेगा, अब तो काम करना पड़ेगा। अर्थ की व्यवस्था प्रादेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा को करनी होगी। इस कार्य में भूलचूक या उपेक्षा-अवहेलना करना विघातक है, क्योंकि हमारे आशांकुर विद्यार्थीवृन्द की प्रवृत्ति कुछ ऐसी दिशा की ओर हो रही है जो कदापि वांछनीय एवं हितकर नहीं है। उस गति और प्रवृत्ति को प्रचार द्वारा रोकना ही आर्यसमाज का मुख्य काम है।

महिला-मण्डल

स्त्रियों के गीत

श्री ज्योत्स्ना कुमारी, साहित्यरत्न

विवाहादि अवसरों पर स्त्रियाँ जो गीत गाती है, उनमें से कुछ की तो सार्थकता हो सकती है, परन्तु अधिकांश गीत निरर्थक और उद्देश्यहीन ही होते हैं। न उनमें छन्द है, न भाव, न भाषा न और कोई बात। ये गीत रूढ़ि में आगये हैं, इसलिये सब जगह ये ही गाये जाते हैं। कुछ काल पूर्व स्त्रियों का पढ़ाना-लिखाना बुरा समझा जाता था, उस समय ऐसे अंट-शंट गीतों की परम्परा चल पड़ी। अशिक्षित स्त्रियों ने जो गढ़न्त गढ़ ली उसी का प्रचार होने लगा। परन्तु अब तो वह समय नहीं रहा। स्त्रियों में भी शिक्षा का काफी प्रचार है। कितनी ही स्त्रियां तो बहुत पढ़ लिखी विदुषी हैं, कवयित्री भी हैं। फिर क्या कारण है कि महिलाओं के लिये भिन्न-भिन्न अवसरों और संस्कारों पर गाये जाने के लिये शुद्ध सुन्दर, शिक्षाप्रद और समयोचित गीतों की रचना न की जाय। यह काम कम महत्व का नहीं है। स्त्री-समाज के लिये तो यह परम आवश्यक है। गानों या गीतों का बड़ा प्रभाव पड़ता है। मुझे याद है, जब मैं छोटी थी तो कांग्रेस में झंडा-गान गाया जाता था। मेरे शहर में कांग्रेस के बड़े-बड़े जलसे होते थे। हजारों की भीड़ जमा होती थी। जिस समय झंडा गान गाया जाता हृदय उत्साह और उमंग से उछलने लगता था। ऐसा ज्ञात होता था कि देश भक्ति मूर्तिमती होकर उस जल्से में नृत्य कर रही है।

अपने आर्यसमाज के उत्सवों में भी मैंने देखा है कि भजनोपदेशकों द्वारा जब भजन गाये जाते हैं, तो उनका बड़ा प्रभाव पड़ता है। पढ़े-बेपढ़े या कम पढ़े सभी लोग भजनों को बड़ी दिलचस्पी से सुनते है। आर्यसमाज के भजनों से काम भी खूब हुआ और हो रहा है। मैं चाहती हूँ कि स्त्रियों के लिये भी अच्छे अच्छे गीत बनाये जाय, जो विविध संस्कारों पर गाये जा सकें। ये गीत सरल तो होने ही चाहिए, भावपूर्ण भी हो, और कविता की दृष्टि से शुद्ध तथा सुन्दर भी। आशा है, कवि या कवयित्रियाँ इस ओर ध्यान देने की कृपा करेंगे। इन गीतोंमें राग रागिनियों का भी ध्यान रखने की जरूरत है, जिससे गाने में आसानी हो।

एक बात मैं इस सम्बन्ध में और कहना चाहती हूँ, वह यह कि मेरी बहनें संगीत का भी अच्छा अभ्यास करें। वयोवृद्धाएं तो, जिनका कार्य-काल प्रायः समाप्त हो चुका, अब संगीत क्या सीखेंगी, परन्तु युवतियां या नवयुवतियाँ इस दिशा में अच्छी प्रगति कर सकती है। मैं देखती हूँ, विवाहादि अवसरों पर जो गीत गाये जाते हैं, न उनमें ताल होती है और न स्वर का ही ध्यान रक्खा जाता है। एक ढोलक टुम्मक-टुम्मक बजती रहती है, और सारा गीत समाप्त हो जाता है। संगीत के नियम जान कर गाने से कविता में भी सौन्दर्य आजाता है, और फिर जो चीज गायी जाती है, उसका श्रोताओं पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

कुछ गीत तो ऐसे होते हैं, जो 'कोरस' के साथ गाये जा सकते है, यानी सब स्त्रियाँ उन्हें मिलकर एक साथ गाती हैं; और कुछ गीत केवल एकाकी गाये जाते है, यानी एक स्त्री साज के साथ गा रही है, और सब सुन रही है। परन्तु विवाहों में सब गीत कोरस में ही गाये जाते है, चाहे वे 'कोरस' के योग्य हैं, या नहीं। इस का भी ध्यान रखने की जरूरत है। मैंने थोड़ा संगीत सीखा है, इसलिये इसमें मेरी कुछ दिलचस्पी है। मैं चाहती हूँ कि जहाँ अन्य-अनेक कलाओं की उन्नति हो रही है, वहाँ संगीत की भी उन्नति हो, और महिलामण्डल में जो इसकी उपेक्षा है, वह दूर कर दी जाय। आशा है, शिक्षित बहनें मेरी उपर्युक्त दोनों प्रार्थनाओं पर ध्यान देंगी अर्थात् संगीत और गीत की विशुद्धता को अपनाएंगी।

——

संस्था-परिचय

फ्रांस की एक आदर्श संस्था

श्री कृपाशङ्कर शर्मा, एम० ए०

वालेन्स नामक फ्रेंच प्रान्त में बोमोन्दाउ नगर के निकट एक उद्योग-शाला स्थापित है। मार्केल-बार्बू नामक एक निर्धन शिल्पकार ने आठ वर्ष पूर्व इस उद्योग-शाला की स्थापना की थी। आधुनिक उद्योग-संस्थाओं की शोषण प्रवृत्ति और हृदयहीनता से दुःखित होकर ही बार्बू ने इस आदर्श उद्योग-शाला को जन्म दिया था। संस्थापक का केवल यही लक्ष्य था कि उद्योग-शालाएँ मुनाफाखोरी और अतिरिक्त सामग्री-संचय की नीति के कट्टर विरोध में, अपने कारखाने के कर्मचारियों की उन्नति के लिये ही जीवित रहें। और वास्तव में अध्यवसायी शिल्पी बार्बू ने अपने आदर्श को साकार कर दिखाया।

फ्रांस की इस अद्वितीय उद्योग-शाला-समाज के विधान और कार्यक्रम का निरीक्षण करते हुए अमरीकन उद्योगपतियों के एक दल को आश्चर्य और लज्जा के साथ स्तब्ध रह जाना पड़ा था। सचमुच इस उद्योगसमाज ने कुछ ऐसे नियमों का निर्माण किया है जिन पर सहसा विश्वास नहीं होता, किन्तु उनकी सचाई में कोई संदेह नहीं।

वहाँ प्रत्येक कर्मचारी की पत्नी को वेतन दिया जाता है, क्योंकि वह अपने पति के घर को व्यवस्थित रखती और बच्चों का लालन पालन करती है। सामाजिक जीवन का यह एक प्रमुख अंग माना गया है। ज्यों ही उस समाज की किसी स्त्री के गर्भवती होने की पुष्टि वहाँ के डाक्टरों द्वारा होती है, त्योंही गर्भगत बालक का वेतन बाँध दिया जाता है। स्कूल जाने योग्य प्रत्येक बालक को उद्योग-शाला की ओर से छात्र वृत्ति मिलती है, क्यों कि उद्योग समाज का निश्चय है, कि बालक अपनी उन्नति के कार्य में संलग्न है। प्रत्येक रोगी को साप्ताहिक खर्चा मिलता है, क्यो कि उन लोगों का कथन है कि रोगी अपने स्वास्थ्य-सुधार के कार्य में व्यस्त है। वह निष्क्रिय नहीं बैठा है।

मार्केल बार्बू का यह प्रयोग इतना सफल हुआ है कि उस समाज के सदस्य अपनी धर्मान्धता को भुला कर एक चित्त और एक बल से कार्य करते हैं। इस समाज का कारखाना और कृषि-फार्म किसी एक व्यक्ति की सम्पत्ति नहीं हैं। वहाँ परिश्रम करने वाले सभी व्यक्ति इस सम्पत्ति के स्वामी हैं। संसार की उद्यमदायिनी संस्थाओं में सम्भवतः यही एक ऐसी संस्था है जो मनुष्यता के सब गुण सम्पन्न कर्मचारियों को विशेष पुरस्कार प्रदान करती है। यह संस्था अपने प्रत्येक सदस्य के व्यक्तित्व और मनोवृत्ति का पृथक् पृथक् ध्यान रखती है।

यदि कोई व्यक्ति बार्बू महोदय से मिले और जिज्ञासा भाव से इस योजना के विषय में पूछताछ करें तो ३६ वर्ष का यह उत्साही और कर्मठ युवक अपनी जीवन गाथा का रोचक वर्णन करने लगेगा।

इस संस्था का सबसे महत्वपूर्ण नियम है समाज का आध्यात्मिक विकास करना। सहयोगियों द्वारा पालन करने के लिये जो तीन बातें उन्होंने निश्चित की हैं वे इस प्रकार हैं—

(१) मनुष्य किसी आदर्श के बिना जीवित नहीं रह सकता। प्रत्येक सहयोगी को अपना लक्ष्य निर्धारित करना चाहिये और उसे अपनी रुचि का परिचय किसी भी क्षण देने का अधिकार है।

२—मनुष्य शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक तीनों गुणों से सम्पन्न है। उसे इन तीनों का विकास करने में प्रवृत्त रहना चाहिये। इस तंत्र में उसको अपना कार्य करने का ढंग स्वयं चुनना चाहिये।

३—समाज का कर्त्तव्य है कि वह प्रत्येक व्यक्ति को समान समझ कर उसे उसकी उस आदर्श प्राप्ति का ही प्रोत्साहन देता रहे जिसे उसने स्वेच्छा और

सिंहावलोकन

विज्ञान और धर्म

श्री प० सत्यव्रत शर्मा शास्त्री

आज सर्वत्र संसार में धर्म के नाम पर एक प्रबल आन्दोलन चल रहा है, एक बड़ी चहल पहल है। आज प्रत्येक नवयुवक का केवल धर्म के ही सम्बन्ध में क्या प्रायः अन्य भी सभी विषयों में अपना-अपना दृष्टिकोण, अपना-अपना समीक्षण और परीक्षण, विवेचना और आलोचना या प्रत्यालोचना, वाद-विवाद प्रायः भिन्न हो रहता है। "मुण्डे-मुण्डे मतिर्भिन्ना" वैसे भी संसार ससरणशील है। इसमें प्रतिक्षण गति का संचार होता ही रहता है। सब का प्रवृत्ति और निवृत्ति का आधार अपनी अपनी भिन्न प्रकृति, भिन्न रुचि और भिन्न भावना ही है। शास्त्र का आधार तो आजकल मानव-समाज के मस्तिष्क से प्रायः उठ गया है। आज का प्राणी एक अजीब जन्तु है। वह विज्ञान के युग में ही पालित पोषित हो रहा है और विज्ञान के प्रवाह में ही बहा जा रहा है। उसी में गहरे गोते लगा रहा है और उसी में मज्जन का सुख-स्वप्न देख रहा है। वह संसार की समस्त वस्तुओं को, सब पदार्थों को—उनकी सत्यता और वास्तविकता को—विज्ञान की कसौटी पर कसना चाहता है, क्योंकि यह 'कलयुग' है। 'विज्ञान' भी एक कला है। कला कलयुग में ही सुरक्षा प्राप्त कर सकती और पनप सकती है। आज ईश्वर, वेद और धर्म की त्रिमूर्ति पर बड़ी विपत्ति है—बड़ी मुसीबत है। आज का नवयुवक तो इस त्रयी को एक आँख भी नहीं देखना चाहता। उसके सुकोमल कन्धों पर अपने कालिज की पढ़ाई का इतना भारी भार लदा है कि उसे इस त्रयी पर विचार करने को अवसर ही नहीं। उसका दैनिक कार्य क्रम इतना व्यस्त है, वह अपने प्रोग्राम में इतना बिज़ी है कि उधर विचार कर ही नहीं सकता। यदि किसी तरह वह इस प्रसंग में ज्ञान-चर्चा करता भी है तो कुछ तो साथियों की फटकार और कुछ आधुनिक विज्ञान की चकाचौंध उसे उस चर्चा से विमुख कर देती हैं। उसे उधर आने ही नहीं देतीं। वह बेचारा घबरा उठता है और उधर से हट जाता है। उसके विपरीत इधर अनेक आकर्षण, प्रलोभन, मनोरंजन, विलासिता के साधन उसे अपनी ओर खींचते हैं और उधर एकदम रूखी सूखी केवल ज्ञान चर्चा। भला वह बेचारा बुद्धिवादी इस बुद्धि-युग में उन्हें कैसे मान सकता है, कैसे अपना सकता है। यह तो साक्षात् चार्वाक का चाचा बना हुआ है। ऋण करके भी घी पीने वाला है, केवल प्रत्यक्ष को ही जीवन का सर्वस्व माने बैठा है। इसे अनुमान या आगम प्रमाण से क्या सरोकार। इसे तो अपने पाश्चात्य दर्शन पर, यूरोपीय विज्ञान पर ही अभिमान है। यह तो सबको एक लाठी से हाँकना चाहता है।

यद्यपि किसी सीमा तक आज यह निःसन्देह और निर्विवाद है कि विज्ञान की चमत्कृति ने देश के सामने एक नया 'कलयुग' उपस्थित कर दिया है जिसके अनवरत धुआँधार से गगन-मण्डल व्याप्त हो रहा है। पर यह भी निर्विवाद है कि जब मनुष्य अपनी सारी शक्ति को लगाकर अपने परिश्रम और अध्यवसाय को सर्वथा समाप्त कर देता है और शान्त होकर उदासीन-सा हो जाता है, तब उसके हृदय-मन्दिर में एक प्रकाश की रेखा प्रज्वलित होती है। उसके अन्तरात्मा में एक ज्योति प्रकट होती है जो उसके विगत जीवन का सिंहावलोकन कराती है। उस समय उसे कुछ और भी प्रतीत होता है। उस अवस्था में वह अपनी शक्ति की असारता को समझता और विचारता है कि अभी दिल्ली दूर है। वह भूले हुए राही की तरह गन्तव्य पथ का ध्यान करता है। ऐसी विपरीत परिस्थिति में, विकट संकट में इस विपद्ग्रस्त मानव को प्रभु अपना स्वरूप दिखाते हैं। बस यही प्रभु की प्रभुता है। उसी समय उसे धर्म कर्म सूझते हैं, तभी वह धर्म के स्वरूप का पाठ पढ़ सकता है, उसे वेद की शिक्षा पर विश्वास हो सकता है।

बस आज के और प्राचीन युग में यही अन्तर है। भूखे को खिलाने से भक्ष्य पदार्थ का रस बनता है। रस बनने पर ही पुष्टि और तुष्टि सम्भव है। आज हमारे जीवन में रस बनना सर्वथा बन्द हो गया है। रस भूख में ही बनता है, आज हमारी भूख ही बन्द है। प्रायः आज का मानव-समाज इस मन्दाग्नि से पीड़ित है। जिस प्रकार मन्दाग्नि में जठराग्नि मन्द हो जाने पर त्रिफला चूर्ण हितकर होता है, उसी प्रकार ज्ञानाग्नि की मन्दता में उपर्युक्त त्रिफला-चूर्ण उपयोगी है। केवल फलों में अन्तर है। बस इस मन्दाग्नि का परम औषधि ही आज आपको देनी है। प्राचीन धर्मशास्त्रों में मानव-धर्म का ही बोलबाला है। धर्म का आदि स्रोत या आदि प्रवर्त्तक एवं प्रचारक सब शास्त्रों ने, समस्त स्मृतिकारों ने, एक स्वर से भगवान् मनु को ही उद्घोषित किया है। जो कुछ मनु ने कहा है वही परम भेषज है। इसलिये उसमें वर्णित धर्म का अनुष्ठान करना, उसका कर्तव्य-बुद्धि से आचरण करना, उसे अपने नैतिक जीवन और व्यवहार में लाना आज प्रत्येक मननशील मनुष्य का परम कर्तव्य है। चाहे वह बालक हो, युवा हो, अथवा वृद्ध हो। किसी वर्ण में या किसी आश्रम में हो। किसी सम्प्रदाय का हो, धर्म सब के लिये सदा एकसा और हितकर है। धर्म के नाम पर ढोंग वस्तुतः त्याज्य और अग्राह्य है। धर्म का सम्बन्ध शरीर और आत्मा दोनों से है। जो धर्म का नाश करता, अर्थात् अधर्म करता है, धर्म उसका नाश कर देता है। जो धर्म की रक्षा करता है—उसका मन, वचन कर्म से आचरण करता है—धर्म उसकी रक्षा करता है। अतः स्वनाश से बचने के लिये धर्म की रक्षा, उसका आचरण अत्यन्त

[शेष पृष्ठ १५ कालम २ पर]

अपनी स्फूर्ति के आधार पर चुन लिया है। इस संस्था की धार्मिक सहिष्णुता का आभास इसी बात से स्पष्ट होता है कि यहाँ ११० कैथोलिक्स, ४२ प्रोटेस्टेण्ट्स और अनेक नास्तिक तथा विविध मतावलम्बी प्रसन्नतापूर्वक अपने आत्म विकास में व्यस्त रहते हैं।

फ्रांस की इस उद्योग-समाज को आर्थिक सहयोग प्राप्त करने के लिये प्रति मास २५०००घड़ीके केसों का निर्माण करना पड़ता है। मुनाफे का ४५ प्रतिशत रुपया सहयोगियों में विभक्त कर दिया जाता है और शेष रुपये को संस्था की वृद्धि, सुधार और बचत में सुरक्षित रखा जाता है। प्रत्येक सहयोगी को वर्ष में १० मास का कार्य पूरा करना पड़ता है। एक मास तक कोई विशेष कार्य करना पड़ता है जिसमें इस संस्था की खेती-बारी भी सम्मिलित है। शेष एक मास वैतनिक अवकाश के लिये रहता है। कार्य करने का सप्ताह ४५ घंटे का माना जाता है जिसमें ३६ घंटे मशीनों पर काम करना पड़ता है और शेष समय में अध्ययन कार्य। सहयोगी गण चाहें तो नाटक-विभाग, साहित्य चर्चा-विभाग अथवा व्याख्यान विभाग में से किसी भी विभाग का सदुपयोग कर सकते हैं। व्याख्यानों के लिये प्रसिद्ध प्रोफेसर और कलाकारों की व्यवस्था की जाती है।

इस संस्था की व्यवस्था का ढंग भी बड़ा सरल है। एक परिवार एक इकाई कहलाता है। पाँच छह परिवारों का एक समूह बना दिया जाता है, और ये लोग एक-दूसरे के घरों पर बैठ-बैठ कर संस्था की विविध समस्याओं को सुलझाने के लिये विचार-विमर्श किया करते हैं।

संक्षेप में इस आदर्श समाज के विषय में इतना ही कहा जा सकता है कि यहाँ आदमी के विकास के सब साधन उपलब्ध होते हैं। सुशिक्षा और सुख के आधार पर मानव जीवन के उत्थान की सब संभावनाओं पर यहाँ पूरा बल दिया जाता है।

मार्केल बार्बू आज भी अपनी योजना के प्रचारार्थ फ्रांस की गली-गली में घूम कर श्रमिकों के सुख की घोषणा कर रहा है। इधर फ्रांस की सरकार भी गत-वर्षों से इस योजना का गंभीर अध्ययन कर रही है।

स्वास्थ्य-सुधा

नित्यक्रिया

श्री आनन्दीप्रसाद मिश्र 'निर्द्वन्द्व'

बहुत कम लोगों को नित्य-क्रिया की पद्धति मालूम है। यथार्थ रीति से नित्य-क्रिया का सम्पादन न करना, अनेक शारीरिक और मानसिक रोगों को उत्पन्न करता है। शारीरिक रोगों का मूल अजीर्ण है और मानसिक रोगों का मूल अपवित्रता है। नित्य कर्मों की लापरवाई से ही उक्त दोनों महारोग जीव को ग्रस्त कर लेते हैं। वर्तमान समय में, प्रत्येक जीव को, सवा सौ वर्ष जीवित रहने का अधिकार है। परन्तु नियम-विरुद्ध चल कर वह अकाल मृत्यु का शिकार हो जाता है। आजकल पचास वर्ष की आयु के औसत में भारतीय मनुष्यों का जीवन समाप्त हो रहा है। जीवन-रक्षक नित्य कर्म की लापरवाई में ही अल्प आयु का चक्र चल रहा है। नियम पालन में भारतीयों की लापरवाई सीमा रहित है। जिसको नियम संयम से स्वाभाविक प्रीति नहीं, उसको कभी सुख प्राप्त नहीं हो सकता। संयम ही आनन्द है, नियम-पालन ही कर्त्तव्य है। अत्यन्त खोज और अनुभव के साथ नित्य-क्रिया के विषय में कुछ नियम लिखे जाते हैं। पाठकों को चाहिए कि सन्तान, स्त्री और कुटुम्ब सहित स्वयं भी इन नियमों का पालन करने की कोशिश करें। इन नियमों का पालन करने पर उनका लाभ ज्ञात होगा। यह स्मरण रखना चाहिए कि मन को संयम और नियम से कष्ट होता है। किन्तु बिना नियम पालन के मनुष्यत्व भी प्राप्त नहीं होता। पशुओं की तरह खाना, सोना, भोग करना और दिन-भर पेट भरने का काम करना ही मनुष्यत्व नहीं है। वर्त्तमान समय में पशु और मनुष्य में आकार-भेद के अतिरिक्त और कुछ भी अन्तर नहीं रह गया है। नियम, प्रेम और स्वार्थ एवं परमार्थ को जानकर अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष की प्राप्ति करना ही मनुष्य-शरीर का कर्त्तव्य है। नियम से धन की, प्रेम से धर्म की, स्वार्थ से लक्ष्य की और परमार्थ से मुक्ति की प्राप्ति होती है। आज नियम पर ही कुछ निवेदन करना है।

प्रातः चार बजे उठो। यदि आँख न खुले, तो घड़ी के अलार्म के सहारे उठो, फिर धीरे धीरे आदत पड़ जाएगी। आँख खुलने पर यदि आलस्य न जाय, तो उसकी दवा यह है कि तुरन्त उठ कर मुँह धो डालना चाहिए, और बैठ कर उच्च स्वर से मन्त्र आदि उच्चारण करने लगना चाहिए। चार बजे की वायु प्राण-वायु के साथ बुद्धि एवं जीवन को बढ़ाने वाली है। हां, तो चार बजे आप उठे, उठते ही ताजा एक लोटा जल लो, और बिना प्यास के भी जितना पी सको, अमृत मान कर पी जाओ। यह जल शारीरिक ताप की शांति करता हुआ अजीर्ण का नाश करेगा और मन्दाग्नि को दूर करेगा। ताजा जल होना चाहिए। जल पीते समय, बाँये नथने को बन्द करलो। कुछ मिनट पश्चात् शौच जाओ। शौच जाते समय, बाँये हाथ से आबदस्त लेना चाहिए। उस समय दाहिना स्वर चलना चाहिए, इससे समस्त मल निकल जायगा। बाँये स्वर पर उंगली लगा देने से काम चल जायगा। मूत्र त्याग के समय दाहिने स्वर को बन्द करना चाहिए, इससे मूत्र-सम्बन्धी कोई विकार नहीं होगा।

लोटे और हाथों को तीन बार मिट्टी से साफ़ करो। तदनन्तर दातून करो। दातून के बाद कुछ आवश्यक सफ़ाई और भी करनी चाहिए। राल नामक एक पदार्थ होता है, जो कफ़ एवं पित्त के विकार योग से उत्पन्न होता है, उसको रोजाना बाहर निकालना पड़ेगा। नहीं तो वह कान, आँख, दाँत और गले में दुर्गन्ध रखेगा और रोग पैदा करेगा। स्फूर्ति भी पैदा न होगी, मन भी मलिन रहेगा, सौन्दर्य भी घटता जायगा। अतः नित्य ही उस राल को निकाल देना चाहिए। उसकी तरकीब इस प्रकार है कि मुख में जल भर कर दाहिने हाथ के अँगूठे से, उस सूराख को रगड़ो, जो कि मुख के ऊपरी भाग में विद्यमान है। तीन बार इस क्रिया को करो। इसके पश्चात्, तीन बार, मुख में थोड़ा जल लेकर, अँगूठे के निकट की दो उंगलियों से जीभ को गले के सूराख तक साफ करो। गले का सूराख और ऊपर का सूराख दो वस्तुएं हैं। गले के सूराख में जीभ की जड़ रहती है। उसमें वह हानिकारक राल टपक कर चिपट जाती है, उंगलियों से उसे खूब साफ करना चाहिए। उसके बाद मुख में खूब पानी भर लेना चाहिए, और नेत्रों को खोलकर जल के छींटे लगाना चाहिए। तदनन्तर नासिका द्वारा जल खींचना चाहिए, कानों को भी जल से साफ़ करना चाहिए। दाँत, आँख, दोनों सूराख, और जीभ को राल से मुक्त करना कभी न भूलिए।

इसके पश्चात् स्नान कर डालो। वैसा ही सुगन्धपूर्ण तेल क्यों न हो, स्नान के बाद उसका व्यवहार न करो। यह शौकीनी की बात है। तेल लगा कर स्नान करना चाहिये। सूखे और खुरदरे अँगोछे से स्नान के पश्चात् शरीर को रगड़ कर पोंछना चाहिये।

स्नान के पश्चात् संध्या-हवन जो कुछ करते हो करो। फिर अपने अवगुणों और गुणों को देखो। अवगुणों को दूर करने की और गुणों को और अधिक विकसित करने की दृढ़ इच्छा करो। इसके पश्चात् अपने से वृद्ध और अनुभवी लोगों को नमस्ते कर उनका कल्याणकारी आशीर्वाद प्राप्त करो। प्रातःकाल कुछ जलपान करने के पश्चात् सायंकाल को एक बार भोजन करना अति उत्तम है। उससे अजीर्ण नहीं होता, हजारों रोग पास नहीं आते। काम और क्रोध के प्रचण्ड विकार भी कमजोर हो जाते हैं। यदि एकदम ऐसा न हो सके, तो खूब भूख लगने पर भोजन करना चाहिये। भोजन करते समय दाहिना स्वर चलना चाहिये। स्वर बदलने की जरूरत हो, तो बाएं धुकधुके पर कपड़े की गेंद बनाकर ५ मिनट बाईं करवट लेट जाओ। दाहिना स्वर खुल जायगा। भोजन करना, सोना और शौच जाना दाहिने स्वर में लाभप्रद और स्वास्थ्य रक्षक होता है। बाएं स्वर में जल पीना, मूत्र त्याग करना, और विश्राम करना जरूरी है। भोजन को धीरे-धीरे चबा कर खाना चाहिये। पेट को खूब भर कर न खाना चाहिये, भोजन के पश्चात् कुछ देर विश्राम करना जरूरी है। भोजन के साथ जल का पीना अच्छा नहीं। भोजन कर चुकने के बाद आधा गिलास पानी दाहिने स्वर में पीना चाहिये। दाहिना स्वर भोजन के कोठे का मार्ग है और बायां जल का। भोजन को थोड़े जल की आवश्यकता है। बाएं स्वर में भोजन करने से खाद्यपदार्थ जल के कोठे में जा गिरते हैं, जो रोग का कारण बन जाते हैं। दाहिने स्वर से जल पीना भोजन के कोठे को जलपूर्ण कर देता है। उससे पेट की अग्नि का फिजूल खर्च होता है और वह कमजोर हो जाती है। यह नियम स्वास्थ्य की दृष्टि से लिखे गये हैं, धर्म की दृष्टि से नहीं। इनमें विज्ञान है, ढकोसला नहीं।

दूध और शर्बत को दाहिने स्वर के साथ पीना चाहिये। भोजन में घी और गुड़ अवश्य होना चाहिये। लाल मिर्च की जगह काली मिर्च का उपयोग लाभप्रद है। ज्यादा मसाला, मिर्च, अचार आदि चटपटे भोजनों के स्वाद से जीभ को व्यभिचारिणी मत बनाओ। उससे विलास-भावना की वृद्धि के अतिरिक्त कुछ भी लाभ नहीं। चटपटे भोजनों से रक्त बिगड़ जाता है, और काम-क्रोध बढ़ जाते हैं। गम्भीरता और शान्ति मिट जाती है, चंचलता और मूढ़ता आ जाती है।

रात को दस बजे तक सो जाना चाहिए। सोने के पूर्व हाथ, पैर और मुख धो डालना चाहिए। चारपाई पर लेट कर ज्ञान और भक्ति के विषय में मन को लगाना चाहिए। शास्त्र ने सन्तान के लिये स्त्री-प्रसंग की आज्ञा दी है विषय-सुख के लिए नहीं। भोग विलास की अधिकता मृत्यु को शीघ्र बुलाने वाली है।

भोजन के पश्चात् खूब कुल्ले करना चाहिए। तदनन्तर हाथों को पोंछ कर उनको आपस में रगड़ो

सुझाव और सम्मतियाँ

दो आवश्यक प्रश्न

आर्यसमाज के नियमोपनियमों का विषय सार्वदेशिक सभा के सम्मुख उपस्थित है; सम्भवतः प्रान्तीय सभा में भी इस पर विचार होगा। उपसमिति में मैं अपने विचार दे चुका हूँ। सर्व साधारण आर्य भी उन पर विचार करें।

प्रथम—आर्यसमाज को अधिक व्यापक एवं लोकप्रिय बनाने के लिए तथा आर्थिक दृष्टि से दृढ़ करने के लिए यह आवश्यक है कि आर्य सभासदों के अतिरिक्त 'आर्य सहायक' भी प्रत्येक आर्यसमाज अधिक से अधिक संख्या में बनाने का यत्न करे। और 'आर्य सहायक' के लिये यह आवश्यक हो कि वह वर्ष में कम से कम एक रुपया किसी आर्यसमाज को देता हो तथा आर्यसमाज के दस नियमों को मानता और आर्यसमाज के कार्यों से सहानुभूति रखता हो। इस प्रकार के आर्य सहायकों को अधिक से अधिक संख्या में प्रत्येक आर्यसमाज बनाने का यत्न करें, उनके साथ सम्पर्क रक्खें और उन्हें 'आर्य' तथा 'आर्यसभासद्' बनाने का यत्न करें। 'आर्यसमाज स्थापना-दिवस' के अवसर पर इसके लिये विशेष उद्योग किया जाया करे।

द्वितीय—प्रायः देखा गया है कि आर्यसभासदों में नित्यकर्म एवं संस्कार आदि की प्रथा कम होकर धार्मिकता धारण करने की प्रवृत्ति नष्ट होती जारही है और कोरे प्रबन्ध एवं शासन-सम्बन्धी कलह तथा सामाजिक शुष्क वाद-विवाद बढ़ कर, वैयक्तिक एवं पारिवारिक जीवन की धार्मिकता तथा पवित्रता गौण हो रही है। इसका घातक परिणाम यह है कि आर्यसमाज की भावी पीढ़ी में नये आर्य बनते हुए नहीं दिखाई देते।

इस त्रुटि को दूर करने के लिये यह आवश्यक प्रतीत होता है कि प्रधान मन्त्री आदि पदाधिकारियों में एक पद 'पुरोहित' का नियमों में और बढ़ा दिया जाय। इस पद के लिये खड़े होने वालों की कुछ नियत योग्यता हो और वर्ष भर में कम से कम २५ अथवा ५० फीसदी सभासदों के घर में (जो भी दोनों में अधिक हों) जाकर पारिवारिक यज्ञादि कराना आवश्यक हो। 'पुरोहित' ही अपने पदाधिकार से समाज का प्रधान उपप्रधान हुआ करे। अन्य आर्य बन्धु भी अपने विचार प्रकट करें।

बृहस्पति शास्त्री, एम० ए०
सिद्धान्त शिरोमणि।

और मुख पर तीन बार फिराओ। हाथों को रगड़ कर तीन बार पेट पर भी फेरो। इस प्रथा से चमड़ी और नेत्र-सम्बन्धी रोग नहीं होते। इन प्रथाओं को जो अपने नित्यकर्म में शामिल करेंगे, उनका स्वास्थ्य अच्छा रहेगा, रोग पास नहीं आवेंगे। मानसिक शुद्धि प्राप्त होगी, शान्ति प्राप्त होगी और चित्त प्रसन्न रहेगा। इन शास्त्रोक्त बाह्य शुद्धि का प्रचार घर घर में होना चाहिए। शारीरिक शुद्धि प्रथम और आवश्यक कर्त्तव्य है।

हमारे नवयुवक

नवयुवक किसी भी देश व जाति के प्राण होते हैं। चीन की आश्चर्यजनक उन्नति का श्रेय किसको है? लेनिन, टाट्स्की ने किसके बल पर अपना प्रचार किया? केवल नवयुवकों के बल पर। तब आइये हम भी अपनी नवयुवक-शक्ति पर पक्षपात रहित गम्भीरतापूर्वक विचार करें। आर्यसमाज से सम्बन्धित इस समय दो संस्थाएं हैं, जो नवयुवकों में प्रचार कर रही हैं। १—भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् २ आर्यवीर दल। भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् को पर्याप्त समय कार्य करते व्यतीत हुआ, परन्तु यह कटु सत्य है कि आर्यकुमार आन्दोलन एक निर्जीव आन्दोलन है। कुमार सभाओं की जो स्थिति है, वह किसी से छिपी नहीं है। भारत की कुछ गिनी चुनी सभाएं ही प्रगतिशील हैं। आर्यवीर दल—इसने जो उन्नति की है वह आश्चर्यजनक है। समस्त भारत में दो सौ शाखाओं का चलना उन्नति का परिचायक है। परन्तु अब इस आन्दोलन में भी शिथिलता आती प्रतीत हो रही है। ऐसा संकटमय परिस्थिति में मैं आर्यजगत् के सम्मुख दोनों संस्थाओं को मिलाने का प्रस्ताव रखता हूँ। यदि दोनों आन्दोलनों का सम्मिलन कर दिया तो उन्नति की पूर्ण आशा की जा सकती है। आर्य नवयुवक अपनी संस्था की शिथिलता देखकर अन्य प्रगतिशील संस्थाओं में चला जाता है। युवक संगठन की जो उपेक्षा आर्यसमाज ने की उसका फल शिथिलता के रूप में आज विद्यमान है। अन्य युवकों के विषय में तो क्या कहा जाय स्वयं आर्यों की सन्तानें भी आर्यसमाज से कोई सम्बन्ध नहीं रखतीं। वह अन्य संस्थाओं में प्रवेश कर समाज के मूलभूत सिद्धान्तों पर कुठाराघात कर रही हैं। ऐसी दुःखद एवं चिन्तनीय अवस्था को देखकर प्रत्येक आर्यसमाज-हितैषी के हृदय में दुःख होना स्वाभाविक है। मेरा नम्र निवेदन है आर्यसमाज के गण्यमान्य नेताओं की सेवा में कि वह इस पर शीघ्र ध्यान देकर आर्यसमाज के भविष्य को स्वर्णिम बनाने का सक्रिय यत्न करें।

हरिश्चन्द्र आर्य, अमरोहा

धर्म-प्रचार कैसे हो?

आर्यसमाज का अधिकता से प्रचार कैसे हो? इसके दो उपाय हैं। सबसे पहले प्रत्येक आर्यसमाजी पक्का आर्यसमाजी बने। वैसा ही आर्यसमाजी जैसे पहले होते थे, जिनकी सचाई की धाक थी। अदालतों में भी एक आर्यसमाजी की गवाही पर पूरा विश्वास किया जाता था। आर्यसमाजों में जाकर पता लगाइये कि कितने आर्य ब्राह्ममुहूर्त्त में उठकर सन्ध्या हवन तथा अन्य धार्मिक कृत्य करते हैं। आर्यों के पुत्र या पारिवारिक जन समाज के सत्संगों में जाते और धार्मिक कृत्यों में भाग लेते हैं या नहीं? जब आर्यसमाजी आत्म-निरीक्षण पूर्वक अपनी त्रुटि दूर करेंगे और अपने परिवारों को आर्य बनावेंगे तभी आर्यसिद्धान्तों का प्रचार होगा। दूसरी बात यह कि केवल समाज जाने से काम न चलेगा, हमें महल्ले-महल्ले, ग्राम ग्राम और नगर-नगर में 'सत्यार्थप्रकाश' की कथाएं कराकर सर्वसाधारण को धर्म का मर्म समझाना होगा। अगर जनता तक आर्यसिद्धान्त नहीं पहुंचे तो यह आर्यसमाजियों की कमी है, जनता का दोष नहीं। शास्त्रार्थ बन्द होने से भी प्रचार में बड़ी बाधा पड़ी है। पाखण्ड-खण्डन करने का कार्य भी फिर जारी करने की जरूरत है। ये उपाय काम में लाए जायं तो आर्य समाज का प्रचार बड़ी सफलता से हो सकता है।

—धर्मानन्द संन्यासी

'त्रिविष्टप' या 'त्रिपर्वत'

५ अप्रैल के 'आर्यमित्र' में श्री शिवपूजनसिंहजी कुशवाहा का 'त्रिविष्टप'-सम्बन्धी एक लेख प्रकाशित हुआ है। उन्होंने तिब्बत शब्द को 'त्रिविष्टप' शब्द का अपभ्रंश बताया है। वस्तुतः तिब्बत शब्द 'त्रिपर्वत' का अपभ्रंश है। अशुद्ध उच्चारण के कारण 'र' का लोप और 'प' के स्थान में 'ब' बोला गया है। इसलिये डबल 'ब' हो गया है। त्रिपवत = तिब्बत। व्याकरण के अनुसार पर्वाणि सन्ति अस्य इति पर्वतः = पहाड़। तृतीयः पर्वतः = त्रिपर्वतः = 'तिब्बत'। तीसरी अर्थात् सबसे ऊंची चोटी का पर्वत। यह 'त्रिपर्वत' शब्द त्रिविष्टप अर्थात् स्वर्ग के अर्थ में ही आता है। परन्तु शब्द 'त्रिपर्वत' है। यह हिमालय के देवताओं का निवास-स्थान माना गया है। 'विष्टप' शब्द का अर्थ इस प्रकार है—विशति तपः अस्मिन्निति विष्टपो लोकः। आदि सृष्टि के समय चूंकि आदि पुरुष तप करते हुए सृष्टि में प्रवेश करते हैं, इस लिये ऐसा कहा गया है।

कविराज डा० बालकृष्ण, शास्त्री

साहित्य-सौरभ

श्री प० किशोरीदास वाजपेयी शास्त्री हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान् हैं। आपको हिन्दी के विषय में जो कुछ कहना होता है, बड़ी निर्भयता से कहते हैं। आपके यहां रूरियायत को कोई स्थान नहीं है। हिन्दी को व्याकरण, शब्द-प्रयोग अथवा अन्य दृष्टियों से परिमार्जित करने के लिये आप सतत उद्योग करते रहते है। वाजपेयीजी ने अपनी निम्नलिखित पुस्तकें हमारे पास भेजने की कृपा की है। इन पुस्तकों से पाठकों का परिचय कराया जाता है—

राष्ट्रभाषा का प्रथम व्याकरण

प्रकाशक—जनवाणी प्रकाशन, १६१।१, हरीसन रोड, कलकत्ता। मूल्य ४)

राष्ट्रभाषा हिन्दी की व्याकरण सम्बन्धिनी उलझनें दूर कर, उसे शुद्धता और सरलता के साथ लिखने और बोलने के लिये ही इस उत्तम व्याकरण-ग्रन्थ की रचना की गयी है। हिन्दी भाषा-भाषी जन तो इस पुस्तक से यथेष्ट लाभ उठावेंगे ही, सबसे बड़ी सुविधा अहिन्दी भाषा-भाषियों को होगी। वे इस व्याकरण द्वारा बड़ी सरलता और शीघ्रता से शुद्ध हिन्दी लिखना और बोलना सीख सकेंगे। इस व्याकरण में प्रायः वे ही सिद्धान्त रखे गये हैं, जो मौलिक तथा आधारभूत हैं। व्याकरण रूखा-सूखा विषय है, परन्तु वाजपेयी जी ने उसे अपनी विशिष्ट लेखन-शैली द्वारा सरस और आकर्षक बना दिया है। ऐसी पुस्तकें शिक्षा-विभाग के पाठ-क्रम में नियुक्त होने से छात्रों के लिये अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। आदि में श्री अमरनाथ झा की अंग्रेजी में भूमिका है।

—

राष्ट्रभाषा का इतिहास

लेखक और प्रकाशक ऊपर के अनुसार, मूल्य २)

पुस्तक के पूर्वार्द्ध में भाषा की उत्पत्ति और विकास पर विचार प्रकट किये गये हैं और फिर १६ वीं शताब्दी से १९४६ तक राष्ट्रभाषा के विकास और प्रचार का वर्णन है। उत्तरार्द्ध में राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में विधान-परिषद् में हुये संघर्ष का उल्लेख किया गया है। अर्थात् इस पुस्तक से यह भली भांति विदित हो जाता है कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर पहुंचने में किन-किन विरोधों, आपत्तियों और अड़चनों का सामना करना पड़ा और हिन्दी सेवियों ने उसकी अभिवृद्धि और उन्नति के लिये सभा-सम्मेलन स्थापित कर अथवा अन्य प्रकार से क्या क्या उद्योग किये। इस छोटे-से इतिहास के पढ़ने से राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में बहुत-सी ज्ञातव्य बातें ज्ञात हो जाती हैं। हिन्दी-प्रचार के प्रारम्भिक युग में जहां वाजपेयी जी ने भारतेन्दु जी आदि का उल्लेख किया है, वहाँ महर्षि दयानन्द का नाम उपेक्षा से तो नहीं, भूल से ही रह गया प्रतीत होता है।

—

हिन्दी निरुक्त

लेखक और प्रकाशक वही, मूल्य ॥)

भाषा-विज्ञान को दृष्टि में रखकर हिन्दी में सम्भवतः यह पहली पुस्तक लिखी गयी है। शब्द-विकास के नियमों का अन्वेषण करना ही इस पुस्तक का मुख्य उद्देश्य है। वर्णों का रूपान्तर स्वतः ही होता रहता है, परन्तु इस 'स्वतः रूपान्तर' में भी वैज्ञानिकता होती है। इसी को वाजपेयीजी ने बड़ी खूबी से समझाया है। हिन्दी शब्दों के उच्चारण तथा अर्थ में देश काल तथा पात्र के भेद से आने वाले अन्तर पर सूक्ष्म दृष्टि डाली गई है। संज्ञाओं तथा क्रियाओं की विभक्तियों की आगम विधि और विकास-शृंखला के प्रवाह पर भी बड़ी सुन्दरता से विचार किया गया है। पुस्तक बड़ी उपयोगी और गम्भीर विवेचना से परिपूर्ण है।

—

कांग्रेस का संक्षिप्त इतिहास

लेखक और प्रकाशक उपर्युक्त मूल्य १॥)

इस इतिहास के सम्बन्ध में कांग्रेस-अध्यक्ष श्री बी० पट्टाभि का मत है कि वह शृंखलाबद्ध और संतुलित है। भाषा सुबोध और सजी हुई है। कांग्रेस के जन्म से लेकर अबतक का संक्षिप्त इतिहास इस पुस्तक में बड़ी सुन्दरता से दिया गया है। सौ से भी कम पृष्ठों में इतनी महत्व-पूर्ण और व्यापक विषय की चर्चा कर देना गागर में सागर भरना ही कहा जायगा। यह इतिहास शिक्षणालयों में पढाया जाना चाहिये, जिससे छोटे छोटे विद्यार्थी अपने देश की राष्ट्रीय महासभा के सम्बन्ध में आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर सकें। प्रौढ़ शिक्षण में भी ऐसी उपयोगी पुस्तकों का समावेश हो सकता है। इस संक्षिप्त इतिहास में कांग्रेस सम्बन्धी अन्य आवश्यक बातों का भी उल्लेख है, जिनका जानना साधारण पाठक के लिये बहुत जरूरी है।

—

मानवधर्म-मीमांसा

लेखक और प्रकाशक ऊपर के अनुसार मूल्य २।)

मानव धर्म क्या है, मनुष्य के लिये क्या कर्त्तव्य और क्या अकर्त्तव्य है? धर्म के मौलिक सिद्धान्त विश्वम्भर के लिये एक है। उनमें किसी का मतभेद नहीं, इत्यादि बातों का इस उपयोगी पुस्तक में स्पष्टता और सरलता से विवेचन किया गया है, और ऐसे उपदेश दिये गये हैं, जिनसे मनुष्य वास्तव में मनुष्य बन सकता है। आज कुछ लोग धर्म के पीछे लाठी लेकर पड़े है। जिस धर्म के अभाववश ही सर्वत्र अशान्ति और अनाचार हो रहे है, उसे ही लोग अपनाने को तयार नहीं। इस हिमाकत का भी कुछ ठिकाना है! मत मजहब या सम्प्रदायवाद देश के लिये विघातक है इसमें कोई सन्देह नहीं, परन्तु धर्म तो इन संकीर्णताओं से सर्वथा परे है, वह तो मनुष्य ही नहीं, प्राणिमात्र के कल्याण के लिये है। इन्हीं बातों की ओर इस पुस्तक में संकेत किया गया है। इस छोटी-सी पुस्तक मे वाजपेयी जी ने अनेक उपयोगी आवश्यक और जीवन को ऊँचा उठने वाली बातें लिख दी है। यज्ञ के सम्बन्ध में अपनी एक विशेष विचार-धारा भी उपस्थित की है। इस अधर्म्म युक्त युग में इस प्रकार के प्रयत्न उपयोगी और प्रशंसनीय है।

——

सामयिक चर्चाएँ

आर्यसमाज और राजनीति

श्री प० शिवदयालु

आज आर्यसमाज-जगत में यह प्रश्न बड़े उग्र रूप से उठा हुआ है कि आर्य समाज को सामूहिक रूप से राजनीति में भाग लेना चाहिए या नहीं। विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से इस प्रश्न पर अपने-अपने विचार प्रकट किए है। यह निर्विवाद है कि आर्यसमाज जिस धर्म अथवा संस्कृति का प्रचार करता है उस का मूल वेद है। आर्यसमाज के प्रवर्तक ने वेद को सब सत्य विद्याओं का तथा विज्ञान द्वारा सिद्ध होने वाले सर्व तत्वों का मूल प्रतिपादित किया है। यह प्रतिपादन भी केवल विश्वास के आधार पर नहीं अपितु अकाट्य युक्ति, तर्क तथा प्रमाणों के आधार पर किया गया है। वेद में राजधर्म का वर्णन है और पूर्ण रूपेण है। राजधर्म के प्रत्येक अंग पर अर्थात् व्यक्तिगत साधनाओं पर सामाजिक एवं राष्ट्रगत साधनाओं पर तथा विश्वगत साधनाओं पर सुन्दर एवं दिव्य प्रकाश डाला है।

भारत की पराधीनावस्था मे जन्म लेकर भी आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द ने विपरीत परिस्थितियों की लेशमात्र भी चिन्ता न करते हुए अपने वेद-भाष्य सत्यार्थप्रकाश तथा अन्यान्य रचनाओं में राजधर्म पर स्थल-स्थल पर स्पष्ट रूप से प्रकाश डाला है।

आर्यसमाज का यह परम

कर्तव्य है कि वह वेदों के राजधर्म पर उसके अंगोपांगों पर विशद एवं विस्तृत प्रकाश डाले। वेदबाह्य राजनीतिक मतवादों की युक्ति तर्क के आधार पर गम्भीर समालोचना करे। ठीक जिस प्रकार आध्यात्मिक एवं समाजिक जगत् में आर्यसमाज सर्व वेद बाह्य मतों एवं सम्प्रदायों से टक्कर लेता है, उसी प्रकार राजनैतिक मतों तथा सम्प्रदायों से भी टक्कर लेना उसका कर्तव्य है। केवल विदेशी साम्यवाद आदि मतवादों से ही टक्कर लेना नहीं, अपितु भारतीय राजनैतिक मतवादों से भी जो वेद-विरुद्ध हैं, टक्कर लेना इसका कर्तव्य है।

इन विभिन्न राजनैतिक मतवादों में सब कुछ असत्य एवं वेद बाह्य है, ऐसा भी आर्यसमाज नहीं मानता। इनमें जो जो बातें वेदानुकूल हैं वह सब आर्यसमाज को मान्य हैं। उनका खंडन करना भी आर्यसमाज को मान्य नहीं। अस्तु, अब प्रश्न यह है कि आर्यसमाज किसी देश विशेष की चालू राजनीति में अथवा राजनैतिक संगठन के साथ सामूहिक रूप से भाग ले या नहीं ? आर्यसमाज यदि किसी देश विशेष तक ही सीमित होता, अथवा उसका लक्ष्य सामयिक और एकांगी होता तो वह परिस्थिति के अनुसार इस देश की राजनीति में सामूहिक रूप से भाग ले सकता था। किन्तु सार्वभौम सनातन धर्म की प्रतिपादक संस्था होने के नाते निश्चय ही वह ऐसा कर नहीं सकता। किन्तु साथ ही आर्यसमाज किसी देश विशेष की राजनीतिक संस्था अथवा सरकार का पृष्ठ-पोषक भी बन कर नहीं रह सकता। जो लोग आत्मिक निर्बलता तथा स्वार्थान्धता के कारण आर्यसमाज को किसी विदेशी अथवा स्वदेशी सरकार का पिछलग्गू बनाना चाहते हैं, वे निश्चय आर्यसमाज के साथ घात करते हैं, और उसके खतरनाक शत्रु हैं।

जब तक भारतवर्ष अंग्रेजों का गुलाम था, आर्यसमाज के कार्यकर्त्ताओं ने विशुद्ध राष्ट्रिय भावनाओं से प्रेरित होकर उनको भारत से निकालने में हर सम्भव उपाय का उपयोग किया। कांग्रेस में सम्मिलित होकर, अथवा आजाद हिन्द फौज में मिलकर अथवा क्रान्तिकारी दलों का अंग बनकर भी कार्य किया। आर्यसमाज को अपने उन कार्यकर्त्ताओं पर जिन्होंने स्वदेश की आजादी के लिये यह उच्चकोटि का त्याग और बलिदान किया, उचित गर्व है।

अब अंग्रेजों के भारत से विदा होने के उपरान्त आर्यसमाज का कर्तव्य भारतीय जनों की मानसिक दासता से टक्कर लेना है। अंग्रेज चले गये, किन्तु भारत के चालू राजनीतिक संघटनों के मस्तिष्क प्रायः अंग्रेजी दासता के शिकार ज्यों के त्यों बने हुए हैं। आज भी प्रायः भारत के राजनैतिक मस्तिष्क विदेशी चाल-चलन, खानपान, रहन-सहन, भाषा-भाव, आचार विचार से युक्त हैं। भारत में विशुद्ध भारतीय संस्कृति को क्रियात्मक रूप से अपनाने की ओर उनका ध्यान नहीं है।

आज आर्यसमाज के सामने सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न निर्भय और निर्मम होकर विशुद्ध भारतीय संस्कृति का शङ्खनाद निनादित करने का है। साथ ही आर्यसमाज राजनैतिक दलों अथवा संस्थाओं का दास बनकर भी नहीं रह सकता। भारत की जो भी राजनैतिक संगठना विशुद्ध भारतीयता को क्रियात्मक रूपेण अपनावेगी, भारत के प्राचीन इतिहास एवं गौरव गाथाओं का मान करेगा, भारत के प्राचीन वर्ण एवं आश्रम धर्म का हृदय से सम्मान करेगी, भारत की प्राचीन शिक्षा-प्रणाली को राष्ट्र में प्रचलित करने के लिए क्रियात्मक पग उठावेगी, भारत की प्राचीन भाषा-संस्कृति को नवयुग के प्रकाश में बल के साथ स्वदेश में तथा बाह्य देशों में फैलाने का प्रयत्न करेगी, भारत के प्राचीन ज्ञान वेद का क्रियात्मक रूपेण मान करेगी, निश्चय वही अधिक से अधिक आर्यसमाज के मान, सत्कार, श्रद्धा एवं सहयोग का पात्र होगी, और आर्यसमाज का मस्तिष्क अधिक से अधिक उसके सामने झुकेगा।

जिस भी राजनीतिक दल की सरकार भारत में संकर संस्कृति (कम्पोजिट कल्चर) का पक्षपात करेगी, विवेक भ्रष्ट होकर अपनों के साथ अन्याय तथा परगामी के साथ पक्षपात करेगी, अथवा उनको सरसावेगी वह इस विश्वतोमुखी क्रान्ति के अग्रदूत दयानन्द की संस्था का तीन काल में भी सहयोग प्राप्त न कर सकेगी। निश्चय ही ऐसी वेद-विरोधी संस्था के साथ आर्यसमाज का किसी भी अवस्था में कोई सम्पर्क हो नहीं सकता।

——

जीवन-ज्योति

कर्मयोगी दयानन्द

श्री पं० प्रकाशवीर शास्त्री

बहुत पुरानी नहीं, आज से एक शताब्दी पूर्व की ही तो बात है जब आधी रात व्यतीत होने पर मूलशंकर नामक एक बालक के हृदय में शिवलिंग पर चढ़े चूहे की धृष्टता देख एक ज्योति जग उठी, मैं सच्चे शिव को खोजकर ही मानूंगा, वह खलनाशक और मंगलमय शंकर कोई और ही है। बस यह ही था वह ठेस जिसने लगकर चौदह वर्ष के एक बालक को आगे चलकर कर्मयोगी स्वामी दयानन्द सरस्वती बना दिया। ठीक भी तो है कभी-कभी साधारण घटनायें ही जीवन को महान् बना जाया करती हैं।

आज हमारा भारत स्वाधीन है और सदियों की दासता से मुक्त हम जब अपने स्वाधीनता-संग्राम का सच्चा और प्रामाणिक इतिहास लिखने जा रहे हैं, ऐसे में १८५७ के विद्रोह के बाद आजादी का अलख जगाने वाले कर्मठ संन्यासी ऋषि दयानन्द को कैसे भूला जा सकता है ? स्वामी दयानन्द केवल उन महात्माओं में ही नहीं थे जो जीवन के आध्यात्मिक स्तर को ही छू कर रह जाते हैं, अपितु उन्होंने समाज की उन कुरीतियों के भी विपरीत सबल आन्दोलन छेड़ा जिसके कारण पराधीनता की नींव और गहरी होती जा रही थी। यद्यपि प्रसिद्ध सुधारक राजा राममोहन राय सती-प्रथा के कलंक को भारत माता के मस्तक से धो चुके थे, परन्तु अभी भी जिस देश में बालविवाह और वृद्धविवाह जैसी दूषित प्रथाएं चल रही थीं। नारी-शिक्षा के नाम पर नाक-भौं सिकोड़ने वाले समाज के पंच और अगुआ बने हुए थे। भारत माता की पवित्र छह करोड़ सन्तानें अछूत और दलित कहकर मनुष्यता के अधिकारों से वंचित रखी जा रही थीं। छोटी-छोटी अन्य बहुत सी दुर्बलताएं समाज का अंग-भंग करने पर तुली थीं। ऐसे में जिस भीषण सामाजिक क्रान्ति की आवश्यकता थी, उसी का अग्रदूत बनकर यह योगी मैदान में आया। सन् सत्तावन के गदर के बाद देश में जो निराशा और उदासी का वातावरण छागया था, उसे दूर करने में बंकिम बाबू के वन्देमातरम राष्ट्रगीत की उन पंक्तियों, ने "द्विंत्रिंश कोटि भुजैर्धृत खर करवाले ! के बोले मा तुमि अबले" जहाँ बहुत बड़ा कार्य किया था, वहाँ 'सत्यार्थ-प्रकाश' ग्रन्थ के ग्यारहवें समुल्लास में गत उज्ज्वल अतीत का इतिहास लिखकर राष्ट्र को फिर से एक सबल अंगड़ाई लेकर उठ पड़ने की अद्भुत प्रेरणा स्वामी दयानन्द ने दी। प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता श्री जयचन्द्र विद्यालंकार ने तो तात्याटोपी और तत्कालीन उन योद्धाओं से जो अंग्रेजी शासन भारत से उखाड़ फेंकने के लिये जूझ रहे थे ऋषि दयानन्द का भी सम्पर्क बताया है। इस महान् आत्मा की मृत्यु का वास्तविक कारण भी कुछ और ही रहस्यमय था, ऐसी भी बलवती चर्चा आजकल पत्रों और सभामंचों पर सुनने में आ रही है। अस्तु, यह कारण तो भारतीय स्वाधीनता संग्राम के प्रामाणिक इतिहास की पंक्तियाँ और भी स्पष्ट बता सकेंगी, परन्तु श्यामजी कृष्ण वर्मा जैसे देशभक्त को छात्रवृत्ति दिलाकर लन्दन भेजना और भारतीय

स्वाधीनता के आन्दोलन का नया रूप छेड़ना उनकी अपूर्व सूझ का परिचायक है।

भिन्न-भिन्न इकाइयों में बँटी भारत की रियासतें और उनके वह राजा जो ब्रिटिश शासन से सम्बन्ध बनाये रखने में ही अपने कर्त्तव्य की समाप्ति समझ रहे थे, शेष भारत के दुःख-दर्द और पराधीनता से अपना नाता न जाने कब का तोड़ बैठे थे। उन्हें क्षत्रियत्व की दुहाई और भारतभूमि की दुर्दशा बताकर न केवल उनकी राजधानियों में ही जाकर सजग किया, अपितु १८७८ के लार्ड रिटन के दरबार-काल में देशी राजाओं की एक सभा में उन्हें यहाँ तक भी कह डाला यहाँ तो कभी तुम अपने पूर्वजों के राज्याभिषेक में एकत्र हुआ करते थे, आज यहाँ कैसे? अपने कर्तव्यों से विमुख रजवाड़ों में जाकर कर्तव्यबोध कराया। राजस्थान के एक राजा को तो रोग की अवस्था में ही उन्होंने यहाँ तक लिखा—जो राजा अपने शरीर की रक्षा नहीं कर सकता कैसे वह अपनी रियासत में रहने वाली सोलह लाख प्रजा की रक्षा करेगा। इस प्रकार देशी राज्यों में भी उन्होंने अपने जीवन और शक्ति का बहुत बड़ा भाग लगाया।

पानीपत के तीसरे संग्राम की हार में जो कारण छिपा हुआ था और जिसके कारण भारतराष्ट्र में मानवीय इकाइयां बढ़ती जा रही थीं, जातिभेद की उस घातक कुप्रथा के विरोध में भी ऋषि ने अपनी आवाज उठाई। सैकड़ों जाति-उपजातियों में बटे समाज को कर्मानुसार चार वर्णों में विभक्त होने का सफल संकेत किया। किसी वर्ग अथवा समुदाय विशेष को किसी नये नाम से सम्बोधित कर उठाने का विचित्र प्रयास कभी नहीं किया, अपितु सब ही मानव एक पिता के पुत्र हैं, और गुण-कर्म के आधार पर अपनी चार संज्ञायें रख सकते हैं, इसके आजीवन उपदेश दिये। भले कर्म करने पर शूद्र ब्राह्मण और बुरे कर्म करने पर ब्राह्मण शूद्र का पद समाज में प्राप्त करेगा। वर्ण मां के गर्भ से नहीं, अपितु कर्म से नियत होते हैं, इसकी भी क्रान्तिकारी घोषणा उन्होंने की।

आर्यजगत

—आ० स० दिलदार नगर का ३० वाँ वार्षिकोत्सव ७ से १० अप्रैल तक समरोहपूर्वक मनाया गया। स्वा० प्रणवानन्दजी, आचार्य रामानन्द शास्त्री, ठा० धर्मराजसिंह आदि के उपदेश तथा भजन हुए। नगर कीर्तन में चिमटा मण्डली ने प्रचार किया। ११ अप्रैल को आर्यसमाज गहमर में प्रचार किया। पांच व्यक्तियों की शुद्धि हुई।

—मधनापार (आजमगढ़) में पं० द्वारकाप्रसाद शर्मा उपदेशक ने नवीन संवत्सर के उपलक्ष्य में वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार के साथ गीता की कथा भी कही। अन्तिम दिन ठा० भीष्मसिंहजी वकील की अध्यक्षता में यज्ञ और व्याख्यान हुए। श्री भगवतीप्रसाद जी के पुत्र का नामकरण संस्कार हुआ।

महर्षि दयानन्द की वैदिक साहित्य-सम्बन्धी अद्भुत खोजों से प्रभावित मैक्समूलर आदि विद्वानों ने जहाँ उन्हें अपने जन्म देश में आने का आमन्त्रण दिया, वहाँ प्रसिद्ध समाज-सेवी श्री केशवचन्द्र सेन ने भी जब यह कहा—स्वामी जी, यदि आपने अंग्रेजी भाषा पढ़ी होती तो विदेशों में चलकर वेद की दुन्दुभि बजाते और इस प्रकार भारत का गौरव बढ़ाते। इस पर हंसकर स्वामीजी ने उत्तर दिया "यदि आपने भी संस्कृत पढ़ी होती केशव बाबू, तो एक और एक ग्यारह दोनों मिलकर पहले अपने देश का सुधार करते, फिर दूसरे देश की सोचते। इसमें उनकी स्वदेशोत्थान की उत्कट भावनाओं का भी परिचय मिलता है।

आज से ६७ वर्ष पूर्व दीपावली की संध्या में उस कर्मयोगी का जीवनदीप बुझ गया, परन्तु आज भी स्वराज्य के साथ सुराज का दिया उनका गुरुमन्त्र और उनके सामाजिक सुधारों की पगडंडी पर चलते हुए हम उनके विमुक्त आत्मा को श्रद्धावनत होकर प्रणाम करते हैं।

—कायमगंज आर्यसमाज में रामनवमी पर्व मनाया गया। पं० रामेश्वर दयालुजी पाण्डेय की अध्यक्षता में यज्ञ हुआ।

—६ मार्च को आ० स० खड्गपुर (फर्रुखाबाद) की स्थापना पं० सोमदत्तजी उपदेशक द्वारा हुई। प० हरनारायण लाल ने समाज मन्दिर बनने तक अपना स्थान आर्यसमाज के लिए दे दिया है।

—आ० स० उरई का वार्षिकोत्सव ३०, ३१ मार्च व १ अप्रैल को मनाया गया। विद्वानों के व्याख्यानों का अच्छा प्रभाव पड़ा। ठा० आत्मारामजी के भजनों की खूब धूम रही।

—आ० स० गोविन्द नगर कानपुर का वार्षिकोत्सव १३, १४ तथा १५ अप्रैल को उत्साह पूर्वक मनाया गया। स्वा० ज्ञानानन्दजी, प्रिंसिपल दीवानचन्दजी प० नन्दलालजी आर्य मिशनरी, प्रो० हासानन्दजी, प० रामचन्द्र जी देहलवी, कु० सुखलालजी आर्यमुसाफिर, प० रामदयालुजी शास्त्री, प० देवीप्रसादजी आदि के व्याख्यान हुए। गोविन्दनगर के लिये इतना बड़ा यह पहला ही जल्सा था। कथा और सचित्र व्याख्यान हुए।

—शोक है कि गत ७ अप्रैल को आ० स० सहतवार (बलिया) के उत्साही कार्यकर्ता ठा० रामकृष्णसिंह जी का युवावस्था में देहान्त होगया। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति तथा दुखी परिवार को धैर्य प्रदान करे।

—आ० स० मिलक (रामपुर) का वार्षिकोत्सव २५ से २७ मार्च ५१ तक मनाया गया। श्री स्वा० ब्रह्मानन्द जी, म० बलवीर सिंह जी के भाषण और भजन हुए। प्रभाव अच्छा पड़ा। ४ अप्रैल को रिठौड़ा के मेले पर प्रचार किया। वर्षान्तर्गत लगभग पचास संस्कार कराये।

—डा० बांकेलालजी और श्रीनारायणदास जी ने देहरादून आर्यसमाज-भवन निर्माण के लिये ८५००) का दान देने की उदारता दिखाई है। धन्यवाद।

निर्वाचन

—आ० कु० सभा राजामण्डी—प्रधान-श्री चन्दनलालजी और मन्त्री-श्री गोपालजी आर्य।

—आ० स० लोदीरोड नई दिल्ली प्रधान-ला० देवीदास चोपड़ा और मन्त्री-श्री चरणसिंह आर्य।

—आ० स० वमणखोला (गढ़वाल) प्रधान-श्री श्यामलाल आर्य और मन्त्री- श्री शङ्करलाल आर्य।

—आ० स० नगीना—प्रधान-श्री राजेन्द्रनाथजी स्नातक और मन्त्री श्री श्यामलालजी।

—आ० स० मिलक (रामपुर)-प्रधान श्री काशीरामजी और मन्त्री श्री नत्थारामजी।

—आ० स० देहरादून—प्रधान-आचार्य बृहस्पतिजी और मन्त्री-श्री जगदर्शनजी सेवक।

—आ० स० बीसलपुर—प्रधान-श्री पोथीरामजी वर्मा और मन्त्री-श्री हरिश्चन्द्रजी सक्सेना।

—आ० स० ग्वालियर—प्रधान-श्री लीलाधर शास्त्री काव्यतीर्थ और मन्त्री-श्री रामस्वरूपजी गुप्त।

उत्सव-सूचनाएँ

—आ० स० लालगंज का आठवाँ वार्षिकोत्सव २२, २३ और २४ अप्रैल को मनाया जायगा।

—आ० स० इटारसी का १३ वाँ वार्षिकोत्सव ३ से ६ मई तक मनाया जायगा।

—२८ तथा २६ अप्रैल को आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध का सम्मेलन कल्याण (सिन्धुनगर) में किया जायगा।

—आ० स० नगीना का २५ वाँ वार्षिकोत्सव ३ से ६ जून तक मनाया जायगा।

—द्वितीय आर्यसमाज मेंहनगर (आजमगढ़) का वार्षिकोत्सव आगामी १२, १३ तथा १४ मई को होगा।

सार-सूचनाएं

—आगरा श्रमजीवी पत्रकार-संघ का वार्षिक चुनाव १६ मई ५१ को नागरी प्रचारिणी सभा भवन में होगा।

—१० अप्रैल को कानपुर सेण्ट्रल से श्री रामदेवजी आर्यप्रचारक का खाकी थैला गुम हो गया है। इसमें हवन कुण्डादि तथा जिला आर्य उपप्रतिनिधि सभा

कानपुर की रसीदबही है। जिनको मिला हो कृपया मन्त्री, उपसभा के पास ८६।२११ देवनगर के पते पर भेज दें।

—आ० स० सहतवार (बलिया) को श्री स्वा० प्रणवानन्दजी के पते की आवश्यकता है।

—

साधु वेशधारी

गत सात आठ महीने से एक मुसलमान हिन्दू साधू बनकर फंफूद स्टेशन से शिकोहाबाद तक रोज रेल में आता-जाता है, कुछ दोहे, चौपाई सुनाकर लोगो से पैसे मॉगता है। लोग इसे हिन्दू साधू समझकर पैसे दे देते हैं। अनुमानत कई रुपये के पैसे रोज उसके पास आ जाते हैं। जनता को इससे सावधान रहना चाहिये।

हरगोविन्द आय, भरथना

—

सावधान !

सम्भल निवासी म० कन्हैया लाल नामक व्यक्ति आयु ५० वर्ष ने गत ११ मार्च को सन्यास आश्रम में प्रवेश किया। नाम सच्चिदानन्द रखा। इस पर मैंने विश्वास किया और आश्रम के वस्तु भण्डार तथा आर्यसमाज के पुस्तकालय की चाबियाँ उसे दे दीं। पीछे यह साधू नामधारी आश्रम का कुछ सामान लेकर चम्पत हो गया। इससे सब सावधान रहे, और वैदिक आश्रम में ऋषिवश के नाम पर कुछ न दें।

देवानन्द संन्यासी

—

चौधरी जगदम्बाप्रसादजी का देहान्त।

खेद है कि आगरा निवासी चौधरी जगदम्बाप्रसादजी गायनाचार्य का, लम्बी बीमारी के बाद अस्सी वर्ष की आयु में १८ अप्रल ५१ को देहान्त हो गया। अन्त्येष्टि सस्कार वैदिक रीति से हुआ बा० नू साहब संगीत के अच्छे ज्ञाता थे। प्राय. विशुद्ध कविता ही गाते थे। स्वयम् भी 'सस्कार संगीत' नामक एक पुस्तक रची थी। आपने पचास वर्ष से अधिक आर्यसमाज का भजनों द्वारा प्रचार किया। देश के लगभग सभी बड़े बड़े नगरो के आर्यसमाजों में आप गये। आप फ़ीस या भेट कुछ नहीं लेते थे। केवल मार्गव्यय लेकर ही प्रचार करने जाते थे। श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आगरा के लिये भी आपने काफ़ी धन संग्रह किया था। परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

—

आर्यसमाज कटरा

दयानन्द-सप्ताह २८ फरवरी से ६ मार्च तक मनाया गया था, नित्य प्रातःकाल ५ से ७ बजे तक प्रभात फेरी होती थी। इस अवसर पर संविवाद हुआ। इस विषय पर वक्ताओं के विचारो का साराश ऋषिबोधोत्सव के दिन ६ मार्च को विशेष रूप से व्याख्यानो का आयोजन किया गया। यह सभा प्रयाग के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश श्री चन्द्रभान अग्रवाल के सभापतित्व में हुई। वक्ताओ में डा० बाबूराम, डा० धर्मानन्द, श्री प० नन्दकिशोर जी विद्यालंकार, श्री के० आर० आर० शास्त्री अध्यापक प्रयाग विश्वविद्यालय आदि प्रमुख थे। श्री चन्द्रभान अग्रवाल ने ऋषि के जीवन पर प्रकाश डालते हुए तथा उनकी महत्ता का दिग्दर्शन कराते हुए कहा कि देश के हित में यह आवश्यक है कि आर्यसमाज में चारित्रक बल बढ़े और समय की गति को दृष्टि में रखते हुए आर्यसमाज के लोग अपने मार्ग पर अग्रसर हों। होलिकोत्सव के अवसर पर कनल गज, कटरा तथा नये कटरे के मुहल्लों में आर्यसमाज के सदस्यो की प्रेरणा से २२ मार्च को हवन तथा उपदेश हुए। २३ मार्च को होली-मिलन का कार्यक्रम हुआ। इस अवसर पर समाज के योग्य तथा प्रतिष्ठित सदस्य डा० लक्ष्मीनारायणजी ने हास्यरस की कविता पढी।

स्थापना दिवस के अवसर पर माननीय न्यायाधीश श्री प्रकाश नारायणजी सरूप के सभापतित्व में एक सभा सायकाल ७ अप्रैल को हुई थी। जिसमें कई मान्य वक्ताओं ने स्वामीजी और आर्यसमाज की महत्ता पर अपने विचार प्रकट किये। श्री सप्रू ने आर्यसमाज की सेवाओं का वर्णन करते हुए कहा कि उसने देश का बड़ा कल्याण किया है।

—

—प्रथम व द्वितीय मार्च १९५१ श्री देवीप्रसाद जौहरी अधिष्ठाता शिक्षाविभाग तथा स० मन्त्री प्रान्तीय आ० प्र० सभा ने आर्यसमाज गाजियाबाद, डी० ए० वी० इण्टर कालेज, आर्यकन्या विद्यालय साधना-मन्दिर गाजियाबाद इन चारो सस्थाओ का निरीक्षण किया और दोनो शिक्षणालयों में बालकों व बालिकाओ के हितार्थ भाषण भी दिये। साधना मन्दिर के लिये जिस भूमि को उत्तरप्रदेशीय राज्य द्वारा प्राप्त करने का उद्योग हो रहा है, उसको भी देखा तथा साधना-मन्दिर के सचालको के साथ उसकी भावी उन्नति के सम्बन्ध विचार-विनमय किया।

—

राजनीति में भाग लिया जाय या नहीं

एक महत्वपूर्ण संविवाद

आर्यकुमार सभा कटरा के तत्वावधान में गत ४ मार्च १९५१ को श्री ज्वालाप्रसाद प्रधान आर्य कुमार सभा की अध्यक्षता में संविवाद हुआ, जिसका विषय था—'देश की वर्तमान परिस्थिति में यह आवश्यक हो गया है, कि आर्यसमाज सक्रिय रूप से आगामी चुनाव में भाग ले।' सर्वश्री जगनन्दनलाल तथा प्रभात कुमारजी ने यह आवश्यक समझा कि आर्यसमाज सामूहिक रूप से आगामी चुनाव में भाग लेकर देशभक्त भारतीय संस्कृति के प्रेमी तथा सच्चरित्र व्यक्तियो को चुने और इस प्रकार राजनीति के कलुषित वातावरण को शुद्ध करे। विशेषतः ऐसे समय जब कि साम्यवाद का प्रचार बढ़ कर देश में नास्तिकता फैला कर भारतीय संस्कृति का ह्रास कर रहा है और शासकों की दुर्बलताओं का लाभ उठा रहा है।

डाक्टर हफीज सैयद ने कहा कि आर्यसमाज को ईश्वर पर पूर्ण विश्वास के साथ अपनी आत्मा को उन्नति करनी चाहिए, इस प्रकार वह निर्भीक होकर देश सेवा कर सकेगा।

श्री आशारामजी ने कहा कि सच्चरित्रता का नारा व्यर्थ है, जब तक कि हमारे पास कोई कार्यक्रम न हो यह सभव है, कि आर्यसमाज के सच्चरित्र व्यक्ति भी गद्दी पर बैठ कर आचार से गिर जावेंगे। चाहिये यह कि जिसके पास देश के हित का कार्यक्रम हो उसे आर्यसमाज अपना मत दे।

डाक्टर बाबूरामजी ने राजनीति की व्यवहारिता को लेते हुए बताया कि राजनीति एक ऐसा दलदल है, जिसमें पड़ कर मनुष्य अपने सदाचार और सत्य अहिंसा के सिद्धान्तों का हनन कर डालता है, इसीलिए प्रायः सदाचारी और आत्मवेत्ता लोग इससे दूर रहते हैं। आर्यसमाज सत्य न्याय, तथा ईश्वर प्रेम के बल पर संसार का कल्याण करना चाहता है, इसलिये उसे इस दलदल से बचना चाहिए, बल्कि उसे ... राजनीति की गंदगी को शुद्ध करने में समर्थ होगी।

इसी विचार के समर्थन में श्री धर्मानन्द ने कहा कि आर्य-समाजी व्यक्तिगत रूप से भाग लें, किन्तु सामूहिक रूप से नहीं।

श्री शङ्करदयालु श्रीवास्तव (संपादक भारत) ने कहा कि यदि आर्यसमाज सामूहिक रूप से भाग लेगा, तो देश में दलबंदी और कटुता और बढ़ेगी। आर्य-समाज का जो ध्येय है उस ध्येय के अनुरूप वह राजनीति में सेवा न कर पायेगी, किन्तु व्यक्तिगत रूप से अवश्य ही प्रत्येक आर्य-समाजी को यह ध्यान रखना चाहिये कि वह सच्चे और संस्कृति प्रेमी व्यक्तियों को चुनता है।

श्री गंगाप्रसादजी उपाध्याय, मन्त्री सार्वदेशिक सभा ने अन्तिम व्याख्यान में बताया कि यदि आर्यसमाज सामूहिक रूप से भाग लेगा तो अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जावेंगी, उसकी सार्व-भौमिकता नष्ट हो जायगी, वह स्वयं एक सम्प्रदाय बन जायगा इसके अतिरिक्त संसार की अनेक आर्यसामाजिक संस्थाओं में परस्पर विरोधी समस्याएँ उत्पन्न हो जायेंगी, जिनको सुलझाना कठिन हो जावेगा।

आवश्यकता

एक आर्य नेता पूर्ण विद्वान् २५०) मासिक आय, पक्का मकान जमींदार संतान हीन विधुर ब्राह्मण वर के लिये, शिक्षित विधवा चाहिये।

पताः—आर० एन० आर्य
ब्रह्मेश्वर आयुर्वेद सदन
नौतनवाँ जि० गोरखपुर



सिद्धान्त-शास्त्री-परीक्षाफल

(नोट–प्रत्येक नाम के साथ का अंक उत्तीर्णता की श्रेणी का सूचक है)

(अजमेर) मानवेन्द्र कुमार १, दीनदयाल दिनेश १, सुशील कुमार ३, पुरुषोत्तम २, उत्तमचन्द्र २, भगवानदास२, जगदीशप्रसाद २, सुन्दरलाल ३, मिश्रीलाल २, रमेशचन्द्र २, तेजसिंह २, ब्रजमोहन ३, तुलाराम २, गोविन्दलाल २, मोहनलाल २, हरीशकर २, बालमुकन्द ३, कोमलप्रसाद ३, जगदीशप्रसाद २, रामस्वरूप २, चम्पालाल २, पूरनचन्द्र ३, कृष्णदत्त १, प्यारेलाल २, हरिश्चन्द्र ३, हनुमान प्रसाद ३, हरस्वरूप गोयल १, चन्द्रदेव १ जगदीशप्रसाद २, रामसिंह १, चारुचन्द्र ३, रामरतन २, श्रीलाल अरोरा ३, विद्यादेवी २, (आर्यनगर) निहाल सिंह ३, (बलरामपुर) कन्हैया बक्स सिंह २, जगन्नाथ प्रसाद २, (नवाबगज) प्यारेलाल २, महावीर प्रसाद २, (भिवानी) तारादेवी आय १, (ताहरपुर) करणसिंह २, (गगागज) जागेश्वरसिंह २, (बिलसूरी) बुधसिंह यादव १, लीलाधर २, तारादत्त ३, तिखासिह २, (गजडुबवारा) श्रीमती देवी २, (आनन्द) रेवा शकर ३, (देहली-इपोसराय) जागेराम २, (बरेली) प्रतापसिंह २, प्रेमनारायण १, हरिओ३म् १, कमलादेवी ३ भागीरथी २, रमेशचन्द्र २; (भर्थना) रामचन्द्र ३, राधाकृष्ण २, अवधेश नारायणलाल २, (झज्जर) राजपाल ३ सत्यवीर ३, सत्यव्रत २, वाचस्पति १, सुदर्शनदेव २, (वा5) खमानी सिंह ३, (हाजापुर) जगवीर शरण २, दीपचन्द १, घनश्याम सिंह २, कृलापसिंह २, (रूदौली) विनय भूषण ३ (पांडुपिडारा) मुंशीराम २, (जलालाबाद) जानेश्वरप्रसाद २ (देहली) [स्वतन्त्र महा विद्यालय] सत्यदेव २, खगेन्द्र चन्द्र २, मुंशीराम २, रत्नकान्ता २, रूपलाल २, फतहसिंह २, वटुकृष्ण २, मगलानन्द २, सत्यप्रकाश २, विनायकप्रसाद २, सर्वानन्द२; (बेतिया) राजवीर प्रकाश २, विन्ध्याचल प्रसाद २; (भगवतीपुर) श्रीराम २, (तुलसीपुर) हरीन्द्र प्रसाद २ प्रभावती देवी २; (नरेला) हरिश्चन्द्र २ (घरौंडा) सुगनचन्द १, गिरवरसिंह २, (ज्वालापुर) [सत्य० निके०] जगदीशप्रसाद १, भगवती देवी १, मुन्शीराम १, विमलाकुमारी २, कलाशवती २, द्रौपदी भाटिया २, शीलावती १, कृष्णावती २, कमलेशकुमारी १, रामदयाल २, सुभाषचन्द्र २, आत्माराम २, उर्मिला रानी ३, यशोदा देवी ३, (ज्वालापुर) [महा विद्यालय] अमृतपाल २, महेन्द्र कुमार २, यशपाल १, (आंवला) हीरालाल ३, (बदायूं) देवेन्द्र कुमार ३, विद्यावारिधि २, (महाराजगज) डी० सत्यनारायण २, बी० महेन्द्र ३ आर शङ्करया २, दीनबन्धु ३; (किरठल) करणसिंह २, अनूपसिंह ३, वीरन्द्रसिंह २, प्रेमकुमार ३, चरणसिंह २, चन्द्रप्रकाश ३, वेदपाल ३, अजयपाल ३, वेदव्रत २ महेन्द्रसिंह ३, भगवतसिंह ३, मिलक जयदेव २, (बुलन्दशहर) [सेवा समिति] मदनलाल २, (मण्डलेश्वर) नारायण पाटीदार २ कालूराम २, (सीसामऊ) कुन्ती सक्सना १, फैजाबाद) ज्ञानदेव ३; (बिरहीकला) बलवतसिंह २, भीष्मप्रताप १, (ठाकुरद्वारा) इन्द्रगोपालसिंह २ कृष्णकुमार २, ओ३म्प्रकाश २, रामस्वरूपसिंह २, गिरीशकुमार २, शकुन्तला देवी २, विदशकुमारी ३ ओ३म्प्रकाश २, (गिलौला) राजप्रतापी २, रामप्यारे २, प्रकाशमित्र २, ईश्वरनाथ २, (कैमथल) रामजालाल २ रामगोपाल २, (बम्बई) एच एम शालिवाहन २, चन्द्रभानसिंह २; (बारां) बिरधीलाल २ (सगरिया) सुब्वैया नाडार ३, (इन्दार) [सयोगता गज] बिहारीलाल जोशी २, उत्तमचन्द २, देवीप्रकाश सेन २, (सिकन्दराबाद) [दक्षिण] ओ३म्प्रकाश ३, रामदास ३, (प्रयाग) [डी० ए० वी०] विष्णुस्वरूप १, (मथुरा) शान्तिदेवी २, विजयसिंह २, (रोहतक) दयानन्द मठ धर्मपाल१, (उज्जैन) रविवर्मा २, (नारमेन) अतरसिंह ३ आनन्दस्वरूप ३, भूपालसिंह ३ धर्मवीरसिंह ३, जयपालसिंह ३, जयइन्द्रसिंह २, सत्यपाल ३ सुरेन्द्र चन्द्र २, विश्वेश्वर दयाल २, धमपाल ३, काशीराम ३, नकलीसिंह ३ (दिण्डोन) प्रहलादकुमार १, (काशी) [डी० ए० वी०] महादेवप्रसाद ३, जमुनाप्रसाद २, जगमोहनलाल ३ (नई देहली) [चि० गु० रो०] हरिकृष्ण ३, जितेन्द्रकुमार ३, महेन्द्रकुमार २, (रणरजण्डा) भगवतीप्रसाद २, (फतहपुर) विश्नोई जगदीशशरण २, (गालावाड़) सज्जनसिंह २, गौरीशङ्कर २, जोधराज ३, (गया) नन्दकुमारप्रसाद २, लालीदेवी २; (लखनऊ) उमाशंकर २, (देहली) [तेलीबाड़ा सीतादेवी १ ईश्वरप्रकाश २, (मुरादाबाद) [कायस्थ पाठ०] मेधातिथि १, उर्मिलादेवी २, रामकुमार ३; (मथुरा) [विद्याप्रकाश मंदिर] रमेशचन्द्र २, ओ३म्प्रकाश १; (मवाना कला) कुसुमकुमारी २ कुमुदबाला २, सन्तोषपाल २, सावित्री गौतम २, भारत भूषण ३ रतीराम २, (सैदपुर) गगारण ३ देवपाल ३, अवतारसिंह ३, एदलसिंह २, कृपालसिंह ३, गुलाबराय ३, अमरसिंह ३, रामप्रसाद ३ शान्तिप्रसाद ३, उमाशंकर ३, शिवराज ३, खैमसिंह ३, रामचन्द्र ३, श्यामलाल ३ बलवीरसिंह ३, नत्थूसिंह ३, ओ३म्प्रकाश ३ राजेन्द्र सिंह ३, शेरबहादुर ३, टीकाराम ३, उदयप्रकाश ३, राजवीरसिंह २, श्योवीरसिंह ३, सत्यपालसिंह ३, मुरारीलाल ३, इन्द्राजशरण ३ दीपसिंह ३, जुगेन्द्र सिंह ३, जगदीशसिंह ३, जयप्रकाश ३, प्रतापसिंह ३, राजपालसिंह ३, वीरेन्द्रसिंह ३, तेजपालसिंह ३, ओंकारसिंह २, कल्याणसिंह २, श्योराजसिंह ३, कवलसिंह ३, धर्मपालसिंह ३, नन्दकिशोर ३, हरिश्चन्द्र ३, जयपालसिंह ३ रवीन्द्रकुमार ३ अली मोहम्मद ३, जयराज सिंह ३, रघुनाथप्रसाद ३, रमनलाल २, मौहम्मद काजिम हुसैन ३, जगवीरसिंह ३, (जयपुर) गुरुदत्त १, दामोदरलाल २, [शेरकोट] बलवन्तार्य २. सरोजबाला २, बगही उदित नारायणसिंह ३, (फुलेरा) किशनचन्द्र मुजफ्फरनगर डी० ए० वी०) शिवकुमार ३, हुकमचन्द ३, (कानपुर) [डी० ए० वी०] उमाशकर गुप्त २, लक्ष्मी नारायण २ दयानन्द चतुर्वेदी २, शिवकुमार १, गुलाबचंद २, धनेशराम २, (बिजनौर) अमीचन्द २, (लालपुर एमा) सुरेन्द्रनाथ शर्मा ३, श्याम बिहारी लाल २, राम शकरलाल ३ (कानपुर) [आनन्दबाग] सरोज कुमारी १, दशलता १, शीलवती १, विद्यावती १, विन्ध्या वासिनी २, शकुन्तला देवी २, त्रिलोचन कौर २ (डडियामई) नाथूराम २, भूदेवप्रसाद २, देवेन्द्रकुमार १, (अमरोहा) तेजसिंह २, हरगोविन्दसिंह ३, (नई देहली) [रा० क० वि०] रमादेवी १, प्रकाशवती १, हरवंशदेवी १, धर्मेन्द्रसिंह २, बांकेबिहारी लाल १, सविता बहन १, कुमारी प्रमीता १, सुशीला गुप्ता २, शारदाकुमारी २, कृष्णाकपूर २, सुदर्शनलता २, सरलानगिया २, माधुरी २, (खण्डवा) बाबूलाल १, (हरदोई) महेन्द्रपालसिंह २, (इन्दोर) [गांधीरोड] शान्तिकुमार २, विमलकुमार १, सुशीला पत्या २, मूलीबाई २ गोपालदास २, विमलचन्द २, प्रेमसागर २, (झज्झर) [गुरुकुल] जयावती १, (गज) सुखदेव २, केशवदेव २, (आगरा) [नामनेर] रामचरनलाल १, सतीशचन्द्र ३ धनीराम १, (नई देहली) [वैदिक आश्रम] उमापुरी २, कृष्णकुमारी २, सावित्रीदेवी २, कान्तासम्बरवाल २, शान्ता १, सावित्री सेठी २, स्वदेश कुमारी २, सुशीलादेवी २, दुर्गा २, कृष्णा २, सुवर्णबाला २, स्वदेशकुमारी २, कुमारी कचन २, कान्तारानी २, सुदर्शनकुमारी २, (सुजानगढ़) जीवानद २, (टूण्डला) कृष्ण मुरारीलाल २, (अलीगढ़) श्यामनारायण २, (गोंदिया) उमादेव आर्य २, (प्रतापनगर) जयगोपाल शास्त्री २,

डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए०,
(परीक्षा मन्त्री) केसरगज, अजमेर।



कन्या गुरुकुल हरद्वार

उक्त गुरुकुल का अठारहवाँ वार्षिकोत्सव १४ से १६ अप्रैल तक समारोह पूर्वक मनाया गया। उत्सव का उद्घाटन माननीय आत्माराम गोविन्दजी खेर मन्त्री स्वायत्त शासन उत्तर प्रदेश ने किया। १३ अप्रैल को सायंकाल उद्घाटन-भाषण करते हुए उन्होने कहा—यह संस्था कन्याओं को निःशुल्क शिक्षा देकर देश की जो सेवा कर रही है वह अनुकरणीय है। प्राचीन काल में नारियाँ वनस्पति विज्ञान से भली भाँति परिचित थीं। उस समय चिकित्सा-शास्त्र आयुर्वेद,व्यवसाय का अंग नहीं था। आज भी देवियाँ यदि इस महत्वपूर्ण शास्त्र में निपुणता प्राप्त करलें—(जैसा कि यहाँ प्रयत्न किया जाता है) तो देश के परिवार पूर्ण स्वावलम्बी बन सकेंगे। इस प्रकार देश का लाखों रुपया बाहर जाने से बच सकता है।

१४ अप्रैल मे श्री हीरावल्लभ जी त्रिपाठी, सदस्य लोक संसद की अध्यक्षता में 'आयुर्वेद सम्मेलन' हुआ। रात्रि में हिज-हाईनेस राणा साहब विल्सन के सभापतित्व में व्यायाम सम्मेलन हुआ। जिसमें गुरुकुल की ब्रह्मचारिणियों ने लाठी, तलवार, कटार, डम्बल, जमनास्टिक आदि के आश्चर्यजनक कौशल दिखलाए।

१५ अप्रैल को पूज्य महात्मा आनन्द स्वामीजी महाराज ने नवस्नातिकाओं को दीक्षान्त अभिभाषण देते हुए 'भारतीय राष्ट्र की निर्मातृ कन्याओं को सुशिक्षा-सम्पन्न एवं जागरुक बनाने के लिए जनता को अत्यन्त प्रभावपूर्ण शब्दों में आह्वान किया। इसी अवसर पर स्वामी अभेदानन्दजी विहार, श्री विश्वनाथ त्यागी, स्वामी भूमानन्दजी, स्वामी वेदानन्दजी तीर्थ आदि विद्वानों के प्रभावपूर्ण व्याख्यान हुए।

१६ अप्रैल के संस्कृति-सम्मेलन की कार्यवाही उस समय विशेष महत्वपूर्ण हो उठी जब गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी के कुलपति प० इन्द्र विद्यावाचस्पति एव कन्या गुरुकुल के संस्थापक श्री ठा० संग्रामसिंह जी के साथ माननीय श्री चन्द्रभानु जी गुप्ता स्वास्थ्य एव खाद्य मन्त्री उत्तर प्रदेश महोत्सव में पधारे। उन्होने कन्या-गुरुकुल द्वारा आयुर्वेदिक शिक्षण के प्रति की गई सेवाओं के लिए उत्तर प्रदेशीय सरकार की ओर से साधुवाद देते हुए कन्याओं के लिए चिकित्साशास्त्र की उपयोगिता का विशद विवेचन किया।

——

[छठवें पृष्ठ का शेष]

आवश्यक है। धर्म सदा अखण्ड और एकरस है, नित्य है। उसका नाश उसका अनाचरण एव अव्यवहार ही है। धर्म के आचरण से इहलोक और परलोक दोनों में ही कल्याण होता है। अभ्युदय और निःश्रेयस् का कारण धर्म ही है। अर्थ और काम की सफलता धर्म के ही आधार पर सम्भव है।

——

सूचना

आर्य समाज अलीगढ के लिए एक ऐसे वानप्रस्थ पुरोहित की आवश्यकता है जो आर्य सदस्यों के यहा संस्कार करा सकें और प्रचार का कार्य भी कर सकें। उनके भरण-पोषण का व्यय उनकी योग्यतानुसार समाज देगा। प्रार्थनापत्र समाज के मन्त्री से प्रमाणित होकर मन्त्री आर्यसमाज अलीगढ़ के पते पर आना चाहिए।

प्रेमशकर पचौरी
(मत्री आर्यसमाज)
अलीगढ़

कन्या की आवश्यकता

२१ वर्षीय क्षत्रियकुल में उत्पन्न सुन्दर हृष्ट पुष्ट, पढ़े-लिखे १००) मासिक आय वाले आर्य वर के लिये १५ वर्षीय सुशील, गृह कार्य मे निपुण आर्य कन्या की आवश्यकता है। बाल विधवा आर्य कन्या के संरक्षकों को भी अवसर दिया जायगा।

मार्फत आर्य मित्र, आगरा।

आवश्यकता

एक आर्य परिवार की पढ़ी लिखी,गृह कार्य से दक्ष १६ वर्षीय ब्राह्मण कन्या के लिये योग्य वर की आवश्यकता है। पत्र व्यवहार विद्याधर, दयानन्द कालेज, कानपुर से करने की कृपा कीजिये।

आवश्यकता है

एक २४ वर्षीय नवयुवक डाक्टर वर के लिए एक योग्य कन्या की आवश्यकता है। डाक्टर साहब विधुर हैं। सुन्दर, स्वस्थ एव प्रसन्नचित्त हैं। मासिक आय २५०)रु, रहने के लिए पूर्ण प्रबन्ध हैं। फ्री हास्पिटलमें प्रधान चिकित्सक हैं। आपका निवासस्थान जि० रोहतक(पंजाब) में है। वैश्य कुलोत्पन्न सिंगल गोत्रिय अग्रवाल हैं। सम्बन्ध विधवा से भी हो सकता है। आप पक्के आर्यसमाजी हैं। दहेज का कोई प्रश्न नहीं है।

पत्र व्यवहार का पता: —
रामेश्वर पाराशर
हेडमास्टर गवर्नमेंट स्कूल,
मु-पो० शेरड़ा, वाया सादुलपुर,
(बीकानेर स्टेट)

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

आर्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक—आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ
३ मई १९५१

मानव-दानव

श्री हरिशङ्कर शर्मा

मानवता के आँगन में,
दानवता खेल रही है,
मृदुता के मंजु महल में,
कटुता कर केलि रही है।

सद्भाव स्रोत सूखा है,
बहती न प्रेम की धारा,
हा, शान्त भ्रांति ने लूटी,
दुख ने सुख मेटा सारा।

सर्वत्र स्वार्थ सागर है,
सुखदा सुनीति सोती है,
बह रहीं रक्त की नदियाँ,
हा, मानवता रोती है।

ये नर—नर भक्षक तक्षक,
कैसा मुंह फाड़ रहे हैं,
मानव दानव-से बनकर,
दिन-रात दहाड़ रहे हैं।

पशु पक्षी साँप सपोले,
दल बना-बना कब लड़ते,
निज जाति नष्ट करने को,
मानव की भाँति न अड़ते।

मत-पन्थों की माया ने
काया समाज की तोड़ी,
फिर सम्प्रदाय-कुभज ने,
ऋजुता की तीत निचोड़ी।

जिसकी गौरव-गरिमा से
सब देश भरे रहते हैं,
जिसको स्वराष्ट्र अभिमानी,
नित 'राष्ट्रवाद' कहते हैं।

उस 'राष्ट्रवाद' की विभुता,
रण में किलकार रही है
अगणित स्वदेश-भक्तों को,
मिनटों में मार रही है।

जिन हत्याओं के कारण
वीरों को मिली बड़ाई,
तब कैसे समझ सकें हम
होंगी ये बन्द लड़ाई।

हा, राष्ट्रवाद प्रेमी नर,
नर का घातक बनता है
जब राष्ट्र-स्वार्थ टकराते,
तब तुमुल युद्ध ठनता है।

जो राष्ट्र स्वार्थ साधन में
जितना सक्षम होता है,
वह नर-नाशक उतना ही,
निज विजय-बीज बोता है।

ये 'राष्ट्रवाद' के वैर
उन्मत्त स्वार्थ-हाला में,
हा, झोंक रहे निशि-वासर,
मानवता को ज्वाला में।

क्या अत्याचार मिटेंगे,
भीषण अत्याचारों से,
क्या शांति-कांति चमकेगी,
पाशविक अनाचारों से।

क्या 'सत्य' 'न्याय' रक्षा का,
आधार स्वार्थ-परता है,
क्या मानवता का प्रेमी,
अन्याय कभी करता है?

हा, हृदय हीनता से मिल,
विज्ञान विनाशक होता,
अघता के बीहड़ वन में,
कटुता के काँटे बोता।

मानव की सूक्ष्म-समझ में
मानव का नाश भरा है,
मानवता चीख रही है,
पर विश्व बना बहरा है।

'यह मानव-जीवन क्या है?'
'आदर्श किसे कहते हैं?'
ऐसे प्रश्नों के उत्तर,
दर्शन देते रहते हैं।

व्यवहार स्वार्थ सागर में,
गोते खाता रहता है
आदर्शवाद के नद में,
वह नेक नहीं बहता है।

दैनिक जीवन में मानव
दानव से क्या कुछ कम है,
वह कपट जाल रचने में,
अति कुशल, निपुण सक्षम है।

छल छद्म, प्रपंच, प्रतारण,
पूजे, परखे जाते हैं,
सद्भाव, सचाई, सद्गुण,
आदर न कहीं पाते हैं।

सम्राट सुभट, पटु पंडित
लेखक शिल्पी, विज्ञानी,
कवि, चित्रकार, नट नायक,
हों देव-कोटि के प्राणी।

ये मानवता को खोकर,
मानव न कहे जाते हैं,
मानवता के पोषक ही,
मानव पदवी पाते हैं।

मानवता की सीमा में,
दुर्भाव न घुस पाता है,
विद्रोह-द्रोह-दानव का,
आतङ्क नहीं छाता है।

सद्भाव प्रेम की प्रभुता,
आनन्द दान देती है,
शुचिता, सहृदयता से मिल,
जीवन-नौका खेती है।

परिवार विश्व है सारा,
जन-जन भाई-भाई हैं,
ऋजुता समता की थाती
सबने प्रभु से पाई है।

फिर कैसी आपा-धापी,
कैसी रौरव रणचण्डी,
कैसी यह विषम व्यवस्था,
कैसा जीवन पाखण्डी?

यह 'राष्ट्रवाद' का घेरा
प्राणों का घातक क्यों हो,
यह देश प्रेम का प्रेरा,
प्रभुता का पातक क्यों हो?

निर्बल से निर्बल मानव
है जीने का अधिकारी,
अपने को 'सर्वे-सर्वा'
क्यों समझे अत्याचारी?

भगवती मेदिनी इतना,
नित अन्न-दान करती है,
जिससे जगती की जनता,
हो तृप्त पेट भरती है।

वस्तु की कमी नहीं है,
फिर क्यों रण रोपे जाते?
क्यों इतने पाँव पसारे,
जो घर में नहीं समाते?

जिसने लिप्सा में पड़कर,
निज हविस नहीं छोड़ी है,
उसको तो दुनिया-भर की,
सब सम्पत्ति भी थोड़ी है।

'जर, जन जमीन' के झंझट,
मानव ने उपजाए हैं,
मानव ही इन झगड़ों का,
निर्णय करने आए हैं।

निर्णय में युद्ध नहीं है
युद्धों में निर्णय कैसा?
इस पशुता की पद्धति में
हा, विनय पराजय कैसा?

कब द्वेष द्वेष से जाता,
कब लोभ लोभ से हारा?
कब रण चण्डी ने जग में,
चिर शान्ति भाव विस्तारा।

कम्पनियों की सम्पत्ति जब्त

पाकिस्तान ने हिन्दुओं और सिक्खों की २४० कम्पनियों की सम्पत्ति जब्त कर ली है। ठीक है, जिसने अकारण ही देश का इतना भाग हड़प लिया उसके लिये इन कम्पनियों की जब्ती क्या अर्थ रखती है।

—

'शिवाजी और प्रताप लुटेरे थे'

पूर्वी बगाल में स्कूल के बालकों को जो पाकिस्तानी इतिहास पढ़ाया जाता है, उसमें शिवाजी और प्रताप को लुटेरा बताया गया है। बताते हैं तो बताने दीजिये, यदि इस विषय में किसी ने 'उफ' भी की तो भारतीय नेता उसे 'साम्प्रदायिकता' का फतवा दे देंगे। 'मौन सर्वार्थ-साधकम्'।

—

अखबारों का टैक्स रद

समाचारपत्रों पर बिक्री और विज्ञापन-कर रद करने का जो विधेयक प्रस्तुत किया गया था, वह स्वीकार कर लिया गया। अच्छा ही हुआ। ऐसे कर से ज्ञान प्रसारक पत्रों को तो मुक्त ही रहने देना चाहिए। .

—

गंगा में जहाज

सरकार ने एक विशेष समिति इसलिये बनाई है कि वह इलाहाबाद और बक्सर के बीच गंगा को जहाज चलाने योग्य बनाने का प्रयत्न करे। ऐसा होने से यात्रा में अवश्य ही बहुत सुविधा हो जायगी।

—

ईसाइयत का जोर

रांची के इलाके में ओरियन जंगली जाति के लोग धड़ाधड़ ईसाई बनाये जा रहे हैं। ये लोग 'राम-राम' कहने के स्थान में 'जय ईशु' या 'ईशु सहाय' कहने लगे हैं। दो लाख ईसाई बन चुके हैं। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' की घोर घोषणा करने वाले इस समाचार को आँखें खोल कर पढ़ें।

— —

दस लाख रुपये चन्दा

आर्य कन्या महाविद्यालय बड़ौदा के संचालक श्री प० आनन्द प्रियजी पूर्व अफ्रीका में दो वर्ष प्रवास कर उक्त महाविद्यालय के लिये दस लाख रुपये ला रहे हैं। वृन्दावन गुरुकुल संचालकों को इससे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए

— —

सटीक समाचार

सेठ शूरजी अस्वस्थ

बम्बई आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता सेठ शूरजी वल्लभ दासजी अचानक बीमार होकर चिकित्सा के लिये अमरीका गये हैं। परमात्मा सेठजी को शीघ्र आरोग्य प्रदान करे।

——

उत्तर प्रदेशीय कांग्रेस

उक्त कांग्रेस की कार्यकारिणी की आवश्यक बैठक २७ अप्रेल को बुलन्दशहर में आचार्य जुगल किशोरजी की अध्यक्षता में हुई। एक प्रस्ताव द्वारा मांग की गयी कि प्रान्त के सभी कांग्रेसजन परस्पर सगठित होकर अन्य दलों के मुकाबिले में एक सयुक्त मोर्चा स्थापित करें। व्यक्तिगत स्वार्थ नष्ट हो तो निस्सदेह एकता का मोर्चा डाटा जा सकता है।

——

अन्न और आत्मसम्मान

भारत सरकार अमरीका की २० लाख टन अन्न-सहायता पर निर्भर नहीं रहेगी। अमरीकी कॉंग्रेस ने खाद्य-बिल में जो शर्तें लगायी हैं, इससे भारत सरकार का रुख कड़ा हो गया है। इस कड़े रुख का पता बुलन्दशहर में दिये गये प्रधान मन्त्री श्री नेहरू के उस भाषण से चलता है, जिसमें उन्होंने कहा कि "भारत इतना नीचे नहीं गिर गया कि खाद्य आयात के मामले में ऐसी शर्तों को स्वीकार करले जिनसे उसके सम्मान को चोट पहुचती हो। नेहरूजी ने ठीक कहा है, निःसन्देह स्वाभिमान नष्ट होने की अपेक्षा भूख से प्राण त्याग देना अधिक श्रेयस्कर है।

——

विश्वभारती राष्ट्रियकरण

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा सस्थापित विश्व-भारती को राष्ट्रिय विश्व विद्यालय का रूप देने सम्बन्धी बिल की अनेक धाराएँ भारतीय संसद द्वारा स्वीकृत हो चुकी हैं। आशा है, कि यह बिल शीघ्र ही एक्ट का रूप धारण कर लेगा। इस बिल के सम्बन्ध में शिक्षा-मन्त्री मौलाना आजाद ने बहस का उत्तर देते हुए ससद में कहा—हम विश्वभारती को उसके मूल रूप में ही स्वीकार करने जा रहे है। इस संस्था का वातावरण तथा उसकी मूल भावना यथावत् बना रहेगी। विश्वभारती के राष्ट्रियकरण से इसकी उपयोगिता और महत्ता और भी अधिक बढ़ जानी चाहिये। साथ ही जैसा कि कहा गया है, इस संस्था की आत्मा को सर्वथा सुरक्षित रखने की जरूरत है।

——

आर्यमित्र के ग्राहकों से—

१ मई से डाकघर के नियमानुसार बिना ग्राहकों की स्वीकृति आये 'आर्यमित्र' के वी० पी० न भेजे जा सकेंगे। अब तक पुराने ग्राहकों को बिना स्वीकृति के ही 'मित्र' के वी० पी० भेजे जाते थे, जिन्हें वे छुड़ा लेते थे। अब नये ग्राहकों को कृपया आर्यमित्र का वार्षिक मूल्य ८) मनीआर्डर द्वारा भेज देना चाहिये। पुराने ग्राहकों को भी मूल्य समाप्ति की सूचना पाते ही रुपये मनीआर्डर द्वारा भेज देने चाहिए। इससे 'मित्र' और ग्राहक दोनों को सुविधा रहेगी। वी० पी० के बढ़े हुए महसूल से भी ग्राहकगण बच जायेंगे। मूल्य भेजते समय पुराने ग्राहक अपना ग्राहक-नम्बर लिखना न भूलें। नये ग्राहक भी कूपन पर 'नवीन ग्राहक' शब्द लिखदें तो कार्यालय को सुविधा होगी।

—व्यवस्थापक

विचित्र घड़ी

मऊ छावनी के श्री गोड राष्ट्रपति श्री डा० राजेन्द्रप्रसाद को एक ऐसी अद्भुत घड़ी भेंट करेंगे जो भारतीय समय के साथ-साथ संसार के विभिन्न देशों का समय भी भले प्रकार बता सकेगी। इस घड़ी के द्वारा सूर्योदय और सूर्यास्त का समय भी जाना जा सकता है। विज्ञान ससार में इस घड़ी को एक और चमत्कार समझना चाहिए।

——

दाम्भिक दृश्य

दैनिक सैनिक के अनुसार २७ अप्रैल को टूंडला थाने के अन्तर्गत बख्तीगढ़ी नामक ग्राम में एक जाटव भाई के यहाँ बारात आयी। गाँव के कुछ लोगों ने इस बारात को बाजे गाजे के साथ चढ़ने से रोक दिया। बारातियों के साथ मार पीट की और उनका सामान लूट लिया। बारात तीन दिन तक पड़ी रही परन्तु उसे चढ़ने नहीं दिया गया। कहीं चौथे दिन जाकर पुलिस की सहायता से लड़के की शादी हुई। यह उन उच्च जाति कहे जाने वाले दाम्भियों के कारनामे हैं, जो हिन्दुत्व, एकता और समता के नाम पर रात दिन बनावटी आँसू बहाया करते हैं।

——

आचार्य कृपलानी पत्रकार के रूप में

आचार्य कृपलानी १ मई को देहली से प्रकाशित होने वाले अंग्रेजी दैनिक पत्र इण्डियान्यूज क्रोनीकल के सम्पादकीय मण्डल के अध्यक्ष नियुक्त किये गये हैं। कृपलानीजी खरी और बेलाग कहने के लिए प्रसिद्ध हैं। आशा है, आपके सम्पादकत्व में यह पत्र खूब लोक-प्रिय सिद्ध होगा।

——

प्रान्तीय रक्षा दल

सुप्रसिद्ध समाजवादी नेता आचार्य नरेन्द्रदेव का कहना है कि प्रान्तीय रक्षा-दल जैसी सार्वजनिक संघटित संस्था का असमय में ही अन्त कर देना इस बात का पुष्ट प्रमाण है कि राज्य की सरकार के कर्णधारों में बुद्धि का पूर्ण अभाव है। प्रान्तीय रक्षा दल की समाप्ति पर आचार्य नरेन्द्रदेव की उपर्युक्त पंक्तियों से कड़ी आलोचना और क्या हो सकती है।

——

'वर्द्धस्व वर्द्धय च'

आर्यमित्र

आगरा, वैशाख कृष्णा १२ संवत २००८ वि०, गुरुवार ता० ३ मई १९५१
दयानन्दाब्द १२६, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५०

मधुमन्मे निष्क्रमणं मधुमन्मे परायणम् ।
वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधु संदृशः ।

अ० १।३४

मधुर भावना चाल-चलन, चिन्तन में भर दो
वाणी में रस घोल कर्म्म भी मीठे कर दो
जीवन में सवत्र सदा माधुर्य दिखाओ
मधुर बनो, माधुर्य-मेघ घर-घर बरसाओ

'क़ानून' और 'धर्म'

इस युग में क़ानून का बोल बाला है। प्रत्येक बात के लिये **'क़ानून' बनाये जा रहे हैं।** जो कार्य बिना कानून के नहीं हो सकते, उनके लिए तो क़ानून बनने ही चाहिएँ, परन्तु जिन कार्यों के लिये हमारी नैतिकता या धार्मिकता जिम्मेवार है, उनके लिये भी क़ानूनों की रचना करना-कराना हमारी गिरावट का सूचक है। जिस तरह लकवा मारा हुआ व्यक्ति किसी के सहारे ही खड़ा रह सकता है, उसी प्रकार हमारे धार्मिक और सामाजिक जीवन को भी क़ानून के बल पर खड़ा रखने की बात कितने ही लोगों के दिमाग में घूमती रहती है। हिन्दू कोडबिल भी ऐसी ही विचार धारा से सम्बन्ध रखता है। शारदा एक्ट के पेंदे में भी यही बात समायी हुई है। खाने-पीने की वस्तुओं में मिलावट न करने का क़ानून भी ऐसा ही है। चोरी-जारी के विरुद्ध भी इसी उद्देश्य से दण्ड विधान निश्चित हुए। हमारा विश्वास है कि यदि क़ानूनी करामात इसी तरह बढ़ी तो, न्हाने धोने, खाने पीने, हसने रोने, उठने बैठने, चलने-फिरने आदि के लिये भी क़ानून बनाये जायगे। पूजा पाठ और सन्ध्या हवन भी कानून के सहारे से ही किये जायगे। अगर हम लोगों में 'ईमानदारी' या 'सचाई' 'कानून' प्रभाव से आ सके तो बुरी बात नहीं है, किसी तरह हम ईमानदार और सच्चे बनें तो सही; परन्तु हो क्या रहा है। एक कानून बनता है, उसके उल्लंघन के लिये दूसरा विरोधी तरीका सोच लिया जाता है। 'कन्ट्रोल' क़ायम हुआ तो 'चोरबाजारी, आ डटी। रिश्वत, सिफारिश, खुशामद और रियायत ने तो सारे कानूनों की कमर तोड़ दी है। ज्यों-ज्यों क़ानून बनते जाते हैं, त्यों-त्यों अपराधों की संख्या बढ़ती जाती है। क्यों? —इसलिये कि कानून का प्रभाव शरीर तक ही रहता है, मस्तिष्क उसका प्रतीकार सोचता है, अन्तःकरण अलग रहता है। अन्तरात्मा सबको सीधे मार्ग पर लाना चाहता है, परन्तु उसकी सुनता कौन है? आज यदि अन्तःकरण—आत्मा की प्रेरणा पर ध्यान दिया गया होता तो क़ानूनों की जरूरत ही न पड़ती। पड़ती भी तो बहुत कम। जिस युग में अन्तरात्मा की पुकार पर सत्य व्यवहार किया जाता है, उसे ही सतयुग या 'राम राज्य' कह सकते हैं, और जब आत्मा को दबोच कर मनमानी घरजानी पर लोग उतर आते हैं, तो वही कलियुग या कुशासन कहा जाता है। आज आत्मा या परमात्मा की ओर कौन ध्यान देता है। महात्मा गांधी ने इसी पथ पर संसार को चलाना चाहा, परन्तु कानूनी करामात ने उस सात्विक भावना को दबा दिया। आत्मा या परमात्मा का नाम साम्प्रदायिकता समझी जाने लगी। परिणाम सबके सामने है, संसार-भर के कड़े क़ानूनी कोड़े मिलकर भी 'शान्ति' की स्थापना में असमर्थ हैं। बड़े-बड़े 'एक्ट पैक्ट' तैयार होते हैं, परन्तु सब असफलतापूर्वक समाप्त हो जाते हैं। अपराधों और युद्धों पर रोक लगाने को क़ानून गढ़े जाते हैं, परन्तु उनका कोई प्रभाव नहीं होता। जब तक कोई हृदय से बुराई का त्याग न करेगा तब तक कानून उससे बुराई नहीं छुड़वा सकता। जेलों का भय भय नहीं रहा, वहाँ तो अपराधों की खेती को उत्तम खाद मिलता है जिससे कच्चे अपराधी पक्के बन कर बाहर निकलते हैं।

कानून नहीं तो आखिर और कौनसा उपाय है, जिससे संसार में शान्ति हो सकती है। संसार की शान्ति के लिये पहले प्रत्येक मनुष्य को अपने हृदय-मन्दिर में शान्ति और सद्भावना की मंजु मूर्ति स्थापित करनी होगी। आध्यात्मिक उन्नति के लिये पूर्ण प्रयत्न करना पड़ेगा, अर्थात परमात्मा को सर्वान्तर्यामी और सर्वव्यापक समझ कर उसकी असीम सत्ता के दर्शन करने होंगे। जिस समय हम यह समझ लेंगे कि परमात्मा हमारे सारे कामों को देखता है, उससे छिपकर हम कोई कार्य नहीं कर सकते, उसी समय हम सच्चे आस्तिक, ईश्वर-भक्त और सदाचारी बन जायगे। यह सब स्वाध्याय, सत्संग और सत्याचरण से ही सम्भव हो सकता, क़ानूनी कोड़े की मार या दण्ड-प्रहार से नहीं।

सभा का बृहदधिवेशन

गत अङ्क में उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के २१ तथा २२ अप्रैल को हुए वार्षिक बृहदधिवेशन के सम्बन्धमें एक 'रस्मी नोट' लिखा जा चुका है। सभा के नव-निर्वाचित अधिकारियों तथा अन्तरंग सदस्यों की सूची भी प्रकाशित की जा चुकी है। परन्तु जहाँ तक बृहदधिवेशन की गति विधि का सम्बन्ध है, वह विशेष उत्साह-वर्द्धक और सौम्य-सात्विक न थी। पचासों आर्यसमाजों से आये हुए प्रतिनिधियों ने न आर्यसम्मेलन में ठीक तरह से भाग लिया और न शिक्षा-सम्मेलन में। और न आगामी वर्ष के लिए कोई क्रियात्मक कार्यक्रम ही तयार किया। चुनाव हुआ और सब चले गये। महीनों पहले से सोचा जा रहा था कि बृहदधिवेशन में कोई निश्चित कार्य क्रम बनाया जायगा। प्रदेश में आर्यसमाज की प्रगति तीव्र करने के लिये कुछ सफल साधन सोचे जायगे, परन्तु कुछ भी न हो पाया। आर्य सम्मेलन और शिक्षा सम्मेलन दोनों 'रस्म' या 'रूढ़ि' के रूप में मना लिये गये। इस वर्ष जो नये प्रतिनिधि सभासद बृहदधिवेशन में आए वे कुछ अच्छा भाव या प्रभाव लेकर नहीं गये। हमें कुछ ऐसा लगता है कि सभा के ये वार्षिक बृहदधिवेशन धार्मिक वातावरण उत्पन्न करने के बदले चुनावी दाव-पेचों के अखाड़े-से बनते जाते हैं। राजनीति में यह प्रक्रिया कितनी ही सुष्ठु और सुन्दर समझी जाय, परन्तु धार्मिक क्षेत्र में उसका स्वागत नहीं किया जा सकता। चुनाव होने के पश्चात् कितने ही सदस्य तो अब अन्तरंग सभाओं में अपनी उपस्थिति भी न कर पाएंगे, जैसा कि गत वर्ष भी हुआ। जो हो, इस समय जरूरत काम करने की है। किसने कितना काम किया, कितने नये आर्यसमाज स्थापित किये और कितने शिथिल या मृत समाजों को अनुप्राणित किया? किसी विशेष दृष्टि से तीन तीन, चार-चार उपकोषाध्यक्षों उपपुस्तकाध्यक्षों, उप प्रधानों और उपमन्त्रियों का निर्वाचन बुरा नहीं है परन्तु इन 'उपों' की 'उपयोगिता' से सभा-समाजों को कुछ लाभ भी तो मिलना चाहिये। क्या ही अच्छा हो यदि ये कोषाध्यक्ष और उपकोषाध्यक्ष मिल कर कोष की उन्नति करें, पुस्तकाध्यक्ष और उपपुस्तकाध्यक्ष पुस्तकालय को बढ़ावें और भी सब अधिकारी इसी प्रकार काय करें। वर्ष-समाप्ति के पश्चात् जब वार्षिक वृत्तान्त सामने आता है तो प्रायः सभी विभागों के आंकड़े बड़े ही निराशाजनक और सूने मृग-से दिखाई देते हैं। कभी-कभी तो ऐसा मन में आता है कि इस वार्षिक वृत्त को हम सभा की रिपोर्ट कहें या अपनी असफलताओं का इतिहास। खैर अभी चुनाव हुए पूरे पन्द्रह दिन भी नहीं हुए, सारा वर्ष काम करने के लिये पड़ा है। यदि अधिकारी, उपाधिकारी और अन्तरंग

सदस्य इस वर्ष उत्साहपूर्वक कुछ काय कर तो, आने वाले इन ग्यारह-, बारह महीनों में आशातीत सफलता प्राप्त हो सकती है। आवश्यकता काम करने की है, 'रस्म अदा' करने की नहीं। आशा है, सब निर्वाचित भाई-बहन जिनके कन्धो पर सारे प्रदेश की आयजनता और आर्यसमाजों का उत्तरदायित्व है, अभी से अपना कुछ कर्तव्य निश्चित करेंगे और उसे पालन करने की ओर भी सोत्साह सचेष्ट होंगे।

ग्रामों की ओर

प्रारम्भ में आयसमाज का प्रचार ग्रामो में हुआ। किसी ग्राम में कोई उत्सव होता था, तो कितने ही ग्रामों के लोग अपनी-अपनी सवारियों में बैठ या घोड़ों पर सवार होकर बड़े उत्साह से वहाँ आते और पूरी दिलचस्पी लेते थे। यह वह युग था, जब शास्त्रार्थ होते थे और शङ्का-समाधान के लिये मोरचे रोपे जाते थे। सारे इलाके में आर्यसमाज की चर्चा होने लगती थी और हार जीत की धूम मच जाती थी। कोई सनातनियों को हारा बतलाता था और कोई आर्यसमाजियों को। उस युग में सारी शक्तियाँ इन्हीं आन्दोलनों और चर्चाओं में लगती थीं। महात्मा गांधी के आन्दोलन के साथ सन् १९२० से लोगों की प्रवृत्ति राष्ट्रियता की ओर बढ़ी। अमन सभा तथा कांग्रेस और रायबहादुरों तथा देश-भक्तों के मोर्चे डटे। स्वराज्य-प्राप्ति के साथ यह युग भी समाप्त प्राय हुआ। अब बेईमानी और ईमानदारी का मोर्चा रुपा हुआ है। एक ओर बेईमानी का बेडौल डील है और दूसरी तरफ ईमानदारी की छोटी-सी सेना। विशाल बल के आगे छोटी-सी शक्ति का स्थिर रहना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। परन्तु सत्य या ईमानदारी में जो दिव्य शक्ति विद्यमान है, उसका मुकाबिला बेईमानी की बेकार फौज हरगिज नहीं कर सकती। आवश्यकता है दृढ़ता और सत्य पर डटे रहने की। महर्षि दयानन्द सत्य पर अटल रहे, सारे देश ने उनका विरोध किया, परन्तु अन्त को उन्हीं का जय-जयकार हे। महात्मा गांधी के आन्दोलन को आदर्शवाद और गुड़ियो का खेल कह कर पुकारा गया, परन्तु वही खेल आज स्वराज्य-स्वातन्त्र्य दिलाने में समर्थ हुआ। ८७ प्रतिशत भारत ग्रामों में बसता है, वहाँ अभी उतनी मक्कारी नहीं पहुँची, जितनी शहर कहे जाने वाले सभ्यता-केन्द्रों में है। ग्रामो में अज्ञान है, अविद्या है और अनक्य है। ये सब बातें शहरों में भी हैं, और ग्रामों से बढ़कर, परन्तु ग्रामों में अत्यधिक जनता है। अतः आर्यसमाज को चाहिये कि वह अपना प्रचार-केन्द्र ग्रामों को ही बनावे और वहाँ अच्छे भजनों द्वारा अपना प्रभाव डालने की चेष्टा करे। ग्रामों की जनता नेतृत्व की खोज में है। वहाँ दो-चार व्यक्तियों के प्रभावित होने से ही सारा ग्राम प्रभावित हो सकता है। फिर ग्रामों के लिए बहुत विद्वत्ता और ज्ञान-गरिमा की भी आवश्यकता नहीं है। वहाँ के लिये चाहिये सदाचारिता, सहानुभूति, स्नेह और समता। बस इसी से सारा ग्राम आपके प्रभाव-क्षेत्र में आ जायगा।

आचार्य विनोबा भावे आजकल पैदल यात्रा कर रहे हैं, उन्होंने ग्रामों के सम्बन्ध में एक जगह बहुत ठीक कहा है—"देहात ही हमारे आधार हैं। वहाँ आज भी हमारी संस्कृति का दर्शन होता है। वे ही हमारी रीढ़ हैं, हमारी आत्मा हैं और हमारा असली रूप हैं। पुराने ऋषि को आज के देहाती की पोषाक में भले ही फरक लगे परन्तु उनकी आत्मा वैसी ही है। भावना में कोई भंग नहीं हुआ है। आज खुद भूखा होते हुए भी वह किसी भी तरह अपने अतिथि को भोजन करवाने की फिकर में रहता है। लेकिन आज इन्हीं देहातों की दौलत, बुद्धि, शक्ति सब बाहर जा रही है। इसे रोकना होगा। देहात वाले ही देश की रक्षा कर सकते हैं।" लाला लाजपतरायजी ने भी एक बार बड़े बलपूर्वक कहा था—ग्रामीण भाई मूर्ख हो सकते हैं परन्तु धूर्त नहीं होते। अब ग्रामवासियों की अज्ञता और उनका अन्धविश्वास दूर करने तथा उनमें नैतिकता लाने और उनकी दीन दशा सुधारने के लिये आर्यसमाज को अग्रसर होना चाहिये।

आर्यसेवकों की स्मृति-रक्षा

आर्यसमाज का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। अगर महर्षि दयानन्द के जन्म से ही समाज का इतिहास माना जाय तब भी उसे सवासौ वर्ष के लगभग होते हैं। आर्यसमाज को स्थापित हुए तो केवल पिचत्तर वर्ष हुए हैं। इस अल्प अवधि में समाज ने विविध क्षेत्रों में जो कार्य किया वह आशातीत ही नहीं, आश्चर्यजनक भी है। आर्यसमाज की आधार-शिला शहीदों की अस्थियों पर रक्खी गयी है। धर्म-प्रचार और देश-सेवा के लिए अनुमानतः जितने वीर व्यक्ति आर्यसमाज ने दिये उतने कदाचित् किसी समाज या संस्था ने नहीं दिये। जितने बलिदान आर्यवीरों के हुए, उतने औरों के नहीं। लेखनी और वाणी द्वारा भी आयसमाज ने बहुत सेवा की है। परन्तु दुःख तो यह है कि आज का आर्यसमाज स्वर्गीय आर्य-कार्यकर्त्ताओं, नेताओं, विद्वानों और सन्यासियों की स्मृति-रक्षा के लिये कुछ नहीं कर रहा। फलतः धीरे-धीरे समाज अपने सेवकों को भूलता जाता है। जरा आर्य नवयुवकों से पूछिये भगवानदीन मिश्र कौन थे, मशालसिंह क्या थे? गणपति शर्मा ने क्या किया? शिवशंकर काव्यतीर्थ किस लिये प्रसिद्ध हुए। मुरारिलाल शर्मा कहाँ रहते थे। दर्शनानन्द की समाज के लिए क्या देन है। सर्वदानन्द के विशेष गुण बताइये। नित्यानन्द, विश्वेश्वरानन्द, शुद्धबोधतीर्थ, मुनीश्वरानन्द, अनुभवानन्द, नन्दकिशोर देव, प्रयागदत्त लखचन्द, तेजसिंह, नत्थासिंह, बल्देवसिंह, प्रवीणसिंह इत्यादि इत्यादि कौन और क्या थे? तो उत्तर बड़ा ही निराशाजनक होगा। शायद ही नवयुवकों ने इन महानुभावों के नाम सुने हों। जब अभी इन स्वर्गीय महानुभावों के सम्बन्ध में स्मृति का यह हाल है तो आगे चलकर तो इनकी कहीं चर्चा भी न हो पावेगी। सार्वदेशिक सभा, आर्य-प्रतिनिधि सभाओं और सबसे अधिक परोपकारिणी सभा का—जिसके पास इतना बड़ा प्रेस है—कर्तव्य है कि वे शीघ्रातिशीघ्र आर्य विद्वानों, नेताओं और सन्यासियों की स्मृति-रक्षा का उचित आयोजन करें। यह स्मृति-रक्षा उनकी प्रामाणिक और सुन्दर जीवनियां प्रकाशित करने से ही हो सकती है। अभी तो सब की जीवनियाँ आसानी से लिखी जा सकती हैं। यदि बीस पच्चीस वर्ष और बीत गये तो यह काय अत्यन्त कठिन हो जायगा और फिर कितने ही विद्वानों के नाम भी आर्यसमाज के आकाश पर चमकते दिखाई न देंगे। इस कार्य के लिये प्रत्येक प्रदेशीय आर्य-प्रतिनिधि सभा में एक स्मृति-रक्षा-विभाग स्थापित होना चाहिए, जो अपने क्षेत्र के सभी प्रसिद्ध-प्रसिद्ध स्वर्गीय और विद्वान् कार्य-कर्त्ताओं तथा नेताओं के जीवन-चरित्र प्रकाशित करे। सार्वदेशिक और परोपकारिणी सभाएं अखिल भारतीय ख्याति के आर्य विद्वानों, संन्यासियों और नेताओं की जीवनियाँ तैयार करावें। एक बात का अवश्य ध्यान रखा जाय, जिन उपदेशकों और भजनोपदेशकों ने प्रचार-कार्य किया है, उनके भी चरित्र अवश्य प्रकाशित हों। एक एक पुस्तक में कई-कई जीवनियों का समावेश हो सकता है। हम तो यहाँ तक कहेंगे कि आर्यसमाज के जिन चपरासी भाइयों ने प्रचार-कार्य किया है, उनकी भी चर्चा जीवनियों में अवश्य होनी चाहिए। आशा है, उपर्युक्त सभाएं अपनी तन्द्रा तोड़ कर इस आवश्यक प्रस्ताव पर अवश्य विचार करेंगी और उसे क्रियात्मक रूप देने में जरा भी संकोच या शिथिलता से काम न लेंगी।

लाला जगनप्रसादजी का देहान्त!

हमें दुःख है कि 'आर्यमित्र' और भगवानदीन आर्यभास्कर प्रेस के एकौंटेण्ट लाला जगनप्रसादजी का आगरे में, उनके घर पर, देहान्त हो गया। लालाजी ने लगातार ३४ वर्ष आर्यप्रतिनिधि सभा की सेवा की। वे बड़े ईमानदार और मेहनती थे। अपना काम बड़ी लगन से करते थे। उनकी दृष्टि में सदैव 'मित्र' और प्रेस का हित रहता था। आगरे से जब मित्र और प्रेस लखनऊ गये तो आप भी उनके साथ लखनऊ गये। अब आप कई महीने से बीमार थे। पैरों पर सूजन आगयी थी, मुंह भी सूज गया था। कई महीने से काम करने में भी असमर्थ थे। अपने पुत्र के साथ रहते थे। शोक है कि १७ अप्रैल को आपका देहान्त होगया! परमात्मा से प्रार्थना है कि वह दिवंगत आत्मा को शान्ति और दुखी परिवार को धैर्य प्रदान करे।

साहित्य-सौरभ

'भारत में मूर्ति-पूजा'

लेखक—श्री राजेन्द्रजी, प्रकाशक-सौरभ प्रकाशन, नयी सड़क, देहली। पृष्ठ-संख्या २७३, मूल्य दो रुपये।

श्री प० राजेन्द्रजी अतरौली (अलीगढ़) के प्रतिष्ठित नागरिक, प्रसिद्ध आर्य कार्यकर्त्ता, अध्ययनशील तथा विचारक सज्जन हैं। लगातार कई वर्षों के गम्भीर अध्ययन-स्वरूप ही आपने यह पुस्तक लिखी है। इस पुस्तक में जिन बातों पर युक्ति-प्रमाणपूर्वक विचार किया गया है, उनमें से मुख्य-मुख्य बातें नीचे दी जाती हैं—मूर्ति पूजा का आदि काल तथा आदि कारण, वैदिक काल और मूर्ति-पूजा, मूर्ति-पूजा और अवतारवाद, मूर्ति-पूजा और बहु देवतावाद, मूर्ति-पूजा और रामायण-काल,-महाभारत-काल,-पौराणिक काल और मुसलिम काल। मूर्ति-पूजा और वर्तमान सुधार-काल, मूर्ति-पूजा का मानव जीवन पर प्रभाव मूर्ति-पूजा और योगसाधन, मूर्ति-पूजा-शङ्का समीक्षा, और उपासना-विधि। अभिप्राय यह कि सुयोग्य लेखक ने मूर्ति-पूजा के सम्बन्ध में अपनी इस महत्व-पूर्ण पुस्तक में, प्रत्येक दृष्टि और पहलू से विचार किया है। फिर अपने विचारों की पुष्टि में तीव्र तर्क और पुष्ट प्रमाण भी दिये हैं। पुस्तक के प्रारम्भ में प्रसिद्ध आर्य विद्वान् श्री प० गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए० का लिखा 'प्राक्कथन' है। इसमें उपाध्याय जी ने मूर्ति-पूजा को एक आध्यात्मिक तथा सामाजिक महारोग बताया है और उचित रूप से कहा है कि मूर्तिपूजा समस्त सुधारों का विरोध कर वास्तविक ईश्वर-भक्ति से विमुख करने वाली अवैदिक विधि है। 'मूर्ति-पूजकों' के मस्तिष्क में भूल कर भी कभी यह बात नहीं समाती कि ज्ञान के विना मुक्ति होना असम्भव है। वे मूर्तिपूजा के मिथ्या भ्रम या अन्ध-परम्परा में ही अपना सारा जीवन बिता देते हैं। सारी मूर्तिपूजा कल्पना के आधार पर चलती है, यानी मूर्ति-निर्माण, मूर्ति-प्रतिष्ठा, और मूर्तिपूजा तीनों ही कल्पना मात्र हैं। वास्तविकता उनमें कुछ भी नहीं है। मूर्तिपूजा आध्यात्मिक भावनासे दूर कर हृदय या मन को भौतिकवाद की ओर लेजाती है। यह भौतिकवाद ही आज सारी अशान्ति का मूल कारण है। श्री प० राजेन्द्रजी ने यह पुस्तक लिख कर बड़ा महत्वपूर्ण काम किया है। हम चाहते हैं कि इसे मूर्ति पूजने और न पूजने वाले दोनों पक्ष बड़े ध्यानपूर्वक पढ़ें। इससे उनको एक सचाई का प्रत्यक्ष ज्ञान एवम् अनुभव होगा और वे भले प्रकार जान सकेंगे कि मूर्तिपूजा द्वारा क्या-क्या अनर्थ हुए, हो रहे और आगे होंगे। ऐसी अच्छी पुस्तक लिखने के लिये लेखक महोदय की हम प्रशंसा करते हैं। यह पुस्तक प्रत्येक आर्य पुस्तकालय में रहनी चाहिए और मूर्ति-पूजक मित्रों को उपहार स्वरूप भेंट देनी चाहिए।

—

अन्तर्नाद

श्री कुँ० हरिश्चन्द्रदेव वर्म्मा 'चातक' कविरत्न

अपने मन को ठीक ठीक जब मैं पहचान न पाया
तब कैसे मैं अखिल विश्व की समझ सकूँगा माया
आज मौन भाषा में मुझसे कौन कह गया आकर–
"पहले अन्तस्तल का कोना-कोना खोजो जाकर"
सपना-सा संसार, भला फिर क्यों इतना सुन्दर है
कितने आकर्षण का यह छोटा-सा जीवन घर है
कहाँ मनुज की इच्छाओं का अन्त, कौन बतलावे
रुदन भाग्य में बदा, कहाँ से हँसना मानव पावे
होता प्यार अनन्त और जीवन स्थायी यह होता
तो फिर बँधा नियति से मानव क्यों बेचारा रोता
आशाओं, इच्छाओं का ही नाम दूसरा जग है
बड़ा कठिन है यहाँ खोजना कौन हमारा मग है
एक स्वप्न-छाया मरीचिका के पीछे मैं भटका–
रंग-बिरंगे फूलों पर तितली-सा जा मन अटका
मन का मेला और आँख का देखा बहुत तमाशा–
अब क्षण-भर तो शान्त मुझे रहने दे मेरी आशा
खोज-खोज कर चले गये कितने मलयानिल मुझको,
किन्तु न कुछ सन्तोष हृदय का दे पाया मैं उनको
खूब धूल के महल बनाये जाने या बे-जाने
यौवन की वाटिका बीच छेड़े रस-भरे तराने
कितना मधुर हृदय लेकर के द्वार तुम्हारे आया
किन्तु तुम्हारे वरद हस्त की मिली न क्षण-भर छाया
कितनी बार मिटी रवि-किरणें, चाह मिटी कब मन की
चिर अतृप्ति ही एक संगिनी बनी हाय! जीवन की
दूरागत यह पवन तुम्हारे खेल रहा अञ्चल से–
और यहाँ मैं खेलूँ कब तक अपने हृदय विकल से
कब तक आँसू से गीले गानों की जोड़ूँ कड़ियाँ
कब तक गिनता रहूँ मौन दारुण विषाद की घड़ियाँ
पल-पल करके यों ही देखो बीत रही सब बेला–
रहा नहीं जाता है मुझसे अब तो और अकेला
धीरे-धीरे अब मेरे मधु का घट सूख गया है–
किन्तु अभी तक तुमसे मिलने का मृदु भाव नया है

× × × ×

बालारुण किरणों के रथ पर चढ़ उस ओर चलूँ मैं–
तुमसे मिलने को वर्षा-बादल-सा उमड़ पड़ूँ मैं।

बालक

उभय प्रेमियों के तुम पावन परम प्रणय-आराधन,
अपने को जीवित रखने के सबसे सुन्दर साधन।
मानवता-कृषि के मृदु अंकुर, रस के सरस खिलौना,
धूल भरे हीरे भूतल के, गोदी के प्रिय छौना।
ममता के आधार, बृहत के क्षुद्र रूप भी शोभन,
जीवन-भर की आशाओं के एक अमूल्य प्रलोभन।
मुसकानों से बने सुनहली किरणों से चमकीले,
सदा सौरभित हृदय-लता के फूल फूल फबीले।
हास और उल्लास तुम्हारी किलकारी में बसते,
कितने मन मृग नहीं तुम्हारी हरियाली में हँसते।
अपने में परिपूर्ण, न भावा तुमको सोना चाँदी,
एक प्यार की थपकी ही पाने के तुम हो आदी।

—

लेखकों से निवेदन

हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के मुजफ्फरपुर-अधिवेशन के अवसर पर श्री वियोगी हरिजी को उनके 'वीर सतसई' नामक काव्य-ग्रन्थ पर जो मंगलाप्रसाद पारितोषिक प्रदान किया गया था, उसे उन्होंने अपनी ओर से सम्मेलन ही को दान कर दिया था। यह रकम वीर-रसपूर्ण बाल-साहित्य के प्रकाशन में लगाई जा रही है।

बाल-साहित्य पर लिखने वाले विद्वान् लेखकों से हमारा अनुरोध है कि वे भारतीय स्वाधीनता-संग्राम के अमर शहीदों की बाल जीवनियाँ और महात्मा गाँधी, जवाहर, गोखले, तिलक, सुभाष, लाजपतराय, पटेल बन्धु, सरोजिनी नायडू और सी० आर० दास जैसे हमारे नेताओं की वीर-रसपूर्ण बाल-जीवनियों की लगभग १०० पृष्ठों तक की पाण्डुलिपियाँ श्री साहित्य मंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग के पते पर रजिस्ट्री द्वारा मई मास के भीतर भेजने की कृपा करें। स्वीकृत रचनाएं २० प्रतिशत रायल्टी पर प्रकाशित की जायँगी।

दयाशंकर दुबे,
साहित्य मंत्री।

सामयिक समस्याएँ

शिक्षा-सम्मेलन

डी० ए० वी० कालिज भवन, लखनऊ में २२ अप्रैल को मध्याह्नोत्तर शिक्षा-सम्मेलन हुआ। सम्मेलन के सभापति थे डी० ए० वी० कालिज के प्रिंसिपल श्री प०महेन्द्रप्रताप शास्त्री, एम०ए०। प्रारम्भ में सभापति महोदय ने अपने भाषण में आर्य-शिक्षण-संस्थाओं और उनमें दी जाने वाली शिक्षा के सम्बन्ध में अपने विचार तथा अनुभव प्रकट किये। फिर नीचे लिखे प्रस्ताव स्वीकृत किये गये। इन प्रस्तावों के प्रस्तुत करने तथा समर्थन में युवराज श्री रणञ्जयसिंहजी, श्री जगनन्दन लाल जी एडवोकेट, श्री धर्मपाल जी विद्यालंकार, श्री देवीप्रसादजी जौहरी आदि के संक्षिप्त किन्तु सारयुक्त भाषण हुए। स्वीकृत प्रस्ताव इस प्रकार हैं—

१—उत्तरप्रदेशीय आर्य-शिक्षा-सम्मेलन की सम्मति में प्रान्त की समस्त आर्य-शिक्षा संस्थाओं (डी० ए० वी० कालेज, स्कूल तथा आर्यकन्या विद्यालय व पाठशाला आदि) को उत्तरप्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के शिक्षा-विभाग से शीघ्रातिशीघ्र सम्बद्ध हो जाना चाहिये। ऐसा करने से प्रबन्ध-व्यवस्था तथा शिक्षा-प्रदान में अनेक सुविधायें—जिनका निर्देश सभा की भ्रमण पत्रिका सं० ११ में किया है, जैसे शिक्षा में समानता, व्यवस्था में सुविधा, अध्यापकों का स्थानान्तरण तथा वेतन आदि का औचित्य, धार्मिक शिक्षा की ओर विशेष ध्यान आदि होना सम्भव है जो कि शिक्षा-संस्थाओं तथा सभा दोनों के हित में होगा और दोनों की उद्देश्य-पूर्ति में विशेष सहायक भी होगा। प्रदेश में बिखरी हुई अनेक संस्थाओं का यह संगठन विविध दिशाओं में विशेष प्रगति भी कर सकेगा। उपर्युक्त सुझाव को कार्यान्वित करने के लिये एक समिति नीचे लिखे सज्जनों की बनाई जावे। (१) श्रीरामदत्त शुक्ल (२) आचार्य बृहस्पतिजी (३) श्री प० गंगाप्रसाद उपाध्याय (४) श्री जगनन्दन लालजी (५) श्री पीतमलालजी (६) श्रीमती लक्ष्मी देवीजी (७) श्री देवीप्रसादजी जौहरी।

२-प्रदेशीय आर्य शिक्षणालयों में शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों छात्राओं के सांस्कृतिक व नैतिक स्तर को उन्नत करने के लिये यह आवश्यक है कि एक सुनिश्चित शिक्षा दीक्षा-पद्धति का निर्माण किया जाय, जो कि सभी आर्य शिक्षा संस्थाओं में समान रूप से प्रचलित हो और उस पर विशेष ध्यान दिया जाय। इस शिक्षा पद्धति के निर्माण के लिये निम्नलिखित सज्जनों की एक समिति बनाई जाय। १-श्री प० रामदत्तजी शुक्ल। २ श्री बा० पीतमलालजी एडवोकेट। ३-श्री प० धर्मपालजी विद्यालंकार। ४-श्री डा० सूर्यदेव शर्मा और ५-अधिष्ठाता शिक्षा-विभाग।

३—प्रस्तावित शिक्षा-बिल जो उत्तरप्रदेशीय विधान-सभा के विचाराधीन है, उसके अन्तर्गत बनने वाले शिक्षाबोर्ड के लिये ३००सौ आर्य शिक्षा-संस्थाओं की ओर से सभा का प्रतिनिधित्व भी होना आवश्यक है। इसलिये यह सम्मेलन सरकार, विधान-सभा तथा परिषद् से अनुरोध करता है कि उक्त बोर्ड में सभा को अपने तीन प्रतिनिधि भेजने का अधिकार दिया जाय, जिससे कि उक्त बोर्ड में प्रदेशीय शिक्षा-संस्थाओं का समुचित प्रतिनिधित्व हो सके।

४—यह सम्मेलन प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत कार्य करने वाले शिक्षा विभाग को सामयिक परामर्श देने के लिये निम्नांकित अनुभवी शिक्षा विशेषज्ञों की एक आर्य शिक्षा-समिति नियुक्त करता है। १-श्री चुन्नीलालजी साहनी भूतपूर्व संचालक-शिक्षा-विभाग, २-श्री कालिका प्रसाद भटनागर, प्रिन्सिपल डा० ए० वी० कालेज, कानपुर, ३ श्री महेन्द्रप्रतापजी शास्त्री प्रिन्सिपल डी० ए० वी० कालेज लखनऊ, ४-श्री मदनमोहन सेठ प्रधान आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश, ५-श्री डा० बाबूराम सक्सेना, अध्यक्ष संस्कृत-विभाग इलाहाबाद वि० वि०। इसके संयोजक प्रदेशीय सभा के शिक्षा-विभाग के अधिष्ठाता होंगे। आवश्यकतानुसार यह समिति अन्य सदस्यों को भी संयुक्त कर सकती है। ——

आर्य्य-सम्मेलन

२१ अप्रैल की रात्रि को डी० ए० वी० कालिज भवन, लखनऊ में आर्य्य सम्मेलन हुआ। सभापति का आसन आचार्य श्री प० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री ने ग्रहण किया। इस सम्मेलन में अधिकतर वे ही आर्य प्रतिनिधि महाशय सम्मिलित थे, जो सभा के बृहद् अधिवेशन में भाग लेने के लिये प्रदेशीय आर्यसमाजों से पधारे थे। इस सम्मेलन में आर्यसमाज के संघटन को अधिक सुदृढ़ तथा प्रभावशाली और देश कालानुसार अधिक प्रगतिशील बनाने के लिये निम्नलिखित योजना व्यवहार में लाया जाना निश्चित हुआ—

१—प्रत्येक जिले के केन्द्रीय आर्यसमाज के प्रमुख अधिकारी एवम् आर्य उपप्रतिनिधि सभा के कार्यकर्त्ता वर्ष में न्यून से न्यून तीन बार अपने क्षेत्र में स्थित आर्यसमाजों की अवस्था का निरीक्षण करें, उनको अनुप्राणित करने के लिये आवश्यकतानुसार प्रयत्न करें। इस कार्य को सम्पादन करने के लिये समय समय पर, पर्वादिकों अथवा अवकाशों के अवसर पर विशेष प्रचार और प्रदर्शन की उचित व्यवस्था करें। ग्राम निवासियों से साक्षात् सम्पर्क स्थापित करें।

२—विश्व व्यापी और विश्व-कल्याणकारी वैदिक संस्कृति के सर्वश्रेष्ठ एवम् सार्वजनिक सिद्धान्तों को साधारणतया समस्त सभ्य देशों के, एवम् विशेषतया भारत राष्ट्र के विभिन्न विश्वविद्यालयों के विशेषज्ञ विद्वानों तथा पत्रकारों के साथ सम्पर्क स्थापित किया जाय। साहित्यिक विचारों के आदान प्रदान द्वारा वैदिक सिद्धान्तों एवम् विचारों का व्यापक प्रसार किया जाय।

३—यतः संस्कृत भाषा समस्त भारतीय एवम् प्राचीन भाषाओं की जननी है, और उससे अधिकाधिक लाभ उठाया जा सकता है, तथा वर्तमान समय की अनेक विद्याओं, कलाओं और विज्ञानों के पारिभाषिक शब्दों का निर्माण हो सकता है, अतः प्रचलित संस्कृत-विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों को अधिक से अधिक सहायता और सहयोग प्रदान किया जावे। संस्कृत भाषा पढ़ने वाले छात्रों को सुविधानुसार आर्थिक सहायता प्रदान की जाय और संस्कृत-साहित्य सम्बन्धी पुस्तकों और ग्रंथों का सम्पादन-मुद्रण और प्रकाशन किया जाय।

इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में क्रियात्मक योजना बनाने के लिये नीचे लिखे सज्जनों की एक समिति बनाई गयी। श्री प० धर्मपालजी, श्री ब्रह्मस्वरूपजी और आचार्य प० देवदत्तजी शास्त्री।

यह भी निश्चय हुआ कि ऋषि दयानन्द-जन्मोत्सव के लिये सरकारी छुट्टी घोषित कराने का उद्योग किया जाय।

इस सम्मेलन में अनेक विद्वानों के संक्षिप्त किन्तु प्रभावशाली भाषण हुए। ——

दैनिक आर्यमित्र

२६ अप्रैल १९५१ को नगर आर्यसमाज आगरा में श्री बाबू परमेश्वरी सहाय एडवोकेट की अध्यक्षता में दैनिक आर्यमित्र के लिए एक सभा हुई। इसमें आगरे के सब समाजों का सहयोग था। इस सभा को यह जान कर बड़ी प्रसन्नता हुई कि दैनिक आर्यमित्र आगरे से ही प्रकाशित होगा। इसके लिए आवश्यक धन संग्रह करने के लिए निम्नलिखित सज्जनों की एक समिति बनाई गई, जिसमें आगरा नगर, हींग की मण्डी राजामण्डी, नामनेर और ताजगंज आर्यसमाजों के सदस्य सम्मिलित हैं।

सर्व श्री पूज्य स्वामी परमानन्दजी, आचार्य हरिदत्त शास्त्री, एम० ए०, बाबू पूर्णचन्द एडवोकेट बा० मथुराप्रसाद एडवोकेट, बा० परमेश्वरीसहाय एडवोकेट, बा० श्रीराम गुप्त एडवोकेट, प्रोफेसर बाबूराम गुप्त, अमूल्यरत्न प्रभाकर, बाबू प्यारेलालजी, प० प्यारेलाल शर्मा, म० श्यामसुन्दरलालजी अध्यक्ष प्रियालाल एण्ड सन्स, बा० श्यामसुन्दरजी, अध्यक्ष सिर्देनवाल इण्डस्ट्रीज, प० चोखेलाल शर्मा, म० रामदयालजी, मोहनलाल आर्य, प० हरिशंकर शर्मा और म० रोशन लालजी। इस समिति के संयोजक बा० मोहनलालजी निर्वाचित हुए। ——

स्वास्थ्य-सुधा

नेत्र-रक्षा

श्री आनन्दीप्रसाद मिश्र "निर्द्वन्द्व"

एक वैज्ञानिक पण्डित का कथन है कि जब मैं आकाश के तारों और नेत्रों की रचना का विचार करता हूँ, तो मेरी नास्तिकता दूर होजाती है। नेत्रों की कैसी सुन्दर रचना है, कैसा मनोहर उनका आवरण है। वास्तव में नेत्र शरीर में रत्न कहने के योग्य हैं, वे एक चर्बी की गद्दी के ऊपर हड्डी के मजबूत चौखटे में सुशोभित हैं। उनके भीतर एक खार मिश्रित प्रवाही पदार्थ बहा करता है, जिससे आँख का गोला सदा धुलता रहता है और स्वच्छ रहता है। नेत्र का उत्तम और प्राकृतिक (स्वाभाविक) रीति से उपयोग होने से नेत्रों की ज्योति अन्तिम अवस्था तक भी कम नहीं होती, किन्तु उसका दुरुपयोग करने से, कहीं जन्म की दुर्बलता से और कहीं ब्रह्मचर्य के अभाव से नेत्र-रत्न कांच के समान बना दिया जाता है। नेत्रों की ज्योति का अधिक अच्छा होना विशेष कर मनुष्य की शक्ति और उसके संयम के ऊपर निर्भर है। आजकल कितने ही नवयुवक विभिन्न कारणों से नेत्रों की शक्ति खो बैठते हैं। ब्रह्मचर्य के साथ भी नेत्रशक्ति का घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसलिए शुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करके मनुष्य नेत्र शक्ति को सतेज कर सकते हैं और बहुत-से रोगों से बच सकते हैं एवं अपनी संतति को भी बचा सकते हैं।

सभी प्रकार के उत्तेजक खान-पान, जैसे-गर्म, तीक्ष्ण चटपटे मसालेदार पदार्थ आँख के लिए हानिकारक हैं। आँख की आरोग्यता, शरीर की आरोग्यता पर भी बहुत कुछ निर्भर है। बहुत दूर देखने से या बहुत नजदीक से पढ़ने से, लेट कर पढ़ने से, दुखती आँखों से देखने व पढ़ने आदि अनेक कारणों से आँखें खराब होजाती हैं।

अतएव नेत्र-रक्षा के लिए निम्नलिखित नियमों के ऊपर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए।

(१) दिनभर लिखने-पढ़ने का काम तथा अधिक बारीक चीजों के देखने का काम आँखों से न लेना चाहिए। शरीर के समान नेत्रों को भी पूरा आराम देना चाहिए। (२) टेढ़े-तिरछे होकर, लेटे-लेटे या सोते-सोते नहीं पढ़ना चाहिए। (३) चलते हुए या सवारी में बैठे-बैठे कभी नहीं पढ़ना चाहिए। (४) कम प्रकाश (रोशनी) या बहुत तेज प्रकाश में लिखना-पढ़ना और बहुत सूक्ष्म वस्तुओं को नहीं देखना चाहिए। (५) दीपक या सूर्य का प्रकाश सदैव आँख के दाहिनी ओर रहना चाहिए। आँख के सामने कभी नहीं रहना चाहिए। (६) बिजली, गैस और मिट्टी के तेल की रोशनी, आँखों की ज्योति को कम करती है। इसलिए इनकी रोशनी में लिखने पढ़ने का काम जहां तक हो, नहीं करना चाहिए या कम करना चाहिए। (७) बहुत बारीक अक्षरों की अथवा विलायती चमकदार कागज पर छपी हुई पुस्तकें नहीं पढ़नी चाहिएँ। (८) सिनेमा के चित्रों को देखने से नेत्रों की दृष्टि चंचल होती है। इसलिए ऐसे चित्र नहीं देखने चाहिए। (९) सूर्य या चन्द्रमा को नहीं देखना चाहिए। (१०) संध्या के समय या अत्यन्त प्रातःकाल में-जब कि सूर्य का प्रकाश न हो, आँख को खींच कर नहीं देखना चाहिए। (११) किसी पुस्तक या प्राणी अथवा किसी अन्य वस्तु को टकटकी लगा कर नहीं देखते रहना चाहिए। (१२) सोते समय आँख के सामने दीपक का प्रकाश नहीं रहना चाहिए। क्यों कि इससे ज्ञान तन्तुओं को शान्ति मिलती है और सुखपूर्वक निद्रा आती है। (१३) सूर्य की तीक्ष्ण धूप, उड़ती हुई धूल और तेज हवा से आँख की सदैव रक्षा करनी चाहिए। (१४) रात्रि में अधिक समय तक जागरण नहीं करना चाहिए। (१५) सवेरे सोना और सवेरे उठना आँख के लिए भी हितकर है। (१६) आँखों के दुखने पर सहसा जिस-तिस की दवा नहीं डालनी चाहिए। आँखों में खुजली होने पर उनको हाथों से नहीं मलना चाहिए, क्यों कि इससे आँखों के ज्ञान-तंतु निर्बल पड़ जाते हैं। (१७) दृष्टि की रक्षा के लिए सात्विक आहार, घी, दूध, मक्खन, बादाम, मीठे फल आदि पदार्थों का विशेष रूप से उपयोग करना चाहिए। गर्म और तीक्ष्ण पदार्थ जैसे—अचार, चटनी, गर्म मसाले, लाल मिर्च, लहसुन, प्याज, चाय, काफी, तम्बाकू, आदि आँख के लिए अत्यंत हानिकारक हैं। (१८) नीला और हरा रंग नेत्रों के लिए अत्यंत लाभदायक है, इसलिए इस रंग के पदार्थों को ज्यादा देखना चाहिए। (१९) सवेरे को वाटिका में, या जंगल में जाकर हरे-भरे वृक्ष, लताओं को देखने से नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। (२०) प्रतिदिन त्रिफले के जल से नेत्रों को धोना चाहिए।

नागरिकता-निरूपण

हम कैसे नागरिक हैं ?

श्री राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी, एम० ए०

कोई तीन-चार दिन की बात है, हम लोग चाय पीने बैठे थे। मक्खन का नया डिब्बा खोलकर बिस्कुट पर मक्खन लगा रहे थे। हाथों में कोई ठण्डी चीज मालूम हुई। ध्यान से देखने पर विदित हुआ कि मक्खन में पानी मिला हुआ था। मैंने कहा, देखो, इन लोगों की बेईमानी। मक्खन में पानी छोड़ देते हैं। इतने में ही मेरा छोटा भाई बोला—"भाई साहब, आपको भ्रम हुआ होगा, टीन बन्द मक्खन में पानी का क्या काम"! "हाथ-कंगन को आरसी क्या है। लो, देख न लो," उसकी ओर डिब्बा बढ़ाते हुए मैंने कहा। उसमें सचमुच पानी शेष था।

हमारे एक मित्र कह रहे थे, बस, हिन्दुस्तानियों में यही तो एक बीमारी है। इनकी कोई चीज जरा भी लोकप्रिय हुई, और उन्हें करोड़पति बनने की सूझी। सच बात तो यह है कि हिन्दुस्तानी व्यापारी पर विश्वास नहीं किया जा सकता। इस मामले में तो अंग्रेज लोग अद्वितीय हैं। जो चीज एक बार भेजेंगे, वही बार-बार भेजेंगे, वही नमूना, वही वजन, वही बनावट – सब कुछ एकसा, और युगों तक। इंगलैण्ड की बनी हुई चीज आप केवल नाम देखकर आँख बन्द करके ले सकते हैं। जो बाहर लिखा है, वही अन्दर होगा। मजाल क्या, जो तनक भी फर्क आ जाये। इधर हमारे देश में। आज और कल और। इतना ही नहीं। एक ही डिब्बे में भिन्न प्रकार का सामान रखा होगा। आप बिस्कुट का डिब्बा लें, तो ताज्जुब नहीं कि उसमें दो तीन प्रकार के बिस्कुट बन्द हों। आप आटा लाइए, उसमें आपको रेत मिला हुआ मिलेगा। क्रीम लाइये। असली के डिब्बे में नकली क्रीम भरी होगी। इस प्रकार कहाँ तक गिनाएँ। इस देश के अधिकांश व्यापारी सदैव यही सोचा करते हैं कि किस प्रकार ग्राहक को ठगा जाय, पूरे पैसे लेकर किस प्रकार चोट दी जावे। वे सदैव बेईमानी करने के लिये नये-नये उपाय सोचा करते हैं। यही कारण है कि व्यापार में उनकी कोई साख नहीं। विदेशों की बात तो जाने दीजिये; भारतवर्ष में ही "इंगलैण्ड में बनी हुई" की छाप देख कर ग्राहक आँखें बन्द करके माल खरीद लेता है। भारत में बना हुई को लेते समय बस बातें सोचता है। विश्वास न हो, तो किसी बड़े दूकानदार के पास जाकर हमारे उक्त कथन की पुष्टि कर लीजिये।

व्यापार की इस धोखेबाजी को हमने सदैव से एक राष्ट्रिय अभिशाप समझा है, और हमने बराबर इसका कारण जानने की चेष्टा की है। हमारी समझ में तो इसका एक मुख्य कारण यह है कि हमारे देश में 'शिक्षित व्यक्तियों का आदर्श तो है सरकारी नौकरी, तथा व्यापार बनाया गया है अशिक्षितों के लिये। अशिक्षित लोगों में दूरदर्शिता एव सदाचार की कमी होना स्वाभाविक ही है, क्योंकि वे बेचारे

प्रवासियों में प्रचार

अफ्रीका की ओर

श्री कुँवर जोरावरसिंह आर्य

एक वैदिक धर्म-प्रचारक के रूप में मैंने अफ्रीका महाद्वीप के पूर्वी व पश्चिमी भागो की यात्रा की है। अपनी दो यात्राओं में मैंने अंग्रेजों द्वारा शासित केनिया युगांडा, टांगानिका, जंजीबार तथा बेल्जियम द्वारा शासित कोन्गो कुल पाँच प्रदेशों का भ्रमण किया है। किसी भी भारतीय धर्म-प्रचारक से अधिक व्यापक व विस्तृत मेरा यह भ्रमण रहा है। द्वीप, उपद्वीप, नगर, ग्राम, पर्वत तथा जंगल का कोई भी स्थान मुझसे नहीं छूट सका है, जहाँ कि थोड़े भी भारतीय बसते हैं। यद्यपि मेरे प्रचार का लक्ष्य प्रवासी भारतीय थे, परन्तु उसके साथ-साथ मुझे श्वेतांगो की उन सभी प्रवृत्तियों को देखने का स्थान-स्थान पर अवसर मिला जो कि वे वहाँ के हब्शियों के कथित उद्धार के लिये चला रहे हैं। बीहड़ जंगलो में, दुर्गम पर्वतो पर, स्थान स्थान पर ईसाई मिशनों का सारे देश में जाल सा बिछा हुआ है। उनके गिर्जों, स्कूलों व अस्पतालो को देख कर एक बार तो कोई भी मनुष्य प्रभावित हुए बिना नहीं रहता, परन्तु थोड़ी भी बारीकी से देखने पर उसे स्पष्ट पता चल जाता है कि यह सब इसलिये किया जारहा है कि उनके साम्राज्य की जड़े इतनी गहरी पहुँच जायें कि फिर किसी भी प्रकार उखाड़ी न जा सकें। या यों कहिये कि सेवा की सुन्दर बोतल में दासता का विष भरा जारहा है। अब पाठक समझ गये होंगे कि अफ्रीका का भविष्य कितना अन्धकारमय है, और अफ्रीका की काली प्रजाओं को किस संदेश की आवश्यकता है—भारतीय की अथवा योरोपीय की।

सहस्रों वर्षों की पराधीनता की शृंखलाओं को तोड़ कर आज भारतवर्ष पूर्ण स्वतन्त्र होकर अपने हजारों वर्ष पूर्व के गौरवपूर्ण स्थान को प्राप्त कर चुका है। आज वह वैदिक युग, रामराज्य व अशोककाल के ऊँचे आदर्शों को सामने रखकर मानव मात्र के कल्याण का ऊँचा ध्येय लेकर आगे बढ़ रहा है। इन आदर्शों को पूर्ण करने के लिये आवश्यक है कि वह अपने पूर्वजों के समान संसार को फिर से वैदिक धर्म व आर्य संस्कृति का पावन संदेश पहुँचाये। प्रारम्भ में यदि अभिमान के नशे में चूर श्वेत प्रजाओं को छोड़ दिया जाय तो संसार में सबसे पीछे पड़े हुए असभ्य तथा असंस्कृत हब्शियों की ओर तो उसे अवश्य ही ध्यान देना होगा। और हब्शियो में काम करने से पूर्व उस कार्य की सफलता के लिये उसे सर्व प्रथम उन प्रवासी भारतीयों को वैदिक धर्म की दीक्षा देकर सुसंस्कृत तथा सुसभ्य बनाना पड़ेगा जो कि लाखों की संख्या में उस प्रदेश में जाकर बस गये हैं। चारों ओर दृष्टि दौड़ाने पर केवल एक आर्यसमाज पर ही दृष्टि ठहरती है, जो इस महत्वपूर्ण कार्य को सम्पन्न करने का बीड़ा उठा सकता है। अबतक आर्यसमाज ने प्रवासी भारतीयों के उत्थान के लिये जो भी कार्य किया है, यद्यपि वह अन्य हिन्दू संस्थाओं से तो अधिक है, तथापि न तो वह अन्य धर्मावलम्बियों से अधिक है और न संतोषजनक अफ्रीका में इस्लाम व ईसाइयत को मानने वाले लाखों हब्शी मिल सकते हैं, परन्तु दुःख के साथ कहना पड़ता है कि हिन्दू एक भी नहीं मिलेगा। अन्य देश के ईसाई व मुसलमान प्रचारकों व संस्थाओं को हम छोड़ भी दें और भारतीयों पर ही दृष्टि डालें तो हम उन्हें अपने से प्रत्येक क्षेत्र में आगे ही पायेंगे। मुसल्मान, अहमदी व खोजा प्रचारक अपने स्वदेश-बान्धवों में ही नहीं वरन् हब्शियों में भी बड़ी लगन व धैर्य के साथ धर्म-प्रचार व विस्तार का कार्य कर रहे हैं। मैंने हब्शियों के लिये उनके द्वारा निर्मित मस्जिद व स्कूल देखे तथा ऐसे कई प्रचारकों से मैं स्वयम् मिला, और उनकी प्रवृत्तियो को जानकर मुझे आर्यसमाज के कार्य पर लज्जा आये बिना न रही। मैंने सोचा कहाँ तो ये भारतीय मुसल्मान जो हिन्दुओं से संख्या, धर्म तथा विद्या में कम होने पर भी हब्शियों में इतना काम कर रहे है और कहाँ हम लोग आर्यसमाजी जोकि वहाँ के हिन्दुओं को भी नहीं सुधार सके। अफ्रीका में हिन्दुओं के पास धन की कमी नहीं है, कमी है कार्यकर्ताओं की। वहाँ कार्यकर्ताओं का एक दम अभाव है। यदि सार्वदेशिक व परोपकारिणी सभायें इस कमी की पूर्ति कर सकें तो निश्चय ही वहाँ बड़ा काम हो सकता है। अफ्रीका की पहली यात्रा में मुझे वहाँ के प्रसिद्ध आर्यसमाजी सेठ श्री नरसीदासजी मिले थे जो इस बात के बड़े इच्छुक थे कि पूर्व अफ्रीका में आर्यसमाज की ओर से एक धर्म-प्रचार- केन्द्र ईसाइयों के समान ही चलाया जाय जिस में स्कूल व अस्पताल भी हों। धन का सारा भार तो वे अकेले ही उठाने को तैयार थे, उन्हें कार्यकर्ताओं की आवश्यकता थी। मेरे परामर्श से वे सार्वदेशिक सभा के कार्यालयों में भी इसी उद्देश्य से आये थे। उन्हीं के शब्दों में उन्हें सार्वदेशिक सभा से कोई सहयोग नहीं मिला। जब कि सार्वदेशिक सभा के अधिकारी इसकी उलटी ही बात कहते हैं। वास्तविकता कुछभी हो, परन्तु वह कार्य आगे नहीं चल सका।

आर्यसमाज "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का नाद गुँजाता है।

इन बातो को समझते ही नहीं। इंगलैण्ड आदि देशों में व्यापार के द्वारा राष्ट्र की सम्पत्ति बढ़ाई जाती, देश की राज्य-सत्ता के हाथ मजबूत किये जाते तथा विदेशो में देश का सम्मान बढ़ाया जाता है। हमारे देश में उसके द्वारा केवल मकान और स्त्रियों के जेवर बनवाये जाते हैं। इस अन्तर का केवल एक ही कारण है—शिक्षा की कमी !

पाठक एक बात और समझ लें। शिक्षा से हमारा अभिप्राय केवल किताबी और कालिज की पढ़ाई से नहीं है। शिक्षा हो जीवन के विकास सम्बन्धी, हमारे व्यवहार सम्बन्धी एव सदाचार तथा नैतिकता सम्बन्धी।

हमारा निश्चित मत है कि जब तक हमारे देश के व्यापार को सभ्य और सुशिक्षित व्यापारी अपने हाथो में न लेंगे, तब तक न तो हमारे देश की राष्ट्रिय सम्पत्ति में ही वृद्धि होगी और न विदेशों में हमारे देश की साख ही जम सकेगी।

हमें सबसे पहले व्यापारिक क्षेत्र में नागरिकता का परिचय देना है। दूसरों के हित-अनहित को हम किस दृष्टि से देखते हैं, इसका सक्रिय पता वहीं लगता है। यदि हम अपने पड़ौसियों, अपने पास आने वालों अथवा अपने ऊपर विश्वास करने वालों को ही नुकसान पहुँचाते हैं, तो फिर हम नागरिक कैसे ? और जब तक हम एक सुयोग्य नागरिक नहीं बनते, तब तक हमें अपने देश की स्वतन्त्रता और महत्ता पर गर्व कैसा ? यही हाल दूकानदारों के वायदों का है। शायद ही कभी कोई दर्जी, धोबी, सुनार (छापेखाने वालों का भी प्रायः यही हाल है। सम्पा०) आदि वायदे पर काम करके दे। जब तक आप दस चक्कर न लगालें, तब तक दर्जी आपको कपड़े न देगा, सुनार आपके गहने न देगा, आदि। बार-बार चक्कर लगाने का परिणाम यह होता है कि ग्राहक फिर दुबारा जाने का नाम नहीं लेता। जितनी बार खाली हाथ लौट कर आता है, उतनी बार यही सोचता है कि—अच्छी बात है, इस बार तो फँस ही गये। मेरी चीज निकल आये, फिर कभी न आऊँगा, आदि। आप ही विचारिये इस प्रकार ग्राहक को क्षुब्ध कर देना कहाँ की बुद्धिमानी और व्यापार-कुशलता है ? होना तो यह चाहिए कि एक बार दूकान पर आकर ग्राहक सदा को आपका ही हो जाय। सौदा खरीदने आये, और आपके हाथों बिना मोल स्वयं बिक जाये। अंग्रेजी दूकानों पर जाइये, वहाँ आपको ये ही बातें मिलेंगी। एक ही बार में ग्राहक से सब कुछ ले लेना व्यापार की बुरी मोर्चाबन्दी है। ग्राहक तो उस मुर्गी के समान होता है, जो नित्य एक सोने का अण्डा देती थी। मुर्गी के मालिक ने सोचा कि क्यों इन्तिजार करूं। लाओ आज ही इसके सब अण्डे इकट्ठे निकाल लूँ। उसने मुर्गी मार डाली। उसका नतीजा क्या निकला, इसे आप भी जानते हैं। अजी ये तो हिन्दुस्तानी हैं। इनकी चीज और बात का क्या भरोसा ? यह सुन कर हमारा सिर शर्म से झुक जाता है।

सिंहावलोकन

'अनशन' तथा 'सत्याग्रह'

श्री प० गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम० ए०

अनशन अर्थात् भूखा रहना और सत्याग्रह अर्थात् किसी विशेष विषय पर अड़जाना ये दो बातें महात्मा गांधी के समय से विशेष प्रसिद्धि उपलब्ध कर चुकी हैं। अनशन तो व्रत आदि के उपलक्ष्य में पहले भी प्रचलित थे, और सत्याग्रह नित्य प्रत्येक परिवार में छोटे बच्चों द्वारा हुआ ही करता है। हमको अमुक वस्तु आज ही मगा दो अन्यथा खाना न खायगे, मकान की छत से कूद पड़ेंगे, घर से निकल जायगे इत्यादि। परन्तु महात्मा गांधी ने इन दोनों शस्त्रों का राजनीति में प्रयोग किया और उनको बहुत सफलता मिली। उनसे पहले आयर्लेंड में एक पादरी ने दो मास से अधिक का अनशन कर के किसी आवश्यक प्रश्न पर अपने प्राण दिये थे। महात्मा टालस्टाय ने भी इस शस्त्र का उपकिया था।

परन्तु अनशन और सत्याग्रह का दुरुपयोग भी महात्माजी के ही समय से आरम्भ हुआ है। लोगों ने महात्मा गांधी से अनशन और सत्याग्रह सीखा, परन्तु महात्मा गांधी की बताई शर्तों को सर्वथा भुला दिया। महात्मा गांधी ने लिखा है कि कहीं अनशन हठ का रूप न ले लेवे और सत्याग्रह दुराग्रह न हो जाय। महात्मा गांधी का कहना है कि अनशन से आध्यात्मिक जागृति उत्पन्न होती है, परन्तु उसी समय जब अनशन करने वाला ज्ञानी और सात्विक हो और उसकी भावनाएं ईर्ष्या, द्वेष आदि घृणित निर्बलताओं से मुक्त हों। इसी प्रकार सत्याग्रह के लिये भी पहले 'सत्य' चाहिये। महात्मा गांधी अनशन करने से पूर्व महीनों सोचते थे कि वे कहीं ईर्ष्या या द्वेष या दुराग्रह को स्थान तो नहीं दे रहे। जब उन को पूर्ण विश्वास हो जाता था कि मेरा आत्मा स्वच्छ है तभी वे अनशन करते थे। और जबतक वे यह नहीं समझ लेते थे कि जिस प्रश्न पर वे सत्याग्रह करना चाहते हैं, वह उतना ही गम्भीर और महत्वपूर्ण है, उस समय तक वे सत्याग्रह नहीं करते थे। उनके विचार से जो अनशन या सत्याग्रह जनता से प्रशंसा प्राप्त करने, दूसरों को धमकाने या ईर्ष्या से किया जाता है, वह घोर पाप है। अतः उससे बचना चाहिये। परन्तु गांधीजी ने जिन कड़ी पाबन्दियों का उल्लेख किया है, वे कठिन हैं। अतः इन ऊपर दिये तीनों प्रलोभनों में फस कर स्वार्थी लोग अनशन तथा सत्याग्रह कर बैठते हैं।

एक कालेज में एक लड़के ने किसी लड़की को छेड़ दिया। अधिकारियों ने लड़के को कालेज से निकाल दिया। लड़के के दोस्तों ने सत्याग्रह कर दिया। एक लड़का फेल होगया। उसने भूख-हड़ताल कर दी। जब मैं हैड मास्टर था तब कई लड़कों ने आकर मेरे सामने यह प्रस्ताव रक्खा। कई फेल लड़कों के पिताओं ने इस प्रकार के अनशनों की ओर संकेत किया। मैंने स्पष्ट कह दिया कि यदि भूख-हड़तालों पर नम्बर मिलने लगें तो भूखहड़तालें बढ़ जायगी और कक्षाओं तथा परीक्षाओं को बन्द कर देना पड़ेगा। एक बार एक लड़के ने मेरे घर के सामने रात-भर हड़ताल करदी। मैंने समझाया, वह न समझा। परन्तु हार कर चला गया। एक ने कहा कि यदि मुझे पास न किया गया तो जमुना के पुल से कूद पड़ूंगा। मैंने कहा यदि तुम अपने जीवन को इतना सस्ता समझते हो तो समझा करो। तुमको पास करने से भी क्या लाभ होगा। यदि तुम जमुना के पुल से कूद पड़ो तो मैं इस दुर्घटना का अपने को उत्तरदाता कभी न समझूंगा। जिसने साल-भर अपनी योग्यता बढ़ाने का यत्न नहीं किया और खेल-कूद में समय व्यतीत कर दिया, उसका अनशन न त्याग है न तपस्या। यह तो मक्कारी है और घोर पाप है। यह अपने उद्देश्य को सस्ते दामों खरीदना चाहता है और लोगों को धोखा देता है। मुझे याद है कि एक बार एक ऐसे ही सन्यासी एक समाज में आ गये और किसी छोटी-सी बात पर मंत्रीजी के विरुद्ध अनशन कर दिया। समाज के आस-पास ऐसे पड़ोसी भी रहते थे जो समाज से सहानुभूति नहीं रखते थे, और समाज की बदनामी करना चाहते थे। उन्होंने सन्यासी जी के अनशन को समाज को बदनाम करने का साधन बना लिया और अकारण ही स्वामी जी के भक्त बन गये। कभी-कभी किसी मनचले ने समाज को बदनाम करने के लिये एक-दो फल या पाव आध सेर दूध भी लाना आरम्भ कर दिया। इनका उद्देश्य परोपकार न था अपितु समाज की बदनामी करना था। उस समय मैंने आश्चर्य और दुःख से यह भी देखा कि जिन सभासदों की मन्त्रीजी से शिकायत थी वे भी स्वामीजी के पक्ष में होगये और सत्य-असत्य की परवा नहीं की। यह चक्र कई मास तक चलता रहा। परन्तु दैवगति से अन्यत्र एक स्थान से स्वामीजी को निश्चित जायदाद या धन मिलने की आशा हो गई और जो सन्यासीजी समाज या मन्त्री जी को सुधारने की शपथ लेकर अनशन कर रहे थे, वे अधिक चमकीले प्रलोभन को देखकर वहाँ से चल दिये।

इसी प्रकार कई वर्ष हुए एक सज्जन ने छोटे-से मत-भेद पर अनशन करना आरम्भ कर दिया। अनशन करने वाले की प्रकृति निबल थी। तीन ही चार दिन में दशा बिगड़ गई। मुझे भी तार दिया गया। मैंने जाकर उनको समझाया कि जिस बात पर आप हठ कर रहे हैं, वह इतनी मूल्यवान् नहीं है कि आप अपनी बहुमूल्य जान लड़ादें। त्याग का और त्याग के उद्देश्य का कुछ अनुपात हुआ करता है। दो रुपये के मूल्य की वस्तु के लिये पचास रुपये देना मूर्खता है। महात्मा गांधी ने कभी साधारण मत-भेद पर अनशन या सत्याग्रह नहीं किया। यदि वे ऐसा करते तो लोग उनको त्यागी न कह कर 'मुंडचिरा' कहते। वे सज्जन मेरे समझाने पर तो नहीं समझे, परन्तु ईश्वर ने ही एक और साधन निकाल दिया, और शीघ्र ही अनशन टूट गया। मैं देखता हूँ कि गांधी जी की देखा-देखी लोगों ने इन दोनों शस्त्रों का बड़ा दुरुपयोग किया है। मैंने स्वयं अनुभव किया है कि अनशन से आत्म-शुद्धि होती है और उस आत्म-शुद्धि का दूसरों पर प्रभाव भी पड़ता है। परन्तु यदि दुरुपयोग किया गया तो अनशन करने वाले में दम्भ, अभिमान, ईर्ष्या, दुराग्रह और दानवता भी बढ़ सकती है। मैं कभी-कभी अनशन पर तजर्बा कर चुका हूँ। परन्तु मेरे घर वालों ने भी नहीं जाना कि यह तजर्बा क्यों और कब किया गया, क्योंकि मैं जानता था कि एक मक्खी पड़ कर सेर-भर दूध को खराब कर सकती है, और एक छोटा सा दम्भ संस्था को भ्रष्ट करने के लिये पर्याप्त है। परन्तु प्रायः लोग अनशन प्रायश्चित्त और आत्म-शुद्धि के लिये नहीं करते। वे दूसरों को धमकाने के लिये करते हैं और उनमें आसुरी प्रवृत्तियाँ बढ़ जाती हैं। एक बार जब मैं यू० पी० सभा का प्रधान था एक तार मिला कि एक प्रसिद्ध नेता ने अनशन कर दिया। बात तो इतनी छोटी थी कि मुझे आज भी हँसी आती है। परन्तु वे सज्जन थे मेरे मित्र, मैं तुरन्त वहाँ पहुँचा, और मैंने कहा, आपने यह क्या किया! आप बुड्ढे और कमजोर हैं, बात भी बड़ी नहीं है। क्या यह आपका "मुड़चिड़ापन" नहीं है। वे कहने

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उस के पास दो संस्थाएँ हैं। एक सार्वदेशिक व दूसरी परोपकारिणी सभा। परन्तु ये दोनों ही विदेश प्रचार पर विशेष ध्यान नहीं देतीं। या तो ये संस्थाएं इस महत्वपूर्ण कार्य से उदासीन हैं अथवा उनके पास साधनों का अभाव है। कुछ भी हो "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का नाद गुंजाने वाला आर्यसमाज आज अपने कर्तव्य-पालन से पीछे हट रहा है। यदि वह अपने ध्येय की पूर्ति में इसी प्रकार निष्क्रिय रहा तो उसका जीवन लम्बा नहीं चल सकता। परन्तु हमें आशा है, ऐसा नहीं होगा और राष्ट्र की स्वतन्त्रता के पश्चात् वह नये उत्साह व नये जोश के साथ आगे बढ़ेगा।

अपराध-चिकित्सा

श्री बा० पूर्णचन्द, एडवोकेट

अपराध भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न नाम से पुकारा जाता है। धार्मिक जगत् में इसे पाप कहते हैं अर्थशास्त्र और व्यवसाय के जगत् में इस बेईमानी कहते हैं सामाजिक क्षेत्र में इसे कसूर और अनुचित व्यवहार कहते हैं कानून और न्याय का दृष्टि में इसे अपराध, व जुर्म, कहते हैं। सार यह है कि जिस क्षेत्र म जिस समय जो काम नहीं करना चाहिये वह करना अपराध है।

हम सब अपनी सम्पत्ति और अपने शरीर की रक्षा चाहते है। हममें स कोइ यह पसन्द नही करता कि हमको कोई किसी प्रकार की भी तकलीफ़ पहुचाये या हमारी कोई जरा-सी चीज़ भी हमारी इच्छा के विरुद्ध ले या हमें धोका दे या ज़बर्दस्ती छीने हमारी मा या बहन को बुरी निगाह से देखे या हमसे झूट बोले। जो हम अपने लिय चाहते है वही हमें दूसरों के साथ करना चाहिये। हम किसी प्रकार से कोई ऐसा काम नही करना चाहिये जिससे दूसरे को तकलीफ़ पहुचे या जिसमें उसे दुःख हो।

यह जानते हुए भी कि अपराध नही करने चाहिये हम अवसर आ जाने पर अपराधी बन जाते है और अनुचित काम कर बैठते हैं। ऐसा क्यो ? इसके दो कारण हैं।

अपराध करने वाला काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार के वशीभूत होकर अपराध करता है। यह सब विकार और बुराइयाँ हृदय और मन से सम्बन्धित हैं और यही अपराध की जड़ हैं। अपराधों को रोकने के लिए इन विकारों के निवारण पर ध्यान देना होगा।

बहुधा बाह्य परिस्थिति के कारण भी व्यक्ति अपराधी बन जाता है या अपराधी बनने के लिये विवश हो जाता है। जैसे निर्धनता या गरीबी भी शिक्षा की कमी, ऐसे लोगो का सग जिनके सम्पर्क में आन मं बुराई करने का स्वभाव हो जाता है, बुरी आदतों से जैसे नशा करना। जो कुछ हम खात हैं, पीत है, देखते है और सुनते हैं, पढ़ते हैं मनन करते है, सब का प्रभाव हमारे विचारों, आचार और व्यवहार पर पड़ता है। अपराधों को रोकने के लिए आन्तरिक और बाह्य दोनों प्रकार के कारणों को दूर करना होगा।

बाह्य और आन्तरिक कारणों के रोकने में धार्मिक जगत् वाले, शिक्षा के क्षेत्र वाले व्यवसाय के जगत वाले और कृषि-विभाग वाले, विकास-संघ या सहयोग-विभाग वाले सब के सहयोग की आवश्यकता है। इसलिए अपराध-निरोध कार्य ही ऐसा कार्य है जिसे सब को करना है और जिसमें सब एक वेदी पर आकर कन्धे से कन्धा मिला कर कार्य कर सकते हैं। पुलिस, जेल, अदालतें, मजिस्ट्रेट, जज, शिक्षा-विभाग के अधिकारी और अर्थ-शास्त्र सम्बन्धी कार्य करने वाले सबको मिलकर कार्य करना है।

मनोविज्ञान के दृष्टिकोण से अपराध करत समय दो प्रकार की भावनाएं होती हैं। उन अपराधियों में जिनमें कुछ विवेक बाक़ी है अर्थात् जो अपराध करते समय यह विचार करते हैं कि अपराध करना चाहिए या नही। अपराध के दण्ड से बचने का भावना एक प्रबल भावना है, या तो व्यक्ति अपने को व अपने अपराध को छिपाकर या दण्ड देने वाले को बहका कर, फुसला कर भ्रम में डालकर लोभ देकर, दण्ड से बचने की भावना कर लेता है और अपराध करने पर तत्पर हो जाता है। यदि वह भावना दूर हो जावे तो बहुत से अपराधी अपराध करने से बच सकते हैं, ऐसी एक सता में विश्वास करने से जिससे कुछ छिपाया नहीं जा सकता और जिस के न्याय में बाधा नहीं डाली जा सकती यह भावना दूर हो सकती है और ऐसी सत्ता में विश्वासके लिए हाज़िर और नाज़िर की शपथ बहुत उपयोगी है और इसका प्रभाव क्रियात्मक जीवन पर पड़ सकता है।

मानसिक जगत् की व्यवस्था के लिए यह बात ध्यान में रखनी है कि लोक-नियम और राज-नियम मानसिक जगत् और विचार-जगत् पर प्रभाव नही डाल सकते। उनका सम्बन्ध केवल कही हुइ बात और किये हुए काम तक है। जबतक मन क अन्दर केवल कल्पना है न कोई दुनिया वाला उसकी बुराई कर सकता है, न किसी को पता चल सकता है और न उसकी कोइ पकड़-धकड़ हो सकती है और वह कल्पना ही सब अपराधों का आधार और मूल है। जिस प्रकार नदी के बहाव को स्रोत से निकलना प्रारम्भ होने पर रोका नही जा सकता, उसी प्रकार बुरी कल्पनाओं के उत्पन्न हो जाने पर केवल राजनियम और लोक नियमों के आधार पर अपराधों का निवारण नहीं हो सकता। मन के अन्दर की अनुचित भावना दैनिक नियम से ठीक होगी जिसका मानसिक जगत् में प्रभाव है और इसके लिये ईश्वर की सत्ता में विश्वास और दैनिक नियमों का पालन करना अनिवार्य है।

अपराध करना या अपराधी बनना एक भयकर रोग है। जैसे अन्य प्रकार के रोगों की औषधि होती है, ऐसे ही इसके लिये भी उपचार की विशेष विधि होनी चाहिये। जो सम्बन्ध विभाग की चिकित्सा से है वही सम्बन्ध पुलिस और मेजिस्ट्रेसी में होना चाहिये और जो सम्बन्ध डाक्टर और अस्पताल में रहने वाले मरीजों से है वही सम्बन्ध मजिस्ट्रेट और जेल-विभाग से होना चाहिये। जेलों को नैतिक अस्पतालों की परिस्थिति में लाना होगा। केवल दण्ड के लिए नहीं, सुधार के लिए जेलों का होना आवश्यक है। जेलों से काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के कारण अपराध करने वालों को रहन-सहन शिक्षा दीक्षा के आधार पर इस प्रकार जीवन व्यतीत करना चाहिए कि उनके अन्दर से उस पाप का अंकुर दूर हो। केवल कुछ समय के लिए पाप करने से रुके रहना और ऊंची-ऊंची दीवारों के अन्दर रहना पर्याप्त नहीं है। हाथ पैर रुके रहे और मन में पाप की वासना बढ़ती रहे इससे कोई लाभ नहीं।

जब कष्ट होता है, जब हम दुखी होते हैं तब हम शिकायत करते है, विलाप करते है दूसरो की शिकायत करते हैं, अपने कष्ट का उत्तरदायित्व दूसरो पर डालना चाहते हैं, राज्य मंत्री प्रजा पर उत्तरदायित्व रखते है और प्रजा मंत्रियों पर। जिसे दुःख है वह उसके ही कर्मों के अनुरूप होगा इसलिये शिकायत और विलाप की बात छोड़ कर क्रियात्मक सुधार की ओर दृष्टि जानी चाहिये।

बाह्य अंकुशों की परीक्षा बहुत होचुकी। बाह्य अंकुश जितने लगाये गये उनके अनुपात से अपराध और अधिक बढ़े, क्योंकि अंकुश-केवल बाह्य रूप से क्रियात्मक लाभ नहीं पहुचा सकते। आवश्यकता है आंतरिक अंकुश की आंतरिक अंकुश का नुस्खा ऊपर लिखे दो शब्द हैं हाज़िर और नाज़िर।

—

लगे, "क्या तुम मुझे पागल समझते हो ? मैं तो इन छोकरों को डराता था।" मैंने ईश्वर को धन्यवाद दिया कि इतने तक ही बीती और बात टल गई। मेरी समझ में आर्यसमाजियों को इस विषय में अधिक सतर्क होने की आवश्यकता है। ऋषि दयानन्द ने तप के जो लक्षण किये हैं वे अन्य आचार्यों के लक्षणों से सर्वथा विपरीत है, वे कहते हैं कि सत्य तपः, ऋत तपः। इसका सीधा अर्थ यह है कि झूठ तप नहीं, प्रमाद तप नहीं, दंभ तप नहीं, आत्मश्लाघा तप नहीं, यदि यह तप नहीं तो क्या हुए ? पाप ! घोर पाप ! इसलिये आर्य लोग स्वय इन दम्भों से बचें और दूसरों की इनके लिये प्रशंसा न करें। न हि सत्यात् परो धर्मः नहि सत्यात् परं तपः।

——

जन संख्या-विवरण १९५१

१९५१ में भारत की जनगणना ३६ करोड़ १८ लाख २० हजार है। इसमें से १८ करोड़ ३३ लाख ८४ हजार ८०६ पुरुष और १७ करोड़ ३५ लाख ६ हजार ८१५ स्त्रिया हैं। देश के बटवारे के कारण करोड़ो मुसलमानों के अलग होजाने पर भी भारत की वर्तमान जनसंख्या चीन के बाद संसार के सब राष्ट्रो से अधिक है। गत १० वर्षों में भारत की जनसंख्या में १२.४ प्रतिशत की वृद्धि हुई है। १९४१ में देश की जनसंक्या (पाकिस्तानी प्रदेश को निकाल कर) ३१ करोड़ ४८ लाख २० हजार १९० था।

प्रान्तो के अनुसार जनसंख्या इस प्रकार है :—

'अ' भाग के राज्य

आसाम—क्षेत्रफल ५४,०८४ वर्गमील;जनसंख्या ९१,२९,४४२। पुरुष ४८,६९, ८७८, स्त्रियाँ ४२,-५९,५६४।

बिहार—क्षेत्रफल ७०,२६८ वर्गमील, जनसंख्या ४०२,१८,०१६—पुरुष २,०१,७२,५६७ स्त्रियाँ २,००,४६,३४९।

बम्बई—क्षेत्रफल १,१५,५७ वर्गमील, जनसख्या ३,५९,४१,-५५९ पुरुष,१,८६,२१,८८३ स्त्रियाँ।

मध्यप्रदेश—क्षेत्रफल १,३०,३२२ वर्गमील, जनसख्या २,१३,२७,८९८, पुरुष-१,०६,८८,८११; स्त्रियाँ १,३६,३९,०८७।

मद्रास—क्षेत्रफल १,२७,७६८ वर्गमील, कुल जनसख्या ५,६९,५२,३३२। पुरुष २,८४,१३,६६१। स्त्रियाँ २,८५,३८,६७१।

उड़ासा—क्षेत्रफल ५९,८६९ वगमील, कुल जनसंख्या १,४६,४४,२९३; पुरुष-७२, ४०, ००८, स्त्रियाँ ७४,०४,२८५।

पजाब—क्षेत्रफल ३७,४२८ वर्गमील, कुल जनसंख्या १,२६,३६,६११—पुरुष ६७,८०,७७०, स्त्रियां ५८,५७,८४१।

उत्तरप्रदेश—क्षेत्रफल १,१५,५२३ वर्गमील, कुल जन-सख्या ६,३२,५४,११८—पुरुष ३,३१,४२,४५७ स्त्रियाँ ३,०१,११,६६१।

पश्चिमी बंगाल—क्षेत्रफल २९,४७६ वर्गमील, कुल जनसंख्या २,४७,८६ ६८३—पुरुष १,३३,१९, ९४१। स्त्रियाँ १,१४, ६६,७४२।

'अ' भाग के राज्यो क कुल जनसंख्या २७,८८ ९५,८५२।

'ब' भाग के राज्य

हैदराबाद—क्षेत्रफल ८२,३-१३ वर्गमील। कुल जनसख्या १,८६,५२,९६४, पुरुष ९४,६४,४९५ स्त्रियाँ ९१,८८,४६९।

मध्यभारत—क्षेत्रफल ४०, -१० वर्गमील, कुल जनसख्या ७९,४१,६४२; पुरुष ४१,२८,३०८, स्त्रियाँ ३८ १३,३३४।

मैसूर—क्षेत्रफल २९ ४७८ वर्गमील। कुल जनसंख्या ९०,७१,६७८, पुरुष ४६,६३,८५८; स्त्रियाँ ४४,०७,८१०।

पेप्सू (पटियाला राज्यसंघ क्षेत्रफल १०,०९९ वर्गमील, कुल जनसंख्या ३४,६८,६३१, पुरुष १८,७३,२०५, स्त्रियाँ १५,९५,४२६।

राजस्थान—क्षेत्रफल १,२८,४२४ वर्गमील, कुल जनसंख्या १,५२,९७,९७९, पुरुष ७९ ६६ २०८, स्त्रियाँ ७३,३१,७७१।

सौराष्ट्र—क्षेत्रफल २१,०६२ वगमील, कुल जनसंख्या ४१ ३६,००५। पुरुष २०,९४,९६८, स्त्रिया २०,४१ ०३७।

त्रावणकोर-कोचीन—क्षेत्रफल ९ १५५ वर्गमील। कुल जनसंख्या ९२,६५,१५७। पुरुष ४६,१५,३३५, स्त्रिया ४६,४९,८८२।

'ब' भाग के राज्यों की कुल जनसंख्या ६,७८,०४ ०५६।

'स' भाग के राज्य

अजमेर—क्षेत्रफल २४२५ वगमील, कुल जनसंख्या ६,९२,०६, पुरुष ३ ५९,५७२, स्त्रियाँ ३,३२ ९३४।

भारतवर्षीय आर्यकुमारपरिषद्

आर्य बन्धुओ को यह जान कर अत्यन्त खुशी होगी कि भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् ने गत ४ वर्षों में सन्तोषजनक प्रगति की है। सन् १९४६ मे परीक्षा केन्द्र समस्त भारतवर्ष में १०६ थे और २५०० छात्रों ने परीक्षा दी थी, इस वर्ष मार्च १९५१ में परीक्षार्थियों की संख्या ५९०० थी और केन्द्रो की सख्या २४४ हो चुकी है। परीक्षाफल भी सन्तोषजनक रहे। इससे पता चलता है कि आर्यसमाज का प्रचार उत्तरोत्तर बढ़ रहा है, भारत से बाहर विदेशो में भी जहाँ भारतवासी रहते हैं, वहा भी इन परीक्षाओं का प्रचार होगया है।

सिद्धान्त सरोज, सिद्धान्तरत्न, सिद्धान्तभास्कर और सिद्धान्त शास्त्री तीनो परीक्षाओ में परिषद् के अधिकारियो ने पाठ्यक्रम में वे पुस्तकें ही नियुक्त की हैं जिनको पढ़ कर आर्यसमाज के सिद्धान्तो का भली प्रकार परिचय हो जाता है और परीक्षार्थी आर्यसमाज के रंग मे रंग जाते हैं। इस प्रकार वे महर्षि दयानन्द सरस्वती के उद्देश्य की पूर्ति कर सकते हैं अर्थात् ऋषि ऋण चुका सकते हैं परमपिता परमात्मा आर्य नवयुवको और युवतियो की बुद्धियो को प्रेरित करें जिससे भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् के परीक्षार्थियों की सख्या दिनोदिन बढ़ती जाय।

सिद्धान्त सरोज, सिद्धान्त रत्न, सिद्धान्त भास्कर और सिद्धान्त शास्त्री के लिए पाठ्यक्रम की सभी पुस्तकें उचित मूल्य पर हमने परिषद् के केन्द्रो को और परीक्षार्थियों को सप्लाई करने का विशेष प्रबन्ध कर लिया है। भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की पुस्तको का सम्पूर्ण सूचीपत्र नव वर्ष के लिए मुफ्त मगायें। इनके अतिरिक्त आर्यसमाज सम्बन्धी सभी पुस्तकें उचित मूल्य पर भेजी जाती हैं।

निवेदक—

जगतराम आर्य व्यवस्थापक

आर्य प्रकाशन मंडल लाजपतराय मार्केट-दिल्ली।

भोपाल—क्षेत्रफल ६९२१ वर्गमील, कुल जनसंख्या ८ ३८,१०७; पुरुष ४,३८,७७८; स्त्रियाँ ३,९९,३२९।

बिलासपुर—क्षेत्रफल ४५३ वर्गमील, कुल जनसंख्या १ २७,५६६, पुरुष ६५,३३२ स्त्रियाँ ६२,२३४।

कुर्ग—क्षेत्रफल १५९३ वर्गमील; कुल जनसंख्या २,२९ २५५; पुरुष १,२५ ३२३; स्त्रियाँ १,०३,९०२।

दिल्ली—क्षेत्रफल ५७४ वर्गमील, कुल जनसंख्या १,७४,३,९९२, पुरुष ९,९० ४४३, स्त्रियाँ ७,५३,५४९।

हिमाचल प्रदेश—क्षेत्रफल १० ६०० वर्गमील, कुल जनसंख्या ९ ८९,४३७, पुरुष ५,१६,३१७, स्त्रियाँ ४,७३,१२०।

कच्छ—क्षेत्रफल ८,४६१ वर्गमील कुल जनसंख्या ५,६७,८२५, पुरुष २ ७३ ३६३। स्त्रियाँ २,९४,४६२।

मणिपुर क्षेत्रफल ८,६२० वर्गमील, कुल जनसंख्या ५,७९ ०५८, पुरुष २,८४ ७४७, स्त्रियाँ २,९४,३११।

त्रिपुरा—क्षेत्रफल ४०४९ वर्गमील, कुल जनसंख्या ६ ४९,-९३०, पुरुष ३,३९,९६२; स्त्रियाँ ३,०९,९६८।

विन्ध्य प्रदेश—क्षेत्रफल २४,६०० वर्गमील, कुल जनसंख्या ३५,७७,४३१, पुरुष १८,३४ ६१०, स्त्रियाँ १७,४२,८२१।

'स' भाग के राज्यो का योग-कुल क्षेत्रफल ६८,२९६ वर्गमील, में कुल जनसंख्या ९९ ९५,१८७, पुरुष ५२ २८,४५७। स्त्रियाँ ४७,६६,६५०।

'द' भाग के राज्य

अंडमान नीकोबार—क्षेत्रफल ३,१४३ वर्गमील; कुल जनसंख्या ३०,९६३। पुरुष १९,०३६। स्त्रियाँ ११ ९०७।

सिक्कम—क्षेत्रफल २७४५ वर्गमील, कुल जनसंख्या १,३५ ६४६। पुरुष ७०,९६१ स्त्रियाँ ६४,६८५।

विस्थापितों की संख्या

आसाम में २,७६ ८२४ बिहार में ७८ ६५१, बम्बई में ३,४१, ८१, मध्यप्रदेश में १,२०,८८६, मद्रास में ६,६२६। उड़ीसा में ४० २६ पंजाब में २४ ६८,५११, उत्तरप्रदेश में ४,७६,८२२, पश्चिमी बंगाल में

श्री राजगुरुजी का भाषण

[नीचे उस भाषण का सारांश दिया जाता है, जो राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री ने उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पद से विरत होते हुए आर्य प्रतिनिधियों के समक्ष लखनऊ में २२ अप्रैल १९५१ को दिया था। —सम्पादक]

सज्जनो, मेरी आयु ६८ वर्ष की है, मैंने गत पाँच वर्षों स लगातार उत्तर प्रदेशीय आयप्रतिनिधि सभा के प्रधान की हैसियत से आयसमाज की सेवा की है। इस बीच म कर्त्तव्य वश मुझ सम्भव है, किसी को अप्रसन्न भी करना पडा हो। परन्तु मैं ईश्वर को साक्षी करके कहता हू कि ऐसा करने मे मेरा व्यक्तिगत हतु बिलकुल नहीं है। आय समाज और सभा का हित ही सदैव लक्ष्य मे रहा है। मैं आज ऐसे सब ही भाइयो स क्षमा मागता हूँ, जो मेरे किसी काय व्यवहार से असन्तुष्ट रहे हैं। उन्हें भले प्रकार समझ लेना चाहिए कि मेरा द्वेष किसी से भी नहीं और मैं सबको ही भाइ तथा मित्र समझता हूँ। मेरी कडाई का कारण सभा और समाजो का हित समझ कर ही मुझ क्षमा कर देना चाहिए। मुझे मेरे कर्त्तव्य पालन मे मेरे उत्तर प्रदश ने बडा सहयोग दिया है, इसके लिये मैं आर्यजनता का हृदय से आभारी हूँ। मुझे हर्ष है कि प्रदश भर मे केवल एक आर्यसमाज हीग की मण्डी आगरा प्रतिनिधिसभा से सम्बद्ध नहीं है, शेष सब समाजों का उससे संबंध हो चुका है। उस समाज के अधिकारियो से मेरा इस विषय मे वार्त्तालाप हुआ है और पूर्ण आशा है कि बहुत शीघ्र ही यह समाज भी प्रतिनिधि सभा से सम्बद्ध हो जायगा।

आगामी अक्टूबर मास में मेरठ मे आर्य महा सम्मेलन हो रहा है, उसका सारा उत्तरदायित्व उत्तरप्रदेश क आर्यों पर है, क्योंकि इस प्रदश मे सम्मेलन होने के कारण उन्हें ही आने वाली समस्त जनता का स्वागत सत्कार करना है। मेरा उत्तरप्रदेश बडा गौरवशाली है, वह किसी कार्य मे कभी पीछे नहा रहा। मुझे पूरी आशा ही नहीं बल्कि दृढ़ विश्वास है कि वह आगामी आय महा सम्मेलन को सफल बनाने में भी कोई प्रयत्न उठा न रखेगा। हमारे प्रदश में दलबन्दी नहीं है। यदि कहीं कोई ऐसी भावना थी भी तो वह क्रमश. दूर होती जाती है। मुझ पूरी आशा है कि अगले वर्ष आर्य जनता का अन्तःकरण और अधिक शुद्ध होगा और वह बड़ी शुद्ध-सात्विक भावना से आगामी बृहदधिवेशन में भाग लेगी। मुझे इस बात का बडा खेद है कि सभा में प्रविष्ट ९२० आयसमाजो में से बहुत थोडे समाजो ने इस बृहदधिवेशन में अपने प्रतिनिधि भेज कर भाग लिया है। आशा है, आगामी वर्ष ऐसा न होगा और आय प्रतिनिधियो की अधिक से अधिक संख्या सभा के बृहदधिवेशन में दिखाइ देगी।

मुझे बडा हर्ष है कि सभा के प्रधान श्रीयुत मदनमोहन सेठ जैसे अनुभवी व्यक्ति निर्वाचित हुए हैं। उनका हृदय बड़ा पवित्र और स्नेह पूर्ण है। वे शुद्ध हृदय से आर्यसमाज की सेवा कर रहे हैं। उनके हाथों मे सभा और समाजों की संघटन सत्ता सर्वथा सुरक्षित और सकुशल रहेगी। मैं सभा के प्रधान पद से अवकाश ग्रहण कर रहा हूँ। परन्तु आर्यसमाज और वेदिक धर्म की सेवा करना मेरे जीवन का एक मात्र लक्ष्य है, और आगे भी रहेगा। किसी न किसी रूप में जीवन-भर इसी लक्ष्य की पूर्ति में जुटा रहूँगा और उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा की सेवा-सहायता करना अपना कर्त्तव्य समझूंगा। मैं एक बार फिर सब आर्य भाई-बहनों मे अपनी भूलों और त्रुटियों के लिये क्षमा याचना करता हू।

—

...२१ १७,८६६ हैदराबाद में ४,१३५, जम्मू और काश्मीर में विशेष अवस्थाओं के कारण जनगणना नहीं की गयी। मध्यभारत में ६८,५५७, मैसूर में ७,८६१, पटियाला संघ में ३८०,१४६ राजस्थान में ३,१२ ७५२, सौराष्ट्र में ६० ५०५ ट्रावणकोर कोचीन में २५४ अजमेर में ७१ ८०४ भोपाल में १७६२२ बिलासपुर में १८७, कुर्ग में ९१, दिल्ली में ४,०६,७६७, हिमाचल प्रदेश म ५,२४८, कच्छ में ११,६६१, मणिपुर में १२००, त्रिपुर में १००, ७५१, विंध्यप्रदेश में १४ ६९८, अंडमान नाकोबार में १५४५ और सिकम म ३६ देश-भर में शरणार्थियों की कुल संख्या ७४,७६ ८७८, है।

—

आर्यजगत

—२४ अप्रैल ५१ को आ० स० बकेवर (इटावा) में श्री स्वा० ज्ञानानन्दजी (मेहता जेमिन) ने श्रीराम आर्य-पुस्तकालय का उद्घाटन किया। स्वामीजी के व्याख्यान का जनता पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा।

—दयानन्द महाविद्यालय गुरुकुल डोरली मेरठ अपने स्नातक श्री हरिदत्तजी शास्त्री के असामयिक निधन पर शोक-सहानुभूति प्रकट करता है। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति और शोकाकुल परिवार को धैर्य प्रदान करे।

—आ० स० स्योहारा (बिजनोर) का ५२ वाँ वार्षिकोत्सव १६, २० तथा २१ अप्रैल को समारोहपूर्वक मनाया गया। १६ अप्रैल को नगरकीर्तन हुआ। सव श्री प० शिवशर्मा वानप्रस्थी, कु० सुखलालजी आर्यपथिक, प० ओम्प्रकाशजी शास्त्री आदि विद्वानों के प्रभावशाली भाषण हुए। स्थानीय वैदिक पाठशाला के अध्यापकों और विद्यार्थियों ने भी प्रशंसनीय भाग लिया।

—गत १५ अप्रैल को आ० स० चोम्बकोट की ओर से एकेश्वर के मेले में प्रचार हुआ। प्रभावशाली भजन और व्याख्यान हुए।

—आ० स० गाजीपुर का ३४ वां वार्षिकोत्सव १३ से १६ अप्रैल तक समारोहपूर्वक मनाया गया। सर्वश्री प० सत्याचरणजी शास्त्री, एम० ए०, प० शिवनारायणजी वेदपाठ, ठ० धर्मसिंह सरहदी आदि के प्रभावशाली भाषण हुए।

—आर्यनगर (मॉडल टाउन) गाजियाबाद में आर्यसमाज का नियमानुसार संघटन हो चुका है। प० हंसराजजी ने सौ वर्गगज भूमि आर्यसमाज-मन्दिर के लिए प्रदान की है।

—गत २२ अप्रैल को आ० स० कायमगंज ने प० श्यामलाल जी शास्त्री के निधन पर शोक-सहानुभूति प्रकट की। शास्त्रीजी की आयु ७५ वर्ष की थी, आपने जीवन भर आर्यसमाज की सेवा की। व्याकरण के आप बड़े अच्छे विद्वान् थे।

—२५ मार्च को आ० स० खड्गपुर द्वारा श्री रघुवीरशरण की पुत्री का चूड़ाकर्म संस्कार वैदिक रीति से हुआ।

—आ० स० नगौला अपने सदस्य लुहारा निवासी श्री सुन्दरसिंहजी राघव की धर्मपत्नी के निधन पर शोक-सहानुभूति प्रदर्शित करता है।

—आ० स० मेहनगर आजमगढ़ का वार्षिकोत्सव सरलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। महिला सम्मेलन भी हुआ जिसमें महिलाओं की उपस्थिति सन्तोषजनक थी। व्याख्यानों व भजनों का अच्छा प्रभाव पड़ा।

—जिला आ० उपप्रतिनिधि सभा लखनऊ ने शुद्धि-कार्य को संगठित करने के लिये एक 'शुद्धि-समिति' बनाई है। जिले में समाज के कार्य को प्रगति देने के लिए २०,२१ मई को जिला आर्य-सम्मेलन करने का भी निश्चय किया है।

—

उत्सव-सूचनाएँ

—आ० स० दादरी (बुलन्दशहर) का उत्सव १२, १३ तथा १४ मई को मनाया जायगा। कई सम्मेलन भी होंगे। राजनैतिक सम्मेलन के प्रधान प० शिवदयालुजी होंगे।

—आ० स० खेतासराय (जौनपुर) का वार्षिकोत्सव ६, १०, ११ तथा १२ मई को होगा।

—

निर्वाचन

—आ० स० गुरुकुल कांगड़ी—प्रधान ह० सुन्दरलाल भण्डारी और मन्त्री-श्री सोमकीर्तिजी।

—आ० स० दादरी (बुलन्दशहर) प्रधान-श्री यशपाल वैद्य आयुर्वेदाचार्य और मन्त्री-श्री जयप्रकाश शर्मा एम० ए०।

—आ० स० होशंगाबाद—प्रधान-श्री प० सत्यव्रत शास्त्री और मन्त्री-श्री कृष्णदेवजी।

—आर्यनगर (गाजियाबाद)—प्रधान-श्री हंसराजजी और मन्त्री श्री कर्मचन्दजी।

—आ० स० पूर्णियाँ—प्रधान-श्री बदरीलालजी आर्य और मन्त्री-श्री नाथूलाल आर्य।

—आर्यसमाज काशी—प्रधान श्री प० जे० पी० चौधरी और मन्त्री श्री रणधीरलालजी गुप्त।

—आर्यसमाज गोला गोकरननाथ प्रधान-श्री प० होतीलालजी और मन्त्री-श्री प० यज्ञदत्त शर्मा।

—

सार-सूचनाएं

—भारत की विदुषी कवियों के नामों की एक डायरेक्टरी तैयार होनी चाहिये। इससे बहुत लाभ होगा।

—सोनल मंत्राई गोरखिन

—होशंगाबाद गुरुकुल में नये ब्रह्मचारियों के प्रविष्ट होने की अन्तिम तारीख १५ जून १९५१ है।

—आ० स० मेरठ शहर 'सामान्य ज्ञान तथा विज्ञान' नामक पुस्तक में उस अंश का तीव्र प्रतिवाद करता है जिसमें महर्षि दयानन्द को विवाहित बताकर उनका तथा आर्यसमाज का घोर अपमान किया गया है। शिक्षा-विभाग को चाहिये कि इस पुस्तक का स्कूलों में पढ़ाना तुरन्त बन्द करके अपना कर्तव्य पालन करे। ऐसी पुस्तकों से महर्षि दयानन्द के भक्तों की भावना को भयङ्कर ठेस लगती है।

— मन्त्री

—आर्यसमाज 'बरमपुर' का नाम बदल कर अब आर्यसमाज 'भोजपुर खेड़ी' कर दिया गया है। सम्बन्धित सज्जन नोट कर लें।

पूज्य स्वामी अमृतानन्दजी महाराज मई मास के प्रथम सप्ताह में भोजपुर समाज में अवश्य पधारें।

आनन्दप्रकाश आर्य

—

कांगड़ी गुरुकुल विश्वविद्यालय

उपर्युक्त विश्वविद्यालय का ५० वाँ महोत्सव १३, १४, १५ और १६ अप्रैल १९५१ को बड़े समारोहपूर्वक मनाया गया। श्री स्वा० अभेदानन्दजी ने 'ओ३म् पताका' फहराते हुए बड़ा महत्वपूर्ण भाषण दिया। श्री पण्डित विश्वनाथजी विद्यालंकार की अध्यक्षता में वेद सम्मेलन हुआ। सरस्वती-सम्मेलन डाक्टर सूर्यकान्त शास्त्री, एम० ए०, डी० लिट् के सभापतित्व में हुआ। नवीन स्नातकों के समक्ष श्री महात्मा श्रीआनन्द स्वामी सरस्वती का दीक्षान्त भाषण हुआ। श्री स्वा० अभेदानन्दजी ने सन्यासियों की ओर से नव स्नातकों को आशीर्वाद दिया। माननीय श्री चन्द्रभान गुप्त ने गुरुकुल फार्मेसी की आधार शिला रखी। ८० नये ब्रह्मचारी इस वर्ष गुरुकुल में प्रविष्ट हुए। उनका उपनयन और वेदारम्भ संस्कार आचार्य श्री प० प्रियव्रतजी ने कराया। इस अवसर पर आपने बड़ा महत्वपूर्ण भाषण दिया। अपील करने पर एक लाख सैंतीस सहस्र रुपये गुरुकुल निधि के लिये प्राप्त हुए। सर्वश्री प० ज्ञानचन्दजी, माननीय आत्माराम गोविन्द खरे, शिवमनलाल सक्सेना एम० पी०, इन्द्र विद्यावाचस्पति, प० ठाकुरदत्त शर्मा, स्वा० व्रतानन्दजी, स्वा० सत्यदेवजी परिव्राजक, प० चिरंजीशर्जी, प० बुद्धदेवजी विद्यालंकार, आचार्य प्रियव्रतजी, महात्मा आनन्दस्वामी सरस्वती, स्वा० वेदानन्दजी, स्वा० अभेदानन्दजी, प० विश्वनाथ त्यागी आदि विद्वानों के प्रभावशाली व्याख्यान हुए। अन्तिम रात्रि को ब्रह्मचारियों के खेलों का प्रदर्शन हुआ जिनका जनता पर खूब प्रभाव पड़ा।

—

दीक्षान्त-समारोह

१५ अप्रैल ५१ को निश्शुल्क गुरुकुल महाविद्यालय अयोध्या का दीक्षान्त समारोह अमेठी राज्य के युवराज श्री रणञ्जयसिंह एक्स एम० एल० ए० (केन्द्रीय) की अध्यक्षता में हुआ। महाविद्यालय की ओर से संस्कृत में आपको मानपत्र दिया गया। छह नवीन स्नातकों ने भी अपने-अपने विचार रक्खे। सभाध्यक्ष महोदय ने अभिनन्दन पत्र का उत्तर देते हुए अनेक सामयिक विषयों पर प्रकाश डाला और वैदिक संस्कृति-सभ्यता एवं संस्कृत भाषा के सौष्ठव का मुक्त कण्ठ से सराहना की। आपने कहा कि सादा जीवन तथा उच्च विचारों के द्वारा ही भारत पुनः गत गौरव प्राप्त कर सकता है। वैदिक धर्म ही उन्नति का सोपान है। चरित्रहीन जन कभी राष्ट्र की भलाई नहीं कर सकते।

—

महर्षि की महती दूरदर्शिता

आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् श्री प० भगवद्दत्तजी 'रिसर्चस्कालर' से मेरा परिचय ३५ वर्ष पुराना है। आपने अपनी लेखनी और वाणी द्वारा आर्यसमाज की ठोस सेवा की है। अन्य अनेक महत्व-पूर्ण कार्यों के अतिरिक्त पण्डित जी ने महर्षि दयानन्द के विज्ञापनों और पत्रों का संग्रह करने में जो घोर परिश्रम और महान् प्रयत्न किया है, वह अत्यन्त प्रशंसनीय है। इस पवित्र कार्य में उनके कई वर्ष लग गये और बहुत धन भी व्यय हुआ। अन्त को पण्डितजी के द्वारा संगृहीत ऋषि-पत्रों की पुस्तक प्रकाशित हुई। मैं इस पुस्तक को बार बार पढ़ता हूँ और मुझे उनमें महर्षि की गरिमामयी दूरदर्शिता का बार-बार बोध होता है। इन पत्रों के विचारों को इस प्रकार संक्षेप में लिखा जा सकता है—भारत की भाषा संस्कृत हो, वेद भाष्य का प्रचार किया जाय। आर्ष ग्रन्थों का महत्व सर्व साधारण पर प्रकट किया जाय। अंग्रेजी भाषा की शालाएँ न खोली जायँ। देशी रजवाड़ों का सुधार किया जाय। वैदिक आधार पर राज्य व्यवस्था हो। देश में अन्न, घी-दूध की वृद्धि हो, जिससे देशवासी उन्हें अधिकता से प्राप्त कर स्वस्थ और पुष्ट हो सकें। श्री प० भगवद्दत्तजी द्वारा सम्पादित और प्रकाशित ऋषि दयानन्द के विज्ञापनों और पत्रों की यह पुस्तक पंजाब-विभाजन के उत्पातों में नष्ट होगयी थी। हर्ष है कि अब उसके मुद्रण और प्रकाशन का पुनः उद्योग किया जा रहा है।

गजाधरप्रसाद
(रिटायर्ड गवर्नमेंट, आडीटर)

साधु-आश्रम

अलीगढ़ जिले में पुल काली नदी पर स्थित यह संस्था स्वर्गीय वीतराग श्री स्वा० सर्वदानन्दजी महाराज की स्मृति स्वरूप है। इसने राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री जैसे त्यागी नेता आर्य-समाज को दिये हैं। इस आश्रम के लिये एक अच्छे पुस्तकालय की बड़ी आवश्यकता है। दानी लोग पुस्तकें या उनके लिये दान देकर इस कमी को पूरा कर सकते हैं। पुस्तक-लेखक महोदयों से भी प्रार्थना है कि वे अपनी रची एक-एक पुस्तक इस पुस्तकालय को अवश्य प्रदान करें। जो लोग चाहें अपनी पुरानी किन्तु उपयोगी पुस्तकें भी इस आश्रम को भेज कर यश के भागी बन सकते हैं।

रामस्वरूप वर्म्मा
आश्रम-पुस्तकाध्यक्ष

अश्लील चल चित्र बन्द हों
गान्धी मैदान में सभा

आर्यसमाज दीवानहाल के तत्वावधान में आयोजित देहली के नागरिकों की एक महती सभा अत्यन्त खेद के साथ अनुभव करती है कि:—क— कला की ओट में वर्तमान सिनेमाओं में वीभत्स-अश्लील और असभ्य चल-चित्रों द्वारा जनता को घोर कुमार्ग और भ्रष्टाचार की ओर ले जाया जा रहा है। जिससे न केवल अबोध बालक-बालिकाओं, युवक और नव युवतियों का नैतिक पतन हो रहा है, प्रत्युत समूचा सार्वजनिक जीवन अत्यन्त दूषित और पाप मय हो रहा है। ख—अनेक चल-चित्र विषैली सामग्री देने के अतिरिक्त जनता को चोरी, डकैती तथा अन्य अमानुषिक कुकृत्यों की ओर ले जाने का कारण बन रही है। ऐसी गम्भीर स्थिति में यह महती सभा बड़े बलपूर्वक सरकार से अनुरोध करती है कि:—अ—वह इस विषय में अपनी उदासीनता व अकर्मण्यता की नीति को छोड़ कर तत्काल उचित कार्यवाही करे। आ—यह सभा निश्चय करती है कि यदि शीघ्र ही इस सम्बन्ध में सरकार ने क्रियात्मक पग न उठाया तो यह सभा बलपूर्वक घोषित करती है कि आर्यसमाज सामूहिक रूप से इस महा रोग के निवारण करने के लिये प्रत्येक वैधानिक उपाय का अवलम्बन करेगा। यह सभा देहली के अधिकारियों से अनुरोध करती है कि कुमार टाकीज के बाहर लगे हुये एक गन्दे चित्र को जो राजधानी के बाजारों में चलने वाले नागरिकों की मनोवृत्तियों को दूषित करने वाला है, तुरन्त हटवादें।

रामगोपाल, मन्त्री
आर्यसमाज दीवानहाल, दिल्ली

सूचना

आर्य समाज अलीगढ़ के लिए एक ऐसे वानप्रस्थ पुरोहित की आवश्यकता है जो आर्य सदस्यों के यहां संस्कार करा सकें और प्रचार का कार्य भी कर सकें। उनके भरण-पोषण का व्यय उनकी योग्यतानुसार समाज देगा। प्रार्थनापत्र समाज के मन्त्री से प्रमाणित होकर मन्त्री आर्यसमाज अलीगढ़ के पते पर आना चाहिए।

प्रेमशंकर पचौरी
(मंत्री आर्यसमाज)
अलीगढ़

गुरुकुल डौरली का भावी शिक्षाक्रम

गुरुकुल डौरली मेरठ जो उत्तर प्रदेश के पश्चिमीय भू भाग की सांस्कृतिक शिक्षा संस्था है, भारत की विभिन्न सांस्कृतिक एवं राजनैतिक क्रान्तियों में इस संस्था ने निर्भीकता के साथ अग्र भाग लिया है और नाना प्रकार के कष्ट और यातनाएं सही हैं गत वर्ष इस संस्था ने अपनी रजत जयन्ती भी मनाई है। संस्था का अपना पाठ्य क्रम रहा है, और कितने ही योग्य स्नातक भी इस गुरुकुल ने उत्पन्न किये हैं।

कितने ही वर्षों से बनारस की प्रथमा, मध्यमा, शास्त्री आदि परीक्षाओं में विधिवत गुरुकुल के छात्र बैठते रहे हैं, गुरुकुल शास्त्री तक बनारस संस्कृत परीक्षा बोर्ड से स्वीकृत है। हिन्दी साहित्य-रत्न आदि की परीक्षाओं में भी यहाँ के छात्र समय-समय पर बैठते रहे हैं तथा एफ० ए०, बी० ए० और एम० ए० की परीक्षाएं भी उत्तीर्ण करते रहे हैं। सन् १९४५ ई० में गुरुकुल में आयुर्वेदिक कालिज की भी स्थापना की गई, जिसने शीघ्र ही डिग्री कालिज का रूप धारण कर लिया किन्तु आयुर्वेद शिक्षासुधार समिति ने सरकार की नीति के अनुसार प्रान्त में केवल चार स्थानों पर ही जहाँ प्रचुर मात्रा में धन भवनादि थे कालिज रखने का निश्चय किया, । अतः गत वर्ष, गुरुकुल का आयुर्वेदिक कालिज बन्द कर देना पड़ा।

भारत के स्वतन्त्र होने के उपरान्त अब भारतीय शिक्षा-प्रणाली में आमूल चूल परिवर्तन करना नितान्त आवश्यक हो गया है। भारत की राष्ट्रीय सरकार ऐसा करने की इच्छा भी रखती है। अभी २३ अप्रैल १९५१ को उत्तर प्रदेश के मान्य प्रधान सचिव श्री प० गोविन्द वल्लभ पन्त ने इस दिशा में एक बहुत स्पष्ट वक्तव्य दिया है, और शिक्षा-विभाग को आदेश दिया है कि वह पुस्तकी शिक्षा पर विशेष बल न देकर उद्योग-धन्धे तथा कृषि की शिक्षा पर विशेष बल दें। कोई भी संस्था ऐसी न हो जिसमें कोई न कोई उद्योग पूर्ण रूपेण प्रत्येक छात्र को न सिखाया जाता हो, श्रम की प्रतिष्ठा पर संस्था की प्रतिष्ठा मानी जाय।

ग्राम्य क्षेत्रों में जो स्कूल कालेज हो उनमें कृषि की सांगोपांग शिक्षा की व्यवस्था की जाय बड़े बड़े कृषि क्षेत्र उस संस्था के साथ लगे हो, जहाँ छात्र क्रियात्मक रूप से शिक्षा ग्रहण कर सकें। गुरुकुल डौरली की साधारण सभा ने अब यह निश्चय कर लिया है, कि संस्कृत महाविद्यालय के साथ-साथ गुरुकुल में एक आदर्श पूर्व एवं माध्यमिक विद्यालय और आगे चलकर कृषि महाविद्यालय की स्थापना करना निश्चय किया गया है, गुरुकुल के शिक्षाक्रम में आश्रम-जीवन सादगी संयम चारित्रिक एवं सांस्कृतिक शिक्षा के साथ-साथ संस्कृत का शिक्षण आरम्भ से ही अनिवार्य होगा। संस्कृत के प्रौढ़ पाण्डित्य के संरक्षण में एवं विस्तार के लिए गुरुकुल संस्कृत महाविद्यालय प्रथक् पूर्ण प्रयत्नशील होगा रहेगा। शिवदयालु मंत्री

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, [illegible] शर्मा द्वारा, विराजा प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ॐ
आर्यमित्र
ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक—आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ
१० मइ १९५१

आर्यसमाज की शिथिलता दूर होनी चाहिए!

सेवा-कार्य खाँड़े की धार पर चलना है !!

समय दिय विना कोई काम न होगा : तन्द्रा तोड़िये : शिथिलता छोड़िये

हमने कई सप्ताह पूर्व लिखा था कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को चाहिये कि वह देश के समस्त आर्यसमाजों के शिथिल सघटन को सुदृढ़ करने के विचार से एक 'संघटन-पक्ष' का आयोजन करे। इस पक्ष में आर्य कार्यकर्तागण घूम-घूम कर अपनी तहसील, अपने जिले अपने डिवीजन और अपने प्रदेश के आर्यसमाजों में उत्साहप्रद जीवनीशक्ति का संचार करें। सोते समाजों को जगावे, जागतों को कर्मण्य बनावे और कर्मण्यों को प्रगति-पथ पर अग्रसर करें। परन्तु खेद है कि कई वार लिखने पर भी सार्वदेशिक सभा का ध्यान हमारी उचित और आवश्यक उपर्युक्त प्रार्थना की ओर नहीं गया। नही मालूम इस शिथिलता से समाजो में जीवन जागृति की भावना कैसे उत्पन्न की जा सकेगी।

हम तो समझते हैं एक साधारण आर्यसमाज से लेकर बड़ी से बड़ी शिरोमणि सभा तक का संघटन ढाँचा ढीला या शिथिल हो रहा है, सर्वथा 'रूढ़िवाद' का बल बढ़ता जा रहा है। कुछ सज्जनों को छोड़कर समाज-सेवा के लिए न किसी के पास शक्ति है और न उत्साह। आवेश का समुद्र निर्वाचन के समय तो उमडता है, परन्तु निर्वाचन होते ही वह एकदम शान्त बन जाता है, फिर साल भर तक कर्तव्य-पालन का ध्यान भी नही होता। छोटे से छोटे समाज का यही हाल है और बडी से बड़ी सभा का भी।

> जिसे प्राण प्यारा सदाचार होगा
> वही वीर ससार से पार होगा,
> नहीं नाम का धर्मधारी तरेगा
> भला काठ का केहरी क्या करेगा।

दो-चार कार्यकर्ताओं से जो बनता है, उसे वे करते रहते हैं। वस्तुतः हमारी प्रचार भावना (मिश्नरी स्प्रिट) नष्ट हो चुकी है। स्वर्गीय कर्मवीरों के नाम लेलेकर ही हम कर्मवीर बनना चाहते हैं, उनका अनुकरण करने का विचार तक नहीं करते। और पूछते यह हैं कि विश्व में वेदों का डङ्का क्यों नहीं बजता? जो लोग स्वयं अपने पुर, परिवार और घर में अब तक आर्यसमाज का प्रचार नहीं कर पाये, वे विश्व को कैसे आर्य बनावेंगे। यह बात हमारी समझ में नहीं आती।

इस समय सबसे अधिक आवश्यकता सघटन की है। इसके लिये प्रत्येक आर्यप्रतिनिधि सभा और आर्यसमाज के अधिकारियों और अन्तरग सदस्यों को अपना समय अर्पण करना चाहिये। कौन अधिकारी या अन्तरग सदस्य कितना समय देगा या देता है, इसका नियमानुसार लेखा रखने की आवश्यकता है। किसको प्रचार में कितनी सफलता हुई, इसकी भी डायरी रहनी चाहिये। जो व्यक्ति बिलकुल समय न दे सके, उसे कोई पद न सोंपा जाय। वह केवल साधारण सदस्य रह सकता है।

आर्यसमाजों प्रान्तीय सभाओं और सार्वदेशिक सभा सब में यह नियम लागू होने की जरूरत है कि जो व्यक्ति समाज-सेवा के लिए दो घण्टे रोज भी न दे सके उसे किसी पद पर प्रतिष्ठित होने का अधिकार न दिया जाय। भीड़ की जरूरत नहीं कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। पहले थोड़े आर्यसमाज और आर्यसमाजी ही बड़ा काम करते थे, अब बहुसंख्यक आर्यजनता भी अकर्मण्यता का केन्द्र बनी हुई है। पद का अर्थ है सेवा। जिनमें सेवा करने की शक्ति नहीं उन्हें क्यों सेवा-कार्य सोंपा जाता है। हम तो इन पंक्तियों द्वारा यही निवेदन करना चाहते हैं कि प्रत्येक सभा और समाज में सदस्यों से समय की याचना की जाय उनसे तन और मन मांगे जाय। धन तो अपने आप ही आ जायगा। इस समय वीतराग श्री स्वा० सर्वदानन्दजी, धर्मवीर प० लेखरामजी, महात्मा मुन्शीरामजी, महात्मा हसराजजी, महात्मा नारायण स्वामीजी आदि का अनुकरण करने की आवश्यकता है। उन कार्यकर्त्ताओं की जरूरत है, जो सारा जीवन नहीं तो जीवन का कुछ अंश तो अवश्य ही वैदिक धर्म की सेवा के लिये समर्पित करें।

सभा और समाजों के स्वी

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०), एक प्रति तीन आने
सम्पादक : हरिशङ्कर शर्म्मा
वर्ष—५३
अङ्क—१८

'हिन्दुस्तान हमारा दल'

उक्त नाम से पाकिस्तान में एक नया दल कायम हुआ है। यह दल अपनी ठंडी नीति—सहिष्णुता और शान्ति की नीति से सारे देश को अपने अधिकार में करना चाहता है। 'लेकर लिया पाकिस्तान हँस कर लेंगे हिन्दुस्तान' की तान तो वर्षों से चल रही है। यह उसी का सूत्रपात प्रतीत होता है।

भाषा-भेद पर बल न दो

४ मई को मारवाड़ में महाराष्ट्र साहित्य-सम्मेलन के चौतीसवें अधिवेशन में भाषण करते हुए श्री ए० के० परियोलकर ने कहा कि भाषा-भेद पर अत्यधिक जोर देकर भारतीय राष्ट्रियता की चेतना को दुर्बल नहीं करना चाहिए। भारत की समस्त चौदह भाषाओं को उसी एक राष्ट्रियता में इन्द्रधनुष के रंगों के समान मिल जाना चाहिये। यद्यपि हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी है, तथापि राष्ट्र ने एकताकारी प्रभाव का उत्तराधिकार संस्कृत से प्राप्त किया है।

डाक्टर गर्ग की विधवा को पेन्शन

उत्तर प्रदेश की सरकार ने बारहसेनी कालिज अलीगढ़ के स्वर्गीय प्रिंसिपल डा० कन्हैयालाल गर्ग की विधवा को १५०) मासिक की पेन्शन स्वीकृत की है। श्री गर्ग को ६ अप्रैल को मार दिया गया था। इसके अतिरिक्त डा० गर्ग की बड़ी लड़की के विवाहार्थ १५००) और बच्चों की १२ वीं तक की पढ़ाई के लिये आर्थिक सहायता भी मंजूर की है। प्रदेशीय सरकार ने ऐसा करके अवश्य ही अपनी सहृदयता का परिचय दिया है।

कृत प्रस्ताव या निश्चय उसी समय कार्यान्वित हो सकेंगे जब उन्हें कार्य में परिणत करने के लिये कर्मवीर दल तैयार होगा। यू० पी० की नौसौ बीस आर्यसमाजों में से केवल दो-ढाई सौ प्रतिनिधियों का बृहद् अधिवेशन में भाग लेना, वृन्दावन गुरुकुल का मर गिर कर चलना, वेद-प्रचार की स्थिति जीर्ण शीर्ण होना, आर्यसमाज में दैनिक पत्र का अभाव इत्यादि हमारी अकर्मण्यता के द्योतक हैं।

ऐसी बातों को यदि निराशा वाद कहा जाता है तो कोरे आशा वाद की थोथी डींग मारने से कोई काम भी नहीं चल सकता। काम करना है तो तन और मन दीजिये। धन और संघटन आपके पीछे लगा फिरेगा।

सप्ताह समाचार

'सती' हो गई।

१७ अप्रैल १९५१ को मध्य भारत की राजधानी लश्कर में एक २२ वर्षीया युवती सबके देखते देखते अपने पति की लाश के साथ जल गयी। सुना है, पुलिस भी देखती रही। इसका नाम रखा गया 'सती'। सती-प्रथा कानूनन नाजायज करार दी जा चुकी है। वैसे भी उसमें अपनी व्यर्थ जान झोंकने के सिवा कोई तत्व नहीं दिखाई देता, कभी ऐसी प्रथा की आवश्यकता रही हो तो रही हो। आग में कूद कर प्राण देना आसान है पर तप-त्याग पूर्वक कठोर जीवन बिताना बड़ा कठिन है।

शरीर बिछा दिये।

अब तक किसी के स्वागत में 'आँखें बिछाने' की आलंकारिक भाषा का ही प्रयोग होता था। परन्तु पोलोन्नासवा (कोलम्बो) में एक महोत्सव के अवसर पर ६७ बौद्ध भिक्षुओं के लिये ६७ व्यक्तियों ने अपने शरीरों का फर्श बिछा कर दिखा दिया। यानी ६७ व्यक्ति जमीन पर लेट गये और उनके शरीरों के फर्श पर ६७ बौद्ध साधु चलकर उत्सव स्थान तक पहुंचे। अन्धश्रद्धा या मनुष्य-पूजा का इससे बढ़कर उदाहरण और कहाँ मिल सकता है।

आर्यमित्र के ग्राहकों से—

१ मई से डाकघर के नियमानुसार बिना ग्राहकों की स्वीकृति आये 'आर्यमित्र' के वी० पी० न भेजे जा सकेंगे। अब तक पुराने ग्राहकों को बिना स्वीकृति के ही 'मित्र' के वी० पी० भेजे जाते थे, जिन्हें वे छुड़ा लेते थे। अब नये ग्राहकों को कृपया आर्यमित्रका वार्षिक मूल्य ८) मनीआर्डर द्वारा भेज देना चाहिये। पुराने ग्राहकों को भी मूल्य समाप्ति की सूचना पाते ही रुपये मनीआर्डर द्वारा भेज देने चाहिए। इससे 'मित्र' और ग्राहक दोनों को सुविधा रहेगी। वी० पी० के बढ़े हुए महसूल से भी ग्राहकगण बच जायगें। मूल्य भेजते समय पुराने ग्राहक अपना ग्राहक-नम्बर लिखना न भूलें। नये ग्राहक भी कूपन पर 'नवीन ग्राहक' शब्द लिखदें तो कार्यालय को सुविधा होगी।

—व्यवस्थापक

श्री वी० पी० मेनन

श्री वी० पी० मेनन अस्थायी रूपमें उड़ीसा के राज्यपाल(गवर्नर) पद का भार ग्रहण करने के लिये कटक पहुंच गये। आप श्री आसफ अली के स्थान पर कार्य करेंगे। मेनन महोदय की आयु ५७ वर्ष के लगभग है। आप एक साधारण क्लर्क की स्थिति से इतने बड़े पद पर प्रतिष्ठित हुए हैं। यह अध्यवसाय प्रशंसनीय है।

पन्द्रह हजार की पेन्शन

संसद में राष्ट्रपति-पेन्शन बिल पास हो गया। इसके अनुसार भूतपूर्व राष्ट्रपतियों को पन्द्रह हजार रुपया सालाना पेन्शन मिलेगी। इस पेन्शन पर आय-कर भी लिया जायगा। यह पेन्शन भूतपूर्व गवर्नर जनरल को भी मिलेगी। श्री सिधवा के कथनानुसार फ्रांस को छोड़कर और किसी देश में ऐसी व्यवस्था नहीं है।

आगामी चुनाव

आम चुनाव नवम्बर-दिसम्बर में होनेकी सम्भावना है। आगामी दो मास के बीच कांग्रेस का चुनाव-घोषणापत्र तैयार कर लिया जायगा। अबकी बार चुनाव-संघर्ष बड़ा कठिन है, देखें कौन-कौन वीर विजय-माल धारण करते हैं।

जनतन्त्र-मोर्चा भंग

श्री जवाहरलाल नेहरू और मौलाना आज़ाद के अनुरोध का उचित सम्मान करते हुए जनतन्त्र मोर्चा भंग कर दिया गया। आशा है कि अब कांग्रेस में एकता का वातावरण स्थायी रूप धारण कर सके।

रोटी के बदले गोली

डिवीजनल कमिश्नर श्री जे० एन० तालुकेदार ने कूचबिहार-गोलाकाण्ड की जांच करके यह मत प्रकट किया है कि पुलिस के लिये 'भूख जुलूस' निकालने वालों पर गोली चलाने का कोई उचित कारण नहीं था। स्वराज्य हुए इतने दिन हो गये, पर पुलिस अभी गोली चलाने का उचित अनुचित अवसर ही नहीं समझ पाई। भूखे रोटी मांगते हैं और पुलिस गोली चला देती है। कैसी सुन्दर भिक्षा है, कैसी उत्तम व्यवस्था है।

आय-सम्बन्धी आंकड़े

भारत की वार्षिक आय ८७ अरब १० करोड़ रुपया है। और प्रति व्यक्ति की आय २२५) वार्षिक है। सबसे अधिक आय कृषि-उद्योग द्वारा होती है, जो कुल आय का ६१ प्रतिशत है। छोटे उद्योग-धन्धों से १२.६ प्रतिशत तथा बड़े उद्योग-धन्धों से १६.४ प्रतिशत आय होती है। जिन किसानों से सरकार को सबसे अधिक आय है, वे ही बेचारे अधिक कष्ट सहते हैं। उन्हीं में सबसे अधिक निरक्षरता है।

'क्षीरात् परं नास्ति च जीवनीयम'

आर्यमित्र

आगरा, वैशाख शुक्ला ४ संवत २००८ वि०, गुरुवार ता० १० मई १९५१
दयानन्दाब्द १२६, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५०

संसिंचाम गवां क्षीरं समाज्येनबलं रसम्। संसिक्ता अस्माकं वीरा ध्रुवा गावो मयि गोपतौ। अ० २।२६।४

गोदुग्ध जिलाता, सबको सबल बनाता
वीरों का सिंचन करता, मोद मढ़ाता
हे प्रभु, गायों से भरा रहे गृह मेरा
हो सुख-सम्पति का सदा विशुद्ध बसेरा

आध्यात्मिक वातावरण

परम प्रभु परमात्मा के साथ आत्मिक सम्बन्ध स्थापित कर, विशुद्ध भावनाए मन, वचन और कर्म में भरना आध्यात्मिक वातावरण कहाता है। दार्शनिक दृष्टि से इसकी मीमांसा बड़ी सूक्ष्म और व्यापक हो सकती है, परन्तु स्थूल और संक्षिप्त रूप से हम अध्यात्म का उपर्युक्त ही अर्थ लेते हैं। दूसरे शब्दों में इसी बात को कहा जाय तो कह सकते हैं कि हम परमात्मा की सत्ता-महत्ता पर हृदय से विश्वास करें, और जो कुछ सोचें विचारें, कहें-करें सब में सत्य और शुद्धता का ही प्रभाव हो। आज वचन में तो ईश्वर है, परन्तु हृदय-क्षेत्र उससे सर्वथा शून्य है। मुख से भगवान् की महिमा गाया जाती है परन्तु पेट में स्वार्थ-साधना या आपाधापी का कतरनी चलती रहती है। यह अध्यात्म नहीं वरन् दम्भ और पाखण्ड है। किसी ने क्या ही अच्छा कहा है —

मन में रक्ख और कुछ वाणी में कुछ और
कर्म्म करें कुछ और ही झूठे तीनो ठौर

मन, वचन और कर्म की भिन्नता ही मिथ्याचार है। आज आपको भगवान् के भजन करने वालो के झुण्ड के झुण्ड दिखाई देंगे, स्थान स्थान पर जप, तप, कीतन संकीर्तन, हवन, यज्ञ होते नजर आवेंगे। ठीक है, परन्तु उनमें भाग लेने वालो के जीवनो की जरा भी पड़ताल तो कीजिये और देखिये कि उनमें भगवान् की भक्ति का कुछ प्रभाव है कि नहीं। वे सचाई से पूर्ण हो सके है अथवा नहीं। नहीं हुए तो यह कैसी भगवद्भक्ति और कैसा यज्ञ-हवन। यह तो परमात्मा के नाम पर संसार को धोखा देना और सबसे अधिक स्वयम् अपने आप को धोखा देना है। भगवान् तो इस प्रकार के भुलावे में आ ही नहीं सकता। वह सर्वव्यापक-अन्तर्यामी तो घट-घट की जानता है। उससे हमारा क्या छिपाव हो सकता है।

आज सबसे अधिक आवश्यकता सच्चे ईश्वर-विश्वास और वास्तविक भगवद्भक्ति की है। ईश्वर-विश्वासी या आस्तिक कौन है? जिसके मन, वचन और कर्म में विभिन्नता न हो, जो सब ओर से शुद्ध एवम् सदाचार सम्पन्न हो, जिसके मन में भी कभी बुरे विचार नहीं आते। जो सारे काम परमात्मा की सत्ता-महत्ता मानता हुआ करता है, जिसकी दृष्टि में वसुधा कुटुम्ब के समान है, जो परायी स्त्रियो को माता के समान समझता है, जिसकी दृष्टि में दूसरो का द्रव्य ढेले के बराबर है, जो न किसी के साथ अन्याय अत्याचार करता है और न अपने ऊपर होने देता है। जहाँ ऐसी भद्र भावना है, वहाँ मानवता, नैतिकता और आध्यात्मिकता का वास है। जिसमें ये अनुपम गुण विद्यमान हैं, वही ईश्वर का अटल विश्वासी और भक्त है। इस प्रकार के विशुद्ध वातावरण के अभाव वश ही आज भ्रष्टाचार का बोल बाला है और अशान्ति का साम्राज्य स्थापित हो रहा है। आध्यात्मिक वातावरण उत्पन्न करने के लिये सबसे पूर्व हमें स्वयम् ईश्वर विश्वासी या आस्तिक बनना चाहिये। तभी कल्याण होगा।

आगामी चुनाव और आर्यसमाज

हमारे पास ऐसे अनेक पत्र आते रहते हैं जिनमें पूछा जाता है कि आगामी चुनावो में आर्यसमाज की स्थिति क्या होगी? वह राजनीति में भाग लेगा या नहीं? हम कई बार लिख चुके हैं और अब फिर कहते हैं कि सामूहिक रूप से आर्यसमाज का राजनीति में भाग लेना कठिन है, क्योंकि इसमें कितनी ही राजनैतिक विचारधाराओ के व्यक्ति सम्मिलित है। वह उनमे से किसी एक धारा को कैसे अपना सकते हैं। यदि आर्यसमाज अपना कोई स्वतन्त्र राजनैतिक दल बनाता है, तो वह एक साम्प्रदायिक संस्था बन जाता है। ऐसी दशा में आर्यसमाज यही कर सकता है कि वह अपने उद्योग द्वारा ऐसा जनमत तैयार करे जो निःस्वार्थ, सच्चे समाज-सेवियो को निर्वाचित कराने में सहायक हो, बिरादरीबाजी या साम्प्रदायिकता का विरोधी हो, भ्रष्टाचार की भावना को नष्ट करे, भारतीय संस्कृति का समर्थक समझा जाय। चुनाव के लिए इस प्रकार का विशुद्ध वायुमण्डल तैयार कर देना कोई साधारण काम नहीं है, और जिस समाज या समुदाय के द्वारा यह कार्य सम्पन्न होगा, वह धार्मिक, सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक सभी दृष्टियो से बड़ा लोकोपयोगी सिद्ध हो सकता है। रहा व्यक्तिगत रूप से आर्यों का राजनीति में भाग लेना, सो इसके लिये तो वे पूर्ण रूप से स्वतन्त्र है। हां एक बात अवश्य है, उन्हें ऐसा ही राजनैतिक समुदाय अपनाना चाहिये जो साम्प्रदायिकता से परे और आर्यसमाज के समीपतर हो। जिस राजनैतिक क्षेत्र में आत्मा और परमात्मा का कोई स्थान नहीं, वह आर्यसमाजियों के लिए कैसे अनुकूल हो सकता है।

अन्न-संकट

असन वसन वासो येषां चैवाविधानतः
मगधेन समा काशी गंगा प्यंगारवाहिनी

जो देश कभी धन-धान्य से सम्पन्न था, आज वह अन्न के लिए बुरी तरह तरस रहा है, दूसरे देशो के आगे उसे हाथ पसारने को मजबूर होना पड़ रहा है। अन्न संकट की यह समस्या दैवी नहीं मनुष्य-निर्मित ही समझनी चाहिये। भारत सरकार इस संकट से उभारने के लिए पूरा प्रयत्न कर रही है। प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने स्पष्ट कह दिया है कि विदेशों से अन्न लेना है और अवश्य लेना है, परन्तु आत्मसम्मान नष्ट करके नहीं। विदेशों से मिलने वाली सहायता का स्वागत किया जायगा, परन्तु इस सहायता के साथ ऐसी कोई शर्त न जुड़ी होनी चाहिये जो किसी स्वाभिमानी राष्ट्र के लिये अपमानजनक हो। और उसके साथ इस प्रकार का कोई दबाव भी न रहना चाहिये जिसका लक्ष्य हमारी घरेलू अथवा अन्तर्राष्ट्रिय नीति में परिवर्तन कराना हो। किसी ऐसी वस्तु के लाभार्थ भी जिसकी हमें अत्यधिक आवश्यकता है, यदि हमें अपने देश के स्वाभिमान अथवा कार्य-स्वातन्त्र्य को बेचने का किंचित भी प्रयत्न करें तो हम उस महान् दायित्व के सर्वथा अयोग्य सिद्ध होंगे, जो हमें सौंपा गया है। श्री नेहरू ने ठीक कहा है, अपना स्वाभिमान या कार्य स्वातन्त्र्य खोकर हमें दूसरे देशों की सहायता नहीं चाहिये। हम तो समझते है इस अन्न-संकट के समय लोगो का कर्तव्य है कि वे किसी भावी लाभ-लोभ की आशा से अन्न को छिपा कर न रखें बड़ी बड़ी दावतें न करें और इस समय एक-एक दाने का मूल्य या महत्व समझें। मुनाफाखोरी और चोरबाजारी ने देश को तबाह कर दिया। जैसी नीयत वैसी बरकत की लोकोक्ति

आज अक्षरशः चरितार्थ हो रही है। इस संकट में सरकार की ही सारी जिम्मेवारी नहीं, जनता की भी है, उसे ऐसा आचार-व्यवहार करना चाहिये कि देश का कोई व्यक्ति भूखों न मरने पावे, सबको पेट भरकर भोजन मिल जाय। ऐसा करने से ही काम चल सकता है।

'हिन्दू' शब्द की मीमांसा

वर्तमान युग में हम 'हिन्दू' या 'आर्य' शब्द का प्रश्न उपस्थित करके एक नया आन्दोलन खड़ा नहीं करना चाहते। इस विषय में आर्यसमाज के प्रारम्भिक जीवन में काफी ऊहापोह हो चुकी है, और महर्षि दयानन्द पर्याप्त प्रकाश डाल चुके हैं। प्रसिद्ध विद्वान् श्री सातवलेकरजी के 'वैदिक धर्म' नामक मासिक पत्र के ताजा अङ्क एक म शास्त्रीजी ने सात-आठ पृष्ठ व्यापी लम्बा लेख लिखकर 'हिन्दू' को वैदिक शब्द सिद्ध करने की असफल चेष्टा की है। इस वृथा पुष्ट लेख में उनकी सबसे बड़ी दलील यही है, चूंकि संस्कृत के 'स' का 'ह' हो जाता है इसलिये सिन्धु से हिन्दु हो गया। इस लेख के उत्तर में हमने इसी अङ्क में श्रीकुशवाहाजी का एक लेख प्रकाशित करना प्रारम्भ किया है, जो दो तीन अङ्कों में चलेगा। इस विषय में जिज्ञासा रखने वाले पाठक इस लेख को ध्यानपूर्वक पढ़ें। उन्हें वैदिक धर्म के उक्त लेख का निराधार धारणाओं का उक्त लेख में उचित समाधान मिलेगा। जहाँ तक हमें ज्ञात है, किसी प्राचीन ग्रन्थ या काव्य में 'हिन्दू' शब्द का प्रयोग नहीं हुआ। यहाँ तक कि महाकवि गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी जो मुगल-शासन काल में ही हुए अपने 'रामचरित-मानस' में किसी स्थान पर भूल कर भी 'हिन्दू' शब्द नहीं लिखा, सर्वत्र 'आरज' या आर्य' शब्द का ही प्रयोग किया है। यदि हिन्दू' शब्द उन्हें मान्य होता, और वे भी उसे देववाणी प्रसूत समझते तो अवश्य ही उसे अपनाते और एक आध स्थान पर जरूर प्रयोग करते, परन्तु ऐसा नहीं किया गया। फारसी भाषा के कोषों में 'हिन्दू' के गन्दे-से-गन्दे माने लिखे हैं, परन्तु देश का दुर्भाग्य है कि यह शब्द अन्य अनेक दूषणों की भाँति अपना लिया गया। अपना लिया तो अपना लिया, परन्तु अब उसे वैदिक व्याकरण द्वारा सिद्ध करने की हिमाकत क्यों की जाती है, यह बात हमारी समझ में नहीं आती। यह तो वही बात है कि हम गोबर को गुड़ मानेंगे और वेदों से भी उसे सिद्ध करने की कुचेष्टा करेंगे, मदिरा-पान करेंगे और धर्म शास्त्र में उसका विधान दिखाएंगे, जूआ भी खेलेंगे और नीति शास्त्र से उसकी सिद्धि भी की जायगी, बलिहारी है, इस बुद्धि की!

'सिनेमा' की मद-मदिरा!

चल-चित्रों (सिनेमाओं) का आज बहुत प्रचार है। कभी नाटकों की धूम था। नाटक इस देश के लिए नये नहीं, बहुत पुराने है, और शायद संसार में सबसे पुराने। वैदिक साहित्य में भी अनेक स्थानों पर कथोपकथन का आभास पाया जाता है। भरत-मुनि ने नाट्य साहित्य रच कर तो इस कला को एक व्यापक और विस्तृत रूप दे दिया है। संस्कृत में बड़े-बड़े प्रसिद्ध नाटक बने और अभिनीत हुए। महाकवि कालिदास के नाटक तो विश्व विख्यात हैं। हिन्दी में भी अनेक नाटक लिखे और सफलतापूर्वक खेले जा चुके हैं। एक समय था जब पारसी कम्पनियों का रंगमंच अश्लील और गन्दे शृंगार-सम्बन्धी नाटकों से भरा हुआ था। समाज में कामुकता की कलुषित भावना पैदा करना ही इन नाटकों का उद्देश्य था। ऐसा करने से इन नाटक कम्पनियों को धन खूब मिलता था। प्रसिद्ध नाटककार श्री प० नारायणप्रसाद बेताब से नाटक कम्पनियों का यह गन्दापन न देखा गया और सम्भवतः सबसे पहले उन्होंने ही महाभारत नाटक लिखा, जो बड़ी सफलतापूर्वक खेला गया और सारे देश में उनकी धूम मच गयी। फिर रामायण तथा अन्य अनेक धार्मिक नाटक उन्होंने लिखे, जो खूब प्रसिद्ध हुए और इनके अभिनय से कम्पनियों को लाभ भी अच्छा हुआ। बेताबजी के पश्चात् श्री सुदर्शनजी, श्री राधेश्यामजी आदि ने भी इसी दिशा में सुरुचि का संचार किया। यानी उस समय नाटकों की गति-विधि बदल गयी और अश्लील नाटकों के स्थान पर धार्मिक एवम् ऐतिहासिक नाटक खेले जाने लगे। सिनेमाओं के प्रचार से नाटकों की आभा मन्द हुई गयी। यानी चलचित्रों के आगे नाटक अतीत की वस्तु बन गये। जो गन्दगी किसी समय नाटकों में थी, उससे भी अधिक आजकल सिनेमाओं में देखी जाती है। कुछ चित्रों को छोड़कर शेष सब ही चित्र और गाने दर्शकों के चरित्रों पर कुप्रभाव डालने वाले हैं। छोटे छोटे बच्चे, चार-चार छह छह आने पैसे देकर जो गन्दे गीत सिनेमाओं में सुन आते हैं, उन्हें ही रात दिन गुनगुनाते फिरते हैं। जो दुर्भाव वहाँ अनेक हृदयों में भर जाते हैं, उन्हीं से अपने जीवन और घर को प्रभावित करना चाहते हैं। सरकार को इन बातों से कुछ मतलब नहीं। उसका सिनेमा सेंसर विभाग तो गन्दे-से गन्दे चित्रों और गानों को तथास्तु' कहकर अपना कर्तव्यपालन कर देता है। एक ओर नैतिकता और चारित्र्य का ढोल पीटा जाता है, दूसरी ओर सिनेमाओं में कामुकता की मद मदिरा पिलायी जाती है। यह कम आश्चर्य और दुःख की बात नहीं है। गन्दे चलचित्रों के विरुद्ध प्रत्येक नैतिकतावादी को बड़े से बड़ा और कड़े से कड़ा आन्दोलन करना होगा। आर्यसमाज को तो इस पुण्य कार्य में सबसे पहले अग्रसर होने की आवश्यकता है। यदि सुधारक-दल की सम्मिलित और संगठित शक्ति सिनेमा-संसार की गन्दगी दूर कर सकी, तो स्वतन्त्र भारत में एक बहुत बड़ा कार्य हो जायगा। हम नाटक या सिनेमाओं के विरोधी नहीं हैं यह एक कला है, जिसमे जीवन में भव्य भाव भरे जा सकते हैं। परन्तु कला तो जीवन को ऊँचा उठाती है और यह सिनेमा की गन्दगी हमें नीचा गिरा रही है। कहे तो कह सकते हैं कि आज गंगाजली में शराब भरी जा रही है। जो सिनेमा शिक्षण और सदाचार-प्रचार के साधन होने चाहिये उनसे गन्दगी बखेरने का काम लिया जा रहा है।

मोरीशस में 'आर्यमित्र'

'आर्यमित्र' के सम्बन्ध में हमारे पास ऐसे अनेक पत्र आते रहते हैं, जिनमें उसकी सेवाओं का प्रशंसापूर्ण उल्लेख रहता है। परन्तु हम ऐसे पत्रों को आत्मश्लाघा के भय से प्रकाशित करना उचित नहीं समझते। हाल ही में हमें मोरीशस से दो पत्र मिले हैं एक तो वहाँ से प्रकाशित होने वाले 'जमाना' नामक एक पत्र की कतरन है, जिसमें लिखा है—

> 'पिछले दिनों में 'आर्यमित्र' के मोरिशस ग्राहक यह शिकायत किया करते थे कि इस पुरानी पत्रिका का रूप आकर्षक नहीं है। इस साल से जहाँ इस पत्रिका का प्रकाशन लखनऊ में नहीं हो रहा बल्कि पूर्ववत् आगरा में, वहाँ उसके पुराने सम्पादक श्री हरिशङ्कर शर्मा ने सम्पादन भार फिर ले लिया है। अब आर्यमित्र का आकार प्रकार देखने योग्य होगया है।"

दूसरा पत्र १ अप्रैल १९५१ का लिखा है, जो यहाँ २६ अप्रैल को पहुंचा। इसके लेखक हैं। श्री प्रोफेसर बी० विष्णुदयालु, एम० ए० प्रोफेसर साहब लिखते हैं—

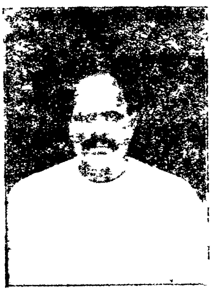
> "मोरीशस में इस बात से आनन्द हुआ कि 'आर्यमित्र' अब सुन्दर बन गया है। अतः मैं अपने देशवासियों की ओर से और अपनी ओर से भी, आर्यमित्र-सम्पादक महाशय को धन्यवाद देता हूँ।"

हम अपने सम्बन्ध में इस प्रकार के पत्र प्रकाशित करने के सदैव विरुद्ध रहे हैं, परन्तु ऊपर के दोनों पत्रों का केवल इस लिये उल्लेख कर दिया है कि पाठक यह समझ सकें कि सात समुन्दर पार विदेशों में भी आर्यमित्र के सम्बन्ध में रुचि लेने वाले उसके प्रेमी पाठक मौजूद हैं।

जीवन-ज्योति

व्याख्यान-वाचस्पति श्री इन्द्रवर्माजी

वाग्मिप्रवर श्री इन्द्रवर्माजी आर्यसमाज के बड़े प्रभावशाली वक्ता थे। आपकी वाणी में बड़ा असर था। आपके भाषणों को सुनकर जनता मन्त्र-मुग्ध-सी हो जाती थी। वर्म्माजी अपने विषय का प्रतिपादन बड़ी सुन्दर और मनोरंजक रीति से करते थे। आपके व्याख्यान में युक्तियों की भरमार रहती थी। यह कला आपने त्यागमूर्ति-नाकिक-शिरोमणि श्री स्वामी दर्शनानन्दजी महाराज के संसर्ग से सीखी था। श्री प० मुरारिलाल शर्मा का भी आप पर प्रभाव था। वर्म्माजी के समय में 'लाउड स्पीकरों' का प्रचार नहीं था, परन्तु उनकी



श्री इन्द्रवर्मा जी

वाणी में ही इतना बल था कि वह हजारों लोगों की भीड़ को चीरती हुई उनका सन्देश और उपदेश विस्तृत गगन में गुंजा देती थी। वर्म्माजी का व्यक्तित्व विशाल था। वे खूब लम्बे-चौड़े और हृष्ट पुष्ट थे। जिस समय व्याख्यान देने खड़े होते, देखकर ही जनता प्रभावित हो जाती थी।

श्री इन्द्रवर्म्माजी का जन्म १८८६ ई० में अलीगढ़ जिले के एक छोटे-से ग्राम में हुआ। परिस्थिति वश आपकी शिक्षा अधिक न हो पाई। आपने जो ज्ञान प्राप्त किया, स्वाध्याय और सत्संग द्वारा ही किया। वे कुछ दिन आगरा के आर्य मुसाफिर विद्यालय में भी पढ़े थे। यहीं महापण्डित राहुल साकृत्यायन भी सम्भवतः उन्हीं दिनों आर्यसमाज के उक्त विद्यालय में शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। उन्होंने अपनी पुस्तक में वर्म्माजी का भी उल्लेख किया है।

वर्माजी आर्यसमाज के अथक प्रचारक थे। सारे देश में—विशेषकर बुंदेलखण्ड में—आपने वैदिक धर्म का प्रचार किया। राजनैतिक आन्दोलनों में भी आपने निर्भयता पूर्वक भाग लिया और कई बार कारागारवासी भी हुए, जहाँ आपको कठोर यन्त्रणाएं दी गयीं। आपके राजनैतिक व्याख्यानों की भी बड़ी धूम थी। हजारों लोगों में आप उत्साह की बिजली भर देते थे। जहाँ पहुंच जाते पुलिस को बड़ी परेशानी होती थी। अधिकारी चिन्ता करने लगते थे। कहते थे, जनता को भड़काने वाला आगया। जब-जब वर्माजी के व्याख्यानों में रोक लगी, तब-तब उन्होंने उसे बड़ी निर्भयता से तोड़ा और जेल गये। निर्भयता आपका विशेष गुण था। आप में ब्राह्म और क्षात्र धर्म दोनों का सुन्दर समन्वय हुआ था। शोक यही है कि ऐसा प्रभावशाली ओजस्वी वक्ता अकाल में ही काल-कवलित होगया। सन्तोष इतना ही है कि वर्माजी के सुयोग्य पुत्र श्री सुरेन्द्र वर्माजी वृन्दावन-गुरुकुल के स्नातक और बड़े होनहार नवयुवक हैं। आपने हाल ही में एम० ए० की परीक्षा दी है। अध्यापन कार्य में आपकी बड़ी रुचि है। परमात्मा श्री सुरेन्द्र वर्माजी को अपने सुयोग्य पिता के चरण चिह्नों पर चलने की शक्ति प्रदान करे, यही प्रार्थना है।

——

महिला-मण्डल

'चौका-चक्की'

श्री शारदा वर्म्मा, एम० ए०

गृहस्थ में चौका-चक्की का बड़ा महत्व है। जिस घर में इन दोनों की उपेक्षा की जाती है, उसमें रोगों की वृद्धि होने लगती है। जो गृहदेवियाँ नियमित रूप से चक्की चलाने में संकोच या लज्जा नहीं करतीं, उनका स्वास्थ्य स्वाभाविक रूप से सुन्दर और अच्छा रहता है। वे घर बैठे ही एक उपयोगी व्यायाम कर लेती हैं, जिससे घर-भर को हाथ-चक्की का पिसा आटा बड़ी आसानी से मिल जाता है। इस आटे को खाने वालों का भी स्वास्थ्य सुधरता है। किसी को हृष्ट पुष्ट देखकर व्यंग्य से मित्र लोग कह देते हैं, कहो, 'भाई, किस चक्की का पिसा आटा खाते हो।' मशीन पर जो आटा पिस कर आता है, उसमें से जीवनोपयोगी कितने ही तत्व नष्ट हो जाते हैं, अब से कुछ ही पूर्व, जब बिजली या इजन की चक्कियों का प्रचार नहीं हुआ था, घर-घर हाथ-चक्की से ही आटा पीसा जाता था। इससे आटा पीसने वाली महिलाएं और खाने वाले व्यक्ति सब ही स्वस्थ रहते थे। चक्की पीसते समय स्त्रियाँ गाने गाती थीं, और अपने छोटे छोटे बच्चों को गोद में डाल लेती थीं। जिससे शरीर संचालन द्वारा उनकी भी कुछ कसरत हो जाती थी। गांवों में प्रायः यह प्रथा अब भी प्रचलित है, यद्यपि वहां भी आटा पीसने की मशीनें लग गयी हैं।

अब चौके की ओर आइये। चौके से प्रयोजन है रसोई का। रसोई रसायन है। स्वास्थ्यकर भोजन शरीर को पुष्ट करता और मन को पवित्र तथा सुन्दर बनाता है। स्त्रियाँ रसोई बनाने के स्थान चौके को शुद्ध करके स्वयं भोजन बनाती थीं, और उन खाद्य वस्तुओं को तैयार करती थीं, जिनको खा-पीकर सारा घर तृप्त रहता था। आज यह कार्य या तो स्वयम् उपेक्षापूर्वक किया जाता है, या मिसरानियों से कराया जाता है। मिसरानियों के बनाये भोजन में वह भावना नहीं रहती जो घर की स्त्रियों के बनाये भोजन में होती है। मिसरानियाँ प्रायः अपना कार्य टालना ही मुख्य कर्तव्य समझती हैं, परन्तु गृहदेवियों का उद्देश्य होता है, घर के व्यक्तियों को सुरुचि वर्द्धक और स्वास्थ्यकर भोजन देना। यह भावना स्वास्थ्य पर बड़ा प्रभाव डालती है। इस भावना से विहीन भोजन भाव-दुष्ट हो जाता है। अतएव आवश्यकता है कि पढ़ी-बेपढ़ी और धनी-निर्धन देवियां अपने चौके-चक्की की ओर ध्यान दें। इससे कुटुम्ब के स्वास्थ्य में आशातीत उन्नति होगी। परिवारों की उन्नति ही समाज और राष्ट्र की उन्नति है। क्योंकि व्यक्तियों या परिवारों से ही समाज बनता है। हमारी पढ़ी-लिखी या धनी महिलाएं सबसे पहले हाथ से काम करना छोड़ती हैं, यह उचित नहीं है। ऐसा करके वे अपना और अपने परिवार के स्वास्थ्य को बहुत हानि पहुंचाती हैं। अभी गत सप्ताह की बात है हमारे प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने बुलन्दशहर के एक महिला सम्मेलन में कहा है—स्त्रियों को हाथ से काम करने की आदत डालनी चाहिए। वे पर्दा तुरन्त छोड़ दें और बच्चों का उचित रीति से पालन-पोषण करें, क्योंकि भावी भारत के वे ही आशा अंकुर नागरिक होंगे और उन्हीं को बहुत कुछ कार्य करना तथा सँभालना पड़ेगा।

——

नागरिकता-निरूपण

'बुरी आदतें'

श्री राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी, एम०ए०

एक दिन हमारे एक मित्र के ओठों पर नीले रंग जैसी कोई चीज लगी हुई थी। मैंने हँस कर कहा, "भाई, स्त्रियाँ ओठों पर लाली लगाती हैं, तो क्या पुरुष उनकी देखा-देखी अथवा समान अधिकार पाने की इच्छा से, अपने ओठो पर नीली लगाने लगे है। मेरी उक्त बात सुन कर वह बेचारे सकपका गये और बोले भाई! आते ही आते तुम क्यों छेड़-छाड़ करते हो। क्या बात है? मैं लौट जाऊँ! बैठूं न?"। मैंने देखा कि बात बढ़ रही है। मैं चुपचाप उठा और एक शीशा लाकर मैंने उनक हाथ में देदिया—कि देखो अपना मुंह। बेमतलब लालटेन हुए जा रहे हो। उन्होने अपना मुंह शीशे में देखा और झेंप गये। उनके ओठ सच-मुच नीले हो रहे थे। उन्हें झेंपते देखकर मैंने एक हल्का-सा चाबुक लगा दिया—कोई बात नहीं। किसी ने सोते में ऐसा कर दिया होगा। वह बेचारे बड़े सोच मे पड़ गये और गम्भीरता पूर्वक विचार करने लगे। यकायक उनकी दृष्टि अपने हाथो की ओर गई। उनकी अंगुलियो म भी कई एक नीली रोशनाई जैसे निशान थे। वह बोले—ये तो कापिंग पन्सिल के निशान है। अरे वाह! अब समझ में आगया। मैं पैन्सिल में थूक लगाकर लिखता हूँ। ओठो पर भी पैन्सिल फिर गई है-उसी क निशान है।

उक्त घटना केवल हमारे मित्र के साथ ही घटा हो सो बात नहीं। हमारे विचार से हम लोगो म प्रत्येक के साथ ऐसी घटनाएं प्रतिदिन घटती रहती है। कभी हम पेन्सिल में थूक लगा कर लिखते है, तो कभी थूक लगाकर लिफाफा चिपकाते हैं अथवा अंगुलियो में थूक लगाकर किताब के पन्ने पलटते है अथवा गेंद फकते समय अपनी हथेलियो को थुथकारने लगत है आदि। हम यह नहीं सोचते कि ये कितनी गन्दी एवं हानिकारक आदते है। साथ ही एक दम अनावश्यक भी। पैन्सिल से जब आप बिना थूक लगाये लिख सकते हैं, तो क्या जरूरत है कि उसमें थूक लगाया जाय। ऐसा करने से ओठ और मुँह व्यर्थ ही रंग जाते हैं। थूक के साथ पैन्सिल का रंग पेट में जाकर हमारे स्वास्थ्य को भी हानि पहुचा सकता है। इसी प्रकार जब गोंद, लेही तथा पानी, इतनी वस्तुए मौजूद हैं, तो क्या जरूरत है कि हम अंगुलियो को थूक लगाकर गंदा करें अथवा लिफाफे पर अपनी जबान फेरकर अपने मुँह को अशुद्ध बनावे। लिफाफे पर न मालूम क्या लगा हो।

इसी प्रकार हम लोग कभी-कभी पैन्सिल तथा होल्डरों का दूसरा सिरा मुँह में लगा लेते हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि किसी विचार म पड़ जाने पर हम उन्हे चबा डालते हैं। पैन्सिल स कान खुजाना अथवा होल्डर के निबो किंवा आलपीनों से दाँतों का मैल साफ करना आदि इसी प्रकार की बातें एव आदत है, जिनसे सिवाय हानि क लाभ कुछ नहीं होता। न मालूम फिर भी क्यो, हम इन सब कार्यों के आदी हो गये हैं। क्या हमने कभी यह भी सोचा है कि जब हम ऐसे काम करते है, तो हमारे पास बैठे हुए अन्य व्यक्ति हमारे बारे में क्या सोचते है। वे कवल यही सोच सकते है, कि हमारे अन्दर बहुत-सी गन्दी आदतें घर कर गई हैं, अन्यथा पढ़े-लिखे होकर भी हम अपने चारो ओर क्यो थुथकारते रहते, अथवा अपनी जबान और पुस्तको को अपवित्र बनाते हुए भी नहीं झिझकते। यदि थूक लगाकर हमने अपने हाथ जूठे कर रखे हैं, तो कोई भला आदमी हमसे हाथ मिलाता हुआ भी संकोच करेगा। हमारे हाथ का पानी पीना और भोजन करना तो दूर रहा। सच-मुच हमारे जीवन में नागरिकता के भावो का नितान्त अभाव है। हम इस कमी को पूरा करना ही पड़ेगा।

वेद-वीथी

प्रभु-प्रेम

श्री लालचन्दजी

त्वामग्ने पुष्करा दध्यथर्वा निरमन्थत।
मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः॥
ऋ० ६।१६।१३" साम १।८।६

हे अग्ने परमात्मन, संशय से रहित ज्ञानी उपासक तुम विश्व के आधार परम धाम को हृदय ही में अपने अन्दर ही साक्षात् करता है।

हे भगवन्, तुझे निश्चय योगी अपने हृदय में प्रत्यक्ष करता है। तू परमाधार है, परम आश्रय है, सारा विश्व तुझ पर आश्रित है। तेरे न्याय, तेरे प्रेम और तेरे सत्य नियम में सारी जगती है। सारे ब्रह्मांड में तेरा अनुशासन है। प्यारे प्रभु, मैं तुझे देखूं ऐसा अनुग्रह कर। भगवन, मैं बहुत भटका हू। बहुत कटु अनुभव प्राप्त कर चुका हूँ। अब तो मेरे परमात्मन, मैं तेरी ही शरण में हूं। प्रभो, मुझे स्वीकार करो। तुम ही परम गति हो, तुम ही परम धाम हो, तुमसे तुम्हे ही माँगता हूँ। तुमसे तुम्हे ही चाहता हूँ। मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि तुम मेरे आत्मीय हो, इसी लिए मैं तुमसे तुम्हे ही चाहता हूं। प्यारे प्रभो, मेरे हृदय में रहते तो हो अब प्रकट हो जाओ।

प्रेष्ठ वो अतिथिंस्तुषे
मित्र मिव प्रियम्।
अग्ने रथं न वेद्यम्॥
ऋ० ८।८४।१" साम० १।१।५

हे अग्ने परमात्मन, आप मित्र के समान प्यारे हैं, सर्वव्यापक, सर्वाधार हैं। आप आनन्द-स्वरूप, पूजनीय प्राप्त करने और जानने योग्य प्रियतम हैं। मैं आपकी स्तुति तथा उपासना करता हूँ। हे प्रियतम, आप परम सुहृद, परम हितकारी परम प्रिय बधु और परम सहायक हैं। मैं आपका सामीप्य चाहता हुआ आपकी स्तुति करता हूँ। मेरे तो आप ही आदर्श हैं, आपही जीवन-लक्ष्य और आप ही उद्देश्य हैं।

हे सत्य शिवं सुन्दरम्, मैं तो आपके निकट होना चाहता हूँ। मैं आपकी मित्रता चाहता हूँ। आप निरन्तर साथ रहते हैं। आप परम रमणीय और सबके आधार हैं। आप मेरे प्रियतम होते हुए भी सबके हैं, सभी आपको प्रिय हैं। सभी के आप मित्र हैं, सब आपके मित्र हैं। आप आनन्द देने वाले आनन्द-स्वरूप हैं। आप परम पूजनीय अभिसरणीय हैं। आप कमनीय-तम हैं। मेरे प्यारे परमात्मन, मुझ में आपके गुण विकसित हो, मैं आपका सच्चा उपासक बनूं।

मारीशस की चिट्ठी

श्री प० धुरन्धरजी मारीशस के बड़े उदार विचार युक्त, उपदेशक हैं। आपके सामने समाज-सुधार की समस्या सदैव प्रस्तुत रहती है। आप अपनी अल्प आय में से अधिकांश लोकोपयोगी कार्यों में व्यय करते रहते हैं। स्थानीय 'गांधी स्मारक पाठशाला' के संचालन में आपका बहुत बड़ा हाथ है। इसमें लगभग १२५ निधन बालकों के पढ़ाने की व्यवस्था है। भारतीय प्रतिनिधि भी प्रायः आपके कार्यों में सहयोग देते हैं।

हाल ही में प० धुरन्धरजी ने अपनी उक्त पाठशाला के वार्षिकोत्सव में उपस्थित सज्जनों के सामने समाज-सुधार सम्बन्धी कई बातें रखीं। कुछ लोगो का विचार है कि धुरन्धरजी के इन सुझावों पर वहाँ की विधान-सभा में भी विचार कराने का प्रयत्न किया जायगा।

'राम-जयन्ती' के दिन मारीशस की राजधानी में एक बड़ा जुलूस निकाला गया, जो अनेक गलियों में भी घूमा। 'हिन्दू शताब्दी स्तम्भ' के पास भजनादि कराये गये। श्री धुरन्धरजी के कारण यहाँ की जनता में वैदिक धर्म की बड़ी चहल-पहल है।

ठाकुरप्रसाद मिश्र

साहित्य-सौरभ

धर्म-सूक्ति

तारागण, सूर्य, चन्द्र, मेरु, मन्दराचल और किसी समय पृथिवी भी विचलित हो सकती है, परन्तु धर्म और सुजनों के वाक्य कभी विचलित नहीं होते।

चलन्ति तारा रविचन्द्र मण्डलं चलेच्च मेरुर्विचलेच्च मन्दरम्,
कदापि काले पृथिवी चलेच्च वै चलेन्न धर्म सुजनस्य वाक्यम्।
'चाणक्य'

❀ ❀ ❀ ❀

नष्ट हुआ धर्म ही मारता है, और रक्षा किया हुआ धर्म ही रक्षा करता है। इसलिए नष्ट हुआ धर्म कहीं हमको न मारे, यह विचार कर धर्म का नाश नहीं करना चाहिये।

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः,
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतो वऽवधात्। 'मनु'

❀ ❀ ❀ ❀

पापी अधर्मियों की शीघ्र ही बुरी गति होती है, ऐसा समझ कर पुरुष को चाहिये कि धर्म से दुःख पाता हुआ भी अधर्म में मन न लगावे।

न सीदन्नपि धर्मेण मनोऽधर्मे निवेशयेत्,
अधार्मिकाणां पापनामाशु पश्यन्विपर्ययम्। 'मनु'

❀ ❀ ❀ ❀

अधर्मी पहले अधर्म से बढ़ता है, फिर उससे अपना भला देखता है, फिर शत्रुओं को जीतता है और फिर जड़ सहित नष्ट हो जाता है।

अधर्मेणैधते तावत्ततो भद्राणि पश्यति,
ततः सपत्नाञ्जयति समूलस्तु विनश्यति। 'मनु'

❀ ❀ ❀ ❀

हरि से तू जिन हेत कर हरिजन से कर हेत
माल मुलक हरि देत हैं हरिजन हरि ही देत 'कबीर'

❀ ❀ ❀ ❀

साहब मेरा एक है दूजा कहा न जाय
दूजा साहब जो कहूँ साहब खड़ा रिसाय कबीर'

❀ ❀ ❀ ❀

बीरा सोई कहावइ जो जानै परपीर
जो परपीर न जानई सो काफ़िर बे-पीर 'कबीर'

चातक-प्रेम

डोलत विपुल विहंग बन पियत पोखरी बारि
सुजस धवल चातक नवल तोर भुवन दस चारि
ऊँची जाति पपीहरा नीचो पियत न नीर
कै जांचै घनस्याम सों कै दुख सहै सरीर
हैं अधीन जाँचत नहीं सीस नाय नहिं लेय
ऐसे मानी मंगनहि को बारिद बिन देय
मान राखिबो माँगिबो प्रिय सो सहज सनेह
तुलसी तीनों तब फबै जब चातक मत लेह
गंगा जमुना सरसुती सात सिन्धु भरिपूरि
तुलसी चातक के मते बिन स्वाती सब धूरि
ब्याधा बधो पपीहरा परो गंग जल जाय
चोंच मूँदि पीवै नहीं धिक जीवन प्रन जाय
बधिक बध्यो परि पुन्यजल उपर उठाई चोंच
तुलसी चातक प्रेम-पट मरत न लाई खोंच
तुलसी सुत तें कहत है चातक बारम्बारि
तात न तरपन कीजियो बिना बारिधर बारि
एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास
स्वाति सलिल 'परमेस प्रभु' चातक तुलसीदास
—तुलसी सतसई से

सूक्ति-सरोवर

संग्रहकार—श्रीअम्बादत्त शर्मा, 'अम्ब'

निन्दा-निषेध

आय कै जगत बीच काहू सों न करै बैर
कोऊ कछू काम करै इच्छा जौ न जोई की
ब्राह्मन की, छत्रिन की बैसनि की,सूद्रन की
अन्त्यज मलेछ की न ग्वाल की न भोई की
भले की, बुरे की 'हरिचन्द' से पतित हू की
थोरे की, बहुत की न एक की न दोई की
चाह जो सुनिन्दा भयो जग बीच मेरे मन
तो न तू कबहू करै निन्दा कहु कोई की
—हरिश्चन्द्र भारतेन्दु

❀ ❀ ❀ ❀

संसार रूप कटु वृक्ष के दो ही फल अमृत के समान मधुर हैं, एक तो सुन्दर उक्तियों का रसास्वादन और दूसरा सज्जनों का संग—

संसार कटुवृक्षस्य द्वे फले ह्यमृतोपमे
सुभाषित रसास्वादः संगतिः सुजनैः सह —चाणक्य

❀ ❀ ❀ ❀

आँधरे को प्रतिबिम्ब कहा बहिरे को कहा सुर राग की तानें
आदी कौ स्वाद कहा कपि को पर,नीच कहा उपकार को मानें
भेद कहा ले करै बुकवा हरवाह जवाहर का पहिचाने
जाने कहा हिजरा रति की गति आसर की गति का खर जाने
—'अज्ञात'

❀ ❀ ❀ ❀

हे हंस, यदि नीर से क्षीर को विलग करने में तू ही आलस्य करेगा, तो फिर इस संसार में और दूसरा कौन अपनी कुलकानि (कुल की परिपाटी) का पालन करेगा।

नीर क्षीर-विवेके हंसालस्य त्वमेव तनुषे चेत
विश्वस्मिन्नधुनान्य कुलव्रत पालयिष्यति कः
भामिनी-विलास

❀ ❀ ❀ ❀

साच, भूठ निर्णय करे नीतिनिपुण जो होय
राजहंस बिन को करे क्षीर नीर को दोय —'शङ्कर'

❀ ❀ ❀ ❀

सकूने-कल्ब की दौलत कहां दुनियाये फ़ानी में
बस इक गफलत-सी हो जाती है और वह भी जवानी में

❀ ❀ ❀ ❀

अजल की नींद आजाती है आखिर सुनने वाले को
कयामत का असर पाता हूँ दुनिया की कहानी में

❀ ❀ ❀ ❀

हुबाब' अपनी खुदी से बस यही कहता हुआ गुजरा
तमाशा था हवा ने इक गिरह देदी था पानी में
'अकबर'

❀ ❀ ❀ ❀

दिल मेरा जिससे बहलता कोई ऐसा न मिला
बुत के बन्दे मिले, अल्लाह का बन्दा न मिला 'अकबर'
साथी बहुतेरे बुरे व्यसनों के अनुरक्त
मन मेरा कैसे लगे मिले न भगवत्भक्त 'अम्ब'

❀ ❀ ❀ ❀

मख्लूके इलाही में अमल पर जो नजर कर
इन्सान से बदतर है न इन्सान से बहतर
हर हाल में है दिल के लिए हाफ़िज़ो नासिर
दौलत कोई मुमकिन नहीं ईमान से बहतर
यह है कि झुकाता है मुखालिफ की भी गर्दन
सुनलो कि कोई शै नहीं 'अहसान' से बहतर
सुनल जो तवज्जह से बुजुर्गों की नसीहत
फिर 'काने-जवाहर' नहीं उस 'कान' से बहतर 'अकबर'

———

स्वास्थ्य-सुधा

'त्रिफला'

श्री जयपालसिंह चौहान

त्रिफला के नाम तथा गुण—

हरड़ तीन भाग, बहेड़ा छह भाग और आमला बारह भाग इन तीनों औषधियों को त्रिफला कहते हैं। इसी को श्रेष्ठ तथा फलोत्तमा भी कहते हैं। त्रिफला एक बड़ा ही द्रव्य और गुणकारी आयुर्वेदिक औषधि है। इसके प्रयोग से वास्तव में बहुत-से रोग नष्ट हो जाते हैं। त्रिफला रक्त-शोधक और दस्तावर है। शरीर के विषैले अंश को दूर करता है, रक्त की क्रिया को नियमित करता है 'ब्लड प्रेशर' (रक्त के दबाव) के लिये यह बहुत ही लाभदायक है। मस्तिष्क में रक्त-जमाव होने के कारण बुद्धि-विकृति होने पर त्रिफला एक उत्तम औषधि है। यह कफ और पित्त-दोष नाशक है। कुष्ठ रोग, प्रमेह, बवासीर, नेत्ररोग, पित्तज्वर, घाव, मस्तिष्क-रोग, हृदय रोग को दूर कर आयु को बढ़ाता है, त्रिफला एक रसायन है और बड़ी गहराई के साथ इसका असर स्वास्थ्य पर पड़ता है। आयुर्वेद के ग्रन्थों में त्रिफला का ऋतु के अनुसार प्रयोग लिखा गया है, किन्तु यहां पर उन्हीं प्रयोगों का उल्लेख किया जाता है जो अनुभूत हैं।

खुजली रोग पर त्रिफला का प्रयोग किया गया और बड़ा ही लाभ रहा। बच्चों के लिये यह औषधि बड़ी गुणकारी सिद्ध हुई। त्रिफला का भली प्रकार चूर्ण कर ले और उस चूर्ण को शुद्ध शहद में इस प्रकार डाले जिससे इसके एक एक तोले के मोदक बन जावें। इन मोदकों को मिट्टी के बर्तन में रखलें। सुबह एक-एक मोदक या तो अर्क गिलोय से या दूध के साथ सेवन करें। इससे रक्तविकार, घाव, खुजली, मंदाग्नि, कोष्ठबद्धता, प्रमेह, ब्लडप्रेशर आदि रोग दूर होंगे और शरीर में उत्साह बढ़ेगा, भूख बढ़ेगी। किन्तु इस बात का ध्यान रहे कि शहद असली हो। नकली शहद से उपर्युक्त रोग नष्ट नहीं होंगे। नेत्र-रोगों पर इसका प्रयोग बड़ा गुणकारी है। दृष्टिमन्दता, रोहे आदि पर इसका प्रयोग बड़ा लाभकारी है। आयुर्वेदीय ग्रन्थों में त्रिफलादिघृत और सप्तामृतलौह इसके दो प्रयोग नेत्र रोगों पर बड़े उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इनके प्रयोग से सब प्रकार के नेत्र-रोग बड़ी आसानी से दूर हो जाते और नेत्र-ज्योति बढ़ती है। साधारण रूप से शुद्ध घृत के साथ सुबह-शाम खाने से भी त्रिफला बड़ा लाभ करता है। प्रमेह और स्वप्नदोष पर भी त्रिफला बहुत गुणकारी है। केवल त्रिफला का चूर्ण तीन-तीन माशे शुद्ध शहद या गिलोय के अर्क या गोदुग्ध के साथ प्रयोग करने से बड़ा लाभ होता है। पाण्डु रोग पर त्रिफला-चूर्ण बहुत गुणकारी है। त्रिफलाचूर्ण गोमूत्र के साथ प्रयोग करने से पथरी रोग को लाभ होता है। पथरी के एक रोगी को बहुत-सी औषधियां दीं किन्तु लाभ न हुआ, फिर निम्नलिखित प्रयोग इन से उसे बड़ा लाभ हुआ। मैं चाहता हूं कि वैद्यजन इस औषधि का प्रयोग करें, अवश्य लाभ होगा। त्रिफला, पाषाणभेद, गोखरू, लौहभस्म, संगमहद भस्म सब को समान भाग मात्रा तीन रत्ती सुबह शाम शहद से लें। यह अश्मरी (पथरी) पर बड़ा लाभ करता है। आयुर्वेद के अधिकांश प्रयोगों में त्रिफला की ही अधिकता है। त्रिफलादि गुग्गुल भगन्दर, नासूर, बलतोड़ आदि फोड़ों को अच्छा कर देता है। केश पर त्रिफला जल, मट्ठा या घृत के साथ स्नान से लाभ करता है। संक्षेप में त्रिफला मानसिक रोग नष्ट करने वाला और बलवर्द्धक है। वह अमृत के समान गुणकारी है सात्विक विचारों को बढ़ाता और बुद्धि को तीव्र करता है।

—

संस्था-परिचय

ज्वालापुर (महाविद्यालय)

सहारनपुर प्रान्तान्तर्गत ज्वालापुर नामक उपनगर में पुण्य सलिला भगवती भागीरथी (गङ्गा) की बड़ी नहर के सुन्दर तट पर रेलवे लाइन से बिल्कुल सटा हुआ रेल के लोहे के पुल से दक्षिण की ओर सुविस्तृत एवं परम रमणीय भूमि में प्राचीन परम्परा का स्मरण कराने वाला एक आश्रम है, जिसका नाम गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर है।

इसकी स्थापना आज से ४४ वर्ष पूर्व वैशाख (अक्षय तृतीय) संवत् १९६४ वि० ३० जून सन् १९०७ ई० को दानवीर श्री स्व० बाबू सीतारामजी सब इन्सपैक्टर पुलिस ज्वालापुर के सुरम्य उद्यान में किसी विशेष उद्देश्य एवं आदर्श को लेकर शास्त्रार्थ महारथी उद्भट लेखक प्रसिद्ध वाग्मी स्वनाम धन्य तार्किक शिरोमणि वीतराग श्री स्व० १०८ दर्शनानन्द जी सरस्वती के कर कमलों द्वारा केवल बारह आने के स्थिर कोष से हुई थी। आज इस संस्था को जनता जनार्दन की एक निष्ठा से मूक सेवा करते हुए ४३ वर्ष व्यतीत हो चुके, और ४४ वां वर्ष आरम्भ हो रहा है। इस स्वल्प काल में ही इसने अपने जीवन में अनेक अनुकूल, प्रतिकूल, सम-विषम परिस्थितियों का सामना किया। परन्तु उसने अपने आदर्श भूत उद्देश्य का अक्षुण्ण रूप से पालन किया और और आज तक कर रही है। इस संस्था की विशेषता प्राचीन ब्रह्मचर्याश्रम प्रणाली के आधार पर निर्धन एवं धनवान् छात्रों को सर्वथा समान भाव से वैदिक वाङ्मय की उच्चतम निःशुल्क शिक्षा देना है। इसकी शिक्षा का माध्यम आर्यभाषा है। इसमें वेद, वेदांग, उपनिषद्, दर्शन, साहित्य, धर्मशास्त्र आदि महत्वपूर्ण विषयों की शिक्षा के अतिरिक्त आर्यभाषा, गणित, भूगोल, इतिहास, राजशास्त्र, नागरिक शास्त्र और अंग्रेजी भाषा की भी यथोचित शिक्षा दी जाती है। इस संस्था से लगभग ३०० छात्र शिक्षा दीक्षा प्राप्त कर स्नातक बन कर देश के धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, साहित्यिक आदि विभिन्न क्षेत्रों में बड़ी तत्परता एवं कुशलता के साथ कार्य कर रहे हैं। यहां का जीवन सरल और सादा है। गुरुकुल ज्वालापुर के स्नातकों में शास्त्रीय प्रौढ़ पाण्डित्य के साथ-ग्रन्थ लेखन, पत्रकार-कला, कवित्व शक्ति, अध्यापन, भाषण आदि में विशेष प्रगतिशीलता है। दर्शन शास्त्र तथा व्याकरण आदि विषयों में यहां के छात्र परम प्रवीण सिद्ध हो चुके हैं।

इसे अपने उन सुयोग्य स्नातकों पर गर्व है जिन्होंने इसकी स्थिर प्रतिष्ठा और गौरव-रक्षा में इसका मस्तक उन्नत किया है। भौतिक दृष्टि से भी इसके पास लाखों की सम्पत्ति है। सैकड़ों बीघा भूमि है भवन हैं, सबकुछ है। इसमें कार्य करने वाले सदा से त्यागी, तपस्वी, सरस्वती के सच्चे उपासक और अनन्य भक्त ही रहे हैं। इसीका यह फल है कि आज भी यह संस्था किसी न किसी रूप में दुःख-सुख भोग कर अपना अस्तित्व सुरक्षित रक्खे हुए है। इसे न राज्याश्रय है और न व्यापक रूप से जनता का ही अवलम्ब प्राप्त है, केवल एक भगवान् के भरोसे पर ही इसका सारा कार्य चल रहा है। कुछ स्वर्गीय तथा आधुनिक विशिष्ट व्यक्तियों ने अपना जीवन-मरण ही इस संस्था को बना लिया था और बनाया हुआ है। वे इसकी उन्नति में यथाशक्ति प्रयत्नशील रहे और हैं। भारत के विभिन्न प्रान्तों के छात्र तथा फीजी से आए विद्यार्थी भी यहां कई वर्षों तक निरन्तर अध्ययन करते रहे हैं। आर्यजगत् के प्रायः समस्त गण्य-मान्य विद्वानों की इस संस्था पर सदैव कृपा-दृष्टि रही है। राजनैतिक नेता भी पधार कर कृतार्थ करते रहे हैं। यहां का वातावरण एक दम शान्त और सत्व गुण प्रधान है।

—

सुझाव और सम्मतियां

एक गम्भीर प्रश्न

लोग मुझसे पूछ रहे हैं और प्रतिदिन पत्र भी आते रहते हैं कि वर्तमान समय में आर्यसमाज का क्या कर्त्तव्य है? उत्तर में थोड़े शब्दों में यही लिखता हूँ कि आर्यसमाज को अपनी सब शक्ति ग्रामों में लगानी चाहिए। समस्त प्रचार का बल ग्रामों में लगाना चाहिए, क्योंकि भारतवर्ष के ग्रामों में पुरातन रीति-नीति तथा धर्म के लिए श्रद्धा भक्ति अब भी विद्यमान है। अंगरेजी राज्य में अंगरेजी शिक्षा दीक्षा के प्रभाव से नगर-उपनगर तो बिगड़ चुके हैं, उनमें भारतीयता का कौन-सा अंश शेष है? ग्रामों की रक्षा होने से नगर-उपनगरों की नास्तिक प्रजा कुछ काल पश्चात् स्वयं मार्ग पर आजायगी। नगरों और उपनगरों में उत्सवों और सम्मेलनों को न कर के ग्रामों में बड़े-से-बड़े उत्सव-सम्मेलन करने चाहिएं। एक बार इतना जोर का प्रचार किया जाय कि भारतवर्ष का कोई ग्राम शेष न रहे जहां हमारा शब्द न पहुंचे। उपदेशकों, महात्माओं और सन्यासियों के कार्यक्रम ग्राम के ही रहें। इस कार्य में नगर के, उपनगर के लोग आर्थिक सहायता दे सकते हैं। वैसे तो इस समय निराश होने का कोई स्थान नहीं तथापि भारतीय वातावरण में सन्देह तथा निराशाओं के कीटाणु बड़े वेग से प्रसरित हो गये हैं। इनको निकाल कर वातावरण को पुनः स्वच्छ बनाना आर्यसमाज का मुख्य कार्य है। हम लोग शहरी धूम धड़ाके, समारोहों को देखकर समझ लेते हैं कि हम बड़े बलवान् हैं पर वास्तव में इन समारोहों के भीतर अधिकतर खोखला ही खोखला है, धार्मिक जीवन का प्रायः अभाव है, डम्बराडम्बर में अधिक शक्ति का अपव्यय हो रहा है, अन्तः कलह बढ़ रहे हैं, कोई कार्य सुमति, श्रद्धा, शान्ति, सद्भाव से, जैसे होने चाहिएं नहीं हो रहे।

हम स्वतन्त्र होगये हैं, हमारा राज्य होगया है, पर स्वधर्म तथा संस्कृति की रक्षा के लिए यदि हम यह समझते रहे कि अब सब कुछ होगया है और शेष भी सब ठीक हो जायगा तो यह हमारी मूर्खता ही होगी। पहले तो राज्य विधर्मी है, विधान विदेशी है, राज्यप्रणाली भी विदेशी है वह आपके धर्म कर्म की रक्षा क्या करने वाली है। वह तो यही ध्यान रक्खेगी कि स्वतन्त्र हुआ देश पूर्णरूपेण स्वतन्त्र ही रह सके। उसका सारा बल, सारा ध्यान इसी में लगेगा। इसलिए धर्म-संस्कृति की रक्षा के लिए वर्तमान राज्य-तन्त्र से कोई आशा न रखिए। परिस्थिति भी ऐसी है कि वह इधर ध्यान देगी तो अन्य अनेक उपद्रव खड़े होंगे।

इसलिए यह समझ लीजिए कि यह काम अपने को ही करना पड़ेगा। यदि आर्यसमाज ने इधर ध्यान नहीं दिया, स्वल्प सन्तोषी की भांति अब तक जो कुछ हुआ इसी में सन्तुष्ट रहा तो मैं कल्पना भी नहीं कर सकता कि स्वयं आर्यसमाज की तथा भारत की क्या दशा होगी। मैं उस चित्र को अभी से आर्यों के सामने खींचना नहीं चाहता। अंग्रेजों के समय में स्वदेशी का आन्दोलन उठा, फिर वह स्वराज्य के आन्दोलन में परिवर्तित होगया। हम स्वतन्त्र होगये किन्तु यह स्वतन्त्रता, स्व-संस्कृति और स्वधर्म के आश्रय के बिना चिरजीवी रह सकेगी भी कि नहीं यह मैं नहीं कह सकता। पाश्चात्य ढंग का विधि-विधान, स्वतन्त्रता, स्वराज्य मिला तो पाश्चात्य राष्ट्रों के से असन्तोष, असमाधान, अशान्ति, अन्तःकलह, धर्मशून्य विज्ञान-जन्य उपद्रवों, क्रान्तियों और उत्क्रान्तियों को देखने और भुगतने के लिए तयार रहिए। भारतीय धर्म तथा संस्कृति ही एक मात्र तरणोपाय है।

—नरदेव शास्त्री

उन्नति के दो सुझाव

मेरे विचार से आर्यसमाज के उन्नत्यर्थ-वर्तमान समय में निम्न-लिखित योजनाओं का शीघ्र ही कार्यान्वित होना आवश्यक है।

(१) चलचित्रों द्वारा प्रचार—आजकल हमारे देश में पौराणिक फिल्मों की बाढ़ सी आगई है। जनसाधारण की रुचि भी उन्हें देखने की है। इसे रोकने के लिए वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार करने वाली, लोगों में सच्चे धर्म, नीति और पुरुषार्थ का प्रचार करने वाली फिल्मों के आविष्कार की नितान्त आवश्यकता है। पौराणिक फिल्में लोगों में अंध-विश्वास को दृढ़ करती जारही हैं और अन्य फिल्में उन्हें अनैतिक, उच्छृंखल विचारों का बना रही हैं।

इस संबन्ध में मैंने आर्यमित्र में ही कुछ दिनों पूर्व किसी आर्य सज्जन की एक योजना पढ़ी थी, जिसमें उन्होंने आर्यसमाज द्वारा एक फिल्म कंपनी कायम करने का प्रस्ताव किया था। मेरे विचार से उनकी योजना सर्वथा स्वागतार्ह है। खर्च कई लाख का है पर मैं समझता हूँ आर्यसमाज में उदार-धी श्रीमानों की कमी नहीं है। लोग इस प्रभावशाली योजना को कार्यान्वित करनेमें यथेच्छ धन देंगे। आवश्यकता केवल जनमत जाग्रत् करने की है, और यह काम स्थान-स्थान पर घूम कर हमारे विद्वान् नेताओं को करना चाहिये।

(२) एक आर्य विश्वविद्यालय की स्थापना—इसकी चर्चा भी कुछ समय पहले आर्यमित्र तथा अन्य आर्य पत्रों में चली थी। हमारी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के भूतपूर्व-प्रधान श्रीमान् इंद्रजी विद्यावाचस्पति ने इस संबंध में एक विज्ञप्ति द्वारा प्रकाशित किया था कि योजना भारत-सरकार के सामने प्रस्तुत है, और उस पर बहुत कुछ वार्त्तालाप भी हो चुका है, पर आगे क्या हुआ मालूम नहीं। वर्तमान परिस्थिति में समस्त आर्यसामाजिक शिक्षा-संस्थाओं का एक सूत्र में ग्रथित होना तथा आर्य विश्वविद्यालय का भारत-सरकार से मान्य होना उसकी उत्तरोत्तर उन्नति और लोक-प्रियता के लिये आवश्यक है। मैं आशा करता हूं कि आर्य समाज के शिक्षा विशेषज्ञ इस पर विशेष विचार कर अपनी योजना सरकार के समक्ष प्रस्तुत करेंगे। मेरा विश्वास है कि ऐसे ठोस कार्यों के लिये पैसे की कमी न होगी। केवल आन्दोलन की जरूरत है।

नीलकण्ठ दिप्रस्कर
सिद्धान्त शास्त्री, बी० ए०

विद्यालय और अनुशासन

विद्यार्थियों द्वारा हड़ताल किये जाने की चर्चा आप भारत-वर्ष आदि पूर्ववर्ती देशों में ही सुनेंगे पाश्चात्य देशों में नहीं। हमारे देश में आये दिन स्कूल और कालेजों में छात्र हड़ताल करते रहते हैं, इंगलैण्ड में कभी यह नौबत नहीं आती। वहाँ मल्लाहों की हड़तालें होती हैं, मजदूर कर्मचारियों की हड़तालें होती हैं, परन्तु विद्यार्थी कभी भी हड़ताल नहीं करते। इसका एक विशेष कारण है। राजनैतिक स्वार्थ-सिद्धि के लिए हमारे देश में विद्यार्थियों को सुन्दर साधन माना जाता है। पाश्चात्य देशों में छात्रों को राजनीति की केवल जानकारी कराई जाती है, उन्हें उसकी दलदल में लाकर खड़ा नहीं किया जाता। किसी विद्यार्थी को यदि प्रोफेसर ने मामूली तौर से डांट दिया, तो बस मुसीबत है। नेता बनने के इच्छुक व्यक्ति तुरन्त ही विद्यार्थियों के हितों के रक्षक बन जाते और विद्यार्थियों की भीड़ को साथ में लेकर चल देते हैं। यह हमारे इस अभागे भारतवर्ष में ही सम्भव है। यदि परीक्षार्थी नकल करता हुआ पकड़ा जाता है तो चार परीक्षार्थी इकट्ठे होकर उस निरीक्षक को मार डालते हैं और फिर भी उनकी हिमायत करने वाले लोग उपलब्ध हो जाते हैं। इस सस्ती नेतागीरी का ही दुष्परिणाम है कि आज का विद्यार्थी हड़ताल करने-कराने, परीक्षाओं में नकल करने, नम्बर बढ़वाने आदि की ओर अधिक ध्यान देता है, पढ़ने-पढ़ाने की ओर नहीं। आजकल के अधिकांश विद्यार्थी ऐसे होते हैं जो अपने कोर्स की पूरी पुस्तकों के नाम तक नहीं जान पाते हैं। और उस पर तुर्रा यह है कि यदि प्रधान अध्यापक कभी किसी प्रकार कड़ाई करें तो ऊपर से डांट आजाती है कि देश के नवयुवकों का दमन मत करो। अब आप ही विचारिये कि हमारे देश के छात्रों में अनुशासन एवं अध्यापकों के प्रति सम्मान-भावना कहां से और कैसे आवे।

अब स्थिति अत्यधिक गंभीर हो गई है। नेता लोगों को चाहिए कि इस अनुशासन हीनता का इलाज सोचें। —रा० प्र० चतुर्वेदी

वैदिक गवेषणा

'हिन्दु' शब्द की व्याख्या पर वैदिक दृष्टि

श्री शिवपूजनसिंह कुशवाहा 'पथिक'

(१)

श्री दीनानाथ शर्मा शास्त्री का 'हिन्दु शब्द की व्याख्या' शीर्षक लेख, अप्रैल १९५१ के "वैदिक धर्म" नामक मासिक पत्र में पूरे ९ पृष्ठों पर प्रकाशित हुआ है। शास्त्रीजी ने अपने लेख में यह प्रदर्शित करने का प्रयास किया है कि वेदो में 'सप्तसिन्धु' वा संक्षिप्त नाम 'सिन्धु' है जिसका दूसरा नाम 'हिन्दु' हो गया तथा यह शब्द मन्त्रकालीन है। आपने व्याकरण के आधार पर शब्दा को तोड़-मरोड़ कर वेदमन्त्रो के दूषित अर्थ करने का वृथा प्रयास किया है। इस लेख द्वारा आपके लेख की समीक्षा की जाती है—वेदों में किसी प्रकार का कोई इतिहास, भूगोल नही है और न किसी व्यक्ति विशेष का नाम। वेदो क सभी शब्द यौगिक हैं। श्री द्विजदासदत्त एम० ए० ने 'रिग्वेद अनवील्ड' नामक ग्रन्थ में वैदिक शब्दा को यौगिक माना है। अतएव वेद में 'भारत' का नाम 'सिन्धु' है। आपकी यह कल्पना निर्मूल है।

'हिन्दु' शब्द वेद क्या, यह न तो वेदिक कोष निघण्टु में और न किसी अन्य प्राचीन संस्कृत-कोष में विद्यमान है। इस देश के कोष में इस शब्द का अभाव पाते है, वहाँ अन्य देशस्थ साहित्य और कोष में इस शब्द को विद्यमान देखते है। फारसी जबान के प्रसिद्ध कोष 'गयासुल्लुगात' में यह शब्द प्रत्यक्ष विद्यमान है। जहाँ उसके अर्थ चोर, डाकू, काले आदमी किये गये हैं वहाँ खूबसूरत भी अर्थ बतलाया गया है। यही कारण है कि भारतवर्ष की उत्तरी-पश्चिमी एक घाटी का नाम 'हिन्दुकुश' रखा गया और विदेशी साहित्य और कोष के अनुकूल उसका अर्थ हुआ वह स्थान जहाँ पर हिन्दुओ का बध किया गया। अतएव यह 'हिन्दु' नाम विदेशियों की ही देन है।

शास्त्रीजी ने यह तर्क-शैली ग्रहण की है कि वेदों में ऐसे शब्द पाये जाते हैं जो एकही अर्थ के बोधक हैं यद्यपि वह कहीं पर 'स' के साथ और कहीं पर 'ह' के साथ विद्यमान है, उससे उनका प्रयोजन कदापि सिद्ध नहीं होता, किन्तु जब वेदो 'श्री' 'ह्री,' 'सिरा', 'हिरा' आदि के दो दो रूप विद्यमान है परन्तु उनमें कहीं भी 'हिन्दु' शब्द नहीं आया। तो उपर्युक्त उदाहरण शास्त्रीजी के अनुकूल नहीं प्रतिकूल है। यदि 'श्री' 'ह्री', अथवा 'सिरा' 'हिरा' आदि की भाँति 'सिन्धु' का 'हिन्दु' रूप अभिमत होता तो अवश्य ही वेदो में कहीं न कहीं विद्यमान होता।+

अतएव भारतीय तो अब भी 'सिन्धु' को 'सिन्ध' और सिन्धु देश के निवासियों को 'सिन्धी' ही कहते हैं। यदि यह हमारा ही अपभ्रंश होता, तो हम इन्हे 'हिन्दी' तो कहते, अतः यह वैदेशिक है' .... आदि युक्तियाँ उचित है।

आप लिखते हैं "सिन्धौ अधिक्षिपतः"...(ऋ० १।१२६।१) इस मन्त्र में भी 'सिन्धौ सिन्धु देशे अधिक्षिपतः निवसतः' क्षि-निवास-गत्योः' इस प्रकार 'सिन्धु' देश बतलाया गया है। श्री पाणिनि ने भी वेदाङ्ग व्याकरण में (अष्टाध्यायी ४।३।८३) 'सिन्धु' देश माना है।"...

यदि 'सिन्धु' शब्द के अर्थ पाणिनीय सूत्रो के आधार पर 'सिन्धु' देश हो सकते हैं तो यह प्रतिफल नहीं निकलता कि 'हिन्दु' शब्द के भी यही अर्थ उक्त सूत्रों में अभिमत हैं, क्योंकि यदि ऐसा होता तो अष्टाध्यायी जैसे पर्याप्त और विस्तृत अद्वितीय व्याकरण में उसकी प्रकटता अवश्य होती। जब यह प्रकटता न उक्त व्याकरण में है और न उसके व्याख्यारूप महाभाष्य आदि बृहत् व्याकरण-ग्रन्थों में तो अन्तिम निष्कर्ष यही निकलता है कि 'हिन्दु' शब्द अपना निजी शब्द नहीं है।

+'ह्री' का दूसरा रूप 'श्री' नहीं है। 'श्री' का अर्थ शोभा, लक्ष्मी आदि है और 'ह्री' का अर्थ 'लज्जा' है। दोनों शब्दों के धातु भी भिन्न भिन्न हैं। इसी प्रकार 'सिरा' और 'हिरा' भी भिन्न भिन्न अर्थों वाले हैं। 'सरितः' और हरितः' का भी एक अर्थ नहीं है। [श्री स्वामी वेदानन्द तीर्थ सम्पादक 'वेदपथ" की सम्मति]

आपने ऋ० १।१२६।१ में आए 'सिन्धौ' शब्द के अर्थ 'सिन्धु देश में अधीश्वर होते बसते हुए' के किये हैं, परन्तु यह अर्थ वैदिक शैली के प्रतिकूल है। 'निरुक्त' में 'सिन्धवः' शब्द नदी-नामों में पढ़ा है और इसी कारण से महर्षि दयानन्द ने अपने भाष्य में "नद्याः समीपे" अर्थ किया है।

शास्त्रीजी 'सिन्धु' का अर्थ 'इन्दु' करते हुए लिखते हैं—"मुहञ्जदाड़ो और हरप्पा की खुदाई में शिवलिङ्ग बहुत मिले, यह सभ्यता वैदिक काल से भी प्राचीन मानी जाती है।"........

अपने मतलब को सिद्ध करने के लिये आप 'मुहञ्जदाड़ो और हरप्पा' की सभ्यता को वैदिक काल से भी प्राचीन मानते हैं, पर ऐतिहासिक विद्वान् आपसे सहमत नहीं हैं। देखिये डा० लक्ष्मण स्वरूप एम० ए०, डी० फिल (ऑक्सन) अपने "मोहञ्जोदारो', शीर्षक लेख × में लिखते हैं:—

"..... ....ऋग्वेद काल मोहञ्जोदारो नगर की स्थापना के काल से बहुत प्राचीन है।"

पुनः "जर्मन देश के प्रसिद्ध आचार्य जैकोबी महोदय ने ज्योतिः शास्त्र की गणना से सिद्ध किया है कि, ऋग्वेद का समय ईसा से कम से कम ५००० वर्ष पहले का है। मोहञ्जोदारो का समय ईसा से ३००० वर्ष पहले का है। इससे हमारे ऊपर लिखे कथन की पुष्टि होती है कि, ऋग्वेद का समय मोहञ्जोदारो से कम-से-कम दो-तीन हजार वर्ष पहले का है।

आपने लिंग-पूजा को वैदिक काल से भी प्राचीन बतलाया है।

परन्तु वेदों में कही भी लिंग-पूजा का वर्णन नहीं है।

ऐतिहासिक विद्वान् भी कहते हैं—"इन्द्र लिंग (शिश्नदेव)-पूजकों को घृणा की दृष्टि से देखता था। कहीं-कहीं इनका इन्द्र द्वारा पराजित भी होने का अर्थ झलकता है।" +

राव बहादुर श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य एम० ए०, एल-एल० बी० लिखते हैं—"ऐसा मानने के लिए गुंजाइश है कि लिंग-पूजा बहुधा अनार्य लोगों में बहुत दिन से प्रचलित थी, और आर्यों ने उस पूजा का शङ्कर के स्वरूप में अपने धर्म में समावेश कर लिया।"

प्रो० हरिदत्त 'वेदालङ्कार' एम० ए०, अध्यक्ष - इतिहास विभाग, गुरुकुल कांगड़ी विश्व विद्यालय, लिखते हैं :—"शिव, रावण आदि अनार्यों द्वारा पूजा जाने वाला देवता हिन्दू धर्म में महादेव माना गया। नागों को हिन्दू धर्म में ऊँचा स्थान इसी सहिष्णुता से मिला। जंगली जातियाँ जिन पत्थरों को पूजती थीं, वे शालग्राम और शिव-लिंग बने। प्रारम्भिक आर्य मूर्त्ति बनाकर या देवता के किसी प्रतीक पर फूल-पत्ते, चन्दन, सिन्दूर इत्यादि चढ़ाना, फल-मूल आदि के नैवेद्य अर्थात् बलि किए पशुओं का रक्त अर्पण करना नहीं जानते थे।" ‡‡

× मासिक पत्रिका 'गङ्गा' का "पुरातत्वाङ्क" प्रवाह ३, जनवरी १९३३ ई०, तरङ्ग १,

+ The Religion and Philosophy of Veda (Vol. I, PP. 129.)

"महाभारत-मीमांसा" पृष्ठ ४५२ (सन् १९२० ई० पूना संस्करण)।

‡‡ "भारत का सांस्कृतिक इतिहास" पृष्ठ ४२ (सन् १९५० ई० प्रथम संस्करण, दिल्ली), तुलना करो—डॉ० रामजी उपाध्याय, एम० ए०, डी० फिल० (प्रयाग) सागर विश्व विद्यालय, सागर कृत "भारत की प्राचीन संस्कृति" प्रथम संस्करण, पृष्ठ १७६।

आर्यजगत

—आ० स० रायबरेली का वार्षिकोत्सव १५ से १८ अप्रैल तक समारोहपूर्वक मनाया गया । ब्रह्मचारी उषबु धजी, प० विद्यानन्दजी, प० शिवशर्मा वानप्रस्थी, कुं० सुखलालजी, प० श्याम शर्मा, प० धमदत्त 'आनन्द', प० कान्ति चन्द्र, प० सुखरामजी आदि के प्रभावशाली व्याख्यान और भजन हुए। १७ अप्रैल को जिलाधीश महोदय के सभापतित्व में मद्य निषेध सम्मेलन हुआ । जनता पर खूब प्रभाव पड़ा ।

—शोक है कि पल्लाचौंद (आज़मगढ़) के पुस्तकाध्यक्ष श्री देवीचरणजी का देहान्त एक आकस्मिक दुघटना के कारण होगया। आप बड़े उत्साही सज्जन थे। परमात्मा आपकी आत्मा को शान्ति प्रदान करे और शोकाकुल परिवार को धैर्य ।

—आ० स० गज डुंडवारा (एटा) का उत्सव २६ माच से १ अप्रैल तक मनाया गया । राजगुरु श्री प० धुरेन्द्रजी के आरोग्य के लिये प्रार्थना की गयी। श्री स्वा० व्रतानन्दजी ने सुभाष इण्टर कालिज में कई दिन प्रचार किया। अध्यापको और विद्यार्थियो पर बड़ा प्रभाव पड़ा । लोगो ने गन्दे सिनेमा न देखने की प्रतिज्ञा की ।

—आ० स० भिनगा (बहरायच) का वार्षिकोत्सव २७ से ३० अप्रैल तक समारोह पूर्वक मनाया गया। प० विद्यानन्दजी, प० सत्यमित्र जी आदि के उपदेशो और म० धर्मदत्तजी, म० सर्वगुणप्रसादजी आदि के भजनों का अच्छा प्रभाव पड़ा। श्री धुरेन्द्र शुक्ल ने धनुर्विद्या सम्बन्धी खेल दिखाये। जनता खूब प्रभावित हुई ।

—आ० स० दार्जिलिंग में श्री वीर शान्ति स्वरूपजी सिद्धान्ती, साहित्य - भास्कर सफलता पूर्वक प्रचार कर रहे हैं। आपने अनेक युवको के यज्ञोपवीत संस्कार करा कर उनसे सदाचरण की प्रतिज्ञा कराई है। पण्डितजी शंका समाधान बड़ी योग्यता से करते हैं। ईसाइयों तक वैदिक सन्देश पहुंचाते हैं। आपके उद्योग से २५ अप्रैल को खरसॉग में आर्यसमाज की स्थापना हुइ ।

—आ० स० रेहरा बाजार (गोंडा) का सातवाँ वार्षिकोत्सव २७, २८ तथा २६ अप्रैल १६५१ को समारोह पूर्वक मनाया गया । प० शिवशरण वेदपाठी, प० देव मित्र शर्मा तथा श्री अ... प्रसादजी के प्रभावपूर्ण भाषण तथा शिक्षाप्रद भजन हुए।

—वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर का वार्षिक महोत्सव गत १६ से २२ अप्रैल तक विशेष आनन्द, शान्ति और सफलता पूर्वक मनाया गया। सम्पूर्ण यजुर्वेदीय मन्त्रो से हवन होता रहा। वैशाख शु० १० को पूर्णाहुति हुई । सर्व श्री स्वा० ब्रह्मानन्दजी, स्वा० भूमानन्दजी, स्वा० रामानन्दजी, प० गंगाप्रसादजी उपाध्याय, प० अमरनाथजी वैद्य शास्त्री, प० विश्वनाथजी, स्वा० आनन्दजी, स्वा० आनन्द प्रकाश जी, प० नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ, प० सुखदेवजी विद्यावाचस्पति, प० बुद्धदेवजी विद्यालङ्कार आदि विद्वानो के उपदेश, प्रवचन और भाषण हुए।

—साहिबगंज निवासी श्री बनवारीलालजी आर्य के पुत्र श्री सत्यनारायणजी का विवाह भागलपुर निवासी श्री विहारीलालजी शाह की पुत्री श्री शान्तिदेवी के साथ वैदिक रीति से हुआ। वर पक्ष की ओर से एक सहस्र रुपया और वधूपक्ष की ओर से एक सौ एक रुपया विविध संस्थाओं को दान दिया गया। संस्कार के समय अनेक विद्वान् उपस्थित थे।

—श्री स्वामी सच्चिदानन्दजी महाराज के उपदेशो से मध्यभारत में बड़ा प्रभाव पड़ा। १४ से १६ अप्रैल तक नागदा में प्रचार किया। आप यहाँ ज्ञान-यज्ञ में भाग लेने पधारे थे। रतलाम, जावरा, इन्दोर आदि में भी आपके व्याख्यान हुए।

—आ० स० गया का २८ वाँ वार्षिकोत्सव २२ से २५ अप्रैल तक मनाया गया। सर्व श्री प० अयोध्याप्रसादजी वैदिक रिसर्च स्कालर स्वा० अभेदानन्दजी, आचार्य रामानन्दजी शास्त्री, प० रुद्रमित्रजी शास्त्री आदि विद्वानो के व्याख्यान और भजनोपदेशको के भजन हुए। जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ा।

—श्री मथुरा प्रसादजी के उद्योग से ७, ८ तथा ६ अप्रैल को बाँदा आर्यसमाज का स्थापना-दिवस तथा आर्यसुधार-सभा का उत्सव मनाया गया, श्री स्वा० दिव्यानन्द जी के उपदेशो का बड़ा प्रभाव पड़ा।

—२३ से ३० अप्रैल १६५१ तक अमेठी राज्य अन्तर्गत रायपुर, रामनगर तथा गोरी गंज आर्यसमाजो के वार्षिकोत्सवों पर वैदिक धर्म प्रचार किया गया। श्री प० धर्मदत्त जिज्ञासु, श्री प० जे० पी० चौधरी काव्यतीर्थ, युवराज रणञ्जयसिंहजी, श्री दत्तकली दीन शर्मा, श्री चन्द्रभानु, श्री विजयपाल पाण्डेय, श्री रामकिशोर शास्त्री, श्री यशपाल शास्त्री श्री ओङ्कारनारायण शास्त्री, श्री इन्द्रजीत गुप्त आदि के प्रभावशाली व्याख्यान तथा श्री भद्रपालसिंहजी और पन्नासिंहजी के भजन हुए।

—नगर आर्यसमाज आगरा ने ६ मई ५१ को श्री म० मोहनलालजी आर्य के बहनोई श्री रामस्वरूपजी गुप्त रिटायर्ड जेलर बुलन्दशहर की असामयिक मृत्यु पर शोक प्रकट किया, और परमात्मा से प्रार्थना की कि वह दिवगत आत्मा को शान्ति तथा दुःखित परिवार को धैर्य प्रदान करें।

—आर्यसमाज मुबारकपुर का वार्षिकोत्सव १८ से २१ अप्रैल और आर्यसमाज लहुवरिया (आजमगढ़) का वार्षिकोत्सव २४ से २७ अप्रैल सन् १६५१ तक मनाया गया। ठा० श्रीपालसिंह, ठा० इन्द्रदेवसिंह आदि के भजनों का और स्वामी प्रणवानन्दजी महाराज के व्याख्यानों का जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

—जिला आर्य उपप्रतिनिधि सभा लखनऊ के स्वाध्याय-परिषद् की दसवीं मासिक बैठक २६ अप्रैल १६५१ को आर्यसमाज महावीर गंज लखनऊ में श्री रामनाथजी की अध्यक्षता में हुई, जिसमें इस विषय पर संविवाद हुआ कि "आधुनिक भारत के लिए गण-तन्त्र राज्य उपयुक्त है अथवा एक तन्त्र राज्य" बहुमत से स्वीकार हुआ। आगामी बैठक २७ मई १६५१ को सायकाल ६ बजे नगर आर्यसमाज, लखनऊ में होगी। जिसमें इस विषय पर भाषण तथा लेख प्रस्तुत होंगे कि 'आयसमाज का अधिवेशन किस प्रकार होना चाहिये।

——

निर्वाचन

—आ० स० लोहरदगा (रांची) प्रधान-श्री महावीरप्रसाद भगत और मन्त्री-श्री रूपनारायण-प्रसादजी।

—आ० स० बाँदा—प्रधान-म० राजबहादुरसिंहजी और मन्त्री—म० देवदत्तजी।

—आ० स० भारतनगर गाजियाबाद—प्रधान-श्री हरिश्चन्द्रजी और मन्त्री-श्री गुरुदत्तजी।

—आ० स० खरसोंग—प्रधान-श्री पाण्डुरंगाचार्य और मन्त्री-श्री बुद्धिमानजी।

—आ० स० सदर बाजार लखनऊ प्रधान-श्री रघुवरदयालुजी और मन्त्री-श्री त्रिलोकीनाथ गुप्त।।

——

उत्सव-सूचनाएँ

—आ० स० बोरना (अलीगढ़) के उत्सव पर २० मई की रात्रि को कवि सम्मेलन तथा संगीत-सम्मेलन होगा। २१ मई को राजगुरु श्री प० धुरेन्द्रजी शास्त्री की अध्यक्षता में आर्य-सम्मेलन होगा। महिला-सम्मेलन, आर्यकुमार-सम्मेलन और वीर-सम्मेलन होंगे। २१ मई को ठा० आत्मारामजी श्री राजगुरुजी से वानप्रस्थाश्रम-प्रवेश दीक्षा लेंगे।

—आ० स० तोछीगढ़ (अलीगढ़) का तृतीय वार्षिकोत्सव २१, २२ तथा २३ मई को मनाया जायगा।

—आ० स० भारत नगर गाजियाबाद का वार्षिकोत्सव २५, २६ तथा २७ मई को मनाया जायगा।

—आ० स० शंकरगढ़ (प्रयाग) का छठा वार्षिकोत्सव ८, ६ तथा १० मई को होगा। ६ तथा १० मई को क्रमशः हरिजन सम्मेलन और आर्य-सम्मेलन होंगे।

—द्वितीय आर्यसमाज मेंहनगर (आजमगढ़) का उत्सव जो १२, १३ तथा १४ मई को होने वाला था, प्लेग-प्रकोप के कारण स्थगित कर दिया गया।

—गुरुकुल विरालसी (मुजफ्फरनगर) का ४६ वाँ वार्षिक महोत्सव १६, २० तथा २१ मई ५१ ई० को मनाया जायगा। कई सम्मेलन होंगे। नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश भी होगा। गु० कु० विरालसी आ० प्र० नि० सभा उत्तर प्रदेश के अधीन होगया है।

—आर्यप्रचारक-मण्डल बिबिया जलालपुर का चतुर्थ वार्षिकोत्सव १६,२० तथा २१ मई सन् १६५१ को होना निश्चय हुआ है।

—आ० स० सदर बाजार लखनऊ का वार्षिकोत्सव ११, १२ १३ तथा १४ मई को मनाया जायगा।

——

सार-सूचनाएं

—कॉंगड़ी-गुरुकुल के स्नातक और पूर्व प्रोफेसर श्री प० ब्रह्मानन्द दीक्षित विद्यालङ्कार आयुर्वेदाचार्य ने तीन वर्ष की खोज के पश्चात् गलित कुष्ठ, और अस्थि क्षय और अन्त्र-क्षय की अमोघ चिकित्सा-विधियों का अनुसन्धान किया है। इन रोगों के रोगी उनसे लाभ उठा सकते हैं। आयुर्वेदाचार्य जी का पता है—नया बास, लोहामंडी, आगरा।

—इस वर्ष भारतवर्षीय आर्य कुमार-परिषद् अजमेर की धार्मिक परीक्षाओं में देश-विदेश से बैठने वाले परीक्षार्थियों में सबसे अधिक संख्या जिला मुजफ्फरनगर के आर्य कुमारों की रही।

—म० रुद्रसिंहजी प्रचारक को बुलाने वाले मन्त्री आर्यसमाज आजमगढ़ के पते पर पत्र-व्यवहार करें।

———

सूचना

आर्य समाज अलीगढ़ के लिए एक ऐसे वानप्रस्थ पुरोहित की आवश्यकता है जो आर्य सद्-स्यों के यहां संस्कार करा सकें और प्रचार का कार्य भी कर सकें। उनके भरण-पोषण का व्यय उनकी योग्यतानुसार समाज देगा। प्रार्थनापत्र समाज के मन्त्री से प्रमाणित होकर मन्त्री आर्यसमाज अलीगढ़ के पते पर आना चाहिए।

प्रेमशंकर पचौरी
(मंत्री आर्यसमाज)
अलीगढ़



सभा के माननीय प्रधान महोदय द्वारा
कार्य-विभाजन

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री मदनमोहन सेठ, एम० ए० ने सभा के प्रधान-पद का कार्य-विभाजन निम्न प्रकार किया है। इससे कार्य में विशेष सुविधा तथा सरलता होगी।

आदेश ९३

१—श्री प० रामदत्त शुक्ल उपप्रधान सभा, कोष-विभाग के बिल जाँच कर स्वीकार किया करेंगे। श्री एकाउन्टेन्ट महोदय का कर्तव्य होगा कि वे पूर्व ही से बिलों को देख, जाँच कर रिपोर्ट दिया करे कि बिल में अङ्कित राशियाँ ठीक व नियमाकूल हैं या नहीं।

२—आयसमाज से सम्बन्धित वादो व अभियोगों में क़ानूनी कार्यवाहियो के सम्बन्ध मे परामर्श दिया करेगे।

३—ऐसे प्रस्तावो के विषय में, जिनका प्रभाव आर्थिक हो, सभा कोषाध्यक्ष से परामर्श करने की सम्मति देंगे।

आदेश ९४

श्री स्नातक नरदेवजी उपप्रधान सभा का विशेष कर्तव्य होगा, कि वे वृन्दावन-गुरुकुल के लिये धनसंग्रह तथा शिक्षा आदि के लिए भारतीय सरकार तथा प्रदेशीय सरकार से सहायता प्राप्त करने तथा गुरुकुल की उन्नति के लिये प्रयत्न करे और सभा के प्रधानजी को उचित परामर्श दें।

आदेश ९५

श्री कुंवर रणञ्जयसिंहजी उपप्रधान सभा वेद-प्रचार के लिये विशेप रूप से धन सग्रह करेंगे डेपूटेशनो का निर्माण करेंगे और उनके इस कार्य में श्री स्वामी दिव्यानन्दजी सहयोग व सहायता देंगे। श्री हरिप्रसादजी भी धन-संग्रह के कार्य में सहायता देंगे।

लखनऊ
२५ अप्रैल १९५१

मदनमोहन सेठ
सभा-प्रधान

सभा की सूचनाएं

(१) गुरुकुल विद्या-सभा के लिये दो निम्न सदस्य सभा के बृहदधिवेशन २२ अप्रैल ५१ में निर्वाचित हुए।
१—श्री मोहनलालजी आर्य, आगरा।
२—श्री फूलनसिंहजी शिकोहाबाद।

(२) सभा के लिये निम्न निरीक्षक आडीटर निर्वाचित हुए—
१—श्री हरिप्रसादजी रायबरेली रि० ग० आडीटर।
२ श्री रामकिशोरसिंहजी प्रयाग।

(३) सभा के विभागों के स्थानीय आय व्यय लेखा निरीक्षक निम्न नियत हुए।
१—गुरुकुल वृन्दावन के लिये श्री राजबहादुजी मथुरा।
२—आयनगर सेटिलमेन्ट ,, श्री विश्वम्भरनाथ तिवारी कानपुर।
३—उपदेश विभाग ,, श्री वीरसेनजी लखनऊ।
४—सभाकार्यालय तथा अन्य विभाग ,, श्री रामेश्वरसहायजी बादशाहनगर लखनऊ।

संस्थाओ के लिये निम्न प्रतिनिधि नियुक्त हुए—
१—नायक बालिका आश्रम मेरठ श्री आत्माशरणजी मेरठ।
२—कन्या गुरुकुल हाथरस श्री पीतमलालजी अलीगढ़।
३—वैदिक पुत्री पाठशाला नई मन्डी मुजफ्फर नगर | श्री प्रो० सत्यप्रकाशजी मुजफ्फरनगर।
४—आर्यविद्या सभा काशी—
१—श्री रामदत्त शुक्लजी
२—,, देवदत्त शर्मोपाध्यायजी
३—,, भृगुदत्त तिवारीजी

भुवाली शम्भुनाथ रामेश्वरीदेवी पुस्तकालय के मन्त्री श्री बदरीप्रसादजी, स० मन्त्री श्री बांकेलालजी शेष सदस्य पूववत् रहे।

भृगुदत्त तिवारी,
सहायक मन्त्री सभा

सभा की सूचना

अन्तरंग सदस्य २२।२।५१ में सभा के निम्न विभाग सभा कार्यालय के साथ रखना निश्चित हुआ।

(१) उपदेश-विभाग, (२) आर्यसमाज रक्षानिधि, विभाग, (३) नायक जाति सुधार विभाग, (४) शुद्धि दलितोद्धार विभाग, (५) जाति भेद निवारक आर्यपरिवार संघ, (६) आर्य वीर-दल, (७) शिक्षा विभाग, (८) मादक द्रव्य निषेध व समाज सुधार-विभाग, (९) अनाथ रक्षा विभाग।

सभा-उपमन्त्री

आर्य साहित्य मण्डल

आर्य साहित्य-मंडल की स्थापना मण्डल के मैनेजिंग डाइरेक्टर श्री मथुराप्रसादजी शिवहरे ने श्री चाँदकरणजी शारदा के स्वर्गीय पिता श्री रामविलास शारदा के परामर्श से सन् १९२४ में अजमेर में की थी। छह वर्ष तक इसे वह स्वयं सफलतापूर्वक चलाते रहे इन छह वर्षों में कई उपयोगी पुस्तकों के अतिरिक्त वेद भाष्य जैसे महत्वपूर्ण और दुष्कर कार्य को भी आरम्भ कर दिया, तथा सामवेद, अथर्ववेद और यजुर्वेद के भाष्य छापकर जनता में प्रचारित किया। इतना ही नहीं, वेद भाष्य के लगभग ४००० स्थायी ग्राहक भी बना डाले। इस प्रकार लिमिटेड कम्पनी बनाने से पूर्व मंडल की नींव दृढ़ हो चुकी थी।

कार्य बहुत बढ़ जाने के कारण मंडल को लिमिटेड कम्पनी के रूप में परिवर्तित करना अनिवार्य हो गया। उस समय श्री दीवान-बहादुर श्री हरविलासजी शारदा चेयरमन बने और स्वर्गीय डा० केशवदेव शास्त्री, श्री डा० मानकरण शारदा, श्री रासबिहारी तिवारी, श्री पूर्णचन्द एडवोकेट, श्री धर्मचन्दजी डायरेक्टर हुए।

१३ अगस्त सन् १९३० को रजिस्ट्रार साहब से कम्पनी का कार्यारंभ करने के लिये अनुमति प्राप्त करली गई।

मंडल को २०००००) रुपये की पूंजी से रजिस्ट्री कराया गया और इस प्रकार १०) रुपये का एक हिस्सा रखकर २००००) हिस्सों में बाँटा गया। ३१ जनवरी सन् १९५१ तक इसके ८८०३ हिस्से बिके और लगभग ८००००) रुपया प्राप्त हुआ। मंडल इसी थोड़ी सी पूंजी से इतना महान् कार्य कर रहा है।

मंडल अपने इस बीस वर्ष के जीवन में चारों वेदों का शुद्ध, सुन्दर, सुबोध हिन्दी भाष्य चौदह भागों में प्रकाशित करने के अतिरिक्त चरक संहिता का सुबोध, सरल हिन्दी भाष्य तीन भागों में प्रकाशित किया। महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र स्वर्गीय श्री प० देवेन्द्रनाथ जी द्वारा संकलित भी प्रकाशित किया गया।

मंडल ने महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों को सर्व साधारण तक पहुचाने के लिये आर्यसमाज के इतिहास में एक महान् क्रान्तिकारी कार्य किया। सन् १९३३ में महर्षि की निर्वाण अर्ध शताब्दी के अवसर पर ऋषि के महत्वपूर्ण ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश का चार आने का सस्ता संस्करण प्रकाशित किया। इसके पश्चात् संस्कार-विधि दो आने में तथा ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका छह आने में प्रकाशित करके सहस्रों की संख्या में जनता तक पहुँचाये। इन ग्रंथों के अतिरिक्त महर्षि कृत अन्य ग्रथों के भी सस्ते और शुद्ध संस्करण निकाले गये। सन् १९४८ में पातंजल-योगप्रदीप प्रकाशित किया।

अब ऋषि दयानन्द विरचित वेदांगप्रकाश के समस्त भागों के शुद्ध, सुन्दर और छात्रोपयोगी टिप्पणियों से युक्त संस्करण प्रकाशित करने का महान् कार्य हो रहा है।

मंडल ने अपने प्रथम वर्ष से ही हिस्सेदारों को लाभ बांटना आरंभ कर दिया और अब तक जो लाभ दिया गया है, उससे उनका लगाया हुआ धन लगभग अदा हो जाता है।

मण्डल प्रत्येक घर में वैदिक साहित्य पहुचाना चाहता है। उसने अभीतक जो कुछ कार्य किया है वह अपने महान् उद्देश्य के आगे समुद्र में बिन्दु के समान है। मण्डल के भावी कार्यक्रम की रूपरेखा बड़ी व्यापक है। वह ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ अंग्रेजी आदि अन्य भाषाओं में प्रकाशित करना चाहता है और वैदिक साहित्य को विश्व-भर में पहुँचाने की योजना बना चुका है। उसका भावी कार्यक्रम—

१—ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, आयुर्वेद, छह दर्शन, शिक्षा, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष, तथा श्रौतगृह्य और धर्मसूत्रों के प्राचीनग्रन्थों के सरल सुबोध भाष्य प्रकाशित करना।

२—वेद के अंग्रेजी तथा अन्य देश भाषाओं में अनुवाद प्रकाशित करना।

३—वेद विषयक उच्चकोटि के दुर्लभ नवीन और प्राचीन ग्रन्थों को प्रकाशित करना।

४—ऋषि दयानन्द के सत्यार्थ-प्रकाश आदि ग्रन्थों को शुद्ध, सुन्दर तथा विविध आकारों में छपवाना।

५—ऋषिदयानन्द के ग्रन्थों के विविध भाषाओं में प्रामाणिक अनुवाद छपवाना।

—

गुरुकुल होशंगाबाद

आयुर्वेदाचार्य प० सत्यव्रतजी शास्त्री के उद्योग से उपर्युक्त गुरुकुल में फिर से प्राण आ गये हैं। इस वर्ष आपने मध्य-प्रदेश की आर्यप्रतिनिधिसभा की सहायताके बिना ही पच्चीस ब्रह्मचारियों को कलकत्ता संस्कृत विद्यालय की परीक्षाओं के लिये तैयार किया है। गुरुकुल के अन्य परीक्षार्थियों का परीक्षा-परिणाम भी बहुत सन्तोष जनक रहा है आजकल ग्रीष्मावकाश है। प्रान्तीय प्रतिनिधि सभा का अधिवेशन भी इसी मास में होने वाला है। प्रतिनिधि महाशयों को अपनी इस संस्था की उन्नति का भी ध्यान रखना चाहिए।

भगवतीप्रसाद उपाध्याय,

राजस्थान में हिंदी की हत्या

राजस्थान बनने से पहले बीकानेर आदि रियासतो का अधिकतर काम हिन्दी में ही होता था। पर राजस्थान बनने के बाद से हिन्दी का स्थान अंग्रेजी को बड़ी तेजी से दिया जा रहा है। ठीक है यदि ऐसा न किया गया तो इन रियासतो की सामंतापूर्ण मनोवृत्ति का प्रदर्शन कैसे होगा।

भोज और नेहरूजी

प्रधान मन्त्री श्री नेहरूजी ने २६ अप्रैल को बुलन्दशहर में दिए गए एक भोज के सम्बन्ध में कहा—"मैं इस नगर के कांग्रेस जनो द्वारा दिये गये आज के भोज में इतने पदार्थों को देखकर चकित रह गया हूँ। दिल्ली में गत ३ वर्षों में मैंने कभी इतना राजसी भोजन परोसा जाता नहीं देखा, यद्यपि मैं अनेक दूतावासो के समारोहो में सम्मिलत हुआ। आज ऐसा समय है कि अन्न का एक दाना भी बरबाद नहीं करना चाहिये। नेहरूजी का उक्त कथन इन पूंजीपतियो को बड़े ध्यान से पढ़ना चाहिये जो दावतों पर हजारो रुपया व्यय करके जनता पर अपनी अमीरी का सिक्का जमाया करते है।

सबसे बड़ा बाँध

भाखरा में विश्व का सबसे बड़ा अर्थात् ५६ मील लम्बा बाँध तैयार हो रहा है। जिसका नाम सिक्खो के दसवें गुरु श्री गोविन्दसिह के नाम पर 'गोविन्द-सागर' रखा जा रहा है। जहाँ भारत की अन्य अनेक बात अद्वितीय हैं, वहाँ इस बाँध का महत्व भी बहुत बड़ा समझा जायगा।

मनुष्य भी पशुओं का चारा खायेंगे

पशुओं को खिलाया जाने वाला 'रिजका' अब मनुष्यों के आहार में भी इस्तैमाल किया जायेगा, ऐसी सभावना हो रही है। 'रिजका' (एल्फाल्फा या लूसर्न) न केवल अमेरिका में ही पशुओं का एक प्रमुख चारा है, बल्कि अन्य देशों में भी यह पशुओं को खिलाया जाता है।

डैनवर के "कोलराडो ए० एंड एम० कौलिज" ने हाल ही के परीक्षणों मे यह पता लगाया है कि 'रिजका' में एक अज्ञात तत्व होता है। इसमे पशु अपनी विटामिन ए की कमी को पूरा करते हैं। इस अज्ञात तत्व को अलग कर लिया गया तो वैज्ञानिकों को यह आशा है कि इस पौधे को मनुष्य जाति के आहार में प्रयुक्त किया जा सकेगा।

दूध और मक्का की शकर से कृत्रिम रबड़

अमेरिकी कृषि-विभाग के वैज्ञानिकों ने दूध और मक्का की शकर से कृत्रिम रबड़ बनाई है। इस किस्म की रबड़ का नाम है लैक्टोप्रीन ई एन और यह कुछ विशिष्ट वस्तुओं के लिये अन्य रबड़ो की अपेक्षा अधिक उपयोगी सिद्ध हुई है। इसमे गर्मी, पानी, तेल आदि से प्रभावित न होने की अद्भुत शक्ति होती है। अमेरिकी वैज्ञानिकों का मत है कि मोटरों में, रैफ्रिजरेटरो में तेल की टंकियों आदि में जहां कहीं भी कुछ चीज खुलने या टपकने की सभावना हो उस स्थान पर लेप कर उसे बन्द करने के लिय यह रबड़ बहुत उत्तम है। इस दूध और मक्का की शकर से प्राप्त दो रासायनिक पदार्थों द्वारा बनाया जाता है।

भूमिको अधिक उपजाऊ बनाने में केंचुओं का विशेष कार्य

अमेरिकी कृषि विशेषज्ञों ने इस बात का पता लगाया है कि भूमि को अधिक उपजाऊ बनाने का साधन केंचुआ भी है। केंचुए उत्पादन-शक्ति को बढ़ाने में सक्रिय रूप से सहायता प्रदान करते हैं। केंचुए हर मौसम में मिटटी को पोला करते रहते हैं जिससे उसमें अधिक जल एव गैसें प्रविष्ट होती हैं।

केंचुआ मट्टी के सभी हानिकारक तत्वों को खा जाता है और भारी मात्रा में पोषक तत्वों को पौधो एवं वृक्षो की जड़ों के निकट इकटठा करता रहता है। प्रयोगों से यह पता चला है कि इन तत्वो मे मैंगनेशियम नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश भी होते हैं जो भूमि को अधिक उपजाऊ बनाते हैं कि केंचुआ मिट्टी को ऊपर करके उसमें से लाभकारी खनिज पदार्थ पौधो को पहुंचाता है जिससे पौधो की वृद्धि होती है। यह अनुमान लगाया गया है कि पचास हजार केंचुए एक मास में एक घन गज मट्टी को ऊपर नीचे करते है जिससे ऊपर की १ टन उपजाऊ मिट्टी तैयार हो जाती है।

केंचुए को बचत का साधन भी समझा गया है, क्योंकि एक वार भूमि में छोड़ने से इनकी संख्या तुरन्त ही बहुत बढ़नी आरम्भ हो जाती है। अमेरिका के बहुत से भागो में केंचुओ को व्यापार के लिये पाला जाता है। केंचुओ के पालने का एक केन्द्र अब नौर्वे, डैनमार्क, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, कनाडा तथा गेलास्का आदि को जहाजो द्वारा केंचुए भेजता है।



आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ओ३म्
आर्यमित्र
ARYA-MITRA, AGRA
उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक—आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ
१७ मई १९५१

शङ्कर दोहावली

[महाकवि स्वर्गीय 'शङ्कर']

सुमन-सरोवर में खिले सदुपदेश अरविन्द
देख दुष्ट दादुर दुरें सेवत साधु मिलिन्द
'शङ्कर' सुन्दर रूप को तन की शोभा जान
मन की शोभा सॉच है धन की शोभा दान
तन से सेवा कीजिए मन से भले विचार
धन से इस संसार में करिये पर-उपकार
मन में राखें और कछु वाणी में कछु और
कर्म्म करें कछु और ही झूठे तीनो ठौर
ऊँचन की मिलि नीच सो होत प्रतिष्ठा भग
गगाजल खारी भयो पाय सिन्धु कौ संग
अभय दान दै दीन को फेर न करहि सहाय
ऐसे पापी पोच कौ सचित सुयश नसाय
कहाँ अविद्या कौ भयो विद्या क ढिग बास
सॉच कहो तो कब रह्यो तमन्तमारि के पास
सूरन कौ सनमान कर कूरन कौ अपमान
साधुन कौ सुख दै सदा दुष्टन कौ दुखदान
ठीक बात माने नहीं मन म भरली भूल
सीच रहा है मूढ़ धी चन्दन जान बबूल
प्यारे नर-नारी रहे जिसम प्रेम पसार
सुख से ऐसे गेह में बढ़ता है परिवार
जाति पाँति की भिन्नता राजनीति मतभेद
करते हैं ये तीन ही प्रेम-पटल में छेद
फैल रहा ससार में जिनका पुण्य-प्रताप
वे बड़भागी धन्य हैं, परम पूज्य निष्पाप
सत्यशील जौ लौ जियें तौ लौ तजें न टेक
झूँठे करत अनेक प्रण पै न निबाहत एक
जा तरुणी के अंग में करे निवास अनंग
तरुण अकेलो मत रहे ता पर तिय के संग
जो कुछ औरों का भला करते हैं हम लोग
उसमें होता है भरा अपना ही सुख-भोग
ब्याज बटोरें जो धनी करें न उद्यम और
उनकी माया में कहाँ पर-हित पावे ठौर
जपते रहते हो वृथा जिन पुरुषो के नाम
क्यों जी करते क्यों नहीं उनके से शुभ काम

जन्म-काल से अन्त लों कर जीवन को नष्ट
मर जाते हैं आलसी भोग भोग कर कष्ट
मरते जाते है घने मानव जीवन भोग
तर जाते हैं, मृत्यु को 'शङ्कर' बिरले लोग
जो मन, वाणी, कर्म्म को कर न सकेंगे एक
वे न निबाहेंगे कभी प्रण कर टालू टेक
जन्म लिया सो सर जिया किया न पर-उपकार
मूढ़ मरा ससार में कम्म असार प्रसार
जो जीवन के अन्त लो करता रहा सुकर्म्म
धन्य उसी का मित्र है, सत्य सनातन धर्म्म
जो बड़भागी साहसी करते हैं शुभ काम
रहते है, संसार में जीवित उनके नाम
रहे एक ही ठौर पर कपटी करें न मेल
जैसे भाजन म भरे मिलें न पानी तेल
सज्जन को आदर मिले पिटे कुचाली कूर
चन्दन मस्तक पै चढे जारे जात बबूर
पहले थोड़ो सुख मिले फिर दुख होय अपार
ऐसे पोच कुकर्म्म को 'शङ्कर' वेग बिसार
प्यारे पर-उपकार कर भली भलाई जान
सबकी उन्नति में मिली अपनी उन्नति मान
पद्म-पत्र का नीर से देख विलक्षण मेल
रे शङ्कर, संसार में इस प्रकार से खेल
जो कुछ भूलो से हुआ उसका सोच बिसार
नाता तोड़ बिगाड़ से चत, चरित्र सुधार
सरिता, सिन्धु सरादि में मज्जहि तरे न कोय
ज्ञान गंग में न्हात ही 'शङ्कर' सद्गति होय
जाके भारी भारते बैलन मानी हार
सो जूआ स्वार्थीन के भयो गरे को हार
खाते हैं भर पेट जो मार मार कर घूस
वे चाकर ऊँचे चढे रुधिर न्याय का चूंस
घोर नीचता ने किया जो अवनति का दास
'शङ्कर' जाता है नही, वह उन्नति के पास
पुष्ट, निरोगी, आलसी, मूढ़, युवक, धनवान
ये गुण जामें देखये ताहि न दीजे दान

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०), एक प्रति तीन आने
सम्पादक हरिशङ्कर शर्म्मा
वर्ष—५३ अङ्क—५६

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा

का

साधारण वार्षिक अधिवेशन

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा दिल्ली का वार्षिक साधारण अधिवेशन ६ मई १९५१ को देहली में श्री प० राजगुरु धुरेन्द्रजी शास्त्री की अध्यक्षता में हुआ। इस अधिवेशन में भारत के प्रायः प्रत्येक प्रदेश की सम्बद्ध सभा के ६० प्रतिनिधियों तथा अन्य सदस्यों ने भाग लिया। सभा के इतिहास में यह पहला अवसर था जबकि प्रतिनिधि सदस्यों ने इतनी बड़ी संख्या में भाग लिया हो।

आगामी ३ वर्ष के लिये श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी, श्री स्वा० आत्मानन्दजी, श्री म० कृष्णजी, माननीय श्री रामसहायजी स्पीकर मध्यभारत-धारा सभा, तथा बम्बई निवासी श्री सेठ शूरजी वल्लभ दासजी सभा के प्रतिष्ठित सदस्य निर्वाचित हुए। श्री लाला नारायणदत्तजी, श्री सरदार पटेल, श्री अरबिन्दजी, श्री ठक्कवापाजी, श्री चौ० मुरतारसिंहजी, श्री बा० श्रीरामजी, श्री ठा० व्रजनन्दनसिंह जी विहार, श्री प्रिंसिपल रामसहाय जी, श्री ओम्प्रकाशजी महता पटना विहार, श्री बा० रामचन्द्रजी रि० ओवरसीयर देहरादून और श्री छुट्टनलालजी स्वामी की मृत्यु पर शोक प्रस्ताव पास हुये। वार्षिक रिपोर्ट की स्वीकृति के साथ-साथ आगामी वर्ष के लिये पदाधिकारियों व अन्तरंग सदस्यों का निर्वाचन हुआ व बजट पास हुआ और आडीटर की नियुक्ति हुई। राजगुरु प० धुरेन्द्र शास्त्री प्रधान और श्री प० ज्ञानचन्दजी बी० ए० मन्त्री निर्वाचित हुए। अन्य पदाधिकारियों व अन्तरंग सदस्यों के नाम इस प्रकार हैं—

उपप्रधान सर्वश्री प० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति, स्वामी अभेदानन्द जी विहार, प० नरेन्द्रजी हैदराबाद दक्षिण, उपमन्त्री प० लक्ष्मीदत्तजी दीक्षित दिल्ली, कोषाध्यक्ष ला० बालमुकुन्दजी आहूजा, पुस्तकाध्यक्ष प्रो० रामसिंहजी एम० ए०।

सर्व श्री प० वासुदेवजी शर्मा, पटना, विहार, रविदत्तजी व्यावर (राजस्थान), मिहिर चन्द्रजी धीमान् कलकत्ता (बंगाल), दत्तात्रेयप्रसादजी दराबाद दक्षिण, विजयशंकरजी बम्बई शिवशंकरजी गौड मध्यभारत चचल दासजी (सिन्ध) रामदत्तजी शुक्ल एडवोकेट लखनऊ (उत्तरप्रदेश) चौ० जयदवसिंहजी मेरठ, ला० चरणदासजी पुरी देहली, पं० यशपालजी सिद्धान्तालंकार, जलन्धर, लाला रामगोपालजी दिल्ली (समाजों के प्रतिनिधि), कविराज हरनाम दासजी बी० ए० आजीवन सदस्य, लक्ष्मीदेवीजी मुख्याधिष्ठात्री कन्या गुरुकुल सासनी, मदनमोहनजी सेठ रि० डि० एड सैशन जज लखनऊ, म० कृष्णजी बी० ए० प्रताप दिल्ली, प० गंगाप्रसादजी उपाध्याय एम० ए० आडीटर, बा० जगदीसप्रसादजी दिल्ली।

अधिवेशन हुआ, जिसमें विविध उप समितियों के अधीन विविध कार्य हुये। आर्यवीर दल के प्रधान सेनापति श्री ओमप्रकाजी त्यागी तथा रक्षा सचिव श्री मिहिरचन्द्रजी धीमान निर्वाचित हुये।

—

सप्तम सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन मेरठ में

६ अक्टूबर से १२ अक्टूबर तक बड़े समारोह पूर्वक मनाना निश्चित हुआ है जिसके लिए स्वागतकारिणी समिति का निर्माण हो रहा है। जो महानुभाव अभी तक स्वागत सदस्य नहीं बने हैं उनको चाहिये कि स्थानीय आर्यसमाज के मंत्री महोदयों के पास जाकर शीघ्र ही सदस्य बनने का प्रयत्न करें। सदस्यता शुल्क १०) है, परन्तु विद्यार्थियों महिलाओं तथा आर्यकुमार सभाओं के सदस्यों के लिए केवल ५) रु० है। स्वागतकारिणी समिति के पदाधिकारियों का निर्वाचन २६—४—५१ को न होकर अब २७—५—५१ को मध्याह्न के १ बजे से आर्यसमाज-मन्दिर शहर मेरठ में होगा। अतः आशा है उस समय तक अधिक से अधिक संख्या में सदस्य बन कर निर्वाचन में सम्मिलित हो कार्य सचालन में पूर्ण योग प्रदान करने की कृपा करेंगे।

कालीचरण आर्य संयोजक

आर्यमित्र के ग्राहकों से—

१ मई से डाकघर के नियमानुसार बिना ग्राहकों की स्वीकृति आये 'आर्यमित्र' के वी० पी० न भेजे जा सकेंगे। अब तक पुराने ग्राहकों को बिना स्वीकृति के ही मित्र' के वी० पी० भेजे जाते थे, जिन्हें वे छुड़ा लेते थे। अब नये ग्राहकों को कृपया आर्यमित्र का वार्षिक मूल्य ८) मनीआर्डर द्वारा भेज देना चाहिये। पुराने ग्राहकों को भी मूल्य समाप्ति की सूचना पाते ही रुपये मनीआर्डर द्वारा भेज देने चाहिए। इससे 'मित्र' और ग्राहक दोनों को सुविधा रहेगी। वी० पी० के बढ़े हुए महसूल से भी ग्राहकगण बच जायेंगे। मूल्य भेजते समय पुराने ग्राहक अपना ग्राहक-नम्बर लिखना न भूलें। नये ग्राहक भी कूपन पर 'नवीन ग्राहक' शब्द लिखदें तो कार्यालय को सुविधा होगी।

—व्यवस्थापक

आर्यप्रतिनिधि सभा राजस्थान ने सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा के इस निश्चय के विरुद्ध अपील की कि प्रदेशीय और प्रान्तीय सीमायें सरकारी विभाजन के अनुसार स्वीकार की जाय और मध्यभारत सभा के अधिकार क्षेत्र की समाजों का सम्बन्ध मध्यभारत सभा के साथ होना चाहिये और समाजों की सम्पत्ति की व्यवस्था दोनों सभाओं को पारस्परिक सुविधानुसार कर लेनी चाहिये। इस बैठक में इस अपील पर विचार होकर वह अस्वीकृत हो गई।

सभा के भूतपूर्व अधिकारियों को भी एक विशेष प्रस्ताव के द्वारा उनकी सेवाओं के लिये धन्यवाद दिया गया। इसी दिन आगामी वर्ष के कार्यविभाजन के लिये नवनिर्वाचित अन्तरंग का

श्री राजगुरुजी का प्रोग्राम

११ से १३ मई मार्फत श्री बा० रामचन्द्रजी मित्तल दुर्गाभवन, मेरठ सदर। १४ मई मार्ग में। १५, १६ मई हरदुआगंज। १७ मई नजीबाबाद। २० मई बोरना पुनः ४-५ दिन आश्रम पर।

—

आवश्यक सूचना

आर्यमित्र के नवीन व पुराने ग्राहकों को तथा विज्ञापनदाताओं को अपना कुल रुपया नीचे के पते पर भेजना चाहिये। ताकि उनके लेखानुसार तुरन्त कार्यवाही हो जाया करे।

व्यवस्थापक
आर्यमित्र, आगरा

—

विश्व भारती बिल पास

३ मई १९५१ को भारतीय संसद ने विश्वभारती बिल पास कर दिया। इस वर्ष विश्वभारती को सरकार से ५ लाख रुपये मिलेंगे, और आगे प्रतिवर्ष ४॥ लाख मिला करेंगे। विश्वकवि रवीन्द्रनाथ की विश्वविख्यात शिक्षा संस्था को विश्व विद्यालय का वैधानिक रूप देकर स्वतंत्र भारत की संसद् ने उपयुक्त और उचित ही कार्य किया है।

—

[छठे पृष्ठ का शेष]

करके विश्व को फिर आर्य साम्राज्य में सम्मिलित कर सकें।

यह अवसर है, उपयुक्त अवसर है, स्वर्ण अवसर है आर्यसमाज की समस्त संस्थाओं को चाहिये कि वे इन भावनाओं को समस्त देश में व्याप्त दें। समूचे राष्ट्र में एक भी व्यक्ति दुर्बल, अशिक्षित और असभ्य न रहने पाये। साम्प्रदायिकता, दलबन्दी और स्वार्थपरता की कहीं गन्ध भी न रहने पाये। कार्य मन्त्रिमण्डलों में प्रविष्ट होने के लिये नहीं, विश्व में व्यापने के लिये किया जाना चाहिये। किसी का विरोध नहीं करना है, विश्व को अपनाना है। हमें स्वराष्ट्र का शासन नहीं हथियाना है, विश्व में आर्यत्वमय विश्वशासन स्थापित करना है। यही वेद का आदेश है, यही देव दयानन्द का दिव्य सन्देश है। क्या आर्य संसार हमारे इन संकेतों पर विचार करेगा।

—

'गुण गृह्या वचने विपश्चितः'

आर्यमित्र

आगरा, वैशाख शुक्ला ११ संवत २००८ वि०, गुरुवार, ता० १७ मई १९५१
दयानन्दाब्द १२६, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५०

स्वस्ति पन्थामनुचरम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता सगमेमहि॥ ऋग्वेद

सूर्य चन्द्र की भाँति स्वस्ति-पथ को अपनावें
ज्ञान दान दे हिंसा का अस्तित्व मिटावें
स्नेह पसार सुसगति कर सब मिलें-मिलावें
जीवन में शुचिता, ऋजुता, मृदुता उपजावें।

हमारा साहित्य

आर्य जाति का सर्वस्व वेद है, वैदिक वाङ्मय की महत्ता संसार के समस्त विद्वानो ने मुक्त कण्ठ से स्वीकार की है। आर्यसमाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द ने भी वेदोद्धार के लिये अपनी सारी शक्ति लगादी और हमें वैदिक साहित्य की ओर प्रेरित किया। पठनपाठन-प्रणाली में भी ऋषि ने संस्कृत साहित्य को ही प्रधानता प्रदान की है। उन्होंने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका और वेद-भाष्य संस्कृत में लिखे, किन्तु दिव्य द्रष्टा दयानन्द ने अपने सिद्धान्तों के प्रचार के लिये राष्ट्र भाषा हिन्दी को अपनाया। भले ही हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखक ऋषि दयानन्द को उस रूप में याद न करें जिस रूप में कि वे हिन्दी साहित्य के अन्य आचार्यों को याद करते है, किन्तु वे इस बात को भूल जाते हैं कि वर्तमान हिन्दी के सर्व-प्रथम जन्मदाता ऋषि दयानन्द ही हैं और उन्होंने यदि हिन्दी को न अपनाया होता तो आज हिन्दी का जितना विकास हुआ है, उतना कदाचित् न हुआ होता। ऋषि दयानन्द के अनुयायियो ने हिन्दी भाषा को ही अपने साहित्य का माध्यम माना। उर्दू-प्रधान पंजाब प्रान्त में आर्य महिलाओं ने हिन्दी भाषा को अपनाया और थोड़े ही काल में समस्त पंजाब में हिन्दी का नाद गूँज उठा। डी० ए० वी० कालिज, हाई-स्कूल, कन्या-महाविद्यालय आदि समस्त आर्य संस्थाओ ने हिन्दी के प्रचार में अपनी सारी शक्ति लगादी। परिणाम यह हुआ कि मुसलिम संस्कृति का बोलबाला होते हुए भी पंजाब में हिन्दी चमकी और खूब चमकी। इधर उत्तर प्रदेश में भी आर्यसामाजिक संस्थाओ ने शिक्षा का माध्यम हिन्दी को ही बनाया। गुरुकुलो में वेद और शास्त्रों की शिक्षा हिन्दी के ही माध्यम से प्रदान की गयी और आज आर्यसमाज बड़े गौरव और अभिमान के साथ कह सकता है कि हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने में उसका प्रमुख हाथ है। वर्तमान हिन्दी को इतना शुद्ध रूप देने वाले आर्य नेता ही हैं। आर्यसमाज के विद्वानो ने हिन्दी-गद्य और पद्य में ऐसा साहित्य निर्माण किया है जो साहित्यिक दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट है। ऐसे साहित्य के सृजन के लिये जिस अन्य भाषा की आवश्यकता है, वह संसार की समस्त भाषाओं की जननी सभ्यता संस्कृति और सद्भावनाओं की प्रसू वर्णी संस्कृत भाषा है, जिसकी शिक्षा पर ऋषि दयानन्द ने इतना बल दिया है और आर्यसमाज ने जिसे अपने प्रारम्भिक काल से ही अपनाया है। जो सभ्यता का प्रथम सोपान है, संस्कृति का उद्गम है वह संस्कृत भाषा ही आर्य जाति को मानवता का पाठ पढ़ाने वाली है, आज उसे फिर अपनाने की आवश्यकता है।

भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हो गयी, हिन्दी राष्ट्र भाषा स्वीकार करली गयी किन्तु जिस हिन्दी को हम राष्ट्र भाषा के पद पर प्रतिष्ठित करना चाहते हैं, वह हिन्दी संस्कृत ज्ञान के बिना अधूरी है। यही कारण है कि आज बंगाल के राज्यपाल डाक्टर काटजू और बिहार के राज्यपाल डाक्टर अणे बार बार लिख रहे है, कि संस्कृत की शिक्षा अनिवार्य करदी जाय। इधर सरकार भी संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना करने के लिये उद्यत है, किन्तु आर्यसमाज इस दिशा में कुछ ढीला पड़ता जा रहा है। अब संस्कृत भाषा की ओर हमारी पहली सी रुचि नही है। हमें अपनी इस प्रवृत्ति को बदलना होगा। अभी तो वह समय आया है जिसकी आर्यसमाज चिरकाल से प्रतीक्षा कर रहा था। आज वेदों का दिव्य सन्देश जनता तक हिन्दी माध्यम के द्वारा हम आसानी से पहुंचा सकते है, किन्तु हमें भी तो उसके लिये कुछ तैयारी करनी चाहिये। संस्कृत को हमने जितना कठिन और जटिल समझ रक्खा है, वह वास्तव में वैसी नहीं है। थोड़ा सा परिश्रम करने पर साधारण संस्कृत का ज्ञान हो जाता है। हमें आवश्यकता नहीं कि हम बहुत बड़े वैयाकरण बनें अथवा तार्किक शिरोमणि की उपाधि प्राप्त करें। उसके लिये वर्षों की आवश्यकता है, हमें तो काम चलाऊ संस्कृत सीखनी है और वह स्वल्प प्रयास से थोड़े समय में बोलने और लिखने के लायक आसकती है। कई विद्वानो ने संस्कृत सीखने के सुगम उपाय सुझाये हैं और पुस्तकें भी लिखी हैं। साधारण संस्कृत ज्ञान से हिन्दी साहित्य की अच्छी उन्नति हो सकेगी। हमारा भारतीय विश्वविद्यालयों से अनुरोध है कि वे अपने पाठ्य विषयों में ऊँची श्रेणियों में, संस्कृत को भी अनिवार्य करदें। संस्कृत के साधारण ज्ञान से विद्यार्थी इस योग्य हो सकेंगे कि वे नवनिर्मित हिन्दी भाषा के शब्दो को आसानी से समझ सकें। शब्दों का नवनिर्माण संस्कृत की धातुओ से हो रहा है, यदि उन्हें धात्वर्थ का पता होगा तो वे सुगमता से उन शब्दों को समझ सकेंगे और उनका ठीक-ठीक प्रयोग भी कर सकेंगे। ऋषि दयानन्द संस्कृत को सर्वसाधारण की भाषा बनाना चाहते थे, इस पर उन्होंने बहुत बल दिया है। आज उसके लिये अनुकूल अवसर है, इसलिये हम अपनी शिक्षा-संस्थाओ में संस्कृत को अनिवार्य कर देना चाहिये और धर्म-ग्रन्थों के स्वाध्याय के लिये समस्त पढ़े-लिखे आर्य सज्जनों को संस्कृत सीखनी चाहिये। आशा है, आर्य सज्जन ऋषि निर्दिष्ट प्रणाली को अपना कर संस्कृत की उन्नति में हार्दिक सहयोग प्रदान करेंगे और भारतीय साहित्य को उच्चतम बनाने में सहायक सिद्ध होंगे।

गोरक्षा

गोरक्षा का राग अलापते हुए भारतवासियो ने शताब्दियाँ व्यतीत कर दी किन्तु वे अभी तक गोरक्षा नहीं कर पाये। श्री गोस्वामी गणेशदत्तजी ने भी कॉंग्रेस सरकार से प्रार्थना की है कि गोवध बन्द कर दिया जाय। इतने अनुनय और विनय करके भी हम अभी तक गोवध बन्द कराने में कृतकार्य न हो सके। गोशालाओ को हम चन्दा देते हैं, तब भी गोरक्षा नही हो पाती। हम चाहते तो हैं कि हमें शुद्ध दूध, दही और घी मिले, पर हमारी प्रवृत्ति उससे सर्वथा भिन्न है। घासलेट के पक्वान्न पचा सकते हैं किन्तु घर पर गाय नहीं रख सकते। गोशाला की बूढी गायों के लिये चन्दा देकर गोपालकों की श्रेणी में अपना नाम छपा देखकर आनन्द विभोर हो जाने वाले क्या गोरक्षक हैं? रेलो में 'गौए रो रो कर'' की पुकार कर चन्दा चाट जाने वाले क्या गोरक्षा कर सकते हैं? गोरक्षा करनी है तो प्रत्येक भारतीय को अपने परिवार में एक-एक गौ रखनी चाहिये और उसकी सर्वात्मना सेवा करनी चाहिये। ऋषि दयानन्द ने गोरक्षा के लिए बड़ा प्रयत्न किया। उन्होंने "गोकरुणानिधि" पुस्तक लिखकर गौ की उपादेयता भी बतलाई, किन्तु हम है कि उस पर अमल करना तो दूर विचार भी नही कर सकते। आवश्यकता इस बात की है कि गोशालाओ पर जो आपाधापी हो रही है वह दूर की जाय। डेरीफार्म के रूप में गोशालाएं चलाई जाय और सबसे अच्छी बात यह है कि शुद्ध दूध और घी की प्राप्ति के लिये लोग अपने घरों पर गौओं को पालें तभी गोरक्षा सम्भव है अन्य उपाय कोई नहीं।

हिन्दी और गुरुमुखी

पंजाब में इस समय हिन्दी और गुरुमुखी का प्रश्न साम्प्रदायिक तनातनी का कारण बन रहा है। सच्चर फार्मूले ने पंजाब में विषम परिस्थिति पैदा कर दी है। सिक्ख इस बात के लिये दृढ़ संकल्प हैं कि सारे पंजाब में गुरुमुखी अनिवार्य कर दी जाय। जो लोग नहीं पढ़ना चाहते उनको भी बलात् गुरुमुखी पढ़ाई जाय। शिक्षा विभाग ने भी स्कूलों को आदेश दिया है कि हिन्दी भाषा भाषी प्रान्त में दूसरी भाषा के रूप में गुरुमुखी पढ़ाई जाय। यह है पंजाब की भाषा सम्बन्धी गड़बड़ जो सारे पंजाब को परेशान कर रही है। पंजाब के डी० ए० वी० स्कूल, सनातनधर्म स्कूल इस आज्ञा के विरुद्ध आवाज उठा रहे हैं, किन्तु उनकी बात अभी तक नहीं सुनी गई। हिन्दू मेम्बरों का सिक्ख मेम्बरों के साथ गठबन्धन ही इस सारे झगड़े की जड़ है। सिक्खों के साथ सहयोग से जो अपनी मिनिस्टरी को बनाये रखना चाहते हैं, वे भला इस न्यायोचित माँग पर क्यों ध्यान देने लगे कि हिन्दी भाषी प्रान्त में बलात् गुरुमुखी न पढ़ाई जाय। इसी कारण जनगणना के समय जगह-जगह पंजाब में उपद्रव हुए और इस समय भी यह मामला जोर पकड़ता जा रहा है। ज्ञात हुआ है कि पंजाब आर्यप्रतिनिधि सभा इस मामले को हाईकोर्ट में लेजाना चाहती है। अबकी बार पंजाब आर्यप्रतिनिधि सभा के बृहदधिवेशन में इस विषय की बड़ी चर्चा रही। अच्छा है पंजाब की मिनिस्टरी समय पर ही इस तनातनी को रोक दे, अन्यथा सम्भव है पंजाब पुनः साम्प्रदायिकता का अखाड़ा बन जाय।

उपाध्यायजी को बधाई

विद्वद्वर श्री प० गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम० ए०, अब की बार सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान मन्त्री नहीं निर्वाचित हुए। उन्होंने कई महीने पहले मन्त्रि-पद से त्यागपत्र दे दिया था। इस पद-उपरति के लिये हम श्री उपाध्यायजी को बधाई देते हैं।

उपाध्यायजी साहित्यकार हैं। उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथ रत्न आर्यसमाज और हिन्दी-साहित्य को भेंट किये हैं। हमारा पूर्ण विश्वास है कि वे सार्वदेशिक सभा के मन्त्रि-पद से विरत होकर अब सर्वात्मना साहित्य-साधना में संलग्न होंगे। इसीलिये हम आपको आज विशेष रूप से बधाई देते हैं, और साथ ही प्रार्थी हैं कि वे अब इस प्रकार के पद तथा अधिकारों से सर्वथा दूर रहकर एकमात्र साहित्य-निर्माण को ही अपना लक्ष्य बनावें।

बाल-विनोद

प्यारे बाल साथियो,

इधर कई सप्ताह से मैंने आप लोगों से भेंट नहीं की। वह इस लिए कि ये दिन आपकी वार्षिक परीक्षा के थे। इन दिनों में आपको अपने साल भर के परिश्रम और जीवन के एक वर्ष का मूल्य प्राप्त करने के लिए अन्तिम उद्योग करना था। इन दिनों आप पूर्ण मनोयोग से परीक्षाओं में संलग्न थे। इसीलिए हमने भी बाल-विनोद छापना स्थगित कर दिया था, जिससे आप लोगों का मन इधर उधर न बटे और परीक्षा-कार्य अच्छे प्रकार सम्पन्न हो। हम अपने सभी बाल साथियों की परीक्षा में सफलता प्राप्ति के लिए शुभकामना करते और जो सफल हो चुके हैं, उन्हें बधाई देते हैं।

शुभचिन्तक
ज्ञानू दादा

ज्ञानू दादा के नाम पत्र

१

मुझे सिनेमा देखना अच्छा लगता है, परन्तु पिताजी सिनेमा देखने से रोकते हैं, और कहते हैं, ऋषि दयानन्द के चरित्र का फिल्म बनने वाला है, उसे देखना। भाई साहब का कथन है कि आर्य-समाजी कहते बहुत और करते कम हैं। वर्षों से दैनिक आर्य-मित्र का आन्दोलन हो रहा है, पर अभी तक मित्र दैनिक नहीं हो सका। जो लोग दैनिक पत्र के लिए डेढ़-दो लाख की पूँजी एकत्र नहीं कर सकते, वे फिल्म कम्पनी के लिए दसियों लाख रुपया कैसे इकट्ठा कर पाएँगे। भाई साहब की बात मुझे ठीक लगती है, इसलिए मैं महर्षि दयानन्द के फिल्म की प्रतीक्षा न करके मौजूदा चित्रों को ही चुपके से जाकर देख आता हूँ। मैं अच्छा करता हूँ या बुरा?

आर्यकुमार, गोरखपुर

[वस्तुतः आजकल आर्य-समाज में करने वाले कम और कहने वाले अधिक हैं। दैनिक आर्य मित्र की मिसाल देकर तो तुमने हमें निरुत्तर कर दिया। फिर भी निराश या हतोत्साह होने की आवश्यकता नहीं। बूढ़े लोग बहुत दिनों से समाज की सेवा करते-करते थक गए हैं। अब आर्य कुमारों को कार्य-क्षेत्र में आकर वृद्धों को कार्य-भार से मुक्त करना चाहिए।

हाँ, तुम पिताजी की आज्ञा का उल्लंघन कर छिपकर सिनेमा देखते हो, यह ठीक नहीं। जो काम छिपकर किया जाता है वह पाप है। यदि कोई धार्मिक शिक्षा-प्रद खेल आवें, तो उसे पिताजी से पूछकर देख सकते हो। अच्छे खेल देखने को पिताजी मना नहीं करेंगे।

२

मैं सनातन धर्मी (पौराणिक) पिता की पुत्री हूँ। मेरे विचार में आर्य समाज भी कोई घृणा की वस्तु नहीं है। धर्म सब अच्छे हैं। धर्म का आचरण करना चाहिए। धर्म वाली सूची में नाम लिखाने मात्र से कोई लाभ नहीं। पिताजी को आर्यमित्र कभी-कभी पढ़ने को मिल जाता है। मैं भी उसमें बाल विनोद पढ़ती हूँ। बाल विनोद में आप बड़े कड़े-कड़े प्रश्न देते हैं। उनके हल करने में मेरी सहेलियों तथा भाइयों को बड़ी कठिनाई होती है।

—कुसुम लता अवस्थी,

[आर्य समाजी केवल वेदों की शिक्षा को मानते हैं, और सनातन धर्मी वेदों के उपदेशों के साथ पुराणों की बातों को भी मानते हैं। इतना ही अन्तर है। आर्य समाज में कोई घृणा की बात है ही नहीं। तुम रविवार को समाज के सत्संग में जाया करो। वहाँ तुम्हें उत्तमोत्तम वेदों के उपदेश सुनने को मिलेंगे।

प्रश्न पहेलियाँ जो बाल साथियों ने भेजी वही हमने छापी हैं। फिर प्रश्न हल करने में थोड़ा बहुत मस्तिष्क को श्रम तो करना ही चाहिए। जिन प्रश्नों के उत्तर देने में कुछ सोचना-विचारना न पड़े, उनसे लाभ ही क्या।]

३

मेरी इच्छा है कि मेरे उत्तर सबसे पहले आपके पास पहुँच जाया करें। परन्तु मुझे आर्य-

[शेष कालम १-२ के नीचे]

मित्र सोमवार को और कभी-कभी मंगल को मिलता है। क्या ही अच्छा होता कि पिताजी मुझे आगरे में ही पढ़ने के लिये दाखिल करा देते। फिर तो मैं गुरुवार को प्रातःकाल ही आर्य मित्र कार्यालय में पहुँचकर वहीं से वहीं बालविनोद में प्रकाशित प्रश्नों के उत्तर दे देता।

हाँ, एक बात बताइये, हम लोगों के मनोरंजनार्थ आपने 'ज्ञानू दादा' नाम की कल्पना कर ली है या कोई महानुभाव ही हैं? यदि कोई हों तो उनका परिचय और पता मित्र में छाप दें। क्या उनका आर्यमित्र से कोई नाता भी है। वेद में वर्णित सूर्य पुत्री उषा की गाथा द्वारा उपदेश देने की रीति के समान कहीं आपने भी ज्ञानूदादा द्वारा बच्चों को ज्ञान देने की पद्धति तो नहीं अपनाई हुई है।

धर्मेन्द्र आर्य

[ज्ञानूदादा आर्यमित्र परिवार के सदस्य हैं। बालविनोद स्तम्भ द्वारा, बालसाथियों का मनोरञ्जन करते हुए उन्हें ज्ञान देना ही ज्ञानूदादा का कार्य है। अवसर आने पर ज्ञानूदादा का परिचय और चित्र भी प्रकाशित किया जायगा।]

१९-४-५१ के अङ्क में छपी पहेलियों के उत्तरों में निम्नलिखित बालकों के उत्तर सही हैं:—

सर्वश्री सन्तोषकुमार शर्मा 'अतीन्द्र', कासगंज; विश्वकान्त-सिंह, फिरोजाबाद; पूर्णचन्द्र आर्य, मथुरा, विद्याभूषण त्रिपाठी, जलालाबाद; राजेन्द्रकुमार आर्य, चन्दौसी।

सुझाव और सम्मतियाँ

प्राचीन जीवन विज्ञान बनाम अर्वाचीन विज्ञान

श्री प० धर्मपालजी विद्यालङ्कार

इस समय भारतवर्ष संसार के अन्य देशों में धीरे-धीरे अपना विशेष स्थान ग्रहण करता जा रहा है। स्वतन्त्र भारत के सम्मुख यह प्रश्न है कि उसे सभ्यता के किस आदर्श को ग्रहण करना चाहिये। देश में प्रचलित विभिन्न विचारों का प्रकाश समय-समय पर देश के नेताओं के भाषणों से प्रायः होता रहता है। इसी प्रकार के दो भाषण गत अक्टूबर मास में हुये।

भारत के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसादजी और राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रधान श्री पुरुषोत्तमदास जी टण्डन के भाषणों ने सामाजिक जीवन को निर्मलता और शारीरिक आरोग्य के लिये स्वाभाविक भोजन व जीवन-निर्वाह की ओर स्वाभाविक रूप से विकसित भारतीय पद्धति के दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है।

परम्परा से ही भारतीय जीवन में संयम और तपस्या की विशेष प्रतिष्ठा रही है। इस लिए पश्चिमीय सभ्यता को चकाचौंध से प्रभावित व्यक्तियों को श्री टण्डनजी के नमक, शक्कर, दूध, मक्खन और शहद का भोजन से परित्याग करने का परामर्श आश्चर्य में डाल दे और वे इस सिद्धान्त से सहमत न हों तो कुछ आश्चर्य की बात नहीं है।

श्री टण्डनजी ने आधुनिक चिकित्सा-पद्धति विशेषतः टीका और इन्जैक्शनों की निंदा की है। वर्तमान समय के वैज्ञानिक ढग पर शिक्षित चिकित्सकों पर, जिन्हें कि आजकल अत्यधिक फैली हुई भयङ्कर बीमारियों तथा उनके वैज्ञानिक ढग पर दूर किये जाने के ज्ञान का अभिमान है, इन वक्तव्यों का कोई प्रभाव चाहे न हो परन्तु इसमें तनक भी सन्देह नहीं कि बीमारी का इलाज करने की अपेक्षा बीमारी के न होने देने के सिद्धान्त को अङ्गीकार करना ही अधिक बुद्धिमत्ता का कार्य है। इस तथ्य को कौन अस्वीकार कर सकता है कि अस्वाभाविक, अनुपयुक्त अथवा अनियमित अधिक आहार-विहार के कारण ही प्रायः बहुतसी बीमारियाँ हो जाती हैं और सात्विक, मर्यादित आहार-विहार मनुष्य की आत्मा और शारीरिक नीरोगिता के लिए अधिक उपयोगी है।

अक्टूबर में होने वाले प्रथम अखिल भारतीय सामाजिक सदाचार-स्वच्छता-सम्मेलन (all India canferance on moral and social Hygine) में डा० राजेन्द्रप्रसादजी ने भी एक अन्य विषय के प्रसंग पर सिनेमाओं के सम्बन्ध में यह सम्मति प्रकट की है कि आजकल सिनेमा दुराचार फैलाने का साधन हो रहे हैं। सम्भवतः बहुत कम ही ऐसे व्यक्ति होंगे जो स्त्री-पुरुषों में एक-दूसरे के प्रति दुराचारपूर्ण आकर्षण भावना उत्पन्न करने वाली इस दूषित प्रक्रिया को रोकने के विचार को अप्रगतिशील समझें। इसी प्रसंग पर उन्होंने एक अन्य नग्न सत्य को भी प्रकट किया है कि मनुष्यों और स्त्रियों का विना किसी प्रतिबन्ध या मर्यादा के परस्पर मिलना सर्वथा अनुचित है। अनेक व्यक्ति इन विचारों के विरोध में म० गांधीजी के इस कथन का उदाहरण देते हैं—

"पवित्रता निश्चय ही आन्तरिक होनी चाहिये, यदि सदाचार वास्तविक है तो उसमें बाहर के प्रलोभनों का मुकाबला करने की सामर्थ्य होनी चाहिये।" महात्मा जी का उक्त वचन यथार्थ होने पर भी स्वयम् उन्हीं का सत्याग्रह-आश्रम का परीक्षण न केवल असफल ही सिद्ध हुआ प्रत्युत विपरीत इसके उन्हें स्त्री-पुरुषों के पृथक्-पृथक् मर्यादा में रहने के सिद्धान्त की विजय को स्वीकार करना पड़ा।

इस युग के एक अत्यन्त उत्कृष्ट ऋषि दयानन्द का कथन इस प्रसंग में एकाएक स्मरण हो जाता है, जहाँ उन्होंने लिखा है—

'स्त्री व पुरुष का विना वर्णाश्रम धर्म मर्यादा के परस्पर का सम्बन्ध सर्वथा त्याज्य है।"

हमारे लिखने का तात्पर्य यह है कि इस संक्रान्ति काल में स्वभावतः विकसित और प्राचीन अनुभवों से सिद्ध परम्परा के स्थान में नवीन-नवीन अपरीक्षित सिद्धान्तों का अनुकरण, प्रचलन भारतीय मनोवृत्ति के अनुकूल न होगा। प्रगति के नाम पर केवल पाश्चात्य शिक्षा से दीक्षित व्यक्ति, यद्यपि इस प्रकार के विचारों को सुनकर अधीर हो उठेंगे, परन्तु बुद्धिमत्ता इसी में है कि इन अपरीक्षित सिद्धान्तों का प्रचलन न किया जावे और प्राचीन परीक्षित सिद्धान्तों का विना परित्याग किये ही समयानुसार सन्तुलित परिवर्तन ही अङ्गीकार किये जावें। विज्ञ पुरुषों का इस सम्बन्ध में एकमत्य है कि प्राचीन सामाजिक व राजनैतिक भारतीय ढांचे में वैज्ञानिक सिद्धान्त इस समय भी आश्चर्यजनक ढग पर न केवल ठीक ही बैठने हैं प्रत्युत वे वर्तमान भोगपरक सभ्यता के दूषणों से भी बचाने वाले सिद्ध हुए हैं। आवश्यकता इस बात की है कि देश का नेतृत्व अत्यन्त सावधानी से किया जाय और उस पर पश्चिमी प्रजातन्त्रवाद के विचित्र प्रगतिशीलता के आदर्श को न थोपा जाय।

— —

नैतिकता-निरूपण

'गप्पी मित्र'?

श्री राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी, एम० ए०

एक बड़े सरकारी अफसर की चर्चा है। वह मेरे रिश्तेदार भी हैं। इसी कारण उनका नाम न बताना ही अधिक अच्छा है। सरकारी अफसर होने के अतिरिक्त वह बड़े ही साहित्यिक एवं मिलनसार व्यक्ति हैं। उनका रात-दिन गप्पें लगाना तो आप मशहूर ही समझिये। उनके पास हर घड़ी गप्प लगाने वाले बैठे रहते थे। घर में तो घर में, दफ्तर में भी लोग पहुंच जाते और घण्टों गप्प लगाया करते थे। सम्भवतः अब भी वही क्रम चल रहा हो।

संयोग की बात, एक दिन मैं भी उनके दफ्तर में पहुंच गया। बहुत-से आदमी बैठे हुये बड़े जोरों से हँस रहे थे। उनमें से एक महाशय के हाथों में बच्चों के खेलने का एक झुनझुना था। समझ में नहीं आया कि मामला क्या है? गप्पें और फिर यह झुनझुना।

मैं थोड़ी देर तक बैठा रहा। बीच-बीच में अपने मतलब की भी बात करता जाता था। इतने में ही एक और सज्जन आये। नमस्कारादि के बाद वे भी सामने वाली कुर्सी पर बैठ गये और मेज पर रखा हुआ पेपरवेट उठा कर देखने लगे। इतने में ही उन अफसर महोदय ने अपनी मेज के दराज में से एक छोटी सी रबर की गुड़िया निकाली और उनके हाथ में देते हुए बोले "लीजिये इससे खेलिये, यह है खेलने की चीज। पेपरवेट को मेज पर ही रख दीजिये। यह खेलने की नहीं, बल्कि मेज पर रखे रहने की वस्तु है।" वह सज्जन कुछ सिटपिटा गये। फिर वही जोर से कहकहा।

मैंने समझ लिया कि पहले भी किसी ने इनकी मेज पर से कोई चीज उठाई होगी और इसी प्रकार घटनाचक्र चला होगा।

ये घटनाएँ चार-छह व्यक्तियों तक ही सीमित न समझनी चाहिएं। प्रायः हमारी सबकी यह आदत पड़ गई है कि किसी के पास जाकर बैठे और आसपास रखी हुई चीजों को उठाकर देखने लगे; ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार बच्चा पास में पड़े हुए खिलौनों को उठाने लगता है। कभी हम होल्डर उठा कर कान खुजाने लगते हैं, कभी पेपरवेट उठाकर घुमाने लगते हैं, कभी पेन्सिल उठाकर चबाने लगते अथवा मेज पर पड़े हुए किसी कागज पर लकीरें खींचने लगते हैं, कभी घण्टी पर हाथ मारते हैं, कभी डायरी उठा कर पढ़ने लगते हैं आदि आदि। हम यह नहीं सोचते कि आखिर इस उलट पुलट से हमारा क्या मतलब हल होता है। हमारे विचार से तुछ नहीं। उथल पुथल हम केवल उथल-पुथल के हेतु करते

विश्व-शासन

[आचार्य विद्यानन्द विदेह]

पूर्वो देवो भवतु सुन्वतो रथोऽस्माकं शंसो अभ्यस्तु दूढ्यः। तदा जानीतोत पुष्यता वचोऽग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ ऋ०-१६४८ ॥

(देवाः) देवो ! (सुन्वतः) प्रगतिशील का (रथ) रथ (पूर्वः) आगे (भवतु) होवे। (अभि) सब ओर (अस्माकम्) हमारा (दूढ्यः) सुदृढ़ (शसः) शासन (अस्तु) होवे। तुम (तत् वचः) उस बात को (आजानीत) समझो (उत) और (पुष्यत) बलवान् बनो। (अग्ने) प्रकाशस्वरूप प्रभो ! (वय) हम (तव सख्ये) तेरी मित्रता में (मा रिषाम) विनष्ट न हों।

विज्ञान की उन्नति के साथ-साथ युद्ध की भीषणता तथा व्यापकता बढ़ती जा रही है। विज्ञानसम्पन्न जातियाँ अन्य जातियों पर शासन करती हैं। विज्ञानप्रबल राष्ट्र अन्य राष्ट्रों का शोषण करते हैं। इन आपत्तियों से बचने के लिये विश्वशासन की स्थापना का आन्दोलन हो रहा है। योजना, जितनी व जैसी कि अब तक प्रकाश में आई है, यह है कि एक सार्वभौम शासन परिषद् की स्थापना की जाय। इस परिषद् में इस भूगोल के समस्त राष्ट्रों के प्रतिनिधि हों। प्रत्येक राष्ट्र अपने-अपने आन्तरिक शासन प्रबन्ध में सर्वथा स्वतन्त्र रहेगा। राष्ट्रों के पारस्परिक सम्बन्धों पर विश्वशासन परिषद् का नियन्त्रण होगा। अन्तराष्ट्रीय विवादों अथवा झगड़ों का निपटारा यह परिषद् किया करेगी। इस परिषद् का निर्णय सम्बन्धित पक्षों को स्वतः मान्य होगा और अवज्ञा करने वाले राष्ट्र को दण्ड देने का अधिकार भी इस परिषद् को प्राप्त होगा। इससे स्वभावतः यह निष्कर्ष भी निकलता है कि अपनी विश्व-पुलिस अथवा विश्वसेना भी होगी और एक विपुल विश्वकोष भी होगा।

परीक्षितस्य परीक्षणं मौर्ख्यम्। परीक्षित की परीक्षा करना मूर्खता है। गत दो महायुद्धों का कटु अनुभव हमारे सामने है। प्रथम महायुद्ध की समाप्ति पर विश्व-राष्ट्र-समूह की स्थापना भी इन्हीं उद्देश्यों को दृष्टि में रखकर की गई थी। परन्तु संसार ने देखा कि प्रबल और प्रमुख राष्ट्र मनमानी करते रहे और निरपराध दुर्बल राष्ट्रों का दमन और दलन होता रहा। बल्कि उस विश्वराष्ट्र समूह की दुर्नीति के परिणाम-स्वरूप ही द्वितीय महायुद्ध के बाद फिर वही अभिनय खेला गया और विश्व-राष्ट्र संघ की स्थापना की गई। यह संघ भी प्रबल तथा प्रमुख राष्ट्रों के कूट-नीतिक दावपेचों का अखाड़ा ही सिद्ध हो रहा है। वह दिन दूर नहीं जब कि यह संघ भी व्यर्थ सिद्ध होकर एक तृतीय महायुद्ध को जन्म देगा। दो विफल परीक्षाओं के बावजूद विश्वशासन के नाम से पाश्चात्यों के उसी कुचक्र में तीसरी बार पुनः फंसना लाभप्रद न होगा।

समस्या का वास्तविक समाधान उपर्युक्त वेदमन्त्र में निर्दिष्ट है। चुस्त का रथ आगे। प्रगतिशील जाति का ही राष्ट्ररथ सबसे आगे रहा करता है। आर्यावर्तीय आर्य जाति को चाहिये कि अपने इस सनातन आर्य राष्ट्र को पुनः सर्व शक्तिमान्, सर्व गुणसम्पन्न और विश्वशिरोमणि आर्यराष्ट्र बनाये। तत्पश्चात् हम धर्मपरायण ईश्वरभक्त न्यायशील, वेदानुयायी, परोपकारी आर्यों का सब ओर समस्त भूमण्डल पर चक्रवर्ती आर्य साम्राज्य हो। सदाचारी, निष्काम, योगयुक्त, अनासक्त, कर्त्तव्यशील आर्यों के ही न्याय-शासन में संसार सच्चे अर्थों में स्वतन्त्र और सुखी रह सकता है। देवो-विचारशीलो, इस रहस्य को समझो, अपने को बलवान् बनाओ और एकत्र अखण्ड चक्रवर्ती आर्य-साम्राज्य की स्थापना करने में प्राणपण से लग जाओ। अभ्युदय और सर्वोदय का यही एकमात्र उपाय है। विश्वकल्याण केवल इसी में है। कार्य निसन्देह जटिल है, कठिन है, दुस्साध्य है, परन्तु शिव और सम्भव है। यह करना ही है, अतः प्रकाशस्वरूप परमात्मा से प्रकाश प्राप्त करते हुए जुट जाओ। चल पड़ो, यह प्रार्थना करते हुए कि "सर्वप्रकाशक देव, हमें प्रकाश दे। तेरा आदेश पालन करने के लिये हम तेरे सख्य का आलम्बन करके कार्य क्षेत्र में उतरते हैं। हम विफल न हों। हमें साफल्य प्रदान कर।"

केवल एक आर्य संस्कृति ही है जिसका मूलमन्त्र है 'वर्धस्व वर्धय च।' वह केवल आर्य जाति ही है जिसका नारा 'हे बढ़ो और बढ़ाओ।' आर्यों ने इस भूमण्डल पर युगों तक चक्रवर्ती धर्मराज्य चलाया है। आर्यों के साम्राज्य में विश्व के समस्त राष्ट्र स्वेच्छा से स्वरक्षा और स्वोन्नति के लिये ही सम्मिलित रहा करते थे। आर्यावर्तीय आर्य समस्त संसार को धर्म, संस्कृति सभ्यता, स्वतन्त्रता, मानवता, सुरक्षा, सदाचार, विश्व-परिवारिकता आदि-आदि बरद बरदान दिया करते थे और इस लोकवाटिका को सुखसौन्दर्यपूर्ण स्वर्ग बनाये रखते थे। आर्य कहते ही विश्वपोषक को हैं। योग्यतम आर्य जाति ही विश्वशासन की स्थापना कर सकती है। आर्य ही विश्वशासन के सूत्राधार बन सकते हैं। यही एक जाति है जिसका आधार सत्य, संयम, सदाचार, न्याय और परोपकार पर आधारित है। इसीलिये इस जाति का विश्वशासन संसार के लिये सदा बरदान रहा है और रहेगा।

आर्य सभ्यता के सर्वथा विपरीत है सैमैटिक अथवा दस्यु-सभ्यता। दस्यु का अर्थ है उपक्षय या शोषण करने वाला। दूसरों का शोषण और अपना पोषण दस्युता का लक्षण है। परशोषण करके अधिक से अधिक धन प्राप्त करना तथा खाना, पीना और मौज उड़ाना और ऊपर से विश्वकल्याण की बड़ी बड़ी उदार बातें बघारना दस्यु-सभ्यता है। जितने दस्यु साम्राज्य स्थापित हुए, असार्वभौमिक तथा अल्पायु हुए, क्योंकि वे पशुबल से स्थापित किये गये थे। जब भी शोषित राष्ट्रों को अवसर मिला दस्यु साम्राज्य का भारी भार उतार फेंका। ग्रीक साम्राज्य बना और कुछ शताब्दियों में ही समाप्त हो गया। रोमन साम्राज्य बना और कुछ शताब्दियों में ही छिन्न-भिन्न हो गया। मुस्लिम साम्राज्य भी कुछ शताब्दियों में ही लुप्त हो गया। ब्रिटिश साम्राज्य भी दो शताब्दियों में ही बनकर उजड़ गया। इस समय किसी का भी साम्राज्य नहीं है, पर अमेरिका और रूस का वर्चस्व अवश्य है। आगामी सम्भावित युद्ध के अन्तिम झटके में ये दोनों राष्ट्र चकनाचूर हो जायंगे। इस बीच आर्यों को सर्वतः सुसंगठित और सुसज्ज हो जाना चाहिये ताकि आगामी प्रलयकारी युद्ध के बाद घायल संसार की चिकित्सा-

[शेष पृष्ठ २ पर]

हैं। किसी भले आदमी की चीजों को हम बेमतलब बेतरतीब कर देते और अपने बालस्वभाव का परिचय देते हैं। कभी कभी ऐसा भी होता है कि हमारे हाथों द्वारा कोई चीज टूट भी जाती है। मुझे भले प्रकार याद है कि एक बार एक दफ्तर में मैं भी इसी प्रकार इधर-उधर हाथ चला रहा था। मैंने घण्टी पर हाथ मारा, घण्टी बजी और चपरासी आ गया। मुझे कहना पड़ा कि भाई कुछ नहीं, वैसे ही घण्टी बजा दी थी। कह नहीं सकता उस समय मुझे कितनी शर्म मालूम हुई थी!

कहने का अभिप्राय यह है कि इन छोटी-छोटी बातों की वजह से हम कभी-कभी बड़ी बुरी तरह लज्जित होना पड़ता है। बेचारे उन सरकारी अफसर ने मित्रों से तंग आकर झुनझुने, गुड़िया आदि खिलौनों का प्रबन्ध किया होगा। हमें चाहिये किसी महानुभाव की कोई भी चीज कभी भी न उठावें—छुएं तक नहीं। क्या मालूम उन्होंने उस वस्तु को उस स्थान पर किस लिये रखा हो।

[नोट—उक्त लेखक महोदय ने जहाँ इस लेख में अफसर महोदय के मित्रों को मेज पर रखी हुई वस्तुएँ अस्त व्यस्त न करने की सलाह दी है, वहाँ उन्हें यह भी सलाह देनी चाहिये थी कि वे किसी 'मित्र' का इस बेरहमी से वक्त बरबाद न करें, यह भी अनैतिक है। साथ ही अफसर साहब को भी बताना चाहिये था कि वे अपनी ड्यूटी के समय फालतू आदमियों को क्यों आने देते हैं। नौकरी का समय नौकरी के लिये है, झुनझुना या गुड़ियों के लिये नहीं। ऐसा करना अफसर की सबसे बड़ी अनैतिकता है।

सम्पादक]

वेदों पर 'आक्षेप'

डा० श्री सूर्यदेव शर्मा, एम० ए० (त्रय), डी० लिट्०

पता नहीं राज पद के मद में अथवा नेतागीरी को स्थिर रखने के लिये अथवा वस्तुतः अपनी अज्ञता के कारण भारत सरकार के क़ानून मन्त्री डा० अम्बेडकर साहब यदा-कदा क्यों वेदों तथा वैदिक साहित्य के अन्य ग्रन्थों पर अनुचित तथा अविद्वत्तापूर्ण आक्षेप करते रहते हैं। अगस्त सन् १९४४ ई० में मद्रास की एक सभा में भाषण देते हुए आपने कहा था, "The Vedas are the works of the lunatics and idiots" अर्थात् "वेद जो हैं वे मूर्ख एवं पागल लोगों के बनाये हुये हैं।" इसकी सिद्धि में डाक्टर साहब ने अब तक कोई युक्ति और प्रमाण नहीं दिये। उनका दावा तो यह रहा है कि वेदों का अध्ययन वे कई बार कर चुके हैं (अंग्रेजी अनुवाद के रूप में)। लेकिन कोई विद्वान् जिसने वेदों का एक बार भी अनुशीलन किया है, कह सकता है कि डा० अम्बेडकर ने वेदों का क ख ग भी नहीं सीखा न देखा, नहीं तो जो आक्षेप उन्होंने वेदों पर किया है, वह कदापि नहीं करते। भला जिन वेदों को सृष्टि की आदि से लेकर अब तक लाखों ऋषि-महर्षि, विद्वान्, मनीषी प्राच्य और पाश्चात्य विचारक, इतने मनोयोग से पढ़ते आये उनको यदि डा० अम्बेडकर ईश्वरीय ज्ञान भी न मानें तो तर्क सिद्ध और युक्तियुक्त ज्ञान का भण्डार तो मानते ही, उन्हें 'पागलों' और 'मूर्खों' की कृति कदापि नहीं कहते।

यही नहीं, डा० अम्बेडकर ने सन् १९४६ में जो पुस्तक लिखी "Who were the Shudras ?" और जिसका हिन्दी अनुवाद "शूद्रों की खोज" नाम से अमृत बुक कम्पनी नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ, उसमें तो भूमिका में आप आर्यसमाज और वेदों पर बुरी तरह बरस पड़े हैं। पृष्ट १० पर आप लिखते हैं:—

"The Arya Samajists have done great mischief in making tne Hindu society a stationary society by preaching that the Vedas are eternal, without beginning and without end infallible and there fore, requiring no change.........I am convinced that the Hindu society will not accept the necessity of of reforming itself unlless and until this Arya Smajist ideolgy is completely destroyed"

अर्थात् "आर्यसमाज ने हिन्दूसमाज का बड़ा अहित किया है, क्योंकि उन्होंने यह प्रचार किया है कि वेद अनादि, अनन्त और अपरिवर्तनशील हैं और उन पर आश्रित हिन्दू समाज भी अपरिवर्तनशील है और रहेगा। मेरा (डा० अम्बेडकर का) दृढ़ विश्वास है कि जब तक आर्यसमाजियों की विचारधारा रहेगी, हिन्दू समाज कदापि सुधार की ओर नहीं जा सकता।"

भला जिस आर्यसमाज ने हिन्दू समाज को जड़मूल से हिला कर रख दिया, जिसके प्रचारकों ने हिन्दू समाज में प्रचलित बुराइयों पर सीधा कुठाराघात किया, वेदों के ही प्रमाण दे-दे कर हिन्दुओं से स्त्री शिक्षा, अछूतोद्धार, समानता की भावना, बाल-विवाह-निषेध, प्रचलित जाति-पाँति का विरोध आदि अनेक सुधारों का सूत्रपात किया, उसी आर्यसमाज की वेद प्रतिपादित विचार-धारा का डाक्टर अम्बेडकर सर्वथा विनाश किये बिना हिन्दू समाज का कल्याण नहीं देखते, यह कैसी आत्म विडम्बना है, कैसी अज्ञता की पराकाष्ठा है।

इसी प्रकार कुछ वर्ष पूर्व अजमेर के एक मुस्लिम विद्वान् एम० एम० जौकी ने वेदों के सम्बन्ध में एक पुस्तक प्रकाशित की जिसका नाम रखा "New searchlight on Vedic Aryans" जिसकी भूमिका सर अब्दुल क़ादिर जैसे एक उच्च राज्याधिकारी ने लिखी, इसमें २ पृष्ठ पर ही उसने लिखा है कि प्रो० मैक्समूलर के शब्दों में "A translation of the Rigveda is a task for the next century" वेदों का अनुवाद आगामी शताब्दी का काम है, अर्थात् वेद अभी अगम्य, अबोध्य और अपठनीय हैं। इसी प्रकार ७ जुलाई १९३४ तथा अनेक आगे के अंकों में "इलस्ट्रेटेड वीकली" में प्रकाशित डा० प्राणनाथ विद्यालंकार के लेखों के अनेक उदाहरण देकर मि० जौकी सिद्ध करते हैं कि—

(१) "The Rigveda is not an Indian document"

(२) "The Rigveda gives Details of all Sumerian cities."

(३) "One fifth of the Rigveda comes from the Nile."

अर्थात् (१) ऋग्वेद भारतीय ग्रन्थ नहीं है।

(२) ऋग्वेद सुमेरियन सभ्यता के नगरों का विस्तृत वर्णन करता है।

(३) ऋग्वेद का पाँचवाँ भाग नील नदी (मिस्र) के तट की रचना है।

डा० प्राणनाथजी के लेखों का उत्तर तो आर्य समाज की ओर से मैंने तथा अन्य सज्जनों ने उस समय दिया था, लेकिन हमें खेद है कि उनके लेखों को कुल्हाड़ी का बेंटा बनाकर वेद रूपी वृक्ष पर ये मियाँ जौकी लोह कुठार रूप में आघात करना चाहते हैं और इस वेद वाटिका के माली, रक्षक आर्य विद्वान चुपचाप सुनते रहते और देखते रह जाते हैं।

भला जिन वेदों के लिये प्रसिद्ध फ्रेंच विद्वान् वाल्टेयर कहता है, 'it was the most precious gift for which the West has been ever indebted to the East (Wilson's Essays: Vol. III p 304) कि "वेद सबसे अधिक मूल्यवान् देन है जो पूर्व से पश्चिम को प्राप्त हुई।" उसके लिये हमारे डा० प्राणनाथजी तथा मि० जौकी कहते हैं कि वेद भारत में नील नदी के किनारे मिस्रदेश से बनकर आया। किमाश्चर्यमतः परम् ?

इसी प्रकार वैदिक साहित्य के सम्बन्ध में लिखते हुये प्रो० मैक्समूलर ने अपनी पुस्तक "india what can it teach us ?" के पृष्ठ ८९ पर कितने सुन्दर उद्गार प्रकट किये हैं। वह लिखता है:-

"The Vedic literatre opens to us a chapter in what has been called the education of the human race to which we can find no parallel anywhere else "

अर्थात् "मानवजाति की शिक्षा के लिये वैदिक साहित्य से हमारे लिये एक ऐसा अध्याय खुलता है, जिसकी तुलना का साहित्य विश्व में अन्यत्र कहीं उपलब्ध नहीं है।

क्या वेदों के रचयिताओं को पागल और मूर्ख बताने वाले डा० अम्बेडकर जैसे महानुभाव कभी आँखें खोल कर ऐसे उद्गारों को भी पढ़ने का कष्ट करेंगे ? इस प्रकार के एक नहीं अनेक पौरस्त्य और पाश्चात्य विद्वानों के, जो कि स्वयं हिन्दू या आर्यसमाजी या वेदानुयायी नहीं हैं, वेदों के सम्बन्ध में प्रशंसोद्गार उद्धृत किये जा सकते हैं। इस समय तो मैं आर्य भाइयों से यही निवेदन करूंगा कि जिन वेदों का पढ़ना-पढ़ाना हमारा परम धर्म है और जिनके लिये हम बड़े प्रेम से निम्न पंक्तियाँ नित्य गाया करते हैं, उनपर जो आक्षेप हों उनके निराकरण के लिये सदा हम सबको प्रयत्नशील रहना चाहिये:—

"वेद भगवन् ! तुम हमारे पूर्वजों के प्राण हो।
रूप में पुस्तक के हो पर तत्व में भगवान् हो ॥"

सिंहावलोकन

मानवता का दीपक जलाओ !

श्री आनन्द स्वामीजी महाराज

आज जिस परिस्थित से गुजर रहे हैं वह बड़ी भयंकर है, चारों ओर हा-हाकार मचा हुआ है और कोई नहीं कह सकता कि कल क्या हो जायगा। मायावाद और भोगवाद के दावानल में लगभग संसार के प्राणी जल रहे हैं। परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि आप निराश हो जायें। संसार में किसी भी वस्तु के लिए न्यूनता नहीं है और यदि गत दो-तीन सौ वर्षों की अपेक्षा आज की अवस्था देखी जाय तो जीवन को सुखी बनाने की सामग्री बहुत बढ़ गई है। दुनिया में सोने की मात्रा गत दो सौ वर्षों की अपेक्षा अधिक है। कपड़े की ओर देखें तो पहले इतनी मिलें और कारखाने कहां थे? इसी प्रकार अन्न उपजाने के लिये साइबेरिया जैसे स्थानों में भी अन्न पैदा हो चुका है, और भारत की बंजर भूमि भी आबाद हो चुकी है। परन्तु देखा यह जा रहा है कि अन्न-संकट और वस्त्र-संकट बढ़ रहा है। सोना और धन अधिक होते हुए भी संसार के लोग निर्धनता की घोषणा करते रहते हैं, मुझे तो इस का एक मात्र कारण यही प्रतीत होता है कि तृष्णा बहुत अधिक बढ़ गई है। वेद भगवान कहते हैं:-

'अपां मध्ये तस्थिवांसं तृष्णाऽविदज्जरितारं मृडः सत्त्र मृडय।'

इसके अर्थ यह है कि पानी के बीचो बीच में खड़ा हूं और प्यास मे मर रहा हूँ। भगवान् मेरी रक्षा करो। ठीक आज संसार की यही अवस्था है। सुख-सम्पत्ति के सारे साधनों के जलों के बीच खड़े होकर भी चिल्ला रहे हैं कि हमारे पास कुछ नहीं रहा। तृष्णा की यह आग कदापि बुझ नहीं सकती और इस अग्नि का बढाने वाला आधुनिक काल का भोगवाद और मायावाद है। और वह पश्चिमी शिक्षा, पश्चिमी सभ्यता तथा पश्चिमी विचारधारा की देन है। एक व्यक्ति के सुधार या उद्धार तथा किसी जाति के उत्थान या राष्ट्र के निर्माण के लिये सबसे प्रथम साधन यह है कि एक ऐसी विचार-धारा चलाई जाय तो उनमें मानवता की भावनाओं को जाग्रत कर दे। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में यही विशेषता है और इसी विशेष विचारधारा का प्रभाव था कि दुनिया ने अपने जन्मकाल से लेकर आज से छह हजार वर्ष पूर्व तक बड़े सुख-चैन से जीवन व्यतीत किया।

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि भारत-वासियोंका पतन महाभारत-युद्ध से एक हजार वर्ष पूर्व प्रारम्भ हो गया था परन्तु फिर भी हमारी प्राचीन संस्कृति और सभ्यता के टूटे फूटे चिह्न इन गुजरे हुए पाँच हजार वर्षों में भी दृष्टि-गोचर होते हैं और हमारे अधः पतन की अवस्था में भी दूसरे देशों की अपेक्षा भारतीय संस्कृति मानवता की ओर अधिक ले जाने वाली है। भारत के प्रधान मन्त्री प० जवाहरलाल नेहरू ने अन्य देशों की अवस्था और आधुनिक काल की नित्य नई बढ़ती हुई समस्याओं को देखकर अहमदाबाद (गुजरात) के विद्यार्थियों के समक्ष ३१ जनवरी सन १९५१ को भाषण देते हुए कहा कि "मैं समझता हूँ कि प्राचीन भारत में आज की अपेक्षा बहुत अधिक समानता, एकता और खुशहाली थी और लोग ज्यादा सुखी थे। इसी प्रकार सरदार पटेल ने जो शब्द कहे वह यह थे—

"हमें अपनी ही संस्कृति को अपनाना चाहिये—अपनी सभ्यता को। हम अपने जीवन के लिये दूसरों की विचारधारा की भीख नहीं मांग सकते। हमारा जीवन विदेशियों की अपेक्षा सर्वथा भिन्न है।"

अब आप देखिये कि जब प्राचीन भारत अपनी संस्कृति और विचार धारा के कारण सुखी था और इसके साथ जब से हम अपनी संस्कृति को भूले हैं, तब से हम ही नहीं, अपितु सारा संसार ही दुखी हो उठा है। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य आज से ७५ वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्दजी ने यह बताया था कि मानव को सच्चा मानव बनाने वाली संस्कृति फिर जाग उठे। आज संस्कृति के सम्बन्ध में भी बहुत मतभेद है। परन्तु वेद ने इसका निबटारा कर दिया है। वेद में संस्कृति के लिए शब्द 'विश्व वारा' आता है, अर्थात् सबसे श्रेष्ठ सम्पूर्ण दोषों को हटाने वाली और सुन्दरता लाने वाली। विश्व वारा को गुण धारण और दोष-निवारण में भी प्रकट किया जा सकता। जिसके द्वारा कोई वस्तु सुन्दर बनाई जाय और उसके सारे दोष हटा दिये जायें तो वह सुन्दर संस्कृति कहलाती है। संसार पर दृष्टि डालकर देखिये कि किस जाति या देश ने ऐसी संस्कृति संसार के सामने रखी जो इस कसौटी पर पूरी उतर सके। भारत के उज्ज्वल भूत को मानने वाले तो यह घोषणा कर सकते हैं, कि उनकी वैदिक संस्कृति ने दुनिया को छह हजार वर्ष कम दो अरब वर्षों तक सुखी, सुन्दर तथा शान्ति-मय बनाए रखा, और यदि संसार फिर सुखी होना चाहता है तो इसी संस्कृति को अपनाना होगा। हमारी संस्कृति जहाँ भौतिक उन्नति की ओर ले जाती है, वहाँ आध्यात्मिक मार्ग पर भी चलाती है। शंका उठाई जा सकती है कि भोगवाद और त्यागवाद साथ-साथ कैसे चल सकते हैं? इसके लिये मैं यह कहना चाहता हूँ कि वेद ने धन, ऐश्वर्य, वैभव प्राप्त करने का आदेश दिया है साथ में यह भी कहा है कि इस में लिप्त न हो जाना। नदी के किनारे आप जायें तो आप देखेंगे कि कुछ नैया तैर रही हैं और कुछ जल में डूबी हुई हैं। जो डूब गई हैं, उनमें छिद्र हो जाने के कारण जल प्रवेश कर गया है और वह डूब गई। जो तैर रही हैं उन में छिद्र नहीं हुए, जल उन में घुस नहीं सका। वह आप भी तैरती हैं और यात्रियों को भी पार ले जाती हैं। धन उपार्जन करो। लक्ष्मी के जल में तैरो। परन्तु सावधान, तुम्हारे हृदय में छिद्र न होने पायें। छिद्र हो गया तो धन का जल मन में प्रवेश कर जायगा तब धन में डूब जाना पड़ेगा, न आप तैर सकोगे और न अन्य साथियों को पार ले जा सकोगे।

लक्ष्मी के बिना तो कोई कार्य चलता नहीं। नारायण भी लक्ष्मी के बिना पूर्ण नहीं होता क्योंकि पूरा नाम लक्ष्मीनारायण है। धन कमाओ परन्तु धन में ऐसे रहो जैसे कमल-पुष्प तालाब के जल में रहता है। जल जितना बढ़ता है कमल पुष्प उतना और ऊँचा हो जाता है, जल में डूबता नहीं? वेद भगवान् ने इस सम्बन्ध में बहुत सुन्दर आदेश दिया है। यजुर्वेद के ४० अध्याय के पहले मन्त्र में भोगवाद और त्यागवाद का साफ उपदेश है। वेद की स्पष्ट आज्ञा है कि 'त्यक्तेन भुञ्जीथा' अर्थात् त्याग भाव से भोगो। परमात्मा ने जो यह सुन्दर सृष्टि बनाई है और इसमें जो सुन्दर फल और दूध आदि अमृत बनाए हैं, नाना प्रकार का सौन्दर्य प्रकट किया है हे मनुष्य, यह सब कुछ तेरे भोग के लिए है इनका भोग कर, परन्तु त्याग भाव से भोग कर। जितना कमा सकते हो कमाओ, धन-संग्रह भी करो, परन्तु जब भारतमाता रो उठे, जब गो माता का करुणक्रन्दन सुनाई दे कि मेरी रक्षा के लिये तुम्हारे नौजवान बेटे के बलिदान की आवश्यकता है, या जब कोई विधवा माई, अनाथ बच्चा पुकार उठे कि मेरी जीवन रक्षा के लिये तेरे धन की आवश्यकता है, तब मैं कहूँ ले जाओ मेरे बेटे, ले जाओ मेरी धन-सम्पत्ति, ले जाओ मेरी मोटरें, ले जाओ मेरी जमीन और बँगले, ले जाओ मेरे शरीर के रक्त का एक-एक बूँद। यह है 'त्यक्तेन भुञ्जीथा'। यह है संस्कृति जिसका वेद आदेश देता है। इसी संस्कृति को पुनर्जीवित करने के लिए ऋषि दयानन्द के आदेशानुसार महात्मा मुन्शीरामजी ने सबसे पूर्व गुजरांवाले और फिर काँगड़ी ग्राम में गुरुकुल की स्थापना की और इस कलिकाल में प्राचीन शिक्षा-प्रणाली के वह सुन्दर दृश्य दिखलाये जिन्हें सच्चा मानव देखने के लिए तरसता रहता है। यही संस्कृति मानवता लाने वाली है। आज संसार इसीलिए दुखी है कि मानव मानव नहीं रहा अपितु दानव बन गया है। आज

शुद्धि और राष्ट्रियता

श्री वीरसेन आर्य

१५ अगस्त सन् १९४७ को हमारे स्वाधीन राष्ट्र का जन्म हुआ। यह नवजात शिशु सांप्रदायिकता की भयकर ज्वाला से चारों ओर से झुलस गया। येन-केन प्रकारेण जीवन-रक्षा की जा सकी। दोनों ओर के प्रयत्नों से किसी प्रकार आग की लपटों पर काबू पाया गया। फिर भी यह आग पूर्ण रूप से बुझ न सकी। अरबों की सम्पत्ति, लाखों के प्राण और करोड़ों के आश्रय को स्वाहा करके भी यह ज्वाला शांत न हुई किन्तु विचित्र ज्वलनशक्ति को लेकर कश्मीर के हिमाच्छादित प्रदेश को भी भयंकर रूप से सन्तप्त करने लगी और वहाँ स्थायी रूप से अपना घर बना



कर बैठ गई। यदि हमें अपने राष्ट्र का जीवन बचाना है तो साम्प्रदायिक भावों को सर्वथा मिटाना होगा। साम्प्रदायिकता का नाश सैकुलर स्टेट की घोषणा मात्र से नहीं होगा, किन्तु हमें साम्प्रदायिकता के कारण और उनके स्वरूप को भली भांति जान कर ही उस पर विजय पाने की आशा करनी चाहिए।

साम्प्रदायिक भावनायें क्यों पैदा हुईं?

विदेशी आक्रमणकारियों ने अपने राज्य के विस्तार की इच्छा से जहाँ हथियारों का प्रयोग किया वहाँ मजहब को अपनी जीत के लिए हथियारों की तरह बरता। जिस किसी को भी डरा, धमका या फुसला कर अपने वश में कर पाया उसे मजहब के नाम पर भारतीय वेश-भूषा, रीति-रिवाज, आचार, चरित्र तथा इतिहास से अलग करके अपने गोल में मिला लिया। इसलाम और ईसाई धर्मों के भारत में फैलने का यही इतिहास है। दोनो ही मजहब दुःखित आत्माओं को शान्ति देने के लिए नहीं किन्तु साम्राज्य-विस्तार की इच्छा से ही हमारे देश में फैलाए गए। नहीं तो क्या कारण है कि भोला पासी अगर इस्लाम को स्वीकार करता है तो उसको अपना भोला नाम छोड़ कर अरबी नाम अब्दुल्ला रखना पड़ता है। धोती छोड़ कर पायजामा पहनना पड़ता है। होली, दिवाली, दशहरा छोड़ कर उसे ईद, बकरईद मनानी पड़ती है। उसे रामलीला से दूर हट कर अरब के इतिहास से नाता जोड़ना पड़ता है। इसीलिए वह हसनहुसेन का मातम मनाता है। गंगा की जगह आबे-जमजम, पीपल की जगह खजूर और कोयल की जगह बुलबुल से भावुकता जोड़ता है। अपने पुरखों को अपना नहीं समझता किन्तु अरब के बुजुर्गों को ही अपना समझता है। जहाँ वह पहले अपने को विदेशियों से अच्छा समझता था, वहाँ अब अरब ब्लॉक के लोगों को अपने से अच्छा, ऊँचा और भाग्यशाली समझता है। यही उसमें पराधीनता के भाव पैदा होते हैं। जब तक भोला था तो भारत का राष्ट्रिय व्यक्ति था, किंतु अब्दुल्ला बनते ही भारतीय राष्ट्र का एक-एक चिह्न उस पर से उतार कर फेंक दिया गया। यही हाल ईसाइयत का है। वहां भी भोला से जोसफ, धोती से पायजामा या पतलून और अपने तीज त्यौहारों से अलग, चौके की जगह मेज कुर्सी, अंग्रेजी सीखने की प्रबल इच्छा, यूरोप य आचार, चरित्र में भावुकता होने के कारण वहां के निवासियों का दासानुदास होने की भावना जगती है। अन्य देशों में चाहे कुछ भी हो पर हमारे देश में तो इस्लाम और ईसाई धर्म साम्राज्यवादियों के द्वारा साम्राज्य-विस्तार के लिए ही आये। इसी लिए हमारे देश में ईसाई और मुसलमानों के रूप में विदेशियों ने पृथक् राष्ट्र ही बनाया। भारत में इस्लाम का प्रचार प्रायः भय से और ईसाइयत का लोभ से अधिक हुआ। यहां के लोगों ने आत्मतुष्टि के लिए दार्शनिक रूप में ईसाई या इस्लाम धर्म को कभी स्वीकार नहीं किया। यदि राष्ट्रियता का विरोध न होता तो समन्वयशील भारतीय दर्शन अवश्य ही उनका संग्रह भी अपने अन्दर कर लेता और वैष्णव लोग बुद्ध की तरह ईसा तथा मुहम्मद को भी अवतार मान कर अपनी सूची २६ तक बना लेते।

वे विरोधी क्यों बने?

जिन लोगों ने इस्लाम या ईसाइयत के रूप में विदेशी राष्ट्रियता को अनजाने स्वीकार कर लिया था, उनकी जब स्वराष्ट्र-भावना ने जोर मारा तो वे फिर से अपने समाज में आने के लिए बेचैन हो उठे, किन्तु जैसे ही अपने पुराने घर में प्रवेश करना चाहा वैसे ही धर्मभीरु हिन्दुओं ने जाति-पांति के किले के फाटक बन्द कर लिए। कुछ समय तक तो वे दया के लिये अनुनय विनय करते रहे, किन्तु जब कोई परिणाम न हुआ तो उस किले को नष्ट करने की प्रतिक्रिया की भावना से भरी हुई विदेशी राष्ट्रियता को कड़वी घूंट की तरह पी गए। कुछ समय तक तो वे विवशता में विदेशी भावनाओं को अरुचिपूर्वक स्वीकार करते रहे, किन्तु अरब के मौलवी और यूरोप तथा अमेरिका के पादरियों ने अपने कठिन परिश्रम से विदेशी भावनाओं में इनकी रुचि उत्पन्न कर दी।

आज वे अपने विरोधी विचारों पर पूरे दृढ़ हैं और इसी राष्ट्र में पृथक् राष्ट्र निर्माण का प्रयत्न मन, वचन तथा कर्म से करते रहते हैं। अनुदार हिन्दुओं ने पहले अपने फाटक इनके लिये बन्द कर दिये और अब उनको विदेशी तथा धर्म-विरोधी समझ कर उनसे घृणा करते हैं। ये भी अपने पुराने राष्ट्र प्रेम के भावों को भुला कर अपनी भावुकता विदेश से जोड़ बैठे हैं और अरब तथा यूरोप के राष्ट्रों को सबल और भारतीय राष्ट्र को निर्बल बनाने की चेष्टा करते रहते हैं। इस भयकर विनाश से राष्ट्र को बचाने का एक मात्र उपाय है 'शुद्धि' यह 'शुद्धि' दोनों ओर की होनी है। हिन्दुओं के हृदय में अपनों को ही विदेशी तथा विधर्मी समझ कर जो घृणा उत्पन्न हो गई है उसके स्थान पर प्रेम तथा सहानुभूति के भाव पैदा हो और ईसाई तथा मुसलमानों के अन्दर स्व-राष्ट्र की भावना जाग्रत हो जिससे वे यहाँ के वेश, भाषा, संस्कृति तीज, त्यौहार, इतिहास, पशु, पक्षी, वृक्ष, वनस्पति और नदी, पर्वतों को अपना समझ कर प्रेम करने लगें। ऐसा होने से ईसाई मुसलमानों को बहुमत का भय न रहेगा और हिन्दुओं को पचमांगी दल का भय न सतायेगा। शताब्दियों के पश्चात् अपना अपने से मिल जायेगा। यह मिलन भारतीय राष्ट्र को शक्तिशाली और सुदृढ़ बना देगा तब आप पूर्व के नेतृत्व, एशिया महाद्वीप के नेतृत्व अथवा विश्व के नेतृत्व का स्वप्न यथेच्छ देख सकेंगे।

आर्यसमाज ने इस कार्य में अपने को अग्रसर किया है। वह हर समझदार भारतीय से इस पवित्र कार्य में सहयोग चाहता है, जो कि तन, धन, मन से हो सकता है। जो जिस योग्य है उसे अपना सहयोग देने में संकोच न करना चाहिये। ——

संसार जल रहा है। परिस्थिति भयंकर है। मायावाद की विचारधारा की तरंगें अति तीव्र हो चुकी हैं। इन्सान शैतान बन चुका है। ऐसी अवस्था में वीरता इसी में है कि चाहे शत्रु चारों ओर खड़े हों, बिजलियाँ टूट रही हों, आंधियों का वेग प्रबल हो फिर भी मन इतना बलवान हो, कि वह सब इन विघ्न बाधाओं को दूर कर के पार निकल जाये। कवि ने कितना अच्छा कहा है—

वह पथ क्या, पथिक-कुशलता क्या,
जिस पथ पर बिखरे शूल न हो।
नाविक की धैर्य परीक्षा क्या,
जब धारा ही प्रतिकूल न हो।

मानवता का दृढ़ संकल्प लेकर आगे आओ और दुखी संसार को सुखी बनाओ। ऋषि दयानन्द का उदाहरण सामने रखो, जिसने केवल मानवता के लिए अपना बलिदान दे डाला। ऋषि दयानन्द ने वेद को इसीलिए अपनाया कि इसमें केवल मानवता के आदेश हैं। उसमें किसी देश विशेष का अथवा किसी एक सम्प्रदाय या फिरके का वर्णन नहीं, उसमें यह कहीं नहीं लिखा कि—क्रिश्चियन भव, मुहम्मदी भव, रशियन भव अमेरिकन भव, बल्कि उसमें तो मानवो भव लिखा अर्थात् मनुष्य बन और इसी मानवता का आदेश वेद द्वारा दिया गया है। दानवता का अन्धकार मिटाने के लिये मानवता का दीपक स्थान-स्थान पर जगा दो। ——

वैदिक गवेषणा

'हिन्दु' शब्द की व्याख्या पर वैदिक दृष्टि

श्री शिवपूजनसिंह कुशवाहा 'पथिक'

(२)

श्री सी० एस० श्रीनिवासाचारी एम० ए० तथा श्री एम० एस० रामस्वामी आयंगर एम० ए० लिखते हैं—"आर्यों के ऋग्वेद में इस बात का उल्लेख मिलता है कि ये दस्यु 'शिश्नदेवा' अर्थात् वे शिश्न और शेष की पूजा करते थे। अगर यह सत्य है तो प्राचीन द्रविड़ नाग-पूजक जाति के लोग थे।" ※

डा० बेनीप्रसादजी एम० ए०, पी-एच० डी०, डी० एस-सी० (लन्दन) प्रोफेसर राजनीतिशास्त्र, प्रयाग विश्वविद्यालय अपने मन्थ में लिखते हैं—

"मोहेनजोदड़ो में पूजा के बहुतसे लिङ्ग मिले हैं। वैदिक साहित्य में शिश्न देवताओं की निन्दा की है। इससे सिद्ध होता है कि आर्यों में पहले लिंग-पूजा नहीं थी पर वैदिक काल के बाद उन्होंने अनार्यों से शिवलिंग-पूजा ग्रहण की।

प० जयचन्द 'विद्यालङ्कार' अपने इतिहास में लिखते हैं—

"ऋक् ७।२१।५ में इन्द्र से प्रार्थना की गई है कि शिश्नदेवाः (शिश्न जिनका देवता है वे लोग) हमारे यज्ञ को न बिगाड़ें। दूसरी जगह शिश्न देवों के गढ़ (पुर) के इन्द्र द्वारा जीते जाने की चर्चा है। सर रामकृष्ण गो० भण्डारकर का मत था + कि शिश्नदेवाः से अभिप्रायः किसी आरम्भिक अनार्य जाति से है × जिसमें उस इन्द्रिय की पूजा प्रचलित रही होगी। वैदिक काल में आर्य लोग उस जाति से घृणा करते थे, पर पीछे उनके वंशजों ने उसकी वह लिंगपूजा स्वयं अपनाली।"

इससे सिद्ध होता है कि लिङ्ग-पूजा अनार्यों की देन है। आर्यों में मूर्ति-पूजा प्रचलित न थी।

जिस मोहेञ्जोदड़ो और हड़प्पा की सभ्यता पर शास्त्रीजी इतने मुग्ध हैं, वह आर्य संस्कृति नहीं है वरन् द्रविड़ादि अनार्य संस्कृति है। देखिये इतिहासवेत्ताओं की क्या सम्मति हैं—प्रो० श्री नेत्र पाण्डेय एम० ए०, एल-एल० बी० अध्यक्ष, इतिहास तथा राजनीति विभाग, प्रयाग महिलाविद्यापीठ कॉलेज, प्रयाग लिखते हैं "सिन्धु की घाटी के निवासी कौन थे? इस प्रश्न पर विद्वानों में बड़ा मतभेद है। कुछ विद्वानों के विचार से तो यहाँ के निवासी उसी जाति के थे जिसके सुमेरु के लोग थे, परन्तु कुछ विद्वानों के विचार में यह लोग द्रविड़ जाति के थे। कुछ विद्वानों का विचार है कि द्रविड़ तथा सुमेर के लोग एक ही जाति के थे।" ※

डा० राजबली पाण्डेय एम-ए, डी, लिट् प्रोफेसर, प्राचीन भारतीय इतिहास और संस्कृति विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, लिखते हैं:—

"वेदों और पौराणिक अनुश्रुतियों से यह पता लगता है कि मध्य देश से अपने प्रसार में आर्यों को पश्चिमोत्तर भारत में असुरों से काफी लड़ना पड़ा था।

असुर जाति, भाषा और संस्कृति में, प्रायः आर्यों के समान थी। युद्ध में आर्यों से पराजित होकर यह ईरान, अक्काद, सुमेर, असीरिया आदि में जा बसी। सिन्धु-घाटी की सभ्यता के निर्माता ये ही थे।" ×

श्री गङ्गाप्रसाद मेहता, एम-ए, प्रोफेसर, इतिहास विभाग, काशी विश्वविद्यालय, लिखते हैं, "......यह कोई सिन्ध और पञ्जाब में रहने वाली आर्येतर जाति थी।"

श्री सत्यनारायण दुबे, एम ए० [इति० राज०], लेक्चरार, आगरा कालेज, आगरा लिखते हैं:—"......कुछ विद्वानों का मत है कि ये द्रविड़ थे।......कभी-कभी इन्हें सुमेरियन लोगों का भाई-बन्धु बताया जाता है।" []

श्री श्याम किशोर मालवीय एम० ए०, वाइस-प्रिन्सिपल बी० एम, इन्टरमीजिएट कॉलेज प्रयाग लिखते हैं:—"...कुछ विद्वान् द्रविड़ सभ्यता को सिन्धु-घाटी की सभ्यता से सम्बन्धित बताते हैं, जिसके अवशिष्टांश हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में पाये गए हैं। ऽ

श्री भगवतशरण उपाध्याय एम० ए०, लिखते हैं:—"ऋग्वैदिक संस्कृति और मोहेन जोदड़ो आदि की द्राविड़ संस्कृति में महान् अन्तर था, जो केवल बाह्य नहीं वरन् बुनियादी और आन्तरिक था। ?

पुनः "......इस सभ्यता के निर्माता द्रविण थे और इनका नाश संभवतः आर्यों ने किया।"....‡

डा० नरेन्द्रनाथ लाहा एम० ए०, पी०-एच० डी०, पी० आर० एस० अपने "सिन्धु उपत्यका की सभ्यता और मोहञ्जोदारो" शीर्षक लेख में लिखते हैं ऽऽ—"... "भारतीय आर्यों के भारतवर्ष

※ "प्राचीन भारत" (हिन्दू काल) पृष्ठ २५ [प० गोरखनाथ चौबे, एम० ए० द्वारा सम्पादित, सन् १९४८ ई०, प्रथम संस्करण, इलाहाबाद] ।

"हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता" पृष्ठ २४ (सन् १९३१ ई० हिन्दुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण)।

"भारतीय इतिहास की रूपरेखा" जिल्द १ द्वितीय संस्करण, पृष्ठ २४४-२४५

+ वैष्णविज्म् शैविज्म् एंड माइनर रिलीजस सिस्टम्स" (स्ट्रांसवर्ग १९१३) पृष्ठ १०५।

× पं० रामगोविन्द त्रिवेदी 'वेदान्त शास्त्री' तथा पं० गौरीनाथ झा व्याकरण तीर्थ अपने "ऋग्वेद संहिता (सरल हिन्दी टीका सहित) प्रथम संस्करण, पृष्ठ ६२ में "शिश्नदेवा" का अर्थ करते हैं "अब्रह्मचारी"।

चतुर्वेदभाष्यकार पं० जयदेव शर्मा विद्यालङ्कार मीमांसातीर्थ अपने "ऋग्वेदसंहिता भाषाभाष्य" चतुर्थ खण्ड, प्रथमावृत्ति, पृष्ठ ६५४ में "शिश्नदेवाः का अर्थ उपस्थेन्द्रिय से क्रीड़ा-विलास करने वाले, कामी, नीच पुरुष करते हैं।"

देखो महामहोपाध्याय प० आर्यमुनिजी कृत "वैदिककाल का इतिहास" प्रथम संस्करण, पृष्ठ १२०-१२१

※—भारत का बृहत् इतिहास (प्रथम भाग) प्राचीन भारत, प्रथम संस्करण, पृष्ठ ५० ।

×—भारतीय इतिहास की भूमिका (प्रथम भाग), प्राचीन भारत, प्रथम संस्करण, पृष्ठ ३९।

+—प्राचीन भारत द्वितीयावृत्ति, पृष्ठ १३।

[]—प्राचीन भारत का इतिहास प्रथम संस्करण, आगरा, पृष्ठ १५।

ऽ—भारत का राष्ट्रीय इतिहास प्रथम संस्करण, प्रयाग, पृष्ठ ३४।

?—प्राचीन भारत का इतिहास "प्रथम संस्करण, पटना, पृष्ठ ३५, तथा" भारतीय इतिहास के कुछ रेखाचित्र" प्रथमसंस्करण-लखनऊ, पृष्ठ ६० से तुलना करो।

‡—प्राचीन भारत का इतिहास पृष्ठ २३।

ऽऽ—मासिक पत्रिका "गङ्गा" का "पुरातत्वाङ्क" प्रवाह ३, जनवरी १९३३ ई, तरङ्ग १ पृष्ठ मोहञ्जदारो और हड़प्पा की सभ्यता के विषय में अत्यधिक जानने के लिए पाठकों को निम्नाङ्कित ग्रन्थ देखने चाहिये—सरजानमार्शल कृत – Mohenjo-daro & the Indus Civilization,; श्री काशीनाथ दीक्षित कृत,

[शेष पृष्ठ १४ पर]

अध्यात्म

अध्यात्म क्या है ?

आचार्य श्री पं० नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ

सुनो, एक था पुरुष (परमात्मा) एक थी स्त्री (प्रकृति), दोनों में सदा प्रीति रहती थी। उनका एक पुत्र हुआ विष्णु—सृष्टि का पालनहारा, उसका भी एक पुत्र हुआ कुमार—ब्रह्मा, आगे सृष्टि चलाने वाला। उसका भी पुत्र हुआ शिव—सृष्टि का संहार करने वाला—इसी प्रकार सृष्टि बढ़ती गयी—कितनी बढ़ी, कौन गिनती कर सकता है। अब यह जो सृष्टि बढ़ी, इनमें आपस में ही वैमनस्य बढ़ने तथा रहने लगा। फिर बूढ़े बाबा को पूछे कहाँ। यादवों की भांति ये आपस में गृहकलह में ही नष्ट हो गए। जो इस संक्षिप्त कथा के मर्म को समझ कर आगे बर्तेगा वह सांसारिक प्रलोभनों में न फँसकर उस परमात्म तत्व अथवा परमार्थ तत्व को समझकर जन्म-मरण के चक्र से बच रहने का प्रयत्न करेगा। इस कहानी को जितना बढ़ाया जाय बढ़ सकता है। आओ, पहले पञ्च तत्व को समझें जिससे कि यह शरीर बनता है, फिर आत्मा इसमें अपने दलबल सहित प्रवेश करता है। पाँच ही तो तत्व हैं।

पृथ्वी (जिस पर हम रहते हैं), आप (जल), तेज (सूर्य-अग्नि आदि), वायु (हवा, जो बहती है और नाना कार्य करती है, आकाश (पोल)।

(१) पृथ्वी बनती और बिगड़ती है इसका प्रलय होता है, यह नित्य कैसे ? इसमें नानाप्रकार की रचनाएं होती रहती हैं, बनती-बिगड़ती रहती हैं। इसलिए सिद्धान्त निकला कि जो बनता है वह बिगड़ता है अवश्य।

(२) आप (जल), यह भी सूख जाता है, भाप बनकर उड़ जाता है। (३) तेज (अग्नि) प्रकट हो कर बुझ जाता है। (४) वायु (हवा) इधर से आया उधर गया, स्थिर नहीं। (५) आकाश तो अवकाश मात्र है, नाम मात्र है यह भी नहीं रहता।

इस प्रकार ये पाँच भूत नहीं रहते, नश्वर हैं। फिर यह उनसे बना हुआ शरीर नाशवान् न हो तो क्या हो।

इस प्रकार विवेक करते चलोगे तो पता चलेगा कि शाश्वत आत्मा, निराकार आत्मा ही सत्य स्वरूप है। उसी की खोज में लगना यही अध्यात्म है। अनित्य पदार्थों का सारासार विचार करके अनित्य से नित्य की ओर बढ़ना ही अध्यात्म है। यह आत्मा जन्मता है और मरता है, ऐसा मूढ़ जन ही मानते हैं। वस्तुतः उसका शरीर से सम्बन्ध होना ही जन्म है, शरीर वियोग ही मृत्यु है। वैसे वह न जन्मता है न मरता है। उस जीवात्मा के स्वरूप को समझ कर परमात्मा की ओर बढ़ना, उसके स्वरूप को जानने का यत्न करना ही अध्यात्म है। उसके जानने के लिए मार्गदर्शक गुरु चाहिए। गुरु के विना गुरुओं का गुरु परमात्मा हाथ नहीं लगता।

× × × ×

सद्गुरु के विना परमार्थ तत्व की प्राप्ति नहीं होती। छल-कपट-दम्भ-रहित हो कर भक्तिभावपूर्वक, श्रद्धापूर्वक, विनयपूर्वक सद्गुरु के पास जाना चाहिये, उनकी सेवा शुश्रूषा करनी चाहिये। जब वे प्रसन्न होते हैं तब निगूढ़ तत्वों को भी सरल करके समझा देते हैं। यही बात गीता में भगवान् कृष्ण ने कही है

तद् विद्धि प्रणिपातेन।
परिप्रश्नेन सेवया ॥
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं।
ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ॥

उपनिषद् कहती है—

तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्,
समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्।

उस परमार्थ तत्व को जानने के लिये ब्रह्मनिष्ठ श्रोत्रिय के पास ही जाना चाहिये। सेवा भी आवश्यक है। शुश्रूषु शिष्य सब कुछ पा सकता है।

गुरु जिस-जिस प्रकार बतलाये उस-उस प्रकार रहस्य जानकर, साधन-सम्पन्न होकर शम दम, तितिक्षा, उपरति को प्राप्त कर अधिकारी बने। अधिकारी बने विना विद्या नहीं आ सकती यदि थोड़ी-बहुत आई तो टिक नहीं सकती। इसीलिए प्राचीन प्रथा यही रही है कि जब कोई शिष्य, जिज्ञासु, साधक गुरु के पास जाता था तो गुरु एक दम उपदेश नहीं करता था इनकी परीक्षा भी लेता था। जब समझ लेता था कि ये विद्या के अधिकारी हैं, समझ सकते हैं, शुचि (शुद्ध) हैं, अप्रमत्त (अप्रमादी) हैं, मेधावी (बुद्धिमान) है। कष्ट सहिष्णु (तप तपने योग्य, है, अद्रोही है, (छल कपट दम्भ से नहीं आये हैं) भक्तिभाव से आये है, श्रद्धालु हैं, जिज्ञासु हैं तब उनको परमार्थ तत्व समझाता था।

आजकल शिष्य लोग गुरुओं के पास गुरु बन कर जाते हैं, निन्दक होते हैं, द्रोही रहते हैं, ऐसे शिष्यों को गुरु पहचान जाते हैं, और फिर शिष्य कोरा लौट आता है। गुरु का विद्या के साथ नष्ट हो जाना अच्छा किन्तु कुशिष्य को, अनधिकारी को विद्या देना ठीक नहीं है। अधिकारी अनधिकारी का विवेक रखना चाहिये तब जाकर विद्या फलती है, तब जाकर विद्या आगे चलती है। यही संक्षेप से अध्यात्म तत्व है।

——

आर्यजगत

—२८ अप्रैल से ४ मई तक स्त्री समाज हसनपुर (मुरादाबाद) की ओर से श्री आचार्य विश्वभवाजी की वाल्मीकि रामायण की कथा हुई और महा० शिवनाथसिंहजी त्यागी के भजन व उपदेश हुए। एक नवयुवती ईसाइन की शुद्धि तथा उसका विवाह एक आर्य नवयुवक के साथ उपर्युक्त महानुभावों द्वारा सम्पन्न हुआ, महिलामण्डल का उत्सव यज्ञ तथा कथा होती रही।

—आर्यसमाज सदर बाजार झाँसी ६ मईके साप्ताहिक सत्संग में अपने भूतपूर्व मंत्री श्री हेमराज जी भाटिया के भ्राता की असामयिक मृत्यु पर शोक सहानुभूति प्रकट करता है।

—आर्यसमाज रम्पुरा (फतेहगढ) श्री अहिवरनसिंह प्रधानाध्यापक जूनियर हाइस्कूल बुढनामऊ के प्रिय पुत्र श्री राजेन्द्रसिंह लिपिक जिला शिक्षा विभाग तथा श्री रामकृष्ण अध्यापक बेसिक स्कूल रम्पुरा की प्रिय पुत्री की आकस्मिक मृत्युओं पर महान् खेद प्रकट करता है। प्रभु मृतात्माओं को सद्गति और शोकाकुल परिवारों को धैर्य प्रदान करे।

—श्री सच्चिदानन्द आर्य की पुत्री का नामकरण संस्कार वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। उपस्थित सज्जनो ने नव बालिका को आशीर्वाद दिया।

निर्वाचन

—आर्यसमाज रसड़ा–प्रधान श्री ठाकुरदासजी और मंत्री श्री राधामोहनजी।

—आर्य स्त्रीसमाज हसनपुर–प्रधान श्रीमती हरुवती देवी आर्या। मंत्रिणी-श्रीमती प्रेमवती देवी आर्या।

सार सूचनाएँ

जिला संगठन समिति बिजनौर के निश्चयानुसार २१ मई को आर्यकुमार सभा शेरकोट (बिजनौर) में एक वादविवाद प्रतियोगिता होगी। विषय है- 'महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तो से ही विश्वशान्ति सम्भव है।'

आर्य समाजियों पर असत्य आरोप

लखनऊ से निकलने वाले राष्ट्रीय स्वयम् सेवक संघ के साप्ताहिक 'पाञ्चजन्य' के २७ अप्रेल सन् ५१ के अंक में किन्ही सरदार महीपसिंह द्वारा 'एक दृष्टिकोण' शीर्षक एक लेख प्रकाशित हुआ है। इसमें पूर्वी पंजाब लुधियाने में होने वाले हिन्दू-सिख वैमनस्य के लिये आर्यसमाजियो को भी उत्तरदायी बताया है और इस प्रकार आर्यसमाजियों पर झूठा आरोप लगाते हुए विष उगला है और लिखा है "किन्तु इसके विपरीत अकेश धारियों के कुछ प्रतिनिधि, विशेष रूप से आर्य समाजी इसके विरुद्ध प्रयास कर रहे थे। वे पंजाबी के नाम पर पंजाबी हिन्दू जनता के सम्मुख सिख साम्प्रदायिकता का हौआ खड़ा कर रहे थे। वे कह रहे थे कि अपनी मातृभाषा हिन्दी लिखाइये " "आपकी मातृभाषा पंजाबी नहीं हिन्दी है।"

उपर लिखे हुए शब्दो से प्रतीत होता है कि श्री सरदार महीपसिंहजी की दृष्टि में हिन्दी को मातृभाषा मानने वाले और उसका प्रचार करने वाले आर्यसमाजी हिन्दू सिख वैमनस्य के प्रति उत्तरदायी हैं किन्तु अकाली लोग नहीं हैं, जिन्होंने जन-गणना में हरिजन हिन्दुओ को मातृभाषा पंजाबी और धर्म सिख लिखाने के लिये विवश किया और जिन लोगो ने ऐसा नहीं किया उन्हे अनेकों प्रकार के अत्याचार सहने पड़े। सरदारजी जरा आँखें खोलें और भूपाल, लुधियाने आदि की घटनाओ पर (जो उस समय के समाचारपत्रों में मौजूद हैं) दृष्टि डाले और विचार करें कि उक्त घटनायें क्या हिन्दू सिख मित्रता की द्योतक हैं?

सरदार महीपसिंहजी ने लुधियाने के आर्यों द्वारा निकाले गये २४ मार्च के जिस जुलूस का वर्णन किया है, और महाशय कृष्ण (सम्पादक दैनिक उर्दू-प्रताप) को "प्रसिद्ध चिर सिक्ख शत्रु" आदि-आदि उपाधियों से विभूषित करके अपनी बुद्धिमत्ता का जो परिचय दिया है उससे सिद्ध होता है कि सरदारजी ने अकालियों द्वारा सुने-सुनाये झूठे प्रोपेगन्डा के आधार पर ही केवल 'एक दृष्टिकोण' जनता के सामने रक्खा है।

लुधियाने के आर्य समाजियों से पत्र व्यवहार करनेसे मालूम हुआ कि २४ मार्च को "मास्टर तारासिंह मुर्दाबाद" "केश कड़ा कंघा कृपाण, इनको भेजो पाकिस्तान," "गुरू नानक हाय हाय," "गुरु गोविन्द हाय हाय" इस प्रकार के कोई भी नारे उक्त जुलूस में नही लगाये, तथा उक्त जुलूस में किसी भी सम्प्रदाय को दिल दुखाने वाली कोई भी बात नहीं कही गई।

समझ में नहीं आता कि उक्त कथित सरदारने किस आधार पर आर्यों के प्रति ऐसे कटु शब्दोंका प्रयोग करके हिन्दू-सिखो की दृष्टि में आर्यसमाजियों को बदनाम करने का असफल प्रयत्न किया है। आप ने लिखा है कि "आर्यसमाज के कृत्यों द्वारा पंजाब के मन में सम्पूर्ण हिन्दू-विरोध का दुर्भाव उत्पन्न हुआ।"

सरदारजी आपने अपने लेख के ऊपर जो "एक दृष्टिकोण" लिखा है वास्तव में यह एक दृष्टि कोण आप व आपके अनुयायियो का ही है, जिसमे दूसरे पहलूकी उपेक्षा की गई है और असत्य तोड़े मरोड़े तथ्योंके आधार पर आर्य समाज को व्यर्थ बदनाम किया गया है।

पूर्वी पंजाब में हिन्दुओ को अकाली दल के हाथ क्या सहना पड़ रहा है, यह वहाँ के रहने वाले ही जानते हैं। जन गणना में उन लोगों की मातृभाषा पंजाबी और अपने को सिख न लिखाने पर अकालियो ने उनपर अनेक अत्याचार किये। वास्तवमें पंजाबी प्रान्त की आड़ मे अकाली सिख अपना प्रभुत्व जमाने की कोशिश करते हुए मास्टर तारासिंह को पंजाब का डिक्टेटर बनाने का स्वप्न देख रहे हैं जो नितान्त असम्भव है। राष्ट्रीय स्वयसेवक संघ के 'पाञ्चजन्य'-सम्पादक ने भी उक्त असत्य और अनर्गल लेख को अपने पत्र में स्थान देकर अपनी नैतिकता एवम् सांस्कृतिक सत्यता का परिचय खूब दिया है।

—केशवदेव शास्त्री
मन्त्री आर्य स० सांडी (हरदोई)

श्री पं० नरेन्द्रजी का भव्य स्वागत

५ मई ५१ की रात्रि को आ० स० दीवानहाल की सरक्षता में दीवानहाल में सायकाल ७॥ बजे से सार्वदेशिक सभा के प्रधान राजगुरु श्री धुरेन्द्रजी शास्त्री के सभापतित्व में देहली-निवासियों की विराट् सभा हुई। हैदराबाद के प्रसिद्ध नेता श्री नरेन्द्रजी, श्री दत्तात्रेयजी और श्री मनोहरलाल जी का आर्यसमाज दीवानहाल के मन्त्री श्री रामगोपालजी ने आर्य-जनता की ओर से स्वागत किया। नगर के समस्त आर्यसमाज, हिन्दू सभा, संस्कृत परिषद्, पुस्तक विक्रेता, आर्य कुमार परिषद्, आर्यवीरदल, आर्य अनाथालय पटौदी हाउस, स्त्रीआर्यसमाज दीवानहाल तथा अन्य संस्थाओं के प्रभावशाली कार्यकर्ताओं ने क्रमशः हैदराबाद के नेताओं को फूलमालायें भेंट कीं। जनता की अपार भीड़ ने जो हजारों की संख्या में दीवानहाल के अन्दर व बाहर खड़ी थी, तुमुल जयघोष से श्री नरेन्द्रजी का स्वागत किया। श्री नरेन्द्रजी ने अपने भाषण में हैदराबाद में समस्त जन-जागृति का श्रेय आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द को दिया। आपने कहा कि "हैदराबाद में निजामशाही के अत्याचारो से पीड़ित जनता की सहायता करके आर्यसमाज ने उसके हृदयो पर अधिकार जमा लिया है। भाषण को जारी रखते हुए श्री नरेन्द्रजी ने कहा कि दो पहाड़ो के बीच में एक छोटी नदी की भाँति बहते हुए अनेक कंकर पत्थरों से टकराते हुए आज हैदराबाद में गतिविधि के कारण वह साधारण नदी एक विशाल समुद्र का रूप धारण कर चुकी है। आज हैदराबाद में आ० स० से टक्कर को लेने वाला कोई दृष्टिगोचर नहीं होता। आर्यपुरुषों को महर्षि दयानन्द के जलाये दीपक को प्रज्ज्वलित रखना चाहिये।" जनता

बार-बार जयघोष द्वारा श्रीनरेन्द्रजी के भाषण का स्वागत कर रही थी। जनता का अवर्णनीय उत्साह देखने योग्य था।

सार्वदेशिक आ० प्र० सभा की सूचनाएं

तिथि ५।५।१९५१ (मध्यान्होत्तर) १॥ बजे, स्थान, बलिदान भवन दिल्ली।

निश्चय संख्या १७

विज्ञापन का विषय सं० १६ गोवध बन्द करने के विषय में सरकार को प्रेरणा किये जाने का विषय प्रस्तुत होकर सर्वसम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव पास हुआ।

महर्षि दयानन्द ने गोरक्षा को धार्मिक तथा आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण बताया है, और आर्यसमाज की सदा यही नीति रही है कि गोहत्या को सभी वैधानिक रीतियों से रोका जाय। आर्यसमाज को खेद है कि स्वतन्त्रता प्राप्त होने पर भी अभी गोहत्या को रोकने में कोई कार्य नहीं हुआ। अतः सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा आर्यसमाजों से साग्रह अनुरोध करती है कि सर्वसाधारण में प्रचार द्वारा और राज्य संसद में प्रेरणा द्वारा यह प्रयत्न करे कि वे कानून तथा अमलीतौर से गोवध को बन्द कराने में प्रयत्नशील हों।

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा बलिदान भवन देहली ने निश्चित किया है कि आर्यसमाज विषयक उच्चकोटि के साहित्य-निर्माताओं को वर्ष में एकबार एक अच्छा पुरस्कार देकर सम्मानित किया जाय और उत्कृष्ट साहित्य में वृद्धि की जाय। यह पुरस्कार १५००) का होगा। इस वर्ष सम्वत् २००७ अर्थात् अप्रैल १९५० से मार्च १९५१ तक प्रकाशित पुस्तकों पर पुरस्कार दिया जायगा। ले० महोदयों से प्रार्थना है कि वे अपनी कृतियों की एक-एक प्रति सभा के कार्यालय में रजिस्ट्री द्वारा भेज दें। पुस्तकें किसी भाषा में हो सकती हैं। प्राथमिक परीक्षा के पश्चात् सभा परीक्षकों के अवलोकनार्थ निश्चित पुस्तकों की अधिक प्रतियां मगाये। पुस्तकें ३१ जुलाई १९५१ तक कार्यालय में पहुंच जानी चाहियें।

सिन्धी भाषा का सत्यार्थप्रकाश

इस सभा में सिन्धी सत्यार्थ प्रकाश की लगभग २००० प्रतियाँ हैं। यह संस्करण देहली में उस समय टाइप आदि का विशेष प्रबन्ध करके सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा ने छपवाया था जब सिन्ध में १४वें समुल्लास सहित सिन्धी सत्यार्थप्रकाश के प्रवचन, विक्रय, और बाहर से मंगाने आदि पर अनुचित प्रतिबन्ध लगा दिया था और जो श्री नारायण स्वामी जी के नेतृत्व में आर्य नेताओं के सत्याग्रह के लिये सिन्ध में चले जाने और वहां बैठ जाने पर उठा लिया गया था।

सभा ने इस पुस्तक का मूल्य ४) लागत मात्र रक्खा था। अब प्रचार की दृष्टि से २) कर दिया है। सिन्धी जाननेवाले आर्य भाइयों को इस रियायत से लाभ उठाना चाहिये। गैर सिन्धी आर्य भाइयों तथा आर्यसमाजों और पुस्तक विक्रेताओं को चाहिये कि वे इस ग्रन्थ के व्यापक प्रचार में सभा का हाथ बटावें और अधिक से अधिक संख्या में इसकी प्रतियां मंगाकर सिन्धी भाइयों तक पहुँचावें। अधिक प्रतियां मगाने पर उचित कमीशन भी दिया जायगा।

ज्ञानचन्द्र, मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के

नवीन निरीक्षकों की सूची १९५१

देहरादून	श्री आचार्य बृहस्पतिजी शास्त्री, श्री संसारचन्द्रजी, देहरादून।
सहारनपुर	जिला उपसभा सहारनपुर के प्रधान या मन्त्री।
मुजफ्फरनगर	श्री सत्यप्रकाशजी एम० ए०, मुजफ्फरनगर।
मेरठ	,, रघुनन्दनस्वरूपजी, ब्रह्मस्वरूपजी, मेरठ।
बुलन्दशहर	,, नारायणसिंहजी, पहासू।
अलीगढ़	,, नाहरसिंहजी व श्री सरदारसिंहजी, जलाली।
आगरा, मथुरा	,, मोहनलालजी आर्य, आगरा।
मैनपुरी	,, मोतीलालजी वैद्य, कुसमरा।
एटा	,, रामप्रसादजी, मढ़ू।
बदायूं, नैनीताल, अल्मोड़ा, मुरादाबाद	,, रामचन्द्रजी, बदायूं।
बरेली	,, धूमसिंहजी, बरेली।
बिजनौर	,, बलवन्तराय, नहटौर।
रामपुर	,, कृष्णशरणजी, श्री सत्यदेवजी, रामपुर।
शाहजहाँपुर	,, चोखेलाल सत्यपालजी मुख्तार, शाहजहाँपुर।
पीलीभीत	,, रामबहादुरजी, पूरनपुर।
गढ़वाल, टिहरी	,, बनारसीलालजी, नजीबाबाद।
कानपुर, उन्नाव	,, रामलाल शर्मा, श्री विश्वम्भरनाथ तिवारी, कानपुर।
इटावा	,, भगवतदयालजी, अर्थना।
इलाहाबाद, मिर्जापुर	,, मातागुलामजी, कटरा प्रयाग।
फतहपुर	,, उमाशंकरजी, फतहपुर।
फर्रुखाबाद	,, विश्वम्भरनाथ तिवारी, श्री सच्चिदानन्दजी।
झांसी, जालौन, बांदा, हमीरपुर, विन्ध्यप्रदेश	,, स्वा० दिव्यानन्दजी सरस्वती, झांसी।
बनारस, गाजीपुर	,, देवदत्त शर्मोपाध्याय, श्री रघुवीरलालजी, काशी।
बलिया, आजमगढ़	,, अक्षयवरनाथजी, आजमगढ़।
जौनपुर	,, सूर्यवली पाडेजी, जौनपुर।
गोरखपुर, देवरिया	,, बालकृष्ण जोहरीजी, गोरखपुर।
बस्ती	,, हरिहरप्रसादजी, बस्ती।
गोंडा	,, ठाकुरप्रसादजी वानप्रस्थी, गोंडा।
बहराइच	,, भोलाप्रसादजी, बहराइच।
सुल्तानपुर, प्रतापगढ़	,, लालबुमारसिंहजी, कालाकांकर।
फैजाबाद	,, केदारनाथजी आर्य।
बाराबंकी, रायबरेली, लखनऊ	,, बा० हरप्रसादजी, रायबरेली।
लखीमपुर	,, शिवनारायणजी शुक्ल, खेरी लखीमपुर।
सीतापुर	,, मथुराप्रसादजी आर्य।
हरदोई	,, रघुनन्दन शर्माजी।

निरीक्षिका महिला प्रचार मण्डल १९५१

स्त्री-समाज, कन्या पाठशाला, अनाथालय तथा विधवा आश्रमों का निरीक्षण करने का अधिकार :—

१—श्रीमती शकुन्तलादेवी गोयल, खैरनगर, मेरठ—मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, देहरादून।

२— ,, हेमलतादेवीजी, खाईडोरा, अलीगढ़—बरेली, शाहजहांपुर, बदायूं, पीलीभीत।

३— ,, दुर्गादेवीजी, स्त्री समाज अलीगढ़—आगरा, मथुरा, एटा, मैनपुरी, इटावा।

४— ,, शकुन्तलादेवी, सदर बाजार मेरठ—बुलन्दशहर, मेरठ, अलीगढ़।

५— ,, गोपीदेवीजी, मुरादाबाद—बिजनौर, मुरादाबाद, रामपुर।

६— ,, कलादेवीजी, कला प्रेस, प्रयाग—प्रयाग।

७— ,, प्रियंवदादेवी व डा० पूर्णदेव सक्सेना, हरदोई—कानपुर, हरदोई, लखनऊ, लखीमपुर, सीतापुर।

८— ,, लक्ष्मीदेवीजी कन्या गु० कु० हाथरस, अलीगढ़—विशेष उत्तर प्रदेशीय समस्त समाजें।

९— ,, प्रेम सुलभावतीजी, ज्वालापुर—पूर्वीप्रान्त।

धर्मपाल विद्यालंकार, मन्त्री
आर्य प्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश, लखनऊ।

[१०वें पृष्ठ का शेष]

में आने के पूर्व सिन्धु-उपत्यका में जो भी जाति रही हो-द्रविड़ अथवा अनार्य-उससे भारतीय आर्यों और उनकी भारतीय सभ्यता शायद समसामयिक ही हो सकती है।"

सब विद्वानों के मत से स्पष्ट प्रकट होता है कि मोहनजोदारो और हड़प्पा की सभ्यता आर्यसभ्यता नहीं है। अतएव इससे सिद्ध हुआ कि लिङ्गपूजा भी वेदक नहीं है। अतएव 'सिन्धु-इन्दु' की कल्पना भी निर्मूल है।

आप लिखते हैं—"हिं कृण्वती वसुपत्नी वसूनां वत्समिच्छन्ति मनसाभ्यागात्। दुहामश्विभ्यां पयोअघ्न्येय सा वर्धतां महते सौभगाय।" [ऋ० १।१६४।२७, अथर्व० ९।१०।५ तथा ७।७३।८]

इस गोवर्णन परक मन्त्र में पूर्वार्ध का आदिम वर्ण 'हिं' है। यही यज्ञ का जीवनाधायक है, यह पूर्व कहा जा चुका है गाय भी यज्ञ का अङ्ग है, अतः उसने भी 'हिं' को धारण किया। इस मन्त्र के उत्तरार्ध का आदि वर्ण 'दु' है। ये ही दो वर्ण 'हिन्दु' यज्ञभक्त एवं गोभक्त इस जाति ने स्वीकृत किए।"

Pre-historic Civilization of the Indus Valley, डा० मेके कृत—The Indus Civilization, डा०जी० आर० हण्टर कृत—Script of Harappa and Mohenjodaro; श्री० एच० हेरास कृत—Story of two Mohenjodaro signs;—श्री एल० ए० वाडल कृत—The Indo-sumerian seals deciphered; डा० रामशङ्कर त्रिपाठीकृत—History of ancient India, डा० राधाकुमुद मुकर्जी कृत—Hindu Civilization, प० भगवतशरण उपाध्याय एम० ए० कृत प्राचीन भारत का इतिहास।"

सूचना

आर्य समाज अलीगढ़ के लिए एक ऐसे वानप्रस्थ पुरोहित की आवश्यकता है जो आर्य सदस्यों के यहां संस्कार करा सके और प्रचार का कार्य भी कर सकें। उनके भरण-पोषण व्यय उनकी योग्यतानुसार दी देगा। प्रार्थनापत्र मंत्री मन्त्री से प्रमाणित आर्यसमाज अलीगढ़ में आना चाहिए।

(मंत्री)

कन्या गुरुकुल हरिद्वार की कतिपय विशेषताएं

१—स्वास्थ्यप्रद रमणीक स्थानपर सुविशाल ब्रह्मचर्याश्रम।
२—सर्वथा निःशुल्क शिक्षा।
३—विदुषी देवियों द्वारा उत्तरदायित्वपूर्ण नियन्त्रण।
४—पोषणादि व्यय अत्यल्प।
५—सम्पूर्ण प्रान्तों की कन्याओं का एकत्र निवास।
६—हिन्दी-संस्कृत के द्वारा वैदिकधर्म की परमोच्च शिक्षा।
७—समस्त गृहकार्यों के शिक्षण की सुव्यवस्था।
८—माननीय श्रीमान् नरहरि विष्णु जी गाडगिल केन्द्रीय मन्त्री भारत सरकार द्वारा उद्घाटित आयुर्वेद विभाग में आठों अंगों सहित आयुर्वेद की बी (B) क्लास रजिस्ट्रेशन योग्यता युक्त परीक्षाओं की पूर्ण व्यवस्था।
९—सम्पूर्ण आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माण की क्रियात्मक शिक्षा।
१०—कन्याओं को सबल एवं उत्साह सम्पन्न स्वावलम्बी बनाने के लिए लाठी, तलवार, कटार, डम्बल, जमनास्टिक ओम् आदि चमत्कार पूर्ण व्यायामों का नियमित सुप्रबन्ध।
११—जीवन को शुद्ध पवित्र आस्तिक बनाने के लिए सायम्प्रातः सन्ध्योपासना एवं यज्ञ का नैत्यिक अभ्यास।

आचार्य चन्द्रावती देवी शास्त्री, प्रभाकर, वैद्य विशारदा



लखनऊ के सोल एजेन्ट—
एस० एस०, महता एण्ड क० २१ श्री रामरोड लखनऊ।

आवश्यकता

सभा प्रधान के लिये एक ऐसे परसनल असिस्टेन्ट को आवश्यकता है जो अनुभवी आर्य हों और हिन्दी का शार्टहैन्ड और टाइप का कार्य जानते हों, अंग्रेजी का भी टाइप जानना विशेष योग्यता समझी जायगी।

अवकाश प्राप्त सज्जन धर्म-सेवाभाव से यह कार्य करें तो उत्तम होगा। योग्यता आदि प्रमाण-पत्र तथा कमसे कम निर्वाहार्थ दक्षिणा सहित प्रार्थना-पत्र निम्न लिखे पते पर भेजने चाहिये।

धर्मपाल विद्यालंकार, मंत्री
आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश
लखनऊ

अनाथालय को दान

श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आगरा ५१ वर्ष से हिन्दू जाति की सेवा कर रहा है। इस में सकडों अनाथ बालक और बालिकाओं का पालन पोषण हो रहा है। हजारों अनाथ बालक शिक्षित और योग्य होकर निकल चुके हैं। अतः आप भी दान देते समय इन अनाथ बालकों को न भूलिये। अनाथ लड़कियों के लिए २४ वर्ष की आयु के वरों की आवश्यकता है। ≈) फार्म का मूल्य भेज कर फार्म मँगा कर, भर कर भेजिए।

मंत्री श्रीमद्दयानन्द अनाथालय
आगरा।

श्री आत्मारामजी अमृतसरी कृत

उपनयन संस्कार ।।।–)
कर्णवेध संस्कार ।≡)

दोनों के लिए १≈) भेज
पण्डित एण्ड कम्पनी
पो० १४१ बड़ौदा

घर बैठे डाक्टर बनें

केवल पत्र व्यवहार से ही घर बैठे D Sc का डिप्लोमा प्राप्त कर ३००) मासिक सूर्य चिकित्सा से कमायें। नियमावली मगालें
दी नेशनल क्रोमोपैथिक कालेज
२ अ० हत्ता गाजियाबाद।

उत्कृष्ट पुस्तकें

हर प्रकार की धार्मिक, राजनैतिक, उपन्यास, नाटक कविता, भजन तथा स्वास्थ्य-रक्षा और बड़े-बड़े नेताओं की जीवनी आदि हमारे यहां से मगाएँ। बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मगाए। कमीशन भी दिया जाता है। पता व डाकखाना बिल्कुल साफ लिखें।

श्यामलाल वासुदेव भारतीय
आर्य पुस्तकालय बरेली



भारी रियायत—स्वास्थ्य-वर्द्धक दोनों औषधियों पर २५ फीसदी छूट—आज ही आर्डर भेजें

च्यवन प्राश (अष्टवर्ग युक्त)

...लय की ताजी वनस्पतियों एवं शुद्ध गंगाजल से तैयार ...स, कास, क्षय, दिल-दिमाग व फेफड़े की कमजोरी, कफ ...काम में लाभकारी पौष्टिक। मूल्य ७) सेर। रियायती ...ज पृथक्।

सिद्ध मकरध्वज वटी

स्थायी स्वास्थ्य-वर्द्धक उत्तम रसायन

नपुंसकता प्रमेह व धातु सम्बन्धी कमी व कमजोरी में अति लाभकारी। मूल्य ३० गोलियां का ≈) रियायती ६) पोस्टेज अलग।

नोट :—इन दवाइयों को बीमार व तन्दुरुस्त दोनों ही सेवन कर सकते हैं।

विशेष सूचना :—संग्रहणी, जीर्णज्वर, पेट व जिगर-रोगों के प्रसिद्ध चिकित्सक नाड़ी विशारद श्री प० हरिशङ्करजी वैद्य प० मातृदत्त पाण्डेय आयुर्वेदाचार्य से इलाज के लिये म० वि० में या चौक बाजार कनखल में मिलिये या लिखिये। व्यवहार गुप्त रखा जाता है।

पता – गुरुकुल महाविद्यालय फार्मेसी ज्वालापुर जिला सहारनपुर (सूचीपत्र मुफ्त)

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ओ३म्

आर्य-मित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

संचालक—आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ

२४ मई १९५१

धर्म ही सब सुखों का मूल कारण है !

स्वतन्त्रता का अर्थ है आत्म-संयम या आत्म दमन : स्वराज्य होगया : सुराज्य होना चाहिये ।

धर्म 'परमिट' कर्म पर'मिट', परमार्थ पर मिट का पुराना राग भूलकर आज गाया जा रहा है, स्वार्थ पर मिट, चोरबाजारी पर मिट रिश्वत पर मिट, सिफारिश पर मिट और परमिट पर मिट। स्वराज्य हो गया पर सुराज्य नहीं हो पाया।

'स्वराज्य' का अर्थ है अपना राज्य और 'सुराज्य' से अभिप्राय है अच्छे राज्य का। अर्थात् अपना राज्य और अच्छा राज्य। आज अपना राज्य 'स्वराज्य' तो है, परन्तु अच्छा राज्य 'सुराज्य' नहीं है। अपना राष्ट्रपति अपना प्रधान मन्त्री अपने राज्यपाल, अपने मिनिस्टर और अपने अधिकारी। अपनी व्यवस्थापिका सभाएँ और अपना संसद। सब कुछ अपना, पराया कुछ भी नहीं, फिर भी 'सुराज्य' नहीं, अच्छे राज्य का अभाव। अच्छा राज्य क्या? वह राज्य जिसमें लोगों को खान-पान, रहन सहन शिक्षा-दीक्षा आमोद-प्रमोद आदि की समान सुविधा हो, जिसमें 'दैहिक, दैविक और भौतिक ताप न व्यापते हों, सारी जनता सुख-सम्पन्न और स्वाभिमान युक्त हो। असदाचार का विनाश और सदाचार का प्रकाश हो। 'सुराज्य' होता तो ये सब सुविधाएँ भी होतीं, परन्तु 'सुराज्य' है कहाँ?

जिस प्रकार 'स्वराज्य के बिना 'सुराज्य' नहीं उसी प्रकार सुराज्य के अभाव में स्वराज्य कैसा! जिस प्रकार 'स्वराज्य' की उत्पत्ति तप त्याग और बल-बलिदान द्वारा हुई है, उसी प्रकार 'सुराज्य' स्थापना के लिये भी तप-त्याग की आवश्यकता है। संकीर्ण स्वार्थ साधना परमिट परस्ती, रियायत हिमायत, रिश्वत, सिफारिश बिरादरी बाजी, चोरबाजारी आदि से कभी 'सुराज्य' कायम नहीं हो सकता। कानूनों की कड़ी कड़ियाँ भी 'सुराज्य' स्थापित नहीं कर सकतीं। इसके लिये सदाचार, सद्भावना और स्वतन्त्रता की आवश्यकता है। हम स्वतन्त्र हैं। स्व का अर्थ है अपने पर और 'तन्त्र'-संयम या काबू रखना। इस दृष्टि से न 'शासक' स्वतन्त्र हैं और न शासित। किसी को अपने ऊपर संयम नहीं। प्रायः सब ही आपा धापी, स्वार्थ सिद्धि और हाय माया में फँसे हुए हैं। अधिकांश लोक-सेवकों का कार्य 'उद्घाटन' करना, अभिनन्दन पत्र लेना और भाषण देना मात्र रह गया है। वे अपने गुट्ट को मजबूत बनाने में तन्मय रहते हैं। निर्वाचित सदस्यों पर केवल एक चिन्ता सवार है कि जिस प्रकार सम्भव हो उनका निर्वाचन क्षेत्र पुष्ट और सन्तुष्ट रहे, जिससे फिर उन्हें उदारतापूर्वक वोट भिक्षा मिल सके। इसके लिये उन्हें निर्वाचन क्षेत्र की मुख्य मुख्य शक्तियों की परमिट सिफारिश रियायत, हिमायत खुशामद रिश्वत आदि से यथेष्ट अर्चना करनी पड़ती है। निर्वाचन-क्षेत्र के किसी प्रभावशाली व्यक्ति पर कोई कानूनी संकट आता है तो उसके प्रतीकार या उद्धार के लिये भी सन्नद्ध रहना पड़ता है।

ऐसी दशा में कैसा 'सुराज्य' और कहाँ का सद्भाव। सुराज्य या रामराज्य श्रद्धा और सद्भावना पर स्थिर रहता है। सामान्य शासन भय के बल पर चलता है, और निकृष्ट शासन का आधार 'स्वार्थ' है। आज तप-त्याग, श्रद्धा-भक्ति या सद्भावना का लोप है। ये सब गोडसे की गोली के साथ समाप्त हुए। अनुशासन आतंक और भय की भावना गांधी प्रभुओं के साथ चली गयी। आज तो स्वार्थ की सीधी सड़क बनी है। स्वराज्य के साम्राज्य में इसी पर दौड़ लगायी जा रही है। 'स्वतन्त्रता' का अर्थ 'आत्म संयम' न रह कर उद्दण्डता, उच्छृंखलता और मनोमुग्धता हो गया है। जनता नेताओं को दोष देती है और नेता जनता को अपराधी बनाते हैं। शासक शासितों से अकड़कर चलते हैं, और शासित शासकों की परवा नहीं करते। श्रद्धा-भक्ति विहीन भय-आतंक शून्य स्वार्थमूलक परिस्थिति में जो होना चाहिये वह 'स्वतन्त्र भारत' में हो रहा है। 'सुराज्य स्थापित करने के लिये जितनी आवश्यकता जनता के ईमानदार बनने की है, उससे भी कई गुना आवश्यकता सरकारी शासकों और कर्मचारियों के सद्भावनायुक्त होने की है। जिस विश्व-कल्याणकारी धर्म को आज बुरी तरह धता बताई जा रही है वही संसार का कल्याण कर सकता है, वही 'सुराज्य'-स्थापना में सहायक और समर्थ हो सकता है। जिससे लोक और परलोक सधता है वही धर्म है। ऐसे सार्वभौम धर्म के अभाव में ही आज अधर्म की वृद्धि हो रही है और धर्म-स्थापना ही सारे अधर्मों की जड़ काट सकता है।

———

वैदिक गवेषणा

'हिन्दु' शब्द की व्याख्या पर वैदिक दृष्टि

श्री शिवपूजनसिंह कुशवाहा 'पथिक'

(३)

शास्त्रीजी ने इस वेद-मन्त्र से 'हिन्दु शब्द की कल्पना की है। आपके इस नूतन आविष्कार पर तो पारितोषिक मिलना चाहिए।

परन्तु इस मन्त्र से आपके माननीय भाष्यकार श्री सायणाचार्य को इससे 'हिन्दु' शब्द नहीं सूझा।

वेद कान्तदर्शी महर्षि दयानन्द भी इसका अर्थ करते हैं:-- (हिंकृण्वती) हिमिति शब्दयन्ती (वसु पत्नी) वसूनां पालिका (वसूनाम) अग्न्यादीनाम् (वत्सम) (इच्छन्ती) (मनसा) (अभि) (आ) (अगात्) अभ्यागच्छति (दुहम) (अश्विभ्याम्) सूर्यवायुभ्याम् (पयः) जल दुग्ध वा (अघ्न्या) हन्तुमयोग्या (इयम) (सा) (वर्द्धताम) (महते) (सौभगाय) शोभनानामैश्वर्याणां भावाय।"

अर्थात्-- 'जैसे (हिंकृण्वती) हिंकारती और (मनसा) मन से (वत्सम) बछड़े को (इच्छन्ती) चाहती हुइ (इयम) यह (अघ्न्या) मारने के न योग्य गौ (अभि, आ, अगात्) सब ओर से आती वा जो (अश्विभ्याम) सूर्य और वायु से (पय) जल वा दूध को (दुहाम) दुहते हुए पदार्थों में वर्त्तमान पृथ्वी है (सा) वह (वसूनाम्) अग्नि आदि वसु संज्ञकों में (वसुपत्नी) वसुओं की पालने वाली (महत) अत्यन्त (सौभगाय) सुन्दर ऐश्वर्य के लिये (वर्द्धताम) बढ़े, उन्नति को प्राप्त हो।"

भावार्थ--"जैसे पृथ्वी महान् ऐश्वर्य को बढ़ाती है वैसे गौएँ अत्यन्त सुख देती हैं, इससे ये गौएँ कभी किसी को मारनी न चाहियें।" ×

महर्षि दयानन्द ने यहाँ 'अघ्न्या' का अर्थ "हन्तुमयोग्या" किया है।

इस शब्द का निर्वचन यास्क मुनि ने निम्न लिखित शब्दों में किया है--

"अघ्न्या अहन्तव्या भवति" (निरुक्त ११ ४४)

अर्थात् गौ का नाम 'अघ्न्या' इस लिए है कि वह 'अहन्तव्या अर्थात् हनन करने योग्य नहीं है।

निरुक्त के टीकाकार श्री दुर्गाचार्य ने भी लिखा है--अघ्न्या कस्मात् सा हि सर्वत्रैव अहन्तव्या भवति।"

निघण्टु के भाष्यकार श्री देवराज यज्वा भी "अघ्न्या अहन्तव्या" लिखते है। यहाँ 'हिन्दु' की कल्पना तो किसी भी भाष्यकार ने नहीं की। आप लिखते हैं--"इस जाति का गो प्रेम देखिये--जब यह जाति भोजन करने बैठती है तो गोग्रास सबसे पूर्व रखती है। मरने के समय वैतरणी तरणार्थ गोदान व गोपूजन प्रसिद्ध है। पहला श्राद्ध भी गाय को ही खिलाया जाता है। इस जाति में गोस्वामियों की उच्चता तथा भगवान कृष्ण की उपासना भी गौओं के कारण से है।.... दूसरे पशुओं को अहन्तव्य न कह कर गाय को ही 'अघ्न्या' कहा जाता है। इसी लिए हिन्दुओं के मुसलमानों से झगड़े होते हैं। गो शब्द आदि वाली सब्जियाँ भी प्रायः नहीं खाई जातीं।......."

परन्तु आपका यह लेख केवल प्रदर्शन के लिए है। हाथी के दाँत दिखलाने के लिए और और खाने के लिए और होते हैं।

आप यहाँ इस मन्त्र से 'हिन्दु' की कल्पना करके गो-रक्षक बनते हैं, परन्तु यहाँ 'हिन्दु' का अर्थ 'कसाई' क्यों नहीं है ?

× "ऋग्वेदभाष्यम्" द्वितीयाष्टके तृतीयाध्यायारम्भ" पृष्ठ ६२८ (संवत् १९४१ वि० में फाल्गुन शुक्लपक्ष, प्रयाग नगर वैदिक यन्त्रालय में मुद्रित)

श्री सेठजी का पत्र

श्रीयुत सम्पादकजी, आर्यमित्र, आगरा,

नमस्ते

आर्यमित्र का अङ्क १० मई सन् १९५१ मेरे सम्मुख है। सदा की भांति इस अङ्क में भी कतिपय रोचक लेख छपे हैं। मुख्य पृष्ठ पर आपका लेख 'आर्यसमाज की शिथिलता दूर होनी चाहिये' शीर्षक बड़ा उपयोगी है। मुझे आशा है कि सार्वदेशिक सभा तथा आर्यसमाजों के कार्यकर्त्ता उस पर विचार करके उनके अनुसार कार्य करेंगे। 'जीवन ज्योति' स्तम्भ में आर्यसमाज के पुराने कार्यकर्त्ताओं की जीवनी आप निकाल रहे हैं। इससे आर्यसमाज के इस समय के कार्यकर्त्ताओं पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ेगा। 'सूक्तिसरोवर' में आपने अच्छा संग्रह प्रकाशित किया है। श्री अम्बादत्तजी शर्मा का यह संग्रह बड़ा रोचक है।

पूज्य नरदेवजी शास्त्री ने 'एक गम्भीर प्रश्न' शीर्षक लेख में यह ठीक ही लिखा है कि आर्यसमाज को अपनी समस्त शक्ति ग्रामों में ही लगानी चाहिये। उक्त लेख के नीचे ही श्री नीलकण्ठजी दिव्यप्रस्कर सिद्धान्त शास्त्री ने उन्नति के दो सुझाव हमारे सामने रक्खे हैं। उनमें से एक 'चलचित्रों द्वारा प्रचार' न केवल उपयोगी ही है वरन् कार्य में लाने योग्य भी है। उनका दूसरा सुझाव आर्यविश्वविद्यालय की स्थापना सम्बन्धी उपयोगी अवश्य है किन्तु क्रियात्मक रूप में इतनी सुविधा से नहीं लाया जा सकता। एक बड़ी कठिनाई यह है कि आम लोगों के पास धन का अभाव है और विश्वविद्यालय खोलने का काम बृहद्धन-साध्य है। दूसरे इतना धन बिना राज्य की सहायता के एकत्र होना लगभग असम्भव है। राज्य यदि धन देगा तो उसमें ऐसी शर्त लगायेगा जिससे वैदिक धर्म का प्रचार विश्व-विद्यालय द्वारा होना कठिन हो जायगा। १० वें पृष्ठ पर 'हिन्दू शब्द की व्याख्या पर वैदिक दृष्टि' शीर्षक लेख खोज के साथ लिखा गया है, परन्तु मेरी सम्मति में आपकी सम्पादकीय टिप्पणी जो पृष्ठ ४ पर छपी है इस सम्बन्ध में दरिया को कूजे में भरने का काम देती है।

भवदीय

मदनमोहन सेठ, मैनेजिंग डायरेक्टर

आर्यमित्र प्रकाशन लि०

[११ वे पृष्ठ का शेष]

और नैतिकता की धूम मचा सकती है, भ्रष्टाचार को दूर कर सकती है। आर्यसमाज का प्रचार-क्षेत्र आर्यसमाज मन्दिरों की चहार दीवारी नहीं बल्कि सारी जनता है। उसे अपनी आवाज प्रत्येक सम्प्रदाय और समुदाय तक निर्भयता और स्पष्टता के साथ पहुंचानी चाहिये। आर्यसमाज वेदों पर आधारित हैं। वेदोंकी कल्याणी वाणी दशों दिशाओं में गूँज जानी चाहिये। यही महर्षि दयानन्द का आदेश है, यही आर्यसमाज का उद्देश्य है और यही मेरी प्रार्थना है। जो लोग कहते हैं कि अब आर्य समाज की आवश्यकता नहीं रही, वे भूल में हैं। मेरी राय में तो जितनी इस समय आर्यसमाज की जरूरत है, उतनी पहले कभी न थी। अब तो आर्य भाई-बहनों को आर्य सिद्धान्तों की अमर ज्योति लेकर प्रकाश में आना चाहिये और भ्रष्टाचार, अनैतिकता एवं अधार्मिकता दूर कर संसार में सदाचार, शिष्टाचार और धार्मिकता का प्रकाश फैला देना चाहिये। इसी से जगत का कल्याण होगा, इसी से शान्ति स्थापित होगी और इसी की इस समय सबसे अधिक आवश्यकता है।

(यह अभिभाषण श्री राजगुरुजी ने पीलीभीत के तृतीय जिला आर्य सम्मेलन के अवसर पर गत २९ अप्रैल को दिया)।

'वाचा वदामि मधुमद्'

आर्यमित्र

आगरा, ज्येष्ठ कृष्णा ३ संवत् २००८ वि० गुरुवार, ता० २४ मई १९५१
दयानन्दाब्द १२६, सृष्टि संवत् १९७२९४९०५०

यस्यां पूर्वे भूतकृत ऋषयो गा उदानृचुः
सप्त सत्रेण वेधसो यज्ञेन तपसा सह।

मातृभूमि के विश्व विजेता शुभकारी हों
गुरु, गौ, वाणी, भू-सम्प्रतिष्ठा व्रतधारी हों
जब जब ऐसे नर वीरों ने जन्म लिया है
जन्म भूमि को सदा विशुद्ध पवित्र किया है

— ——— —

सुख कहाँ है ?

आज संसार दुःख क्लेश और अशान्ति का आगार बना हुआ है। लोगों ने भौतिक सुख और झूठी शान्ति को ही सब कुछ समझ रखा है। ज्यों त्यों कर रुपये इकट्ठा कर लेना और मौज उड़ाना ही आज जीवन का उद्देश्य समझा जाता है। शारीरिक सुखभोग में ही मुक्ति या निश्रेयस् और स्वर्ग माना जाता है। जितना भौतिकवाद आज है, उतना कदाचित् कभी नहीं रहा। लोक और परलोक दोनों की चिन्ता मनुष्य को नहीं है। लोकहित चिन्तन का ध्यान यदि किसी को होता तो संसार की ऐसी भयङ्कर स्थिति क्यों होती। आज संसार में जितना कष्ट है वह अधिकतर मनुष्य का ही बनाया हुआ है। मनुष्य की दानवता ही सारे अनर्थों की जननी है। भौतिक भोगों का भूखा मानव आज खुदगर्जी में लिप्त स्वार्थ साधन में अपनी सारी शक्ति लगा रहा है इस समय उसे न ईश्वर का ध्यान है और न धर्म का। यदि कहीं कोई ईश्वर को याद भी करता है तो अपने भौतिक सुख साधनों की कामना में शारीरिक भोगों की पूर्ति इच्छा से। हे प्रभु मेरी नौकरी बनवा दे, मुझे कार दिलवा दे, मेरे घर में धन के ढेर लगा दे, मेरे शत्रुओं को मार दे जिससे मेरे भौतिक भोगों के मार्ग में कोई कंटक शेष न रहे। ऐसे ईश्वर-भक्तों ने यह समझ रखा है कि ईश्वर उनके हाथ की कठपुतली है, अतः उससे वे जो कुछ माँगेंगे वही उन्हें प्राप्त हो जायगा। यह है आज की ईश्वर भक्ति। इसी प्रकार अपने स्वार्थ की सिद्धि में सारी शक्ति लगा देने का नाम धर्म मान लिया गया है। भयङ्कर पापाचार के पश्चात् किसी को कुछ दे दिला दिया, मन्दिर मठ या धर्मशाला बनवा देना अथवा तीर्थ यात्रा कर आना हमारी धार्मिकता है। न हम ईश्वर को जानते हैं और न धर्म को मानते हैं। फिर भी ईश्वर भक्ति और धर्माचार का ढोंग दिखाते हैं। सच्चा सुख और वास्तविक शान्ति आडम्बर में नहीं, सत्य में है हृदय की विशुद्धता में है। हृदय शुद्ध नहीं तो हमारे कार्यों और व्यवहारों में शुद्धि किस प्रकार आ सकती है। मन की पवित्रता ही जीवन की पवित्रता है। पवित्रता और विशुद्धता में ही सुख और शान्ति का निवास है। वास्तविक सुख-शान्ति के लिये जीवन को पवित्र बनाना अनिवार्य है। जीवन की पवित्रता का अर्थ है मन, वचन और कर्म तीनों में पवित्रता। जो लोग शरीर का आराम पहुँचाना ही सुख समझ बैठे हैं, वे सचमुच सुख का अर्थ नहीं समझे। अशान्त आत्मा या मलिन मन को लेकर कोठियों और कारों में विहार करना कैसे शान्ति का साधन कहा जा सकता है। अपवित्रता या मलिनता मन को दूषित कर देती है। तन की स्वच्छता, स्वस्थता और दृढ़ता भी आवश्यक है परन्तु मन तथा आत्मा के अशुद्ध होते हुए शरीर का सुख कभी शान्तिदायक नहीं हो सकता। सच्ची शान्ति और वास्तविक सुख के लिये मन और आत्मा की पवित्रता की बड़ी आवश्यकता है, जो ईश्वर भक्ति और धर्माचरण से ही सम्भव है। ईश्वर और धर्म की भावना ही मन और आत्मा को पवित्र कर सकती है आज मन और आत्मा की पवित्रता की साधना को कार्यान्वित करने के लिये कोई उपाय नहीं किया जा रहा। शिक्षा पद्धति में ऐसी बातों के लिये कोई स्थान नहीं। सरकार इन बातों का सुनना भी साम्प्रदायिकता समझती है। जीवन के लिये जिन बातों की अत्यन्त आवश्यकता है, दुःख है कि उन्हीं की अवहेलना की जा रही है। और ऐसी हालत में स्वप्न देखे जा रहे हैं, शान्ति एवम् सुख के। यह कैसे आश्चर्य की बात है।

————

आर्यसमाज की सवेतन सेवा

जो लोग वेतन या निर्वाहार्थ लेकर आर्यसमाज की सेवा करते हैं, उन्हें प्रायः अच्छी दृष्टि से नहीं देखा जाता। जहाँ यह ज्ञात हुआ कि अमुक आर्य कार्यकर्त्ता कुछ लेता है, वहीं उसके सम्बन्ध में लोगों का दृष्टिकोण बदला। यानी वेतन या निर्वाह के नाम पर कुछ लेना ऐसा भयङ्कर अपराध है, जो समाज में सहन नहीं किया जा सकता। इस भावना की प्रतिक्रिया का प्रभाव भी स्पष्ट है। सुयोग्य तथा विद्वान् कार्यकर्त्ता आर्यसमाज में कार्य करने के लिए नहीं आते। क्योंकि अवैतनिक कार्य करने का आडम्बर वे रच नहीं सकते और लेकर कार्य करने में जो अपमान होता है, उसे सहन करने की उनमें शक्ति नहीं। फलतः आर्यसमाज अच्छे कार्यकर्त्ताओं से वंचित रह जाता है। किसी समय अछूतों के सम्बन्ध में आर्यसमाज की सब से प्रबल युक्ति यह थी कि जब तक कोई अछूत 'हिन्दू धर्म' में रहता है, तब तक उसे पास नहीं बिठाया जाता, परन्तु ज्यों ही वह ईसाई या मुसलमान बन जाता है, त्यों ही उसे आग्रहपूर्वक स्पर्श करते और बैठने के लिये बढ़िया से बढ़िया स्थान देते हैं। आर्यसमाज की यही युक्ति हमें इस समय याद आरही है। जब तक कोई आर्य विद्वान् आर्यसमाज की सेवा में रहता है तब तक उसे अधिकार नहीं दिये जाते, परन्तु यदि वही विद्वान् आर्यसमाज के बाहर किसी संस्था में नौकरी कर लेता है तो उसे पकड़ पकड़ कर अधिकारों की कुर्सी पर बिठाया जाता है। मतलब यह कि आर्यसमाज की सवेतन सेवा में रहने के कारण तो उसमें सद्भावना नहीं थी, परन्तु इसलामिया स्कूल का हेडमास्टर बन कर वही व्यक्ति देवता बन गया। कैसा विचित्र तर्क है। कहा जाता है कि सवेतन सेवा में रहने वाले कार्यकर्त्ता अपनी संस्था के साथियों के साथ कनवैसिंग प्रपंच रच कर एक गुट बना लेते हैं। हमारी राय में ऐसा करना अनुचित है। जो व्यक्ति ऐसा करता है उसे दण्ड दिया जाना चाहिये। परन्तु वह सामाजिक या वैधानिक अधिकारों से क्यों वंचित हो। फिर अगर 'कनवैसिंग' अपराध है, तो वह तो आर्यसमाज की बड़ी से बड़ी सभा संस्थाओं से लेकर छोटी से छोटी सभाओं के निर्वाचन के समय दिन दहाड़े होते हैं, और उनमें कोई हानि नहीं समझी जाती। हम तो समझते हैं सवेतन समाज सेवक के सम्बन्ध में केवल इतना ही प्रतिबन्ध होना चाहिये कि जब उसके व्यक्तिगत सम्बन्ध का कोई प्रश्न सभा या समिति में प्रस्तुत हो तो वह उसमें परोक्ष या प्रत्यक्ष रीति से भाग न ले। अपने इस सुझाव की ओर हम आर्य जनता का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट करना चाहते हैं। सवेतन सेवा को 'जलील' समझ कर उससे सम्बन्धित व्यक्तियों के विरुद्ध हाथ उठा देना तो एक साधारण-सी बात है, परन्तु इस हाथ उठा देने के कारण समाज का जो भयङ्कर अहित हो रहा है, उस पर विचार करना बड़ा कठिन है। कैसे आश्चर्य की बात है कि किसी सभा-समिति से चवन्नी या अठन्नी मासिक चन्दा देने वाले सदस्य तो धर्म के धर्म या समाज के ठेकेदार समझे जायें, और यदि उनमें से ही कोई निरवहार्थ वेतन लेकर त्यागपूर्वक कुछ कार्य करे तो वह अनाप्त होकर समस्त अधिकारों से वंचित कर दिया जाय। मान लीजिये समाज का जो सभासद् आठ आने महीने देता है यदि वही किसी शिक्षण संस्था का अध्यापक हो जाय और डेढ़ सौ मासिक वेतन लेने के बदले सौ रुपये ही ले—

पचास का त्याग करे, तो उसका आदर चवन्नी चन्दा देने वाले की अपेक्षा बहुत कम रह जायगा, क्योंकि वह वेतन लेता है। भले ही इस वेतन के साथ पचास रुपये मासिक त्याग और हार्दिक सद्भाव है। आर्यसमाज के इस प्रकार के नियमों और विधानों ने भयङ्कर अनर्थ किया है। सैकड़ों सुयोग्य व्यक्ति आर्य संस्थाओं में न आकर दूसरी संस्थाओं में चले गये। उन्हें तो अन्य संस्थाएँ मिल गयीं, परन्तु आर्यसमाज सुयोग्य कार्यकर्त्ताओं की खोज में अब तक आँखें फाड़-फाड़ कर देख रहा है, और देखता रहेगा।

आधुनिक शिक्षा-पद्धति

आधुनिक शिक्षा-पद्धति के सम्बन्ध में यह बलवती धारणा थी कि भारत के स्वतंत्र होते ही उसमें आमूल चूल परिवर्तन होगा, परन्तु स्वराज्य होने पर भी इस दिशा में कोई प्रगति नहीं दिखाई दी। यह ठीक है कि केवल दो-चार वर्षों में ही शिक्षा पटल एक दम नहीं बदला जा सकता। परन्तु फिर भी उसमें सुरुचिपूर्ण एवं उपयोगी परिवर्तन होने के कुछ न कुछ चिह्न तो दिखाई देने सकते हैं। खेद है ऐसा नहीं हो रहा। शिक्षा-संस्थाओं के नाम 'हायर' या 'लोअर' कर देने से उनका स्वरूप समझने में उलझन तो पड़ गई है, परन्तु शिक्षाविधि की आत्मा में कोई तब्दीली नहीं हो पायी। हम तो देखते हैं स्वतंत्र भारत के विद्यार्थियों में जिस नियमन और अनुशासन की आवश्यकता है वह उनमें नहीं है। अलीगढ़ की उस महा भयंकर दुर्घटना ने तो वर्तमान शिक्षा-विधि के खोखलेपन को और भी अधिक स्पष्ट कर दिया है। शिक्षा का आदर्श और उद्देश्य छात्रों की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति करना है। परन्तु इस दिशा में क्या हो रहा है। कोर्स के नियत पोथों को रट-रटाकर उपाधियाँ प्राप्त कर लेना कभी शिक्षा का आदर्श नहीं माना गया। यदि उपाधियाँ प्राप्त करना ही शिक्षा का आदर्श होता तो कोई उपाधिधारी किसी प्रतारणा या प्रवंचना में लिप्त दिखाई न देता। परन्तु ऐसा नहीं है। कितने ही उपाधिधारी लोग नैतिकता की दृष्टि से कुछ ऊँचे नहीं कहे जा सकते। शिक्षा वही है जिससे मनुष्य का नैतिक स्तर ऊँचा उठता, उसमें इनसानियत आती और उपर्युक्त त्रिविधि शक्तियों को बल मिलता है। हम जानना चाहते हैं कि शिक्षा-विभाग के विधाता गण शिक्षा-विधि को वास्तविक रूप देने के लिये क्या कर रहे हैं? विद्यार्थियों की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति के लिये कौन-कौन से साधन काम में लाए जा रहे हैं? शिक्षा-पटल में नैतिकता या नागरिकता के सिद्धान्तों को कहां तक समाविष्ट करने की चेष्टा की गई है? क्या स्वतंत्र भारत की सरकार का शिक्षा-विभाग इन प्रश्नों का उत्तर देना अपना कर्तव्य समझेगा।

महर्षि दयानन्द-कीर्ति-मंदिर

पोरबन्दर के सेठ श्री नानजी भाई कालिदास की गणना देश के उन दो-चार दानवीरों में की जा सकती है जिन पर उचित गर्व किया जा सकता है। दानवीर श्री सेठ मेहताजी अब तक आर्य संस्थाओं को साठ लाख रुपया दान दे चुके हैं। राष्ट्रिय संस्थाओं को भी आपने पर्याप्त दान प्रदान किया है। सब मिलाकर आपके दान की सूची एक करोड़ के लगभग पहुँचती है। टंकारा में, जहाँ महर्षि दयानन्द का जन्म हुआ था, महर्षि दयानन्द-कीर्ति-मन्दिर निर्माण कराने के विचार से हाल ही में एक डेपूटेशन सेठजी से मिला। हर्ष की बात है कि इस पवित्र कार्य के लिये सेठजी ने डेढ़ लाख रुपया दान दिया है, और गत १५ मई को एक दान-पत्र लिखकर राजनियमानुसार उसकी रजिष्ट्री भी करा दी है। सेठजी ने इस कार्य के लिये जो मान्य ट्रस्टी नियत किये हैं, उनके नाम हैं—सर्व श्री राजाधिराज श्री उम्मेदसिंह शाहपुरा, कुँवर चाँदकरण शारदा, प० आनन्दप्रियजी, श्री अर्जुनदासजी श्री गिरधर भाई गोविन्दजी मेहता, प्रधान आर्य समाज, टंकारा, कुमारी सविता बहन एन० मेहता, आचार्या, आर्य कन्या गुरुकुल पोरबन्दर और श्री अर्जुन भाई पटेल, प्रोप्राइटर पटेल ब्रदर्स० जामनगर। श्री सेठ मेहता ने तो इस कार्य के लिये डेढ़ लाख रुपया प्रदान किया ही है महर्षि के अन्य भक्तों को भी एतदर्थ यथाशक्ति आर्थिक सहायता प्रदान करनी चाहिये, जिससे दयानन्द कीर्ति-मन्दिर-निर्माण-कार्य बड़े विशाल रूप में शीघ्रतापूर्वक सम्पन्न हो सके।

आर्य उप-प्रतिनिधि सभाएं

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत प्रदेश के प्रत्येक जिले में आर्य उप-प्रतिनिधि सभाएँ स्थापित करने का विधान है। कितने ही जिलों में आर्य उप-प्रतिनिधि सभाएँ स्थापित हुई भी हैं। हम चाहते हैं कि प्रदेश का ऐसा कोई जिला न रहना चाहिये जिसमें आर्य उप-प्रतिनिधि सभा स्थापित न हो। इन उप-प्रतिनिधि सभाओं का कर्त्तव्य बहुत बड़ा है। ये सभाएँ चाहें तो सारे प्रदेश में नव-जीवन सचार कर सकती हैं। प्रत्येक उप-प्रतिनिधि सभा को चाहिये कि वह अपनी सारी शक्तियाँ समेट कर गाँव गाँव में आर्य-समाजों की स्थापना करे और प्रयत्नपूर्वक उन्हें सजीव बनावे तथा रचनात्मक कार्य करने की ओर प्रेरणा दे। अगर ये उपसभाएँ उत्साहपूर्वक ठीक-ठीक कार्य करें तो प्रत्येक जिले में सैकड़ों आर्यसमाजों की स्थापना हो सकती है जो जनता की सारी प्रतिकूल परिस्थिति को आसानी से पलट सकती है। यह समय योजना बनने का नहीं बनी-बनायी योजनाओं को दृढ़तापूर्वक कार्यान्वित करने का है। आर्य-समाज ने यह किया, वह किया अमुक नेता या कहता है, त्यों कहता है, ऐसी बातों की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है काम करने की। यदि जिला उप-प्रतिनिधि सभाएँ कार्य करने में जुट जाय तो एक साल में ही आशातीत सफलता हो सकती है। क्या जिलों के आर्य भाई-बहन हमारी इस आवश्यक प्रार्थना को ध्यानपूर्वक सुनकर उसे कार्य रूप में परिणत करने का प्रयत्न करेंगे।

दयानन्द-पुरस्कार

इन स्तम्भों में सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा से कई बार प्रार्थना की जा चुकी है कि वह ऋषि दयानन्द की स्मृति में एक साहित्य-पुरस्कार की स्थापना करे। यह पुरस्कार प्रतिवर्ष सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ पर प्रदान किया जाय। हर्ष की बात है कि सभा का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ और उसने एक ऐसे पुरस्कार की स्थापना भी की। यह पुरस्कार १५००) का होगा और इस वर्ष अर्थात् अप्रेल १९५० से मार्च १९५१ तक प्रकाशित पुस्तकों पर दिया जायगा। लेखकों को चाहिये कि वे इस अवधि में प्रकाशित अपनी पुस्तकों की एक-एक प्रति सभा-कार्यालय में रजिस्ट्री द्वारा भेज दें। पुस्तकें किसी भी भाषा में हो सकती हैं। प्राथमिक परीक्षा के पश्चात् सभा परीक्षकों के अवलोकनार्थ निश्चित पुस्तकों की प्रतियाँ मँगाएगी। ऐसी सभी पुस्तकें ३१ जुलाई १९५१ तक सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में देहली पहुँच जानी चाहिएँ। सार्वदेशिक सभा ने दयानन्द पुरस्कार का निश्चय कर वास्तव में उपयोगी साहित्य अभिवृद्धि के लिये प्रशंसनीय कार्य किया है। सभा को यह तो पहले ही प्रकाशित कर देना चाहिये कि वह किन-किन विषयों की पुस्तकों पर पुरस्कार देगी। पुस्तकों को आर्यसमाज तक ही सीमित रखना ठीक नहीं है। जिस विद्वान् की भी उपयुक्त पुस्तक हो उसे ही इनाम मिलना चाहिये। पुरस्कार-समिति में विशेषज्ञ विद्वान् ही रक्खे जायं, इधर-उधर के लोग नहीं। ऐसा करने से दयानन्द-पुरस्कार के गौरव और क्षेत्र दोनों के ही व्यापक होने में उचित सहायता मिलेगी और यह पुरस्कार अधिकाधिक लोकोपयोगी सिद्ध होगा।

—आप किसी पर क्रोध इसीलिए करते हैं, कि वह आपकी इच्छा के विरुद्ध कोई कार्य करता है। फिर आप अपने भीतर स्थित षड् रिपुओं पर क्रोध क्यों नहीं करते जो पद-पद पर आपको कष्ट पहुँचाते और आपको शुभ कार्यों से रोक पाप कर्मों की ओर ले जाते हैं।

बाल-विनोद

प्रश्न पहेली

एक रईस के यहाँ चालीस घोड़े थे। उसकी घुड़साल नीचे दिये चित्र के समान बनी थी।

५	५	५
५		५
५	५	५

घुड़साल का दरोगा एक एक कमरे में पाँच-पाँच घोड़े बाँधता था। रईस सुबह-शाम घुड़साल में जाता और हर एक लाइन में १५ घोड़े गिन लेता। एक बार दरोगा के किसी रिश्तेदार ने अपने लड़के की शादी के लिए ४ घोड़े माँगे। दरोगा ने मालिक से बिना पूछे ही ४ घोड़े मंगनी दे दिये और शेष ३६ घोड़ों को ऐसी तरकीब से बाँध दिया कि जब शाम को रईस ने आकर घोड़ों की गिनती की तो हर एक लाइन में १५ घोड़े मौजूद थे। बताओ दरोगा ने घोड़े किस तरह बाँधे थे।

शादी में उस आदमी को लड़के की सुसराल से ८ घोड़े दहेज में मिले। उसने रईस के चारों घोड़े वापस कर दिये और दरोगा से कहा कि हमारे ८ घोड़ों को भी अपने यहाँ रखलो। दरोगा ने वे ८ घोड़े भी ले लिए और अड़तालीसों घोड़ों को भी ऐसी तरकीब से बाँध दिया कि गिनने पर हर एक लाइन में पन्द्रह ही घोड़े थे। बताओ दरोगा ने दुबारा घोड़ों को किस तरकीब से बाँधा। सही उत्तर भेजने वालों के नाम प्रकाशित किये जायगे।

भानू दादा के नाम पत्र

१

मैं मिशन स्कूल में पढ़ता हूँ। वहाँ पढ़ाई शुरू होने से पूर्व जो प्रार्थना होता है, उसमें आसमानी बाप से रोज की रोटी माँगी जाती है। आसमानी बाप से मतलब क्या परमात्मा से है? क्या ईसाइयों का परमात्मा रोटी से बढ़ कर और कोई चीज नहीं दे सकता?

—उमेशचन्द्र गौड़

[ईसाइयों का परमात्मा कोई दूसरा नहीं है। वे ऐसा समझते हैं, तो उनकी भूल है। खैर, ईसाइयों का परमात्मा रोज की रोटियों से अधिक कुछ दे सकता हो, या न दे सकता हो, परन्तु वैदिक धर्मावलम्बियों का परमात्मा तो अतुल वैभवशाली और सर्व शक्तिमान है। वह तो अपने भक्तों का सब कुछ दे सकता और देता है। तुम उससे सायं प्रातः सन्ध्या के मन्त्रों द्वारा सैकड़ों वर्षों का स्वस्थ सुखी जीवन और सद्बुद्धि प्रदान करने की प्रार्थना किया करो। सद्बुद्धि मिल जाने पर फिर तुम्हारे लिए किसी चीज की कमी नहीं रहेगी, सब कुछ पैदा कर सकोगे।]

२

मेरे घर पर पढ़ाने वाले गुरु जी आर्यवीर दल के नेता हैं। वे पढ़ाते तो खूब है, और मैं परीक्षा में कक्षा भर में प्रथम आता हूँ, परन्तु धर्म में बिलकुल शून्य आता हूँ।

—कृष्णकुमार, बाराबंकी

[धर्म में शून्य आना तो अच्छा नहीं है। आर्यवीर दल तो एक सैनिक संगठन है, जो धर्म की रक्षा के उद्देश्य से ही बनाया गया है। उसके नेता से तो धर्म-रक्षा की जितनी आशा की जा सकती है, उतनी धर्म शिक्षा की नहीं। धर्म शिक्षा के लिए तुम्हें किसी धार्मिक व्यक्ति को गुरु बनाना चाहिए। समाज के सत्सङ्गों में जाना चाहिए और आर्योद्देश्य रत्नमाला, व्यवहार-भानु आदि छोटी-छोटी पुस्तकों का स्वाध्याय करना चाहिए। धर्म से शून्य तो कोई भी काम अच्छा नहीं।]

उत्तरदाताओं के नाम

पूर्व प्रकाशित नामों के अतिरिक्त निम्नलिखित बालकों ने ५-४-५१ के अङ्क में प्रकाशित गणित पहेली के सही उत्तर और भेजे है—

सर्वश्री नरेन्द्रप्रतापसिंह, रायपुर (मध्यभारत); केदारनाथ गुप्त पीलीभीत, कामताप्रसाद आर्य सोहमदी (लखीमपुर); उर्मिला सेठ, आगरा, श्री कृष्णसिंह, सिधुआ (देवरिया) धर्मेन्द्र आर्य वलिगमनगर (एटा), जुहीराम आर्य, चुनार, कुसुमलता अवस्थी, करनपुरदत्त (फर्रुखाबाद)।

महिला-मण्डल

भूतों का भय

श्रीमती तारादेवी वर्मा, बी० ए०

योतो भूतों का भय हमारे देश में ग्राम-ग्राम और घर-घर में घुसा हुआ है। क्या शिक्षित और क्या अशिक्षित सभी इस कल्पित भयसे इतने भीत रहते हैं कि देखकर आश्चर्य होता है। परन्तु महिला-समाज ने तो इस दिशामें पराकाष्ठा करदी है। उसके लिए तो घर बाहर कदाचित् ही कोई निर्बाध स्थान हो, जहाँ वह निसंकोच जा-आ सके और अपने बच्चों को आने जाने दे। चौराहे पर, तिराहे पर, पीपल के नीचे, पास पड़ोस या रास्ते में बनी कब्र के पास, पथवारी के पीछे, घाट पर, यहाँ तक कि घर में भी उन्हें भूत, प्रेत, चुड़ैल, सैयद, मियां, मदार किसी न किसी की सत्ता सर्वत्र सताती रहती है। वे स्वय तो इस अज्ञान जनित निराधार भय से डरती ही हैं, अपनी सन्तानों को भी डरपोक और कायर बना देती हैं। मैंने अनेक घरों में देखा है, बच्चे घर के कमरों तक में अकेले घुसते हुए डरते हैं। वे अबेर-सबेर बिना किसी को साथ लिए पेशाब करने तक नहीं जा सकते। दूध पीकर घर से बाहर न जाना, बाजार से खाने पीने की वस्तु लेकर उस पीपल के पास होकर मत आना, नए कपड़े पहन कर अमुक कब्र के पास से मत निकलना इत्यादि निराधार विभीषिकाएँ बच्चों के हृदयों में इन माताओं द्वारा ठोक ठोक कर घुसा दी जाती हैं। हमारी ग्रामीण बहनें तो घरमें किसी बच्चे के रोगी हो जाने पर उस रोग का हेतु भी भूत-प्रेत की बाधा चुड़ैल की झपट, सैयद की खोर या भुमिया बाबा का फेरा ही मानती हैं। फलतः वे रोग की चिकित्सा किसी योग्य वैद्य या डाक्टर से न कराकर, ओझा, फकीर, भगत, स्याने आदि से झाड़-फूक ही कराती रहती हैं और अनेक बार इस मूर्खता का दुष्परिणाम भोगती हैं।

मैंने कई बार ऐसी भोली बहनों से पूछा—आखिर जिस भूत-प्रेत जिन्न या चुड़ैल से तुम इतना डरती हो, उसे तुमने कभी अपनी आँखों से भी देखा है। उसपर उत्तर 'नहीं' में ही मिला। कुछ अर्ध शिक्षिता बहनों ने तर्क दिया—"हम हवा को आँखों से नहीं देख पाते, तो क्या मानलें हवा है ही नहीं। गर्मी-सर्दी भी आँखों से दिखाई नहीं देतीं, पर क्या ये चीजें हमें कष्ट नहीं पहुचाती। मैं उन बहनों की बात मानती हूँ, ऐसी चीजें भी हैं, जो दिखाई नहीं देतीं, पर उनका प्रभाव हमपर पड़ता है। पर दलील देने वाली बहनों ने यह नहीं सोचा कि हवा है, तो उसका अनुभव मनुष्य मात्र बल्कि कहना चाहिए प्राणि मात्र को होता है। गर्मी-सर्दी भी पौराणिक, आर्य-समाजी, मुसलमान, ईसाई पारसी, जर्मन, रूसी, अमरीकी, बूढ़े, बालक गाय भैंस और पेड़ पौधों तक सबको सताती है। पर क्या भूत-प्रेतों के सम्बन्ध में भी यही बात कही जा सकती है? यदि भूत-प्रेत नामकी कोई चीज है, तो वह अंग्रेजों को जापानियों को अथवा भारत में ही जो लोग उन्हें नहीं मानते उनको क्यों नहीं पीड़ा पहुचाती। अपने न मानने वालों और खण्डन करने वालों को तो विशेष रूप से त्रास पहुचाकर उन्हें उनपर अपनी सत्ता और शक्ति का प्रभाव जमाना चाहिए। पर यह कम आश्चर्य की बात है कि भूत-प्रेत अपने मानने और पूजने वालों को तो सताते हैं और गालियाँ देने वालों से कुछ नहीं

स्वास्थ्य-सुधा

गरमियां और गरम चाय

कविराज श्री शिवसिंह, आयुर्वेदाचार्य

प्रायः प्रत्येक अच्छे पत्र में आप चाय का विज्ञापन देखेंगे—'गर्मियों में गरम चाय ठण्डक पहुँचाती है।' कुछ तो बिना समझे-बूझे ऐसे विज्ञापनों से आकृष्ट होकर और कुछ पश्चिमीय सभ्यता का अन्धानुकरण करते हुए अनेक लोग इस भीषण ग्रीष्मकाल में भी चाय पीते हैं। हम यह नहीं सोचते कि पश्चिमी देशवासी जो गर्मियों में भी चाय पीते हैं, उनके देश के वातावरण और भारत के वातावरण में क्या अन्तर है। वस्तुतः गर्मियों में गरम चाय ठण्डक पहुंचाती है यह एक वैसा ही भ्रम है, जैसे कुए का पानी जाड़ों में गरम और गर्मियों में ठण्डा जान पड़ता है। कुए के पानी का तापमान जाड़ों में बाहरी सर्दी की अपेक्षा अधिक होता है, इसीलिये वह उन दिनों में गरम जान पड़ता है। इसी तरह गर्मियों में वह बाहरी गर्मी की अपेक्षा ठण्डा जान पड़ता है। वैसे न जाड़ों में कुओं के नीचे आग जलाई जाती है और न गर्मियों में उनमें बरफ डाली जाती है। यही हाल गरम चाय का है। गर्मियों में वह हमारे शरीर में इतनी गर्मी पैदा कर देती है कि उस भीतरी गर्मी की अपेक्षा हमें बाहरी वातावरण ठंडा जान पड़ता है; और हम अज्ञानवश समझ लेते हैं कि गर्मियों में गरम चाय ठण्डक पहुंचाती है। अस्तु,

हमारे प्रत्येक आहार-विहार का प्रभाव हमारे स्वास्थ्य पर पड़ता है। चाय का पीना भी इस नियम का अपवाद नहीं हो सकता। अतः एक चिकित्सक के नाते हम अपना कर्तव्य समझते हैं कि चाय पीने का हमारे स्वास्थ्य पर भला या बुरा क्या प्रभाव पड़ता है, इस पर कुछ प्रकाश डाला जाय। चाय एक मादक पदार्थ है, इस बात को वैद्य-डाक्टर सभी स्वीकार करते हैं। मादक पदार्थ किसी रोग विशेष की अवस्था में उचित मात्रा में सेवन करने पर भले ही कुछ लाभ पहुंचावें, परन्तु स्वस्थ व्यक्ति के लिये वह सदैव हानि ही पहुंचाते हैं। चाय का भी यही हाल है। इसका विशेष सेवन, खासकर गर्मियों के दिनों में वीर्यदोष उत्पन्न करता है, जिसके परिणामस्वरूप स्वप्नदोष, शीघ्रपतन आदि रोग लग जाते हैं। यद्यपि ये रोग अन्य कारणों से भी उत्पन्न होते हैं, परन्तु आजकल के नवयुवकों, विशेषतः विद्यार्थी-समाज में इन व्याधियों के उत्पन्न होने का प्रधान कारण चाय का सेवन है। जिन गुजरात आदि प्रान्तों में चाय पीने की प्रथा विशेष प्रचलित है, वहाँ उक्त वीर्यरोग तथा मन्दाग्नि, अनिद्रा, अर्श आदि अधिकता से बढ़ रहे हैं। यह बात यों ही नहीं कही जा रही, स्वास्थ्य विषयक सरकारी रिपोर्ट इसके प्रमाण हैं। रात्रि में कार्य करने वाले रेलवे, कारखानों आदि के कर्मचारी, तथा परीक्षा के दिनों में विद्यार्थी, नींद भगाने के लिये चाय का सहारा लेते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि चाय से कुछ समय के लिये नींद भाग जाती और शरीर में फुर्ती आ जाती है पर अन्त में चाय और अनिद्रा दोनों के दुष्परिणाम भयङ्कररूप में सामने आते हैं, और उन्हें शरीर में खुश्की, प्यास, निर्बलता, बहुमूत्र, प्रमेह, दृष्टि मान्द्य, जोड़ों और अंगों की शिथिलता आदि व्याधियों का शिकार होना पड़ता है। थोड़े समय के लिये शरीर में उत्तेजना पैदा कर देने के अतिरिक्त चाय में कोई लाभदायक तत्व या गुण नहीं हैं। अंग्रेजों या ठन्डे देश के निवासियों को वहाँ के शीत प्रधान वातावरण के कारण चाय भले ही विशेष हानि न पहुंचाती हो, पर भारतवासियों को तो वह निश्चय ही हानिकारक है, अतएव दूर से ही त्यागने योग्य है। अंग्रेज लोग चाय के साथ मक्खन का प्रचुर मात्रा में सेवन करते हैं, इसलिये भी वे इसके अवगुणों का शिकार कम होते हैं, पर हमारे चाय के प्याले में तो तोले भर मक्खन निकले दूध से अधिक कुछ नहीं होता, फिर हम उसके बुरे प्रभाव का मुकाबला कैसे कर सकते हैं।

आशा है सूत्र रूप में व्यक्त किये गए मेरे विचारों से पाठक चाय से होने वाली हानियों को समझ जायेंगे और वे उन हानियों से बचने के लिये चाय को दूर से ही नमस्कार कर देंगे।

——

कहते। सर्दी को तो कोई माने न माने सबको अनुभव होती है। यही बात गर्मी, हवा आदि पर लागू है। पर भूत प्रेतों के सम्बन्धमें ऐसा नहीं देखा जाता। इससे सिद्ध है भूत-प्रेत बाहरी कोई चीज नहीं है, यह केवल, अविद्या से उत्पन्न हुआ हमारे मन का भ्रम मात्र है। कुछ स्वार्थी स्याने (चालाक) लोग अबोध स्त्री-पुरुषों के हृदय में इस निराधार भ्रम की भावना को और दृढ़ करके अपना उल्लू सीधा करते रहते हैं। मैं अपनी बहनों से कहूँगी कि वे अपने मनसे उस व्यर्थ के भय को निकाल दें, और अपने बच्चों से भूलकर भी ऐसी बातें न कहें जिनसे उनके कोमल हृदयों में इस झूठे भय की भावना के अंकुर जमें। सर्व व्यापक सर्व शक्तिमान परमात्मा के सिवा संसार में दूसरी कोई शक्ति नहीं है जो हमें दुख-सुख पहुंचा सके। और परमात्मा भी जो दुख दुख देता है, वह हमारे कर्मों के अनुसार देता है, अकारण नहीं।

——

साहित्य-सौरभ

सवेरा आ रहा है

श्री रामगोपाल शर्मा 'दिनेश', एम० ए०

आँख खोलो सामने देखो सवेरा आ रहा है।
निबिड़ तम तम पी धरा का,
ज्योति में भर प्राण अपने,
साधना का दीप ले जो,
कर गया साकार सपने,
स्वर्ग से भू पर उतर आलोक उसका गा रहा है,
आँख खोलो सामने देखो सवेरा आ रहा है।
देश की काली निशा फिर,
हँस उठे आलोक पाकर,
स्नेह का मधु-दान करता,
जी सके मानव धरा पर,
प्रेम का संदेश अम्बर को जगाने जा रहा है,
आँख खोलो सामने देखो सवेरा आ रहा है।
शोध-शालाएँ करो अब-
बन्द सब विज्ञान की ये,
बन रही हैं आज भ्रहक,
मनुजता के प्राण की ये,
रक्त की ले प्यास मानव असुर बनने जा रहा है,
आँख खोलो सामने देखो सवेरा आ रहा है।
तुम न अणुबम से सकोगे-
जीत मानव के हृदय को,
सो रहे हो जाग जाओ,
क्यों बुलाते हो प्रलय को,
हो रही है शङ्खध्वनि युग एक बीता जा रहा है,
आँख खोलो सामने देखो सवेरा आ रहा है।
चाहते हो सुमन बन कर,
भू गगन में सुरभि भरना,
भूल जीवन डाल पर यदि,
प्रेम-जग में झूम झरना,
तो हृदय खोलो मिलो मानव अकेला जा रहा है,
आँख खोलो सामने देखो सवेरा आ रहा है।

आनन्द का स्रोत

['ट्यून इन दी इनफिनिट' के आधार पर एक बोधप्रद लघु कथा]

आचार्य न व शास्त्री वेदतीर्थ

कहीं की बात है। एक बड़ा धनिक, सुखवस्तु गृहस्थ रहता था। उसने इतना धन कमाया इतना धन कमाया कि उसकी समझ में ही नहीं आता था कि इस अतुल सम्पत्ति को कहाँ रक्खे, क्या करे, किस काम में लाय। विलास-भोग में भी लगाये तो कहाँ तक लगावे। लड़कों के नाम करे तो लड़के अयोग्य, असमझ, अक्खड़। पिता की एक भी बात नहीं सुनते थे।

इसी चिन्ता में वह एक दिन व्यस्त था कि अकस्मात् उसको सूझा कि कहीं की यात्रा कर आवें जिससे जी बहल जाय। यात्रा में निकला, कई अच्छे-अच्छे सुरम्य मार्ग देख डाले, अनेक तीर्थ देख डाले। कोई पूर्व जन्म के संस्कार थे कि अकस्मात् एक नदी के तट पर एक महात्मा से भेंट हुई।

जहाँ महात्मा बैठे थे, उसके पास थोड़े अन्तर पर वह भी जा बैठा। महात्मा की दृष्टि उस पर जा पड़ी तो वे समझ गये कि यह कोई सुखवस्तु गृहस्थ है, पास अतुल सम्पत्ति के रहते भी बेचैन है। महात्मा ने पूछा—

"कहाँ रहते हो, इधर कहाँ भटक रहे हो।"

उसने अपनी समस्त रामकहानी अथ से इति तक सुना डाली और कहा—महात्मन् पास सब कुछ रहते भी मैं सतत विचारमूढ़ रहता हूँ, यह नहीं सूझ रहा कि इस अतुल सम्पत्ति का क्या करूं। स्वयं भोग-विलासों से ऊब गया हूँ। उत्तराधिकारी लड़के भी असमझ हैं उनके हाथों में यह सम्पत्ति पड़ जायगी तो स्वल्पकाल में ही सत्यनाश हो जायगा।

महात्मा ने थोड़ी देर सोचा, और बोले—हम तुमको मार्ग बतला सकते हैं यदि तुम मानोगे तो तुम्हारा भी कल्याण होगा और इस प्रदेश के लोगों का भी हित होगा। पुण्य भी मिलेगा। इस प्रदेश में ऐसा कोई स्थान नहीं है, जहाँ संसारी लोग आकर कुछ काल रहकर अपनी चिन्ताओं को भूलकर आनन्द लाभ करें, स्वास्थ्य लाभ करें, उनकी यात्रा ही और सुख-लाभ भी हो।

धनिक बोला 'अवश्य करूंगा, आज्ञा कीजिये।" महात्मा बोले—इस सुन्दर पर्वत-माला के थोड़ी दूर पीछे रम्य पहाड़ी है, पास ही पाँच छह ग्राम हैं लोग सरल प्रकृति के हैं, छल-कपट नहीं जानते। वहाँ एक नदी भी बहती है, जिसका जल बड़ा रोचक, पाचक स्वास्थ्यवर्द्धक है। दस-पाँच सुन्दर झरने स्रोत भी हैं, वनश्री प्रेक्षणीय है। यदि तुम हमारा कथन मानो तो इस पहाड़ी प्रदेश को खरीद लो, इस स्थान में ही आ बसो और इस प्रदेश में सब प्रकार के फलदार वृक्षों को लगाओ। इस स्थान को ऐसा बनाओ, ऐसा आकर्षक करो कि संसार के कोने-कोने से आरोग्य-लाभार्थ यहाँ यात्री आया करें। उनके निवास के लिए इन सुन्दर झाड़ियों में सुन्दर-सुन्दर छोटे-छोटे निवासस्थान बनाओ, आने-जाने के लिये सुन्दर मार्ग बनाओ, जिसमें यात्री सुखपूर्वक आ सकें। इस पर्वत का सम्बन्ध दूरस्थ राजमार्गों के साथ जुड़े ऐसे मार्ग निकालो।

महात्मा का बोल उसके हृदय पर बैठ गया। उसने उस पहाड़ी प्रदेश को खरीद लिया, नदी में से छोटे छोटे नाले निकाले, रम्य फलदार विस्तृत उपवन तैयार किया, ग्रामवासियों को सभी प्रकार का सुभीता दिया, स्थान स्थान पर सुरम्य छोटे छोटे भवन बनाये। वह निसर्ग सुन्दर पर्वत-प्रदेश और भी ऐसा सुन्दर बन गया कि उस स्थान की ख्याति संसार के कोने कोने में पहुंच गयी। यात्री आने-जाने लगे। वहाँ के स्वास्थ्यप्रद जल और पवित्र वायुमण्डल की उपमा नहीं दी जा सकती थी। वनश्री, जलश्री पत्रमली की श्री, सुन्दर भवनों की श्री, सुन्दर सुन्दर उपवनों की श्री उत्तरोत्तर एक से एक उत्तमोत्तम। जब यात्रियों का जमाव होने लगा तब वे एकान्त में पड़े हुए ग्राम भी समृद्धिशाली बने, अच्छे अच्छे धनिकों ने अपने लिये और स्थान लेकर ग्रीष्म ऋतु के निवास-कुटीर बना डाले। इस स्थान का नाम ही "आनन्द पर्वत पड़" गया। स्रोत भी 'आनन्द-स्रोत कहलाये जाने लगे।

मनुष्य तो आनन्द का भूखा रहता है, जहाँ आनन्द मिलता है वहीं पहुंचता है। उस धनिक की ख्याति दिग्दिगन्त तक छा गयी। धनिक अपनी बस्ती को छोड़कर आनन्द पर्वत में ही रहने लगा। उसको अब भीतरी आनन्द मिलने लगा। उसने थोड़ी-सी जायदाद अपने लड़कों के लिए छोड़कर, शेष अपना सर्वस्व आनन्दपर्वत पर लगा दिया। वनों-उपवनों को सींचने के पश्चात् जो जल बचता था, उससे सुदूरवर्ती ग्राम भी लाभ उठायें इस लिए दूर दूर तक छोटी छोटी नहरें निकलवाईं। नहरों से ग्राम के लोग अपने खेतों को सींचकर प्रमुदित होते थे। सारांश, एक महात्मा के संपर्क से उस धनिक का तो जीवन आनन्दमय हो ही गया, संसार के अन्य लोग आकर भी वहाँ आनन्द उठाने लगे।

संसार में आकर कौन स्थिर रहा है। जो आता है वह अवश्य जाता है। धनिक भी कालवश होगया। उधर उसके दुष्ट लड़के चाह रहे थे कि पिताजी मर जायगे तब हम इस आनन्दपर्वत को बेच कर धन जोड़ लेंगे और मौज करेंगे। पिता के मरने के पश्चात् लड़कों ने इस आनन्द पर्वत की दुर्दशा कर डाली। स्थान बेच बेचकर खाने लगे। वन बेचे उपवन बेचे, भवन बेचे, स्रोतों की परवाह नहीं की, स्रोत बिगड़ गये, नहरें बिगड़ गयीं, फिर बाग तो उजड़ना ही था। आसपास के तथा सुदूर रहने वाले ग्रामवासी भी सत्रस्त होगये क्योंकि ऊपर से नीचे जल नहीं जाता था, बन्द हो गया था। उसी जल का सहारा लेकर ग्राम बसे थे आनन्द पर्वत के आनन्द-कुंजों की पहली ख्याति सुनकर जो लोग आते थे वे निराश होकर लौट जाते थे सर्वत्र यह बात जोर से फैल गयी कि आनन्दपर्वत उजड़ गया आनन्दस्रोत बन्द होगया। अच्छे अच्छे गवैये भी वहाँ आ-आकर गाने लगे कि—

"इस उजड़े हुए चमन को
मिटने से तू बचादे"

अब उस उजड़े हुए आनन्द-पर्वत की क्या दशा है, वहाँ के उपवन के सुन्दर-सुन्दर महाकाय छायावाले पेड़ों को काट काट कर उस धनिक के लड़के घर का ईंधन बना रहे हैं। फलदार वृक्षों के फल कोई भी नौकर ले जाता है। चन्दन के वृक्ष छिन्न विच्छिन्न पड़े हैं। मार्ग उद्ध्वस्त होरहे हैं, भवन भी गिरते जा रहे हैं, नदी नाले, स्रोत लड़कों की जान को रो रहे हैं कि कैसे मूर्ख बेसमझ लड़के निकले जो चन्दन की लकड़ी से लशुन पका रहे हैं। अब लोग उस उदार धनी के नाम को स्मरण करते रहते हैं पर लम्बे-लम्बे दुःख के श्वास लेते हैं कि विधाता, यह क्या होगया। मनुष्य-समुदाय आनन्द का, चहल-पहल का साथी है। उजड़ों का कौन साथ देता है। लड़कों को तनिक भी पश्चात्ताप नहीं कि उन्होंने आनन्दस्रोत को बिगाड़ा। प्रत्युत वे हर्ष ही मना रहे हैं। ऐसे बेसमझ हैं।

मनुष्य आनन्द को चाहता है, जहाँ आकर्षण होगा, जहाँ आनन्द मिलेगा, वहां पहुंचेगा। पक्षी भी उसी फलदार वृक्ष पर पहुंचेंगे जहाँ फल होंगे। आतप से संत्रस्त मनुष्य वहीं जायगा, जहाँ छाया मिलेगी। यदि मनुष्य अपने जीवन में कुछ आनन्द लायगा तो लोग स्वयं आकृष्ट होंगे, वैसे आनन्द का स्रोत तो भगवान् ही हैं। मनुष्य अपने अज्ञान से वहाँ तक पहुंचने नहीं पाता। सच पूछो तो वह आनन्द का स्रोत भीतर ही है। अन्तर्मुख अन्तरिन्द्रिय होकर साक्षात्कार करने की आवश्यकता है, बहिरिन्द्रिय बहिर्मुख आत्मा उस धनिक के कुपुत्रों के तुल्य है जो आनन्द स्रोत से विमुख होकर मनुष्य-जीवन को नष्ट भ्रष्ट कर लेते हैं। स्वयं भी नष्ट होते हैं औरों को भी नष्ट करते हैं।

नैतिकता-निरूपण

दूसरों की सुविधा

श्री राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी एम० ए०

एक दिन की बात है। मैं आगरा में ठण्डी सड़क पर घूमता चला जा रहा था। देखता क्या हूँ कि हरीपर्वत के थाने के पास एक भीड़ इकट्ठी है। उत्सुकता-वश मैं भी वहाँ चला गया। विदित हुआ कि दो आदमियों में खूब जोर के साथ कहा-सुनी हो रही है और बाकी के सब लोग तमाशा देख रहे हैं। एक दो आदमी समझा कर उन्हें शान्त करने की चेष्टा कर रहे थे। अन्त में उन दो व्यक्तियों में से एक सज्जन बोले कि भाई मेरी छड़ी तुम्हारे लगी है अपना डण्डा तुम मेरे मार दो और एक के बजाय चार मार दो। झगड़ा बढ़ाने से क्या लाभ? इस बात के सामने आते ही विवाद कुछ ढीला पड़ गया। थोड़ी देर बाद वे दोनों सज्जन एक दूसरे से क्षमा-याचना करते हुए वहाँ से चल दिये। भीड़ भी छट गई।

पाठक यह जानने के लिये उत्सुक होंगे कि आखिर मामला क्या था। उस समय मैं भी बहुत उत्सुक था। पूछने पर विदित हुआ कि जिन सज्जन ने यह कहा था कि भाई, मेरी छड़ी तुम्हारे लगी है तो, वह महानुभाव सड़क पर छड़ी घुमाते हुए जा रहे थे। वह छड़ी उन दूसरे महानुभाव के लग गई थी। बस इसी बात पर झगड़ा खड़ा हो गया था। उक्त घटना की जानकारी करते समय एक अन्य महानुभाव से वहीं जान-पहचान होगई और हम दोनों इसी के बारे में बातें करने लगे।

हम लोग न मालूम क्यों अपने आस पास वालों का ध्यान नहीं रख सकते? कभी हम छड़ा घुमाते हुए घूमते हैं, तो कभी छाता हिलाते हुए चलते हैं। सड़क पर ही नहीं, हमने बाजारों के बीच में ऐसा होते देखा है और उनके कारण जब किसी के चोट लग जाती है, तब झगड़ा होता और व्यर्थ का तमाशा खड़ा हो जाता है। चार आदमी बीच-बचाव करते और सबके सामने हमें लज्जित होना पड़ता है। यदि छाता या छड़ी न घुमाएँ, तो हानि ही क्या है।

इसी प्रकार राह चलते हुए हम लोग चाहे जहाँ नाक छिनक देते अथवा थूक देते हैं। देखते नहीं कि वह कहाँ गिरेगा, किसके ऊपर गिरेगा। अक्सर ऐसा होता है कि थूक किसी बराबर वाले राहगीर के ऊपर गिर पड़ता है और फिर झगड़ा होता है। कभी तो माफी माँगने से झगड़ा समाप्त हो जाता है, और कभी-कभी अपने-अपने अधिकारों की चर्चा के साथ रार बढ़ती चली जाती है। वैसे सड़क के बीच में पड़े हुआ थूक खखार भी आपत्ति की वस्तु हैं। देखने में घृणा तथा गन्दगी और उसके ऊपर किसी का पैर पड़ जाये, तो कहना ही क्या?

सड़क पर चलते समय एक और प्रकार की लापरवाही की चर्चा चल पड़ी। आपने अक्सर देखा होगा कि बहुत से व्यक्ति, विशेषकर प्रातःकाल घूमने जाने वाले महानुभाव, सड़क पर दातौन करते हुए चलते हैं। वे दातौन करते जाते और सड़क पर थूकते जाते हैं तथा जहाँ जी में आया दातौन की कूची को तोड़ मरोड़ कर सड़क पर फेंक देते हैं। पता नहीं, यह क्या रिवाज है, और कब शुरू हुआ? उनका थूक व दतौन के रेशे सड़क गन्दी करते तथा कभी-कभी आस-पास के लोगों की असुविधा का कारण बनते हैं। परन्तु हम इन आदतों को छोड़ते नहीं। छोड़ने का तो सवाल ही क्या है कभी यह भी नहीं सोचते कि ये आदतें अच्छी हैं, अथवा बुरी। जिनके कारण हमारे आसपास वालों को असुविधा हो, वे काम हमें करने चाहिए अथवा नहीं। हमें भय है कि हमने भी आज तक अपने जीवन के इस पहलू पर विचार नहीं किया है। आइये, आज ही हम ऐसे कामों की एक सूची तैयार करलें और निर्णय करलें कि आज के बाद भविष्य में हम ऐसा कोई काम न करेंगे जिसके कारण किसी अन्य व्यक्ति को किसी भी प्रकार की असुविधा हो। भारत के नव-निर्माण के लिये यह आवश्यक है कि हम सुयोग्य नागरिक बनें।

वेद-वीथी

जीवन-यज्ञ

एतं ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे, तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव॥ यजु० २।१२।

हे देव सविता! तेरे इस विश्वयज्ञ को विश्व के कल्याण के लिए और सत् ज्ञान के लिए कहते हैं। उस तेरी विश्वकल्याण की भावना से एक यज्ञपति के जीवन की रक्षा हो।

हे परमेश्वर, हे सर्व प्रेरक, कृपा कीजिये, प्रेरणा कीजिये कि मेरा जीवन-यज्ञ तेरे विश्व यज्ञ के अनुकूल हो। मेरी जीवनचर्या तेरे नियमों के अनुकूल हो। मैं ऋत और सत्य का तत्व जानूं। मेरी जीवन क्रियाओं से इन शाश्वत नियमों का प्रतिपादन होता रहे। हे प्यारे पिता! मेरी दिनचर्या से आप सदा प्रसन्न हों। मैं यज्ञपति होऊं, यजमान होऊं, मेरा जीवन यज्ञीय हो। हे यज्ञपुरुष! मेरा जीवन तुझे समर्पित हो। मेरे जीवन में एक ही कामना हो कि मैं अपने पिता की प्रसन्नता लाभ करूं। जिस काम से आप प्रसन्न हों वही काम मैं करूं। आप अमृतमय हैं, अविनाशी हैं, सर्वव्यापक हैं। मैं आपका अमृतपुत्र, आपके विश्वयज्ञ में अपने कर्तव्यों की आहुति देता रहूँ। मैं आत्मार्पण करूं और आप स्वीकार करें। हे सत्‌चित् आनन्द! मुझ पर यज्ञ का मर्म प्रकट कीजिये। मैं यज्ञ के रहस्य को जानूं और यज्ञ में दीक्षित हो सदा अपनी समिधा अर्पित करता रहूँ। मुझ में आत्मार्पण का चाव बढ़े और मैं नित्य प्रसन्न रहूँ। आत्म प्रसाद में ही मेरा यज्ञ सुरक्षित रहे और सुफल होता रहे।

सर्व द्रष्टा

अमित्रहा विचर्षणिः पवस्व सोम शं गवे। देवेभ्यो अनुकामकृत॥ ऋ० ९।११।७

हे सर्वोत्तम ऐश्वर्यवान प्रभो, तू स्नेह न करने वालों का नाश करने वाला, विशेष रूप से सबका द्रष्टा और नाना कामना वाले मनुष्यों के लिए उनकी इच्छाओं को निरन्तर पूर्ण करता हुआ भूमि के लिये शान्ति सुख की धारा बहाता है।

हे प्रेममय दयालु प्रभो! जब हम आपस में स्नेह नहीं करते और वृथा कलह और क्लेश बढ़ाते हैं तो आप प्रेम से हमें दण्ड देते हैं। जिससे हम यह जानें कि आपस के सद्भाव और सद्-व्यवहार ही आपकी कृपा हम पर बरसाते हैं।

आप सबसे प्रेम करते हैं और चाहते हैं कि हम आपके प्रिय पुत्र आपका अनुकरण करते हुए जानें कि परस्पर का प्रेम ही श्रेयस्कर है। आपकी आज्ञा है कि सभी मनुष्य प्रेम से रहें और एक दूसरे की उन्नति में सहायक हों। जो लोग घृणा करते हैं अथवा ईर्ष्या करते हैं, आपके व्यापक प्रेम-शासन में उनकी सम्पत्ति और कीर्त्ति का धीरे-धीरे ह्रास होता देखा गया है। प्रभो! हमारा अनुभव है कि आपस में स्नेह करने वाले सदा आपसे जीवन-धन पाते रहते हैं और सदा उन्नत होते हैं।

परमात्मन! हम अब न भूलें कि आप विशेष रूप से सब के द्रष्टा हो। आप हमारे सभी आचार-विचार देखते हो। आपने हमारी सद्‌गति के लिये हमें आचार-विचार में स्वतन्त्र बनाया है कि हम साधनशील हों और अपनी स्वतन्त्रता का सदुपयोग करें और आपकी देखरेख में सदा उत्तम कर्म करते रहें। हम आपसे कोई विचार अथवा कर्म छिपा नहीं सकते।

लालचन्द

सामयिक समस्याएँ

शिथिलता की चिकित्सा

श्री श्रीराम शर्मा, बम्बई

'आर्यमित्र' के सम्पादक महोदय तथा अन्य कई विद्वान् आर्यसमाज में नये सिरे से उत्साह भरने का सदुद्योग लेखों के द्वारा कर रहे हैं, यह स्वागत योग्य विषय है। इसके लिये उपाय भी सुझाये हैं। आर्य जनता इस विषय में जितना अधिक रस ले उतना ही अच्छा हो।

पर विषय को कुछ गहराई से विचारने की आवश्यकता है, इस लिये आर्य विद्वज्जनों को चाहिये कि वे अपने मस्तिष्क को कुछ कष्ट देवें। रोग के उपचार में रोगोत्पत्ति के कारणों पर सभी वैद्य डाक्टर आम तौर पर पहले पहुचते हैं, तब समाज-शैथिल्य के कारणों की अवगणना कैसे की जा सकती है। असफल उपचार में लगना या तत्परता दिखाना सामान्य समझदारी भी नहीं मानी जायगी, इसलिये आवश्यक है कि अभी से एक आयोजन बनाया जाय, जिसके आधार पर एक 'विचार-समिति' बने जो शीघ्र ही शैथिल्य के कारणों की जाँच करे और सुधार के नवीन उपचार बतावे।

आर्यसमाज का वर्त्तमान संगठन कहाँ तक आर्य संस्कृति के सिद्धान्तों के अनुरूप और अनुकूल है यह बात भी साथ ही साथ विचारणीय है। संगठन में संस्कृति के ठीक विपरीत कौन-कौन तत्व हैं उन्हे वह 'विचार-समिति' सबसे पहले प्रकट करे।

क्या आर्यसमाज और अन्य धर्मसमाज, क्या कांग्रेस और क्या कोई सरकार, भारत या कोई भी प्रगतिशील देश किसी विषय में किसी भी समय में एक ही नियम से समुन्नत, और तेजस्वी हुए हैं कि उन्हे एक सत्यव्रतधारी मेधावी तपस्वी अग्रणी मिला है। वह अग्रणी बाक़ायदा रजिस्टर्ड अधिकारी रहा हो या न रहा हो, उसकी तेजस्विता के विद्यमान रहते हुए सभा-सोसाइटयों के नियमोपनियम अपनी चमत्कृति कुछ भी नहीं दिखाते प्रत्युत उस मेधावी अग्रणी के विचारानुवर्ती होकर सीधी-सादी चाल चलते हैं। आर्य संस्कृति में स्व-आचार से आचरण बनाने वाला आचार्य पद बड़ा महत्व रखता है। एक प्रजा अपने सम्राट् का जो सम्मान करती है उतना ही सम्मान आर्य प्रजा अपने परिव्राट् का करती है। सम्राट् भी परिव्राट के प्रति नमता है।

वर्त्तमान आर्यसामाजिक संगठन का शक्ति स्रोत शिरोमणि सभाओं से निर्झरित होता है। एक बड़े नगर की आर्य प्रजा को जो कुछ आर्य तत्व मिलता है, वह अपने नगर के आर्यसमाज के प्लेटफार्म से। इन आर्य जन-नायकों में या आर्य प्रजा के सूत्र-धारों में आर्यसमाज की सेवा के लिये आवश्यक विशिष्ट गुणों की योग्यता क्या है—कितनी है इसकी कोई स्पष्ट मर्यादा समाज-संगठन में निहित नहीं है। तर्क-वितर्क से इस बात का उत्तर लिखने को कई आर्य नेता तैयार हो जायगे, पर बात बृहत् सत्य पर आधारित हो, हृदयग्राही हो ऐसी दलील देना दुस्साध्य ही है। आर्यजगत् में यह बात सर्वसम्मत मानी जायगी कि पुराने आर्य विद्वानों और नेताओं में से किसी एक-एक में ही जितनी शक्ति समाज उत्थान की थी उतनी आज सौ दो सौ में मिल कर भी नहीं है। वे एक-एक मानो स्वयं एक संस्था या सभा स्वरूप थे। यह बल क्या है। यह आत्म बल वह वस्तु है जिसके द्वारा एक व्यक्ति लाखों को अपना अनुगामी बना लेता है। आत्मबल से शून्य हजारों व्यक्ति दो-चार को भी अपनी ओर नहीं मोड़ पाते। कहने का तात्पर्य यह है कि आर्य-समाज में आरम्भिक युग में जो बल था, वह बल निर्झरित होता था आर्यसेवकों के सत्य-आचरण से और विद्वानों के तप से। उस युग में सत्य-सेवन के कारण से एक बहुत ग़रीब अपढ़ आर्य सभासद् भी सबका प्रेम और आदर का पात्र होता था जबकि आज हर सातवें दिन 'प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार वर्त्तने' का पाठ करते रहने पर भी प्रेम पवन का संचार विद्वान् और लीडरों में भी नहीं होता। किसी के प्रति प्रीति, श्रद्धा या आदरभाव उसके सत्य के कारण से उपजता है। जो प्रीति-वल्लरी सत्य के जल से सिञ्चित होती है वह पद-मद के धुए से धूसरित हो जाती है।

"आर्यमित्र के सहृदय सम्पादक महोदय के बहुमूल्य सुझाव के आधार पर प्रथम एक ही सुझाव को हाथ धरा जाय तो आगे का मार्ग अवश्य प्रशस्त होगा। वह यही कि आर्यसमाज के संगठन की शिरोमणि सभाओं के प्रमुख अधिकारी तथा बड़े बड़े नगरों के प्रधान मन्त्री तभी पद ग्रहण करें जबकि योग्यता के साथ साथ वह उस पद-सेवा के लिये अपना पूरा समय भी दे सकते हों। अर्थात् चुनाव के नियमों में ही यह स्वीकृत बात उल्लिखित होनी चाहिये। कचहरी में या आफिस में, मेडीकल-प्रेक्टिस में या निजी धन्धे में श्रम से जो थके-माँदे से पस्त होकर घर लौटते हैं वे क्लर्क महाशय के लेख पर हस्ताक्षर से अधिक और क्या परिश्रम कर सकते हैं।

आर्यजनता के भोलेपन से भी आर्यजगत् की बड़ी हानि हो रही है। इस भोलेपन को दूर करने का भी एक अलग उपाय ढूँढ़ निकालने की आवश्यकता है। वह उपाय 'आर्यमित्र' के दैनिक होने और उसकी पाठक-ग्राहक-संख्या में विशेष तौर पर वृद्धि करने से जल्दी ढूँढ़ लिया जायगा। आर्यजनता कुछ सुप्त-सी हो रही है। उसका जागरण ही नेताओं के जागरण का साधन बनना चाहिये। 'विचार समिति' के निर्माण के संयोजन का कार्य 'सार्वदेशिक' सभा को तुरन्त हाथ में लेना चाहिये। वह आगे न बढ़े तो मेरठ-आर्यसम्मेलन की स्वागतसमिति को यह काम हाथ धरना चाहिये। वह भी पीछे हटे तो जो कतिपय वर्षों से उपदेशक महासम्मेलन चल रहा है वह इस कार्य को हाथ में लेवे। 'समिति' का निर्माण सभी प्रान्तों के योग्यता सम्पन्न आचरण निष्ठ आर्यसंस्कृति के मर्मज्ञ सुयोग्य सेवकों की २०-२५ संख्या पर निर्भर होना चाहिये। अदीमुल-फुर्सत महानुभावों को इस कार्य के लिये कष्ट नही देना चाहिये। जिसको तन-मन से यह लगन लगी है वही हृदय से कार्य कर सकेंगे, खानापूरी मात्र की कार-गुजारी से इस 'विचार,समिति' को बचाये रखने की आरम्भ से ही सावधानता रक्खी जावे। विचार-समिति का निर्माण यदि जून मास के अन्त तक हो सके तो मेरठ आर्यसम्मेलन तक समिति शैथिल्य की निदानपूर्वक चिकित्सा की अपनी रिपोर्ट तैयार कर सकती है और सम्मेलन में उस पर विचार तथा निर्णय हो सकता है। वस्तुतः आवश्यकता है आमूल सुधार की।

प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाएं एवं आर्य सार्वदेशिक सभा संयोजक नियुक्ति के लिये अपना अपना निर्णय इधर के कुछ सप्ताहों में कर लेवें। अभी हाल में आरम्भ के लिये सार्वदेशिक सभा के या उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के एक अधिकारी अथवा आर्यमित्र के सम्पादक महोदय को विचार-समिति निर्माण के संयोजक का कार्य सौंप देना चाहिये।

सेवा-कार्य खाँड़े की धार अवश्य है, अभी आर्यसामाजिक समुदाय इतना ही सत्य का व्रत ले ले कि चुनाव में पक्षपात या पार्टीबन्दी की छलबल भरी भावना को हम तिलाञ्जलि दे देवें, तो इतने अल्प सत्य के सेवन से ही सुधार का सूत्रपात सम्भव है। ऋषियों के से सत्य-सेवन के लिये अथवा हरिश्चन्द्र की सी सत्य प्रतिज्ञा के लिये यह अपील नहीं है। अपितु हम सब यदि अपने व्यक्तिगत व्यवहारों में सत्य का बॉयकाट रखते हैं तो कमसे कम अपनी आर्य सभाओं को तो असत्य की कालिमा से बचावें। स्थिति तो ऐसी है कि हमें हर छमाही में दिवाली और शिवरात्रि से १४-१५ दिन पूर्व एक बड़े आयोजन से 'सत्य-पक्ष' मनाते चलना चाहिये। विशेष प्रार्थना और आशा है कि विचारक विद्वान् इस विषय पर विशेष प्रकाश डालेंगे।

——

सामयिक समस्याएं—

आर्य प्रतिनिधि सम्मेलन तथा संगठन

इस वर्ष आर्यप्रतिनिधि सभा के वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर आर्यप्रतिनिधि-सम्मेलन सफलतापूर्वक आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में प्रस्तावो के साथ-साथ कुछ वक्ताओ ने समाज की वर्तमान त्रुटियो पर भी विचार किया।

प्रान्त के ६९० आर्यसमाजो में से अधिकांश समाजों के सदस्य स्वय दृढ़ आर्यसमाजी नही है। उनको भले प्रकार साप्ताहिक अधिवेशन इत्यादि भी कराना नहीं मालूम। जो अपने सिद्धान्तों को स्वय ही भले प्रकार नहीं समझते वे दूसरो पर क्या प्रभाव डाल सकते हैं। अत इस समय अपने विस्तार को बढ़ाने की अपेक्षा सबसे आवश्यक चीज यह है कि वर्तमान समाजो की स्थिति ठीक की जाय। प्रत्येक समाज मे कम से कम दो ऐसे पुरोहित रहने चाहिये जो अपने क्षेत्र मे अधिवेशन तथा सस्कार भले प्रकार करा सके। किसी नवीन समाज की स्थापना से पूर्व वहाँ पुरोहित का प्रबन्ध अवश्य सोच लेना चाहिये। पुरोहित अधिकाश इस प्रकार के होने चाहिये जिनकी जीविका का साधन दूसरा हो, क्योकि पुरोहिताई के भरोसे रहने पर उनको जीविका चलाना असम्भव हो जायगा। यदि प० बृहस्पतिजी शास्त्री के सुझाव अनुसार एक पद पुरोहित का भी प्रतिनिधि सभा ने नियत कर दिया जाय तो इस सम्बन्ध मे बहुत कुछ कार्य हो सकेगा। सभा का पुरोहित इस बात का देख-रेख करे कि प्रत्येक समाज मे दो पुरोहित अवश्य हो जाय। इसके लिए शिक्षण-शिविर भी आवश्यक होगा। शिक्षण-शिविर की व्यवस्था इस प्रकार की जा सकती है कि उसका व्यय शिविर स्वयम् उठा सके।

प्रचार-शैली मे भी परिवर्तन की आवश्यकता है। हम प्रचार की खण्डनात्मक पद्धति को छोड़कर रचनात्मक पद्धति को अपनाने चाहिये। पचयज्ञ का महत्व, योगाभ्यास, राम और रामराज्य, स्वास्थ्य, मादक द्रव्य-निषेध, अछूत उद्धार, आदर्श माता आदि ऐसे अनेक विषय हैं जिनका प्रचार बिना किसी की भावनाओं को ठेस पहुचाए किया जा सकता है। देवी सीता तथा ब्रह्मचारी हनुमान आदि के उज्ज्वल चरित्र भी प्रस्तुत किये जासकते हैं। इसी प्रकार के अन्य सुन्दर विषय साधारण जनता के समक्ष प्रस्तुत किये जाने चाहिए। खण्डनात्मक विषयों को लकर जनता को अपनी ओर आकर्षित करने की बजाय उस में आर्यसमाज के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न कर दी जाती है जो वर्तमान परिस्थिति में हमारी अवनति का बहुत बड़ा कारण है। प्रचार को अधिक रोचक बनने के लिये सगीत, धनुर्विद्या, योग सम्बन्धी क्रियाएँ, जादू के खेल, हस्तकला, मैजिक लेन्टर्न, एकांकी नाटक, संलाप (डायलोग) इत्यादि का भी सहारा लेना चाहिये।

प्रतिनिधि सम्मेलन में जनता से सम्पर्क बढ़ाने पर भी जोर दिया गया था। जनता से सम्पर्क बढ़ाने से पूर्व समाजों को सगठित करना अधिक आवश्यक है। इस सम्बन्ध में आर्यउप प्रतिनिधि सभा, लखनऊ का कार्य-क्रम अनुकरणीय है।

आर्य उपप्रतिनिधि सभा लखनऊ ने समाजो के संगठन के लिए जो योजना चलाई उसमें केवल ।-) मासिक डाक-व्यय होता था। इसके चलाने से स्वाध्याय के साथ-साथ आपस में सम्पर्क बढ़ा और संगठन दृढ़ हुआ। इस सभा ने एक स्वाध्याय परिषद् की स्थापना की जिसके अन्तर्गत उत्तम विषयों पर भाषण तथा लेख प्रस्तुत हुआ करेंगे और इस प्रकार हम आपस में अच्छे लखक तथा वक्ता उत्पन्न करेंगे। इसके अतिरिक्त शुद्धि के सयोजक शिक्षण के सयोजक भी नियत कर दिये गये है। यदि आर्य सज्जन शिक्षण शिविर के पाठ्यक्रम के सम्बन्ध मे कुछ विचार दें तो हम उनके कृतज्ञ होंगे। आर्य समाजियो के पास मस्तिष्क है यदि संगठन ठीक ढंग से करलिया जाय तो कुछ अच्छे तथा धैर्यवान् कार्यकर्ता वैदिक संस्कृति का प्रचार बड़े सुन्दर ढग से कर सकते हैं।

विश्वास है कि यदि उपसभाएँ और उनके प्रभाव में जिले के कार्य कर्ता जिला सभाओ द्वारा अपने क्षेत्र की समाजो को उन्नत रूप से संगठित करलें तो आगे चलकर प्रान्तीय संगठन को अधिक उपयोगी बनाने पर भी विचार किया जासकता है और सुन्दर तथा कम व्यय वाली योजनाएँ बनाकर प्रान्त में भारतीय संस्कृति का ठोस प्रचार किया जासकता है।

रामेश्वरसहाय, बी० ए०

—

कन्या गुरुकुल हरिद्वार की कतिपय विशेषताएं

१—स्वास्थ्यप्रद रमणीक स्थानपर सुविशाल ब्रह्मचर्याश्रम।
२—सर्वथा निःशुल्क शिक्षा।
३—विदुषी देवियो द्वारा उत्तरदायित्वपूर्ण नियन्त्रण।
४—पोषणादि व्यय अत्यल्प।
५—सम्पूर्ण प्रान्तो की कन्याओं का एकत्र निवास।
६—हिन्दी-संस्कृत के द्वारा वैदिकधर्म की परमोच्च शिक्षा।
७—समस्त गृहकार्यों के शिक्षण की सुव्यवस्था।
८—माननीय श्रीमान् नरहरि विष्णु गाडगिल केन्द्रीय मंत्री भारत सरकार द्वारा उद्घाटित आयुर्वेद विभाग में आठो अंगो सहित आयुर्वेद की बी (B) क्लास रजिस्ट्रेशन योग्यता युक्त परीक्षाओं की पूर्ण व्यवस्था।
९—सम्पूर्ण आयुर्वेदिक ओषधियो के निर्माण की क्रियात्मक शिक्षा।
१०—कन्याओं को सबल एवं उत्साह सम्पन्न स्वावलम्बी बनाने के लिए लाठी, तलवार, कटार, डम्बल, जमनास्टिक ओम् आदि चमत्कार पूर्ण व्यायामों का नियमित सुप्रबन्ध।
११—जीवन को शुद्ध पवित्र आस्तिक बनाने के लिए सायम्प्रातः सन्ध्योपासना एवं यज्ञ का नैत्यिक अभ्यास।

आचार्य चन्द्रावती देवी शास्त्री, प्रभाकर, वैद्य विशारदा

आवश्यकता

सभा प्रधान के लिये एक ऐसे परसनल असिस्टन्ट को आवश्यकता है जो अनुभवी आर्य हों और हिन्दी का शार्टहैन्ड और टाइप का कार्य जानते हों, अंग्रेजी का भी टाइप जानना विशेष योग्यता समझी जायगी।

अवकाश प्राप्त सज्जन धर्म-सेवाभाव से यह कार्य करें तो उत्तम होगा। योग्यता आदि के प्रमाण-पत्र तथा कमसे कम निर्वाहार्थ दक्षिणा सहित प्रार्थना-पत्र निम्न लिखे पते पर भेजने चाहिये।

धर्मपाल विद्यालंकार, मंत्री
आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश
लखनऊ

अनाथालय को दान

श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आगरा ५१ वर्ष से हिन्दू जाति की सेवा कर रहा है। इस में सकड़ों अनाथ बालक और बालिकाओं का पालन पोषण हो रहा है। हजारों अनाथ बालक शिक्षित और योग्य होकर निकल चुके हैं। अतः आप भी दान देते समय इन अनाथ बालकों को न भूलिये। अनाथ लड़कियों के लिए २४ वर्ष की आयु के वरों की आवश्यकता है। २=) फार्म का मूल्य भेज कर फार्म मँगा कर, भर कर भेजिए।

मंत्री श्रीमद्दयानन्द अनाथालय
आगरा।

—

आर्यसमाज प्रगति की ओर

राजगुरु श्री पं० धुरेन्द्र शास्त्री

ओम् पूषन्तव व्रते वयं न रिष्येम कदाचन।
स्तोतारस्तइहस्मसि।

यजु० अ० ३४ मं० ४१।

हे शक्तिदायक पुष्टिकर्ता आपके हम भक्त हों।
निमित तुम्हारे व्रत-नियम में हम सदा अनुरक्त हों॥
श्रद्धा सहित प्रत्येक क्षण हम आपकी स्तुति कर।
हे दीनबन्धु सदैव सब की आप विपदा को हरें॥

देवियो और सज्जनो, मैं आजकल अस्वस्थ हूं। अचानक एक कष्ट भोगना पड़ा। बम्बई में इलाज हुआ। यद्यपि रोग दूर हो गया है तथापि उसका प्रभाव अभी शेष है। मैं निर्बल हूँ, परन्तु कुछ मित्रों के प्रेमाग्रह से इस सम्मेलन का सभापतित्व स्वीकार करना ही पड़ा। मुझे अपने भाषण में केवल दो-चार बातें आपसे निवेदन करनी हैं, आशा है आप ध्यानपूर्वक उन्हें सुनने की कृपा करेंगे। मेरी राय में यह युग भाषणों का नहीं काम करने का है। आर्यसमाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द कर्म के केन्द्र और दृढ़ता के दुर्ग थे। उन्होंने जो कुछ कहा वही करके दिखाया, यह उनकी सबसे बड़ी विशेषता है। प्रारम्भ में महर्षि का लोगों ने बड़ा विरोध किया, आर्यसमाज के विरुद्ध भी भयंकर आन्दोलन उठाया गया, परन्तु अब सारा विरोध शान्त हो गया और लोग देश की वर्तमान स्वार्थपूर्ण भयंकर परिस्थिति में आर्यसमाज से बड़ी बड़ी आशाएं कर रहे हैं। कुछ विचारशील विद्वानों और नेताओं ने तो यहाँ तक कहा है कि आर्यसमाज ही देश से भ्रष्टाचार दूर करने की अद्भुत शक्ति रखता है। वही इन प्रतिकूल परिस्थिति में शुद्धि या परिशोधन का कार्य करने में समर्थ हो सकता है। आज संसार का बड़े से बड़ा विचारक महर्षि दयानन्द के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पण करता हुआ उनके महान् कार्य की मुक्त-कण्ठ से सराहना कर रहा है। अब प्रश्न यह है कि ऐसे समय में, जब देश को आर्यसमाज की सबसे अधिक आवश्यकता है, आर्यों को क्या करना चाहिये? क्या कोरी प्रतिज्ञाओं और थोथी वचन वीरता से कुछ हो सकेगा? जिस प्रतिज्ञा या कथन का आधार क्रियाशीलता पर नहीं होता, उससे कोई लाभ नहीं है। आज सबको कर्मण्य या कर्मवीर बनने की आवश्यकता है। महर्षि ने हमें क्या आदेश-उपदेश नहीं दिए? क्या नहीं सुनाया-समझाया। अब तो हमें उन उपदेशों पर चलने की आवश्यकता है। स्वयं उन पर चलें और दूसरों को चलावें। आर्यसमाज कोई सम्प्रदाय नहीं है। सम्प्रदाय में गुरुडम होता है, उसका क्षेत्र थोड़े से लोगों से ही सम्बन्धित होने के कारण अत्यन्त संकीर्ण हो जाता है। आर्यसमाज तो मानव ही नहीं, प्राणिमात्र का भला करना चाहता है। वह 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की नीति में विश्वास रखता है और उसी का समर्थक भी है।

सज्जनो, जिससे लोक और परलोक—अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि हो, वही धर्म है। आज संसार निःश्रेयस की तो सोचता भी नहीं, अभ्युदय से भी विमुख होता जा रहा है, अर्थात् वह लौकिक उन्नति की ओर भी ध्यान नहीं दे रहा। धर्मपूर्वक धन का कमाना बुरी बात नहीं, उनके लिये शास्त्रों में विधान है, परन्तु अधर्म या बेईमानी से रुपया इकट्ठा करना कभी उचित नहीं कहा जा सकता। आज स्वार्थान्धता का युग है, अनुचित और अवैध साधनों से कार्य सिद्ध करना ही स्वार्थान्धता है। संसार कुछ भी क्यों न कहे, आत्मा निरन्तर धिक्कारती रहे, परन्तु आज येनकेन प्रकारेण अर्थ-संग्रह करना ही जीवन का उद्देश्य मान लिया गया है। जो व्यक्ति भौतिक साधनों से सम्पन्न शरीर को सुख पहुंचाता है और अपनी आत्मा की पुकार या प्रेरणा पर कुछ ध्यान नहीं देता, वही सफल कहा जाता है। सफलता की यह कैसी विडम्बना है।

मैं धन की सफलता को सफलता नहीं मानता। सबसे बड़ी सफलता चरित्र की सफलता है। कोई मनुष्य कितना ही गुणी या विद्वान् क्यों न हो, यदि उसमें चरित्रबल नहीं है तो वह न ज्ञानी है न गुणी। चरित्र क्या है? जब ज्ञान क्रिया में आता है तो वह चरित्र कहाता और सदाचार पदवी पाता है। यदि दुर्भाग्यवश अज्ञान क्रिया में परिणत होता है तो उसे दुराचरण दुश्चरित्र कहते हैं। देश से दुराचार का मुँह काला होना चाहिए। स्वतन्त्र भारत का गौरव सदाचार या नैतिकता में है। यदि हम सच्चरित्र नहीं, नैतिक नहीं तो हमारे स्वतन्त्र होने से क्या लाभ?

बन्धुओ, भारतीय संस्कृति हमें बतलाती है कि हम स्वयं बढ़ें और दूसरों को भी उन्नत होने का अवसर दें। 'वर्धस्व वर्धय च' बढ़ो और बढ़ने दो इन सिद्धान्त में स्वार्थ-परता या आपाधापी नहीं है बल्कि अपनी उन्नति और वृद्धि के साथ दूसरों की उन्नति और वृद्धि की भावना सन्निहित है। महर्षि दयानन्द ने भी हमें यही आदेश दिया है। आर्यसमाज का नियम भी यही है कि अपनी उन्नति में ही सन्तुष्ट न होना चाहिए, सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए। इस परम कल्याणकारिणी भावना के नष्ट होने से ही आज व्यक्तिगत स्वार्थसिद्धि के दुर्भाव जाग्रत हो रहे हैं।

एक बात मैं विशेष रूप से कहना चाहता हूं। आजकल कुछ लोग धर्म को सारे अनर्थों की जड़ बता रहे हैं, परन्तु उन्होंने भ्रम एवं भूल से सम्प्रदायवाद को धर्म समझ रक्खा है। सम्प्रदायवाद की आलोचना मैं अभी कर चुका हूं। धर्म तो संसार भर के लिये एक है—मनुष्य मात्र के लिये एक है, उसके अभाववश ही सारे अनर्थ हो रहे हैं। धर्म कहता है चोरी मत करो, जारी (व्यभिचार) मत करो, झूठ मत बोलो, रिश्वत मत लो, भ्रष्टाचार के विचार मन में भी न आने दो इत्यादि। जो धर्म ऐसे अटल आधार पर आश्रित है उसकी अवहेलना करना अपने चिन्तन या विचारधारा का खोखलापन दिखाना है। मैं तो बड़े बलपूर्वक कहूंगा कि आज जितने अधर्म हो रहे हैं उनका मूल कारण धर्म की उपेक्षा या अवहेलना ही है। ज्यों-ज्यों धर्म विषयक हमारी अरुचि या उपेक्षा बढ़ती जाती है, त्यों त्यों संसार में अनर्थ और भ्रष्टाचार की वृद्धि होती जाती है।

आर्य बन्धुओ, अब वचन वीरता की आवश्यकता नहीं, कर्मवीर बनने की जरूरत है। आप लोग संगठित होकर नैतिकता को अपनाइये और दूसरे लोगों को नैतिक बनाने का पूर्ण प्रयत्न की जिये। कानून द्वारा सुधार किये जाते हैं, दण्ड भी दिये जाते हैं परन्तु यह सब अस्थायी उपाय है। इनसे अपराध रुकते नहीं, उत्तरोत्तर बढ़ रहे हैं। एक युवक जो घड़ी चुराने के कारण जेल में जाता है, वह पक्का चोर बनकर जेल से निकलता है, यानी सुधार के बदले उसका और बिगाड़ हो जाता है। सुधार का सच्चा और सफल उपाय समझा-बुझाकर ठीक-ठीक दोष दर्शन कराना और उसे नैतिक दृष्टि से सुधार-पथ की ओर लाना है। जब कोई अपराधी अपराध के दोष समझ कर उसे सच्चे हृदय से त्याग देता है, तो फिर उसे नहीं करता। आज आर्यसमाज का कार्य इसी क्षेत्र में होना चाहिये बढ़े हुये भ्रष्टाचार को दूर करने का एक मात्र उपाय धर्म, सदाचार तथा नैतिकता है। नैतिकता क्या है? नैतिक शास्त्र या नीति उसे कहते हैं जिसमें कर्तव्याकर्तव्य का उपदेश होता है। यानी मनुष्य को क्या करना चाहिये और क्या न करना चाहिये। नीति का आधार धर्म होता है। नैतिकता का भवन धर्म की नींव पर ही बनाया जाता है, इसलिये सबसे मूल और मुख्य कारण धर्म ही मानना पड़ेगा।

भाइयो, मैं दो-चार बातें और निवेदन करके अपना वक्तव्य समाप्त करता हूं। मैं देखता हूं कि पीलीभीत जिले में बहुत थोड़े आर्यसमाज हैं। इतने बड़े जिले में केवल चौदह-पन्द्रह आर्यसमाजों का होना विशेष आशाप्रद क्या निराशाजनक है। मैं तो चाहता हूँ कि जिले का कोई ग्राम न रहना चाहिये जिसमें आर्यसमाज न हो। यह काम कुछ कठिन नहीं है, आप लोग चाहें तो एक वर्ष में पीलीभीत जिले में बहुत बड़ी संख्या में आर्यसमाजें स्थापित कर सकते हैं। इतनी बड़ी शक्ति संगठित होकर सारे जिले की जनता में धर्म

[शेष पृष्ठ ९ पर]

आर्य जगत

—आर्यसमाज मुबारकपुर (आजमगढ़) का द्वितीय वार्षिक उत्सव १८ से २० अप्रैल तक बड़े समारोहपूर्वक मनाया गया। अनेक विद्वानो के सारगर्भित भाषण और भजनोपदेशको के उत्साहवधक भजन हुए । उत्सव में प्रतिदिन दो ढाई हजार मुसलमान भी सम्मिलित होते थे। जनता पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा।

—आर्यसमाज जलालाबाद (शाहजहाँपुर) का वार्षिकोत्सव १३ से १६ अप्रेल तक धूम-धाम से मनाया गया । व्याख्यानो और भजनों का जनता पर खूब प्रभाव पड़ा।

—सलेमपुर (अलीगढ़) निवासी ठा० कलियानसिंहजी की पुत्री सत्यवती देवी का विवाह हसनपुर (बुलन्दशहर) निवासी ठा० हरीसिंहजी के पुत्र गोवधनसिंह के साथ ७ ५-५१ को वैदकरीत से सम्पन्न हुआ। संस्कार श्री प० ज्वालाप्रसादजी ने कराया।

—१३ अप्रैल को आर्यसमाज चौक, मथुरा में कस्तूरी देवी का पुनर्विवाह ठा० नौबतसिंहजी के साथ समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ। १२५) आर्यसमाज को तथा ५१) डी० ए० वी० हाईस्कूल को दान में दिये गए। ३ मई को सरस्वती देवी (नाथो बाई) का पुनर्विवाह ठा० हेतरामजी (पुलिस लाइन) के साथ सम्पन्न हुआ। १५) समाज को व १४) विद्यालय को दान दिये।

—आर्यसमाज जमनियाँ (गाजीपुर) का २० वाँ वार्षिकोत्सव ८ से ११ मई तक बड़ा धूमधाम से मनाया गया। अनेक विद्वानो के ओजस्वी भाषण व भजनोपदेशको के भजन हुए । हिन्दू मुसलमान सभी पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा।

—अमनगोल के जनप्रिय समाजसेवी श्री चन्द्रशेखरप्रसादजी की सुपुत्री सती देवी का शुभविवाह गत ७ मई को, पर्दे की रूढ़ियों का बहिष्कार करते हुए, पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ।

—आर्यसमाज जबलपुर के पुराने कार्यकर्ता श्री प० चिरंजीलाल शर्मा का चार दिन की बीमारी के पश्चात् ६ मई को स्वर्गवास हो गया। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

—बाह (आगरा) निवासी श्री बाबूरामजी वकील की पुत्री का विवाह संस्कार मथुरा निवासी श्री विद्यारामजी गुप्त के सुपुत्र विजेन्द्रनाथ के साथ ८ मई को सानन्द सम्पन्न हुआ। १०१) स्थानीय समाज को भवन-निर्माणार्थ और एक फर्श दान में दिये ।

—आर्यसमाज बलरामपुर की साधारण सभा द्वारा श्री अखिलेश्वरसहायजी वर्मा, कनिष्ठ आत्मज श्री डा० नर्मदेश्वरसहाय वर्मा के निधन पर, शोक प्रकट किया गया, तथा दिवगत आत्मा को शान्ति एवं दुखित परिवार को धैर्य प्रदान करने के लिए परमात्मा से प्रार्थना कीगई।

—श्री घनश्यामदास आर्य वैदिक विद्यालय देवरिया का प्रथम वार्षिकोत्सव ११ से १३ मई तक समारोहपूर्वक मनाया गया। सुप्रसिद्ध आर्यविद्वानों की अध्यक्षता में संस्कृति-सम्मेलन, शिक्षा-सम्मेलन आदि उपयोगी सम्मेलन हुए। श्री पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु, श्री प० शंकरदेवजी व्याकरणाचार्य, श्री स्वामी ब्रह्मानन्दजी दण्डी आदि के भाषणों का जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा। इसी अवसर पर विद्यालय संस्थापक परिवार के सदस्य सेठ विश्वम्भरलाल के पुत्र का यज्ञोपवीत संस्कार वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। विद्यालय के प्राचीन स्नातको को प्रमाण-पत्र दिये गए और स्नातक-मण्डल-समिति की स्थापना हुई।

—मन्त्री पोखरी (मणिपुर) में १४ मई को देशबन्धुजी अधिकारी के सभापतित्व में हिन्दी विद्यालय की स्थापना हुई। विद्यालय का उद्घाटन ठा० हरिहरसिंहजी ने किया। विद्यालय को सफल बनाने के लिये उपस्थित जनता ने तन मन धन से पूर्ण सहयोग देने का वचन दिया। अधिकारीजी के भाषणोपरान्त सभा विसर्जित हुई।

कानगोपी हिन्दीविद्यालय (मणिपुर) में श्री देशबन्धुजी अधिकारी ने मैजिक लालटेन द्वारा प्रचार किया। प्रचार का विषय था, भारतीयता की रक्षा और भारतीय संस्कृति एव वैदिक धर्म-प्रचार हमारा परम कर्तव्य होना चाहिये।

—आर्यसमाज मन्दिर हाथरस में श्री शिवदत्तजी और चम्पादेवी का विवाह-संस्कार श्री स्वामी योगानन्दजी द्वारा वैदिक विधि से सम्पन्न हुआ। नगर में एक जैन परिवार की कन्या का विवाह भी उझियानी निवासी श्री मूलचन्दजी के भतीजे के साथ वैदिक पद्धति से हुआ। यह संस्कार श्री विहारीलालजी शास्त्री ने कराया।

उत्सव सूचनाएं

—आर्यसमाज पुरानी मण्डी (सहारनपुर) का वार्षिकोत्सव २४ से २७ मई तक होना निश्चित हुआ है।

निर्वाचन

—स्नातक मण्डलसमिति श्री घनश्यामदास आर्य वैदिक विद्यालय—प्रधान—श्री आत्मानन्दजी और मन्त्री—श्री विद्याभास्कर शास्त्री।

सार-सूचनाएं

—श्री भीमसेनजी वर्मा, पूर्व मन्त्री आर्यसमाज जबलपुर को समाज की आज्ञाओं की अवहेलना करने के कारण, समाज की १२ मई की अन्तरग सभा के प्रस्ताव स० १ द्वारा समाज की सदस्यता से स्थगित कर दिया गया है।

परमानन्द गुप्त, मन्त्री।

—आर्यसमाज काशीपुर (नैनीताल) के प्रचारक श्री रामचरण नायक, समाज का धन, वर्तन और रसीदबही लेकर लापता हो गये हैं। जनता उनसे सावधान रहे और उनको चन्दा आदि न दे।

—जितेन्द्रनाथ, मन्त्री

सार्वजनिक सभा

रानीमण्डी प्रयाग में हकीम श्री मोहनलालजी के उद्योग से, बाबू जगनन्दनलालजी एडवोकेट की अध्यक्षता में एक विराट् सार्वजनिक सभा की गई। इसमें "भ्रष्टाचार-निवारण, समाज-सुधार एवं विश्व शान्ति के लिये आर्य धर्म की महती आवश्यकता" विषय पर अनेक विद्वानों के भाषण हुए। भाषणकर्ताओं में श्री राजकुमार रणञ्जयसिंहजी अमेठी राज्य, श्री विद्यानन्दजी काशी आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। उपस्थिति बहुत अधिक थी। सभा समाप्ति पर आगत अतिथियों को जल-पान भी कराया गया।

आर्य परिवार

जैसा सीधा और दृढ सम्बन्ध हमारा अपनी जन्मगत जाति से होता है, वैसा सम्बन्ध आर्यों का आर्य जाति में देखने में नहीं आता। हम जन्मगत जाति-भाइयों के दुःख सुख में सम्मिलित होते हैं, उन्हीं में परस्पर विवाह-सम्बन्ध करते हैं। क्या ही अच्छा हो यदि इसी प्रकार के सम्बन्ध और व्यवहार परस्पर आर्य जाति में भी होने लगें। ऐसा होने से हमारी सामाजिक अनेक कठिनाइयाँ दूर हो जायगी तथा उलझनें सुलझ जायगी और हम गुण कर्म-स्वभाव से वर्ण व्यवस्था स्थापित करने में सफल हो सकेंगे। आर्यपरिवार संघ अजमेर के पत्र में विवाह योग्य लड़के-लड़कियों और विधुर एवम् विधवाओं की सूची छपती रहती है। उसमें उनका आयु और योग्यता का उल्लेख होता है जन्म-जाति का नहीं। उक्त संघ को प्रोत्साहन देकर हमें एक व्यापक परिवार की स्थापना करनी चाहिये।

गुरुकुल में मन्त्रियों का आगमन

श्री शिवविनायकरावजी, खाद्य मन्त्री हैदराबाद दक्षिण तथा श्री कुमार स्वामी राजा, प्रधान मन्त्री मद्रास इस सप्ताह मे गुरुकुल कांगड़ी म पधारे। श्रद्धानन्द द्वार पर उनका फूलमालाओं तथा बैंड द्वारा स्वागत किया गया। उन्होने गुरुकुल के मुख्य-मुख्य विभागो का अवलोकन कर हर्ष एव सन्तोष प्रकट किया। अपराह्न में वेद मन्दिर म आचाय प्रियव्रत जी के सभापतित्व में एक सभा बुलाई गई, जिसमें श्री आचार्यजी ने दोनो महानुभावो का परिचय कराया और कहा कि श्री विनायकरावजी इसी विश्वविद्यालय क एक प्रतिभाशाली स्नातक हैं, जिन्होने देश और जाति की अथक सेवा की है, जिसक फलस्वरूप वे आज एक उच्च पद पर आरूढ़ हैं। कुलमाता को आप जेसे सुयोग्य स्नातको पर गर्व है।

प्रथम श्री राजाजी का भाषण हुआ जिसमें उन्होंने कहा कि जो मान आप लोगो ने मुझे दिया है, उसका मैं आभारी हूँ। मुझे शीघ्र ही देहली लौट जाना है इस लिये मे आपके बीच में अधिक ठहर नहीं सकता। तत्पश्चात् श्री विनायकरावजी का निम्न लिखित प्रवचन हुआ—

माननीय आचायजी तथा उपस्थित बन्धुओ,

जितना स्वागत आपने मेरा किया है, वह मेरे लिये बहुत है, यद्यपि तुम यह विशाल स्वागत करके भी कहते हो कि हम तुम्हारा कुछ स्वागत नहीं कर सके। मेरा एक लम्बे अर्से के बाद यहाँ आना हुआ है। आशा है समय-समय पर फिर भी आता रहूँगा। यहाँ मैं केवल एक या दो के चेहरों से परिचित हूं। मैं तो पुण्य भूमि गगा के पार वाले गुरुकुल का स्नातक हूँ। जिस समय मनोहर दिन होता था, तो हम छुट्टी लेकर घूमने जाया करते थे। शायद तुम भी आजकल जाते होगे। आज मैं तुम्हारे बीच में आकर अपनत्व एव आनन्द का अनुभव कर रहा हूँ। यह बन्धुत्व दूसरे स्कूलों व कालेजो मे नहीं पाया जा सकता। मैं यहाँ आ कर अपने को बड़ा सौभाग्यशाली समझ रहा हूँ। जिस प्रकार गगा का पानी सभी स्थानो पर पवित्र ही समझा जाता है और लोग उसकी पूजा करते है, इसी प्रकार यह गुरुकुल भी पवित्र है और इससे निकले हुए स्नातक तथा विद्यापान करने वाले विद्यार्थी भी पवित्र हैं। यह गुरुकुल वस्तुतः पावन गगोत्री है। जिस समय इस पावन गुरुकुल की स्थापना श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी ने की थी उस समय उनका यही उद्देश्य था कि इस गुरुकुल-गगोत्री की बोतले जहाँ कहीं भी जायगी वहाँ हीं वे अपने ज्ञान जल से आस-पास के निवासियो को पवित्र करेंगी। एक बार स्वामीजी से पूछा गया कि इस गुरुकुल की स्थापना क्यो की गयी है। उसके उत्तर में स्वामी जी ने कहा था, कि इस संस्था में से जो विद्यार्थी निकलेंगे वे जब इस संसार के बाजार में जायगे तो वहाँ उन्हे खोटा कोई नहीं कहेगा। वह प्रत्येक कार्य में सिरे ही उतरेंगे।

मुझे यहाँ के विद्यार्थियों के स्वास्थ्य को देखकर प्रसन्नता हुई है। आज दिन संसार में ब्लैक मारकीट का जमाना कहा जाता है, उसमें बड़ी-बड़ी बेईमानी चल रही है। हमारे समय मे तो ब्रह्मचारियों के लिये खाने तथा अपने पालन-पोषण करने के लिये एक समस्या उपस्थिति होती थी, परन्तु आजकल तुम्हारे समय में सुविधायें मिल गयी हैं। वस्तुतः परिश्रम एक बड़ी चीज है। यदि संसार में प्रवेश करने के बाद तुम सभी प्रत्येक कार्य तत्परता एव परिश्रम से करोगे तो सफलता तुम्हारा स्वागत करेगी। उस समय तुम अपना सौभाग्य समझोगे कि मैं गुरुकुल माता की गोद में पला था। मेरा उदाहरण ले लीजिये। आज भी मैं अपने पीछे के जीवन को देखता हूँ तो यही सोचना हूँ कि यदि मैं गुरुकुल में न पढ़ता तो मेरा यह स्वागत तथा मान असम्भव था। आज जो भी मैं इतना बड़ा हो पाया हूँ और जो भी कुछ मैंने सीखा है वह सब इसी पवित्र गुरुकुल की कृपा है। दुनिया का दरवाजा सबके लिये खुला है। दुनिया में सघर्ष है, कम्पिटशन है और इस सघर्ष को जीतने के लिये गुरुकुल म ट्रेनिंग दी जाती है। अनेक नेताओं के सामने अपने परावलम्ब उपस्थित है परन्तु मेरे सामने तो यही समस्या है कि आज तो बेईमानी तथा चोरबाजारी गर्म है, सच्चरित्रता का नामो निशान मिटता जा रहा है। यह न समझें कि अदालतों में न्याय होता हैं, वहाँ तो सच को झूठ बनाना और झूठ को सच बनाना ही आवश्यक है। इन्हीं बातों को देखकर मुझे वकालत से घृणा होगई और मैंने उसका परित्याग कर दिया।

आज-कल जो समाज में दुराचार हो रहा है उसे हम कानूनों द्वारा बन्द नहीं कर सकते, क्योंकि आजकल कानून को तोड़ने वाले अधिक हैं। इसलिये हमें सच्चे और परिश्रमी नागरिकों की आवश्यकता है।

अन्त में आचार्यजी ने गुरुकुल की ओर से इस सुन्दर एव प्रेरणा देने वाले भाषण के लिये धन्यवाद दिया। तत्पश्चात् कुलवन्दना-गीत तथा शान्ति पाठ के साथ कार्यवाही समाप्त हुई।

आवश्यक सूचना

आर्यमित्र के नवीन व पुराने ग्राहकों को तथा विज्ञापनदाताओं को अपना कुल रुपया नीचे के पते पर भेजना चाहिये। ताकि उनके लेखानुसार तुरन्त कार्यवाही हो जाया करे।

व्यवस्थापक
आर्यमित्र, आगरा

— —

तुरन्त आवश्यकता

भारत विख्यात कार्यालय राय साहब-के० एल० शर्मा रईस "जगाधरी" के पौत्र आयु २० साल गौड़ ब्राह्मण भारद्वाज गोत्र लिखा-पढ़ा, अति सुन्दर, सब तरह से योग्य युवक के लिये गौड़ ब्राह्मण उत्तम कुल मे सम्बन्धित-रूपवती घर को सब तरह से संभालने वाली योग्य कन्या की दरकार है,

दहेज आदि का कोई प्रश्न नही परन्तु कन्या वर योग्य हो। ऊपर पते पर मनेजर से पत्र व्यवहार करें।

हवन सामिग्री

अमोली के श्री रामेश्वर दयालु ने शुद्ध और पवित्र हवन सामिग्री के कारण पर्याप्त ख्याति प्राप्त की थी। उनके मरने के बाद वही सामिग्री वहों के श्री सुन्दर लाल रामसेवक शर्मा बेचते हैं। उक्त महोदय ने सभा के वृहदधिवेशन के अवसर पर कुछ सामिग्री समालोचनार्थ हमे दी थ, जिस का उपयोग हमने किया। वास्तव मे जैसा कुछ इन्होने अपने विज्ञापन में दिया है, उसी प्रकार की शुद्ध, सुगंधित तथा कीटाणु नाशक सामिग्री प्रतीत हुई। आर्य भाइयो को इन के यहां से सामग्री मगा कर इनके उत्साह को बढ़ाना चाहिए। मूल्य १।) रु०

मगाने का पता—
सुन्दरलाल रामसेवक शर्मा
अमोली (फतेहपुर)

——

आर्यमित्र प्रकाशन लिमिटेड के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ॐ

आर्य-मित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

संचालक—आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ

३१ मई १९५१

गरल-पान

प्रो० श्यामसुन्दरलाल दीक्षित, एम० ए०

जागो रे एक वार,
जागो रे एक वार।
जागो तुम दीन-हीन,
जागो रे तन-मलीन,
जागे कृषकाय क्षीण।
जागो तुम एक वार,
जागे जग वार-वार।
गूँजा यह शंखनाद,
कान्ति का सँदेशा यह,
कण-कण में,
क्षण-क्षण में,
जन-जन में;
"मूल चन्द्र उदित हुआ है
पूर्णचन्द्र जैसा"
हिन्दू-जाति सोती थी,
लाल लुटते थे—
आँख लाल भी न होती थी।
विषम समस्या थी-
चोटी की-
रोटी की।
तभी एक बालक ने,
जागरण किया अखण्ड,
देखीं वह लीलाएँ—
महाकाल भैरव की।
गूँजा तब कानों में,
'जागो तुम मूलशंकर!
जागेगा जगतीतल।'
कविता के जगे छन्द,
जागे आनन्दकन्द,
जागा दृढ़ दयानन्द।

उसकी शुभ वाणी से
मधुर मधुर गूँजन से
मुखरित हुई मथुरा भी
आश्रम पवित्र हुआ
विरजानन्द योगी का
किन्तु नहीं रह पाया सीमित वह-
सागर सा
फैल गया ज्वाला हो
मानो अग्नि माला हो
भस्मसात् करने को,
जाति की कुरीतियों को,
राज्य की अनीतियों को।
जागा वह शंकर-सा,
बोला फिर—
'जागो तुम एक वार,
जागो जग वार-वार।'
एक वार देवों ने भी समुद्र मंथन में,
पाये थे रत्न कई।
इसी भाँति योगी ने,
विविध धर्म-मथन से
चौदह निकाले रत्न,
जिनसे बनाये गये—
चौदह ये समुल्लास
आज भी प्रकाशित जो,
किन्तु इन रत्नों में
निहित एक प्याला था,
विष का
गरल का
हलाहल तरल का।

आगे बढ़ रसिकों ने
कवियों ने,
नेता धर्मगुरुओं ने
अपनाली रत्न-राशि,
केवल था शेष यही
गरल पान कौन करे?
सबने विद्रोह किया,
बोले वे सभी लोग
यह विष है, देश का, समाज का
उसके अन्यायों का
उसके घोर पापों का
जीवित रहेगा इसे
पीकर भी कौन भला?
देव नहीं,
इसके लिये तो महादेव को
बुलाया जाय।
बोला वह शङ्कर-सा
और प्रलयङ्कर-सा,
भैरव भयङ्कर-सा
मेरे ध्रुव-मंथन से,
चारु-चारु चिन्तन से
निकले हैं रत्न जो भी
उन्हें आप रक्खें सुरक्षित सदैव साथ
और विष पान करने को मैं प्रस्तुत हूँ।
जातिगत रूढ़ियों का
वैमनस्य,—द्वेष का
आलस का,

भीरुता का—
कायरता, दैन्य का,
गरल नहीं है यह,
अमृत है देवताओ?
"इसे पिया मीरा ने,
पीकर वह अमर हुई।
नाच रहे गिरिधरगुपाल
आज घर-घर में।
आज मैं पियूँगा इसे
अमर बनाऊँगा
हिन्दुओं की संस्कृति को
भाषा को, भावों को"
आगे बढ़ आया तभी
दुर्गुण-स्वरूप एक
मानव का पुतला-सा
हँसता-सा
रोता-सा
उसने विष-पात्र लेके
सामने बढ़ा दिया
शंकर-समान मूलशंकर परचढ़ा दिया।
होकर प्रसन्न बोले—
"द्वैत भावना को छोड़
एकाकी होता हूँ।
जाओ, निज रक्षा करो,
यह लो निर्वाह-रूप
थैली गुण-रत्नों की।
देता हूँ अभय-दान—
करता हूँ गरल-पान—
बनता हूँ नीलकंठ।"

———

वार्षिक मूल्य ८) (विदेश में १०), एक प्रति- तीन आने
सम्पादक हरिशङ्कर शर्मा
वर्ष—[illegible]
अङ्क—[illegible]

श्री प्रधानजी के दो पत्र

[आर्यमित्र-सम्पादक के नाम]

(१)

लखनऊ से बाहर होने के कारण मैं आर्यमित्र के ३ मई के अंक को अब पढ़ पाया, तीसरे पृष्ठ पर आपका सम्पादकीय लेख सभा का बृहदधिवेशन शीर्षक अत्यन्त उपयोगी है और जो कुछ आपने लिखा है वह यथार्थ है। यह दुःख की बात है कि हम बृहदधिवेशन के समय निर्वाचन पर सारा बल लगा देते है। एक प्रकार यह ठीक भी है कि सभा के कार्य को आगे सुचारु रूप से चलाने के लिये यह आवश्यक है कि सभा का हितपूर्वक कार्य करने वालो के हाथ में उसकी बागडोर दी जावे परन्तु यही सारा ध्येय नही है। हमें यहभी विचारना चाहिये कि वैदिक धर्म की प्रगति किस प्रकार बढ़ावें, और नैतिकता देश में फैले, ऐसे कौनसे उपाय कार्य में लावे। सभा और समाज के निर्माण का बड़ा उद्देश्य यही है और यदि इसमें सफलता नही मिलती तो निर्वाचनादि सब गौण कार्य ही रह जाते हैं।

प्रश्न यह है कि इस प्रकार के विचार किस समय किये जाय। प्रथम तो लोगों के पास समय ही कम है। कारण कि आजकल के कठिन जमाने में आजीविका की पूर्ति ही बहुत-सा समय ले लेती है। फिर यदि ऐसी कोई मीटिंग पहले की जाय तो आगन्तुक महानुभावों की रुचि निर्वाचनादि में होने से वे उस मीटिंग में अच्छी तरह से भाग नही लेने देती। निर्वाचनादि के पश्चात् इस प्रकार की मीटिंग रुचिकर नही होती। कारण कि प्रतिनिधि महानुभाव अपने-अपने घरों को लौटने की जल्दी में होते हैं। फिर क्या किया जाय? इस कामके लिये बैठक कब रक्खी जाय? कार्य आवश्यक है। मुझे आशा है कि आप तथा अन्य सज्जन बतावेंगे कि उक्त कार्य कैसे किया जाय और इस कार्य के लिये कौन समय उपयुक्त होगा।

आपने इस ओर ठीक ही ध्यान खींचा है कि तीन-तीन उपमंत्री उपकोषाध्यक्ष, उपपुस्तकाध्यक्ष प्रतिवर्ष जो चुने जाते हैं, वे क्या विशेष कार्य करते हैं? अथवा केवल उनके चुनाव की रस्म ही अदा होकर रह जाती है। इस वर्ष हमें देखना चाहिये कि उक्त पदाधिकारी क्या करते हैं और यदि उनका निर्वाचनादि रस्म मात्र है तो उनमें कमी की जावे अथवा केवल वही प्रतिनिधि पदो पर निर्वाचित किये जाय, जो सभा के निमित्त कार्य करें, विशेष धन या पुस्तकें एकत्रित कर सकें। पृष्ठ ४ पर आपने एक उपयोगी प्रस्ताव आर्य सेवको की स्मृतिरक्षा सम्बन्धी किया है। और आप यह कार्य आर्यमित्र द्वारा कर भी रहे हैं यह सचमुच उत्तम और कृतज्ञतापूर्ण कार्य है, और आशा की जाती है कि आप आर्यमित्र द्वारा इसे जारी रक्खेंगे।

लखनऊ, २३-४-५१

(२)

आर्यमित्र का १७ मई का अङ्क मेरे सम्मुख है। मुखपृष्ठ पर "शङ्कर-दोहावली" बड़े मार्के की चीज छपी है। मैंने बड़े चाव से एक से अधिक वार इस दोहावली का पाठ किया। कुछ दोहे तो ऐसे हैं कि यदि उनको मोटे अक्षरों में सदा अपने सम्मुख रखा जाय तो बड़ा लाभ हो, जैसे--

(१) प्यारे नरनारी रहैं, जिसमें प्रेम प्रसार।
सुख से ऐसे गेह में, बढ़ता है परिवार।

(२) जो कुछ औरों का भला, करते हैं हम लोग।
उसमें होता है भरा, अपना ही सुख-भोग।

(३) पद्म-पत्र का नीर से देख विलक्षण मेल।
रे शङ्कर, संसार में इस प्रकार से मेल।

आपने सम्पादकीय मुख्य लेख में यह ठीक ही लिखा है कि आर्यसमाज बड़े गौरव और गर्व के साथ कह सकता है कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने में उसका प्रमुख हाथ है। वर्तमान हिन्दी को इतना शुद्ध रूप देने वाले आर्यनेता ही हैं। पृष्ठ तीन पर 'गोरक्षा' शीर्षक उपयोगी सम्पादकीय लेख है। और चाहिये भी आर्य-हिन्दुओं को यही कि स्वयं अपने-अपने घरों में गऊ का पालन करें। परन्तु आजकल तो बड़ी कठिनाई है। चारा बहुत मंहगा मिलता है, और उससे अधिक मंहगे टहल करने वाले आदमी मिलते हैं। रहने के घर भी ऐसे नहीं हैं जहाँ ढोरों को अच्छी तरह रखा जा सके। मुझे खूब याद है कि बचपन में हमारे घर में बराबर गऊ रही। किन्तु अबतो अगर दस गुना व्यय भी करें तब भी गौ पालना दुस्तर है। कदाचित् इस समय तो कोआपरेटिव डेरीज ही इस काम को कर सकती हैं। किन्तु यह बात अनुभव से कही जा सकती है कि उनका दूध इस योग्य नहीं होता कि जिस दूध का सेवन कर पूरा लाभ उठाया जा सके।

अभी हाल में मेरे भतीजे का पुत्र अमेरिका से शिक्षा प्राप्त करके लौटा है। उसका कहना है कि प्रत्येक भोजन के बाद हर एक अमेरिका निवासी दूध सेवन अवश्य करता है। हमारे देश में तो हम लोग अब दूध के स्थान में अधिकतर चाय का ही सेवन करते हैं। एक बड़ा कारण ऐसा करने का यह भी है कि दूध आसानी से नहीं मिलता। पहाड़ो में तो उसका सर्वथा अभाव-सा ही है।

इस अङ्क के पृष्ठ ११ पर आचार्य नरदेव शास्त्रीजी ने 'अध्यात्म क्या है?' इस विषय पर एक रोचक लेख लिखा है, जो आसानी से 'आर्यमित्र' के पाठको को समझ में आ सकता है। ऐसे सुगम प्रकार से लिखे गये लेखों की बड़ी आवश्यकता है।

सम्पादकजी, आपने श्री पं० गंगाप्रसादजी उपाध्याय को सार्वदेशिक सभा के मन्त्री पद से अवकाश ग्रहण करने पर बधाई दी है कि उनके द्वारा अब अच्छा साहित्य उपलब्ध हो सकेगा। बात तो ठीक है, किन्तु सार्वदेशिक सभा आर्यसमाज की शिरोमणि सभा है और उसके संचालन का कार्य भी मामूली नहीं है। किसी योग्य पुरुष के ही हाथ में वह कार्य रहना चाहिये।

लखनऊ — मदनमोहन सेठ,

२३-५-५१ — प्रधान सभा

राजगुरूजी का तूफ़ानी दौरा

विहार प्रान्तीय अन्न-संकट की जाँच

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान राजगुरु श्री पं० धुरेन्द्र शास्त्री आजकल विहार प्रान्त में भ्रमण कर रहे हैं। राजगुरुजी के भ्रमण का उद्देश्य दुर्भिक्ष-पीड़ित स्थानों का निरीक्षण करना है। २२ मई को श्री राजगुरुजी ने खाद्य-संकट के सम्बन्ध में खाद्य-मन्त्री श्री अनुग्रहनारायणसिंहजी से विस्तार पूर्वक विचार-विनिमय किया। विहार प्रान्तीय कॉंग्रेस के अध्यक्ष श्री लक्ष्मीनारायणजी 'सुधांशु' से २३ मई को इसी समस्या पर विचार किया। सोशलिस्ट और कम्यूनिस्ट कार्यालयों से भी इस विषय में जानकारी प्राप्त की। श्री राजगुरुजी वास्तविक वस्तुस्थिति जानने के लिये जयनगर, मधुवनी, सहरसा, मधेपुरा और सुपौल तथा उनके समीपवर्ती ग्रामों की भी यात्रा कर रहे हैं। आपका यह कार्य अभी निरन्तर चलता रहेगा।

'यज्जाग्रतो दूर मुदैति दैवं'

आर्यमित्र

आगरा, ज्येष्ठ कृष्णा ११ संवत २००८ वि०, गुरुवार, ता० ३१ मई १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-सवत् १९७२९४९०५१

महित्रीणामेवाऽस्तु द्युक्ष' मित्रस्यार्यम्णाः । दुराघर्षं वरुणस्य ।
ऋ० १०।१८५।१

मित्रभाव या न्याय-बुद्धि ध्रुव धारण करना
पा श्रेष्ठत्व अपार विश्व के बीच विचरना
मानव-जीवन का आदर्श यही जाना है
इन्हीं सद्गुणों को सबन सुखमय माना है

'दयानन्द-सेवक-समिति'

देश में एक 'लोक-सेवक-समिति' (सरवेंट आफ इण्डिया सोसाइटी) बहुत दिनों से स्थापित है। इसके सदस्यों ने देश की प्रशंसनीय सेवा की है। लोक-सेवक-समिति के सदस्यों को अपनी समस्त लौकिक आकांक्षाएं त्याग कर सारी शक्तियाँ देश सेवा के लिए लगानी पड़ती हैं। सदस्यों के निर्वाह का उत्तरदायित्व समिति पर होता है। स्वर्गीय महात्मा गोखले, माननीय श्री श्रीनिवास शास्त्री, प० हृदयनाथ कुंजरू आदि ने इसी समिति के सेवक की हैसियत से देश-सेवा की है। हमने बहुत पहले लिखा था और अब फिर लिखते हैं कि आर्यसमाज में 'दयानन्द-सेवक समिति' की स्थापना होनी चाहिये। इस समिति के प्रायः वैसे ही नियम और उपनियम हो जैसे कि उक्त लोक-सेवक-समिति तथा अन्य ऐसी ही संस्थाओं के हैं। स्वर्गीय लाला लाजपतराय ने भी देश-सेवा के लिए ऐसी ही एक समिति को जन्म दिया था।

'दयानन्द-सेवक-समिति' को किसी प्रदेशीय या सार्वदेशिक सभा के अन्तर्गत न रहकर स्वतन्त्रतापूर्वक अपना कार्य करना चाहिये। इस समिति में ऐसे विद्वान्, और अनुभवी कार्यकर्त्ता सम्मिलित हों, जो अपना जीवन वैदिक धर्म सेवा में समर्पित करने का व्रत लें, अथवा ले चुके हों, जिनकी एक मात्र साधना समाज-सेवा हो। जो लोग केवल सांसारिक स्वार्थपूर्ति में संलिप्त हैं, उन्हें इस समिति से पृथक ही रहना चाहिये। दयानन्द सेवक समिति के सदस्यों को मासिक रूप से इतनी वृत्ति अवश्य मिलनी चाहिये जिससे उन्हें गृहस्थ संचालन में किसी प्रकार की कठिनाई न हो। जो सदस्य ऐसे हों जिन्हें वृत्ति की आवश्यकता नहीं, उन्हें भी वृत्ति अवश्य लेनी चाहिये, भले ही वह वृत्ति 'दयानन्द-सेवक-समिति' के लिये दान-रूप में अर्पित कर दी जाय। समिति का ऐसा सदस्य कोई न हो जो निश्चित वृत्ति न लेता हो। 'आनरेरी पन' या 'अवैतनिकता' कुछ लेने वाले या न लेने वालों के बीच एक भेदक भित्ति खड़ी कर देती है। न लेने वाले अपने को त्याग-मूर्ति और लेने वालों को जलील-सा समझने लगते हैं। यह विषम भावना 'दयानन्द सेवक-समिति' के सदस्यों के मध्य न होनी चाहिये, इससे अनेक कठिनाइयाँ पैदा हो जायगी।

'दयानन्द-सेवक-समिति' का केन्द्र कार्यालय किसी केन्द्रीय स्थान में रहे और उसकी शाखाएं प्रत्येक जिले और प्रान्त में फैली हों। समिति के सेवक निश्चित और नियमित कार्यक्रम के अनुसार अपना-अपना कार्य करें। कुछ सदस्य कालिजों की दुनिया में प्रचार करें और कुछ अदालती तथा व्यापारिक जगत् में; कुछ अन्य क्षेत्रों में। हम समझते हैं, दयानन्द-सेवक-समिति में सदस्यों की कमी न रहेगी और उनके द्वारा काम भी खूब होगा। पूर्ण उद्योग करने पर 'समिति' के लिये आवश्यक धन तो एकत्र हो ही जायगा।

हमारा विश्वास है कि बिना पूरा समय दिये समाज-सेवा का कार्य कर सकना कठिन है। पहले जिन आर्य कार्यकर्त्ताओं ने कार्य किया, पर्याप्त समय देकर किया। परन्तु अब लोग समय तो कम से कम देते हैं, किन्तु श्रेय अधिक से अधिक चाहते हैं। सारी शक्ति चुनाव में खर्च कर देने के बाद फिर कुछ काम शेष नहीं रह जाता। ऐसे सदस्यों या समाजों से कोई आशा नहीं की जा सकती। लगन के कार्यकर्ताओं की कमी के कारण आज शिरोमणि सभाओं से लेकर साधारण सदस्य तक अकर्मण्यता का आलिंगन किये हुए हैं। 'दयानन्द सेवक-समिति' निश्चय ही ऐसा कार्य करेगी जिससे समाज के शिथिल शरीर में प्रगतिशीलता का संचार होगा। आर्यसमाज बहुत ढीला हो गया है, उसकी सारी संस्थाएं ढीली-पोली पड़ी हैं। अगर आर्यसमाज को जीवित रहना है तो कर्म्मवीर बनकर जीवित रहना चाहिये। 'कर्म्मवीर' बनने के लिए समय और शक्ति की आवश्यकता है। बिना समय, शक्ति लगाए और स्वार्थ-त्याग किये सफलता की आशा रखना आकाश से कुसुम तोड़ने के समान है।

जन-शिक्षण क्यों नहीं होता ?

कौंसिल-असैम्बलियों के चुनाव आगामी नवम्बर-दिसम्बर मास में होने वाले हैं। इनमें जूझने के लिये राजनैतिक दल अभी से तैयारियाँ कर रहे हैं। जिस प्रकार वधू-वरण करने के लिये किसी जमाने में स्वयंवर होते थे, उसी प्रकार मिस 'मेम्बरी' को हासिल करने के लिये आज बड़े-बड़े आयोजन किये जा रहे हैं। कनवैसिंग का सहारा लिया जा रहा है। सिफारिश, खुशामद और बिरादरीबाजी तथा रिश्तदारी निकाली जा रही है। यह सब कुछ हो रहा है देश-सेवा के नाम पर। परन्तु एक स्वतन्त्र देश की सरकार को 'जन-शिक्षण' के लिये जो कुछ करना चाहिये वह उसे नहीं कर रही। देश के अनेक नागरिक तो यह भी नहीं जानते कि 'चुनाव' क्या बला है? वोट किसको देना चाहिये और किसको नहीं। वोट देने का अर्थ क्या है, गलत वोट देने से कितना बड़ा अनर्थ हो सकता है। इन सब बातों को सुझाने समझाने की सरकार को न तो अब फुरसत है और न आवश्यकता। 'वोट-भिक्षु' लोग 'स्वार्थ-सिद्धि' के लिये घर-घर और ग्राम-ग्राम वोट भिक्षा मांगते फिरेंगे। 'हमें वोट दीजिये, हमें वोट दीजिये' की आवाज सर्वत्र सुनाई देगी। आपको क्यों वोट दी जाय, क्यों न दी जाय, किसको दी जाय, किस आधार पर दी जाय, इसे न कोई बताना चाहता है और न पूछना। सरकार कालिजों की सिद्धान्तहीन पढ़ाई और अपने प्रचार (प्रोपेगैण्डा) पर तो लाखों करोड़ों रुपया व्यय करती है, परन्तु जन-शिक्षण पर कुछ नहीं करती। जिन मतदाताओं के मतों से राष्ट्र और भारत के भविष्य का निर्माण होगा, उनकी शिक्षा का उसे ध्यान भी नहीं। यदि जनता को चुनाव सम्बन्धी ठीक-ठीक शिक्षण दिया जाय तो उससे योग्य व्यक्तियों के चुनने में बड़ी सहायता मिल सकती है। भारत के निर्वाचकगण या निर्वाचन-क्षेत्र चुनावों के सम्बन्ध में अपने कर्तव्य से जितने हीन हैं उतने कदाचित् ही किसी देश के हों। क्या सरकार का कर्तव्य नहीं है कि वह जन शिक्षण पर ध्यान दे। लोगों को चुनाव के सम्बन्ध में उनके कर्तव्य बतावे और चुनाव की बारीकियाँ उन्हें समझावे बुझावे। अभी समय है, सरकार चाहे तो इस दिशा में अपना यथेष्ट कर्तव्य पालन कर सकती है और एक बड़ी आवश्यकता की पूर्ति करने में सहायक हो सकती है।

दैनिक के सम्बन्ध में

हमारे पास प्रायः नित्य-प्रति ऐसे पत्र आते रहते हैं, जिनमें पूछा जाता है कि 'आर्यमित्र' का दैनिक संस्करण क्यों नहीं प्रकाशित होता, कब से प्रकाशित होगा, होगा भी कि नहीं। ऐसे प्रश्नकर्ता हमसे प्रश्न करने के पूर्व यदि अपने अन्तरात्मा से दरियाफ्त कर लिया करें कि उन्होंने दैनिक 'मित्र' के लिये क्या प्रयत्न किया है, स्वयम् कितने हिस्से खरीदे हैं और अपने मित्रों से कितने

खरीदवाए हैं तो अधिक अच्छा है। आर्यमित्र का दैनिक संस्करण खेल नहीं है, उसके लिये कम से कम दो लाख रुपये की और आवश्यकता है। हमारे पंजाबी आर्य भाई आपत्तिग्रस्त होने पर भी सचमुच सच्चे पुरुषार्थी हैं। उन्होंने विस्थापित होने पर भी अपने 'मिलाप' और 'प्रताप' देहली, जालन्धर, हदराबाद आदि स्थानों से प्रकाशित कर दिये हैं, परन्तु आर्यों की इतनी बड़ी सम्मिलित शक्ति द्वारा आर्यमित्र अभी दैनिक नहीं हो पाया, यह कितने दुःख की बात है। प्रत्येक आर्यसज्जन और आर्यसमाज अपने समाचारों और लेखों को तुरन्त आर्यमित्र में प्रकाशित देखना चाहता है; और कभी-कभी कुछ सज्जन तो अपने पत्रों में हमें सम्पादन-कला पर लेक्चर भी झाड़ देते हैं। परन्तु यह नहीं सोचते कि आर्यमित्र के ज़रा-से स्थान में सब बातें कैसे आ-समा सकती हैं। और वे दैनिक पत्रों की तरह कैसे पाठकों को शीघ्रातिशीघ्र पढ़ने को मिल सकती हैं। साप्ताहिक पत्र विचार-पत्र होते हैं, वे समाचार-पत्र का काम कठिनता से ही दे सकते हैं, फिर इस युग में जब मोटर लौरियों और बसों की बदौलत दैनिक पत्र ग्राम ग्राम पढ़े जा रहे हैं। यदि आर्यमित्र को दैनिक बनाना है तो उसके हिस्से खरीदने चाहियें। ऐसा किये बिना सारे मनसूबे व्यर्थ हैं, कोरी योजनाएं कुछ नहीं कर सकती।

वृन्दावन-गुरुकुल

स्वतन्त्र भारत में गुरुकुल जैसी प्राचीन शिक्षा-प्रणाली पर आधारित संस्थाओं को फूलने-फलने का पूरा अवसर होना चाहिए। परन्तु दुःख है कि उत्तरप्रदेशीय आर्यों की प्यारी और पुरानी संस्था वृन्दावन गुरुकुल उन्नति या प्रगति के विशेष चिन्ह नहीं दिखा रहा। इस समय हमें विस्तार में न जाकर केवल यही कहना है कि हमारे वृन्दावन-गुरुकुल में कल्पनाशक्ति का अभाव है उसमें अवसर से लाभ उठाने की विशेष चिन्ता नहीं की जाती। उसकी यत्किंचित् प्रगतिशीलता को भी जनता के सामने नहीं रखा जाता। केवल उत्सव के दिनों में कुछ साधारण-सी चहल-पहल ज़रूर दिखाई देती है, सो भी दो तीन सप्ताह। कांगड़ी गुरुकुल इस दिशा में बड़ा सौभाग्यशाली है। वह प्रत्येक अवसर से लाभ लेना जानता है। देश के बड़े-बड़े आदमियों को वह अपनी ओर शीघ्र आकृष्ट कर लेता है। परन्तु वृन्दावन गुरुकुल, वृन्दावन में यात्रार्थ आये हुए बड़े बड़े विद्वानों की विद्यमानता से भी वंचित रहता है। आर्यों की यह प्रतिष्ठित संस्था महात्मा नारायणप्रसादजी जैसे कर्मठ प्राणप्रेरक की ओर सतृष्ण दृष्टि से देख रही है। हमारी राय में उसके संचालन के लिये अनुभवशीलता और कल्पनाशक्ति दोनों की आवश्यकता है और सबसे अधिक ऐसे संचालकों की आवश्यकता है जो अपना सारा समय नहीं सारा जीवन लगाकर उसमें प्राण-संचार कर सकें। आर्यसमाज में शिक्षा-शास्त्रियों की कमी नहीं है, कमी है उन्हें प्रतिष्ठापूर्वक आमन्त्रित करने और सादर-सम्मान के साथ संस्था में रखने की। जिस दिन आर्यसमाज में ऐसी उत्तम भावनाएं आ जायगी, उसी दिन उसकी सारी संस्थाएं दिव्य द्युति से दमक उठेंगी। वृन्दावन गुरुकुल की सन्तोषजनक अवस्था न देखकर जहाँ हमें दुःख होता है, वहाँ लज्जा भी अनुभव हुए बिना नहीं रहती। गुरुकुल की स्वामिनी उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा को इस विषय में सफलतापूर्वक चिन्तन करने की आवश्यकता है। गुरुकुलोपसभा या विद्या सभा के कुछ सदस्य साल-भर में कुछ घण्टों के लिए एकत्र होकर शायद इस महत्वपूर्ण प्रश्न को सम्यक् रीति से हल न कर सकेंगे।

अम्बेडकर साहब का आलाप

केन्द्रीय सरकार के विधि विधान-वेत्ता जनाब अम्बेडकर साहब समय-समय पर अनर्गल आलाप द्वारा अपनी गुप्त और गूढ़ मलिन मनोवृत्ति का अप्रशंसनीय परिचय देते रहते हैं। कभी आप अछूतों को भड़काते हैं, कभी आर्यसमाज पर कोप-कोदण्ड तान कर उसे ही सारे अनर्थों और बरबादियों की जड़ बताते हैं। कभी आप सिख धर्म के स्वागत-सत्कार में उसके निमित्त अपनी आँखें बिछाकर द्विविधा-भरे दिल के दरवाज़े खोलदेते हैं, और कभी बौद्ध धर्म को अपने-अपने हृदय का हार बनाकर उग्रतापूर्वक उछलते बोलते हैं। अम्बेडकर साहब जैसा अवसर देखते हैं, वैसा ही राग अलापने लग जाते हैं धर्म के सम्बन्ध में उनका कोई सिद्धान्त नहीं है। आजकल आप बौद्ध धर्म पर फ़िदा हैं। हिन्दू धर्म या ब्राह्मण धर्म से सख्त नाराज हैं। अभी उस दिन 'बुद्ध-जयन्ती' के दिन भाषण देते हुए आपने हिन्दू धर्म पर बुरी तरह विष-वमन किया और उसे खूब खरी खोटी सुनाई। आप जहाँ जाते हैं, प्रायः वहीं बौद्धधर्म का कलकीर्तन करते हैं, मानो केन्द्रीय सरकार में रह कर बौद्ध धर्म का प्रचार करना ही आपका मुख्य कार्य है; और इसी धर्म के प्रचार'उद्धार के लिये आपकी वहाँ स्थिति है। कोई किसी धर्म को माने, इससे हमें कोई सरोकार नहीं; परन्तु जिस वैदिकधर्म से करोड़ों व्यक्तियों का सम्बन्ध है, उसके विरुद्ध बेजोड़ बातें बकना कभी क्षन्तव्य नहीं कहा जा सकता। जिस वैदिकधर्म के मूल तत्वों पर आज संसार के बड़े-बड़े विचारक मुग्ध हो रहे हैं, उसकी हुजूर अम्बेडकर साहब खिल्ली उड़ाते हैं। जो वैदिक अध्यात्मवाद विश्व को शान्ति प्रदान कर सकता है, वह जनाब अम्बेडकर की समझ शरीफ में व्यर्थ की वस्तु है। मालूम नहीं, अम्बेडकर साहब किस खयाले-खाम में रहते हैं। धार्मिक दृष्टि से वे बेपेंदी के पात्र की तरह कभी इधर ढुलक जाते हैं, और कभी उधर। आखिर उनका कोई सिद्धान्त भी है, या यों ही जो मन में आया अलापने लगे और जिधर ढुलक गये उधर ही और को भी धकेलने लगे। खुदा बचावे ऐसे बे-उसूले धर्म-ध्वजों से।

वेद-वीथी

अक्षय ऐश्वर्य

देवस्य चततो मही प्रसवित हवामहे सुमतिं सत्यराधस। यजु० २२।२१

चेतन स्वरूप सकल संसार के उत्पादक, पालक-पोषक स्तुति के योग्य ईश्वर की महती सुन्दर बुद्धि को हम ग्रहण करते हैं, जिसमें अक्षय-ऐश्वर्य प्राप्त होता है।

सत्यराधस वह सत्य धर्म से प्राप्त किया हुआ है जिसका व्यय नहीं होता, जिसे पाकर मनुष्य के अन्दर यज्ञ अनुष्ठान करने की, सर्वहित के कार्य मिलकर करने की, उल्लासयुक्त रुचि होती है। एक ऐश्वर्य वह है जो मनुष्य को अनाचार, अत्याचार और दुराचार में प्रेरित करता है जिससे सभी प्रकार के व्यभिचार लोग किया करते है। धर्म से अर्थ और धर्म अर्थ से काम, यह मानव धर्म का क्रम है, इसमें कामना में वासना और लालसा की छाया तक नहीं होती। धर्मशील मनुष्य भी धन, धान्य, सम्पत्ति प्राप्त करते हैं, वह दिव्य सम्पत्ति धर्म कार्यों में देश, जाति, समाज और राष्ट्र के उत्थान में व्यय होती है तथा शतवीर्य युक्त फूलती फलती है। दिव्य सेवा में मनुष्य अभय होता है, उसकी शान्ति भोग में स्थिति होती है।

ऐसी सच्ची ऐश्वर्यवाली कमाई सच्चिदानन्द भगवान के आचारवान उपासकों को ही प्राप्त होती है। भगवान् परम ऐश्वर्यवान है। भगवान् लक्ष्मीपति सर्वधारक पालक पोषक और रक्षक है। भगवान का उपासक निर्धन कैसे हो सकता है? वैदिक मर्यादा में तो मनुष्य को अनेक ऐश्वर्यों का स्वामी होना ही चाहिये। ऐश्वर्य हीन व्यक्ति तथा ऐसे व्यक्तियों का समाज कभी आर्यसमाज नहीं हो सकता। आर्य तो आर्य नाम सर्व शक्तिमान सर्व ऐश्वर्य सम्पन्नप्रभु का अमृतपुत्र है। वह न तो ऐश्वर्यहीन है और न कृपण। भगवान् वृषभ है, सुखों की वर्षा करते हैं। भगवान् का उपासक भी परम उदार और सुहृद होता है। भगवान् का उपासक तो अपने भगवान् को अथवा भगवद्भक्त आप्त पुरुषों को ही आदर्श मान कर उनके गुण धारण करता है।

भगवान् के उपासक को अपनी अमरता तथा चेतनता का पूरा निश्चय होता है और भगवान् से पूर्णता, आनन्द और सौन्दर्य चाहता और निरन्तर पाता है। भगवान का स्तोता अपनी स्तुति के अनुकूल आचरण करता है, भगवान के गुण धारण करता है और भगवान् की महती सुन्दर सुमति पाता है।

—लालचन्द

स्वास्थ्य-सुधा

भोजन के साथ जल

श्री प० सत्येन्द्रनाथ, आयुर्वेदाचार्य

भोजन के साथ जल पीना चाहिए या नहीं, इस सम्बन्ध में लोगो के विभिन्न विचार हैं, यहाँ तक कि चिकित्सकों में भी मतैक्य नहीं है। हमारे स्वाथ्य से घनिष्ठ और दैनिक सम्बन्ध रखने के कारण यह विषय अत्यन्त महत्व-पूर्ण है। अतः पाठकों की जानकारी के लिए इस सम्बन्ध में अपना अभिमत प्रकट करते हैं।

हम जो कुछ भी आहार करते हैं, वह अन्न-प्रणाली द्वारा आमाशय में पहुंचता और वहाँ जठराग्नि द्वारा उसका शनैः-शनैः पाचन होता है। उस पाचन-क्रिया के नियमित और उचित रूप में सम्पन्न होने में जलका बहुत काय होता है। यदि हमारा आहार ऐसा है, जिसमें जलांश अधिक मात्रा में मौजूद है, जैसे-फल, दूध, दही, रसीले शाक, खिचड़ी, चावल, साबूदाना आदि, तो हम स्वय अनुभव करते हैं कि ऐसा भोजन शीघ्र और सरलता से पच जाता है। परन्तु इसके विपरीत जब हम रोटी, परोंठा, बाटी, लड्डु, पेड़ा, रबड़ी, घेबर, पूड़ी, कचौड़ी, गाढ़ी दालें, अरबी आदिके सूखे शाक आदि ऐसे पदार्थों का भोजन करते हैं, जिन में जलीय अंश अल्प मात्रा में होता है, तो सब कोई अनुभव करते हैं कि ये पदार्थ देर में पचते हैं। जो पदार्थ विशेष खुश्क होते हैं, वे तो बिना जल का घूंट लिए गले में भी नहीं उतरते, उनका पचना तो दूर की बात रही। इससे सिद्ध है कि आहार के पचाने में जल बहुत सहायक होता है। जिस समय आमाशय में आहार पचने लगता है, उस समय हमें प्यास अनुभव होती है, इससे भी आहार पचाने के लिए जल आवश्यक है, इस बातका समर्थन होता है। यदि हम कभी भूल या प्रमाद वश गुरुपाको आहार (जिनमें जलांश कम होता है), के साथ जल नहीं पीते, तो उसके पचने में बड़ी दिक्कत पड़ती है। आहार देर से पचता है, मल-मूत्र समय पर और ठीक नहीं उतरते, कब्ज हो जाता है, पेट फूल जाता है तथा अपान वायु शुद्ध नहीं होता। फलतः छाती में जलन होती और खट्टी डकारें आना शुरू होजाती हैं। यदि ऐसे आहार के साथ थोड़ा-थोड़ा जल पिया जाता है, तो वह जल आमाशय में, खाए हुए पदार्थों के साथ मिलकर, उन्हें द्रव रूप में परिणत कर पाचन-क्रिया में जठराग्नि को साहाय्य प्रदान करता है। जिस प्रकार पतीली में दाल, चावल आदि बिना जलके पक नहीं सकते, उसी प्रकार जठराग्नि में भी आहार जल बिना पच नहीं सकता। हां, जैसे तोरई आदि अधिक जलांश वाले हरे शाक बिना पानी डाले भी पक जाते हैं, वैसे ही जल-प्रधान पदार्थ जठराग्नि में भी बिना जल की सहायता के पच जाते हैं।

उपर्युक्त युक्तियों का सार यह है कि हमें भोजनके साथ थोड़ा-थोड़ा जल अवश्य पीना चाहिए। जब हम आहार के साथ थोड़ा-थोड़ा जल पीते हैं, तो उस जल मिले भोजन के आमाशय में पहुँचते ही—उसमें पाचक पित्त और आमाशयिक रस आसानी से मिल जाते हैं और उसे शीघ्र पचा देते हैं। विपरीत इसके जब खुश्क और ठोस आहार आमाशय में पहुंचता है, तो उसमें आमाशयिक रस और पाचक पित्त बहुत देर में मिल पाते हैं, फलतः ऐसे पदार्थ देर में पचते हैं, और इनके पचाने में जठराग्नि की बहुत अधिक शक्ति व्यय होती है।

जिस प्रकार भोजन के साथ जल न पीने से पाचन-क्रिया ठीक नहीं होती, उसी प्रकार अधिक जल पीने से भी आहार का ठीक-ठीक परिपाक नहीं होता। इसी-लिए महर्षि सुश्रुताचार्यने कहा है—

अत्यम्बु पानान्न विपच्यतेऽन्नं,
अनम्बु पानाच्च स एव दोषः,
तस्मान्नरो वन्हि विवर्धनाय,
मुहुर्मुहुर्वारि पिबेदभूरि।

—अर्थात् भोजन के साथ अत्यधिक जल पीने से आहार नहीं पचता। बिना जल पिये भी यही दोष (अन्न न पचने का) होता है। इसलिये मनुष्यों को चाहिये कि जठराग्नि को दीप्त करने के लिए आहार के साथ अनेक बार थोड़ा-थोड़ा जल पियें।

जो लोग भोजनके साथ सर्वथा जल पीने के विरोधी हैं, उन्हे सुश्रुताचार्य का उक्त कथन और हमारी युक्तियो पर विचार कर भोजनके साथ जलका उचित प्रयोग अवश्य करना चाहिए। किस प्रकार के आहार के साथ तथा इसके पश्चात् कितना व किस प्रकार जल पीना हितकर है किसके साथ अहितकर है, इस पर अगले किसी अंक में निवेदन करेंगे।

बाल-विनोद

श्यामू की शैतानी

किसी शहर में श्यामू नामक रहता था लड़का शैतान।
वह अपनी शैतानी से करता था सब को ही हैरान॥
राह-बाट, बाजार, मदरसा, जहाँ कहीं मौका पाता।
श्यामू वहीं कुछ न कुछ अपनी शैतानी था फैलाता॥
कभी नहीं वह घर-मारग में सीधे-सादे चलता था।
कभी कुदकता, कभी दौड़ता, रुककर कभी उछलता था॥
कहीं उलझता भिखमगों से कहीं फेरुओ से लड़ता।
ईंट फेंकता कभी किसी पर श्यामू सदा दीख पड़ता॥
कभी डाक के बम्बे में वह कूड़ा-करकट भर आता।
मिलता अगर कभी मौका तो उलटा इसको कर आता॥
इक्का, ताँगा, घोड़ागाड़ी जो भी उसे दीख पड़ता।
लटक उसी के पीछे जाता कभी न था जी में डरता॥
पढ़ते समय क्लास में सबसे पीछे बैठा करता था।
चौंच बनाता कभी कभी कंकड़ियां फेंका करता था॥
एक रोज तो श्यामू ने की शैतानी ऐसी भारी।
होगा बड़ा ताज्जुब तुमको सुन उसकी करनी सारी॥
निकला भोंदू कोचवान घर से घोड़ागाड़ी लेकर।
जाते हुए मदरसे को श्यामू की पड़ी नजर उस पर॥
पीछे देखा पायदान खाली तो होकर के बेडर।
झट पीछे से उचक चढ़ लिया श्यामू घोड़ागाड़ी पर॥
मुफ्तखोर को बिना बोहनी हुए चढ़ा गाड़ी पर जान।
झल्लाया बेतरह और चिल्लाया भोंदू गाड़ीवान॥
'अबे कौन है? उतर जल्द, वरना चाबुक फटकारूंगा।
पकड़ लिया तो ठीक तरह फिर तेरी कमर सुधारूंगा॥'
पर श्यामू ने चिल्लाने की की कुछ भी परवाह नहीं।
भला उतरता क्यों? डर क्या था? डटा रहा बेधड़क वहीं॥
यों न कभी उतरेगा श्यामू, जब यह भोंदू ने जानी।
तब गाड़ी को रोक, निबटने की उससे उसने ठानी॥
गाड़ी रोक, छत्त पर होकर भोंदू जब झांका पीछे।
तब झट उतरा श्यामू और घुस गया गाड़ी के नीचे॥
'पाजी ठहर, कहां जाता है!' यों गुस्से में होकर लाल।
गाड़ी की छत पर होकर भोंदू पीछे पहुंचा तत्काल॥
लगा देखने नीचे गाड़ी के झुक कर जब गाड़ीवान।
तब तक निकल वहाँ से आगे जा पहुंचा श्यामू शैतान॥
जब तक भोंदू गाड़ी के नीचे झांका, अकड़ा-ऐंठा।
तब तक श्यामू आगे चढ़ कर कोचबक्स पर जा बैठा॥
रास पकड़ झट घोड़ो की श्यामू ने फटकारा कोड़ा।
घोड़े ताबड़तोड़ उड़े, भोंदू पीछे पैदल दौड़ा॥
आगे-आगे श्यामू गाड़ी को दौड़ाए जाता था।
पीछे—'अरे रोक भइया' यों भोंदू हा-हा खाता था॥
जब भोंदू ने हाथ जोड़ हा हा खाई और मिन्नत की।
तब जाकर श्यामू ने ज्यों-त्यों उसको घोड़ागाड़ी दी॥

सामयिक समस्याएँ

जनवृद्धि और भारत का भविष्य

श्री मनुदेव 'अभय' वैदिक मिशनरी

आज से एक मास पूर्व भारत के गृहमन्त्री श्री राजगोपालाचार्यजी ने भारत की जन संख्या के संबंध में यह घोषणा की कि वर्तमान भारत की जन-संख्या ३५, ६८, ६०, ००० है। उक्त घोषणा में यह भी कहा गया है कि सन् १९४१ में (पाकिस्तानी प्रदेशों को छोड़कर), ३१, ४८, ३०,००० की संख्या थी, अर्थात् सवा तेरह प्रतिशत जन-वृद्धि हुई। इस प्रकार तीव्र गति से बढ़ती हुई जन-संख्या के कारण देश के नेता गण चिन्तित हो उठे हैं। और वे लोग समय-समय पर अपने भाषणों में इस ओर संकेत भी करते हैं। उनका इस प्रकार चिन्तित होना स्वाभाविक है। भारत के समान आर्थिक तथा औद्योगिक क्षेत्र में पिछड़े हुए देश की भयकर जनवृद्धि देश के भविष्य की ओर संकेत कर रही है। और उस भविष्य के संबन्ध में अनुमान लगाकर हमारे नेता गण प्रायः भयभीत हो चुके हैं। परन्तु स्मरण रहे यह जनवृद्धि हमारे देश में ही नहीं अपितु अखिल विश्व में हो रही है। अभी-अभी संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा विश्व की जन संख्या के संबन्ध में एक विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है, जिसमें कहा गया है कि वर्तमान विश्व की जन-संख्या दो अरब, चालीस करोड़ है तथा प्रतिवर्ष ढाई करोड़ के हिसाब से जनवृद्धि हो रही है। अब हमें यहाँ यह विचार करना है कि इस प्रकार द्रुत गति से बढ़ती हुई जनवृद्धि क्या मानव-जाति के लिये लाभदायक है? यदि नहीं तो उसके प्रतिरोध के लिये किस प्रकार प्रयास किया जाय, जिसके द्वारा मानव-जाति की रक्षा हो सके।

संसार का वर्तमान युग औद्योगिक तथा आर्थिक युग माना जाता है। अतः आर्थिक दृष्टिकोण से विचार करने पर ज्ञात होता है कि आज प्रत्येक देश में रोटी, कपड़ा, मकान की समस्या इतनी जटिल हो रही है कि संसार के प्रत्येक क्षेत्र में बड़ा असंतोष व्याप्त हो रहा है। और इस प्रकार संसार में-विशेषकर पश्चिमी ससार में—ऐसे 'वादों' का जन्म हो रहा है, जिनके कारण आज मानवता तथा मानव-सभ्यता के स्थायित्व में संदेह होने लगा है। इसीलिये तो माल्थ्यूज नामक एक विचारक ने कहा है कि जन-वृद्धि के इस बढ़ते हुए बोझ को हलका करने के लिये अगर मनुष्य न सँभले तो प्रकृति स्वयं ही व्यापक संक्रामक बीमारियों या युद्धों को भेज दिया करती है। परन्तु बीमारियों से मनुष्य का शरीर और युद्धों से शरीर तथा नीति और संस्कृति दोनों क्षीण हो जाते हैं। अतः यदि हमें इस अवनति से अपने आपको बचाना है तो मनुष्य-समाज को खुद ही विवेकशील बनकर अपनी अनावश्यक वृद्धि पर प्रतिबंध लगाना चाहिये। इससे यह सिद्ध होता है कि इस भयंकर जन-वृद्धि के कारण मानवता तथा मानव-सभ्यता व संस्कृति का भविष्य अंधकारमय है।

अब दूसरा प्रश्न यह है कि इसके प्रतिरोध के लिये किस प्रकार का प्रयास किया जाय जिसके द्वारा मानव-जाति की रक्षा की जा सके। इतिहास का एक नियम है कि यदि कोई समाज अथवा जाति संसार में जीवित रहना चाहती है, तो उसे तत्कालीन समयानुसार अपने सामाजिक नियमों में परिवर्तन कर लेना चाहिये, और उसे अपने रक्षार्थ कुछ ऐसे आधार भूत सिद्धान्तों को मान लेना चाहिये जिन्हें संसार पिछली सभ्यता का द्योतक मानता हो। तो भी उन्हें ग्रहण करने में तनक भी नहीं हिचकना चाहिये। हां, तो हम यहां संसार की जन-वृद्धि के प्रतिरोध के संबंध में विचार कर रहे थे। इसके प्रतिबंध के लिये पश्चिमी विद्वानों ने केवल भौतिकवाद का आश्रय लिया और सतति-निरोध के कृत्रिम साधनों का आविष्कार कर दिया। दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि वहां गर्भावरोध (Birth control) का प्रचार किया गया। परिणामस्वरूप पश्चिमी जगत् में वासना-एवं कुप्रवृत्तियों को खुलकर खेलने का अवसर प्राप्त हो गया तथा वहाँ व्यभिचार, अनैतिकता तथा नाना प्रकार के संक्रामक रोग फैलने लगे। अर्थात् मरज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की। अब वहाँ के विद्वानों को भी भौतिकवाद के कारण बड़ी भारी पराजय स्वीकार करनी पड़ रही है तथा अब वे यह भी स्वीकार रहे हैं, कि केवल भौतिकवाद मानवता के लिये शाप सिद्ध हो रहा है। संतति-निरोध का दूसरा उपाय है 'संयम' मनोविज्ञान के एक विद्वान् का कथन है कि मनुष्य का वैयक्तिक तथा सामाजिक उन्नतिके लिये सबप्रथम विचार-परिवर्तन तत्पश्चात् संयम (Self control) की नितान्त आवश्यकता है। अहा, कितना सुन्दर नियम है। मनुष्य के जीवन में तो कभी-कभी ऐसे अवसर आ जाते हैं कि वह अपना मानसिक संतुलन खो बैठता है, और उसके सम्मुख से संयम नामक संज्ञा लोप हो जाती है। परन्तु विचार-परिवर्तन के कारण ही विचार-दृढ़ता तथा विचार-दृढ़ता के कारण आत्म-बल प्राप्त होता है, जिसके कारण मानव मात्र कठिन से कठिन समय में भी वीरतापूर्वक विजयी लौटता है, और संसार में एक आदर्श उपस्थित कर देता है। अतः यदि हमें मानव-जाति की रक्षा करनी है तो हमें संसार के मनुष्य मात्र के नैतिक विचारों को जाग्रत करना पड़ेगा। परन्तु नैतिकता का अर्थ संकीर्णता एवं शुष्क जीवन नहीं है। नैतिकता का तो यह अर्थ होता है कि प्रत्येक मनुष्य अपने सम्पूर्ण जीवन में प्राकृतिक अवस्था के अनुसार प्रत्येक प्रकार का सुख संयमपूर्वक प्राप्त करे। बस भारतीय वैदिक संस्कृति में इसी प्राकृतिक संयमी जीवन को 'आश्रम' कहा है। इसीलिये प्राचीन समय में प्रत्येक मनुष्य ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम तथा संन्यासाश्रम के रूप में व्यतीत कर ऐहिलौकिक तथा पारलौकिक सुख प्राप्त करता था। अहा, इस आश्रम-व्यवस्था में किस प्रकार प्राकृतिक अवस्था तथा संयम का सम्मिश्रण है! प्रत्येक आश्रम आनन्द से ओत-प्रोत तथा उच्च नैतिकता पर आधारित है। जिसके कारण प्रत्येक मनुष्य का जीवन बड़ा सुखी तथा पूर्ण व्यतीत होता है। अतः मानवताकी रक्षाका एक मात्र उपाय आर्यों की वैदिक आश्रम-व्यवस्था ही है। इसीलिये संसार के प्रत्येक शासन का धर्म हो जाता है कि वह अपने अपने देश में आश्रम-व्यवस्था का अत्यधिक प्रचार करे। परन्तु विशेषकर भारतवर्ष में तो आश्रम-व्यवस्था पर अटूट आस्था रखने वाली संस्था आर्यसमाज तथा उसके अग्रगण्य नेताओं का यह पुनीत कर्तव्य है कि वह भारत-भर में इसका प्रचार अत्यन्त तीव्र गति से करे, ताकि भारतके विश्व देशों का आदर्शस्वरूप हो जावे तथा विश्व के सभी अवशेष देश इसका अनुसरण करे। अथवा यों कहिये कि पश्चमी भौतिकवादी सभ्यतापर पूर्व की आध्यात्मिक वैदिक सभ्यता की विजय-पताका पुनः फहराने लगे और मानव-मात्र को शांति प्राप्त हो।

हंसो-हंसाओ

'उस ड्रामे में मेरी पत्नी पार्ट नहीं कर सकेगी।'

'क्यों क्या मुश्किल है? उन्हें बोलने की तो जरूरत ही न होगी।'

'बस यही काम तो उसके लिए मुश्किल है।'

❀ ❀ ❀

मेडीकल कालेज के डाक्टर ने एक रोगी विद्यार्थियों को दिखा कर और रोग के सम्बन्ध में कुछ बातें बताकर विद्यार्थियों से पूछा—'क्या इस रोग में आपरेशन की जरूरत है?'

प्रायः सभी विद्यार्थियों ने उत्तर दिया 'नहीं'।'

इस पर डाक्टर ने कहा—'तुम लोग भूल में हो। आपरेशन के सिवा इस रोग का दूसरा इलाज ही नहीं है।'

यह सुन मरीज तड़क कर बोला—'डाक्टर साहब आप बहुमत का निरादर करते हैं।'

शिक्षा-समस्या

शिक्षा का मूलतत्व

श्री मुनहरीलालजी

सबसे पहले हमें जानना चाहिये कि शिक्षा किसे कहते हैं कुछ लोग केवल पढ़ने-लिखने को शिक्षा कहते हैं, कुछ बठने-उठने के ढग व बोलने-चालने के सलीके को शिक्षा समझते हैं। बहुत से लोग अच्छी वेष भूषा और भाषण शक्ति को शिक्षा मानते हैं—परन्तु इनमें से कोई भी शिक्षा नहीं कही जा सकती। लिखना-पढ़ना जान लेना स्वयं शिक्षा नहीं है। यह केवल साध्यम है, जिसक द्वारा शिक्षा प्राप्त की जा सकती है। इसके अतिरिक्त सत्सग और सदुपदेशों के सुनने से भी शिक्षा ग्रहण की जा सकती है।

वास्तव में जो उद्योग हम में पशुपन निकाल दे, मक्कारी दूर करदे स्वाथ नष्ट करदे प्रकृति माता के भोगों का न्याय पूवक प्रयोग करना सिखा दे, ऐसे उद्योग का नाम शिक्षा है। शिक्षित वह है जिसमें पशुपन का अभाव हो और मनुष्यत्व की वृद्धि हो। शिक्षा का आरम्भ उस साधना या प्रणाली से होना चाहिये, जिसके द्वारा मनुष्य सावजनिक हितों को सर्वोपरि समझकर, अपने स्वाथ को उनकी अपक्षा तुच्छतर समझने लगे। यह शिक्षा-प्राप्ति का अथवा शिक्षित मनुष्य का प्रथम गुण या चिह्न है। यदि कोई मनुष्य अपने निजी स्वार्थ की सिद्धि मे जनता के हितों का ध्यान नहीं रखता तो वह शिक्षित नही कहलाया जा सकता।

शिक्षा का दूसरा अग विचार-शक्ति का विकास करना है। जिस शिक्षा से विचार शक्ति अथवा बुद्धि विकासित नहो, वह शिक्षा नहीं कहलाइ जा सकती। इसलिये शिक्षित मनुष्य की दूसरी पहचान यह है कि उसमें बुद्धि से काम करने की शक्ति हो, वह दूसरो की देखा-देखी कोई काम न करे, बल्कि सदा ही अपनी बुद्धि को काम में लाकर हित-अहित का विचार कर किसी कार्य में हाथ डाले। परमात्मा ने हमको बुद्ध इसलिये दी है कि हम इसका प्रयोग करके काम करे। मनुष्य और पशु में यही भेद है। जो मनुष्य अपनी बुद्धि को शिक्षा द्वारा विकसित नहीं कर सकते वे अशिक्षित अथवा पशु-तुल्य हैं।

शिक्षा का तीसरा अंग अपने स्वरूप का पहचानना है। शिक्षित मनुष्य को मालूम होना चाहिये कि उसके जीवन का उद्देश्य क्या है। वह ससार में किस लये आया है। ईश्वर ने उसको दुनिया में किस मतलब के लिये भजा है। खाना-पीना बच्चे पालना, इन्द्रिय-सुख, येबातें तो पशु योनि में भी मिल सकती थीं। फिर उसके मनुष्य-योनि में उत्पन्न होने का क्या कारण है और उसके इस ससारमें क्या कर्त्तव्य हैं। यदि हमने पढ़ लिख और शिक्षा प्राप्त करके भी पशुवत् जीवन व्यतीत किया तो हमारी शिक्षा निथक है। आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी दैविक शक्तियों का शिक्षा द्वारा विकास करें और उनको दूसरो की सवा में लगावे। हमारी शिक्षा ऐसी होकि हम अपने कर्त्तव्यांको जानने लगें, यथा—मनुष्य का अपने साथ, अन्य प्राणियों क साथ, ईश्वर के प्रति क्या कर्त्तव्य है। जिस शिक्षा द्वारा मनुष्य को अपने इन तीनों कर्त्तव्यों की जानकारी प्राप्त हो वही वास्तविक शिक्षा है।

वर्तमान शिक्षा-प्रणाली,

शिक्षा के मुख्य तीन अंगो की व्याख्या करक अब हम वर्तमान शिक्षा-प्रणाली पर एक दृष्टि डालत हैं, और देखना चाहते है कि इस आधुनिक प्रणाली से शिक्षा के किस-किस अंग की पूर्ति हुई है। क्या इस प्रणाली द्वारा शिक्षित मनुष्यों ने सार्वजनिक हित के लिये अपने निजी स्वार्थ को तुच्छ समझा है, अथवा अपनी दैविक शक्तयों का विकास करके उस अपने अन्य भाइयो की सेवा म लगाया है, या अपने कर्त्तव्यों को समझकर उनका पालन किया है? यदि आप वर्त्तमान शिक्षा-प्रणाली का ध्यानपूर्वक अध्ययन करें और होस्टलो में रहने वाले विद्यार्थियों की दिन चर्या पर एक दृष्टि डालें तो आप को ज्ञात हो जायगा कि इस प्रणली में शिक्षा के उपयुक्त तीन अंगों की पूर्ति के लिये कोई स्थान नहीं है। होस्टलों में रहने वाले या कालिजोंम शिक्षा पाने वाले विद्यार्थी, जो कि वहाँ के वातावरण के अनुसार विलास प्रिय होते हैं और जिनको सयम मे रहना सिखाया ही नहा जाता, शिक्षा समाप्ति पर कैस स्वार्थ त्यागी हो सकते हैं? जिन विद्यार्थिया ने अपने पठन पाठन काल में अपने हाथों से कोई काम नहीं किया और अपने सरक्षको के भेजे हुए धन से नवाबो और राजाओं जैसा जीवन व्यतीत किया है, क्या आप आशा करते हैं कि वे शिक्षा समाप्ति पर कोई जन-सेवा या देश सेवा सम्बन्धी काम कर सकेंगे। जिन कालिज के विद्यार्थियों की विलास-प्रिय आवश्यकताऐ इतनी बढ़ी-चढ़ी हो कि जिनकी पूर्ति करने में वह अपने सरक्षकों की निर्धनता का ध्यान न रखते हों तो क्या कालिज छोड़ने पर ये छात्र ऐसे त्यागी हो सकेंगे, जो अपने देश के अन्य निर्बल व निर्धन भाइयों को कुछ सहायता दे सकें। ये बेचारे क्या जानें कि जीवन का उद्देश्य किस चिड़िया का नाम है। इनके जीवन का उद्देश्य तो खाओ, पिओ और सिनेमा देखो है। इनकी शिक्षा तो ऐसी है जिसके प्रभाव में वे अपनी मातृ-भाषा, और अपनी वेश भूषा से भी घृणा करने लगते है। अपने अनपढ़ अथवा कम पढ़ भाइयो से बातचीत करना पसंद नहीं करते। वे केवल अपने सुख और स्वार्थ की बात जानते हैं। सार्वजनिक हित के लिये अपने सुख को तिलाञ्जलि देना इनके वश की बात नही है। वतमान शिक्षा-प्रणाली में अनेक दोष व त्रुटियाँ हैं-इससे शिक्षा के उद्देश्यो की पूर्ति नहीं होती, अतः यह प्रणाली भारतवासियो के लिये हितकर नहीं है। इसमें शोघ्र परिवर्तन होना चाहिये।

वास्तविक शिक्षा के तीन मुख्य साधन

अब मैं उन साधनो का उल्लेख करूँगा जो शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति कराने में समर्थ हैं—

प्रथम और सब से मुख्य साधन ब्रह्मचय आश्रम का पुनरुद्धार है। होस्टल में रहने वाले छात्रों से ब्रह्मचर्य के नियम पालन करायें जॉय अर्थात् उनको ब्राह्म मुहूर्त में प्रातः उठने की आदत डाली जाय, सुबह ही स्नान करके ईश्वर-प्रार्थना, हवन इत्यादि का करना अनिवार्य कर दिया जाय। प्रत्येक होस्टल में एक व्यायाम शाला हो जहाँ विद्यार्थियो से दोनों समय व्यायाम कराया जाय। विद्यार्थियो के भोजन सात्विक हो। वस्त्र स्वदेशी और आवश्यकता से अधिक न हो। वेश भूषा भारतीय हो। सिनेमा आदि चरित्र को बिगाड़ने वाले खेल तमाशे देखने की आज्ञा न हो। फैशन व विलासिता का कोई सामान न रखने दिया जाय।

दूसरा साधन है जीविका-उपार्जन करने की योग्यता। प्रचलित शिक्षा प्रणाली द्वारा शिक्षित हमारे नवयुवक बी० ए०, एम० ए० पास कर लेने पर भी अपनी जीविका स्वतन्त्रतापूर्वक कमाने की योग्यता नहीं रखते। वह तो केवल एक ही काम करने के योग्य हैं और वह है दफ्तर की बाबू गिरी। जिस विद्यार्थी ने अध्ययन, काल में सौ रुपया मासिक व्यय करके बड़े ठाठ-बाट से जीवन बिताया हो, वह साठ की क्लर्की से कैसे सन्तुष्ट हो सकता है। परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार का शिकार हो जाता है। पुस्तकों में बहुत-सा विद्याए पढा परन्तु हाथ से कुछ करना न सीखा। ऐसी 'पुस्तक विद्या' से कोई लाभ नहीं। जीविका उपार्जन करने की योग्यता प्राप्त करानी है तो प्रत्येक स्कूल और कालिज में उद्योग शालाए स्थापित होनी चाहियें, जहा विद्यार्थियो को कृषि विद्या, वस्त्र निर्माण विद्या गोपालन आदि अनेक शिल्प-विद्याओं क सिखाने का प्रबन्ध हो। इस प्रकार शिक्षा पाकर विद्यार्थी कालिज छोडने पर कोई सा उद्योग हाथ से कर के जीविका उपार्जन कर सकता है।

तीसरा साधन वर्तमान उच्च-वेतन भोगी, विलास-प्रिय, अध्यापको की जगह कर्मनिष्ठ, त्यागी, सच्चरित्र गुरुओं द्वारा शिक्षा दिलाने का प्रबन्ध करना

सुझाव और सम्मतियाँ

आर्यसमाज की दो समस्याएँ

श्री राजेन्द्रजी

आर्यसमाज की मंद प्रगति तथा उसमें तरुण रक्त का अभाव, ये दो समस्याएँ आज प्रत्येक आर्यसमाजी की चिन्ता का कारण बनी हुई हैं। मेरे विचार में आर्यसमाज ने दो भूल की हैं और उन ही का यह परिणाम है। पहली भूल यह हुई कि प्रचार के काय को अधूरा छोड़ कर वह संस्थाओं के जाल में फँस गया, और उसने अपनी शक्ति को उसी में लगा दिया। प्रचार-काय केवल नगरों तक सीमित रह गया। वहाँ भी इसकी शक्ति अनेकानेक संस्थाओं में बटकर छिन्न-भिन्न होगई। ग्रामों तक वह न पहुँच सका और जन-आन्दोलन न बन सका, जिसके बिना कोई आन्दोलन सफलीभूत नहीं हो सकता। दूसरी भूल यह हुई कि हम अपने पारिवारिक जीवन में आर्यसमाजी न बन सके। आर्यसमाज के बड़े बड़े नेता और अधिकारी तक अपने परिवार को आर्यसमाजी बनाने में असफल रहे। गृहदेवियाँ या तो आर्यसमाजी न बनी या आर्यसमाज की विरोधी बनी रहीं। परिणाम यह हुआ कि हमारी सन्तान जिन पर माताओं का विशेष प्रभाव होता है, आर्यसमाजी नहीं बनी। जब हमारी संतान ही आर्य न बनी तो बाहर का युवक-समाज हमसे क्या प्रभावित हो सकता है?

ये दोनों भूलें सुधारी जा सकती हैं। नगर के समाजों को, जो प्रायः धन-सम्पन्न हैं, अपनी समस्त शक्ति ग्राम प्रचार पर लगा देना चाहिये। इसके लिये सार्वदेशिक, प्रान्तीय अथवा जिला सभाओं की प्रतीक्षा में नहीं रहना चाहिये। उपर्युक्त सभाओं के पास कार्यकर्ताओं और धन दोनों का अभाव है। अतः उनकी प्रतीक्षा में अब समय नष्ट न करके यह कार्य नगर के समाजों को अपने हाथों में तुरन्त ले लेना चाहिये। कोई ग्राम ऐसा न रहे जहाँ आर्यसमाज का संदेश न पहुँचे। निकट के ग्रामों को मिला कर उनमें एक-एक आर्यसमाज स्थापित करदी जाय। यह प्रचार-कार्य एक वर्ष करके ही समाप्त न कर दिया जाय, अपितु निरंतर कम से कम, पाँच वर्ष तक चलता रहे, जब तक कि ये ग्राम के समाज पूर्णतः सुसंगठित न हो जायें। नगरों में वार्षिकोत्सवों पर अधिक धन व्यय न करके वहाँ समय समय पर विद्वानों के व्याख्यानों की योजना की जाय और इस प्रकार बचा हुआ यह धन भी ग्राम-प्रचार पर व्यय किया जाय। धन का उपयोग उसे बैंकों में जमा करके रखने में नहीं है। फिर दान का धन बैंकों में जमा रखना अथवा उसका सूद पर चलाना तो उस संगृहीत धन का घोर दुरुपयोग है। आर्यसमाजों और सभाओं को यह व्यापारिक मनोवृत्ति तुरन्त त्याग देनी चाहिये। इस संगृहीत धन को प्रचार-कार्य पर मुक्त हस्त से व्यय किया जाय। पंजाब में आर्यसमाज का इस प्रकार संगृहीत अपार धन-सम्पत्ति जिस प्रकार विनष्ट हुई, उससे हमें कुछ शिक्षा लेनी चाहिये।

मौखिक प्रचार के साथ ग्रामों में ग्रामोपयोगी आर्यसमाज का सस्ता साहित्य और पत्र पत्रिकाएँ भी पहुँचाई जाय। आर्यसमाज को एक दैनिक पत्र के अभाव में आजकल बड़ी क्षति उठानी पड़ रही है। दूसरी संस्थाओं के पास अपने अनेक दैनिक पत्र हैं। वे उनके द्वारा अपने सिद्धान्तों का तीव्र गति के साथ प्रचार कर रहे हैं। उनमें या तो आर्यसमाज के समाचार प्रकाशित ही नहीं किये जाते, और यदि किये भी जाते हैं तो उन्हें वह स्थान मिलता है, जहाँ भूलकर ही किसी की दृष्टि पड़े। हमारी बड़ी बिराट् सभाओं के समाचार अंतिम पृष्ठ पर और वह भी दो चार पंक्तियों में प्रकाशित किये जाते हैं। अतः इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि आर्थिक क्षति उठाकर भी आर्यसमाज का एक दैनिक पत्र तुरत प्रकाशित किया जाय।

अपने पारिवारिक जीवन को आर्यसमाजी बनाने का उपाय भी कहीं बाहर नहीं ढूंढना है। हम अपने विवाह सम्बन्ध, चाहे जन्मगत जाति में करें चाहे जाति-बन्धन तोड़कर करें-केवल आर्यसमाजियों में ही करें।

प्रायः साधारण आर्यसमाजी ही नहीं, आर्यसमाज के बड़े-बड़े नेता तक पद अथवा धन के प्रलोभन वश अपने पुत्र-पुत्रियों के विवाह पौराणिक और जैन परिवारों तक में कर देते हैं। परिणाम यह होता है कि हमारी पुत्रियां जो कुछ संस्कार यहाँ संचित करती हैं वहाँ जाकर वे नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार उन परिवारों से जो कन्याएँ पुत्र-बधू के रूप में हमारे यहाँ आती हैं, वे अपने वहाँ के संस्कारों को यहाँ लाती हैं। और यही कुचक्र आगे चलकर हमारी संतति को आर्य बनने में बाधक सिद्ध होता है। अतः प्रत्येक आर्य को यह दृढ़ निश्चय कर लेना चाहिये कि उसे विवाह सम्बन्ध करते समय आर्य परिवार को प्राथमिकता देनी है, धन अथवा पद को नहीं। यदि ऐसा नहीं किया गया तो हमारे परिवार हजार प्रयत्न करने पर भी और चाहे जो कुछ बन जाय किन्तु आर्य नहीं बनेंगे।

हमें अब केवल योजनाओं से संतुष्ट न रहकर उन्हें कार्यरूप में परिणत करने के लिये आगे आना चाहिये। जो धन दे सकते हैं वह धन दें, जो समय दे सकते हैं वह समय दे दें। परिस्थिति इस समय अनुकूल है, यदि हम चाहें तो उससे पूरा पूरा लाभ उठा सकते हैं।

——

है। आज कल विद्यार्थियों की उद्दण्डता की चारों ओर चर्चा है। इनकी उच्छृंखलता और मनमानी हड़तालों के समाचार सुनकर अधिकारी वर्ग भी शंकित हो उठा है। जिस गुरु शिष्य-प्रेम के लिये भारत प्रसिद्ध रहा, उसके विद्यार्थियों में यह गुरु-अवज्ञा का दुर्गुण कहां से आगया। त्रुटि दोनों ओर की है। न उस स्तर के गुरु रहे और न शिष्य। आज के अध्यापक शिष्यों को विद्या दान नहीं करते वे तो विद्या बेचते हैं। अध्यापकों के जीवन, आदर्श जीवन नहीं हैं। वे विलास-प्रिय हैं। फैशन-परस्त हैं। बड़े बड़े वेतन लेकर कम से कम काम करना चाहते है, विदेशी वेशभूषा के प्रेमी हैं। ऐसे अध्यापकों के सम्पर्क में आने वाला विद्यार्थी उनके जीवन से क्या शिक्षा लेगा। यही न, कि वह भी बड़ा होने पर अपने अध्यापक की भांति आदर्श-शून्य व्यक्ति बन जाय। इन अध्यापकों के ऊंचे वेतनों के कारण, कालिज-शिक्षा बड़ी खर्चीली होती जा रही है, और इसका दुष्परिणाम शिक्षित युवकों के भ्रष्टाचार में लिप्त जीवनों में प्रदर्शित हो रहा है। इसलिये सब से सुगम मार्ग तो यही है कि शिक्षा देने वाले अध्यापक या तो त्यागी, संयमी, सच्चरित्र, सादा जीवन व्यतीत करने वाले हों या योग्य विद्वान् वानप्रस्थी हों, जो कि विद्यार्थियों को पुस्तक ज्ञान भी करावें और उनके चरित्र और सदाचार का भी निर्माण करें। जब विद्यार्थी का विलासिता का जीवन समाप्त हो जायगा और वह अपने अध्यापक के आदर्श जीवन को उनके निकट सम्पर्क में आकर देखेगा, तो उसके अन्तःकारण में अपने गुरु के लिये आदर-सत्कार का भाव उत्पन्न होगा—और ब्रह्मचर्य के नियमों के पालन करने से प्रति दिन व्यायाम करने से, उद्योग-शाला में व्यस्त रहने से उसको उद्दण्डता और हड़ताल के लिये अवसर ही कहाँ मिलेगा।

——

वैदिक गवेषणा

'हिन्दु' शब्द की व्याख्या पर वैदिक दृष्टि

श्री शिवपूजनसिंह कुशवाहा 'पथिक'

(४)

आप 'हिन्दु' शब्द को सिद्ध करने के लिये आज गोरक्षक बनते हैं; पर आपके माननीय सायण, महीधर, उव्वट स्वयं वेदों में गोमांस-भक्षण सिद्ध करते हैं।

मेरी 'वेदवाणी' में प्रकाशित 'वेद और गणेश' की समीक्षा करते हुए आप लिखते हैं:—

"·······वह ब्राह्मण कण्डिका वेद से प्रतिकूल भी नहीं है। 'अथर्व वेद' में अतिथि के लिये 'स य एवं विद्वान् मांसम् उपसिच्य उपहरति' (अथर्व० ९।१।७, ९।६ (४),७) यह मंत्र मूल है।" ×

वास्तव में मैंने 'शतपथब्रा०' से दिखलाया था कि उसमें गाय के बछड़े का मांस खाना लिखा है, इससे वह वेद नहीं है। उसी पर आपने यह लिखा है।

आपके इस लेख की पुष्टि करते हुए और मेरे लेख के प्रत्युत्तर में 'सिद्धान्त' के सम्पादक श्री दुर्गादत्त त्रिपाठी लिखते हैं—"·····मधु के बाद और उदक के पहले बीच में मांस का उल्लेख है। स्पष्ट है कि क्षीर, सर्पि, मधु, उदक भक्ष्य पदार्थ हैं, इनके बीच में परिगणित करने के कारण वेद को मांस का भी वही भक्ष्यत्व स्पष्ट बुबोधयिषित है। यदि 'य एव विद्वान् मांसमुपसिच्य उपहरति' इस मन्त्र का अर्थ श्री कुशवाहाजी के कथनानुसार मान्य किया जाय, तो उसी के अनुसार य एव विद्वान् क्षीरमुपसिच्योपहरति, य एव विद्वान् सर्पिरुपसिच्योपहरति, य एव विद्वान् मधूपसिच्योपहरति, य एव विद्वानुदकमुपसिच्योपहरति" का अर्थ भी लाक्षणिक ही करना पड़ेगा, जो थोड़ा-सा भी विचार करने पर विद्वान् पाठक समझ सकते हैं कि कथमपि सङ्गत न होगा। अतः सिद्ध है कि उक्त अथर्व-मन्त्र में मांस अर्पण करने का ही विधान है, पुष्ट मांस गौ के अर्पण का नहीं। केवल अथर्वसंहिता में ही नहीं, आपके तथा कथित वेद-व्याख्यानरूप 'शतपथ ब्राह्मण' में भी 'यथा राज्ञे वा ब्राह्मणाय वा महोक्षं वा महाजं वापचेत तदह मानुषं हविर्देवानामेवमस्मा एतदातिथ्यं करोति" (३।४।१।२) से अतिथि सत्कारार्थ मांस पचन करना सूचित किया है। +

अब पाठक ही निर्णय करें कि काल्पनिक हिन्दु नामधारी 'कसाई' हैं या गोरक्षक ?

इस तरह की बातें यदि कोई अन्य 'दस्यु' लिखता तो मुझे दुःख न होता, पर गोरक्षा की डींग मारने वाले ब्राह्मण-कुलोत्पन्न की लेखनी की करामात से दुःख होता है। अतएव ऋ० १।१६४।२७ मन्त्र से आपकी 'हिन्दु' की कल्पना भी खपुष्प के सदृश है।

आपने श्री पं० नरदेवजी 'शास्त्री' 'वेदतीर्थ' प्रणीत "ऋग्वेदालोचन" से 'सिन्धु' से 'हिन्दु' दिखलाने का कष्ट किया है, पर आपको जानना चाहिये कि यह उनका मत नहीं है। उन्होंने तो पाश्चात्य पण्डित मेकडानल का मत प्रदर्शन किया है। इसी प्रकार ब्रह्मपक्ष, ऐतिहासिक पक्ष प्रभृति उन्होंने दिखलाया है।

'हिन्दु' शब्द पर उनका क्या मत है, इसके लिए देखिये वे "वैदिक मुनि फिर मैदान में" शीर्षक अपने लेख २३ में [] वैदिक मुनि स्वामी हरिप्रसादजी के लेख की समालोचना करते हुए लिखते हैं। "आप 'हिन्दू' शब्द के परम भक्त हैं किन्तु उस शब्द को वेदों के 'सिन्धु' शब्द के साथ जोड़ने का भरसक प्रयत्न करते हैं। हमने संस्कृत साहित्य में 'हिन्दू' शब्द को ढूंढ कर निकालने का प्रबल प्रयत्न किया किन्तु सातसौ वर्ष पूर्व की कश्मीर की राजतरंगिणी को छोड़कर हमको 'हिन्दू' शब्द कहीं नहीं मिला। सिन्धु प्रदेश-वासियों को उच्चारण की असमर्थता के कारण ईरान और मध्य एशिया के लोग 'हिन्दू' कहते रहे, तभी से इधर के लोगों का नाम 'हिन्दू' पड़ा। पहले-पहले यह 'हिन्दू' शब्द निर्दोष था, फिर कालान्तर में इसके अर्थ विपरीत हुए, जैसे—

पुरानी परशियन	संस्कृत शुद्ध रूप
माह	मास
हफ्ताह	सप्ताह

(अब उल्टे अर्थ देखिये)

संस्कृत का 'देव' पुरानी परशियन में 'राक्षस' का वाचक हो गया—राक्षस का वाचक 'असुर' शब्द देव का वाचक है। 'इन्द्र' शैतान का वाचक बन गया है, इसी प्रकार सिन्धु से बने हुए हिन्दु शब्द के विकृत अर्थ नीच, काला, चोर आदि हो गए। यह पुराने परशियन भाषा का हाल।·········

इत्सिंग की भारत यात्रा—यह चीनी यात्री भारत में ७ वीं शताब्दी में आया था। वह भारतवर्ष का नाम आर्य देश लिखता है—उसका कथन है कि, "केवल उत्तर की जातियाँ ही (हूण=मुगल अथवा तुर्क) आर्य देश को हिन्दु कहती हैं किन्तु यह नाम बिलकुल प्रचलित नहीं। भारत के लोग प्रायः इस संज्ञा (हिन्दू) को नहीं जानते और भारत के लिये सबसे ठीक नाम है 'आर्यदेश'।"····

आप लिखते हैं ····"पृथ्वीराज के सभाकवि आदिकवि चन्दवरदाई ने अपने कविता ग्रंथ में इस देश को 'हिन्दव' इस नाम से तथा इस जाति को सर्वत्र 'हिन्दु' नाम से कहा है। 'हम हिन्दु लजवान' 'गति हिन्दू पर साहिसब्जि' इत्यादि उसी 'पृथ्वीराज रासो' नामक उसके ग्रंथ के उदाहरण हैं।"

चन्दबरदाई का यह "पृथ्वीराजरासो" ग्रन्थ प्रामाणिक नहीं है। कविराजा श्यामलालदानजी ने अपने 'पृथ्वीराज-चरित्र" ग्रन्थ में "पृथ्वीराजरासो" को जाली ठहराया है।

समालोचक-सम्राट् आचार्य प० रामचन्द्र शुक्लजी लिखते हैं-"·······इस दशा में भाटों के इस वाग्जाल के बीच कहाँ पर कितना अंश असली है, इसका निर्णय असम्भव होने के कारण यह ग्रन्थ न तो भाषा के इतिहास के और न साहित्य के इतिहास के जिज्ञासुओं के कामका है।"········※

आप लिखते हैं-"ऋग्वेद के १० वें मण्डल के ७५ वें सूक्त का ऋषि "सिन्धु क्षित प्रैयमेध" माना गया है, उसका यही अर्थ है कि सिन्धु देश का शासक वा 'सिन्धु' देश में रहने वाला। उस सूक्त में "इमं मे गंगे ! यमुने सरस्वति ! शुतुद्रि ! स्तोम सचता परुष्ण्या। असिक्न्या मरुद्वृधे ! वितस्तयार्जीकीये ! शृणुहि आ सुषोमया" (ऋ० १०।७५।५) ·······

इन मन्त्रों से सिन्धु देश की सीमा पर प्रकाश पड़ता है। वह याद रखना चाहिये कि ऋग्वेद में नदियों के नामों से देशों को सूचित किया गया है, यही प्राचीन प्रथा है।······

यहाँ न तो नदियों का वर्णन और न देशों का ही वर्णन है। यह तो आपकी कल्पना है

देखिये इस मन्त्र का अर्थ महर्षि दयानन्दजी लिखते हैं:—

'देखो मासिक पत्रिका "गङ्गा" का "वेदाङ्क" प्रवाह २, जनवरी १९३२ ई०, तरंग १, पृष्ट २१८ से २२२ तक साहित्याचार्य प० महेन्द्र मिश्र 'मग' का 'ऋग्वेद की कुछ उल्लेखनीय बातें' शीर्षक लेख।

× साप्ताहिक "सिद्धान्त" काशी, वर्ष १० मङ्गलवार, दिनाङ्क २७ दिसम्बर १९४९ ई०, अङ्क ३६, पृष्ठ २८६ कॉलम १।

+ वही, वर्ष ११, दिनाङ्क १९ दिसम्बर १९५० ई०, अङ्क ३४ पृष्ठ ५४४ में मेरे लेख की आलोचना "गणेश-समीक्षालोचन" शीर्षक लेख।

[] साप्ताहिक "आर्यमित्र" दिनाङ्क ३० जुलाई १९३६ ई० पृष्ठ ५।

※ "हिन्दी साहित्य का इतिहास" पृष्ठ ४४ (सम्वत् १९९७ वि० संशोधित और प्रवर्द्धित संस्करण, प्रयाग)

"इडापिंगलासुषुम्णाकूर्म्मनाड्यादीनां गंगादि संज्ञास्तीति। तासां योगसमाधौ परमेश्वरस्य ग्रहणात्। तस्य ध्यानं दुःखनाशकं मुक्तिप्रदं च भवत्येव। तासामिडादीनां धारणा सिध्यर्थं चित्तस्य स्थिरीकरणार्थं स्वीकरणमस्तीति तत्र ग्रहणात्।"......×

अर्थात्—इस मन्त्र में गङ्गा आदि नाम इडा, पिङ्गला, सुषुम्णा, कूर्म और जठराग्नि की नाड़ियों के हैं, उनमें योगाभ्यास से परमेश्वर की उपसना करने से मनुष्य लोग सब दुःखों से तर जाते हैं, क्योंकि उपासना नाड़ियों ही के द्वारा धारण की जाती है।

वेदों में कहीं, देश विशेष का कोई नाम नहीं है उसकी पुष्टि अनेक विद्वान् करते हैं: यथा—प्रो० बालकृष्णजी एम० ए०, पी०-एच० डी०, एफ० आर० एस-एस०; एफ० आर० ई० एस०, एफ० आर० पी० एस० अर्थशास्त्र-महोपाध्याय, गुरुकुल विश्वविद्यालय, कांगड़ी हरिद्वार लिखते है—"वेदों में से देख-देख-कर ऋषियों, राजाओ, देशों, नदियो, पर्वतो, क नाम रखे गए। अतः वेदों में पाए जाने वाले उक्त नाम ही आज तक भारत तथा उसके आस-पास की नदियों, जातियों राजाओं वा ऋषियो के है।" -

वैदिक रिसर्च स्कॉलर प० प्रियरत्नजी आर्य (श्री स्वामी ब्रह्ममुनिजी) अपनी पुस्तक ॐ में लिखते हैं:—"वेदों में गङ्गा, यमुना आदि नामों का आजाना किसी ऐतिहासिक घटना को सिद्ध नहीं करता है क्योंकि ये नाम यौगिक हैं, अतएव लोकप्रसिद्ध रूढ़ व्यक्तियों के नाम नहीं हैं। शरीर गत नाड़ियों के नाम में भी गङ्गा आदि हैं और वसिष्ठ अमृत प्राण को कहते है, ऐसा कथन श्री बाबू भगवानदासजी काशी और श्री प० चन्द्रमणिजी विद्यालङ्कार आदि कइ एक विद्वानो का है।"

प्रो० चन्द्रमणिजी 'विद्यालङ्कार', 'पालीरत्न', वेदोपाध्याय गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी, हरिद्वार लिखते हैं:—पाठकगण विश्वामित्र, विपाट्, शुतुद्री आदि नामो को देखकर सन्देह में न पड़ जावें कि इससे तो अनित्य इतिहास का ही पता चलता है। जब वेद ही एक मात्र ज्ञान का आदिम स्रोत था, और वैदिक भाषा ही सृष्टि की आदि में मनुष्यो की भाषा थी, तब इन्हीं वेदों में से चुन चुन कर नदी आदि के नाम रक्खे जाते थे। ये नाम वैदिक नामो से भिन्न कैसे हो सकते थे।"......[]

यह ऋ० १०।७५।५ वाला मन्त्र निरुक्त, दैवतकाण्ड, ६ अ० ३ प० २४ सं० २० श० में आया है। प चन्द्रमणिजी विद्यालङ्कार, पालीरत्न उसका अर्थ करते हैं:—

"...... (गङ्गे यमुने) हे इड़ा! हे पिंगला! (शुतुद्रि परुष्णि सरस्वति!) और हे शुतुद्री तथा परुष्णी नामों वाली सुषुम्ना नाड़ी। (मे इमं स्तोमं आसचत, तुम मेरे इस परमेश्वर-स्तवन का सेवन करो। (मरुद्वृधे असिक्न्या) हे सुषुम्णा! तू पिंगला के साथ (आर्जीकीये! वितस्तया सुषोमया) और हे इडा! तू वितस्ता नाम वाली सुषुम्णा के साथ मिली हुई (आश्रृणुहि) मेरे इस परमेश्वर-स्तवन का श्रवण कर।"(⌣)

विद्वद्वर श्री शिवदत्तजी ज्ञानी एम० ए०, भारतीय विद्या भवन बम्बई के इतिहास विभाग के अध्यापक अपने ग्रन्थ + में लिखते हैं—"संस्कृत साहित्य में 'हिन्दू' नाम का उल्लेख नहीं आता। कुछ लोग ऋग्वेद से सिद्ध करने का यत्न करते हैं। उनके अनुसार वैदिक कालीन 'आर्य जिस देश में रहते थे उसका नाम 'सप्तसिन्धु' 'हफ्त हिन्दू' हुआ बाद म 'हिन्दुस्तान 'हिन्दू' आदि शब्द बन गए। किन्तु इस सिद्धान्त के लिये ऐतिहासिक, साहित्यक आदि कोई भी प्रमाण नहीं है। भाषा शास्त्र के नियमों से भी यह सिद्ध नहीं किया जा सकता। ऋग्वेद में किसी देश विशेष के नाम का उल्लेख नहीं है।"... अतएव यह भी आपकी कल्पना निर्मूल है।

संवत् १९२७ वि० (सन् १८७० ई०) के श्रावण मासके कृष्णपक्ष की प्रतिपदा तिथि को काशी के ४६ पण्डितों ने मिलकर एक व्यवस्था-पत्र लिखा कि हमारा नाम हिन्दू नहीं है इसमें सबसे अंतमें हस्ताक्षर करने वाले पण्डित दुर्गादत्त जी ने लिखा—

हिंन्दू शब्दो हि यवनेष्वधर्मिजन बोधकः।
अतोनार्हन्ति तच्छब्दबोध्यतां सकला जनाः॥

अर्थात्-हिन्दू शब्द मुसलमानों के यहाँ अधार्मिक के लिए प्रयुक्त होता है, अतः सब मनुष्यों का यह नाम नहीं होना चाहिए।

इस व्यवस्था पत्र का महत्व और भी बढ़ जाता है, जब इसमें हम श्री स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती तथा श्री प० बालशास्त्री जी हस्ताक्षर भी देखते हैं। ये दोनो महानुभाव अपने समय में काशी के सबसे बड़े पण्डित समझे जाते थे और इन्हीं दो विद्वानोंने महर्षि दयानन्दजी से शास्त्रार्थ करने की ठानी थी। यदि हमारा नाम हिन्दू होता तो महर्षि दयानन्दजी के प्रबल विरोधी- पण्डित मण्डली कभी भी इस नाम के विरुद्ध व्यस्था न देती।

परलोकवासी योगिराज श्री अरविन्द घोषजीने अपने "What is significance of the name of Arya" शीषक लेख × में 'आर्य' शब्द की विशद व्याख्या की है। व्याख्या का मुख्यांश यों हैं:-

"the word Arya expressed a particular ethical and social ideal, an ideal of well governed life, candour, courtsy, nobility, straight dealing courage, gentleness, purity, humanity, compassion protection of the weak, liberality, obeservance of social duty, eagerness for knowledge, social accomplishment—there is no word in human speech that has a nobler history.

The Arya is he who strives and overcomes all out side him or within him that stand opposed to the human advance In every thing he seeks truth, in every thing right and freedom'.

अर्थात् "आर्य" शब्द से एक सामाजिक तथा नैतिक आदर्श का, एक मर्यादित जीवन का, उदारता, नम्रता, सज्जनता, सरलता, साहस, सौजन्य, पतिव्रता, मानवता, निबलों की सहायता, सामाजिक कर्तव्यों का अनुष्ठ न, ज्ञानप्राप्ति की उत्कण्ठा, इत्यादि गुणोंका बोध होता है। वस्तुतः मानवीय भाषा में अन्य कोई शब्दनहीं, जिसका इतिहास इस शब्द स उच्च हो।"

स्वर्गीय, रायबहादुर, महामहोपाध्याय डा० गरीशङ्कर हीराचन्द ओझा, डी० लिट् लिखते हैं:—"इस पुस्तक में 'आर्य' शब्द का प्रयोग देखकर पाठक यह अनुमान न करें कि यह शब्द आर्यसमाज के अनुयायियों के लिये प्रयुक्त हुआ है।

आजकल 'हिन्द' शब्द का प्रयाग होता है, परन्तु उसके स्थान में प्राचीन काल में 'आर्य' शब्द का प्रयोग होता था। हिन्दू नाम विक्रम संवत् की ८ वीं शताब्दी से पूर्व के ग्रन्थों में नहीं मिलता है। फारस (ईरान) की भाषा में 'स' के स्थान में 'ह' बोला जाता था जैसे कि 'सप्त' को 'हफ्त' 'सिन्धु' को 'हिन्दु' आदि। इसी से ईरानियों ने सिन्धु के निकटवर्त्ती निवासियों को हिन्दू कहा। पीछे से सारे भारत के लोग हिन्दू और उनका देश हिन्दुस्तान कहलाया। सिकन्दर के समय के यूनानी लेखकों ने 'सिन्धु' को इंडु (इण्डज्) और वहाँ के निवासियो को 'इण्डियन' कहा, इसीसे अंग्रेज भारतवासियों को

×' ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका" ग्रन्थ प्रामाण्याप्रामण्य विषयः। "ईश्वरीय ज्ञानवेद" पुस्तक, प्रथमावृत्ति, पृष्ठ ८३।

ॐ' वेद में इतिहास नहीं" प्रथम संस्करण, पृष्ठ ११३

[] "निरुक्त भाष्य" पूर्वार्ध, प्रथमावृत्ति, पृष्ठ १५४।

(⌣) ' निरुक्त भाष्य" उत्तरार्ध, प्रथमावृत्ति, पृष्ठ ५८७।

+ "भारतीय संस्कृति" का चतुर्थ अध्याय शीर्षक "हिन्दू या आर्य ?"

× "Arya" VOL. I P. 61 तथा प० रघुनाथ प्रसाद पाठक कृत "आर्य' शब्द का महत्व प्रथम संस्करण, पृष्ठ ६-१०।

'इण्डियन' और भारतको 'इण्डिया' कहते हैं। प्राचीन कालमें 'आर्य' शब्द बड़े गौरव का सूचक था और सम्मान के लिये उसका प्रयोग हुआ था। रानियाँ एवं स्त्रियाँ अपने पति को सम्बोधन करने में 'आर्यपुत्र', ऐसे ही सासु और श्वसुर के लिए क्रमशः आर्या और आर्य शब्दों का प्रयोग करती थीं। बौद्धों में भी यह शब्द गौरव का बोधक माना जाता था, इसीसे उसके कई प्रसिद्ध धर्माचार्यों आदि के नाम के साथ 'आर्य' शब्द जुड़ा हुआ मिलता है—जैसे कि आर्य असग, 'आर्यदेव' आर्य पार्श्विक, आर्य सिंह आदि। जैनों में साध्वी अब तक आर्या (आरजा) कहलाती है।" ॐ

महर्षि दयानन्दजीने अपने व्याख्यान में स्पष्ट कहा था," "उस समयमें ब्रह्मचारी और ब्राह्मण इनका नाम आर्य था, उसका सूत्र है कि आर्यो ब्राह्मणकुमारयोः" (पाणिनिसूत्रम्)

ऐसी व्यवस्था होते हुए हमारे देश का नाम 'आर्यस्थान' अथवा 'आर्य खण्ड' होना चाहिए, सो उसे छोड़ न जाने 'हिन्दुस्तान' यह नाम कहाँ से निकला? भाई श्रोतागण! हिन्दू शब्द का अर्थ तो काला, काफिर, चोर इत्यादि है और हिन्दुस्तान कहने से काले, काफिर, चोर लोगो की जगह अपना देश, ऐसा अर्थ होता है। तो भाई, इस प्रकार का बुरा नाम क्यो ग्रहण करते हो? और आर्य अर्थात् श्रेष्ठ अथवा अभिज्ञात इत्यादि और आवर्त कहने से ऐसा का देश अर्थात् आर्यावर्त का अर्थ श्रेष्ठो का देश ऐसा होता है, सो भाई ऐसे श्रेष्ठ नाम को तुम क्यों स्वीकार नहीं करते? क्या तुम अपना मूल का नाम भी भूल गए? हा, यह हम लोगों की स्थिति देखकर किसके हृदय को क्लेश न होगा? सब ही को होगा। अस्तु, गतञ्च अत्र! अब हिन्दु इस नामका त्याग करो और आर्य तथा आर्यावर्त इन नामोका अभिमान धरो। गुण-भ्रष्ट हम लोग हुए, परन्तु नाम-भ्रष्ट तो हमें न होना चाहिए, ऐसी आप सबो से मेरी प्रार्थना है।" ॐ

अतएव पं० दीनानाथजी शास्त्री की 'हिन्दु' शब्द की व्याख्या सर्वथा त्याज्य है।

३२, "राजपूताने का इतिहास" जिल्द पहली, द्वितीय संस्करण पृष्ठ ४२—४३ की पाद टिप्पणी।

ॐ उपदेश-मञ्जरी" पृष्ठ १३५-१३६ (पूने में आठवाँ व्याख्यान, जनवरी १९५१ ई० में आर्य प्रकाशन मण्डल, लाजपतराय मार्कीट, दिल्ली द्वारा प्रकाशित)।

आर्यजगत

—आर्यसमाज बेलड़ा (सहारनपुर) का वार्षिकोत्सव ११ से १३ मई तक धूम धाम से मनाया गया। सर्व श्री स्वामी विवेकानन्दजी, कु० सुखलालजी आर्य मुसाफिर आदि विद्वानो के भाषण हुए। जनता पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा।

—आर्यसमाज पाठकपुर उन्नाव के सम्मानित सदस्य प० रामकृष्ण जी त्रिपाठी के पुत्र का यज्ञोपवीत सस्कार वैदिक रीति से हुआ। ११) विविध सस्थाओ को दान दिये गए।

—आर्यसमाज जौनपुर की एक साधारण सभा द्वारा समाज के स्तम्भ श्री शिवभजनलालजी मुख्तार के निधन पर हार्दिक शोक प्रकट किया गया और दिवंगत आत्मा को शान्ति व दुःखित परिवार को धैर्य प्रदान करने के लिये परमात्मा से प्रार्थना की गई।

—आ०स० लोधीरोड दिल्लीकी १८ अप्रैल ५१ की अन्तरंग सभा द्वारा विवाह संस्कारो में प्रचलित दहेज प्रदर्शन की कुप्रथा के विरुद्ध एक प्रस्ताव पास करके समस्त आर्य बन्धुओ से इसे बन्द करने की प्रार्थना की गई। दहेज-विरोधी आन्दोलन को व्यापक रूप देने के लिए १३ मई को एक सार्व जनिक सभा की गई, जिसमें स्थानीय सनातन धर्म सभा, स्त्री समाज आदि संस्थाओ के प्रतिनिधि और कोटला ग्राम के निवासी भी सम्मिलित हुए। सबने प्रस्ताव का समर्थन किया और दहेज-प्रथा बन्द करने के लिए लोगों ने मौखिक व लिखित प्रतिज्ञाए कराने के वचन दिए।

—श्री रामकौशिकजी उपदेशक सभा ने १६४॥) वेद प्रचारार्थ सग्रह कर सभा कोष, लखनऊ में भेजे।

—आर्यसमाज बोरना (अलीगढ) का २६ वां वार्षिकोत्सव १८ से २१ मई तक सानन्द सम्पन्न हुआ। प० महादेवप्रसादजी आचार्य साधुआश्रम, स्वामी आनन्दप्रकाशजी तीर्थ, पं० रामदयालुजी शास्त्री, श्रीमती लक्ष्मीदेवीजी अध्यापिका कु० सुखलालजी आर्य मुसाफिर, ठा० श्रवणसिंहजी, ठा० गजराजसिंहजी आदि के भाषण और भजन हुए। कई दिनों तक यज्ञ भी हुआ। श्री आनन्दप्रकाशजी तीर्थ ने ठा० आत्मारामजी को वानप्रस्थाश्रम की दीक्षा दी।

—मई (फर्रुखाबाद) के कुन्दन सिंहजी की पुत्री का पाणिग्रहण संस्कार आ० स० मुरान के चि० शिवरतनसिंहजी के साथ वैदिक रीति से हुआ। संस्कार प० रामचन्द्र उपदेशक सिद्धान्त शास्त्री ने कराया।

—इगलास (अलीगढ) में श्री पं० यशपालजी शास्त्री के उद्योग से २३ मई को आर्यकुमार सभा की स्थापना हुई।

—१५ तथा १७ मई ५१ को आर्यसमाज अमरोहा (मुरादाबाद) में श्री पं० रामचन्द्रजी देहलवी का भाषण हुआ। आपके भाषण का जनता पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा। इससे पूर्व अमरोहा में मुसलमानों की एक सभा हुई थी, उसमें बड़े उत्तेजनापूर्ण भाषण दिये गये थे। वायुमण्डल को शान्त करने के विचार से ही श्री प० रामचन्द्रजी देहलवी के भाषण कराये गए थे।

—आ० स० गंज मुरादाबाद के मन्त्री तथा म्युनिसिपल कमिश्नर श्री जगन्नाथसिंहजी सिंहल के ठीक समय पर हस्तक्षेप करने से एक वृद्ध का विवाह जो एक बालिका के साथ होने वाला था रुक गया और बरात को वापस जाने के लिए बाध्य कर दिया तथा उस कन्या का विवाह एक नवयुवक के साथ करा दिया। इस कार्य की नगर में भूरि-भूरि प्रशंसा है।

—आ० स० हलद्वानी (नैनीताल) में २० मई को एक जन्म के मुसलमान की शुद्धि हुई। शुद्ध हुए का नाम रामसिंह रखा गया। एक ईसाई परिवार के पांच स्त्री-पुरुषो की शुद्धि प० शिवदत्तजी ने कराई।

--आर्यसमाज गोरखपुर(जबलपुर) श्री प० चिरंजीलालजी शर्मा, भूतपूर्व प्रधान आर्यसमाज गोरखपुर तथा कोषाध्यक्ष श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा, मध्य प्रदेश और विदर्भ के आकस्मिक निधन पर अत्यन्त शोक प्रकट करती है और परमात्मा से प्रार्थना करती है कि वह दिवगत आत्मा को शान्ति तथा शोकातुर परिवार को धैर्य प्रदान करे।

—स्त्री आर्यसमाज हसनपुर का तृतीय वार्षिकोत्सव कथासहित ८ से १४ मई सन् ५१ ई० तक बड़े समारोहपूर्वक मनाया गया। सर्व श्री आचार्य विद्यानन्दजी विदेह, प० देशराजजी, प० मंगलदेवजी शास्त्री पुराण-मार्तण्ड, पं० जगदीशभूषणजी सगीताचार्य, श्रीमती प्रभावतीजी प्रभाकर, "काव्यतीर्थ", श्रीमती शकुन्तला-देवीजी गोयल आदि के प्रभावशाली व्याख्यान और शिक्षाप्रद भजन उपदेश हुए। श्री आचार्य विदेहजी की सात दिवस तक शिक्षा-प्रद एवं रोचक वेदकथा होती रही। प्रभात फेरी, बृहद्यज्ञ, वेदकथा तथा अनेक महत्वपूर्ण सम्मेलन भी हुए, जिनका जनता पर अत्युत्तम प्रभाव पड़ा। स्थानीय हायर सेकिन्डरी स्कूल में भी श्री आचार्य विदेहजी का सारगर्भित भाषण हुआ। कुछ दिनों से कुछ आर्य व्यक्तियों में

वैमनस्य हो गया था, जो इस अवसर पर श्री त्रिवेदीजी के उद्योग द्वारा दूर हो गया। यह बड़े आनन्द की बात है।

—आर्यप्रतिनिधि सभा मध्य-भारत ने रतलाम व मंदसोर जिलों के अन्तर्गत एक संगठन अर्थात एक केन्द्र रखा है। इस केन्द्र में २९ आर्यसमाज हैं। इन सब आर्यसमाजों ने एक सूत्र में बँधकर अनुशासन का पालन करते हुए केन्द्र को अधिक से अधिक मजबूत बनाना निश्चित किया है।

उत्सव सूचनाएं

—आर्यसमाज भोजपुर खेड़ी का २६ वां वार्षिकोत्सव ३१ मई तथा १, २ जून को समारोहपूर्वक मनाया जायगा।

—आर्यसमाज मूड (आर्यनगर) बरेली का वार्षिकोत्सव ६ से ९ जुलाई तक मनाना निश्चित हुआ है। ६ जुलाई को नगरकीर्तन होगा।

निर्वाचन

—आर्यकुमार सभा मुजफ्फरनगर प्रधान-श्री भृगुनन्दनजी गुप्त और मन्त्री-श्री पन्नालालजी आर्य।

—आर्यसमाज बेलड़ा (सहारनपुर)—प्रधान-श्री करणसिंहजी और मन्त्री-श्री कबूलसिंहजी।

—आर्यकुमार सभा इगलास—प्रधान-श्री बनवारीलालजी और मन्त्री-श्री शिवचरणलालजी।

सार-सूचनाएं

—तहसील लक्ष्मणगढ़ (अलवर) में जो जोगी शुद्ध हो गये हैं, उन पर मुसलमानो द्वारा अत्याचार किया जा रहा है। लक्ष्मणगढ़ थाने में रिपोर्ट लिखाई गयी तो लिखने से इन्कार कर दिया। उच्चाधिकारियों को इस ओर ध्यान देना चाहिए।

— महीपाल शास्त्री, ग्राम प्रचारक,

—मैंने मेरठ जिले के आर्यसमाजों में निरीक्षण भ्रमण करना प्रारम्भ कर दिया है। मन्त्री महाशय कृपया अपने रजिस्टर आदि ठीक रखें। रघुनन्दनस्वरूप, एडवोकेट निरीक्षक आर्यप्रतिनिधि सभा, उत्तरप्रदेश, मेरठ।

—प० चाननराम अप्त भाषक को प्रचारार्थ बुलाने का पता—निगमागम विद्यालय, दारानगर गंज (बिजनौर)।

—श्री जयेन्द्र शास्त्री को प्रचारार्थ बुलाने वाले हीरावाली पो० नगीना (बिजनौर) के पते पर पत्र-व्यवहार करें।

—गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी की शाखा गुरुकुल सूपा का नया सत्र ता० १३ जून से प्रारम्भ हो रहा है। नए प्रविष्ट होने वाले ब्रह्मचारियों का १० जून को वेदारम्भ संस्कार होगा। जो महानुभाव अपने बालकों को गुरुकुल में प्रवेश कराना चाहे नीचे लिखे पते से नियमावली मँगा ले। आचार्य गुरुकुल सूपा, वाया नवसारी (सूरत)।

—कन्या गुरुकुल हाथरस की वार्षिक परीक्षाएँ समाप्त हो चुकी हैं और २० मई से ३० जून तक का वार्षिक ग्रीष्मावकाश आरम्भ हो गया है। १ जौलाई से विद्यालय का प्रारम्भ होगा। जो सज्जन अपनी कन्याओं को गुरुकुल में प्रविष्ट कराना चाहें, वे गुरुकुल-कार्यालय से पत्र व्यवहार करके अपनी कन्या के लिये स्थान सुरक्षित करालें।

—लक्ष्मीदेवी आचार्या।

आर्य कुमार परिषद

उत्तर प्रदेशीय आर्य कुमार परिषद् की अन्तरग सभा का अधिवेशन ६ मई १९५१ को नजीबाबाद में हुआ। इसमें निरीक्षण जिलासंगठन, प्रान्तीय शिविर यात्राएं, खाद्य समस्या, वाद-विवाद, प्रतियोगिता, कृत्रिम आर्यकुमार धारा-सभा आदि विषयों पर विचार और निश्चय हुए। परिषद् की कार्य-प्रगति पर भी विचार हुआ।

आवश्यक सूचना

आर्यमित्र के नवीन व पुराने ग्राहकों को तथा विज्ञापनदाताओं को अपना कुल रुपया नीचे के पते पर भेजना चाहिये। ताकि उनके लेखानुसार तुरन्त कार्यवाही हो जाया करे। पुराने ग्राहक अपना न० अवश्य लिखा करें।

व्यवस्थापक
आर्यमित्र, आगरा

प्रचार-यात्रा

१६ मई से १० जुलाई तक मेरा अवकाश प्रारम्भ हो गया है। इच्छा तो अनेक वर्षों से यही रहती है कि ग्रीष्मावकाश के ये दिन कहीं उत्तराखण्ड के किसी एकान्त स्थान में रहकर साधना और स्वाध्याय-चिन्तन में व्यतीत करूं किन्तु गुरुकुल के कार्य के लिये भी अन्य कोई उपयुक्त समय न मिलने के कारण निश्चय किया है कि इस अवकाश को वैदिक-प्रचार और गुरुकुल-सेवा में लगाऊँ। तदनुसार मई के अन्त तक गुरुकुल बिरालसी की कुछ व्यवस्था आर्यप्रतिनिधि सभा के निश्चयानुसार करूंगा, और जून मास गुरुकुल वृन्दावन के लिये दूंगा। जो समाज वा सज्जन वृन्दावन की सहायता के लिये वा प्रचार के लिये बुलाना चाहें एक सप्ताह पूर्व इस पते पर लिखें (आचार्य) वृहस्पति एम०ए० वेद शिरोमणि कुलपति गुरुकुल विश्वविद्यालय, वृन्दावन।

पीलीभीत जिला-सम्मेलन

पीलीभीत तृतीय जिला आर्य-सम्मेलन पीलीभीत नगर में २६ अप्रेल से २ मई सन् १९५१ तक श्री पूज्य राजगुरु प० धुरेन्द्रजी शास्त्री प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अध्यक्षता में अत्यन्त समारोहपूर्वक मनाया गया। २६ अप्रेल को श्री अध्यक्ष महोदय का शानदार जुलूस आर्य-समाज मन्दिर से आरम्भ होकर नगर की मुख्य-मुख्य सड़कों पर घूमता हुआ सम्मेलन-मण्डप पर समाप्त हुआ। मण्डप रामस्वरूप पार्क में बहुत ही विशाल बनाया गया था। जुलूस की समाप्ति पर श्री प्रधानजी द्वारा आर्यध्वजारोहण हजारों की जनसंख्या के बीच हुआ। तत्पश्चात् जिले के अनेक आर्यसमाजों के प्रधानों ने सम्मेलन के सभापति का स्वागत किया और स्वागत-कारिणी के सभापति ने अपना स्वागत-भाषण पढ़ा। फिर अध्यक्ष महोदय का भाषण हुआ जो गत आर्यमित्र में प्रकाशित हो चुका है, इस अवसर पर ३० अप्रैल, १ व २ मई को राष्ट्र-निर्माण, गो-रक्षा, शिक्षा, पारिवारिक तथा महिला-सम्मेलन हुये। राष्ट्रभाषा सम्मेलन श्री अलगूरायजी शास्त्री एम०एल०ए०, गोरक्षा सम्मेलन श्री निरंजनसिंह शिक्षाध्यक्ष डिस्ट्रिक्ट बोर्ड पीलीभीत, शिक्षा सम्मेलन विद्वद्वर श्री प० गङ्गाप्रसादजी उपाध्याय तथा पारिवारिक व महिला-सम्मेलन श्रीमती लक्ष्मी-देवीजी आचार्या कन्या गुरुकुल हाथरस की अध्यक्षता में बहुत ही सफलतापूर्वक हुए। आर्य सम्मेलन तथा उपर्युक्त सम्मेलनों में अनेक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास हुये। इस अवसर पर उक्त विद्वानों और नेताओं के अतिरिक्त श्री स्वामी ब्रह्मानन्दजी दण्डी श्री प० उषर्बुध, आचार्य श्री विद्यानन्द विदेह, श्री प० प्रकाशवीरजी शास्त्री, श्री कुँ० सुखलाल जी आदि अनेक विद्वान् भी पधारे थे, जिनके उपदेशों से जनता बहुत प्रभावित हुई। हजारों की संख्या में जनता प्रत्येक प्रोग्राम में बड़े उत्साह से सम्मिलित होती रही, मण्डप खचाखच भर रहता था और बाहर हजारों जन खड़े सुनते रहते थे। इस सम्मेलन से यहाँ आर्यसमाज के कार्य को विशेष प्रगति मिली है।

आर्य वीरदल-शिक्षण-शिविर

१५ जून से ३० जून तक

देश की वर्तमान शोचनीय अवस्था में आर्य वीरदल किस प्रकार अपने राष्ट्र की सेवा कर सकता है, इसका क्रियात्मक शिक्षण देने के निमित्त आर्य वीर दल के अखिल भारतीय व प्रान्तीय अधिकारियों का एक साधना शिविर देहरादून के पास पर्वतीय स्थान पर १५ जून से ३० जून तक लगने जा रहा है। दल के वर्तमान अधिकारियों के अतिरिक्त जो शिक्षित व स्वस्थ व्यक्ति आर्य वीरदल के शारीरिक, आत्मिक व चारित्रिक उत्थान के कार्य में अपना सहयोग देने के लिए तत्पर हों, वे शिविर में आने का कष्ट करें। शिविर में भाग लेने वालों का निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है—

१—अपने साथ नोटबुक, पैंसिल, [illegible] नेकर, सफेद कमीज, काला कच्छा, सफेद सेन्डोकट बनियान, सफेद मोजे, सफेद फूलबूट, बिस्तरा तथा थाली लोटा लावें।

२—शिविर-शुल्क २५) अपने साथ लावें। अपने आने की सूचना १० जून तक सार्वदेशिक सभा दिल्ली को देवें। शिविर-शुल्क शिविर के प्रारम्भ में ही अदा करना होगा।

३—१४जून १६१५ की सन्ध्या को आर्यसमाज देहरादून में पहुच जाना चाहिए। स्टेशन पर, पथ दर्शक का प्रबन्ध होगा।

विशेष—शिविर के सैनिक अनुशासन में रहना होगा।

भारतीय छात्रों को अमेरिका में अध्ययन की सुविधा

'अमेरिकन फुलब्राइट ऐक्ट' के छात्रविनियम-सम्बन्धी उपबन्धों के अन्तर्गत भारतीय यूनिवर्सिटियों के कुछ छात्रों तथा अध्यापकों को भी १६५२-५३ में अमेरिका जाकर अध्ययन करने, पढ़ाने तथा अन्वेषण का काय करने का अवसर मिलेगा।

अमेरिकी शिक्षण संस्थाओं में पढ़ने अथवा पढ़ाने के लिये भारत, मिश्र, ईरान, पाकिस्तान, टर्की तथा १३ अन्य देशों से अधिक से अधिक १२०० छात्र तथा अध्यापक आमन्त्रित किये जायेंगे। इतनी ही संख्या में अमेरिकी छात्र और अध्यापक भी उच्च शिक्षा प्राप्त करने, पढ़ाने अथवा अन्वेषण का कार्य करने के लिये मध्यपूर्व के पांच देशों तथा १३ अन्य देशों को भेजे जायेंगे।

१६५२ में भारत से कुल १०३ छात्रों और अध्यापकों को आमन्त्रित किया जायेगा। इनमें से ६ लेक्चरर, १५ अन्वेषणकर्ता (रिसर्च स्कालर) २ अध्यापक और ८० छात्र होंगे। अमेरिका से भारत भेजे जाने वालों में ७ लेक्चरर, ६ अन्वेषणकर्ता, २ अध्यापक और २५ स्नातक छात्र होंगे।

मध्यपूर्व के देशों के अलावा आस्ट्रेलिया, बेल्जियम, बर्मा, फ्रांस, ग्रीस, इटली, हालैंड न्यूजीलैंड, नौर्वे, फिलिपीन, थाइलैंड और ब्रिटेन से भी १२०० छात्रों तथा अध्यापकों को अमेरिका में आमन्त्रित किया जायेगा।

फुलब्राइट ऐक्ट के परिपालन की व्यवस्था अमेरिका का विदेश विभाग करता है। वह छात्र-विनिमय कार्यक्रमों पर व्यय करने के लिये विदेशों में पड़ी फालतू अमेरिकी सम्पत्ति की बिक्री से प्राप्त विदेशी मुद्रा और उधार-पूंजी का उपयोग करने का अधिकार देता है। विदेशों से आमन्त्रित किये जाने वाले छात्रों और अध्यापकों के आने जाने का खर्च भी अमेरिकी विदेश विभाग की ओर से दिया जाता है।

आपकी दैनिक आवश्यकता

शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित-जगत् प्रसिद्ध

शुद्ध सुगंधित हवन-सामग्री

नमूना मुफ्त मंगाकर अवश्य परीक्षा करिये

पता—सुन्दरलाल रामसेवक शर्मा
शुद्ध सुगन्धित हवन सामग्री भण्डार
मु० पो० असौली (फतेहपुर)

हर स्त्री माँ बन सकती है
एक बच्चे की कीमत सिर्फ
१५।=)

१ दिन में शर्तिया गर्भ की गारंटी बेऔलाद माता बहिनों के लिए स्वर्ण अवसर। १ बांझ (बन्ध्या) २—काकवन्ध्या यानी १-२ औलाद होकर बन्द होजाना, ३—मृतवत्स्या यानी सन्तान ही होकर मर जाना या ४—कन्या ही कन्या होना। उपरोक्त सब दोष निवारण के लिए आज ही परीक्षा करें।

नपुंसकता

केवल एक दिन में दूर

चाहे जैसा सुस्त, नाकारा, कमजोर नपुंसक (नामर्द) हो गया है सिर्फ एक दिन में बिना तकलीफ नपुंसकता (नामर्दी) दूर की गारण्टी। लाभ न होने पर कीमत वापसी। आर्डर के साथ एडवांस। उत्तर के लिए जवाबी पत्र आना लाजिमी। मूल्य १२॥) डाक व्यय अलग।

राजवैद्य डा० जौहरी
कृष्णा अस्पताल, हरदोई, (यू० पी०)

आवश्यकता

वैदिक यन्त्रालय के लिये सहायक प्रबन्धकर्त्ता, वर्क्स सुपरवाइजर तथा वैदिक साहित्य के सशोधक और वैदिक पुस्तकालय के लिये सेल्स मैनेजर की आवश्यकता है। केवल योग्य, अनुभवी और आर्यसामाजिक व्यक्ति ही अपने प्रमाण पत्रों की प्रतिलिपि सहित तारीख ३० जून सन् ५१ तक प्रार्थनापत्र मन्त्री वैदिक यन्त्रालय प्रबन्ध कर्त् सभा, पोस्ट बक्स न० ३८ अजमेर के पते पर भेजें। वेतन योग्यतानुसार १५०) मासिक तक।

———

असली मीठी
बालजीवन घुट्टी

बच्चों की हर एक बीमारी को ... कमजोर बच्चों को ताकतवर बनाती ... रोजाना चटा देने से बच्चे कभी बीमार नहीं होंगे दाँत आसानी से निकल आवेंगे।
— मू० शी० ।) दर्जन २॥) डा० व्य० अ० —
सब जगह बिकती है नकली घुट्टियों से बचो। नए सौदागर नमूना मुफ्त मगावें।
पता—बालजीवन कार्यालय अलीगढ़ ...

आर्यमित्र

में

विज्ञापन देना

व्यापार की उन्नति करेगा

गुरुकुल वृन्दावन आयुर्वेदिक प्रयोगशाला लिमिटेड के

अमूल्य उपहार

च्यवनप्राश

बल, वीर्य, बुद्धि एवं स्फूर्तिदायक सर्वोत्तम टानिक है। पुरानी खाँसी, हृदय की धड़कन एवं यक्ष्मा पर अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ है।   मूल्य ७) सेर,

पराग रस

प्रमेह और समस्त वीर्य-विकारों की एकमात्र औषधि है। स्वप्नदोष जैसे भयङ्कर रोग पर अपना जादू का सा असर दिखाती है।   मू० ६) तोला,

गुरुकुल वृन्दावन का भीमसेनी सुरमा

इस अनुभूत सुरमे का निरन्तर कुछ काल तक प्रयोग करने से नेत्रों के समस्त रोग, परवाल, रोहा, धुन्ध, ढलका, कटाव, जलन, खुजली शीघ्र आराम होते हैं।   मू० ॥।) शी०

ब्राह्मी-शरबत

ग्रीष्म ऋतु का अनुपम उपहार, शीतल, सुमधुर, सुगन्धित पेय। नित्य प्रति व्यवहार करने से लू आदि ग्रीष्म कालीन रोगों का भय नहीं रहता। मूल्य ४) प्रति बोतल

हर शहर मे एजेन्टों की आवश्यकता है।

चन्द्रप्रभावटी

यह औषधि शरीर में नई शक्ति लाती है। खून की कमी, जिगर की कमजोरी, बवासीर, बहुमूत्र, प्रमेह व स्वप्नदोष आदि रोगों में तुरन्त लाभ करती है। मूल्य १) तोला

शुद्ध हवन सामग्री

आर्य जनता क इस महान कष्ट को देखकर (कि पैसा खर्च करने पर भी उत्तम सामग्री नहीं प्राप्त होती) हमने विशुद्ध शास्त्रोक्त रीति से सामग्री का निर्माण किया है।

लागतमात्र मूल्य १।) सेर   एक मन ५०)

थोक बिक्री के लिये खरीदने पर विशेष रियायत है।

ब्राह्मी-तेल

दिमाग को ताजा, केशों को मुलायम करता और गर्मी की उष्णता से बचाता है। दैनिक व्यवहार से मस्तिष्क संबंधी समस्त विकारों को दूर करता है। मूल्य १०) प्रति सेर

गुरुकुल वृन्दावन आयुर्वेदिक प्रयोगशाला लिमिटेड, वृन्दावन।

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

आर्यमित्र

• ARYA-MITRA, AGRA •

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक-आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ
७ जून १९५१

'समय' की भीख दीजिए !

कोरी बातों से काम नहीं चलेगा !

आगे बढ़िए और काम कीजिए !

प्यारे आर्य भाई-बहनो, आपने आर्यसमाज के नियमों और आर्यसिद्धान्तों पर विश्वास करके ही आर्यसमाज की सदस्यता स्वीकार की है। प्रारम्भ में आर्यसमाजियों की संख्या थोड़ी थी परन्तु काम बहुत होता था। अब आर्यसमाज और आर्यसमाजी बहुत हैं, पर काम नाममात्र को ही होता है। मनोरंजन के लिये साल-भर में एक बार उत्सव मना लेना कोई बड़ा काम नहीं है, जब संसार का कोई काम शेष न रहे तब समाज के साप्ताहिक अधिवेशनों में जा बैठना भी कुछ अर्थ नहीं रखता।

आर्यसमाज तो वह प्रचण्ड शक्ति है, जिसने कांग्रेस और स्वराज्य के लिये प्रशस्त पथ-निर्माण किया, जो अपनी राष्ट्रिय प्रगतियों के कारण विदेशी सत्ता की आँखों में सदैव कांटे की तरह खटकता रहा, जिसने देश पर बलिदान होने वाले बड़े बड़े क्रान्तिकारी वीर पैदा किये, जो भारतीय भावना-प्रसार करने में अग्रसर और अग्रगण्य रहा, जिसने वैदिक शिक्षा-प्रचार के लिये सबसे आगे बढ़कर काम किया, जो छूत-छात मिटाने के लिये सबसे पहले आगे बढ़ा, जिसने हिन्दी प्रचार के लिये अग्रदूत का काम किया, जिसने धार्मिक और सामाजिक संसार में आश्चर्यजनक चमत्कार कर दिखाया, जिसने गुरुडम का गपोड़गढ़ गिराने और मानसिक दासता दूर करने में कदापि कमी नहीं की। नागरिक अधिकार-रक्षा के लिये जिसने अहिंसात्मक सत्याग्रह छेड़कर स्वेच्छाचारी निजाम के छक्के छुड़ा दिये! कितने दुःख की बात है कि ऐसी महान् शक्ति आज अचेत और अकर्मण्य बनी हुई है।

इस असावधानता और अकर्मण्यता का कारण उचित और आवश्यक नेतृत्व का अभाव और तप त्याग की कमी बताया जाता है। अधिकांश में यह ठीक भी है। परन्तु इस प्रकार की पुरानी शिकायत कब तक चलती रहेगी। काम करने वालों के पथ प्रदर्शन के लिये महर्षि दयानन्द और स्वर्गीय आर्य नेताओं के आदर्श तथा आदेश बहुत काफी हैं। उन्हीं का अनुसरण कर कार्यक्षेत्र में कूद पड़ना चाहिए।

आर्यसमाज के लिये जितना उपयुक्त अवसर आज है उतना कदाचित पहले कभी न था। परन्तु अवसर से लाभ तभी उठाया जा सकता है, जब काम करने की उमंग उठे, आगे बढ़ने के लिये उत्साह हो, और थोड़ा-बहुत तप त्याग करने के लिये भी जी चाहे। परन्तु ये सब बातें हीनता की ओर जा रही हैं।

जो लोग आर्यसमाज को राजनैतिक क्षेत्र में घसीट ले जाना चाहते हैं, वे उसके साथ न्याय नहीं कर रहे। सामुदायिक रूप से आर्यसमाज का राजनीति में पड़ना अपने व्यापक और विशाल स्वरूप को संकीर्ण, संकुचित और हीन बना देना है। आर्यसमाज का काम राजनैतिक दलदल में फँसना नहीं, बल्कि एक सुधारक और शुभचिन्तक की हैसियत से दलदल में फँसे हुओं को बाहर निकालना है।

आज हम आर्य भाई-बहनों से धन की याचना नहीं कर रहे, केवल समय की भीख माँगने के लिये हाथ पसारते हैं। श्रद्धा और प्रसन्नता से जितना समय वे दान दे सकें अवश्य दें। यदि प्रत्येक भाई बहन आगामी दिसम्बर मास तक दो दो महीने का समय भी दान कर दें तो बहुत बड़ा काम हो सकता है।

समय दान देकर आप अपने नगर, तहसील और ज़िले में ही काम कीजिए, कहीं बाहर जाने-आने की ज़रूरत नहीं है। पूर्व स्थापित आर्यसमाजों को सुसंगठित, सुदृढ़ और जीवित-जाग्रत् बनाइये इसके बाद नये समाज स्थापित कीजिए। यदि आगामी छह सात महीनों में उत्तर प्रदेश के लगभग एक सहस्र आर्यसमाज सचेत, और सावधान होगये तो यह एक बहुत बड़ी सफलता समझी जायगी। फिर प्रचार का काम बड़ी द्रुतगति से हो सकेगा।

इस समय सबसे बड़ी आवश्यकता भ्रष्टाचार मिटाने की है। इसी की पाप छाया सारे देश पर छाई हुई है, आर्यसमाज स्वयम् सुसंगठित होकर, अपने प्रशंसनीय पुरुषार्थ प्रभञ्जन द्वारा इस अविद्या बदली को छिन्न-भिन्न कर सकता है।

जो कार्यकर्त्ता इस अपील से सहमत हों और आगामी दिसम्बर तक संघटन-कार्य करना चाहें, वे परमात्मा को साक्षी देकर ऐसा करने की प्रतिज्ञा करें, और ईमानदारी से अपने कार्य में जुट जायें। सफलता होकर रहेगी। सफलता की शुभ सूचना के लिये आर्यमित्र के कालम खुले हुए हैं। नाम नहीं काम प्रकाशित कराने की जरूरत है। जो-कर्म-कमरी कुछ न करके, अपने नामों को सालाना रिपोर्टों में आँखें फाड़-फाड़ कर देखने के आदी हो गये हैं, वे कृपया अपनी भिक्षा को अपने पास ही रखें। ऐसी भिक्षा की आवश्यकता नहीं है। पूर्ण आशा है कि हमारी यह विनम्र विनती व्यर्थ न जायगी और प्रत्येक ज़िले में आर्य्य कार्यकर्त्ताओं की मण्डलियाँ बड़े उत्साह और स्नेह से काम करना तुरन्त प्रारम्भ कर देंगी। 'शुभस्य शीघ्रम्'

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०), एक प्रति तीन आने

सम्पादक : हरिशङ्कर शर्म्मा

वर्ष—५३
अङ्क—२०

'कुशवाहा' साहब का कोप-कोदण्ड

श्री शिवपूजन सिंह कुशवाहा पत्र-पत्रिकाओं में प्रायः अपने लेख प्रकाशित कराते रहते हैं। ये लेख मौलिक न होने पर भी स्वाध्याय के परिचायक होते हैं। गत जनवरी से अब तक हमने भी 'आर्यमित्र' में आपके दो-तीन लेख प्रकाशित किये हैं, जो आपने कृपा पूर्वक हमारे पास भेजे थे। 'हिन्दू' शब्द के सम्बन्ध में एक लेख तो हमने स्वयं प्रार्थना करके आपसे लिखवाया था, जो धन्यवाद पूर्वक 'मित्र' में प्रकाशित भी करा दिया गया।

कुशवाहाजी ने १ जून ५१ के 'विज्ञापक' नामक पत्रमें पूरे सवा दस कालमों का एक लम्बा लेख छपवाया है। शीर्षक है—"आर्यपत्रों की उनके लेखकों के प्रति उदासीनता।" ('उनके' के बदले 'अपने' शब्द शायद अधिक उपयुक्त होता; क्यों कुशवाहाजी ?) इस विशालकाय लेख में आपने दो-तीन को छोड़कर, शेष सबही सम्पादकों की बड़ी कड़ी आलोचना की है। किसी-किसी सम्पादक को तो 'झूठा' और 'धूर्त' तक लिख मारा है। नीति तो प्रायः सबही पत्रों की बुरी बताई है।

कुशवाहा साहब की शुभ सम्मति में वही सम्पादक सर्वश्रेष्ठ और सुनीति-सम्पन्न हैं, जो उनके लेखों को वेद-वाक्य मानकर तुरन्त प्रकाशित करदें और प्रकाशित लेख की कई "कतरनें" उनकी श्री सेवा में अविलम्ब भेज दें। आपकी कड़ी कसौटी पर ऐसे ही दो-तीन सम्पादक खरे उतरे हैं, अतएव उन्हीं भाग्यशालियों की आपने भरपेट प्रशंसा की है।

कुशवाहा जी ने इस प्रसंग मे आचार्य श्री द्विवेदीजीको भी स्मरण किया है, हालांकि आपको उनका जरा भी अनुभव नहीं है। द्विवेदी जी महाराज अपने सम्पादकीय कर्तव्य में कितने कड़े थे, और वे लेखों का चुनाव किस सख्ती से करते थे, इसे कुशवाहाजी क्या जानें। उस समय अच्छे-अच्छे विद्वान् लेखक 'सरस्वती' में अपने लेख प्रकाशित होना परम सौभाग्य समझते थे। आज के सम्पादक यदि वैसी ही कड़ाई करें तो श्री कुशवाहा साहब जैसे असहिष्णु लेखक सम्पादकों पर गालियों की बौछाड़ के बदले पाषाणों की वर्षा करने लगें।

अगर आचार्य द्विवेदीजी इतनी सख्ती न करते तो ऐरे-गैरे सभी के लेख "सरस्वती" में छपते रहते और उस समय उसका कोई स्टैण्डर्ड ही न रहता।

कुशवाहाजी ने अपने उक्त लेख में 'आर्यमित्र' पर भी कृपा की है—पूर्व सम्पादक पं० धर्मपालजी समालोचनार्थ भेजी उनकी किताबें 'हज़म' कर गये और वर्त्तमान सम्पादक बार-बार लिखने पर ही उनके लेख छापता है, फिर लेखकी 'कतरन' तक उनकी श्री सेवा में नहीं भेजता—इत्यादि। आर्य मार्तण्ड-सम्पादक श्री चाँदकरण शारदा को भी आपने बुरी तरह फटकारा है। वाह, कुशवाहा साहब ! आप लेखक क्या हुए आपने तो हिटलरी हण्टर या डिक्टेटरी डण्डा हाथ में लेलिया ! आसमान सिर परउठा लिया !

सब सम्पादक तुच्छ और हेच ! कुशवाहाजी की चिट्ठियों और लेखों से दो तीन बातें हमें मालूम हुई हैं, वे पत्र-पत्रिकाओं को अपनी शोहरत तथा अपनी पुस्तकों के प्रचार का अखाड़ा बनाना चाहते हैं। जो सम्पादक अपनी पूर्व निश्चित सारी व्यवस्था को अस्त व्यस्त कर कुशवाहाजी के लेखों को फ़ौरन से पेश्तर नहीं छाप सकता वह 'झूठा', 'धूर्त' और बुरी नीति वाला है। दूसरे आप अपने नाम नामी के साथ मालगाड़ी के डिब्बों की तरह अपनी सारी उपाधि-व्याधियों को जोड़ देना बहुत पसन्द करते हैं। भले ही इन अति साधारण उपाधियों के कारण आपका और आपके स्वाध्यायपूर्ण लेख का कितना ही गौरव क्यों न कम होता हो। जो सम्पादक इन लम्बी-चौड़ी उपाधियों युक्त लेखों को न छापे या देर से छापे उसी की नीति निन्दनीय और वही 'धूर्त' तथा 'झूठा' ! कैसी अच्छी कसौटी है—कितनी सुन्दर विचार-धारा है। धन्य है, यह 'लेखकीय' शिष्टाचार ! श्री कुशवाहाजी ने सम्पादकों पर जो पुष्प-वर्षा की है, उसके लिये उन्हें हम धन्यवाद देते हुए सलाह देते हैं कि वे जरा संयम से काम लें और अपने सम्बन्ध में उन्होंने जो गलत अन्दाजा लगा रखा है, उस पर ठंडे दिल से गौर फरमावें। उपयोगी और अच्छे लेखों के लिये सब सम्पादक लालायित रहते हैं—बन पड़ता है तो पत्र-पुष्प भी भेंट किये जाते हैं। परन्तु वह काम गालियों की गोली दागने से नहीं हो सकता, अच्छा लेखक बनने से ही सम्भव है। सम्पादकीय कठिनाइयोंको सम्पादन-कार्य करने वाले ही जानते हैं। सस्ती शोहरत लूटने वाले जल्दबाज लेखकों को तो उसकी कल्पना भी नहीं हो सकती।

— —

निष्पाप मन

श्री हरिशङ्कर शर्मा

सम्पति का कोष कमाऊँ, चाहे सर्वस्व गँवाऊँ,
सुख हो या दुःख उठाऊँ, जुग जिऊँ, अभी मर जाऊँ,
नगरी का नागर बनूँ, बसूँ या वन में,
पर, पाप न आवे हे प्रभु, मेरे मन में।

परिवार भले ही छोड़े, प्रिय पत्नी नाता तोड़े,
मुँह सन्तति क्यों न मरोड़े, शासन सब तीत निचोड़े,
कष्टों का कोप रहे, कितना ही तन में
पर, पाप न आवे हे प्रभु, मेरे मन में।

दुखियों के दुःख विदारूँ, पतितों पर प्रेम प्रसारूँ,
बल सदा सत्य का धारूँ, बन धीर न हिम्मत हारूँ,
हो जरा-जीर्ण तन, या उमंग यौवन में,
पर, पाप न आवे हे प्रभु, मेरे मन में।

अन्याय-अनीति मिटाऊँ, सेवा-सन्मार्ग सुझाऊँ,
सद्भाव-सुधा बरसाऊँ, समता-सुनीति सरसाऊँ,
यश हो या अपयश मिले, मुझे जीवन में,
पर, पाप न आवे, हे प्रभु, मेरे मन में।

———

आर्यसमाज नैनीताल

आर्यसमाज-मन्दिर नैनीताल का शिलान्यास ३ जून १९५१ को उत्तर प्रदेशीय सरकार के प्रधान मन्त्री श्री पं० गोविन्द वल्लभ पन्त द्वारा हुआ। इस मन्दिर की दो मंजिलें पहले ही बनकर तयार हो चुकी हैं। इस अवसर पर उत्तर-प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री मदन मोहन सेठ, एम०-ए० ने आर्यसमाज के मन्त्री जी के पास जो शुभ कामना भेजी है, वह इस प्रकार है—

श्रीमन्त्रीजी,

आर्यसमाज नैनीताल के शिलान्यास का निमंत्रण पाकर मुझे अकथनीय हर्ष हुआ। इस अनिर्वचनीय उल्लास के दो प्रमुख कारण हैं। प्रथम तो यहकि माननीय मुख्य मन्त्री प० गोविन्द-वल्लभ पन्त के तपोपूत कर्मठ करों का स्पर्श पाकर यह अवसर आर्यसमाज नैनीताल के इतिहास में चिरस्मरणीय हो जायगा, प्रान्त के प्रमुखतम व्यक्ति स्वतंत्रता-संग्राम के अग्रणी नेता तथा अपने प्रदेश के प्रथम नागरिक का सहयोग प्राप्त करने के लिये आप बधाई के पात्र हैं। दूसरे यह कि इस मंदिर के निर्माण में समाज के अधिकारियों ने आर्योचित धीरता, वीरता और दृढ़ता से काम लिया है। विपरीत परिस्थितियों के झंझा-वातों में भी कृतसंकल्प होना अभिनन्दनीय गुण है। आपके इस सुकृत से सोने में सुगन्ध की उक्ति सर्वथा चरितार्थ होती है। इस उत्सव में सम्मिलित होने की मेरी प्रबल इच्छा थी परन्तु अपरिहार्य कार्यवश मैं उपस्थित न हो सकूंगा। मेरी यह हार्दिक कामना है कि आर्यसमाज नैनीताल पुष्पित पल्लवित और फलीभूत हो।

मदनमोहन सेठ, सभा-प्रधान

'पुनन्तु मां देवजनाः'

आर्यमित्र

आगरा, ज्येष्ठ शुक्ला ३ सवत् २००८ वि०, गुरुवार, ता० ७ जून १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५१

आयुषे त्वा वर्चसे त्वौजसे च बलायच।
यथा हिरण्यतेजसा विभासासि जनाँ अनु।

अथर्व० १९।२६।३

मैं दीर्घ आयु तम-तेज शक्ति-बल पाऊँ
इसलिये नाथ, तुमको सभक्ति अपनाऊँ
जिस भाँति दिव्य द्युति दमक रही है तेरी
हो सुयश-चन्द्रिका उसी भाँति प्रभु, मेरी

कुछ काम करें !

अमर शहीद श्रीस्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज के पश्चात् आर्यसमाज में एक सर्वमान्य नेता का अभाव बुरी तरह खटक रहा है। विद्वान्-पण्डित, साधु-सन्त, त्यागी तपस्वी तो अब भी अनेक हैं, परन्तु जो समाज के विशाल वोहित को कर्णधार के रूप में ठीक मार्ग पर ले जा सके ऐसा नेता दिखाई नहीं देता। नेता के लिये जहाँ त्यागी-तपस्वी होना आवश्यक है वहां उसका बुद्धिमान, कुशल, दूरदर्शी और अनुभवी होना भी जरूरी है। नेता बनाने से नहीं बनता, वह तो अपने विशाल व्यक्तित्व द्वारा ही सर्वसाधारण के हृदयों पर अटल अधिकार जमाता है। अपनी त्याग-तपस्या और सुन्दर सूझ बूझ द्वारा ही सबकी श्रद्धा का भाजन बनता है। समाज-सेवा के लिये उसे थोड़ा समय नहीं, सारा जीवन समर्पित कर देना पड़ता है, जिस काम को वह दूसरों से कराना चाहता है पहले उसे स्वयम् करके दिखाता है। 'बन्दा बीस कदम गोली तीस क़दम' की निकृष्ट नीति में उसका विश्वास नहीं होता। आये दिन आर्यसम्मेलनों में बड़े-बड़े प्रस्ताव पास किये जाते हैं, परन्तु वे सम्मेलन की समाप्ति के पूर्व ही समाप्त हो जाते हैं। अथवा पास करने वालों के घर पहुंचते-पहुंचते विशाल वायुमण्डल में विलीन होने लगते हैं।

'नेता' एक दिन में नहीं बनता, वर्षों में उसका निर्माण होता है। इस समय देश की परिस्थिति आँखें फाड़-फाड़ कर आर्यसमाज की ओर देख रही है और आशाभरी मूक वाणी से पुकार रही है—'ऐ आर्यसमाज! आगे बढ़, और देश से भ्रष्टाचार का भूत भगा कर उसमें सुख-शान्ति का संचार कर दे' आर्यसमाज परिस्थिति की इस पुकार को सुनता तो है, परन्तु अपनी शिथिलता और उत्साहहीनता वश कुछ कर नहीं पाता।

आवश्यकता है कि प्रत्येक प्रान्त और प्रदेश में पन्द्रह-पन्द्रह बीस-बीस विचारक आर्य किसी शान्त स्थान पर एकत्र हों, और गम्भीरतापूर्वक सारी परिस्थिति तथा समस्या पर विचार करें। पहले दो या पाँच वर्ष की एक योजना बनाई जाय। यह योजना आसमान में उड़ने वाली न होकर जनता में व्यावहारिक रूप धारण करने वाली यानी क्रियात्मक हो। केवल योजना बनाना पर्याप्त नहीं, उसे कार्यान्वित करने-कराने के लिए भी भगीरथ प्रयत्न करना पड़ेगा। बिना क्रिया के कोई विचार कारगर नहीं हो सकता। स्वीकृत योजना को क्रियात्मक रूप देने के लिये एक कार्य-समिति का निर्माण होना चाहिये। इस समिति में वे लोग ही सम्मिलित किए जायें जो सुयोग्य, अनुभवी, दूरदर्शी और क्रियाकुशल हैं, जिनके पास अवकाश है, समय है। अपनी जीविका के भार भार से दबे हुए लोगों के गलों में 'धर्म-प्रचार' का ढोल डाल देना कदापि श्रेयस्कर नहीं हो सकता।

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा की विचार-समिति का आयोजन आगामी अगस्त मास में वृन्दावन गुरुकुल में होना चाहिए। अधिक से अधिक पच्चीस-तीस आर्यविचारकों को वहाँ बुलाया जाय। ये लोग समय लेकर आवें, रेलवे 'टाइम टेबुल' के पन्ने पलटते हुए न आवें। कम से कम पांच दिनों तक प्रत्येक दृष्टि से समाज की सारी परिस्थिति पर विचार किया जाय और निश्चित योजना को तुरन्त कार्यरूप में परिणत कर दिया जाय। काम करने वालों के लिये धन की कमी नहीं रहती। आर्यसमाज की संस्थाएँ धन की कमी से कभी बन्द नहीं हुईं। कार्यकर्त्ताओं के अभाववश ही उनकी बरबादी हुई है। १९३९ ई० में हैदराबाद-सत्याग्रह के सम्बन्ध में जनता के बड़े निराशाजनक विचार थे। रुपया कहाँ से आएगा, स्वयंसेवक कौन बनेगा, जेल कौन जायगा, यह कैसे होगा और वह कैसे किया जायगा। इसी द्विविधा और असमंजस में अधिकांश लोग पड़ गये थे, परन्तु उत्साहशीलता और साहस-प्रियता ने सत्याग्रह का वह सुन्दर स्वरूप दिखाया कि उसका उदाहरण मिलना कठिन है। दस सहस्र के लगभग वीर सत्याग्रहियों ने निजाम की जेलें भर दीं। सौ से अधिक सत्याग्रहियों ने इस धर्म युद्ध में वीरगति प्राप्त की। लाखों रुपया व्यय हुआ, सैकड़ों सत्याग्रही कारागार-यात्रा के लिए उत्साहपूर्वक प्रतीक्षा करते रह गये। अगर कुछ कर्मवीर कार्यकर्त्ता कमर बाँध कर उठ खड़े हों तो उत्तर प्रदेश से भ्रष्टाचार के भयङ्कर भूत को बड़ी आसानी से भगाया जा सकता है। काम करने वालों के लिए अनुगामियों या अनुयायियों की कमी नहीं रहती। कार्यकर्ताओं को कार्य क्षेत्र में दृढ़ता और धीरतापूर्वक कूद पड़ने से ही सारी समस्या हल हो जाती है। हम आर्यसमाज की ओर से हताश या निराश नहीं हैं, हमें तो ऐसे कर्मवीरों का आह्वान करना है जो त्याग-तप पूर्वक आगे बढ़ें और सर्वसाधारण को अपने साथ चलावें।

कोई कुछ भी क्यों न कहे, परन्तु हमें तो इस निविड़ निराशा-निशा में भी सदाशा सूर्य की सुरम्य रश्मियाँ दिखाई दे रहीं हैं।

साहित्यिक भ्रष्टाचार!

कुछ सप्ताह पूर्व इन स्तम्भों में दो पुस्तकों की ओर शिक्षा-विभाग का ध्यान आकृष्ट किया गया था। एक पुस्तक है एक प्रिंसिपल साहब की रचना और दूसरी है—"अनुभवी तथा सुयोग्य अध्यापकों" की लिखी हुई। दोनों ही पुस्तकों में लेखकों ने अखण्ड बाल-ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द को 'विवाहित' बताकर अपनी प्रचण्ड मूर्खता का प्रत्यक्ष परिचय दिया है। इसी प्रकार की एक तीसरी पुस्तक का भण्डाफोड़ सुप्रसिद्ध आर्यविद्वान् श्री प० चन्द्रमणि विद्यालङ्कार ने किया है। इस पुस्तक के लेखक हैं कोई श्री राजनारायण गुप्त एम०ए० और प्रकाशक है—इलाहाबाद का 'किताब-महल।' यह पुस्तक मदरसों की नवमी-दशमी कक्षा में पढ़ाई जाती है। इसके लिखने में तो लेखक महाशय ने कमाल ही किया है। आर्य-समाज का परिचय देते हुए आपने उसके दस नियमों तक की मनमानी घड़न्त कर डाली है। यानी गुप्त साहब के मन में जो उमंग उठी वही नियमों के नाम पर आपने अपने क़लम के हवाले कर दी है। पुस्तक के ३५६ पृष्ठ पर श्रीमान् गुप्त साहब ने आर्यसमाज के सम्बन्ध में अनर्गल आलाप करते हुए फरमाया है—

'कुछ अंशों में भारत में धर्मान्धता और वैरभाव का बीज बोने में उसका (आर्य-समाज का) भी हाथ है। उसने बहुत संख्या में साम्प्र-दायिक संस्थाओं को जन्म दिया और इस प्रकार फूट का प्रचार किया।"

राजनारायण साहब के नामके पीछे 'एम०ए'का दुमछल्ला लगा हुआ है अतएव उन्हें कम से कम इतनी तमाज और इतना शऊर तो होना ही चाहिए था कि वे आर्यसमाज जैसी प्रतिष्ठित संस्थाके विरुद्ध कुछ लिखने से पूर्व, स्वयम् नहीं सोच विचार सकते थे तो, किसी अन्य समझदार व्यक्ति से पूछ-गछ कर लेते। किसी लेखक नामधारी के लिये जानकारी की जान मसोस कर अपनी अक्ल का दिवाला निकाल बैठना बहुत ही हास्यास्पद और लज्जाजनक है। गुप्त साहब को क्या मालूम कि उनकी इन अविवेकपूर्ण पंक्तियों से कितने लाख व्यक्तियों की भावना को गहरी चोट लग सकती है। हमें इन अनर्थकारी अनाड़ी लेखकों से कुछ नहीं कहना और न अर्थ-लोलुप प्रकाशकों से ही कोई शिकायत है। ये दोनों तो अपनी-अपनी स्वार्थ-सिद्धि की सनक में सत्य या तथ्य की कुछ भी परवा नहीं करते। हमें तो शिक्षा-विभाग के उन अधिकारियों से कहना है, जो अक्ल से असहयोग कर, ऐसी गन्दी किताबों को कोर्स की कुर्सी पर बिठाकर बेचारे बालकों के मत्थे मढ़ देते हैं। कोमल मति विद्यार्थियों की विमल बुद्धि पर, किसी समाज, संस्था या धर्म के विरुद्ध विषैला प्रभाव डालना स्वतन्त्र भारत में दण्डनीय अपराध होना चाहिए। क्या कोर्स-कमेटियों के कर्णधारों ने सचमुच कसम खाली है कि वे पाठ-विधि में प्रविष्ट करने के पूर्व किसी पुस्तक का एक पन्ना भी पलट कर न देखेंगे, अथवा वे पूँजीपति प्रकाशकों की प्रभुता से इतने प्रभावित हो गये हैं कि आँखें मीच और बुद्धि भींच कर उनकी मनमानी पुस्तकों को एकदम 'एप्रूव' (स्वीकृत) कर देते हैं। साथ ही हम अनधिकारी लेखकों से भी कुछ कहना चाहते हैं। वे कृपया पुस्तक प्रणयन को इतना सीधा और सरल काम न समझें जितना कि समझते आ रहे हैं। अच्छी पुस्तक लिखने के लिये श्रम-साधना की आवश्यकता है। अध्ययन, मनन और चिन्तन दरकार हैं। कोई व्यक्ति अपनी 'उपाधियों' की धौंस में लेखक भी बन सकता है, यह जरूरी नहीं है। उपाधियाँ पा लेना और बात है, और साहित्यिक बनना दूसरी। कितने खेद की बात है कि आज पुस्तक प्रणयन एक खिलवाड़-सा बन गया है, और कोई भी ऐरा-गैरा नत्थू खैरा, बिना सच्ची साधना के केवल उपाधि व्याधि के बल पर 'ग्रन्थकार' बन जाना चाहता है और ऊल जलूल जो मन में आता है, लिख मारता है। सरकार का ध्यान इस साहित्यिक भ्रष्टाचार की ओर हम बड़े बलपूर्वक आकृष्ट करना चाहते हैं। वह इन मूर्खता-पूर्ण पुस्तकों को जल्द से जल्द नष्ट करे, जिससे जहाँ उनके पढ़ने वाले छात्रों के दिमाग सड़ायँद से बचे रहें, वहाँ एक सचाई का गला भी न घुटने पावे।

साम्प्रदायिक विष-वर्षा

अखण्ड भारत के खण्ड-खण्ड हो जाने पर भी कठमुल्ले अखबारों की कुप्रवृत्ति में कुछ भी अन्तर नहीं आया। वे निरन्तर उद्दण्डतापूर्वक साम्प्रदायिकता का विष वमन करते रहते हैं, 'इमलाह' 'सियासत' 'शाहता शरियत' 'आगाज' आदि पत्र तो ऐसी गन्दी और घृणित दुर्भावनाएं फैलाने में सबसे बढ़-चढ़कर हैं। मुसलिम यूनिवर्सिटी का मासिक पत्रिका (मेगज़ीन) कहती है—'हिन्द में जो फिर से गूँजी है सदाये सोमनाथ तू भी गजनी में कोई गजनवी फिर पैदा कर।' कानपुर का 'शाहता शरियत' नामक शैतान मासिक पत्र तो गन्द उगलने में बहुत ही आगे बढ़ गया है। उसने तो वेद शास्त्रों की दिल खोलकर निन्दा की है। भगवान् कृष्ण पर घृणित से घृणित आरोप लगाये हैं। यह उद्दण्ड पत्र लिखता है—'ऋग्वेद में गोकुशी (गोवध) जायज़ है।' ऋग्वेद में लिखा है कि अपनी निजी बेटी के साथ सम्भोग करना धर्म है। कृष्ण की याद में हिन्दू तीन त्योहार मनाते हैं होली, दिवाली और पत्थर चौथ। होली पर गाई जाने वाली गन्दी गालियाँ कृष्ण के फूहड़पन की द्योतक हैं। दिवाली उनके (कृष्ण के) द्वारा उकसाई जाने वाली भ्रातृ-हत्या की खुशी के बारे में है। जैसे कौरवों ने पाण्डवों की दौलत हथिया ली थी वैसे ही हिन्दू दूसरों का धन हड़पने की फिक्र में रहते हैं। कृष्ण डाकू था। अथर्ववेद के बारे में यह पत्र लिखता है कि उसमें ऐसी गन्दी बातें हैं, जिनका उल्लेख नहीं हो सकता। विश्व की किसी धार्मिक पुस्तक में ऐसी गन्दी बातें नहीं होंगी और [illegible] सभ्य जाति ऐसी गन्दी भाषा में रचे गये मन्त्रों से [illegible] की स्तुति कर सकता है। 'शाहता शरियत' [illegible] महीनों से वेदों, हिन्दू-देवी-देवताओं तथा हिन्दू महापुरुषों और हिन्दू धर्म के विरुद्ध बुरी से बुरा बकवाद कर रहा है। और भी पत्र इसी तरह बक-झक कर हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को गहरी ठेस पहुँचा रहे हैं। आश्चर्य और दुःख तो यह है कि हमारी 'धर्म-निरपेक्ष' सरकार यह सब कुछ देखती है, और कुछ नहीं करती। अन्य पत्र-पत्रिकाओं के कालमों में तो कुरेद-कुरेद कर सम्प्रदायवाद के कीटाणु खोजे जाते हैं, परन्तु इन बेहूदे अखबारों की वाहियात बातें निरखने परखने में उसकी पैनी दृष्टि न जाने कहाँ चली जाती है। क्या इन कठमुल्ले पत्रों की ऐसी बेहूदा बकवाद पर कोई नियन्त्रण नहीं किया जा सकता। क्या उनकी थूथड़ी कुचलने के लिये सरकार के पास कोई साधन शेष नहीं है? अथवा वह 'धर्म-निरपेक्षता' के नाम पर इन पत्रों की ऐसी शैतानियत पर जान-बूझ कर कोई ऐक्शन लेने का इरादा नहीं रखती। हम सरकार का ध्यान उपर्युक्त अखबारों की नालायकियों और उद्दण्डताओं की ओर खास तौर से आकृष्ट करना चाहते हैं। साम्प्रदायिकता के विषैले कीटाणु कहीं भी क्यों न हों, उन्हें जल्द से जल्द निर्दयतापूर्वक नष्ट कर देना चाहिये। इन चिथड़े पर्चों के सम्बन्ध में सरकार की ऐसी 'सहिष्णुता' या उपेक्षा कभी प्रशंसनीय नहीं कही जा सकती। धर्म-निरपेक्ष सरकार का कर्तव्य है कि वह इन 'धर्म-निन्दक' अखबारों को जल्द से जल्द ठिकाने करे। अलीगढ़ की मुसलिम यूनिवर्सिटी एक ओर तो दिखाने के लिये 'राष्ट्रियता' का ढोंग रचती रहती है, दूसरी ओर उसकी मासिक मुखपत्रिका सोमनाथ के नष्ट-भ्रष्ट मन्दिर के जीर्णोद्धार को न सहकर फिर से दूसरे गजनवी का स्वागत-सत्कार करने के लिए अत्यन्त उत्सुकता प्रकट कर रही है। आखिर यह सब क्या ढोंग-ढकोसला है। यदि हमारे इन दोस्तों की यही गन्दी प्रवृत्ति रही तो बहुत सम्भव है कि आगे चल कर यही दुर्भावना कहीं दूसरा 'पाकिस्तान' बनाने का प्रबल प्रयत्न न करे।

शोक सहानुभूति

पिछले दिनों तीन साहित्यकारों के निधन से साहित्य-क्षेत्र में बहुत बड़ी कमी होगई। वृन्दावन के गोस्वामी श्री छबीलेलालजी और लखनऊ के श्री प० शुकदेवबिहारी मिश्र के निधन से हिन्दी की बहुत बड़ी हित-हानि हुई। श्री छबीलेलालजी सुप्रसिद्ध उपन्यास-लेखक स्वर्गीय श्री प० किशोरीलालजी गोस्वामी के सुपुत्र थे, आपने साहित्यिकता परम्परा में पाई थी, आपने अनेक पुस्तकें लिखीं। देशसेवा के अपराध में आप कईबार कारागार भी गये। आप जहाँ सुलेखक थे, वहाँ वक्ता भी बड़े प्रभावशाली थे। श्री शुकदेव बिहारी मिश्र सुप्रसिद्ध साहित्यकार 'मिश्र बन्धुओं' में से एक थे। आपने बड़े उपयोगी और ठोस साहित्य की रचना की है। हम दोनों महानुभावों के देहावसान पर शोक-सहानुभूति प्रकट करते है। तीसरे व्यक्ति जिनका हाल ही में देहान्त हुआ है वे श्री हसरत मुहानी हैं। आप उर्दू के प्रसिद्ध साहित्यकार और कवि थे। आपने देश के लिये भी बड़े-बड़े सकट सहे। पीछे आपकी विचार-धारा कुछ साम्प्रदायिक होगई थी। परन्तु आप साहित्यकार बड़े ऊँचे थे। सबसे पहले आपने ही गजल को राष्ट्रियता का रूप दिया था। आपकी मृत्यु से उर्दू साहित्य की बड़ी हानि हुई। हमें आपके न रहने का सख्त अफसोस है।

बाल-विनोद

बाल सखा के नाम पत्र

१

आप बालविनोद किसी अंक में छापते हैं, किसी में नहीं। जो अंक बिना बालविनोद का आता है, उसे देखकर हमें बड़ी निराशा होती है। आपसे प्रार्थना है कि बाल-विनोद प्रत्येक अंक में प्रकाशित किया करें।

ऋषिराम मित्तल

[सचमुच कुछ अंको में बालविनोद नहीं छापा। उसका कारण १७ मई के अंक में बताया गया है। आपकी भाँति और भी अनेक बाल साथियों की इच्छा है कि बालविनोद प्रति अंक में छपे और पूरे पेज का छपे। भविष्य में ध्यान रक्खेंगे कि बाल विनोद प्रति अंक में छपे। हाँ, पूरे पेज में छापना उस समय तक कठिन है, जब तक मित्र के ग्राहकों की संख्या काफी न बढ़ जाय।]

२

हमारी परीक्षाएँ समाप्त हो गईं। स्कूल बन्द हो गए। अब दिन-भर घर बैठे बैठे समय नहीं कटता। आप उपाय बताइये जिससे समय सरलता से व्यतीत हो जाय।

आर्य वीरेन्द्रकुमार भार्गव

[छुट्टियों के समय को काटना नहीं चाहिये, उपयोग में लाना चाहिए। जब तक स्कूल खुले तुम अपने पास-पड़ोस के गरीब अपढ़ बालकों को पढ़ाया करो, इससे राष्ट्र का हित होगा और अभ्यास बढ़ेगा। पर छुट्टियों में इतना काम भी न करो जिसका बोझ पड़े, क्योंकि छुट्टियां विश्राम करके अपनी शक्तियों को पुनः सबल बनाने के लिये ही दी जाती हैं।]

उत्तर दीजिये

चिड़ियों की तीन टोलियां आगे-पीछे उड़ती जा रही थी। एक अन्य चिड़िया ने बीच वाली टोली से पूछा-तुम तीनो टोलियों में कुल कितनी हो? उनमें से एक बोली-हम से डेढ़ गुनी तो आगे जा रही हैं। आगे वालियों से दो गुनी पीछे आ रही हैं। अगर तुम भी हममें मिल जाओ तो हम सब मिलकर १०० हो जावें। बताओ बीच की टोली में कितनी चिड़ियाँ थीं, और आगे पीछे वाली टोलियों में कितनी-कितनी।

श्री कृष्णसिंह देवरिया।

बाल-जगत्

पिछले अङ्कों में प्रकाशित प्रश्नो के उत्तर अब तक आरहे हैं। यह क्रम असुविधाजनक है। इतने दिनो बाद उत्तरदाताओं की नामावली छापना अच्छा नहीं लगता। उत्तर जल्दी से जल्दी भेजने चाहिएं। पिछली पहेलियो के उत्तरदाताओं की नामावली इस बार और छापी जाती है। आगे नई पहेलियो के उत्तर-प्रेषकों के नाम छपेंगे।

सर्वश्री—रमेशचन्द्र आर्य, सच्चिदानन्द सत्यपालसिंह आर्य ऋषिराम मित्तल, सत्यप्रकाश, जगदीश्वर दयाल, जयदयाल शर्मा, वेदप्रकाश आर्य जगदीशशरन आर्य, दिलावर आर्य, रामवीर प्रकाश, लक्ष्मीनारायण आर्य, व्रजमोहन आर्य, आर्य वीरेन्द्र कुमार भार्गव।

—पाँच अक्षरों के, दोनों ओर से एक से पढ़े जाने वाले बहुत से शब्द बाल साथियो ने भेजे हैं, उनमें से अनेक शब्द निरर्थक हैं। सार्थक शब्द ये हैं—नाव खेवना, हर तरह, वन मानव, सरस रस, मराहेराम, नवयौवन। कुछ बालकों ने एक शब्द ऐसा भेजा है, जो सार्थक तो है पर शिष्ट नहीं अतः वह नहीं छापा गया

—बहरायच से देवदत्त आर्य सूचित करते हैं कि मैंने १६ अप्रैल के अङ्क में प्रकाशित पहेली पर एक पुस्तक पुरस्कार देने का वचन दिया था। मुझे सर्व प्रथम सही उत्तर जगदीश्वर दयालु (बहरायच) का मिला, अतः इन्हे 'स्वामी दयानन्द के उद्देश्य'' पुस्तक पुरस्कार रूप देदी गई।

—जलाली (अलीगढ़) से वहाँ की आर्यकुमार सभा के मन्त्री श्री रमेशचन्द्र ने एक पहेली प्रकाशनार्थ भेजी है, परन्तु उसका उत्तर साथ में नहीं भेजा, अतः वह नहीं छपेगी।

—२४-५-५१ के अङ्क में छपी घोड़ो वाली पहेली के उत्तर-दाताओं की नामावली अगले अङ्क में छपेगी।

जीवन-ज्योति

नरही-लखनऊ आर्यसमाज के मन्त्री

स्व० श्री जियालालजी

श्री बा० जियालालजी नरही-लखनऊ आर्य-समाज के उत्साही मन्त्री थे। आपका जन्म संवत् १८८२ ई० में बिजनौर में हुआ। १९४० ई० में आप लखनऊ आये और गत अप्रैल मास में आपकी मृत्यु होगई। आपने अपने ज्येष्ठ भ्राता मुन्शी श्यामलालजी, चौधरी शेरसिंहजी, मुन्शी हरगुलालजी तथा मुन्शी हरलाल जी के साथ आर्य समाज बिजनौर की स्थापना की। आप १९१० ई० से स्वदेशी वस्त्र तथा खादी का व्यवहार करते थे, और इस नियम को जीवन-भर निभाया।

श्री जियालालजी के पिता मुन्शी शादीलालजी भी बड़े प्रतिष्ठित थे। इनकी शिक्षा बिजनौर में ही हुई। १९०६ ई० में विवाह हुआ। १९०८ में सरकारी सेवा में प्रवेश किया और १९३६ ई० में पेन्शन ली। आपकी पत्नी भी बड़ी धार्मिक थीं।

बाबूजी समाज-सेवा में सदैव सलग्न रहते थे। बिजनौर में एकवार प्लेग-पिशाच का प्रचण्ड प्रकोप हुआ। प्राणो के मोह से लोग अपने सगे-सम्बन्धी रोगियों को घरों में बन्द कर भाग गये। उस समय बा० जियालालजी बड़ी निर्भय भावना से सेवा-क्षेत्र में अवतीर्ण हुए और प्लेग-पीड़ितों की परिचर्या तथा मृतको की अन्त्येष्टि क्रिया करते रहे। बाबूजी की इस सच्ची और नि:स्वार्थ सेवा के कारण आर्य-समाज का यश दूर-दूर तक फैल गया था।

आर्य-समाज में शिक्षा-प्रसार, दलितोद्धार, शुद्धि, संस्कार आदि कार्यों में आपने बड़ी रुचि दिखाई और इस दिशा में काम भी खूब किया। आप अपने आचार्य महर्षि दयानन्द का आदेश मन, वचन तथा कर्म्म से पालन करते थे। आर्य समाज की सेवा में रत रहने के कारण आप अपने परिवार की भी प्रायः परवा न करते थे।

लखनऊ में आये तो यहा भी आपने आर्यसमाज की खूब सेवा की, आपके गृह पर प्रायः सदैव सत्संग होते रहते थे। आर्य विद्वानों के स्वागत-सत्कार में आपकी बड़ी श्रद्धा थी। आपके यहा छोटे बड़े, शहरी-ग्रामीण बिना जाति-पाति के भेदभाव के आते थे और सबको आप समान समझते थे। सब ही प्रकार के लोगो के साथ आपका समता सहित स्नेह था। आपके जीवन का एक ही लक्ष्य था, आर्य-समाज की सेवा और वैदिक धर्म का प्रचार। जो व्यक्ति आपसे एक बार मिलता, आपके सु-व्यवहारसे आपका ही हो जाता था। सबके साथ शिष्ट और मिष्ट व्यवहार करना आपका स्वभाव-सा बन गया था।

बाबूजी का पारिवारिक जीवन भी प्रशसनीय रहा। परिवार के सभी जन धार्मिक और सुशिक्षित हैं। आपके पुत्र अच्छे अच्छे पदो पर हैं। पारिवारिक आपत्तिया भी आप पर आईं, परन्तु वे आपको धर्म-मार्ग से तनक भी विचलित नहीं कर सकीं। आप उन्हीं पुराने आर्य-कार्य कर्त्ताओ में से थे, जिनके अभाववश आज आर्य-समाज उत्तरोत्तर शिथिलता की ओर जा रहा है।

साहित्य-सौरभ

ओ जवान !

श्री लाखनसिंह भदौरिया

ओ जवान, तुम विनाश-पन्थ पर चलो नहीं।
चल सको तो तुम, सृजन-सुपन्थ पर चलो तरुण,
पर न भूल कर पतन-कुपन्थ पर चलो तरुण,
जलो प्रदीप-ज्योति बन, अँगार-से जलो नहीं,
ओ जवान, तुम विनाश पन्थ पर चलो नहीं।
शक्ति इसलिये नहीं, विनाश विश्व का करो,
शक्ति इसलिये मिली, विषाद विश्व का हरो,
मिटो तो इस तरह मिटो कि विश्व को खलो नहीं,
ओ जवान, तुम विनाश-पन्थ पर चलो नहीं।
आत्म-ज्योति का प्रकाश पा, हृदय-कली खिले,
श्वास-श्वास में सृजन-सुवास भी पली चले,
खिलो तो तुम प्रसून बन, मिलिन्द बन छलो नहीं,
ओ जवान, तुम विनाश-पन्थ पर चलो नहीं।
रो सको तो रो उठो, किसी करुण कराह पर,
व्यंग्य कर हँसो नहीं, दुखी जनो की आह पर,
बिछ सको तो फूल बन त्रिशूल बन चुभो नहीं,
ओ जवान, तुम विनाश-पन्थ पर चलो नहीं।
एक डग बढ़े समस्त विश्व का रुके पतन,
एक डग बढ़े प्रकाश की उगे नई किरण,
ओ प्रकाश-पुञ्ज, अन्धकार में पलो नहीं,
ओ जवान, तुम विनाश पन्थ पर चलो नहीं।

———

यज्ञ पुरुष से प्रार्थना

यज्ञ-रूपी प्रभु हमारे भाव उज्ज्वल कीजिए
मुक्त हों छल-छद्म से वह शक्ति हमको दीजिए
वेदमन्त्रो को उचारें, सत्य व्रत-साधन करें
मग्न ब्रह्मानन्द में हो, ईश-आराधन करें
यज्ञ का विस्तार हो, सद्धर्म्म सब पालन करें
धर्म्मधारी वीर बन हम विश्व के सङ्कट हरें
वासना मिट जायँ जड़ से पाप-अत्याचार की
जाग जाए ज्योति जग में स्नेह-सत्याचार की
यज्ञ से प्रत्येक प्राणी का परम कल्याण हो
दीन-दुखियो का सदा सब संकटो से त्राण हो
स्वार्थ का संहार हो, सद्भाव का विस्तार हो
पुण्य का प्रस्तार हो, दुर्भाव से निस्तार हो
हे प्रभो, अति नम्रता से है हमारी प्रार्थना
प्रेरणा यह कीजिए हो हम सभी उन्नतामना

— लालचन्द

———

संस्था-परिचय

बाल अपराधी-विद्यालय

बालको में अपराध की प्रवृत्ति जन्मजात से नहीं होती है। कुछ लोगो की यह धारणा कि बाल्यावस्था के दोष दूर नहीं किये जा सकते, सर्वथा मिथ्या है। अमेरिका वासियो ने इस सम्बन्ध में गम्भीर अध्ययन किया है। इस विषय में दिलचस्पी लेने वाले अमेरिकी विशेषज्ञ उक्त समस्या को सुलझाने के लिये निरन्तर प्रयत्नशील हैं।

बाल-अपराधियों के सुधार और उनमे अपराधी प्रवृत्ति की रोक-थाम के लिये लिये विभिन्न प्रकार के तरीके अपनाये गये हैं। परन्तु विशेषज्ञों द्वारा बाल-अपराधी को समझाने की चेष्टा या उसका मनोवैज्ञानिक अध्ययन करना उक्त समस्या को सुलझाने का एक उपाय है।

बालकों में अपराध करने की प्रवृत्ति की रोक-थाम और उसका सुधार पूर्णरूप से स्कूल के शिक्षको, सलाहकारों, डाक्टरों, निगरानी करने वाले अधिकारियो खेल के शिक्षकों, समाज-सेवको, मनोवैज्ञानिकों, और मानसिक रोगों के चिकित्सकों पर निर्भर करता है।

न्यूयार्क का 'हाथर्न सीडर नाल्स बाल-अपराधी स्कूल इस दिशा में प्राप्त की गई सफलता का ज्वलन्त उदाहरण है। यह स्कूल २२८ एकड़ भूमि में बना हुआ है तथा इसमें कुल २६ इमारतें हैं। यहां की खास विशेषता यह है कि कहीं भी आपको बन्दी-गृह की तरह, बन्द दरवाजे, पहरेदार और नियंत्रण नहीं दिखाई पड़ेंगे।

उक्त स्कूल में कुल १०० कर्मचारी हैं, जिनमें शिक्षक, संरक्षक, समाजसेवक, मानसिक रोगों के विशेषज्ञ डाक्टर और फार्म में काम करने वाले लोग भी शामिल हैं। इसके अतिरिक्त स्कूल में अपना बालनिर्देश गृह शिक्षा और चिकित्सा-विभाग भी हैं।

इस स्कूल में ८ से १८ वर्ष तक के बालक और बालिकायें रखी जाती हैं। बालकों की संख्या बालिकाओं से अधिक होती है।

स्कूल में दाखिल किये जाने वाले बालक प्रायः वे होते हैं जिनको अदालतें चोरी या अन्य किसी समाज-विरोधी कार्य के लिये सजा देती हैं। कुछ अभिभावक भी अपने बच्चों के बिगड़ जाने पर उन्हें स्कूल में दाखिल करा देते हैं। इनके अलावा सामाजिक संस्थाओं द्वारा भेजे गये कुछ अनाथ बालक भी इसमें पढ़ते हैं। धनी अभिभावकों से स्कूल का व्यय लिया जाता है।

स्कूल में बालक शुक्रवार को भरती किया जाता है ताकि वह नया सप्ताह आरम्भ होने पर नये वातावरण से परिचित हो जाये। स्कूल के जीवनकाल में स्कूल के कमरे ही उनके घर और स्कूल के संरक्षक ही उनके माता-पिता बन जाते हैं। उनके संग रहने वाले संरक्षक उनके जीवन पर अपना प्रभाव डालते हैं। वस्तुतः बालक का सुधार पूर्णरूप से उन पर ही निर्भर रहता है। बालकों के संरक्षक प्रौढ़ व्यक्ति होते हैं तथा उनसे खूब प्रेम करते है।

स्कूल में प्रवेश करने पर बालक की शारीरिक, मानसिक और व्यावसायिक प्रवृत्तियों की परीक्षा की जाती है। स्कूल में बालको के लिये, व्यवसाय, छपाई, बढ़ईगीरी, सिलाई और मशीनो के सम्बन्ध में शिक्षा देने की भी व्यवस्था है। पढ़ने के बाद बालक समाज-सेवक के पास जाते हैं जो उन्हें कई विषयों पर बातचीत करने को प्रोत्साहित करता है। इसके अलावा वे स्कूल, क्लब, समाचार पत्र क्लब, बाल स्काउट दल इत्यादि के भी सदस्य रहते हैं। ये सब बातें उनके जीवन-सम्बन्धी दृष्टिकोण को व्यापक बनाती हैं और उनमें अच्छी आदतें डालती हैं।

बालकों की आदतों में सुधार होने पर उनको सप्ताह के अन्त में घर जाने, स्थानीय स्कूल में पढ़ने और वेतन पर काम करने की भी इजाजत दी जाती है। लेकिन शाम को उन्हें स्कूल आ जाना पड़ता है।

——

सिंहावलोकन

परिवार की धार्मिक व्यवस्था

प्रो० रामचरण महेन्द्र, एम० ए०

जिस परिवार में प्रतिदिन ईश्वर-चिन्तन होता है, प्रातः सायम् नियमित रूप से प्रार्थना की जाती है, उसमें लक्ष्मी की कृपा रहती है। समृद्धि में वृद्धि होती है। जिस परिवार में मन, वाणी और चरित्र की पवित्रता है, उसमें सद्ज्ञान का प्रकाश होता है। जहाँ ज्ञान का प्रकाश है, वहाँ अशिक्षा, मूढ़ता एवं अन्धविश्वास क्यों कर रह सकते हैं। अतएव अज्ञान को दूर करने के लिए घर में पूजा पाठ, धार्मिक ग्रन्थों का घरेलू पुस्तकालय, भक्ति और पवित्रता उत्पन्न करने वाले चित्र, साधु-महात्माओं का सत्कार, सुपात्र को दान और अतिथियों का प्रतिष्ठा का मानता रहना चाहिये। जिस परिवार में इस प्रकार सच्चे हृदय से धर्म-चर्चा होगी, उसमें अज्ञान और दारिद्र्य कदापि न रहेंगे।

परिवार के प्रत्येक सदस्य को चाहिये कि निश्चित समय पर पूजा के स्थान पर बैठ कर ईश्वर-चिन्तन करे, पवित्र भजनों का गान करे, प्रभु-कीर्त्तन तथा भजन द्वारा चित्त को उच्च आध्यात्मिक तत्वों में संलग्न रक्खे। यदि घर में एकान्त न हो, तो सरिता, तालाब या अन्य किसी एकान्त स्थान पर जाया जा सकता है। ईश्वर-चिंतन का अभिनय मत कीजिये। अनेक व्यक्ति पवित्र स्थानों पर जाकर मन में विकारमय दृष्टिकोण लिए रहते हैं। ढोंगियों से सावधान! ये लोग धोखा देकर घरों में चोरी कराते हैं; स्त्रियों को बहकाते हैं। सच्चे ईश्वर-भक्त एकान्त ही में भजन-पूजन करते, हुल्लड़ तथा मिथ्याप्रदर्शन की प्रवृत्ति से दूर भागते हैं।

प्रतिदिन कुछ पृष्ठ धार्मिक पुस्तकों के अवश्य पढ़ो। धीरे-धीरे संसार की वस्तुओं से तुम्हारा चित्त खिंचता जायगा और उच्च विषयों पर आ जायगा। काम, क्रोध, ईर्ष्या, लोभ, मोह इत्यादि से चंगुल से छूट कर तुम अपने वास्तविक सत्, चित् आनन्द-स्वरूप पर प्रतिष्ठित हो जाओगे। परमात्मा या आत्मा, को छोड़ कर बाह्य वस्तुओं में तुम्हें सुख प्रतीत न होगा। बाह्य सुख आत्म सुख की एक मात्र परछाईं-सी प्रतीत होने लगेगी। वस्तुओं में सुख है ही नहीं, सुखाभास है। स्थायी सुख, अनन्त अखण्ड सुख अपनी आत्मा में है।

परिवार को गन्दगी से बचाइये। गन्दगी के अनेक प्रकार हैं। गन्दे विचार, नग्न चित्र, कुत्सित सिनेमा-चित्र, अश्लील आदतें, व्यभिचार, मद्यपान, चाय, सिगरेट, भांग इत्यादि सभी निकृष्ट वस्तुएँ हैं। उच्च परिवारों में इनका अणुमात्र भी न होना चाहिये। इन सभी में बड़ी संक्रामकता है। वे एक व्यक्ति से दूसरे, फिर तीसरे पर पहुँचती हैं और इस प्रकार सम्पूर्ण परिवार विनष्ट हो जाता है। व्याधि की भाँति ये दोष तीव्र गति से फैलते हैं। एक दुष्कर्म से अनेक गन्दी आदतों की वृद्धि होती है। जिस परिवार को इन निन्द्य वस्तुओं में निस्सारता, क्षणभंगुरता, मलिनता दिखाई देता है, वह धन्य है। उसे चाहिये कि मन को इन भोगों में भ्रमित न होने दे। चित्त को निरन्तर ईश्वर-चिन्तनाओं, भगवान् की भक्ति में लगाए रक्खे। इस प्रकार जो परिवार उच्च आध्यात्मिक विषयों में रमण करता है, वही अधिकतम संतोष, सुख और प्रतिष्ठा प्राप्त करता है।

परिवार के लिए चारों वर्ण धर्म आवश्यक हैं—

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों के कर्त्तव्य महान् हैं। ब्राह्मण ज्ञान, विवेक, बुद्धि, समता, विनम्रता का अवतार है। वह ज्ञानार्जन करता है, विद्या दान देता है, सत्पथ पर अग्रसर होने के लिये प्रेरणा प्रदान करता है। क्षत्रिय समाज की रक्षा करने वाला धीर, वीर, दृढ़प्रतिज्ञ सैनिक है। देश के ऊपर आने वाली प्रत्येक आपत्ति और कठिनाई से उसे युद्ध करना है। वैश्य देश की सम्पत्ति में वृद्धि करने वाला, समाज की आर्थिक सुव्यवस्था को दृढ़ बनाने वाला कर्म मार्गी है। सेवा शूद्र का धर्म है। उसे बीमार, दीन, अशक्त, कोमल, वृद्ध की सेवा करनी है। किसी भी समाज की सर्वतोमुखी उन्नति के लिए ये चारों जातियाँ समान रूप से कार्य करें, कोई अपने स्थान के इधर-उधर न जाय यह आवश्यक है।

प्रत्येक परिवार और व्यक्ति के जीवन में भी उपर्युक्त चारों वर्णों के कर्मों की आवश्यकता है। यदि कोई व्यक्ति अपने आप को केवल एक ही काम करने वाला समझे, तो वह गलती करता है। अपने परिवार में आपको ब्राह्मण का कार्य करना चाहिये, अर्थात अज्ञान दूर करने के लिए कटिबद्ध हो जाना चाहिये। ब्राह्मणत्व का आदर्श है, ज्ञान प्राप्ति, सद्ग्रन्थों का अध्ययन, निःस्वार्थ एवम विनम्र विद्या-दान, जनता का शिक्षण, ईश्वराराधना। प्रत्येक मुखिया का यही कर्म सबसे पहले होना चाहिये। फिर क्षत्रिय के समान परिवार पर आने वाली प्रत्येक कठिनाई, विपत्ति, अड़चन मुकदमा, बीमारी से रक्षा करने के लिये तैयार रहना चाहिये। क्षत्रिय का कर्म सतर्कता, बुद्धिमत्ता, वीरता और धीरता से निकट सम्बन्ध रखता है। उसमें वीरत्व की भावना की प्रमुखता है। हमें क्षत्रियों के समान कर्तव्य-पथ पर चलना सीखना चाहिये, आत्म-सम्मान और प्रतिष्ठा के लिये मर-मिटना चाहिये।

परिवार का आर्थिक पहलू वैश्य के हाथ में रहे। अर्थात् जब आप परिवार के लिए जीविका उपार्जन करने निकलें तो पूरे वैश्य बन जायें। वैश्य को उन्नत बनाने वाले गुणों में मुख्य मितव्ययिता, व्यवसायी वृत्ति, विनम्रता, मिलनसारी, व्यावहारिक सभ्यता, मृदुल सामाजिक व्यवहार, दूसरों का आदर-सत्कार, मृदु भाषण हैं। इनमें से सतर्कतापूर्वक प्रत्येक गुण का विकास करना उचित है। इन गुणों से लक्ष्मी का मान होता है। हमें लक्ष्मी का मान धन के सदुपयोग द्वारा करना चाहिए। तड़क-भड़क का पहनावा, फैशन, पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण, जुआ, लाटरी, सट्टा, मद्यपान, चोरबाजारी, अपनी हैसियत बढ़ा चढ़ा कर दिखलाने की दूषित वृत्ति, सिनेमा देखना, सैरसपाटे, चटोरी आदतें, अनियन्त्रित खर्च आर्थिक दृष्टि से परिवार की सञ्चित शक्ति का क्षय करना है। वैश्यों के समान हमें अपने परिवार के लाभ को सदैव दृष्टि में रखना चाहिये।

शूद्र में सेवा-भावना का उच्चतम विकास है। सेवा-धर्म से यह लोक तथा परलोक दोनों सुधरते हैं, आत्मविकास होता है। पूजनीय महात्माओं के सम्पर्क में रहने तथा जीवन को उन्नत, परिपक्व और प्रतिष्ठित करने का अवसर प्राप्त होता है। आत्म-नियन्त्रण की सिद्धि प्राप्त हो जाती है। जो अपने परिवार की सेवा के लिए शूद्र की तरह दौड़ पड़ता है, छोटे से लेकर वृद्धों तक की निःस्वार्थ भावना से सेवा करता है, वही महापुरुष है। सेवा-भाव से मनुष्य दूसरों के कल्याण के साथ अपना भी कल्याण कर सकता है।

इस प्रकार प्रत्येक परिवार की उन्नति के लिये चारों वर्णों के धर्म नितान्त आवश्यक है। प्रत्येक परिवार और व्यक्ति के जीवन में इनका उचित स्थान होना चाहिये।

गृहस्थ धर्म एक योग साधना है

गृहस्थ धर्म एक योग-साधना है, जिसमें मनुष्य के ऊपर पग पग पर उत्तरदायित्व एवं कर्त्तव्यों का भार है। यह आश्रम आगे आने वाले एक कष्टसाध्य जीवन की तैयारी कराता है। यदि इसमें रहकर हम इन्द्रिय-जन्य सुखों की निस्सारता, क्षणभंगुरता एवं नीरसता न जानें और सीधे वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम ग्रहण कर लें, तो हमारी बड़ी साधना में वासनाओं और क्षुद्र इच्छाओं का ताण्डव चलता रहेगा।

गृहस्थाश्रम अन्य तीनों आश्रमों की पुष्टि के लिए है। दूसरे शब्दों में यों कहा जा सकता है कि ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ, संन्यास ये तीनों ही आश्रम गृहस्थाश्रम को व्यवस्थित और सुखशान्तिमय बनाने के लिए हैं। ब्रह्मचारी इस लिये ब्रह्मचर्य का पालन करता है कि उसका भावी गृहस्थ-जीवन शान्तिपूर्ण और समृद्ध हो। वानप्रस्थ और सन्या-

महिला-मण्डल

स्त्रियाँ व खाद्य-समस्या

श्रीमती सावित्री शर्मा, बी० ए०

आज का युग समस्याओं का युग है। प्रत्येक देश अपनी-अपनी समस्याओं के सुलझाने में निमग्न है। हमारा देश भी इस सक्रामक रोग से अछूता नहीं रह सका है। बाहरी समस्याओं के साथ ही हमें अपनी बहुत-सी आन्तरिक समस्याएँ भी सुलझानी हैं। आन्तरिक समस्याओं के अन्तर्गत यों तो धार्मिक, सामाजिक व राजनैतिक सभी विषय आ जाते हैं, परन्तु इस समय तो सबसे अधिक आवश्यक और महत्वपूर्ण समस्या है अन्न और वस्त्र का, जिसको सुलझाने में आज देश की सारी शक्ति खपाई जा रही है। बडे-बड़े अधिकारी गण व देश के समस्त शुभचिन्तक जन अन्न वस्त्र की इस बढती हुई कठिनाई से चिन्तित हैं। साधारणतया तो उत्पादन की वृद्धि ही इस समस्या के सुलझाने का एक मात्र उपाय है, परन्तु यदि देश के समस्त नागरिक अन्नाभाव के इस महान् संकट को मिल जुल-कर दूर करने की चेष्टा करें तो कोई कारण नहीं जो देश की यह विपत्ति दूर न हो। परन्तु भारत के अधिकाश निवासी इस विपत्ति की गम्भीरता को नहीं समझते, इसी कारण वह राजकीय अधिकारियों के सहायक होने की अपेक्षा उनके विरोधी ही सिद्ध होते हैं। यह लिखते हुए मेरा मस्तक लज्जा से नत हो रहा है, कि पुरुषो की अपेक्षा स्त्रियाँ ही इन अन्न व वस्त्र की समस्या को जटिल बनाने के लिये अधिक उत्तरदायी हैं।

प्रत्येक भारतीय गृहिणी की यह अभिलाषा रहती है कि वह तीज त्यौहार, जन्म-मरण शादी व्याह प्रत्येक उत्सव को पहले की भाँति धूम धाम व ठाठ-बाट से मनाये। यह मैं मानती हूँ कि प्रत्येक जाति को जाग्रत् व सम्पन्न रहने के लिये अपने पूर्वजों की स्मृति को त्यौहारो के रूप में जीवित रखना परम आवश्यक है, परन्तु इससे भी अधिक आवश्यक है अपने देश की परिस्थित को ध्यान में रखते हुए कार्य करना। आज यह आवश्यक नहीं कि हम अपने देवताओं को नाना प्रकार की खाद्य सामग्री का भोग लगाकर ही प्रसन्न करें, अथवा अपने जन्म-मरण आदि के अवसरों पर पहले ही की भाँति भोज आदि का आयोजन करें, बल्कि आज भारत की गृहणी को मितव्ययी होने की आवश्यकता है। अर्थात् उसे वह समस्त खर्चीले रीति-रिवाज बन्द करने की आवश्यकता है, जिनका प्रभाव देश के वर्तमान सकट पर पड़ता हो। परन्तु होता बिल्कुल इसके विपरीत है। जब भी कोई उत्सव का अवसर आता है, तो घरकी बड़ी बूढ़ियों को तो यह कहते हुए सुना ही जाता है कि "हमारे जमाने में तो इस अवसर पर माल पुए बनाये जाते थे, तुम्हारे बाबा ने चार गाँवों की दावत की थी जब तुम पैदा हुऐ थे, अब तो भैया तुम्हारा राज है, चाहे कुछ करो या न करो।" कितना मार्मिक व्यग्य है! परन्तु जब उन वृद्धाओं का बहू बेटियाँ भी पुरुषों से यह आग्रह करती हैं कि "चाहे कहीं से भी हो, इतनी चीनी, इतना घी और इतने कपड़े का प्रबन्ध तो करना ही होगा," तो वास्तव में मेरी आँखों के सामने बंगाल के भीषण अकाल का करुण दृश्य आ उपस्थित होता है।

वृद्धाओं के व्यग्यों व अपनी पत्नी व बहनों के आग्रह से प्रेरित होकर घर के पुरुष उचित व अनुचित प्रत्येक रीति से उनकी इच्छा पूरी करने की चेष्टा करते हैं। इसी कारण चोरबाजारी, झूठे राशनकार्ड बनवाना, अधिक यूनिट राशनकार्डों में लिखवाना, रिश्वत देना व लेना आदि व्यापारों में दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि हो रही है। फिर यदि एक ही बार स्त्रियों की यह फरमाइश होती तब भी गनीमत थी, पर यहाँ तो आज पुत्र जन्म है, कल वर्ष गाँठ है, परसों शादी है, कभी कोई त्यौहार है तो फिर भात छोछक इत्यादि देना है। एक न एक ऐसा अवसर निकलता ही रहता है, जबकि मेहमानों का एकत्रित करना, गाना-बजाना, दावत आदि करना, लेना-देना आदि स्त्रियों के लिये अनिवार्य प्रतीत होता है। किसी भी अवसर पर वह अपने 'खानदान' की झूठी शान को कम नहीं करना चाहतीं। पुरुष इस विषय में स्वाभावतः कुछ उदार होते हैं। तभी तो वे बहुधा यह कहते हुए पाये जाते हैं, कि "क्या आवश्यकता है इतनी टीम टाम करने की। राशन व कट्रोल के जमाने में अन्न व वस्त्र एकत्र करना कितना कठिन है यह क्या तुम नहीं जानतीं। काम थोड़े में होता है और अधिक में भी।" परन्तु न जाने क्यों स्त्रियों को यह बातें सार हीन प्रतीत होती हैं। वह पुरुषों को अकर्मण्य समझ कर उन स्त्री उचित शस्त्रों का प्रयोग करती हैं जिनका प्रयोग कभी वह उस समय किया करती थीं, जब कि देश की मर्यादा सकट में होती थी, अथवा जब कभी उनके पति अथवा पुत्र अपने कर्तव्य से विचलित हो जाते थे। उस समय वह पुरुषों को कर्तव्य का मार्ग दिखाती थीं, परन्तु आज उनको कर्तव्य से विचलित कराती हैं। इतना अधः पतन क्यों हो गया है इस देश की नारियों का, यह ईश्वर ही जाने।

केवल उत्सवों के अवसरों पर ही नहीं, बल्कि अपने दैनिक जीवन में भी देखती हूँ कि पर्याप्त वस्त्रों के होते हुए भी, अधिकाश नारियों की यह इच्छा रहती है कि किसी न किसी प्रकार उन वस्त्रों में और वृद्धि हो जाय तो अच्छा है। और अपनी इस इच्छा-पूर्ति की चेष्टा में वह यह भूल जाती हैं कि वह उस देश की निवासिनी हैं, जिसने अपने खून से एकत्र किये हुये समस्त स्टर्लिंग (विदेशी सिक्के) विदेशों से अन्न व वस्त्र मँगवाने

सी लोग लोकहित की साधना करते है। यह लोक या संसार का सुख प्रकट करने वाला गृहस्थ धर्म ही है। यदि गृहस्थाश्रम की व्यवस्था बिगड़ जाय तो अन्य तीनों आश्रम ठीक रीति से नहीं चल सकेंगे।

गृहस्थाश्रम से अहं का विस्तार होता है, आत्म भाव की सीमा बढ़ कर उसमें परिवार के अन्य सदस्य भी आते हैं। छोटे-छोटे शिशुओं की सेवा-शुश्रूषा में निःस्वार्थ भाव से सलग्न होकर मनुष्य निजी स्वार्थों का नाश करता है। खुदगर्जी नष्ट हो जाती है, आत्म सयम की लगाम लगती है। स्त्री, पुत्र, सगे, सम्बन्धी, परिजन, पड़ोसी, घर के पशु पक्षी आदि में आत्मीयता बढ जाती है। क्रमशः उन्नति की ओर हम चलते है। अन्त में मनुष्य पूर्णतया आत्म सयमी हो जाता है। दूसरों के लिए अपने को भूल जाता है। खुदी मिटती जाती है और खुदा मिलता जाता है। गृहस्थ-योग की साधना जब अपनी विकसित अवस्था पर पहुँचती है तो आत्मा परमात्मा में लीन हो जाता है।

गृहस्थ हमें तुच्छता और सकीर्णता से महत्ता और उदारता की ओर ले जाता है, स्वार्थ का परिशोधन कर परमार्थ बना देता है। यदि गृहस्थ धर्म के सब उत्तरदायित्व को पूर्ण करते रहें, स्वार्थ को हटाकर परमार्थ की साधना करते रहें, तो वे निर्वाण प्राप्त कर सकते हैं।

आत्मीयता की उन्नति का अभ्यास करने के लिए सबसे उत्तम स्थान अपना घर है। आत्मीयता के साधक को अपना दृष्टिकोण देने और सेवा करने का बनाना पड़ता है। प्रेम की उदार भावनाओं से अपने अन्तःकरण को परिपूर्ण कर सगे-सम्बन्धियों के लिए त्याग करना पड़ता है। इस आत्मीयता के प्रसार से घर स्वर्ग बन जाता है।

गृहस्थ का सोपान पार कर लेने के पश्चात् जीवन यात्रा का एक नया चरण प्रारम्भ होता है। मनुष्य को प्रतीत होने लगता है कि सासारिक सुखों के आगे भी कोई चीज है। काम, क्रोध, लोभ, मोह से भरे हुए जीवन से उसे परितोष नहीं हो पाता। वह धीरे धीरे आत्मा के सुखद प्रदेश में प्रवेश करता है। आत्मा का प्रदेश वह मगल मय संसार है जहाँ इन्द्रियों की लोलुपता के आकर्षण और प्रलोभन नहीं है।

— –

सुझाव और सम्मतियाँ

ग्रीष्मावकाश का सदुपयोग

आजकल ग्रीष्मावकाश है। इस काल में स्कूलों तथा कालिजों के विद्यार्थी पढ़ाई से मुक्त हो जाते हैं। इसके पश्चात् जब उन्हें पुनः स्कूलों में जाना होता है तब तक का समय उनका अपना होता है। इस समय को छात्र विभिन्न प्रकार से बिताते हैं। कुछ केवल नहाना, खाना व सोना ही इस अवकाश का लक्ष्य बना लेते हैं, कुछ अपने सम्बन्धियों से मिलते हैं। कुछ ताश, चौसर में और कुछ निरुद्देश्य भ्रमण और सिनेमा-दर्शन की भेंट इस अमूल्य समय को कर देते हैं। पर इस समय का केवल यही उपयोग नहीं है। किसी विद्वान् ने कहा है कि—'मनुष्य का यह निराधार भ्रम है कि काल को काट रहा है।' इस बात को दृष्टि में रखकर यहां उचित है कि इस अवकाश के समय का विद्यार्थी उचित उपयोग करें। इस सम्बन्ध में हमारे कुछ सुझाव हैं। अपनी रुचि के अनुसार अवकाश के सदुपयोग के लिए विद्यार्थी इनमें से कोई भी चुन सकते हैं।

ग्रीष्मावकाश का सर्वोत्तम उपयोग अध्ययन-कार्य में किया जा सकता है। आज का युवक अपने और विश्व के सांस्कृतिक तथा सामाजिक ज्ञान से शून्य जैसा है। इस काल में उच्च धार्मिक साहित्य, सामाजिक पुस्तकें पढ़ कर अपनी ज्ञान-वृद्धि की जा सकती है और आत्म-शुद्धि की नींव डाली जा सकती है।

कहा भी है शरीर की शुद्धि जल से और मन की शुद्धि सत्य से होती है। विद्या और तप से आत्मा शुद्ध होती है, और ज्ञान से बुद्धि शुद्ध हो जाती है।

अपने शरीर को हृष्ट-पुष्ट करना भी इस समय का सदुपयोग है। शरीर सब धर्मों का साधक है, अतः उसकी रक्षा करना आवश्यक है। पर रक्षा और मोह में अन्तर समझ लेना चाहिये। प्राकृतिक साधनों से शरीर को पुष्ट करना तथा स्वच्छ रखना शरीर की रक्षा और कर्तव्य है; परन्तु कृत्रिम साधनों से उसे सुन्दर, सुवासित तथा आकर्षक बनाने का प्रयत्न शरीर का मोह है, अतएव त्याज्य है। यह भी ध्यान रहे कि शरीर की सम्पुष्टि अधिक तथा अमूल्य भोजन करने से असम्भव है। इसका एकमात्र साधन ब्रह्मचर्य पालन है और वह मन की शुद्धि के द्वारा ही किया जा सकता है।

इस अवकाश में प्रायः बाहर जाने को मन करता है। यह भ्रमण अनावश्यक नहीं, पर वह उद्देश्यपूर्ण होना चाहिए। संसार में दुखी जनों की कमी नहीं, अज्ञान व अन्याय की सीमा नहीं है। सुधारों के लिए क्षेत्र असीम पड़ा है। आपका भ्रमण दुखियों के दुःख-निवारण के लिए, बिना पढ़ों को पढ़ाने के लिए, अन्याय का दमन करने के लिए, संसार में शुभ विचारों और शुभ कार्यों का प्रचार करने के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है। परोपकार की यह भावना अस्वाभाविक नहीं है। वृक्ष किसके लिए फलते हैं? गायें किसके लिए दूध देती हैं? नदियें किसके लिए बहती हैं? निश्चय ही अपने लिए नहीं। यह समस्त जड़ जगत् हमको परोपकार का सन्देश दे रहा है। कवि के शब्दों में—

यही पशु प्रवृत्ति है,
कि आप आप ही चरे।
मनुष्य है वही कि जो,
मनुष्य के लिए मरे।

ग्रीष्मावकाश का सदुपयोग एक अन्य साधन से भी किया जा सकता है। माना गया है कि आत्मिक शक्ति मनुष्य में सर्वश्रेष्ठ गुण है, उसी के बल से मनुष्य सर्वोत्तम प्राणी है। इस समय में युवक गण अपनी इस शक्ति की वृद्धि के लिए साधना कर सकते हैं। आत्मिक शक्ति ज्ञान और चिन्तन से प्राप्त होती है। ज्ञान के लिए स्वाध्याय करना उचित है और चिन्तन के लिए संयम। अल्पाहारी जन दीर्घजीवी तथा बुद्धिमान होता है। इसलिए अल्पाहार के अभ्यासी बनिये। वाणी का संयम कीजिए, एक विद्वान् ने कहा है कि अधिक सुनो, अधिक पढ़ो, अधिक देखो, अधिक सोचो, पर थोड़ा बोलो।

विचारों पर भी संयम कीजिए। यह ध्यान रखिये कि मन चंचल है, आपके वश से बाहर जाने की चेष्टा करेगा। पर आप इसे वश में रख सकते हैं इसका साधन विचारों पर संयम करना है। हर समय कुछ न कुछ सोचते रहिये पर शुभ ही सोचिये यही एक कल्याण का मार्ग है। यदि अवकाश का विद्यार्थियों ने उपर्युक्त किसी भी प्रकार से उपयोग किया तो वे सचमुच कुछ अर्जित कर सकेंगे। अन्यथा ये मास उनके इस प्रकार नष्ट हो जायेंगे, मानो किसी ने अपने धन को कुए में डाल दिया।

अमीचन्द आर्य,
सिद्धान्त शास्त्री।

—

में व्यय कर दिये हैं और जो अब भी अपने निवासियों की क्षुधा शान्त करने के लिये अन्य देशों के सम्मुख अपना अञ्चल पसार रहा है!

उपर्युक्त कथन से मेरा तात्पर्य यह नहीं, कि देश के इस वर्तमान खाद्य और वस्त्र के संकट के लिये केवल स्त्रियाँ ही उत्तरदायी हैं। पुरुष बिल्कुल निर्दोष हैं, अथवा अन्य राजनीतिक त्रुटियाँ व दैवी प्रकोप इसका कारण नहीं है। मेरे कहने का अर्थ केवल यह है कि कारण चाहे कुछ भी हो, परन्तु यदि हम लोग चाहें तो इस महान् संकट की गम्भीरता को कुछ अंशों तक कम कर सकती हैं। इस समय तो देश में पूज्य बापू द्वारा बताये गये नारे—"आवश्यकता से अधिक खरीदना पाप है", को बुलन्द करने की आवश्यकता है; और यह नारा तभी बुलन्द हो सकता है, जब देश की स्त्रियाँ इसके महत्व को समझें। अन्यथा हमारे भविष्य के सुनहरे स्वप्न और स्वतन्त्र भारत की समस्त आशायें एक दिन नष्ट हो जायेंगी

——

दहेज-प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन

यह अनुभव करते हुए भी कि आज के युग में भारत में दहेज प्रथा की उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है, और उसके परिणाम-स्वरूप माता-पिता चिन्ता-रूपी अग्नि में अहर्निश धधक रहे हैं, तथा इस प्रथा को समाप्त करने के लिए सभाओं द्वारा अनेकों नियम बनाये जाने पर भी बालक-बालिकाओं के सम्बन्ध निश्चित करते समय अनेक जगह पशु-विक्रेताओं का सा दृश्य उपस्थित हो जाता है। भले ही बाह्य रूप से एक-एक रुपया लग्न तथा टीका में रक्खा जाय, परन्तु कन्या के लिए आभूषणों की माँग बहुत बढ़ गयी है। ऐसी दशा में परिषद् के निश्चयानुसार-कि 'दहेज निश्चय न किया जावे तथा श्रद्धा से प्राप्त कन्या-पक्ष का कुल रुपया संस्थाओं को दान दे दिया जावे' का आन्दोलन आरम्भ कर दिया गया है। इस आन्दोलन के प्रारम्भ में बड़ी कठिनाई आती है। चूँकि आज के इस भोगवादी युग में यह त्यागवादी प्रवृत्ति बड़ी कठिन है। परन्तु आर्यकुमार जैसा निश्चय कर लेते हैं अपने उस निश्चय से टल नहीं सकते।

इस दहेज प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन में उपप्रान्तीय आर्यकुमार परिषद् अलीगढ़ के प्रचार-मन्त्री श्री रामस्वरूपजी सिद्धान्त-शास्त्री ने भी भाग लिया तथा कन्या पक्ष से प्राप्त कुल १००१) एक सहस्र तथा ५१) इक्यावन रुपया अपनी ओर से मिलाकर कुल १०५१) एक सहस्र इक्यावन रुपया निम्न प्रकार दान कर दिया। ४००) आर्य समाज मन्दिर कचौरा। ४००) सहायतार्थ विभाग। २००) आर्य कुमार परिषद् अलीगढ़ को स्थायीनिधि को। ५१) आर्य सामाजिक विभिन्न संस्थाओं को। दहेज के विरुद्ध आज के युग में इस त्यागवाद के अतिरिक्त दूसरा कोई सुन्दर उपाय नहीं है। ईश्वर हमारे इस आन्दोलन को आगे बढ़ाए जिससे देश की सुधारवादी संस्थाएँ जो दुरवस्था में हैं सुचारु रूप से चल सकें।

—यशःपाल शास्त्री, प्रधान मन्त्री
उपप्रान्तीय आ० कु० परिषद्
अलीगढ़

——

स्वास्थ्य-सुधा

चिरचिटा

श्री आनन्दीप्रसाद मिश्र 'निर्द्वन्द्व'

चिरचिटा को संस्कृत में अपामार्ग कहते हैं। हिन्दी में चिरचिटा, लट जीरा या ओंगा बोलते हैं। यह छोटे छोटे ग्रामों तक में प्रायः सब जगह होता है। वर्षा ऋतु में उत्पन्न होता है, शीतकाल में इसकी बालें पकती हैं। पहले छोटे छोटे फूल दिखाई देते हैं, फिर फूल झड़कर चावल की समान आकार के फल लगते हैं। चिरचिटा का वृक्ष दो ढाई हाथ ऊँचा होता है। वृक्ष का चोटी में से एक प्रकार की बाल सी निकलती है, उसमें फल-फूल लगा करते हैं। फल नीचे को झुके होते हैं और उनमें काँटे होते हैं, जिससे कि वे वस्त्र में लगने से उससे चिपक जाते हैं।

चिरचिटा दो प्रकार का होता है, एक सफेद फूल का, दूसरा लाल फूल का। लाल चिरचिटे के पत्तों में लाल रंग की बूंदें दिखाई पड़ती हैं। चिरचिटे की बाल में से छोटे-छोटे चावल निकलते हैं, उनको चिरचिटे के चावल कहते हैं। उनका स्वाद कुछ कड़वा-सा होता है। चिरचिटे के पत्ते, शाखा, जड़ और चावल, सब ही औषधि के काम में आते हैं।

प्रयोग

(१) अर्श रोग में प्रतिदिन प्रातःकाल तीन माशे चिरचिटे की जड़ को चावलों के माँड़ के साथ पीस कर पान करने से अर्श रोग दूर होता है। यह रक्तार्श की भी अति उत्तम औषधि है। (२) चिरचिटे के चावलों को पीस कर उसका नस्य लेने से नासिका द्वारा कफ निकल जाने पर सिर का भारीपन दूर होता है। (३) प्रथम कास्ट्रायल द्वारा पिचकारी लगा कर पीछे चिरचिटे के ६ माशे स्वरस को ३ माशे शहद के साथ मिला कर पान करने से उदरस्थ कृमि नष्ट हो जाते हैं। (४) चिरचिटे की तीन माशे जड़ को पीस कर शीतल जल के साथ सेवन करने से विसूचिका (हैजा) रोग शमन होता है। (५) शरीर के किसी स्थान के कट जाने से रुधिर निकलने पर उस स्थान में चिरचिटे के पत्तों को हाथों से मसल कर या पत्थर पर पीस कर बाँधने से बहुत शीघ्र रुधिर का निकलना बन्द हो जाता है। रक्त बन्द करने का यह अनुभूत योग है। (६) आँख के कोये में नासूर हो जाने पर इसमें से पीव निकलती हो तो चिरचिटे के पत्तों को थोड़े से चूने के साथ कुछ पीस कर आँखें बन्द करके पलकों पर लेप करें, फिर उस पर केले का पत्ता रख कर पट्टी बाँध दें। एक दिन तक पट्टी बँधी रखकर दूसरे दिन खोलें। इसी प्रकार करने से दो तीन दिन में उक्त विकार नष्ट हो जाता है। (७) चिरचिटे को जड़, पत्ते और डाली सहित भस्म करके उस भस्म को तिल के तेल में पकाकर कान में डालने से कर्णनाद (कानों का गूँजना) और बहिरापन दूर होता है। (८) चिरचिटे की जड़ को ताँबे के बर्तन में दही के पानी के साथ घिस कर कबूतर के पंख से आँखों के भीतर लगाने से नेत्र नीरोग होते हैं। काकजंघा और मूलसहित चिरचिटे को समान भाग लेकर दोनों का विधिपूर्वक क्वाथ बना कर सेवन करने से खूब गहरी नींद आती है। (९) सफेद खरेंटी की जड़ की छाल ७ तोले, चिरचिटे की जड़ दो तोले, दोनों को एकत्र कूट कर एक सेर ११ छटांक जल और ६ छटाक गाय के दूध के साथ पकावें। जब पकते-पकते जल सब जल जाये और दूध मात्र शेष रह जाए, तो उसको छान कर प्रतिदिन प्रातःकाल पान करने से उन्माद रोग दूर होता है। (१०) चिरचिटा और तालमखाने के क्वाथ के द्वारा भपारा देने से सूजन दूर होती है। मूल, शाखा और पत्तों सहित चिरचिटे को ५ तोले लेकर, ५ छटांक जल में २० मिनट तक पकावें, उस आधी अथवा एक छटांक जल को प्रतिदिन सेवन करने से भी सूजन नष्ट होती है। (११) मूत्र कृच्छ्रता, रक्तबद्धता, अतिसार, आम, रक्तातिसार, शोथ, जलोदर, चर्मरोग और गलगण्ड रोग में भी यह लाभप्रद है। (१२) सूखी खाँसी में चिरचिटाका क्वाथ पान करने से खाँसी तर हो जाती है। (१३) चिरचिटा विषनाशक है; इसलिए साँप, कुत्ता अथवा अन्यान्य विषैले जीवों के काटने पर इसका सेवन करने से और क्षत स्थान में इसका लेप करने से विष का प्रभाव नष्ट हो जाता है। (१४) बहुत पुराने घाव में चिरचिटे के पत्तों का लेप करने से अत्यन्त लाभ होता है, यह घाव को भरने वाला है। (१५) चिरचिटे के पचांग को जलाकर उसका विधिपूर्वक क्षार बनाकर सेवन करने से खाँसी और साँस में बहुत लाभ होता है। विशेषतः बालकों की खाँसी और कुकुरखांसी में यह अत्यन्त हितकर है।

आर्य्यजगत

—श्री स्वामी विद्यानन्दजी ने नवाबगंज (बरेली) आर्यसमाज में चार दिन बड़े विद्वत्तापूर्ण भाषण दिये। जनता पर खूब प्रभाव पड़ा। १७-१८ मई को मास्टर-नत्थूसिंहजी ने मैजिक लालटेन द्वारा प्रचार किया।

—शोक है कि आर्यसमाज नगौला (अलीगढ़) के उपप्रधान ठा० जीवारामसिंहजी का देहान्त हो गया। आर्य समाज आपकी मृत्यु पर शोक-सहानुभूति प्रकट करता है।

—आर्य समाज जवाँ (अलीगढ़) में एक वर्ष से प्रत्येक पूर्णमासी को यज्ञसहित उत्सव मनाये गये। सनातनियों ने इन उत्सवों में विघ्न डालने की चेष्टा की, परन्तु वह निष्फल सिद्ध हुआ। जवाँ आर्य समाज का पुराना क्षेत्र है। स्व० ठा० बलवन्तसिंहजी आदि वीरों के कारण इस स्थान की अच्छी ख्याति रही। अब भी समाज का अच्छा कार्य हो रहा है।

—बहजोई (मुरादाबाद) में यज्ञ मण्डल द्वारा बहुत से यज्ञ होते हैं। हाल ही में २१ से २६ मई तक यज्ञ हुए। चार दिन महाशय बनवारीलालजी के घर पर, तीन दिन आर्यसमाज-मन्दिर में और एक दिन बा० अलखधारी जी के यहाँ आचार्य सत्यभूषणजी और स्वा० आत्मानन्दजी ने यज्ञ कराये।

—नवाबगज (बरेली) के रिटायर्ड सब इन्सपेक्टर श्री किशनलालजी की पुत्री सावित्री देवी का विवाह श्रीमुल्लनसिंहजी के पुत्र श्री कर्णसिंहजी के साथ वैदिक रीति से हुआ। संस्कार पं० इन्द्रदेवजी ने कराया। २०) स्थानीय आर्य समाज को दान में दिये।

—आर्यस० जवाहरखेड़ा (उन्नाव) का वार्षिकोत्सव २३से २५मई तक मनाया गया, श्री शिव स्वामीजी, श्री रामलालजी शर्मा, श्री बदरीप्रसादजी, और श्री देवीप्रसादजी के व्याख्यान और भजन हुए। बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा।

—आ० स० दयानन्दनगर (अछोरा) फैजाबाद की रजत जयन्ती १६ से २२ अप्रैल तक समारोहपूर्वक मनायी गया। श्री विद्यानन्दजी, श्री महादेवप्रसाद शास्त्री, स्वा० इष्टानन्दजी, श्री रामनारायणसिंहजी, प० अयोध्याप्रसादजी आर्य, प० कृष्णदत्त आयुर्वेदालङ्कार आदि विद्वानों के भाषण हुए। यज्ञ भी हुआ। जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

—आ० स० खड़गपुर के श्रीरामनिवासजी के पुत्र वेदप्रकाश का उपनयन व वेदारम्भ संस्कार वैदिक रीति से कराया गया। २) दान में प्राप्त हुए।

—कचौरा (अलीगढ़) निवासी श्रीरामस्वरूप जी सिद्धान्त शास्त्री का विवाह सुहा ली निवासी श्री सदारामलालजी आर्य की पुत्री द्रौपदीदेवी स्नातिका कन्या गुरुकुल हाथरसके साथ २० मई ५१ को सम्पन्न हुआ। प० बिहारीलाल शास्त्री तथा प० रामदयालु शास्त्री ने संस्कार कराया।

—शोक है कि दयानन्द नगर (फैजाबाद) के कार्यकर्त्ता एवम् श्री सदानन्द दातव्य औषधालय के प्रबन्धक की पत्नी का देहान्त हो गया।

—आ० स० शेरकोट (बिजनौर) के वार्षिकोत्सव पर आयोजित हिन्दुओं की एक विराट सभा ने गढ़वाल के आर्य बन्धुओं पर किये गये अत्याचार पर घोर घृणा प्रकट की तथा सरकार से प्रार्थना की कि वह इन अत्याचारों की तहकीकात करे।

—बिजनौर जिले के प्रसिद्ध आर्य-कार्यकर्त्ता पं० लक्ष्मीनारायण उपाध्याय के परिवार की कन्या विमलादेवी का विवाह ६ मई ५१ को सहारनपुर निवासी पं० मुकुन्दलाल शर्मा वैद्य के पुत्र श्री राधेश्याम के साथ वैदिक रीति से हुआ। बरात में केवल आठ व्यक्ति आए थे। लड़के ने केवल १) स्वीकार किया और कुछ नहीं लिया। कन्या को केवल एक चादर भेट की गयी। संस्कार खुर्जा निवासी श्री पं० वासुदेवजी सांख्यतीर्थ, आयुर्वेदाचार्य ने कराया।

—शान्ति-आश्रम लोहरदगा (राँची) के उद्योग से गत २४ तथा २५ मई को लोहरदगा में श्री पं० अयोध्याप्रसाद जी वैदिक रिसर्च स्कालर और श्री स्वामी अभेदानन्द जी सरस्वती के वैदिक धर्म पर प्रभावशाली भाषण हुए।

—२६ से २८ मई १९५१ तक आर्य-समाज मायंग का वार्षिकोत्सव समारोह पूर्वक हुआ। बाहर से अनेक साधु-संन्यासी, विद्वान्, नेता पधारे थे, जिनमें गुरुकुल अयोध्या के कुलपति श्री स्वामी त्यागानन्द सरस्वती, उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान युवराज रणञ्जयसिंहजी एक्स-एम० एल० ए० (केन्द्रीय), विद्याभूषण अमेठी राज्य, डि० बो० के अध्यक्ष श्री देवकलीदीन शर्मा, श्री रमाकान्त शास्त्री, स्वामी सत्यव्रतजी तथा श्री महिपालसिंह जी आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

—

उत्सव-सूचनाएं

—उप प्रान्तीय आर्यकुमार परिषद् अलीगढ़ की ओर स जिले की चौदह आर्य कुमार सभाओं के १ जून से २६ जून ५१ तक निरन्तर उत्सव कराये जा रहे हैं। इन उत्सवों में स्वा० आत्मानन्दजी, प० विश्वबन्धु शास्त्री, पण्डित मेधातिथि शास्त्री, ठा० सरदारसिंह जी, प० व्रजनन्दनलालजी, पं० रामस्वरूपजी, कु० जयपाल सिंहजी, ठा० सुवर्णसिंहजी आदि के व्याख्यान व भजन होंगे।

—आर्य-समाज ज्योली कोट का वार्षिकोत्सव ६, ७ तथा ८ जून को मनाया जायगा।

—

सार-सूचनाएं

—आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध अपने यहां के आर्य भाइयों से प्रार्थना करती है कि वे कृपाकर आर्य-समाज-मन्दिर बम्बई के पते पर तुरन्त सूचना दें कि वे पाकिस्तान में आर्य-समाज की क्या-क्या सम्पत्ति छोड़ आए हैं और उसका आनुमानिक मूल्य क्या है और वह किसके पास है। मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा।

—उत्तर प्रदेशीय आर्यकुमार परिषद् की जिला संगठन समिति बिजनौर द्वारा आयोजित जिला वाद-विवाद प्रतियोगिता २१ मई को शेरकोट में हुई। सर्व-प्रथम श्रीरघुवरदयालु आर्य बिजनौर आए। अतः बिजनौर सभा ने 'श्री रामस्वरूप आर्य चल विजयोपहार' प्राप्त किया। आगामी विवाद का विषय है "स्वतन्त्र भारत और आर्यकुमार" निबन्ध १५ जून तक श्री जगदीशप्रसादजी एम० ए० मुरादाबाद के पास पहुँचने चाहिएँ।

—कानपुर जिला आर्य उप प्रतिनिधि-सभा की ओर से श्री रामनिवासजी शास्त्री उपदेशक तथा श्री रामदेवजी भजनोपदेशक कानपुर जिले में प्रचारार्थ भ्रमण कर रहे हैं। सब लोग कृपया उनकी सहायता करें।

—श्री आनन्द हिन्दू अनाथ आश्रम व निःशुल्क गुरुकुल पीपल खेड़ा में इस वर्ष ३५ नवीन अनाथ प्रविष्ट किये जायेंगे। यह संस्था अच्छा काम कर रही है।

निर्वाचन

—आ० स० नवाबगज (बरेली), प्रधान-मास्टर सुन्दरलालजी और मन्त्री प० जानकीप्रसादजी।

—आ० स० पाठकपुर (उन्नाव), प्रधान-श्री चन्द्रदत्त शर्मा वैद्यभूषण और मन्त्री-श्री श्यामाचरणजी त्रिपाठी। ——

आर्यसमाज नैनीताल का नवीन मन्दिर

नैनीताल उत्तरप्रदेश की ग्रीष्म कालीन राजधानी है। उत्तरप्रदेशीय सरकार के सचिवालय तथा अन्य यात्रीगणों के कलरव से यह स्थान, ग्रीष्म के ६ मास मुखरित रहता है। इन दिनों नैनीताल की अप्रतिम शोभा अनिवर्चनीय होती है, जिसमें प्रकृति के नयनाभिराम दृश्यों के साथ मानव-सर्जित वास्तुकला का सुन्दर समन्वय है।

ऐसे केन्द्रीय स्थान पर वैदिक संस्कृति के प्रेमियों की तृष्णाकुल आँखें स्वभावतः उसके मंदिर को खोजती हैं। आर्यसमाज नैनीताल के उत्साही कार्यकर्त्ता लगभग ४० वर्ष से यह प्रयत्न कर रहे थे कि प्रान्त की राजधानी के गौरव के अनुरूप ही यहाँ एक सुन्दर आर्य समाज मंदिर का निर्माण हो। लगभग ३ वर्ष हुए एक सुन्दर भूमि जो नगर के म्युनिस्पल गार्डन में ताल के पास है, भवन-निर्माण के लिये मिल गई। अब तक समाज के भगीरथ प्रयास से मंदिर की दो मंजिलें बन चुकी है, जिसमें दो अतिथिशालायें व सुन्दर कमरे बने हैं। परन्तु एक मंजिल बनना शेष है। कुछ सामान एकत्रित हो चुका है, पर धनाभाव से निर्माण की गति अवरुद्ध होती जा रही है, और निकट भविष्य में बन्द हो जाने की आशंका है, यदि धन की सहायता नहीं मिली। ऐसी अवस्था में सामान बेकार जाने के अतिरिक्त फिर तीसरी मंजिल बनना असम्भव-सा हो जायगा, क्योंकि कुछ विरोधी लोग भरसक प्रयत्न में हैं।

मंदिर की तीन मंजिलें बनने के लिये ५०००० रुपये की आवश्यकता है। परन्तु इस समय आर्य समाज नैनीताल के अधिकारियों को मंदिर निर्माण के लिये कम से कम १५००० रुपया पन्द्रह सहस्र रुपये की अत्यन्त और शीघ्र आवश्यकता है। चाहे वह धन ऋण रूप में प्राप्त हो या दान में। आर्य-समाज ऋण पर ८ आना सैकड़ा सूद भी देगा। इस भवन से ३००० रुपया प्रति वर्ष की आय होगी। इस प्रकार पांच वर्ष में ऋण चुकजाने के लिये ऋणदाता आश्वस्त हो सकते हैं।

अब तक कुछ स्वनामधन्य सस्थाओं ने निम्नप्रकार दान भेजा है।

१-आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश १०००), २-अखिल भारतीय आर्य हिन्दू धर्म सेवा संघ १६००), ३-आर्य समाज हलद्वानी १०००), ४-आ० स० देहरादून १०१), ५-आ० स० आगरा छावनी १०१), ६-आ० स० नजीबाबाद ५०) ७-आ० स० खुर्जा १६), ८-आ० स० सहारनपुर २०), ९-आ० स० बुढ़ाना, मुजफ्फर नगर ११) रु०।

आशा है वैदिक धर्म प्रेमी, धर्मधुरीण धनी-मानी, आयजन इस संकट-काल में आर्य-समाज नैनीताल की सहायता कर लोक-परलोक में पुण्य और यश के भागी बनेंगे।

राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री,
प्रधान, सार्वदेशिक
आर्यप्रतिनिधि सभा।

मदनमोहन सेठ
प्रधान, आर्यप्रतिनिधि सभा,
उत्तरप्रदेश।

आर्य वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर

'संजय'

यह एक सुप्रसिद्ध आर्य-सामाजिक संस्था है। इस संस्था में वानप्रस्थी आर्यजन तथा आर्य देवियाँ निवास करते हैं। इस समय लगभग ६० वानप्रस्थी आश्रमवास कर रहे हैं। इस आश्रम में निवास करते हुए आश्रमवासी महानुभाव स्वाध्याय, अध्यात्म जीवन चिन्तन, सम्मिलित संध्या, यज्ञ, भोजनादि करते हैं। सद्भावना, सुमति और सुजनता के वातावरण में रहते हुए अपने जीवन को वार्द्धक्य अवस्था में मुनिवृत्ति से यापन करने का शुभ सत्प्रयत्न करते हैं। सांसारिक प्रपंचपूर्ण कार्य-कलापों से विमुक्त रहते हुए राग-द्वेष और ईर्ष्या एव मात्सर्य-जनित कुप्रवृत्तियों से अपने जीवन को परिरक्षित रखने का आर्योचित अनुष्ठान करते हैं, किन्तु अनपढ़ पापमय एव मर्त्य भावापन्न होने के कारण यदा कदा ऐसे शान्तिपूर्ण प्रदेश में भी अशान्तिजनक प्रवृत्तियों का प्रादुर्भाव हो जाना अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता।

अप्रैल मास के तृतीय सप्ताह में अर्थात् १६ से २२ अप्रैल तक आर्यवानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर में आश्रम की विशाल यज्ञशाला में एक विराट् यजुर्वेद-पारायण महायज्ञ का आयोजन किया गया। इस यज्ञ में आर्यजगत् के सुप्रसिद्ध विद्वानों ने ऋत्विग् रूप से भाग लिया और उनके गम्भीर गवेषणापूर्ण धार्मिक उपदेशों से जनता को विशेष लाभ हुआ। परन्तु अत्यन्त खेद और लज्जा के साथ लिखना पड़ता है कि २३ अप्रैल को ही स्थानीय मजिस्ट्रेट के अनुशासनानुसार आश्रम की यज्ञशाला, पुस्तकालय, वस्तु-भण्डार और भोजनालय में ताले डलवाकर उन्हें बन्द करवा दिया गया। जिसके परिणामस्वरूप उसी दिन से यज्ञ आदि से, जिन्हें आश्रमवासी समान रूप से प्रति दिन करते रहते थे, सर्वथा वञ्चित कर दिये गये। इस प्रकार का प्रतिबन्ध यदि किसी आर्येतर की प्रेरणा अथवा प्रयत्न से लगवाया गया होता तो कदाचित् कोई अधिक आश्चर्य की बात न समझी जाती, और न तब इस प्रकार के प्रतिबन्ध के सम्बन्ध में उचित अथवा अनुचित के विचार का ही कोई अवसर उत्पन्न होता; परन्तु जब इस प्रकार का प्रतिबन्ध किन्हीं ऐसे महानुभाव के प्रयत्न का फल होता है कि जो स्वयं आर्यजगत् में सुविख्यात, धर्मोपदेष्टा और वैदिक यज्ञ-अनुष्ठानों के प्रतिष्ठापक समझे जाते हों, तो साधारण जनों के हृदयों में विस्मय उत्पन्न हो सकता है।

चल-अचल सम्पत्ति, पद और स्वत्वाधिकार के सम्बन्ध में न्यायालयों के द्वारा निर्णय प्राप्त करने की कार्यवाही करने की सुविधा प्रत्येक नागरिक को समान रूप से प्राप्त है, इस सिद्धान्त का अपवाद कोई आर्य नागरिक नहीं कहा जा सकता। तथापि इस परम्परा का अनुकरण करने वाले भी मानवोचित अनिवार्य संध्या, यज्ञादि अनुष्ठानों के सम्बन्ध में यदि प्रतिबन्धात्मक प्रवृत्तियों का अनुसरण करने लगें, तो अनेक असम्बद्ध और निर्दोष व्यक्तियों के साधारण नागरिक अधिकारों के व्यवहार में अनायास बाधाएँ उपस्थित हो जाती हैं, जिनको किसी अर्थ में भी उचित और वाञ्छनीय कहना असाधारण साहस का कार्य होता है। इस प्रकार के कार्यों की उपयोगिता और उपादेयता कहाँ तक आर्य-सदाचार की मर्यादाओं के अनुकूल है, इसका अनुमान करना कठिन नहीं है। यह तो हमारा दुर्भाग्य है कि अन्य साधारण जनों के लिए स्वयं अनुकरणीय उदाहरण

बनकर यज्ञादि श्रेष्ठतम शुभ कार्यों के करने कराने की सार्वजनीन परम्परा को अपने प्रयत्न से दृढ़तर अधिक व्यापक और विशेष लोकोपकारी न बना सकें। किन्तु "आये थे हरिभजन को ओटन लगे कपास" इस लोकोक्ति के अनुसार यदि कोई आर्य-महानुभाव ही इन शुभ अनुष्ठानों के सम्बन्ध में बाधाएं अथवा प्रतिबन्ध परम्परा का अनुगमन करने लगे तो हमारा कथनी और करनी में महान् अन्तर उपस्थित होना सम्भव है और फिर हमारे उपदेशों और शिक्षाओं का विचारशील जनों के लिये कोई अधिक प्रयोजन भी शेष रहना कदाचित् सम्भव नहीं है।

वीतराग, तपोधन एवं वेदप्राण महर्षि स्वामी दयानन्द आर्यसमाज के प्रवर्त्तक ही नहीं अपितु वैदिकता के वातावरण को सुप्रतिष्ठित करने के लिये वैदिक वर्णाश्रम मर्यादाओं को पुनः अनुप्राणित कर वेद-युग के श्रेष्ठ प्रवर्त्तक आचार्य भी हुए। महर्षि ने जिस वैदिकता की परम्परा का प्रतिष्ठापन आर्यजनों के कल्याणार्थ किया, उसकी उन्नति और विस्तार सभी आर्यजनों के लिये समान रूप से उपादेय अनुष्ठान है। पिछले ७५ वर्ष पर्यन्त आर्यसमाज से सम्बन्ध रखने वाले विद्वानों, संन्यासियों, वानप्रस्थियों, गृहस्थियों और ब्रह्मचारियों ने अपनी अपनी परिस्थिति और क्षमता के अनुसार इस पावन परम्परा को परिपुष्ट बनाने का पुरुषार्थ किया है। अनिराकरिष्णु न बनने का संकल्प तो प्रत्येक आर्य यज्ञोपवीत धारण करने के समय ही दृढ़ता के साथ अपने हृदय में अंकित करता है, और यावत् जीवन इस व्रत-पालन करने को अपना औचित्य अनुभव करता है। अपनी विचक्षण आर्ष प्रज्ञा से महर्षि दयानन्द ने पशु से, पिशाच से, राक्षस से, दानव से, दैत्य से, असुर से, मानव, मानव से देव और देव से ऋषि बनने की वैदिक वीथी पर आर्य जनों को दृढ़ता के साथ स्थापित किया, इसलिये आर्यजनों के विविध कर्तव्यानुष्ठानों का उत्तरदायित्व अत्यधिक होना स्वाभाविक ही है। अपने उत्तरदायित्व के अनुरूप कर्तव्यपालन किस मात्रा और परिमाण में और किस रूप में हम करते रहे, कर रहे, और करेंगे यह समस्त आर्यजनों के लिये सम्भव रूप से विशेष चिन्ता का प्रश्न हो जाता है। इस प्रश्न पर समस्त विचारशील आर्यजन अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार विचार कर अपने-अपने कर्तव्यों के पालन करने में समर्थ हो सकते हैं। यह बात पाठकों के लिये चिन्तन का विषय है। प्रत्येक प्रकार की विषम और संकटाकीर्ण स्थिति में भी आर्यजन दृढ़ता के साथ अपने कर्तव्य-पालन करने में समर्थ होंगे। इस सम्बन्ध में किसी प्रकार का सन्देह नहीं हो सकता।

—

अमेठी में विराट सभा

२७ मई १९५१ को रामनगर अमेठी राज्य में श्री सरयूप्रसाद सिंह वकील की अध्यक्षता में एक विराट् सार्वजनिक सभा हुई, जिसमें लगभग १२००० से अधिक जन समूह एकत्र था। उत्तर-प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के उप प्रधान युवराज रणञ्जयसिंह जी ने सभा का उद्घाटन करते हुए अपने ओजस्वी भाषण में कहा कि देश में जो नाना प्रकार के उपद्रव मचे हुए हैं उन के निवारणार्थ अविलम्ब तत्पर हो जाना चाहिए। भ्रष्टाचार, कलङ्क है। आचरणहीन व्यक्तियों को आगे बढ़ाने का यही दुष्परिणाम है। निर्भीकतापूर्वक उनका विरोध करना चाहिए। इसी आशय का एक प्रस्ताव भी सब सम्मति से स्वीकृत हुआ और सबने हाथ उठा कर प्रण किया कि सदाचारियों को प्रोत्साहन दिया जायगा, तथा दुराचारियों का विरोध किया जायगा। गोवध-निषेध तथा हिन्दू कोडबिल विरोधी प्रस्ताव भी सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए।

महोपदेशक डा० शिवमङ्गलसिंह, जिला बोर्ड के अध्यक्ष श्री देवकलीदीन शर्मा, श्री बांकेबिहारीसिंह वकील, श्री गयाबरशसिंह वकील, श्री शिवनायकसिंह, श्री विजयपाल पाण्डेय वकील, श्री आदित्यनारायण सिंह, श्रीरामसुमेरसिंह आनन्द तथा श्री पन्नासिंहजी के प्रभावशाली भाषण हुए।

(संवाददाता)

—

आर्यमहासम्मेलन की तैयारियां

अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में सार्वदेशिक सभा के आदेशानुसार मेरठ में आर्य-महासम्मेलन होने वाला है। उसके प्रबन्ध के लिए मेरठ जिले के आर्यसमाजों के प्रयत्न से लगभग ६०० स्वागत-सदस्य बन चुके हैं। २७ मई को सम्मेलन के लिये प्रबन्ध-कारिणी समिति का निर्माण किया गया। सर्व सम्मति से श्रीमती शकुन्तला गोयल स्वागताध्यक्षा, श्री हरशरण-दास, श्री मूलचन्द शास्त्री, श्री द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री तथा श्रीमती सुशीला उप-स्वागताध्यक्ष, श्री कालीचरणजी प्रधान मंत्री, श्री श्यामलाल सहायक मंत्री तथा लाला मनोहरलालजी कोषाध्यक्ष चुने गये। विभिन्न विभागों के लिये १८ व्यक्ति और चुने गये तथा २७ प्रबन्ध-समिति के सदस्यों का भी चुनाव हुआ। विभागों के मन्त्री चुनने का अधिकार इस प्रबन्ध समिति को सौंप दिया गया। स्थान मैदान नौचन्दी निश्चित किया गया है। मेरठ जिले के आर्य समाजों में इस सम्मेलन के लिये बड़ा उत्साह है। महिलाओं में विशेष उत्साह है।

—

भारत में पेनिसिलिन का कारखाना

संयुक्तराष्ट्र संघ ने भारत में पेनिसिलिन के कारखाने की स्थापना में सहायता देने का जो प्रस्ताव रखा था, भारत ने उसे स्वीकार कर लिया है। इस कार-खाने के निर्माण में लगभग २ करोड़ रुपया लागत बैठेगी। विश्व स्वास्थ्य संघटन ३,५०,००० डालर व्यय करके भारत को टैक्निकल सहायता तथा प्रशिक्षण की सुविधायें प्रदान करेगा। संयुक्तराष्ट्र संघ का बाल संकट कोष ८,५०,००० डालर की लागत के उपकरण देगा।

भारत सरकार ने बाल संकट कोष की इस सहायता के बदले में भारतीय महिलाओं तथा बच्चों को ८,५०,००० डालर के मूल्य की पैनिसिलिन बिना मूल्य वितरित करने का आश्वासन दिया है।

डेढ़ वर्ष के भीतर कारखाने के चालू हो जाने की आशा की जाती है। ——

वर की आवश्यकता

चंदेल वंशीय एक सुशिक्षिता (कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हाथरस की ११ वीं श्रेणी उत्तीर्ण) एक सुन्दर कन्या के लिए स्नातक अथवा-ग्रेजुएट वर की आवश्यकता है। वर कुशवाहा सेंगर या राठौड़ इनमें से किसी भी वंश का होना चाहिए। दहेज पिशाच सम्पर्क में न आयें तो ही अच्छा है।

पत्र व्यवहार का पता—
जगदेवसिंह कलकत्ता
टेलरिंग हाउस,
लालगंज, पो० लालगंज
जि० रायबरेली यू० पी०

अनाथालय को दान

श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आगरा ५१ वर्ष से हिन्दू जाति की सेवा कर रहा है। इस में सकड़ों अनाथ बालक और बालिकाओं का पालन-पोषण हो रहा है। हजारों अनाथ बालक शिक्षित और योग्य होकर निकल चुके हैं। अतः आप भी दान देते समय इन अनाथ बालकों को न भूलिये। अनाथ लड़कियों के लिए २४ वर्ष की आयु के वरों की आवश्यकता है। २) का मूल्य भेज कर फाम मँगा कर, भर कर भेजिए।

मन्त्री, श्रीमद्दयानन्द अनाथालय
आगरा।

सफेद बाल काला

खिजाब से नहीं, हमारे आयुर्वेदिक 'केश कल्याण' सुगन्धित तेल से बालों का गिरना रुककर सफेद बाल जड़से काला हो जाता है। यह तेल दिमागी ताकत और आंखों की रोशनी को बढ़ाता है। जिन्हें विश्वास न हो वे दूना मूल्य वापस की शर्त लिखा लें। मूल्य २) बाल अधिक पक गया हो तो ५) का तेल मगाइये।

धन्वन्तरि औषधालय
पो० शेखपुरा

आर्योदय काव्यम्

श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए० की नवीन कृति।

यह काव्य संस्कृत भाषा में है। हिन्दी अर्थ नीचे दिया हुआ है। आर्य संस्कृति के प्रारम्भ से लेकर महर्षि दयानन्द के आगमन तक आर्य जाति के उत्थान और पतन की कहानी ललित छन्दोबद्ध भाषा में लिखी गई है। माननीय अणे बिहार के राज्यपाल, माननीय सम्पूर्णानन्द, माननीय के० मुंशी आदि ने इसकी प्रशंसा की है। सचित्र पुस्तक का मूल्य १॥)

अन्य ग्रन्थ—आस्तिकवाद ३), जीवात्मा ४), शंकर-भाष्या-लोचन ५), मनुस्मृति-भाष्य ५), भगवत्-कथा १), हम क्या खावें १), महिला-सत्यार्थप्रकाश ॥=), Light of truth (अंग्रेजी सत्यार्थ-प्रकाश) ६), वैदिक मणि-माला ॥=), आदि आदि सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये।

पता—कला प्रेस, इलाहाबाद।

सम्मन

इत्तिलानामा बनाम रिस्पोन्डेन्ट मुशअर इत्तिला तारीख मुकररः समाअत अपील

अदालत जनाब डिप्टी कमिश्नर साहब लखनऊ
मुकाम लखनऊ
गयाप्रसाद अपीलाट
बनाम
प्रागी वगैरह

[अपील] बनाराजी अदालत मुकाम [मौरी] माह सन् १६

बनाम प्रागी वल्द पवम कौम गड़रिया साकिन मौजा भटगांव परगना बिजनौर तहसील व जि० लखनऊ

वाजे हो कि अपील बनाराजी डिगरी इस मुकदमा में मुसम्मी गयाप्रसाद ने पेश की और इस अदालत में दर्ज रजिस्टर हुआ। और इस अदालत ने तारीख ११ माह जून सन् १६५१ वास्ते समाअत इस अदालत के मुकर्रर की है। अगर आप या आपके वकील या और कोई शख्स जो कानूनन आपकी तरफ से जवाब व सवाल करने का मजाज रखता हो हाजिर न आयेगा तो उसकी समाअत और तजवीज आपकी गैरहाजिरी में यकतरफा की जायगी।

तारीख माह सन् १६

२ रूपम वल्द नरायन कौम गड़रिया ३—भोला वल्द नरायन कौम गड़रिया ४—माखन वल्द नरायन कौम गड़रिया साकिन भटगाव परगना बिजनौर जिला लखनऊ।

मुंसरिम

सफेद बाल काला

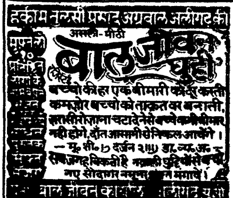
इस अनोखे तेल से बालों का पकना रुक कर पका बाल काला पैदा होकर ६० वर्ष तक काला स्थायी रहेगा। सिर का दर्द व चक्कर आना दूर कर, आंख की ज्योति को बढ़ाता है। एकाध बाल पका हो तो २॥) एकत्र ३ का ६।) आधा पका हो तो ३॥) एकत्र ३ का ६) और कुल पका हो तो ५) एकत्र ३ का १२) बेफायदा साबित करने पर ५००) इनाम जिन्हें विश्वास न हो वे =) का टिकिट भेज कर शर्त लिखा लें। बिहार लेबोरेटरीज पो बेगूसराय (मुंगेर)

पौने मूल्य में

हिन्दी की सभी पुस्तकें सूचीपत्र मुफ्त मँगाएं
भारत पब्लिशिंग हाउस
५, गांधी रोड, आगरा

शान्ति सुधा

[illegible] पागल से लेकर दौरे पड़ने तक के लिये पहली खुराक से ही शर्तिया फायदा होता है [illegible] हकीमों द्वारा आजमाई गई
मूल्य [illegible] डाक खर्च सहित
[illegible] स्नातक [illegible] पो० रुड़की जि० सहारनपुर।



आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ॐ आर्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

संचालक—आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ

१४ जून १९५१

होगया स्वराज्य अब सुराज चाहिए

'स्वराज्य' और 'सुराज'

श्री हरिशङ्कर शर्मा

पड़ा अहिंसा-यज्ञ में, सत्य-धर्म का आज्य,
हाँ, 'स्वराज्य' तो होगया, हुआ न किन्तु 'सुराज्य'।

राजनीति रम रही न सत्य शेष है,
सत्व का न काम कहीं छद्म वेष है,
सुख-समृद्धि नष्ट हुए, कष्ट-क्लेश है,
हाय, दुःख सह रहा 'स्वतन्त्र देश' है,
भाषणों की भूख नहीं, नाज चाहिए—
होगया स्वराज्य, अब सुराज चाहिए।

हाय! 'हाय-हाय' कर कराह सब रहे,
इस प्रकार हाय! हम तबाह कब रहे,
भुखमरी की भूतनी किलकार रही है,
अन्नहीन मानवों को मार रही है,
इस विपत्ति-वज्रपात से बचाइये—
होगया स्वराज्य, अब सुराज चाहिए।

मिल रहीं न शुद्ध वस्तु, भाव चढ रहे,
हो रहे अनर्थ, अनाचार बढ़ रहे,
चोर, जार, डाकुओं का वेग बढ़ा है,
स्वार्थ-सिन्धुओं से आज काम पड़ा है,
बिगड़े हुए समाज का आनिक बनाइये—
हो गया स्वराज्य, अब सुराज चाहिए।

नौकरी, उद्योग या व्यवसाय नहीं है
लाखों गरीब रोरहे कुछ आय नहीं है
चिथड़ों का है अभाव न रहने को झोंपड़ा
हा, देशवासियों पै ये संकट बड़ा पड़ा
बेकार व्यक्तियों को काम-काज चाहिए—
होगया स्वराज्य अब सुराज चाहिए।

शिक्षा में न आदर्श न अपना महत्व है,
इन थोथी पोथियों में न कुछ तथ्य तत्व है,
परदेशियों की सभ्यता सब पर सवार है,
भारत की भावनाओं पर ममता न प्यार है,
इस दास मनो-वृत्ति को मन से मिटाइये—
होगया स्वराज्य, अब सुराज चाहिए।

जिससे हुए स्वतन्त्र वह तप त्याग नहीं है,
सहयोग न सहकार न अनुराग कहीं है,
आतंक न श्रद्धा न व्यवस्था का नाम है,
बस रात दिवस स्वार्थ-देव को प्रणाम है,
मानवता मर रही, इसे अमृत पिलाइये—
होगया स्वराज्य, अब सुराज चाहिए।

आशा थी जब स्वराज्य का सुख सूर्य उगेगा,
सोये हुए 'स्वदेश' का सौभाग्य जगेगा,
हो जायगी धन-धान्य से भरपूर भारती,
हँस-हँस स्वतन्त्रता की उतारेंगे आरती,
गाँधी के भक्त होके न गौरव गिराइये—
होगया स्वराज्य, अब सुराज चाहिए।

राजनीति विश्व का विनाश कर रही,
धर्महीन हाय! हो हताश कर रही,
द्वेष-दम्भ से न कभी काम चलेगा,
सत्य-सूर्य से ही सुख-सरोज खिलेगा,
'रामराज्य' का सुदृश्य फिर दिखाइये—
होगया स्वराज्य, अब सुराज चाहिए।

[illegible] मूल्य ५), एक प्रति
[illegible] में १०), तीन पैसे

सम्पादक : हरिशङ्करशर्म्मा

वर्ष—५३
अङ्क—२१

जीवन-ज्योति

माननीय श्री चरणसिंहजी

श्री चरणसिंहजी ने गत ४ जून १९५१ को नैनीताल में उत्तर-प्रदेशीय मंत्रिमंडल की सदस्यता की शपथ ग्रहण की। श्री चरणसिंहजी का जन्म मेरठ जिलेके भदौला गांव में एक किसान परिवार मे दिसम्बर १९०२ ई० में हुआ था। उनकी सम्पूर्ण शिक्षा मेरठ में हुई और १९२५ ई० में उन्होने आगरा कालेज से एम० ए० की परीक्षा पास की। कानून की परीक्षा पास करने के बाद वे सन् १९२८ से गाजियाबाद म दीवानी की अदालत में वकालत करने लगे। प्रायः १० वर्ष तक वे गाजियाबाद मे ही वकालत करते रहे सन् १९३९ में वे मेरठ चले गये। वहा उनका अधिक समय कांग्रेस के कार्यों में व्यतीत होने लगा। शीघ्र ही वे मेरठ जिला कांग्रेस कमेटी के जनरल सेक्रेटरी और फिर प्रधान चुने गए। सन् १९४० से ४६ तक वे मेरठ जिला बोर्ड के सदस्य रहे। मेरठ जिला बोर्ड के उप प्रधान पद को भी उन्होने कई वर्ष तक सुशोभित किया।

श्री चरणसिंहजी ने भारत के स्वातंत्र्य-संग्राम में एक कुशल सैनिक और सेनानी की भाँति भाग लिया और देश प्रेम के लिए जेल-यातनाएँ भोगीं। सन् १९३०, १९४० और १९४२ में उन्हे जेल-यात्रा करनी पड़ी। पिछली वार १९३९ में जब कांग्रेस ने प्रदेश के सामान्य निर्वाचन में भाग लिया तब मेरठ के निर्वाचन क्षेत्र से वे असेम्बली के सदस्य चुने गए। महायुद्ध प्रारम्भ होने पर कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार के युद्ध प्रयत्नों में हाथ बटाने से इन्कार कर दिया और कांग्रेस के समस्त पदो से इस्तीफा दे दिया। कांग्रेस के नेताओ को पकड़कर जेलो में ठूँस दिया गया श्री- चरणसिंहजी भी ब्रिटिश सरकार के कोप-भाजन हुये।

महायुद्ध समाप्त होने के बाद सन् १९४६ में मेरठ की जनता ने उन्हे फिर असेम्बली के लिए अपना प्रतिनिधि निर्वाचित किया। सन् १९४६ से वे उत्तर प्रदेश लेजिस्लेटिव कांग्रेस पार्टी के जनरल सेक्रेटरी और उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी की कार्यकारिणी समिति के सदस्य की हैसियत से कार्य कर रहे हैं।

सन् १९४६ में कांग्रेस मंत्रिमंडल का निर्वाचन होने पर श्री चरणसिंहजी सभा-सचिव के पद पर नियुक्त किये गए व एक वर्ष तक वे माल-विभाग का कार्य देखते रहे। उसके बाद सितम्बर १९४७ से ४८ तक वे चिकित्सा एव जन-स्वास्थ्य-विभाग का काय देखते रहे और अप्रैल १९४८ में उन्हे न्याय-विभाग का काय सौंपा गया। सन् १९५० में न्याय विभाग क साथ ही वे सूचना और विधान-निर्माण का काम भी देखने लगे। तब से इस समय तक वे इन तीनों विभागो का काय संचलन बड़ी योग्यता से करते रहे।

श्री चरणसिंहजी को सूचना, न्याय एव विधान-विभागों का कार्य सौंपा गया है। श्री चरणसिंह के मंत्रि पद पर नियुक्त किये जाने के फलस्वरूप अब उत्तर प्रदेशीय मंत्रिमंडल के सदस्यो की संख्या ११ हो गई है।

श्री चरणसिंहजी आर्यसमाज और वैदिक धर्म के भी अनुयायी हैं। इस दिशा में भी आपकी सेवाएँ प्रशंसनीय हैं। उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री- मदनमोहन सेठ ने आपके मन्त्रि-पद पर नियुक्त होने के उपलक्ष्य में अपनी और सभा की ओर से



श्री चरणसिंहजी

आपको हार्दिक बधाई दी है, तथा आपके दीर्घायुष्य के लिए परमात्मा से प्रार्थना की है, जिससे आप देश और समाज की अधिकाधिक सेवा कर सकें।

श्री चरणसिंहजी ने उत्तर प्रदेश के कब्जा आराजी कानून का गहन अध्ययन किया है। प्रदेश की कृषि समस्याओ की उन्हे विशेष जानकारी है। उत्तर प्रदेश-जमींदारी विनाश एव भूमि-व्यवस्था बिल का आलेख तैयार करने में उन्होने प्रमुख भाग लिया है। यह बिल अब कानून का रूप धारण कर चुका है। सन् १९४७ में उन्होने जमींदारी उन्मूलन नामक एक पुस्तक भी प्रकाशित की। जमींदारी उन्मूलन प्रचार बोर्ड के वे अध्यक्ष रह चुके हैं। इसके अतिरिक्त समाचारपत्रो में काम करने वालों की स्थिति की जाच करने के लिए उत्तर प्रदेश-सरकार द्वारा नियुक्त की गयी समाचार पत्र-उद्योग जांच समित के वे अध्यक्ष रहे।

——

नैनीताल आर्यसमाज मन्दिर की आधार शिला

३ जून १९५१ को नैनीताल आ० स० मन्दिर की आधारशिला उत्तर प्रदेशीय सरकार के प्रधान मन्त्री माननीय श्री प० गोविन्द-वल्लभ पन्त के कर कमलों द्वारा रखी गयी। इस अवसर पर श्रीमान् पन्तजी ने बड़ा प्रभावशाली भाषण दिया और कहा कि देश में जो कुछ जागृति हुई है, उसका अधिकाश श्रेय आर्यसमाज को है। आर्यसमाज ने अछूतोद्धार के लिये बहुत बड़ा काम किया, वह सार्वजनिक सेवा में अग्रसर रहा। आज सबसे अधिक आवश्यकता यह है कि साम्प्रदायिक भेद-भाव भूल कर सम्मिलित शक्ति द्वारा मानवता की सेवा में सलग्न रहा जाय। श्री प० अलगूरायजी शास्त्री ने आध घण्टे से अधिक भाषण दिया। दूसरे दिन अर्थात् ४ जून को भी शास्त्रीजी का प्रभावशाली भाषण हुआ। माननीय खेर साहब और माननीय श्री चरणसिंहजी के भी भाषण हुए। इस अवसर के चित्र आगामी अङ्क में दिये जायेंगे।

——

[छठे पृष्ठ का शेष]

माता को चाहिए कि बालक को स्वयं खिलाए, उस पर प्यार करे, उसे हसाए और उसके साथ बातें करे। बालक को खिलाते समय माता के सहज वात्सल्य पूर्ण हृदय से जो विद्युतधारा निकलती है, उसका बालक के ऊपर विशेष प्रभाव पड़ता है।

नौकरों के हाथों में रहने से बच्चो में स्वाभाविक गुणो के विकास को प्रोत्साहन तो मिलता ही नहीं, उलटे उनमें अनेक दुर्गुण आ जाते हैं। निम्न स्तर क नौकर बालकों को अनेक गन्दी बात सिखा देते हैं। मैं समझती हूँ, नौकरों से और सब काम कराये जाय, पर बच्चों को खिलाना और भोजन बनाना ये दो काम स्त्रियों को अपने आपही करने चाहिए। भोजन बनाने और परोस कर खिलाने में भी भावनाओं का प्रभाव काम करता है। पुरानी कहावत है "बिना माता के परसे और बिना इन्द्र के बरसे तृप्ति नहीं होती।" हमारे शास्त्रों में भोजन खिलाते समय पत्नी को भी माता की उपमा दी गई है।

मैं अपनी बहनो से निवेदन करूंगी, कि यदि वे रख सकतीं हैं, तो सब कामों के लिए नौकर रखल, परन्तु ऊपर बताये दो काम स्वयं अपने हाथों करने में ही उनका सच्चा गौरव और कल्याण है। और तभी वे सच्ची माता कहाने की अधिकारिणी हो सकती हैं।

——

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः,
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःख भाग्भवेत ।

आर्य ॐ मित्र

आगरा, ज्येष्ठ शुक्ला १० सवत २००८ वि०, गुरुवार, ता० १४ जून १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि सवत् १९७२९४९०५१

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव, यद्भद्रं तन्न आसुव ।

हे देव, दुर्गुणो दुःखो से बच जायें
सद्गुणो सुखों को ही सदैव अपनायें
कर कृपा हमें सब भाँति समृद्ध बनाओ
हे नाथ, प्रेम-पीयूष नित्य बरसाओ

वृन्दावन-गुरुकुल बीमार है !

निदान और चिकित्सा

वृन्दावन-गुरुकुल एक ऐसी शिक्षण-संस्था है, जिसे क्षय का रोग लग चुका है, और जिसका रोगी शरीर दिनोदिन क्षीण और जर्जर होता रहा है। महोत्सव के समय इस रोग-ग्रस्त शरीर को तेल तथा पाउडर से चुपड़ कर, प्रोपेगेंडा के डण्डा के सहारे खड़ा करने की कोशिश की जाती है, परन्तु उत्सव बीतने ही विवशतापूर्वक वह फिर रोग-शय्या पर जा पड़ता है !

'उनके आने से जो आ जाती है रौनक मुँह पर
वे समझते हैं कि बीमार का हाल अच्छा है'

महोत्सव के समय गुरुकुल-यात्रा खेल कूद सभा सम्मेलन और समारोह-रङ्ग देख कर समझ लेते है कि गुरुकुल का हालत बहुत अच्छी है, वह उन्नति-पथ पर अग्रसर है और उसे किसी प्रकार का कष्ट नहीं है। परन्तु वस्तुतः गुरुकुल रोगी है, और उसकी दशा उत्तरोत्तर निराशापूर्ण होती चली जा रही है। न उसके पास औषधि के लिये काफी धन है और न परिचर्या के लिए सुयोग्य जन। अभाव है न सद्भाव। किसी प्रकार गुरुकुल की यह कष्टपूर्ण काया ज्यों-त्यों कर चल रही है।

आज हम अपने देश के भाग्य-निर्णायक स्वय हैं, हमारा ही राज्य या स्वराज्य है। ऐसा अनमोल अवसर पाकर जो राष्ट्रिय शिक्षण-संस्था सफल-समुन्नत और सम्पन्न होनी चाहिये थी, वह आज अपार कष्ट से कराह रही है; अन्न वस्त्र के लिये भटक रही है; और औषधि उपचार के लिये तरस रही है। बहुत-से आशावादी आर्य इन पंक्तियों को पढ़ कर घृणा की हंसी हंसते हुए कहेंगे कि 'आर्य-मित्र' भी अजीब जन्तु है, जो एक भला-चगा स्वस्थ सस्था को रोगी या बीमार बताता है, परन्तु बात ऐसी ही है। हम झूठे आशावाद के समर्थक नहीं है। ग्रीष्म को वसन्त या पावस को पतझड़ कहने की हमारी आदत नहीं। सच्चा आशावादी वही है, जो आशा के अमृत से अपना हृदय भर कर, उत्साह पूर्वक कार्य-क्षेत्र में कूद पड़ता और सफलता को घसीट कर लाता है। कोरे आशावाद-वारिधि में निमग्न रहने वाले जन कल्पनाशूर तो हो सकते हैं, कर्मवीर नहीं। मन-मोदकों से मुँह मीठा कभी नहीं हो सकता। आज आर्यसमाज में ऐसे ही अव्यवहार्य आशावाद की आँधी आई हुई है। कुछ भाई तो कौंसिलो की कुर्सियों या असेम्बलियों के आसनों पर बैठ कर, भारत से भ्रष्टाचार का भूत भगाने और विश्व में वेदों का डङ्का बजाने के सुख स्वप्न देख रहे हैं, और कुछ भाई राजसत्ता की बागडोर अपने कर कमलों में ग्रहण कर 'राम-राज्य' स्थापित करने के लिये उतावले दिखाई देते हैं।

जो समाज वृन्दावन गुरुकुल को नहीं चला सकता, सभा के वेद प्रचार विभाग को सम्पन्न और सुदृढ़ नहीं बना सकता, अपने संगठन में सफल नहीं हो सकता, काम करने के लिये कुछ घण्टे रोज नहीं दे सकता वह अपनी थोथी आशावादिता के बल पर विश्व को आर्य बनावेगा ! और भारत-भूमि में सत्य युग प्रवर्तित करेगा ! कैसा हास्यास्पद प्रसग और कितनी खेदपूर्ण बात है।

आप किसी दिन वृन्दावन-गुरुकुल जाइये। जिस समय आप गुरुकुल मार्ग पर अग्रसर होंगे, ऐसा प्रतीत होगा, मानो किसी रेगिस्तान की ओर पग बढ़े जा रहे हैं। सड़क-सुन्दरी की ऊबड़-खाबड़ हड्डियों को पददलित करते हुए गुरुकुल-भूमि में पहुँचिये। न भूमि में आकर्षण दिखाई देगा और न सौन्दर्य। न हरियाली और न वानस्पतिक सुषमा। कलित कालिन्दी के सुरम्य तट पर व्रज में बनी हुई इस संस्था में इतनी शुष्कता और ऐसी नीरसता ! आश्चर्य ! महा आश्चर्य ! किसी साधारण हाई स्कूल या कालिज में आपको जो चहल-पहल दिखाई देती है, वह हमारी इस पुरानी-पवित्र और विशाल संस्था में कदाचित ही कभी मिले तो मिले। सदव धन की कमी, कार्यकर्ताओं का अभाव और ब्रह्मचारियो की न्यूनता। कालिजों में विद्यार्थियों को दाखिला नहीं मिलता और गुरुकुल के लिये विद्यार्थी नहीं मिलते ! कितने दुःख की बात है !

वस्तुतः बात यह है कि वृन्दावन गुरुकुल की ओर आर्यजनता ध्यान नहीं देती। एक प्रबन्ध-समिति बना दी और हो गया उद्धार। इस समिति ने भी साल में कभी-कभी गुरुकुल में अधिवेशन करके ही अपने परम कर्तव्य-पालन की पराकाष्ठा कर दी ! किसी को वेतन देने के लिये टका नहीं, और जो वेतन ले उसके लिए सम्मान नहीं। अगर कोई निःस्वार्थ सुयोग्य कार्यकर्ता वहाँ पहुँच भी जाय तो उस पर दलबन्दी की दुनाली दागी जाय। फिर बतलाइए काम कैसे चले, और सफलता क्योंकर हो ?

स्व० महात्मा नारायण स्वामी ने अपने तप-तेज से गुरुकुल-गौरव बढ़ाया, उनके विरुद्ध भी गुटबन्दियाँ की गयीं। पर वे सब कुछ सहते हुए हिमाचल की तरह अटल और अचल बने रहे। और भी अनेक विद्वान् आये परन्तु वे सब उपेक्षा की आँधी या अपमान के तूफान में उड़ा दिये गए। विद्वद्वर श्री प० गङ्गाप्रसादजी रिटायर्ड चीफ जज ने नाममात्र का आनरेरियम लेकर गुरुकुल-सेवा प्रारम्भ की, परन्तु उन पर स्वार्थान्धता का अभिशाप लाद कर निकाल बाहर किया। विद्वद्वर स्व० श्री प० घासीरामजी ने डेढ़ वर्ष तक गवर्नर का काम किया, अन्त को उन्हें भी षडयन्त्र का शिकार बनना पड़ा। राज्यरत्न स्व० श्री प० आत्मारामजी, श्री प० शिवनारायण शुक्ल आदि किसी की भी हिम्मत न हुई जो अपमान का विष पान करके गुरुकुल सेवा में सलग्न रहता। चीफ जज साहब ने तो गुरुकुल से 'आनरेरियम' के रूप में जो थोड़ा सा रुपया लिया था, उसे सूद समेत वापस कर अपना प्रायश्चित्त किया।

तो क्या गुरुकुल भूमि में कुछ ऐसा असर है जो कोई सुयोग्य कार्यकर्ता वहाँ नहीं ठहरने पाता। हाँ, है। धन की कमी के कारण वहाँ अधिक योग्य व्यक्ति नहीं पहुँच पाते जो पहुँचते हैं, उन्हें निर्वाहार्थ लेने के कारण आर्य जनता आदर की दृष्टि से नहीं देखती। जहाँ शिक्षा के आधुनिक साधन और योग्यतर व्यक्ति न हो वहाँ कैसे आकर्षण हो और कहाँ से धन आवे। गुरुकुल सम्बन्धी प्रश्न उपस्थित होने पर अन्तरंग सदस्यगण और गुरुकुल प्रबन्ध-समिति के मेम्बर गुरुकुल-वासियों की बातों में आ आकर दलों में विभक्त हो जाते हैं, क्योंकि उन्हें स्वय तो गुरुकुल का कुछ अनुभव होता नहीं, कभी दिलचस्पी ली नहीं, ली तो साल में एक-आध घण्टे से अधिक नहीं। ऐसे लोगों को अपनी सारी सम्मति दूसरों की राय के आधार पर बनानी पड़ती है, और आगे चलकर यही भावना पार्टी में परिणत हो जाती है। पार्टी के इन पाटों के बीच न जाने अब तक कितने कार्यकर्ता घिस गए और कितने पिस गये।

हमारी राय में अगर आर्य जनता वृन्दावन-गुरुकुल को जीवित रखना चाहती है तो उसे तीन बातें करनी होंगी—आवश्यक धन-संग्रह, विशेषज्ञ अध्यापकों की व्यवस्था, प्रभावशाली और विद्वान् आचार्य।

सबसे बढ़कर ऐसा संचालक या गवर्नर जो अनुभवी और शिक्षा-शास्त्री होने के अतिरिक्त व्यापक सूझ-बूझ और क्रियात्मक कल्पना-शक्ति का व्यक्ति हो। मुख्याधिष्ठाता और आचार्य पर अन्तरंग सभा को पूरा विश्वास कर उन्हें उनके उपयुक्त सब अधिकार देने चाहिएं, उनके काम में कम से कम हस्तक्षेप करना चाहिये। गुरुकुल वासियों का, चाहे वे वैतनिक हों, चाहे अवैतनिक, समान सम्मान होना आवश्यक है। एक क्षण के लिए भी कोई उन्हें दीन-हीन न समझे। वे स्वयं भी अपने को स्वाभिमान-सम्पन्न समझ कर एक त्यागी-तपस्वी और सच्चे सात्विक 'मिशनरी' की तरह काम करें। कुछ न लेकर कुछ न करने वाले अवैतनिकों की अपेक्षा कुछ लेकर सब कुछ करने वाले त्यागी कार्यकर्ता महान् हैं।

गुरुकुल की पाठविधि पर पुनः विचार होना चाहिये, वेद-वेदांग और देववाणी के साथ-साथ, कुछ ऐसे विषयों की भी शिक्षा दी जानी चाहिये जो आजकल बहुत उपयोगी समझे जाते हैं—यथा वक्तृत्वकला, सम्पादनकला, संक्षिप्त लेखन-कला, ग्रन्थ-प्रणयन, सेक्रेटरी के काम की शिक्षा, समाज-सेवा, नागरिकता संघटन-कार्य इत्यादि। इससे संस्था में बड़ा आकर्षण होगा। हिन्दी की उच्च शिक्षा के लिये विशेष रूप से विस्तृत आयोजन होना चाहिये। ये सब शिक्षाएं अनुभवी और विशेषज्ञों द्वारा ही दी जायें सुस्ती मूर्खों द्वारा नहीं। ऐसे शिक्षकों की उचित व्यवस्था करना संचालकों का मुख्य कर्तव्य है। किसी काम के लिए धन, जन, श्रद्धा, सहयोग और संलग्नता आदि की आवश्यकता होती है, इनकी पूर्ति हो जाने पर ही सफलता देवी के दिव्य दर्शन होते हैं।

———

स्व० श्री पं० घासीरामजी का पत्र

विद्वद्वर श्री प० घासीराम एम० ए० आर्यसमाज के दूरदर्शी नेता, विमल विचारक, महान् साहित्यकार और अनमोल रत्न थे। आपको आर्यसमाज और गुरुकुल शिक्षा से असीम अनुराग था। आप संस्कृत के स्वयम् बहुत बड़े विद्वान् थे। मित्रों की प्रेम-प्रेरणा और अपनी श्रद्धा-भक्ति से पण्डितजी ने वृन्दावन गुरुकुल की सेवा स्वीकार की। डेढ़ वर्ष तक गवर्नर (कुलपति) के रूप में बड़ी तत्परता के साथ काम किया। अन्त में आप गन्दी दलबन्दी के शिकार बने और गुरुकुल छोड़ने को विवश हुए। गुरुकुल छोड़कर श्री पण्डितजी ने अपने आदरणीय मित्र श्री मदनमोहन सेठ एम० ए० को १२ नवम्बर १९३१ को अंग्रेजी में जो पत्र लिखा, उसके आवश्यक अंश का अनुवाद नीचे दिया जाता है। इस पत्र के पढ़ने से ज्ञात होगा कि हमारा गुरुकुल किस बीमारी से बीमार है और स्वर्गीय पण्डितजी के शब्दों में इस बीमारी का क्या इलाज है। हम चाहते हैं कि गुरुकुल प्रेमी जनता इस पत्र को ध्यान पूर्वक पढ़कर अपना कुछ कर्त्तव्य निश्चित करे। अगर उत्तर प्रदेशीय लाखों आर्यों की प्यारी संस्था गुरुकुल की इस प्रकार रिझ-रिझ कर मृत्यु होनी है, तो अच्छा है कि उसके जीवन-सूत्रको तुरन्त तोड़ दिया जाय। श्री प० घासीरामजी लिखते हैं—मैंने गुरुकुल से अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया। इस समय ऐसा प्रतीत होता है कि मैंने अपने मित्रों के आग्रहवश गुरुकुल की गवर्नरी स्वीकार कर बड़ी मूर्खता की। मैं गुरुकुल में कुछ भावनाएं लेकर गया था, खेद है कि उनको कार्य-रूप में परिणत न कर सका। फिर भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि गुरुकुलोन्नति विषयक समस्याएं मुझे बिलकुल जटिल प्रतीत नहीं हुईं। यदि मुझे अपनी कार्य-प्रणाली पर काम करने दिया जाता और सभा की ओर से भी पर्याप्त आर्थिक सहायता मिलती तो मुझे विश्वास है कि मैं गुरुकुल को [illegible] के अन्तर्गत उन्नति-पथ पर अग्रसर कर देता। मेरा [illegible] में गुरुकुल की उन्नति में तीन बहुत बड़ी रुकावटें हैं, १ धन की कमी, २ अध्यापक वर्ग की अयोग्यता और अनुभव हीनता ३ गुरुकुलवासियों के साथ सहानुभूतिशून्य व्यवहार। यह बात निःसंकोच कही जायगी कि आवश्यक धन-संग्रह करनेमें, सभा ने मेरे साथ सहयोग नहीं किया। मेरे डेढ़ वर्ष के कार्य-काल में केवल एक शिष्ट मण्डल (डेपूटेशन) धन एकत्र करने के लिये गया, जो बड़ी कठिनता से लगभग तीनसौ रुपये की क्षुद्र धन-राशि एकत्र कर सका।

गुरुकुल में मुझे षड्यन्त्र का शिकार भी बनना पड़ा। यह षड्यन्त्र अयोग्य और अकुशल व्यक्तियों ने मेरे विरुद्ध रचा था। क्योंकि मैं इन व्यक्तियों को निकाल कर गुरुकुल का उनसे पिण्ड छुड़ाना चाहता था। सब से अधिक अकमण्य, अयोग्य और गुटबाज व्यक्ति गुरुकुल का आचार्य था। उसने मिथ्या भाषण और पैशुन्य द्वारा सभा के अन्तरंग सदस्यों में मेरे विरुद्ध एक दल बना दिया। परिणाम यह हुआ कि इस दल ने मुझे और मेरे प्रस्तावों को आगे नहीं बढ़ने दिया। वास्तविक स्थिति बिना समझे और मेरी बात बिना सुने-समझे उसने मेरी भर्त्सना की।

पूर्ण रूप से निराश और दुखी होकर मैंने इस कृतज्ञताशून्य कार्य को छोड़ दिया। गुरुकुल के कार्यसंचालन में मुझे अपने स्वास्थ्य और समय की जो बलि देनी पड़ी, उसका अनुमान भी कर सकना कठिन है।

मेरी दृढ़ धारणा है कि जब तक गुरुकुल से अयोग्य व्यक्तियों को न निकाला जायगा, और जिस व्यक्ति को गुरुकुल प्रबन्ध का उत्तर-दायित्व सौंपा गया है, उस पर पूरा विश्वास न किया जायगा, तब तक यह संस्था कदापि उन्नति नहीं कर सकती।

वर्तमान परिस्थितिमें योग्य से योग्य व्यक्ति भी गवर्नर के रूप में वहाँ नहीं टिक सकता। मेरे जीवन में यह एक दुःखपूर्ण घटना हुई, हर्ष है कि अब उसका अन्त भी हो गया।

———

सिनेमा और आर्यसमाज

हमारे पास ऐसे कई लेख आए हैं, जिनमें आर्यसमाज के प्रचार-कार्यके लिये चल-चित्रों से काम लेने पर जोर दिया गया है। कुछ लेख इसके विरुद्ध भी हैं, उनकी राय में महर्षि दयानन्द के चित्र और चरित्र को चित्रपट पर लाना कुछ अच्छी बात नहीं है। दोनों बातों में तथ्य है। पहली बात तो इसलिये ठीक है कि संसार में सब देश अपने प्रचार-कार्य के लिये रेडियो और चल-चित्रों का प्रयोग कर रहे हैं। चित्रपट पर भारत और भारत से बाहर के प्रायः सभी धार्मिक महापुरुष, नेता और बड़े-बड़े लोग आ गये हैं। यदि ऋषि दयानन्द का परम पावन चरित्र भी चित्रपट पर लाया जाता है तो कोई हानि दिखाई नहीं देती। प्रामाणिक जीवनी के आधार पर ऋषि-जीवन-कथा बड़ी सरलता से तैयार हो सकती है, इसके पात्रों में गम्भीरता और पवित्रता का पूरा ध्यान रखा जा सकता है। आवश्यक और अवसरोपयोगी विशुद्ध और सुन्दर गायन भी उसमें सम्मिलित हो सकते हैं। सौभाग्य से ऐसा करने वाले विशेषज्ञ कलाकार मौजूद हैं। भारतीय सिनेमा-संसार और नाटक-जगत् में जिन दो कलाकारों की सबसे अधिक ख्याति हुई वे हैं श्री बेताबजी और श्री सुदर्शनजी। श्री बेताबजी पाँच वर्ष पूर्व चल बसे, परन्तु श्री सुदर्शनजी अपनी प्रतिभा-प्रसूत कला कृतियों से आज भी सिनेमा-संसार को चकित कर रहे हैं। श्री बेताबजी और श्री सुदर्शनजी दोनों का ही आर्यसमाज से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा और दोनों ने ही ऋषि दयानन्द के प्रति परम श्रद्धा-भक्ति प्रदर्शित की है। श्री सुदर्शनजी तो 'आर्यगजट' के एडीटर भी रह चुके हैं, आजकल आप बम्बई में हैं। अभिप्राय यह कि सुदर्शनजी जैसे कलाकारों के तत्वावधान में यदि ऋषि का चल चित्र तैयार किया जाय तो उसकी समीचीनता, पवित्रता और गम्भीरता निरन्तर अक्षुण्ण रह सकती है। और जो लोग ऋषि-चरित्र को चल-चित्र पर लाने के इसलिये विरोधी हैं, कि उसमें स्त्रियोंका गन्दा या शृंगारिक 'पार्ट' होगा उनकी भी आशंका दूर हो सकती है। अगर यह कार्य किसी पेशेवर कम्पनी को दिया गया तो सम्भव है उसमें अवांछनीय अंश आ जाय, परन्तु आर्यसमाज अपने उद्योग द्वारा एतदर्थ कोई पृथक संस्था या कम्पनी खड़ी करे तो उसमें किसी प्रकार की हित-हानि की आशंका नहीं की जा सकती। मैजिक लालटेन द्वारा अभी तो ऋषि चित्र-चरित्र दिखाये जाते हैं, सिनेमा पर आने से ही उनमें क्या हानि हो जायगी। सिनेमा यन्त्र शिक्षा-प्रसार और धर्म-प्रचार दोनों का

साहित्य-सौरभ

आर्योदय काव्यम् (पूर्वाद्ध) लेखक श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०, प्रकाशक—कला प्रेस, प्रयाग मूल्य १॥)

कुछ सप्ताह पूर्व श्री पं० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय के साहित्यिक जीवन का उल्लेख करते हुए हमने लिखा था कि वे 'आर्योदय' नामक संस्कृत का एक काव्य लिख रहे हैं। हर्ष की बात है कि इस काव्य का पूर्वाद्ध प्रकाशित हो गया है। विद्वानों ने इसे बहुत पसन्द किया है, शैली को सराहा है और भावों की भरपूर प्रशंसा की है। विहार के राज्यपाल (गवर्नर) श्री अणे महोदय संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित हैं। 'आर्योदय' को पढ़कर आपने जो सम्मति भेजी है, वह अविकल रूप से नीचे प्रकाशित की जाती है। उत्तर प्रदेश के शिक्षा-मन्त्री विद्वद्वर श्री सम्पूर्णानन्दजी ने भी 'आर्योदय' के विद्वान् लेखक को दाद दी है। माननीय श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी ने भी इस काव्य को सराहा है। इन दोनों महानुभावों की सम्मतियाँ भी सारांश रूप में नीचे दी जाती हैं। आर्यसमाज को गर्व होना चाहिये कि उसमें उपाध्यायजी जैसा ठोस विद्वान् मौजूद है। आपकी प्रतिभा-प्रभा साहित्याकाश की प्रत्येक दिशा में बड़ी उज्ज्वलतापूर्वक चमक रही है। भगवान् ने उनकी वाणी और लेखनी दोनों में दिव्यता प्रदान की है। वे दार्शनिक, शिक्षाशास्त्री, वक्ता, लेखक, कवि, विचारक, विद्वान् और पण्डित हैं। सार्वदेशिक सभा के प्रधान मन्त्री और उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान रहकर प्रचार, संघटन और सुव्यवस्था सम्बन्धिनी योग्यता का भी प्रशंसनीय परिचय दे चुके हैं। 'आर्योदय' के सम्बन्ध में हम अपनी सम्मति फिर लिखेंगे। पुस्तक आलोचनार्थ हमारे पास पहुँच गयी है।

माननीय श्री सम्पूर्णानन्दजी शिक्षा-मंत्री

प्रिय गंगाप्रसादजी,

आपकी पुस्तक मिली। मैं उसे देख गया। इस दृष्टि से मुझे पुस्तक बहुत पसन्द है कि संस्कृत में एक ऐसी पुस्तक लिखी जाय जो भारत के इतिहास का थोड़े में पूरा दर्शन करा दे। मैं यह भी चाहता था कि पुस्तक धर्म की भूमिका में लिखी जाय। आपकी रचना इस दिशा में प्रमाण है। इसलिए मैं इसका स्वागत करता हूँ। ·····"

भवदीय—सम्पूर्णानन्द

माननीय श्री क० मा० मुन्शी

श्री भाई,

आपका तारीख ११-४-५१ का पत्र तथा साथ में 'आर्योदय काव्य' की एक प्रति मिली। यह सुन्दर रचना अपनी रमणीयता का सर्वोत्तम प्रमाण है। आपका प्रयास प्रथम होता हुआ भी स्तुत्य है। ऐसे प्रकाशन के लिये बधाई।

क० मा० मुन्शी

ही बहुत बड़ा साधन है उसके द्वारा खूब प्रचार किया जा सकता है। आजकल हमारे देश में सिनेमा द्वारा जो अनर्थकारी पाप-प्रचार हो रहा है, उससे समझदारों को घृणा और अरुचि होना स्वाभाविक है। परन्तु सरकार के कानों पर जूँ तक नहीं रेंगती। इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि यदि किसी को दूध, दही या हलुवा के अनुचित सेवन से, अजीर्ण या विसूचिका हो जाय तो दूध-दही या हलवा के विरुद्ध ही युद्ध छेड़ दिया जाय और उसका प्रचार तथा प्रसार रोका जाय। रोका जाने वाला अनुचित प्रयोग है। किसी चीज का उचित प्रयोग तो कभी दुःखदायी हो ही नहीं सकता। जो बात भोजनादि के लिये सत्य है, वही सिनेमा के लिये भी सत्य कही जा सकती है।

माननीय श्री एम-एस अणे राजपाल विहार

Dear Shri Gangaprasad Upadhyaya.

I am very thankful. to you for sending me your Sanskrit poem आर्योदयकाव्यम् which was received some time ago. I think that my office has already acknowledged its receipt. I read some portions of this great peom and went through the whole of the 4th canto. stanza by stanza. I also read some of the stanzas of the 7th canto which describes the successful fight given by shri Chattrapati Shivaji Maharaj to emancipate Bharat from the yoke of Aurengzeb. The whole plan of your poem is grand and highly patriotic. The story of India's war for emancipation has not been written by the foreign historians with any scrupulous regard for truth or with any feeling of genuine sympathy for the Aryas who were being enslaved and tyrannised. Every Indian who has any respect for Vedic culture will certainly welcome the book which you have written. On gaining independence we have entered on the era of the revival of Indian culture. It is therefore very appropriate that you have thought of narrating the story of our fall and rise in Sanskrit verse.

Your poem shows your mastery of Sanskrit language. The lines move smoothly and melodiously. Most lofty sentiments are expressed in simple but elegant style. The description of the army of Shri Chattrapati Shivaji Maharaj in the following lines brings out clearly the high ideals of Indian soldiers and their leaders.

शर्मिष्ठा शिवाऽनीकिनी शूरगर्भा
दयार्द्रा दयाशत्रु शत्रु र्बलिष्ठा
शठान् भर्त्सयन्ती शुभान् पालयन्ती
व्यचारीदहा दिक्षु पापायकेतुः ७।४४

In the following lines of 10th Canto you have reveald in felicitious language a great truth, of which India has need even today after its emancipation, for the preservation of its independence and progress of its people on lines of its genius.

पादक्रान्तरजः कणा अपि पथःकुर्वन्ति सम्मेलन-
मापत्तावनुभूय दुःखसमतां पिण्डीभवन्त्येव च। १०।३८
कांक्षामात्रमलं नृणां न हृदये साध्यस्य पूर्तौ क्वचिद्
योग्यायैव ददाति वांछितफलं विश्वम्भरः सर्वदा
यावद् दुष्टगुणान् त्यजेन्न जनता जातीयताघातकान्
तावच्छक्तिमुपैति नैव, न च वा मुंचेत पराधीनताम् १०।४०

This Sanskrit poem deserves to be prescribed as a text book for the study of Sanskrit in High Schools in India. They will learn Sanskrit language and also have a correct idea of their own history in a nut-shell.

I congratulate you on your learned effort to popularize Sanskrit language at this time. The readers of your fluent verses will see that Sanskrit language is as living as any other so called living languages of the civilized world. and it is more powerful in expressing the deepest emotions of the Indians than any vernacular or foreign language.

I hope your effort will be duly appreciated and patronized so that you may be encouraged to pursue it further to complete the book.

With my best regards,
Yours sincerely,
M. S. Aney.

बाल-विनोद

ज्ञानू दादा के नाम पत्र

मैंने एक अखबार में पढ़ा कि सरकार ने नदियों के पुलों और रेल की पटरी के आस-पास पुलिस इसलिए तैनात करदी है, कि परीक्षा में फेल होने वाले लड़के इन स्थानों पर आत्महत्या न करने पावें। दादा, परीक्षा में फेल होना क्या ऐसा पाप अथवा अपराध है, जिसके कारण लड़के आत्म-हत्या कर लेते हैं।

—सत्यभूषण चतुर्वेदी, लखनऊ

[परीक्षा में फेल होना न कोई पाप है, न अपराध। उसमें पास हो जाना भी योग्यता की कोई सच्ची कसौटी नहीं है। योग्य विद्यार्थी भी अनेक बार फेल हो जाते हैं और अयोग्य अपनी तिकड़म से पास हो जाते हैं। परिश्रमी लड़के भले ही फेल हो जाय, वे आत्मघात जैसा कुकर्म कभी नहीं करते। उन्हें आत्म-विश्वास होता है, हमने अपना कर्तव्य किया, फल आशानुरूप नहीं मिला, न सही। आत्महत्या वे ही लड़के करते हैं जो घर वालों और अपने आत्मा को भी धोखा देते हुए, पढ़ने के समय को, सिनेमा देखने या ऐसे ही अन्य दुर्व्यसनों में बर्बाद करते हैं। अन्त में जब पोल खुलती है, तब आत्मघात करके अपनी नालायकी और कायरता का ढिंढोरा पीटते हैं। ऐसे निकम्मे लड़कों की सर्वत्र निन्दा ही होती है।]

थोड़ा हँस लीजिए

एक अँगरेज, हिन्दुस्तानी से—"क्या बात है, अँगरेज सब एक रंग के होते हैं, लेकिन हिन्दुस्तानी सब एक रंग के नहीं होते।"

हिन्दुस्तानी—"जी हाँ गधे अक्सर एक ही रंग के होते हैं, लेकिन घोड़े सब एक रंग के नहीं होते।"

❀ ❀ ❀

लड़का मां से—"अम्मा, जिस काम में मार खानी पड़े, क्या वह काम करना चाहिए?"

मां—"नहीं बेटा, हरगिज नहीं करना चाहिए।"

लड़का—"तो मैं कल से पढ़ने नहीं जाऊँगा, क्योंकि पढ़ने में मार खानी पड़ती है।

—विद्यासागर, आगरा

बाल-जगत्

अनेक बालकों की चिट्ठियाँ आती हैं, जिनमें वे पूछते हैं—"मैंने कहानी लिखी है, मैंने कविता बनाई है, आप बालविनोद में छाप तो भेजूं।" ऐसे प्रश्न करने वाले सब बाल साथियों से हमारा कहना है कि वे अपनी रचनाएँ अवश्य भेजें। छापने लायक चीजें अवश्य छापी जायेंगी।

२४ मई के अङ्क में प्रकाशित पहेली के हल इस प्रकार हैं—

६	३	६		३	६	३
३		३		६		६
६	३	६		३	६	३

निम्नलिखित बालकों के हल इनसे बिलकुल मिलते हैं—विद्यासागर गुप्त, आगरा। ब्रह्मचारी ओमप्रकाश, आर्ष गुरुकुल, एटा। शैलेन्द्र गुप्त, नेहरूनगर कानपुर। सत्यप्रकाश, सिद्धान्तसरोज, मुरादाबाद। अर्जुनसिंह 'अरुण' कानपुर। राजेन्द्रकुमार, मुरादाबाद। ओमप्रकाश आर्य रिवाड़ी। वेदप्रकाश आर्य, एतमादपुर। वीरेन्द्र भार्गव, सागर। पुरुषोत्तमशरण अग्रवाल, रामपुर। उमेशचन्द्र माथुर, तिलहर। उर्वशीदेवी आर्या, बिजनौर। राजेन्द्र आर्य, चन्दौसी। राजनारायण शर्मा, अमौली। वृन्दावन आर्य, कसियारी मैनपुरी। रमेशचन्द्र गुप्त, लवेदी इटावा। शिव प्रेमचन्द्र आर्य, उमरन इटावा। जगदीश्वरदयाल आर्य, बहरायच। नरेन्द्रकुमार अग्रवाल, नजीबाबाद। विमलादेवी, खेड़ा खास मुरादाबाद। विपिनकान्त गुप्त, फैजाबाद।

नीचे लिखे बालकों की पूर्तियों के योग तो ठीक बैठते हैं, परन्तु अङ्कों का कोई क्रम नहीं है—सुभाषचन्द्र शर्मा सासनी अलीगढ़। खेमराम मित्तल, जलालाबाद। रामचन्द्र आर्य, बाराबंकी। चित्रलेखा सकसेना, पटियाली। हीरालाल शर्मा, शेरपुर खानाजादपुर (मुरादाबाद)। धनसीराम बोन्दीया, रायगढ़। सुरेन्द्र वर्मा, गाजियाबाद। प्रमोदकुमार अग्रवाल, फीरोजाबाद। सत्यप्रकाश, बयाना। ओमप्रकाश, दरियागंज, देहली। सत्यकान्तसिंह भार्गव, फीरोजाबाद। सुरेशचन्द्र गुप्त, टॉडा। ज्ञानेन्द्रसिंह गंगवार, मँझला। अजयकुमार गुप्त, कांतिकालौनी, आगरा। विद्याभूषण गुप्त, हसनपुर (मुरादाबाद)। अवधेश शर्मा, कुसुमरा (मैनपुरी) रमाकान्त आर्य, धामपुर। नन्दकिशोरप्रसाद आर्य, अलौली गढ़ (मुंगेर)। हरनामसिंह विद्यार्थी, फतहपुर गयन्द। सर्तशप्रकाश गुप्त, हसनपुर, (मुरादाबाद)। जयप्रकाश गुप्त, दूधली (मुजफ्फरनगर)। चरनसिंह वर्मा, गाजियाबाद। देवेन्द्रनाथ सिन्हा, ग्राम जोकहरा, डा० जोकहरा, जि० आजमगढ़। ——

महिला-मण्डल

सच्ची माता

श्रीमती होमवती उपाध्याय, शास्त्रिणी, एम० ए०

आजकल की पढ़ी-लिखी बहनें इस बात में गौरव समझती हैं कि उनके बच्चे को ऊपरी (डिब्बे का) दूध पिलाया जाता है, और उसे दिन भर नौकर खिलाता है। मैं अपनी उन भोली बहनों से कहूंगी कि वे ऐसा करके अपने बच्चों के प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा नहीं करतीं। साथ ही वह ईश्वरी नियम का उल्लंघन भी करती हैं। परमात्मा की प्रत्येक व्यवस्था बड़ी वैज्ञानिक है। यदि मनुष्य शैशव कालमें पशुओं का दूध पीकर मनुष्य बन सकता, तो ईश्वर उसकी मा के स्तनों में दूध कभी पैदा न करता। जब तक शिशु को मा का दूध पीना आवश्यक है, तभी तक प्रकृति उसकी पूर्ति करती है, जब आवश्यकता नहीं रहती तब मा के स्तनों में दूध स्वतः सूख जाता है। किस बालक के लिए कितना पतला, कितना मीठा और कितना गर्म दूध होना चाहिए उसकी व्यवस्था अच्छे से अच्छा डाक्टर भी ऊपरी दूध में बिल्कुल सही मात्रा में नहीं कर सकता, हाँ मा के दूध में ये सभी बातें ठीक मात्रा में होती हैं, इसे सभी विज्ञानवेत्ता जानते और मानते हैं। कहीं-कहीं किसी रोग आदि के कारण इसके अपवाद भी हो सकते हैं, लेकिन प्रधानतः शिशु के लिए उसकी माता का दूध ही सबसे अधिक हितकर है।

यह बात भी निर्विवाद है, कि प्रत्येक प्राणी के दूध में उसके स्वभाव का प्रभाव रहता है। इसी लिये हमारे आयुर्वेद शास्त्र में बड़े होने पर भी गाय का दूध व्यवहार करने पर विशेष बल दिया गया है। शैशव काल में तो अनिवार्य रूप से मा का ही दूध मिलना चाहिए। आजकल अधिकांश बालकों में बुद्धि की मन्दता, अकर्मण्यता, कायरता, साहसहीनता आदि इसीलिए देखने में आते हैं, कि उन्हें शैशव-काल में मा का दूध पीने को नहीं मिला। पशुओं का दूध पीकर मानवोचित गुण आवें कहाँ से। प्रायः लोगों को कहते सुना जाता है, "देखें तूने कितना अपनी मा का दूध पिया है।" इससे स्पष्ट सिद्ध है कि मा का दूध पीकर ही मनुष्य में साहस, वीरता बुद्धि की प्रखरता आदि गुण आ सकते हैं।

अपना दूध पिलाने के समान ही यह भी आवश्यक है कि बालक को स्वयं खिलाया जाय। नौकर में बच्चे के प्रति वह आत्मीयता और शुभाकांक्षा नहीं आ सकती, जो घरवालों—विशेष करके माता में होती हैं। नौकर कुछ टके लेकर अपना समय देता है, भावनाओं का उससे कोई सम्बन्ध नहीं होता। बच्चे के लालन पालन में भावनाओं की मुख्य आवश्यकता है। बालक को जितना पौष्टिक आहार आवश्यक है, उससे भी अधिक उसे हार्दिक प्यार चाहिए। जिन बालकों को हार्दिक स्नेह नहीं मिलता वे रूखे, चिड़चिड़े, और विरक्त स्वभाव के बन जाते हैं। इसलिए

[शेष पृष्ठ २ पर देखिये]

सिंहावलोकन

आर्य युवकों से

श्री हरिशरण श्रीवास्तव एम० ए०, एल० टी०

किसी भी राष्ट्र के प्राण वहाँ के युवक होते हैं। युवकों में अकर्मण्यता उनके लिये ही नहीं, अपितु समस्त राष्ट्र के लिये अभिशाप होती है। राष्ट्र की चेतना और शक्ति का स्रोत युवकों पर ही निहित है। यदि देश की यह सम्पत्ति अक्रियाशील हो जाय, युवकों की नस-नस में उदासीनता प्रवेश कर ले, तब तो देश का अहित अवश्यम्भावी है। हमारे देश का भी कुछ ऐसा ही हाल है। हमारे नवयुवकों में जो उत्तेजना और जोश होना चाहिये, कहीं उनका पता भी नहीं चलता। प्रचण्ड झंझावात के पश्चात् आकाश में जो शिथिलता छा जाती है ठीक वही दशा नौजवानों की है। स्वतन्त्रता एक लक्ष्य था, युवकों ने उसके लिये बलिदान किया। देश का प्रत्येक नवयुवक अपनी स्थिति के अनुसार उसमें सम्मिलित हुआ। वह लक्ष्य तो प्राप्त हो गया, किन्तु लक्ष्य की प्राप्ति ने रक्त की उष्णता कम कर दी। आज का युवक रोटी की समस्या में कुछ ऐसा उलझ गया है, कि वह उससे छुटकारा नहीं पा रहा। दिन दुनिया सब आर्थिक पहलू से ही आँके जा रहे हैं। और उसी का परिणाम है यह उदासीनता।

पर इस शिथिलता का उत्तरदायी कौन है। यदि विश्व की परिस्थिति और युद्धोत्तर समस्याएँ इसका कारण माना जाय तो किन्हीं अंशों में ठीक कहा जा सकता है। किन्तु संसार के अधिकांश देश युद्ध की विभीषिका के बीच गुजर रहे हैं। युद्ध के भयंकर बादल कहाँ नहीं मँडरा रहे, परन्तु प्रत्येक देश में जो नव स्फूर्ति और नया जोश तथा कार्य करने में तत्परता दिखलाई पड़ती है, वह हमारे युवकों में नहीं है। अपनी इस शिथिलता के जिम्मेवार तो हम ही हैं। परीक्षा में उत्तीर्ण होने के पश्चात् विद्यार्थी अपनी सफलता का प्रसाद विश्राम के मञ्च में चखना चाहता है। परीक्षा-काल में दत्तचित्त विद्यार्थी परीक्षा के उपरान्त निश्चेष्ट हो जाता है; जब तक कि फिर से उसके अध्ययन अथवा कार्य का नवीन क्षेत्र नहीं बन जाता। तब क्या हमारे युवकों के लिए अभी तक कार्य-क्षेत्र का प्रशस्त मार्ग खुला नहीं है? बात यह है कि देश के उत्थान और निर्माण की समस्याएँ कुछ ऐसी उलझ सी गयी हैं कि शताब्दियों की निरुत्साहिता और परतन्त्र मनोवृत्ति स्वयं अपने आप अपने लिये कुछ ढूँढ़ नहीं पा रही हैं। उसे एक ऐसे निर्देशक की आवश्यकता है जो उचित मार्ग का निर्देश कर सके।

परन्तु वह निर्देशक कौन है? आर्यसमाज ने इसका बीड़ा उठाया था। आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने धार्मिक क्षेत्र अथवा सामाजिक क्षेत्र में ही क्रान्ति नहीं की अपितु जीवन के सर्वाङ्गीण रूप की समीक्षा की थी। और यही कारण था कि आर्यसमाज की बहुमुखी कार्य प्रणाली सफलता के साथ सम्पादित हुई। जिस समाज की विजय-दुन्दुभी ने पञ्जाब के जन-मन पर अधिकार कर लिया, उत्तर प्रदेश में जिस आर्यसमाज ने स्तुत्य कार्य किया, जिस आर्य समाज में सदस्य बन जाना गौरव का प्रतीक माना जाता था, अब चारों ओर से यह शिकायत आ रही है कि समाज में युवक आते नहीं। एक ओर तो युवकों में वैसी ही शिथिलता पाई जा रही है, दूसरी ओर जिनसे कुछ आशा की जाती थी, वह स्वयं कुछ नहीं कर रहे।

देश की समस्याएं अभी वैसी की वैसी हैं। जो कहते हैं कि आर्यसमाज की आवश्यकता नहीं है वे स्वयं देखें कि देश की स्थिति क्या हो रही है। अभी वे सारी समस्याएं समाज के आगे हैं, जिनके लिए आर्यसमाज की स्थापना हुई थी, बल्कि स्थिति तो यह है कि पहले से कहीं अधिक परिस्थितियाँ उत्पन्न हो गई हैं। स्वतन्त्रता मिल गई, परन्तु मानसिक दासता अब भी मौजूद है। अन्ध विश्वास तो दूर हुआ परन्तु उसके स्थान पर अश्रद्धा और उद्दण्डता स्थान कर गई। चरित्र-निर्माण का कार्य आर्यसमाज के ऊपर ही है। छात्रों में जब इतनी उद्दण्डता और कायरता प्रवेश कर गई हो कि अपने निन्द्य कर्मों के लिए अपने पूज्य गुरुओं पर ही जोर आजमाई करने लगें, तब तो वैदिक संस्कृति पुनर्जीवित हो चुकी। शुद्धि का कार्य जोरों से चलना चाहिये। त्रावणकोर, मैसूर, छोटा नागपुर और संथाल परगनों में विशेष रूप से कार्य करने की आवश्यकता है। वहाँ आर्य मिशनरियों को ईसाइयों की साम्प्रदायिक नीति का ही सामना नहीं करना है, अपितु वहाँ की सरकार की पक्षपातपूर्ण नीति से भी टक्कर लेनी है। वास्तविकता है कि जिधर देखो उधर ही हमें काम करना है, परन्तु करे तो कौन? यही भारी समस्या है।

आर्यसमाज में जब भी दो-चार लोग एकत्रित हुए तो यही प्रश्न होता है कि इन कार्यकर्त्ताओं के बाद आर्यसमाज की बागडोर सम्भालेगा कौन? जब अधिकांश आर्यसमाजियों के पुत्र ही आर्यसमाजी नहीं बन पाते अथवा इस ओर कार्य करने में उदासीन से रहते हैं, तब बाहर से कौन आएगा। यह तो हमारा ही दोष है कि उन्हें हम आर्य न बना सके। बाहर से आने वाले युवक साप्ताहिक सत्संग में विशेष उत्साह नहीं लेते। आर्यसमाज और आर्यकुमार सभाओं के झगड़े इसमें विशेष बाधक रहे हैं।

यदि आर्यसमाज की शिथिल गति को रोकना है तो मेरी समझ में दो कार्य किये जाय, उससे आर्यसमाज का कार्य बढ़ सकता है। इस समय आर्यसमाज के पास दूर स्थानों पर जाकर प्रचार करने वाले मिशनरी बहुत कम हैं। अपने देश में ही ऐसे स्थान हैं, जहाँ आर्य प्रचारक या तो पहुँचे नहीं अथवा अल्प संख्या में पहुँचे। आर्य मिशनरी तैयार करना खेल नहीं है। न हमारे पास इतना धन है कि उसकी सहायता से हमारा काम चल सके। अतः मेरी समझ में गुरुकुलों में इस प्रकार का एक व्यवस्थित पाठ्यक्रम रखा जावे जिसमें कि देश-देशान्तरों की मानव स्थिति तथा धार्मिक और सामाजिक स्थिति का अध्ययन अपने सिद्धान्तों के साथ विशेष रूप से छात्रों को कराया जावे। इस कोर्स को छात्रों के लिये अनिवार्य न माना जाय, अपितु जो प्रसन्नतापूर्वक इस ओर जाना चाहें, और उनके अभिभावक भी स्वीकार कर लें, तब उनका जीवन बौद्ध भिक्षुओं की भाँति निर्माण किया जावे। ये मिशनरी सच्चे और अधिक उपयोगी सिद्ध होंगे ऐसा मेरा विचार है। आर्य अनाथालयों में भी यह प्रयोग किया जा सकता है। उपदेशक-विद्यालय और इसमें अन्तर इतना रहेगा कि प्रारम्भ से ही विद्यार्थी का जीवन वैसा ही बनेगा जो कि उसे आगे करना है। उपदेशकों को विद्यालयों में आर्य-सिद्धान्त तथा अन्य धर्मों का अध्ययन करना पड़ता है, परन्तु एक कोर्स के रूप में, न कि जीवन निर्माण करने के लिए।

दूसरी बात यह है कि शिरोमणि सभा की ओर से समस्त डी० ए० वी० तथा आर्य विद्यालयों के प्रधान आचार्यों तथा प्रबन्धकों की एक बैठक में इस बात पर गम्भीर विचार किया जावे कि इन विद्यालयों से निकलने वाले छात्र इस प्रकार के हों जिन पर आर्यसमाज की इतनी गहरी छाप लग जावे जो वर्षों ही नहीं वरन् जीवन भर कायम रहे। यदि आर्य संस्थाओं में चरित्र-निर्माण और धार्मिक शिक्षा पर बल न दिया गया तो हमारे इन विद्यालयों की इस दृष्टिकोण से उपादेयता ही क्या रहे।

यदि यह दो कार्य [illegible] दिए जावें तो आर्यसमाज में [illegible] वकों की कमी न रहेगी। [illegible] सभाएं और डी० ए० वी० [illegible] स्थाएं इस ओर विशेष [illegible] करें, तब क्या कारण है [illegible] कि समाज युवकों को न [illegible] और वे न आएं। तब तो प्रश्न [illegible] हो जायगा कि आर्यस[illegible] गद्दी की महन्ती का लालच [illegible] छोड़ा जावे। अधिवेशन [illegible] में परिवर्तन किये [illegible] काम नहीं चल सकता।

कोई भी [illegible] तक चल नहीं सकता [illegible] तक

जेठ बैसाख की दोपहरी में जब गर्मी खूब पड़ रही हो, लू लग जाने के समाचार प्रायः सुनने में और कभी-कभी देखने में आते रहते हैं। भूमध्य रेखा के दूर देशों में जहाँ कि शीत की अधिकता से सर्दी, जुकाम, न्युमोनिया आदि रोग ऋतु के कारण होते हैं, वहाँ उसके निकटवर्ती स्थानों पर गर्मी के दिनों में इस अंशुघात के रोगी प्रायः हो जाते हैं। बूढ़े, कमजोर, बच्चे, स्त्रियाँ और कोमल प्रकृति वाले मनुष्यों पर सर्दी की भाँति गर्मी का भी प्रभाव शीघ्र पड़ता है और वे इसमें ग्रस्त हो जाते हैं। शीतऋतु में निर्धन मनुष्य प्रायः ईश्वर से ग्रीष्म ऋतु के जल्दी आने की प्रार्थना किया करते हैं। इसका कारण उनके पास वस्त्रों का अभाव होता है, परन्तु गर्मी की भी ऋतु निर्धन मनुष्यों के ही प्राणों की घातक बन बैठती है। उसका कारण यह अंशुघात ही है। धनी पुरुष तो ऋतु अनुरूप स्थानों में आराम से रहते हैं। इसलिये उनको दोनों ऋतुएँ कष्ट नहीं देतीं। रिक्शा खींचने वाले मजदूर, गाड़ीवान, डाक के हरकारे आदि प्रायः इस रोग की बलिवेदी पर अपने प्राणों की भेंट करते हुए सुने जाते हैं।

यह एक स्वाभाविक-सी बात है कि ठंडे देश के निवासियों पर इस अंशुघात का प्रभाव बहुत जल्दी और घातक पड़ता है, और गरम देशों के निवासी अपनी प्रकृति के कारण इसको काफी अंश तक सहन कर जाते हैं। एक बार रोगी जब अंशुघात से ग्रस्त हो जाता है, तो वह धूप से जले हुए पौधे की भाँति बहुत लम्बे समय के लिये अपना जीवन-रस खो बैठता है। और उस रस के पुनः संचार के लिये बहुत समय मिथ्याहार विहार और धूप से दूर रहकर ही वह अपना खोया स्वास्थ्य पा सकता है। मस्तिष्क पर चोट के रोगी की भाँति ही उसे दीर्घ काल तक विश्राम और सुपौष्टिक भोजन की आवश्यकता होती है।

कि उसके कार्यकर्ताओं में नव रक्त न हो। अतः आर्यसमाज का कार्य देश का कार्य होने के नाते देश की बड़ी भारी समस्या इस प्रकार सुलझ जावेगी और छाई हुई उदासीनता और अकर्मण्यता का अन्त न हो आएगा। आर्य नेताओं को इस ओर ध्यान देने की आवश्यकता है

स्वास्थ्य-सुधा

'अंशुघात' या लू लग जाना

वैद्यराज श्री ब्रह्मदत्त स्नातक एम० ए०, आयुर्वेद शिरोमणि

कारण—सूर्य की अत्यन्त तीव्र किरणों अथवा उष्णवायु (लू) का शरीर के साथ संयोग होने पर देह का तापमान बाह्य वातावरण के अनुसार बढ़ता जाता है। शरीर का वह स्नायुमण्डल जो अनैच्छिक रूप से इस तापमान का नियन्त्रण करता है, जब उसका संतुलन नष्ट हो जाता है, तभी शारीरिक तापमान भी बाह्य तापमान के अनुसार बढ़ने लगता है। इसी को अंशुघात अथवा लू लगना कहते हैं। रक्त में से जलीयांश कम हो जाता है और बाह्य गरमी के अनुसार ही रक्त धीरे-धीरे उबलने लगता है। इसी प्रकिया को तापमान का बढ़ना अथवा ज्वर कहते हैं। और असाध्य दशा में यही ज्वर तेज होता हुआ १०७ व १०८ फ० तक पहुँच कर रोगी के प्राण हर लेता है।

लक्षण—रोगी की सहनशक्ति एवं ग्रीष्म की प्रचण्डता के अनुसार ही रोगी में लक्षणों की उत्पत्ति होती है। बिल्कुल साधारण दशा में तो सिरदर्द व थोड़ा-सा गरम शरीर और थकान ही मालूम हुआ करती है। परन्तु तीव्र दशा में प्रलाप और तीव्र ज्वर तथा कभी अवसाद होकर रोगी की मृत्यु हो जाती है। परन्तु साधारणतः इसके लक्षण अत्यन्त प्यास, अत्यन्त मूर्छा, सिर चकराना, आँखों का लाल होना यह मुख्य लक्षण हैं। जी मचलाना, वमन, मूत्र की कमी, नाड़ी एवं हृदय की अनियमितता, त्वचा का रूक्ष हो जाना, स्पर्श का अनुभव न होना, शरीर में ऐंठन तथा रोगी की प्रकृति के अनुसार अन्य लक्षण भी हो जाया करते हैं।

बच्चों में अंशुघात का साधारण प्रभाव होने पर वे चिड़चिड़े हो जाते हैं तथा उनको अनिद्रा या निद्रा में चौंक पड़ना एवम् ज्वर की शिकायत हो जाती है।

जो पुरुष इस गरमी की ऋतु में जूता तथा छतरी के बिना घूमते फिरते हैं उनको तथा जेल के बन्दियों, सैनिकों एवं खुले में काम करने वाले अन्य मनुष्यों को ही प्रायः यह रोग हो जाता है। विशेष उल्लेखनीय यह है कि इन दिनों यदि मनुष्य गरमी में खुले स्थानों पर निकलते समय अपना सिर, गर्दन और सुषुम्ना (रीढ़ की हड्डी) को भली भाँति ढककर चले और बीच-बीच में खूब पानी पीता रहे तो वह सहसा अंशुघात की चपेट में नहीं आता। खादी के वस्त्र भी इस अंश में बहुत उपयोगी हैं कि वे शरीर और बाह्य तापमान के बीच एक आवरण का काम देते हैं, साथ ही उसके मोटे होने के कारण पसीना आते रहने से उष्णता का प्रवेश अबाध रूप से शरीर में नहीं हो पाता।

यदि रोगी के हाथ-पैरों के नाखून नीले-पीले पड़ जायें और नाड़ी अनियमित हो जाय तथा शरीर में भारी ऐंठन हो जाय तो उसको असाध्य ही समझना चाहिये। विसूचिका (हैजे) में कै और दस्त द्वारा शरीर का जलीयांश कम हो जाने से मूत्र का अभाव, और आक्षेप आदि जो-जो लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं, अंशुघात में भी गर्मी के द्वारा शरीर का जलीयांश कम होने पर (जलीयांश प्रचुर मात्रा में शरीर में होने पर लू लगने का प्रभाव कम हो पाता है) लगभग वही लक्षण होते हैं।

चिकित्सा:—ऊपर के विवरण से यह स्पष्ट है कि शारीरिक तापमान के ऊँचे होने पर ही उपर्युक्त लक्षण जन्म लेते हैं। इसलिये यदि उस तापमान को स्वाभाविक स्थिति में नीचे लाया जा सके, तो अन्य लक्षण स्वतः शान्त हो जाते हैं। यूरोपियन व उच्चवर्गीय व्यक्तियों की सुविधा के लिये बड़े-बड़े नगरों में मुख्य स्थानों एवं स्टेशन आदि पर अंशुघात के पीड़ितों के लिये केन्द्र बने हुए हैं। वहाँ अन्य उपचारों के साथ ठण्डक में रोगी को पूर्णतः विश्राम के साथ लिटा दिया जाता है। इस प्रकार का प्रबन्ध घर में सूर्य की किरणों से सर्वथा दूर स्थान में खस की टट्टी आदि लगाकर और खूब पानी आदि छिड़क कर किया जा सकता है। वायु आने का प्रबन्ध होना चाहिये।

रोगी के सारे कपड़े उतार कर बगल एवं वक्षण में बर्फ रखना चाहिये तथा सारे शरीर पर उसे मलते रहना चाहिये। थोड़ा-थोड़ा करके बारम्बार प्रचुर ठंडा जल रोगी को पीने के लिये देना उपयोगी होगा। मस्तक को खूब ठंडा रखना चाहिये। इन क्रियाओं से तापमान शनैः शनैः नीचे आने लगता है और वह जब १०२ फा० तक आ जाय, तब तक ही ऐसा करना उचित है। परन्तु, यदि पुनः तापमान बढ़ने लगे तो यही क्रिया दोहरानी चाहिये। त्वचा के बजाय गुदा के भीतर थर्मामीटर लगाकर देखने से ठीक ठीक तापमान का पता लगता है। इस प्रकार शारीरिक ताप स्वाभाविकावस्था में आ जाता है, और रोग के लक्षण क्रमशः न्यून होते जाते हैं। परन्तु, दुर्बलता के रूप में लम्बे समय तक उसका प्रभाव शरीर व मस्तिष्क पर बना रहता है। ऐसे रोगी को धूप से बाद में भी बहुत बचने की आवश्यकता रहती है। परन्तु तापमान को नीचे लाने की इस प्रक्रिया में जब कभी तापमान-नियंत्रक अनैच्छिक स्नायु-मण्डल पूरा सहयोग नहीं देता, तब हृदय और नाड़ी की गति अनियमित हो जाती है, और मूर्छित होकर रोगी मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। ऐसी दशा में चिकित्सक की सम्मति से मृतसञ्जीवनी सुरा, ब्रांडी, एवं कपूर के योग देने पर हृदय को पुनः उत्तेजना प्राप्त होती है। कभी-कभी तीव्र कोष्ठबद्धता (कब्ज) के कारण इन उपचारों के बाद भी रोगी नहीं सम्हलता, तब उसे तीव्र विरेचन देना आवश्यक हो जाता है।

आयुर्वेद के प्राचीन ग्रंथों में

सुझाव और सम्मतियाँ

आर्यसमाज के अधिवेशन

श्री रामेश्वरसहाय बी० ए०

आर्यसमाज के वर्तमान अधिवेशनों में जो त्रुटिया पाई जाती हैं और जिनके कारण साप्ताहिक तथा अन्य अधिवेशनो में उपस्थिति की न्यूनता रहती है, उन पर जिला आर्य उप-प्रतिनिधि सभा, लखनऊ की स्वाध्याय-परिषद् में शिवशंकरसहायजी की अध्यक्षता में २७ मई, ५१ को भले प्रकार विचार-विनिमय हुआ। उसका सार निम्नांकित पंक्तियों में दिया जाता है—

वैदिक सत्संग गुटका में जो साप्ताहिक अधिवेशन का क्रम है, वह उचित है। उसमें वेद-मंत्रों की व्याख्या के स्थान पर यह बात देखने की अधिक आवश्यकता है कि अधिवेशन में आने वाले सज्जन संध्या, प्रार्थना तथा अग्निहोत्र के मंत्रों का अर्थ भले प्रकार समझते हैं अथवा नहीं। सदस्यों की एक बड़ी संख्या संस्कृत भाषा तथा वैदिक मंत्रोंके अर्थों से अनभिज्ञ है, अतः उनको संध्या-हवन में उतनी रुचि नहीं होती, जितनी कि होनी चाहिये। अतः एक-एक मंत्र का अर्थ भले प्रकार उनके समक्ष उपस्थित किया जाय और इस मंत्र के अर्थ को साप्ताहिक अधिवेशन में इस क्रम से दुहरा भी दिया जाय कि एक मंत्र का अर्थ कई बार उनके समक्ष आ जाय, जिससे अर्थ बोधगम्य हो जाय। इससे संध्या, हवन इत्यादि में सदस्यों की रुचि अवश्य बढ़ेगी।

पाठ या उपदेश करने के लिये वक्ता महोदय अपने विषय पर भले प्रकार स्वाध्याय तथा मनन करके आयें ताकि उस विषय को सरस तथा सुन्दर ढंग से प्रस्तुत कर सकें जिससे श्रोता अपने समय का सदुपभोग समझें, उन्हें कोई नवीन चीज प्राप्त हो और उनकी आगामी अधिवेशनों में आने के लिये रुचि बढ़े। वक्ता तथा विषय पूर्व से निर्धारित हो जाने चाहिये, जिससे वे अपना उत्तरदायित्व समझें और विशेष तैयारी करके आयें। वर्तमान प्रणाली के अनुसार केवल नीरस पाठ कर देने से आनन्द नहीं आता। यदि वक्ता ने अपने विषय पर अधिकार प्राप्त कर लिया है, तो उसको वह बड़े सुन्दर ढंग से प्रस्तुत कर सकेगा। इस प्रकार वक्ता तथा श्रोता दोनों को आनन्द प्राप्त होगा। अधिवेशन में अन्य सदस्यों को भी भाषण देने के लिये प्रोत्साहन देना चाहिये, ताकि उनकी दिलचस्पी भी बढ़े और वह स्वाध्यायशील बनें।

अधिवेशन को ठीक समय पर प्रारम्भ कर देना चाहिये। यदि अधिकारी-वर्ग ऐसा करेगा तो सदस्यों का समय नष्ट न होगा और इसका उनपर अच्छा प्रभाव पड़ेगा। कई स्थानों पर देखने में आया है कि अधिवेशन के ठीक समय से प्रारम्भ न होने के कारण सदस्यों ने समाज में जाना कम कर दिया।

अधिवेशन में सदस्यगण अपने परिवार सहित पधारें और उसमें भजन के लिये महिलाओं तथा बच्चों को प्रोत्साहित करें तो कार्यक्रम अधिक रुचिकर हो जायगा।

सदस्यों में प्रेम तथा मेल-जोल बढ़ाने के लिये पारिवारिक सम्मेलन भी आवश्यक हैं। भाषण का विषय इतना रोचक तथा शिक्षाप्रद होना चाहिये कि सदस्यों के अतिरिक्त उस क्षेत्र के अन्य आमन्त्रित पड़ोसियों पर भी सुन्दर प्रभाव पड़े और समाज के प्रति उनकी श्रद्धा बढ़े। स्वाध्यायशील पुरुष को ही, जिसे अपने विषय पर पूर्ण अधिकार है, और जो समाज की मर्यादा बाहर स्थापित कर सकता है, इस अवसर पर बोलना चाहिये। ऐसे कार्यों के लिये समाज-पुरोहितों की अत्यन्त आवश्यकता है जिससे वे भले प्रकार प्रचार करें और अपने क्षेत्र में संस्कार भी करायें। जिला उपसभा तथा प्रदेशीय सभाओं को योग्य पुरोहितों की संख्या-वृद्धि की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

साप्ताहिक अधिवेशनों में शंका समाधान की भी उचित व्यवस्था रहनी चाहिये। यदि किसी समाज में कोई शंका उपस्थित हो जाय जिसका निवारण स्थानीय समाज न कर सके तो किसी विद्वान् से डाक द्वारा अतिशीघ्र उसका समाधान कराया जाय। इस सम्बन्ध में यदि आर्यमित्र-सम्पादक बच्चों के 'ज्ञानू दादा' की भाँति प्रौढ़ों की भी शंका निवृत्ति कर दिया करें तो अच्छा हो।

वार्षिक अधिवेशन इस प्रकार होना चाहिये कि व्यय न्यून से न्यून हो और यदि समाज-सेवी भजनीक तथा भाषण-कर्ता निःशुल्क ही प्राप्त हो जाय तो व्यय बहुत कम हो जायगा। ऐसे उपदेशकों तथा भजन-उपदेशकों की एक सूची उनके भाषण के विशेष विषयों सहित, जिन पर उनका पूर्ण अधिकार हो जिला उप-सभा तथा प्रतिनिधि सभा में रहनी चाहिये और आर्यमित्र में भी सर्व साधारण की जानकारी के लिये प्रकाशित हो जानी चाहिये। वार्षिक अधिवेशन पर स्थानीय समाज का कुछ ऐसा कार्यक्रम भी रहे जो उस क्षेत्र की जनता को अधिक से अधिक आकर्षित कर सके, और इस प्रकार समाज का प्रभाव अपने क्षेत्र में व्यापक रूप से फैल जाय। लोग समाज के प्रति श्रद्धा की भावना रख सकें और समाज उन लोगों को समाज द्वारा संस्कार इत्यादि कराने के लिये प्रेरित कर सके। इस प्रकार साप्ताहिक अधिवेशन, पारिवारिक अधिवेशन तथा वार्षिक अधिवेशन द्वारा समाज का प्रचार अपने क्षेत्र में भले प्रकार होता रहेगा।

अधिवेशनों में स्वास्थ्य की ओर ध्यान देना भी परमावश्यक है। एक समाज-सेवी बिना अच्छे स्वास्थ्य के अपने परिवार तथा समाज की अधिक दिनों तक सेवा कदापि नहीं कर सकता, अतः स्वास्थ्य-सम्बन्धी साहित्य का अवलोकन, शुद्ध आहार विहार, नीरोग तथा स्वस्थ पुरुष के अनुभवों और योगाभ्यास द्वारा इस दिशा में भी अधिक लाभ उठाया जा सकता है।

अंशुघात के रोगी के लिये जो विहारचर्या लिखी है, वह ठीक उसी प्रकार की है जो कि उत्तप्त कामियों के कामपीड़ित होने पर की जाती थी। गहन स्निग्ध सुगंधित कुंजों में शीतल पत्तों और पुष्पों से बनी सेज पर अत्यन्त धवल स्वच्छ शय्या बिछा कर उस पर अंशुघात के रोगी को लिटाकर तालपत्र, कमल अथवा केले के पत्तों से उसकी हवा करनी चाहिये। महाकवि बाणभट्ट की कादम्बरी में वैशम्पायन को इसी दशा में नायिका कादम्बरी ने देखा था। इन दोनों व्याधियों में अन्तर केवल इतना है कि एक का मूल मन तो दूसरे का शरीर है। बाह्य लक्षणों में पर्याप्त समानता दोनों दशाओं में पायी जाती है और इस एक चिकित्सा से दोनों के रोगों की शान्ति हो जाती है।

ऐसे रोगी को सुपाच्य, स्निग्ध पोषक भोजन दिया जाना आवश्यक है। इमली व कच्चे भुने आम का झोल तथा प्याज भी लू का प्रभाव रोकते हैं।

भारत को विटामिन गोलियों की भेंट

पान अमेरिकन एयरवेज के कैप्टिन जैक प्रिडी ने हाल ही में नई दिल्ली के पालम हवाई अड्डे पर पहुंचने पर हैल्थ सर्विसेज के डायरेक्टर जनरल कर्नल सी. के. लक्ष्मणन को अमेरिका की तीन सेवासमितियों–"अमेरिकन फ्रेण्ड्स सर्विस कमिटी", "चर्च वर्ल्ड सर्विस" और "वार रिलीफ सर्विसेज ऑव दि नैशनल वल्फेयर कौनफ्रेन्स" की ओर से खाद्योज (विटामिन) की ३,००,००० गोलियां भेंट कीं।

ये गोलियां पर्याप्त पौष्टिक आहार न मिलने से होने वाले रतौंध रोग (रात के समय अन्धा होना) की रोकथाम के लिये बच्चों में बांटी जायेंगी।

कर्नल लक्ष्मणन ने यह भेंट स्वास्थ्य-मंत्रिणी राजकुमारी अमृतकौर की ओर से स्वीकार की। उन्होंने बताया कि सरकार ने फिलहाल इस भेंट का बड़ा हिस्सा बिहार में बांटने का निश्चय किया है, जहां इन दिनों अन्न की अत्यधिक कमी है।

सामयिक समस्याएँ

भारत सरकार शिक्षा ले

श्री गणेशदत्तजी इन्द्र

मुसलमान शासन ने तो साम्प्रदायिकता का विष इस देश में ऐसा छोड़ा कि उसके कारण भारत के पूर्व और पश्चिम में एग्जिमा जैसे दो दाग हो गए है। और दूसरा शासकीय धर्म अंग्रेज लोग इस देश में छोड़ गए हैं। ईसाइयत के ये कीटाणु स्वराज्य के विकृत उदर में कालरा के कीटाणुओं की भाँति वृद्धि पा रहे हैं। ईसाई राज्य से कहीं अधिक उपयोगी यह भारतीय स्वराज्य उन्हें साबित हुआ है। धर्म निरपेक्ष राजकीय लोग अधिक से अधिक लाभ उठाने में भिड़ गये हैं। गिरजाघरों पर तिरंगे झण्डे फहरा कर उन्होंने अपना जाल और भी विस्तृत कर दिया है। पूज्य महात्मा गाँधी के पवित्र नामोच्चारण-पूर्वक ये लोग ईसाइयत को खूब फैला रहे हैं। डालरों के प्रवाह में बह कर आए हुए ये मसीही मिश्नरी यहाँ भी डालरों की माया फैलाकर भारतीयों को भुलावा दे रहे हैं। आज शिखा-सूत्र रख कर भी ईसाई बने रहने की चालाकी उन्होंने अपनाली है। रामू को राबट और किसना को क्रिस्तन बनाने की परिपाटी भी छोड़ दी है। शिखा सूत्र और हिन्दू नाम वाले ईसाइयों की संख्या बढ़ाई जा रही है। इस रहस्य से सरकार को बेखबर नहीं रहना चाहिये।

भारत के पड़ोसी देश तिब्बत से समाचार आ रहे हैं कि डालर देश अपने इन डालर-पोषित मिश्नरियों के यहाँ युद्धोपयोगी शस्त्रास्त्र तथा अन्य सामग्री एकत्र करने में लगा हुआ है। हवाई जहाजों द्वारा गुप्त रीति से उनके आवास स्थलों में उन धर्मगुरुओं के धर्म स्थानों में अहिंसक महात्मा ईसा के नाम पर बनाए गए प्रार्थना मन्दिरों- गिरजाघरों में निरीह निर्दोष मनुष्यों का खून बहाए जाने का उपक्रम किया जा रहा है। दूसरी खबर चीन से आई है कि उनके चर्च देश के गुप्तचर, मिश्नरियों के यहाँ आकर ठहरते है, और इस तरह धर्म की ओट में चीन साम्राज्य के भेदों को अमेरिका भेजते रहते हैं। इतना ही नहीं, वहाँ के मिश्नरी धर्मगुरु भी गुप्तचरों का काम करते हैं।

जिन देशों में ईसाइयत फैली हुई है उनमें अवसर आते ही ये ईसा के दूत अपने पोषक देश की हितावृत्त में भी सहायक हो जाते है। इन घटनाओं से यह सिद्ध हो गया कि ईसाइयत एक राजनैतिक जाल है। आधी सदी पूरी होते न होते यह ईसाइयत और ये धर्म-प्रचारक पापा मामा मिश्नरी भारत के शत्रु अवश्य बन जावेंगे। धर्मों के प्रति उदार भावना की नीति पर, उस समय सिवा पश्चात्ताप के हमारे पास और कुछ भी नहीं रह जावेगा, जैसा कि पाकिस्तान के निर्माण के समय हुआ। अनिच्छा पूर्वक मन मारकर पाकिस्तान के नाम पर भारत-भूमि देनी पड़ी।

हम यह तो पहले ही स्वीकार कर चुके हैं कि शासन का सदैव धर्म-निरपेक्ष होना आवश्यक है, किन्तु हम यह भी चाहते हैं कि धर्म के चोले में जो शैतान नाच रहा है, उस शासन अच्छी तरह देख समझ ले। जन-स्वातन्त्र्य के नाम पर शतानियत को प्रोत्साहन देना भी तो उचित नहीं है। शासन को चाहिये कि इस पर विचार कर और ऐसा अवसर भारत में न आने दे कि विदेशियों की चालबाजियों, षड्यन्त्र और दाव पेच इन धर्म-प्रचारकों द्वारा भारत में स्थान पा सकें।

शासन को इसके लिये विधान बनाना चाहिये। उसमें धर्म की परिभाषा बनाई जावे। प्रचार की परिभाषा निर्मित हो। विदेशी धर्मों के लिये विधान में विशेष विचार किया जाना उचित है। जो धर्म हिंसा की ओर प्रेरित करता हो अथवा जिसमें 'गुण्डाइज्म' हो, उसे रोकने का विधान बनाया जाय। स्त्री, धन, सम्पत्ति, भूमि, वस्त्र आदि के प्रलोभनों के बल पर फैलाए जाने वाले धर्म को गैरकानूनी करार दिया जाकर रोक की जाय। जिस धर्म में मद्य, मांस आदि अनाचारों की छुट्टी हो उसे धर्म ही न माना जाय। धर्म सम्बन्धी यह विधान विश्व में शान्ति और सुख का साम्राज्य स्थापित करने में समर्थ हो सकेगा।

तिब्बत और चीन में हमें सावधानी ग्रहण करनी चाहिये। भारत में फैले इस मिश्नरी जाल पर कड़ी नजर रखनी चाहिये। पाकिस्तान में अमरीकी अड्डे बन गए हैं। भारत में ये गिरजाघर और काले लबादों पर काली रस्सी लपेट कर घूमने वाले मिश्नरी प्रचारक विदेशियों के हथियार न बनने पावें इस बात का ध्यान अभी से सरकार को रखना चाहिये। तिब्बत और चीन की इस घटना से भारत सरकार को शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

'धियो यो नः प्रचोदयात्'

हमारी पोशाक

प्रो० वासुदेव विष्णुदयाल एम० ए०, मॉरीशस

"आर्यमित्र" के मारीशसीय पाठकों ने पोशाक के बारे में प्रकट किये मतों को दिलचस्पी से पढ़ा, हमारे मध्य भी भारतीय पोशाक की प्राचीनता पर चर्चा होती रहती है। मॉरीशस में जो वर्तमान परिस्थिति है, वह ब्रह्म समाज के उद्भव-काल की परिस्थिति से कुछ सीमा तक मेल खाता है। कलकत्ता में पश्चिमीय सभ्यता का प्रवेश हो चुका था, और असंख्य लोगों पर उसका सिक्का जम गया था। ब्रह्म-समाज के महा पुरुष चिन्तायुक्त हो उठे। श्री देवेन्द्रनाथजी सनातन धर्मियों से सन्धि करके पश्चिमीयों के प्रयत्नों को निर्मूल करने में लग गये। उसी जमाने में हिन्दू-हितार्थी विद्यालय की नींव पड़ी। समाज-मन्दिर में प्रवचन करने वाले किस पोशाक में रहें, इस पर ब्रह्म समाज को विचार करना पड़ा। यही तय हुआ कि प्रवचन करने वालों को एक चोगा धारण करना चाहिये। मॉरीशस में भी उच्चकोटि के उपदेशक धर्मोपदेश करते वक्त धोती धारण करते हैं। कई ग्रामों में धोती-धारी प्रवासी अब भी विद्यमान हैं।

सात समुन्दर पार पड़े हुए एक-एक मॉरीशस वासी में यह जानने की उत्कण्ठा हुई थी, कि जब राज्य हाथ आयेगा भारतीय शासक कोनसी पोशाक अपनायेंगे। भारत-यात्रा करके उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले मॉरीशसवासियों के आनन्द का ठिकाना न रहा जब उन्होंने देखा कि शेरवानी और पायजामा अपनाया गया। इस आनन्द का कारण यह है कि मॉरीशस के विद्यार्थी अधिक संख्या में लाहौर में विद्याध्ययन करते रहे। उन्होंने इस "पञ्जाबी पोशाक" में अपने गुरुओं और सहपाठियों को देखा।

अनेक नाम तथा वस्तुएं ऐसी हैं जो साधारण लोगों को जानने में किसी जाति विशेष की होती है परन्तु जो वस्तुतः औरों से ली गई चीजें होती हैं। "सुगर" शब्द अंग्रेजों का है, लेकिन जो अंग्रेजी भाषा तथा संस्कृत दोनों का ज्ञान रखता है, उसकी दृष्टि में "शकरा" शब्द से लिया गया है। जनवरी मास के "इण्डियन रिव्यू" में श्री गल्लेटा, आई० सी० एस० ने लिखा है कि ईसाइयों के धर्म ग्रन्थ में कई अंश ऐसे हैं जो हिन्दुओं के धर्म-ग्रंथों से लिये गए हैं। निष्पाप शिशुओं का वध कंस ने भी राजा हरोड की तरह करवाया था। जन्म का अन्धा (जॉन ९, १) केवल ईसा ने नहीं देखा था। सद्धर्म पुण्डरीक सूत्र में एक जन्मान्ध का कथा मिलती है। सिमिओन (२-२५-३०) की कहानी ललित विस्तार में पाई जाती है। लेखक ने एक आन्दोलन खड़ा किया है। उन्होंने पोप को लिखा है। प्रोटेस्टेण्टों की सेवा में भी उन्होंने एक पुस्तिका भेजी है।

संसार में आदान प्रदान होता रहता है। जब कोई लिया गया नाम प्रिय हो जाता है। हम उसे प्रचलित करने में संकोच नहीं किया करते। "हिन्दू" शब्द के सम्बन्ध में बहस हुआ करती थी। एक पक्ष यह था कि किसी

विदेशी भाषा में इसका बहुत बुरा अर्थ होता है। दूसरा पक्ष यह था कि कमसे कम हिब्रू भाषा में इसका कोई बुरा अर्थ नहीं, हिब्रू में "हिन्द" का मतलब है "शक्तिशाली"। यदि हम "हिन्दू" का बहिष्कार करें हमें "हिन्दी" को रखने का अधिकार न होगा। अब तो हमारी भाषा ही का नाम "हिन्दी भाषा" पड़ गया। हमारे बच्चे "हिन्दी-व्याकरण" सीखते हैं।

विदेशी होने पर भी "हिन्दू" को हमने अपना शब्द बना छोड़ा। अब उसका इतना ही अर्थ है—"जो भारत में उत्पन्न हुए किसी भी धर्म को मानता हो।" इस अर्थ में शेरवानी और पायजामा हमारी वेश-भूषा में परिगणनीय है।

सच पूछिये तो हमें इस बात का डर था कि कहीं सूट को न अपनाया जाय। बापूजी की शिक्षाओं को ताक पर रख दिया गया। साथ-साथ पन्द्रह साल के बाद हिन्दी का समादर करने वाले संन्यासी, चपरासी, ड्रायवर सब से अंग्रेजी में बोलते दिखाई दे रहे हैं। सूट को राष्ट्रिय मान लिया जाय तो हम पहचान भी न पाते कि हमारे शासक भारतीय हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि धोती शेरवानी और पायजामे से प्राचीनतर है। मध्यकालीन भारत की यात्रा करने वाले पश्चिमीय यात्री मारको पोलो ने अपने भ्रमण-वृत्तान्त में बताया है, भारत के लोग बहुत कम परिधान पहनते थे। भारतीय सभ्यता के उच्च शिखर पर पहुँचे हुए थे। उसी यात्री ने कहा था कि भारतीय श्रेष्ठ कोटि के व्यापारी थे, घोड़ों को विदेश से मँगाते थे, तेलगू देश में सुन्दर "मुस्लिन" बनाया जाता था, संसार के सबसे बड़े जहाज हिन्दुओं के थे, लोग भूषणों से लदे रहते थे। यदि कम कपड़े पहनते थे तो कारण यही था कि उनके देश में अधिक वस्त्र धारण करने की आवश्यकता नहीं थी।

मारको पोलो की तरह आर्य्यन् ने लिखा था कि भारतीय लोग एक कपड़ा लेकर उसे अपने कन्धों पर शिथिलता से फेंकते हैं। वे एक "मुस्लिन" का बना हुआ कुर्ता भी धारण करते हैं और अपनी दाढ़ी को रंगते हैं। इन प्रमाणों के साथ यदि हम संस्कृत लेखकों का कथन जोड़ दें कि उत्तरीय और धोती को ही पुरुष धारण करते थे, तो इस परिणाम पर अवश्य पहुचेंगे कि शेरवानी और पायजामा अपेक्षाकृत अर्वाचीन हैं।

—

आर्य्यजगत

—शोक है कि आर्यसमाज मित्रहारा के प्रधान श्री पं० जगन्नाथ प्रसाद जी का देहान्त हो गया। आर्यसमाज शोक-सहानुभूति प्रकट करता है। आप बड़े ही निर्भीक, साहसी और कर्मठ सदस्य थे।

—आर्यसमाज रायड़वाला रामनवार का वार्षिकोत्सव ६ तथा ७ मई को सानन्द सम्पन्न हुआ।

—प० अवधविहारीलालजी भट्ट बकेवर (इटावा) निवासी के पुत्र श्री यशोदानन्दन के शुभ विवाह के उपलक्ष्य में २१) वेद प्राचारार्थ भेजे गये।

—आर्यसमाज नगरा झाँसी अपने भूतपूर्व उपमन्त्री श्री बाबूलाल वैश्य के देहान्त पर शोक-सहानुभूति प्रकट करता है। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति और दुखी परिवार को धय प्रदान करे।

—२८ मई ५१ को पं० खड्गपाल सिंहजी प्रचारक के उद्योग से फतेहपुर (सहारनपुर) में आर्यसमाज की स्थापना हुई।

—शोक है कि आर्यसमाज निचलौल (गोरखपुर) के मुख्य कार्यकर्त्ता श्री प० भागवतप्रसादजी प्रधान का २७ मई को देहान्त हो गया। अन्त्येष्टि संस्कार वैदिक रीति से हुआ। उक्त आर्यसमाज शोक सहानुभूति प्रकट करता है। परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

—आर्य गुरुकुल देवरिया का उत्सव ११, १२ तथा १३ मई ५१ को मनाया गया। सर्व श्री स्वामी ब्रह्मानन्दजी, प० गोपालशास्त्री दर्शन केसरी, प० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु, ब्र० अखिलानन्दजी, प० शंकरदेवजी, प० इन्द्रदेवजी, प० द्वारकाप्रसादजी आदि विद्वानों के भाषण हुए। नगर-कीर्तन भी हुआ। उपाधि-वितरण किया गया।

—आ० स० शेरकोट का वार्षिकोत्सव २० से २४ मई ५१ तक सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। श्री प० हरिशरणजी सिद्धान्तालङ्कार के भाषणों का अच्छा प्रभाव पड़ा। २१ मई को आर्यकुमारों की वाद विवाद-प्रतियोगिता हुई, जिसमें श्री रघुवरदयालु आर्य प्रथम रहे।

—गढ़मुक्तेश्वर के श्री दामोदरदासजी की पुत्री का विवाह पिलखुआ निवासी श्री रामगोपालजी के पुत्र श्री धीरेन्द्रप्रकाश के साथ सम्पन्न हुआ। १०) स्थानीय समाज को दान दिय गये। प० तीर्थराजजीने संस्कार कराया। २५ मई को एक मुसलमान की शुद्धि हुई। नाम धर्मदेव रखा। गढ़मुक्तेश्वर नवार्मी श्री सोहनलालजी के पुत्र श्री ओमप्रकाशजी की पुत्री सुखदादेवी का विवाह अतरौली (अलीगढ़) के श्री भगवतीप्रसादजी के पुत्र श्री-

ओमप्रकाशजी के साथ २८ मई को हुआ। दोनों ओर से दस रुपये दान दिये गये। श्री प० सुरेन्द्र शर्मा गौर ने संस्कार कराया।

—अमरोहा आ० स० के मन्त्री प० हरिश्चन्द्रजी सत्यवादी का विवाह संस्कार १६ मई को एक विधवा कन्या से सम्पन्न हुआ। यह संस्कार श्री प० गंगाप्रसादजी उपाध्याय, और श्री प० रामचन्द्रजी वैदिक मिश्नरी ने कराया। वर-पक्ष की ओर से आर्यसमाज मन्दिर बनवाने के लिये २५०) दान दिया गया।

——

उत्सव सूचनाएं

—आजमगढ आर्यसम्मेलन ४ से ७ जौलाई ५१ तक आर्यसमाज मधुवन में होना निश्चित हुआ है। अनेक विद्वान् उसमें भाग लेंगे।

—आ० स० मुरतारपुर का सातवाँ वार्षिकोत्सव १६, १७, १८, तथा १९ जून ५१ को मनाया जायगा। श्री स्वामी अमृतानन्दजी कृपया अवश्य पधारें।

——

निर्वाचन

—आ०स० राघड़वाला रामबार—प्रधान-श्री फूलसिंहजी आर्य और मन्त्री-श्री परशुरामजी आर्य।

—आ०स० नगरा झांसी-प्रधान-बा० हरीसिंहजी ठेकेदार और मन्त्री-श्री रामनाथ शर्मा।

—आ० स० फतेहपुर (सहारनपुर) प्रधान-श्री गेंदारामजी आर्य और मन्त्री-श्री आत्मारामजी आर्य।

——

सार सूचनाएं

जिला आर्य उप-प्रतिनिधि सभा लखनऊ के स्वाध्याय-परिषद् की बारहवीं बैठक २४ जून ५१ को आर्यसमाज बादशाहनगर, लखनऊ में होगी। विचारणीय विषय 'वर्तमान काल में हमारे प्रचार के विषय क्या होने चाहिए'

—प्रचार मन्त्री

—कुछ आर्यसज्जन यज्ञोपवीत को दाहिने हाथ के नीचे और बाएँ कंधे के ऊपर पहनते हैं। कुछ केवल गले में पहनते हैं कुछ आर्य विद्वान यज्ञोपवीत पहनते ही नहीं। इस विषय में विद्वानों का क्या समाधान है? शिवदत्त शास्त्री आलम नगर (मेरठ)

[इस विषय में संस्कारविधि और संस्कार-चन्द्रिका में पूर्ण प्रकाश डाला गया है। उन्हें पढ़िये। जो आर्य विद्वान् यज्ञोपवीत नहीं पहनते, उन्हें 'आर्य' कहना भूल है। —सम्पादक]

—महाविद्यालय ज्वालापुर के महोपदेशक श्री प० रामस्वरूपजी शर्मा वानप्रस्थी प्रचार के लिये अलीगढ से सिकन्दराराद जा रहे थे, बस में महाविद्यालय की रसीदबही उनसे खो गई है। रसीदबही का नम्बर ७३ है। दानी महानुभावों से निवेदन है कि इस नम्बर की रसीदबही को वे जाली समझें और इस पर वे धन-संग्रह करने वाले को किसी प्रकार का दान न देवें।

देवीचरण त्रिपाठी,
मुख्याधिष्ठाता।

—महा महोपाध्याय श्री गौरी शंकर हीराचन्द ओझा का लिखा 'राजपूताने का इतिहास' कहाँ से मिल सकेगा। चन्द्रगुप्त C/o श्री नन्दराम वैश्य १०, रामगली, मेरठ नगर।

—राजमित्र, राजरत्न मास्टर आत्मारामजी अमृतसरी की ८५ वीं जन्म-जयन्ती के उपलक्ष्य में उनकी समस्त उपलब्ध कृतियां २० जून ५१ से १९ जुलाई ५१ तक आधे मूल्य में दी जावेंगी। विनोद पण्डित, कारेली बाग, बड़ौदा।

——

अनाथालय को दान

श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आगरा ५१ वर्ष से हिन्दू जाति की सेवा कर रहा है। इस में सैकड़ों अनाथ बालक और बालिकाओं का पालन-पोषण हो रहा है। हजारों अनाथ बालक शिक्षित और योग्य होकर निकल चुके हैं। अतः आप भी दान देते समय इन अनाथ बालकों को न भूलिये। अनाथ लड़कियों के लिए २४ वर्ष की आयु के वरों की आवश्यकता है। २) फार्म का मूल्य भेज कर फार्म मँगा कर, भर कर भेजिए।

मंत्री, श्रीमद्दयानन्द अनाथालय
आगरा।

——

सभा की छात्र-वृत्तियाँ

आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की ओर से प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी नवीन छात्र-वृत्तियाँ आगामी जुलाई मास से नायक जाति के बालक-बालिकाओं को दी जायेंगी। सहायता चाहने वाले विद्यार्थियों को चाहिये कि अपने प्रार्थना-पत्र १५ जुलाई १९५१ तक अपने-अपने स्कूल, कालेज के उच्च अध्यापकों एवं प्रिन्सिपल की सिफारिश के साथ सभा-कार्यालय ५, मीराबाई मार्ग लखनऊ के पते पर भेज दें।

धर्मपाल विद्यालंकार
मन्त्री, आ० प्र० सभा, लखनऊ

आर्यवीर दल आवश्यक है

महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित "कृण्वन्तोविश्वमार्यम्" के ध्येय को सम्मुख रखते हुए आर्यसमाज की योजना का चतुर्मुखी होना स्वाभाविक है। अर्थात् धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक इत्यादि सभी क्षेत्रों में इसे वैदिक धर्म अथवा संस्कृति के आधार पर क्रान्ति करनी आवश्यक है। इस विशाल कार्यक्रम के लिये जहाँ आर्यसमाज को अनुभवी वृद्ध नेताओं की आवश्यकता है, वहाँ इसे संघर्ष में सर्वस्व की बाजी लगाने वाले नवयुवकों की भी आवश्यकता है। सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा ने इसी उद्देश्य की पूर्ति के निमित्त आर्य-वीर-दल का निर्माण किया है। क्षात्र-धर्म की चेतना उत्पन्न करना आर्य-वीरदल का मुख्य उद्देश्य है।

अपने इस छोटे-से जीवनकाल में आर्यवीर-दल ने आर्यसमाज की बड़ी अच्छी सेवा की है। बंगाल का दुर्भिक्ष, नवाखाली का हत्या काण्ड, देश के विभाजन, हैदराबाद राज्य में रजाकारों की गुण्डाशाही तथा आसाम के भूमिकम्प के अवसर पर दल के नवयुवकों ने सराहनीय सेवा-कार्य किये हैं। परन्तु सार्वदेकि सभा आर्यवीर-दल की शक्ति को जिस रूप में देखना चाहती है, वह वैसी अभी तक नहीं बन पायी। अन्य कारणों के साथ-साथ इसका एक बहुत बड़ा कारण यह भी रहा है कि आर्यसमाजों ने आर्यवीरदल के निर्माण में अपना हार्दिक सहयोग नहीं दिया।

महर्षि दयानन्द महाराज द्वारा निर्मित आर्यसमाज के नियमों में से छठे नियम के आधार पर तो आर्यसमाज का वास्तविक रूप वही है, जहाँ आर्यों की शारीरिक, आत्मिक तथा सामाजिक उन्नति के लिये प्रयत्न होता है। इस दृष्टि से जिस आर्यसमाज में इन तीनों प्रकार की उन्नति के लिये प्रयत्न नहीं होता, उसमें महर्षि की भावना के अनुसार कार्य नहीं हो सकता। इसलिए व्यायामशाला अथवा आर्यवीर-दल प्रत्येक आर्यसमाज का अंग होना चाहिये।

देश की वर्तमान क्रान्तिकारी अवस्था में यदि आर्यसमाज ने नवयुवकों को अपनी ओर आकर्षित न किया तो यह उसकी भयङ्कर भूल होगी। क्योंकि आज देश का नवयुवक भिन्न भिन्न वादों से चकाचौंध में नास्तिकता की ओर दौड़ा चला जा रहा है। दुर्भाग्यवश यदि नास्तिक आन्दोलनों के हाथ में देश की बागडोर आ गई, तो आर्यसमाज का "कृण्वन्तोविश्वमार्यम्" का नारा एक बार तो हवा में उड़ जायगा। अर्थात् वैदिक धर्म तथा संस्कृति के आधार पर आर्य राष्ट्र का निर्माण एक जटिल समस्या बन जायगी। इसलिए आर्यसमाजों को चाहिये कि वे आर्य शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के आदेशानुसार अपने यहाँ आर्यवीर-दल के रूप में नवयुवकों की शक्ति का संग्रह करें और सभा के आदेशानुसार इस शक्ति का सदुपयोग करें।

ज्ञानचन्द,
मन्त्री, सार्वदेशिक सभा

दक्षिण अफ्रीका में वाक्-प्रतियोगिता

स्व० श्री स्वामी भवानीदयालजी सन्यासी ने अपने जीवन में जो हिन्दी के प्रचार का महान् कार्य दक्षिण अफ्रिका तथा अन्य उप निवेशों में किया था, उसको ध्यान में रखते हुए हिन्दी शिक्षा - सघ नेटाल (साउथ अफ्रिका) ने स्वर्गीय ओजस्वी नेता श्री स्वामी जी की स्मृति में हिन्दी वाक् प्रतियोगिता का आयोजन किया है। गत मास २६ अप्रैल को महात्मा गांधी हाल डरबन में श्री जे० मगनलाल की अध्यक्षता में यह प्रतियोगिता बड़ी सफलता पूर्वक हुई। इसमें आर्यसमाज प्लेसिसलेयर, वेद धर्म सभा, पीटर मोरित्सवर्ग, आर्यसमाज स्प्रिन्ग फिल्डमियर बक, सनातनधर्म उन्नति सभा, डरबन केन्द्रिय हिन्दी प्रचार-समिति तथा युवक आर्यसमाज क्लेयरउड आदि हिन्दीप्रेमी संस्थाओं के प्रतिनिधियो ने भाग लिया। इस अवसर पर हिन्दी प्रथमा परीक्षा में सफल विद्यार्थियो को ए० आर० बी० महाराज ने प्रमाणपत्र भी वितीर्ण किये। अध्यक्ष महोदय ने अपने भाषण में बताया कि माता-पिताओं का कर्त्तव्य अपने बालको की शारीरिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने में ही समाप्त नहीं हो जाता, अपितु इससे भी अधिक आवश्यक यह है कि उनकी मानसिक शक्ति का विकास अच्छे प्रकार से हो और विशेष रूप से उस भाषा के माध्यम द्वारा हो जिसको कि उन्होंने अपने शैशव में माता के दूध के साथ ही पान किया है। उन्होंने आशा प्रकट की कि यह प्रतियोगिता हिन्दी के अनन्य उपासक आदरणीय स्वामी भवानीदयालजी की स्मृति को अपने जोरदार हिन्दी के प्रचार के द्वारा अक्षुण्ण बनाये रखने का प्रयत्न करेगी। अध्यक्ष ने हिन्दी-शिक्षा संघ नेटाल के कार्यकर्ताओं का धन्यवाद किया और विशेष रूप से पंडित नरदेव जी वेदालंकार, स्नातक गुरुकुल कांगड़ी (भारत) के हिन्दी शिक्षा के लिए अफ्रिका में किये हुए महान् प्रयत्नों की सराहना की।

स्कूल की आधार शिला

३ जून ५१ को भगेसरा (प्रतापगढ) में जूनियर हाई स्कूल की नींव अमेठी राज्य के युवराज श्री रणञ्जयसिंहजी एक्स एम० एल०ए० (केन्द्रीय) द्वारा रक्खी गई। उक्त अवसर पर आयोजित सभा में भाषण देते हुए आपने विद्या और सदाचार का महत्व बतलाया और कहा कि जब तक इनका प्रसार नहीं होता, लोक कल्याण सभव नहीं है। आचरणहीन व्यक्तियों को प्रोत्साहन देने का ही दुष्परिणाम है जो चारों ओर इतना भयङ्कर भ्रष्टाचार फैला हुआ है। दुराचारी व्यक्ति चाहे जिस वर्ग वा दल का हो तिरस्करणीय है। सभा में पृथ्वीगज के श्री हीरासिंह, ठा० लालकुमारसिंह तथा ठा० श्रीपालसिंह आदि के भी भाषण हुए।

स्वामी अभेदानन्दजी नेपाल को

अखिल भारतीय आर्य उपदेशक सम्मेलन के कार्यवाहक अध्यक्ष तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान श्री स्वामी अभेदानन्दजी महाराज ४ जून ५१ को वायुयान द्वारा पटना से काठमाण्डू के लिये रवाना हो गये। सामाजिक तथा धार्मिक कार्यों के सिलसिले में ही आप वहाँ गये हैं। नेपाल मे आप वहाँ के यातायात - मन्त्री श्री भद्रकाली मिश्र के साथ १५ दिनों तक निवास करेंगे।

महत्वपूर्ण निश्चय

आर्यसमाज भारत नगर गाजियाबाद के वार्षिकोत्सव के अवसर पर गत २७ मई को सर्वसम्मति से निम्न लिखित प्रस्ताव पास हुआ है। इस प्रस्ताव की पुष्टि में विद्वानों के अनेक भाषण हुए।

आर्य-समाज के तत्वावधान में हो रही, गजियाबाद के नागरिकों की यह विशाल सभा, भारतवर्ष की वर्तमान परिस्थिति के सुधार और भविष्य के भाग्य की रक्षा के लिये, भारत में फैले हुए भ्रष्टाचार, घूसखोरी आदि तथा बालको और युवको के चरित्रों को दूषित करने वाले साधनों—सिनेमा, अश्लील साहित्य आदि को अविलम्ब प्रतिबन्ध करने की आवश्यकता अनुभव करती है। एतदर्थ (क) भारत सरकार जनता के चरित्र निर्माण को लक्ष्य में रखकर युवकों के लिये चरित्रहीनता के साधन – सिनेमा-अश्लील चित्रों आदि पर तत्काल प्रतिबन्ध लगाए एवं भारत की शिक्षा-प्रणाली में भारतीय संस्कृति एवं धर्म की शिक्षा को अनिवार्य स्थान प्रदान किया जावे। (ख) सामान्य जन समुदाय भी अपने राष्ट्र की भावी आशा युवकों की उन्नति के लिये, युवको और बालकों में धर्म, ईश्वर-विश्वास, नैतिकता और चरित्र की ओर विशेष ध्यान दें। (ग) भारत सरकार से प्रार्थना है कि रेडियो पर गाये जाने वाले अश्लील गीतो को सर्वथा बन्द कर, उनके स्थान पर वेद के पवित्र सांस्कृतिक उपदेशों को प्रसारित किया जावे।

मंत्री,

आवश्यकता है

एक १५ वर्षीया क्षत्रिय कुलोत्पन्न अति सुशील, रूपवती, शिक्षित, गृहकार्य में दक्ष कन्या के लिये स्वस्थ, सदाचारी, सुधारवादी शिक्षित आजीविकासम्पन्न वर की आवश्यकता है। सम्बन्ध आर्यमात्र में हो सकता है।

—गनपतराव, किरिया मंदिर
गोंदिया (म० प्र०)
३६ B. २३-२४

आवश्यकता

खंडेलवाल ब्राह्मण १५ वर्षीया गृह-कार्य में दक्ष मिडिल, विद्याविनोद, सिद्धान्त रत्न परीक्षा पास स्वस्थ गौर वर्ण कन्या के लिये दृढ़ आर्यकुमार वैदिक धर्मी ब्राह्मण वर चाहिये। विवाह वैदिक रीति से होगा। आर्य खंडेलवाल ब्राह्मण वर को विशेषता दी जायगी।

पता—गणपति शर्मा आर्य
नयाबास सुजानगढ़
३८ बी० २३, २४ राजस्थान

क्षत्रिय वर चाहिये

दो सर्वाङ्ग सुन्दर गृह कार्य में पूर्ण निपुण क्षत्रिय कन्याओं के लिये शिक्षित सम्पन्न ऐसे क्षत्रिय वरों की आवश्यकता है, जो किसी व्यवसाय में लगे हों।

एक कन्या १८ वर्षीया परमार क्षत्रिय वंश की है जो आजकल बी० ए० में पढ़ रही है। उसके लिये कमसे कम ग्रेजुएट वर होना जरूरी है। दूसरी चौदह वर्षीया यादव क्षत्रिय वंश की हिन्दी पढ़ी-लिखी कन्या है। इसके लिये भी अच्छे पढ़े लिखे सुयोग्य वर की आवश्यकता है। दहेज के भूखे सज्जन पत्र-व्यवहार करने का कष्ट न करें।

—केशर कुमारी देवी
हेड पण्डिता
झालावाड़ (राजस्थान)
३७—बी० २३,

वर की आवश्यकता

चंदेल वंशीय एक सुशिक्षिता (कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हाथरस की ११ वीं श्रेणी उत्तीर्ण) एक सुन्दर कन्या के लिए स्नातक अथवा ग्रेजुएट वर की आवश्यकता है। वर कुशवाहा सेंगर या राठौड़ इनमें से किसी भी वंश का होना चाहिए। दहेज पिशाच सम्पर्क में न आयें तो ही अच्छा है। पत्र व्यवहार का पता—

जगदेवसिंह
कलकत्ता टेलरिंग हाउस,
पो० लालगंज
जि० रायबरेली यू० पी०

आवश्यकता है—

आर्य कन्या पाठशालाएँ (जूनियर हाई स्कूल) आगरा के लिए (१) B. A., L. T. या Inter C. T. (२) हाई स्कूल V. T. C. और अपर मिडिल V. T. C. (आर्ट क्राफ्ट या फिजकल ट्रेनिंग में योग्यता प्राप्त) अध्यापिकाओं की। वेतन सरकारी ग्रेड के अनुसार और योग्यतानुसार अधिक भी। आर्यसमाजियों को विशेषता दी जायगी। प्रार्थना-पत्र २० जून तक भेजें। मैनेजर—

परमेश्वरीसहाय B.A.-L.L.B.
कचहरीघाट, आगरा

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, [illegible] शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

आर्य-मित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

सचालक-आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ

२८ जून १९५१

आचार्य्य विनोबा भावे



आपने दक्खिण म सैकड़ों मील की पैदल यात्रा करक मार्ग म आने वाले ग्रामों की जनता में विशुद्ध गाँधीवाद का प्रचार किया तथा नैतिकता और मानवता क मूल सिद्धान्तो का विस्तृत व्याख्या कर लोगों को उनके कर्त्तव्य समझाए।

आचार्य्य जे० बी० कृपलानी



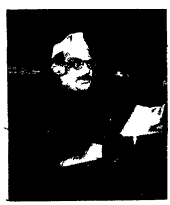
आपने काग्रेस से इस्तीफा देकर 'कृषक मजदूर प्रजा पार्टी' की स्थापना की है। आपका कहना है कि काग्रेसी नेताओं ने अपने कर्त्तव्य से विमुख होकर गांधीवाद त्याग दिया है, अतएव भ्रष्टाचार दूर करने और गांधीवाद के पुन प्रचार के लिये उक्त नयी पार्टी को जन्म दिया गया है।

माननीय श्री एम० एस० अणे



आप विहार प्रान्त के गवर्नर हैं। देववाणी संस्कृत के स्वयम् बड़े विद्वान् हैं। संस्कृत के प्रचार और प्रसार में सतत प्रयत्नशील रहते और इस दिशा म प्रोत्साहन भी देते रहते हैं।

माननीय श्री सम्पूर्णानन्द



आप उत्तर प्रदेशीय सरकार के शिक्षा मन्त्री हैं। संस्कृत विश्व विद्यालय की स्थापना के लिये पूर्ण रूप से सचेष्ट हैं। हिन्दी के प्रसिद्ध दार्शनिक लेखक और ग्रन्थकार हैं।

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०)

एक प्रति तीन आने

सम्पादक हरिशङ्कर शर्मा

श्रीप्रधानजी का पत्र

[यह पत्र गत सप्ताह ही हमें प्राप्त हो चुका था, परन्तु स्थानाभाव-वश उस समय न प्रकाशित किया जा सका। स्व० श्री पं० घासीरामजी की जिस चिट्ठी का इसमें उल्लेख है, वह गत अङ्क में प्रकाशित की जा चुकी है। सम्पादक]

श्रीयुत सम्पादकजी आर्यमित्र,

२४ तथा ३१ मई के आर्यमित्र पढे। २४ मई के अङ्क में पृष्ठ ३ पर सम्पादकीय लेख 'आर्यसमाज की अवेतन सेवा' शीर्षक बड़ा उपयोगी है। मैं तो यह निवेदन करूंगा कि आर्यसमाज के कार्यकर्ता इस सम्बन्ध में लगातार अपने विचार 'आर्यमित्र' में प्रकाशित करें, जिससे जनमत बन जावे और यह कार्य होने लगे। उसी अङ्क के पृष्ठ ८ पर 'नैतिकता निरूपण' एक अच्छा लेख श्री राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी ने लिखा है, सचमुच ऐसी शिक्षा की बड़ी आवश्यकता है, कारण कि हम लोग दूसरों की सुविधा का तनक भी विचार नहीं करते। फारसी में एक अच्छी लोकोक्ति इसके सम्बन्ध में यह है:—

"उन्च बरखुद पसन्दी पर दिगरॉ मापसन्द"

इस का तात्पर्य यह है कि जो व्यवहार तुम्हें स्वयं पसन्द नहीं आता, वह दूसरों के सम्बन्ध में भी तुम्हें अच्छा नहीं लगना चाहिए।

२४ मई के अङ्क में पृष्ठ १० पर आर्यसम्मेलन की कार्यवाही प्रकाशित हुई है। उस कार्यवाही में दो-तीन बातें ऐसी हैं, जिनको कार्यान्वित अवश्य करना चाहिये। उनमें से एक सुझाव आचार्य बृहस्पतिजी का है कि प्रतिनिधि सभा में एक पद पुरोहित का भी नियत किया जाय। मुझे आशा है कि सभा की आगामी अन्तरंग इस सुझाव पर विचार करेगी। दूसरा उपयोगी सुझाव यह है कि प्रचार को अधिक उपयोगी बनाने के लिए संगीत, धनुर्विद्या योग सम्बन्धी क्रियाएं जादू के खेल, हस्तकला, मैजिक लेन्टन, एकाकी नाटक, संलाप (डायलोग) इत्यादि का भी सहारा लेना चाहिये। मैं उस प्रस्ताव से सहमत नहीं हूँ जिसके द्वारा यह बताया गया है कि प्रचार की खण्डनात्मक पद्धति को छोड़ कर रचनात्मक पद्धति को अपनाना चाहिये।

रचनात्मक पद्धति को अवश्य अपनाना चाहिए, परन्तु खण्डनात्मक पद्धति को सर्वथा छोड़ देना ठीक नहीं है। उस पद्धति के छोड़ने से बहुतसी बुराइयाँ हमारी सोसाइटी में घर कर लेती हैं।

हम देखते हैं कि भारत में कुछेक बड़े आदमियों की समाधियाँ बनाई जा रही हैं, और उन पर फूल चढाए जा रहे हैं। ऐसी अवैदिक कुप्रथा का खंडन अवश्य होना चाहिये। यह जरूर है कि खंडन सभ्यतापूर्वक मधुर शब्दों में किया जाय।

३१ मई के अङ्क में मुख्य पृष्ठ पर 'गरलपान' शीर्षक कविता स्वामीजी महाराज के जीवन की एक दो घटनाओं पर प्रकाश डालती है और अच्छी भी है, किन्तु एक साप्ताहिक पत्र के लिये लम्बी है।

इसी अङ्क के पृष्ठ ३ पर सम्पादकीय लेख दयानन्द-सेवक समिति की स्थापना पर प्रकाशित हुआ है। यह एक बड़ा उत्तम सुझाव है परन्तु इस सम्बन्ध में यह जानना रुचिकर होगा कि 'सर्वेण्ट आफ इण्डिया सोसाइटी' के खोलने के समय महात्मा गोखले के पास कितना धन एकत्रित हो चुका था। बात यह है कि 'दयानन्द सेवक-समिति' की स्थापना के लिये एक बड़ी धनराशि की आवश्यकता होगी, जो कदाचित् ८-१० लाख रुपये से अधिक ही हो। इतना धन हमारे आर्य भ्राता एकत्रित कर देंगे, इसमें सन्देह मालूम होता है। आपने स्वयं ही उसी पृष्ठ पर अपने दूसरे सम्पादकीय नोट में दैनिक के सम्बन्ध में धन की कमी को महसूस किया है।

गुरुकुल वृन्दावन के विषय में जो आपने ३१ मई के 'आर्यमित्र' में पृष्ठ ? पर सम्पादकीय लेख लिखा है, वह बहुमूल्य और विचारणीय है। गुरुकुल के सम्बन्ध में आपने जो त्रुटियाँ अनुभव की हैं, वे ही त्रुटियाँ हमारे नेता स्व० श्री पं० घासीरामजी ने अनुभव की थीं। पंडितजी कुछ समय तक गुरुकुल के कुलपति रहे, और उन्होंने भरसक प्रयत्न किया कि वृन्दावन गुरुकुल की स्थिति सुधर जाय, किन्तु उन्हें इस कार्य में बहुत सी कठिनाइयाँ पेश आईं। इस सम्बन्ध में मैं उनका एक पत्र जो उन्होंने १२ नवम्बर सन् ३१ को लिखा था, ज्यों का त्यों आपके पास भेज रहा हूँ। यदि आप उचित समझें तो आप उसे 'आर्यमित्र' में उद्धृत कर सकते हैं। और कार्य होजाने पर लौटाने का कष्ट करें।

पृष्ठ ५ पर स्वास्थ्य सुधा शीर्षक में श्री पं० सत्येन्द्र नाथ आयुर्वेदाचार्य ने एक उपयुक्त लेख लिखा है और यह अनुभव से भी कहा जा सकता है कि उन्होंने जो भोजन के साथ जलपान करने का विधान बताया है, कि आहार के साथ अनेक बार थोड़ा-थोड़ा जल पिये यह बिल्कुल ठीक है।

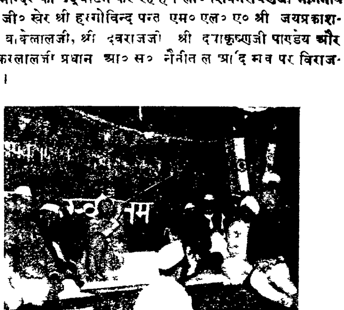
पृष्ठ ८ पर श्री राजेन्द्रजी का "आर्यसमाज की दो समस्यायें" शीर्षक विचार-उत्पादक लेख है। उसके द्वारा आर्यसमाज का ध्यान प्रचार के कार्य को अधिक बढ़ाने की ओर खींचा गया है।

मदनमोहन सेठ
सभा-प्रधान।

श्री शारदाजी को बधाई!

२१ जून १९५१ को प्रसिद्ध आर्य नेता देशभक्त श्री कुँवर चाँदकरण शारदा एडवोकेट अपने जीवन के ६३ वर्ष सफलता पूर्वक सम्पूर्ण कर ६४ वे में वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। इस शुभ अवसर पर हम आपको हार्दिक बधाई देते हुए परमपिता परमात्मा से प्रार्थी हैं कि वह आपको शतायु करें। बन्धुवर श्री शारदाजी ने अपनी लेखनी और वाणी द्वारा देश और समाज की प्रशंसनीय सेवाएँ की हैं। आप गत ४१ वर्षों से एक सैनिक और सेनानी के रूप में सार्वजनिक सेवा-क्षेत्र में दृढता पूर्वक अचल रूप से डटे हुए और अटल हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दी की उन्नति, भ्रष्टाचार गोवध तथा हिन्दू कोड-बिल के विरोध में आपकी सेवाएँ संस्मरणीय रहेंगी। हैदराबाद-सत्याग्रह के तो आप विजयी सेनानी (डिक्टेटर) है। आर्य-मार्तण्ड का सम्पादन आप बड़ी योग्यता और निर्भयता से कर रहे हैं। आप देश के अथक सैनिक और महर्षि दयानन्द के अनन्य अनुयायी हैं। हम आपकी ६४ वीं वर्ष गांठ पर आपका बार-बार अभिनन्दन करते हैं।

माननीय मुख्य मन्त्री श्री गोविन्दवल्लभ पन्त नैनीताल आर्य समाज मन्दिर का उद्घाटन कर रहे हैं। ला० शिवनारायणजी माननीय श्री ए० जी० खेर श्री हरगोविन्द पन्त एम० एल० ए० श्री जयप्रकाशजी, श्री व० केलालजी, श्री देवराजजी श्री देवकृष्णजी पाण्डेय और श्री शंकरलालजी प्रधान आ० स० नैनीताल आदि मंच पर विराजमान हैं।



इस शुभ अवसर पर ला० शिवनारायणजी (बेलनगंज आगरा निवासी ने) दस हजार रुपये समाज-मन्दिर के लिये दान दिये। एक हजार रुपया पहले भी आप इसी के लिये दान दे चुके हैं। बारह हजार रुपये आपने इस मन्दिर के लिये ऋण-रूप दिये हैं।

‘स्वेन क्रतुना संवदेत’

आर्य ओ३म् मित्र

आगरा, आषाढ़ कृष्णा २ सवत २००८ वि०, गुरुवार, ता० २१ जून १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५१

शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु यो नः सेदुरप्रिये तं नि दध्मः ।
पवित्रेण पृथिवि मोत् पुनामि । अथ० १२।१

हम सदा शुद्ध जल प्राप्त करें, जल से शरीर हो जाय शुद्ध,
सब पावन-पुण्य विचारो मे, संयुक्त बनें प्रेमी प्रबुद्ध।
जो शत्रु हमारा नाश करें, उसको हम दण्डित किया करें,
सद्भाव हृदय में भरा रहे, हम प्रेमामृत नित पिया करें।

‘धर्म्महीन राजनीति’

गन्दी, संकीर्ण और सड़ी !

इस युग में वही बड़े से बड़ा राजनैतिक नेता समझा जाता है जो धर्म की अधिक से अधिक उपेक्षा, अवहेलना और निन्दा करता है। ऐसे नेताओ ने मत-मन्थो, जात-बिरादरियों यानी ‘सम्प्रदायवाद’ का नाम ‘धर्म’ रख लिया है। या तो ये लोग ‘धर्म’ का अर्थ समझते नही, समझते हैं तो झुठलाते हैं। अगर इन्होंने ‘सम्प्रदायवाद’ का नाम धर्म रख लिया है तो यह वही बात हुई कि कोई गुलकन्द का नाम गोबर या रबड़ी का नाम कीच रखले। इसे नाम रखने वालो की मूर्खता या हिमाकत ही समझना चाहिए। संसार का धर्म एक है, इसमें दो मत नही हो सकते। जिन नियमों और सिद्धान्तों से मानव-जीवन ऊँचा उठता अथवा जिनके आधार पर मनुष्य-समाज लोक-परलोक सम्बन्धिनी अथवा अपनी-पराई उन्नति करता है, वही धर्म है। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, धृति, क्षमा, दम, शम, शौच, इन्द्रिय-निग्रह इत्यादि धर्म के लक्षण प्रसिद्ध हैं। इस धर्म ने विश्व का कब विनाश किया? कब अशान्ति पैदा की? कब युद्ध या महायुद्ध रोपे? कब हत्याएं कराईं? क्या संसार का कोई भी राजनैतिक नेता इन प्रश्नों के उत्तर दे सकता है? किसी प्रकार भी सिद्ध कर सकता है? यदि कहा जाय कि ‘सम्प्रदाय’ से ही धर्म का मतलब है, तो यह महा मूर्खता क्यो। गोबर को गुलकन्द क्यो बताया जा रहा है? भले को ‘बदमाश’ क्यो कहते हो? निःसन्देह साम्प्रदायिकता बहुत बुरी है, उसकी जितनी निन्दा की जाय थोड़ी है। परन्तु राजनीति उससे भी अधिक बुरी, बीभत्स और भयानक है। इसके कारण भाई ने भाई के गले काटे, विष-पान कराये, विश्व के दो सर्व-संहारकारी महायुद्ध भी राजनीति के कारण ही हुए। उनमें साम्प्रदायिकता का नाम भी नहीं है। आज उन्हीं महायुद्धों का कुफल घोर भुखमरी और अत्यन्त अशान्ति के रूप में सारे संसार को भोगना पड़ रहा है। भारतवर्ष की तबाही का कारण भी यही गन्दी और सड़ी राजनीति है। जिस राजनीति ने मानवता का संहार किया, वैर-वृक्ष का बीज बोकर छिन्न-भिन्नता और आपाधापी का स्वार्थपूर्ण जाल बिछाया, उसे भली कहना सत्य का गला घोंटना और आत्मा का हनन करना है। हम फिर डंके की चोट राजनैतिक अखाड़ेबाजो से पूछना चाहते हैं कि वे बतावें और जरूर बतावें कि धर्म ने कब और क्या अनर्थ किया? यदि नहीं किया तो आज वे धर्म शब्द का उच्चारण करके भी क्यो अपने को कलंकित समझते है। विश्व वन्द्य महात्मा गांधी ने भारत को स्वतन्त्र कराया, उन्हें राजनीति से भी काम लेना पड़ा। परन्तु उनकी राजनीति में धार्मिकता या आध्यात्मिकता ही मुख्य थी, वे अपने प्रत्येक काम में धर्म और अध्यात्म का पुट देते थे, इसीलिये उनकी राजनीति भी धर्म-प्रधान रही, और उसका सिक्का संसार पर बैठ गया। अंग्रेजो की तोप-तलवार तथा मेशीन गनें रखी रह गयीं। महात्माजी स्वयम् ही धार्मिक नहीं रहे, उन्होंने अपने अनुयायियो से भी कहा कि सर्वशक्तिमान परमेश्वर पर पूरा विश्वास करो और सत्य तथा धर्म्म का सहारा लेकर कार्य-क्षेत्र में कूद पड़ो; सफलता अवश्य प्राप्त होगी। ऐसा ही हुआ। महात्मा गांधी ईश्वर के अटल विश्वासी और धर्म के अचल समर्थक थे। उन्होंने अपनी राजनीति में धर्म को पूरा स्थान दिया। इसी से उनकी इतनी अधिक महत्ता है।

परन्तु अब ! अबकी क्या पूछते हो? जिस प्रकार मदगामी ब्राह्मण लोग किसी समय अछूतों से राजो बचकर चलते थे, उसी तरह हमारे राजनैतिक नेता और सत्ताधारी जन ‘धर्म’ से परहेज कर कोसों दूर भागते है। इसलिये कि कहीं उनकी राजनीति पर धर्म की छाया न पड़ जाय। उसमें सत्य का अंश न समा जाय, क्षमा या अस्तेय अपना अधिकार न करले। इन ‘क्रियाकुशल लोगो से और तो कुछ बना नहीं ‘सम्प्रदाय को धर्म का नाम देकर उसे दुनिया की निगाह में गिराना शुरू कर दिया। फिर भी कहते हैं, हम गांधी-भक्त है गांधीवाद पर चलना हमारा ध्येय है? गांधीजी हमारे गुरु थे, यह थे, वह थे।

गांधी मार्ग से विचलित होने के कारण ही ‘स्वतन्त्र भारत’ पर विपत्ति वज्र-पात हो रहा है। राजनीति से धर्म का सम्बन्ध-विच्छेद कर देना ही गांधी-पथसे भ्रष्ट होना है। ‘रामराज्य’ की महिमा इसी में है कि तब राजनैतिक गन्द को धर्म की धूनी से दूर कर दिया गया था। महात्मागांधी ने भी यही किया और स्पष्ट कहा, कि मैं ‘रामराज्य’ उसे कहता हूँ जिसकी प्रत्येक चेष्टा और गति-विधि में अध्यात्म-शक्ति परिस्फुट हो रही हो—धर्म की ज्योति जहाँ स्पष्ट दिखाई दे रही हो। जहा धर्मकी सत्ता नहीं वहाँ सत्य और सदाचार ठहर ही कैसे सकते है। संविधानो की सुदृढ़ सॉकले और कानून की कड़ी कड़िया धर्म-हीन मदमातो को कदापि नहीं जकड़ सकतीं। इसलिये ये सब नकली उपाय आज व्यर्थ या विफल सिद्ध हो रहे है। हमें आश्चर्य तो आर्य-समाज पर है कि वह अपनी व्यापक विशेषता को राजनीति की गन्दी संकीर्णता पर समर्पित कर देना चाहता है। आज देश में सर्वत्र राजनैतिक गन्दगी बिखरी हुई है। स्वार्थान्धता के मोर्चे अड़े हुए है, खुदगर्जी और मतलबपरस्ती के दृश्य दिखाई दे रहे हैं। फिर भी आर्य-समाज इस गन्दगी के गढ़ में घुसना चाहता है। यह कितने आश्चर्य और दुःख की बात है, आर्यसमाज के पास विश्व-धर्म के अटल सिद्धान्त है, उन्हीं का उसे गर्व और गौरव है। अगर वह चाहे तो कल्याण-कारी वैदिक धर्म-दिवाकर की सुरम्य रश्मियो के पुण्य एवम् प्रांजल प्रकाश द्वारा राजनीति की सारी गन्दगी को दूर या काफूर कर सच्ची शान्ति की स्थापना कर सकता है।

छात्रों में अनुशासन-हीनता

स्कूल-कालिजो तथा ऐसे ही अन्य शिक्षणालयो में पढ़ने वाले विद्यार्थियो में अनुशासन-हीनता के भाव बहुत बढ़ते जा रहे हैं। अलीगढ की दुर्घटना को तो इस दिशा में कलंक-रूप ही समझना चाहिए। विद्यालयों में अनुशासन-हीनता क्यो है, और वह कैसे दूर की जा सकती है, इस विषय पर आजकल काफी चर्चा चल रही है। कुछ लोगो की राय है कि अर्थ दण्ड या शारीरिक दंड द्वारा विद्यार्थियों में अनुशासन और सौजन्य की भावना जाग्रत् की जा सकती है। परन्तु हम ऐसा नहीं समझते। ये दोनो दण्ड तो विद्यार्थियो को उत्तेजित कर उन्हे और अधिक उग्र या उद्दण्ड बना देने वाले है। अनुशासन-प्रियता के लिये श्रद्धा और सद्भावना द्वारा हृदय-परिवर्तन की आवश्यकता है। आज शिक्षणालयों की बड़ी विचित्र स्थिति है। शिष्य गुरुओं पर श्रद्धा नहीं रखते और गुरु शिष्यों के साथ वात्सल्यपूर्ण व्यवहार नहीं करते। दोनो ओर कमी है गुरु-शिष्य-परम्परा को सुरक्षित रखने की जो प्राचीन भावनाएँ है, उन्हे ढकोसला या दकियानूसी बताया जाता है। भौतिक या धार्मिक शिक्षा

*का नाम आते ही सरकार की त्योरी चढ़ जाती है। फिर कैसे श्रद्धा-*भक्ति और वात्सल्य की भावना पैदा हो। पुरानी परिपाटी के अनुसार संस्कृत पढ़ने पढ़ाने वालों में अब भी अच्छा सम्बन्ध है। शिष्य गुरुओंका आदर करते हैं और गुरु शिष्यों पर प्रेम रखते हैं। आजकल के 'सभ्यताभिमानी' लोग इसे 'गुरुडम' और 'मानसिक दासता' बतलाते हैं। कालिज-स्कूलों में अनुशासन पैदा करने के लिये श्रद्धा और स्नेह की आवश्यकता है—आदर और विनय अपेक्षित है। दण्ड या दण्डा नहीं। इनसे तो और अधिक उद्दण्डता और उग्रता का बढ़ना निश्चित है।

———

प्रौढ़-शिक्षा-प्रचार

प्रौढ़ शिक्षा से अभिप्राय उन लोगों की शिक्षा से है, जिनकी आयु अधिक हो गई है और जो जीविका सम्बन्धी झंझटों में पड़कर साक्षर नहीं हो पाये। ऐसे निरक्षरों की संख्या देश में लाखों नहीं करोड़ों है। इन पर "काला अक्षर भैंस बराबर" की लोकोक्ति अक्षरशः चरितार्थ होती है। इस सम्बन्ध में मेरठ की सुप्रसिद्ध आर्यकार्यकर्त्री श्रीमती शकुन्तलादेवी गोयल ने एक सुझाव हमारे पास भेजा है। वे चाहती हैं कि आर्यसमाज मन्दिरों में प्रौढ़ शिक्षा का कार्यक्रम नियमित रूप से प्रारम्भ किया जाय। इस प्रकार आर्य सामाजिक जन-जनता के अधिकाधिक सम्पर्क में आवेंगे और सरलता से आर्यसिद्धान्तों का प्रचार हो सकेगा। हम देवीजी के इस प्रस्ताव का सबल समर्थन करते हैं। आर्यसमाज इस प्रस्ताव को कार्यान्वित करके प्रतिवर्ष सहस्रों व्यक्तियों को साक्षर बना सकता है। उत्तर प्रदेश के एक सहस्र आर्यसमाज, औसत से, यदि पचास-पचास व्यक्तियों को भी प्रतिवर्ष हिन्दी का साधारण ज्ञान करा सकें तो वर्ष में पचास हज़ार आदमी सरलता से साक्षर बन सकते हैं। हम तो चाहते हैं कि प्रत्येक आर्यसमाज-मन्दिर में प्रौढ़-शिक्षण श्रेणियां तुरन्त खोल दी जावें, और उनमें आर्य सदस्य निःस्वार्थ भाव से अपढ़ प्रौढ़ों को पढ़ावें। ये श्रेणियाँ रात्रि को अधिक सुविधाजनक होंगी, क्योंकि उस समय वे लोग पढ़ने आ सकेंगे जिन्हें दिन भर जीविका सम्बन्धी कार्य करने से अवकाश नहीं मिलता। यह कार्य अधिक व्यय-साध्य भी नहीं है, केवल थोड़ा समय देने की आवश्यकता है। प्रारम्भ में साधारण व्यय के लिये विशेष चन्दा किया जा सकता है। प्रौढ़ों में स्त्री-पुरुष दोनों की ही गणना की जाती है। यानी प्रौढ़ों और प्रौढ़ाओं दोनों को पढ़ाने की व्यवस्था की जाय, प्रौढ़ाओं को स्त्रियां शिक्षा दे सकती हैं। ये शिक्षणालय पढ़ी-लिखी स्त्रियों के घरों पर हों तब भी कोई हानि नहीं है।

———

श्मशान भूमि की पवित्रता

इसी अङ्क में अन्यत्र पाठक उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री मदनमोहन सेठ एम० ए० का पत्र पढ़ेंगे, जो उन्होंने मरघट-सुधार के सम्बन्ध में गत २ जून को माननीय मन्त्री श्री ए० जी० खेर की सेवा में भेजा है। श्री सेठजी ने अपने पत्र में जो सुझाव दिये हैं वे बड़े ही उपयुक्त और आवश्यक हैं। उनको कार्य-रूप में परिणत करने के लिये शीघ्र ही व्यवस्था होनी चाहिये। अंग्रेजों और पारसियों के श्मशान कितने सुन्दर और सुरम्य होते हैं। उन्हें देखकर कोई यह नहीं कह सकता कि ये मुर्दों के क्रिया-कर्म की जगह हैं। सुहावना उद्यान, मनोरम वृक्षावली, आकर्षक वातावरण, चित्त प्रसन्न करने वाला शुद्धता और स्वच्छता, बैठने के लिये उपयुक्त कमरे, तबियत लगने के लिए पुस्तकालय या वाचनालय सभी की वहां सुन्दर व्यवस्था होती है। परन्तु हिन्दू श्मशान की बीभत्सता कोढ़ में खाज पैदा कर देता है। मुर्दनी में जाने वाले शोकाकुल व्यक्तियों के चित्त में वहां शोक के साथ घृणा के भी भाव भर जाते हैं। नागरिकों और नगर-पालिकाओं दोनों को इस विषय में अपना कर्तव्य पालन करना चाहिये। मरना सबको है और सब की ही अन्त्येष्टि होनी है। अन्त्येष्टि कितनी ही शोकोत्पादक क्यों न हो परन्तु वह पवित्र तो है ही। ऐसा पवित्र काम बड़े पवित्र स्थान पर ही होना चाहिये। जो सम्पन्न लोग मृतक भोजों में सैकड़ों सहस्रों रुपया बर्बाद कर देते हैं, वे श्मशान की शुद्धता और सुन्दरता पर तनिक भी ध्यान नहीं देते, यह कितने दुःख की बात है। हम तो समझते हैं कि छोटे-बड़े प्रत्येक नगरनिवासी का कर्तव्य है कि वह श्मशान के वातावरण को सुन्दर और शुद्ध बनाने के लिये पूरा ध्यान और यथाशक्ति दान प्रदान करे। श्मशान-सुधार के लिए नगर में समितियाँ बनाई जायं जो ईमानदारी से अपने कार्य में लगें। सरकार को भी चाहिए कि वह इस ओर ध्यान देकर मरघटों के सुधार की अविलम्ब व्यवस्था करे। मुरदे उठाने के लिए एक गाड़ी भी होनी चाहिए। बहुत दिन हुए, आगरा की सेवा-समिति के पास एक ऐसी गाड़ी थी जिसको वह 'वैकुण्ठी' कहती थी। यह गाड़ी महामारी के समय अनेक मुर्दों को ढोती थी और अस्पताल के लावारिस मुर्दों को भी ले जाती थी।

———

श्री कुँवर हरिप्रसादसिंहजी का देहान्त !

दुःख से लिखना पड़ता है कि गत ५ जून को बाँदा निवासी श्री कुँवर हरिप्रसादसिंह एम० एल० ए० का देहान्त हो गया ! आप कर्मवीर आर्य थे। बाँदा अनाथालय और आर्यसमाज की आपने प्रशंसनीय सेवा की। कांग्रेस में भी बड़ा काम किया, आप सार्वजनिक कार्यों में सदा अग्रणी रहते थे। वृन्दावन गुरुकुल की भूमि प्राप्त कराने में आपने पूज्य महात्मा नारायण स्वामीजी के साथ पूरा सहयोग किया था। हमें कुँवर साहब जैसे कर्मठ आर्यवीर के उठ जाने का बड़ा दुःख है। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति तथा दुःखित परिवार को धैर्य प्रदान करे।

———

अपराधों की निवृत्ति

वर्तमान युग जिसमें धर्म और ईश्वर दोनों को धता बता कर केवल कानूनों का असफल आश्रय लिया जा रहा है अपराध वृद्धि के लिये सबसे अधिक उपयुक्त और उर्वर सिद्ध हुआ है। स्वतन्त्र भारत में तो अपराधों के मान या पूर्वापेक्षा कहीं बढ़ गयी है। जहां ईश्वर, धर्म, सदाचार, संयम किसी का भी भय या विचार न हो, वहाँ अपराधों से बचने की प्रेरणा ही कैसे मिल सकती है। कानून की आँखों में धूल झोंकना या उसकी अवहेलना करना तो अभ्यस्त अपराधियों के लिये एक साधारण-सी बात है। कानूनी शिकंजे में तो प्रायः नये अपराधी आया करते हैं, पुरानों को तो उससे बचने के हजार हथकंडे याद होते हैं। अपराधों या पापों का तो हृदय में ईश्वर और धर्म की ध्रुवधारा प्रवाहित होने से ही उन्मूलन हो सकता है। पाखण्ड-प्रदर्शन का नाम ईश्वर-भक्ति नहीं है। आज के पाश्चात्य शिक्षा-शास्त्रियों ने बड़ी खोज और छानबीन के बाद निश्चित किया है, मनुष्य के लिये बाल्यकाल से ही सुशिक्षा की सुव्यवस्था होनी चाहिए, परन्तु महर्षि दयानन्द कहते हैं, बाल्यकाल नहीं, बालक के गर्भगत होते ही उसमें पवित्र और सुन्दर संस्कार भरे जाने चाहिएं। आज जैसे असंस्कृत माता-पिता हैं, वैसे ही असंस्कृत अध्यापक और गुरु भी। फिर बालकों के हृदयों में सच्ची शिक्षा का संचार कैसे हो, वे कैसे सच्चरित्र और धार्मिक बनें। इस युग में शिक्षा का अर्थ है पोथा-पढ़न्त और उपाधि-प्राप्ति। जिसने विश्वविद्यालय की उपाधियाँ प्राप्त कर ली, वही शिक्षित समझा जाने लगा। भले ही उनका शरीर रोगों का घर हो, मन में मलिनता भरी हो आत्मा पाप पंक में सना हो, परन्तु वह शिक्षित है, सुसंस्कृत है और सुसभ्य है !! देश को ऐसी शिक्षा, संस्कृति और सभ्यता की आवश्यकता नहीं। शिक्षा वह है जो शरीर, मन और आत्मा को ऊंचा उठाती है। इससे भिन्न शिक्षा नहीं, 'पोथा-रटन्त' है। ऐसे पोथा रटुओं या उपाधिधारियों को साक्षर या पठित कहा जा सकता है, शिक्षित और सभ्य नहीं। क्या शिक्षित जन कभी अपराध करेगा, पापपूर्ण कुमार्ग की ओर जायगा, मन में दुर्भावना आने देगा, हृदय को कलुषित बनावेगा। कदापि नहीं। कहने का अभिप्राय यह है कि जहाँ पोथा पढ़ने और ज्ञान-विज्ञान सीखने की आवश्यकता है, वहाँ वास्तविक शिक्षा भी अनिवार्य है। यह शिक्षा माता के गर्भ से ही मिलनी चाहिये और घर-द्वार, पुर-परिवार, विद्यालय-महाविद्यालय सर्वत्र मिलनी चाहिए। इस शिक्षा के बिना न तो अपराध रुक सकते हैं न पापाचार घट सकते हैं और न विश्व को शान्ति प्राप्त हो सकती है। चलो, पीछे की ओर, और देखो पुरानी संस्कृति को। तभी कल्याण होगा।

———

अध्यात्म-धारा

सच्ची शान्ति कहाँ है ?

श्रीयुत लालचन्दजी

पवित्र हृदय में भगवान् के दर्शन होते हैं। पवित्र हृदय में प्रेम का उदय होता है। पवित्र हृदय में सदा मंगल कामना होती है। पवित्र हृदय में स्फूर्ति होती है। पवित्र-पावन भाव पवित्र हृदय-भूमि की ही उपज है। जिसका हृदय पवित्र है, उसे भय नहीं लगता। पवित्र हृदय में सदा सब के लिए शुभ कामना ही हुआ करती है। पवित्र हृदय वाला मानव आशावादी होता है, वह कभी हताश नहीं होता। निराशा उसके पास भी नहीं झाँकती। पवित्र वातावरण में सभी के आचरण पवित्र होते हैं, ऐसे वायुमण्डल में दुराचार नहीं होते।

सदाचार के लिये पवित्र वायुमण्डल और स्वच्छ स्थान परम आवश्यक है। अन्तःकरण की पवित्रता के लिए शुद्ध सात्विक भोजन आवश्यक है। न केवल भोजन शुद्ध हो, बल्कि वह शुद्ध भावना से ही बनाया गया हो। तभी भावना भी शुद्ध होती है। जैसा कोई मनुष्य भोजन करता है, वैसा ही उसका मन बनता है। शुद्ध भोजन से निःसन्देह शुद्ध मन बनता है और शुद्ध मन में शिव संकल्प होते हैं। शिव संकल्प वाला मन मनुष्य को कल्याण-मार्ग की ओर ले जाता है।

मनुष्य की बुद्धि निर्मल हो। शरीर स्वस्थ और शुद्ध हो, मन पवित्र और शक्तिशाली हो, इन्द्रियाँ सबल हों, अंग पुष्ट हों तो मनुष्य की दीर्घायु होती है। दीर्घायु में ही मनुष्य अनुभवी होता है और अपना तथा दूसरों का हित कर सकता है। शुद्ध-पवित्र जीवनचर्या में ब्रह्मचर्य सुसाध्य है। जीवनचर्या पवित्र हो और नियमित हो तो शक्ति बढ़ती है, और चित्त प्रसन्न होता है। पवित्र अन्तःकरण में आत्मशक्ति का विकास होता है।

सत्य से पवित्रता स्थिर होती है। सदाचारी ही पवित्र है। जो पवित्र है, वही धर्मशील है। पवित्र हृदय तथा शुद्ध मन में ही धर्म के सभी अंग पुष्ट होते हैं। जहाँ धर्म फलता है, वहाँ स्थायी ऐश्वर्य होता है। इस लिए ऐश्वर्य की कामना वाले के लिए अपना पवित्र जीवन बनाना अनिवार्य है। पवित्रता और सत्य एक दूसरे पर अवलम्बित हैं। जो पवित्र है, वह ही सदाचारी है और सदाचारी ही पवित्र है।

केवल सुन्दर वस्त्र धारण कर लेने से मनुष्य शुद्ध नहीं होता। आहार शुद्ध होने से जीवन-तत्व की शुद्धि होती है और जीवन-तत्व की शुद्धि से स्मृति की उन्नति होती है, स्मृति की चेतना की स्थिरता से बुद्धि एकाग्र होती है, एकाग्र बुद्धि से आत्मा का ज्ञान होता है, आत्मज्ञान से मनुष्य की अन्तर-ज्योति प्रकाशित होती है।

जब अन्तरात्मा में प्रकाश उदय होता है, तब मनुष्य की दृष्टि संकीर्ण नहीं रहती, उसका दृष्टिकोण बदल जाता है। वह अपने आपको जनता में मिला देता है। जनता से उसका एकीकरण हो जाता है। उसमें मेल के भाव जाग्रत होते हैं और भिन्नता के भाव दूर होते हैं। अभिन्नता और अनन्यता उसके व्यवहार में चरितार्थ होने लगती है। पृथकता के स्थान में एकता और विषमता के स्थान में समता अनुभव होती है।

सब में मिल कर सब जैसा होकर वह कर्तव्य रूप से सब का हित करने लगता है और उपकार करता हुआ वह अभिमान नहीं करता। उसे सबका सहयोग प्राप्त होता है, क्योंकि उससे अन्तःकरण में किसी के प्रति ग्लानि नहीं है। वह सबमें समता में मिलता है, उसे सभी एकसे दीखते हैं। वह जनता में विश्वास करता है और जनता उसमें विश्वास करती है। इस प्रकार परस्पर विश्वास का वायुमण्डल बन जाता है, जिसमें सभी के हृदय प्रफुल्लित होते हैं। ऐसे वायुमण्डल में पवित्रता नहीं दीखती, सभी एक दूसरे की सहायता करते हुए उन्नत होते हैं।

पवित्र वायुमण्डल में ही यज्ञ-भावना सफल होती है। पवित्र वातावरण में सब मिलकर सर्वोन्नति के साधन करते हैं। पवित्र जीवन ही यज्ञ रूप है। पवित्र जीवन में स्वस्थता, निश्चिन्तता और तत्परता होती है, जो प्रत्येक की उन्नति में सहायक होती है। जिसकी जीवनचर्या शुद्ध और पवित्र है, उसका घर अवश्य शान्तिधाम है, वही स्वर्गधाम है।

——

साहित्य-सौरभ

मेरे मन्दिर में एक दीप

श्री रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' एम० ए०

मन एक, साधना एक, अर्चना का सुन्दरतम एक गीत,
वीणा में स्वर अवशेष एक, कैसी जीवन की हार जीत,
जब मेरा ही मेरे समीप—
मेरे मन्दिर में एक दीप।

है भरी दृगों में स्नेह-ज्योति, करती मेरे पथ में प्रकाश,
जिसमें मिलकर दो हृदय एक, दो प्राण एक, है एक आश,
शाश्वत हो प्रभु मेरा प्रदीप,
मेरे मन्दिर में एक दीप।

मुझमें प्रियतम, प्रियतम में मैं, हम एक, प्रेम की एक राह
चरणों की गति और प्रगति एक, है ईश। एक जीवन-प्रवाह,
हो एक लहर जिसके समीप—
मेरे मन्दिर में एक दीप।

है सलिल और वह लहर एक, है सुमन-सुरभि का अटल प्यार,
इस हृदय-सिन्धु का एक मेघ, जो बरसे रिमझिम एक धार,
मेरे सागर में एक सीप,
मेरे मन्दिर में एक दीप।

——

भावों से—

कुमारी वीरबाला

ओ जन-जन के पावन भावो, अन्तरतम से बाहर आओ,
युग-युग का घन तम कर विलीन, जगती में नव प्रकाश लाओ।
तुम अन्धकार में पड़े-पड़े, जग को तममय हो बना रहे,
तुम आज परस्पर भाइ को भाई का वैरी बना रहे,
मानव-मानव हैं सब समान इस मूल तत्व को भुला रहे,
मानवता-पथ को छोड़ आज, दानवता-पथ पर चला रहे,
तुम अब फिर से मानवता के पावन आदर्श लिये आओ,
युग-युग का घन तम कर विलीन जगती में नव प्रकाश लाओ।
है कोलाहल हलचल का रव औ' अंधकार जग में छाया,
पल पल में राष्ट्र बदलते हैं, औ' पल में पलट रही काया,
निज स्वार्थभाव में हो तन्मय जग भ्रातृभाव खोता सारा,
है भूल गया अब विश्व सकल 'वसुधा कुटुम्बकम्' का नारा,
तुम इन पुनीत प्रिय गीतों को अब फिर से दुहराते आओ,
युग-युग का घन तम कर विलीन जगती में नव प्रकाश लाओ।
सर्वोदय पथ भुलाने से जन मन में छाई तीव्र भ्रान्ति,
है मचा विश्व में उथल पुथल दिशि दिशि में छाई है अशान्ति,
अन्तर्नयनों की मन्द ज्योति, आनन पर की है हीन कान्ति,
उर क्षुद्र भाव से भर हुये कर रहे भग है प्रेम शान्ति,
धोकर उर के सारे कल्मष, शुचि शान्ति-सुधा अब बरसाओ,
युग युग का घन तम कर विलीन, जगती में नव प्रकाश लाओ।

——

संस्था-परिचय

श्रीमद्दयानन्द अनाथालय, आगरा

५२ वर्ष हुए देश में भयङ्कर दुर्भिक्ष पड़ा था। वह साल था संवत् १९५६। सवत् १९५६ का यह "छप्पनियों अकाल" बड़ा ही रोमाचकारी था। बागड़ में तो इसका और भी भयावह प्रभाव पड़ा था। वहाँ अब तक गाया जाता है,

"छप्पनियो साल, फिर मत आओ मोरे बागड़ में"

इस घोर दुर्भिक्ष के समय भी आर्यसमाज पीड़ित मानवता की सेवा-सहायता करने में कभी पीछे नहीं रहा। उसने उस समय अनाथालयों की स्थापना की। स्वर्गीय श्री स्वामी मगलदेवजी के हृदय मे तड़पन पैदा हुई और उन्होंने ही उपर्युक्त अनाथालय आगरे में स्थापित किया। प्रारम्भ में इस अनाथालय में केवल दस अनाथ बालक राजाधिराज श्रीमान् शाहपुराधीश के यहाँ से आकर प्रविष्ट हुए, फिर यह संख्या २८० हो गयी। अब तक इस अनाथालय द्वारा लगभग तीन हजार बालक-बालिकाए पालित-पोषित और शिक्षित हो चुके है। वे अपनी जीविका स्वयम् कमाते हुए परमात्मा को धन्यवाद देते और महर्षि दयानन्द का गुणगान करते हैं। लगभग पाँचसौ बालिकाओ के विवाह योग्य वरो के साथ कराये जा चुके है, जो अपने-पति-गृहो मे सद्गृहिणी बनी हुई, हिन्दू समाज का मस्तक ऊंचा कर रही हैं।

श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आर्यसमाज आगरा नगर के अधीन है। समाज की अन्तरग सभा ही एक उपसमिति द्वारा इसका प्रबन्ध करती है। इसकी रजिस्टी ५ माच सन् १९१८ ई० को एक्ट २१ सन् १८६० के अनुसार हो चुकी है।

यह अनाथालय प्रारम्भ में तो भाड़े के मकानों मे रहा, परन्तु गत ४५ वर्षों से अपने निज के मकान में है। यह संस्था सरकार द्वारा भी स्वीकृत (रिकागनाइज्ड) हो चुकी है। यानी वह इसमें हिन्दू अनाथ बालक-बालिकाओ को प्रविष्ट कराती रहती है। सरकार समय-समय पर सहायता भी करती है।

छोटे बालक-बालिकाओ की प्रारम्भिक शिक्षा के लिये पृथक-पृथक स्कूल है। इसके अतिरिक्त बुनाई सिलाई, लकड़ी के कार्य आदि की शिक्षा का प्रबन्ध है। बालिकाओं को पाठशाला-सम्बन्धी कार्य, सिलाई, कसीदा आदि की भी शिक्षा दी जाती है। इसके अतिरिक्त उच्च शिक्षा के लिये बालकों का प्रबन्ध बाहर के स्कूलों में कर रखा है। धार्मिक शिक्षा विशेष रूप से दी जाती है। यज्ञशाला मे सब अनाथालयवासी नित्य यज्ञ करते हैं। बालक-बालिकाओं के रहने के लिये पृथक-पृथक स्थान है। प्रत्येक कमरे में पन्द्रह-पन्द्रह बालक रहते है। प्रत्येक कमरे पर एक 'मानीटर' है, जो हर प्रकार की सहायता देता और देख रेख करता है। बालक-बालिकाएं सर्वथा पृथक-पृथक कमरों में रहते है। बालिका-विभाग में बिना आज्ञा के कोई पुरुष नहीं जा सकता। उसकी सारी व्यवस्था स्त्रियों के हाथ में है। रात्रि को पहरा भी रहता है, जिससे किसी को कुछ कष्ट हो तो वह कह सके। ऋतु के अनुकूल भोजन तथा रोगी और छोटे बालकों को दूध दिया जाता है। विशेष अवसरों पर विशेष भोजन भी दिया जाता है।

बालक-बालिकाओं के स्वास्थ्य पर पूरा ध्यान दिया जाता है। इस कार्य के लिये अनुभवी चिकित्सक रहते है।

अनाथालय का वार्षिक व्यय लगभग २० हजार रुपये है। अधिकांश की पूर्ति स्थानीय और बाहर के दान द्वारा होती है। अनेक दानियों ने पांच-पांच सौ रुपये जमा कर रखे हैं, जो स्थायी कोष मे जमा रहते है? केवल उनके सूद से उनके नियत किये हुए दिन अनाथों को भोजन दिया जाता है।

छोटे छोटे बच्चों के पालन के लिए धायें नियुक्त करनी हैं। इसके लिये 'शिशु पालन' फण्ड खोला गया है। उसके लिये धन की आवश्यकता है, एक अतिथि-भवन बनाने की आवश्यकता है, क्योंकि बाहर से प्रायः रोज ही दो-एक व्यक्ति अनाथालय में ठहरने की इच्छा से आते रहते है।

मानवता की रक्षा के लिये यह संस्था गत ५२ वर्षों से प्रशंसनीय काम कर रही है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, अंग्रेज, पारसी सभी ने इसे देखा और अपनी बड़ी अच्छी सम्मतियां लिखी है। जिले के कलक्टर, जज आदि अधिकारी भी समय-समय पर इसका निरीक्षण करते रहते हैं। सभी इस संस्था से प्रभावित और प्रसन्न है।

जिस "छप्पनियों साल" में इस अनाथालय की स्थापना हुई, उस समय रुपये का 'डेढ़ पसेरी' यानी साढ़े सात सेर गेहूँ बिकता था, परन्तु अब गेहूँ तथा अन्य वस्तुओं का क्या भाव है, इसे सोचते हुए भी बड़ा दुःख होता है। अब पाठक स्वयम् सोचें कि 'छप्पन' का अकाल भयङ्कर था, कि अब का समय। ऐसी बुरी परिस्थिति में श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आगरा सार्वजनिक साहाय्य का कितना अधिकारी है, यह किसी के कहने की नहीं स्वयम् विचारने की बात है।

सुधार-योजना

मरघटों का सुधार

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के माननीय प्रधान श्री मदनमोहन सेठ, एम० ए० ने एक बड़े आवश्यक और महत्वपूर्ण कार्य की ओर स्थानीय स्वायत्त शासन विभाग के माननीय मन्त्री श्रीयुत ए० जी० खेर महोदय का ध्यान आकृष्ट किया है। यह कार्य श्मशान सम्बन्धिनी पवित्रता है। आदरणीय सेठजी ने अपने पत्रक में लिखा है:—

हिन्दू श्मशानो की असन्तोषजनक स्थिति किसी से छिपी नहीं है। श्मशान-भूमि या मरघट शुद्ध और स्वच्छ नहीं रक्खे जाते, क्योंकि वहाँ उन्हें देखने-भालने के लिये कोई आदमी नहीं रहता। इस विषय में हमें अपने पाश्चात्य बन्धुओ से शिक्षा लेनी चाहिए। मृतकों की अन्त्येष्टि करने की हिन्दू-पद्धति सब से अधिक वैज्ञानिक, श्रेष्ठ और अल्प व्यय साध्य है। खेद है कि हम श्मशान के वातावरण को शुचि एवम् सुन्दर बनाने के लिए कोई उद्योग नहीं करते। कम से कम हम उन्हें उचित अवस्था में तो रख ही सकते है। बहुत से श्मशान तो ऐसे है, जहाँ मुर्दनी मे आने वाले लोगो को धूप ताप या वर्षा से बचने के लिए कोई स्थान ही नहीं होता। कुछ श्मशान ऐसे होंगे, जहाँ सायाबान बने हों, परन्तु श्मशान भूमि की तरह ये स्थान भी बड़े गन्दे रक्खे जाते हैं। वर्षा ऋतु मे जबकि खुले स्थान पर मृतको को जलाने में बड़ी कठिनाई होती है, अन्त्येष्टि के लिए कोई पटा हुआ स्थान होना चाहिए। अगर इन स्थानो की सफाई के लिए आवश्यकतानुसार एक-दो पूरे समय के सेवक रक्खे जाय तो बड़ा अच्छा हो। मुर्दनी में आने वालो की रक्षा के लिए भी सायादार स्थान या पटाव की व्यवस्था की जाय, जिससे धूप और वर्षा से बचाव हो सके। श्मशान में पटे हुए हवन कुण्ड होने चाहिएँ, जिनमें मृतक संस्कार, विशेष कर वर्षा के समय शीघ्रता और सरलता से सम्पन्न किया जा सके। कुछ सदाबहार वृक्ष भी श्मशान के चारो ओर लगा देने चाहिएँ, और ऐसे चबूतरे बनाये जायँ, जिन पर हर मौसम में आसानी से बैठा जा सके। ये सब कार्य नगरपालिकाओ द्वारा बड़ी आसानी से हो सकते है। वे मरघटों में जलने वाले मुर्दों पर थोड़ा सा कर लगादें, तो अनुचित नहो। पश्चिमीय देशो मे तो ऐसा होता है।

इस विषय में एक बात और सोचने की है। कभी-कभी अपरिचित या परदेशियों को मरघट तक मुर्दा ले जाने में बड़ी कठिनाई होती है, क्योंकि उनके पास काफी आदमी नहीं होते।

[शेष पृष्ठ १५ पर]

राजनैतिक रंगमंच

परिस्थिति-परिचय

आचार्य श्री प० नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ

[आचार्य श्री नरदेव शास्त्री जहाँ आर्यसमाज के विद्वान् और नेता हैं, वहाँ आपने कांग्रेस में रहकर देश की भी बड़ी सेवा की है। अनेक बार आपने जेल आकर वहाँ की कठोर यन्त्रणाएं सही हैं। गढ़वाल आदि पर्वतीय प्रदेश में तो आपके तप त्याग का बड़ा प्रभाव रहा और आप वहाँ के आदरणीय नेता माने गये।

—सम्पादक]

'कम्यूनिस्ट'

ये भारतवर्ष में साम्यवादी नाम से प्रसिद्ध है, पर हैं वस्तुतः वर्गवादी, क्योंकि इनका नारा है—'हे संसार के मजदूरो एक हो जाओ !' किसान भी मजदूरों में आ गये। इनका बल केवल किसान-मजदूरों पर ही रहा है, रहता है, रहेगा। इस साम्यवाद अथवा वर्गवाद की उपज रूस से है। भारत के साम्यवादी भी उन्हीं के बलबूते पर कूदते रहते हैं। ये अहिंसा में तनक भी विश्वास नहीं रखते। प्रत्येक उचित अनुचित उपाय से भारतीय जनता को अपने मत का बनाने का प्रयत्न करते रहते हैं। रूस में उनके उपाय चल गये, वहाँ परिस्थिति भी ऐसी थी, पर भारतवर्ष में ये फेल हो गये। इनका किसी धर्म-कर्म में विश्वास नहीं है, इनको वर्तमान वोट पद्धति में भी विश्वास नहीं है। हिंसा-अहिंसा, जोर-जबरदस्ती के प्रश्न को लेकर इनमें भी बड़ी भारी धड़ेबन्दी रही और अब भी चल रही है। अब इनमें यह बात जोर पकड़ रही है कि लूट-मार, जोर-जबरदस्ती को बन्द करके अन्यों की भाँति खुला प्रचार किया जावे। इस विचार के कम्यूनिस्ट अबकी बार चुनाव में खड़े होंगे। हम यह नहीं कहते हैं कि ये भारतभक्त नहीं हैं, पर इनकी विचारधारा और उपाय भारत के लिए हितकर नहीं है।

सोशियालिस्ट
(समाजवादी)

ये पहले कांग्रेस में भी रहे। कांग्रेस के साथ रहते, बहते और काम करते रहे, और कांग्रेस के प्रेस तथा प्लैटफॉर्म से अपना प्रचार करते रहे। जहाँ अपना काम बनता वहाँ पूर्ण सहयोग दे देते। जहाँ काम नहीं बनता वहाँ उस विषय में उदासीन रहते। कांग्रेस से भिन्न विचार-धारा रखते हुए भी कांग्रेस की छाती पर ही मूंग दलते रहे। जब इनका खूब प्रचार हुआ, तब कांग्रेस के अनुशासन को भी भंग करने लगे। एक समय आया कि कहीं-कहीं कांग्रेस के उम्मीदवार के विरोध में भी खड़े होने लगे। इसी बात पर कांग्रेस से विरोध खड़ा हुआ, अन्त में कांग्रेस छोड़कर पृथक् सगठन करने के लिए विवश हुए। इनकी विचारधारा पाश्चात्य समाजवाद का उच्छिष्ट है। ये भारतवर्ष की संस्कृति सभ्यता में विश्वास नहीं रखते। पूँजीवाद के कट्टर शत्रु हैं, पर प्रच्छन्न रूप में पूँजीवादियों से सहायता लेते रहते हैं। बातें गरीबों के हित की करते हैं, पर इनके नेताओं के रहन सहन ठाट-बाट देखने योग्य हैं। फर्स्ट सेकण्ड के बिना इनकी रेलयात्रा बनती नहीं, बड़े-बड़े होटलों के बिना इनकी सरती नहीं। वैसे देशभक्त हैं, देश के लिए कष्ट भी उठाते हैं, महात्मा गांधी के अहिंसा-तत्व को भी मानते हैं, भीतर की राम जाने। ये लोग भी कांग्रेस का मुकाबला करेंगे। इनका समाजवाद भारत हितकारी नहीं है। इनमें भी क्रान्तिकारी समाजवादी और वैज्ञानिक समाजवादी आदि भेद हैं। क्रान्तिकारी अहिंसा तत्व में विश्वास नहीं रखते। ये तो अंग्रेजों से उचित सम्बन्ध रखने के भी विरोधी हैं—ये समस्त उद्योगों का राष्ट्रियकरण चाहते हैं।

हिन्दूमहासभा

यह तो भारत की ही उपज है। पाकिस्तानी विपरीत व्यवहार, छल, दम्भ, कपट, अत्याचार, अनाचार के कारण ही इसको पनपने का अवसर मिल रहा है। यह हिन्दूराज्य चाहती है। यह कहती है कि जब हिन्दुस्तान अथवा भारत में हिन्दुओं का ही प्रचण्ड बहुमत है तब हिन्दूराज्य ही क्यों न बने। यह विधर्मी राज्य की विरोधिनी है। पाकिस्तान की दुर्नीति की प्रबल विरोधिनी सभा है। ये यह नहीं सोचते कि जिस दिन हिन्दू राज्य की बात सोचेंगे उसी दिन हिन्दुओं में प्रत्येक मत तथा पन्थाइ अपना-अपना अधिकार चाहेगा और एक विप्लव सा खड़ा होगा। यह महासभा भी कांग्रेस के विरोध में कसकर खड़ी होगी। इसका कहना यह है कि हिन्दू राज्य चाहने अथवा होने से यह अभिप्राय थोड़े ही है कि हिन्दू राज्य में मुसलमान रहने ही न पायेंगे, अथवा उनको हैरान ही किया जायगा। वैसे सब धर्मों को स्वतन्त्रता रहेगी, स्वतन्त्रतापूर्वक सब कोई अपने-अपने धर्म का पालन कर सकेंगे, किन्तु मनमानी गड़बड़ न कर सकेंगे।

रामराज्य परिषद्

इसे हिन्दूमहासभा की छोटी बहन समझिए। श्री करपात्रीजी के मस्तिष्क की उपज है। इसकी स्थापना हिन्दू कोडबिल का विरोध और गोवध के पूर्ण निषेध के हेतु हुई थी। अब तो यह भी लम्बे-चौड़े हाथ फेंक रही है।

इसके अतिरिक्त कृपलानीजी का प्रजातन्त्र कांग्रेस से असन्तुष्ट लोगों का अच्छा जमघट रहेगा। अब प्रसववेदना हो रही है। बच्चा बाहर आजाय तो जान सकेंगे कि कैसे-कैसे लक्षणों वाला है। श्री श्यामाप्रसाद मुकर्जी की पीपल्स पार्टी भी बंगाल में कुछ न कुछ उधेड़ बुन करती रहेगी। श्री घोष की कृषक प्रजा पार्टी भी बंगाल की उपज है। जनकांग्रेस के मुख्य नेता श्री प० श्रीकृष्णदत्त पालीवाल हैं। यह उत्तर प्रदेश की उपज है। पता नहीं यह अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखकर काम करेगी अथवा कृपलानी-जनतन्त्र में विलीन हो जायगी। सारांश, उपर्युक्त सब दल स्वतन्त्र रूप में अथवा अन्य दलों के साथ मिलकर चुनाव के अखाड़ों में उतरेंगे। अब कांग्रेस की बात सुनिये—

कांग्रेस

मुख्य संस्था है कांग्रेस। यह लिबरल पार्टी (रानाडे गोखले आदि की) के हाथ में रही। फिर लोकमान्य तिलक आदि के हाथ में आयी। फिर गान्धीजी के नेतृत्व में भारत को स्वराज्य प्राप्त हुआ। महात्मा गान्धी का कथन था कि उद्देश्य भी पवित्र हो और उसके प्राप्ति के साधन भी पवित्र रहें। अपवित्र साधनों से पवित्र उद्देश्य की प्राप्ति भी उचित नहीं। लोकमान्य कहते थे कि जैसा उद्देश्य, जैसा समय वैसे ही साधन रहने चाहिएँ। गोखले आदि कहते थे कि अँगरेजों की छत्र-छाया में ही स्वराज्य प्राप्त करें। इनका और भारत का अभिसम्बन्ध ईश्वरीय है। जो हो, गान्धी युग ने स्वराज्य दिला ही दिया और इतने सस्ते में दिला दिया कि देने वाले और लेने वाले दोनों ही चकित रह गये। स्वराज्य इस प्रकार अतिशीघ्र अचानक मिलने में संसार की अन्य परिस्थितियां भी कारण बनीं। स्वराज्य मिले साढ़े चार वर्ष हुए। स्वराज्य मिला पर स्वराज्य का चमत्कार देखने को नहीं मिला। कारण कि स्वराज्य देने वालों में स्वराज्य को स्वाभाविक ढंगसे नहीं दिया, विवश होकर दिया, शीघ्रतामें दिया और बदर बाँट करके दिया। परिणाम यह हुआ कि अतिभयङ्कर दुर्दृश्य देखने पड़े तथापि कांग्रेस शान्ति स्थापना में सफल हुई। यह उसकी प्रथम सफलता समझिए। राज्यसूत्र भी ऐसे ढंग से, सबको साथ लेकर संभाले कि गौराङ्ग प्रभु जो समझ रहे थे कि हमारे जाने के पश्चात् भारत मर मिटेगा और फिर हमारी ही सहायता चाहेगा ऐसा नहीं हुआ। प्रत्युत संसार में भारतवर्ष की प्रतिष्ठा बढ़ गयी और उसकी सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रों में परिगणना होने लगी। यह दूसरी सफलता समझिए। अपना विधान बन गया यह तीसरी सफलता समझिए। और उस विधान के अनुरूप पग भी उठाया जाने लगा यह चौथी सफलता है ये तो हुई बाहरी सफलताएँ। भीतरी सफलताओं में सबसे बड़ी सफलता राजा-महाराजाओं का भारत की छत्र छाया में आने की है। जागीरदारी-प्रथा, जिमींदारी-प्रथा आदि

आने को हैं। यह भी एक सफलता है। हैदराबाद की निजामशाही का दमन, जूनागढ़ हस्तगत करना ये भी कम सफलताएँ नहीं हैं।

काश्मीर हाथ से चला था, एकदम सहायतार्थ दौड़कर उसको बचाना भी प्राय सकट था। इसमें भी तीन-चौथाई पार हुए। यू० एन० ओ० चाहता है, किसी तरह भारत और पाकिस्तान का समझौता हो जाय, किन्तु भारत सरकार ने स्पष्ट एलान (घोषणा) कर दिया है कि अन्य राष्ट्रों को हम कश्मीर में अनुचित हस्तक्षेप न करने देगे। समय ही बतलायेगा कि क्या होगा।

हां, अन्न वस्त्र की समस्या जटिल ही होती जा रही है। विदेशों स अन्न आ रहा है, किसी तरह निवाह हो रहा है। महात्मा गान्धी कन्ट्रोल के पक्षपाती नही थे। उनक सामने कुछ महीनो क लिये कन्ट्रोल उठ भी गया था पर उनके अविश्वासी अनुयायियो ने पुन उसे लगा दिया। पता नही क्यो स्थिति सुलझ नही रही है। घूसखोरी, पक्षपात, सिफारिश आदि की शिकायतें बेहद बढ रही हैं। इसका कारण दण्डनीति की ढिलाई है। और यह ढिलाई इसलिये है कि अभी काश्मीर का मामला चल हा रहा है और भारत के परराष्ट्रिय सम्बन्ध अभी जैसे चाहिये वैसे दृढ़ नही हो सके हैं। ऐसी दशा में बाहर शान्ति नही, घर में वैसे ही अशान्ति है, और अशान्ति को उग्र दण्ड नीति से बढ़ा दना बुद्धिमत्ता का काम नही है। ऐसा समझकर कुछ ढिलाई बरती जा रही हो तो कह नही सकते।

एक बात और है जाते-जाते अंगरेज स्वराज्य का ढोल काग्रेस के गले में डाल गये। कॉग्रस को न दे जाते तो किसको दे जाते। कॉग्रस कोई भारत के बाकायदा वोटरो में वोट प्राप्त करके राज्यारूढ़ नहीं हुई था। हाँ सबसे बड़ी, सबसे प्रभावशालिनी सस्था अवश्य थी। अंगरेज जाने की जल्दी में थे, और उन्होने 'लो भाई अपना घर सभालो, जैसे चाहे' कहकर कॉग्रस के सिर पर बोझ डाल ही तो दिया। काग्रस चाहती तो सब राज्याधिकार कॉग्रेसी सदस्यो के ही हाथ में रखती, पर उसने दूरदर्शिता से कॉग्रेस से इतर पार्टियों का भी सहयोग लिया और राज्यशकट चलाया।

भारतवर्ष के लोग इतने सतोषी हैं, कि इनको खाने को अन्न और पहनने को कपड़ा अच्छी तरह मिलता रहता तो इनको यह कभी पर्वा न होती कि देश के बाहर भीतर क्या झझट हो रहे हैं। किन्तु इन विषयों में तगी रहने से भारत सरकार ने भारत के गौरव को बढाने और उसको स्थिर रखने के लिए जो-जो किया उधर तो किसी का ध्यान जा नही रहा, और सर्वत्र अन्न-वस्त्र के लिए कोलाहल मच रहा है। यह कोई नहीं समझ रहा कि हम शताब्दों की दासता के पश्चात् मुक्त हुए हैं अभी घर अच्छी तरह सभालने की बात तो दूर रही, अच्छी तरह देखने भी नहीं पाये हैं। इस साढे चार वर्ष के अर्द्ध स्वराज्य ने भी ससार में भारत को सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रों की पक्ति में ला बैठाया है। यह क्या कम सफलता है।

अवसरवादी नये कॉग्रेसियों ने भी अपनी त्याग तपस्या सेवा भाव की बात को भुला कर कॉग्रेस का गौरव घटाने में सहायता ही दी है। अस्तु,

ऐसे वातावरण में

चुनाव सिरपर आ रहे हैं। चुनाव करने वाले वोटर हैं अठारह करोड़। चुनाव लड़ने वाले दल भी कम नही हैं। अब जो चुनाव होगा और उसमें जिस विचारधारा वालों का बहुमत होगा वही भारतवर्ष के स्वराज्य का, प्रजातन्त्र का श्री गणेश समझिए। अंगरेजों को जिस प्रजातन्त्र का अनुभव था वैसा प्रजातन्त्र वे भारत को दे गये। उसके गुणो से लाभ उठाना और दोषो से बचना हमारा काम है।

———

आवश्यक सूचना

आर्यमित्र सम्बन्धी धन, व्यवस्थापक, आर्यमित्र आगरा के पते पर भेजना चाहिये और पत्र व्यवहार भी यहीं के पते होना चाहिए। जो सज्जन या समाज भूल से लखनऊ के पते पर पत्र या रुपया भेजते हैं वे कृपया इसे नोट करलें। लखनऊ भेजने से कार्यवाही में विलम्ब होता है।

व्यवस्थापक

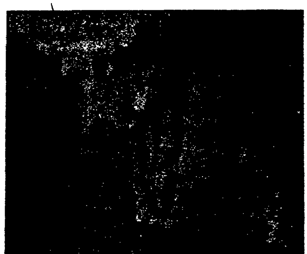
स्मारक-उद्घाटन

आर्यसमाज उझानी

आर्यसमाज उझानी (बदायूँ) के मन्दिर में स्वर्गीय रायबहादुर ब्रजलालजी बधवार, एम० एल० ए० चेयरमैन डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का स्मारक उनके सुपुत्र श्री पुरुषोत्तमलालजी बधवार बार एट-ला, चेयरमैन म्युनिसिपल बोर्ड उझानी ने निर्माण कराया, जिसका उद्घाटन उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के उपप्रधान श्री नरदेवजी स्नातक एम० पी० द्वारा १३ मई १९५१ ई० को सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर लाला रामप्रसाद गोयल ने स्नातकजी को ५१) भेट किये, जिसे उन्होंने वृन्दावन गुरुकुल को दान कर दिया। स्नातकजी को अभिनन्दन भी दिया गया जिसके उत्तर में आपने सक्षिप्त और प्रभावशाली भाषण दिया और आर्यसमाज का महत्व दरसाया। स्थानीय दलित-सम्मेलन भी स्नातकजी की अध्यक्षता में हुआ, जिसमें माननीय श्री जगजीवनरामजी, केन्द्रिय श्रम मन्त्री भी पधारे थे और बधवार महोदय के ही मेहमान हुए थे। नीचे दिये दोनो चित्र उसी अवसर के हैं।



पहला चित्र—द्वार के उद्घाटन का है। द्वार के दाईं ओर श्री बधवार महोदय, श्री नरदेवजी और जिले के एम एल० ए० आदि हैं। बाई ओर आर्य सदस्य और नगर के प्रतिष्ठित पुरुष हैं।



दूसरा चित्र—उद्घाटन के पश्चात्। बाईं ओर से बा० रघुवीरसहाय एम० एल-ए० सेठ मूलचन्दजी पूर्व प्रधान आर्यसमाज, श्री नरदेव स्नातक एम० पी०, श्री बधवार महोदय (राजाजी), ला० रामप्रसाद गोयल प्रधान, आ० स०, ठा० हुकुमसिंहजी, जिले के प्रसिद्ध आर्य समाजी और काग्रेसी चौ० बदनसिंहजी एम एल० ए०।

———

सामयिक समस्याएँ

बिहार प्रान्तीय भुखमरी

राजगुरु श्री पं० धुरेन्द्र शास्त्री, प्रधान-सा० आ० प्र० सभा

उत्तरीय बिहार प्रान्तीय भुखमरी का समाचार समाचार-पत्रों में प्रायः पाठक पढ़ते ही रहे हैं। भुखमरी का वास्तविक परिस्थिति का परिचय प्राप्त करने के लिए ही मैं इधर ग्रामों का भ्रमण कर रहा हूँ। जयनगर और मधुवनी के आस-पास के ग्रामों का भ्रमण करके सहरसा जिले में आया हूँ। सर्व प्रथम यहाँ का ही समाचार पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ।

सहरसा अभी हाल में ही उपनूतन जिला नियत हुआ है। इस जिले में सहरसा, मधेपुरा, सुपौल तीन डिवीजन हैं। कोसी नदी का प्रायः प्रचुर प्रकोप रहता है। मानसी ओ० टी० आर० का जकशन है। यहाँ से एक ब्रांच लाइन सुपौल तक जाती है। मानसी से सहरसा २७ मील है और सहरसा से सुपौल १७ मील है। सहरसा से मानसी तक दो ट्रेन जाती और दो ट्रेन आती हैं परन्तु सहरसा से सुपौल तक २४ घण्टे में एक ही ट्रेन जाती और आती है। यह लाइन (सहरसा से सुपौल) ५ वर्ष के पश्चात् अभी ११ मई से चालू हुई है। सहरसा से सुपौल तक छोटे-बड़े ७ पुल हैं, इनमें दो बड़े ही भयकर हैं, यदि ट्रेन पुल के पास हो और वेगवान झंझावात (आँधी) आजावे तो ट्रेन पुल पार नहीं करेगी। झंझावात के समाप्त होने पर ही ट्रेन पुल को पार करेगी।

यह ब्रांच लाइन बड़ी ही विचित्र है। मानसी से सहरसा तक, ट्रेन का टाइम जो टाइमटेबुल में छपा है, उसके अनुसार ट्रेन नहीं चलती है। परन्तु सहरसा से सुपौल तक को रेल के आने-जाने का समय-विभाग तो टाइमटेबुल में प्रकाशित भी नहीं है और न लिखकर स्टेशन पर चिपकाया ही गया है।

मैंने गार्ड से पूछा कि सुपौल से किस समय ट्रेन वापस होगी। मुस्कराते हुए गार्ड ने उत्तर दिया कि इसका लौटना तो पहुँचने पर निर्भर करता है। यदि पहुँच भी गई तो लौटना नई लाइन, नये काठ के पुल और कोसी की अनुकूल परिस्थिति पर निर्भर करता है। सम्भव है परसरमा स्टेशन से ही वापस हो आना पड़े।

सुपौल थाना कांग्रेस के कार्यालय में श्री लहटनजी चौधरी (भूतपूर्व प्रधान थाना कांग्रेस) से भेंट की और कुछ वस्तुस्थिति का परिज्ञान प्राप्त किया। इसी बीच में हजारीबाग सेन्ट्रल जेल के मेरी साथी श्री प० राजेन्द्रजी मिश्र एम० एल० ए० से भेंट हो गई। आधा घण्टा तक मिश्रजी के साथ विनोद, भुखमरी और सामयिक राजनीति पर विचार-विनिमय कर तीन बजे जीपकार द्वारा चल दिया। सुखपुर, विजलपुर, तुलस्याही और पुरुषोत्तमपुर (पुरीख) आदि ग्रामों में गया।

सुपौल से सुदूर के ग्रामों की बड़ी ही दयनीय दशा है। दयनीय दशा का कारण प्रकृति का प्रकोप और शासन के कर्मचारियों की अकर्मण्यता है।

प्रकृति का प्रकोप—

समय पर आवश्यकतानुसार वृष्टि का न होना और जैसे-तैसे कुछ खेती की भी गई तो कोसी की बाढ़ से विनष्ट हो जाना।

शासन के कर्मचारियों की अकर्मण्यता—

यद्यपि बिहार गवर्नमेन्ट ने सहरसा जिले को तीन लाख मन खाद्यान्न दिया है, और वह जिले में आ भी गया है, अधिक से अधिक खाद्यान्न की दूकान खोलने का गवर्नमेण्ट का आदेश भी है, परन्तु जब कोई व्यक्ति प्रार्थनापत्र खाद्यांन की दूकान खोलने के लिए देता है, दूरस्थ देहात से आता है, परन्तु दो-दो मास तक उसको दौड़-धूप में लग जाता है, फिर भी अनुमति पत्र (परमिट) नहीं मिलता है। अनेक ऐसे स्थान भी हैं जहाँ कोई भी व्यक्ति खाद्यान्न की दूकान का परमिट नहीं लेना चाहता है, क्योंकि वह यह समझता है कि यदि रुपया जमा करके मैं अन्न यहाँ ले आया तो बुभुक्षु-जन आकर लूट लेंगे। रुपया भी जावेगा, घर नष्ट होगा और शरीर क्षतविक्षत भी होगा। ऐसी घटना हुई भी हैं। यदि फौजी व्यक्तियों का प्रबन्ध हो तो खाद्यान्न की दूकानें दूरस्थ भुखमरी के ग्रामों में खुल सकती हैं।

ऐसे अनेक परिवार निम्न श्रेणी के मिले हैं जिनको दो-तीन और चार शाम तक खाद्यान्न प्राप्त नहीं हुआ है। खाद्यान्न न मिलने का कारण खाद्यान्न का अभाव नहीं है अपितु द्रव्याभाव है। द्रव्य के अभाव का कारण यह है कि वर्षा न होने से खेती में काम नहीं है। काम न मिलने से मजदूरी करने वालों के पास पैसा नहीं है।

जमींदार किसान और मजदूर—

जमींदार के विषय में कुछ नहीं लिखना है, वह तो अब भी सर्वतः सुखी है।

किसान—

दो वर्ष से वर्षा न होने के कारण खेती नहीं हुई है। उसके पास जो कुछ था दो वर्ष में खा लिया। अब उस किसान के पास न अपने खाने के लिए ही कुछ है न मजदूर को देने के लिए मजदूरी ही है। अब वृष्टि होने पर भी कैसे काम चलेगा।

कैसे काम चलेगा—

इसके लिए गवर्नमेण्ट ने तकावी (लौन) देना आरम्भ किया है, परन्तु स्थानीय शासनकर्ताओं (कर्मचारी) की अकर्मण्यता के कारण सन्तोषप्रद व्यवस्था नहीं है। किसी-किसी किसान को तो अल्प प्रयास में ही लौन मिल जाता है, परन्तु किसी-किसी किसान को प्रभूत पुरुषार्थ करने पर भी सफलता नहीं मिलती है। इसमें क्या कारण है उसे तो प्रभु या अधिकारी ही जान सकते हैं।

जिन मजदूरों के पास पैसा नहीं है, अतएव अन्न भी नहीं ले सकते हैं, उनके निर्वाहार्थ गवर्नमेण्ट ने तीन कार्य आरम्भ कराये हैं:—

१—सड़क, बाँध और तालाबों की सफाई।

इस जिले में यह तीनों ही कार्य अल्पमात्रा में आरम्भ हुए हैं। सड़कों का जीर्णोद्धार या नूतन निर्माण डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के द्वारा होता है। मजदूरों को समय-समय पर कभी-कभी रुपया नहीं मिलपाता है। उसकी एक घटना का उल्लेख यहाँ कर देना उपयुक्त होगा।

सुपौल से ६ मील की दूरी पर वीना अ-दौली ग्राम है। यहाँ गत वर्ष एक सड़क का जीर्णोद्धार कराया गया परन्तु अभी तक मजदूरों को मजदूरी इसलिये नहीं मिली है कि गवर्नमेंट ने डिस्ट्रिक्टबोर्ड को रुपया नहीं दिया। डिस्टिक्टबोर्ड ने ठेकेदार को रुपया नहीं दिया और ठेकेदार ने मजदूरों को रुपया नहीं दिया।

भिलाही ग्राम धरहरा थाना में है। पोखरा की खुदाई अथवा सफाई के लिए कहीं-कहीं रुपया पूर्व (पेशगी) दिया जाता है। परन्तु इस ग्राम के लिये रुपया पेशगी नहीं मिला। कुछ कार्य होने पर रुपया दिया जावेगा ऐसी अनुमति मिली। गाँव वालों ने अपने पास से मजदूरी देकर तालाब का कुछ हिस्सा खुदवा लिया। कोसी रिलीफ ऑफीसर के यहाँ दो मास तक ग्रामवाले प्रार्थना करते रहे कि चलकर कार्य देख लिया जावे और रुपया मिल जावे ताकि भविष्य में कार्य हो सके। परन्तु कोसी रिलीफ ऑफिसर के सहायक देखने के लिए नहीं गये। दो मास के पश्चात् कहा कि हमारी जीप खराब है। यदि आप जीप का प्रबन्ध करो तो मैं चलकर देख आऊँ। अन्त में गाँववालों ने जैसे-तैसे एक दिन एक जीप का भी प्रबन्ध किया परन्तु उस दिन भी सहायक महोदय यह कहकर नहीं गये कि आज स्वास्थ्य ठीक नहीं है। ४-६ दिन के बाद चलूँगा यह बात लगभग १५ मई को कही थी परन्तु ३० मई तक नहीं गये।

मजदूरी करने वाले व्यक्तियों को दो एक शाम उपवास करना पड़ जाता है, परन्तु इस समय कोई व्यक्ति भूखा नहीं मरता है।

प्रायः प्रजा और प्रजापालक दोनों ही भ्रष्टाचार के स्वच्छन्द

सुझाव और सम्मतियाँ

हम कैसे नागरिक हैं ?

थूकने की बुरी आदत

एक डाक्टर साहब मुझ पर बड़ी कृपा करते हैं। वे मुझसे उम्र में बहुत बड़े हैं। इसी कारण उन्हें मित्र बनाने में मुझे सकोच होता है। जो भी हो, चर्चा उन्हीं के दवाखाने की है। एक मरीज ने उनके दवाखाने में थूक दिया। उन्हें क्रोध आगया,उन्होने उस रोगी के संरक्षक द्वारा उसे साफ़ कराया और डाट लगाई सो अलग।

बाद में मैंने कहा, "डाक्टर साहब! आपको बहुत ज्यादा गुस्सा आ गया।' मेरा इतना कहना था कि डाक्टर साहब फिर एकदम लाल हो गए। बोले—"देखो जी मुझे इस तरह की बहूदी आदत पसन्द नही है। मैं डाक्टर हूं, केवल यहा बात नहीं है। बचपन में इन छोटा छोटी बातों के कारण मेरी पिटाई हुई थी। इस कारण मेर सस्कार भी वैसे ही बन गए हैं।" इसी सिलसिल मे उन्होने अपने बचपन की एक घटना की चर्चा कर दी। वह बोले कि 'एक बार उन्होंने नाक सिनक कर अपने हाथ पंखे की झालर से पोछ दिये थे। बस इसी बात पर उनक पिताजी ने उन्हें पखे की रस्सी से खूब पीटा था और कहा था कि—"तौलिया, अंगोछे, धोती आदि सब कुछ छोड़ ॰ जो-रोज धुलते हैं, अथवा धोए जा सकते हैं–तू ने इस पखे की झालर से हाथ पोंछे जो साल-छह महीने में एक बार धुलती है ।" वह दिन है और आज का दिन है, मैंने कभी भी घर की अथवा बाहर की कोई भी वस्तु किसी भी रूप में गन्दी नहीं की ।'

उक्त घटना द्वारा हमें समझ लेना चाहिए कि यदि हम अपने बच्चों को शुरू से ही स्वच्छ आदतें सिखावें तो कोई कारण नहीं कि बड़े होकर वे अच्छे नागरिक न बन सके ।

हमने अक्सर देखा है, आपने भी देखा होगा कि लोग चाहे जहाँ पान की पीक थूक देते हैं। घर की दीवारें, फश, नालियाँ सब कुछ रँगा रहती हैं। किसी के मकान में हाल ही में सफेदी होकर चुकी है, और हमने पीक करके उसकी दीवार रँग दी। यदि हमारी दीवार को किसी ने इस तरह बिगाड दिया होता तो ?

पान की पीक करने वालों में एक और विशेष आदत पाई जाती है। वे लोग किवाड़ के पीछे कोने म पीक कर देते अथवा फर्श उठा कर पीक करके ऊपर से उसे ढक देते हैं। आप ही विचारिये कि ये सब कितनी बुरी आदतें हैं।

पान खाने वालों में और भी अनेक बुरी आदतें पाई जाती हैं। कत्थे के हाथ वे कभी अपने सिर के बालो से पोछ देते हैं, तो कभी किसी दीवार पर रगड देते हैं। कभी वे अपने हाथ टंगे हुए पर्दे से पोंछ देते हैं, कहीं कभी किसी दरवाजे के किवाड से पोंछ देते है। आपने अक्सर देखा होगा कि पान खाने वालों के कारण किवाड़, दीवारें, पर्दे आदि अनेक स्थान और वस्तुएँ अक्सर गन्दी बनी रहती हैं।

मेरे उक्त कथन से कोई यह न समझ लें कि मैं पान खाने का विरोधी हूँ। मुझे यह मालूम नहीं कि पान खाने से क्या हानि-लाभ हैं। मैं तो केवल इतना-सा सुझाव देना चाहता हूँ कि यदि हम पान खाते हैं, तो हमें चाहिए कि रूमाल आदि जैसे किसी कपड़े से हाथ पोंछें अथवा पानी से हाथों को धो डालें तथा किसी पीकदान में अथवा नाली पर जाकर पीक करें। हमें समझ लेना चाहिए कि किसी देश के निवासियों का नैतिक स्तर वैसा ही होगा जैसी कि उसके समाज के नागरिकों की नागरिकता होगी, और उनके हर घडी के व्यवहार होंगे। यदि हमें स्वतन्त्र भारतवर्ष के सुयोग्य नागरिक बनना है तो हमें अपने जीवन में इन छोटी-छोटी बातो का ध्यान रखना होगा। आपको उस समय कितनी लज्जा आती होगी जब आपके साथ बैठा हुआ अंग्रेज तो सिगरेट की राख को भी एक अलग पात्र में सम्हाल कर डालेगा और उसी मेज पर बैठे हुए आप वहीं फश पर अथवा दीवार पर पिच से थूक दें, अथवा पान की पीक कर दें।

—राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी एम० ए०

साम्राज्य को समृद्ध करने क प्रचुर प्रयास में हैं। नैतिकता वचन में स्तुत्य परन्तु व्यवहार में नितान्त निन्द्य समझी जा रही है।

मजदूरों के निर्वाहार्थ एप्रिल ५० से दिसम्बर ५० तक गवर्नमेंट ने निम्नलिखित कार्यों क लिये रुपया व्यय किया।

नवीन सड़क निर्माण तथा जीर्णोद्धार में एक लाख तिरानवे हजार दो सौ सतहत्तर रुपया व्यय किया।

इस समय इस जिले में कोई व्यक्ति भूखा तो नही मरता है, अन्न का अभाव भी नही है, परन्तु पैसा पास न होने और मजदूरी न मिलने के कारण एक दो शाम उपवास भी करना पड़ जाता है।

इस यात्रा में मेर साथ आर्यसमाज खगड़िया के प्रधान श्री रामस्वरूपलालजी भी रहे।

आर्यसमाज का उत्तरदायित्व

हमारे राष्ट्र-निर्माण-कार्य को राष्ट्रिय और सामाजिक जीवन मे व्याप्त ढीलेपन से बहुत हानि पहुँचती है। वर्तमान भारतवर्ष की चिन्तनीय अवस्था है। चोरबाजारी, रिश्वतखोरी, उच्छृंखलता, अनुशासनहीनता और अत्यधिक स्वार्थ ही चारों ओर दृष्टिगोचरहो रहे हैं। नेतागण आदर्शवाद पर लम्बे-लम्बे भाषण देते हैं, परन्तु उन भाषणों में यथार्थवाद की रूपरेखा का अभाव रहता है। यही कारण है कि राष्ट्र का स्तर ऊंचा नहीं उठ रहा। आज राष्ट्र को ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता है, जो जनसाधारण के स्तर को शुद्ध करके उक्त राष्ट्र हित की सर्वोपरि भावना का समावेश कर सकें। आज ऐसे नेताओं की आवश्यकता है, जो बिना भाषणों और प्रदर्शनों के केवल अपने कार्यों से राष्ट्र और समाज को जीवन शक्ति दे सकें। लोगों में राष्ट्रियता लाने के लिए उनमें समाज-सुधार, गृह-शिल्प, ग्राम-सुधार, शिक्षा-प्रचार, नैतिक कला-उत्थान के भाव पैदा करने की जरूरत है। भले ही यह कार्य कितने ही छोटे पैमाने पर क्यों न हो। बड़ी-बड़ी योजनाएं ही बड़े काम नहीं करतीं। छोटे-छोटे कार्यों को सचाई और चतुराई से हाथ में लिया जाय तो उनसे भी राष्ट्र-निर्माण तथा जाति-उत्थान होता है। ग्रामों की अवस्था अत्यधिक चिन्तनीय है। वहाँ दरिद्रता, अशिक्षा, चिकित्सा की अव्यवस्था आदि ऐसी बातें हैं जो उन लोगों को कष्ट में डाल रही हैं।

अतः ग्रामो में जाकर राष्ट्र-निर्माण का काय करना चाहिए। परन्तु मुट्ठी भर आदमियों ने ही यह कार्य हाथ में ले रखा है। अधिकाश शिक्षित व्यक्ति तो शहरों की विलासिता और आमोद-प्रमोदों के जीवन को त्यागने में अपने को असमर्थ पाते हैं। वर्तमान पाश्चात्य शिक्षा ने भारतीयों को निकम्मा बना दिया है। राष्ट्र-निर्माण की सफलता के लिए आर्यसमाज को अग्रसर होना चाहिए। सबसे प्रथम उसे अपने आपको दृढ बना कर नागरिकों में चरित्रबल भरने की आवश्यकता है। उनमें अनुशासन और नियन्त्रण की भावना पैदा करनी चाहिए। राष्ट्र में से ईर्ष्या, द्वेष, दलबन्दी, अहंकार, पाखण्ड, अन्धविश्वास आदि को मिटाने का प्रयत्न करना चाहिए। आर्य सस्कृति और आर्यमर्यादाओं से राष्ट्र को पूर्ण परिचित कराना चाहिए। क्योंकि राष्ट्र के नागरिकों में सच्ची राष्ट्रियता को लाना आर्यसमाज का ही कर्तव्य है।

—जीवानन्द 'आनन्द'

आर्य्यजगत

—शोक है कि कासगंज आर्य-समाज के उपप्रधान श्री हीरालाल जी के सुपुत्र श्री धर्मेन्द्रकुमार का ३० मई को २१ वर्ष की आयु में देहान्त हो गया। परम पिता परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति और शोकाकुल परिवार को धैर्य प्रदान करें।

—श्री पं० अमरनाथजी वैद्य शास्त्री ने विगत सप्ताह देहरादून में एक ईसाई परिवार की शुद्धि की। उनके पुराने नाम बदलकर आर्य-नाम रखे गये। परिवार में ३ पुरुष और ३ स्त्रियाँ हैं। नाम इस प्रकार रखे गये, मोहनलाल, शिरोमणि देवी, राजेन्द्र प्रकाश, उषा और आशा। इस अवसर पर श्री वैद्यजी ने शुद्ध हुओं का स्वागत करते हुए उन्हें उपदेश दिया। उपस्थित जनता ने शुद्ध हुओं के हाथ से प्रसाद ग्रहण किया।

—आर्यकुमार सभा कैमथल का वार्षिकोत्सव ३ तथा ४ जून को हुआ। सर्व श्री मेधातिथि शास्त्री, यशःपाल शास्त्री, पृथिवीसिहजी, जयपालसिहजी आदिके व्याख्यान और धर्मोपदेश हुए।

—आर्यसमाज अमरोहा में नित्य-प्रति सत्संग होते हैं, उपस्थिति भी अच्छी होने लगी है।

—आर्यसमाज न्होटी (अलीगढ़) का ४७ वां वार्षिकोत्सव २८ मई से ३ जून ५१ तक मनाया गया। स्वा० योगानन्दजी, स्वा० उचितानन्दजी, श्री ओङ्कारमिश्रजी प्रणव शास्त्री, श्रीमती हेमलता-देवी, श्रीमती कृष्णादुलारी देवी, आनरेरी मजिस्ट्रेट श्रीमती प्रभावतीजी बी० ए० एल-एल० बी०, ठा० आत्मारामजी वानप्रस्थी, श्री हुकमसिहजी, श्री महीपालजी, श्री महेशपालजी आदि के व्याख्यान और भजन हुए। महिला-सम्मेलन श्रीमती कृष्णदुलारीजी की अध्यक्षता में हुआ। आर्यसम्मेलन के प्रधान ठाकुर साहबसिहजी प्रधान जिला सभा थे। प्रभाव बड़ा अच्छा पड़ा।

—१४ मई को उभानी (बदायूं) में श्री पं० बिहारीलालजी शास्त्री के भतीजे चि० रमेशचन्द्र शर्मा का यज्ञोपवीत संस्कार वेदान्ताचार्य श्री पं० हरिदत्तजी शास्त्री नवतीर्थ, एम० ए० के आचार्यत्व में हुआ।

—आ० स० मोरसराय देहली में पुनः नवजीवन आ गया है। २७ मई को नया निर्वाचन हुआ। डा० ज्ञानचंदजी संरक्षक बनाये गये। प्रभावशाली व्याख्यान और भजन हुए।

—११ जून को अताईपुर (फर्रुखाबाद) के श्री लक्ष्मीनारायणजी हकीम की पुत्री मायादेवी का पाणिग्रहण संस्कार बेवर निवासी श्री देवेन्द्रस्वरूपजी के साथ वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ।

—आ० स० देवीपुरसराय (कानपुर) का वार्षिकोत्सव ३, ४ तथा ५ जून को श्री हनुमानप्रसादजी के सभापतित्व में सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। श्री स्वामी ब्रह्मानन्दजी दण्डी, श्री रामनिवास शास्त्री, श्री रामलाल शर्मा, स्वा० शिवानन्दजी, श्री नवलकिशोरजी, श्री रामदेवजी आदि के व्याख्यान और भजन हुए। आ० स० मन्दिर तथा पाठशाला बनवाने का निश्चय हुआ। एक सप्ताह के लिये आर्यवीर दल का कैम्प भी खोला गया।

—

उत्सव सूचनाएं

आ० स० अमरोहा १४ से २० अक्टूबर तक अपनी स्वर्णजयन्ती मना रहा है। श्री आनन्द भिक्षुजी के पते की आवश्यकता है।

—

निर्वाचन

आ० कु० सभा कैमथल,प्रधान श्री गुलाबराय गौतम और मन्त्री-श्री रामगोपाल शास्त्री।

—

सार सूचनाएं

—आ० स० पुरवा (उन्नाव) में शीघ्र ही एक बड़ा यज्ञ होने वाला है। इसके लिए श्री स्वा० अमृतानन्दजी सरस्वती की आवश्यकता है।

श्याममनोहर आर्य, मन्त्री

—पं० हसराज शर्मा भजनोपदेशक को बुलाने वाले सज्जन या समाज, प्रधान आर्यसमाज तिलकनगर, देहली के पते पर पत्र-व्यवहार करें।

—१ तथा २ सितम्बर, ५१ को जयपुर में आर्य राजनैतिक कान्फ्रेन्स होगी। स्वागत-समिति का निर्माण हो रहा है।

—संवाददाता

—आ० स० सुल्तानपुर का उत्सव जो सहारनपुर में होने वाला था, अनिवार्य कारण से स्थगित कर दिया गया।

—कानपुर प्रान्तीय आर्य उपप्रतिनिधि सभा ने जिले में प्रचारार्थ योग्य उपदेशक, भजनीक और संन्यासी भेजने की व्यवस्था की है, जिन्हें आवश्यकता हो मंत्रीजी को देवनगर कानपुर के पते पर लिखें।

—

आर्य महासम्मेलन मेरठ

मेरठ में अखिल भारतीय आर्य महा सम्मेलन की तैयारियाँ बड़े उत्साहपूर्वक हो रही हैं। प्रसिद्ध आर्य कार्यकर्त्री श्रीमती शकुन्तलादेवीजी की अध्यक्षता में एक सुदृढ़ स्वागत-समिति का सघटन हो गया है। स्वागत-समिति के प्रधान मन्त्री कर्मवीर श्री बा० कालीचरणजी आर्य बड़े प्रयत्नपूर्वक सम्मेलन की योजना में संलग्न है। अन्य अधिकारी तथा सदस्यगण भी बड़ी तत्परता से काम कर रहे है। हम चाहते है कि अधिकाधिक आर्य भाई-बहन स्वागत-समिति के सदस्य बनें। सबके हार्दिक सहयोग द्वारा ही यह महान् यज्ञ सम्पन्न हो सकेगा। जो सज्जन या समाज इस महासम्मेलन की सफलता के लिए सुझाव प्रकाशनार्थ भेजना चाहे वे बड़ी प्रसन्नता से भेज सकते है। परन्तु ये सुझाव अति संक्षिप्त और सारयुक्त होने चाहियें। लम्बी चौड़ी भूमिका या विस्तृत व्याख्या की आवश्यकता नहीं है। केवल तात्विक बातें ही लिखिये।

—

आर्य-संगठन

इस समय असंगठित आर्य-समाजों को सगठित होने की अत्यन्त आवश्यकता है। मेरी राय में संगठन का एक यह भी साधन है कि आर्यसमाज-मन्दिरों में योग्य और शिक्षित पुरोहित स्थायी रूप से नियुक्त हों। इन पुरोहितों की नियुक्ति जिला सभाएं और प्रांतीय सभाएं अपने-अपने अधिकार-क्षेत्रों में करावें।

ऐसा करने से संगठन और प्रचार में अवश्य सफलता प्राप्त होगी। आर्यसमाज-मन्दिर साधना, सहायता और प्रकाश देने वाले बनाए जाय।

बाबूराम आर्यसेवक, अमरोहा

—

पौराणिक प्रचार

वर्तमान काल में सिनेमाओं में पौराणिक कथानकों के आधार पर चित्र दिखाए जा रहे हैं। विष्णु के दस अवतार और द्रौपदी के पाँच पति आदि की पौराणिक भावनाएं बड़ी तीव्रता से फैलायी जा रही है। पौराणिक आधार पर नितनयी फिल्में तैयार की जा रही हैं। इन फिल्म बनाने वालों का उद्देश्य धन बटोरने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। भले ही इनके कारण देखने वालों पर बुरा प्रभाव पड़े और उनमें मिथ्या विश्वास की वृद्धि हो। सरकार द्वारा सोमनाथ-मन्दिर का जीर्णोद्धार और उसमें माननीय राष्ट्रपति-द्वारा शिवलिंग-स्थापना भी ऐसी ही बात है। इधर आर्यसमाज ने खण्डन का कार्य बिलकुल बन्द कर दिया। पता नहीं क्या सोचकर। पौराणिक पोपलीला तो वैसे ही बढ़ रही है, परन्तु आर्यसमाज चुप बैठा है। आर्य नेताओं को इस पर विचार करना चाहिये।

गंगाप्रसाद आर्य, बल्लारशाह

—

वृन्दावन-गुरुकुल

ग्रीष्मावकाश के बाद वृन्दावन गुरुकुल का कार्य १ जुलाई से प्रारम्भ हो रहा है। नये साल में गुरुकुल के अध्यापक-विभाग में हिन्दी, राजनीति तथा अर्थशास्त्र के एम० ए०, एक ट्रेण्ड ग्रेजुएट, एक आयुर्वेदाचार्य, दो नामल ट्रेंड ग्रेजुएट, एक ए० एम० एम० अध्यापकों की आवश्यकता होगी। आर्यसमाज के प्रेमी सज्जन जो गुरुकुल की सेवा करना चाहें, अपने प्रार्थना-पत्र आयु, योग्यता, अनुभव न्यूनतम वेतन के उल्लेख सहित शीघ्र भेजें। गुरुकुल में संस्कृत सहित हाई स्कूल परीक्षोत्तीर्ण छात्र भी प्रविष्ट हो सकते हैं।

—शोक है कि गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन के ब्रह्मचारी चन्द्रमन का ता० ६-६-५१ को सायंकाल ७ बजे टाइफाइड ज्वर से देहावसान हो गया। यह ब्रह्मचारी सौम्य, सुशील तथा सुयोग्य, होनहार वक्ता व लेखक था। अपने होनहार विद्यार्थी की असामयिक मृत्यु से गुरुकुल में शोक छा गया। समस्त कुलवासियों ने मिलकर दिवंगत आत्मा को सद्गति एवं शोक सन्तप्त परिवार को दुःख सहने की क्षमता प्रदान करने के लिये प्रभु से प्रार्थना की।

—शोक है कि गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन के सुयोग्य स्नातक श्री भूपेन्द्रजी तर्क शिरोमणि के असामयिक देहावसान के दुःखद समाचार को जानकर समस्त कुलवासियों को महान् दुःख हुआ। सबने मिलकर दिवंगत आत्मा की सद्गति के लिए ईश्वर से प्रार्थना की और उनके शोक-संतप्त परिवार के साथ समवेदना प्रकट करते हुए उन्हें धैर्य प्रदान करने के लिये प्रभु से प्रार्थना की।

— —

धार्मिक शिक्षा का पाठ-क्रम

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा ता० २० अप्रैल सन् १९५१ के नि० सं० ४ की लिपिः ४ विषय सं० ४ निम्न शिक्षा संस्थाओं को प्रविष्ट करने पर प्रस्तुत हुआ।

१—आर्य कन्या पाठशाला, शहर मेरठ। २—अविनाशीसहाय डी० ए० वी० हाईस्कूल, एटा। ३—साधना मन्दिर आर्य व्यायाम शाला, नजीबाबाद (बिजनौर) ४—डी० ए० वी० हायर सेकेन्डरी स्कूल, इलाहाबाद। ५—डी० ए० वी० हाईस्कूल, आजमगढ़। श्रीमती लक्ष्मीदेवीजी ने विचार प्रकट किया कि एक इन्सपेक्टर (निरीक्षक) विशेष रूप से निरीक्षण करने के लिये रखा जावे, जो प्रतिवर्ष रिपोर्ट दिया करें और व्यायाम व धर्म-शिक्षा की विशेष शिक्षा-पद्धति निर्माण कर प्रस्तुत करें। निश्चय हुआ कि उक्त शिक्षण संस्थाओं को सभा में सम्प्रति सम्बद्ध किया जावे। यह भी निश्चय हुआ कि निम्न सज्जनों की उपसमिति बनाई जावे, जो सभा का पथ-प्रदर्शन करें कि किस-किस प्रकार की और सम्बद्ध संस्थाओं में से किन-किन को सम्बद्ध रखा जावे और

—

यदि आवश्यक हो तो सभा के उपनियमो में क्या-क्या संशोधन किया जावे। उपसमिति यह भी परामर्श देगी कि सभा धार्मिक शिक्षा के लिये किस पाठ्यक्रम को निर्धारित करें। उपसमित के सदस्य हैं—(१)श्री रामदत्त शुक्लजी, (२) श्री लक्ष्मीदेवीजी, (३) श्री आचाय बृहस्पति शास्त्रीजी, (४) श्री कालीचरणजी, (५) श्री हरिशङ्कर शर्माजी, (६) श्री देवीप्रसाद जौहरीजी, (७) श्री प्रीतमलालजी, और (८) श्री धर्मपाल विद्यालकारजी (संयोजक)।

भृगुदत्त तिवारी· एम० ए०
उपमन्त्री सभा, लखनऊ

——

आवश्यक निवेदन

आगरा जिले के समस्त आर्यसमाजो के मन्त्री महोदयो की सेवा में निवेदन है कि जिलोपसभा ने गत २६ अप्रैल ५१ को जो धन राशि समाजो पर लगाई है और जिसकी सूचना पहले भेजी जा चुकी है, उसे कृपया अति शीघ्र मेरे पास भेज दें, जिससे प्रचारक नियत करके जिला प्रचार का काय आरम्भ कराया जाये।

—मोहनलाल आर्य
मंत्री

——

श्री नारायण स्वामी विद्यालय

माननीय पन्तजी का शुभागमन

श्री नारायण स्वामी विद्यालय रामगढ़ में १० जून को माननीय प० गोविन्दवल्लभ पन्त मुख्य मन्त्री, यू० पी० पधारे। आपने नवीन छात्रालय की आधारशिला का न्यास किया। तत्पश्चात् उन्हे श्री नारायण स्वामो विद्यालय की प्रबन्धकारिणी सभा की ओर से अभिनन्दन पत्र समर्पित किया गया। अभिनन्दन पत्र का उत्तर देते हुए माननीय पन्तजी ने कहा—आज ११ वर्ष के बाद यहाँ आने पर मैंने विद्यालय की आशातीत उन्नति देखी। मेरी समस्त सद्भावनाएँ विद्यालय के साथ है। यह विद्यालय श्री नारायण स्वामीजी महाराज के तप-त्याग का ही फल है। श्री स्वामीजी तपोनिष्ठ कर्मठ योगी थे। मेरी यह हार्दिक अभिलाषा है कि विद्यालय के बालक और बालिकाय गुरुकुल की भाँति ही स्वामीजी के जीवन को अपने सम्मुख रखकर अपना चरित्र-निर्माण करें। यही इस विद्यालय की विशेषता होगी। चरित्र-सम्पन्न छात्र का जीवन मुझे सबसे अधिक अच्छा लगता है। पर्वतीय प्रदेश फलों की बहुतायत के लिए बड़ा उपयोगी है। यदि इन फलो का वैज्ञानिक ढंग से उत्पादन किया जाय तो देश के उत्पादन में एक बड़ी भारी सहायता मिलेगी। विद्यालय में उद्यान-विद्या की शिक्षा के लिए पन्तजी ने एक सहस्र की धनराशि देने की घोषणा की। अन्त में धन्यवाद के पश्चात् सायं ५ बजे पन्तजी नैनीताल चले गये। इस अवसर पर श्री हरगोविन्द पन्त डिप्टी स्पीकर उत्तर प्रदेश तथा जिले के अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति भी उपस्थित थे।

——

तुलाराम कन्यागुरुकुल विद्यालय

यह गुरुकुल दुर्गनगर (मध्यप्रदेश) में नगर के गन्दे वातवरण से दूर उत्तम स्वास्थ्य-प्रद स्थान पर आर्यप्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश के अधीन स्थापित है। बाहर से आने वाली कन्याओ के निवास के लिए उत्तम व्यवस्था है। यहाँ सरकारी पाठ-विधि के अनुसार शिक्षा दी जाती है, परन्तु इसके अतिरिक्त संस्कृत· धर्म शिक्षा, सिलाई एवं संगीत इसकी विशेषताएँ हैं। शिक्षा तथा आश्रम का समस्त प्रबन्ध स्त्रियाँ ही करती हैं। कन्या गुरुकुल हाथरस की आचार्या श्रीमती लक्ष्मीदेवीजी का पूर्ण सहयोग प्राप्त है। प्रवेश सामान्यतः जून मास में होता है। विशेष जानकारी के लिये आचार्या, तुलाराम कन्या गुरुकुल विद्यालय दुर्ग (मध्यप्रदेश) को लिखें।

——

अलमोड़ा-अभियोग

ठीक एक वर्ष हुआ जब इस अभियोग के सम्बन्ध में एक अपील ',आर्यमित्र" में श्री पूज्य राजगुरुजी, श्री मदनमोहन सेठजी (प्रधान-सभा) तथा मेरे हस्ताक्षरों से छपा था कानून के अनुसार जो मुकदमा अदालत में विचाराधीन हो जाता है, उसके विषय में विस्तृत रूप से नहीं लिखा जा सकता, परन्तु चूंकि यह मुकदमा उत्तर प्रदेशस्थ आर्यसमाजों के लिए एक विशेष महत्व रखता है, और प्रदेश के अनेक आर्य समाजों ने इसमें सहयोग दिया है, और दे रहे हैं, अतएव आर्यभाइयों की जानकारी के लिये यह बताना आवश्यक है कि उसमें क्या हो रहा है।

यह मुकदमा सीनियर सिविल जज अलमोड़ा की अदालत में आर्य प्रतिनिधि सभा ने १२ जुलाई सन् १९५० को दायर किया था। नालिश में लगभग ६००) की कोटफीस लगायी गई थी। अदालत ने समाज-मन्दिरकी मालियत जाँचने के लिए पी० डबल्यू० डी० को लिखा था। इसी बीच में सीनियर सिविल जज की जगह खाली पड़ी रही। अब एक सीनियर जज यहां पर आ गये हैं और मुकदमे की कार्यवाही चालू करदी गई है। मुकदमे में ३ जुलाई पेशी के लिये नियत है, उस समय तक सरकारी तखमाना भी अदालत में पहुंच जाने की आशा की जाती है।

इस समय तक लगभग १०००) सभा व्यय कर चुकी है। सभा की उपर्युक्त अपील पर लगभग ६००) समाजों से इस निधि में अब तक पहुंचा है। जो व्यक्ति इस मुकदमे को कर रहे हैं, उनका अनुमान है कि इसमें नीचे की अदालत में ही ३०००) से उपर व्यय होगा। मालियत का तखमीना आने पर ही कम से कम ५००)की आवश्यकता पड़ेगी। मैंने यह सोचा था कि जब जब मुकदमे की पैरवी से अवकाश मिले तब-तब श्री देवनाथजी को समाजों में भेज दूँ। और अनेक समाजों में वह गये भी, परन्तु अनुभव यह हुआ कि रेलयात्रा में पर्याप्त व्यय हो गया और अलमोड़ा से बाहर रहने के कारण यहाँ के काम में बाधा पड़ी।

इस प्रदेश में ६०० आर्य समाज सभा में प्रविष्ट है, जिनमें से केवल ५० समाजों ने ही अभी तक हमारी अपील पर ध्यान दिया है। कुछेक ने तो केवल १) से लेकर ६०) तक ही भेजा है। बड़े दुःख की बात है कि आर्य भाई तीन चार दिन के उत्सवों में तो तीन-चारसौ रुपया व्यय कर देते है, परन्तु इस आवश्यक कार्य के लिए २५) की राशि भेजने में भी संकोच करते है। जिन समाजों ने अभी तक इस, आवश्यक कार्य की ओर ध्यान न दिया हो, या नाम मात्र ही ध्यान दिया हो, वे कृपा करके २५) या ५०) अवश्य इस मद में सभा के कोषाध्यक्षजी के पास भेज दें, और एक कार्ड द्वारा मुझे भी आर्य समाज अलमोड़ा के पते पर सूचित कर दें।

—शिवनारायण शुक्ल, ऐडवोकेट
संयोजक, समाज-रक्षक समिति, (अलमोड़ा)

शिक्षा संस्थाओं की सूची

मान्यवर, नमस्ते।

भारत की केन्द्रीय सरकार यह जानना चाहती है कि उत्तर प्रदेश में कौन-कौन आर्यसमाजें अथवा आर्यसमाजों के अन्तर्गत व उनसे सम्बन्धित सभायें जैसे-'आर्य विद्यासभा' 'आर्य शिक्षण सभा' 'अछूतोद्धार समिति', 'डी० ए० बी० कालेज, ट्रस्ट' आदि है जो बालकों अथवा बालिकाओं के लिये स्कूल व कालेज या जनता के लाभार्थ पुस्तकालय या वाचनालय सचालन कर रही हैं। अतएव आर्य शिक्षण संस्थाओं के सचालकों, मुख्य मुख्य आर्यसमाजों के मन्त्री महोदयों, तथा अन्तरङ्ग सभा के माननीय सदस्यों एवं समस्त निरीक्षकों से निवेदन है कि वे शीघ्रातिशीघ्र निम्नांकित चित्र भरकर अथवा भरा कर भेजने की कृपा करें। किसी भी शिक्षण-संस्था व सार्वजनिक पुस्तकालय अथवा वाचनालय का नाम छूटने न पावे ताकि प्रदेशीय आर्यसमाजों का गौरव शिक्षा प्रसार की दृष्टि से उचित रूपसे स्थापित करने में कोई न्यूनता अथवा त्रुटि न रहे। आशा है सम्बन्धित महानुभाव इस सूचना के संग्रह करने में अपना बहुमूल्य सहयोग प्रदान करने की कृपा करेंगे।

धर्मपाल विद्यालंकार, मंत्री
देवीप्रसाद जौहरी,
स० अधिष्ठाता शिक्षा विभाग

१—नाम जिला। २—नाम आर्यसमाज अथवा सभा आदि जिसके प्रबंध में हो। ३—स्कूल व पाठशाला अथवा गुरुकुल विद्यालय दशम कक्षा तक। ४—कालेज या महाविद्यालय ११ से ऊपर कक्षा तक। ५—पुस्तकालय अथवा वाचनालय। ६—क्या इस संस्था की रजिस्ट्री पृथक कानून २१ सन १८६० ई० के अन्तर्गत हुई है? यदि हुई है तो कब ? ७—संस्था की चल अचल सम्पत्ति क्या-क्या है ? ८ अन्य कोई तत्सबन्धी सूचना।

—

भ्रमण-प्रोग्राम

उत्तरप्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री मदनमोहन सेठ, एम० ए० का भ्रमण प्रोग्राम इस प्रकार रहा—

६ जून से १३ जून तक आर्य-समाज फर्रुखाबाद १४ जून मार्ग में। १५, १६ जून वृन्दावन गुरुकुल।

भृगुदत्त तिवारी, उपमन्त्री सभा,

—

मित्रों से

मैं तीन-चार मास के लिए मसूरी जा रहा हूँ। अक्तूबर में नीचे उतरूंगा। यदि कोई आवश्यक पत्र व्यवहार हो तो, निम्न पते पर लिखने की कृपा करें। स्वास्थ्य पूर्व जैसा नहीं रहता इसलिये पर्वत का आश्रय लेना पड़ता है।

नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ
लण्ढोर बाजार, मसूरी।
(उत्तर प्रदेश)

फर्रुखाबाद का विवाद

गत वर्षों से फर्रुखाबाद के आर्यभ्राताओं में कुछ विवाद चला आता था जिससे समाज की प्रगति रुकी हुई थी। हर्ष की बात है कि पिछले सप्ताह सभा के प्रधान श्री मदनमोहनजी सेठ एम० ए० और मन्त्री श्री प० धर्मपालजी विद्यालङ्कार ने फर्रुखाबाद पहुँच कर इस विवाद को बड़ी शान्ति से शान्त कर दिया, और दोनो दल सन्तुष्ट हो गये। सबको बधाई !

—

चार रुपये में विवाह

मेरठ के प्रसिद्ध साहित्य-सेवी श्री अध्यापक मुरारिलाल शर्मा के सुयोग्य पुत्र लेफ्टिनेण्ट कर्नल श्री सीताराम शर्मा का विवाह गत १० जून को कानपुर में प्रो० श्यामलाल शर्मा (इन्दौर) की सुपुत्री कुमारी कमला शर्मा, एम० ए० के साथ हुआ। इस विवाह के सम्बन्ध मे अध्यापकजी लिखते है—

'विवाह बड़ा सुन्दर रहा। बड़ी श्रद्धा से किया। लड़की इच्छानुकूल बड़ी ही अच्छी मिली। मैंने एक रुपया लगन में लिया और एक खेत में। मेरी ओर से खर्च भी कानपुर में केवल दो ही रुपये हुए। यानी एक रुपया वारफेर में और एक महतर को इनाम में।" ऐसा अल्प व्यय साध्य आदर्श विवाह वास्तव में अनुकरणीय है।

—

ग्रीष्मावकाश का शिविर

उत्तर प्रदेशीय आर्यकुमार परिषद् की ६ मई ५१ को अन्तरग सभा के निश्चयानुसार ग्रीष्मावकाश में आर्यकुमारो के लिए एक शिविर का आयोजन किया गया है। यह शिविर २४ से ३१ जून तक दारानगर गज (बिजनौर) में लगेगा। शिविर में वैदिक सिद्धान्तो तथा आर्यकुमार-संगठन की प्रणाली पर श्री प० बुद्धदेव विद्यालकार, श्री प्रियव्रत वेदवाचस्पति, श्री विश्वनाथ त्यागी बी० ए०, एल-एल बी० प्रभृति विद्वानों तथा भारतवर्षीय और प्रांतीय परिषद् के अनुभवी कार्यकर्त्ताओं के भाषण होगे। इसके अतिरिक्त शिविर में कुमारों की ज्ञान वृद्धि के लिए उत्कृष्ट वैदिक तथा अन्य साहित्य का एक पुस्तकालय भी प्रस्तुत रहेगा। शिविर में सम्मिलित कुमारों को भाषण सुनने तथा अध्ययन करने के पश्चात् विचार-परिषद् के रूप में विचार-विनिमय का भी प्रबन्ध रहेगा। इस प्रकार इस शिविर को सब दृष्टियो से उपयोगी बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

समस्त आर्य कुमार सभाओ से प्रार्थना है कि शिविर के उपयोग तथा महत्ता को ध्यान में रखकर अपने यहाँ के श्रेष्ठतम कार्यकर्त्ताओ को शिविर में भेजें। शिविर का शुल्क १०) है।

इस सम्बन्ध में जिला सगठन कर्त्ताओं तथा निरीक्षक महानुभावो से विशेष निवेदन है कि वे स्वय तो शिविर में अवश्य ही सम्मिलित हो कृपया अपने क्षेत्र की सभी सभाओ को इस मे सम्बन्धी प्रेरणा करें तथा नाम भिजवायें।

रघुवरदयाल आर्य, मंत्री

—

मेरठ आर्य महासम्मेलन

कार्यकारिणी का निर्माण

सप्तम सार्वदेशिक आर्य सम्मेलन की स्वागत-समिति की प्रबन्ध-समिति की आवश्यक बैठक १२ जून को आर्यसमाज-मन्दिर मेरठ शहर में श्रीमती शकुन्तला गोयल के सभापतित्व में हुई। सम्मेलन के प्रबंध को सुचारू रूप से चलाने के सम्बन्ध में विशेष विचार किया गया। कार्य संचालन की सुविधा के लिये निम्न महानुभावो की एक कार्यकारिणी भी बनाई गई—श्रीमती शकुन्तला गोयल, श्री हरशरनदास, बा० कालीचरण, श्री श्यामलाल, श्री मनोहरलाल, श्री ब्रह्मस्वरूप, श्री मुसई लाल, चौ० जयदेवसिंह, श्री विश्वम्भर सहाय प्रेमी, श्री शिवदयालु, श्री आत्माशरण, श्री रतनलाल रिटायर्ड जज, श्री विद्यासागर, ला० प्यारेलाल हापुड़, ला० मुरलीधर मवाना, डा० शकरलाल दौराला। सम्मेलन अक्टूबर मास के प्रथम सप्ताह में होना निश्चित हुआ है।

—

[छठे पृष्ठ का शेष]

ऐसी ही कठिनाई महामारी आदि के समय भी अनुभव की जाती है। यह ठीक है कि उस समय सेवा-समितियाँ काफी सहायता देती हैं, पर सब नगरो में तो सेवा-समितियाँ नहीं हैं। हमारी राय में इस कार्य के लिए ऐसी ठेला गाड़ियाँ होनी चाहिएँ, जिनमें आसानी से शव श्मशान भूमि तक लेजाया जा सके। ये गाड़ियाँ नगर-पालिकाओं की देख-रेख में रहें, और नियत तथा उचित भाड़ा देने पर, आवश्यकता के समय, इस्तैमाल करने के लिए मिल सकें।

—

आर्योदय काव्यम्

श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए० की नवीन कृति। यह काव्य संस्कृत भाषा में है। हिन्दी अर्थ नीचे दिया हुआ है। आर्य संस्कृति के प्रारम्भ से लेकर महर्षि दयानन्द के आगमन तक आर्य जाति के उत्थान और पतन की कहानी ललित छन्दोबद्ध भाषा में लिखी गई है। माननीय अणे विहार के राज्यपाल, माननीय सम्पूर्णानन्द, माननीय कं० मुंशी आदि ने इसकी प्रशंसा की है। सचित्र पुस्तक का मूल्य १॥)

अन्य ग्रन्थ—आस्तिकवाद ३), जीवात्मा ४), शकर-भाष्या-लोचन ४), मनुस्मृति-भाष्य ५), भगवत्-कथा १), हम क्या खावें १।), महिला-सत्यार्थप्रकाश ॥।=), Light of truth (अंग्रेजी सत्यार्थ-प्रकाश) ६), वैदिक मणि-माला ॥=), आदि-आदि सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये।

पता—कला प्रेस, इलाहाबाद

कन्या गुरुकुल हरिद्वार की कतिपय विशेषताएं

१—स्वास्थ्यप्रद रमणीक स्थानपर सुविशाल ब्रह्मचर्याश्रम।
२—सर्वथा निःशुल्क शिक्षा।
३—विदुषी देवियों द्वारा उत्तरदायित्वपूर्ण नियन्त्रण।
४—पोषणादि व्यय अत्यल्प।
५—सम्पूर्ण प्रान्तों की कन्याओं का एकत्र निवास।
६—हिन्दी-संस्कृत के द्वारा वैदिकधर्म की परमोच्च शिक्षा।
७—समस्त गृहकार्यों के शिक्षण की सुव्यवस्था।
८—माननीय श्रीमान् नरहरि विष्णुजी गाडगिल केन्द्रीय मंत्री भारत सरकार द्वारा उद्घाटित आयुर्वेद विभाग में आठों अंगो सहित आयुर्वेद की बी (B) क्लास रजिस्ट्रेशन योग्यता युक्त परीक्षाओं की पूर्ण व्यवस्था।
९—सम्पूर्ण आयुर्वेदिक ओषधियों के निर्माण की क्रियात्मक शिक्षा।
१०—कन्याओं को सबल एवं उत्साह सम्पन्न स्वावलम्बी बनाने के लिए लाठी, तलवार, कटार, डम्बल, जमनास्टिक ओम् आदि चमत्कार पूर्ण व्यायामों का नियमित सुप्रबन्ध।
११—जीवन को शुद्ध पवित्र आस्तिक बनाने के लिए सायंप्रातः सन्ध्योपासना एवं यज्ञ का नैत्यिक अभ्यास।

नोट—प्रवेश के लिये ३० जून तक शीघ्र लिखें।

आचार्य चन्द्रावतीदेवी शास्त्री, प्रभाकर वैद्यविशारद

आवश्यकता है

एक १५ वर्षीया क्षत्रिय कुलोत्पन्न अति सुशील, रूपवती, शिक्षित, गृहकार्य में दक्ष कन्या के लिये स्वस्थ, सदाचारी, सुधारवादी शिक्षित आजीविकासम्पन्न वर की आवश्यकता है। सम्बन्ध आर्यमात्र में हो सकता है।

—गनपतराव, झिरिया मंदिर
गोंदिया (म० प्र०)
३६ B. २३-२४

आवश्यकता

खंडेलवाल ब्राह्मण १५ वर्षीया गृह-कार्य में दक्ष मिडिल, विद्याविनोद, सिद्धान्त रत्न परीक्षा पास स्वस्थ गौर वर्ण कन्या के लिये दृढ़ आर्यकुमार वैदिक धर्मी ब्राह्मण वर चाहिये। विवाह वैदिक रीति से होगा। आर्य खंडेलवाल ब्राह्मण वर को विशेषता दी जायगी।

पता—गणपति शर्मा आर्य
नयाबास सुजानगढ़
३८ बी० २३, २४ राजस्थान

सफेद बाल काला

खिजाब से नहीं, हमारे आयुर्वेदिक 'केश कल्याण' सुगन्धित तेल से बालों का गिरना रुककर सफेद बाल जड़से काला हो जाता है। यह तेल दिमागी ताकत और आंखों की रोशनी को बढ़ाता है। जिन्हें विश्वास न हो वे दूना मूल्य वापस की शर्त लिखा लें। मूल्य २) बाल अधिक पक गया हो तो ५) का तेल मंगाइये।

धन्वन्तरि औषधालय
पो० शेखपुरा, जि० मुंगेर

वर की आवश्यकता

चंदेल वंशीय एक सुशिक्षिता (कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हाथरस की ११ वीं श्रेणी उत्तीर्ण) एक सुन्दर कन्या के लिए स्नातक अथवा ग्रेजुएट वर की आवश्यकता है। वर कुशवाहा सेंगर या राठौड़ इनमें से किसी भी वंश का होना चाहिए। दहेज पिशाच सम्पर्क में न आयें तो ही अच्छा है।

पत्र व्यवहार का पता—
जगदेवसिंह
कलकत्ता टेलरिंग हाउस,
पो० लालगंज
जि० रायबरेली यू० पी०

श्रीमद्भगवद्गीता

पुरुषार्थबोधिनी टीका

ले० प० सातवलेकर। इस १००० पृष्ठों के विशाल ग्रन्थ में (१) अर्जुन के विषाद का कारण, (२) विश्वरूप दर्शन का रहस्य, (३) गीतोपदेश के साथ वेदोपदेश की तुलना और (४) गीतोपदेश को व्यवहार में लाने का अनुष्ठान करने की रीति बताई है। किसी अन्य टीका में ये स्पष्टीकरण नहीं मिलेंगे। गीतोपदेश से राज्य-शासन कैसे सफल हो सकता है, यह इसी टीका में पाठक देखेंगे। मूल्य १५), डाक व्यय १॥) मूल्य पेशगी म० आ० द्वारा ११॥) भेजिये।

स्वाध्याय-मण्डल, आनन्दाश्रम
किला-पारडी. (जि० सूरत)

उत्कृष्ट पुस्तकें

१ उपनिषद् प्रकाश	३॥)
२ दृष्टांतसागर स० भाग १	३)
३ ,, ,, ,, भाग २	२॥)
४ घरेलूविज्ञान सजिल्द	२॥)
५ वेदरहस्य	२)
६ वेदान्त दर्शन	३)
७ सत्यनारायण की कथा	।=)
८ आर्यसत्सङ्ग	।≈)
९ प्राणायाम विधि	।)
१० धर्मशिक्षा	≡)
११ शाद्रिय सराने	।≈)
१२ कल्याण मार्ग	१)
१३ छान्दोग्य उपनिषद्	२।)
१४ चाणक्य नीति	१॥)
१५ मुसाफिर भजनावली	१।)
१६ जनेऊ १।।) ह० सामग्री १॥) सेर	
१७ हवनकुण्ड लोहा १।') तांबा ३)	

इसके अलावा हर प्रकार की पुस्तकों के लिए बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये। कमीशन काफी दिया जाता है। अपना पता और डाकखाना साफ लिखिएगा।

श्यामलाल वासुदेव भारतीय
आर्य पुस्तकालय बरेली

भजनोपदेशकों की आवश्यकता

मध्यभारत के ग्रामों में वैदिक धर्म का प्रचार करने के लिए सच्चरित्र, सिद्धान्तज्ञ, प्रचार की तीव्र लगन रखने वाले कुशल भजनोपदेशकों की आवश्यकता है। जो अर्थ के विषय में अत्यन्त शुद्धाचरण रखते हों वे निम्न पते पर पत्र-व्यवहार करें। वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा।

वीरसेन
मंत्री मध्य-भारतीय आ० प्र० स०
७२ महारानी रोड, इन्दौर नगर

आर्यमित्र

में
विज्ञापन देना
व्यापार की उन्नति करेगा।

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, बलदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

आर्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
सचालक-आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ
आगरा, ५ जालाई १६५१



व्याख्यान वाचस्पति —श्री प विचारीलाल शर्मा काव्यतीर्थ



विद्वद्वर श्री प० रामदत्त शुक्ल एम० ए० एडवोकेट



श्री प० धर्म्मपाल विद्यालङ्कार, मन्त्री आ० सभा, उत्तरप्रदेश



श्री प० भृगुदत्त तिवारी एम० ए०, एडवोकेट
उपमन्त्री आ० प्र० सभा उत्तरप्रदेश

वार्षिक मूल्य ८ (विदेश में १०) | एक प्रति तीन आने | सम्पादक हरिशङ्कर शर्म्मा

श्रीमान् राजगुरुजी की माननीय राष्ट्रपति से भेंट

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा देहली के प्रधान राजगुरु श्री पं० धुरेन्द्रजी शास्त्री ने २५ जून को सायंकाल ५ बजे राष्ट्रपति श्री डा० राजेन्द्रप्रसादजी से गवर्नमेण्ट हाउस नई दिल्ली में भेंट की। भेंट का उद्देश्य विहार के अन्न संकट-ग्रस्त क्षेत्रों की स्थिति तथा इन क्षेत्रों के घूम कर प्राप्त हुए अनुभवों को राष्ट्रपति के सामने रख कर उनसे आवश्यक परामर्श करना था। लगभग पौन घण्टे तक राष्ट्रपति से खुल कर वार्तालाप व परामर्श हुआ। सार्वदेशिक सभा ने भ्रष्टाचार उन्मूलन के लिए जो कार्यक्रम बनाया है, उसकी भी एक प्रति राष्ट्रपति को भेंट की गई। वर्तमान सिनेमाओं के चित्रों से अश्लीलता निकलवाने की उपयोगिता को राष्ट्रपति बड़ी तीव्रता से अनुभव करते हैं। एक दो अन्य सामयिक विषयों पर भी बात-चीत हुई।

कवि के प्रति

श्री लाखनसिंह भदौरिया

काव्य की सत साधना से, विश्व को तू जगमगादे।
जो नहीं पथ ढूंड पाये,
ज्ञान की प्राची दिशा का,
जो नहीं कर अन्त पाये,
अज्ञता की चिर निशा का,
ज्ञान का आलोक देकर, राह तू उनको बतादे।
द्रोह के भीषण भंवर में,
विश्व की नैय्या पड़ी है,
डूबना ही चाहती अब,
टल रही पल-पल घड़ी है,
प्रेम की पतवार से तू पार नैय्या को लगादे।
आज अत्याचार का ही,
राज भू-पर हो रहा है,
दुःख-दानव से प्रपीड़ित,
दीन मानव रो रहा है,
तू पड़ा क्यों सो रहा है, शक्ति जन-जन में जगादे।
जो निठुर निर्मम हृदय में-
विश्व का मधु प्यार भरदे,
जो मृतक निष्प्राण में भी-
रक्त का संचार करदे,
डालदे जो जान, नूतन तान वह नवमय सुनादे।
मत जला, इस विश्व-वन को,
द्वेष-दावानल जलाकर,
मत पिला, विष-घूंट जग को,
नित विषैले गान गाकर,
पी, मनुज अमरत्व पाये, वह सुधा-प्याला पिलादे।
मुक्ति-पथ पर ले चले जो,
भावना तेरी सफल हो,
तू सफल हो साधना से,
साधना तेरी सफल हो,
'सत्य-शिव-सुन्दर' सुजल से, पूरिता सरिता बहादे।
काव्य की सत साधना से, विश्व को तू जगमगादे॥

आर्यसमाज अल्मोड़ा

आर्यसमाज-समष्टि ध्यान दे!

गत ५-६ वर्षों से आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के सम्मुख आर्यसमाज मन्दिर अल्मोड़ा का प्रश्न उपस्थित है। यह विशाल मन्दिर अल्मोड़ा की मालरोड मोटर रोड पर एक तिमंजला भवन है, जिसके बनने में २५-३० वर्ष व्यतीत हुए हैं और इस भवन को उन्नत स्थिति तक पहुंचाने में आर्य-जनता और आर्यनेताओं का विशेष उद्योग रहा है। अल्मोड़ा में इस समाज-मन्दिर के समान कोई अन्य भव्य समाज-मन्दिर नहीं है।

श्री महात्मा नारायणस्वामीजी ने आर्य संस्थाओं की देख-भाल करने के लिए अल्मोड़ा को केन्द्र स्थान बनाया और स्वामी कृष्णानन्दजी को एतदर्थ भेजा। परन्तु उन्होंने सन् १९४४ ई० में एक नवीन सोसाइटी को--जिसके सदस्य आर्यपुरुष नहीं हैं—रजिस्ट्री कराकर आर्यसमाज हलद्वानी व अल्मोड़ा की अचल सम्पत्ति व संस्थाओं पर अधिकार करना चाहा।

सभा के प्रधान राजगुरु श्री धुरेन्द्र शास्त्री आदि पर चोरी तथा १४५ फौजदारी के झूठे मुकद्दमे चलाए गए, जिनमें हाईकोर्ट से सभा के पक्ष में फैसला हुआ। इन मुकदमों में लगभग ५ सहस्र रुपया सभा का व्यय हो चुका है। अब यह अनिवार्य हो गया है कि स्वामी कृष्णानन्दजी आदि पर अदालत दीवानी में नालिश कर दी जावे। तदनुसार आर्यसमाज अल्मोड़ा रक्षा-समिति स्थापित की गई है जिसके संयोजक श्री पं० शिवनारायण शुक्ल एडवोकेट हैं, जो परिश्रम और धैर्य से मुकदमों की पैरवी कर रहे हैं।

दीवानी में दायर मुकद्दमे में लगभग चार-पांच सहस्र रुपया व्यय का अनुमान है। सभा की शक्ति आर्यसमाज और आर्य पुरुष हैं। अतः आर्यसमाजों से विशेष रूप में निवेदन है कि वे अपना कर्तव्य समझें और यथाशक्ति इस रक्षा-निधि में धन श्रीकोषाध्यक्ष सभा ५, मीराबाई मार्ग, लखनऊ के पास सभा-कार्यालय में भेज दें।

मदनमोहन सेठ, सभा-प्रधान — धर्मपाल विद्यालंकार, सभा-मन्त्री

आर्य महासम्मेलन, मेरठ

सप्तम आर्य सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन दशहरा की छुट्टियों में ६ से १२ अक्टूबर सन् १९५१ तक मेरठ नगर में होने जा रहा है। उसके साथ एक प्रदर्शिनी का आयोजन भी किया जा रहा है। प्रदर्शिनी में प्राचीन वस्तुएं व पुस्तकें, आर्य-समाज का साहित्य और ऋषि दयानन्द के सम्बन्ध में जो भी वस्तुएँ मिलेंगी वे विशेष प्रकार से प्रदर्शित की जावेंगी। अतः आर्य हिन्दू जगत से प्रार्थना है कि वह इस प्रदर्शिनी को सफल बनाने में योग प्रदान करें। यदि कोई प्राचीन वस्तु, प्राचीन या नवीन ग्रन्थ या अन्य वस्तु किन्हीं सज्जन के पास या उनकी जानकारी में हो तो उसकी सूचना मुझे देने की कृपा करें।

शिवाजी-भवन, गाजियाबाद — हरसरनदास, संचालक, प्रदर्शिनी-विभाग

'शोभसे वर्म्वीरनु स्वराज्यम'

आर्यमित्र

आगरा, आषाढ़ शुक्ल १ संवत २००८ वि०, गुरुवार, ता० ५ जौलाई १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५१

मेधां सायम् मेधां प्रातर्मेधां मध्यंदिनं परि।
मेधां सूर्यस्य रश्मिभिर्वचसा वेशया महे।

अथर्व ६।१०८।५

साय प्रातः मध्याह्न सर्वदा ध्याऊं
हे मेधा, तुझको पूर्ण यत्न से पाऊं
कल्याणकारिणी, नित हित सेरा करना
मन-मानस में सद्भाव सलिल तुम भरना

ईमानदार' और 'आस्तिक'

'ईमान' अरबी का एक शब्द है। इसका अर्थ है, खुदा पर एतकाद करना या ईश्वर पर विश्वास रखना। 'बे-ईमानी' का मतलब हुआ, ईश्वर पर विश्वास न रखना। इस प्रकार 'बे-ईमानी' और 'नास्तिकता' दोनों शब्द प्रायः एक ही अर्थ का बोध कराते हैं। जो लोग 'बे-ईमान' या 'नास्तिक' हैं, किसी असीम सर्वोत्तम सत्ता को नहीं मानते, वे ही कुकर्म करते हैं। ये कुकर्म ही धार्मिक संसार में 'पाप', क़ानूनी ज़बान में 'जुर्म' और नैतिक परिभाषा में अपराध कहलाते हैं। 'जुर्म' की पकड़ से बचने के लिए पुलिस की निगाह में धूल झोंकी जाती है, और पाप करते समय स्वयम् अपनी आन्तरिक आंखों में तकुआ भोंकना पड़ता है। दुनिया में 'खुदा' या 'परमात्मा' का नाम तो बहुत लिया जाता है, परन्तु उसका ध्यान या भय बिलकुल नहीं करते। यदि लोग सचमुच सच्चे 'ईमानदार' अथवा 'ईश्वर-भक्त' बन जायें तो 'पाप', 'अपराध', 'जुर्म' तीनों का ही लोप हो जाय। जो मनुष्य ईश्वर से नहीं डरता, वह सबसे डरता है, और जो ईश्वर से डरता है, वह किसी से नहीं डरता। संसार में जितनी भी 'धर्म-चर्चा' बढ़ती जाती है, उतनी ही अनाचार में वृद्धि दिखाई देती है। तो क्या 'धर्म' अनाचार कराता है नहीं, धर्म है कहां? भ्रमवश धर्म का ढोंग ही धर्म मान लिया गया है। म्यान को ही लोग भूल से तलवार समझते हैं। सच्चा धार्मिक और पक्का ईमानदार वही है, जो पाप, अपराध या जुर्म नहीं करता। अपने जीवन को पवित्रता और सचाई के साथ बिताता है। हम कई बार लिख चुके हैं कि कानून की कटरी जुर्म-जल्लाद का खातिमा नहीं कर सकती। यह तो नकली इलाज है। इसका प्रभाव शरीर तक ही सीमित रहता है। एक छोटा 'मुजरिम' जेल में जाकर बड़ा अपराधी बन जाता है। आवश्यकता कानून की भी है नहीं तो उद्दण्डता और उच्छृंखलता की सीमा ही न रहेगी। कोई व्यवस्था ही न हो पाएगी। परन्तु 'पापों' या 'अपराधों' से मुक्त होने का अमोघ उपाय 'ईमानदारी' और 'आस्तिकता' है, आडम्बर या ढोंग नहीं। जब सब लोग असली अर्थ में 'आस्तिक' या 'ईमानदार' बन जायेंगे तभी अपराधों की सृष्टि समाप्त हो जायगी और उसी युग का नाम 'सत्ययुग' होगा। आस्तिकता के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता स्वाध्याय, सत्संग और आत्मचिन्तन की है। आत्मचिन्तन द्वारा जब व्यक्ति स्वयम् अपने में दोष देखता है, तभी उससे मुक्ति पाने के लिए भी उद्यत होता है। आत्मचिन्तन ने बड़े-बड़े पापियों को पुण्यात्मा बना दिया और दुराचारियों का जीवन सदाचार में परिणत कर दिया। आत्म-चिन्तन के लिए स्वाध्याय और सत्संग की आवश्यकता है—ऐसे ग्रन्थों का अध्ययन जो जीवन में पवित्रता भर दें,—ऐसे सन्तों का सहवास जिनके शुभ दर्शन से ही कल्याणकारी प्रभाव पड़ता हो। गन्दी किताबें पढ़ने या पाखण्डियों के अनर्गल आलाप सुनने का नाम स्वाध्याय और सत्संग नहीं है। स्वाध्याय और सत्संग की महिमा से ग्रन्थ के ग्रन्थ भरे पड़े हैं। हमारी राष्ट्रिय सरकार को जिस 'ईमानदारी-आस्तिकता' यानी विश्व-धर्म या मानव-धर्म का जन-जन में प्रचार करना चाहिये, उससे वह दूर भागती, परहेज़ करती और पीछे हटती है, क्योंकि उसकी दृष्टि में 'धर्म' का अर्थ 'सम्प्रदाय', 'मत' या 'मज़हब' है। कैसी विलक्षण विचार-विधि और कितनी विचित्र विडम्बना है!

'बन्दी' बन्धुओं से बात-चीत

जो बन्दी बन्धु किसी अपराध में लिप्त होने के कारण न्यायालयों से दण्ड पाकर, कारागारों में रखे जाते हैं, वे भी मानव हैं। जिस प्रकार महात्मा गांधी वेश्याओं को 'पतित बहनें' कहते थे, उसी तरह इन कैदियों को 'पतित बन्धु' के नाम से पुकार सकते हैं। तो क्या जो व्यक्ति जेलों में बन्द हैं, वे ही 'पतित भाई' हैं, और नहीं? नहीं; इनसे पचासों गुने 'पतित भाई' बन्धन विहीन होकर, 'सफेद पोशी' का जीवन बिताते हुए, विविध प्रकार के व्यवसाय और कार-बार कर रहे हैं। जो पकड़ में आगया, वह जेल भेज दिया गया जो नहीं पकड़ा गया, वह 'भलामानस' और 'शरीफ' बना घर में बैठा रहा। अस्तु, यहां हम अपराधों की दार्शनिकता का विवेचन नहीं कर रहे, हमें तो 'बन्दी' बन्धुओं से बात चीत का वृत्तान्त आपको सुनाना है।

प्रायः दो वर्ष से इन पंक्तियों के लेखक को सरकारी अपराध-निरोधक समिति की ओर से, आगरा केन्द्रीय कारागार में बन्दी भाइयों को कुछ नैतिक बातें बताने के लिये जाना पड़ता है। रविवार को एक 'वनिंग सेशन' में सब बन्दी बन्धु एकत्र कर दिये जाते हैं। जेलर साहब और हम पहुंचते हैं सारा वायुमण्डल शान्त पाते हैं। इस सभा में सबसे पहले बन्दी भाई, हिन्दू, मुसलमान, सिख आदि बड़ी श्रद्धा से प्रार्थना करते हैं, हारमोनियम और ढोलक भी बजाते हैं। सैकड़ों कंठों से निकली हुई सस्वर लहरी एक समा बांध देती है। प्रार्थना और भजन समाप्त होने पर उनके आगे कुछ नैतिक तत्वों की व्याख्या की जाती है, जिससे ये भाई बड़े प्रभावित होते जान पड़ते हैं। गर्दन झुकाते, गम्भीर भाव दरसाते और कभी-कभी उनके नेत्र सजल तक हो जाते हैं। दो दिन तो इन भाइयों ने बाजे पर भक्ति भाव से भरे ऐसे करुण गीत गाये कि हम और जेलर महोदय दोनों की ही आंखों से विवशता पूर्वक बूंदें टपक पड़ीं। हमारे विदा होते समय ये भाई बड़ी श्रद्धा से प्रणाम करते और महात्मा गांधी की जय बोलते हैं।

पाठकों को हमने यह उस दुनिया का हाल सुनाया जिससे बहुत कम लोग परिचित हैं। सुनाने का अभिप्राय यह है कि जहाँ तक हमारा अल्पकालीन अनुभव है, उसके आधार पर निःसंकोच कहा जा सकता है कि इन बन्दी बन्धुओं के मन पर नैतिकता की सरल और सुस्पष्ट व्याख्याओं का बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ता है और उस समय बड़ा विशुद्ध वायुमण्डल बन जाता है। हमारे अतिरिक्त श्री बा० पूर्णचन्द एडवोकेट श्री बा० परमेश्वरीसहाय एडवोकेट और श्री प्रो० पी० एस० सक्सेना भी बड़ी जेल में व्याख्यान देने जाते हैं, उनका भी ऐसा ही अनुभव है। श्री बा० पूर्णचन्दजी ने तो पूरी जेल के सब बन्दी भाइयों के आगे अपने कई भाषण दिये हैं, जिनका बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा है। आगरे की छोटी जेल में भी ऐसी ही प्रचार-व्यवस्था है।

इस सम्बन्ध में हमारे दो मुख्य सुझाव है—प्रदेशीय सरकार प्रदेश के सब कारागारों के बन्दी बन्धुओं को आध्यात्मिक और नैतिक उपदेश सुनाने की समुचित व्यवस्था करे। प्रदेश की आर्य-प्रतिनिधि सभा सरकार को इस काम में पूर्ण सहयोग दे, और आवश्यक साहित्य की व्यवस्था करे। ऐसा करने से मानवता और नैति-

कता के प्रसार में अच्छी प्रगति हो सकती है। बन्दी बन्धुओं पर स्नेह और सद्भावना पूर्ण नैतिक बातों का बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ता है। वे सचमुच प्रभावित होते हैं। सभी धर्मानुयायियों को कुछ न कुछ ग्रहण करने का अवसर मिलता है।

———

परिषद् की परीक्षाएं

अखिल भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् ने वैदिक धर्म-प्रचार के विचार से गत कई वर्षों से चार परीक्षाओं की व्यवस्था कर रखी है। ये परीक्षाएँ सिद्धान्त-सरोज, सिद्धान्त-रत्न, सिद्धान्त-भास्कर और सिद्धान्त-शास्त्री हैं। परीक्षाओं का नियत पाठ्यक्रम है, और उनकी समुचित व्यवस्था की जाती है। सन् १९४९ में सारे भारत में इन परीक्षाओं के १०९ केन्द्र थे और लगभग २५०० परीक्षार्थी थे। परन्तु अब केन्द्रों की संख्या २४४ और परीक्षार्थियों की ५९०० है। १९४९ से परीक्षाओं का मुख्य कार्यालय अजमेर में है, और श्री डा० सूर्यदेव शर्मा, एम० ए० (त्रय), एल० टी०, डी० लिट् अवैतनिक परीक्षा मन्त्री हैं। आपके ही उद्योग द्वारा ये परीक्षाएं इतना लोकप्रिय हुई हैं। हम चाहते हैं कि इन परीक्षाओं का अधिकाधिक प्रचार हो, जिससे परीक्षा देने वालों की संख्या कम से कम पचास सहस्र तो अनतिदूर भविष्य में ही हो जाय। इन परीक्षाओं द्वारा सबसे बड़ा लाभ तो यह होता है कि परीक्षार्थी को धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन करना पड़ता है, जिससे इस दिशा में उसकी जानकारी बढ़ती है। कालिजों, स्कूलों तथा अन्य शिक्षणालयों के छात्रों को तो इन परीक्षाओं में बैठना अनिवार्य होना चाहिये। विद्यार्थी ही क्यों बूढ़े-बड़े, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यासी सभी इन परीक्षाओं में भाग ले सकते हैं। इससे उनकी स्वाध्याय-प्रवृत्ति जाग्रत् और उन्नत होगी। कन्याओं और महिलाओं के लिए भी ये परीक्षाएं बहुत उपयोगी हैं। फिर परिश्रम का फल भी सुन्दर उपाधि के रूप में मिलता है। ऐसी दशा में आशा है, प्रत्येक आर्य संस्कृति प्रेमी इन परीक्षाओं का प्रचार और प्रसार करने में पूरा प्रयत्नशील होगा।

———

'वृक्षारोपण' या 'वनमहोत्सव'

गत वर्ष प्रायः इन्हीं दिनों सरकार की ओर से वन-महोत्सव या वृक्षारोपण सप्ताह मनाया गया था। सहस्रों नहीं, लाखों पौधे लगाए गए और इस कार्य में धन भी पर्याप्त परिमाण में व्यय हुआ। देश में कदाचित ही कोई ऐसा स्थान रहा हो जहां यह महोत्सव न मनाया गया हो। जनता, नेता और सरकारी अधिकारी सब ही का सहयोग और उत्साह इस कार्य में था। गत वर्ष काफी रुपया व्यय करके जो पौधे रोपे गए, उनमें से जीवित कितने रहे ? कुछ दिन पूर्व समाचारपत्रों में प्रकाशित हुआ था कि अस्सी प्रतिशत पौधे उचित देख-भाल के अभाववश नष्ट हो गए। अस्सी प्रतिशत हों या न्यूनाधिक, पर नष्ट अवश्य हुए। गत वर्ष हम भी अनेक वनोत्सवों में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, परन्तु उनमें सरकारी प्रेरणा और रस्म अदायगी का प्रभाव ही अधिक दिखाई दिया। जो पौधे लगाए गए थे, फिर उनको शायद किसी ने फिरकर भी नहीं देखा। हम पूछते हैं, इस प्रकार के वृक्षारोपण से क्या लाभ, और उस पर व्यर्थ धन क्यों नष्ट किया गया ? सुना है, केन्द्रीय सरकार की प्रेरणा से इस वर्ष फिर वनोत्सव मनाए जायेंगे। बड़ी प्रसन्नता की बात है। परन्तु ये उत्सव 'तमाशा' बन कर न रह जायें। जो पौधे लगाए जायें, उनके पालन-पोषण पर भी पूरा ध्यान रहे, जिससे वे शीघ्र ही बड़े होकर देश की आवश्यकता पूर्ति कर सकें। गत वर्ष 'अमृतबाजार पत्रिका' में वनमहोत्सव के सम्बन्ध में एक बड़ा अच्छा 'व्यंग्य चित्र' (कार्टून) प्रकाशित हुआ था। कुछ मजदूर फलों से लदे, हरे-भरे वृक्षों पर कुल्हाड़ा चला रहे थे। किसी ने पूछा, भले लोगो यह क्या कर रहे हो ? मजदूर बोले—तुम्हें नहीं मालूम ! आज यहां वनोत्सव मनाया जायगा नये पौधों का आरोपण होगा। इसी कार्य के लिये स्थान बनाने के लिये ये पेड़ काटे जा रहे हैं।" सचमुच हमें ऐसा वनोत्सव नहीं चाहिए, जिसमें 'विरवारोपण' के उत्साह में वृक्षों को बरबाद किया जाय, बच्चों को जीवित रखने के लिये बूढ़े हलाल कर दिये जायें। वह कैसा उत्सव या महोत्सव। सूखे ठूंठों को उखाड़ फेंकने में कोई हानि नहीं, परन्तु हरे-भरे फलदार पेड़ों का काटना धर्म, संस्कृति, राजनीति और सामयिक आवश्यकता सबके विरुद्ध है। आप निःसन्देह नये-नये पौधे लगाइये, परन्तु पुराने वृक्षों को नष्ट क्यों करते हैं। ऐसा कार्य तो नैतिकता, धार्मिकता और कानून सभी दृष्टियों से अपराध होना चाहिए। यानी जो कोई भी फलदार वृक्षों को काटे वह दण्डनीय समझा जाय। उसे इस अपराध के कारण सजा दी जाय। हमें हंसी तो कितने ही उन 'वृक्ष भक्तों' पर आती है जिन्होंने स्वार्थवश अपनी फैक्टरियों के 'बायलर' में सैंकड़ों पेड़ों को काट कर झोंक दिया। वन-महोत्सव में सबसे पहले ऐसे ही लोग वृक्ष महिमा पर लम्बा लेक्चर झाड़ कर, पौधों का आरोपण करने के लिये सबसे पहले आगे बढ़े। क्या अन्य अनेक कार्यों की भाँति वन-महोत्सव भी दुनिया को धोखा देने का अवसर है। अस्तु, हम सरकार और जनता दोनों से निवेदन करना चाहते हैं, कि पहले वे बड़े-बड़े वृक्षों की रक्षा पर पूरा ध्यान दें, हरे-भरे बागों को बरबाद होने से बचाओ, पीछे नयें पौधे भी लगाओ। ये पौधे भले ही थोड़े हों, परन्तु जितने भी हों उनकी रक्षा का पूरा ध्यान रखा जाय, असावधानी या उपेक्षा से एक भी पौधा न मरने पावे। फारसी में निहाल पौधे और बेटे दोनों को कहते हैं। अतएव इन 'नौ (नये) निहालों' की बड़ी श्रद्धा प्रेम-भावना और प्रयत्नशीलता से रक्षा होनी चाहिए। 'रस्म' के नाम पर 'तमाशा' करना न तो उचित ही है और न आवश्यक। वृक्षों का सम्बन्ध प्राणि-मात्र से है। वे हमारे शरीरों को परिपुष्ट बनाते हैं। हम उनको जिन्दगी को स्वस्थ और लम्बी बनाने का उद्योग करें।

———

अन्न की बरबादी !

सोमनाथ के मन्दिर की पिछले दिनों प्राण-प्रतिष्ठा हुई। इस अवसर पर मेहमानों के लिये सरकार की ओर से जो लड्डू बनवाए गये थे, उनमें से तीन-चौथाई से ज्यादा बच रहे और बेकार गये। महात्मा गांधी का पत्र 'हरिजन-सेवक' गत २३ जून के अङ्क में इस सम्बन्ध में लिखता है—

> 'जो अन्न बचा और बरबाद हुआ, उससे बिहार के कम से कम एक लाख अकाल पीड़ित लोगों का पेट भर सकता था। ...... जो हुआ उससे सरकार की प्रतिष्ठा को बट्टा लगे बिना नहीं रह सकता, लेकिन आडम्बरों के प्रदर्शनों में विवेक की अपेक्षा रखना ही बेकार है। जिस देश में दाने-दाने पर ध्यान रखा जाता हो, लोग भूखों मर रहे हों, उसमें 'प्रसाद' या 'मेहमानदारी' के नाम पर एक लाख भूखों का भोजन इस प्रकार बरबाद हो जाना बड़े ही दुःख और लज्जा की बात है।

———

भजनों द्वारा प्रचार

आर्यसमाज ने भजनों द्वारा प्रचार में अच्छी सफलता प्राप्त की। भजनों को सभी लोग बड़ी रुचि और ध्यान से सुनते हैं। अब भी भजनों द्वारा खूब प्रचार हो सकता है। आध्यात्म-प्रचार, नैतिकता प्रसार और सामयिक समस्याओं से सम्बन्ध रखने वाले शुद्ध भजन शुद्ध संगीत के सहयोग से गाए जाय तो उनका अच्छा प्रभाव पड़ेगा। कविता और संगीत में प्रभाव डालने की स्वाभाविक शक्ति है। हां, उस शक्ति का उपयोग उचित रीति से होना चाहिये। पेशेवर मण्डलियों की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक समाज को अपनी मण्डली स्वयं तैयार करने की आवश्यकता है। यदि लोग इस ओर अग्रसर होंगे तो सब साधन भी जुटने शुरू हो जायेंगे, क्योंकि किसी कार्य के लिए बलवती इच्छा होने से सफलता मिलती ही है।

———

सामयिक समस्याएँ

बिहार प्रान्त की भुखमरी

राजगुरु श्री प० धुरेन्द्रशास्त्री, प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा।

बिहार प्रान्तीय भुखमरी (खाद्यान्नभाव ग्रसित ग्रामा) का कुछ समाचार तो आर्यमित्र के पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर चुका हूँ, शेष समाचार अब प्रस्तुत कर रहा हूँ।

पूर्णिया, भागलपुर, मुंगेर, दरभंगा और सहरसा, जिले के ४५ ग्रामों का मैंने निरीक्षण किया है। वाहन (सवारी) की सुविधा न होने के कारण कहीं-कहीं १५ मील तक पैदल यात्रा भी करनी पड़ी है। कांग्रेस गवर्नमेन्ट ने अब यहाँ इतना अन्न भेज दिया है कि अन्न के अभाव का अभाव हो गया है।

मजदूर भी भूखा न रह सकें, इसके लिए गवर्नमेन्ट की ओर से कई योजनाएं चल रही हैं। बाँध बधवाना, पुरानी सड़कों का जीर्णोद्धार करना आदि। कुछ नयी सड़कें भी निर्माण हो रही हैं। पुराने तालाबों की सफाई और कुछ नये तालाब भी निर्माण हो रहे हैं। पाठकों के जानने के लिए खगड़िया सब-डिवीजन का उल्लेख यहाँ कर देता हूँ। ६ सड़कों पर काम चल रहा है, और इसी सप्ताह में अन्य सड़कों पर काम आरम्भ हो जायगा, जिनपर लगभग एक हजार तक मजदूर कार्य करेंगे।

किसी अंश से भूखा का शमन हो सके, इसलिये नवीन कूप निर्माण भी कराया जा रहा है। तालाब, नदी और कूपों से सिंचाई हो सके, इसके लिये गवर्नमेन्ट ने मशीन और पाइप का भी प्रबन्ध किया हुआ है। यद्यपि प्रान्त को भुखमरी के कष्ट से मुक्त करने के लिये केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकार ने प्रचुर प्रयास किया है, तथापि भुखमरी के कष्ट से प्रान्त सर्वथा मुक्त नहीं हो सका है। अनावृष्टि के कारण अनेक स्थान ऐसे हैं जहाँ पुरुष और पशुओं के पीने के जल का अत्यधिक कष्ट है। यद्यपि मजदूरों के लिये कार्य चालू है, तथापि अनेक स्थान ऐसे हैं, जहां मजदूर भुखमरी के प्रकोप के भोजन बने हुए हैं। तालाबों से पुरैनी की जड़ को निकाल, उबाल कर क्षुधा के शमन करने में समर्थ हो जाते हैं। कहीं-कहीं तो इसके भी न प्राप्त होने पर केवल जलाहार करके ही दो-दो दिन रहना पड़ जाता है। मैंने ऐसे अनेक राशन-कार्ड देखे हैं, जिन पर तीन-तीन मास तक अन्न अंकित नहीं है जैसे मंगलदासवान के गृह में ३ व्यक्ति प्रौढ़ हैं। राशनकार्ड नं० १०७ सर्किल ६, खगड़िया थाना. पर २६।१२ ५१ को सवा पांच सेर ज्वार लिखी है। २६ फरवरी से १ जून तक कुछ अन्न नहीं लिखा है। मैंने कुछ प्रश्न किये वह इस प्रकार हैः—

प्रश्न—२६ फरवरी से अब तक अन्न क्यों नहीं लिया; यहां तो राशन की दुकान पर अन्न मिलता है? उत्तर—राशन की दुकान पर अन्न बिकता तो है परन्तु पैसे पास न होने के कारण अन्न न ले सके। प्रश्न—अब तक किस प्रकार से दिन काटे हैं? उत्तर—जब-जब दो चार, छह आना मजदूरी से मिल गये तब-तब अरहर या मटर लेकर उबाल ली। थोड़ी सी उबली हुई अरहर या मटर चबाली और पानी से पेट भर लिया। कभी-कभी तो दो-दो दिन तक अन्न का एक दाना भी मुँह में नहीं पहुंचा, तब केवल जल से ही निर्वाह करना पड़ा है। प्रश्न—गवनमेन्ट ने तो कई काम चला रक्खे हैं। मजदूरी क्यों नहीं करते हो? उत्तर—सबको काम नहीं मिलता। जिसको काम मिल जाता है, वह मजदूरी कर ही लेता है। इसी प्रकार अन्य अनेक प्रश्न किये। मैं उस परिणाम पर पहुँचा हूं कि (१) प्रत्येक मजदूर को मजदूरी न मिलने (२) मध्यमवर्ग व्यक्ति, धन और अन्नके अभाव से, (३) लज्जा से अन्न याचना न करने से भुखमरी का नग्न नृत्य सर्वत्र विराजमान है। अतएव अनेक जन क्षुधा की अग्नि से दग्ध हो रहे हैं। मैं समस्त नर-नारियों से विनम्र निवेदन करता हूँ कि आप यथा शक्ति अन्न और धन अपने समाज में एकत्रित करके सार्वदेशिक सभा को सूचना दे दें। भारत के किसी भी कोने में जब-जब भारतीयों पर कोई विपत्ति आई तब-तब आर्यसमाज के सेवकों, महर्षि दयानन्द महाराज के भक्तों और वेद के अनुयायियों ने तन, मन, धन देकर उन्हें कष्ट से मुक्त करने का प्रभूत प्रयास किया है। मुझे आशा ही नहीं अपितु विश्वास है कि इस संकट-काल में भी आर्यजनता सर्वात्मना सहयोग प्रदान करेगी।

——

आ० स० और निर्वाचन

श्री शिवनारायण शुक्ल, एडवोकेट

मैंने ऐसा सुना है कि उत्तरप्रदेश के कुछ प्रमुख आर्य भाई आगामी चुनाव में सदस्यता के लिए खड़े होने का विचार कर रहे हैं। ज्यों-ज्यों निर्वाचन का समय निकट आ रहा है, त्यों-त्यों देश में अनेक पार्टियों का प्रादुर्भाव हो रहा है और सभी पार्टियां देश में अपने-अपने चमकीले प्रोग्राम सामने रख रही हैं। चूंकि आर्यसमाज ने अपना कोई प्रोग्राम घोषित नहीं किया है, इससे मैं परिणाम निकालता हूँ कि जिस आर्य भाई को जिस पार्टी की तरफ से चुनाव का निमंत्रण मिलेगा वह उसी के झंडे के नीचे चला जायगा। इन पंक्तियों के लिखने से मेरा आशय यह है कि क्या ऐसी स्थिति आर्यसमाज के लिए गौरव की स्थिति होगी या उससे आर्यसमाज को हानि पहुंचने की सम्भावना और आपस की फूट बढ़ने का भय होगा। अभी तक आर्यसमाज सामूहिक रूप से किसी भी राजनैतिक दल में सम्मिलित नहीं है। प्रत्येक आर्यसमाज में कांग्रेसी लोग भी हैं, सोशलिस्ट भी हैं। कुछेक की सहानुभूति हिन्दू सभा वालों से, कुछ की राष्ट्रिय संघ से और कुछ की डा० श्यामप्रसाद मुकर्जी की पार्टी से है। यह ध्रुव सत्य है कि आजकल पार्टी में बिना सम्मिलित हुए किसी व्यक्ति का निर्वाचन में खड़े होकर सफल होना लगभग असम्भव या अत्यन्त कठिन है और प्रत्येक पार्टी तब ही अपना टिकट किसी उम्मीदवार को देती है, जब वह प्रतिज्ञा करा लेती है कि वह एक सूत्र में बँधकर पार्टी में रहेंगे। ऐसी दशा में आर्यसमाज के लोगों को भिन्न-भिन्न पार्टियों का टिकट लेकर असेम्बली में पहुँचना क्या आर्यसमाज के लिए कोई सम्मान की चीज होगी। जो भाई असेम्बली और पार्लीमेंट की कार्यवाही को देखते और पढ़ते हैं, उन्हें मालूम है कि अनेक सदस्य या तो चुप बैठे रहते हैं या अपना वक्तव्य एक पक्ष में देते हैं, और वोट अपनी पार्टी के साथ देते हैं। मेरी सम्मति में यह अवस्था व्यक्तियों के लिए भले ही शोभनीय हो पर आर्य भाइयों के लिए तो यह नितान्त लज्जाजनक है। मैं तो यह समझता हूँ कि यदि आर्य भाई असेम्बली या संसद में जाना ही चाहते हैं, तो उन्हें एक प्रोग्राम लेकर जाना चाहिये, और साथ ही अपनी स्वतन्त्रता को कायम रखते हुए जाना चाहिये। इसका परिणाम यह होगा कि हम किसी पार्टी की दुम में बंधे हुए न होंगे और अपने सिद्धान्त को सामने रखते हुए स्वतन्त्र रूप से सम्मति दे सकेंगे। इसका एक परिणाम यह होगा कि आवश्यकता पड़ने पर हमारे भाई सरकारके साथ वोट करेंगे और जब कोई अवसर आयेगा तो विरोधी दल के साथ भी वोट करने में कोई हानि न होगी। परन्तु ऐसा हम तब ही कर सकते हैं जब स्वतन्त्र रूप से खड़े हों। स्वतन्त्र उम्मीदवार की हैसियत से खड़े होने में धन की समस्या पैदा होती है। कम से कम इस प्रान्त में तो ऐसे आर्य-भाई बहुत कम निकलेंगे जो पांच या दस हजार रुपया इस कार्य के लिए अपने पास से लगा दें। ऐसी अवस्था में क्या यह उचित न होगा कि जो आर्य भाई असेम्बली या संसद की सदस्यता के लिए खड़े हों, वे निर्वाचन के पहले अपनी एक कान्फ्रेन्स करें और सारी स्थिति पर गम्भीरता पूर्वक विचार करें और एक निश्चित नीति निर्धारित करके जायें।

इस समय लोग मुख्य रूप से दो दलों में विभक्त हैं। एक दल कांग्रेस का है जिसके हाथ में कांग्रेस की बागडोर है, दूसरा दल कांग्रेसियों के विरोधियों का है।

स्वास्थ्य-सुधा

'आम' की उपयोगिता

श्री स्वामी परमानन्दजी संन्यासी

फलों की दुनिया में आम की बड़ी महत्ता और उपयोगिता है। जितना आम भारतवर्ष में पैदा होता है उतना अन्य देशों में नहीं। मदरास में तो आम माघ फाल्गुन से ही पकने लगता है, बिहार में आम पकने का समय आते-आते मदरास का आम समाप्त हो जाता है। बंगाल और उत्तरप्रदेश में भी बहुत आम होता है। बम्बई में भी आम जल्दी पकना शुरू हो जाता है। बिहार के मुजफ्फरपुर और दरभंगा जिलों में तरह-तरह के आम होते हैं। आम प्रायः दो प्रकार के हैं—बीजू और कलमी। कलमी आम मुख्यतः मालदह, बम्बई, फजली, कृष्ण-भोग, सिपिया, मुकुल, बथुआ, मीरजाफर, मिठुआ, कपूरी, जठ, लाट, कम्पू, भोट आदि होते हैं। जब आम का बौर पकता है तो बड़ी सुन्दर सुहावनी सुगन्ध आती है।

पके आमों में सबसे अधिक लाभकारी बीजू आम होते हैं, क्योंकि उनमें अधिक रस और पतला गूदा होने से वे जल्द पच जाते हैं। पेड़ पर पका हुआ आम वायुनाशक और पाल में पकाया हुआ पित्तनाशक होता है। वर्षा से पहले यदि आम खाया जाय तो उसे दो-तीन घण्टे पानी में पड़ा रहने दिया जाय, इससे उसकी गर्मी शान्त हो जाती है। आम का रस निचोड़ कर कटोरों और प्यालों में भी खाया जाता है, परन्तु स्वास्थ्य के लिए आम चूस कर खाने से ही लाभ होता होता है। पके आम चूसने के पश्चात् दूध पीना बहुत गुण करता है। मीठे बीजू आम का पतला रस त्रिदोष नाशक, पौष्टिक, वृष्य, रक्तवर्द्धक, कान्तिवर्द्धक, रतौंधी दूर करने वाला, पित्त दोष और गैस तथा कब्जियत को मिटाने वाला है। उचित रूप से आम सेवन किया जाय तो उससे कितने ही रोग दूर हो जाते हैं। हृदय की दुबलता, श्वास संग्रहणी वायुगुल्म, मूर्छा, प्रदर, प्रमेह दमा, क्षय आदि अनेक रोगों के लिए वह बहुत उपयोगी है। बच्चों को सूखा रोग में आम बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। रोगी बालक को पहले आम का रस दिया जाय फिर नियमित रूप से उसे दूध पिलाया जाय तो वह हृष्ट-पुष्ट हो जायगा।

आयुर्वेद में दुग्ध कल्प और तक्र कल्प की तरह आम्र कल्प का भी बड़ा महत्व है। जिस द्रव्य के द्वारा कल्प किया जाता है, उसके अतिरिक्त और किसी वस्तु के ग्रहण करने का नियम नहीं। अतः आम्र कल्प में आम ही चूसा जाय और पानी के स्थान में भी आम का रस ही पिया जाय। आम्र कल्प उदर-सम्बन्धी रोगों—संग्रहणी आदि के निमित्त किया जाता है। उसकी अवधि कम से कम २७ और अधिक से अधिक ८४ दिन तक है। इस सम्बन्ध में यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि आम्र कल्प हो या अन्य कोई कल्प, सुयोग्य वैद्य की देख-रेख में ही करना चाहिये। उचित रीति से आम्र कल्प किया जाय तो सातों धातुओं को परिपुष्ट करता तथा उन्हें बढ़ाता है। शरीर भार और ओज की वृद्धि करता है, और कद को भी बढ़ाता है। आम में अन्य उपयोगी तत्वों के अतिरिक्त केलशियम, लोहा एवं कई और जीवनोपयोगी तत्व होते हैं।

अति सबकी बुरी है। अधिक आम खाने से भी लाभ के बदले हानि ही उठानी पड़ती है। मन्दाग्नि, मलावरोध आदि रोग हो जाते हैं। यदि स्वादवश अधिक आम खा लिए जाय तो, एक दो केले खाने से वे पच जाते हैं। आम के रस और दूध के साथ पचामृत पर्पटी, मुक्तापर्पटी आदि औषधियों का सेवन बड़ा लाभदायक है।

खट्टा आम हानिकारक होता है, उसके खाने से अनेक रोग पैदा हो जाते हैं। कच्ची अमियों की स्वादिष्ट लौंजी या अचार बनाकर खाते हैं। अमियों को उबालकर उसका रस निकाल लिया जाता है और उसमें हींग नमक, कालीमिर्च तथा चीनी डालकर पना भी बनाते हैं, यह पना भोजन के साथ खाने में बड़ा उपयोगी रोचक और स्वादिष्ट बन जाता है। लू लगने पर यदि इस प्रकार का पना पिया जाय तो बड़ा लाभ होता है। अभिप्राय यह है कि आम का उचित प्रयोग सब दृष्टियों से सुखद और स्वास्थ्य प्रद है। वह ऋतु के अनुकूल तथा अन्न की कमी की पूर्ति करने वाला भी है। लोग चाहें तो आम चूस कर ही दिन बिता सकते हैं। आम की गुठली और उसके भीतर की गिरी भी कितने ही रोगों को दूर करती है। इस जरा से स्थान में इन सब बातों का वर्णन कर सकना कैसे सम्भव हो सकता है।

कितने दुःख की बात है कि ईंधन तथा लकड़ी के लिये आज कल बड़े-बड़े आम के बाग काटे जा रहे हैं। इससे आमों का मिलना बहुत कठिन हो गया है। जो आम पहले अत्यन्त सस्ते थे, वे ही अब खूब महंगे हो गये हैं। हरे-भरे फलदार वृक्षों का काटना कानून की दृष्टि से एक अपराध होना चाहिए। और इस बात पर पूरा ध्यान रखना चाहिए कि बागात की रक्षा हो, और फलदार वृक्ष किसी दशा में भी न काटे जायें।

——

कविता की 'कीमत'

श्री 'अम्ब' कवि

कवि उपदेशयुक्त उक्तियों के अमृत से,
जनता में सुरुचि-प्रवाह कर देते हैं।
मानवों को कष्ट देने वाले दुष्ट-दानवों के,
दोष दिखला के उर-दाह कर देते हैं।
निपट निकम्मों में उमंग भर देते कहीं,
कर्मशीलता की चित्त चाह कर देते हैं।
कविता-कला की किन्तु कीमत यही है 'अम्ब'
लोग बदले में 'वाह वाह' कर देते हैं।

———

कॉंग्रेस का दल जिस दृढ़ता से अपनी सत्ता कायम रखने की कोशिश कर रहा है, उसी दृढ़ता से विरोधी दल कांग्रेस की जड़ उखाड़ कर अपने अधीन करना चाहता है। हमारी सम्मति में आर्य समाज की नीति न तो एक दल के साथ है, न दूसरे दल के। अतएव सबसे अच्छा मार्ग यह है कि आर्यसमाजी जिस उम्मेदवार को बेहतर समझें, उसको अपना वोट दें, चाहे वह कांग्रेसी हो चाहे उसका विरोधी। ऐसा न करके यदि कोई आर्य-भाई कांग्रेस के टिकट पर खड़ा होगा और कोई हिन्दू सभा के टिकट पर तो आर्यसमाजों की सीमित शक्ति छिन्न-भिन्न होने का भय है। मान लीजिये कि एक ही नगर में दो आर्य भाई दो भिन्न-भिन्न पार्टियों के टिकट पर खड़े हुए हैं, वहां के आर्यों के दो दल हो जाना अनिवार्य होगा। यह अवस्था आर्य समाज के लिए अत्यन्त हानिकारक प्रमाणित होगी। यह विचार सर्वथा मेरे अपने हैं, मैं किसी राजनैतिक पार्टी का सभासद नहीं हूँ। आर्य-समाज के एक पुराने सेवक के नाते ही आर्यसमाज की हित-दृष्टि से यह लिख रहा हूँ।

——

राजनैतिक रंग-मंच

आर्यसमाज और राजनीति

प्रो० श्री सत्यव्रत सिद्धान्तालङ्कार (भूतपूर्व मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल कांगड़ी)

देश के स्वतन्त्र होने के बाद कांग्रेस के हाथ में राज-सत्ता आयी। यह सत्ता कांग्रेस ने चुनाव से प्राप्त नहीं की, अंग्रेज गये और कांग्रेस के हाथ में बाग-डोर देते गये। और किसी के हाथ में दे भी नहीं सकते थे, क्योंकि देश में दूसरी कोई सगठित पार्टी थी भी नहीं। १५ अगस्त १६४७ से आज तक कांग्रेस के हाथ में शासन-सत्ता रही और इन चार वर्षों में कांग्रेस की साख दिनोदिन बढ़ने क स्थान में घटती गई और अब ऐसी स्थिति आगई है कि अगले चुनावों में अगर ईमानदारी से चुनाव लड़े जायें, जिसकी बहुत कम सम्भावना है, अगर हुकूमत चुनावों में हस्तक्षेप न करे तो शहरी इलाकों में कांग्रेसी उम्मीदवारों के जीतने की बहुत कम आशा है।

कांग्रेस का चारों तरफ से विरोध हो रहा है। सबसे जबर्दस्त विरोध समाजवादियों की तरफ से है। अभी पिछले दिनों एक क्रान्तिकारी समाजवादी-दल बना है। कम्यूनिस्ट भी मैदान में है। डेमोक्रेटिक फ्रंट वालों ने कांग्रेस से इस्तीफा देकर अपना अलग दल बनाया है। इन सब का कहना है कि कांग्रेस अन्न की, वस्त्र की, मकान की—किसी समस्या का हल नहीं कर सकी। कांग्रेस के राज में चोरबाजारी और कालाबाजारी बढ़ती जा रही है, कुनबा परवरी का बोलबाला है। रिश्वत बढ़ती जा रही है, ईमानदारी का नाम नहीं। सब राजनैतिक दलों का कांग्रेस पर एक ही-सा आरोप है—चोरबाजारी, कालाबाजारी, रिश्वत, बेईमानी, कुनबापरवरी!

परन्तु जिस कांग्रेस के सिर पर श्री जवाहरलाल नेहरू और श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन जैसे परखे हुए व्यक्ति बैठे हुए है, वह इन बातों से न बच सकी तो दूसरे दल वाले इन बातों से बच जायेंगे -इसकी क्या गारण्टी है? कहा जाता है, परख कर तो देखो, परन्तु एक सधे हुए दल के व्यक्तियों को परख कर देखा तो निराश होना पड़ा, अब बिना सधे हुए व्यक्तियों के हाथ में बागडोर देने से क्या लाभ होगा?

किसी बीमार का जब इलाज किया जाता है, तो पहले उसके रोग का निदान किया जाता है। एक बीमार है, उसे पसीना अधिक आता है। एक डाक्टर आया, उसने पसीना रोकने की दवा दी, परन्तु पसीना न रुका। हमने दूसरे को बुला लिया। उसकी दवा से भी पसीना न रुका, तो तीसरे को बुला लिया। हो सकता है, तीसरे, चौथे या पॉचवे डाक्टर की दवा से पसीना आना रुक जाय, परन्तु यह भी हो सकता है कि पसीना रुकने पर बीमार अच्छा होने के स्थान पर मर ही जाय। योग्य चिकित्सक का कर्तव्य यह है कि वह पसीना आने के कारण का पता लगाये। क्या यह तपेदिक का बीमार है, और इसी कारण इसे इतना पसीना आता है, क्या यह उतरता हुआ मलेरिया है, या पसीना आना इस बीमार का स्वभाव ही है? आज सभी चिल्ला रहे हैं कि अन्न का कष्ट दूर होना चाहिये, वस्त्र सबको मिलना चाहिये, चोरबाजारी हटनी चाहिये, कालाबाजारी दूर होनी चाहिए, कुनवा परवरी ठीक नही रिश्वतखोरी और बेईमानी का इलाज होना चाहिये—परन्तु यह भी किसी ने सोचा कि ये चीजें बीमारी के असली रूप है, या बीमारी के लक्षणमात्र। हमारे समाज की असली बीमारी तो यह है कि हम लोग सच्चे नहीं हैं, ईमानदारी नहीं है, हमें त्याग नहीं, तपस्या नहीं, हम चरित्र-भ्रष्ट हैं, हम पैसे को सब-कुछ समझे हुए है। जब तक हमारा चरित्र ऐसा रहेगा तब तक हम चोरबाजारी क्यों नहीं करेंगे, रिश्वत क्यों नहीं लेंगे, कालाबाजारी क्यों नहीं करेंगे?

समाजवादी कहते है कि अन्न-वस्त्र का संकट दूर होना चाहिये और चोरबाजारी, कालाबाजारी और रिश्वतखोरी हटनी चाहिये। मजे की बात यह है कि कांग्रेस भी यही कहती है। क्या कांग्रेस ने कभी कहा कि चोरबाजारी होनी चाहिये? चोरबाजारी के विरुद्ध कांग्रेस ने जिहाद बोल रखा है, यह दूसरी बात है कि फिर भी वह हटती नहीं। जब कांग्रेसियों का, समाजवादियों का, उग्र समाजवादियों का, कम्यूनिस्टों का और अन्य सभी दलों का एक ही ध्येय है, तब इनकी आपस की लड़ाई तू-तू मैं मैं किस लिए है? और, जब कांग्रेसी इन बुराइयों के विरुद्ध शोर मचाते हुए भी इन्हें दूर नहीं कर सके तो, दूसरे दल कैसे दूर कर लेंगे?

कांग्रेस इन बुराइयों को दूर नहीं कर सकी—और दूसरे राजनैतिक दल भी इन्हें दूर नहीं कर सकेंगे, इसका एक विशेष कारण है। वह कारण यह है कि इन सब दलों की राजनीति का आधार सत्य, ईमानदारी, त्याग, तपस्या, चरित्र—ये सब नहीं हैं। इनकी राजनीति में झूठ बोला जा सकता है, बेईमानी हो सकती है, त्याग एक ढोंग है, तपस्या ऋषि-मुनियों के लिये रिजर्व है। ये ऐसे राजनीतिज्ञ है जो देश के लिये शराब की पाबन्दी लगाने के कानून बना कर खुद घर में शराब पी सकते हैं और उनके अन्तरात्मा को मसोसने वाली कोई चीज उनके पास नहीं फटकती। ये ऐसे राजनीतिज्ञ हैं जो देश के युवकों के लिए तम्बाकू को हानिकर समझ कर उस पर कानूनी पाबन्दी लगा सकते हैं, किन्तु घर में स्वयं दिन-रात सिगरेट फूकते हुए यह नहीं अनुभव करते कि वे कुछ बुरा करते है। इन राजनैतिक दलों का एक का नहीं सब का, कहना है कि प्राइवेट लाइफ अलग होती है, पब्लिक लाइफ अलग।

इसमें सन्देह नहीं कि इस प्रकार की विचार-धारा से मनुष्य को अपने व्यक्तिगत जीवन में सफलता मिल जाती है परन्तु हमें स्मरण रखना चाहिये कि इस स्वतन्त्रता के उपभोग करने का अधिकार उन लोगों का नहीं है जो देश का शासन करते हैं। यह अधिकार तो आम जनता का है। शासक के ऊपर इतनी जिम्मेवारी होती है कि वह प्राइवेट और पब्लिक लाइफ का जीवन नहीं बिता सकता। उसका तो सारा जीवन पब्लिक जीवन है। इस तपस्या के बदले में उसे हुकूमत मिलती है। परन्तु आज के शासक हुकूमत करने के साथ-साथ प्राइवेट जीवन की स्वतन्त्रता चाहते हैं। परिणाम यह होता है कि शासकों के व्यक्तिगत भ्रष्ट-चरित्र को देख कर जनता चरित्रहीन हो जाती है। अपनी व्यक्तिगत कमजोरियों को छिपाने के लिए सभी राजनैतिक दल सत्य, ईमानदारी, त्याग, तपस्या, चरित्र—इन चीजों को अपनी राजनीति का आधार बनाने के लिए तैयार नहीं होते। वे कहते हैं कि राजनीति का आधार तो रोटी का समान बटवारा है, सचाई, ईमानदारी आदि का राजनीति से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है।

अगर यह बात ठीक है तो चोरबाजारी करने वाला क्या बुरा करता है? तुम्हारी राजनीति में जब सत्य कोई मौलिक सिद्धान्त नहीं है, जब ईमानदारी कोई जड़ की बात नहीं है, तब तुम एक राजनैतिक दल की हैसियत से किसी को ईमानदार रहने या रिश्वत न लेने का उपदेश कैसे दे सकते हो? राजनीति में तुम तो झूठ बोल सकते हो और जनता को सच्चा रहने को कहते हो, राजनीति में तुम तो बेईमान हो सकते हो और जनता को ईमानदार रहने को कहते हो। यह बात चल नहीं सकती, इसलिए चल नहीं रही। कालाबाजारी, चोरबाजारी, रिश्वत, परिवार-पोषण झूठ, बेईमानी, चालाकी—ये सब तो एक ही बिरादरी की चीजें हैं। क्योंकि हमारे राजनैतिक दल इनमें से एक न एक चीज को अवश्य अपनाते हैं इसलिए इन दलों में से कोई भी देश की व्यापक चरित्र हीनता को दूर नहीं कर सकेगा, नहीं कर सकेगा।

(२)

देश की बीमारी का इलाज करने के लिए एक नवीन दल की आवश्यकता है। ऐसे दल की आवश्यकता है जो सत्य, ईमानदारी, त्याग, तपस्या चरित्र-निर्माण को राजनीति का आधार बनाये। आखिर, रोटी के सवाल का हल तो हर एक दल करेगा। कौन-सा

दल है, जो रोटी-कपड़ा-मकान आदि समस्याओं का हल नहीं करना चाहता, या इन समस्याओं का हल नहीं करेगा ? हिन्दूसभा तक के प्रोग्राम को देखें तो आर्थिक दृष्टि-कोण से इसमें और उग्र समाजवादियों के प्रोग्राम में कोई अन्तर नहीं दीखता। आर्थिक समस्या तो सबको हल करनी है परन्तु आज हमारी आर्थिक समस्या का हल भी हमारी चरित्र-हीनता के पीछे छिपा हुआ है। चरित्र-भ्रष्ट व्यक्तियों का समूह किसी 'वाद' को लेकर क्यों न खड़ा हो जाय परिणाम वही निकलेगा जो आज कांग्रस के राज में दिखाई पड़ रहा है। केवल समाजवादी नारे लगाने या लाल झण्डा फहरा देने से कुछ हो जाता तो तिरंगा झण्डा उस चमत्कार को पहले कर चुका होता। आज एक ऐसे दल के संगठित होने की आवश्यकता है जो एलान कर दे कि चरित्र हमारी राजनीति का आदि है और चरित्र ही हमारी राजनीति का अन्त है। चरित्र की कसौटी पर परखे हुए व्यक्ति होंगे तो रिश्वतखोरी, काला बाजारी और चोरबाजारी अपने-आप मिट जायगी। आज देश के राजनैतिक क्षेत्र में ऐसी संस्था के प्रवेश करने की आवश्यकता है जो चरित्र को राजनीति का आधार बनाने के लिए तैयार हो। ऐसी संस्था है—और वह है 'आर्यसमाज'।

आर्यसमाज कोई धार्मिक संस्था नहीं है। आर्यसमाज एक चौमुखी संस्था है। ऋषि दयानन्द ने जो कुछ लिखा है, वह आर्य-समाज का प्रोगाम है। आर्यसमाज ने शिक्षा-संस्थाएं खोलीं, गुरुकुल, स्कूल, कालेज खोले, विधवा-आश्रम और अनाथालय खोले, शुद्धि सभाएं खोलीं। यह सब क्यों किया ? इसलिये कि ऋषि दयानन्द के लेखों में इस बात की ध्वनि गूंजती है। ऋषि दयानन्द राजनीति पर भी अपने 'सत्यार्थ-प्रकाश' में एक अध्याय लिख गए है। फिर आर्यसमाज राजनीति में क्यों भाग न ले ? कोई समय था जब आर्यसमाजी और क्रान्तिकारी का एक ही अर्थ समझा जाता था। पटियालामें आर्यसमाजियों को गर्जने तक होने के कारण निकाल दिया गया था। उस समय आर्यसमाज को बचाने के लिए आर्यसमाज के नेताओं ने एक नवीन विचार-धारा को जन्म दिया। उस समय कहा गया कि आर्यसमाज का राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं है। उस समय की दृष्टि से यह बात ठीक थी, आज यह बात गलत है। आज आर्य-समाज की राजनीति में न आने के कारण देश में कोई ऐसा दल नहीं जो चरित्र की शुद्धि को राजनीति का आधार मान रहा हो, और इसलिए चरित्र भ्रष्टता दिनो-दिन बढ़ती चली जा रही है।

मेरे कहने का यह अभिप्राय नहीं कि आर्यसमाजियों के अतिरिक्त सब चरित्र-भ्रष्ट हैं, न मैं यह दावा करता हूँ कि सब आर्यसमाजी दूध के धुले हुए है। मेरे कहने का मतलब सिर्फ इतना है कि आर्यसमाज ऐसी संस्था है, जो चरित्र-निर्माण को पहला नम्बर देती है। आर्य-समाज में सिगरेट पीने वाला बुरा माना जाता है, आर्यसमाज में किसी प्रकार की गड़बड़ करने वाले के ऊपर झट उंगली उठ जाती है। अन्तरंग सभामें सवाल पेश हो जाता है। आर्यसमाज का चरित्र-निर्माण पर सबसे ज्यादा ध्यान है, दूसरों का तो इधर ध्यान ही नहीं। आर्यसमाजने गुरुकुल खोले, डी० ए० वी० स्कूल और कालेज बनाये, आर्य-कुमार सभाओं का निर्माण किया, यह सब इसलिये क्योंकि आर्य समाज चरित्र को सबसे ऊँची चीज समझता है, दूसरे तो कुछ समझते ही नहीं। एक आदमी बुराई करे और शर्मिन्दा भी न हो, आर्यसमाजी बुराई करेगा तो अपने जुलूस तो नहीं निकलवायेगा, शर्म तो अनुभव करेगा, मुंह तो छिपाएगा। ऐसे दल के लोगों को आज राजनीति के क्षेत्र में आना चाहिये और सामूहिक रूप से आना चाहिये, आर्य-समाजी होने के नाते आना चाहिये।

(३)

आर्यसमाज के राजनीति में भाग लेने का विरोध समाज के कुछ बड़े-बड़े नेताओं की तरफ से होता है। उनका कहना है कि आर्यसमाजी भिन्न-भिन्न राजनैतिक विचारों वाले हो सकते हैं। कांग्रेसी, सोशियलिस्ट, कम्यूनिस्ट सभी आर्यसमाजी हो सकते हैं, फिर आर्यसमाज सामूहिक रूप से किस दल की राजनीति का साथ दे। और अगर आर्य-समाज अपनी राजनीति का अलग निर्माण करे, तो क्या किसी को यह अधिकार न होगा कि राजनीति के बाहर आर्य-समाजी होता हुआ राजनैतिक क्षेत्र में आर्यसमाज का विरोध करे? कहने को यह प्रश्न बहुत ठीक जँचता है, और इसी युक्ति के आधार पर अब तक हम राजनीति से अलग खड़े हुए हैं, परन्तु यह एक काल्पनिक प्रश्न है, और काल्पनिक स्थिति है। मेरा तो कहना यह है कि कांग्रेस सोशियलिस्ट, हिन्दू सभा आदि सबका आर्थिक प्रोग्राम एक ही है, उनमें कोई भिन्नता नहीं। आज किसी राजनैतिक दल की बात सुन लीजिये। उसमें एक दूसरे को जो गाली गलौज हो उसे अलग कर दीजिये तो देश का भावी चित्र सभी एक सा खींचते हैं। आर्थिक ध्येय सबका एक है। आज तो संसार की हवा ही ऐसी है कि उसके अलावा कोई बात ही नहीं कर सकता। हाँ, ताकत का सवाल जरूर है, वह सवाल जिसे 'पावर पालिटिक्स' कहा जाता है। सब ताकत के पीछे दौड़ रहे है। ताकत हाथमें आनेके बाद चरित्र-निर्माण को आधार बनाने वाला कोई नहीं है, अतः अन्त में होने वाला वही है जो कांग्रेस का हो रहा है। जब सब का ध्येय एक है तो काल्पनिक भेद को आधार बनाकर आर्यसमाज को राजनीति से रोके रखना युक्ति-युक्त नहीं है। और अगर कोई ऐसा माई का लाल निकल आय जो आर्य समाज के और विचारों से सहमत हो, आर्यसमाज की राजनीति से सहमत न हो, तो वह आजाद है; परन्तु मुझे यह निश्चय है कि ऐसे आदमियों की संख्या दूनी होगी, और उसमे न तो आर्यसमाज को कोई नुकसान पहुंचेगा, न उन्हे आर्यसमाज को राजनीति के बाहर भाग लेने की कोई रुकावट होगी। हाँ, यह प्रश्न हो सकता है कि अगर ऐसे व्यक्तियों की संख्या बहुत अधिक बढ़ जाय तब क्या होगा ? उस अवस्था में जहाँ-जहाँ ऐसी अवस्था उत्पन्न हो जायगी वहाँ-वहां समाज राजनीति में भाग नहीं लेगा। राजनीति में भाग लेना कोई अटल सिद्धान्त तो नहीं है। किसी समय राजनीति में भाग लिया जाता था, समय आया जब भाग लेना बन्द हो गया, अब फिर शुरू किया जा सकता है। और परिस्थितियां बदल जायेंगी तो फिर बन्द किया जा सकता है—इस में है क्या ?

कई लोग कहते हैं कि राजनीति में तो बहुत गन्द उछाला जाता है, चुनाव के झगड़े हैं, तू-तू मैं-मैं है, परन्तु आर्यसमाज इन बातों से कब घबराने वाला है। आर्यसमाज के महारथी चुनावों की तू तू मैं-मैं के बहुत अभ्यस्त हैं। किस आर्यसमाज में मन्त्री प्रधान पद के लिये झगड़ा नहीं होता, लट्ठ तक चलते हैं, पार्टियाँ बनती हैं। अगर दूसरे दलों के साथ लोहा लेने के लिये आर्यसमाज को अपना उग्र रूप दिखाना पड़े तो वह क्यों न दिखाये ?

आर्यसमाज का राजनीति में प्रवेश करना समय की मांग है। यह किनारे बैठा रहा तो मर जायगा। राजनीति में शक्ति है। हम उस शक्ति की पूजा करते हैं। किसी साधारण आदमी के एसेम्बली के सदस्य बन जाने पर उसे समाज-मन्दिर में आमन्त्रित करते है। विद्वानों का सत्कार करनेके स्थान पर उसे अभिनन्दन-पत्र देते हैं। और वह समाज की वेदी से यह कह कर कि यद्यपि मैं आर्यसमाजी नहीं हूँ तथापि आर्यसमाज के प्रति मेरे हृदय में प्रेम है, अपने घर चलता बनता है। अगर हमको ऐसे व्यक्तियों की पूजा करनी है तो क्यों न आर्यसमाज अपने बल पर शक्ति को अपने हाथ में ले ताकि इन लोगों का मुंह तो न ताकना पड़े। जनता शक्ति की पुजारी है। राजा काल का निर्माण करता है। अगर आर्यसमाजी आर्य-समाज के संगठन के बल पर उच्च स्थानों पर पहुँचते हैं तो जनता अपने-आप आर्यसमाज की अनुयायी बन जाती है। अगर हम निश्चय है कि आर्य-समाज के विचारों द्वारा देश तथा समाज का कल्याण हो सकता है, तो अपने विचारों को क्रियात्मक रूप में परिणत करने के लिये हमारे पास इसके अतिरिक्त कोई चारा नहीं है कि आर्य-समाज राजनीति में भाग ले।

सुझाव और सम्मतियाँ

मूल सींचना ही हितकर है।

श्री पीतमलाल, एम-एस-सी०, एडवोकेट

आर्यसमाज के सबही हितैषी उसकी वर्तमान अवस्था से असन्तुष्ट हैं, और उसकी उन्नति के लिये नाना प्रकार के सुझाव प्रस्तुत करते हैं। हम भी अपना सुझाव आर्यबन्धुओं के विचारार्थ रखते हैं।

शिथिलता के जो कारण कहे जाते हैं उनमें से कुछ ये है। आर्यपरिवार-संघ या आर्यभ्रातृ-भाव का न होना। आर्यसंस्थाओं से धन, मन, शक्ति का दुरुपयोग तथा ह्रास। आर्यसमाजों और सभाओं में दलबन्दी और पद-लोलुपता के दूषित मनोभाव। सच्चे वानप्रस्थियों तथा संन्यासियों का सेवा-भाव से कार्य करने के लिए उत्पन्न न होना, आर्यसमाज का राजनीति मे सामूहिक रूप से क्रियात्मक भाग न लेना आदि।

अब हम उनपर अपने विचार और सुझाव प्रकट करते है। हम को मूल कारणों पर ध्यान देना चाहिये। दिखावटी बातों से काम नहीं चल सकता। 'सत्य ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् अच्छी नीति है। स्वर्गीय ठाकुर नत्थासिंह गाया करते थे 'सच्चा सखुन हो लेकिन शीरीं दहन से निकले'। बन्धुओ, सच्ची बात तो यह है कि हम आर्य नहीं बने, न ऋषि दयानन्द के भक्त कहलाये जाने के अधिकारी है। हम मानते कुछ है, कहते कुछ है और करते कुछ और ही हैं। फल भी वही है। परमात्मा न्यायकारी है, सबको यथोचित कर्मफल देता है। जैसा हमने किया है या कर रहे है, वैसा ही फल प्रत्यक्ष है। जैसा करेंगे वैसा पावेंगे। यदि हमको अपनी वर्तमान स्थिति से वास्तवमें असन्तोष है, तो हम अपनी अब तक की त्रुटियों पर पश्चात्ताप करें, और भविष्य में आत्मवंचना के व्यवहार को न करें। आर्य-परिवार संघ क्यों नहीं बना, और उससे क्या हानि है ? इस पर तनक विचार कीजिए। हमारी आर्यसभाओं और आर्यसमाजों के प्रतिष्ठित कहे जाने वाले अधिकारी और सभासद भी अपना पौराणिक जाति-बिरादरी के बन्धनों, रस्म रिवाजों से मुक्त नहीं है। उनके परिवार के संस्कार विवाहादि जन्म-जाति में ही होते हैं। संस्कार के समय थोड़ासा यज्ञ हवन करते और कुछ दान देने से ही उनको वैदिक संस्कार होने का अधिकार मिल जाता है और समाचारपत्रों में उसको घोषणा कर दी जाती है। पौराणिक रस्म-रिवाजे, पौराणिक भावनाए, पौराणिक मनोवृत्ति हमारे घरों में घर किये हुए हैं। हमारा धन पौराणिक रस्मों में व्यय होता है। हमारी सन्तान आर्य नहीं बनती, न आर्यसमाज की दशा को उन्नति करने के लिये उनमें सेवा और त्याग भाव ही उत्पन्न होते हैं। मै यह नहीं कहता कि विवाह-संस्कार के समय यज्ञ न कराये जाय या दान न हो। हाँ अवश्य हो परन्तु वर-वधू गुण-कर्म स्वभाव से समान हों। पौराणिक रिवाजों को कोई स्थान न हो। नव दम्पतीके हृदय पर यह अंकित होना चाहिये कि हमने आर्य सज्जनों को साक्षी देकर गृहस्थ-आश्रम में प्रवेश किया है। आर्य परिवार बनाना। आर्य सन्तान उत्पन्न करके उसे वैदिक संस्कृतिमें पालन करना, और आर्यसमाज तथा वैदिक धर्म की सेवा करना ही हमारा मुख्य कर्त्तव्य है। यदि ऐसा हो तो आज आर्यसमाजी लोग रिश्वत, चोरबाजारी, और भ्रष्टाचार में न भाग ले। इस प्रकार आर्य समाज का मुख जनता और सरकार दोनों के आगे उज्ज्वल हो। फलतः सब अधिकार आर्यों के हाथ में हो और आर्यसमाज की उत्तरोत्तर उन्नति हो, परन्तु ऐसा नहीं है, क्योंकि हमने आर्य जाति नहीं बनाई। हम दिखावटी फूलोंसे खुशबू चाहते है। हम अपने त्रुटिपूर्ण व्यवहार को शुष्क तर्क से सम्पुष्ट करनेका व्यर्थ प्रयत्न करते है। अतः जब हम अपना निरीक्षण करे तो इस पर अवश्य विचार करें। यों तो आर्यपरिवार-संघ हमारी प्रदेशीय सभा में भी बना है, परन्तु उनका कार्य कितना है, और क्या है यह पाठक सभा के वार्षिक वृतान्त से ही जान लें। काम आर्यों के करने का है, करने से होगा, बातें बनाने से नहीं।

हमारे उत्तर प्रदेश में ही अनेक शिक्षा-संस्थाएं हैं। यदि आर्यसभा या अन्य कोई संस्था इनकी डायरेक्टरी (सूची पुस्तक) बनाती है, तो प्रतीत होगा कि जहाँ लाखों विद्यार्थियों को लाखों रुपया प्रतिवर्ष व्यय करके शिक्षा-दान का मान और हर्ष प्राप्त होता है, वहाँ यह भी लोभ होता है कि नवयुवकों और नवयुवतियों की इतनी बड़ी संख्या हमारे अधीन और सम्पर्क में रहते हुए भी हमने उनको ऋषि दयानन्द का अनुयायी नहीं बनाया। इसका मुख्य कारण यह है कि आर्य-संस्थाओं के संचालकों में से अधिकांश धार्मिक वृत्ति के नहीं है। कुछ संचालक शिक्षा प्रेमी होने से शिक्षा-प्रचार से ही सन्तुष्ट रहे, कुछ अपने पद और मान से सन्तुष्ट रहे और कितने ही पदलोलुपता और स्वार्थ-सिद्धि की लगन में ही अपने दिन पूरे कर गये। पौराणिक जाति भेद भी आर्य शिक्षा संस्थाओं को धार्मिक दृष्टि से असफल बनाने में मुख्य कारण रहा, और है। इस स्थिति में आर्य शिक्षा संस्थाओं और आर्यसमाजों में जो पदलोलुपता और दलबन्दी का बोलबाला है उसके कारण आर्यशिक्षा संस्थाएं और आर्य समाज (संस्था रूप से) दोषी नहीं कहे जा सकते। न वे आर्य समाज की शक्ति के ह्रास का कारण हैं। इस स्थिति का दोष तो उन स्वार्थी अधकचरे आर्य समाजियों पर है जो विना तप, संयम, धर्म प्रेम तथा सेवा-भाव के ही उस दड़ा [illegible] के सर्वोत्तम आचार्य महर्षि दयानन्द के मिशन को पूरा करने का उत्तर-दायित्व अपने निबल कन्धों पर लेने और उनको प्राप्त करने के लिये दूषित उपायों का प्रयोग करते है। हमारा अनुभव है कि दलबन्दी और पदलोलुपता में फँसे हुए अधकचरे आर्यसमाजियों के कारण धर्म प्रेमी सच्चे समाजी तटस्थ हो बैठे तथा हो रहे है, और नामधारी आर्यसमाजियों की दलबन्दी अधिकार प्राप्त कर कर के सफल हो रही है। वानप्रस्थी और संन्यासियों की सेवा शुश्रूषा करने वाले वर्तमान परिस्थिति में विरले ही गृहस्थी हैं। फिर वह क्या करें ? अपना कर्तव्य यथा-शक्ति पूरा करते है. गृहस्थाश्रम बिगड़ने से वानप्रस्थ और सन्यासाश्रम बिगड़ना स्वाभाविक है।

हम सब का मन चाहता है कि हम आर्यसमाजी भी कांग्रेसियों की भाँति सामूहिक रूप मे राजनीति में भाग लें और उनकी भाति ही अधिकारी भी बनें। बात तो अच्छी है, परन्तु क्या आर्यसमाज ने इतने बड़े उत्तरदायित्व को धारण करने की तैयारी कर ली है ? क्या बड़े से बड़े प्रलोभन भी एक आर्य को धर्म-पथ से विचलित करने में विफल रहेंगे। क्या कठिन से कठिन संकट उपस्थित होने पर आर्यसमाजी धैर्य धारण करता हुआ संकट को सुलझाने में समर्थ होगा। और इस प्रकार के अनेक प्रश्न हैं, जिनका उत्तर यही मानते हैं, कि अभी वह समय नहीं आया। यदि हमारा कथन असत्य हो, तो हमको अपनी आर्य संस्थाओं आर्यसमाजों और आर्य सभाओं की स्थिति पर क्यों असन्तोष हो। यदि हम राज्याधिकार चाहते हैं तो हमको चाहिये कि आज से तीन महीने के भीतर सम्पूर्ण आर्य संस्थाओं, आर्यसमाजों और आर्यसभाओं को शुद्ध, पवित्र और सफल बना कर दिखावें। फिर आगामी निर्वाचन में राज्याधिकार के लिए भी बाहुबल का परीक्षण करें। यह सब हमारे अधिकार में है। काम करने से चलेगा, कहने से नहीं। बाह्य बातों को त्याग कर मूल तत्व पर दृष्टिपात करना चाहिए।

हाँ, तो वह मूल क्या है. जिसको सींचना है ? जिसके आधार पर गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास, राज्याधिकार सब ही अवलम्बित है वह ब्रह्मचर्य आश्रम, नवयुवकों और नवयुवतियों का सुधार है। यही मूल है। इसको किस प्रकार सींचा जावे यह विचारणीय है।

हमारी सम्मति में आर्य कुमारों और कुमारियों को सुधारने में नीचे लिखी योजनाए सफल

महिला-मण्डल

परिवार-सुधार

श्रीमती श्यामाबाई वर्मा, बी० ए०, साहित्यरत्न

देश में शिक्षा-प्रचार के लिये पर्याप्त प्रयत्न किये जारहे है। नये-नये शिक्षणालय स्थापित हो रहे हैं। स्त्रियो के लिये भी, पहले की अपेक्षा अब, शिक्षा की अच्छी व्यवस्था है। परन्तु फिर भी अन्ध परम्परा का बड़ा जोर है। मेरी बहनें मिथ्या भ्रमों के जटिल-जाल में बुरी तरह फँसी हुई हैं। कोई मेला-दशहरा आया, भीड़ की भीड़ गंगा-यमुना नहाने चल दी। उनके दिमागों में यह भरा हुआ है कि पर्व्व या त्यौहार विशेष को नदी-सरोवर आदि में स्नान करने से मुक्ति मिल जाती है, सारे पाप दूर हो जाते हैं, जहाँ पापो से मुक्ति पाने का उपाय किसी नदी में एक डुबकी लगाना या एक दिन उपवास कर लेना मात्र हो, वहाँ अन्ध विश्वास की कितनी वृद्धि हो सकती है, पाप करने के लिये कितनी छूट मिल सकती है। यह सहज में ही समझा जा सकता है।

स्त्रियाँ गृह-स्वामिनी होती है, बालकोंको शिक्षा-दीक्षा उनके गर्भगत होते ही प्रारम्भ हो जाती है। किसी गृहस्थ या परिवार की उन्नति-अवनति का अधिकतर उत्तरदायित्व देवियो पर ही होता है। गृह या परिवार की परम्परा का निर्माण भी वे ही करती हैं। ऐसी दशा में सोचने की बात है कि मेरी बहनें कितनी शिक्षित और समझदार होनी चाहिए। मैं उपाधि - प्राप्ति को शिक्षा का आदर्श नहीं मानती। मैं तो उसी बहन-भाई को शिक्षित समझती हूँ, जिसका जीवन सात्विक, सरल, निर्दम्भ और सद्भावनाओ से भरा हुआ है।

कुछ दिनो से 'हरिकीर्तन' की प्रथा और प्रचलित हुई है। महल्ले महल्ले में किसी स्थान पर कुछ स्त्री-पुरुष एकत्र होकर 'हरे किशना' 'हरे रामा' की पुकार लगाने लगते हैं। उस समय खूब ढोल ढपान बजाये जाते और बड़े जोर से चिल्लाया जाता है। स्त्रियाँ इन कीर्तनो में अधिक भाग लेती हैं। ऐसी कीर्तन-मण्डलियों में सम्मिलित होना एक फैशन-सा बन गया है। मानो जो मनुष्य इनमें भाग लेते हैं, वे बड़े पवित्र, ऊँचे और पुण्यात्मा हैं। यह दम्भ की भावना भी बड़ा विनाश कर रही है। दिन भर लोग चोर-बाजारी करते, झूठ बोलते और ग्राहकों को ठगते हैं, परन्तु सुबह-शाम कीतन-मंडलियों में शामिल होकर 'भगत' बन जाते है। यह अपने को परमात्मा को और संस्था को धोखा देना है। कीतन ही नहीं, आडम्बर के नाम पर जो भी प्रार्थना-विधियां हैं, उनसे भी कोई लाभ नहीं होता। प्रार्थना का वाणी से नहीं, हृदय से सम्बन्ध है। हृदय की पवित्रता ही हमें सच्चा भक्त बना सकती है शास्त्रो में लिखा है कि बिना ज्ञान के मुक्ति नहीं होती। ज्ञान तभी सफल होता है, जब वह क्रियात्मक रूप में आकर चरित्र बन जाता है। जहाँ 'सच्चरित्रता' नहीं, वहाँ कोरी ईश्वर-भक्ति से कोई लाभ नहीं। अस्तु,

हाँ, तो मैं अपनी बहनो से यह कह रही थी कि वे अपने गृहों को ही पवित्रता और पुण्य का केन्द्र बनावें। परिवारिकों के मनो और हृदयो को शुद्ध करने का प्रयत्न करें। प्रातः साय नित्य पारिवारिक प्रार्थनाएं की जायें और तदनुसार ही व्यवहार हो। ऐसा करने से परिवार का स्तर ऊँचा उठेगा, और सभी परिवारों का स्तर उठने लगा तो देश और समाज की उन्नति में कोई सन्देह न रहेगा। मैं अपनी बहनो से ही यह प्रार्थना क्यो कर रही हूँ इसका कारण यही है कि परिवार-संचालन की सारी बागडोर बहनों के ही हाथो में होती है। सन्तान-निर्माण भी उन्हीं के द्वारा होता है। एक स्त्री चाहे तो स्वयम् धर्मात्मा बनकर अपने बच्चों और कुटुम्बियो को भी धर्मात्मा बना सकती है। उसकी जरा-सी उपेक्षा ही सारे घर को बरबाद कर देती है। पुरुष तो जीविका कमाने में अपनी शक्ति लगाते हैं, स्त्रियाँ परिवार को सुन्दर और सात्विक बनाने का प्रयत्न करें, घर का स्वास्थ्य, सदाचार व्यय, कार्यक्रम, पूजा पाठ आदि सब कुछ स्त्रियों के हाथों में ही रहता है। उन्हें समय-समय पर अपने परिवार में विद्वान्, साधु-संन्यासियो, पण्डित-पुरोहितो की कथाए भी करानी चाहिएँ, उपदेशो की व्यवस्था भी करनी चाहिए। यह सब तभी सम्भव हो सकता है, जब गृहदेवियों के विचार परिष्कृत यानी साफ-सुथरे हो। इसके लिये उन्हें साधु संगति और स्वाध्याय आदि की आवश्यकता है। जो देवियाँ थोड़ी भी हिन्दी लिख-पढ़ सकती हैं, उन्हें सत्यार्थप्रकाश की एक-एक पंक्ति बड़े ध्यानपूर्वक पढ़नी चाहिए और जो पढ़ने-लिखने में असमर्थ है, वे ऐसे ग्रन्थो को दूसरों से सुन समझ कर ही अपना काम चला सकती है।

———

होंगी, उनको काम में लाया जावे।

(१) आर्य शिक्षा-संस्थाओं के छात्रो और छात्राओ को अनिवार्य रूप से धार्मिक शिक्षा दी जावे। इस विषय में उनकी वार्षिक परीक्षा ली जाएँ और आर्यकुमार-परिषद अथवा इसी प्रकार की ऐसी ही अन्य संस्थाओं की परीक्षाएं दिलाई जावें, और अधिकारियो को प्रमाण-पत्र दिए जावें। (२) आर्य नवयुवक और नवयुवतियाँ प्रतिज्ञा करें कि वे अपने विवाह सम्बन्ध में जन्म जाति-भेद को स्थान न देंगे और न पौराणिक रस्म-रिवाज, दान-दहेज आदि कुप्रथाओं को मानेंगे। (३) आर्य नवयुवक और नवयुवतियाँ क्रियात्मक रूप से राजनीति में भाग न लें, परन्तु राजकीय विषयो और राजनीति आन्दोलनो का अध्ययन तथा उन पर वाद-विवाद करना उनके स्वाध्यायका मुख्य अंग हो। गृहस्थ धर्म का पालन करें। (४) नवयुवक और नवयुवतियों के लिए एक मासिक पत्र हो जो उनका उचित मार्ग प्रदर्शन करे। (५) अ० भा० आर्यकुमार परिषद का कार्य अधिक व्यापक और नियमित हो। यह विचार मैंने परामर्श के रूप मे रखे हैं। यदि इनका कोई अंश उपयोगी समझा जायगा तो मैं अपने आपको कृतार्थ समझूंगा।

———

आर्यजगत

—शोक है कि आ० स० मर्दाई (गोंडा) के संस्थापक पं० रामरत्न मिश्र की माता का १४ जून ५१ को देहान्त हो गया, अन्त्येष्टि क्रिया वैदिक रीतिसे हुई। आपने अपने पिताजी की अन्त्येष्टि भी वैदिक रीति से की थी। विरोधियों की जराभी परवाह नहीं की।

—आ० स० जहाँगीराबाद (बुलन्दशहर) में श्री स्वामी ईश्वरानन्द सरस्वती की कथा आठ दिनों तक होती रही। दो व्याख्यान हुए। प्रभाव बहुत अच्छा पड़ा। लोगो ने ईश्वरोपासना का व्रत धारण किया।

—आ० स० छावनी आगरा की ओर से श्री ज्ञानेन्द्रदेवजी सूफी ने १ से ३ जून तक नामनेर में तथा ४ जून को सुल्तानपुरा आगरा में प्रचार किया। श्रोताओं की उपस्थिति अच्छी रही।

—आर्यसमाज नौगांव ग्वाल की ओर से मण्डलेश्वर मेला पर ८ जून ५१ को सफलतापूर्वक प्रचार किया गया। सभापति का आसन श्री महेश्वरदत्तजी ने सुशोभित किया। यज्ञ हुआ तथा कई व्याख्याताओं के व्याख्यान व भजनोपदेशकों के भजन हुए। इस मेले में पशुओं का वध होता है। इस क्रूरता के विरुद्ध भी भाषण हुए।

—शोक है कि आर्यसमाज रामगढ़ के संस्थापक और प्रधान चौ० राजारामसिंह आर्य का देहान्त १८ जून ५१ को हो गया। आपने तन, मन, धनसे आर्यसमाजकी सेवा की। समाज-मन्दिर के लिये एक सहस्र रुपये लागतकी भूमि दानदी। अन्त्येष्टि संस्कार वैदिक रीति से हुआ। आपकी आयु ७६ वर्ष की थी। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

—श्री पं० धर्मवीरजी आर्य भण्डाधारी उपदेशक आजमगढ़ जिले में वैदिक धर्म-प्रचार कर रहे हैं। आप टकारा में एक यज्ञ भी कराना चाहते हैं।

—आर्य-कुमार सभा नगौला (अलीगढ़) का वार्षिकोत्सव ९ तथा १० जून १९५१ को मनाया गया। सव श्री० स्वा० सत्यानन्दजी, स्वा० सत्यव्रतजी, स्वा० योगानन्दजी, स्वा० आत्मानन्दजी, स्वा० विशुद्धानन्दजी, पं० मेधातिथिजी शास्त्री, प० ओङ्कारजी प्रणव शास्त्री, प० प्रेमदत्त शास्त्री, प० यशपालजी शास्त्री, कु० रणवन्तसिंहजी, कु० जयपालसिंहजी, कु० महेशजी आदि के भाषण तथा भजन हुए। शिक्षा-सम्मेलन दहेज-प्रथा-उन्मूलन-सम्मेलन, नशा-निषेध-सम्मेलन सफलतापूर्वक हुए। उपयोगी प्रस्ताव स्वीकृत किये गये। सात आर्यकुमारो के यज्ञोपवीत संस्कार हुए। उपस्थिति बहुत अच्छी होती थी। श्री प० सुवर्णसिंहजी आयसिद्धान्त मनीषी ने उत्सव को सफल बनाने के लिये पूर्ण प्रयत्न किया।

—आ० स० समरा (अलीगढ़) का तृतीय वार्षिकोत्सव ३ तथा ४ जून को समारोहपूर्वक मनाया गया। सवश्री स्वामी सत्यव्रतजी स्वा० शान्तानन्दजी दण्डी, स्वा० आत्मानन्दजी, स्वा० विशुद्धानन्दजी, प० रामचन्द्रजी व्याकरणाचार्य, प० सुवर्णसिंहजी, कु० रणवन्तसिंहजी, प० चन्द्रलालजी शर्मा आदि के भाषण तथा भजन हुए। उत्सव से एक दिन पूर्व यज्ञ हुआ। फौजी बैण्ड के साथ ग्राम में भारी जुलूस निकाला गया। समाज के प्रधान प० गोविन्दरामजी का उत्साह प्रशंसनीय था।

—श्री० स्वा० महेश्वरानन्दजी सरस्वती आजकल आन्ध्रदेश में सफलतापूर्वक वैदिक धर्म-प्रचार कर रहे हैं। आप वहाँ वैदिक आश्रम में ठहरे है।

—महुवा (जयपुर) निवासी सेठ बंशीधर दुर्गाप्रसादजी ने चि० सोहनलाल के विवाहोपलक्ष्य में विविध आर्य संस्थाओं को १७३) दान दिये।

—१६ जून को आर्यसमाज खरगपुर (मैनपुरी) में श्री सूर्यपालसिंहजी का यज्ञोपवीत संस्कार प० रामचन्द्रजी उपदेशक ने कराया। विविध संस्थाओं को दान भी दिया।

—२७ जून को नीब काकोरी (फर्रुखाबाद) में ब्र० अटलबिहारी की प्रपौत्री का पाणिग्रहण संस्कार शाहावर (एटा) निवासी प० भजनलालजी के साथ प० रामचन्द्र शर्मा उपदेशक ने वैदिक रीति से कराया।

—१९, २०, तथा २१ जून को आर्य कुमार-सभा विजयगढ़ (अलीगढ़) का द्वितीय वार्षिकोत्सव परिषद् के तत्वावधान में समारोहपूर्वक मनाया गया। अनेक संन्यासी, विद्वान् उपदेशकों एवं सुमधुर गायकों द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार हुआ। प्रथम दिन अमर शहीद श्री रमेशचन्द्रजी आर्य के प्रति अनेक विद्वानों ने अपनी पुनीत श्रद्धांजलि अर्पित की। इसके अतिरिक्त शङ्का समाधान, वादविवाद प्रतियोगिता आदि का कार्यक्रम अत्यन्त रोचक रहा। इसी अवसर पर शिक्षा-प्रसार-योजना, दहेज-विरोध तथा मादक द्रव्य-निषेध के विषय में उपयोगी प्रस्ताव पास किये गये। जनता पर अच्छा प्रभाव रहा।

निर्वाचन

—आर्यकुमार-सभा नगौला (अलीगढ़) प्रधान-प० हजारीलाल पाठक और मन्त्री-कु० वीरपालसिंह राघव।

सार-सूचनाएं

—आर्य भ्रमण सभा जिला अलीगढ़ द्वारा सोमना ग्राम में 'विश्व-शान्ति' यज्ञ का आयोजन होने वाला है। इस अवसर पर कई सम्मेलन भी होंगे। श्री स्वामी शान्तानन्दजी दण्डी इस यज्ञ के संयोजक हैं।

—प्रसिद्ध आर्य व्याख्याता, श्री पं० कालीचरण शर्मा मौलवी फाजिल, शास्त्रार्थ महारथी से पत्र-व्यवहार का पता है—नारियल बाज़ार, कानपुर।

—सिकन्दराबाद गुरुकुल ग्रीष्म-अवकाश के बाद १ जुलाई से खुल गया है। इस वर्ष गुरुकुल में संस्कृत के साथ-साथ हिन्दी तथा अंग्रेजी पढ़ाने की भी व्यवस्था की गयी है। गुरुकुल में अपने बालकों को प्रविष्ट कराने वाले महाशय शीघ्रता करें।

मुख्याधिष्ठाता

—आगामी ७ अगस्त से हैदराबाद से 'ज्ञानगंगा' नामक मासिक पत्र प्रकाशित होगा। यह पत्रिका हैदराबाद-स्वातन्त्र्य-संग्राम के वीर सेनानी स्वर्गीय भाई बंशीलालजी एवं अमर शहीद श्री श्यामलालजी की स्मृति में प्रकाशित हो रही है।

गंगा-तट पर ज्ञान-यज्ञ

उपर्युक्त ज्ञान-यज्ञ का प्रारम्भ स्वर्गीय श्री स्वामी केवलानन्दजी महाराज ने किया था, जो गंगा-तट पर दारानगर गंज (बिजनौर) में श्रावण मास-भर रहता है। नित्य किसी आर्ष ग्रन्थ की कथा होती है। तीन दिन प्रारम्भ में उत्सव होता है, जिसमें सुयोग्य श्रेय वक्ताओं के भाषण, भजन और कविताओं की व्यवस्था की जाती है। इस वर्ष भी सदा की भाँति व्यास पूर्णिमा से स्व० स्वामीजी के सुयोग्य शिष्य मण्डलेश्वर श्री स्वा० सुखानन्दजी महाराज गीता की कथा कहेंगे और २०, २१ तथा २२ तारीख को उत्सव होगा, जिसमें आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् पधार रहे हैं। बिजनौर से आश्रम को लारी जाती है।

बिहारीलाल शास्त्री

अलीगढ़ में प्रचार की धूम

जिला अलीगढ़ में वैदिक धर्म-प्रचार की अच्छी धूम है। एक-एक तारीख में कभी कभी कई-कई अधिवेशन हो जाते है। उपप्रान्तीय आर्य कुमारपरिषद् अलीगढ़ की ओर से १ जून से २६ जून १९५१ तक निरन्तर ग्रामीण आर्यकुमार सभाओं के उत्सव मनाने के प्रोग्राम चलते रहे है। जिला आर्यउपप्रतिनिधि सभा अलीगढ़ की ओर से भी आर्यसमाजों के उत्सव मनाये जा रहे हैं। साथ-साथ ग्राम-प्रचार भी हो रहा है। प्रचार की दृष्टिसे जिला अलीगढ़ तीन विभागों में विभक्त कर दिया गया है। तीनों विभागों के प्रचार-मन्त्री श्री ठा० नाहरसिंहजी, श्री पं० सुवर्णसिंहजी और श्री ठा० रुदारसिंहजी हैं। अब तक १५ स्थानों में उत्सव मनाये जा चुके हैं। जिले की आर्यभ्रमणसभा प्रचार के अतिरिक्त आर्यसमाज पर किये गये विपक्षियों के आक्षेपों का उत्तर भी देती है। लगभग ५० ग्रामों में इस सभा ने उत्सव और प्रचार कराये। दस नवीन आर्य-समाजों की स्थापना की। प्रचार

का जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ रहा है।

सुवर्णसिंह मन्त्री
आर्यउपप्रतिनिधि सभा, अलीगढ़

विरोधियों की कुचेष्टा

आर्यभ्रमण सभा अलीगढ १९२७ ई० से जिले में प्रचार काय कर रही है। इसी के द्वारा जवां (अलीगढ़) में प्रत्येक पूर्णिमा को यज्ञ तथा सत्सग होता है। इनमें रुचि लेकर काफी जनता जवां में एकत्र होती है। परन्तु कुछ विरोधी लोग इस पवित्र काय में विघ्न डालते और आर्यसमाज के विरोधी नारे लगाते हैं। सत्संगों में रोड़े ककड़ फेंकते तथा और भी अनेक कुचेष्टाएँ करते हैं।

सत्यव्रत संन्यासी
प्रान्तीय आयमण्डल अलीगढ़

[अलीगढ़ जिले में जवां आर्यसमाज का अच्छा केन्द्र रहा है। स्व० ठा० बलवन्तसिंहजी, स्व० ठा० कर्णसिंहजी, स्व० बौहरे होतीलालजी जैसे सुप्रतिष्ठित आयवीरों की जन्मभूमि और कर्मभूमि जवां में आर्यसमाज का इस प्रकार विरोध होना घोर लज्जा की बात है। फिर इस युग में जब एकस्वर से आर्यसमाज के कार्यों की प्रशंसा की जा रही है। विरोधी तक उसे मुक्तकण्ठ से सराहते हैं। सम्पादक]

आर्यप्रतिनिधि सभा सिन्ध
की
आवश्यक सूचनाएँ

सब सिन्धी भाइयों से प्रार्थना है कि वे प्रत्येक स्थान पर वहाँ के स्थानिक सामाजिक भाइयों से मिलकर भ्रष्टचार को हटाने के लिये पूरा पूरा यत्न करें और सिन्धी भाइयों में जो कुरीतियाँ बढने लगी हैं उनका सबल विरोध करें।

इस समय गो रक्षा आन्दोलन सारे भारतवर्ष में चल रहा है। इसको प्रत्येक प्रकार से पुष्ट करना चाहिये। ऋषि-कृत गोकरुणा निधि भिन्न भिन्न भाषाओं में छपवा कर बांटनी चाहिये। सम्पन्न भाइयों को इस ओर ध्यान देना चाहिए।

आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध ने यह निश्चय किया है कि सिन्धी भाषा देवनागरी लिपि में ही लिखी और पढ़ी जावे। इसलिये सब सिन्धी भाइयों का यह कर्तव्य है कि वे भूलकर भी अरबी लिपि का पक्ष न लें बल्कि उसका भरसक विरोध करें।

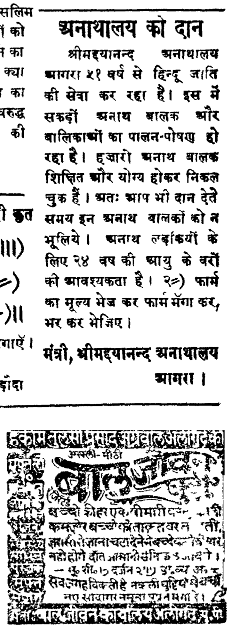
अमलनेर में आर्यसमाज शिथिल हो चुका था, प्रो० ताराचन्द ने वहाँ पहुच कर आर्यभाइयों को इकट्ठा किया। प्रभु-प्रार्थना के पश्चात् यह निश्चय हुआ कि प्रति शनिवारको समाज का अधिवेशन किया जायगा। श्री जोशीजी ने स्वीकृति दी कि अधिवेशन उनके मकान पर किया जाय।

गगाराम मंत्री
आ० प्र० सभा सिन्ध।

'समय की भीख'

७ जून स० ५१ के आर्यमित्र में 'समय की भीख दीजिए' 'कोरी बातों से काम नहीं चलेगा'- 'आगे बढ़िये और काम कीजिए' शीर्षक लेख पढ़ा। हृदय में अति उत्साह पैदा हुआ। निःसंदेह यदि प्रत्येक काय-कर्त्ता परमात्मा को साक्षी देकर स्वयं चरित्रवान हो और पद, धन, तथा नाम पाने की लोलुपता छोड़ देश में फैली हुई भ्रष्टता को दूर करने में तत्पर हो जावे तो बहुत अंशों में सफलता प्राप्त कर सकता है और आर्यसमाज के गौरव को बढ़ा सकता है। उदाहरणार्थ मैं पहासू-समाज को ही रख रहा हूँ। इस समाज ने दिखावट को छोड़ ठोस काम किया है। इस समाज में २० साल से एक भ्रमण सभा स्थापित है, जो प्रत्येक अमावस्या को किसी न किसी ग्राम में प्रचार करती है। इस सभा के उपदेशक व भजनीक बिना फीस लिये यहाँ तक कि रोटी भी अपने पास से खाकर प्रचार करते हैं। इस प्रचार का असर देखिये-बुलन्दशहर जिले के कांग्रेसी एम० एल० ए० आदि पहासू परगने को आर्य समाज का गढ़ कहने लगे हैं। जिस आर्य के हाथ में तेल, चीनी, कपड़े का परमिट आया उसने ईश्वर को साक्षी देकर इस उत्तमता से कार्य किया जिससे जनता में आर्यसमाज का गौरव बढ़ा। पिछले दिनों न आर्यमित्र में प्रकाशित हुआ था कि श्री पुरुषोत्तमदास टंडन ने अपने भाषण में कहा है कि देश में फैले हुए भ्रष्टाचार को आर्यसमाज ही दूर कर सकता है। कब? जब वह स्वयं भ्रष्ट न हो। उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि-सभा तथा आर्यसार्वदेशिक सभा का कर्तव्य है कि वह कोई ऐसी योजना बनावे, जिससे देश में फैला हुआ भ्रष्टाचार दूर हो। स्वतन्त्र भारत में आर्यसमाज को काम करने की बड़ी आवश्यकता है। समय हमारे साथ है। प्रत्येक आर्य के दिल में यह लगन हो कि मैं रामराज्य बनाऊंगा। देश के भ्रष्टाचार को दूर करूंगा। महात्मा गाँधी के विचारानुसार धर्म राजनीति से पृथक नहीं है। धर्म मनुष्य के प्रत्येक कार्य में व्यापक हो सकता है। धर्म का अर्थ सम्प्रदाय नहीं, बल्कि धर्म विश्व की नैतिक सुव्यवस्था है। ऐसी सुन्दर शैली से ही आर्य समाज देश का नेतृत्व कर अपना गौरव बढ़ा सकता है।

आर्यमित्र के इसी अंक में साम्प्रदायिक विष-वर्षा शीर्षक सम्पादकीय लेख पढ़कर दुःख और आश्चर्य हुआ। मुसलमानों के ऐसे लेख उन कार्यकर्त्ताओं के काम पर पानी फेर रहे हैं जो हिन्दू मुसलिम मेल-मिलाप तथा मुसलमानों को भारत में प्रतिष्ठापूर्वक रहने का आश्वासन देते रहे हैं। क्या सरकार या सार्वदेशिक सभा की ओर से ऐसे गन्दे लेखों के विरुद्ध कुछ कानूनी कारवाई न की जायगी।



अनाथालय को दान

श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आगरा ५१ वर्ष से हिन्दू जाति की सेवा कर रहा है। इस में सैकड़ों अनाथ बालक और बालिकाओं का पालन-पोषण हो रहा है। हजारों अनाथ बालक शिक्षित और योग्य होकर निकल चुके हैं। अतः आप भी दान देते समय इन अनाथ बालकों को न भूलिये। अनाथ लड़कियों के लिए २४ वर्ष की आयु के वरों की आवश्यकता है। २=) फार्म का मूल्य भेज कर फार्म मंगा कर, भर कर भेजिए।

मंत्री, श्रीमद्दयानन्द अनाथालय
आगरा।

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्

परीक्षाओं का पाठ्यक्रम जुलाई १९५१ से

सिद्धान्त-सरोज

प्रथम प्रश्न पत्र—(१) धार्मिक शिक्षा भाग १, २, ३ (आर्य-साहित्य मडल अजमेर), (२) आदर्श ब्रह्मचारी (प० भगवानदेव कृत), (३) व्यवहार भानु (ऋषि दयानन्द कृत)।

द्वितीय प्रश्न पत्र—(१) आर्यसमाज के उज्ज्वल रत्न (आर्य-साहित्य मण्डल) या आर्यजगत् के उज्ज्वल रत्न (प्रेमी प्रेस मेरठ), (२) हमारे स्वामी (राजपाल एण्ड सन्स देहली), (३) वैदिक शिष्टाचार (प० हरिश्चन्द्रजी कृत), (४) हमारा शत्रु तम्बाकू (पण्डित भगवानदेवजी कृत)।

सिद्धान्त-रत्न

प्रथम प्रश्न पत्र (१) पञ्च महायज्ञ विधि (ऋषि दयानन्द कृत), (२) आर्योद्देश्य रत्नमाला (ऋषि दयानन्द कृत), (३) बाल सत्यार्थ-प्रकाश (प्रो० विश्वनाथ कृत), (४) ब्रह्मचर्यामृत (प भगवानन्द कृत)।

द्वितीय प्रश्न पत्र (१) वैदिक धर्म प्रश्नोत्तरी (प० धर्मदेव कृत) (२) स्वामी श्रद्धानन्द (राजपाल एण्ड सन्स) (३) धार्मिक शिक्षा भाग ७ तथा ८ (डा० सूर्यदेव शर्मा कृत), (४) व्यायाम (पण्डित भगवानदेव कृत)।

सिद्धान्त-भास्कर

प्रथम प्रश्न पत्र—(१) सत्यार्थप्रकाश पूर्वार्द्ध (१० समुल्लास तक), (२) आर्यसमाज क्या है? (महा० नारायण स्वामी)।

द्वितीय प्रश्न पत्र—(१) जीवन ज्योति (प्रिंसिपल दीवानचन्द कृत), (२) विद्यार्थी जीवन रहस्य (महा० नारायण स्वामी कृत), (३) ऋषि दयानन्द-चरित (प्रो० इन्द्रजी कृत)।

तृतीय प्रश्न पत्र—(१) वैदिक सिद्धान्त (लाला रामप्रसाद कृत), (२) धार्मिक शिक्षा, भाग ९, १० (डा० सूर्यदेव शर्मा कृत), (३) जातिभेद का अभिशाप (प० शिवपूजनसिंह वेदालंकार)।

चतुर्थ प्रश्न पत्र—(१) आर्यसमाज का इतिहास (पण्डित हरिश्चन्द्र कृत), (२) युद्ध शान्ति और अहिंसा (आर्य साहित्य-मण्डल), (३) निबन्ध (किसी धार्मिक विषय पर)।

सिद्धान्त शास्त्री

प्रथम प्रश्न पत्र—(१) सत्यार्थ प्रकाश (सम्पूर्ण) (२) ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, (३) संस्कार विधि।

द्वितीय प्रश्न पत्र—(१) आर्य पर्व पद्धति (सार्वदेशिक सभा), (२) दर्शनानन्द ग्रन्थ संग्रह पूर्वार्द्ध (गोविन्दराम हासानन्द अथवा राजपाल एण्ड सन्स), (३) भारतीय समाज शास्त्र (प० धर्मदेव कृत), (४) काया कल्प (बुद्धदेव विद्यालंकार कृत)।

तृतीय प्रश्न पत्र—(१) उपनिषद् ६ (ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, श्वेताश्वेतर), (२) षड्दर्शन समन्वय (स्वा० ओमानन्द कृत) अथवा, आस्तिकवाद (प० गंगाप्रसाद उपाध्याय कृत)।

चतुर्थ प्रश्न पत्र—(१) वैदिक संस्कृति (प० गंगाप्रसाद उपाध्याय कृत), (२) धर्म का आदि स्रोत (प० गंगाप्रसाद एम० ए०), (३) निबंध (किसी धार्मिक सामाजिक वा राजनीतिक विषय पर।

सिद्धान्त-वाचस्पति

प्रथम प्रश्न पत्र—वैदिक साहित्य (१) वैदिक सम्पत्ति (प० रघुनन्दन शर्मा कृत), (२) वेद रहस्य (महा० नारायण स्वामी कृत), (३) वैदिकवाङ्मय का इतिहास प्रथम भाग (प० भगवद्दत्त कृत) अथवा, यजुर्वेद अध्याय ३१ ३२ तथा अथर्ववेद-पृथ्वीसूक्त।

द्वितीय प्रश्न पत्र (दर्शन साहित्य)—(१) सर्व दर्शन मीमांसा (पं० गोपालजी कृत), (२) न्याय दर्शन (किसी आर्य विद्वान् का भाष्य), (३) मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प (स्वा० आत्मानन्द कृत)।

तृतीय प्रश्न पत्र (मतों का तुलनात्मक अध्ययन)—(१) धम्मपद (राहुल सांकृत्यायन भाष्य), (२) यवनमत समीक्षा (प० लेखराम कृत), (३) बाइबिल का आलोचनात्मक ज्ञान, (४) कम्यूनिज्म (प० गंगाप्रसाद उपाध्याय कृत)

चतुर्थ प्रश्न पत्र (सामान्य ज्ञान भाषण कला आदि)—(१) सामान्य ज्ञान (यू० पी० शिक्षा बोर्ड द्वारा स्वीकृत कोई पुस्तक), (२) भाषण-संभाषण (प० देवनाथ उपाध्याय कृत) (३) निबन्ध (उच्च स्तर के किसी धार्मिक या राजनीतिक विषय पर)।

डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए०, डी० लिट्
परीक्षा मन्त्री, अजमेर

'उर्दू आर्यावर्त'

नयी चाल।

अभी मुझे उर्दू का एक मासिक पत्र आर्यावत देखने को मिला। उसके सम्पादक कोई मियाँ सिकन्दर हैं, और मुद्रक है फारूकी प्रेस, लालकुआँ, दहली। आर्यावर्त का सम्पादक एक मुसलमान को देखकर मुझे प्रसन्नता हुई कि इस देश क गौरवमय नाम तथा उच्च सस्कृति को अपनाने वाला कोइ मुमलमान इस युग में है और उसका विदेशी अरबी, ईरानी, तूरानी, मुगल या यवनपन दूर होकर वह पूर्ण स्वदेशी बन गया। परन्तु उसके टाइ टल पेज पर ही चुम्बन करते हुए स्त्री-पुरुषो क दृश्य देखकर मुझे विचार बदलने पड़े। वस्तुत' मियाँ सिकन्दर भोगविलास तथा अय्याशी को आर्यावत का आधार बनाकर चले है और उसमें अति निम्न कोटि की सामग्री संचित की है और उसके लिये नाम चुना हे 'आर्यावत'। एक ओर पाकिस्तानी मनोवृत्ति के ये मुसलमान जहाँ अलीगढ़ यूनवर्सिटी क मैगजीन में सोमनाथ-मन्दिर का प्रश्न उठाकर हिन्दुओं की धामिक भावनाओं को खुल्लमखुल्ला चोट पहुँचाते हुए भी लाखों रुपये की सरकारी सहायता लेते है, वहाँ इस "सेकुलर स्टेट' म सन् ५१ से इस नया पत्रिका को निकाल कर उन्होंने अपनी क्षुद्रता का और भी अच्छा परिचय दिया है। समस्त आर्य हिन्दू सस्थाओ से अनुरोध है कि वे अपने यहाँ से देहलीक चीफ कमिश्नर के पास उक्त पत्र को बन्द कराने का प्रस्ताव पास करके भेजें तथा आन्दोलन करें।

ब्र० द० स्नातक

एम० ए०, शास्त्री, आ० शि०

गढ़वाल के आर्य पुरुषो को सूचना

खेद है कि श्री नन्दराम, भगतराम और जियानन्दजी आदि कुछ व्यक्तियो ने गढवाल में कोली राजपूत नाम की एक जातीय सभा खोल ली है और अब वे उसी में कार्य करते हैं। इससे आर्यसमाज के कार्य और प्रतिष्ठा को हानि पहुँच रही है। वैदिक-धर्म व आर्यसमाज के मत के अनुसार इस प्रकार जातीय सभा निर्माण करना व उनमें भाग लेना सर्वथा अनुचित है। यह भी ज्ञात हुआ है कि उक्त महानुभावों ने गढ़वाल-बिजनौर प्रान्त की एक गढ़वाल उपसभा बनाली है जो अवैधानिक है। आर्य प्रतिनिधिसभा यू० पी० से सम्मत गढवाल-बिजनौर की उपसभा बहुत समय पूर्व से कार्य कर रही है जिसके प्रधान श्री मगनसिंह वकील और मन्त्री श्री रघुवरदयालु आर्य हैं। यही उपसभा प्रमाणित और वैधानिक है, अतः इसके अतरिक्त अन्य किसी गढ़वाल की सभा को सहयोग नहीं देना चाहिये, और इस प्रकार के कार्य करने वाले व्यक्तियो से सावधान रहना चाहिये।

धर्मपाल विद्यालङ्कार
सभा-मन्त्री

बाल-विनोद

हम आर्य हैं

श्री बुद्धदेव वैसिया

ऋषियों की हम सन्तान हैं,
शुचि वेद अपना गान है।
निर्भर हमीं पर आज भी-
निज देश का सम्मान है।
है प्राप्त यह गौरव हमें-
"हम जगत् के आचार्य हैं।"
हम आर्य हैं, हम आर्य हैं।
हम सभ्यता की खान हैं,
आर्यत्व के अभिमान हैं,
जग को जगाने का हमें ही-
प्राप्त शुभ वरदान है।
करते न हम भ्रम-भूल से भी
कभी अनुचित काय है।
हम आर्य हैं, हम आर्य हैं।
हम मनुजता के त्राण हैं,
दनुजत्व को विष-बाण हैं,
ध्रुव ध्येय जीवन का हमारे-
विश्व का कल्याण है।
हमको बनाना आर्य उनको-
जो कि शेष अनार्य हैं।
हम आर्य हैं, हम आर्य हैं।

—

ज्ञानूदादा के नाम पत्र

हमारे एक रिश्तेदार हैं। पिताजी कहते हैं इनसे मामा कहो, और वे कहते हैं, मुझसे फूफा कहो। अब आप बताइये, मैं उनसे क्या कहूँ।

सुरेन्द्रकुमार आर्य
चन्दौसी

[भाई, घरेलू मामलों में ज्ञानू दादा को पंच न बनाओ। वैसे भी तुम्हारे इस प्रश्न का उत्तर देना ज्ञानू दादा के लिए टेढ़ी खीर है। हाँ हम एक युक्ति बता सकते हैं। तुम अपना बुआजी से इस समस्याको सुलझवाओ। वही ठीक-ठीक बता सकेंगी कि उन रिश्तेदार से तुम्हें क्या कहना चाहिए।]

नवीन गणित-पहेली

सौ रुपयों को सात थैलियोंमें इस प्रकार भरो कि एक से लेकर सौ रुपये तक देनेके लिए थैलियों को खोलना न पड़े। भरी की भरी थैलियां ही उठाकर दी जा सकें। थैलियों में रुपयों की संख्या पूरी होनी चाहिए, भिन्न में न हो।

उत्तर २५ जुलाई तक ज्ञानू-दादा के पास आ जाने चाहिएँ, जिससे सही उत्तरदाताओं के नाम अगस्त के पहले अंक में छाप जा सकें।

पहेली प्रेषक
जगदीश्वरदयालसिंह आर्य
बहराइच

—

बाल-जगत्

हमारे पास बालसाथियों की भेजी हुई कुछ शब्द-पहेलियाँ रक्खी हैं। उनमें अनेक भूलें हैं। उदाहरण के रूप में एक पहेली का एक पद है—

'वीर में हूँ, वीरता में नहीं'

बालबन्धु देखगे वीर में जो दो अक्षर है, वही ज्यों के त्यों वीरता में भी मौजूद हैं फिर 'वीर में हूं, वीरता में नहीं' कहना कहाँ ठीक बनता है। इसी प्रकार अन्य पहेलियाँ भी दोष-पूर्ण हैं। बाल साथी जो पहेली रचें उसमें छन्द और तुक के साथ इन बातों का भी पूरा-पूरा ध्यान रक्खें।

७ मई के गणित-प्रश्न का उत्तर

बीच की टोली में १८ चिड़ियाँ, आगे वाला में बीच वाली की ड्योढ़ी अर्थात् २७ चिड़ियाँ हैं और पीछे वाली में आगे वाली की दुगुनी, अर्थात् ५४ चिड़ियाँ। ये कुल ९९ हुईं। पूछने वाली चिड़िया भी इन में मिल जाय, तो सब १०० हो जावें।

सही उत्तर-दाताओं के नाम—

वीरेन्द्रकुमार भार्गव, नरेन्द्र प्रतापसिंह, कृपाशङ्कर रसड़ा, घनसीराम बोदिया, सत्यकान्तसिंह गौड़, जूहीराम आर्य, जगदीश्वर-दयालसिंह आय, राजेन्द्रप्रकाश गहलौत, वीरेन्द्रकुमार आर्य्य, शिवप्रेमचन्द्र आर्य, नरेन्द्रकुमार अग्रवाल, रवीन्द्रसिंह यादव, सतीशप्रकाश गुप्त, विपिनविहारी आर्य, वीरेन्द्रदत्त आय, ओम-प्रकाश आर्य, रमाकान्त आर्य, कन्हैयालाल, वेदप्रकाश, सतीश आर्य, ब्रह्मचारी धर्मेन्द्र टुड्डू, तुलसी टुड्डू, वशिष्ठ मुनि, सच्चिदानन्दगिरि गोस्वामी, रामकुमार आर्य, अलख आर्य, देवेन्द्रनाथ सिनहा, कुमारी प्रेमलता, महेन्द्र दीक्षित, गिरिजाशंकर सकसेना, महेशचन्द्र कपूर, वृन्दावनलाल गुप्त, राजरानी, ज्ञानेन्द्र वर्मा, सोमनाथ गर्ग, विष्णुदेव आर्य, चन्द्रकान्ता श्रीवास्तव।

— —

सभा मन्त्री का प्रोग्राम

निम्न समाजों को सूचित किया जाता है कि उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री प० धर्मपाल विद्यालंकारजी जुलाई मास के दूसरे सप्ताह में निम्नलिखित स्थानों में पहुँच रहे हैं। उनके पहुँचने पर समाज का निरीक्षण करावें और वेद-प्रचारार्थ धन द्वारा सहायता करें।

(१) बाराबंकी, (२) रुपौली, (३) टांडा, (४) फैजाबाद, (५) सुलतानपुर, (६) अमेठी, (७) प्रतापगढ़, (८) रायबरेली।

भृगुदत्त तिवारी, सभा-उपमन्त्री

सभा की सूचना

सभा के कार्यों को सुव्यवस्थित रूप से चलाने के लिए सभा के निम्नस्थ विभागों के सहायक अधिष्ठाता नियुक्त किए गए हैं, और उन्हें काय करने का अधिकार दिया गया है।

१—शिक्षा-विभाग	श्री देवाप्रसाद जौहरीजी
२—अनाथ रक्षा-विभाग	श्री बनारसीलालजी आर्य नजीबाबाद
३—शुद्धि दलितोद्धार विभाग	श्री प० अमरसिंहजी आर्यपथिक अगनियां
४—जातिभेद निवारक, आर्यपरिवार संघ विभाग	श्री प्रीतमलालजी (अलीगढ़)
५—आर्यवीर दल	श्री स्वामी दिव्यानन्द सरस्वतीजी, झांसी
६—भूसम्पत्ति-विभाग	श्री देवीप्रसाद जौहरीजी

निरीक्षकों की नियुक्ति

उत्तर प्रदेशीय आर्यसमाजों को सूचित किया जाता है कि नवीन निरीक्षकों की नियुक्ति निम्न प्रकार की गयी है। उनके पहुचने पर निरीक्षण करावें और सभा का प्राप्तव्य धन दें।

१—तहसील अतरौली श्री रामस्वरूप वर्मा साधु आश्रम अलीगढ़
२—तहसील मवानाकलां श्री प्रियव्रत शास्त्रीजी मवाना (मेरठ)
३—तहसील मुरादाबाद सहायक श्री वैद्य आत्मस्वरूपजी आयुर्वेद शिरोमणि
४—तहसील मुरादाबाद सहायक श्री रामनिवासजी, मुरादाबाद
५—तहसील जौनपुर सहायक श्री रामावतारजी आर्य जौनपुर
६—तहसील फतेहपुर सहायक श्री राजारामजी फतेहपुर
७—तहसील खेरी सहायक श्री यज्ञदत्त शर्माजी गोला

धर्मपाल विद्यालंकार सभा मन्त्री

———

आर्यवीर दल शिक्षण-शिविर

उपर्युक्त शिविर १५ से ३० जून तक देहरादून में श्री ओम-प्रकाश जी पुरुषार्थी की अध्यक्षता में लगा जिसमें ५० आर्यवीरों को शारीरिक और बौद्धिक विकास सम्बन्धी शिक्षा दी गई। शिविर में पजाब, पेपसू, उत्तर प्रदेश, देहली प्रान्त, हिमाचल प्रदेश इत्यादि स्थानों के आर्य वीरों ने भाग लिया। दीक्षान्त भाषण आचार्य बृहस्पति शास्त्री द्वारा दिया गया। शिविर की समाप्ति पर सभी वीरों ने प्रतिज्ञा की कि वे शुद्ध और पवित्र जीवन व्यतीत करते हुए भारत में सुख और शान्ति स्थापित करने का प्रयत्न करेंगे। ठाकुरदत्त शर्मा 'अमृत-धारा' प्रधान आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब तथा अन्य आर्य विद्वानों ने समय-समय पर शिविर में पधार कर अपने उपदेशों द्वारा आर्यवीरों को प्रोत्साहित किया। ३० जून को रात्रि के ८ बजे आर्यसमाज-मन्दिर में श्री महन्त इन्दिरेशचरण दासजीको अध्यक्षता में एक बृहद् आर्यवीर - सम्मेलन हुआ, जिसमें श्री ओमप्रकाशजी पुरुषार्थी तथा श्री ब्रह्मचारी उपर्बुधजी के भाषण हुए। पुरुषार्थीजी को आर्यवीर-दल देहरादून द्वारा अभिनन्दन-पत्र भेंट किया गया।

मेधातिथि

हर स्त्री मां बन सकती है
एक बच्चे की कीमत सिर्फ
१५।=)

६ दिन में शर्तिया गर्भ की गारंटी बेऔलाद माता-बहिनों के लिए स्वर्ण अवसर। १ बांझ (बन्ध्या) २—काकवन्ध्या यानी १-२ औलाद होकर बन्द होजाना, ३—मृतवत्सा यानी सन्तान हो होकर मर जाना या ४—कन्या ही कन्या होना। उपरोक्त सब दोष निवारण के लिए आज ही परीक्षा करें।

नपुंसकता

केवल एक दिन में दूर

चाहे जैसा सुस्त, नाकारा, कमजोर नपुंसक (नामर्द) हो गया हो सिर्फ एक दिन में बिना तकलीफ नपुंसकता (नामर्दी) दूर की गारण्टी। लाभ न होने पर कीमत वापस। आर्डर के साथ एडवान्स और उत्तर के लिए जवाबी पत्र आना लाजिमी। मूल्य १२॥) डाक व्यय अलग।

राजवैद्य डा० जौहरी
कृष्ण अस्पताल, हरदोई, (यू० पी०)

आपकी दैनिक आवश्यकता

शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित—जगत् प्रसिद्ध

शुद्ध सुगंधित हवन-सामग्री

नमूना मुफ्त मंगाकर अवश्य परीक्षा करिये

पता—सुन्दरलाल रामसेवक शर्मा
शुद्ध सुगन्धित हवन सामग्री भण्डार
मु० पो० असौली (फतेहपुर)

कन्या गुरुकुल हरिद्वार की कतिपय विशेषताएं

१—स्वास्थ्यप्रद रमणीक स्थानपर सुविशाल ब्रह्मचर्याश्रम।
२—सर्वथा निःशुल्क शिक्षा।
३—विदुषी देवियों द्वारा उत्तरदायित्वपूर्ण नियन्त्रण।
४—पोषणादि व्यय अत्यल्प।
५—सम्पूर्ण प्रान्तों की कन्याओं का एकत्र निवास।
६—हिन्दी-संस्कृत के द्वारा वैदिकधर्म की परमोच्च शिक्षा।
७—समस्त गृहकार्यों के शिक्षण की सुव्यवस्था।
८—माननीय श्रीमान् नरहरि विष्णुजी गाडगिल केन्द्रीय मंत्री भारत सरकार द्वारा उद्घाटित आयुर्वेद विभाग में आठो अंगो सहित आयुर्वेद की बी (B) क्लास रजिस्ट्रेशन योग्यता युक्त परीक्षाओं की पूर्ण व्यवस्था।
९—सम्पूर्ण आयुर्वेदिक ओषधियों के निर्माण की क्रियात्मक शिक्षा।
१०—कन्याओं को सबल एवं उत्साह सम्पन्न स्वावलम्बी बनाने के लिए लाठी, तलवार, कटार, डम्बल, जमनास्टिक ओम् आदि चमत्कार पूर्ण व्यायामों का नियमित सुप्रबन्ध।
११—जीवन को शुद्ध पवित्र आस्तिक बनाने के लिए सायंप्रातः सन्ध्योपासना एवं यज्ञ का नैत्यिक अभ्यास।

नोट—प्रवेश के लिये ३० जून तक शीघ्र लिखें।

आचार्या चन्द्रावतीदेवी शास्त्री, प्रभाकर, वैद्यविशारद

श्रीमद्भगवद्गीता

पुरषार्थबोधिनी टीका

ले० प० सातवलेकर। इस १००० पृष्ठों के विशाल ग्रन्थ में (१) अर्जुन के विषाद का कारण, (२) विश्वरूप दर्शन का रहस्य, (३) गीतोपदेश के साथ वेदोपदेश की तुलना और (४) गीतोपदेश को व्यवहार में लाने का अनुष्ठान करने की रीति बताई है। किसी अन्य टीका में ये स्पष्टीकरण नहीं मिलेंगे। गीतोपदेश से राज्य-शासन कैसे सफल हो सकता है, यह इसी टीका में पाठक देखेंगे। मूल्य १५), डाक व्यय १॥) मूल्य पेशगी म० आ० द्वारा १६॥) भेजिये।

स्वाध्याय-मण्डल, आनन्दाश्रम
किला-पारडी. (जि० सूरत)

विज्ञापन

आवश्यकता है—माध्यमिक वर्गों (Middle Classes) तक पढ़ाने के लिये दो योग्य और अनुभवी अध्यापकों की, एक हिन्दी और गणित पढ़ाने के लिये, और दूसरे इतिहास तथा भूगोल पढ़ाने के लिये। इसके अतिरिक्त एक अनुभवी और योग्य लेखक चाहिये। जो अध्यापक और लेखक कम से कम ५ वर्षों तक गुरुकुल अथवा गुरुकुल जैसी किसी आदर्श संस्था में काम कर चुके हों उनको विशेषता दी जायगी। उन्हें आश्रमी जीवन बिताना होगा। मन्त्री, सर्वोदय गुरुकुल आश्रम, रामकृष्ण नगर बेरगनिया मुजफ्फरपुर के पते से १० जुलाई १९५१ तक प्रार्थना-पत्र भेजें।

बादाम रोगन

सौ प्रतिशत शुद्ध और प्रामाणिक

खाने और लगाने के लिये।

नमूना	॥।=)
छोटी शीशी	१॥।)
बड़ी शीशी	६॥)

आज ही आर्डर दीजिये।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरद्वार)
सोल एजेन्सी, कुलदीपचन्द,
सत्यपाल सामा रावतपाड़ा आगरा,

उत्कृष्ट पुस्तकें

१ उपनिषद् प्रकाश	३॥)
२ दृष्टांतसागर स० भाग १,	३)
३ दृष्टांतसागर स० भाग २,	२।)
४ घरलूविज्ञान सजिल्द	२॥)
५ वेदरहस्य	०)
६ वेदान्त दर्शन (स्व० दर्शना०)	३)
७ सत्यनारायण की कथा	॥,
८ आसमस्क्र	।=)
६ प्राणायाम विधि	।)
१० धर्मशिक्षा	=)
११ राष्ट्रीय तराने	।=)
१२ कल्याण मार्ग	१)
१३ छान्दोग्य उपनिषद्	२।)
१४ चाणक्य नीति	॥।)
१५ मुसाफिर भजनावली	१।)
१६ जनेऊ १।) हवनसामग्री	१॥)

सेर १७ हवनकुण्ड लोहा १॥) तांबा ३)।

इसके अलावा हर प्रकार की पुस्तकों के लिए बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये। कमीशन काफी दिया जाता है। अपना पता और डाकखाना साफ लिखियेगा।

श्यामलाल बलदेव भार्गव
आर्य-पुस्तकालय बरेली

श्री जगदीश भूषण कवि

संगीताचार्य ग्रामोफोन सिंगर आर्य भजनोपदेशक को वार्षिकोत्सवों, विवाहों, पर्वों, शुभसंस्कारों पर गायन, कथा तथा प्रचार के लिये याद करें।

पता—मुहल्ला गुढ़्याई, फोन नं० १५३, शाहदरा देहली।

शान्ति सुधा

मुनव्वार पागल से लेकर दौरे पड़ने तक के लिये पहली खुराक से ही शर्तिया फायदा होता है डाक्टरों वैद्यों हकीमों द्वारा आजमाई गई

मूल्य ३० खुराक ... डाक खर्च सहित

गुरुकुल स्नातक औषधालय पो० रुड़की जि० सहारनपुर।

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ओ३म्

आर्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक—आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ
आगरा, १२ जुलाई १९५१

वन-वैभव

श्री हरिशङ्कर शर्मा

अति शान्त भाव से खड़े हुए
तप-निष्ठ, योगी, यति, ज्ञानी हो
तुम मूक, मौन, अविचल अवाक्
अपनी कह रहे कहानी हो

तुम गुल्म, लता, तरु, पुंज-रूप
सब जीवों के हित साधक हो
तुम वीतराग, विश्रुत वदान्य
निष्काम कर्म आराधक हो

सुन्दर सुहावनी हरियाली
मन हरती—प्रमुदित करती है
वन विभुता, शुचिता, श्री-सुषमा
नित हर्ष हृदय में भरती है

विहंगों के वृन्द बैठ तुम पर
कलरव करते, गुण गाते हैं
कुछ रैन-बसेरा लेते हैं
कुछ नियमित नीड़ बनाते हैं

तुम सुख-दुख अनुभव करते हो
तुम कृश—पृथु, रोगी होते हो
तुम खाते हो, तुम पीते हो—
तुम जगते हो, तुम सोते हो

तुम बेला, जुही, चमेली हो
चम्पा, गुलाब, गुल की लड़ियाँ
केवड़ा, बकुल, रजनीगन्धा—
सुन्दर सरोज की पखड़ियाँ

तुम जड़ी-बूटियाँ, कन्द-मूल
रस, ओषधि, प्राण प्रदायक हो
अङ्गों के आवश्यक अवयव-
शाखों के सबल सहायक हो

तुम हो वसन्त के रम्य राग
तुम ही वसन्त के वैभव हो
तुम प्रकृति परी के रंग-रूप
तुम सुन्दरता, तुम सौरभ हो

तुम सारंगी, वीणा, सितार
तुम तबला, ढोल, पखावज में
डमरू, इकतारा, मुरली में—
करताल, कमानी में—गज में

तुम से ले बंसी, बंसीधर
धर अधर मधुर ध्वनि गाते थे
चर-अचर विमोहित होते थे
सुख पाते थे—हरषाते थे

पट-अन्न दान दे दे कर तुम
तन ढकते, भूख मिटाते हो
अपना वैभव—अपनी विभूति—
यों हाथोंहाथ लुटाते हो

पत्ते-पत्तियाँ, सींक, तिनके
कलियां फलियाँ उपजाते हो
शोभा से वन भर देते हो
सुरभित घर नगर बनाते हो

मधु की महिमा पर मुग्ध विश्व
तरु, तुमही से रस पाता है
पाकर वसुधा का सुधा स्रोत—
जन जन कृतार्थ हो जाता है

इन रंग-बिरंगे रंगों की
छवि छाया तुम्हीं दिखाते हो
रग-रग में रंग जमाते हो—
तुम होली-फाग मचाते हो

तीखे, कटु, अम्ल, कषाय तुम्हीं
मिसरी, गुलकन्द, मिठाई हो
तुम चाय, मसाले मेवा हो
रोटी, शर्बत, ठंडाई हो

तुम स्नेह रूप बन बत्ती से—
नित प्रणय भाव दरसाते हो
तम-तोम हृदय का छेद-बेध—
जल-जल प्रकाश फैलाते हो

तुम चरखा, करघा खादी से—
भारत की भक्ति सिखाते हो
अति उच्च तिरंगे झण्डे में—
बन राष्ट्र-भाव लहराते हो

दे प्राण प्रदायक प्राण वायु—
विष-वायु स्वयम् खा लेते हो
यों जगती-तल के जीवों को—
तरु प्राण दान तुम देते हो

वन-उपवन में वर्षा जल को
तुम रोक थाम कर लेते हो
पृथिवी के पोषक तत्वों को—
यों व्यर्थ न बहने देते हो

तुम जलाघात से पृथिवी की—
दृढ़ देह न कटने देते हो
उस मां वसुन्धरा के तन की
तरु, शक्ति न घटने देते हो

तुम से नदियाँ संयम में रह
मर्यादाहीन न होती हैं
बेढब बाढ़ों में बह-बहकर
जल-जीवन व्यर्थ न खोती हैं

तरुहीन हुआ जो भूमि-भाग
मरुभूमि वहीं बन जाता है
उड़ती है धूल वनस्पति का
अंकुर न फूटने पाता है

तरु, उगो न यदि जगतीतल पर
तो जीव नहीं जी सकते हैं
फल फूल, पट अन्न असम्भव हैं
घी-दूध न खा-पी सकते हैं

तुम शाख शाख पर लाख लाद
प्रभुता-प्रमाद दरसाते हो
तन क्षीण, दीन धन-हीनों को—
तरुवर, लखपती बनाते हो

जल पर जहाज बन तरते हो
बन यान-विमान विचरते हो
फर्नीचर से घर भरते हो
हल खेती-क्यारी करते हो

तरु-कंटक सखा, हितैषी हैं
संकट में सदा बचाते हैं
संरक्षक, वीर, सिपाही हैं—
कुसुमों का कोष रखाते हैं

तुम शीत, ताप, वर्षा, तुषार
नत मस्तक हो सह लेते हो
असहाय अरक्षित जीवों को
अपनाते आश्रय देते हो

पत्थर ईंटों की चोटें खा
प्रतिफल में फल बरसाते हो
तुम हिंसाहीन भावना का—
सुखदायक दृश्य दिखाते हो

खारी भारी पानी पीकर
मधुमय रसधार पिलाते हो
रूखा-सूखा खुद खाते हो
सबको फल फली खिलाते हो

तुम खाद-रूप मिल मिट्टी में
निर्बल थल में बल लाते हो
अपना अस्तित्व मिटाकर तुम
प्यारा परिवार बढ़ाते हो

भगवान राम ने राज त्याग
तुमको आवास बनाया था
श्रीकृष्णचन्द्र ने कुंज रूप
तुमको सप्रेम अपनाया था

तरु, बैठ तुम्हारी छाया में
मुनि गौतम बुद्ध कहाये थे
खा-खा कर पत्ते गिरिजा ने
पंचानन से पति पाये थे

अपहृता सती सीताजी पर
जब क्रूर कष्ट ग्रह आया था
बन कर अशोक तरु, तुमने तब
दुखिया का शोक मिटाया था

तुम शकुन्तला के प्रिय परिजन
ऋषि-मुनियों के वर बालक हो
गति, मति, संस्कृति के संचालक
तुम प्राणिमात्र प्रतिपालक हो

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०), एक प्रति- तीन आने

सम्पादक : हरिशङ्कर शर्मा

वर्ष—५२
अङ्क—२[illegible]

ऋषि वाल्मीकि की प्रतिभा ने
प्रेरणा तुम्ही से पाई थी
कवि कालिदास ने काव्य-कला
तरु तुमही में छिटकाई थी
तुलसी, रवि, सूर रमे तुम में
गुरु गांधी ने गुण-गान किया
मुनियो ने शीतल छाया में
मानव को ज्ञान प्रदान किया
घिस-पिस कर भी सौरभ देते
तुम यज्ञाहुति बन जाते हो
इस त्याग-तपस्या के कारण
मस्तक पर आसन पाते हो

तुम देवों या नरदेवों पर
बन पत्र-पुष्प चढ़ जाते हो
मालाओं में छिद-विध कर भी
ग्रीवा कर विभव बढ़ाते हो
बनकर कपाट-पट प्रहरी से
जन-धन की रक्षा करते हो
मंजूषो में बहुमूल्य वस्तु
मणि द्रव्य धरोहर धरते हो
अन्धे लगड़ों की लकड़ी हो
अबलो के सबल सहारे हो

तुम पत्र, लेखनी पुस्तक हो
तुम ज्ञानाधार हमारे हो
झंझा के झोको-झटको से
तुम झूम-झूम झुक जाते हो
नय विनय, त्याग-तप, सयम से
घर-घर में पूजा पाते हो
जलकर गर्मी प्रकाश देते
भोजन, पय, पेय पकाते हो
तुम वायु विशुद्ध बनाते हो
बादल को बल पहुँचाते हो

तुम चिता नग्न मृत दहो भी
क्षण-भर में गति करने वाले
जौहर बन राजपुत्रियों में
जौहर-ज्वाला भरने वाले
लेकर कुठार काटा शरीर
फिर छिन्न-भिन्न प्रत्यंग किया
आतप में त्रस्त किया तुमको
बोटी-बोटी को जला दिया
पर धन्य-धन्य हे कर्मवीर!
कर्त्तव्य कर्म में मग्न रहे
सर्वस्व समर्पित करके भी
हित-साधन में संलग्न रहे

स्वराज्य या परराज्य ?

आचार्य विनोबा भावे

कुछ लोगो ने पूछा कि स्वराज्य आया है फिर भी हम कोई खास फर्क नहीं देखते हैं। मुझे यह सुनकर आश्चर्य नहीं हुआ। पहले के जमाने में भी राज्यो के बदल होते थे। एक राज्य जाता था, दूसरा आता था। लेकिन उससे प्रजा में कोई फर्क नहीं होता था। तो प्रजा में कोई फर्क हुए बगैर जो राज्य आता है वह स्वराज्य ही नहीं कहाता। वह परराज्य है, चाहे उसको चलाने वाले अपने लोग ही क्यों न हो। मेरी तो व्याख्या यह है कि जहां स्वराज्य होता है वहां लोगों में सद्गुण होते हैं। और जहां स्वराज्य नहीं होता वहां दुर्गुण होते है। गोरी चमड़ी वाले लोग गए और काली चमड़ी वाले लोग आये इससे स्वराज्य नहीं बनता। अगर हमको यह अनुभव आता है कि पहलेसे हमारे दुर्गुण कम हुए हैं, तो स्वराज्य आया ऐसा समझ सकते हैं। अगर वैसा अनुभव नहीं आता है और चार साल पहले जिन दुर्गुणों में हम थे वे अब भी कायम है, तो स्वराज्य हमें नहीं मिला है-ऐसा समझना चाहिए।

[छठे पृष्ठ का शेष]

दयानन्द स्कूल नाम होता तो कम से कम ऋषि का नाम तो याद होना था। उस दिन मैंने सबको पत्र लिखा कि डी० ए० वी० शब्द निकाल दो, दयानन्द कालेज या दयानन्द स्कूल नाम रक्खो। परन्तु रूढ़ियां तो रूढ़ियां हैं।

एषोधमः सनातनः। यह न नादानों से छूटती है न विद्वानों से। आर्यों से हिन्दू शब्द कहाँ छूटा ? और क्या आप समझते हैं कि आर्यमित्र का आन्दोलन सफल होगा ? कदापि नहीं। नक्कारखाने में तूती की आवाज कौन सुनेगा। यह वह समा तो है नहीं जो सर्टीफिकेटजबर्ग को तुरन्त ही लेनिनग्रेड करदें। आर्यसमाजी मचों से तो रूढ़िवाद का खण्डन करना है, परन्तु है यह बड़ा रूढ़ि प्रिय। आर्यसमाज में पचासों गलतफहमियां (भ्रान्तियां) हो गई, परन्तु वे चलाई जा रही हैं। क्योकि वे 'नक्शे कल-हजर' (पत्थर की लकीर) बन गई हैं। क्या कहें कुछ कहा नहीं जाता और चुप भी रहा नहीं जाता।

गंगाप्रसाद उपाध्याय

साहित्य-सौरभ

हिन्दी-पर्वत

श्री डाक्टर रा० स० लाल

आदर्श बन्दीगृह लखनऊ से प्रकाशित "प्रभात" के वर्ष २ संख्या १ में श्रीरामगोपालसिंह बन्दी द्वारा लिखित 'हिन्दी पर्वत' शीर्षक एक लेख छपा है। प्रभात का सम्पादन सम्भवतः आदर्श जेल लखनऊ के प्रधानाध्यक्ष डाक्टर श्री अ० स० राज द्वारा होता है। 'सम्भवतः' इसलिये कि प्रभात के इस अङ्क में सम्पादक, प्रकाशक और मुद्रक का नाम कहीं नहीं है और न पृष्ठ-संख्या ही दी है। 'प्रभात' की प्रतियाँ सभी जेलो में भेजी जाती हैं। लेखक महोदय ने हिन्दी-पर्वत में हिन्दी-प्रेमी के मुंह से निम्नांकित शब्द कहलाये हैं:—

इक्के = द्विचक्र अश्वरथ

स्टेशन = लोहपथगामिनी विश्राम-स्थल।

रेलगार्ड = वाष्पवाहक यान।

टिकट = मार्ग व्यय-दान पत्रिका।

तूफान मेल = झंझावात आदि।

लेख का कुछ नमूना देखिये:—

हिन्दी प्रेमी—(बुकिंग क्लर्क से) हे यात्रा प्रमाणपत्र दायक महोदय कृपया कर्णपुर का एक यात्रा प्रमाणपत्र देने का असीम कष्ट करें।

बुकिंग क्लर्क—(देखने लगता है) क्या कहते हो ? कर्णपुर किस लाइन का स्टेशन है ?

हिन्दी-प्रेमी—हे महाशय, कर्णपुर पूर्वीय भारतीय लोहपथ-गामिनी का विशाल विश्राम केन्द्रस्थल है। आप इतने विशाल केन्द्रस्थल को नहीं जानते ? यात्राप्रमाण-पत्रदायक महोदय कृपया आप शीघ्र लज्जा को ग्रहण करें

एक देहाती—ए बाबू साहब, हमरा टिकसवा देत्या। ई का जना का बकवत अहैं। रंगरेजनौ के चचा दीखत अहैं।

हिन्दी प्रेमी—हे ग्रामीण, मैं काशी की पवित्र भूमि पर विशुद्ध हिन्दी का प्रयोग कर रहा हूँ। आंग्ल भाषा का प्रयोग करके मैं भगवान् विश्वनाथके इस पुण्य स्थल को अपवित्र नहीं करना चाहता।

देहाती—हमका लेइलेय देत्या टिकसवा।

बुकिंग क्लर्क—(मुँह ताकते हुए) कर्णपुर ई० आई० आर० का कोई भी स्टेशन नहीं है।

देहाती—(टिकट लेकर) ल्या अब रंगरेजन के नाती, लब बूका अंगरेजी।

हिन्दी प्रेमी महाशयजी आधुनिक कानपुर कर्णपुर का ही अपभ्रंश है।

बुकिंग क्लर्क—तो क्यों नहीं कहते। आपने कान का कर्ण कर दिया है। जनाब हिन्दुस्तानी बोला कीजिये (टिकिट देता है)

(टिकिट लेने के बाद एक पान वाले से)

हि० प्रे०—हे अवरुद्ध स्थल पर ताम्बूल तथा तमाल पूँगीफल शाखा विचूर्ण विक्रेता आप का ताम्बूल यदि विशुद्ध हो तो कृपा कर मुझे द्वितीय मुद्राओं का ताम्बूल देने का कष्ट करें। (पानवाला अनसुना करके चला जाता है)

हि० प्रे०—(फल वाले से) प्रति शपरी रसाल का मूल्योच्चारण करें।

फलवाला—बाबूजी क्या कुछ नशे में बातचीत कर रहे हो ?

हि० प्रे०—(एक कुली से) हे भारवाहक क्या झंझावात लोहपथगामिनी इसी अवरुद्ध स्थल पर गति शून्य होगी। इत्यादि

समझ में नहीं आता इस प्रकार की हिन्दी कहाँ बोली जाती है और कौन बोलता है या इस प्रकार की हिन्दी के प्रचार करने का उद्योग कौन कर रहा है। इस प्रकार के 'हिन्दी-पर्वत' रचकर हिन्दुस्तानी की मनोरम घाटी कोई नहीं बना सकता। रहे देहाती वे यदि पर्वत नहीं चढ़ सकते तो घाटी भी नहीं पार कर सकते। लेखक महोदय को इतनी साधारण बात का भी ज्ञान नहीं है कि झंझावात (तूफान मेल) 'काशी की पवित्र' भूमि से होकर नहीं जाती।

खेद इस बात का है कि हिन्दुस्तानी के प्रचारकों के इस प्रकार के लेख उत्तरप्रदेशीय सरकार के आदर्श बन्दीगृह द्वारा

(शेष इसी पृष्ठ के दूसरे का० पर)

प्रकाशित 'प्रभात' में स्थान पाते हैं। जबकि उत्तर प्रदेशीय सरकार हिन्दी को राजभाषा घोषित कर चुकी है, और प्रभात लखनऊ से प्रकाशित होता है।

सोम त्वं नो वृधे भव

आर्यमित्र

आगरा, आषाढ़ शुक्ला ८ संवत् २००८ वि० गुरुवार ता० १२ जौलाई १९५१
दयानन्दाब्द १२७ सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५१

गूहता गुह्यं तमो वि यात विश्वमत्रिणम्।
ज्योतिष्कर्ता यदुश्मसि ॥ ऋ० १।८६।१०

अज्ञान तिमिर को आओ दूर हटादें
अपस्वार्थ असुर को मिल जुल मार मिटादें
सद्भाव ज्ञान की ज्योति जग जगभर में
हो प्रेम प्रकाश नगर में, पुर में घर में

भ्रष्टाचार का अन्त कीजिये !

सार्वदेशिक सभा की योजना

आज पाठक इसी अङ्क में अन्यत्र सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा की एक योजना पढ़ें। जिसमें देश में फैले हुए भ्रष्टाचार का अन्त करने के लिए कुछ व्यावहारिक बातें बताई गई हैं। यह योजना अत्यन्त आवश्यक और समयोचित है। हम इसका स्वागत करते तथा चाहते हैं कि यह शीघ्रातिशीघ्र कार्यरूप में परिणत की जाय। यों तो सारे संसार में ही भयङ्कर भ्रष्टाचार फैला हुआ है परन्तु इस समय तो अपने घर, नगर, जिले, प्रान्त और देश से ही भ्रष्टाचार मिटाया जा सके तो बहुत बड़ी बात होगी। भ्रष्टाचार का पिता स्वार्थ और माता बेईमानी है। जब स्वार्थ से बुद्धि की भावना बेईमानी का रूप धारण कर लेती है, तभी भ्रष्टाचार का जन्म होता है। आवश्यकता स्वार्थ की भावना नष्ट करने की है। स्वार्थ की भी दो श्रेणियाँ हो सकती हैं, एक उचित स्वार्थ और दूसरा अनुचित स्वार्थ। उचित स्वार्थ के बिना तो संसार का कोई काम नहीं चलता परन्तु अनुचित स्वार्थ असन्तोष और भ्रष्टाचार का कारण बन जाता है। यह अनुचित स्वार्थ धन सम्पत्ति धरा धाम स्त्री पुरुष पद प्रभुता सभी से सम्बन्ध रखता है। इसको नष्ट करने के लिए हमें जनता में आस्तिकता धार्मिकता और सद्भावना का प्रचार करना होगा। इसके बिना जो उपाय किए जायेंगे अस्थिर और अस्थायी होंगे। सार्वदेशिक सभा के अधीन कितनी ही प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाएं हैं। इन सभाओं का निर्माण कई सहस्र आर्यसमाजों द्वारा हुआ है। हम समझते हैं, जितना सुन्दर और सुदृढ़ संघटन आर्यसमाज का है, उतना और किसी संस्था का नहीं परन्तु यह संघटन शिथिल है और इसी शिथिलता के कारण सार्वदेशिक सभा आर्यप्रतिनिधि सभाएं और आर्यसमाज समष्टि भी शिथिल हैं। भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलन उठाने के लिए सारी जनता को सतर्क और सचेत होना चाहिये। जिस प्रकार उसने हैदराबाद, सत्याग्रह अथवा अन्य ऐसे ही अवसरों पर असीम उत्साह दिखाया था उसी प्रकार अब भी दिखाने की आवश्यकता है। प्रत्येक आर्य और आर्यसमाज का कर्तव्य है कि वह सार्वदेशिक सभा की योजना लेकर कार्यक्षेत्र में कूद पड़े और रात दिन के निरन्तर उद्योग द्वारा भ्रष्टाचार के भूत का काला मुंह कर दे। यदि आर्यसमाज के उद्योग द्वारा यह महान् काम हो गया तो वह हजार एम० पी०-एम० एल० ए० और लाख एम० एल० सी० बनने की अपेक्षा कहीं बढ़ चढ़ कर होगा। वह राष्ट्र की सबसे बड़ी सेवा समझी जायगी, और उसका सारा श्रेय निस्सन्देह आर्यसमाज को मिलेगा।

काम करने की विधि यह है कि प्रत्येक जिला तथा तहसील और प्रत्येक छोटा-बड़ा नगर अपने अपने क्षेत्रों में काम करें। पहले अपने जीवन, अपने घर-परिवार और अपने पुर से भ्रष्टाचार दूर कर तब दूसरों के सामने जाय तो उसका बहुत बड़ा प्रभाव पड़ेगा। जो लोग विश्व को वैदिक धर्म की ध्वजा के नीचे लाने की घोषणा करते और स्वयं अपने आप और अपने परिवार को वैदिक धर्मी नहीं बना पाते उनकी वाणी में कुछ भी असर नहीं रहता। जितना निश्चित कार्यक्षेत्र होगा उतनी ही अधिक सफलता होगी। अपना अपना कार्यक्षेत्र निश्चित कीजिये और उसमें उष्ण उत्साहपूर्वक कूद पड़िये और प्रण कर लीजिये कि जब तक सफलता प्राप्त न होगी पीछे पग न हटायेंगे। निश्चय ही विजयश्री आपके साथ होगी।

'पुरोहित' का पद

प्रसिद्ध आर्यविद्वान् आचार्य श्री बृहस्पति शास्त्री वेदशिरोमणि, एम० ए० ने आर्यसमाजों में 'पुरोहित' नियत करने की ओर उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का ध्यान आकृष्ट किया है। आपका सुझाव है कि आर्यसमाज के नियमोपनियमों में अन्य पदाधिकारियों के साथ साथ एक पद पुरोहित का भी रखा जाय। उसका भी वार्षिक अथवा त्रैवार्षिक निर्वाचन हो। पुरोहित अपने समाज का 'सीनियर' उपप्रधान माना जाय। पुरोहित पद के लिए वह व्यक्ति खड़ा हो जो वेदादि शास्त्रों का विद्वान्, स्नातक अथवा किसी प्रमाणित संस्था में शिक्षा प्राप्त हो अथवा भारतवर्षीय आर्यकुमारपरिषद् का सिद्धान्त शास्त्री परीक्षा पास निष्पक्ष तथा सदाचारी हो। वर्ष में पचास प्रतिशत या कमसे कम पच्चीस प्रतिशत आर्यसदस्यों के घर पारिवारिक यज्ञ और संस्कार करावे। प्रस्ताव बड़ा उपयोगी और शीघ्र ही कार्यान्वित होने योग्य है। आशा है आर्य जनता इसका सबल समर्थन करेगी जिससे वह आर्यसमाज का उपनियम बन कर कार्यरूप में परिणत किया जा सके। पुरोहित का पद बहुत ऊंचा है। हमारी राय में उसका चुनाव सर्वसम्मति से होना चाहिए, यानी चुनाव के समय सब अधिकारी और अन्तरंग सदस्य एकमत होकर उसे चुनें। उसके 'सीनियर या जूनियर' उपप्रधान या और कोई अधिकारी होने की आवश्यकता नहीं, वह तो अन्तरंग सदस्य भी न रहना चाहिये क्योंकि वोट विभाजन के समय उसे कभी इस और कभी उस पक्ष में रहना पड़ेगा। जिस पुरोहित को सब लोग सर्वसम्मति से चुनेंगे उसकी प्रतिष्ठा तो सबसे अधिक होगी ही। पुरोहित को समाज के 'पोलिटिक्स' से सर्वथा पृथक् रहने की आवश्यकता है तभी उसकी मान मर्यादा अक्षुण्ण रह सकती है।

'मंगता पाठक'

पेट का भोजन अन्न और मस्तिष्क का भोजन साहित्य है। अन्न से शरीर का पोषण और विकास होता है और साहित्य से ज्ञान तथा विचारों की वृद्धि में सहायता मिलती है। अन्न मांग कर खाना अनुचित समझा जाता है परन्तु साहित्य मांगने में कोई हानि नहीं समझता। यात्रा करते समय ट्रेन में एक समाचारपत्र खरीद लीजिए, अन्य यात्री उस पर गिद्ध की तरह टूट पड़ते। चाय बिसकुट पान सुपारी और काफी में काफी व्यय कर डालेंगे परन्तु पत्र पत्रिका मांग कर ही पढ़ेंगे। उनके लिये एक दो या चार-छः आने खर्च करना अत्यन्त असह्य होगा। हम ऐसे लोगों को 'मंगता पाठक' कहते हैं। 'मंगता पाठक' इसी देश में आपको मिलेंगे दूसरे देशों में तो कभी किसी से मांग कर साहित्य पढ़ना अपमानजनक समझा जाता है। जब हम अन्न को मांग कर नहीं खाते तो साहित्य की भीख क्यों मांगें। यदि कहा जाय कि निर्धनता ऐसा करने को विवश करती है तो चाय, बिसकुट और चुरट, पान या सैर सिनेमा पर क्यों पैसे बर्बाद किये जाते हैं। उस समय निर्धनता कहां चली जाती है। जब कोई पुस्तक या पत्र स्वयम् पैसे खर्च करके खरीदे जाते हैं तो उनके अध्ययन में विशेष रुचि होती है, और साहित्य के प्रसार तथा प्रचार

में भी सहायता मिलती है। सबसे अधिक लाभ तो यह होता है कि 'मंगतापन' की कुटेव छूटती है, और हम सभ्य बनते हैं। किसी ने ठीक कहा है—"माँगन भलो न बाप को जो प्रभु राखे टेक"।

———

'आर्यमित्र' की 'स्वर्णजयन्ती'

गत वर्ष वृन्दावन-गुरुकुल-महोत्सव पर जिस समय प्रदेशीय अन्तरंग सभा ने मेरठ में आर्य-महासम्मेलन करने का प्रस्ताव पास किया तो उस समय हमने कहा था कि आर्य महासम्मेलन के साथ ही 'आर्यमित्र' की स्वर्णजयन्ती भी मनायी जानी चाहिए। राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री, प्रधान सार्वदेशिक सभा ने तो उसी अन्तरंग सभा में इस 'स्वर्णजयन्ती' की घोषणा भी करदी थी, अब आर्य महा-सम्मेलन की स्वागत-समिति के प्रधान मन्त्री कर्मवीर श्री कालीचरण आर्य ने 'आर्यमित्र' का 'स्वर्ण जयन्ती' समारोह मनाने की 'रूपरेखा' हमसे मांगी है, और वे बड़े उत्साह से इस उत्सव को मनाना चाहते हैं। 'आर्यमित्र' पचास वर्ष से अधिक आयु का हो गया। इसने बड़ी-बड़ी कठिनाइयां सहकर आर्यसमाज, वैदिकधर्म, देश, समाज और साहित्य की सेवा की है। वह एक संस्था के रूप में देश के सामने अटल, अचल और अडिग रहा है। हिन्दी संसार में केवल एक पत्र को छोड़ कर 'आर्यमित्र' सबसे अधिक पुराना है। हम चाहते हैं, 'मित्र' की महान् सेवाओं के उपलक्ष्य में उसकी स्वर्णजयन्ती बड़े समारोह पूर्वक मनायी जाय। इस अवसर पर उसका 'स्वर्णजयन्ती-अङ्क' भी प्रकाशित हो। यह साहित्य-समारोह सम्भव हो तो माननीय राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रप्रसाद महोदय की अध्यक्षता में मनाया जाय। देश के प्रसिद्ध पत्रकार और विद्वान् उसमें भाग लें और हो सके तो उसके पहले ही 'मित्र' के दैनिक और मासिक संस्करण भी प्रकाशित कर दिये जाय। हम चाहते हैं कि आर्यमित्र प्रेमी विचारशील साहित्यिक सज्जन इस स्वर्णजयन्ती को सुन्दरता और सफलता पूर्वक मनाने के लिये अपनी-अपनी योजनाएं प्रस्तुत करने की कृपा करेंगे।

———

हमारे 'पुस्तकालय'

प्रत्येक आर्यसमाज में छोटा-मोटा पुस्तकालय होता है। निर्वाचन के समय एक पुस्तकाध्यक्ष भी चुना जाता है। पुस्तकालयों को हम 'ज्ञान मन्दिर' भी कह सकते हैं। इन 'ज्ञान-मन्दिरों' में स्वाध्याय योग्य आर्य साहित्य का संग्रह होना आवश्यक है। वेद, शास्त्र, ऋषि कृत ग्रन्थ तथा अन्य उपयोगी साहित्य। बड़े-बड़े आर्यसमाजों में अच्छे पुस्तकालय हैं, परन्तु उनसे लाभ उठाने वालों की कमी है। एक विद्वान् के कथनानुसार ये पुस्तकालय अपनी पुस्तक आप ही पढ़ते रहते हैं। विचारशील विद्वान् लेखक श्रीयुत लालचन्दजी ने ठीक ही कहा है कि आर्यसमाजों में प्रायः पुस्तकाध्यक्ष-पद किसी सीधे-सादे आर्य सभासद का दिल रखने, जी बहलाने या उसे अधिकारियों में गिने जाने का मान देने के लिए भेंट कर दिया जाता है। पुस्तकालयों में कूड़ा-करकट भर जाता है, जीव जन्तु रहने लगते हैं। उपेक्षित पुस्तक अलमारियों की आड़ में पड़ी-पड़ी मौन साधन किये अपने दुर्दिन बिताती रहती हैं। श्री लालचन्दजी का कहना है कि आर्य-पुस्तकालयों में अच्छी-अच्छी पुस्तकें मँगाकर रखी जायें। सब अवस्थाओं और स्थितियों के पाठकों के लिये साहित्य का संग्रह हो। आर्य परिवारों में पुस्तकों को घुमाने की व्यवस्था की जाय और पुस्तकों के सम्बन्ध में प्रति सप्ताह साप्ताहिक अधिवेशनों में चर्चा हो। इससे स्वाध्याय की ओर रुचि बढ़ेगी और साहित्य का उचित सम्मान तथा उपयोग हो सकेगा।

———

हमारी अस्पष्ट भावना

पिछले दिनों सोमनाथ के मन्दिर का जीर्णोद्धार हुआ, उस अवसर पर भाषण करते हुए राष्ट्रपति श्रीराजेन्द्रप्रसादजी ने अपने को 'सनातनधर्मी' कहा। धार्मिक दृष्टि से राष्ट्रपति का जो विश्वास था, वही आपने स्पष्ट रूप से प्रकट कर दिया। इस प्रकार की खरी-खरी और स्पष्ट बात को हम पसन्द करते हैं। इसके विपरीत ऐसे कितने ही आर्यसमाजी भाई हैं, जो ऊँचे पदों पर पहुँचकर अपने को आर्य-समाजी कहने में झिझकते रहे और झिझकते हैं। सरकारी सेवकों और व्यवस्थापिका सभाओं के सदस्यों और मिनिस्टरों में ऐसे बहुत कम आर्यसमाजी मिलेंगे, जिन्होंने डंके की चोट अपने को 'आर्य-समाजी' कहा हो। नहीं तो "मैं आर्यसमाज से सहानुभूति रखता हूं", "मुझे आर्यसमाज से प्रेम है", "मैं स्वामी दयानन्द" को "निर्भय सुधारक मानता हूँ" इत्यादि अस्पष्ट बातें ही आर्यों के मुँह से सुनाई पड़ती है। अंग्रेजों के समय में "आर्यसमाजी" होना एक हौआ था, क्योंकि वे आर्यसमाज में राज विद्रोह के कीटाणु देखते थे, परन्तु आज तो वैसी स्थिति नहीं रही, फिर क्यों कुछ सरकारी अधिकारी या कर्मचारी मिनिस्टर या मेम्बर अपने को 'आर्यसमाजी' कहने में संकोच करते हैं, और आर्यसमाजों के साप्ताहिक अधि-वेशनों में जाने या आर्य सदस्य-सूची में नाम लिखाने से डरते या झिझकते हैं। अब तो ऐसी भीरु भावना की बिलकुल आवश्यकता नहीं है, आवश्यकता तो कभी नहीं थी।

———

दैनिक सत्संग

कुछ आर्यसमाजों में दैनिक सत्संग की योजना प्रचलित की गई थी, हर्ष की बात है कि वह सफल हुई। प्रातःकाल प्रवचन और भजन सुनने के लिये सदस्यों की पर्याप्त संख्या इन सत्संगों में पहुंची। हम चाहते हैं कि प्रत्येक आर्यसमाज में दैनिक सत्संग का कार्यक्रम रखा जाय। उसमें हवन, प्रवचन और भजनोंकी ही प्रधानता रहे। यानी समाज में एक आध्यात्मिक वातावरण पैदा किया जाय। हम देखते हैं कि आर्यसमाज सुधारक, संशोधक या संघटनवादी के रूप में तो स्पष्ट दिखाई देता है, परन्तु उसकी धार्मिकता या आध्यात्मिकता कुछ लुप्त या गुप्त-सी होती जाती है। हमतो समझते हैं कि आर्यसमाज धार्मिक पहले है, और कुछ पीछे। धार्मिकता का अर्थ है, स्वाध्याय और सत्संग द्वारा अपने आत्मा को उठाना और अपने जीवन को ऊंचा बनाना। आत्मा के गिर जाने से ही आज संसार अनेको अनर्थों का आवास और अनाचारों का अड्डा बन गया है। अपने जीवनों में धार्मिकता लाने की आवश्यकता है—वह धार्मिकता जिसमें न अनाचार है न भ्रष्टाचार, केवल विशुद्ध भावना ही जहाँ विहार करती है, शुभ संकल्प ही जिसकी देन है। हम चाहते हैं कि आर्य-समाज के दैनिक सत्संग हममें स्वाध्याय, सत्संग और आत्मचिन्तन की भद्र भावना पैदा करें, जिससे हमारा और संसारका कल्याण हो।

———

'डी० ए० वी०' नाम व्यर्थ है!

पिछले किसी अंकमें हमने लिखा था कि "डी० ए० वी०" संस्थाओं को अपना अंग्रेजी नाम बदल कर दयानन्द-विद्यालय वा महाविद्यालय नाम रख लेना चाहिये। इन नामों में अपनापन और आर्यसमाज की भावना है। गत सप्ताह हमारे पास श्री प० गंगाप्रसाद उपाध्याय ने इस सम्बन्ध में एक 'नोट' भेजा है, जो इसी अंक में प्रकाशित किया जाता है। श्री प० दत्तात्रेय वाळ्वे एम० ए०, प्रिंसिपल डी० ए० वी० कालिज अजमेर से भी इस विषय में हमें विचार-विनिमय करने का अवसर मिला। आपने हमारे सुझाव को पसन्द किया और कहा कि शीघ्र से शीघ्र 'डी० ए० वी०' का स्थान दयानन्द-विद्यालय-महाविद्यालय को मिलना चाहिए। हमने अपने नोट में लिखा था कि बहुत-से भाई डी० ए० वी० का अर्थ तक नहीं समझते। इस सम्बन्ध में प्रिंसिपल वाळ्वे ने बताया कि मैंने एक परीक्षा में साधारण ज्ञान के पर्चे में कई सौ विद्यार्थियों से 'डी० ए० वी०' का अर्थ पूछा तो बड़ी कठिनता से तीस प्रतिशत छात्र उसका ठीक-ठीक मतलब बता सके। बाकी किसीने कुछ लिखा और किसीने कुछ। उपाध्यायजीने भी अपने नोटमें ऐसीही एक बात लिखी है। हम सार्वदेशिक सभा, प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं और डी० ए० वी० प्रबन्ध-समितियों से प्रार्थना करते हैं कि वे शीघ्र से शीघ्र 'डी० ए० वी०' शब्द का बहिष्कार कर दयानन्द विद्यालय वा महाविद्यालय शब्द को अपनावें। क्योंकि इसी में हमारी सांस्कृतिक और धार्मिक भावनाएँ सन्निहित हैं, डी० ए० वी० में नहीं।

———

मुसलमानों में पंचकालीन नमाज का नियम है और आर्यों में पंच महायज्ञ का। अनुमान है कि पंचकालीन नमाज पंचमहयज्ञ का ही संक्षिप्त अथवा अवशिष्ट रूप है। जो हो,

गीता में भगवान् कृष्ण ने बताया है कि यथार्थ कर्म के अतिरिक्त अन्य समस्त कर्म मनुष्य को बंधन में डालने वाले हैं, क्योंकि सर्वव्यापी परमात्मा यज्ञ कर्म में नित्य स्थित रहता है। यज्ञ शेष भोजन करने वाले सब पापों से मुक्त हो जाते हैं। परन्तु जो मनुष्य अपने ही लिये भोजन पकाते और उसे खा लेते हैं, वे तो पाप ही खाते हैं। यज्ञ से प्रसन्न हुए देवतागण मनुष्यों को अभीष्ट भोग देते हैं और जो लोग भोग तो भोगते हैं, किन्तु यज्ञ द्वारा देवताओं को सन्तुष्ट नहीं करते, वे चोर ही हैं। इतना ही नहीं, जो लोग अमृतरूपी यज्ञ शेष को खाते हैं, वे स्वयं परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त होते हैं, किन्तु अयाज्ञिक पुरुष का यह लोक ही नष्ट हो जाता है फिर परलोक की तो बात ही क्या?

इन्हीं सब कारणों से आर्यावर्त देश में अति प्राचीन काल से दैनिक पंचमहायज्ञ, इष्टियों, गोमेध, अजामेध तथा अश्वमेधादि यज्ञ तथा जप यज्ञ, स्वाध्याय यज्ञ तथा योग यज्ञादि प्रचलित रहे हैं। जब तक इस पुनीत देश में यज्ञों का प्रचुर प्रचार रहा, तब तक वह धन-धान्य तथा सुख से परिपूर्ण रहा, किन्तु जब से इस प्रथा का लोप हुआ, अथवा इसमें न्यूनता आई तब से ही देशवासी दुःख सागर में डूबने लगे। यज्ञों के पुनः प्रचार से पुनः उसी स्वर्णकाल का प्रकाश अवश्यमेव हो जायगा।

प्रश्न उठता है—यज्ञ का अर्थ और स्वरूप क्या है? यदि यज्ञों की इतनी महिमा है, तो भगवान् गौतम बुद्ध को इनके विरोध में क्यों खड़ा होना पड़ा? 'यज्ञो वै विष्णुः' अर्थात् यज्ञ ही विष्णु है। अतः विष्णु या भगवान् के नाम पर उन्हें समर्पण करके जो भी कार्य किये जायें, वे यज्ञ हैं गीता के अध्याय ३ श्लोक ६ और अध्याय ४ श्लोक २३-२४ का भी यही अर्थ है—अर्थात्

अध्यात्म धारा

यज्ञ की महिमा और उसका स्वरूप

श्री प० कृष्णदेव शर्मा, एम० ए०

परमार्थ भाव से, त्याग भाव से, बलिदान की भावना से किया हुआ कर्म ही 'यज्ञ' है। अंग्रेजी भाषा में यज्ञ को "सैक्रीफाइस" (Sacrifice) कहते हैं, जिसका अर्थ बलिदान भी है। परन्तु देखने में यह आता है कि ईसाइयों, यहूदियों तथा मुसलमानों में 'सैक्रीफाइस" बलिदान या कुर्बानी के अवसर पर किसी पशु को काट डालते हैं। आह? कैसी विडम्बना है! सच पूछिये तो इस निन्दनीय प्रथा के प्रचलन के लिये भी हम भारतीय ही उत्तरदायी हैं। हमने ही यज्ञों में पशु-बलि का विधान आरम्भ किया। आत्म-बलिदान का स्थान पर बलिदान ने ले लिया, स्वार्थांध मनुष्य ने परमार्थ के नाम को घोर स्वार्थ पंक से पंकिल कर दिया—अर्थ का अनर्थ हो गया? अश्वमेध, गोमेध तथा नरमेधादि के नाम पर घोड़ों, गायों तथा मनुष्यों की नृशंसता पूर्ण हत्याएं होने लगीं और यह सब धर्म के नाम पर, यज्ञ के नाम पर, विष्णु के नाम पर। यह भूल गये कि 'राष्ट्रं वा अश्वमेधः' अर्थात् राष्ट्र पालन, राजविद्या ही अश्वमेध है। 'गो' का अर्थ है पृथिवी, इन्द्रियां, वाणी तथा सूर्य-किरण आदि। 'गो' अर्थात् पृथिवी से कृषि द्वारा भांति-भांति के अन्न, वनस्पतियां व ओषध्यादि प्राप्त करना ही गोमेध है। 'गो' नाम इन्द्रियों का संयम करना ही 'गोमेध' है। वाणी का संयम करना ही 'गोमेध' है। वाणी का संयम करना तथा सूर्य किरणों से स्वास्थ्यादि लाभ-प्राप्ति ही सुन्दर गोमेध यज्ञ है। मनुष्य-जाति के उपकारार्थ सर्वस्व बलिदान करना ही सच्चा 'नरमेध' है। 'बकरी' आदि पशुओं की विद्या को जानकर इनकी उन्नति की व्यवस्था में प्रयत्नशील होना ही सच्चा 'अजामेध' है। इन प्रकार के अत्याचार, अनाचारों को देखकर अहिंसा के अवतार गौतम बुद्ध को पशुबलि रोकने के लिये यज्ञ-मात्र के विरुद्ध आवाज उठानी पड़ी।

इस विषय में अत्यन्त आश्चर्य की बात यह है कि यह सब भ्रांतियां तब ही फैल सकीं जब कि यज्ञ का सर्वाधिक लोक-प्रसिद्ध रूप 'अग्नि होत्र' रहा। यह अग्नि होत्र 'यज्ञ' मात्र का प्रतीक था और है। बलिदान की भावना के इतने जाज्वल्यमान प्रतीक को नेत्रों के सम्मुख निरन्तर देखते हुए भी उसे स्मरण न रख सके। नित्य प्रति होम करते समय घृत, साकल्य तथा समिधादि की आहुति अग्नि में डाल कर और उसके परमाणुओं को वायुमंडल में विलीन देखकर भी पुरोहितों, यजमानों एवं दर्शकों के हृदय में स्वार्थ बलिदान की भावना जाग्रत न हो सकी। हवन के समय 'स्वाहा' शब्द का उच्चारण करने पर भी ध्यान न आया कि 'स्व' का हवन करना, आत्म-बलिदान ही यज्ञ का उद्देश्य है, 'स्व' 'आह' अर्थात् अन्तरात्मा की पुकार को सुनना ही हमारा परम धर्म है, 'सु' 'आह' मधुर भाषण हमारे व्यवहार का मुख्य अंग होना चाहिये। 'इदमग्नये इदन्नमम' 'इदमसोमाय इदन्नमम' 'इदं प्रजापतये इदन्नमम' की पवित्र ध्वनियों का उच्चारण हमारे बहरे कानों ने सुनकर भी न सुना और हमारे हृदय में भगवदर्पण कर्म करने की बुद्धि जाग्रत न हुई। परिणाम हमारे सामने है।

जिस प्रकार यज्ञ-कुण्ड में आहुति डालकर यज्ञ किया जाता है, इसी प्रकार जीवन-यज्ञार्थ शरीर रक्षा व पुष्टि भी यज्ञकर्म है। भोजनादि रूपी आहुतियाँ इस उदर रूपी यज्ञ कुण्ड के जठरानल रूपी अग्नि में डाली जाती हैं। इस विराट् विश्वरूपी यज्ञ कुण्ड में प्रजापति सृष्टि-रचना पालनादि यज्ञ करता है, सूर्य रूपी अग्नि में आहुतियां पड़ रही हैं। किसके लिये? क्या भगवान् का इसमें कुछ स्वार्थ है? नहीं, वह सब कुछ हमारे लिये करता है। योगी 'प्राण को अपान' में और 'अपान' को 'प्राण' में आहुति डालकर 'प्राणायाम-यज्ञ' किया करता है। इसी प्रकार यज्ञ के अन्य भी अनेक प्रकार हैं।

इन सब में अग्निहोत्र-यज्ञ के अधिक प्रचार का विशेष कारण, एक तो यही कि यह यज्ञ मात्र का प्रत्यक्ष मूर्तिमान प्रतीक है। दूसरे इसका अनुष्ठान सर्व-साधारण के लिये सुगम है। तीसरे इसके करने से सुगंधित, पौष्टिक एवं रोगनाशक द्रव्यों के अग्नि में होमने से तत्काल वायुमंडल शुद्ध होकर यज्ञकर्त्ता यजमान, पुरोहित तथा अन्यान्यों के स्वास्थ्य प्रफुल्लतादि में वृद्धि करता है। प्लेग हैजा आदि संक्रामक रोगों के निवारण में रामबाण सिद्ध होता है। जिन रोगियों को सूची वेध (Injection) भी असह्य हो उनके शरीर में अग्निहोत्र यज्ञ द्वारा ओषधियों का प्रभाव डाला जा सकता है, क्योंकि अग्नि उन पदार्थों को सूक्ष्म रूप देकर वायुमंडल में प्रवाहित कर देता है। श्वास प्रश्वास द्वारा ओषधितत्व शरीर के भीतर प्रवेश कर जाता है। रोगी को आप घी खिला नहीं सकते किन्तु आहुति रूप डाला हुआ घृत रोगी का पोषण करता है। अथर्ववेद तथा चरक के अनुसार भी गुग्गुल आदि की धूनी भयंकर रोगों का नाश करती है। एक छटांक घी हम एक या दो मनुष्यों को ही खिला सकते हैं परन्तु यज्ञ में आहुत एक छटांक घी सैकड़ों प्राणियों का उपकार करता है। एक बात और है। जब आप नित्यप्रति अनेक प्रकार से मल-मूत्रादि का उत्सर्ग करके, वायुमंडल को गन्दा करते हैं, तो आपका यह परम कर्त्तव्य है कि उसे शुद्ध भी बनावें।

इसके अतिरिक्त अग्निहोत्र यज्ञ से समस्त लौकिक सुख प्राप्त होते हैं। इस बात का अनुभव दो चार सप्ताह श्रद्धापूर्वक नित्य यज्ञ करके आप स्वयं अपने जीवन में कर सकते हैं। परन्तु इसका अनुष्ठान श्रद्धा, भक्ति एवं विधिपूर्वक होना चाहिये। मन्त्रार्थों को भी पढ़ते, समझते चलें, जिससे भावना का बल उसके साथ रहे। श्री० डा०

सिंहावलोकन

आर्यसमाज का कायाकल्प

श्री प० श्रीराम शर्मा, बम्बई

ऋषि दयानन्द ने 'स्वमन्तव्यामन्तव्य' में सार निकालते हुए दो श्लोकों द्वारा असिधारा व्रत की जो बात कही है, वही आर्यसमाज के उद्धार का अमोघ साधन है। "वे ही नर धन्य हैं जो विद्या अविद्या को अलग छांटने में मन लगाते हैं, उस विषय में पैनी बुद्धि घुसाते हैं, जिन्होने शील और शिक्षा आभूषण पहना हुआ है, सत्यव्रत धारण करके भी जो घमंड नहीं करते, विनय से जो विभूषित हैं, हृदय जिनका निर्मल है, जो केवल दूसरों के दुःख दलन में संलग्न रहते हैं, सांसारिक जन चाहे बड़ाई करें या बुराई, पास कितना ही धन आ जावे या कौड़ी भी न रहे, आज ही मार डालने का कोई भय दिखा रहा हो या दीर्घजीवि होने का कोई आशीर्वाद दे रहा हो इन सब अवस्थाओं से लेश मात्र भी प्रभावित हुए बिना केवल न्यायमार्ग पर जो धीर दृढ़ रहता है, वही धर्म का सच्चा सेवक और पक्का पालक है। आर्यसमाज को यदि अपना गत गौरव प्राप्त करना है तो वह विद्या, तप और त्याग से मिल सकेगा। उत्सव और प्रचार, सम्मेलन और महासम्मेलन उस धर्म के साधन हैं, साध्य नहीं। उद्देश के सहायक हैं, वे स्वयं उद्देश्य नहीं। इस लिये आर्यभाइयों को चाहिये कि वे उचित-अनुचित की छानबीन के लिये ईश्वर से 'धियोयोनः प्रचोदयात्' की प्रार्थना करें, अपनी बुद्धि को तेज करें। मेधावी या स्थित प्रज्ञ होना तो ऊंची बात है, हम साधारण सच झूठ को कम से कम सभा-समाज में तो न घुसने दें। ७ वां नियम १० नियमों में सबसे छोटा है। व्यवहार विद्या का वह द्योतक है। समाज संगठन में वह पारस्परिक प्रेम आवश्यक तत्व है, वह स्नेह किस स्निग्धता से साधा जाय? 'धर्मानुसार' और 'यथायोग्य' की छानबीन की सावधानता से ही यह प्रीति हरी-भरी रह सकती है। प्रेम अशुद्ध न हो, उसमें धर्म का पुट लगा हुआ हो, जहां धर्मिष्ठ और मिथ्या आचरण के लोग एक समान न पूजे जाते हों, जहां मूर्ख का भेद-भाव स्पष्ट हो, जहां सभासदों की प्रतिष्ठा सब धान बाईस पंसेरी या 'टके सेर भाजी टके सेर खाजा' जैसी न हो। पूज्य-अपूज्य का भेद न रहने पर समाज ही क्या रहेगा। ऋषि दयानन्द के प्रादुर्भाव से पहले भी धुरन्धर विद्वान् थे पर सत्य-अन्वेषण की योग्यता और निधड़क सत्य बोलने के आत्मबल से वे शून्य थे। हमें भी सत्य-असत्य का अन्वेषक और कम से कम सभा-समाज के कार्यों में सत्य का सेवी होना चाहिये। हमें अब तुरन्त सामाजिक आत्मनिरीक्षण में लग जाना उचित है। तभी हमारी छोटी-बड़ी सभाओं का और आर्यजगत् का उद्धार होगा।

आर्य जनता को अब कुछ जागने की आवश्यकता है, उसे अपने बल, पौरुष और कर्त्तव्य को नये सिरे से समझने का अवसर उपस्थित हो गया है। क्या उसे याद है कि वह कैसे महापुरुष के बताए मार्ग पर चल रहा है। ऋषि दयानन्द का नवजागरण क्या था, यही कि वह सत्य-असत्य की शामिल खिचड़ी नहीं पकाते थे। उनकी दृढ़प्रतिज्ञा थी 'इदम् अहम् अनृतात् सत्यम् उपैमि' झूठ और सच परस्पर विरुद्ध हैं, साथ साथ नहीं रह सकते। 'सत्यार्थप्रकाश' आदि ग्रन्थों की रचना में और सिद्धान्त विवेचन में भी उनकी यही मूल प्रतिज्ञा काम कर रही थी, चलनी से जैसे आटा, भूसी, कूड़ा-कर्कट एक दम अलग अलग कर दिये जाते हैं, वैसे ही भारतीय समाज से वह पाखण्ड को निकाल फेंकना चाहते थे। यहाँ पर हम शास्त्रों, उपनिषदों और वेदों के प्रमाणों से धर्म अधर्म की व्याख्या करने नहीं बैठे, और न जीवात्मा-परमात्मा का स्वरूप लक्षित करने के लक्ष्य से यह निवेदन कर रहे हैं। आर्य समाज के बाह्य क्षेत्र के विद्वान् के साथ, आर्यसमाज की जो व्यवस्था चल रही है, अभी तो वही विचारणीय है आर्यसमाज का सामान्य जन अपनी सामूहिक अवस्था पर विचार करने में अथवा कहिये कि आत्म-निरीक्षण करने में पूरी असावधानी दिखा रहा है, यही चिन्ता और चिन्तन का मुख्य विषय है। जो आर्यसमाज कभी देश की सभा-सोसाइटियों में अग्रणी पद पाने का गौरव प्राप्त करता रहा है, आज वह क्यों निस्तेज-सा दीख रहा है। यह क्या थोड़ा भी ध्यान देने का विषय नहीं है! आर्यसमाज छोटे-बड़े अधिवेशन या उत्सव महोत्सव कुछ चमक-दमक के साथ सम्पन्न भले ही कर लेता हो, परन्तु उस उत्सव के तुरन्त बाद ही उसका ब्रह्मतेज या प्रकाश कहां काफूर हो जाता है। वयप्राप्त और वृद्ध पुरुषों को याद है कि कभी आर्यसमाज की गति विधि से अंग्रेज घबरा उठे थे। माना कि उन्होंने अपनी नीति से बहुत-से आर्य रायबहादुरों और आफिसों के बाबू महाशयों को अपने चंगुल में ले लिया था। आज वह ब्रह्मतेज वाला आर्यसमाज रूढ़िया मनामना कर सन्तुष्ट हो लेता है। यह नहीं सोचता कि सिवाय लकीर पीटने के वह कौन-सा नया-पुराना सुधार कर रहा है। रूढ़ि, आडंबर, पाखण्ड को जड़मूल से उखाड़ फेंकने वाले तपस्वी यति के समाज में आज कैसी गाढ़ निद्रा छा गई है क्या आर्य जनता इस पर विचार न करेगी।

देश की राजनीति और राजनैतिक क्षेत्र आर्यसमाज से आशा बांधे बैठे हैं पर संसार का उद्धारक आर्यसमाज स्वयं इस तत्व पर विचार करने तक को अवकाश नहीं पाता। आर्य जनता की शिथिलता से ही शिरोमणि सभाओं में शैथिल्य हैं। शक्ति का स्रोत जनता है न कि नेतागण या शिरोमणि-सभाएं। इस सिद्धान्त को यदि आर्य जनता समझती होती तो उदासी का यह वातावरण कदापि न छा जाता। आर्य जनता को ऋषि दयानन्द महाराज के थोड़े भी प्रतिज्ञा वचन याद रहे होते तो वह आर्य नेताओं की तन्द्रा को तुरन्त तोड़ सकती थी। चुनाव में यदि उसे यही याद रह जाय कि सभा में हम आत्म हनन नहीं करेंगे, झूठ नहीं बोलेंगे, तपस्वी, सत्यवादी, त्यागी, योग्य पुरुष को ही योग्य पद पर बिठायेंगे, पदलोलुप पद-मद के उपासक को नहीं, तो बहुत काम हो सकता है।

दुर्गाशंकर नागर और श्री डा० कुन्दनलाल द्वारा सैकड़ों रोगियों की चिकित्सा केवल अग्निहोत्र यज्ञ द्वारा की जाती है। महर्षि दयानन्द आदेश करते हैं— "आर्यवर-शिरोमणि महाशय, ऋषि, महर्षि, राजे, महाराजे लोग बहुत-सा होम करते और कराते थे। जब तक इस होम करने का प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त देश रोगों से रहित और सुखों से पूरित था, अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाये।"—

'डी०ए० वी०'

आर्यमित्र के सम्पादकजी ने डी०ए०वी०नाम के ऊपर एक छोटा सा नोट लिखकर आर्यसमाज का ध्यान एक अत्यावश्यक बात की ओर आकर्षित किया है। यही बात मैंने आज से पन्द्रह वर्ष पूर्व कही थी। केवल कही ही नहीं, अपितु आर्यगजट आदि सभी पत्रों में प्रकाशित भी कराई, और डी० ए० वी० कालेजों और स्कूलों के अध्यापकों को भी लिखा। उसकी एक रोचक कहानी है। मुझे अपने स्कूल के लिये एक भूमि लेनी थी, मैं इलाहाबाद के कलक्टर महोदय के पास गया। कार्ड पर "हैडमास्टर डी० ए० वी० हाई स्कूल, इलाहाबाद लिखा हुआ था।" कलक्टर थे मिस्टर बिशप, उन्होंने पूछा "डी० ए० वी० स्कूल क्या दारागंज में है?" मैंने उनको आर्यसमाज और ऋषि-दयानन्द का कुछ हाल बताया। वह इस विषय में कुछ जानते न थे। उन्होंने डी० ए० वी० से दारागंज एंग्लोवर्नाक्यूलर समझा। मैं जब लौटकर आया तो मैंने अपने स्कूल के बहुत से लड़कों से पूछा कि तुम डी० ए० वी० के लड़के हो। "डी" का क्या अर्थ? वे बता न सके। उस दिन मुझे यह ख्याल हुआ कि यदि

[शेष पृष्ठ २ पर]

भ्रष्टाचार का नाश हो !

आर्यों का दृढ़ संकल्प : क्रियात्मक कार्यक्रम

श्री ज्ञानचन्द्जी, मन्त्री, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा

स्वदेश में भ्रष्टाचार तथा चरित्रहीनता जिस वेग के साथ बढ़ रहे हैं, उसके अनुमान के लिये कुछ संकेत नीचे दिए जाते हैं:—

१. सरकारी दफ्तरों, न्यायालयों तथा राजकीय विभागों में घूसखोरी का बाजार गर्म है। २. व्यापार में चोरबाजारी और असत्य व्यवहार जोरों पर है। ३. टैक्सों और चुंगी आदि से बचने के लिए आत्मा का हनन करने वाले अनेक साधन बरते जाते हैं। ४. प्रजा और राजकर्मचारी दोनों ही कानून की बेधड़क अवहेलना करते हैं। बाढ़ खेत को खा रही है। प्रायः देखा जाता है कि क़ानून के रक्षक न्यायाधीश और पुलिस ही कानून तोड़कर स्वार्थ-सिद्धि में लगे हुए हैं। ५. खानपान की चीजों में मिलावट का कोई ठिकाना नहीं। शुद्ध घी-दूध प्रायः लुप्त हो चुके हैं। ६. कहीं कला के नाम पर अर्द्ध नग्न नाच हो रहे हैं, कहीं आमोद प्रमोद के नाम पर गन्दे दृश्य दिखाए जा रहे हैं, कहीं मनोरंजन के लिए गन्दे गीत गाये जा रहे हैं, सिनेमा और रेडियो तो अश्लीलता के अड्डे बन रहे हैं। बाजारों और गली-कूचों में नाटयों के निर्लज्जतापूर्ण चित्र लटके रहते हैं। व्यभिचार जिस दुर्गति से बढ़ रहा है, उसके आंकड़े पढ़ने से रोंगटे खड़े हो जाते हैं। ७. मद्य, मांस, तम्बाकू आदि मादक द्रव्यों का प्रयोग बेरोक-टोक बढ़ता चला जा रहा है। क्लब और होटल तो वाममार्ग के अड्डे बनते जा रहे हैं। वहां खुल्लमखुल्ला जूआ खेला जाता है। शराब के दौरे चलते हैं। इनमें स्त्रियों भी सम्मिलित होती हैं। बहुतसे सरकारी अफसर दफ्तरों से उठकर सीधे वहीं पहुंचते हैं, और रात को प्रायः ६ बजे तक यहीं मस्त रहते हैं। कोई कोई तो रात्रि के १२ बजे तक यहीं पड़े रहते हैं। ८. स्कूलों और कालेजों में निरंकुश उद्दण्डता तथा उच्छृंखलता का राज्य है। गुरुओं की शिष्यों के हाथों गत बनती है, और किसी-किसी को तो जान से भी हाथ धोने पड़ते हैं। ब्रह्मचर्य का नाश, मादक द्रव्यों का सेवन, शिष्टाचार का अभाव और विलासिता का जीवन यह आजकल के विद्यार्थियों के लक्षण हैं। इस पर सह शिक्षा जो गजब ढाती है, उसके लिये क्या कहा जाय। ९. ग्रामों के सरल स्वभावयुक्त लोग भी शहरों के सम्पर्क में आकर अपनी सरलता खोकर भ्रष्टाचार का शिकार बन रहे हैं। १०. क्या हम कह सकते हैं कि स्वार्थवश देशद्रोह करने वालों का मूलनाश हो गया है? ११. समाचार-पत्र ज्ञान के दीपक हैं परन्तु "इस घर को आग लग गई घर के चिराग से" वाला मामला हो रहा है। हमारे समाचार-पत्रों में फिल्मी नटियों की तस्वीरें और उनकी कामोत्पादक कथाएं और भोगविलास भरी सामग्री के विज्ञापन हजारों जनता को बरबाद कर रहे हैं।

इन अवस्थाओं को देख कर लज्जा से आंखें जमीन में गढ़ जाती हैं। कभी वे दिन थे जब मनु महाराज इस देश के सम्बन्ध में यह दावा करते थे।

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः, स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः

इस देश में उत्पन्न हुए ब्राह्मणों के चरणों में बैठ कर सारी पृथ्वी के लोग सच्चरित्रता की शिक्षा ग्रहण करें। महाराज अश्वपति की यह गर्वपूर्ण उक्ति अभी तक हमारे कानों में गूंजती है।

नमे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः। नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणीकुतः।

मेरे राज्य में कोई चोर नहीं है, कोई अदानशील कजूस नहीं, कोई शराब पीने वाला नहीं, कोई अग्निहोत्र न करने वाला नहीं, कोई अविद्वान् नहीं। व्यभिचारी पुरुष नहीं, फिर व्यभिचारी स्त्री कैसे हो सकती है? रामराज्य का तो कहना ही क्या। कहाँ मर्यादा-पुरुषोत्तम राम का सुशासन? कहाँ वह प्रजा की धर्म-परायणता? कहाँ वह सुख समृद्धि?

इस घोर चरित्रहीनता और भ्रष्टाचार का क्या परिणाम हो सकता है, इसकी कल्पना करते ही दिल दहल जाता है। ये बुराइयाँ बड़े-बड़े साम्राज्यों की जड़ें खोखली कर देती हैं और वे धड़ाम से गिरा कर मिट्टी में मिला देती हैं। महाभारत का विनाश रोमन और ग्रीक साम्राज्यों का पतन तथा मुगल साम्राज्य की तबाही, इसके भयावह उदाहरण हैं। हम तो हैं ही क्या? हमारी स्वतन्त्रता तो अभी चार साल की बच्ची है। इसे कितना सतर्क और सावधान होने की आवश्यकता है।

कुछ लोग सरकार के गले मढ़कर और उसे कोस कोस कर अपने दिल की भड़ास निकाल लेते हैं। "यथा राजा तथा प्रजा" यह बात तो ठीक ही है, परन्तु लोकतन्त्र में तो प्रजा ही राजा को बनाती है। सत्य मध्य मार्ग है, अर्थात् दोष सरकार और प्रजा दोनों का ही है। अतः इलाज भी दोनों का परस्पर सहयोग से ही किया जा सकता है। चीन ने ऐसे ही सहयोग से दो साल के अन्दर भ्रष्टाचार के मिटाने में पर्याप्त सफलता प्राप्त की है।

आर्यों का दृढ़ संकल्प

इस मध्य मार्ग की धारणा का अवलम्बन करते हुए आर्य समाज अपने सामूहिक बल के साथ कार्यक्षेत्र में उतर रहा है। हमारा विश्वास है कि आदित्य ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द के पुण्यप्रताप से आर्य लोगों में आज भी यह सामर्थ्य है कि इस महा पतन से देश को निकाल दें।

हमने दृढ़ संकल्प कर लिया है कि हम भ्रष्टाचार और चरित्रहीनता जैसे भयंकर शत्रुओं के साथ चौमुखी लड़ाई लड़ेंगे और तब तक दम न लेंगे जब तक इनकी जड़ों को उखाड़ कर न फेंक दें। हम राजा और प्रजा दोनों को खरी खरी सुनायेंगे। दोनों से अनुनय विनय करके उन्हें सन्मार्ग की ओर प्रेरित करेंगे। हमें विश्वास है कि इस पुण्य कार्य में हमें सरकार तथा प्रजा दोनों का सहयोग प्राप्त होगा। परन्तु हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि जो कोई भी अपने स्वार्थों की खातिर हमारे और हमारे उद्देश्य की प्राप्ति के बीच रोड़े अटकाने का प्रयत्न करेगा, उसका हम डटकर मुकाबला करेंगे और अपने कर्तव्य-पालन में कदापि न चूकेंगे। ऐसी अवस्था में हम न आराम लेंगे, न लेने देंगे।

कार्यक्रम

हम युद्धस्थल में उतर रहे हैं। हमारा सबसे प्रथम कर्तव्य है कि हम एक सुदृढ़ सुसंगठित और विजयवाहिनी का रूप धारण करें। हम अपने आपको सर्वथा अपनी शिरोमणि सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा के नियन्त्रण के अधीन करदें और उसके आदेश पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए सर्वदा उद्यत रहें। सर्वस्व त्याग की बात सुनकर चौंकिये नहीं। भ्रष्टाचार और चरित्रहीनता जैसे क्रूर और नृशंस शत्रुओं के साथ लोहा लेना खेल है। गल नहीं है। सम्प्रति हमारा कार्यक्रम निम्न प्रकार है —

१ प्रत्येक आर्य दृढ प्रतिज्ञा करके वह आर्यसमाज के सदाचार-सम्बन्धी उपनियम ४ (ख) के अनुसार अपना सदाचार बनाएगा और दृढ़ता के साथ उसका पालन करेगा। २, प्रत्येक आर्य सभासद् अपनी आय का शतांश आर्यसमाज के कोष को अर्पण करेगा। ३. प्रत्येक आर्य समाज सदाचार-सैनिकों के जत्थों के निर्माण करे, जिनमें अधिक से अधिक आर्यसभासदों, आर्य वीरों और वीरांगनाओं, सर्वसाधारण, बालक और बालिकाओं और स्कूलों तथा कालिजों के विद्यार्थियों को भरती किया जावे। ४ व्याख्यानों तथा पत्रिकाओं द्वारा भ्रष्टाचार और चरित्रहीनता-विरोधी आन्दोलनों को प्रगति दी जावे। ५. मास में एक अथवा अधिक बार सदाचार सैनिकों की नगर-यात्राएं निकालने का प्रबन्ध किया जाय और इनमें भ्रष्टाचार विरोधी और सदाचार-समर्थक पट्टियों लेखों का प्रदर्शन किया जावे और ऐसे ही नारे लगाये जायें और गीत गाए जायें। ६. नगरों में जहां कहीं अश्लील चित्र लगे हुए हों उन्हें उखड़वाने का यत्न करें। ७. सिनेमाओं के मालिकों को प्रेरणा करें कि वे गन्दी कथाओं और चित्रों का परित्याग करदें और देशवासियों

में नवोल्लास और नवोत्साह पैदा करने वाले चित्र तैयार करायें। अपनी इन माँगों के लिए यथावसर सामूहिक प्रदर्शन भी करे। ८. सरकार से माँग की जाय कि भ्रष्टाचार फैलाने वाली फिल्मों को तत्काल बन्द किया जाये और फिल्म संसर कमेटियों में सदाचार-सैनिकों के प्रतिनिधि भी लिये जायें। ९. रेडियो पर गन्दे गीत तत्काल बन्द कराये जाने चाहिए। इसके लिए ब्राडकास्टिंग विभाग को प्रेरणा की जाये कि वे भी सरकार से इस प्रकार की माँग करें। रेडियो के प्रोग्राम के चुनाव के लिए राजकर्मचारियों से पृथक् समितियाँ होनी चाहियें जिनमें सदाचार सैनिकों के प्रतिनिधि भी अवश्य होने चाहियें। १० समाचार-पत्रों के स्वामियों तथा प्रबन्धकों से मिलकर उनसे प्रार्थना करनी चाहिये कि वे अपने समाचार-पत्रों में भ्रष्टाचार-विरोधी आन्दोलन को प्रगति दें और सर्वप्रथम अपने पत्रों को अनाचार फैलाने वाले लेखों तथा विज्ञापनों से मुक्त करदें। ११. प्रत्येक सदाचार सैनिक का कर्तव्य होना चाहिये कि वह अपने स्वार्थों को खतरे में डालकर भी भ्रष्टाचारियों को दण्ड दिलाने में सहायक हो। दफ्तर में, मण्डी में, रेल में अथवा बाजार में जहाँ कहीं भी हो वहाँ घूँस लेने वालों और चोरबाजारी करने वालों के ऊपर कड़ी दृष्टि रक्खे और अवसर पाते ही उन्हें पकड़वाने की व्यवस्था करे। १२. होटलों और क्लबों में घुस कर वह अनाचारियों की काली करतूतों को नंगा करदे, उन्हें दण्ड का भागी बनाने का प्रयत्न करे। १३. विद्यार्थी प्रायः भावुक होते हैं, उनमें देशभक्ति तथा मानवहित की भावनाएँ जगाकर, उद्दण्डता और उच्छृंखलता से हटाकर उन्हें सदाचार-सैनिकों में भरती करके उनके उत्साह को सन्मार्ग पर डाले। १४ सहशिक्षा के विरुद्ध घोर आन्दोलन जारी किया जाये। १५ मादक द्रव्यों के निषेध के लिये आन्दोलन किया जाये और सरकार से माँग की जाय कि वह इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कानून बनाये। १६. अश्लील साहित्य की खोज की जाये और ऐसे साहित्य के लेखकों और प्रचारकों को घोर दण्ड दिलाने का यत्न किया जाये। सरकार से प्रेरणा की जाये कि वह स्कूलों के पाठ्यक्रम में चरित्र-निर्माण करने वाले विषयों का समावेश करे। १७. ग्रामों में प्रचार द्वारा ग्रामीण जनता को कुमार्ग में पड़ने से रोका जाये। १८. सरकार से माँग की जाय कि भ्रष्टाचार के अपराधियों को कठोर दण्ड देने के लिए कानून बनाये जाय।

इस सारे कार्यक्रम की पूर्ति के लिये सरकार के ऊँचे से ऊँचे पदाधिकारियों तक पहुँच कर उनसे सहयोग की प्रार्थना की जाये। आशा है कि हमें यह वाञ्छनीय सहयोग प्राप्त होगा, परन्तु इसके अभाव में भी सदाचार-सैनिकों को अपना काम जारी रखना चाहिये और अपने आन्दोलन को इतना प्रबल और संगठित बनाना चाहिये कि सरकार हमें यह सहयोग देने पर विवश हो जाय।

हम यह भी स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि भ्रष्टाचार और चरित्रहीनता से राष्ट्र की सम्भावित हानि के भय को सामने रखते हुए हम अपना यह कर्तव्य मानते हैं कि सब अनुकूल परिस्थितियों और संगठनों का सहयोग प्राप्त करें परन्तु अवसर पड़ने पर प्रतिकूल परिस्थितियों तथा संगठनों का मुकाबला करने के लिए भी कटिबद्ध रहें।

हम प्रतिज्ञा करते हैं कि इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए यदि सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा सत्याग्रह की आज्ञा देगी तो हम उसके लिए भी सहर्ष उद्यत रहेंगे।

सदाचार-सैनिक का प्रतिज्ञा-पत्र

ओ३म् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यतामिदं मह मनृतात् सत्यमुपैमि।

व्रतपति परमात्मा को साक्षी जानकर मैं यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं सदैव सदाचार सैनिकों के लिए नियत सदाचार तथा नियन्त्रण की मर्यादाओं का पालन करूंगा और स्वदेश में से भ्रष्टाचार तथा चरित्रहीनता को मिटाने के लिए सदाचार सैनिकों के अधिकारियों की आज्ञाओं का तन, मन, धन से पालन करने के लिए सर्वदा उद्यत रहूँगा। मेरा नाम सदाचार सैनिकों में लिख लिया जाये।

नाम, आयु, पिता का नाम, व्यवसाय, पता, हस्ताक्षर प्रतिज्ञा करने वाले के, हस्ताक्षर प्रमाणित करने वाले के।

नोटः—इस प्रकार की प्रतिज्ञाएं सूर्योदय के समय यज्ञाग्नि को साक्षी करके की जाय।

——

सुझाव और सम्मतियाँ

प्रौढ़ शिक्षा और आर्यसमाज का कर्तव्य

श्री पं० गंगाप्रसाद एम० ए०, कार्यनिवृत्त चीफ् जज

२६ जून ५१ के आर्यमित्र के अंक में मेरठ की सुप्रसिद्ध कार्यकर्त्री श्रीमती शकुन्तला देवी गोयल के नाम से एक सुझाव प्रकाशित किया गया है कि 'आर्यसमाज मन्दिरों में प्रौढ शिक्षा का कार्यक्रम किया जाय। इस प्रकार आर्य सामाजिक जन, जनता के अधिकाधिक सम्पर्क में आयेंगे और सरलता से आर्य-सिद्धान्तों का प्रचार हो सकेगा।"

यह सुझाव बड़े महत्व का है। कांग्रेस का सदा यह ध्येय रहा कि स्वराज प्राप्त होने पर बालक बालिकाओं के लिये प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य की जाय, और अशिक्षित प्रौढ़ों को भी शिक्षित किया जाय, कांग्रेस ने इसके लिये कुछ यत्न किया भी, परन्तु देश के दुर्भाग्य से देश विभाजन होजाने के कारण कांग्रेस के सामने बहुत से आवश्यक कार्य आ गये।

प्रौढ-शिक्षा का काम बड़ा भारी है। विधान सभा के नये चुनाव में अल्पवयस्क (नाबालिगों) को छोड़कर सबको मत देने का अधिकार दिया गया है। उनकी संख्या का अनुमान १८ करोड़ किया गया है। उनमें पढ़े-लिखों की संख्या कितनी होगी यह ठीक तौर से तो नयी जन गणना की रिपोर्ट से ही ज्ञात होगा, परन्तु १० प्रतिशतक से अधिक होना कठिन है। यदि १८ करोड़ में तीन अथवा अधिक से अधिक चार करोड़ शिक्षित मान लिये जाय तो १४ या १५ करोड़ अशिक्षित रह जाते हैं, उनको शिक्षा देने का कितना भारी काम है?

आर्यसमाज देश के सुधार व शिक्षा-प्रचार के सब कार्यों में सदा अगुआ रहा है। यदि इस महत्वपूर्ण काय को वह अपने हाथ में ले तो बड़ा काम हो सकता है। बड़े आर्यसमाज-मन्दिरों में हाल व साधारण मन्दिरों में हाल वा कोई एक बड़ा कमरा इस काम के लिये रक्खा जाय। फर्श के लिये दरी या अच्छा टाट हो सकता है। अध्यापक के लिय एक साधारण गद्दी व तकिया हो। बेंच या स्टूल-कुर्सी आदि का कोई काम नहीं। रोशनी के लिये जहाँ बिजली न हो वहाँ एक गैस का लम्प व लालटेन हो सकती है। पढ़ाने वाले अवैतनिक होंगे ही। समय रात का रखना आवश्यक ही है, क्योंकि दिन में शिक्षार्थी अपनी मिहनत-मजदूरी आदि में लगे होंगे। शरद ऋतु में ५ या ६ बजे से ७ या ८ बजे से तक, गर्मी के मौसम में ७ से ९ बजे तक का समय अनुकूल होगा। जहाँ जैसी दशा हो। यह प्रबन्ध केवल पुरुषों की शिक्षा का हुआ। प्रौढ़ स्त्रियों के लिये आर्य देवियों में से ही जो अपना अमूल्य समय दे सकें वे अपने घर पर ही शिक्षार्थियों को ऐसे समय पर जो अनुकूल हो बुला सकती हैं।

फर्श व रोशनी के सिवाय पुस्तकें व स्टेशनरी भी शिक्षार्थियों को बिना मूल्य देनी चाहियें। इन सब खर्चों के लिय बड़े समाजों में चन्दा वा दान का प्रबन्ध होना कठिन नहीं। छोटे वा साधारण समाजों के लिये प्रान्तीय आर्य-प्रतिनिधि सभा आर्थिक सहायता देवें और इसके लिये एक विशेष निधि खोलनी चाहिये। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को भी इस महत्वपूर्ण कायके लिये एक निधि खोलनी चाहिये, क्योंकि कुछ प्रान्तीय सभायें ऐसी शक्तिशालिनी नहीं कि अपने प्रान्त के समाजों को आर्थिक सहायता दे सकें।

इस प्रकार यह कार्य सारे भारत में चालू हो सकता है।

मेरी सम्मति में यह विषय मेरठ में होने वाले 'आर्य-महा सम्मेलन' में प्रस्ताव के रूप में रक्खा जाय। यदि सम्भव हुआ तो मैं एक प्रस्ताव लिखकर भेज दूंगा, (क्योंकि अपने हीन स्वास्थ्य के कारण यह आशा नहीं कि मैं सम्मेलन में उपस्थित हो सकूं)। स्वयम् श्रीमती शकुन्तला देवीजी सम्मेलन की स्वागत-समिति की अध्यक्षा वा नेत्री हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि ऐसा प्रस्ताव अवश्य स्वीकृत होगा। सम्मेलन से स्वीकृत होने पर वह सार्वदेशिक सभा की आज्ञा के लिये उक्त सभा में भेज दिया जाय, जिससे सारे भारतवर्ष में यह उत्तम काय सुचारु से कार्यान्वित हो सके।

श्रीमती शकुन्तला देवी ने अपने सुझाव में कहा है, "इस प्रकार आर्यसामाजिक जन जनता के अधिकाधिक सपर्क में आयगे और सरलता से आर्य सिद्धान्तों का प्रचार हो सकेगा।" इसकी तथ्यता में तो तनक भी सन्देह नहीं हो सकता, परन्तु आर्य सिद्धान्तों के प्रचार को छोडकर देश-सुधार की दृष्टि से प्रौढ़-शिक्षा का कार्य भी बड़े महत्व का है। मेरा तो यह विचार है कि पूर्वोक्त शिक्षा प्रचार के कार्य में समाजों को धार्मिक शिक्षा के नाम से कोई शिक्षा विषय रखने की आवश्यकता नहीं। उससे कुछ लोगो में "साम्प्रदायिकता" के भाव पदा होने का अन्देशा हो सकता है जो आजकल बहुत फैला हुआ है। समाज-मन्दिर का स्थान और आर्य सदस्य का शिक्षक होना इसके लिये पर्याप्त है कि जो शिक्षा वहाँ दी जायगी वह वैदिक धर्म के आधार पर ही होगी। शिक्षार्थियों को कुछ प्रार्थना-मन्त्र, श्लोक वा भजन आदि सिखलाना अवश्य ठीक होगा।

शिक्षा प्राथमिक (Upper-Primary) श्रेणी तक होनी उचित है. यदि कुछ शिक्षार्थी उसको भी पूरी न कर सकें तो हर्ज नहीं। सरकारी विभागो में चिट्ठी पत्री लिखने पढ़ने की और घर के कामकाज के हिसाब लिखने की योग्यता हो जाना भी प्रौढ़ शिक्षा के लिये पर्याप्त समझा गया है।

आशा है कि सब आर्यसमाज इस योजना का स्वागत करेंगे, और सम्मेलन में प्रस्ताव होने पर उसका समर्थन करेंगे। कार्य इतना उपयोगी और सुगम है कि बहुत-से आर्य तो तुरंत ही उसका प्रारंभ कर सकते हैं।

—

महिला-मण्डल

देश की सम्पति देश के बच्चे

श्रीमती सावित्री देवी शर्मा, बी० ए०

बच्चे राष्ट्र की अनमोल निधि हैं। आज का बच्चा ही कल का नागरिक होता है, और उसी के हाथों में होती है राष्ट्र की बागडोर। जैसे किसी देश के बच्चे होंगे वैसा ही राष्ट्र भी बनेगा। यह सब जानते हुए भी जब मैं किसी भी प्राइमरी स्कूल के बच्चों को "देश की सम्पत्ति देश के बच्चे" नामक नारा लगाते हुए सुनती हूँ, तो अनायास ही मुझे हसी आ जाती है। मैं सोचने लगती हूँ कि जिस देश की इस "सम्पति" में दिन दूनी रात-चौगुनी वृद्धि हो रही हो, उस देश की गणना विश्व के निर्धन देशों में क्यों की जाती है? देश के शुभचिन्तक क्यों इतने चिंतित हैं, देश की इस "सम्पत्ति" की वृद्धि से। इसका कारण केवल यही है कि हम अपने बच्चों की उचित सार-संभाल नहीं रखते। हमारे देश में बच्चों की कम से कम चिन्ता की जाती है। उनके शारीरिक व मानसिक विकास की ओर तनक भी ध्यान नहीं दिया जाता। यह अनमोल निधि दुर्भाग्य से ऐसे व्यक्तियों के संरक्षण में रहती है, जो इस "सम्पत्ति" के महत्व को ही नहीं समझते और वे हैं देश की मातायें।

बच्चों की सर्व-प्रथम शिक्षक उसकी मा होती है, जिसके सम्पर्क में वह अपना समस्त शैशव व्यतीत करता है। मनोविज्ञान के सिद्धांतों के अनुसार यह अवस्था मनुष्य के चरित्र-निर्माण के लिये बहुत ही उपयुक्त है। उस आयु में जो कुछ भी बच्चा सीखता है, वह पत्थर की लकीर की भाँति अमिट होता है। यदि इस आयु में पूरी सतर्कता से काम लेकर बच्चों के विकास की पर्याप्त चेष्टा न की गई तो बाद में उन पर किया गया समस्त व्यय और परिश्रम व्यर्थ हो जाता है। प्राचीन मातायें बच्चों के पालन-पोषण में सावधानी रखने के महत्व को भली भाँति समझती थीं। यही कारण था कि बड़े-बडे राज-घरानों की मातायें पर्याप्त दास-दासियों के होते हुए भी अपने बच्चों की देख-भाल स्वयम् किया करती थीं। उनकी प्रत्येक गति-विधि पर वह लक्ष्य रखती थीं और युवा होने पर जब उनके पुत्र व पुत्रियाँ कोई अनुचित कार्य करते थे तो वे आधुनिक माताओं की भाँति ईश्वर को अथवा अपने भाग्य को दोष देने की अपेक्षा पालन पोषण के समय की अपनी ही किसी त्रुटि को खोजती थीं जो कि बच्चे के उस अनुचित कार्य के रूप में प्रकट होती थी। हमारा देश उन महापुरुषों के लिये जिनका नाम आज भी भारतवासी गौरव के साथ लेते हैं, ऐसी ही माताओं का आभारी है, परन्तु आज हम किससे ऐसी आशा करें? कौन देगा हमें शिवाजी जैसे वीर, श्रीराम जैसे योगी एव महाराणा प्रताप जसे देशभक्त। क्या उन धनी मानी महिलाओं से जो अपने हाथों से अपने शिशुओं का पालन पोषण करना अपनी एव अपने कुटुम्ब की शान के विरुद्ध समझती हैं, जो बच्चों को आया अथवा दाइयों के सुपुर्द करके निश्चिन्त हो जाती है, एवं बहुमूल्य वस्त्र एव मनोविनोद की सामग्री जुटाने मात्र तक ही मा का कर्त्तव्य सीमित समझती हैं, अथवा उन ग्रामीण माताओं के हाथों में हम अपनी इस राष्ट्रिय धरोहर को सुरक्षित समझें जो अपने पुत्र एव पौत्रों की संख्या में वृद्धि होते देख कर फूली नहीं समातीं चाहे उनके ये बच्चे कितने ही कुकर्मी, अशिक्षित, एव चरित्रहीन, क्यों न हों। जो मा भूत-प्रेत, स्याने-दीवाने और मौलवी-मुल्लाओं से अपने बच्चो के स्वास्थ्य की याचना करती रहती हैं, एवं जो किसी की कुदृष्टि लगने के भय से अपने बालकों को साफ़-सुथरा रखने तक से घबराती हैं, उनके द्वारा पालित बच्चे कभी भी किसी राष्ट्र का भार सँभालने योग्य नहीं हो सकते। मनुष्यता के कर्त्तव्यों से नितान्त अनभिज्ञ इन नागरिकों की वृद्धि से यदि हमारे देश के विद्वान् चिन्तित हैं तो आश्चर्य ही क्या है?

आज स्वतन्त्र भारत को अपने राष्ट्र के विकास के लिए ऐसी शिक्षित माताओं की आवश्यकता है जो उसे ऐसे नागरिक दे सकें जो कि इस पथ भूले प्रमाद में पड़े आधुनिक राष्ट्र को अपने पुरुषार्थ द्वारा सम्पन्न और शक्तिशाली बना सकें, परन्तु क्या वह आधुनिक शिक्षित नारियाँ देश की इस आवश्यकता को पूरी कर सकेंगी जो अपने बच्चों को 'मम्मी', 'डैडी', पापा, 'आन्टी' एव 'गुडमार्निंग' आदि शब्द सिखाकर ही अपनी शिक्षा का प्रमाण देना यथेष्ट समझती हैं और बच्चों के पालन पोषण की अन्य महत्वपूर्ण बातें जिन पर कि उनका सर्वतोमुखी विकास निभर है घर की अशिक्षित वृद्धाओं पर ही अवलम्बित रहती हैं, परन्तु इसमें शिक्षित माताओं का नहीं बल्कि उनकी शिक्षा का ही विशेष दोष है। जिन बालिकाओं का समस्त बचपन इतिहास, भूगोल एव अर्थशास्त्र आदि रटते हुए व्यतीत हुआ हो, जिन्हें बच्चों के मनोविज्ञान और बालशिक्षा शास्त्र का प्रारम्भिक ज्ञान भी न हो और अपनी यह स्कूल की शिक्षा समाप्त करते ही उन पर मातृत्व जैसा गहन उत्तरदायित्व लाद कर यह आशा करना कि वह अपनी सन्तान को शिवाजी की माता जीजाबाई की भाँति शिक्षा दे सकेंगी, कहाँ तक युक्ति-संगत है, यह विचारणीय है। अतएव आज राष्ट्र की उन्नति के लिए देश के बच्चों से अधिक उनकी माताओं को उचित एव समयानुकूल शिक्षा देने की आवश्यकता है, जिससे वे प्रत्येक भारतीय गृह में ऐसा वातावरण पैदा करें जिसमें रहकर हमारे बच्चे सुसंस्कृत, प्रभावशाली एव महान् बन सकें।

—

सामयिक समस्याएँ

आर्य-महासम्मेलन

श्री बा० कालीचरण आर्य, प्रधान मन्त्री, आर्य महासम्मेलन स्वागत समिति

प्रश्न है कि मेरठ में होने वाला यह सप्तम आर्य महासम्मेलन क्या करेगा और इससे क्या लाभ होगा। उत्तर सीधा है और सरल भी। जिस काय के करने के लिये आयसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्दजी महाराज ने आर्यसमाज का स्थापना का थी उसा काम को करने कराने क लिये आर उसको प्रगति दने के लिये यह सम्मेलन किया जा रहा है। प्रत्येक आर्यसमाज का क्षेत्र सीमित होता है, बड़े सम्मेलन का क्षेत्र बढ़ जाता है, परन्तु इस महासम्मेलन का कार्यक्षेत्र न केवल भारतवष है, अपितु सारा ससार है। इस समय आर्यसमाज क घोष को, उसके सदेश को ससार क प्रत्येक प्राणी तक पहुँचाना हे। सोई हुई जनता को जगाना है, जागते हुये को सचेत करना और कतव्य पथ पर आरूढ़ करना है। जो अब तक अपने हानि-लाभ को नहीं पहचानता, उसको बतलाना है कि किस काम को करने से लाभ है और किस काम को करने से हानि होगी। आयसमाज का उत्तरदायित्व दिनो-दिन बढ़ रहा है। देश और समाज की दशा शोचनीय होती जा रही हे। प्रत्येक प्राणी को अपना जीवन सकटमय प्रतीत होता है और वह अपने आपको 'किकर्त्तव्य विमूढ़' की दशा में पाता है। सन्तोष क स्थान पर असतोष, शान्ति के स्थान पर अशान्ति, प्रम भाव के स्थान पर वैर-विरोध, सुख के स्थान पर कलह और सताप का राज्य हो रहा ह। जो प्रयत्न इस पारस्परिक अविश्वास, अशान्ति को दूर करने के लिये किये जाते हैं, सब असफल हो रहे हैं। ऐसी दशा में आयसमाज का चुप बैठे रहना, मन्द शब्दो में कुछ कहना, या धीमी चाल से अपने काय को करना उसके लिये कलङ्क की बात होगी, और ऋषि दयानन्द क लिये उपकारों के प्रति हमारी कृतघ्नता होगी।

महा सम्मेलन ६ अक्टूबर से आरम्भ होगा। इससे पूर्व मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक आर्य नर-नारी, बाल वृद्ध अपने कर्त्तव्य पर आर्यवीर की भाँति डट जावें और आर्यसमाज के सदेश को घर-घर पहुँचाने का प्रयत्न करें। अपने समस्त कामो को करते हुये कुछ समय इस काम क लिये भी निकालें। जो महानुभाव गृहस्थ में रहते हुये, वानप्रस्थ जीवन व्यतीत कर रहे हैं, उन्हे तो अपना पूरा समय ही इस ओर लगा देना चाहिये। आर्यसमाज-प्रवर्त्तक ने आर्यसमाज के नियमों और मन्तव्यों में एक आर्यवीर के कर्त्तव्य को भर दिया जिसका आर्यसमाज इस संसार में प्रचार और प्रसार कर रहा है, और करता रहा है आयसमाज का दृढ़ विश्वास है कि ऋषि दयानन्द के बतलाये हुए सत्य सनातन, सार्वभौम वैदिकधर्म के सिद्धान्तो से ही संसार का कल्याण होना सम्भव है। उन्ही सिद्धान्तों को समझ कर और उन पर आचरण करके ही प्रत्येक प्राणी हर प्रकार की समस्या को न केवल अपने लिये सुलझा लेता है, अपितु दूसरों के लिये भी ऐसा माग प्रदर्शित करता है, जिस पर चल कर अपने लक्ष्य तक पहुचने में यात्री सफलता अनुभव करते हैं। आर्य बन्धुओ, सप्तम सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन आर्यसमाज का एक बड़ा मेला है, परन्तु यह ध्यान रहे कि यह केवल एक बड़ा मेला ही नहीं ह, और न इस दृष्टि से इस सम्मेलन को मना रहे हैं। हमारा ध्येय तो इस घोर संकट के समय जब कि ससार आर्य समाज की ओर देख रहा है, संसार को कुछ देना ह जो उसकी जीवन समस्या को सुलझा सके। आर्यसमाज ही इसका पथ-प्रदर्शक बन सकता है जिसकी किसी प्रकार का कोई प्रलोभन नहीं। आर्यसमाज के काम में कोई ऐसी भावना निहित नहीं, और न होनी चाहिये, जिससे यह गध भी आवे कि आर्यसमाज जनता से सेवा के बदले कुछ चाहता है। आर्यसमाज के सदस्यों द्वारा निष्काम भाव से ही सेवा होती है, और होनी चाहिये। इस सेवा का उद्देश्य संसार की अनार्ष बुद्धि को बदलना है। यह अनार्ष बुद्धि ही ससार की अशान्ति, कलह और असन्तोष का एक मात्र कारण हे।

— –

वृन्दावन-गुरुकुल

श्री प० शिवनारायण शुक्ल एडवोकेट

इधर कई मास से लगातार गुरुकुल के सम्बन्धमें लेख निकल रहे हैं, जिनका सारांश यह है कि गुरुकुल की अवस्था शोचनीय हो रही है। यह लेख प्रायः इसी सद्भावना से प्रेरित हो कर लिखे गये हैं कि जिस दलदल में यह सस्था फसी हुई है, उससे उसे निकाला जाये। मैं भी अपनी गणना इस सस्थाके हितैषियोंमें करके कुछ पंक्तियां लिख रहा हूँ। मेरी सम्मति में उत्तर प्रदेश की आर्यप्रतिनिधि सभा का यह कर्त्तव्य है कि वह शीघ्र ही एक सभा वृन्दावन में बुलाकर इस पर गम्भीरता-पूर्वक विचार करे कि गुरुकुल को हमें चलाना है या नहीं और चलाना है तो किस रूप में। इस सभा में गुरुकुल के स्नातक, ब्रह्मचारियों के संरक्षक, अध्यापक, शिक्षा के विशेषज्ञ, कुछ पुराने कार्यकर्त्ता और प्रमुख आर्य होने चाहियें; परन्तु इन सबकी संख्या २५, ३० से अधिक न हो, क्योकि अधिक संख्या में विचार-विनिमय में कठिनाई होती है। साथ ही सभासदों को यह भी सूचना देदी जाये कि वह लगभग एक सप्ताह गुरुकुल में ठहरने के लिए तैयार होकर आवें। मैं समझता हूँ कि गुरुकुल ही क्या, हमारी प्रान्तिक सभा की दशा भी एक ऐसी अवस्था में पहुच गई है कि उस पर सब आर्य भाइयों को गम्भीरता से सोचना चाहिये। दुर्भाग्य से हमारे वृहदधिवेशन अब बिल्कुल सारहीन हो गये हैं। आर्यसमाजों के चुने हुए २०० व्यक्ति अपनी गाढ़ी कमाई का पैसा खर्च करके रात्रि को यात्रा की यातना सहकर पहुँचते हैं और तीन-चार घंटे के बाद जब निर्वाचन का काम समाप्त हो जाता है तो सब प्रतिनिधि अपने-अपने घर लौटने के लिये रेलवे टायमटेबिल के पन्ने उलटने लगते हैं। उत्तर प्रदेश की लगभग एक हजार समाजों में से कवल सौ सवासौ समाजो को छोड़कर शेष समाजो की क्या अवस्था हे। प्रतिवर्ष वेद-प्रचार में दस-पन्द्रह हजार का घाटा बढ़ रहा है, गुरुकुल की दशा गिर रही है, इन विषयों पर कोई गम्भीरता से विचार करना ही नही चाहता। निर्वाचन क बाद जो नयी केबिनेट की बैठक होती है उसमें 'रस्म अदायगी' की कार्यवाही कठिनाई से एक घटे भर में समाप्त हो जाती हे।

मै समझता हूँ, अब इस टालमटोल से काम चलने वाला नहीं है। यदि हम गुरुकुल को वर्तमान शैली पर चला सकते तो हमें साहस करके उसे बदल देना चाहिये। गुरुकुल अब परीक्षण की दशा में नहीं है, उसे चलते हए ५० वर्ष हो चुके हैं। सैकड़ों स्नातक देश में काम कर रहे हैं, जनता उसके फलों को चख चुकी है। रही बात धन और कार्यकर्त्ताओ की, मैं धन की अपेक्षा कार्य कर्त्ताओ को ही मुख्य समझता हू। इस समय प्रान्त में सैकड़ो सस्थाये आर्यसमाजों द्वारा चल रही हैं। कानपुर, देहरादून लखनऊ के डा० ए० वी कालेजो को ही सामने रख लीजिये। ये संस्थायें तीन-चार व्यक्तियो के अदम्य उत्साह, अथक परिश्रम और आत्मविश्वास तथा उनके सहयोगियो के अटूट और अन्ध श्रद्धा के उज्वलन्त उदाहरण हैं। अभाग्यवश हम स्वय काम नहीं करते और जो काम के लिए आगे बढ़ते हैं, उन पर हम विश्वास नहीं करते।

मैंने स्वय भी कुछ समय इस काम में लगाया ह, और कुछ अनुभव प्राप्त किया है। स्वर्गीय प० घासीरामजी ने श्री सेठजी को लिखे अपने पत्र में अपने कटु अनुभवों की जो झलक दिखाई है उसमें एक शब्द भी अत्युक्ति नहीं है, परन्तु 'बीती ताहि बिसार दे आगे की सुधि लेउ'

———

विचार-विनिमय

मेरे विचार

आर्यमित्र के सम्पादक महोदय पुराने आर्यसमाजी हैं और उनके कई लेखों से ऐसा प्रतीत होता है, मानो उनके हृदय में आर्यसमाज के उत्थान और उन्नति के लिये ज्वाला धधक रही है परन्तु आर्यमित्र के अंकों में ऐसे लेख भी होते हैं, जिनसे उनकी इच्छापूर्ण होना कठिन ही नहीं, बल्कि असम्भव हा दीखती है।

२१ व २८ जून के अंकों को देखिये। २१ जून के प्रथम पृष्ठ पर चार चित्र हैं, जिन में एक आचार्य विनोबा भावेका, दूसरा आचाय कृपलानी का, तीसरा श्री एम, एस अणे का और चौथा श्रीसम्पूर्णानन्दजी का है। मैं यह बल पूर्वक कह सकता हूं कि ये चारो सज्जन आर्य नहीं हैं, और इनके हृदयो में कोई प्रेम आयसमाज के लिये नहीं है। इनमें प्रथम सज्जन तो सर्वोदय समाज के जन्मदाता और कार्यकर्त्ता है। शुद्ध हुए मुसलमानो की चोटी कटवाकर, यज्ञोपवीत तुड़वाकर और आर्यधर्म से वंचित् करके उनको फिर से मुसलमान बनाने का कार्य इसी समाज ने किया है। इसके विरुद्ध आर्य सार्वदेशिक सभा को प्रस्ताव करके अपने प्रचारक भेजने पड़े। यह चारो सज्जन अपने क्षेत्र में ऊंचा स्थान रखते हैं और वहां सम्मानित पदों पर हैं, परन्तु आयसमाज से इनका तनक भी लगाव नहीं है। इसमे भी कोई सन्देह नहा है कि ये कांग्रेस के कायकर्त्ता हैं और रहे हैं। परन्तु उनके सम्बन्ध मे आयमित्र के पृष्ठों पर कुछ भी कहा जाना कहां तक उचित है, यह बात विचारणीय है। 'आर्यमित्र' उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का गजट है और केवल आयसमाज के सिद्धान्तो का प्रचार और आर्यसमाज सम्बन्धो सूचनाओं का आर्यजगत म प्रसारित करना उसका मुख्य ही नहीं केवल एक मात्र कर्तव्य है। कांग्रेस के प्रचार के लिये तो आज देश मे सहस्रो हैं, जो करोड़ों आदमियों तक उनकी नीति का प्रचार करते हैं, परन्तु हमारे आर्यसमाज के पास तो केवल एक ही पत्र इस प्रान्त में है। यदि उससे भी कांग्रेस या अन्य संस्थाओं का प्रचार होने लगे तो नहीं कहा जा सकता कि आर्यसमाज की आवाज को आर्यजगत् तक कैसे पहुंचाया जावेगा। आर्यमित्र प्रकाशन लि० के भागीदारों को यही आश्वासन दिया गया था कि इसके द्वारा आर्यसमाज का प्रचार किया जावेगा।

अब प्रश्न यह है कि क्या कांग्रेस और आर्यसमाज का प्रचार एक है। मेरी दृष्टि में ऐसा नहीं है। जो महानुभाव ऐसा स्वप्न देखते हैं, वह उचित नहीं है। कांग्रेस एक राजनैतिक और धर्मनिरपेक्ष संस्था है, और आर्यसमाज विशुद्ध धार्मिक। कांग्रेसी विचार के आर्यसमाजी सज्जन तो इसमें राजनीति की गध भी नहीं देख सकते और इसको कोरा धर्म मानते है। ऐसे विचारवानों के लिये दोनों में समता होनी समझ में नहीं आती। दोनों की नीति का प्रचार करने से सम्पादक महोदय का स्वप्न कभी पूरा नहीं हो सकता और आर्यसिद्धान्तों का प्रचार असम्भव है। मेरा तो यह मत है कि देश में राजनीति के वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार के अभाव ने और वैदिक राजनीति से दूर रहने से आर्यों को अपनी इच्छा के विरुद्ध दूसरे सिद्धान्तों को अपनाना और अपनी आत्मा का हनन करना पड़ा जिसका अब उनको पक्ष पड़ गया है। गर्व से कहा जाता है कि यह आर्यसमाजी ही हैं जिन्होंने दूसरी संस्थाओं में घुसकर राजनीति को चमका कर दिखाया है। परन्तु यह बात भी विचारणीय है कि वहां आयसमाजियो की यह हिम्मत नहीं है कि वे अपनी विचार-धारा को वहां प्रकट भी कर सकें। यदि हमने अपनी राजनीति से दूर रहने की भूल न की होती तो जो शक्ति हमारे कारण दूसरी संस्थाओं को प्राप्त है, वह हमारे पास होती और हम वैदिक सिद्धान्तो के प्रचार में कहीं दूर पहुच जाते और ऋषि-ऋण से उऋण होते।

२८ जून के आर्यमित्र में जो सम्पादकीय लेख "खरी आलोचना" के शीर्षक से प्रकाशित हुआ है उसी के कारण मैंने अपने विचार प्रकट किये हैं। अब देखता हूं कि मेरे विचारों का स्वागत होता है या रोष प्रकट होता है। राजनीति की शुद्धि और भ्रष्टाचार इत्यादि दूर तभी हो सकते हैं जब वैदिक आदर्शों का ज्ञान जनता तक पहुंचाया जावे। कांग्रेस और हमारे सिद्धान्तों में आकाश भूमि का अन्तर है। धर्मनिरपेक्ष संस्थाओं की नीति पाश्चात्य सिद्धान्तो पर अवलम्बित है जिमको दूर करने और आर्य जाति को उसके विषैले प्रभाव से मुक्त करने के लिये ऋषि दयानन्द ने अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया, परन्तु हम उसके अनुयायी हैं कि उन्हीं संस्थाओं का प्रचार करके अपने आपको धन्य समझते हैं। क्या आर्यजगत् के महानुभाव उपर्युक्त बातो पर विचार करेंगे?

हरसरनदास
गाजियाबाद।

हमारा वक्तव्य

श्री हरसरनदासजी प्रतिष्ठित आर्य कार्यकर्त्ता और जिम्मेदार आर्यसमाजी हैं। आप कितनी ही आर्यसभा-संस्थाओं के आदरणीय सदस्य और अधिकारी हैं। अतएव हम आपके लेख को ज्यों का त्यों प्रकाशित करते हैं और साथ ही इस सम्बन्ध में अपना अभिप्राय भी देते हैं। आशा है, वे स्वय तथा उनकी-सी विचार-धारा के अन्य आर्यसमाजी सज्जन हमारे आशय को समझने की कृपा करेंगे।

आर्यमित्र में उपर्युक्त चारों चित्र प्रकाशित हुए हैं। ये चारों ब्लाक लखनऊ में आयप्रतिनिधि सभा ने ही बनवाये थे, जिसका कि 'मित्र' 'गजट' है। सम्भवतः ये ब्लाक छपने को ही बनवाये गये होंगे और किसी काम तो वे आ नहीं सकते। लखनऊ में स्वयं सभा की देख-रेख में ये ब्लाक पहले भी छप चुके हैं। अब २१ जून के अंक में भी वे प्रकाशित कर दिये गये तो क्या हानि हो गयी। १—आचार्य विनोबा के चित्र के नीचे लिखा है-इन्होंने पैदल चलकर विशुद्ध गाँधीवाद, नैतिकता और मानवता के मूल सिद्धान्तों का प्रचार किया। २—आचार्य कृपलानी के चित्र के नीचे लिखा है-भ्रष्टाचार दूर करने और गांधीवादके पुनः प्रचारके लिये आपने प्रजापार्टी को जन्म दिया है। ३—माननीय अणे के चित्र के नीचे लिखा है-आप संस्कृत के प्रचार और प्रसार में सतत प्रयत्नशील रहते हैं। और ४—श्री संम्पूर्णानन्दजी के चित्र के नीचे लिखा है-आप सस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना के लिये पूर्ण रूप से सचेष्ट हैं। हिन्दी के प्रसिद्ध दार्शनिक लेखक और ग्रन्थकार हैं।

हमारी समझ में नहीं आता कि इन चित्रों और उनके नीचे लिखी पंक्तियों में कांग्रेस का प्रोपेगेण्डा कहाँ है? यदि संस्कृत-प्रचारके प्रयत्न और मानवता, नैतिकता अथवा गांधीवाद के प्रसार की सकेतात्मक सूचनाएं देना भी अनुचित है, तो वास्तव में उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभाने अपने 'गजट' के लिये ये तथा अन्य बीसियो कांग्रेसियोंके ब्लाक बनवा और उन्हें छपवा कर सख्त गलती की है।

श्रीहरसरनदासजी ने इन व्यक्तियों के चित्रों पर तो आपत्ति की, क्योंकि वे आयसमाजी नहीं हैं, परन्तु कभी यह भी सोचा कि गुरुकुल-सभाएँ, आर्यप्रतिनिधि सभाएं और आयसमाज जिन कांग्रेसी नेताओं तथा मिनिस्टरो को मिन्नत कर-करके अपने यहाँ दीक्षान्त भाषणों, उद्घाटनों या सभापतित्व आदि कार्यों के लिये बुलाने और लाने में अपना चरम और परम सौभाग्य समझती हैं, उनमें से कितने 'आर्यसमाजी' हैं। ऐसे बीसियों गैर आर्यसमाजी नेताओं की सूची गिनाई जा सकती है, जिनके द्वारा आर्यसमाजियों ने आर्यसमाजो के बड़े से बड़े कार्य सम्पन्न कराये। शायद श्री हरसरनदासजी भूले न होंगे कि अभी कुछ मास पूर्व एक प्रसिद्ध गुरुकुल की संचालक-समिति ने दीक्षान्त भाषण के लिये एक मुसलमान मिनिस्टर को बुलाया

था। मिनिस्टर साहब किसी कारणवश न पधार सके यह दूसरी बात है। माननीय श्री गोविन्द-वल्लभ पन्त किस आर्यसमाज के सदस्य है, जो हाल ही में आर्य-समाज के कई कार्य सम्पन्न कर चुके हैं। जिन माननीय अणे साहब के चित्र पर आपत्ति की गई है, उन्हीं की अध्यक्षता में शोलापुर में आर्य जनता ने हैदराबाद-सत्याग्रह करने का निश्चय किया था और आर्यपत्रों ने उनके बड़े-बड़े चित्र छापे थे। तब क्या अणे साहब आर्यसमाजी थे। यू० पी० के लेफ्टीनैंट गवर्नर सर जेम्स मेस्टन के कर-कमलों से वृन्दावन गुरुकुल की आधारशिला रखवाई गयी थी, सम्भवतः उन्होंने भी किसी आर्यसमाज की सदस्यता का प्रवेश-पत्र नहीं भरा था। कितने ही अंग्रेज कलक्टरों ने उस समय अपने शुभागमन से आर्यसमाजों को कृतार्थ किया था। एक नहीं, ऐसे बीसियों गैर आर्यसमाजी कांग्रेसी नेताओं के नाम लिये जा सकते हैं जिन्होंने गुरुकुलों में आकर स्नातकों को दीक्षान्त भाषण तक दिये और अपने व्याख्यानों से अनेक आर्यसमाजों को कृतार्थ किया। कौन नहीं जानता कि अमर शहीद पूज्य श्री० स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज कांगड़ी गुरुकुल में गैरआर्यसमाजी बड़े-बड़े विद्वानों और नेताओं को आमन्त्रित करते, उनके व्याख्यान कराते और चित्र छपाते थे। जरा उस समय के समाचारपत्रों का तो अवलोकन कीजिए।

बात यह है कि आर्यसमाज सामूहिक रूप से सदैव राजभक्त रहा है। पहले वह अंग्रेज अफसरों का भक्त था और अब कांग्रेसी शासकों का। ऐसी दशा में कांग्रेस के प्रभाव या प्रवाह से वह कैसे दूर रह सकता है। एक ओर तो आर्यसमाजों द्वारा कांग्रेसी नेताओं को आग्रह पूर्वक आमन्त्रित करने में सौभाग्य समझा जाता है, दूसरी ओर उनके चित्र छापने से भी परहेज! कैसी अद्भुत नीति और कितनी विचित्र मनोवृत्ति है।

आगामी आर्य महासम्मेलन मेरठ में हो रहा है सुना है, उसमें गैर आर्यसमाजी कांग्रेसी नेता भी बुलाये जायेंगे। ऐसी दशा में श्रीहरसरनदासजी को बड़े असमंजस में पड़ जाना पड़ेगा। क्योंकि वे शायद महासम्मेलन की कार्यकारिणी के भी सदस्य हैं। या तो उन्हें सदस्यता छोड़नी पड़ेगी, या 'गैर आर्यसमाजी' कांग्रेसी नेताओं से महा सम्मेलन शून्य रहेगा। ज्ञात नहीं किस बात को वे पसन्द करेंगे।

'सर्वोदय समाज' के नियम और उद्देश्य हमने भी पढे हैं, उनमें किसी शुद्ध हुए की चोटी काटने या जनेऊ तोड़ने का विधान नहीं है। जो व्यक्ति 'सर्वोदय-समाज' के नाम पर ऐसा करता है, वह उसका और समाज का शत्रु है और उसका यह घोर घृणित कार्य धिक्कारने योग्य है।

श्रीहरसरनदासजी ने यह बात बहुत ठीक लिखी है कि वर्तमान आर्यमित्र सम्पादक 'पुराना आर्यसमाजी' है। बेशक पुराना, और दो पीढ़ियों का पुराना!—उस समय का जब कि आर्यसमाज का संसार में अस्तित्व या प्रादुर्भाव ही हुआ था। और इसीलिये वह आर्यसमाज के किसी बड़े से बड़े सेवक तथा शुभचिन्तक की समता में अपने को जरा भी कम नहीं समझता। परन्तु उसे संकीर्णता, प्रलोभन, प्रभाव या दबाव के कारण सत्य को आँख ओझल करने अथवा 'ठकुर सुहाती' कहने की आदत नहीं है। वह आर्यसमाज के विश्वव्यापी विराट् वैभव को 'कठमुल्लापन' की पिटारी या संकीर्णता की सन्दूकड़ी में बन्द रखना पसन्द नहीं करता। जब तक उत्तर-प्रदेशीय सभा द्वारा स्पष्ट निषेध आज्ञा न होगी तब तक 'मित्र' में प्रासंगिक चित्र अवश्य छपते रहेंगे। चाहे वे कांग्रेसियों के हों, चाहे आर्यों के अथवा और किसी के। वर्तमान राजनीति या राजनैतिक दलों से 'आर्यमित्र' का कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। सामूहिक रूप से आर्यसमाज के राजनीति में प्रवेश करने के हम सर्वथा विरुद्ध है।

श्री हरसरनदासजी अपने लेख में 'आर्यमित्र' के ऐसे एक लेख का भी उल्लेख नहीं कर सके जिसमें अवाञ्छनीय बातों का प्रचार किया गया हो। हमारा विश्वास है कि 'आर्यमित्र' यथोचित रीति से अपना कर्त्तव्य-पालन कर रहा है। वैदिक धर्म प्रचार तथा आर्य-समाज की सेवा करना ही उसका मुख्य ध्येय है और रहेगा। यदि श्री हरसरनदासजी 'आर्यमित्र' के पिछले लेखों को ध्यान पूर्वक पढ़ेंगे तो उन्हें स्पष्ट ज्ञात होगा कि हमने धर्महीन राजनीति की सदैव तीव्रतर निन्दा की है और कांग्रेस शासन की भूलों को कभी नहीं बख्शा। अनौचित्य तो सब ही निन्दनीय हैं, चाहे वे कांग्रेस के हों चाहे आर्यसमाज के, अथवा और किसी के।

—सम्पादक

आर्यसमाज मथुरा एवं तत्सम्बन्धी संस्था विशयक व्यवस्था-पत्र

आर्यसमाज मथुरा वैधानिक नियमानुसार उत्तरप्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा से सम्बद्ध एवं अधीन एक आर्यसमाज है। विषम तथा अव्यवस्थित परिस्थिति के कारण सभास्थ अन्तरंग सभा ने अपने निश्चय सं० ४० ता० २-१०-५० के द्वारा सभा प्रधान को वैधानिक नियमानुसार कार्य करने का अधिकार दिया है, तदनुसार सभा प्रधान ने सभा के नियम १६ (१) तथा आर्य समाज के उपनियम ४६ के अनुसार आर्यसमाज मथुरा के संगठन को ३१-१२-५१ तक के लिये स्थगित कर दिया और उक्त समाज के सात आर्यसभासदों को सभा के नियम १६ (२) के अनुसार २ वर्ष के लिए आर्यसभासदों के अधिकारों से वंचित कर दिया।

आर्यसमाज मथुरा एवं उससे सम्बद्ध संस्थाओं की प्रबन्ध व्यवस्था के लिये सभा प्रधान ने श्री रामनाथजी मुख्तार मथुरा, श्री चा० जयदेवसिंहजी ऐडवोकेट मेरठ और श्रीरमेशचन्द्रजी वकील मथुरा की एक प्रबन्ध-समिति बनादी कि वह समस्त प्रकार की प्रबन्ध व्यवस्था करती रहे। सभा की ओर से श्री रमेशचन्द्रजी प्रबन्ध का कार्य मुख्य रूप से करते रहें।

आर्यसमाज मथुरा की परिस्थिति एवं परिवर्तित प्रगति की आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुये सभास्थ अन्तरंग सभा ने अपने निश्चय सं० १६ ता० २०-४-५१ के द्वारा सभा प्रधान की परिवर्तित परिस्थिति के अनुरूप उचित व्यवस्था करने का अधिकार प्रदान किया।

आर्यसमाज मथुरा सम्बन्धी सभी बातों को दृष्टि में रखते हुये अन्यथा अन्य व्यवस्था होने तक आर्यसमाज मथुरा तथा तत्सम्बन्धी संस्थाओं की प्रबन्ध-व्यवस्था निम्नस्थ प्रबन्ध-समिति करेगी।

१—श्री कर्णसिंह छोंकर, डेम्पियरनगर, मथुरा प्रधान।

२—श्री रमेशचन्द्रजी वकील, तिलक द्वार, मथुरा, मन्त्री।

३—श्रीमती वीरबाला देवीजी पत्नी श्री रामनाथजी मुख्तार मथुरा कैण्ट प्रबन्धक, आर्य-कन्या पाठशाला, मथुरा। श्री कर्णसिंहजी छोंकर प्रबन्ध-समिति के प्रधान होते हुए आर्यसमाज मथुरा विषयक धन प्राप्त करने तथा उसके सम्बन्ध का पूर्ण आयव्ययादि का विवरण रखने का कार्य करेंगे। श्री रमेशचन्द्रजी आर्यसमाज विषयक मंत्री, पद का कार्य करेंगे। श्रीमती वीरबाला देवीजी आर्यकन्या पाठशाला की प्रबन्धक (मैनेजर) रहेंगी और तत्सम्बन्धी आय-व्यय आदि हिसाब विषयक समस्त कार्य करेंगी।

आर्यसमाज मथुरा के अनुशासित आर्यसभासद् श्री मुरारिलाल शर्माजी ने तारीख २८-३-५१ को एक पत्र क्षमा-याचना के रूप में दिया है कि उनके सम्बन्ध में दी गई प्रतिबन्धाज्ञा रद्द करदी जाय। उनके आश्वासन को दृष्टि में रखते हुए आदेश दिया जाता है कि समाज सम्बन्धी जो कुछ प्राप्तव्य धन उन पर शेष है, उस हिसाब के साफ होजाने की तिथि से उनके विरुद्ध लगे प्रतिबन्ध को रद्द समझा जाय।

आशा की जाती है कि आर्यसमाज मथुरा से साक्षात् सम्बन्ध रहने वाले सदस्यों, सहायकों और सहानुभूति रखने वाले सभी सहृदय सज्जनों के हृदयों में परस्पर सुमति, सद्भावना, सदाशयता, सहिष्णुता और आर्योचित एकता का समन्वित समुदय होगा जिससे प्रेरित होकर सब मिल कर आर्य-

समाज विषयक सार्वजनिक कार्यों में लगन से सहयोग प्रदान करने में समर्थ होंगे।

मदनमोहन सेठ,
सभा प्रधान।

आर्यजगत

—गत २९, ३० जून तथा १ जुलाई को आर्ष गुरुकुल यज्ञतीर्थ, एटा का वार्षिकोत्सव समारोह पूर्वक मनाया गया। यह संस्था ऋषि दयानन्द प्रणीत प्रणाली पर व्याकरण, निरुक्त वेदादि शास्त्रों का अध्ययन कराती है। उत्सव में आर्यजगत के प्रकाण्ड पण्डित, विद्वान्, तपस्वी प० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु के शास्त्रीय गंभीर विषयों पर प्रतिदिन भाषण हुए। रात्रि को प्रतिदिन दण्डी स्वामी श्री ब्रह्मानन्दजी के आध्यात्मिक-प्रवचन होते थे। इसके अतिरिक्त श्री प्रोफेसर बाबूरामजी, एम० ए०, श्री स्वा० परमानन्द जी, स्वा० सत्यानन्दजी के मनोहर एवं शिक्षाप्रद प्रवचन हुए। श्री जगदीश भूषण, ब्रह्मचारी राजेन्द्रजी, प० रामचन्द्रजी आदि के मधुर सङ्गीत का आनन्द रहा। इसके अतिरिक्त ब्रह्मचारियों के हिन्दी तथा संस्कृत में भाषण, सस्वर वेद-पाठ तथा सामगान बड़े ही आकर्षक थे।

—शोक है कि आर्यसमाज जलालाबाद (फर्रुखाबाद) के प्रधान श्री प० ज्योतिः स्वरूप चतुर्वेदी का अकस्मात् देहान्त होगया। आप प्रत्येक सार्वजनिक कार्य में पूरी दिलचस्पी लेते थे। आप चौबे रामदुलारेलालजी के भतीजे थे। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति और शोकाकुल परिवार को धैर्य प्रदान करे।

—शोक है कि आर्यसमाज बहटा (बुलन्दशहर) के प्रधान श्री प० गंगा सहाय वर्मा वैद्यवर का ८० वर्ष की आयु में १ मई ५१ को देहान्त होगया। आप आर्यसमाज और वैदिक धर्म के सच्चे सेवक थे। कई संस्थाओं को जन्म दिया था। आपका अन्त्येष्टि संस्कार वैदिक रीति से हुआ। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे। सात रुपया दान दिया गया।

—मोहिनी देवी नामक बाहर से आई हुई एक स्त्री का विवाह आर्यसमाज कायमगंज (फर्रुखाबाद) द्वारा म० सूबेदार जी के साथ वैदिक रीति से हुआ। वर की ओर से ५१) समाज को दिये गये।

—आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा के मन्त्री श्री रमेशचन्द्र शास्त्री ने राजस्थान के उपप्रधान मन्त्री माननीय श्री अमृतलाल यादव से भेंट की। आपने राजस्थान के हरिजन तथा पिछड़ी जातियों के सम्बन्ध में विचार-विमर्श किया। शास्त्रीजी ने अपनी सेवायें इस सम्बन्ध में राजस्थान सरकार को देने की इच्छा व्यक्त की, जिसे मन्त्री महोदय ने सहर्ष स्वीकार किया।

—शोक है कि आ० स० बनारस छावनी भोजूबीर के संस्थापक श्री राजेन्द्रनारायणजी का २६ जून को ७६ वर्ष की आयु में देहान्त होगया। अन्त्येष्टि वैदिक रीति से हुई। डी० ए० वी० कालिज बनारस के प्रिंसीपल श्री कृष्णानन्दजी आपके सुयोग्य और विद्वान् पुत्र हैं। श्री राजेन्द्रनारायणजी त्यागवीर और वैदिकधर्म के पक्के अनुयायी थे। जहाँ रहे, आर्यसमाज की सेवा करते रहे।

[इस दुःख में हम श्री कृष्णानन्दजी के साथ हार्दिक शोक-सहानुभूति प्रकट करते हैं। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति तथा दुखी परिवार को धैर्य प्रदान करे। सम्पादक]

—डालटन गंज निवासी श्री जगदीश प्रसाद के पुत्र श्री मदनलाल का विवाह रानीगंज (गया) के श्री महावीरप्रसाद की पुत्री विद्यादेवी के साथ २ जुलाई को हुआ। वर पक्ष की ओर से ५१) आ० स० डालटनगंज को दान दिया गया।

—आर्य समाज मसूरी का वार्षिकोत्सव २८,२९,३० जून तथा १, २ जुलाई को स्थानीय टाउन हॉल में समारोह पूर्वक मनाया गया। २८ जून को नगरकीर्तन हुआ। जुलूस, नगर के बाजारों में होता हुआ, सवाय होटल पहुंचा, जहाँ सबको मिठाई वितरित की गयी। एक सप्ताह पूर्व से ही यजुर्वेद से यज्ञ आरम्भ हुआ। सर्व श्री स्वा० ब्रह्ममुनि, स्वा० विज्ञानानन्द, डा० गोकुलचन्द नारंग, डा० सत्यकेतु विद्यालङ्कार, पं० गुरुदत्त सिद्धान्तालङ्कार, पं० निरंजन देव, आचार्य नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ, प० ठाकुरदत्त शर्मा, अमृतधारा इत्यादि के व्याख्यानों तथा कुं० सुखलालजी आदि के भजनोपदेशों का बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा।

—गत २६, २७ तथा २८ जून को परिषद् के तत्वावधान में आर्यकुमार सभा कचौरा (अलीगढ़) का प्रथम वार्षिकोत्सव समारोह पूर्वक मनाया गया। सर्व श्री स्वा० योगानन्द, स्वा० आत्मानन्द, स्वा० विशुद्धानन्द, प० बिहारीलाल शास्त्री, प० ओङ्कार मिश्र 'प्रणव' शास्त्री, माता हेमलतादेवी, कुंवर जयपालसिंह 'मानव', कुं० महेशचन्द संगीतरत्न आदि महानुभावों के व्याख्यान, भजन और कविता-पाठ हुए। श्री यशःपाल शास्त्री की अध्यक्षता में आर्य कुमार सम्मेलन और माता हेमलता देवी की अध्यक्षता में महिला-सम्मेलन हुआ। अनेक उपयोगी और महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास हुए। अन्त में परिषद् के प्रधान श्री सरदारसिंहजी का ओजस्वी भाषण हुआ। आ० कु० सभा कचौरा की ओर से आपको १०१) की थैली भेंट की गयी जिसे आपने परिषद् को दे दिया।

—गुरुकुल झिंगला (मुजफ्फरनगर) के मुख्याधिष्ठाता श्री सरदारसिंहजी वानप्रस्थी तथा श्री ला० कबूलसिंहजी कोषाध्यक्ष ने १६ से २१ जून ५१ तक विविध स्थानों के व्यक्तियों से गुरुकुल के लिये ८६४) एकत्र किये। धन्यवाद।

—शोक है कि आर्यसमाज इन्दौर (बुलन्दशहर) के मन्त्री श्री राजेन्द्रप्रकाश आर्य की पत्नी का देहान्त २८ जून ५१ को हो गया। आप स्थानीय स्त्रियों में शिक्षा तथा वैदिकधर्म का प्रचार बड़ी सफलता से करती रहती थीं, परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति और दुखी परिवार को धैर्य प्रदान करे।

—गत २४ मार्च को बेलड़ा (सहारनपुर) में आर्यसमाज की स्थापना हुई। स्थापना उत्सव समारोह पूर्वक मनाया गया। ग्रामीण जनता तथा सदस्यों ने १२१३) समाज को सहायता-स्वरूप प्रदान किये। यानी २४२) उत्सव के लिये और ९७१) समाज-मन्दिर के लिए।

—आर्यसमाज आजमगढ़, मधुवन और आ० स० मुबारिकपुर में २६, २८ और २९ जून को प० धर्मवीरजी आर्य झण्डाधारी ने वैदिकधर्म प्रचार किया।

—देहली निवासी प्रसिद्ध राष्ट्रिय कार्यकर्त्ता वैद्य दामोदरदासजी की पुत्री विद्यावती गुप्ता, प्रभाकर का पाणिग्रहण संस्कार श्री बद्रीप्रसाद गवर्नमेंट कंट्रेक्टर मथुरा के पुत्र श्री लक्ष्मणप्रसाद गुप्त एम० ए० के साथ २५ जून ५१ को वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। लगभग तीन सौ कार्यकर्ताओं ने नव दम्पती को आशीर्वाद दिया। श्री मावलंकर और देहली के डिपुटी कमिश्नर का आशीर्वाद विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

—आ० स० लोहरदगा (राँची) के उद्योग से एक विधवा का उद्धार हुआ और २६ जून को गौरैया टोली (पटना) निवासी श्री जानकी साहु के साथ उसका विवाह कर दिया गया। १६) दान दिया। संस्कार आचार्य श्री स्वामी शिवानन्द तीर्थ ने कराया। प्रताप-जयन्ती के दिन आदिम जाति के छात्र तुलसी टुडू का उपनयन संस्कार हुआ। जून मास में श्री स्वा० शिवानन्द तीर्थ और श्री स्वा० दुखदमनानन्द ने आदिम जाति के ग्रामों में प्रचार किया।

निर्वाचन

—आर्यसमाज बेलड़ा (सहारनपुर) प्रधान श्री कर्णसिंहजी और मंत्री श्री कबूलसिंहजी।

—आर्यसमाज मंसूरी—प्रधान-ला० देवीदयाल चडोक और मन्त्री श्री परमात्माशरण।

सार-सूचनाएँ

—आ० स० गोविन्दनगर कानपुर के मन्त्री श्री देवीदास आर्य (सिन्ध निवासी) के पास एक गुमनाम पत्र आया है, जिसमें धमकी दी है कि यदि वे हिन्दी-प्रचार और पंजाबी भाषा का

विरोध करना न छोड़ेंगे तो कतल कर दिये जायगे। जिला अधिकारियों को इस ओर ध्यान देना चाहिये।

डाक्टर दुर्गादास, प्रधान
आ० स० गोविन्दनगर

—आ० स० पुरवा (उन्नाव) में १५ जुलाई से १६ जुलाई तक यजुर्वेद पारायण महायज्ञ होगा। अनेक विद्वान् व भजनोपदेशक पधारेंगे।

—श्री जयपालसिंह 'मानव' भजनोपदेशक को प्रचारार्थ बुलाने वाले सज्जन और समाज सिकन्दरपुर पो० बुढ़ांसी (अलीगढ़) के पते पर पत्र-व्यवहार करें।

—आ० स० तिलकनगर देहली में ६ से १५ जुलाई तक प० बुद्धदेव मीरपुरी के व्याख्यान तथा भजनोपदेशकों के भजन होंगे।

—पुन-पुन (पटना) थाने की जनता पर भुखमरी का बड़ा भयङ्कर प्रभाव हुआ है। सरकार की ओर से जो मुफ्त खाद्य सहायता वितीर्ण की जा रही थी उससे भी इस ओर की जनता वंचित रही। ऐसी दशा में आर्यसमाज को इधर ध्यान देकर इन कष्ट-पीड़ितों की सहायता करनी चाहिये।

श्री राजेश्वर प्रसाद गुप्त, प्रधान
आ० स० पुन-पुन (पटना)

राजस्थान प्रान्तीय आर्य-सम्मेलन

उक्त सम्मेलन १ से ४ सितम्बर १९५१ तक जयपुर में होगा। प्रधान-पद के लिए श्री प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति का नाम प्रस्तुत किया गया है। सम्मेलन के लिये पांच हजार का बजट स्वीकार कर लिया गया है। उद्घाटन के लिये माननीय श्री जयनारायणजी व्यास मुख्य सचिव राजस्थान से प्रार्थना की गई है। इस अवसर पर अनेक सम्मेलन होंगे। स्वागत समिति का निर्माण हो गया है।

सत्यपाल, विद्यावाचस्पति

[आगामी अक्टूबर मास में मेरठ में सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन हो रहा है। उसके केवल एक मास पूर्व इस प्रान्तीय सम्मेलन की क्या आवश्यकता या उपयोगिता थी, यह बात हमारी समझ में नहीं आई। इस समय तो आर्यों की सारी शक्तियां आर्य महासम्मेलन को सफल बनाने में ही लगानी चाहिए थी। आर्य महासम्मेलन करना गत दिसम्बर मास में निश्चित हो चुका है। फिर अब राजस्थान सम्मेलन के लिये कौनसी बड़ी आवश्यकता पैदा हो गयी।

—सम्पादक]

गुरुकुल मेहियां 'छपरा'

इस शिक्षण-संस्था का नया सत्र १९ जून १९५१ से प्रारम्भ हो गया है परन्तु बिहार संस्कृत-समिति की संस्कृत परीक्षा १६ जुलाई से होगी। इसके बाद तो नये वर्ष की संस्कृत की पढ़ाई होगी। सम्प्रति गुरुकुल में ६० ब्रह्मचारी तथा विभिन्न विषयों के ग्यारह विद्वान् अध्यापक हैं, जिनके अध्यवसाय से गुरुकुल की अपनी उपाधि—"विद्यारत्न" के साथ ही संस्कृत शास्त्री, हिन्दी विशारद एवं मैट्रिक की उपाधि भी ब्रह्मचारियों को १० वर्ष के अन्दर ही प्राप्त हो जाती है। कला एवं कृषि-विज्ञान की व्यावहारिक शिक्षा भी यहाँ दी जाती है। ब्रह्मचारियों के शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास का यहां पूर्ण प्रबन्ध है। प्रत्येक ब्रह्मचारी से सिर्फ भोजनादि व्यय के निमित्त ३०) प्रतिमास लिया जाता है। आर्य-शिक्षा-पद्धति के प्रेमी जो सज्जन अपने विद्यार्थियों को प्रविष्ट कराना चाहें उन्हें शीघ्रता करनी चाहिये। क्योंकि नवीन वर्ष में ४१ ब्रह्मचारियों का ही प्रवेश होगा।

—आचार्य।

अलीगढ़ जिले में धर्मान्दोलन

उप प्रान्तीय आर्यकुमार परिषद् अलीगढ़ ने जिले-भर में धार्मिक सन्देश पहुंचाने के लिए एक योजना बनाकर प्रचार प्रारम्भ किया है। ग्रामों और कस्बों में जाकर आर्योपदेशक सदाचार सम्बन्धी भाषण दे रहे हैं। भ्रष्टाचार की बुराइयों तथा अन्ध विश्वासों की हानियां जनता को बतायी जाती हैं। जनता बहुत रुचि के साथ भाग ले रही है। अस्पृश्यता, नशा सेवन, दहेज आदि कुरीतियों के विषय में रूढ़िवादी जनता को तर्क पूर्ण ढंग से समझाया जाता है। सर्वश्री स्वा० योगानन्द स्वात्मानन्द, प० सत्यव्रत, प० प्रकाशवीर शास्त्री, प० बिहारीलाल शास्त्री, प० रामदयालु शास्त्री प० मेधातिथि शास्त्री, प० ओंकारमिश्र 'प्रणव' शास्त्री, प० यशःपाल शास्त्री, प० प्रेमदत्त शास्त्री, माता हेमलता देवी तथा श्री आत्माराम वानप्रस्थी, कुं० जयपालसिंह 'मानव' कुंवर महेशचन्द्र 'संगीतरत्न' श्री नत्थूसिंहजी आदि बड़ी सफलता से प्रचार-कार्य में संलग्न हैं। जनता पर खूब प्रभाव पड़ता है।

गुरुकुल डौरली

ग्रीष्मावकाश के बाद पहली जुलाई से दयानन्द-महाविद्यालय गुरुकुल डौरली (मेरठ) में छात्रों का प्रवेश प्रारंभ होगया है। गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज बनारस की प्रथमा, मध्यमा, शास्त्री आदि परीक्षाओं के दिलाने का भी यहां उत्तम प्रबन्ध है। इस वर्ष संस्कृत की परीक्षा देने वाले छात्रों के लिए गुरुकुल के हायर सेकण्डरी विभाग में इङ्गलिश आदि विषयों के पढ़ने की पूर्ण सुविधाएँ दी जावेंगी। गुरुकुल का प्राइमरी विभाग भी यथापूर्व चालू रहेगा। इस विभाग में पाँचवीं कक्षा तक की पढ़ाई का प्रबन्ध योग्य एवं अनुभवी अध्यापकों की देख रेख में रहेगा। गुरुकुल में छात्रावास का भी अत्युत्तम प्रबन्ध है। आश्रम में रहने वाले छात्रों के रहन-सहन स्वास्थ्य एवं सदाचार का पूर्ण ध्यान रक्खा जाता है। छात्रों की दिनचर्या में सन्ध्या, यज्ञ, और धार्मिक शिक्षा का स्थान अनिवार्य होगा। अतः धार्मिक शिक्षा प्रेमी महानुभावों को अपने लड़कों को प्रविष्ट कराने में शीघ्रता करनी चाहिए। स्थान सीमित है।

—बलजीतसिंह आचार्य।

बिहार की भुखमरी

आपको समाचार पत्रों से यह तो ज्ञात हो ही गया होगा कि बिहार प्रान्त के निवासी अन्न-संकट-ग्रस्त हैं। सभा के प्रधान श्री राजगुरु प० धुरन्द्रजी शास्त्री बिहार पीड़ितों की दयनीय दशा को स्वयं निरीक्षण कर आये हैं। उनका आदेश है कि समाजें इस कार्य में पूरे वेग से लग जायें और अन्न तथा धन-संग्रह का कार्य तत्काल आरम्भ कर दें। जितना-जितना अन्न जहाँ-जहाँ जमा हो उसे वहाँ के राशन अधिकारियों से मिलकर उनके यहाँ ही जमा कर देने की व्यवस्था करें और उनसे अन्न जमा की रसीद सार्वदेशिक सभा देहली के नाम में प्राप्त करके हमें भिजवा देवें। उस रसीद के अनुसार हम सरकार से उतना अन्न बिहार में पीड़ितों को बटवाने की व्यवस्था करेंगे, और जो धन प्राप्त हो उसे सार्वदेशिक सभा देहली को भिजवाते रहें ताकि सभा उस धन से बिहार में रिलीफ के कार्य को भली भांति चला सके और बिहार पीड़ितों की पूरी पूरी सेवा कर सकें। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि जब कभी भारत के किसी भी कोने में भारतीयों पर कोई आपत्ति आई तब तब आर्यसमाज के सेवकों महर्षि श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज के भक्तों और वेद के अनुयायियों ने तन, मन, धन देकर उन्हें कष्ट से मुक्त करने का प्रयास किया है। अतः मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि इस संकट में भी आर्यसमाज सर्वात्मना सहयोग प्रदान करके अपने गौरव में वृद्धि करेंगे।

ज्ञानचन्द्
मंत्री

गुरुकुल-विश्वविद्यालय वृन्दावन में नवीन छात्रों का प्रवेश

ग्रीष्मावकाश के बाद गुरुकुल विश्व-विद्यालय वृन्दावन का नवीन शिक्षा सत्र प्रारम्भ होगया है। गुरुकुल के अधिकारी परीक्षोत्तीर्ण छात्र इन्टर में तथा शिरोमणि परीक्षोत्तीर्ण स्नातक सीधे एफ० ए० में प्रविष्ट हो सकते हैं। गुरुकुल की शिक्षा निःशुल्क है। भोजनादि व्यय के लिए संप्रति विद्यालय विभाग में २०, २२ रुपया और महाविद्यालय विभाग में २५) रुपया मासिक देना होता है। घी, दूध, वस्त्र आदि का व्यय इससे अलग है। बाहर की चौथा पांचवीं परीक्षोत्तीर्ण लगभग १० वर्ष की आयु के और संस्कृत लेकर हाई स्कूल परीक्षा उत्तीर्ण करने वाले छात्र गुरुकुल में प्रविष्ट हो सकते हैं। नवीन प्रवेश केवल जुलाई मास में होंगे। अतएव प्रवेशा-

र्थियो को यथासम्भव शीघ्र प्रवेश प्राप्त कर लेना चाहिए।

मुख्याधिष्ठाता,
गुरुकुल विश्व विद्यलय,
वृन्दावन।

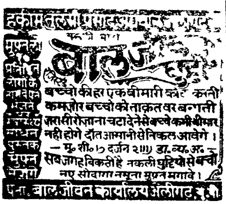
आवश्यक निवेदन

आर्यसमाज कटरा प्रयाग विश्व विद्यालय के अति निकट हैं, अतः उसका कार्य क्षेत्र विश्व-विद्यालय के क्षेत्र से अधिकाधिक सबंध रखता है। कटरा की आर्यकुमार सभा का उत्तर दायित्व इस दृष्टिकोण से है और अधिक बढ जाता है क्योंकि वर्षों से विश्व-विद्यालय के कुछ छात्रोको अपना बनाकर उन्हीं के द्वारा अन्य छात्रो में सभा का सदेश पहचाने का कार्य करती आ रही है। उत्तर-प्रदश ही नहीं, भारत के कोने कोने मे छात्र यहां उच्च शिक्षा प्राप्त करने आते हैं। इन छात्रो में अनेक आय परिवारो के छात्र भी आते हैं। सकोचवश अथवा अन्य किसी कारण से उन में से बहुतेरे सभा से दूर ही रहते हैं। सभा के कार्य कर्त्ता प्रयत्न करने पर भी इस प्रकार के सब छात्रो को खोज निकालने में असमर्थ रहते हैं, फलतः सभा की प्रगति बाधा पहुचाती है। अतः अन्य-जगत स प्राथना है कि जब उनकी सतान अध्ययनार्थ प्रयागमें आवें, तो उसकी सूचना वे कृपा करके आयकुमार सभा कटरा को देदें। इससे बड़ा लाभ होगा। सभा सभी आय युवको को एक प्रेम सूत्र में बाधने में सफल होगी और समाज का कल्याण होगा। ऐसी प्रार्थना पहले भी की जा चुकी है। आशा है, अब अधिक ध्यान दिया जायगा।

ज्वालाप्रसाद
प्रधान

हिन्दी में भी प्रोग्राम

भारतीय श्रोताओं के अनुरोध पर अमेरिकी 'आकाशवाणी' ने १५ मई १९५१ से अपने प्रोग्राम को हिन्दी में भी ब्रौडकास्ट करना आरम्भ कर दिया है। इस प्रोग्राम में समाचार संगीत रूपक आदि होते हैं और अमेरिका से इनका दैनिक ब्रौडकास्ट भारतीय समय क अनुसार शाम क ६-३० के ७ बजे तक होता है।



आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, मिरावा प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

आर्यमित्र

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक-आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ
आगरा, १९ जौलाई १९५१


श्री प० गंगा प्रसाद एम०ए०, रिटायर्ड चीफ जज


श्री प० अलगूराय शास्त्री


श्री घनश्यामसिंह गुप्त


आचार्य श्री [illegible]

वार्षिक मूल्य ८),
विदेश में १०),
एक प्रति-
तीन आने

सम्पादक : हरिशङ्कर शर्मा

वर्ष—५३
अङ्क—२८

ऋषि दयानन्द के प्रति घृणित प्रचार !!

श्रीविश्वम्भरसहाय प्रेमी

कानपुर के उर्दू 'शाहना शरीयत' ने जनवरी से अप्रैल १९५१ के अंकों में हिन्दुओं के देवी-देवताओं का घृणित व नग्न चित्र अंकित करके अत्यन्त निन्दनीय मनोवृत्ति का परिचय दिया है। देवी देवताओं वेदों, जैन साधुओं, भगवान् श्रीकृष्ण आदि के विरुद्ध अत्यन्त अश्लील शब्दों में आक्षेप किये गये है। अब जून १९५१ के अंक में उसके सम्पादक ने आर्यसमाज के प्रवर्त्तक ऋषि दयानन्द के विरुद्ध मिथ्या आरोप लगाये हैं। इस प्रकार के लेखों को पता नहीं कि उत्तर प्रदेश की सरकार क्यों प्रकाशित होने देती है। हम यहाँ इस पत्र के जून के अंक के कुछ अंश उद्धृत कर रहे हैं। इनसे पाठक और प्रान्तीय सरकार यह अनुमान लगा सकती है कि पत्र के सम्पादक तथा मुद्रक किस प्रकार उत्तेजना फलाकर प्रकाशन नियमों का उल्लंघन कर रहे हैं।

यह अखबार लिखता है– सत्यारथ परकाश (सत्यार्थ प्रकाश) पढ़ने के बाद ख्वाहतलब (शुभचिन्तक) को मुसन्निफ (लेखक) की सवानेह उमरी (आत्मकथा) मालूम करने का ख्याल पैदा हुआ। चुनाचे एक किताब मौसूमा (नामक) स्वामी दयानन्द मुसन्निफ (लेखक) भगवानदेव मतबूआ (छपी हुई) जीवन प्रेस, लाहौर बजबान अंग्रेजी दस्तयाब (हस्तगत) हुई। जिसके जरिये मालूम हुआ कि काठियावाड़ में मोरवी एक रियासत है, जिसके एक मौज का नाम रामपुर है। इस मौजे में कुमरा कौम आबाद है, जिसकी औरतें नाचने-गाने, शौहर के अलावा गैर मरदों से हमबिस्तर (सहशार्या) होने मंदिर में रतजगा करने का पेशा करती हैं। अम्बाशंकर नामी एक काश्तकार ने कुमरा काम की एक औरत पर जिसका शौहर जिन्दा था कब्जा कर लिया। बिरादरी ने उसको जात से खारिज कर दिया। इस औरत के बतन (पेट) से महादेव के मंदिर में जिसमें रतजगा होता था लड़का पैदा हुआ। अम्बाशंकर ने उसकी परवरिश की और नाम मूलशंकर रखा। मूलशंकर जब बालिग हुआ तो वह अम्बाशंकर का रुपया सोना-चाँदी जवाहरात रेशमी धोतियाँ लेकर फरार हो गया। पुलिस ने गिरफ्तार किया, मगर हिरासत से भाग गया। सन्यासी का लिबास पहनकर मथुरा आया और अपना नाम दयानन्द जाहिर किया। तालिबइल्मी करने (शिक्षा प्राप्त करने) और कुव्वत बाह (वीर्यवृद्धि) के वास्ते अबरक का कुश्ता बनाने लगा। उनसठ वर्ष की उमर में मुकररा वजन से ज्यादा कच्चा कुश्ता इस्तेमाल करने की वजह से बीमार हुआ और एक माह बाद फौत हो गया। चूंकि यह शख्स नुत्फे नातहकीक (जिसके पिता का ठीक पता न हो) था, लिहाजा उसने सहीउलनसब (वध) और गैर सहीउलनसब (अवैध) का तफरीक (अन्तर) मिटाने के वास्ते सत्यारथ परकाश (सत्यार्थ प्रकाश) में ब्याह की आठ किस्में बयान की हैं, जिनमें इख्तलाफ जेहन (विरोध) का चूंकि होना लाजिमी था लिहाजा हुआ है और यह महज हलाल और हराम के तफरीक (भेद) मिटाने के वास्ते दयानन्द ने किया है, इसी अखबार में एक स्थान पर लिखा गया है कि वेद हो या शास्तर (शास्त्र) या पुरान (पुराण) या इसमिरती (स्मृति) सब पागलखाने की बकवास हैं।

इस पर [illegible] किसी प्रकार की टिप्पणी [illegible] है। स्पष्ट है कि इस लेख का [illegible] एक महान [illegible] ब्रह्मचारी सन्यासी और [illegible] हिन्दू [illegible] श्रद्धा के [illegible] इन बमान्व [illegible] का [illegible] प्रकार [illegible] जिससे [illegible] आशा न [illegible] प्रकाशित [illegible]

'मुसलमानों के खिलाफ जहाद बोल दिया गया है' का अन्तर्राष्ट्रीय प्रचार करने का मौका मिल जाय और दूसरे देश में आन्तरिक अशांति के कारण पाकिस्तान के कश्मीर सबधी मसूबों के सफल होने में सहायता मिल सके।

पिछले छह मासों से यह अखबार इसी प्रकार की मनगढ़ंत गप्प के सहारे हिन्दू धर्म तथा उसके अवतारों एवं सुधारकों के सम्बन्ध में निराधार लाञ्छनपूर्ण लेख छापता जा रहा है। इससे पहले वह भगवान कृष्ण को चोर और डाकू लिख चुका है। भगवती दुर्गा के सम्बन्ध में उसने अत्यन्त अश्लील बातें लिखी हैं। हिन्दू कन्याओं के बारे में वह अत्यन्त घृणित बातें लिख चुका है। पर यह चीज बिलकुल 'शाहना शरीयत तक ही सीमित है, ऐसी बात नहीं है। 'सियासत' 'आगाज' 'इस्लाह' प्रभृति अनेकों मुसलिम पत्र इसी प्रकार की कुत्सित बातें प्रकाशित कर रहे हैं। उनके विरुद्ध शासन ने अब तक क्या किया, यह जानने को लोग आतुर हैं पर इस प्रकार के घृणित प्रचार के विरुद्ध किसी प्रकार की सरकारी कार्यवाही की गई हो, ऐसी सूचना अभी तक नहीं मिली है।

'शाहना शरीयत' की शरारत

[गत ७ जून के 'आर्यमित्र' में हम 'शाहना शरीयत' की शरारतों के खिलाफ एक कड़ा नोट लिखकर सरकार का ध्यान आकृष्ट कर चुके है। उस समय उसने वेद-शास्त्रों और भगवान् श्रीकृष्ण आदि महान् पुरुषों के विरुद्ध विष-वमन कर अपनी नीचता का परिचय दिया था। यदि उसी समय सरकार इस पत्र सर्प की विषैली दाढ़ों को तोड डालती तो उसे इस प्रकार महर्षि दयानन्द की गालियाँ देने की हिम्मत ही न होती। यू० पी० सरकार की नाक के नीचे एक गुण्डा अखबार इस तरह महर्षि दयानन्द को गालियां देकर असंख्य लोगों के हृदयों को ठेस पहुचावे, इससे बढ़कर आश्चर्य और दुःख की बात और क्या हो सकती है। क्या सरकार के सूचना-विभाग तक यह गन्दा और गुण्डा अखबार नहीं पहुँचता? पहुँचता है तो क्या पढ़ा नहीं जाता? पढा जाता है तो क्या 'हिन्दू मुसलिम' इत्तिहाद की इमारत मिस्मार होने के अन्देशे से उस पर कोई कारवाई करना मुनासिब नहीं समझा जाता। हम समझते हैं इस स्वतन्त्र भारत में आज इस चिथड़े अखबार ने श्रीस्वामीजी महाराज को जैसी गालियाँ दी हैं, वैसी आज तक किसी कट्टर से कट्टर विरोधी ने भी न दी होंगी। यू० पी० और केन्द्रीय दोनों सरकारों से हम बड़े जोर से कहना चाहते हैं कि वे मुसलिम अखबारों के इस 'गुण्डापन' को जल्द से जल्द ठीक करें, अखबार के सब पर्चों को जब्त कर और भयकर साम्प्रदायिकता का विष फैलाने वाले इन शरारती और शैतान अखबार नवीसों को सख्त से सख्त सजा दें। ऐसे नालायक पत्रकार जो इस तरह फिरकापराना जहर फैलाते है, कभी पत्रकार नहीं कहला सकते। चाहे वे किसी क्षेत्र या देश में काम करने वाले क्यों न हों। हम ऋषि दयानन्द के भक्तों से प्रार्थना करते हैं कि वे उक्त गुण्डे अखबार की बेहूदगी से उत्तेजित न हों और शान्ति तथा धैर्य पूर्वक इस सम्बन्ध में सरकारी निर्णय की प्रतीक्षा करें। सम्पादक]

वेदप्रचार-सप्ताह

उत्तरप्रदेश में वेद प्रचार सप्ताह १७ अगस्त से २४ अगस्त तक—अर्थात् श्रावणी से श्रीकृष्ण जन्माष्टमी तक मनाया जायगा। कार्यक्रम शीघ्र प्रकाशित होगा।

धर्मपाल विद्यालङ्कार सभा मन्त्री

तन्मे मनः शिव संकल्प मस्तु

आर्य ॐ मित्र

आगरा श्रावण कृष्णा १ सवत २००८ वि० गुरुवार, ता० १६ जौलाई १६५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-सवत् १६७२६४६०५१

ओ३म् भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्, भर्गो देवस्य
धीमहि, धियोयोनः प्रचोदयात् ।

प्राण प्रदाता सकट त्राता, हे सुख दाता ओ३म् ओ३म् ।
सविता, माता-पिता वरेण्यम्, भगवन्त्राता ओ३म् ओ३म् ।
तेरा शुद्ध स्वरूप करें हम, धारण धाता ओ३म् ओ३म् ।
प्रेरित प्रज्ञा कर सुकर्म में विश्व-विधाता ओ३म् ओ३म् ।

'धियो योनः प्रचोदयात्'

उपर्युक्त मन्त्रांश में परमात्मा से प्रार्थना की गई है कि वह हमारी बुद्धियों को प्रेरणा करे, सारा संसार और सारा जीवन बुद्धि का खेल है । बिना बुद्धि के कोई काम नहीं हो सकता । संसार में जो कुछ मनुष्य-निर्मित दिखाई देता है, उस सबके आधार में बुद्धि है । बिना बुद्धि के न कोई काम हुआ न हो सकता है । यह बुद्धि उस तलवार के समान है जो शत्रु का भी गला काट सकती है और मित्र का भी । अपना भी और पराया भी । क्या कुकर्म करने में बुद्धि की आवश्यकता नहीं होती । बड़े-बड़े बुद्धिमानों को मालूम भी नहीं होता और उनकी जेब कट जाती हैं । डाका डालने और चोरी करने में भी अक्ल की जरूरत होती है । जाल बनाने और अपराध छिपाने में भी बुद्धि को पूरा दखल देना पड़ता है । 'एटम बम' भी बुद्धि द्वारा ही बने हैं, और उनका सर्व संहारकारी प्रयोग भी बुद्धि-बल से ही होता है । दूसरी तरफ पुल, धर्मशाला, अस्पताल, विद्यालय, भवन, ग्रन्थ, काव्य आदि बनाने में भी बुद्धि की जरूरत होती है । दान, सेवा तथा परोपकार भी बिना बुद्धि के नहीं हो सकते । चिकित्सा और सेवा-शुश्रूषा के लिये भी बुद्धि दरकार है । अभिप्राय यह कि अच्छे और बुरे दोनों कार्यों के लिये बुद्धि विवेक की आवश्यकता होती है । जिन कार्यों से अपना और दूसरों का हित होता है, वे भले और जिनसे अहित होता है वे बुरे काम कहलाते हैं । चोर, डाकू, अत्याचारी आदि दूसरों का धन हड़पने में अपना हित समझते हैं, परन्तु यह उनका भ्रम है । जिन कार्यों से पतन होता है, आत्मा गिरता है, लज्जा, भय और शंका की उत्पत्ति होती है, वे कदापि हितकर नहीं कहे जा सकते । कुकर्म करने वाला व्यक्ति जहाँ दूसरों की दृष्टि में गिरता है, वहाँ स्वयं उसका अपने हृदय में भी आदर-भाव नहीं रहता ।

बुद्धि का ठीक ठीक प्रयोग क्या है ? मन की मलिनता रहित अवस्था कब होती है ? जब मन में शुभ संकल्पों का उदय होता है, तो बुद्धि विशुद्ध बनकर जीवन को कल्याण-पथ की ओर ले जाती है । जिस बुद्धि को भगवान् प्रेरित करते हैं, उसमें अशुद्धता आ ही नहीं सकती, वह सदैव पुण्य मार्ग की ओर अग्रसर होती रहती है । उसमें मनुष्य ही नहीं प्राणिमात्र की हित कामना समा जाती है । कापट्य या कुत्सा का लेश भी शेष नहीं रहता । आज हम लोगों की बुद्धि स्वार्थान्धता में रत रहने के कारण मलिन और अपवित्र हो गयी है, उसीका कुपरिणाम है कि दशों दिशाओं में अत्याचार, अनाचार और भ्रष्टाचार की भट्टी धधक उठी है, सब खुदगर्जी में गर्क दिखाई देते हैं । कहीं शान्ति है न समाधान । परोपकार की भावना शेष नहीं रही है और न सदाचार का चिन्तन बाकी है । आपाधापी का अखाड़ा या अत्याचार का अड्डा जमा हुआ है । मनोमुखता, उद्दण्डता, उच्छृंखलता और अनुशासनहीनता का दौरात्म्य बढ़ रहा है । कानून बनते हैं, फेल हो जाते हैं । विधान निर्मित होते हैं, व्यर्थ सिद्ध हो जा जाते हैं । क्यों ? हमारी बुद्धि विमल नहीं है, मन गन्दे और गर्हित है । उनमें परमात्मा का प्रभाव और प्रकाश नहीं दिखाई देता । इसीलिये उक्त मन्त्रांश में परमात्मा से प्रार्थना की गयी है,—हे प्रभो, हमारी बुद्धियों को प्रेरित कीजिए, अपनी दिव्य ज्योति से उन्हें प्रकाश-कण दीजिए, जिससे हमारे मन शुभ संकल्पयुक्त हों, हम पुण्य कार्य की ओर प्रवृत्त हों और कुकर्मों का कभी चिन्तन भी न करें । ऐसी धारणा मन में बद्धमूल होने से बुरे काम करने का अवकाश और अवसर ही कहाँ मिलेगा । जब बुद्धि पवन प्रभु परमात्मा के पुण्य प्रकाश से प्रेरित, प्रभावित और प्रकाशित होगी तो वह अनिष्ट, अशुभ और अकल्याण की ओर जायगी ही क्यों ? शिव संकल्पों से युक्त मन में अशुभ संकल्पों का प्रवेश ही कैसे होगा ? आज सबसे अधिक आवश्यकता बुद्धि को विशुद्ध बनाने और मन को शिव संकल्प युक्त रखने की है । यदि बुद्धि और मन शुद्ध, सात्विक है तो हमारे द्वारा कोई कुचेष्टा हो ही नहीं सकती, फिर समाज और संसार के स्वर्ग या सुख-शान्ति-धाम बनने में सन्देह ही क्या रह जायगा । आओ सब मिलकर परमात्मा से प्रार्थना करें—याचना करें 'धियो योनः प्रचोदयात्' । हे प्रभो हमारी बुद्धियों को प्रेरित कीजिए, जिससे वह कुपन्थ गामिनी न बनकर सदैव सत्पथ पर ही अग्रसर हो ।

वन महोत्सव

इस सम्बन्ध में दो सप्ताह पूर्व हमने इन स्तम्भों में अपने विचार व्यक्त किये थे । वन भारत की संस्कृति की जन्मभूमि है । ऋषि-मुनियों ने वनों में रहकर ही तपस्या, अपूर्व वेद ज्ञान ... तथा अमर साहित्य-सृजन से विश्व को प्रकाशित और प्रभावित किया था । वन जीवन की प्रत्येक दशा के लिये अत्यन्त आवश्यक और उपयोगी है । वृक्षों से पृथिवी के पोषक तत्व व्यर्थ बहने से रुकते है, उनके कारण 'भूमि क्षर' नहीं हो पाता, बाढ़ों की रुकावट होती है, बादलों को बल मिलता और धरती उर्वरा बनी रहती है । अन्न-वस्त्र, ओषधि आदि के तो वे सुलभ साधन हैं । राज्यस्थान का रेगिस्तान आज हमारी ओर बढ़ा चला आ रहा है, आगरा, मथुरा, तथा अन्य समीपवर्ती जिलों में भी धूल उड़ने लगी है और वहाँ की उपजाऊ शक्ति कम हो चली है । इसका कारण भी वृक्षों का अभाव है । यदि राजस्थान में वन-वृक्ष होते तो भयंकर बवंडरों के साथ हजारों टन रेती उड़कर दूसरे प्रदेशों की उर्वरा भूमि को रेगिस्तान न बनाती । अभिप्रायः यह है कि यदि उत्तर-प्रदेश को रेगिस्तान बनने से बचाना है तो यहाँ की सरकार को इस ओर सतर्क होना चाहिए । राजस्थान की मरुभूमि और अपने प्रदेश के मध्य वृक्षों की बाढ़ लगानी चाहिये । वनोत्सवकी रस्म अदायगी मात्र से काम नहीं चल सकता । इसके लिये पूर्ण प्रयत्न करना पड़ेगा । यह एक समस्या है ।

परोपकारिणी सभा

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द द्वारा अजमेर में संस्थापित है । इसके द्वारा वैदिक यन्त्रालय संचालित हो रहा है, महर्षि कृत ग्रन्थ भी प्रकाशित होते हैं । जहाँ तक हमारा अनुमान है यन्त्रालय और ग्रन्थ प्रकाशन द्वारा सभा को अच्छी आय है । परन्तु सभा ने वेद धर्म प्रचार का कोई विशेष व्यवस्था नहीं की प्रतीत होती । हमने कई बार लिखा है कि सभा को कम से कम एक उच्च कोटि का मासिक तो शीघ्र ही प्रकाशित करना चाहिए । बहुत दिन हुए 'परोपकारी' नामक मासिक पत्र आचार्य पद्मसिंह शर्मा के सम्पादकत्व में निकला था । उसी को फिर पुनर्जीवित किया जा सकता । संस्कृत, हिन्दी अंगरेजी तथा अन्य भाषाओं में नवीन वैदिक साहित्य निर्माण की

बड़ी जरूरत है। आज इसी अंक में अन्यत्र आचार्य श्री विश्वश्रवाजी ने कुछ आवश्यक कार्यों के लिये सभा का ध्यान आकृष्ट किया है। वस्तुत ये कार्य बड़े ही महत्वपूर्ण हैं अतः प्रयत्नपूर्वक करने चाहिए। मतलब यह कि सभा को युग के साथ चलने की आवश्यकता है। लेखनी और वाणी द्वारा प्रचार के उसे सब ऐसे साधन काम में लाने चाहिए जिनकी सफलता सुनिश्चित है। शिथिलता या मन्दमनोरथता किसी संस्था की प्रगति में बाधक हुए बिना नहीं रहती।

अपने हृदयों से पूछिये !

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा और आर्य प्रतिनिधि सभाएं कुछ प्रगतिशीलता से काम नहीं ले रही। उनका ध्यान जितना [illegible] पुरी और महकमा बन्दी की ओर है उतना ठोस और क्रियात्मक कार्यक्रम की ओर नहीं। यही कारण है कि देश के सब से [illegible] का संघटन प्राय शिथिल दिखाई दे रहा है। उत्तर प्रदेश के लगभग एक सहस्र आर्यसमाजों में से केवल दो ढाई सौ समाज ही जीवित जाग्रत् दिखाई देते हैं। लेखनी और वाणी का शस्त्र भी शिथिल पड़ी है। आनरेरी व्याख्याताओं के पास प्रचार के लिये समय ही नहीं और निर्वाहार्थ कुछ लेकर काम करने वाले योग्य विद्वानों का [illegible] का अभाव। फिर काम कैसे चले। कालिजों और स्कूलों के छात्रों तक आर्यसमाज का सन्देश पहुंचता ही नहीं। वार्षिकोत्सव मनोरंजन मात्र के साधन बन गये हैं। प्रचार पद्धति बहुत ही ढीली है। आर्यसमाज के प्रादुर्भाव को बहुत दिन नहीं हुए परन्तु उसका प्रभाव उत्तरोत्तर कम होता जा रहा है। प्रथम तो आर्यसमाजों में नवयुवक हैं ही बहुत कम। जो हैं उनसे किसी पुराने आर्य नेता या विद्वान् के सम्बन्ध में कुछ पूछिये तो उत्तर बड़ा ही निराशाजनक होगा। क्योंकि न तो आर्यनेताओं और आर्य विद्वानों की अच्छी जीवनियां लिखी गयी और न आर्यसमाज के [illegible] पर विस्तृत इतिहास की ही रचना हुई। पिछली बातों को कोई पढ़े समझे और जाने तो कैसे ? आर्यसमाज का एक बहुत बड़ा पुस्तकालय होना चाहिए था—जहाँ बैठकर विद्वान् लोग रिसर्च कर सकें। एक संग्रहालय होता जिसमें स्वर्गीय नेताओं विद्वानों शहीदों और कार्यकर्ताओं के चित्र [illegible] आदि हस्तलिखित रचनाएं जीवनियों और कार्यकलाप के विवरण तथा वर्णन होते परन्तु इन सब बातों के लिए समय और धन किसके पास है। आर्यसमाज तो अपनी रूढ़ियों में फंस गया है। उसने कुछ पौराणिक रूढ़ियां तो त्याग दी हैं परन्तु अपनी नयी रूढ़ियाँ बना ली। समझ में नहीं आता कि हमारी शिरोमणि सभाओं का [illegible] शिथिलता अपने अधीनस्थ आर्यसमाजों को कैसे जीवित जाग्रत् कर सकेगा और विश्व को आर्य बनाने के लिए उनके पास क्या साधन सामग्री है। निर्वाचन कर लिये, खातपत्रों के उत्तर दे दिये, कुछ और थोड़ा बहुत कर कराया, बस साल भर की कार्यगुजारी समाप्त। क्या इतने से ही काम चल जायगा ? क्या करोड़ों के एक विशाल समुदाय के लिये इतना [illegible] सन्तोषजनक है। इसका उत्तर हमें अपने हृदयों से पूछना चाहिए।

आर्यों के बालक आर्य बनें !

दुःख से देखा जाता है कि आर्यसमाजियों के बालक प्रायः आर्यसमाज के सदस्य नहीं बनते और न आर्यसमाज के प्रति कुछ रुचि ही दिखलाते। इसका दोष सिवाय उनके और किसी पर नहीं स्वयम् बालकों के अभिभावकों पर है। उन्होंने अपने घर परिवार में ऐसा वातावरण क्यों न पैदा किया जिससे उनके बालक आर्यसमाजी बनते। कैसा आश्चर्य जान पड़ता है कि एक ओर तो विश्व को आर्य बनाने की घोषणा की जाती और दूसरी तरफ हम अपने बालकों को भी आर्य नहीं बना सके। कटरा (प्रयाग) आर्यसमाज ने इस सम्बन्ध में एक बड़ी सुन्दर बात सोची है उनके मन्त्री चाहते हैं कि जिन आर्य अभिभावकों के बालक प्रयाग विश्वविद्यालय में पढते हैं, उनके नाम और पते, उस समाज में भेज दिये जायं, जिससे इस समाज के अधिकारी उन छात्रों से मिलकर उन्हें आर्यसमाज की ओर प्रेरित प्रभावित कर सकें। यह बात जितनी प्रयाग के लिये उपयोगी है, उतनी ही काशी, कानपुर लखनऊ आगरा, मेरठ अलीगढ आदि शिक्षा केन्द्रों के लिये भी। इन नगरों के कालिजों में बाहर से आ आकर आर्यों के बालक पढते हैं वहाँ के स्थानीय आर्य समाजों को भी कटरा आर्यसमाज की सी ही योजना बनानी चाहिए, इससे इन बालकों में आर्यसमाज का प्रचार होगा और वे इस ओर आसानी से प्रवृत्त हो सकेंगे।

'सत्यार्थप्रकाश' का दूसरा भाग

देहरादून निवासी वैद्यराज श्री पं० अमरनाथजी महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज के परम भक्त हैं। आपने अपने एक लेख द्वारा सत्यार्थप्रकाश का द्वितीय भाग लिखे जाने का सुझाव दिया है। वैद्यजी का कहना है कि सत्यार्थप्रकाश लिखे जाने के बाद जो और नये समस्याएं पैदा हो गयी हैं उनका समाधान तथा निराकरण द्वितीय खण्ड में कर दिया जाय और इसे कुछ चुने हुए विद्वान् तय्यार करें। बात तो ठीक है ऐसा ग्रन्थ अवश्य लिखा जाना चाहिए, परन्तु उसका नाम सत्यार्थप्रकाश रखने की क्या आवश्यकता है। इससे तो आगे चलकर भ्रम पैदा होगा और बड़ा गड़बड़ी फैलेगा। आज सत्यार्थप्रकाश का द्वितीय भाग प्रकाशित होगा कल संस्कार विधि का और परसों ऋषि प्रणीत अन्य ग्रन्थों का। हम ऋषि की रचनाओं के साथ अपनी रचनाएं जोड़ने की न तो आवश्यकता है, और न ऐसा करने का अधिकार ही। अपना पृथक साहित्य निर्माण करना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है।

'अनाथालय' नहीं बाल गृह

उत्तर प्रदेश के प्रधान मन्त्री माननीय पं० गोविन्दवल्लभ पन्त ने गत ३० मई को बरेली अनाथालय के एक भवन की आधारशिला रखते हुए सरकार की ओर से दस दो सहस्र रुपये देने की घोषणा की। साथ ही यह भी कहा कि जिन बालकों के माता पिता नहीं हैं उनके लिये अनाथ शब्द का प्रयोग उचित नहीं है। यह शब्द इन बालकों के मन में भावना को मन्द करने वाला है। बात बिल्कुल ठीक है। अब से कई वर्ष पूर्व इसी आशय का एक टिप्पणी इन स्तम्भों में भी लिखी गई थी। सन्तोष की बात है कि हमारे माननीय प्रधान मन्त्री महोदय ने भी इस आवश्यक प्रश्न की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट किया है। जिन बालक बालिकाओं का दायित्व ग्रहण करने वाला राष्ट्र या समाज हो वे अनाथ कैसे हो सकते हैं। उनमें 'अनाथपन' की हीन भावना क्यों भरी जाय। वे तो वैसे ही बहादुर और विद्वान् होने चाहिए जैसा कि स्वतन्त्र राष्ट्र में आशा की जा सकती है। हम निजी तौर पर जानते हैं कि अनाथालयों में पल पोस कितने ही बालक बड़े विद्वान् और प्रतिष्ठित पदों पर हैं। बालिकाएं बड़े-बड़े घरों में आदर्श गृहणी के रूप में सुचारु रूप से अपना कर्तव्य पालन कर रही हैं। ऐसे होनहार बालकों को अनाथ कहकर उनमें मन्द मनोरथता भरना एक नैतिक अपराध है। अस्तु, उत्तर प्रदेशीय आर्य-प्रतिनिधि सभा के आदरणीय प्रधान श्रीमदनमोहन सेठ एम० ए० ने माननीय श्री पन्तजी से अनाथालय के बदले में कोई और उपयुक्त नाम बताने की प्रार्थना की तो आपने 'बाल सदन' या 'बाल गृह' बताये हैं। हम समझते हैं यह सुझाव बहुत सुन्दर है। 'बाल सदन' की अपेक्षा 'बालगृह' अधिक उपयुक्त जान पड़ता है, क्योंकि इसमें 'गृहहीन' बालकों के लिए 'गृह' (घर) की भावना है। इस प्रदेश में आर्य समाज की बनी १२ अनाथालय हैं हम समझते हैं, इन सभी के नाम अब बालगृह दयानन्द बालगृह श्रद्धानन्द बालगृह आदि आसानी से रखे जा सकते हैं केवल अनाथालय शब्द बदलना है।

जीवन-ज्योति

श्री पं० वासुदेव शर्मा

श्री पं० वासुदेव शर्मा भजनोपदेशक ने आर्यसमाज की प्रशंसनीय सेवा की। इनका जन्म अब से ७३ वर्ष पूर्व उमरी (बिजनौर) ग्राम में हुआ था। प्रारम्भ में इन्होंने गुरुकुल सिकन्दराबाद आदि आर्य संस्थाओं में शिक्षा प्राप्त की। श्री पं० कृपाराम शर्मा (पूज्य दर्शनानन्दजी महाराज) और श्री पं० मुरारिलाल शर्मा की इन पर बड़ी कृपा थी और इन्हीं लोगों की प्रेरणा से आप प्रचार-कार्य में प्रवृत्त हुए थे। ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इन्होंने अच्छा अध्ययन किया था। ये कविता भी करते थे। कई भजन पुस्तकें भी बनाई थी, 'वासुदेव-भजन-संग्रह' और 'वासुदेव-भजन-बत्तीसी' इनकी प्रसिद्ध पुस्तकें हैं। पण्डितजी देश के प्रायः सभी समाजों में प्रचारार्थ गये थे। आपकी प्रचार-शैली बड़ी आकर्षक और प्रभावपूर्ण थी। हँसमुख और विनोदी भी आप खूब थे।

पं० वासुदेवजी नियम पूर्वक नित्य सन्ध्या तथा अग्निहोत्र करते थे। कभी अन्तर न आने देते थे। आप प्रायः अपनी और महाकवि शंकर की कविताएं गाते थे। भजनों के साथ आप सिद्धान्तों की व्याख्या भी बड़ी सुन्दर करते थे। संस्कार सम्बन्धी भजनों का तो आपके पास ढेर था। जैसा अवसर होता वैसे ही भजन आप गाते। पण्डितजी भजनोपदेशक ही नहीं थे, संस्कार भी आप बड़ी कुशलता से कराते थे। प्रारम्भ में आपने विरोधियों के विरोध का सामना बड़ी दृढ़ता और निर्भयता से किया। जहाँ आपको प्रचार करने को स्थान नहीं मिलता, आप कुओं पर बैठकर या चलते-फिरते ही प्रचार करते। विरोधियों की गालियों की कभी परवा नहीं की।



श्री पं० वासुदेव शर्मा

पण्डितजी महात्मा मुन्शीराम जी (श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी) के अनन्य भक्त थे। कांगड़ी गुरुकुल की स्थापना के समय आपने महात्माजी के साथ सारे देश में प्रचार यात्रा की थी। पीछे आपने ज्वालापुर-महाविद्यालय की सेवा में अपना समय बिताया। अपने उद्योग द्वारा कितने ही आर्यसमाज स्थापित किये जो आज भी बड़े उत्साह से काम कर रहे हैं। पं० वासुदेव शर्मा सच्चे और सात्विक प्रचारक थे। ऐसे प्रचारक जिन्होंने आर्यसमाज के प्रारम्भ काल में उसकी जड़ मजबूत करने में बहुत बड़ा काम किया। वे आर्य मिशनरी थे, उनका सारा जीवन आर्यसमाज और वैदिकधर्म के लिये ही था। शर्माजी आर्यसमाज की सेवा के लिए ही जिये और उसी की सेवा करते-करते केवल ४४ वर्ष की अवस्था में चल बसे! पं० वासुदेव शर्मा के कोई पुत्र न था, प्रसिद्ध विद्वान् श्री पं० सत्यव्रत शर्मा शास्त्री आपके भतीजे हैं जो बड़ी संलग्नता से आर्यसमाज और वैदिक धर्म की सेवा कर रहे हैं।

महिला-मण्डल

हमारे गीत

श्रीमती सुखदा देवी वर्मा, एम० ए०, साहित्यरत्न

स्त्रियों के गीतों की बड़ी बुरी दशा है। विवाहादि अवसरों पर प्रायः वे ऐसे गीत गाती हैं, जिनमें न तुक होती है न ताल। न भाव होते हैं, न भाषा की सुन्दरता। वही बंधे हुए गीत हैं, जो प्रायः सब जगह गाये-बजाये जाते हैं। दुःख तो यह है कि अब तो मेरी बहनों ने अपने गानों में सिनेमा के गन्दे गीत भी शामिल कर लिये हैं। जो बहनें इन गीतों को गाती हैं वे 'सुघड़' 'संस्कृत' और 'प्रगतिशील' समझी जाती हैं। एकबार 'आर्यमित्र' में किसी और बहन ने भी इस आवश्यक विषय की ओर ध्यान आकृष्ट किया था, परन्तु कुछ परिणाम दृष्टिगत नहीं हुआ। आर्यसमाज ने समाज-संशोधन की दिशा में बड़ा काम किया है। उसका कर्त्तव्य है कि वह कुछ ऐसे गीत तयार करावे जो संस्कारों के साथ गाये जाय, और भाषा, भाव तथा काव्य की दृष्टि से भी ठीक हों। एक-आध पुस्तक इस तरह की निकली है, परन्तु उसमें कविता-सम्बन्धिनी शुद्धता पर ध्यान नहीं दिया गया। इस कार्य को सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा अच्छे पुरस्कार की घोषणा करके करा सकती है। स्त्रियों के लिये अच्छे गीत बन गये तो एक महत्वपूर्ण काम हो जायगा और इससे समाज का बड़ा हित होगा।

एक बात मुझे नामों के सम्बन्ध में भी कहनी है। मैं देखती हूँ कि इस युग में भी प्रायः हमारे बालक बालिकाओं के ऊटपटांग नाम रख दिये जाते हैं। खिच्चा, घिस्सू, छदम्मी, नत्था, बाबू, मुन्शी आदि। इसी प्रकार के बालिकाओं के तिर्री, किन्नो, पिक्को, नर्रो, बदर्रो, किट्टो आदि नाम होते हैं। यह भद्दी प्रथा शीघ्रातिशीघ्र बन्द होनी चाहिए। सब नाम शुद्ध, सुन्दर और सार्थक होने चाहिएं। मेरी पढ़ी-लिखी बहनों को तो इस दिशा में पूर्ण रूप में सचेष्ट होने की आवश्यकता है। उन्हें बेपढ़ी बहनों को भी इस दिशा में सावधान करना चाहिए। नाम का बड़ा महत्व होता है। इसका सम्बन्ध सारे जीवन से और उसके बाद भी होता है। ऋषि-मुनियों और प्राचीन राजा महाराजाओं के नाम कैसे सुन्दर हैं। वही प्रथा हमें भी अपनानी चाहिये। मैंने एक जगह महर्षि दयानन्द की जीवनी में पढ़ा है कि एक बीमार व्यक्ति महाराज के पास गये, और अपने अस्वस्थ रहने का दुखड़ा सुनाने लगे। महाराज ने उनका नाम पूछा तो उन्होंने 'कूड़ेमल' बताया। महाराज ने हंसते हुए कहा—अरे भले आदमी, 'कूड़ा' ही क्या कम था जो उसमें 'मल' जोड़ने की जरूरत पड़ी। ऋषि ने 'कूड़ेमल' का नाम बदल कर 'आनन्दस्वरूप' रखा। इस नाम का उस व्यक्ति पर बड़ा प्रभाव पड़ा और वह स्वस्थ हो गया। मैं चाहती हूं, मेरी प्रत्येक पढ़ी लिखी बहन इस बात का पूरा प्रयत्न करे कि

अध्यात्म धारा

अध्यात्म क्या है ?

'देव'

यह सष्टि क्या है, कहा से आयी, किसने उत्पन्न की ? सरल उत्तर है, परमात्मा ने। मसाला कहां से आया? प्रकृति से। प्रकृति में क्या गुण हैं? सत्व, रज, तम। यही प्रकृति जब विकृत रूप में आती है, सृष्टि बन जाती है। यह देह भी तीन गुणों का पुतला है। सत्व (उत्तम गुण), रजस् (मध्यम), तम (निकृष्ट)। सत्व गुण से भगवद्भक्ति सूझती है। रजोगुण जन्ममरण के चक्र में डालता है। तमोगुण से अधोगति मिलती है। शुद्ध सत्व परमार्थ की ओर लेजाता है। वही जब शवल अर्थात रजोगुण स मिश्रित हो जाता है, वही ससार म फसे तथा उलझे रहने का कारण बनता है। किसी में सत्वगुण अधिक रज न्यून, किसी में रजोगुण अधिक सत्व न्यून ऐसा चलता है।

अधिक	न्यून	अतिन्यून
सत्व	रजस्	तमस्
रजस्	सत्व	तमस्
तमस्	रजस्	सत्व

ससार में विरला ही प्राणी होगा जो इन तीन गुणों के पञ्जे स छूटा हो। सबमें न्यूनाधिक प्रमाण मे तीन गुण रहते ही है। जब सत्व गुण इतना प्रबल हो जाता है कि वह रजस् तथा तमस् का बखेला ढक तोड़कर उनको सर्वथा प्राणहीन कर डालता है, तब परमार्थ का आभास मिलने लगता है। मनुष्य तीन प्रकार का सात्विक राजस् और तामस्। उसकी तीन प्रकार की श्रद्धाएं सात्विकी, राजसी और तामसी। उसके तीन प्रकार के आहार सात्विक, राजस् और तामस्। उसकी तीन प्रकार की बुद्धिएँ सात्विकी, राजसी और तामसी। उसकी तीन प्रकार की प्रवृत्तिएँ सात्विक, राजसी और तामसी। उसके तीन प्रकार क कर्म सात्विक, राजस् और तामस्। उसके तीन प्रकार के फल सात्विक, राजस और तामस।

सत्व—निर्मल प्रकाशक और निर्विकार होता है। इसलिए यह सुख और ज्ञान की आसक्ति से बाँधता है।

रजस्—यह जीवात्मा को कर्म और उसके फल की आसक्ति से बाँधता है इसीलिए मनुष्य रागद्वेष में फँस जाता है।

तमस्—अज्ञान से तम होता है, वह मोह में डालता है। प्रमाद, आलस्य और निद्रा से बाँधता है।

सत्व—सुख में प्रेरित करता है। रजस्—कर्म में प्रेरित करता है, आराम से नहीं बैठने देता। तमस्—ज्ञान को ढक लेता, है, प्रमाद में प्रेरित करता है। जब समझो कि समस्त इन्द्रिय द्वारों मे, प्रकाश, चेतना तथा बोध का प्रादुर्भाव हो रहा है तब जानना कि सत्व बढ़ रहा है। जब देखो कि लोभ, प्रवृत्ति, कर्मों का आरम्भ, अशान्ति, स्पृहा बढ़ रहे है, तब जानो रजोगुण जग रहा है। और जब कर्तव्याकर्तव्य नहीं सूझता, कोइ प्रवृत्ति नहीं हो रही, मोह बढ़ रहा है, प्रमाद हो रहा है तब जानो तम जाग रहा है।

जब शरीर सत्वगुण के चढ़ाव और बढ़ाव में छूटता है तब उत्तम पुण्य लोक मिलता है। जब रजोगुण के चढ़ाव में शरीर छूटे तो मनुष्य-जन्म में आता है। जब तमोगुण की अधिकता की दशा मे देह छूटे तब जानना कि वह मूढ़ योनि में अर्थात् वृक्षादि स्थावरों में जन्म लेगा। सात्विक कर्मों का फल, निर्मल सुख, ज्ञान और वैराग्य। राजस गुणों का फल दुःख। तामस गुणों का फल अज्ञान। सत्व से ज्ञान बढ़ता है, रज से लोभ बढ़ता है और तम से प्रमाद, मोह, अज्ञान। इस प्रकार विवेक करते गये तो मगज फटने को हो जाता है। अनन्त काल के अनन्त जीव, उनकी अनन्त वासनाएँ, उससे उत्पन्न उनके त्रिगुणात्मक अनन्त कर्मों का झमेला,—जल में खोज। कहाँ तक की जावे, फिर उन सब का साक्षी, फलदाता करुणानिधान भगवान्। अल्पज्ञ मनुष्य जान भी तो नहीं सकता। जाने भी तो कहाँ तक स्मरण रक्खे, रख ही नहीं सकता।

———

स्वास्थ्य-सुधा

'बावली घास'

श्रीहरिशंकर शर्मा

तीस वर्ष से अधिक की बात है। मेरे पूज्य पिता स्वर्गीय महा कवि शंकर रक्तार्श (खूनी बवासीर) से व्यथित थे, रोज ढेर-सा खून जाता था, वे निर्बलता वश खाट में लग गये थे। उठने-बैठने की भी शक्ति नहीं रही थी, पारिवारिक जन और मित्र-मिलापी बड़े चिन्तित थे। अनेक वैद्यों और डाक्टरो के इलाज हुए, परन्तु कुछ भी लाभ न हुआ। एक प्रकार से पिताजी असाध्य हो चुके थे, उन्हें स्वय भी अपने जीवन की आशा न रही थी। बाहर से बहुत से मित्र-मिलापी उन्हें देखने आते और निराश होकर चले जाते थे। दूर-दूर के और समीपवर्ती ग्रामो के भी। एक दिन एक पटवारीजी आये वे पास के ही एक ग्राम में रहते थे। बोले—"आप लोग मेरी बात पर विश्वास कर पण्डितजी को 'बावली घास' कूट-पीस तथा पानी में छान कर पिलाइये। अवश्य लाभ होगा।" अपने दुपट्टे की गाँठ खोलकर उन्होंने एक तोले के लगभग 'बावली घास' का चूरा दिया और बड़ा विश्वास दिलाकर चले गये। साहित्याचार्य श्री प० पद्मसिंह शर्मा और वैद्यराज श्री प० रामचन्द्र शर्मा (कनखल निवासी) भी ठहरे हुए थे। पहले तो सब इस नये प्रयोग के परीक्षण से झिझके अन्त को यही निश्चय हुआ कि जो हो यह औषधि अवश्य ही दी जाय। परमात्मा मंगल करेगा। काली मिरचों के साथ ठंडाई की तरह घोट छान कर 'बावली घास' पिलाई गयी, उससे रक्त-स्राव में कुछ फर्क हुआ। शाम को यही औषधि फिर यथाविधि दी गई। रात में और लाभ हुआ। पिताजी तथा हम सब को आशा बँधी। प्रातः पूज्य प० पद्मसिंह शर्मा और मैं पटवारीजी के घर पहुंचे और सारी कथा कह सुनाई। उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई, उनसे हम और औषधि ले आये। चार-पांच दिन में पिताजी का भयङ्कर रक्त-स्राव बन्द हो गया। केवल कमजोरी शेष रह गयी। वह भी थोड़े दिनो बाद जाती रही। फिर तो इस औषधि का बहुत प्रचार हुआ और स्थान-स्थान पर वह बाँटी जाने लगी। 'बावली घास' का शास्त्रीय नाम किसी को नहीं मालूम। बीसियों वैद्यो से पूछा गया। इसलिये उसे 'बावली घास' ही मान लिया गया है। अलीगढ़ जिले में इसे इसी नाम से पुकारते हैं।

'बावली घास' कार कातिक में ज्वार, मक्का और कपास के खेतो में अपने आप होती है। कोई उसे बोता नहीं। यह घास तो क्या, फुट-डेढ़ फुट का एक पौधा है। इस पर फली भी आती है, बड़ी बारीक। फूल में इकट्ठी कर लेने से, सूखी हुई घास भी सालभर तक काम देती है। अलीगढ़, मथुरा, एटा, आगरा, भरतपुर, बुलन्दशहर आदि जिलों में तो यह होती ही है और जिलो में अनुसधान नहीं किया इस से रक्तार्श का भयकर रक्त-स्राव बन्द हो जाता है, तकलीफ नहीं रहती। बिलकुल जड़ मे तो रोग नहीं जाता, परन्तु कष्ट की समाप्ति अवश्य हो जाती है। जब ज़रा भी रोग की शिकायत हो, एक मात्रा लेने से ठीक हो जायगी। भगवान् ने जड़ी-बूटियों को कैसी अद्भुतशक्ति प्रदान की है।

———

उसके पास-पड़ौस या महल्ले में किसी बालक का नाम भौंड़ा-भद्दा न रक्खा जाय। जो पण्डित-पाधा मूर्खतावश ऐसा करें, उसे भले प्रकार समझा बुझा दिया जाय और विकृत नाम रखने से सबको रोका जाय। ऐसा करने से एक बड़ी कमी दूर हो जायगी और नामों में सुन्दरता आ जायगी।

———

सुझाव और सम्मतियाँ

"सत्यार्थप्रकाश" का द्वितीय भाग

कविराज प० अमरनाथ वैद्यशास्त्री

श्री स्वामी दयानन्दजी सरस्वती ने स० ६३२ वि० में सत्यार्थ-प्रकाश प्रकाशित किया, जो कि आर्यों के लिए स्मृति-ग्रन्थ सिद्ध हुआ। स्वामीजी ने वेद चतुष्टय और आर्ष ग्रन्थो के प्रमाण देकर आर्यों के लिए धर्म-कर्म तथा विधि-निषेध का आदेश किया, और उनके समय तक जितने-देशी विदेशी मतमतान्तर थे, उनकी कपोल कल्पनाओं का ओजस्वी भाषा में निर्भीकता से खण्डन किया। अनार्ष ग्रन्थो की तीव्र आलोचना की। आरम्भ में केवल सत्यार्थप्रकाश को ध्यान पूर्वक पढ़ जाने से ही वैदिक धर्म का तत्व, ईश्वर विश्वास, सदाचार, शिष्टाचार भारतीय सभ्यता-संस्कृति का ज्ञान स्वराज्य की भावना और कर्तव्य-कर्म का बोध हो जाता है। निर्जीव भाव नष्ट होकर नवजीवन संचार हो जाता है। मिथ्या प्रपंच-पथों के जाल से बचकर वेदमार्ग के सुपथ का अवलम्बन कर आयत्व की दृढ़ भावना हृदय में भर जाती है। पूर्वार्द्ध के १० समुल्लासों में वैदिक विधान मण्डन और उत्तरार्द्ध के ४ समुल्लासो में अवैदिक मतों का सयुक्तिक सरल खण्डन किया गया है।

इन ६६-७० वर्षों में अनेक मत-पथ, धार्मिक, राजनैतिक और उत्पन्न हो गये है। यद्यपि सत्यार्थ-प्रकाश की शैली से हम अपने धार्मिक सिद्धान्तों का पालन करते हुए मिथ्या मतों का निराकरण कर सकते हैं, परन्तु यह तो विशेष स्वाध्यायशील व्यक्तियों का ही कार्य है. तथापि नवीनो द्भव देशी-विदेशी मतो, भ्रमात्मक पंथों, अनाचार, दुराचार, भ्रष्टाचार की दुष्प्रवृत्तियो का सत्यार्थप्रकाश शैली के अनुसार निर्भयता पूर्वक खण्डन करने की आवश्यकता है। इसलिए इसका दूसरा भाग लिखा जावे।

सत्यार्थ प्रकाश के दूसरे भाग में १४ समुल्लास होने चाहियें। उनमें विवेचनीय विषय निम्न प्रकार हों। पूर्वार्द्ध में १–ईश्वर, २–वेद, ३–उपनिषद्, ४–गीता, ५–पुराण, ६ स्मृति, ७–षट्दर्शन, ८–इतिहास (रामायण, महाभारत) ९–शिक्षा व्यवस्था, पाठ्यक्रम, गुरुकुल विद्यालय। १०–आर्यो का धार्मिक, लौकिक पारिवारिक आचार व्यवहार आदि। उत्तरार्द्ध में ११–भारतीय नवीन मत, १२–भारतीय राजनैतिक संस्थाये। १३–विदेशी मत-पथ १४–विदेशीय राजनैतिक संस्थाये, व विभिन्न वाद।

अब प्रश्न यह रहा कि दूसरा भाग कौन लिखे। महर्षि दयानन्द ने अपनी विशेष मेधावी बुद्धि से सर्वाङ्गपूर्ण सत्यार्थप्रकाश की रचना करदी, अब आर्यसमाज में कौन ऐसा दीर्घदर्शी प्रत्युत्पन्न-मत साधनाशील व्यक्ति है, जोकि इस ग्रन्थ का सम्पादन करे। यही बात विचारणीय है। अनेक आर्य विद्वानो ने वैदिक सिद्धान्तो के अनुकूल खण्डन मण्डनात्मक पुस्तक लिखी हैं परन्तु सर्वत्र सबको वे रचनाये प्राप्त नहीं होती और वे पुस्तक सर्वाङ्ग पूर्ण भी नहीं हैं। समस्त ज्ञातव्य विषय एक ग्रन्थ में ही प्रविष्ट होने चाहिए। उन विभिन्न पुस्तको में से उपयोगी अंश संगृहीत किये जावें। इस प्रकार पर्याप्त सामग्री मिल सकती है।

पांच विद्वानो की समिति (लेखक-मंडल) जो कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के द्वारा संगठित हो, वह इस दूसरे भाग का सम्पादन करे और विज्ञप्ति पत्रों द्वारा सूचना प्रकाशित कर विवेचनीय विषयो पर विचारो का भी संग्रह किया जावे, जिससे कि सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय भाग के सम्पादन करने में सुविधा हो। सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रकाशित ग्रन्थ ही सर्वमान्य हो सकता है।

ऊपर १४ समुल्लासो के जो विषय लिखे गये हैं, ये तो विचार के रूप में हैं, प्रकरणानुसार एक विषय, दूसरे में भी समाविष्ट हो सकता हैं। समुल्लासों के विषय बढ़ाये-घटाये जा सकते हैं व परिवर्तित किये जा सकते हैं। यथा समय विवेचनीय विषयों की सूची प्रकाशित की जा सकती है।

पच्चीस वर्ष में युग परिवर्तन हो जाता है। नये-नये विचार, मत, पथ, वाद खड़े हो जाते हैं। सिद्धान्तो के मानने वालों में भी शिथलता आ जाती है, धार्मिक तत्वो को ठीक न समझने से अवहेलना की वृत्ति उत्पन्न हो जाती है। लौकिक कार्यों में भी रूढ़ि [illegible] अनाचार की भावना भर जाती है। इसलिए समय की गतिविधि को ध्यान में रखकर वैदिक सिद्धान्तो का प्रतिपादन कर २५ वर्षों के अनन्तर सत्यार्थप्रकाश के भागो का सम्पादन आवश्यक ही प्रतीत होता है। ६६ वर्षों में समय की गतिविधि में बड़ा अन्तर हो गया है। सर्वसाधारण जनता को समझने और कर्त्तव्य रूप में लाने के लिए अनेक वैदिक सिद्धान्तो के स्पष्टाकरण की आवश्यकता है। नवीन प्रामाणिक एक स्मृति-ग्रन्थ न मिलने से आर्य जनता भी किंकर्त्तव्य विमूढ हो रही है। जिसकी जैसी रुचि प्रवृत्ति स्थिति होती है वह वैसा ही आचरण करने लगता है यद्यपि वह सिद्धान्त विरुद्ध होता है। नये नये मत पथ, वाद के चक्र में पड़कर आर्य व्यक्ति भी भ्रमित हो जाते है। यदि इससे पूर्व ही दूसरा भाग प्रकाशित हो जाता तो आर्य जनता को समयानुकूल सरल मार्ग का बोध हो जाता।

मेरठ में होने वाले सप्तम आर्यसम्मेलन में यदि यह प्रस्ताव स्वीकृत होकर सार्वदेशिक सभा सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय भाग का सम्पादन कार्य प्रारम्भ करदे तो आर्य साहित्य में विशेष श्री-वृद्धि से आर्यजनता का कल्याण साधन हो सकता है।

वर्षों से हृदय में उठते हुए विचार को मैंने लिखा है। इसकी उपयोगिता - अनुपयोगिता पर विचारशील आर्य सज्जनो को अपने-अपने भाव, विचार प्रकट करने चाहिएं।

हमारी कार्य-प्रणाली

श्री ब्रह्मस्वरूप गुप्त, एम०ए एडवोकेट

भविष्य में हमारी कार्य-प्रणाली क्या हो, इस विषय में मैं नीचे कुछ सुझाव प्रस्तुत करता हू, आशा है, आर्य विद्वान् उन पर विचार करेंगे। वार्षिक वृहदधिवेशनों के अवसर पर तो चुनाव-चर्चा ही रहती है, वहां ऐसी महत्वपूर्ण बातो पर विचार करने के लिये समय कहाँ! प्रायः कहा जाता है कि काम करने वाले नवयुवक नहीं मिलते, परन्तु मेरा ख्याल है कि नवयुवकों से काम लेने वालों का अभाव है, जो हो। मेरे सुझाव इस प्रकार है—

१ प्रत्येक आर्यसमाज में उपनियमों के अनुसार समुदाय स्थापित किये जावें। २. प्रत्येक समुदाय को एक सप्ताह का स्थानीय आर्यसमाज का प्रबन्ध तथा कार्यक्रम सौंपा जाय और यह सब कार्य मंत्री सभा की देख रेख तथा व्यवस्था में हो। ३ प्रत्येक समुदाय के सदस्यो में परस्पर प्रेम तथा सम्पर्क नित्य बढ़ाया जाय तथा भिन्न समुदायो से भी परस्पर परिचय और सम्पर्क स्थापन का उपाय किया जाय। ४ आर्यसमाज में जितनी उपसमितियाँ बनें उनमें यथासम्भव दो से अधिक अन्तरंग सदस्य न रहे। शेष स्थानीय आर्यसमाज के अन्य सदस्यो में से लिये जावें, जिससे उनमें आर्यसमाज के लिये कार्य करने की भावना उत्पन्न हो और कार्य करने का अवसर भी मिले। ५ आर्य प्रतिनिधि सभा में भी सब उपसमितियाँ उक्त संख्या ४ के अनुसार ही बनें। ६. आर्य प्रतिनिधि सभा में उक्त संख्या पाँच के अनुसार ६ सदस्यों की एक उपसमिति प्रतिवर्ष बनाई जावे जो अपने को तीन तीन के तीन भागो में बांट कर अपने कार्यक्षेत्र बांट ले और मास में कम से कम एकवार अपने क्षेत्र के किसी भी शिथिल आर्य-समाज में पहुंच कर सदस्यों से सम्पर्क कर आर्यसमाज को उन्नति तथा प्रगतिशील बनादे इसका व्यय सभा देगा। ७ आर्य समाज का जीवनउपयोगी संगठन भी बनाया जाय और इसके लिये सदस्यों से शतांश के स्थान पर उनकी आय का ८ प्रतिशत तक ले लिया जाय इसमें से एक भाग आर्यसमाज के लिये रहेगा और शेष ७ भाग की आय से उद्योग-धन्धे तथा पाठशाला आदि चलाये जायें, जिनमें आर्यों को प्रत्येक कार्य

में प्राथमिकता मिले। और इस धन से आर्यों के असहाय कुटुम्बों का उस समय भरण-पोषण भी किया जाय जिस समय तक भार उठाने योग्य परिवार में एक पुरुष न हो जाय।
८. प्रत्येक नगर व आर्यसमाज के अधीन वानप्रस्थ आश्रम खोले जाय जहाँ से अच्छे तथा अनुभवी कार्यकर्त्ता मिल सकें और वृद्धजन अपनी सन्तानों से निरादृत हो घर में न पड़े रहें।
९. प्रत्येक पाँच ग्रामों के बीच एक आर्य पुरोहित या योग्य वानप्रस्थी रहे तथा प्रत्येक बड़े आर्यसमाज में एक योग्य पुरोहित रहे। ये पुरोहित बालकों को पाँचवीं कक्षा तक निःशुल्क शिक्षा दें। उनमें से प्रत्येक पाठशाला से कुछ विद्यार्थी चुनकर प्रत्येक राज्य (प्रान्त) की मुख्य पाठशाला में निःशुल्क शिक्षा को रखे जाय, शेष अपने अभिभावकों की इच्छानुसार शिक्षा पावें। १०. इन राज्य पाठशालाओं में प्रतिवर्ष दो-दो श्रेष्ठ विद्यार्थी लेकर भारत की सार्वदेशिक केन्द्रीय पाठशाला में निःशुल्क शिक्षित किये जायें और उनमें से प्रतिवर्ष १० विद्यार्थी चुनकर विदेशों में विशेष शिक्षा प्राप्त करने के लिये भेजे जावें।

इस प्रकार हम धर्म, राष्ट्र तथा देश और जनता की सच्ची सेवा के लिये सचमुच प्रगतिशील तथा उपयोगी सिद्ध हो सकेंगे और सच्चे आर्य कहलाने के अधिकारी बन जायेंगे।

— —

साहित्य-सौरभ

मेरे प्रकाशन सम्बन्धी अनुभव

श्री प० गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम० ए०

पिछले किसी अङ्क में मैंने 'हमारा साहित्य' शीर्षक लेख दिया था, जिसे श्री सम्पादकजी ने अपनी पुष्टि सहित छापने की कृपा की। साथ ही कुछ पंक्तियाँ आलोचनात्मक भी लिखी थीं। उनकी विस्तृत आलोचना तो शायद फिर कभी करूँ, परन्तु एक प्रश्न का उत्तर देना चाहता हूं। श्री सम्पादकजी पूछते हैं कि उपाध्यायजी अपने अनुभव से बतावें कि उनकी पुस्तकों के कितने संस्करण निकल चुके हैं, अपने साहित्य सम्बन्धी अनुभवों को यदि मैं लिखने लगूँ तो एक अत्यन्त रोचक बड़ी सी पुस्तक तैयार हो सकती है। जो आर्य समाज के साहित्य प्रेम की उत्साहजनक कहानी न होगी फिर भी संक्षेप से प्रश्न का उत्तर तो लिखता हूं।

सन १९-६ में मैंने आस्तिक-वाद की रचना की। श्री महात्मा नारायण स्वामीजी ने इसे न केवल पसन्द ही किया अपितु एक लम्बी भूमिका लिखकर मेरा मान बढ़ाया। महात्मा हंसराजजी ने पुस्तक को आद्योपान्त पढ़कर कई पृष्ठों में उत्तर दिया, मेरे पास छापने के लिये पैसे नहीं थे। इतनी बड़ी पुस्तक के लिये कितना पैसा चाहिये इसका अनुमान सभी विज्ञ पुरुष लगा सकेंगे। मेरा प्रेस भी न था। परन्तु लीडर प्रेस में मेरी साख थी। इन्होंने कागज के दाम माँगे बिना ही पुस्तक छाप दी। जब बिल आया तो काफी बड़ा था। मैंने 'आर्यमित्र' में विज्ञापन देने के लिये १००) का एक चैक भेजा। विज्ञापन निरन्तर बहुत दिनों तक छपता रहा और केवल ८० पुस्तकें बिक सकीं। मैंने लीडर का वह बड़ा बिल कैसे चुकाया? यह लिखने की आवश्यकता नहीं, उसी के पश्चात् उतनी ही बड़ी पुस्तक 'अद्वैतवाद' लिखी गई। छपे कैसे? इस समस्या का यह समाधान किया गया कि श्री दुलारेलालजी ने क्रमशः मासिक पत्र माधुरी में पुस्तक छापने का वचन दे दिया और हस्तलिखित कापी उनको देदी गई। इतने में मेरे मित्र श्री प्रेमचन्दजी माधुरी के सम्पादक होगये, वे मेरे सहपाठी थे। उन्होंने कई मास तक निरन्तर लेख छापे और भूरि भूरि प्रशंसा की। परन्तु जब शनैः शनैः लोगों को पता चला कि अद्वैतवाद में शंकराचार्य के मत का मंडन नहीं अपितु दार्शनिक आलोचना है तो 'माधुरी' के व्यवस्थापकों और विशेषकर नवलकिशोर प्रेस के अध्यक्ष महोदय से शिकायत की गई और उन लेखों का छपना बन्द हो गया। मैं अपने उन लेखों को अति साधारण समझता था और इनके मासिक पत्र में छपने से ही सन्तुष्ट था। परन्तु अब मुझे इनका मूल्य मालूम हुआ। जिस पुस्तक ने शंकर के अनुयायियों में हलचल उत्पन्न करदी उस को तो छपना ही चाहिये। फिर लीडर प्रेस का आश्रय लिया गया और पुस्तक छप गई। छपते ही कई ओर से आवाज आई, "इसका उत्तर लिखा जायगा" उत्तर तो किसी ने नहीं लिखा, परन्तु पुस्तक धीरे धीरे बिकती रही। कितने दिनों में? और लीडर का बिल कैसे चुका? यह क्यों बतलाया जाय?

एकबार श्री स्वा० आनन्दघनजी ने मुझे लिखा, "तुमने आर्य-समाज की पुस्तक लिखकर बहुत धन कमाया है, परन्तु दान तो देते ही नहीं।" मुझे कुछ बुरा लगा। वस्तुतः बात कुछ और ही थी। मेरे ट्रैक्ट और कई अङ्गरेजी की पुस्तकें 'चौक समाज' छापता था और मेरा कुछ आर्थिक हित न था। कला प्रेस खुल जाने से कुछ सुविधा अवश्य होगई। परन्तु मेरे पुत्र श्री विश्वप्रकाशजी बी० ए०, एल-एल० बी० ने यह प्रेस विकालत न करके अपनी जीविका के लिये खोला था। उनकी रोजी का यही एक मात्र साधन है। जब विश्वप्रकाश को पता चलता है कि मैं कोई नई पुस्तक लिख रहा हूँ तो उनका दिल दहल जाता है। "पुस्तक तो बिकती नहीं। सौ दो सौ कापियाँ बिकीं भी तो बरसों में। छापनी ही पड़ेगी।' इसीलिये पुस्तक समाप्त होने के पश्चात् बरसों पड़ी रहती हैं और मैं समझता हूँ कि विश्वप्रकाश मेरी पुस्तक छाप कर पितृऋण चुका रहे हैं। यही तर्पण है यही श्राद्ध है। क्योंकि उनकी श्रद्धा का प्रकाश होता है और मेरी कुछ तृप्ति हो जाती है। मैं पुस्तक तो ऋषि-ऋण के चुकाने के लिये लिखता हूं, परन्तु ऋषि-ऋण तो तब चुकता जब पुस्तक दूसरों तक पहुँचती।

मैंने अपनी पुस्तकों के लिये किसी धनाढ्य के सामने हाथ नहीं पसारा। ऐसा करने की योग्यता भी नहीं, पसारता तो मुंह की खाता। आयुभर में एक सज्जन मिले। श्री जगन्नाथजी रामनगर (दिल्ली)। वे एक दिन बिना माँगे ही मुझे 'वैदिक कलचर" के छापने के लिये एक हजार रुपया देगये। मैंने वह धन सार्वदेशिक सभा में जमा कर दिया और उसी की ओर से पुस्तक छपी। पुस्तक की बड़ी प्रशंसा हुई। श्री हरिशंकरजी शर्मा ने तो बिना माँगे ही एक प्रशंसा का असाधारण पत्र लिखा। 'विज्ञापन छपता रहा परन्तु इतनी पुस्तकें भी नहीं बिकीं कि एक सहस्र से अधिक सात-आठ-सौ रुपये जो छपने में लगे थे वह भी चुक जाते। अभी 'आर्योदय' छपा है। वह डेढ़ वर्ष पहले तैयार होचुका था। प्रशंसा के लम्बे चौड़े पत्र आये हैं। 'आर्यमित्र' के सम्पादकजी ने कृपा करके अपना एक पृष्ठ ही अर्पण कर दिया। 'आर्यमित्र' में विज्ञापन भी निकल रहा है, जिसके लिये लगभग बीस-पच्चीस रुपये का बिल आता होगा। मैंने विश्वप्रकाश से पूछा कि "कुछ मांग आई?" उत्तर मिला "केवल दो पुस्तकों का आर्डर आया है।' आर्यसमाज में यदि कोई १००) का दान देदे तो उसका बहुत मान होता है। ५००) देने पर तो सार्वदेशिक सभा का आजीवन सदस्य हो जाता है। परन्तु यदि कोई उसके लिये साहित्य-रूप में पचास हजार रुपये की सेवा करदे तो भी कोई उसे दो कौड़ी के लिये पूछने वाला नहीं है। एक दिन कुछ सज्जनों के बीच "वैदिक कल्चर" की प्रशंसा हो रही थी। इनमें दिल्ली के एक धनाढ्य सज्जन भी थे। मैंने कहा "क्या आपको पुस्तक भेजदूँ" कहा "अच्छा"। पुस्तक की बिक्री से मुझे तो कुछ मिलने वाला था नहीं सार्वदेशिक सभा का बोझ ही हलका होना था। मेरे कार्यालय ने पुस्तक भेज दी। पुस्तक के दाम थे ३॥)। चपरासी लौटकर आया, पूछा

संस्था-परिचय

परोपकारिणी सभा

आचार्य श्री विश्वश्रवाजी

ऋषि दयानन्द ने दो संगठनों का निर्माण किया। एक आर्यसमाज और दूसरी परोपकारिणी सभा संवत् १६३६ फाल्गुन शुक्ला पञ्चमी मंगलवार तदनुसार २७ फरवरी सन् १८८३ को ऋषि ने अपने जीवन-काल में परोपकारिणी सभा का निर्माण करके रजिस्ट्री करादी और जो कुछ सामान अपने पास था सब उस सभा के सुपुर्द कर दिया। उस समय परोपकारिणी सभा के २३ सदस्य थे। आरम्भ में उदयपुराधीश महाराणा सज्जनसिंहजी प्रधान थे और उदयपुर के ही कविराज श्री श्यामलदासजी मन्त्री थे। तब से अब तक यह सभा अपने पूर्ण उत्तरदायित्व के साथ कार्य कर रही है। इस समय इसके सभापति शाहपुराधीश राजाधिराज श्री उम्मेदसिंहजी हैं और मन्त्री दीवानबहादुर श्री हरविलासजी शारदा हैं।

इस सभा को ही ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों के छापने का अधिकार है और इसी सभा के पास ऋषि के ग्रन्थों के समस्त हस्तलेख अब तक सुरक्षित रखे हैं। ऋषि ने अपने ग्रन्थों में जो प्रमाण दूसरे ग्रन्थों के दिये हैं, वे भी हस्त लिखित ही ऋषि के पास थे क्योंकि मुद्रित ग्रन्थ ऋषि के काल में नहीं के बराबर थे, ऋषि को हस्तलिखित ग्रन्थों से ही अधिक काम लेना पड़ा है। उन प्राचीन आर्ष ग्रन्थों तथा सम्प्रदाय-ग्रन्थों के हस्त लेखों का भी संग्रह परोपकारिणी सभा के पास है। ऋषि के ग्रन्थों में उद्धृत प्रमाणों के पाठ कहीं-कहीं वर्तमान मुद्रित ग्रन्थों से नहीं मिलते। उसका कारण यही है कि ऋषि ने अपने पास विद्यमान हस्त लिखित ग्रन्थों से प्रमाण दिये हैं और आज कल लोग वर्तमान मुद्रित ग्रन्थों से पाठ मिलाते हैं। उनके लिये आवश्यक है कि अजमेर जाकर ऋषि के संग्रह के हस्तलेखों को देखें।

इसलिये परोपकारिणी सभा ऋषि के ग्रन्थों को यथापूर्व छापने का प्रयत्न करती रही है। उनमें किसी प्रकार के परिवर्द्धन या परिवर्तन करने का सुझाव उसने कभी स्वीकार नहीं किया। सभा के मन्त्री श्रीहरविलास शारदा ने कई बार यह घटना मुझे सुनाई कि ऋषि दयानन्द ने अपना हाथ उनके शिरपर रखकर यह आशा की थी कि मेरा काम करना। वे इस बात को याद करके रोने लगते हैं कि ऋषि के मैंने दर्शन किये थे और उन्होंने मुझसे उक्त बात कही थी। श्री-शारदाजी ने अपने जीवन में ऋषि ग्रन्थों की रक्षा की।

राजकीय नियम के अनुसार पचास वर्ष बीतने पर मुद्रित ग्रन्थों को कोई भी छपवा सकता है, इस सुविधा का सहारा लेकर अन्य पुस्तक-विक्रेता आदि ने ऋषि ग्रन्थों को छापना प्रारम्भ कर दिया। कुछ ने तो उनमें मन-माने परिवर्तन भी किये। अतः ऋषि ग्रन्थों के प्रामाणिक संस्करण वे ही समझे जा सकते हैं जो परोपकारिणी सभा द्वारा वैदिक यन्त्रालय अजमेर में मुद्रित हों। अब श्रीहरविलास शारदा अत्यन्त अस्वस्थ हैं, उनके जीवन का अन्तिम समय है, कानों से सुनाई नहीं देता, पैरों से चला नहीं जाता, परन्तु उनकी बुद्धि अत्यन्त उत्तमता से कार्य कर रही है। पर अब वे नाम मात्र के मन्त्री हैं। कई बार त्यागपत्र दे चुके हैं और परोपकारिणी सभा का कार्यभार भी दूसरों के सुपुर्द कर दिया है। इसी प्रकार शाहपुराधीश राजाधिराज श्री-उम्मेदसिंहजी भी कई बार त्याग पत्र दे चुके हैं, और काम करने से अपनी असमर्थता प्रकट करते रहे हैं। सम्भव है अभी एक-दो वर्ष इस प्रकार की व्यवस्था और चले। इस प्रकार सन् १८८३ से आरम्भ होकर १६५३ में परोपकारिणी सभा का ७० वर्ष का इतिहास समाप्त होगा। अच्छा हो १६५३ में परोपकारिणी सभा की "हीरक जयन्ती" मनाई जावे।

ऋषि ने अपने जीवन-काल में जिन विश्वस्त व्यक्तियों के हाथ में परोपकारिणी सभा सौंपी थी वे सब मर गये। यों तो वर्तमान-काल में जितने व्यक्ति परोपकारिणी सभा के सदस्य हैं उन सबका ही उत्तरदायित्व है, तथापि कुछ प्रमुख व्यक्ति हैं, जिनके हाथ में अब परोपकारिणी सभा का भविष्य है। उनमें दो व्यक्ति मेरी दृष्टि में हैं। श्री महाशय कृष्णजी (लाहोर) और श्री प्रो० घीसूलालजी (अजमेर)। महाशय कृष्णजी ही इस समय कार्य-कर्त्ता प्रधान हैं। मेरी राय में परोपकारिणी सभा को इस समय नीचे लिखे कार्य करने हैं—

१—ऋषि-ग्रन्थों के जो हस्तलेख हैं, तथा अन्य जो हस्तलिखित ग्रन्थ आदि सामान ऋषि का है, उसकी सूची तैयार करके प्रकाशित करना। जिससे आर्य-जगत् यह जान सके कि अभी ऋषि का क्या-क्या सामान सुरक्षित है। जैसाकि श्रीहरविलास जी शारदा ने बताया कि मथुरा शताब्दी के समय ऋषि के वस्त्र प्रदर्शनार्थ गये थे, वे लौट कर अब तक नहीं आये और न पता चलता है कि वे कहां हैं। इसी प्रकार कुछ ऋषि-ग्रन्थों के संग्रह के सम्बन्ध भी हुआ है। अतः वर्तमान सामान की पूर्ण सूची मुद्रित करके प्रकाशित कर देना चाहिए। २—ऋषि के कुछ अमुद्रित ग्रन्थ भी हैं, उनको छाप कर प्रकाशित करना। ३—कुछ हस्त लेखों तथा हस्तलिखित ग्रंथों के कागज गल रहे हैं उनका फोटो कराना। परोपकारिणी सभा ने एक बार सब हस्त लेखों के फोटो कराने का संकल्प किया था, फोटो की मशीन भी खरीदी थी, और सब प्रान्तीय सभाओं से प्रार्थना की थी कि वे उसके साथ आर्थिक सहयोग करें। यू० पी० प्रतिनिधि सभा ने यह काम मेरे सुपुर्द किया था, पर मुझे धन मांगना नहीं आता, बिना मांगे कोई देता नहीं, अतः एक पाई भी परोपकारिणी को नहीं भेजी जा सकी थी। परन्तु प्रत्येक अवस्था में परोपकारिणी को यह कार्य अवश्य करना चाहिए। अन्यथा ऋषि के अमुद्रित ग्रन्थ और हस्तलेख नष्ट हो जावेंगे। ४—ऋषि का वेदभाष्य फिर छपना है, उसका संपादन किसी योग्य विद्वान् के द्वारा कराया जाय, जो वेद, व्याकरणादि सब शास्त्रों का ज्ञाता हो, संपादन-कला में अभ्यस्त हो, और ऋषि दयानन्द का सच्चा भक्त हो। मेरी निश्चित धारणा है कि यदि सम्पादक में इन तीनों गुणों में से किसी एक गुण की भी कमी हुई तो वह वेदभाष्य का सत्यानाश कर देगा। इस विभाग के अध्यक्ष पूज्य श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी महाराज हैं, वे इस दिशा में अवश्य उचित कार्य करेंगे। ५—सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थ जो ऋषि की मृत्यु के पश्चात् भी अनेकों वार छप चुके हैं, उनके सब संस्करणों और हस्तलेखों पर दृष्टि डालना कि किसी में कुछ गड़बड़ी तो नहीं हुई है। ६—परोपकारिणी सभा ने एक बार यह भी संकल्प किया था कि एक 'मासिक पत्र' निकाला जावे। वर्तमान अधिकारी इस काम को तभी कर सकते हैं, जब कोई योग्य व्यक्ति उनको मिले। अब तो 'मासिक पत्र' का काम अत्यन्त आवश्यक होगया है, क्योंकि एक नई विचारधारा आर्यसमाज में उत्पन्न हुई है, जो ऋषि ग्रन्थों के पाठों पर विचार करती है। ७—एक योग्य प्रचारक परोपकारिणी सभा के पास हो तो

"कमीशन क्या है ?", मैंने लिख दिया "एक पुस्तक पर कमीशन नहीं दिया जाता।" मुझे कई सप्ताह पश्चात् ज्ञात हुआ कि पुस्तक बैरंग वापस करदी गई थी। तभी तो मेरे मुँह से अचानक एक शेर निकल पड़ा :—

गर्म बाजारी है गुंजों की यहाँ पर हरसू।

मैं वह गौहर हूं कि दिल्ली में खरीदार नहीं।

मैंने इस शेर में दिल्ली के साथ एक अन्याय किया है। यह दिल्ली की विशेषता नहीं। समस्त आर्यसमाज के जगत् की है।

यह खाना तमाम आफ्ता-बस्त, लेकिन—

ग़ालिब का एक शेर याद आगया।

बेनयाजी हद से गुजरी

बन्दा परवर कब तलक।

हम कहेंगे हाले दिल और

आप फ़रमावेंगे "क्या"।

——

सिंहावलोकन

हमारी भूलें और उनका प्रायश्चित्त

आचार्य नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ

आज भारत में कतिपय जटिल प्रश्न उपस्थित हैं। मुसलमानों का प्रश्न जैसा स्वराज्य के पूर्व जटिल था, वैसा ही अब भी है। एक सिक्खों का प्रश्न है, जो खालसास्थान के स्वप्न देख रहे हैं। पाकिस्तानियों का स्वप्न तो पूर्व ही पूरा हो चुका है। अब दक्षिण में विशेषतः मलाबार (केरल) में ईसाइयों का प्रश्न उपस्थित हो रहा है, और उनके सिर पर धुन सवार हो रही है कि खिस्तिस्थान क्यों न बनाया जाय, जबकि उनकी संख्या उस प्रदेश में ६०–७० लक्ष के लगभग है।

भारत में ईसाई-धर्म का आद्य प्रवर्तक डा० नोबिली को बतलाया जाता है। मदुरा में ईसाइयों ने उसका पुतला खड़ा कर रक्खा है। सबसे पहले ये रोम से आया। इसने हिन्दुओं की परिस्थिति तथा अन्तःस्थिति का पूर्ण अध्ययन किया। उसने देखा कि हिन्दुओं में ब्राह्मणों का विशेष मान-सम्मान है। उन्हीं की व्यवस्थाएं चलती हैं। तब उसने ब्राह्मणों से हेल-मेल बढ़ाया। उनसे कहा कि मैं ब्राह्मण हूँ—रोम से आया हूँ। अपने ढंग का पूजा-पाठ करने लगा, धोती बाँधने लगा, तालाब में तीन तीन चार-चार घण्टे खड़े रहकर जाप करने लगा, और लोगों से कहने लगा कि आप लोग तो चार ही वेद—ऋग्—यजु—साम—अथर्व मानते हैं। मेरा पाँचवा वेद है 'इशुर्वेद'। लोगों में चर्चा फैली कि कोई रोम का ब्राह्मण आया है। बड़ा जप-तप करता है, घण्टों जल में खड़ा रहता है, इत्यादि। भावुक लोग सहस्रों की संख्या में आने लगे, उसको देखकर (दूर से ही) विस्मित होने लगे। चहु ओर उस की प्रसिद्धि होने लगी। बड़े बड़े धनिक राजा, महाराजा भी उसके दर्शनार्थ आने लगे। परन्तु नोबिली उनसे नहीं मिलता था। अर्थात् उसने भारत के त्यागियों का-सा पूरा-पूरा ढोंग रचा।

बहुत वर्षों पश्चात् जब एक बड़े तालाब में किसी पर्व के अवसर पर सहस्रों स्नानार्थियों की भीड़ लगी तब जब वे स्नान कर चुके, तब उसने गम्भीर शब्दों में उनसे कहा कि आप सब लोग आज से ईसाई हो चुके, अब आप लोग हिन्दू नहीं रहे। उन्होंने पूछा कि जब हमारा तुमसे कोई किसी प्रकार का सम्पर्क नहीं रहा तब हम ईसाई कैसे हुए। उसने कहा कि इसी बड़े तालाब में मैं स्नान करता हूँ, आप भी करते हैं, आप मेरे संपर्क से कैसे बचे? बस इधर हिन्दुओं में हल्ला पड़ गया कि ये सब ईसाई हो गये और उधर ईसाइयों का जो रोमन कैथोलिक पन्थ था वह इस प्रकार से अपने पन्थ में इन लोगों को लेने को तैयार नहीं था, क्योंकि वे कहते थे कि यथारीति, यथाविधि से हमारे 'बापतिस्मा' को लो तब हम तुमको अपने मत में लेंगे। इन कैथोलिकों ने रोम को लिख भेजा कि डा० नोबिली धोकाधड़ी, ढोंग से लोगों को ईसाई बना रहा है, इससे ईसाइयों का दुर्नाम हो रहा है। इसको वापस बुलालो। ईसाई का मुख्य केन्द्र तो रोम था। वहीं सबसे बड़े पादरी रहते थे। वे ही निर्णय कर सकते थे। जाँच पड़ताल के पश्चात् उन्होंने डा० नोबिली को वापस बुलाया, किन्तु इन द्विविधा में पड़े हुए सहस्रों हिन्दुओं का कुछ भी निर्णय नहीं किया, इनमें सब जातियों के लोग थे। उस समय के हिन्दुओं ने इनको दूर-दूर किया, इधर ईसाइयों ने भी दुरदुराया क्योंकि ये लोग बप्तिस्मा लेने को तैयार नहीं थे। फल यह हुआ कि एक पृथक जाति बनी। जो-जो जिस जाति के थे उसी में विवाह सम्बन्ध करते थे, हिन्दुओं के ही आचार-विचार पालते थे, किन्तु ईसाई कहलाये जाते थे। इनके पीछे और जो पादरी आये उन्होंने इन हिन्दुओं को हर प्रकार से छला, किन्तु ये बेचारे चुपचाप सहते रहे।

पचहत्तर वर्ष के सुदीर्घ काल के पश्चात् रोम ने निर्णय किया कि इनको १८ शर्तों पर ईसाइयों में सम्मिलित किया जाय। इन दिनों इन अधकचरे हिन्दुओं की संख्या लाखों तक पहुंच चुकी थी। शर्तें कुछ इस प्रकार की थीं १—हिन्दु पद्धति से स्नान न किया जाय, स्नान ईसाइयों के ढंग का हो २—माथे पर अथवा शरीर पर भस्म न रमाएं। ३—बाहु पर अनन्त न बांधे, यदि बाँधे तो साथ ही ईसाइयों का क्रास भी बंधा रहे। ४—मंगल कार्यों में-विवाहादि के अवसर पर नारियल फोड़कर न बाँटा जाय जैसा कि हिन्दुओं में रिवाज है। ५—अछूतों से घृणा न की जाय. उनको सब प्रकार की सहायता दी जाय। ऐसे-ऐसे निर्बन्ध डाले गये। बेचारों ने विवश होकर सब बातें मान लीं, करते भी क्या? पर उनके समाज में विवाहादि प्रथा अन्य व्यवहार हिन्दुओं जैसे ही चलते रहे हैं।

आज इस भूल का परिणाम यह है कि केवल दक्षिण में—मलाबार आदि प्रदेशों में ईसाइयों की संख्या साठ-सत्तर लाख हो रही है। ये अपने ही भाई अपने शत्रु हो रहे हैं। इन तीन सौ, साढ़े तीनसौ वर्षों में यह दशा हो गई। आज जब कि हमारा स्वराज्य हो रहा है ऐसे-ऐसे जटिल प्रश्न हमारे संमुख उपस्थित हो रहे हैं और न जाने कब तक दिक करते रहेंगे।

जिस हिन्दु जाति तथा आर्य जाति ने किसी समय शक, हूण आदि विदेशी जातियों को निःसंकोच अपने गले के नीचे उतारा और अपने में सर्वथा संमिलित किया, उसी जाति ने इन भ्रम में डाले गये अपने ही भाइयों को अपने में मिलाने से इतना संकोच किया जिस अक्षम्य अपराध का फल आज हम भुगत रहे हैं। आर्य-समाज ने द्वार खोला, सही, ये विधर्मियों को अपने में मिलाने तो लगे पर अच्छी तरह पचा न सके, जिसका फल यह हुआ कि द्वार के खुले रहने पर भी लोगों ने भीतर आना बन्द कर दिया।

अपनी 'शुद्धि' करो

शुद्धि-आन्दोलन का अर्थ है बिछुड़े हुए भाइयों का मिलाप। अर्थात् जो भाई, सामाजिक संकीर्णता या अत्याचार के कारण दूसरे मत-पन्थों में चले गये हैं, उनसे स्पष्ट कहा जाय कि 'भाइयो, हम से भयङ्कर भूल हुई, जो हमने आपके साथ मूर्खतापूर्ण व्यवहार किया। अब हम अपनी भूल स्वीकार कर अपना प्रायश्चित्त करते हैं। हमारा प्रायश्चित्त या हमारी शुद्धि यही है कि हम आपको अपने में मिला कर आपके साथ दूध मीठे की तरह मिलने को तैयार हैं। अब आपके साथ हमारा जरा भी परहेज न होगा। शादी विवाह बिलकुल हिलमिल कर होंगे। आप ही नहीं, उदार वैदिक धर्म आज प्रत्येक व्यक्ति को अपनाने के लिये तैयार है, चाहे वह किसी देश, जाति, मत या सम्प्रदाय का हो। जो वैदिक धर्म की सत्य-सनातन सत्ता स्वीकार करे, वही वैदिक धर्मी बन सकता है। कहने का अभिप्राय यह है कि हिन्दू धर्म का उदार द्वार सबके लिये समान रूप से खोल देना चाहिए और जो उसमें प्रवेश करे उसके साथ प्रेम और सद्भावना युक्त व्यवहार किया जाना चाहिए, जिससे वह हमारी उदारता को भले प्रकार समझ सके और फिर निराश होकर वापस लौटने का नाम भी न ले। वस्तुतः हमें

अच्छा है, परोपकारिणी सभा ही ऋषि की उत्तराधिकारिणी है। कोई भी अन्य सभा संस्था, ट्रस्ट, प्रकाशक, मुद्रक ऋषि के ग्रन्थों में कुछ भी परिवर्तन करदे पर वह परिवर्तन अपनी सत्ता स्थिर न रख सकेगा। अतः परोपकारिणी सभा की एक विशेष स्थिति आर्य-समाज में है, परोपकारिणी सभा का योग्य प्रचारक जिसकी दृष्टि में मुख्य परोपकारिणी सभा हो यह कार्य कर सकेगा। आर्य समाजों और सभाओं में रहने वालों की मनोवृत्ति बिलकुल और प्रकार की होती है, उसमें सब प्रकार के व्यक्ति आते-जाते रहते हैं। नीति बदलती रहती है, अतः आर्यसमाज के अतिरिक्त एक स्थिर नीति वाली संस्था परोपकारिणी सभा का निर्माण ऋषि ने किया।

श्री सर्वदानन्द साधु-आश्रम

प्रसिद्ध त्यागी-तपस्वी वीतराग स्वर्गीय श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज का परिचय कराने की आवश्यकता नहीं। आपके तपस्या-पूत व्यक्तित्व को प्रायः प्रत्येक आर्यसमाजी बड़ी अच्छी तरह जानता है। स्वामीजी सात्विकता-सरलता के सिन्धु और त्याग तपस्या की मूर्ति थे। अबसे प्रायः ४० वर्ष पूर्व आपने अलीगढ़ जिले में, हरदुआगंज के निकट काली नदी के किनारे सुरम्य स्थान में, महर्षि दयानन्द के गुरु की स्मृति में श्री विरजानन्द साधु आश्रम की स्थापना की थी। आरम्भ में इस आश्रम में साधु सन्यासी काफी संख्या में रहते तथा स्वाध्याय-प्रवचन करते थे। आश्रम के साथ एक विद्यालय भी था जिसमें विद्यार्थी लोग विद्वान् अध्यापकों से संस्कृत तथा वैदिक साहित्य की शिक्षा प्राप्त करते थे। जिन जातियों को लोग भ्रमवश अस्पृश्य कहते हैं, उनके बालकों को भी उक्त विद्यालय में निस्संकोच शिक्षा दी जाती थी। छूत-छात या जाति-पांति का तो कोई विचार या भेद भाव था ही नहीं। आज तो सभी सुधारक अस्पृश्यता-विरोधी हैं, परन्तु सन १९१०-१२ में अछूत कहे जाने वालों के साथ खान-पान सम्बन्धी सम्पर्क या संसर्ग रखना बड़ी विकट समस्या थी। स्वर्गीय स्वामीजी महाराज ने उस समय इस विकट समस्या को भी बड़ी सरलता से हल कर दिखाया। जहां इस विद्यालय ने राजगुरु सर्वश्री पं० धुरेन्द्र शास्त्री, व्याकरणाचार्य पं० शङ्करदेव शास्त्री, काव्य वेदन्ताथ पं० सुरेन्द्र शर्मा, पं० देवप्रकाश शास्त्री, पं० शिवकुमार शास्त्री, पं० धर्मपाल जी, पं० यशपाल शास्त्री इत्यादि कितने ही विद्वान् पैदा किये, वहां अस्पृश्य कही जाने वाली जाति में जन्मे श्री मनीषादेव को भी शास्त्री, पण्डित तथा विद्वान बनाया। श्री पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु ने भी आश्रम की पुण्य भूमि में ही श्री स्वामी जी महाराज के चरणों में अध्ययन का सौभाग्य प्राप्त किया था। इस आश्रम में स्वर्गीय स्वामीजी महाराज से कितने ही व्यक्ति दीक्षा लेकर सन्यासी हुए और उन्होंने आर्यसमाज की प्रशंसनीय सेवा की तथा अब भी कर रहे हैं।

आश्रम का प्रबन्ध एक सुसंगठित समिति के हाथों में है। वही उसकी देख-भाल करती है। आश्रम के विद्यालय में आर्ष पद्धति के अनुसार संस्कृत व्याकरण की शिक्षा दी जा रही है। इस विभाग के अध्यक्ष श्री पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु हैं। यह आश्रम देशभर के आर्य-समाजों में प्रसिद्ध है। धार्मिक, राजनैतिक और साहित्यिक नेता समय-समय पर वहां पधारते रहते हैं। समीपवर्ती ग्रामवासी बालकों को पढ़ाने लिखाने को आश्रम-भूमि में एक विद्यालय और है, जिसमें सरकारी पाठ-विधि के अनुसार शिक्षा दी जाती है। आश्रम का डाकघर भी है, आस-पास के गावों को यहीं से चिट्ठियां बटती हैं।

प्रतिवर्ष कार्तिक की पूर्णिमा के लगभग आश्रम का वार्षिकोत्सव मनाया जाता है। उसमें बहुत बड़ी तादाद में जनता इकट्ठी होती है। दूर-दूर से यात्री आते और तीन दिनों तक बड़े-बड़े विद्वानों के उपदेशामृत का रसास्वादन करते हैं। यह उत्सव क्या एक बड़ा मेला होता है। यह आश्रम अलीगढ़ से रामघाट जाने वाली सड़क पर है। काम लायक सुन्दर और सादा भवन बने हुए हैं। फुलवाड़ी और हरियाली बड़ी ही सुन्दर प्रतीत होती है। आश्रम की ओर दर्शक का मन सहसा आकृष्ट हो जाता है। और उसे प्राचीन ऋषि कुटियों की याद आने लगती है।

पूज्य श्री स्वामीजी के जीवन में उनका विशाल व्यक्तित्व ही इस आश्रम और आश्रम समिति में प्राण-प्रेरणा किया करता था। अब स्वामीजी के पश्चात उनके प्रधान शिष्य बाल ब्रह्मचारी श्री-पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री उसके प्राण-प्रेरक हैं, और उन्हीं के आदेश-उपदेशों के अनुसार इस आश्रम की सारी व्यवस्था होती है।

पूज्य श्री स्वामीजी महराज का जब भौतिक शरीर नष्ट हो गया तो सबकी सम्मति यही हुई कि स्वर्गीय श्री स्वामीजी महाराज की पुण्य-स्मृति में इस आश्रम का नाम ही 'श्री सर्वदानन्द-साधु-आश्रम' रख दिया जाय। उनकी यह रचना ही उनका स्मारक भी हो।

श्री सर्वदानन्द साधु-आश्रम में ऋषि-प्रणाली यानी आर्षपद्धति पर शिक्षण कार्य हो रहा है। श्री प० रामचन्द्रजी व्याकरणाचार्य और निरुक्ताचार्य सम्प्रति आचार्य हैं। विद्यालय में मिडल या छठी श्रेणी उत्तीर्ण विद्यार्थी प्रविष्ट किये जाते हैं। चौदह-पन्द्रह वर्ष से अधिक उनकी आयु न हो और आर्ष पद्धति में पूरी निष्ठा तथा श्रद्धा रखते हों। नया सत्र प्रारम्भ हो गया है।

बिछुड़े हुए भाइयों अथवा विधर्मियों की शुद्धि नहीं करना, अपनी शुद्धि करना है। यदि हमने अपनी शुद्धि ठीक ठाक करली और उसमें किसी प्रकार का सन्देह न रहा तो दूसरों की शुद्धि अपने आप हो जायगी।

हरिशंकर शर्मा।

संस्कृति का स्वरूप

खाने-पीने के अपवित्र ढग

श्री राजेन्द्रजी

अंधानुकरण दास मनोवृत्ति का एक विशेष लक्षण है। भारतवासियों का, जो लगभग एक हज़ार वर्ष तक विदेशियों से पदाक्रान्त रहे हैं, अंधा अनुकरण स्वभाव बन गया है। वह अपने विजेताओं का खाने-पीने और वेष भूषा में सदा अंधा-अनुकरण करते रहे और आज भी यह दूषण इनसे छूटा नहीं है, अपितु बढ़ ही रहा है।

मुस्लिम राज्यकाल में हमने मुसलमानों के बहुत-से खाने पीने और पहनावे के ढंगों को जो अपने प्राचीन ढंगों से श्रेष्ठ नहीं थे अपना लिया। परन्तु अङ्गरेजों के डेढ़-सौ वर्ष के सम्पर्क ने हमारे ऊपर जो प्रभाव छोड़ा है, वह सुव्यवस्थित पश्चिमीय शिक्षा-प्रणाली के कारण बहुत गहरा और गम्भीर है।

यहां मैं खानपान को ही ले रहा हूं। आज होटलों, रेलों, रेस्टोरान्टों (जलपान-गृहों) सोडा, लेमोनेड और चाय की दुकानों पर कांच और चीनी के पात्रों का उपयोग होता है।— मैं यहां शीघ्रता से बढ़ने वाले अंडा और मांस के भक्ष्याभक्ष्य के प्रश्न को भी छोड़ रहा हूं। घरों पर भी कांच और चीनी के पात्रों का उपयोग बढ़ रहा है। इन पात्रों को पानी से धोकर शुद्ध कर लिया जाता है। कभी-कभी तो उन्हें पानी से भी नहीं धोया जाता या फिर एक पानी के टब या बाल्टी में उन्हें डाल निकाल कर शुद्ध समझ लिया जाता है। पानी भी दिन भर वही गन्दा रहता है। ऐसा प्रायः होटलों और रेस्टोरांओं में सर्वत्र देखा जा सकता है। परिणामतः इन पात्रों पर लगी चिकनाई और गंदे हाथ मुंह के अपवित्र कण अथवा पश्चिमी भाषा में कीटाणु लगे ही रहते हैं। यह प्याले और गिलास कभी-कभी देखने में इतने गन्दे होते हैं कि ग्लानि होने लगती है। इन पात्रों को यदि आप सूंघें तो कहीं-कहीं इनसे दुर्गन्ध तक आने लगती है। मुसल्मान खानसामे तो इन्हें थूक और झाड़न से रगड़ कर साफ करते देखे गये हैं। कांच के जूठे गिलासों में रेल में सोडा-लेमोनेड पिलाते हुए तो लेखक ने स्वयं अपनी आंखों देखा है। पहले बहुत से होटलों और दुकानों पर हिन्दू मुस्लिम पात्रों को पृथक् रखा जाता था किन्तु वर्तमान शासन में हिन्दू मुस्लिम एकता के नाम पर वह भेद भी दूर किया जा रहा है। आश्चर्य तो यह है कि एक ओर तो इन्हें सर्वत्र वायुमंडल और शरीर में अनेक संक्रामक कीटाणु-कीटाणु ही दीख पड़ते हैं, और दूसरी ओर इन खाने-पीने के गंदे और अस्वास्थ्यकर ढंगों को- जिन से वह संक्रामक रोग सरलता से फैलते हैं, प्रोत्साहन दिया जा रहा है।

स्वर्गीय देशभक्त बा० राजप्रसादजी ने गुप्त अपनी अमरीका यात्रा में वहां के एक नगर का उल्लेख किया है जहां होटलों और रेस्टोरेंटों में उन्होंने कांचों के स्थान पर कागज के गिलास

का उपयोग होते देखा। पूछने पर उन्हें बताया गया कि वहाँ पर एक संक्रामक रोग फैल गया है जिसका कारण डाक्टरों ने कांच के गिलास का उपयोग बताया है अब उन पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है। गुप्तजी लिखते हैं कि यह देखकर मुझे अपने देश के मिटटी के शकोरे कुल्हड़ दोनों पत्तलों का स्मरण हो आया।

आज पश्चिमी देशों में कागज के गिलास प्याले और तश्तरियों का प्रचलन बढ़ रहा है जिन्हें दोना पत्तलों की भांति उपयोग करके फेंक दिया जाता है। परन्तु हम अभागे अपनी अच्छी प्रति नीति को तिलाञ्जलि देकर दूसरों के अपवित्र और अशुद्ध ढंगों को अपना रहे हैं। कांच और चीनी के पात्रों का मैं विरोधी नहीं, परन्तु अन्य धातु पात्रों की भांति उन्हें मिटटी राख सोडा आदि से स्वच्छ करना चाहिये। देखा यह जाता है कि मांजने के झंझट से बचने के लिए ही इन्हें अपनाया जा रहा है अन्यथा टूट फूट का हिसाब लगाया जाय तो कांच और चीनी के पात्र पीतल कांसे आदि के पात्रों से महंगे पड़ते हैं। हाँ थोड़ा दर्शनीयता अवश्य बढ़ जाती है।

भावज नक जलपानों और पार्टियों में अंग्रेजों के चले जाने पर भी अंग्रेजों का एक अन्धा अनुकरण प्रचलन हो चला है। एक ही प्लेट में से कई कई लोग सम्मिलित रूप में खाते हैं। उसी में उनकी मृदु थूक से सनी चम्मच और अंगुलियाँ चलती हैं। अंग्रेज राज्यकाल में सार्वजनिक अवसरों पर विशेष रूप से हिन्दुओं के लिए ऐसा घृणित प्रबन्ध नहीं होता था। किन्तु स्वदेशी [illegible] इस [illegible] भूत से हम मानो [illegible] के लिए तुला [illegible] है

भारतीय [illegible] के पोषकों को [illegible] इन घिनौने ढंगों का [illegible] विरोध करना चाहिये [illegible] वर [illegible] रिवाज [illegible] प्रचलन हो [illegible] उनके [illegible] करना [illegible] अत हमें [illegible] नहीं रहना चाहिये

सामयिक समस्याएँ

प्रान्तीयवाद का अनिष्टकारक परिणाम

आर्य समाज बम्बई के साप्ताहिक सत्संग में ८ जुलाई को समाज के उपप्रधान श्री पं० विजयशंकरजी ने वर्तमान समय में भारतीय राजनैतिक रंगमंच पर खेले जा रहे नाटक के विरुद्ध प्रान्तीयवाद की हानियों से अवगत करते हुए एक व्याख्यान दिया। उसका सार मात्र उपयोगी होने से पाठकों के विचारार्थ नीचे दिया जाता है।

जब तक कि संसार में मनुष्यों का शासन एक ही राज्य के द्वारा न हो और जब तक संसार के मनुष्य एक दूसरे के साथ दुःख सुख का अनुभव करने वाले न हो जाय तब तक किसी को भी सच्ची शान्ति नहीं मिल सकती। यदि भिन्न भिन्न राष्ट्र या जातियाँ अपना हित एक दूसरे से पृथक समझें या अपना ही हित करें तो उससे किसी का हित और भला न होगा। प्रजा के एक विभाग का हित और उससे दूसरे विभाग से भिन्न और अलग कभी न होगा। इस सत्य से अज्ञात रहने के कारण आज के राष्ट्रवादी राज्यों में लड़ाइयाँ हो रहीं हैं भूत काल में हुईं और भविष्य में भी जब तक पृथकवाद का पोषक राष्ट्रवाद रहेगा तब तक लड़ाइयों समाप्त नहीं होंगी।

देश भेद प्रान्त भेद जाति भेद मनुष्यों के स्वार्थ पूर्ण स्वार्थ की पूर्ति है जो जर्मन और जापानी द्वितीय विश्व युद्ध के समय अंग्रेज और अमरीकनों के शत्रु घोषित कर दिये थे आज उन्हीं को मित्र बनाया जा रहा है कारण देश भक्ति के नाम पर स्वार्थ पूर्ति। इस प्रकार की देशभक्ति या प्रान्तभक्ति सच्चा परिणाम नहीं ला सकती। मिस्टर जिन्ना पक्ष विशेष में मुसलमानों के हितैषी रहे और अन्त में मुस्लिम माने के हेतु अलग पाकिस्तान स्थापित किया संयुक्त भारत विभक्त हुआ। परिणाम प्रत्यक्ष है। भूत काल के पृथकवाद के कारण स्वतन्त्र भारत हजार वर्ष पर्यन्त परतन्त्र रहा। आज इतने वर्षों के बाद प्राप्त इस स्वतन्त्रता को यह प्रान्तीयवाद हड़पना चाहता है इस वाद से भयंकर वाद कोई नहीं, अतः हमें सचेष्ट हो जाना चाहिये जिस प्रकार भिन्न भिन्न राष्ट्र इस भूमण्डल के अंग हैं इसी प्रकार प्रान्त भी किसी राष्ट्र के अंग हैं। जैसे राष्ट्रों के समूहीकरण बिना भूमण्डल नहीं बने ही प्रान्त बिना राष्ट्र नहीं। कौन कह सकता है कि यह भाषावार प्रान्त रचना का रोग कल को भाषावार नगर रचना का रूप धारण नहीं कर लेगा।

अंग्रेज तो चले गये पर अपनी धरोहर स्वरूप हिंदू मुस्लिम और आदिवासी के भ्रम भेद प्रान्तीय शासनवाद और देशी राज्य की व्यवस्था भारत के मत्थे मढ़ गये जिसमें देशी राज्यों को तो स्व० सरदार की प्रखर बुद्धि ने तुरन्त समाधान कर दिया परन्तु यह हिंदु मुसलिम आदिवासी कृत्रिम भेद तथा प्रान्तीयता का दोष बराबर बना हुआ है।

जन्म के आधार पर जाति भेद ने जितना भयंकर अनिष्ट किया उस से अधिक अनिष्ट भूत काल में इस प्रान्तीयता ने किया और भविष्य में न जाने यह क्या रंग लायगा। आज पुनः भारत में प्रान्तीय भेद उग्र रूप धारण कर रहा है। आंध्र कर्णाटक महाराष्ट्र, गुजरात बंगाल पंजाब सभी प्रान्त इस रोग के वशीभूत हो भाषावार प्रान्त रचना कर अलग अलग राज्य स्थापित करना चाहते हैं, परन्तु यदि राज्य इसमें आर्थिक हानि संगठन हानि और सामाजिक सम्बन्ध हानि होगा परस्पर द्वेष तथा मिथ्याभिमान ही बढ़ेगा और हम आत्म रक्षण में असमर्थ हो जायेंगे।

इस रोग से छुटकारा पाने के लिये ऋषि दयानन्द प्रतिपादित शैली का अनुसरण करना चाहिए। (अ) प्रान्तीय सरकारों का अस्तित्व ही उठा देना चाहिये, उसके स्थान में पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण विभाग कर केन्द्रीय सरकार के अधीन शासनाधिकारी नियुक्त करने चाहियें। (ब) भिन्न प्रान्तों में एकता स्थापित करने के लिये अन्तर प्रान्तीय रोटी बेटी व्यवहार प्रचलित करना चाहिये। (स) धर्माचार्यों को धार्मिक दृष्टि से प्रान्तीय भेद-भाव दूर करने की चेष्टा करनी चाहिये। (द) प्रान्तीय संस्था साहित्य, इतिहास को अन्तर प्रान्तीय स्वरूप देना चाहिये। इसी प्रकार उत्पादन तथा विभाजन का भी अन्तर प्रान्तीय रूप होना चाहिये। जिस प्रकार की भावना मनुष्य को अपने कुटुम्ब के लिये होती है उसी प्रकार की भावना मनुष्य मात्र के प्रति पैदा कर प्रान्तीयता के भावों को दबा देना चाहिये। प्रभु हमें सद्बुद्धि दें हम संगठित होकर देश की रक्षा करने में समर्थ हो सकें।

अनाथालय को दान

श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आगरा ५१ वर्ष से हिंदू जाति की सेवा कर रहा है। इस में सकड़ों अनाथ बालक और बालिकाओं का पालन पोषण हो रहा है। हजारों अनाथ बालक शिक्षित और योग्य होकर निकल चुके हैं। अतः आप भी दान देते समय इन अनाथ बालकों को न भूलिये। अनाथ लड़कियों के लिए १४ वर्ष की आयु के वरों की आवश्यकता है ४/-) फार्म का मूल्य भेज कर फार्म मंगा कर, भर कर भेजिए

मंत्री, श्रीमद्दयानन्द अनाथालय, आगरा।

आवश्यकता

मेरे मित्र जिनकी आयु २५ वर्ष है, बी० ए० करने के पश्चात् पुलिस डिपार्टमेंट में आफिस सुप्रिटेन्डेन्ट (८) मासिक पर हैं स्वास्थ्य बहुत उत्तम तथा सदाचारी आर्य हैं जन्म उनका ब्राह्मण वंश में हुआ इनके लिये एक विदुषी कुलीन आर्य कन्या की आवश्यकता है। पत्र व्यवहार इस पते पर किया जाय -

श्री छुटटनलाल जी प्रधान पशनर इन्स्पेक्टर सुन्दर इस्लामी गेट भोपाल (Bhopal)

आर्यजगत

—२८ मई ५१ को श्री यशपाल शास्त्री द्वारा रामपुर (मथुरा) में आर्य कुमार सभा की स्थापना हुई।

—छतना (पटना) में कुछ देवियों ने मिलकर महिला वैदिक पुस्तकालय की स्थापना की है। कार्य सफलतापूर्वक चल रहा है।

—६ जुलाई ५१ को श्री रणवीर हायर सेकेण्डरी स्कूल मे ११ वीं कक्षा तथा एक जूनियर हाइ स्कूल का उद्घाटन अमेठी राज्य के युवराज श्री रणञ्जयसिंहजी ने किया। अभी हाल ही मे उक्त युवराज महोदय ने भेटुआ ग्राम मे एक जूनियर हाईस्कूल का शिलान्यास किया। सभी स्थानो पर हवन-यज्ञ के पश्चात् सार्वजनिक सभाएँ हुई। युवराज महोदय के व्याख्यान हुए।

—आ० स० जवाँ (अलीगढ) का चौदहवा मासिकोत्सव १६ जून को मनाया गया। स्वा० सत्यव्रत जी और कु० रणवन्तसिंहजी के भाषण हुए। प्रभाव अच्छा पडा।

—आरिहा (अलीगढ) के कु० महमन्तसिंहजी आर्य की पुत्री का विवाह भागीपुर (अलीगढ) निवासी कु० बलवीरसिंहजी के पुत्र के साथ २ जुलाइ को श्री प० अमरसिंहजी आर्य पथिक ने कराया। अनेक आर्य विद्वान् उपस्थित थे। वरपक्ष की ओर से ५१) विविध संस्थाओं को दान दिये गये

—शोक है कि श्री स्वामी ब्रह्मानन्दजी का देहान्त हो गया। आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश के तत्वावधान में ८ जुलाइ ५१ को नागपुर में आपके प्रति श्रद्धाजलियाँ अर्पित की गयी। अनेक विद्वान् उपस्थित थे। अन्त में शोक सहानुभूति सूचक एक प्रस्ताव भी पास किया गया।

—मभोली (मुरादाबाद) के लाला ज्ञानचन्दजी ने अपने पिता की मृत्यु पर १७ रु० दान दिया। मसेवी के लाला दीनदयालुजी की पत्नी का अन्त्येष्टि संस्कार वैदिक रीति से किया गया। इस अवसर पर २०) दान दिया।

—जिला प्रचार के सिलसिले में मैंने २४ जून से १ जुलाई ५१ तक सभा के प्रचारक प० हेमचन्द शर्मा के साथ अजीतमल, बकेवर, गोपिया गज, गुलरिहा, दिबिया-पुर, बसरेहर, [illegible] और [illegible] ([illegible]) में जसवन्त नगर में प्रचार किया।

३ जुलाई मगलवार को बकेवर निवासी म० कन्चनलाल साहू ने अपने स्वर्गीय पिता की स्मृति में हवन-यज्ञ कराया २१) विविध सस्थाओं को दान दिये।

—आ० स० उधरनपुर (हरदोई) के प्रधान रायसाहब प० जगदम्बा प्रसाद के कनिष्ठ भ्राता प० शारदाप्रसादजी की असामयिक मृत्यु पर स्थानीय समाज शोक प्रकट करता है। परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति और दुखी परिवार को धैर्य प्रदान करे।

—आ० स० उधरनपुर (हरदोई) के सरक्षक अमेठी-युवराज श्री रणञ्जयसिंहजी और उप सरक्षक प० सुरेशचन्द्रजी चुने गये। युवराज महोदय ने २५१) और उनके राज कर्मचारियो ने १०१) आर्यसमाज मन्दिर को सहायतार्थ दिये। समाज धन्यवाद देता है।

निर्वाचन

—शाहाबाद जिला आर्यसभा—प्रधान-श्री डोमन मिश्र और मन्त्री-श्री पन्नालाल गुप्ताय।

—आ० कु० सभा रामपुर (मथुरा)—प्रधान श्री रामेश्वर दयालुजी और मन्त्री श्री जगदीश प्रसादजी।

—महिला वैदिक पुस्तकालय छतना (पटना)—प्रधान-श्रीमती सावित्री देवी और मन्त्रिणी—श्रीमती कृष्णा देवी।

—आर्यसमाज उधरनपुर (हरदोई) प्रधान-रायसाहब जगदम्बाप्रसाद और मन्त्री-प० भूपालदेवजी।

सभा-सूचनाएँ

—जिला आर्य उपप्रतिनिधि सभा लखनऊ के स्वाध्याय परिषद् की १३ वीं मासिक बैठक २९ जुलाई को आ० स० हसनगज लखनऊ में होगी। 'रामराज्य' के आदर्श पर विचार होगा। —मन्त्री

—स्वा० आनन्दतीर्थ संन्यासी ने [illegible] ([illegible]) में गत पाँच वर्षों में किये अपने रचनात्मक कार्यों का विवरण भेजा है जिससे आपकी सफलता और कार्य शक्ति का अच्छा बोध होता है। आपके कार्य प्रशसनीय हैं।

—जुलाई ५१ से सुलतान (नैनीताल) जनता जूनियर हाईस्कूल खुल गया है। उद्घाटन श्री स्वामी ईश्वरदासजी ने किया।

—पूर्णसिंह वर्मा

—श्री प० ब्रह्ममित्र शास्त्री को प्रचारार्थ बुलाने वाले सज्जन और समाज मन्त्री, आर्यसमाज हसनगज (पार) लखनऊ के पते पर पत्र व्यवहार करें।

—मेरी आयु पचपन वर्ष की है। अपने जीवन को लोकसेवा में लगाना चाहता हूँ। धर्मार्थ औषधालय मेरी निःशुल्क सेवाओं से लाभ उठा सकता है। रामस्वरूप गोयल वैद्य रजिस्टर्ड, अडींग (मथुरा)

—मैंने इटावा जिला आर्य परिषद् से त्यागपत्र दे दिया है। अब मैं किसी परोपकारी सस्था मे शान्तिपूर्वक बैठकर समाज की सेवा करना चाहता हूँ। मेरी आयु ६८ वर्ष की है परन्तु स्वास्थ्य अच्छा है। मैं परिश्रमी हूँ। —स्वा० आनन्दनाथ सन्यासी, आनन्दनिवास, भरथना (इटावा)

आवश्यक सूचना

आर्यसमाजों और आर्य जनता की सूचना के लिये यह विज्ञापित किया जाता है कि डाक विभाग ने अपनी सुविधा के लिये देहली नगर को कई भागों में विभक्त कर दिया है। हमारे विभाग की म ख्या ६ है। डाक विभाग ने हमें प्रेरणा की है कि हम पत्र व्यवहार में इस स ख्या का प्रयोग अवश्य किया करें। तथा सभा के नाम जो द्वारा [illegible] पत्र [illegible] प्रेषक भी [illegible] अन्तर्गत पते पर देहली ६ लिखा करें। इस सख्या के व्यवहार में आने से पत्र की डिलीवरी में विलम्ब न हुआ करेगा. जैसा कि इन दिनों प्रायः हो जाता है। सभा के साथ डाक द्वारा पत्र-व्यवहार करने वाले महानुभाव कृपया इस बात को नोट करने का कष्ट करें। और भविष्य में सभा को भेजे जाने वाले पत्रो पर देहली ६ अवश्य लिखा करें।

ज्ञानचन्द, मन्त्री,

आर्यसंस्कृत विद्यालय

उत्तर प्रदेश में रामपुर रियासत सबसे पुरानी मुस्लिम स्टेट थी, जहाँ आज से चार पाँच वर्ष पूर्व आर्यसस्कृति के स्वप्न देखे जाते थे। वहाँ हिन्दू-मुसलमानो की पहचान करना भी कठिन था। हिन्दी सस्कृत केवल पाधा पुरोहित ही नाम मात्र को जानते थे, शेष जनता उर्दू फारसी ही लिख पढ सकती थी। ऐसी दशा में आर्यसमाज बिलासपुर (रामपुर) के अन्तर्गत आर्यसंस्कृत विद्यालय ३० वर्षो से वैदिक सिद्धान्तो का मौलिक रूप से प्रचार करता आ रहा है, और इस रियासत में हिन्दी सस्कृत शिक्षा का केन्द्र बना रहा है। प्रारम्भ से लेकर अब तक प्रायः आर्य विद्वान् गुरुकुलो के स्नातक या शास्त्री अनुभवी शिक्षकों द्वारा ही शिक्षा दिलाई जा रही है। अब तक लगभग ५०० बालक बालिकाएँ इससे शिक्षा प्राप्त कर अपना जीवन सुगमता से व्यतीत कर रहे है। विद्यालय में बेसिक प्राइमरी शिक्षा के अतिरिक्त भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् अजमेर गवर्नमेण्ट सस्कृत कालेज बनारस, प्रयाग महिला विद्यापीठ इलाहाबाद की परीक्षाएँ दिलाई जाती है। शिक्षा सर्वथा निःशुल्क है, सभी को समान रूप से धार्मिक शिष्टाचार और सदाचार की अनिवार्य शिक्षा है। निर्धन छात्रों को यथा शक्ति सहायता भी दी जाती है भवन बनाने के लिए एक विधवा देवी ने भूमि दान दी है। यह विद्यालय सार्वजनिक सहायता का अधिकारी है

रामनारायण शास्त्री, आचार्य

वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर समाचार

(समझौते का विफल प्रयत्न)

आर्य वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर के सम्बन्ध में आर्य प्रतिनिधि सभा व आश्रम के अधिकारी और स्वामी वेदानन्दजी के मध्य में एक अपील ए० डी० एम० साहब सहारनपुर के सम्मुख विचाराधीन थी। इस वाद में अपीलान्ट श्री स्वा० वेदानन्दजी थे और प्रतिवादी आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश थी। इसके अतिरिक्त एक मुकद्दमा धारा १४५ जाब्ता फौजदारी रजिडेन्ट मेजिस्ट्रेट हरद्वार के सम्मुख चल रहा था, जिसमें वादी स्वा० वेदानन्दजी हैं और प्रतिवादी श्री बालमुकन्द आदि वानप्रस्थी हैं।

इन दोनों मुकद्दमों के सम्बन्ध में जिलाधीश सहारनपुर ने प्रयत्न किया कि किसी प्रकार परस्पर समझौता और निर्णय हो जावे, अतः इस सम्बन्ध में उभयपक्ष की ओर से इस बात की स्वीकृति दी गई थी कि श्री स्वा० आत्मानन्दजी महाराज (अध्यक्ष सार्वदेशिक दयानन्द वानप्रस्थ सन्यासी मण्डल) और श्री प० रामदत्तजी शुक्ल ऐडवोकेट लखनऊ, उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा आवश्यक समझौता करा दें।

श्री कलक्टर महोदय के निर्देशानुसार उक्त दोनों महानुभावों ने इस सम्बन्ध में अवसरोचित प्रयत्न किया किन्तु जब उभयपक्ष अर्थात् वानप्रस्थ आश्रम के महानुभावों और श्री स्वामी वेदानन्द जी समझौते के लिये पूर्व लिखित स्वीकृति देने को कहा गया तो वानप्रस्थाश्रम के प्रतिनिधियों ने तो स्वीकृति दे दी किन्तु स्वा० वेदानन्दजी ने अपनी ओर से स्वीकृति न दी और कहा कि मण्डल के निश्चय बिना वे समझौते के सम्बन्ध में किसी प्रकार की लिखित स्वीकारी न देंगे। निदान समझौते का यह पारस्परिक प्रयत्न भी निष्फल हुआ।

खेद है कि जिलाधीश महोदय की सद्भावना और सत्प्रयत्न का कोई परिणाम न हुआ और दोनों मामले यथापूर्व न्यायालयों में ही निर्णय होने के लिये रह गये।

धर्मपाल विद्यालङ्कार
—— सभा मन्त्री।

भूल सुधार

निरीक्षक नियुक्ति की सूचना 'आर्यमित्र' ५ जौलाई १९५१ के पृष्ठ सं० १५ पर प्रकाशित हुई है। मुरादाबाद, जौनपुर, फतेहपुर, गोंडी के साथ जिला शब्द के स्थान में तहसील छप गया है। समाजें कृपया नोट करलें।

—— सभा-मन्त्री

राजस्थान का रेगिस्तान

सहयोगी 'पाञ्चजन्य' लिखता है कि राजस्थान का कुल क्षेत्रफल १,३०,००० वर्गमील है। इसमें से अरावली पर्वतशृङ्खला के पश्चिम में ७५,००० वर्गमील भूमि रेगिस्तान है। इन ७५,००० हजार वर्गमीलों में से भी ३६,००० हजार वर्गमील का इलाका ऐसा है कि उसके केवल एक प्रतिशत में ही पेड़ दिखाई पड़ सकते हैं, शेष में बालू ही बालू है। पेड़ों से वायु अथवा आंधी का वेग रुकता है, टूटता है। पर यहां पेड़ों के न होने के कारण अनुमान किया गया है कि आंधी प्रतिवर्ष २५,००० टन बालू उड़ाकर ले जाती है। इस प्रकार रेगिस्तान आधा मील प्रतिवर्ष की रफ्तार से बढ़ रहा है और शनैः शनैः रेगिस्तान का क्षेत्र पूर्व दिशा में अग्रसर हो रहा है।

देहरादून स्थित भारतीय वन-अनुसंधान संस्था ने कई वर्ष पूर्व इसी विषय पर लिखते हुए अपनी बुलेटिन नम्बर १३३ में कहा था—'भारत का विशाल सिंध और राजपूताना का रेगिस्तान, जिसका क्षेत्रफल १,००,००० वर्गमील है और जिसके चारों ओर की १,००,००० वर्गमील भूमि रेगिस्तान के समान ही है—अर्थात् (अविभाजित) भारत के क्षेत्रफल का आठवां हिस्सा उत्तर और पूर्व की ओर अग्रसर हो रहा है और वह उन्नतोदर चाप बहावलपुर (पाकिस्तान) से प्रारम्भ होकर पंजाब के फिरोजपुर जिला तथा पटियाला से होता हुआ उत्तर-प्रदेश के मेरठ, अलीगढ़ और कासगंज को अपनी लपेट में लेता है।

गत ५० और ६० वर्षों की पड़तालों का तुलनात्मक अध्ययन कर देहरादून की अनुसंधान संस्था इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि रेगिस्तान आधा मील प्रति वर्ष की रफ्तार से बढ़ रहा है। इसी आधार पर हिसाब लगाकर वन-अनुसंधान संस्था वालों का अनुमान है कि प्रतिवर्ष हमारे देश की लगभग ३० वर्गमील उपजाऊ भूमि रेगिस्तान होती जा रही है।

पर एक बात तो इससे भी अधिक गम्भीर है। अरब सागर से जो पछुवा हवा गर्मी तथा वर्षा ऋतु में चलती है वह जब कच्छ की खाड़ी से गुजरती है तब अपने साथ नमक के अणुओं को भी उड़ा लाती है और जब वह अणु राजस्थान की मिट्टी में बैठ जाते हैं तो राजस्थान के उस भाग के कुओं का पानी तथा नदियों का जल और भी नमकीन और खारा हो जाता है। कुछ कुओं का जल तो इतना अधिक खारा हो गया है कि न तो वह पीने के काम आ सकता है और न सिंचाई के ही।

इसी नमकीनेपन के कारण ही इस क्षेत्र की प्रमुख नदी का नाम लूनी नदी है। बालोतरा तक तो इस नदी का जल मीठा है पर उसके बाद से इसका जल नमकीन होता है और अन्त में जब वह कच्छ की खाड़ी में जाकर गिरती है तो उस स्थान पर इसकी तीन धाराओं का जल जैसे गाढ़े नमक के पानी के समान हो जाता है।

अंग्रेजी सरकार द्वारा बुलाये गये हालैंड और किस्टो नामक दो विशेषज्ञों ने इस बात का पता लगाने के लिए कि प्रतिवर्ष उपर्युक्त प्रकार से कितना नमक राजस्थान की मिट्टी में जमता है, कई प्रयोग किये। उन्होंने अनुमान किया कि १८६ मील के लम्बे मार्ग पर गर्मियों में आने वाली पश्चिमी तथा दक्षिणी पश्चिमी तेज हवा द्वारा कच्छ की खाड़ी से लगभग १,३०,००० टन नमक राजस्थान पहुंच जाता है।

गुरुकुल-गदपुरी

यह आश्रम बल्लभगढ़ जि० गुड़गावां में दिल्ली से मथुरा जाने वाली सड़क पर नहर के किनारे बना हुआ है। स्थान बहुत रमणीक है। राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा संस्कृत की पंजाब एवं बनारस यूनिवर्सिटी की परीक्षाएं दिलाने का प्रबन्ध है। भोजन व्यय केवल ५) मासिक लिया जाता है। प्राज्ञ तथा विशारद की श्रेणियां चालू हैं। छात्रों को लाभ उठाने का अच्छा अवसर है।

—आचार्य सुरेन्द्रकुमार

वेद प्रचार सप्ताह

उत्तर प्रदेश के समस्त आर्य समाजों को सूचित किया जाता है कि इस वर्ष "वेद प्रचार सप्ताह" श्रावण शुक्ला १५ से भाद्रपद कृ० ८ सं० २००८ वि० तदनुसार १७ अगस्त से २४ अगस्त १९५१ तक मनाया जावेगा। इस सप्ताह का कार्यक्रम यथाशीघ्र समाजों में भेजा जावेगा। समाजों को उचित है कि उत्साहपूर्वक सप्ताह मनाने का अभी से आयोजन करने का कष्ट करें।

धर्मपाल विद्यालंकार,
सभा मंत्री

१००) इनाम लीजिये

मेरी मां १४ जून सन् १९५१ लखीमपुर खीरी से दिन में दो बजे घर से कत्थई रंग की धोती पहिन कर मथुरा वृन्दावन जाने के विचार से गई थीं तब से उनका कोई पता नहीं चलता है। यहां पर हम सब लोग बहुत चिन्तित व परेशान हैं। वे जहां कहीं हों मुझको अपनी सूचना देने की कृपा करें।

यदि किसी सज्जन को उनका पता हो तो मुझे तुरन्त सूचना देने की कृपा करें। १००) का इनाम पता लगाने वाले को दूंगा। उनका नाम सत्यवती देवी या स्नेह लता है उम्र ३७ साल है कद छोटा, रंग सांवला, दुबली पतली हैं। ३४, २८-३१

कैलाश चन्द्र
C/o, बा० रामसुचित निगम
मुहल्ला—राजगढ़,
लखीमपुर खीरी

आर्य प्रकाशन मण्डल दिल्ली

की स्थापना आर्य संस्थाओं एवं आर्य बन्धुओं की सुविधा के लिए आर्य नेताओं के आग्रह पर की गई है। आर्यसामाजिक समस्त साहित्य संस्कृत, हिन्दी अंगरेजी, उर्दू कहीं का भी प्रकाशन हो, आर्य प्रकाशन मण्डल १७६ लाजपत मार्केट से उचित मूल्य पर मिल सकता है। अनेक स्थानों से मंगाने की अपेक्षा एक ही स्थान से पुस्तकें मंगाने में हर प्रकार की सुविधा रहेगी।

आर्य प्रकाशन मण्डल ने भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषद् की सभी परीक्षाओं की समस्त पुस्तक परिषद् के केन्द्रों एवं परीक्षार्थियों को उचित मूल्य पर भेजने का विशेष प्रबन्ध किया है। आर्य सामाजिक और परिषद् की पुस्तकों का तुरन्त आर्डर भेजें बाद में कई पुस्तकें अप्राप्य हो जाती हैं।

—निवेदक
जगतराम आर्य,

कन्या की आवश्यकता

लगभग २० वर्षीय अविवाहित दृढ़ आर्य विचार के 'व्याकरणाचार्य निरुक्ताचार्य' वर के लिये १६ वर्ष से १८ वर्ष तक का शिक्षित गृहकार्य में दक्ष सुशील अविवाहिता कन्या की आवश्यकता है। आर्य मात्र पत्र व्यवहार कर सकते हैं।

पता मन्त्री आर्य समाज [illegible]
पो० [illegible]
उत्तर प्रदेश

हर स्त्री माँ बन सकती है
एक बच्चे की कीमत सिर्फ १५।=)

६ दिन में शर्तिया गर्भ की गारंटी बेऔलाद माता-बहिनो के लिए स्वर्ण अवसर। १ बांझ (बन्ध्या) २—काकबन्ध्या यानी १-२ औलाद होकर बन्द होजाना, ३—मृतवत्सा यानी सन्तान हो होकर मर जाना या ४—कन्या ही कन्या होना। उपरोक्त सब दोष निवारण के लिए आज ही परीक्षा करें।

नपुंसकता

केवल एक दिन में दूर

चाहे जैसा सुस्त, नाकारा, कमजोर नपुंसक (नामर्द) हो गया हो सिर्फ एक दिन में बिना तकलीफ नपुंसकता (नामर्दी) दूर की गारण्टी। लाभ न होने पर कीमत वापस। आर्डर के साथ एडवांस और उत्तर के लिए जवाबी पत्र आना लाजिमी। मूल्य १२।) डाक व्यय अलग।

राजवैद्य डा० जौहरी
कृष्ण अस्पताल हरदोई (यू० पी०)

आपकी दैनिक आवश्यकता
शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित [illegible]

शुद्ध सुगंधित हवन-सामग्री

नमूना मुफ्त मंगाकर अवश्य परीक्षा करिये

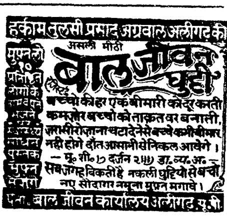
पता—सुन्दरलाल [illegible]
शुद्ध सुगन्धित हवन सामग्री भण्डार
मु० पो० [illegible] (फतेहपुर

आर्यमित्र

में

विज्ञापन देना

व्यापार की उन्नति करेगा



मस्तिष्क एवं हृदय

रोग-सम्बन्धी—भयकर पागलपन, मृगी, हिस्टीरिया, स्मरण शक्ति का ह्रास, पुराना सरदर्द, ब्लड प्रैशर-रक्त चाप की न्यूनाधिकता, दिल की तीव्र धड़कन तथा हार्दिक पीड़ा आदि—
सम्पूर्ण पुराने रोगों की परम विश्वस्त चिकित्सा के लिए शीघ्र परामर्श कीजिए—

जीर्णव्याधिविशेषज्ञ—**कविराज योगेन्द्रपाल शास्त्री**
एल० ए० एम० एस आयुर्वेदाचार्य
धन्वन्तरि स्नातक-आयुर्वेदिक यूनानी तिब्बिया कालेज, देहली।

मुख्याधिष्ठाता— कन्या गुरुकुल हरिद्वार
व्यवस्थापक— 'शक्ति प्रेस' (नहरपुल) कनखल
मुख्य सम्पादक— 'शक्ति सन्देश' (साप्ताहिक) कनखल
लेखक— 'प्राचीन राज्यवंश' एवं भारतीय जन क्रान्तियाँ'

संचालक— आयुर्वेद शक्तिआश्रम, कनखल

महर्षि निर्वाण भूमि अजमेर की भारत प्रसिद्ध

महर्षि सुगन्धित सामग्री

यह बल-वर्द्धक तथा रोग-नाशक बहुमूल्य औषधियों से बनी हुई अत्यन्त सुगन्धित सामग्री है। आर्य नेताओं तथा आर्यसमाजों ने इसकी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। हम आपसे साग्रह अनुरोध करेंगे कि एक बार आप अवश्य 'महर्षि सुगन्धित सामग्री' मगाकर प्रयोग में लाएं। हमारा दावा है कि ऐसी उत्तम सामग्री आपको अन्यत्र दो रुपये सेर भी न मिलेगी। मूल्य थोक भाव १।—) सेर। एक मन या इससे अधिक मगाने पर १) सेर।

छटाक, आधपाव, पाव के सुन्दर पैकिटों में बन्द प्रति सेर एक आना अधिक।

स्मरण रहे कि आज कल की वस्तुओं की महंगाई में इससे कम मूल्य में सामग्री देना, सामग्री के नाम से जनता को धोखा देना है।

पता—श्री विरजानन्द वैदिक विद्यालय, अजमेर।

श्री जगदीश भूषण कवि

संगीताचार्य ग्रामोफोन सिंगर प्राय भजनोपदेशक को वार्षिकोत्सवों, विवाहों, पर्वों, शुभसंस्कारों पर गायन, कथा तथा प्रचार के लिये याद करें।

पता—मुहल्ला गुड़याई,
फोननं० १५३, शाहदरा देहली।

बादाम रोगन

सौ प्रतिशत शुद्ध और प्रामाणिक

खाने और लगाने के लिये।

नमूना	॥≥)
छोटी शीशी	१॥)
बड़ी शीशी	६॥)

आज ही आर्डर दीजिये।
गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरद्वार)
सोल एजेन्सी, कुलदीपचन्द, सत्यपाल सामा रावतपाड़ा आगरा,

यह विज्ञापन नहीं सत्य है

यदि आप बातों का भूलना, बालों का गिरना, शिर में चक्कर आना, नींद न आना, उन्माद, और कम उम्र में बालों का पकना आदि के शिकार हैं तो किशोर तेल का व्यवहार करें। मू० २॥)
मोहन आयुर्वेदिक रसायनशाला जयनगर-दरभंगा (बिहार)

विज्ञापन व्यापार का सर्वोत्तम साधन है

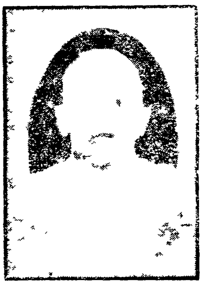


ओ३म्

आर्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक-आर्य मित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ
आगरा, २६ जुलाई १९५१



सामवेद भाष्यकार—श्री प० तुलसीराम स्वामी



वैदिक साहित्यकार—श्री प० शिवशङ्कर काव्यतीर्थ



श्री बा० उमाशङ्करजी एडवोकेट (फतेहगढ़)



श्री बा० [illegible] एडवोकेट (मेरठ)

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०), एक प्रति- तीन आने

सम्पादक हरिशङ्कर शर्म्मा

वर्ष—[illegible]
अङ्क—[illegible]

आर्य महासम्मेलन

(१)

भारतवर्ष की एक जीती-जागती धार्मिक संस्था का सप्तम् सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन देश के प्रसिद्ध एवम् ऐतिहासिक नगर मेरठ के नौचन्दी के विशाल और सुविधाजनक स्थान पर बडे समारोह पूर्वक ६ अक्टूबर से १२ अक्टूबर ५१ तक मनाया जायगा।

सम्मेलन को प्रत्येक दृष्टि से सफल बनाने के लिये पूर्ण उद्योग हो रहा है। स्वागत कारिणी समिति का निर्माण हो चुका है। कार्य अठारह विभागों में विभाजित हो चुका है। प्रत्येक विभाग के मन्त्री चुन लिये गये है और सब ही मन्त्री अपने अपने विभाग का कार्य संलग्नता से कर रहे हैं। एक अन्तरंग सभा ५५ सदस्यों की बनादी गई है और इस सभा को अधिकार दिया गया है कि वह छह सदस्य [illegible] कर संख्या को ६१ तक बढ़ा सके। इसी अन्तरंग सभा ने १५ सदस्यों की एक छोटी सी कार्य कारिणी समिति कार्य की सुविधा के लिए बना दी है जो धन संग्रह का कार्य कर रही है। इस सम्मेलन के साथ प्रदर्शिनी करने का भी निश्चय किया गया है जो प्रदर्शिनी इसका मुख्य अंग होगा—

इस आर्य महासम्मेलन में भारतवर्ष में बहुत से आर्य तथा आर्य [illegible] प्रेमी सज्जन अवश्य पधारेंगे। भारतवर्ष के प्रत्येक [illegible] से [illegible] आर्य धर्म के [illegible] का पूर्ण आशा [illegible] एक ही स्थल जवालापुर [illegible] से पांच हजार आर्य [illegible] पधारने का पत्र भी कार्यालय को प्राप्त हो चुका है। भिन्न भिन्न स्थानों से बड़े बड़े उपयोगी प्रस्ताव प्राप्त हो [illegible] विद्वानों [illegible] महत्व [illegible] शास्त्रार्थ [illegible] व्याख्यान वाचस्पति, [illegible] मुख्य [illegible] सम्मेलन में [illegible] की जा रही [illegible] सम्मेलन में कई उपयोगी सम्मेलनों की योजना है और इसके अतिरिक्त जहाँ सर्वोत्तम भाषणों का प्रबन्ध किया जा रहा है, वहाँ देश के प्रसिद्ध नेताओं से आधुनिक परिस्थिति के अनुकूल अनेक विषयों पर शास्त्रार्थ की योजना भी सम्मुख उपस्थित है। आशा है कि सफलता प्राप्त होगी।

सम्मेलन में पधारने वाले महानुभाव अभी से अपने [illegible] क्रम में उपरोक्त तिथियों को अंकित करलें और समिति कार्यालय से पत्र व्यवहार कर अपने अपने स्थान सुरक्षित करा लें।

दूकानदार [illegible] को शीघ्रता करनी चाहिये ऐसा न हो कि पछताना पड़े

कालीचरण आर्य
प्रधान मन्त्री
आर्य्य महासम्मेलन

(२)

६ से १२ अक्टूबर तक मेरठ में आर्य महासम्मेलन होने वाला है। सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा ने अन्तिम रूप में इन तिथियों को स्वीकार कर लिया है। स्वागत समिति का एक [illegible] बैठक १६ जुलाई को सायंकाल ५ बजे आर्यसमाज मन्दिर में श्रीमती शकुन्तला गोयल की अध्यक्षता में हुई। इस बैठक में मुख्य रूप में धन संग्रह के प्रश्न पर विचार किया गया [illegible] पचास हजार रुपया सम्मेलन के लिए एकत्रित किया जायगा। [illegible] हापुड़ [illegible] पांच हजार रुपया मिलने की आशा की गई है। मेरठ सदर शहर तथा लालकुर्ती में लगभग पन्द्रह हज़ार रुपया एकत्रित करने का अनुमान लगाया गया है।

सम्मेलन का स्थान मेला नौचन्दी निश्चित किया गया है। वहां पर लगभग दस हज़ार [illegible] व्यक्तियों के निवास के लिए डेरों का प्रबन्ध किया जायगा।

सम्मेलन के साथ कई आर्य सम्मेलन भी किए जायेंगे। [illegible] आर्य महिला सम्मेलन के कार्यकर्ताओं ने इस अवसर पर प्रान्तीय सम्मेलन करने का निश्चय किया है [illegible] तथा साहित्य प्रदर्शिनी करने का भी आयोजन किया गया है। सम्मेलन [illegible] को आरम्भ से अन्त तक हो जायगा। सम्मेलन को सफल बनाने के लिए [illegible] अनुभवी तथा उत्साही [illegible] का विविध उपसमितियों का निर्माण किया जा चुका है।

पुस्तक परिचय

सच्ची शान्ति के उपाय

मैंने श्री स्वामी स्वरूपानन्दजी दातागंज (बदायूं) की लिखी दो छोटी पुस्तक 'सच्ची शान्ति के उपाय भाग १ व २ पढ़ीं। दोनों पुस्तक बड़ी उपयोगी हैं। इनमें सामयिक विषयों पर विचार किया गया है। प्रचलित भ्रष्टाचार को रोकने के उपाय बताए हैं और सम्प्रदायवाद आदि विषयों पर प्रश्न उत्तर के रूप में विचार किया गया है। पुस्तक प्रचार पाने योग्य हैं गोलियाँ छोटी हैं परन्तु हैं काम की। आगामी संस्करण में इन दोनों को मिला कर और कुछ बढ़ाकर यदि एक पुस्तक कर दी जाय तो और अधिक लाभदायक होगा। दोनों भागों का मूल्य चार चार आने है। पहले भाग में ३६ पृष्ठ और दूसरे में ५४ पृष्ठ हैं।

— पूर्णचन्द्र एडवोकेट

—

अन्त्येष्टि कर्म संस्कार विधि,

लेखक—आचार्य श्री पं० हरिदत्त शास्त्री एम० ए० और प्रकाशक—श्री सेठ गोपालदास सकसरिया अध्यक्ष व संचालक सेकसरिया ग्रन्थमाला जोवनीमण्डी आगरा। मूल्य) पृष्ठ संख्या १३०।

आचार्य श्री पं० हरिदत्त शास्त्री सुप्रसिद्ध प्रकाण्ड पण्डित हैं। आपकी लेखनी द्वारा ही यह महत्वपूर्ण पुस्तक लिखी गयी है। इसमें अन्त्येष्टि संस्कार की विधि संस्कारचन्द्रिका की टीका सहित दी गई है। महर्षि दयानन्द की संस्कार विधि का ही पूरा आश्रय और अधिकार रक्खा है। वही सारी विधि है। हाँ, इस पुस्तक की कुछ विशेषताएं भी हैं। अस्थि चयन ग्यारहवें दिन क्या करें, वेदी का परिमाण, श्मशान यात्रा, शव [illegible] के समय क्या बोले, [illegible] शोक चिन्ह, मरण चिन्ह, प्राण निकलते समय का कष्ट, शव का वेश कौन प्रवेश कौन करावे, संस्कार की सामग्री, दक्षिणा, शवस्नान, क्षौरकर्म, पुनर्जन्म, मृत्यु का भय, श्मशान मार्ग के मन्त्र, महापुरुषों के अन्तिम वाक्य इत्यादि अनेक बातों की ओर इस पुस्तक में संकेत किया गया है। अन्त्येष्टि के सम्बन्ध में जो पौराणिक अथवा लौकिक विचार धाराएँ हैं उनका भी उल्लेख करके विद्वान् लेखक ने वैदिक सिद्धान्तों का स्थापना पर ही विशेष बल दिया है। आचार्य हरिदत्त शास्त्री ने अन्त्येष्टि संस्कार के सम्बन्ध में अपने सूक्ष्म समझ से कितनी ही आवश्यक और उपयोगी बातें इस पुस्तक में सम्मिलित कर उसे व्यावहारिक दृष्टि से भी बहुत उपयोगी बना दिया है। ऋषि दयानन्द के पुराने भक्त वयोवृद्ध श्री सेठ सकसरियाजी ने इस पोथी को प्रकाशित किया है। अतः पुस्तक का आठ आना मूल्य लागत मात्र ही रक्खा गया है।

——

[छठवें पृष्ठ का शेष]

विरले ही भगवान् के उपासक भगवान की आज्ञा का अनुसरण करते हुए आपस में विशुद्ध प्रेम का बर्ताव करते हैं तथा सद्व्यवहार में सतत रत रहते हैं। हमें भी अपने विकास के लिए भगवान् को ही आदर्श जानकर उनके दिव्य गुण धारण करके सबसे धर्मानुसार प्रीति पूर्वक यथायोग्य बर्तना चाहिये। भगवान् का प्रेम अद्भुत है। अनुपम है। हमें प्रेम का रहस्य जानना चाहिये। और सबसे प्रेम करना सीखना चाहिये। यही ढंग परमात्मा को न भूल कर परस्पर सत्य और प्रेम के व्यवहार करने का है। इस व्यवहार में जीवन का विकास है। परमात्मा निःस्वार्थ प्रेम करता है। हम भी स्वार्थरहित हित का व्यवहार करें परममित्र हमें कभी नहीं भुलावें। हम भी सदा उनकी स्मृति जाग्रत रखते हुए तथा सतर्क होकर सब कार्य कर्तव्य रूप से करें। भगवान् को भूलकर हमारी जीवनचर्या में ऋजुता आनी चाहिये और हमारा पारस्परिक व्यवहार निष्कपट होना चाहिये।

——

तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा

आर्य ॐ मित्र

आगरा श्रावण कृष्णा ८ संवत् २००८ वि०, गुरुवार, ता० २६ जौलाई १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि संवत् १९७२९४९०५१

मेधां सायं मेधां प्रातर्मेधां मध्यन्दिनं परि
मेधां सूर्यस्य रश्मिभिर्वचसा वेशयामहे

अथर्व० ६-१०८-५

साय प्रात दिन मध्य यत्न करते हैं
रवि रश्मि रम्य रत ज्ञान-ध्यान धरते हैं
मेधा जब वाक् शक्ति से मिल जाती है
सन्मार्ग-ज्योति जगती को दिखलाती है

तृष्णा तरुणी

उचित मात्रा में न्याययुक्त स्वार्थ सबका होता है उसकी कोई निन्दा नहीं कर सकता। ऐसे स्वार्थ के बिना काम भी नहीं चलता। निन्दा तो उस स्वार्थ की है, जो दूसरों की हित-हानि करके सिद्ध किया जाता है। सब अपने-अपने न्याय्य स्वार्थ पर आरूढ़ रहें तो किसी प्रकार की अशान्ति की आशङ्का न हो। जो लोग अपने औचित्यपूर्ण न्याय स्वार्थ को भी लात मार देते हैं, वे तो निश्चय ही सच्चे तपस्वी, त्यागी और महान् पुरुष हैं। आज का संसार अन्यायपूर्ण स्वार्थ का केन्द्र और तृष्णा का धाम बना हुआ है। अपना स्वार्थ तो है ही, दूसरों का स्वार्थ हड़पने के लिए भी घृणित प्रयत्न किया जा रहा है—घोर अनधिकार चेष्टाएँ की जा रही हैं। एक राष्ट्र दूसरे पर चढ़ता दिखाई देता है, और एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति पर तथा एक समुदाय दूसरे समुदाय पर आक्रमण कर रहा है। जो लोग भले प्रकार खा पी रहे और सुखपूर्वक जीवन बिता रहे हैं, परमात्मा ने जिन्हें न्यायपूर्वक उचित मात्रा में सब कुछ दिया है, वे भी दूसरों की सुख सुविधा लूटने को तैयार हैं। आज विश्व में यही अन्धेर मचा हुआ है, इसी प्रकार की मलिन मनोवृत्ति बढ़ रही है। महात्मा कबीर ने कहा—

देख पराई चूपरी मत ललचावे जी्व
रूखा-सूखा खायके ठंडा पानी पीव

जिस प्रकार न्याय से प्राप्त सुख साधनों के उपयोग भोग करने का सबको अधिकार है, उसी प्रकार उचित और न्याययुक्त साधनों द्वारा अर्जित अपने वैभव और यश को बढ़ाने का सब हक रखते हैं। परन्तु शिकायत तो अनधिकार और अन्यायमयी नीति की है, जिसका आज सर्वत्र प्रचार और प्रसार है। भोगेच्छाओं को सीमा से अधिक बढ़ाना और उनकी पूर्ति के लिए औचित्य की मर्यादाओं को भंग करना ही, 'तृष्णा' और स्वार्थान्धता है। तृष्णा धन वैभव की ही नहीं, यश, अधिकार, पद प्रभुता और परिवार की भी होती है। आज सभी तरह की तृष्णाओं में लोग लिप्त हैं। चोरी-जारी, अधिकार लिप्सा, पदलोलुपता इत्यादि भी तृष्णा तरुणी के ही विकृत रूप हैं। ज्यों-ज्यों आधुनिक सभ्यता का जटिल जाल फैलता जाता है, त्यों-त्यों तृष्णा तरुणी की मूर्ति भयङ्कर होती जाती है। यदि डाकुओं का एक झुण्ड अपनी अनुचित स्वार्थ सिद्धि के लिए डाका डालता है, तो वह निन्दनीय और घृणास्पद समझा जाता है, परन्तु यदि एक राष्ट्र अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए दूसरे राष्ट्र पर चढ़ाई करता और सहस्रों लाखों निरपराध सैनिकों के रक्त की धार बहाता है, तो उसके काम की प्रशंसा की जाती है। जो व्यक्ति जितने ही अधिक आदमियों की हत्या करता है, वह उतना ही वीर-बहादुर समझा जाता है। यह 'तृष्णा' भयङ्कर और अन्यायपूर्ण स्वार्थान्धता नहीं तो क्या है। महाराज भर्तृहरिजी ने ठीक ही कहा है, हम वृद्ध होते जा रहे हैं, परन्तु हमारी तृष्णा जोर पकड़ती जा रही है। हमारी शारीरिक शक्ति क्षीण हो रही है, किन्तु तृष्णा का बल उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। जब तक तृष्णा का अन्त न होगा, तब तक संसार में शान्ति नहीं हो सकती, एक्ट पक्ट सब नकली इलाज हैं। शान्ति सभाएँ और सुरक्षा-परिषदें स्वार्थ-सिद्धि के सुन्दर, सुघर और परिष्कृत रूप हैं।

माया मरी न मन मरे मर मर गये शरीर
आशा तृष्णा ना मरी कह गए दास कबीर

निःसन्देह यह समय तृष्णा तरुणी को नष्ट करने का है। तृष्णा का नाश औदार्य और औचित्य, न्याय और धर्म की मर्यादाओं का पालन करने से ही हो सकता है। मर्यादाओं के पालन के लिए आत्मचिन्तन विवेक और आस्तिकता अपेक्षित हैं। हृदयों में 'जीओ' और 'जीने दो' की पुण्य प्रवृत्ति जाग्रत् होने से ही काम चलेगा। आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत का आदर्श आगे आवेगा और तब संसार सचमुच सुखी बन जायगा।

कबीर ने एक बात और बड़ी अच्छी कही है—

साईं इतना दीजिए जामें कुटुम समाय
मैं भी भूखा न रहूँ साध न भूखा जाय

सचमुच यही भारतीय संस्कृति है। भारतीय संस्कृति तो और भी महान् है, इसमें तो स्वयं भूखा रह कर भी आतिथ्य करने की कल्पना और प्रेरणा है। परिश्रमपूर्वक जो मिल जाय उसी में सन्तोष कीजिए, अपने परिवार को पालिए और अतिथि को भी सेवा सत्कार से सन्तुष्ट कीजिए। अन्याय-अत्याचार या परपीडन-शोषण के लिए तो हमारी संस्कृति में स्थान ही नहीं है। कहाँ का साम्राज्यवाद और कहाँ का आक्रमण! सर्वत्र शान्ति ही शान्ति आकाश, पाताल, पृथिवी सब शान्त और स्वयं शान्ति भी शान्त। तृष्णा का नाश कीजिए, सुख और शान्ति का स्रोत उमड़ पड़ेगा, हमारा कल्याण होगा और सारे संसार में कल्याणमयी भावना दौड़ जायगी।

'गुरु पूजा'

अभी आषाढ़ की पूर्णिमा के दिन 'गुरु-पूजा' थी, उस दिन सम्भवतः शिक्षा-सत्र की समाप्ति पर, चतुर्मासों की छुट्टी होने के पूर्व, प्राचीन गुरुकुलों में गुरुओं की पूजा की जाती थी। शिष्यगण अपने-अपने गुरुओं का उस दिन विशेष आदर सत्कार करते थे, और गुरुजन भी अपने प्यारे शिष्यों को लोक परलोक-साधक सुन्दर आदेश उपदेश तथा आशीर्वाद देते थे। यह उस युग की बात है, जब 'गुरु शिष्य परम्परा' आदर्श रूप समझी जाती थी। दोनों के हृदयों में पिता पुत्र की भावना काम करती थी। अनुशासनशीलता हाथ बाँधे खड़ी रहती थी। आज कल स्कूल-कालिजों की उद्दण्डता पूर्ण अनुशासनहीनता का उस समय लेश भी शेष न था। 'गुरु पूजा' 'मर्दुमपरस्ती' या 'गुरुडम' का नाम नहीं है। आदर्श गुरु के पवित्र आचरणों का अनुकरण करना ही सच्ची 'गुरु पूजा' है। आचार्य का अर्थ है, जिसके आचरणों के अनुसार अपना आचार बनाया जाय। राम का वह सच्चा भक्त है जो राम के से आचरण बनाता और तदनुसार ही जीवन बिताता है। राम-राम की रटना लगाकर राम के विरुद्ध चलने वाला कभी राम का भक्त नहीं कहा जा सकता। वह तो राम के नाम पर धोखा देने वाला या दम्भ रचने वाला विचित्र व्यक्ति है। इसी प्रकार 'गुरु पूजा' का सन्देश गुरु के आदेश उपदेशों को अमल में लाना है, यही सच्ची गुरु-पूजा है। महर्षि दयानन्द आर्यसमाज के पूज्य प्रवर्त्तक और गौरवपूर्ण गुरु थे, गुरु-पूजा के दिन हम उनका विशेष रूप से स्मरण, चिन्तन और कथन कर सकते हैं। केवल इस भावना से कि उनका सा चरित्र बनाने में हम सफल हों, उन्होंने जो उपदेश आदेश दिये हैं, उनको हम अपने जीवन में ढालें, और जैसे

धार्मिक, सदाचारी, सत्यमूर्ति हमारे ये गुरु थे, वैसे ही हम भी बनने की चेष्टा करें। इन अर्थों में 'गुरुपूजा' का दिन हमारे लिये बहुत महत्वपूर्ण हो सकता है, और भविष्य में हमारी शिरोमणि सभाओं को इसके नियमानुसार मनाने पर विचार करना चाहिये।

आडम्बरयुक्त जीवन

हमने कई बार इन स्तम्भों में लिखा है कि आधुनिक स्कूल कालिजों में धार्मिक शिक्षा उतनी ही आवश्यक है, जितनी अन्य विषयों की। बल्कि धार्मिक शिक्षा तो उनसे भी अधिक जरूरी है। जो शिक्षा जीवन को पवित्र, ऊंचा और आदर्शयुक्त बनाती है, वही धार्मिक शिक्षा है। आज 'डिगरियों' के दरवाजे तो लम्बे चौड़े और विशाल बन रहे हैं, परन्तु नैतिकता, मानवता और सत्याचरण की गति संकीर्ण तथा मन्द होती जा रही है। अनुशासनहीनता तो एक भूत काल की वस्तु बन गई है। हमारे शिक्षाधिकारीगण शिक्षा के बाहरी रूप पर तो लीपा पोती कर रहे हैं, परन्तु उसकी आत्मा को स्पर्श तक नहीं करते। 'सेकेण्डरी' 'लोअर' या 'हायर' नाम रखने से शिक्षणालय का कुछ भी महत्व नहीं बढ़ा, और न कुछ हित हुआ है। उपाधि प्राप्त करने वालों की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक दशा इस बात को अच्छी तरह बता सकती है कि आखिर वे इतनी 'ऊंची' शिक्षा पाकर भी कहाँ हैं। केवल उपाधि-व्याधियाँ उनका कितना कल्याण कर सकती है। जो शिक्षा मनुष्य को मनुष्य नहीं बना सकती—मानवता की भद्र भावना का सचार नहीं कर सकती वह शिक्षा नहीं, शिक्षा का आडम्बर मात्र है युक्ति यह दी जाती है कि देश में कोई एक धर्म हो तो विद्यालय-महाविद्यालयों में उसकी शिक्षा दी जाय, इतने धर्मों की शिक्षा कैसे सम्भव हो सकती है। हम इस युक्ति को बिल्कुल बहाना और व्यर्थ समझते हैं। साधारण धर्म के मौलिक सिद्धान्त एक हैं, उनसे कोई भी इन्कार नहीं सकता। कोई भी धर्मावलम्बी जिन तत्वों के विरुद्ध नहीं वही धर्म है, और इसी की शिक्षा शिक्षणालयों में दी जानी चाहिए। रस्म अदायगी के लिये नहीं बल्कि धर्म विषय में विद्यार्थी का उत्तीर्ण होना आवश्यक है। ऐसा करने से छात्रों पर मानव धर्म के मूल तत्वों का कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य पड़ेगा और उनके जीवनों में उसका चमत्कार भी दिखाई देगा।

जगद्गुरु महर्षि दयानन्द ने तो जीवन के प्रत्येक कार्य और व्यवहार में धर्म को पूरा स्थान दिया है। वे राजनीति को एक क्षण के लिये भी धर्म से शून्य नहीं देख सकते थे। महात्मा गांधी भी धर्म के सबल समर्थक थे। उनका सारा जीवन ही धर्ममय था। स्वामी विवेकानन्द का कहना है—'जब तक तुम सच्चे धार्मिक नहीं हो' तब तक भारत का उद्धार होना असम्भव है। भारत क्या समस्त विश्व का कल्याण इसी पर ‑।'

कदाचित् ही कोई विचारक विद्वान हुआ हो, जिसने जीवन को धार्मिक तत्व से पृथक माना हो, परन्तु हमारी स्वराज्य सरकार धर्म से अछूता रहना चाहती है। उसे नैतिकता और मानवता के मूल सिद्धान्तों के प्रचार करने में संकोच है। आज इतना भ्रष्टाचार, अनाचार और अत्याचार देखते हुए भी उसकी धर्म-प्रचार की ओर प्रवृत्ति नहीं होती। हमारी दृढ़ धारणा है कि कानूनी इलाज नकली है, असली चिकित्सा धर्म-प्रचार ही है, और इसी ओर सरकार को सचेष्ट होना चाहिए।

असर क्यों नहीं होता !

एक समय था जब आर्यसमाज का हृदय इतना संवेदनाशील था कि उस पर छोटे छोटे आन्दोलनों का भी बहुत बड़ा असर होता था, मामूली बातों में भी वह कर्तव्य की ओर प्रवृत्त हो जाता था। आज का दिन है कि उसके कान पर जोर-जोर से घण्टे बजाए जाते हैं, परन्तु कुछ भी परिणाम नहीं निकलता। यही बात दिखाई देता है:

मैं कहूँगा दर्दे दिल और आप फरमाएंगे—'क्या'

गत छह मास के अन्तर्गत इतनी योजनाएं आर्यसमाज समष्टि के सामने आईं और सब हवा में उड़ गयीं। बड़े-बड़े विद्वान् विचारकों ने सुन्दर सुझाव सामने रखे, परन्तु उन पर किसी ने कुछ भी ध्यान न दिया। आखिर इस निश्चेष्टता से क्या समझा जाय? क्या इसे हम अपनी जीवन-शक्ति कह सकते हैं? क्या इस शिथिल 'संघटन' पर हमें अभिमान करने की हिम्मत हो सकती है! क्या कुछ समाजों के वार्षिकोत्सव मना लेने से ही विश्व में वैदिक धर्म का प्रचार हो जायगा? समाजों की जितनी संख्या है, उतना उनकी सत्ता नहीं रही। एक बात और है। आर्यसामाजिक जगत् इस समय पाँच विभागों में बटा हुआ है—कोंग्रेसी आर्यसमाजी, हिन्दुसभाई आर्यसमाजी, सबी आर्यसमाजी, बिरादरीबाज आर्यसमाजी और आर्यसमाजी आर्यसमाजी। छटी श्रेणी के कितने ही आर्यसमाजी और हैं, जिनकी सारी शक्तियाँ हिन्दी प्रचार आदि कार्यों में लगी हुई हैं। जो जिस क्षेत्र के आर्यसमाजी हैं, वे प्रायः उसी क्षेत्र में अपनी शक्तियाँ लगा रहे हैं। जो आर्यसमाजी आर्यसमाजी हैं उनकी संख्या बहुत थोड़ी है, और वे ही आर्यसमाज के उत्थान तथा उत्कर्ष की चिन्ता से चिन्तित दिखाई देते हैं। हमारी राय में जब तक सब आर्यसमाजियों की सारी शक्तियां आर्यसमाज के लिए ही काम में न लाई जायगी तब तक न तो सघटन सुदृढ होगा और न कोई ठोस काम हो सकेगा। यही कारण है कि समाज का सघटन उत्तरोत्तर ढीला पड़ता जाता है, क्रिया और शक्ति उसका साथ छोड़ रही है। जो लोग आर्यसमाज को राजनीति में घसीट कर उसे चुनावों का अखाड़ा बनाना चाहते हैं वे सम्भवतः उसके साथ न्याय नहीं कर रहे। आर्यसमाजी भाइयों को आर्यसमाज की उन्नति का उतना ध्यान नहीं जितना अपने अपने राजनैतिक क्षेत्रों में सफल होने का है।

फिर जोर बँधा !

पाकिस्तान बनने के बाद समझा गया था कि कठमुल्ले मुसलमानों की प्रपंचपूर्ण प्रतारणा से हमें छुट्टी मिल जायगी। परन्तु अब छिपे छिपे और स्पष्ट रूप से भी उनकी मलिन मनोवृत्ति फिर प्रकट होने लगी है। कानपुर के 'शाहना शरियत' नामक चिथड़े अखबार ने वैदिक साहित्य और हिन्दू देवी देवताओं तथा महापुरुषों के विरुद्ध जो गन्द उगली है, महर्षि दयानन्द के विरुद्ध जिस शैतानियत से बकवाद किया है, उससे उसकी जहरीली जहनियत जाहिर हुए बिना नहीं रह सकती। कानपुर, आगरे आदि शहरों में मुस्लिम घरों में बम, कारतूस बनते हुए पकड़े जाना भी गन्दी मनोवृत्ति का पूरा परिचायक है। कहा तो यह जाता है कि पाकिस्तान के पंचमार्गी लोग भी भारत में हैं और वे ही सारी गड़बड़ मचा रहे हैं। कभी किसी को उकसाते और कभी किसी को भड़काते हैं। कभी किसी को खरी-खोटी सुनाते और कभी किसी को गालियां देते हैं। समाचार पत्रों में आए दिन इन पाकिस्तानी जासूसों के पोलखाते छपते रहते हैं। यदि ये सब बातें सत्य हैं तो बहुत ही शोचनीय हैं। मुसलमानों ने देश के दो टुकड़े करके भारतमाता के हृदय को टूक-टूक कर दिया। आखिर ये अब और क्या चाहते हैं। शान्तिपूर्वक रहना चाहें तो भारत में बड़ी खुशी से रहें, न रहना चाहें तो उनके लिये पाकिस्तान के द्वार खुले हैं, वहाँ तशरीफ ले जा सकते हैं। गाली गलौज क्यों बकते और उपद्रव की बातें क्यों सोचते हैं, इससे क्या लाभ। हम इस ओर सरकार का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट करना चाहते हैं, वह जरा इन मतवालों की नब्ज देखकर उनके रोग का ठीक ठीक निदान करे और उनके उन्माद का मुनासिब इलाज भी सोचे। अगर उनकी मतान्धता का यह मरज इसी तरह गुप-चुप बढ़ता गया तो कुछ दिनों बाद जहाँ सरकार के आगे एक कठिन समस्या उपस्थित हो जायगी, वहाँ भारतीय जनता को भी विषम परिस्थिति में पड़ जाना पड़ेगा। समय रहते सचेत और सचेष्ट होने की बड़ी आवश्यकता है

साहित्य-सौरभ ग्राम गौरव

मानवता का स्वर्ग

श्री रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' एम० ए०

मैं मानव हूँ मुझे धरा पर मानवता का स्वर्ग चाहिए।
बीत रहे युग, गीत न अब तक—
लौट सके विद्रोही कवि के
कोई ऐसा युग ले जिसमें
अपने सच्चे हों मानव के।
आज युगों के खंडहरों में मुझको नव निर्माण चाहिए।
मैं मानव हूँ मुझे धरा पर मानवता का स्वर्ग चाहिए॥
शङ्खध्वनि में सुना रही है
आज व्यथित हो मेरी वाणी—
'यह मानव की धरती, इस पर
शोषित नहीं रहेगा प्राणी!'
कंगालों के कङ्कालों में मुझको नव निर्माण चाहिए।
मैं मानव हूँ, मुझे धरापर मानवता का स्वर्ग चाहिए॥
स्नेह-भरे मिट्टी के दीपक
जहाँ जलाती हो दीवाली
ज्योति जुगनुओं की पीने को
जहाँ घुमड़ती पावस काली।
वहाँ नए दिन रात बनाने मुझको नया प्रकाश चाहिए।
मैं मानव हूँ, मुझे धरा पर मानवता का स्वर्ग चाहिए॥
जहाँ स्वार्थ पर केन्द्रित होकर
खून पिए मानव मानव का।
आहों और कराहों पर हो
जहाँ महल उठता वैभव का।
वहाँ पाप धोने जीवन के महासिन्धु का ज्वार चाहिए।
मैं मानव हूँ मुझे धरा पर मानवता का स्वर्ग चाहिए॥
नहीं चाहिए ऐसा रवि जो
ऊँची दीवारों पर आए।
घासफूस की झोपड़ियों में,
जो हस हस कर आग लगाए।
मिट्टी को भी स्वर्ण बनाए ऐसा स्वर्ण विहान चाहिए।
मैं मानव हूँ मुझे धरा पर मानवता का स्वर्ग चाहिए॥

पर प्रेतों को जल-दान यहाँ

धन दौलत की पूजा होती मानवता का अपमान यहाँ।
दो दो दानों को तरस-तरस
मानव भूखा मर जाता है।
अपने अन्तर की आहों से
वह अम्बर को भर जाता है।
मानवता ठुकराई जाती मिलता कुत्तों को दान यहाँ।
होती है वैभव की पूजा,
गोवर्धन ठुकराया जाता।
अपमानित होते कृष्ण, सलिल—
पत्थर पर बरसाया जाता।
प्यासी मानवता चिल्लाती, पर प्रेतों को जलदान यहाँ।
महलों में जलते हैं दीपक
कुटियों में तम छाया रहता।
जल उठता धन का भी अन्तर
पृथ्वी पर मानव दुख सहता।

हमारे मूक बन्धु

श्री राजेश वर्मा, सिद्धान्तशास्त्री

ग्रामों में गाय, भैंस, बकरी, बैल, घोड़ा, गधा आदि उपयोगी पशुओं का लोगों के साथ बड़ा सम्बन्ध रहता है। ये पशु दूध देते, खेत जोतते, बोझे ढोते और सवारी के काम आते हैं। परन्तु जिस प्रकार प्राय लोग स्वयं अपने दैनिक जीवन पर ठीक ठीक ध्यान नहीं देते, उसी प्रकार उक्त पशुओं की भी यथोचित देख-भाल नहीं कर पाते। उनके दाने चारे की विशेष परवा नहीं की जाती। सड़ा गला जैसा भी भूसा या चारा मिल गया उनके आगे डाल दिया। जहाँ पशु बाँधे जाते हैं, वहाँ शायद ही सफाई का ध्यान रखा जाता हो। मनों कूड़ा पड़ा रहता है। मच्छर मक्खियाँ भिनर-भिनर करते रहते हैं जिससे पशुओं को चैन नहीं पड़ता और वे सुख की नींद नहीं सो पाते। इन पशुओं को नहलाने धुलाने की बात तो बहुत ही कम लोग सोचते हैं, नहीं तो गोबर, मूत्र, मिट्टी आदि से पशुओं के शरीर गन्दे दिखाई देते हैं। दूध देने वाले पशुओं से दूध तो अधिकाधिक लेने का प्रयत्न किया जाता है, परन्तु उन्हें पौष्टिक दाना चारा देना आवश्यक नहीं समझा जाता। इसी प्रकार बैल, घोड़े और गधों से रात दिन काम लेते हुए भी उनकी भोजन-व्यवस्था और शुश्रूषा ठीक ठीक नहीं हो पाती। परिणाम यह होता है कि ये उपेक्षित पशु अस्वस्थ और असमर्थ होकर या तो अपनी मौत मर जाते हैं, या मारने के लिये कसाई खाने भेज दिये जाते हैं।

जब कोई पशु बीमार होता है, तब तो उसकी दशा और भी दयनीय हो जाती है। न दवा न दारू। बेचारा बुरी तरह दिन काटता रहता है, परन्तु स्वार्थी मालिक लोग उससे तब तक काम लेना बन्द नहीं करते जब तक कि वह असमर्थ होकर काम करने के काबिल नहीं रहता। यह कितनी निर्दयता है। अगर मनुष्यों से बीमारी में काम लिया जाय तो वे चीख उठते और आन्दोलन खड़ा कर देते हैं। परन्तु मूक पशुओं के कष्ट को कोई नहीं देखता। यह कितने आश्चर्य की बात है।

हम 'गोरक्षक' बनने का दम्भ दिखाते हैं परन्तु कितने परिवारों में गौएं हैं और कितने लोग सच्चे गोपालक हैं। गौओं के दुख-सुख और खान-पान की क्या परवा की जाती है। केवल बातूनी जमा-खर्च करके हम गोरक्षा की रस्म अदा करना चाहते हैं। कुछ लोगों को एक और खब्त होता है, वे पक्षियों को पिंजड़ों में बन्द कर रखते हैं। यानी अपने मनोविनोद के लिये गगन विहारी स्वच्छन्द विहगों के जीवन को बरबाद कर देते हैं। यह कहाँ की बुद्धिमत्ता या भलमनसाहत है। यह गन्दी प्रवृत्ति जल्द से जल्द बन्द होनी चाहिए।

ग्रामों में पशुओं को थोड़ी बहुत तो हवा मिल जाती है, कुछ घूमने फिरने को भी अवसर प्राप्त होता है। परन्तु जो पशु शहरों में रहते हैं उन्हें तो घोर नरक भोगना पड़ता है, बम्बई, कलकत्ता अथवा अन्य ऐसे ही नगरों में गायों की जो दुर्दशा होती और उन्हें जैसे तंग तारीक कोठड़ों में बन्द रहना पड़ता है, वह बहुत ही भयावह है। जहाँ मनुष्य अपनी

मानवता पथ भूली जाती, जड़ता को दीपक दान यहाँ।
मुर्दों को आभूषण भूषण
इस जग मे पहनाए जाते।
आँसू से शरद् निशाओं मे
नंगे नर नहलाए जाते।
कंकाल ठिठुर कर मर जाते, होता वैभव का मान यहाँ।
धन-दौलत की पूजा होती,
मानवता का अपमान यहाँ।

महिला-मण्डल

महिलाओं की महत्ता

कुमारी ज्योत्स्ना शर्मा बी० ए०, विशारदा

प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने गत १६ जुलाई को स्त्रियों की एक सभा में भाषण करते हुए बंगलौर में कहा—स्त्री जाति के विकास पर देश की उन्नति निर्भर है। भारत की स्त्रियाँ पुरुषों से अधिक कार्य करने के योग्य हैं, परन्तु दुर्भाग्य से वे अब भी कानूनी तथा सामाजिक बुराइयों की शिकार हैं। इन बुराइयों को जल्दी से जल्दी दूर करने पर देश का विकास होगा, क्योंकि भविष्य की पीढ़ी को शिक्षित करने का कार्य महिलाएं करेंगी। भारत के लम्बे इतिहास में इस देश की महिलाओं ने कई महा पुरुष पैदा किये। अभी हाल में महात्मा गांधी के नेतृत्व में जो स्वतन्त्रता संग्राम हुआ था, उसमें महिलाओं ने महत्वपूर्ण भाग लिया। स्त्रियों की उन्नति के सभी रास्ते खोल दिये जायेंगे और वे इस तरह मानवता तथा देश की सेवा कर सकेंगी।'

प्रधान मन्त्रीजी ने महिलाओं के सम्बन्ध में ऊपर जो कुछ कहा है, वह सर्वथा सत्य है। पुरुषों ने अपने अज्ञान अथवा स्वार्थ के कारण स्त्रियों को पद-दलित कर रखा था। न वे पढ़ती-लिखती थीं, और न कहीं घूमती फिरती थीं। सदैव पर्दा उनके ऊपर पड़ा रहता था परन्तु अब वह बात नहीं रही, फिर भी देखा जाता है कि पर्दे का सर्वथा लोप नहीं हो पाया। अधिकांश स्त्रियाँ अब घूंघट काढ़े रहती हैं, उन्हें समाज में मुंह खोलकर बैठने में लज्जा और संकोच अनुभव होते हैं। यह कुप्रवृत्ति शीघ्र से शीघ्र नष्ट होनी चाहिए। दूसरी धारा पढ़ी लिखी स्त्रियों की है, वे पढ़-लिखकर गृहस्थ के काम-धन्धों से हाथ लगाना अनुचित या अपमान-जनक समझती हैं। इन्होंने शिक्षा का आदर्श और उद्देश्य परीक्षाएँ पास करना अथवा पुस्तकें रटते रहना ही समझ रखा है। अगर शिक्षा-पद्धति स्त्रियों को सच्ची और अच्छी गृहस्थिन नहीं बना सकती, तो इसे उचित एवम् उपयोगी शिक्षा पद्धति नहीं कहा जा सकता। सन्तान का बिगाड़ सुधार माताओं पर निर्भर करता है। एक विद्वान् का कहना है कि बालक नौ वर्ष की आयु तक जितनी बात सीख लेता है उतनी फिर जीवन में नहीं सीख पाता। नौ वर्ष तक प्रायः बालक माताओं की गोद या देख रेख में ही रहते हैं, ऐसी दशा में वे माताएं कितनी अच्छी गृहिणी या गृहस्थिन होनी चाहिए, यह बात आसानी से सोची-समझी जा सकती है। श्री जवाहरलालजी ने बिल्कुल ठीक कहा है कि स्त्री जाति के विकास पर देश की उन्नति निर्भर है। महर्षि दयानन्द यही बात आज से पौन शती पूर्व कह गये हैं, अब तो स्वतन्त्र भारत में यह देखने की आवश्यकता है कि महिलाओं को जो शिक्षा दी जाय उसकी आत्मा सांस्कृतिक और भारतीय होनी चाहिये। जिससे भावी जीवन में हमारी बहनें सुगृहिणी और सद्गृहस्थिन बन सकें। पढ़ी लिखी स्त्रियों में स्वार्थ नहीं होना चाहिए। यानी वे जो कुछ जानती हैं, उससे दूसरों को भी लाभ उठाने का अवसर दें। मैं देखती हूँ कि प्रायः पढ़ लिखकर मेरी बहनें बेपढ़ी स्त्रियों को मूर्ख समझने लगती हैं, और उनसे किसी प्रकार का सहयोग अथवा संसर्ग नहीं रखतीं। इससे क्या लाभ? प्रत्येक शिक्षित स्त्री का कर्त्तव्य है कि वह अपनी जानकारी से दूसरी बहनों को भी फायदा पहुंचावे, जिससे उसका पढ़ना लिखना सार्थक हो।

सुख सुविधा और कुशल क्षेम की बात सोचते रहते हैं, वहाँ उन्हें इन मूक पशुओं की दयनीय दशा पर भी विचार कर उनके कष्ट-मोचन के लिये उचित उद्योग करना चाहिए। दया और करुणा स्नेह और सहानुभूति केवल कहने भर के लिये अच्छी नहीं, उन्हें चरित्र के साँचे में ढालना चाहिए,

---

अध्यात्म-धारा

भगवत्-स्मरण

श्री लालचन्दजी

नाहं ब्रह्म निराकुर्यां, मा मा ब्रह्म निराकरोद्, निराकरणमस्तु। यो वै भूमा तत्सुखम्, नाल्पेसुखमस्ति, भूमैव सुखम्, भूमात्वेव विजिज्ञासितव्यः। —छान्दोग्य।

परमात्मा हमें नहीं भूलता, हम भी उसे कभी न भूलें। जो यहाँ ब्रह्म पवित्र शान्ति निकेतन जगदाधार परमात्मा है वही परम सुखमय आनन्दस्वरूप है। उसी से कल्याण होता है, अल्प अर्थात् तुच्छ पदार्थों में सुख कहाँ? महान् प्रभु ही नित्य सुख स्वरूप है, इसलिए उसी को जानने की इच्छा करनी चाहिये। उसी से परम सुख प्राप्त होता है।

परमात्मा सारे विश्व का पालनहार है। उसकी दृष्टि से कोई भी ओझल नहीं। सबका उसे ध्यान है। सबकी ओर उसकी प्रेममयी दृष्टि है। परमात्मा हमारे सारे आचार विचार, सारे संकल्प तथा सारे कार्य देखता है। हमें भगवान् को सदा अपने हृदय में अनुभव करना चाहिये और यह भी जानना चाहिये कि वही एक अद्वितीय प्रभु सबके हृदयों में परिपूर्ण है। यह अनुभूति ही मनुष्य को सन्मार्ग में रखती हुई उसका परम कल्याण करती है। जब मनुष्य के सामने सदा भगवान् विराजते हैं तो वह कभी अधर्म नहीं कर सकता। अधर्म अर्थात् पापकर्म छिपकर किया जाता है। जब मनुष्य यह जान लेता है कि भगवान् सर्व अन्तर्यामी घट घटवासी तथा सर्वव्यापक है, वही अनादि और अनन्त है, असीम है और सारे विश्व में ओतप्रोत है, सारे ब्रह्माण्ड में व्याप्त है और सारी जगती से परे है, सारी जगती में भगवान् है और सारी की सारी जगती भगवान् में है तथा भगवान् अत्यन्त महान् है। जगती उसमें है और वह जगती में है किन्तु जगती से न्यारा है। जगती में होते हुए तथा जगती उसमें होने पर भी वह जगती से अलग है। वह साक्षी है। भगवान् हमें कभी भी भूलता नहीं। हम भी अपने सारे व्यवहारों में भगवान् को न भूलें। सदा उसे अपने सामने देखें और उसकी देख-रेख में ही अपनी जीवनचर्या करें।

भगवान् सारे संसार को क्रियाशील करता हुआ भी स्वयं निश्चल है। उसके नियम अटल और अच्युत हैं। भगवान् ऋत और सत्य द्वारा जगत् में अपना प्रेम शासन कर रहा है वह न्यायकारी है। उसके न्याय में दया है दया में न्याय है। वह निष्पक्ष न्याय करता है। पूर्ण सत्य और ऋत उसके न्याय में स्पष्ट दिखाई देता है। उसका दण्ड सदा प्रेममय होता है और जीवों के विकास के लिए ही होता है। वह नियम उल्लंघन करने पर दंड देता है और पश्चात्ताप करने पर, अनुताप करने पर पाप नाश से बचने का उत्साह और साहस भी देता है उसकी नीति सरल है, उसकी रीति नित्य प्रेममयी है। वह सदा प्रेम करता है, उसके दंड में भी असीम प्रेम है और है जीव के सुधार की सद्भावना।

अनन्त रूप उसकी प्रीति सरल सुलभ है। उसकी नीति नित्य रीति प्रेममय है। जब मनुष्य को इस अटल सत्य की प्रतीति हो जाती है, तो वह भगवान् को अपना आत्माराम तथा अभिराम समझता है। परमात्मा परमसार है, परम आश्रय है, परम सुहृद है, परम सुखद है। परमात्मा नित्य सब मोद-प्रमोद देते हैं। जितना हित परमात्मा करता है उतना अन्य कोई भी नहीं कर सकता। संसार के साथी प्रायः स्वार्थ के लिए ही साथ देते हैं और स्वार्थ-सिद्धि होने पर अलग हो जाते हैं।

[शेष पृष्ठ २ पर]

वास्तविक प्रचार-योजना

वैद्यशास्त्री, श्रीगंगाचन्द्र अग्रवाल

२८ जून ५१ के 'आर्यमित्र' में श्री विश्वनाथजी त्यागी ने अपने एक लेख में 'उपदेशक विद्यालय' की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। यह योजना बहुत उपयोगी और कार्य-रूप में परिणत करने योग्य है। बौद्ध भिक्षु भिक्षुणियों ने भारतेतर देशों में जाकर अपने धर्म का प्रचार किया, परन्तु उनसे भी पूर्व आर्यावर्त के कर्मठ महापुरुषों ने ज्ञान दायिनी भगवती श्रुति के पवित्रतम सन्देश को निखिल विश्व के कोने-कोने में दानव को मानव और नर को नारायण बनाने की उदात्त अभिलाषा से अपने जीवन के एक भाग को ही अर्पित कर दिया। उन्होंने वैदिक संस्कृत और भारतीय सभ्यता का प्रचार करके एक विशाल भारत (Greater India) की सृष्टि की था। पौराणिक साहित्य भी यह प्रतिपादन करता है कि वशिष्ठ ऋषि ने मिश्र देश में जाकर वहां के कई हजार निवासियों के विचारों की परिशुद्धि करते हुए उन्हें वेदामृत पिलाया था। यह मानव स्वभाव है कि पर्याप्त ऊहापोह करने के अनन्तर जो सिद्धान्त सबसाधारण के अभ्युत्थान के लिए श्रेयस्कर जचता है, उसके प्रचार के लिए एक व्यक्ति व्यग्र हो उठता है और इसी सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप देने के लिए वह खण्डन मण्डन रूप अस्त्र का आश्रय ग्रहण करता है। श्री स्वामीजी महाराज तथा उनके निधन के पश्चात् उनके अनुयायियों ने इस अस्त्र का अवलम्बन करके जिस तेज, दीप्ति एवं वाग्मिता का परिचय दिया उससे एकवारगी ही मदान्धों, वन्धाइयों और मजहबपरस्तों का आसन हिल उठा था। काश यह प्रवृत्ति अद्यावधि स्थिर रहती तो बड़ा काम होता। किन्तु सौभाग्य अथवा दुर्भाग्य से आर्यसमाज को अपनी अन्तःप्रेरणा से, या दूसरों की दृष्टि में 'देशद्रोही' बनने के कलंक से बचने के लिए स्वातन्त्र्य-आन्दोलन के तूफानी दिनों में अपनी शास्त्रार्थ शैली की लगाम को ढीला कर देना पड़ा। जिसका अवश्यम्भावी परिणाम आज प्रत्यक्ष है।

सुझाव और सम्मतियाँ

आर्यसमाजों के वार्षिकोत्सव जिस प्रकार होते रहते हैं उनमें मैं कोई स्थायी लाभ नहीं देखता। उनमें तो व्यर्थ ही धन व्यय किया जाता है। जनता की किसी प्रकार की ज्ञान-वृद्धि नहीं हो पाती। ये उत्सव तो केवल रस्म अदायगी के रूप में किए जाते हैं। मेरी सम्मति में तो ऐसे 'उपदेशक-विद्यालय' स्थापित होने चाहिए जिनमें आर्य सिद्धान्त ग्रन्थों के अतिरिक्त कुरान और बाइबिल भी पढ़ाए जाय। इन विद्यालयों में केवल युवक लिए जाय। दूसरे विद्यालय ऐसे हों जिनमें प्रौढ लोग शिक्षा पा सकें। इन्हें अरबी फारसी का ज्ञान कराकर इसलाम, ईसाइयत और वैदिकधर्म के सिद्धान्तों का तुलनात्मक अध्ययन कराया जाय, जिससे उनमें शास्त्रार्थ पटुता सम्पादित हो सके। ऐसा करने में यदि उत्सवों की बलि देनी पड़े तो कोई हानि नहीं है। जो सम्पत्ति और शक्ति उत्सवों पर व्यय होती है, उसे इस विद्यालय पर खर्च करना चाहिये। युवकों के शिक्षण के लिए ऐसे उपदेशक विद्यालय सरलतापूर्वक प्रत्येक गुरुकुल के अङ्ग बन सकते हैं। किन्तु प्रौढों के शिक्षण के लिए शहरों का एक केन्द्र बना कर चलते फिरते पुस्तकालयों की तरह चलती फिरती श्रेणियां इस प्रकार बनायी जा सकती हैं कि अध्यापक समीपवर्ती एक शहर में पाठ देकर दूसरे शहर में जायें, फिर तीसरे शहर में जायें। फिर पहले शहर में लौट कर पाठ सुनें और पाठ दें। इस तरह करने से थोड़े दिनों में ही प्रत्येक शहर में 'मनाजिरों' की एक मण्डली तैयार हो जायगी। जो खण्डन मण्डन पूर्वक अपनी समीपवर्तिनी वेद विरोधी प्रगतियों की सरलतापूर्वक खबर ले सकेगी। अस्तु, श्री त्यागीजी ने अपनी प्रचार-योजना के प्रकाशित करने की आशा दिलायी है, जिसकी उत्सुकता पूर्वक प्रतीक्षा की जायगी। इस योजना में उक्त उपदेशक विद्यालय का स्थान अवश्य होना चाहिए।

——

'उरुक्रम राष्ट्र'

आचार्य प्रभामित्र त्रिपाठी

आज राष्ट्र-निर्माण की समस्या सबसे प्रमुख है, किन्तु दुःख है इस बात का है कि हम अपने राष्ट्र की अतीत संस्कृति के मूलाधार से उपेक्षित हैं। आज भी राष्ट्र की सबसे प्रमुख राष्ट्रिय संस्था कांग्रेस और उसके प्रमुख कर्णधार इस विषय में न्यूनता अनुभव करते हैं। अस्तु, उन्नीसवी शताब्दी के प्रमुख सुधारक महर्षि दयानन्द ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' के प्रथम समुल्लास में एक वेद मन्त्र का सर्व प्रथम उल्लेख किया है। इस मन्त्र में राष्ट्र निर्माण के प्रमुख तत्व वर्णित हैं। यह मन्त्र इस प्रकार है —

'शन्नो मित्रः शंवरुणः शन्नो भवत्वर्यमा, शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः।'

इस मन्त्र को ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश और आर्याभिविनय दोनों में सब प्रथम स्थान देकर उसका ईश्वर परक अर्थ किया है, किन्तु जब हम इसका राष्ट्रिय अर्थ करते हैं तो उसके अनुसार उसमें 'उरुक्रम' अर्थात् राष्ट्र को अत्यन्त शक्तिशाली बनाने के उपायों का सुन्दर वर्णन मानते हैं। मन्त्र में मित्र, वरुण, अर्यमा, इन्द्र, बृहस्पति, विष्णु और पश्चात् उरुक्रम का वर्णन कल्याणमय होने के लिए आता है। यदि इन शब्दों के अर्थों के अनुसार हमारे नेतागण कार्यक्रम बनाकर उसे क्रियात्मक रूप देने के लिये सन्नद्ध हो जाय तो वस्तुतः हमारा राष्ट्र उरुक्रम (महा बलशाली) हो जाय। सबसे पहला साधन 'मित्र' शब्द है, मित्र से अभिप्राय राष्ट्र को शक्ति-सम्पन्न बनाने के लिये मैत्री भाव, स्नेह, सहयोग और प्रेम की आवश्यकता से है। स्नेह वारि के बिना राष्ट्र-वृक्ष सूख जाता है। सहयोग और प्रेम भी सत्युक्त हों और अभद्र स्नेह न हो तो दुर्जन की मैत्री के समान वह भी राष्ट्रोच्छेदक ही सिद्ध होगा। दूसरा साधन है 'वरुण' वरुण नाम वरः श्रेष्ठ 'यो व्रियते वर्य्यते वा स वरुणः' भावार्थ यह है कि सहयोग और प्रेम के साथ सुन्दर स्नेहमय वातावरण में सुन्दर यथायोग्य श्रेष्ठ चुनाव हो। योग्य व्यक्तियों के हाथ में पूर्ण विश्वास के साथ उनके अनुकूल कार्य दिये जायें, और इस प्रकार का चुनाव भी केवल कलह का कलुष रूप न हो अपितु कल्याणमय हो। इस प्रकार वरण वरुण हो। ध्यान रहे यातायात को भी सूक्ष्म दृष्टि से वरुण नाम से कहा गया है। राष्ट्र-निर्माण में यातायात साधन कल्याणमय हो, इसका कितना महत्व है, यह किसी से छिपा नहीं है।

इन दोनों महत्वपूर्ण साधनों के पश्चात् वेद ने तृतीय साधन 'अर्यमा' का वर्णन किया है। अर्यमा न्याय विभाग को कहते हैं। ऋषि की व्युत्पत्ति में ही न्याय-शक्ति का परिचायक 'अर्यमा' शब्द है। जिस राष्ट्र में सहयोग और प्रेम के साथ योग्यतापूर्वक चुनाव हो, न्याय शक्ति कल्याणमयी हो, ऐसा न हो कि झूठ को सच और सच को झूठ सिद्ध किया जाय ऐसा कानून न हो जिससे न्यायप्रिय लोगों का गला घोंट दिया जाय, अपितु वह 'अर्यमा' शक्ति 'शं' कल्याणकारिणी हो, जिससे राष्ट्र उन्नतिशील होता जाय।

इन तीन साधनों अर्थात् यातायात और न्याय विभागों अथवा सहयोग और स्नेहपूर्ण योग्य चुनाव विभाग तथा न्याय-विभाग से ही चौथे की सार्थकता होगी और वह है इन्द्र अर्थात् ऐश्वर्य, कोष, सामर्थ्य, सैनिक शक्ति। उपर्युक्त साधनों को यदि क्रियात्मक रूप दिया जाय तो निश्चय है हमारा राष्ट्र परमैश्वर्य सम्पन्न हो जाय। इन साधनों की सुव्यवस्था के अभाव में ही आज राष्ट्र "सर्वप्रभुत्व सम्पन्न गण राज्य" घोषित होते हुए भी भुखमरी, निराशा आदि के कारण अपने को तेजहीन सा अनुभव कर रहा है।

अन्न, वस्त्र और अर्थ, काम, की चिन्ता से मुक्त जनों की मोक्ष अथवा धर्म ज्ञान वा अध्यात्म मार्ग की ओर प्रवृत्ति होती है। उसी राष्ट्र में बड़ी गहन गहन दार्शनिक गुत्थियों और तात्विक बात खोली जाती हैं। इसी का

राजनैतिक रंग-मंच

हमारा कर्त्तव्य

अध्यापक श्री मुरारिलाल शर्मा

गत कई सप्ताहोंसे 'आर्यमित्र' के 'राजनैतिक रंग मंच' शीर्षक के अन्तर्गत वर्तमान राजनैतिक परिस्थिति पर प्रकाश डाला जा रहा है और वह भी साधारण व्यक्तियों द्वारा नहीं वरन् तपे-तपस्वी आचार्य श्री पं० नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ तथा प्रो० श्री सत्यव्रत सिद्धान्तालङ्कार आदि आदरणीय व्यक्तियों द्वारा। मैं भी इस विषय पर अपने कुछ विचार जनता के सम्मुख प्रस्तुत करता हूँ।

यह बात तो सभी न्यायशील व्यक्ति मानेंगे कि देशभक्ति का सेहरा किसी राजनैतिक दल विशेष के सिर नहीं रहा। क्रान्तिकारी लोगों के तप और त्याग की वे लोग भी भूरि भूरि प्रशंसा करते हैं जिनका उनसे गहरा मत-भेद रहा है। उन्हें न फूलों की मालाएं गले में डलवा कर जलूस निकलवाने का अवसर मिला था और न बढ़िया-बढ़िया प्रीति भोजों में स्वादिष्ट भोजन उड़ाने का। उनकी तकदीर में तो एक ही चीज थी और वह थी नौकरशाही की गोलियों की बौछार। और हमें इस बात के मानने में तनक भी सकोच न होना चाहिए कि हमें जो राजनैतिक स्वतन्त्रता मिली है उसका अधिकांश श्रेय इन निःस्वार्थ क्रान्तिकारियों की कुर्बानियों को ही है।

समाजवादी दल में भी श्री जयप्रकाशनारायण तथा आचार्य नरेन्द्रदेवजी जैसे नररत्न हैं। आज भी नरम दल के नेता स्व० महामना गोपालकृष्ण गोखले, माननीय पं० श्रीनिवास शास्त्री, आदि के नाम बड़े आदर से लिए जाते हैं।

जो लोग वर्तमान कांग्रेस के सभी लोगों को निकम्मे और भ्रष्टाचारी होने की उपाधि देते हैं, वे भी कांग्रेसवालों के साथ घोर अन्याय करते हैं। कारण, कांग्रेस में आज भी बहुत-से ऐसे तपे तपस्वी हैं जिन्होंने अपनी सेवाओं के बदलेमें एक कौड़ीका भी लाभ नहीं उठाया। और यह बात भी पग-पग पर दिखाई पड़ रही है कि कांग्रेस सरकारों के शासन काल में दिनदहाड़े रिश्वत, चोर-बाजारी और भ्रष्टाचार का खुल्लमखुल्ला प्रचार है कितने ही सरकारी अफसर घूस लेते हुए तनक भी नहीं डरते। इसके दो मुख्य कारण प्रतीत होते हैं। एक तो यह कि इन्हें कुछ उद्देश्य-हीन स्वार्थी कॉंग्रेसमैनों का सहयोग प्राप्त है और दूसरा यह कि न्यायशील कॉंग्रेसमैन इच्छा होते हुए भी ऐसे लोगों के दावपेच के आगे मात खा जाते हैं।

रही कॉंग्रेस नेताओं की बात इनमें भी अधिकांश गुटबन्दी की कीचड़ में फंसे हुए हैं। ये लोग अपने स्वार्थ और गुट को बनाये रखने के लिए न्याय-पथ-भ्रष्ट लोगों का साथ देते हैं। क्या बात है कि आज जनता के सभी लोग उन देशभक्त कहलाये जाने वाले लोगों को बुरा बताते हैं जिनको कुछ समय पहले वे बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे? कारण स्पष्ट दिखलाई पड़ता है, और वह यह कि आज नेता नामक लोगों में तप और त्याग रह ही नहीं गया है। किसी का रिश्तेदार अयोग्य होता हुआ भी बड़े-बड़े सरकारी पदों पर विराजमान है तो किसी का परमिटों के सामानों में हिस्सा है। कल जिनकी गृहस्थी का काम बड़ी कठिनाई से चलता था, आज वे कोठ वाले बन रहे हैं। यह कैसे? जनता अन्धी नहीं है वह सब कुछ जानती है।

एक ओर देश में अन्न और वस्त्र का घोर सकट उपस्थित है। लोगों की कठिनाइयों दिन दिन बढ़ रही हैं। दूसरी ओर नेताओं और शासकों को आनन्द मनाने से ही अवकाश नहीं मिलता। जहाँ जाते हैं, वहाँ के लोगों के भाग्य जग जाते हैं। उनकी एक ही दिन में कई कई दावतें होती हैं, और वे भी बड़े ठाठ की। नगर से सैकड़ों लोगों को उनमें बुलाया जाता है। लोग नेताओं और शासकों के साथ बैठकर दावतें खाने में अपना परम सौभाग्य समझते हैं। इस प्रकार बिना आवश्यकता के एक-एक दिनमें सहस्रों रुपये पर पानी फिर जाता है। क्या इन लोगों को राशन नहीं मिलता अथवा ये अपने घर भोजन करना बुरा समझते हैं?

सच बात तो यह है कि हम बनते हैं गाँधीवादी किन्तु गाँधीवाद की गंध तक हमारे पास नहीं फटकने पाती। आज हम तड़क भड़क और शान-शौकत में पश्चिमी देशों को मात देने की ओर डटे हुए हैं। आये दिन अधिकारियों की मोटरें बदलती हैं, कोठियों के ठाटबाट का तो कुछ कहना ही नहीं। प्रजा के गाढ़े पसीने की कमाई इस प्रकार निःसकोच पानी की तरह बहाई जा रही है। तभी तो अनेक बार विश्वास दिलाने पर भी जनता का विश्वास इन नेताओं पर से उठ गया है।

अब रही चुनाव की बात। आगामी चुनावों में हमें ऐसे ही लोगों को अपनी राय देनी चाहिए जिन पर हमें पूर्ण विश्वास हो। हमें इस बात के लिखने में तनक भी सकोच नहीं कि लक्ष्य-हीन, स्वार्थी और गुटबन्द लोग अपने अतिरिक्त किसी का भला नहीं कर सकते। अन्त में हम पढ़े-लिखे समझदार लोगों का ध्यान निराशावादी मनोवृत्ति के विरुद्ध आकर्षित करना चाहते हैं। कुछ लोग हर समय यही कहते रहते हैं—'ये सब चुनाव के दावपेच हैं' प्रभुता पाय काय मद नाहीं', जब कांग्रेस की कटु आलोचना करने वाले अधिकार पा जायगे तब ये भी ऐसे ही अन्याय करेंगे।' हमें ऐसी दूषित मनोवृत्ति से सदैव बचना चाहिए। इसका अर्थ तो यह हुआ कि हम सच्चे लोगों का भी विश्वास न करें। और भ्रष्ट लोगों को मनमानी करने दें। तो हमने अंग्रेजों को यहाँसे क्यों निकाला। ध्यान रहे, अन्यायी अन्यायी ही है, चाहे गोरा हो या काला। जिस राष्ट्र में विवेकहीन विश्वास की दूषित मनोवृत्ति घर कर जाती है वह दिन दिन अवनति के गर्त की ओर अग्रसर होता जाता है। अतः राष्ट्र की सच्ची सेवा इसी में है कि हम निडर हो देश सेवा-कार्यों में ऐसे ही लोगों को सहयोग प्रदान करें जिनका धर्मपूर्ण राजनीति में पूर्ण विश्वास हो और जिनके विचार संकीर्ण तथा गन्दे न हों।

हम राजनीति में भाग लें

डाक्टर रामकृपाल शर्मा

आजकल आर्यजगत में इस बात की चर्चा बहुत सुनी जाती है कि आर्य समाज को राजनीति में भाग लेना चाहिये अथवा इससे उसे अलग रहना चाहिये। इस सम्बन्ध के लेख तथा भाषण द्वारा ही कुछ सज्जन आर्य जनता तक अपने विचार पहुंचाकर पथ प्रदर्शन कर रहे हैं। दोनों ही प्रकार के विचार हमारे सम्मुख आते रहते हैं। एक समय के पश्चात् मैं यह अनुमान लगा सकता हूँ

संकेत बृहस्पति शब्द से है। इसलिये ऋषि ने राजार्य सभा पर बल दिया है। बिना दृढ़ राजार्य सभा के विद्यार्य सभा और धर्मार्य सभा सबल और सफल नहीं हो सकतीं। बृहस्पति अर्थात् शिक्षाशक्ति वा विद्या-विभाग कल्याणमय हो किन्तु आज देश के शिक्षक वर्ग विशेष कर शिशु शिक्षक वर्ग की दशा दयनीय है। जिस मानसिक और आर्थिक यन्त्रणा में वह पिस रहा है, उसके विषय में लेखनी लिख नहीं सकती?

पाँचवीं शक्ति है 'विष्णु' अर्थात् राजा जो अपनी इन उपर्युक्त व्यापक शक्तियों से "विष्णु" नाम से अभिहित होता है राष्ट्रपति विष्णु बिना इन शक्तियों के कुछ नहीं कर सकता। क्योंकि जब तक यातायात साधन प्रबल न हों, दूसरे राष्ट्रों से परस्पर मैत्री सम्बन्ध वा स्नेह न हो, यथा योग्य श्रेष्ठ चुनाव न हो, न्याय-शक्ति का सुन्दर समीचीन प्रबन्ध न हो, कोष, सैनिकशक्ति, सामर्थ्य और विद्या का सुन्दर सन्तुलन न हो, शिक्षा की उचित व्यवस्था के लिए रुपये न हों, अभिरुचि न हो तब तक क्या किया जा सकता है। अपनी इन सभी व्यापक और कल्याणकारिणी शक्तियों से जब राष्ट्रपति सम्पन्न होता है, तभी वह 'उरुक्रम' बलशाली बनता है। ईश्वर की प्रेरणा और उसकी वाणी के अनुसार चलने से ही 'उरुक्रम' बन सकेगा।

कि जितने लेख तथा भाषण आर्य पुरुषों के इस सम्बन्ध में होते हैं, इनमें अधिक संख्या ऐसों की होती है जो आयसमाज का राजनीति में भाग लेना अत्यन्त आवश्यक सिद्ध करते हैं। आर्यसमाज के बड़े-बड़े विद्वानों की ओर से राजनीति में भाग लेने का विरोध भी होता है। यदि वे आर्यसमाज में त्यागी और तपस्वी लोगों के अभाव वश तथा शिथिलता के कारण ऐसा करते हैं तो कुछ अंशों में एक समय तक के लिये उनकी बात मान्य है और वे आर्यसमाज को सदैव के लिये राजनीति में भाग लेने को मना करते है तो यह बात विचारणीय है। जो सज्जन राजनीति में भाग लेने का विरोध करते हैं उनकी ओर से भिन्न-भिन्न प्रकार की युक्तियाँ प्रस्तुत की जाती हैं। मैं आपके समक्ष कुछ उठाई गई आपत्तियां और उनके उत्तर संक्षेप में रखता हूँ और साथ ही पाठकों से यह भी प्रार्थना करता हू कि वे उन पर स्वय भी विचार करें।

१-आयसमाज यदि राजनीति के रंगमंच पर उतर आया तो वह आध्यात्मिकता की ओर से विमुख हो जायगा और अन्य राजनैतिक पार्टियों की सी इसकी दशा हो जायगी।

उत्तर-इसका अभिप्राय तो यह हुआ कि आर्यसमाज के राजनीति में भाग लेने से वे सब संस्थायें जो आजकल धर्म तथा विद्या प्रचार का कार्य कर रही है समाप्त हो जायगी। महर्षि दयानन्द की तीव्र दृष्टि में भी यह बात न आई कि ऐसा हो जायगा। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश में क्या बिना विचारे ही राजनीति का प्रकरण रख दिया? इसके साथ-साथ तीन आर्य सभाओं का होना अनिवार्य लिख दिया? मैं समझता हू कि जब तक आर्य सार्वदेशिक सभा द्वारा आर्य राज्य स्थापित नहीं होता तब तक आर्यसमाज अधूरा है इसके अभाव के कारण आर्य राष्ट्र का निर्माण करना असम्भव है।

२-धन तथा पद के लालच में फँसकर आर्य समाजियों का भी नैतिक पतन होगा।

उत्तर-जो आर्य हैं, उनका नैतिक पतन नहीं हो सकता। कांग्रेस आज अपने नैतिक पतन के कारण ही बदनाम है और अन्य पार्टियों की भी कोई गारन्टी नहीं क्योंकि उन्होने चरित्र तथा धर्म को अपने सिद्धान्तों का आधार नहीं माना है। इसलिये उनकी नैतिक उन्नति होनी ही कठिन है। आर्यसमाज धर्महीन राजनीति को कोई महत्व नहीं देता। जब आर्यसमाज का सदस्य बनने के लिये सदाचार का नियम रक्खा जाता है, और एक बीड़ी सिगरेट पीने वाले को भी बुरा समझा जा सकता है जब छोटा-सी ही अनुचित बात पर अंतरंग सभा में उंगली उठ सकती है तो भला नैतिक पतन वाले व्यक्ति को कैसे सहा जा सकता है, इसलिये नैतिक पतन की कोई सम्भावना नहीं है।

३-आर्यसमाज मन्दिरों की पवित्रता नष्ट हो जायगी और मन्दिर राजनीति के अखाड़े बन जायगे।

उत्तर-आर्यसमाज मंदिरों की पवित्रता तब तक नष्ट नहीं हो सकती जब तक वहाँ अधर्म का का कार्य होना आरम्भ न हो जाय। धर्मयुक्त राजनीति से तो मंदिरों की पवित्रता को और चार चाँद लग जायेंगे। इसका यह मतलब नहीं कि वहाँ हर वक्त राजनीति की ही बातें होंगी, सब कार्यों का समय नियत होगा। जिस प्रकार कुमार सभा और आर्यवीर दल का कार्य मंदिरों में सुचारु रूप से चलता है इसी प्रकार आर्यसमाज की हाई-कमान्ड अंतरंग सभा के अधीन राज्य-सभा का भी कार्य चलने में कोई आपत्ति नहीं आ सकती।

४-आर्यसमाजियों में राजनीति में पड़ने के कारण फूट पड़ने का डर है क्योंकि भिन्न-भिन्न पार्टियों को अपनाने के कारण वे एक दूसरे का विरोध करेंगे।

उत्तर-आर्यों में फूट पड़ने की कोई सम्भावना नहीं है, बल्कि एक शक्तिशाली संगठन होने की आशा है। क्योंकि आर्यसमाजी तो मजबूर होकर दूसरी राजनैतिक पार्टियों में घुसे हुए हैं। जो सच्चे आर्य हैं, वे आर्यसमाज के राजनीति में भाग लेने की घोषणा सुनते ही तुरन्त ही अन्य अन्य अपनाई हुई पार्टियों को तिलांजलि दे आयेंगे और जो किसी भी पार्टी के सदस्य नहीं है वे कहीं नहीं जायेंगे, क्योंकि वे आर्यसमाज से अच्छा प्रोग्राम किसी भी अन्य सस्था में नहीं पा सकते, जहाँ तक मैं समझता हूँ कोई भी आर्यसमाजी बिना स्वामीदयानन्द के सिद्धान्तों में विश्वास किये आर्य नहीं बना फिर वह महर्षि की राजनीति से ही कैसे विमुख हो सकता है। यदि कोई स्वार्थी अलग रहेगा तो वह आर्यसमाजी नहीं कहा जा सकता।

५-आर्यसमाज सारे विश्व के लिए है इसे एक देश के लिए अर्पण नहीं किया जा सकता।

उत्तर-यह बात तो सत्य है कि आर्यसमाज विश्व के लिए है, परन्तु जहाँ इसका जन्म हुआ है यदि वहाँ वह एक खिलौना बन कर रह जाय। अपना प्रोग्राम चलाने में केवल इस लिए विवश हो जाय कि राज्य सत्ता औरों के हाथों में है तो फिर उससे संसार का कल्याण करने की कैसे आशा की जा सकती है और विश्व में उसे बिना शक्ति के महत्व देने ही कौन लगा है।

६-आर्यसमाज के टिकट पर खड़े होने वाले सफल नहीं हो सकते सनातन धर्मी, सिख-जैन इत्यादि वोटरों को आर्यसमाजी उम्मेदवार के विरुद्ध भड़का सकते हैं।

उत्तर-यदि गहरी दृष्टि से देखा जाये तो आर्य के विरुद्ध कोई भी नहीं होता, अनार्य के सब विरोधी होते हैं। आर्यसमाजी उम्मेदवार के विरुद्ध अमुक अमुक को भड़कायेंगे तो फिर हमें भय भीत होकर घर में ही छिप जाना चाहिये। कांग्रेस के विरुद्ध भारत की बीसों पार्टियाँ होंगी परन्तु यही सम्भावना है कि कांग्रेस चुनाव जीतेगी। एक जलता चिराग लाखों बुझे हुए चिरागों को रोशन कर सकता है, परन्तु बुझे हुए लाखों चिराग एक चिराग को भी रोशन नहीं कर सकते।

७-एक खालिस मजहबी सस्था पंजाब के लेजिस्लेटिव ऐसम्बली के चुनाव में असफल रही। मुसलमान सफल होते हैं, मुसलिम लीग द्वारा सिख अकाली दल द्वारा।

उत्तर-यदि कोई मजहबी संस्था सफल न हो तो इसका यह तो मतलब नहीं कि आर्य समाज जैसी संस्था भी जो विश्वव्यापी वैदिक धर्म की अनुयायी है असफल हो जाय। आर्यसमाज कोई साम्प्रदायिक संस्था नहीं है, इसलिए इसकी सफलता अवश्यम्भावी है। मुझे बड़ा आश्चर्य होता है जब आर्यसमाजी नेता भी आर्यसमाज की तुलना एक साम्प्रदायिक संस्था से करने लगते हैं।

संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है। जो अपना ही उपकार नहीं कर सकता वह संसार का कैसे कर सकता है। आज कल सकट के समय में गन्दी तथा हानिकारक राजनीति को बदलना समय की पुकार है। यदि आर्यसमाज राजनीति से अलग रहा तो उसकी उन्नति तो दूर रही उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ जायेगा। सार्वदेशिक सभा को समस्त आर्यसमाजों की सम्मति लेकर एक निश्चित प्रोग्राम की घोषणा करनी चाहिये जिससे इस चुनाव में क्या अगले चुनाव में आर्य समाज कुछ चमत्कार दिखा सके। सब आर्यों को अभी से तैयारी करनी चाहिये।

मेरे कुछ सुझाव

आर्यसमाज में कहीं कहीं बिरादरीबाजी भी घुस पड़ी है, अपना बहुमत बनाने के लिये। इससे बड़ा अनर्थ हो रहा है। बिरादरी वालों को समाज से तो कोई हित होता नहीं वे तो वोट-दान देने आते हैं। यह प्रवृत्ति नष्ट होनी चाहिए। दैनिक सत्संग की प्रथा प्रचलित होने से समाज का बड़ा हित होगा। प्रत्येक जिले के आर्यसमाज अपनी जिला-सभा के अधीन रहें। जिला सभा ही प्रान्तीय सभा के सामने उत्तरदायी हो। प्रत्येक जिला सभा एक अच्छा उपदेशक और प्रचारक रख कर जिले के गाँवों में प्रचार करावे। प्रान्तीय प्रतिनिधि सभा कर्मठ और विद्वान् व्याख्याता रखे। ये व्याख्याता ही समाजों का निरीक्षण करें और अपने क्षेत्रों के उत्तरदायी हों। आर्य पुरोहित का सुझाव अति उत्तम है। पुरोहित को मासिक दक्षिणा मिलनी चाहिये। इस कार्य को गुरुकुलों के स्नातक

सिंहावलोकन

धर्म-विहीन राजनीति

श्री निरञ्जनदेवजी सौराष्ट्र

आज संपूर्ण जगत् का वायुमण्डल विक्षुब्ध हो चुका है। आगामी विश्वयुद्ध के नगाड़े बड़े जोरों से बज रहे हैं। ससार में एक भारी क्रान्तिमय परिवतन होने जा रहा है। हमारा स्वतत्र देश क्या इससे अछूता रह सकता है? विश्व के वर्तमान प्रश्नो में हमारी नीति चाह जैसी तटस्थ हो फिर भी भारत पर इसका किसी न किसी रूप में प्रभाव पड़ना अवश्यम्भावी है। हमारे देश में हजारो वर्षों में कितना उथल-पुथल हो गई। शताब्दियों की दासता भी हम लोगों ने सही। हमारी सस्कृति, हमारी सभ्यता और हमारी धार्मिक रीति नीति को कुचलने क लिये कितने ही विदेशी शासकों ने कोशिश की फिर भी आज हमारे देश का सास्कृतिक गौरव पूर्ववत् कायम है। हम देखते हैं कि प्राचीन ग्रीक, रोमन आदि सस्कृतियाँ आज लुप्तप्रायः हो चुकी हैं, लेकिन अपनी सस्कृति का गौरवमय अस्तित्व देख हम आश्चर्य से गा उठते हैं :

"क्या बात है जो हस्ती
मिटती नहीं हमारी,
सदियों रहा है दुश्मन
दौरे जहाँ हमारा।"

हाँ, तो इसका कारण स्पष्ट है कि हमारा आदश शुद्ध धर्म-प्रधान रहा है। हमारा देश आध्यात्मिकता की पवित्र भूमि मानी जाती है। हमारे धर्म और संस्कृति ने उसे पोषा है। इसी से तो विश्व की जिन्दा सस्कृतियों में हमारी गणना अग्रगण्य है।

लेकिन खेद है कि इस विषय में हमारी चालू राजनीति बहुत ही उपेक्षावृत्ति रख रही है। यदि हमारे देश की यही धम-निरपेक्ष राजनीति रही तो इसका नतीजा सामने है, जो अन्य देशों का हुआ। हमने तो अपने धर्म में कभी सकुचितता का अनुभव नही किया। यही कारण है कि यहाँ पर पारसी, ईसाइ, इस्लाम आदि अपना स्थान बना सके हैं। और इसी के फलस्वरूप यहाँ जैन, बौद्ध, चार्वाक आदि मत सप्रदाय फूले फले। इस विषय में अन्य देशों की नीतियाँ तो हम देख चुके हैं। हिटलर ने तो अपने देश में यहूदियो को साँस तक नहीं लेने दिया था। इतनी उदारता और क्षमता तो केवल जगद्गुरु भारत में ही है।

यदि हम धर्म-विषय में थोड़ा गहन मनन करें तो मालूम पड़ेगा कि धर्म तो मानवीय जीवन का प्राण स्रोत है। रुचि अनुसार धर्म शब्द की व्याख्या कई तरह की होती रही है। किन्तु धम जिज्ञासा सर्वव्यापक है। धर्म-भावना मनुष्य के स्वभाव गत होने से सब में ओत प्रोत है। अतएव इसको किसी हालत में भी नष्ट नहीं कर सकते। धर्म शब्द का अर्थ कई बार पारलौकिक सुख विषयक किया जाता है। लेकिन यदि हम अपने प्राचीन धार्मिक साहित्य का अध्ययन करें तो हमें मालूम होगा कि धर्म शब्द सकुचित अर्थ बोधक नहीं, बल्कि जिससे जनसमुदाय को 'निःश्रेयस्' और 'अभ्युदय' की प्राप्ति हो यही धर्म का असली तात्पर्य है। धर्म शब्द का धातु अर्थ धृ-धारण (धारण करना) अर्थात् जिन नियमो से समाज वा राष्ट्र का धारण हो वही धर्म है। स्मृतिकार मनु ने तो बतलाया है—

वेद स्मृतिः सदाचारः
स्वस्य च प्रियमात्मनः
एतच्चतुर्विध प्राहुः
साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्

"वेद, स्मृति, सत्पुरुषों का आचार और जैसा दूसरो से हम चाहते हैं, वैसा प्रिय व्यवहार मानव मात्र से करे ये चार धर्म के लक्षण अर्थात् इन्हीं से धर्म लक्षित होता है।' महाभारतकार ने तो उपर्युक्त धर्म की चौथी बात पर ही बल देकर बताया है—

श्रूयता धर्म सर्वस्व
श्रुत्वा चैवावधार्यताम्
आत्मन प्रतिकूलानि
परेषां न समाचरेत्

अर्थात् धर्म के सार सवस्व को ध्यान से सुनो और सुन कर उसका यथावत् पालन करो। जो बताता है, अपने से प्रतिकूल व्यवहार दूसरों से न करें। क्या हमारे मन्त्रद्रष्टा ऋषि-मुनियों द्वारा अभिलक्षित धर्म में कोई संकुचितता है? और धर्म के इस विशाल भाव का उद्बोधन जिस धम मे हो उसका प्रसार अनुचित है? धर्म के इसी भाव को अन्य धर्मों में स्वीकृत माना गया है। क्राईस्ट ने तो स्पष्ट कहा है "Do unto other as you would, other snould do unto you." यही तो यह भावना है, जिसे स्मृतिकार और महाभारतकार ने बताया है। उस समय की राज्यस्थिति में क्राईस्ट ने कितनी महान् क्रान्ति करनी चाही थी क्राइस्ट ने अपने अनुयायियों को समझाया था कि अपनी तलवार को म्यान में रखो और कहा Love your enemy अर्थात् अपने दुश्मन से भी प्रेम करो। क्या इसी तत्व का दर्शन अहिंसा रूप में हम हिन्दू धर्म में नहीं पाते? हमारे देश के महापुरुष दयानन्द, गांधी, अरविन्द आदि इसी धमतत्व के चिराग बन कर जिये, जिन्होंने मानव-सस्कृति को अनुप्राणित किया। धर्म शुष्कता तो राष्ट्र का खोखलापन है। देश की स्थिति और काल-अनुसार धर्म-तत्व का व्याख्यान कई तरह से किया जाता है। उन्नीसवीं सदी के महान् सुधारक ऋषि दयानन्द ने हमारे देश में बड़ी भारी धार्मिक क्रान्ति पैदा की। उन्होंने एक आदर्श मन्त्र दिया जिससे देश को नया जीवन मिला। वह मन्त्र है धर्म अर्थात् स्वाधीनता, अधर्म अर्थात् पराधीनता। इसका प्रयोजन यह है कि धर्मवान् हरएक व्यक्ति को स्वाधीनता की सिद्धि करनी चाहिए और अधर्म से दूर भागने वाले हर मनुष्य को पराधीनता का चिह्न भी मिटा देना चाहिए। ऋषि दयानन्द ने उसमें ऐसा भाव पैदा किया कि आज का मनुष्य भी युग धर्म का पालन कर सके। बड़े बड़े त्याग और बलिदानों के बदल पायी आजादी को कायम रखने के लिये और इस 'स्वराज्य' को 'सुराज्य' बनाने के लिये धर्म की स्थापना हमें करनी होगी, और इसके लिये पहले प्रजा देह की शुद्धि की आवश्यकता है। पुरानी रूढ़ियों और वहमों से पीड़ित प्रजा-देह को रोग-मुक्त करना होगा। आज धार्मिक रीति-रिवाजो के पालने में प्रजा पथ भ्रष्ट है। आज की धर्म-प्राण प्रजा में असली धर्म और पुरुषार्थ अस्त हो चुका है। इस तरह से सामाजिक रोगो से निर्बल शरीरों को लेकर प्रजा कौनसी लड़ाई लड़ सकेगी? अतएव हमारी सरकार का कर्त्तव्य तो समाज में प्रचलित अन्धविश्वासों और साम्प्रदायिक रूढ़ियों को नष्ट कर, धम का शुद्ध रूप देश में प्रचार करना है। तभी हमारा देश उन्नति-पथ पर अग्रसर होगा। पर, जब समाज का अन्तरात्मा जल रहा हो, तब क्या हो सकता है? अतएव धर्म-भावना का सस्करण कर उसको नये रूप में स्थापित करना यही देश के लिये श्रेयस्कर है। प्रजा-शरीर में नया खून, नयी जिजीविषा और नया मनुष्यत्व धर्म के प्रचार से आ सकता है।

यदि हम देश के इतिहास के पिछले पन्ने पलट कर देखे तो जान सकेंगे कि आदर्श राज्यकर्ताओं को महान् पुरुषों द्वारा बार-बार धर्म मार्ग बताया जाता था। महान् राज्यों ने धर्म-संस्थापित कानूनों द्वारा ही अपना गौरव बढ़ाया था। हम देखते हैं कि राम को वशिष्ठ ने, युधिष्ठिर को भीष्म और विदुर ने, चन्द्रगुप्त को चाणक्य ने, अशोक को महान् बौद्ध गुरु ने और शिवाजी

[शेष पृष्ठ १३ पर]

करें। समाजों के अधीन सस्थाएँ एक सूत्र में बँधी हो और सबका सम्बन्ध प्रान्तीय आर्य-प्रतिनिधि सभा से होना चाहिए। समाजो के अन्तरग-सदस्यो को आर्य-सिद्धान्तों का ज्ञान होना चाहिये, वे सन्ध्या-अग्निहोत्र करते हों, उन्हें सस्कार कराने आते हो। जो इन बातो को न जानते हो, उन्हें अन्तरग सदस्य या अधिकारी न बनाया जाय। बिरादरी बाजी और दलबन्दी दूर करने के लिये पूरा प्रयत्न किया जाय। जो इस प्रपच में लिप्त हो, उन पर अनुशासन की कार्यवाही की जाय।

नाथूलाल मुनीम

जीवन-ज्योति

'शङ्करजी' और 'ठाकुर साहब'

महाकवि शङ्कर ने १३ वर्ष की आयु में महर्षि दयानन्द के दर्शन किए और उसी समय वे उनके भक्त बन गये। जब शङ्करजी कानपुर में नहर के महकमे में सब ओवरसियर थे, तब उन्होंने वहाँ ऋषि के लगातार कई भाषण सुने और वे उनके अनन्य अनुगामी होकर कानपुर आर्यसमाज के सदस्य बन गये। कानपुर में शङ्करजी ने ७ वर्ष ६ मास नौकरी की और वहां श्री प० देवदत्त शास्त्री से संस्कृत का अध्ययन भी किया। अपने कई अंग्रेज अफसरों को हिन्दी पढ़ाई। एक अफसर से स्वाभिमान के प्रश्न पर कुछ खटक गयी, अतएव आपने अपनी सरकारी नौकरी से त्याग पत्र दे दिया।

नौकरी छोड़कर शङ्करजी अपनी जन्मभूमि हरदुआगंज में आगए और दो वर्ष की तयारी के बाद चिकित्सा-कार्य प्रारम्भ कर दिया। आर्यसमाज का प्रचार भी बड़े उत्साह से करने लगे। सबसे प्रथम बरौठा के श्री ठाकुर उमरावसिंहजी (प्रज्ञाचक्षु) शङ्करजी के उपदेश से प्रभावित होकर आर्यसमाजी बने। ठाकुर साहब 'साठ' के (चौहानों के साठ गाँव) नेता थे, उनका इन गाँवों में बहुत बड़ा असर था। अतएव साठ' में आर्यसमाज का प्रभाव विद्युत वेग से फैल गया और सब ग्रामों का केन्द्रीय समाज 'आर्यसमाज बरौठा" के नाम से स्थापित हुआ। शङ्करजी इस समाज के संस्थापक थे। होली दिवाली के उत्सवों पर 'साठ' के क्षत्रियों की बरौठा समाज में भीड़ लग जाती थी और बहुत बड़ा उत्साह तथा प्रभाव दिखाई देता था, साप्ताहिक अधिवेशन भी खूब सफल होते थे।



महाकवि शङ्कर

शङ्करजी ही उपदेशक और पुरोहित भी थे। यह बात साठ वर्ष पूर्व की होगी। ठा० उमरावसिंहजी आर्यसमाजी होते ही कुछ दिन बाद ओरंगाबाद के स्वर्गीय श्री ठा० खमानसिंहजी भी आर्य समाज के सदस्य बन गये। बात यह हुई कि ठा० खमानसिंहजी को पन्द्रह वर्ष की आयु में 'आर्याभिविनय' पढ़ने को मिला उसमें वे ऋषि दयानन्द के भक्त बन गए और पढ़ जब मालूम हुआ कि बरौठा में शङ्करजी तथा ठा० उमरावसिंहजी ने आर्य समाज स्थापित किया है, तो वे उसमें सम्मिलित हो गये। ठाकुर साहब भक्त टाइप के पौराणिक थे, मांस-मदिरा के दुर्व्यसन से कतई दूर। आर्यसमाजी होकर ये नित्य सन्ध्या हवन और स्वाध्याय करते थे। भाषण देने और लेख लिखने का भी अच्छा अभ्यास कर लिया था। ठा० उमरावसिंह बरौठा आर्यसमाज के प्रधान और ठा० खमानसिंहजी मन्त्री चुने गए। शङ्करजी साथ थे ही। तीनों के उद्योग से जिले भर में आर्य समाज की धूम मच गई। छलेसर के श्री ठा० मुकुन्दसिंहजी का भी प्रशंसनीय सहयोग प्राप्त होगया। अभिप्राय यह कि अलीगढ जिले में आर्यसमाज की प्रारम्भिक प्रगति का सारा श्रेय उपयुक्त तीन-चार सज्जनों को ही है।

ठा० खमानसिंहजी जिले और जिले से बाहर घूम घूम कर आर्यसमाज का प्रचार करते रहे, और शङ्करजी की शक्तियाँ कविता की ओर केन्द्रित होगया अतः वे साहित्य रचना द्वारा ही आर्यसमाज की सेवा में संलग्न हो गए। शङ्करजी स्थानीय आर्य समाज में बिना नागा जाते और व्याख्यान देते थे। हरदुआगंज में भी समाज स्थापित हो गया। श्री ठाकुर उमरावसिंहजी का देहान्त होने पर सारा उत्तरदायित्व ठा० खमानसिंहजी पर आ पड़ा इसके बाद तो और भी अनेक सच्चे और पक्के आर्यसेवक तैयार हो गए। बरौठा आर्यसमाज के द्वारा कितने ही सफल वार्षिकोत्सव और कितने ही शास्त्रार्थ हुए। धर्मवीर प० लेखरामजी भी वहां पधारे और भी बडे बडे नेताओं ने उस भूमि को पवित्र किया। वीतराग पूज्य श्री स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज को साधुआश्रम की स्थापना में बरौठा आर्यसमाज और ठा० खमानसिंहजी ने यथाशक्ति अच्छा सहयोग दिया। शुद्धि आन्दोलन में तो ठाकुर साहब ने क्रियात्मक भाग लिया। उस समय जबकि लोग शुद्धि के नाम से डरते थे।

महाकवि शङ्कर ने अपनी कविता द्वारा आर्यसमाज का खूब प्रचार किया। वे एक क्षण को भी अपने इस पवित्र मिशन को न भूलते थे। आचार्य श्री प० महावीरप्रसाद द्विवेदी के सम्पादन काल में सरस्वती में शङ्करजी की जितनी कविताएं निकलीं प्राय सब ही आर्य, समाज के रंग में रंगी हुई थी कुछ सम्पादक लोग आर्यसमाजी भावों से चिढ़ते थे परन्तु शङ्करजी की सुन्दर सरस और शुद्ध कविताओं का मोह उन्हें उन भावों को प्रकाशित करने के लिए मजबूर कर देता था। शङ्करजी के सामने बड़े बड़े प्रलोभन आए कि यदि वे अपनी कविता की धारा बदल दें तो उन्हें प्रचुर मात्रा में धनराशि प्राप्त हो सकती है। प्रलोभन देने वाले कितने ही तो नरेश भी थे, परन्तु शङ्करजी ने किसी प्रलोभन



ठाकुर खमानसिंहजी

वश अपने सिद्धान्तों को शिथिल करना पाप समझा। वे अन्तिम श्वास तक आर्यसमाजी रहे और आर्य होने के कारण जहाँ वे बिरादरी से वर्षों बहिष्कृत रहे, वहाँ उन्होंने असह्य आर्थिक हानियाँ भी सहीं।

शङ्करजी अन्तिम समय तक यही कहते रहे—"मेरे तुच्छ जीवन की दो महत्वपूर्ण घटनाएँ हैं, मैंने महर्षि दयानन्द के दर्शन किये हैं और मैं कुछ तुकबन्दी कर लेता हूँ।" देहान्त से बीस मिनट पूर्व शङ्करजी ने अपने पुत्र श्री हरिशङ्कर शर्मा से यही कहा था—"बेटा, जिस प्रकार सम्भव हो, आर्यसमाज की सेवा करना, उससे कभी विरत न होना।"

इसी प्रकार ठा० खमानसिंहजी भी अपने अन्तिम श्वास तक आर्यसमाज की सेवा करते रहे। वे आर्यसमाज के लिए ही जिये और आर्यसमाज के लिये ही मरे। प्रान्तीय आर्यप्रतिनिधि सभा के वर्षों अन्तरंग-सदस्य और उप-प्रधान रहे। ठा० खमानसिंहजी अपने पुत्र डाक्टर महावीरसिंह एम० बी०, बी० एस०, सिविल सर्जन के रूप में आर्यसमाज के लिए एक विभूति छोड़ गए हैं। डाक्टर साहब जैसे सुयोग्य कर्मवीर और धर्मवीर बहुत कम होते हैं। आप लश्कर में रहकर वर्षों से आर्यसमाज तथा वैदिक धर्म की बहुमूल्य सेवाएं कर रहे हैं। आपकी सच्चरित्रता का बड़ा व्यापक प्रभाव है, आप सचमुच एक आदर्श आर्य हैं।

अभिप्राय यह कि श्री प० नाथूरामशङ्कर शर्मा और श्री ठा० खमानसिंहजी दोनों मित्रों का संगठन और सम्मिलन ऐसा सुन्दर, सुदृढ़ स्नेहपूर्ण और सच्चा था कि वह आर्यसमाज की दिशा में बड़ा ही प्रशंसनीय और ठोस काम कर गया। दोनों मित्रों में कार्यनीति पर कभी-कभी मतभेद भी हुआ, परन्तु वह द्वेष या वेमनस्य में कभी परिणत नहीं हुआ स्नेह और सद्भाव ज्यों का त्यों बना रहा। शङ्करजी की बीमारी में ठाकुर साहब प्रायः नित्य उन्हें देखने आते थे, और दोनों ही प्रचार सम्बन्धी अपनी पुरानी बात याद कर करके तथा आर्यसमाज की वर्त्तमान अधोगति देख-देखकर आँसू बहाया करते थे। शङ्करजी के कुछ वर्ष बाद ही ठाकुर साहब भी चल बसे, और इस प्रकार ऋषि कालीन दो सच्चे आर्य मिशनरियों का जीवन अध्याय समाप्त हो गया। परमात्मा उनकी आत्माओं को शान्ति प्रदान करे।

आर्यजगत

—अलीगढ़ आर्यसमाज ने दैनिक सत्संग व्यवस्था और हवन कार्य प्रारम्भ कर दिया है।

—१३ जुलाई ५१ को उझानी (बदायूँ) नगर पालिका के एक्जीक्यूटिव आफिसर श्री जौहरीलाल गर्ग बी० ए०, एल-एल बी० की भानजी श्रीमती तारादेवी का पुनर्विवाह गज डुंडवारा निवासी ला० रामप्रकाश गोयल विधुर के साथ सम्पन्न हुआ। संस्कार प० बिहारीलाल शास्त्री ने कराया। नगर के सभी प्रतिष्ठित स्त्री पुरुष इस विवाह में सम्मिलित हुए थे। सब ने वर वधू को आशीर्वाद दिया। तीन सनातनी पण्डित भी सम्मिलित थे। वर पक्ष की ओर से २५) दान में दिये। संस्कार के पश्चात् 'विधवा-विवाह' पर व्याख्यान-वाचस्पति श्री प० बिहारीलाल शास्त्री का भाषण हुआ।

—आर्य प्रतिनिधि सभा के भजनोपदेशक प० मानसिंहजी ने कायम गज मण्डई में १५ तथा १६ जुलाई को प्रचार किया। साप्ताहिक सत्संग नियमपूर्वक होते हैं।

—१४ जुलाई को आर्यसमाज डोईवाला में प्रचार हुआ आचार्य बृहस्पति शास्त्री एम० ए० और प० रुद्रदत्त शास्त्री के भाषण हुए। १५ जुलाई को प० अमरनाथजी वैद्यशास्त्री का साप्ताहिक अधिवेशन में प्रवचन हुआ। यह आर्यसमाज शिथिल है, इसकी उन्नति के लिये वार्तालाप हुआ। श्री प० बृहस्पतिजी शास्त्री ने समाज का निरीक्षण कर आवश्यक आदेश तथा सुझाव दिये।

—मर्बोद (देहरादून) में म० हरीसिंहजी ने अपने नवनिर्मित भवन के उपलक्ष में १५ जुलाई को हवन, भजन तथा व्याख्यान कराये। प० अमरनाथजी वैद्यशास्त्री और प० रुद्रदत्त शास्त्री के व्याख्यान और म० सुखपाल-के भजन हुए। म० ईश्वरचन्द्रजी ने वैदिक सत्यनारायण की कथा सुनाई। गाँववासी हरिजन भाइयों के साथ बैठकर सबने आनन्द पूर्वक भोजन किया। इस गाँव में हरिजन भाइयों को जल का बड़ा कष्ट है। जिसके दूर करने का उद्योग किया जा रहा है।

—हसेरन (फर्रुखाबाद) में ८ जुलाई को ला० मुन्नालालजी की पुत्री कालिन्द्री देवी का पाणिग्रहण संस्कार कुसुमरा (मैनपुरी) निवासी श्री कृष्णचन्द्र गुप्त के साथ हुआ। १४ जुलाई को आर्यसमाज कैरावली (मैनपुरी) में मुखिया चिन्तामणिजी की पुत्री रेशमदेवी का पाणिग्रहण संस्कार मुहल्ला (आगरा) निवासी श्री गया-प्रसादजी गुप्त के साथ हुआ। उपर्युक्त दोनों संस्कार प० राम-चन्द्रजी उपदेशक द्वारा सम्पन्न हुए। ११) विविध संस्थाओं को दान में मिले।

आर्यसमाज आर्यनगर (भूड़) बरेली का ४६ वाँ वार्षिकोत्सव ६, ७, ८ तथा ९ जुलाई ५१ को समारोह पूर्वक मनाया गया। ६ जुलाई को शानदार नगर-कीर्तन जुलूस निकाला। सर्व श्री स्वा० ब्रह्मानन्दजी दण्डी स्वा० विशुद्धानन्दजी, प० बिहारीलाल शास्त्री, कु० सुखलालजी, प० जगन्नाथजी प० धर्मराजजी, स्वा० सत्यानन्दजी, श्री जगदीश कविजी के भाषण तथा भजन हुए। संस्कृति-सम्मेलन प्रभावशाली हुआ। संस्कृत पाठशाला के छात्रों को श्री जगदीशशरण वकील चेयरमैन चुंगी ने पारितोषिक दिये। कन्या महाविद्यालय की कन्याओं को सेठ मोहनलाल पोद्दार ने पारितोषिक वितरण किया और १०१) दान देने का वचन दिया।

—गजाधरपुर (बस्ती) आ० स० के उपमन्त्री प० पृथिवीपति त्रिपाठी श्री पुत्री के विवाहावसर पर पधारे हुए प० भगवान दत्त शर्मा प्रचारक सभा ने १६, २० तथा २१ जून को स्थानीय आर्यसमाज में सफलता पूर्वक प्रचार किया। वर की ओर से ३५) दान दिया गया। प्रचार का प्रभाव बड़ा अच्छा था।

सार-सूचनाएँ

—गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी की मुख्य शाखा गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ का ग्रीष्मकालीन सत्र २४ जुलाई मंगलवार को समाप्त होकर नया सत्र प्रारम्भ हो जायगा। नये बालकों का प्रवेश प्रारम्भ है। यह संस्था दिल्ली के समीप अत्यन्त स्वास्थ्यप्रद रमणीक पहाड़ी पर स्थित है। —आचार्य

—आर्यसमाज कायमगंज से श्री ओमप्रकाश जी आर्यवीर-दल शिक्षण-शिविर देहरादून गए। वहाँ सार्वदेशिक सभा की ओर से उन्हें प्रमाण पत्र दिया गया।

—श्री बालदिवाकर हंस और आचार्य कृष्णजी ने जानी (मेरठ) में भारतीय लोकसंघ की स्थापना की।

—आगामी श्रावण शुक्ला ७ ता० ९ अगस्त को सारे देश में अमर महाकवि गोस्वामी श्री तुलसीदास-जी की जयन्ती मनानी चाहिए। इस कार्य के लिए एक विशेष कार्य-क्रम बनाया जाय।

—रामनाथ सुमन

—श्री प्रेमसुख संगीताचार्य तथा श्री प० सुरेन्द्र शर्मा काव्यतीर्थ महोपदेशक को प्रचारार्थ बुलाने वाले सज्जन और समाज आर्य-समाज शाहदरा देहली के मारफत पत्र व्यवहार करें।

श्री स्वामी अमृतानन्दजी संरक्षक के पते की आवश्यकता है। वासुदेव आर्य, आर्यसमाज रानी की सराय, आजमगढ़।

—आ० स० गोविन्द नगर कानपुर 'शाहना शरीयत' नामक पत्र द्वारा महर्षि दयानन्द, वेद शास्त्र तथा हिन्दू महापुरुषों के विरुद्ध लिखे निन्दा सूचक लेखों को घोर घृणा की दृष्टि से देखता है। तथा सरकार से प्रार्थी है कि वह इसके सम्पादक पर शीघ्र ही मुकदमा चलावे।

—जुलाई के अन्तिम सप्ताह में जयपुर से 'राष्ट्रदूत' नामक दैनिक पत्र श्रीसुमनेशजी जोशी के सम्पादन में प्रकाशित होगा।

मैनेजर

उत्सव-सूचनाएँ

—आ० स० नजीबाबाद का वार्षिकोत्सव २८, २६ तथा ३० सितम्बर को मनाया जायगा।

निर्वाचन

—आर्यसमाज सुलतानपुर-प्रधान -प० देवकलीदीन शर्मा अध्यक्ष जिला बोर्ड और मन्त्री-म० श्री बेचूसिंहजी।

—आ० कु० सभा सरायतरीन-ह्यात नगर (मुरादाबाद)—प्रधान श्री केशवदेवजी और मन्त्री-श्री विद्याधर आर्य।

'शाहना शरीयत' की शरारत

विदित हुआ है कि बम्बई सरकार ने उत्तरप्रदेश सरकार को एक पत्र लिखकर उसका ध्यान इस राज्य के कुछ उर्दू पत्रों द्वारा किये जाने वाले साम्प्रदायिक प्रचार की ओर आकर्षित किया है। बम्बई सरकार ने कानपुर के मासिक 'शाहना शरीयत' तथा कुछ अन्य उर्दू पत्रों के उद्धरणों का जिन्हें नेशनल प्रेस ने विगत जून के प्रथम सप्ताह में प्रचारित किया था, उल्लेख करते हुए उत्तरप्रदेश सरकार से आग्रह किया है कि इस प्रकार के कुत्सित प्रकाशनों को तुरन्त नियन्त्रित किया जाय।

यह स्मरणीय है कि उपरोक्त पत्र ने अपने जनवरी से अप्रेल तक के अङ्कों में हिन्दू समाज तथा उनके देवी-देवताओं के सम्बन्ध में अनेक अश्लील बात लिखी थी, वेदों तथा अन्य धर्म-ग्रन्थों के बारे में भी अनेक घृणित बातें लिखी थीं भगवान् कृष्ण तथा भगवती दुर्गा पर अनेक गन्दे आरोप लगाये थे। बम्बई सरकार का मत है कि इस प्रकार के प्रकाशनों का प्रभाव न केवल उत्तर प्रदेश बल्कि बाहर के लोगों पर भी पड़ सकता है और इसके परिणाम भयङ्कर हो सकते हैं।

नेशनल प्रेस के प्रतिनिधि को इस सम्बन्ध में इस राज्य के विधान-विभाग सर्वोच्चाधिकारियों से ज्ञात हुआ है कि इस प्रकार के प्रकाशनों की रोक-थाम के लिए वे सजग हैं, किन्तु संविधान में प्रदत्त अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्य के कारण वे इस प्रकार के पत्रों के विरुद्ध कोई भी कार्यवाही कर सकने में असमर्थ थे, परन्तु अब संविधान के अनुच्छेद १६।२ में समुचित संशोधन होजाने के कारण ऐसे प्रकाशनों पर अंकुश लगाना सम्भव हो सकेगा। इसी संवाददाता का यह भी कहना है कि यहाँ के राजनीतिक क्षेत्रों के अनुसार इस राज्य के कुछ मुस्लिम सचालित उर्दू पत्र जानबूझ कर इस ढंग का उत्तेजित साहित्य प्रकाशित कर रहे हैं, जिससे यहाँ साम्प्रदायिक वैमनस्य फैले और उससे पाकिस्तानी मन्सूबों की पूर्ति में सहायता मिले। कुछ भी हो, ये पत्र अपनी गन्दी भाषा में अब भी इसी प्रकार का कुत्सित साहित्य छाप रहे हैं। 'शाहना शरीयत' के मई के अङ्क में ही आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती के सम्बन्ध में भी एक ऐसा ही लेख प्रकाशित हुआ है, जिसके उद्धरण छाप सकना तो किसी शिष्ट पत्र के लिये सम्भव नहीं है और वेदों, स्मृतियों, शास्त्रों आदि को पागलखाने की बकवास कहा गया है। `` नै० प्रे०।

"बस" प्रचार-योजना

आर्यसमाजें ध्यान दें

वर्तमान आन्दोलन युग में प्रत्येक संस्था की उन्नति व प्रगति के लिए वर्तमान वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग आवश्यक हो गया है। इन वैज्ञानिक उपकरणों में यद्यपि प्रारम्भ में पर्याप्त व्यय हो जाता है, तथापि परिणाम में उसका प्रभाव अत्यन्त व्यापक तथा किये गए व्यय की अपेक्षा सुलभ और सस्ता प्रमाणित होता है। आर्यप्रतिनिधि सभा ने इन्हीं सब बातों को ध्यान में रख कर ग्रामों और शहरों में मोटर बस द्वारा प्रचार की योजना का सचालन किया है। श्री बा० पीतमलाल एडवोकेट अलीगढ़ इस योजना को प्रगति दे रहे हैं, परन्तु अभी इस कार्य में ऐसी सफलता प्राप्त नहीं हुई है कि इस कार्य को प्रारम्भ किया जा सके। मुरादाबाद आर्यसमाज के गत वर्ष के वार्षिकोत्सव पर एतदर्थ जो योजना बनाई गई थी, उसमें आनुमानिक १५ सहस्र रुपया प्रारम्भिक व्यय आंका गया था। आर्य पुरुषों से निवेदन है कि वे इस कार्य की महत्ता को अनुभव करें और धन एकत्रित कर कोषाध्यक्ष आर्य्य प्रतिनिधि सभा, ५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ के पास भेजदें।

मदनमोहन सेठ, प्रधान
आर्यप्रतिनिधि सभा
उत्तर प्रदेश लखनऊ

शुभ विवाह

१ जुलाई को डी० ए० वी० कालेज लखनऊ के विशाल भवन में कालेज के प्रिंसिपल श्री महेन्द्र-प्रताप शास्त्री की सुपुत्री सुवीरा कुमारी एम० ए० का पाणिग्रहण-संस्कार श्री रामपालसिंह एम० ए० वायस प्रिंसिपल लखावटी कालेज के सुपुत्र श्री डा० तेजपालसिंह एम० ए०, पी-एच० डी० (अमेरिका) के साथ राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री, प्रधान सार्वदेशिक सभा द्वारा सम्पन्न हुआ। श्री प० रामदत्तजी शुक्ल एम० ए०, श्री मदनमोहन सेठ प्रधान आ० प्र० नि० सभा उत्तर प्रदेश, प० हरिदत्त शास्त्री नवतीर्थ एम० ए०, डा० नरेन्द्रदेव शास्त्री आगरा, प० वाचस्पतिजी शास्त्री एवं माननीय श्री चन्द्रभानु गुप्त मन्त्री खाद्य एवं पूर्ति विभाग, श्रीमती मालवीयजी, श्रीमती खेर, चौ० हरपालसिंहजी कमिश्नर लखनऊ, चौ० रामसिंहजी तथा अन्य अनेकों सम्भ्रान्त नागरिकों ने संस्कार के अवसर पर उपस्थित होकर वरवधू को आशीर्वाद दिये। संस्कार के उपरान्त कन्या के पिता श्री महेन्द्रप्रताप शास्त्री ने करुणकण्ठ से कन्या को भावी जीवन के लिये जो उपदेश दिया वह अपने ढंग का निराला एवं अनुकरणीय चीज थी। दाम्पत्य जीवन के प्रथम चरण में उत्तरदायित्व का बोध कराने वाले इस प्रकार अभिभावकों द्वारा सावजनिक पथ प्रदर्शन की परम्परा हमारे समाज के लिये लाभदायक सिद्ध होगी। इस शुभ अवसर पर वर वधू उभय पक्ष की ओर से दो सौ रुपया सार्वजनिक संस्थाओं को दान देने की घोषणा की गई।

वैदिक विवाह

आर्यसमाज तथा कॉंग्रेस के कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री बनारसीलालजी आर्य नजीबाबाद के सुपुत्र श्री वीरेन्द्रकुमारजी आर्य का शुभ विवाह आर्य मिशनरी श्री प० शिवचन्द्रजी बी० ए० की आयुष्मती कन्या सरोजकुमारी के साथ वैदिक रीति से बिड़ला-मन्दिर दिल्ली में १५ जौलाई को सम्पन्न हुआ। संस्कार के समय श्री जुगलकिशोरजी बिड़ला, श्री देशबन्धुजी गुप्त, संसद-सदस्य, श्री डा० युद्धवीर सिंहजी, अध्यक्ष दिल्ली म्यूनिस्पल कमेटी, श्री बाबा मिचखासिंहजी, श्री ओम्प्रकाशजी पुरुषार्थी, प्रधान सेनापति आर्यवीर दल, श्री महाशय कृष्णजी बी० ए० मालिक "प्रताप", श्री रामगोपालजी विद्यालंकार सम्पादक 'वीर अर्जुन', श्री राम सिंहजी सम्पादक 'थाट', श्री जैनेन्द्रकुमारजी पत्रकार, श्री कालीचरणजी स्वागतमन्त्री आर्य महासम्मेलन, श्री प० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति, श्री प० रामचन्द्रजी जिज्ञासु, प० चन्द्रभानुजी तथा दिल्ली के आर्यसमाजों तथा आर्य संस्थाओं के अधिकारी प्रभृति महानुभाव उपस्थित थे।

संस्कार की समाप्ति पर श्री मदनमोहन सेठ प्रधान उत्तर-प्रदेशीय आयप्रतिनिधि सभा, श्री प० रामदत्त शुक्ल एडवोकेट, राजर्षि श्री पुरुषोत्तमदास टंडन, प्रधान अ० भा० कॉंग्रेस, श्री कैलाशनाथजी काटजू, राज्यपाल बंगाल, माननीय श्री० महावीर त्यागी, राज्य वित्तमन्त्री (केन्द्र), श्री श्यामाप्रसाद मुकर्जी, जी० वी० जी० देशपाण्डे, श्री गुरु गोलवालकरजी, श्री० प्रो० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति संसद-सदस्य प्रभृति नेताओं के प्राप्त आशीर्वाद श्री० ईश्वरदयालुजी आर्य कार्यकर्त्ता प्रधान भारतवर्षीय आयकुमार परिषद् ने पढ़कर सुनाये। अन्त में श्री प० शिवचन्द्रजी ने नवदम्पती को अत्यन्त मार्मिक शब्दों में उपदेश दिया।

[दसवें पृष्ठ का शेष]

को गुरु रामदास ने धर्म-मार्ग से च्युत होते ही, उसी का उपदेश और मार्ग दर्शन दिया जिसका यशोगान आज भी हम करते हैं। बिना धर्म के राजनीति निरी अपंगु है। आज यदि हमें अपना गौरवमय स्थान संसार में पुनः स्थापित करना है तो, हमें भूलना नहीं चाहिए कि वह शक्ति हमारे ही धर्म में मौजूद है। इसी से हमारी संस्कृति और सभ्यता जीवित है।

राजस्थान-आर्यसम्मेलन

जैसा कि "आर्य मार्तण्ड अजमेर" के १५-७-५७ के अंक से विदित होगा जयपुर में १ सितम्बर से ४ सितम्बर १९५१ तक राजस्थान-आर्यसम्मेलन होने वाला है। आर्य्यमित्र के १२-७-५१ के अंक में श्रीसम्पादकजी ने इसकी सूचना देते हुए एक टिप्पणी दी है कि जिस अवस्था में ८ मास पीछे मेरठ में अखिल भारतीय आर्य्य सम्मेलन होना पहले से निश्चित हो चुका था तो राजस्थान में प्रान्तीय आर्य सम्मेलन करने का क्या आवश्यकता था। वास्तव में श्री सम्पादकजी का नोट कुछ अंश में युक्त ही है। (१) लगभग २ वर्ष से मैं अपने स्वास्थ्य की हीनदशा के कारण उदयपुर छोड़कर जयपुर में (अपने पुत्र डा० प्रकाश स्वरूप रस्तोगी के साथ) रहने लगा हूं। इसलिये इस विषय पर लिखना आवश्यक समझता हूं। मेरा निवासस्थान आर्यसमाज मन्दिर से ढाई-तीन माल की दूरी पर है। इस कारण तथा विशेषकर अपनी अस्वस्थता के कारण मैं समाज के साप्ताहिक सत्संगों में भाग नहीं ले सकता। परन्तु विशेष सत्संगों की सूचना मन्त्री जी मुझको दे देते हैं और मैं उन में उपस्थित हो जाता हूं। (२) राजस्थान प्रान्तीय सम्मेलन के विषय में प्रान्तीय प्रतिनिधि सभा के वर्तमान मन्त्री श्री रमेशचन्द्र शास्त्री विद्याभास्कर के निरीक्षण में जयपुर आ० स० के कुछ प्रतिष्ठित सभासदों की एक संयोजक मीटिंग २७-६-५१ को जयपुर में हुई, इसकी सूचना मुझ को नहीं मिली इसलिये मैं उसमें उपस्थित नहीं हो सका। यह मीटिंग श्री गणेशनारायणजी सोमानी के सभापतित्व में हुई जो जयपुर-समाज के पुराने व प्रतिष्ठित नेता हैं। उसमें प्रान्तीय सम्मेलन १ से ४ सितम्बर तक होने का निश्चय हुआ और एक स्वागत समिति के निर्माण का भी निश्चय उसी समय हो गया।

(४) गत रविवार १५-७-५१ को जयपुर में राजस्थान प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा की मीटिंग हुई। उसमें निमन्त्रित होकर मैं भी उपस्थित हुआ। प्रान्तीय सम्मेलन करने का विचार जो एक प्रकार से पहले ही तै हो चुका था अन्तरंग सभा ने स्वीकार किया। आर्य सम्मेलन मेरठ की समीपता के कारण प्रान्तीय सम्मेलन की उपयोगिता पर कुछ वार्तालाप हुआ। यह निश्चय रहा कि पार्लमिन्ट के चुनाव के विषय में (जो समेलन का मुख्य विषय होगा) प्रान्तीय सम्मेलन अपने सभासदों में विचार-विनिमय कर के जो विचार स्थिर करेगा उनको आर्य समेलन मेरठ में भेज देगा इस प्रान्त के नेता भी उक्त महासम्मेलन में भाग लेंगे। महा समेलन का इस विषय पर जो निश्चय होगा वह राजस्थान को अवश्य मान्य होगा। इसके सिवाय प्रान्तीय सभा को राजस्थान में प्रचार सम्बन्धी अन्य भी कार्य हैं जिन पर जयपुर के समेलन में विचार होकर उचित कार्यवाही की जायगी। १५-७-५१ के आर्य-मार्तण्ड के पृ० १-२ पर जो पत्र सभा के मन्त्रीजी का छपा है उसमें प्रान्तीय समेलन में होने वाले कई सम्मेलनों का वर्णन है। जयपुर आर्यसमाज के सभासद् सम्मेलन को सफल बनाने में यत्नवान हैं।

गंगाप्रसाद
[पूर्व प्रधान सार्वदेशिक सभा]

अध्यापक और प्रचारक

फिजीके एक आर्य स्कूल के लिये दो ट्रेण्ड ग्रेजुएटों (बी०ए० वा एम० ए०, बा० टी० वा एल० टी०) की आवश्यकता है। वेतन २६० पोण्ड वार्षिक होगा। जो २६ पोण्ड मासिक की वार्षिक वृद्धि होकर ५५० पोण्ड तक जा सकेगा। रहने के लिये स्थान मुफ्त तथा आने जाने का टूरिस्ट क्लास का मार्ग-व्यय स्कूल की ओर से दिया जायगा। मनोनीत प्रार्थी को वहां कम से कम पांच वर्ष तक रहने का वचन देना होगा। प्रमाणपत्रों सहित १५ अगस्त १९५१ तक प्रार्थना-पत्र मन्त्री, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा देहली के पास पहुंच जाने चाहियें। फिजी के लिये प्रचारार्थ एक सुयोग्य अंग्रेजी जाननेवाले सन्यासी महात्मा की भी आवश्यकता है। जो महानुभाव वहां जाना चाहें वे भी सार्वदेशिक सभा के मन्त्री से पत्र-व्यवहार करने का कष्ट करें।

श्री धर्मप्रकाशजी का स्वर्गवास

आर्यवीर-दल के सदस्यों को यह जानकर हार्दिक वेदना होगी कि उनके कर्मठ, दृढ़प्रतिज्ञ, पक्के सिद्धान्तप्रेमी तथा आर्यवीर-दल के सच्चे पुजारी श्री भाइ धर्मप्रकाशजी सेनापति आर्यवीर-दल राजस्थान का स्वर्गवास होगया। कुछ मास पूर्व उनके पेट में ऐसी बीमारी पैदा हो गई थी कि जिसका इलाज जोधपुर, व्यावर, जयपुर, बनारस तथा आगरा के प्रसिद्ध अस्पतालों में कराने से भी कोई लाभ न हुआ और अन्त में आगरा के सरोजिनी नायडू अस्पताल में उनका स्वर्गवास होगया। आर्यवीरों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि मरते समय तक उन्होंने आर्य वीर दल के संचालन-कार्य को नहीं भुलाया और मृत्यु-शैया पर लेटे-लेटे भी उनकी भावना अपने प्रान्त के आर्य वीरों तक पहुंचती रही, और अपनी अन्तिम घड़ियों में भी वह एक शिविर लगाने की तैयारी कर रहे थे। भारत के समस्त आर्यवीरदलों को चाहिये कि वह अपने इस कर्मठ साथी के प्रति अपनी शाखाओं में श्रद्धांजलि अर्पित करें और उनकी आत्मा की शान्ति के लिये प्रभु से प्रार्थना करें।

—ओमप्रकाश पुरुषार्थी
प्रधान सेनापति

भारत में हलचल

मचा देने वाली ८४ पृष्ठ की रहस्यमय पुस्तक "जोहर मुल्क" एक कार्ड पर १० भिन्न-भिन्न स्थान के आदमियों के पूरे पते लिख कर मुफ्त मंगाले।

'इण्डियन स्टोर्स' (२१) जगाधरी
(E. P.)

वर की आवश्यकता

एक आर्य वर की आवश्यकता है, जो वैश्य मात्र से हो, स्वस्थ, सुन्दर, शिक्षित, और बारोजगार हो। कन्या एक प्रसिद्ध ग्रामीण आर्य घराने की है। बसल वैश्य स्वस्थ सुन्दर और गृह-काय में दक्ष है। अधिकारी सज्जन ही पत्र व्यवहार करें।

लेखराज आर्य, ग्रा० भटपुरा
पो० असमोली (मुरादाबाद)

यथार्थ शान्ति के उपाय

दो भाग

भाग में इनके नास्तिकवाद खडन किया गया है, जिसमें ईश्वर-जीव वेद ही ईश्वरीय ज्ञान क्या है पुनर्जन्म आदि वैदिक सिद्धान्तों को सृष्टि नियम तथा तर्क मे सिद्ध किया गया है जिसका उत्तर कोई दे नहीं सकता—दूसरे भाग में 'धनियों को खतम करो' 'किसान, मजदूरों का राज्य होगा' 'मजदूर ही मील के सच्चे मालिक हैं' आदि व्यर्थ बातों का मुँहतोड़ उत्तर दिया गया है इन पुस्तको को यदि मील मजदूरो तथा किसानो में भले प्रकार बाटा जावे तो कम्यूनिस्टों तथा सोश्यलिस्टों का भय दूर हो जाता है। मूल्य प्रति भाग ।) आना।

पता :—स्वरूपानद
दातागंज, जि० बदायूं।

उत्कृष्ट पुस्तकें

१ उपनिषद् प्रकाश	३॥)
२ दृष्टांतसागर स० भाग १,	३)
३ दृष्टांतसागर स० भाग २,	२।)
४ घरेलू विज्ञान सजिल्द	२॥)
५ वेदरहस्य	२)
६ वेदान्त दर्शन (स्व० दर्शना०)	३)
७ सत्यनारायण की कथा	॥)
८ आर्यसत्सङ्ग	।=)
९ प्राणायाम विधि	।)
१० धर्मशिक्षा	=)
११ राष्ट्रीय तराने	।=)
१२ कल्याण मार्ग	१)
१३ छान्दोग्य उपनिषद्	२।)
१४ चाणक्य नीति	॥।)
१५ मुसाफिर भजनावली	१।)
१६ जनेऊ १॥) ह० सामग्री	१) सेर
१७ हवन कुण्ड लाहा १॥) तांबा	३)

इसके अलावा हर प्रकार की पुस्तकों के लिए बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये। कमीशन काफी दिया जाता है। अपना पता और डाकखाना साफ लिखें।

श्यामलाल वसुदेव भारतीय
आर्य-पुस्तकालय, बरेली

गुरुकुल वृन्दावन आयुर्वेदिक प्रयोगशाला लिमिटेड के

अमूल्य उपहार

चन्द्रप्रभावटी

यह ओषधि शरीर में नई शक्ति लाती है। खून की कमी, जिगर की कमज़ोरी, बवासीर, बहुमूत्र, प्रमेह, स्वप्नदोष, प्रदर आदि रोगों में तुरन्त लाभ करती है। मूल्य १) तोला

शुद्ध हवन सामग्री

आर्य जनता के इस महान कष्ट को देखकर (कि पैसा खर्च करने पर भी उत्तम सामग्री नहीं प्राप्त होती) हमने विशुद्ध शास्त्रोक्त रीति से सामग्री का निर्माण किया है।

लागतमात्र मूल्य १।) सेर   एक मन ५०)

थोक बिक्री के लिये खरीदने पर विशेष रियायत है।

ब्राह्मी-तेल

दिमाग को ताजा, केशों को मुलायम करता और गर्मी की उष्णता से बचाता है। दैनिक व्यवहार से मस्तिष्क संबंधी समस्त विकारों को दूर करता है। मूल्य १०) प्रति सेर

इनके अलावा अन्य समस्त ओषधियाँ आसव, रस, भस्में बड़े परिमाण में बिक्री के लिये तय्यार रहते हैं। जिसके लिये हमारा बड़ा सूचीपत्र मंगाइये!

गुरुकुल वृन्दावन आयुर्वेदिक प्रयोगशाला लिमिटेड, वृन्दावन।

हर स्त्री माँ बन सकती है
एक बच्चे की कीमत सिर्फ
१५।=)

१ दिन में शर्तिया गर्भ की गारटी बेऔलाद माता-बहिनो के लिए स्वर्ण अवसर। १ बांझ (बन्ध्या) २—काकवन्ध्या यानी १-२ औलाद होकर बन्द होजाना, ३—मृतवत्सा यानी सन्तान हो होकर मर जाना या ४—कन्या ही कन्या होना। उपरोक्त सब दोष निवारण के लिए आज ही परीक्षा करें।

नपुंसकता

केवल एक दिन में दूर

चाहे जैसा सुस्त, नाकारा, कमजोर नपुंसक (नामर्द) हो गया हो सिर्फ एक दिन में बिना सफल "" नपुंसकता (नामर्दी) दूर की गारण्टी। लाभ न होने पर कीमत वापस। आर्डर के साथ एडवान्स और पत्तर के लिए जवाबी पत्र आना लाजिमी। मूल्य १२॥) डाक व्यय अलग।

पता—राजवैद्य डा० जौहरी
कृष्णा अस्पताल, हरदोई, (यू० पी०)

आपकी दैनिक आवश्यकता

शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित—जगत् प्रसिद्ध

शुद्ध सुगंधित हवन-सामग्री

नमूना मुफ्त मंगाकर अवश्य परीक्षा करिये

पता—सुन्दरलाल रामसेवक शर्मा
शुद्ध सुगन्धित हवन सामग्री भण्डार
मु० पो० असोली (फतेहपुर

आर्यमित्र

में

विज्ञापन देना

व्यापार की उन्नति करेगा



आवश्यकता है

श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आगरा की योग्य कन्याओं के लिए योग्य शिक्षित व्यवसाय से लगे हुए आर्य वरों की आवश्यकता है। जिनकी आयु २५ वर्ष से अधिक न हो। २=) विवाह फार्म का मूल्य भेजकर, फार्म मँगा कर, भर कर भेजिये।

मन्त्री
श्रीमद्दयानन्द अनाथालय,
आगरा।

बादाम रोगन

सौ फ़ीसदी शुद्ध और प्रामाणिक

खाने और लगाने के लिये।

नमूना	।।=)
छोटी शीशी	४॥)
बड़ी शीशी	६॥)

आज ही आर्डर दी जये।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरद्वार)
सोल एजेन्ट्स कुलदीपचन्द
सत्यपाल सामाराबतपाड़ा आगरा,

मस्तिष्क एवं हृदय

रोग-सम्बन्धी—भयंकर पागलपन, मृगी, हिस्टीरिया, स्मरण शक्ति का ह्रास, पुराना सरदर्द, ब्लड प्रेशर रक्त चाप की न्यूनाधिक्यता, दिल की तीव्र धड़कन तथा हार्दिक पीड़ा आदि—सम्पूर्ण पुराने रोगों की परम विश्वस्त चिकित्सा के लिए शीघ्र परामर्श कीजिए—

जीर्णव्याधिविशेषज्ञ—	कविराज योगेन्द्रपाल शास्त्री एल० ए० एम० एस, आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि स्नातक-आयुर्वेदिक यूनानी तिब्बिया कालेज, देहली।
मुख्याधिष्ठाता—	कन्या गुरुकुल हरिद्वार
व्यवस्थापक—	'शक्ति प्रेस' (नहरपुल) कनखल
मुख्य सम्पादक—	'शक्ति सन्देश' (साप्ताहिक) कनखल
लेखक—	'प्राचीन राज्यवंश' एवं भारतीय जन क्रान्तियाँ'

संचालक— आयुर्वेद शक्तिआश्रम, कनखल

महर्षि निर्वाण भूमि अजमेर की भारत प्रसिद्ध

महर्षि सुगन्धित सामग्री

यह बल-वर्द्धक तथा रोग-नाशक बहुमूल्य औषधियों से बनी हुई अत्यन्त सुगन्धित सामग्री है। आर्य नेताओं तथा आर्यसमाजों ने इसकी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। हम आपसे साग्रह अनुरोध करेंगे कि एक बार आप अवश्य 'महर्षि सुगन्धित सामग्री' मंगाकर प्रयोग में लाएं। हमारा दावा है कि ऐसी उत्तम सामग्री आपको अन्यत्र दो रुपये सेर भी न मिलेगी। मूल्य थोक भाव १।-) सेर। एक मन या इससे अधिक मंगाने पर १) सेर।

छटांक, आधपाव, पाव के सुन्दर पैकिटों में बन्द प्रति सेर एक आना अधिक।

स्मरण रहे कि आज कल की वस्तुओं की भारी महंगाई के समय इससे कम मूल्य में सामग्री देना, सामग्री के नाम से जनता को धोखा देना है।

पता—श्री विरजानन्द वैदिक विद्यालय, अजमेर।

यह विज्ञापन नहीं सत्य है

यदि आप बालों का झड़ना, बालों का गिरना, शिर में चक्कर आना, नींद न आना, उन्माद, और कम उम्र में बालों का पकना आदि के शिकार हैं तो किशोर तेल का व्यवहार करें। मू० २॥)
मोहन आयुर्वेदिक रसायन-शाला जयनगर-दरभंगा (बिहार)

विज्ञापन व्यापार का सर्वोत्तम साधन है



आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

आर्य्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

सञ्चालक-आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ

आगरा, २ अगस्त १९५१

आचार्य्य श्री रामदेवजी



आपने अपनी लेखनी और वाणी से जीवन भर आर्यसमाज और वैदिकधर्म की महती सेवा की।

आचार्य्य श्री श्रीपाद दामोदर सातवलेकरजी



आप वैदिक साहित्य के सृजन और प्रचार में सर्वात्मना संलग्न हैं।

वार्षिक मूल्य ८), विदेश से १०) एक प्रति तीन आने

सम्पादक हरिशङ्कर शर्म्मा

वर्ष— [illegible]
अङ्क— [illegible]

'शाहना शरियत' पर क़ानूनी कार्रवाई की जाय,

सरकार अपना कर्त्तव्य-पालन करे

आर्यसमाज प्रस्ताव भेजें

कानपुर से शाया होने वाला 'शाहना शरियत' नामक मुसलिम पत्र वेद-शास्त्र, आर्यधर्म और हिन्दू देवी देवताओ के विरुद्ध जिस जहरीली जहनीयत का इजहार कर रहा है, उसके सम्बन्ध में हम कई वार इन स्तम्भों में लिख चुके हैं। इस गन्दे और गुण्डे अखबार ने महर्षि दयानन्द के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है, उससे तो उसके एडीटर के दिल की गन्दगी, दिमाग की शैतानियत और कलम की शरारत जाहिर हुए बिना नही रहती। ऋषि के सम्बन्ध में इस जलील अखबार ने ऐसे अपमानजनक शब्द लिखे हैं, जिनके कारण शर्म भी शर्म से जमीन में गड़ जाती है। इस युग में इस नापाक और नाचीज अखबार की ऐसी हिम्मत, उसके अनाड़ी एडीटर का ऐसा साहस कि महर्षि दयानन्द के परम पावन चरित्र पर धूल उड़ाने या गन्द फेंकने की हिमाकत करे! हम इस अखबार की ऐसी नीचतापूर्ण नीति को बार-बार धिक्कारते और देश तथा समाज की शान्ति को भंग करने वाली समझते हैं। हमारी राय में 'आजादी' का मतलब यह हरगिज नहीं है कि शरर-अंगेज 'शाहना शरियत' अपनी अखबारनवीसी की नापाकियत और नावाकफियत इस तरह से जाहिर करता रहे।

क्या हमारी सरकार के पास ऐसे उजबक अखबारो की अक्ल ठीक करने के लिये कोई कानून नही है? क्या वह इस तरह की वाहियात और बेहूदा बातो को 'टालरेट' करना मुनासिब समझती है? क्या वह नहीं जानती की इन कठमुल्ले अखबारो की कुटिल एवम् कुचेष्टापूर्ण कूटनीति के कारण कितने अधिक आदमियो की भावनाओं को भयङ्कर ठेस पहुच रही है? यदि उसे इन सब बातो का ज्ञान और ध्यान है तो क्या कारण है कि ऐसे जटियल और जलील अखबार तथा उसके अयोग्य एडीटर बड़ी शेखी, शोखी और शरारत के साथ, आजादी और गुस्ताखी के साथ वेद शास्त्र, हिन्दू देवी-देवता तथा महर्षि दयानन्द के विरुद्ध इस तरह जहर उगलें। हम देश की वर्तमान परिस्थिति में किसी प्रकार का अशान्तिपूर्ण और उत्तेजनायुक्त वातावरण पैदा नहीं करना चाहते, परन्तु साथ ही यह भी सहन नहीं कर सकते कि कोई विरोधी या विद्वेषी हमारी धार्मिक भावनाओ पर इस प्रकार आघात पहुचाता रहे।

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के माननीय प्रधान श्री मदनमोहन सेठ एम० ए०, जज ने १६ जुलाइ ५१ का पत्र संख्या ६१३१ यू०पी० सरकार की सेवा में भेजकर उसका ध्यान इस अनौचित्य की ओर आकृष्ट किया है, साथ ही चाहा है कि वह 'शाहना शरियत' की शरारत और शैतानियत के खिलाफ कड़ी से कड़ी और बड़ी से बड़ी कारवाइ करे जिससे उसकी अक्ल ठिकाने आवे। श्रीप्रधान जी ने अपने उक्त पत्र में बिलकुल ठीक लिखा है कि अगर इन अखबारो की ये कमीनी हरकतें इसी तरह जारी रहीं और उनका उद्दण्ड, उच्छृंखल तथा उन्मत्त प्रलाप न रोका गया तो जातीय घृणा फैलने और शान्ति भंग होने की पूर्ण आशङ्का हो सकती है, जिसे आर्यसमाज कदापि नहीं चाहता। सरकार का कर्तव्य है कि वह इस दिशा में शीघ्र से शीघ्र अपना कर्तव्य पालन कर अपराधी को उचित दण्ड दे।

अन्त में हम समस्त आर्यसमाजों के अधिकारियो से प्रार्थना करेंगे कि वे अपने समाजों के विशेष अधिवेशन कर 'शाहना शरियत' के अनाचार तथा द्वेषप्रचार के विरुद्ध प्रस्ताव पास करें और उन्हें राज्य के प्रधान मन्त्री माननीय श्री गोविन्दवल्लभ पन्त केन्द्रीय सरकार और आर्यप्रतिनिधि सभा के पास भेजें, जिससे शीघ्रातिशीघ्र 'शाहना शरियत' को उसके किये भयङ्कर अपराध का उचित दण्ड मिल सके।

श्री सभा-प्रधान का पत्र

आर्यमित्र-सम्पादक के नाम

मैं २०, २१ जौलाई को अमेठी युवराज श्री रणञ्जयसिंहजी के निमन्त्रण पर रणवीर इण्टर कालेज के वार्षिकोत्सव में सम्मिलित होने के लिये गया था, वहाँ कुछ अवकाश मिला तब १२ जौलाई का आर्यमित्र पढ़ा। आपकी 'वन-वैभव' कविता बड़ी रोचक है, विशेषकर उसकी निम्न पंक्तियाँ हम मनुष्यो के लिए बड़ी शिक्षाप्रद हैं—

पत्थर, ईंटों की चोटें खा, प्रतिफल में फल बरसाते हो,
तुम हिंसाहीन भावना का सुखदायक दृश्य दिखाते हो।

सार्वदेशिक सभा के सुयोग्य मन्त्री का लेख 'भ्रष्टाचार का नाश हो' कौतूहल से पढ़ा। विषय गम्भीर है और हमारे देश को भ्रष्टाचार से बचना भी चाहिये। यदि हम जीवित रहना चाहते हैं, तो " परन्तु उसमें दिये हुए सुझाव इतने अधिक व्यावहारिक नहीं हैं।

"पुरोहित का पद" शीर्षक आपकी टिप्पणी आर्यसमाज का विशेष ध्यान उस अत्यन्तावश्यक विषय की ओर खींचती है। आर्यसमाज के उपनियमों का संशोधन भी दुःसाध्य है और जब होगा तब देखा जायगा, किन्तु यदि इस सुझाव पर अभी से सब समाजें कार्य करने लगें तो बड़ा लाभ हो।

आपने "नगता पाठक" शीर्षक टिप्पणी देकर भारतवासियों को अच्छी चेतावनी दी है। हमारे देश में कुछ ऐसी प्रथा चली आती है कि अच्छे-बुरे सभी कार्यों पर धन व्यय करते हैं, किन्तु समाचार-पत्रों को माँग कर ही पढ़ना चाहते हैं।

"आर्य मित्र की स्वर्ण जयन्ती' की रूपरेखा हमारे मित्र श्री बा० कालीचरणजी आर्य ने आपसे माँगी है, आर्य महासम्मेलन का सुन्दरावसर इस कार्य के लिए बड़ा ही उचित रहेगा, और आर्यमित्र ने अपने ५० वर्ष से अधिक आयु में जो कार्य किया है उसका दिग्दर्शन भी जनता को मिल जायगा। सचमुच आपने ठीक लिखा है कि आर्यमित्र एक संस्था है।

"हमारे पुस्तकालय" शीर्षक आपकी सम्पादकीय टिप्पणी समयोचित है। कदाचित् आपको ध्यान हो कि जब बुलन्दशहर में आर्यप्रतिनिधि सभा का कार्यालय था, तब प्रतिवर्ष उपयोगी पुस्तकों की सूची सभा की ओर से सब समाजों में भेजी जाती थी, और समाजों को अच्छी पुस्तकें उपलब्ध करने में इससे सहायता प्राप्त होती थी।

"डी० ए० वी० नाम व्यर्थ है" शीर्षक टिप्पणी और उसके सम्बन्ध में श्री प० गंगाप्रसादजी उपाध्याय का लेख दोनों ही समयोचित हैं। यह सुझाव बहुत अच्छा है कि डी० ए० वी० नाम रखने वाली संस्थाएँ अपना नाम स्पष्ट केवल 'दयानन्द-विद्यालय' इत्यादि रक्खें। मुझे पूर्ण आशा है कि ऐसी सब संस्थाएँ इस सुझाव को कार्यान्वित करेंगी।

पृष्ठ ८ पर "प्रौढ़-शिक्षा और समाज का कर्तव्य" शीर्षक लेख हमारे नेता श्री प० गंगाप्रसादजी, एम० ए०, रिटायर्ड चीफ जज ने बड़ा भावपूर्ण लिखा है। उन्होंने मेरठ की श्रीमती शकुन्तला देवीजी गोयल के इस सुझाव का समर्थन किया है। कार्य उत्तम है और हमारी सरकार का ध्यान भी इस ओर है। मैं समझता हूँ कि यदि समाजें इस कार्य को अपने हाथ में लें तो इस सम्बन्ध में उन्हें सरकार से भी आर्थिक सहायता मिल सकती है।

पृष्ठ १० पर हमारे मित्र श्री प० शिवनारायणजी शुक्ल ने गुरुकुल और आर्य प्रतिनिधि सभा की दशा पर विचार करने के लिये समितियो के बनाने का सुझाव दिया है, मेरी सम्मति में इस सम्बन्ध में यह अच्छा हो कि यदि श्री शिवनारायणजी शुक्ल जैसे विचारवान

[शेष पृष्ठ १५ पर]

'स्वजनस्य दुर्वृत्तं निवारयेत्'

आर्य ॐ मित्र

आगरा, श्रावण कृष्णा ३० संवत २००८ वि०, गुरुवार, ता० २ अगस्त १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि संवत् १९७२९४९०५१

गूहता गुह्यं तमो वि यात विश्वमत्रिणम्, ज्योतिष्कर्ता यदुश्मसि। ऋ० १।८६।१०

अज्ञान-अन्ध को दूर करें सब आओ
स्वार्थान्ध भावनाओं का खोज मिटाओ
जग को प्रकाश का पुण्य मार्ग दिखलावें
हो कर्मवीर जीवन में सुयश कमावें

———

राजनैतिक पथ-प्रदर्शन

आर्यमित्र के गताङ्क में हमने लिखा था कि कुछ दिनों से आर्यसमाजी लोग छह भागों में विभक्त दिखाई देते हैं। १—कॉंग्रेसी आर्यसमाजी, २—हिन्दूसभाई आर्यसमाजी, ३—सर्घी आर्यसमाजी, ४—बिरादरी बाज आर्यसमाजी, ५—हिन्दी प्रचारक आर्यसमाजी और छठे आर्यसमाजी आर्यसमाजी। कुछ आर्यसमाजी सोशलिस्ट और कम्यूनिस्ट भी हो गये हैं। इन्होंने आर्यसमाज को छोड़ दिया, परन्तु शेष सब किसी न किसी रूप में आर्यसमाज से सम्बन्ध बनाये हुए हैं। सम्बन्ध तो बनाये हुए हैं, परन्तु आर्यसमाज के लिये काम प्रायः नहीं करते। आर्यसमाजी लोग इन दलों में क्यों गये? धार्मिक नैतिक, सामाजिक या सैद्धान्तिक शिक्षा तो उन्हें किसी से लेनी न थी, उसके लिये तो आर्य सिद्धान्त ही बहुत काफी हैं, वे तो केवल राजनैतिक आकांक्षाओं की पूर्ति के लिये उक्त समुदायों में सम्मिलित हुए हैं। आर्यसमाज सामुदायिक रूप से राजनीति में भाग लेता तो कदाचित् उनको इन राजनैतिक दलों में जाने की आवश्यकता या अभिलाषा न होती, परन्तु आर्यसमाज तो कोई साम्प्रदायिक समुदाय नहीं, राजनैतिक पार्टी भी नहीं है जो अपने 'उम्मेदवार' खड़े कर सके। यदि करता है तो वह अपनी सारी व्यापकता, विशालता और विशदता खोकर केवल कुछ रजिस्टर्ड आर्यों का पन्थ बन जाता है और उसकी सार्वभौमता जाती रहती है। मानव मंगल कामना और विश्व-बन्धुत्व की भावना भी नष्ट हो जाती है, इसके अलावा आर्यसमाज के नाम पर आर्यसमाजी उम्मेदवार को 'वोट' कितने मिलेंगे, गैर आर्यसमाजी लोग उसे क्यों वोट देंगे। इन्हीं सब कारणों से हमने आर्यसमाज के प्रचलित राजनीति में भाग लेने का विरोध किया है, अब भी हमारी यही राय है।

साथ ही हम यह भी सोचते हैं कि जिन आर्य भाई-बहनों ने देश के स्वतन्त्रता-युद्ध में क्रियात्मक भाग लिया और आजादी के लिये कड़े से कड़े कष्ट सहे वे कौंसिलों और असेम्बलियों में क्यों न जायं? ऐसा करने का उन्हें व्यक्तिगत रूप से पूरा अधिकार होना चाहिए। साथ ही आर्यसमाजियों का भी कर्तव्य है कि वे उन्हें उनके चुनाव में सफल होने के लिये व्यक्तिगत रूप से पूरी सहायता दें। इसमें हम कोई हानि नहीं देखते। आजादी की लड़ाई में जूझा हुआ कोई भी आर्यसमाजी एम० एल० ए०, एम० एल० सी० या एम० पी० बनने के अधिकार से इसलिये क्यों वंचित रहे कि आर्यसमाज सामुदायिक रूप से राजनीति में भाग नहीं ले रहा। इतना हम अवश्य चाहते हैं कि आर्यसमाजियों को अपने-अपने प्रान्त की उन्हीं राजनैतिक संस्थाओं की ओर से खड़ा होना चाहिए जो आर्यसमाज के बहुत समीप हैं, और जिनमें ईश्वर तथा धर्म को नमस्कार करने की कोई प्रतिज्ञा नहीं करनी पड़ती और न किसी साम्प्रदायिकता जन्य संकीर्णता का आश्रय लेने की आवश्यकता होती है।

हम चाहते हैं कि देश के आर्य नेता और विचारक विद्वान् इस दिशा में देशभक्त आर्यसमाजियों का दिग्दर्शन या पथ-प्रदर्शन करें। इसके लिये सार्वदेशिक सभा की अध्यक्षता में मुख्य मुख्य आर्य नेताओं की एक कानफ्रेन्स की जाय जो विचार विनिमय के पश्चात् किसी परिणाम विशेष पर पहुंचे। हमारी राय में यह कानफ्रेन्स आगामी आर्य महासम्मेलन से बहुत पहले होनी चाहिए और इसमें बीस पच्चीस आर्य नेताओं से अधिक के सम्मिलित होने की आवश्यकता नहीं है।

———

विनोबाजी की विचार-धारा

जुलाई १९५१ के 'सर्वोदय' में आचार्य श्री विनोबा भावे ने अपने लेख में लिखा है: 'इस्लाम सबको समान मानता है, यद्यपि उपनिषद् आदि में यह विचार मिलता है, लेकिन हमारी सामाजिक व्यवस्था में इस समानता की सहानुभूति नहीं मिलती थी, हमने उस पर अमल नहीं किया था। व्यावहारिक समानता का विचार इस्लाम के साथ आया। हमारे यहां जो कमी थी वह इस्लाम ने पूरी की।' विनोबाजी ने उपर्युक्त पंक्तियां लिखते हुए इस्लाम की प्रशंसा पर जितना ध्यान रखा है, उतना वास्तविकता पर नहीं। जिस समय इस देश में वेद शास्त्रों और उपनिषदों का युग था, जाति-पांति का नाम भी नहीं था। मानवमात्र में समानता थी, 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का अभिनन्दनीय नाद गूंजता और इसी पर अमल भी किया जाता था। मानव ही नहीं प्राणिमात्र के लिये प्रेम, सहानुभूति और समानता के भद्र भावों की भव्य भागीरथी उमड़ती थी। सारा समाज चार अनिवार्य भागों में विभक्त था। अज्ञान दूर करने वाला समुदाय ब्राह्मण, अन्याय मिटाने वाला क्षत्रिय और अभाव पूर्ति करने वाला वैश्य कहाता था। ये विभाग जन्म से न माने जाते थे। जिस व्यक्ति में जिस समुदाय की योग्यता होती थी उसी में वह सम्मिलित कर दिया जाता था। यह समाजविभाजन किसी न किसी रूप में आज भी सारे संसार में प्रचलित है। इसके बिना न कभी काम चला न चल सकता है। इस विभाजन की संज्ञा कुछ भी हो, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि के स्थान में कोई भी नाम रखा जाय, परन्तु उसकी आत्मा या स्प्रिट वही है जो वैदिक वा उपनिषद्-काल में थी। उस समय जाति-पांति का कोई झमेला ही न था। भगवान राम का चरित्र पढ़ने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि वे साधारण से साधारण व्यवसाय करने वाले व्यक्तियों के साथ भी हार्दिक प्रेम प्रकट करते रहे, वनवृक्षों तक की कुशल पूछते रहे। उस समय सारे समाज में समानता थी। जन्म के आधार पर ऊंच-नीच की संकीर्ण भावना जरा भी काम न करती थी। जिस इस्लाम को समता का समर्थक बताया जाता है उसमें तो इतनी संकीर्णता है कि मुसलमान के अतिरिक्त और किसी के लिये सम्मान या आदर ही नहीं। फिर उसमें भी ऊंच-नीच, छुटाई बड़ाई तथा विषमताजन्य अनेक प्रकार की भावनाएं हैं। समझ में नहीं आता कि इस्लाम को समता का समर्थक कैसे कहा जा सकता है। जिस देश ने सृष्टि के आदि में 'आत्मवत् सर्व भूतेषु' और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का उच्च आदर्श संसार में स्थापित किया हो, उसे कल का इस्लाम या अन्य कोई आधुनिक मत क्या देन या शिक्षा देगा। ऐसी बातों में तथ्य तो कुछ है नहीं, हाँ, उनसे मुसलमानों की थोड़ी-सी 'प्रशंसा' अवश्य हो जाती है।

———

नगर-विकास और आत्म-विकास

कितने ही नगरों की बेढंगी बनावट को सुन्दर स्वरूप देने के लिए 'नगरोन्नति' या 'नगर-विकास योजनाएं' (टाउन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट) प्रारम्भ की गयी हैं। इन योजनाओं पर लाखों-करोड़ों रुपया खर्च किया जा रहा है वस्तुत. ऐसे आवश्यक कार्यों को देखकर बड़ी प्रसन्नता होती है, परन्तु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण कार्य और है। वह है, 'चरित्र-निर्माण'। नगर-निर्माण पर तो इतना धन व्यय हो, परन्तु 'चरित्र निर्माण' की ओर ध्यान भी न दिया जाय, यह साधारण भूल या छोटी उपेक्षा नहीं है। कितने ही सुन्दर और सुघड़ घर नगर बना लिए जाय, परन्तु यदि उनमें चरित्रवान जनता नहीं रहती तो यही कहना पड़ेगा कि शरीर तो अच्छे हैं, परन्तु उनमें आत्मा का अभाव है—जीवनी शक्ति का लोप है। आज सारी अशान्ति और सकटपूर्ण परिस्थिति चरित्रहीनता के कारण ही है इसे दूर करने के लिए कुछ नहीं किया जाता। पत्तों पर पानी छिड़का जा रहा है, किन्तु जड़ों पर कुल्हाड़े चल रहे हैं। ऐसी वृक्षावली कैसे जीवित जाग्रत और हरी भरी रह सकेगी। हमारा अभिप्राय यह है कि नगर विकास का अर्थ घर मकानों, गली कूचों या सड़क-पार्कों की उन्नति तक ही सीमित न समझा जाय, किन्तु उसका मतलब नागरिकों का चरित्र निर्माण भी हो। ऐसे ऐसे साधन काम में लाए जाय जिनसे जनता का नैतिक स्तर ऊंचा उठे। अध्यात्म प्रचार, नैतिकता प्रसार, स्वाध्याय सत्सग आत्मचिन्तन आदि की विविध विधियाँ इस कार्य में बहुत सहायक सिद्ध हो सकती हैं। यह काम सरकार और नगर पालिकाओं के करने का है तदर्थ जो सभा-समाज स्थापित हैं, उन्हें भी सब प्रकार की सहायता देनी चाहिये, जिससे वे और अधिक उत्साह से अपना कार्य कर सकें। हम चाहते हैं कि भौतिक उन्नति के साथ-साथ लोगों की आध्यात्मिक उन्नति भी हो अर्थात वे नैतिक दृष्टि से भी ऊंचे उठें, तभी नगर निर्माण और नगर विकास की योजनाएं अधिक उपयोगी और श्रेयस्कर सिद्ध हो सकेंगी।

'गोधन' का ह्रास

'गोधन' की दृष्टि से प्राचीन भारत महाराष्ट्र की बहुत बड़ी सम्पत्ति गिनी जाती था। जिस घर में जितनी ही अधिक गाय रहीं, वह घर उतना ही सम्पन्न और समृद्धिशाली समझा गया। गोवंश की उपयोगिता विविध प्रकार से इतनी महत्वपूर्ण है कि उस पर बड़े बड़े पोथे लिखे गये और लिखे जा सकते हैं। पहले दो प्रकार की बस्तियां थीं—ग्राम और घोष। 'ग्राम' वे थे जिनमें खेती बारी करके अन्न, फल फूल और शाकभाजी उत्पन्न किए जाते थे और 'घोष' वे थे जहां गौओं से घी, दूध मक्खन और दही मट्ठा तैयार करके दिया जाता था। दूध का व्यापार करने वालों को आज भी 'घोषी' कहते हैं। जिसके पास नौ लाख गायें होती थीं, वह 'नन्द' कहलाता था, अठारह लाख गायें रखने वाला 'महानन्द' और साढ़े चार लाख गायें जिसके पास होती थी उसकी उपनन्द उपाधि था। 'विराट' भी एक उपाधि थी, विराट के पास असंख्य गायें रहती थीं। ऐसे अनेक ग्रन्थ हैं, जिनमें गायों से काम लेने, उनके उपाय तथा वंश-वृद्धि करने उनका दोहन करने उनका पालन पोषण करने, उनको दाना चारा खिलाने आदि की विधियाँ बताई गई हैं, परन्तु उनकी ओर कोई ध्यान भी नहीं देता। आज 'गोरक्षा गोरक्षा' का शोर तो बहुत है, परन्तु गोपालन के लिये कोई उचित उपाय काम में नहीं लाया जाता। गोशालाएं तो कुछ लोगों के पेट पालन का व्यवसायमात्र बन गयी हैं। 'गाभक' गटकाना और भीख मांगना यही गोशालाओं का प्रयोजन है। आवश्यकता है कि सहकार समितियों के सिद्धान्त पर व्यावसायिक दृष्टि से दुग्धशालाएं कायम की जाय, और ये शालाएं ही गऊओं का पालन पोषण तथा संरक्षण करें, तथा गोवंश-वृद्धि पर ध्यान दें। सारे काम वैज्ञानिक दृष्टि से किये जाय। 'गोमाता' 'गोमाता' कहकर या गौओं के खुर पूज-पूज कर गोपाल या गोभक्त उनकी जरा भी सेवा या पूजा नहीं कर सकते। सच्चे 'गोभक्त' तो इंगलैण्ड या अमरीका में रहते हैं, भारत में तो गोभक्ति की गाथामात्र शेष रह गयी है। परिवार के परिवारों की पड़ताल कर जाइये, शायद ही किसी के खूंटे पर गाय मिले। ऐसी दशा में कैसी गोरक्षा और कहाँ का गोधन! स्वराज्य होने पर आशा थी कि सरकार इस दिशा में कुछ कर्तव्य पालन करेगी, परन्तु वह निराशा में परिणत हो रही है। बिना दूध के नागरिकों का शारीरिक और मानसिक विकास कैसे हो सकता है और वे किस प्रकार सुन्दर स्वास्थ्य-सम्पत्ति के स्वामी बन सकते हैं?

'साहित्य प्रकाशन-गृह'

इस विषय पर हम इन स्तम्भों में कई बार अपने विचार प्रकट कर चुके हैं, हमारी दृढ़ धारणा है कि व्यावसायिक दृष्टि से चलने वाले प्रकाशन गृह कभी असफल नहीं होते। कुछ पाठकों को १९ जुलाई के 'मित्र' में पं० गंगाप्रसाद उपाध्यायजी का 'मेरे प्रकाशन सम्बन्धी अनुभव' शीर्षक लेख पढ़कर निराशा हुई है। वे पूछते हैं कि जब उपाध्यायजी जैसे विद्वानों को अपनी पुस्तकों के प्रचार में सफलता नहीं मिली तो अन्य लेखकों की किताबें कैसे बिक सकेंगी? ऐसी दशा में आप 'साहित्य-प्रकाशन-गृह' पर क्यों बल देते हैं। प्रश्न ठीक है, पर इन प्रश्नकर्ता मित्रों को जानना चाहिये कि साहित्य प्रकाशन में तीन मुख्य काम होते हैं—१ उपयोगी और महत्वपूर्ण ग्रन्थ की रचना २—ग्रन्थ को सुन्दर और शुद्ध रीति से छपवाना और ३—उसका प्रचार अर्थात् बिक्री। कुछ लोग केवल एक काम कर सकते हैं कुछ दो और कुछ तीनों। जो तीनों कामों में दक्ष हैं, उनकी पुस्तकें धड़ाधड़ बिकती हैं। अधिकांश लेखक पुस्तक लिख लेते और छपवा भी शुद्ध और सुन्दर लेते हैं, परन्तु बेचने में 'जीरो' उपाध्याय जी इन लोगों में हैं। स्वयं इन पंक्तियों के लेखक ने तीन दर्जन से अधिक पुस्तकें लिखकर प्रकाशकों को दी, जिन्होंने वे छपाई और बेची कितनी ही पुस्तकों के तो पन्द्रह पन्द्रह बीस बीस संस्करण हो गये। सम्भवतः सब मिलाकर कई लाख पुस्तकें बिक चुकीं परन्तु गरीब लेखक को रोटी के लिए कुछ टके मिल गये बाकी 'जीरो'। यदि वह स्वयं अपनी पुस्तकें प्रकाशित करता तो शायद सैकड़ों की संख्या में भी वे न बिक पातीं। इसी लिये आवश्यकता है कि एक बड़ा प्रकाशन गृह' स्थापित किया जाय जो लेखकों से पुस्तकें लिखा लिखा कर उनका प्रचार करे और लेखकों को उसका पारिश्रमिक दे। सफलता निश्चित् है। लेखक ही पुस्तक लिखे और बेचे भी, यह प्रयोग असफल सिद्ध हो चुका है और होगा। हम फिर कहते हैं कि आर्यसमाज में कितने ही गम्भीर और प्रौढ़ लेखक हैं परन्तु कोई अच्छा प्रकाशन-गृह न होने के कारण वे दूसरों के लिए किताबें लिखते रहते हैं, बेचारे स्वयं न पुस्तकों को छपा सकते हैं और न बेच पाते हैं। एक बड़ा 'प्रकाशन-गृह' स्थापित होने पर ऐसे सब लेखकों का सहयोग प्राप्त हो सकता है, और आर्यसाहित्य प्रचार में बड़ी प्रगति दिखाई दे सकती है।

दयानन्द शिक्षा-संस्थाएं

दयानन्द विद्यालय और दयानन्द महाविद्यालय देश में पर्याप्त संख्या में हैं। लाहौर का प्रसिद्ध और पुराना दयानन्द महाविद्यालय सम्भवतः सबसे बड़ी शिक्षा-संस्था थी परन्तु अब वह दुर्भाग्यवश पाकिस्तान के पल्ले में चला गया। अब न जाने उस विशाल भवन में क्या हो रहा होगा। इन शिक्षण संस्थाओं की स्थापना का उद्देश्य प्रारम्भ में आर्यसमाज का प्रचार करना था, उस समय इनके द्वारा आर्यसिद्धान्तों का भले ही कुछ प्रचार हुआ हो परन्तु अब तो इस दिशा में बहुत ही कम प्रयत्नशीलता दिखाई देती है। यही विद्यालयों का हाल है और यही महाविद्यालयों का। सारी शक्तियाँ विश्वविद्यालयों की पाठ-विधि पूरी करने और परीक्षोत्तीर्ण होने में लगा दी जाती हैं। ठीक है, इसलिये तो इन संस्थाओं का जन्म-जीवन ही हुआ है, परन्तु वैदिक धर्म-प्रचार और आर्यसमाज का विस्तार और प्रचार करना भी तो इनकी स्थापना का एक मुख्य हेतु है। इस ओर इतनी संलग्नता क्यों नहीं दिखाई जाती हम तो समझते हैं दयानन्द शिक्षण संस्थाओं के स्वरूप में

साहित्य-सौरभ

सत्यार्थ-प्रकाश

श्री हरिशङ्कर शर्मा

था मोह-महा तम ने अधिकार जमाया,
अज्ञान अविद्या की फैली थी माया,
घनघोर घटा दुर्गति की घहराई थी,
चहुँ ओर निराशा-निशा हाय! छाई थी,
ऋषि की प्रतिभा प्राची ने ज्ञान पसारा,
सत्यार्थ प्रकाश किया,--मेटा तम सारा,
अज्ञान-उलूक लुका; दुर्गति-दल भागा,
झलकी जीवन की ज्योति; भाग्य फिर जागा।
सबके हृदयों में वैदिक भाव समाया,
ऋषि-मुनियों की गुण-गरिमा को अपनाया,
निज देश-जाति की गौरव-गुरुता गाई,
मानो, अपनी खोई वसुधा फिर पाई—
गड़बड़ गाथा को त्याग बुद्धि-बल धारा;
है निगमागम का सबको सबल सहारा,
परमेश्वर ही है, पूज्य-उपास्य हमारा—
है स्वावलम्ब—पुरुषार्थ परम व्रत प्यारा।
जिसने जग में जीवन की ज्योति जगाई,
जिसने विवेक की विभुता फिर दरसाई,
जिसने मानसिक दासता का गढ़ ढाया,
जो 'नवजीवन' का नया सँदेशा लाया,
है वह 'सत्यार्थ-प्रकाश' न मिटने वाला,
फैला सर्वत्र, न नेक सिमटने वाला,
यदि आई उस पर ठेस प्राण दे देंगे,
फिर तो रक्षा करके ही हम दम लेंगे।
'सत्यार्थ-प्रकाश' वेद की विश्रुत वाणी,
है शान्ति-दायिनी, सुभग, सुखद, कल्याणी,
कोटानुकोटि हृदयों में यही समाई,
निरखो; 'नवयुग' की विमल छटा छिटकाई,
हे आर्य्यसमाज! ज्योति का दाता है तू,
सारी उन्नति का भाग्य-विधाता है तू,
यदि शिथिल हुआ तो, पतन भयंकर होगा,
जिसका परिणाम महा प्रलयङ्कर होगा।
उठ, संभल-सोच, कर्त्तव्य कर्म्म में रत हो,
'पद लोलुपता' में पड़ा, न तू श्रीहत हो,
तुझको 'सत्यार्थ-प्रकाश' मिला सुखदाई—
तूने ऋषि दयानन्द की सम्पति पाई,
तू तेजपुंज है, शक्ति-धाम सक्षम है,
तू कर्म्म सिंह है साहस में कब कम है,
❀ ❀ ❀
उठ, आर्य वीर, वर वैदिकता विस्तारो—
जगतीतल पर 'सत्यार्थ-प्रकाश' प्रसारो।

———

कुछ विशेषता होनी चाहिये, वे अन्य संस्थाओं के समान ही क्यों रहें। यदि हमारी ये शिक्षा-संस्थाएँ अपने छात्रों में वैदिक धर्म की विशुद्ध भावना और आर्यसिद्धान्तों का पुण्य प्रभाव नहीं भर सकतीं तो इनके नाम के साथ 'दयानन्द' शब्द जोड़ने से क्या लाभ और आर्यसमाज के प्रचार की इनसे कैसे आशा की जाय। हम यह नहीं कहते कि इन संस्थाओं ने इस प्रचार की दुनिया में कुछ काम ही नहीं किया है, परन्तु बहुत ही कम। सम्भव है, हमारा यह विचार गलत भी हो। यदि वह वस्तुतः गलत है तो अपनी भूल मानने में सबसे अधिक प्रसन्नता हमें होगी। ———

जीवन-ज्योति

श्री स्वामी मंगलदेवजी

स्वामी मंगलदेवजी आर्य-समाज में बड़े सन्त-संन्यासी हो गए हैं। आगरे का श्रीमद्दयानन्द अनाथालय अबसे प्रायः ५० वर्ष पूर्व आपही के द्वारा स्थापित हुआ था। स्वामीजी बहुत ही सात्विक, सरल और साधु प्रकृति के महानुभाव थे। आपका जन्म नजीबाबाद (बिजनौर) के एक प्रतिष्ठित अरोड़ा वंश में कार्तिक कृष्णा ४ संवत् १९१२ वि० को हुआ था। पिता लखपती थे। उनकी धर्म-कर्म में बड़ी श्रद्धा थी स्वामीजी वृन्दावन, आगरा, प्रयाग, काशी होते हुए बिहार और बंगाल पहुंचे। दानापुर में एक साधु के चेले बने और मंगलदास नाम रक्खा गया, क्योंकि उस दिन मंगलवार था। घूमते फिरते मंगलदासजी अपने गुरु के साथ हरिद्वार-कुम्भ पर पहुंचे। वहाँ घर के लोग मिल गये, परन्तु इन्होंने उनके साथ कोई सम्बन्ध स्थापित न किया। हरिद्वार से मिर्जापुर आए और यहाँ कई वर्ष रहकर विद्याभ्यास किया।



श्री स्वामी मंगलदेवजी

का जन्म का नाम निहालचन्द था। आठ वर्ष की आयु में जनेऊ हुआ और दस वर्ष की आयु में विवाह। प्रारम्भ में इन्हें उर्दू-फारसी पढ़ाई गई। इनके माता, पिता, भ्राता सबही ईश्वर-भक्त तथा साधु-सन्त सेवी थे। परिवार की भगवद्भक्ति का प्रभाव निहालचन्दजी पर भी पड़ा, अतः ये भी बड़े भक्त हो गए। पाँच वर्ष कपड़े की दुकान की। २२ वर्ष की आयु में इनकी पत्नी का देहान्त हो गया। इस घटना के एक मास पश्चात् ये घर से निकल पड़े। घर से निकल कर निहालचन्द जी मथुरा, वेदान्त की भी शिक्षा पाई। इन्हीं दिनों इन्हें 'सत्यार्थ-प्रकाश' पढ़ने को मिला, और वे उसे पढ़कर ऋषि दयानन्द के पक्के भक्त बन गए।

आर्यसमाजी होकर स्वामीजी ने अपना नाम मंगलदेव रक्खा और फिर आप सर्वात्मना आर्य समाज के ही प्रचार में लग गए। सारे देश में भ्रमण किया। स्वामीजी अपनी लेखनी, वाणी और सबसे बढ़कर अपने चरित्र-बल से लोगों को प्रभावित करते थे। रिश्वत लेने या अनुचित कमाई करने वाले के यहाँ कभी भोजन न करते थे। स्वामीजी

इनकी स्वाध्याय में बड़ी रुचि थी। इनके पास पुस्तकों का बहुत बड़ा संग्रह था, जिसे ये अपने जीवन में ही दान कर गए। ये बड़े निर्लोभ और निर्लिप्त साधु थे, कविता भी करते थे, गद्य और पद्य में कई छोटे-छोटे ट्रैक्ट भी लिखे हैं। स्वामीजी का देहान्त श्रीमद्दयानन्द अनाथालय में ही हुआ। आप दो ढाई साल बीमार रहे, चलने-फिरने और उठने बैठने तक में असमर्थ हो गये थे परन्तु आपके भक्तों और शिष्यों ने सेवा-शुश्रूषा की समुचित व्यवस्था कर दी थी। इससे उन्हें कोई ऊपरी कष्ट नहीं हुआ।

स्वामीजी का व्याख्यान शैली शान्त और गम्भीर थी। वे एक प्रकार से प्रवचन या कथा करते थे। भीड़-भड़ से वे दूर भागते थे। गृहस्थों के घर जा-जा कर उन्हें उनके कल्याण की बातें बताते रहते थे। स्त्री, पुरुष, बालक सबको एकत्र कर पारिवारिक प्रचार करना उन्हें बहुत पसन्द था। कोई परिचित या भक्त बीमार पड़ जाता तो उसे नित्य देखने जाते, और यदि चिकित्सा अथवा पथ्यादि की कमी होती तो उसकी व्यवस्था कर देते, स्वयम् औषधि लाकर देते, वैद्य डाक्टर को ले जाते। ऐसा था उनका सहृदयतापूर्ण स्वभाव। किसी के आर्थिक कष्ट को भी वे न देख सकते थे। जिस प्रकार सम्भव होता उसे दूर करते-कराते रहते थे। वे बड़े ही निर्लोभ तथा विनम्र थे। जिस व्यक्ति में जो दोष देखते, तुरन्त उसे प्रेमपूर्वक बता देते। स्वामीजी ने सैकड़ों लोगों के दुर्व्यसन छुड़ाये। इनकी वाणी में बड़ा मिठास था। परन्तु वे खरी आलोचना करने में कभी संकोच न करते थे। स्वामीजी की लिखी पुस्तकों में 'पाँच पैर की गऊ' और 'कन्या-विक्रय निषेध' बहुत प्रसिद्ध हैं। आप चिकित्सा भी करते थे। गो-विधवाओं और दीन-हीनों के परम सहायक थे।

स्वामीजी अपनी जीवनी स्वयं लिख गये हैं, जो अभी तक अप्रकाशित है। छपने पर सौ सवासौ सफे की पुस्तक बन सकती है। स्वामीजी के कोई शिष्य चाहे तो इस शुभ कार्य करने का श्रेय प्राप्त कर सकते हैं। हस्तलिखित जीवनी सुरक्षित है।

ऐसे साधु सज्जनों के चारु चरित्र की जितनी चर्चा हो उतनी ही थोड़ी है।

स्वास्थ्य-सुधा

अदरक की उपयोगिता

आयुर्वेदाचार्य श्री प० सत्येन्द्रनाथजी वैद्यराज, आगरा

अब वर्षाऋतु है। इस ऋतु में जलवायु के दूषित होने से लोगों की जठराग्नि मन्द पड़ जाती है। अग्नि के मन्द होने से अजीर्ण अपच, विषमज्वर (मलेरिया बुखार), प्रतिश्याय (जुकाम) कफ खांसी आदि अनेक रोग हो जाते हैं। अतः इन रोगों से बचने और अग्निबल की क्षीणता को दूर करने के लिये इस ऋतु में 'अदरक' का प्रयोग अतीव लाभदायक है उसके कुछ प्रयोग पाठकों के लाभार्थ आगे लिखे जाते हैं। आशा है, पाठकगण इनमें से किसी प्रयोग का उपयोग कर लाभ उठावेंगे।

अदरक के गुण—आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार अदरक चरपरी, तीक्ष्ण, पाक में मधुर, मलभेदक (मल की गांठों को तोड़ने वाली), आम-कफ और वातनाशक, स्वर को उत्तम करने वाली, जठराग्नि प्रदीपक, शोथशूल (उदरशूल) श्वास-काम, अर्श (बवासीर) आनाह, अफरा और समस्त प्रकार के उदर रोग तथा उदर कृमि (पेट के कीड़े) को नष्ट करने वाली है। वर्षाऋतु में दूषित जल जनित विकारों (मन्दाग्नि, विषमज्वर प्रतिश्याय, अपच के दस्त आदि) को दूर करने में इसका प्रभाव मुख्य है।

जो अदरक हरी ताजी, मोटी गांठ वाली अधिक चरपरी, पीसकर निचोड़ने में खूब रस देने वाली हो वही उत्तम होती है, उसी को औषध कार्य में लेना चाहिये। तथा जो सूखी, सड़ी गली, पुरानी अदरक हो वह व्यवहार करने योग्य नहीं है। अदरक को सुखाकर ही सोंठ बनायी जाती है। यदि किसी जगह अदरक नहीं मिले तो अच्छी सोंठ पीसकर उसको पानी में उबालकर उसका रस अदरक का काम दे सकता है।

अदरक प्रयोग करने की निम्न विधियाँ हैं:—

(१) अदरक की मोटी गांठ को पानी से खूब धोकर साफ करले, फिर चाकू से छील कर उसके छोटे छोटे टुकड़े करलेवे। इन तीन माशा टुकड़ों में एक माशा पिसा हुआ सेंधा नमक मिलाकर भोजन करने से पूर्व अच्छी प्रकार चबाकर खा लें। यह विधि दोनों समय भोजन करने से पूर्व करनी चाहिये। इसके प्रयोग से जठराग्नि खूब प्रबल होती, भोजन में रुचि बढ़ती और रुचि बढ़ने से भोजन का भलिभांति परिपाक होता है। जीभ और कण्ठ का कफ दूर होकर इनकी शुद्धि होती है।

अथवा अदरक के टुकड़े, हरी मिर्च, प्याज इनको थोड़ा सा सेंधा नमक और नीबू का रस मिलाकर भोजन के साथ सेवन किया जा सकता है। इससे भी पाचन क्रिया बढ़ती और खाना हज्म होता है।

अथवा अदरक, काला नमक, मुनक्का, भुना जीरा, भुनी हींग और प्याज इनको सिलपर बारीक पीसकर चटनी बनाकर भोजन के साथ खाने से भी उपर्युक्त गुण होते हैं, और पेट की वायु का निस्सरण होता है।

(२) साफ की हुई दो-ढाई तोले अदरक को सिल पर या खरल में पीसकर उसका वस्त्र में निचोड़कर रस ले लेवें। इस रस में बराबर का शुद्ध मधु (शहद) मिलादें। यह अत्युत्तम औषधि बनगई। इसमें से तीन तीन माशे की मात्रा से कफ, खाँसी, श्वास, मन्दाग्नि और अजीर्ण रोगों में तीन तीन घंटा बाद एक खुराक पिलाते रहने से उपर्युक्त सभी रोगों में अद्भुत लाभ पहुंचता है। रोगी प्रयोग कर लाभ उठावें।

(३) साफ की हुई दो तोले अदरक की मोटी गाँठों को कुचल लेवें या चाकू से बारीक टुकड़े करलेवें। ११ कालीमिर्चें और ११ तुलसीपत्र इन दोनों का चूरा करलें। फिर इन सब को चीनी के ढक्कनदार बर्तन में रखकर ऊपर से एक पाव खूब खौलता हुआ पानी डालदें और १५-२० मिनट तक ढक कर रक्खा रहने दें। पश्चात् छानकर गुनगुना पिलाने से शीतज्वर (मैलेरिया बुखार) प्रतिश्याय (जुकाम), सिरदर्द, कमरदर्द तथा अन्य वर्षाऋतु-जनित विकार तीन चार दिन में नष्ट हो जाते हैं यह क्रिया प्रातः और रात्रि दोनों समय करनी चाहिये। इस विधि से सम्पूर्ण शरीर से खूब पसीना निकल कर विजातीय विष शरीर से निकल जाता है।

(४) एक पाव अदरक का रस, एक पाव नीबू का रस और ढाई तोला काला नमक इन तीनों को मिट्टी या चीनी की हाँडी में डालकर चूल्हे पर चढ़ाकर मन्द-मन्द अग्नि से पकावें। इसको लकड़ी के चम्मच से चलाते रहे। जब गाढ़ा हो जावे तब उतार कर काँच की चौड़े मुँह की शीशी में भर कर रख छोड़ें। इसमें से एक छोटी चम्मच भर कर भोजन के पश्चात् दोनों समय चाट लिया करें। इस औषधि के प्रयोग से उदरशूल, गुल्म (वायुगोला) अजीर्ण अपच, अफरा, मलावरोध, उदरकृमि, (पेट में कीड़े पड़जाना), वमन, हिचकी, बवासीर, हृदय का भारी रहना आदि समस्त रोग दूर होते हैं और चित्त प्रसन्न होता है।

(५) जब किसी व्यक्ति का कफ-खाँसी, जुकाम या सरदी के कारण गला बैठ जाय, तब उसको चाहिये कि आवाज को खोलने और कफ खाँसी के निवारण के लिये अदरक की एक मोटी गाँठ को छीलकर उसको मुँह में डाल लेवे और धीरे धीरे उसका रस चूसता रहे। इस भाँति करने से उसका कण्ठ शुद्ध होकर स्वर साफ हो जावेगा।

नोट—कुष्ठ पाण्डु मूत्रकृच्छ्र रक्तपित्त व्रण दाह ज्वर इत्यादि के रोगियों को अदरक का सेवन नहीं करना चाहिये, तथा ग्रीष्म और शरद् ऋतु में भी अदरक का सेवन करना हानिकारक है।

सुझाव और सम्मतियाँ

'मेवजाति' की शुद्धि का प्रश्न

श्री प० गंगाप्रसादजी एम-ए०,
(कार्यनिवृत्त जज)

बहुधा आर्य लोगों को यह विदित है कि अलवर व भरतपुर रियासतों में लगभग एक लाख मेव जाति के लोग बसे हुए हैं। जो पहले राजपूत थे, पीछे मुसलमान हो गये, परन्तु अब तक उनके आचार व व्यवहार कुछ अंशों में हिन्दुओं से मिलते हैं, पाकिस्तान की स्थापना पर जो देश का विभाजन हुआ, उसके बाद कहा जाता है कि लगभग पचास हजार मेवों ने इसलाम को त्याग कर हिन्दू या आर्य धर्म स्वीकार कर लिया, और बहुत-से मेव पाकिस्तान में चले गये। भारत सरकार की प्रेरणा से उनमें से बहुत-से भारत में वापस आ गये। उनके प्रभाव से और कुछ अन्य कारणों से जो मेव हिन्दू या आर्य हो गये थे उनमें से अधिकांश फिर मुसलमान हो गये। कहा जाता है कि इसमें सर्वोदय समाज का भी हाथ था। १२।७।५१ के 'आर्यमित्र' में जो श्री हरसरनदास (गाजियाबाद निवासी) का लेख छपा है उसमें इसकी ओर स्पष्ट संकेत है। देहरादून के प्रसिद्ध आर्य नेता श्री अमरनाथ वैद्य का लेख हाल में ही इस विषय पर 'आर्यमित्र' में छपा था। और भी लेख छपे। इस विषय पर काफी आन्दोलन हुआ। सार्वदेशिक सभा के कुछ कार्यकर्त्ता कुछ सरकारी अधिकारियों से भी मिले।

१५।७।५१ को जयपुर में राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा की बैठक थी। मैं भी उसमें सम्मिलित हुआ था। मैं भारतीय हिन्दू शुद्धिसभा देहली का भी सभासद हूँ। इस लिये मुझको इस विषय में जानकारी प्राप्त करने की विशेष इच्छा थी। सभा के नये उप प्रधानों में एक श्री छोटेसिंहजी हैं, जो अलवर में वकालत करते हैं। पूछने पर उन्होंने बतलाया कि अभी तक आर्यसमाज या शुद्धि सभा या किसी अन्य संस्था की ओर से मेवों की शुद्धि के लिये संगठित रूप से कोई भी उद्योग नहीं हुआ। उनकी सम्मति है कि केवल व्याख्यान आदि से कुछ फल न निकलेगा, किन्तु कोई योग्य एक या दो उपदेशक या संन्यासी वहां जाकर स्थायी रूप से रहें और उनमें सम्पर्क करें। केवल धार्मिक उपदेशक नहीं किन्तु जिस प्रकार मुक्ति - फौज (Salvation Army) के प्रचारक काम करते हैं, उसी प्रकार हमारे उपदेशक उनमें मिलकर काम करते रहें। उनकी शिक्षा में तथा साधारण रोगों को औषधि आदि देने में उनके सहायक हों। इसमें सन्देह नहीं कि सफलता का सच्चा मार्ग यही है। मैंने श्री प० जियालालजी से जो अब राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान हैं, और आर्यसमाज के उद्योगी व पुराने कार्यकर्त्ता हैं वार्त्तालाप किया। मुझे खुशी है कि उन्होंने आश्वासन दिया है कि वे अवश्य एक या दो उपदेशक वहाँ स्थायी रूप से रहने के लिये भेज देंगे। आशा है कि राजस्थान प्रान्तीय सभा इस कार्य में पूरा उद्योग करेगी और देहली की शुद्धि-सभा भी इसमें अपनी शक्ति के अनुसार पूरा सहयोग देगी। काम बहुत बड़ा है और उतने ही महत्व का है। ईश्वर सफलता प्रदान करे।

——

शंका-समाधान

एक देवीजी ने कर्म-व्यवस्था सम्बन्धी एक शंका मेरे पास भेजी है। शंका नीचे दी जाती है—

"एक व्यक्ति जो आर्यसमाज के प्रभाव में आकर आर्य बन जाता है, वह घर बाहर बिरादरी से सताये जाने पर कोई परवा नहीं करता और वह अपने पुत्र-पुत्रियों का सम्बन्ध बिरादरी से बाहर गुण कर्मानुसार करने को उद्यत हो जाता है, परन्तु परिस्थिति वश कुछ को अपनी जाति में ही सम्बन्ध करना पड़ता है और जिसमें अशिक्षा, चोरी, व्यभिचार और अन्य भयंकर दोष भी हैं। ऐसे परिवार में विवाह होने से लड़की को महान् कष्ट होता है, यहाँ तक कि पति का दुराचार इत्यादि जान लेने पर वह पति के घर तक नहीं जाती और महान् कष्ट सहन करती है, ऐसी स्त्री को बहुधा लोग भाग्यहीन या अभागिन समझते हैं, क्या यह लाञ्छन ठीक है? मैंने कर्म-व्यवस्था नामक पुस्तक लिखी है, सम्भवतः इसीलिये यह शंका मेरे पास भेजी गयी है। इस शंका का समाधान इस प्रकार है—

शंका स्वाभाविक है, जब किसी ऐसे व्यक्ति को जीवन में कष्ट होता है, और उन कष्टों का सम्बन्ध उसके इस जन्म के कार्यों से नहीं प्रतीत होता, तो देखने वालों को बड़ा आश्चर्य होता है, और जब कभी कोई ऐसे व्यक्ति को 'अभागा' कहता है तो इसका लाञ्छन बड़ा कटु और न्याययुक्त प्रतीत होता है। इस प्रकार का विचार केवल एक जन्म के आधार पर उत्पन्न होता है, विवाह द्वारा बहुधा ऐसे कष्ट होते हैं, जिनका इस जन्म से कोई सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता। यही अवस्था उन सुखों की है, जो विवाह सम्बन्ध में ही प्राप्त होते हैं। यदि पूर्व जन्म को भी दृष्टि में रखा जाय तो कोई आश्चर्य नहीं। किसी को अकारण सुख या दुःख नहीं मिलता। यह अवश्य है कि पुरुषार्थ द्वारा इस प्रकार के दुःख कम किये जा सकते या मिटाये जा सकते हैं। ऐसी कन्या जिसका अयोग्य परिवार में विवाह हुआ है शिक्षा प्राप्त कर अपना जीवन निर्वाह कर सकती है। यदि न्याय और कानून के आधार पर सम्भव हो तो वह दूसरा विवाह भी कर सकती है।

—पूर्णचन्द्र एडवोकेट

——

'हिन्दू' शब्द त्याज्य है!

वेदतीर्थ श्री प० सुरेन्द्र शर्मा गौर
काव्यतीर्थ

'आर्यमित्र' ने 'डी० ए० वी०' अक्षरों के बहिष्कार पर जो अपनी विचार-योजना प्रकट की है, वह आवश्यक, अत्युत्तम और महत्वपूर्ण है। मेरी धारणा है कि डी० ए० वी० आदि अक्षरों या शब्दों के समान ही 'हिन्दू' शब्द के बहिष्कार का भी आन्दोलन होना चाहिये। ऐसा करना तो ऋषि दयानन्द के आदेश का ही पालन होगा। ४ जुलाई १८७५ ई० को पूना में ऋषि दयानन्द ने १५ व्याख्यान दिये थे। उनका संग्रह 'उपदेश मञ्जरी' के नाम से मुद्रित है। इस पुस्तक के पृष्ठ ४५ पर मूर्तियों में प्राण-प्रतिष्ठा का खण्डन करते हुए चौथे व्याख्यान में ऋषि कहते हैं—'प्राणेभ्योनमः' इस प्रकार के प्राण-प्रतिष्ठा के मन्त्र कहाँ से निकले। सब मिथ्या ही है। इसका विचार हम हिन्दुओं को-नहीं-नहीं,

'मैं भूला हम आर्यों को अवश्य करना चाहिए। हिन्दू शब्द का उच्चारण मैंने भूल से किया क्योंकि हिन्दू यह नाम हमको मुसलमानों ने दिया है। जिसका अर्थ 'काला 'काफ़िर' 'चोर' इत्यादि है, सो मैंने मूर्खता से उस शब्द को स्वीकार (उच्चारण) किया था। हमारा असली नाम तो आर्य अर्थात् श्रेष्ठ है। फिर पृष्ठ १२५ पर आठवें व्याख्यान में ऋषि ने कहा था—

"भाई श्रोतागण 'हिन्दू शब्द का अर्थ तो काला, काफ़िर, चोर इत्यादि है। तो भाई इस प्रकार का बुरा नाम 'क्यों ग्रहण करते हो।' पृष्ठ १३१ पर कहा है, सो भाई क्या तुम अपना मूल नाम (श्रेष्ठ शब्द आर्य नाम) भी भूल गये? हाँ, यह हम लोगों की स्थिति देखकर किसके हृदय को क्लेश न होगा? सब ही को होगा। अस्तु, सज्जनो, अब 'हिन्दू' इस नाम का त्याग करो और आर्य तथा आर्यावर्त इन नामों का अभिमान धरो। गुण भ्रष्ट हम लोग हुए परन्तु नाम-भ्रष्ट तो हमें न होना चाहिए। ऐसी आप सबों से मेरी प्रार्थना है।' पृष्ठ १३६। इसी प्रकार सत्यार्थ-प्रकाश आदि अपने ग्रन्थों और भाषणों में भी ऋषि ने हिन्दू शब्द त्याज्य और आर्य नाम ग्राह्य एवम् उत्तमार्थ कहा है। ऋषि के इस कथन पर कुछ भी टीका टिप्पणी करना आवश्यक नहीं है। यदि 'हिन्दू' शब्द को किसी भी बहाने चिपटाये

भारत के अतीत और वर्तमान समय में, जमीन-आसमान का अन्तर है। कलियुग के पूर्व के समय में, मानव-स्वभाव दूसरे प्रकार का था। उस समय सासारिक आवश्यकताएं बहुत कम थीं। खान-पान में आजकल का-आडम्बर न था। शीतकालमें भाँति भाँति के वस्त्रों की जरूरत न थी। निवास के लिए सात मंजिल के पुख्ता मकानो की आवश्यकता न थी। धन बटोरने और जोडने में लोगों की लिप्सा न थी। तृष्णा की तरगो में बहना अनुचित समझा जाता था। सांसारिक जीवन को प्रारब्ध पर छोड़ कर लोग अन्तर्मुखी बनना ही अपना कर्तव्य समझते थे। लोगो के हृदयो में पाप न था, धनी कहलाने का रोग न था आत्मिक आध्यात्मिक विद्या से अरुचि न थी। खतो में अन्न बहुत पैदा होता था, एव जगलो में स्वतः ही इतने फल पैदा होते थे कि जिनसे लाखों मनुष्य अपना जीवन निर्वाह करके आत्म-चिन्तन में लीन रहा करते थे। यज्ञ करना और कराना ही अतीत भारत के शिरोभूत जन-समुदाय का स्वभाव था। वानप्रस्थ अवस्था वाले लाखों नर नारी, वनो में कुटी बनाकर रहा करते थे। उस समय डाकुओं का भय न था, व्यभिचार की चेष्टा न थी, हैजा व ताऊन की आँधी न थी। उस समय के राजा राजा थे और प्रजा प्रजा थी। उस समय के साधु साधु थे और गृहस्थ गृहस्थ थे। उस समय अकाल न पड़ता था, क्योंकि लोग धार्मिक थे, उस समय अकाल मृत्यु न थी, क्योंकि लोग व्यभिचारी न थे। उस समय संस्कृत भाषा की प्रधानता थी और बच्चा बच्चा वेदानुगामी था। यदि चाहते तो व लोग, वेदों से रल, तार, मोटर, हवाई जहाज, गैस बिजली, रेडियो आदि भाँति भाँति के भौतिक उपकरण प्रकट कर सकते थे। पाँच तत्वों एव मन और बुद्धि से संसर्ग रखने वाला ऐसा कोई भी आविष्कार न तो है और न भविष्य में हो सकता है। जिसका

रखने का किसी को दुराग्रह हो तो वह केवल आत्मवंचना मात्र होगा।

— –

सिंहावलोकन

तब और अब

श्री आनन्दीप्रसाद मिश्र 'निर्द्वन्द्व'

सूत्र वेदो में न हो यह हमारा पक्षपात नहीं, यह बात ध्रुवसत्य है। पूर्व के पुरुषो ने यह जानकर उपर्युक्त आविष्कार नहीं किए कि लोग अन्तर्मुखी जीवन का दिव्य सुख भूल जायेंगे और बाहिर्मुखी मानसिक सागर में डूब जावेंगे। क्या आजकल, उपर्युक्त आविष्कारो के कारण कुछ सुख मिला है? कितनी ईर्ष्या है? कितनी मार-काट है? कितनी अशान्ति है? कितनी खींचातानी है? स्वय मनुष्य ही एक विचित्र यन्त्र बन गया है। थोडा-सा जीवन रखने वालों को इतना झफट शोभा नहीं देता। परमात्मा को भुलाया, आत्मा को भुलाया, धर्म को भुलाया और कर्तव्य को भुलाया। बच्चों के नीरस खेलो की भाँति यह सब किस प्रयोजन का है? दूर-दर्शी पूर्वजों ने जिस आशका से मानसिक कल्पनाओं को रोका था, आज वही कल्पनाएँ साकार बनकर उनकी बुद्धिमानी का प्रमाण दे रही हैं और जगत् के ही जन समाज को रुला रही हैं। जिस चेष्टा को रोका गया था, उत्सुकता ने उसी चेष्टा को सजीव कर दिखलाया। उन महामना पूर्वजों ने, आवश्यकता समझ न्याय, योग, सॉख्य, व्याकरण, चिकित्सा और नीति जैसे उपयोगी शास्त्रों के आविष्कार किए। ऐसा कौन मूर्ख होगा जो व्याकरण के आविष्कार को फोनोग्राफ के आविष्कार से कम क़ीमती समझे। प्रकृति से सम्बन्ध रखने वाली कोई भी बात, वेदों से पृथक् नहीं।

जिस समय पिता वेदान्त में लीन था, माता सयम में लीन थी, बड़ा भाई निरुक्त में लीन था, छोटा भाई सुश्रुत में लीन था, सारा परिवार नदी के तट पर एक कुटीर बना कर वन के खाद्य पदार्थों पर सन्तुष्ट था, सभी लोग ब्रह्मचारी और प्रसन्न चित्त थे। प्रातः चार बजे से छह बजे तक यज्ञ करते थे। जिस समय समस्त परिवार मन्त्रोच्चारण करता था, उस समय कौन कह सकता था कि वह सच्चे अर्थों में साधु नहीं थे। गृह-राग और गृह त्याग का सयुक्त दृश्य कितना मनोहर था, यदि उस समय प्रत्येक व्यक्ति गृहत्यागी हो जाता तो कोई विपरीत घटना नहीं थी। परन्तु आज जबकि चौसठ पैसों के लिए चौबीस घण्टे हड्डा तोड़ परिश्रम करना पड़ता है, तो गृह और कर्म त्याग कर साधु बन जाना देश काल व अवस्था के बिलकुल विपरीत आचरण है। ५६ लाख तो क्या, वर्तमान भारत में ५६ साधु भी बहुत हैं। यदि साधु-वेशधारी को देखकर लोग नाक-भौं चढ़ाते हैं, तो कुछ बेजा नहीं करते।

भारतवर्ष में ५६ लाख साधु वेशधारी व्यक्ति हैं। उनमें से कितने व्यक्ति परमात्मा की वसीअत को स्मरण रखकर उसी की खोज में तल्लीन हैं? ५६ लाख में, जो वास्तव में साधु हैं, उनके प्रति कुछ कहना नहीं। ५६ लाख में एक लाख को हम छोड़े देते हैं। शेष को एकदम गृहस्थ बनकर अपनी ही मेहनत से अपना पेट पालना चाहिये। साधु-वेश धारण करके धन द्वारा अहकार कीर्ति, ईर्ष्या द्वेष, अविद्या और मुहजोरी से सम्बन्ध रखना, परमात्मा से भी नहीं देखा जाता और ससार से भी नहीं।

गृह अनुरागियों के प्रति भी कुछ वक्तव्य है। यद्यपि इन लोगों ने अपने अज्ञान से ससार को नीरस बना डाला है और अपने कमजोर शरीरों के ऊपर आर्थिक कठिनाइयों की शिला रखली है, तथापि इनको निरन्तर भूलें हा न करते रहना चाहिये। यह लोग अपने वर्तमान जीवन से यह दिखला रहे हैं कि ये न तो दीन के रहे, न दुनिया के। न सांसारिक ज्ञान प्राप्त है और न धार्मिक आनन्द उपलब्ध है। वही मसल हुई कि "न खुदाही मिला, न विसाले सनम, न इधर के रहे न उधर के हुए।"

प्रथम तो आपको अपने कुछ विकृत विचार त्यागने होंगे, तदनन्तर आपको कुछ समय आध्यात्मिक अभ्यासो के लिए अवश्य ही देना होगा। घर में रहकर भी ये अपने को योगी कह सकते हैं। यदि इन्हे स्वय ही परमात्मा के उपदेश याद हैं, अथवा किसी कारण से अब याद हो आए हैं, एव सब के प्रति ये सरलता और सात्विकतापूर्वक कुछ काय जारी करना चाहते हैं, तो हमारी सम्मति में ये अपने को योगी समझें। इनका प्रारब्ध ही इनका जीवन-चरित्र है। हमारी सहायता से, ये अपने प्रारब्ध को क्रमशः सुन्दर बनाने में तत्पर हो जावेंगे कि जो अज्ञानवश दोषों से कुरूप बन रहा है। इनका दुख-सुख और इनकी आशा निराशा प्रारब्ध पर निर्भर है। फलतः गृहानुरागी भी रहो आध्यात्मिक पर्चानुरागी भी बनो। लोक भी सभालो और परलोक भी

——

पैदल प्रचार-यात्रा

साधु-सन्यासी पहले घूम-घूम कर प्रचार करते थे। उनकी पैदल यात्रा होती थी। गाँव-गाँव जाना, घर-घर से रोटी माँग कर खाना और सबको उपदेश देना। वर्षा के चतुर्मासों में ये पदयात्री अपनी यात्रा स्थगित कर देते और किसी स्थान पर ठहर जाते थे। चार मास तक कथा-वार्त्ता द्वारा जनता को निरन्तर लाभ पहुचाते थे। ग्रामीण जनता का इससे बड़ा उपकार होता था। यह प्रथा अब भी प्रचलित की जा सकती है। प्रचार का यह बड़ा सुन्दर और समुचित साधन है। आज की प्रचार विधि में मैं तो कोई तत्व नहीं देखता, एक उपदेशक पटना से सहारनपुर किसी उत्सव में जाता है, फिर सहारनपुर से इटारसी पहुँचता है। समय और धन की कितनी हानि हुई और फिर एक-दो व्याख्यानों का लोगों पर प्रभाव भी क्या पड़ेगा।

–शिवदत्त गुप्त

——

यात्रा-वर्णन

(१)

मेरी स्वर्ग-यात्रा

श्री डा० सूर्यदेव शर्मा, एम० ए०, डी० लिट

पाठकगण, शायद उपरोक्त शीर्षक देखकर चौंकेंगे और आश्चर्य से पूछेंगे कि स्वर्ग-यात्रा के बाद भी क्या कोई मनुष्य पुनः भूतल पर आकर अपनी यात्रा का वर्णन लिख सकता है ? हाँ, मैंने स्वर्ग की यात्रा की और उसका कुछ वर्णन पाठकों के सम्मुख भी रख रहा हूँ। वह, कौनसा स्वर्ग है ? वही जिसके लिये मुगल सम्राट जहाँगीर कहा करता थाः—

अगर फिरदौस बररूये जमीनस्त
हमीनस्तो हमीनस्तो हमीनस्त

अर्थात् अगर पृथ्वी-तल पर कहीं स्वर्ग है तो वह यही है, यहीं है, यहीं है। वास्तव में काश्मीर भारतवर्ष का ही नहीं किन्तु भूतल का स्वर्ग है। ससार के अन्य सुन्दर, सुरम्य स्वीटजरलैन्ड आदि देशों को लोग अपने महाद्वीप का स्वर्ग कहते हैं, लेकिन काश्मीर की तुलना में वे भी कुछ नहीं। काश्मीर की गगनचुम्बी पर्वतश्रेणियाँ, हिमाच्छादित धवल शिखर, कलकल निनादिनी सतत प्रवाहिनी सरिताएँ, द्रवित रजतवत् झरते झरने, शीतल मन्द सुगन्धित पवन, आपगातटीय जल प्रपूरित कच्छाबद्ध धान के खेत, चहचहाती हुई चिड़ियाँ, नाना रंग विभूषित फूल और कुसमित क्यारियाँ, बहुविधि स्वादिष्ट मिष्ट फल, हरी हरी घास पर रंग-बिरंगे पुष्प जटित कालीननुमा फर्श और प्रकृति तथा मानव का मनोरम सौन्दर्य कश्मीर को वास्तव में स्वर्ग ही बनाए हुए है। ऐसे स्वर्ग की यात्रा जिसने अपने जीवन में नहीं की उसका जीवन एक बहुत बड़े सौन्दर्य दर्शन से वंचित रहा। मैंने तो इसीलिए एक पर्वत-शिखर पर बैठकर इस कल्पना की तुकबन्दी ही कर डाली, जिसकी कुछ पंक्तियाँ यहाँ दी जाती हैं:—

अहो यदि स्वर्ग इस भूलोक में
सम्भव कहीं पर है
यहीं पर है, यहीं पर है,
यहीं पर है, यहीं पर है।
अगर इच्छा किसी की हो कि
जीवित स्वर्ग में जाये
तो वह मानव यहीं आये,
यहीं आये, यहीं आये।
मिला यदि देखने को स्वर्ग यह
तो भाग जागा है,
नहीं तो मानवी जीवन
अधूरा है, अभागा है।

ऐसे स्वर्ग के दर्शन करने की मेरी उत्कट अभिलाषा थी, अत. ग्रीष्मावकाश के प्रारम्भ होते ही मैं आर्यसाहित्य मण्डल के मैनेजिंग डायरेक्टर श्री मथुरा प्रसाद शिवहरे, प० यज्ञदत्त शास्त्री, श्री पी० एल० जोशी, एम० ए० के साथ कश्मीर क लिए रवाना हुआ। आजकल कश्मीर जाने वालो को भारत सरकार से परमिट लेनी पड़ती है जो हम लोगों ने श्री जगन्नाथजी बी० ए०, एल०एल० बी० का सहायता से दिल्ली में डिफेन्स मिनिस्टरी से प्राप्त की। इस प्रकार हम लोग अमृतसर तक ट्रेन में और वहाँ से लगभग ३५० मील की यात्रा मोटर बस द्वारा करके २७ मई को श्रीनगर में पहुँच गये। पठानकोट से जम्मू तक जो नई सड़क बनी है, कहते हैं, उस पर तो नोट बिछे हुए हैं क्योकि उसके बनाने में सरकार का बहुत व्यय हुआ है। मार्ग में सड़क के किनारे श्रीनगर तक अनेक स्थानों पर भारतीय सेना पड़ी हुई है। श्रीनगर तक जाने में अधमपुर, कुद, बटोट, रामबन, बनीहाल आदि अनेक रमणीय और सुन्दर ग्राम मार्ग में पड़ते हैं और फिर पारपंजाल पहाड़ के ऊपर नौ हजार फुट की ऊंचाई पर सड़क बनाई गई है, जहाँ पहाड़ को काट कर एक फर्लांग लम्बी सुरंग में से सड़क निकलती है। सड़क के किनारे पर अभी तक अनेक स्थानों पर बर्फ जमी हुई थी। इस सुरंग को पार करने के बाद सुरम्य कश्मीर घाटी का दृश्य सामने आ जाता है, जो वास्तविक स्वर्ग का दृश्य उपस्थित करता है।

श्रीनगर शहर झेलम नदी के दोनों किनारों पर बसा हुआ है और उन दिनों भारत के विभिन्न भागों से यात्री यहाँ पर पहुँचते हैं। लगभग १२० यात्री प्रतिदिन इन दिनों में पहुँच रहे थे। पिछले तीन वर्षों से वहाँ यात्री लड़ाई झगड़े के कारण प्रायः नहीं गये थे इसलिये वहाँ के लोगों की आर्थिक दशा और हीन हो गई, क्योंकि भारतीय यात्रियों के कारण ही वहाँ के अनेक लोगों की जीविका चलती है। वहाँ लोग हाउसबोटों में घर बना कर रहते हैं। श्रीनगर में अठारह हाई स्कूल, पाँच कालेज, यूनीवर्सिटी अजायबघर, रेडियो स्टेशन, सरकारी एम्पोरियम, सैन्ट्रल मार्केट आदि अनेक दर्शनीय स्थान हैं और उसके आस-पास शंकराचार्य पर्वत, शाही चश्मा निशात बाग, शालामार बाग, महाराजा का भवन, हरीपर्वत, डल झील आदि अनेक रमणीक और सुरम्य स्थान दर्शनीय हैं। श्रीनगर में पाँच आर्य समाज, दो डी० ए० वी० हाई स्कूल और एक आयकन्या हाई स्कूल हैं। एक डी० ए० वी० कालेज भी था जो अब टूट गया है। हजूरी बाग और बजार बाग के आयसमाजों के मन्दिर अच्छे बने हुए हैं। डल झ ल की यात्रा लोग शिकरा (छोटी नाव) में बैठकर करत हैं। यह झ ल लगभग ४ मील लम्बी और ढाई मील चौड़ा तथा बीस फुट तक गहरी है। इसी के किनारे पर ससार के उद्यानो में सुन्दरतम उद्यान निशात बाग (प्रमोद-उद्यान) तथा शालामार स्थित हैं, जिन्हे क्रमशः आसफखाँ और सम्राट जहाँगीर ने सन् १६४२ और १६१६ ई० में निर्माण कराया था। शाही चश्मा सम्राट शाहजहाँ ने सन् १६४५ ई० में बनवाया था। इसका पानी अत्यन्त स्वादिष्ठ, हल्का, स्वास्थ्यप्रद, निर्मल एक टौनिक के रूप में है। हम लोग श्रीनगर में लगभग तीन सप्ताह रहे और वहाँ के आयसमाजों और डी० ए० वी० हाई स्कूलो में मेरे कई व्याख्यान भी हुए। इसी बीच में तारीख १ से ४ जून तक जम्मू काश्मीर नेशनल कान्फ्रेन्स का वार्षिक उत्सव श्रीनगर के गाँधी पार्क में हुआ। उसमें एक दिन काश्मीर केसरी शेख अबदुल्ला का जलूस नगर में बड़ी शान के साथ निकला और दूसरे दिन पण्डित जवाहरलाल नेहरू का जुलूस झेलम नदी में नावों पर निकाला गया। कान्फ्रेन्स का जलसा बड़ी धूम-धाम से हुआ, और उसमें शेख अब्दुल्ला और पण्डित नेहरूजी के ओजस्वी भाषण हुए जिनको पाठकों ने समाचारपत्रों में पढा होगा।

श्रीनगर के अतिरिक्त काश्मीर में दो और ऐसे स्थान हैं, जहाँ पर लोग जाकर सप्ताह-दो सप्ताह ठहरते हैं, और आस पास के दृश्यों और जलवायु का आनन्द उठाते हैं। इनमें से लिडर घाटी में श्रीनगर से ६० मील दूर पहलगाव बड़ा ही रमणीय है, जिसके पास बर्फ का पुल है जहाँ से अमरनाथ को मार्ग जाता है। दूसरा स्थान श्रीनगर से लगभग तीस मील दूर गुलबर्ग है जो प्राकृतिक रम्य दृश्यावली की दृष्टि से मुझे सबसे सुन्दर प्रतीत हुआ और उसे देखने के लिये हा मैं श्रीनगर से दो बार वहाँ गया। तब भी मेरी तृप्ति नहीं हुई। वहाँ से लगभग चार मील ऊपर की ओर ग्यारह हजार फुटकी ऊंचाई पर खिलिनवर्ग है जहाँ पर यात्री बर्फ पर चलते और बर्फ की गाड़ी में बैठकर ऊपर पहाड़ से फिसलते भी हैं। यहाँ से नगा पर्वत की चोटी, वुलर झील तथा काश्मीर की समस्त घाटी दृष्टिगोचर होती है। वास्तव में श्रीनगर में तो नही गुलवर्ग और खिलिनवर्ग को देखकर दर्शक के मुख से अकस्मात निकल पड़ता है— "यही है स्वर्ग भूतल का" प्रकृति की श्रेष्ठतम रचना। न वर्णन कर सके रसना यहीं पर चाहिए बसना।" इन स्थानो के अतिरिक्त सिन्ध नदी का घाटी सोनामार्ग अच्छावल, शिवपुर, मार्तण्ड, अनन्त नाग आदि अनेक स्थान भी सुरम्य और दर्शनीय हैं। डल झील में तैरते हुए श्वेत चलती-फिरती दुकाने, कमल उद्यान, सोना लङ्का तथा रूपा लङ्का तथा पम्पुर में केशर के खेत आदि भी आश्चर्यजनक स्थान हैं। वास्तव मे काश्मीर का कोई स्थान ऐसा नहीं जहाँ प्रकृति ने अपनी शोभा और रमणीयता की पराकाष्ठा न कर दी हो। इसी कारण इसे पृथ्वीतल का स्वर्ग कहते हैं

लेकिन यहाँ के निवासी अत्यन्त दीनहीन और मलीन हैं। वे स्वच्छता जानते ही नहीं। काश्मीर की सामाजिक और राजनैतिक दशा का वर्णन अगले लेख में किया जायगा।

—

अध्यात्म धारा

शुभ संकल्प

प्रोफेसर एम० एल० शाण्डिल्य, एम० ए०

अब तक किसी मनुष्य का जीवन शुद्ध सांस्कृतिक, नैतिक, आध्यात्मिक और मानवता पोषक विचारों और निर्मल वैराग्य तथा ज्ञान द्वारा उच्चता की श्रेणी पर नहीं पहुँच चुका है, तब तक उसे अधिकार नहीं कि वह अपने विचारों का जनता में प्रचार करे। नहीं तो उनका जनता पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता और उसका ऐसा परिश्रम व्यर्थ ही जाता है। प्रतिभाशाली, तत्व दर्शी, स्थितप्रज्ञ महानुभावों, महात्माओं और कार्यकुशल कर्मवीरों के उपदेशों का जनता पर प्रभाव पड़ना निश्चित है।

एक विद्वान् का कहना है कि "शुभ संकल्प से ही सुन्दर और पवित्र चरित्र निर्माण होता है पवित्र चरित्र से ही घर में समता और एकता विराजने लगती है। घर की समता से ही देश के प्रत्येक क्षेत्र में पूर्ण सुव्यवस्थाओं का आयोजन होता है, और देश की सुदृढ़ सुव्यवस्था से विश्व में शान्ति का राज्य स्थापित होता है।" इस विचार धारा से पता चलता है कि शुभ संकल्प ही विश्व-शान्ति की कुञ्जी है। विश्व शान्ति के मनोहर वृक्ष को हरा-भरा, फूलता-फलता, विस्तृत, सुदृढ़ और सुसंगठित देखने की लालसा और सद्भावना है तो हमें प्रारम्भ से ही अपने हृदय क्षेत्र में शुभ संकल्पों के बीज बोने होंगे और उनको सदाचार, मानवता, सद्भावना आस्तिकता तथा सत्याचार का पवित्र खाद देना पड़ेगा।

प्रत्येक मनुष्य शुभ संकल्पों के परमाणुओं से ही पैदा हुआ है। ऐसा न होता तो वह पशु पक्षी या कीड़े मकोड़े के रूप में ही इस धराधाम पर आता। परन्तु खेद यही है कि ज्यों ज्यों मनुष्य बड़ा होता जाता है और उसको इस संसार के वातावरण में विचरने का अवसर मिलता जाता है, त्यों त्यों न जाने कितने दूषित चक्करों में पड़ कर— शुभ संकल्पों के बीजों को भले प्रकार सींचने के बदले, उल्टा उसको मिटाने और उखाड़ फेंकने में उसे तनक भी संकोच नहीं होता और मनुष्यता से हाथ धो बैठता है। ऐसे व्यक्तियों की संख्या ज्यों ज्यों बढ़ती जाती है, त्यों-त्यों विश्व शान्ति की भावना एक प्रकार से निर्मूल ही होती जाती है।

मानवता के विराट् विश्व-व्यापी वैभव के हम सब क्षुद्र अंश हैं। इस विश्वव्यापी क़ालीन के एक तार के भी दूषित हो जाने से उसकी पहली सी सुन्दरता में कमी आ जावेगी। इसे ज्यों का त्यों सुन्दर रखने के लिये प्रत्येक तार का धर्म है कि वह तनक भी अस्वच्छ और दूषित न होने पाये। नहीं तो उस क़ालीन की सुन्दरता में कमी आने का उत्तर दायित्व उस तार पर ही होगा। विश्व शांति का उत्तरदायित्व हम सब पर व्यक्तिगतरूप से अलग अलग है। हम अपने व्यक्तित्व को यदि पवित्र रखेंगे तो विश्व-शान्ति अवश्य होगी, इसमें सन्देह नहीं। इसके लिये प्रत्येक व्यक्ति का परम कर्त्तव्य है कि जिन शुभ संकल्पों को लेकर उसने मनुष्य जन्म पाया है उनको वह नित्य-प्रति बढ़ाता रहे। प्रातःक्षण हमारे हृदय-मन्दिर में शुभ संकल्पों की आभा चमकती रहे। हृदय के उपजाऊ क्षेत्र में पवित्र शुभ संकल्पों की बाढ़ का तांता लगा रहे।

जब प्रत्येक मनुष्य के हृदय में शुभ संकल्पों की पवित्र गंगा बहने लगेगी तभी वह ईश्वर का सुपुत्र बनने का अधिकारी होगा। इन शुभ संकल्पों को कहीं बाहर से लाने की आवश्यकता नहीं है। ये तो हमारे साथ ही साथ जन्मे हैं। 'जब ज़रा गर्दन झुकाओ देखलो।' बढ़ने और फैलने को लालायित हैं। इनके बढ़ने से हमारी आधिभौतिक आधिदैविक और आध्यात्मिक उन्नति में बड़ी सहायता मिलेगी। शुभ-संकल्पों की सीढ़ी पर धीरे-धीरे चढ़ता हुआ एक मनुष्य वन्दनीय और पूजनीय महात्मा गांधी बन जाता है तो दूसरा अशुभ संकल्पों के अपवित्र नाले में बहता हुआ अपने जीवन-काल में ही निन्दनीय और घृणित हत्यारा होकर कलंकित बन जाता है। प्रातः स्मरणीय पूज्य महर्षि दयानन्द का जीवन शुभ संकल्पों से ओत प्रोत था। उच्च बनने के लिये हमें भी शुभ संकल्पों को पूर्णरूप से जीवन में लाकर उन्हें अपने कर्त्तव्य रूप में परिणत करना होगा। तब ही हम सब सच्चे आर्य बन सकेंगे और बढ़ते-बढ़ते विश्व-शांति की उज्ज्वल और पवित्र मूर्ति के साक्षात् दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त कर सकेंगे। गीता में शुभ संकल्पों का वर्णन इस प्रकार है—

अभयं सत्वसंशुद्धिर्ज्ञान योग व्यवस्थितिः। दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥ अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्। दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्॥ तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता। भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत॥

ये २२ प्रकार के शुभ संकल्प हैं। जितना भी इन पर मनन किया जाव और जितना ही इन्हें जीवन में ढाला जावे उतनी ही उन्नति होने में सहायता मिलेगी। शुभ संकल्प-सम्पन्न मनुष्य का आचार विचार, उठना बैठना, रहन सहन, बात-चीत, मेल मिलाप, खाना पीना लिखना पढ़ना सब ही एक निराले ढंग का हो जाता है। उसके चारों ओर का वातावरण अपने आप ही पवित्रता में बदल जाता है, फिर चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, गृहस्थी हो या सन्यासी, युवक हो या वृद्ध, निर्बल हो या बलवान्, धनी हो या निर्धन, व्यापारी हो या किसान, नौकर हो या मालिक। उसके जीवन में सुख और शांति की ज्योति जाग पड़ती है। इस लिये प्रतिदिन नहीं प्रतिक्षण हमें यह विचारते रहना चाहिए कि शुभ संकल्पों का पौधा बढ़ रहा है या मुरझाया जा रहा है। हृदय-तंत्री में शुभ संकल्पों की झंकार कभी बन्द न हो, 'ओ३म्' के गगन-भेदी नाद की गूंज कभी कम न हो। तब यह अवश्य ही अनुभव होगा कि जीवन को सब प्रकार से उन्नतिशील बनाने के लिये शुभ संकल्प ने कल्पवृक्ष, कामधेनु और अमरज्योति का काम करके एक प्रकार की पुण्य प्रगति पैदा करदी है। इस प्रकार हमारे लिये 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की साधना सिद्ध हो जायगी। दुःख में भी सुख की भावना तथा झलक दीख पड़ेगी। मृत्यु एक नये वस्त्र पहनने के लिये पुराना वस्त्र उतार कर फेंक देने के समान प्रतीत होगी। परमात्मा करे हम सबों की विचार धारा और कार्य-शैली सद्भावों से प्रेरित होकर सुख और शान्ति का राज्य स्थापित करने में समर्थ हो।

'तन्मे मनः शुभ संकल्पमस्तु'

—

'बनावटी जीवन'

आजकल मुकदमेबाजी का बड़ा दौरदौरा है। ज़रा कोई बात हुई, चट अदालती कार्रवाई शुरू हो गयी। पहले मामूली झगड़े-टंटे आपस में या पंचायत द्वारा तय कर लिये जाते थे। कोई किसी से ऋण ले आता था तो चुपके-से सूद समेत या बिना सूद के वापस कर आता था। किसी को मालूम भी न होता था। न रुक्का न पर्चा। आज रजिस्टरी होने पर भी उज़्रदारी पेश की जाती है, और बेईमानी के लिए कानून का सहारा टटोला जाता है। जिसे यह दुनिया 'सभ्यता' कहती है वह ढोंग आडम्बर या बनावट है। जब तक जीवन में सादगी और सचाई नहीं आएगी तब तक व्यक्तियों और समाज का कल्याण कदापि नहीं हो सकता। इस समय सबसे बड़ी ज़रूरत ईमानदारी की है। बिना ईमानदारी के कानून क्या कर सकेगा। मुकदमेबाजी जितनी कम हो उतना अच्छा है।

—त्रिवेणीशंकर शास्त्री, एम० ए०

—

नैतिकता-निरूपण

'मिलना-जुलना'

श्री राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी, एम० ए०

हममें से बहुतों की यह आदत सी पड़ गई है कि किसी के घर पहुंचे नहीं कि पान, पानी, चाय आदि की फ़रमायश करने लग गये। दो एक जगह जहाँ हमारी बहुत ज्यादा बेतक़ल्लुफी हो, वहाँ की बात तो जाने दीजिए, अन्यथा इस प्रकार के व्यवहार से अधिकांश व्यक्तियों को असुविधा ही होती है। किसी समय सम्भव है वह आपकी खातिर न कर सकता हो; सम्भव है, उसके घर में उस समय पान न हो अथवा चाय न हो, यह भी हो सकता है कि उस समय उसके घर में कोई नौकर आदि ऐसा व्यक्ति भी न हो, जो आपको पानी लाकर दे सके। आपने तो पानी-पान माँग दिये, परन्तु उस बेचारे आतिथेय की स्थिति पर तो विचार कीजिए। प्रत्येक भद्र पुरुष घर आए व्यक्ति का सत्कार करना चाहता है और करता है, साथ ही वह यह भी चाहता है कि अपना काम वह स्वतन्त्रता-पूर्वक एवम् अपनी इच्छानुसार करे। वह चाहता है कि अपनी वह पानी, पान सत्कार-स्वरूप अर्पण करे, न कि आपकी आज्ञापालन के परिणामस्वरूप। आपके माँगने पर पानी पान देने का अर्थ है उसकी ओर से सत्कार की कमी एवम् उसके व्यवहार की अकुशलता। प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि वह जो कुछ करे उसके लिये उसे प्रशंसा मिले और अपना काम अपने आप करे। माँगने पर दी जाने वाली वस्तु अतिथि-सत्कार न होकर सिर-दर्द अथवा गले पड़ी ढोलक का रूप धारण कर लेती है।

कुछ लोगों को किसी के घर आते ही टट्टी या मूत्रालय की आवश्यकता होती है। किसी के घर में एक ही संडास हो और वह भी अन्दर। अब वह बेचारा आपको ले जाय मकान के अन्दर, आँगन छत आदि सारी जगहों में घुमाता हुआ। अन्दर उसके घर की स्त्रियाँ भी होंगी। कोई स्नान कर रही होगी, कोई भोजन बना रही होगी आदि। इस प्रकार आपकी टट्टी-पेशाब के कारण वह अपने घर के चलते प्रोग्राम में गड़बड़ डाले, और बेपर्दगी के साथ आपको अपने घर का कोना कोना दिखावे।

बहुत से व्यक्तियों में एक और आदत पाई जाती है। वे किसी के भी मकान में बिना आवाज़ दिये सीधे चले जाते हैं। उन्हें इस बात का कोई ख्याल नहीं रहता कि उनका इस प्रकार अन्दर जाना घर वालों को कितना बुरा मालूम पड़ता है। ऐसी स्थिति में अक्सर यह होता है कि या तो उनसे स्पष्ट रूप से घर के बाहर चला जाने को कहा जाये अथवा किसी बहाने उन्हें टाल दिया जाय। मैंने ऐसे भी व्यक्ति देखे हैं जो एक-दो बार साधारण रूप में नज़र बदलने पर भी नहीं समझ पाते। यहाँ तक कि ज़रा सी गुंजायश पाते ही अन्दर जाकर कुर्सी, मूढ़ा जो भी दिखाई दे जाय, उसी पर जाकर जम जाते हैं। और कुछ नहीं, तो चारपाई पर ही बैठ जाते हैं।

उक्त प्रकार की तथा इसी प्रकार की अन्य अनेक घटनाएँ आप प्रायः देखते और भुगतते होंगे। हमें विश्वास है कि आपको ये सब नापसन्द हैं। आप नहीं चाहते कि आपकी आज्ञा के बिना कोई भी व्यक्ति आपके घर के अन्दर आवे, परन्तु क्या करें, शराफ़त के तक़ाज़े में सब कुछ बर्दाश्त करते रहते हैं—अन्दर ही अन्दर भले ही इन्हें बेहूदे गधे कह कर कुढ़ा करते हों। जो भी हो ये सब आदतें हरकत बुरी हैं। हमें अपने जीवन से इन सब बातों को निकाल देना चाहिये। प्रत्येक व्यक्ति की सुविधा, असुविधा तथा भावनाओं का ध्यान रखना चाहिए। आप तो बैठे हैं शाम के वक्त अपने बच्चों के साथ, और हम पहुंचे दफ़्तर का कोई रोना लेकर। हमें विश्वास है कि हमारा पहुँचना आपको बुरा मालूम होगा। आप तो बैठे हुए खाना खा रहे हैं और हम सीधे रसोईघर में पहुंच जाते हैं, आपसे अपनी सभा के लिए चन्दा माँगने। आप चन्दा देते होंगे, तो न देंगे। साथ ही हमें अशिष्ट एवं बेहूदा समझेंगे।

प्रश्न हो सकता है कि ये सब बातें आखिर कहाँ पढ़ी जायें। ये बातें पढ़ने और बताने की नहीं, बल्कि अनुभव करने की हैं। ये बातें स्कूल और कालेजों की किताबों में नहीं पढ़ाई जातीं। इनका हमारे रक्त में प्रवेश किया जाता है। तभी यह सम्भव होता है कि हम अवसर देखकर ही अपनी बात कहें, तथा अन्य व्यक्तियों की सुविधा असुविधा और भावनाओं का ध्यान रखें। व्यवहार की यह शिक्षा हमें अपने माता पिता तथा अन्य समीपवर्ती गुरुजनों से मिलती है—वह भी भाषणों द्वारा नहीं, बल्कि स्वयं उनके निजी व्यवहार द्वारा। यदि हम चाहते हैं कि हमारी भावी सन्तान स्वतन्त्र भारत की प्रभुता के अनुरूप उच्चकोटि की नागरिक बने, तो हमें निश्चित रूप से तदनुकूल आचरण करना होगा। हमारे बच्चे हमको जैसा करते देखेंगे, वे वैसा ही करना सीखेंगे। हम लोग पुस्तकों की शिक्षा तो प्राप्त कर लेते हैं, परन्तु आदमी बनना नहीं सीख पाते। हमें आदमी बनाने वाली शिक्षा का नाम ही नागरिकता है और उसका हमारे जीवन में नितान्त अभाव है। बड़े से बड़े से लेकर छोटे से छोटा व्यक्ति बिना सोचे-समझे चाहे जो बात चाहे जहाँ कह बैठता अथवा चाहे जिस वस्तु की चाहे जहाँ फ़रमायश कर देता है। बिना आदमीयत की शिक्षा लिए हम किस प्रकार आदमी बनकर आदमियों के बीच में बैठने योग्य बन सकते हैं ?

——

बाल-विनोद

ज्ञानू दादा के नाम पत्र

(१)

राष्ट्रिय स्वयं सेवक संघ के सदस्य और कार्यकर्त्ता आर्य समाज के सदस्य तथा पदाधिकारी हो सकते हैं कि नहीं ?

रामचन्द्र—मन्त्री
आर्यसमाज कायमगंज

[राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ एक राजनैतिक पार्टी है। उसके सदस्य यदि आर्यसमाज के सिद्धान्तों और महर्षि दयानन्द के बनाए आर्यसमाज के दस नियमों को मानते एवं तदनुसार आचरण करते हैं, तो वे समाज के सदस्य और पदाधिकारी क्यों नहीं हो सकते ? आर्यसमाज में तो कांग्रेसी समाजवादी, हिन्दूसभाई, संघी सभी आ सकते हैं, बशर्ते कि आर्यसमाज के सिद्धान्तों और नियमों को हृदय से स्वीकार करें।]

(२)

हम बालकों की यह हार्दिक अभिलाषा है कि अपने ऐसे दादा (ज्ञानूदादा) का जो कि बालकों की तत्वहीन बातों का भी उचित और सारपूर्ण उत्तर देते हैं, परिचय प्राप्त करें।

बीरेन्द्रकुमार आर्य,
चन्दौसी

[लो भाई तुम्हारी इच्छा तुम्हारे साथी राजेन्द्रकुमार आर्य ने पूरी करदी। वे अपने पत्र में लिखते हैं कि—"हमने सुना है कि हमारे दादा कुछ विचित्र हैं। मैंने उनके सम्बन्ध में इस प्रकार कल्पना की है—

कुछ पतले हैं, कुछ मोटे हैं,
कुछ काले हैं कुछ गोरे हैं,
कुछ लम्बे हैं कुछ गट्टे हैं,
कुछ बालक हैं कुछ बुड्ढे हैं।
दादाजी बताइये आप ऐसे

नहीं, तो फिर कैसे हैं ?"

बिलकुल ठीक समझे भाई राजेन्द्र। ज्ञानू दादा सचमुच ऐसे ही हैं।

धन के विचार से पतले हैं,
फिर भी शरीर कुछ मोटा है।
इच्छाएं लम्बी-लम्बी हैं,
लेकिन क़द बिलकुल छोटा है।
बाहर से तन कुछ काला है,
भीतर मन गोरा-सच्चा है।
अनुभव विचार सब बूढ़े हैं,
पर स्वभाव अब भी बच्चा है।]

गरमागरम जामुनें

एक ग्रामीण अपने शहरी मित्र के यहाँ मिलने गया। शहरी महाशय थोड़ी सी जामुनें पत्ते पर रक्खे, नमक मिलाकर बड़े ज़ायके से खा रहे थे। दोस्त को देखकर बोले—'आओ भाई' लो जामुन खाओ। इस पर ग्रामीण मित्र बोला —'यार क्या ठडी और बासी जामुनें खा रहे हो। मेरे यहाँ चलो मैं तुम्हे ताजी ताजी गरमागरम जामुनें खिलाऊँगा।' शहरी दोस्त हँसकर बोले 'क्यो बुद्धू बनाते हो, जामुने भी कहीं गरमागरम होती है।' ग्रामीण ने कहा 'बनाने की क्या बात है? हाथ कगन को आरसी क्या? चलो आजही चलकर देख न लो।'

दोनो दोस्त गाँव में पहुचे। ग्रामीण मित्र शहरी भाई को सीधा बाग में लिवा ले गया। वहाँ उसने पेड़ पर चढ़कर एक लग्गी लगाई और पटर पटर पकी पकी जामुनें नीचे धूल में बरस पड़ी। ऊपर से मित्र बोला- 'जल्दी जल्दी खाओ नही तो ठडी हो जायगी।' शहरी मित्र धूल में से जामुनें बीन बीन कर और फूँक से उनकी धूल झाड़-झाड़ कर खाने लगे। जामुने बड़ी घुली हुई, मीठी और जायकेदार था पर गरम न थी। इस पर शहरी मित्र बोले—'कहो यार आखिर तुम्हारी बात झूठ निकली न। हमें यो ही बनाते थे। जामुने गरमागरम कहाँ है।' इस पर देहाती मित्र हँसते हुए बोला—'क्यो झूठ बोलते हो। सरासर फूक-फूक कर खा रहे हो, फिरभी कहत हो जामुनें गरम नहीं हैं। क्या ठडी चीज भी कोई फूक-फूंक कर खाता है?'

इस पर शहरी दोस्त निरुत्तर हो चुप रह गए।

राजेन्द्रकुमार
मुरादाबाद

—

उत्तर दाताओं की नामावली

५ जुलाई के अंक में १००) को सात थैलियो में बन्द करने की जो गणित पहेली छापी गई थी। उसके अब तक प्राप्त हुए उत्तरो में इनके उत्तर सही है—

शशिभूषण बाजपेयी जम्पुरापुर, रमेशचन्द्र बयाना (भरतपुर), धनसीराम धोदिया, रायगढ़, कान्ताप्रसाद, आर्य पुरानी मन्डी सहारनपुर, नरेन्द्रसिंह राजपूत कन्नौज, नरेन्द्र प्रतापसिंह विद्यार्थी रामपुर, अशोककुमार फतेहपुर-गयन्द, रामचन्द्र यादव बारबकी, सत्यपालसिंह बद्दीपुर (हरदोई), ओमप्रकाश चतुर्वेदी, नया बाजार (लश्कर), विश्वप्रकाश आर्य बस्ती, भगवानदास टॉक उगतपुरी, ब्रह्मज्योतिस्वरूप लोहरदगा, वृन्दावन शर्मा आर्य कुसमरी (मैनपुरी), ओम प्रकाश आर्य रिवाड़ी सरलादेवी गोला गोकरणनाथ, जगदीश्वर दयालसिंह आर्य बहराइच, विपिनविहारी आर्य नगर उएटारी (पलामू), ब्रह्मचारी ओमप्रकाश आर्य गुरुकुल एटा, राजेन्द्रकुमार आर्य चन्दौसी, लखनलाल धुरन्धर आर्य खरोरा रायपुर, चित्रलेखा सकसेना, पटियाली (एटा), रवीन्द्रसिंह यादव मुसिया खेड़ा (एटा),

उत्तर अगले अंक में अवशिष्ट उत्तर-दाताओं के नामों के साथ छापा जायगा।

—

सन्ध्या-रहस्य

श्री सुव्रतसिंह आर्य, सिद्धान्त मनीषी

सबसे प्रथम सन्ध्या विषयक श्रुति क्या उपदेश दे रही है, 'अहरहः सन्ध्यामुपासीत' नित्य-प्रति प्रातः साय सन्ध्या करो। लेकिन पश्चिमी वातावरण ने आर्यावर्त देश को अपने मुख्य उद्देश्यो से बहुत ही पीछे हटा दिया है। यह बीसवीं शताब्दी अहम्मन्यता और अर्थवाद की शताब्दी बन गई है। विज्ञान और प्रकृति की पूजा ने मनुष्य समाज को सर्वशक्तिमान् परमेश्वर की अपेक्षा अपने आप पर बहुत कुछ विश्वासी बनाकर सन्ध्या जैसे आस्तिक भाव को नितान्त भुला दिया है। ऐसी अवस्था में नित्य-कर्म सन्ध्या जैसे प्राचीन श्रद्धा युक्त आस्तिक मनुष्य-कर्तव्य पर कुछ लिखना अनिवार्य है। ईश्वर को अनेकशः धन्यवाद है कि अत्यन्त प्राचीन संस्कारो का प्रभाव अब भी मनुष्य के हृदय पटलो पर अङ्कित है। सहस्रो मनुष्य विरुद्ध विचार रखते हुए भी परम्परा की दृष्टि से ईश्वर में श्रद्धा रखते हैं।

क्या हम जैसे बीसवीं शताब्दी के व्यवहार-व्यस्त लघुविचार-प्राणी परमेश्वर के सम्बन्ध में तर्क कर सकते हैं। प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों के विषय में अन्धे की तरह टटोल कर चलने वाला विज्ञानवाद यदि उस प्रभु को टटोलने का भी साहस करे जिसने इस सारे सुन्दर जगत् का निर्माण किया है, और जो उसे क्षणभर में विध्वस भी कर सकता है? तो यह हास्यास्पद है। जो पक्षियो के कलरव में बोलता है, नदी के कल-कल में गाता है। और आकाश के उज्ज्वल आलोक में रमता है, क्या वह तुच्छ विचार वाले मनुष्यो के तर्क एवम् कल्पना का वस्तु है?

मनुष्य एक फूल को देखकर मुग्ध हो जाता है। पक्षी की मधुर तान पर लोटपोट हो जाता है, महकती हुई मंजरियों से लदी हुई, वायु के झकोरों से लहलहाती हुई आम की शाखाओ पर स्थित कोकिल की मधुर कूक से प्रफुल्लित हो जाता है। कमलों पर मडराते हुए भ्रमरो की गुंजार एवम् स्वच्छ जलाशय में किलोल करते हुए मरालादि के आकाश-भेदी शब्दो से परमात्मा की कारीगरी की विचित्रता पूर्ण रूप से प्रकट होता है।

जो जगत् की तुच्छातितुच्छ वस्तुओ का निर्लज्ज और अकृतज्ञ भिखारी है, उसे उस जगत्, उस फूल और पक्षीगण से अनन्त तक व्याप्त जगत् के निर्माणकर्ता की उपासना करनी योग्य है। यही उपासना सन्ध्या है। जो आत्मा को शान्ति तृप्ति, धैर्य, पवित्रता तथा जीवन प्रदान करती है। परन्तु दुर्भाग्यवश आर्यवश ने अपने पूवर्जों के गौरव को भूल कर सन्ध्या जैसे पवित्र कार्य को नितान्त ही भुला दिया है।

सन्ध्या शब्द दो शब्दो से बना है 'स' 'ध्य', 'सं' अच्छे प्रकार से 'ध्यै' ध्यान करना। अतः वास्तव में चुने हुए वेदमन्त्रो का स्वाध्याय या मनन ही सध्या है। महर्षि मनु ने भी यही कहा है "अध्यापन ब्रह्मयज्ञं"। परन्तु सन्धियों में नियमपूर्वक सन्ध्या करना अनिवार्य है। जैसा कि महर्षि दयानन्द ने पचमहायज्ञविधि में लिखा है—

"सन्ध्यायन्ति सन्धीयते वा परब्रह्म यस्यां सा सन्ध्या।" सन्ध्या में नौ प्रकार के मन्त्र हैं। (१) आचमन (२) इन्द्रियस्पर्श (३) मार्जन (४) प्राणायाम (५) अघमर्षण (६) मनसा परिक्रमा (७) उपस्थान (८) गायत्री (९) समर्पण। सन्ध्या के मन्त्रों में सर्व प्रकार की श्रेष्ठता के भाव भरे पड़े हैं। सन्ध्या का सबसे पहला आचमन मन्त्र आलस्य को दूर करता हुआ, शान्त स्वभाव बनाने की शिक्षा ही नही देता किन्तु साथ में उपाय भी बताता है। 'इन्द्रिय स्पर्श मन्त्र' जहाँ हमें अपने शरीर को पुष्ट बनाने की शिक्षा देता है वहाँ उससे यशस्वी कर्म्म करने का भी आदेश मिलता है। 'मार्जन मन्त्र' में पवित्रता के भाव भरे पड़े हैं। 'प्राणायाम मन्त्र' शुद्ध वायु में गहरे साँस लेने से हमारे स्वास्थ्य को सुधारता हुआ, परमात्मा और आत्मा के अनेक गुणों का चिन्तन कराता है। 'अघमर्षण मन्त्र' ईश्वर की अनन्त शक्ति का चित्र आँखो के सामने खीचते हुए, हमें पाप कर्मों से बचाते हैं। 'मनसा परिक्रमा मन्त्र' परमात्मा को सर्वत्र बताते हुये हमें अभयदान दे रहे है। 'उपस्थान मन्त्र' हमारा आसन ईश्वर के समीप ही जा लगाते हैं। 'गायत्री मन्त्र' हमारी बुद्धियो को श्रेष्ठ मार्ग पर प्रेरित करता और सर्व रक्षक ईश्वर का ध्यान दिलाता है। 'समर्पण मन्त्र' बारम्बार नमस्कारादि से परमात्मा में गहरी श्रद्धा उत्पन्न करता है। जिस सन्ध्या में श्रेष्ठता का भाव उत्पन्न करने वाले इतने मन्त्र मोजूद हों, उनके प्रति दिन पाठ तथा मनन करने से भला मनुष्य में निकृष्ठ भावनाएँ ठहर सकती है'

द्विजातियो के नित्य कर्म में 'संध्या' अनिवार्य है। इसी से मनुष्य द्विजाति कहा जाता है। द्विजत्व के रक्षार्थ तथा मर्यादा रखने के लिए मर्यादा-पुरुषोत्तम श्री भगवान् रामादिक पूर्वज नित्य प्रति श्रद्धापूर्वक सन्ध्या किया करते थे, जसा कि रामायण में अङ्कित है।

विगत दिवस मुनि आयसु पाई
सन्ध्या करन चले दोऊ भाई

प्राचीन काल में सन्ध्या का कितना महत्व और विश्वास था कि सीता महारानी की खोज में लङ्का में बैठा हुआ हनुमान

आर्यजगत

—गत वर्ष की भाँति सभा के उपदेशक प०रामकौशिकजी ने सुन्दरपुर (सहारनपुर) निवासी लाला मुरलीलालजी आर्य के गृह पर, एक सप्ताह तक पुष्कल सामग्री और घृत से यज्ञ कराया तथा रात्रि को उपनिषदों की कथा कही। सभा के वेद प्रचार के लिये २६) दान मिला।

—आ० स० केशवपुर के प्रयत्न से स्व० लखनप्रसादजी की विधवा पुत्री राजकुमारीजी का अन्तर्जातीय विवाह स्व० महेश्वरसिंहजी के पुत्र श्री कृष्णचन्द्रसिंह के साथ गत १८ जुलाई को आ० स० मन्दिर जमालपुर म प० सन्तोषकुमार शर्मा सिद्धान्त शास्त्री द्वारा सम्पन्न हुआ। नगर क अनेक प्रतिष्ठित सज्जन उपस्थित थे।

—सर्वदानन्द साधु-आश्रम हरदुआगज के श्री स्वा० भजनानन्द जी महाराज के व्याख्यान आ० स० मन्दिर नगीना में २ जुलाई से ११ जुलाई तक हुए। जनता पर खूब प्रभाव पड़ा।

—शोक है कि गत १४ जुलाई को आ० स० बलिया के कमठ एवम् उत्साही कार्यकर्ता व वतमान मन्त्री श्री यमुनाप्रसादजी गुप्त का देहान्त हो गया। इनसे पूर्व मई में और भी कई मृत्यु हो चुकी हैं, जिनसे आर्यसमाज के कार्य को बड़ा धक्का लगा है। परमात्मा दिवगत आत्माओं को शान्ति और शोकाकुल परिवारों को धैर्य प्रदान करें।

—आ० स० सुनेल (होलकर) ने १५ जुलाई को अपने कर्णधार श्री प० हरिप्रसाद शर्मा आचार्य के नीरोग होने के लिये परमात्मा से प्रार्थना की।

—आर्यकुमार सभा गाजियाबाद का वार्षिक अधिवेशन सभा के परम हितैषी श्री लहरचन्दजी के सुपुत्र के देहावसान पर शोक प्रकट करता है। परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति और शोकाकुल परिवार को धैर्य प्रदान करें।

—गत ६ जुलाई को स्वामी रमानन्दजी आदि के उद्योग से मोर्चापुरा (बिजनौर) में आर्यसमाज की स्थापना हुई। १७ तथा १८ जुलाई को प्रथम वार्षिकोत्सव समारोहपूर्वक मनाया गया।

—आ० स० जवाँ (अलीगढ़) का १५ वाँ वार्षिकोत्सव १८ जुलाई गुरुपूर्णिमा को मनाया गया। स्वा० आत्मानन्दजी, पं० सुवर्णसिंहजी, कु० रणवन्तसिंहजी आदि के भाषण हुए।

—आ० स० नगौला (अलीगढ़) में गत १५ जुलाई को यज्ञ के पश्चात् श्रीरणवीरसिंहजी एम०ए० का व्याख्यान हुआ। श्री छत्तरसिंहजी भगत द्वारा वाचनालय की स्थापना की गयी।

—आ० स० दभौरा (अलीगढ़) की ओर से २४ जुलाई को वर्षा के निमित्त बृहत् यज्ञ हुआ। प० सुवर्णसिंहजी, स्वामी आत्मानन्द जी, शिवशंकरजी आदि के व्याख्यान हुए।

—शोक है कि १८ जुलाई ५१ को बेतिया (बिहार) के वयोवृद्ध तथा विद्वान् आर्य श्री बालगोविंदजी का देहान्त हो गया। आप बड़े आध्यात्मिक थे। महात्मा गांधी के साथ भी कुछ दिनों रहे थे। आपके शिष्यों और भक्तों की बहुत बड़ी संख्या है। मृत्यु के समय आपकी ८८ वर्ष की आयु थी, परन्तु बीस मील तक पैदल चलते थे। आपके सुपुत्र श्री रामवीरप्रकाश अरुणेश सिद्धान्त शास्त्री हैं।

सार सूचनाएं

—'नमस्ते' की वैदिक व्याख्या क्या है, इसका प्रारम्भ सबसे प्रथम कब और कहाँ हुआ। आर्यसमाज के मासिक, साप्ताहिक या दैनिक पत्र देश विदेशों में कहाँ-कहाँ से किस भाषा में प्रकाशित होते हैं।

भगवानदास पाठक, आर्यवीर
मोठ (झांसी)

—उत्तर प्रदेशीय आर्यकुमार परिषद् बिजनौर की विज्ञप्ति सं० ८ से विदित होता है कि परिषद् अपना कार्य बड़ी तत्परता से कर रहा है। उसके अन्तरंगाधिवेशनों में अनेक महत्वपूर्ण और उपयोगी निश्चय किये गए हैं। परिषद् प्रगतिशीलता का परिचय दे रही है। उत्साही मन्त्री श्री रघुवरदयालु आर्य तथा अन्य अधिकारी सतर्कता से कार्य कर रहे हैं।

—आर्यसमाज रानीसराय (आजमगढ़) ने अपने मन्दिर और धर्मशाला के लिए भूमि लेली है। भवन-निर्माणार्थ धन की आवश्यकता है। दानी महाशय कृपया सहायता करें।

त्रिवेणीप्रसाद मन्त्री

—गुरुपूर्णिमा के दिन भरथना (इटावा) आर्यसमाज मन्दिर में एक पाठशाला स्थापित की गयी है। इसमें भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की परीक्षाओं में बैठने वाले छात्रों को शिक्षा दी जायगी।

व्यवस्थापक

—'डी० ए० वी० के स्थान में दयानन्द आदर्श विद्यालय' नाम होना चाहिए। अर्थात् 'एंगलो' के स्थान पर 'आदर्श' कर दिया जाय।

धर्मेन्द्र, जमशेदपुर

—अखिल भारतीय आर्यावर्तीय आर्यसंन्यासी मण्डल का कार्यालय गुरुकुल चित्तौड़गढ़ (राजस्थान) में है। कथा-व्याख्यान के लिए इस पते पर संन्यासियों को बुलाना चाहिए।

स्वतन्त्रानन्द मुमुक्षु, मन्त्री

—आर्य समाज दीवान हाल देहली का यह अधिवेशन भारत सरकार को विश्वास दिलाता है कि यदि काश्मीर पर पाकिस्तनी आक्रमण हुआ तो इस स्थिति में आर्यसमाज की ओर से सरकार को पूर्ण सहयोग दिया जावेगा

मन्त्री,

उत्सव-सूचनाएँ

आर्यसमाज तिलहर को स्थापित हुए ५३ वर्ष हो गये, अतः उसका स्वर्ण जयन्ती-महोत्सव २१ अक्टूबर से ४ नवम्बर तक समारोहपूर्वक मनाया जायगा।

—गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ का वार्षिकोत्सव १२, १३ तथा १४ अक्टूबर को समारोह पूर्वक मनाया जायगा। नये प्रविष्ट बालकों का वेदारम्भ भी उत्सव पर ही होगा।

निर्वाचन

—आर्यसमाज मूसा नगर-प्रधान श्री सुन्दरलाल मिश्र और मन्त्री श्री मेवालाल तार्किक।

—आर्यकुमार सभा गाजियाबाद-प्रधान श्री दातारामजी और मन्त्री श्री श्यामलालजी

'शाहाना शरीयत' की शैतानियत

कानपुर के उपर्युक्त कठमुल्ले अखबार ने महर्षि दयानन्द, वेद, शास्त्र, हिन्दू धर्म और हिन्दू देवी देवताओं के विरुद्ध जो गन्द उगली है, उसे निम्नलिखित संस्था और समाज घोर घृणाकी दृष्टि से देखते तथा सरकार का ध्यान इस ओर बड़े जोर से आकृष्ट करते हैं—

वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर, आ० स० नजीबाबाद, आ० स० मैनपुरी, आ० स० राजामडी(आगरा), आर्यसमाज लश्कर (ग्वालियर),

---

सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन मेरठ

सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन का सातवाँ अधिवेशन मेरठ नगर में आगामी अक्टूबर में ७ से ६ तक नौचन्दी के मैदान में होगा। इसके साथ अनेक सम्मेलन भी होंगे। स्वागतकारिणी समिति प्रबन्ध को उत्तम से उत्तम बनाने में प्रयत्नशील है। परन्तु उसके हाथ दृढ़ करने के लिये आर्य नर-नारियों को उसे हर प्रकार का सहयोग देना चाहिये। स्वागतकारिणी की ओर से समय-समय पर प्रबन्ध कार्य की प्रगति की सूचना आर्यजाति को मिलती रहेगी।

ज्ञानचन्द, मन्त्री

सीताजी की भेंट का पूर्ण विश्वास सन्ध्या पर कर रहा है—

यदि जीवति सा देवी
ताराधिप विमानिना
आगमिष्यति सावश्य
सन्ध्यार्थे वरवर्णिनी

स्मृतिकारोंमें मनु भी सन्ध्या विषयक स्पष्ट व्यवस्था दे रहे हैं। पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठेत्सावित्रीमार्क दर्शनात्। पश्चिमांतु समासीनो सम्यगृक्ष विभावनात्।

प्रातःकाल की सन्ध्या सावित्री का जप करते हुए सूर्य दर्शन तक पूर्वाभिमुख होकर बैठें, और साय-काल को पश्चिमाभिमुख होकर तारागण-दर्शन तक बैठें।

आयुर्वेद महासम्मेलन

अखिल भारतीय आयुर्वेद महा सम्मेलन का एक विशेष अधिवेशन ११ तथा १२ अगस्त १६५१ को वैद्यरत्न श्री प० शिव-शर्माजी की अध्यक्षता में गाजियाबाद में होना निश्चित हुआ है। इसमें अनेक सामयिक महत्वपूर्ण विषयों पर विचार किया जायगा।

बाबूराम मिश्र, स्वागताध्यक्ष
लक्ष्मीनारायण वद्य, स्वागत मन्त्री

श्रीरणवीर जयन्ती

२१ जुलाई ५१ को श्री रणवीर हाइयर सकण्डरी स्कूल अमेठी राज्य म आर्य प्रतिनिधि सभा क प्रधान श्रीमदनमोहन सेठ एम०ए०, एल०जज की अध्यक्षता म श्री रणवीरजयन्ती क अवसर पर वार्षिक पारितोषक वितरणोत्सव समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ। श्री रणवीर विद्याप्रचारिणी सभा के प्रधान युवराज श्री रणञ्जयसिंह ने स्वागत करत हुए स्वर्गीय राज कुमार श्री रणवीरसिंहजी के आदर्श जीवन पर प्रकाश डाला और उनकी कई रचनाएँ सुनायीं। आपने यह भी बतलाया कि श्री रणवीर विद्या प्रचारिणी सभा इस समय आनन्द पाठशाला, एक जूनियर हाई स्कूल तथा श्री रणवीर हाइयर सेकण्डरी स्कूल का सचालन कर रही है। महारानी बालिका विद्यालय जो योग्य अध्यापिकाओं क अभाव में बन्द हो गया था, उस अब चलाने का प्रबन्ध हो रहा है। आपने बतलाया कि गत वर्ष जो नवीन छात्रावास बनवाने की अपील की गयी थी उसम १०००) स अधिक जमा हो गया है। उसका निर्माण कार्य प्रारम्भ है। युवराज क भाषण क पश्चात् आर्यप्रतिनिधि सभा क मुख्य मन्त्री श्री धर्मपाल विद्यालङ्कार का गवेषणापूर्ण भाषण हुआ जिसमें दीक्षा का महत्व बतलाया। अन्त में विद्यालय क प्रिन्सिपल महोदय ने धन्यवाद दिया तथा श्री युवराज रणञ्जय-सिंह की ओर स समस्त छात्रों को मिठाई बाँटी गयी। उत्सव समाप्ति पर प्रतिष्ठित अतिथियों को राज भवन रामनगर में जलपान कराया गया। दूसरे दिन आर्यसमाज अमेठी में भी श्री मदनमोहन सेठ, श्री धर्मपालजी विद्यालङ्कार तथा महाशय केदारनाथ आर्य के भाषण हुए। युवराज श्री रणञ्जय सिंह ने १५) वेदप्रचार फण्ड में तथा १००) आर्यसमाज रामनगर को आर्य प्रतिनिधि सभा से सम्बद्ध कराने का शुल्क दिया।

मा० श्री चौधरी चरणसिंह को मानपत्र

यू० पी० सरकार के मन्त्री श्री चरणसिंहजी को आर्यसमाज गाजियाबाद द्वारा मानपत्र दिया गया जिसके उत्तर में आपने कहा कि आर्यसमाज स्वतन्त्रता संग्राम का अग्रदूत है। महर्षि दयानन्द ने जिस रचनात्मक कार्य की ओर संकेत किया था उसी को व्यावहारिक रूप महात्मा गांधीजी द्वारा दिया गया। अछूतोद्धार स्त्री शिक्षा स्वदेशी का व्यवहार आदि सब पर स्वामी दयानन्द ने बल दिया था। उन्होंने ही सबसे पहले कहा था कि माता पिता के समान भी यदि विदेशी राजा का राज्य हो तो वह भी स्वराज्य का स्थान नहीं ले सकता। आपने कहा कि मुझे इस बात पर गर्व है कि आर्य समाज ने सेवा के प्रत्येक क्षेत्र में पहले कदम उठाया है।

टंकारा में महर्षि दयानन्द का स्मारक

सार्वदेशिक सभा की विज्ञप्ति

आर्यसमाजों द्वारा हमारा ध्यान सौराष्ट्र टंकारा में महर्षि दयानन्द स्मारक फंड विषयक अपील की ओर आकृष्ट करके पूछा जा रहा है कि सभा का इस विषय में क्या आदेश निर्देश है। हमारे ध्यान में यह बात भी लाई गई है कि कुछ सज्जन इस निधि के लिये धन संग्रह वा जनता को प्रेरणा कर रहे हैं। आर्य समाजों और आर्य जनता की सूचना के लिये यह उद्घोषित करना आवश्यक प्रतीत होता है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने अभी तक टंकारा में स्मारक के स्वरूप के सम्बन्ध में कोई निश्चय नहीं किया है और न इसके लिये कोई अपील जारी की है और न इस सम्बन्ध में किसी अन्य संस्था वा व्यक्ति की अपील को प्रमाणित किया है। सभा की यह दृढ़ सम्मति है कि अनुशासन से स्वतन्त्र अपील द्वारा एकत्र धन का सदुपयोग होना सम्भव नहीं है अत: आर्यसमाजों को निर्देश दिया जाता है कि भिन्न भिन्न व्यक्तियों वा संस्थाओं की ओर से प्रचारित अपील पर धन न दिया जाय।

ज्ञानचन्द आर्य सेवक
मन्त्री सभा

[दूसरे पृष्ठ का शेष]

एक-दो पुरुष प्रथम कुछ दिनों तक सभा और गुरुकुल की दशा का अध्ययन करके अपने विचारों को लेखबद्ध करें और तब वह विचार गिने चुने आर्य नेताओं की सम्मति के लिये उनके पास भेज जायें, और उनकी सम्मति प्राप्त होने के पश्चात् यदि आवश्यकता हो तो छोटी-सी एक कान्फ्रेन्स इस सम्बन्ध में बुलाई जाय। बिना ऐसा किये २५, ३० सज्जन यदि जमा भी होंगे तो वह कुछ विशेष लाभप्रद कार्य न कर सकेंगे।

अगले पृष्ठ पर श्री ला० हरशरणदासजी के "विचित्र विचार" छपे हैं। सम्पादकजी, आपने बेकार ही अपने बचाव में इतना लम्बा नोट लिखा। प्रत्येक समाचारपत्र के लिये आवश्यक है कि वह चलताऊ समाचारों का (करेन्ट टोपिक्स) पर टिप्पणी लिखे और जो सज्जन उस समय जनता की दृष्टि में हों उनके चित्र भी छापे। आर्यमित्र ऐसा ही करता है फिर न जाने क्यों हमारे मित्र ला० हरशरणदासजी ने आर्यमित्र-सम्पादक पर ऐसा करने के लिये हस्तक्षेप किये।

लखनऊ
२६, ७, ५१

मदनमोहन सेठ

छपते-छपते

आवश्यकता

आर्य कन्या पाठशाला काशीपुर (नैनीताल) को एक v t c हाईस्कूल पास प्रधान अध्यापिका तथा एक संस्कृत अध्यापिका की आवश्यकता है वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा।

गोविन्दसिंह
मैनेजर आर्यकन्या पाठशाला
काशीपुर, (नैनीताल)

भजनोपदेशकों की आवश्यकता

मध्यभारत के ग्रामों में वैदिक धर्म का प्रचार करने के लिए सच्चरित्र, सिद्धान्तज्ञ, प्रचार की तीव्र लगन रखने वाले कुशल भजनोपदेशकों की आवश्यकता है। जो अर्थ के विषय में अत्यन्त शुद्धाचरण रखते हों वे निम्न पते पर पत्र व्यवहार करें। वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा।

वीरसेन मंत्री मध्य भारतीय
आ० प्र० सभा०
७२ महारानी रोड,
इन्दौर नगर

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, बलभद्र शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

आर्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

संचालक-आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ

आगरा, ९ अगस्त १९५१

आओ, प्यारी पन्द्रह अगस्त !

श्री हरिशङ्कर शर्मा

सुन्दर स्वतन्त्रता-सूर्य्य उगा,
दासता-रूप तम तोम भगा,
सदियों का सोया देश जगा,
होगया संघटन स्नेह ध्वस्त—
आओ, प्यारी पन्द्रह अगस्त !

अपना विधान : अपना स्वराज,
अपने अधीन सब राज-काज,
पर अन्न वस्त्र पर पड़ी गाज,
रूक हुए त्रस्त आपत्तिग्रस्त—
आओ, प्यारी पन्द्रह अगस्त !

अधिकारों का मद-मोह लिए,
पद-प्रभुता का छल-छोह लिए,
दलबन्दी, दुर्मति, द्रोह लिए,
हो रहे आज हम मस्त व्यस्त—
आओ, प्यारी पन्द्रह अगस्त !

सित स्वार्थ-सर्प फु कार रहा,
मानवता पर मुँह मार रहा,
दानवता-विष संचार रहा,
कर दिये हौसले हाय पस्त—
आओ, प्यारी पन्द्रह अगस्त !

मन में न धर्म ईश्वर का भय,
वाणी म गाँधीजी की जय,
करणी में पाप पुञ्ज सञ्चय,
है दम्भयुक्त जीवन समस्त—
आओ, प्यारी पन्द्रह अगस्त !

"जुग जुग बीते, अब आओगी,
सुख शान्ति, स्नेह, सरसाओगी,
वैभव विभूति बरसाओगी,"
समुदित आशा होगयी अस्त—
आओ, प्यारी पन्द्रह अगस्त !

रिश्वत रमणी का प्रेम प्यार,
सुन्दरी सिफारिश का दुलार,
कनवैसिंग का चिर चमत्कार,
हैं स्वार्थ सिद्धि में सिद्धहस्त—
आओ, प्यारी पन्द्रह अगस्त !

जन-जीवन में तप त्याग नहीं,
नैतिकता में अनुराग नहीं,
मन या दामन बे-दाग नहीं,
खुदगरज और मतलबपरस्त—
आओ, प्यारी पन्द्रह अगस्त !

आई हो तो सादर स्वागत
उत्साह नही पर, आव भगत,
कर रहा आज आरत भारत,
भूखा नंगा, क्षत, लतदस्त—
आओ, प्यारी पन्द्रह अगस्त !

———

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०) | एक प्रति तीन आने | सम्पादक हरिशङ्कर शर्म्मा | वर्ष—२३ अङ्क—?

महाकवि तुलसीदास

महाकवि गोस्वामी तुलसीदासजी कृत अमर महाकाव्य 'राम-चरित-मानस' की गणना विश्व-साहित्य में सर्वथा उचित रूप से की जाती है। रामायण की महत्ता के कारण ही उसका अँग्रेजी और उर्दू कविता में भी सुन्दर अनुवाद हो चुका है, बंगला में भी उसके आधार पर रामायण का निर्माण हुआ है। अब रूसी भाषा में भी तुलसीकृत रामायण का उल्था हो गया है। संसार की अन्य भाषाओं में भी इसका अनुवाद हुआ होगा। राम-चरित-मानस में मर्यादा-पुरुषोत्तम भगवान् राम का आदर्श और उदात्त चरित वर्णित है। मानव-जीवन की विविध दिशाओं और विविध समस्याओं पर इसमें काव्यमयी दृष्टि से विचार किया गया है। मातृ पितृ भक्ति, बन्धु भाव पातिव्रत्य, एक पत्नीव्रत, सेवक-सेव्य भाव, गुरु शिष्य परम्परा, सच्ची मित्रता, अस्पृश्यता प्रेमपूर्ण-प्रजापालन, बहुविवाहविरोध, लोक संग्रह, ईश्वर भक्ति, धर्म प्रेम, प्रतिज्ञा पालन सहिष्णुता आदि सैकड़ों बातों की शिक्षा हमें रामायण से मिलती है। इस महाकाव्य में कुछ बातें ऐसी भी हैं, जिनसे सैद्धान्तिक दृष्टि से हम सहमत नहीं हो सकते क्योंकि वे कवि कल्पना या पौराणिक भावना के आधार पर लिखी गयी हैं। महाकवि तुलसीदास ऐसे समय में हुए थे जब मुगल शासन के प्रभाववश भारतीय संस्कृति बड़े संकट में पड़ी हुई थी। क्षण-क्षण में उसके जीवन को खतरा था। ऐसी विकट परिस्थिति में इस सुबोध और सर्व-सुलभ महाकाव्य की रचना द्वारा महाकवि तुलसीदास ने भारतीय भावनाओं की रक्षा का महान् कार्य किया। जिस 'हिन्दू' शब्द पर आज लोग प्राण देते हैं, उसका तुलसीदासजी के समय में भी बड़ा प्रचार था, परन्तु तुलसीदासजी ने अपने सारे राम-चरित-मानस में कहीं भी 'हिन्दू' शब्द का प्रयोग नहीं किया, वरन् 'आरज' (आर्य) शब्द ही काम में लाए हैं।

'रामचरित-मानस' ने जहाँ महाकाव्य के रूप में करोड़ों व्यक्तियों को शिक्षा दी तथा उनका मनोरंजन किया, वहाँ प्रकाशकों और पुस्तक विक्रेताओं को भी करोड़ों रुपयों का लाभ पहुँचाया, कथा वाचकों को भी प्रचुर दक्षिणा दिलाई। जब तक इस महाकाव्य का अस्तित्व है, तब तक वह निश्चय ही पाठकों का असीम उपकार करता रहेगा। राष्ट्र के लिये कवियों की बड़ी महत्ता है। स्वतन्त्र राष्ट्र में तो उनकी गुण-गरिमा का अधिकाधिक गायन होना चाहिए। किसी राष्ट्र का गौरव उसकी कला-कृतियों द्वारा ही होता है, इन कृतियों में कविता का बहुत ऊँचा स्थान है। अतएव हम विश्व कवि गोस्वामी तुलसीदास की 'पुण्य तिथि' को उनकी स्मृति में अपनी सादर श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

श्रद्धांजलि !

कवि-कुल कमल दिवाकर सुदिव्य देव
राम गुण-गान कर जग को जगा गया
जीवन को उन्नति की चोटी पै चढ़ावें कैसे
भाषा बोलचाल की में सबको सुझा गया
बाँच-बाँच कथा लोग लाते हैं लखूखा रुपे
सम्पति का स्रोत प्रेस वालों पै बहा गया
छोड़ गया 'मानस' विभूति विश्व-वासियों को
आज ही के दिन धराधाम में समा गया

'आर्यमित्र' के सम्बन्ध में—

'आर्यमित्र' आर्यसिद्धान्तों के प्रसार का एक मुख्य साधन है। आर्योपदेशक, प्रचारक व भजनीक जहाँ कठिनता से भी नहीं पहुँच सकते, वहाँ 'आर्यमित्र' केवल आठ रुपये में वर्ष-भर प्रचार करता रहता है। अतएव स्वाभाविक है कि आर्यों में अपने इस पत्र का अधिक से अधिक प्रचार करने की इच्छा उत्पन्न हो। मैं आर्यसमाजों के अधिकारियों के सम्मुख एक व्यावहारिक योजना प्रस्तुत करता हूँ, जिस पर यदि ध्यान दिया गया तो सुगमता से 'आर्यमित्र' की ग्राहक-संख्या कई गुनी अधिक बढ़ सकती है। और इस प्रकार आर्यसमाज का अधिक प्रचार हो सकता है।

आर्यसमाज गाजियाबाद के अधिकारियों ने अब से लगभग १॥ मास पूर्व 'आर्यमित्र' की ग्राहक संख्या बढ़ाने का प्रयास किया। इस निमित्त जो प्रयास किया गया उसके आधार पर यह अनुभव हुआ कि अधिकांश व्यक्ति 'आर्यमित्र' का वर्षभर का चन्दा आठ रुपया देने में तो झिझकते हैं, परन्तु तीन आने प्रति के हिसाब से बारह आने मासिक देने में कोई भार नहीं समझते। यह है भी एक मनोवैज्ञानिक तथ्य। अतएव निश्चय किया गया कि गाजियाबाद में 'आर्यमित्र' की एजेन्सी स्थापित की जाय। स्थानीय एक समाचार-पत्र-विक्रेता से सम्बन्ध स्थापित किया गया और एजेन्सी स्थापित कर दी गई।

इस समय तक यहाँ आर्यमित्र की कुल चार प्रतियाँ डाक द्वारा आती थीं। परन्तु अब एजेन्सी के द्वारा तीस प्रतियाँ और आने लगी हैं। 'आर्यमित्र' का वर्तमान कलेवर व पाठ्य-सामग्री इतनी आकर्षक है कि हमें तीस नये ग्राहक बनाने में कोई विशेष कठिनाई नहीं हुई। इस कार्य में कुल तीन घण्टे से अधिक हमारा समय नहीं लगा। इस दिशा में हमारा प्रयत्न अभी जारी रहेगा। हमारा विश्वास है कि यदि बड़े-बड़े नगरों के आर्यसमाज जहाँ कि एजेन्सी द्वारा पत्र मँगाने की सुविधा प्राप्त है, इस ओर प्रयत्न करें तो सहज ही में 'आर्यमित्र' की ग्राहक-संख्या बढ़ सकती है।

मैं प्रत्येक आर्यसमाज के मन्त्री महोदय से प्रार्थना करूँगा कि आप इस सम्बन्ध में अपने यहाँ के लोगों को प्रेरित करें ताकि मेरठ आर्यमहासम्मेलन के पूर्व ही 'आर्यमित्र' का दैनिक संस्करण निकालने के स्वप्न की पूर्ति की ओर कुछ ठोस तथा क्रियात्मक पग उठाया जा सके। कहने की आवश्यकता नहीं कि 'आर्यमित्र' की ग्राहक-संख्या का तुरन्त बढ़ाया जाना आर्यमहासम्मेलन की सफलता का भी एक कारण बन सकेगा।

रत्नसिंह एम० ए०,
(प्रोफेसर, दर्शन-विभाग)
गाजियाबाद

सम्पादक गिरफ्तार

समाचारपत्रों में प्रकाशित हुआ है कि 'शहनाए शरीयत' के एडीटर जिन्होंने अपने पत्र में हिन्दू देवी-देवताओं, वेद-शास्त्रों और महर्षि दयानन्द के विरुद्ध घृणित प्रचार किया है, कानपुर में गिरफ्तार कर लिये गये और अब उन पर कानून के अनुसार अभियोग चलाया जायगा।

'सूरः पश्यति चक्षुमा'

आर्यमित्र

आगरा, श्रावण शुक्ला ७ संवत् २००८ वि०, गुरुवार, ता० ६ अगस्त १६५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-संवत् १६७२६४६०५१

यं मर्त्यः पुरुस्पृहं विदद्विश्वस्य धायसे।
प्र स्वादनं पितूना मस्त तातिं चिदायवे।

ऋ० ५।७।६

प्रभु ही उपास्य है, विश्व विधाता-धाता
अन्नादिक को मीठा-स्वादिष्ठ बनाता
वह एक मात्र सब का आश्रय-दाता है
ज्ञानी जन उसको ध्याता—अपनाता है

देश की परिस्थिति

अभी कुछ समय पूर्व देश एक सूत्रता में आबद्ध था, कांग्रेस ही राष्ट्र का सबसे प्रधान राजनैतिक समुदाय था, कांग्रेस के ही कर्मठ कार्यकर्ताओं और नेताओं ने देश का शासन सूत्र सँभाला और अभी तक वही उसे सँभाले हुए हैं। केन्द्रीय शासन के मन्त्रि-मण्डल में तो ऐसे भी व्यक्ति सम्मिलित किये गए जो कांग्रेस के सदस्य नहीं हैं और न कभी रहे थे। जनता ने स्वराज्य-शासन से बड़ी बड़ी आशाएँ बांध रखी थीं, सुन्दर और सुहावनी कल्पनाएँ कर रखी थीं, परन्तु वे पूरी न हुईं। अन्न-वस्त्र के भाव चढ़ते ही गए, और भी जीवनोपयोगी वस्तुओं में सस्तापन न आया। गत महायुद्ध के समय जिस मँहगाई का आतङ्क था, वह युद्ध समाप्त होने पर और भी बढ़ गया! कोई कहता है यह संकट महायुद्ध की देन है, कोई 'मुद्रास्फीति' को इसका कारण बताता है, किसी की दृष्टि में बढ़ती हुई जन-संख्या के कारण ही यह दुर्भिक्ष देखना पड़ा है। और भी अनेक कारण बताए जा सकते हैं और बताए जाते हैं। इन पर विचार करने के लिए ये पंक्तियाँ नहीं लिखी जा रहीं। कारण कुछ भी हो परन्तु दुर्भाग्यवश परिणाम बड़ा ही भयङ्कर है, जो आज स्वतन्त्र भारत को भोगना पड़ रहा है।

कन्ट्रोलों के कारण भी जीवन-मार्ग कंटकाकीर्ण बन गया है, ये चोरबाजारी के पिता हैं। इनका दुरुपयोग कर व्यापारियों ने विपुल धनराशि कमाई, बहुसंख्यक जनता को त्रस्त तथा आपत्तिग्रस्त होना पड़ा। परमिटों के प्रसाद और प्रताप से बड़े-बड़े दरिद्र लोग भी धनवान् बन गए, और जो लोग इस कला में प्रवीण न थे, वे हाथ मलते रह गये। जिस वोट-बल ने एम० एल० ए० आदि बनने में सहायता प्रदान की थी, वही बल प्रतिफल में परमिट-प्रसाद तथा अन्य सुख-सुविधाएँ पाकर कृतार्थ हो गया, साथ ही त्याग तपस्या की पुण्यभूमि में भ्रष्टाचारिता की भयङ्कर भट्टी दहक गयी। ऐसे समय में रियायत, हिमायत, खुशामद, सिफारिश और रिश्वत की सेनाओं ने अधिक उग्रता से आक्रमण किया। अपराधों की संख्या बढ़ी और भ्रष्टाचार का भार भी भारी हुआ। जनता ने सरकार को बुरा-भला कहना शुरू किया, और सरकार ने जनता को अनैतिक एवं भ्रष्ट बताया। कांग्रेस किं कर्तव्य-विमूढ़ हो गयी, सुधार और उद्धार उसके वश से बाहर होगया। यही नहीं बहुत-से कांग्रेसी भी आरोपों और आक्षेपों के लक्ष्य बन गए, जो कितने ही अंशों में यथार्थ भी थे। कांग्रेस के प्रति भी लोगों की अश्रद्धा और भर्त्सना शुरू हुई, खद्दर दम्भ की द्योतक समझी जाने लगी, और गाँधी टोपी 'कालुष्य-कवच' कहलायी। रिश्वत, रियायत और सिफारिश से अपराधों की संख्या बढ़ी। अमुक व्यक्ति से अमुक काम निकल सकता है, कानूनी फन्दे से वह बचा लेगा और कुकर्मरत धन्धे से यों त्राण मिल जायगा। ऐसे ही भावों की भरमार से भ्रष्टाचार बढ़ा और अपराध चमके।

लोगों ने सोचा कि कांग्रेस के विरोध में दूसरा दल बनाया जाय वह भी बन गया और धड़ाधड़ उसकी जमात बढ़ने लगी, परन्तु करामात की कमी बराबर बनी हुई है। कांग्रेस हो या प्रजापार्टी, हिन्दू सभा हो या राष्ट्रिय स्वयंसेवक संघ, कम्युनिस्ट हों या सोशलिष्ट हों जब तक राष्ट्र में नैतिकता, सदाचार और मानवता का उदय न होगा, तब तक कोई भी दल शान्ति स्थापना नहीं कर सकता। सत्य और अहिंसा अर्थात् आध्यात्मिक आधार ही से भारत स्वतन्त्र हुआ है और यह आध्यात्मिकता ही शिशु स्वराज्य की रक्षा कर सकती है। सबसे प्रथम सब दलों और पार्टियों को मिलकर नैतिकता प्रसार में प्रवृत्त होना चाहिये। यह नैतिकता ही एकता की जननी है। जब तक लोग वैयक्तिक स्वार्थ-सागर के महा मगर बने रहेंगे और अपना स्वार्थ, राष्ट्र के स्वार्थ में सन्निहित न करेंगे, तब तक देश में शान्ति न होगी और न सुख-सूर्य का उदय हो सकेगा। हाँ, एक दल के विरोध में दूसरा दल खड़ा होने से दोनों में प्रतिद्वन्द्विता के भाव अवश्य जाग्रत् हो जायेंगे जिससे मनोमुखतापूर्ण उच्छृंखलता की तीव्र गति में कुछ शिथिलता अवश्य आ सकती है।

आर्य महासम्मेलन

सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन की तैयारियाँ बड़ी धूम धाम से हो रही हैं। यह महासम्मेलन ६ से १२ अक्टूबर तक मेरठ में किया जायगा। सारे देश के आर्यों में इसके लिए बड़ा उत्साह है। प्रश्न किया जाता है, यह सम्मेलन किस लिये किया जारहा है, उसमें मुख्य और महत्वपूर्ण बात क्या होगी। हमारी समझ में इस प्रश्न का उत्तर यही हो सकता है कि यह सम्मेलन स्वतन्त्र भारत में सम्भवतः पहली बार हो रहा है, इसमें आर्यसमाज का संगठन सुदृढ़ और व्यापक बनाने पर विचार होना चाहिये, आर्यसमाज का भावी कार्यक्रम निश्चित होना अनिवार्य है। आर्यों में जीवन-जागृति की भावना किस प्रकार उत्पन्न हो, यह सोचना है। वस्तुतः यह एक ही विषय है, अर्थात् आर्यसमाज को देश की महान् शक्ति बनाने के लिये व्यावहारिक या क्रियात्मक उपाय क्या-क्या हैं। यदि मेरठ आर्य महासम्मेलन यह सोचने में समर्थ और सफल हुआ तो वह निःसन्देह सफल कहा जायगा। नहीं तो पिछले कई सम्मेलनों की भाँति यह भी सम्मेलनों का सम्मेलन या व्याख्यानों की प्रदर्शिनी बन कर रह जायगा। इस महासम्मेलन में स्वागत समिति को लगभग पचास सहस्र रुपया व्यय करना पड़ेगा। और यदि उसमें न्यूनातिन्यून पचास सहस्र व्यक्ति भी सम्मिलित हुए और प्रत्येक व्यक्ति का व्यय औसत से बीस-बीस रुपया भी पड़ा तो दस लाख रुपया और खर्च होगा। आने वालों के समय का मूल्य आँकना तो व्यर्थ ही है। जिस महासम्मेलन में इतना अधिक व्यय हो, उसका एक एक क्षण कितना मूल्यवान और महत्वपूर्ण होना चाहिये। यह समय 'रस्मी सम्मेलनों' में न बिताया जाय, इनके लिए तो आर्यसमाजों और गुरुकुलों के उत्सव और महोत्सव ही बहुत काफ़ी हैं। हमारा अभिप्राय यह है कि मेरठ महासम्मेलन कुछ ठोस काम करे, वह सम्मेलनों की प्रदर्शिनी न बनने पावे। हम समझते हैं कि महासम्मेलन में जिन प्रयोगात्मक और प्रगत्यात्मक विषयों पर विचार हो उन्हीं पर विद्वानों के व्याख्यान भी कराये जावें, जिससे जनता को सोचने-विचारने और अपनी सम्मति स्थिर करने में सहायता मिले। महासम्मेलन की कार्यवाही नित्य तीन घण्टे से अधिक न हो, इसमें विचारों को वैधानिक रूप दिए जायें, शेष समय में उन्हीं विषयों से सम्बन्ध रखने वाले प्रवचन या भाषण होते रहें छोटे-मोटे अन्य सम्मेलन स्थगित कर दिये जायं। यदि जनता में जीवन जागृति और संगठन तथा सतर्कता है, तो अवश्य ही आर्यसिद्धान्तों,

संस्कृति और वैदिक भावनाओं का उत्तरोत्तर प्रचार होगा। और यदि जीवन-जागृति नहीं है तो ये सम्मेलन अरण्य रोदन या रस्म अदायगी मात्र समझे जायेंगे। पहले हमें अपने में और जनता में जीवन लाने की जरूरत है। इसी पर सम्मेलन का मुख्य लक्ष्य होना चाहिये।

शिक्षा-विभाग की चिट्ठी

८ मार्च, १२ अप्रैल और ७ जून के 'आर्यमित्र' के सम्पादकीय स्तम्भों में हमने ऐसी तीन पुस्तकों के विषय में शिक्षा-विभाग के अधिकारियों का ध्यान आकृष्ट किया था, जो सरकारी विद्यालयों के पाठ्यक्रम में सम्मिलित हैं, और जिनमें महर्षि दयानन्द तथा आर्य समाज के सम्बन्ध में अनुचित और असत्य बातें लिखी गई हैं। ७ जून के 'मित्र' में प्रकाशित 'साहित्यिक भ्रष्टाचार' शीर्षक सम्पादकीय लेख तो हिन्दी के प्रतिष्ठित पत्र 'विशाल भारत' में भी उद्धृत हुआ है। परमात्मा का धन्यवाद है कि इस आवश्यक विषय की ओर उत्तरप्रदेशीय हाईस्कूल और इण्टरमीडिएट बोर्ड के अधिकारियों का ध्यान गया और डिप्टी डायरेक्टर साहब ने हमें लिखा है—

आपने ७ जून के 'आर्यमित्र' में 'साहित्यिक भ्रष्टाचार' शीर्षक लेख लिखकर कुछ लेखकों की कुछ पुस्तकों पर टीका टिप्पणी की है। यदि आप चाहते हैं कि इस सम्बन्ध में कुछ कार्यवाही की जाय तो कृपया पुस्तकों और लेखकों के नाम तथा विषय लिखकर तुरन्त भेज दें।

उक्त चिट्ठी पढकर हमें बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि 'आर्यमित्र' में आपत्तिजनक पुस्तकों के लेखकों और प्रकाशकों के नाम तो पहले ही दिये जा चुके हैं। पृष्ठ संख्या और पंक्तियों तक का उल्लेख कर दिया है। यह भी लिख दिया गया है कि पुस्तक किस श्रेणी में पढ़ाई जाती है। समझ में नहीं आता कि बोर्ड को और क्या चाहिए। ऊपर की चिट्ठी में एक बात बड़े मजे की लिखी है, वह यह कि "यदि हम चाहते हैं कि इस सम्बन्ध में कुछ कार्यवाही की जाय" (If you wish action to be taken) तो लेखकों और पुस्तकों के नाम लिख भेजे। मानो बोर्ड का इस दिशा में कुछ कर्तव्य ही नहीं है। वह अपनी ओर से कोर्स की किताबों में लिखी असत्य और अनर्गल बातोंके निवृत्यर्थ स्वयम् कुछ नहीं करना चाहता। ७जूनके जिस अङ्क का हवाला डिप्टी डायरेक्टर साहब ने अपने उक्त पत्र में दिया है, उसी में पुस्तक के लेखक, प्रकाशक और विषय का भी स्पष्ट उल्लेख है। पृष्ठ-संख्या भी दी गई है। हम समझते हैं शिक्षा-विभाग एक प्रतिष्ठित संस्था है, उसमें ऐसी उपेक्षा, असावधानी और 'दीर्घसूत्रता' का प्रवेश न होना चाहिये। प्रथम तो बोर्ड को यही सोचना चाहिए कि स्कूलों की किताबों में ऐसी बेढंगी बातें क्यों गयीं। कोर्स-कमेटियों ने यदि ध्यान नहीं दिया था तो बोर्ड के अधिकारियों के इस ओर उदासीन या शिथिल रहने का क्या कारण है। अब हमारे सुझाने-समझाने पर भी ऐसी ढीली पोली नीति क्यों बरती जा रही है।

'पेशा या 'मिशन'

आजकल पत्रकार-कला के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की व्याख्याएं की जा रही हैं। अधिकतर लोगों की सम्मति में पत्रकार कला एक व्यवसाय है, जो जीविकाजन के लिये अपनाया जाता है। 'पत्रकार' के रूप में, जीविकाजन द्वारा निर्वाह करना, बुरा नहीं है, परन्तु हम इसे पेशा नहीं कह सकते। पेशों में सदैव आमदनी पर लक्ष्य रखा जाता है। वही पेशेवर सफल समझा जाता है, जो अधिक धन पैदा करता है। परन्तु एक सच्चे पत्रकार के लिये यह कैसे सम्भव हो सकता है। मान लीजिए एक ऐसा पत्रकार है, जो महर्षि दयानन्द का अनन्य अनुयायी रहकर आर्यसमाज के सिद्धान्तों का समर्थन करता है, और इसे केवल सौ रुपये मासिक मिलते हैं। परन्तु दूसरा पत्र जिसकी नीति आर्य सिद्धान्तों का विरोध करना और स्वामीजी को खोटी खरी सुनाना है, उक्त पत्रकार को पाँचसौ रुपये मासिक देने को तैयार है, तो क्या उसे उस पत्र में धन के लोभ से जाना चाहिए। पेशा कहता है, अवश्य जाना चाहिए, परन्तु सिद्धान्तों और विचारों का बल उसे उस ओर प्रवृत्त होने से रोकता है, अतः वह पाँचसौ मासिक के लाभ को लात मारदेता है,तो फिर वह पेशा कैसे हो सकता है। वह तो 'मिशन' ही है। 'मिशन' में सिद्धान्त-पालन का प्रश्न मुख्य और निर्वाह का प्रश्न गौण होता है। अगर कोई पत्रकार धन के लोभ से, अपने विचारों के विरुद्ध काम करने को प्रवृत्त होता है, तो न उसकी लेखनी में ओज रहता है, और न भावनाओं में बल दिखाई देता है। वह तो एक दम सिद्धान्तशून्य बन जाता है। जिसने टके दे दिये, उसी ने अपने पक्ष का समर्थन करा लिया! ऐसे पत्रकार पत्रकार-कला के लिये कलङ्क-स्वरूप होते हैं, उन्हें 'जमीर फरोश' या 'विवेक-विक्रेता' कहना चाहिए। इसी लिये हमारी निश्चित सम्मति है कि पत्रकार का काम 'प्रोफेशन' (पेशा) नहीं 'मिशन' है। और एक सच्चे तथा ईमानदार पत्रकार का पद किसी मिनिस्टर अथवा राजा-महाराजा से किसी प्रकार भी कम नहीं कहा जा सकता।

जितने गुरुकुल उतने 'विश्वविद्यालय'!

आर्यसमाज के अनेक 'गुरुकुल' हैं, कुछ पुराने और कुछ नये। अब तो ऐसा है कि जहाँ दस-बीस विद्यार्थी मिल गये, वहीं 'गुरुकुल' स्थापित कर दिया जाता है। यही गुरुकुल दो-तीन वर्ष बाद या पहले दिन से ही 'विश्वविद्यालय' (यूनीवर्सिटी) बन जाते हैं, दीक्षान्त-उत्सव करते और उपाधियाँ बाँटते हैं। यानी जो गुरुकुल है, वह विश्वविद्यालय भी है। जिस समाज में इतने विश्वविद्यालय हों, उसकी शिक्षा सम्बन्धिनी उन्नति का कुछ ठिकाना है। हम नहीं समझते, इतने अधिक विश्वविद्यालयों का क्या महत्व है, और उनकी उपाधियों की कौन प्रतिष्ठा करेगा। हम कई बार आर्यनेताओं का ध्यान आकृष्ट कर चुके हैं कि सरकार द्वारा स्वीकृत 'दयानन्द-विश्वविद्यालय' तो जब बनेगा तब बनेगा, यद्यपि वह शीघ्र बनना चाहिए, परन्तु 'गुरुकुल-विश्वविद्यालय' की स्थापना तो तुरन्त ही हो जानी चाहिए। सब आर्यप्रतिनिधि सभाएं मिलकर एक 'गुरुकुल विश्वविद्यालय' बनाएँ। इसके अधीन ही सब गुरुकुल हों और जो नाम मात्र के गुरुकुल व्यर्थ जनता का धन बरबाद करते हैं, वे पाठशाला या विद्यालय बना दिये जाय। गुरुकुल विश्वविद्यालय के अन्तर्गत जितने गुरुकुल हों उनकी पाठ-विधि, प्रबन्ध व्यवस्था और उपाधियाँ समान हों। सबका एकही दीक्षान्त या उपाधि वितरणोत्सव हो। ऐसा करने से जहाँ इन संस्थाओं का महत्व बढेगा, वहाँ गुरुकुल के नाम पर चलने वाली बहुत-सी संस्थाओं की समाप्ति भी हो जायगी। कुछ गुरुकुलों की उपाधियों का इससे अधिक उपहास क्या होगा कि स्वयं उनके स्नातक लोग उनकी उपाधियों को अपने नामों के साथ लगाना पसन्द नहीं करते। इन 'उपाधियों' की प्रतिष्ठा बढ़ानी चाहिए और यह तभी सम्भव होगा जब उपाधियों को महत्ता प्रदान कर उन्हें ऊँचा उठाया जायगा।

वेद-प्रचार-सप्ताह

गत वर्षों की भाँति इस वर्ष भी आगामी १७ अगस्त से २४ अगस्त तक अर्थात् श्रावणीसे श्रीकृष्णजन्माष्टमी तक 'वेद प्रचार-सप्ताह मनाया जायगा। आज इसी अङ्क में अन्यत्र प्रान्तीय आर्यप्रतिनिधि-सभा द्वारा निर्धारित कार्यक्रम प्रकाशित किया जाता है। समस्त सब आर्यसमाजों को इस पर ध्यान देकर अपना कर्तव्य-पालन करना चाहिए। यदि यह सप्ताह प्रान्त के लगभग एक सहस्र आर्यसमाजों द्वारा श्रद्धा-उत्साह और सलग्नता से मनाया जाय तो जनता में बड़ी जागृति हो सकती है और आर्यसमाज की गति-विधि में भी पर्याप्त प्रगतिशीलता दिखाई दे सकती है। श्रावणीपर्व हमारा सांस्कृतिक और धार्मिक पर्व है। इससे वेद और शिक्षा विधि का घनिष्ठ सम्बन्ध है। श्रावणी को कुछ लोग 'सलूनों' भी कहते हैं। कहा जाता है कि मुग़ल शासन में फस्ली सन् श्रावणी से ही शुरू होता था, इसीलिये उसे 'साले नौ' यानी साल (वर्ष) नौ (नया) कहते थे। वही पीछे 'सलूनों' हो गया। कुछ भी हो, श्रावणी पर्व बहुत पुराना है; इसकी हमारे यहाँ बड़ी महत्ता है. वेदप्रचार-सप्ताह श्रावणी का ही महत्वपूर्ण अंग है, अतः उसे बड़े उत्साह और आनन्द के साथ मनाना चाहिए।

स्वास्थ्य-सुधा

प्राकृतिक चिकित्सा

प्रो० विनयमोहन शर्मा ए० ए०

[इस लेख के विद्वान् लेखक श्री शर्माजी नागपुर विश्वविद्यालय के प्रतिष्ठित उपाध्याय हैं। आपने अपने जीवन में प्राकृतिक चिकित्सा के अनेक उत्तम प्रयोग किये हैं। आपका जीवन बड़ा ही संयत और प्राकृतिक पद्धति के आधार पर है। सम्पादक]

अम्लपित्त

मराठी 'प्रभा' में श्री० कानिटकर ने अपना एक अनुभव प्रकाशित कराया है। आप लिखते हैं, "मैं दो वर्ष से अम्लपित्त से पीड़ित था। भोजन जरा भी नहीं पचता था, मेरा स्वास्थ्य गिरता गया। रक्त में कमी होने लगी, चेहरे पर सफेदी छाने लगी। वैद्य कहते कि मीठे पदार्थ, फल, घी आदि खाना चाहिए, पर मुझे मीठी चीज हजम ही नहीं होती थीं। खट्टे, चरपरे और तेल के तले पदार्थ ग्रहण करते ही उबकाई आ जाती थी। वैद्यों ने पाचक ओषधियाँ और डाक्टरों ने सोडा-बाय-कार्ब आदि दवाइयाँ दीं। एक डाक्टर ने सलाह दी कि 'जो पदार्थ तुम्हें पचे, खाया करो।' अम्लपित्त दो प्रकार का होता है—एक पेट के ऊपरी भाग में तैयार होता है और दूसरा पेट के निचले भाग में। पाचन-शक्ति कम होने से अन्न पेट में अधिक समय तक रहता है और वह वहीं सड़ता है। इससे जो पदार्थ प्रकृतितया खट्टा हो और पच न सकता हो, उसे हर्गिज न खाना चाहिए। उदाहरणार्थ-भात, बेर, खीर, आलू का साग, जामुन आदि स्वभावतः अम्ल उत्पन्न करते हैं। मैंने रोटी और मक्खन खाना शुरू किया। इससे मुझे लाभ हुआ। डकारें कम हुईं और शौच होने लगा। पहले अन्न के न पचने से मुझे दस्त नहीं होता था। सोने के पूर्व रोज लिक्विड पैराफिन, अरण्डी का तेल या या अन्य कोई रेचक ओषधि लेनी पड़ती थी। डाक्टर वैद्यों ने नीबू खाने की सलाह दी थी परन्तु उससे मुझे हानि ही हुई। अन्त में मैंने दवा न लेने का निश्चय किया और निम्न कार्य-क्रम से रहन-सहन शुरू कर दिया-जिससे मुझे लाभ होने लगा।

१—सुबह-शाम तीन मील घूमने का व्यायाम। २—दिन में केवल दो बार भोजन। ३—कुछ दिन तक रोटी और मक्खन का सेवन किया। ४—गेहूँ की रोटी ज्यादा खा लेने पर अपच हो जाता और कम खाने से पेट नहीं भरता था, इसलिए मैंने गेहूँ की रोटी ही खाना छोड़ दिया था। ५—ठण्डा पानी जितना आवश्यक होता पीता था। ज्यादा पानी नुकसान करता था। ६—रात को कभी भी देर तक न जागता था। आठ घण्टे नींद लेने का नियम जारी रखा। ७—जब हाजत हो तभी शौच के लिए जाता। इस कार्य-क्रम से मेरा रोग दूर हो गया। मैं अपने खान-पान में बड़ा नियमित था। अब अन्न पचने लगता तो ज्यादा खाने से भी तकलीफ न होती।

नेत्र-रोग

आँखों की बीमारियाँ इस समय बढ़ती आ रही हैं। इसका कारण यह है कि हम बचपन से ही उन पर अनावश्यक दबाव डालते हैं। आँखों का चीर फाड़ द्वारा भी इलाज किया जाता है। परन्तु उससे विशेष लाभ नहीं होता। प्राकृतिक ढंग से चिकित्सा करने से नेत्र रोग दूर होने का अनुभव अनेकों को हुआ है। सुबह सूर्योदय के समय-हलकी धूप में किरणों की ओर मुँह कर हाथों से आँखों को जरा ढाँपकर कुछ देर तक खड़े रहना चाहिए। फिर छाया में आकर आँखें खोल लेनी चाहिएँ। इस तरह कुछ समय तक अभ्यास करने से आँखों की ज्योति बढ़ने लगती है। रतौंधी भी दूर हो जाती है। दिन भर पढ़ते-लिखते समय कई बार पलकें गिराना-उठाना चाहिए। पलकों के बार-बार न मारने से भी आँखों को अनेक रोग घेर लेते हैं। अवकाश के समय हथेलियों से आँखों को बार-बार बन्द करना भी अच्छा व्यायाम है। दाएँ-बाएँ, ऊपर-नीचे पुतलियों को घुमाना लाभप्रद है। आँखों को चौड़े बर्तन में भरे पानी में भी डुबाकर नीचे देखने से भी सफाई हो जाती है। पढ़ते समय एकटक नहीं देखना चाहिए। सोते समय चित्त लेटकर पढ़ने की जिनकी आदत हो, उन्हें यदि उनके नेत्र खराब हो गये हैं, इस तरह पढ़ना बन्द कर देना चाहिए। रात को पढ़ते समय बाईं ओर से पुस्तक या पत्र पर प्रकाश आये, इसका प्रबन्ध कर लेना उचित है।

इन्फ्लुएंजा

इन्फ्लुएंजा के दिनों में हमें सफाई से रहने तथा भीड़ के स्थान पर न जाने की आवश्यकता है। महायुद्ध के पश्चात् इन्फ्लुएंजा ने जो इतना जोर पकड़ा था, उसका कारण यह था कि युद्ध विषैली गैस तथा लाशों के क्षेत्रों में सड़ने के कारण वायु-मण्डल ही दूषित हो गया था। भीड़ में जाने से परस्पर श्वासोच्छ्वास में गंदी वायु फेफड़ों में जाती है, जो हानिकारक होती है। रात का जागरण भी इन दिनों नहीं करना चाहिए। 'जल्द सोना और जल्द उठने' का सिद्धान्त-पालन करने से अनेक बीमारियों का आक्रमण रुक जाता है। जिस कमरे में आप सोते हैं, उसकी खिड़कियाँ खुली रखें। खान पान में अति से परहेज कीजिए और अँतड़ियों को साफ रखिए। यदि आपके दाँतों में कोई बीमारी हो तो उसका इलाज अवश्य कराइए क्योंकि सड़े हुए दाँतों के द्वार से जो कुछ भी आपके शरीर में प्रविष्ट होगा, उससे शरीर विषमय ही बनेगा। इन्फ्लुएंजा के दिनों में सभा-सोसायटियों, सिनेमा-गृह, थिएटरहाल में जाने का शौक कम कीजिए। बीमार हो जाने की दशा में, आराम से बिस्तरे की शरण लेना चाहिए, और उसके कमरे में ज्यादा आदमियों का आवागमन न होना चाहिए। छींकते और खांसते समय रूमाल लगा लेना चाहिए जिससे रोग-कीटाणुओं का कमरे में फैलाव न हो सके। कफ आदि को किसी बर्तन में एकत्र कर दूर फेंक देना चाहिए। बीमारी की हालत में भोजन नहीं देना चाहिए। बुखार उतर जाने पर अपने दैनिक कार्य-क्रम पर क्रमशः आना चाहिए। परिश्रम से अपने को बचाना चाहिए।

'केन्सर'

अमेरिका के प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक मि० बिरनर मैकफेडन ने 'केन्सर' विशेषतया उदर के केन्सर (इस बीमारी में उदर में फोड़ा या घाव हो जाता है) से बचने के कतिपय प्राकृतिक उपाय बतलाये हैं। मि० मैकफेडन कहते हैं कि 'केन्सर' की बीमारी शरीर की सहनशक्ति (Vitality) के गिर जाने से होती है। यदि मनुष्य अपने पाचक यंत्रों को और अँतड़ियों को ठीक रख सके तो उसे इस बीमारी के होने का भय ही नहीं रहता। स्वास्थ्य का सबसे पहला सिद्धान्त यही है कि 'ज्यादा मत खाओ' और जो कुछ खाओ उसे खूब चबा-चबाकर खाओ। दाँतों का काम 'आँतों' से न लो। प्राकृतिक भोजन करो—याने सीधा-साधा भोजन लो। उसमें अधिक मिर्च-मिसाले डालने की आवश्यकता नहीं। आटे को बग़ैर छाने उपयोग में लाना चाहिए। चोकर के प्रयोग से अँतड़ियाँ, मल को शुद्ध करने का अच्छा काम करती हैं। हरी शाक-भाजी के प्रयोग से भी कब्ज का भय नहीं रहता। शुद्ध जल का खूब प्रयोग करो, और जहाँ तक हो सके खुली हवा और धूप में ज्यादा रहो। गरम भोजन जिससे जबान जलने लगे, हरगिज मत खाओ। अंगूर के रस पर महीनों रहने से यह रोग दूर होता है।

चेचक की बीमारी

बम्बई दया-प्रचारक संघ ने श्री बी० एन० फड़के की चेचक से बचने की बतलाई हुई ओषधि प्रकाशित कराई है। 'चेचक को रोकने और दूर करने के लिए केले का बीज बड़ा उपकारी होता है। गोवा के डाक्टर बहुत दिनों से इसका प्रयोग करते आ रहे हैं। हाल ही में बम्बई आर्थर रोड अस्पताल में भी इसका प्रयोग हुआ है। जोरों की चेचक में भी इससे लाभ हुआ है। चेचक वा

शिक्षा-विस्तार के विचार से उत्तर प्रदेश में बहुत पहले सबसे प्रथम मेरठ आर्यसमाज ने एक मिडिल स्कूल की स्थापना की, पीछे यही स्कूल मेरठ से देहरादून ले जाया गया और वहाँ वह हाई स्कूल में परिणत होगया। श्री चिन्तामणिजी के मन्त्रित्व-काल में उपर्युक्त डी० ए० वी० हाई स्कूल इण्टरमिडिएट कालिज बना। उन्हीं दिनों कानपुर आर्य-समाज ने भी एक 'नाइट स्कूल' (रात्रिपाठशाला) खोला जिसमें आर्यसमाज के कार्यकर्तागण अवैतनिक रूप से अध्यापन-कार्य करते थे। यही नाइट स्कूल आगे चलकर डी० ए० वी० हाई स्कूल और डी० ए० वी० कालिज में परिवर्तित हो गया। जहाँ वर्त्तमान डी० ए० वी० हाई स्कूल और कालिज का भवन है, वहाँ एक बँगला था, जिसे ३८५००) में ले लिया गया था। प्रारम्भ में कालिज ने सरकार से किसी प्रकार की सहायता न ली और अध्यापकों आदि ने अल्प वेतन लेकर ही कालिज की सेवा की, किन्तु कुछ समय बाद प्रमुख सरकारी अधिकारियों एवम्

और तरह के विस्फोटक विष के शरीर में प्रवेश करने और स्फोटक के निकलने के बीच के समय में यदि केले के बीज का प्रयोग किया जाय तो सब के सब रोगियों को लाभ पहुँचना निश्चित है। इस बीज में यह शक्ति भी है कि यह जोर का बुखार भी आठ पहर के भीतर उतार देता है। चेचक से बचने के लिये इसकी मात्रा इस प्रकार होनी चाहिये—बड़ों के लिये केले के आठ बीजों का करीब दस ग्रेन चूर्ण यदि शहद या दूध के साथ एक बार खा लिया जाय तो निश्चित है कि साल-भर तक चेचक आदि रोग न होंगे। बच्चों के लिए चौथाई और ५ से १५ वर्ष तक के लिए आधी मात्रा है। चेचक से छुटकारा पाने की मात्रा इस प्रकार है। बड़ों के लिए केले के बीज का दस ग्रेन चूर्ण शहद के साथ दिन में दो बार देना चाहिए। अवस्था देखकर आवश्यकतानुसार तीन से पाँच दिनों तक रोज इसी तरह दवा देनी चाहिए। रोगी के लिए हलके भोजन की व्यवस्था करनी चाहिए।

संस्था-परिचय

डी० ए० वी० कालिज कानपुर

आवश्यकताओं के प्रभाव से कालिज ने सरकारी सहायता स्वीकार कर ली। इस प्रकार डी० ए० वी० कालिज ट्रस्ट एण्ड मैनेजमेंट सोसाइटी यू० पी० के अन्तर्गत इस समय डी० ए० वी० हायर सेकण्डरी स्कूल कानपुर, डी० ए० वी० कालिज कानपुर, डी० ए० वी० हायर सेकेण्डरी स्कूल देहरादून, डी० ए० वी० कालिज देहरादून और श्री नारायण स्वामी इण्टर कालिज रामगढ़ है।

प्रारम्भ में जब आर्यसमाज ने स्कूली शिक्षा का कार्य मेरठ से प्रारम्भ किया था, तब कालिज-सोसाइटी के अध्यक्ष स्व० श्री लक्ष्मणस्वरूपजी थे और स्व० बाबू आनन्दस्वरूपजी मन्त्री थे। मेरठ स्कूल जब वहाँ से उठकर देहरादून चला गया तब प्रबन्ध-समिति के सभापति स्व० बाबू ज्योतिःस्वरूपजी बनाये गये। सन् १६१८ ई० में कानपुर में डी० ए० वी० कालिज की स्थापना हुई। सर्वप्रथम स्व० श्री शङ्करसहायजी सभापति हुए, उसके बाद सभापति स्व० बाबू आनन्दस्वरूपजी तथा मन्त्री स्व० मुंशी ज्वालाप्रसादजी तथा संयुक्त मन्त्री बा० ब्रजेन्द्रस्वरूपजी निर्वाचित हुए। श्री आनन्दस्वरूपजी के बाद १६३१ ई० से बा० ब्रजेन्द्रस्वरूपजी ने सभापति का कार्य सँभाला, जिसे वे अब तक बड़ी योग्यता से करते रहे। पूरे बीस वर्ष काम करने के पश्चात् अधिक आयु होने के कारण आपने अब २२ जौलाई को अपने कार्य से अवकाश ग्रहण कर लिया।

डी० ए० वी० कालिज के प्रथम प्रिंसिपल श्रीयुत लाला दीवानचन्दजी हुए, फिर इस पद को वर्तमान प्रिंसिपल श्री कालिकाप्रसादजी भटनागर ने सँभाला।

श्री ब्रजेन्द्रस्वरूपजी ने डी० ए० वी० कालिज ही नहीं कानपुर नगर की भी बड़ी सेवा की। आप कानपुर नगरपालिका के अध्यक्ष और शिक्षाध्यक्ष रहे। बारह वर्ष तक कानपुर इम्प्रूवमेंट-ट्रस्ट बोर्ड के आनरेरी अध्यक्ष रहे। आपने दंगों और महामारी के समय भी नगर की प्रशंसनीय सेवा की। इन सेवाओं के उपलक्ष्य में आपके नाम पर कानपुर में एक पार्क बनवाया गया और सरकार ने आपको 'रायबहादुर' की उपाधि दी, जिसे आपने वापस कर दिया।

कानपुर की अन्य अनेक सार्वजनिक संस्थाओं से भी बा० ब्रजेन्द्रस्वरूपजी का बड़ा सम्बन्ध है। आगरा विश्वविद्यालय में आप 'डीन आफ् दी फैकल्टी आफ् ला' हैं। इस विश्वविद्यालय ने आपकी सेवाओं के उपलक्ष्य में आपको आनरेरी 'डाक्टर' की उपाधि प्रदान की है।

गत २२ जुलाई को डाक्टर ब्रजेन्द्रस्वरूप को कालिज से विदाई दी गई। विदाई देते समय श्री ला० दीवानचन्दजी, प्रिंसिपल कालिकाप्रसाद भटनागर, श्री शिवकुमारलाल श्रीवास्तव, श्री प्रेमनारायण शुक्ल आदि के प्रशंसात्मक भाषण हुए।

डी० ए० वी० कालिज कानपुर उत्तर प्रदेश की बड़ी महत्वपूर्ण शिक्षा संस्था है। इसकी स्थापना में स्व० बा० आनन्दस्वरूपजी और स्व० मुंशी ज्वालाप्रसादजी ने बड़ा काम किया था। पीछे डा० ब्रजेन्द्रस्वरूपजी ने भी उसे बड़ी योग्यतापूर्वक सँभाला। कालिज में उच्चकोटि के उपाध्याय और अध्यापक हैं, उसका परीक्षा-परिणाम भी प्रशंसनीय रहता है। कालिज कमेटी को इस कालेज का नाम 'दयानन्द महाविद्यालय' कर देना चाहिये। डी० ए० वी० नाम अनुपयुक्त प्रतीत होता है। आर्यसमाज का विशुद्ध वायु-मण्डल साम्प्रदायिकता के कीटाणुओं से सर्वथा अछूता रहे, इस पर भी कालिज के नेताओं को सदैव ध्यान रखने की जरूरत है। समाज, सभा और संस्थाएँ सभी की पवित्रता अपेक्षित और आवश्यक है।

हमारी धूमधाम

आचार्य श्री विश्वश्रवाः

आर्यसमाज में जो बाहरी धूमधाम है, वह किसी संस्था के लिये जीवनप्रद, शोभाजनक और प्रतिष्ठाकर हो सकती है, पर एक दिन आएगा जब यह कुछ न रहेगा। रहेंगे परोपकारिणी सभा के गर्त में ऋषि दयानन्द के अमुद्रित ग्रन्थों के सड़े कागज, ऋषि के अपुष्ट ग्रन्थ। छीछालेदर किया ऋषि कृत वेद-भाष्य, अनाथ पाठविधि और आर्ष चक्षु से दृष्ट पर असंगत प्रतीयमान ऋषि की हजारों बातें। ऋषि के देहान्त से लेकर आज तक, आर्ष पाठविधि पर एक भी अच्छा ग्रन्थ नहीं लिखा गया। अनार्ष टीकाओं से आर्ष-ग्रन्थों के पढ़ाने का छात्रों पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है। परोपकारिणी सभा के संग्रहालय में ऋषि का अमुद्रित वेदभाष्य पड़ा है तथा ऋषि की अन्य भी अमुद्रित चीजें पड़ी हैं, उनके प्रकाशन की ओर ध्यान देना चाहिए। ऋषि कृत ग्रन्थों पर प्रौढ़ टीकाएँ लिखी जानी चाहिएँ। सार्वदेशिक सभा और परोपकारिणी सभा के पुस्तकालयों में ऋषि के समस्त ग्रन्थों के समस्त संस्करण रहने चाहिएँ। ऋषि के अनुपलब्ध ग्रन्थ खोजे जावें। इस कार्य के लिये सारे देश में घूमना पड़ेगा। कौमुदी, कुमार सम्भव, जागदीशी, पञ्चदशी छोड़कर ऋषि का भाष्य देखना चाहिए कि वह किस स्थिति में है। आचार्य शङ्कर के शिष्यों ने शङ्कर-साहित्य को अमर बना दिया, परन्तु ऋषि दयानन्द के शिष्य, भक्त और आर्यसमाज के कर्णधार इस दिशा में क्या कर रहे हैं? याद रखिये, बाह्य आडम्बर से काम नहीं चलेगा, ठोस काम करना होगा। साहित्य-निर्माण ही सबसे बड़ा और ठोस काम है। इसकी ओर ही अग्रसर हूजिए।

वेदप्रचार-सप्ताह

वेदप्रचार सप्ताह १७ अगस्त से २४ अगस्त तक अर्थात् श्रावणी से श्रीकृष्ण जन्माष्टमी तक उत्तर-प्रदेश के सारे आर्यसमाजों में बड़ी श्रद्धा और गम्भीरता से मनाया जायगा।

साहित्य-सौरभ

चित्र का दूसरा पहलू

श्री प० गङ्गाप्रसादजी उपाध्याय

पिछले एक लेख में मैंने अपने कुछ साहित्य सम्बन्धी अनुभवों का उल्लेख किया था। यद्यपि उनके वर्णन करने में मैंने किसी अत्युक्ति का प्रयोग नहीं किया तो भी मैं समझता हूँ कि लोग शायद इस को शिकायत के रूप में लेंगे। परन्तु यह बात नहीं है, अनुभव कटु भले ही हो अस्वाभाविक नहीं, आ सम्पादकजी ने मेरे एक लेख क आलोचन में यह पद लिख दिया था।

'गुण न हिरानो गुणगाहक हिरानो है।'

अर्थात् साहित्यकार तो हैं परन्तु उनके गुण के ग्राहक नहीं हैं। यह बात है तो ठीक ही। परन्तु आज मैं एक और बात लिख रहा हूँ। गुणी लोगों को ग्राहकों की परवा नहीं करना चाहिये। आज से कोई बीस वर्ष हुए होंगे मैं शतपथ ब्राह्मण का अनुवाद करने बैठा। पुस्तक इतनी बड़ी है कि इसके पूरा करने में मुझे दस साल लग गये। गर्मियों की छुट्टियों में जब लू चलती थी मैं अपने कमरे में एक तौलिया हाथ में लिये पसीना पोंछ-पोंछ कर पुस्तक को लिखता जाता था। एक बार अपने ज्येष्ठ पुत्र डा० सत्यप्रकाश के समक्ष मेरे मुँह से निकला। "इतना परिश्रम व्यर्थ है, न दस हजार रुपये होंगे न पुस्तक छपेगी। और तीन-चार हजार पृष्ठों की (२४) की पुस्तक मोल भी कौन लेगा?" श्री प० घासीरामजी ने कई बार मुझ से कहा, 'क्यों इसके पीछे पड़े हो?' परन्तु सत्यप्रकाश ने एक ऐसी बात कही जो मेरे जी को लग गई। उन्होंने कहा, 'आप छपने या बिकने के क्यों पीछे पड़े हैं।' यह भी तो समय था जब छापेखाने न थे। लोग केवल इसलिए साहित्य लिखते थे कि उनमें एक गुण था। और वह उसका प्रकाशन अच्छा समझते थे। आप अपना काम करते जाइये। दूसरों का काम दूसरे जानें।

यह नसीहत अच्छी थी और मैं इसी का अनुसरण कर रहा हूँ। साहित्य—(उच्च साहित्य) बाजारू है ही नहीं, जिसके लिये ग्राहकों की जरूरत हो। उच्च साहित्य मूली-गाजर नहीं है, जो बाजार में आते ही बिक जाय। उसके लिए परखने वाले की जरूरत है। मिलटन अंग्रेजी का बहुत बड़ा कवि था। उसके जीवन में उसकी पुस्तक "स्वर्ग विछोह" (पैराडाइज लौस्ट) के केवल दो संस्करण छपे और हरएक में उसको पाँच-पाँच पौण्ड मिले। पुस्तक लगभग ३० वर्ष के परिश्रम से लिखी गई थी। कारण यह था कि वह सर्व साधारण के स्तर से बहुत ऊँची थी। इस लिये यदि मेरी किसी कृति की गुरुजन प्रशंसा करें और वह न बिके तो मैं यही अनुमान लगा लेता हूँ कि वह साधारणस्तर से ऊँची चीज है, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि मैं लिखना छोड़ दूँ। यदि मैं ऐसा करना तो कभी का बैठ गया होता। मैं दूसरे साहित्यकारों से भी यही कहता हूँ। यदि उनको रुपया ही कमाना था और ग्राहकों की परवा करनी थी तो वह बीड़ी का कारबार शुरू करते और शीघ्र ग्राहकों का जमघट उनको मिल जाते। जिस इंगलैण्ड में हजारों मन कागज रोज साहित्य-निर्माण में व्यय होता है उसी इंगलैण्ड में हरबर्ट स्पेंसर को अपने "मूल सिद्धान्त" (First Principlas) नामी ग्रंथ के लिखने में कई हजार का घाटा उठाना पड़ा। किसी प्रकाशक का साहस नहीं हुआ कि उसको छापकर अपना धन फँसाता।

मैंने लिखा था कि आर्य-समाज में न इतिहासकार हैं, न प्रकाशक न खरीदार! इससे मेरा यह आशय नहीं था कि आर्य-समाज में लेखक ही नहीं, लेखक तो बहुत हैं लेकिन ऐसे लेखक नहीं। जो वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार के हेतु ही काव्य, उपन्यास, इतिहास या दर्शन लिखें। यह बात है तो कठिन कि साहित्य की मांग न होते हुए भी साहित्यकार साहित्य-निर्माण में लगे रहें, परन्तु है आवश्यक। जनसाधारण की अभिरुचि के स्तर को उच्च कलाकार ही ऊँचा कर सकते हैं।

सौन्दर्य-सन्धान

श्री आनन्दीप्रसाद मिश्र "निर्द्वन्द्व"

भक्त कवि एवं आर्टिस्ट के लिए सुन्दर और असुन्दर कही जाने वाली ऐसी पृथक्-पृथक् दो वस्तुएं नहीं हैं। उनकी भावना में सब वस्तुओं के भीतर जो नित्य तत्व है, वही सुन्दर है। जो कुछ इन्द्रियों से ग्राह्य है, वही अनित्य है। उसकी सुख-शृंखला और मान-परिमाण सभी अनित्य हैं। अतः साधारण मनुष्य समाज के लिए जो सौन्दर्य नित्य है, उसका पता लगाना नितांत असम्भव है।

हम लोगों का मन केवल सुन्दरता-आस्वाद ग्रहण कर सकता है। कोई भी यह बात नहीं कह सकता कि आर्टिस्ट की दृष्टि में यौवन सुन्दर है, वृद्ध कान्त नहीं। प्रकाश सुन्दर है, अन्धकार नहीं। प्रकाशमान दिवस सुन्दर है, मेघाच्छन्न दिवस नहीं। वर्षा की सरिता सुन्दर है, शरत् सरिता नहीं। चन्द्रकला सुन्दर है, और पूर्णचन्द्र नहीं। जिन्हें आर्ट का थोड़ा भी ज्ञान नहीं है, उनके लिए किसी वस्तु विशेष या आदर विशेष में ही सुन्दरता की कल्पना करना सम्भव है। कबीर आर्टिस्ट थे, इसीलिए उन्होंने कहा है कि "सबही मूरत बीच अमूरत मूरत की बलिहारी।" जो अच्छे आर्टिस्ट है, उनकी बनाई हुई सभी रचनाओं में हमें यही दीख पड़ता है कि उत्तम-मध्यम सभी मूर्तियों में अमूर्त विराजता है।

रुचि भी बदलती है और आदर्श भी बदलता है। "हमारे मन और भावनाओं में प्राण के साथ गुप्त रूप से जो नित्य एवं सुन्दर स्रोत बह रहा है, उसी को सुन्दर आदर्श कह सकते हैं, और किसी वस्तु को नहीं।" सभी पदार्थों में सुन्दरता की सीमा है, और उनमें कुछ न कुछ नित्य तत्व का रस है।

बाह्य रूप-रंग बदलता रहता है किन्तु जो नित्य है, उसमें परिवर्तन नहीं हो सकता। समस्त शिल्प की जाँच करने के लिये हम लोगों में से प्रत्येक के हृदय में नित्य सुन्दरता का एक आदर्श है। "बड़े-बड़े आर्टिस्ट सुन्दरता का आदर्श गढ़ने को नहीं आते। जो वस्तुएं समय-समय पर नियमानुसार सुन्दरता का आदर्श बनना चाहती हैं, उन्हीं के तोड़ने और सुन्दर असुन्दर के मिश्रण द्वारा बहने वाली सरिता के स्रोत में बहा देने के लिए उनका आगमन होता है। इसीलिए आर्टजगत् में शिल्प की प्राचीन धारा के साथ नवीन धारा का मिश्रण होने से नूतन-नूतन सौन्दर्यों की सृष्टि होती है। जो सचमुच शक्तिशाली है, वह तो प्राचीन प्रथा को पीछे ढकेल कर आगे बढ़ता है, परन्तु जो अशक्त है, वह नियमों के बन्धन में बँधकर शनैः शनैः उस महान् शिल्प-रचना की धारा के साथ अपना भी स्वर मिला, अपने आपको क्षुद्र अनुभव कर उसी के साथ बहता है। "सौन्दर्य लोक के सिंहद्वार की चाबी अपने भीतर ही है। जब आन्तरिक सिंहद्वार खोला जाता है, तब बाह्य सौन्दर्य वहाँ पहुँच जाता है। हृदय मन्दिर और भीतर की सूचना बाहर अबाध स्रोत में बह चलती है। प्रत्येक को अपने आप सुन्दर असुन्दर के ज्ञान के उत्कृष्ट उपाय को अपने ही भीतर ढूंढ लेना चाहिये।

तमाखू की जगह अन्न

अन्न संकट के कारण सारे देश में त्राहि-त्राहि मची हुई है। 'अधिक अन्न उपजाओ' आंदोलन बड़े वेग से चल रहा है इस संबन्ध में एक बात विशेष रूप से विचारणीय है, अनेक जिलों में हजारों बीघे जमीन पर तमाखू की खेती होती है। तमाखू ऐसी चीज नहीं है, जो जीवन के लिये आवश्यक हो। आवश्यक कहाँ, यह तो स्वास्थ्य के लिए सब दृष्टियों से हानिकारक या विघातक है। इसकी खेती और प्रचार रोकने पर तो सरकार को विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए। यदि तमाखू की खेती बन्द कर दी जाय तो उसके स्थान पर अन्न पैदा किया जा सकता है और तमाखू सेवन से जो स्वास्थ्य-हानि हो रही है, उससे बहुत कुछ त्राण भी मिल सकता है। भारत-सरकार को इस दिशा

'पुरोहित का पद'

श्री भद्रजितजी स्नातक

आर्यसमाज में पुरोहित पद प्रचलित करने में चाहे वह निर्वाचित हो अथवा नियुक्त हो, कोई लाभ दृष्टिगोचर नहीं होता। आर्यसमाज के स्थापना काल से आजतक यज्ञ तथा संस्कार आदि करने में न कोई त्रुटि होती रही और न पुरोहितों की अनुपस्थिति से कोई बाधा ही उत्पन्न हुई। फिर इस पद की क्या आवश्यकता हुई ? क्यों न हम मध्यकालीन पुरोहित पद की वर्तमान कालिक अनिष्टकर परिणिति से शिक्षा ग्रहण करें ? इस पद के निर्वाचन से आर्यसमाज के एक विशिष्ट प्रकार के व्यक्तियों में जो स्वाध्याय शील है पद-लिप्सा जाग्रत होगी, और निर्वाचन-जनित दोष, जिनसे हमारी समाज अब भी पर्याप्त मात्रा में ग्रस्त हैं, और भी बढ़ेंगे। अभी तक आयसमाज की परम्परा यह है कि प्रत्येक सदस्य साधारण और विशेष यज्ञ आदि कार्यों के करने के विषय में आत्म-निर्भर रहता है। जब कभी संस्कार आदि का अवसर प्राप्त हुआ, उपस्थित सज्जन मिलकर उसको यथा विधि सम्पन्न कर लेते हैं। आज तक पुरोहित अभाव-जन्य कोई कठिनता उत्पन्न नहीं हुई। हिन्दू भाइयों के समान उनको इस कार्य के लिये किसी पर निर्भर रहना नहीं पड़ता। निर्वाचित पुरोहित होने पर, स्वाभाविक ही है कि उनकी उपस्थिति अनिवार्य समझी जावे और उसके बिना कार्य क्रम रुके पड़े रहें।

इस नियुक्ति का अवश्यम्भावी परिणाम यह भी होगा कि वैदिक स्वाध्याय की कमी होगी। फलतः आय सदस्य-जोकि अब विवशता से कुछ न कुछ संस्कारों आदि के विषय में जान लेते हैं, क्योंकि वे उनको स्वयं कराने पड़ते हैं- और भी परमुखापेक्षी हो जावेंगे। यदि यह कहा जावे कि यह नियुक्त व्यक्ति आय परिवारों को और उनके बालकों को धार्मिक शिक्षा से युक्त करेगा इस प्रयोजन के लिये यह पद आवश्यक है, तो यह कोई निश्चित नहीं है कि उस निर्वाचित व्यक्ति को इतना समय सुलभ ही होवे, अथवा वह इस कार्य के लिये बाध्य ही हो। यदि आय जन अपने बालकों की धार्मिक शिक्षा आवश्यक समझते हैं तो वैदिक धर्म कोई गूढ़ पहेली नहीं है, अपितु वह इतना सरल और स्वाभाविक है कि अपने माता पिता के दैनिक आचरण, स्वाध्याय, और साप्ताहिक सत्संग में उपस्थित रहने के द्वारा ही वे यह सब ग्रहण कर सकते हैं। आर्य जन अभी इतने अनभिज्ञ नहीं हो गये हैं कि अपने बालकों को यह शिक्षा स्वय न दे सकें। देना ही न चाहें अथवा ध्यान ही न देवें यह बात भिन्न है। अतः कोई कारण नहीं कि इस निरर्थक पद की सृष्टि की जावे। मैं आशा करता हूँ कि विज्ञ गण इस पर विचार करेंगे

—

में अपना कर्तव्य पालन अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक करना चाहिए। यदि तमाखू की खेती बन्द कर दी जाय तो अन्न की पदावार बहुत कुछ बढ़ जायगी और एक दुर्व्यसन से छुटकारा भी मिलेगा। प्रान्तीय आर्यप्रतिनिधि सभाओं को भी इस दिशा में विशेष रूप प्रयत्नशील होना चाहिये।

—रामसिंह वर्मा एम० ए०

सुझाव और सम्मतियाँ

शिक्षा-सम्बन्धी सुझाव

आजकल हमारे देश की शिक्षा विधि संस्कृतिहीन और धर्मशून्य है। इस समय शिक्षा में क्रान्ति करने की आवश्यकता है, जिसमे जनता में धर्म और संस्कृति के भावों का अधिकाधिक प्रचार हो सके। मेरी सम्मति में कुछ सुझाव इस प्रकार हैं—

देश में जितने बड़े बड़े आर्य समाज है, और जिनमें पाठशालाएं चल रही या चल सकती हैं, उनमें गुरुकुल-पाठविधि के आधार पर स्थानीय कुछ छात्रों को शिक्षा दी जाय। इसके पश्चात् उन्हे गुरुकुल भेज दिया जाय। इस प्रकार प्रत्येक समाज में एक छोटा-सा गुरुकुल ही बन जायगा। इससे जहाँ विद्यार्थियों के संरक्षकों को सुविधा होगी वहाँ गुरुकुलों को भी बड़ी सहायता मिलेगी। यदि पाठशालाओं वाले पच्चीस समाज भी निकल आये और एक-एक पाठशाला में दस दस विद्यार्थी भी हुए तो वर्ष में २५० विद्यार्थी गुरुकुल को ऐसे मिलेंगे जिनमें से गुरुकुलाधिकारी अभीष्ट संख्या में विद्यार्थी चुन सकेंगे। विद्यार्थियों की संख्या कम होने के कारण गुरुकुलों को जो असुविधा होती है, वह न होने पावेगी। विद्यार्थियों को दस वर्ष समाजस्थ गुरुकुलों (पाठशालाओं) में रखा जाय। शिक्षक लोगों में समाज के पुरोहित और वानप्रस्थ आर्य हो। आशा है इस योजना पर आर्य जनता विचार करेगी।

सत्यपाल शर्मा, वेदशिरोमणि

—

'डी० ए० वी०' नाम बदलिये !

इस युग में आर्य-संस्थाओं के नाम 'डी० ए० वी०' रखना आर्यसमाज के लिये अपमानजनक है। दयानन्द के लिये 'डी०' का संकेत अत्यन्त अनुचित है। 'आर्यमित्र' ने ठीक लिखा है कि डी० ए० वी० संस्थाओं के नाम दयानन्द विद्यालय या महाविद्यालय रखने चाहिएं। लोगों को पता तो चले कि 'डी०' दयानन्द का बोधक है। इस विषय में प्रत्येक 'डी० ए० वी०' संस्था को शीघ्र से शीघ्र विचार करने की आवश्यकता है। साइनबोर्डों पर और पत्र व्यवहार आदि में 'दयानन्द' शब्द का ही प्रयोग होना चाहिए। 'डी० ए० वी०' की जगह भी जरूरत नहीं है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को भी इस विषय में उचित निर्णय कर अपना आदेश देना चाहिए। कालिज सोसाइटी भी इस समयोपयोगी प्रस्ताव को अवश्य क्रियात्मक रूप दे। ऐसा करने से इन संस्थाओं का गौरव बढ़ेगा, घटेगा नहीं। प्रत्येक व्यक्ति को आर्यमित्र के इस सुझाव का अभिनन्दन और समर्थन करना चाहिए।

प्रेम किशोर गुप्त, एम ए० बी० टी०

—

डी० ए० वी० कालिजों के काम

डी० ए० वी० कालिजों और स्कूलों ने देश की सेवा तो की पर वे आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार न कर सके। इन शिक्षालयों के बहुत से शिक्षक तो आर्य समाज से अनभिज्ञ और उसके विरोधी भी हैं। हाल ही में डी० ए० वी० हायर सेकण्डरी स्कूल कानपुर के प्रिन्सपल ने महर्षि दयानन्द के विषय में भ्रान्तिपूर्ण बातें लिखकर यह साबित कर दिया है। (आर्यमित्र ८ मार्च ५१ सम्पादकीय लेख देखिये) किसी भी विचारशील मनुष्य के दिमाग में यह बात उठ सकती है क्या डी० ए० वी० कालेज और स्कूल आय समाज द्वारा सचालित हैं। क्या इतनी शक्ति नष्ट करने के पश्चात् आर्यसमाज इन संस्थाओं से यह आशा नहीं रखता कि उनसे आर्यसमाज का प्रसार हो। इन संस्थाओं ने अब तक कितने आर्य तैयार किये ? इन संस्थाओं में आर्यसमाज के कितने नियमों का पालन होता है, और कितनी संस्थाओं में आर्यसमाज की विचार धारा के अनुकूल शिक्षा दी जाती है। यदि ये संस्थायें केवल इसलिये खोली गई हैं कि इनमें आर्यसमाज का प्रसार न होकर अन्य बातों का प्रसार हो, तो किसी को कुछ नहीं कहना। फिर तो आर्यसमाज की गाड़ी इन संस्थाओं के दलदल में फँसी ही समझिये। 'दयानन्द' (डी०) और वैदिक (वी०) शब्द केवल मुलम्मे के लिये रक्खे गये हैं।

डाक्टर रा० स० लाल

—

क्या आप जानते हैं ?

अमेरिका की सब से पुरानी यूनिवर्सिटी हार्वर्ड यूनिवर्सिटी है, जिसकी स्थापना १६३६ में हुई थी।

❀ ❀ ❀

अमेरिका का पहला दैनिक समाचार पत्र १७८४ में छपा था। यह फिलाडेल्फिया से प्रकाशित हुआ था।

❀ ❀ ❀

पहले पहल हवाई जहाज १९०३ में उड़ाया गया था जो अमेरिका के नौर्थ कैरोलाइना राज्य में राइट ब्रदर्स ने उड़ाया था।

—

यात्रा-वर्णन

काश्मीर के निर्धन निवासी

श्री डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए०, डी० लिट्०

(२)

जल-वायु की समता और शीत प्रदेश के कारण काश्मीर के निवासियों के गठन और उनकी आकृति सब बलिष्ठ, सुदृढ़ और दर्शनीय हैं। प्राचीन आर्यों के वे सच्चे प्रतिनिधि हैं। उनका गौर वर्ण, लम्बा कद, लम्बी ऊँची नाक, सुन्दर आखें, भव्य चेहरा आदि सब सौन्दर्य के प्रतीक हैं। ऐसे सुन्दर स्वर्ग के निवासी देवता-तुल्य होते हुए भी दीन-हीन दशा को क्यों प्राप्त हो रहे हैं, यह एक रहस्य है, जो नीचे की पंक्तियो से प्रकट होगा।

इस समय काश्मीर की आबादी लगभग ४० लाख है, जिसमें लगभग ३२ लाख मुसलमान और ८ लाख हिन्दू सिक्ख आदि हैं। कश्मीर, जिसका नाम कश्यप ऋषि के नाम पर पड़ा, किसी समय आर्य ऋषियों का मुख्य निवासस्थान था। वहाँ के नगरो और स्थानों के नाम अब भी प्राचीन आर्य संस्कृति की स्मृति दिलाते हैं। श्रीनगर महाराज अशोक का बसाया हुआ है। अमरनाथ अनन्तनाग, मार्तण्डतीर्थ, व्रज-विहार, बैरीनाग, पहलगाँव, इच्छावल, बारामूला (बराह मूला) इत्यादि सैकड़ो नाम प्राचीन सभ्यता के द्योतक वहाँ अब भी विद्यमान हैं। मैं यहाँ इतिहास की उन घटनाओं का उल्लेख नहीं करूँगा जिनके द्वारा ऋषियों की इस पवित्र भूमि में मुसलमानों की इतनी अधिक आबादी बढ़ गई तथा आर्य हिन्दुओ की संख्या इतनी कम रह गई, और अब जो बचा है, वह भी दिन पर दिन कम होती जा रही है। आश्चर्य नहा कि सारे जम्मू और काश्मीर राज्य में अब हिन्दुओ की आबादी पाँच फीसदी से भी कम हो जाय। क्योकि वहाँ की वर्तमान सरकार निष्पक्षता और असाम्प्रदायिकता का ढोल पीटती हुई भी कुछ ऐसे कार्य कर रही है जिनसे हिन्दुओ को वहाँ रहने में कठिनाई प्रतीत हो रही है, जैसे नया भूमि सुधार क़ानून तथा सरकारी दफ्तरो में छटनी का काम जिनमें अब तक हिन्दू ही अधिक थे उन्हीं की अधिक हानि हो रही है और वहाँ के काश्मीरी पण्डितो को तथा पंजाबी हिन्दुओं को जो वहाँ जाकर बस रहे थे, जीविका के अभाव में काश्मीर छोड़ने को विवश होना पड़ रहा है। काश्मीर के महाराजा हरीसिंह को तो एक प्रकार से देश निकाला ही मिल चुका है। उनके पुत्र युवराज कर्णसिंहजी को भी वैधानिक रूप से राज्य के प्रमुख होते हुए भा कोई पूछता नहीं। कला कौशल तथा अधिकतर उद्योग-धन्धे तो सारे मुसलमानों के हाथ में है. केवल सर्विस और जमींदारी काश्मीरी पण्डितों (हिन्दुओ) की जीविका थी, सो वह भी उनसे छिनती जा रही है। अब उनका भगवान् ही रक्षक है।

साधारण काश्मीरी जनता की दशा, आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से अत्यन्त शोचनीय है। यद्यपि वर्तमान सरकार वहाँ के लोगों की आर्थिक दशा सुधारने के लिए भरसक प्रयत्न कर रही है, फिर भी अभी वहाँ का जीवन स्तर नीचा है। लोग बड़ी कठिनाई से अपनी जीविका कमाते हैं। झेलम घाटी को छोड़कर जिसकी लम्बाई १२० मील और चौड़ाई लगभग ६० मील है और कहीं खेती के उपयुक्त भूमि नहीं है। इस घाटी में भी पानी की अधिकता से सबसे अधिक उपज चावल की होती है अन्य खाद्य पदार्थों की बहुत कम। श्रीनगर आदि शहरों में ऊन के कालीन, गब्बे, आसन, शाल, दुशाले, पश्मीना आदि तथा रेशम के अनेक सामान बनते हैं और उन पर कढ़ाव का काम, लकड़ी और पेपरमैशी पर चित्रकारी का काम बहुत प्रसिद्ध है। काश्मीर के फल तो प्रसिद्ध हैं ही। इनके अतिरिक्त श्रीनगर, पहलगाँव, गुलमर्ग, अनन्तनाग आदि नगरों के अधिकांश लोगो की जीविका बाहर के यात्रियो पर चलती हैं। पिछले दो-तीन साल से वहाँ यात्री नहीं गए तो श्रीनगर के मल्लाह आदि का कहना था कि वे लोग भूखों मरने लगे। ऐसी दरिद्रता में इनकी उन्नति होना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।

काश्मीर में दूसरी बात जो सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है वह है वहाँ के लोगों की अस्वच्छता और गन्दगी। घर में, बाहर सड़को पर, गलियो में, कपड़ों में, शरीर में; मालूम होता है ये लोग सफाई रखना तो जानते ही नहीं। बड़ी-बड़ी बाहो के ढीले ढीले लम्बे चोगे स्त्री पुरुष सभी पहनते हैं, लेकिन इनके धोने का नाम नहीं लेते। पानी की इतनी अधिकता और सफाई की इतनी कमी, यह एक आश्चर्य है। शायद दरिद्रता ही इसका कारण हो, लेकिन इनकी गन्दी आदत इसका सबसे बड़ा कारण प्रतीत होता है। शिक्षा के क्षेत्र में भी काश्मीर बहुत पिछड़ा हुआ था लेकिन अब वहाँ यूनीवर्सिटी स्थापित हो जाने तथा वर्तमान सरकार द्वारा कई नए कालेज और स्कूल खोले जाने से शिक्षा को प्रगति बढ़ रही है। आर्यसमाजों ने भी श्रीनगर में डी० ए० वी० कालेज खोला था लेकिन सरकार द्वारा प्रोत्साहन न मिलने और अधिकांश पंजाबी आर्यों के वहाँ से चले आने से कालेज बन्द हो गया, केवल रैनावाड़ी और अमीरा कदल में दो डी० ए० वी० हाई-स्कूल तथा आर्यसमाज हजूरीबाग में एक आर्यकन्या हाईस्कूल अब भी चल रहा है। परन्तु उनकी आर्थिक दशा शोचनीय है, क्योकि शेख अब्दुल्ला की सरकार ने इनको कई अन्य संस्थाओ की तरह साम्प्रदायिक संस्था मानकर इनकी सरकारी सहायता बिलकुल बन्द कर रक्खी है। सरकारी भाषा उर्दू होने के कारण हिन्दी को बिलकुल प्रोत्साहन नहीं मिलता। केवल आर्यसमाज की पाठशालाएँ, कुछ अन्य हिन्दू-संस्थाएं हिन्दी की ज्योति जगा रही हैं।

राजनैतिक दृष्टि से जम्मू व काश्मीर की सरकार नेशनल कान्फ्रेन्स के हाथ में है, जिसके प्रधान शेख अब्दुल्ला साहब हैं, जो काश्मीर के शेर कहे जाते हैं। उनका तथा गृह मन्त्री बख्शी गुलाम मुहम्मद साहब का वहाँ की जनता पर अच्छा प्रभाव है। राष्ट्र संघ में काश्मीर का जो मामला चल रहा है उसका क्या भविष्य होगा सो तो ज्ञात नहीं, परन्तु यह तो निश्चय ही है कि आगामी सितम्बर मास में वहाँ विधान परिषद् अवश्य बुलाई जायेगी और वह जो फैसला करेगी, वह भविष्य के गर्भ में है। लेकिन काश्मीर में अलग से विधान परिषद् का बुलाया जाना, वहाँ के झण्डे का भारतीय झण्डे से अलग रहना, भारत में राज्य भाषा हिन्दी घोषित हो जाने पर भी वहाँ उर्दू को राज्य-भाषा रखना, भारतीय राष्ट्र-गान 'जन गन मन" से पृथक् एक अलग काश्मीरी राष्ट्र-गान का होना आदि कुछ ऐसी बातें है जो साधारण दर्शक के मन में काश्मीर के राजनैतिक भविष्य के विषय में कुछ आशङ्काएँ अवश्य उत्पन्न करती हैं। हमारे नेताओ का ध्यान इन पर अवश्य जाना चाहिये और काश्मीर को भारत का एक अविभाज्य अंग रखने के लिए सदैव सचिन्त रहना चाहिये। कहीं ऐसा सुन्दर सुरम्य स्वर्गोपम भूभाग भविष्य में भारत के हाथ से निकल न जाय इसके लिए हम सबको अपनी सरकार और नेताओ के साथ सदैव सजग रहने की आवश्यकता है।

महिला आर्यसमाजों से

उत्तर प्रदेश की समस्त स्त्री आर्यसमाजो को सूचित किया जाता है कि मेरठ नगर में सप्तम सार्वदेशिक आर्य महा सम्मेलन ६ से १२ अक्टूबर १६५१ में बड़े समारोह पूर्वक मनाने का आयोजन किया जा रहा है। सम्मेलन की स्वागताध्यक्षा श्रीमती शकुन्तला देवी गोयल और कर्म्मवीर श्री कालीचरण जी प्रधान मन्त्री हैं। मेरठ की समस्त स्त्री समाजें सम्मेलन को सफल बनाने में प्रयत्नशील हैं। उत्तर प्रदेशीय समस्त महिला आर्यसमाजों का कर्त्तव्य है कि सम्मेलन को तन मन तथा धन द्वारा सहयोग प्रदान करें। —भृगुदत्त तिवारी, उपमंत्री

आर्यप्रतिनिधि सभा

वेद-प्रचार-सप्ताह

श्री मान्यवर मन्त्रीजी और प्रतिनिधि महोदय, नमस्ते।

निवेदन है कि इस वर्ष "वेद-प्रचार-सप्ताह" मिति श्रावण शुक्ला १५ से भाद्रपद कृष्णा अष्टमी संवत् २००८ तदनुसार ता० १७ अगस्त से २४ अगस्त १९५१ तक मनाया जाना है। सप्ताह का कार्य-क्रम निम्न प्रकार दिया जाता है। पूर्ण विश्वास है कि आर्यसमाज अभी से सप्ताह को सफल बनाने का भरसक प्रयत्न करेगा। वेद-प्रचार सप्ताह का उद्देश्य आर्यों की मुख्य धर्म-पुस्तक वेद का सन्देश जनता तक पहुँचाना है, जिससे जनता में वैदिक धर्म, आर्य संस्कृति व वैदिक आर्य सभ्यता की व्यावहारिक उत्कृष्टता प्रकट हो।

श्रावणी पर्व-कार्यक्रम

सप्ताह का आरम्भ श्रावणी पर्व से होता है। वेद-विश्वासी जनता में श्रावणी पर्व का महत्व अन्य सब पर्वों की अपेक्षा महत्व-पूर्ण है। पर्व का लक्ष्य वैदिक स्वाध्याय का विस्तार, वैदिक जीवन का संचार तथा पवित्र वैदिक वातावरण निर्माण करना है। श्रावणी पर्व—मिती श्रावण शुक्ला १५ ता० १७ अगस्त १९५१ दिन शुक्रवार को मनाया जावे, प्रत्येक आर्य परिवार में सूर्योदय से पारिवारिक यज्ञ की योजना की जाय। पारिवारिक—यज्ञ से निवृत्त हो ७॥ बजे तक समस्त आर्य सज्जन आर्य मन्दिरों में उपस्थित हों। नियत समय पर वेद-पाठ आरम्भ हो, तत्पश्चात् सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा निश्चित् "पर्व पद्धति" के पृष्ठ संख्या १०६ से १०९ तक का सम्पूर्ण क्रिया-विधान किया जाय। पूर्णाहुति के पूर्व वेद-विश्वासी आर्यजनों को गम्भीरतापूर्वक वेद तथा वेदानुकूल शास्त्रों के स्वाध्याय का पावन व्रत धारण करना चाहिये। अधिवेशन में वैदिक स्वाध्याय के महत्व पर किसी विद्वान् के भाषण की व्यवस्था की जावे। श्रावणी का दिन विशेष प्रकार से वेद के पारायण में व्यतीत करना चाहिये। रात्रि को आर्य मन्दिरों में वेद-कथा की जाय।

बलिदान दिवस

इसी दिन बलिदान-दिवस भी मनाया जावे। प्रातः श्रावणी उपाकर्म पद्धति के अन्त में वैदिक धर्म व आर्यसमाज के लिये आत्मा-हुति देने वाले वीर आर्य महापुरुषों की अमर चरित्र गाथा का गान किया जावे जिससे आर्यपुरुषों में स्फूर्ति, बल, संगठन और कर्त्तव्य की भावना जाग्रत हो।

कृष्ण-जन्मोत्सव

पर्व-समाप्ति मिति भाद्रपद कृष्णाष्टमी दिन शुक्रवार ता० २४ अगस्त १९५१ ई० को आर्यजाति के महान् नेता श्रीकृष्णचन्द्र के पावन जन्मोत्सव पर है। अतः (१) जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में आर्यमन्दिरों में प्रातःकाल विशेष यज्ञ किया जाय। (२) रात्रि को समाज मन्दिरों में अथवा अन्य सार्वजनिक स्थानों पर कृष्ण के सन्देश में भावपूर्ण गम्भीर भाषण किये जावें। सप्ताह में किसी एक दिन आर्यवीर दल का विशेष रूप से प्रदर्शन तथा पारितोषिक वितीर्ण किये जावें।

सप्ताह के शेष दिनों में प्रातः समाज-मन्दिरों में विशेष यज्ञ की योजना की जाय। मध्याह्न में वैदिक सिद्धान्तों के प्रतिपादक ग्रन्थ विक्रय किये जावें और ट्रेक्ट वितरण किये जावें। आर्यसमाज के नवीन सदस्य बनाये जावें और दलितोद्धार, शुद्धि, राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार में आन्दोलन किया जावे। रात्रि को—मन्दिरों में वेद कथा की योजना की जाय। वेदों की अपौरुषेयता, वैदिक सिद्धांतों का मन्त्रों द्वारा प्रतिपादन, वेदभाष्य की वैदिक शैली, दयानन्द-भाष्य का महत्व, मन्त्रों का अर्थ संगति आदि विषयों पर प्रकाश डाला जावे। पूर्व से ही व्यवस्था की जाय कि आर्यसभासद् उपर्युक्त विषयों में से किसी विषय पर विशेष स्वाध्याय कर इस सप्ताह के लिये विशेष निबन्ध अथवा व्याख्यान तयार करें। संक्षेप में वेद प्रचार-सप्ताह—प्रत्येक आर्यसमाज के आन्तरिक निरीक्षण का सप्ताह है। आर्य समाज को अपने परम धर्म तथा कर्तव्य पालन करने की कितनी लगन है और आचार्य में कितनी भक्ति है, इसका निरीक्षण करना चाहिये।

विविध विज्ञप्तियाँ

कर्णवास का ऋषि-स्मारक

आर्यसमाज के पक्ष में निर्णय

आर्यपुरुषों के पुरुषों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि कर्णवास (बुलन्द शहर) में गंगा किनारे महर्षि दयानन्द ने जो निवास किया था और यज्ञ-शाला की प्रतिष्ठा की थी, तब से, लगभग ८४ वर्ष से उस पर आर्य समाज का कब्जा था और आर्य-पुरुष अत्यन्त श्रद्धा से वहाँ यज्ञादि कार्य करते थे, परन्तु इस सम्बन्ध में जो मुकदमा चल रहा था, उसका निर्णय न्यायालय द्वारा २१-७-५१ को आर्यसमाज छिबाई के पक्ष में हो गया है। और आर्यसमाज का कब्जा न्यायालय द्वारा प्रमाणित हुआ है। ऋषि दयानन्द के स्थान, यज्ञशाला व कुटी स्मारक पर चन्दौसी के सेठ विश्वम्भरनाथजी अपने स्वार्थ व चालाकी से कब्जा करना चाहते थे, और उक्त स्थान को खुदवाकर अपनी कोठी बनवाना चाहते थे! उनके इस कार्यसे आर्य जगत् में अत्यन्त क्षोभ उत्पन्न हो गया था। उक्त सेठ महोदय ने श्री बाबूलालजी दीक्षित आदि आर्य पुरुषों पर अनेक झूठे मुकदमे दायर कर दिये थे, जो प्रायः सब के सब पहले ही खारिज हो गये। केवल एक अभियोग दफा १४५ में शेष रह गया था, उसका निर्णय भी २१-७-५१ को आर्यसमाज के पक्ष में हो गया। जिसके द्वारा कब्जा आर्य-समाज का ही माना गया, इस प्रकार दो वर्ष से चल रहे इस अभियोग की समाप्ति हुई।

इस पुण्य कार्य में सभा की ओर से तत्कालीन सभा-मन्त्री श्री बा० उमाशंकरजी वकील, फतेपुर, श्री० प० शिवलालजी बुलन्दशहर, श्री सोहनलालजी व मनोहरलालजी छिबाई निवासी आदि आर्यपुरुषों ने स्मारक की रक्षा के लिये धैर्यपूर्वक निरन्तर यत्न किया। उनके यत्न सफल हुये। आशा है श्री विशम्भरनाथ-जी भविष्य में उपद्रव न करेंगे और ऋषि के इस पुण्य स्मारक में बाधा न डालेंगे।

धर्मपाल विद्यालंकार,
सभा-मन्त्री

— —

भारतीय संस्कृति परिषद्

आगरे में एक सांस्कृतिक संस्था का अभाव देखकर कुछ विचारक विद्वानों ने ३०-७-५१ को उपर्युक्त नाम की एक परि-षद् स्थापित करने का निश्चय किया है। इस परिषद् का मुख्य उद्देश्य भारतीय संस्कृति का प्रचार तथा उसको जीवन में क्रियान्वित करना होगा। संचा-लन के लिये निम्नलिखित सदस्यों की एक प्रारम्भिक उपसमिति का निर्माण किया गया है। सर्वश्री प्रो० न० म० अन्ताणी, प्रो० गुलाबराय एम० ए०, डा० सत्येन्द्र पी० एच० डी०, बा० पूर्णचन्द्र एडवोकेट, प्रो० बाबूराम गुप्त, प० हरिशंकर शर्मा (संयोजक) तथा प० राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी (सहकारी संयोजक) परिषद् का उद्घाटन श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के लगभग होगा।

राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी

— —

एक रुपया निधि

प्रत्येक आर्यसमाज का यह कर्तव्य है कि वह अपने सभासदों तथा अन्य वैदिक धर्म से प्रेम रखने वाले महानुभावों से वेद प्रचार के लिये कम से कम एक रुपया प्रति सज्जन इस वेद-प्रचार-सप्ताह में संग्रह करके सीधा सभा के श्री कोषाध्यक्षजी के पास ५, मीराबाई मार्ग के पते पर तुरन्त भेज देवें। और इस धन से।) प्रति आर्यसभा-सद् वेद प्रचारार्थ शुल्क जो सभा ने दिसम्बर १९३६ ई० में समाजों पर अनिवार्य कर दिया है, चुकादें। सभा के अन्तरंग सदस्यों, निरी-क्षकों तथा मण्डलाधीशों और उपदेशकों को इस धन के संग्रह में उत्साह और पुरुषार्थ से काम लेना चाहिये।

धर्मपाल विद्यालङ्कार
मन्त्री, आर्यप्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश।

———

सामयिक समस्याएँ

भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलन

श्री अमरनाथ वैद्यशास्त्री

सार्वदेशिक सभा के मंत्रीजी ने क्रियात्मक आन्दोलन की एक योजना बनाई है, जो कि आर्यमित्र के गताङ्क में प्रकाशित भी हुई है और सुयोग्य सम्पादकजी ने भी इस पर अग्रलेख लिखा है। दुर्भाग्य से स्वराज की व्यवस्था में ही यत्र तत्र-सर्वत्र भ्रष्टाचार, दुराचार, अनाचार, तथा व्यभिचार बढ़ रहा है। इसके विरोध तथा नाश के लिए पत्रों में लेख प्रकाशित हो रहे हैं। बड़ी बड़ी सभाओं में भाषण दिये जाते हैं। कहीं कहीं पकड़े जाने पर दुष्टों को साधारणतया दण्ड विधान भी होता रहता है। परन्तु यहाँ भ्रष्टाचार का यह भूत उग्र रूप धारण करता जा रहा है। मारकेट-(बाजार) मारकाट के अड्डे बन रहे हैं। शाप (दुकान) अभिशाप के समान हो रही हैं कस्टमर कष्टमर होकर मर रहे हैं। राशन तो अन्न-प्राशन हो रहा है। साधारण बाबू लोगों को जो 'पे' मिलती है, वह 'पेय' (जलपानमात्र) रह गई है। कचहरी 'कच-हरी' बन रही है। कोर्ट को जाते-जाते कोट-कपड़े तक उतरने की दशा हो जाती है। काजी साहब के पास जाने की सुविधा का 'स्कोप' नहीं रहा। क्योंकि वे जनता के साथ 'सकोप' व्यवहार करते हैं। कहाँ तक कहें देश में चारों ओर त्राहि-त्राहि मच रही है; भूख, भय, भ्रम के भाव बढ़ रहे हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि इस दुर्दशा का सुधार करना कठिन अवश्य है। परन्तु रोग असाध्य नहीं। पर मार्ग भी सुगम नहीं, क्योंकि जिनके हाथों में व्यापार, सत्ताधिकार है, जिनके स्रोतों से भ्रष्टाचार की धारा बह रही है, वे कभी नहीं चाहेंगे कि हमारे स्वार्थों में कोई बाधा डाले। वे सुधारकर्मियों को पूर्णतया दबाने, धमकाने, अभियोग चलाने का भरसक प्रयत्न करेंगे। इस प्रकार की विपरीत, विषम, विकृत स्थिति में सुधार मार्ग कितना भयावह और कटकाकीर्ण है, क्या-क्या विपत्तियाँ आएँगी, क्या-क्या विघ्न बाधाएँ उपस्थित होंगी। इस पर दृढ़ता, गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है, तभी सुधार हो सकेगा।

सार्वदेशिक सभा भूमण्डल के आर्यों की शिरोमणि सभा है। उसका आदेश सबके लिए शिरोधार्य है। उसकी निर्धारित योजना सामयिक सर्वोपयोगी व सर्वहितकारिणी है। आर्यसमाज के अतिरिक्त भारत राष्ट्र में कोई संस्था ऐसी नहीं जिसका व्यवस्थित और व्यापक संगठन हो, जिसके नियम सार्वभौम तथा सर्व जन-हितकारी हों। इसलिए आर्यसमाज को ही इस कार्य के लिये अग्रसर होना चाहिये।

सार्वदेशिक सभा ने पत्रों में सुधार-योजना प्रकाशित कर दी और कहीं-कहीं आर्यसमाजों को भी योजना की प्रतियां भेजी होंगी। परन्तु निवेदन तो यह है कि इससे काय सिद्ध न होगा होना यह चाहिए कि सार्वदेशिक सभा अपनी योजना को आदेश-रूप में समस्त प्रान्तीय आर्यप्रतिनिधि सभाओं को भेजे। वे अपनी अन्तरंग सभा में विचार कर उन प्रस्तावों को परिषद् के रूप में समस्त आर्यसमाजों को भेजकर तन, मन, धन से दृढ़ संकल्प करने की प्रेरणा करें। तभी आर्यसमाज के मंत्री-प्रधान सचेत होंगे और अपनी अन्तरंग सभा में दृढ़ संगठन का विचार कर अनुशासन का पालन करेंगे। सदाचार-सैनिक बनाकर भ्रष्टाचार के विरुद्ध उत्साह, शान्ति और धैर्य से क्रियात्मक कार्य में सन्नद्ध होंगे। मैंने कतिपय आर्य-कार्यकर्त्ताओं विद्वानों से वार्तालाप और पत्र-व्यवहार किया। उनको इस आन्दोलन की सफलता में कुछ सन्देह है। इसलिये प्रत्युत्तर भी आशाजनक नहीं मिला। मेरा विचार है कि इस विषय पर और अनुकूल-प्रतिकूल विचार माँगे जावें, आर्यपत्रों में प्रकाशित किये जावें, जिससे कि आन्दोलन के लिए पूरा अवसर मिले। अच्छा तो यह है कि सप्तम आर्य महा सम्मेलन मेरठ में प्रस्ताव स्वीकार कर निश्चित घोषणा की जावे। तब भ्रष्टाचार के भूत को मार भगाने में सफलता होगी।

—

आर्य महासम्मेलन क्या करे?

आचार्य नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ

आर्य महासम्मेलन एक मार्ग-दर्शक सम्मेलन होना चाहिये। भीड़ भड़का, भड़भच्चर, डम्बराडम्बर में काम बहुत कम होता है और औपरिष्टिक सफलता को ही असली सफलता समझकर हम कृतकृत्य हो बैठते हैं—यह प्रथा श्रेयस्करी नहीं है।

इस समय देश की परिस्थिति अत्यन्त जटिल हो रही है। एक तो ब्रिटिश सत्ताशाही में भारतीय शिक्षित जनता का धर्मभाव वैसे ही नाममात्र को शेष रह गया था, अब तो अपने ही राज्य में चहुँ-ओर मानो रोटी-कपड़ा, हाय रोटीकपड़ा इसके अतिरिक्त कोई अन्य प्रश्न ही नहीं रहा है। हिम्मत, त्याग, आत्मविश्वास आदि गुणों का न जाने एकदम क्या हुआ। एकदम बुराइयों का फव्वारा बड़े वेग से छूट गया। ऐसा क्यों हुआ, अथवा हो रहा है इस विषय का ऊहापोह होना चाहिये।

ब्रिटिश-काल में ऋषि दयानन्दजी ने भारतीयों का स्तर ऊँचा उठाने का प्रयत्न किया और भारतीयों की नीतिमत्ता को उच्च स्तर पर लाने में पूर्ण बल लगाया। भारतीय धर्म्म-संस्कृति के साथ तदनुरूप राज्य सत्ता के न रहने से ऋषि दयानन्द द्वारा कुछ तो सुधार हुआ, परन्तु बहुत कुछ सुधार शेष रह गया। दूसरी ओर अंग्रेजी शिक्षा दीक्षा से भारतीयों में दासता के बन्धन से छूटने की प्रबल आकांक्षा उत्पन्न हुई और कांग्रेस की स्थापना हुई। स्वा० दयानन्द स्वराज्य के पूर्व सांस्कृतिक स्वराज्य को लाकर भारत की नीतिमत्ता को ऊँचे स्तर पर लाना चाहते थे। तिलक पक्ष कहता था कि पहले स्वराज्य पीछे सब कुछ। गांधी कहते और यत्न करते रहे कि नीतिमत्ता के साथ-साथ स्वराज्य। इस प्रकार स्वा० दयानन्द से लेकर सभी के प्रयत्न परस्पर पूरक ही रहे। अंग्रेज गये पर उनकी छाया और भाषा बनी ही रही, उनके जाते ही दबे हुए दुर्गुण उभरे और अब भारत की यह दशा है कि स्वराज्य होने पर भी स्वराज्य के चमत्कारों का—सुख का पता तक नहीं। जो स्वराज्य भी हुआ वह पाश्चात्य ढंग का। ऐसी दशा में आर्यसमाज के सम्मुख यह बड़ा ही महत्व का प्रश्न उपस्थित हो रहा है कि इस धकापेल में उनके पैर उखड़ तो नहीं जायेंगे, पैर अच्छी तरह जमे तो रहेंगे। संसार के उपकार की, वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार की व्यवस्था तो

आर्यसमाजें सचेत हों

सभा में आर्यसमाजों से इस प्रकार के पत्र प्रायः प्राप्त होते हैं कि जिनमें यह पूछा गया होता है कि अमुक स्वतंत्र अनाथालय व गुरुकुल आदि को धन देना उचित है अथवा नहीं। प्रायः यह देखा गया है कि गुरुकुल व अनाथालय आदि उत्तम कार्यों की आड़ में अनेक सज्जन अपनी आदि संग्रह की स्वार्थ सिद्धि करते हैं। इस प्रकार के कार्यों से न केवल सम्पूर्ण आर्यसमाज ही बदनाम होता है प्रत्युत सार्वजनिक जीवन भी दिन-प्रतिदिन गन्दा होता जा रहा है। आर्यसमाज के संगठन को इससे बहुत क्षति पहुँच रही है और जनता के दान व धन का दुरुपयोग हो रहा है। संगठन के अधीन सुप्रसिद्ध गुरुकुल वृन्दावन आदि संस्थाओं तक को हानि पहुँच रही है। अतः आर्यपुरुषों और आर्यसमाजों का कर्तव्य है कि इस प्रकार की संस्थाओं के लिये धन संग्रह कराते हुए इस बात का ध्यान रक्खें कि वे आर्य प्रतिनिधि सभा से सम्बन्धित, उससे अनुमति प्राप्त संस्थाओं के लिये ही सहायता किया करें।

धर्मपाल विद्यालंकार,
सभा-मन्त्री

—

आर्य महासम्मेलन मेरठ

श्री विश्वम्भरसहाय प्रेमी, प्रचार-मंत्री

सप्तम आर्य महासम्मेलन मेरठ में धूम-धाम के साथ विजया दशमी के अवसर पर ता० ६ से १२ अक्तूबर तक होने वाला है। सार्वदेशिक सभा अपना ३ दिन का कार्यक्रम रक्खेगी। अभी उसने इन तारीखों में से अंतिम रूप से तारीखें निश्चित नहीं की हैं। सम्मेलन के साथ-साथ वेद सम्मेलन, शिक्षा-सम्मेलन, गौ-सम्मेलन, सांस्कृतिक सम्मेलन तथा महिला-सम्मेलन भी होंगे। प्रान्तीय आर्यकुमार परिषद् ने भी अपना सम्मेलन करने का निश्चय कर दिया है और यह भी आशा है कि इसके साथ-साथ अखिल भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की ओर से भी सम्मेलन होगा।

एक सुझाव आर्यमित्र की रजत जयन्ती करने का भी है। एक पत्रकार के नाते मैं इस सुझाव का पूरा समर्थन करता हूँ। मेरी सम्मति में आर्य महासम्मेलन के अवसर पर हिन्दी पत्रकारों का एक विशेष सम्मेलन किया जाय, और सभी पत्रकार 'आर्यमित्र' की जयन्ती में भी भाग लें। इस कार्य को बड़ा विस्तार देने की आवश्यकता है क्योंकि आर्यसमाज के साथ आर्यमित्र का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। आर्यमित्र की रजत जयन्ती से आर्यमित्र को भी उन्नत करने का मार्ग निकाला जा सकता है।

स्वागत समिति आर्य सम्मेलन के लिये सभापति के नामों पर विचार कर रही है। उसकी ओर से पाँच नाम चुनकर सार्वदेशिक कार्यालय में भेजे जायगे। उन पाँचों नामों में से आर्यप्रतिनिधि सभायें एक नाम का चुनाव करेंगी। स्वागत-समिति ने वेद-सम्मेलन के लिये श्री प० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, शिक्षा-सम्मेलन के लिये प्रिन्सिपल दीवानचन्दजी, एम० ए० गौ सम्मेलन के लिये प० ठाकुरदास भार्गव एम० पी० और सांस्कृतिक सम्मेलन के लिये प० अयोध्याप्रसाद रिसर्च स्कालर के नाम चुने हैं।

सम्मेलन के सम्बन्ध में हमसे कई प्रमुख व्यक्तियों ने प्रश्न किये हैं कि इस अवसर पर सम्मेलन करने से क्या लाभ होगा। कुछ ने यह भी पूछा है कि आर्यसमाज के लिए सम्मेलन कहाँ तक लाभकारी सिद्ध होगा। इस सम्बन्ध में हमारा विश्वास है कि यदि आर्यसमाज के विचारशील व्यक्ति सामयिक समाज-सुधार सम्बन्धी कार्यों पर विचार करें और कोई क्रियात्मक ऐसा मार्ग निकालें, जिसपर चलकर आर्यसमाज जनता की सेवा कर सकें। तो बहुत कुछ लाभ हो सकता है। दूसरे शिक्षा की दिशा में भी आर्यसमाज बहुत कुछ विचार दे सकती है। इस समय शिक्षा का पाठ्य-क्रम बहुत परिवर्तित हो गया है। उसमें अनेक पुस्तकें ऐसी सम्मिलित कर दी गई हैं, जिनसे आर्य सभ्यता पर भारी आघात पहुंचता है। बच्चे में प्रारम्भ से ही यह भाव भरा जाता है कि उनके पुरखा माँस खाते थे, जंगलों में रहते थे, असभ्य थे। इतना ही नहीं किन्तु उन्हें जानवरों के समान घूम-फिरकर पेट भर लेने वाला प्राणी लिखा है। इसके अतिरिक्त भारतीय इतिहास को भी दूसरे रूप में प्रकट किया गया है। बेसिक रीडरों में तो भारतीय सभ्यता को अत्यन्त निन्दनीय रूप में प्रस्तुत किया है।

शिक्षा के पाठ्यक्रम के साथ सह-शिक्षा का प्रश्न है। वैसे अब सर्वत्र सहशिक्षा चल पड़ी है, परन्तु आर्यसमाज को देखना है कि क्या यह भारतीय सभ्यता की रक्षा कर सकेगी या ऋषि दयानन्द महाराज के सिद्धान्तों के विपरीत होने से हमारी सभ्यता को क्षति पहुँचायेगी। इस प्रकार से आर्य विद्वानों को अपना काफी समय लगाकर इस प्रश्न को सुलझाने का यत्न करना चाहिये।

आर्यसमाज के भावी कार्यक्रम की रूपरेखा बनाये जाने का प्रश्न भी एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। सार्वदेशिक सभा ने अभी कुछ समय पूर्व भ्रष्टाचार रोकने व उसे मिटाने की एक योजना बनाई है। इस सम्बन्ध में भी आर्यसमाजों को संगठित रूप में कार्य करने की आवश्यकता है। उसे जितना ही व्यापक बनाया जा सके, बनाने का यत्न करना चाहिये। एक समय था कि अदालतों में आर्यसमाजियों की साक्षी का विशेष मान होता था। हमें फिर से उसी सम्मान को प्राप्त करने का यत्न करना चाहिये, और जन साधारणों में इस बात की धूम मचा देनी चाहिये कि आर्यसमाज भ्रष्टाचार को मिटाकर रहेगी।

इस प्रकार मद्य निषेध तथा धूम्रपान को रोकने का भी गम्भीर प्रश्न आर्यसमाज को अपने हाथ में फिर से लेना चाहिये। मद्य-निषेध का कार्य यद्यपि कई राज्य सरकारों ने अपने हाथ में लिया हुआ है। तथापि अबतक जनसाधारण में इसके विरुद्ध घृणा उत्पन्न न होगी तब तक वास्तविक सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। केवल क़ानून से दोषों को नहीं रोका जा सकता। आर्यसमाज द्वारा प्रदर्शित किये जाने वाले मार्ग पर अधिक से अधिक व्यक्तियों के चलाने से ही दोषों की निवृत्ति हो सकती है। स्थान स्थान क आर्यसमाजें यदि प्रयत्न करें तो हजारों व्यक्तियों की शराब छुड़ा सकती हैं और लाखों नये पीने वालों को चेतावनी देकर इस व्यसन में फँसने से रोक सकती हैं। इसी प्रकार धूम्र-पान को भी रोका जा सकता है जो आजकल के स्कूलों तथा कालिज विद्यार्थियों में बराबर बढ़ता जारहा है।

संस्कृति की रक्षा का भी एक बड़ा प्रश्न हमारे सामने विद्यमान है। आज मूर्ति-पूजा तथा नास्तिकवाद का बोलबाला है। मूर्तिपूजा बराबर बढ़ती जा रही है। नये-नये मन्दिरों के निर्माण और जीर्णोद्धार ने फिर से जनता को मूर्ति-पूजा की ओर अग्रसर कर दिया है। इस समस्या को कैसे सुलझाया जाय, इसका भी विद्वानों को कोई मार्ग निकालना चाहिये। नास्तिकवाद को रोकने के लिए पढ़े-लिखे युवकों में प्रचार की भारी आवश्यकता है। आर्यसमाज का साहित्य भी अब बहुत कम प्रकाशित होता है। स्वयं आर्यसमाजी भी स्वाध्याय नहीं करते। नये बनने वाले आर्यसमाजी किसी समय सत्यार्थप्रकाश को खरीदना और पढ़ना अपना कर्तव्य समझते थे। परन्तु अब तो नये आर्यसमाजी केवल साप्ताहिक सत्संगों में ही कुछ सुन आना पर्याप्त समझने लगे हैं। अतः वैदिक साहित्य की ओर जनता की रुचि उत्पन्न करना भी एक महत्वपूर्ण कार्य है। इसी प्रकार विदेशों के लिये वैदिक साहित्य का प्रकाशन भी एक महत्वपूर्ण कार्य है।

हमने संक्षेप से कुछ कार्यों की चर्चा की है। हम आशा करते हैं कि आर्य महासम्मेलन के लिए आर्य विद्वान् अपने सुझाव प्रकाशित करने की कृपा करेंगे।

——

कर सकेंगे। इस दृष्टि से आर्य सम्मेलन के सम्मुख तीन बड़े प्रश्न हैं—(१) अब भविष्य में हमारी प्रचार-प्रणाली किस प्रकार रहेगी अथवा रहनी चाहिये। (२) हमारे संगठन इसी प्रकार के चलेंगे कि इनमें भी कुछ परिवर्तन की आवश्यकता है। (३) हम ऐसे कौन-से उपाय करें जिनसे पाश्चात्य ढग के विधान के अनुरूप चलने वाले स्वराज्य पर, शासन चक्र पर आर्य-संस्कृति का प्रभाव डालकर उसको अपने अनुरूप बना सकेंगे। यदि मेरठ महासम्मेलन इन तीन प्रश्नो पर ठीक ठीक निर्णय करके मार्गदर्शक बन सके तो मैं सम्मेलन को सफल समझूंगा।

——

आर्यजगत

—श्री जगदीशभूषणजी अपने भजनों द्वारा अजमेर में सफलतापूर्वक प्रचार कर रहे हैं।

—आ० स० कायमगंज के उद्योग से स्थानीय नाज की मण्डी में 'वर्षायज्ञ' हुआ, उसी दिन रात को मूसलाधार वृष्टि हुई।

—प० धर्मवीरजी आर्य ब्रह्मचारी ने निम्न आर्यसमाजों में प्रचार किया-गणेशगंज लखनऊ, मेस्टनरोड कानपुर, आजमगढ़, बुलानाला काशी, चौक प्रयाग, देवरिया, गोरखपुर शहर, बेथरारोड बलिया, मधुबन (आजमगढ़) दोहरीघाट। आपने दैनिक सत्संग चलाने पर विशेष बल दिया। आपके भाषणों का अच्छा प्रभाव पड़ा। अब आप विश्व शान्ति यज्ञ की व्यवस्था के लिये टकारा जारहे हैं।

—अमेठी राज्य की युवराज्ञी महोदया ने सम्पूर्ण यजुर्वेद से एक बृहद् वृष्टि-यज्ञ आ० स० रामनगर के तत्वावधान में २६ से २९ जुलाई तक कराया। यज्ञारम्भ के दस घण्टे के भीतर ही यहाँ वृष्टि आरम्भ होगया। युवराज श्री रणंजयसिंहजी भी यज्ञ में उपस्थित थे और उन्होंने स्वयं यजुर्वेद-मन्त्रों का पाठ किया।

—गत आषाढ़ शुक्ला १० को आ० स० सहपऊ (मथुरा) के मन्त्री श्री बदरीप्रसादजी 'दिव्य' के पुत्र प्रेमप्रकाशजी का विवाह संस्कार मथुरा में श्री अयोध्याप्रसादजी की पुत्री द्रौपदी के साथ वैदिक रीति से हुआ। वरपक्ष की ओर से आर्य संस्थाओं को दान दिया गया।

—शोक है कि २८ जुलाई को आर्यसमाज जलेसर के मन्त्री श्री लाला रामचन्द्र गुप्त का देहान्त हो गया। आप बड़े कर्तव्यशील आर्य थे। जीवन-भर समाज की प्रशंसनीय सेवा की। जलेसर-आर्यसमाज आपके निधन पर शोक प्रकट करता है। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति तथा शोकाकुल परिवार को धैर्य प्रदान करे।

सार सूचनाएँ

—मेरठ आर्य महासम्मेलन की तिथियाँ विजयादशमी को बचा कर रखी जाय तो अधिक सुविधाजनक होगा।

मंत्री, आ० स० ज्वालापुर

—गुरुकुल तिलहर (शाहजहाँपुर) की प्रबन्ध समिति को रजिस्टर्ड कराने तथा इस संस्था को प्रान्तीय आर्यप्रतिनिधि सभा के साथ सम्बद्ध कराने का प्रस्ताव पास किया गया।

—नवयुग में आर्यकुमारों का कर्तव्य, १८५७ के गदर में महर्षि दयानन्द का हाथ, शिक्षा में सिनेमा का स्थान, जीवन का उद्देश्य इन विषयों पर १८ वर्ष तक आयु के हाईस्कूल के विद्यार्थी अपने लेख भेजें। प्रथम, द्वितीय और तृतीय पुरस्कार दिए जायगे।

देवदत्त आर्य कोषाध्यक्ष,

आर्यकुमार सभा, बहरायच।

—मैं दमे की सफल दवा जानता हूँ, बड़ी सरल है, स्वयं मुझे इससे फायदा हुआ है। मुफ्त बताता हूँ। स्वरूपानन्द दातागंज (बदायूँ)

—मध्य भारत सरकार को इन्दौर से गौ और बछड़ों की निकासी का काम बन्द कर देना चाहिये। यह निकासी गत १७ मार्च से शुरू हो रही है। इससे इन्दौर में गोवंश की हानि होगी।

फतेहसिंह आर्य

—आध्यात्मिक प्रचारक तथा सुगायक श्री स्वामी योगानन्द दण्डी को प्रचारार्थ बुलाने वाले सज्जन और समाज मन्त्री आर्यसमाज हाथरस के पते पर पत्र व्यवहार करें।

—१७ जुलाई को पहासू आर्यसमाज ने आर्यभ्रमण सभा स्थापित की है, जो गाँवों में जाकर वैदिक धर्म-प्रचार करती है। गत अमावस्या को स्वामी सत्यानन्द जी महाराज के प्रधानत्व में गंगागढ़ गाँव में प्रचार किया गया।

निर्वाचन

—आ० कु० सभा बाराबंकी—प्रधान-म० रामसंजीवनलालजी और मन्त्री-म० माताप्रसादजी।

—आ० स० सराय रुहेल्ला—प्रधान-श्री इन्द्रसेनजी और मन्त्री श्री सत्यपालजी साहित्यरत्न।

—आर्य कुमार सभा बिजनौर प्रधान-प० विद्यासागर शर्मा और मन्त्री-श्री रामगोपालजी।

—आ० स० मानपुर (गया) प्रधान-श्री चुन्नीलाल आर्य और मन्त्री-श्री उदयप्रकाशजी।

विरोधी प्रस्ताव

'क्रमागत'

कानपुर के 'शाहना शरियत' नामक मुसलिम पत्र ने ऋषि दयानन्द, हिन्दू देवी-देवताओं और वेद शास्त्रों के विरुद्ध जो जहर उगला है, उसके प्रतिवाद में निम्नलिखित संस्था और आर्यसमाज अपना तीव्र प्रतिवाद प्रकट करते तथा सरकार से उचित कार्यवाही करने का अनुरोध करते हैं—

अखिल भारतीय दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियारपुर, आर्यसमाज अबोहर, आ० कु० सभा बाराबंकी, आर्यसमाज वैदिक आश्रम ऋषिकेश, आ० कु० सभा बुरहानपुर, आ० स० धुवली (गोरखपुर), जिला आर्य उपप्रतिनिधि सभा लखनऊ, भारतीय संस्कृति संरक्षण समिति कानपुर।

गुरुकुल कौरली समाचार

दयानन्द महाविद्यालय गुरुकुल कौरली मेरठ का वार्षिक निर्वाचन २९ जौलाई सन् १९५१ को हुआ। आगामी तीन वर्ष के लिये श्री लालचन्द्रजी प्रधान व श्री पं० शिवदयालुजी मंत्री निर्वाचित हुए। श्री माननीय चौधरी चरणसिंहजी और श्री प० अलगूरायजी शास्त्री गुरुकुल सम्बन्धी अपनी सेवाओं के कारण गुरुकुल के संरक्षक नियुक्त हुए। सन् १९५२-५३ के बजट का निर्माण और स्वीकृति का कार्य नवीन प्रबन्धक समिति को सौंपा गया। गुरुकुल जूनियर तथा हायर सेकण्डरी स्कूल के संचालन के लिये गुरुकुल प्रबन्धक समिति द्वारा जो उपसमिति बनाई गई है वह स्वीकृत हुई। इस समिति के सदस्यों की संख्या १६ रखना निश्चित् हुआ। गुरुकुल जूनियर हाई स्कूल में २०० के लगभग के छात्र प्रविष्ट हो चुके हैं। गुरुकुल संस्कृत महाविद्यालय का दाखला अभी तक खुला हुआ है।

मुख्याधिष्ठाता

सेवा में,

श्री माननीय

प० जवाहरलाल नेहरू

प्रधान मन्त्री भारत सरकार

नई देहली

श्रीमन्महोदय, सादर नमस्ते

जहाद सम्बन्धी पाकिस्तान के प्रलाप को दृष्टि में रखते हुए देश की सुरक्षा के लिए आप और आपकी सरकार सीमान्तों पर भारतीय सेना के जमाव आदि का कार्य कर रहे हैं, उसकी यह सभा प्रशंसा करती है। पाकिस्तान से युद्ध को टालने का सच्चे हृदय से यत्न करते हुए भी शान्ति की इस प्रशंसनीय भावना के पीछे देश के गौरव और सुरक्षा के लिए आप तथा आपकी सरकार जिस दृढ़ता का परिचय दे रहे हैं, उस पर हर्ष प्रकट किये बिना नहीं रहा जा सकता। परमात्मा करे शान्ति की रक्षा के लिये आपके यत्न सफल हों। फिर भी यह सभा किसी भी राष्ट्रीय आपत्ति के समय में प्रयोग के लिये अखिल भारतीय आर्यवीर दल के २००० वीरों की सेवाएं आपकी आज्ञा पर समर्पण करने को उद्यत है और आशा करती है कि आप और भारत सरकार आर्य वीर दल को यथावसर समाज सेवा और देश प्रेम का परिचय देने का अवसर प्रदान करेंगे।

भवदीय

ज्ञानचन्द मन्त्री,

सार्वदेशिक सभा, देहली

आ० स० दार्जिलिंग की स्वर्ण-जयन्ती

उपर्युक्त उत्सव २०, २१ तथा २२ अक्टूबर ५१ को बड़े समारोहपूर्वक मनाया जायगा। स्वागत-समिति का निर्माण हो गया है। स्थानीय जनता में इस स्वर्णजयन्ती महोत्सव के लिये बड़ा उत्साह है। -मन्त्री

आर्य समाजों में आर्य वीर दल संगठन कीजिये।

महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित कृण्वन्तो विश्वमार्यम् के ध्येय को सन्मुख रखते हुए आर्य समाज की योजना का चतुर्मुखी होना स्वाभाविक है अर्थात् धार्मिक आर्थिक, राजनैतिक इत्यादि सभी क्षेत्रों में इसे वैदिक धर्म अथवा संस्कृति के आधार पर क्रांति करना आवश्यक है। इस विशाल कार्यक्रम में जहां आर्य समाज को अनुभवी वृद्धि नेताओं की आवश्यकता है। वहाँ इस संघर्ष में सर्वस्व की बाजी लगाने वाले नवयुवकों की भी आवश्यकता है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने इसी उद्देश्य की पूर्ति के निमित्त "आर्य वीर दल' का निर्माण किया है। जनता में क्षात्र धर्म की चेतना उत्पन्न करना आर्य वीर दल का मुख्य उद्देश्य है। अपने इस छोटे से जीवन काल में आर्य वीर दलने आर्यसमाज की बड़ी अच्छी सेवा की है। बङ्गाल का दुर्भिक्ष, नौआखाली का हत्या काण्ड, देश के विभाजन हैदराबाद राज्य में रजाकारों की गुण्डाशाही तथा आसाम के भूकम्प के अवसर पर दल के नवयुवकों ने सराहनीय सेवा कार्य किये हैं। परन्तु सार्वदेशिक सभा आर्यवीर दल की शक्ति को जिस रूप में देखना चाहती है वैसी अभी तक नहीं बन पायी है। अन्य कारणों के साथ-साथ इसका एक बहुत बड़ा कारण यह भी रहा है कि आर्य समाजों ने आर्य वीर दल के निर्माण में अपना हार्दिक सहयोग नहीं दिया है। महर्षि दयानन्दजी महाराज द्वारा निर्मित आर्य समाज के नियमों में छठे नियम के आधार पर तो आर्यसमाज का वास्तविक रूप वही है, जहाँ आर्यों की शारीरिक, आत्मिक तथा सामाजिक उन्नति के लिये प्रयत्न होता हो। इन दृष्टि से जिस आर्यसमाज में इन तीनों प्रकार की उन्नति के लिये प्रयत्न न होता हो वहाँ महर्षि की भावना के अनुसार कार्य नहीं होता। इसलिये व्यायामशाला अथवा आर्य वीर दल प्रत्येक आर्यसमाज का अंग होना अनिवार्य है। देश की वर्तमान क्रांतिकारी अवस्था में यदि आर्य समाज ने नवयुवकों को अपनी ओर आकर्षित न किया तो यह उसकी भयंकर भूल सिद्ध होगी क्योंकि आज देश का नवयुवक भिन्न भिन्न वादों से चकाचौंध होकर नास्तिकता की ओर दौड़ा चला जा रहा है। दुर्भाग्यवश यदि नास्तिक आन्दोलन कर्त्ताओं के हाथ में देश की बागडोर आगई तो आर्यसमाज का कृण्वन्तो विश्वमार्यम का नारा एक बारगी हवा से उड़ जाएगा अर्थात् वैदिक धर्म और संस्कृति के आधार पर आर्य राष्ट्र का निर्माण एक जटिल समस्या बन जायेगी। इसलिये आर्यसमाज को चाहिये कि वे शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के आदेशानुसार अपने यहाँ आर्य वीर दल के रूप में नवयुवकों की शक्ति का संग्रह करें और सभा के आदेशानुसार इस शक्ति का सद् उपयोग करें।

ज्ञानचन्द मन्त्री
सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा
देहली

—

मण्डल-प्रचार-योजना

१—श्री प० बृहस्पतिजी शास्त्री, एम० ए०, देहरादून देहरादून, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर—प० रामकौशिकजी उ०, म० हुकुमसिंहजी प्र० ।

२—श्री रत्नसिंहजी एम०ए०, गाजियाबाद—मेरठ,बुलन्दशहर पं० सच्चिदानन्दजी उ०, म० महीपालसिंहजी, म० श्रवणसिंहजी प्र० ।

३—श्री मोहनलालजी आर्य, आगरा—अलीगढ़, आगरा, मथुरा पं० श्रीकृष्णजी शर्मा उ०, म० खड्गपालसिंहजी प्र० ।

४—श्री पं०दयारामजी आर्य, शिकोहाबाद—एटा, फर्रुखाबाद, मैनपुरी,इटावा—प० सत्यमित्र शास्त्री महो, पं० मानसिंहजी शर्मा प्र० ।

५—श्री पं० ज्ञानेन्द्रजी स्नातक, इलाहाबाद—कानपुर, फतेहपुर, इलाहाबाद, मिर्जापुर—पं० रामनिवासजी उ०, म० हेमचन्द्रजी शर्मा प्र० ।

६—श्री बनारसीलालजी आर्य, नजीबाबाद—बिजनौर, गढ़वाल, टिहरी, मुरादाबाद, रामपुर—प० तोतारामजी उ०,पं०रविदत्तजी शर्मा उ०, म० गोविन्दरामजी शर्मा प्र० ।

७—श्री चन्द्रनारायणजी एम० ए०, बरेली—बरेली, (बदायूं), नैनीताल, अलमोड़ा-प० राजेन्द्रदेवजी उ०, प० मुकुन्दरामजी शर्मा प्र० ।

८—श्रीमती प्रियंवदादेवीजी, हरदोई—हरदोई, लखनऊ, उन्नाव, बाराबंकी, रायबरेली—पं० रूपनारायणजी शर्मा उ०, प० बालकृष्णजी शर्मा प्र० ।

९—श्री रामबहादुरजी मुख्तार, पूरनपुर—पीलीभीत,लखीमपुर, शाहजहाँपुर, सीतापुर-पं० सोमदत्तजी शर्मा उ०, पं० ब्रजबहादुरजी प्र० ।

१०—श्री अक्षयवरनाथजी आर्य, आजमगढ़—बस्ती,गोरखपुर, देवरिया, आजमगढ़—प० महादेवप्रसादजी शास्त्री महो०, म० सर्वगुणप्रसादजी उ० ।

११—श्री महा०केदारनाथजी आर्य,फैजाबाद—गोंडा, फैजाबाद, बहराइच, प्रतापगढ़, सुलतानपुर—प० शिवनारायणजी वेदपाठी उ०, म० श्रीपालसिंहजी प्र० ।

१२—श्री रणधीरलालजी आर्य, बनारस—बनारस, जौनपुर, गाजीपुर, बलिया-पं० धर्मराजसिंहजी उ०, प० भगवानदत्तजी शर्मा प्र० ।

१३—श्री मदनमोहनजी वकील, मोंठ—झांसी, जालौन, बाँदा, हमीरपुर, महाराजपुर—पं० लक्ष्मणदेवजी उ०, प० धर्मदत्तजी आनन्द प्र० ।

नोट—ऊपर लिखित उपदेशकों तथा प्रचारक महाशयों से प्रार्थना है कि वे इस नयी योजना के अनुसार अपने-अपने मंडलों में पहुँच कर उपर्युक्त मण्डल-संचालकों के परामर्शानुसार प्रचार-कार्य करें ।

धर्मपाल विद्यालंकार
सभा-मन्त्री, अधिष्ठाता उप० विभाग
आर्यप्रतिनिधि सभा, उत्तरप्रदेश

प्रदर्शिनी

सप्तम आर्य सार्वदेशिक आर्य महा सम्मेलन दशहरा की छुट्टियों में ६ से १२ अक्टूबर तक मेरठ नगर में होने जा रहा है। प्रदर्शिनी में प्राचीन वस्तुएँ व पुस्तकें, आर्यसमाज का साहित्य और ऋषि दयानन्द के सम्बन्ध में जो भी वस्तुएँ मिलेंगी, वे विशेष प्रकार से प्रदर्शित की जावेंगी। अतः आर्य हिन्दू जगत् से प्रार्थना है कि वह इस प्रदर्शिनी को सफल बनाने में योग प्रदान करे। यदि कोई प्राचीन वस्तु प्राचीन या नवीन ग्रन्थ या अन्य वस्तु किन्हीं सज्जन के पास या उनकी जानकारी में हो तो उसकी सूचना मुझे देने की कृपा करें।

हरसरनदास, संचालक
शिवाजी-भवन गाजियाबाद

वृन्दावन गुरुकुल

गुरुकुल में गत १ अगस्त को विद्यापरिषद् की ओर से तिलक-पुण्य तिथि मनाई गयी। सभापति का आसन विद्वद्वर श्री प० द्विजेन्द्र-नाथ शास्त्री ने सुशोभित किया था। ब्र० रमेशदत्तजी, ब्र० रामसिंहजी आदि ब्रह्मचारियों के भाषण हुए। ब्र० विष्णु शर्मा ने कविता पढ़ी। अन्त में सभापतिजी का बड़ा सारगर्भित भाषण हुआ, जिसमें आपने स्वराज्य-सूत्र-धार लोकमान्य तिलक के जीवन पर बड़ी सुन्दरता से दृष्टि-पात किया।

मन्त्री, विद्यापरिषद्

आवश्यकता

एक अंग्रेजी पढ़े २२ से २५ वर्षीय कन्या की ठहरौनी न करने वाले कान्यकुब्ज ब्राह्मण वर की आवश्यकता है कन्या पाठक कुलोत्पन्न आयु करीब १७ वर्ष संस्कृत पढ़ी अंग्रेजी में इन्ट्रेंस पास एफ० ए० में पढ़ रही है। गौरवर्ण स्वरूपवती है।

पता—पत्र-व्यवहार
पाठक ब्रह्मादत्त मास्टर
कच्ची गढ़ी औरैया,
जिला इटावा।

आवश्यकता

आर्य कन्या पाठशाला काशीपुर (नैनीताल) को एक v. t. c. हाईस्कूल पास प्रधान अध्यापिका तथा एक संस्कृत अध्यापिका की आवश्यकता है वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा।

गोविन्दसिंह
मैनेजर आर्यकन्या पाठशाला
काशीपुर, (नैनीताल)

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ओ३म्

आर्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

संचालक—आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ

आगरा, १६ अगस्त १९५१

मुद्रक-प्रकाशक
कृष्णकुमार कोंचवी

बालक का वेदारम्भ

श्री हरिशङ्कर शर्मा

प्यारे पुत्र, आज मैं तेरा वेदारम्भ कराती हूँ,
आशा की आधार-शिला पर सुख का सदन बनाती हूँ,
आओ, आओ, बेटा, तुमको गुरुकुल-मा अपनाएगी,
लालन पालन-पोषण करती, सब कुछ वही सिखाएगी।

मेरी याद न करना प्यारे, 'कुल' तेरा परिवार हुआ,
श्री आचार्य पिताजी हैं, अब गुरुकुल ही घरबार हुआ,
गुरुकुल-माता की गोदी में जितने पढ़ने वाले हैं,
उन्नति के ऊंचे पर्वत पर वे सब चढ़ने वाले हैं।

उनमें पारस्परिक प्रेम की दिन पर दिन अधिकाई हो,
तेरे ऊपर कृपा करें सब, तू सबका प्रिय भाई हो,
गुरुलोगों की अनुकम्पा से सुबुध बनें हित-साधन हो,
ब्रह्मचर्य व्रत हो ध्रुव तेरा, लक्ष्य ईश-आराधन हो।

तपोभूमि का दृश्य मनोहर वन की छटा निराली है,
प्रकृति-सुन्दरी की सुषमा से कोई ठौर न खाली है,
विविध पक्षिगण निर्भयता से कल-कल शब्द सुनाते हैं,
मानो अपनी प्रिय बोली में ईश्वर के गुण गाते हैं।

उपवन की सुन्दर हरियाली कैसी शोभा देती है,
भोले-भाले दर्शक का मन अनायास हर लेती है,
रंग-बिरंगी पुष्प-वाटिका अनुपम दृश्य दिखाती है,
शीतल, मन्द, सुगन्ध वायु से तपोभूमि भर जाती है।

सरिता की उत्तुंग तरंगें हिय को हर्षित करती हैं,
छोटी-मोटी जल-धाराएं, चढ़ती और उतरती हैं,
कभी-कभी इन धाराओं का एक रूप हो जाता है,
मानो ऊंच-नीच का मिथ्या भेदभाव खो जाता है।

ऐसी पुण्य-भूमि प्रिय बालक, तुझे बलिष्ठ बनाएगी,
हो प्रसन्न सुखदायक देवी शिक्षा-सुधा पिलाएगी,
चिरजीवी होकर तू जग में जीवन-ज्योति जगाएगा,
सकल सिद्धि-सम्पन्न रहेगा, मनमाने फल पाएगा।

प्राणाधार धर्म-पालन में पशु-प्रमाद का नाम न हो,
पापाचार अन्त करने में, कायरता का काम न हो,
जननी-जन्म-भूमि-सेवा में सुत, सर्वस्व लुटा देना,
धर्म-जाति जीवित रखने को निज अस्तित्व मिटा देना।

मानवता की मञ्जु मूर्ति मन-मन्दिर में पधरा लेना,
नैतिकता की गुण-गरिमा को अपनाना—आदर देना,
वर वैदिक आदर्श विश्व में तेरा सदा सहायक हो,
ध्रुवता, धर्म-भावना प्यारे तुझको प्राण-प्रदायक हो।

अनुशासन-पालन में प्रिय सुत, कभी शिथिलता मत लाना,
यम-नियमों की महिमा का आदर्श जगत् को दिखलाना,
भारतीयता ही जीवन में उज्ज्वल ज्योति जगाएगी,
ऋजुता, शुचिता, कर्मवीरता, धर्मधीरता लाएगी।

दुखियों के कष्टों का कंटक कटक गिराने वाला हो,
दीनों के दुर्दशा-दुर्ग को तू नित ढाने वाला हो,
सत् साहित्य-सरोज खिलाने को प्रिय दिव्य दिवाकर हो
पारस्परिक प्रेम-पीयूष प्रवाहक शुभ्र सुधाकर हो।

गुरुकुल में रह सदाचार से शिक्षण-काल बिताएगा,
पारंगत, पण्डित होकर जब, बेटा तू घर आएगा,
तब तेरा सत्कार करूंगी अति आनन्द मनाऊंगी,
प्यारे पुत्र, उसी दिन सच्ची पुत्रवती कहलाऊंगी।

———

वार्षिक मूल्य ८)
विदेश में १०),
एक प्रति-
तीन आने

सम्पादक हरिशङ्कर शर्मा

माननीय प्रधानजी का पत्र

[सम्पादक के नाम]

श्रीयुत सम्पादकजी, नमस्ते।

'आर्यमित्र' का २६ जौलाई का अंक मेरे सामने है। आर्य-महासम्मेलन की तैयारियों का हाल पढ़कर बड़ी प्रसन्नता होती है। मुझे आशा है कि यह सम्मेलन पूर्व के सब सम्मेलनों से अधिक समारोह के साथ होगा, क्यों न हो दैवी शक्ति उसके साथ है। मुझे यह भी विश्वास है कि हमारे मेरठ के आर्य भाई महा सम्मेलन को जनप्रिय बनाने में कोई कसर न उठा रक्खेंगे और हमारे भाई श्री ला० हरशरणदासजी के संकुचित विचारों पर न चलेंगे।

'तृष्णा तरुणी' पर आपने इस अंक में अच्छा सम्पादकीय लेख लिखा है, आपने कबीरजी के निम्न पद को लिखकर समुद्र को कूजे में भरने का यत्न किया है।

साईं इतना दीजिये जामें कुटुम समाय,
मैं भी भूखा न रहूँ साध न भूखा जाय।

'गुरुपूजा' पर भी आपका नोट अच्छा है। अब तो आशा पड़ रही है कि शीघ्र ही दंडी स्वामी गुरु विरजानन्दजी की कुटी की भूमि आर्यसमाज को मिल जायगी। तब उसमें गुरुधाम बनाने का अच्छा अवसर मिलेगा। मेरा तो ऐसा स्वप्न रहा है कि उस छोटे-से भूमि भाग में एक सुन्दर संगमरमर की यज्ञशाला और पुस्तकालय बनाये जांय। जिसमें नित्यप्रति यज्ञ-हवन हों। और वेद उपनिषदों का पाठ हो। क्या आर्य भाई और बहनें अपने वित्त के अनुसार पुष्कल धन-राशि तैयार रक्खेंगे कि जैसे ही भूमि आर्य प्रतिनिधि सभा के हाथ में आवे वैसे ही निर्माण का कार्य आरम्भ हो जाय। वैसे तो भूमि को प्राप्त करने के लिये ही सभा बहुत-सा धन इसी समय सरकार में जमा कर रही है। क्या आर्य भाई और बहनें इसमें भी सभा का हाथ बटायेंगे जिससे हम सच्ची 'गुरुपूजा' कर सकें।

'आडम्बर युक्त जीवन' शीर्षक सम्पादकीय टिप्पणी में आपने एक महत्वपूर्ण विषय की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। सचमुच विश्वव्यापी धर्म के तत्वों की शिक्षा की व्यवस्था पूर्ण रूप से हमारे देश में होनी चाहिये। नवीन बनने वाली संसद (पार्लियामेंट) के सदस्यों की ओर प्रदेशीय धारासभाओं को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। जिससे भारतवासी अपने कर्तव्यों को भले प्रकार जान सकें।

'असर क्यों नहीं होता' शीर्षक टिप्पणी एक अच्छी समस्या है, आपने इस पर थोड़ी-सी पंक्तियों में विशेष प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है। मैं आप से बिल्कुल सहमत हूँ कि जब तक आर्य-समाजियों की सारी शक्तियाँ आर्यसमाज के लिये ही काम में न लाई जायँगी, तब तक न तो संगठन सुदृढ़ होगा और न कोई ठोस कार्य ही हो सकेगा।

यह सीधी-सी बात है कि मनुष्य एक समय में एक ही विवाह कर सकता है, यदि उसका प्रेम सच्चा है। आर्यसमाज में ही हमारी पूरी लगन लगनी चाहिये और यदि हम किसी अन्य कार्य को भी करें तो भी आर्यसमाज का ही ध्यान रखते हुए उसे करना चाहिये।

सम्पादकजी, बात यह है कि हममें परमेश्वर और धर्म का उतना दृढ़ विश्वास नहीं रहा जितना कि हमारे पूर्वज आर्यसमाजियों में था और यही कारण है कि हमारे ऊपर अच्छी से अच्छी बात और योजना का असर नहीं होता।

हम देखते हैं कि हमारे मुसलमान भाइयों को अपने मजहबी कार्य करने में किसी नवीन योजना की आवश्यकता नहीं होती। जैसा भी उनका मजहबी विश्वास है, उस पर वे दृढ़ हैं। और इसी से वे प्रत्येक कार्य को दृढ़तापूर्वक करते हैं। हमारे धार्मिक विचार उत्तम होते हुए भी हमारे विश्वास में दृढ़ता नहीं है। इसीसे हमें सफलता नहीं मिलती, और हम नयी-नयी योजनाओं को ढूँढ़ते रहते हैं।

आर्य महासम्मेलन

श्री ला० कालीचरणजी आर्य, प्रधान मंत्री, स्वागत-समिति

यह तो पाठकों को विदित ही है कि सप्तम सार्वदेशिक आर्यसम्मेलन ६ अक्टूबर से १२ अक्टूबर तक मेरठ में होगा। इस महासम्मेलन में भारत के कोने-कोने से तो आर्य जनता आवेगी ही विदेशों से भी आर्य भाई-बहन पधारेंगे। बड़े-बड़े सन्यासी महात्मा और विद्वानों के दर्शन होंगे। वेद-सम्मेलन, शिक्षा-सम्मेलन, गो-सम्मेलन, संस्कृति-सम्मेलन का होना तो निश्चय हो गया है, राजार्य-सम्मेलन, शुद्धि-सम्मेलन, संस्कृत-सम्मेलन, जाति-भेद-निवारक-सम्मेलन, परिवार-सम्मेलन आदि का करना विचाराधीन हैं। इस अवसर पर एक महायज्ञ की योजना भी की जा रही है। इसका समस्त भार श्री प० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल वृन्दावन पर है। गाजियाबाद निवासी श्री ला० हरशरणदासजी प्रदर्शिनी के संयोजक हैं। बाजार का कार्य-भार मेरठ के प्रसिद्ध एडवोकेट श्री आत्माशरणजी को सौंपा गया है। जिससे सबको शुद्ध और उपयुक्त भोजन सामग्री मिल सके, तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ भी प्राप्त हो सकें। सभा-मण्डप-(पण्डाल) निर्माण का कार्य श्री मुसद्दीलालजी ने लिया है। निवास स्थान की व्यवस्था का भार श्री रघुनन्दन स्वरूपजी एडवोकेट सँभालेंगे। श्री पं० धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री आगत मेहमानों को यथास्थान ठहराने की व्यवस्था करेंगे। प्रकाश का प्रबन्ध श्री शान्ति प्रकाशजी के सुपुर्द हुआ है। सभामण्डप बाजार और आर्य नगर सर्वत्र प्रकाश-व्यवस्था आप ही करेंगे। जल का प्रबन्ध श्री नन्दरामजी वैश्य करेंगे। न्हाने-धोने की समुचित व्यवस्था रहेगी, स्त्रियों और पुरुषों के लिये अलग अलग। भोजन व्यवस्था का कार्य श्री ला० विद्यासागरजी द्वारा सम्पन्न होगा। स्वयम सेवकों के अध्यक्ष श्री नन्दकिशोरजी दुबलिश हैं। श्री चौ० जयदेवसिंहजी एडवोकेट को नगर-कीर्तन के विशाल जुलूस का प्रबन्ध सौंपा गया है। श्री पं० शिवदयालुजी और श्री विश्वम्भरसहायजी प्रेमी प्रचार-कार्य कर रहे हैं।

पूछा जाता है कि इस यज्ञ-सम्मेलन में समाज का कुछ काम भी होगा, या वह यों ही तमाशा बन कर रह जायगा। यदि आर्यजनता सचमुच कुछ ठोस काम चाहती है तो सबसे पहले उसे सार्वदेशिक सभा द्वारा निर्दिष्ट भ्रष्टाचार तथा चरित्रहीनता मिटाने के लिये दृढ़ संकल्प होना चाहिए। भ्रष्टाचार मिटाने के लिए पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए। सबसे मुख्य और प्रथम यही काम है। महासम्मेलन से पूर्व इसे पूरा कर लेना चाहिए, फिर सम्मेलन की सफलता सुनिश्चित है।

छुट्टी की सूचना

सदा की भाँति इस वर्ष भी श्रावणी और श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के उपलक्ष्य में 'आर्यमित्र' का आगामी अङ्क (२३ अगस्त का) बन्द रहेगा। ३० अगस्त को फिर पाठकों की सेवा में पहुँचेगा।

व्यवस्थापक

पृष्ठ ६ पर "भगवत् स्मरण" सम्बन्धी लेख छपा है। ऐसे लेखों की आवश्यकता है जिससे लोगों का ध्यान भगवान् की ओर अधिक खिंचे।

पृष्ठ ११ पर "जीवन ज्योति" शीर्षक में महाकवि शङ्करजी और ठा० खमानसिंहजी की जीवनी का परिचय मिलता है। मुझे दोनों ही महान् पुरुषों से अच्छी तरह परिचित होने का सौभाग्य प्राप्त है। महाकविजी के दर्शन तो पहली बार बुलन्दशहर में ही हुए जब उनके पुत्र श्री हरिशंकर शर्मा कविरत्न आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय मन्त्री थे। उस समय बुलन्दशहर में वे कृपापूर्वक दो-तीन दिन ठहरे थे। फिर तो कविजी की जन्मभूमि हरदुआगंज में भी जाने का मुझे कई बार अवसर मिला। मेरे अनुरोध पर

[शेष पृष्ठ १५ पर]

'ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः'

आर्यमित्र

आगरा, श्रावण शुक्ला १४ संवत् २००८ वि०, गुरुवार, ता० १६ अगस्त १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५१

**कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्स दन्धसः ।
दृढा चिदारुजे वसु । ऋ० ४।३१।२**

तुझमें न न्यूनता और अधिकता आती
तेरी प्रभुता तो सदा साम्य सरसाती
अन्नादिक भोजों से भी सुख मिलता है
पर पाकर तुझको हृदय-पद्म खिलता है ।

धर्म-भावना

अंग्रेजी की 'मिश्नरी स्प्रिट' को 'हम धर्म-भावना' कहना ही अधिक पसन्द करते हैं । आर्यसमाज के प्रारम्भकाल में और उसके बाद तक धर्म-प्रचारकों (मिश्नरियों) ने बड़ा प्रशंसनीय प्रचार-कार्य किया, प्रत्येक प्रचारक स्वार्थ-भावना को तिलांजलि देकर आर्यसिद्धान्तों का महत्व दिखलाता था । अध्यापक, लेखक, अधिकारी, व्यापारी, वकील, चिकित्सक कोई भी आर्य किसी उद्यम या व्यवसाय को क्यों न करता हो, परन्तु उसे सदैव अपने धर्म प्रचार की ही धुन लगी रहती थी । वह दूसरों से जिन बातों को कहता, उन्हें पहले स्वयं करके दिखलाता था । लोगों पर 'आर्यसमाज' का सिक्का जमा हुआ था । वह आर्यसमाजी है, अतएव सच्ची गवाही देगा, रिश्वत नहीं लेगा, सिफारिश नहीं सुनेगा, रू रियायत नहीं करेगा, ऐसा था, उस समय आर्यसमाज का प्रभाव । परन्तु जब से इस धर्म-भावना ने कूच किया, तब से ही आर्यसमाजियों की श्रेष्ठता का गौरव भी गिर गया । यदि हम वस्तुतः समाज को ऊंचा उठाना है तो पहले प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं उठना होगा, और अपने हृदयों में 'धर्म भावना' भरनी होगी, और उसी भावना को क्षण-क्षण में अपने जीवन के साँचे में ढालना होगा । हमारी संस्थाएँ हैं, कालिज हैं, स्कूल हैं, परन्तु वे निर्जीव हैं, उनमें मेशीन की तरह पुस्तकें रटाने और परीक्षा दिलाने के अतिरिक्त और क्या होता है । हम स्वयं जो आर्यसमाज के सेवक, शुभचिन्तक, अधिकारी, नेता या प्रणेता बने हुए हैं, वैदिक धर्म-प्रचार के लिए क्या करते हैं ? इन स्तम्भों में कई बार लिखा जा चुका है कि पुरानी पौराणिक रूढ़ियाँ छोड़कर आर्यसमाज ने अपनी नयी रूढ़ियाँ अपनाली हैं । आज अमुक दिवस है अमुक जयन्ती और अमुक सप्ताह है, अमुक पर्व है, अमुक त्यौहार है । हवन कर लिया, व्याख्यान दे लिया और जय जगदीश हरे ! ज्यों ज्यों आर्यसमाजों की संख्या बढ़ती जाती है, त्यों त्यों हमारी धर्म-भावना क्षीण होती जाती है । हम एक मेशीन की तरह अपने सामाजिक जीवन में घूमते रहते हैं । हमारे कार्यों में न उत्साह है न गम्भीरता । न तत्परता है न लगन । फिर भी दावा है, विश्व को आर्य बनाने का । जो आर्यसमाजी अपने बालकों को भी आर्य नहीं बना सके, उनके आचार-विचार और कथन में कैसे प्रभाव मान लिया जाय । सन्तान को आर्य बनाना तो दूर रहा, स्वयं हम अपने आपको आर्य नहीं बना पाये । आर्यसमासदों के रजिस्टर में नाम लिखा लेना मात्र 'आर्य' होने का प्रमाण नहीं है । आर्य का लक्षण महर्षि ने क्या किया है, जरा हम लोग अपने हृदयों पर हाथ रख कर विचारें तो सही । आर्यसमाज के लिए सच्चे सौ आर्य चाहियें, नाम के दस लाख आर्य भी 'भजा गलस्तन' वत् हैं । वेद-प्रचार-सप्ताह प्रतिवर्ष आता है और रूढ़ि का रूप धारण करके गुजर जाता है । हम चाहते हैं, अबकी बार यह सप्ताह हमारे हृदयों में धर्म-भावना यानी 'मिश्नरी स्प्रिट' भरे और हम सच्चे अर्थों में आर्य बनने की प्रतिज्ञा करें । वास्तविक आर्य बनने से ही देश और समाज का कल्याण होगा । वास्तविक आर्यत्व का अभाव ही हमें अधोगति-गर्त में धकेल रहा है ।

क्या आर्यसमाज पन्थ है ?

कभी-कभी कुछ लोग भ्रमवश आर्यसमाज को सम्प्रदाय या मत पन्थ कहने लगते हैं । ये वे ही लोग हैं जिन्होंने आर्यसमाज के सिद्धान्तों या नियमों का अध्ययन नहीं किया । गत मई के 'सर्वोदय' में आचार्य विनोवा भावे का एक लेख पढ़कर हमें बड़ा आश्चर्य और दुःख हुआ । श्री विनोवाजी से किसी ने पूछा—"क्या 'सर्वोदय-समाज का काम पुराने धर्मों और पन्थों की तरह चलना ठीक न होगा ? विनोवाजी ने उत्तर दिया—'क्या मैं यह समझूं कि सर्वोदय समाज को आर्यसमाज की तरह आप एक पन्थ बनाना चाहते हैं । प्रश्नकर्ता के 'जी हाँ' कहने पर श्री विनोवाजी बोले—तो हम खोने वाले हैं । उनकी (आर्यसमाजों की) कट्टरता ने प्रारम्भ में कुछ कार्य किया भी हो तो आज उनका विकास रुक गया है ।' ज्ञात नहीं विनोवाजी ने आर्यसमाज को किस आधार पर पन्थ बताया है । पन्थ या सम्प्रदाय तो उसे कहते हैं, जिसमें बुद्धि या तर्क को नमस्कार कर 'गुरुडम' की ही गरिमा गरजती रहती है. 'बाबा वाक्य प्रमाणम्' को मान्यता दी जाती है, संकीर्ण समुदाय ही कार्य-क्षेत्र बनाया जाता है । आर्यसमाज के नियम कितने उदार और व्यापक हैं उनमें तो सारे संसार की सेवा करने का उल्लेख है । अपनी ही उन्नति करना संकुचित भावना बताया गया है, सबकी उन्नति में अपनी उन्नति मानी गया है । मनुष्य ही क्यों प्राणिमात्र के कल्याण पर आर्यसमाज का लक्ष्य है । वह जो कुछ कहता है, मनुष्यमात्र के लिए कहता है, हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों या भारतवासियोंके लिए ही नहीं कहता । ऐसा व्यापक तथा विस्तृत आदर्श और उद्देश्य रखने वाले समाज को 'पन्थ' बताना श्री विनोवाजी के लिए कभी उचित नहीं कहा जा सकता । "कट्टरता ने तो आरम्भ में कुछ काम किया भी हो" विनोवाजी का यह वाक्य कितना अनुदार है, 'कट्टरता' का कैसा अनुचित और अप्रासंगिक प्रयोग किया गया । यदि विनोवाजी ने 'सत्यार्थ प्रकाश' भले प्रकार पढ़ा होता और आर्यसमाज द्वारा किये गये विशाल कार्यक्रम पर गम्भीर दृष्टि डाली होती तो, उनके इन वाक्यों का स्वरूप कुछ और ही होता और वे आर्यसमाज की मुक्तकंठ से प्रशंसा किये बिना न रहते । जिस आर्यसमाज ने देशोन्नति सम्बन्धी प्रत्येक क्षेत्र और दिशा में सबसे पहले और सबसे अधिक काम किया, विनोवाजी उसे "होतो" की संदिग्ध धारासे धूमिल करना चाहते हैं । हमारा तो दृढ़ विश्वास है कि 'सर्वोदय' के लिए महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज ने जितना काम किया उतना और किसी ने नहीं किया । वे सब का सब प्रकार से, सब दिशाओं और सब क्षेत्रों में उदय और उद्धार देखना चाहते थे । क्या श्रीविनोवाजी ऐसा एक भी उदाहरण दे सकते हैं, जिससे ऋषि दयानन्द की सर्वोदयोन्मुखी विचार-धारा कहीं भी शिथिल, धीमी या मन्द हुई हो । जिस सुधार उद्धार का बीड़ा आर्यसमाज ने अस्सी वर्ष पहले उठाया था, वही आज जन-जनता की प्यारी वस्तु बना हुआ है, और 'सर्वोदय-समाज' भी उसी का आश्रय या आशीर्वाद लेकर कार्यक्षेत्र में अवतीर्ण हुआ है । जिस अजस्र स्रोत से सारी सुधार-सरिताएँ प्रवाहित हुईं, उसी की विनोवाजी ऐसी उपेक्षा करें यह कितने आश्चर्य और दुःख की बात है । जिस सत्यार्थप्रकाश ने विदेशियों द्वारा पददलित भारतभूमि को स्वतन्त्र होने और स्वराज्य प्राप्त करने के लिए सबसे प्रथम

प्रेरित, प्रभावित और उत्साहित किया उसी के समर्थक आर्यसमाज को विनोबाजी 'पन्थ' और 'कट्टर' कहें इससे अधिक अनुदारता और क्या हो सकती है।

सभा-भवन में यज्ञशाला

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का केन्द्रीय कार्यालय नारायण स्वामी-भवन, ५, मीराबाई मार्ग, लखनऊ में है। यह भवन सुन्दर, सुरम्य और सुहावने स्थान पर बना हुआ बड़ा सुविधाजनक स्थान है। सभा-केन्द्र होने के कारण इस भवन का सम्बन्ध सारे देश और मुख्यकर उत्तरप्रदेश के आर्यों से है। नारायण स्वामी-भवन जो पूज्य महात्मा नारायण स्वामीजी महाराज का स्मारक है, अब तक यज्ञशाला से शून्य था। हर्ष की बात है कि उसमें यज्ञशाला का निर्माण-काय प्रारम्भ हो चुका है। यह यज्ञशाला स्थापत्य कला का एक सुन्दर नमूना होगी। इस शाला पर अबतक लगभग दस सहस्र रुपये व्यय हो चुके हैं, अभी छह-सात सहस्र रुपये और व्यय होंगे। यह रक़म इतनी छोटी है कि सभास्थ समाजें उसे बड़ी आसानी से एकत्र कर सकती हैं। यदि सभान्तर्गत एक सहस्र समाज पाँच-पाँच, छह-छह रुपये भी दें तब भी इस यज्ञशाला का कार्य भले प्रकार सम्पन्न हो सकता है। अथवा बड़े-बड़े दो सौ आर्यसमाज सौ-सौ रुपया दें तो और भी अच्छा है।

इस सम्बन्ध में यहाँ यदि सनातनधर्मी और जैन भाइयों की श्रद्धा और उदारता का उल्लेख किया जाय तो अनुचित न होगा। इनमें से एक-एक व्यक्ति हज़ारों-लाखों रुपये व्यय करके मन्दिर और धर्मशाला बनवा देता है, परन्तु आर्यों की सारी शक्ति भी ऐसे कार्यों में पिछड़ी हुई दिखाई देती है। कितने दुःख की बात है, कि 'यज्ञशाला' जैसी पवित्र चीज के लिये, छह छह सात सात सहस्र रुपये के लिये चिन्तित होकर सभा के अधिकारियों को अपील निकालनी पड़ती है, हाथ फैलाने को विवश होना पड़ता है। आर्यसमाज में ऐसे दानी-मानी और धनियों की कमी नहीं हैं, जो अकेले ही ऐसी कई यज्ञशालाएँ बनवा सकते हैं, परन्तु उनमें न जाने क्यों इस प्रकार की धर्मभावना का उदय नहीं होरहा। वे सब देखते और सुनते हुए भी चुप रहते हैं। अस्तु, उक्त यज्ञशाला का काम प्रारम्भ हो गया है, छह सात हज़ार रुपये के कारण वह रुका न रहना चाहिए। हमें पूर्ण आशा है कि यज्ञशाला के निमित्त अपेक्षित धन, अधिक से अधिक, एक सप्ताह के भीतर सभा-कोष में पहुँच जायगा।

दैनिक 'मित्र'

आखिर १९५१ के भी आठ महीने बीतने आए, परन्तु 'दैनिक आर्यमित्र' के कोई लक्षण दिखाई नहीं देते। आर्य महासम्मेलन आएगा और सफलता पूर्वक सम्पन्न हो जायगा, परन्तु दैनिक पत्र की कमी फिर भी बराबर बनी रहेगी। दैनिक ही क्यों, आर्यसमाज में कोई अच्छा मासिक और साप्ताहिक भी तो नहीं हैं, जो हैं, वे उसी पुरानी कीली पर घूमने वाले हैं। युग कहाँ से कहाँ पहुँचा, पत्रकार-कला में क्रान्ति होगयी, परन्तु हमारी 'अखबारी दुनिया' एक पग भी आगे न बढ़ पाई। वे ही कर्णवेधन और मुण्डन संस्कारों की सूचनाएँ और वे ही विवाह विज्ञप्तियाँ। यदि आर्यसमाज से बाहर का कोई व्यक्ति आर्यपत्रों को पढ़े तो क्यों पढ़े, उनमें क्या आकर्षण है। तारीफ़ तो यह है कि स्वयम् आर्यसमाजी भी अपने पत्रों को नहीं पढ़ते। अपने समाज की सूचना हुई तो पढ़ली या इधर-उधर से एक निगाह डाल ली, और बस! समाज में कोई पत्र आगया, काफ़ी है, उसे भी पढ़ने वाले नहीं। सब समाजों में भी पत्र नहीं मगाए जाते। पत्र खरीदने वाले समाजों की संख्या सम्भवतः चालीस प्रतिशत से अधिक नहीं है। फिर दावा विश्व को वैदिकधर्म की ध्वजा के नीचे लाने का। संघ, महासभा, रामराज्य परिषद् आदि सबके कई-कई दैनिक हैं, परन्तु आर्यसमाज के पास एक भी नहीं! सारे देश के आर्यसमाजी मिल कर भी एक दैनिक को जन्म नहीं दे सके। गत चार वर्षों से दैनिक आर्यमित्र की चर्चा चल रही है, परन्तु वही ढाक के तीन पात! हिस्से बिकें तो दैनिक निकले। जब तक कोष में काफी धन न हो जाय तब तक दैनिक कैसे प्रकाशित किया जाय। हिसाब लगाकर देखा गया है कि पहले वर्ष में दैनिक को अवश्य ही कुछ न कुछ घाटा होगा। प्रचार की दृष्टि से यह घाटा सर्वथा नगण्य है। एक दो दस-बीस या पचास-सौ व्यक्ति अथवा आर्यसमाज मिलकर उसे आसानी से पूरा कर सकते हैं, परन्तु इस दिशा में कोई सोचे, तब तो। दैनिक के साथ ही एक अच्छे 'मासिक' की भी योजना थी, वह भी खटाई में पड़ी हुई है। सच तो यह है कि हमारी लेखनी और वाणी दोनों की ही दशा बड़ी शोचनीय है। कितने विद्वान् वक्ता या व्याख्याता हैं, जो शिक्षा केन्द्रों में प्रचार करने जाते हैं। यों आमदेशी व्याख्याताओं के नामों से सभाओं की सूचियाँ पटी पड़ी हैं। समझ में नहीं आता कि इस प्रकार की उत्साहहीनता, शिथिलता और अकर्मण्यता से आर्यसमाज की प्रगति का छकड़ा कैसे आगे बढ़ पाएगा।

'कश्मीर-काण्ड'

पाकिस्तान का कहना है कि कश्मीर उसका है, अतएव वह उसे मिलना चाहिए। भारत सरकार राजी से न देगी तो पाकिस्तान लड़कर कश्मीर ले लेगा। भारत के प्रधान मन्त्री श्री नेहरू बराबर कह रहे हैं कि लड़ने भिड़ने की कोई बात नहीं है, पाकिस्तान की जनता के ऊपर ही इस प्रश्न को छोड़ दिया जाय। यदि वह पाकिस्तान को पसन्द करे तो कश्मीर पाकिस्तान का, और भारत में रहना चाहे तो भारत का। परन्तु पाकिस्तान के तानाशाह यह सीधी सादी सच्ची बात मानने को तैयार नहीं हैं वे कहते हैं कि हम कोई भी युक्तियुक्त या बुद्धिसंगत सुझाव नहीं सुनेंगे, कश्मीर पाकिस्तान का है और वह उसे अविलम्ब मिल जाना चाहिए। यहाँ तक कि पाकिस्तानी तानाशाह बिलकुल लड़ने पर उतारू हो गये हैं। सीमान्त प्रदेश पर पहले से एकत्र अपनी सेना उन्होंने और भी बढ़ा दी है, और सारे पाकिस्तान में मुसलमानों की कठमुल्ली प्रवृत्ति या धर्मान्धता को उभाड़कर जेहाद का शोर मचाना शुरू कर दिया है। जनता पर युद्ध का आतङ्क स्थापित करने के लिये पाकिस्तान में खाई खन्दकें खोदी जारही हैं और 'ब्लैक-आउट' भी किये जा रहे हैं। मानो उस देश पर विपत्ति-वज्रपात या 'कहरेइलाही' होने वाला है। दूसरी ओर हमारे प्रधान मन्त्री श्री नेहरूजी पाकिस्तान से मैत्री सम्बन्ध बनाये रखना चाहते हैं और युद्ध के लिये ज़रा भी तैयार नहीं है। पाकिस्तान की सेना बढ़ायी जारही है, परन्तु भारतीय सेना में काफ़ी काट छाँट करदी गयी है। साधारण-सी बात है कि लड़ाई लड़ने वाला राष्ट्र ऐसे समय में अपनी सैनिकशक्ति को भला क्यों कम करता। इसीसे भारत सरकार की युद्ध-विरति का अनुमान किया जा सकता है। परन्तु यह भी निश्चित समझिये कि यदि इतने पर भी पाकिस्तान ने कश्मीर पर आक्रमण किया तो वह भारत पर आक्रमण समझा जायगा और भारतीय सेना उद्दण्ड एवम् उच्छृंखल पाकिस्तान का पतन, पराजय और मानमर्दन करने में कभी पीछे न रहेगा। इस समय भारत में भले ही राजनैतिक पार्टियाँ हों, परन्तु युद्ध के समय सब धर्म, सम्प्रदाय और दल एक होकर उद्दण्ड शत्रु का सामना करने में सर्वात्मना सहायक होंगे, जिससे उसे अपना अस्तित्व स्थिर रखना भी असम्भव हो जायगा। भारत की मुसलमान जनता भी अपने राष्ट्र (भारत) के साथ सक्रिय सहयोग करने को सर्वथा तैयार है। परमात्मा पाकिस्तान के अदूरदर्शी तानाशाहों को सुमति प्रदान करे, जिससे वहाँ की निरीह और निरपराध जनता भयङ्कर रक्तपात से बच जाय और निष्प्रयोजन तथा निरर्थक रणचण्डी खेलने का अवसर ही उपस्थित न हो। हमें यह जान कर बड़ा दुःख है कि कहीं-कहीं पचमांगी गुण्डे लोग भारत की शान्ति को भंग करने का गुप्त रूप से असफल प्रयत्न कर रहे हैं, ऐसे धूर्तों से भारतीय जनता को सावधान रहना चाहिए। सन्तोष की बात है कि पुलिस इन देश-द्रोहियों का दर्प दलन करने में पूरी तरह सतर्क और सचेष्ट है।

प्रचार-प्रणाली

वेद-प्रचार परमावश्यक है

श्री पं० धर्मपाल विद्यालंकार मंत्री, आ० प्र० सभा, उत्तरप्रदेश

आर्यसमाज का मुख्य कार्य वेद-प्रचार व वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार है। इस कार्य में अत्यन्त शिथिलता होने का दुःख किस आर्य को न होगा? इस प्रचार-कार्य को प्रभावशाली व व्यापक बनाने के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा ने चार योजनायें संचालित की हैं। १—प्रचार, २—शिक्षा-केन्द्रों में सुशिक्षित नवयुवकों में प्रचार ३—बड़े नगरों और कस्बों में प्रचार, ४—ग्रामीण जनता में प्रचार।

शुद्धि-कार्य के लिये आर्य-जगत् के प्रसिद्ध श्री अमरसिंहजी शास्त्रार्थ महारथी पुनः अधिष्ठाता नियत किये गये हैं। यह विचार किया गया है कि शुद्धि का कार्य ग्रामों में आरम्भ किया जावे। प्रान्त में जिस-जिस जिले की उप-प्रतिनिधि सभायें शुद्धि कार्य में सहयोग देने को तत्पर हों, उस उस जिले में शुद्धि-कार्य का केन्द्र स्थापित किया जायगा। प्रान्त में २१ उप प्रतिनिधि सभायें हैं, उनको चाहिये कि अपने-अपने जिले में शुद्धि-कार्य के लिये केन्द्र स्थापित करें, करावे और एतदर्थ सभा से पत्र-व्यवहार करें।

सुशिक्षित नवयुवक कम्युनिज्म आदि के विदेशी वादों में, जो इस देश की परम्पराओं व सांस्कृतिक विकास की दृष्टि से भारत के लिये हानिकारक सिद्ध हो रहे हैं, फँसते चले जा रहे हैं। उनमें वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार के लिये एतदर्थ श्री डा० ला० दीवानचन्दजी एम० ए०, कानपुर, श्री प० गङ्गाप्रसाद उपाध्यायजी एम० ए०, श्री प्रो० सीतारामजी एम० ए०, श्री प० अयोध्याप्रसादजी कलकत्ता, श्री प० विहारीलालजी शास्त्री, श्री स्वामी सत्यदेवजी परिव्राजक, श्री पूर्णचन्द्रजी एडवोकेट, श्री प० सूर्यदेव शर्मा एम० ए० आदि विद्वानों से प्रार्थना की गई है। आर्यसमाज को इस योजना से लाभ उठाना चाहिये। वे सभा द्वारा पत्र व्यवहार कर व्यवस्था करा सकते हैं।

सभा अपने उपदेशकों द्वारा नगरों व कस्बों में प्रचार-कार्य कराती है। आर्यसमाजों के लिये विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि वह सभा के उपदेशकों को ही अपने यहाँ प्रचारार्थ बुलाया करें और यदि वे सभा के अतिरिक्त किसी अन्य प्रचारक को बुलाना चाहें तो वह सभा के द्वारा ही व्यवस्था किया करें। इससे न केवल प्रचार काय सुसगठित और प्रभावशाली होगा, प्रत्युत अनुशासन भी दृढ़ होगा।

देश की जनता का एक बहुत बड़ा भाग, निःसंदेह ग्रामों में निवास करता है, जहाँ कि वैदिक धम प्रचार शून्य के बराबर है। पश्चिमीय सभ्यता व सस्कृति से सर्वथा प्रभावित अनेक राजनैतिक दलों के राजनैतिक सत्ता ग्रहण करने के उद्देश्य से किये गए आन्दोलनों से भारतीय समाज की मनोदशा के असन्तुलित तथा अव्यवस्थित हो जाने की प्रबल आशंका उत्पन्न हो गई है। इसका प्रतिकार होना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश के पश्चिमीय जिलों में तो बहुत कुछ आर्यसमाजें स्थापित हैं, परन्तु पूर्वीय जिलों में आर्यसमाजों की सख्या बहुत न्यून और उनमें बहुत-सों में तो शिथिलता आ गई है। अतः यह व्यवस्था की गई है कि प्रान्त को मण्डलों में विभक्त किया जावे। प्रत्येक मण्डल में एक व अधिक मण्डलाधीशों के अधीन सभा के उपदेशकों व प्रचारकों द्वारा प्रचार-कार्य किया जाता है। मण्डलाधीशों से यह आशा की जाती है कि वे प्रत्येक आर्यसमाज का स्वय निरीक्षण करें, आर्य पुरुषों के निकट सम्पर्क में आवें और उपदेशकों द्वारा भी समाजों की शिथिलता को दूर करने का यत्न करें। उपदेशकों का कर्तव्य है कि अपने-अपने मण्डल की समाजों से सभा का दशांश, सूद, कोटि तथा वेदप्रचार का धन प्राप्त करें, यदि कोई समाज शिथिल हो रही हो, तो उसे जाग्रत करें, सभा में प्रविष्ट न हो, उसे प्रविष्ट करावें और प्रत्येक प्रकार से आर्यसमाज के संगठन को दृढ़ करने के उत्तरदायित्व को निभावें।

वेद-प्रचार मद में धन की अत्यन्त न्यूनता हो गई है। प्रचार से धन और धन से वेद-प्रचार का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। वर्तमान राजनैतिक प्रमुख उत्तेजक वातावरण में अस्थिर विवेक रहित जन समुदाय सहज हीं सान्निध्य प्रभावों में बहुत समय से बह रहे हैं। उससे वैदिक आर्य संस्कृति के सिद्धान्तों की ओर रुचि कम हो रही है और देश की नैतिकता की आधार-शिला हिल गई है। अत्यन्त विषम समय उपस्थित प्रतीत होता है। देश संक्रान्ति काल में से गुजर रहा है, आर्य पुरुषों को निश्चय करना चाहिये कि वे आर्यप्रतिनिधिसभा और आर्यसमाज को जीवित रखना चाहते हैं कि नहीं? यदि चाहते हैं तो उन्हें इस समय विशेष रूप से कटिबद्ध होकर उचित साधनों को ग्रहण करना कराना होगा? और सभा को वेद-प्रचार के लिये धन की चिन्ता से मुक्त करना होगा, तभी कल्याण है। आर्य अपने कर्तव्य को पहचाने और धन शीघ्र से शीघ्र सभा के कोष में विशेष प्रयत्न करके भेजें।

सेवा की परम्परा

वैद्य ब्रह्मदत्त स्नातक, एम० ए०-आयुर्वेद-शिरोमणि

कल सायंकाल मेरे पास एक अमेरिकन ईसाई मिश्नरी मि० ऐलेन औषधालय में बैठे थे। भारत में काम करने वाले भिन्न-भिन्न अमेरिकन मिशनों की व्यवस्था के सम्बन्ध में उनसे बातचीत हुई। उनसे ज्ञात हुआ कि मेथोडिस्ट मिशन तथा कुछ अन्य संस्थाओ के कोष में धर्म-प्रचार या मानवता की सेवा के लिये करोड़ों पौण्ड धन जमा है। अभी हाल में अमेरिकन सूचना-विभाग ने युद्ध पूर्व तथा वर्तमान कालीन दान में प्राप्त संख्याओं का उल्लेख करते हुये बताया था कि वर्तमान विश्वजनीन आर्थिक संकट होते हुए भी व्यक्तिगत दान का परिमाण वहाँ युद्ध से पूर्व की अपेक्षा पँच गुना बढ़ गया है। और इनमें से ७० प्रतिशत दान धर्मप्रचार के लिये दिया जाता है। धर्मप्रचार-विभाग में दिये गये इस धन का छह प्रतिशत से अधिक दीन-दुखियो की सेवा, रोगियों की परिचर्या, प्रसूताओं की देखभाल तथा अनाथ बच्चों के पालन-पोषण में व्यय होता है। शेष ४० प्र० श० में से भी २५ प्र० श० धन शिक्षा में तथा मुश्किल से १५ प्र० श० विशुद्ध धर्मप्रचार में लगाया जाता है। इससे भी बड़ा आश्चर्य यह है कि सारे विश्व से स्वर्ण-कोष को [illegible] लाकर जमा करने वाला अमेरिका इस धर्म-खाते का ८५ प्रतिशत धन स्वदेश से बाहर सुदूर भू-भागों में व्यय करता है। वहाँ केवल धन देकर ही धर्मप्रचार से कर्तव्य की इतश्री नहीं समझ लेते, अपितु उनमे से योग्यतम व्यक्ति अपना जीवन और समग्र शक्तियां लगाकर मानवता के कष्टों के निवारण में जी-जान से जुट जाते हैं। इलाहाबाद के डा० साम हिगिनबाटम ने आधी शती तक भारत में कृषि-विज्ञान का सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक ज्ञान फैलाने का प्रशंसनीय उद्योग किया। इसी प्रकार अन्य भी सहस्रों है।

इस सम्बन्ध में सबसे अधिक उल्लेखनीय बात यह है कि वहाँ के कुछ स्त्री-पुरुष भिक्षु तथा भिक्षुणियां बनकर जहां काम में जुट जाते हैं, और निर्वाह के लिये आवश्यक अंश लेकर धर्मप्रचार के पवित्रता भरे काम को करते हैं, वहाँ इस प्रकार के कार्यकर्त्ताओ का एक बड़ा भाग इस प्रकार का भी पाया जाता है, जोकि एक नियत अवधि तक अपना समय धर्मप्रचार के हेतु दे-देता है। देहली के निकट ग्राम में स्थित एक मिश्नरी अस्पताल के इंचार्ज डा० मारिस तथा उसी अस्पताल से ५० मील दूर पर स्थित महिला-अस्पताल की सुपरिण्टेंडेंट डा० (मिस) कैथेराइन ऐसे ही व्यक्ति हैं, जो स्वदेश में चिकित्सा सम्बन्धी व्यवसाय के द्वारा हजारों डालर प्रति मास उपार्जन करते थे। पर यहाँ आकर उन्होने क्रमशः ५ व १० वर्ष तक चिकित्सा द्वारा मानवता की मूक सेवा करने का व्रत लिया हुआ है और आप पढ़कर आश्चर्य करेंगे कि भोजन और निवास के अतिरिक्त केवल

५०)-६०) मासिक निर्वाहार्थ वे लेते हैं। हमारे यहाँ के छोटे-बड़े अस्पतालों में आनरेरी फिज़ीशियन व आनरेरी सर्जन बनकर उचित एवं अनुचित साधनों से रोगियों से विपुल धन खींचने वाले डाक्टर सहस्रों मिलेंगे, जिनका नाम अवैतनिक होने पर भी सोलह-सोलह बत्तीस बत्तीस रुपये की फीसों से वे दिन-रात अपनी जेबें गरम करते रहते हैं। परन्तु उपर्युक्त दोनों डाक्टरों की फीस व अतिरिक्त सारी उपार्जित धनराशि मिशन के कोष में ही जाती है।

यह है सच्चा वानप्रस्थाश्रम का स्वरूप। यह है भोग के साथ त्याग का सामञ्जस्य और इसे ही आप संघमित्रा तथा अशोक एवं प्राचीन भारतीय ऋषियों की आध्यात्मिक परम्परा का जाग्रत स्वरूप कह सकते हैं। हमारे त्यागमय पूर्वजों के उत्तराधिकारी कभी इतने स्वार्थत्याग और परोपकार की बात मन में सोच सकते हैं? एक स्वामी विवेकानन्द या कुछ उनके शिष्य तथा आर्यसमाज के प्रचारक आदि विदेशों में गये भी, और उनको आध्यात्मिक ऊँचे उपदेश सुनाये, तो भी मानवता की सेवा करने का उनका रिकार्ड आज क्या है? कैलीफोर्निया फिलाडेल्फिया या अन्य स्थानों पर अमेरिकन स्त्री-पुरुषों ने वेदान्त या योगविद्या के चमत्कारों से प्रभावित होकर लाखों डालर की पूंजी से विशाल भारतीय आध्यात्मिक ज्ञान-केन्द्र चाहे खोल दिये हों, परन्तु वे केवल दिमागी कसरत करने वालों के लिये एक अच्छी व्यायाम शाला (स्टेडियम) का काम दे सकते हैं. जनता का आकर्षण उनको कभी प्राप्त नहीं हुआ और न हो सकता है। हाँ, यदि कोई रचनात्मक काम करें तब हमारी श्रेष्ठ आध्यात्मिक परम्परा की जड़ें उनके हृदयों में जम सकती हैं। चीन, जापान, स्याम दक्षिण पूर्वी मलाया तथा बर्मा आदि में जो कुछ भारत का सांस्कृतिक अस्तित्व शेष है, वह उसीका परिणाम है। पर, उससे पूर्व तो हमें अपने घर में ही दिया जलाने की आवश्यकता है। मि० ऐलेन ने जैसे आदमियों का वर्णन किया है, किसी राष्ट्र या जाति को उठाना ऐसे ही नरनारियों के हाथ में है।

——

प्रदर्शिनी की रूप-रेखा

श्री हरिशङ्कर शर्मा

आर्य महासम्मेलन के साथ मेरठ में एक बड़ी प्रदर्शिनी करने का भी निश्चय किया गया है। प्रदर्शिनी का संघटन या आयोजन करना निश्चय ही बड़ा कठिन काम है। वह पत्र-पत्रिकाओं में सूचना या विज्ञप्तियाँ प्रकाशित कराने मात्र से कभी नहीं हो सकता। उसके लिए कार्यकर्ताओं को बड़ी दौड़-धूप और जोड़ बटोड़ करनी पड़ती है। सम्मेलनों के लिये तो मेज-कुर्सी,सभापति और सभामण्डप की ही आवश्यकता होती है परन्तु प्रदर्शिनी के लिए विपुल सामग्री की। हम चाहते हैं, मेरठ में होने वाली यह प्रदर्शिनी तमाशा न बन कर, असली अर्थ में प्रदर्शिनी हो अर्थात् वह आर्यसमाज की सारी सत्ता-महत्ता प्रदर्शन करने में अग्रगण्य समझी जाय।

हमारी राय में प्रदर्शिनी के सात विभाग होने चाहियें। प्रथम विभाग महर्षि जीवन-सम्बन्धी हो, इसमें उनकी रची हुई सब पुस्तकें रखी जाय, हस्तलिखित प्रतियाँ भी हों। ऋषि के वस्त्रादि स्मृति-चिह्न भी रखे जाय। टंकारा के शिवालय और ऋषि-गृह की भी झाँकी हो। ऋषि के जितने असली चित्र उपलब्ध हो सकें, वे भी उसमें रखे जायें। साथ ही ऋषिजीवन-सम्बन्धी मुख्य-मुख्य घटनाओं की विवरण-पत्रिका तैयार की जाय, जो वहाँ मोटे अक्षरों में एक स्थान पर टँगी हो।

दूसरा साहित्य-विभाग—इस में आर्यसमाज के सब मान्य ग्रन्थ संगृहीत हों। वेद, शास्त्र, उपनिषद्, ब्राह्मण, स्मृति आदि। अन्य आर्य विद्वानों ने जो महत्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे हैं वे भी इस विभाग में रहें। आर्यसमाज-सम्बन्धी समस्त पत्र पत्रिकाओं की प्रदर्शिनी भी इसी विभाग में की जाय। सम्भव हो तो प्रत्येक पत्र-पत्रिका का प्रथम अङ्क या कोई विशेषाङ्क मंगाया जाय।

तीसरा विभाग कर्मकाण्ड विभाग—इसमें यज्ञ-सम्बन्धी पात्र तथा अन्य वस्तुएँ दिखाई जाय। यज्ञ-सामग्री की उपयोगिता सूचक चार्ट रखा जाय। यज्ञों के प्रकार और उनकी विधियाँ बताई जायें। यज्ञ का वैज्ञानिक विश्लेषण और महत्व और उसके आध्यात्मिक लाभ का उल्लेख। यज्ञ-कुण्डों और वेदियों के परिमाण तथा रूप।

चौथा प्रचार विभाग यह तीन उपविभागों में विभक्त किया जाय। लेखनी, व्याख्यान और भजन। लेखनी विभाग में ग्रंथकार, कवि, लेखक और सम्पादकों के चित्र और परिचय रहें। व्याख्यान-विभाग में उपदेशकों और व्याख्याताओं के चित्र और परिचय। इनमें सन्यासी प्रचारकों का अलग 'ग्रूप' रहे और महिलाओं का अलग। भजनोपदेशकों में-भजनीकों के चित्र तथा परिचय रहें। इन्होंने भी आर्यसमाज की बड़ी सेवा की है। जिन व्याख्याताओं, उपदेशकों और प्रचारकों ने घोर कष्ट सहकर जीवन भर समाज की सेवा की है, उनके चित्र और चरित्र खोज खोज कर मँगाये जायें। कुछ प्रसिद्ध आर्य नेताओं के इधर उधर से चित्र मंगाकर प्रदर्शिनी-भवन में टाँग देना ही काफी नहीं है। आर्य विद्वानों, नेताओं और दानियों के हस्तलेखों की प्रतियाँ, चित्रों और स्मृति चिह्नों के रखने की व्यवस्था भी इसी विभाग में की जाय।

पाँचवाँ संघटन-विभाग—इस में सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा तथा उसके अधीनस्थ प्रतिनिधि सभाओं से सम्बन्ध रखने वाले विवरण और चित्र रहें। प्रत्येक सभा का सारा स्वरूप अक्षरों,अङ्कों रेखाओं तथा मूर्तियों में दिखाया जाय। यानी किस सभा से कितने समाज, कितने गुरुकुल, शिक्षणालय और कितने उपदेशक या प्रचारक सम्बद्ध हैं। आदिम अधिकारी कौन थे, अब कौन हैं, सभा कब स्थापित हुई, इत्यादि। इसी में या ऋषि दयानन्द के विभाग में परोपकारिणी सभा का अस्तित्व भी प्रदर्शित किया जाय, यानी उसका सचित्र संक्षिप्त परिचय हो। कालिज ट्रस्टों की संस्थाएँ भी इसी विभाग में दिखाई जाय। दयानन्द-विद्यालय और महाविद्यालयों के चित्र और परिचय भी। मुख्य मुख्य समाज-मन्दिरों या भवनों के चित्र और परिचय भी इस विभाग में रहें।

छठा हुतात्मा विभाग—इसमें उन अमर शहीदों के चित्र और परिचय रहें, जिन्होंने वैदिक धर्म की सेवा करते-करते अपने प्राणों की आहुतियाँ दीं। हैदराबाद-सत्याग्रह का विवरण और उसके शहीदों के चित्र तथा परिचय।

सातवाँ प्रगति-विभाग—विविध दिशाओं और क्षेत्रों में आर्यसमाज के कार्य और उसकी सफलता का दिग्दर्शन। अङ्कों और तथ्यों के प्रकाशन द्वारा। देशी-विदेशी विद्वानों की दृष्टि में आर्यसमाज इत्यादि।

हमारा अभिप्राय यह है कि मेरठ प्रदर्शिनी की संयोजना इस प्रकार होनी चाहिये जिससे दर्शक एक दृष्टि में आर्यसमाज-समष्टि का स्थूल किन्तु पूरा ज्ञान प्राप्त करले। उस पर आर्यसमाज की सत्ता और महत्ता का प्रभाव हो, और वह जान ले कि आर्यसमाज का सांकेतिक संक्षिप्त स्वरूप क्या है।

दो वर्ष हुए रुड़की कालिज के शताब्दी महोत्सव पर संगठित विशाल प्रदर्शिनी को देखने का अवसर हमें मिला। इस प्रदर्शिनी में इंजीनियरी कला को अत्यन्त छोटे रूप में केन्द्रीभूत कर दिया गया था। शायद ही ऐसा कोई कार्य रहा हो, जो वहाँ प्रदर्शित न किया गया हो। फिर सब बातों को दिखाने और समझाने वाले प्रवीण पथ-प्रदर्शक प्रदर्शिनी के प्रत्येक विभाग में मौजूद थे। उस समय हमारे देश और प्रदेश के माननीय मुख्य मन्त्री महोदयजी वहाँ पधारे थे। गत वर्ष आगरा कालिज में भी एक बड़ी अच्छी प्रदर्शिनी हुई थी। हम चाहते हैं, हमारी यह आर्य प्रदर्शिनी भी खूब सफल और सुन्दर हो। उसके प्रत्येक विभाग में सुबोध और दक्ष 'गाइड' हों, जो सब बातें बड़े स्नेह और नम्रभाव से दर्शकों को बतावें।

हमारा विश्वास है कि यदि इस प्रदर्शिनी की संयोजना ठीक ठीक हुई तो आर्यसमाज-समष्टि की सारी सत्ता-महत्ता का सुदृश्य दर्शकों की आँखों के आगे झूलने लगेगा।

——

सामयिक समस्याएँ

आर्यों का चुनाव

यदि कोई निर्वाचन सम्बन्धी मेरी इच्छा पूछना चाहे तो मैं कहूँगा कि हम आर्यों की यह कोशिश होनी चाहिए कि जहाँ तक सम्भव हो आर्यसमाजियों की अधिक से अधिक संख्या चुनाव में सफल हो और उसमें भी उन योग्यतम आर्यसमाजियों की जो संसद में पहुँचकर अधिक से अधिक उपयोगी हो सकें। आर्यसमाजियों के बाहर चुनने के लिये हमारा दृष्टिकोण यह होना चाहिये कि जो लोग देश की समस्याओं को भली भाँति समझ सकें उनको चुना जाय। सभी में सब गुण मिलना तो कठिन है, परन्तु फिर भी चुनने वाले अपनी बुद्धि का प्रयोग कर ही सकते हैं। लोकल उम्मेदवारों में कौन सबसे उपयुक्त है इसके लिए यदि स्थानिक दो-चार आर्य नेता बैठ कर सोच लें और अन्य उन्हीं का अनुकरण करें तो हितकर होगा।

आजकल भिन्न-भिन्न दलों की ओर से जो नीति-निर्देशकायें (Manifestoes) निकल रही हैं, उनमें तो आकाश पाताल की बातें कही जा रही हैं, और वे सब भी लगभग एक ही भाषा में अर्थात् (१) हम भ्रष्टाचार मिटायेंगे। (२) मंहगी को दूर भगायेंगे। (३) भारत अखण्ड करायेंगे। (४) धर्म-ध्वजा फहरायगे। (५) भूमि को स्वर्ग बनायेंगे। (६) हम सब कुछ कर दिखलायेंगे।

परन्तु यदि आप गहराई में जाकर उनकी प्रतिज्ञाओं की जाँच करने लगें तो ढाक के तीन पात ही दृष्टि पड़ते हैं। किसी के पास जादू नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि सार्वदेशिक नेताओं का विश्वास जनता की बुद्धिमत्ता में नहीं है, उनकी भेड़चाल में है। उनकी धारणा है कि खूब बढ़ा-चढ़ा कर दून की हाँको और जनता तुम्हारा अनुसरण करेगी ही। जो बात पचास वर्ष में भी पूर्ण न हो सके उसको कह दो कि हम गद्दी पर पहुँचते ही ऐसा कर देंगे। गद्दी तो मिल जाय फिर देखा जायगा। यदि विफल हुए तो कुछ न कुछ कारण तो बताया ही जा सकेगा। जनता करती तो ऐसा ही है, परन्तु क्या आर्यजनता में और अन्य जनता में कुछ भेद और विशेषता न होनी चाहिये। आर्यों का सिद्धांत तो उनको जादू पर विश्वास करना नहीं सिखाता।

—गंगाप्रसाद उपाध्याय

आर्यसमाज और राजनीति

"आर्यसमाज राजनीति में भाग ले या न ले"—इस प्रश्न पर आर्यसमाज के पत्रों में चर्चा चलती ही रहती है। दोनों पक्षों की युक्तियाँ प्रायः इतनी प्रबल होती हैं कि पाठकों का किसी निश्चय पर पहुँचना कठिन हो जाता है। यह सत्य है कि राज्य का सहारा लेकर संसार के विभिन्न मतों का प्रचार बड़ी शीघ्रता और सरलता से हुआ है। किंतु यह भी सत्य है कि राजशक्ति के परिवर्तन पर उसका ह्रास भी उतनी ही शीघ्रता से हुआ है।

मैं इस लेख में उस या इस पक्ष में कुछ नहीं लिख रहा। मुझे तो यहाँ केवल यही विचार करना है कि क्या आर्यसमाज इस समय इस स्थिति में है कि वह राजनीति में पड़कर कोई सफलता प्राप्त कर सके? आर्यसमाज का प्रचार-क्षेत्र इस समय कुछ प्रान्तों में नगरों तक ही सीमित है। बहुत-से प्रान्तों में तो वह अभी नगरों तक भी नहीं पहुँच सका है। तब क्या कोई समाज या दल अपने आन्दोलन को जन आन्दोलन बनाये बिना सफलीभूत हो सकता है और विशेषकर राजनीतिक क्षेत्र में जहाँ मताधिकार पर ही सब कुछ निर्भर होता है। कांग्रेस जब तक नगरों तक सीमित रही, उसका कोई बल नहीं था, परन्तु महात्मा गांधी के समय में जब उसे जन आन्दोलन का रूप दिया गया, वह समस्त भारत पर छा गई और अंग्रेजों को जाते समय राजसत्ता उसी के हाथ सौंपनी पड़ी। अतः इस विषय पर चर्चा करने से पूर्व हमें आर्यसमाज के क्षेत्र को व्यापक और विस्तृत बनाकर उसे जन-आन्दोलन का रूप देना चाहिये। जिन प्रान्तों में वह नगरों तक है उनमें ग्रामों तक और जहाँ नगरों तक भी उसका सन्देश नहीं पहुँचा वहाँ नगरों और तत्पश्चात् ग्रामों में उसे पहुँचाने का प्रयत्न करना चाहिये। परन्तु हमारी अवस्था यह है कि वर्षों से प्रचार की अनेक योजनाएँ बनाते हैं, किन्तु वह प्रस्तावों तक ही सीमित रहती हैं, कार्यान्वित नहीं हो पातीं। आज भी अनेक प्रांत ऐसे हैं, जहाँ हमारा कार्य नहीं के बराबर है। ग्रामीण तो "आर्यसमाज क्या है" इस भी भले प्रकार नहीं जानते। जिस समाज की यह दशा हो, उसके लिये राजनीति में भाग लेने न लेने की बात करना एक थोथा विवाद है। इसका यह अर्थ नहीं कि कोई आर्यसमाजी राजनीति में भाग ही न ले। जिनका राजनीतिक क्षेत्रों में प्रभाव है वे भाग लें और अवश्य लें, परन्तु सामूहिक रूप से राजनीति में प्रवेश करने से पूर्व हम अपने आन्दोलन को जन-आन्दोलन बना लें। यह केवल आर्यसमाज के प्रचार को तीव्र प्रगति देने से ही सम्भव है। केवल लेखों और प्रस्तावों से नहीं। हमें कार्यक्षेत्र में उतरने से पूर्व उसके लिये शक्ति संचय कर लेनी चाहिये, तब ही कुछ लाभ हो सकता है। यह समय तो वैदिक संदेश को घर घर पहुँचाने का है। इसी के लिये हमें अपनी समस्त शक्तियों को केन्द्रीभूत करना चाहिये।

—राजेन्द्र, अतरौली

आर्यसमाज और चुनाव

आर्यसमाज में कुछ लोगों का ध्यान चुनाव की ओर भी जारहा है। जहाँ तक आर्य समाज के व्यक्तियों का सवाल है, वे तो राजनीति में सदैव महत्वपूर्ण भाग लेते रहे हैं, और स्वतन्त्र भारत में उन्हें और भी अधिक लेना चाहिये, परन्तु आर्य समाज सामूहिक रूप से राजनीति से अलग रहा है और स्वतन्त्र भारत में यह पहले से भी अधिक आवश्यक है। जहाँ तक भ्रष्टाचार, अनाचार आदि को राजनीति के क्षेत्र में रोकने का सवाल है, आर्यसमाज वह कार्य सामूहिक रूप से भी कर सकता है और उसे करना भी चाहिये, परन्तु सामूहिक रूप से राजनीति में हिस्सा लेने का अर्थ यह होता है कि धारा-सभाओं के लिये आर्यसमाज भी अपने उम्मीदवार खड़े कर, कुछ लोग किसी न किसी रूप में आर्यसमाज को इस ओर ले जाना चाहते हैं, परन्तु यह ध्यान रखना चाहिये कि ऐसी भूल यदि आर्यसमाज ने की तो उसका सर्वनाश ही हो जायगा। देश में जितनी भी राजनैतिक विचार-धाराएँ हैं, उन सभी के मानने वाले व्यक्ति आर्यसमाज में विद्यमान हैं, फिर आर्यसमाज का उनसे भिन्न कौन-सा प्रोग्राम होगा, जिसको सारे आर्यसमाजी मान लेंगे। इस दिशा में कोई थोड़ी सी चेष्टा करने पर भी आर्यसमाज छिन्न-भिन्न हो जायगा। ऐसी दशा में आर्य समाज को चुनाव सम्बन्धी झंझट से अलग ही रहना चाहिये।

--धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री,
[प्रोफेसर, मेरठ कालिज]

मुसलमानों में बुतपरस्ती

इस्लाम का यह दावा है कि वह एक खुदा की पूजा करना सिखाता है। इसमें मूर्ति-पूजा, कब्र-पूजा, मनुष्य-पूजा या जड़-पूजा के लिए कोई स्थान नहीं है। परन्तु आश्चर्य तो यह है कि इस्लाम के नाम पर वह सब कुछ हो रहा है, जिसका इस्लाम खण्डन कर चुका है। मुझे अजमेर में ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की दरगाह पर जाने का अवसर प्राप्त हुआ। मैंने वहाँ के मुसलमानों का बड़ा भाग मूर्ति-पूजा में ग्रसित पाया, उन्हें ख्वाजा की कब्र की पूजा करते और कब्र में मुँह डालकर रोते-चिल्लाते देखा। मानो ख्वाजा साहब उनकी पुकार सुन रहे हैं। अथवा ख्वाजा की कब्र पर चीखने-चिल्लाने से उनकी पुकार खुदावन्द ताला तक पहुँच जायगी। मुसलमानों में कब्र-पूजा बुरी तरह प्रचलित है, और कोई

सिंहावलोकन

ब्राह्मण की हिंसा ?

प्रो० वासुदेव विष्णुदयालु एम० ए०, (मारीशस)

[इस लेख के विद्वान् लेखक श्री विष्णुदयालुजी मारीशस मे वैदिकधर्म तथा आर्यसमाज की प्रशसनीय सेवा कर रहे हैं। आपने अपने लेख म महात्मागाधी तथा अन्य महापुरुषों की अ चचल आस्तिकता का ओर सकेत किया है और इस अटल ईश्वर विश्वास को ही ससार के कल्याण का कारण बनाया है। सम्पादक]

जो अग्नि हमारे शरीर में बसी हुई है वह सब अगो को एकत्र करती है। कल हम मर जायें, यह अग्नि हमारे शरीर से कूच कर जाय तो हमारे शरीर का मास एक ओर हो जायेगा और हड्डी दूसरी ओर हो जायेंगी। इनको आग मिलाये रखती है।

इस आग को बुझाना नहीं चाहिये। इसे हमने बुझा दिया तो रसातल को चले जायेगे। अपने शरीर को कौन मनुष्य प्रिय नहीं समझता ? शरीर को अलकृत करने के लिये हम कितने प्रयत्न करते रहते हैं। सुन्दर वस्त्रों और चाँदी सोने से उसे लाद देते हैं। मुह पर तो वस्त्र रखा नहीं जाता। परन्तु इसी मुख से दुनिया जान जाती है कि अमुक मनुष्य सुन्दर है या नहीं। कदाचित् यही कारण है कि हमने सोचा कि शरीर को सुन्दर बनाने के लिये उस पर उसी तरह रंग चढ़ाना अपेक्षित है, जिस तरह दीवारों पर चढ़ाया जाता है। स्वाभाविक सौन्दर्य, चेहरे की स्वाभाविक लाली शरीर की आग से ही आती है। महर्षि दयानन्द या योगिराज अरविन्द का चित्र देखकर तुरत ज्ञात होता है कि इन श्रेष्ठ मानवो ने समझ रखा था कि शरीर कवल उसकी अग्नि के लिये प्रिय होता है:—

न ब्राह्मणो हिंसितव्योऽग्निः प्रियतनोरिव। सोमो ह्यस्य दायाद, इन्द्रो अस्याभिशस्तिपाः॥ अ० ५-१८ ६

मुसलमान इनके विरुद्ध आवाज नहीं उठ ता। आवाज उठाना तो दूर रहा, इसलाम के प्रचार के लिए क़ब्र-पूजा और लोगों के दिलमिल विश्वास म लाभ उठाया जाता है।

—महाशय कृष्णजी

—

"ब्राह्मण की हिंसा नहीं करनी चाहिये, प्रिय शरीर की अग्नि के तुल्य यह ब्राह्मण है। सोम केवल इस ब्राह्मण का पुत्र है और इन्द्र इस ब्राह्मण की हिंसा से रक्षा करता है।"

ब्राह्मणो के नेत्र वेद हैं। "वेदैः पश्यन्ति ब्राह्मणाः" वे वेद की अवहेलना नहीं करते। उनमें और हममें उत्तर-दक्षिण का अन्तर है। अग्नि को दर्पण में हम उस प्रकार नहीं देख सकते जिस प्रकार अपने अपने मुख को देखा करते हैं। हम उस मास को जरूर देख लेते हैं जिसे एक दिन कीडे-मकोड़े खाकर पचा लेंगे। इस कीडे की खुराक को हमने प्रिय बना दिया, इससे हम रीझते है और अग्नि का ख्याल तक नहीं करते। जो अग्नि का ख्याल करते हैं, उनसे हमारा वैर है। हमें रुष्ट होना ही है तो हम उनसे रुष्ट हो जाये जो अन्याय करते हैं।

जहाँ अन्याय है, वहाँ हिंसा से काम लिया जाता है। जहाँ त्याग है वहाँ प्रेम अर्थात् अहिंसा का ही वास हो सकता है। गीता का भाष्य करते हुए महात्मा गाधी ने कहा है कि हमें निष्काम कर्म करना है, हम कर्म के फल की प्राप्ति के लिये आतुर नहीं, हम हिंसक भी नहीं बन सकते, हिंसा उन लोगो द्वारा होता है, जो किसी वस्तु को प्राप्त करना चाहते है, जिसमें कामना है और जो प्रिय वस्तु को प्राप्त करने के लिये पाशविक बल तक का प्रयोग करते हैं।

न्याय प्रेम का जनक है। अधिक लोग अन्याय के शिकार बनते हैं और बहुत कम लोगों को किये गये अन्याय से लाभ होता है। हम अन्याय करते हैं जिससे हमारे बच्चे औरो के बच्चों से सुखी हों।

परन्तु देव पुरुषों द्वारा तो अन्याय किया ही नहीं जा सकता। वे अपने पुत्र को किसी और के पुत्रों से बड़ा नहीं समझते। मानवता के साकार रूप महात्मा गांधी ऐसो की गणना में जाते थे। ऐसो का पुत्र सोम होता है। शराबियो का कहना है कि सोम एक लता है जिससे शराब बनती थी। वेद के विद्यार्थी तो जानते है कि यहाँ इस शब्द से यज्ञ की ओर सकेत किया गया है। 'सोमो ह्यस्य दायादः' देव पुरुषो पर लागू है। जिस तरह कोई माता प्रातः काल अपने बच्चे का मुख देखती है और रात को सोने से पहले फिर बच्चे का मुख निहारती है उसी भाँति चार बजे प्रातः और ५ बजे साय बापूजी प्रार्थना या यज्ञ करते थे। यज्ञ स्थली में उनका वध होना उस माता के अपने डूबते हुए बच्चे की रक्षा के प्रयत्न में समुद्र या नदी के तरगो में विलीन हो जाने के समान है।

बापू सरीखे देव-हिंसा में मारे जाने योग्य नहीं थे। हत्यारे ने वेद विरुद्ध क्रिया की, वेद-विरोधी पश्चिमीयो की भाँति कार्य किया। किसी सत्य प्रेमी फ्रेंच लेखक ने महात्माजी की हत्या के पश्चात् स्पष्ट लिखा कि "हम (पश्चिमीयो) ने गाँधीजी को मारा"।

मानव प्राणी बन्धन में पड़ा था। मानसिक दासता इतनी दूर तक पहुच चुकी थी कि जनता की आवाज सुनने में आती ही नहीं थी। महात्माजी ने मूक जनता का प्रतिनिधित्व किया। ससार-शरीर की हड्डी प्रजा है। हड्डियों पर लगा हुआ मांस राजा आदि है। महात्मा गाधी अग्नि थे। उन्होंने मांस को हड्डिया मे मिलाया। बहुत से लेखको ने कहा है कि कभी कभी मालूम होता था कि महात्मा जी अराजकता के अति निकट आ गये थे। वास्तव में उन्होंने दबाये हुए को उठाया। जब जनता उठने लगी, जनता के दबाने वालो को भय उत्पन्न हुआ। भय शासकों को सन्मार्ग पर ला देता है।

बापूजी पवित्र अग्नि को जगाते थे। उनसे रुष्ट होने वाले एक ऐसी आग से प्रीति करते हैं जो विनाश लाती है। अणु बम से एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र का काम तमाम करने पर उद्यत है। भय का आज इसी लिये सर्वत्र अखड राज्य है।

महात्माजी सोम के पिता और इन्द्र के पुत्र थे। युवावस्था में वे लन्दन पहुँचे, जो ईश्वर से खाली था। लन्दन में विलासिता का बाजार लगा रहता है। वहाँ पर महात्माजी ने गीता का पाठ किया। जिस दक्षिण अफ्रीका में प्रवासियों की दशा पशुओं की दशा से भी बुरी हो गई थी, वहाँ ऐसा लगता था कि ईश्वर विद्यमान था ही नहीं। वहाँ पर भी ईश्वरभक्त गाधी अपने प्रभु से विमुख न हुये।

भारत में लौट कर जब वे सेवा करने लगे, उनके साथी तक उनका पदानुसरण करने के लिए तैयार न थे। उन्होंने एक बार कहा, "केवल गांधी गांधी का चेला है"।

अथर्व वेद के शब्दो में इस का यही अर्थ हो सकता है कि संसार अपने रक्षक के आदेशो की अवहेलना करता था। हम उन्हे पाने के योग्य न थे। श्री वियोगी हरि ने बताया है कि बापू में संसार के सभी धार्मिक पुरुषों के अन्यतम गुण विद्यमान थे। वे अनोखे थे। इन्द्र देख रहा था कि यह ससार गांधी को अपने बीच में रखने लायक नहीं है। इन्द्र ने अपनी गोद में अपने लाड़ले पुत्र को ले लिया।

हम कृतघ्न बनकर अपने ही सेवक का निरादर करते हैं। सेवक लोग इसलिये सेवा नहीं करते कि हम उनके प्रति कृतज्ञ हों वे जानते हैं कि भलाई करने वालों को अपमान सहना पड़ता है। उनकी रक्षा तो स्वयं ईश्वर करता है। उन्नीस बार बड़े-बड़े उपवासों को कर के बापू ने संसार को चकित कर छोड़ा। उन जैसे निर्बल शरीर वाले को अनशन करने की शक्ति कहा से आई ? ऐसों की रक्षा परमात्मा करता है जो सर्व शक्तिमान और निर्बलों का बल है। बापूजी के शरीर की शक्ति उसके बीच जलने वाली अग्नि थी। जिस भाँति

सुझाव और सम्मतियाँ

आर्यसमाज और उपासना

श्री रघुनन्दन स्वरूप एम० ए०, एडवोकेट

आर्य जाति के विभिन्न क्षेत्रों में बिखरने का एक विशेष कारण उसकी उपासना-पद्धति की विभिन्नता रही है। महाभारत के उपरान्त जब जाति में विद्वानों की कमी हुई, और स्वार्थियों की संख्या-वृद्धि हुई तो उन्होंने अपना-अपना प्रभुत्व स्थापित रखने के लिये भिन्न भिन्न उपास्य देवों की रचना की और साथ ही प्रत्येक उपास्य देव की अर्चना-विधि भी घड़ी। एक उपास्य देव की अर्चना का क्रम दूसरे की अर्चना के विपरीत रहा। इसके जो फल हुये उनके उल्लेख न कर केवल इतना ही लिखना पर्याप्त होगा कि आर्य जाति की दुरवस्था का एक बहुत बड़ा कारण यह भी था।

आर्यसमाज के प्रवर्त्तक प्रातः स्मरणीय भगवान् दयानन्द ने अपने दिव्य चक्षुओं से यह सब देखा और गहन मनन के उपरान्त आर्य जाति को उपासना की एक विधि दी जो पंच महायज्ञ विधि में वर्णित है। आर्यसमाज ने इस पद्धति को अपनाया। प्रारम्भ में एक कोने में जो आर्यसमाज की उपासना-विधि प्रयुक्त होती थी, वही दूसरे कोने में भी होती थी। इसका बहुत बड़ा प्रभाव था। कोई भी आर्य सदस्य एक भाग से दूसरे भाग के आर्यसमाज में जाकर अपने को नवीन वातावरण में नहीं पाता था, प्रत्युत एक ही वातावरण में अपने को पाकर बिना किसी झिझक के नित्य कर्म पूरा कर सकता और करता था। इसका बहुत बड़ा फल यह था कि आर्यसमाज में एकता थी, और थी उससे उत्पन्न होने वाली शक्ति जो संसार ने आर्यसमाज द्वारा चलाये हुए कार्य क्रमों में देखी।

पर, दुर्भाग्यवश आज अवस्था में बहुत कुछ परिवर्तन हो चुका है। अधिकांश में अब प्रायः आर्यसमाज का एक सदस्य दूसरे समाज मे जाने पर अपने को उसी 'अवस्था में नहीं' पाता। आवश्यकता पड़ने पर वह किसी काय को स्वय आरम्भ करने में हिचकता है। उसको नहीं ज्ञात कि मैं जिस स्थान में हूँ वहाँ की प्रार्थना-पद्धति क्या है? स्वभावतया उसमें एक संकोच उत्पन्न हो जाता है और वह अपने आप को अजनबी और एकाकी-सा समझने लगता है।

उदाहरण के लिये ब्रह्म यज्ञ संध्या पर दृष्टि डालिये। कहीं संध्या का आरम्भ गायत्री मन्त्र से किया जाता है तो कहीं आचमन मन्त्र से। किसी स्थान पर अघमर्षण मन्त्र के उपरान्त आचमन मन्त्र पढ़ा जाता है तो कहीं गायत्री भी पढ़ा जाता है। किसी स्थान पर उपस्थान के चौथे मन्त्र के उपरान्त आचमन मन्त्र पढ़ा जाता है तो कहीं नहीं। कहीं उपासना के उपरान्त एक बार गायत्री का पाठ होता है, तो कहीं तीन बार। कहीं पर गायत्री के बाद समपण का पाठ होता है तो कहीं पर नहीं।

यज्ञ की पद्धति भी इसी प्रकार फेरफार के साथ की जाती है। कहीं स्वस्ति-वाचन और शान्ति-प्रकरण पढ़े जाते है, कहीं नहीं। कहीं एक दो ही पढ़े जाते हैं, कहीं दोनों। मुझे इस बार बम्बई जाने का अवसर मिला, स्वभावतया मैं गिरगाँव आर्यसमाज में गया। वहाँ प्रार्थना के आठ मन्त्रों के उपरान्त स्वस्तिवाचन और शान्ति प्रकरण का पाठ न पढ़ा जाकर पुरुष सूक्त का पाठ पढ़ा गया। मेरा अभिप्राय यह नहीं है कि पुरुष सूक्त वेद का अंग नहीं है, वेद का तो जितना और जिस भाग का अभीष्ट हो पाठ किया जा सकता है और सबमें कल्याण निहित है। मेरा अभिप्राय यह है सर्वथा एक नवीन पद्धति जो मैंने कहीं नहीं देखी बम्बई आर्यसमाज में देखने को मिली। कहीं थोड़े मन्त्रो से यज्ञ का कार्य किया जाता है, कहीं पूरे मन्त्रों से। समाप्ति पर भी विभिन्नता देखने को मिलती है। हमारे उत्तर प्रदेश में तो कुछ समाजों में एक भजन गाया जाने लगा है जो भारत के अन्य भागों में मुझे सुनने को नहीं मिला। उत्तर प्रदेश के कुछ अन्य समाजों में भी इसको नहीं देखा। इस भजन का यह भाग:

> हाथ जोड़ झुकाये मस्तक
> वन्दना हम कर रहे,
> नाथ करुणा रूप करुणा
> आपकी सब कर रहे।

कहाँ तक वैदिक प्रार्थना के अनुकूल है? क्या यह निराकार परमात्मा की प्रार्थना समझी जा सकती है, इस पर बहुत कुछ कहा जा सकता है। आज मुझे केवल इतना ही कहना है कि संसार को संसार के व्यवहार में संगच्छध्वं संवदध्वं का पाठ देने वाला आर्यसमाज किस लहर में बह रहा है।

कहीं हम भी भ्रम में न पड़ जावें, इसी लिये महर्षि दयानन्द ने हमें सचेत कर मार्ग प्रदर्शन किया था। प्रार्थना की एक रूपता में मुसलमानों ने कितना भाव भर दिया। राष्ट्रिय संघ की सामूहिक प्रार्थना सुनने से मनपर कितना अच्छा असर होता है। क्या यह बात आर्यसमाज की वर्तमान संध्या और प्रार्थना के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है।

मैं आर्यसमाज की शिरोमणि सार्वदेशिक सभा तथा प्रान्तीय सभाओं प्रतिनिधि सभाओं का ध्यान इस ओर आकर्षित कर आशा करता हूँ कि वे इस सम्बन्ध में उचित आदेश देकर इस विभिन्नता को दूर करेंगी तथा समय-समय पर अपने निरीक्षकों के द्वारा यह भी देखने का प्रयत्न करेंगी कि उनके आदेशों का पालन किया जा रहा है या नहीं। मैं आर्यबन्धुओं से भी प्रार्थी हूँ कि समय रहते हुए उनको इस ओर ध्यान देना चाहिये और उपासना विधि की विभिन्नता दूर करके समाज में एकता और अभिन्नता लाने का प्रयत्न करना चाहिए।

यह आग शरीर को प्रिय है। हमें वे उच्च आत्मा प्रिय होने चाहिए जो ब्राह्मण होते हैं। हम ब्राह्मण की हिंसा कभी न करें।

दैनिक सत्संग

आर्यसमाज के प्रारम्भिक काल से ही साप्ताहिक सत्संग की प्रथा है। रविवार को प्रातः नगर के समस्त आर्यवृन्द आर्यसमाज में एकत्रित होते हैं। सुविधानुसार सत्संग में बैठकर विदा हो जाते हैं। केवल साप्ताहिक सत्संग ही आज की विषम परिस्थिति में पर्याप्त नहीं है। आर्यसमाज के प्रारम्भिक काल में न इतनी संस्थाएँ थीं, और न इतने वाद ही थे। सब संस्थाओं में आर्यसमाज का प्रामुख्य था। सप्ताह में एक बार मिल बैठना भी पर्याप्त होता था। पर आज की दशा कुछ विपरीत है। आज प्रश्न एक या दो संस्थाओं का नहीं, अनेकों का है। नित्य प्रति अनेक 'वाद' व्यक्ति को अपनी ओर आकर्षित करने का पुष्कल प्रयत्न कर रहे हैं। नवीन आन्दोलन एवं संस्थाएँ भी इस ओर से उपेक्षा नहीं रखतीं। वह सब अहर्निश चिन्तित है कि किस प्रकार व्यक्ति की स्वकीय संस्था के सामीप्य में लाकर अपनी विचार-धारा से प्रभावित किया जाये। आर्यसमाज की वस्तुस्थिति यह है कि हमारे सदस्य सप्ताह में एक बार यदा कदा अवकाश होने पर सत्संग में जाने का निश्चय कर लेते हैं और कुछ सदस्य तो महीनों तक भी आर्यसमाज के समीप नहीं आते। स्पष्ट है कि साप्ताहिक सत्संग में नियमित आने वाले महानुभावों पर भी इस बात का पूर्ण विश्वास नहीं किया जा सकता कि केवल हमारी वैदिक विचार धारा से ही वे परिचित हैं। हमारे कुछ सदस्य ६ दिन निरन्तर किन्हीं अन्य संस्थाओं से सम्पर्क रखते हैं और सातवें दिन आर्यसमाज से। विचारने की बात है कि उनकी सहानुभूति किस ओर होगी? साप्ताहिक सत्संग हमारे संगठन की कसौटी समझी जाती है। पर मेरे विचार से आज हम उसके द्वारा यथार्थ निर्णय पर नहीं पहुँच सकते। हम अपनी शक्ति का गलत अनुमान रखते हैं। यह अनुमान हमारे भविष्य तथा वर्तमान के लिए कितना हानिकारक है। मेरा अभिप्राय यह नहीं कि साप्ताहिक सत्संगों की आवश्यकता ही नहीं, पर आज की

यात्रा-वर्णन

(३)

"युधिष्ठिर अरबी ज़बान बोलते थे"

श्री डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए०, डी० लिट०

मैंने अपनी काश्मीर यात्रा में जहाँ अनेक प्रकृति के आश्चर्य देखे, जैसे केशर की क्यारी, कमल का उद्यान जल में तैरते हुये खेत, चलते-फिरते घर, पानी पर दुकानें इत्यादि वहां साहित्यिक और शिक्षा-क्षेत्र में एक ऐसा आश्चर्य देखा जिसकी कल्पना भी इस लेख के नहीं कर सकते। भारतवर्ष क्या संसार का कोई भी शिक्षित मनुष्य इस बात को कभी विचार में भी नहीं ला सकता कि जो पुस्तकें स्कूल के पाठ्यक्रम में रक्खी जाती हैं, उनमें अपनी मतान्धता और पक्षपात पूर्ण नीति के कारण कोई ऐसी बात लिख सकेगा जो एक महान् ऐतिहासिक भूल होने के साथ असम्भव बात को सम्भव कर दिखाने की असफल चेष्टा भी हो।

अभी पिछले दिनों यू० पी० के स्कूलों के पाठ्यक्रम में दो तीन ऐसी पुस्तकों की आलोचना "आर्यमित्र" आदि में पढ़ चुका हूँ जिनमें ऋषि दयानन्द को भ्रांति अथवा अज्ञानता के कारण विवाहित लिखा गया था और जिनके लेखक यू० पी० के एक प्रिंसिपल तथा 'अनुभवी तथा सुयोग्य अध्यापक' थे। इसी प्रकार किन्हीं सज्जन राजनारायण गुप्त, एम० ए० ने अपनी पुस्तक (जो नवीं दसवीं कक्षाओं के लिये है) आर्यसमाजों के लिये लिखा है कि "उन्होंने बहुत संख्या में साम्प्रदायिक संस्थाओं को जन्म दिया और इस प्रकार फूट का प्रचार किया"। यह गुप्त महोदय का अनर्गल प्रलाप है। स्वामी दयानन्द और आर्यसमाज पर तो ऐसे असत्य आक्षेप अनेक बार होते रहे हैं और उनके मुंह तोड़ उत्तर भी दिये जाते रहे हैं, लेकिन अब सुनिये काश्मीर की पाठविधि का गोरखधन्धा।

इतिहास और भूगोल का विशेष प्रेमी होने के कारण मैंने काश्मीर के इतिहास और वहाँ की शिक्षा प्रणाली का भी विशेष अध्ययन किया। इसी सम्बन्ध में वहां के स्कूलों में पढ़ाई जाने वाली इतिहास की पुस्तकों को भी देखा। मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब मैंने सातवीं कक्षा की इतिहास पुस्तक "हमारी कहानी, हिस्सा ५" को पढ़ा। यह किताब जम्मू व काश्मीर सरकार के 'टैक्स्टबुक सलाहकार बोर्ड के द्वारा तसनीफ़ व इशाअत शुदा है।' उसके नवें पाठ में पृष्ठ १०६ पर (जिसका शीर्षक है "इस्लाम और हिन्द का मुमालिक इस्लामिया से ताल्लुक") लिखा है :—

"आर्यों का हिन्दुस्तान में आना तो चन्द हज़ार साल की बात समझी जाती है लेकिन मुसलमान तो अपना ताल्लुक हिन्दुस्तान से तारीख की याद से पहले का समझते हैं। चुनानचे बाज मुसलमान मुहक्कक़ीन का ख़याल है कि हज़रत आदम को जो जन्नत से निकाला गया तो वह दुनिया में आये जो हिन्दी में दक्षिण यानें दाकन, हिन्दुस्तान का जनूबी हिस्सा है। उसके मुतल्लिक कई रुवायात भी है, अगर उनको नजर अन्दाज भी कर दिया जाये और सिर्फ तारीखी नजर से देखा जाय तो मालूम हो जायगा कि हिन्द मुसलमानों का मफ़तूहा मुल्क नहीं बल्कि आबाई मुल्क है। स्वामी दयानन्द सत्यार्थप्रकाश में लिखते हैं कि जब महाभारत में कौरवों ने पाण्डवों का लाख का घर जलाना चाहा तो विदुरजी ने युधिष्ठिर को अरबी जबान में इस राज से आगाह कर दिया और युधिष्ठिर ने अरबी जबान में ही इनको जवाब दिया। इससे महाभारत के जमाने में भी अरबों का वजूद हिन्दुस्तान में साबित होता है।"

पाठको, देख लिया कि हज़रत आदम भी जन्नत से ढकेले गये तो हिन्दुस्तान में ही गिरे और महाभारत के जमाने में भी अरबी का यहाँ खूब प्रचार था। यह सब लिखा गया है, सातवीं कक्षा के कोमल बुद्धि के बालक-बालिकाओं के लिये और किसी मामूली आदमी के द्वारा प्रकाशित पुस्तक में नहीं किन्तु जम्मू व काश्मीर के शिक्षा बोर्ड के "ज़ेरे एहतिमाम" प्रकाशित इतिहास की पाठ्यपुस्तक में। भला इसका उद्देश्य क्या हो सकता है, सिवाय इसके कि काश्मीर के कोमल मति बालक बालिकाओं के दिल में यह बात पूरी तौर से बिठा दी जाय कि सारे हिन्दुस्तान में आर्यों के आने से भी पहले मुसलमानों का बोलबाला था और अरब की तहज़ीब और ज़बान हिन्दुस्तान में सब जगह फैली हुई थी। इस्लाम की प्राचीनता को सिद्ध करने के साथ ही उसके गौरव और अच्छाइयों का सिक्का भी तुलबा के दिलो-दिमाग पर जमाने के लिये उसी किताब के पृष्ठ १०४ पर क्या लिखा है, सुनिये :

"इस्लाम दुनिया में सलामती सुलह और मोहब्बत का पैगाम लेकर आया। इस्लाम ने अख़ूव्वत (बन्धुत्व प्रेम प्रीति) का वह नमूना पेश किया है जिसको देखकर दुनिया हैरान है"।

आगे मुसलमानों को जंग और जेहाद का भी पैगाम दिया गया है। पृष्ठ १०८ पर लिखा है :—

"इसी तरह मुसलमानों को खुदा का हुक्म है कि वे इसकी राह में जंग करें"।

इन उद्धरणों को पढ़कर क्या कोई विश्वास कर सकता है कि किसी राज्य के सब स्कूलों में सब मतों और जातियों के छात्रों को पढ़ाई जाने वाली पुस्तकों में ऐसे साम्प्रदायिक और इस्लाम के प्रोपैगैण्डा के अवतरण मिल सकते हैं? पहले तो इन किताबों की भाषा ही इतनी उर्दू और फ़ारसी शब्दों से पूरित है कि वह हिन्दी लड़कों की समझ में आ ही नहीं सकती और फिर कन्या विद्यालय की छात्रायें तो उसे क्या ख़ाक समझेंगी? सारी पुस्तक में हिन्दी का शब्द तो ढूंढ़ने पर भी मुश्किल से एक दो मिलेगा, यद्यपि हिन्दी पढ़ने वालों के लिये यह इतिहास की पुस्तकें नागरी लिपि में तो छाप दी गई हैं, पर उनमें शब्द सब अरबी फ़ारसी के हैं।

सारे पाठों का उद्देश्य एक मालूम पड़ता है, और वह है आर्यों और हिन्दुओं की सभ्यता, संस्कृति, भाषा और रीति रस्म को अपमानजनक शब्दों में निम्न कोटि का सिद्ध करना और इस्लाम की "शानोशौकत" और "जाहोजलाल" का सिक्का लड़के लड़कियों के दिलों पर बठाना। इस्लाम की मतान्धता में लिखने वाला यह भी भूल गया कि इस्लाम तो हज़रत मोहम्मदसाहब के जमाने से आरम्भ हुआ तो अगर युधिष्ठिर अरबी भाषा भी बोलते थे तो हज़रत मोहम्मद से पहले पैदा हुये थे तो मुसलमानों का मुल्क हिन्दुस्तान आबाई कैसे हो गया?

हमें आश्चर्य है कि शेख़ अब्दुल्ला की सरकार जिसमें राष्ट्रिय मुसलमानों का बाहुल्य है, इस प्रकार की पुस्तकों को स्कूलों की टैक्स्ट बुकों में कैसे स्वीकार करती है, जिनमें ऐसी ऊल-जलूल बातें लिखकर अरबी जबान और इस्लाम का प्रोपैगैण्डा किया जाता है? [illegible] के और विशेषकर काश्मीर के आर्य हिन्दुओं को ऐसी पुस्तकोंके विरुद्ध उग्र आन्दोलन करना चाहिये ताकि वहाँ की सरकार ऐसी पुस्तकों को स्कूलों के पाठ्यक्रम में न रखें।

[नोट—इस लेख के विद्वान् लेखक ने काश्मीर के जिस गन्दे पाठ्यक्रम की ओर संकेत किया है, उसको हटाने के लिये सार्वदेशिक सभा को पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए। यह बड़ा आवश्यक कार्य है। सम्पादक]

परिस्थिति में साप्ताहिक सत्संग ही पर्याप्त नहीं है। हमारा कार्यक्रम दैनिक हो, प्रत्येक सदस्य नित्यप्रति उसमें सम्मिलित हो। प्रत्येक के दुःख एवं कठिनाइयों का प्रत्येक को ध्यान हो, यह बात परमावश्यक है। जीवित संस्था के लिए इस प्रकार संगठन का सूत्र दृढ़ हो जाता है।

मेरा अपना अनुभव और विचार है कि जिन आर्यसमाजों ने अपने यहाँ दैनिक सत्संग का कार्यक्रम प्रारम्भ किया उनमें नवीन स्फूर्ति, जागृति एवं नवीन रक्त का संचार होता दिखाई देता है। सत्संग का कार्यक्रम सुविधानुसार रखा जा सकता है।

—हरिश्चन्द्र आर्य, अमरोहा

विविध विज्ञप्तियां

सभा का अन्तरंगाधिवेशन

अन्तरंग सभासदों को सूचित किया जाता है कि आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश की अन्तरंग-सभा का साधारण अधिवेशन २६ अगस्त १६५१ रविवार को नारायण स्वामी भवन, लखनऊ में १२ बजे मध्यान्होत्तर से प्रारम्भ होगा। कृपया सदस्यगण नियत समय पर पधारने का कष्ट करें।

—भृगुदत्त तिवारी
सभा उपमन्त्री

——

भू-सम्पत्ति-विभाग के अधिष्ठाता

उत्तरप्रदेशीय आर्यजनता को सूचित किया जाता है कि सभास्थ भू सम्पत्ति विभाग के सहायक अधिष्ठाता श्री जयदेवसिंहजी एडवोकेट सभा-उपमन्त्री, मेरठ निवासी नियुक्त किए गए हैं।

—सभा-उपमन्त्री

——

चित्र और दुकानें

आर्यमहासम्मेलन के लिए निम्न महानुभावों के चित्रों की आवश्यकता है। सर्वश्री महात्मा हंसराजजी, प० घासीरामजी, प० तुलसीरामजी स्वामी, प० शिवशङ्करजी काव्यतीर्थ, ला० वजीरचन्दजी, प० शिव शर्माजी, प० भगवानदीनजी, प० नन्दकिशोरदेव शर्मा, आचार्य रामदेवजी, ला० देवराजजी, प० धर्मभिक्षुजी, प० मोजदत्तजी, प० मुरारलालजी शर्मा। ये चित्र बड़े हों और पाँच दिन पूर्व सम्मेलन-कार्यालय में पहुंच जाने चाहियें। अभी से सूचना भी दे दें कि कौनसा चित्र किनके पास है। जिनका आर्यसमाज में बलिदान हुआ है, उनके चित्रों की भी आवश्यकता है, कृपया हैदराबाद के हुतात्माओं के चित्र अवश्य भेजें। इस कृपा के लिए मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूंगा।

जो सज्जन सम्मेलन में दुकान लेना चाहें वे भी कृपया अभी से पत्र-व्यवहार करें। प्रदर्शिनी के अध्यक्ष श्री ला० हरशरणदास जी रईस, गाजियाबाद हैं। दुकानों के लिए श्री बा० आत्माशरणजी एम० ए०, एडवोकेट मेरठ से पत्र-व्यवहार करें चित्र सम्बन्धी पत्र-व्यवहार करने का पता—

कालीचरण आर्य, प्रधान मन्त्री,
स्वागत-समिति, मेरठ

——

सभा के नियम सम्बन्धी आवश्यक निर्देश

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर-प्रदेश के नियमों में कुछ आवश्यक संशोधन सभा के नैमित्तिक असाधारण अधिवेशन दिनांक २२ अप्रैल १६५१ स्थान दयानन्द कालेज लखनऊ में स्वीकार किये गये है। यह परिवर्तित नियम सन् १६५१ से लागू समझे जायेंगे। उत्तर-प्रदेश के समस्त आर्यसमाजों को इन संशोधन के अनुसार कार्य करना चाहिये।

१ निश्चय सं० ५ भाग (क) के आगे की टिप्पणी के नीचे यह शब्द बढ़ा दिये जावें—"परन्तु यह भी आवश्यक शर्त होगी कि ऐसी प्रत्येक आर्यसमाज का प्रत्येक 'आर्य' अथवा 'आर्यसभासद्' न्यून से न्यून चार आना मासिक शुल्क आर्यसमाज को देता हो।" इस परिवर्तन के अनुसार प्रत्येक आर्य व आर्य सभासद को न्यून से न्यून ।) मासिक अथवा ३) वार्षिक चन्दा आर्यसमाज का देना अनिवार्य होगा। और ऐसे ही सभासदों की संख्या के अनुसार प्रतिनिधि स्वीकार किये जायेंगे।

२—निश्चय सं० ६ नियम सं० ५ (ग) के अन्त में निम्नलिखित शब्द बढ़ा दिये जावें—"ऐसे प्रतिनिधियों की संख्या ७ आर्यसमाजें सम्मिलित होने तक एक (१) इसके उपरान्त प्रत्येक ७ आर्यसमाजों या उनके अंश पर एक और प्रतिनिधि लिया जा सकेगा। परन्तु किसी उपसभा के प्रतिनिधियों की संख्या ७ से अधिक न हो सकेगी। साथ ही यह भी आवश्यक शर्त रहेगी कि उपसभा में सम्मिलित उन्हीं आर्यसमाजों की संख्या पर जो अपने वार्षिक चित्र और सभा का प्राप्तव्य धन आर्य-प्रतिनिधिसभा को चुका देंगी, प्रतिनिधि लिये जायेंगे। प्रतिनिधियों की प्राथमिकता चित्र में अङ्कित क्रम से स्वीकार की जायगी।" यह नियम जिला उपसभाओं के सम्बन्ध में हैं। अब तक केवल एक ही प्रतिनिधि लिया जा सकता था। इस संशोधन के अनुसार आगामी वर्ष से जिलोपसभाओं के ७ प्रतिनिधि तक स्वीकार हो सकेंगे।

३—निश्चय सं० ७ नियम सं० ८ (२) में २) दो रुपये के स्थान पर ४) रुपये प्रतिनिधि-शुल्क अङ्कित किया जाना स्वीकार हुआ। अब तक केवल २) प्रतिनिधि शुल्क था—परन्तु अब संशोधित नियम के अनुसार प्रत्येक सभासद को ४) रु० प्रतिनिधि शुल्क देना होगा।

४—निश्चय सं० ८ नियम १६ (१) में दशांश की राशि कम से कम १०) दस रुपये के स्थान में १५) पन्द्रह रुपया स्वीकार की जावे। इस नियम के अनुसार न्यून से न्यून १५) पन्द्रह रुपया दशांश आर्य समाजों को सभा के लिये देना होगा।

५—निश्चय सं० ६ नियम सं० १६ (२) में जिलोपप्रतिनिधि-सभाओं से १०) के स्थान में २०) रु० वार्षिक शुल्क लिया जाना स्वीकार किया जावे। इस परिवर्तन के अनुसार जिलोपप्रतिनिधि सभाओं को न्यून से न्यून २०) धन राशि सभा में वार्षिक शुल्क के रूप में भेजनी होगी।

—धर्मपाल विद्यालङ्कार, मन्त्री

——

स्वास्थ्य-सुधा

फटकरी

श्री आनन्दी प्रसाद मिश्र "निर्द्वन्द्व"

फटकरी सोरठ की तरफ से आती है। कच्छ प्रान्त में यह अधिकता से पैदा होती है। पंजाब की तरफ भी होती है। यह एक बड़ी अच्छी घरेलू दवा है। हमारे देश की स्त्रियाँ इसका अति प्राचीनकाल से अनेक रोगों में व्यवहार करती आती हैं। इस प्रकार की ओषधि-चिकित्साओं में इसका अधिकता से उपयोग देखा जाता है।

सामान्य गुण—फटकरी कटु, तीखी, कुछ कषैली, खट्टी, वर्णोत्पादक, तारे को बाँधने वाली, स्तम्भक, रक्त-स्तम्भक, एवं कुष्ठ, व्रण, प्रदर, विष के विकार, मूत्रकृच्छ, प्रमेह, वमन, शोष, ज्वर, नेत्र रोग, रक्तपित्त, वात, पित्त और कफ सम्बन्धी सब रोगों को दूर करती है। फटकरी अधिक मात्रा में वमन के द्वारा कफ को निकाल देती है, इस कारण बालकों के गले में कफ के रुक जाने से जो गला रुक जाता है, ऐसी अवस्था में थोड़ी फटकरी के चूर्ण को शीतल जल के साथ सेवन कराने से वमन होकर गले का कफ फट जाता है। शरीर के किसी भी भाग में से रुधिर गिरता हो तो इसका उपयोग करने से तत्काल रुधिर का गिरना बन्द हो जाता है। जब आमरक्त या दस्त में रुधिर अधिक गिरता हो तो इसका उपयोग करने से तत्काल रुधिर का गिरना बन्द हो जाता है। किसी कारण से मुँह आगया हो, मुँह में छाले पड़ गये हों, मुख विरसता और अत्यन्त पीड़ा हो तो फटकरी के जल के द्वारा कुल्ले कराने से अवश्य लाभ होता है। यदि नाक में से रुधिर गिरता हो और किसी प्रकार भी बन्द न होता हो तो नाक में फटकरी के जल की पिचकारी लगानी चाहिए। कान की पीड़ा और कानों में से रुधिर गिरने पर इसकी पिचकारी लगानी चाहिए। कभी-कभी प्रसव होने के पश्चात् प्रसूता स्त्रियों के गर्भाशय में से अधिक रुधिर गिरा करता है. ऐसी स्थिति में फटकरी के जल की पिचकारी लगाने से तत्काल लाभ होता है। अथवा गर्भाशय में फटकरी का टुकड़ा रखने से भी रुधिर गिरना बन्द हो जाता है। पुराने दुष्ट व्रणों के धोने के लिये फटकरी का पानी बड़ा उपयोगी है। फटकरी को फुलाकर उसमें नींबू का रस मिलाकर दाद, चकत्ते आदि त्वचा के रोगों पर लगाने से बहुत लाभ होता है। आँखों के दुखने

आर्यजगत

—१ अगस्त को आ० स०-मन्दिर शकूरगढ़ प्रयागमें श्रीमती सोनउवा देवी और श्री विहारीसिंहजी का अन्तर्जातीय विवाह हुआ। आचार्य श्री स्वामी आत्मानन्दजी थे।

—श्री ठा० श्रवणसिंहजी और श्री कुशलपालसिंहजी के उद्योग से सोरो (एटा) आर्यसमाज का जीर्णोद्धार हुआ। अब सब काम नियमानुसार होने लगा है। अधिकारियों का निर्वाचन भी हो गया है।

—श्री रामचन्द्रजी की अध्यक्षता में आर्यसमाज मुसानगर (कानपुर) का नया चुनाव हुआ। अब इस समाज की दशा सन्तोषजनक है। सब कार्य यथोचित रीति से हो रहे हैं।

- २८ जुलाई से ३ अगस्त तक आगराकेंट की मुस्तफा बिल्डिंग और हरी भवन में प० रामचन्द्र शर्मा सिद्धान्त शास्त्री ने भजनों द्वारा प्रचार किया।

—शोक है कि आ० स० नगौला (अलीगढ़) के प्रधान प० रघुवरदयालुजी शर्मा के भतीजे कोमलप्रसादजी का युवावस्था में देहान्त हो गया। आ० स० नगौला शोक सहानुभूति प्रकट करता है।

—आ० स० सदर बाजार, न्यू कालोनी, जरीपटका तथा हंसापुरी श्री अविनाशीरामजी के देहान्त और श्री कालूरामजी लेखा की पत्नी के निधन पर शोक-सहानुभूति प्रकट करते हैं।

—४ अगस्त को आ० स० फर्रुखाबाद द्वारा एक मुसलमान वेश्या की पुत्री मुन्नीबाई की शुद्धि की गयी। नाम गायत्रीदेवी रखा गया। गायत्रीदेवी का विवाह श्री मुन्नीलालजी के पुत्र श्री मौजीलालजी के साथ कर दिया गया। दोनों ही अवसरों पर नगर के गण्य-मान्य सज्जन उपस्थित थे। लगभग चारसौ व्यक्तियों ने श्रीमती गायत्रीदेवी के हाथ से प्रसाद ग्रहण किया।

—श्री प० जगदीश भूषणजी की चिमटा मण्डली अजमेर के मुख्य-मुख्य मुहल्लों में बड़ी सफलता से प्रचार-कार्य कर रही है। अनेक विद्वानों के व्याख्यान भी होते हैं। जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ रहा है।

—२६ जुलाई को नकुड़ (सहारनपुर) में डक्टर बलवीरजी के स्थान पर साप्ताहिक सत्संग हुआ। श्री प० अमरनाथजी वैद्यशास्त्री (देहरादून) का प्रभाव पूर्ण भाषण हुआ, म० रत्नचन्दजी ने भजनगान किया।

—आर्य वीर-दल कानपुर की विशेष सभा अपने ६ अगस्त के अधिवेशन में प० धर्मप्रकाशजी के देहावसान पर शोक सहानुभूति प्रकट करती है। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

—आ० स० नजीबाबाद में प० जगन्नाथ शर्मा वानप्रस्थी ने सात दिवस तक वैदिक सिद्धान्त सम्बन्धी कथा कही। समाज का कार्य बड़ी सफलता से हो रहा है।

—आ० स० डोईवाला में २८ जुलाई से ३१ जुलाई तक प० लोकमणिजी ने प्रचार किया। ३ अगस्त से ६ अगस्त तक प० बुद्धदेवजी मीरपुरी और स्वा० सन्तोषानन्दजी ने प्रचार-कार्य किया। प० अमरनाथजी वैद्यशास्त्री का प्रभावशाली भाषण रविवार को हुआ। डा० सेवारामजी ने जाटव नेत्र-रोगियों की धर्मार्थ चिकित्सा की। इस प्रचार के कारण समाज में नवजीवन संचार होगया है।

आ० स० कांठ (मुरादाबाद) के प्रयत्न से कांठ में २८ जुलाई से १ अगस्त तक वर्षा के निमित्त एक वृहद् यज्ञ हुआ। जिसमें घृत-सामग्री आदि में ४४०) व्यय हुए। परमात्मा की कृपा से १ अगस्त को मूसलाधार वर्षा हुई। जनता पर यज्ञ का अत्युत्तम प्रभाव पड़ा।

—शोक है कि आ० स० सोथरा के वयोवृद्ध अनुभवी और परिश्रमशील मन्त्री अध्यापक श्री लेखराजसिंहजी वानप्रस्थी का १६ जुलाई को देहान्त होगया। परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

—गत वर्षों की भाँति इस वर्ष भी कानपुर प्रान्तीय आर्य उपप्रतिनिधि सभा ने वेद प्रचार के सिलसिले में २० जुलाई से २५ अगस्त तक एक निश्चित योजना के अनुसार प्रचार-कार्य प्रारम्भ कर दिया है। श्री रामनिवास शास्त्री, श्री रामदेवजी, स्वामी शिवानन्दजी आदि प्रतिदिन किसी न किसी आर्यसमाज या मुहल्ले में प्रचार कर रहे हैं। जिन स्थानों में प्रचार कार्य हो चुका है, उनमें बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा है। प्रतिदिन प्रातःकाल शरशैया घाट पर भी प्रचार होता है।

सार-सूचनाएं

—आ० स० हलद्वानी ने कु० प्रतापसिंहजी आर्य मुसाफिर को पहाड़ी प्रान्त में प्रचारार्थ नियुक्त किया है।

—कानपुर हिन्दू अनाथालय की स्वर्णजयन्ती आगामी दिसम्बर मास में मनायी जायगी। स्वागत-समिति बन गयी है।

—आ० स० और आ० कु० सभा सरायतरीन हयातनगर ने अपने विशेष अधिवेशन द्वारा निश्चित किया है कि युद्ध छिड़ने पर उनकी सारी शक्तियां भारत सरकार के साथ होंगी।

—आ० स० बोरना पो० पन्हेटो (अलीगढ़) के मन्दिर निर्माण के लिये धन की आवश्यकता है, भूमि-भाग प्राप्त हो चुका है। २५) रुपय देने वालों का मन्दिर पर नाम अङ्कित किया जायगा। यह समाज सन् १९१२ से स्थापित है। इस समाज के मुख्य कार्यकर्त्ता तथा प्रसिद्ध प्रचारक श्री प० आत्मारामजी वानप्रस्थी आय सिद्धान्त प्रचार के लिये प्रशसनीय प्रयत्न कर रहे हैं।

—जो सज्जन या समाज श्री प० रुद्रदत्तजी शास्त्री को प्रचारार्थ बुलाना चाहे, वे कृपया वनस्पति-भवन, देहरादून के पते पर पत्र-व्यवहार करें।

—आर्य उप प्रतिनिधि सभा जिला मेरठ की अन्तरंग सभा का अधिवेशन २६ अगस्त को मध्यान्होत्तर १ बजे से आर्यसमाज-मन्दिर लावड़ (मेरठ) में होगा। अन्तरंग सदस्य कृपया अवश्य पधारें।

—मंत्री

उत्सव-सूचनाएं

—आ० स० नजीबाबाद का उत्सव २८, २९ तथा ३० सितम्बर को समारोह पूर्वक मनाया जायगा।

निर्वाचन

—आ० स० सोरों (एटा)— प्रधान श्री रामप्रकाशजी और मन्त्री-श्री कुशलपालसिंहजी।

—आ० कु० सभा हल्दौर (बिजनौर) प्रधान श्री छेदालालजी एम० ए०, एल० टी० और मन्त्री-श्री राधेश्यामजी आर्य।

—आ० स० मूसानगर (कानपुर) प्रधान-श्री सुन्दरलालजी मिश्र और मन्त्री श्री मेवालालजी तार्किक।

पर एव उनमें अत्यन्त लाली और चीस के अधिक होने पर फटकरी के चूर्ण को गुलाबजल में घोलकर उसमें कोमल वस्त्र या रुई का फाया भिगोकर नेत्रों पर रखने से लाली और चीस शीघ्र शान्त होती है। अथवा नेत्रों के भीतर फटकरी के जल की बूँदें टपकाने से भी पूर्ववत् फल होता है। यदि तत्काल के उत्पन्न हुए बालक की आँखें सूज जायें और खुल न सकें तो प्रथम गरम जल से धीरे धीरे उसके नेत्रों को धोकर पश्चात् वस्त्र से अच्छे प्रकार पोंछकर दो-दो बिन्दु फटकरी का जल डालें। इस प्रकार करने से नेत्रों की सूजन और पीड़ा दूर हो जाती है। शरीर के किसी भी अग में चोट लग जाने पर रुधिर के संचित होने से जो पीड़ा और सूजन उत्पन्न होती है, उसमें फटकरी के पानी से सेकने से अवश्य लाभ होता है। शरीर के भीतरी भाग में चोट लग जाने पर फटकरी के चूर्ण को गरम दूध के साथ सेवन करने से शीघ्र ही चोट की पीड़ा कम हो जाती है। स्त्रियों के कितने ही गुप्त रोगों के लिये भी यह बहुत उपयोगी है। फटकरी के खाने की मात्रा १ रत्ती से २ रत्ती तक और पिचकारी के लिए २ माशा से ६ माशे तक तथा जल १ पौंड लेना चाहिए।

'शाहनए शरियत' की शरारत

क्रमागत

नीचे लिखे आर्यसमाजों ने 'शाहनए शरियत' के गन्दे लेखों के विरुद्ध प्रस्ताव पास कर माननीय भारत-मन्त्री, माननीय प० गोविन्द वल्लभ पन्त और प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के पास भेजे हैं

आगरा नगर, फैजाबाद, नकुड़ (सहारनपुर), बाजार श्रद्धानंद अमृतसर, बलरामपुर (अवध), डोईवाला, पाटन, उन्नाव, चौक प्रयाग, बावली (मेरठ), ज्वालापुर, कायमगंज, हापुड़, गाजियाबाद, गोंदिया, गगोह (सहारनपुर), मेरठ नगर,

---

सत्याग्रह-बलिदान-स्मारक-दिवस

इस वर्ष श्रावणी उपाकर्म का पर्व १७ अगस्त ५१ को पड़ता है। सत्याग्रह बलिदान-दिवस भी इसी दिन मनाया जाता है। आर्यसमाजो को यह दिवस अत्यन्त पवित्रता, समारोह और गम्भीरता से मनाना चाहिये। इस दिन का प्रोग्राम इस प्रकार होगा—प्रातः ८॥ बजे आर्यसमाज-मन्दिरो में उपाकर्म की कार्यवाही के पश्चात् सार्वजनिक सभा जिसमें सब उपस्थित पुरुष और देवियाँ मिलकर प्रारम्भ में निम्न लिखित मन्त्रों का पाठ करें। ओ३म् ऋतावान ऋतजाता। ऋग्वेद ७-६६-१३ ओ३म् अग्ने व्रतपते व्रते। यजुर्वेद १-४ ओ३म् इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः। कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। अपघ्नन्तो अराव्णः। ओ३म् उपस्थाते अनमीवा।

आर्यसमाजों के पुरोहित अथवा अन्य कोई वेदज्ञ विद्वान् उपर्युक्त मन्त्रों का तात्पर्य पढ़कर प्रार्थना करायें। इसके पश्चात् धर्मवीरों के प्रति श्रद्धांजलि शीर्षक कविता का गान किया जाय जो आर्यसमाजों में गत वर्ष तक प्रतिवर्ष सभा कार्यालय से भेजी जाती रही है। अन्त में एक व्याख्यान कराया जाय जिसमें हैदराबाद सत्याग्रह के हुतात्माओं के आत्मोत्सर्ग तथा वैदिक धर्म का महत्व दर्शाया जाय।

ज्ञानचन्द, मंत्री

'शाहना शरीयत' की शरारत

प्रतिनिधि सभा का आदेश

आर्यसमाजों के मन्त्रियों को

कानपुर के 'शाहना शरियत' नामक मुस्लिम समाचारपत्र के ३१ मई १९५१ के अङ्क में आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती के पवित्र जीवन पर जिस प्रकार सर्वथा असत्य घृणित तथा विद्वेषप्रचारक आक्षेप किये गये हैं, उससे आर्य जगत् में अत्यन्त विक्षोभ उत्पन्न हो गया है और आर्यसमाजो से बड़े तीव्र और रोषभरे पत्र इस बात के लिये आ रहे हैं कि गवर्नमेन्ट से अनुरोध किया जाय कि वह इसके लेखक के विरुद्ध मुकद्दमा चलाकर और देश की दो विभिन्न जातियों में जान बूझकर विरोध उत्पन्न कर साम्प्रदायिक विष फैलाने के इस नीच प्रयत्न को रोके और अपराधियों को कठोर दण्ड दे। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान श्री मदनमोहन सेठजी ने उत्तर प्रदेशीय सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित कर दिया है। इस पत्र ने हिन्दुओं के सर्वमान्य धार्मिक ग्रन्थ, वेदों, स्मृतियों और शास्त्रो आदि को ऋषियों की पागलपने की बकवास बतलाया है। विरोध प्रदर्शन करने के लिये यह उचित होगा कि आर्यसमाजे अपना विशेष अधिवेशन कर निम्न आशय का प्रस्ताव स्वीकार कर–१. माननीय श्री प० गोविन्दवल्लभ पन्त प्रधान-मन्त्री उत्तर-प्रदेशीय सरकार लखनऊ, २. भारत सरकार के प्राइम मिनिस्टर माननीय श्री प० जवाहरलाल नेहरू न्यू देहली और ३. आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश, ५ मीराबाई मार्ग लखनऊ तथा समाचारपत्रों को विरोध प्रदर्शन प्रस्ताव की प्रतिलिपियाँ प्रेषित करें।

प्रस्ताव

'आर्य हिन्दुओं का यह विशेष अधिवेशन कानपुर के 'शाहना-शरीयत' के ३१ मई सन् १९५१ को हिन्दुओं के वेदादि धर्मशास्त्र ग्रन्थो को पागलपने की बकवास तथा आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती के विशुद्ध चरित्र को जान बूझकर कलंकित करने के उद्देश्य से लिखे गये लेख पर अत्यन्त घृणा व रोष प्रकट करता है और भारत सरकार और उत्तर प्रदेशीय सरकार से अनुरोध करता है कि वह इस प्रकार के सम्प्रदायों में जान-बूझ कर द्वेष फैलाने वाले व्यक्ति को कठोर दण्ड दे जिससे भविष्य में इस प्रकार के कार्य करने का किसी को साहस न हो'।

—धर्मपाल विद्यालङ्कार, मन्त्री, आ० प्र० सभा, उत्तरप्रदेश

आवश्यक निवेदन

'टंकारा में विश्व - शान्ति बृहद् चतुर्वेद पारायण" के नाम प० धर्मदेव आर्य झण्डाधारी ने जो विज्ञपन प्रकाशित किया है, और अपने को टंकारा आर्यसमाज का उपदेशक बताया है, वह नितान्त असत्य और आर्यों को भ्रम में डालने वाला है। टंकारा आर्यसमाज से उक्त विज्ञप्ति का कोई सम्बन्ध नही है, और श्री धर्मदेवजी इस आर्यसमाज के उपदेशक भी नहीं हैं। इसलिये जनता सावधान रहे।

बुद्धदेव पोपटमल, मन्त्री

आ० स० टंकारा (सौराष्ट्र)

गुरुकुल बिरालसी

आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश के अधीन होने के पश्चात् से गुरुकुल बिरालसी उन्नति-पथ पर अग्रसर हो रहा है। इस गुरुकुल में पठन पाठन गुरुकुल-वृन्दावन की पाठ विधि के अनुसार ही सुचारु रूप से चल रहा है। नवीन ब्रह्मचारी प्रविष्ट हो रहे हैं। ब्रह्मचारियों के संरक्षकों की सुविधा को ध्यान में रखते हुए, गुरूकुल कमेटी ने निम्न प्रकार शुल्क निश्चित किया है। २५) प्रवेश शुल्क, १२) वार्षिक चन्दा। ६२ मन गेहूँ व ॥२५ सेर दाल वर्ष में अथवा १०) मासिक शुल्क देना होगा, जो केवल भोजन मात्र है।

ब्रह्मचारियो को प्रविष्ट कराने के इच्छुक सरक्षक महोदय कार्यालय गुरुकुल बिरालसी (मुजफ्फर नगर) से प्रवेश पत्र मगाले और पूर्ति करके भेज देवें। हिन्दी, संस्कृत के परीक्षार्थियो को भी स्थान मिल सकता है। पत्र-व्यहार कर निश्चित करें।

गगादत्त, वानप्रस्थी

व्यवस्थापक, गुरुकुल बिरालसी

(मुजफ्फरनगर)

गुरुकुल में तुलसी जयन्ती

गुरुकुल विश्व-विद्यालय वृन्दावन में विद्या-परिषद् की ओर से एक सार्वजनिक सभा तुलसी पुण्य तिथि एवं क्रान्ति-दिवस के उपलक्ष में कुल के आचार्य महोदय के सभापतित्व में संगठित हुई, जिसमें कुल के प्रमुख वक्ताओं ने महाकवि को श्रद्धांजलि समर्पित की तथा सन् ४२ की क्रान्ति में हुतात्माओं के प्रति भी श्रद्धाजलि समर्पित की गयी। प्रमुख वक्ताओं में थे ब्र० रमेशदत्तजी, ब्र० ब्रह्मस्वरूपजी, ब्र० मायानन्दजी, ब्र० रामाज्ञाजी, ओम्प्रकाशजी तथा क्षेमेन्द्रजी।

शुद्धि की गति तीव्र कीजिए

प्रान्त-भर के आर्यसमाजों और शुद्धि प्रेमी सज्जनों से निवेदन है कि व शुद्धि-आन्दोलन की गति तीव्र करें और शुद्धि-कार्य के सम्बन्ध में कृपया मुझे निरन्तर सूचना देते रहें। जहाँ-जहाँ शुद्धि-कार्य हो रहा है, वहाँ वहाँ की विस्तृत सूचना मुझे अवश्य मिलनी चाहिये।

अमरसिंह, आर्य पथिक
अधिष्ठाता शुद्धि-विभाग
अरनिया (बुलन्दशहर)

श्री स्वामी अभेदानन्दजी

श्री स्वा० अभेदानन्दजी, उप प्रधान सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा देहली, पिछले दिनों स्वा० श्री स्वा० केवलानन्दजी के निगमाश्रम दारानगर गंज (बिजनौर) में प्रचारार्थ गये थे। इस यात्रा के सिलसिले में वे बिजनौर, नजीबाबाद और चाँदपुर भी पधारे थे जहाँ उनके हाई स्कूलों में प्रभावशाली व्याख्यान हुए। श्री स्वामी जी इस यात्रा के बाद देहली आगये।

ज्ञानचन्द, मन्त्री

शान्ति का प्रयत्न

उत्तर प्रदेशोय कॉंग्रेस पार्लाटरी बोर्ड के सभारम्भ के ।सर पर अपने भाषण में मुख्य त्री पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्त ने नता से यह अनुरोध किया कि पाकिस्तान के किसी भी आक्रण से देश की सुरक्षा के लिये यार रहें। पण्डित पन्त ने यह पूर्ण ।शा प्रकट की है कि आगामी ाम चुनाव में कॉंग्रेस की विजय वश्यम्भावी है क्योंकि कॉंग्रेस ऐसी संस्था है जो किसी भी ठिनाई में देश को बचा सकती है। पाकिस्तानी नेताओं द्वारा दिये गये उत्तेजनात्मक भाषणों का जिक्र करते हुए मुख्य मन्त्री ने पाकिस्तान के प्रधान मन्त्री श्री लियाकतअली के भाषण का एक उद्धरण प्रस्तुत किया। आपने कहा कि प्रधान मन्त्री नेहरू भी देश में पूर्ण शान्ति कायम रखने का प्रयत्न कर रहे हैं।

[दूसरे पृष्ठ का शेष]

शङ्करजी ने मेरी लिखी 'वैदिक वैजयन्ती' नामक पुस्तक के लिए कई कविताएँ विशेष रूप से लिखी थीं, जो पीछे उनके प्रसिद्ध काव्य ग्रन्थ 'अनुराग रत्न' में भी प्रकाशित हुईं। शङ्करजी ने कवि-उचित बड़ा कोमल और भावुक हृदय पाया था। वे मुझसे बड़ा स्नेह करते थे। ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के महान् भक्त थे। वैदिक साहित्य में तो उनकी अगाध श्रद्धा थी।

ठाकुर खमानसिंहजी तो कई वर्ष तक सभा के अन्तरंग सभासद् और मेरे सहयोगी रहे। और अभी दो-तीन वर्ष की बात है, जब मैं साधुआश्रम के उत्सव में सम्मिलित हुआ था, तब उनसे अन्तिम बार भेंट हुई थी। उनके हृदय में आर्यसमाज के कार्य की बड़ी लगन थी। दोनों ही महापुरुषों के पुत्र अर्थात् श्री पं० हरिशङ्कर शर्मा और श्री डा० महावीरसिंहजी आर्यसमाज की निरन्तर सेवा कर रहे हैं।

मदनमोहन सेठ

विज्ञापन व्यापार का सुलभ साधन है।

यथार्थ शान्ति का उपाय

दो भाग

पहले भाग में इनके नास्तिकवाद खंडन किया गया है, जिसमें ईश्वर-जीव वेद ही ईश्वरीय ज्ञान क्या है पुनर्जन्म आदि वैदिक सिद्धान्तों को सृष्टि नियम तथा तर्क से सिद्ध किया गया है जिसका उत्तर कोई दे नहीं सकता—दूसरे भाग में 'धनियों को खतम करो' 'किसान, मजदूरों का राज्य होगा' 'मजदूर ही मील के सच्चे मालिक हैं' आदि व्यर्थ की बातों का मुँहतोड़ उत्तर दिया गया है इन पुस्तकों को यदि मील-मजदूरों तथा किसानों में भले प्रकार बांटा जावे तो कम्यूनिस्टों तथा शोश्यलिस्टों का भय दूर हो जाता है। मूल्य प्रति भाग ।) आना।

पता—स्वरूपानन्द
दातागंज, जि० बदायूं

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, पद्मदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

आर्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

सञ्चालक—आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ

आगरा, ३० अगस्त १९५१

विपत्ति-वर्षा

श्री हरिशङ्कर शर्मा

है हाय ! निराशा निशि काली,
छा रही हीनता हरियाली,
रक्त-रक्त रंग रञ्जित लाली,
सुख के सब साज नसाये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

संकट-झूले में झूल रही
झकझट झोंटे ले ऊल रही,
विष की फुलवगिया फूल रही,
रोने के गाने गाये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

आँखों से मेह बरसता है,
जीवन में नहीं सरसता है,
सूखा संसार तरसता है,
किन कर्म्मों के फल पाये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

गड़-गड़ घन-गोले गरज रहे,
पाकर बिजली-बल तरज रहे,
सुन-सुन सबके हिय लरज रहे,
गुण-गौरव के गढ़ ढाये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

दुर्मति दुर दादुर बोल रहे,
पपिहा-पापी मुँह खोल रहे,
छलछद्म-छछूंदर डोल रहे,
दुख के विष वासर आये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

झगड़े झींगुर झिंगार रहे,
कटु केकी क्रूर पुकार रहे,
नर-नाग जाग फुंकार रहे,
विकराल काल ने खाये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

सद्भाव सदन हा टूट गया
मृदु मुदिता का मठ फूट गया,
सौभाग्य सदा को रूठ गया,
अघ ओघ समोद सुहाये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

हा, मानवता चिंघाड़ रही,
दुर्गति दुर्नीति दहाड़ रही,
अवनति व्यालिन मुँह फाड़ रही
सोये दुर्भाव जगाये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

सभ्यता पाप के साथ हुई,
अनघा ऋजु रीति अनाथ हुई,
कुटिला करतूति सनाथ हुई,
भ्रम भेद-भाव अपनाये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

वह देखो नर-कंकाल वहाँ,
उन दयनीयों का हाल वहाँ,
कर रहा कलेवा काल जहाँ,
तापों ने हाय, तपाये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

कौड़ी कौड़ी को लाल हाय !
कस पेट पड़े कंगाल हाय !
बन रहा विश्व विकराल हाय !
भूखे भर पेट न पाये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

हिंसा का प्रबल प्रहार सुनो,
अबलों पर अत्याचार सुनो,
करुणा का हाहाकार सुनो,
सङ्कट ने प्राण सुखाये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

हा, आग पेट में लगती है,
अन्तर की ज्वाला जगती है,
चिन्ता की चिता सुलगती है,
विकराल चक्र घहराये हैं—
विपदा के बादल छाये हैं।

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०),
एक प्रति तीन आने
सम्पादक हरिशङ्कर शर्म्मा
वर्ष—५३
अङ्क—३३

शिक्षा-समस्या

गुरुकुल के मूल सिद्धान्तों की विजय

प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति, एम० पी०

गुरुकुल के वे मूल सिद्धान्त जिन्हें हम व्यवच्छेदक कह सकते हैं जिनके कारण वह अन्य शिक्षा-संस्थाओं से भिन्न किया जा सकता है निम्नलिखित हैं--

१--शिक्षण संस्था का सरकारी नियन्त्रण से स्वाधीन होना। २--शिक्षा में राष्ट्रिय भावना और राष्ट्रिय शिक्षा की मुख्यता। ३--गुरु शिष्य सान्निध्य और आश्रम-प्रणाली द्वारा चरित्र-निर्माण को शिक्षा का आवश्यक और प्रमुख अंग मानना।

गत ५० वर्षों में ऐसे अनेक बड़े-छोटे शिक्षणालय और विश्व विद्यालयों की स्थापना हुई है, जिनमें पूर्ण रूप से अथवा आंशिक रूप में गुरुकुल के मूलतत्वों को कार्य में परिणत करने का यत्न किया गया है। हिन्दूविश्वविद्यालयों, काशी विद्यापीठ, जामिया मिल्लिया आदि सब संस्थाएँ गुरुकुल के पश्चात् ही स्थापित हुई हैं। इसी काल में दर्जनों गुरुकुल और शायद बीसियों राष्ट्रिय शिक्षणालय स्थापित हुए। जिन विचारों को प्रारम्भ में केवल एक सनकी की सनक समझा जाता था। गुरुकुल के प्रारम्भिक सफल सञ्चालन के पश्चात् देश के बड़े बड़े विभाग कम से कम एक सुहावना स्वप्न समझने लगे, और धीरे-धीरे वे स्थूल सचाइयों में परिणत होने लगे। किसी संस्था ने गुरुकुल की एक सचाई को अपनाया और किसी ने दूसरी को, परन्तु हम गुरुकुल के समर्थक और स्नातक यह सन्तोष पूर्वक कह सकते हैं कि आज भी उपर्युक्त तीनों मूल तत्वों का एकीकरण केवल गुरुकुल में ही प्राप्त हो सकता है। गत ५० वर्षों में सरकार द्वारा या गैर सरकारी तौर से शिक्षा सम्बन्धी जो कमीशन बैठाये गये हैं, उनकी रिपोर्ट के अध्ययन से आप इस परिणाम पर पहुँचेंगे कि देश के प्रायः सभी शिक्षाविज्ञ लार्ड मैकाले की रिपोर्ट के आधार पर बनाई हुई सरकारी शिक्षा-पद्धति से असन्तुष्ट थे और उसे भारतवासियों के लिए अनुपयुक्त और मनुष्यता की सम्पूर्ण उन्नति का विरोधी समझते थे। जो सुधारणायें प्रस्तुत की गई हैं उनका विश्लेषण करने से प्रतीत होगा कि उनका झुकाव उन्हीं मूलतत्वों की ओर है जिनके आधार पर गुरुकुल की स्थापना की गई थी।

बहुत-से विचार जो ५० वर्ष पूर्व हवाई स्वप्न प्रतीत होते थे, आज स्थूल तत्व का रूप धारण किए दृष्टिगोचर हो रहे हैं। उस दिन मातृभाषा द्वारा शिक्षा देना एक खयाली पुलाव मालूम होता था, आज सरकारी यूनिवर्सिटियों में भी शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को बनाया जा रहा है, और प्रान्तीय धारा सभाओं और केन्द्रीय धारा-सभा में देश भाषा की तूती बोल रही है। उस दिन राष्ट्रिय शिक्षणालय राजद्रोह के केन्द्र माने जाते थे, आज सरकार उन्हें सहायता देने को उत्सुक है।

५० वर्ष पूर्व अंग्रेजी सरकार के घर में संस्कृत की छाया भी असम्भव थी, आज आप केन्द्रीय धारा सभा के भवन में प्रवेश कर छत की ओर दृष्टि डालिये तो आपको संस्कृत का यह नीति वाक्य लिखा मिलेगा "न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धाः" उस दिन गुरुकुलीय वेशभूषा को उपहास के योग्य समझा जाता था, आज सरकार के गृह-सदस्य केवल धोती कुर्ता पहन कर इस महादेश के गोरे और देशी अफसरों पर शासन-चक्र चला रहे हैं और उन शासन चक्र चलाने वालों पर भी आध्यात्मिकता शासन कर रही है। जो रहन सहन और शिक्षा के आदर्श १९०१ में उपहासास्पद समझे जाते थे, वह १९५१ में सर्वोपरि सम्मान योग्य हो गये हैं। मैं यह तो नहीं कहूँगा कि यह सम्पूर्ण परिवर्तन केवल गुरुकुल के कारण हुए हैं, परन्तु इतना कहने का साहस अवश्य करूँगा कि इन परिवर्तनों में गुरुकुल की प्रेरणा और गुरुकुल का दृष्टान्त दोनों ही सहायक हुए हैं। इसमें तो कोई सन्देह नहीं हो सकता कि ये सब परिवर्तन गुरुकुल के आधार भूत तत्वों का पूर्ण रूप से समर्थन करते हैं। इसी कारण मैंने वर्तमान समय को गुरुकुल के मूल सिद्धान्तों की विजय-घोषणा का समय कहा है। यह समय एक दूसरे कारण से भी अपूर्व है। हमारी मातृभूमि सदियों के मायाजाल को छिन्न-भिन्न करके प्रकाशमय स्वतन्त्र जीवन में प्रवेश कर चुकी है और जैसे प्रत्येक महायज्ञ की पूर्ति में भी विघ्न-बाधाओं की कमी नहीं है। ज्यों ज्यों यज्ञ की पूर्ति का समय निकट आता जा रहा है, त्यों-त्यों विघ्न-बाधाओं का जोर बढ़ता जा रहा है। ऐसे समय में ऐसे संरक्षकों की आवश्यकता है, जिनमें बल हो, साहस हो और मरमिटने की भावना हो। गुरुकुल का जीवन और शिक्षण यदि कुछ सिखाता है तो यही। उसने आप लोगों को अपने देश भारत और उसकी संस्कृति से प्रेम करना सिखाया है, और सिखाया है उनके लिये अपने तन, मन की आहुति देना। आर्यजाति के इस भाग्यपूर्ण समय में जाति के पुत्रों में जिन गुणों की आवश्यकता है गुरुकुल की दीक्षा का ध्येय उन गुणों से युक्त युवकों को तैयार करना है।

'आर्यमित्र' के सम्बन्ध में--

प्रो० रत्नसिंह एम० ए० ने गाजियाबाद में 'आर्यमित्र' के प्रचार के लिए जो प्रशंसनीय उद्योग किया उसका उन्हीं की लेखनी से लिखा वर्णन पाठक पढ़ चुके हैं। प्रसन्नता की बात है कि प्रोफेसर साहब की आवाज खाली नहीं गयी, और भी कई आर्य-समाजों ने उनका अनुकरण कर अपने यहाँ 'मित्र' के वितरण की व्यवस्था की है। हम चाहते हैं कि प्रत्येक छोटा-बड़ा आर्यसमाज स्वयं 'मित्र' का ग्राहक बने, और अपने नगर में इस पत्र के प्रचार का प्रचुर उद्योग करे। बड़े-बड़े नगरों के आर्यसमाज अपने सदस्यों में 'मित्र' का प्रचार बढ़ा सकते हैं। स्थानीय पत्र विक्रेताओं के यहाँ 'मित्र' की बिक्री की व्यवस्था करने में सहायक हो सकते हैं। प्रचार का साधन लेखनी और वाणी ही है। तीन आने पैसे व्यय करके "आर्यमित्र" द्वारा देश के प्रसिद्ध प्रसिद्ध आर्यनेताओं और आर्य विद्वानों विचारकों की विचार-धाराएं पढ़ने का बड़ा सुन्दर-सुयोग प्राप्त हो सकता है। आर्यमित्र में प्रायः सभी प्रकार के उपयोगी लेख देने का प्रयत्न किया जाता है। महिलाओं और बालकों के लिए भी काफी मसाला रहता है। गम्भीर लेखों की भी कमी नहीं रहती। शीघ्र ही 'मित्र' में कुछ और भी सुधार करने की बात सोची जारही है, जिससे वह अधिक लोकप्रिय हो सके। हम चाहते हैं कि 'आर्यमित्र' के पाठक भी 'मित्र' की उन्नति के सम्बन्ध में अपने सुझाव भेजें, जिससे उन पर विचार किया जा सके। साथ ही वे इसके प्रचार के लिए भी यथाशक्ति उद्योग करें। यदि एक एक आर्य और आर्यसमाज पाँच पाँच सात सात भी 'मित्र' के ग्राहक जुटावे तो शीघ्र ही इसकी पन्द्रह बीस हजार ग्राहक संख्या हो सकती है।

'आर्यमित्र' बावन वर्ष से धर्म, समाज और देश की सेवा कर रहा है। इतने पुराने सेवक के बीस सहस्र भी ग्राहक न होना बड़े दुःख की बात है। विश्व को आर्य बनाने की घोषणा करने वाला और भूमण्डल-भर में वैदिक धर्म दिवाकर की दिव्य द्युति दमकाने वाला आर्यसमाज क्या 'आर्यमित्र' के सम्बन्ध में अपना कुछ कर्तव्य नहीं समझता? ग्राहक बढ़ाकर और विज्ञापनों की सहायता देकर आर्यजनता अपने इस प्यारे 'मित्र' की यथेष्ट सहायता कर सकती है। आशा है कि ये पंक्तियाँ व्यर्थ न जायगी, और आर्यजनता इस ओर अवश्य अपना कर्तव्य पालन करेगी।

व्यवस्थापक
आर्यमित्र, आगरा।

"नमस्ते अस्त्वायते नमो अस्तु परायते"

आर्य ॐ मित्र

आगरा भाद्रपद कृष्णा १३ संवत् २००८ वि० गुरुवार ता० २० अगस्त १९५१
दयानन्दाब्द १२७ सृष्टि संवत् १९७२९४९०५२

नमस्ते प्राण क्रन्दाय नमस्ते स्तनयित्नवे ।
नमस्ते प्राण विद्युते नमस्ते प्राण वर्षते ।

अ० ११-४-२

जो प्राणेश कि व्यापक है, विभु अणु-अणु में
बादल बिजली में समा रहा कण-कण में
उसका समुचित उपयोग दुःख हरता है
मानव में मंगल भाव यही भरता है

सुखहीन 'स्वराज्य'

जिस स्वराज्य की शताब्दियों से प्रतीक्षा थी, उसे आए आज पूरे चार वर्ष होगए परन्तु सुख का कोई लक्षण नहीं दिखाई देता। अन्न वस्त्र तक का घोर संकट उपस्थित है दूध की तो बात ही क्या। जिस स्वराज्य में सुख समृद्धि के अमृत-वर्षा होनी चाहिये थी, उसमें दुःख दारिद्र्य की भयङ्कर मूसल बरस रहा है। 'स्वराज्य' तो किसी अर्थ में है भी परन्तु सुराज्य के चिह्न तक नहीं दिखाई देते। गत महायुद्ध से पूर्व जो देश सब भाँति सम्पन्न था, वह आज महा विपन्न बन गया है। अर्थशास्त्री अपने अटकलपच्चू बातों से जनता का परितोष करना चाहते हैं। यह कारण है वह कारण है, "यों आबादी बढ़ी, त्यों बरबादी चढ़ी, यह निर्यात हुआ, वह आयात गया।" साधारण लोग इन शास्त्रीय व्याख्याओं और दिमागी कसरतों को नहीं जानते। वे तो पूछते हैं कि क्या दस वर्ष में ही अर्थशास्त्र के सारे सिद्धान्त बदल गये ? क्या इसी अल्प अवधि में भगवती वसुन्धरा ने अन्न उगलना बन्द कर दिया क्या सारी गाय-भैंसों की मृत्यु इन्हीं दिनों में हुई भाई, पहले भी तो महा युद्ध हो चुका है, उसकी स्थिति तो कितनी शीघ्रता से सुधर गयी थी। अब तो चार वर्ष से 'स्वराज्य' है, अंग्रेज परिन्दा पर भी नहीं मार पाता, फिर भी यह सङ्कट क्यों ? आपत्ति किस लिए ? अच्छा स्वराज्य मिला, खाने को न पहनने को ! इस स्वराज्य की कोई कैसे खुशी मनावे ! दलों पर दल बनते चले जाते हैं, चुनाव संग्राम की तैयारियाँ हो रही हैं, मिस मेम्बरी के स्वयंवर के लिये बड़े-बड़े लीडर, प्लीडर, एडीटर, मिस्टर, मिनिस्टर, बैरिस्टर श्रीमान्, धीमान्, धर्म प्राण, लोकत्राण, पहलवान, नौजवान सभी परिकर बांध बांध कर, अभी से अपनी अपनी विरदावली का बखान करने लगे हैं, कार्य कलाप का ढिंढोरा पीटते फिरते हैं। ज्ञात नहीं इस महा स्वयंवर में मिस मेम्बरी किन बड़भागियों के गले में विजयमाल डालेगी। किन्हीं के गले में डाले, और कोई कितना ही अपना गुण गान करे परन्तु 'स्वराज्य' की सुखहीन अवस्था ही रहेगी। 'अ' के स्थान पर 'ब' के बैठ जाने से क्या हो जायगा टंकी में भरा गन्दा जल तामलोट में जाकर भी गन्दा ही रहेगा और सोने चांदी के पात्रों में पड़कर भी उसकी गन्दगी दूर नहीं हो सकती। आवश्यकता टंकी के जल को निर्मल बनाने की है। फिर वह सर्वत्र विशुद्ध होकर सचमुच जीवन (जल) सिद्ध होगा जो पियेगा परितृप्त हो जायगा, और जिसे वह छुएगा उसे पवित्र कर देगा। इस गन्दे जल में नैतिकता की 'निर्मली' डालने की आवश्यकता है।

आज अनैतिकता का बोल बाला है। धूर्त्तता धर्म के आडम्बर में छिपाई जारही है, मक्कारी पर मानवता का मुलम्मा चढ़ाया गया है, और नीचता नैतिकता की ओढ़नी ओढ़कर अपना भोंड़ा-भयावना रूप प्रकट नहीं होने देती। तो क्या ये दोष पहले नहीं थे, 'स्वराज्य' में ही सारे अवगुण आगये। पहले भी थे परन्तु स्वराज्य में वे कम होने के बदले और बढ़ गये हैं, क्योंकि आज सैंया भये कुतवाल अब डर काहू का की उक्ति चरितार्थ हो रही है। अमुक मन्त्री मेरे मित्र हैं, अमुक मिनिस्टर मेरे मित्र के मित्र हैं, अमुक एम० एल० ए० मेरी बिरादरी के हैं, अमुक एम० एल० सी० के लिए मैंने ही वोट दिलवाए थे। थानेदार की क्या हस्ती कलक्टर क्या कर सकता है, तहसीलदार तो रोज हाजिरी देने आता है। भला डिप्टी भी कोई चीज है। ऐसे भावों ने दोषों को कई गुना कर दिया है। यह कोरी कल्पना नहीं, वास्तविकता है। बड़े बड़े व्यापार और व्यवहार इसी वास्तविकता के बल बूते पर चल रहे हैं। मूंछों पर ताव देते हुए लोग चोरबाजारी कर रहे हैं, दिन-दहाड़े रिश्वत हड़पी जा रही है। खुले खजाने अपराधों पर भलमनसाहत का पर्दा डाला जा रहा है। तिकड़म शास्त्र में जो व्यक्ति जितना ही प्रवीण है, उतना ही वह सफल सबल, सभ्य और सुबोध समझा जाता है। जो लोग अंग्रेजों के समय में साधारण अधिकारी के भी पास जाकर स्वार्थ सिद्ध करने में हिचकते और झिझकते थे, वे आज अपनी तिकड़म शक्ति के सहारे या वोटबल के भरोसे बड़े बड़े मिनिस्टरों से काम निकाल लाना एक साधारण सी बात समझते हैं।

यह सब ठीक सही, परन्तु इसका उपाय क्या है ? हम कहते हैं नैतिकता प्रचार और मानवता प्रचार नैतिकता और मानवता दोनों ही धर्म के अंग हैं। जब तक राजनीति धर्म (सम्प्रदाय नहीं) से शून्य रहेगी तब तक वह कभी मंगलमूल नहीं हो सकती। भ्रातृभाव और विश्वबन्धुत्व ही स्वार्थ की संकीर्णता को दूर कर सकते हैं। सच्ची शान्ति के ये ही जनक और वास्तविक सुख के ये ही उत्पादक हैं। जो आर्यसमाज चुनाव चक्र में फंसने की अनुचित उत्सुकता दिखा रहे हैं वे पहले स्वयं नैतिक और धार्मिक बनें, और फिर नैतिकता धार्मिकता का प्रचार करें। कौंसिलों या असेम्बलियों की कुर्सी पर बैठकर यह काम नहीं हो सकता। हिन्दू हित का दम भरने वाली अन्य सार्वजनिक संस्थाएं भी पहले भारत के राजनैतिक वायुमण्डल को विशुद्ध बनावें, तब कौंसिल प्रवेश की बात कहें। 'अ' को कुर्सी से हटाकर 'ब' को बैठालने से कुछ भी नहीं हो सकता। दोनों एक ही थैली के चट्टे बट्टे हैं। जब तक जनता नैतिक और धार्मिक न होगी तब तक मन्त्री मिनिस्टर भी उच्च कोटि के नहीं बन सकते। सच्चे देश सेवकों का स्थान असेम्बलियों में नहीं असेम्बलियों से बाहर है। कानून नैतिकता में नहीं सदाचार में है, बाहर आनन्द सुख नहीं भीतर अन्तरात्मा में है। अतः अन्तरात्मा की शुद्धि के लिये ही सारे काम होने चाहियें।

सहायता सम्पर्क-यात्रा

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री मदनमोहन सेठ एम० ए० और मन्त्री श्री पं० धर्मपाल विद्यालङ्कार आजकल आर्यसमाजों में भ्रमण कर रहे हैं। हाल ही में आपने बरेली, बदायूं, उझानी, मथुरा, आगरा, फीरोजाबाद आदि स्थानों की यात्रा की। इस यात्रा का उद्देश्य वेद प्रचारार्थ आर्यसमाजों तथा आर्यसामाजिकों से आर्थिक याचना तथा उनके साथ सभा का व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करना है। दोनों कार्यों में दोनों महानुभावों को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है अर्थात् समाजों ने वेद प्रचार के लिये यथाशक्ति पत्र पुष्प भी भेंट किये और सभा के माननीय अधिकारियों से सम्पर्क का लाभ भी उठाया जिन भाइयों को सभा के सम्बन्ध में कुछ शिकायतें थीं वे भी साक्षात् वार्तालाप द्वारा दूर हो गयीं और भी कई भ्रान्तियां मिटीं। हम समझते हैं, यह यात्रा विधि बहुत सुन्दर है

अवकाशानुसार यह निरन्तर जारी रहनी चाहिए। समाजों में अधिकारियों के न पहुंचने से जो भ्रम-भ्रान्तियाँ फैल जाती हैं उनका इस प्रकार की यात्राओं से निवारण हो सकेगा, परस्पर सम्पर्क स्थापित होगा और सभा को सहायता भी मिलेगी। साथ ही समाजों के ? गड़े-बखेड़े भी शान्त हो जायंगे।

आर्यमहासम्मेलन की तिथियाँ

हमारे पास कई विद्वानों के ऐसे लेख आए हैं, जिनमें मेरठ महासम्मेलन को साधारण चुनावों के पश्चात् करने की सलाह दी गयी है। अब जब कि महासम्मेलन का बहुत थोड़ा समय शेष रह गया है, हमने इन लेखों का प्रकाशित करना उचित नहीं समझा। इस प्रकार की सम्मति देने वालों में श्री प० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय और श्री प्रो० धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री भी हैं। आज से महासम्मेलन का एक मास और लगभग एक सप्ताह शेष है। इसी अवधि में पूरी साज-सज्जा करनी और सारी सामग्री जुटानी है। चालीस-पचास सहस्र रुपया भी एकत्र करना है। यदि सम्मेलन के लिये अपेक्षित धनराशि एकत्र हो चुकी है, और सारी व्यवस्था सुन्दरता पूर्वक की जा सकती है तो अवश्य ही वह इन निश्चित तिथियों पर ही होना चाहिए, कुछ भी परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं है। और यदि अभी आर्थिक कठिनाई है और साधन-सामग्री कम है तो सम्मेलन के स्थगित करने पर तुरन्त विचार करना जरूरी है। वह आगामी शिवरात्रि पर किया जा सकता है। हमारा अभिप्राय यह है कि यह सम्मेलन सब प्रकार पूर्ण सफलता से सम्पन्न होना चाहिए। उत्साह और धन की कमी से उसका सौष्ठव कदापि नष्ट न होने पावे।

'कश्मीर' क्यों ?

कुछ लोग और विशेष कर हमारे मुसलमान भाई 'कश्मीर' को अपनी बपौती समझते हैं, उनकी राय में 'कश्मीर' मुसलमानों की सत्ता महत्ता का उद्गम स्थान है। परन्तु ये लोग अधिक गहराई में नहीं जा सके। इनको नहीं मालूम कि 'कश्मीर' शब्द की व्युत्पत्ति कैसे हुई और यह प्रदेश कितना पुराना है? वस्तुतः 'कश्यप' और 'मीर' मिलकर कश्यपमीर हुआ, जो पीछे 'कश्मीर' या काश्मीर कहलाया। 'कश्यप' मुनि को कौन नहीं जानता; 'मीर' शब्द शुद्ध संस्कृत का है, अर्थ है सागर, सीमा और पहाड़ी प्रदेश। 'मीर' शब्द संस्कृत के किसी भी पुराने और प्रतिष्ठित कोष में इन अर्थों में देखा जा सकता है। फिर 'कश्यपमीर' शब्द का 'काश्मीर' रूप आज नहीं महाभारत-काल से भी बहुत पहले हो चुका है। 'महाभारत' आदि में अनेक स्थलों पर 'काश्मीर' शब्द आया है, कुछ उदाहरण देखिये

काश्मीरेष्वेव नागस्य भवनं तक्षकस्य च,
वितस्ता स्यमिति स्यात सर्व पाप प्रमोचनम्।
—वन० ८२ अ०

'काश्मीरीव तुरङ्गमः' विराट् पर्व

काश्मीर राजो गोनर्दो दरदाधिपतिनृपः
—हरिवंश

ततः काश्मीरीकान् वीरान क्षत्रियान् क्षत्रियर्षभ.
—सभापर्व

काश्मीरा पार्वती तत्र राजाज्ञेयो हराशंजः
—राजतरंगिणी

ऊपर के उदाहरणों से यह बात भले प्रकार समझ में आ जाती है कि 'काश्मीर' महाभारत से भी बहुत पहले का है और वह पूर्व समय में सदैव हिन्दू नरेशों की राजधानी या भारत का अनिवार्य अंग रहा है। अगर आज इसमें मुसलमानों की अधिक संख्या है तो इस कारण वह उनका कैसे मान लिया जाय। भारत का अंश भारत में ही रहना चाहिए। भारत का कुछ भाग पाकिस्तान में चला गया है, यही बड़े दुःख और दुर्भाग्य की बात है। हमें पूर्ण विश्वास है कि भारत सरकार स्वर्ग-सहोदर कश्मीर को किसी शर्त पर भी भारतमाता की गोद से अलग न होने देगी।

किफायत की कैंची !

उत्तर प्रदेश की जेलों में कैदी भाइयों में नैतिकता का प्रचार करने के लिये कुछ अवैतनिक प्रचारक नियत हैं। ये प्रचारक जिला जेलों और केन्द्रीय कारागारों में प्रचार कार्य करते हैं। नगर के लोगों में से ही कुछ योग्य व्यक्ति इस कार्य के लिये चुन लिये जाते हैं, और वे ही प्रायः प्रचार करते रहते हैं। मास में लगभग एक बार एक प्रचारक की बारी आती है। हमारा निजी अनुभव है कि कैदी भाई प्रचारकों की बातें बड़ी रुचि और ध्यान से सुनते हैं। वे उस दिन स्वयम् भजन गाते बजाते और तन्मय हो जाते हैं, सुखकर शान्त वायुमण्डल बन जाता है। प्रचारकों को कुछ मिलता नहीं, उल्टा उन्हें अपना समय देना पड़ता है हाँ, जेल की ओर से तांगे का भाड़ा जरूर मिल जाता है, जो उसी समय तांगे वाले को देकर उससे रसीद लेली जाती है। यह भाड़ा अधिक से अधिक दो डेढ़ रुपये होता है, उस दशा में जब कि तांगे को डेढ़ दो घंटे रुकना पड़े। परन्तु माननीय गवर्नर महोदय ने अब यह भाड़ा अस्वीकृत कर दिया है। यानी अब यदि किसी प्रचारक को प्रचार करना हो तो वह जूता चटकाता हुआ जेल जाय, या अपने पास से भाड़ा दे, अथवा तांगा या गाड़ी खरीदे। सरकार के पास ऐसा व्यय और वाहियात बातों के लिये पैसा कहाँ है? नैतिकता के प्रचार में यदि कुछ व्यय हो गया तो सम्भव है, सत्ताधारी अधिकारियों के एलाउन्सों में कुछ कमी पड़ जावे अथवा राजसी ठाट बाट या दिखावटी शान-शौकत में अन्तर आ जाय।

'शिरोमणि' उपाधि

वृन्दावन गुरुकुल देश की प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध आर्य शिक्षा-संस्था है। आगरा विश्व-विद्यालय ने इसके स्नातकों को प्रदेशीय सरकार की अनुमति से अन्य कालिजों के ग्रेजुएटों के समान ही मान कर उन्हें एम० ए० परीक्षा में बैठने की आज्ञा दे दी है। कितने ही स्नातक तो बड़े अच्छे अङ्कों से एम० ए० परीक्षा में उत्तीर्ण हो चुके हैं। वृन्दावन-गुरुकुल का ब्रह्मचारी जिस विषय को लेकर स्नातक होता है, उसी के आगे शिरोमणि उपाधि जोड़ दी जाती है। हाल ही में प्रदेशीय सरकार ने जहाँ कालिजों के ग्रेजुएटों के साथ अन्य कई शिक्षण-संस्थाओं के स्नातकों को आगामी साधारण निर्वाचन में मत देने का अधिकार स्वीकार किया है, वहाँ वह वृन्दावन-गुरुकुल के स्नातकों को भूल गयी है। इस भूल का निराकरण करने के लिये उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के माननीय प्रधान श्री मदनमोहन सेठ, एम० ए० ने सरकार को लिखा है। हमें पूर्ण विश्वास है कि सरकार अपनी इस भूल का अवश्य और शीघ्र ही संशोधन करेगी और उक्त गुरुकुल के स्नातकों को भी अन्य ग्रेजुएटों की तरह ही निर्वाचन के समय अपना मत देने का अधिकार प्रदान करेगी।

'वेद-प्रचार-सप्ताह'

१७ से २४ अगस्त तक शिरोमणि सभाओं के आदेशानुसार, सारे देश के आर्यसमाजों में वेद-प्रचार-सप्ताह समारोहपूर्वक मनाया गया। यज्ञ, प्रवचन, व्याख्यान, कथा और भजन हुए। इसी अवसर पर श्रावणी पर्व और श्री कृष्ण जन्माष्टमी उत्सव भी विशेष रूप से मनाये गये। वेद आर्यजाति के प्राण हैं। वैदिक सिद्धान्तों और वैदिक भावनाओं के अभाववश ही आज विश्व अशान्ति और स्वार्थान्धता का धाम बना हुआ है। यदि संसार सुख-शान्ति चाहता है तो उसे विशाल वैदिक धर्म की विशुद्ध भावनाओं का प्रचार करना होगा। यही समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है और इसीकी ओर महर्षि दयानन्द ने सर्व प्रथम संसार का ध्यान आकृष्ट किया। जो वेद-विमुख लोग आज वेदों की हंसी सी उड़ाते हैं, उन्हें एक दिन वैदिक भावनाओं के आगे नतमस्तक होना पड़ेगा, क्योंकि उनके बिना विश्व का कल्याण या मानवता का त्राण नहीं हो सकता।

'आर्य महासम्मेलन' की रूप-रेखा

श्री हरिशङ्कर शर्मा

इन पंक्तियों के लेखक द्वारा गत अङ्क में आर्यमहासम्मेलन के अवसर पर होने वाली प्रदर्शिनी की रूप-रेखा' शीर्षक एक लेख लिखा गया था, जिसमें प्रदर्शिनी के सात विभाग बनाने की ओर संकेत था। आज 'महासम्मेलन' की रूप रेखा पर कुछ विचार किया जाता है। हमारी सम्मति में आर्य महासम्मेलन मेला मात्र नहीं है, वह आर्यसमाज की जीवन-मरण-सम्बन्धिनी समस्याओं का हल सोचने के लिये किया जारहा है। अब तक जितने आर्य महासम्मेलन हुए, उनमें दो का ही महत्व है—(१) शोलापुर महासम्मेलन जिसमें हैदराबाद-सत्याग्रह स्वीकृत हुआ और उसे क्रियात्मक रूप दिया गया। (२) पहला महासम्मेलन जो देहली में स्व० महात्मा हंसराजजी की अध्यक्षता में हुआ था। शेष महासम्मेलनों को तो स्थानीय आर्यसमाजों के बड़े बड़े वार्षिकोत्सव ही कहना अधिक उचित होगा। हमें भय है कि कहीं मेरठ महासम्मेलन भी वहां के समाजों का बड़ा वार्षिकोत्सव बनकर ही न रह जाय। उक्त प्रदर्शिनी की 'रूप रेखा' की भाँति ही 'महासम्मेलन' के सम्बन्ध में हमारे सुझाव इस प्रकार हैं—

स्वागत-समिति—यह महासम्मेलन उत्तरप्रदेश में होरहा है, अतएव स्वागत समिति में प्रदेश के मुख्य-मुख्य आर्य विचारकों और विद्वानों को भी सम्मिलित करना चाहिए, केवल किसी जिले तक ही ऐसी समितियाँ क्यों सीमित रहें। स्वागत-समिति में से ही एक कार्य समिति का निर्माण किया जाय, जिससे कार्य में सुविधा हो। ऐसा करने से स्वागत-समिति को सारे प्रदेश का सहयोग और सम्पर्क प्राप्त होगा, और महत्वपूर्ण सुझाव तथा शुभ सम्मतियाँ मिलने में भी बहुत सुविधा हो जायगी। यह स्वागत समिति ही अपना अध्यक्ष चुनेगी।

विचार-विधि—पच्चीस-तीस आर्यविचारक महासम्मेलन से पूर्व किसी स्थान पर मिलें, और कई दिनों तक आर्यसमाज के भावी कार्यक्रम पर गम्भीरता पूर्वक विचार कर किसी निश्चित परिणाम पर पहुचें। इन विद्वान् विचारकों का प्रधान लक्ष्य समाज के संघटन शरीर को सुदृढ़ तथा सशक्त बनाकर उसमें प्राण शक्ति संचार करना हो। यदि शरीर सबल, सशक्त और स्वस्थ है, और उसमें प्राणशक्ति का भी यथोचित संचार है तो कड़े से कड़ा और बड़े से बड़ा काम भी सरलता तथा सफलता से सम्पन्न हो सकता है। कहीं अस्पताल में पड़े कराहते हुए निर्बल रोगी को भी किसी ने कुछ करते धरते देखा है। ये विचारक ऐसी योजना बनाकर महासम्मेलन में विचारार्थ प्रस्तुत करें जो सर्वथा व्यावहारिक हो। इस समय 'विश्व को आर्य' बनाने की ऊँची उड़ान का अवसर नहीं, अपने तथा अपने पुर-परिवारवालों को आर्य बनाने का समय है। पहले दो वर्ष का कार्यक्रम बनाया जाय, और उसे कार्यरूप में परिणत करने की व्यावहारिक विधि बता दी जाय। इसी योजना और विधि पर विचार हो व्याख्यान हों और उन्हें ही वैधानिक रूप दिया जाय। 'रस्मी सम्मेलन' स्थगित रहें। समाज का शरीर सशक्त और सप्राण है तो सब कुछ होजायगा, नहीं तो 'रस्मी सम्मेलनों' के भाषण और प्रस्ताव पुस्तकों और पत्रों की पीठ पर पड़े-पड़े ऊर्ध्व श्वास लेते रहेंगे, जैसा कि अब तक होता रहा है।

एक रूपता—आर्यसमाज में आज कितनी ही अखिल-भारतीय सभाएँ और संस्थाएँ हैं। इन्होंने समाज के सुदृढ़ संघटन को ढीला कर दिया है। भिन्न-भिन्न रुचि, क्षेत्र, कार्य क्रम, योजना और समुदाय बन गये। भेदभाव भूलकर ऐसी सभी सभा-संस्थाएं एक हो जानी चाहिएं, क्योंकि आर्यसमाज के महान् संघटन के आगे बड़े से बड़ा व्यक्ति और समुदाय भी बहुत छोटा है। जिस प्रकार सम्प्रदायों की सेना ने विराट् हिन्दू जाति को बलहीन बना दिया, उसी प्रकार विविध संस्थाओं की सृष्टि आर्यसमाज को निर्बल करके दम लेगी। इस संस्थावाद के संक्रामक रोग से समाज को मुक्ति मिलनी चाहिए।

शिरोमणि सभाएँ—आर्यप्रतिनिधि सभाओं और सार्वदेशिक सभा में जीवनी शक्ति की बहुत कमी है। उनका अधिकतर कार्य दफ्तर की मेज और सरक्युलरों की सरगर्मियों तक ही सीमित है। यही कारण है कि प्रतिनिधि सभाओं से सम्बद्ध सैकड़ों आर्यसमाजों में से केवल कुछ समाज ही वार्षिक बृहदधिवेशनों में भाग लेते हैं। समाज भी शिथिल और सभाएं भी ढीली। फिर काम कैसे हो और जीवन जागृति कहाँ से आए। यदि प्रत्येक जिला और प्रत्येक तहसील संघटन कार्य संभाल ले तो संघटन के सुदृढ बनने और जीवनी शक्ति का संचार होने में कुछ भी कठिनता न हो। आर्यजगत् एकदम जाग उठे, और क्रिया शक्ति का सुन्दर स्वरूप दिखाई देने लगे।

व्यक्तित्व की हानि—आर्यसमाज के प्रारम्भ में त्याग-तपस्या के कारण व्यक्तित्व का विकास हुआ। सारे संसार की दृष्टि आर्यसमाज की ओर होगयी, और त्यागी तपस्वी आर्य कार्यकर्त्ताओं के कार्य कलाप की भूरि भूरि प्रशंसा होने लगी। फिर त्याग-तप में हीनता होने से व्यक्तित्व का ह्रास हुआ और आर्यसमाज ऐसे लोगों के हाथ पड़ा जिनके पास त्याग तप तो क्या सभा-समाजों का काम करने के लिये मास या वर्ष में कुछ घंटे भी नहीं हैं। जहाँ व्यक्तित्व की परिभाषा "कम से कम काम करना और अधिक से अधिक श्रेय लूटना"हो,वहाँ से त्याग-तपस्या सिर पटक कर बेरंग वापस न होजायें तो क्या करें। हम दुःख और लज्जा के साथ कहना पड़ता है कि आज आर्यसमाज में व्यक्तित्व की झिलमिल झाँकी बहुत ही मन्द दिखाई दे रही है। क्या आशा की जाय कि आगामी आर्यसम्मेलन में कुछ व्यक्ति तन, मन और धन को समाज-सेवा के लिये अर्पित कर त्याग तपस्या का अभिनव निदर्शन प्रस्तुत करेंगे। व्यक्तित्व के बिना सभा और समाज कुछ भी नहीं कर सकते, और न त्यागी-तपस्वी कार्यकर्त्ताओं के दर्शन ही हो सकते हैं।

दो शब्दों में आगामी आर्य महासम्मेलन के सम्बन्ध में मेरा सुझाव यह है कि समाज के संघटन-शरीर को स्वस्थ-सुदृढ़ और सबल बनाकर उसमें श्रद्धा संयुक्त कर्मण्यता की प्राण-प्रतिष्ठा की जाय और तप त्याग द्वारा व्यक्तित्व का विकास हो। अर्थात् समाज में फिर लेखराम, गुरुदत्त, मुन्शीराम, हंसराज, दर्शनानन्द, सर्वदानन्द, नारायण स्वामी, रामदेव इत्यादि इत्यादि पैदा हों। पोले प्रस्ताव, भावुकता भरे भाषण रस्मी सम्मेलन और व्योम विहारिणी योजनाओं की आवश्यकता नहीं है; ठोस निश्चित और व्यावहारिक कार्य-क्रम चाहिए, जो आगामी दो वर्षों में अवश्य पूरा करके दिखाया जाय।

यदि ऐसे ठोस और सफल सम्मेलन के लिये समय की कमी हो तो महासम्मेलन की तिथियाँ जनवरी या फरवरी के लिये बढ़ाई जा सकती हैं। अक्टूबर में ही सम्मेलन हो, ऐसा वेद वाक्य नहीं है। वेद वाक्य तो यह है कि जो कुछ किया जाय दृढता, वास्तविकता, सद्भावना, उत्साह और सात्विकता से किया जाय, जिससे सफलता में कोई सन्देह न रहे। आशा है, आर्यजनता 'महासम्मेलन' की इस रूप रेखा पर गम्भीरतापूर्वक विचार करेगी।

———

जीवन-ज्योति

सेठ केदारनाथ सेकसरिया

आगरा के प्रसिद्ध आर्य्य दानवीर सेठ श्री केदारनाथ सेकसरिया का जन्म जयपुर राज्यान्तर्गत नवलगढ़ में आज से ८० वर्ष पूर्व अर्थात् संवत् १९२८ विक्रमी में हुआ। आपके पिता लाला प्रेमसुखदास सेकसरिया बड़े धार्मिक विचार के व्यक्ति थे। सेठ केदारनाथजी दो भाई थे, छोटे भाई का नाम लाला शिव प्रसाद सेकसरिया था। सेठ केदारनाथजी बचपन से ही ऊहापोहप्रवाण, सत्संग प्रिय, सदाचारी तथा धर्मात्मा रहे हैं। श्री स्वामी दर्शनानन्दजी, श्री प० गणपति शर्मा, श्री प० भीमसेनजी शर्मा श्री प० तुलसीराम स्वामी आदि आर्य विद्वानों का आपने जीवन में सत्सङ्ग लाभ किया है। महर्षि दयानन्द के दर्शन के बाद से ही आपकी श्रद्धा आर्यसमाज के प्रति दिनोदिन बढ़ती ही गई। सेठजी ने आर्यसमाज के लिए प्रचुर धनराशि दान दी है। नगर आर्यसमाज आगरा के विशाल भवन-निर्माण कराने का श्रेय सेठजी को ही है। इसी प्रकार आर्य कन्या पाठशाला आगरा के लिए आपने एक लाख रुपया दान दिया है। सेठ केदारनाथजी ने सन् १९४३ ई० में कई सहस्र रुपये व्यय करके 'विष्णु यज्ञ' कराया था। इस यज्ञ के मुख्य अध्यक्ष आर्यसमाज के प्रकाण्ड पण्डित विद्वद्वर श्री प० हरिदत्त शास्त्री एम० ए०, नवतीर्थ थे। देश के अन्य अनेक वेदज्ञ विद्वानों ने यज्ञ में भी भाग लिया था। सेठ सेकसरिया के हृदय में वेदों और यज्ञ के लिए बड़ी भारी श्रद्धा है वे विद्वानों का बड़ा सत्कार करते हैं। सेठजी की हार्दिक इच्छा है कि आर्य जाति में जितनी कुरीतियाँ हैं, वे सब दूर हों, तथा मानव-जाति यथार्थ शास्त्रीय विधि-विधान को अपनावे। सेठजी फलित ज्योतिष और अन्ध परम्पराओं में विश्वास नहीं रखते। उनके नाम पर एक ग्रन्थमाला की भी स्थापना हुई है, जिसका पहला पुष्प 'वैदिक विष्णु यज्ञ पद्धति' दूसरा पुष्प 'देहली शास्त्रार्थ' और तीसरा पुष्प 'अन्त्येष्टि कर्म विधि' के नाम से प्रकाशित हो चुका है। तीनों ग्रन्थ पण्डित-प्रवर श्री हरिदत्त शास्त्री एम० ए० के रचे हुए हैं, और सेठजी के यहां से बिना मूल्य वितरित होते हैं। ऐसी व्यवस्था है कि सेठजी की इच्छानुसार प्रति वर्ष कोई न कोई पुस्तक धर्म जिज्ञासु भाइयों को निरन्तर भेंट की जाती रहे। जिससे जनता में कुसंस्कारों तथा आर्यसमाज के प्रति फैली हुई उदासीनता दूर हो, तथा मनु भगवान् की आज्ञानुसार संस्कारों द्वारा संस्कृत मानव मात्र मनुष्य-योनि के परम लक्ष्य चतुर्वर्ग की प्राप्ति के लिए अग्रसर हो सके।



सेठ श्री केदारनाथ सेकसरिया

सेठ सेकसरिया बड़े विनम्र स्वभाव के सज्जन हैं, आप अपने उद्योग द्वारा ही विपुल धनराशि के स्वामी बने हैं। इस समय आपका व्यापार पूर्ण उन्नत है। आगरा में आपका बहुत बड़ा लक्ष्मी तेल मिल तथा अन्य अनेक व्यापारिक संस्थान हैं। अधिक आयु तथा अस्वस्थ होने के कारण आपका शरीर जर्जर हो गया है, परन्तु आपका धार्मिक प्रेम उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है। वैदिक विद्वानों के उपदेश, व्याख्यान और प्रवचन सुनने के लिए आप विशेष अवसरों पर समाज मन्दिर में आते और लेटे-लेटे बड़ी शान्ति से धर्म-चर्चा सुनते रहते हैं। जहाँ सेठजी इतने बड़े समृद्धिशाली धनी हैं, वहाँ भगवान् ने आपको पुत्र पौत्रों से भी सम्पन्न किया है। सेठजी के पुत्र सेठ विश्वम्भरनाथजी और सेठ गोपालदासजी सेकसरिया भी बड़े धार्मिक और निष्ठावान् सज्जन हैं। आप लोग अपने धर्म प्राण पिता के चरण-चिह्नों पर चलने का पूरा प्रयत्न करते रहते हैं। वयोवृद्ध सेठ सेकसरिया की अन्तिम इच्छा है कि जब उनका यह नश्वर शरीर छूटे, तो प्रत्येक और्ध्वदैहिक कृत्य वेदोक्त रीत्यनुसार ही किया जाय। इसीलिए आपने आचार्य श्री प० हरिदत्त शास्त्री से "अन्त्येष्टि कर्म विधि" नामक विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थ की रचना कराई है।

——

लोग प्रतिज्ञा करें कि हम बड़ी श्रद्धा-भक्ति से वेद-प्रचार कर "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" की पूर्ति में कृतकार्य होंगे।

——

वैदिक धर्म

श्री प० केशवदेव शास्त्री आर्योपदेशक

विश्व नियन्ता जगदीश्वर ने अपनी अनन्त शक्ति के द्वारा इस ब्रह्माण्ड की रचना करके मनुष्य मात्र को ज्ञान देने के हेतु आदि सृष्टि में वेदों का प्रकाश किया। वेदों का ज्ञान किसी देश विशेष, समय विशेष या किसी मनुष्य विशेष के लिये नहीं है, बल्कि समस्त संसार के मनुष्यों के लिये समय विशेष के प्रभाव से रहित किया है। भगवान् ने स्वयम् कहा है—देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति। अथर्व० १०।८।३२ अर्थात् हे मनुष्यो उस परम देव परमात्मा के काव्य वेद को देख जो न कभी मरता है और न कभी जीर्ण पुराना होता है। अस्तु, मनुष्य मात्र और विशेष कर हम आर्यों का यह परम कर्तव्य है कि हम सब उक्त अमर काव्य वेद को पढ़ें और तदनुकूल आचरण करके विश्व में उसका प्रचार करें। इसी आधार पर आचार्य प्रवर महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज के तीसरे नियम में वेदों का पढ़ना पढ़ाना और सुनना-सुनाना परम धर्म बताया है। और कहा है कि हम सब वेद-प्रचार में अनथक परिश्रम करके प्रभु की आज्ञा का पालन करें, क्योंकि जब तक वेद का प्रचार न होगा मनुष्य अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष में से किसी सिद्धि को भी प्राप्त नहीं कर सकता और न अपने प्रभु को ही पहचान सकता है। मुक्ति प्राप्त करने के लिये सर्वोत्पादक प्रभु का जानना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि ईश्वर ही समस्त ब्रह्माण्ड को पैदा करनेवाला है और जीवात्मा को भी स्वकर्मानुसार जन्म देने वाला है।

जब ईश्वर ही सर्वोत्पादक सिद्ध हुआ तब संसारस्थ जीव अपने स्वामी उत्पादक को प्राप्त किये बिना कैसे सुखी होगा। अतः हमें चाहिये कि भगवान् की आज्ञानुसार हम समस्त ब्रह्माण्ड में ईश्वर को व्यापक समझकर उसके द्वारा दिये गये पदार्थों का भोग करते हुए किसी अन्य की इच्छा न करें। हम सब आर्य

[शेष इसी पृष्ठ के तीसरे का० में]

मनोविज्ञान

आदत का महत्व तथा निर्माण

प्रो० श्री रत्नसिंहजी, एम० ए०

[प्रो० रत्नसिंहजी एम० ए०, दर्शनाध्यापक हैं। आपने मनोविज्ञान का विशेष रूप से अध्ययन किया है। आपकी ही प्रेरणा से "मनोविज्ञान" शीर्षक यह नया स्तम्भ प्रारम्भ किया जाता है। प्रोफेसर साहब तो इस विषय पर लिखेंगे ही, मनोविज्ञान के अन्य विद्वानों से भी हमारी प्रार्थना है कि वे भी इस स्तम्भ के लिये अपने अपने महत्वपूर्ण लेख भेजने की कृपा करें। सम्पादक]

जिस सभा में आध्यात्मिक विषय पर व्याख्यान हो रहा हो, आप वहाँ उपस्थित हुए श्रोताओं के चेहरों का निरीक्षण कीजिए। कुछ श्रोता तो रात-भर की सारी नींद वहीं पूरा कर लेते हैं, परन्तु कुछ ऐसे भी होते हैं जो व्याख्यान का आनन्द लेते हैं और व्याख्याता के शब्दों के साथ-साथ उनकी गर्दन भी झूमती चलती है। ऐसे अवसरों पर बैठे-बैठे मन ही मन लोग अनेक प्रकार की शपथ लिया करते हैं, यथा—नित्य प्रति वेद का स्वाध्याय करना, दोनों समय सन्ध्या करना, सदा सत्य बोलना, ब्रह्मचर्य के नियमों का पूर्ण पालन करना, जीवन का शेष समय आर्यसमाज की सेवा में लगा देना आदि आदि। सत्संग के स्थान से उठते उठते ही बहुत-से लोगों की शपथ तो हवा में मिल जाती है। कुछ लोग घर पहुँचते-पहुँचते ही सब कुछ भूल जाते हैं। परन्तु कुछ ऐसे भी होते हैं जो उन पर अमल करना शुरू कर देते हैं। अमल एक-दो दिन किया और फिर सब सफाचट! दो वर्ष पूर्व आर्यसमाज गाजियाबाद में श्री आचार्य विश्वश्रवाजी श्रावणी के अवसर पर पधारे थे। उन्होंने सभा में उपस्थित लोगों से प्रतिदिन प्रातः यज्ञ करने के लिए आग्रह किया था। लगभग ५० व्यक्तियों ने ऐसा करने का निश्चय किया था, परन्तु आज शायद केवल एक-दो सज्जन ऐसे हैं जो नियम का पालन कर रहे हैं।

ऐसा क्यों होता है? उत्तर स्पष्ट है। हम किसी कार्य को करने का विचार तो कर लेते हैं, परन्तु उसकी आदत नहीं डालते। मनुष्य-जीवन में आदत का बड़ा महत्व है। कुछ मनोवैज्ञानिकों का तो यह कहना है कि मनुष्य का स्वभाव आदत का ही पुंज है। मनुष्य में दो प्रकार के गुण होते हैं—जन्मजात तथा अर्जित। आदत इसी श्रेणी में आती है। अर्थात् कोई भी आदत हमें जन्म के साथ पैतृक सम्पत्ति के रूप में नहीं मिलती, अपितु हम स्वयं आदत का निर्माण करते हैं। जिस प्रकार का अभ्यास हम करते हैं, उसी प्रकार की हमारी आदत बन जाती है।

आदत से किये गये कार्यों में कई विशेषताएँ देखने में आती हैं। अभ्यस्त कार्यों में सदा समानता रहती है। जिस प्रकार हमें सोने, नहाने, खाने अथवा सायकिल चलाने की आदत पड़ जाती है, उसी प्रकार हम सदैव किया करते हैं। एक बार सेना का एक कार्य-निवृत्त सिपाही अपने दोनों हाथों में सामान लिए शहर की एक सड़क पर चला जा रहा था। एक मसखरा एक दूकान पर बैठा उसकी चाल देख रहा था। उसने सोचा कि इस सिपाही के साथ दिल्लगी करनी चाहिए। जैसे ही वह सिपाही उसकी दूकान के सामने आया उस मसखरे ने बड़े जोर से 'अटेन्शन' कहा। 'अटेन्शन' शब्द के सुनते ही सिपाही के हाथ नीचे गिर गए और उसका सामान नीचे गिर गया। 'अटेन्शन' शब्द के सुनते ही हाथ नीचे डालने की आदत सिपाही को सेना में पड़ चुकी थी यह उदाहरण इस बात का द्योतक है कि आदत के कामों में समानता किस प्रकार आ जाती है।

अभ्यस्त कार्यों की दूसरी विशेषता सरलता है। जब हम सायकिल चलाना पहले पहल सीखते हैं तो कितनी त्रुटियाँ करते हैं परन्तु आदत पड़ जाने पर वही कार्य कितना सरल हो जाता है। आदत पड़ने पर कार्य रोचक हो जाता है। जब पहले पहल किसी आदमी को शराब सिगरेट अथवा कोई मादक द्रव्य पीने को दिया जाता है तो वह नाक भौं सिकोड़ने लगता है, किन्तु आदत पड़ने पर वही पदार्थ रोचक बन जाता है। अभ्यस्त कार्यों के लिए हमें ध्यान की उतनी आवश्यकता नहीं पड़ती जितनी आदत न पड़ने की अवस्था में पड़ती है। जब बालक आरम्भ में अक्षर लिखना सीखता है तो अक्षर के प्रत्येक भाग पर ध्यान देना होता है। परन्तु आदत पड़ने पर वही बालक बिना ध्यान दिए हुए बड़ी शीघ्रता से बड़े बड़े वाक्य लिख देता है। आदत पड़ने के कारण ही समाज की निम्न श्रेणियों में मनुष्य अपना जीवन सन्तोष से व्यतीत करते हैं। आदत से एक बड़ा लाभ यह है, कि यह हमारी शक्ति का अपव्यय नहीं होने देती। स्त्रियाँ कातती रहती हैं और आपस में बातचीत भी करती रहती हैं।

यदि जीवन को सफल बनाने में आदत का इतना महत्व है तो हमें यह भी जानना चाहिए कि अच्छी आदतों का निर्माण कैसे किया जाय? परन्तु अच्छी आदतें भी तब तक लाभ नहीं पहुंचा सकती, जब तक बुरी आदतें त्याग न दी जाय। किसी वस्त्र पर अच्छा रंग चढ़ाने के लिए उसका मैल धो देना आवश्यक है। अतएव हमें पहले यही विचारना होगा कि बुरी आदतें कैसे छोड़ी जाय।

किसी बुरी आदत को छोड़ने के लिए अवसर की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए अपितु दृढ़ संकल्प के साथ उसे शीघ्र त्याग देना चाहिए। यदि किसी को शराब पीने की आदत पड़ गई है तो उसे यह नहीं सोचना चाहिए कि आज तो पीलूँ कल से नहीं पीऊँगा। परन्तु जब कल आती है तो मन फिर शरारत पर उतरता है। फिर वही विचार पैदा होता है, अच्छा आज और सही कल से तो हरगिज नहीं पिऊँगा। परन्तु वह कल कभी आती ही नहीं।

बहुत-से व्यक्ति किसी बुरी आदत को छोड़ने का दृढ़ संकल्प भी कर लेते हैं और उसे तुरन्त दबा भी देते हैं परन्तु वह आदत फिर जाग्रत् हो जाती है। यहाँ लोग एक मनोवैज्ञानिक भूल करते हैं। बुरी आदत त्यागने के लिए संकल्प के साथ उस आदत को दबा देना ही पर्याप्त नहीं है। किसी बुरी आदत का त्याग करने के लिए उसके स्थान पर दूसरी आदत डालने का अभ्यास श्रेयस्कर रहता है। इसमें सफलता भी अधिक मिलती है। शराबी को शराब की आदत त्यागने के संकल्प के साथ-साथ गर्म दूध पीने का अभ्यास कर लेना चाहिये। जब शराब का चसका उठे तभी गर्म दूध पी लेना चाहिये।

किन्तु बुरी आदत छोड़ने के लिए ये दोनों नियम भी पर्याप्त नहीं हैं। तीसरी महत्वपूर्ण बात है ऐसे वातावरण में रहना जहाँ कि उस आदत के अनुकूल वातावरण न मिले। सिनेमा देखने के अभ्यस्त को ऐसे लोगों की संगत में रहना चाहिए जो सिनेमा न देखते हों। यदि इन तीनों नियमों पर आचरण किया जाय तो निश्चय है कि हमारी बुरी आदतें छूट सकती हैं।

अच्छी आदत डालने के लिए दृढ़ संकल्प कर लेना आवश्यक है। हमारी आदतों का निर्माण हमारे दृढ़ संकल्प पर ही निर्भर है। जब हम किसी भले काम को करें तो अच्छा है कि सब के सामने प्रतिज्ञा करें कि इस अमुक भले काम को करते ही रहेंगे। इसका परिणाम यह होगा कि जब कभी हम पथ भ्रष्ट होंगे तो हमें यह विचार पैदा होगा कि दूसरे लोग क्या कहेंगे? वैदिक धर्म में संस्कारों का यही महत्व है।

दृढ़ संकल्प मात्र से कोई अच्छी आदत नहीं पड़ जाती। उसके लिये उसका तुरन्त आरम्भ कर देना अनिवार्य है। नित्य प्रातः दोनों समय सन्ध्या करने की आदत डालने के लिये दृढ़ संकल्प के साथ सन्ध्या करने का कार्य भी तुरन्त आरम्भ कर देना चाहिये। इसके साथ ही उस कार्य में संलग्न रहना अत्यावश्यक है। आपका सन्ध्या करने का महीनों का अभ्यास एक-दो दिन के उपवास से ही गुड़-गोबर हो सकता है। अतः जब तक किसी कार्य की आदत न पड़ जाय तब तक

साहित्य-सौरभ

पुस्तकों की कष्ट-कथा

श्री अमरनाथ वैद्य शास्त्री

आषाढ शु० ८ के 'आर्यमित्र' में हमारे पुस्तकालय शीर्षक एक सम्पादकीय लेख प्रकाशित हुआ है इस सम्बन्ध में मेरा बहुत कटु अनुभव है। सभी आर्यसमाजों में थोड़ा बहुत पुस्तकों का संग्रह तो रहता ही है। कहीं-कहीं बड़े बड़े नगरों की समाजों में अच्छे पुस्तकालय भी हैं। पुस्तकों का संग्रह और उनकी व्यवस्था अधिकारियों की रुचि और प्रवृत्ति के अनुसार ही होती है। यह सत्य है कि विरला ही कोई पुस्तकालय अपने कर्त्तव्य का पालन करता हो। वार्षिक निर्वाचन में पुस्तकाध्यक्ष अवश्य चुना जाता है कोषाध्यक्ष के समान ही यह भी एक आवश्यक महत्वपूर्ण पद है। परन्तु इस अधिकार को प्राप्त कर कितने पुस्तकाध्यक्ष ने पुस्तकालयों की उन्नति और सुचारु रूप से संरक्षण व्यवस्था की यह चिन्तनीय है। इस विद्या भंडार रूपी कोष को भी आय व्यय की धनराशि के समान निरीक्षण करना और अन्तरंग में उपस्थित करना चाहिए और वार्षिक विवरण में पूरा पुस्तकालय वृत्त प्रकाशित करना चाहिए। खेद है कि आर्यसमाजों के मंत्री प्रायः इस ओर ध्यान नहीं देते। केवल पुस्तकाध्यक्ष पर ही सब कुछ निर्भर रहता है कि वह पुस्तक सम्पत्ति की रक्षा व्यवस्था करे अथवा कृमि भक्षित विकृत विनष्ट होने दे।

अधिकांश पाठक पुस्तकों के साथ बहुत बुरा व्यवहार करते हैं। उनके इन कुत्सित कर्मों को देखकर विचारशील पुस्तक-संरक्षक को अवश्य कष्ट होता है। यह बात नहीं कि मूर्ख अज्ञानी ही ऐसा करते हों अपितु तथ्य यह है कि पठित शिष्ट आर्य सदस्य पाठक भी इस दोष से मुक्त नहीं हैं। मैं भी पुस्तकाध्यक्ष रह चुका हूँ। मेरे अनुभव में आई हुई निम्न घटनाओं का अवलोकन कीजिए।

१—एक सदस्य संस्कार चन्द्रिका ले गये। कई बार कहने सूचित करने पर तीसरे मास में वह मलिन दशा में लौटाई। जब वे रविवार को मिले तो वही पुस्तक पुनः मांगी और कारण यह बताया कि पुस्तक के अन्तिम रिक्त पृष्ठ पर उनकी श्रीमतीजी ने दो तीन धुलाइयों की वस्त्र सूची लिख रक्खी थी। धोबी से वस्त्र लेकर उसको पारिश्रमिक देना था। देवीजी ने डॉटकर पतिदेव से कहा कि आप व्यर्थ मेरे घरेलू कामों में गड़बड़ करते हैं वह पुस्तक समाज को क्यों लौटाई बस पर तो मैंने इसलिए लेखा लिख रक्खा था कि सुरक्षित रहे। २—एक सज्जन ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका ले गये। जब लौटाई तो उसके प्रत्येक पृष्ठ पर अंग्रेजी में टिप्पणियाँ लिख रक्खी थीं। ३ एक महाशय उपनिषद् संग्रह ले गये। उन्होंने प्रत्येक पृष्ठ पर उर्दू में भाष्य कर दिया। पूछने पर कहा कि मेरी बड़ी पुत्री पहले पढ़कर सुना देती है तब मैं अपनी सुविधा के लिए उसके पृष्ठों पर उर्दू में भावार्थ लिख लेता था। ४—एक नव दम्पती आर्यसमाज में आकर ठहरे उन्होंने कहा कि मेरी पत्नी 'हिन्दी प्रभाकर' है इसको कोई अच्छा पुस्तक पढ़ने को दीजिये। पुस्तक-सूची देखकर उन्होंने सन्ततिशास्त्र ले लिया सात आठ दिन के पश्चात् जब उन्होंने प्रस्थान किया तो देवीजी वह पुस्तक भी साथ ले गईं। जब उनको लौटाने पत्र लिखा तो उन्होंने पुस्तक लौटा तो दी परन्तु साथ ही भरा पत्र आया कि आप सस्ते साहित्य का प्रचार करते हैं। ... आपको विद्या की उन्नति करना है। पर खेद है कि यह पुस्तक भी आपने मेरा वाइफ' के पास न रहने दी, आप से भलाई की और क्या आशा हो सकती है इत्यादि। जब पुस्तक को खोलकर देखा तो विचित्र दशा थी। आवश्यक कर्त्तव्यों आदर्शों, प्रयोग पर लाल नीली रेखायें खिंच रही थीं स्थान स्थान पर चिह्न लगे हुए थे। किसी प्रयोग पर लिखा था कि यह मेरे लिए उपयोगी है। कहीं पर लिखा था कि यह योग मेरे पति के लिए पुष्टिकारक है। कहीं पर लिखा था कि यह छोटे बच्चे के लिए हितकारी होगा। कहीं सकता था कि इन नियमों का पालन न करने से ही मुझे कष्ट उठाना पड़ा, इत्यादि २। और प्रथम पृष्ठ पर यात्राव्यय अङ्कित था। ५—एक सज्जन स्वामीजी का जीवनचरित्र ले गए। जब लौटाने आये तो कहा कि क्षमा कीजिए। गत सप्ताह जब बच्चे के मुण्डन संस्कार पर प्रसाद बाँटा तो बड़े लड़के ने पहले ही जलेबी चुराकर पुस्तक पर रख दी। हम कार्य में व्यस्त रहे, देखा नहीं। रात को चूहा ने प्रसाद प्राशन किया और साथ ही पुस्तक का बन्धन भी काट गए। इतना ही अच्छा समझिये कि सारी पुस्तक भक्षण नहीं की। इसी से सतोष कीजिये कि इनके पूर्व वंशज मूषक से ही स्वामीजी को उद्बोधन प्राप्त हुआ था। ६—एक विद्यार्थी भारतवर्ष का इतिहास ले गया। उसमें से मानचित्र निकाल कर रख लिए पूछने पर प्रत्युत्तर मिला कि मुझे इनकी विशेष आवश्यकता थी। ७—छह सात वर्ष हुए एक प्रसिद्ध विद्वान् वेदानुसन्धान के लिए सायण भाष्य के आठ भाग ले गये। कई बार पत्र लिखे प्रत्युत्तर न मिला। अब जब निवेदन किया तो उन्होंने अधिकार पूर्वक स्पष्ट कह दिया कि यह वेदभाष्य में नहीं लौटाऊंगा क्योंकि मुझे इसकी निरंतर आवश्यकता रहती है।

इसी प्रकार का वृत्तान्त एक सज्जन ने और बतलाया कि उत्तर प्रदेशीय एक महोपदेशक महोदय भी जहाँ तहाँ से अच्छी अच्छी पुस्तकें हस्तगत कर लेते हैं, लौटाते नहीं हैं। अपने पुस्तक-संग्रह को परिपुष्ट करते रहते हैं। ८—कितनेही व्यक्ति सचित्र पुस्तकों पत्रिकाओं के विशेषांकों में से चित्र फाड़ लेते हैं। पढ़कर रखते समय पृष्ठ मोड़कर स्मृति चिन्ह का उपयोग करते हैं जिससे पृष्ठ कट जाता है। अच्छी मोटी बहुमूल्य पुस्तक को बिना सहारे खोलकर पढ़ने से पुष्ट बन्धन भी ढीला होकर विकृत हो जाता है। पढ़ते पढ़ते सो जाने से करवट के नीचे आकर पुस्तक फट जाती है। मोड़ कर पढ़ने से पुस्तक की सिलाई टूट जाती है पढ़ते पढ़ते खुला छोड़ने से पुस्तक विकृत हो जाती है। गीले या चिकने हाथों से छूने पर पुस्तक मलिन विरूप हो जाती है। पुस्तकें लेकर न लौटाना। आगे दूसरे को देना। असावधानी से कहीं फेंक देना, खो देना, नष्ट कर देना इत्यादि। वहाँ तक कहें पुस्तकों के प्रति ऐसे व्यवहार अशिष्ट-दुराचार, अपहरण ही कहे जा सकते हैं। और भी सर्वत्र समाजों के पुस्तकाध्यक्षों को भी इस प्रकार के अनेक कटु अनुभव हुए होंगे, व होते रहते हैं। सावधान, पुस्तकों की रक्षा और प्रतिष्ठा अत्यन्त आवश्यक है। सभ्यता सदाचार तथा शिष्टाचार है।

—

उसका निरन्तर अभ्यास करते रहना चाहिए।

यदि इन नियमों का पालन किया जाय तो अच्छी आदतों का निर्माण हो सकता है। और एक बार जब कोई अच्छी आदत पड़ जाती है तो ... कार्य करना कठिन ... जाता है। फिर ... अवसर ही शेष नहीं ... जाता।

—

पण्डितजी की पुस्तकें

श्री मौलवी महेशप्रसादजी से आर्य जनता भलीभाँति परिचित हैं। आप बनारस विश्वविद्यालय में फारसी के प्रोफेसर हैं। आपने कुछ दिन पूर्व ईरान की यात्रा भी की थी। सत्यार्थ प्रकाश के विषय में वे बहुत कुछ खोज करते रहे हैं। मालवीसाहब आज कल बीमार हैं। वह इलाहाबाद में ही हैं वह चाहते हैं कि उनकी निज की पुस्तकों को कोई खरीद ले। पुस्तक लगभग २०००) का होगा। सत्यार्थप्रकाश के तेरहवें तथा चौदहवें समुल्लास के सम्बन्ध में उन्होंने बहुत सा मसाला इकट्ठा किया था। इनमें बहुत सी ऐसी पुस्तकें हैं, जो

सिंहावलोकन

वैदिक 'विधान'-विधि

श्री हरिश्चन्द्र लोहिया (जयपुर)

ये व आपोऽपामग्नयोऽप्स्वन्तर्यजुष्या देवयजनाः । इदं तानति सृजामि तान् माभ्यवनिक्षि । तैस्तमभ्यति सृजामो योऽस्मान द्वेष्टि यं वय द्विष्मः । त वधेय त स्तृषीयानेन ब्रह्मणानेन कर्मणा नया मेन्या । अथर्व० १०-५-२१

हे (आपः) आप्त प्रजाजनो ! (वः अपाम् अग्नयः) तुममें से योग्य नेतागण (ये अप्सु अन्तः) जो तुम्हारे बीच विद्यमान हैं (यजुष्याः) वे ही निर्वाचित होने योग्य हैं, वे चुने जा कर (देव यजनाः) देवों का चुनाव करें । (इदम् तान् अति सृजामि) यह राष्ट्र मैं उन्हीं के हाथों में सौंपता हूँ (तानि मा अभि अवनिक्षि) उनका आदर न करूं, (तैःतम अभि अपिसृजाम.) चुनाव के समय उन्हे सहयोग देते हुए हम उसका विरोध करें (यः अस्मान् द्वेष्टि) जो विरोध में खड़ा हो (यं वय द्विष्मः) अथवा जिसके विरोध में हम हों, (अनेन ब्रह्मणा) उन्हीं निर्वाचित नेताओं द्वारा हम वेद विधान का प्रचलन करावें (अनेन कर्मणा) उन्हीं के द्वारा वेदानुकूल कर्मों का निर्माण करावे और (अनेन मेन्या) उन्हीं के सयुक्त बल से संसद में (तं वधेय) प्रत्येक वेद-विरोधी को नीचा दिखावें और (त स्तृषीय) उसके विरोध का अन्त करें ।

भारत एवम् तिब्बत की आधुनिक सीमा पर स्थित मानसरोवर के रमणीक तटों पर भूमि से अमैथुनिक रूप से प्रकट होकर सारे विश्व के मानवों के पूर्वज जब इस भूभाग पर आये तब उन्हीं के द्वारा मानव-सभ्यता का उदय हुआ, इस अकाट्य सत्य को आज सारा विश्व मान चुका है। उन्हीं आदिम मनुष्यों ने नित्य होने वाले आपसी कलह एव झगड़ों से निवृत्ति पाने के लिए राष्ट्र पर एक सुदृढ़ एव उत्तम राज्य संस्था का निर्माण करने का विचार किया, इस विचार के उठते ही हमारे उन माननीय पूर्वजों में दो स्वाभाविक भावनाओं का उदय हुआ, एक तो साम्राज्यवाद और दूसरी जनराज्यवाद। साम्राज्यवादी अथवा (Imperialist) वे सभी लोग थे जिन्हें अपनी शक्ति एवम् प्रतिभा पर घमण्ड था, वे मानते थे कि हम अपनी पार्टी के बल पर सत्ता हस्तगत कर लेंगे। उन्होंने शक्तिमान एवं वैभवशाली होने से अपना नाम असुर रखा। दूसरी ओर थे वे लोग जो योग्य व्यक्तियों के हाथों में राष्ट्र को सौंपना चाहते थे, ऐसे त्यागमूर्ति जन सुर या देव कहलाये। ये थे जनतन्त्र राज्य-प्रणाली के पक्षपाती, जनराज्यवादी (Democrats) ।

राज्य-निर्माण एवं मतभेदों को सुलझाने के हेतु उन देवों और असुरों ने एक भारी सभा की और मृत्यु से बचाने वाली सभा होने से उसका नाम 'अमृत-मथन' रखा, परन्तु उसमें कोई समझौता न हुआ. जनराज्यवादी देवों का पक्ष यह था कि जो वेद विधान प्रत्येक सृष्टि के आदि में परम पिता परमात्मा की ओर से प्राणिमात्र के कल्याण के अर्थ प्रकट होता है, वह प्रकट हो चुका है, वही ज्ञान का समुद्र है, निर्भ्रान्त एवं माननीय है, उसी को मथा जावे और राष्ट्र-निर्माण के हेतु उसी में से अमृत निकाला जावे और राज्य-संस्था का निर्माण किया जावे, परन्तु असुर पक्ष इसके विपरीत था। असुर कहते थे कि जो शक्तिमान होगा वह स्वयं सत्ता हस्तगत कर लेगा और वही नियम-विधान आदि का निर्माण करेगा। अतः समझौता न होने पर असुर उस सभा से रूठ कर चले गये, परन्तु क्योंकि वे अधिक शक्तिशाली थे अतः उन्होंने पार्टी और पैसे के बल से अपनी सत्ता स्थापित कर ली, और (हिरण्यकशिपु) अथवा असुर भाषा में ह्येवन् अस्प की छत्रछाया में देवों को भाँति भाँति के त्रास देने लगे, परन्तु कब तक? साम्राज्यवाद के विरुद्ध गुप्त योजनाएँ हुईं, षड्यन्त्र रचे गये और अन्त में हिरण्यकशिपु के असुर साम्राज्य का अन्त कर दिया गया। हिरण्यक मारा गया और असुरों को यह देश छोड़ कर पश्चिम की ओर भागना पड़ा और इस प्रकार हमारे देश पर सर्वप्रथम जनराज्य का प्रारम्भ हुआ, जिसने प्रभु प्रदत्त वेद के अनादि विधान को स्वीकार कर उसे सदा के लिए मानव समाज पर प्रचलित किया और उसे ही मानवता का पथ प्रदर्शक माना।

अतः जब यह बात बिलकुल स्पष्ट हो जाती है कि हमारे देश में राज्य-संस्था का प्रारम्भ उस प्राचीन काल में हुआ और उन राज्य-निर्माताओं ने प्रभु-प्रदत्त वेद-विधान को ही इस राष्ट्र का निर्भ्रान्त-विधान स्वीकार किया तो फिर हमें कोई अधिकार नहीं रहता कि हम वेद को ठुकरा कर नवीन मनुष्यकृत विधानों की ओर देखें और उन पर विचार करें, हमारा अधिकार तो केवल इतना ही है कि अपने राज्य के हेतु वेदानुकूल सामयिक नियमादि बना ले और लौकिक कार्य चलाते हुए परलोक और मोक्ष के साधन करे, क्या किसी में इतनी हिम्मत अथवा पौरुष है जो यह सिद्ध कर सके कि सब सत्य विद्याओं से परिपूर्ण वेद में राज्य-संचालन का सम्पूर्ण ज्ञान नहीं है।

संसद में जाकर, वेद-विधान को मान्य करने के उपरान्त हमारे निर्वाचित नेताओं को जो दूसरा कार्य करना है, वह है राज्य के संचालकों का निर्वाचन। तो जब वे जाते ही वेद-विधान को स्वीकार कर नवीन मनुष्य कृत विधान को ठुकरा देंगे तो उसके बताये प्रकार से राज्य-संचालन का प्रश्न ही समाप्त हो जावेगा. फिर तो उन्हें चुनने होंगे एक प्रजापति, एक इन्द्र, नियम-क़ानून बनाने वाले बारह आदित्य एवं आठ वसु (पाँच सरकारी महाविभागों "यथा अर्थ विभाग, विद्याप्रचार, सामाजिक सुधार, वनकृषि-विभाग और पशु-विभाग" के ईश 'पञ्चषु' एक प्रधान सेनापति, एक प्रधान सेनापति, एक प्रधान मन्त्री एवं एक मरुत्त प्रतिनिधि)। राष्ट्रपति इन्द्र द्वारा सेना का संगठन होगा और रक्षा एव न्याय विभाग के लिए ग्यारह व्यक्तियों के एक रुद्र मण्डल का निर्माण एवं स्वमन्त्रणार्थ सात सचिवों की घोषणा। प्रजापति प्रजा के मध्य रहकर जनता के दुःख सुख एव आवश्यकताओं की जानकारी प्राप्त कर उसे राज्य से मनवावेगा. तब वह समय आयेगा जब आठ वसुओं, ग्यारह रुद्रों, बारह आदित्यों, प्रजापति एव इन्द्र इन तेंतीस देवों का हमारे देश पर राज्य होगा और तभी हम सब लौकिक एव पारलौकिक कार्य सुगमता एव सफलता से कर सकेंगे। प्रजापति और इन्द्र दोनों सम्पूर्ण जीवन के निमित्त चुने जावेंगे जिससे वे अपनी पूर्ण योग्यता से कार्य कर सकें, परन्तु उनके मदान्ध होने अथवा विपरीत कार्य करने पर अगले दिन ही उन्हें पदभ्रष्ट करने का अधिकार संसद के सदस्यों को रहेगा। तभी हम यह घोषणा कर सकेंगे कि हमारे देश में राज्याधीन सभा, सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के अधीन और प्रजा राजसभा के अधीन है। तभी हमारी समस्त योजनाएं एव कार्यक्रम सफल हो सकेंगे।

इस प्रकार अथर्ववेद के उपरोक्त मन्त्र का दर्शन कर लेने के उपरान्त हमारी समझ में स्पष्टतया यह आजाता है कि हमें किस प्रकार के व्यक्तियों को निर्वाचन के समय सहयोग देना है। प्रत्येक वेदानुयायी का यह धर्म हो जाता है कि मत अथवा सहयोग देते समय चुनाव लड़ने वाले व्यक्ति में सर्वप्रथम ऋग्वेद में वर्णित सात योग्यताओं को परख लें जो इस प्रकार है— १—वह सबकी भलाई में विश्वास रखता हो, २—वह बुद्धिमान एव ज्ञानवान हो, ३—वह विद्वान् हो, ४—वह वेद का कट्टर अनुयायी हो और उसकी वैधानिक व्याख्याओं में रस लेता हो, ५—वह जनकार्यों में सक्रिय भाग लेता

खोजने पर भी नहीं मिलती। सत्यार्थप्रकाश सम्बन्धी पुस्तकों के दाम लगभग २५०) हैं। यदि कोई सभा या सज्जन इस विषय में मौलवी साहब की सहायता करना चाहें तो मुझे लिखें।

गंगाप्रसाद उपाध्याय
कला प्रेस, प्रयाग।

रहा हो, ६—वह अन्यों की बात शान्ति से सुनने की क्षमता रखता हो परन्तु साथ ही अजेय हो, ७—वह भव्य व्यक्तित्व का स्वामी हो। इस प्रकार से परीक्षा कर लेने पर हमें चाहिये कि उससे यज्ञाग्न के समक्ष ऋग्वेद में वर्णित निम्न प्रतिज्ञा करा लें और तब प्राण पण से उसे सहयोग दें—वह प्रतिज्ञा यह है—

सोमस्य मा तवसं वक्ष्यग्ने वह्निं चकर्थ विदथे यजध्यै, देवाँ अच्छा दीद्यद्युञ्जे अद्रिं शमाये अग्ने तन्वं जुषस्व। प्राञ्चं यज्ञं चकृम वर्धतां गीः समिद्भिरग्निं नमसा दुवस्यन्। दिवः शशासुर्विदथा कवीनां गृत्साय चित्तवसे गातुमीषुः। ऋग्वेद ३-१-१,२

(सोमस्य तवसम्) सुख शान्तिदायक वेदविधान की जानकारी से बलयुक्त (मा) मुझको (अग्ने) हे प्रकाशस्वरूप परमात्मन् आप (वह्निम् वाक्ष) चुनाव में सफल बनाइये (देवान् यजध्यै) देवों के चुनावकार्य का जो (अच्छ चकर्थ) उत्तम स्वरूप वेद द्वारा बताया है उसी प्रकार से मैं (विदये दीद्यत् युञ्ज) संसद में जाकर उस कार्य में अगुआ बनकर सम्मिलित हूंगा (अद्रिम् शमाये) संसद में शान्तिपूर्वक वेदानुकूल कार्य करूंगा (अग्ने) सो हे परमेश्वर आप (तन्वम् जुषस्व) चुनाव के लिए मुझे स्वीकार कीजिए। (प्राञ्चम) वेदानुकूल रीति से (यज्ञम्) राष्ट्रिय कार्यों को (नमसा चकृम) वेद का आदर करते हुए मैं करूंगा (समिद्भिः अग्निम्) अपने पूर्ण बुद्धि विज्ञान से अपने में से अग्रणी देवों की (दुवस्यन) सदा सहायता करूंगा (गीः वर्धताम्) इस चुनाव से हमारा वेदज्ञान और भी बढ़े (कवीनाम् दिवः) वेदज्ञ नेताओं से प्रकाशित होकर (विदथा) हमारी राजसभा अथवा संसद (तवसे गृत्साय शशाशुः) उन योग्य शासकों को अनुशासन सिखावे और (गातुम् ईषुः) हम इसके द्वारा राष्ट्र की भलाई करें (चित्) मैं इसे मानता हूँ, प्रतिज्ञा करता हूँ।

—

प्रत्येक छोटे-बड़े आर्यसमाज को अपने नगर में 'आर्य्यमित्र' का प्रचार करना चाहिए।

सुझाव और सम्मतियाँ

'धियो योनः प्रचोदयात्'

श्री पीतमलाल ऐडवोकेट

"संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है।" महर्षि दयानन्द महाराज ने यह आदेश आर्यसमाज के लिये दिया और इसको आर्यसमाज का एक नियम निर्धारित किया। आज श्रावणी पर्व पर हम विचार करें कि इस ओर हमने क्या किया है और अब हम क्या करें?

काशी के प्रमुख विद्वान्, काशी पण्डित सभा के सभापति, त्याग', तपस्वी श्री पं० गोपाल शास्त्री, दर्शन-केशरी महोदय ने 'वेदवाणी' द्वारा हमारा ध्यान हमारे उत्तरदायित्व की ओर आकर्षित किया है। वह कहते हैं कि "राष्ट्रिय सरकार धर्म को निरपेक्ष बताकर सात समुद्र पार के धर्म को सभी जगह प्रविष्ट करती जा रही है। इस स्थिति में सुधार की आशा किससे की जावे—'अब यदि भारत में कोई संस्था है तो वह 'आर्यसमाज' ही है कि वह स्वतन्त्र भारत के इस संकट-काल में खड़े होकर भारत के सच्चे स्वरूप का उद्धार कर सके। यह काम राजनीतिज्ञों से नहीं होगा। यह भारत के वैदिक विद्वानों और सच्चे महात्माओं से ही होगा।"

योग्य विद्वान् ने यह सत्य ही लिखा है। क्या आर्यसमाज उनके आदेश का मान करेगा? कहने को तो आर्यसमाज कर ही रहा है और इसको सब स्वीकार भी करते हैं, परन्तु संकट-समय में जिस परीक्षित व्यक्ति वा संस्था को स्मरण करके आह्वान किया जाता है, वह विशेष बात है। वैदिक धर्म के ऊपर विशेष संकट है और उस को आर्यसमाज जैसा परीक्षित समाज ही निवारण कर सकता है। इस भाव से यह विचार प्रकट किये गए हैं। अस्तु।

तो अब आर्यसमाज को क्या करना चाहिये। आर्यसमाज को अपनी रीति नीति 'समयानुसार' निर्धारित करनी चाहिये। ऐसा नहीं हो रहा है, छोटा मुंह बड़ी बात है, परन्तु वास्तविकता ऐसी प्रतीत होती है, कि जिस दोष से महर्षि दयानन्द आर्यजनता को सुरक्षित रखना चाहते थे, वह उससे न बच सकी। आज आर्यसमाज, पौराणिक समुदाय की भाँति 'रस्म-रिवाज' का कायल दीखता है। उत्सव, सम्मेलन आदि मेले-तमाशों को करके और उनमें प्रस्ताव पास करके ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझता है। सबके उद्देश्य, विचार और जीवन के व्यवहार में जमीन-आसमान का अन्तर है, फिर एक पौराणिक और आर्य में भेद ही क्या रहा? वेदों को तो सब ही मानते हैं और उनकी दुहाई देते हैं।

हमारा आशय उत्सव और सम्मेलनों को न मनाने का नहीं है वह तो एक प्रकार के यज्ञ और लाभप्रद हैं, परन्तु उनको उपयोगी बनाने के लिये ज्ञान और विवेक से विचार होना चाहिये।

हमारी सम्मति में भारतीय स्वतन्त्रता के होते ही युगपरिवर्तन हो गया है। इस युग परिवर्तन के साथ ही आर्यसमाज को अपनी शैली बदलनी चाहिये। प्रश्न है, अब आर्यसमाज क्या करे?

आर्यसमाज को अब गिनती (Quantity) के स्थान पर वास्तविक योग्यता (Quality) पर ध्यान देना चाहिये। वेदादि शास्त्रों के ज्ञाता तथा उनके प्रचार के लिए जीवन अर्पण करने वाले विद्वानों को जीवन-निर्वाह की चिन्ताओं से सर्वथा मुक्त करके मानव समाज का पथ प्रदर्शन करने का समुचित अवसर देना चाहिये। इस समय आर्यसमाज को नेतृत्व का कार्य अपने हाथ में लेना चाहिये। जनता को एक तपस्वी नेता की आवश्यकता है। इस नेता का स्थान आर्यसमाज ले। जनता को सत्यमार्ग का प्रदर्शन करे और उस पर चलने का शुभ परामर्श दे।

दूसरा कार्य आर्यसमाज के लिये आर्यपरिवार बनाने का है। जातिभेद से जकड़ा हुआ पौराणिक समाज वैदिक संस्कारों से दीक्षित नहीं हुआ। आर्यसमाजी कहे जाने वालों के परिवार अधिकांश आर्य नहीं बने। इसका मुख्य कारण यह है कि जन्मजाति-भेद को न त्याग कर आर्य युवक और युवतियों के विवाह नहीं रचाये गये। केवल कुछ [illegible] और कुछ आर्यसंस्थाओं को दान कर देने से ही संस्कार को वैदिक संस्कार मान लिया है। यह उचित नहीं है। आर्यविवाह ऐक्ट सन् १९३७ ई० से वर्तमान है। भारतीय शासन-विधान में जन्मजाति को कोई मान वा स्थान नहीं है, परन्तु फिर भी ऋषि दयानन्द के भीरुभक्त जन्मजाति के कल्पित जाल में बंधे पड़े हैं और अपनी सन्तान के विवाह आर्यपरिवार में नहीं करते। यह दशा शोचनीय है। हमारी धारणा है कि आर्यसमाजियों को आर्यपरिवार-संघ के लिये शीघ्रातिशीघ्र उद्योग करना चाहिए। ज्यों ज्यों नवयुवक और नवयुवती जाति-बन्धन को तोड़कर आर्यपद्धति से विवाह की परिपाटी को अपनायेंगे, त्यों त्यों जाति का धार्मिक स्तर ऊँचा उठेगा और सुदृढ़ होगा। यह कार्य करने का है। वृथा बात बनाने और प्रस्ताव पास करने का नहीं है। हमारा स्वयं अनुमान है कि आर्यजनता में अभी इसकी बड़ी कमी है।

इन त्रुटि के निकलने पर ही आर्यजाति दृढ़ बन सकेगी जो नेतृत्व का कार्य कर सकेगी। यह आर्यसमाज के कार्यक्रम में मुख्य भाग होना चाहिये। आर्यप्रतिनिधि सभा के आर्य परिवार-संघ के सदस्य बन कर उत्साही आर्य कार्य करें।

तीसरा महत्वपूर्ण और आवश्यक कार्य देश से भ्रष्टाचार मिटाने का है क्योंकि भ्रष्टाचार अति को पहुंच गया है। इसके लिए एक विशेष प्रकार का संगठन और उद्योग करना पड़ेगा, जिसमें एसेम्बली के सदस्य, पत्रकार, नवयुवक स्वयंसेवक इत्यादि अनेक सदस्य सम्मिलित होकर कार्य करेंगे। इनको त्याग और तप से कार्य करना पड़ेगा और कड़ी यातनाएँ सहनी पड़ेंगी।

स्वास्थ्य-सुधा

वर्षा-ऋतु

श्री डा० कुन्दनलालजी एम० डी०

हमारे पूर्वज ऋषियों ने स्वास्थ्य के नियमों में दिनचर्या और ऋतुचर्या पर विशेष बल दिया है। इसके अनुसार जहाँ हेमन्त और शिशिर ऋतु में पौष्टिक पदार्थ मेवा, पकवान खाना आवश्यक और लाभदायक है, वहाँ वर्षा ऋतु में अग्नि मंद हो जाने के कारण उपरोक्त पदार्थों को खाना रोग को निमंत्रण देना है। किन्तु इनके विरुद्ध सुपाच्य भोजन सब्ज़ा, रोटी, चावल, मूंग, छाछ, फल खाना हितकर है। अग्नि तीव्र करने को कुछ न कुछ व्यायाम अवश्य करना चाहिये। जो लोग इसका विचार नहीं करते उनके शरीर में विकार इकट्ठे होने लगते हैं, उनको इसी ऋतु में अथवा क्वार मास में ज्वर-जाड़ा, पेचिश, सग्रहणी, जुकाम, इनफ्लूएन्ज़ा इत्यादि रोग होते हैं। अतः हमें ऐसा प्रबन्ध रखना चाहिये कि शरीर में मल (विकार) रहने न पावें। आम, खीरा, अमरुद, नीबू इत्यादि फल इसी काम के लिये प्रकृति ने इस ऋतु में पैदा किये हैं।

नीबू

विकार निकालने में नीबू सब फलों का राजा है पर लोग स्वाद के वशीभूत होकर उसे खाते भी हैं तो उसके बहुत से गुण नष्ट करके। सब से अच्छा ढंग नीबू सेवन का यह है कि खाली पेट नीबू को आधे गिलास पानी में निचोड़ कर पीवें। इस प्रकार पीने से शरीर से विकार निकलते हैं, रक्त शुद्ध होता है और अग्नि तीव्र होती है।

कुछ लोग नीबू से घबराते हैं और कहते हैं कि हमको इसके सेवन से नजला और जुक़ाम हो जाता है। बात उनकी ठीक है, क्योंकि जिनके शरीर में कफ रूप में विकार जमा है, उनको जुक़ाम हो सकता है क्योंकि नीबू तो विकारों का शत्रु ठहरा। वह उन्हें अवश्य निकालेगा पर यह जुकाम आपका शत्रु नहीं मित्र है जो एक-दो दिन उपवास करने और फिर गर्म पानी में नीबू निचोड़ कर पीने से स्वय अच्छा हो जावेगा। पर, यदि वह विकार आपके शरीर में रहते और ऐसी अवस्था में आपके शरीर में किसी संक्रामक रोग टी० बी० इत्यादि के कृमि प्रवेश कर जायें तो विकार रहित शरीर में तो उनकी मृत्यु हो जाती है पर विकार वाले शरीर में विकारों का भोजन पाकर वह पनपने लगते हैं, और कुछ समय में शरीर पर विजय पाकर घातक रोग उत्पन्न कर देते हैं। अब आप स्वयं ही विचार करें कि नीबू ने यदि विकार निकालने को जुक़ाम किया तो वह आपके लिये हितकर है या हानिकारक।

सहोड़ा

जाड़ा-बुखार से बचाव का दूसरा उपाय नित्य प्रति सहोड़ा की दातुन करना है। आयुर्वेद के मत से इसके गुण इस प्रकार हैं:

वद्र द्रश्चास्य शाखोटः
सपति कफ नाशनः,
बातलश्च कृमि हन्ति
पाण्डुताज्वरकामलाः।

इसका दूसरा नाम वद्रद्रुआस्यशाखोट है। यह बातजनक है तथा पित्त, कफ, कृमि, पाण्डुता, ज्वर और कामला को नष्ट करता है।

जाड़े-बुखार की ओषधि के रूप में इसके पत्तों का व्यवहार बहुत दिनों से होता है। कहते हैं, पत्तों का रस नाक में डालने से बारी रुक जाती है। पर रोग-प्रतिशोधक के रूप में इसकी दातुन बहुत उपयोगी है। सन् १९१७ ई० में आसाम के गौरीपुर प्रांत में जाड़े-बुखार का बड़ा वेग हुआ पर जो लोग सहोड़ा का दातुन करते थे वह सुरक्षित रहे।

वर्षा ऋतु में ओस में न सोना ही अच्छा है, क्योंकि जिनके शरीर में विकार है, उनको इस ऋतु में ओस में सोने से रोग हो सकते हैं। हाँ, जिनका शरीर विकार रहित है उनको वर्षा के अभाव में मैदान में सोने से कुछ हानि नहीं हो सकती किन्तु उनको भी सूर्योदय से पूर्व उठकर स्नान कर लेना आवश्यक है।

इस ऋतु में अधिक परिश्रम करना, भीगे कपड़े पहनना, धूप में अधिक घूमना और अधिक सहवास और खूब तन कर खाना हानिकारक है। बाज़ार की मिठाई, पकवान तो इस ऋतु में खाना ही न चाहिये। यदि यात्रा इत्यादि में बाज़ार का भोजन करना पड़े तो फलों पर निर्वाह करना चाहिये। नीबू का शरबत पीकर भी बहुत समय बिताया जा सकता है। पचामृत अर्थात् दूध, दही, मधु, तुलसी के पत्ते तथा गंगाजल मिलाकर पीना भी हितकारी है। इस ऋतु में यथासम्भव अधिक से अधिक समय नंगे शरीर शुद्ध वायु में रहना हितकर है। प्रातःकाल में उषः काल में तो अवश्य ही घण्टे दो घण्टे नंगे शरीर पर शुद्ध वायु लेना चाहिये। क्योंकि जिस प्रकार हम नाक से श्वास लेते हैं, और अशुद्ध वायु बाहर

तप और त्याग बिना कोई कार्य नहीं हो सकता। ससार का उपकार करने वालों को पहले स्वदेश और स्वजाति का उपकार करना चाहिये। आर्यसमाज का इतिहास यातनाओं और बलिदानों का इतिहास है। अब वह समय आगया है जब वैदिक धर्म अपने अनुयायियों से बलिदान चाहता है। आर्यवीरो, उठो तुम ऋषि सन्तान हो, ऋषियों का रक्त तुम्हारी नसों में बह रहा है। महर्षि दयानन्द के शिष्य भ्रष्टाचार और अत्याचार को सहन नहीं कर सकते।

— —

संस्था-परिचय

फर्रुखाबाद की संस्कृत पाठशाला

यह पाठशाला दानवीर स्वर्गीय श्री प० लक्ष्मीनारायण मिश्र रईस फर्रुखाबाद ने सन् १८९८ ई० में फर्रुखाबाद नगर के निकट पवपुखरा ग्राम में स्थापित की थी और इसके लिये चार हजार रुपये वार्षिक आमदनी की भूसम्पत्ति की रजिस्टरी करा कर एक ट्रस्ट भी बना दिया था। इस ट्रस्ट के अध्यक्ष जिला कलक्टर महोदय तथा सदस्य अन्य प्रतिष्ठित पुरुष थे।

इस ५४ वर्ष के कार्य-काल में इस पाठशाला ने सैकड़ों व्याकरणाचार्य और साहित्याचार्य तैयार किये। जयपुर आयुर्वेद महाविद्यालय की परीक्षाएं भी दिलाईं जिनसे वैद्यों की संख्या भी काफी बढ़ी। सम्प्रति इस ट्रस्ट के अन्तर्गत एक हाईस्कूल खोला गया है, और बोर्ड आफ इण्डियन मेडीसन यू० पी० द्वारा निर्धारित वैद्य परीक्षाएं भी होती हैं। इसके अतिरिक्त बनारस संस्कृत कालिज की व्याकरण तथा साहित्य-परीक्षाएं भी दिलाई जाती हैं। जो छात्र अंग्रेजी के साथ संस्कृत परीक्षाएं देना चाहते है, उनके लिए यहाँ बड़ी सुविधाएं हैं। संस्कृत छात्र मैट्रिक तक निःशुल्क शिक्षा पा सकते हैं। निवास, प्रकाश और कहार की सेवाएं मुफ्त। इसके अतिरिक्त संस्कृत के छात्रों को ५) से १५) तक वृत्तियाँ भी दी जाती हैं। इस संस्था के प्रिंसिपल—श्री प० आनन्दघन एम० ए०, एल-एल बी० और मुख्याध्यापक श्री प० तेजोनारायण पाण्डेय, व्याकरण-साहित्याचार्य, काव्य-वेदतीर्थ, वेदान्त, वैद्यशास्त्री हैं। और भी सब सुयोग्य अध्यापक हैं। फर्रुखाबाद जिले में यह प्राचीनतम आर्यशिक्षा संस्था है। इसने अब तक सैकड़ों संस्कृत के विद्वान् दिये यह कोई साधारण बात नहीं है। ऐसी संस्थाएँ समाज के लिए गौरव स्वरूप हैं।

——

सामयिक समस्याएँ

'ठोस काम'

श्री प० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय

आर्यमित्र के विद्वान् सम्पादक ने मेरठ में होने वाले आर्य-सम्मेलन के कार्य के विषय में जनता का ध्यान आकर्षित किया है। उनका अभिप्राय है कि जिस काम में जनता का आठ-दस लाख रुपया व्यय होना है उसमें केवल मेल-मिलाप ही नहीं अपितु कुछ ठोस काम भी होना चाहिये। मेरे विचार में सम्मेलन एक बड़ा मेला है। मेले में वही काम हो सकता है जो उसके अनुरूप है, चाहे व्यय कितना ही क्यों न हो। अर्थात् उत्साह चहल-पहल, मेल-जोल, वार्त्तालाप इत्यादि। जो चीज मेले का विषय ही नहीं उसकी मेले में कैसे आशा हो सकती है। मेले में जो ठोस चीज दृष्टि पड़ती भी हैं, वे मेले में बनती नहीं, अपितु कहीं और जगह में बनाकर यहाँ प्रदर्शित की जाती हैं। चीजों के निर्माण-गृह और होते हैं और प्रदर्शन गृह और। इसलिये यदि आर्यसमाज के निर्माता कहीं और जगह से ठोस चीजें बनाकर ले आयेंगे तो मेले में उनका प्रदर्शन अवश्य हो जायगा। अन्यथा नहीं।

यह विषय विवादास्पद है कि ठोस चीज है क्या? इसमें सबका मत एकसा तो नहीं। मुझे एक कहानी याद आ गई लगभग चालीस वर्ष हुए मेरा एक बच्चा कहीं से फटी पतंग उठा लाया। जोड़ने चला तो मेरी गोददानी में गोंद न पाया। झुँझला कर मेरी माताजी से कहने लगा, "देखो, अम्मा, पिताजी सारा गोंद पैकट बना बना कर बरबाद करते हैं पतंग के लिये नहीं छोड़ते" उसके दृष्टिकोण से गोंद का सर्वोत्कृष्ट उपयोग यही था कि पतङ्ग जोड़ी जाय और पैकिट जोड़ना गोंद को बरबाद करना था। इसी दृष्टान्त को फैलाकर देखिये कि ठोस काम क्या है, और बेठोस क्या?

आर्यसमाज की प्रगति में छोटी बड़ी पचासों सस्थाओं का हाथ है और वे सब अपने काम ठोस समझती हैं। अतः इनका तुलनात्मक विवेचन तो दो चार नेता ही बैठकर कर सकते हैं। सम्मेलन तो केवल यश या अपयश का ही भागी हो सकता है। गत कलकत्ता सम्मेलन के पश्चात् एक नेता ने कहा "हम तो दूध लेने गये थे परन्तु भैंस ने दूध तो न दिया गोबर कर दिया।" मैंने कहा कि था तो वहाँ दूध भी और गोबर भी। परन्तु जो भैंस के थनों के पास गया उसे दूध मिला, जो गोबर के स्थान में गया उसे तो गोबर ही मिलना था।"

मेरी समझ में तो यदि सम्मेलन केवल एक ही काम करले अर्थात् समाज की बिखरी हुई शक्तियों को एक करदे तो लाखों रुपये का व्यय सफल हो सकता है। १९३८ का शोलापुर का सम्मेलन तो हैद्राबाद के अत्याचारों के विरुद्ध था। अतः एक ही काम सामने था। १९४४ का दिल्ली का सम्मेलन सिन्ध सरकार के सत्यार्थ-प्रकाश के प्रतिबन्ध के विषय में था। वहाँ तो समाज के सब दल मिल गये थे। क्योंकि विरोधी पक्ष भयानक था। परन्तु कलकत्ते में तो ऐसी कोई शक्ति न थी और न मेरठ में है। अतः कलकत्ते में भी आन्तरिक विरोध ने जोर पकड़ा और यह तांता चलता ही रहा, वहाँ अनेक सम्मेलन किये गये जो न केवल अपनी स्वतन्त्र सत्ता ही रखते, अपितु अपना प्राबल्य भी प्रकट करना चाहते थे।

आर्यसमाज का यह दुर्भाग्य रहा कि जहाँ इसमें हिन्दुओं को संगठित करने का घोर प्रयत्न किया वहाँ इसकी अपनी दलबन्दियों नित्य इसको कमजोर करती रहीं। ऋषि दयानन्द ने न अपना खलीफा छोड़ा, न अपनी गद्दी बनाई, न अपना नाम समाज के सिद्धान्तों में शामिल किया। इसीलिये कि मेरे अनुयायी दलबन्दी के दलदल में न फसें।

परन्तु उनके देहावसान के दस वर्ष के भीतर ही दो दल हो गये और वह अभी तक समाज को निबल कर रहे हैं। कुछको तो यह विश्वास भी हो गया है कि काम दलबन्दी से ही होता है। इसलिये आज कल आर्यसमाज से सम्बन्धित अखिल भारतीय केवल सार्वदेशिकसभा ही नहीं है अपितु दो नहीं चार नहीं, कई सस्थायें हैं। वे सब स्वतन्त्र दल हैं और दूसरे दलों को पछाड़ना उनका काम है। क्या सम्मेलन में यह शक्ति है कि व्यक्तियों या वर्गों के लोभ और मोह को छुड़ाकर समाज को 'सगच्छध्वं' का पाठ पढ़ा सके। पाकिस्तान के पश्चात् जो मारकाट हुई उसने कुछ आँखें खोली थीं। परन्तु जो मर गये वे तो मर ही गये। जो बचे उन्होंने फिर अपने रास्ते बना लिये। जिस प्रकार गाँधीजी के अनुयायी गांधीजी के नाम पर ही अलग अलग दल बनाकर एक दूसरे को कोस रहे हैं उसी प्रकार दयानन्द और वेद के नाम पर हम भी दल बना डालते हैं। प्रति वर्ष दलों में आधिक्य होता है, कमी नहीं, फिर ठोस काम क्या हो?

आजकल निर्वाचन की आँधी देश-व्यापी हो रही है। प्रत्येक दल निर्वाचन के दृष्टिकोण से बात करता है। आर्यसमाज की जनता भी उन्हीं दलों में विभक्त है। इसमें जनता का दोष नहीं नेताओं का दोष है जो जनता को अपने पीछे लगाने के लिये उसके सामने एक विशेष दृष्टिकोण रखते हैं। मुझे तो भय है कि अगले सम्मेलन में भी वही होगा। संभव है कि एक-दो नये दल खड़े हो जाय, और समस्या सुलझाने के बजाय उलझ जाय।

——

मेरठ आर्य-महासम्मेलन

सप्तम सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन जो ता० ९ अक्टूबर से १२ अक्टूबर तक मेरठ नगर में होरहा है, उसमें निम्नलिखित सम्मेलन होने निश्चित हुए हैं। १—वेद सम्मेलन-प्रधान श्री प० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु काशी। २—शिक्षा-सम्मेलन-प्रधान-श्री प्रिंसिपल दीवानचन्दजी एम० ए० कानपुर। ३—त्रैत सिद्धान्त सम्मेलन-प्रधान श्री प० अयोध्याप्रसादजी रिसर्च स्कौलर कलकत्ता। ४—गो सम्मेलन-प्रधान श्री ठाकुरदत्त जी भार्गव ससद्-सदस्य देहली। ५—महिला-सम्मेलन-प्रधाना श्रीमती शन्नोदेवीजी जालन्धर। ६—शुद्धि-सम्मेलन-प्रधान श्री कुवर चाँदकरणजी शारदा अजमेर। इनके अतिरिक्त राज्य आर्य-सम्मेलन अभी विचाराधीन है, और भी अनेक सम्मेलनों की योजना थी, परन्तु वे समय के अभाव से नहीं किये जा सकते। जो महानुभाव कोई प्रस्ताव भेजना चाहे भेज सकते हैं, उन पर विचार किया जा सकता है। नौचन्दी मेले के इस समस्त स्थान का नाम जहाँ यह सम्मेलन किया जायगा जिसमें एक बड़ी प्रदर्शिनी, गो प्रदर्शिनी और एक बड़ा सुन्दर बाजार होगा भारत के प्रसिद्ध विद्वान् मेरठ निवासी स्वर्गीय श्री प० घासीरामजी के नाम पर "घासीराम नगर" रखना निश्चित हुआ है। इस नगर के चार मुख्य द्वार होंगे जिनके नाम श्रद्धानन्द द्वार, सर्वदानन्द द्वार, नारायण स्वामी द्वार और तुलसीराम स्वामी द्वार होंगे।

जो महानुभाव सम्मेलन के अवसर पर सम्मेलन में दुकान लाना चाहे वे अभी से श्री आत्माशरणजी एम० ए०, एल-एल० बी० एडवोकेट मेरठसे पत्र व्यवहार कर लें। जो सज्जन सम्मेलन में अपने ठहरने के लिये स्थान रिजर्व कराना चाहें वे श्री रघुनन्दन स्वरूपजी एम० ए०, वकील सदर

——

निकालते हैं इसी प्रकार हमारे रोम छिद्र द्वारा श्वास लिया और निकाला जाता है। जो व्यक्ति दिन रात अपने शरीर को कपड़ों से और विशेषतया चुस्त कपड़ों से ढके रहते हैं, उनके रोम-छिद्र इस कार्य को ठीक रूप में नहीं कर पाते और इस कारण उनका रक्त दूषित हो जाता है, जो अनेकों रोगों का कारण बनता है।

——

आर्य्यजगत

—शास्त्रार्थकेसरी प० अमरसिंह जी आर्यपथिक ने तहसील खुर्जा और तहसील खैर (अलीगढ़) के लगभग चालीस मील के घेरे में प्रचार करने के लिये एक मण्डल बना दिया है। प्रतिमास अमावस्या को किसी न किसी ग्राम में अधिवेशन किया जाता है। बड़ी सफलता होती है। स्वयम् आर्यपथिकजी तथा अन्य उपदेशक प्रचार करते हैं। अ॰ ॰॰ का वेदविद्यालय भी अपने आचार्य प० अमरसिंहजी की अध्यक्षता में सफलतापूर्वक चल रहा है।

—श्रावणी के दिन खरगोन में श्री जोगीलालजी सोनी हरिजन (बनाई) के घर वैदिक रीति से यज्ञ किया गया और उन्हें यज्ञोपवीत धारण कराया। यज्ञ, व्याख्यान और भजन हुए।

—आर्यसमाज जर्वा (अलीगढ़) का सोलहवाँ मासिकोत्सव श्रावणी के दिन हुआ। भजन और व्याख्यान हुए।

—आ० स० सदर बाजार कानपुर द्वारा १२ अगस्त को दो पुरुषों और एक स्त्री की शुद्धि हुई। ये लोग जन्म के मुसलमान थे। नागपचमी के मेले पर प्रचार किया गया। प० रामनिवास शास्त्री के व्याख्यान और भजनोपदेशकों के भजन हुए।

—श्री स्वामी उद्योगानन्दजी तथा ठा० जगन्नाथसिंहजी आर्य जुगनू के उद्योग से आ० स० जिगर सण्डी (आजमगढ़) का जीर्णोद्धार हुआ। अधिकारियों का नया निर्वाचन किया गया।

मेरठ से पत्र व्यवहार कर शीघ्र निश्चय करलें। ठहरने के स्थान में निम्न प्रकार वस्तु होंगी।

१–ई० पी० टैन्ट २१'×१६'

२–स्वीस कौटेज १२'×१२' (आगे-पीछे बरामदा)

३–सिपाही पाल १४'×१४'

४–काबुल टैन्ट (डेरा एक चोबा) १२'×१२'

५–छोटी छोलदारी ७'×८'

इनमें प्रकाश और चटाई साथ होगी। पलग या चारपाई या दरी जो लेना चाहेंगे इसका भाड़ा पृथक होगा।

कालीचरण आय
प्रधान मन्त्री,
स्वागत-समिति, मेरठ।

—१४ अगस्त को आ० स० फर्रुखाबाद में श्री दरबारीलालजी की विधवा पुत्री श्री कमलादेवी का पाणिग्रहण संस्कार श्री लल्लूलालजी के साथ हुआ।

—आर्य-स्त्री समाज मेरठशहर ने श्रावणी पर्व समारोहपूर्वक मनाया। २ से १६ अगस्त तक स्नातक सत्यपालजी की कथा होती रही।

—५ से १६ अगस्त तक आ० स० भाटपुर देवरिया ने विविध स्थानों में वेद-प्रचार किया।

—अमेठी और रामनगर में श्रावणी उत्सव समारोहपूर्वक मनाया गया। प० शङ्करदयालु शास्त्री के भाषण हुए। हैदराबाद-दिवस भी मनाया गया। युवराज श्री रणञ्जयसिंहजी भी उत्सवों में उपस्थित थे।

—आ० स० कायमगज में श्रावणी पर्व मनाया गया। आर्यवीर-दल की परेड हुई। वृहद् यज्ञ किया गया। हैदराबाद के शहीदों को श्रद्धांजलियाँ अर्पित हुईं।

—शोक है कि साथा (अलीगढ़) के बोहरे जुगलकिशोर शर्मा का देहान्त हो गया। आप बड़े ही सज्जन आर्य थे। आर्यसमाज के कार्यों में प्रशसनीय सहयोग प्रदान करते थे। आर्यसमाज नगौला शोक-सहानुभूति प्रकट करता है। परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

—१ जुलाई १९५० को आ० स० दौलताबाद के नगर कीर्तन में मुसलिम गुंडों द्वारा आक्रमण किया जाने पर श्री रामस्वरूप आर्य तथा उनकी माता श्रीमती कुशलदेवी ने आर्यध्वज की रक्षा की। अतः आर्यउपप्रतिनिधि सभा बिजनौर गढ़वाल की ओर से उन्हें एक उत्सव समारोह में ओम् के सुन्दर काष्ठ-ध्वज और प्रशस्ति पत्र भेट किये गये।

—आ० स० आगरा नगर ने वेद-प्रचार सप्ताह समारोहपूर्वक मनाया। प्रातःकाल श्री पूर्णचन्द्रजी एडवोकेट वेद-कथा कहते रहे। सायकाल भिन्न भिन्न महल्लों में ठा० यशवन्तसिंहजी के भजन और श्री मोहनलालजी आय. श्री परमेश्वरीसहायजी एडवोकेट, श्री कालीचरणजी आर्य (मेरठ) के व्याख्यान होते रहे। जनता पर उत्तम प्रभाव पड़ा।

—शोक है कि ६ अगस्त को मथुरा मण्डल के भजनोपदेशक कु० विजयसिंहजी की बहन श्रीमती तारादेवी का देहान्त हो गया। परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति और दुखी परिवार को धैर्य प्रदान करे।

—भरथना (इटावा) में भारतीय लोकसंघ की स्थापना हुई। प० बुद्धदेव विद्यालङ्कार और प० बालदिवाकर हंस के भाषण हुए।

—१६ अगस्त को आर्यसमाज बालोत्तरा में दुर्गादास-जयन्ती बड़ी धूमधाम से मनाई गई, जिसमें आर्यप्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा के प्रधान कर्मवीर प० जियालालजी प्रधान मन्त्री श्री प० रमेशचन्द्रजी शास्त्री व श्री प० रामचन्द्रजी आर्यमुसाफिर के प्रभावशाली भाषण एवं श्री प० भगवतीप्रसादजी, श्री कु० मूलचन्द्रजी आर्य के मनोहर भजन हुए। भाषणों एवं भजनों का जनता पर काफी प्रभाव पड़ा।

निर्वाचन

—आर्यकुमार सभा हरदोई—प्रधान-प० रघुनन्दन शर्मा और मन्त्री-श्री आदित्यकिशोरजी।

—आ० स० जिगर सण्डी (आजमगढ़)—प्रधान-श्री सत्यदेव सिंहजी और मन्त्री-श्री बोधीसिंहजी।

सार-सूचनाएँ

—मैं दमे की दवा नहीं जानता जैसा कि 'मित्र' में प्रकाशित हुआ है. एक साधन जानता हूँ। इसी साधन के सम्बन्ध में मुझसे पत्र-व्यवहार करें। स्वरूपानन्द, दातागज, बदायूँ।

—श्री भद्रपालजी भजनोपदेशक से पत्र व्यवहार का पता—चन्दन-भवन, स्टेशन रोड, बदायूँ।

—आ० स० कायमगंज में स्वतन्त्रता दिवस समारोहपूर्वक मनाया गया।

—श्री प० सुरेन्द्र शर्मा काव्य तीर्थ अस्वस्थतावश वनस्पति भवन, देहरादून में ठहरे हुए हैं।

—श्री आर्यसमाज हसनपुर (मुरादाबाद) में स्वतन्त्रता-दिवस समारोहपूर्वक मनाया गया। श्रीमती श्यामदेवी की अध्यक्षता में एक विराट् सभा हुई।

—११ अगस्त को अमेठी की श्री भगवान् आम्र वाटिका में वन-उत्सव मनाया गया। युवराज श्री रणञ्जयसिंहजी ने ११ आम लगाये।

—गुरुकुल मेहियाँ छपरा में ६ अगस्त को 'तुलसी जयन्ती' धूमधाम से मनायी गयी।

—अमेठी में युवराज श्री रणञ्जय सिंहजी की अध्यक्षता में 'तुलसी-जयन्ती' समारोहपूर्वक मनायी गयी। अनेक विद्वानों के भाषण हुए।

—श्री हकीम रामदासजी प्रधान आ० स० फरीदपुर जि० बरेली ने यह दुःखद समाचार भेजा है कि उक्त आर्यसमाज के उपप्रधान श्री रतनलालजी, आर्यसमाज के उत्साही कार्यकर्ता का २०-२१ जुलाई की रात्रि में किसी ने वध कर दिया। और उनके शव का भी पता न लगा। एक मास से अधिक समय हो गया अभी तक पुलिस हत्यारे का कुछ पता न लगा सकी है।

देवीप्रसाद जौहरी

—गाजियाबाद नगर में लाउडस्पीकर का दुरुपयोग रोकने के लिए आर्यसमाज गाजियाबाद की ओर से गत कई सप्ताहों से आन्दोलन किया जा रहा है। श्री प० जनार्दनजी ने कई हजार हस्ताक्षर कराकर प्रार्थना पत्र भिन्न भिन्न उच्च अधिकारियों के पास उचित कार्यवाही के लिए भेजे हैं।

रतनसिंह मन्त्री

उत्सव-सूचनाएँ

—आर्यसमाज राजामण्डी आगरा का वार्षिकोत्सव ४ से ७ नौम्बर तक मनाया जायगा।

आगरा में वेदप्रचार-सप्ताह

आर्यसमाज आगरा नगर, आ० स० हींग मंडी और आर्यसमाज राजामंडी ने वेदप्रचार-सप्ताह सफलता पूर्वक मनाया।

नगर आर्यसमाज ने विविध महल्लों में प्रचार किया। हींग की मंडी आर्यसमाज में विद्वानो के प्रवचन हुए, श्रीकृष्णजन्मोत्सव बड़े समारोह पूर्वक मनाया गया। राजामंडी आर्यसमाज की ओर से सदस्यों के घरो पर प्रचार हुआ। एक दिन श्री हरिशंकर शर्मा के स्थान पर भी प्रचार हुआ, जिसमें सौभाग्य से मान नीय श्री मदनमोहन सेठ एम० ए० प्रधान सभा और श्री प० धर्म पालजी विद्यालंकार भी सम्मि लित थे। विद्यालङ्कारजी और विद्वद्वर श्री प० हरिदत्त शास्त्री एम० ए० के प्रवचन तथा प० भोजदत्तजी शर्मा के भजन हुए।

राजस्थानीय आर्य सम्मेलन

इस सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष श्री प० गङ्गाप्रसादजी एम० ए०, रिटायर्ड चीफ जज निर्वाचित हुए हैं। उप स्वागताध्यक्ष प० दुर्गा-प्रसादजी एम० ए० और श्री जय कृष्णजी वेदी, प्रधान मन्त्री श्री वैद्य विजयशंकरजी, सहायक मंत्री श्री हरिश्चन्द्रजी और श्री प्रेमसिंहजी कोषाध्यक्ष सेठ हनुमान सहायजी चुने गये हैं। इनके अतिरिक्त, अर्थसमिति, प्रचार-समिति, आतिथ्य समिति, मण्डप समिति, जुलूस समिति भी बनाई जा चुकी है। जुलूस-समिति के संयोजक श्री जियालाल-जी है। सम्मेलन जयपुर में होगा। आर्य सम्मेलन की तैयारियाँ लगभग पूर्ण होने को है। आगत प्रतिनिधियों के निवास इत्यादि का सब प्रबन्ध किया जा चुका है। चौड़ा रास्ता जयपुर के बाहर रामलीला के विशाल मैदान में पंडाल बनाया जायगा। सम्मेलन के अध्यक्ष श्रीमान् प्रो० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति का जुलूस शनिवार ता० १ सितम्बर को ३ बजे से प्रारम्भ होगा। सायंकाल ८ बजे से पंडाल में खुला अधि वेशन किया जायगा। आर्यसमाज के कई प्रसिद्ध विद्वान् और नेता पधार रहे हैं। जयपुर में यह अपने ढंग का अनूठा ही सम्मेलन होगा। आने वाले प्रतिनिधियों को जयपुर स्टेशन पर स्वयंसेवक तैयार मिलेंगे जो प्रतिनिधियों के निवास इत्यादि की व्यवस्था से उन्हें परिचित करायेंगे। स्वय सेवक यदि न मिल सकें तो प्रति-निधि अथवा दर्शक को सीधे आर्यसमाज मन्दिर किशनपोल बाजार पहुंच जाना चाहिए। वहाँ से उनके ठहरने की व्यवस्था की जा सकेगी।

रमेशचन्द्र शास्त्री
सभा-मन्त्री

'शहनए शरीयत' की शरारत

क्रमागत

नीचे लिखे स्थानो के आर्य समाजों ने शहनए शरीयत की शरारत के विरुद्ध प्रस्ताव पास करके सरकारी के माननीय मन्त्रियों तथा आर्यों की शिरो-मणि सभाओं को भेजे हैं—

भटपुरा (मुरादाबाद), भोज-पुर खेड़ा, नैनीताल, निचलौल (गोरखपुर), कोसीकलाँ (मथुरा), कमालगंज, जबलपुर, खड़की (पूना), आर्यनगर एटा, चांद पुर बिजनौर, उन्नाव, बोरना (अलीगढ़), बस्ती, नगीना, भदरसा (फैजाबाद), छावनी महू, सहसवान (बदायूं) हल-द्वानी।

सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन

मेरठ

पिछले दिनों आर्य जगत् को सूचित किया गया था कि सार्व देशिक आर्यमहासम्मेलन का सातवाँ अधिवेशन ७-८-९ अक्टूबर को होगा। स्वागत कारिणी की सुविधा को दृष्टि में रखते हुए इन तिथियों में परि वर्तन कर दिया गया है। अब यह सम्मेलन ९ से १२ अक्टूबर तक होगा। ६,७ और ८ अक्टूबर को अन्यान्य सम्मेलन होगे।

ज्ञानचन्द्र मन्त्री
सार्वदेशिक सभा

हर स्त्री माँ बन सकती है
एक बच्चे की कीमत सिर्फ
१५।=)

६ दिन में शर्तिया गर्भ की गारंटी बेऔलाद माता बहिनों के लिए स्वर्ण अवसर। १ बांझ (बन्ध्या) २—काकवन्ध्या यानी १-२ औलाद होकर बन्द होजाना, ३—मृतवत्सा यानी सन्तान हो होकर मर जाना या ४—कन्या ही कन्या होना। उपरोक्त सब दोष निवारण के लिए आज ही परीक्षा करें।

नपुंसकता
केवल एक दिन में दूर

चाहे जैसा सुस्त, नाकारा, कमजोर नपुंसक (नामर्द) हो गया हो सिर्फ एक दिन में बिना तकलीफ नपुंसकता (नामर्दी) दूर की गारण्टी। लाभ न होने पर कीमत वापस। आर्डर के साथ एडवांस और उत्तर के लिए जवाबी पत्र आना लाजिमी। मूल्य १२॥) डाक व्यय अलग।

पता—राजवैद्य डा० जौहरी
कृष्णा अस्पताल, हरदोई, (यू पी०)

आपकी दैनिक आवश्यकता
शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित—जगत् प्रसिद्ध

शुद्ध सुगंधित हवन-सामग्री
नमूना मुफ्त मंगाकर अवश्य परीक्षा करिये

पता—सुन्दरलाल रामसेवक शर्मा
शुद्ध सुगन्धित हवन सामग्री भण्डार
मु० पो० अमौली (फतेहपुर)

गुरुकुल वृन्दावन आयुर्वेदिक प्रयोगशाला लि०
के

अमूल्य उपहार
चन्द्रप्रभावटी

यह औषधि शरीर में नई शक्ति लाती है। खून की कमी, जिगर की कमजोरी, बवासीर, बहुमूत्र, प्रमेह, स्वप्नदोष, प्रदर आदि रोगों में [illegible] लाभ करती है। मूल्य १) तोला

शुद्ध हवन सामग्री

आर्य जनता के इस महान कष्ट को देखकर (कि पैसा खर्च करने पर भी उत्तम सामग्री नहीं प्राप्त होती) हमने विशुद्ध शास्त्रोक्त रीति से सामग्री का निर्माण किया है।

लागतमात्र मूल्य ।) सेर एक मन ५०)
थोक बिक्री के [illegible] खरीदने पर विशेष रियायत है।

ब्राह्मी-तेल

दिमाग को ताजा, केशों को मुलायम करता और गर्मी की उष्णता से बचाता है। दैनिक व्यवहार से मस्तिष्क संबंधी समस्त विकारों को दूर करता है। मूल्य १०) प्रति सेर

इनके अलावा अन्य समस्त औषधियाँ आसव, रस, भस्में बड़े परिमाण में बिक्री के लिये तय्यार रहते हैं। जिसके लिये हमारा बड़ा सूची पत्र मंगाइये।

गुरुकुल वृन्दावन आयुर्वेदिक प्रयोगशाला लि०
वृन्दावन।

आर्यमित्र
में
विज्ञापन देना
व्यापार की उन्नति करेगा

हकीम तुलसी प्रसाद अग्रवाल अलीगढ़ की
असली मीठी
बालजीवन घुट्टी
बच्चों की हर एक बीमारी को दूर करती
कमजोर बच्चों को ताकतवर बनाती
जरासी रोजाना चटादेने से बच्चे कभी बीमार नहीं होंगे दाँत आसानी से निकल आवेंगे।
— मू० शी० ।≈) दर्जन २॥।) डा० व्य० अ० —
सब जगह बिकती है नकली घुट्टियों से बचो।
नए सौदागर नमूना मुफ्त मंगावें।
पता. बाल जीवन कार्यालय अलीगढ़ यू० पी०

—:आवश्यकता:—

एक विद्वान् तथा परिश्रमी आर्य प्रचारक सन्यासी की जिन्हें समाज-सेवा की लगन हो। समाज मन्दिर में रहने के लिए शीघ्र आवश्यकता है। भोजन तथा वस्त्र का भार समाज के उपर होगा। नीचे लिखे पते पर पत्र व्यवहार करें।

मन्त्री, आर्यसमाज लावड़
(जिला मेरठ)

आवश्यकता

एक १५ वर्षीया सुन्दर, सुशील, गृहकार्य में पूर्ण दक्ष, वैदिक कुलोत्पन्न कन्या के लिए योग्य शिक्षित स्वस्थ और सम्पन्न वर की आवश्यकता है। पत्र व्यवहार का पता—

मन्त्री, आर्यसमाज
मधुबनी, (दरभंगा)

आवश्यकता है

श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आगरा की योग्य कन्याओं के लिए योग्य शिक्षित व्यवसाय से लगे हुए आय वरों की आवश्यकता है। जिनकी आयु २५ वर्ष से अधिक न हो। २=) विवाह फार्म का मूल्य भेजकर, फार्म मँगा कर, भर कर भेजिये।

मन्त्री
श्रीमद्दयानन्द अनाथालय,
आगरा।

बादाम रोगन
सौ प्रतिशत शुद्ध और प्रामाणिक
खाने और लगाने के लिये।

नमूना	।।।=)
छोटी शीशी	१।।।)
बड़ी शीशी	६।।।)

आज ही आर्डर दीजिये।
गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरद्वार)
सोल एजेन्सी, कुलदीपचन्द,
सत्यपाल सामा रावतपाड़ा आगरा,

आवश्यकता

विधवाश्रम मोतीकटरा आगरा की योग्य विधवाओं के लिए योग्य सम्पन्न वरों की आवश्यकता है। जिनकी आय १५०) मासिक से कम न हो। आर्यवरों को ही विशेषता दी जायगी। पत्र व्यवहार का पता—

मन्त्री विधवाश्रम
आगरा

कैसी भी दाद व खुजली के लिये
दादमार

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
सचालक-आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ
आगरा, ६ सितम्बर १९५१

गीता-गान

श्री हरिशङ्कर शर्मा

बुझ गई ज्ञान की ज्योति मोह तम छाया
हो कि कर्तव्य विमूढ पार्थ घबराया
क्या कुरुक्षेत्र में अब वह युद्ध ठनेगा
जिसमें भाई का भाई बधक बनेगा

क्या गुरुजन पर अब शस्त्र प्रहार करू मैं
क्या बन्धु बान्धवो के अब प्राण हरू मैं
क्यो विश्व-विनिन्दित बनूँ अधम कहलाऊँ
क्यो वश विनाशक बन कर पाप कमाऊँ

गाँडीव हाय घर ही में टकारेगा
क्या अर्जुन अब अपनो ही को मारेगा
हा, कुल ललनाएं मुझको बुरा कहेगी
किस भाँति रहेगी कैसे त्रास सहेगी

मर्यादा होगी नष्ट भ्रष्ट कर देंगी
इस पुण्य-भूमि को पापो से भर देंगी
फिर वर्ण सङ्करो की माया उमगेगी
गौरव गिरि से गिर जाति जघन्य बनेगी

हा, काँप रहा है गात लडूँ मैं कैसे
उखड़े जाते हैं पाँव, अडूँ मै कैसे
आवेश अश्व गिर गया चढूँ मैं कैसे
पीछे हटती है देह बढूँ मैं कैसे

यह देख शिथिलता चक्र सुदर्शनधारी
बोले, अर्जुन क्यो पतन हुआ यह भारी
जाने कैसे तुझ में यह मोह समाया
पड़ गई ज्ञान-रवि पर माया की छाया

हे सखे, भ्रान्त पथ त्याग तत्व पहचानो
नश्वर शरीर को शाश्वत सत्य न जानो
भौतिकता का ही नाश हुआ करता है
अज अमर आत्मा किसका कब मरता है

शैशव, यौवन, वार्धक्य सदा आते हैं
कब काल चक्र से जीव त्राण पाते हैं
है मृत्यु अवस्था भेद भूत काया का
समझो इसको वर खेल मोह-माया का

है 'मृत्यु' जीर्ण पट त्याग तुल्य परिवर्तन
है 'जन्म' उसी का पुनि नौतिक आवर्तन
फल आश का परिणाम सकाम प्रवर्त्तन
निष्काम कर्म ही बन्धन हेतु निवर्तन

संयोग-वियोग जगत् में जब होता है
ममता में फँस प्राणी हँसता रोता है
जगता है भौतिक भाव सत्य सोता है
यह जीव बीज बन्धन के खुद बोता है

जो काम कामना सहित किया जाता है
वह जन्म-मरण का कारण कहलाता है
निष्काम कर्म बन्धन का मूल नहीं है
इस दिव्य फूल में कोई शूल नहीं है

संसार चक्र यो ही चलता रहता है
यह जन्म मरण का स्रोत सदा बहता है
जो जन्मा है वह निश्चय देह तजेगा
कर्तव्य विमुख होकर तू अपयश लेगा

अपकीर्ति मृत्यु से भी बढ़कर होती है
तप तेज, प्रतिष्ठा गुण गौरव खोती है
हो सावधान अब अर्जुन अस्त्र उठाओ
गरजो तरजो प्रलयकर बाण चलाओ

विजय-श्री तेरे चारु चरण चूमेगी
भगवती भारती हो प्रसन्न वर देगी
तू धर्म कर्म ससिद्धि सु-साधक होगा
यह विश्व सदा तेरा आराधक होगा

निज धर्म त्याग पर धर्म न धारण कर तू
कर्तव्य विमुख हो अपने आप न मर तू
योगी को भला शोक सन्ताप कहाँ है
कायरता से बढ़कर कुछ पाप नहीं है

जिस भाँति धर्म ध्रुवता का साधन तन है
उस भाँति मोक्ष बन्धन का कारण मन है
तन को पवित्र मन को निर्लिप्त बनाना
है आत्म तत्व को समझ परम पद पाना

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०), एक प्रति- तीन आने
सम्पादक : हरिशङ्कर शर्म्मा
वर्ष—५३
अङ्क—३०

इन्द्रियाँ विषय-भोगों में रम जाती हैं
वृत्तियाँ स्वार्थ-साधन में जम जाती हैं
इनको अन्तर्मुख करो तत्व पहचानो
कर निज स्वरूप का बोध ब्रह्म को जानो

जो जीता तो तू राज-पाट पावेगा
यदि मृत्यु हुई तो स्वर्ग-धाम जावेगा
दोनों गतियाँ हैं तुझे परम सुखदाई
फिर क्यों कर्तव्य-विमूढ़ हो रहा भाई

सर्वदा सत्य का विजय हुआ करता है
बन कर असत्य अघ-रूप आप मरता है
सद्धर्म सुरक्षित हो संकट हरता है
महाज्ञ विवेकी भव-सागर तरता है

हे मित्र, कर्म में लगो शिथिलता त्यागो
तज भौतिक ममता-मोह वीरवर जागो
जो कर्म लोक हित-हेतु किया जाता है
कर्ता उसमें आसक्त न हो पाता है

निर्लिप्त, कर्म-बन्धन से दूर रहेगा
सुख-दुख सम्पत्ति-विपत्ति समान सहेगा
कर्ता है किन्तु अकर्ता मानो उसको
मम भक्ति-भावना-भाजन जानो उसको

जब प्राणि मात्र के लिए रात आती है
तब संयमियों की ज्योति जगमगाती है
जब लोक स्वार्थ के लिए सजग होता है
तब मुनि समाज सुख-निद्रा में सोता है

सुन योगिराज के वचन मोह-तम भागा
होगया विवेक-विहान परन्तप जागा
फिर मचा घोर घमसान जगी रणचण्डी
कौरव-दल हुआ विनष्ट मिटे पाखण्डी

भगवान् भक्त-वत्सल की अमृत वाणी
हो गई शिथिल अर्जुन को अति कल्याणी
है सत्य ज्ञान का तत्व सुभगवन् गीता
प्राणों से प्यारी जननी जन्म पुनीता

जिस ओर कृष्ण-से योगिराज का बल हो
जिस ओर वीर अर्जुन-सा भक्त अटल हो
उस ओर विजय श्री ऋद्धि-सिद्धि बरसेंगी
कल्याण कामना की ध्रुव धार बहेगी

हे करुणासिन्धु, दयालु, भक्त-भयहारी
हे सदय सच्चिदानन्द विवेक-विहारी
यह देश धीर, धर्मज्ञ, वीर निर्भय हो
भगवान् कृष्ण की सदा जगत् में जय हो

आवश्यकता

आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश को योग्य व उत्तम उपदेशकों की आवश्यकता है। जो उपदेशक महानुभाव आर्यसिद्धान्तों का उत्तम ज्ञान रखते हों और शिक्षित नवयुवकों को पश्चिमीय नवीन हानिकारक वादों का खण्डन करने की क्षमता रखते हों, वे अवश्य प्रार्थना-पत्र भेजें।

धर्मपाल विद्यालंकार, मन्त्री
आर्यप्रतिनिधि सभा, उ० प्र० लखनऊ

मौलवी महेशप्रसादजी का देहावसान !

आर्य-जगत् को यह सुनकर अत्यन्त शोक होगा कि मौलवी महेशप्रसादजी प्रोफेसर अरबी, फारसी, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का २९ अगस्त १९५१, बुधवार को १०॥ बजे रात को इलाहाबाद के निकट एक ग्राम रसूलाबाद में देहावसान हो गया। मौलवी साहब अरबी, फारसी के विद्वान और लाहौर अरबीकालेज के स्नातक थे। उन्होंने फारसी साहित्य की खोज के लिये ईरान की भी यात्रा की थी। वे उत्तर प्रदेशीय सभी अरबी पटलों के सदस्य थे और अरबी फारसी के विद्वानों में इनका विशेष मान था। वे हिन्दी के बड़े अच्छे लेखक थे। उन्होंने अपनी ईरान-यात्रा भी हिन्दी में ही लिखी थी। ऋषि दयानन्द के परम भक्त थे और उनकी जीवनी तथा सत्यार्थप्रकाश के १३ वें और १४ वें समुल्लास के सम्बन्ध में इन्होंने बहुत खोज की थी। आर्यसमाज के जगत् में इनसे प्रायः सभी परिचित थे, और वे अच्छे वक्ता समझे जाते थे। मौलवी साहब का जीवन अत्यन्त सरल और सत्यप्रिय था। वे आर्यसमाज के ठोस काम करने वालों में थे। मरते समय उनकी आयु लगभग ६० वर्ष थी। उनकी स्त्री का बहुत दिन हुए देहान्त हो चुका था। उनकी चार लड़कियां हैं। दो का विवाह हो चुका है और दो विवाह के योग्य हैं। मैं पिछले मास उनसे मिला था। उस समय वह अपनी पुस्तकों को निकालने के बड़े इच्छुक थे। उनकी पुस्तकों का मूल्य २०००) के लगभग है। इसमें २५०) के लगभग मूल्य की वह दुष्प्राप्य पुस्तकें हैं जिनका सत्यार्थ-प्रकाश से सीधा सम्बन्ध है।

—गंगाप्रसाद उपाध्याय

[अपने विषय के ऐसे दिग्गज विद्वान् के अचानक उठ जाने से हमें घोर दुःख है। शोकाकुल परिवार के साथ हम आर्यजगत् की ओर से सहानुभूति प्रकट करते हुए परमात्मा से प्रार्थी हैं कि वह दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे। पण्डित महेशप्रसादजी से हमारा व्यक्तिगत सम्बन्ध था। उस समय से जब वे सन् १९१६ ई० में आगरा के 'आर्यमुसाफिर विद्यालय' के विद्यार्थी थे। उस समय हम तथा पंडितजी के अन्य मित्र इन्हें 'साधु' कहा करते थे। इसी आर्यमुसाफिर विद्यालय आगरा में तब अन्तर्राष्ट्रिय ख्याति-प्राप्त महापण्डित श्री राहुल सांकृत्यायन भी पढ़ते थे। उस समय राहुलजी का सम्बन्ध आर्यसमाज से था, और उनका नाम था श्री प० केदारनाथ पाण्डेय। —सम्पादक]

'सरस–सूक्ति'

वैद्य राजबहादुर आर्य 'सरस'

मान अभिमानियों के मारदूँ मैं वीरता से
धीरता से ज्ञान-गुण ईश्वर के गाऊँ मैं
द्वेष-भाव द्रोहियों को देश से निकाल कर
भारत में प्रेम-प्रीति सरिता बहाऊँ मैं
करदूँ मैं सम्पदा स्वधर्म हित सारी दान
दीन दुखियों को सदा उर से लगाऊँ मैं
'सरस' शहीद होके अन्त में स्वधर्म हेत–
जननी की गोद को पवित्र कर जाऊँ मैं
कूकर बिलाये पय मारग पिलाये मृग–
नेवला, सुलाये प्यार करके प्रभूत हैं
सिंह व्याघ्र पाले किये प्राण के न लाले तीखे–
नख दांत वाले बल जिनमें अकूत है
विषय-विलास में न आई याद जात पांत
कायर-कपूत बना प्रेमिका का दूत है
किन्तु देश सेवी अंग मानव-समाज का जो
'सरस' अबोध उसे मानता अछूत है

'अमित्रान् जयन्तु'

आर्य ॐ मित्र

आगरा, भाद्रपद शुक्ल ४ संवत् २००८ वि०, गुरुवार. ता० ६ सितम्बर १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५१

अमित्र सेनां मघवन्नस्माञ छत्रुयतीमभि
युवं तानिन्द्र वृत्रहन्नग्निश्च दहतं प्रति।

अथ ३।१।३

वीर और सेनापति मिलकर युद्ध-क्षेत्र में अड़ जाएँ
ले अमोघ आयुध वैरी के पीछे निर्भय पड़ जाएँ
हो घनघोर लड़ाई जिससे अरि के पैर उखड़ जाएँ
विजयी हों हम प्रबल शत्रु-दल के ऊपर पर झड़ जाएँ

हमारी डी० ए० वी०-संस्थाएँ

डी० ए० वी० शिक्षणालयों को हम दयानन्द-शिक्षणालय कहना ही अधिक उपयुक्त समझते हैं। 'डी० ए० वी० स्कूलों और कालिजों' के बदले दयानन्द-विद्यालय और महाविद्यालय का ही सर्वथा और सर्वदा प्रचार होना चाहिए। 'डी० ए० वी०' शब्द अब त्याज्य और बहिष्कार्य है। किसी समय इस शब्द का महत्व रहा हो, परन्तु अब इसकी तनिक भी आवश्यकता नहीं है। कुछ सप्ताह-पूर्व गुरुकुलों के सम्बन्ध में इन स्तम्भों में विचार व्यक्त किये गये थे, आज हम दयानन्द शिक्षण-संस्थाओं के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहते हैं।

देश में सैकड़ों ऐसी शिक्षा-संस्थाएँ हैं, जो दयानन्द के नाम पर वर्षों से चल रही हैं। इन संस्थाओं का उद्देश्य सरकारी पाठ-विधि के अनुसार शिक्षा देने-दिलाने के अतिरिक्त और कुछ नहीं जान पड़ता। शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों ही पाठ्यपुस्तकों और परीक्षाओं के पीछे पड़े रहते हैं। कितनी ही दयानन्द संस्थाएँ तो विधान की बदौलत ऐसे संचालकों के हाथों में चली गई हैं, जिनका भूलकर भी कभी आर्यसमाज से सम्पर्क नहीं रहा। वैदिक सिद्धान्तों की शिक्षा की ओर प्रथम तो इन संस्थाओं में ध्यान दिया ही नहीं जाता, दिया भी जाता है तो नाम मात्र को अथवा रस्म अदा करने के लिए। देश में सैकड़ों दयानन्द-शिक्षण-संस्थाओं के होते हुए भी आर्यसमाज में तरुण रक्त का प्रवेश नहीं हो रहा। आर्यकुमार सभाओं और आर्य सम्मेलनों में भी कुछ प्रगति नहीं दिखाई देती। डाक्टर सूर्यदेव शर्मा एम० ए० के उद्योग से परीक्षाओं का काम तो अवश्य चल रहा है। दयानन्द शिक्षण-संस्थाओं से आर्यसमाज को इतनी अधिक संख्या में नवयुवक कार्यकर्ता मिलने चाहिए थे, कि सारे देश में प्रचार की धूम मच जाती। परन्तु ऐसा नहीं हुआ और न शीघ्र होने की आशा है। हमारा अनुमान है कि दयानन्द शिक्षण-संस्थाओं का वातावरण दयानन्द की शिक्षा-दीक्षा से परिपूर्ण नहीं होता, परिपूर्ण क्या अछूता-सा ही समझना चाहिए। इन संस्थाओं के अधिकांश आचार्य और मुख्याध्यापक जितना विश्वविद्यालयों आदि के आन्दोलन चक्र में भाग लेते हैं, उससे चौथाई भी यदि आर्यसमाज के प्रचार की ओर प्रयत्नशील रहें, तो बड़ा काम हो सकता है। प्रथम तो इन संस्थाओं के आचार्य और अध्यापक आर्य-समाजी हैं ही नहीं, हैं भी तो नाम मात्र को। बहुत थोड़े दयानन्द-शिक्षणालय हैं, जहाँ के आचार्य और मुख्याध्यापक वस्तुतः कर्तव्य-परायण या कर्मवीर आर्य कहे जा सकते हैं। इन्हीं संस्थाओं में आर्यसमाज और वैदिक धर्म के लिए उत्साह भी दिखाई देता है। कोई पूछे तो पूछ सकता है कि आखिर इन दयानन्द-शिक्षण-संस्थाओं से दयानन्द द्वारा संस्थापित आर्यसमाज को क्या लाभ पहुंचा? हम सब संस्थाओं को एक ही लाठी से नहीं हांक रहे, जैसा कि ऊपर कहा गया है, कुछ संस्थाएं ऐसी भी हैं जो आर्यसमाज के लिए उपयोगी भी सिद्ध हो रही हैं, परन्तु इतने से क्या? हमारी अभिलाषा तो उसी समय पूर्ण हो सकती है, जब सब दयानन्द-शिक्षण-संस्थाओं में विशुद्ध वैदिक वातावरण पैदा किया जाय। धार्मिक शिक्षा पर भी उतना ही बल हो, जितना कि परीक्षा की पोथियों पर दिया जाता है। यह उसी समय हो सकता है, जब इन शिक्षणालयों के अधिकारी, आचार्य, अध्यापक और प्रबन्ध-समिति के सदस्य गण समाज के रंग में रंगे हों। उनके हृदय वैदिक भावनाओं से भरे हों और वे शिक्षार्थी नवयुवकों के जीवनों को भी धार्मिकता या नैतिकता के साँचे में ढालने का प्रयत्न करें। जिन संस्थाओं के साथ दयानन्द का नाम नत्थी हो, वे दयानन्द के मिशन की पूर्ति के लिए नाममात्र को ही कुछ करें, यह बड़े दुःख की बात है।

दयानन्द-शिक्षण-संस्थाओं के विधाताओं, आचार्यों और अध्यापकों को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि विश्वविद्यालयों की लम्बी-चौड़ी उपाधियों का अब विशेष महत्व नहीं रहा और न तत्वतः इनमें कोई खास आकर्षण है। हम समझते हैं, छोटी मोटी पोथियाँ रट रटाकर डिगरियाँ हासिल कर लेना मात्र शिक्षा का आदर्श नहीं है। ऐसे लोग उपाधिधारी, साक्षर, पठित और विद्वान् तो हो सकते हैं, परन्तु सुशिक्षित और सुसंस्कृत नहीं। शिक्षित और संस्कृत होने के लिए शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति की आवश्यकता है। यदि दयानन्द शिक्षण-संस्थाओं द्वारा इस प्रकार की त्रिविध उन्नति या प्रगति नहीं होती तो उनमें और साधारण शिक्षणालयों में कोई अन्तर नहीं है। फिर तो ये भी साधारण पढ़े-लिखे व्यक्ति पैदा करने वाली वैसी ही साधारण संस्थाएँ हैं, जैसी कि अन्य। हमारी शिक्षा-संस्थाएं विशेषता का दावा करती हैं, अतः उनमें धर्म, सदाचार, नैतिकता, मानवता, सभ्यता, संस्कृति आदि को सर्वोपरि स्थान मिलना चाहिए। तभी इन संस्थाओं के साथ 'दयानन्द' शब्द की सार्थकता है, और तभी वे आर्यसमाज की सच्ची सहायिका सिद्ध हो सकती हैं। दयानन्द के नामसे संयुक्त संस्थाएं दयानन्द के आदेश उपदेश का सम्यक् परिपालन न करें, इससे बढ़कर और अनर्थ क्या हो सकता है।

हिन्दी साहित्य-सम्मेलन

उधर हिन्दी राष्ट्र-भाषा हुई और इधर अखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का सुन्दर संघटन दलबन्दी के दल-दल में फँस गया। गतवर्ष सम्मेलन-परीक्षाओं की जो मिट्टी पलीद हुई, उसे जानने वाले अच्छी तरह जानते हैं। जो विशाल संस्था एकदिन एक सूत्रता में आबद्ध थी, वही आज 'मुण्ड-मुण्डे मतिर्भिन्ना' की कुत्सित केन्द्र बनी हुई है। कहीं अक्खड़ता के अभियोग लग रहे हैं, और कहीं पार्टी-बन्दी की विषैली बेल से फूट के फल झड़ रहे हैं। यहां तक कि सम्मेलन के संस्थापक और प्राण राजर्षि टंडन तक उससे खिन्न होकर भिन्न दिखाई देते हैं। अगर सम्मेलन की यही दशा रही तो भविष्य में कठिनता से ही वह कुछ कर सकेगा। हमें इस सार्व-जनिक साहित्यिक संस्था की ऐसी दयनीय दुर्दशा देखकर बड़ा दुःख होता है। जो शक्तियाँ सुन्दर साहित्य-सृजन और राष्ट्र-भाषा प्रचार में लगनी चाहिए थीं, वे अपने-अपने पक्षों का पोषण और पार्टियों की पुष्टि में लगी हुई हैं। हमारी बड़ी अभिलाषा है कि यह महान् संस्था हिन्दी के इस अनुकूल युग में सब प्रकार सम्पुष्ट और परिपुष्ट होकर उत्तरोत्तर उन्नति की ओर अग्रसर हो। हमने एक बार और भी लिखा था कि एक निष्पक्ष पंचायत द्वारा सम्मेलन की सारी सड़ायँद दूर करदी जाय, जिससे उसका संघटन-शरीर स्वस्थ तथा सशक्त बन सके। हमारी राय से इस पंचायत में यदि माननीय क० मा० मुन्शी,

माननीय सम्पूर्णानन्दजी, श्री प० बनारसीदास चतुर्वेदी या ऐसे ही कोई अन्य तटस्थ महानुभाव रहे तो अवश्य ही अभीष्ट सफलता प्राप्त हो सकती है। क्या आशा की जाय कि सम्मेलन के संचालक महोदय हमारी इस विनीत विनती पर ध्यान देंगे।

राजनैतिक दल-दल

स्वराज्य होने पर समझा गया था कि देश में सुख-शान्ति-पूर्ण वातावरण के दिव्य दर्शन होंगे, परन्तु बात उलटी ही हुई। भ्रष्टाचार, अनैतिकता और अधार्मिकता के आधिपत्य ने सारी सदभिलाषा पर पानी फेर दिया! स्वराज्य की शासन-सत्ता सुख-शान्ति स्थापित करने में एकदम असमर्थ रही, दलबन्दियों का दल-दल दिखाई देने लगा, नयी नयी पार्टियाँ पवित्रता की प्रतिज्ञा कर रही हैं, लम्बे-चौड़े दावे किये जा रहे हैं, सुख शान्तिपूर्ण परिस्थिति की धारा बहाने की योजनाएँ जनता के सामने रखी जा रही हैं, परन्तु जिस भद्र भावना और पुण्य प्रवृत्ति से नैतिकता-प्रसार और मानवता-सचार युक्त सुख-शान्ति सुधा की वर्षा हो सकती है, उसकी ओर कोई ध्यान तक नहीं देता।

जिसे प्राण प्यारा सदाचार होगा
वही वीर ससार से पार होगा
नहीं नाम का धर्मधारी तरेगा
भला काठका केहरी क्या करेगा

आज नाम के 'धर्मधारी' और 'काठ के केहरी' भ्रष्टाचार की सबल सेना पर आक्रमण करना चाहते हैं, परन्तु कोरी विज्ञप्तियों और थोथे मेनीफेस्टोओं (प्रतिज्ञापत्रों) से कुछ भी नहीं हो सकता। चरित्र-निर्माण के लिए आत्म-चिंतन और दृढ़ व्रत की आवश्यकता है। कोई दल छोटा हो अथवा बड़ा, यदि उसमें चारित्र्य बल नहीं है, तो स्वार्थ-सिद्धि म वह भले ही किसी अंश तक सफल हो जाय, परन्तु देशका उससे कुछ भी हित नहीं हो सकता। येन केन प्रकारेण चुनाव-सग्राममें सफली भूत हो जाना सत्य और अहिंसा की सिद्धि नहीं है। सफलता के लिए हमें सचमुच सत्य-साधक और अहिंसा-प्रेमी बनना पड़ेगा, तभी देश के इस विषाक्त वायुमण्डल में सुख-शान्ति की अमृत-वर्षा की जा सकेगी।

यज्ञ या व्यवसाय

कुछ दिनों से यज्ञों की बड़ी धूम है, कई व्यक्ति तो यज्ञों के नाम पर पर्याप्त धन एकत्र करके, कुछ का यज्ञ करा देते हैं और शेष द्रव्य अपने पास रखते हैं। हम यज्ञ के विरोधी नहीं, परन्तु वे सुसंगठित-संस्थाओं के तत्वावधान में, कर्मिष्ठ याज्ञिकों द्वारा विधिवत् सम्पन्न होने चाहिएँ। यज्ञ का करना खेल नहीं है, जिसे हर कोई कर सके। आज-कल यज्ञों की चर्चा इसलिए अधिक सुनाई देने लगी है, कि भारत की धर्म-भीरु जनता यज्ञों की इतनी श्रद्धालु है कि वह उसके नाम पर ऐसे संकट-काल में भी अपना पेट काट कर कुछ न कुछ दे देती है, जनता के इस मनोविज्ञान को समझने वाले चतुर व्यवसायी यज्ञयोजक स्वार्थसिद्धि के लिये इधर-उधर गोलके खनकाते फिरते हैं। यज्ञ के नाम पर ऐसी व्यावसायिक प्रवृत्ति निरन्तर निन्दनीय है। ऐसे लोगो से जनता को पूर्ण रूप से सतर्क रहना चाहिए और अपना दान उन्हीं सुसंगठित संस्थाओ को देना चाहिए जो उत्तरदायित्वपूर्ण और अधिकारिणी हैं। एक बात और भी है, वतमान संकट-काल में जब अन्न और वस्त्र तक के लाले पड़े हुए हैं, कितने ही लोगो को भरपेट भोजन तक नहीं मिलता, यज्ञों की रचना बहुत ही सोच-समझ कर बड़ी दूरदर्शिता के साथ करनी चाहिए। यज्ञ व्यवसाय नहीं जीवन और जगत् में क्रान्ति करने वाली पवित्र अग्नि है। उसका उपयोग आध्यात्मिक अधिकारी ही कर सकते हैं, वेद-विद्या-विहीन अनाड़ी और अज्ञ नहीं।

'भरत-मिलाप' साम्प्रदायिकता नहीं है!

जो हिन्दू लोग ईसाई-मुसलमान बन गए उनको पुनः हिन्दू धर्म में प्रविष्ट कराने के लिए शुद्धि सभाओं की स्थापना हुई। स्वर्गीय श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी और स्व० श्री महात्मा हंसराजजी के तत्वावधान में शुद्धि-आन्दोलन की अच्छी प्रगति हुई। बहुत-से लोगों ने हिन्दू-धर्म में प्रवेश भी किया, परन्तु कालक्रम से ये शुद्धि-सभाएँ स्वय शुद्ध होने योग्य बन गईं अतएव इनकी कार्य-शक्ति भी क्षीण हो गयी। दक्षिणी भारत की ओर देखिये, लाखों लोग ईसाई मत में प्रविष्ट हो चुके हैं। मन्दिरो के स्थानो में गिरजे बन गये हैं, स्थान-स्थान पर प्रभु ईसा मसीह का गुणगान सुनाई पड़ रहा है। कहा जाता है नेपाल में भी ईसाइयत बड़ी तीव्रता से प्रवेश कर रही है, और वहाँ भी हिन्दू धर्म की ध्रुवता में घुन लगने लगा है। काश्मीर में मुसलमानो की संख्या बढ़ ही चुकी है। हमारे देश में ईसाई-मुसलमान विदेशो से नहीं आए, यहीं के हिन्दू लोग ही अपना धर्म-त्याग कर उन मतों के अनुयायी बन गये, इसका भयकर परिणाम पाकिस्तान हुआ। ईसाई और मुसलमान अपना काम बड़ी शान्ति से करते हैं, परन्तु यदि आर्यसमाजी चार व्यक्तियो को भी शुद्ध कर लेते हैं तो चारों जगह उसकी विज्ञप्ति प्रकाशित कराते हैं। हिन्दू महासभा, राष्ट्रिय स्वयम् सेवक संघ, रामराज्य परिषद आदि हिन्दू-हित का दावा करने वाली सस्थाएँ आज चुनावों के लिये 'घनघोर' तयारियाँ कर रही हैं, परन्तु हिन्दुओं के ह्रास का उन्हें कुछ भी ध्यान नहीं है। इस पर वे एक क्षण के लिये भी विचार नही करती। आर्य समाज का भी यही हाल है, यहाँ ढोल तो खूब पीटा जाता है, परन्तु काम नाम मात्र को ही होता है। 'भरत-मिलाप' या शुद्धि का काम किसी को चिढ़ाने या अप्रसन्न करने के लिये नहीं है। यदि कोई भूला भटका भाई अपने पुर-परिवार में आकर आनन्दित होता है तो इसमें किसी को क्यो नाराजगी होनी चाहिए। बुरा और निन्दनीय काम तो वह है, जिसमें कोई व्यक्ति बहका-फुसला कर उसके प्रिय परिजनों या पुर-परिवार से पृथक् कर विभिन्न दिशा में ले जाया जाता है। किसी बहके-बिछुड़े व्यक्ति के अपने घर आने पर किसी को अप्रसन्नता हो तो इसके लिये क्या कहा जाय और यह काम साम्प्रदायिकता क्यों है?

आर्यसमाज का इतिहास

आर्ष ग्रन्थों और आर्य विद्वानों की कुछ पुस्तकों को छोड़ कर आर्यसमाज में साहित्य कहे जाने योग्य बहुत ही कम सामग्री है। कुछ दिन पूर्व भजन-पुस्तकों की भरमार थी, अब वह भी बहुत कम होगई। आर्यसमाज की स्थापना को अभी पूरे सौ वर्ष भी नहीं हुए, इतने अल्प काल में ही बहुत-से पुराने और प्रसिद्ध स्वर्गीय कार्यकर्त्ता तथा नेता विस्मृति के गहरे गर्त में गिर गए। नयी पीढ़ी से पुराने आर्यों के सम्बन्ध में पूछिये तो वे उनके बारे में कुछ नहीं जानते। जानें भी कैसे? आर्यसमाज की ओर से उनको जानकारी कराने के लिये उद्योग भी क्या किया जारहा है? न किसी की जीवनी है, न कोई चर्चा! हमारी बड़ी-बड़ी सभाएँ या तो वेदों के महाभाष्य ही कराती हैं, या कुछ नही करतीं। स्वर्गीय नेताओं और कार्यकर्त्ताओं की स्मृति-रक्षा का उन्हें ध्यान तक नहीं आता। ये सभाएँ चाहें तो एक-एक आर्य सिद्धान्त पर विद्वानों द्वारा छोटे-छोटे अनेक ग्रथ लिखा सकती हैं। सत्यार्थप्रकाश के प्रत्येक समुल्लास की व्याख्या में कितनी ही लघु पुस्तिकाएं प्रकाशित कराई जा सकती हैं। हम पूछते हैं कि आर्यसमाज का बृहद्इतिहास लिखाने के लिए क्या किया जा रहा है। ऐसे महत्वपूर्ण विषय की उपेक्षा और अवहेलना क्यों है? यदि शिरोमणि सभाएं चाहें तो यह परमावश्यक कार्य श्री प० इन्द्र विद्यावाचस्पति जैसे सिद्ध और प्रसिद्ध विद्वान् लेखक द्वारा बड़ी आसानी से कराया जा सकता है। यदि यह कार्य शीघ्र ही न कराया गया तो कुछ काल पश्चात् आर्यसमाज को पछताना पड़ेगा और भावी पीढ़ी इस कार्य के अभाव में आज के नेताओं को दोष दिये बिना न रहेगी।

महिला-मण्डल

आर्यसमाज और महिलाएं

श्रीमती शकुन्तलादेवी प्रधाना, आर्य स्त्रीसमाज, मेरठ सदर

ढोर गवार शूद्र पशु नारी,
ये सब ताड़न के अधिकारी।

यह थी दशा आर्यजाति की महिलाओं की, आर्यसमाज के प्रवर्त्तक ऋषि दयानन्द के प्रादुर्भाव से पूर्व। समाज में था पुरुष का आधिपत्य मध्य उन्नीसवीं शताब्दी में। स्त्री जाति को पैरों की धूल समझा जाता था। स्त्रियों में पठन-पाठन का होना तो एक ओर, उनको घर से बाहर आकर स्वतन्त्र वायुमण्डल में साँस लेने की भी आज्ञा न थी। और था साथ में बाल-विवाह और वृद्ध-विवाह का प्रचलन। परिणाम में स्त्री जाति में विधवाओं की बहुलता थी और थे उससे पैदा होने वाले दुष्परिणाम। विधवा-विवाह का प्रचलन न होने के कारण आर्यजाति की ललनायें विधर्मियों की शरण में जा रही थीं और समाज में छिपा हुआ व्यभिचार फैला हुआ था। माताओं की बुरी हालत होने से जाति के बच्चे भी निर्बल और उत्साहहीन होते थे, जिसका परिणाम आर्य जाति को दासता के रूप में देखना पड़ रहा था।

भगवान् दयानन्द ने आकर ललकारा कि आर्य जाति तू किस अन्धकार में पड़ी है। स्त्री जाति जो वेद के शब्दों में "मातृमान पितृमान आचार्यमान पुरुषो वेद।" जो महिलाएं समाज में अपना प्रथम स्थान रखती थीं उनकी दशा अब कैसी हीन हो रही है। जिस मातृशक्ति के सम्बन्ध में मनु ने कहा था कि जहाँ पर नारियों का सम्मान होता है, वहाँ देवताओं का वास होता है, उनका निरादर करके जाति कभी सुख की नींद नहीं सो पाती। जिस जाति में गार्गी और मैत्री जैसी विदुषी नारी होती थीं, उसकी अब कैसी दशा है? भगवान् दयानन्द ने कहा कि अब समय है कि अपने कर्तव्य पर ध्यान दो और नारी जाति का उत्थान करो। परमात्मा दया करेंगे, जाति का भाग्य उदय होगा और वह पुनः संसार में अपना स्थान प्राप्त करेगी। अपने आचार्य की शिक्षा से प्रभावित होकर आर्यसमाज ने बाल-विवाह और वृद्ध-विवाह के विरोध में अपनी आवाज उठाई और संकटों और विरोध की परवा न करके भी स्त्री शिक्षा की ओर पग बढ़ाया। प्रत्येक समाज ने समाज-मन्दिरों में कन्या पाठशालाओं की स्थापना की।

समय ने पल्टा खाया, ऋषि का तप फल लाया। आर्यसमाज के विरोधी भी कन्याओं की शिक्षा की ओर अग्रसर हुए। विधवा-विवाह का भी प्रचलन शनैः शनैः होने लगा, अल्प आयु के स्थान में विवाह बड़ी अवस्था में किया जाने लगा। स्त्री जाति ने अपने पूर्व गौरव को पाया, समाज में इसका आदर होने लगा और अब तो भारत की देवियाँ समाज के प्रत्येक क्षेत्र में दृष्टिगोचर हो रही हैं।

राजनैतिक आन्दोलन में उन्होंने आगे बढ़ कर अपने भाइयों के कन्धों से कन्धा भिड़ा कर कार्य किया। फलतः देश के स्वतन्त्र होने पर राष्ट्र के पास आदर के जो उच्च स्थान थे वे उनको दिये गये। उनको राज्यों का राज्यपाल देश के मन्त्री-मण्डल का सदस्य और विदेशों में भारत का प्रतिनिधि या दूत बनाया गया।

यह सब कुछ तो हुआ परन्तु प्रतिक्रिया में जो कुछ न होना चाहिये था वह भी हुआ। अपना उच्च आसन छोड़ कर पुरुषों से राज्य की नौकरियों में आज देवियाँ स्पर्द्धा करती हैं और यह शिक्षा का चलन जिससे ऋषि दयानन्द ने हमें बचाया था उस ओर पुनः जाति अग्रसर होने लगी है।

पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंग कर देवियों की जो अवस्था हो रही है, उसका वर्णन करना कठिन ही नहीं असम्भव है। अभी समय है भगवान दयानन्द के बताये पथ पर चल कर जाति को बचाया जा सकता है।

हमको क्या करना था क्या किया है और क्या करना शेष है। जो बुराइयाँ हम में हैं या आ गई हैं, उनको किस प्रकार दूर किया जावे इन सब पर विचार करने के लिये मेरठ नगर में होने वाले सप्तम आर्य महासम्मेलन के अवसर पर जो ६ अक्तूबर से १२ अक्तूबर तक होगा, आर्य महिलाओं का एक सम्मेलन देश के प्रमुख कार्यकर्त्ताओं के सभापतित्व में होने जा रहा है। अपनी बहनों से मेरी प्रार्थना है कि वह इस अवसर से लाभ उठाकर अधिक से अधिक संख्या में महिला-सम्मेलन में भाग लेकर जाति के सुधारने के लिये एक कार्यक्रम बनाने में योग दें। सम्मेलन के अवसर में ठहरने की उचित व्यवस्था की जा रही है। महिलाओं के निवास स्थान का प्रबन्ध महिलाओं के ही अधीन होगा।

—

सिंहावलोकन

ऐतिहासिक अतथ्य

श्री नेहपालसिंह, आई-ई-एस, रिटायर्ड

काश्मीर की स्कूली किताबों में श्री सूर्यदेवजी ने आर्यों के भारत में कुछ ही हजार बरसों से आया हुआ होने का उल्लेख देखकर उसके विषय में 'मित्र' में लिखा है। परन्तु उन्हीं पुस्तकों की यह विशेषता नहीं है, पुरातत्व इतिहास, राजनीति, संस्कृति की प्रायः सभी पुस्तकों में इसी प्रकार का मत दिया जाता रहा है। इस क्रम में अब भी कोई परिवर्तन नहीं हो रहा है। किसी संदेह—शायद के साथ भी यह नहीं मिलेगा कि कुछ विद्वान् ऐसा मानते हैं। ध्रुव सत्य के ही रूप में यह प्रायः माना हुआ मिलेगा। यह उदारता भी नहीं दिखायी जायगी कि यद्यपि पश्चिमी लोगों का यह मत है, पर अपने पुराने ग्रन्थ बताते हैं कि आर्य अनादि काल से भारत में या बड़े भारत में ही रहते थे। इस प्रकार दूसरे मत का भी जिक्र हो जाता तो युवकों को थोड़ी उत्सुकता तो हो जाती कि आगे आपको निश्चय करना चाहिये कि सत्य क्या है। परन्तु सन्देह को स्थान ही नहीं छोड़ा।

इस अतथ्य ने इतिहास को ही विकृत नहीं किया है, वरन् देश में कुछ विषैली भावनाएं और प्रवृत्तियाँ भी जमा दी हैं। अछूत कहे जाने वाले वर्ग ने सवर्णों को आक्रमण करके अपने राज्यों को छीनने वाला और उन्हें दासता के पाशों में बाँधने वाला मान लिया है और दक्षिण में द्रविड़ और आर्य का भेद जो भयंकर रूप लेता जा रहा है, इसी भीत पर खड़ा हुआ है। आदिवासी भी इसी प्रकार प्रभावित हुए हैं। अंग्रेजों को भी अपने विदेशी आक्रमणकारी के लांछन को इसी कहानी की लीपन से पोत देने का बहाना मिल गया था। कुछ याद है कि जिन्ना ने भी इस तर्क का अपने स्वार्थ में उपयोग किया था। सो कश्मीर की पुस्तकों में भी यह स्थान पावे तो आश्चर्य क्या है। मेरा अनुमान है हमारे यहाँ के स्कूलों की पुस्तकों में भी इसी प्रकार इतिहास शुरू हुआ है। इसमें अंग्रेजों का दोष भी बहुत नहीं। विजेता जैसे भी बनता है देश की एकता की भावना बिगाड़ने की युक्ति, जाने-अनजाने, ढूंढ़ता है, परन्तु खेद यह है कि अपने इतिहासकारों और लेखकों ने भी इस भूल को आँख मीचकर दोहराया है। इतना भी बताने की हिम्मत नहीं दिखाई कि पश्चिमी लोगों का ऐसा मत है यद्यपि अपने साहित्य में कोई प्रसंग इसके आधार के लिये नहीं आया मिलता है।

अब विद्वानों को चाहिये, तुरन्त इस भूल को शुद्ध करें या पक्के तर्क प्रमाण इसकी पुष्टि के लिये उपस्थित करें। यह भारतीय राष्ट्र की नींव में एक दरार है।

संयुक्त राष्ट्रसंघ ने कुछ समय

अध्यात्म धारा

'अभय' बनो

प्रो० एम० एल० शाण्डिल्य, एम० ए०

'जो बोले सो 'अभय', ऋषि दयानन्द की जय' को जलसों, यज्ञों, सभा-सुसाइटियों, उत्सवों और नगर-कीर्तनों में आर्यवीर ऊंचे-ऊंचे स्वर से उच्चारण करके जनता को 'अभय' होने की चेतावनी देते रहते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं की ऋषि दयानन्द के उपदेशों पर पूर्णरूप से चलने वाले व्यक्ति अवश्य ही इस जीवन में ही 'अभय' हो सकते हैं। गीता में शुभ सकल्पों की शृंखला में 'अभय' सबसे पहला कड़ा बताई गई है। शुभ संकल्पों को साथ लेकर ही मनुष्य पैदा होता है। तभी तो एक शिशु बहुत दिनों तक सब को ही अभयता का पाठ पढ़ाता रहता है। न वह सर्प जैसे विषैले जीवों से डरता है और न शेर जैसे हिंसक पशु को देखकर ही घबराता है। वह सब को ही अपना हितैषी समझता है, तभी तो सबको देखकर मुसकरा देता है। अभयता तो शिशु के रोम-रोम से टपकती है।

शुभ सकल्पों की दैवी सम्पत्ति ही हमें 'अभय' कर सकती है, और अशुभ संकल्पों की आसुरी सम्पत्ति हमारा पतन करती है। अच्छी शिक्षा, सत्संग और पुरुषार्थ शनैः शनैः हमें अभय कर सकते हैं। जब तक सर्वभूतात्मैक्य-साम्य-भाव युक्त जीवन का निर्माण नहीं किया जावेगा तबतक 'अभय' होना एक स्वप्न मात्र समझना चाहिये।

'अभय' का अर्थ निडर होना है। एक आर्यवीर अपने कर्तव्य पालन करने में इहलौकिक अथवा पारलौकिक, दृष्ट अथवा अदृष्ट किसी प्रकार के भय से भी विचलित नहीं होता। मृत्यु होजाने तक की भी आशंका हो तो भी वह नहीं डरता, क्योंकि वह भली-भाँति जान चुका है कि शरीर तो नाशवान ही है और आत्मा अजर-अमर है। इसलिये वास्तव में डरका कोई कारण नहीं है। लोकहित के कार्यों में और आत्मिक उन्नति के उद्योग में किसी से भी न डरकर आगे बढ़ना ही तो ऋषि दयानन्द ने हमें बताया है। निर्भय होना दैवी प्रकृति के पुरुषों का सब से पहला लक्षण है।

पर यह नहीं भूलना चाहिये कि राक्षसी और आसुरी आचरण करने में और दूसरों पर अत्याचार करने में निर्भयता से कार्य करना अथवा दुष्ट दुराचारियों को कुकर्म करने में निर्भय कर देना-'अभय' का दुरुपयोग ही माना जायगा। दैवी प्रकृति के वर्द्धमान पुरुषों को 'अभय' के विरुद्ध आचरण करना शोभा नहीं देता। अनर्थ करने में किसी का डर न मानकर उद्दण्ड हो जाना या दूसरों को भी अनर्थ करने में स्वच्छन्द कर देना सर्वथा अनुचित है। दूसरी ओर निर्भय होने से यह नहीं समझना चाहिये कि निडर होने के कारण घमंड में सब की अवहेलना और अवज्ञा करके लड़ाई मोल लीजावे या समुचित कारणों का विचार न करके अपने को खतरे में डाला जावे।

किसी न किसी प्रकार के भय से प्रत्येक मनुष्य पीड़ित दिखाई देता है। पूर्णरूपेण 'अभय' अथवा 'निर्भय' प्राणी मिलना असम्भव सा ही प्रतीत होता है। कुछ अन्वेषकों ने पाँचसौ मनुष्यों के 'भयों' की गणना की है। सब मिलाकर सात सहस्र प्रकार के भयों से ये मनुष्य दुखी पाये गये। इनमें प्रायः सभी भय, अस्वाभाविक, व्यर्थ और स्वयं पैदा किये हुए पाये गये। अर्जुन जैसा विद्वान, बुद्धिमान, बलवान्, सत्तावान वीर होकर भी अनेकों भयों से घिरा हुआ था। बड़े बड़े ज्ञानी, साधु और सत्पुरुष भी अपने कर्तव्य पालन में, लोक-सेवा में, सात्विक व्यवहारों में और कल्याण के प्रयत्नों में, कभी-कभी रजोगुणी और तामसी प्रकृति के पुरुष द्वारा की हुई निन्दा आदि के भय करते देखे गये हैं। ऐसी दशा में निर्भयता की सबसे ऊंची चोटी पर पहुंचना एक प्रकार से असम्भवसा ही प्रतीत होता है। कोई विरला तत्वदर्शी महात्मा ही निर्भय बन सकता है। तब तो चारों ओर महा 'भय-सागर' से घिरे हुए प्राणी के लिये पार होकर सर्वथा निर्भय बन जाना कितना कठिन कार्य जान पड़ता है?

पर तो भी निरुत्साह के लिये कोई स्थान नहीं है। हमारे वेद-शास्त्रों ने ऋषि महर्षियों की जीवनियों ने, साधु सन्तों के उपदेशों ने हमारे लिये 'अभय' होने के रामबाण नुसखे बताये हैं। उनमें से किसी एक का भी प्रयोग करने से मनुष्य का बेड़ा पार हो सकता है। 'ओ३म्'-रूपी गोलियों से पथ्य अपथ्य का विचार रखते हुए संसार के सभी प्राणी अभय हो सकते हैं। भव भय हारी, सर्वलोकनाथ परमेश्वर का प्रतिदिन स्मरण करने से अवश्य ही निर्भयता आ जाती है। विश्व-कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने स्वर्ग का चित्र अङ्कित करते हुए कहा है—निर्भय पुरुष को यहीं स्वर्ग का आनन्द मिलने की भावना हमारे हृदयों में जाग्रत हो जाती है। बाइबिल में भी लिखा है कि 'अभय होने का एकमात्र उपाय अपने को प्रभु की शरण में अर्पण कर देना है।'

आर्य वीरो, आप ऋषि दयानन्द के बताये मार्ग पर चलकर अपने को निर्भय और शुभ सकल्प युक्त होने का प्रयत्न करें। महाकवि 'शंकर' ने ठीक ही कहा है :—

> भूल न दीनानाथ को,
> कर्म, विचार सुधार,
> यों हो सकता है सखा,
> भव सागर से पार।

हुआ एक मानव शास्त्र के विद्वानों द्वारा दी हुई व्यवस्था प्रकाशित की थी। वह यह बताने को थी कि कोई नस्ल इस समय शुद्ध रक्त की नहीं है। लक्ष्य उसका हिटलर के आर्यवाद का खंडन करने की ओर था। आर्य नस्ल की श्रेष्ठता को लेकर हिटलर ने अपनी जाति की प्रभुता की धाक जमाने का और जर्मनों को उत्तेजित करने का प्रयत्न किया था। शांति के हित में इस वाद का निराकरण आवश्यक माना गया। भारत में कुछ हजार बरस हुए असली निवासियों को, जो उनसे अधिक सभ्य थे, दलते कुचलते हुए आर्य यहाँ आये यह भी भ्रान्त कुछ कम बिगाड़ नहीं कर चुकी है। इसको भी नष्ट करना राष्ट्र-निर्माण का एक कार्य मानना चाहिये।

आर्य-महासम्मेलन; मेरठ

आर्य महासम्मेलन मेरठ के लिये जो ६ से १२ अक्टोबर तक होगा आर्यसमाजों से प्रतिनिधियों के नाम माँगे जारहे हैं। सार्वदेशिक सभा के कार्यालय से समाजों के नाम इस विषय में भ्रमणपत्रिका भेजी जा रही है। आर्यसमाजों को अपने प्रतिनिधियों का निर्वाचन अभी से कर लेना चाहिए। प्रत्येक समाज को जो सार्वदेशिक सभा से सम्बद्ध प्रतिनिधि सभा में प्रविष्ट होगा एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार होगा। जिन समाजों के दस या दस से अधिक सभासद होंगे वे अपने १० या १० से अधिक आर्य सभासदों पर एक प्रतिनिधि के हिसाब से भेज सकेंगे। प्रतिनिधियों की सूची सार्वदेशिक सभा के कार्यालय से भेजे गए वह फार्म पर भरकर सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में भेजनी होगी। प्रतिनिधि शुल्क २) है। परन्तु सभा ने समाजों को आदेश दिया है कि कोई समाज प्रतिनिधि शुल्क का धन अभी न भेजें। सम्मेलन के समय प्राप्त करके टिकिट दे दिया जायगा। समाजों को अभी से सार्वदेशिक सभा व स्वागत-कारिणी को सूचित कर देना चाहिए कि यहाँ से कितने प्रतिनिधि और दर्शक सम्मेलन में भाग लेंगे जिससे प्रबन्ध में सुविधा हो।

—ज्ञानचन्द, मन्त्री
सार्वदेशिक सभा, देहली।

प्रत्येक छोटे बड़े आर्यसमाज को अपने नगर में "आर्य्यमित्र" का प्रचार करना चाहिए।

मारिशस में परीक्षा-केन्द्र

साहित्याचार्य ठाकुरप्रसाद मिश्र
मारीशस

मारिशस में लगभग सवा-सौ वर्ष से निवास करते हुए भारतीय लोग विभिन्न सांस्कृतिक संघर्ष होने पर भी अपनी संस्कृति, सभ्यता तथा धार्मिक कृत्यों की तत्परता से रक्षा करते आ रहे हैं; तथा भारत से प्राप्त सहयोग का सदुपयोग करते हुए आज बहुत आगे निकल बढ़े हैं।

सन् १८३५ के प्रथम भारतीय श्रमिक-समूह के आगमन-काल से आज तक के इतिवृत्त को टटोलने पर स्पष्ट दिखाई देता है कि यहाँ पर आये भारतीयों की आत्मनिर्भरता तथा आत्म-विश्वास ही उनकी प्रगति के कारण हुए, और उस समय का वातावरण भी ऐसा ही था जिससे इस द्वीप का भारत से उतना घनिष्ठ सपर्क न रह सका था। फिर भी, जब आज स्वतन्त्र भारत की ओर से एम० ए० या बी० ए० उपाधि वाले चन्द दिनों के मेहमान की तरह विद्या प्रचार की दृष्टि से यहाँ आते हैं तो देखते हैं कि यहाँ के लोग भारत जाकर वर्षों की तपस्या से वहाँ के बड़े-बड़े विद्या केन्द्रों के स्नातक आकर इस दशा में त्याग तथा उत्साह से काम कर रहे हैं और यहाँ की जनता उत्तरोत्तर आगे ही कदम बढ़ा रही है।

आज से कुछ वर्ष पहले जहाँ पर संस्कृत और हिन्दी की कोई विशेष सत्ता ही नहीं थ, वहाँ आज लन्दन यूनिवर्सिटी के स्थानीय केन्द्र में इण्टर तथा बी० ए० परीक्षाओं में दोनों भाषाओं को लेने वाले परीक्षार्थी तथा अध्यापक भी दृष्टिगोचर हो रहे हैं। भले ही यह बात भारतीयों की दृष्टि में नगण्य हो, पर यह स्मरण रखना चाहिए कि यह प्रवासियों के भगीरथ प्रयास का ही परिणाम है।

प्रयाग के हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने भी यहाँ के नव शिक्षित हिन्दी प्रेमियों को प्रोत्साहित करने के लिए 'हिन्दी-परिचय-परीक्षा' का केन्द्र स्थापित कर अपनी उदारता का परिचय दिया है; फिर भी, यह कहना अनुचित नहीं कि इतनी बड़ी भारतीय संस्था की ओर से यह काम पर्याप्त है। यहाँ प्रायः सभी चाहते हैं कि कुछ उच्च तर श्रेणी की हिन्दी-पढ़ाई हो तथा सम्मेलन की ओर से प्रथमा और मध्यमा का भी केन्द्र स्थापित हो। इस विषय में अन्य संस्थाओं की ओर से पत्र व्यवहार होता था। पर गत वर्ष ता० ८ जून १९५० को हमारे प्रधान श्री हरिपदारथजी ने पत्र-द्वारा अभी केवल प्रथमा के केन्द्र की अभ्यर्थना की, जिसका कोई उत्तर नहीं मिला। हाँ, यह सुना गया है उपर्युक्त पत्र "राष्ट्र भाषा प्रचार समिति" के सुपुर्द कर दिया गया है। लेकिन यह यहाँ की स्थिति के नितान्त ही प्रतिकूल है। अल्प-संख्यक जनता में दो पृथक् संस्थाओं द्वारा दो पृथक् परीक्षाओं के केन्द्र होना किसी को सम्मत नहीं है।

आधुनिक युग में हिन्दी-प्रचार की ओर प्रायः सभी भारतीयों का ध्यान गया है। इस टापू में जो लोग परिस्थिति वश अंग्रेजी स्कूल में प्रविष्ट तक न हो सके उन्हें भी अपने साहित्य की उत्कृष्ट जिज्ञासा है। परीक्षाओं द्वारा नियम पूवक क्रम-बद्ध स्वाध्याय करने वाले विद्यार्थी पर्याप्त संख्या में विद्यमान है। अतः सम्मेलन से हमारी यही अभ्यर्थना है कि, जिस तरह हिन्दी प्रचार की दृष्टि से तदितर भाषी प्रान्तों में, वह प्रथमा-परीक्षा में निर्धारित साहित्य के पत्रों में ही परीक्षा लेकर विद्यार्थियों को अग्रसर होने में प्रोत्साहन देता है, वही सुविधा यहाँ के छात्रों को देते हुए शीघ्र ही एक "प्रथमा" का केन्द्र स्थापित करें।

इस विषय में तीन वर्ष से पत्र-व्यवहार किया जा रहा है, जिसमें यहाँ के भारतीय कमिश्नर की भी शरण ली गयी थी, पर उनकी उदासीनता देखकर श्री हरिपदारथ ने सीधे सम्मेलन को लिखा जिसका कोई अभाप्सित परिणाम आज तक नहीं निकला। ऐसी दशा में जिन्होंने मुझे भारतीयता के प्रचार के लक्ष्य से ही तैयार कर इस द्वीप में परावृत्त किया है, उन पूज्य प० नरदेव शास्त्री, प० रामनारायण मिश्र, प० करुणापति त्रिपाठी, डा० मगल देव शास्त्री प्रभृति विद्वानों का ध्यान आकर्षित कर, पुनः सम्मेलन को लिखते हुए आशा करता हूँ कि उपर्युक्त मनीषि-गण अपने चिर कालिक अन्तेवासी के भाव को सफलित करते हुए, इस द्वीप के हिन्दी-प्रेमियों को प्रोत्साहित करते हुए, अभिहित अभीष्ट की पूर्ति में पूर्ण प्रयास करेंगे, जिससे यहाँ पर भी भारतीयता सुरक्षित रह कर हमारे गौरव को अक्षुण्ण रखे। इत्यलं विज्ञेषु।

साहित्य-सौरभ

हमारे कवि-सम्मेलन

गत स्वतन्त्रता दिवस के सिलसिले में मुझे कई कवि सम्मेलन देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। कविताओं और कवियों में मुझे कई दोष दिखाई दिए। १—कुछ कविताएं अशुद्ध और अरुचिपूर्ण थीं। २—कुछ रचनाओं की भाषा अशुद्ध थी। जिस समय ये कविताएँ पढ़ी जा रही थीं, हमारा सिर नीचे झुका हुआ था। हमें भय था कि कहीं कोई यह न कह बैठे, क्यों साहब, बस यही है आपकी हिन्दी! आप इसी को बना रहे हैं, भारत की राष्ट्र भाषा! अनेक रचनाएँ अवसर के अनुरूप न थीं। कुछ तो निश्चित रूप से प्रतिकूल थीं, "स्वतन्त्रता-दिवस" के अवसर पर गम के तराने और असीम असीम के राग अलापना तथा सद आहे भरना अथवा आजादी की लड़ाई में डबलमार्च करना आदि बातें सुनने वालों को खटक रही थीं। ३—कुछ रचनाएँ आवश्यकता से अधिक लम्बी थीं, अच्छी होते हुए भी उनकी ओर से श्रोता उदासीन हो जाते थे। ४—कुछ कविगण बिना कहे सुने तीन तीन चार-चार रचनाएं पढ़ते जाते थे। जनता ताली बजाती थी। उन्हें उखाड़ने के लिये, परन्तु कविजी समझते थे कि उनकी प्रशंसा हो रही है। दो तीन कवियों के सम्बन्ध में तो दो-तीन रचनाएँ पढ़ने का एक और बुरा परिणाम हुआ। अन्तिम कविता में तनक सा दोष होने पर उनकी शुरू की अच्छी कविता को जनता भूल गई। एक-दो कवियों की पहली कविता सरस और भाव पूर्ण थी, और उसने जनता को मुग्ध भी किया। उन्होंने एक-दो और रचनाएँ पढ़ डालीं। उनमें तनक शैथिल्य था। बस श्रोतागण उनसे ऊबने लगे और पहले का बना हुआ रंग फीका पड़ गया।

मेरे विचार से मेरा उक्त अनुभव साधारण-सी घटना है। अन्य मित्रों और गुरुजनों को भी ऐसे ही अवसर आए होंगे। प्रायः प्रत्येक कवि-सम्मेलन में उक्त प्रकार की शिकायतें मिल ही जाती हैं। इस सम्बन्ध में मेरा सुझाव यह है कि बिना पूर्ण स्वीकृति के कोई भी रचना न पढ़ी जाये। कवि-सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रत्येक कवि की रचना पहले से संयोजक अथवा सभापति के पास पहुँच जानी चाहिये और उसकी देखभाल करली जाये। आवश्यकता हो तो उसमें आवश्यक सुधार भी किया जा सकता है। अश्लील व अशुद्ध एवं अवसर के प्रतिकूल रचनाएँ लौटाई जा सकती हैं। इस प्रकार कवि जी को यह विदित रहेगा कि उन्हें कितना पढ़ना है तथा संयोजक-जी को यह पता रहेगा कि उनके अतिथियों के सत्कार में कौन कौन वस्तुएँ उपस्थित की जाने वाली हैं तथा कुल आयोजन कितने समय में समाप्त हो जायेगा। आदर्श स्थिति तो यह हो कि उनसे रचना एक बार पहले पढ़वा भी ली जाये। मैंने अक्सर देखा है कि बहुत-से कविगण बीच में अटक जाते अथवा भूल जाते हैं। कभी-कभी वे अपने लिखे हुए कागज के भी पढ़ने में अटक जाते हैं और रचना अच्छी होते हुए भी जनता पर सम्यक् प्रभाव डालने में असमर्थ रहती है।

राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी,
एम० ए०, बी० एस सी०

आर्य मित्र के ग्राहक बनना बनाना आर्यमित्र का मुख्य कर्त्तव्य है।

राजनैतिक रंग-मंच

हैदराबाद राज्य के कम्युनिस्ट क्षेत्र में—

श्री प० प्रकाशवीर शास्त्री

हैदराबाद राज्य का तेलगाना क्षेत्र जो आज भारत के समाचार-पत्रों में चर्चा का विषय बना हुआ है, उसे जब-जब भी मैं इस राज्य में आया वास्तविकता क्या है, देखने की जिज्ञासा बनी रहती थी। सौभाग्य से हैदराबाद राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री प० मनोहरलालजी के साथ इस क्षेत्र में भ्रमण करने का अवसर मिला।

राज्य के इस तेलगाना क्षेत्र में जिसमें नलगुंडा और वरंगल जिले विशेष रूप से सम्मिलित हैं मध्यम श्रेणी के व्यक्तियों का प्रायः अभाव है। आवश्यकता से अधिक गरीब और आवश्यकता से ही अधिक धनवानों का यह क्षेत्र है। जमींदार जिन्हें इधर देशमुख कहते हैं, और पटेल जो गांव के मुखिया होते हैं उनमें लखपति और अधलक्षाधिपति तो सुगमता से मिलेंगे। "पुलिस कार्यवाही" से पहले जब यहाँ रजाकारों की तूती बोलती थी, तब और उससे पूर्व भी शासन का हाथ इनकी पीठ पर था जिससे निधनता हाल की उपज नहीं प्रतीत होती, अपितु पहले से चली आरही परम्परा है। पुलिस कार्यवाही के बाद शासन का ऊपरी ढांचा बदलते ही गरीबों ने अंगड़ाई ली और हमें रोटी दो, जमीन दो, कपड़ा दो की मांगों के साथ एक आन्दोलन उठ खड़ा हुआ, जिसका नेतृत्व करने के लिये कुछ पढ़े-लिखे व्यक्ति जो ऐसे अवसरों से लाभ उठाने की प्रतीक्षा में रहते हैं, आगे आगये। आन्दोलन यदि व्यवस्थित और वैध रूप में चलता तो उन मांगों को पूरा करने के लिये सम्भव है, शासन को शान्ति से विचारने का कुछ समय मिलता, परन्तु अवसरवादी इस लीडरशिप ने जब से हिंसा का आश्रय लिया तब से आन्दोलन में उग्रता तो आई, परन्तु लूट-मार से सिवाय हिंसा का प्रश्रय देने वालों के उन गरीबों के हाथ कुछ भी न आया जिनकी वह आवाज थे। किसी के पास पचास हजार बीघे भूमि हो [illegible] पर अपने बच्चों [illegible] एक बीघा भी [illegible] इन्कलाब तो स्वाभा[illegible] [illegible] वैध मार्ग से चलकर वह और भी अच्छा रहता। आचार्य विनोबा भावे के शब्दों में जिन्होंने पैदल इस क्षेत्र का भ्रमण किया है "कांग्रेस में भी अवसर से लाभ उठाने वालों की कमी नहीं है" दक्षिण का यह तेलंगाना क्षेत्र भी सूना नहीं है, अन्तर इतना ही है वह हिंसा की जीप में सवार हैं और यह अहिंसा की शेवरलेट कार में।

पुलिस कार्यवाही के बाद हिंसा का सहारा लिये हुए उस प्रकार के व्यक्ति अपने साथ कुछ गरीबों को लेकर गांव के किसी भी देशमुख पेटल या पटवारी के घर गये उसे कत्ल कर दिया और घर का सब सामान लूटकर सोना-चाँदी, रुपया पैसा अपने पास रख लिया तथा ज्वार चावल आदि अन्न उन गरीबों को बांट दिया, उसी को उन्होंने बहुत समझ कर सन्तोष कर लिया। इसके साथ उन हरकतों का विरोध करने वाले सच्चे कार्यकर्ताओं का भी वध किया जाने लगा। पुलिस जो इस आन्दोलन को रोकने के लिये भेजी गई थी सुनते हैं, कांग्रेस नामधारी कुछ व्यक्तियों के इशारों पर जो ऐसे हिंसात्मक कार्य नहीं भी करते थे, और थे कुछ खाते-पीते उन्हें भी कम्युनिस्ट हैं, कह कर पकड़ने लगी और फिर अपनी और नामधारियों की गोली सीधी करने लगी। इन सब स्थितियों से जनसाधारण बहुत परेशान हैं, हिंसा में उनका विश्वास नहीं और अहिंसा की आड़ में यह होने लगा, इसी से तंग आकर कहीं-कहीं तो लोगों को यह कहते सुना इससे तो रजाकारी हुकूमत ही ठीक थी।

राजनैतिक क्षेत्र की भी स्थिति बड़ी विचित्र है। हर गांव और ताल्लुके में जहाँ जहाँ हम गये कांग्रेस में स्वामी रामानन्द तीर्थ ग्रुप और रंगोरेड्डी ग्रुप में विभाजित पार्टियां और उनके कार्यालयों को देखा। सोशलिस्ट पार्टी का इधर अभी कोई विशेष क्षेत्र नहीं है। कम्युनिस्ट पार्टी जब से उनके नजरबन्द नेता अब छूटकर आये हैं, पर्याप्त हलचल कर रही है। साहित्य आदि भी तेलगु में हर तरह का अधिक मात्रा में छाप कर बांटा जारहा है, परन्तु उनकी हिंसात्मक कार्यवाहियों के बन्द न होने से तूफानी आन्दोलन तक ही सीमित है। सम्पत्तिशाली देशमुख जब से गांवों को खाली करके नगरों में आ बसे है, तबसे अच्छी स्थिति के किसानों को ही हिंसात्मक कार्यवाहियों का शिकार बनाये जाने लगा है। दक्षिण का यह क्षेत्र धार्मिक भावना प्रधान तो पहले से ही है. सस्वर वेदपाठ सुनाकर भीख माँगने वाले, सिरों पर गौ के खुर से भी बड़ी चोटी रखने वाले, माथे पर किसी न किसी प्रकार का तिलक लगाए हिन्दू यहां हैं। हर गांव में दो चार बड़े मन्दिर भी हैं। प्रातःकाल प्रत्येक घर के द्वार पर गोबर छिड़क कर आटे से रेखायें कढ़ी मिलेंगी, परन्तु इतना सब होते हुए भी यहां हिन्दूसभा, रामराज्य परिषद् और जनसंघ का कोई क्षेत्र नहीं है। व्यवहार में कहां तक उनका स्थान है, यह प्रश्न तो बाद का है परन्तु गांधीजी, नेहरूजी और नेताजी के स्टेचु भी हर नगर के चौराहों पर हमने लगे पाये।

पुलिस के बारे में भी जनसाधारण में ऐसी चर्चायें सुनने को मिलीं—भारत संघ से जो पुलिस आती है, वह वातावरण से पूर्णतया परिचित न होने, भाषा न जानने से तथा यह सोच कर कि कुछ समय के लिए स्पेशल ड्यूटी पर आए हैं जैसे भी हो समय काट चलो उत्तरदायित्व तो राज्य पुलिस का है, जिसे यहाँ रहना है, सोचकर अपनी अवधि बिताकर चली जाती है। राज्य पुलिस यह सोचकर हाथ ढीले कर देती है कि जब इस आन्दोलन को शान्त करने को बाहरकी पुलिस आई है नाम होगा उसका तो फिर उन्हें ही जो कुछ करें करने दो। कभी किसी ने आकर सूचना दी अमुक स्थान पर या अमुक व्यक्ति ऐसा है, तो तस्करता दिखा दो और जेल को चलता किया या फिर छोड़ छाड़कर अलग किया।

इस पकड़ाधकड़ी और हिंसात्मक कार्यवाही से एक बात और यह होगई जो पैसे वाले हैं, वे अब आसानी से किसी को सहयोग देने से इन्कार नहीं करते। भले ही मन मारकर दें, परन्तु दे अवश्य देते हैं, न देने की हालत में लुटेरे अथवा कम्युनिस्ट है, कहकर पकड़े जाने का भय रहता है। लेकिन इस वातावरण से भी लाभ अधिकांश कांग्रेसी नामधारी भाई ही उठा रहे हैं।

रजाकारी दौर से पूर्व एक निर्भीक और अन्याय के लिये डटकर लड़ने वाली संस्था होने से आर्यसमाज का बहुत प्रभाव था तथा संगठन भी बहुत सुव्यवस्थित रूप में चलता था। अब न तो उस प्रकार का हव्शीपन ही रहा और न मजहबी आड़ में खुले आम लूट और हत्याएं ही रहीं, इस कारण तथा आर्यसमाज के पास चालू लीडरशिप का न प्रमाणपत्र ही मिलता है और न लोहा-नमक-तेल-कपड़ा चीनी के परमिट ही मिलते हैं इससे कुछ फसली तबका आर्यसामाजिक वातावरण से निकल कर विभिन्न पार्टियों में चला गया है। कोई कोई उधर जाकर यह कहने लगे हैं कि अब हैदराबाद में आर्यसमाज की क्या आवश्यकता है। इतने पर भी समाजों में ताले लग गए हों या कार्य रुक गया हो ऐसी बात नहीं है। जो सच्चे और सात्त्विक तक व्यक्ति हैं उनकी निष्ठा तो पूर्व से भी अधिक है। इस प्रकार के व्यक्तियों के समाजों से हटने पर सामाजिक वातावरण में निखार तो हुआ परन्तु अपनी लकड़ी लोहे में लगने से कुल्हाड़ी बनने पर जैसे वह वन के बूढ़े वृक्ष रोने लग गये थे वैसे ही इन तपे हुए आर्यों को भी अपने उन सहकर्मियों के पृथक हो खिन्न देखा गया।

एक और विशेष बात हैदराबाद राज्य में तथा भारत के अन्य भागों में भी हिन्दी के प्रचार का सर्वप्रथम बीड़ा जिस आर्यसमाज ने उठाया था उसके इस तेलगाना क्षेत्र में तेलगु भाषा के आधार

हमारी उपासना-विधि

१६ अगस्त के आर्यमित्र में श्री रघुनन्दनस्वरूपजी एम० ए० एडवोकेट का आर्यसमाज और उपासनाविधि के विषय में जो लेख छपा है, वह सर्वथा सत्य है। मैं भारत के भिन्न-भिन्न समाजों में जाता हूँ तो संध्या और अग्निहोत्र में इसी प्रकार की विभिन्नताएं पाता हूँ। इनके दूर करने का उपाय हमने यही सोचा है कि महर्षि दयानन्द कृत पंच महायज्ञ-विधि में जो विधि बताई गई है और जिस प्रकार मन्त्र लिखे हैं, वे ही बोलने चाहियें और बाकी जो भिन्न भिन्न प्रांतों और समाजों ने तथा पुरोहितों ने नये नये प्रकार और गायत्री के कई कई बार पाठ की विधियाँ बना ली हैं, उनको एकदम बन्द कर देना चाहिये। मैं जहाँ जाता हूँ, यही कहता हूँ, इससे कई स्थानों पर विभिन्नताएँ दूर हो भी गई हैं। हमें तीव्र आन्दोलन करके सरकार को बाधित करना चाहिये कि वह गोवध बन्द करने का कानून भारत में सर्वत्र शीघ्रातिशीघ्र लागू करे। पाकिस्तानी गुण्डों को दण्ड देने के लिए हमें सदा तैयार रहना चाहिए। देश में क्षात्रधर्म जाग्रत् कर हमें अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करना चाहिए।

—चाँदकरण शारदा, एडवोकेट

पर आन्ध्र भाग का पृथक आर्य-सामाजिक संगठन बनाने की चर्चा कुछ अंगुलियों पर गिने जाने वाले व्यक्तियों ने आरम्भ कर दी है। भाषा के आधार पर बनने वाले प्रान्तीयता के जिस विष से आज हमारे राष्ट्रिय जीवन में विषाक्तपन आ गया है, वह रोग आर्यसमाज जैसी उदार संस्था के इस प्रगतिशील गढ़ हैदराबाद राज्य में पनपे यह ठीक नहीं है। अभी यह भाव अंकुरित ही हो रहे हैं, आशा है, राज्य के आर्य नेता हैदराबाद कांग्रेस की भांति आर्यसमाज में यह रोग नहीं आने देंगे।

हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद और राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा ने न केवल यहां अपितु दक्षिण भारत में भी हिंदी प्रचार में सराहनीय कार्य किया है, परन्तु दक्षिण में तो हिंदी के लिए जो भी यत्न किया जाय अभी वह थोड़ा है। सांस्कृतिक दृष्टिकोण के आधार पर बने पाठ्यक्रम से राज्य की आर्यप्रतिनिधि सभा भी हिंदी की परीक्षाएं यदि इधर चालू करे तो हिंदी को सर्वप्रियता के शिखर पर पहुचाने में उसका और भी यह विशेष सहयोग होगा। अधिक व्यय-साध्य भी यह नहीं है।

तेलगु भाषा का इस क्षेत्र में जो उत्साह निजामाबाद-नारायणपेठ वरंगल-सूर्यापेठा आदि स्थानों पर पाया नलगुंडा, में जहां एक लाख से अधिक आर्यसमाज की सम्पत्ति है उसके बिल्कुल विपरीत पाया। आशा है, शीघ्र ही इसकी भी कमी पूरी हो जायगी।

सुझाव और सम्मतियाँ

मेरा सुझाव

आर्यसमाज की उन्नति के लिए बड़े-बड़े विद्वानों ने सुझाव रखे हैं। मैं भी अपनी समझ से कुछ बात निवेदन कर रहा हूँ। समय ऐसा आगया है कि केवल सुझाव दे देने से काम नहीं चलेगा। आगामी आर्यमहासम्मेलन में एक कार्यक्रम बनाया जाय जिसमें जन सम्पर्क बढ़ाने वाले कार्य अधिक हों। हमारे सभी नेता व विद्वान् अपने-अपने विषय चुन लें। फिर कार्यक्षेत्र का बटवारा हो जावे। सभी अपने-अपने क्षेत्र में पहुँचें, जहाँ स्थानीय कार्यकर्तागण इन नेताओं की सभी प्रकार से सहायता करें। एक ओर जहाँ पुराने आर्यों की त्रुटियाँ दूर हों और उनमें आत्मिक बल व संगठन उत्पन्न किया जाय, वहाँ नये लोगों से सम्पर्क बढ़ाकर उन्हें आर्यसमाज में प्रविष्ट किया जाय। जो समय दे सकते हों वे समय दें, जो धन दे सकते हों वे धन दें और हमारे वयोवृद्ध नेता गण कार्यकर्ताओं को आशीर्वाद दें। 'सर पर कफन को बाँधे' वाली लगन उत्पन्न होने-भर की देर है।

—डा० रा० स० लाल,
बाराबंकी

शिक्षा-समस्या

कुछ मास व्यतीत हुए, बाँदा निवासी श्री मथुराप्रसादजी ने 'आर्यमित्र' में शिक्षा-सम्बन्धी एक लेख लिखा था, और अन्य आर्य भ्राताओं से प्रार्थना की थी कि वे भी अपने विचार 'आर्यमित्र' में प्रकाशित करें। श्री मथुराप्रसादजी ने लिखा था कि वर्तमान शिक्षा-पद्धति से प्रायः सभी देश-हितैषी असन्तुष्ट हैं और उसमें परिवर्तन करना आवश्यक समझते हैं, परन्तु यह कोई नहीं कहता या लिखता कि वर्तमान पद्धति में क्या-क्या परिवर्तन किए जाय। इन सुझावों और सम्मतियों के प्राप्त होने पर एक योजना बनाकर आर्य-प्रतिनिधि सभा द्वारा अथवा सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रदेशीय शिक्षा-मन्त्रियों के पास भेजी जाय, तभी कुछ कार्य हो सकेगा। केवल कहते रहने से कुछ नहीं हो सकता।

इस लेख को पढ़कर मैंने भी इस विषय पर एक सुझाव प्रस्तुत किया था जो तारीख ३१ मई १९५१ के 'आर्यमित्र' में प्रकाशित हुआ था। मुझे आशा थी कि वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में परिवर्तन करने का कार्य इतना आवश्यक है कि आर्य विद्वान् शीघ्र ही इस ओर ध्यान देंगे और अपने विचार प्रकट करेंगे। परन्तु अब तक किसी सज्जन ने कोई सम्मति 'आर्यमित्र' में प्रकाशित नहीं की। इससे मुझे यह आशङ्का अवश्य हुई कि आर्य भाइयों की इस विषय में इतनी उदासीनता क्यों है। जो आर्यसमाज शिक्षा सम्बन्धी मामलों में देश का नेतृत्व करता रहा है, वह आज इस विषय में इतनी शिथिलता क्यों दिखा रहा है। इस बीच में मुझे दो मास के लिए बाहर भ्रमण करना पड़ा। फैजाबाद व लखनऊ के आर्यसमाजों में मैंने इस विषय पर बातचीत की और वहाँ के सदस्यों से व्यक्तिगत भी परामर्श किया। इस आपसी बात-चीत से यह पता लगा कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली से सन्तुष्ट तो कोई नहीं है परन्तु इस प्रणाली में क्या क्या परिवर्तन किए जायें। यह कार्य ऐसा सुगम नहीं है, जिस पर साधारण पढ़े-लिखे आर्य सदस्य सम्मति दे सकें। इस कार्य को करने के लिए विद्वानों की एक छोटी-सी समिति बनाई जावे जो इस पर विचार करके अपनी उचित सम्मति आर्यप्रतिनिधि सभा को भेज दें।

सुनहरीलाल, प्रधान
आ० स० एतमादपुर

सम्मेलन कैसे सफल हो ?

शहीद धर्मपूज्य श्रद्धानन्दजी की शहादत पर आर्यमहासम्मेलन का पहला अधिवेशन महात्मा हंसराजजी के सभापतित्व में दिल्ली हुआ था। वह सम्मेलन पहला सम्मेलन होने के कारण सफल और प्रभावशाली था। इसके बाद सिवाय शोलापुर सम्मेलन के जिसमें हैदराबाद सत्याग्रह स्वीकार हुआ था, कोई सम्मेलन प्रभावशाली सम्मेलन सिद्ध नहीं हुआ। जहाँ तक मैं समझता हूँ इसका कारण हमारे सम्मेलन के अधिकार की कमी है। हमारा सम्मेलन केवल सिफारिश करने वाला होता है। उसके प्रस्ताव आर्यसार्वदेशिक सभा की स्वीकृति के आश्रित हैं। जब तक सभा की स्वीकृति की मुहर न लग जावे, तब तक उसके प्रस्तावों का कोई मूल्य नहीं है। इस लिए हमको राष्ट्रीय महासभा (कांग्रेस) की भांति अपने नियमों में ऐसा परिवर्तन करना चाहिये कि हमारे सम्मेलन का निश्चय अकाट्य और अन्तिम हो। कांग्रेस के बृहद् अधिवेशन में आगामी प्रोग्राम निश्चित होता है, और देश को जिस मार्ग पर चलाना है, उसको अन्तिम रूप दिया जाता है। इसी लिए सारा देश टकटकी लगाए उस अधिवेशन की ओर देखता है। यही रूप हमारे महासम्मेलन का होना चाहिए। नये प्रधान और कार्यकारिणी सभा का चुनाव और आगामी वर्ष का प्रोग्राम आर्यजनता के लिए निश्चय करना चाहिए। तब उसको कार्य रूप में परिणत करना, आर्य-नेताओं तथा आर्यजनता का

सामयिक समस्याएँ

इस समय देश की जो परिस्थिति है वह अनिश्चित और डॉवाडोल है। भारत की आर्थिक दशा अन्न और वस्त्र की समस्या से साधारण जनता की दृष्टि में असन्तोषजनक है। अभी कुछ दिन से पाकिस्तान की भारत के विरुद्ध जंग-जिहाद की तैयारी के कारण स्थिति में और भी परिवर्तन हो गया है। यद्यपि यह ठीक है कि इस तैयारी से भारतीय जनता घबराई नहीं है तो भी देश का वातावरण क्षुब्ध तो हो ही गया है। स्वतन्त्र भारत के प्रथम चुनाव निकट होने के कारण राजनैतिक वातावरण पहले से ही क्षुब्ध है। भारतीय जनता किसी न किसी दलबन्दी के दलदल में पड़ी हुई अपना मार्ग निश्चित नहीं कर पा रही है। देश की सबसे बड़ी राजनैतिक संस्था कांग्रेस भी इस समय दलबन्दी का शिकार बन रही है। इसके दिग्गज नेताओं में ही इस समय फूट पड़ गई है। हरेक सरकारी विभाग में जगह-जगह रिश्वतखोरी, चोरबाजारी, झूठ और बेईमानी का बाजार गर्म है। ऐसे समय में आर्यसमाज का क्या कर्तव्य और प्रोग्राम होना चाहिये?

आर्यसमाज को उसके संस्थापक ऋषि दयानन्द ने जिस उद्देश्य से स्थापित किया था वह बहुत ऊंचा और महान् था। संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य बतलाया था और इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये ऋषि ने वेदों का पढ़ना-पढ़ाना, सुनना सुनाना और उनका प्रचार आर्यों का परम धर्म माना

उसके लिये जुट जाना कर्तव्य होगा। तभी हमारा सम्मेलन एक प्रभावशाली और सफल सम्मेलन हो सकता है। अन्यथा यह एक छोटा-मोटा मेला ही होगा और जनता में नव जीवन संचार नहीं कर सकेगा। आशा है, आर्य नेता नियमों में परिवर्तन करके महासम्मेलन को कांग्रेस की तरह एक प्रभावशाली सम्मेलन बनाने का निश्चय करेंगे, और यही रूप प्रान्तीय सभाओं को देंगे। कुछ ठोस काम करने की आवश्यकता है, थोथे प्रदर्शनों से कोई लाभ नहीं हो सकता। —बनवारीलाल शादों

—

आर्यसमाज का पुरोगम

श्री डा० सूर्यदेव शर्मा एम०ए० डी० लिट्

था। हम भी "विश्व भर को आर्य बनाना यह हमारा काम है" का गीत सदैव गाते रहे। तो क्या हमारा यह उद्देश्य पूरा हो गया? क्या संसार का उपकार हो चुका? क्या शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति समाप्त हो चुकी? क्या देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार हो चुका? क्या वेदों के पढ़ने-पढ़ाने का परम धर्म हम पालन कर चुके? यदि नहीं तो फिर आर्यसमाज का और नया प्रोग्राम बनाने से पहले हम सर्व प्रथम इसी लक्ष्य को अब अपने सम्मुख क्यों न रखें? आर्यसमाज के प्रचार के लिये और वैदिक सिद्धान्तों के प्रसार के लिये हम प्रेस और प्लेटफार्म के अतिरिक्त अन्य नवीनतम साधनों को क्यों न अपनायें? आर्यसमाज के विद्वान् वैदिक सिद्धान्तों पर संसार की विभिन्न भाषाओं में और अपनी देशव्यापी राष्ट्रभाषा में अधिकाधिक साहित्य का सृजन क्यों न करें? रेडियो, फिल्म तथा अन्य आधुनिक वैज्ञानिक साधनों द्वारा हम पूर्ण वैज्ञानिक वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार क्यों न करें?

सामयिक प्रोग्राम की दृष्टि से भारत में इस समय जो भ्रष्टाचार और अनाचार राजनैतिक और व्यापारिक क्षेत्र में फैला हुआ है, उसको मिटाना भी इस समय हमारा प्रोग्राम होना चाहिये। कुछ मास पूर्व कांग्रेस के अध्यक्ष श्री पुरुषोत्तमदास टंडन ने प्रयाग में भाषण करते हुए कहा था कि इस समय देश में और कांग्रेस में जो भ्रष्टाचार फैला हुआ है उसको मिटाने और कांग्रेस को शुद्ध करने का काम यदि कोई संस्था कर सकती है तो वह आर्यसमाज ही है। शासन के दोषों को दूर करने का काम कांग्रेसजनों के सामर्थ्य के बाहर की बात है क्योंकि उनमें से अधिकांश इस समय सत्तारूढ़ हैं और उनमें से अनेक उन दोषों में लिप्त हैं। आर्यसमाज शासन और सत्ता से परे है अतः कांग्रेस की शुद्धि आर्यसमाज ही कर सकता है और कोई संस्था नहीं। इस समय देश में धर्म और संस्कृति की सर्वत्र अवहेलना की जाती है। कांग्रेस सरकार ने तो समस्त भारत के विधान को ही धर्म-निरपेक्ष बना डाला और भारतीय संस्कृति की भी उपेक्षा करके मुस्लिम प्रसादिनी नीति को बहुत दिनों से अपना रखा है। समाजवादी और साम्यवादी दल भारतीय संस्कृति और धर्म को पहले ही धता बता चुके हैं। अन्य राजनैतिक दल संस्कृति का नाम तो लेते हैं लेकिन वे मध्यकालीन और दूषित संस्कृति का ढिंढोरा पीट रहे हैं। उन्हें यह पता ही नहीं कि शुद्ध वैदिक संस्कृति क्या वस्तु है? हमारे भारतीय समाज और राष्ट्र का आदर्श क्या होना चाहिये? उन्हें संस्कृति से प्रेम तो है लेकिन शुद्ध संस्कृति का जितना ज्ञान होना चाहिये उतना नहीं। इस दिशा में सबसे बड़ा काम आर्यसमाज ही कर सकता है। जब भारत प्रगाढ निद्रा में सोया पड़ा था तब आर्यसमाज ने उसमें नवीन स्फूर्ति और विशुद्ध चेतना उत्पन्न की और आज जब भारतीय समाज को अपनी स्वतन्त्रता रूपी गाड़ी को चलाने के लिये ठीक रास्ता नहीं मिल रहा है, तब उसको वैदिक राजमार्ग पर चलाने का श्रेय आर्यसमाज क्यों न ले? इस समय प्राचीन वैदिक संस्कृति के आदर्श का पथ प्रदर्शन केवल आर्यसमाज ही कर सकता है, और कोई संस्था नहीं है जो इस काम को कर सके।

जब से भारत स्वतन्त्र हुआ है, तब से अनेक प्रयत्न करने पर भी हमारी सरकार शिक्षा की प्रणाली को सुधारने में जरा भी सफल नहीं हुई है। वे ही दकियानूसी ढंग और पुराने टाइपके स्कूल तथा बाबा आदम के जमाने की पाठ्य प्रणालियाँ अब भी यहाँ प्रचलित हैं। शिक्षा के क्षेत्र में सुधार किये बिना भारत की नव सतति तैयार नहीं हो सकती और इस दशा में आर्यसमाज सबसे अच्छा पथ प्रदर्शन कर सकता है। वर्त्तमान स्कूलों, कालेजों और विश्वविद्यालयों की पाठ्य प्रणालियों में सुधार कराके नव भारत का निर्माण करना आर्यसमाज का मुख्य ध्येय होना चाहिये।

आशा है, आर्यसमाज के नेता और कार्यकर्त्ता गण आर्य महासम्मेलन में जो तारीख १ से ४ सितम्बर तक जयपुर में (प्रान्तीय) तथा ता० ६ से १२ अक्टूबर तक मेरठ में (अखिल भारतीय) होगा उपरोक्त चारों बातों पर गम्भीरता से विचार करके आर्यसमाज का ऐसा प्रोग्राम निश्चित करेंगे जिससे भविष्य में आर्यजनता और भारतीय जनता को कुछ ठोस प्रेरणा मिल सके।

—

अमेठी नरेश का दान

अमेठी नरेश श्रीमान् राजा भगवानबख्शसिंहजी को राज्य करते पूरे ६० वर्ष होगये। अपने शासन-काल में आपने अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये हैं। अभी कुछ मास हुए आपने लगभग नौ लाख रुपये की सम्पत्ति दान की है, जिसमें से पचास सहस्र रुपये वार्षिक आय का भू-भाग विद्यालय, पुस्तकालय, औषधालय, गोशालादि परोपकार पूर्ण कार्यों के लिये दान देकर "राजा भगवानबख्श रिलीजस एण्ड चैरिटेबिल ट्रस्ट" बना दिया है। इसके मैनेजिंग ट्रस्टी युवराज श्री रणञ्जयसिंहजी हैं।

—

जीवन-ज्योति

स्वर्गीय प० श्यामजी कृष्ण वर्मा

श्री प० रामनारायणजी मिश्र काशी

अगस्त १९२९ में मैं स्वीजरलैंड की राजधानी जिनीवा में था। उनदिनों वहाँ सार्वदेशिक शिक्षा-सम्मेलन हो रहा था। एक दिन श्री गौरीशङ्कर प्रसाद ऐडवोकेट, श्रीप्यारेलाल रस्तोगी जज और श्री श्रीराम वाजपेयी स्काउट कमिश्नर के साथ एक चौराहे पर खड़े होकर मैं बातचीत कर रहा था कि एक हृष्टपुष्ट सज्जन ने आकर हम लोगों को नमस्ते कहते हुए अपना नाम श्यामजी कृष्ण वर्मा बतलाया। अकस्मात् उनसे मिलकर हम लोग गद्गद् हो गए क्योंकि महर्षि दयानन्द सरस्वती की जीवनी में और भारतीय क्रान्ति के इतिहास में उनका शुभ नाम कईबार पढ़ा था। काशी के पुराने लोगों ने हम बतलाया था कि कारमाइकल पुस्तकालय में उन्होंने जब धारा-प्रवाह संस्कृत में भाषण दिया था तब पण्डितों की बड़ी भीड़ जमा होगई और उनमें हलचल मच गई थी।

अस्तु, एक दूसरे से परिचय प्राप्त करने के बाद उन्होंने हमें अपने यहाँ जलपान के लिए निमन्त्रित किया। चार अगस्त को सायंकाल हम लोग उनके घर गए। भारत की राजनीति और आर्यसमाज की अवस्था पर बहुत देर तक बातचीत होती रही। हमें आश्चर्य इस बात से हुआ कि राजनीतिक क्रांतिकारी जीवन होते हुए भी उन्हें आर्यसमाज से अगाध प्रेम था और भारत में समाज की गतिविधि और प्रगति का वे पूरा परिचय रखते थे। बातचीत के सिलसिले में उन्होंने अपने पुस्तकालय के ऊपरी हिस्से की ओर संकेत करके बतलाया कि महर्षि के सैकड़ों पत्र यहां रखे हैं जिनके आधार पर यह लिखा जा सकता है कि वे किस प्रकार भारत को विदेशी शासन से मुक्त करने के लिए उत्कंठित थे। इस सम्बन्ध में जो कुछ उन्होंने कहा उसका सारांश यह है:

लोगों ने स्वामी दयानन्द को पहचाना नहीं। इतना बड़ा विद्वान्, ऐसा सर्वतोमुखी क्रान्तिकारी फिर पैदा होना कठिन है। उनका सब काम पूर्व व्यवथित होता था।

उनके पंजाब और राजस्थान को अपने कार्य का क्षेत्र बनाना निरर्थक नहीं था। वे केवल धर्म-गुरु ही नहीं थे धर्म का उनका लक्ष्य व्यापक था। उनका भावष्य में क्या प्रोग्राम था, लोगों को मालूम नहीं है। मैंने आर्यसमाज के कई सज्जनों को लिखा था कि वे एक उत्साही नवयुवक को मेरे पास भेजें जो संस्कृत और अँगरेजी अच्छी जानता हो। संस्कृत का जानना इसलिये आवश्यक है कि महर्षि के सब पत्र संस्कृत में हैं जो नवयुवक आवे उसे समाज अपने खर्च से मेरे पास भेजे। उसके यहां रहने का और यहां से भारत लौटने का खर्च मैं दूंगा। मेरे पास जो पत्र हैं उनके आधार पर स्वामीजी के जीवन के उस पहलू पर प्रकाश पड़ जाएगा जो लोगों पर अब तक प्रकट नहीं हुआ है।" इत्यादि।

हम लोगों के पास इतना समय नहीं था कि उनसे फिर मिलते क्योंकि दूसरे ही दिन हम लोग जरमनी के लिए रवाना हो गए। अब न मालूम वह सामग्री कहाँ गई। हमारे मन में यह धारणा थी कि श्याम जी क्रान्तिकारी होने के कारण बड़े उग्र, उतावले और जल्दबाज होंगे पर हमने उन्हें बड़ा ही गम्भीर, संतुलित बुद्धि वाला और मिलनसार पाया।

——

दो-तीन बातें

अपने उत्तर प्रदेश में एक दर्जन बालगृह (अनाथालय) कहे जाते हैं। इनकी सूची समाचार-पत्रों में प्रकाशित हो जानी चाहिए। कारण यह है कि आजकल बाजा और बाँसुरी बजाकर पीले कपड़े पहनने वाले कुछ अनाथ बालकों का झुण्ड जनता को ठगता फिरता है। रेलों और सड़कों पर भी प्रायः यही ठगी हो रही है। इस कार्य के लिये सरकार को एक निरीक्षक भी नियुक्त करना चाहिए, जो सारा हिसाब किताब देखे। छह वर्ष का प्रत्येक अनाथ बालक अनिवार्य रूप से पाठशाला भेजा जाय। १८ या २१ वर्ष का होने पर उसे काम-धन्धे में लगाया जाय। अनाथ कन्याएँ और लड़के अलग-अलग रहें। उनकी अन्य अनाथालयों में अदला-बदली होती रहे। मुसलमानों के यतीमखाना को भी सरकार अपने अधिकार में ले।

* * *

नेपाल निवासी हिन्दुओं को ईसाई लोग धड़ाधड़ ईसाई बना रहे हैं। वहाँ ईसाई मत के प्रचार को रोकना चाहिए। वहाँ पहले तत्कालीन नेपाल सरकार तो आर्यप्रचारकों के साथ बड़ी कठोरता का व्यवहार किया था, अब वह ईसाई मत को वहाँ क्यों पनपने दे रही है। आर्यसमाज को इस ओर सतर्क होने की आवश्यकता है हिन्दू महासभा और संघ किधर सो रहे हैं।

* * *

हमारी सरकार के राजदूत विदेशों में रहते हैं, ये दूत प्रायः विदेशी रंग में रँगे होते हैं। इससे विदेशों में भारतीयता का अच्छा प्रभाव नहीं पड़ पाता। विदेशों में ऐसे राजदूत भेजे जायँ जो भारतीयता के भक्त ही नहीं उसे अपने जीवन में ढालने वाले भी हों। इससे विदेशी लोग अवश्य प्रभावित होंगे और भारतीयता का गौरव अनुभव करेंगे।

आशा है, मेरे इन सुझावों पर सम्बन्धित महानुभाव अवश्य विचार करने की कृपा करेंगे।

राममोहन, चदौसी।

——

राष्ट्रपति का भाषण

गत ३० अगस्त को राष्ट्रपति श्री डा० राजेन्द्रप्रसादजी ने हैदराबाद की उस्मानिया यूनिवर्सिटी में हिन्दी प्रचार के सम्बन्ध में इस प्रकार भाषण दिया।

हैदराबाद (दक्षिण) ३० अगस्त। "अहिन्दी भाषा भाषियों के शिक्षा व्यवस्था में कैसे और किस दर्जे में हिन्दी शिक्षा को दाखिल किया जाय, इस बात को बिना देर किए तय कर लेना चाहिए। और फिर जो भी योजना तय पावे इसको अमल में लाने के लिए कदम उठाए जाने चाहिए, जिससे कि संविधान ने जो मियाद मुकर्रर की है उसके खत्म होते-होते हम संघ के सरकारी प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी के बिना भी काम चला सकें।" यह है वह अपील जो भारत के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने आज उस्मानिया विश्वविद्यालय के विशेष स्नातक समारोह में भाषण देते हुए की। यह समारोह राष्ट्रपति को कानून के डाक्टर की सम्मान सूचक पदवी से विभूषित करने के लिए आयोजित किया गया था। अपने भाषण के प्रारम्भ में राष्ट्रपति ने विश्वविद्यालय द्वारा उर्दू को शिक्षा का माध्यम बनाने के सब प्रथम क्षण पर खुशी प्रकट की और देश की भाषा नीति पर प्रकाश डाला। आपने कहा कि लोकतंत्रात्मक समाज की स्थापना के लिए यह आवश्यक है कि हमारी प्राथमिक, माध्यमिक व विद्यालय की शिक्षा का माध्यम मातृभाषा ही होना चाहिए। किन्तु आजकल मातृभाषाओं की उन्नति के लिए भाषा शुद्धि का जो आंदोलन चल रहा है, उसका राष्ट्रपति ने विरोध किया और कहा:—"शब्दों, मुहाविरों या किन्हीं व्याकरण के नियमों का बहिष्कार केवल इसी कारण न कर दिया जाय कि वे बाहर से उधार आगए हैं यह बात महज कामयाब ही न होगी बल्कि भाषा को गरीब भी बना देगी। अगर किसी लफ्ज को जनता बखूबी समझती है तो कोई वजह नहीं कि उसको इसी आधार पर निकाल बाहर किया जाय कि वह विदेशी है।"

——

आर्यजगत

—आयसमाज माटुंगा बम्बई में दयानन्द-विद्यालय के छात्रों में २८ अगस्त को प० धर्मवीर आय झण्डाधारी का भाषण हुआ।

- आयसमाज सहपऊ के सदस्य श्री दुर्वीप्रसाद और श्री गौरीशङ्कर गुप्त के पुत्रों के नामकरण वैद्य राजबहादुरजी 'सरस' ने वैदिक विधि से कराये, सुन्दर व्याख्या भी की।

मार-सूचनाएँ

—श्री प० हरिदत्त शास्त्री, एम० ए० लिखित "अन्त्येष्टि कर्म संस्कार-विधि" पुस्तक निम्नलिखित पते पर बिना मूल्य मिलती है।

सेठ गोपालदास सेकसरिया, श्री महालक्ष्मी आयल मिल्स लि०
जीवनी मण्डी, आगरा।

—१५ अगस्त को शान्ति आश्रम लोहरदगा (राँची) में स्वतन्त्रता दिवस समारोहपूर्वक मनाया गया।

—मटौर-दौराला (मेरठ) का दयानन्द वेद-प्रचार-मण्डल बड़ी तत्परता से वेद प्रचार कर रहा है। स्वामी सम्पूर्णानन्दजी और स्वामी अभयानन्दजी का प्रयत्न सराहनीय है।

—आगामी ६ सितम्बर को देश में हिन्दी के उन्नायक स्वर्गीय भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजी की पवित्र स्मृति में जयन्ती मनाई जायगी।

—हर्ष की बात है कि आगामी आयमहासम्मेलन के अवसर पर श्री प० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल वृन्दावन की अध्यक्षता में एक बड़ा यज्ञ भी होगा। आशा है, इस यज्ञ के करने में ऋषि प्रोक्त प्राचीन वैदिक यज्ञपद्धति का ही प्रयोग किया जायगा।—आत्मानन्द भारती

—आर्यसमाज डालटेन गंज (पलामू विहार) ने आर्यमित्र के १० नये ग्राहक बनाने की सूचना दी है। इसके लिए अनेक धन्यवाद। —व्यवस्थापक

—कोई ऐसी व्यवस्था काम में लाई जानी चाहिए जिसके आधार पर छोटे-बड़े आर्य विद्वान् निःशुल्क रूप से आर्यसमाजों को लाभान्वित कर सकें या केवल मार्ग व्यय ही देना पड़े। प्रत्येक समाज के चन्दे में प्रचारार्थ निधि तयार की जाय या और कोई उपाय सोचा जाय।

—डा० बैजनाथप्रसाद वर्नवाल।

निर्वाचन

—गुरुकुल छात्रोपकारिणी सभा-गुरुकुल वैद्यनाथ, प्रधान—श्री भगवानजी विशारद और मन्त्री—श्री विद्यानन्दजी

—आयसमाज चौपार (शोलापुर)—प्रधान-श्री भानुदास आर्य और मन्त्री—श्री दत्ताराम आय।

—आर्यकुमारसभा चन्दौसी—प्रधान—श्री ला० मदनमोहनलालजी और मन्त्री—लाला मदनगोपालजी।

आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य-प्रदेश, नागपुर—प्रधान—माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्त और मन्त्री—श्री प्रो० इन्द्रदेवसिंहजी।

—आर्यसमाज हुमायुपुरी प्रधान—श्रीशिवनारायण वर्मा, असिस्टेण्ट सिविलसर्जन, और मन्त्री—श्री राजलिङ्गम और श्री एल० वी० शर्मा।

—आ० स० कर्नलगंज (गोंडा) प्रधान—पं० वेणीदत्तजी और मन्त्री—मु० रामाश्रयलालजी।

—

उत्सव-सूचनाएँ

—आ० स० पानीपत का वार्षिकोत्सव १२, १३ तथा १४ अक्टूबर को मनाया जायगा।

—आ० स० बरबीघा (मुंगेर) की रजत-जयन्ती २८, २९, ३० तथा ३१ दिसम्बर को मनायी जायगी, स्वागताध्यक्ष महाशय शंकर प्रसाद गुप्त और स्वागत-मन्त्री—प० हरगोविलाल आर्य चुने गये हैं।

—गुरुकुल वैद्यनाथधाम का उत्सव १२ से १५ अक्टूबर तक होगा। वहाँ की छात्रपरिषद् अपने उद्देश्यानुसार साहित्य और सेवा-काय में संलग्न है।

—आ० स० तिलहर का स्वर्ण जयन्ती उत्सव ३१ अक्टूबर से २ नवम्बर तक मनाया जायगा। अनेक आर्य विद्वानों के पधारने की स्वीकृति आचुकी है।

—

शहनये शरियत की शरारत

क्रमागत

निम्नलिखित स्थानों के आर्य समाजों ने भी उपर्युक्त गन्दे अखबार द्वारा किये गये ऋषि दयानन्द सम्बन्धी घृणित प्रचार के विरुद्ध प्रस्ताव पास कर सरकार तथा आर्यसमाज की शिरोमणि सभाओं के पास भेजे हैं—

जमालपुर, कायमगंज, जलालाबाद (शाहजहाँपुर), महपऊ (मथुरा), काँठ (मुरादाबाद), मिसरिया (हरदोई), कनखल (सहारनपुर), खड़गपुर (फर्रुखाबाद), करनलगंज (गोंडा)।

—

कांगड़ी-गुरुकुल

१५ अगस्त को स्वतन्त्रता-दिवस बड़े समारोह पूर्वक मनाया गया आचार्य श्री प्रियव्रतजी का विद्वत्तापूर्ण भाषण हुआ। रात को श्री प० वागीश्वरजी विद्यालङ्कार की अध्यक्षता में साहित्य-गोष्ठी का सुन्दर आयोजन हुआ। उपाकर्म्म या श्रावणी पर्व भी यथाविधि मनाया गया। श्री आचायजी का गम्भीर भाव-भरा भाषण हुआ।

—

प्रधानजी का भ्रमण

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के माननीय प्रधान श्री मदनमोहन सेठ एम० ए०, जज १६ अगस्त को सभा के प्रधान मन्त्री श्री प० धर्मपालजी विद्यालङ्कार के साथ बदायूं पधारे। आप लोग आजकल प्रदेशीय आर्यसमाजों का निरीक्षण कर रहे हैं। बदायूं तथा उझानी के समाजों की ओर से आपको थैलियाँ भेंट की गयी।

—

वेद-प्रचार-सप्ताह

निम्नलिखित स्थानों की आर्यसमाजों तथा संस्थाओं में वेद-प्रचार-सप्ताह बड़े समारोह पूर्वक मनाया गया। हवन, भजन, प्रवचन और व्याख्यान हुए। उपाकर्म, बलिदान-दिवस और श्रीकृष्ण जन्माष्टमी भी मनाई गयी।

शान्ति-आश्रम लोहरदगा, कुरैया, खुर्द कलां (शाहजहाँपुर), नगीना, आर्य विवेकाश्रम अमसाहा, सहपऊ, दातागंज (बदायूँ), नजीबाबाद, स्त्री आर्यसमाज हसनपुर, साँडी (हरदोई), कायमगंज, काँठ (मुरादाबाद), नवाबगंज (कानपुर), शेखपुरा, गुरुकुल वैद्यनाथधाम, (एटा) आजमगढ़, जलालाबाद, (शाहजहाँपुर), टाँडा (रामपुर), नगौला (अलीगढ़), आर्य-प्रतिनिधिसभा सिन्ध, मानपुर (गया), झाँसी, स्त्री आ० स० सदरबाजार झांसी, तिलहर, चौन्दक (गढ़वाल)।

—

मसूरी की चिट्ठी

जब से श्री नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ मसूरी पधारे हैं, तब से आर्यसमाज तथा कांग्रेस के क्षेत्रों में अच्छी चहल पहल हो गयी है। शास्त्रीजी ने गत दो मासों में लगभग १५ व्याख्यान दिये। वेद-सप्ताह में भी आपके तथा श्री सत्यकेतु विद्यालंकार के विद्वत्तापूर्ण भाषण हुए। मसूरी में स्वतन्त्रता दिवस भी बड़ी धूम धाम से मनाया गया। सभी राजनैतिक विचार-धाराओं के लोग उसमें सम्मिलित थे। गांधी चौक में श्री राहुलजी ने झण्डा फहराया और छावनी में श्री नरदेव शास्त्री ने। वहीं और उन्हीं की अध्यक्षता में बड़ी सभा हुई। डीपो लेंग्वेज स्कूल के ढाई सौ पादरियों ने भी स्वतन्त्रता दिवस मनाया।

—

विविध-सूचनाएं

वेद-प्रचार-सप्ताह

१

श्रावणी से जन्माष्टमी तक वेद प्रचार सप्ताह १७ से २४ अगस्त तक निर्विघ्न समाप्त हो गया। सभा में अब तक वेद-प्रचार रुपया फण्ड में केवल तीन-चार समाजों से ही रुपया आया है। समाजों को चाहिये कि संगृहीत धन शीघ्र से शीघ्र सभा में भेजने का कष्ट करें।

२

सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन और उपदेशकों का कर्त्तव्य ?

सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन ६ अक्टूबर से १२ अक्टूबर १६५१ तक मेरठ नगर में होने जारहा है। सम्मेलन की तैयारियाँ प्रारम्भ हो रही हैं। सभास्थ समस्त अवैतनिक उपदेशकों, वैतनिक उपदेशकों तथा प्रचारकों को सूचित किया जाता है कि मेरठ में होने वाले सम्मेलन का जहाँ पर वे प्रचारार्थ जावें, बड़े वेग के साथ प्रचार करें और सम्मेलन में अधिक से अधिक प्रतिनिधि भिजवाने की प्रेरणा करें तथा धन-संग्रह करके भिजवावें। प्रतिनिधि-चित्र सार्वदेशिक सभा देहली के कार्यालय से मंगा लेवें।

३

वार्षिकोत्सव

मेरठ नगर में सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन ६ अक्टूबर १६५१ तक हो रहा है। यह दिन दशहरे के अवकाश के हैं। उत्तर प्रदेश में इन दिनों में कई समाजों के उत्सव होते हैं। यद्यपि उक्त तिथियों में हमारे प्रान्त में उक्त सम्मेलन जिसमें सहस्त्रों की संख्या में आर्य पुरुष (नर-नारी) एकत्रित होंगे—होने जा रहा है। इससे वंचित रहना उचित न होगा। अतः प्रान्त की समस्त आर्यसमाजों को सूचित किया जाता है कि उपर्युक्त तिथियों को बचाकर अपने-अपने समाज के उत्सव व कथाएँ आदि रखने की कृपा करें और सम्मेलन में सम्मिलित होने का कष्ट करें।

भृगुदत्त तिवारी, एम० ए०,
उपमन्त्री, सभा
आ० प्र० सभा, उत्तर-प्रदेश।

दयानन्द पुरस्कार

गत वर्ष मई मास में विज्ञापित किया गया था कि सार्वदेशिक सभा की ओर से "दयानन्द पुरस्कार" के नाम से प्रतिवर्ष १५००) आर्यसमाज विषयक उच्चकोटि की मौलिक कृति के लिये उसके लेखक को दिया जाया करेगा। लेखकों को यह भी प्रेरणा की गई थी कि वे अप्रैल १६५० से मार्च १६५१ तक प्रकाशित हुई अपनी कृतियों की एक-एक प्रति सभा कार्यालय में इस प्रकार भिजवायें कि वह ३१ जुलाई ५१ तक प्राप्त हो जाय। अब लेखकों की सुविधा के लिये यह तिथि ३० सितम्बर ५१ तक के लिये बढ़ा दी गई है। लेखकों को अपनी कृतियां भेजने में शीघ्रता करनी चाहिये।

—ज्ञानचन्द, मन्त्री
सा० दे० सभा, देहली

पुलिस कर्मचारी और आर्यसमाज

पिछले दिनों एक आर्य सज्जन ने मेरा ध्यान इस बात की ओर आकृष्ट किया था कि देहली में पुलिस के कर्मचारियों का आर्यसमाज के सत्संग में भाग लेना निषिद्ध है अतः जो कर्मचारी भाग लेने के लिये उत्सुक रहते हैं वे ऐसा करने से वंचित रह जाते हैं। मैंने इस बात की सत्यता जानने के लिये देहली के सुपरिन्टेन्डेन्ट महोदय को एक पत्र लिखा था। उन्होंने अपने पत्र नं० २५१४७ तिथि २७-८-५१ के द्वारा इस सूचना को असत्य बताया है:-

"With reference to your letter No. 1866 dated the 9th August 1951 I am desired to inform you that no restriction as mentioned by you is placed on the personnel of Delhi police."

—ज्ञानचन्द मन्त्री,
सार्वदेशिक सभा, देहली

आर्यवीर दलों से

आर्यवीर-दल के समस्त अधिकारियों को सूचित किया जाता है कि आर्यमहासम्मेलन मेरठ में ६ अक्टूबर से १२ अक्टूबर तक होने जारहा है। इस अवसर पर सेवा तथा प्रबन्ध के निमित्त यथेष्ठ आर्यवीरोंकी आवश्यकता होगी। इसलिये इस अवसर पर जो नागरिक आर्यवीर दल सेवार्थ, मेरठ आना चाहें वे अपने आने वाले वीरों का तुरन्त सूचना कार्यालय को बलिदान भवन, नया बाजार देहली के पते पर भेज। आने वाले वीरों को निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है १-उन्हें आने-जाने का मार्ग व्यय स्वयं वहन करना होगा। २-उनकी वेष भूषा (यूनीफार्म) दल के विधानानुसार पूर्ण होनी चाहिए। ३-सम्मेलन के अवसर पर उन्हें सैनिक अनुशासन में रहना होगा। ४-आने वाले आर्य वीरों के भोजन का प्रबन्ध सम्मेलन की ओर से होगा। ५-बिना स्वीकृति प्राप्त किए कोई भी आर्य सेवार्थ आने का कष्ट न करें।

ओम्प्रकाश प्रधान सेनापति,
आर्यवीर-दल, देहली

गुरुकुल बिरालसी

सम्प्रति गुरुकुल बिरालसी आ० प्र० सभा उत्तर प्रदेश के अधीन है, और पठन-पाठन का प्रबन्ध भी सुचारुरूप से चल रहा है। अतः आर्यजनता को चाहिये कि वह अपनी सन्तान को गुरुकुल में प्रविष्ट करके लाभ उठावे। अन्यान्य छात्र भी जो कि काशी, सम्मेलन (प्रयाग), पञ्जाब इत्यादि की संस्कृत या हिन्दी परीक्षाऐं देना चाहें, स्वभोजन-व्यय देकर प्राइवेट रूप से लाभ उठा सकते हैं। भोजन व्यय न्यूनतम रक्खा है।

गंगादत्त वानप्रस्थी
व्यवस्थापक

आर्य उपदेशक सम्मेलन

अखिल भारतीय आर्य उपदेशक सम्मेलन के माननीय अध्यक्ष प० अयोध्या प्रसादजी वैदिक रिसर्चस्कालर के नेतृत्व में गत शरद ऋतु में जैसे दो मास के लगभग उत्तर भारत का निरन्तर प्रचार क्रम चला था ठीक उसी प्रकार गत जून मास से सम्मेलन के कार्यकर्त्ता प्रधान श्री स्वा० अभेदानन्दजी' महाराज के संरक्षण में यह क्रम दक्षिण भारत में चल रहा है।

श्री स्वामी अभेदानन्दजी पीछे लगभग एक मास नेपाल भ्रमण के लिये सम्मेलन का मिशन लेकर गये और वहाँ की स्थिति का गम्भीर अध्ययन करके लौटे। नेपाल में आर्यसमाजिक प्रचार से पूर्व हिन्दी प्रचार करने और उसके साथ-साथ यह सांस्कृतिक कार्यक्रम आरम्भ करने की भी सम्मेलन के प्रमुख कार्यकर्त्ता आजकल एक योजना बना रहे हैं। आजकल हैदराबाद राज्य के तेलगाना क्षेत्र में सम्मेलन के प्रधान मन्त्री श्री प्रकाशवीर शास्त्री और मन्त्री श्री प० मनोहरलालजी आदि का भ्रमण चल रहा है। सितम्बर के आरम्भ में श्री स्वा० अभेदानन्दजी महाराज के साथ श्री बंशीलालजी व्यास, श्री प० मनोहरलालजी, प्रकाशवीर शास्त्री आदि महानुभाव पूना बम्बई एवं गुजरात के प्रमुख नगरों का भ्रमण करते हुए गोआ, पाण्डुचेरी और कच्छ आदि स्थानों पर भी जहाँ आर्यसामाजिक संगठन नहीं है जायेंगे। राजनीति की समस्याओं में उलझा दक्षिण भारत सांस्कृतिक और नैतिक प्रचार के लिये आर्यसमाज के प्रचार का हृदय से स्वागत करता है। सम्मेलन का तृतीय वार्षिक अधिवेशन बम्बई नगर में शिवरात्रि पर होगा जिसके लिये इधर अभी से पर्याप्त उत्साह है।

धार्मिक परीक्षायें

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की ओर से सिद्धान्त सरोज, रत्न, भास्कर, शास्त्री और वाचस्पति की पांचों धार्मिक परीक्षायें आगामी जनवरी मास में समस्त भारत में होंगी। आवेदन पत्र भेजने की अन्तिम तारीख १५ नवम्बर है। नवीन पाठविधि और आवेदनपत्र निम्न पते से मुफ्त मगाये जा सकते है। गतवर्ष इन परीक्षाओं में लगभग ६००० छात्र-छात्रायें बैठे थे। समस्त आर्यसमाजों और आर्य संस्थानों में इनके केन्द्र स्थापित होने चाहिये। इन परीक्षाओं में बालक, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सभी बैठ सकते हैं।

निवेदक :—

डा० सूर्यदेव शर्मा, एम० ए० डी० लिट्

परीक्षा मन्त्री,

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्, अजमेर।

श्रीमद्भगवद्गीता

पुरुषार्थबोधिनी टीका

लेखक प० सातवलेकर। इस १००० पृष्ठों के विशाल ग्रन्थ में (१) अर्जुन के विषाद का कारण, (२) विश्वरूप दर्शन का रहस्य, (३) गीतोपदेश के साथ वेदोपदेश की तुलना और (४) गीतोपदेश को व्यवहार में लाने का अनुष्ठान करने की रीति बताई है। किसी अन्य टीका में ये स्पष्टीकरण नही मिलेंगे। गीतोपदेश से राज्य-शासन कैसे सफल हो सकता है, यह इसी टीका में पाठक देखेंगे। मूल्य १५), डाक व्यय १॥) मूल्य पेशगी म० आ० द्वारा ११।) भेजिये।

स्वाध्याय-मण्डल, आनन्दाश्रम किला-पारडी, (जि० सूरत)

हर स्त्री माँ बन सकती है
एक बच्चे की कीमत सिर्फ
१५।=)

१ दिन में अलिया गर्भ की गारंटी बेऔलाद माता-बहिनो के लिए स्वर्ण अवसर। १ बांझ (बन्ध्या) २—काकवन्ध्या यानी १–२ औलाद होकर बन्द होजाना, ३—मृतवत्सा यानी सन्तान हो होकर मर जाना या ५—कन्या ही कन्या होना। उपरोक्त एव दोष निवारण के लिए आज ही परीक्षा करें।

नपुंसकता
केवल एक दिन में दूर

चाहे कैसा सुस्त, नाकारा, कमजोर नपुंसक (नामर्द) हो गया हो सिर्फ एक दिन में बिना तकलीफ नपुंसकता (नामर्दी) दूर की गारण्टी। लाभ न होने पर कीमत वापस। आर्डर के साथ एडवान्स और उत्तर के लिए जवाबी पत्र आना लाजिमी। मूल्य १२॥) डाक व्यय अलग।

पता—राजवैद्य डा० जौहरी
कृष्ण अस्पताल, हरदोई, (यू० पी०)

आपकी दैनिक आवश्यकता
शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित—जगत् प्रसिद्ध
शुद्ध सुगंधित हवन-सामग्री
नमूना मुफ्त मंगाकर अवश्य परीक्षा करिये

पता—सुन्दरलाल रामसेवक शर्मा
शुद्ध सुगन्धित हवन सामग्री भण्डार
मु० पो० असौली (फतेहपुर)

आर्यमित्र
में
विज्ञापन देना
व्यापार की उन्नति करेगा

हकीम तुलसी प्रसाद अग्रवाल अलीगढ़ की
असली मीठी
बालजीवन घुट्टी
बच्चो की हर एक बीमारी को दूर करती
कमजोर बच्चो को ताक़त वर बनाती,
जरासी रोजाना चटादेने से बच्चे कभी बीमार
नही होगे दाँत आसानी से निकल आवेगे।
— मू० शी० ।> दर्जन २॥) डा० व्य० अ० —
सब जगह बिकती है नकली घुट्टियों से बचो।
नए सौदागर नमूना मुफ्त मगावे।
पता. बाल जीवन कार्यालय अलीगढ़ यू० पी०

आवश्यकता है

श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आगरा की योग्य कन्याओं के लिए योग्य शिक्षित व्यवसाय से लगे हुए आर्य वरों की आवश्यकता है। जिनकी आयु २५ वर्ष से अधिक न हो। २=) विवाह-फार्म का मूल्य भेजकर, फार्म मँगा कर, भर कर भेजिये।

मन्त्री
श्रीमद्दयानन्द अनाथालय,
आगरा।

बादाम रोगन
सौ प्रतिशत शुद्ध और प्रामाणिक
खाने और लगाने के लिये।

नमूना	॥।=)
छोटी शीशी	१॥।)
बड़ी शीशी	६॥)

आज ही आर्डर दीजिये।
गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरद्वार)
सोल एजेन्सी, कुलदीपचन्द,
सत्यपाल सामा रावतपाड़ा आगरा,

आवश्यकताएं

सुन्दर स्वस्थ, टेन्थ पास और गृहकार्य में दक्ष आर्य कायस्थ कन्या १७ वर्षीय के लिये योग्य २५ वर्षीय आर्य वर की आवश्यकता है। विशेष योग्य होने पर जाति बन्धन तोड़कर भी सम्बन्ध हो सकेगा। वर शिक्षित, स्वस्थ किसी सरविस में ... या घर पर ही सम्पन्न हो। २४

पता—प० द्वारिकाप्रसाद शर्मा,
उपदेशक
C/o बा० भगवतीप्रसादजी, वकील
बड़ादेव मातवरगंज, आजमगढ़।

वर चाहिए

कुमारी सुशीला देवी आयु १६ वर्ष दर्जा ७ तक पढ़ी हुई के लिए वर की आवश्यकता है। कन्या सीना-पिरोना तथा गृहकार्य में दक्ष है। इसके पिता श्री मुन्नीलालजी गर्ग गोत्री अग्रवाल वैश्य हैं। रेलवे में २२०) रु० मासिक पर नौकर हैं। विवाह वैदिक रीत्यनुसार जाति-बन्धन तोड़कर होगा। ३४

पत्र व्यवहार का पता:—
हृदयनारायण,
बक्शीपुर, गोरखपुर।

आवश्यकता है—एक अध्यापिका की जो प्रभाकर, विद्याविनोदिनी आदि परीक्षाओं के लिए कन्याओं को साधारण विषयों में तैयार करा सके। पूर्ण विवरण और न्यूनतम वेतन दर्शाते हुए निम्न पते पर पत्र-व्यवहार करें।

मन्त्री-आर्यसमाज,
मंडी धनौरा,
(मुरादाबाद)

श्री बल्लनलाल आयु २२ वर्ष इन्ट्रेंस पास, रेलवे नौकरी वेतन ११०) मासिक स्वस्थ, सुन्दर के निमित्त एक कन्या चाहिये। वर के पिता श्री मुन्नीलालजी रेलवे में २२०) मासिक पर नौकर हैं। गर्ग गोत्री अग्रवाल वैश्य हैं। विवाह जाति-पाँति तोड़कर भी हो सकेगा। ३४

पता—हृदयनारायण,
बक्शीपुर-गोरखपुर।

आर्य समाज हापुड़ को एक पुरोहित की आवश्यकता है। जो वैदिक धर्म का प्रचार भी कर सके, और संस्कार कराने में दक्ष हो। वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा।

पता—श्रीरामचन्द्र माथुर,
मंत्री आर्यसमाज, हापुड़ (मेरठ)

विधवाश्रम मोतीकटरा आगरा को योग्य विधवाओं के लिए योग्य सम्पन्न वरों की आवश्यकता है। जिनकी आय १५०) मासिक से कम न हो। आर्यवरों को ही विशेषता दी जायगी।

पत्र व्यवहार का पता:—
मंत्री विधवाश्रम
आगरा

कन्या-गुरुकुल महाविद्यालय हाथरस में कन्याओं के आश्रम (छात्रावास) के लिए एक योग्य आश्रम अधिष्ठात्री की शीघ्र आवश्यकता है। जो देवी या माता समाज और सार्वजनिक कार्य का अनुभव रखती हों, तथा आश्रम व्यवस्था को नैतिक रूप में चला सकें, वह निम्न पते पर पत्र व्यवहार करें। वेतन योग्यतानुसार दिया जायेगा। स्वाध्यायशील और समाजसेवी अवैतनिक माताओं को विशेषता दी जायेगी। तथा गुरुकुल उनका आभारी होगा।

लेडी डाक्टर हरदेवीजी शर्मा,
मु० पो० हाथरस (अलीगढ़)

देहली के एक प्रतिष्ठित जैन परिवार के लिए एक गृहपरिचारिका की आवश्यकता है, जो बच्चों की देख-भाल कर सके एवं रसोईघर का प्रबन्ध सम्हाल सके। जैन महिला को विशेषता दी जायेगी।

गर्मी के दिनों में पहाड़ पर एवं सर्दी में देहली रहना होगा—भोजन व रहने की सारी सुविधाओं के साथ साथ अच्छा वेतन दिया जायेगा। आवेदन पत्र भेजें—३३–३५

श्री एस० पी० जैन
पोस्ट बक्स नं०–११६७, देहली

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, ब्रह्मदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ओ३म्

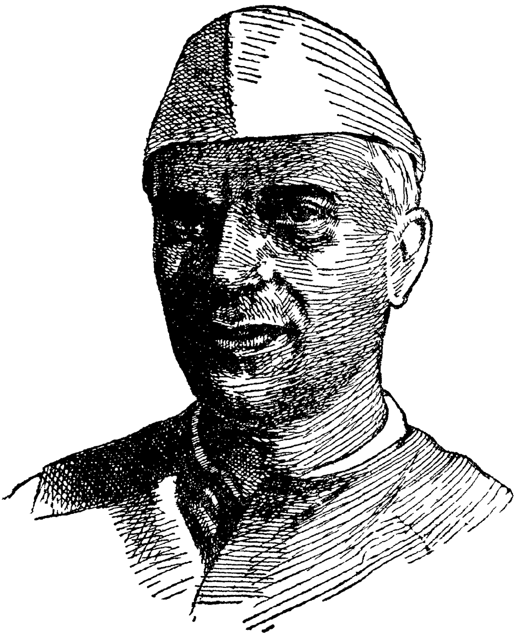
आर्य-मित्र

• ARYA-MITRA, AGRA •

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

संचालक-आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ

आगरा, १३ सितम्बर १९५१



श्री जवाहरलाल नहरू

महासमिति ने आपको पाचवीं वार कांग्रेस का अध्यक्ष चुना है।

उम्मेदवार कौन हो?

आने वाले आम चुनावों के उम्मेदवार को सबसे पहले ईमान दार होना चाहिये, साथ ही उसम योग्यता भी हो। वस्तुत कांग्रेस का टिकट तो उस ही दना चाहिय जिसन आवेदनपत्र नहीं भजा क्योंकि उसे इसकी ख्वाहिश ही नहीं। फिर योग्य व्यक्तियों को तो विना मांग ही टिकट दना चाहिये भले ही वे कांग्रेस न हो। यदि हम समझेंगे कि अमुक व्यक्ति योग्य है तो हम उसे ही टिकिट देंग, इस बात का विचार न करंग कि उसने आवदनपत्र भेजा है या नहीं।

—श्री नेहरू

देश-विदेश के समाचार

—दिल्ली, विगत एक मास से उत्पन्न कांग्रेस-संकट समाप्त हो गया है। ८, ९ सितम्बर को काँग्रेस महासमितिने अपने दिल्ली अधिवेशन में राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन का प्रधान-पद से त्याग पत्र स्वीकार कर प्रधान मन्त्री जवाहरलाल नेहरू को अध्यक्ष का भार सौंप दिया है। काँग्रेस की वर्तमान दशा में सुधार और जनाकर्षण उत्पन्न हो सके इस दिशा में सक्रिय प्रयत्न करने के उद्देश्य से आगामी १७, १८ अक्टूबर को दिल्ली में काँग्रेस का विशेषाधिवेशन बुलाने की घोषणा की गयी है।

—काश्मीर विधान परिषद् के ७५ सदस्यों में से ४३ निर्विरोध निर्वाचित हो गये हैं। यह घटना काश्मीर के भारत समर्थक दृष्टिकोण की परिचायक है।

—भारतीय संसद में ग श्रेणी के राज्यों में प्रजातन्त्री शासन स्थापित करने के सम्बन्ध में कानून बना दिया गया है। अब भोपाल, विन्ध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, अजमेर और कुर्ग में चीफ कमिश्नरों के साथ निर्वाचित प्रतिनिधि शासन चलायेंगे सार्वजनिक नेता भी चीफ कमिश्नर बन सकेंगे।

—नागलोई (दिल्ली) में भावी चुनावों की रूप-रेखा समझाने के लिये नकली चुनावों का परीक्षण किया गया, जो पर्याप्त सफल रहा।

—अफगानिस्तान के प्रधान मन्त्री भारत में आये, उनका देश में सर्वत्र भव्य स्वागत किया गया। भारतीय संसद में उन्होंने भाषण देते हुए भारत और अफगानिस्तान के सांस्कृतिक सम्बन्धों पर प्रकाश डाला और कहा कि यद्यपि हमारी सीमायें नहीं मिलती हैं तथापि हमारे दिलों में एक दूसरे के लिये बहुत मुहब्बत है। अफगान प्रधान मन्त्री ने भारतीय सभाओं में सर्वत्र हिन्दी में बोलकर अपने भारत प्रेम का परिचय दिया।

—भारत के शिक्षा मन्त्री मौलाना आजाद ने संसद में बताया कि राष्ट्रभाषा हिन्दी के व्यापक प्रचार की दृष्टि से अखिल भारतीय हिन्दी शिक्षा समिति की स्थापना करदी गयी है समिति शीघ्र ही अपना कार्य आरम्भ कर देगी।

—भारत के चुनाव कमिश्नर श्री सुकुमार सेन ने आगामी चुनावों की तिथियाँ घोषित करदी हैं। २५ अक्टूबर से हिमाचल प्रदेश में चुनाव आरम्भ हो जायेंगे, देश के मैदानी प्रदेश में ३ जनवरी ५२ से २४ जनवरी तक निर्वाचन सम्पन्न हो जायेंगे।

—लखनऊ में उत्तरप्रदेशीय जन संघ की स्थापना कर दी गयी है। उसके अध्यक्ष अवागढ़ के राव कृष्णप्रताप सिंह बनाये गये हैं।

—दिल्ली, काश्मीर समस्या का समाधान करने के लिये नियुक्त प्रतिनिधि डा० ग्राहम ने अपने मिशन में असफल होकर जेनेवा जा रहे हैं। भारत और पाकिस्तान के मध्य वार्तालापके बाद अब आप सुरक्षा परिषद् के लिये रिपोर्ट भेजेंगे जिस पर सुरक्षा परिषद् निकट भविष्य में ही विचार करेगी।

—दिल्ली में पख्तूनिस्तान दिवस मनाते हुए पख्तून जिरगे के अध्यक्ष ने कहा कि पख्तून पाकिस्तान की ओर से कश्मीर में कदापि नहीं लड़ेगा। पाकिस्तान की सरकार ने खान बन्धुओं को जेल में रखकर अपने में हमारा विश्वास खो दिया है।

—श्रीनगर में भाषण देते हुए काश्मीर के उप प्रधानमन्त्री बख्शी गुलाम मुहम्मद ने कहा कि काश्मीर हमारे पास एक अमानत है हम जान की बाजी लगाकर भी रक्षा करेंगे।

—दिल्ली, आन्ध्र प्रान्त निर्माण की घोषणा २ अक्टूबर से पूर्व करदी जाय इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये आन्ध्र के श्री स्वामी सीताराम ने जो अनशन कर रक्खा है उसे समाप्त करने की प्रार्थना राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद और प्रधान मन्त्री पण्डित नेहरू तार भेजकर कर चुके हैं। स्वामीजी २५ दिन से अनशन कर रहे हैं।

—दिल्ली, संसद में वनस्पति घी निरोधक ठाकुर दास भार्गव के बिल पर विचार हुआ, सरकार ने कहा कि ३॥ करोड़ की पूंजी वाले उद्योग को सहसा समाप्त नहीं किया जा सकता है।

—अमृतसर, पाकिस्तानी युद्धोन्माद के कारण पिछले दिनों पंजाब सीमान्त में जो आतंक और भय व्याप्त हो गया था वह अब सर्वथा समाप्त हो गया है। भारतीय सीमान्त की जनता पूर्ववत् जीवन बिता रही है।

—शिमला, भारतीय बांध योजना के अन्तर्गत नांगल का बांध बन कर तय्यार हो गया है, इसका निर्माण दिसम्बर ४६ में आरम्भ हुआ था, निर्माण में ३॥ करोड़ रुपया व्यय हुआ है। विद्युतशक्ति का उपयोग १९५२ से ही आरम्भ हो जायगा, नहरों से सिंचाई ५४, ५५ में सम्भव हो सकेगी। बांध में २४००० एकड़ जमीन को एक फुट ऊंचा पानी देने की सामर्थ्य है।

—सैन्फ्रासिस्को समाचार के अनुसार ८ सितम्बर को सैन्फ्रासिस्को जापान शान्ति सन्धि सम्मेलन में जापान शान्ति सन्धि के अमेरिकन मसविदे पर ४८ राष्ट्रों ने हस्ताक्षर कर दिये। रूस ने सन्धि का जोरदार विरोध किया साथ ही पोलैण्ड और चैकोस्लोवाकिया ने भी विरोध किया है, इस प्रकार उपस्थित देशों में से इन तीनों ने मसविदे पर हस्ताक्षर नहीं किये और कहा कि इस शान्ति सन्धि में भावी महायुद्ध के बीज विद्यमान हैं जो कभी भी अंकुरित हो सकते हैं। जापान के प्रधान मन्त्री योशीदा ने यद्यपि सन्धि को जापान की ओर से स्वीकार किया है तथापि उन्होंने सन्धि से अपना असन्तोष व्यक्त कर दिया है। चीन को सम्मिलित न करने और भारत के सम्मिलित न होने से इस सन्धि का एशिया की जनता की दृष्टि में कोई महत्व नहीं रह जाता, हमारे प्रधान मन्त्री बहुत पहले ही भारत का दृष्टिकोण रख चुके हैं।

—ईरान में चल रहे तेल सम्बन्धी विवाद में यद्यपि इस सप्ताह कोई प्रगति नहीं हुई है तथापि ईरानी संसद में प्रधान मन्त्री डा० मुसद्दिक ने घोषणा की है कि यदि ब्रिटेन समझौता चाहता है तो १५ दिन के अन्दर वार्ता पुनः आरम्भ करदे अन्यथा ईरान से अंग्रेजों को निकलना ही पड़ेगा।

—ब्रिटेन में स्त्रियों को भी पुरुषों के समान वेतन मिलना चाहिये इसके लिये प्रधान मन्त्री एटली से एक प्रतिनिधि मण्डल मिला है। और प्रार्थना की है कि ब्रिटेन में समान वेतन दिया जाना चाहिये।

आर्यः स्वमिव परं मन्यते

आर्यमित्र

आगरा, भाद्रपद शुक्ल १३ संवत २००८ वि०, गुरुवार, ता० १३ सितम्बर १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५१

आ त्वा हार्षमन्तरेभूर्ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः ।
विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत ॥
ऋ० १०।१७३।१

हे नृपति वरण कर हमने तुझे बनाया
हो तेरी सदा प्रजा पर पूरी छाया
हो सुदृढ़ स्वस्थ सुस्थिर नित राज्य चलाना
विचलित या शिथिल न होकर तू गिरजाना

'नेता' नहीं हैं

आर्यसमाज मनुष्य-पूजा में विश्वास नहीं रखता, 'गुरुडम' का तो वह घोर विरोधी है। 'बाबा वाक्य प्रमाणम्' की निर्बल नीति या दुर्बल दलील को भी उसने कभी नहीं अपनाया। फिर भी उसमें अपने नेताओं के लिए श्रद्धा-भक्ति और आदर के उच्च भाव रहे हैं। जिन व्यक्तियों ने तप त्याग द्वारा आर्यसमाज की सेवा की, आड़े वक्त में उसे स्नेह, सहानुभूति और सहायता का दान दिया उन्हें आर्यसमाज ने अपने पलकों पर बिठाया और हृदय में स्थान दिया। बड़े नेता ही नहीं जिले और नगर के स्थानीय आर्य नेता भी आर्यसमाज के श्रद्धाभाजन रहे। क्यों?—इसलिए कि वे आर्यसमाज की सेवा में अपने जीवन का बहुत-सा समय निःस्वार्थ भाव से लगाते और उसकी प्रगति को आगे बढ़ाते थे। उनमें त्याग की भावना काम करती थी और वे अनेक कष्ट सहकर और असह्य हानियां उठाकर भी समाज की सेवा में संलग्न रहते थे। ऐसे त्यागी-तपस्वी नेताओं को चाहे वे स्थानीय हों अथवा प्रान्तीय या अखिल भारतीय ख्याति के—आर्यजनता अपने आदर और श्रद्धा-भक्ति का पात्र समझती रही। वे जिधर ले जाते उधर ही वह जाती, वे जो कहते उसे ही वह करती थी। एक प्रकार से ये नेता ही उस समय आर्यजनता के सच्चे सेवक और पक्के पथ-प्रदर्शक थे। हमने देखा कि यदि जिले के किसी समाज में कुछ वैमनस्य होता आर्यसमाज में शिथिलता आती या कोई वैयक्तिक विवाद उठ खड़ा होता तो ये नेता ही वहां जाते और सारे वायुमण्डल को ठीक करके लौटते थे। उस समय आर्यजनता ही नहीं साधारण जनता भी आर्य नेताओं की ईमानदारी पर विश्वास करती और उन्हें समाज का सच्चा सहायक एवं हितैषी समझती थी।

हम कई बार कह चुके हैं कि नेता बनने के लिए व्यक्तित्व की आवश्यकता है। व्यक्तित्व का विकास या निर्माण तप त्याग से होता है। जिस नेता में जितना ही अधिक तप त्याग होता है, वह उतना ही बड़ा और आदरणीय समझा जाता है। आर्यसमाज में जब तक त्यागी-तपस्वी नेताओं या कार्यकर्ताओं की कमी नहीं हुई थी, तब तक इसकी वाणी में बल और कार्य-शक्ति में प्रभाव रहा। जानने वाले जानते हैं कि अमर शहीद श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी जो बात कहते थे देश के एक सिरे से दूसरे तक गूँज जाती थी, और सर्वत्र बड़े ध्यान से सुनी जाती थी। उस पर अमल भी होता था। श्री स्वामीजी के याचना करते ही धन भादों के मेघ की भाँति बरसने लगता था। सब ही धर्मों और विचारों वाले लोग उन्मुक्त हस्त हो आर्यसमाज के लिए दान देते थे। यही बात स्वर्गीय श्री महात्मा हंसराजजी की भी थी। ये दोनों ही महापुरुष आर्यसमाज के उच्चतम नेता थे, इनके अतिरिक्त प्रान्तीय और स्थानीय नेताओं के भी उद्योग, कथन और प्रयास व्यर्थ न जाते थे। नेताओं के साथ-साथ आर्यसमाज में बड़े-बड़े साधु-सन्त, संन्यासी और विद्वान भी थे, जिनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य और लक्ष्य आर्यसमाज का प्रसार और वैदिक धर्म का प्रचार करना था। उन्हें अपने उद्देश्य की पूर्ति में न अन्न की चिन्ता थी न वस्त्रों की फिक्र। रात-दिन आर्यसमाज का हित चिन्तन ही उनका ध्रुव ध्येय या पवित्र कार्य था।

दुर्भाग्य से अब वह परिस्थिति नहीं रही। नेताओं और साधु-सन्तों तथा त्यागी-तपस्वियों की संख्या अब आर्यसमाज में उंगलियों पर गिनी जा सकती है। वह अधिक नहीं, अत्यन्त ही न्यून, सीमित और परिमित है। फिर नेता कहाँ से आवें, सच्चे साधु-सन्तों के दर्शन किस प्रकार हों। निःस्वार्थ नेताओं और त्यागी साधु-सन्तों की कमी से किसी समाज की जो दुर्दशा हो सकती है वही आज आर्यसमाज की हो रही है। दूर जाने की आवश्यकता नहीं, कांग्रेस को ही देखिये। कितने छोटे-बड़े त्यागी-तपस्वी नेता इसमें थे, परन्तु आज वह भी भ्रष्टाचार और स्वार्थान्धता का केन्द्र बनकर अपना आकर्षण और प्रभाव खो बैठी।

यदि मेरठ आर्य महासम्मेलन आर्यसमाज को कुछ नेता दे सका तो उसकी सफलता निस्सन्देह और निश्चित है। नेता बनाने से नहीं बनते। 'अमुक महाशय नेता चुने गये' यह कह देने से कोई नेता नहीं बनेगा, बल्कि कुछ कार्य-निवृत्त व्यक्तियों को स्वयं आगे आकर अपने नाम प्रस्तुत करने होंगे, जो तन, मन, धन अर्पित करके आर्यसमाज की सेवा का पवित्र व्रत लें। त्याग-तपस्या की भावना अपने हृदय में भर कर कार्य-क्षेत्र में उतरें। ये ही सच्चे 'नेता' होंगे और इन्हीं की इस समय आवश्यकता है। ऐसे ही नेताओं के अभाव में आर्यसमाज शिथिलता और अकर्मण्यता की ओर दौड़ा जा रहा है।

भावी 'चुनाव-चक्र'

आजकल आने वाले आम चुनावों की चर्चा भारतीय गगन-मण्डल में गूँज रही है। उसी के लिये सारी तैयारियाँ और सरगर्मियाँ दिखाई दे रही हैं। बड़े बड़े प्रबन्ध और आयोजन किए जा रहे हैं। लोगों का खयाल है कि पिछले चुनावों में जो लोग चुने गये वे देश की हित-दृष्टि से अधिक सफल नहीं हुए। हमारा अनुमान है कि आगामी चुनावों में जो लोग चुने जायंगे उनका कार्यकलाप और भी निराशापूर्ण और असन्तोषजनक होगा। हम देखते हैं, अबकी बार चुनाव के मैदान में वे लोग भी खम ठोक कर कूद रहे हैं, जिनका स्वतन्त्रता के आन्दोलन से कभी कुछ भी सम्बन्ध नहीं रहा। यहां तक भी ठीक है, वे लोग भी सदस्यता की लालसा और लिप्सा में मुँह बाए हुए हैं, जिन्होंने बयालीस के आन्दोलन में बाग़ काटने वाली कुल्हाड़ी के 'बेंटे' का काम किया था। चुंगी की मेम्बरी की तरह ही अबकी बार इन आम चुनावों का रूप भी दिखाई देगा। जो अधिक द्रव्य खर्च कर सकेगा, वही विधान सभा की कुर्सियों पर जा बैठेगा। पार्लीमेंटरी बोर्डों को क्या चाहिए? अपनी हाँ में हाँ मिलाने वाले पार्टीबाज़! और यदि वे अपने चुनावों में रुपया खर्च कर सकें तब तो कहना ही क्या? चुपड़ी और दो दो! ऐसे सच्चे-सीधे धर्मावतार सदस्य पार्लीमेंटरी बोर्डों को और कहाँ मिल सकेंगे। रही उम्मेदवार मेम्बरों की योग्यता और गुण-गरिमा, इससे तो कोई सरोकार ही नहीं। राजनीति में गुणों की क्या जरूरत, वहाँ तो हाँ में हाँ मिलाने वाले बेउसूले व्यक्तियों की ही प्रायः आवश्यकता होती है। आज से चार-पाँच वर्ष पूर्व की बात है, चुनाव हो रहे थे, इन पंक्तियों के लेखक ने एक राजनैतिक नेता से पूछा, श्रीमान्, आपने तो अपनी पार्टी में प्रायः ऐसे ही लोग भर लिये हैं जो न भाषण दे सकते हैं और न विशेष सोच-विचार ही सकते हैं। नेताजी झिड़क कर बोले

तुम क्या जानो, इन बातों को। राजनीति में ऐसे ही आदमियों की जरूरत होती है जो आंख मींच और अक्ल मींच कर अपने नेता का अनुगमन करते रहें। उनके वोट की आवश्यकता है, बुद्धबल की नहीं। बात सीधी-साधी थी, समझ में आगयी। आज उसी अध्याय की पुनरावृत्ति होने जा रही है। पार्टी का पल्ला पकड़ कर पीछे-पीछे चलने वाले 'माननीय' मेम्बर खोजे जा रहे हैं, जो बड़भागी तिकड़म शास्त्र में दक्ष और पार्टीबाजी में प्रवीण होंगे, वे ही सफलता का तेजहीन ताज अपने विशाल भाल पर धारण कर सकेंगे। आश्चर्य तो हमें उन व्यक्तियों पर है जो गत चार पांच वर्षों से सरकारी मेशीनरी के मजबूत पुर्जे बने रहे और आज सरकार से असहयोग कर स्वय निर्लिप्त नारायण बन उसके दोषों की गिनती कराते फिरते हैं। मालूम नहीं पांच वष तक सरकारी वेतन और भत्ते का भरपूर कलेवा कर उनके हृदय में सरकार की आलोचना करने की यह नैतिक शक्ति का असीम सागर किस भावी स्वार्थ-सिद्धि के लिए उमड़ पड़ा है। कांग्रेस में ऐसे भी त्यागी-तपस्वी कार्यकर्ता हैं जिनके जीवन पर कट्टर से कट्टर आलोचक तक को कभी उंगली उठाने का अवसर नहीं मिला। परन्तु उन गरीबों को पूछता कौन है? उन्हे विधान-सभाओं में ले जाने की परवा किसे है? ऐसे सच्चे सात्विक लोग तो 'तिकड़म-शास्त्र' या पार्टी-प्रपंच के शत्रु ही सिद्ध होंगे। अतएव उनकी उपेक्षा करने में ही राष्ट्र की भलाई है उन्हें छोड़ देने में ही पार्लमेंटरी बोर्डों का कल्याण है।

राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री का सारा जीवन सार्वजनिक सेवा का जीवन है। वे सन् १९२० से कांग्रेस के सदस्य हैं, सदैव खद्दर पहनते और संयम का जीवन बिताते हैं। स्वतन्त्रता आन्दोलन में कारागार-यात्रा भी की है, बड़े त्यागी तपस्वी हैं। क्या ऐसे व्यक्ति असेम्बली आदि में जाने योग्य नहीं। आचार्य नरदेव शास्त्री बारह बार जेल गये, काल कोठरियों में रखे गये, बेड़ियां पहनाई गईं, परन्तु ऐसे त्यागी-तपस्वी को आज तक किसी ने कौंसिल-असेम्बलियों के योग्य न समझा। ज़रा शास्त्रीजी के नीचे लिखे शब्दों को पढ़िये—

"यह तो सोलह आने ठीक है कि मैं कहीं से खड़ा हो जाता और अड़ जाता तो असेम्बली में पहुच जाता। परन्तु मैं गुटबन्दी का आदमी नहीं हूं। लखनऊ जाकर नेताओं से मिलना, उनकी मिन्नतें करना, उन पर ज़ोर डलवाना, इत्यादि फ़न मुझमें नहीं है। फिर एक बार भी तो प्रान्त के 'हाई कमाण्ड' ने फूटे मुंह से मुझसे यह कभी नहीं कहा कि आप खड़े हो जाइये, हमारी आज्ञा है, यह होता भी कैसे? जब कि मुझमें चाटुकारिता जैसे अपेक्षित गुण का अभाव था।" श्री पं० रामदत्त शुक्ल एडवोकेट भी कांग्रेस के सेवक रहे हैं, आगरा के आर्य नेता श्री मथुराप्रसाद कक्कड़ एडवोकेट कई बार जेल गये, और सारे शहर का उन पर विश्वास है, परन्तु असैम्बली के योग्य वे कभी नहीं समझे गये १९४२ का क्रान्ति के सक्रिय कर्णधार और निर्भय नेता विशाल भारत सम्पादक श्री प० श्रीराम शर्मा की सदस्यता प्राप्त कर कोई भी विधान सभा-संसद अपनी गौरव-वृद्धि कर सकती थी। परन्तु ऐसे निस्पृह नेताओं की आवश्यकता क्या है। वहाँ तो दूध पीने वालों की जरूरत है। श्रीरामजी हाँ में हाँ मिलाना नहीं जानते, चाटुकारी का चार्ट भी उन्होने नहीं पढ़ा। दो चार नहीं ऐसे सैकड़ों सच्चे सात्विक कार्यकर्त्ताओं के नाम गिनाये जा सकते हैं, जो कांग्रेस के लिये मर मिटे परन्तु उन्हे 'हाई' या 'लोअर' किसी कमाण्ड ने पूछा तक नहीं। चाटुकारिता का उनमें गुण नहीं, तिकड़म शास्त्र पढ़ा नहीं, 'पार्टी-प्रपंच के दाव-पेचों को जानते नहीं'। ऐसी दशा में असैम्बलियों में वे ही लोग भरे जायंगे जो चुनाव-संग्राम के पटु पहलवान हैं, और जोड़-तोड़ लगाने में जिन्होने पूरी दक्षता प्राप्त करली है। जो लोग आशा लगाए बैठे हैं कि आगामी चुनाव अपेक्षाकृत कुछ अच्छे होंगे, उन्हे निराश होना पड़ेगा। लक्षण और निदान 'बद से बदतर' होने की ही सूचना दे रहे हैं।

ऐसी अवस्था में केवल एक ही उपाय है कि मतदाता गण उस व्यक्ति को वोट दें, जिसे वे सच्चा सेवक और ईमानदार समझते हैं। किसी दल या पार्टी के बहकाने-फुसलाने की जरा भी परवा न करें। सचमुच सारी शक्ति जनता के हाथ में है, वह चाहे तो अच्छे से अच्छे आदमी को असैम्बली आदि में भेज सकती है। बिरादरीबाजी, सम्प्रदायवाद, राजनैतिक पार्टी-प्रपंच किसी की कुछ भी नहीं सुननी चाहिए। निःसन्देह एक दिन कांग्रेस देश की विश्वासपात्र महान् संस्था थी, परन्तु अब वह अपनी स्वार्थपूर्ण प्रवृत्ति के कारण अपना गौरव गिरा चुकी। अब इस महासभा के संशोधन की आवश्यकता है। इसमें त्याग-तप की भावना लाने से काम चलेगा। महात्मा गांधी ने जो मार्ग दिखाया था, उससे वह बहुत दूर होगयी और इसमें प्रायः स्वार्थ-साधक लोग घुस पड़े। आने वाली स्थिति और भी भयावह दिखाई दे रहा है। कांग्रेस का नेतृत्व निस्पृह, निर्भय और निष्पक्ष नेताओं के हाथ में होना चाहिए, उसमें से वे सब तत्व निकाल कर फेंक देने चाहिएं जिनके कारण उसकी गौरव-हानि हुई है, और भ्रष्टाचार को सहायता मिली है। कांग्रेस के मुकाबले में जो दल या पार्टियाँ बन रही हैं, वे उस समय तक सफल नहीं हो सकतीं, जब तक कि उनके सदस्यों में नैतिकता और सदाचार का प्रवेश न हो। आर्यसमाज ऐसी प्रतिकूल परिस्थिति में कुछ काम कर सकता था, परन्तु वह तो स्वयम् शिथिलता और अकर्मण्यता के राजरोग में बुरी तरह ग्रस्त है, अतः उसे स्वयम् आत्मसुधार की आवश्यकता है।

अपराध-चिकित्सा

कारागारों में हमारे हजारों भाई बन्द हैं, इनमें कुछ व्यक्ति ऐसे भी हो सकते हैं जिन्होने अपराध किये ही नहीं अथवा किसी लाग-डाट के कारण यों ही जेलों में भर दिये गये। हमारा विचार है कि जेलों में जाकर अपराधियों का सुधार तो होता नहीं, उल्टी उनमें अपराध करने की कुप्रवृत्ति बढ़ जाती है। जो नवयुवक प्रारम्भ में एक घड़ा चुराने के कारण जेल जाते हैं वे वहाँ दूसरे कैदियों से मिलकर चोरी के आवश्यक और अपेक्षित हथकण्डे सीख, पक्के चोर बन जाते हैं। समझ में नहीं आता कि इस प्रकार के दण्डों में सुधार की भावना कैसे प्रवेश कर सकती है। कानून के कोड़े से भी अपराधों में कमी नहीं होती। हम देख रहे हैं कि ज्यों-ज्यों कानूनों की कड़ाई बढ़ती जाती है, त्यों-त्यों अपराधों में भी वृद्धि होती जाती है। जितने अपराधी जेलों में बन्द हैं, उनसे कई गुने पकड़ में न आने वाले अपराधी खुले-खजाने और दिन दहाड़े अपना कारबार चला रहे हैं। अपराधों की सच्ची चिकित्सा नैतिकता-प्रचार ही हो सकती है। जेलों और जेलों से बाहर नैतिकता प्रचार के लिये सुसंगठित और सफल उद्योग होना चाहिये। अपराध-निरोधक विभाग की ओर से जेलों में नैतिकता प्रचार की व्यवस्था की गयी थी परन्तु "स्वराज्य सरकार" को इस महत्वपूर्ण और उपयोगी कार्य में कुछ टके व्यय करना भी खटक रहा है। नैतिकता-प्रचारकों को तांगा भाड़ा तक देना बन्द कर दिया गया है। इस सम्बन्ध में झाँसी के प्रसिद्ध और ठोस कार्यकर्त्ता श्रद्धेय श्री स्वामी दिव्यानन्दजी महाराज का पत्र नीचे दिया जाता है, इससे अपराध समस्या पर कुछ प्रकाश पड़े बिना न रहेगा। स्वामीजी लिखते हैं—

"गत ३० अगस्त के 'आर्यमित्र' में जेल-प्रचार सम्बन्धी सम्पादकीय टिप्पणी पढ़ी, मैं बुन्देलखण्ड की चार जेलों में निरन्तर प्रचार-कार्य करता रहता हूँ, सरकार से एक पैसा भी नहीं मिलता, बल्कि इस प्रचार में साढ़े तीनसौ रुपये वार्षिक मुझे स्वयं व्यय करना पड़ता है, साहित्य भी वितरण करता रहता हूं। बन्दी जनों पर इस प्रचार-कार्य का इतना प्रभाव पड़ता है कि कभी-कभी तो अधिकारी लोग चकित रह जाते हैं। जिन बन्दियों की बुरी आदतें जेल के अधिकारी अनेक प्रयत्न करने पर भी नहीं छुड़ा पाते, वे व्याख्यान सुनकर अपने जीवन ही बदल रहे हैं। एक कुख्यात और भयंकर डाकू ने मेरे कई व्याख्यान सुनकर मुझे निम्न लिखित पत्र लिखा है—

"श्री श्री १०८ मान्यवर गुरुजी, आपका सेवक हरदास आपको चरण छूना कहता है। आपकी मीठी-मीठी बातों ने हमारा जीवन बना दिया। मुझे गुरूजी के चरणों की आशा है कि मेरी काया पलट करें, मुझे सीधा रास्ता दिखाने वाला सिर्फ एक आदमी मिला है। गुरूजी आपकी प्रेम-भरी मधुर वाणी ने पाप का पर्दा हटा करके ज्ञान

शिक्षा-समस्या

बीमारी का इलाज

श्री स्नातक भूदेवजी, सिद्धान्त शिरोमणि, एम० ए०

पिछले दिनों 'आयमित्र' के सम्पादकाय स्तम्भो में "गुरुकुल बृन्दावन बीमार है और उसकी चिकित्सा होनी चाहिये" शीर्षक एक भावुकता पूर्ण प्रार्थना अधिकारियों और जनता से की गयी थी, परन्तु किसी क्षेत्र में उसका कोई प्रभाव हुआ हो अभी तक दृष्टिगोचर नहीं हुआ। कितने आश्चर्य की बात है कि उत्तर-प्रदेश की लगभग एक सहस्र आर्यसमाजों का एक मात्र पुत्र गुरुकुल दशाब्दियों से रुग्णावस्था में पड़ा हुआ है और अनेकों चेतावनिया के बाद भी किसी का ध्यान उधर नहीं जाता।

गुरुकुल के लिये अच्छा प्रबन्धक न मिलने की जिस कठनाइ का वर्णन किया जाता है, वह निराधार बात है। प्रबन्धक और योग्य शिक्षक गुरुकुल को भी मिल सकते है, यदि उनको प्रचलित माप-दण्ड के अनुसार पारिश्रमिक दिया जावे और उनका पूर्ण सम्मान हो। गुरुकुल के लिये जिस अर्थ संकट की बात कही जाती है, वह बहुत कुछ अपने आप पैदा किया गया है। जिनके ऊपर संस्था का दायित्व है; वे पैसा जुटाने को तय्यार नहीं, तब पैसा कहां से और कैसे आवे ? उससे सम्बन्धित सभी व्यक्ति अपने हृदयो पर हाथ रख कर सोचें कि वे अपने दायित्व को कहाँ तक पूरा कर रहे हैं। पिछले दिनों गुरुकुल की प्रयोगशाला को लिमिटड कम्पनी का रूप देकर उससे गुरुकुल के आर्थिक लाभ का उपाय सोचा गया है। वस्तु स्थिति को दृष्टि में रखते हुए अभी इस कम्पनी से आर्थिक लाभ की आशा नहीं की जा सकती।

अब तक परम्परा यह चली आयी है कि आर्य प्रतिनिधिसभा गुरुकुल का एक मुख्याधिष्ठाता चुन देती है, और समझ लेती है कि "मांगो और खिलाओ" की नीति से वह गुरुकुल का संचालन कर ले जायगा। इस नीति के फल स्वरूप गुरुकुल के प्रायः सभी स्थायी कोष समाप्त हो चुके हैं, और गुरुकुल का घाटा साठ हजार से ऊपर पहुँच गया है। सभा ने अपनी इस नीति में परिवर्तन करने के लिये कभी गम्भीर प्रयत्न नहीं किया।

गुरुकुल का वार्षिक व्यय लगभग अस्सी हजार है। इसमें से आधा शुल्क में आजाता होगा, शेष चालीस हजार के प्रबन्ध का प्रश्न है। प्रान्त के एक सहस्र आर्यसमाज ४०) रुपये के औसत से वर्ष भर में इसकी पूर्ति कर सकते हैं, और कुछ दान भी आता ही रहेगा, परन्तु इस सबके लिये सभा की नीति में परिवर्तन होना आवश्यक है। सभा गुरुकुल के द्वैध शासन को समाप्त कर उसका सीधा संचालन अपने हाथ में लेले। गुरुकुल की शुल्क, दान आदि की सम्पूर्ण आय सभा के कोष में जमा हो और गुरुकुल के सभी व्यय सभा के कोष से किये जॉय। समाजो से प्राप्तव्य धन को सभा ही वसूल कराये सभा के पास मण्डलाधीश है, उपदेशक हैं, प्रचारक है, और साथ हो अनुशासनात्मक दण्ड-दान भी है।

इसके अतिरिक्त यदि सभा यह सोचती है कि इस प्रकार सम्पूर्ण व्यय की व्यवस्था कर सकना उसके वश की बात नहीं है तो उसे गुरुकुल के लिये अन्य विश्व विद्यालयों का-सा विधान बनाना चाहिये। वर्ष में निश्चित चन्दा देने वाले व्यक्ति सदस्य हों, और उन्हीं के द्वारा निर्वाचित-समिति के हाथ में प्रबन्ध का भार हो। प्रस्तावित विधान में आर्यसमाज के मौलिक सिद्धान्तो की संरक्षकता के लिये सभा के आवश्यक अधिकारों के महत्व को ध्यान में रक्खा जाय। इस शर्त के बाद जो धन-संग्रह करे या धन लगाये उसे प्रबन्ध में भाग मिलना ही चाहिये। सार्वजनिक प्रयत्नों से अनेक संस्थायें चल रही हैं, गुरुकुल भी चल सकता है।

मैं अपनी सम्पूर्ण सद्भावना और शक्ति के साथ सभा के अधिकारियो से प्रार्थना करता हूँ, कि वे इस विषय में शीघ्र और उचित कार्यवाही करें। वे या तो समस्त उत्तरदायित्व स्वय उठावें या दूसरों को उठाने दें।

[लेखक महोदय गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन के स्नातक है, अपनी शिक्षा-संस्था की उन्नति के लिये उनके प्रस्तुत विचार विचारणीय है। आर्य-समाज के भविष्य को उज्ज्वल बनाने के लिये हमें उसकी आधारभूत संस्थाओ को उन्नत बनाने का सदा प्रयत्न करते रहना चाहिये। यदि गुरुकुल जैसी संस्थाओ के संचालन में कोई कठिनाई आगयी है, तो उस पर गम्भीरता पूर्वक विचार कर सुधार के लिये प्रयत्नवान होना चाहिये। —सम्पादक]

का द्वार खोल दिया, ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि गुरुजी के चरणो में पहरा दू।" स्वामीजी के भाषणों से बन्दी के जीवन में जिन नैतिक भावनाओं का विकास हुआ वे अपनी कहानी स्वय कह रही हैं। स्वराज्य को सुराज्य बनाने वाले हमारे नेता क्या इस प्रचार पद्धति के मूल्य को समझेंगे और समस्त आवश्यक सुविधायें प्रदान करेंगे।

राजनैतिक रंग-मंच

चुनावों में आर्यसमाज का कर्त्तव्य

महात्मा आनन्द स्वामी का सन्देश

[महात्मा आनन्द स्वामी (प्रसिद्ध आर्य नेता महात्मा खुशालचन्द 'खुरसन्द') आजकल गंगोत्री में 'आत्म चिन्तन' और 'आत्मदर्शन' कर रहे हैं। उनसे जिज्ञासा की गयी थी कि वर्तमान संकट काल मे आर्यसमाज का क्या कर्तव्य है। महात्माजी ने इस सम्बन्ध में अपना जो सन्देश भेजा है वह निम्न प्रकार है। सम्पादक]

देश के वर्तमान सकट के समय कई लोग तो यह कह रहे है कि आर्यसमाज को इस समय राजनीति में कूद पड़ना चाहिए। मुझे यह सन्मति अच्छी नजर नहीं आती, तो फिर पूछा जायगा कि आर्यसमाज किस प्रकार इस समय भारत को बचा सकता है। किसी भी पार्टी के साथ नत्थी होना मैं आर्यसमाज के लिए हितकर नहीं समझता। आर्य-समाज को पार्टी पालिटिक्स की दलदल में फॅसना नहीं चाहिए, न 'डायरेक्ट इलेक्शन' में उम्मीदवार खड़ा करना चाहिए। अगर आर्यसमाज ने यह गल्ती की तो वह अपना प्रभाव खो बैठेगा। आर्यसमाज की पोजीशन एक सच्चे ब्राह्मण और सन्यासी की है इसे केवल पथ प्रदर्शन करना चाहिए और भारतवासियो को बतलाना चाहिए कि भारत के कौन-कौन व्यक्ति भारत की बागडोर सॅभालें। इसके सम्बन्ध में मेरठ में होने वाले आय-सम्मेलन में पूण विचार करके एक आल इण्डिया कमेटी बना देनी चाहिए। जितनी भी राजनैतिक या नीम पोलिटिकल पार्टियाँ भारत की असैम्बलियों के लिए उम्मीदवार खड़ा करें इन समस्त उम्मेदवारो की अच्छी प्रकार पड़ताल की जावे कि कौन उम्मीदवार भारत के लिए उपयोगी सिद्ध होगे ? और काम, क्रोध, लोभ से दूर होकर वे भारत की निष्काम सेवा करेंगे। चाहे वे उम्मीदवार कॉंग्रेस के हों या नीम कांग्रेस की ओर से। ऐसे उम्मीदवार की आर्यसमाज और आर्यसमाजियों की ओर से पूरी हिमायत के लिये फैसले कर दिए जायॅ। इनके हक में आर्यसमाज के सेवक, आर्य-समाज की संस्थाएॅ, आ० स० के पत्र, आर्य वीर दल, आ० वी० संघ के १ लाख सैनिक सब के सब एक आवाज में प्रचार करें और इनको सफल बनाएॅ। एक प्रतिज्ञा पत्र तैयार किया जावे जिसमें भारतीय सस्कृति को अपनाने, गोवध बन्द कराने, भारत में रहने वाले लोगो को

साहित्य-सौरभ

द्विराष्ट्र सिद्धान्त और राष्ट्रीय मुसलमान

लेखक—श्री स्नातक ब्रह्मदत्त शिरोमणि, एम० ए०, आद्य सम्पादक पुण्यभूमि। प्रकाशक राष्ट्र सेवा-सदन, लाल बिल्डिंग, नई सड़क, देहली। मूल्य १)

भारत की राष्ट्रियता का आधार क्या है, और उसका स्वरूप क्या होना चाहिये। भारत-विभाजन के पश्चात् यह प्रश्न प्रत्येक राष्ट्र-चिंतक के सामने उपस्थित रहा है द्वि राष्ट्र के जिस सिद्धान्त का मि० जिन्ना ने प्रचार किया था उसका प्रभाव पाकिस्तान बन जाने के बाद और भी अधिक बढ़ा है। यद्यपि हमारे राजनीतिज्ञ इस बात के लिये प्रयत्नशील हैं कि इस दिशा में सोचना बन्द किया जाय तथापि राष्ट्र का मुस्लिम सम्प्रदाय अभी उस दृष्टि से ही सोचता है। प्रस्तुत पुस्तक का प्रतिपाद्य विषय यही है। भारत में राष्ट्रिय मुसलमान कहे जाने वाले जमीयत उल-उलेमा आदि संस्थाओं के मुसलमान बाह्य रूप से ही राष्ट्रवादी बनते हैं अन्दर से मुस्लिम हितों के लिये ही प्रयत्नशील हैं। लेखक ने भारत में नव-पाकिस्तान-निर्माण की भावना के लिये हो रहे प्रयत्नों की विवेचना कर राष्ट्र को सामयिक चेतावनी देने का प्रयत्न किया है। हम विद्वान् लेखक को इस चेतावनी के लिये बधाई देते हैं। पुस्तक पठनीय, ज्ञान वर्द्धक और अत्युपयोगी है, राष्ट्रवाद के समर्थकों द्विराष्ट्र वादिनी मनोवृत्ति का भण्डा फोड़ करने के लिये पुस्तक का अधिकाधिक प्रचार होना चाहिये।

——

भारतीय समाज-शास्त्र

लेखक—श्री धर्मदेव विद्यावाचस्पति, सम्पादक "सार्वदेशिक" देहली। प्रकाशक-आर्य साहित्य मण्डल लिमिटेड, अजमेर, द्वितीय संस्करण, मूल्य २) पृष्ठ संख्या-२४८,

प्रगतिशीलता के इस युग में प्राचीन सिद्धान्तों के महत्व को समझने वाले बहुत कम व्यक्ति हैं। पाश्चात्य मान्यताओं के आधार पर प्राचीन विश्व को परिवर्तित कर नया रूप देने का प्रयत्न चल रहा है। प्रस्तुत ग्रन्थ के विद्वान् लेखक ने अपनी गम्भीर गवेषणा द्वारा समाज निर्माण के आधुनिक सिद्धान्तों की व्यर्थता सिद्ध कर भारतीय समाज विज्ञान "वर्णाश्रमधर्म" के उच्चतम सिद्धान्तों की तुलनात्मक स्थापना की है। आर्यसमाज ने भारतीय समाज की कुरीतियों को नष्ट कर भारतीय आधार पर समाज के नव निर्माण का जो प्रयत्न किया है, प्रस्तुत पुस्तक उसका समर्थन करती है। पुस्तक आठ अध्यायों में विभक्त है—समाज शास्त्र के लक्षण तथा प्रकार, भारतीय समाज शास्त्र की आधार शिला, वर्णाश्रम धर्म की ऐतिहासिकता, तुलनात्मक वर्णाश्रम धर्म, भारतीय समाज की बुराइयाँ और इलाज, भारतीय और पश्चिमीय सभ्यता, भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थति, सामाजिक विकासवाद के सिद्धान्तकी आलोचना, इस प्रकार सम्पूर्ण आवश्यक विषयों पर गम्भीर विचार किया गया है। हिन्दी में समाज-शास्त्र सम्बन्धी साहित्य की अभावपूर्ति में इस ग्रन्थ से बहुत बड़ी सहायता मिलती है। पुस्तक का महत्व और लोकप्रियता पुस्तक के द्वितीय संस्करण से स्वयं सिद्ध है। भारतीय विचार-धारा का प्रचार करने के लिये पुस्तक बहुत उपयोगी है, इसका अधिकाधिक प्रचार होना चाहिये।

——

आर्यकुमार-निबन्ध-माला

लेखक—श्री धर्मदेव विद्यावाचस्पति, स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा, देहली। प्रकाशक—राजपाल एण्ड सन्स, नई सड़क देहली। पृष्ठ संख्या १००, मूल्य १)

आर्यसमाज के सिद्धान्तों का आर्य युवकों और उनके द्वारा अन्य युवकों में प्रचार हो सके, इस उद्देश्य से यह पुस्तक लिखी गई है। प्रस्तुत पुस्तक में आर्य जीवन, वैदिक धर्म का व्यापक रूप, वैदिक ईश्वरवाद, वैदिक धर्म और विश्वशान्ति, आश्रम व्यवस्था, वैदिक धर्मोद्धारक श्रद्धेय महर्षि दयानन्द, वर्णव्यवस्था, जातिभेद-प्रथा के राष्ट्रघातक भयंकर परिणाम आदि विषयों पर निबन्ध लिखे गये हैं। युवक समाज में यदि हम अपने सिद्धान्तों का प्रचार करने में सफल हो जायें तो समाज का भविष्य बड़ा सुन्दर हो सकता है। योग्य लेखक ने गम्भीर किन्तु महत्वपूर्ण विषयों को सरल भाषा में वर्णन कर सराहनीय कार्य किया है। पुस्तक की उपयोगिता के साथ-साथ पुस्तक की छपाई सफाई भी सुन्दर है।

——

विदुर का राजधर्म

लेखक—महात्मा विदुर, अनुवादक-श्री प० शिवदयालु मेरठ, प्रकाशक-आर्य संघ, चाणक्यपुरी मेरठ सदर, पृष्ठ-संख्या १५० मूल्य १॥)

महात्मा विदुर भारतीय राजधर्म के प्रमाणिक व्यक्ति रहे हैं। प्रस्तुत अनुवाद उनके राजनीति सम्बन्धी विचारों का दिग्दर्शन कराता है। श्री शिवदयालुजी राजनैतिक कार्यकर्त्ता हैं, और वे राजनीति में अधिकाधिक भारतीय विचारों के प्रचारेच्छु हैं। इस अनुवाद में बड़ी योग्यता के साथ पण्डितजी ने विदुरजी के विचारों को स्पष्ट करते हुए उनके सामयिक उपयोग के महत्व को स्पष्ट किया है। संस्कृत में राजनीति का क्या रूप रहा है यह भी इस अनुवाद से हिन्दी के पाठकों को ज्ञात हो सकेगा। इससे पहले भी विदुर नीति के कई अनुवाद हुए हैं परन्तु उनका दृष्टिकोण केवल परीक्षार्थियों को अर्थ-बोध करना मात्र था, इस पुस्तक ने उस कमी को बहुत अंश तक दूर कर दिया है। भारतीय राजधर्म का वास्तविक स्वरूप जनता समझ सके इस आशय से इस पुस्तक का प्रचार अभीष्ट है। श्री प० शिवदयालुजी इसी प्रकार अन्य ग्रन्थों के प्रमाणिक अनुवाद उपस्थित कर सकें तो हिन्दी का बड़ा उपकार हो।

——

विज्ञान-वार्ता

वनस्पतियाँ ताजी रहेंगी

वनस्पतियों को अधिक काल तक ताजा और शुद्ध रखने के लिए अमेरिकन वैज्ञानिकों ने प्लास्टिक के एक नये पदार्थ का आविष्कार किया है। इस प्लास्टिक को बाँधने से साग सब्जियाँ इतनी ताजी रहा करेंगी कि जैसे अभी बाग बगीचे से तोड़कर लाई गई हों।

केंचुए भी एक दवा हैं

ईश्वर की रचना में कोई भी पदार्थ अनुपयोगी नहीं है, केंचुए जैसे जीव की उपयोगिता वैज्ञानिकों ने पता चला ली है। कलकत्ता की सावजनिक स्वास्थ्य शाला में अकस्मात इस बात का पता चला है कि परीक्षण ट्यूब्स के अन्दर जो फफूंद लग जाती है वह नलिकाओं में छोटे केंचुए डाल देने से नहीं लगती।

——

सच्चा भारतीय बनाने, हिन्दी और संस्कृत की उन्नति करने· भारत को अखण्ड करने के सम्बन्ध में उल्लेख हो। ऐसे प्रतिज्ञा पत्र जिस भी पार्टी का हो उम्मीदवार हस्ताक्षर कर दें और वे निष्काम सेवा करने वाले भी हों। इनकी पूरी हिमायत आयसमाज की ओर से की जाय। सच्चे ब्राह्मण की तरह आर्यसमाज का काम प्रचार करना है। आज तक आर्यसमाज ने इसी तरीके से लोगों की विचारधारा बदलने का यत्न किया है। आर्यसमाज के पास कोई सैनिक शक्ति नहीं कोई आर्थिक शक्ति भी नहीं; केवल दो चीजें इस समय आर्यसमाज के काम आ सकती हैं—"सच्चाई और सेवा" इस समय भारत के कल्याण के लिए सचाई और सेवा की आवश्यकता है। दुर्भिक्ष, कत्ल, जायदाद की जब्ती, आपत्ति के भयानक बाढ़ से ऊपर उठकर देश को बचाने के लिए सच्ची बात कहना और इसके साथ निष्काम सेवा करना इस समय आर्यसमाज का मुख्य काम है। तभी हम समाज-सेवा और राष्ट्र सेवा के आदर्श को उपस्थित कर सकते हैं।

——

सुझाव और सम्मतियाँ

प्रचार की त्रिधारा

आर्यसमाज के कार्य में प्रगति लाने के लिये समय-समय पर विविध विचार प्रकट किये जाते हैं। इस सम्बन्ध में प्रचार के क्षेत्र और प्रचार की प्रणाली निर्धारित किये जाने की शीघ्र आवश्यकता है। मेरी सम्मति में आर्यसमाज को ग्रामों और विश्व-विद्यालयों में अपना प्रचार क्षेत्र बढ़ाना चाहिए और अपने सदस्यों में आत्मनिरीक्षण और अनुशासन की भावना को बलवान बनाना चाहिये। ग्रामों की जनता अपनी समस्या के समाधान के लिए सच्चा नेतृत्व चाहती है। दैनिक समस्याओं के हल, चिकित्सा, सफाई, शिक्षा आदि की पूर्ति में सक्रिय भाग लेकर आर्यसमाज ग्रामों में अपने दीर्घ जीवन की नींव डाल सकता है। विचार-धाराओं के संघर्ष क्षेत्र की दृष्टि से आर्यसमाज विश्वविद्यालयों में अपनी विचार धारा के प्रसार का प्रयत्न कर अच्छी सफलता और ख्याति प्राप्त कर सकता है। सार्वजनिक जीवन की पवित्रता के लिए हम अपने सदस्यों के व्यक्तिगत जीवन को उन्नत बनाने की ओर भी ध्यान देना चाहिये। आत्म निरीक्षण की भावना ही हमें सदैव सावधान रक्खेगी। यदि समाज के अन्दर कार्य को प्रगति देने के लिए उपर्युक्त प्रकार से कार्यारम्भ किया जाय तो समाज का पर्याप्त प्रचार हो सकेगा।

—हरिदास ग्वाल,
जहानाबाद, गया

प्रचारार्थ धन की समस्या

१६ अगस्त के 'आर्यमित्र' में श्री वैद्य ब्रह्मदत्तजी स्नातक एम०ए०, ने अमेरिकन मिश्नरी से हुई अपनी भेंट का उल्लेख करते हुए बतलाया है कि ईसाई मिश्नरियों के पास मानवता की सेवा के लिए अपार धन-राशि कहाँ से आती है। आर्यसमाज जिसका उद्देश्य ही संसार का उपकार करना है, प्रचार के लिए कभी पर्याप्त धन नहीं प्राप्त कर सका है। हमारे वेद-प्रचार के कोष में सदैव धन की कमी बनी रहती है वास्तव में हमने समस्या का हल खोजने का कभी गम्भीर प्रयत्न ही नहीं किया। यदि हम प्रयत्न करें तो समस्या का हल अवश्य मिल जायगा। ईसाई मिश्नरियों के कोष में जो करोड़ों रुपया है, उसमें अधिकांश दान का ही हो ऐसी बात नहीं है, अधिकांश व्यवसाय से ही पैदा किया हुआ होता है। मिशन की ओर से कुछ कम्पनियाँ काम करती हैं जिनका लाभ धर्म-प्रचार में व्यय किया जाता है। बहुत समय पूर्व मैंने सार्वदेशिक सभा के पास बैंक या बीमा कम्पनी खोलने विषयक एक प्रस्ताव विचारार्थ भेजा था परन्तु इस ओर अधिक ध्यान न देते हुए वहाँ से लिखा गया कि काम कठिन है। आज मैं पुनः प्रचारार्थ धन की समस्या हल करने के लिए सार्वजनिक रूप से सभा का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ। विश्वास है कि इस पद्धति से समस्या के समाधान में पर्याप्त सहायता मिलेगी।

—कृष्णलाल, एडवोकेट
सहारनपुर

निर्वाचन में आर्यसमाज

ज्यों-ज्यों निर्वाचन समीप आता जा रहा है, कुछ आर्य समाजियों में निर्वाचन में सम्मिलित होने और सफलता के लिए आर्यसमाज की शक्तियों का उपयोग करने का विचार बढ़ता जा रहा है। इस विचार-धारा में कितना बल है, इसका तो भविष्य ही निर्णय करेगा परन्तु मुझे अपने आर्य बन्धुओं से यही कहना है कि सुधार के नाम पर निर्वाचन में भाग लेकर हम अपनी शक्ति का क्षय क्यों करना चाहते हैं। हमें अपने चारों ओर की गन्दगी को दूर करने में ही अपनी शक्ति लगानी चाहिये। यदि हम अपने क्षेत्रीय प्रदेशों सामाजिक वर्गों और समाज की स्वनियन्त्रित संस्थाओं के वातावरण में शुद्ध जीवन के वायु प्रवाहित करने में सफल हो जायँ तो जनता से निर्वाचन भिक्षा माँगने न जाना पड़ेगा। जनता हमें अपने आप बुला ले जायगी। आज आर्यसमाज के मिशन को दीर्घजीवी बनाने के लिए हमारे पास आत्मनिरीक्षण की भावना का शक्ति-पुञ्ज होना चाहिये। निर्वाचन की चमक और पदों की लिप्सा हमारा विनाश शीघ्रता से हमारे पास ला देंगे। अतः उनसे दूर रहने में ही आर्यसमाज का हित है।

—प्रेमशंकर पचौरी एडवोकेट,
अलीगढ़

विश्व धर्म

आज संसार-भर में संघर्ष और लड़ाई-झगड़ों का बोलबाला है। इसका कारण भौतिकवाद की अति और धार्मिक भावना का अभाव है। संसार भर में मारक अस्त्र-शस्त्र इतने बड़े पैमाने पर एकत्र किये गये कि युद्ध के रूप में उनका फूट पड़ना अनिवार्य हो गया। जब तक अस्त्र शस्त्रों और विस्फोटक द्रव्यों का यह महान् भण्डार समाप्त होगा तब तक संसार के राष्ट्र विनाश के कगार पर पहुँच जायँगे। इसके उपरान्त उनके पुनर्निर्माण का प्रश्न होगा।

नवीन विधि से संसार को निर्माण करने की रीति क्या है? रीति है एक 'विश्वव्यापी धर्म' की योजना। वह विश्वव्यापी धर्म जो समस्त प्रचलित धर्मों में ऐक्य स्थापित करे। जो हमारे घरेलू और सामाजिक प्रेम भाव को बढ़ावे और पारस्परिक विश्वास को दृढ़ करे। जो ईर्ष्या-द्वेष और फूट के विस्फोटों को शान्त करे और उन शक्तियों को समेटे जो मेल और घनिष्ठता उत्पन्न करने वाली है। इसी विश्वव्यापी धर्म का एक अंग होगा एक ऐसा सामाजिक संघटन जिसमें व्यक्तित्व का ह्रास न होने पावे, और जो विज्ञान (विशेषः मानव स्वभाव विज्ञान) के नियमाकूल हो। यह विश्वव्यापी धर्म समस्त राष्ट्रों के धर्म-ग्रन्थों पर बनेगा। यह जिस सामाजिक संघटन के धर्म का अंग बनकर स्थापित करेगा उसकी रूप रेखा हमें वैदिक धर्म-ग्रन्थों में प्राप्त होती है। वास्तविक धर्म वह है जो जीवमात्र के लिये सब समयों में उपयोगी हो और जिससे इस लोक और परलोक में अधिकाधिक सुख प्राप्त हो सके।

—सुन्दरलाल रि० हेडमास्टर
नवाब गंज (बरेली)

नाम परिवर्तन हो

मेरा सुझाव यह है कि डी० ए० वी० स्कूल का नाम दयानन्द वैदिक विद्यालय होना चाहिये। हैड मास्टरों को मुख्याध्यापक तथा अन्य मास्टरों को अध्यापक, द्वितीय तृतीय अध्यापक और धर्माध्यापक संस्कृताध्यापक गणिताध्यापक आदि कहा जाना चाहिये। डी० ए० वी० कालिज का नाम 'दयानन्द वैदिक महाविद्यालय' प्रिंसपल को आचार्य वायस प्रिंसपल को उपाचार्य और प्रोफेसरों को उपाध्याय एवं धर्मोपाध्याय संस्कृतोपाध्याय, इतिहासोपाध्याय विज्ञानोपाध्याय आदि कहा जाना चाहिये। होस्टल को छात्रावास कहना चाहिये। स्कूल का हो तो विद्यालय छात्रावास कालिज का हो तो महाविद्यालय छात्रावास। दयानन्द यूनिवर्सिटी अवश्य बनना चाहिये और उसका नाम दयानन्द विश्वविद्यालय या दयानन्द वैदिक विश्वविद्यालय होना चाहिये। धर्म शिक्षा और सन्ध्या अग्निहोत्रादि प्रत्येक विद्यार्थी के लिये होने चाहिये। धर्म शिक्षा में सदा प्रथम रहने वाले को विशेष उपाधि दी जानी चाहिये और अध्यापक पद के लिये उसको विशेषता दी जानी चाहिये। विद्यालय (स्कूल) और महाविद्यालय (कालिज) में कोई भी आचार्य उपाचार्य उपाध्याय मुख्याध्यापक और विद्यार्थी कभी कभी पतलून टोप और नकटाई आदि पश्चिमीय पहनावा पहन कर न जाय अपना विशेष चिन्ह रूप पहनावा भी निश्चित होना चाहिये।

—अमरसिंह, आर्य पथिक
बुलन्दशहर,

सिंहावलोकन

सामयिक समस्याएँ

स्वतन्त्रता क्या है ?

श्री पूर्णचन्द्र, एडवोकेट

स्वतन्त्रता बहुत प्रिय और रोचक शब्द है। परन्तु इसके वास्तविक अर्थ को बहुत कम लोग समझ पाते हैं। किसी न किसी प्रकार का तन्त्र होना मनुष्य जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक है। बन्धनों को यद्यपि मनुष्य कभी स्वेच्छा से स्वीकार नहीं करता, सामाजिक परिस्थितियों ही उसे बन्धन स्वीकार करने के लिये बाध्य करती है, तथापि जब मनुष्य तन्त्र के साथ 'स्व' शब्द का सम्बन्ध स्थापित कर लेता है, तब उसे बन्धनों का कष्ट नहीं रहता। 'स्व' शब्द युक्त तन्त्र को पालन करने वाला पालन करते समय यह अनुभव करता है कि उक्त तन्त्र तो स्वयं उसने ही अपने लिये बनाया था, ज्ञान पूवक बनाया था किसी के प्रभाव में आकर नहीं।

स्वतन्त्रता और परतन्त्रता में महान् अन्तर है। शक्ति और सामर्थ्य की कसौटी अच्छे नियमों का बिना किसी हिचकिचाहट के पालन कर सकना है। सदाचार, पवित्रता, धार्मिकता, सद्व्यवहार और शुद्ध कर्म करने की योग्यता से ही स्वतन्त्र भावना की परीक्षा हो सकती है। आज स्वतन्त्रता का अर्थ ठीक इससे उल्टा लगाया जाता है। जो उपर्युक्त सद्गुणों को भंग करने की जितनी ही अधिक शक्ति रखता है, उतना ही वह स्वतन्त्र समझा जाता है।

स्वतन्त्रता का पालन करना स्वतन्त्रता प्राप्त करने से अधिक कठिन है। स्वतन्त्रता के योग्य बनने के लिये कठोर मर्यादाओं के पालन की भावना होना आवश्यक है। भारतीय जीवन में जन्म से मरण तक प्रत्येक आचार-विचार और व्यवहार मर्यादाओं से जकड़े हुए हैं।

ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में स्वतन्त्रता के दो रूप प्रतिपादित किये हैं, (१) आन्तरिक स्वतन्त्रता, (२) बाह्य स्वतन्त्रता, बाह्य स्वतन्त्रता प्राप्त करने का अधिकारी वही हो सकता है जिसे आन्तरिक स्वतन्त्रता प्राप्त है।

प्रत्येक शरीरधारी आत्मा के लिये उसका शरीर एक साम्राज्य है, मन प्रधान मन्त्री है, बुद्धि एक विशेष अधिकार रखने वाला मन्त्री है, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ उसकी प्रजायें हैं। यदि आत्मारूपी राजा का अधिकार• और साम्राज्य मन, बुद्धि चित्त अहंकार, ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों पर है तो वह व्यक्ति वस्तुतः स्वतन्त्र कहा जायगा। सयमी, पुरुषार्थी और सदाचारी पुरुष को कोई बाह्य आकर्षण या किसी प्रकार का अनुचित प्रभाव कभी पराधीन नहीं बना सकता। इसी प्रकार के व्यक्ति अपनी बाहरी स्वाधीनता की रक्षा करने में समर्थ रहते हैं।

स्वतन्त्रता शब्द के साथ अधिकार और कर्त्तव्य दोनों भाव आते हैं परन्तु आज स्वतन्त्र शब्द के साथ अधिकार शब्द तो शेष है, कर्तव्य का किसी को ध्यान नहीं। वास्तव में कर्त्तव्य पालन कारण और अधिकार प्राप्ति कार्य है। जो लोग कर्त्तव्य करने से पहले अधिकार की बात करते हैं, वे "कहे खेत की सुने खलिहान की" कहावत चरितार्थ करते हैं। आज राष्ट्र को जाग्रत् बनाने और स्वतन्त्रता का वास्तविक अर्थ समझाने के लिये प्राचीन मर्यादाओं का प्रचार होना चाहिये तभी कर्त्तव्य और अधिकार की भावनाओं का समन्वय हो सकेगा। आज मैं मन चाहा करूं के स्थान पर मुझे क्या करना चाहिये के प्रचार की आवश्यकता है। चाहे और चाहिये शब्दों में बड़ा अन्तर है। चाहिये शब्द में मर्यादोचित और नियमानुकूलता का भाव निहित है, और चाहे से उच्छृंखलता, उद्दण्डता और मर्यादा-शून्यता का भाव झलकता है। मनुष्य की महत्ता 'चाहिये' के भावों में निहित है, 'चाहने' में नहीं। यदि आज राष्ट्र में प्राचीन वैदिक सिद्धान्त और ऋषि दयानन्द के विचार प्रचलित हो जावें तो राष्ट्र का संकट कम हो जायगा। आज अधिकारी वर्ग अपने को जनता का सेवक न समझ कर इसका स्वामी मान बैठा है, यही राष्ट्र के अधःपतन का मुख्य कारण है। नेता को निःस्वार्थ और देश सेवा परायण होना चाहिये। साथ ही प्रजा को भी सत्यव्रती और सदाचारी बन कर राष्ट्र सचालन में सक्रिय सहयोग करना उचित है।

बन्धनों और मर्यादाओं के उचित रूप से प्रचलित एवं पालित होने का नाम ही स्वतन्त्रता है। वही मनुष्य वास्तव में स्वतन्त्र है, जो जन्म से स्वभाव से मर्यादा पालन करने का अभ्यासी है। शिक्षा संस्थायें, संस्कार, यज्ञ और योग की भारतीय प्रथायें प्रत्येक नागरिक को स्वतन्त्रता का अधिकारी बनाने के लिये ही है। यदि स्वतन्त्रता के उक्त अर्थ को सारा संसार स्वीकार करले तो संसार का उद्धार हुए बिना न रहे।

—

जन-वृद्धि-समस्या

श्री राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी, एम० ए०, बी० एस सी०,

भारत की खाद्यान्न समस्या के समाधान में प्रयत्नशील राष्ट्र के नेता भारत की जन-संख्या-वृद्धि के कारण परेशान है। प्रति दिन पैदा होने वाले १० हजार बच्चे खाद्य समस्या सुलझने नहीं देते।

जन गणना का कार्य आज से ३०० वर्ष पूर्व योरुप में प्रारम्भ हुआ था। उस समय इग्लैण्ड में चार्ल्स द्वितीय और भारत में मुगल सम्राट् औरंगजेब सिंहासनासीन थे। उन दिनों १६६० में विश्व की जन संख्या ४,४५, ००००००, लाख आंकी गयी थी। पिछले ३०० वर्षों से यह निरन्तर बढ़ती ही जारही है। बढ़कर आज वह २४०००००००० लाख होगयी है। १६६० की अपेक्षा आज विश्व में लगभग पांच गुने आदमी रहते हैं। इस वृद्धि का छोटे देशों पर तो काफी प्रभाव पड़ता रहा है परन्तु हमारा देश तो बहुत बड़ा है इसलिये आबादी की समस्या हमारे सकट का कारण नहीं बननी चाहिये। भारत की ४० करोड़ जन-संख्या विश्व का जन सख्या का ५वाँ भाग है। भारत की आबादी का घनत्व २६० प्रतिवर्ग मील है, कम से कम ४० व्यक्ति प्रतिवर्ग मील तथा अधिक से अधिक १२०० व्यक्ति प्रति वर्गमील में रहते है। उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारतवर्ष के क्षेत्रफल को देखते हुए जन-संख्या अत्यधिक नहीं है। आबादी के क्षेत्र की अपेक्षा खाली स्थान अधिक है। ऐसी अवस्था में सबसे बड़ा विपत्ति यही है कि हमारे देश म लोग अपने उत्पत्तिस्थान को छोड़ना पसन्द नहीं करते। यदि हमारे देश में अपना जन्म स्थान छोड़ कर नयी आबादी बसाने की प्रवृत्ति बढ़ने लगे तो नयी जमीन आबाद होने लगेगी, और कृषि का क्षेत्र बढ़ने से अन्न में भी वृद्धि होगी। यही जन समस्या का वास्तविक हल है।

आधुनिक विचार-धारा के विद्वानों ने खाद्यान्न और जन-वृद्धि की अन्योन्याश्रित समस्या का समाधान सन्तति-निरोध का प्रचार बतलाया है, परन्तु यह समाधान भारतीय वातावरण के अनुकूल नहीं है। भारत में इस आन्दोलन से लाभ की अपेक्षा हानि ही अधिक हो रही है। सन्तति-निग्रह के नाम पर अश्लील विज्ञापनों ने वातावरण को अत्यधिक दूषित बना दिया है। गर्भ निरोधक औषधियों के प्रचार ने समाज में अनाचार, व्यभिचार को सुरक्षित प्रश्रय देने का कार्य किया है। इसलिये कोई भी नैतिक व्यक्ति और समुदाय सन्तति निरोध के इस पश्चिमीय आन्दोलन का समर्थन नहीं कर सकता। (शेष पृष्ठ ६ पर)

मनो-विज्ञान

बाल चरित्र-सुधार

प्रोफेसर श्री कृष्ण विनायक फड़के एम० ए०

बच्चों के चरित्र-सुधार के सम्बन्ध में आजकल मनोवैज्ञानिकों ने अनेक अनुसन्धान किए हैं, यहाँ तक कि चरित्र-सुधार का एक पृथक् शास्त्र ही बन गया है। इस लेख में पाठकों के समक्ष इस विषय से सम्बन्धित कुछ साधारण नियमों का उल्लेख किया जायगा।

प्रसंगवश बच्चों के कार्य की निन्दा भले ही करनी पड़े पर 'तुम चोर हो' 'झूठे हो' 'बदमाश हो' इत्यादि शब्दों से उनके चरित्र पर कभी लांछन न लगाना चाहिये। हमें यह कहना चाहिए कि तुम्हारा यह काम बुरा हुआ, हमें तुमसे ऐसे काम की आशा न थी। मालूम होता है किसी दूसरे व्यक्ति के प्रभाव में आकर तुमने यह बुरा काम किया है—इत्यादि। यदि बच्चों के हृदय में यह दृढ़ भावना हो जाय कि वे माता-पिता की दृष्टि में गिर चुके हैं तो उनके आत्मगौरव की भावना शिथिल हो जायगी और उस स्थिति में अपने सुधार के लिए उनके हृदय में कोई उत्साह न रहेगा। 'तुम तो अच्छे हो, पर तुम्हारा यह काम बहुत बुरा हुआ' इस आशय के वाक्यों से बच्चे की आत्मा को आघात नहीं पहुँचता और वह निराश नहीं होता तथा वह अपने सुधार की ओर प्रवृत्त हो सकता है। अतः चरित्र-सुधार के कार्य में सदैव 'पाप से घृणा करो, पापी से नहीं' इस उक्ति को ध्यान में रखना चाहिए।

बालक भी बड़ों की तरह आत्म सम्मान चाहता है, परन्तु हम बड़े बहुधा इस बात की उपेक्षा कर जाते हैं और बालक को उसके मित्रों के सामने ही डाँटने-डपटने लगते हैं। हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बालक की निन्दा उसके मित्रों के समक्ष न करें। उसे अलग बुला कर उसकी भूल समझाने से अधिक प्रभाव होता है। कुछ माता-पिता मौके बेमौके बच्चों को डाँटा ही करते हैं। इससे भी बच्चों में उनके आत्म-गौरव का भाव नष्ट होकर आत्म-हीनता की भावना बढ़ने की आशङ्का रहती है। अतः निन्दा करने और डाँटने के बजाय अच्छे कार्यों की प्रशंसा करने और उचित अवसर पर ही बुरे कार्यों की निन्दा करने की ओर हमें ध्यान रखना चाहिए।

बिगड़े हुए बालक के मित्र और विश्वास-भाजन बने बिना कोई प्रौढ़ व्यक्ति उसका सुधार नहीं कर सकता। अतः माता-पिताओं का कर्तव्य है कि वे प्रेम व सहानुभूति के व्यवहार द्वारा बच्चों के विश्वासपात्र बनने का प्रयत्न करें। यदि उन्हे यह कार्य असम्भव जान पड़े तो उन्हें ऐसे व्यक्ति की खोज करनी चाहिए जिसके प्रति बालक के हृदय में आदर और श्रद्धा के भाव हो, अथवा जो अपने व्यवहार एवं बुद्धिमत्ता द्वारा बालक को प्रभावित कर सके।

जो माता-पिता स्वयं अपने सुधार की ओर प्रवृत्त होते हैं, वे अपने बच्चों में भी आत्म-सुधार की भावना जाग्रत करते हैं। "मुझसे यह भूल हो गई" इस प्रकार अपने दोषों के स्वीकार करने का प्रभाव बच्चों पर बहुत अच्छा पड़ता है। और बच्चों की जानकारी में माता पिता द्वारा अपने किसी दोष को दूर करने, परिश्रम करने और उसमें सफलता प्राप्त करने का बच्चों पर गहरा प्रभाव पड़ता है। माता-पिता के दृष्टान्त से बच्चों में भी आत्म-निरीक्षण और आत्म-सुधार की तीव्र अभिलाषा जाग्रत होती है, और उनमें निराशा का स्थान आशावादिता ग्रहण करती है। अपने उदाहरण के अतिरिक्त अतीत व वर्तमान काल में जिन लोगों ने आत्म-सुधार के कार्य में सफलता प्राप्त की है और कुमार्ग को छोड़कर सन्मार्ग ग्रहण करते हुए जो उन्नति के शिखर पर पहुँचे हैं, उनके दृष्टान्त समय समय पर बच्चे के समक्ष लाते रहने का भी बच्चों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

भारतीय धर्मशास्त्र में बालकों के लिये संस्कारों की प्रणाली आरम्भ की गई थी। संस्कार-पद्धति बच्चों के विकास में पर्याप्त सहायक सिद्ध होती है।

बालकों के सुधार के लिए एक बात हमें और ध्यान में रखनी चाहिए कि उनके मस्तिष्क में बुरी आदतों के लिए घृणा पैदा करा दें। जब तक बालक किसी बात को बुरा नहीं समझता, उससे दूर नहीं हो सकता है। बालक के सामने बुरी आदत का बार-बार जिक्र नहीं करना चाहिए, नहीं तो वह आपके मना करने पर भी नहीं मानेगा। अतः त्याज्य के स्थान पर ग्राह्य गुणों का दिग्दर्शन कराना, इस दिशा में एक अच्छा साधन सिद्ध होता है।

बालक स्वभाव से बहुत मृदु होते हैं, उनमें दुष्टता का लेश भी नहीं होता पर परिस्थितियाँ ही उन्हें बनाती-बिगाड़ती हैं। अतः बालकों के सुधार में डाक्टर की भाँति बुराई के मूल की खोज की ओर माता पिता को अधिक ध्यान देना चाहिए और मूल कारणों को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

बालकों में सुधार का प्रयत्न करते समय हमें केवल उनके दुर्गुणों के निवारण पर ही दृष्टि नहीं रखनी चाहिये अपितु उनमें जो स्वाभाविक अच्छाइयाँ हैं, उनकी प्रशंसा भी करनी चाहिये। बहुधा सुधारकगण एक दम सुधार होने की आशा किया करते हैं, परन्तु यह विचार अवैज्ञानिक है। बुरी आदत का सुधार सतत परिश्रम और नियमित अभ्यास द्वारा ही सम्भव है। अतः इस सम्बन्ध में उतावलेपन से काम नहीं चल सकता, क्रमिक सुधार ही सफलता लायेगा।

साधारणतः बच्चों को मौखिक उपदेश देकर उनसे किसी अच्छी आदत को डालने के लिए कहना अच्छा नहीं। यदि आप बालक को चार बजे उठाना चाहते हैं तो आपके एक दो, दस बार कह देने मात्र से वह ऐसा नहीं कर सकेगा। उसके लिए आपको स्वयं प्रयत्न करना होगा, और आप उसे ६ बजे, ५ बजे उठाकर ही ४ बजे उठा सकेंगे और उनकी आदत बना सकेंगे।

बालकों में अनुकरण प्रवृत्ति प्रबल होती है। यदि किसी अवगुण को हम बच्चों से दूर रखना चाहते हैं तो हमें उसे अपने से दूर कर देना चाहिए। चरित्र-सुधार के कार्य में उपदेश और उदाहरण रखने के अतिरिक्त अच्छे उपदेशों द्वारा बालक में भले-बुरे का ज्ञान तथा आत्मोत्थान की तीव्र उत्कंठा उत्पन्न कराने का प्रयास करना चाहिये। इसके लिये अच्छे मनुष्यों का संग, अच्छी पुस्तकों का पठन आदि उपायों का अवलम्बन किया जाना चाहिये।

यदि हमारे राष्ट्र के कर्णधार समस्या के हल के लिये इच्छुक हैं तो उन्हें भारत की पड़ती भूमि को आबाद करने का आन्दोलन करना चाहिये। आज १८ प्रतिशत भूमि में ही आबादी है, कुछ में पहाड़ और जंगल है फिर भी ५० प्रतिशत से अधिक भूमि अपनी उर्वरा शक्ति के साथ आबाद होने की राह देख रही है। जन संख्या के समाधान के लिये मानवीय प्रयत्नों के अतिरिक्त प्रकृति भी अनेक प्रकार से विश्व और हमारे देश में भी सहायता करती रहती है। अतः खाद्यान्न समस्या के समाधान के लिये जनवृद्धि पर प्रतिबन्ध लगाना और उसके लिये सन्तति-निरोध का प्रचार करना प्रकृति के कार्य में हस्तक्षेप करना होगा। सन्तति निरोध जैसे खिलवाड के बजाय हम यदि अपने जीवन को तनक सन्तुलित बनाने का प्रयास करने लगें तो अधिक हितकर हो।

स्वास्थ्य-सुधा

विषमाहार

श्री विजयशङ्कर शर्मा

यह एक निश्चित सिद्धान्त है कि आहार की श्रेष्ठता एवं उसके सम्यक् उपयोगिता की विधि जानने वाला व्यक्ति दीर्घ जीवी हुआ करता है। भारतीय आयुर्वेद के महान् आचाय चरक-ऋषि ने एक स्थान पर उपदेश देते हुए कहा था—

हिताशी स्यान्मिताशी स्यात्काल-भोजी जितेंद्रियः। पश्यन् रोगान् वहून्कष्टान्बुद्धिमान विषमासनात्॥

अर्थात् बुद्धिमान व्यक्ति को संयमी बनकर हितकारी और परिमाणयुक्त आहार करना चाहिये। इस बात को सदैव ध्यान में रखना चाहिये कि विषमासन से अनेको प्रकार के भयकर और कष्ट-साध्य रोग उत्पन्न हो जाते है। यद्यपि उपर्युक्त उपदेश आज से हजारो वर्ष पूर्व हमारे एक हितैषी ने दिया था तदपि हम भारतीय उसका यथोचित पालन नहीं करते और अपने हीन स्वास्थ्य से देश के गौरव को क्षीण करते जा रहे हैं।

विषमाहार का शरीर पर क्या प्रभाव पड़ता है, यह भोजन के समय तो अनुभव नही होता पर शरीर में जाते ही विकार की क्रिया आरम्भ हो जाती है, जिससे शुद्ध रक्त और रसों का संचार क्रम शिथिल एव दूषित हो जाता है।

अनियमित भोजन भी स्वास्थ्य के लिये उतना ही अहितकर है जितना अपौष्टिक भोजन यदि भोजन बहुत स्वादु और पौष्टिक हो, परन्तु समय पर न किया जा सके तो शरीर को उससे कोई लाभ पहुंचेगा ऐसी आशा करना भ्रम ही होगा। कभी ७ बजे प्रातः भोजन करना, कभी १२ बजे, कभी १, २, बजे, कभी ६ बजे शाम को और कभी १२ बजे रात तक भी न कर पाना, कभी बहुत थोड़ा खाना और कभी आवश्यकता से अधिक भोजन करने की आदत स्वास्थ्य के लिये उतनी ही अनिष्टकर है जितना स्वास्थ्य के लिये अन्य कोई अस्वास्थ्यकर आचरण हो सकता है।

आयुर्वेद-विज्ञान के अनुसार निम्न प्रकार के विषमाहारों से से मनुष्य को अपने स्वास्थ्य की रक्षा करनी चाहिये।

सयोग-विषम—मूली के साथ दूध पीना संयोग-विषम कहाता है।

देश-विषम—देश की शीत और उष्ण परिस्थिति के देखते हुए भी जब गर्म देश में शीत वस्तुओं का और शीत देश में गर्म वस्तुओं का प्रयोग न कर गर्म स्थान में भी गर्म वस्तुओं का सेवन किया जाता है, तब आहार देश-विषम हो जाता है। भारत यद्यपि उष्ण देश है तथापि यहाँ चाय, लहसुन, प्याज आदि का प्रयोग बढ़ रहा है जो देश के स्वास्थ्य के लिये अहितकर सिद्ध हो रहा है।

प्रकृति-विषम—प्रत्येक मनुष्य की अपनी विशेष प्रकृति हुआ करती है। अर्थात् किसी की प्रकृति कफ प्रधान, किसी की वात प्रधान और किसीकी पित्त प्रधान। अपनी प्रकृति के अनुकूल भोज्य पदार्थों का सेवन स्वास्थ्य के लिये हितकर है परन्तु प्रकृति प्रतिकूल आहार प्रकृति विषम हो जाता है। अतः सदैव प्रकृति का ध्यान रखकर भोजन की व्यवस्था होनी चाहिये।

स्थिति-विषम—भोजन के समय बाह्य और आन्तरिक स्थितियाँ स्वस्थ होनी चाहिये। यदि भोजन के समय आपका मन अशान्त चिन्ताकुल, क्रोधयुक्त है अथवा घर या बाहर वातावरण अशान्त है तो भोजन का पूर्ण-लाभ प्राप्त नहीं हो सकेगा। इस स्थिति विषमता को दूर रखने के लिये वातावरण को अनुकूल रखने का प्रयत्न करना चाहिये। इसके अतिरिक्त आसन पर अच्छी प्रकार बैठकर प्रसन्न-चित्त से भोजन करना चाहिये, लेटकर, टेढ़े बैठकर अशान्त मन से नहीं।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने आहार के प्रति सावधान बन सके तो स्वास्थ्य की दृष्टि से वह उन्नत बन सकता है। वास्तव में मिथ्या आहार-विहार ही शारीरिक व्याधियों का मूल कारण है, इस दिशा में सचेत होकर हम अपना और दूसरों का लाभ कर सकते हैं।

—

आर्य महासम्मेलन

हम क्या करें ?

देशभक्त कुँवर चाँदकरण शारदा,

सप्तम सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन ६ से १२ अक्टोवर तक मेरठ में होने जा रहा है। सम्मेलन के सामने सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि आर्यसमाज मे किस प्रकार जीवन-ज्योति जगाई जाय, और कैसे नवीन उत्साह उत्पन्न किया जाय? राजनीति मे आर्यसमाज को भाग लेना चाहिये या नहीं? भ्रष्टाचार और चरित्रहीनता मिटाने की क्या विधि है ऋषि दयानन्द ने अपने समय मे अपने तरीके से इस प्रकार की समस्याओं का समाधान किया था, क्या आजकी समस्याओं के समाधान के लिये भी उनकी शिक्षाएं हमारा पथ-प्रदर्शन नहीं कर सकती? यह संसार दुख सागर है, अब साठ वर्ष के हो गये, अब तो हमें मरना ही है, ऐसे विचार रखने वाले आर्यसमाज का नेतृत्व नहीं कर सकते। आर्यसमाज को तो ऐसे आर्य युवकों की आवश्यकता है, जो यह कहें कि राष्ट्र के सकट का प्रत्येक सम्भव उपाय से सामना करेंगे। इसके लिये चाहे हम सेना में भर्ती होना पड़े या नगे पाँव ग्राम-ग्राम में जनता जनार्दन की सेवा के लिये घूमना पड़े। जब कार्यकर्त्ता गण समाज के सच्चे प्रगतिशील स्वरूप को प्रगट कर सच्चा पथ-प्रदर्शन कर सकेंगे, तभी हमारी वर्तमान दशा में परिवर्तन हो सकेगा।

हमने न चाहते हुए भी जनता की समस्याओं से अपने को पृथक् रखने का रूप धारण कर लिया है, केवल प्रस्तावों, लेखों और भाषणों से कभी समस्याओं का हल नहीं हुआ करता। जनता भारत की अन्न वस्त्र, निवास-स्थान आदि की न्यूनतम आवश्यकताओं का समाधान चाहती है। यदि हम आर्यसम्मेलन में बैठकर हवन कर लेंगे और थोड़े-से सम्मेलन आदि कर अपने घरों को वापस लौट जायेंगे तो सम्मेलन कदापि सफल नहीं होगा।

हम स्वतन्त्रता की भूमि पर सामाजिक और आर्थिक स्वाधीनता के महल कैसे बनावें। अपने देश की अविद्या अन्धकार में ग्रस्त और सुप्त जनता को कैसे शक्तिशाली एवं ज्ञानवान् बनावें? आगामी निर्वाचन में सुयोग्य प्रतिनिधियों को चुनने के लिये जनता कैसे सुशिक्षित बनाई जाय? उपर्युक्त बातों पर हमें आर्यसम्मेलन में विचार कर आर्य जनता का मार्ग-दर्शन करना पड़ेगा। अभी शान्ति के सूर्य के दर्शन दूर है, राष्ट्र पर शत्रुओं की गृद्ध दृष्टि है। पड़ौसी राष्ट्र एव विदेशी राष्ट्रों की दुरभिसन्धियों का हमें सामना करने के लिये राष्ट्र को तय्यार करना है। इस प्रकार सामायिक-समस्याओं के अतिरिक्त सैद्धान्तिक प्रश्नों पर भी सम्मेलन में विचार किया जाना चाहिये। हमें देश को निश्चित रुप से बता देना होगा कि देश का अभ्युदय ऋषि दयानन्द और महात्मा गांधी के आध्यात्म युक्त राजनैतिक सिद्धान्तों पर चलकर होगा अथवा पश्चिमीय भौतिकवाद पर आश्रित राजनीति व मार्क्सवादी अर्थतन्त्र का अनुसरण करने से हम आगे बढ़ सकेंगे?

आर्यसम्मेलन की सफलता के लिये मैंने अपने कुछ विचार प्रस्तुत किये हैं। यदि यह सम्मेलन विचारों में क्रान्ति और प्रगति ला सका तो कई कार्यकर्त्ताओं का प्रयत्न सफल होगा और आर्यसमाज की प्रतिष्ठा में वृद्धि हो सकेगी।

——

आर्य्य महासम्मेलन-समाचार

महासम्मेलन पर प्रदर्शिनी

जैसा कि पाठकों को ज्ञात है, आर्यमहासम्मेलन मेरठ के अवसर पर एक बृहद् प्रदर्शिनी की आयोजना हो रही है, प्रदर्शिनी के आयोजक गाजियाबाद के श्री हरिशरणदासजी रईस हैं। वे चाहते हैं कि आर्यसमाज और आर्यबन्धु इस कार्य में उनकी सहायता करें, अर्थात् प्रदर्शिनी में रखने के लिये आर्यनेताओं तथा विद्वानों के चित्र, ग्रन्थ, स्मृति-चिह्न, हस्तलेख, परिचय आदि जो भी सामग्री हो वह तुरन्त उनके पास उक्त पते पर भेज दी जाय। आवश्यकता होने पर सामग्री प्राप्त्यर्थ आयोजकजी स्वयं भी आने-जाने को तैयार हैं। महर्षि दयानन्द सम्बन्धी बहुत-सी सामग्री अजमेर में है, वह भी इस प्रदर्शिनी में आनी चाहिये। प्रदर्शिनी की रूप-रेखा के सम्बन्ध में एक लेख 'आर्यमित्र' में प्रकाशित हो चुका है, लगभग उसी के आधार पर इस प्रदर्शिनी का रचना की जा रही है। श्री हरिशरणदासजी बड़े उत्तरदायित्व-पूर्ण और प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं, आपके पास भेजी हुई प्रदर्शिनी सम्बन्धी प्रत्येक वस्तु सर्वथा सुरक्षित रहेगी, और वह बड़ा सावधानी से प्रेषक महाशय को वापस कर दी जायगी। पूर्ण आशा है कि आर्यजनता इस प्रदर्शिनी को सफल और सम्पन्न बनाने में श्री हरिशरणदासजी को पूरा सहयोग प्रदान करेगी। —सम्पादक

महासम्मेलन की तैयारियाँ

मेरठ में सप्तम सार्वदेशिक आर्यसम्मेलन की तयारियाँ बड़े उत्साह से हो रहीं हैं। सम्मेलन सप्ताह ६ से १२ अक्टूबर तक मनाया जायगा। सार्वदेशिक सभा की ओर से ६, १०, ११, तथा १२ अक्टूबर की तिथियों का अपने विविध सम्मेलनों के लिये प्रयोग किया जायगा। प्रारम्भ के शेष दिनों अन्य विषयों पर कई सम्मेलन होंगे तथा आर्य विद्वानों के भाषण होते रहेंगे। इस अवसर पर विशेष यज्ञ का कार्यक्रम भी बनाया जा रहा है।

स्वागत-समिति की ओर से व्यय का जो अनुमान लगाया गया है उसकी पूर्ति शीघ्र की जा रही है। मेरठ नगर में धन संग्रह का कार्य चल रहा है। हापुड़ से लगभग दो सहस्र रु० हो चुका है। गाजियाबाद से भी कुछ रुपया प्राप्त हो गया है और शीघ्र ही एक अच्छी धन-राशि एकत्रित हो जायगी। मुजफ्फरनगर से भी केवल महिलाओं के प्रयत्न से एक हजार रुपया एकत्रित हो गया है। मेरठ डिवीजन के बाहर से भी प्रधान मंत्री श्रीकालीचरणजी कुछ रुपया एकत्रित करके लाये हैं। पूरा विश्वास है कि अगले पन्द्रह दिनों में सम्मेलन के लिये अच्छी धन-राशि प्राप्त हो जायगी

स्वागत समिति ने मेला नौचंदी का विशाल मैदान प्राप्त कर लिया है, जहां पंडाल बनाया जायगा। निवास के लिये डेरों की व्यवस्था की जा रही है। मैदान में टीन की दुकाने हैं जो बाजार के लिये काम आयगी। पानी के लिये नलों की पहले से ही व्यवस्था है स्वास्थ, पानी आदि की व्यवस्था में म्युनिस्पल बोर्ड का पूर्ण सहयोग प्राप्त होगा। बिजली की लाइन भी इस क्षेत्र खिची हुई है, जिससे स्टार केम्प व पंडाल आदि में बिजली प्राप्त हो सकेगी।

जहाँ तक स्वागत-समिति के प्रबन्ध का प्रश्न है वहां तक मैं कह सकता हूँ कि मेरठ के आर्य भाई बहिन तथा उनके सम्पर्क में आने वाले अन्य व्यक्ति सभी प्रकार से सेवा-अतिथि सत्कार कार्य को उत्तम प्रकार से निबाहेंगे। स्वागत समिति सम्मेलन के लिये पंडाल आदि की भी उत्तम व्यवस्था करेगी, परन्तु जहाँ तक आर्य जनता में उत्साह उत्पन्न करने का प्रश्न है, यह कार्य प्रत्येक आर्य नेता, आर्य पत्रकार, आर्य प्रतिनिधि सभाओं तथा सार्वदेशिक सभा को करना चाहिये और उसको ही आर्यसमाज के जीवन मरण की समस्याओं को सुलझाना चाहिये। यदि पूरा एक मास भी आर्यसमाज की शक्तियों को एकत्रित करने में लगा दिया जाय तो सम्मेलन की सफलता में कुछ भी संदेह नहीं रह सकता।

सम्मेलन का सबसे बड़ा लाभ यही है कि आर्यसमाजों में चेतना आये। आर्यसमाज के कार्यक्रम को क्रियात्मक रूप देने के लिये प्रयत्न किया जाय। आर्यसमाज की रुकी हुई गति को प्रगति प्राप्त हो। इस समय साधारण जनता के सामने अनेकों ऐसी समस्यायें उपस्थित हैं, जिनको सुलझाने में आर्यसमाज बहुत कुछ भाग ले सकता है। भ्रष्टाचार को मिटाने की ओर सार्वदशिक सभा ने जो पग बढ़ाया है उस आन्दोलन को वास्तविक रूप में सफल करने के लिये आवश्यकता है कि आर्य समाजों में जागृति उत्पन्न हो और आर्यसदस्य पहले के समान अपने आपको सच्चे अर्थों में आर्य कहने का साहस कर सकें। शिक्षा के वर्तमान स्वरूप में संशोधन करने की भी आवश्यकता है। साथ ही हमें वैदिक प्रचार कार्य को भी आगे बढ़ाना है जो इस समय बहुत शिथिल अवस्था में है। वैदिक साहित्य का प्रकाशन भी इस समय नहीं के बराबर है। आर्यसमाज का अपना व्यापक क्षेत्र आज काफी संकीर्ण होता जा रहा है। इस पर भी विचार करना है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऐसे महामेलों पर व्यवस्था तथा यात्रा आदि में लाखों रुपया व्यय हो जाता है। मेले तो मेले ही समझिये, परन्तु इन महामेलों से आर्यसमाज की शक्ति का संगठन होता है। इन मेलों पर कुछ विचार शील व्यक्ति मिलकर परस्पर कोई योजना भी बनाते हैं। साथ ही इन मेलों के प्रदर्शन से जनता को भी आभास मिलता है कि आर्य समाजियों की कितनी बड़ी शक्ति है और उसका कितना व्यापक क्षेत्र है।

—विश्वम्भर सहाय प्रेमी
प्रकाशन मन्त्री
आर्य-महासम्मेलन

राष्ट्र भृत् यज्ञ

६ अक्टूबर से १२ अक्टूबर तक मेरठ नगर में होने वाले सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन के शुभ अवसर पर एक अभूतपूर्व आदर्श बृहत् यज्ञ का भी आयोजना की गई है। राष्ट्र के अभ्युदय एवं कल्याण को लक्ष्य में रखकर किये जाने वाले इस 'राष्ट्रभृत्' यज्ञ में अनेकानेक कर्मकांडी यज्ञ विशेषज्ञ वेदपाठी विद्वान् भाग लेंगे।

अथर्ववेदीय 'पृथ्वी सूक्त' के प्रथम मन्त्र 'सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्मयज्ञः पृथ्वी धारयन्ति। सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं पृथ्वी न कृणोतु॥ के आधार पर इस यज्ञ की योजना की गई है। इसके लिए सम्मेलन-भूमि में एक विशाल यज्ञ-मंडप बनाया जा रहा है। इस यज्ञ-मंडप में ७ यज्ञ-वेदियां बनाई जावेंगी। केन्द्र में एक विशाल यज्ञ वेदी 'पृथ्वी' स्थानीय होगी। इसके चारों ओर समान अन्तर पर छह और वेदियाँ बनेगी जो क्रमशः सत्य, ऋतं, दीक्षा, तपः, ब्रह्म, यज्ञ इन आदर्श तत्वों से निर्दिष्ट रहेंगी। इस प्रकार बना हुआ यह पडर 'छह अरों वाला' राष्ट्र-चक्र इस यज्ञ का आधार होगा। इनमें क्रमशः एक-एक दिन एक एक वेदी में उस पर अङ्कित 'आदर्श तत्व' के प्रतिपादक मन्त्रों से यज्ञ होगा और अन्तिम सातवें दिन समस्त वेदियों में एक साथ यज्ञ होकर पूर्णाहुति होगी। तथा इस प्रकार 'येन यज्ञस्तायते सप्तहोता' के आदर्श का भी प्रतिपादन अन्तिम दिवस के यज्ञ में होगा। प्रतिदिन पढ़े जाने वाले मन्त्रों की महत्ता व रहस्य को बताने वाले प्रवचन भी प्रतिदिन यज्ञ के अन्त में हुआ करेंगे। इस प्रकार इस आदर्श यज्ञ के द्वारा राष्ट्र-निर्माण का बोधक साधन आर्य जनता के सम्मुख रखा जायगा। यह यज्ञ सात दिन तक चलेगा।

इस राष्ट्र-यज्ञ के संचालन के लिए एक वेधाः 'ब्रह्मा' और छह पुरोधाः 'पुरोहित' होंगे जिनका यज्ञ-समिति द्वारा नियोजन होगा। इन ब्रह्मा और पुरोहितों की अध्य-

आर्य महासम्मेलन-समाचार

क्षता में समस्त ऋत्विज् एव यजमान यज्ञ को सम्पन्न करगे, वेद-मन्त्रो के पाठ के लिए वेद पाठी विद्वानो का एक पृथक् मडल होगा।

इस साप्ताहिक यज्ञ के लिए ७८ यजमानो को दीक्षित करने क योजना है। इसमें भाग लेने वाले समस्त ऋत्विजो वेदपाठियो व यजमानो को ग्रहभृत् यज्ञ का व्रत लेना होगा। ऐसा व्रत लेने वाले सत्य सकल्प अग्निहोत्री व यज्ञोपवीती श्रद्धालु सज्जन ह यज्ञ में भाग ले सकगे। इस बृहत् यज्ञ की समस्त पद्धति सम्मेलन मे पूर्व ही प्रकाशित हो जायगी। उसमें यज्ञ में भाग लेने वाले समस्त विद्वान् वेदपाठियो ऋत्विजो, पुरोहितो व यजमानो क नाम भी अङ्कित रहग।

अतएव जो श्रद्धालु सज्जन यज्ञ मे यजमान बनने के अभिलाषी हों व शीघ्रातिशीघ्र एक आवेदन पत्र स्नातक सत्यपाल शर्मा, आचार्य आर्यसमाज मेरठ शहर क पते पर भेजन की कृपा कर।

—द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री
अध्यक्ष, यज्ञ-समिति,

आर्य सेवक-सेविकाए

इस वर्ष दशहरे के शुभ अवसर पर मेरठ क ऐतिहासिक नगर मे ६ अक्टूबर से १२ अक्टूबर सन् ५१ तक आर्यो का महासम्मेलन बडे धूमधाम से होगा जिसमे देश क ही नही बल्कि देश से बाहर क भी बडे बडे योग्य विद्वान्, प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ, तेजस्वी सन्यासी और कर्म-काडी महोपदेशक तथा शास्त्रार्थ-महारथी पधार रहे है। हिन्दू समाज की कुरीतियो का निराकरण करने के लिये, गोरक्षा क पवित्र कार्य को प्रगति देने के लिये, देश मे भारतीय सस्कृत सभ्यता की रक्षा और विस्तार क [illegible] और स्वतन्त्र भारत म [illegible] नैतिक [illegible] इस [illegible] का नाश [illegible] सम्मेलन इस [illegible] पर हो रहा है [illegible] निर्णय [illegible] इस शुभ अवसर पर आर्य सेवक सेविकाओ [illegible] भी यात्रियो की सेवा के लिये आवश्यकता होगी। जीवन मे ऐसे [illegible] अवसर कभी कभी ही आते हैं। आशा है कि आर्य नवयुवक, प्रेमी सज्जन और वीर महिलाये इस सेवाकार्य के लिये शीघ्रातिशीघ्र अपने नाम भेजने की कृपा करेंगे जिससे [illegible] निराश होना न पडे आर्य स्वयसेवकों के भोजन तथा रहन सहन का सब प्रबन्ध महासम्मेलन की ओर से ही होगा। नाम यदि स्थानीय आर्यसमाजो की ओर से आये तो अति उत्तम होगा। नाम प्राप्त होने पर स्वीकृति तुरन्त भेजने का प्रयत्न किया जावेगा। आने वाले भाई बहनो को मेरठ शहर रलवे स्टेशन पर उतरना चाहिये।

—नन्दकिशोर टुवलिश, एम०ए०
अध्यक्ष, आर्य स्वयसेवक विभाग,
लालकुर्ती बाजार, मेरठ।

कृपया चित्र भेजिये

उत्तर प्रदेश के आर्यसमाजो क मन्त्री महोदयो से प्रार्थना है कि आर्य महासम्मेलन मेरठ क अवसर पर आयोजित प्रदर्शिनी की सफलता के लिये चित्रों (फोटो) की आवश्यकता है। अत शीघ्रातिशीघ्र निम्न विवरण प्रस्तुत करने वाले चित्र बनवाकर भेजने की कृपा कर

१—आर्यसमाज मन्दिरो का यज्ञशाला सहित चित्र, किस सन् में निर्माण हुआ इसका भी उल्लेख कर। २ आर्यसमाज क अन्तर्गत जो अन्य सस्थाये काम कर रही ह उनक स्थापना क उल्लेख सहित चित्र भेज।

३—अपने समाज से सम्बन्धित आर्य विद्वानो के चित्र भेजें।

४ आर्यसमाज म जो साहित्य [illegible] उसके [illegible] विवरण चित्र भेज।

५—आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के १८८७ से १९५१ तक के प्रधान और मन्त्रियो के जो चित्र प्राप्त हो उन सब को सगृहीत [illegible] सम्मेलन को [illegible] [illegible]

[illegible]
[illegible] मन्त्री

आर्य महासम्मेलन के लिये

विचारणीय विषय

(१)

१—पुरातन आश्रम भूमियों एवं उनके भग्नावेषों के स्थान पर नवीन आश्रम स्थापित होने चाहिये जिनमें रचनात्मक कार्य क्रमों द्वारा प्राचीन वैदिक संस्कृति की शिक्षा एवं स्वास्थ्य निर्माण की शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिये। ताकि भविष्य में राष्ट्र निर्माण करने वाले योग्य स्वस्थ एवं उज्जवल चरित्र वाले व्यक्ति उत्पन्न हो सकें और विदेशों में भी इसी प्रकार के आश्रम बनाये जायें।

२—पुरातन वैदिक संस्कृति के प्रचार के लिये आर्य ग्रन्थों का विदेशी भाषाओं में अनुवाद कराने की व्यवस्था के लिये विदेशी भाषा प्रकाशन, एजेन्सियां बनाई जायें, उक्त व्यवस्था को कार्यान्वित करने के लिये वर्तमान गुरुकुलों एवं अन्य आर्य संस्थाओं में विदेशी भाषाओं के पठन-पाठन का प्रबन्ध किया जाना चाहिये और ऐसी व्यवस्था भी होनी चाहिये कि आर्य ग्रन्थों का विदेशी भाषानुवाद कम से कम मूल्य पर उपलब्ध हो सके।

३ पुरातन आर्य ग्रन्थ जो विदेशियों द्वारा परतन्त्र भारत में विदेश ले जाये गये उनको प्राप्त करने या वहाँ से उनकी कापी प्राप्त करने का मुख्य रूप से प्रयत्न किया जाना चाहिये और जो भारत में वर्तमान हैं उनकी खोज करनी चाहिये।

४-प्रत्येक आर्य (हिन्दु) परिवार के लिये एक अनिवार्य नियम बनाया जाय जिसके अन्तर्गत सब प्रकार से योग्य व्यक्ति एक निश्चित आयु में गृहस्थ को छोड़ उक्त आश्रमों में रह कर अपने द्वारा विशेष योग्यता पाये हुए विषयों की शिक्षा अन्य व्यक्तियों को उनकी रुचि अनुसार प्रदान करें ताकि देश जाति समाज का कल्याण हो सके।

५—जनता में क्षात्र-बल के प्रचार हेतु प्रत्येक नगर के ग्राम में जहां आर्यसमाज हैं समाज के अन्तर्गत व्यायाम शालायें खोली जानी चाहियें जिनमें सब प्रकार की व्यायाम सामग्री उपलब्ध हो।

६—प्रायः देखने में आया है कि जो भी अन्य मतावलम्बी आर्य (हिन्दू) धर्म में दीक्षित होना है उसको आर्यजन घृणा की दृष्टि से देखते हैं और उनके साथ सम्बन्ध करने में हिचकिचाते। ऐसा संकीर्ण मनोवृत्ति को तुरन्त त्याग देना चाहिये। ऐसे भी देखने में दृष्टिगोचर हुए हैं कि यदि कोई विधर्मावलम्बी अथवा क्रिश्चन अपनी सन्तान को शिक्षित बनाने के उद्देश्य से उनको किसी आर्यसंस्थाओं में प्रविष्ट कराना चाहता है तो उनको लेने से इन्कार कर दिया जाता है।

७—पिछड़ी हुई जातियां जो आज निरन्तर ईसाई मिशनरियों एवं मुस्लिम संस्थाओं द्वारा धर्म भ्रष्ट की जा रही हैं, उनको तुरन्त रोकने के लिए सामूहिक प्रयत्न होना चाहिए। आए दिन देखने में आ रहा है कि हिमालय प्रदेश किन्नर प्रदेश आसाम व मध्यभारत के कबाइली क्षेत्रों में बहुत बड़ी संख्या में वहां की पिछड़ी जातियों को ईसाई संस्थाएँ ईसाई बना रही हैं जिसके फल स्वरूप उनकी बड़ी संख्या ईसाई बन गई हैं।

—अश्वनीकुमारदत्त मेरठ

(२)

१—वर्तमान आर्य हिन्दू समाज के उत्थान के लिए वर्तमान शिक्षा प्रणाली को बदल कर विशुद्ध वैदिक संस्कृति के प्रचारार्थ भारतवर्ष के ग्रामों में जो आज पिछड़े हुए हैं, आर्यसमाज व पाठशालाओं की स्थापना [illegible] केन्द्रिय आर्य सार्वदेशिक प्रतिनिधि सभा की ओर से सामूहिक रूप से प्रयत्न होना चाहिये।

२—राष्ट्रिय त्योहारों के मनाये जाने का ढंग जिनका महत्व आज बहुत कुछ क्षीण होता जा रहा है उनका वास्तविक व सच्चा रूप हिन्दू जनता के समक्ष रखने के लिये आर्यसमाजों के और से नियात्मक रूप में प्रयत्न होना चाहिये ताकि देश उनके महत्व समझे।

३—वर्तमान आर्य कन्या पाठशालाओं में मासिक [illegible] प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाना चाहिये और साथ ही साथ ऐसा प्रबन्ध किया जाय कि आर्य पाठशालाओं की ओर से प्रकाशित होनी चाहिये, जिनमें कन्याओं की सर्व श्रेष्ठ रचनाओं पर पारितोषिक दिये जायें ताकि आर्य कन्याओं को वैदिक विकास हो सके एवं साहित्य सेवा के लिये प्रोत्साहन मिल सके।

४ आर्य कन्याओं एवं महिलाओं के स्वास्थ्य निर्माण के के लिये स्थानीय आर्यसमाजों में शारीरिक शिक्षा सैन्य शिक्षा व्यवस्था आदि का अनिवार्य रूप से प्रबन्ध किया जाना चाहिये, ताकि राष्ट्र निर्माण और समाज निर्माण कार्य के लिये स्वस्थ एवं सशिक्षित महिलायें आगे बढ सकें।

कुमारी सुशीला आर्य, मेरठ

—कीरतपुर (विजनौर) में वेद-प्रचार सप्ताह के अवसर पर स्त्री आर्यसमाज की स्थापना हुयी।

—ठा० स्वणसिंहजी भजनोपदेशक ने कासगज में आर्यसमाज, ए०वी० पाठशाला तथा बारहद्वारी पर सफलतापूर्वक प्रचार किया।

—६ से १५ अगस्त तक आर्य्य समाज नानपारा में स्वामी विशुद्धानन्दजी तथा श्री सर्वगुण प्रसादजी ने प्रचार किया।

—आर्यसमाज रायबरेला, कासगज और बीसलपुर ने शहनऐ शारयत नामक पत्र की शरारत के विरुद्ध प्रस्ताव पास किया।

—नई बाजार गढ़ी आयसमाज में पं० बालकृष्णजी उपदेशक ने प्रचार तथा धनुर्वेद का प्रदर्शन किया।

—श्री जयानन्द भारतीय आजकल टिहरी में आर्यसमाज का कार्य तथा प्रचार कर रहे है। हिसरिया खाल (खासपट्टी) में आयसमाज का उत्सव हुआ। सरकार की ओर स पुलिस का प्रबन्ध था। इतना होत हुए भी झगड़ा हो गया। जिसमे कइयों के चोटें लगीं। इसके पश्चात् आर्यसमाजियो पर ग्राम वालों ने बड़ा अत्याचार किया। मुकदमा चल पड़ा था पर जयानन्द भारतीय ने अधिकारियो से मिलकर राजानामा करा दिया। फिर इस स्थान पर अगले मास सभा करायेग। आपने मसूरी में भी दा दिन प्रचार किया। जहाँ-जहाँ ग्रामो में जात हैं समाज की स्थापना करते जाते है।

—आर्यसमाज लखनऊ श्री मौ० महेशप्रसाद महोपाध्याय हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस के आकस्मिक निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करता है। श्री महेशप्रसादजी जहाँ अरबी और फारसी के असाधारण विद्वान् थे, वहा महर्षि दयानन्द के साहित्यानुसधान कार्य में सतत सलग्न रहने वाले निष्ठावान आय सामाजिक और वैदिक सिद्धान्तो के भी मर्मज्ञ मर्मपा थे। उनके देहावसान से आयजगत् में एक ऐसा स्थान रिक्त हो गया है कि जिसकी पूर्ति कठिन है। परमात्मा दिवगत आत्मा को चिर शान्ति और परिवारिको को धर्य प्रदान कर।

——

आर्यजगत

निर्वाचन

—आ० स० कालौंदा, प्रधान-श्री चम्पतसिहजी और मन्त्री-श्री सरजीतसिंहजी।

—स्त्री आ० स० कीरतपुर, प्रधाना श्री चन्द्रवतीजी और मन्त्राणी-श्री रामसुमरीदेवीजी।

—आ० स० शिवहारा, प्रधान-श्री दिग्विजयसिंहजी त्यागी और मन्त्री-वैद्य मगीलालजी उपाध्याय

—आ० स० सौथरा मैनपुरी, प्रधान—श्री गोविन्द वर्माजी आर्य और मन्त्री-श्री सोवरनसिंहजी आर्य।

—जिला आर्य उपप्रतिनिधि सभा फरुखाबाद, प्रधान-श्री डा० रघुवारदत्तजी शर्मा और मन्त्री-श्री सच्चिदानदन्दजी आर्य।

—आर्यसमाज नई बाजार गढ़ी, प्रधान-श्री रामदेवजी और मन्त्री श्री मेवालालजी।

—आ० स० कशिया पश्चिम, प्रधान श्री अयोध्याप्रसादजी और मन्त्री-उदयसिहजी आर्य।

——

सार-सूचनाएं

—मेरठ महासम्मेलन में देश की प्रत्येक आर्यसस्था को बड़े उत्साह से सम्मिलित होना चाहिये और बृहद् जुलूस के लिये अपनी समाज और सस्था के नाम के कपड़े के बोर्ड लाने चाहिये। ओ३म् ध्वजाए हो तो और भी अच्छा हो, आशा है कि आर्यसस्थाए और महासम्मेलन की स्वागत समित मेरी इस प्रार्थना पर अवश्य ध्यान देंगे।

—जनार्दन आर्य

—सत्यार्थप्रकाश का पद्यानुवाद कहाँ से और कितने में प्राप्त हो सकता है।

—स्वामी शान्तिनिकेतन
दुबारी (आजमगढ़)

—आर्यसमाज महपऊ (मथुरा) के मन्दिर निर्माणार्थ आर्थिक आवश्यकता है, दानी लोग कृपया दान देकर कृतार्थ करें।

—मन्त्री

——

उत्सव-सूचनाएँ

—आ० स० खुदागज शाहजहाँपुर का वार्षिकोत्सव ११, १२, १३, १४ अक्टूबर को होगा।

——

वेद-प्रचार सप्ताह

(क्रमागत)

निम्नलिखित स्थानो में वेद प्रचार सप्ताह बड़े उत्साह से मनाया गया।

—आ० स० कीरतपुर, अलीगंज (बरेली) बहराइच, अम्बहटा (सहारनपुर), डोईवाला, सौथरा (मैनपुरी), बीसलपुर, कासगज, गगोह (सहारनपुर) पहासू (बुलन्दशहर)

——

उत्तरप्रदेशीय आर्यकुमार-सभा

उत्तरप्रदेशीय आर्यकुमार सम्मेलन के प्रधान पद निर्वाचन के लिए निम्न नाम उपस्थित हैं—१—श्री प० रामचन्द्रजी देहलवी, हापुड़ २—श्री प्रो० रमेशचन्द्रजी त्रिवेदी, एम० ए०, मुरादाबाद ३—श्री वैद्य सुदर्शनजी आयुर्वेदाचार्य, देहरादून, सभा के कार्यालय से मत-पत्र स्थानीय सभाओं को भेजे जा चुके हैं। मतदान की अन्तिम तिथि १५ सितम्बर है।

—रघुवरदयालु आर्य मन्त्री
आ० कु० परिषद, विजनौर

——

स्नातक-मण्डल

स्नातक-मण्डल गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन की अन्तरग सभा की बैठक आगामी १६ सितम्बर को मध्याह्न ११ बजे से कुल भूमि में आरम्भ होगी। इस बैठक में गुरुकुल की भावी उन्नति के सम्बन्ध में गम्भीर विचार होगा। स्नातक बन्धु समय पर पधारने की कृपा करें।

—स्नातक उमेशचन्द्र
शिरोमणि, एम० ए०
मन्त्री, स्नातक मण्डल

——

आवश्यकता

आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश को योग्य व उत्तम उपदेशकों की की आवश्यकता है। जो उपदेशक महानुभाव आर्यसिद्धान्तों का उत्तम ज्ञान रखते हों और शिक्षित नवयुवकों को पश्चिमीय नवीन हानिकारक वादों का खण्डन करने की क्षमता रखते हो, वे अवश्य प्रार्थना-पत्र भेजें।

धर्मपाल विद्यालंकार, मन्त्री

आर्यप्रतिनिधि सभा, उ० प्र० लखनऊ

आवश्यकता है

श्रीमद्दयानन्द अनाथालय आगरा की योग्य कन्याओं के लिए योग्य शिक्षित व्यवसाय से लगे हुए आर्य वरों की आवश्यकता है। जिनकी आयु २५ वर्ष से अधिक न हो। २=) विवाह-फार्म का मूल्य भेजकर, फार्म मँगा कर, भर कर भेजिये।

मन्त्री
श्रीमद्दयानन्द अनाथालय,
आगरा।

विशेष योजना

अखिल भारतवर्षीय सप्तम आर्यमहासम्मेलन तथा ऋषि निर्वाण पर्व के शुभ अवसर पर निम्न पुस्तकों पर दो आना रुपया कमीशन दिया जायगा। २५) से अधिक के आर्डर पर तीन आना रुपया।

१—ऋषि दयानन्द के ग्रंथों का इतिहास—सजिल्द बढ़िया ६) साधारण बिना जिल्द ४)
२—संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास—सजिल्द १०)
३—भारतवर्ष का इतिहास (श्री पं भगवद्दत्तजी कृत १५)
४—ऋग्वेद की ऋक्संख्या ।।)
५—सामवेदीय स्वरांकनप्रकार ≡)
६—पाणिनि के समय विद्यमान संस्कृत वाङ्मय

पता— प्राच्यविद्याप्रतिष्ठान, पो० अजमतगढ़ पैलेस बनारस

आवश्यकतायें

आर्य समाज हापुड़ को एक पुरोहित की आवश्यकता है। जो वैदिक धर्म का प्रचार भी कर सके, और संस्कार कराने में दक्ष हो। वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा।

पता—श्रीरामचन्द्र माथुर,
मंत्री-आर्यसमाज, हापुड़, (मेरठ)

विधवाश्रम मोतीकटरा आगरा की योग्य विधवाओं के लिए योग्य सम्पन्न वरों की आवश्यकता है। जिनकी आय १५०) मासिक से कम न हो। आर्यवरों को ही विशेषता दी जायगी।

पत्र व्यवहार का पता:—
मंत्री विधवाश्रम
आगरा

आवश्यकता है—एक अध्यापिका की जो प्रभाकर, विद्याविनोदिनी आदि परीक्षाओं के लिए कन्याओं को साधारण विषयों में तैयार करा सके। पूर्ण विवरण और न्यूनतम वेतन दर्शाते हुए निम्न पते पर पत्र-व्यवहार करें।

मन्त्री-आर्यसमाज,
मंडी धनौरा,
(मुरादाबाद)

"आर्य कन्या पाठशाला हिसार (मिडल स्कूल) के लिए २ जे०वी० तथा २ बेसिक ट्रन्ड आर्य्य अध्यापिकाओं की आवश्यकता है। वेतन तथा महगाई अलांउस गवर्नमेन्ट ग्रेड के अनुसार दिया जावेगा। प्रार्थना पत्र निम्न पते पर भेजें।

श्री शान्तिदेवीजी मुख्याध्यापिका
आर्यकन्या पाठशाला,
मिडिल स्कूल हिसार

अग्रवाल वर चाहिये

एक शिक्षिता आर्यकन्या के लिये जो विद्या विनोदिनी, विशारद एवं हाईस्कूल पास है, तथा इन्टर की तैयारी कर रही है, स्वस्थ, सुन्दर, सुशील और गृह-कार्यों में निपुण है, योग्य आर्य वर की आवश्यकता है। आयु १६ वर्ष है। दहेज के प्रेमी पत्र-व्यवहार न करें।

भद्रजित, आयुर्वेदशिरोमणि
अकबरपुर, जि० कानपुर

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ॐ
आर्य-मित्र
ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक—आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ
आगरा, २० सितम्बर १९५१

'रामराज्य' के 'मन्त्री'

श्री हरिशङ्कर शर्मा

जो विज्ञ ज्ञान-गुण से आगे बढ़ता था
बन विनयशील, गौरव गिरि पर चढ़ता था
जो त्याग-तपस्या-व्रत का सत् साधक था
जो सत्य धर्म ध्रुवता का आराधक था
जो जनता में जीवन-द्युति दमकाता था
वह कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाता था

जिसने जन-सेवा जीवन-लक्ष्य बनाया
जिसने न भूल-भ्रम से भी पाप कमाया
जिसको न स्वार्थ की गन्ध कभी भाती थी
जिसकी सुकीर्ति दशदिश में छा जाती थी
जो धीर धूर्त्तता को धिक् धतियाता था
वह कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाता था

जो शुद्ध-भावना-अमृत बरसाता था
जो अशुचि जीवनों में शुचिता लाता था
जिसके शब्दों में सुधा धार बहती थी
जिसकी वाणी में विमल ज्योति रहती थी
जो दीन हीन दुखियों को सुखदाता था
वह कर्मवीर तब मन्त्री पद पाता था

जो दुरभिमान-दुर्दम्भ नहीं करता था
जन-जीवन में सद्भाव सदा भरता था
जो विषयों में आसक्त नहीं रहता था
जो जनता के हित घोर कष्ट सहता था
जो कुटिला कपट नीति का घर ढाता था
वह कर्मवीर तब मन्त्री पद पाता था

दे-दे अभिभाषण भीड़ न व्यर्थ लगाता
अपनी प्रभुता की धाक न नेक जमाता
निज गुण गरिमा के गीत न गद् गद् गाता
जो कहता उसको करके भी दिखलाता
जो आशा रवि की किरणें छिटकाता था
वह कर्मवीर तब मन्त्री पद पाता था

जो वेतन पर बलिदान नहीं देता था
जो भत्ते पर प्रिय प्राण नहीं देता था
जो पी घमण्ड का घी न अकड़ जाता था
जो शान जमाता और न इतराता था
जो प्रेम पयोनिधि में निश दिन न्हाता था
वह कर्मवीर तब मन्त्री पद पाता था

जो गुटबन्दी से काम नहीं करता था
झाँसे झटके से 'वोट' नहीं हरता था
जिसको तिकडम की तान न कभी सुहाती
मन वचन-कर्म में नहीं भिन्नता भाती
जो छल-प्रपच का पन्थ न अपनाता था
वह कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाता था

जिसका जन जन को द्वार खुला रहता था
पीड़ित आ अपनी कष्ट-कथा कहता था
जो स्नेह सहित दुख दूर किया करता था
व्याकुल जन को परितोष दिया करता था
जो सब पर समता-ममता दरसाता था
वह कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाता था

जो मित्रों को धन राशि न दिलवाता था
कुनबे पर कचन कोष न बरसाता था
जो स्वार्थ-सिद्धि पर मिट न धर्म खोता था
जो वैर-वृक्ष के बीज नहीं बोता था
जो न्याय-नीति की शुचिता सरसाता था
वह कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाता था

जो चोर, जार ज्वारी का दर्प दबाता
वचकता का विषमय व्यापार मिटाता
जिसको न आय का अनुचित साधन भाता
जिस पर न दस्युदल पोच प्रभाव जमाता
जो सत्य अहिंसा पथ का निर्माता था
वह कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाता था

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०)
एक प्रति- तीन आने
सम्पादक हरिशङ्कर शर्मा
वर्ष—५३
अङ्क—३

—महासमिति के अधिवेशन में श्री नेहरू के कांग्रेस अध्यक्ष बन ज ने के बाद कांग्रेसी क्षेत्रों में अनेक प्रतिक्रियायें हुई है। मध्यप्रदेश के भू० पू० गृहमन्त्री श्री द्वारिकाप्रसाद मिश्र ने कांग्रेस से त्यागपत्र दे दिया और जन संघ के मच से नेहरू और कांग्रेस विरोधी प्रचारात्मक भाषण दिये। कांग्रेस कम्प में उक्त परिवर्तन से काफी चहल पहल आरम्भ हो गयी है, कांग्रेस का द्वार सदव प्रगतिशील विचारों वालों के लिये खुला है और खुला रहेगा के रूप में श्री नेहरू ने कांग्रेस छोड़कर गये व्यक्तियों को जो निमन्त्रण दिया है उसे यद्यपि के० एम० पी० और रामपार्टी ने स्वीकार नहीं किया है तथापि बंगाल के युगान्तर दल द्वारा स्वीकार किये जाने की आशा है १८ सितम्बर को ३० कांग्रेस में भी परिवर्तन होने की सम्भावना होने लगी है। नई वर्किंग कमेटी में श्री पुरुषोत्तम-दास टण्डन द्वारा सदस्यता स्वीकार किये जाने से टण्डनजी के प्रति जनता में श्रद्धा बढ गयी है। श्री लालबहादुर शास्त्री और श्री निवास मलय्या के कांग्रेस महामन्त्री बनाये जाने से कांग्रेस के कार्य में प्रगति आने की सम्भावना को बल मिला है। कांग्रेस अधिवेशन के लिए नई दिल्ली की कूटनीतिक बस्ती का क्षेत्र चुना गया है जिसका नाम सत्य वती नगर होगा, स्वागताध्यक्ष श्री चौ० ब्रह्मप्रकाश चुने गये हैं कांग्रेस शुद्ध आन्दोलन की ओर जनता की दृष्टि लगी हुई है। अपने मिशन में प० नेहरू सफल हो यही राष्ट्र की कामना है।

—हिन्दू कोड-बिल पर इसी संसद के अधिवेशन में विचार करने के सरकारी निश्चय का देश की जनता ने विरोध किया था यह भी ज्ञात हुआ है कि राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने प० नेहरू को इस सम्बन्ध में संसद के लिए स्थागत करने के लिए पत्र लिखा है। था परन्तु बिल १७ ता० को संसद में पेश कर दिया गया है।

—बम्बई, मद्रास, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश की राज्य सरकारों ने उन्नत योजनाओं की पूर्ति के लिए ... करोड़ रुपया जनता से ऋण लेने की घोषणा की है।

देश-विदेश के समाचार

—बम्बई में गोआनि लोगों के संयुक्त मोर्चे ने पुर्तगाल भारत के गवर्नर जनरल को एक चेतावनी देते हुए कहा है कि छः मास में वे गोआ को खाली कर दें।

—आगामी आम चुनावों के लिये निर्वाचन आयुक्त ने दलों के लिये निम्न २५ चिन्ह स्वीकार किये हैं—दो जोते हुए बैल वृक्ष, सिंह, मानवीय हाथ, घुड़सवार, झोपड़ी, उदय होते सूर्य, हाथी, अनाज की बाल, और दरांती, फावड़ा और कोयला झोंकनेवाला मशाल, सितारा, अनाज फटकना हुआ किसान, दीप, धनुषबाण,

मुहम्मद ने विधान सभा के चुनावों को काश्मीरी जनता की सच्ची आवाज बताया है।

—मेरठ के जिलाधीश श्री वीरेन्द्र विक्रमसिंह ने सम्पूर्ण मेरठ जिले के लिये एक आज्ञा घोषित कर ईद के अवसर पर गोवध निषिद्ध कर दिया, यह आज्ञा ३० सितम्बर तक कार्यान्वित रहेगी।

—संसद में वित्तमन्त्री श्री देशमुख ने सूचित किया कि भारत अब तक विश्व बैंक से ५६०८ लाख डालर ऋण प्राप्त कर चुका है।

रेलकाइ जन, साईकिल, नैलगाड़ी, नौका फूल घड़ा, सीढ़ी तराजू, मुर्गा और ऊंट।

—दिल्ली में पारस्परिक वार्ता के बाद भारतीय और कनाडियन प्रतिनिधियों ने भारत को कोलम्बो योजनान्तर्गत सहायता देने के आधारभूत सिद्धान्त तय किये हैं।

—कराची की एक सभा में भाषण देते हुए मि० लियाकत अलीखाँ ने काश्मीर विधान सभा के चुनावों को धोखा कहा है उसके उत्तर में जम्मू में बख्शी गुलाम

—काश्मीर की नव निर्मित विधान-सभा का अधिवेशन २२ अक्टूबर से होने की सम्भावना है।

नेपाल में राणा लोग सुधारों में बाधा पहुंचा रहे हैं। अतः शीघ्र ही वहाँ मन्त्रि मण्डल का संकट पैदा हो सकता है।

—आचार्य विनोबा ने १२ सितम्बर से अपनी उत्तर प्रदेश की १५०० मील की पद-यात्रा आरम्भ कर दी है और वे इसी प्रकार चलकर दिल्ली में प्रधान मन्त्री से मिलेंगे।

—जम्मू में पाकिस्तान का एक सैनिक अफसर गिरफ्तार किया गया है उसके पास एक ट्रांसमीटर, कैमरा और अनेक कागजात मिले हैं।

—काश्मीर के प्रधान मन्त्री श्री शेख अब्दुल्ला ने मि० लियाकत अली के कराची भाषण का उत्तर देते हुए कहा कि यदि चालीस लाख काश्मीरियों के बाप की मिल्कियत काश्मीर में शासन करने का मुझे अधिकार नहीं है तो उत्तर प्रदेश के रहने वाले मि० लियाकत को पंजाब, सिंध और बंगाल की जनता पर शासन करने का क्या अधिकार है।

—दिल्ली में व्यापारियों को सूचित किया गया है कि १ नवम्बर से पूर्व वे अपना रजिस्ट्रेशन अवश्य करालें अन्यथा व्यापार न कर सकेंगे।

—ग्वालियर में मध्य भारत सरकार ने विज्ञप्ति प्रकाशित की है कि मध्य भारत जमींदारी उन्मूलन कानून २ अक्टूबर से लागू हो जायगा। यह मुहाल, जमीनों और चाकों प्रत्येक पर लागू होगा।

—श्री गुलजारीलाल नन्दा भारत सरकार के 'योजना मन्त्री" बना लिये गये हैं। वे योजना आयोग के उपाध्यक्ष का अवैतनिक कार्य भी करते रहेंगे।

—अमेरिका में भारत की राजदूत श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित अपनी भारत की यात्रा के बाद १३ तारीख को न्यूयार्क पहुँच गयी हैं।

—संसद का अधिवेशन ६ अक्टूबर तक जारी रहेगा।

—प्रेस बिल एक लम्बी बहस के बाद सिलेक्ट कमेटी के सुपुर्द कर दिया गया है। अधिकांश सदस्यों की सम्मति है कि इसे जन-मत के लिये प्रचारित कर दिया जाय।

—ईरान के साथ ब्रिटेन के संघर्ष ने अब उग्र रूप धारण कर लिया है। ईरान के १५ दिन के अल्टीमेटम के उत्तर में लन्दन सरकार ने ईरान को प्रदत्त मुद्रा सम्बन्धी सुविधायें रद्द करने की घोषणा की है। ईरानी जनता अब इस जिच को अधिक नहीं रहने देना चाहती, वह बेकार बैठे अंग्रेज कारीगरों के वेतन को देश के लिए बोझ समझती है और उन्हें निकालने की मांग कर रही है। रूस की सरकार ने इस स्थिति से लाभ उठाने की दृष्टि से ईरान सरकार को यन्त्र विशेषज्ञों की सहायता देने का प्रस्ताव भेज दिया है।

'अग्नि तपो यथास्थ'

आगरा, आश्विन कृष्ण ५ सं. २००८ वि० गुरुवार, २० सितम्बर १९५१
दयानन्दाब्द १२७ सृष्टि-सम्वत् १९७२९४९०५१

अधा नो विश्व सौभग हिरण्य वाशी मत्तम।
धनानि सुषणा कृधि। ऋ० १।४२।६

हे सर्व मंगल मय प्रभो, शुभ शक्ति सबको दीजिए
बलवान-वीरों को दयामय, प्रेरणा वह कीजिए
जिससे सभी जन राष्ट्र के सम्पत्ति-धन पाते रहें
ऋजुता-सरलता, स्वगनता के भाव अपनाते रहें।

आर्यसमाज की शुद्धि हो !

आर्यसमाज ने गत १८७५-२६ ई० तक विविध क्षेत्रों में देश और समाज की सच्ची सेवा कर सुयश-सम्पादन करने में पूर्ण प्रयत्न किया, प्रशंसनीय तप-त्याग का परिचय दिया। बलिदान देने में भी वह कभी किसी से पीछे नहीं रहा। १९३९ में हैदराबाद सत्याग्रह के अवसर पर आर्यसमाज के अशक्त शरीर या शुष्क अस्थि पंजर में एक बार फिर बड़े वेग से जीवन, जागृति, उत्साह और आवेश की विद्युत-धारा दौड़ गयी। संसार ने उसकी प्रशंसनीय कर्मवीरता और निःस्वार्थ भावना को बड़ी उत्सुकता से देखा। देश में आज जो जीवन-जागृति दीखती है, उसका आद्य प्रवर्त्तक आर्यसमाज ही है, इसे स्वीकार करने में किसी को सन्देह या संकोच न होना चाहिए। जब आर्यसमाज और आर्यसमाजी अल्प संख्या में थे, तब वे आशातीत और ठोस कार्य करते थे परन्तु अब जब वे बहुसंख्यक हुए तो इनकी कार्य शक्ति जाती रही। इसका मुख्य कारण यही है कि रजिस्टरों में जो आर्य और आर्यसमाजी दर्ज हैं उनमें से अधिकांश अवांछनीय और नाममात्र के हैं। नाम लिखाने मात्र से कोई आर्य या आर्यसमाजी नहीं हो सकता। गुण और कर्मों के कारण त्याग तप के बल पर ही व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

आर्यसमाज ने सब की शुद्धि की है, सबकी त्रुटियों का दिग्दर्शन कराया है, अब स्वयम् उसकी शुद्धि की आवश्यकता है। उसमें से वह अवांछनीय तत्व खुरच कर फेंक देना चाहिए जो न कुछ करता और न करने देता है। जिसमें कहने-भर को ही आर्यत्व शेष रह गया है। जिसे न आर्यसिद्धान्तों में रुचि है और न व्यावहारिक कार्यक्रम में दिलचस्पी। जो अन्तरंग-सभाओं की सदस्यता अथवा अधिकारारूढ़ता को ही गौरव या 'फैशन' की चीज समझते हैं। जिनके पास कभी-कभी सभा-समाजों में आ बैठने को भी अवकाश नहीं। जो किसी काम के लिए साल भर में दस-बीस रुपया देकर ही स्वर्ग अपवर्ग-प्राप्ति के स्वप्न देखने लगते हैं। जिनकी निगाह में पद-मद के कारण त्यागी-तपस्वी विद्वानों का कोई मूल्य नहीं। जो कुछ लेकर काम करने वालों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं, जिनके आचार-विचार दोनों गिरे हुए हैं। जिनकी स्वार्थान्धता और अकर्मण्यता के कारण आर्यसमाज का विशुद्ध वायुमण्डल विषाक्त हो रहा है। जो न स्वाध्याय करते हैं और न सत्संग से लाभ उठाते हैं। जिन्होंने कभी 'सत्यार्थ-प्रकाश' के दो समुल्लास भी ध्यानपूर्वक नहीं पढ़े। हम नहीं समझते, ऐसा निकम्मा और निरर्थक तत्व आर्यसमाज के लिए किस प्रकार उपयोगी हो सकता है।

अनेक [illegible] में इनसे आर्यसमाज सम्बद्ध हैं, आर्यसमाज के इनसे [illegible] ठीक है। परन्तु यह सभा कर क्या रही है। जिन [illegible] सभाओं के प्रतिनिधियों को साल में एक बार वृहदधिवेशन में उपस्थित होने का भी अवकाश नहीं आखिर वे करते क्या हैं, उनकी सत्ता क्या [illegible]? उनमें लाभ क्या? प्रतिनिधि-सभाओं के चुनावों के समय जिस प्रकार अधिकारियों और अन्तरंग-सदस्यों का निर्वाचन होता है वह भी एक तमाशा है एक-एक पद के लिये [illegible] उम्मीदवार परन्तु काम कुछ नहीं। [illegible] कन्धा [illegible] दिया, वही अन्तरंग-सदस्यता के आसन पर आसीन हो [illegible] अधिकारी की कुर्सी पर आ डटा। नाम धन से क्या मतलब। फलतः सभा और समाज सालभर तक अकर्मण्यता के आकाश में विचरण करते रहते हैं। साल भर पीछे जो वार्षिक वृत्तान्त प्रकाशित होता है उसे अपनी अकर्मण्यता और असफलता का इतिहास ही कहना ठीक होगा।

हम महासम्मेलनों को मेला मात्र समझते हैं, पुराना अनुभव हमारे इस कथन की पुष्टि करेगा। महासम्मेलन होने चाहियें, अवश्य होने चाहिये और बड़े उत्साह के साथ होने चाहिये। परन्तु उनमें किसी ठोस काम की आशा करना निराशा को निमन्त्रण देना है। ठोस कार्यक्रम तो प्रत्येक प्रान्त के लिये कुछ विचारक नेता ही निश्चित कर सकते हैं। भीड़-भड़क्के में ऐसे काम नहीं होते।

हम बड़े बलपूर्वक कहते हैं कि आर्यसमाज में आर्यों, आर्यों और केवल आर्यों की आवश्यकता है। हमें क्रियाशील आर्यों की जरूरत है। हमें सम्प्र निकम्मे आर्यों की [illegible]। आर्य सदस्य होना 'फैशन' नहीं है, वह एक धार्मिक और परम पवित्र कर्तव्य है। जो व्यक्ति इस परम पवित्र कर्तव्य या विश्व-कल्याणकारी धर्म को हृदय से पालन करने की क्षमता या ममता रखता है वही आर्यसमाज में रह सकता है। बाकी सबको समाज से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर उसकी शुद्धि में सहायक होना चाहिए।

'पग यात्रा'

पूर्वकाल में 'पग यात्रा' का बड़ा महत्व था। साधु-संन्यासी, व्याख्याता-उपदेशक, विद्वान् पण्डित घूम घूम कर प्रचार किया करते थे। वे एक ग्राम में पहुंचते, वहाँ अपने प्रवचनों और कथाओं की धूम मचाते, वयक्तिक सम्पर्क स्थापित करते, लोगों को समझाते बुझाते और एक ग्राम का आतिथ्य स्वीकार कर दूसरे को चल देते। जनता इन्हें बड़ी श्रद्धा भक्ति से विदाई देती। यही क्रम दूसरे ग्राम या नगर में भी जारी रहता। जैन साधु अब भी ऐसा ही करते हैं। वे सारे देश में पग यात्रा करते और अपने उपदेशों द्वारा सर्वसाधारण को लाभ पहुंचाते हैं। अब आचार्य विनोबा ने भी उसी पथ का अनुसरण किया है। क्या आर्यसमाज में भी इस पुण्य प्रथा का प्रचार नहीं हो सकता? क्या हमारे साधु-संन्यासी और व्याख्याता-उपदेशक भी इस प्रकार पग यात्री बन कर प्रचार करने को तैयार नहीं हैं। एक संन्यासी आज मेरठ में है, कल आजमगढ़ के लिये प्रस्थान करता है, परसों इटारसी पहुंचता है। वहां से देहरादून की दौड़ लगाता है, इससे जहां धन की बरबादी होती है, वहाँ समय और शक्ति का भी ह्रास होता है। स्वाध्याय और चिन्तन के लिए तो इस दौड़-धूप में अवसर ही नहीं मिल पाता। फिर यह प्रचार मँहगा भी पड़ता है। हम चाहते हैं, आर्यसमाज में 'पग यात्रा'-प्रवृत्ति का प्रचार हो। साधारण जनता में प्रचार करने के लिए वेद-शास्त्र या साहित्य-व्याकरण के पण्डितों की आवश्यकता नहीं, कोई भी साधारण पढ़ा-लिखा सदाचारी व्यक्ति प्रचार कार्य कर सकता है। प्रभाव आचरणों से पड़ता है, भाषणों से नहीं। भाषण तो एक कला है, जो आचरणों के बिना विशेष प्रभावोत्पादक नहीं

हो सकती। प्रान्तीय आर्यप्रतिनिधि सभाओं को चाहिये कि वे नगर यात्राओं का आयोजन करें और उन्हें भी प्रचार का एक साधन बनावें। इससे यह भी विदित हो जायगा कि कौन व्यक्ति कितना समय दे सकता और किस प्रकार प्रचार में सहायक हो सकता है।

श्री नेहरू और कांग्रेस

उस दिन कांग्रेस कमेटी में भाषण देते हुए माननीय प० जवाहरलाल नेहरू ने कहा कि आगामी आम चुनावों के लिये सबसे प्रथम ईमानदार आदमियों की आवश्यकता है। ईमानदारी पहले और योग्यता पीछे। जो लोग मेम्बरी के लिये आवेदन-पत्र नहीं भेजना पसन्द करते, परन्तु हैं जनसेवी और ईमानदार, उनसे पार्लियामेंटरी बोर्डों को स्वयम् खड़ा होने के लिये प्रार्थना करनी चाहिए। भले ही ऐसे लोग कांग्रेस के सदस्य न हों, नेहरूजी ने यह भी कहा कि प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियां को अपना पुनर्संगठन करना चाहिए, और जो लोग कांग्रेस छोड़ कर अलग हो गये हैं उन्हें यदि कांग्रेस के उद्देश्य में विश्वास है तो फिर उसमें सम्मिलित हो जाना चाहिए। श्री नेहरू ने वस्तुतः बड़े मार्के की बात कही है। ईमानदारी की कमी से कांग्रेस काफी बदनाम होगयी। जनता ने भी इस असद्भावना पूर्ण परिस्थिति से बहुत लाभ उठाया। कहीं परमिट की प्रसादी बाँटी गयी तो कहीं सिफारिशों का जादू चला। कहीं चोरबाजारी को उपेक्षा दृष्टि से देखा गया तो कहीं कुनवा परवरी का बोल बाला हुआ। स्वार्थेच्छु जनता और स्वार्थसाधक सत्ताधारी दोनों ने ही प्राय सरकार और कांग्रेस को बदनाम करने में कमी नहीं की। पिछली बातों का रोना रोने से क्या लाभ। भूत को देखकर भविष्य का सुधार करना चाहिए अब तो ऐसा प्रयत्न हो कि आगामी चुनावों में ईमानदार लोग चुने जायें। किसी की ईमानदारी किसी से छिपी नहीं रहती। परन्तु इसे पूछता कौन है। यदि जनता ईमानदारों को चुनना चाहेगी तो ईमानदारों की कमी न रहेगी। ईमानदार आदमी न किसी को ठगना है न ठगवाता है, न स्वार्थ-सिद्धि में सहायक होता है न पद मद में चूर होकर जगत को तृणवत् समझता है वह सत्ता की शराब पीकर नशे में चूर भी नहीं होता। सत्ता को सत्ता नहीं सेवा समझता है। उसके लिये शासन का अर्थ है विनम्रता पूर्ण न्यायनीति। जिन लोगों के हाथ में इन दिनों देश की बागडोर रही उनमें से कुछ ने तो अपने को विश्व का व्यक्ति समझना ही त्याग दिया। वे अधिकार की उन्मादक मदिरा पीकर आसमान में उड़ने लगे। मानो जन जनता से उनका कोई सम्बन्ध या सरोकार ही नहीं, वे साधारण मनुष्य नहीं देवदूत हैं। ऐसे घमण्डी और स्वार्थी सत्ताधारियों का मानमर्दन ईमानदार और विनम्र व्यक्तियों को चुनने से ही हो सकता है, इस बात को चुनने वाले अच्छी तरह समझ लें व नेहरूजी को अपना 'मत' दें खूब सोच समझ कर दें। स्वार्थान्ध गुटबंदी और सकीर्ण बिरादरीबाजों की बनावटी बातों में आजाने से ऐसा अनर्थ हो जायगा कि जिसके लिये पीछे बुरी तरह पछताना होगा और परिस्थिति बद से बदतर बन जायगी।

हिन्दी का बढ़ता हुआ प्रभाव

हिन्दी का प्रभाव दिनोदिन बढ़ रहा है वह भारत की राष्ट्र-भाषा के रूप में सारे देश में अपना पुण्य प्रभाव जमाए बिना न रहेगा। हैदराबाद के सभी छः बड़े स्कूलों में हिन्दी शिक्षा अनिवार्य करदी गया है। सब अध्यापकों को हिन्दी सीखनी होगी सारे 'साइनबोर्ड' हिन्दी में लिखे जायगे उस्मानियाँ विश्वविद्यालय में शिक्षा का माध्यम उर्दू के बदले हिन्दी कर दिया गया है। जब तक हिन्दी माध्यम की यथोचित व्यवस्था न हो तब तक हिन्दुस्तानी में ही शिक्षा दी जायगी अर्थशास्त्र, कला और विज्ञान हिन्दी-हिन्दुस्तानी में पढ़ाये जायगे। हिन्दी कालेज एक और नया विभाग स्थापित किया गया है। उस्मानियाँ विश्वविद्यालय के अध्यापक वर्ग को हिन्दी और देवनागरी की शिक्षा देने के लिये श्रेणियाँ खोली गयी हैं, क्योंकि नये नियमों के अनुसार वे हिन्दी में सम्यक् योग्यता प्राप्त किये बिना विश्वविद्यालय में न रह सकेंगे। उपाध्यक्ष आदि कई अधिकारी पहले ही हिन्दी की अच्छी योग्यता प्राप्त कर चुके हैं। इसी प्रकार बम्बई सरकार ने भी अपने समस्त अधिकारियों और कर्मचारियों को आदेश दिया है कि वे दो वर्ष के भीतर अर्थात् १ अप्रैल १९५४ ई० तक हिन्दी और देवनागरी का अच्छा ज्ञान प्राप्त करलें, नहीं तो उनकी वेतन-वृद्धि रोक दी जायगी। अभिप्राय यह है कि हिन्दी और देवनागरी प्रचार के लिये सारे देश में प्रशसनीय प्रयत्न हो रहा है। परन्तु जिस आर्यसमाज ने सम्भवतः सबसे प्रथम हिन्दी की ओर देश का ध्यान आकृष्ट किया, पंजाब जैसे उर्दू प्रधान मरु प्रदेश में हिन्दी की सुन्दर वाटिका लगाई, वह हिन्दी की ओर से उदासीन है। न उसके पास कोई प्रकाशन गृह है और न सुन्दर और प्रभावशाली पत्र-पत्रिकाएं। उस तो संस्थाओं के लिये चन्दा मांगने और अपने पुराने गुण गान करने से ही अवकाश नहीं। बहुत हुआ तो वर्ष-भर पीछे सभा समाजों के निर्वाचन में कुछ उत्साह दिखा दिया और बस।

राजनैतिक सम्प्रदायवाद

आजकल राजनैतिक क्षेत्र में एक बड़ी विचित्र लहर चल पड़ी है। किसी भी पुरानी और अच्छी बात का उल्लेख कीजिए आप सम्प्रदायवादी कह दिये जायगे। भारतीय संस्कृति' का नाम लीजिए, आप सम्प्रदायवादी। वेद-शास्त्र और उपनिषदों की प्रशसा में कुछ कहिये, आप सम्प्रदायवादी। हिन्दू कोड की किसी धारा को समाज के लिये अहितकर बताइये, आप सम्प्रदायवादी। ससद में बैठकर परमात्मा का नाम लीजिए, आपको सम्प्रदायवादी होने का फतवा' मिल जायगा। और इस फतवा को देने वाले होंगे वे 'वचन-बहादुर' जो राजनैतिक सम्प्रदायवाद में बुरी तरह फसे हुए हैं। इसमें सन्देह नहीं कि सम्प्रदायवाद बहुत बुरी चीज है, मत पन्थों की जितनी निन्दा की जाय थोड़ी है, परन्तु राजनीति रमणी के छल छद्म-भरे कुटिल कटाक्ष और विषैले हाव भाव धार्मिक सम्प्रदायों से अधिक विघातक सिद्ध हुए हैं। किसी विद्वान ने ठीक कहा है कि कला तो मनुष्यों को एक स्थान पर मिलकर बैठना सिखाती है, परन्तु राजनीति छिन्न भिन्न कर देती है। राजनीति के नाम पर गत दो महायुद्धों में भयङ्कर विनाश या नर-सहार हो चुका है, और अब भी इस विनाश की काली घन घटाएं विश्व व्योम पर घहराती हुई दिखाई देती हैं। धार्मिक सम्प्रदायों की तरह राजनीति के भी अनेक सम्प्रदाय बन गये हैं। वे मुक्ति दिलाने का दावा करते हैं और ये सुख शान्ति तथा स्वतन्त्रता की वर्षा करने के प्रतिज्ञा-सूत्र में अपने को बाधते हैं। स्नेह, सद्भाव, सगठन और समता को नष्ट करने में दोनों ही प्रकार के सम्प्रदाय समान रूप से सहायक सिद्ध हो रहे हैं। सार्वजनिक चुनावों के समय तो राजनैतिक सम्प्रदायों की बाढ़ सी आजाती है। कोई सम्प्रदाय संस्कृति की रक्षा करना चाहता है, कोई गोवध बन्द करने की घोषणा करता है। कोई हिन्दू जाति के हित पर प्राण देता है और किसी को अपनी बिरादरी बचाने की फिक्र पड़ जाती है। उधर सोशलिस्ट, कम्यूनिस्ट, रायिस्ट, गाधीवादी, प्रजापार्टी, मजदूर पार्टी आदि राजनैतिक सम्प्रदाय अलग चढ़ाई कर रहे हैं। है यह सब वोट भिक्षा के नाम पर। चाहे जैसी प्रतिज्ञा करा लीजिए, परन्तु वोट भिक्षा दे दीजिए। जिस सकुचित सम्प्रदायवाद को किसी की भलाई या हित-साधना से जरा भी सम्बन्ध नहीं रहा वह भी आज वोट का भीख मागने के लिए झोली पसार रहा है। हम तो कहते हैं कि धार्मिक सम्प्रदायों की भांति ही इन राजनैतिक सम्प्रदायों से भी देश का भयङ्कर अहित और अकल्याण हुआ है। ऐसी दम्भपूर्ण सकीर्ण भावना का अन्त कर देना ही प्रत्येक दृष्टि से श्रेयस्कर समझा जा सकता है।

चयनिका

[मधुप]

"माता भूमिः पुत्रोऽहम् पृथिव्याः"

भूमि माता है, यह कैसे सम्भव हो सकता है कि कुछ बालकों को ही उस पर अधिकार प्राप्त हो, और अधिकतर उसके वात्सल्य से वंचित रहे ? हवा और पानी की भाँति भूमि पर भी सबका समान अधिकार है—काल पुरुष की माँग है इस माँग को हमें समझने और उसके साथ हो जाना चाहिये। इस माँग के विरोध में मत खड़े होइए वरना जमाना वह आयगा कि न भूमि रहेगी और न वे जो उस पर अधिकार जताते हैं। व्यक्तिगत सुख-दुःख की चिंता तो पशु भी करते हैं, सामाजिक सुख-दुःख की चिन्ता यदि हम नहीं करेंगे, तो इसका अर्थ होगा, हम मनुष्य होते हुए भी, अभी पशु जीवन से ऊपर नहीं उठे हैं, अभी हमारे सामाजिक जीवन का श्रीगणेश ही नहीं हुआ है।

—आचार्य विनोबा भावे,

गांधीवाद का समन्वय-बोध

आज की दुनियां एक तरफ चल रही है—गांधीजी ने उसे दूसरी ओर ले चलना चाहा, वे अच्छाई नहीं छोड़ना चाहते थे, आज के समाज से भिन्न उनकी कल्पना थी। हम लोग ठीक तरीके से उनके काम को नहीं समझ पा रहे हैं। उनके कार्यक्रम में कई बातें थीं, वे समन्वय प्रवृत्ति को लेकर चलते थे, परन्तु आज हमारी दशा उनके सम्बन्ध में ठीक वैसी ही हो गयी है, जैसे हाथी के बारे में अन्धे अपनी राय प्रगट करते हैं, यानी हम गांधीजी के काम को अलग-अलग ढंग से सोचते हैं, उनकी आंशिक चीज को हम समग्र मानते हैं और दूसरी ओर ध्यान नहीं देते इसी एक अंश को लेकर चलने के कारण ही गांधीजी की नीति से सरकार की नीति सहमत नहीं हो रही है, हमारी सरकार उनकी नीति के अनुसार नहीं चल रही है। हम पूरी चीज को आगे रखकर नहीं बढ़ रहे। हमारे राजनीतिज्ञों के सामने पूरा चित्र नहीं है। जो चीज गांधीजी सोचते थे, हम वह नहीं कर पा रहे हैं।

—राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद

उच्च-शिक्षा की सफलता

विश्वविद्यालय की शिक्षा का उद्देश्य केवल चरित्र-निर्माण और धर्मनिरपेक्ष लोकतन्त्र की समुन्नति ही नहीं, बल्कि खाद्य की कमी और निरक्षरता आदि विविध समस्याओं का समाधान भी होना चाहिये। भारतीय विश्वविद्यालयों के छात्रों में सामान्य ज्ञान की बहुत कमी होती है। एक विषय में विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ अन्तर्राष्ट्रिय क्षेत्र की सामयिक प्रवृत्तियों का ज्ञान तो आवश्यक है ही, अपने देश के इतिहास, संस्कृति और कला का भी समुचित ज्ञान वाञ्छनीय है। समाज और राष्ट्र की उन्नति के लिये यह आवश्यक है कि विश्वविद्यालयों में छात्र सादा और पवित्र जीवन वितायें और विश्वविद्यालय से निकलने के बाद अपना जन साधारण से सम्बन्ध स्थापित कर सकें, जब तक छात्रों में जनता जनार्दन के साथ आत्मसात होने की भावना जाग्रत न होगी तब तक विश्वविद्यालय की शिक्षा देश के धन का भारी अपव्यय ही सिद्ध होगी।

—श्री आचार्य नरेन्द्र देव

समाज का अभ्युदय

जन-साधारण समाज की नींव है और इस नींव की दृढ़ता पर ही समाज का अभ्युदय निर्भर है। बड़े बड़े लोग तो समाज के गुम्बद हैं, जो दूर से चमकते तो बहुत हैं, पर समाज के निर्माण और व्यवस्था में नींव की अपेक्षा बहुत कम महत्व रखते हैं। अगर हमें व्यवस्थित और प्रगतिशील समाज का निर्माण करना है, तो जन-साधारण में नागरिक चेतना को विकसित करके ही ऐसा सम्भव कर सकते हैं। आत्मवत् व्यवहार ही नागरिकता का सर्वोच्च आदर्श है, मनुष्य को दूसरों के प्रति वैसा ही व्यवहार करना चाहिये, जैसा कि वह दूसरों के द्वारा अपने प्रति किये जाने की अपेक्षा करता है। इसी आधार पर चलने से समाज के नेता जनता में नागरिक भावना का विकास करने में सफल हो सकते हैं।

—माननीय श्री श्रीप्रकाश

दो राष्ट्रों का हार्दिक सम्बन्ध

भारत और अफगानिस्तान का मैत्री सम्बन्ध वास्तविक और स्थायी है, हम सम्पूर्ण विश्व में न्याय और शान्ति चाहते हैं, दुनियां की सुरक्षा में हमारा पारस्परिक सहयोग लाभकर सिद्ध होगा। भारत में विशाल प्रजातन्त्र की स्थापना एशिया के इतिहास में महत्वपूर्ण घटना है, विश्व में इस घटना से सर्वाधिक प्रसन्नता अफगान जनता को है। यद्यपि आज दोनों देशों का सीमा नहीं मिलती, लेकिन इससे भी अधिक निकट सम्बन्ध दोनों देशों की जनता के दिलों में है।

—श्री शाह मुहम्मदखां गाजी
अफगानिस्तान के प्रधान मन्त्री

अध्यात्म धारा

कल्याण-पथ

भद्रमिच्छन्ति ऋषयः स्वर्विदः
तपोदीक्षा उपसेदुरग्रे ।
ततो राष्ट्रं बलमोजश्च जातं
तदस्मै देवा उपसंनमन्तु ॥

अथर्व०

समस्त जनता का कल्याण हो, ऐसी इच्छा तत्वदर्शी ऋषियों के अन्तःकरण में हुई और उन्होंने दीक्षा लेकर जो तप किया उसके कारण राष्ट्र का निर्माण हुआ, तथा उस राष्ट्र से राष्ट्रिय बल और ओज उत्पन्न हुआ, अतः इस राष्ट्र के प्रति हमें विनम्र होना चाहिये।

उपर्युक्त वेद मन्त्र में राष्ट्रोत्पत्ति और राष्ट्र के प्रति प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य वर्णित है। प्रत्येक व्यक्ति को ही नहीं, राष्ट्र के प्रत्येक अधिकारी को भी विनम्र होने की आवश्यकता है। सत्य और विनम्रता के बिना राष्ट्रिय ओज, तेज और बल कुछ भी स्थिर नहीं रह सकता। आज अशान्ति का मुख्य कारण विनम्रता और ओज-तेज का अभाव ही है। प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थान्ध होकर कुटिल नीति का आश्रय लेता दिखाई देता है। अधिकारी जन पद मद के कारण विनम्रता को नमस्कार कर चुके हैं, ऐसी दशा में सात्विक भावना और वास्तविक स्नेह और श्रद्धा-भक्ति का उदय होना असम्भव ही है। किसी उदीयमान और प्रगतिशील राष्ट्र की आधार शिला कटुता, कुटिलता और स्वार्थमूलकता पर कदापि नहीं रक्खी जा सकती, जो लोग राष्ट्र या राजनीति को धर्म से शून्य रखना चाहते हैं, वे न राष्ट्र का अर्थ समझते हैं और न धर्म का। अन्य देशों की बात इस समय हम नहीं कहते, भारत के सम्बन्ध में तो दृढ़तापूर्वक कहा जा सकता है कि जब-जब यहाँ की राजनीति ने धर्म से असहयोग किया, तभी तब अनर्थों की वर्षा हुई। जो बात भारत के सम्बन्ध में है वही विश्व पर भी लागू हो सकती है धर्महीन विश्व आज संकटों का केन्द्र बना हुआ है। धर्म का आश्रय और अनुष्ठान ही संसार की सारी अशान्ति को शान्ति में परिणत करने की क्षमता रखता है। जिन सिद्धान्तों के पालन करने से परलोक, लोक, दीन दुनिया और अभ्युदय-निश्रेयस् की सिद्धि होती है, वही वास्तव में धर्म है। इसी धर्म के बिना आज संसार में संकटों का समुद्र उमड़ रहा है और आपत्तियों की आंधियाँ आ रही हैं। यदि हमें वास्तव में सुख शान्ति से रहना है तो विनीत और विनम्र बनकर विशुद्ध वैदिक धर्म पालन करते हुए तेज, ओज और बल प्राप्त करना होगा, तभी सबका कल्याण हो सकता है।

—मर्त पी

विज्ञान-वार्ता

घास को नष्ट करने वाला पदार्थ

अमेरिका के कृषि वैज्ञानिकों ने खेतों में पैदा होने वाली घास को नष्ट करने के लिये 'सोडियम कम्पाउण्ड आफ ट्रिक्लोरेमेटिक एसिड' नामक रासायनिक पदार्थ ढूंढ लिया है। इसके प्रयोग से गन्ना, चुकन्दर, सन तथा रिजका आदि को हानि नहीं होती और उनके खेतों की घास नष्ट हो जाती है।

हवा से चलने वाली घड़ी

स्विटजरलैण्ड के वैज्ञानिकों ने एक ऐसी घड़ी का निर्माण किया है जो हवा से चलती है। इसके लिये न बालकमानी चाहिये और न अनेकों पुर्जे, हवा के तापमान में होने वाला क्षीण परिवर्तन ही उसका आधार है।

अणु शक्ति चालित पनडुब्बियाँ

अमेरिकी इञ्जीनियरों ने अणुशक्ति चालित पनडुब्बियों की रूप-रेखा तय्यार कर ली है। ये पनडुब्बियाँ डीजल चालित पनडुब्बियों की अपेक्षा अधिक समय तक जल के नीचे रह सकती हैं। अणुशक्ति चालित पनडुब्बियों के निर्माण में प्रचलित की अपेक्षा चौगुना व्यय होगा।

चावल के बराबर रेडियो-ट्यूब

अमेरिका में एक ऐसी रेडियो ट्यूब बनायी गयी है जिसका आकार चावल के बराबर है। इस छोटी रेडियो ट्यूब के कारण रेडियो व्यापार में बहुत बड़ी तरक्की होने की सम्भावना है।

चन्द्रलोक की यात्रा

अमेरिकी वैज्ञानिकों ने चन्द्रलोक की यात्रा के लिए पूर्ण तैयारियाँ कर ली है। पृथ्वी से चन्द्रलोक की ओर जाने के लिए यह आवश्यक है कि राकेट कम से कम प्रति सैकेण्ड ७ मील की गति से चले। अब ऐसे राकेटों का निर्माण कर लिया गया है जिनकी गति प्रति घण्टा ३०००० मील अर्थात् एक सेकण्ड में वह ८ मील चल सकेगा। देखिये मनुष्य कब चन्द्रलोक के दर्शन करता है।

चमकदार स्याही

वैज्ञानिकों ने ऐसी चमकदार स्याही का निर्माण किया है जो ज्यों-ज्यों प्रकाश कम होता जाय त्यों-त्यों अधिक चमकदार दिखाई देने लगती है। इस स्याही का का नाम 'नियोन इन प्रिण्ट' है, सूर्य की सीधी रोशनी पड़ने पर भी इसकी चमक एक महीने तक खराब नहीं होती।

लक्ष्यवेधक नया वायुयान

अमेरिका में समुद्र स्थित पनडुब्बियों को डुबाने वाले शीघ्रगामी ऐसे वायुयान का निर्माण किया गया जो ७५ नाट की गति से उड़ सकता है, जहां समुद्र में पनडुब्बियाँ हों वहाँ आकाश में बड़ी मन्द गति से मंडरा सकता है। इसकी एक विशेषता यह भी है कि इसमें हवा में खड़े-खड़े नीचे के जहाजों से पेट्रोल डाला जा सकता है। इसकी लम्बाई ३२४ फुट है।

नमक-दोष नाशक औषधि

वैज्ञानिकों ने एक ऐसी औषधि की खोज कर ली है जिसके सेवन से रक्तचाप (हाई-ब्लड प्रेशर) या हृदय, वृक्व (गुर्दे) अथवा यकृत की बीमारियों के रोगी नमक का प्रयोग करने में वञ्चित न रहेंगे।

नमक शरीर में जाकर रक्त-प्रणाली में अधिक मात्रा में पानी इकट्ठा कर देता है, परन्तु यह औषधि खाये गए नमक का १२ भाग शरीर से निकाल देती है और इस प्रकार शरीर में पानी की मात्रा कम हो जाती है। इस औषधि का नाम 'रेसोडक' है। रेसोडक न तो शरीर में लीन होती है और न शरीर पर कोई दुष्प्रभाव ही डालती है। जो लोग नमक नहीं खाते उनके लिए भी यह लाभदायक है।

मस्तिष्क-रोग और ध्वनि-तरंगें

कैम्ब्रिज के वैज्ञानिकों ने मस्तिष्क की बीमारियां जानने के लिये ध्वनि तरंगों का प्रयोग किया और सफलता प्राप्त की है। ध्वनि-तरंग के प्रयोग एक्सरे विधि से अधिक सुगम सिद्ध होगा। एक्सरे के प्रयोग में मस्तिष्क के सभी रिक्त स्थानों को हवा से भरना पड़ता है जो बहुत कठिन कार्य है परन्तु ध्वनि तरंग चिकित्सा में ऐसा नहीं करना पड़ेगा।

समुद्र जल शुद्धि की नयी-विधि

डाक्टर मरिया टैल्केस नामक महिला ने समुद्र के खारी जल को शुद्ध बनाने के लिये एक सौर भपका (सोलर स्टिल) तय्यार किया है। भपका एक तरह का कम गरम कड़ाहा होता है जो कांच से पूरी तरह कसकर ढका रहता है। एक नाली से जल उस कड़ाहे में आता है और सूर्य की गर्मी से भाप बनकर कांच की छत पर जम जाता है और फिर नमक से मुक्त बूंदों के रूप में वह भाप पानी की टंकी में इकट्ठी हो जाती है। सौर भपका प्रतिदिन १० से १२ हजार गैलन तक जल शुद्ध कर सकता है।

बाल-विनोद

प्यारे बाल साथियो, इस बार कई सप्ताह पश्चात् आपसे मिल रहा हूँ। कई दिनों तक बराबर लड्डुओं की ही गिनती, हिसाब लगाना पड़ा। करते-करते नाक में दम आ गया। खैर, ज्यों-त्यों कर बड़ी कठिनाई से पिंड छूटा है, उस उलझन से।

आप सोचते होंगे कि ज्ञानूदादा भी क्या अद्भुत आदमी हैं, जो लड्डुओं के मामले को झंझट बतलाते हैं लड्डुओं का काम कोई हमें सौंप दे, तो हम उसे भर-पट धन्यवाद दें।

परन्तु नहीं आप लोग जैसा सोचते और समझते हैं, बात वैसी नहीं थी। इसीलिये तो मैं इसे झंझट बताता हूँ। अठवाड़ों तक दिन दिनभर और कभी कभी रात में भी लड्डू ही गिनते रहने पर भी, खाने को उनका थोड़ा बहुत चूरा मिलना तो दूर किनार, उनकी मनको मस्त बना देने वाली खुशबू भी सूंघने को न मिले, हृदय को आह्लादित कर देने वाली उनकी गोल मटोल मनोहर मूर्ति के दर्शन तक न हों तो भला यह काम कोरा झंझट नहीं तो क्या है? अगर तुम्हें यह झंझट नहीं जान पड़ता तो लो, करके देख लो। हाँ, इस काम में यह पहली शर्त है कि लड्डू फोड़ा न जाय। लो अब गिनो और हिसाब लगाओ—

सुरेश, महेश और रमेश तीनों भाई मेले को गए। रास्ते में खाने के लिए उनकी मां ने कुछ लड्डू बनाकर कटोरदान में रख दिये। रात को वे पड़ाव पर ठहरे। हारे-थके थे ही बिना खाए पिये सो गए। रात में सुरेश की आँख खुली, तो उसे भूख मालूम हुई। कटोरदान खोला और लड्डुओं के तीन बराबर हिस्से कर अपना हिस्सा खा लिया। शेष कटोरदान में रख कर सो गया। थोड़ी देर में महेश की भी नींद उचटी। भूखा वह भी था। सुरेश की भांति उसने भी शेष लड्डुओं के तीन बराबर भाग किये और एक भाग खाकर दो भाग रख दिये। अब रमेश जागा और उसने भी शेष रक्खे हुए लड्डुओं को तीन जगह बांटकर एक हिस्से को खा लिए, बाकी रख दिये। सवेरे तीनों भाई साथ-साथ उठे और रात के शेष लड्डुओं को बराबर-बराबर बांटकर खा गए। प्रत्येक बार के बांट में लड्डू फोड़ा नहीं गया। अब गिनो और बताओ वे कुल कितने लड्डू घर से लेकर घर से चले थे और प्रत्येक ने कितने कितने लड्डू खाए।

—प्रश्न प्रेषक—श्री रामचन्द्रजी
आ० स० कायमगंज

सुझाव और सम्मतियाँ

प्रचार और संगठन

आर्यसमाज का प्रथम युग प्रचार युग—महान् तथा उज्ज्वल था और उसने भारत में नवजीवन संचार करके भारत के भविष्य को उज्ज्वल करने में बड़ी सहायता दी, किन्तु देश की वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए आर्यसमाज की प्रचार प्रणाली में अपेक्षित परिवर्तन करने की आवश्यकता प्रतीत होती है। इसलिए इस विषय में मेरे सुझाव इस प्रकार हैं, आशा है उन पर मेरठ आर्य महासम्मेलन गम्भीरतापूर्वक विचार करेगा।

आर्यसमाज में गायन विद्या का लोप-सा हो रहा है। आर्यसमाज के गायक तथा भजनोपदेशकों ने आज तक यद्यपि अपने ढंग से उज्ज्वल प्रचार किया है, तथापि अब केवल संगीत कलाहीन भजनोपदेशकों का काम नहीं रहा। भजनोपदेशक ऐसे हों जो गान विद्या के नियमों से अच्छी तरह परिचित हों और गानविद्या के अनुरूप गायन जानते हों।

सिद्धान्तों के प्रचारार्थ योग्य से योग्य विद्वान् उपदेशक रखे जायें तथा उनका पूर्ण सत्कार किया जावे। आर्यसार्वदेशिक सभा ऐसे उपदेशकों को तैयार करने के लिए एक महोपदेशक महाविद्यालय खोले जिसमें योग्य से योग्य व्यक्ति प्रविष्ट करके उनको न केवल सिद्धान्त विषयक अपितु संसार-भर के धर्मों का तथा राजनैतिक इतिहासों का भी परिज्ञान कराया जावे। यह महोपदेशक महाविद्यालय इतना बड़ा और इतना अधिक उपयोगी हो कि विदेशी और विधर्मी तक उससे लाभ उठा सकें। इस विद्यालय से दस वर्ष बाद कम से कम सौ विद्वान् महोपदेशक प्रति वर्ष मिलने चाहिए।

भविष्य में सर्वसाधारण प्रबन्ध सम्बन्धी सब कार्य भले ही बहुमत से होते रहें, परन्तु धर्म कार्यों में धार्मिक विद्वानों का ही निर्णय मान्य करके आर्यसमाज के संगठन को सावधानता से चलाना चाहिये। आर्यसमाज के चुनावों में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाय कि मुख्य पदों पर प्रायः धार्मिक पुरुषों को ही चुनें। इस विषय में बहुमत का ध्यान न रखा जाय। प्रथम अवसर धार्मिक विद्वानों को दिया जाय, धार्मिक विद्वान न मिलें तो दूसरा नम्बर धार्मिकों का रहे। उनकी आर्थिक हीनता पर ध्यान न दिया जाय। केवल धनी होने के कारण किसी को कोई पद न दिया जाय।

इक्कीस वर्ष की अवस्था के पश्चात् सब आर्य अथवा आर्य देवियां कांग्रेस के सदस्य तथा सदस्याएँ बनें और कांग्रेस संगठन पर अपना प्रभाव डालने का और वर्तमान देश की दशा को सुधारने तथा वर्तमान विधान के अनुसार प्रचलित होने वाले शासन-चक्र को भारतीय धर्म तथा संस्कृति से प्रभावित करने और प्रचलित पद्धति से अधिकाधिक देश को लाभान्वित करने की चेष्टा करें।

नवीन ढंग पर चलाई जाने वाली शिक्षा संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा पर पूर्ण बल दिया जाय और प्राचीन शिक्षा संस्थाओं से सबल अनुरोध किया जाय कि वे अपनी शिक्षा संस्थाओं में प्राचीन वेद-शास्त्रादि की शिक्षा पर ही बल देवें और उनमें नवीन प्रकार की शिक्षा-दीक्षा का संचार करके मिश्रित रूप न करें और न सरकार की सहायता लेकर अपनी स्वतन्त्रता तथा महत्व खो बैठें।

—नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ

आर्य विद्वत्सभा की स्थापना

आर्यमहासम्मेलन के अवसर पर एक स्थायी आर्य विद्वत्सभा की स्थापना होनी चाहिये। इस प्रकार जब आर्यविद्वान् एक सभा में संघटित होंगे तो आर्यजनता को भी एकता-सूत्र में संगठित होते देर न लगेगी। तब वह बहुत-से सिद्धान्तों के तत्व और मर्म को समझ सकेगी। यह विद्वत्सभा व्यवहार दक्ष, कार्यपटु, विशिष्ट विचारकों की हो। प्रारम्भ में बीस-पच्चीस विद्वान् ही इसमें रखे जायें। आर्य महासम्मेलन का उद्देश्य आर्यजगत का पथ-प्रदर्शन करना होना चाहिए। वह व्यावहारिक कार्यक्रम की रूपरेखा निश्चित करे और उसे क्रियात्मक रूप दे। सार्वदेशिक सभा और प्रान्तीय आर्यप्रतिनिधि सभाएँ इस दिशा में अपने सारे अधिकार इस विद्वत्सभा को ही सौंप दें और उसके आदेशानुसार वे स्वयम् भी चलें विद्वत्सभा के लिए जो विद्वान चुने जावें वे पूरा समय देने वाले हों। यह विद्वत्सभा ही ठोस साहित्य का प्रचार करे और विरोधी साहित्य का उत्तर दे। अभिप्राय यह है कि मेरठ आर्यमहासम्मेलन कोरा महामेला न हो, बल्कि कुछ ठोस कार्य करने में ही अपनी उपयोगिता और सफलता समझे।

—श्रीराम शर्मा 'वैदिक' आगरा

हमारी उपासना-विधि

इस सम्बन्ध में आर्यमित्र में दो लेख पढ़े; एक श्री रघुनन्दनशरण एडवोकेट का दूसरा श्री कुँवर चांदकिरण शारदा का। इस बारे में आर्यविद्वानों ने बड़े असमञ्जस में डाल दिया है। आर्यसमाज का एक विद्वान् कुछ कहता है दूसरा कुछ। हम लोग जो साधारण व्यक्ति हैं, नहीं समझ पाते कि किस विद्वान की बात प्रामाणिक और मानने योग्य है। फल स्वरूप जो एक विद्वान् कह देता है उसकी मानते हैं फिर दूसरा विद्वान् बताता है उसकी अच्छी लगती है। उसके बताये मार्ग पर चलने लगते हैं एक तीसरा विद्वान् आता है वह कहता है यह सब गलत है।

मेरी प्रार्थना है कि इस विषय में सार्वदेशिक सभा द्वारा उपासना-विधि की एक रूपता का आदेश होना चाहिये, जो सर्वत्र समान रूप से जानी मानी जा सके और जिसमें किसी विद्वान को अपनी अलग राय देने का कोई अधिकार न हो। जिसे जो सम्मति या सुझाव देने हों, उन्हें पहले ही सार्वदेशिक सभा उनसे माँग लें और उपासना-विधि के सम्बन्ध में अपना अन्तिम निर्णय दे दे। जिससे यह विभिन्नता नष्ट हो जाय।

—रामगोपाल आर्य
चँदौसी

उपदेशक-विद्यालय

आर्यमहासम्मेलन मेरठ का समय निकट आ रहा है। इस अवसर पर यदि एक उपदेशक विद्यालय स्थापित करने का निश्चय कर लिया जाय तो आर्य जगत् की एक बहुत बड़ी त्रुटि की पूर्ति हो जायेगी। उपदेशक विद्यालय के संचालन का कार्य ऐसे कर्मठ तथा अनुभवशील व्यक्ति को सौंपा जाय जिसे वैदिक धर्म से सच्चा प्रेम हो और जो आदर्श उपदेशक उत्पन्न करने की क्षमता तथा योग्यता रखता हो। मेरे विचार से यदि यह कार्य भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् के सुयोग्य परीक्षा मन्त्री डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए०, डी० लिट्, साहित्यालङ्कार, सिद्धान्त शास्त्री, अजमेर को सौंपा जाय तो उपदेशक विद्यालय शीघ्र ही अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकेगा। विद्यालय का समय तथा पाठ्यक्रम इत्यादि ऐसा रक्खा जाय जिससे विद्यार्थी अध्यापक, व्यापारी तथा नौकरी आदि व्यवसाय के सभी सज्जन लाभ उठा सकें। हम विद्यालय से ऐसे उपदेशक निकालें जो भारतीय ग्रामीण तथा नागरिक जनता के अतिरिक्त विदेशों में भी वैदिक धर्म के प्रसारक हों। यदि प्रति वर्ष हमारे विद्यालय से इस प्रकार के उपदेशक निकलते रहें तो देश के समस्त आर्यसमाजों में फैलकर वे आर्यसमाज तथा वैदिक धर्म के स्तर को अधिक ऊँचा उठा सकेंगे जो कि प्रत्येक दृष्टि से एक ठोस कार्य होगा। पाठ्यक्रम इत्यादि के सम्बन्ध में यदि अन्य महानुभाव भी विचार दें तो कृपा होगी।

—रामेश्वरसहाय, लखनऊ

स्वास्थ्य-सुधा

वर्षा-ऋतु मे स्वास्थ्य-रक्षा

आयुर्वेदाचार्य श्री उमादत्त एम ए०

परिवर्तनशील ऋतुओं का हमारे स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ा करता है जिस प्रकार जाड़ा में जाड़ा और गर्मियों में गर्मी शरीर पर प्रभाव डालते हैं उसी भाँति वर्षा ऋतु का नम वायुमण्डल पाचन संस्थान में मन्दाग्नि और श्वास संस्थान में शिथिलता उत्पन्न कर देता है, यही कारण है कि वर्षा ऋतु में प्राय सबकी भूख कम हो जाती है और रक्त की पूर्ण शुद्धि न होने के कारण रक्त की व्याधियाँ अधिक हुआ करती है

इसलिए अन्य मौसमों की अपेक्षा वर्षा-ऋतु में हम अपने स्वास्थ्य की ओर अधिक ध्यान देना चाहिये। अनियमित जीवन बिताने वालो पर वर्षा ऋतु का दुष्प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। जो लोग आवश्यक व्यायाम, नियमित और अल्पाहार तथा भ्रमण के प्रोग्राम का पालन करते हैं वे स्वस्थ बने रहते हैं बरसात के मौसम में जिन आवश्यक बातो का ध्यान रखने से स्वास्थ्य उत्तम बना रहता है उनमें से कुछ निम्न प्रकार हैं

भोजन वर्षा ऋतु में कम भोजन करने से शरीर स्वस्थ बना रहता है, जठराग्नि मन्द हो जाने के कारण अधिक भोजन पच नहीं पाता और इस प्रकार अजीर्ण का कारण बन जाता है, इसलिये इस मौसम में अल्पाहारी व्यक्ति ही स्वस्थ रहता है। यदि महीने में एक दो बार उपवास भी रक्खा जा सके तो वह भी बहुत लाभदायक सिद्ध होगा। यद्यपि आजकल हमारे देश में रात्रि में ६ बजे के लगभग भोजन करने की प्रथा बढ़ रही है तथापि वर्षा ऋतु में सूर्यास्त होते होते भोजन समाप्त कर देना ही उचित है।

सामान्य भोजन के अतिरिक्त प्रकृति के वरदान रूप में प्राप्त फलो के उपयोग का अवसर भी हमें वर्षा ऋतु में ही प्राप्त होता है। आरम्भ में आम और जामुन और बाद, अमरूद, नाशपाती, अनार और अंगूर आदि का उपयोग करना चाहिये। खीरा और ककड़ी भी इन मौसम के अच्छे और सस्ते फल है। कच्चे गोले की गिरी का उपयोग भी हम में से बहुत से लोग करते हैं। गिरी तो लाभदायक है ही साथ ही गोले का पानी भी एक दिव्य पदार्थ है उसमें पाचन और दाह शमन करने की अद्भुत शक्ति है, अत यथा सम्भव उसके उपयोग का प्रचार करना चाहिये।

नीबू का उपयोग इस मौसम में बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ है। प्रात ठण्डे या गुनगुने एक गिलास जल में एक नीबू निचोड़ कर लेने से शरीर में स्थायी स्फूर्ति बनी रहती है। बरसात रोगो में नीबू का प्रयोग रामबाण सिद्ध होता है। तुलसी की पत्ती का चाय के रूप अथवा कालीमिर्च के साथ औषधि रूप से सेवन भी इन मौसम की बहुत सी बीमारियों से बचाने वाला सिद्ध हुआ है।

शरीर शुद्धि—इस मौसम में शरीर के रोम कूपों को खुला रखने की ओर अधिकाधिक ध्यान देना चाहिये। चर्म रोगो से बचने के लिये यह आवश्यक है कि रोम रंध्र खुले रहें, इस हेतु स्नान-क्रिया के समय खद्दर के सुन्दर अथवा रोयेंदार तौलिये से शरीर को रगड़ना चाहिये, रगड़ने से रोम कूप खुल जाते हैं। साधारण जल से स्नान के अतिरिक्त वर्षा जल के स्नान से भी लाभ होता है क्योंकि जल में एक विद्युत्शक्ति होती है, जिससे शरीर में स्फूर्ति आ जाती है।

व्यायाम—सामान्य व्यायाम के अतिरिक्त शीर्षासन सर्वाङ्गासन आदि अनुकूल एवं मृदु अभ्यस्त आसनो का प्रयोग भी करते रहना चाहिये। दण्ड बैठक क्रम में थोड़ी कमी करके दण्ड अधिक लगानी चाहिये उदर पर प्रभाव डालने वाले व्यायामो का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिये, जिससे पाचन संस्थान ठीक प्रकार से गति और शक्ति प्राप्त करता रहे।

इसके अतिरिक्त दिन में न सोना और रात में शीघ्रशयन भी इस मौसम में स्वास्थ्य वर्धक नियम है। वर्षा में मच्छरो से बचने के लिये मच्छरदानी का प्रयोग भी करना चाहिये, यदि यह सम्भव न हो तो कड़वे तेल की मालिश करके सोने से भी मच्छरो से बचाव हो सकता है। वर्षा के सुहावने मौसम में छोटे छोटे दलों में अपने समीपस्थ स्थानो में वन विहार आदि के प्रोग्राम बनाकर भ्रमण के क्रम को जारी रखना चाहिये इस प्रकार मनोरंजन के साथ साथ स्वास्थ्य पर भी इसका अच्छा प्रभाव पड़ता है।

वर्षाऋतु का सुहावना मौसम हमारे लिये प्रकृति की अनुपम भेंट है यदि हम सावधानी पूर्वक अपने को स्वस्थ बनाये रख सकें तभी हम प्रकृति की इस अनुपम एवम् रमणीक भेंट का वास्तविक आनन्द अनुभव कर सकते हैं।

महिला-मण्डल

नारी और राष्ट्र-निर्माण

श्रीमती ज्योत्स्ना साहित्याचार्य

प्रत्येक देश के सुन्दर भविष्य का निर्माण उस देश की महिलायें ही किया करती हैं महिलाओं की इसी राष्ट्र निर्मातृ शक्ति की ओर संकेत करते हुए महात्मा गांधी ने कहा था- "सच्ची माता बनना ही स्त्रियों की सच्ची राष्ट्र सेवा है।" अर्थात यदि प्रत्येक माता अपनी सन्तान को योग्य बनाने का प्रयत्न करे तो सारे राष्ट्र का वास्तविक निर्माण हो सकता है।

कल तक भारत में मध्यकालीन विचार धाराओं की शृंखलाओं में नारी आबद्ध थी और इसलिये अशिक्षिता थी। परन्तु आज सामाजिक और राजनैतिक चेतना के कारण स्त्री जाति के बन्धन शिथिल हो चुके हैं। आज आवश्यकता इस बातकी है कि महिलायें अपने को शिक्षित बनाये और अपने महान् मातृत्व को गम्भीरता पूर्वक स्वीकार करें।

प्राचीन भारत में मातायें अपनी सन्तानो का बचपन से ही नहीं गर्भ से ही निर्माण आरम्भ कर देती थी। भारतीय जीवन में संस्कार पद्धति का यही महत्व था और यही कारण था कि हमारे पूर्वकाल में राम, लक्ष्मण, भरत, श्रवण कुमार, लव और कुश, अर्जुन और अभिमन्यु, प्रताप और शिवाजी जैसे राष्ट्र सपूतो का आदर्श परम्परा भारत के मस्तक को गौरवान्वित किये रही। आज भी राष्ट्र उन जैसे आदर्श पुरुषो की मांग कर रहा है जिसे स्त्री जाति ही पूर्ण कर सकती है। उत्तम संस्कारो के इस महत्व का महिलाओ में अधिकाधिक प्रचार किया जाना चाहिये।

पाश्चात्य आधुनिक सभ्यता ने आज भारतीय गृहस्थ के जीवन की दिशा को निर्माण की अपेक्षा विलासोन्मुख बना दिया है। विलास मग्न दम्पती अपनी सन्तानो के निर्माण पर ध्यान नहीं दे पाते और इस प्रकार हमारी नयी पीढ़ी का वास्तविक निर्माण नहीं हो रहा है। मातायें बच्चो के कपड़े और साजसजावट तक ही अपने कर्तव्य की इति श्री समझ लेती हैं। यह उनकी भारी भूल है, उन्हें सर्व प्रथम बालक के चरित्र-निर्माण पर ध्यान देना चाहिये बाद में किसी और बात पर।

प्रचलित शिक्षा पद्धति में पर्याप्त कमियाँ हैं जिनके प्रभाव से बालक का वास्तविक चरित्र नहीं बन पाता। इसलिये राष्ट्र-निर्माताओं के नव निर्माण में माताओं का दायित्व और भी अधिक बढ़ जाता है। हमारा महिला समाज अपने महान् दायित्व को शीघ्र अनुभव कर सके इसके लिये आज आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षित बहनें अशिक्षित बहनो के पास पहुंचे और उनको

बेसिक अँगरेजी शब्द है और आज कल सभी लोग इसका अर्थ समझते हैं। अँगरेजी को सर्वथा व्यापक रूप देने के लिये अँगरेजी के विद्वानों ने बेसिक अँगरेजी की नींव डाली थी। और अँगरेजी भाषा में से सरल शब्दों और प्रयोगों को छाटकर उनको जनता में फैलाने का यत्न किया गया था। अब भारतवर्ष में भी बेसिक हिन्दी का इसी प्रकार प्रचार किया गया।

जब से राष्ट्रभाषा का प्रश्न उपस्थित हुआ है, बेसिक संस्कृत की भी आवश्यकता अनुभूत होने लगी है। आर्यसमाज को चाहिये कि उत्साह और श्रद्धा के साथ इस प्रश्न को अपना कर अपनी सारी शक्ति इस ओर लगा दे। भारतवर्ष में केवल आर्यसमाज ही ऐसी संस्था है जिसकी संस्कृत के सर्वोपयोगी होने पर आस्था है, सनातनी लोग केवल इसको धर्म

आवश्यक बातों का ज्ञान कराया। वस्तुतः बा स्मारक ट्रस्ट ने कुछ प्रशंसनीय कार्य तय्यार भी किये हैं, परन्तु वे अपर्याप्त हैं। सरकार और सामाजिक संस्थाओं, को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। महिलाओं की शिक्षा में समाज सेवा के महत्त्वपूर्ण कार्य क्रम को स्थान दिया जाना चाहिये जिसमें महिलाएं सुधार कार्य में अधिक रुचि ले सकें। मिस मेयो ने भारत का और विशेष कर स्त्री समाज का जो रूप प्रस्तुत किया था, उसे समाप्त करने के लिये हमें कठोर परिश्रम करना होगा। इस कार्य में महिला समाज का दायित्व सर्वाधिक है।

हमारे शास्त्रों में मातृमान और मातृदेवो भव के जो उच्चतम उपदेश बालकों को दिये गये हैं, उनके द्वारा राष्ट्र निर्माण में मातृशक्ति की महत्ता स्पष्ट परिलक्षित होती है। राष्ट्र के नव निर्माण में आज जब अन्य सभी वर्गों की शक्तियाँ जुट गयीं हैं तब महिला समाज को भी अपने गौरव की रक्षा के हेतु राष्ट्र निर्माण के कार्य में सक्रिय सहयोग देना चाहिये। यदि आज की भारतीय महिलायें अपने दायित्व को पूर्ण कर सकीं तभी उनके महापुरुषों की जन्मदात्री होने का गौरव स्थिर रह सकेगा।

सामयिक समस्याएँ

बेसिक संस्कृत

श्री प० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय, एम० ए०

के कामों अर्थात् पूजा पाठ की ही भाषा समझते हैं और सनातनियों के बहुत से गुरुओं ने तो गुरुमन्त्र भी हिन्दी में कर डाले हैं। अतः वह बिना संस्कृत के भी काम चला सकते हैं। परन्तु आर्यों की दृष्टि तो उस अवसर की ओर लगी हुई है जब लोगों में वेदों को पढ़ने और समझने की क्षमता उत्पन्न हो जाय। यही कारण था कि आर्यसमाज के प्रवर्तक ऋषि दयानन्द पहले

ओर टूट पड़ा तो अगले ५० वर्षों में संस्कृत में राष्ट्रभाषा होने की क्षमता उत्पन्न हो जायगी। यह नहीं कहना चाहिये कि भारतवासी हिन्दी संस्कृत को राष्ट्रभाषा बनाने की क्षमता आ जायगी, परन्तु इसके लिये पुरानी ढंग को छोड़ना होगा। और बेसिक संस्कृत के नाम डालनी होगी। बेसिक संस्कृत से मेरा यह आशय नहीं कि हम संस्कृत को कटे नहीं चाल लाना चाहते या उसे



श्री पं० गङ्गाप्रसादजी उपाध्याय

केवल संस्कृत ही बोलते थे। यह तो अच्छा हुआ कि उन्होंने हिन्दी को अपना लिया इससे आर्य समाज ने देश भर में हिन्दी के लिये एक नवीन जोश उत्पन्न कर दिया और उसके फल स्वरूप आज हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा हो गई। परन्तु अब इस हिन्दी को अपनाने वाले तो देश के सभी लोग हो गये। अब हिन्दी को गोद में खिलाने के दिन चले गए। अब तो यह अपने पैरों खड़ी हो रही है। अब इसको दूसरों के ऊपर छोड़ कर आर्यसमाज को अपना समस्त शक्ति संस्कृत की ओर लगा देनी चाहिये। यदि आर्यसमाज ने गम्भीरता से इस प्रश्न को अपना लिया और निश्चय कर इस

बदलना चाहते हैं। कदापि नहीं हम केवल संस्कृत का विभीषिका को दूर करना चाहते हैं। संस्कृत सब प्रकार से पूर्ण है इसका शब्द सागर अनन्त है। आवश्यकता है कि उस अनन्त सागर में से जिसमें डूब जाने के भय से लोग उसके पास जाने से घबराते हैं हम कुछ शब्द और सरल प्रयोग छांट लें जिनको लोग बिना अष्टाध्यायी और महाभाष्य के पढ़े हुए भी समझकर संस्कृत को बोलचाल और व्यवहार की भाषा बना सकें। अष्टाध्यायी महाभाष्य आदि का प्रश्न कुछ थोड़े से पाठशालाओं के लिये छोड़ दिया जाय। वे अपने आदर्श की ओर दृष्टि रखते रहें। हमारा उद्देश्य यह

होना चाहिये कि हम संस्कृत को जनता की भाषा बना देवें। अभी पिछले दिनों तक अंग्रेजी के मिडिल पास लोग लाखों की संख्या में सरकारी दफ्तरों का काम अंग्रेजी में चलाया करते थे। दफ्तरों में निश्चित शब्दावली थी। वह सरलता से सीखी और प्रयोग में लाई जा सकती थी। वे शेक्सपियर मिल्टन, टेनीसन आदि से सर्वथा अनभिज्ञ थे। और न वे ग्रामर ही जानते थे, परन्तु उन्होंने अंग्रेजी को सरकारी भाषा बनाने में बड़ी मदद दी। हम भी संस्कृत के लिये वही काम कर सकते हैं। इस के लिये सरल शब्दों और सरल वाक्यों का एक निश्चित संख्या होनी चाहिये। उसमें व्याकरण का कुछ भी काम न रहे। सरल गद्य और सरल पद्यों की पुस्तकें बनाई जायं, तथा और संघ को ऊंचे दर्जों के लिये छोड़ दें, रामायण महाभारत की सरल शैली को अपना कर ऋषि दयानन्द के ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका की सी संस्कृत का प्रयोग किया जावे। और हमारे गुरुकुलों, कालेजों, तथा स्कूलों में एक बार इतने जोर से काम किया जाय कि संस्कृत की ओर से लोगों का भय जाता रहे। इससे हिन्दी को भी विशेष होने में सहायता मिलेगी। आज जो हिन्दी के पारिभाषिक शब्द बनाये जारहे हैं, वे सब प्रायः संस्कृत से लिये जाते हैं, हिन्दी के कवियों में भी तत्सम शब्दों का बाहुल्य होता जारहा है। यह सब चिन्ह बताते हैं कि संस्कृत के लिये क्षेत्र है। यदि इससे लाभ उठाया जाय। आर्यसमाज के लिये यह एक नया रचनात्मक काम होगा, जिसमें अच्छे अच्छे राष्ट्रिय दृष्टि वाले पंडितों तथा अन्य लोगों की सहानुभूति होगी। आर्यसमाज को चाहिये कि जिन कामों को दूसरे कर सकते हैं, उनको उनके ऊपर छोड़ कर उन उपयोगी कामों को हाथ में ले जिधर दूसरों का ध्यान नहीं है या कम है।

साहित्य और संस्था-परिचय

भूतल पर स्वर्ग

श्री डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए०

अहो, यदि स्वर्ग भूतल पर मनोरमतम कहीं पर है
तो वह निश्चय यहीं प र, यहीं यहीं पर है।
अगर इच्छा किसी की हो कि उ ल्लित स्वर्ग म
तो वह मानव यहाँ आये, यहीं आ यहीं आये
कहीं पर जटित पुष्पों म प्रकृत ढ हरित पट है
कहीं कलकल ध्वनित निर्मल सुशीतल आपगातट है।
कहीं गिरि गोद में बादल अमत अठखेलियाँ करत,
मचलते दूव बालक सम पयस-प्रेमाश्रु रत भरत।
शिखर पर 'सूर्य' ने कर रूप कूँची श्वेत रंगा है
किसी ने या वहाँ हिम रूप में चाँदी बखरी है।
कहीं झरने झर जल शुभ्र मानो द्रव रजत वाले,
कहा कल्लोल करते और इठलाते बह नाले।
स्वर्ग की सीढ़ियां के सम कहीं पर खेत हरियाले,
बनो से हैं ढक पवत, हरे नीले कहीं काले।
कहीं गिरि श्रेणियाँ मस्तक उठाये गगन छूती
स्वर्ग सदेशवाहन के लिये मनु दूत दूती हैं।
कहीं निर्मल जलाशय शुभ्र नीलिम लोल लहराते,
निकटवर्ती सुतरु गिरि गगन के दपण सदृश भाते।
सुना है, कल्पतरु है एक ही उस स्वर्ग में केवल,
सहस्रों कल्पतरु इस स्वर्ग में दे नित्य मीठे फल।
सुगन्धित शुद्ध शीतल मन्द निशदिन वायु बहता है,
प्रकृति सुषमा निरख कर मन प्रफुल्लित नित्य रहता है।
कहीं पर सकड़ों पंछी मधुर प्रिय गान गाते हैं,
मनहु गन्धर्व गण मगन स्वरलहरी सुनाते हैं।
सुना है, स्वर्ग में कुछ अप्सराएं वास करती हैं,
यहाँ साक्षात रतिरूपा रमणियां चित्त हरती हैं।
पराकाष्ठा यहाँ भगवान् के रचना दिखाना है,
मनोरम दिव्य स्वर्गोपम छटा मन को लुभाता है।
मिला यदि देखने को स्वर्ग यह तो भाग जागा है
नहीं तो मानवी जीवन अधूरा है, अभागा है।
न कोई भूमि भूतल पर कभी तुलना कर उसकी,
रुचिर रमणीयता प्रियता भला ऐसी कहां किसकी।

आर्यवीर

श्री सत्यभूषण वेदालङ्कार

आर्यवीर हम, आर्यधर्म के हैं सच्चे अनुयायी,
आर्य बनाएंगे हम जग को, सभी हमारे भाई।
हम सङ्कट में, विपदा में क्या, कभी नहीं घबराये,
कितने ही तूफान न जाने हम पर घिरकर आये।
सीखा है हमने सङ्कट में हंसना या मुसकाना,
सीखा है हमने अपने आदर्शों पर मिट जाना।
देश हुआ है अब स्वतन्त्र हमको कर्त्तव्य निभाना,
भूले भटके मनुजों को है सत्यमार्ग पर लाना।
हमको ही आगे बढ़कर आर्यत्वभाव अपनाना,
सुप्त हृदय में नवजीवन का अभिनव ज्योति जगाना।
सबको एक समान समझ कर सबको गले लगाना,
सबके सुख में अपना सुख, यह भाव हमें अपनाना।
हममें गौरव है, बल है हैं भाग्य हमारे जागे,
हम विजयी हैं, विजयी होंगे बढ़कर सबसे आगे।

———

काशी—आर्यसमाज

ऋषि दयानन्द काशी सात बार पधारे थे प्रथम बार १८५६ ई० में आये और १२ दिन ठहर और अन्तिम बार १८७९ ई० में पधारे। काशी आर्यसमाज का स्थापना ऋषि के अन्तिम आगमन के समय हुई। उस समय प० अमरनाथ धर और मुन्शी बख्तावर सिंह मन्त्री थे और ५० सभासद थे। उस समय एक कल स्थान का गढ़ था, जिसमें सिद्धान्तों पर वाद विवाद हुआ करते थे। श्री प० कृपाराम जी (स्वामी दर्शनानन्द जी) ने उस समय काशी में आर्यसमाज का प्रभाव स्थापित करने और विरोधियों से टक्कर लेने में प्रशंसनीय कार्य किया था। प० कृपारामजी ने अपना एक प्रेस भी खोला था, जिससे आर्यसमाज सम्बन्धी सस्ते और उपयोगी ट्रैक्ट बड़ी संख्या में प्रकाशित हुए थे। विद्यार्थियों को जो पुस्तक दुर्लभ थीं, वह इस प्रेस के कारण अत्यन्त सस्ते मूल्य पर सुलभ हो गयी थीं। राजा मुन्शी माधोलाल ... डा० छन्नूलाल बाबू ... गाड आदि ... समाज के उद्योग किया था। आप ही लोगों के उद्योग से आर्यसमाज मन्दिर का निर्माण हुआ। डाक्टर साहब ने दयानन्द कालेज लाहौर को दस सहस्र रुपये दान दिये थे। सुप्रसिद्ध सन्यासी स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी तथा स्वामी नित्यानन्दजी काशी में राजा माधवलाल के ही अतिथि होते थे। स्वामीजी के प्रयत्न से आर्यसमाज के लिए और भी स्थान मिल गये थे। श्री बाबू गौरीशङ्करप्रसाद और श्री प० रामनारायण मिश्र आदि के कारण काशी में आर्यसमाज का प्रचार होने में बहुत सहायता मिली, श्री लाला टेकचन्दजी ने भी इस दिशा में बहुत काम किया।

प्रारम्भ में काशी में आर्यसमाज को खण्डन-मण्डन की नीति का विशेष आश्रय लेना पड़ा था, इससे वहाँ की सनातनी जनता अधिक उत्तेजित होकर आर्यसमाज पर ईंट बरसाने लगती थी, जिससे वार्षिक अधिवेशन के समय सभा भी शामियाने लगाने पड़ते थे। श्री पुन माधवप्रसाद जी ... तो काशी आर्यसमाज ... स्वरूप ही ... देख रेख में जिलेजिला आर्यसमाज मन्दिर निर्माण कराया है। लहरतारा निवासी ... प्रसाद ने आर्यसभासद होने पर एक सहस्र रुपया तथा एक मकान समाज को दिया। श्री जुगल किशोर बिडला का भी काशी आर्यसमाज बहुत अनुगृहीत है इन्होंने भी उसे पर्याप्त धनराशि प्रदान की है। अब भाड़े से भी आर्यसमाज को काफी आय होती है। अब तो काशी में आर्यसमाज का अच्छा प्रचार है और विरोध शान्त हो चुका है। कुछ दिन डा० केशवदेव शास्त्री भी काशी में रहे थे, उस समय आर्यसमाज का काफी चहल पहल थी। इस समाज में उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के कई बार बृहदधिवेशन हो चुके हैं। प्रारम्भ काल में प० कृपाराम शर्मा ने आर्यसमाज के प्रचार के लिए जो कार्य किया वह सदैव स्मरणीय रहेगा।

आर्यसमाज के विशाल भवन के अतिरिक्त काशी में आर्यसमाज की डी० ए० वी० कालेज, नित्यानन्द वेद विद्यालय, अनाथाश्रम, महिलाश्रम आदि संस्थायें आधुनिक शिक्षा, संस्कृत शिक्षा तथा सामाजिक कार्यक्रम को पूर्ण करने में संलग्न हैं। आर्यसमाज की ओर से संस्थाओं का उत्तम रीति से संचालन होता रहे एतदर्थ एक आर्य विद्या-सभा बनी हुई है जो उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के सहयोग से कार्य करती है। इस प्रकार काशी जैसे स्थान में ऋषि दयानन्द के आदर्श विचारों का प्रचार करने में काशी आर्यसमाज का प्रयत्न प्रशंसनीय एवं सराहनीय है।

——

आपको समाचार पत्रों द्वारा विदित हो गया होगा कि ३०, ३१ अक्टूबर और १ नवम्बर को सार्वदेशिक आर्यमहासम्मेलन मेरठ में नौचन्दी के विशाल मैदान में समारोहपूर्वक मनाया जा रहा है। इस अवसर पर स्वागत-समिति द्वारा विविध सम्मेलनों का आयोजन किया गया है। जिनमें देश के कोने-कोने से पधारे हुए नेतागण राष्ट्र की वर्तमान राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक समस्याओं का सन्तोषजनक व्यवहारिक समाधान करेंगे। आपको उनके शिक्षाप्रद क्रान्तिकारी विचार दिग् दिगन्त को गुंजा देने वाले विराट् नगर कीर्तन के दर्शनीय दृश्य भी देखने को मिलेंगे।

इस आर्य नगरी में गोसम्मेलन, राष्ट्रभृत बृहद्‌यज्ञ, दो सुन्दर कलापूर्ण कृतियों, एक गोलोक की छविपूर्ण झाँकी दूसरी सांस्कृतिक साहित्यक स्वरूप दर्शनीय प्रदर्शिनी भी दृष्टिगोचर होगी।

यह केवल मात्र विनोद की वस्तुएं ही नहीं अपितु राष्ट्र के नव-निर्माण की स्थायी आधार शिलायें है जिन दृढ़ नीवों पर जातियों के भव्य भवनों के शिखर भविष्य में ऊँचे उठा करते है।

जहाँ स्वसंस्कृति का संगीत नहीं, सम्पन्न सजीव साहित्य नहीं, जहाँ गोरस की बहती धार नहीं वहाँ राष्ट्र की आत्मा में गौरव, शरीर में शक्ति, शक्ति में तेजस्विता यह जीवन के चिह्न अधिक दिन नहीं टिक सकते।

वाणी के व्यापार तक ही सीमित न रह कर जनता की सेवा के निमित्त चक्षुदान यज्ञ की योजना भी हमारे विचाराधीन है। यह भौतिकता और आध्यात्मिकता का संगम कितना हृदयंगम होगा, जब एक ओर कुशल चिकित्सकों के द्वारा नेत्रविहीनों को भौतिक बाह्य नेत्र मिल रहे होंगे, तो दूसरी ओर ज्ञानियों के ज्ञान अँजन से आन्तरिक चक्षुओं पर पड़े अज्ञान के पट उठ रहे होंगे।

मैं आर्यसमाज से भिन्न दृष्टिकोण रखने वाले भाइयों से प्रार्थना करूंगी कि आप अधिक नहीं (१) यज्ञ में (२) गोसम्मेलन व गोप्रदर्शन में (३) संस्कृति के संरक्षण में समाज का हाथ तन,

आर्य सम्मेलन

मेरे सुनहरे स्वप्न

श्रीमती शकुन्तला गोयल, स्वागताध्यक्षा आर्यमहासम्मेलन, मेरठ

मन, धन के सक्रिय सहयोग द्वारा सुदृढ़ कीजिये। यह समय उदासीनता दिखाने का नहीं। फिर आप में और हममें भिन्नता भी कुछ नहीं। एक रक्त, एक रूप, एक भाषा, एक भेष एक देश है, एक ईश्वर सबका पिता एक भारत सबकी माता है।

मैं इस रिश्ते को रिश्ता मानने मानने वाले, भारत माता को माँ पुकारने वाले एक संस्कृति के उपासक सब सिक्ख व सनातनी, जैनी, मुसलमान, ईसाई भाइयों को सम्मेलन की ओर से हृदय से निमंत्रित करती हूँ। सब सभा मण्डप में पधारें और उत्सव की शोभा बढ़ावें। पारस्परिक सद्विचार ही राष्ट्र के गौरव की स्थापना किया करते है।

मैं सुनती हूँ कि कहीं कहीं प्रान्तीयता के पुराने कुत्सित विचार हृदयों में घर बनाए हुये हैं, कहीं जातीयता की दीवारें दिलों को तंग कर रही हैं, सर्वत्र स्वार्थमयी दलबन्दी के दलदल में दलपति बने आर्यगण पददलित हो रहे हैं।

मैं पूछती हूँ कब तक इन सकीर्ण पगडन्डियों पर हम वैमनस्य के कांटों में उलझे खड़े रहेंगे। आपस की फूट के कड़वे फल हमने बहुत खाये हैं, हमें बाह्य आक्रमणों से इतना भय नहीं जितना कि अपने अन्दर की कमजोरियों के अहर्गीले मर्मों से। दयानन्द के वीर सैनिकों, अभी दिग्विजय की अन्तिम मंजिल दूर है। विचारों के भेद भावों को भुलाकर होश में आओ। सब गले मिल जाओ संसार तुमसे पथ प्रदर्शन चाहता है। इन दर्द भरे शब्दों से आप सबको बुलाकर मैं इस रंग-मंच पर सबका अभिषेक करना चाहती हूँ। बल संघटन में है आपस की फूट में नहीं।

देश के नवयुवकों, तुम देश के प्राण हो, राष्ट्र की नैया के कर्णधार हो, माता के अभिमान हो तुम जैसे बनोगे देश की इमारत वैसी ही बनी जायगी। देश बूढ़ों का नहीं बालको तुम्हारा है। वृद्धा माता की आँखों के तारे आर्यनवयुवको, आगे बढ़ो। इस पुनीत पर्व पर देश, धर्म, राष्ट्र के अनुराग-रंग में अपने को गाढ़ा रंग कर अज्ञान की अँधेरी रात को प्रभात की लालिमा में रँग दो। तुम्हारे बिना घर फीका, जग सूना और सम्मेलन अधूरा है। वीरो तुम्हारा बार-बार आह्वान है। अभिनन्दन है।

हम इस अवसर पर महिला-सम्मेलन का विशेष अधिवेशन भी बुला रहे है। जिस देश में स्त्रियों का स्वाभिमान जागृत हो जाता है, जहाँ मातायें अपने यथार्थ स्वरूप को समझ लेती हैं। उसमें देवता जन्म लेते हैं। वह राष्ट्र देखते देखते अभ्युदय की ओर अग्रसर हो जाता है, अतः मातायें बहुत बड़ी संख्या में पधारें, समय की पुकार को सुनें, परिस्थिति को पहचानें, परिश्रम से निज पथ को प्रशस्त बनायें। इस सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिये मैं देश भर की मातृ शक्ति को आमन्त्रित करती हूँ। संस्कृतियों की जननी जगज्जननी जानकी-सी देवियाँ ही होती हैं, इसमें कुछ संशय नहीं।

इस महोत्सव का भार आपकी इस बहन के कमजोर कन्धों पर भाइयों ने उदारतावश आरोपित कर दिया है। बहनों के लिए यह अग्नि-परीक्षा का अवसर है। देखना यह है कि वह मातृ-शक्ति का गौरव किस प्रकार सुरक्षित रखती है। जीवन-मरण के मुश्किल से चालीस दिन शेष है। कोष में धन-राशि कार्य की तुलना में अपर्याप्त है। कार्य महान् है। बहनों से मैं अपील करती हूँ कि वह सम्मेलन की सफलता में सर्व प्रकार से प्रयत्नशील हों। बूँद-बूँद से तालाब भर जाया करते हैं। जब आर्य देवियों की टोलियाँ मेरी तरह से भिक्षा के लिये झोलियाँ पसार सब ओर छा जायगी तो वह समय दूर नहीं कि सफलता द्वार पर खड़ी सुभूषित जयमाला आपके गले में डाल रही होगी। यही मेरे सुनहरे सुन्दर स्वप्न हैं। मेरे ये स्वप्न अवश्य पूर्ण होंगे।

क्योंकि असम्भव शब्द आर्यों के शब्दकोष में नहीं ऐसी मेरी ध्रुवधारणा है।

जहां मैं बहनों से अनुरोध करती हूँ वहाँ सब भाइयों को भी इस महान् यज्ञ में दीक्षित होने के लिए सादर निमन्त्रण देती हूँ। बहनों! उत्सव का शोभा भाइयों से है, भाइयों की शोभा गुणों से है। सम्मेलन को सभाल कर सफलता के शिखर पर पहुँचा देने की शक्ति आप में है।

अच्छा होता इस उत्तरदयित्व पूर्ण पद का भार कोई योग्यतम भाई-बहन सँभालते। अपनी असमर्थता और अयोग्यता को मैं अच्छी तरह समझती हूँ, किन्तु जनतन्त्र के चरणों में नत मस्तक हो जाने के सिवाय अन्य मार्ग नहीं है। आपकी कार्यक्षमता का मस्तिष्क की योग्यता का गृह बन्दिनी बहनों से क्या सुन्तुलन हो सकता है।

इन सहृदयता से आर्द्र शब्दों के साथ मैं, सब देश वासी भाइयों के हाथ में सद्भावना सूत्र ग्रथित प्रेम-राखी श्रद्धा से समर्पित करती हूँ। आप वैमनस्य के विचारों को विसार कर समय दें, सच्चा सहयोग दें, सम्मेलन की सम्पूर्णता में सर्वस्व दें। तन, मन, धन, जन, जीवन, यौवन सब कुछ देकर अपनी बहन की लाज को राखी के प्रेम के धागों में सुरक्षित रखें। बहन का यश ही वास्तव में भाइयों की विशुद्ध कीर्ति है।

अन्त में प्रार्थना है कि परमात्मा उदासीन हृदयों में उत्साह दे, सम्मेलन को सफलता प्रदान करें यही एक सुनहरे स्वप्न की कामना शेष है।

—कस्बा लुहारी में श्री रामकौशिकजी उपदेशक, सभा ने आर्य समाज का प्रचार किया। यहाँ के आर्यसमाज का सत्संग प्रतिदिन रात्रि में भी होता है।

—सोराय आर्यसमाज की ओर से जनता में श्री प० बालकृष्णजी उपदेशक सभा ने सफलतापूर्वक प्रचार किया। वेद प्रचारार्थ धन भी मिला।

—जलालाबाद (शाहजहाँपुर) आर्यसमाज ने वर्तमान राजनीति के अभारतीय स्वरूप के विरोध में प्रस्ताव करते हुए आर्यजनता से उसे सुधारने के लिये माँग करने की अपील की।

—कुरैयाखुर्द कलाँ (शाहजहाँपुर) आर्यसमाज की ओर से हरपुर पियरा, मनिहरिया टांडा पटिइन सुलतानपुर, महुआ, बाम बोझा, मुरादपुर आदि ग्रामों में सभा के प्रचारक श्री व्रजबहादुरजी तथा श्री मनोहरसिंहजी ने प्रचार किया। ग्रामीण जनता पर उत्तम प्रभाव पड़ा।

—आरा आर्यसमाज के तत्वाधान में महोपदेशक श्री विद्यानन्दजी ने नगर में प्रचार किया।

—रुड़की आर्यसमाज की ओर से नगर में श्री स्वामी अभेदानन्दजी के भाषण कराये गये। जन्माष्टमी के अवसर पर एक बृहत् सहभोज भी हुआ।

—घमौरा आर्यसमाज मे मैजिक लालटेन द्वारा प्रचार किया गया। ब्र० जगदीशजी ने आसन एवं प्राणायाम की क्रियायें प्रदर्शित की।

—

निर्वाचन

—आ० कु० सभा, बहराइच प्रधान श्री भोलानाथजी आर्य और मन्त्री श्री जितेन्द्रनाथजी आर्य।

—आ० कु० सभा अमरोहा प्रधान श्री मदनमोहनलालजी और मन्त्री श्री ज्ञानेन्द्रजी शर्मा।

- आर्यसमाज बहिया (शाहाबाद विहार) प्रधान श्री गुरुप्रसादजी और मन्त्री श्री गुरुचरणजी आर्य।

- आर्यसमाज कालान्दा (बुलन्दशहर) प्रधान श्री चमनसिंहजी और मन्त्री श्री सरजी-सिंहजी।

—

आर्य जगत

उत्सव

—नगीना आर्यसमाज का वार्षिकोत्सव ६ से ६ दिसम्बर तक मनाया जायगा।

—तिलहर आर्यसमाज का स्वर्ण जयन्ती महोत्सव २१ अक्टूबर से २ नवम्बर तक होगा।

—अमरोहा आर्यसमाज की स्वर्णजयन्ती १४ से २० अक्टूबर तक मनायी जायगी।

—महात्मा नारायण स्वामी का चतुर्थ जयन्ती महोत्सव बरेली में १३, १४, १५, १६ अक्टूबर को मनाया जायगा आर्य विद्वान् और नेता पधारेंगे। डा० श्याम स्वरूप सत्यव्रत स्वागत-समिति के प्रधान हैं।

—

सार-सूचनाएं

—अम्बाजगोई (मोमिनाबाद) दक्षिण आर्यसमाज ने अपने कोषाध्यक्ष श्री मिकुलालजी को अधिकार पद से वञ्चित कर दिया है उन्होंने अपने भाई चन्द्रगुप्त आर्य के अन्तर्जातीय विवाह का विरोध किया था।

—आरा जिला आर्यसमाज के निर्वाचन की सूचना में भूल हो गयी है। श्री डोमनमिश्र जी के स्थान पर श्री राजेन्द्रप्रसादजी को प्रधान समझना चाहिये।

—

संस्कार

—राउतपुर (शाहजहाँपुर) के श्री रामलड़ैते की पुत्री का नामकरण संस्कार आर्यसमाज खुडागपुर की ओर से सम्पन्न कराया गया।

—नया मुहम्मदपुर (आरा) आर्यसमाज के प्रधान श्री ढालमणिजी के सुपुत्र श्री भावनाथजी ने अपने पिताजी के निधन के पश्चात गृह-शुद्धि संस्कार कराया। संस्थाओं को दान दिया।

—आरा आर्यसमाज के प्रधान श्री इन्द्रदेव नारायणजी के बालक बालिकाओं का यज्ञोपवीत संस्कार प० विद्यानन्दजी ने कराया।

—

शोक-समाचार

—बाँदा फैजाबाद और आगरा नगर, आर्यसमाजों ने श्री मौलवी महेशप्रसादजी आलिम फाजिल प्रोफेसर हिन्दू विश्व विद्यालय बनारस के आसामयिक निधन पर शोक प्रस्ताव पास किया।

— सिकन्दराबाद गुरुकुल के प्राचीन कार्यकर्त्ता श्री प० देवशर्माजी के आसामयिक निधन पर कुलवासियों ने शोक प्रकट किया। पण्डितजी बुलन्दशहर जिले में आर्यसमाज के प्राण थे। परमात्मा दिवगत आत्माको शान्ति और शोकाकुल परिवार को धैर्य प्रदान करे।

—

शुद्धि संस्कार

अनूपशाहर आर्यसमाज द्वारा किशन नाम के बालक को जिसे मुसलमान बना लिया गया था पुनः शुद्ध किया गया।

—

वेद-प्रचार सप्ताह

क्रमागत

आर्यसमाज घमोरा (रामपुर) आरा (विहार), बाँदा, रुड़की, कस्बा लुहारी, सोराय, कुरैयाखुर्द कलाँ (शाहजहाँपुर)।

—

आर्यकुमार परिषद्

अखिल भारतवर्षीय आर्यकुमार सभा के आगामी वर्ष के लिये प्रधान श्री अलगूरायजी शास्त्री, मन्त्री उत्तरप्रदेश कांग्रेस निर्वाचित हुए हैं। आशा है आर्य कुमार परिषद् आपके नेतृत्व में उन्नति करेगी।

—

आर्य महासम्मेलन समाचार

आर्य महासम्मेलन की तिथियों में परिवर्तन

स्वागत समिति के कार्यालय में अनेक पत्र आ रहे थे कि तिथियाँ परिवर्तित की जायें। कारण बहुत थे, परन्तु दो विशेष थे—(१) सितम्बर के अन्त में और अक्टूबर के आरम्भ में वर्षा का भय (२) ऋषि के निर्वाण अवसर पर सम्मेलन का किया जाना। इन दोनों कारणों पर विचार करने के पश्चात् समिति की अन्तरंग सभा ने १०-६-५१ को सर्व सम्मति से निश्चय किया कि ६ अक्टूबर ५१ के स्थान पर २७-१०-५१ से सम्मेलन आरम्भ किया जाय और १-११-५१ को समाप्त हो। ३०-१०-५१ ऋषि का निर्वाण दिवस है।

कालीचरण
प्रधान मन्त्री, स्वागत समिति

सार्वदेशिक सभा का निर्णय

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा का साधारण अधिवेशन १।६।५१ को श्री० राजगुरु प० धुरेन्द्रजी शास्त्री की अध्यक्षता में बलिदान भवन देहली में हुआ। इसमें जो मुख्य निश्चय हुए उनमें एक यह था कि कई अनिवार्य कारणों से स्वागत कारिणी समिति की प्रेरणा पर सार्वदेशिक आर्य महा सम्मेलन मेरठ की तिथियाँ बदल दी जाय। अतः अब यह सम्मेलन ६, १०, ११ और १२ अक्टूबर के बजाय ३०, ३१ अक्टूबर और १ नवम्बर को होगा। इससे पूर्व ३ दिन तक वेद सम्मेलन आदि विविध सम्मेलन होंगे। इन तिथियों में आर्य समाजों को अपने उत्सव न रखने चाहिये, और आर्य जनों को बहु सख्या में सम्मिलित होकर सम्मेलन को प्रत्येक प्रकार से सफल बनाना चाहिए।

आर्य महासम्मेलन के सभापति श्री विनायकराव विद्यालङ्कार

सप्तम सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन मेरठ के अध्यक्ष श्री० माननीय प० विनायकरावजी विद्यालंकार बार० ऐट० ला० खाद्य और कृषि-मन्त्री हैदराबाद प्रदेश निर्वाचित हुए हैं। २७ से २६ अक्टूबर तक वेद, गौ-रक्षा, संस्कृति, आदि अनेक सम्मेलन होंगे। ३० अक्टूबर को सम्मेलन के अध्यक्ष महोदय का विराट् जलूस निकलेगा और ३१ अक्टूबर एवं १ नवम्बर को महा सम्मेलन का अधिवेशन होगा।

ज्ञानचन्द
मन्त्री सार्वदेशिक सभा

आवश्यकता

आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश को योग्य व उत्तम उपदेशकों की की आवश्यकता है। जो उपदेशक महानुभाव आर्यसिद्धान्तों का उत्तम ज्ञान रखते हों और शिक्षित नवयुवकों में पश्चिमीय नर्तन हानि कारक वादों का खण्डन करने की क्षमता रखते हों, वे अवश्य प्रार्थना-पत्र भेजें।

धर्मपाल विद्यालंकार, मन्त्री
आर्यप्रतिनिधि सभा, उ० प्र० लखनऊ

विविध-सूचनाएँ

मद्य-निषेध कार्य

श्री विश्वनाथ जी त्यागी बी० ए, एल-एल बी० मद्यनिषेध अधिकारी उत्तर प्रदेशीय सरकार की नियुक्ति बनारस में हुई है और उन्होंने ११ अगस्त को कार्यभार सभाल लिया है। त्यागीजी से पश्चिमी उत्तरप्रदेश की आर्य जनता भली प्रकार परिचित है और उनकी वक्तृत्व-कला से बहुत लाभ उठा चुकी है। त्यागी जी आर्यसमाज के अथक कार्यकर्त्ता रहे हैं। सुदूर आसाम में सार्वदेशिक सभा की ओर से प्रचारकार्य के लिये गये और उसे सफलता पूर्वक किया। आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के वह सहायक मन्त्री रहे। अपने विद्यार्थी जीवन से ही आर्यसमाज के कार्य के प्रति उन्हे विशेष अभिरुचि रही है। डी० ए० वी० कालेज कानपुर की आर्यकुमार सभा के वह प्रमुख कार्यकर्त्ता रहे और आर्यकुमार परिषद् का उन्होंने बहुत काम किया।

उत्तरप्रदेश के पूर्वी भागों के आर्यसमाजों के लिये यह बड़ा सुन्दर अवसर है, वह श्री विश्वनाथ त्यागी की उपस्थिति से लाभ उठाये। मद्यनिषेध आर्यसमाज के सामाजिक कार्य का प्रमुख अंग रहा है। अन्य सुधारों के समान इसका सूत्रपात भी आर्यसमाज ने ही किया था परन्तु खेद का विषय है कि वही आर्यसमाज आज इस कार्य में शिथिल है। आर्य भाइयों को चाहिये कि वह ऋषि मन्तव्यानुसार मद्यनिषध के पुण्यकार्य मे सरकार का अधिक से अधिक सक्रिय सहयोग करें और आर्यसमाज के द्वारा स्थान-स्थान पर सभायें, पंचायतें आदि संयोजित कर त्यागीजी के भाषण करायें। इससे जहाँ देश का उपकार होगा वहाँ आर्यसमाज के प्रति जनता और सरकार दोनों की आस्था बढ़ेगी।

मदनमोहन सेठ,
प्रधान आर्यप्रतिनिधि सभा,
उत्तरप्रदेश लखनऊ

यम-नियम का चार्ट

उत्तर प्रदेशीय समस्त आर्यसमाजों को विदित हो कि यम नियम का चार्ट चित्र छपकर सभा की ओर से तैयार हो गया है। यह चित्र प्रत्येक आर्यसमाज-मन्दिर में लटकाया जाना चाहिये। डाक द्वारा भेजने में टूट जाने की सम्भावना के कारण नहीं भेजा गया। मेरठ में आर्यमहासम्मेलन के अवसर पर दो आने देकर प्राप्त कर सकेंगे। उक्त चित्र सुन्दर रूप में तैयार किया गया है।

आर्यपरिवार संघ

आर्यप्रतिनिधि सभान्तर्गत "जाति-भेद निवारक आर्यपरिवार संघ" एक विभाग है। इस वर्ष इस विभाग के सहायक अधिष्ठाता आर्यसमाज के प्रसिद्ध कार्यकर्ता श्री पीतमलालजी एडवोकेट अलीगढ़ बनाये गये हैं। उन्होंने अपने लेखों द्वारा इस विभाग की बड़ी आवश्यकता अनुभव की है। सभा द्वारा निश्चित फार्म सभा कार्यालय में उपस्थित है। प्रत्येक आर्य सदस्य को (फार्म) चित्र को भर कर प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिये। प्रवेश चित्र शुल्क एक रुपया रक्खा गया है। आर्यसमाजों के कार्यकर्ताओं को चाहिये कि फार्म सभा कार्यालय से मंगा कर प्रत्येक सदस्य से भरवा कर भिजवाएँ। सभा को विश्वास है कि प्रत्येक आर्य इस त्रुटि को अनुभव करते हुए इस क्षेत्र में कार्य करने के लिये तत्पर होगा।

—भृगुदत्त तिवारी एम० ए०
सभा उप मन्त्री

निरीक्षण कार्य

आगरा, मथुरा, अलीगढ़ जिलों की आर्यसमाजों का निरीक्षण कार्य वर्षा ऋतु की समाप्ति पर आरम्भ होगा। मैं तीनों जिलों की समाजों से प्रार्थना करूंगा कि वे अपने रजिष्टर ठीक रक्खें तथा दशांश, सूद कोटि आदि का धन तय्यार रक्खें।

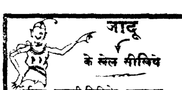
—मोहनलाल आर्य
मण्डलाधीश व निरीक्षक

धार्मिक परीक्षायें

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद की ओर से सिद्धान्त सरोज, रत्न, भास्कर, शास्त्री और वाचस्पति की पाँचो धार्मिक परीक्षायें आगामी जनवरी मास में समस्त भारत में होगी आवेदन पत्र भेजने की अन्तिम तारीख १५ नवम्बर है। नवीन पाठविधि और आवेदनपत्र निम्न पते से मुफ्त मगाये जा सकते है। गतवर्ष इन परीक्षाओं में लगभग ६००० छात्र छात्रायें बैठे थे। समस्त आर्यसमाजों और आर्य संस्थाओं में इनके केन्द्र स्थापित होने चाहिये। इन परीक्षाओं में बालक, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सभी बैठ सकते है।

निवेदक :—
डा० सूर्यदेव शर्मा, एम० ए० डी० लिट्
परीक्षा मन्त्री,
भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्, अजमेर।





समन

समन बगरज इनाफसाल मुकदमा

मुकदमा नम्बर २१६५

सन् १९५० ई०

बअदालत जज खफीफा कानपुर मुकाम कानपुर

मुद्दई

ठाकुर सुमेरसिंह वल्द मुकुन्दसिंह, कौम ठाकुर, साकिन मोहल्ला रामबाग, शहर लखनऊ

बनाम मुद्दाअलेह

बयानसिंह वल्द रंजीतसिंह कौम ठाकुर, साकिन सहरोई परगना सौकिख तहसील छिबरामऊ जि० फर्रुखाबाद

हरगाह मुद्दई ने आपके नाम एक नालिश बाबत १००) के दायर की है लिहाजा आपको हुक्म होता है कि आप बतारीख ३ माह १० सन् १९५१ ई० बवक्त ८ असालतन या मार्फत वकील के जो मुकद्दमे के हाल से करार वाकई वाकिफ किया गया हो और जो कुल उमूर अहम मुतअल्लिके मुकद्दमा का जवाब दे सके या जिसके साथ कोई और शख्स हो जो जवाब ऐसे सवालात का दे सके हाजिर हो और जवाबदिही दावे मुद्दई मजकूर की करो हरगाह वही तारीख जो आपके इजहार के लिये मुकर्रर है वास्ते इनफिसाल कतई मुकदमे के तजवीज हुई है पस आपको लाजिम है कि अपने जवाब दावा की ताईद में जिन गवाहों की शहादत पर या जिन दस्तावेजात पर आप इस्तदलाल करना चाहते हों उसी रोज उनको पेश करो।

मुत्तिला रहे कि अगर बरोज मजकूर आप हाजिर न होंगे तो मुकद्दमा बगैर हाजिरी आपके मसमूह और फैसल होगा। आज बतारीख २८ माह ८ सन् १९५१ ई० मेरे दस्तखत और मुहर अदालत से जारी किया गया।

आज्ञा से
राजनरायण कटियार
मुसरिम
I. S. C. C. Kanpur

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ॐ

आर्य्य-मित्र

• ARYA-MITRA , AGRA •

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक आर्यमित्र प्रकाशन लि० लखनऊ
आगरा ७ सितम्बर १९५१

विश्व-वन्द्य बापू



विश्व की व्यापक विमल विभूति
आत्म संयमता की अनुभूति
भद्र भावों की पुण्य प्रसूति
सरलता शुचिता के शृङ्गार
तुम्हारा जग में जय जयकार

राम का धैर्य बुद्ध की शान्ति
कृष्ण के कर्म्म-योग की कान्ति
भीष्म की अविचलता अक्रान्ति
धन्य गुण-गरिमा के आगार
तुम्हारा जग में जय जयकार

असहयोग सुदर्शन की शक्ति
करोड़ों हृदय की अभिव्यक्ति
स्नेह सम्मान विभूषित भक्ति
आत्म बल के अक्षय भण्डार
तुम्हारा जग में जय जयकार

विश्व की ज्योति अमर आदर्श
उच्च उत्थान प्रकट उत्कर्ष
प्रगतिमय गतिमय भारतवर्ष
सभ्यता संस्कृति के आधार
तुम्हारा जग में जय जयकार

प्रतिअंक मूल्य ८)
विदेश में १०)

हरिशङ्कर शर्म्मा

अंक २७

—श्री नेहरू के कांग्रेस अध्यक्ष बनने के बाद कांग्रेस-क्षेत्रों में जिस क्रान्तिकारी परिवर्तन की सम्भावना हुई थी वह सफल होती दिखाई नहीं देती। प्रजा-पार्टी के आचार्य कृपलानी कांग्रेस में व्यक्तिगत रूप से आने के लिए तय्यार नहीं हैं और न पार्टी को ही भंग करना चाहते हैं। हाँ किदवई तथा अन्य व्यक्ति प्रान्तों और जिलों की वर्तमान कार्यकारिणियों में सुधार की मांग कर रहे हैं, पण्डित नेहरू ने उनसे किसी प्रकार का आश्वासन लिये बिना ही कांग्रेस में आने का आग्रह किया है। अध्यक्ष की ओर से एक विज्ञप्ति में पण्डितजी ने उम्मेदवारों के निर्वाचन में महिलाओं और परिगणित जातियों को अधिक प्रतिनिधित्व देने का आदेश दिया है। मध्यप्रदेश के प्रधान मन्त्री श्री शुक्ल ने श्री मिश्र के वक्तव्य की निन्दा की है और मध्यप्रदेश की प्रान्तीय कांग्रेस ने पण्डित नेहरू की अध्यक्षता का स्वागत और मिश्रजी के वक्तव्य की निन्दा की है। दिल्ली में कांग्रेस अधिवेशन की तयारियाँ आरम्भ हो गयी हैं। कांग्रेस के दैनिक कार्य में सहयोग देने के लिये श्री गुलजारीलाल नन्दा को पण्डितजी ने कार्यकर्ता कांग्रेस अध्यक्ष बना दिया है।

—पिछले सप्ताह संसद में हिन्दू कोड बिल पर काफी बहस हुई, डा० अम्बेडकर ने राम और सीता के पवित्र सम्बन्धों पर जब आक्षेप किये तो संसद में खलबली मच गई, बाद में उनको क्षमा मांगने पर स्थिति शान्त हुई। काका गाडगिल जैसे भारतीयता के समर्थक व्यक्ति ने संसद में अपने कपड़े हटा शरीर नंगा कर "मैं जनेऊ नहीं पहनता" का प्रदर्शन कर अपनी प्रगतिशीलता का परिचय दिया और हिन्दू-कोड का समर्थन किया। यद्यपि डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी के समान कोई वक्ता न कर सका फिर भी कई कांग्रेसी बिल के विरोध में बोले, संसद और जनता में बिल का विरोध होने पर भी प्रधान मन्त्री कोड बिल को पास कराने की चेष्टा कर रहे हैं। कई धारायें भी पास हो चुकी हैं।

देश-विदेश के समाचार

—लखनऊ में ३ से ५ अक्टूबर तक अखिल भारतीय प्राच्य सम्मेलन होगा १५ विभिन्न छोटी परिषदें होंगी, भारत और विदेशों के ५०० से अधिक प्रतिनिधि उसमें सम्मिलित होंगे। आचार्य नरेन्द्रदेव सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष हैं।

—वर्धा में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के मन्त्री श्री भदन्त आनन्द कौशल्यायन ने जो उपवास और मौन व्रत धारण किया था, वह समाप्त कर दिया है। राष्ट्रभाषा प्रचार समिति ने श्री आनन्दजी के प्रति पूर्ण विश्वास प्रकट किया है।

—उत्तर प्रदेशीय विधान सभा में शिक्षा मन्त्री सम्पूर्णानन्द ने हिन्दी को राज्य कार्यों में अधिकाधिक रूप में प्रयुक्त किये जाने के सम्बन्ध में बिल उपस्थित किया। अब शासन का प्रत्येक कार्य हिन्दी में आरम्भ हो जायगा। हिन्दी न जानने वालों को मौका दिया जायगा।

—"आग और खून" लेखक आरिफ बटालवी, मुद्रक अदाब प्रेस, कराची और प्रकाशक महराब एण्ड अदीब कराची, नामक उर्दू की पुस्तक की समस्त उपलब्ध प्रतियों तथा उससे सम्बन्धित अन्य कागजात सरकार ने जब्त करने की घोषणा की है। इस पुस्तक का पुनर्मुद्रण, अनुवाद अथवा सारांश प्रकाशन भारतीय दण्ड-विधान के अन्तर्गत दण्डनीय होगा।

वैदिक संस्कृति प्रचारक : सामाजिक चेतना के प्रतीक

हिन्दी के ५३ वर्ष पुराने पत्र

आर्यमित्र का "ऋष्यङ्क"

आगामी दीपावली पर प्रकाशित होने जा रहा है

ऋष्यङ्क के महत्व को दृष्टि में रखकर इस वर्ष लेखों का वर्गीकरण इस प्रकार कर लिया गया है। लेखकों से प्रार्थना है कि इन्हीं विषयों से सम्बन्धित लेख भेजें।

१—भ्रष्टाचार-विरोध एवं नैतिकता प्रसार, २—ऋषि दयानन्द की महत्ता, ३—आर्यसमाज का भावी प्रोग्राम (शिक्षा, सामाजिक और राष्ट्रिय दृष्टि से), ४—भारतीय साहित्य के उत्थान और संरक्षण के साधन। इनके अतिरिक्त उत्तमोत्तम कविताएँ, शिक्षाप्रद एवं रोचक कहानियाँ तथा अन्य सामयिक समस्याओं पर लेख होंगे।

आर्यमित्र विज्ञापन के लिए अद्वितीय माध्यम है, शीघ्र लिखिये। —व्यवस्थापक

आर्यमित्र, आगरा।

—हैदराबाद के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश ने शोएबुल्ला हत्याकाण्ड के सभी अभियुक्तों को सन्देह के लाभ में मुक्त कर दिया है। प्रसिद्ध रजाकार नेता कासिम रिजवी भी इस काण्ड का अभियुक्त था।

—भारत सरकार के उपमन्त्री श्री राजबहादुर ने कहा है कि सरकार ने गणन ज्योतिष योजना निर्माण समिति की सिफारिशों को स्वीकार कर लिया है और वह उत्तर भारत में शीघ्र ही केन्द्रीय वेधशाला का निर्माण करेगा।

—भारत सरकार ने सरकारी सेवाओं तथा नौकरियों में नियुक्ति के लिये गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी, गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन, प्रयाग महिला विद्यापीठ, जामामिलिया इस्लामिया दिल्ली और काशी विद्यापीठ बनारस की परीक्षाओं को स्वीकार कर लिया है।

—नागपुर विश्व विद्यालय की ओर से शीघ्र ही पत्रकार कला का शिक्षण देने का निर्णय किया गया है।

आंध्र प्रान्त निर्माण के लिये स्वामी सीतारामजी का अनशन २६ दिन बाद समाप्त हो गया है।

—पाकिस्तान में भाषण स्वतन्त्रता पर इतना प्रतिबन्ध है कि फातमा-जिन्ना के रेकार्ड भाषण को भी पूरा नहीं सुनाया गया, फातिमा-जिन्ना बड़ी दुखी हैं और अब वे पाकिस्तान छोड़ने का विचार कर रही हैं।

—विगत सप्ताह कोरिया युद्ध विराम वार्ता के प्रारम्भ होने के कुछ संकेत मिले थे, दोनों ओर के सम्पर्क अफसरों में वार्ता भी हुई थी पर अब दोनों ओर से भयंकर आक्रमण प्रत्याक्रमण आरम्भ हो जाने से वार्ता की आशा समाप्त हो गयी है।

—राष्ट्रपति ट्रूमैन ने भाषण देते हुए कहा कि अमरीका नीति की अपेक्षा अपने शस्त्र-बल पर अधिक भरोसा रखता है।

—डर्बन में महात्मा गांधी के पुत्र मणिलाल गांधी ने २२ सितम्बर से द० अफ्रीका सरकार के जातीय पृथक्करण कानून का विरोध करने के लिये सत्याग्रह आरम्भ कर दिया है।

—ब्रिटेन में २५ अक्टूबर से आम-चुनाव होने की घोषणा कर दी गयी है।

'विवस्वान नो अमृतत्वे दधातु'

आर्यमित्र

आगरा, आश्विन कृष्ण १२ सम्वत् २००८ वि०, गुरुवार, ता० २७ सितम्बर १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-सम्वत् १९७२९४९०५२

उत्तिष्ठत सनह्यध्वमुदाराः केतुभिः सह ।
सर्पा इतरजना रक्षांस्यमित्राननु धावत ॥

अथर्व० ११ १० १२

ओ उदार वीरो, उठकर झण्डे फहराओ
रण में बल बलिदान, त्याग, तप, तेज दिखाओ
सर्प-समान शत्रु दल जो सम्मुख आ जाए
सह न सके मार तुम्हारी, वह मर जाए

गांधी-जयन्ती

आगामी दो अक्टूबर को विश्व-वन्द्य महात्मा गांधी की जन्म जयन्ती सारे देश में बड़े उत्साह और समारोह के साथ मनाई जायगी। महात्मा गांधी वह महामानव थे जो किसी देश में कभी कभी ही जन्म धारण कर लोक-कल्याण किया करते हैं। स्वर्गीय सरदार वल्लभभाई पटेल ने गत दीपावली पर देहली में बिलकुल ठीक कहा था कि काठियावाड़ ने देश को दो महान् विभूतियाँ प्रदान कीं,—एक महर्षि दयानन्द और दूसरी महात्मा गांधी। दोनों महानुभावों ने व्यापक और विस्तृत दृष्टिकोण रखते हुए भारत के नव निर्माण में पूरा और पुष्कल सहयोग दिया, दोनों ही भारत के त्राता और विधाता सिद्ध हुए। महर्षि को 'गुरुडम' के विरुद्ध महान् युद्ध करना पड़ा और महात्माजी को 'किंगडम' के खिलाफ। एक बार हमारे देश के एक महान् नेता ने ठीक कहा था कि महात्मा गांधी ने ऋषि दयानन्द के सूत्रों की ही बड़ी सुन्दर, सफल और व्यावहारिक व्याख्या की है। महात्मा गांधी अपने पराधीन देश को स्वतन्त्र करके कोटि कोटि मानवता के विकट बेड़ी-बन्धन को काट गये। जब तक कृतज्ञता का कण भी संसार में रहेगा, तब तक यह देश अपने उद्धारकर्ता, स्वतन्त्रय-प्रदाता और भाग्य विधाता महात्मा गांधी का गुणगान करता रहेगा। महात्माजी सत्य और अहिंसा के सबल समर्थक और परमात्मा के अनन्य उपासक थे, उन्होंने इसी आध्यात्मिक तत्व के आधार पर बिना अस्त्र शस्त्रों की सहायता के हमें स्वतन्त्र कराया। इसे विश्व की सबसे बड़ी विचित्रता ही समझना चाहिये। महात्माजी सत्य के उन सच्चे उपासकों में थे जो मन, वचन और कर्म से उसकी उपासना में संलग्न रहते हैं। वे चाहते थे कि उनके अगणित अनुयायी भी सत्य और अहिंसा के सत्य-पथ पर चल कर प्राचीन भारत के गत गौरव को पुनः स्थापित करें। इसके लिये उन्होंने अपने जीवन की बाजी लगा दी और संसार को सिद्ध करके दिखा दिया कि इस गये-बीते युग में भी आध्यात्मिकता के आधार पर चल कर एक साधारण मनुष्य भी कितना महान् और उच्च बन सकता है और इस प्रकार वह संसार के लिये कितना कल्याणकारी हो सकता है।

यह ठीक है कि महात्मा जी का भौतिक शरीर साम्प्रदायिकता का शिकार बन गया परन्तु वह भौतिक शरीर आत्मा नहीं था। आत्मा अजर और अमर है, उसे कोई मार-काट या नष्ट विनष्ट नहीं कर सकता, महात्माजी के दिवंगत आत्मा आज भी हमारा पथ-प्रदर्शन कर रहा है, और जब तक उनका एक वाक्य भी संसार के अन्दर मौजूद है, तब तक बराबर करता रहेगा। जिस विश्व विश्रुत महा मानव की अमर कीर्ति दिग्दिगन्त व्यापिनी हो रही हो उसे कौन मरा हुआ कह सकता है। "कीर्तिर्यस्य स जीवति"। आज भारत में स्वराज्य है परन्तु सुराज्य नहीं हो पाया क्योंकि हम और हमारे शासकों ने—देश सेवकों और नेताओं ने महात्माजी के बताये पुण्य पथ को त्याग कर स्वार्थपूर्ण मार्ग का अनुसरण प्रारम्भ कर दिया। महात्मा गांधी की जय बोल कर या उनकी जन्म-जयन्ती के दिन भावुकता-भरे व्याख्यान देकर ही हम महात्माजी के शिष्य और भक्त नहीं कहला सकते यदि हम गांधी जी के आदेश और उपदेश को त्याग कर भिन्न मार्ग पर चलते हैं, तो जहां हम महात्माजी के साथ न्याय नहीं करते, वहाँ अपने प्रति भी घोर अविश्वास, आडम्बर और अभद्र भावना दिखलाते हैं। महात्मा गांधी का सच्चा आदर और उनके प्रति सच्ची श्रद्धा भक्ति उनके आदेश और उपदेश पालन में है। इसी से संसार का कल्याण हो सकता है और इसी से सुराज्य की समुज्ज्वल ज्योति या दिव्य द्युति दमक सकती है।

बालकों का सुधार

महर्षि दयानन्द ने शिक्षा का महत्व दरसाते हुए आदेश दिया है कि बालक की शिक्षा जन्म से नहीं, उसके गर्भगत होते ही होनी चाहिये। गर्भ से उसके जैसे संस्कार होंगे वैसा ही वह आगे चलकर बनेगा। परन्तु हम देखते हैं कि इस ओर बिलकुल ध्यान नहीं दिया जाता। गर्भगत बालक का तो कहना ही क्या, उसके जन्म लेने के वर्षों बाद तक भी उसकी शिक्षा-दीक्षा की उचित व्यवस्था नहीं की जाती। किन्तु हां बालकों पर तो इतना लाड़ प्यार किया जाता है कि उनमें होश सम्भालते-सम्भालते और गन्दी प्रवृत्तियाँ घर कर जाती हैं। वे छोटे-छोटे अपराध करने लगते हैं, जिन्हें देख कर माता पिता प्रसन्न होते और हँस हँस कर प्रोत्साहन देते हैं, यही साधारण अपराध प्रवृत्ति आगे चलकर भयानक पापों का रूप धारण कर लेती है और फिर उसका सुधार न माता-पिता कर सकते हैं, और न इसमें कानून का कड़ा कोड़ा सफल होता है। मनुष्य के सद्भावना-सम्पन्न होने का सबसे महत्वपूर्ण अवसर उसका शैशव है। विद्वानों का कहना है कि माता की गोद या देख रेख में बालक अच्छी या बुरी जैसी भी बातें सीख लेता है, उन्हें वह कभी नहीं भूलता, और उन्हीं बातों का प्रभाव उसके भावी जीवन पर भी पड़ता है। ऐसी दशा में सोचने की बात है कि बालकपन कितना महत्वपूर्ण है, और उसमें शिक्षा दीक्षा की कितनी सुन्दर व्यवस्था होनी चाहिये। महर्षि दयानन्द ने सबसे अधिक इसी ओर संसार का ध्यान आकृष्ट किया। उनकी सम्मति में शिक्षा का उद्देश्य पोथी-रटन्त नहीं, बल्कि चरित्र निर्माण है, जिसके लिये प्रारम्भ से ही माता पिता का ध्यान रहना चाहिये।

सबसे प्रथम माता पिता को चाहिये कि वे बालकों के छोटे छोटे अपराधों को भी बड़े अपराधों का बीज समझ कर उनकी उपेक्षा न करें, और जब वे बालक को कोई अनुचित बात करते देखें, तभी उसे डाट दें, जिससे वह फिर उस काम को न करे। बालक पर विश्वास कर उसे सदैव प्रोत्साहन दिया जाय, उसे सत्य बोलना सिखाया जाय हंसी में भी कभी झूठी बात न कहने दी जाय। इससे आगे चल कर बड़ी हित हानि होती है। बालक को भले बालकों के साथ खेलने दिया जाय, जहाँ गाली गलौज और गन्दगी का व्यवहार न हो, मार-पीट और लड़ाई-झगड़े भी जहाँ न हों। बालकों के सामने हमें स्वयं भी अपना अच्छा उदाहरण उपस्थित करना चाहिये। हम स्वयं झूठ बोलकर बालकों को सत्यभाषी नहीं बना सकते, स्वयं चोरी करके उन्हें ईमानदारी की शिक्षा नहीं दे सकते। खुद गन्दे या झगड़ालू बन कर हम बच्चों को स्वच्छ, सरल और स्नेहशील कैसे बना सकेंगे। बालकों को कोई बात बतानी या समझानी हो तो उसे उसके गुण दोष बताकर ही समझाना चाहिये। बलपूर्वक कोई काम नहीं कराया जा सकता, उसका कुछ प्रभाव भी नहीं पड़ता। बालकों को बचपन से ही ऐसी शिक्षा देनी चाहिये जिससे वे अपने बड़ों का आदर

करना सीखें और मित्रों तथा साथियों के साथ हिल-मिल कर रहें, आपस में प्रेम का व्यवहार करें। बालकों को प्रारम्भ से ही ऐसी कथा कहानियाँ और बातें सुनानी चाहिए जो उनमें स्नेह, सदाचार, कर्तव्य-पालन और भलाई की भावना भर सकें। हमारे कुछ पाठक इन पंक्तियों को पढ़कर कदाचित् कहने लगें कि वैदिक सिद्धान्तों की व्याख्या के स्थान पर 'आर्य मित्र' में बालकों की ये क्या व्यर्थ बातें लिखी जाने लगीं, परन्तु याद रखना चाहिये कि समाज का सारा निर्माण इन बालकों पर ही है, बालकपन के छोटे-छोटे दोष और अपराध ही आज भ्रष्टाचार, अनाचार और भयङ्कर अपराधों में परिणत हो गये हैं और उन्हीं के कारण सारा समाज और राष्ट्र घोर अशान्ति और आपत्ति का केन्द्र बन गया है। महर्षि दयानन्द योगिराज थे उन्होंने दूरदर्शिता से पहले ही सब कुछ समझ लिया था, और इसी लिये आदेश दिया कि बालक का सुधार जन्म से नहीं, जन्म से भी पूर्व गर्भ से ही होना चाहिये, तभी उसका जीवन शुद्ध और आचरण पवित्र बनेगा और वह समाज के लिये अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो सकेगा।

अभिनव प्रचार-योजना

गत अंक में हमने आचार्य विनोबा की पदयात्रा का उल्लेख करते हुए आर्यसमाज का ध्यान प्रचार की इस पुरानी और प्रशस्त परिपाटी की ओर आकृष्ट किया था। अब श्री प० गंगाप्रसाद उपाध्याय ने भी एक प्रचार योजना भेजी है, जो इसी अंक में अन्यत्र प्रकाशित की जाती है। इस योजना में, जैसा कि पाठक पढ़ेंगे, उपाध्यायजी स्वयं सक्रिय भाग लेने को तय्यार हैं। हमारी राय में यह भी प्रचार की बड़ी सुन्दर, सफल और समुचित विधि है। अमरीका, अफ्रीका, इंग्लैंड आदि देशों में इसी प्रकार व्याख्यान कराकर जनता के साथ वैयक्तिक सम्बन्ध स्थापित करने की कोशिश की जाती है। उपाध्यायजी की अमूल्य सेवाओं का उपयोग पहले शिक्षा-केन्द्रों में होना चाहिये। ग्रामों के लिये वे अधिक सफल न हो सकेंगे। हम समझते हैं कि शिक्षा-संसार को प्रभावित करने के लिये कार्य निवृत्त प्रिंसिपल श्री दीवानचन्दजी भी यदि इसी प्रचार विधि का अनुसरण करें तो बड़ा लाभ हो। श्री पूर्णचन्द्रजी और श्री प० रामदत्त शुक्ल को भी कचहरी के कक्ष छोड़कर इसी प्रचार-प्रणाली का पल्ला पकड़ना चाहिये। इससे वे समाज के लिये और भी अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकेंगे। चीफ जज श्री प० गंगाप्रसादजी से भी हम यही प्रार्थना करते, परन्तु वे इतने अस्वस्थ और वृद्ध हैं कि यात्रा-जन्य असुविधायें सहन नहीं कर सकते। ऐसे विद्वान् की वाणी लेखनी का रूप धारण करके ही बहुत कुछ काम कर सकती है। क्या दर्शभक्त श्री चाँदकरण शारदा और कर्मवीर प० जियालालजी से भी हम इसी प्रकार की प्रार्थना करने का साहस करें? आचार्य इन्द्र विद्यावाचस्पति को भी अब अपना अधिकांश समय वेदधर्म प्रचार के लिये ही अर्पित कर देना चाहिये। राजगुरु श्री प० धुरेन्द्रशास्त्री तथा अन्य आर्य नेता और महोपदेशक महानुभाव जो प्रचार-कार्य में सतत निरत रहते हैं उनकी सेवा में हमारी विनम्र विनती है कि यदि वे निश्चित और विशिष्ट क्षेत्रों में इस प्रचार-प्रणाली को अपनावें तो अधिक कार्य हो सकेगा। साधु-सन्यासी किसी संस्था विशेष से सम्बद्ध होने की अपेक्षा यदि नियत क्षेत्र में, नियमित रूप से प्रचार करें तो यह कार्य उनके लिये अधिक शोभनीय और स्वरूपानुरूप होगा।

महा सम्मेलन के सभापति

३०, ३१ अक्टूबर तथा १ नवम्बर को मेरठ में होने वाले सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन के सभापति हैदराबाद के प्रसिद्ध आर्य नेता श्री प० विनायकराव विद्यालंकार बार-एट्-ला निर्वाचित हुए हैं। इस उचित और उपयुक्त निर्वाचन के लिये हम स्वागत समिति सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा और स्वयं श्री विनायकरावजी को हार्दिक बधाई देते हैं। श्री विनायकरावजी प्रसिद्ध विचारक और विख्यात विद्वान् है। आप हैदराबाद सरकार के खाद्य मन्त्री हैं। हैदराबाद सत्याग्रह के समय आपने बड़ी तत्परता के साथ सहयोग दान दिया था, और आप उस महान् आन्दोलन के 'अधिनायक' (डक्टेटर) भी निर्वाचित हुए थे। हम पूर्ण आशा है कि कांगड़ी-गुरुकुल के विशुद्ध वातावरण में शिक्षित और दीक्षित श्री विनायकरावजी आर्यसमाज और देश को इस संकटपूर्ण परिस्थिति में बड़ा सुन्दर और सफल पथ प्रदर्शन करेंगे। ऐसा पथ-प्रदर्शन जिससे आर्यसमाज के शिथिल शरीर में विद्युत् वेग से प्रगति का संचार हो और वह अपनी अकर्मण्यता तथा तन्द्रा त्यागकर कार्य-क्षेत्र में कूद पड़े।

हिन्दू-कोड-बिल

उपर्युक्त बिल के सम्बन्ध में 'आर्यमित्र' के पृष्ठों पर विशेषज्ञ विद्वानों के विवेचनात्मक और विस्तृत अनेक लेख प्रकाशित किये जा चुके है। इस सम्बन्ध में आर्यसमाज की शिरोमणि सभायें भी अपना दृष्टिकोण व्यापक रूप से प्रस्तुत कर चुकी है। हिन्दू कोड बिल में सबसे अधिक विवादास्पद बातें दो हैं, दाय भाग और विवाह-विच्छेद (तलाक)। आर्यसमाज की दृष्टि से ये दोनों ही अनुच्छेद अनुचित और अनुपयुक्त हैं। जब पिता की सम्पत्ति में पुत्र की भांति पुत्री भी बटवारे की अधिकारिणी हो जायगी तो निश्चय ही भाई बहन का सौहार्द समाप्त हो जायगा। यानी फिर भाई की दृष्टि में बहन के प्रति कोई कर्तव्य ही शेष न रहेगा। आज जिस प्रेम और श्रद्धा भक्ति से बहन के प्रति भाई सेवा, सत्कार और स्नेहशीलता का परिचय देता है, वह बटवारा होने पर कैसे कायम रह सकता है। फिर जिस पुत्री को दूसरे परिवार में जाकर गृह-स्वामिनी बनना है, उसे पिता की सम्पत्ति से क्या सम्बन्ध? या यों कहिये कि पिता की जो सम्पत्ति पुत्री और उसकी सन्तान के लिये विविध रूपों में वर्षों तक सदुपयुक्त होती रहेगी, उसे पुत्री एकदम लेकर क्या करेगी? इसमें न शोभा है और न समीचीनता। विवाह विच्छेद की बात तो बड़ी ही विचित्र है। यह जहाँ अभारतीय है, वहाँ असांस्कृतिक भी। कुछ लोग समझते हैं कि सम्बन्ध विच्छेद से हिन्दू समाज में सुख-शान्ति और सुविधा का प्रसार हो जायगा। परन्तु क्या वे बता सकते हैं कि जिन देशों और जातियों में तलाक-प्रथा प्रचलित है, उनमें सुख शान्ति की कितनी वर्षा हो रही है। हम तो देखते हैं कि विदेशों में, जहाँ जरा जरा-सी बातों पर विवाह-सम्बन्ध की बखिया उधेड़ कर फेंक दी जाती है, वहाँ की सामाजिक व्यवस्था और दाम्पत्य जीवन अत्यन्त ही अशान्त, विषादपूर्ण और विषमय है। क्या यही तलाक प्रथा हिन्दुओं की अवस्था में कुछ भी सुधार कर सकेगी? हम तो समझते हैं, विवाह-विच्छेद आर्य भावना के सर्वथा विरुद्ध और हिन्दू मात्र का अहित करने वाला है। ऐसे बिल को स्वीकृत कर उसे कानून का रूप देना व्यर्थ ही नहीं हानिकारक भी है। आज कल यह बिल संसद में विचाराधीन है। उस पर वाद-विवाद हो रहे हैं, पाकिस्तान की तरह इस बिल के भी दो टुकड़े कर दिये गये हैं। यानी पहले टुकड़े पर अब विचार होगा और दूसरे पर फिर। इस प्रकार बेचारा "न म बिस्मल" बिल बुरी तरह बिलबिलाता रहेगा। क्या सरकार और संसद के पास इस अनावश्यक और व्यर्थ बिल की अपेक्षा कोई और उपयोगी बिल नहीं था जिस पर विचार कर लोकहित साधन का प्रयत्न किया जाता। आश्चर्य तो यह है कि अपने को धर्म-निरपेक्ष कहने वाली सरकार 'हिन्दू बिल' क्यों पास कर रही है, यह तो उसका साम्प्रदायिक कार्य हुआ। मुसलमानों के सामाजिक जीवन सुधार की चिन्ता सरकार को क्यों नहीं है? वहाँ भी तो दाम्पत्य जीवन की घोर दुर्दशा है। क्या उस ओर इस धर्म निरपेक्ष सरकार का कोई कर्तव्य नहीं? अथवा मुसलमानों के भय के कारण वह इस कार्य को अपने हाथ में लेना उचित नहीं समझती।

अध्यात्म धारा

दीप-शिखा

श्री पूर्णचन्द्र एडवोकेट

ओ३म् त्वं ह्यग्ने अग्निना विप्रो विप्रेण सन् सता। सखा सख्या समिध्यसे ॥ ऋ० ८-८३-१४

संसार के रचयिता परमेश्वर का ज्ञान ज्ञानवान पुरुष ही प्राप्त कर सकते हैं। इस संसार में आकर जो मानव ईश्वरीय दिव्य ज्ञान से प्रकाशित नहीं होते, उनका जीवन व्यर्थ है, ईश्वर के ज्ञान से ही हमारी अज्ञता नष्ट हो सकती है, और हमारा ज्ञान-दीपक प्रकाशित हो सकता है। संसार में जलता दीपक एक आकर्षक और उपयोगी वस्तु है, जलता दीपक संसार से अन्धकार नष्ट करता है। दीपक को प्रकाशित करने के लिये किसी बाह्य निमित्त की की आवश्यकता रहती है, चाहे वह दियासलाई हो या और कुछ। बाह्य साधन के साथ साथ दीपक में अपनी सामर्थ्य भी होना चाहिये, दीपक का सुन्दर आकार, जलने के लिये तेल और बत्ती भी आवश्यक है। उपर्युक्त साधनों के विद्यमान होने पर दीपक बाह्य साधनों के सहारे दीप्तमान बन सकता है। जिस प्रकार एक दीपक निमित्त की सहायता से प्रकाशित होता है, उसी प्रकार वह दूसरे दीपकों के लिए निमित्त बन जाता है, एक दीपक से सैकड़ों सहस्रों दीपक जल सकते हैं, परन्तु जल वे ही सकेंगे जिनमें प्रकाशित होने की सामर्थ्य होगी। दीपक की प्रशंसा इसमें है कि उसने कितने स्थानों का अन्धकार दूर किया, कितने और दीपक प्रकाशित किये। एकान्त में निष्प्रयोजन जलने वाले दीपक का बहुत कम मान होता है, इसलिये यह कहना बिलकुल ठीक है कि दीपक स्वयम् प्रकाशित होता हुआ भी दूसरों के लिये तभी मूल्यवान होता है, जब उससे बहुत से दीपक प्रकाशित होकर स्थान स्थान पर प्रकाश करने लगते हैं। हमारा जीवन भी दीपक के इसी महत्वपूर्ण रूप को धारण करता है। वेद मन्त्र में अन्तिम शब्द 'समिध्यसे' प्रकाशित पदार्थ की योग्यता के लिये आया है। समिधा शब्द का अभिप्राय है है, जो स्वयं प्रकाशित हो सके और दूसरों को प्रकाशित कर सके। संसार में उसी मनुष्य की कीर्ति और गुण गान होता है, जो तेजस्वी हो, ज्ञानी हो, विप्र हो, सज्जन और श्रेष्ठ हो, परन्तु मनुष्य में ये गुण कैसे आ सकते हैं यही गम्भीर प्रश्न सदैव बना रहता है उपर्युक्त गुण व्यर्थ होंगे यदि हम अपनी तेजस्विता से दूसरों को तेजस्वी न बना सकें, अपनी सज्जनता से दूसरों को सज्जन न बना सकें, अपनी श्रेष्ठता से दूसरों को श्रेष्ठ न बना सकें, अपनी मित्रता से दूसरों का मित्र न बना सकें, मित्र को मित्र देखकर ही प्रशंसा होती है, इसी लिये शिष्य से गुरु की और अनुयायियों से नेता की महत्ता जानी जाती है। गुरु विरजानन्द को कौन जानता यदि ऋषि दयानन्द सा शिष्य वे न बना सकते। महर्षि दयानन्द की उतनी ख्याति न होती यदि वे आर्यसमाज की स्थापना और वैदिक धर्म का प्रचार न करते और पण्डित लेखराम तथा स्वामी श्रद्धानन्द से उनके शिष्य न होते। हमें अपने ज्ञान के लिये निमित्त की खोज में रहना चाहिये। ज्ञान का प्रकाश प्राप्त करके ज्ञान प्रकाश को अपने तक ही सीमित नहीं रखना चाहिये, उसे दूसरों तक पहुंचा देने में ही ज्ञान की वास्तविक सफलता है। यदि ज्ञान दान की यह परिपाटी स्थिर रहेगी तो संसार में सुख शान्ति का साम्राज्य स्थापित होगा। यदि ज्ञान प्राप्त करने की ओर ध्यान न रहा तो भी हानि होगी और यदि प्राप्त कर ज्ञान का निष्कपट विस्तार न हुआ तो भी हानि होगी। परमात्मा ही हमारे ज्ञान का निमित्त कारण हो सकता है। हमारे ज्ञान-दीपक को प्रकाशित करने वाली ज्ञान दीपशलाका परमात्मा ही है परमात्मा का ध्यान आते ही परमात्मा के परोपकार की ओर ध्यान जाता है और हममें परोपकार और दया सेवा की भावनाएं जाग्रत् होने लगती हैं दूसरों को लाभ पहुंचाने की भावना उत्पन्न होती है।

हमारा ज्ञानी होना, तेजस्वी होना, सज्जन होना, मित्र होना उसी समय सफल होगा, जब हम दूसरों तक अपने गुणों का प्रभाव पहुंचा सकें। महर्षि दयानन्द ने ऐसे ही भावों से प्रेरित होकर शक्तियों का संचय किया और संसार के उपकार की ओर ध्यान दिया। केवल अपनी ही उन्नति और मोक्ष की चिन्ता उन्होंने नहीं की।

चयनिका

[मधुप]

स्वतन्त्रता की लड़ाई

हमें पूर्ण राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त हो गयी है, किन्तु दूसरी स्वतन्त्रताओं का प्रायः अभाव है इसलिये इनकी प्राप्ति तक हमें अपना आन्दोलन जारी रखना चाहिये।

—श्री नेहरू

वैज्ञानिक समाजवाद

स्टालिनवाद की धर्मकर्म की बला से हीन और नैतिकता से रहित राजनीतिक फिलासफी का इलाज गांधीवाद है, और कोई भी समाजवादी अपने सिद्धान्त के अन्तःसार को हानि पहुंचा कर ही उसकी उपेक्षा कर सकता है। प्रत्येक वैज्ञानिक-समाजवादी का कर्तव्य है कि वह गान्धी दर्शन को समझे और जहाँ तक समाजवाद को सुदृढ़ बनाने के लिये वाञ्छनीय हो, वहाँ तक उसे आत्मसात् भी करे।

— श्री जयप्रकाशनारायण

शिक्षा-विधि

जो शिक्षा आगामी कल के नागरिकों को जीना और जीवन की समस्याओं को सुलझाना नहीं सिखाती वह व्यर्थ है। ब्रिटिश शिक्षा पद्धति अभारतीय थी उसने भारत की विरासत की उपेक्षा कर भारत की आत्मा के भीतर ही एक द्वन्द पैदा कर दिया था। अतः आज हमें उससे मुक्ति मिलनी चाहिये

—मैसूर के राजप्रमुख

शिक्षा का आधार

भारत में शिक्षा विनयमूलक रही है, पर आज तो विनय का स्थान उच्छृंखलता ने ले लिया है। सम्भवतः आज का शिक्षित जगत् इस उच्छृंखलता की व्याधि से ही सर्वाधिक पीड़ित है। चारित्रिक उच्चता और विनय के बिना शिक्षा एक भार-मात्र है। शिक्षा व्यक्ति के विकास और विमुक्ति का साधन तभी बन सकेगी जब शिक्षा का लक्ष्य पुस्तक-ज्ञान तक ही सीमित नहीं रहेगा और चारित्र्य को शिक्षा का मूलाधार माना जायगा।

—आचार्य श्री तुलसी

समाज-व्यवस्था

अहिंसा और निर्भयता का आपस में चोली दामन का सा सम्बन्ध है। जो अहिंसक होगा वह न केवल स्वयं निर्भय होगा बल्कि समस्त संसार को भी निर्भयता का अमर आश्वासन देगा जो समाज-व्यवस्था समता और अहिंसा के आधार पर खड़ी होगी ही मानव-मात्र के लिये श्रेयस्कर सिद्ध हो सकेगी।

—श्री हरिभाऊ उपाध्याय

शिक्षा और चरित्र

शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य की मनुष्यता को उभारना तथा उसके दिल और दिमाग की ताकतों को विकसित करना है। शिक्षा की यही सच्ची कसौटी है। उपदेश की अपेक्षा आचरण हमेशा प्रभावकारी होता है, हमारे चारित्रिक पतन का दोषारोपण कुछ लोग शिक्षा पद्धति पर करते हैं, पर यह निर्णय करना मुश्किल है कि विद्यार्थियों

विज्ञान-वार्ता

गुर्दे के ट्यूमर की नयी औषधि

वाशिंगटन के नेशनल इन्स्टीट्यूट आफ हेल्थ' के डाक्टरों ने 'एक्टीनोमाइसिन' नामक एक औषधि का अनुसन्धान किया है जिसकी सहायता से गुर्दे में होने वाले ट्यूमर को बिना आपरेशन किये नष्ट किया जा सकेगा, रक्त चाप (हाइ ब्लड प्रेशर) की चिकित्सा में भी उक्त औषधि से सहायता मिलने की सम्भावना व्यक्त की गयी है।

नमक द्वारा अंग कटने की दर्द बन्द

एक अमरीकी वैज्ञानिक ने अंगों के कटने पर नस-नाड़ियों में होने वाली असह्य पीड़ा को दूर करने का एक नया उपाय निकाला है, उस वैज्ञानिक ने अमुक व्यक्ति की रीढ़ की हड्डी के पास सुई द्वारा नमक के घोल को पहुंचा कर रोगियों की पीड़ा शान्त करने में सफलता प्राप्त की है। रीढ़ की हड्डी के पास ६ प्रतिशत नमक का घोल पहुंचाने पर पहले तो रोगी का दर्द बढ़ा पर बाद में एकदम समाप्त हो गया। हाथ आदि ऊपर के अंगों के कटने पर रीढ़ के ऊपरी भाग में और टांग आदि नीचे के हिस्सों के कटने पर नीचे के भाग में नमक पहुंचाना चाहिये।

आग बुझाने का नया पदार्थ

वैज्ञानिकों ने एक ऐसे रासायनिक पदार्थ का अनुसन्धान किया है जिसकी सहायता से आग की लपटों को आसानी और शीघ्रता से बुझाया जा सकेगा यह रसायन एक प्रकार का खाने का सोडा है जो मशीन की सहायता से पाइप द्वारा आग पर छिड़का जाता है आग के साथ मिलने ही यह पदार्थ कार्बन डाई आक्साइड और पानी की भाप में परिणत हो जाता है और आग बुझ जाती है

कृत्रिम सूत

अमरीका में 'एमिलर' नामक एक नये रासायनिक सूत का आविष्कार किया गया है। 'एमिलर' लचकीला होता है और धोने, घिसने और रगड़ने से भी आसानी से नष्ट नहीं होता, न यह अधिक सिकुड़ता है और न इस पर बिजली का ही कोई प्रभाव होता है, दीमक आदि कीड़े भी इसे हानि नहीं पहुंचा सकते। पहनने के वस्त्र, सीने के धागे, पर्दे और आग बुझाने के लिये कपड़े के नलों तथा बी बैल्टम आदि औद्योगिक सामग्रियों के रूप में एमिलर का प्रयोग आरम्भ हो गया है।

छोटे ट्रैक्टरों का उपयोग

अमरीका के कृषि विभाग ने छोटे ट्रैक्टरों तथा घोड़ों वाली मशीन से मक्का, गेहूँ और चारे की उपज-वृद्धि के लिये एक नयी विधि का आविष्कार किया है। नयी विधि के अनुसार मक्का की फसल ६० इंच स्थान छोड़कर लाइनों में उगाई जाती है और गेहूं की फसल बोने के समय इस बीच की भूमि में छोटे ट्रैक्टरों की सहायता से गेहूं बो दिया जाता है। इधर गेहूं बो चुकने ही मक्का पक कर तय्यार हो जाती है और मैकेनिकल हार्वेस्टर से काट ली जाती है। इस विधि से कृषक के समय और भूमि दोनों का उचित उपयोग हो जाता है।

सुगन्धिपूर्ण चलचित्र

प्रो० वैरा रीसा ६ वर्ष से एक ऐसे वैज्ञानिक परीक्षण में संलग्न हैं जिसकी सहायता से फिल्मों में ध्वनि के साथ साथ दर्शकों को सुगन्ध का लाभ भी प्राप्त हो जायगा उनका विचार है कि चित्रों में केवल घटनाओं को दिखाने और सम्वाद को सुनाने की ही नहीं चित्र के पुष्पों, खाद्य पदार्थों आदि की सुगन्धि भी दर्शकों तक पहुंचाने की व्यवस्था होनी चाहिये। यदि प्रोफेसर वैरा अपने प्रयोग में सफल हुए तो दर्शकों को सिनेमा में आये पकवानों और ताजे पुष्पों की सुगन्धि का लाभ भी प्राप्त हो सकेगा।

सूर्य में रेडियो स्टेशन

वैज्ञानिकों ने ध्वनि तरंगों का अध्ययन करते हुए पता लगाया है कि सूर्य में रेडियो स्टेशन है, और वहाँ से तीन सिग्नल भेजे जाते हैं, एक तो स्थायी रूप से हिस की सी ध्वनि करता है, दूसरा कभी-कभी आने वाली गड़बड़ आवाज के रूप में है जो १२ दिन तक लगातार सुनाई देती है, तीसरा सिग्नल एक अनियमित धड़ाके की आवाज के रूप में आता और एक मिनट से भी कम समय तक रहता है।

...के चरित्र-दोष के कारण शिक्षा पद्धति दूषित हुई या शिक्षा पद्धति के दूषित होने के कारण चरित्र में दोष आया।

—प्रो० हुमायूँ कबीर

प्रवासी भारतीय

ट्रिनिडाड में भारतीय

श्री जनार्दन भट्ट एम-ए०

प्रवासी भारतीयों में स्वदेश, स्वधर्म और स्वसंस्कृति के प्रचार का प्रश्न बहुत ही महत्वपूर्ण है। भारत से बाहर रहते हुए बहुत समय बीत जाने के कारण प्रवासी भाइयों में भारतीयता के प्रति प्रेम कम होता जा रहा है। प्रवासी भाइयों से हमारा निकट सम्पर्क बना रहे इसके लिये पिछले दिनों अखिल भारतीय आर्य (हिन्दू) धर्म सेवा संघ ने प्रयत्न आरम्भ किया है। संघ की ओर से भारत सेवाश्रम संघ के कुछ सन्यासियों का एक मण्डल ट्रिनिडाड में प्रचारार्थ भेजा गया है। उक्त मण्डल के वहाँ जाने से प्रवासी भारतीयों में एक नया जीवन आ गया है। मण्डल के प्रयत्न से वहाँ के भारतीय ईसाई पादरियों के प्रभाव से मुक्त हो, अपने प्राचीन धर्म में आस्थावान बन रहे हैं। मण्डल के प्रयत्न से ट्रिनिडाड के भारतीयों ने विगत अगस्त मास में ही एक शिव मन्दिर का निर्माण कर लिया है। योजना तो यह है कि मन्दिर के साथ एक स्कूल, पुस्तकालय और व्यायामशाला का भी निर्माण किया जाय परन्तु ट्रिनिडाड के अधिकतर भारतीय मध्यम वर्ग के हैं, अतः अभी मन्दिर मात्र से ही उन्हें सतोष करना पड़ा है। जो हिन्दू पहिले थे वे प्रायः ईसाई धर्म स्वीकार कर चुके हैं अतः उनसे कोई सहायता मिलने की आशा नहीं है। भारतीय सन्यासी मण्डल के प्रचार से ट्रिनिडाड के भारतीयों ने भिन्न भिन्न नगरों और छोटे-छोटे कस्बों में मन्दिर बनाना निश्चय किया है। प्रवासी भाइयों को अपनी आत्म शान्ति के लिये इन मन्दिरों से बहुत सहायता मिलेगी।

अभी तक शिक्षा के क्षेत्र में ट्रिनिडाड के प्रवासियों के पास अपना कोई स्कूल नहीं है। सभी बालक मिश्नरियों के स्कूल में पढ़ने जाते हैं। जहां उन्हें अपना भारतीय नाम भी बदलने के लिये बाध्य होना पड़ता है और धीरे धीरे वे ईसाई धर्म को स्वीकार कर अपने को गौरवान्वित समझने लगते हैं। भारत सरकार की ओर से भारतीयों के इस प्रकार धर्म परिवर्तन के विरुद्ध किसी प्रकार का विरोध सम्भव नहीं है, क्योंकि धर्म निरपेक्ष राज्य के लिये हिन्दुओं का हित करना ईसाइयों का विरोध करना होगा इसलिये ट्रिनिडाड में हिन्दुओं का अपना कम से कम एक स्कूल अवश्य होना चाहिये।

ट्रिनिडाड की ईसाई सरकार और निर्धन हिन्दू जनता दोनों हिन्दुओं के स्कूल की समस्या को हल करने में असमर्थ है। अब भारतीयों का ही कर्तव्य है कि वे प्रवासी भाइयों में शिक्षा, संस्कृति और धर्म-प्रचारार्थ यथाशक्ति सहयोग प्रदान करें। ट्रिनिडाड, ब्रिटिश गायना तथा वेस्टइन्डीज के ५ लाख से अधिक हिन्दू भाइयों को मातृभूमि भारत का सांस्कृतिक सन्देश सुनाने के लिये सन्यासी मण्डल जो कार्य कर रहा है, उसे दृष्टि में रखते हुए हमें अन्य स्थानों के लिये भी प्रतिनिधि मण्डल भेजने की योजनायें बनाना और उन्हें कार्यान्वित करना चाहिये।

ग्राम जीवन

कृषि-अनुसन्धान

श्री मुरारीलाल बी० एस-सी० (एजी०)

आज के विज्ञान ने मानव को जो शक्ति दी है, उसमे वह प्रकृति के गुप्त रहस्यो का अनुसंधान कर प्रकृति का अपने हित में अधिकाधिक उपयोग कर सकता है। प्रकृति के इस अध्ययन की विभिन्न दिशाओं में कृषि का क्षेत्र सर्वाधिक समीप है। भारत कृषि-प्रधान देश है अतः हमारी सरकार कृषिसम्बन्धी गवेषणाओं के लिये पूसा (दिल्ली) में एक कृषि अनुसन्धान शाला का सञ्चालन कर रही है। १९०५ में बिहार के पूसा नामक स्थान में इस संस्था की स्थापना की गयी थी। १९३४ के भयकर भूकम्प ने जब इस संस्था को नष्ट कर दिया, तब १९३६ में दिल्ली के समीप इस संस्था को पुनः स्थापित किया गया। एव प्रथम पूसा में इसकी स्थापना हुई थी। उस स्मृति को स्थायी रखने के विचार से दिल्ली में भी उक्त संस्था का नाम भी पूसा ही रख दिया गया। इस संस्था में जो परीक्षण होते रहते हैं उनसे समय-समय पर जनता को सूचित किया जाता है, नवीन खोजें इस प्रकार हैं—

आम की गुठली का उपयोग—यद्यपि हिन्दी में "आम के आम गुठली के भी दाम" की कहावत प्रसिद्ध है, तथापि आज तक आम की गुठली बेकार की वस्तु समझी जाती रही है। अब नये अनुसन्धान के द्वारा आम की उपयोगिता भोजन और औद्योगिक कार्यों के लिये प्रमाणित हो चुकी है। हमारे देश मे आम की गुठलियों से निकलने वाली गिरी का परिमाण ७००००० टन है जिसका खाने के लिये १५००० टन आटा बनाने अथवा औद्योगिक कार्यों के लिले २८०००० टन माड़ी बनाने में उपयोग किया जा सकता है। गुठली का आटा परीक्षण करने पर सिद्ध हुआ है कि गेहूँ के मिश्रण के साथ खाने से जीवनीशक्ति पर उसका कोई दुष्प्रभाव नहीं होता है। कागज और जूट के उद्योग में इसकी माड़ी का उपयोग करने से माड़ी के लिये प्रयुक्त चावल की बचत का लाभ तो स्पष्ट ही है।

मुलैठी—अब तक इस वनस्पति का आयात साधारणतया स्पेन से ही होता रहा है। इस उपयोगी वस्तु को भारत में उत्पन्न करने के लिये पूसा में जो परीक्षण किया गया, उसमें पर्याप्त सफलता मिली है। मुलेठी के क्षुप जमीन को घेरते हुए खूब बढ़े. इस प्रकार अब भारत में मुलैठी का उत्पादन सम्भव हो गया है।

जूट का उत्पादन—जूट की पैदावार का क्षेत्र पाकिस्तान में चले जाने के कारण भारत के सामने जूट की समस्या बराबर बनी रहती है। पूसा में जूट का उत्पादन परीक्षण करने पर ज्ञात हुआ है कि उत्तर भारत में भी जूट का उत्पादन सम्भव है। यदि इस प्रयोग के फलस्वरूप उत्तरी भारत में जूट की खेती आरम्भ कर दी जाय तो पूर्वी प्रदेश की जूट की सम्पूर्ण फसल व्यापारिक फसल बन जायगी, इससे देश को बहुत आर्थिक लाभ होगा।

कृषि व्याधियाँ—पौधो को कीटाणुओ द्वारा जो हानि होती है उससे रक्षा के लिये भी पूसा में अनुसन्धान हुए है। ५०००० से भी अधिक किस्मों के कीटाणुओं का संग्रह कर लिया गया है और निरन्तर परीक्षण चल रहे हैं। गन्ने में लगने वाली बहुत सी बीमारियों तथा गेहूँ में लगने वाले रतुए की रोकथाम करने मे इन अनुसन्धानो से पर्याप्त सहायता मिली है।

जड़ी-बूटियो का अजायबघर—कृषि-पौधों के अतिरिक्त जीवनोपयोगी वनस्पतियों के अध्ययन का कार्य भी यहाँ किया गया है, बीस हजार से अधिक छोटी-बड़ी किस्म की जड़ी बूटियों का यहाँ का संग्रह एशिया में वनस्पतियो का सबसे बड़ा संग्रह है।

कृषि का यन्त्रीकरण—कृषि की उन्नति के लिये यन्त्र शक्ति का उपयोग भारत में भी आरम्भ हो जाने के कारण भारतीय किसानों को कृषियन्त्रो की उपयोगिता और वर्तमान औजारो व खेती के तरीको में सुधार करने के लिये यहाँ से पर्याप्त प्रेरणा प्राप्त होती है। हाल में एक ऐसी मशीन आयी है जिसमे भूमि का बहुत बारीकी से अध्ययन किया जा सकता है। जमीन की शक्ति जानने में इससे बड़ी सहायता प्राप्त होगी।

कृषि अनुसन्धान कार्य को प्रगति देने के उद्देश्य से राष्ट्रिय सरकार इस शाला के अतिरिक्त पूसा (बिहार का पूर्व स्थान) में, और करनाल पंजाब में भी इसी प्रकार के केन्द्र खोल चुकी है, शमला में खोलने के सम्बन्ध मे योजना विचाराधीन है। भारत जैसे कृषिप्रधान प्रदेश के लिये कृषि सम्बन्धी अनुसन्धानों का अत्यधिक महत्व है। यह प्रसन्नता का विषय है कि सरकार का इस ओर विशेष ध्यान है। जनता का भी ध्यान इस ओर हो, तभी राष्ट्र की उन्नति हो हो सकती है।

—

संस्था-परिचय

गुरुकुल चित्तौड़गढ़

महर्षि दयानन्द जब चित्तौड़गढ़ पधारे थे, तब वे अपने शिष्य स्वा० आत्मानन्दजी के साथ गम्भीरी नदी के पश्चिमी तट पर स्थित श्री रणछोड़ेश्वरनाथ महादेव के मन्दिर पर ठहरे थे। वह स्थान ऋषि को इतना सुन्दर और प्राकृतिक दृश्यो से पूर्ण प्रतीत हुआ कि उन्होंने जहाँ अब चित्तौड़गढ़ गुरुकुल स्थित है वहाँ ही गुरुकुल स्थापित करने की हार्दिक इच्छा प्रकट की। कहा जाता है कि स्वामी श्रद्धानन्दजी की भी इच्छा यहाँ पर गुरुकुल स्थापित करने की था, परन्तु अपने साथियों के आग्रह से कांगड़ी हरिद्वार में स्थापित किया। अस्तु कागड़ी के तीसरे मण्डल के स्नातक ब्रह्मचारी श्री युधिष्ठिर जी ने १४ वर्ष की ही अवस्था में संकल्प किया था कि मैं वीरभूमि चित्तौडगढ़ में गुरुकुल स्थापित कर अपना जीवन इसी पुण्य कार्य में लगा दूँगा। युधिष्ठिरजी चौंतीस पेंतीस वर्ष की अवस्था में सन्यास लेकर श्री स्वामी व्रतानन्दजी हुए और चित्तौड़गढ़ में गुरुकुल स्थापित किया। आज २२ वर्ष से यह गुरुकुल स्थापित है। कई स्नातक वेद-वागीश की उपाधि से विभूषित हैं। पंडित धर्मव्रतजी उपमुख्याधिष्ठाता तथा पंडित भीमसेनजी उपाचार्य के पद पर प्रतिष्ठित रह कर गुरुकुल की सेवा में रत हैं। तीसरे व्यक्ति श्री इन्द्रदेवजी जो यहीं के ब्रह्मचारी तथा अध्यापक हैं, सराहनीय कार्य कर रहे हैं। स्वयम् स्वामी व्रतानन्दजी आचार्य तथा मंत्री के कार्य भार को वहन कर रहे हैं। शिक्षा-क्रम आर्ष पद्धति के अनुसार है। परीक्षाएँ नियमानुसार होती और स्नातकों को उपाधियाँ दी जाती हैं। इस गुरुकुल की आर्थिक सहायता का स्रोत पंजाब ही था जो विभाजन के कारण सूख गया।

—

लेखकों से निवेदन

आर्यमित्र के लेखकों से निवेदन है कि आर्यमित्र में रचनाएँ भेजते समय ध्यान रक्खें कि लेख दो कालम से अधिक बड़ा न हो। सामान्य तथा सामयिक लेखों के अतिरिक्त हमारे स्थायी स्तम्भों के लिये प्राप्त होने वाली रचनाएं शीघ्र प्रकाशित होंगी। स्थायी स्तम्भ — जीवन ज्योति, स्वास्थ्य सुधा, महिला मण्डल, बाल विनोद, संस्था परिचय, ग्राम-जीवन, विज्ञान वार्ता आदि हैं।

सम्पादक

युवक-आन्दोलन

आर्यकुमार सजग हों

श्री मनुदेव 'अभय'

आज चारों ओर से यह ध्वनि कर्णगोचर हो रही है कि आर्यों के पुत्र-पुत्रियाँ प्रायः आर्य तथा वैदिक धर्मी नहीं बन रहे। अर्थात् आर्यसमाजियों की सन्तानें आर्यसमाजी नहीं हो रहीं। इसका मुख्य कारण यही है कि आर्य माता-पिता अपनी सन्तानों तथा ऋषि दयानन्द के प्रति उपेक्षापूर्ण नीति से कार्य कर रहे हैं। इतना ही नहीं यह एक और आश्चर्यजनक घटना है कि कभी-कभी तो आर्यकुमार अपने आप से इतने अनभिज्ञ रहते हैं कि उन्हें आर्य सिद्धान्तों तथा आर्यों के महान् नेताओं तक का ज्ञान नहीं रहता। यह अक्षम्य दोष आर्यकुमारों का नहीं सम्प्रति उनके आर्य संरक्षकों का है। ऋषि के जीवन में एक दिन ऋषि का एक अनन्य भक्त अपने पुत्र सहित ऋषि के पास आये। वह श्रद्धालु भक्त तो निस्संदेह विचारों, वस्त्रों तथा व्यवहार में आर्यत्व से परिपूर्ण थे, परन्तु पुत्र महाशय वही अपने पश्चिमीय विलासी वेष में थे। ऋषि ने उनसे चर्चा करते समय अत्यन्त ओजपूर्ण तथा गम्भीर मुद्रा में कहा आप तो नहीं, अपितु आपका भविष्य पश्चिम की ओर जा रहा है। वह भक्त सहसा चौंक पड़ा और उसने देखा कि ऋषि का तर्जनी उस युवक की ओर संकेत कर रही थी पाठकगण, इस घटना से स्वयं निर्णय कर सकते हैं कि जनता का भविष्य तथा आर्यकुमारों का जीवन काल भविष्य में किस रूप में चित्रित है।

प्राथमिक शिक्षण समाप्ति तक प्रत्येक आर्यकुमार प्रायः अपने ही परिवार के वातावरण से प्रभावित होता रहता है अथवा यों कहिये वह अपरिमार्जित तथा अपरिपक्व रहता है। हां अब माध्यमिक शिक्षण क्षेत्र में उसमें पुस्तकों के अध्ययन तथा विचारों के ग्रहण करने की स्वाभाविक रुचि जाग्रत हो जाती है। बस यह माध्यमिक शिक्षण-काल ही जीवन में महत्वपूर्ण होता है, जब कि प्रत्येक आर्य माता पिता अपनी सन्तानों में आर्य विचार धारा का संचार या प्रवेश करा सकते हैं। इस समय वे अपने आर्यकुमारों को अधिक से अधिक आर्य सिद्धान्तों का साहित्य संग्रह करके दें, जिससे स्वाभाविक प्रबलता के अनुसार आर्यकुमारों में अपने सिद्धान्तों के प्रति रोचकता, स्पष्ट दिग्दर्शन तथा गाम्भीर्य का समावेश हो सकेगा। विद्यालय का शिक्षण प्रारम्भ होते ही प्रत्येक आर्यकुमार का कर्तव्य है कि वह अपने मित्रों, अपने सहपाठियों तथा सम्बन्धियों में उन विचारों का प्रचार करे। और जहाँ तक हो सके वह आर्य सिद्धान्तों का प्रचार आर्यसाहित्य द्वारा ही करे कहीं ऐसा न हो कि आपके विचारों के कारण मित्रों में मृदुल सम्बन्ध की अपेक्षा कटुता तथा प्रेम की अपेक्षा असहिष्णुता के अंकुर उत्पन्न हो जाय। इसका यह अर्थ नहीं है कि हम अपने मित्रों से स्नेहादि हेतु अपने आर्यसिद्धान्तों की चर्चा ही न करें। नहीं, इसका यह अर्थ है कि अपने समवयस्क मित्रों से विचारों के आदान-प्रदान में उग्रता, हठ तथा क्रोध का सम्मिश्रण न किया जाय अन्यथा परिणाम स्वरूप वे मित्र आपसे घनिष्ठता स्थापित करने की अपेक्षा दूर-दूर चले जायेंगे, और सम्भव है, आर्यकुमारों को अपना एकाकी जीवन बिताने के लिये बाध्य होना पड़े।

आर्यकुमारों का यह विद्यालयीन शिक्षण का जीवन काल तरुणाई का प्रथम चरण होता है। इसी काल में आर्यकुमार भिन्न-भिन्न प्रकार के साहित्य, विचारधाराओं तथा वादों के वायुमण्डल से प्रभावित होने लगता है। अतः प्रत्येक आर्यकुमार का कर्तव्य है कि वह इस बहुरंगी चमक से अपने नेत्र न चौंधने दें अपितु वह वादों के साहित्य का अध्ययन, विचार तथा तुलनात्मक अध्ययन, और मनन करें।

आर्यकुमार प्रायः दलगत संस्थाओं में प्रवेश करने लगते हैं। तथा उन संस्थाओं में इतना जीतोड़ परिश्रम करते हैं कि पूर्ण अध्ययन, कर्तव्य तथा सिद्धान्तों की अवहेलना करना उनके बाएं हाथ का खेल हो जाता है। विद्यार्थियों का विशेषकर आर्यकुमारों का यह भीषण अपराध है। अपरिपक्व बुद्धि सर्वदा पतन की ओर ले जाती है। एक बार महात्मा गांधी से कुछ विद्यार्थियों ने पूछा—"महात्माजी क्या विद्यार्थी भी आपके इस राजनैतिक आन्दोलन में सक्रिय भाग लें?" गांधीजी ने स्पष्ट उत्तर दिया कि "विद्यार्थियों का यह क्षेत्र नहीं है। विद्यार्थियों का क्षेत्र तो उनके अध्ययन, विचार निर्माण तथा चरित्र-निर्माण

नागरिकता-निरूपण

नागरिक जीवन

श्री चन्द्रामणिलाल मित्तल

नागरिक जीवन का पूर्ण रूप से विकास करने की आवश्यकता है। जब तक सामाजिक कुरीतियाँ, दूषित शिक्षा-प्रणाली बेकारी और बीमारी की प्रबलता है, तब तक नागरिक जीवन का उदय नहीं हो सकता। स्वाधीनता की रक्षा के लिये राष्ट्रिय हित और चरित्र गठन की जरूरत है। हमें स्वार्थमय जीवन त्याग कर कष्ट का जीवन बिताना चाहिए। चरित्र गठन द्वारा चोरबाजारी, रिश्वत, मुनाफाखोरी आदि सभी दूषणों का अन्त हो सकता है। संकीर्ण साम्प्रदायिकता भी इसी से नष्ट हो सकती है। चरित्र-निर्माण या चरित्र-गठन के लिये सत्य और अहिंसा के अटल आधार की आवश्यकता है। स्वतन्त्रता की रक्षा एकता से ही हो सकती है। राजनैतिक दलों की स्थापना साम्प्रदायिक आधार पर न होनी चाहिए। साम्प्रदायिकता विष है। नैतिकता या नागरिक जीवन निर्माण के लिये दरिद्रता भी दूर होनी चाहिए। दरिद्रता बड़े बड़े अनर्थों की जननी है, इस लिये इसे नये नये उद्योग-धन्धों द्वारा दूर कर देना चाहिए इसके लिये बेईमानी चोर-बाजारी और रिश्वतखोरी का भी किला मिस्मार करना होगा। अच्छे नागरिक का स्वास्थ्य तो अच्छा होना ही चाहिए। दुर्बल और रोगी मनुष्य अपनी उन्नति में असमर्थ होते हैं जनता के अस्वस्थ और निर्बल हो जाने से राष्ट्र का भी निर्बल होजाना स्वाभाविक है। नागरिकों का आलसी होना बहुत बड़ा अभिशाप है। आलसी या निकम्मापन बड़े अनर्थ का कारण होता है। उससे उन्नति में रुकावट पड़ती है। स्वार्थ तो राष्ट्रोन्नति के लिये बहुत ही विघातक है। स्वार्थी अपनी ही भलाई चाहता है, देश या राष्ट्र से उसे कोई सरोकार नहीं। दूसरों के हितों और स्वार्थों पर कुठाराघात करना स्वार्थी का मुख्य काम बन जाता है। अतः अच्छा नागरिक बनने के लिये निःस्वार्थ और स्वस्थ बनने की जरूरत है। स्वार्थ त्याग कर हमें ऊँचा आदर्श उपस्थित करना चाहिए। असमानता और अस्पृश्यता भी सच्ची तथा अच्छी नागरिकता के लिये विघातक हैं। हम हरिजनों की परवा नहीं करते, उनके साथ विषम व्यवहार करने में ही अपना गौरव समझते हैं। बिरादरीबाजी के फन्दे में फँसे रहना ही हमें पसन्द है। ऐसा करने से हमारा नैतिक जीवन दिनोंदिन क्षीण और दूषित हो रहा है। हम अधोगति गर्त में गिर रहे हैं।

नागरिकता के विकास के लिये शिक्षा सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। ऐसी शिक्षा जिसमें मानवता, प्रेम और विश्व-बन्धुत्व की भावना भरी हो। बालकपन से ही विद्यार्थियों को स्वार्थ के दोष बताये जायें जिससे वे अपने देश राष्ट्र और समाज की उन्नति को ही अपनी उन्नति समझें। शिक्षा-संस्थाएं आदर्श युक्त होनी चाहिए। कोरी शिक्षा लाभकारी नहीं हो सकती। जनता के मस्तिष्क में नये विचारों का संचार करना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य हो। राष्ट्र संघटन, पारस्परिक प्रेम, सार्वजनिक हित कामना, न्याय, शान्ति, सुव्यवस्था, अन्तर्राष्ट्रिय उन्नति तथा विश्व शान्ति उन्नत एवम् उत्तम नागरिकता के ऊँचे लक्ष्य हैं। इनके प्रचार के लिये ही हमें अधिकाधिक कार्य करना चाहिए, तभी कल्याण होगा।

———

सामयिक समस्याएँ

प्रचार का प्रस्ताव

श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय

मेरा विचार है कि इस वर्ष शरद् ऋतु का अधिक समय वैदिक धर्मप्रचार में लगाऊं। मैं तूफानी दौरा नहीं करना चाहता। इसमें रेल को पैसे अधिक देने पड़ते हैं समय का दुरुपयोग होता है और साहित्य सेवा में भी बाधा पड़ती है। मेरी योजना इस प्रकार की है —

(१) एक स्थान पर दस या १० दिन रहा जाय। रात को एक घण्टे का व्याख्यान और अर्ध घण्टे साधारण प्रश्नोत्तर (शास्त्रार्थ नहीं)। (२) दिन में स्कूल या कालेज में ४० मिनट का व्याख्यान। (३) घण्टे आध घण्टे लोगों से मेल मिलाप शेष दिन भर बैठ कर लिखने पढ़ने का काम।

इसके लिये स्थानीय समाजों के सहयोग की आवश्यकता होगी —

(१) अर्थात् वह समय चुना जाय जो नगरनिवासियों को अत्यन्त सुविधाजनक हो और स्कूलों की तातील भी न हो न परीक्षाकाल हो।

(२) विषयों को स्थानीय लोग वहाँ की आवश्यकतायें सोच कर नियत करें। और स्थान के प्रमुख लोग बारी बारी से विषयों की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए सभापति बनाये जायें।

(३) इनकी घोषणा एक सप्ताह पहले नगर में भली भांति की जाय। विज्ञापन में सभा का स्थान, समय, विषय और सभापति के नाम के अतिरिक्त वक्ता का परिचय भी दो चार शब्दों में हो।

यदि कई समाज तयार हों तो प्रोग्राम ऐसा बनाया जा सकता है कि यात्राएं बहुत लम्बी और कष्टप्रद न हों। भारतवर्ष के किसी एक प्रान्त को लिया जा सकता है और वहाँ के कुछ नगरों में एक दूसरे के पीछे योजना बनाई जा सकती है।

योजना को पूरी तरह सफल बनाने के लिये पहले से सोच विचार और पत्र व्यवहार की आवश्यकता होगी। व्याख्यानों से पूर्व विज्ञप्ति का पुष्कल प्रबन्ध करना होगा। इस सम्बन्ध में मुझे दक्षिणी अफ्रीका के आर्य भाइयों का प्रबन्ध बहुत पसन्द आया। वहाँ उन्होंने मेरे पहुँचने से पूर्व ही विज्ञप्ति का ऐसा अच्छा प्रबन्ध कर रखा था कि समय का अधिक से अधिक उपयोग हो सका और कम से कम परिश्रम पड़ा। इसका मैं थोड़ा सा नमूना देता हूँ—

१—मैं डरबन पहुंचा तो पहुंचने की तारीख से पूर्व ही बड़े विज्ञापनों द्वारा मेरे आने की सूचना दी जा चुकी थी।

मेरे पहुंचते ही आठ दिन का कार्यक्रम निश्चित हो गया। और विषय तथा सभापति नियत हो गये। विज्ञापन चार पृष्ठों पर था। ऊपर के पृष्ठ पर मेरा चित्र और नाम था। भीतर तिथि क्रम से समय स्थान विषय और सभापति का उल्लेख था। पीछे के पृष्ठ पर मेरे बनाये ग्रन्थों की सूची थी। इस प्रकार जो जनता नहीं आती थी उनको थोड़ा बहुत मेरे विषय में ज्ञात हो जाता था और वे इस प्रकार प्रश्न करते थे।

व्याख्यान ठीक समय पर आरम्भ होते थे और ठीक घण्टे से अधिक देना नहीं पड़ते थे। अपरिचित सभापति [illegible] पत्र के विषय में कुछ हाल लिखा बद्ध पत्र से ही भेज दिया जाता था। इससे लाभ यह होता था कि लोग अंधेरे में टटोलने की बजाय सोच विचार कर व्याख्यान सुनते थे। यदि इस प्रकार की योजना लोगों को प्रिय हो और वे इस काम में सहयोग देना चाहें तो मुझे लिख यह भी दें कि वे किस समय या [illegible] के लिये किस प्रकार का प्रबन्ध [illegible] किया जायगा।

——

है। उन्हें इन गाजने तक गोष्ठियों में पढ़कर अपना अमूल्य समय नष्ट नहीं करना चाहिये। कितना सुन्दर उपदेश है। यदि समस्त विद्यार्थी नहीं तो कम से कम आर्यकुमार ही गांधीजी के उपदेशानुसार कार्य करने लग जावें तो वे अपने आपका तो बहुत ही भला कर लेंगे।

आर्यकुमार राष्ट्र के नव निर्माण में अपने उच्चचरित्र निर्माण द्वारा कुछ सहयोग दे सकें इसके लिये आर्यकुमार परिषद् के संघटन को दृढ़ बनाने की आवश्यकता है। जो आर्यकुमार आर्यकुमार सभा के प्रोग्राम को सफल बनाने में सक्रिय भाग नहीं लेते वे दूसरी संस्थाओं में भी आगे नहीं बढ़ सकते। आर्यकुमार सभा की उन्नति में ही प्रत्येक आर्यकुमार का भविष्य निहित है।

——

स्वास्थ्य-सुधा

मनहूस मक्खी

श्री रामइन्द्रनारायण जौहरी एम० एस-सी

मक्खी बहुत ही दुःख दायी जीव है। इसके कारण बहुत से रोग फैलते हैं और हर साल हजारों मौतें होती हैं। मक्खियाँ नर और मादा दो प्रकार की होती हैं। दोनों के मिलने के पश्चात् ही मादा अंडे देती है। अण्डे से कीड़ा (लारवा Larva) काढ़ से गोला और गोले से बच्चा बनता है। तब कहीं मक्खी बनती है। आमतौर से मक्खियाँ जून जुलाई से लेकर अक्टूबर तक बढ़ती हैं और अगस्त सितम्बर के महीनों में सबसे अधिक बढ़ती हैं। एक समय में मादा सौ से डेढ़ सौ तक अंडे देती है। सड़े गोबर खाद सड़े हुए फल तरकारी आदि मक्खियों के जन्मस्थान हैं। सड़ी हुई वस्तुओं में इनका जन्म होता है।

अणुवीक्षण यंत्र द्वारा यदि मक्खी के शरीर का निरीक्षण किया जाय तो ज्ञात होगा कि उसका सारा शरीर सूक्ष्म लोमों से ढका हुआ है। इनकी टांग पंख आदि सारे अंगों पर बाल से होते हैं। इसके टांगों के सिरे पर एक गोल गद्दी सी होती है जिससे चिपचिपा रस निकला करता है। यह रस उसे वस्तुओं पर उल्टा चिपट जाने और चलने में सहायता देता है।

मक्खियाँ घर में बिन बुलाए ही चक्कर काटती फिरती हैं। कहने को हम उन्हें नहीं बुलाते परन्तु हमारी गन्दी आदतें उनका स्वागत करने को सदैव तयार रहती हैं। ऐसी दशा में वे हमारे घर में घुस आती हैं तो उनका क्या अपराध? दोष तो अपना है जो गन्दी आदत नहीं छोड़ते। जहाँ जी चाहा थूक दिया और कहीं भी बच्चों को मल मूत्र के लिये बैठा दिया। चाहे कुछ भी रहे कोई परवा नहीं। दूषित चीजें [illegible] पड़ी।

इन कीटाणुओं को हमारे शरीर में पहुंचाने का बड़ा भारी [illegible] तक है इनसे तरह तरह के रोग फैलते हैं। जब कभी मक्खी इस प्रकार के दूषित और गन्दे मलों पर बैठती है तो उसकी टांग और पंख में मल भर जाता है। वहाँ से उड़कर जब वह हमारी खाने पीने की चीजों पर बैठती है तो वह उन विषैले और दुर्गन्धित रोगाणुओं को उनपर छोड़ जाती है। इससे स्वास्थ्य नष्ट होने में बड़ी मदद मिलती है। मक्खी गन्दगी को चाटकर उसको साफ करती है, फिर चाहे वहाँ उस गन्दगी को उगल देती है। अतः वह सफाई करने वाली नहीं कही जा सकती। मक्खी जब किसी स्थान पर बैठती है तो पहले उसे तर करती है और फिर चाटती है। तर करने के लिये वह अपने पेट का रस मुंह से उगलती है जिसमें चपल कीटाणु भरे रहते हैं। इन कीटाणुओं से भोजन दूषित हो जाता है।

सुझाव और सम्मतियाँ

भ्रष्टाचार कैसे दूर हो ?

अभी दो महीने की बात है, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा देहली ने देश में भयंकर रूप से फैले हुए भ्रष्टाचार और चरित्र हीनता को दूर करने के लिए एक योजना बनाकर सब आर्य-समाजों में भेजी थी और उसे क्रियान्वित करने की प्रार्थना की था। योजना बड़ी प्रशंसनीय थी। यदि यह भ्रष्टाचार आर्य समाज द्वारा हट जाय तो इससे उत्तम कौन-सा कार्य हो सकता है। परन्तु हम आर्य भाइयों को सोचना तो यह है कि क्या हम इस बुराई को दूर करने के योग्य है। क्या आर्यसमाजी इस भ्रष्टाचार से मुक्त है ? यदि नहीं तो दूसरों का भ्रष्टाचार कैसे छुड़वा सकते हैं। सबसे पहले अपनी जाँच पड़ताल कीजिये और बतलाइये कि आप कोई भ्रष्टाचार करते है या नहीं। याद रखिये, धुआँधार भाषण देना, चन्दा एकत्रित करना, सन्ध्या हवन करना ऊंचे पदों पर सुशोभित होना इतना कठिन काम नहीं है, जितना भ्रष्टाचार रहित होना। यदि २५ प्रतिशत आर्यसमाजी भ्रष्टाचार रहित निकल आवें तो सार्वदेशिक सभा की योजना सफल होने की आशा की जा सकती है। परन्तु दस फीसदी भी आर्यसमाजी इस व्यापक रोग से बचे नहीं मिलेंगे। मैंने यह योजना अपने समाज के सदस्यों के सम्मुख रखी और पूछा कि आप सचाई से अपनी अन्तरात्मा की साक्षी से यह बतलाएँ कि आप स्वयं भ्रष्टाचार करते हैं या नहीं ? सबने एक ही उत्तर दिया कि हम किसी न किसी रूप में भ्रष्टाचार करते हैं। वकील ने कहा कि मैं अभियोगों में अधिक फीस लेने में नहीं झिझकता, तारीखें बढ़वाने की कोशिश करता हूँ, सरकारी कर्मचारियों को हक दिलवाता हूँ, फिर मैं कैसे कह दूं कि मैं भ्रष्टाचार नहीं करता। दुकानदार सदस्य ने कहा कि हमारा तो तो काम बिना चोरबाजारी के चल ही नहीं सकता, हम तो इसी के सहारे पेट पालते हैं। सरकारी कर्मचारी ने कहा कि हमारी तो रिश्वत लिये बिना गुजर ही नहीं हो सकती। वेतन इतना कम है कि काम चल ही नहीं सकता। एक जमींदार महोदय भी थे वह कहने लगे कि हम नजराना लेते हैं, मुकदमों में जल्दी तारीखें डलवाने के लिये अहलकारों को रिश्वत देते है। मुझे बड़ा सन्तोष हुआ कि इन भाइयों ने सीधी-सच्ची बात कह दी और मैंने ऐसा ही उत्तर श्री मन्त्रीजी सार्वदेशिक सभा को लिख दिया कि इस समाज में कोई सदस्य प्रतिज्ञा पत्र भरने को तैयार नहीं। मैंने अपना प्रतिज्ञा-पत्र हस्ताक्षर करके भेज दिया और लिखा कि मैंने कभी भ्रष्टाचार न किया न करूंगा, परन्तु औरों को भ्रष्टाचार करने से रोकने की सामर्थ्य मुझ में नहीं है। यह जाँच-पड़ताल तो एक छोटे से कस्बे के आर्यसमाज की है। सम्भव है, अन्य बड़े बड़े नगरों के समाजों की यह दशा न हो। उनमें अधिक भाई ऐसे हों जो इस बुराई में न फँसे हों। परन्तु मेरा अनुमान है कि जिन वर्गों से मिलकर यह समाज बना है, अर्थात् वकील, व्यापारी, सरकारी कर्मचारी और रईस-जिमींदार इनके सम्बन्ध में भ्रष्टाचार की आम शिकायते हैं। और जब आर्यसमाज की दशा ऐसी हो तो कौन यह आशा करेगा कि हम देश व्यापी भ्रष्टाचार को दूर कर सकेंगे। हाँ, एक बात हमको यह करनी चाहिये कि हम सबसे पहले आर्यसमाज से भ्रष्टाचार दूर करने का प्रयत्न करें और यदि भ्रष्टाचारी अपने दुर्गुणों को छोड़ने को उद्यत न हों तो ऐसे लोगों को समाज से अलग कर दिया जाय। क्योंकि ऐरे गैरे नत्थू खैरे चरित्र हीन लोगों से आर्यसमाज का बहुत बड़ा ह्रास हुआ है और भविष्य में और भी होने का डर है।

मुनहरीलाल, प्रधान
आर्यसमाज एत्मादपुर, आगरा

मक्खी स्वयम् अपनी पैदाइश और खाने के विचार से तो सदैव अपवित्र है, वह जहाँ भी बैठती है, वहीं बीट या विष्टा कर गन्दा बना देती है। भोजन पर बैठकर उसे भी दूषित कर देती है। स्वच्छ और सफेद स्थान को काला तथा दुर्गन्धयुक्त बनाने में यह बड़ी कुशल है। इस प्रकार मक्खी रोग फैलाने का मुख्य साधन है। एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति और एक स्थान से दूसरे स्थान तक यह निरन्तर गन्दगी और कीटाणु फैलाती रहती है। तिजारी, संग्रहणी, पेचिश, मोतीझरा, तपेदिक, प्लेग, नेत्र रोग फोड़े फुन्सियों आदि की बीमारी फैलाने में यह बड़ा काम करती है। हैजा फैलाने में तो सबसे अधिक सहायक है। रोगी के मल, मूत्र, थूक और वमन पर बैठकर मक्खी अपनी टांगों में रोगाणु लपेट लेती है। फिर उन्हें खाद्य पदार्थों पर छोड़ देती है इससे हैजा भयङ्करता से फैल जाता है।

कभी कभी तो मक्खी सोते हुए गन्दे मनुष्यों की नाक में घुसकर अण्डे रख देती हैं। इन अण्डों से कीड़े निकलते हैं, जो रेंगकर मस्तिष्क की ओर जाने लगते है। पाठकों ने देखा, मक्खी कितनी खतरनाक है। अतः उससे बहुत सावधान रहने की आवश्यकता है। मक्खियों से बचने के लिये हमें बिलकुल साफ सुथरा रहना चाहिए। अपने घरों और स्थानों को भी स्वच्छ रखना चाहिए। घर के पास कूड़ा करकट या गन्द जमा न होने दें। तरकारी के छिलके या सड़ी हुई वस्तुएं जमा न होने दें। और न किसी वस्तु को सड़ने-गलने दें। सड़ने वाली वस्तुओं को जला देना चाहिए, जिससे वे इकट्ठी न होने पावें और मक्खियों को अण्डे देने का अवसर न मिले। गोबर, लीद, खाद आदि को खेतों में डलवा देना चाहिए। खाने की चीजों को अलमारियों या जालीदार सन्दूकों में बन्द रखिये। खुली कभी न रहने दी जाएं। खिड़कियों और दरवाजों पर भी परदे रहने चाहिए या उनके दरवाजे जालीदार हों। रोगियों के पास मक्खियों का प्रवेश न होना चाहिए। मोरियों और सन्डासों को फिनायल से धुलवाते रहिए। घरों में कभी-कभी जन्तुनाशक पदार्थ छिड़कने चाहिए।

आगामी चुनाव

आगामी आम चुनावों के सम्बन्ध में आर्यसमाज को क्या करना चाहिये, इस विषय में मेरा सुझाव है कि आर्यसमाज राजार्यसभा का पुनरुद्धार करे। राजार्य सभा चुनाव में अपने उम्मेदवार खड़े करे। राजार्य सभा को चुनावों के सम्बन्ध में अपनी शक्ति बढ़ानी हो तो वह कांग्रेस और जन-संघ के साथ सम्बन्ध स्थापित करने से बढ़ सकती है। राजार्य सभा के अधिकारी प्रान्त का दौरा करके उपयुक्त आर्य व्यक्तियों को चुनाव के लिये खड़ा करें। सारे क्षेत्रों से उम्मेदवार खड़े न हो सकें तो जितनों से हो सकें उन्हीं से खड़े किये जाय।

जितेन्द्रनाथ, मन्त्री
आ० स० काशीपुर

मेरे प्रस्ताव

आर्य महासम्मेलन में विचारार्थ मेरे निम्न प्रस्ताव हैं—१ आर्यसमाजों में आई हुई शिथिलता, अव्यवस्था और सिद्धान्त हीनता दृढ़ता से दूर की जावे और सदाचार के आधार पर आर्यसदस्यों के जीवन को उच्च आदर्शमय तथा वैदिक धर्मी बनाया जाय। २-राजार्य सभा की स्थापना की जावे जिससे कि आर्यसमाज संगठित रूप से राजनीति में सक्रिय भाग लेकर वैदिक स्वराज्य की योजना में पूर्ण योग दे सके। ३-आर्यसमाज सामूहिक शक्ति से भ्रष्टाचार, दुराचार, अनाचार को दूर करने में संलग्न हो। सर्वप्रथम केन्द्र स्थान दिल्ली में यथोचित प्रयोग किया जावे।

अमरनाथ वैद्य शास्त्री, देहरादून

प्रश्नोत्तर

मैंने प्रश्न किया था कि सन्यासी तो पुत्रादि के मोह त्याग से ही बनता है। उसके लिये तो विश्व परिवार है। जनता तो जनहित के लिये ही सन्यासी को धन आदि देती है, यह धन तो जन कल्याण में ही उसे लगाना चाहिये न कि अपने पूर्वाश्रमस्थ सम्बन्धियों के निमित्त। इसके उत्तर में राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री प्रधान सार्वदेशिक सभा लिखते हैं—'जो व्यक्ति संन्यासी है

मनो-विज्ञान

पति का सुधार

श्री कुंवर बहादुरजी

एक व्यक्ति बड़े चोर, डाकू व हिंसक थे। कहीं भी उनका मान न था, पर जब घर में आते तो उनकी धर्मपत्नी उनकी बड़ी पूजा और सेवा करती तथा आवश्यकता से अधिक मान देती थी, एक दिन किसी सन्देह के आधार पर पुलिस ने मकान घेर लिया। पतिदेव अपनी पत्नी से विदा माँगकर बोले कि अब जेल की दीवारें व फाँसीघर उनकी याद कर रहे हैं, अब वे जीवन में फिर कभी घर न लौट सकेंगे। धर्मपत्नी ने बड़ी सावधानी से उन्हें कहीं पर छिपा दिया और पुलिस को विदा कर दिया। २५ वर्ष की सेवा के बाद पतिदेव अपनी पत्नी के चरणों में शीश रखकर विनती करने लगे कि 'भविष्य में तुम मेरी गुरुआनी होगी और मैं तुम्हारा सेवक हूँगा। तुम्हारी आज्ञा-पालन करना मेरा धर्म होगा।' पत्नी गद् गद् हो गई तथा विनय पूर्वक कहने लगी वह घर से बाहर न निकले घर में धन भी इतना था कि दोनों के जीवन-निर्वाह के लिये बहुत काफी था। दो वर्ष बीत गये और अब श्रीमान जी को पुलिस का भय नहीं रहा। एक दिन अपनी पत्नी से बोले अब तो मैं हवन-सन्ध्या नित्य करता हूँ। बुरे काम भी सदा के लिये छोड़ दिये हैं, पर क्या तुम यह बताने की कृपा करोगी कि तुम मुझ जैसे अधम की सेवा क्यों करती थीं?

पत्नी बोली सारे गुणों के जोड़ का संक्षिप्त नाम ज्ञान है, तथा प्रयत्न भी साथ रहना चाहिए। ज्ञानी यदि कर्मशील न हो तो समाज के लिये कोई लाभ नहीं परमात्मा ज्ञान का भण्डार है, उस निराकार परमात्मा के गुण साकार जीवात्मा में प्रतिनिधि बन कर हमको माता पिता, भाई बहन, गुरु-शिष्य, पति पत्नी, मित्र शत्रु, राजा प्रजा इत्यादि जन्मजन्मांतर के कर्मानुसार मिलते रहते हैं। आप मेरे जगत् के निर्वाचित पति हैं, पर मेरा असली पति तो परमेश्वर है, उसकी दी हुई निधि की सेवा और सुरक्षा में प्रयत्नशील रहना, मैंने अपना धर्म समझा हुआ था और भविष्य में भी ऐसा ही होगा। इसी धर्य और ज्ञान का नाम है मनो-विज्ञान। पुरुषों को भी अपने, बाधक नशा स्त्रियों इत्यादि के साथ शुभ-संकल्पों द्वारा मनोवैज्ञानिक ढंग से जीवनयात्रा करनी चाहिये।

——

उसने तो पुत्रादि सम्बन्धियों का न्यास कर दिया अतएव उसके पुत्रादि सम्बन्धी कोई हैं ही नहीं। यदि वह उस सम्बन्ध को संन्यास लेकर भी स्थिर रखता है और परिवार की आर्थिक सहायता करता है तो उसका कार्य निन्द्य है और उस व्यवहार का समर्थन भी निन्द्य है।'

स्वतन्त्रानन्द, चित्तौड़

——

रिकार्डों द्वारा प्रचार

गन्दे गीतों के रेकार्डों के स्थान पर यदि ऐसे रेकार्ड बनाये जायें जिनमें स्वर सहित वेद मन्त्र भरे गये हों तो वेद-प्रचार में अच्छी सफलता मिल सकती है। वातावरण भी विशुद्ध बन सकता है। ये रेकार्ड वेदपाठी विद्वानों द्वारा सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में तैयार होने चाहिये।

वेदानन्द, प्रयाग

(२)

आर्य सिद्धान्तों का प्रचार रेडियो द्वारा किया जाय। भजनों और व्याख्यानों द्वारा महल्ले-महल्ले में प्रचार हो। प्रचार को कथा का रूप दिया जाय। ग्रामों में भी यही प्रचार विधि सफल हो सकती है। ग्राम जनता के प्रश्नों के उत्तर भी प्रचार के समय देने चाहिये।

धर्मानन्द, प्रयाग

——

महिला-मण्डल

पारिवारिक जीवन

श्रीमती कृष्णा गुप्ता, बी० ए०, साहित्यरत्न

जीवन की सुख-समृद्धि के लिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति का गृहस्थ-जीवन सुखी हो। गृहस्थ जीवन को सुखी रखने का दायित्व यद्यपि पुरुषों पर भी है, तथापि गृहस्थ का वास्तविक आधार होने के कारण महिला मण्डल पर ही उसका अधिकतर दायित्व है। पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव ने स्त्रियों में पुरुष की समानता की जो अनुचित स्पर्धा उत्पन्न कर दी है उसी के कारण भारतीय गृहस्थ कलह के घर बनते जा रहे हैं समानता का जो अर्थ वर्तमान शिक्षा ने बताया है, भारतीय आदर्श सर्वथा उसके प्रतिकूल है। भारतीय आदर्श के अनुसार पुरुष और नारी के कार्य क्षेत्र पृथक्-पृथक् हैं और कार्य क्षेत्रों के आधार पर ही दोनों के अधिकारों और कर्तव्यों का वर्गीकरण किया जाता है। आधुनिक आदर्शों के अनुसार स्त्री जाति पुरुष के प्रत्येक कार्य के लिये अपने को सर्वथा योग्य मानती और संघर्ष करती है।

बौद्धिक एवं अन्य मानवीय समानताओं के होते हुए भी प्रकृति ने नारी समाज को मातृत्व का जो महान् उत्तरदायित्व सौंपा है उसे पूर्ण करने की क्षमता के लिए स्त्रियों को चाहिये कि वे पुरुष समाज के क्षेत्र में आगे न बढ़ अपने क्षेत्र में ही योग्य और सामर्थ्ययुक्त बनें। विदेशों में जहाँ की नकल हमारी बहनें आंख बन्द करके करना चाहतीं हैं, नारी-समाज ने पुरुषों की समानता की होड़ करके कोई सुख प्राप्त नहीं किया। वहां के पारिवारिक जीवन की घटनाएं इस बात का साक्षी दे रही हैं। भारतीय आदर्श के अनुसार नारी का क्षेत्र गृह के भीतर रह कर निर्माण करना है, पुरुष समाज का दायित्व है कि उस निर्माण के लिये सामग्री जुटावे। निर्माण के इसी महत्व के कारण नारी को हमारे यहाँ साम्राज्ञी की पदवी से विभूषित किया गया है।

समाज की जीवन-गाड़ी के दो पहियों के रूप में स्त्री और पुरुष को अपनी योग्यता निर्माण के लिये विकास के सम्पूर्ण समान अधिकार प्राप्त होने चाहियें, परन्तु गाड़ी का एक पहिया यदि अपने स्थान पर चलने के बजाय दूसरे के स्थान पर चलने लगे तो गाड़ी कैसे आगे बढ़ सकेगी। गाड़ी के पहिये जहाँ फिट कर दिये गये हैं, वहां उनका स्थान रहना चाहिये इसी प्रकार प्रकृति ने समाज की गाड़ी में जिस जिस पहिये के रूप में लगा दिया है, उसे वहां रहना और अपनी लकीर पर आगे बढ़ते जाना चाहिये। तभी समाज की, राष्ट्र की, और जीवन की गाड़ी आगे बढ़ सकेगी।

मध्यकाल के सामन्ती युग में समाज के पुरुष वर्ग ने नारी जाति के प्रति जिस उच्छृंखलता का व्यवहार किया था आज उसी की प्रतिक्रिया भारतीय नारी के हृदय में हो रही है, यही समय है जब कि नारी-समाज को अपनी उच्चाशयता का परिचय देना है। नारी-समाज का आज कर्तव्य-परायण नेतृत्व की अधिक आवश्यकता है, अधिकारोन्मुख नेतृत्व की नहीं।

अधिकारवाद की आँधी ने हमारी बहनों को जहाँ पुरुष-समाज से संघर्ष करना सिखाया है वहाँ भौतिकवादी बनाने का दोष भी उसी पर है। विदेशी रहन सहन के साथ विदेशी सामग्री का अधिकाधिक प्रयोग नारी को पतित राष्ट्र चरित्र की ओर ले जा रहा है। विदेशी वस्त्र और मदिरा की दुकानों पर गांधी युग की पिकेटिंग करने वाली भारतीय नारी आज कहां हैं। नारी की विडम्बनापूर्ण महत्वकांक्षा की पूर्ति में जब पुरुष समाज अपने स्वास्थ्य और धन की आहुति नहीं दे पाता तभी परिवार संघर्ष

बाल-विनोद

सन्तोषी भाई

अशोककुमार

प्राचीन भारत में विराट् नगर के पास सूर्यपति नाम का एक राजा राज्य करता था उसके तीन राजकुमार विश्वपति, प्रजापति और सुकर्णदेव थे। एक दिन अचानक ही राजा की मृत्यु हो गयी और राज्य का सम्पूर्ण अधिकार मन्त्री मानदेव ने अपने हाथ में ले लिया। तीनों राजकुमारों को राज्य से बाहर निकाल दिया गया तीनों भाई अपने भाग्य के भरोसे निकल पड़े, उनमें से विश्वपति तिब्बत की ओर गया और प्रजापति ने मिश्र का मार्ग ग्रहण किया परन्तु छोटा राजकुमार सुकर्णदेव बहुत सादा जीवन बिताने की इच्छा से राज्य के समीप ही रह गया।

विश्वपति का विचार था कि संसार में धन सबसे बड़ी वस्तु है, यदि हमारे पास बहुत सा धन हो तो हम एक बड़ी सेना तय्यार कर अपना राज्य पुनः प्राप्त कर सकते हैं इसलिये मुझे धन पैदा करने के लिये व्यापार करना चाहिये और इस प्रकार विश्वपति ने एक बड़ा व्यापार आरम्भ कर दिया।

प्रजापति धन की अपेक्षा शक्ति में अधिक विश्वास करता था उसके विचार में यदि हमारे पास सैन्य बल हो तो हम सम्पूर्ण राज्य पर पुनः अधिकार कर सकते हैं इस प्रकार वह मिश्र के राजा के सहारे से एक विशाल सेना तय्यार करने में संलग्न रहा।

सबसे छोटा राजकुमार बड़ा सतोषी था, वह धन और राज्य के लोभ से मुक्त था इसीलिये उसने एक कृषक-कन्या से विवाह कर एक ग्राम में ही रहना और सन्तोषी जीवन बिताना अच्छा समझा।

बारह वर्ष के बाद राजकुमार सुकर्ण ने देखा एक ओर से उसका बड़ा भाई विश्वपति सोने-चांदी, हीरे जवाहरात से लदे घोड़े और खच्चरों के साथ उसी के गाँव की ओर आ रहा है, और दूसरी ओर से दूसरा भाई प्रजापति मिश्र के सैनिकों की विशाल घुड़सवार सेना लेकर उसी की ओर आ रहा है। विश्वपति के अपार धन की सूचना पाकर प्रजापति की सैनिक मनोवृत्ति लालची बन गयी और वह सोचने लगा कि राज्य पर आक्रमण करने से पहले इस धन को ही लूट लिया जाय, परन्तु अकस्मात् विश्वपति की भी सुकर्ण से भेंट हो गयी और प्रजापति ने भी सुकर्ण को पहचान लिया, इस प्रकार तीनों भाई परस्पर गले लगा कर मिले।

विश्वपति और प्रजापति दोनों ने अपने परिश्रम और मन्सूबों की बातें सुकर्ण को सुनाईं और पूछा कि तुमने बारह वर्ष में क्या क्या किया। सुकर्ण ने बताया कि मैंने एक संतोषी पुरुष की भांति जीवन बिताया। मैं धन और राज्य की लिप्सा में पड़कर व्यर्थ परेशान नहीं हुआ और मुझे अपने वर्तमान जीवन में बड़ा सुख है। छोटेभाई की बात सुन दोनों भाइयों ने कहा कि यद्यपि हम दोनों ने धन और सैन्य संग्रह कर लिया है तथापि हमें जीवन में सुख अनुभव नहीं हुआ। हमारे मन में सदा लोभ और अहंकार की भावनायें भरी रही हैं। प्रजापति ने बताया कि कि जब तक मुझे यह पता नहीं लगा था कि धन वाले काफले का स्वामी मेरा भाई विश्वपति ही है तब तक मेरे मन में अपने सैन्य बल से उसका धन अपहरण करने की भावना बढ़ रही थी। इस प्रकार अपनी मानसिक अवस्थाओं का वर्णन करने के बाद दोनों भाइयों ने छोटे राजकुमार की प्रशंसा की और उसे अपने साथ लेकर मन्त्री मानदेव के शासन पर आक्रमण कर अपना राज्य पुनः प्राप्त कर लिया और सुकर्ण को राजा बना कर वृद्ध होने के कारण वे स्वयं वनवास को चले गये। सुकर्ण का सन्तोषी जीवन ही उसके राजा बनाये जाने का मुख्य कारण था। धन और बल से सुख नहीं मिलता सन्तोष से ही वास्तविक सुख प्राप्त होता है।

—

का केन्द्र बन जाता है। हमारी बहनों को अपनी पारिवारिक आर्थिक क्षमता और राष्ट्रीय गौरव को ध्यान में रखते हुए ही अपना जीवन बिताना चाहिये, तभी हमारा पारिवारिक जीवन सुखी और समृद्ध बन सकेगा।

—

आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के प्रधान और मन्त्रियों की

नामावली

[सन् १८८७ से १९५१ तक]

१८८७, ८८—प्रधान मु० लक्ष्मण स्वरूपजी देहरादून, मेरठ और मन्त्री प० विहारीलालजी मुजफ्फरनगर। १८८९—प्रधान राय सुन्दरलालजी मैनपुरी और मन्त्री पूर्वोक्त। १८९०—प्रधान बा० दुर्गाप्रसादजी फरुखाबाद और मन्त्री प० भगवानदीनजी मिश्र हरदोई। १८९१, ९२—प्रधान श्री देवीप्रसादजी और मन्त्री पूर्वोक्त। १८९३ प्रधान मु० ज्योतिस्वरूपजी देहरादून, मेरठ और मन्त्री पूर्वोक्त। १८९४, ९५, ९६—प्रधान राजा फतहसिंहजी पुवायाँ (शाहजहाँपुर) और मन्त्री पूर्वोक्त। १८९७ प्रधान बाबू लखपतरायजी गाजियाबाद (मेरठ) और मन्त्री मु० नारायणप्रसादजी मुरादाबाद। १८९८, ९९, १९००—प्रधान प० भगवानदीनजी मिश्र हरदोई और मन्त्री पूर्वोक्त। १९०१—प्रधान कुँवर हुकुमसिंहजी आंगई (मथुरा) और मन्त्री बा० श्यामसुन्दरलालजी मैनपुरी। १९०२—प्रधान प० भगवानदीनजी मिश्र हरदोई और मन्त्री पूर्वोक्त। १९०३—प्रधान पूर्वोक्त और मन्त्री मु० नारायणप्रसादजी मुरादाबाद। १९०४, ५, ६—प्रधान पूर्वोक्त और मन्त्री बाबू श्रीरामजी आगरा। १९०७—प्रधान पूर्वोक्त और मन्त्री मु० नारायणप्रसादजी मुरादाबाद। १९०८—प्रधान रामदुलारेलालजी फतेहगढ़ और मन्त्री पूर्वोक्त। १९०९—प्रधान प० तुलसीरामजी स्वामी मेरठ और मन्त्री बाबू गुलराजगोपालजी गुप्त, फतेहगढ़। १९१०—प्रधान पूर्वोक्त और मन्त्री बाबू रघुवीरशरणजी, मेरठ। १९११, १२, १३—प्रधान प० तुलसीरामजी मेरठ और मन्त्री श्री मदनमोहनजी सेठ, बुलन्दशहर। १९१४, १५, १६ प्रधान प० घासीरामजी और मन्त्री पूर्वोक्त। १९१७—प्रधान कुँवर हुकुमसिंहजी आंगई (मथुरा) और मन्त्री पूर्वोक्त। १९१८—प्रधान प० घासीरामजी मेरठ और मन्त्री पूर्वोक्त। १९१९—प्रधान कुँवर हुकुमसिंहजी आंगई (मथुरा) और मन्त्री बा० पूर्णचन्द्रजी, आगरा। १९२०—प्रधान पूर्वोक्त और मन्त्री श्री गदाधरसिंहजी समेड़ी, कानपुर। १९२१—प्रधान पूर्वोक्त और मन्त्री बा० शालिग्रामजी आगरा। १९२२—प्रधान बा० सीतारामजी लखीमपुर (खीरी) और मन्त्री पूर्वोक्त। १९२३—प्रधान पूर्वोक्त और मन्त्री बा० रघुनन्दनप्रसादजी लखनऊ। १९२४—प्रधान बा० विश्वम्भरदयालुजी मुजफ्फरनगर और मन्त्री प० इन्द्रमणिजी मेरठ। १९२५, २६, २७—प्रधान प० घासीरामजी मेरठ और मन्त्री बा० बृजनाथजी मित्तल मेरठ। १९२८, २९, ३०, ३१—प्रधान ठा० मशालसिंहजी हरदोई और मन्त्री श्री रासविहारीजी तिवारी लखनऊ। १९३२—प्रधान पूर्वोक्त और मन्त्री बा० उमाशङ्करजी फतेहपुर। १९३३—प्रधान बा० पूर्णचन्द्रजी आगरा और मन्त्री पूर्वोक्त। १९३४—प्रधान डा० बाबूरामजी सक्सेना, इलाहबाद और मन्त्री पूर्वोक्त। १९३५, ३६, ३७—प्रधान श्री मदनमोहनजी सेठ बुलन्दशहर और मन्त्री बा० पीतमलालजी अलीगढ़। १९३८—प्रधान बा० पीतमलालजी अलीगढ़ और मन्त्री श्री कालीचरणजी मेरठ। १९३९—प्रधान राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री, रजपुरा (मथुरा) और मन्त्री पूर्वोक्त। १९४०—प्रधान श्री मदनमोहनजी सेठ, बुलन्दशहर और मन्त्री पूर्वोक्त। १९४१, ४२, ४३—प्रधान श्री गंगाप्रसादजी उपाध्याय, प्रयाग और मन्त्री श्री महेन्द्रप्रतापजी शास्त्री लखनऊ। १९४४—प्रधान पूर्वोक्त और मन्त्री प० रामदत्तजी शुक्ल लखनऊ। १९४५—प्रधान श्री मदनमोहनजी सेठ बुलन्दशहर और मन्त्री पूर्वोक्त। १९४६—प्रधान राजगुरु धुरेन्द्रजी शास्त्री, रजपुरा (मथुरा) और मन्त्री पूर्वोक्त। १९४७—प्रधान पूर्वोक्त और मन्त्री बा० उमाशङ्करजी फतेहपुर। १९४८, ४९—प्रधान पूर्वोक्त और मन्त्री श्री रामदत्तजी शुक्ल लखनऊ। १९५०—प्रधान पूर्वोक्त और मन्त्री बा० पीतमलालजी अलीगढ़। १९५१—प्रधान श्री मदनमोहनजी सेठ और मन्त्री श्री धर्मपालजी विद्यालङ्कार बदायूं।

———

आर्य महासम्मेलन समाचार

२७ से २९ अक्टूबर तक मेरठ में वेद-सम्मेलन, गोरक्षा-सम्मेलन, संस्कृत-सम्मेलन, महिला-सम्मेलन आदि अनेक सम्मेलन होंगे। ३० अक्टूबर को नगर-कीर्तन तथा अध्यक्ष श्री विनायकरावजी का जुलूस निकाला जायगा। जिसमें प्रायः सब आर्य-समाजें और आर्य-संस्थाएँ सम्मिलित होंगी। ३१ अक्टूबर तथा १ नवम्बर को सम्मेलन के मुख्य प्रस्तावों पर विचार किया जायगा। उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री मदनमोहन सेठ एम० ए०, हाल ही में मेरठ पधारे थे, आपको मेरठ के कार्यकर्ताओं पर पूर्ण विश्वास है कि वे सब प्रकार उचित प्रबन्ध करेंगे। स्वागत समिति प्रबन्ध-व्यवस्था बड़ी उत्तमता से करेगी, सम्मेलन में विचारार्थ अनेक प्रस्ताव और सुझाव आ रहे हैं, जिन पर सार्वदेशिक सभा गम्भीरतापूर्वक विचार करेगी, और आवश्यक होने पर उन्हें महा सम्मेलन के सामने भी प्रस्तुत करेगी।

—विश्वम्भरसहाय प्रेमी
प्रचार-मन्त्री

——

सभापति का जुलूस

सप्तम सार्वदेशिक आर्य-महासम्मेलन मेरठ के अध्यक्ष श्री माननीय विनायकरावजी विद्यालङ्कार बार० ऐट०ला० खाद्य और कृषि मन्त्री हैदराबाद निर्वाचित हुए हैं। २८ अक्टूबर को प्रधान का जुलूस निकलेगा। २९ और ३० को खुला अधिवेशन होगा। २७ व ३१ अक्टूबर व १ नवम्बर को वेद, गोरक्षा, संस्कृति आदि अनेक सम्मेलन होंगे।

——

राष्ट्रभृत यज्ञ

सप्तम आर्य महासम्मेलन मेरठ के अवसर पर ता० २७ अक्टूबर से १ नवम्बर तक राष्ट्रभृत महा यज्ञ होगा। राष्ट्र विधायक सत्य, ऋत, दीक्षा, तप, ब्रह्म और यज्ञ इन पृथ्वी धारक तत्वों के अनुरूप भारतवर्ष राष्ट्र का निर्माण होगा।

ज्ञानचन्द मन्त्री-सभा

——

प्रत्येक छोटे-बड़े आर्यसमाज को अपने नगर में "आर्यमित्र" का प्रचार करना चाहिए।

पितृ-यज्ञ

श्री प० केशवदेव शास्त्री

पितृ-यज्ञ के वैदिक स्वरूप को भुलाकर हमारे समाज में श्राद्ध और तर्पण के रूप में जो प्रथा प्रचलित है उसे अन्ध-विश्वास और पाखण्ड लीला के अतिरिक्त कुछ नहीं कहा जा सकता। आश्विन मास में सम्पन्न होने वाले श्राद्ध तर्पण के स्थान पर सच्चे पितृ-यज्ञ का प्रचार किया जाना चाहिये। चारों वेदों का अवलोकन करने पर उनमें कहीं भी 'मृतक श्राद्ध' का शब्द नहीं मिलेगा और न प्रचलित रूप में मृतकों को इस प्रकार तृप्त करने का विधान ही। वस्तुतः जो लोग मर चुके हैं उनकी पितृ संज्ञा ही नहीं रहती क्योंकि आत्मा और शरीर का संयोग रहने तक ही संसार में जीव की पिता, पुत्र, स्त्री, माता आदि संज्ञायें रहती हैं। आत्मा के शरीर से पृथक् होते ही शरीर जला दिया जाता है और आत्मा पूर्व के सम्पूर्ण सम्बन्धों को त्याग नया जन्म ग्रहण कर लेता है। नये जन्म के अनुसार ही सांसारिक रिश्ते पुनः स्थापित हो हो जाते हैं। इस प्रकार पुनर्जन्म का सिद्धान्त मृतकश्राद्ध के खण्डन में प्रबल युक्ति है। पुनर्जन्म के सिद्धान्तानुसार यह भी सम्भव हो सकता है कि पिता की आत्मा पुत्र के रूप में और पुत्र की आत्मा भाई या बहिन के रूप में जन्म धारण करले, इसलिये यह एक निश्चित् सिद्धान्त है कि शरीर रहित आत्मा का शरीर धारी आत्मा से कोई सम्बन्ध नहीं रहता।

पितृ शब्द का वास्तविक अर्थ है रक्षा करने वाला, पालन करने वाला और पैदा करने

आर्य जगत

—आ० स० कुसुमरा (मैनपुरी) के श्री अवधेश शर्मा की पत्नी का सीमन्तोन्नयन संस्कार हुआ। वेद प्रचार सप्ताह मनाया गया।

—आ० कु० सभा मदार दरवाजा (फर्रुखाबाद) ने वेद प्रचार सप्ताह मनाया। विद्वानों के प्रवचन और भजनोपदेश हुए। दैनिक सत्संग प्रचलित कर दिया गया है।

—आ० स० नवाबगंज (बरेली) ने वेद-प्रचार सप्ताह मनाया, यज्ञ व्याख्यान और भजन हुए।

—अलीगंज (बरेली) में प० रामचन्द्रजी उपदेशक की प्रेरणा से आ० कु० सभा स्थापित हुई।

—आ० स० थानाभवन में प० श्रीरामजी कौशिक ने सफलतापूर्वक प्रचार किया। वेद प्रचार सप्ताह मनाया गया।

—आ० स० सडाला में वेद-प्रचार सप्ताह मनाया गया प० रुद्रदत्त शास्त्री के प्रवचन हुए।

—६ सितम्बर ५१ को श्री धर्मदत्त जी 'आनन्द' ने लालढोंक (नैनीताल) में आर्यसमाज स्थापित किया।

—आ०स०कोठ (मुरादाबाद) प्रो० महेशप्रसादजी के देहावसान पर शोक-सहानुभूति प्रकट करता है। ६ तथा १० सितम्बर को श्री बलवीरसिंहजी 'बेधड़क' तथा श्री हरस्वरूपसिंहजी ने यहां प्रचार किया।

—आ० स० मलाही (चम्पारन) के तत्वावधान में २६ अगस्त से २ सितम्बर तक प० रामानन्दजी शास्त्री की गीता पर कथा हुई। अरेराज में भी शास्त्रीजी ने सफलतापूर्वक प्रचार किया। प्रभाव अच्छा पड़ा।

—२३ से ३१ अगस्त तक जिरोली, पहाड़ू, सोंही तथा फतेलपुर ग्रामों में आत्मानन्दजी तथा श्री जयपाल सिंहजी 'मानव' ने सफलतापूर्वक प्रचार किया।

—आ० स० लखीमपुर-खीरी 'शहन शरियत' के शरारत भरे लेखों का तीव्र प्रतिवाद करता है।

—कानपुर में डा० बाबूराम शर्मा ने अपने प्रपौत्र के नामकरण संस्कार के शुभअवसर पर तीन दिन तक प्रचार कराया।

—दयानन्द आर्यविद्यालय (पूना) में १७ सितम्बर को श्री प० धर्मवीरजी भण्डाधारी ने "विद्यार्थी-जीवन के आदर्श" पर भाषण दिया।

—आ० स० कमालगंज (फतहगढ़) के उपप्रधान श्री बाबू मूलचन्दजी के सुपुत्र के असामयिक देहावसान पर आर्यसमाज की ओर से शोक प्रकट किया गया।

—आ० स० भटपुरा (मुरादाबाद) की ओर से असमोली ग्राम के मेले में श्री प० शान्तिस्वरूपजी ने प्रचार किया।

—आ० स० मिलक (रामपुर) में वेद-प्रचार सप्ताह के अवसर पर श्री स्वामी शिवानन्दजी और ब्रह्मचारी जगदीशजी ने प्रचार तथा योगासन के प्रदर्शन किये। समाज की आर्यकन्या पाठशाला की उन्नति के लिये अपील की गयी।

—चतुर्वेद पारायण यज्ञ आ० स० मांडी (हरदोई) में होने वाला था, वह आर्यमहासम्मेलन के कारण सम्प्रति स्थगित कर दिया गया है। —मन्त्री

—स्वामी अमृतानन्दजी १७ अक्टूबर को आ० स० सुल्तानपुर (नैनीताल) के उत्सव पर कृपया अवश्य पधारें। —मन्त्री

—एटा की श्रीमती उमादेवी अध्यापिका ने आर्षगुरुकुल एटा को अपनी उपार्जित धन राशि का ११०१) भवन-निर्माणार्थ प्रदान किया है। गुरुकुल में भवन निर्माण कार्य प्रारम्भ हो गया है। प्रवेशार्थी ब्रह्मचारी प्रार्थना-पत्र भेज सकते हैं। यहाँ आर्षप्रणाली के अनुसार शिक्षा दी जाती है। श्री स्वामी ब्रह्मानन्द दण्डीजी गुरुकुल के प्रयोजक हैं।

—मोहनलाल पोद्दार

—श्री केशवलालजी आर्य जड़िया, भोपाल तथा श्रीयुत प्रो० सत्यव्रत शास्त्री, सांख्यतीर्थ का होशंगाबाद गुरुकुल से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है उन्हें गुरुकुल के लिये किसी प्रकार की सहायता न दी जाय।

इन्द्रदेवसिंहसिंह, मन्त्री,
आर्यप्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश

—आ० स० ... वाला, उक्त गुण जीवित शरीर में ही सम्भव है, मृतक में नहीं, वेदों में जहाँ जहाँ पितृ-यज्ञ का उल्लेख है वहाँ वहाँ जीवित पितरों के प्रति आदर प्रदर्शन का ही भाव है, मृतक पितरों के प्रति वर्तमान पाखण्डी कर्मकाण्ड का विधान नहीं है। जो मनुष्य अपने जीवित माता पिता की सेवा न कर मृत्यु के पश्चात् लोक-धर्म की भावना से मृतक-श्राद्ध में विश्वास रखते हैं उन्हें अपने वास्तविक कर्तव्य को पहचानना चाहिए, जीवित पितरों की सच्ची सेवा करना उनके शारीरिक और मानसिक सुख का पूर्ण ध्यान रखना ही वास्तविक पितृ-यज्ञ है।

सार-सूचनाएं

—मैं आर्यसमाज का विस्तृत इतिहास लिखने के लिये सामग्री एकत्र कर रहा हूँ, शीघ्र ही इस कार्य के लिये यात्रा करने वाला हूँ।

ईशबन्धु वेदशास्त्री, वेद कुटीर,
६६ खालधारी रोड
पो० बरतला कलकत्ता १८

निर्वाचन

—आ० कु० सभा अलीगंज (बरेली)—प्रधान-म० रामप्रसादजी और मन्त्री-म० रामेश्वरदयालुजी।

—आ० कु० सभा शाहदरा (देहली)—प्रधान-श्री हरिदास आर्य और मन्त्री-श्री बलदेवराज।

—आर्यसमाज लाल ढोंक (नैनीताल)—प्रधान-आनन्दसिंहजी और मन्त्री-श्री रामप्रसादजी।

उत्सव-सूचनाएं

—आ० स० हरदोई का उत्सव ८, ६ तथा १० अक्टूबर को मनाया जायगा।

—आर्यसमाज सब्जीमण्डी देहली का ४६ वाँ उत्सव २६ सितम्बर से २ अक्टूबर तक मनाया जायगा। पहले दिन विराट् नगर-कीर्तन जुलूस निकलेगा।

—आर्यसमाज तिलहर का स्वर्ण-जयन्ती महोत्सव १२ से २१ अक्टूबर तक होगा। महासम्मेलन के कारण पूर्व तिथियों बदल दी गई हैं।

आवश्यकता

आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश को योग्य व उत्तम उपदेशकों की की आवश्यकता है। जो उपदेशक महानुभाव आर्यसिद्धान्तों का उत्तम ज्ञान रखते हो और शिक्षित नवयुवकों में पश्चिमीय नवीन हानिकारक वादों का खण्डन करने की क्षमता रखते हो, वे अवश्य प्रार्थना-पत्र भेजें।

धर्मपाल विद्यालंकार, मन्त्री
आर्यप्रतिनिधि सभा, उ० प्र० लखनऊ

—आर्यसमाज दानापुर का उत्सव ३ से ४ अक्टूबर तक बड़े समारोह पूर्वक मनाया जागया। २५ सितम्बर से २ अक्टूबर तक प्रातः अध्यात्म कथा होगी।

—आर्य समाज आगरा शहर में मृतक श्राद्ध के खण्डन में श्रीयुत ब्रजमोहन झा का सारगर्भित भाषण हुआ, और १६.६.५१ को आर्य युवकों में सांस्कृतिक विचारों के प्रचारार्थ आर्य कुमार सभा की स्थापना हुई, प्रधान श्री ओम्प्रकाशजी शास्त्री और मन्त्री श्री द्वारकाप्रसादजी निर्वाचित हुए।

—

ब्रज में प्रचार

आगरा, मथुरा, अलीगढ़ जिलों का आर्यसमाजों के प्रधान मन्त्रियोंको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि आर्यप्रतिनिधि सभा ने तीनों जिलों में प्रचार कार्य के लिये दो प्रचारक हमें दिये हैं। तीनों जिलों की आर्यसमाजें अपने उत्सव तथा प्रचार आदि के प्रोग्राम बनाते समय इन प्रचारकों को बुलाने के लिये लिखें, जिससे इन प्रचारकों का अधिकाधिक उपयोग हो सके। श्री मानसिंहजी अभी आगरा नहीं आये हैं परन्तु श्री खड्गपालसिंहजी ने आगरा की एत्मादपुर और फिरोजाबाद तहसीलों में प्रचार आरम्भ कर दिया। उक्त तहसीलों में वे जहाँ-जहाँ पहुँचे वहाँ वहाँ की समाजें उनसे प्रचार करावें और सभा का प्राप्तव्य धन दशांश सृष्टि कोटि, वेद-प्रचार गुरुकुल आदि मदों का जो धन हो उन्हें देकर सभा को रसीद प्राप्त कर लें।

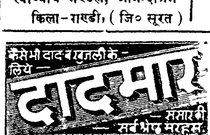
—मोहनलाल आर्य
मण्डलाधीश
मण्डी सईदखाँ, आगरा

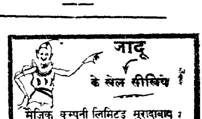
—

आर्य संस्कृति प्रचार समिति

आगरा में आर्यसमाज के कार्य को प्रगति देने के विचार से २३ सितम्बर को आर्यसमाज हींग की मण्डी में चारों आर्यसमाजों की केन्द्रीय सभा 'आर्य संस्कृति प्रचार समिति' की बैठक हुई। शहर के विविध मुहल्लों और विविध वर्गों में प्रचार कैसे किया जाय इस प्रश्न पर गम्भीरता पूर्वक विचार हुआ। आर्यों में सप्ताह में एक बार केन्द्रिय स्थान पर मिलने की प्रथा को प्रोत्साहन देने का निश्चय किया गया। आर्य संस्कृति प्रचार समिति की आगामी बैठक ८ सितम्बर को उक्त स्थान में ही होगी।

—





धार्मिक परीक्षायें

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की ओर से सिद्धान्त सरोज, रत्न, भास्कर, शास्त्री और वाचस्पति की पाँचों धार्मिक परीक्षायें आगामी जनवरी मास में समस्त भारत में होंगी। आवेदन पत्र भेजने की अन्तिम तारीख १५ नवम्बर है। नवीन पाठविधि और आवेदनपत्र निम्न पते से मुफ्त मंगाये जा सकते हैं। गतवर्ष इन परीक्षाओं में लगभग ६००० छात्र-छात्रायें बैठे थे। समस्त आर्यसमाजों और आर्य संस्थाओं में इनके केन्द्र स्थापित होने चाहिये। इन परीक्षाओं में बालक, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सभी बैठ सकते हैं।

निवेदक —
डा० सूर्यदेव शर्मा, एम० ए० डी० लिट्
परीक्षा मन्त्री
भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्, अजमेर।

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

आर्य-मित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

संचालक-आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ

आगरा, ४ अक्टूबर १९५१

नये समाज के लिये नया मानव चाहिये !

निरुद्देश्य शिक्षा राष्ट्र के युवकों का भविष्य अन्धकारमय बना रही है। देश के युवक-युवतियाँ ही राष्ट्र को संकट से पार लगा सकते हैं।

—आचार्य नरेन्द्रदेव

आगरा आगमन के अवसर पर विद्यार्थियों की सभा में भाषण देते हुए आचार्यजी ने कहा कि "हमारे देश में आज जो शिक्षा प्रचलित है उसका जीवन और समाज से कोई सम्बन्ध नहीं है निरुद्देश्य शिक्षा राष्ट्र के युवकों का भविष्य अन्धकारमय बना रही है. आज देश को ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो नवयुवकों में चरित्र, उत्साह और कर्मठता की भावनाएं जाग्रत् कर सकती हो और जिसके द्वारा ज्ञान की प्रतिदिन विस्तृत होने वाली सीमाओं में राष्ट्र के विद्यार्थी अभिरुचि के साथ प्रवेश कर सकें, आज बौद्धिक से अधिक उपयोगितावादी शिक्षा की आवश्यकता है। हमारी शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिये 'नये समाज की रचना' यदि हमारी शिक्षा इस ओर कोई प्रगति न करेगी तो देश की स्वाधीनता संकट में पड़ जायगी और देश अवनति के गर्त में गिर जायगा।

भारत को स्वाधीन हुए ४ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं परन्तु देश में कहीं भी नूतन हृदय, नूतन कलेवर दिखाई नहीं पड़ता सर्वत्र निरुत्साह और उदासीनता व्याप्त है। देश के युवक-युवतियाँ ही राष्ट्र को इस संकट से पार लगा सकते हैं। हमारे नवयुवकों में आज अंग्रेजी भाषा का बहुत आदर है परन्तु उन्हें सदा स्मरण रखना चाहिये कि हमारे देश का गौरव अपनी राष्ट्र-भाषा हिन्दी और सांस्कृतिक भाषा संस्कृत के अभ्युत्थान में ही सन्निहित है। भारत में एकता की भावना को स्थायित्व प्रदान करने के लिये देश के युवकों को प्रान्तीय और विशेषकर दक्षिणी भाषाओं के अध्ययन की ओर भी ध्यान देना चाहिये। भारत के सुनहरे अतीत की गवेषणा और आज के युग से उस समय के विचारों का सामञ्जस्य स्थापित करने का प्रयत्न राष्ट्रीय गौरव की वृद्धि में सहायक होगा, अतीत के गौरव की रक्षा किये बिना कोई भी राष्ट्र संसार में उन्नति नहीं कर सकता। हमारे समाज में शोषक शोषित ऊँच नीच शिक्षित-अशिक्षित की अनेकों गहरी खाइयाँ विद्यमान हैं। जब तक उन्हें पूरी तरह से पाटा न जायगा हमारे समाज और राष्ट्र की गाड़ी आगे न बढ़ सकेगी। वैज्ञानिक और बौद्धिक शक्ति के साथ साथ हमें मानवीय शक्ति के विकास की ओर भी ध्यान देना चाहिये। हमारे देश की अशिक्षित जनता को नवयुवक ही उचित दिशा दिखा सकते हैं। इसलिये उन्हें अपनी बुद्धि के द्वार अवरुद्ध न होने देने चाहिये। आज नये समाज की रचना के लिये नये मानव की आवश्यकता है, विद्यार्थी ही नये समाज के नये मानव हैं। देश की ३५ करोड़ जनता अपनी परेशानियों के लिये आपकी ओर दृष्टि लगाये हुए है। देश का विद्यार्थी-समाज तप-त्याग की उन्नत भावनाओं के साथ आगे बढ़ने का निश्चय करे। राष्ट्र को आगे बढ़ाने वाले अग्रदूत बहुत नहीं हुआ करते, अभी थोड़े ही व्यक्तियों ने भारत के स्वाधीनता संग्राम में विजय प्राप्त की थी, थोड़े विद्यार्थियों का समूह भी राष्ट्र-निर्माण के संघर्ष में राष्ट्र का पथ प्रदर्शन कर सकता है। आवश्यकता है दृढ़ निश्चय के साथ आगे बढ़ने की। विद्यार्थी-समाज से मेरी प्रार्थना है कि वह अपने लिये नहीं तो देश की गरीब और परेशान जनता के उद्धार के लिये आगे बढ़े। आज के युग की आपसे यही माँग है।"

———

वार्षिक मूल्य ८), विदेश में १०), एक प्रति- तीन आने | सम्पादक हरिशङ्कर शर्मा | वर्ष—५३ अङ्क—३८

देश के समाचार

—कांग्रेस में परिवर्तन लाने के लिये कांग्रेसाध्यक्ष श्री नेहरू ने जो प्रयत्न आरम्भ किया है उसमें यद्यपि आचार्य कृपलानी ने स्वयं और उनकी प्रजापार्टी ने कांग्रेस में पुनः सम्मिलित होने से मना कर दिया है तथापि प्रजापार्टी के प्रमुख व्यक्ति श्री किदवई के कांग्रेस में आने की पूर्ण सम्भावना उत्पन्न हो गयी है। कांग्रेस के प्रान्तीय दलों में आन्तरिक एकता स्थापित करने का प्रयत्न आशा जनक स्थिति में पहुंच गया है। पेप्सू संघ के तीनों दलों, मध्य प्रदेश के तीनों और पंजाब के दोनों दलों ने समझौते के सिद्धान्त स्वीकार कर लिये हैं और आशा है शीघ्र ही सब प्रान्तीय दलों में एकता स्थापित हो जायगी। कांग्रेस अध्यक्ष ने प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियों को निर्वाचन में सहि लाओ और अल्पसंख्यकों का ध्यान रखने के आदेश के साथ साथ साम्प्रदायिक विचारों तथा निहित स्वार्थ वाले व्यक्तियों को कांग्रेस का टिकट न दिये जाने का भी आदेश दिया है। साथ ही ऐसे ईमानदार व्यक्तियों को जिनकी ईमानदारी में किसी को सन्देह न हो कांग्रेस का प्रति निधि बनाने के लिये उनके पास जाकर प्रार्थना करने का भी कांग्रेस कमेटियों को आदेश दिया गया है। श्री नेहरू का विचार है कि चाहे कम व्यक्ति हों क्यों न पहुँचे पर कांग्रेस का प्रतिष्ठा योग्य व्यक्तियों के भेजने में ही है। कांग्रेस अधिवेशन के लिये सत्यवती नगर का निर्माण आरम्भ हो गया है। स्वागत समिति का निर्वाचन हो चुका है। इस अवसर पर रेलवे बोर्ड ने स्पेशल ट्रेनें चलाने का भी निश्चय किया है।

—संसद में हिन्दू कोड बिल पर विचार स्थगित कर दिया गया क्योंकि राष्ट्रपति जल्दबाजी में इस बिल को पास करने के विरुद्ध थे। सरकार के उक्त निर्णय से विधिमन्त्री डा० अम्बेडकर अप्रसन्न हैं और उन्होंने मन्त्री मण्डल से त्यागपत्र दे दिया है जो स्वीकार कर लिया गया है। विधि मन्त्री ६ अक्टूबर तक कार्य करते रहेंगे।

—भारतीय संसद के सदस्य श्री मुद्गल के अवैध कार्य के विरुद्ध प्रधान मन्त्री श्री नेहरू ने उन्हें सभा से पृथक् किये जाने का प्रस्ताव किया, श्री मुद्गल ने उत्तर में संसद सदस्यों पर आक्षेप किया और त्यागपत्र उपस्थित किया, परन्तु उनके त्यागपत्र को स्वीकार न कर उनको सदस्यता से पृथक करने का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।

—हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के कार्यालय पर सरकारी ताला पड़ा हुआ है। सम्मेलन अधिकारियों के पारस्परिक संघर्ष से जो संकट पन्न स्थिति पैदा हो हो गई है उसे समाप्त करने के लिये सम्मेलन के हितचिन्तक प्रयत्न रहे हैं।

—२६ जनवरी १९५० से ३१ अगस्त १९५१ तक राष्ट्रपति के पास मृत्युदण्ड से दया के लिये ७८४ प्रार्थना पत्र आये थे राष्ट्रपति ने उनमें से १०० प्रार्थियों की प्रार्थना स्वीकार कर उनकी सजा को आजीवन कारावास में परिणत कर दिया है।

—पटियाला संघ में दहेज निवारक बिल के द्वारा दहेज को रोकने का प्रयत्न किया जा रहा है। दहेज लेने वाले को एक मास का कैद या दहेज के बराबर जुर्माने की सजा दी जायगी। दहेज देनेवाले को भी १००० रु० जुर्माने की सजा दी जायगी।

— संसद में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय और अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय विधेयक पास कर के दोनों विश्वविद्यालयों में धार्मिक शिक्षा को एच्छिक बनाने की व्यवस्था कर दी गयी है।

राजकोट (सौराष्ट्र) में अनावृष्टि के कारण १७ सौ गावों की खड़ी फसल नष्ट हो गयी है।

—बम्बई के केसरी पत्र सम्वाददाता को अफ्रीदी नेताओं ने एक वक्तव्य में बताया है कि काश्मीर पर आक्रमण के लिये रावलपिंडी में लियाकतअली ने चायपार्टी में बुलाकर हमें उकसाया था। हम अब संसार को विश्वास दिलाते हैं कि अब हम काश्मीर पर कभी आक्रमण न करेंगे।

—लंका सरकार ने लंका से बाहर रुपया भेजने के नियम शिथिल कर दिये हैं। अब प्रति मास १०००) तक प्रत्येक व्यक्ति लंका से बाहर भेज सकेगा। लंका से भारत आने वाले यात्री भी एक मास में परमिट के बिना २०००) तक ला सकेंगे।

—आसाम, बम्बई और जम्मू आदि में जो पाकिस्तानी जासूस गिरफ्तार हुए हैं, उनमें से कुछ बम्बई के जल-सेना-केन्द्रों में नकली कैप्टेन और जम्मू में मदारी के रूप में जासूसी का कार्य कर रहे थे।

—पटियाला में साम्यवादियों की आतंकवादी कार्यवाहियाँ बहुत बढ़ गई हैं और वहाँ तेलंगाना क्षेत्र जैसी स्थिति पैदा हो गई है।

—उसमानिया विश्वविद्यालय के उपकुलपति नवाब अलीयार जंग ने प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों के प्रकाशन में विश्वविद्यालय की ओर से रुचि प्रकट की है।

—श्री महावीर त्यागी ने बताया है कि अब तक ६ करोड़ की गुप्त आय प्रकट हो चुकी है, शीघ्र ही और भी प्रकट होने की आशा की जाती है।

—पश्चिमी पंजाब के शरणार्थियों को बसाने में भारत सरकार मार्च ५१ तक २० करोड़ रुपया खर्च कर चुकी है। इस वर्ष इस कार्य में १२ करोड़ व्यय किया जा रहा है।

—आन्ध्र प्रान्त निर्माण की घोषणा १० अक्टूबर तक हो जाने की सम्भावना है।

—भारत और चीन में प्रतिनिधि मण्डलों का विनमय हो रहा है।

—आसाम के उत्तर पूर्वीय सीमान्त में गत वर्ष से भी अधिक भयंकर बाढ़ आ गयी है। सदिया का हवाई अड्डा और पोलाटिकल एजेन्ट का दफ्तर २ फीट पानी में डूबा हुआ है। जनता पेड़ों पर चढ़ कर प्राणों की रक्षा कर रही है फसलें पूर्णतया नष्ट हो चुकी हैं।

—नई दिल्ली के अन्नपूर्णा उपहार गृह में स्त्रियों को वैज्ञानिक पद्धति से भोजन बनाने की शिक्षा दी जायगी। प्रारम्भ में ५० स्त्रियों को शिक्षा देने के निश्चय किया गया है।

—राष्ट्रिय विचारों के सिक्खों के एक प्रतिनिधि मण्डल ने राष्ट्रपति से भेंट करते हुए कहा कि वे पंजाबी भाषाभाषी पृथक् प्रान्त निर्माण के समर्थक नहीं हैं।

——

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत

आर्य ॐ मित्र

आगरा, आश्विन शुक्ल ४ सवत् २००८ वि०, गुरुवार, ता० ४ अक्टूबर १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-सवत् १९७२९४९०५१

गूहता गुह्य तमो वि यात विश्व मत्रिणम ।
ज्योतिष्कर्ता यदुश्मसि । ऋ० १ । ८६ । १०॥

अज्ञान-तिमिर का नाश नित्य करता है
स्वार्थान्ध भावना को सदैव हरता है
जो ज्ञान भानु को उज्ज्वल ज्योति जगाता
वह विज्ञ ज्ञान-गरिमा मय पूजा पाता

'सम्प्रदायवाद' की संक्रामकता

राजनैतिक जगत् में सम्प्रदायवाद की जो व्याख्या की जाती है, वह बड़ी विचित्र है। हिन्दी-हिन्दू, ईश्वर-धर्म, वेद-शास्त्र, सभ्यता-सस्कृति, सदाचार सयम, वर्णाश्रम किसी का भी नाम लीजिये, सम्प्रदायवाद का 'फतवा' मिल जायगा ? कितने ही नेताओं ने तो 'नैतिकता' और 'मानवता' को भी 'सम्प्रदाय' का सज्ञा दे दी है। लोक-सभा या धारा-सभाओं के फर्श पर 'ईश्वर और धर्म' का नाम लेते ही राजनैतिक वृत्त का बल बदलने लगता है। यहाँ तक कि कुछ दिनों से देववाणी सस्कृत और लोकवाणी हिन्दी की चर्चा तक साम्प्रदायिक सीमा में समझी जाती है। साम्प्रदायिकता की संक्रामकता इसी प्रकार बढ़ती गयी तो हमें भय है कि कहीं 'भारत' और 'स्वराज्य' शब्द भी साम्प्रदायिक न समझ लिये जाय, गगा यमुना, हिमालय और विन्ध्याचल को भी साम्प्रदायिक न बता दिया जाय, मथुरा वृंदावन और प्रयाग अयोध्या पर भी सम्प्रदायवाद की छाप न लगने लगे।

आर्यसमाज सम्प्रदायवाद का घोर शत्रु है। मानवता-उद्धार मार्ग और विश्व-बन्धुत्व के कल्याण पथ में जो संकीर्ण और संकुचित मत पन्थ या सम्प्रदाय आये उन सबका महर्षि दयानन्द ने तीव्र प्रतिवाद किया। जहाँ तक हम समझते है, गुरु परम्परागत प्राप्त तर्क शून्य और बुद्धि-वर्द्धन भोली भावनाओं का नाम ही सम्प्रदाय है। इस सम्प्रदायवाद के न हम समर्थक है और न सहायक। हम तो उस महान् धर्म के सेवक, साधक और प्रसारक है जिसमें मनुष्य ही नहीं प्राणिमात्र का कल्याण भावना सन्निहित है। यही सच्चा धर्म है, और इसी को प्राचीन पूज्य ऋषि मुनियों ने माना है। लोक और परलोक सिद्धि कराने वाले धर्म का ही पुण्य प्रेरणा सम्प्रदायवाद के प्रबल विरोधी महर्षि दयानन्द और महात्मा गाधी ने दी है। लोकमान्य तिलक, महामना मालवीय, भारत-केसरी लाजपतराय, विश्व कवि रवीन्द्र, योगिराज अरविन्द आदि सबने ही सच्चे हृदय से ईश्वर और धर्म का समर्थन किया है। परन्तु आज स्वतन्त्र भारत में स्वराज्य सत्ता-सम्पन्न सर्वाधिकारी नेतागण ईश्वर भक्ति और धर्म-चर्चा को कोई महत्व ही नहीं देते। सम्प्रदायवाद कह कर उनसे उसी तरह बिदकते हैं, जिस तरह कभी 'जानबुल' भारतीय भावनाओं से बिदकता रहता था।

विश्व-विभूति महात्मा गाधी के भक्त और अनुरक्त कितने ही नेतागण आज उन्हें अपना गुरु और मार्ग प्रदर्शक मानने में तो अपना गौरव और गर्व अनुभव करते है, परन्तु उनके चरण-चिह्नों पर चलने में परहेज है। महात्माजी की प्यारी ईश्वर-प्रार्थना, गीता-भक्ति सत्यशीलता, अहिंसा-वृत्ति आदि को कोई महत्व नहीं दिया जा रहा। महात्माजी अन्न-वस्त्र बिना तो रह सकते थे, परन्तु ईश्वर-प्रार्थना के बिना जीना उन्हें पसन्द न था। एक ओर इतनी दृढ़ता और दूसरी ओर ईश्वर के नाम तक का बहिष्कार। कैसी विचित्र विषमता और कैसी बेढगी विडम्बना है। यदि विश्व-बन्धुत्व और सार्वभौम मानवता को दृष्टि-पथ में रखकर देखा जाय तो राजनीति से बढ़कर संकीर्ण और संकुचित सम्प्रदायवाद दूसरा नहीं हो सकता। जिस राजनीति की रणचण्डी ने भयंकर नर संहार कराकर संसार को तबाह कर दिया, उसके सबल समर्थक आज सर्वशक्तिमान ईश्वर और विश्व-कल्याणकारी धर्म की अवज्ञा करे, इससे अधिक भयकर अपराध और क्या हो सकता है। हम मानते और जानते है कि ईश्वर और धर्म के नाम लेने या गीत गाने मात्र से कुछ नहीं हो सकता। ईश्वर-भक्त और धर्म-प्रेमी वही व्यक्ति है, जो अपने आचार-विचार को शुद्ध बना और स्वार्थ को तिलाञ्जलि देकर, लोक कल्याण में सलग्न रहता है। आर्यसमाज का काम है कि वह स्वयं सच्चा ईश्वर भक्त और धर्म-निष्ठ बनकर जनता से भी वैसा ही बनने का आग्रह और अनुरोध करें।

आर्य महासम्मेलन और सुझाव

आगामी ३० ३१ अक्टूबर तथा १ नवम्बर को मेरठ में होने वाले आर्यमहासम्मेलन में विचारार्थ सुझावों की एक आँधी सी उठ खड़ी हुई है। पचासों प्रस्ताव और सुझाव 'मित्र' में प्रकाशित हो चुके है। क्या इन सब सुझावों पर उक्त महा सम्मेलन में विचार कर सकना सम्भव होगा ? क्या इन तथा अन्य अनेक प्रस्तावों पर इस महा सम्मेलन में विचार करना आवश्यक है ? क्या यह सम्मेलन आर्यसमाज की सारी समस्याओं को पूरा कर विशुद्ध वैदिक युग स्थापित करने की कामना से किया जा रहा है ? जिसके मन में जो आता है, वही उसे प्रस्ताव और सुझाव के रूप में प्रकाशित करा देता है। मानो आगामी आर्यमहासम्मेलन आर्यसमाज सम्बन्धी सारी उपाधि व्याधियों को दूर करने वाली एक अमोघ औषधि सिद्ध होकर रहेगा। हमारी समझ में जितने अधिक प्रस्ताव तथा सुझाव इस महासम्मेलन में रक्खे जायगे उतनी ही उसकी शक्ति क्षीण और विभक्त होगी हमतो कई बार लिख चुके है कि इस महा सम्मेलन में केवल दो बातों पर विचार होना चाहिये, अर्थात् आर्यसमाज का सघटन-रूपी शरीर सुदृढ़ करने के लिये व्यावहारिक और क्रियात्मक साधन क्या हो सकते है और इस सुदृढ़ शरीर में प्राण-प्रतिष्ठा करने की क्या विधि है ? यदि ये दोनों कार्य सिद्ध हो सके तो निश्चय ही महा सम्मेलन सफल समझा जायगा। संघटन की निर्बलता और शक्ति की क्षीणता में किसी ठोस काम करने की कैसे आशा की जा सकती है। संगठन की कमजोर कमर पर बड़ी-बड़ी योजनाओं के भारी गट्ठर कैसे लादे जा सकते हैं। हमारी समझ मे सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का कर्तव्य है कि वह अपने इस महासम्मेलन के उद्देश्य और लक्ष्य की घोषणा तुरन्त करदे जिससे जनता जान सके कि उसके आयोजन का मुख्य प्रयोजन क्या है यानी वह किस निमित्त किया जा रहा है। सम्मेलन अति समीप आ गया परन्तु अभी उसका उद्देश्य ही अविदित है, यह कम आश्चर्य की बात नहीं।

बिल की बला टली !

जिस हिन्दूकोडबिल के सम्बन्ध मे गताङ्क में कुछ चर्चा की गयी थी, सम्प्रति उसकी बला टल गयी ! २६ सितम्बर को लोक-सभा में प्रधान मन्त्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने घोषणा करदी कि अब हिन्दू कोडबिल पर इस अधिवेशन में विचार नहीं होगा, सरकार ने इसे स्थगित करने का फैसला किया है। बिल के अचानक स्थगित होने का मुख्य कारण यह है कि राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद

उसके सम्बन्धमें जल्दबाजी से कोई निर्णय किये जानेके विरुद्ध हैं। और उन्होंने मन्त्रिमण्डल को एक विस्तृत पत्र लिखकर सूचित किया है कि यदि संसद ने इस बिल पर विचार करना स्थगित न किया तो मैं त्याग-पत्र दे दूँगा। लोक-सभा द्वारा बिल के पास होने पर भी सबसे बड़ा प्रश्न यह था कि बिल पर राष्ट्रपति के हस्ताक्षर नहीं हो सकते थे। माननीय राष्ट्रपति ने इस बेढंगे बिल के विरुद्ध जिस साहस से काम लिया है उसकी मुक्त कंठ से प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते। डा० राजेन्द्रप्रसाद ने भले प्रकार अनुभव किया कि कोडबिल के पास होने से करोड़ों हृदयों की सूक्ष्म धार्मिक भावनाओं को गहरी ठेस पहुँच सकती है। इसीलिये उन्होंने इसके विरुद्ध इतना जोर लगाया। उनका यह कार्य भारतीय संस्कृति का समर्थक और अत्यन्त आदरणीय है। विधि-मन्त्री श्री अम्बेडकर महोदय कितने ही महान् विद्वान् और कानूनी पण्डित सही, परन्तु उन्हें भारतीय भावनाओं से न जाने क्यों चिढ़-सी हो गयी है। कभी-कभी तो वे ऐसी बेढंगी तथा व्यर्थ बातें लिख तथा कह डालते हैं जो कदापि सहृदयता की सूचक नहीं कही जा सकती। राजनीति कितनी ही शुष्क और नीरस सही, परन्तु फिर भी कम से कम भारत में तो उसके साथ सहृदयता तथा सद्भावना का सम्बन्ध रहा ही है। काश कि अम्बेडकर महाशय इस सांस्कृतिक दृष्टिकोण को समझ सकते और उनके हृदय में भारतीय भावनाओं के प्रति आदर होता।

पत्रकार विद्यालय

देश में ज्यों ज्यों कला और व्यवसाय की दृष्टि से पत्रकारिता बढ़ती जाती है, त्यों त्यों पत्रकार-विद्यालयों की आवश्यकता भी अनुभव होती जाती है। अभी तक देश में ऐसा कोई पत्रकार-विद्यालय नहीं स्थापित हुआ जिसको वास्तव में पत्रकार-विद्यालय कहा जा सके। जहाँ तहाँ पत्रकार-कला-शिक्षण-श्रेणियाँ खोलने और उनमें केवल किताबी बातें बताने से काम नहीं चल सकता जब तक इस कला की क्रियात्मक शिक्षा न दी जाय तब तक तोतारटन्त से क्या लाभ! सरकारी विश्व विद्यालय भी इस दिशा में सचेत और सचेष्ट हैं, परन्तु उनके पत्रकार-विद्यालयों में उन्हीं अध्यापकों का प्रवेश हो सकेगा जिनके नाम के पीछे उपाधियों के छल्ले लगे होंगे। भले ही उनका व्यावहारिक ज्ञान शून्य के समान ही क्यों न हो। सरकारी पत्रकार-विद्यालय में पत्रकारिता में सारा जीवन खपा देने वाले 'निरुपाधि नारायण' अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी, बाबूराव पराडकर, लक्ष्मणनारायण गर्दे, बनारसीदास चतुर्वेदी, इन्द्र विद्यावाचस्पति आदि को कौन पूछेगा। हम तो चाहते हैं कि आर्यसमाज के गुरुकुलों में पत्रकार-विद्यालय स्थापित किये जायं और उनमें पत्रकार-कला के सुयोग्य आचार्यों द्वारा स्नातकों तथा अन्य विद्यार्थियों को शिक्षा दिलाई जाय। एक अच्छा पुस्तकालय हो प्रेस और पत्र की भी व्यवस्था की जाय जो व्यावहारिक शिक्षण के लिये बहुत उपयोगी है। कांगड़ी और वृन्दावन गुरुकुलों में यह कार्य बड़ी सरलता तथा सफलता से हो सकता है। केवल क्रियात्मक कल्पना शक्ति की आवश्यकता है। हम वृन्दावन गुरुकुल के संचालकों से कई बार यह चर्चा कर चुके हैं, परन्तु अभी तक यह सुझाव विचार-कोटि के योग्य भी नहीं समझा गया। अस्तु तब नहीं तो अब सही। यदि उक्त दोनों गुरुकुलों में पत्रकार-विद्यालय खोल दिये जायें तो जहाँ देश को शिक्षित और अनुभवी पत्रकार मिलेंगे वहाँ किसी अंश तक कुछ लोगों की व्यावसायिक समस्या की पूर्ति भी हो जायगी फिर ये सम्पादन-कलाकोविद जहाँ काम करेंगे, वहां आर्यसमाज की कुछ न कुछ झलक तो दिखाई देगी ही।

नेपाल में भारतीय संस्कृति

हमारा पड़ोसी नेपाल कितनी ही बातों में भारतीयता का सबल समर्थक और सुदृढ़ पोषक रहा है। वहां शिक्षा के अभाववश कुछ ऐसी अन्ध परम्पराएं, मिथ्या भावनाएँ और निरर्थक रूढ़ियां प्रचलित हो गयी हैं कि उनसे त्राण पाना उसके लिये बहुत ही कठिन है। इन्हीं परम्पराओं और रूढ़ियों के कारण आर्यसमाज आदि प्रगतिशील सुधारक संस्थाओं के प्रचारकों को नेपाल में प्रवेश करने तक का अधिकार नहीं मिल पाया। कभी कोई आर्यविद्वान् नेपाल चला भी गया तो वह वहां की सरकार का कोपभाजन बना! अस्तु अब परिवर्तित परिस्थिति में नेपाल को कुछ चेत हुआ है और उसने अपनी सहिष्णुता को शिथिल कर दूसरों की बात सुनने का भी अभ्यास किया है। फलतः ईसाई और कम्युनिस्ट प्रचारक नेपाल में धड़ाधड़ पहुँच रहे हैं और वहां की जनता को अपने जाल में फँसने के लिये पूरे प्रयत्नशील हैं। ऐसे समय में आवश्यकता है कि आर्य-समाज के प्रचारक नेपाल पहुचें और वहाँ रचनात्मक कार्यों को प्रारम्भ कर नेपालवासियों को वेद शास्त्रों का महत्व समझावें जिससे वे हृदय से हिन्दू धर्म और हिन्दू-संस्कृति को अपनाने में सोत्साह अग्रसर हों। आशा है, आर्यसमाज की शिरोमणि सभायें इस महत्व-पूर्ण कार्य के लिये कुछ सुयोग्य और सुलझे हुए विद्वान् उपदेशकों को नेपाल भेजने का शीघ्र उद्योग करेंगी। ऐसे आवश्यक प्रश्नों को वर्षों तक खटाई में डाल रखने से बड़ी हित हानि हो सकती है।

महर्षि के पत्र

६ सितम्बर के 'आर्यमित्र' में काशी निवासी श्री प० रामनारायण मिश्र का एक लेख श्री श्यामजी कृष्ण वर्माके सम्बन्ध में प्रकाशित हुआ है। मिश्रजी ने अपनी योरुप यात्रा के समय जेनोवा में श्यामजी से हुई अपनी भेंटका उल्लेख करते हुए लिखा है कि श्यामजी ने महर्षिके अनेक पत्र तथा अन्य सामग्री उन्हें दिखायी थी और वे चाहते थे कि आर्य-समाज की ओर से कोई व्यक्ति उन्हें मिले तो महर्षि सम्बन्धी बहुत-सी उपयोगी सामग्री संकलित हो सकती है। श्यामजी के उक्त कथन पर तब किसी ने ध्यान नहीं दिया और अब वह सारी सामग्री अप्राप्य सी हो गयी है। महर्षि के मानस-पुत्र श्यामजी का यह अमूल्य संग्रह यदि किसी प्रकार प्राप्त हो सकता तो बहुत बड़ा काम हो। विदेशों में ही नहीं देश में भी महर्षि सम्बन्धी पत्रों की तत्परता से खोज की जानी चाहिये। यदि सार्वदेशिक अथवा प्रान्तीय आर्यप्रतिनिधि सभाएं 'महर्षि अनुसन्धान-विभाग" स्थापित कर कुछ कार्य कर सकें तो आशा है कि महर्षि सम्बन्धी बहुत-सी नयी और वास्तविक घटनाओं और उनके दृष्टि कोणों का पता लग सकेगा। थोड़े समय बाद तो इस प्रकार की सामग्री का प्राप्त होना असम्भव ही हो जायगा। अतः इस ओर शीघ्र ध्यान देने की आवश्यकता है।

राजगुरुजी की प्रचार-यात्रा

आर्यसमाज के त्यागी तपस्वी आर्य विद्वान् राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री सदैव ही धर्म-प्रचार में संलग्न रहते हैं। उनके जीवन का एक मात्र लक्ष्य वैदिक धर्मप्रचार और आर्यसमाज सेवा ही है। रात-दिन उन्हें यही धुन है। निश्चय ही वे महान् गुरु के महान् शिष्य हैं। आर्य महासम्मेलन के लिये तो राजगुरुजी बहुत ही बड़ा प्रयत्न और पुरुषार्थ कर रहे हैं। हाल ही में आप अमेठी गये थे वहाँ आपका विद्वत्ता पूर्ण व्याख्यान हुआ और युवराज श्री रणञ्जयसिंहजी ने आपको एक हजार एक रुपया भेंट किया। अन्य नगरों में भी शास्त्री-का ऐसा ही आदर हुआ तथा हो रहा है। परमात्मा राजगुरुजी को उनके महान उद्योग में सफलता प्रदान करे।

यादवेन्दुजी का देहावसान

अत्यन्त दुःख से लिखना पड़ता है कि आगरा नगर के नवयुवक साहित्यकार श्रीयुत रामनारायण यादवेन्दु बी० ए०, एल० एल० बी० का लम्बी बीमारी के बाद देहरादून में देहान्त होगया। यादवेन्दुजी गम्भीर और ठोस साहित्यकार थे, आपने राजनीति, संस्कृति और नागरिक शास्त्र सम्बन्धी अनेक पुस्तकें लिखी हैं। हिन्दी के प्रसिद्ध पत्र पत्रिकाओं में भी आप लिखते रहते थे। जाटव जाति में जन्म लेकर आपने अपने पुरुषार्थ और बाहु-बल द्वारा शैक्षणिक और सांस्कृतिक दृष्टि से अपने को काफी ऊंचा उठाया था। आप आर्य-समाज और वैदिक धर्म में बड़ी श्रद्धा रखते थे, महर्षि दयानन्द के परम भक्त थे। यादवेन्दुजी के दुःखददेहावसान से हम बहुत दुखी हैं, परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति और संतप्त परिवार को धैर्य प्रदान करे, यही हमारी कामना है।

चयनिका — अध्यात्म-धारा

[मधुप]

भारत के युवकों से

मैं बहुत वर्षों तक जी चुका हूँ, और मैंने अपना काम किया है। मैं अपने जीवन की सान्ध्य-वेला में पहुँच चुका हूँ। अब शीघ्र ही देश को आगे ले जाने का बोझ आज के नवयुवकों पर आ पड़ेगा मैं चाहता हूँ कि भारत के नवयुवक साफ-साफ समझ लें कि उन्हें देश किधर ले जाना होगा। देश के विकास के लिये उचित सामाजिक विचार-धारा का होना आवश्यक है, वह देश के जीवन उसकी आदतों, कार्य-प्रणालियों, उत्पादन तथा दूसरी बातों से निर्मित हो सकती है। भारत का निर्माण विभिन्न जातियों, रीति रिवाजों, संस्कृतियों तथा भाषाओं के लोगों द्वारा हुआ है। उपर्युक्त विविधताओं में भी हम एक होकर रहे हैं, और आगे बढ़े हैं। भावी भारत का निर्माण इसी महान् भावना को लेकर किया जाना चाहिये।

—श्री नेहरू

यथार्थ जीवन

मुझे धन नहीं चाहिये, न मुझे मन्दिर बनवाना है न मकान। मुझे केवल जमीन चाहिये, वह भी अपने लिये नहीं, अपितु भूमिविहीनों के लिये। ईश्वर ने आप लोगों को हाथ दिये हैं जिसका अर्थ है आपको दान देना चाहिये। जीवन छोटा है और मानव-जीवन में ही यह सम्भव है कि हम सत्कर्मों द्वारा आवागमन के बन्धन से मुक्त हो सकें। इसलिये हमें चाहिये कि हम जीवन का प्रत्येक क्षण दूसरों की भलाई में तथा अपने पड़ोसियों की सेवा में लगा दें और समाज के प्रति अपनी जिम्मेवारी को समझें। एकाकी जीवन पशु के जीवन से श्रेष्ठ नहीं है, समाज के लिये जीना ही यथार्थ जीवन है।

—आचार्य विनोबा भावे

हमारे कायदे-कानून

आज भारत में धार्मिक और जातीय भेद-भाव जोरों पर है, निरक्षरता भी बहुत व्यापक है, हम सामान्यतः गरीब हैं, और गरीबी के साथ साथ अधिक खर्चीले रहन-सहन की माँग करने वाली एक बाहर से आयी संस्कृति के प्रलोभनों में फँस सकते हैं। हमारा देश पूर्व या पश्चिम के अन्य राष्ट्रों जैसा नहीं है। हम न पौरस्त्य हैं और न पाश्चात्य, इसलिये हमारे कायदे-कानून भी हमारे अपने ही होने चाहिये।

—श्री राजगोपालाचार्य

गुरुदेव का सन्देश

गुरुदेव द्वारा प्रयुक्त शान्तं, शिवं, अद्वैतम् के तीन शब्दों में हमें ईश्वर का वह स्वरूप मिलता है जो जाति, धर्म अथवा विश्वास के सारे संकीर्ण प्रतिबन्धों से बहुत ऊपर है। अरबी में अद्वैत का अर्थ है जिसके बराबर कोई दूसरा नहीं है एकेश्वरवाद, का सर्वोच्च सिद्धान्त यही है। उनका दूसरा सन्देश है, 'यत्रविश्वं भवत्येक नीडम्' अर्थात् जहाँ सम्पूर्ण विश्व एक घर के समान हो गया है। मानवता के विषय में इससे ऊँचा भाव नहीं हो सकता। मानवता की एकता के विश्वास से परिपूर्ण इस उद्घोषणा को जीवन में क्रियान्वित करना चाहिये।

—मौलाना अब्दुलकलाम आजाद

हमारी विदेश-नीति

भारत एक वैधानिक लोकतन्त्र और धर्म निरपेक्ष राज्य है, हमारी विदेश-नीति संयुक्तराष्ट्र-समर्थक और स्वतन्त्र राष्ट्र-समर्थक है। हम अपने लोकतन्त्र की किसी भी बाह्य या आन्तरिक आक्रमण से रक्षा करना चाहते हैं। हम स्वतन्त्रता, समानता, न्याय और विश्व शान्ति चाहने वालों के साथ हैं, हम विश्व-शान्ति की सुरक्षा के लिये प्रत्येक प्रकार के साम्राज्यवाद के विरोधी हैं, चाहे वह आर्थिक हो या अन्य किसी प्रकार का, हमारी नीति ही विश्व में शान्ति स्थापित कर सकती है।

—श्री विजयलक्ष्मी पण्डित

कल्याण-पथ

विश्वकर्मा विमना आद्विहाया
धाता विधाता परमोत संदृक्।
तेषामिष्टानि समिषा मदन्ति
यत्रा सप्तऋषीन् पर एकमाहुः॥

यजु० १७।२६॥

इस संसार में सर्वव्यापक, निर्विकार, विचित्र जगत् का उत्पादक और धारण कर्ता ईश्वर है और वही सर्वोत्कृष्ट है। जो उस ईश्वर में भक्ति और विश्वास रखते हैं, उन्हें ही सब प्रकार के अभीष्ट सुख प्राप्त होते हैं और जो लोग इसके विपरीत आचरण करते हैं, उन्हें कभी सुख प्राप्त नहीं होता। अतः प्रत्येक मनुष्य को ईश्वर की उपासना में रत रहना चाहिये वेद मन्त्र के उपर्युक्त आशय को हम सब अच्छी तरह जानते और मानते हैं। परन्तु जीव की अहंकार भावना के वशीभूत होकर ईश्वर की सत्ता अस्वीकार किया करते हैं। सांसारिक वासनाओं की पूर्ति में आसक्त होने के कारण उस सर्वशक्तिमान का हमें ध्यान नहीं रहता और फलस्वरूप हमारे दुःख बढ़ते जाते हैं। पारिवारिक जीवन के क्षेत्र से लेकर राष्ट्र और विश्व के महान क्षेत्र तक सर्वत्र स्वार्थ और दम्भ का बोलबाला है। आज राष्ट्र का जीवन भ्रष्टाचार के बोझ से पिसा जा रहा है, कोई भी व्यक्ति अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिये अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ की चिन्ता नहीं करता। हमारे राष्ट्र की नव प्राप्त स्वाधीनता भ्रष्टाचार के प्रबल झञ्झावात से खतरे में पड़ गई है। व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के जीवन में प्रगति हो, इसके लिये आवश्यक है कि राष्ट्र का प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करे और पाप कर्म से अपने को बचावे। जब तक हमारी शिक्षा-पद्धति, हमारे पारिवारिक जीवन और बड़े लोगों के व्यक्तिगत जीवन में नैतिकता के महान् आदर्श सन्निहित न होंगे और हमारे अन्दर ईश्वर से भय का भाव जाग्रत् न होगा तब तक हमारा सुधार नहीं हो सकता। इसलिये आज राष्ट्र की सम्पूर्ण शक्ति चरित्र-निर्माण के महत्त्वपूर्ण कार्य में लगनी चाहिये।

जब तक मानव का मिथ्याहंकार समाप्त न होगा, तब तक उसे कभी सुख नहीं मिल सकता। जीवन में सुख प्राप्त हो, इसके लिये आत्मदमन के सिद्धान्त पर चलना होगा। और यदि अनेकों बार ठोकरें खाने के बाद भी हम अपनी दशा नहीं सुधारेंगे तो समझना चाहिये कि हम मनुष्य जीवन की महत्ता को अनुभव नहीं करते। मनुष्य का चोला संसार में अमूल्य निधि के रूप में हमें प्राप्त है, जो नरतन के महत्व को नहीं समझते, उनके जीवन को धिक्कार है। हमारे शुभ कर्मों से हमें यह मानव शरीर प्राप्त हुआ है, इसके गौरव की रक्षा के लिये हमें ईश्वर भक्ति की भावना को विकसित करना होगा। सर्व शक्तिमान ईश्वर अपने भक्तों पर सदा कृपा करते हैं। जो ईश्वर-भक्त बनेगा उसे कभी कष्ट नहीं पहुँचेगा। उसकी आत्मा सदा प्रसन्न रहेगी और वह अपना जीवन सफल बना सकेगा। जब हमारे जीवन की वर्तमान भौतिकवादी दिशा अध्यात्मवाद की ओर बढ़ेगी तभी हम वास्तविक सुख को पा सकेंगे और रसो वै सः के अनुपम ब्रह्मानन्द-सुख में लीन हो सकेंगे।

—मनीषी

हिन्दी का रूप

मैं हिन्दी को सरल बनाने के पक्ष में हूँ और चाहता हूँ कि उसने उर्दू, फारसी, अंग्रेजी आदि के जो शब्द अपना लिये हैं वे न निकाले जायं। अंग्रेजी ने भी यूनानी और लैटिन भाषाओं के बहुत से शब्द अपनाये हैं, हिन्दी में भी टैक्नीकल शब्दों के नये कोष बनाने में उपर्युक्त दृष्टि से काम लिया जाना चाहिये।

—राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन

महिला-मण्डल

अन्धविश्वास

श्री सुषमा पाठक, शास्त्रिणी

जब मनुष्य की तर्कना शक्ति कुण्ठित हो जाती है, तब उसमें धीरे-धीरे अन्धविश्वास की भावनाएँ घर करने लगती है। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अन्धविश्वास शीघ्र और अधिक स्थान प्राप्त कर लेते है। अन्धविश्वास का प्रभाव संक्रामक व्याधि की भांति शीघ्र ही फैल जाता है और बिना बुद्धि पर जोर दिये ही लोग उनको मानना आरम्भ कर देते है। अन्धविश्वास के विचारों से समाज का बहुत हानि होने की सम्भावना रहती है। महिला-समाज में प्रचलित अन्धविश्वासों में से कुछ निम्न प्रकार है—बिल्ला का रोना मृत्यु आगम का सूचक है, किसी कार्य के आरम्भ में किसी का छींक देना, बिल्ली का रास्ता काट जाना, छिपकली का गिरना कार्य की असफलता की सूचना देते है। किसी शुभ कार्य के आरम्भ में धोबी की मैले कपड़ों की गठरी अथवा जल-पूर्ण कुम्भ का दर्शन शुभ फल दायक होता है, (शुभ कार्यों में द्वार को मंगल घट से शोभित करने का यही अभिप्राय है) बच्चों की बीमारियाँ टोने टोटकों के द्वारा अवश्य नष्ट हो जाती हैं, बच्चों पर दूसरों की नजर लग जाती है अतः बच्चों को हरेक के सामने नहीं लाना चाहिये, यदि किसी से तेल गिर जाय तो वह शुभ-सूचक होता है विशेषकर शनिवार के दिन, क्योंकि सनीचर देवता प्रसन्न होकर पिण्ड छोड़ जाते हैं। कौए का बोलना अतिथि के आगमन की सूचना देता है, दक्षिण में सूर्योदय से पूर्व ही गृह द्वार को लीप-पोत कर साफ कर देना आवश्यक माना जाता है। यदि सूर्योदय के समय द्वार गन्दा होगा तो लक्ष्मी उस गृह में कभी न आयगी। शुक्रवार के दिन लक्ष्मी आती है यदि उस दिन दीपक जलने में देर हो जाय या किसी के हाथ से दूध गिर जाय अथवा घर का कोई प्राणी किसी कारण रो पड़े तो बहुत बड़ा अपशकुन माना जाता है और लक्ष्मी लौट जाती है, मद्रास मे भिखारी को भिक्षा देते समय दोनों पैर देहलीज से बाहर रखना आवश्यक समझा जाता है। सीताजी ने रावण को भिक्षा देते समय दोनो पैर अन्दर ही रक्खे थे यही कारण था कि सीताजी पर घोर आपत्ति आयी थी, इनके अतिरिक्त विवाह आदि अवसरों पर भी स्त्रियाँ विविध प्रकार के अन्धविश्वासों का सहारा लेती हैं। क्या अन्धविश्वासों में कोई वास्तविक सत्यता है? क्या इनसे हमारे जीवन की प्रगति में कोई बाधा नहीं पड़ती? इत्यादि प्रश्न हैं जिन्हे गम्भीरता से सोचना चाहिये। अन्ध विश्वास शुभ हो या अशुभ दोनों ही जीवन की प्रगति में बाधक हैं, जहाँ अशुभ मानी जाने वाली घटनाएं हमारे हृदय में निराशा, उत्साहहीनता की भावना को जन्म देती हैं, वहाँ शुभ मानी जाने वाली घटनाएँ भी हमारे मन में मिथ्याभिमान और सफलता की झूठी आशा को जन्म देती है, इसलिये महिलाओं का कर्तव्य हैं कि वे अन्धविश्वास की हानिप्रद परम्पराओं को त्याग दें। यदि महिलाएँ अन्धविश्वासों को तिलांजलि देदें तो परिवार के अन्य सदस्यों में स्वयं परिवर्तन आ जायगा। समाज-सुधार की प्रगति के लिये आवश्यक है कि हमारी मातायें और बहनें शीघ्र ही अन्धविश्वासों से मुक्त हों, जीवन का एक ही लक्ष्य होना चाहिये प्रगति करना कर्तव्य करने वाले को उसका फल अवश्य प्राप्त होगा। इसलिये शकुन-अशकुन के बन्धनों को जितनी शीघ्रता से समाप्त किया जायगा उतना ही समाज को लाभ होगा। निर्भय और साहसी युवकों के निर्माण का दायित्व माताओं पर ही है अतः माताओं को अपनी सन्तानें को ऐसा बनाने की चेष्टा में संलग्न रहना चाहिये कि वे किसी प्रकार की बाधा से भयभीत न हों और अन्धविश्वासों को छोड़ ईश्वर पर विश्वास करते हुए अपने कर्तव्य मार्ग पर आगे बढ़ने वाले बनें।

—

क्या आप जानते हैं?

भूकम्प की भविष्य वाणी

इटली के भूकम्प-विज्ञान-वेत्ता श्री रफायल बेन्दान्दी भूकम्प के सम्बन्ध में भविष्यवाणी कर सकते हैं। २ सितम्बर को इटली में आये भूकम्प की सूचना उन्होंने दस दिन पूर्व दे दी थी। उनका विश्वास है कि भूकम्प अचानक नहीं होता वह भी ज्वार-भाटे की भांति नियमित होता है।

बौनों का सिरताज

श्रीरामपुर में तैलगाना का एक बीस वर्षीय १८ इंच ऊँचा बालक है जो दुनिया में सबसे छोटा आदमी बताया जाता है। इस बौने ने एक दिन बाजार में चल कर १५ मिनट में १५ रु० कमाये, यह १६ इंची बौना ६ फुट से अधिक ऊंचाई से कूद सकता है।

नकली आगाखां

वियटनाम निवासी डा० दो हुतथिन डीलडौल और सूरत शकल में बिलकुल आगाखा प्रतीत होते हैं, जब वे पेरिस गये तब बहुत-से फ्रांसीसियों ने उन्हे आगाखां समझने के कारण झुक-झुक कर सलाम किया और बख्शीश के लिये हाथ फैलाये, डा० थिन के सम्बन्ध में आगाखां के मिथ्याभ्रम का उन्हे पता तब लगता जब वे बख्शीश न देकर आगे बढ़ जाते।

समुद्र के भीतर टैलीवीजन का प्रयोग

अभी तक टैलीवीजन का प्रयोग साधारणतया मनुष्यों के पारस्परिक व्यवहार तक ही सीमित था परन्तु अब पानी के अन्दर भी उसका प्रयोग सफल सिद्ध हुआ है। ब्रिटिश नौ सेना की एक पनडुब्बी समुद्र में डूब गयी थी टैलीवीजन की सहायता से २५८ फुट नीचे से निकाल ली गयी है।

डेढ़ करोड़ का हीरा

संसार के प्रसिद्ध धनपति हैदराबाद के निजाम के पास १५० कैरेट का याकूब नामक हीरा है, जिसका मूल्य डेढ़ करोड़ रुपया है। पिछले दिनों यह हीरा बिक्री के लिये अमरीका भेजा गया था पर वहाँ उसका उचित मूल्य प्राप्त न हो सका।

मानव-इतिहास की नयी खोज

उत्तरी ईरान में अनुसन्धान कार्य में संलग्न अमरीकी मानव-विज्ञान वेत्ताओं को ७५००० वर्ष प्राचीन तीन नर कंकाल मिले हैं। इन नर कंकालों की वर्तमान मानव से समता ने वैज्ञानिकों को को विकासवादी धारणाओं में परिवर्तन करने के लिये बाध्य कर दिया है।

तीन हजार हाजियों की मौत

मक्का में हज यात्रा के लिये गये हुए तीस हजार यात्रियों में से ३ हजार यात्री गर्मी और हृदयगति बन्द हो जाने के कारण मर गये। मक्का में गर्मी इतनी तेज पड़ती है कि बाहर के मनुष्य उसे कठिनता से सहन कर सकते हैं। हर ग्रीष्म ऋतु में वहाँ हर चीज जलती और पिघलती नजर आती है।

रहस्यमय व्यक्ति

२२ सितम्बर को बम्बई की खुफिया पुलिस के सुपरिएटेन्डेएट के कमरे में एक रहस्यमय व्यक्ति अचानक पहुँचा और ७४५००० रु० के नोटों का बण्डल छोड़कर गायब हो गया। थोड़ी देर तक नौकर ने उस व्यक्ति के लौटने की प्रतीक्षा की पर जब वह नहीं आया तब उस बण्डल को खोला गया और उक्त नोटों का पता चला।

अन्धों के लिये कार्य

अमरीकी शिक्षा-विभाग का विश्वास है कि अब अन्धे व्यक्ति २०० से अधिक पेशों में सफलता पूर्वक कार्य कर सकते हैं।

अमरीकी परिवार की बचत

अमरीका से ४४० लाख परिवारों की जाँच करने पर ज्ञात हुआ कि उनकी नकद धन को छोड़कर जीवन बीमा तथा अन्य प्रकार की दीर्घकालीन बचत ४०० डालर हैं।

—

सामयिक समस्याएँ

आर्यजनों के सामने प्रश्न

श्री प० इन्द्र विद्यावाचस्पति

पण्डितजी ने हालही में राजस्थान आर्य सम्मेलन जयपुर में जो महत्वपूर्ण भाषण दिया उसका कुछ अंश निम्न प्रकार है:—

देश की वर्तमान दशा से असन्तुष्ट होकर आर्यजन मनमें सोचते और आपस में पूछते हैं कि क्या देश के वर्तमान रोग का कोई इलाज नहीं? यदि है तो क्या आर्यसमाज को इस विषय में सर्वथा अकर्मण्य रहना चाहिये? आर्यजनों का ऐसा सोचना स्वाभाविक है। देश के स्वाधीनता संग्राम के यज्ञ में उन्होंने भी भरपूर आहुतियाँ दी हैं। फिर क्या कारण है कि स्वाधीनता प्राप्त होने के पश्चात् देश की जो दुर्दशा हुई है, उसमें वे विचलित न हों? और उसका कोई उपाय न सोचें?

देश में स्वाधीनता हो जाने पर आज चार वर्षों के अनुभव के पश्चात् जो निराशा उत्पन्न हो गई है, उसके दो कारण हैं। एक तो बाह्य कारण हैं—जैसे अन्तर्राष्ट्रिय परिस्थिति, विभाजन, कोरिया युद्ध आदि। दूसरा कारण आन्तरिक है। वह शासन की मशीन को चलाने वाले मानवों की योग्यता से सम्बन्ध रखता है। मैं इन दोनों प्रकार के कारणों में पहले की अपेक्षा दूसरी कोटि के कारणों को ही अधिक महत्व देता हूँ। मेरी सम्मति में वर्तमान शासन के प्रति जो निराशा का भाव है, उसके मुख्य कारण आन्तरिक और मानवीय हैं। वे निम्न लिखित हैं—

(१) हमारे समाज में असमानता और ऊंच नीच के भाव पूर्ववत् विद्यमान हैं, इस कारण असमानता पर आश्रित राज्य दृढ़ नहीं रह सकता (२) हमारे अन्दर कर्तव्य-धर्म की भावना निर्बल और अधिकारों की भावना प्रबल हो गई है, इससे कार्य में न वह गहराई रही है, और न सत्यता। (३) व्यवहार में पड़कर हमारा नैतिक-बल और चरित्र-बल बहुत कुछ दिवालिया सिद्ध हुआ है। क्या शासक (मन्त्री) क्या विधान-निर्माता और क्या सरकारी कर्मचारी सभी में नैतिक बल या सत्य बल का विरलापन पाया गया है। (४) शिक्षा का अभाव। आर्यसमाज इस दिशा में उपयोगी सिद्ध हो सकता है। वस्तुतः वह स्वतंत्र भारत का राष्ट्रिय धर्म हो सकता है। यदि हम संकुचित साम्प्रदायिक दृष्टि को छोड़कर विशाल धार्मिक दृष्टि से सब घटनाओं को देखें। हमारे सामने कार्य (१) चरित्र निर्माण नैतिकता धार्मिकता (२) सामाजिक असमानताओं का नाश (३) शिक्षा-प्रचार (४) अधिकार की अपेक्षा कर्तव्य की भावना प्रबल होना। महर्षि ने आर्यसमाज के जिम्मे मनुष्य निर्माण का ही काम किया था।

आर्यसमाज भावी चुनाव में तीन प्रकार से भाग ले सकता है। (१) आर्यसमाज चुनाव लड़े (२) आर्यसमाजी नागरिक तौर पर चुनाव लड़ें और आर्यसमाजी उनका समर्थन करें। (३) आर्यसमाज योग्य उम्मेदवारों को सहायता दे।

पहला उपाय असामयिक और हानिकारक है। दूसरे और तीसरे उपयोगी और लाभदायक हैं। चुनाव में जिन व्यक्तियों का समर्थन किया जा सकता है, उनमें निम्न लिखित गुणों का होना आवश्यक है (क) आस्तिक और सदाचारी हों। (ख) भारतीयता में श्रद्धा रखनेवाला हो। (ग) देश सेवक हो और (घ) नियमनिर्माण तथा शासन की योग्यता रखते हों। आशा है आर्य जन गम्भीरता के साथ मौजूदा समस्या पर विचार करेंगे।

——

सिंहावलोकन

नेपाल में आर्यसमाज

श्री रामानन्द शास्त्री, उपप्रधान, बिहार आ० प्र० नि० सभा

हिमालय की गोदी में एक करोड़ जन संख्या वाले नेपाल देश का हमारे लिये सामरिक और आर्थिक महत्व तो सुविदित ही है परन्तु नेपाल का सांस्कृतिक महत्व भी कुछ कम नहीं है। राजनैतिक क्रान्तियों की छत्र-च्छाया में जहाँ राज्य बनते और बिगड़ते हैं, वहाँ संस्कृतियाँ भी परिवर्तित होने लगती हैं। नेपाल की विगत क्रान्ति ने राणाशाही के किले को भूमिसात् करके स्वतन्त्रता के लिये द्वार उन्मुक्त कर दिये हैं। इस अवसर पर जहाँ भारतीयों को अपनी संस्कृति का प्रचार और सुधार करने का अवसर मिला है, वहाँ ईसाई मिशनरियों के लिये भी सुविधायें हो गयी हैं। पटना के रोमन-कथोलिक चर्च के बिशप फादर मोरान स्वदल बल नेपाल पहुंच गये हैं और उन्होंने गोदावरी नामक महत्वपूर्ण स्थान में सेन्ट जेवियर्स स्कूल भी स्थापित कर दिया है, जिसमें वहाँ के धनी और प्रतिष्ठित घरानों के बच्चे पढ़ने आते हैं। इस प्रकार नेपाल की भावी पीढ़ी में ईसाई सभ्यता के बीज बोने का कार्य बड़ी संलग्नता से आरम्भ हो गया है। तिब्बत में साम्यवादी सरकार की स्थापना का प्रभाव भी भविष्य में नेपाल की संस्कृति पर प्रभाव डालेगा इसमें किसी को सन्देह नहीं होना चाहिये। इस प्रकार ईसाइयत और साम्यवादी विचार-धाराओं की कैंची में नेपाल में हमारी सभ्यता खतरे में पड़ी हुई है।

आर्यसमाज के लिये नेपाल में कार्य करने का इस समय अच्छा अवसर है, आर्यसमाज ही नेपाल के सांस्कृतिक-संघर्ष में विजय प्राप्त कर सकता है। कुछ उत्साही व्यक्तियों ने नेपाल में आर्य समाज की स्थापना के प्रति रुचि प्रकट की है, वीर गति प्राप्त शुक्रराज शास्त्री के भाई वाक्यपतिराज शास्त्री के अथक प्रयत्न से काठमाण्डू और वीरगंज में आर्यसमाज स्थापित भी हो गयी है, और निकट भविष्य में हिटौरा, अमलेखगंज, भीमफेदी और विराटनगर में भी स्थापित होने की आशा है।

नेपाल में आर्यसमाजों की स्थापना मात्र से ही आर्यसमाज का काम आगे नहीं बढ़ेगा आवश्यकता इस बात की है कि नेपाल में योग्य कार्यकर्ता पहुंचें। नये स्थापित समाज अभी इतने समर्थ नहीं हैं कि वेतनभोगी उपदेशक और प्रचारक रख सकें। बिहार प्रान्तीय आ० प्र० नि० सभा ने कुछ उपदेशक भेजे हैं, परन्तु यह कार्य सम्पूर्ण आर्यजगत् के द्वारा सम्पन्न हो तभी सफल हो सकता है। नेपाल में प्रचार के नये तरीकों को अपनाना चाहिये। एक प्रचारक पांच-सात गांवों के केन्द्र में एक स्कूल स्थापित करके कार्य करें तो शीघ्र प्रचार होगा। आस-पास की जनता केन्द्र से ज्ञान-ज्योति पाती रहेगी, अध्यापन से समय निकाल कर समय समय पर गांवों में प्रचार भी किया जा सकेगा। आर्यसमाज में बहुत से सन्यासी हैं, यदि उनमें से कुछ नेपाल आकर कार्य करें तो बहुत सफलता मिल सकती है। यद्यपि नेपाल की साधारण जनता निर्धन है, तथापि वहाँ कार्य करने वालों को भोजन-व्यवस्था की ओर से निश्चिन्त रहना चाहिये, खाद्य सामग्री की बहुलता और नेपालियों की अतिथि-सत्कार-भावना के कारण उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न होगा। आशा है नेपाल में प्रचार के कार्यक्षेत्र को ध्यान में रखकर सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों का ध्यान इस महत्वपूर्ण दिशा की ओर अवश्य ही आकृष्ट होगा और नेपाल में आर्यसमाज का कार्य शीघ्र ही आगे बढ़ेगा।

——

सुझाव और सम्मतियाँ

गुरुकुल-निधि स्थापित हो

'आर्यमित्र' में गुरुकुल बृन्दावन सम्बन्धी समय-समय पर प्रकाशित लेख पढ़ कर मुझे अनुभव हुआ कि प्रत्येक आर्य भाई को उक्त संस्था के गौरव की रक्षा के लिये प्रयत्न करना चाहिये। १३-सितम्बर के अंक में श्री स्नातक भूदेव शास्त्री ने जो सुझाव दिये हैं उन पर गम्भीरता से विचार किया जाना चाहिये। प्रत्येक आर्य समाज से ४०) गुरुकुल को मिलने के उनके प्रस्ताव को क्रियात्मक रूप देने के लिये मेरा सुझाव है, कि यदि चार आना वेद-प्रचार फण्ड की भांति बृन्दावन गुरुकुल सहायता-निधि में एक रुपया देना प्रत्येक आर्य सदस्य के लिये अनिवार्य कर दिया जाय और जो समाज उक्त निधि सभा में प्रतिवर्ष दे उसी को प्रतिनिधित्व का अधिकार दिया जाय। सम्भवतः पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा में इसी प्रकार गुरुकुल-निधि का नियम प्रचलित है। इस निधि की स्थापना से काफी धन समग्रह हो जायगा और गुरुकुल का काम सरलतासे चलने लगेगा। ३१ दिसम्बर को समाप्त होने वाले वर्ष से ही यह नियम प्रचलित किया जा सके तो अधिक अच्छा हो। आशा है सभा के अधिकारी इस सुझाव पर विचार करेंगे।

—रामसंजीवनलाल,
बाराबंकी

आर्य युवकों में प्रचार

आर्यसमाज में तरुण रक्त की कमी को प्रत्येक विचारशील आर्य अनुभव करता है, परन्तु इस दिशा में कोई सक्रिय कार्य नहीं हो रहा। आर्य शिक्षा-संस्थाओं में युवकों को आर्य बनाने की ओर पूर्ण ध्यान दिया जाय तो शीघ्र सफलता मिल सकती है। इस सम्बन्ध में मेरे सुझाव निम्न प्रकार हैं—१-सर्व प्रथम सम्पूर्ण आर्य शिक्षा संस्थाओं का केन्द्रीयकरण किया जाय। इस कार्य की सफलता के लिये 'दयानन्द शिक्षा-समिति' की स्थापना की जाय, २-एक 'दयानन्द प्रकाशन गृह' स्थापित हो जो युवकों में प्रचारार्थ हिन्दी और अंग्रेजी में साहित्य प्रकाशित करे। ३-शिक्षा-संस्थाओं में आर्य सिद्धान्तों पर नियमित रूप से भाषणों की व्यवस्था की जाय। ४-आर्यकुमार-परिषद् और आर्यवीर दल की प्रत्येक संस्था में स्थापना हो तथा आर्यकुमार-परिषद् की परीक्षाओं को अधिकाधिक प्रोत्साहन दिया जाय। ५-आर्य संस्थाओं में आर्य विचारों के व्यक्तियों की ही नियुक्तियाँ की जाय। ६-विद्यार्थियों को पारितोषिकों में कप, शील्ड आदि न देकर आर्य सिद्धान्तों की ही पुस्तकें दी जायें। ७-युवकों में सामाजिक रुचि जाग्रत करने के लिये बाढ़ पीड़ितों की सहायता में, अनाथ-अबलाओं के उद्धार कार्य में, निरक्षरता-निवारण में, मेलों इत्यादि में उन्हें स्वयसेवक रूप में भेजा जाय, अध्यापक-वर्ग भी सक्रिय भागले तो बालकों में शीघ्र झुकाव होगा। ८-प्रत्येक आर्य शिक्षा-संस्था में 'धार्मिक-निधि' स्थापित हो जिसमें विद्यार्थियों से चन्दा लिया जाय। उपर्युक्त प्रोग्राम के अनुसार यदि युवकों में सामूहिक रूप से कार्य किया जाय तो बहुत शीघ्र सफलता मिलेगी और भविष्य में आर्यसमाज सुदृढ़ हाथों में पहुँच सकेगा। आशा है मेरठ में आर्य-नेता आर्यसमाज में युवकों के अभाव की समस्या पर गम्भीरता से विचार करेंगे।

—जनार्दनप्रसाद विद्यार्थी,
गोरखपुर

हमारा शिक्षाक्रम

आर्यसमाज के कार्यक्रमों में शिक्षा का कार्य ही इस समय मुख्य रूप से चल रहा है, परन्तु प्रश्न तो यह है कि हमारी शिक्षा-संस्थाएँ हमारे सिद्धान्तों के प्रसार में कहाँ तक सफल हो रही है। गुरुकुल और कालिज दोनों पद्धतियों में शिथिलता और दोष आगये हैं। बृन्दावन गुरुकुल की समस्या युक्त प्रान्त के लिये सदैव सिर दर्द बनी रहती है, जब तक आर्थिक और प्रबन्ध समस्याएं हल न हो जायँ तब तक गुरुकुल का सफल संचालन हो भी कैसे। दूसरी ओर डी० ए० वी० कालिजों के द्वारा जो प्रचार हो रहा है, उससे कोई वास्तविक लाभ नहीं। कुछ लोगों ने डी० ए० वी० नाम परिवर्तन कर 'दयानन्द विद्यालय' नाम रखने का सुझाव दिया है सुझाव अच्छा है, उस पर विचार होना चाहिये परन्तु नाम परिवर्तन मात्र से कोई जादू न होगा। समस्या का वास्तविक हल तो शिक्षा के वर्तमान रूप में परिवर्तन करनेसे ही होगा। गुरुकुल में जब तक अधिकारियों के बालक पढ़ने न जायेंगे तबतक जनता भी अपने बच्चों को वहाँ भेजने में संकोच करती रहेगी। कालिजों में सह-शिक्षा का विषैला प्रभाव प्रसार पा रहा है, उसे शीघ्र समाप्त किया जाना चाहिये इसके अतिरिक्त सार्वदेशिक की विद्यार्य सभा द्वारा समस्त आर्य शिक्षा-संस्थाओं का केन्द्रियकरण होना चाहिये, जिससे केन्द्र द्वारा स्वीकृत शिक्षा-क्रम का ही संस्थाओं में प्रचलन हो। इस कार्य के लिये आर्य विश्व विद्यालय की योजना पर गम्भीरता-पूर्वक विचार किया जाना चाहिये।

—सूबेदार आर्य
बेवर (मैनपुरी)

पारिवारिक-सम्पर्क

आर्यसमाज के प्रारम्भिक युग में आर्यों में परस्पर जो बन्धुत्व भाव था उसका आज सर्वथा लोप हो चुका है। उस युग में आर्यसमाज का प्रत्येक अधिकारी और सदस्य अपने साथियों के व्यक्तिगत जीवन से निकट सम्पर्क स्थापित रखने में अपना गौरव अनुभव करता था। हर्षोत्सवों में ही नहीं बीमारी आदि कष्ट के समय भी प्रत्येक सदस्य एक दूसरे के घर सहानुभूति के लिये जाता था, अधिकारी आवश्यक सहायता पहुँचा कर अपना कर्तव्य-पालन करते थे, और बाहर से आने वाले नेता और उपदेशक समस्त आर्य बन्धुओं की कुशलक्षेम पूछ कर आर्य परिवार की भावना का परिचय देते थे। परन्तु आज वे दिन स्वप्न हो गये हैं। आज तो समाज के सदस्यों और अधिकारियों में विपरीत भावना घर कर गयी है, आर्य नेताओं में साधारण सदस्यों से सम्पर्क स्थापित करने का उत्साह ही नहीं होता, वे आते हैं और बड़े व्यक्तियों के घर ठहर समाज में भाषण देकर चले जाते हैं, और अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। पहले आर्य सदस्यों में सिद्धान्तों के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होती थी और आने वाले नेताओं से अपनी शंकाओं का समाधान कर लेते थे पर आज तो साधारण सदस्य के लिये अपने नेता से बात करना भी कठिन होता है। साथ ही हमारे कितने ही अधिकारियों में पूर्व की सी सैद्धान्तिक योग्यता भी नहीं रह गयी है, इस कारण वे जन-सम्पर्क में आने से घबराते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि आर्यों में पुनः पारिवारिक भावना प्रचलित हो। प्रत्येक आर्य सदस्य एक दूसरे के इतना अधिक निकट हो कि परस्पर एक दूसरे की अनुपस्थिति खलने लगे। आर्य नेता और उपदेशक अपने परिभ्रमण में अधिक से अधिक आर्य बन्धुओं से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयत्न करें। अधिकतर आर्य-समाजों में ही ठहरें और सदस्यों की शङ्काओं का समाधान करें। आर्यसमाज के सदस्यों ने घोषणा की थी 'बनायेंगे आर्य फिर सारे जगत् को' आज हमें सबसे पहले अपने को आर्य बनाने की आवश्यकता है। पारस्परिक सम्पर्क की स्थापना के द्वारा ही अपने आदर्शों की प्राप्ति में हम सफल हो सकते हैं।

—व्रतपाल वार्ष्णेय,
अलीगढ़

सत्यार्थप्रकाश का प्रभाव

आज से ३५ वर्ष पूर्व जब आर्यसमाज का प्रचार जोरों पर था, जनता में आर्यसमाज के सम्बन्ध में आर्यसमाजियों को विधर्मी, धर्मभ्रष्ट, नास्तिक आदि उपाधियों से विभूषित किया जाता था। मेरे मन में भी पर्याप्त कौतूहल था और मैं आर्यसमाज की सभाओं में सम्मिलित होने लगा, आर्यसमाज के विद्वानों के भाषणों में मुझे तो कोई आपत्तिजनक बात नहीं मालूम हुई। परन्तु पिता के मूर्ति पूजक होने के कारण आर्यसमाज के प्रति

जीवन-ज्योति

श्री प० गंगाप्रसादजी चीफ़ जज

श्री प० गंगाप्रसाद एम० ए० चीफ जज आर्यसमाज के उन प्रतिष्ठित विद्वानों में हैं, जिन पर हम उचित रूप से गर्व कर सकते हैं। उन्होंने 'फाउन्टेन हैड आफ रिलीजन' (धर्म का आदि स्रोत) नामक पुस्तक लिख कर साहित्य-भण्डार की प्रशंसनीय वृद्धि की है। ऐसा कौन विद्वान् है, जिसने इस ग्रन्थ-रत्न की महत्ता की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा न की हो।

पण्डितजी का जन्म वैसाख शुक्ला ३ (अक्षय तृतीया) सम्वत् १९२८ (१८७१ ई०) को मेरठ के एक प्रतिष्ठित रस्तोगी वैश्य परिवार में हुआ। अक्षय तृतीया को जन्म लेकर प० गंगाप्रसाद जी ने एक साहित्यकार के रूप में सचमुच अपनी कीर्ति को अक्षय कर दिया। आपके पिता श्री रामदासजी भी बड़ी धार्मिक रुचि के सज्जन थे। पण्डितजी की प्रारम्भिक शिक्षा स्थानीय पाठशाला में हुई, और गवर्नमेन्ट हाई स्कूल से प्रवेशिका परीक्षा पास की। फिर १८८३ से १८९३ ई० तक अर्थात् पूरे छह वर्ष आगरा कालिज में अध्ययन कर एम० ए० उपाधि प्राप्त की। श्रेणी में सदैव उच्च रहने के कारण विद्यार्थियों और अध्यापकों में आपका बड़ा आदर था। अपने हृदय और मस्तिष्क की महत्ता के कारण आप बहुत ही लोकप्रिय हो चुके थे। बाल्यकाल से ही आपकी धर्म और ईश्वर में बड़ी भक्ति थी। १८८६ ई० में आपने युवकों के हितार्थ मेरठ में 'आर्य डिबेटिंग क्लब' की स्थापना की और आगरा आने पर 'आर्यमित्र सभा' को जन्म दिया। इस सभा ने आर्यसमाज को कितने ही प्रतिष्ठित कार्यकर्ता दिये। १८९० ई० में पण्डितजी ने 'ज्योतिष चन्द्रिका' नामक एक विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थ लिखा जिसमें गणित और फलित ज्योतिष का बड़ी योग्यतापूर्ण विवेचन किया गया है। सन् १९०० ई० में 'कास्ट सिस्टम' नामक पुस्तक लिखी जिसमें जन्मपरक जाति-पाँति का भेद मिटाकर गुण कर्मानुसार वैदिक वर्णव्यवस्था की युक्ति प्रमाण पूर्वक सिद्धि की गयी है। १९०९ ई० में 'फाउन्टेनहेड आफ रिलीजन' की रचना हुई। यह ग्रन्थ अपनी उत्तमता के कारण विद्वत्समाज में बड़ा आदरणीय समझा गया। उपर्युक्त दोनों अंग्रेजी ग्रन्थों के अनुवाद हिन्दी, उर्दू, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं में भी हो चुके हैं। 'फाउन्टेन हैड ऑफ रिलीजन' का अनुवाद १९१६ ई० में श्री हरिशङ्कर शर्मा ने किया था। इस अनुवाद का नाम है 'धर्म का आदि स्रोत'। उर्दू अनुवाद विद्वद्वर स्व० प० घासीराम, एम० ए० ने 'सरचश्मे मजाहब' के नाम से किया। पण्डित गंगाप्रसादजी ने 'केन' और 'कठ' उपनिषदों पर भी अंग्रेजी में भाष्य लिखे हैं। १९१२ ईस्वी में पण्डितजी अखिल भारतवर्षीय समाज सुधार सम्मेलन कानपुर के सभापति हुए। १९२१ ईस्वी में वृन्दावन गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता पद पर प्रतिष्ठित हुए। १९४० ईस्वी में रामगढ़ (नैनीताल) में 'नारायण स्वामी हाई स्कूल' की स्थापना में आपने महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया और कई वर्षों तक उसकी प्रबन्ध समिति के अध्यक्ष रहे। १९४१ से १९४४ तक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान रहे, १९४२ ई० में आप दक्षिण भारतीय आर्यसम्मेलन बंगलौर के अध्यक्ष निर्वाचित हुए और वहाँ बड़ी विद्वत्ता के साथ वैदिक महत्ता प्रकट की। १९४२ से १९४४ तक आर्यविद्या सभा काशी के अध्यक्ष रहे। १९४५ में आपने अजमेर में जाति-भेद निवारक आर्य परिवार संघ स्थापित करने में बड़ा सहयोग दिया और उसके अध्यक्ष भी चुने गये। १८९८ से १९२० ई० तक पण्डितजी ने डिप्टी कलक्टर के रूप में सरकारी सेवा की। १९२२ से १९३६ ई० तक आप टेहरी गढ़वाल राज्य के चीफ जज और जुडीशल मिनिस्टर रहे। सरकारी सेवा में भी आप आर्यसमाज को निरन्तर अपनी साहित्य देन देते रहे।



श्री प० गंगाप्रसादजी

गंगाप्रसादजी जहाँ प्रकाण्ड पण्डित, महान् विद्वान् और विमल विचारक हैं वहाँ वे प्रौढ़ लेखक और प्रभावशाली वक्ता भी हैं। भाषण और लेखन दोनों की ही ओर आपकी प्रारम्भ से ही बड़ी अभिरुचि रही है। आप जो कुछ लिखते और बोलते हैं, उससे आपके विस्तृत स्वाध्याय और विशद चिन्तन का अनायास ही परिचय मिल जाता है। पण्डितजी वयोवृद्ध हैं पर उनके हृदय में आर्यसमाज और वैदिक धर्म के लिये नवयुवकों का सा उत्साह और स्नेह भरा हुआ है। हाल ही में आपने राजस्थान आर्यसम्मेलन जयपुर के स्वागताध्यक्ष पद से जो भाषण दिया, उसके शब्द शब्द से आपका धर्म प्रेम प्रकट होता है। परमात्मा से प्रार्थना है कि वह आपको वैदिक धर्म की सेवा के लिये शतायु और चिरायु करे।

——

श्रद्धा दर में जाग्रत् हुई। अब मेरे मन में एक द्वन्द्व था कि मैं किस सिद्धान्त का पालन करूँ, खोज करने पर ऋषि दयानन्द और उनके ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' का परिचय मिला। मैंने अपने क्षेत्र के प्रचारक श्री स्वामी चित्तघनानन्दजी से सत्यार्थ प्रकाश लेकर पढ़ डाला। सत्यार्थप्रकाश पढ़ते ही मेरी सारी शंकायें समाप्त हो गयीं और मुझे आर्यसमाजियों के कथन में विश्वास उत्पन्न हो गया। इस प्रकार सत्यार्थप्रकाश ने मुझे आर्यसमाजी बना लिया। मेरी धारणा है कि उत्तम संस्कारों वाला प्रत्येक मनुष्य एक बार सत्यार्थप्रकाश का अवलोकन करने ही से आर्य बन जायगा। मनुष्य को पाखण्ड-जाल से बचाने, सत्पथ-दर्शाने तथा ईश्वर में विश्वास उत्पन्न कराने में सत्यार्थप्रकाश के समान अन्य कोई ग्रन्थ नहीं है। सत्यार्थप्रकाश के विचारपूर्वक अध्ययन तथा पठन पाठन का विशेष प्रचार होने से ही आर्यसमाज में वास्तविक जीवन आ सकता है।

रामजीलाल भूतरा,
घाऊपुरा (रामपुर)

——

स्वास्थ्य-सुधा

नीबू के प्रयोग

श्री चन्द्रधर भिषगाचार्य

नीबू के फल से प्रत्येक व्यक्ति परिचित है। भारतवर्ष में यद्यपि इस फल का प्रचार बहुत प्राचीन-काल से है, तथापि इसके उचित और अधिकाधिक प्रयोग का ज्ञान बहुत कम लोगों को ही है। नीबू की फसल के समय भारतीय भोजन में नीबू का उपयोग किया जाता है और इस प्रकार नीबू भारतीय भोजन का एक अंग बन चुका है। इसके अतिरिक्त अन्य प्रकारों से भी नीबू स्वास्थ्य के लिये अत्यधिक लाभदायक है,। सर्व साधारण की जानकारी के लिये कुछ प्रयोग लिखे जाते हैं।

पित्त प्रकोप में नीबू का शर्बत जिसे बोलचाल की भाषा में शिकंजबीन कहते हैं, उपयोगी प्रयोग है। आप गरमी से परेशान हों एक गिलास जल में एक नीबू निचोड़ कर थोड़ी सी चीनी मिला कर पीजिये, चित्त में शान्ति और शरीर में स्फूर्ति अनुभव करने लगेगी। उदरशुद्धि के लिये प्रातः निराहारावस्था में ठण्ड या गुनगुने जल में एक नीबू का रस लेने से बहुत लाभ होता है, नियमित रूप से लेने से उदर-विकार सम्बन्धी प्रायः सभी शिकायतें दूर हो जाती हैं। मन्दाग्नि रोग में भोजन से पूर्व अदरक और सेंधे नमक में नीबू का रस मिला कर लेने से भूख बढ़ती है और थोड़े दिन के नियमित प्रयोग से नियत समय पर खुल कर भूख लगने लगती है। भोजन के साथ मूली और टमाटर में नीबू का रस स्वादिष्ट और पाचक सिद्ध होता है।

अतिसार, प्रवाहिका और विषमज्वर की अवस्था में जब पेट और मुँह का स्वाद बिगड़ जाता है, नीबू को काटकर नमक, जीरा और कालीमिर्च डाल, थोड़ा-सा गरम करके चूसने से स्वाद और पेट ठीक हो जाता है। वमन की अवस्था में भी इसी प्रयोग से जी मिचलाना बन्द हो चित्त को शान्ति मिलती है। इसके अतिरिक्त वमन की अवस्था में नीबू की छाल की राख शहद के साथ चाटने से भी शीघ्र लाभ होता है।

एन्फ्लुएन्ज़ा (कफ-वात प्रधान ज्वर) में अन्य किसी औषधि का प्रयोग न कर केवल नीबू का रस दो-ढाई तोला जल में दिन में दो-तीन बार लेने से निश्चित लाभ होता है। इस व्याधि में स्वाद के विचार से नीबू के रस में चीनी नहीं डालनी चाहिये। चीनी के प्रयोग से कफ बढ़ने से हानि होने की सम्भावना रहती है। मलेरिया में कुनैन के प्रयोग से चक्कर आने लगते हैं, मुँह का स्वाद बिगड़ जाता है, तब नीबू चूसने से कुनैन की गर्मी शान्त होती है और चित्त प्रसन्न होता है। कुनैन को नीबू के रस में मिला कर लेने से कुनैन के अवगुणों से रक्षा, ज्वर-हानि, अग्नि दीप्ति आदि का लाभ भी होता है।

अजीर्ण नाश के लिये खाने के सोडे के घोल में निम्बुकाम्ल (साइट्रिकएसिड) डालकर पीने से पाचन शक्ति बढ़ती है और अजीर्णता समाप्त होती है। त्वचा की शुद्धि के लिये नीबू को शरीर में मलने से शरीर का रंग साफ हो जाता है। चेहरे के मुँहासे नष्ट होते और मुख कान्तिमान प्रतीत होने लगता है।

रक्त विकार में नीबू बहुत गुणकारी सिद्ध होता है। खाज की बीमारी में कड़वे या चमेली के तेल में नीबू का रस मिलाकर लगाने से खाज तत्काल ठीक होने लगती है। पेट के दर्द में नीबू के अचार का उपयोग भारतीय गृहस्थों में प्रचलित ही है। नीबू के बीज भी उदर के कृमि-विकार में अत्यन्त गुणकारी सिद्ध हुए हैं। नीबू के बीजों को सुखाकर उनका चूर्ण बनाकर रख लीजिये और छोटे बच्चों के पेट में होने वाले कीड़ों को नष्ट करने में उसका उपयोग कीजिये, अव्यर्थ सिद्ध होंगे। खटाई के अन्य समस्त पदार्थों में नीबू की खटाई सर्वश्रेष्ठ है। आम, इमली, कमरख, करौंदा आदि खटाइयाँ खाँसी और वीर्य-विकारों की जनक हैं परन्तु नीबू की खटाई में इस प्रकार का कोई भय नहीं रहता। इसीलिये साधारण खाँसी जुकाम में भी नीबू का प्रयोग हानिकर सिद्ध नहीं होता। आयुर्वेद की औषधियों के निर्माण में द्रव्यों के शोधन-मारण में, कल्पों और रस सिद्ध औषधियों के निर्माण में नीबू के रस की भावनायें दी जाती हैं। नीबू के रस की भावना से युक्त औषधियाँ बहुत ही गुणकारी सिद्ध होती हैं। नीबू हमारे स्वास्थ्य के लिये प्रकृति की अनुपम भेंट हैं, नीबू का नियमित प्रयोग करके अपने स्वास्थ्य की रक्षा करने में हम बड़ी सरलता से समर्थ हो सकते हैं।

——

ग्राम जीवन

ग्रामों का सुधार

श्री रामस्वरूप शास्त्री, एम-ए०

प्राकृतिक सुषमा से युक्त भारतीय ग्रामों का जीवन शहर वासियों के लिये सदैव आकर्षण की वस्तु रहा है। परन्तु आज ग्रामों में अशिक्षा के कारण उत्पन्न गन्दगी का वातावरण व्याप्त है। यदि वह किसी प्रकार समाप्त हो सके तो ग्रामीण जनता ही नहीं प्रत्येक भारतीय को हार्दिक प्रसन्नता होगी। ग्रामों में अशिक्षा-निवारण, सफाई और स्वास्थ्य सुधार के लिये हमारी वर्तमान सरकार ने पंचायतों की स्थापना के रूप में कुछ कार्य किया है, परन्तु उसमें अभी बहुत कमी है। जब तक ग्रामीण-जनता में स्वयं अपनी दशा सुधारने की प्रवृत्ति जाग्रत न होगी सरकारी प्रयत्नों को आंशिक सफलता ही प्राप्त होगी। सरकारी मशीनरी के साथ साथ सामाजिक कार्यकर्त्ता-दलों को भी ग्राम-सुधार के कार्य में रचनात्मक भाग लेना चाहिये।

ग्रामों की गन्दगी के कारणों में से कुछ इस प्रकार हैं—स्थान स्थान पर मल-मूत्र का खुला पड़ा रहना और सड़ना, छोटे-छोटे गड्ढों में पानी का सड़ना, घरों के आस-पास कूड़ा-कचरा एकत्र होना, घरों में धुआँ निकलने का मार्ग न होना, घरों में धूप और हवा के न आने-जाने के कारण सील और अँधेरा रहना, घर के बरतनों और कपड़ों को गन्दा रखने की आदत का होना आदि उपर्युक्त कारणों से अनेकों बीमारियाँ फैलती हैं, ग्रामों में मलेरिया के अधिक फैलने के भी उपर्युक्त ही कारण हैं। गाँवों के कुओं की सफाई की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये। कभी कभी तो कुओं में गिरे जानवरों को भी नहीं निकाला जाता और सड़े पानी को ही ग्रामीण लोग प्रयुक्त करते रहते हैं। गन्दे कपड़ों का धोवन, जूठे बरतनों के माँजने का गन्दा पानी कुओं में ही गिरता रहता है कुएँ के चारों ओर छोटे छोटे गड्ढों में पानी सड़ा करता है, पेड़ों की पत्तियाँ उनमें गिरा करती हैं, तालाबों की भी यही दशा है। यदि ग्रामीण लोगों में सुधार की भावना जाग्रत कर उक्त गन्दगी नष्ट की जा सके तो ग्रामों में वर्तमान व्याधियों का दशमांश भी शेष न रहेगा। मच्छरों के कारण ही ग्रामीणों को मलेरिया अधिक सताता है, अतः मच्छरों के विनाश के सुगम उपाय काम में लाये जाने चाहियें। ग्रामों के अन्दर और आस-पास छोटे-छोटे गड्ढों को शीघ्र बन्द कराया जाय तो मच्छरों को फैलने का अवसर ही न मिलेगा। गड्ढों को भरने के अलावा खाद के ढेरों और जानवर बाँधने के स्थानों में भी मच्छर-विरोधी आन्दोलन जारी रखना चाहिये। मच्छर भगाने के लिये विशेष योग्यता के व्यक्तियों अथवा मूल्यवान औषधियों की इतनी आवश्यकता नहीं है जितनी सचेष्ट और सावधान रहने की।

मच्छर नाश के लिये चूना बहुत उपयोगी, सस्ता और प्रत्येक ग्राम में आसानी से उपलब्ध होने वाला पदार्थ है, गड्ढों और कुओं की सफाई के लिये चूने का प्रयोग अँगरेजी औषधियों से भी अधिक उपयोगी सिद्ध होता है। इसी प्रकार नीम की पत्तियाँ और लकड़ियों के धुएँ से भी मच्छर-विनाश आन्दोलन में बहुत सहायता मिलती है। मलेरिया के आक्रमण से बचने के लिये तुलसीके पांच पत्ते और ११ कालीमिर्चें प्रातः सायं जलके साथ लेने से बहुत लाभ होता है, तुलसी तो प्रत्येक ग्राम में होती है अतः इस नुस्खे का अधिकाधिक प्रचार किया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त अन्य प्राकृतिक उपचारों के प्रचार की ओर भी हमारा ध्यान होना चाहिये। भारतवर्ष के लिये विदेशी पद्धति की अपेक्षा प्राकृतिक उपचार पद्धति अधिक उपयोगी और सफल सिद्ध होगी। इस प्रकार ग्रामीण स्वास्थ्य की ओर यदि विशेष ध्यान दिया जाय तो ग्रामोंका सुधार शीघ्र ही हो जायगा। निरक्षरता-निवारण के लिये स्कूलों की स्थापना द्वारा होने वाले प्रयत्नों की उपयोगिता सुविदित ही है। कर्ज के भार से मुक्त, अन्न सम्पत्ति से युक्त और सन्तुष्ट आज का भारतीय किसान अपने और राष्ट्र दोनों के लिये उपयोगी बन सके इसके लिये आवश्यक है कि वह ग्राम के जीवन का स्तर उन्नत करने में रुचि पूर्वक भाग ले, ग्रामों का सुधार बाहर के लोगों की अपेक्षा ग्राम के व्यक्तियों पर अधिक निर्भर है। शिक्षा, स्वास्थ्य और उन्नत सामाजिक जीवन से युक्त भारत के ग्राम ही भारत के वास्तविक ग्राम कहे जा सकते हैं, आज राष्ट्रका ध्यान सबसे अधिक इसी दिशा में लगना चाहिये।

विज्ञान-वार्ता

चमड़े का सफेद रंग

अमेरिकन वैज्ञानिकों ने एक ऐसी राख का अनुसन्धान किया है जिससे चमड़े को स्थायी रूप से सफेद बनाया जा सकेगा, पुराना होने पर भी वह काला न होगा, सूर्य की किरणें भी इस चमड़े पर कोई विरुद्ध प्रभाव न डाल सकेंगी।

संस्था-परिचय

आर्य [हिन्दू] धर्म सेवा-संघ

आर्य (हिन्दू) धर्म की सेवा और प्रचार तथा हिन्दू जाति की उन्नति के उद्देश्य से अखिल भारतीय हिन्दू आर्य धर्म सेवा संघ ट्रस्ट तथा उसके अन्तर्गत आर्य हिन्दू धर्म सेवा-संघ की स्थापना सन् १९४१ में हुई थी। तबसे संघ निरन्तर हिन्दू धर्म और हिन्दू जाति की सेवा में लगा हुआ देश और जाति के उत्थान में यथाशक्ति प्रयत्न कर रहा है। गत इन नौ वर्षों में हिन्दू जाति के हित के लिये अछूतोद्धार, शिक्षा प्रचार, चिकित्सा, अनाथ-रक्षा, वनवासी तथा पहाड़ी जातियों के उत्थान, निराश्रित शरणार्थियों की सहायता आदि भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में तथा भारत के विभिन्न भागों में कार्य करने वाली सनातनी, आर्य-समाजी, सिख, बौद्ध आदि अनेक संस्थाओं को मासिक तथा एक-मुश्त सहायता देने में अब तक अनुमानतः बीस लाख रुपए से ऊपर व्यय कर चुका है। देश-भर में इस समय लगभग १५० संस्थाओं को मासिक तथा एक मुश्त सहायता देने में तथा लगभग ७० छात्रों को छात्र वृत्ति देने तथा लगभग ४० अनाथ महिलाओं को वृत्ति देने में संघ का १६ हजार रुपया मासिक लग रहा है। उक्त डेढ़सौ संस्थाओं में ४५ शिक्षा संस्थाएं, २५ चिकित्सालय, ५ अनाथालय, ५ शिल्प-विद्यालय तथा शेष प्रचार और संगठन-सम्बन्धी संस्थाएँ हैं।

श्री बिड़लाजी हिन्दू जाति के बृहत्स्वरूप में बौद्धों को भी सम्मिलित देखना चाहते हैं, इसलिये जहाँ उन्होंने अन्य हिन्दू वर्गों को सहायता प्रदान की है, वहां कई बौद्ध तीर्थ स्थानों में अतिथि-शालाएँ व बौद्ध-विहारों का पुनर्निर्माण भी करवाया है। बिड़लाजी की सहायता से यह आर्य (हिन्दू) धर्म संघ भी बौद्ध भिक्षुओं तथा छात्रों की पर्याप्त सहायता करता है। सब भारत में धर्म की जिज्ञासा से प्रेरित होकर आए हुए अनेक यूरोपीय और अमरीकनों को भी यथाशक्ति सहायता प्रदान कर रहा है।

अमरीका, यूरोप, ब्रिटिश-गायना, ट्रिनीडाड, पूर्वी अफ्रीका आदि देशों में हिन्दू धर्म का प्रचार करने में भी संघ की ओर से यथासाध्य सहायता प्रदान की गयी है। कुछ वर्ष पूर्व हिन्दू संस्कृति वेदान्त-दर्शन तथा हिन्दू धर्म के सम्बन्ध में प्रचार करने के लिए बनारस हिन्दू विश्व-विद्यालय के दर्शनाचार्य डा० बी० एल० आत्रेय ने संघकी सहायता से अमरीका, श्याम, चीन तथा हवाई द्वीप में हिन्दू धर्म और संस्कृति पर व्याख्यान दिये थे। इसी प्रकार कुछ समय पूर्व पंजाब के प्रसिद्ध विद्वान् तथा प्रचारक पं० ऋषिरामजी ने भी संघकी सहायता से ट्रिनीडाड तथा ब्रिटिशगायना की यात्रा की और वहाँ हिन्दू धर्म का प्रचार किया। आजकल भी वे संघ की सहायता से मारिशस में हैं। जहाँ लगभग तीन लाख भारतीय निवास करते हैं।

मणिपुर आसाम में हिन्दी प्रचारके लिए भी संघने अपने व्यय से एक प्रचारक व एक प्रचारिका को वहाँ भेजा हैं जो वहाँ भिन्न-भिन्न स्थानों में कक्षायें खोलकर तथा मैजिक लैटर्न के द्वारा हिन्दी का प्रचार रहे हैं।

इस प्रकार श्री बिड़लाजी की सहायता से यह संस्था देश में संस्कृति की रक्षा और विस्तार का जो महत्वपूर्ण कार्य कर रही है वह भारत के धनपतियों के लिये आदर्श और अनुकरणीय उदाहरण है। सेवा-संघ ने जो कार्य किया है उसके लिये उसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। आशा है सेवा-संघ भविष्य में और भी प्रगति करेगा और भारतीय संस्कृति-समुद्धार के महान् कार्य में पूर्ण सहायक सिद्ध होगा।

राज्याभिषेक हीरक जयन्ती

अमेठी राज्य के अधिपति श्रीमान् राजर्षि राजा भगवान बख्शसिंह (अवस्था ८३ वर्ष) के राज्याभिषेक की हीरक-जयन्ती भाद्रपद शुक्ला ७ को अनेक प्रमुख संस्थाओं तथा प्रजा वर्ग की ओर से विशेष समारोहपूर्वक मनाई गई। अपार जन-समूह में सार्वदेशिक सभा दिल्ली, उ० प्र० आर्यप्रतिनिधि सभा, उ० प्र० क्षत्रिय-महासभा, गुरुकुल महाविद्यालय अयोध्या आदि २१ प्रमुख संस्थाओं ने अभिनन्दन पत्र भेंट किये। अन्त में श्रीमान् अमेठी नरेश महोदय की ओर से युवराज श्री रणञ्जयसिंहजी ने धन्यवाद देते हुए अभिनन्दन-पत्रों का उत्तर दिया और कहा कि प्रजा हित ही राज्य का परम्परागत लक्षण है और इसी लिये कुछ मास पूर्व पचास सहस्र वार्षिक आय का भू-भाग दान देकर ट्रस्ट बना दिया गया है। उसके द्वारा प्रजा के लिये विद्यालय, औषधालय, गोशाला और छात्र-वृत्ति आदि की स्थायी सुविधा रहेगी। तदुपरान्त राज्य के मैनेजर श्री सुरेशचन्द्र मिश्र श्रीमान् अमेठी नरेश के प्राइवेट सैक्रेटरी श्री राघवराम पाण्डेय तथा मुफस्सलात के अवैतनिक मैनेजर श्री पं० गौरीशङ्कर तिवारी को पदक एवं उपाधियों से अलंकृत किया गया। इस ऐतिहासिक अवसर पर स्थानीय प्रतिनिधि सज्जनों के अतिरिक्त बाहर से पधारने वालों में सार्वदेशिक सभा के प्रधान राजगुरु श्री पं० धुरेन्द्र शास्त्री, गुरुकुल अयोध्या के कुलपति श्री स्वामी त्यागानन्दजी आचार्य लौटूसिंह गौतम, श्री यज्ञनारायण उपाध्याय एम० एल० ए०, श्री शिवमंगलसिंह प्रभृति के नाम उल्लेखनीय हैं। दूसरे दिन श्री रणवीर इन्टर कालेज में 'अन्तर विद्यालय मल्ल युद्ध प्रतियोगिता' का मामुख्य हुआ। कुश्ती बराबर रही। अतः अमेठी नरेश राज्याभिषेक हीरक जयन्ती 'फलक' कोई न पा सका। प्रायः सभी उच्च अधिकारी एवं प्रमुख व्यक्ति प्रतियोगिता के समय पधारे थे, जिन्हें राज-भवन में जल-पान कराया गया।

—संवाददाता

सभा की सूचनाएँ

अवैतनिक उपदेशकों का सहयोग

१—वनस्पति औषधालय के अध्यक्ष श्री प० अमरनाथ वैद्य शास्त्री देहरादून निवासी ने अवैतनिक रूप से आर्यसमाजों में उपदेश करने का वचन दिया है। अतः समाजों को आदेश दिया जाता है कि उत्सवों, कथाओं आदि में आपकी अमूल्य सेवाओं से लाभ उठावें।

२—उत्तर प्रदेशीय समस्त आर्यसमाजों को सूचित किया जाता है कि सभा की प्रार्थना पर श्रीमान् स्वामी अमृतानन्द सरस्वती आर्य वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर (सहारनपुर) ने अवैतनिक रूप से उपदेशक का कार्य करना स्वीकार किया है। श्री स्वामीजी महाराज एक उच्च कोटि के विद्वान् हैं। आपका भाषण ओजस्वी तथा प्रभावशाली होता है। प्रत्येक आर्यसमाज यथावसर अपने उत्सवों तथा कथाओं के लिये स्वामीजी को आमंत्रित कर सकता है।

—मदनमोहन सेठ
सभा-प्रधान

निश्चयों की लिपि

उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा ता० २६ अगस्त ५१ के तीन निश्चयों की लिपि।

१—नि० सं० २-सर्व अन्तरंग सभासदों ने खड़े होकर निम्न लिखित शोक प्रस्ताव स्वीकार किया।

'अन्तरंग सभा का यह साधारण अधिवेशन श्री कुँवर हरिप्रसादसिंहजी एम० एल० ए० एडवोकेट बाँदा, और श्री रत्नलालजी उपप्रधान आर्यसमाज फ़रीदपुर (बरेली) के असामयिक देहावसान पर हार्दिक शोक प्रकट करता और परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करता है कि दिवंगत आत्माओं की सद्गति और परिवार के दुःखित सज्जनों को सान्त्वना प्रदान करे।

२—नि० सं० ३ के अनुसार निम्नलिखित आर्यसमाज सभा में प्रविष्ट किये जावें—

१-रामनगर पो० (सुलतानपुर) कोटिधन सौ रुपये। २-स्त्री समाज हसनपुर (मुरादाबाद) कोटिधन मुक्त। ३-स्त्री समाज फलावदा (मेरठ) कोटिधन मुक्त। ४-असुरन पो० बशारतपुर (गोरखपुर) कोटिधन सौ रुपया। ५-खेतुपुरा पो० रुपधनी(एटा) कोटिधन सौ रुपया।

३—नि० सं ६ के अनुसार निम्न शिक्षा-संस्थाओं को सम्बद्ध किया जावे।

(अ) श्री दयानन्द आर्य-विद्यालय सदर बाजार मेरठ, (ब) आर्यकन्या पाठशाला बाद शाहनगर लखनऊ (स) श्री रणवीर हायर सेकेण्डरी स्कूल अमेठी (सुल्तानपुर),

भृगुदत्त तिवारी
उपमन्त्री, सभा

अ० भा० आर्य महासमेम्लन

आवश्यक सूचनाएँ

आर्यमहासम्मेलन का कार्य बड़े उत्साह से आरम्भ हो चुका है। सम्मेलन के मण्डप और प्रदर्शिनी का कार्य शुरू कर दिया गया है। राष्ट्र-भृत यज्ञ के लिये यज्ञशाला आदि का निर्माण हो रहा है। बाहर से आने वाले आर्य बन्धुओं की सुविधा के लिये छोटी-बड़ी छोलदारियों तथा छोटे-बड़े डेरों का प्रबन्ध किया गया है, जिनका निवास-शुल्क ५) और ८) तथा १५) और २५) निश्चित किया गया है। एक बाजार लगाने का भी निश्चय किया गया है, जिसमें भोजनादि की दुकानों के अतिरिक्त आर्य-साहित्य, खादी तथा अन्य उपयोगी वस्तुओं की दुकानें भी होंगी। जो व्यक्ति दूकानें लाना चाहें, वे अपना शुल्क अगाऊ भेजकर स्थान सुरक्षित करालें। एक दुकान का किराया ४० और ५० रुपया है, बिजली इसी में सम्मिलत होगी। सम्मेलन से पूर्व २० से २६ अक्टूबर तक एक 'चक्षु-यज्ञ' का आयोजन किया जायगा। सम्मेलन कैम्प के समीप ही नेत्र चिकित्सा का कार्य नेत्र-विशेषज्ञ डाक्टरों की देख-रेख में सम्पन्न होगा। इस कार्य का सम्पूर्ण भार महिलाओं ने अपने ऊपर लिया है। जिन व्यक्तियों की आंखें बनेंगी उनके भोजनादि का प्रबन्ध सम्मेलन की ओर से रहेगा। सम्मेलन में पत्रकारों की सुविधा का पूर्ण ध्यान रखा जायगा जिन पत्रों के प्रतिनिधि महा-सम्मेलन में सम्मिलित होना चाहें, वे पहले ही स्वागत समिति को सूचना भेज दें। दीपावली के अवसर पर छुट्टियाँ कम होने के कारण कुछ आर्यबन्धु सम्मेलन में आने में असुविधा अनुभव कर रहे हैं, परन्तु आर्यों को इस अवसर पर अधिकाधिक संख्या में सम्मिलित होकर अपने धर्म-प्रेम का परिचय देना चाहिये। आर्यसमाजों से प्रार्थना है कि सम्मेलन की तिथियों में अपने उत्सव आदि न रक्खें।

विश्वम्भरसहाय प्रेमी
प्रचार-मन्त्री, आर्यसम्मेलन

धन-संग्रह

राजगुरु श्री प० धुरन्द्र जी शास्त्री प्रधान सार्वदेशिक सभा इन दिनों उत्तर प्रदेश के अलीगढ़, मुरादाबाद और बिजनौर जिलों में आर्यमहासम्मेलन मेरठ के सिलसिले में भ्रमण कर रहे हैं। अलीगढ़ से उन्हें १५००), हाथरस से ५००) और मेंडू से ७१) प्राप्त हुआ है। आर्य महासम्मेलन में लगभग ३०-३५ हजार रुपया व्यय होने का अनुमान है। इनकी पूर्ति का अधिकांश दायित्व उत्तरप्रदेश की आर्यजनता पर ही है। आशा है, इस दायित्व को सुन्दरता और शीघ्रता के साथ पूरा किया जायगा।

ज्ञानचन्द मन्त्री
सार्वदेशिक सभा

आर्यवीर-दलों से

अखिल भारतीय सप्तम सार्व-देशिक आर्य महासम्मेलन मेरठ में २६ अक्टूबर से १ नवम्बर तक होने जा रहा है, जिन स्थानों से दल सेवा तथा प्रबन्ध कार्य के लिये मेरठ आर्य महासम्मेलन पर आना चाहें, वे आने वाले वीरों की संख्या केन्द्र को लिख कर आने की स्वीकृत ले लें। वीरों का गणवेष में आना अनिवार्य है। भोजन का प्रबन्ध सम्मेलन की ओर से होगा।

ब्र० उषर्बुध,
स० प्र० सेनापति

महासम्मेलन का मुख्य कार्य

आर्यमहासम्मेलन के अधिकारियों ने सम्मेलन के अवसर पर छह विविध सम्मेलन करने का निश्चय किया है। मेरी सम्मति में महासम्मेलन के अवसर पर विविध सम्मेलनों की आयोजना में शक्ति को व्यर्थ नहीं खोना चाहिये। महासम्मेलन विशेष आवश्यकताओं, सामाजिक तथा राजनैतिक समस्याओं को सुलझाने के लिये, आर्य जीवन में विशेष शक्ति-संचार के लिये, वैदिक धर्मप्रचार की विशेष प्रचार व्यवस्था तथा जनता के उद्धार कार्य में अग्रसर होने के लिये अथवा किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिये कभी-कभी बुलाया जाता है, इसलिये उसमें अत्यावश्यक योजनाओं पर ही विचार किया जाना चाहिये। यदि सम्मेलन से पूर्व कतिपय विशिष्ट विद्वान् मेरठ में उपस्थित हो धार्मिक, राजनैतिक और सामाजिक परिस्थितियों के सम्बन्ध में विचार-विनिमय करें और योजनापूर्वक प्रचार-व्यवस्था बना सकें तो सम्मेलन सफल होगा। यदि सम्मेलन से हम कोई योजना लेकर न लौटे तो इतनी शक्ति का व्यय व्यर्थ ही होगा।

—अमरनाथ वैद्य, देहरादून

लेखकों से निवेदन

आर्यमित्र के लेखकों से निवेदन है कि आर्यमित्र में रचनाएँ भेजते समय ध्यान रक्खें कि लेख दो कालम से अधिक बड़ा न हो। सामान्य तथा सामयिक लेखों के अतिरिक्त हमारे स्थायी स्तम्भों के लिये प्राप्त होने वाली रचनाएँ शीघ्र प्रकाशित होंगी। स्थायी स्तम्भ — जीवन-ज्योति, स्वास्थ्य-सुधा, महिला-मण्डल, बाल-विनोद, संस्था-परिचय, ग्राम-जीवन, विज्ञान वार्ता आदि हैं।

—सम्पादक

आर्यजगत

—आर्यसमाज टाँडा (रामपुर) की ओर से प० राजाराम शास्त्री और प० सर्वगुण प्रसादजी ने नगर तथा ग्रामों में प्रचार किया।

—आर्यसमाज लावण (मेरठ) का उत्सव बड़ी धूम-धाम से मनाया गया। श्री श्यामलाल पथिक तथा प० सच्चिदानन्दजी महोपदेशक ने प्रशसनीय सहयोग दिया।

—अतर्रा (बाँदा) में वेद-प्रचार मण्डल स्थापित किया गया है। श्री स्वामी दिव्यानन्दजी के सहयोग से कार्य आरम्भ हो गया है। अतर्रा में सुरैय्या बाबा के मन्दिर, हिन्दू कालिज महिला समाज और कृषि फार्म आदि में स्वामीजी की कथा और भाषण हुए। प्रचार-कार्य और अतिथि सत्कार का सम्पूर्ण व्यय श्री राजारामजी द्वारा किया गया।

—आर्यसमाज बेवर ने एक सप्ताह तक प्रचार कराया और 'शहनये शरीयत की शरारत के विरुद्ध प्रस्ताव पास किया।

—आर्यसमाज भूड़ बरेली ने इस वर्ष एक मास तक वेद-प्रचार किया। श्री रामस्वरूपजी वानप्रस्थी और श्री स्वामी विशुद्धानन्दजी ने महत्व पूर्ण कथा और भाषणों द्वारा सहयोग दिया।

—श्री श्रवणसिंहजी ने वेद-प्रचार सप्ताह के अवसर पर विविध स्थानों से ४१३) उत्तर प्रदेशीय आ० प्र० सभा की वेद-प्रचार निधि के लिये संग्रह किये।

—आर्यसमाज मऊनाथ भजन ने श्री मौलवी महेशप्रसादजी के देहावसान पर शोक प्रकट किया।

—आर्यसमाज मगलौर ने श्री कबूल सिंहजी वानप्रस्थी की धर्मपत्नी के देहावसान पर शोक प्रकट किया।

—आर्यसमाज फलावदा (मेरठ) ने श्री मणशीरामजी के देहावसान पर शोक प्रकट किया। परमात्मा दिवगत आत्माओं को तथा दुखी परिवारों को धैर्य प्रदान करे।

—आ० स० शोलापुर में श्री आचार्य मेधाव्रतजी के गम्भीर प्रवचन हुए, नगर के सरस्वती कन्या विद्यालय, सेवासदन हाईस्कूल, दयानन्द कालेज, जनरल लाइब्रेरी आदि स्थानों में भी प० जीने मराठी भाषा में प्रवचन और शंका समाधान किया। मराठी बोर्डिङ्ग में विद्यार्थियों का सम्मिलित यज्ञोपवीत-संस्कार कराया गया। इस कार्यक्रम के अतिरिक्त सर्व श्री पू० शीष स्वामी जी, पू० स्वामी आनन्दप्रकाशजी, प्रकाशवीरजी शास्त्री, प० वंशीलालजी व्यास, प० मनोहरलालजी आदि विद्वानों ने भी समय-समय पर भाषण दिये।

उत्सव

—आ० स० कोसी कलाँ का वार्षिकोत्सव ११ से १४ अक्टूबर तक।

—आ० स० गोरखपुर का वार्षिकोत्सव १० से १३ नवम्बर तक।

—आ० स० गगोह का वार्षिकोत्सव ५ से ७ नवम्बर तक।

—आ० स० धामपुर का वार्षिकोत्सव ३ से ६ नवम्बर तक।

—आ० स० अमरोहा का स्वर्ण-जयन्ती महोत्सव १४ से २१ अक्टूबर तक।

—आ० स० राजामण्डी आगरा का वार्षिकोत्सव ४ से ७ नवम्बर तक।

—इन्द्रप्रस्थ गुरुकुल का वार्षिकोत्सव २० और २१ अक्टूबर को मनाया जायगा। पूर्व घोषित तिथियाँ बदल दी गयी हैं।

निर्वाचन

—आ० कु० सभा चुनार, प्रधान श्री चन्द्रलाल वर्मा और मन्त्री रामाधीन।

—आ० कु० सभा बिलासपुर (रामपुर) प्रधान श्री मुरारीलालजी और मन्त्री श्री हरिशंकरजी।

—आ० स० देवरिया, प्रधान श्री फूलचन्द इञ्जीनियर और मन्त्री श्री राजेन्द्रनाथ वकील।

सार-सूचनाएँ

—वैद्यनाथ धाम गुरुकुल महा विद्यालय का वार्षिकोत्सव आर्य महा सम्मेलन की तिथियों के कारण स्थगित कर दिया गया है। —मुख्याधिष्ठाता

—आर्यवीर-दल सहायता और प्रतिज्ञा-दिवस सदा की भाँति इस वर्ष विजया दशमी पर न मनाया जाकर १६ से १८ नवम्बर तक मनाया जायगा।

—ओम्प्रकाश पुरुषार्थी
प्रधान सेनापति, आर्यवीर दल

—लखनऊ, हिन्दी प्रचारार्थ विद्यापीठ यहाँ महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। विद्यापीठ के भवन निर्माणार्थ एक लाख रुपये की अपील प्रकाशित की गयी है। चालीस हजार रुपया प्रवासी भारतीयों की ओर से एकत्रित किये जाने के वचन प्राप्त हो चुके हैं। श्री अमरनाथ झा से विद्यापीठ का कुलपति-पद स्वीकार करने की प्रार्थना की गयी है।

— ब्रह्मदत्त तिवारी नागर

—"गांधी ग्राम-पत्रिका" का प्रकाशन लखनऊ से २ अक्टूबर से प्रारम्भ हो गया।

—श्री विद्या धर्म वर्द्धनी पाठशाला आगरा में अब निः शुल्क धर्म-शास्त्र, पौरोहित्य और पुराणेतिहास की शिक्षा का भी प्रबन्ध हो गया है। इसके अतिरिक्त गीता प्रेस गोरखपुर की रामायण व गीता की विभिन्न परीक्षाओं की शिक्षा भी पाठशाला में हुआ करेगी।

—व्रजनाथ शर्मा गोस्वामी

आवश्यकता

आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश को योग्य व उत्तम उपदेशकों की की आवश्यकता है। जो उपदेशक महानुभाव आर्यसिद्धान्तों का उत्तम ज्ञान रखते हों और शिक्षित नवयुवकों में पश्चिमीय नवीन हानिकारक वादों का खण्डन करने की क्षमता रखते हों, वे अवश्य प्रार्थना-पत्र भेजें।

धर्मपाल विद्यालंकार, मन्त्री
आर्यप्रतिनिधि सभा, उ० प्र० लखनऊ

बाल-विनोद

विचार कर उत्तर दो

राघवेन्द्र और महेन्द्र स्वतन्त्रता दिवस का उत्सव देखने के लिये अपने प्यारे कुत्ते को साथ लेकर जब पटना जाने लगे तब माँ ने दोनों भाइयों और कुत्ते का ख्याल करके उनको कुछ लड्डू बनाकर दे दिये। घर से चलकर राघवेन्द्र महेन्द्र मध्यान्ह में पटना पहुँच गये, गर्मी काफी थी, दोनों स्नान के लिये गये स्नान करने के बाद राघवेन्द्र पहले ही लौट आया और उसने महेन्द्र के आने का प्रतीक्षा न करते हुए लड्डुओं को तीन बराबर हिस्सों में बाँट एक हिस्सा स्वयं खा लिया और तीन बराबर हिस्सों से अधिक बचा हुआ एक लड्डू अपने कुत्ते को खिला कर अकेला ही घूमने निकल गया। महेन्द्र जब लौटकर आया उसे भी बड़े ज़ोर की भूख लगी थी, लड्डुओं के तीन बराबर भाग कर उसने भी एक भाग खा लिया और १ लड्डू कुत्ते को डालकर वह भी घूमने निकल गया। शाम को जब राघवेन्द्र और महेन्द्र घूमकर लौटे, बहुत थके हुए थे, बचे हुए लड्डुओं के तीन हिस्से कर दो हिस्से उन्होंने खा लिये और एक लड्डू कुत्ते को भी डाल दिया। अब सोचकर बताओ कि वे दोनों कितने लड्डू लेकर चले थे और उन्होने उनको किस प्रकार बांटा और कितने शेष बचे।

योगेश्वर प्रसाद गुप्त
लोहरदगा (विहार)

पूर्व पहेली का उत्तर

२० सितम्बर के प्रश्न का सही उत्तर निम्न प्रकार है—

सुरेश, २७+८=३५ लड्डू
महेश, १८+८=२६ लड्डू
रमेश, १२+८=२० लड्डू

सही उत्तर दाताओं के नाम

ज्ञानूदादा को प्रसन्नता है कि निम्न बालकों ने सही उत्तर भेजे हैं सर्व श्री सावित्रीबाई धुरन्धर खरोरा सी० पी०, योगेश्वरप्रसाद लोहरदगा (रांची), रमेशचन्द्र शुक्ल कानपुर, आनन्दप्रकाश बस्ती, परमानन्द आर्य बांकीपुर पटना, विश्वप्रकाश बस्ती, धनसीराम बोंदिया रामगढ़, मनमोहनदास बस्ती, विनोदकुमार अलीगढ़, देवेन्द्रनारायण अलीगढ़, सूरजमल रणधीरसिंह गाजियाबाद, रामाधीनसिंह चुनार रामचन्द्र यादव बाराबंकी।

—ज्ञानूदादा

—इंगलैण्ड के सम्राट जार्ज षष्ठ आजकल बीमार हैं उनके फेफड़े का आपरेशन सफल हो गया है। इंगलैण्ड की प्रजा अपने सम्राट की बीमारी से बड़ी चिन्तित है।

विदेश के समाचार

—ईरान की सरकार के अबादान के कारखाने से अंग्रेजों को निकालने के निश्चय के कारण ईरान की स्थिति संकटापन्न हो गयी है। अंग्रेजों को हटाने के निर्णय के साथ ईरान सरकार ने तेल भण्डार को ब्रिटेन के अतिरिक्त अन्य देशों को देने का भी निर्णय किया है। ब्रिटिश सरकार इस बात के सख्त खिलाफ है कि किसी तीसरे देश के हाथ में तेल का अधिकार जाय। इस लिये उसने ईरानी तेल के मामले को यू० एन० ओ० में उपस्थित करने का निर्णय किया है।

—दक्षिण अफ्रीका की सरकार अणु-शक्ति कारखानेकी स्थापना के सम्बन्ध में विचार कर रही है।

—ब्रिटेन की सेना शीघ्र ही नौ लाख हो जायगी।

—कोरिया में समझौता वार्ता पुनः भंग हो गयी है और इस समय जेट विमानों से भयंकर हवाई युद्ध हो रहा है।

—पाकिस्तान में पूर्वी बंगाल सरकार ने मुस्लिम बालकों को अरबी पढ़ाने का निश्चय किया है।

—संयुक्त राष्ट्रिय संघ के काश्मीर प्रतिनिधि डा० फ्रांक ग्राहम जेनोवा से हवाई जहाज द्वारा न्यूयार्क पहुंच गये हैं, उन्होंने सुरक्षा-परिषद में उपस्थित करने के लिये अपनी रिपोर्ट तय्यार करली है। सम्भवतः अक्टूबर के मध्य में उनकी रिपोर्ट पर विचार होगा।

शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित—जगत् प्रसिद्ध

सर्वोत्तम शुद्ध सुगन्धित कीटाणु नाशक

हवन-सामग्री

हमारी वैदिक संस्कृति में यज्ञ का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है 'अग्निहोत्रम् जुहुयात स्वर्गकामः' सुख की कामना करने वाले को प्रतिदिन अग्निहोत्र अवश्य करना चाहिये। ऋषियों का कथन है कि वैज्ञानिक रूप से अग्निहोत्र किया जाय तो किसी भी प्रकार के रोग का गृह में प्रवेश नहीं हो सकता, यदि विधिपूर्वक एवं विशुद्ध द्रव्यों से हवन-सामग्री का निर्माण किया गया हो। इसलिये आपसे सामह निवेदन है कि यदि आप हवन के वास्तविक लाभ को अनुभव करना चाहते हैं तो हमारे द्वारा निर्मित सर्वोत्तम शुद्ध हवन-सामग्री का प्रयोग करे। हवनसामग्री का खुदरा मूल्य प्रतिसेर १॥) डेढ़ रुपया है। थोक ग्राहकों व आर्यसमाजों को भरपूर कमीशन दिया जाता है। नमूना मुफ्त मँगा कर देखिये। हमारा पता यह है—

आनन्द आयुर्वेदीय फार्मेसी भोगांव (मैनपुरी)

आपकी दैनिक आवश्यकता

शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित—जगत् प्रसिद्ध

शुद्ध सुगन्धित हवन-सामग्री

नमूना मुफ्त मंगाकर अवश्य परीक्षा करिये

पता—सुन्दरलाल रामसेवक शर्मा

शुद्ध सुगन्धित हवन सामग्री भण्डार

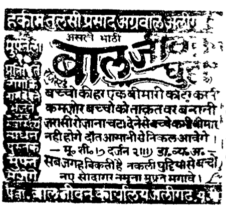
मु० पो० असौली (फतेहपुर)

आर्यमित्र

में

विज्ञापन देना

व्यापार की उन्नति का साधन है।



बादाम रोगन

सौ प्रतिशत शुद्ध और प्रामाणिक

खाने और लगाने के लिये।

नमूना	॥≈)
छोटी शीशी	१॥)
बड़ी शीशी	६॥)

आज ही आर्डर दीजिये।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरद्वार)

सोल एजेन्सी, कुलदीपचन्द, सत्यपाल सामा रावतपाड़ा आगरा,

श्री जगदीश भूषण कवि

संगीताचार्य ग्रामोफोन सिंगर आर्य भजनोपदेशक को वार्षिकोत्सवों, विवाहों, पर्वों, शुभसंस्कारों पर गायन, कथा तथा प्रचार के लिये याद करें।

पता—मुहल्ला गुदबाई, फोन नं० १४३, शाहदरा देहली।

धार्मिक परीक्षायें

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की ओर से सिद्धान्त सरोज, रत्न भास्कर शास्त्री और वाचस्पति की पाँचों धार्मिक परीक्षायें आगामी जनवरी मास में समस्त भारत में होंगी। आवेदन पत्र भेजने की अन्तिम तारीख १५ नवम्बर है। नवीन पाठविधि और आवेदनपत्र निम्न पते से मुफ्त मगाये जा सकते हैं। गतवर्ष इन परीक्षाओं में लगभग ६००० छात्र-छात्रायें बैठे थे। समस्त आर्यसमाजों और आर्य संस्थाओं में इनके केन्द्र स्थापित होने चाहिये। इन परीक्षाओं में बालक, वृद्ध स्त्री, पुरुष सभी बैठ सकते हैं।

निवेदक :—

डा० सूर्यदेव शर्मा, एम० ए० डी० लिट्

परीक्षा मन्त्री,

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्, अजमेर।

आवश्यकता

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश लखनऊ के कार्यालय में एक लेखक की आवश्यकता है। योग्यता मैट्रिक, हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का टाइप करना जानने वाले को विशेषता दी जायगी, प्रार्थी आर्यसमाज का सभासद् होना चाहिये।

वेतन क्रम ५५-३-११० होगा और ३०॥ प्रतिशत मंहगाई मिलेगी, योग्य व्यक्ति को आरम्भिक वेतन अधिक भी दिया जा सकेगा। प्रार्थना पत्र प्रमाण सहित ७ अक्टूबर १९५१ तक भेजने चाहिये।

भृगुदत्त तिवारी उपमन्त्री

आ० प्र० सभा उत्तर प्रदेश

आवश्यकता

आवश्यकता है मेरी इकलौती कन्या के लिये एक हाई स्कूल पास ऐसे अति सीधे शुद्ध विचार तथा आचरण वाले स्वस्थ आदर्श आर्य अनाथ वर की जो सक्सेना अन्यथा कोई कायस्थ हो आयु लगभग १८ वर्ष के हो और जिसका नाम मात्र भी कोई मुख्य सम्बन्धी न हो और जिसे विवाह के पश्चात् मेरे ही घर रहना स्वीकार हो।

(नोट) - किसी प्रकार के भी छली व्यक्ति पत्र व्यवहार न करे।

मास्टर ब्रजमोहन लाल वर्मा, २०१ कृष्णा टोला, अलीगढ़ U. P.

उपदेशक की आवश्यकता

आर्यसमाज सागर को एक ऐसे उपदेशक की आवश्यकता है, जो प्रचार उपदेशक व पुरोहित कार्य विद्वता पूर्वक कर सके। लगन का कार्यकर्त्ता हो यदि कोई त्यागी सन्यासी हो तो उत्तम वेतन योग्यतानुसार जो आपसी वार्त्तालाप से निश्चित हो।

दुर्गाप्रसाद भार्गव मन्त्री

आर्य समाज सागर (म० प्र०)

श्रीमद्भगवद्गीता

पुरुषार्थबोधिनी टीका

लेखक पं० सातवलेकर। इस १००० पृष्ठों के विशाल ग्रन्थ में (१) अर्जुन के विषाद का कारण, (२) विश्वरूप दर्शन का रहस्य, (३) गीतोपदेश के साथ वेदोपदेश की तुलना और (४) गीतोपदेश को व्यवहार में लाने का अनुष्ठान करने की रीति बताई है। किसी अन्य टीका में ये स्पष्टीकरण नहीं मिलेंगे। गीतोपदेश से राज्य-शासन कैसे सफल हो सकता है, यह इसी टीका में पाठक देखेंगे। मूल्य १५), डाक व्यय १॥ मूल्य पेशगी म० आ० द्वारा ११॥) भेजिये।

स्वाध्याय-मण्डल, आनन्दाश्रम

किला-पारडी, (जि० सूरत)



आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, बलदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ओ३म्

आर्य्य-मित्र

• ARYA-MITRA , AGRA •

उत्तर प्रदेशीय प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

सचालक-आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ

आगरा, १८ अक्टूबर १९५१

आर्यसमाज की एक बहुत बड़ी आवश्यकता

आर्य जनता इधर ध्यान क्यों नहीं देती

दैनिक पत्र के विना काम न चलेगा

आर्यसमाज को स्थापित हुए पौन शती से अधिक समय हो गया, परन्तु अभी तक उसका कोई दैनिक पत्र प्रकाशित नहीं हो पाया। दैनिक तो दूर रहा उच्चकोटि का कोई मासिक और साप्ताहिक भी नहीं है। समझ में नहीं आता कि किस बूते और बिरते पर आर्यसमाजी 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' की घोर घोषणा करते रहते हैं। कितनी ही संस्थाओं को अस्तित्व मे आये अभी कठिनता से कुछ ही वर्ष हुए हैं, परन्तु उनके सफल साप्ताहिक और प्रभावशाली दैनिक पत्र मौजूद हैं। आर्य प्रतिनिधि सभाओं के दो दो, ढाई अथवा चार फर्मों के ही सही रूखे-सूखे तथा भूखे पत्रो को देखकर खेद होता है। आर्यजनता जब आर्य पत्रो की तुलना सुसम्पन्न सचित्र, सुन्दर और सजीले पत्रों से करती है, तो उसे बड़ी निराशा होती है और जब उसे तीन आने खर्च करने पर ऐसे सर्वाङ्ग सम्पन्न पत्र की एक प्रति प्राप्त हो जाती है, तो वह उतने ही पैसे देकर किसी रूखे-सूखे अचित्र और असुन्दर पत्र को क्यों खरीदे, आर्य सामाजिक संस्थाएँ अपने अलग अलग निबल-दुर्बल मुखपत्र निकाल कर एक सार्वजनिक सर्वाङ्ग सम्पन्न दैनिक आर्य पत्र प्रकाशन का मार्ग बन्द कर रही हैं।

एक समय था जब देश में साप्ताहिक पत्रों का महत्व था उस समय आर्य समाज ने साप्ताहिक पत्रों द्वारा देश में हलचल मचा दी थी पर आज समय बदल गया है। जनता दैनिक पत्रों द्वारा ही प्रगति का अध्ययन करती है। छोटे छोटे साप्ताहिकों द्वारा पहुचने वाला प्रचार दूसरे विचारों की दैनिक पहुच के आवरण में ढक जाता है इस प्रकार हम सब से पीछे रह जाते हैं। इस प्रकार दैनिक आर्य पत्र के अभाव के कारण आर्यसमाज की प्रगति और प्रचार मे जो बाधा पड रही है, उसका ज्ञान किसे नही है परन्तु हम पूछते हैं इस बाधा को दूर कर दैनिक पत्र निकालने के लिये क्या किया जा रहा है। एक एक व्यक्ति एक-एक दैनिक निकाल रहा है, परन्तु सारी आर्यसमाज समष्टि मिलकर भी एक दैनिक नहीं निकाल सकती, यह कम दुःख और आश्चर्य की बात नहीं है। आर्यसमाज कितना ही उपयोगी और अच्छा काम क्यो न करे, परन्तु वह प्रचार के साधन दैनिक पत्र की कमी के कारण महत्वपूर्ण दृष्टि से नहीं देखा जाता और न उसके कार्य का साधारण जनता को जानकारी ही होती है। आज का युग प्रचार का युग है जो व्यक्ति या समाज अपने कार्यों का समुचित प्रचार नहीं कर पाता उसकी तप पूर्ण साधना भी सीमित और सकुचित बनी रहती है। आर्यसमाज राष्ट्रोत्थान में कभी किसी से पीछे नहीं रहा और आज भी यथा शक्ति चरित्र निर्माण और सेवा क्षेत्र में वह सर्वाग्रणी है, परन्तु दैनिक पत्र के अभाववश हम अपने कार्यों और नीतियों का परिचय नहीं दे पाते, और यही कारण है कि लोग आर्यसमाज को भूलते जा रहे हैं। यदि हम चाहते हैं कि राष्ट्र के चरित्र निर्माण में हम पूर्ण सहयोग दें तो हमें भ्रष्टाचार के विरोध के लिये दैनिक पत्र चाहिये। यदि हम चाहते हैं कि राज्य की नीति भारतीय बन सके तो हमे दैनिक पत्र चाहिये। यदि हम चाहते हैं कि सामाजिक और आर्थिक जीवन में हमारे आदर्शों के अनुसार क्रान्ति हो तो हमें दैनिक पत्र चाहिये आज आर्यसमाज का भविष्य दैनिक पत्र पर अवलम्बित है, यदि ऐसे पत्र की शीघ्र व्यवस्था न की जा सकी तो हमे और अधिक हानि उठानी पडेगी। आर्य जनता को इस प्रश्न पर गम्भीर विचार और शीघ्र निर्णय करना चाहिये। देश की दूसरी प्रगतिशील संस्थाएं इस दिशा में बहुत आगे बढ चुकी हैं। क्या हम अब भी संस्थावाद और पृथक्तावाद की नींद से न उठेंगे। यदि हम अपने को जीवित रखना चाहते हैं तो हमे दैनिक निकालना ही होगा और वह भी अभी या फिर कभी नहीं। सम्मेलन में आने वाली आर्य जनता के सामने यह गम्भीर प्रश्न रखते हुए हम आशा करते हैं कि इस दिशा में आवश्यक निर्णय और व्यवस्था के लिये सक्रिय पग अवश्य उठाया जायगा और आर्य जनता एक बार फिर अपना जीवन-जागृति का पर्याप्त परिचय देगी।

आर्य महासम्मेलन मेरठ

आर्यसमाजों का कर्तव्य

आर्य जगत् को यह ज्ञात ही है कि आर्य महासम्मेलन उत्तर प्रदेश के आर्य पुरुषों के निमन्त्रण पर मेरठ में २७ अक्टूबर से १ नवम्बर तक दीपावली के शुभावसर पर समारोह पूर्वक मनाया जा रहा है। दीपावली का पुण्य आनन्दोत्सव न केवल आर्यजाति मात्र के लिये महा पर्व है, प्रत्युत आर्य पुरुषों के लिये तो युग विधाता ऋषि दयानन्द का निर्वाण दिवस होने के कारण महान् आत्म निरीक्षण का पर्व भी है। इस वर्ष ऐसा प्रसंग बहुत वर्षों के अनन्तर आया है। जब कि ठीक ३० अक्टूबर को इसी दीपावली के दिन ऋषि का निर्वाण हुआ था। इस समय न केवल देश ही के सम्मुख अपितु आर्यजाति के सम्मुख भी अनेक सामाजिक व राजनैतिक गम्भीर समस्याएँ उपस्थित हो गई हैं और हम एक बड़े विचित्र एवम् समस्या पूर्ण संक्रान्ति काल में से गुजर रहे हैं। आर्यजाति का हृदय प्रबल रूप से आलोडित है। और आर्य समाज के लिये भावी प्रोगाम का निश्चय करना न केवल आवश्यक ही हो गया है, अनिवार्य भी है। इतने बड़े महान् यज्ञ के सम्पन्न होने के लिये उपयुक्त धनादि साधनों की कितनी अधिक आवश्यकता है, यह समारोह के निम्न संक्षिप्त प्रोग्राम से ही प्रकट हो जायगा। यद्यपि आर्य महासम्मेलन का मुख्य प्रोगाम २७ अक्टूबर से १ नवम्बर तक ही होगा। परन्तु यह मेला २० अक्टूबर से ही प्रारम्भ हो जायगा।

चक्षु दान-यज्ञ

२० से २६ अक्टूबर तक चक्षुदान यज्ञ होगा। देश के प्रसिद्ध नेत्र चिकित्सकों की व्यवस्था की गई है। जिससे इस अवसर पर चक्षु सम्बन्धी शल्य चिकित्सा, आपरेशन आदि द्वारा जनता लाभ उठा सके। ठहरने आदि का सम्पूर्ण प्रबन्ध-व्यवस्था का उत्तरदायित्व मेरठ की आर्य देवियों ने अपने ऊपर लिया है।

२८ नवम्बर को नगर कीर्तन होगा

इस विशाल व भव्य-नगर कीर्तन में आर्य पुरुषों को अपने-अपने प्रतीक चिन्हों मोटो आदि सहित अधिक से अधिक संख्या में सम्मिलन होना चाहिये और नियमानुसार आर्यसमाजों को अपने प्रतिनिधि सम्मेलन में भेजने चाहिये।

राष्ट्र भृत यज्ञ

सम्मेलन के अवसर पर २६ अक्टूबर से १ नवम्बर तक राष्ट्र-भृत' यज्ञ होगा। इस यज्ञ में 'श्रद्धाचक्र' के समान ७ यज्ञकुण्ड होंगे। जिसमें ४२ यजमान ६ पुरोधा १ वेधा तथा इनके अतिरिक्त होता और वेद पाठी पृथक् होंगे। इस यज्ञ का आधार अथर्व वेद का पृथ्वी सूक्त होगा जिसकी व्याख्या न केवल आध्यात्मिक शान्ति को ही देने वाली होगी अपितु वैदिक धर्म की दृष्टि से राजनैतिक समस्याओं पर भी प्रकाश डालने वाली होगी।

महोत्सव में राजनैतिक सम्मेलन, संस्कृति-सम्मेलन, शिक्षा-सम्मेलन-राष्ट्र-सम्मेलन, महिला-सम्मेलन और गौ-रक्षा-सम्मेलन आदि सम्मेलन होंगे। जिनमें देश व राष्ट्र की समस्याओं के हल प्रस्तुत किये जायगे।

इसी प्रकार इस विशाल आर्य महासम्मेलन की योजना के अनुरूप ही भव्य आयोजन की पूर्ण व्यवस्था तभी सम्पन्न हो सकती है, जब आर्य पुरुष व आर्यसमाजें इस महान् कार्य के उपयुक्त धन से सहायता करें। सम्मेलन में आर्यसमाज की शक्ति, प्रभाव, संगठन और योग्यता की परीक्षा होगी। समय बहुत कम रह गया है। स्वागत-समिति और मेरठ के आर्य पुरुष उत्साह से अपने कर्तव्य में लगे हुए हैं परन्तु आर्य समाजें अपने कर्तव्य-पालन में शिथिल प्रतीत होते हैं।

आर्यसमाजों को शीघ्र ही धन-संग्रह कर स्वागत कारिणी-समिति आर्यसम्मेलन कार्यालय मेरठ में भेजना चाहिये ताकि यह महान् आयोजन पूर्णतः सफल हो।

आर्यजनता अवसर न खोये

महासम्मेलन में अवश्य सम्मिलित होइए

आर्य मित्र के गत अङ्क में मैं सार्वदेशिक सभा के प्रधान की हैसियत से समस्त आर्य जनता को आर्य महासम्मेलन में सम्मिलित होने के लिये सादर सप्रेम और साग्रह आमन्त्रित कर चुका हूँ। अब फिर प्रार्थना है कि आर्य भाई बहन इस अवसर को हरगिज हाथ से न जाने दें और अवश्य मेरठ पधारें। अन्य धर्मी लम्बी अपने विश्वासानुसार वर्षान्तर्गत न जाने किस किस तीर्थ की यात्रा करते हैं परन्तु आर्यों का यह महासम्मेलन कभी कभी ही हुआ करता है और प्रत्येक आर्य के लिये इसमें सम्मिलित होना ही उसकी तीर्थ यात्रा होगी। महासम्मेलन ऐसा समारोह होगा जिसमें बड़े-बड़े साधु सन्त और संन्यासियों का सत्संग होगा, विचारक विद्वानों के विद्वत्ता पूर्ण व्याख्यान सुनने को मिलेंगे वेद कथा और धर्म चर्चा कर्ण कुहरों में पड़ेगी। विशाल आर्य परिवार के साथ महर्षि की पावन पुण्य तिथि मनाने और उनके गुण गाने का अवसर प्राप्त होगा। आर्य समाज बिना ज्ञान के मुक्ति नहीं मानता, ज्ञान प्राप्ति के साधन श्रवण, मनन, स्वाध्याय, सत्संग और सदाचार के अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं। इन सबके लिये ऐसे महासम्मेलन में प्राप्त होने वाली पीयूषवर्षिणी ज्ञान कथाओं और विवेक प्रवचनावलियों से आप ज्ञान मार्ग की ओर बढ़ सकेंगे। सप्ताह भर तक देश-विदेश के विद्वानों का सत्संग प्राप्त कर अपने अध्यात्म बल को बढ़ाने के साधन प्राप्त कीजिये, वैदिक ज्ञान-गरिमा से मन और अन्तःकरण को पूर्ण करने, कल्याणकारी वैदिक भावनाओं और आदर्शों को एक स्थान में प्राप्त करने और उन्हें जीवन में धारण करने की प्रेरणा प्राप्त करने का महासम्मेलन जैसा सुन्दर सुयोग और पुण्य अवसर आपको बहुत दिनों बाद प्राप्त हो रहा है, आइये और उससे लाभ उठाइये। यदि आप चाहते हैं कि आर्य समाज में पुनः वही जीवन जागृति आवे जो आदि युग में थी तो इस अवसर पर संघठित होकर विचार कीजिये। अपनी उन्नति, धर्म की उन्नति और राष्ट्र की उन्नति के लिये आर्य सम्मेलन से हमें बहुत कुछ शक्ति प्राप्त होगी, इस शक्ति को बढ़ाने और स्वयं ग्रहण करने में सहयोग का हाथ बढ़ाइये "संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्" का आज सबसे अच्छा अवसर हमें प्राप्त हुआ है यदि इस समय हम अपनी शिथिलता आलस्य और प्रमाद के कारण कुछ न कर सके तो हम अपने मिशन में कदापि आगे न बढ़ सकेंगे। आशा है आर्य जनता मेरे इस नम्र निवेदन पर अवश्य ध्यान देगी और अधिक से अधिक संख्या में सम्मेलन में सम्मिलित होकर आर्य समाज की गौरव-वृद्धि में अपना सक्रिय सहयोग देगी। —धुरेन्द्र शास्त्री

आर्य महासम्मेलन के सभापति का जुलूस

आर्य महा सम्मेलन मेरठ के मनोनीत सभापति श्री विनायकराव विद्यालङ्कार बार-एट ला का जुलूस २८ अक्टूबर १९५१ को मेरठ नगर में बड़ी धूमधाम से निकलेगा। यही इस महा सम्मेलन का नगरकीर्तन होगा। सभापति के जुलूस के पीछे प्रत्येक प्रान्त की आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान तथा मन्त्री की सवारी होगी। जुलूस का दृश्य सचमुच नयनाभिराम और अद्भुत होगा। आर्य जनता को २७ अक्टूबर से पूर्व ही मेरठ पहुंच जाना चाहिये जिससे वह महासम्मेलन की आदि से अन्त तक सारी कार्यवाही देख सके। जुलूस में सम्मिलित होने वाली संस्थाओं को ओ३म् पताकाएं, संस्था चिह्न आदि अपने साथ लाने चाहिये।

ठहरने आदि की व्यवस्था के लिये स्वागतकारिणी के मन्त्री महोदय से पत्र व्यवहार करें। निवेदक:—

मदनमोहन सेठ, प्रधान
धर्मपाल विद्यालङ्कार, मन्त्री
आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश।

स्थिरेण धीरेण च लभ्यते जयः

आर्यमित्र

आगरा, कार्तिक कृष्ण ४ संवत् २००८ वि०, गुरुवार, ता० १८ अक्टूबर १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५१

आत्वाहार्षमन्तरेधि ध्रुवस्तिष्ठा विचाचलिः विशत्वा सर्वा वाञ्छन्तु मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत । ऋ० १०।१७३।१

हे निर्वाचित नरेश, गद्दी पर आओ
हो सुस्थिर शासन दृढ़ अधिकार जमाओ
सबके प्रिय होकर, निज कर्तव्य निभाना
हो भ्रष्ट न शासन को भी भ्रष्ट बनाना

आगामी तीन वर्षों का कार्यक्रम

एक व्यावहारिक योजना

२७ अक्टूबर से १ नवम्बर १९५१ तक मेरठ में आर्य महासम्मेलन-समारम्भ हो रहा है। इस अवसर पर और भी कई सम्मेलन होंगे, परन्तु प्रधान सम्मेलन का मुख्य लक्ष्य आर्यसमाज की वर्तमान समस्याओं पर विचार करना है। हम कई बार लिख चुके हैं, और अब फिर बड़े विनीत भाव से किन्तु बलपूर्वक कहना चाहते हैं कि मेरठ आर्य-महासम्मेलन कहीं 'महामेला' बनकर ही न रह जाय, वह केवल प्रस्ताव पास करने वाली महासभा ही सिद्ध न हो। यह हम इस लिए कह रहे हैं कि कुछ दिनों से आर्यसमाज की सभा संस्थाएँ निष्प्राण और निष्क्रिय-सी हो गयी हैं। आर्यसमाजी होने के कारण आर्यसमाजियों की न सरकार में कोई आवाज है, और न जनता में। स्वयं आर्य जनता में आर्य नेताओं या आर्य शिरोमणि सभाओं का कुछ प्रभाव नहीं दिखाई देता। ऐसी दशा में सभा-समाजों के प्रस्ताव और कार्यक्रम केवल रजिस्टरों की रद्दी पर कुलांचें भरते रहते हैं। समाचार-पत्रों के पृष्ठों पर भी बहुत कम आ पाते हैं, क्योंकि आर्यसमाज में समाचारपत्र हैं ही कहाँ जो स्वीकृत प्रस्तावों को आगे बढ़ा सकें। अस्तु, जहाँ अन्य अनेक लोगों ने आर्य महासम्मेलन के लिए अपनी विचारधाराएँ प्रस्तुत की हैं और योजनाएं प्रकाशित कराई हैं, वहाँ हम भी कुछ बातें लिखना आवश्यक समझते हैं। हम चाहते हैं कि आर्य महासम्मेलन हमारी योजना पर भी विचार करे और उचित समझे तो उसे स्वीकृत कर क्रियात्मक रूप दे। यह योजना अधिक से अधिक तीन वर्षों में पूरी हो जानी चाहिये।

संघटन और प्रचार

प्रत्येक जिले में आर्यों की संघटन और प्रचार-समितियाँ बनाई जायँ। इन समितियों में जिले के कर्मठ आर्यकार्यकर्ता सम्मिलित हों। ये कार्यकर्त्ता ही जिले भर में भ्रमण करके आर्य सिद्धान्तों का प्रचार करें-करावें और जिस नगर अथवा ग्राम में आर्यसमाज नहीं है, वहाँ उसे स्थापित करें। जहाँ आर्यसमाज पहले से स्थापित है, वहाँ उसमें सक्रियता, जीवन और प्रभाव पैदा करने का प्रयत्न करें। एक दिन भी ऐसा नहीं जाना चाहिये जिसमें प्रचार की व्यवस्था न हो। इन समितियों का मुख्य कार्य हो रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा जिले के आर्यों का संघटन सुदृढ़ बनाना, आर्यसमाजों की स्थापना करना और उनमें सजीवता लाना। संघटन के साथ-साथ प्रचार-कार्य भी अति आवश्यक है। प्रचार-योजना ऐसे विषयों और प्रश्नों को लेकर की जाय जिनमें जनता का अधिक से अधिक सहयोग प्राप्त हो सके। हम समझते हैं, मूर्ति-पूजा, श्राद्ध और अवतारवाद को छोड़कर शेष ऐसा कोई विषय नहीं, जिसमें अधिकाधिक जनता आर्यसमाज के साथ सहयोग न कर सके। परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि हम अपने किसी भी मौलिक सिद्धान्त में किसी के साथ किंचित् भी समझौता करने को तैयार हों। जिन बातों में हमें आर्यसमाज से बाहर का सहयोग प्राप्त न हो उन्हें हम लोग स्वयं प्रचारित और प्रसारित करें। जिनमें सब सहमत हैं उनमें सबका सहयोग लिया जाय। ऐसा न हो कि इन सर्वसहमत और सर्वसम्मत विषयों में 'एकाकीपन की नीति' बरती जाय—आर्यसमाज के सदस्यों तक ही उन्हें सीमित रखा जाय। इस प्रकार की प्रचार विधि में हम अधिक सफल न हो पाएंगे। हम समझते हैं, आगामी तीन वर्षों में यह प्रचार-विधि उत्साह और दृढ़ता से काम में लाई जाय तो ग्राम-ग्राम और झोपड़ा-झोपड़ा विशुद्ध वैदिक ध्वनि से प्रतिध्वनित हो जायगा और प्रत्येक व्यक्ति तक आर्यसमाज का सन्देश पहुँचे बिना न रहेगा।

लेखनी और वाणी

प्रदेश के शिक्षा-केन्द्रों और बड़े-बड़े नगरों में प्रचार करने के लिए एक प्रचारक-समिति बनाई जाय, जिसमें प्रदेश के विचारक विद्वान्, व्याख्याता और साहित्यिक सम्मिलित हों। ये समिति लेखनी और वाणी द्वारा प्रचार करने का आयोजन करे। विद्यालयों और महाविद्यालयों के छात्रों, अध्यापकों, सुशिक्षित जनता आदि तक वैदिक सिद्धान्त पहुँचाना इस समिति का मुख्य काम हो। विद्वानों द्वारा लिखित हैंडबिल, ट्रैक्ट, पुस्तक, ग्रन्थ आदि का भी उचित उपयोग किया जाय। व्याख्यान ऐसे हों जो विशेष रूप से तैयार किये गये हों और जो सुशिक्षित जनता को सुदृढ़ युक्ति-प्रमाणों और ओजस्विता द्वारा प्रभावित कर सकें। इस दिशा में भजनों का भी बड़ा महत्व है, परन्तु ये भजन साहित्य और संगीत दोनों दृष्टियों से निर्दोष हों। उक्त प्रचार-समिति यदि आवश्यक समझे तो अपनी प्रचार-यात्रा के लिये मोटर-बस आदि की भी व्यवस्था करे, इसमें अधिक सुविधा और किफायत होगी। यह प्रचार-समिति जिले में प्रचार-व्यवस्था इस प्रकार करे कि एक जिले के विद्वान् और व्याख्याता दूसरे जिले में प्रचार के लिये भेजे जायं, क्योंकि स्वयं अपने जिले में वे विशेष प्रभावशाली सिद्ध न हो सकेंगे।

चित्रपट और ध्वनि-विस्तारक यन्त्र

प्रचार कार्य में उक्त दोनों साधनों से भी सहायता लेनी चाहिये। आर्यसमाज सम्बन्धी ऐसे चित्र तैयार कराये जायँ जो चित्रपट (सिनेमा) पर प्रदर्शित किये जा सकें। व्याख्यानों की ध्वनि अधिक ऊँची और तीव्र करने के लिए ध्वनि-विस्तारक यन्त्र (लाउड स्पीकर) भी काम में लाये जा सकते हैं। ये यन्त्र मोटरों और बसों में भी लगे रहें, जिससे ग्रामों में भी उनका उपयोग हो सके।

दयानन्द-विश्व-विद्यालय

आर्यसमाज में गुरुकुलों सहित जितनी शिक्षण-संस्थाएँ हैं, उन सबके लिये विधानानुसार दयानन्द विश्वविद्यालय की स्थापना की जाय। यह विश्व-विद्यालय अपनी शिक्षण-संस्थाओं के लिये विशेष प्रकार की शिक्षा विधि का निर्माण करे और सब संस्थाओं को एक सूत्र में ग्रन्थित होने का अवसर दे।

आर्यप्रकाशन-गृह

एक उच्च कोटि का प्रकाशन-गृह स्थापित किया जाय, जो मुद्रण-कला सम्बन्धी आधुनिक साधन-सम्पन्न हो। इस प्रकाशन गृह द्वारा संस्कृत, हिन्दी तथा अन्य भाषाओं का उत्कृष्ट साहित्य प्रकाशित किया जाय। दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्र निकाले जायं, जो आर्य-सिद्धान्तों का प्रचार और विस्तार करने में पूर्ण रूप से सहायक हों। यह कार्य भी इन्हीं तीन वर्षों में हो जाना चाहिए।

हमारी प्रार्थना है कि आर्यमहासम्मेलन में सम्मिलित आर्य

प्रतिनिधि गण यदि उचित समझें तो उपर्युक्त भावों के आधार पर एक निश्चित और व्यावहारिक योजना स्वीकृत कर उसे कार्य रूप में परिणत करने की प्रतिज्ञा करें। कितने ही प्रस्तावों को पास कर एक को भी क्रियान्वित न करना और उन्हें रजिस्टरों में कैद होने के लिये छोड़ देना इतने बड़े सम्मेलन द्वारा समय, शक्ति और धन का दुरुपयोग मात्र ही कहा जायगा।

शासन में क्या सुधार हों?

उपर्युक्त प्रश्न को दृष्टि पथ में रखकर केन्द्रीय सरकार ने जनता से जानना चाहा है कि उसकी सम्मति में देश के शासन में क्या-क्या सुधार आवश्यक और अपेक्षित हैं। देशी विदेशी नीति सम्बन्धी कुछ विषयों की ओर संकेत कर उसने उनके सम्बन्ध में जन-मत जानने की जिज्ञासा की है। इस दिशा में हमें सरकार से जो कुछ कहना है वह यही है कि सबसे पहले उसे ऐसा उद्योग करना चाहिए कि उसके मन्त्रियों, अधिकारियों और कर्मचारियों में नैतिकता तथा सद्भावना (ईमानदारी) का प्रवेश हो। नैतिकता के अभाव में जो अनर्थ और अनाचार हो रहे हैं वे किसी से छिपे नहीं हैं। यहाँ तक कि हमारे कितने ही मन्त्रियों और अधिकारियों की ओर भी जनता बुरी तरह उंगली उठाने लगी है। भ्रष्टाचार-प्रचार का उत्तरदायित्व जनता पर ही नहीं, कुछ सत्ताधारियों पर भी है। भ्रष्टाचार सम्बन्धी गन्दी बातें ऐसी स्पष्ट हैं कि यहाँ उनके विस्तार की आवश्यकता नहीं है। रिश्वत के सम्बन्ध में एक ग्रामीण भाई ने एक दिन कहा—"नमबत में साब, फरक तो जरूर पर्यो है, पहले कचहरी में मुन्सी एक रुपय्या लेतो, अब चार ले हैं" अभिप्राय यह है कि भ्रष्टाचार की भयानकता दिनोंदिन बढ़ रही है और गत तीन चार वर्षों में तो उसे और भी बल मिला है। हमारा विश्वास है कि जब तक शासन में ईमानदारी नहीं आयेगी, और हमारे निर्वाचित सदस्य ईमानदार तथा सद्भावना युक्त न होंगे तब तक जनता भली और ईमानदार नहीं बन सकती। सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि देश में बड़े जोर से नैतिकता प्रचार आन्दोलन प्रारम्भ किया जाय। लेखनी और वाणी, चित्र और अभिनय सभी साधनों का इस कार्य में उपयोग हो। इसी विषय को शिक्षणालयों में मुख्यता और प्राथमिकता दी जाय और जो व्यक्ति जरा भी अनैतिक काम करे या बेईमानी का सहारा ले उसे कठोर से कठोर दण्ड दिया जाय। ऐसा किये बिना किसी प्रकार के सुधार की आशा करना वृक्ष की जड़ को न सींच कर उसके पत्तों पर पानी छिड़कने के समान होगा। पहले मनुष्य को मनुष्य बनना चाहिये, इसके अभाव में ही सारे अनर्थ और अत्याचार हो रहे हैं। नैतिकता और सद्भावना का सुन्दर स्वरूप और सच्चा समन्वय ही मानवता या मनुष्यता है।

डा० अम्बेडकर का पद-त्याग

भारत सरकार के विधि मन्त्री श्री डा० अम्बेडकर अपना पद-त्याग कर फिर परिगणित जातियों के नेता बन गये! यानी आगामी आम निर्वाचन में आप परिगणित जातियों के प्रतिनिधियों को निर्वाचित कराने में, उनकी पूरी-पूरी सहायता करेंगे। अम्बेडकर साहब बड़ी विचित्र रीति-नीति के व्यक्ति हैं। आप हिन्दुत्व त्याग चुके,क्योंकि हिन्दू धर्म में आपको कोई अच्छी बात दिखाई नहीं देती। अब आप अपने को बौद्ध कहते हैं, परन्तु फिर भी आपको हिन्दुओं की बड़ी चिन्ता बनी हुई है। शायद इसीलिये आपने संसद् में हिन्दू कोड बिल का 'शिगूफा' छोड़ कर हिन्दुओं में असन्तोष पैदा कर दिया है। अब आप परिगणित जातियों का उद्धार करेंगे। यह बड़ी विचित्र बात है कि आप घोर सम्प्रदायवादी होकर भी अपनेको असम्प्रदायवादी सिद्ध करने की असफल चेष्टा करते रहते हैं। आर्यसमाज पर भी आपने अपनी पुस्तकों में कई बार आक्रमण किये हैं। मन्त्रित्व के पद पर प्रतिष्ठित होकर अम्बेडकरजी बौद्ध धर्म का प्रचार और हिन्दू धर्म का तिरस्कार करने में कभी जरा भी नहीं चूके। जनाब ने अजीब तबियत पायी है, कभी कुछ और कभी कुछ। यदि अम्बेडकर साहब हिन्दू-धर्म त्याग कर बौद्धधर्म की कुछ भी सेवा कर सके तो निस्संदेह वह ग़नीमत समझी जायगी।

अध्यात्म धारा

अन्तःकरण-शुद्धि

प्रो० एम० एल० शाण्डिल्य, एम० ए०

जीवन में शुभ संकल्पों की सफलता के लिये चित्त की निर्मलता, अन्तः करण की पवित्रता की पृष्ठभूमि आवश्यक होती है। हमारे धार्मिक कर्मकाण्डों का जीवन से इतना घनिष्ठ सम्बन्ध इस आधार-भूमि का निर्माण करने के लिये किया गया है। कर्मकाण्डों का एकमात्र लक्ष्य हृदय की शुद्धि के लिये ही प्रयत्न है। जिस हृदय-शुद्धि का इतना महत्व हो उसे सीधे साधे कार्य के लिये सैकड़ों-हजारों सम्प्रदायों ने तरह तरह के कर्मकाण्डों की रचना कर मनुष्य समाज के सामने विचित्र समस्या खड़ी कर दी है। प्रत्येक सम्प्रदाय अपने कर्मकाण्ड को सत्य और अनिवार्य कहता है, और यह सब होता है ईश्वर और सम्प्रदाय के नाम पर। पर आज हमें स्वस्थ चिन्तन के आधार पर इन सबके सार को समझ कर नये समाज का निर्माण करना होगा। सम्प्रदायों के झगड़ों को मिटाकर वास्तविक जीवन-निर्माण को अपना लक्ष्य बनाना होगा। सब धर्म अन्तः करण की पवित्रता के आदर्श के सम्बन्ध में एक मत हैं। इस स्थिति में पहुंचकर मानव सत्य संकल्पों, आदर्श कार्यों और उच्च व्यक्तित्व के लिये उर्वरा भूमि बन जाता है। जब शरीर रूपी सरोवर में हृदय की पवित्रता रूपी कमल खिलता है, तब उसमें फँसा हुआ जीव रूपी भ्रमर तुरन्त उड़कर आनन्दाकाश में विहार करने लगता है। जैसे छोटे से बादल के टुकड़े का आवरण महान् सूर्य को ढक कर अन्धकार पैदा कर देता है, उसी प्रकार जीवान्तःकरण पर माया का आवरण ज्ञान के प्रकाश को रोक लेता है। अन्तःकरण की पवित्रता के बिना वह धर्म के वास्तविक स्वरूप को नहीं समझ सकता। अन्तः करण की पवित्रता के लिये ऋषि ने हमारी दिनचर्या और संस्कारों का विधान किया है। छोटे बच्चों का मन शुद्ध होता है, उस पर समाज जैसा संस्कार डालना चाहे, डाल सकता है। इसी सच्चे और आदर्श समाज के लिये हमें बच्चों के निर्माण की ओर अधिक ध्यान देना होगा। वासनामय संसार बच्चों को बिगाड़ने में बड़ी निर्दयता और निर्भयता से संलग्न है। हमें अपने बालकों के आदर्श जीवनों द्वारा संसार के सामने आदर्श स्थापित करना होगा। ऋषि ने 'संसार का उपकार करना' हमारा मुख्य ध्येय बताया है। इस महान् कार्य में सफलता पाने के लिये हमें सर्वप्रथम अपने अन्तः करणों को शुद्ध बनाना पड़ेगा, सामाजिक जीवन में स्वार्थ हम पर हावी न हो सके तभी हम दूसरों का सुधार करने में समर्थ हो सकते हैं। शरीर के तप के लिये हमें पहले मन का तप करना होगा। गीता में "मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्म विनिग्रहः, भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानस मुच्यते" मन की प्रसन्नता, सौम्यभाव, मननशीलता संयम और अन्तः करण की शुद्धि, यह मन का तप कहलाता है। अन्तः करण की शुद्धि बिना यह तप अधूरा ही रह जाता है।

इसलिये महान् बनने के लिये हृदय की पवित्रता हमारा प्रथम लक्ष्य होना चाहिये। मन की पवित्रता के आते ही सब प्रकार के शुभ संकल्प पल्लवित और विकसित होने लगेंगे और इस प्रकार अन्त में हम जीवन के अन्तिम लक्ष्य परमात्मा की मित्रता में भी सफल हो जायेंगे। महाकवि शंकर ने ठीक ही कहा है—

तन, मन, वाणी, आत्मा, बुद्धि चरित्र पवित्र,
जो कर लेता है वही परम मित्र का मित्र।

सामयिक समस्याएँ

आर्यसमाज और 'चलचित्र'

स्नातक रमेशचन्द्र एम० ए०

आज का युग प्रचार का युग कहा जाता है। जो संस्था या समाज इस युग में प्रचार के महत्व को स्वीकार न कर अपने प्राचीन रूप से आगे बढ़ना चाहते हैं, उन्हें अपने आदर्शों के व्यापक प्रसार में सफलता नहीं मिल सकती। प्रचार-कार्य की सफलता का आधार है, प्रचार के साधनों का समुचित उपयोग। विज्ञान ने अपना सन्देश दूर-दूर तक पहुँचाने के लिये लाउडस्पीकर, रेडियो, टेलीविजन तथा अन्य बहुत से उपयोगी साधन हमें प्रदान किये हैं। ऐसा कौन व्यक्ति है जो इन साधनों की उपयोगिता से इन्कार कर सकता है। इस युग में इसी प्रकार का एक और अत्युत्तम साधन हमें उपलब्ध है और वह है 'चल-चित्र'। चल-चित्रों के माध्यम द्वारा आज देश में शिक्षा, स्वास्थ्य, समाज-सुधार आदि कार्यों में पर्याप्त सफलता मिल रही है। आप शिक्षा में सुधार करना चाहते हैं तो शिक्षा-सम्बन्धी आदर्श फिल्मों द्वारा शिक्षणालयों में, अशिक्षितों में, प्रौढ़ों और महिलाओं में एक नया क्रान्तिकारी सन्देश पहुंचा सकते हैं। स्वास्थ्य-आन्दोलन के लिये देश में कहाँ क्या हो रहा है, रक्त-दान कैसे दिया जाता है मजदूरों और स्त्रियों की चिकित्सा के लिये क्या-क्या प्रयत्न हो रहे हैं। शिशु-स्वास्थ्य की कौन सी योजनाएं चल रही हैं इत्यादि सभी बातें चल-चित्रों द्वारा जनता तक पहुंचाई जाती हैं। क्या आपने कभी ऐसी फिल्में नहीं देखी, और क्या आपके ऊपर उसका वाञ्छित प्रभाव नहीं पड़ा? यदि आप इन कार्यों के लिये चल-चित्रों के महत्व को स्वीकार करते हैं तो मुझे आपसे कहने का साहस अवश्य होगा और वह यह कि क्या आर्यसमाज में अपने सामाजिक कार्यक्रम के लिये चल-चित्रों की उपयोगिता के प्रश्न पर विचार किया जा सकेगा। जो आदरणीय वृद्ध जन सिनेमा नाम से ही चौंकते और उसमें दुर्गुण ही दुर्गुण देखते हैं उनसे मुझे कुछ नहीं कहना; परन्तु जो बन्धु दोषों के साथ गुणों को भी स्वीकार करने के समर्थक हैं उनके सामने सिनेमा की उपयोगिता और आर्यसमाज के प्रचार में उसकी व्यावहारिकता का प्रश्न गम्भीरता के साथ उपस्थित रहना चाहिये।

आज आर्यसमाज के प्रचार-कार्यक्रम में शिथिलता और असफलता के अनेक कारणों से एक मुख्य कारण यह भी है कि हमारे प्रचार-साधन तृतीय श्रेणी के साधन हैं। युग को अपने साथ ले चलने के लिये हमें युग साधनों के साथ भी चलना होगा। चल चित्रों की उपयोगिता को दृष्टि में रखकर अनेकों भाइयों ने पहले भी इस ओर आर्यसमाज के कर्णधारों का ध्यान आकृष्ट किया है; परन्तु हमारा नेतृत्व तो ऐसे उपयोगी प्रश्न पर अपनी रूढ़िवादिता के कारण विचार भी करना पसन्द नहीं करता। 'सत्य के ग्रहण करने और असत्य का परित्याग करने में सदा उद्यत रहना चाहिये' आज यह आदर्श आर्यसमाज-भवनों की चहार-दीवारी तक ही सीमित रह गया है। यदि हमें युग में अपना अस्तित्व रखना है तो हमें युग के साथ आगे बढ़ना होगा।

जब-जब चल-चित्र द्वारा ऋषि जीवन के उज्ज्वल चरित्र के प्रचार का प्रस्ताव किया गया तब-तब महर्षि का अभिनय कौन पुरुष करेगा, किसमें इतनी नैतिक शक्ति है, चरित्र-भ्रष्ट व्यक्तियों द्वारा महर्षि का अभिनय किये जाने से महर्षि का गौरव नष्ट होगा इत्यादि युक्तियाँ दी जाती रही हैं इस पक्ष के व्यक्तियों द्वारा इस प्रश्न का उत्तर भी मिलना चाहिये कि महर्षि ने जिन ऋषि-मुनियों, राम और कृष्ण को आदर्श और महान् पुरुष माना है, उन सबके चल-चित्र बने हैं या नहीं भक्त प्रहलाद में महर्षि नारद, और राम-राज्य में राम और महर्षि वसिष्ठ बनने वाले व्यक्तियों के कारण इन महर्षियों और राम आदि के चरित्रों पर क्या कलंक लग गया, उनके गौरव में कौनसी कमी आ गयी। और यदि महर्षि जिन्हें महापुरुष मानते हैं उनके चल चित्र बनने पर हमें कोई एतराज नहीं तो महर्षि के आदर्श चरित्र के व्यापक प्रसार में मिथ्या आदर्शवाद का सहारा क्यों लिया जाता है। यद्यपि ऋषि ने प्रचलित राम-लीला और कृष्ण लीला का विरोध किया था, परन्तु वे अभिनय सिद्धान्त के विरोधी नहीं थे। उन्होंने स्वयं कला की शिक्षा का अपनी पाठ-विधि में समर्थन किया है। अभिनय की कला भारत में नयी हो ऐसा भी नहीं है, अपितु हम आर्य लोग भारत के नाट्य शास्त्र को यूनानियों के नाट्य सिद्धान्तों से प्राचीन मान अपने को गौरवान्वित अनुभव करते हैं। ऐसी अवस्था में हमें अभिनय-कला को स्वीकार करने में कोई आपत्ति न होनी चाहिये। यदि हम सिनेमाओं में सुधार चाहते हैं तो उसके लिये आदर्श भी तो हमें ही उपस्थित करना होगा।

इसलिये आज एक बार फिर गम्भीरता के साथ इस प्रश्न पर विचार किये जानेकी आवश्यकता है कि महर्षि का चल चित्र बनाया जाय या नहीं। इस भय की निराकृति के लिये कि संचालक गण महर्षि का कथानक न जाने कैसा बना लेंगे, इस दिशा में योग्यता रखने वाले विद्वानों का सहयोग प्राप्त किया जा सकता है। सुप्रसिद्ध कहानीकार और कथानक-लेखक श्री सुदर्शनजी, श्री प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति, श्री प० हरिशंकर शर्मा, श्री प० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री, श्री डा० सूर्यदेव शर्मा आदि का एक मण्डल महर्षि-चित्र का कथानक तय्यार करने के लिये नियुक्त कर दिया जाय तो कथा के दूषित होने का भय जाता रहेगा। जहाँ तक महर्षि के अभिनय का प्रश्न है, यदि सार्वदेशिक सभा इस कार्य के लिये किसी सम्मानित व्यक्ति का निर्वाचन कर सके तो अत्युत्तम होगा। यह एक क्रान्तिकारी विचार अवश्य है, परन्तु आर्यसमाज के गौरव और प्रतिष्ठा के लिये यदि ऐसा किया जा सके तो आर्यसमाज के प्रचार में हमें अधिक सफलता मिल सकती है। महर्षि के सफल चित्र के बाद आर्यसमाज के शिक्षा और समाजिक कार्यों का प्रचार करने वाले चित्रों का निर्माण भी किया जा सकेगा। चित्र-निर्माण के लिये एकाधिकार अथवा कन्ट्रैक्ट-पद्धतियों और आर्थिक समस्या के प्रश्न को सार्वदेशिक सभा तय कर सकती है, परन्तु सबसे मुख्य प्रश्न तो चल चित्रों द्वारा प्रचार सिद्धान्त की सैद्धान्तिक रूप से स्वीकृति का है। क्या आर्य जनता अपने प्रचार एवं प्रभाव के लिये इस सामयिक एव उपयोगी प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करेगी।

आर्यादर्श

श्री अम्बादत्त शर्मा 'अम्ब'

ज्ञान-दान लेते, देते 'मान' गुरु मान सभी,
'अम्ब' वेद विद्या के निधान, यशवान थे।
त्राण करते थे सदा प्राणधारी पीड़ितों का,
भय को भगाने वाले सुभट महान् थे।
दीन-दुखियों को धन धाम दे, बनाते सुखी,
परम दयालु, पुण्य प्रेम के प्रधान थे।
'आर्य' कहलाते शुभ कार्य के प्रमाण द्वारा,
होते विश्व वर्णन में तुम्हारे गुण गान थे।

संस्था-परिचय

'महर्षि दयानन्द महाविद्यालय'

एक गुरुकुल प्रेमी

ऋषि की जन्मभूमि काठियावाड़ (सौराष्ट्र) में महर्षि दयानन्द महाविद्यालय सन् १९४७ में स्थापित हुआ है। संस्था के प्राणरूप धर्मप्रेमी दानवीर सेठ श्री नानजी भाई कालिदास मेहता ने इस संस्था को स्थापित कर इसकी उन्नति के लिये पन्द्रह लाख रुपये का उदार दान दिया है। सेठजी आर्य जाति के उद्धार के लिये बड़े बेचैन रहते हैं। वे इस संस्था को उस उच्च आदर्श पर स्थापित करना चाहते हैं, जिसके स्वप्न द्रष्टा महर्षि दयानन्द थे। सेठजी ने ऋषि के मिशन की पूर्ति के लिये अपने धन भण्डार का द्वार सदा खुला रखा है। वे यह देखने के लिये अति लालायित हैं कि जिस देश में ऋषि ने जन्म लेकर सोये भारत को जगाया वह देश ऋषि की जन्म भूमि काठियावाड़ आर्य जाति के लिये आदर्श तीर्थ-स्थान बने। अतएव काठियावाड़ में उन्होंने आर्य कन्या विद्यालय, स्थापित किया है। ऋषि के जन्मस्थान टंकारा-स्मारक के लिये आप ढाई लाख की धन-राशि प्रदान कर चुके हैं। आर्य जाति के सांस्कृतिक साम्राज्य के लिये "महर्षि दयानन्द महाविद्यालय" अपना कर्तव्य पूरा कर इस स्वप्न की पूर्ति के लिये वे अपना तन-मन धन ऋषि के मिशन के लिये अर्पण कर चुके हैं।

काठियावाड़ के इतिहास प्रसिद्ध पर्वत गिरनार की गोद में बसा हुआ यह विद्यालय जलवायु की दृष्टि से सर्वोत्तम है। इस संस्था की विशेषता इसकी आश्रम-प्रणाली में है, जहाँ कुटुम्ब-भावना जाग्रत होती है। २०० (दो सौ) ब्रह्मचारियों के इस कुल में गुरु-शिष्य सम्बन्ध से एक निराला वायुमण्डल बना हुआ है। इसका चतुर्दिक प्राकृतिक सौन्दर्य समस्त सौराष्ट्र में नयनाभिराम है। गिरिप्रदेश का सौन्दर्य हठात् आँखों को खींचता है। समीप में बहती हुई कलकल निनादिनी नदी का कर्णमधुर संगीत इस वातावरण में ऐसा गूंज उठता है कि वहाँ किसी भी मार्ग पर गुजरते हुए व्यक्ति का ठहरने को जी ललचा उठता है। यात्री क्षणिक यह अनुभव करता है कि यह निस्सन्देह वही स्थान है जिसका प्राचीन गुरुकुलों के लिये उल्लेख किया जाता है।

इस संस्था के ब्रह्मचारियों पर जहां बौद्धिक दृष्टि से ध्यान दिया जाता है, शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से भी उनका खूब ख्याल रखा जाता है। ब्रह्मचारियों के सामूहिक अनुशासन तथा व्यवस्था के लिये सैनिक शिक्षा का भी विशेष प्रबन्ध है। इन सबको देखते ही दक्षिण भारत के सदर्न कमाण्डर इन चीफ कह उठे हैं कि "यह संस्था सु-सचालित है। ब्रह्मचारी फुर्तीले, तेजस्वी और स्वस्थ हैं। आज हमारे देश में ऐसा अनुशासन एवं व्यवस्था आवश्यक है। मुझे विश्वास है कि यह संस्था इन आवश्यकताओं की पूर्ति करेगी।" सौराष्ट्र राज्य के मुख्य मन्त्री श्री धेबर लिखते हैं—"आर्य संस्कृति पर आधारित इस संस्था के शुद्ध वातावरण, भ्रातृप्रेम, मानव-प्रेम, देश-सेवा इत्यादि शिक्षा के मूल भूत गुणों का दर्शन कर मैं प्रसन्न हूँ।"

संस्था की इस उच्च कक्षा के उन्नति के लिये जहाँ सेठजी का तन-मन धन अर्पित है वहाँ के संस्था आचार्य श्री अर्जुनदेवजी एम० एस-सी० को भी बहुत बड़ा श्रेय है। उन्होंने एक प्रतिष्ठित प्रोफेसर का स्थान जिसके पीछे १५ वर्ष गुजारे थे, छोड़ अपनी सेवा का योगदान इस संस्था के लिये दिया है। उन्हीं के श्रम के फलस्वरूप संस्था के मेट्रिक कक्षा के ब्रह्मचारी ८७% (सत्तासी प्रतिशत) अङ्क प्राप्त कर सारी बम्बई यूनिवर्सिटी में प्रथम आये हैं।

समीप के स्थानों में समयानुकूल वेद-प्रचार होता है। आशा है आर्यजाति के हार्दिक सहयोग से यह संस्था अपने प्यारे ऋषि के सिद्धान्तों का पालन करती हुई, उसके मिशन की पूर्ति में सहायक होगी।

—

स्वास्थ्य-सुधा

यक्ष्मा-विरोधी आन्दोलन

स्नातक जयकुमार एम० ए०, आ० शि०, प्राणाचार्य

यक्ष्मा की व्याधि यद्यपि प्राचीन समय में राजाओं, महाराजाओं की बीमारी हुआ करती थी, और इसी लिए आयुर्वेद में इसे 'राजयक्ष्मा' के नाम से पुकारा गया है; परन्तु आज भारत में यह रोग अमीर-गरीब सभी वर्गों में व्याप्त हो चुका है। हमारे देश में इसकी भीषणता का परिचय इसी बात से मिल सकता है कि प्रतिवर्ष एक लाख व्यक्तियों में से २५० से ४०० तक व्यक्ति इस रोग से मर जाते हैं; अर्थात् १० लाख व्यक्ति इस रोग से मृत्यु को प्राप्त होते हैं। और ५० लाख से अधिक व्यक्ति कबर में पैर रक्खे अपना जीवन जैसे तैसे काटते रहते हैं। धनवानों के घर में इस रोग का प्रसार चिकित्सा और उपचारों पर प्रचुर व्यय करके रोका भी जा सकता है, परन्तु कारखानों में काम करने वाले मजदूरों, दफ्तरों में काम करने वाले बाबुओं और पर्दों और सीलन भरे घरों में रहने वाली बहनों में इस बीमारी का प्रसार इतना अधिक हो चुका है कि देश संकट में से गुजर रहा है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रत्येक व्यवसाय और प्रत्येक काल और स्थान में, बिना किसी रुकावट के यह रोग प्रवेश पा चुका है। हमारी असावधानी और निर्धनता के कारण चिकित्सा और उपचार के अभाव में नष्ट होने वाली राष्ट्र की जन-शक्ति हमें अपने कर्तव्य का हर समय स्मरण कराती है।

इस रोग की संक्रमकता भी एक बड़ी समस्या है। परिवार में एक क्षय रोगी है, छोटे छोटे बच्चे, माता, पत्नी, बहन, भाभी सभी को उसके साथ छोटे-से गन्दे मकान में रहने के लिये बाध्य होना पड़ता है। फलतः परिवार में एक के बाद दूसरे, दूसरे के बाद तीसरे इसी प्रकार सबको यह दुष्टा राक्षसी अपनी क्षुधा का ग्रास बना लेती है। परिवार से मुहल्ले, मुहल्ले से नगर इस प्रकार यह सर्वत्र बहुत शीघ्र फैल जाती है। आज कानपुर की घनी मजदूर बस्ती में प्रति घण्टा १ व्यक्ति इस बीमारी से मर जाता है।

संक्रामकता की इस भयानकता का सामना करने के लिये दूसरे देशों में स्वास्थ्यप्रद स्थानों में सेनीटोरियमों की स्थापना की जाती है। इस प्रकार के सेनीटोरियमों की स्थापना में जनता का पूर्ण सहयोग रहता है। हमारे देश में भी सरकार ने भुवाली, देहरादून, धर्मशाला आदि स्थानों में सेनीटोरियम स्थापित किये हैं, परन्तु यह कार्य घट में बूंद जल के समान ही है। अभी उत्तरप्रदेश के प्रधान मन्त्री श्रीगोविन्दवल्लभ पन्त ने विद्यार्थियों और शिक्षकों के लिये एक पृथक सेनीटोरियम स्थापित करने की घोषणा की है। परन्तु इतने से ही काम कैसे चल सकता है। दूसरे देशों की जनता यक्ष्मा-विरोधी आन्दोलन के लिये बहुत प्रयत्न करती और सरकार को सहयोग देती है। जर्मनी, इटली, स्विटजरलैण्ड, डेनमार्क आदि में जनता की सहायता से अनेकों सेनीटोरियम स्थापित हैं। इन देशों के मजदूर, रेल, तार के कर्मचारी, विश्वविद्यालयों के विद्यार्थी और अध्यापक अपने सदस्यों से चन्दा करके सेनीटोरियमों की स्थापना करते और यक्ष्मा की समस्या को हल करते हैं। जर्मनी में इस रोग से मुक्ति के लिये वर्ष में दो बार एक-एक सप्ताह तक आन्दोलन किया जाता है, सार्वजनिक स्थानों में क्षय-विरोधी फिल्में दिखाई जाती हैं

[शेष पृष्ठ १२ पर]

महिला-मण्डल

आन्दोलन का कार्यक्रम

श्री शकुन्तला प्रभाकर

राष्ट्र की उन्नति के लिये महिला-समाज की उन्नति एक महत्व पूर्ण प्रश्न है। ऋषि दयानन्द ने भारत की दुरवस्था के जिन कारणों का पता लगाया उनमें स्त्रियों की सामाजिक हीनता, स्त्रियों को पुरुष समाज द्वारा 'पैरों की जूती' समझा जाना, 'ढोल गंवार शूद्र पशु नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी'। के अनुसार नारी की पशुवत् ताड़ना किया जाना आदि महत्व पूर्ण कारण भी थे। ऋषि ने पुरुषों के समान मानवीय अधिकार दिलाने का आन्दोलन किया और नारी जाति को समाज शिक्षा और धर्म सभी क्षेत्रों में समान अधिकार दिलवाये, समानाधिकार की वह आदर्श परम्परा आज पाश्चात्य वातावरण में दूषित होकर समाज में उच्छृंखलता का रूप धारण करने लगी है। इस अनुचित भावना का मूल कारण आधुनिक शिक्षा है। महिला-समाजकी उन्नति के लिये शिक्षा के वर्तमान स्वरूप में शीघ्र परिवर्तन करना ही महिला-समाज की अग्रणी बहनों का कर्तव्य है। शिक्षा की परिवर्तित नीति के साथ-साथ महिलाओं के वर्तमान सामाजिक जीवन की उन्नति के लिये हमें कठोर परिश्रम करना होगा। थोड़ी सी शिक्षित बहनों की प्रगतिशीलता के अतिरिक्त अभी हमारे देश में लाखों-करोड़ों ग्रामीण और नागरिक बहनें सामाजिक रूढ़ियों में पिस रहीं हैं उनका उद्धार करना आज हमारा मुख्य कर्तव्य होना चाहिये।

पर्दा-प्रथा का लोप यद्यपि अधिकांश में हो चुका है, तथापि अभी मिथ्या अन्धविश्वासों की बेड़ियाँ महिला-वर्ग को जकड़े हुए हैं। इन विश्वासों से मुक्ति ही स्त्रियों की उन्नति का मार्ग प्रशस्त कर सकती है। आज हमारे समाज में दहेज की दुष्प्रथा भयंकरता से व्याप्त है, और उसका परिणाम हमारी असहाय गरीब बहनों को ही भुगतना पड़ता है। परन्तु क्या इस प्रथा को कायम रखने और सुदृढ़ बनाने में महिलायें स्वयं योग नहीं देतीं हैं? क्या हमारी वे ही बहनें जो पहले दहेज की चक्की में पिस कर गृहस्थिन बन जाती हैं जब अपने लड़कों के विवाह-सम्बन्ध निश्चित करती हैं तब दहेज के लिये प्रयत्न नहीं करतीं, और इस प्रकार समाज की नई बहनों को इस दुष्प्रथा का शिकार होने के लिये बाध्य नहीं करती? यह एक नैतिक प्रश्न है हम अपनी बहनों को अपने स्वार्थों के लिये परेशान न करें, और पुरुष समाज को दहेज लेने से रोकें तभी यह समस्या हल हो सकती है। जब तक दहेज लेने वाले परिवार की बहनें, मातायें दहेज लेने में रुचि प्रकट करती रहेंगी, तब तक इस समस्या का हल ढूंढ़ना मृगतृष्णा ही होगी। राष्ट्र निर्माण के दायित्व को समझने वाली बहनों को इस समय एक बात की ओर भी अधिक ध्यान देना चाहिये वह है, आगामी निर्वाचनों में महिला मत दाताओं को उनके कर्तव्यों से परिचित कराना हमारे देश की स्त्रियाँ लज्जा-संकोचवश निर्वाचन जैसे सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने में हिचकिचाती हैं परन्तु सरकार की सबसे अधिक आलोचना करने का श्रेय महिला-समाज को ही प्राप्त है। भोजन-वस्त्र की समस्या और मँहगाई आदि के कारण वे दिन रात सरकार की तीव्र आलोचनाएं करती रहती हैं। आगामी निर्वाचनों में योग्य व्यक्तियों का ही चुना जा सके इसके लिये महिलाओं को अपने मताधिकार का पूर्ण प्रयोग करने के लिये उद्यत किया जाना चाहिये। इस कार्य के लिये अपने-अपने क्षेत्रों में हमें अपनी बहनों के पास जाना होगा और उन्हें मताधिकार का महत्व समझाना होगा। यदि इस दिशा में कुछ प्रगति हो सके तो तो महिला समाज में जागृति उत्पन्न हो सकेगी।

इस प्रकार महिला-समाज की उन्नति के लिये इस समय शिक्षा-पद्धति में सुधार दहेज-प्रथा-नाश के लिये महिलाओं में जागृति उत्पन्न करना, आगामी निर्वाचन के लिये महिलाओं को जागृत करना हमारा आज का कार्यक्रम होना चाहिये।

यदि महिला-नेतृत्व इन प्रश्नों को हल करने में संलग्न हो तो महिला समाज की अनेकों समस्याएँ हल हो सकेंगी।

—

ग्राम जीवन

हमारी ग्राम-पंचायतें

श्री मुरारीलाल द्विवेदी, बी० एस-सी०

प्राचीन भारत का राजनैतिक और सामाजिक जीवन ग्राम पंचायतों के द्वारा नियन्त्रित एवं संचालित था। यही कारण था कि नगरों पर विदेशी सभ्यता का प्रचुर प्रभाव होते हुए भी ग्रामों में भारतीय सभ्यता जीवित बनी रही। महात्मा गांधी समाज और राष्ट्र के अभ्युत्थान में पंचायत-प्रथा के महत्व को भली भाँति समझते थे, इसीलिये उन्होंने स्थान स्थान पर पंचायत राज्य की कल्पना की है। भारतीय संविधान का निर्माण करते हुए राज्य की प्रथम इकाई के रूप में पंचायतों के महत्व को स्वीकार किया गया है। हमारी सरकार ने अनेक राज्यों में पंचायत राज्य स्थापित करने की ओर सक्रिय कदम भी उठाये हैं। आज पंचायत राज्य के महत्व को सभी ने अपना लिया है, अब विचारणीय प्रश्न यह है कि नव-निर्मित पंचायतें क्या और कैसे प्रगति करें। पंचायतों का सर्व प्रथम आदर्श न्याय की भावना का प्रसार करना होना चाहिये। भारतीय ग्रामों की दलित जनता कथित उच्च वर्ग के अन्याय और अत्याचारों से पीड़ित है। पंचायत के पंचों का प्रथम कर्तव्य यह होना चाहिये कि वे सबको समान न्याय प्रदान करें। न्याय की भावना ही अन्त में पारस्परिक सौहार्द और बन्धु-भाव को जन्म देती है। ग्रामों में शिक्षा और स्वास्थ्य की समस्याएँ भी पंचायतों द्वारा ही हल की जानी चाहिये। पंचायत द्वारा प्रत्येक ग्राम में शिक्षालय, चिकित्सालय स्थापित किये जाने चाहिये। आज हमारी राज्य सरकारें "एलोपैथी" में अपनी अन्ध-श्रद्धा को समाप्त कर आयुर्वेदिक पद्धति की चिकित्सा को प्रोत्साहन देने का निश्चय करे तो इस दिशा में अच्छी प्रगति हो सकती है। शिक्षा और स्वास्थ्य की समस्याओं के साथ साथ कृषि सम्बन्धी सुधारों की दिशा में भी पंचायतें बहुत महत्वपूर्ण कार्य कर सकती हैं। सम्मिलित कृषि की भावना को प्रोत्साहन देकर राष्ट्र की श्रम शक्ति को उपयोग में लाया जा सकता है। अखबारों, रेडियो तथा अन्य प्रकार के प्रचार इस दिशा में उतने सफल नहीं हो सकते जितनी सफलता प्रत्येक पंचायत द्वारा कृषि-सुधारों को सक्रिय रूप में सिखलाने वाले व्यक्तियों के प्रचार से मिल सकती है।

ग्रामों के सामाजिक जीवन में सुधार करने में भी पंचायतें बहुत सहायक सिद्ध हो सकती हैं। ग्रामों में पंचायती बहिष्कार की प्रथा प्रचलित है, परन्तु इस प्रथा में अच्छी बुरी सभी बातों में बहिष्कार करने की नीति अपनायी जाने लगी है। यह अनुचित है और इसमें सुधार होना चाहिये। साथ ही समाज के स्वरूप का नव-निर्माण करने के लिये नयी मान्यताएँ स्थापित की जानी चाहिये। जो व्यक्ति सदाचारी न हो, भ्रष्टाचार और अवैध तरीकों का प्रयोग करता हो उसके सामाजिक बहिष्कार का निश्चय किया जाय। नैतिक भावना के प्रसार के लिये पंचायतें दैनिक सत्संगों का भी प्रचार कर सकती हैं। इस प्रकार भारत की ग्राम-पंचायतें नव-भारत के निर्माण में क्रान्तिकारी सहायता पहुंचा सकती है। यदि हमारा

सुझाव और सम्मतियाँ

शिक्षा-क्षेत्र में नया कार्य

गुरुकुलों की स्थापना के द्वारा आर्यसमाज ने शिक्षा जगत् में एक क्रान्ति कर दी थी। आज फिर उन्हें सामयिक आदर्श उपस्थित करने वाली संस्थाओं का रूप दिया जाना चाहिये। वेद शास्त्रों की स्वतन्त्र पाठविधि रखकर शेष को राज्य पाठ्यक्रम के अनुसार बनाकर सबकी प्रतियोगिता में उन्हें आगे लाना चाहिये। विद्यार्थियों में स्वावलम्बन की भावना का विकास करके हम गुरुकुलों को निःशुल्क भी बना सकते हैं। अपनी इस स्वतन्त्र शिक्षा पद्धति के साथ-साथ हमें अपनी शक्ति आश्रम-पद्धति के विकास पर एक अन्य प्रकार से भी केन्द्रित करनी चाहिये। पहले आर्यसमाज शिक्षा संस्थाएँ इसलिये खोलता था कि देश में उनका अभाव है पर अब तो राज्य और जनता दोनों का ही इस ओर ध्यान है। इसलिये हम उधर से ध्यान हटाकर आदर्श बोर्डिङ्ग हाऊसों की स्थापना में अपनी शक्ति लगायें तो युवकों के चरित्र निर्माण में अधिक सफलता प्राप्त कर सकते हैं। आशा है, आर्य जन इन विचारों पर ध्यान देंगे।

—चन्द्रमणि विद्यालंकार
देहरादून

आ० कु० सभाओं की उन्नति

आर्यसमाज में तरुण-रक्त के बहुत से सुझाव प्रकाशित हुए हैं उन सबकी उपयोगिता विचारणीय है। जो युवक हमारे विचार-क्षेत्र में आगये हैं उनके प्रति हम क्या आदर्श उपस्थित करें वह भी गम्भीर प्रश्न है। आर्यकुमार सभाएँ तो हमने बनाली हैं पर उनके पुस्तकालयों में आदर्श साहित्य हम नहीं पहुँचा रहे। यदि हमारी सभाओं के पुस्तकालयों में आदर्श साहित्य न मिल कर सर्वत्र उपलब्धि योग्य औपन्यासिक साहित्य एवम् अश्लील साहित्य ही युवकों को प्राप्त हो तो हमारा प्रयत्न कैसे सफल हो सकता है। आ० कु० सभाओं के प्रधान, मन्त्रियों की योग्यता भी विचारणीय है, यज्ञवेदी पर बैठते समय उचित वेषभूषा का उनमें अभाव, सन्ध्या-हवन के मन्त्रों का स्मरण न होना, अशुद्ध स्मरण होना, आ० कु० सभा के उद्देश्यो नियमों आदि से उनका अपरिचित होना, सभा के कार्यों में सहयोग और प्रेम की भावना का अभाव इत्यादि रहते सभा का वे कैसे उद्धार कर सकते हैं। आ० कु० सभा के अधिकारियों का ध्यान इन आवश्यक बातों की ओर जायगा तभी कुछ प्रगति हो सकेगी अन्यथा हमारी आ० कु० सभाएँ एक क्लब से अधिक कोई आदर्श उपस्थित न कर सकेंगी। इस कार्य के लिये सभा 'आदर्श-जीवन' नामक एक पत्र का प्रकाशन आरम्भ कर सके तो कार्यकर्ता युवको का उचित पथ-प्रदर्शन हो सकेगा।

—ओंकारशरण प्रणव,
विलासपुर

पंचायती राज्य सफल हो गया तो हमारे कर्णधार आन्तरिक भय से मुक्त हो देश को बाह्य शक्तियों से बचाने के लिये पूर्णतया प्रयत्नशील हो सकेंगे।

उन्नति का मार्ग

आर्य सम्मेलन के अवसर पर प्रत्येक आर्य को पारिवारिक सत्संग का व्रत लेना चाहिये, ऐसे व्यक्तियों को समाज का अधिकारी न बनाने का निश्चय किया जाना चाहिये जो सन्ध्या-हवन, और समाज के कार्य क्रम में रुचि नहीं रखते, वेद प्रचार के कार्य में सहयोग देने वाले व्यक्तियों को वैतनिक अवैतनिक रूप से आदर अनादर देने की भावना को समाप्त करने का निश्चय किया जाय, समाज में अतिथि-सत्कार के आदर्शों की स्थापना का हम निश्चय करें। इन तथा ऐसे ही अन्य निश्चयों और उनकी कार्यरूप में परिणति द्वारा ही हम अपनी उन्नति कर सकेंगे।

—धर्मवीर आर्य झंडाधारी

स्वतन्त्र और समानान्तर सम्मेलन

आर्य समाज में विभिन्न विषयों के स्वतन्त्र और समानान्तर सम्मेलन स्थापित करने की प्रथा बढ़ रही है। आर्य-समाजों के उत्सवों पर गौरवशील व्यक्तियों को सभापति बनाने और कुछ व्याख्यानों के लिये ऐसा किया जाय तो कोई हानि नहीं। परन्तु प्रायः इस प्रकार के सम्मेलन इस लिये जाते हैं कि किसी विशेष विषय का प्रचार करके यह दिखाया जाय कि जनता अमुक विषय के पक्ष में नहीं है। ऐसे सम्मेलन वास्तविक प्रतिनिधित्व से रहित होते हैं परन्तु जनता को धोखा अवश्य हो जाता और वह उनके निर्णयों को आर्यसमाज का निर्णय मानने लगती हैं। 'आर्यमित्र' के १३ सितम्बर के अंक में मेरे एक भाई ने आर्य विद्वत्परिषद् की आयोजना का प्रस्ताव किया है उनका आशय कितना ही उच्च हो इस प्रकार की स्वतन्त्र परिषद् आर्य समाज के संघटन को बल हीन ही बनायेगी शक्तिशाली नहीं। मेरे विचार से स्वतन्त्र और समानान्तर सम्मेलनों और परिषदों के स्थान में विशेषज्ञों की अस्थाई समितियों की सभाओं द्वारा स्थापना अधिक उपयोगी सिद्ध होगी। यदि किसी समाज को किसी विषय पर विशेषज्ञों की अनुमति की आवश्यकता हो तो सभाए उसी विषय के विशेषज्ञों की अस्थाई समिति बना सकती है। जैसे यदि व्याकरण का विषय है तो वैय्याकरणों की यज्ञ का विषय है तो याज्ञिकोंकी, कानून का विषय है तो कानून जानने वालों की। परन्तु उनको सम्मेलन कहना भूल होगी। और वे समितियाँ उसी काल और उसी विषय के लिये होंगी। ऐसी समितियाँ सभाओं द्वारा नियुक्त होने के कारण अपना महत्व भी रक्खेंगी। आशा है, नये-नये सम्मेलनों और परिषदों के प्रस्तावक और समर्थक इस दृष्टि से विचारने की कृपा करेंगे।

—गंगाप्रसाद उपाध्याय

'सप्त सूत्री योजना'

१—आर्यसमाज की उन्नति के लिये एक नेता की परमावश्यकता है। इस कार्य के लिये निर्वाचित नहीं आत्मसमर्पित नेता की आवश्यकता है। २—आर्यसमाज की तत्काल शुद्धि की जानी चाहिये, स्वामीजी ने आर्य के जो लक्षण लिखे हैं उनसे रहित व्यक्ति किसी भी प्रकार आर्यसमाज में न रहने पावें। ३—आर्यसमाज के साहित्यिक एवं प्रचार के लिये देहली में सार्वदेशिक सभा द्वारा केन्द्रीय आर्य पुस्तकालय एवं अनुसन्धान-शाला की स्थापना की जानी चाहिये। ४—आर्यसमाज में वानप्रस्थ और सन्यास आश्रमों के सुधार और उद्धार की ओर ध्यान दिया जाना चाहिये। ५—आर्यसमाज ब्राह्म धर्म के साथ-साथ क्षात्र धर्म की ओर भी अपना ध्यान दे और जनता के दुख सुखों में हिस्सा बटाना आरम्भ करे। ६—देश में बढ़ती हुई साम्प्रदायिकता को रोकने में ऋषि के 'सत्यार्थ प्रकाश' का उपयोग किया जाय। देश को साम्प्रदायिकता से मुक्त करने के लिये इस ग्रन्थ को आर्यसमाज बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों, विद्वानों और सर्वसाधारण में पहुँचाने के लिये कठिन श्रम करे। ७—मथुरा जन्म शताब्दी के बाद से आर्यसमाज के जीवन में जो शिथिलता आ गयी है उसे दूर करने के लिये एक सक्रिय योजना बनाई जाय। उपर्युक्त विचारों की सफलता के लिये संन्यासी वर्ग को आगे आने की आवश्कता है। आशा है सम्बन्धित आर्यजन इस दिशा मे विचार करेंगे और सम्मेलन के अवसर पर कोई ठोस कदम उठाने का निश्चय करेंगे।

—स्वामी मेधानन्द सरस्वती
देहली

दयानन्द शिक्षा-संस्थाएं

आर्यसमाज ने शिक्षा-क्षेत्र में जो क्रान्ति की थी भारत के इतिहास में वह स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाने वाला कार्य है, पर आज हमारी विशेषता समाप्त हो चुकी है। हमारे डी० ए० वी० शिक्षणालय सरकारी पाठ्यक्रम की पूर्ति के साधन यन्त्र मात्र रह गए हैं। न उनमें धार्मिक वातावरण है

और न प्राचीन साहित्य के अध्ययन की व्यवस्था, महात्मा हंसराज जी ने जिन आदर्शों और समन्वय की भावना को सामने रखकर डी० ए० वी० शिक्षा-पद्धति की नींव डाली थी आज वह स्प्रिट समाप्त हो चुकी है और इन संस्थाओं के संचालन का महत्व सामाजिक से व्यक्तिगत अधिक हो गया है। आर्यजनता को अपनी इतनी बड़ी शक्ति का अपव्यय होने से रोकना चाहिये। उत्तर प्रदेश में ३०० से अधिक आर्य शिक्षण संस्थाएं हैं। इतनी बड़ी शक्ति द्वारा हम पुनः क्रान्ति-पथ के पथिक बन देश को नया मार्ग नहीं दिखा सकते। मेरा सुझाव है कि देश के सम्पूर्ण डी० ए० वी० शिक्षणालयों की एक केन्द्रीय समिति बनाई जाय और वही जिस नये पाठ्यक्रम का निर्धारण करे उसे ही सर्वत्र प्रचलित किया जाय। युवकों के चरित्र निर्माण और भारतीय जीवन के प्रति उनमें आकर्षण लाने के लिये हमें सघटन, दृढ़ता और विश्वास के साथ आगे बढ़ना होगा। अपनी पाठ-विधि के संचालन में यदि हमें राज्य के असहयोग का भी सामना करना पड़े तो उसके लिये तैयार रहना होगा। आशा है आर्यजन इस सुझाव पर विचार करेंगे।

—रोशनलाल गुप्त, आगरा

एक आवश्यक निर्णय

भारतीय स्वाधीनता संग्राम की विजय के लिये आर्यसमाज ने जो क्रान्तिकारी कार्य किया था वह स्वर्ण अक्षरों में लिखा जायगा परन्तु क्या हमारा कार्य पूरा हो गया, क्या अब हाथ पर हाथ धरे बैठ कर हम ऋषि के मिशन को आगे बढ़ा सकते हैं यदि नहीं तो हमें संसार को उपदेश देने से पहले आत्म-निरीक्षण करना होगा। हम जोश के साथ उफनते बहुत हैं परन्तु करते कुछ नहीं, अब ऐसे काम नहीं चल सकता, हमें देश के काम के लिये प्रथम पंक्ति में आने के लिये तय्यार होना चाहिये। यद्यपि हमारा आदर्श तप और त्याग किसी स्वार्थ के लिये नहीं था और न है परन्तु आज देश की नैतिक पतन सम्बन्धी अवस्था को देखकर हमें क्रान्तिकारी कदम उठाने का निर्णय करना होगा। विगत कलकत्ता आर्य महासम्मेलन में विषय निर्धारिणी समिति में आर्यसमाज को राजनीति में भाग लेने के लिये प्रस्ताव आया था, इस सम्बन्ध में उचित रिपोर्ट देने के लिये एक उपसमिति भी बना दी गयी थी उसकी रिपोर्ट प्रकाशित हो चुकी है परन्तु कोई ठोस कदम नहीं उठाया गया। मेरठ में हमें फिर अवसर प्राप्त होगा वहाँ यदि एक बार आर्य समाज राजनीति में भाग लेने का निर्णय कर सके तो समाज की शिथिलता समाप्त हो जायगी और सारी शक्ति एक निश्चित योजना की सफलता में जुट जायगी। मैं आर्यसम्मेलन में आने वाले भाइयों से इस प्रश्न पर गम्भीर और अन्तिम निर्णय करने की प्रार्थना करूंगा।

—कन्हैयालाल मिश्र, बम्बई

विज्ञान-वार्ता

स्वप्न के कारण

प्रोफेसर रत्नसिंह, एम० ए०

स्वप्न मनुष्य का एक सामान्य अनुभव है। स्वप्न हमें प्रत्येक दिन होता है परन्तु हम अपने अनेक स्वप्न जागते ही तुरन्त भूल जाते हैं। प्राचीन समय से ही मनुष्य स्वप्न देखता आ रहा है और उसके बारे में भी कुछ न कुछ चर्चा करता आ रहा है। प्राचीन काल में ही स्वप्न के अर्थ बताने वाले व्यक्ति भी विद्यमान रहे हैं। अपने आपको जानने के लिये स्वप्न का समझना अति आवश्यक है। यहाँ पर हम स्वप्न का स्वरूप बतलाकर संक्षेप में उसके प्रमुख कारणों का वर्णन करेंगे।

स्वप्न एक प्रकार की कल्पना है। कल्पना को समझने के लिए महर्षि दयानन्द द्वारा रचित "व्यवहार भानु" में वर्णित शेखचिल्ली का उदाहरण सहायक सिद्ध होगा। चार आने की मजदूरी करने वाले शेखचिल्ली ने मन ही मन मुर्गी, बकरी, गाय खरीद ली, विवाह भी कर लिया और वह भी एक नहीं बल्कि दो। पत्नियाँ भी आगईं और बच्चे भी हो गए। परन्तु वास्तविक जगत् में सब कुछ शून्य। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि यदि उस शेखचिल्ली को मुर्गी, बकरी, गाय, विवाह, पत्नी और बच्चे शब्दों का भूतकाल में अनुभव न हुआ होता तो वह इनकी कल्पना कदाचित् न कर सकता। कहीं उसने मुर्गी देखी, कहीं बकरी, किसी का विवाह देखा, किसी की पत्नी और किसी के बच्चे। परन्तु इन सब अनुभवों को उसने अपने से सम्बन्धित करके अपना एक परिवार ही बना डाला। इस प्रकार स्पष्ट है कि कल्पना में हम गतानुभव को एक नया स्वरूप प्रदान कर देते हैं। यदि गतानुभव न हो तो कल्पना भी न हो। स्वप्न में भी यही सिद्धान्त काम करता है। स्वप्न में भी हम कोई ऐसी घटना नहीं देखते, जिसका अनुभव हमें भूतकाल में न हुआ हो। परन्तु कल्पना की भाँति स्वप्न उन अनुभवों को नया स्वरूप प्रदान कर देता है। यही कारण है कि जन्मान्ध व्यक्ति को कभी रूप का स्वप्न नहीं होता।

स्वप्न जिन उत्तेजनाओं के कारण होता है उन्हें हम मुख्यतः दो भागों में विभाजित कर सकते हैं—शारीरिक तथा मानसिक। शारीरिक उत्तेजना भी दो प्रकार की होती हैं। हमारी आपस की परिस्थिति से उत्पन्न तथा शरीर के विकारों से उत्पन्न। हमारे शयन करने का स्थान यदि दुर्गन्ध युक्त है तो हमारे स्वप्न भी गन्दे होंगे। मुँह ढककर सोने से भी गन्दे स्वप्न आते हैं। मुँह ढकने से गन्दी वायु हमारे मस्तिष्क में जाती रहती है। उससे मस्तिष्क में दर्द पैदा हो जाता है। यही दर्द गन्दे स्वप्न का कारण बन जाता है। यदि कोई व्यक्ति रात्रि में खुले पैर सो रहा हो जिससे कि उसके पैरों पर ओस का प्रभाव पड़े तो उसे स्वप्न दिखाई देगा कि वह पानी में चल रहा है। एक बार एक आदमी ने स्वप्न देखा कि उसका गला कोई दबा रहा है, इतने में उसकी आँख खुल गई। जागने पर उसे ज्ञात हुआ कि मच्छरदानी का एक डण्डा ढीला होने के कारण उसके गले पर पड़ा हुआ है।

कभी-कभी हमारी शारीरिक उत्तेजनाएँ भी स्वप्न का कारण होती हैं। जिस आदमी को कब्ज की शिकायत रहती है उसे प्रायः गन्दे स्वप्न दिखाई दिया करते हैं। बीमारी की दशा में मनुष्य को बड़े भयंकर स्वप्न दिखाई दिया करते हैं। गन्दे स्वप्नों से छुटकारा पाने के लिये रात्रि के समय हल्का भोजन करना श्रेयस्कर रहता है।

शारीरिक उत्तेजनाओं के अतिरिक्त स्वप्न के प्रमुख कारणों में मानसिक उत्तेजनाएं भी हैं। नींद के पूर्व के विचार भी स्वप्न के कारण होते हैं। आर्यसमाज के वार्षिकोत्सवों के अवसर पर रात्रि में प्रायः हमें वे ही घटनाएं स्वप्न में दिखाई दे जाती हैं, जो कि रात्रि के व्याख्यान में हमने सुनी थीं। हम उन्हीं पर विचार करते करते सो जाते हैं और रात्रि में वे ही किसी न किसी रूप में हमें स्वप्न में दिखाई दे जाती हैं। इस दृष्टि से अच्छे स्वप्नों के लिये आर्यों के दैनिक समय विभाग में सोते समय पढ़े जाने वाले शिव संकल्प मन्त्र अति महत्वशाली तथा श्रेयस्कर हैं।

हमारे स्वप्न के यही सामान्य कारण हैं, किन्तु फ्रायड महोदय के स्वप्न सम्बन्धी सिद्धान्त ने मनोविज्ञान के जगत् में वर्तमान काल में क्रान्ति मचा दी है। फ्रायड के अनुसार हमारे स्वप्नों का कारण अतृप्त दबी हुई इच्छाएँ हैं। जागृतावस्था में हमारे मन में विविध इच्छाएं उत्पन्न होती रहती हैं। उनमें से कितनी इच्छाएं अनैतिक होती हैं, जिनकी तृप्ति समाज नहीं होने देती। हमारा मन ऐसी इच्छाओं का दमन कर देता है। ये इच्छाएँ नष्ट नहीं होतीं, इनका दमन अवश्य हो जाता है। ये इच्छाएँ मन की अचेतनावस्था में चली जाती हैं। निद्रावस्था में अचेतन मन का साम्राज्य हो जाता है। उस समय हमारी दबी हुई इच्छाओं को तृप्ति का उचित अवसर मिल जाता है। इसलिये

साहित्य-सौरभ

संस्कार विधि विमर्श— लेखक श्री प० अत्रिदेवजी गुप्त विद्यालङ्कार भिषगरत्न—प्रोफेसर हिन्दू यूनवर्सिटी आयुर्वेद विभाग बनारस। मूल्य ३) रु०

उक्त पुस्तक संस्कार विधि की टीका है। संस्कार विधि की वैसे तो सबसे बृहत् एवं विस्तृत टीका "संस्कार-चान्द्रिका" है पर उक्त 'विमर्श' में आयुर्वेद के प्रसिद्ध विद्वान् ने केवल आयुर्वेद की दृष्टि को ही रखते हुए विस्तृत आलोचना की है, किस संस्कार में कौन-सा कार्य आयुर्वेद की दृष्टि से महत्वपूर्ण है—यह खूब दर्शाया है। चरक,काश्यप संहिता अष्टाङ्ग हृदय, सुश्रुत, उपनिषद्, पुराणादि के आधार पर प्रत्येक संस्कार का सूक्ष्म विवेचन किया है। गर्भाधान संस्कार में, समय, वीर्य, गुण, दोष गर्भस्थिति, ब्रह्मचर्य, गर्भयोग्य आयु, विधि, बीज, आदि विषयों पर पर्याप्त विचार किया गया है। पुंसवन में किन द्रव्यों का सेवन करावे यह आयुर्वेद की दृष्टि से सोचा गया है। सीमन्तोन्नयन में दौहृद के कारणों पर जैसा प्रकाश डाला है वैसा हमने अन्यत्र नहीं देखा। जातकर्म में उपयुक्त पदार्थों की परीक्षा आयुर्वेद के दृष्टिकोण से अत्युपयोगी सिद्ध हुई है। निष्क्रमण में बालरक्षा प्रकार व साधनों पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। विवाह संस्कार में 'गौ' के लाभों पर आयुर्वेद आदि की दृष्टि से पर्याप्त विचार किया गया है। सबसे अधिक विस्तृत विचार गर्भाधान संस्कार पर किया गया है इस पुस्तक का 'परिशिष्ट' बड़े महत्व का है—जिसमें सारे संस्कारों के योग्य पदार्थों पर सिंहावलोकन न्याय से विचार किया है। ऐसी सुन्दर रचना के लिए श्री प्रो० अत्रिदेवजी निःसंदेह सारे ही आर्यजगत् के प्रशंसाभाजन एवं धन्यवाद के पात्र हैं।

समय की रागिनी (कविता-संग्रह) रचयिता श्री अम्बादत्त शर्मा 'अम्ब'। प्रकाशक अम्ब पुस्तक-भण्डार, हरदुआगंज (अलीगढ़) पृष्ठ संख्या ३२। मूल्य चार आना।

प्रस्तुत पुस्तक अम्बजी की समय-समय पर रची हुई कविताओं का संग्रह है। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, इसमें आज के युग की छोटी-बड़ी अनेकों समस्याओं का राग गाया गया है। एक सुकवि के नाते अम्बजी ने बड़ी निर्भयता के साथ अपने विचारों को प्रकट किया है। दुर्भाग्य से कुछ कवियों में चाटुकारिता की भावना बढ़ गयी है, उसका उनमें अभाव है। दुरंगी-दुनिया, 'रामनाम जपना पराया माल अपना', 'कलयुगी ब्राह्मण' 'भारत के वणिक' 'ब्लैक मारकेट में' 'रिश्वत-रानी की कहानी रह जायगी' 'राम-राज्य निर्माण करो' 'आप अवसरवादी हैं' 'बालकों को आप अंगरेजी ही पढ़ाते हैं' इत्यादि कविताएँ सामयिक और उपयोगी हैं। पुस्तक के अन्त में कवि-सम्मेलन दोहावली का भी संग्रह है जिसमें तार समस्या की पूर्ति में अनेक कवियों के दोहे हैं। अल्प मूल्य की यह पुस्तक बड़ी उपयोगी और पठनीय है। आशा है, अम्बजी अब और अधिक गम्भीर रचनाओं द्वारा साहित्य भण्डार की श्री वृद्धि करेंगे।

—

ये ही अतृप्त इच्छाएँ स्वप्न के द्वारा अपनी तृप्ति कर लेती हैं। फ्रायड के इस स्वप्न-सिद्धान्त में सत्यता का अंश अवश्य है परन्तु संस्कारों के प्रभाव से भी इस सिद्धान्त के अनुयायी इन्कार नहीं कर सकते। शिव संकल्प की भावना अच्छे संस्कारों के निर्माण में पर्याप्त सहायता देती है। इस कारण स्वप्न के विविध कारणों पर विचार कर हम जीवन-निर्माण में उनके महत्व को ध्यान में रखना चाहिये।

—

शिक्षा-समस्या

बीमारी का इलाज

स्ना० भूदेव शास्त्री एम० ए० सिद्धान्त शिरोमणि

(२)

१३ सितम्बर के आर्यमित्र में प्रकाशित उपर्युक्त शीर्षक लेख की अभीष्ट दिशा में कोई अधिकृत प्रतिक्रिया हुई हो इसका पता नहीं चला है परन्तु गुरुकुल-हितैषी अनेक मित्रों ने इस प्रश्न पर अपनी रुचि अवश्य प्रकट की है। मैं भी अनुभव करता हूँ कि सभा अपने कोष से गुरुकुल के संचालन का उत्तरदायित्व निभा सकेगी यह सम्प्राप्त सम्भव नहीं है। मेरे दूसरे प्रस्ताव के साथ अनेक मित्रों ने प्रायः सहमति प्रकट की है, और उक्त दिशा में उपयुक्त योजना प्रस्तुत करने का आग्रह किया है। गुरुकुल और आर्यप्रतिनिधि सभा के पारस्परिक सम्बन्धों को दृष्टि में रखते हुए वृन्दावन गुरुकुल के लिये निम्न प्रकार की प्रबन्ध व्यवस्था के सुझाव पर विचार किया जा सके तो गुरुकुल के विश्वविद्यालय स्वरूप का रक्षा भी हो सकेगी और आर्यसमाज का वरदहस्त उसपर बना रहेगा। गुरुकुल के लिये एक स्वतन्त्र स्वामिनी सभा का निर्माण किया जाय। प्रत्येक आर्य सदस्य जो वर्ष में बारह रुपया चन्दा दे सके इस सभा का सदस्य बन सके। इस प्रकार के साधारण सदस्यों की बृहत्सभा गुरुकुल का प्रबन्ध करने के लिये एक प्रबन्ध कर्तृ सभा का निर्वाचन करेगी। इस प्रबन्ध कर्तृ सभा की सदस्य संख्या १५ हो और उसका सभापति जिसे कुलपति की संज्ञा दी जाय ये १५ व्यक्ति ही चुनें। इन १५ व्यक्तियों में से १० व्यक्तियों का निर्वाचन साधारण सभा करे और २ प्रतिनिधि आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के बृहदाधिवेशन द्वारा निर्वाचित, और दो प्रतिनिधि पंजीकृत स्नातकों के प्रतिनिधि तथा १ ब्रह्मचारियों के संरक्षकों का प्रतिनिधि हो। इस प्रकार संघटित होने वाली प्रबन्ध-समिति अधिक प्रतिनिध्यात्मक एवं जन-

—

युवक अक्टूबर १९५१ (मासिक पत्र) प्रबन्ध सम्पादक श्री प्रेमदत्त पालीवाल। वार्षिक मूल्य ३॥) एक प्रति का ।=), प्रकाशक युवक-कार्यालय ३, विजयनगर कालोनी आगरा।

'युवक' विगत ६ मास से युवकों में जीवन-जागृति का आदर्श उपस्थित करने का प्रयत्न कर रहा है। प्रस्तुत अङ्क में युवक जीवन में उद्बोधन, उत्साह और आदर्श का सन्देश देने वाली रचनाओं का उत्तम संग्रह किया गया है। श्री सोहनलाल द्विवेदी की कविता, श्री रामनाथ सुमन का 'समाज निर्माण में प्रतीक का महत्व, श्री विजय लक्ष्मी पण्डित का 'युवकों को मानव अधिकारों के नये युग का निर्माण करना है' 'युवकों के सम्मेलन एक तुलना' आदि लेखों द्वारा युवकों को आदर्श पथ दिखाया गया है। गान्धी-जयन्ती के अवसर पर युवक गान्धीजी के आदर्श जीवन का सन्देश भी युवकों तक लेकर पहुँचा है, 'महात्मा एक दिव्यात्मा', बापू से, बापू का महाप्रयाण, गांधीजी के गांव, गांधीजी के सम्बन्ध में अच्छा प्रकाश डालते हैं इनके अतिरिक्त श्री कृपाशङ्कर शर्मा एम० ए० द्वारा लिखित 'कौन बदतमीज', श्री राल्फ का 'अनन्त की ओर' आचार्य विनोबा भावे का 'अपने ग्राम को गोकुल बनायें' आदि लेख, तथा श्री सुमित्रानन्दन पंत की 'युग परिवर्तित संगीत' और श्री जयशंकर प्रसाद की पावन-प्रभात कविताएं सुन्दर सम्पादन की अभिव्यक्ति करती हैं। धारावाहिक नाटक 'सर्विस' तुरगनेव की लघुकथा 'मूर्ख' आदि ने पत्र की शोभा को और भी बढ़ा दिया है। इस प्रकार के कलापूर्ण और अच्छे पत्र का हम हार्दिक सफलता चाहते हैं और आशा करते हैं कि 'युवक' युवकों में जहाँ जीवन जागृति पैदा कर सकेगा वहाँ उनमें नैतिक भावना उत्पन्न करने में भी उसे सफलता प्राप्त होगी। सुन्दर कागज और अच्छी छपाई, आर्ट पेपर के कलापूर्ण मुखपृष्ठ आदि के लिये भी प्रकाशक महोदय प्रशंसा के पात्र हैं।

—आ० स० डोईवाला, रामपुर, प्रेमनगर और मसूरी में श्री वैद्य अमरनाथजी ने आर्य-सम्मेलन का सन्देश सुनाया और अधिक से अधिक संख्या में प्रतिनिधि भेजने की प्रेरणा की।

—आ० स० कायमगंज के उत्साही कार्यकर्ता श्री जगन्नाथप्रसाद ने अपने स्वास्थ्य लाभ के उपलक्ष में यज्ञ कराया और २०) दान दिये। श्री वेदमित्रजी ने आर्यवीर दल की परेड करायी, आर्यवीरों में बड़ा उत्साह उत्पन्न किया।

—आ० स० कांठ (मुरादाबाद) में राजगुरु श्री प० धुरन्द्र शास्त्री ने उपदेश दिया। समाज की ओर से १०१) आर्य सम्मेलन के लिए उन्हें भेंट किये गये।

—आ० स० दौरोला (मेरठ) का उत्सव १२ से १४ अक्टूबर तक बड़े समारोह के साथ मनाया गया।

प्रिय होगी, ऐसा मेरा विश्वास है। उपर्युक्त योजना बनाते समय जहाँ जन-सम्पर्क तथा विशेष हितों का ध्यान रक्खा गया है, वहाँ मूल में सदस्यता के लिये आर्यसमाज का सदस्य होने की शर्त से गुरुकुल को बाह्य व्यक्तियों के हाथ में न जाने देने के सिद्धान्त का रक्षा भी की गई है। यही नहीं आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के दो प्रतिनिधियों के लिये स्थान सुरक्षित रखने के सिद्धान्त से सभा और गुरुकुल के परम्परागत सम्पर्क का निर्वाह भी हो जायगा। यदि इस योजना पर गम्भीरता से विचार किया जा सके तो हम बीमारी का इलाज करने में अवश्य सफल हो सकेंगे।

गुरुकुल के गौरव की सुरक्षा और महान् दायित्व को पूर्ण करने की आज सबसे अधिक आवश्यकता है। संचालकों द्वारा इस संस्था के सम्बन्ध में शीघ्र ही ध्यान न देने से प्रतिनिधि सभा के गौरव को हानि तो हो ही रही है संस्था का अस्तित्व भी खतरे में पड़ता जा रहा है, जिससे हितैषियों को बड़ा कष्ट भी हो रहा है और बाद में दुख होगा। इस दिशा में सभी आर्य जगत् की व्यापक चिन्ता क्या अधिकारियों को कुछ करने की आत्म प्रेरणा कर सकेगी।

—

आर्यजगत

—आ० स० नैनीताल में इस वर्ष वेद-प्रचार सप्ताह विशेष समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। श्री हीरानन्द पाराशर शास्त्री के गम्भीर और ओजस्वी भाषणों का जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

—आ० स० सण्डीला (हरदोई) के सदस्य श्री जमुनाप्रसाद मिश्र के आकस्मिक निधन पर समाज में शोक प्रकट किया गया।

—आ० स० झमरी (कानपुर) में श्री स्वामी ईश्वरानन्द का भाषण हुआ।

—आ० स० चाऊपुरा मसवासी (रामपुर) में कु० प्रतापसिंह आर्य मुसाफिर ने प्रचार किया।

उत्सव

—आ० स० महावीरगंज (लखनऊ) का उत्सव ९ से ११ नवम्बर तक।

—आ० स० नगरा (झांसी) के श्री गंगाप्रसाद शर्मा की माता श्री श्यामतीज के निधन पर सार्वजनिक सभा में शोक प्रकट किया गया। माताजी के दुखद महाप्रस्थान के कारण सब लोग दुखी हैं। प्रभु से प्रार्थना है कि वह उपर्युक्त आत्माओं को सद्गति और परिवार को धैर्य की शक्ति प्रदान करें।

—आ० स० भोलेपुर (फतहगढ़) में हिन्दू कोड बिल और 'शहनाह शरीयत' की शरारत के विरुद्ध प्रस्ताव पास किये गये।

—आ० स० राजामण्डी (आगरा) का उत्सव ४ से ७ नवम्बर तक।

—आ० स० मल्लावाँ (हरदोई) का उत्सव आर्यसम्मेलन के कारण स्थगित कर दिया गया।

—आ० स० बाराबंकी का उत्सव ३१ अक्टूबर से ३ नवम्बर तक होगा। श्री प० विद्यानन्दजी इस अवसर पर अवश्य पधारने की कृपा करें।

निर्वाचन

—आ० स० अर्जुनगंज—प्रधान—श्री रामभरोसेलाल और मन्त्री—श्री गुलजारीलाल आर्य।

—आ० स० जलाली—प्रधान—श्री मा० सरदारसिंह और मन्त्री—श्री लोकमणिदास।

—आ० प्र० नि० सभा मध्य प्रान्त का बृहदधिवेशन नागपुर में सम्पन्न हुआ प्रधान श्री घनश्यामसिंह गुप्त और मन्त्री श्री इन्द्रदेवसिंह चुने गये।

—आ० स० चाऊपुरा मसवासी (रामपुर) प्रधान श्री शान्तिस्वरूप सक्सेना और मन्त्री श्री लखपति सिंह।

—

[छठे पृष्ठ का शेष]

सुन्दर सीले बेच कर इस कार्य के लिये चन्दा एकत्र किया जाता है।

भारत में भी क्षय की बढ़ती हुई बाढ़ को रोकने के लिये गत वर्ष गांधी जयन्ती के अवसर पर क्षय-मुद्रा की बिक्री का आन्दोलन आरम्भ किया गया था। २५ करोड़ के इस विशाल देश में इस आन्दोलन के द्वारा केवल १० लाख रुपया ही संगृहीत हो सका, यह जनता की उदासीनता का परिचायक है। फिर भी इस दिशा म हिम्मत से काम करने का जरूरत है। इस वष पुन गांधी जयन्ती पर क्षय मुद्रा आन्दोलन आरम्भ किया गया है। स्कूलों, कालिजों, अस्पतालो, सरकारी कार्यालयो, सार्वजनिक सस्थाओं सभी को इस आदोलन में पूर्ण सहयोग देना चाहिये।

उपर्युक्त सहयोग के उपर ही यक्ष्मा पर विजय प्राप्त कर सकना अवलम्बित है। जनता का इस ओर अधिकाधिक ध्यान और रोग से बचने के लिये सावधानी ही इस दुष्ट व्याधि से राष्ट्र को मुक्त बना सकती है। जितना अधिक सहयोग प्राप्त होगा सरकार उतन ही उत्तम साधनो, अधिक सेनीटोरियमों आदि के द्वारा जनता की सुरक्षा करने में सफल होगी। प्रत्येक राष्ट्र प्रेमी और राष्ट्र हितैषी का कर्तव्य है कि वह शासन-सत्ता से चाह कितना ही अधिक राजनैतिक मतभेद क्यों न रखता हो, परन्तु यक्ष्मा विरोधी सब हितैषी काय में सरकार को पूण सहोयग दे और दिलावे।

आर्य महासम्मेलन समाचार

सम्मेलन की तय्यारियाँ

सप्तम् सावदेशिक आर्य महासम्मेलन २७ अक्टूबर से १ नवम्बर ५१ तक मेरठ नगर में नौचन्दी के मैदान में होगा। स्वागत-समिति का कार्यालय नौचन्दी के मैदान में एक विशाल पण्डाल बनाने समाजों के प्रतिनिधि तथा दर्शकों के ठहरने आदि के प्रबन्ध कराने में व्यस्त हैं। स्वागत-समिति के कितने ही कार्यकर्ता धन-संग्रह तथा प्रचार काय में लगे हुए हैं। कार्यालय में फोन लग गया है जिसका नं० ३०६ है। प्रान्तीय सरकार के स्वास्थ्य-विभाग और नगर पालिका के सफाई तथा जल-विभाग स्वागत समिति का पूर्ण सहयोग कर रहे हैं। यातायात की सुविधाओं के लिये पूरा प्रयत्न किया जा रहा है। मेरठ शहर के स्टेशन पर यात्रियों को उतरना होगा। वहीं से नौचन्दी मैदान के लिये मोटर बस, रिक्शा तथा तांगे मिलेंगे। मेरठ क्षेत्र में रोडवेज की कुछ अधिक मोटर बसें उन दिनों चलवाने का भी प्रयत्न किया जा रहा है। बाहर से आने वाले परिवारों के लिये किराये पर छोटी-बड़ी छोलदारियां, छोटे बड़े डेरे मिल सकेंगे दर ५ रु०, ८ रु० १५ रु० तथा २५ रु० होंगी। डेरों में बिजली का पूरा प्रबन्ध रहेगा। आर्य सम्मेलन संसार के आर्यों का एक महा मेला होगा। इसकी सफलता पर आर्य समाज की उन्नति निर्भर करती है। अतः सभी आर्य भाई बहिनों को इसमें योग देना आवश्यक है।

विश्वम्भर सहाय प्रेमी
प्रकाशन मन्त्री

—

सम्मेलन के लिये प्रतिनिधि

भारतवर्ष तथा विदेश के समाजों के एक हजार से अधिक प्रतिनिधियों के सम्मेलन में भाग लेने के लिये इस सभा में नाम अब प्राप्त हो चुके हैं। समस्त भारतवर्ष के सम्मेलन में भाग लेने वाले दर्शकों की संख्या तो सहस्त्रों में इस कार्यालय में प्राप्त हो चुकी है। आर्य जनता में सम्मेलन के लिये बड़ा उत्साह है जिन समाजों ने अभी तक अपने प्रतिनिधि सदस्यों की सूची नहीं भिजवाई है उन्हें तुरन्त ही यह सूची इस सभा के कार्यालय में भिजवा देनी चाहिए। प्रतिनिधि शुल्क ५) है। उसे भिजवाने की आवश्यकता नहीं है वह सम्मेलन के समय ही प्रतिनिधियों से लिया जायगा। समाजों को अपने प्रतिनिधियों तथा दर्शकों की ठीक-ठीक संख्या का पता स्वागत-समिति-कार्यालय मेरठ को दे देना चाहिये ताकि स्वागत-समिति को उनके ठहराने आदि की व्यवस्था कराने में सुविधा हो।

ज्ञानचन्द
मन्त्री, सार्वदेशिक सभा

—

आर्य वीर दलों को आदेश

आर्य वीर दल के अधिकारियों को सूचित किया जाता है कि ता० २६ अक्टूबर से पहली नवम्बर तक होने वाले आर्य महासम्मेलन, मेरठ पर सेवार्थ आने वाले आर्य वीरों की सूची ता० २०।१०।५१ तक प्रधान कार्यालय बलिदान-भवन श्रद्धानन्द बाजार देहली के पते पर भेज दें। आर्य वीर दल के अनुशासन से परिचित वीरों को ही भेजा जाय, इस बात को ध्यान में रखकर ही सूची भेजी जानी चाहिए। सैनिकों का गणवेश में आना भी अनिवार्य है।

(ओम्प्रकाश पुरुषार्थी)
प्रधान सेनापति
आर्यवीर दल

—

आवश्यकता

"एक उच्च कुलोत्पन्न २४ वर्षीया अग्रवाल विधवा के लिए जो देखने में सुन्दर, हिन्दी शिक्षा प्राप्त और गृह कार्य में दक्ष है एक स्वजातीय, योग्य, शिक्षित विधुर वर की आवश्यकता है। मासिक आय २५०) से कम न हो। निम्न लिखित पते से पत्र व्यवहार करें।

बी० डी० ब्रदर्स, बलांगिर उड़ीसा।

बाल-विनोद

नीबू की पहेली

एक राजा ने अपने भोजन में अरहर की दाल बनी जानकर अपने सेवक को बाजार से नीबू लाने की आज्ञा दी। बाजार से लौटते समय दरवाजे पर सेवक को तीन पहरेदार मिले, एक दरवान ने कहा कि इन नीबुओं में से आधे नीबू और एक नीबू अधिक मुझे दो और यह ध्यान रखना कि नीबू को काटा न जाय, इस प्रकार दूसरे और तीसरे दरवान ने भी क्रमशः नीबू माँगे। सेवक इस प्रकार इन तीनों को नीबू देता हुआ जब राजा के पास पहुँचा एक नीबू ही शेष था। अब विचार कर उत्तर दो कि सेवक ने तीनों दरवानो को कितने कितने नीबू दिये और कुल योग क्या था।

—रामचन्द्र कायमगज

ढूंड कर लिखिये

नीचे के नक्शे में एक नदी, एक नेता, एक पर्वत, एक शहर और एक देश का नाम छिपा है खोजकर लिखिये—

जा	व	न	मे	प
ग्र	पा	न्द्र	ध्या	मे
च	सू	च	र	न
ल	न	सु	ज	भा

यह ध्यान में रखें कि नामों के अक्षर परस्पर मिलते न हों, नदी के नाम में जो अक्षर आचुके हों नेता के नाम में उनका प्रयोग न हो इसी प्रकार अन्यत्र, देश का नाम भारत से भिन्न भी हो सकता है।

—जगदीश्वरदयाल,
बहराइच

कैसे बाटेंगे

राम, सोहन और प्रेम तीनों सड़क पर घूम रहे थे, उन्हें एक कागज की पुड़िया पड़ी हुई मिली, खोलने पर उसमें कुछ सरकारी सिक्के मिले जिनका योग ३॥ पैसा था, बाजार से कोई चीज न खरीदकर उन पैसों को बाँटना चाहे तो प्रत्येक को क्या मिलेगा।

—लल्लन प्रसाद, ग्वालियर

सोचकर बताना

हरि और विष्णु दोनों भाई जब विजयादशमी के उत्सव में जाने लगे तब उन्हें पिता ने एक रुपया दिया और हरि से कहा कि रुपये को इस प्रकार बाट लेना कि तुमसे दो पैसे विष्णु को अधिक मिल जाय। बताओ हरि ने विष्णु को कितने पैसे दिये और स्वयं क्या रक्खा।

—अशोककुमार सक्सेना
देहरादून

पूर्व पहेली का उत्तर

४ अक्टूबर के अङ्क में प्रकाशित पहेली का उत्तर २४ लड्डू है।

राघवेन्द्र ८+३+× =११
महेन्द्र ४+३+× = ८
कुत्ता १+१+ = ३
२ शेष बचे

सही उत्तर भेजने वालों के नाम

ओम्प्रकाश आर्य दुगावा (लखनऊ) रमेशचन्द्र आर्य, चुन्नामनन लाल मीतल, जैशरणलाल सक्सेना, बयाना (भरतपुर) रामचन्द्र कायमगज देवेन्द्रकुमार मिश्र, कसूपुर (इटावा) गिरिराजकिशोर कायमगज, राजेन्द्रप्रकाश शर्मा लाखन (अलीगढ)

विचार करें

कुमारी सरोजबाला शेरकोट (बिजनौर), प्रेमकुमार वर्मा, कानपुर, रामचन्द्र यादव बाराबंकी, सत्यप्रकाश, बस्ती, कान्ताप्रसाद आर्य सहारनपुर, विनोदकुमार अलीगढ़ विद्याभूषण गुप्त हसनपुर अपने उत्तर पर विचार करें और संशोधन कर लें।

२० सितम्बर की पहेली का उत्तर बाद में भेजने वालों के नाम

लालनप्रसाद रेजडेन्सी गेट ग्वालियर, जगदीश्वरदयाल आर्य बहराइच, विपनविहारी आर्यनगर कटारी (रतलाम) भागचन्द आर्य रामसनेर (अहमदनगर), हरिपाल सिंह यादव मुमियाखेड़ा (एटा), रामसनेही शर्मा आर्यनगर हरदोई, ब्रह्मज्योति लोहरदगा (रांची)

—ज्ञानू दादा

ग्राहकों को आवश्यक सूचना

आर्यमित्र के इस अंक के बाद २५ अक्टूबर और एक नवम्बर का संयुक्त अंक अभ्युदयाङ्क होगा। ८ नवम्बर का अंक सदैव की भांति दिवाली की छुट्टी के कारण बन्द रहेगा। अतः इस अंक के पश्चात् साधारण आर्यमित्र १५ नवम्बर को प्रकाशित होगा।

जिन ग्राहकों का वार्षिक चन्दा नवम्बर में समाप्त होता है, वह १० नवम्बर तक ८) मनीआर्डर द्वारा भेज दें। रुपया प्राप्त न होने पर १५ नवम्बर का अंक वी० पी० द्वारा भेजा जायगा। कृपया एजेण्ट और ग्राहक नोट करलें।

— विनीत व्यवस्थापक

आवश्यक सूचना

आर्यमित्र का अभ्युदयाङ्क छप रहा है, २५ अक्टूबर को अभ्युदयाङ्क भेजा जायगा। एक अङ्क की कीमत ॥) है। प्रत्येक आर्यसमाज को अधिक से अधिक प्रतियाँ मंगा कर प्रचार करना चाहिये। रुपया मनीआर्डर से आने पर अभ्युदयाङ्क शीघ्र मिलेगा।

—व्यवस्थापक

बा० पूर्णचन्द्रजी के व्याख्यान

आगरा के सुप्रसिद्ध विद्वान् व्याख्याता श्री बा० पूर्णचन्द्रजी एडवोकेट दशहरा की छुट्टियों में अलीगढ़ पधारे। आपके ५ व्याख्यान विविध विषयों पर अलीगढ़ में हुए। आपने आर्यसमाज दादों का निरीक्षण किया और वहाँ भी एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया।

—संवाददाता

आर्य कुमार परिषद्

उत्तर प्रदेशीय आ० कु० परिषद् का वार्षिक अधिवेशन मेरठ में घासीराम नगर में २८ अक्टूबर मध्याह्न २ बजे श्री पं० रामचन्द्र देहलवी शास्त्रार्थ महारथी की अध्यक्षता में होगा। "आर्यसमाज को आगामी चुनाव में भाग नहीं लेना चाहिये" विषयक वाद विवाद प्रतियोगिता भी इसी अवसर पर होगी।

रघुवरदयालु आर्य
मन्त्री आ० कु० परिषद् उत्तरप्रदेश

—मिश्र सरकार ने अंग्रेजों से हुई सन्धि को न मानने की घोषणा की है।

—कांग्रेस अध्यक्ष श्री नेहरू की अपील पर उत्तर प्रदेश के श्री कृष्णदत्त पालीवाल अपने दल बल सहित पुनः कांग्रेस में सम्मिलित हो गये हैं। महाकोशल के के० एम० पी० दल के नेता श्री ठा० निरञ्जनसिंह ने भी कांग्रेस में सम्मिलित होने का निर्णय कर लिया है। सत्यवती नगर देहली में कांग्रेस अधिवेशन १६ अक्टूबर से आरम्भ हो गया है। सारे देश की आशाएं उस ओर लगी हुई हैं।

—डा० ग्राहम ने काश्मीर के सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट दे दी है। रिपोर्ट में पाकिस्तान का पक्ष लेते हुए भारत को दोषी सिद्ध किया गया है।

आर्यजनों को आवश्यक सूचना

सप्तम सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन २७ अक्टूबर से १ नवम्बर तक मेरठ में होने जा रहा है। अतः हमने आर्यजनों की सुविधा के लिये इस अवसर पर सर्वोत्तम शुद्ध हवन सामग्री सस्ते मूल्य में मेरठ-सम्मेलन में सम्मेलन स्थान पर मेरठ शहर में देना निश्चित किया है। अतः आप सम्मेलन में जाने वाले आर्यसमाजों के अधिकारियों, आर्य संस्थाओं के संचालकों व थोक ग्राहकों तथा दूकानदारों इत्यादि से सानुरोध प्रार्थना है कि वह अपना आर्डर हमारी सम्मेलन में भेजी हुई दुकान पर बुक करा देवें तथा जितनी आवश्यकता हो उतनी हवन सामग्री हमारी सम्मेलन स्थल की दुकान से खरीद लेवे। जो सज्जन मेरठ न पहुँच सकें वह सीधा आर्डर हमारे पास भेज देवें। निवेदक :—

सुरेन्द्रदेव शास्त्री, आयुर्वेद-शिरोमणि (स्नातक गुरुकुल)
कार्यालय आनन्द फार्मेसी [हवन विभाग]
स्थान व पोस्ट— भोगांव जिला मैनपुरी [उत्तर प्रदेश]

आपकी दैनिक आवश्यकता

शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित-जगत् प्रसिद्ध

शुद्ध सुगन्धित हवन-सामग्री

नमूना मुफ्त मंगाकर अवश्य परीक्षा करिये

पता—सुन्दरलाल रामसेवक शर्मा
शुद्ध सुगन्धित हवन सामग्री भण्डार
मु० पो० असोथर (फतेहपुर)

हर्ष समाचार

श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट के प्रकाशन का पुनः आरम्भ

आर्य जनता को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि ट्रस्ट की पुस्तकों का १५ सहस्र रुपयों का सारा स्टाक लाहौर में नष्ट हो जाने के पश्चात् अभी अपना प्रेस न होने पर भी पुस्तकों के पुनः प्रकाशन का कार्य ईश्वर की कृपा से पुनः आरम्भ हो गया है। निम्न पुस्तकें छप कर तैयार हैं।

१—संध्योपासनविधि—(भाषार्थ, दैनिक हवन) —)॥
२—हवनमन्त्र – (प्रार्थना स्वस्तिवाचन शान्तिप्रकरणादि –)
३—व्यवहार भानु—(ऋषि दयानन्द कृत) =)॥
४—ऋषि दयानन्द का स्वलिखित तथा स्वकथित आत्म-चरित्र ।=)
५—आर्याभिविनय—ऋषि दयानन्द कृत मू० ।=)

शेष पुस्तकें भी यथासम्भव शीघ्र छपेंगी। मिलने के पते—

रामलाल कपूर एण्ड संस पेपरमर्चेण्टस्

गुरु बाजार	नई सड़क	बुरहाना रोड
अमृतसर	देहली	कानपुर

रामलाल कपूर ट्रस्ट मोतीझील बनारस ६

आर्यमित्र

में

विज्ञापन देना

व्यापार की उन्नति का साधन है।

असली मीठी
बालजीवन घुट्टी
बच्चों की हर एक बीमारी को रोकती कमजोर बच्चों को ताकतवर बनाती, आसानी से चटा देने से बच्चे कभी बीमार नहीं होंगे दाँत आसानी से निकल आवेंगे।
— मू० शी० ।) दर्जन २॥) डा० व्य० अ०
सब जगह बिकती है नकली घुट्टियों से बचो नए सौदागर नमूना मुफ्त मंगावें।
पता. बालजीवन कार्यालय अलीगढ़ यू.पी.

श्रीमद्भगवद्गीता

पुरुषार्थबोधिनी टीका

लेखक प० सातवलेकर। इस १००० पृष्ठों के विशाल ग्रन्थ में (१) अर्जुन के विषाद का कारण, (२) विश्वरूप दर्शन का रहस्य, (३) गीतोपदेश के साथ वेदोपदेश की तुलना और (४) गीतोपदेश को व्यवहार में लाने का अनुष्ठान करने की रीति बताई है। किसी अन्य टीका में ये स्पष्टीकरण नहीं मिलेंगे। गीतोपदेश से राज्य-शासन कैसे सफल हो सकता है, यह इसी टीका में पाठक देखेंगे। मूल्य १५), डाक व्यय १॥) मूल्य पेशगी म० आ० द्वारा ११।) भेजिये।

स्वाध्याय-मण्डल, आनन्दाश्रम
किला-पारडी, (जि० सूरत)

हिन्दू राष्ट्र का ओजस्वी साहित्य

१ हमारी समस्यायें लेo वीर सावरकर मू० १।)
२ स्वातन्त्र्य वीर सावरकर, ले० स्वर्गीय चन्द्रगुप्त वेदालंकार मू० १॥)
३ हिन्दूधर्म की विशेषतायें, ले० स्वामी सत्यदेव मू० ।)
४ महाराणा प्रताप सचित्र ॥।)
५ वीर शिवाजी सचित्र ॥)
६ झांसी की महारानी ।)
७ डा० हैडगेवार (सचित्र) ॥।)
८ गुरु गोलवलकर ॥।)

प्रत्येक पर डाक खर्च ।=) एक साथ मंगाने पर आठों पुस्तकों का सेट मू० ५) डाक खर्च ।)

राष्ट्रीय पुस्तकालय, २१ डिसपेंसरी रोड, देहरादून यू० पी०

—

भजनोपदेशक की आवश्यकता

बिहार प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा को सुयोग्य अनुभवी, शिष्ट दस भजनोपदेशकों की आवश्यकता है वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा। प्रार्थी आवेदन पत्र के साथ किसी आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान मन्त्री, किसी प्रसिद्ध महोपदेशक की सम्मति भी भेजें।

वासुदेव शर्मा प्रधान मन्त्री
बिहार आर्य प्रतिनिधि सभा
पटना ४

—

बादाम रोगन

सौ प्रतिशत शुद्ध और प्रामाणिक

खाने और लगाने के लिये।

नमूना	॥=)
छोटी शीशी	१॥।)
बड़ी शीशी	६॥।)

आज ही आर्डर दीजिये।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरद्वार)
सोल एजेन्सी, कुलदीपचन्द,
सत्यपाल मामा रावतपाड़ा आगरा,

——

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

आर्यमित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

सञ्चालक—आर्यमित्र प्रकाशन लि०, लखनऊ

आगरा १५ नवम्बर १९५१

२१.११.५१

सप्तम आर्य महासम्मेलन के अध्यक्ष



श्री विनायकराव विद्यालंकार बार एट लॉ — कृषि एवं खाद्य मंत्री हैदराबाद राज्य

आर्यसमाज को एक ऐसी बैंक से उपमा दी जा सकती है जिससे भिन्न भिन्न राजनैतिक संस्थाएं अपनी पूंजी पाकर अपने कारखाने (पार्टियाँ) चलाती हैं। हमें चाहिये कि हम इस बैंक को बैंक ही रहने दें, यदि यह कारखाने में परिवर्तित हो गया तो फिर पूँजी के लिये हमको भी दूसरों की तरफ देखना होगा। आर्यसमाज का काम मनुष्य निर्माण और सत्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन है। चरित्रवान, नीतिमान और सज्जन व्यक्तियों की पूंजी आर्यसमाज में इतनी हो कि यहाँ से निकलने वाला व्यक्ति जिस कार्य क्षेत्र में जाय कर्तव्य परायणता तथा ईमानदारी की दृष्टि से वह सर्वोपरि हो और हर संस्था ऐसे व्यक्ति को पाकर अपने आपको धन्य समझे। आर्य समाज ने देश को बड़े बड़े नेता दिये और कार्यकर्ता प्रदान किये हैं, श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द, वीर पुंगव लाला लाजपतराय आदि के नाम यदि आज जगत् में अमर हैं तो राष्ट्रिय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में भी मिटाये नहीं मिट सकते। हरिजन आन्दोलन का कांग्रेस के प्रोग्राम में समागम स्वामी श्रद्धानन्दजी के कांग्रेस में पदार्पण का ही परिणाम है इसके पूर्व कांग्रेस ने हरिजन सुधार के प्रोग्राम को नहीं अपनाया था। अनेक आर्यसमाजियों ने तन मन, धन से देश की महान् सेवा की है। हमारा आज भी मनुष्य निर्माण मुख्य आदर्श होना चाहिये, आर्यसमाज के लिये धारा सभा एक अत्यन्त संकुचित क्षेत्र है, आर्य समाज का सच्चा कार्यक्षेत्र तो मन और आत्मा का विस्तृत मैदान है जिन्हें सच्चा मार्ग दर्शन कराना आर्यसमाज का काम है इसलिये हमें अपने सभासदों में से चरित्रवान मनुष्यों का निर्माण करके सत्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन करके इस बैंक की पूँजी को बढ़ाना है, ताकि मानव समाज इससे लाभ उठा सके।

—सप्तम आर्य महासम्मेलन में अध्यक्षीय भाषण से

वार्षिक मूल्य ... एक प्रति ... आना

सम्पादक हरिशङ्कर शर्म्मा

वर्ष—५३

अङ्क—४



६३वीं जन्म जयन्ती, १४ नवम्बर ५१

जीवन-ज्योति

वीर जवाहर

श्री डा० पट्टाभि सीतारमैय्या

१९१८ की कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में उद्देश्य समिति की बैठक में मैंने जवाहरलालजी को देखा। आज भी उनका उस समय की सूरत शक्ल पोशाक बोलने की शैली आदि मेरी स्मृति में ज्यों की त्यों बनी है। पिता और पुत्र मोतीलाल नेहरू और जवाहरलाल दूज की तरह आते और क्षण भर रह कर अदृश्य हो जाते। लोगों में उस समय दोनों बाप बेटों की चर्चा थी, जिधर जाते, सभी उनकी ओर देखने लगते मानो आंखों में समा गये हों।

जवाहरलालजी के व्यक्तित्व एवं उनकी प्रतिभा के स्रोत की जानकारी के लिये उनके परिवार की परम्पराओं व मातृभूमि की तत्कालीन अवस्था की ओर दृष्टिपात करना होगा। जिस जवाहर का जन्म काश्मीर की गोद में हुआ हो और जिसने अपनी शिक्षा पश्चिम की शालाओं और विश्वविद्यालयों में पायी हो उस जवाहर के लिये वकालत के पेशे में दिलचस्पी न होना स्वाभाविक ही था, उस समय की दूषित राजनीति को भी उन्होंने निम्न स्तर का पाया, उनके संतप्त अन्तःकरण में देशभक्ति की ज्वाला भड़क रही थी। उन्होंने तुरन्त जान लिया कि आनन्द भवन का सुख मेरे भावी जीवन का लक्ष्य नहीं बन सकता। भारतीय स्वातन्त्र्य संग्राम में उन्हें एक ऐसा अविचल सैनिक बनना था जो भारत राष्ट्र को विदेशी दासता से मुक्त कराकर उसे पुनः सुख समृद्धि का आगार बना सके। जवाहरलालजी ने देश की वेदी पर सर्वस्व न्यौछावर कर दिया और भारत माता की बेड़ियां काटने की प्रतिज्ञा कर ली।

नेहरूजी ने गांधीजी को अपना नेता पाया, तिरंगे को अपना निशान माना और लक्ष्य बनाया ४० कोटि की मुक्ति को। अपने सिद्धान्त पर डटे रहने में उन्होंने अपने उद्देश्य को भी एक बार पीछे रख दिया किन्तु सत्य अहिंसा के मार्ग पर चल कर आज उन्होंने चरम लक्ष्य को पा लिया है। अपने देशवासियों को विदेशियों के चंगुल से छुड़ा लिया है और अब वे व्यस्त हैं राष्ट्रोन्नति के कठिन कार्य में, ताकि भारत भी संसार के बड़े बड़े राष्ट्रों के साथ चल सकने में समर्थ हो सके।

जीवन में वे कभी भ्रष्ट नहीं हुए, कभी सहमे तक नहीं विचलित होना तो परे की बात है।

गांधीजी ने सरदार पटेल के मुकाबले नेहरूजी को अपना उत्तराधिकारी क्यों चुना यह रहस्य आज स्पष्ट हो गया है। गांधीजी जानते थे कि इन दोनों में छोटा और युवक ही आने वाली पीढ़ी एवं वयस्क पीढ़ी में हेल मेल रखने में अधिक सफल होगा, सरदार को भी इस बात में कोई एतराज न था। दोनों के पास अपनी प्रतिभा थी और जब वे दोनों एक साथ मिल जाते तो पृथ्वी की कोई शक्ति उन्हें अपने चरम लक्ष्य तक पहुँचने से नहीं रोक सकती थी, इस समन्वय में अपार शक्ति होती थी।

जवाहरलालजी जब बार-बार विलायत जाते थे तब बहुत से लोग सोचा करते थे कि उनके दिमाग में कुछ और ही विचार घर कर गये हैं। किन्तु नेहरूजी के सम्बन्ध में इस प्रकार सोचना सबसे बड़ी और बुरी गलती थी। जब समय आता और सारा भारत संग्राम में जुट पड़ता था तो वे अपना सैनिक पद सम्हालते थे। और जब संग्राम से अवकाश मिलता और लोग अपने-अपने विचारों में लीन हो जाते तब नेहरूजी विदेश जाकर विदेशी राजनीति का अध्ययन करते और विदेशियों से अपना सम्पर्क स्थापित करते थे, जिससे देश की स्वतन्त्रता मिल जाने पर वह असहाय अवस्था में न रह जाय। सचमुच जवाहरलालजी ने विदेश यात्रा से जो अनुभव पाया उससे वे एक सफल राजनीतिज्ञ और सफलतम कूटनीतिज्ञ बन सके। उन्होंने इसीलिये विदेश मन्त्री का पद जो बड़े महत्व का है स्वयं सम्हाला है। सुरक्षा के सम्बन्ध में हमारी जानकारी बहुत थोड़ी थी, इसलिये १९४२ में क्रिप्स के साथ फौज के विषय में हम खुल कर बातचीत भी न कर सके, क्या पूछें यही हम न जानते थे, विदेश नीति की बात और थी। आज हम नेहरूजी की दूरदर्शिता एवं विचार शक्ति का जिनके कारण उन्हें ज्ञान, अनुभव एवं सूझ जैसे गुण प्राप्त हों—उसका फल मिल रहा है।

नेहरूजी ने अपने अध्ययन का पूरा लाभ उठाया है। उन्होंने भारतीय संस्कृति एवं परम्परा के साथ पाश्चात्य शिक्षा का समन्वय कर एक नवीन एकता एवं विश्व संस्कृति का आदर्श सम्मुख रखा है। जवाहरलालजी में हिन्दुत्व और इस्लाम, पूर्व और पश्चिम का अनूठा समन्वय हुआ है। इस प्रकार उन्होंने भारतीय राष्ट्रियता को शक्तिशाली बनाया, भारतीय आध्यात्मिक दृष्टिकोण को पाश्चात्य वैज्ञानिक आविष्कारों की सचाई से मिलाकर उसे नवजीवन प्रदान किया और पौर्वात्य आध्यात्मिकता की गम्भीरता के निकट लाकर पाश्चात्य भौतिकवाद की उग्रता को कोमल बनाया है।

गांधीजी की मृत्यु के पश्चात् नेहरूजी ने उनके आदर्शों को अपने जीवन का अनिवार्य अंग बना लिया है। वे प्रधान मन्त्रित्व पद की जिम्मेदारी को सफलता पूर्वक निबाह रहे हैं, इस प्रकार उनका जीवन राष्ट्रिय और अन्तरराष्ट्रिय आदर्शों का प्रतीक बन गया है। आज वे उस उच्च स्तर पर पहुँच गये हैं कि उनकी गणना विश्व नेतृत्व करने वाली विभूतियों में की जा सकती है। उनके लिये भारतीय स्वतन्त्रता पूर्व एशिया स्वतन्त्र करने का महत्व पूर्ण साधन है। अन्तिम लक्ष्य पाने के लिये वह एक सीढ़ी है और एशियायी मुल्कों की स्वतन्त्रता विश्व एकता एवं विश्व सरकार की स्थापना की दूसरी सीढ़ी है। नेहरूजी के वयस्क हो जाने पर भी उनके जोश और स्फूर्ति में कमी नहीं हुई। उनके स्वभाव में दो स्रोत बहते हैं। जिसमें समानता और विषमता की मात्राएं विद्यमान हैं। उनमें बालक की सरलता और बालक का अल्हड़पन दोनों गुण बनकर समाये हुए हैं। वे किसी से द्वेष नहीं कर सकते यह कार्य उनके लिये असाध्य है। वे किसी पार्टी को जन्म देकर नेतृत्व नहीं कर सकेंगे, पर जिस दल में वे कार्य करते हैं उसका नेतृत्व उन्हें अपने आप मिल जाता है। वे अपना गुट निर्माण करने में असफल होंगे परन्तु अपनी कार्य परायणता और व्यक्तित्व के बल पर अपनी बाजी हरबार जीतते रहेंगे।

अमरीका उनकी नीति की प्रशंसा करे या आलोचना उन्हें इस बात की परवाह नहीं, अपने सिद्धान्तों पर वे अटल रहना जानते हैं। उनका विदेश नीति का जहाज सुगम एवं सुरक्षित मध्यममार्ग से चला जा रहा है। रूस के सोवियतवाद और अमरीका के साम्राज्यवाद की छाया भी उनपर नहीं पड़ सकी। इस तरह पं० नेहरू अखिल विश्व संघटन के नेता बनने में सारे आवश्यक गुणों के भंडार हैं। आज भारत की राजनीति के कर्णधार बनकर दो विनाशक शक्तियों के बीच संतुलन का महान् कार्य उनके द्वारा सम्पन्न हो रहा है जिसकी भारत को आज के विश्व में सर्वाधिक आवश्यकता है।

——

गुरुकुल महोत्सव

गुरुकुल विश्व विद्यालय वृन्दावन २३ से २६ दिसम्बर तक

कन्या गुरुकुल हाथरस २६ से २८ दिसम्बर तक

आर्यमित्र

लेख रश्मि दितहृत्तमो, लसत् ज्ञानकोकनद जागरप्रदः ।
अज्ञता घन विभावरी हरः, "आर्यमित्र" उदियर्ति सम्मुदे ॥

आगरा मार्गशीर्ष कृष्ण २ संवत्२००८वि० गुरुवार,ता०१५नवम्बर१९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि संवत् १९७२९४९०५२

आर्य महासम्मेलन पर एक दृष्टि

चिर प्रतीक्षित सप्तम आर्यमहासम्मेलन मेरठ में नौचन्दा मैदान के घासीराम नगर में २७ अक्टूबर से एक नवम्बर तक बड़े समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ। आर्यसमाज के आन्दोलन को प्रगति देने के लिये आर्य नेताओं का यह सामयिक एवं प्रशंसनीय प्रयत्न था। सम्मेलन की आयोजना जिस उद्देश्य से की गई थी, उसको दृष्टि में रखते हुए सम्मेलन के लिये आर्यजनता ने अपार उत्साह प्रगट होता था। देश के सुदूरस्थ हैदराबाद और आसाम तक से आर्य बन्धुओं ने सम्मेलन में पधार कर सम्मेलन के महत्व को व्यापक रूप दिया।

ऋषि निर्वाण के शुभावसर पर आर्यजनता ने एकत्र हो अपने आचार्य और गुरु के आदर्शों पर चलने की जो प्रतिज्ञा की वह आर्यसमाज की लोक-सेवा एवं परोपकार-भावना का उच्चतम आदर्श उपस्थित करती है।

सम्मेलन की मुख्य बैठकों के अतिरिक्त प्रोग्राम में आर्य-युवक-सम्मेलन, शुद्धि-सम्मेलन, संस्कृति-सम्मेलन, वेद-सम्मेलन, गो-सम्मेलन, राजनीति-सम्मेलन, महिला-सम्मेलन और कवि-सम्मेलन आदि के सफल आयोजनों द्वारा समागत जनता के समय का उचित उपयोग किया गया और जनता को विविध समस्याओं पर स्वस्थ दृष्टिकोण से विचार करने का अवसर प्राप्त हुआ।

सम्मेलन के मुख्य कार्यक्रम में विराट् नगर कीर्तन का भव्य आयोजन सम्मेलन की अपनी विशेषता थी, आर्यजनता के विशाल जन समुद्र को देखकर साधारण जनता बहुत प्रभावित हुई। सम्मेलन के प्रारम्भ में स्वागताध्यक्षा श्री शकुन्तला गोयल ने स्वागत भाषण पढ़ा, वह दृश्य अनुपम था, आपने भाषण में आर्यसमाज की सामायिक उपयोगिता पर प्रकाश डाला। सम्मेलन के अध्यक्ष-पद से श्रीविनायकराव विद्यालङ्कार बार-एट ला ने जो गम्भीर और विवेचनापूर्ण सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक भाषण दिया वह एक नयी चीज थी। अध्यक्ष के भाषण ने वर्तमान परिस्थिति में आर्यसमाज के दृष्टिकोण का स्पष्ट प्रतिपादन किया और आर्यसमाज की प्रतिष्ठा को बढ़ाया। बाह्य दृष्टियों से उपयोगी होते हुए भी हम प्रधान महोदय के भाषण में भविष्य के लिये किसी सक्रिय योजना का अभाव पाते हैं। श्री विनायकरावजी ने योजना वाले अंग को यह कहकर ही छोड़ दिया है कि पिछले अधिवेशन में जो कार्यक्रम बनाया गया था वही पर्याप्त है। इस दिशा में सभापति के भाषण से ही कोई प्रकाश नहीं पड़ता इतना ही नहीं, सम्मेलन के सम्पूर्ण निश्चयों और प्रस्तावों में योजना का अभाव है।

सम्मेलन में जिस प्रस्ताव ने सजीवता उत्पन्न की वह था राजनीति सम्बन्धी प्रस्ताव। दो दिन के गम्भीर विचार विमर्श के बाद आर्यनेताओं और जनता ने मध्यम मार्ग ग्रहण किया अर्थात् आर्यसमाज को सामूहिक रूप से प्रचलित राजनीति और चुनावों में सक्रिय भाग न लेकर आर्यों को व्यक्तिगत रूप से राजनीति में भाग लेने की स्वतन्त्रता प्रदान करने वाला प्रस्ताव स्वीकार किया गया साथ ही भविष्य में आर्य संस्कृति से प्रभावित एक राजनैतिक संघटन स्थापित करने लिये १७ व्यक्तियों की एक समिति के निर्माण का प्रस्ताव भी पास हुआ। कलकत्ता सम्मेलन से मेरठ में हम यहीं दो कदम आगे बढ़ सके। यद्यपि हमारा यह निश्चय बहुत देर में हुआ, फिर भी हम उसका स्वागत करते हैं। इस निश्चय के फलस्वरूप आर्यसमाज का और परम्परया प्रत्येक आर्यसमाजी का दायित्व बढ़ जायगा। अब हमें अपने सिद्धान्तों और जनता की आशाओं के अनुरूप राजनीति को प्रभावित करना है। सार्वदेशिक आर्यसम्मेलन के अधिवेशन में स्वीकृत इस प्रस्ताव के कारण आर्यसमाज और उसके नेता एक नैतिक उत्तरदायित्व में आबद्ध हो चुके हैं। आशा है, वे जनता की आकांक्षाओं के अनुरूप नये राजनैतिक संघटन के निर्माण का पूर्ण सुविधाएँ प्रदान करेंगे। साथ ही समिति से भी हमें पूर्ण आशा है कि वह आर्यों को विशाल शक्ति का समर्थन पाने वाले राजनैतिक संघटन का निर्माण करते समय निःशील एवं उदात्त दृष्टिकोण अपनाएगी। आर्यसमाज संकीर्ण साम्प्रदायिक मनोवृत्ति, विदेशी सिद्धान्तों और आदर्शों की मानसिक दासता तथा अन्य हीनताओं का सदैव विरोधी रहा है। नये राजनैतिक संघटन का भी यही व्यापक दृष्टिकोण रहे। आशा है, समिति के सम्मानित और विद्वान् सदस्य इसका पूर्ण ध्यान रक्खेंगे। इस मुख्य प्रस्ताव के अतिरिक्त सम्मेलन आगामी वर्ष के लिये नवीन कार्यक्रम देने में असमर्थ रहा। आर्य संस्कृति-प्रचार गो-रक्षा, शिक्षा-आन्दोलन, विश्व-शान्ति के प्रस्तावों की पुरानी परम्परा को जीवित रखने मात्र से आर्यजनता की आशायें पूरी नहीं हो सकतीं। आशा है भविष्य में सम्मेलन के अधिकारी गण जनता की मनोवृत्ति को समझेंगे और उसे पूर्ण करेंगे।

इस महा सम्मेलन में आर्य समाज के उच्चकोटि के प्रायः सभी विद्वानों ने भाग लिया परन्तु आर्य प्र० नि० सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान श्री मदनमोहन सेठ, श्री प० रामदत्त शुक्ल श्री आचार्य नरदेव शास्त्री, श्री प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति श्री प्रि० महेन्द्रप्रताप शास्त्री, श्री प्रो० धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री, श्री प० अयोध्याप्रसाद वैदिक मिश्नरी आदि अन्य नेताओं का अभाव बराबर खटकने वाला था। सम्मेलन की ओर से श्री हरशरणदासजी द्वारा आयोजित प्रदर्शिनी एक सामयिक आयोजना थी, यद्यपि प्रदर्शिनी विशाल रूप धारण न कर सकी, फिर भी अल्प समय और सीमित साधनों के द्वारा जो कुछ किया जा सका वह सराहनीय था। चतुर्दान यज्ञ जैसे मानव मात्र हितैषी महान् कार्य का आयोजन सम्मेलन के अधिकारियों की अपनी सूझ थी। राष्ट्रभृत यज्ञ ने आर्यसमाज के राष्ट्र-हितैषी एवं प्राचीन संस्कृति समर्थक दृष्टिकोण को स्थापित करने में सफलता प्राप्त की, समस्त नागरिक और समागत जनता ने इस आयोजन में स्व श्रद्धानुरूप सहयोग दिया।

सहस्र की संख्या में समागत प्रतिनिधियों दर्शकों और अभ्यागतों की सुन्दर व्यवस्था के लिये हम स्वागत-समिति, स्वागताध्यक्षा श्रीमती शकुन्तला गोयल और स्वागत मन्त्री श्री कालीचरणजी का धन्यवाद करते हैं। उनके साथियों श्री विद्यासागर भोजन मन्त्री श्री विश्वम्भर-सहाय प्रेमी प्रचारमन्त्री और श्री जयदेवसिंह एडवोकेट, द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री श्री हरशरणदासजी, श्री आत्माशरणजी, श्री मुसद्दीलालजी, श्री रघुनन्दनस्वरूपजी, श्री शान्ति प्रकाश श्री नन्दरामजी आदि के श्रम और उत्साह भी प्रशंसनीय, अनुकरणीय एवं स्मरणीय रहेंगे।

आर्य सम्मेलन में समागत विशाल जनता की भीड़-भाड़ के होते हुए भी सम्मेलन में किसी प्रकार की गड़बड़ी, अशान्ति का नाम भी नहीं था, जनता ने जिस सभ्य और शिष्ट तरीके से सम्मेलन को सफल बनाने में सहयोग दिया वह आर्योचित एवं सराहनीय था। कैम्प की व्यवस्था में आर्य वीर दल के सैनिकों ने जिस सेवा भाव और अनुशासन का परिचय दिया उसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। हजारों की संख्या वाले जन समूह के मध्य किसी प्रकार की अभद्र घटना न होना आर्य जनोचित प्रवृत्ति का सूचक है इस आचरण की जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है।

आजकी कठिनाइयों को देखते हुए सम्मेलन के लिये इतनी बड़ी धन राशि का संग्रह आर्यों के अदम्य उत्साह का परिचायक है। सार्वदेशिक सभा के प्रधान राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री और स्वागत मन्त्री श्री कालीचरणजी आदि के प्रयत्नों से जो धन-संग्रह हो सका और जिन्होंने दिया उनके लिये आर्य जगत् आभारी है। आर्यसमाज के कार्य को आगे बढ़ाने के लिये लगन, उत्साह और योग्यता के साथ धन की भी अत्यधिक आवश्यकता है, आशा है आर्य जनता इसी प्रकार भविष्य में भी धन द्वारा सहायता देती रहेगी।

आर्य महासम्मेलन समाप्त हो गया, ऋषि निर्वाण के अवसर पर आर्य बन्धुओं ने ऋषि की अमर एवं अखण्ड ज्योति से प्रकाश ग्रहण कर उसे समस्त विश्व में प्रज्वलित करने का भार अपने कन्धों पर लिया है। अब हमारा कर्तव्य है कि हम आर्य समाज के सन्देश को जीवन के प्रत्येक अंग में धारण कर उसे राष्ट्र के प्रत्येक नगर और गांव में पहुँचाने में जुट जायँ। महासम्मेलन का एक ही सन्देश है, आर्य संस्कृति की उज्वल ज्योति को कभी धूमिल, तिमिरावृत या मन्द न होने दिया जाय। यदि इस ओर हम प्रयत्नशील हो सके तो हमारा यह महासम्मेलन सचमुच सफल समझा जायगा।

साक्षरता आन्दोलन

गत ६ नवम्बर को आगरा नगर पालिका के शिक्षा-विभाग के साक्षरता आन्दोलन का उद्घाटन शिक्षा मन्त्री माननीय श्री सम्पूर्णानन्दजी ने किया। नगर पालिका के शिक्षाध्यक्ष श्री महेन्द्रजी इस आन्दोलन के संयोजक हैं। श्री महेन्द्रजी का विचार है कि आगामी निर्वाचन के अवसर तक आगरा के प्रौढ़ व्यक्तियों को साक्षर बनाने का पूर्ण प्रयत्न किया जा सके तो २० सहस्र से अधिक मत दाताओं को साक्षर बनाया जा सकेगा और वे निर्वाचन के समय अपने हस्ताक्षर कर सकेंगे और लिखे हुए नामों को पढ़कर अपनी इच्छानुसार मतदान कर सकेंगे। श्री महेन्द्रजी बड़े अच्छे संयोजक हैं। आगरा में होली के गन्दे वातावरण को मिटा 'होली मेले' का वे सफल आयोजन कर चुके हैं। हमें आशा है, इस आन्दोलन में भी उन्हें सफलता प्राप्त होगी। हम इस आन्दोलन की हार्दिक सफलता चाहते हैं जनता को इस कार्य में पूर्ण सहयोग देना चाहिये। निरक्षरता की समस्या केवल आगरा तक ही सीमित हो ऐसी बात नहीं है यह तो हमारा राष्ट्र व्यापी रोग है। चुनाव के सहारे इस रोग का नष्ट करने का प्रथम श्रेय आगरा को प्राप्त हो रहा है। आशा है आगरा की जनता अपने नगर में इस आन्दोलन को सफल बनायेगी और बाद में उत्तर प्रदेश की जनता और सारा राष्ट्र इस योजना का स्वागत करेगा और उसे अपनाकर राष्ट्रिय कलंक मिटाने में संलग्न होगा।

आम चुनाव

आने वाले आम चुनावों के सम्बन्ध में प्रायः आर्य भाई हमसे पूछते रहते हैं कि इस दिशा में उनका क्या कर्तव्य है। अर्थात वे किस पार्टी या व्यक्ति को अपना मत दें। इस विषयमें हमारा यही निवेदन है कि आर्यसमाज को किसी राजनैतिक पार्टी के पहिये के साथ बंधने या खिंचने की कोई आवश्यकता नहीं है। विधान सभा या संसद के उस उम्मेदवार को वोट देना चाहिये जिसकी ईमानदारी, न्याय-निष्ठा और सचाई का पूरा परिचय प्राप्त हो। अपने नगर या जिले के ईमानदार कार्यकर्त्ताओं को कौन नहीं जानता? किसी के प्रभाव या दबाव में आकर किसी गलत आदमी को वोट दे देने से बड़ा अनर्थ हो सकता है। आज बिरादरीबाजी का बहुत जोर है, चुनाव के कारण चालाक लोग बिरादरियों के गुट्ट बना रहे हैं। इनमें कितने ही तो ऐसे हैं जो अपने को आर्यसमाजी कहने का भी दम भरते और साम्प्रदायिकता से भी कोसों बचते हैं। हमारी राय में बिरादरीबाजी या सम्प्रदायवाद के नाम पर वोट देना भयंकर भूल होगी। इसके लिये पीछे पछताने के सिवाय और कोई चारा न रह जायगा। सम्प्रदायवाद और बिरादरीबाजी से बचना एक आर्य का स्वयम् ही कर्तव्य नहीं, उसे दूसरे लोगों को भी इस प्रकार के दूषित और विषैली भावनाओं से बचने के लिये समझाना बुझाना चाहिये। ऐसा करने से समाज की अच्छी सेवा हो सकेगी। आशा है, ये पंक्तियाँ व्यर्थ न जायँगी। आर्यसमाजी सज्जन और आर्यसमाज समुदाय इस ओर विशेष ध्यान देंगे।

अध्यात्म धारा

आस्तिक भावना

पुरूतमं पुरूणामीशानं वार्याणाम
इन्द्रं सोमे सचा सुते। ऋ० १।१।६।२

इस विशाल विश्व में ईश्वर ही सर्व शत्रु विनाशक है और वही संसार के बहुविध पदार्थों का उत्पादक और स्वामी है, वरणीय मोक्षादि के स्थान और इस संसार के उत्पादक के रूप में ईश्वर ही हमारे प्रीति पूर्वक गान का आधार होना चाहिये, हमें ईश्वर के गुणों की स्तुति कर उनके अनुरूप बनने का प्रयत्न करना चाहिये तभी हमारा जीवन सफल और आनन्दमय बन सकता है।

आज मानव का जीवन कितना दुखी और कष्टप्रद है क्या हमने कभी इस समस्या पर गम्भीरता पूर्वक सोचा विचारा है। मनुष्य के समस्त दुखों का मूल उसका अहम्भाव और उसकी स्थापना के लिये उचित अनुचित का विचार किये बिना प्रयत्न करना ही है। यदि हम संसार के समस्त प्राणियों को अपने जैसा अनुभव करने की भावना को अपने में जाग्रत करें तो हमारे दुख कम हो सकते हैं। इस भावना को उद्बुद्ध करने का आधार ईश्वर की शक्ति में विश्वास ही हो सकता है। संसार का सारा कलह, भीषण हाहाकार इसी एक केन्द्र-बिन्दु से पृथक् हो जाने के कारण ही मचा हुआ है। ईश्वराधन की सच्ची भावना मनुष्य को हार्दिक शान्ति और सत्य सुख का अनुभव कराती है। विश्व के प्रांगण में घटित होने वाली अघटित दुर्भाग्य पूर्ण घटनाओं को देखते-देखते मानवता परेशान हो चुकी है। सर्वत्र विनाश और कलह के अतिरिक्त हमें कुछ नहीं दिखाई पड़ता इस सबका कारण आस्तिक भावना का अभाव ही है। विश्व शान्ति और विश्व कल्याण के सुनहरे गीत गाने वालों का स्वप्न तब तक कभी पूर्ण नहीं हो सकता जब तक समस्त संसार और मानवता की एकता के लिये ईश्वर को आधार न बना लिया जाय।

जीवन की सुख समृद्धि, अशान्ति और विग्रह से मुक्ति आदि के लिये हमें आस्तिक बन अपने जीवन का, आदर्श का निर्माण करना चाहिये। प्रभु हमारे जीवन को उन्नत और सफल बनाने में अवश्य सहायता करेंगे।

—मनीषी

ईसाइयों का शिक्षा-कार्य

भारत में शिक्षा प्रचार के कार्य में आर्यसमाज और ईसाई मिशनरियों ने बहुत कार्य किया है परन्तु दोनों के उद्देश्यों में महान् अन्तर रहा है। एक ओर जहाँ आर्यसमाज भारतीय संस्कृति और परम्परा के अनुसार शिक्षा देने और दिलाने का प्रयत्न करता रहा है वहाँ दूसरी ओर ईसाई प्रचारकों ने शिक्षा के नाम पर भारतीय सभ्यता भारतीय इतिहास और भारतीय स्वाभिमान को नष्ट करने वाली शिक्षा प्रदान की है। प्रस्तुत अङ्क में पाठक त्रावणकोर में ईसाइयों द्वारा शिक्षा क्षेत्र में साम्प्रदायिक भावनाओं के प्रचार को पढ़ेंगे। वे राज्य से आर्थिक सहायता प्राप्त करके साम्प्रदायिकता का प्रचार करते हैं। यह निन्दनीय है इसका शीघ्रातिशीघ्र निराकरण किया जाना चाहिये।

राष्ट्रनायक आर्यसमाज

श्री विनायकराव विद्यालङ्कार बार-एट-ला

सप्तम आर्य महासम्मेलन मेरठ के अध्यक्ष के भाषण का कुछ अंश

आज से ७६ वर्ष पूर्व सन् १८७५ ई० में पहली बार महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज की स्थापना की थी। आर्यसमाज की यह स्थापना भारतीय इतिहास की महत्वपूर्ण घटना है। कोई माने या न माने किन्तु आज भारत में धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक व शैक्षणिक तौर पर जो चौमुखी उन्नति दृष्टिगोचर हो रही है उसमें बड़ा भाग आर्य समाज का रहा है।

महर्षि ने भारतीय जीवन में अन्धश्रद्धा और कुरीतियां तथा विज्ञान के नाम पर धर्म का खण्डन करने वाली धारा को मोड़ने के लिये तर्क और विज्ञान का सहारा लिया, अवतारवाद और मूर्तिपूजा का तर्क द्वारा खण्डन कर वैदिक धर्म की वैज्ञानिकता सिद्ध करने में शक्ति लगाई और वैज्ञानिकों को बताया कि आस्तिकवाद और पुनर्जन्म के सिद्धान्त तर्कसिद्ध और पूर्ण हैं विज्ञान इन्हें झुठला नहीं सकता।

ऋषि से पूर्व आठ सौ वर्षों की दासता के कारण भारत के प्राचीन इतिहास पर मानों मिट्टी पड़ी हुई थी अंग्रेजों ने उसे और भी विकृत बना दिया था। महर्षि ने कूड़ा-कर्कट हटा कर भारतीय इतिहास के उज्ज्वल पृष्ठों को भारतीयों के सम्मुख रखकर उन्हें उनके वास्तविक स्वरूप का, उनके गौरवशील अतीत का तथा उनकी अनुकरणीय सभ्यता का दर्शन कराया, फलस्वरूप भारतीयों में अपने राष्ट्र के प्रति अभिमान उत्पन्न हुआ। आर्यसमाज ने इस अभिमान की ज्योति को जगाये रखने में महत्वपूर्ण हिस्सा लिया है ले रहा है और लेता रहेगा।

आर्यसमाज का काम मनुष्य निर्माण और सत्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन है। चरित्रवान नीतिमान और सज्जन व्यक्तियों की आर्यसमाज के पास महान् पूंजी होनी चाहिये। आज के राजनैतिक प्रश्नों में सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न भारत को असाम्प्रदायिक, धर्म निरपेक्ष राष्ट्र बनाने का है। मैं नहीं समझता कि इसमें किसी आर्यसमाजी के लिये विरोध का कोई कारण हो, आर्यसमाज साम्प्रदायिकता का कट्टर विरोधी रहा है और रहेगा। सच पूछा जाय तो आर्यसमाज का उद्भव भारतीयों को साम्प्रदायिकता की दलदल से एक रूप व एक जाति में लाने के लिये ही हुआ था।

आज देश में जो शासन प्रणाली प्रचलित है वह अधिकांश में विदेशी प्रणाली है, यह बात निन्दनीय और त्याज्य है। हमें अपनी शासन प्रणाली का कोई न कोई आदर्श बनाना होगा जो कि भारतीय ही हो सकता है। आर्य अथवा भारतीय संस्कृति पुराने आदर्शों पर आधारित है जिस पर हमारा सामाजिक जीवन अवलम्बित है। उन आदर्शों का हमारी राज्य व्यवस्था पर प्रभाव होना आवश्यक ही नहीं स्तुत्य भी होना चाहिये। यदि ऐसा न हुआ तो हमारा स्वतन्त्र होना न होना बराबर होगा। दुनिया के सामने कुछ नई चीज जिस पर भारतीयता की छाप हो रखने के लिये हमें अवश्य प्रयत्नशील होना चाहिये। आज देश में चारों ओर भ्रष्टाचार ही भ्रष्टाचार फैला हुआ है। भ्रष्टाचार और नैतिक पतन को कानून के द्वारा नष्ट कर सकना सहज और सम्भव नहीं है। मनुष्य आज कानून इस लिये तोड़ता है कि आज उसके हृदय में पाप पुण्य की कोई कल्पना बाकी नहीं है, धर्म का भय नहीं है, उसे भय है तो केवल कानून तोड़ने पर पकड़े जाने का। भ्रष्टाचार रोकने का सर्वोत्तम उपाय मनुष्य की आत्मा को उन्नत बनाना है। आत्मा ही मनुष्य का और परम्परया समाज का सच्चा मित्र है वही नैतिकता का पहरेदार बन सकता है। अतः उसे सबल बनाने का ही एकमात्र प्रयत्न होना चाहिए। भ्रष्टाचार की वर्तमान समस्या आर्थिक नहीं अपितु नैतिक है। इस समस्या का हल राष्ट्र की धारासभाओं में बैठ कर नहीं ग्राम-ग्राम में खड़े किये गये आर्यसमाज मन्दिरों में है जिन्हें पुनर्जीवित करना हम आर्यों का ही मुख्य दायित्व है।

गत चालीस वर्ष से आर्यसमाज को एक प्रश्न रह रह परेशान करता रहा है परन्तु आर्यसमाज ने उसका एक के सिवा कभी भी दूसरा हल नहीं निकाला, वह प्रश्न है कि आर्यसमाज को सामूहिक तौर पर प्रचलित राजनीति में भाग लेना चाहिये या नहीं। आर्यसमाज ने १९१० ई० से इसका एक ही हल स्वीकार किया है कि प्रत्येक आर्यसमाजी व्यक्तिगत रूप से चालू राजनीति में काम करने के लिये स्वतन्त्र है परन्तु सामूहिक रूप से आर्यसमाज को उसमें भाग नहीं लेना चाहिये। आज जब हमारा देश स्वतन्त्र है तब हमारे लिये यह प्रश्न और भी जटिल हो गया है। स्वाधीनता से पूर्व पृथक् पृथक् पार्टियाँ होते हुए भी सबका अन्ततोगत्वा भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति ही अन्तिम लक्ष्य था पर अब तो पार्टियों के उद्देश्यों में भी अन्तर आ गया है। कांग्रेस एक प्रकार का सामाजव्यवस्था चाहती है तो सोशलिस्ट दूसरे प्रकार की, जनसंघ तीसरे प्रकार की और हिन्दू सभा चौथे प्रकार की। इनमें से किसी के साथ भी हम पूरी तरह से सहमत नहीं हो सकते परन्तु आज हमारी स्थिति स्वतन्त्र खड़े होने की नहीं है। हमने देश की आर्थिक और सामाजिक समस्याओं के हल का नई रोशनी में कोई ढांचा तय्यार नहीं किया है जो कि समस्त आर्यप्रतिनिधि सभाओं और आर्यसमाजों की अन्य शाखाओं उपशाखाओं द्वारा सर्व सम्मत हो और फिर हमारे आज के संघटन के आधार पर आर्यसमाज से बाहर का सहयोग भी हमें प्राप्त न हो सकेगा। राजनीति क्षेत्र में किसी पार्टी के तौर पर खड़े रहने के लिये ढांचा तय्यार कर लेने की अत्यन्त आवश्यकता होती है। ऐसी अवस्था में समय के अभाव और अधूरी तय्यारी के साथ आर्य समाज का संघठन तौर पर राजनीति में सहसा उतर आना आर्यसमाज के लिये हानिकारक ही सिद्ध होगा। आगामी पाँच वर्ष तक हमें इस प्रश्न को सुलझाने का प्रयत्न करना चाहिये। और तब यदि उचित प्रतीत हो तो अच्छी तय्यारी के बाद बतौर एक स्वतन्त्र पार्टी के हम राजनीति के मैदान में उतर आवें। भावी निर्वाचनों के लिये तो हमें अपने सदस्यों को वेद प्रतिपादित धार्मिक सिद्धान्तों के सर्वथा विरुद्ध न हो उस पार्टी या व्यक्ति का समर्थन करने की स्वतन्त्रता दे देनी चाहिये।

किसी भी संस्था में कार्य के तीन रूप होते हैं विचार-प्रचार और आचार। महर्षि ने भारत को विचार दिये आर्य समाज ने लेखों भाषणों और शास्त्रार्थों द्वारा उनका प्रचार किया। अब आर्य समाज के सिद्धान्तों और नियमों से शिक्षित व्यक्ति के विचारों में बहुत कम मत भेद पाया जाता है। आर्यसमाज के समस्त सामाजिक कार्यों को देश में अपना लिया गया है, धार्मिक सिद्धान्तों की सत्यता भी स्वीकार की जा चुकी है। अब आवश्यकता है आचार की। आन्दोलन काल समाप्त हो चुका अब आचरण युग है। आर्यसमाज में जिस कथित शिथिलता की ओर बार बार संकेत किया जाता है वह वस्तुतः आचरण की शिथिलता है। हमें अपने सिद्धान्तों को आचरण में लाकर उनके आदर्शों को स्थापित करना चाहिये और इसके लिये आर्यसमाज के विद्वान् बैठकर बदले हुए युग के अनुरूप व्यवहारिक योजना बनाएँ और समाज को उसपर आचरण करने के लिये बाधित करें। हम राजनीति में भाग लेना अवश्य चाहते हैं पर हमने देश की वर्तमान समस्याओं की तरफ बहुत कम ध्यान दिया है, भविष्य की बात तो बहुत दूर की है, हमें समझना चाहिये कि वही जाति या संस्था उन्नति कर सकती है जो नावों के काल में जहाजों की सोचे, जहाजों के काल में विमानों की सोचे, विमानों के काल में राकेट्स की सोचे और राकेट्स के काल में ऐसे यानों की सोचे जिनमें बैठ कर नक्षत्रों की सैर की जा सके।

मुझे आर्य समाज की शक्ति में विश्वास है। आर्य समाज ने देश सेवा एवं जाति उत्थान में अपने अल्प कालीन जीवन में

आर्य महासम्मेलन के प्रस्ताव

शोक प्रस्ताव

मेरठ में आयोजित सप्तम सार्वदेशिक आर्य महा सम्मेलन आर्यसमाज के वयोवृद्ध कार्यकर्ता श्री लाला नारायणदत्तजी श्री लाला ज्ञानचन्दजी, श्री बाबू श्रीरामजी (आगरा) प्रसिद्ध आर्य सन्यासी श्री स्वामी केवलानन्दजी, भारत के प्रसिद्ध विद्वान् योगीराज श्री अरविन्द, भारत सरकार के उपप्रधान मन्त्री श्री सरदार बल्लभभाई पटेल, प्रसिद्ध समाज सेवी श्री अमृतलाल ठक्कर और आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वानों और कार्यकर्त्ताओं श्री विश्वम्भर नाथजी पंजाब सभा श्री ला० नोतनदासजी पंजाब सभा, श्री एम० बी० शर्मा मद्रास श्री रायसाहब अमृतरायजी अम्बाला, श्री प० शंकर देवजी पाठक गुरुकुल वृन्दावन, श्री ठा० खमानसिंहजी अलीगढ़, श्री स्वामी रामानन्दजी बिहार, श्री महेशलालजी बिहार, श्री ओम्प्रकाशजी मेहता श्री बाबू रामचन्द्र जी एम० बी० ओ० देहरादून, श्री प्रि० रामसहायजी, श्री ठा० ब्रजनन्दनसिंहजी (पटना) श्री चौ० मुख्तार सिंहजी दौराला, श्री प० छुट्टनलालजी स्वामी, श्री स्वामी भवानीदयालजी सन्यासी, श्री मौलवी महेशप्रसाद जी आलिम फाजिल, श्री ज्ञानेन्द्रजी सिद्धान्त भूषण के असामयिक निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करता है, इन नेताओं और कार्यकर्ताओं की सेवाओं के प्रति श्रद्धाञ्जलियां अर्पित करता हुआ परमात्मा से दिवंगत आत्माओं की शान्ति के लिये प्रार्थना करता है।

राजनीति सम्बन्धी मुख्य प्रस्ताव

यह सम्मेलन निश्चय करता है कि आर्यसमाज बहैसियत आर्यसमाज प्रचलित राजनीति तथा चुनाव में भाग न ले।

नये राजनैतिक संघटन का प्रस्ताव

आर्य संस्कृति की विचार धाराओं से प्रभावित पृथक् राजनैतिक संघटन स्थापित कर उसे सक्रिय रूप देने के लिये निम्न लिखित सज्जनों की एक समिति बनाई जाती है।

(१) सर्व श्री स्वामी आत्मानन्दजी महाराज वैदिक साधनाश्रम यमुनानगर अम्बाला, (२) स्वामी अभेदानन्दजी बांकीपुर पटना, (३) स्वामी सत्यदेवजी परिव्राजक ज्वालापुर, (४) श्री आनन्द स्वामीजी देहरादून, (५) प० बुद्धदेवजी विद्यालङ्कार भारतीय लोकसंघ गाजियाबाद (६) राजगुरु प० धुरेन्द्रजी शास्त्री, (७) प० जियालालजी अजमेर, (८) पण्डित भगवद्दत्तजी रिसर्च स्कालर नई देहली, (९) प० मनोहरलालजी हैदराबाद, (१०) प० मिहरचन्दजी धीमान सलाकिया (हावड़ा) (११) प० बालदिवाकरजी हंस भारतीय लोकसंघ गाजियाबाद, (१२) प० प्रकाशवीरजी शास्त्री आर्यसमाज चन्दौसी, (१३) ओम्प्रकाशजी पुरुषार्थी प्रधान सेनापति आर्यवीर दल देहली, (१४) प० रामचन्द्रजी देहलवी, (१५) स्नातक भूदेवजी शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणि एम० ए० आगरा।

सांस्कृतिक सम्पर्क

भारत का सांस्कृतिक सम्पर्क भूमण्डल के प्रायः सभी देशों में कुछ न कुछ रहा है और एशिया खण्ड में पुरातन काल से सुदृढ़ रहा है। यह सम्पर्क कुछ काल से विशेषकर विदेशीय राजसत्ता के कारण ढीला हो गया है। इस सम्मेलन की सम्मति है कि वह समय आ गया है जब कि भारत अपना सांस्कृतिक सम्पर्क अन्य देशों के साथ और विशेष कर एशिया खण्ड के सभी देशों के साथ पुनः स्थापित तथा सुदृढ़ करे। यह सम्मेलन भारत सरकार से भी अनुरोध करता है कि वह भारतीय संस्कृति के प्रचारार्थ उचित साधनों का प्रयोग करे तथा विदेशों में अपने दूतावासों के द्वारा भी भारतीय संस्कृति के विशुद्ध तत्वों के प्रचार की व्यवस्था करे।

व्यवस्था सम्बन्धी निश्चय

आर्य महासम्मेलन के खुले अधिवेशन में केवल वही विषय विचारार्थ आते हैं जिन्हें एतदर्थ विषय निर्धारिणी सभा भेजती है और विषय निर्धारिणी सभा के अधिकांश सदस्य सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के सदस्य होते हैं। इस प्रकार खुले अधिवेशन में स्वीकृत सब विषय सार्वदेशिक सभा से स्वीकृत तथा सब आर्य समाजों के प्रतिनिधियों द्वारा पुष्ट हो जाते हैं। अतः निश्चय किया जाता है कि उन सब विषयों को कार्यान्वित करना सार्वदेशिक सभा पर बाध्य होगा।

भ्रष्टाचार विरोधी प्रस्ताव

इस सम्मेलन को यह देखकर दुःख होता है कि देश के स्वतन्त्र होने के पश्चात् देशवासियों का चरित्र स्तर बहुत गिर गया है तथा भ्रष्टाचार और दुराचार की वृद्धि हो गई है यह सम्मेलन समस्त आर्यसमाजों को आदेश देता है कि वे सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा द्वारा सचालित भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलन को प्रबल और सघठित बनाने में पूर्ण सक्रिय सहयोग दें। जनता में सदाचार को बढ़ाने के लिये प्रारम्भ में निम्न अंशों पर विशेष बल दिया जाये। "अश्लील सिनेमाओं' 'सार्वजनिक स्थानों पर लगे अश्लील चित्रों" तथा रेडियो द्वारा प्रचारित अश्लील गीतों और अश्लील साहित्य को बन्द करवाने तथा सरकार द्वारा उन पर कठोर प्रतिबन्ध लगवाने का प्रबल प्रयत्न किया जाये। जिससे देश में दुराचार का अति शीघ्र अन्त हो जाय। ब्रह्मचर्य विरोधिनी सह शिक्षा के विरुद्ध भी प्रबल आन्दोलन किया जाय। प्रत्येक प्रान्त में एक शिक्षा पटल इस कार्य के लिये नियत किया जाए कि वह अपने प्रान्त के सरकारी शिक्षा विभाग द्वारा नियत पुस्तकों को देखकर विरुद्ध तथा अश्लील विचार धारा के सम्बन्ध में ग्रन्थों के निरीक्षण का कार्य करे और इस विषय को वह सार्वदेशिक सभा के ध्यान में लाये जो सरकार से इस विषय में पत्र व्यवहार करेगी तथा विद्वानों द्वारा इसका उत्तर लिखवाया जावे।

विश्व शान्ति

संसार के विभिन्न राष्ट्रों में आशङ्का और अशान्ति का जो वातावरण देखा जा रहा है और मानव समाज के संहार करने वाले अणु विस्फोट (एटम बम) आदि अस्त्र शस्त्रों का जो निर्माण और संचय किया जा रहा है उसका मूल कारण इस सम्मेलन की राय में यह है कि मानव समाज का जो संघटन विविध देशों में है उसका आधार प्रायशः आधिभौतिक (Materalistic) है। मनुष्य समाज का दृष्टिकोण केवल ऐहिक सुखों की पूर्ति की ओर ही केन्द्रित रहता है और विविध देशों के शासन के अधिकारी अपने देश के आर्थिक और साम्पत्तिक विकास और प्रसार के निमित्त दूसरे देशों के हितों की उपेक्षा और अवहेलना करने वाली राष्ट्रिय स्पर्धा की भावनाओं से प्रेरित होते हुए अपनी नीति को निर्धारित करते हैं जिसका अनिवार्य परिणाम विश्व कलह और विश्व अशान्ति का बीजारोपण है।

मानव समाज को इन सब भयंकर परिणामों से बचाने का और विश्व शान्ति की स्थापना का इस सम्मेलन की राय में एक ही मार्ग है जिसे भारत के ऋषि मुनियों ने अपनी दिव्य दृष्टि और वैदिक ज्ञान से ढूंढ निकाला था अर्थात् मनुष्य समाज का संघटन आधिभौतिक आधार पर न रह कर उसकी आधार शिला आध्यात्मिक हो जो केवल मनुष्य के स्थूल शरीर और उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति पर ही दृष्टि न रखता हो। मनुष्य की आत्मा और उसके विकास पर भी दृष्टि रखता हो जिसका मूलतत्व वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था पर आश्रित है जिसमें आधिभौतिक और आध्यात्मिक मात्राओं तथा व्यक्तिवाद और समष्टिवाद का सुन्दर समन्वय है।

[शेष प्रस्ताव अगले अङ्क में]

——

प्रशंसनीय कार्य किया है और उसके लिये उसे महान् बलिदान भी देने पड़े हैं। मुझे आशा है कि आर्यसमाज कार्य करने की अपनी गौरव परम्परा को स्थिर रक्खेगा और विश्व का सच्चा पथ-प्रदर्शन करता रहेगा।

——

सप्तम् आर्य महासम्मेलन मेरठ

विराट् जुलूस, अनेक सम्मेलन, महत्व पूर्ण निश्चय

ऋषि के प्रति श्रद्धाञ्जलियाँ

प्राचीन एतिहासिक मेरठ की नगरी में चिर प्रतीक्षित सप्तम् आर्य सम्मेलन २७ अक्टूबर को प्रातः सात बजे राष्ट्रभृत यज्ञ की वेद-ध्वनि के साथ प्रारम्भ हुआ। ९ बजे प्रातः सार्वदेशिक सभा के प्रधान राजगुरु प० धुरेन्द्र शास्त्री ने ओ३म् की आर्य ध्वजा का समुत्तोलन किया और आर्य जनता को प्रेरणा की कि हम इस झण्डे के नीचे खड़े होकर अनुशासन में रहना सीखें और राष्ट्र तथा विश्व के लिये आदर्श बनें। सम्मेलन का उद्घाटन महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती ने किया, उन्होंने बताया कि आर्यसमाज ने अपने जन्मकाल से ही हर आँधी तूफान आने पर देशवासियों की सेवा की, उसमें तपस्वी दयानन्द का तेज रहा, और स्वामी श्रद्धानन्द जेसी वीरात्मा की शक्ति रही है आर्यसमाज ने भारत की संस्कृति की रक्षा के लिये महान् प्रयत्न किये हैं, उसकी आज भी आवश्यकता है। देश में स्वतन्त्रता आ गई है पर देशवासी पहले से भी अधिक संकटों में फँसे हैं, जीवन की पवित्रता ही राष्ट्र की समस्या को सुलझा सकती है। आर्यसमाज इसी मिशन की पूर्ति का काम करता है। उद्घाटन के पश्चात् श्री ओम्प्रकाश पुरुषार्थी के सभापतित्व में आर्य युवक सम्मेलन हुआ जिसमें आर्य युवकों के लिये राष्ट्रिय कार्यक्रम के सम्बन्ध में गम्भीर विचार विमर्श हुआ। मध्यान्ह में श्री कुँ० चांदकरण शारदा की अध्यक्षता में शुद्धि-सम्मेलन हुआ जिसमें शुद्धि कार्य और शुद्ध हुए भाइयों के साथ व्यावहारिक जीवन की समस्याओं पर प्रकाश डाला गया। रात्रि में श्री प० बुद्धदेव विद्यालंकार के सभापतित्व में संस्कृति सम्मेलन सम्पन्न हुआ, सभापति महोदय ने कहा आर्य संस्कृति की महत्ता और गौरव की रक्षार्थ आर्यों को पश्चिमीय भौतिकवादी संस्कृति से मोर्चा लेना होगा उसके लिये अपने सांस्कृतिक स्वरूप का स्पष्ट चित्र बनाना और अदम्य शक्ति के साथ कार्य करना होगा।

२८ अक्टूबर को सम्मेलन के अध्यक्ष का विशाल जुलूस निकाला गया बैण्डबाजों के साथ गजारोही अध्यक्ष विनायकराव के रूप में आर्यसमाज की विशाल शक्ति ने अपनी राष्ट्र और विश्व-सेवा की महान् भावना का परिचय दिया। पांच मील लम्बे जुलूस का भव्य दृश्य देखकर ऐसा कौन व्यक्ति होगा जिसे आर्यसमाज की शक्ति के प्रति विश्वास और श्रद्धा उत्पन्न न हुई हो। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो देश के कोने कोने से आयी आर्यजनता ऋषि दयानन्द के सच्चे वीर सैनिकों की विशाल सेना के रूप में अन्याय और अत्याचार का दलन करने के लिये निकल पड़ी हो, आर्यों की इस विशाल सेना ने जनता के हृदय में एक आशा की ज्योति जगाई और जनता को यह अनुभव हुआ कि आर्यसमाज हमारे दुःखों और कष्टों को दूर करने में हमारा सहयोग और पथ प्रदर्शन करेगा। जनता की इस आशा और विश्वास का परिचय सम्मेलन में विशाल उपस्थिति से मिलता था। रात्रि में खुले अधिवेशन की कार्यवाही आरम्भ करते हुए सार्वदेशिक सभा के प्रधान राजगुरु प० धुरेन्द्र शास्त्री ने अध्यक्ष पद के लिये श्री विनायक राव विद्यालंकार बार-एट-ला का नाम प्रस्तावित करते हुए उनके विशिष्ट नायकत्व की प्रशंसा की, इस प्रस्ताव का अनुमोदन समर्थन प्रान्तीय सभाओं के प्रधान व्यक्तियों ने किया। श्री विनायकरावजी द्वारा सभापति का आसन ग्रहण करने के पश्चात् स्वागताध्यक्षा श्रीमती शकुन्तला गोयल ने अध्यक्ष महोदय, आर्यजनता तथा अन्य अभ्यागतों के स्वागत में भाषण दिया। अपने भाषण में उन्होंने आर्य समाज के महिला जागरण आदि कार्यों का उल्लेख किया। जिस समय श्री शकुन्तला बहन अपना स्वागत भाषण पढ़ रही थीं उस समय उपनिषद् कालीन ऋषि आश्रमों में गार्गी के गौरवकी स्मृतियां सचित्र बन कर उपस्थित हो रही थीं। यह आर्यसमाज का गौरव है कि उसने अपने विशाल सम्मेलन की स्वागताध्यक्षा एक महिला को बनाया। स्वागत भाषण के पश्चात् सम्मेलन के अध्यक्ष श्री विनायकरावजी ने अपना विद्वत्तापूर्ण सारगभित भाषण पढ़ा। भाषण की एक-एक पंक्ति उनके स्वस्थ चिन्तन और आदर्श पथ-प्रदर्शन की भावना से ओतप्रोत थी।

२९ अक्टूबर को राष्ट्रभृत यज्ञ के पश्चात् आचार्य प० प्रियव्रत वेदवाचस्पति श्री स्वामी सत्यदेव परिव्राजक तथा श्री प० वैद्यनाथ शास्त्री के सामयिक समस्याओं के सम्बन्ध में प्रभावशाली भाषण हुए। मध्याह्न में खुले अधिवेशन में दिवंगत आर्य एवं राष्ट्रिय नेताओं के प्रति शोक प्रस्ताव के बाद आर्य संस्कृति प्रचार, सम्मेलन के निर्णयों से सार्वदेशिक सभा का सम्बन्ध, गोरक्षा आदि प्रस्तावों के बाद आर्य सम्मेलन का मुख्य प्रस्ताव आर्यसमाज का राजनीति से सम्बन्ध-विषयक मध्यप्रदेश के स्पीकर श्री घनश्यामसिंह गुप्त ने उपस्थित किया। इस प्रस्ताव पर यद्यपि विषय समिति एक मत थी परन्तु जनता राजनीति के सम्बन्ध में स्वस्थ और निश्चित दृष्टिकोण के लिये अत्यधिक उत्सुक थी और उक्त प्रस्ताव को अपूर्ण समझती थी ऐसी अवस्था में प्रस्ताव पर संशोधन आने आरम्भ हो गये। श्री शिवदयालुजी मेरठ और आचार्य बृहस्पति शास्त्री वेदशिरोमणि एम० ए० गुरुकुल वृन्दावन के संशोधनों को स्वीकार कर लिया गया। श्री प० बुद्धदेवजी तथा अन्य व्यक्तियों के प्रस्ताव विरोधी भाषणों के बीच में ही खुला अधिवेशन आगामी दिवस के लिये स्थगित होगया।

रात्रि में वेद-सम्मेलन के प्रधान पद से श्री प० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु का वेद सम्बन्धी गम्भीर विवेचना पूर्ण मुद्रित भाषण हुआ। जिज्ञासुजी ने वेद के सम्बन्ध में भारतीय दृष्टिकोण, वेद के प्रति महर्षि दयानन्द का उपकार, आज की भौतिकतावादी संस्कृति के दूषित प्रभाव से भारतीय युवकों को बचाने के उपाय, आर्यसमाज वेद के सम्बन्ध में किस नीति का अनुसरण करे आदि समस्याओं पर विशेष प्रकाश डाला।

३० अक्टूबर की प्रातः यज्ञ के पश्चात् आचार्य डा० मंगल देव शास्त्री काशी की अध्यक्षता में शिक्षा-सम्मेलन हुआ। सभापति ने अपने भाषण में आर्यसमाज के शिक्षा कार्यक्रम, उसके भूत और वर्तमान रूपों और प्रभावों के सम्बन्ध में प्रकाश डालते हुए भविष्य में आर्यसमाज को शिक्षा जगत् का पुनः नेतृत्व करने की प्रेरणा दी। सम्मेलन में शिक्षा को उन्नत करने, गुरुकुलों की शिक्षा को प्रगति देने, सहशिक्षा को रोकने आदि सम्बन्धी कई प्रस्ताव पास किये गये। डा० सूर्यदेव शर्मा ने आर्य शिक्षा संस्थाओं के डी० ए० वी० नामों को परिवर्तित कर 'दयानन्द' विद्यालय, महाविद्यालय रखे जाने का प्रस्ताव किया। आचार्य बृहस्पति जी के अनुमोदन और आर्य मित्र सम्पादक श्री हरिशंकर शर्मा के प्रबल समर्थन के साथ सर्व सम्मति से उक्त प्रस्ताव स्वीकार किया गया। निजाम कालेज के श्री धारेश्वर जी तथा बनारस के श्री गोपाल शास्त्री ने भी इस अवसर पर भाषण दिये और आर्यसमाज के कार्य की प्रशंसा की

मध्यान्ह में खुले अधिवेशन की कार्रवाई एक उत्तेजित वातावरण में आरम्भ हुई। प्रस्ताव के

विरोधियों ने समय का लाभ उठाकर अपने पक्ष का समर्थन प्राप्त करने में सफलता प्राप्त करली थी। अध्यक्ष महोदय ने बड़ा सतर्कता और योग्यतापूर्वक कार्य सञ्चालन किया।

विषय की गम्भीरता और सामयिक आवश्यकता को अनुभव करते हुए अध्यक्ष महोदय ने इस प्रस्ताव पर उभयपक्षी वक्ताओं को अपने विचार प्रकट करने की पर्याप्त स्वतन्त्रता प्रदान की। प्रस्ताव के समर्थक वक्ताओं ने कहा कि आर्यसमाज को सांस्कृतिक और समाज सुधार के क्षेत्र में ही कार्य करते रहना चाहिये, चुनाव की दलदल और धड़ेबन्दी से आर्यसमाज का स्वरूप विकृत हो जायगा। श्री देशबन्धु गुप्त एम० पी० तथा श्रीमहाशय कृष्ण, श्री राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री, श्री म० आनन्द स्वामी आदि ने आर्यसमाज द्वारा सामूहिक रूप से राजनीति में भाग लेने की व्यावहारिक कठिनाइयाँ समझाईं। प्रस्ताव के विरोध में श्री प० बुद्धदेव विद्यालङ्कार, श्री प्रकाशवीर शास्त्री, श्री प० मनोहरलाल (हैदराबाद) श्री मेहरचन्द धीमान, श्रीमती सुशीलादेवी (हैदराबाद) आदि के ओजस्वी भाषण हुए। श्री प० बुद्धदेवजी ने कहा स्वामी करपात्री के रूढ़िवाद और प० नेहरू के अभिनववाद के बीच, एक और साम्यवाद और दूसरी ओर पूंजीवाद के बीच देव दयानन्द के सिद्धान्त हैं जो भारतीय संस्कृति के अनुकूल हैं, राजनीति को उनसे प्रभावित करने के लिये आर्यसमाज को कोई संघटन अवश्य बनाना होगा। श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने कहा जब कोरिया फिलिस्तीन, और जर्मन एकता के आन्दोलन राजनैतिक है और उन्हें भारत का समर्थन प्राप्त हो सकता है तब अखण्ड भारत की माग साम्प्रदायिक कैसे हो सकती है। आर्यसमाज को सच्चा राजनैतिक पथ प्रदर्शन देने के लिये आगे बढना होगा। दो दिन की लम्बी बहस के बाद मध्यमार्गीय मार्ग निकल गया जिसके आधार पर मुख्य प्रस्ताव आर्यसमाज सामूहिक रूप से राजनीति और चुनावों में भाग न ले' बहुसम्मति से पास हुआ और साथ ही एक प्रस्ताव द्वारा आर्यसंस्कृति के विचारों से प्रभावित एक पृथक् राजनैतिक संघटन बनाने के लिये १७ व्यक्तियों की एक समिति नियुक्त करने का प्रस्ताव भी स्वीकार किया गया। इस प्रकार गम्भीर मन्थन के बाद आर्य नेताओं ने एक उचित मार्ग को स्वीकार किया।

रात्रि में महात्मा आनन्द स्वामी के सभापतित्व में महर्षि निर्वाण उत्सव बड़े उत्साह के साथ मनाया गया। इस अवसर पर भारत भर के आर्यसमाजों के मुख्य व्यक्तियों द्वारा क्रान्तिदर्शी दयानन्द के आदर्श जीवन के प्रति श्रद्धाञ्जलियाँ अर्पित की गईं। सार्वदेशिक सभा के प्रधान राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री द्वारा समस्त आर्य जनता से आत्म शुद्धि की प्रतिज्ञा कराने के पश्चात् श्री प० भगवद्दत्तजी रिसर्च स्कालर, श्री मेहरचन्द धीमान् श्री बुद्धदेव विद्यालंकार, श्री धर्मदेव शास्त्री दर्शन केसरी, श्री जियालालजी, श्री सुशीलादेवी हैदराबाद, वेस्ट इण्डीज में भारत के भूत पूर्व उच्चायुक्त श्री सत्याचरण, श्री प० हरिशंकर शर्मा, श्री धर्मपाल विद्यालंकार आदि ने महर्षि द्वारा समाजोत्थान के लिये किये गये कार्यों पर प्रकाश डाला। उत्तर प्रदेश कांग्रेस के मन्त्री श्री अलगूराय शास्त्री ने अपने हृदयोद्गार प्रकट करते हुए कहा आर्यसमाज भारतीय राजनीति का विश्वकोष है, हमें यहीं आकर सच्ची शान्ति मिलती है, सच्चा सुख अनुभव होता है। ऋषि का संसार पर महान् उपकार है कि वह विश्व कल्याण के लिये आर्य समाज का ज्योति स्तम्भ दे गया, उस ज्योति स्तम्भ की रक्षा का दायित्व हम आर्यों पर है उठो, आगे बढ़ो और ऋषि की अखण्ड ज्योति को अमर बनाये रखो। जब भारत के नागरिक अपने-अपने नगरों में दीप माला का उत्सव मना रहे थे। देश के कोने कोने से आये आर्य बन्धु देश को, विश्व को ज्ञान की ज्योति से आलोकित करने के लिये ऋषि दयानन्द की दिव्य द्युति से अपने हृदयों में ज्ञान और आशा की ज्योति जगाने में संलग्न थे।

३१ अक्टूबर को प्रातः राष्ट्रभृत यज्ञ और श्री आनन्द स्वामी के प्रवचन के उपरान्त श्री हरदेव सहायजी हिसार निवासी के सभापतित्व में गो-सम्मेलन सम्पन्न हुआ। सभापति पद से उन्होंने अपने भाषण में उपयोगी पशुओं के वध को तत्काल रोकने के लिये कानून की माग की। उन्होंने कहा भारत सरकार प्राइडिटव शब्द के अर्थों को स्पष्ट करे जिससे दुधारू पशुओं की रक्षा हो सके। एक ओर सरकार गोवध बन्द करने के आश्वासन देती है और दूसरी ओर उसके द्वारा नियुक्त निर्यात वृद्धि समिति भारतीय निर्यात में चमड़े को मुख्य स्थान देने के लिये गोवध का समर्थन करती है यह क्या तमाशा है आपने गाय के प्रश्न को साम्प्रदायिक नहीं आर्थिक बताया।

१२ बजे से श्रीमती शन्नो देवी एम० एल० ए० के सभानेतृत्व में आर्य महिला सम्मेलन आरम्भ हुआ। अध्यक्ष पद के भाषण से महिलाओं की समस्याओं, उनके कर्तव्य और आर्यसमाज व महिला आन्दोलन विविध विषयों पर प्रकाश डाला गया।

मध्यान्ह में खुले अधिवेशन का कार्य शान्तिपूर्ण वातावरण में आरम्भ हुआ। यह खुले अधिवेशन की अन्तिम बैठक थी। विश्व शान्ति के महत्वपूर्ण प्रश्न पर आर्यसमाज का दृष्टिकोण उपस्थित करते हुए आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता बाबू पूर्णचन्द्र एडवोकेट ने प्रस्ताव उपस्थित किया। इस प्रस्ताव में विश्वशान्ति के लिये विश्व बन्धुत्व, समानता, एक विश्व और समस्त मानव एकता के सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हुए कहा गया भारतीय दृष्टिकोण ही विश्वशान्ति स्थापित कर सकता है। सायकाल संध्या समय कार्रवाई रोककर श्री प० धर्मदेव विद्यावाचस्पति द्वारा मुख्य पण्डाल में सामूहिक सन्ध्या कराई गई।

रात्रि में श्री प० भगवद्दत्त रिसर्च स्कालर के सभापतित्व में राजनीति-सम्मेलन हुआ। आपने अपने विस्तृत भाषण में आर्य राजनीति के सम्बन्ध में विशद विवेचन किया। श्री बाबू पूर्णचन्द्र एडवोकेट ने वैदिक शासन की रूपरेखा पर विशेष प्रकाश डाला। स्ना० भूदेव शास्त्री शिरोमणि एम० ए० ने आर्य सम्मेलन द्वारा नियुक्त राजनीति समिति का स्वागत और उसके द्वारा समर्थित राजनैतिक संघटन का समर्थन करने वाला प्रस्ताव उपस्थित किया और जनता ने एक स्वर से उसे स्वीकार कर अपनी उत्कट एवं उच्चभावना का प्रदर्शन किया।

१ नवम्बर सम्मेलन के कार्यक्रम का अन्तिम दिवस था। आज राष्ट्रभृत यज्ञ की पूर्णाहुति होनी थी। राष्ट्र की समृद्धि के लिये सम्मेलन के अवसर पर इस याज्ञिक कल्पना द्वारा आर्य समाज के विद्वानों ने कर्मकाण्ड का व्यवहारिक उपयोग उपस्थित किया। भारतीय जनता ने उदात्त भावनाओं के साथ आर्य विद्वानों द्वारा आयोजित इस महायज्ञ की पूर्ति के समय बड़े उत्साह से भाग लिया। गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन, आर्ष गुरुकुल एटा, कन्या गुरुकुल हाथरस आदि के ब्रह्मचारियों, ब्रह्मचारिणियों, श्री प० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, श्री स्वामी ब्रह्मानन्द दण्डी, श्री माता लक्ष्मीदेवी, श्री प० हरिदत्त शास्त्री, श्री डा० नरेन्द्रदेव शास्त्री, श्री स्ना० सत्यपाल वेद शिरोमणि, श्री प० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री, श्री प० तेजोनारायण शास्त्री, श्री आचार्य विश्वश्रवाः, श्री ज्योति स्वरूप आचार्य श्री प० शंकर देव आदि विद्वानों ने इस यज्ञ को सफल बनाया। पूर्णाहुति के पश्चात् श्री आचार्य बृहस्पतिजी का गम्भीर भाषण हुआ।

रात्रि में श्री प० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय के भाषण के पश्चात् डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए०, के सभापतित्व में कवि सम्मेलन आरम्भ हुआ। श्रीमती सावित्री देवी, श्री सत्यपाल, श्री ओंकार सिंह निर्भय, श्री रघुवीर शरण मित्र, श्री मदन गोपाल सिंहल, श्री मती कमला चौधरी एम० पी०, श्री पीयूष अजमेर, श्री जोरावरसिंह आदि की रचनायें बहुत पसन्द की गईं। कुछ व्यक्तियों ने इस अवसर पर सभा में अशान्ति उत्पन्न करने का प्रयत्न किया, शीघ्र ही स्थिति सम्हाल ली गई और सभापति के अन्तिम भाषण तथा धन्यवाद के बाद शान्ति पाठ और ऋषि दयानन्द वैदिकधर्म, भारतमाता, आर्यसमाज की जय के तुमुल जयनादों के साथ सम्मेलन समाप्त हुआ।

सामयिक समस्याएँ

नैतिक-निर्णय का विषय

श्री प्रो० रत्नसिंह एम० ए०

मनुष्य की क्रियाओं को मुख्यतः दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—ऐच्छिक तथा अनैच्छिक। अनैच्छिक क्रियाएँ वे क्रियाए हैं जो हमारी इच्छा के बिना ही हो जाती है और जिन पर हमारा कोई नियन्त्रण नहीं रहता। यथा—छींकना, आँख का खोलना व बन्द करना सांस लेना आदि। अनैच्छिक क्रियाओं से नैतिक निर्णय का कोई सम्बन्ध नहीं है। नैतिक निर्णय मनुष्य की ऐच्छिक क्रियाओं पर ही दिया जाता है। यदि कोई व्यक्ति जान-बूझ कर अर्थात् इच्छा सहित कोई क्रिया करता है तो उसी के सम्बन्ध में हम कहा करते हैं कि यह कार्य अच्छा है अथवा बुरा, उचित है अथवा अनुचित। मार्ग में पैदल यात्रा करते हुए अनजाने हमारे पैरों से सैकड़ों चींटिया व जीव जन्तु कुचल जाया करते हैं। नैतिक दृष्टि से हम इस कार्य को अच्छा वा बुरा नहीं कहते। परन्तु यदि कोई व्यक्ति जान-बूझ कर चींटियों के बिल पर खड़ा होकर उन्हें कुचलने लगे तो उस व्यक्ति को क्रूर कह कर उसके कृत्य को बुरा कहते हैं और उसकी निन्दा करते हैं।

किन्तु ऐच्छिक क्रिया की दो मुख्य अवस्थाएँ होती हैं। (१) इच्छा-उत्पत्ति और (२) परिणामों की बाह्य अवस्था। अपनी ओर दौड़ते हुए शेर को देखकर उसे मारना ऐच्छिक कार्य है। उसे मारने के लिए पहिले तो मन में उसे मारने की इच्छा करनी पड़ती है और फिर गोली का निशाना लगाना जिसका परिणाम शेर का मरना है। अब प्रश्न उठता है कि किसी कार्य के औचित्य वा अनौचित्य का निर्णय उसके उद्देश्य (इच्छा) वा प्रयोजन के आधार पर करना चाहिए अथवा उसके परिणाम के आधार पर। पश्चिमी नीति शास्त्रज्ञों में इस विषय पर तीव्र मतभेद है। मिल तथा बेंथम सुखवादियों का मत है कि किसी क्रिया का अच्छा या बुरा होना उसके परिणाम पर निर्भर करता है। परन्तु इस मत के विपरीत काण्ट और बटलर का मत है कि किसी कार्य का निश्चय उसके उद्देश्य पर निर्भर है।

इन दोनों विरोधी मतों में से कौन सा मत ग्राह्य है? वस्तुतः जब आन्तरिक प्रेरणा के उद्देश्य और बाह्य परिणाम में साम्य होता है तो दोनों ही नैतिक निर्णय के विषय होते हैं। परन्तु कभी कभी आन्तरिक उद्देश्य और बाह्य परिणाम में विरोध पाया जाता है। ऐसी दशा में नैतिक निर्णय का विषय किसे माना जाय? कई अवसर ऐसे भी आते हैं जब कि मनुष्य का उद्देश्य तो अच्छा होता है परन्तु परिणाम बुरा। जैसे, एक कुशल सर्जन रोगी को आराम पहुँचाने के लिये सद्भावना से रोगी के शरीर में आपरेशन करता है। सर्जन के अनेक प्रयत्न करने तथा सावधानी रखने पर भी रोगी की मृत्यु हो जाती है। यहाँ परिणाम बुरा हुआ परन्तु उद्देश्य अच्छा था। इसलिए नैतिक दृष्टि से उसका कार्य बुरा नहीं कहा जा सकता। एक लोभी भृत्य अपने नेत्रहीन स्वामी का प्राणान्त करने के लिए चूल्हे पर पकती हुई दाल के पात्र में मरा हुआ सर्प डाल कर अन्यत्र चला जाता है। स्वामी टटोलता हुआ स्वयं जाकर उस पतीली का मुँह खोलता है। उसके खुलते ही भाप से उसके नेत्र खुल जाते हैं। यहाँ परिणाम तो अच्छा है परन्तु उद्देश्य बुरा। इसलिए यह कार्य बुरा है। अतः जहाँ आन्तरिक उद्देश्य और बाहरी परिणाम में विरोध होता है वहाँ आन्तरिक उद्देश्य के आधार पर ही नैतिक निर्णय दिया जाता है।

परन्तु क्या हम किसी कार्य की नैतिकता का निर्णय उस कार्य के केवल आन्तरिक उद्देश्य के आधार पर ही कर सकते हैं? यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि उद्देश्य में इच्छित ध्येय का ज्ञान रहता है। अब विचारणीय यह है कि यदि किसी कार्य का ध्येय तो उत्तम हो परन्तु उसे प्राप्त करने के लिए अनुचित साधनों का प्रयोग किया जाय तो क्या वह कार्य नैतिक दृष्टि से अच्छा है या बुरा? क्या उत्तम ध्येय वा उद्देश्य के कारण ऐसी दशा में हम उस कार्य को अच्छा कह सकते हैं? एक व्यक्ति दीनों की सहायता धनिकों के घर से माल चुरा कर करता है। उसका ध्येय तो उत्तम है परन्तु साधन अनुचित है। इसलिए हम उसके कार्य को नैतिक दृष्टि से अच्छा नहीं कह सकते। अतएव यह स्पष्ट है कि किसी कार्य का औचित्य वा अनौचित्य उस कार्य के उद्देश्य तथा उसकी प्राप्ति के साधन दोनों पर ही निर्भर करता है। इसलिये प्रत्येक उत्तम कार्य में साध्य उत्तम होने के साथ साथ साधन को भी पवित्र रखना ही वास्तविक आदर्श होना चाहिये।

——

साहित्य-सौरभ

रत्नमाला

श्री हरिदत्त शास्त्री, नव्यतीर्थ, एम० ए०

[इनसे पूर्व आर्यसमाज के दश नियमों का शिखरिणी-छन्दोबद्ध संस्कृत-अनुवाद आर्यमित्र के पाठकों की भेंट किया जा चुका है, अब आर्योद्देश्य रत्नमाला का शिखरिणी छन्दोबद्ध अनुवाद आपके सम्मुख प्रस्तुत है।]

पुराऽऽर्यसामाजिक लोक हेतोः,
महर्षिणा ये नियमाः प्रणीताः।
तेषां मया प्राग्गुरु जिह्विकायै,
छन्दो निबन्धो विहितः सुबन्धः॥
यतः शिखरिणी बालाः लपन्ति लघुगीतये।
तस्माच्छिखरिणी वृत्ते कृतेयं 'रत्नमालिका'॥

ईश्वरः

स ईशः सर्वात्माऽऽकृति विरहितोऽनादि निधनः,
चिदात्मा सौख्यात्मा जनि मृति-विहीनो निरुपमः।
स्वभाव, कर्माणि प्रगुणगुण गुम्फो न वितथो-
यदीयो, यः सृष्टेः स्थिति-जनि-लयाना प्रभवति॥

धर्मः

स धर्मो यस्त्वादौ जगति गदितो वेद-वचसा,
हितो यः सर्वेषां प्रयितिकरणैर्भाविनतमः।
विनान्यायैः, पक्षे पतन जनितैर्दोषविसरै—
रपेतो नोपेतो, ऽभ्युदय - फलदो दाम दमनः॥

अधर्मः

सचाधर्मो यः स्याद् गदितचर धर्माभिभवकृत,
महेशाज्ञा भङ्गादसुभृति गणे दोषधिषणाम्—
प्रकुर्वन्, सन्तन्वन् नियमविषये वैशयिकताम्,
दधद्दार्ढ्यं मौढ्ये हठधिय महत्तां च तनुते॥

पुण्यम्

प्रसारो विद्यानामशुभ - गुण - विध्वसन परम्,
कलालोल चित्त विकृति कलनादान्तर गतिम्—
प्रकुर्वत्, स्वाचारैर्वितथ कृतिमशादपि विना—
दधत्, प्रोक्त पुण्य मुनिवर दयानन्द मुनिना॥

पापम्

समभ्चद् यत् पुण्यादिह विमुखभाव त्रिभुवने,
प्रकर्षद्दौरात्म्यं श्रुति - गुरुवचो गर्हणपरम्।
दुराचारेऽसारे पथि सकल जीवान् प्रगमयत्,
अतात सत्याद्धीन विविधवधपीन श्रुतमघम्॥

———

महिला-मण्डल

आर्य महिला सम्मेलन मेरठ

सप्तम् सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन के सुअवसर पर ३१ अक्टूबर को मध्यान्ह में श्रीमती शन्नोदेवी एम० एल० ए० की अध्यक्षता में महिला सम्मेलन हुआ। सभानेत्री ने अपने भाषण में नारी जाति के गौरव और आदर्शों की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए निम्न शब्द कहे—

भारतीय नारियाँ अपने देश के गौरव और सम्मान को स्थिर रखने में सदैव अग्रणी रही हैं, उन्होंने सदा ऐसे वीर पुंगव पुत्रों को जन्म दिया है जो अपना सर्वस्व बलिदान करके मातृ-भूमि के गौरव की रक्षा करते रहे हैं। भारतीय स्वाधीनता के लिये वीर भगतसिंह जैसे पुत्रों को उत्पन्न करने का गौरव हमें प्राप्त है। आज देश के सामने राष्ट्र निर्माण की समस्या है, माताएँ अपने चरित्रबल से आज भी भारत का नव निर्माण कर सकती हैं और इस काम में वे पुरुषों के साथ कन्धे से कन्धा भिड़ाकर कार्य कर रही हैं। स्त्रियाँ अपनी शक्ति को कम समझती हैं यह उनकी भूल है उन्हें अपनी शक्ति पहिचाननी होगी और देश के नैतिक स्तर को उन्नत करने में उन्हें अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ लग जाना होगा तभी हमारा देश पुनः गौरवपूर्ण पद प्राप्त कर सकेगा।

मेरठ की सुप्रसिद्ध महिला कार्य कर्त्री श्री कमला चौधरी एम० पी० ने सम्मेलन में बोलते हुए कहा कि आर्य समाज और गान्धीजी ने नारी जाति को समाज और राजनीति में एक ऊँचे स्थान पर लाकर खड़ा कर दिया है. अब हमारा कर्तव्य है कि भारत के उत्थान में सम्पूर्ण शक्ति के साथ जुट जाय। नारियों की अशिक्षा की समस्या देश की उन्नति में एक बहुत बड़ी बाधा है, यद्यपि पुरुषों में भी शिक्षा का प्रतिशत बहुत कम है पर इससे हमारा दायित्व कम नहीं हो जाता अतः इस ओर भी ध्यान देना आवश्यक है।

कन्या गुरुकुल हाथरस की आचार्या माता लक्ष्मीदेवीजी ने अपने भाषण में आर्य सिद्धान्तों का परिवार में अधिकाधिक प्रवेश करने पर जोर देते हुए कहा कि यदि बहनें अपनी सन्तानों को सदाचारी और उन्नत देखना चाहती हैं तो वे उन्हें घर में ही सच्ची शिक्षा देकर वैसा बना सकती हैं स्कूलों में आज बालकों का निर्माण नहीं हो सकता अतः हमें अपने परिवारों में यज्ञ स्वाध्याय, गौ सेवा, अतिथि सत्कार वृद्धों का आदर इत्यादि बातों को प्रधानता देनी होगी। उत्तम संस्कार ही उत्तम सन्तान का निर्माण कर सकते हैं।

सम्मेलन में पाँच प्रस्ताव स्वीकार किये गये। १—गन्दे अश्लील गानों और दृश्यों वाले फिल्मों पर रोक लगाई जाय और शिक्षाप्रद फिल्मों का निर्माण किया जाय। २—भारतीय महिलाओं का जीवन सादा और आदर्श होना चाहिये उन्हें पश्चिमी विलासिता पूर्ण जीवन से दूर रहना चाहिये। ३—सरकार को चाहिये कि वह उन गन्दे विज्ञापनों पोस्टरों लेबिलों आदि के प्रकाशन पर प्रतिबन्ध लगावे जिनमें कुरुचि पूर्ण, नग्न नारी चित्रण किया जाता है। ४—वर्तमान शिक्षा के साथ प्राइमरी कक्षाओं में सांस्कृतिक शिक्षा दिये जाने की सरकार को व्यवस्था करनी चाहिये। ५—सरकार को चाहिये कि दहेज, एक पत्नी के रहते दूसरा विवाह कर लेना, पत्नी का त्याग कर देना इत्यादि दूषित प्रथाओं को बन्द करने के लिये कानून बनावे।

इन प्रस्तावों पर सर्व श्री स्नातिका सत्यवतीजी, विद्यावतीजी अंग्रेज महिला सरला देवीजी, यशोदा देवीजी, सुशीला देवीजी आदि के प्रभावशाली भाषण हुए।

इस आर्य महिला सम्मेलन ने महिला समाज को एक नया सन्देश दिया है। देश की माताएँ बहनें यदि सम्मेलन के प्रस्तावों और भाषणों पर विचार करें तो वे देश की उन्नति में सच्ची सहायक बन सकेंगी।

——

स्वास्थ्य-सुधा

पेट के कीड़े

श्री वैद्य बुद्धिप्रकाश आर्य

जो व्यक्ति व्यायाम नहीं करते और अधिकतर बैठे रहने का कार्य करते है, दिन में सोते हैं और उस पर भी खट्टे-मीठे चाट के पदार्थ (उड़द की पिट्ठी के बने बड़े पकौड़ी आदि), मांस, गुड़, सिरका सड़े व गन्दे फल, मेवे व तरकारियाँ, मछली, दूध आदि पदार्थ नित्य सेवन करते रहते हैं तथा अपच होने पर भी भोजन कर लेते हैं उनके उदर में 'क्रिमि' उत्पन्न हो जाते हैं जिससे उन्हें शूल, हृद्रोग, अरुचि, दस्त, मुख से दुर्गन्धि, क्षुधा की न्यूनता, सिर में पीड़ा, चेहरा पीला पड़ जाना, मुँह से राल बहना आदि रोग हो जाते हैं। यदि रोगी बालक हो तो निद्रा में दाँत पीसता है और नाक को नोचा करता है। कृमि के कारण रोगी दुर्बल होता रहता है।

यह कृमि मनुष्य की आंतड़ियों में कई प्रकार के उत्पन्न हो जाते हैं उनमें से तीन मुख्य प्रकार के हैं उन्हीं का वर्णन व चिकित्सा नीचे दी जाती है।

१—कद्दूदाना Tapeworm
२—केंचुए Round worm
३—चुरने, सूती कीड़े The rad worm

कद्दूदाना (Tape worm) यह कृमि अलग-अलग चौरस टुकड़ों के आपस में मिलने से बनता है। प्रत्येक टुकड़ा जो रोगी के मल के साथ निकलता है कद्दू के बीज की तरह का होता है। इसी से इसे 'कद्दूदाना' कहते हैं। यह कृमि मनुष्य की छोटी आंत में लगे रहते हैं इसकी लम्बाई कई-कई फिट की होती है। यह कृमि मल के साथ कभी कभी स्वयं ही निकलते रहते हैं।

चिकित्सा

१—कबीला ४ माशा थोड़े से गुड़ में मिला कर रोगी को गरम जल से खिलावे, इसके तीन घण्टे पश्चात् कैस्टर आइल (अरण्ड तेल) चार तोले पिलावे।

२—नारियल की गिरी, पलास पापड़ा (ढकपन्ना) प्रत्येक एक-एक तोला पीस कर एक तोला गुड़ में मिलाये। बालक को आयु के अनुसार दो तीन माशा और युवा को ६ माशा गर्म जल से खिलावे।

३—कबीला, वायविडंग, सूखा पोदीना, निसोथ प्रत्येक एक तोला कूट छान कर ६ माशे की मात्रा में रोगी को उष्ण जल के साथ दे। यह प्रयोग कद्दूदाने तथा केंचुए दोनों में लाभ करता है। अथवा डाक्टरी चिकित्सा निम्न प्रकार से करें।

४—पहले दो दिन तक रोगी को हर प्रातः १ औंस (२॥ तोले) कैस्टर आइल (अरण्ड तेल) अथवा १ औंस मेगनेशियासल्फेट (साल्ट) उष्ण जल में घोल कर दे, इससे दस्तों में अधिकतर कृमि निकल जायगे। तीसरे दिन प्रातः ५ बजे निम्न औषधि औषधि (मिक्श्चर) की केवल एक ही मात्रा पिलायें:—

ऐक्स्ट्रेक्ट फिलीसिसलिक्युड २ ड्राम
स्प्रिट क्लोरोफार्म १५ बूँद
सीरप औरशाई १ ड्राम
म्युसिलेज (जितना पर्याप्त हो)
पानी २। तोला

तत्पश्चात् ८ बजे अर्थात् इस मिक्श्चर के तीन घण्टे पश्चात् एक औंस कैस्टर आइल २॥ तोले उष्ण जल में मिलाकर तुरन्त पिला दें, थोड़ी देर में ही समस्त कृमि जेल सहित निकल जाते हैं। स्मरण रहे कि इन तीनों दिनों में रोगी को केवल दूध ही दिया जावे। जेल निकलने के पश्चात् हल्का भोजन आरम्भ करें। और अधिक मसाले व मांस आदि से परहेज करते रहें तो फिर कृमि उत्पन्न न होंगे।

[शेष पृष्ठ १२ पर]

बाल-विनोद

प्रिय बाल बन्धुओ !

आज हम बहुत दिनो के बाद मिल रहे हैं। इस लम्बे समय में तुमने दिवाली के आनन्ददायक त्योहार मनाया होगा और खूब मिठाइयां खाई होंगी, यात्रायें भी की होंगी। हम भी विशेष कार्यों में सलग्न रहने के कारण तुम लोगों से बातचीत नहीं कर सके। अब हमारा काम भी समाप्त हो गया है और तुम्हारी छुट्टियाँ भी, आशा है अब हम लोग शीघ्र परस्पर मिलते रहेंगे। जिन बन्धुओं ने पिछली १८ अक्टूबर की पहेलियों के उत्तर भेजे हैं उनका उत्साह प्रशंसनीय है, आशा है इसी उत्साह से सब बाल साथी भाग लेते रहेंगे। इस बार के लिये कुछ पहेलियां दी जाती हैं। देखें कौन शुद्ध और शीघ्र उत्तर भेजते हैं—

हल्की गेंद—रमेश के पास ९ गेंदें हैं, गेंदें देखने में तो प्रायः बराबर हैं परन्तु उनमें एक गेंद कुछ हल्की है। रमेश ने मोहन से पूछा कि इनमें से हल्की गेंद का पता लगाओ, गेंद तराजू द्वारा दो बार से अधिक न तोली जाय। बताओ मोहन ने किस प्रकार हल्की गेंद का पता लगाया।

जगदीश्वर दयाल आर्य
बहराइच

किसको क्या मिला—विजयादशमी की छुट्टियों में सत्येन्द्र के पिताजी ने एक दिन अपने मित्रों के साथ पिकनिक की। सब मिलाकर २० संख्या थी। वे लोग जल्दी में २० पूड़ियाँ ही साथ ले आ सके अतः यह निश्चय किया गया कि प्रत्येक बच्चे को १।४ महिलाको १/२। और पुरुष को ४ पूड़ी दी जायें। इस वितरण के बाद बताओ कितने बच्चे थे, कितनी महिलायें थीं, और कितने पुरुष थे और किस वर्ग को कितनी पूड़ियाँ मिलीं।

रामचन्द्र आर्य
कायमगंज

क्या बुद्धिमानी की—एक चोर राजा के बाग में अमरूद तोड़ने के लिए घुसा, बाग में सात द्वार थे और सातों पर सिपाही विद्यमान थे। चोर ने सिपाहियों से कहा मुझे भीतर जाने दो जो कुछ लाऊँगा उसमें से आधा आप लोगों को दे दूंगा और दिये हुए में से एक लेकर चला जाऊंगा, चोर जब लौटा उसने अपनी शर्त निभाई परन्तु सिपाहियों के पल्ले कुछ भी न पड़ा और जितने अमरूद तोड़े थे सब ले गया बताओ कितने अमरूद तोड़े और सिपाहियोंको उसने कैसे चकमा दिया।

— यशप्रकाश आर्य
बस्ती

मारवाड़ी में पहेली—
छ दू ब रह रोटॅ यॅ, जानी आये बीस
पूरी-पूरी बांट दो, आधी की नहीं है रीत

—सत्यनारायण,
कुचामन सिटी

पहेलियों के उत्तर

१—कुल नीबू २२ थे, २—, नेता–सुभाषचन्द्र, नदी–अमेजन, पहाड़–विन्ध्याचल, शहर–मैसूर, देश-जापान ३—प्रत्येक को ३॥ पाई मिलेगीं ४—हरि को ।≡)। और विष्णु को ॥)। मिलने चाहिये

सर्वशुद्ध उत्तर भेजने वालों के नाम

रामनारायण आर्य हसनपुर, श्रीदयाल गढ़वाया फरुखाबाद, पन्नीलाल फ्रीलैंडगंज दोहद, राजकुमार अग्रवाल मुरादाबाद, विश्वप्रकाश रायजादा बस्ती, रामचन्द कायमगंज, नलिनी श्रीवास्तव, गिरिराजकिशोर कायमगंज, हरिप्रसाद ऊपरी (पलामू), विपिनबिहारी आर्य ऊपरी (पलामू) दे, वेन्द्रनाथ सिन्हा आजमगढ़, रामचन्द्र यादव बाराबंकी, ब्रह्मदत्त मिश्र मुरसान सन्तोष कुमार मेरठ सदर, रामपाल आर्य भोलेपुर (फतहगढ़), गोविन्ददास मथुरा, रमेश चन्द्र आर्य, रमेश चन्द्र गोयल, चूरामनलाल मीतल, सुरेशचन्द्र सिंहल, धुरंन्द्र कुमार बयाना भरतपुर।

अल्प अशुद्ध हल भेजने वालों के नाम – गणेशचन्द्र रायगढ़ (पहेली १,२,४,) त्रिवेणी प्रसाद (२) ओंकारदयाल रजौला गया (२,४) उर्मिला रानी हैदरगंज (२,३,४) मुंशीसिंह इनरयतपुर शाहाबाद आरा (२४) शिवपूजन पाठक (१,२४) भागचन्द आर्य संगमनेर अहमदनगर (१२,४) ओम प्रकाश आर्य दुगावों लखनऊ १,२,४) जगदीश्वर दयाल सिंह बहराइच (१३,४) सत्यनारायण कुचामनसिटी (१,४) रामपाल आर्य भोलेपुर फतहगढ़ (१,२,४) नरेन्द्रचन्द्र जौहरी मैनपुरी (२)

—ज्ञानूदादा

सम्मेलन में आर्यवीर दल

प्रशंसनीय कार्य

मुझे सप्तम सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन के अवसर पर कर्त्तव्य पालन की भावना से प्रेरित होकर आए आर्यवीर दल के सैनिकों द्वारा किया गया सेवा कार्य देखकर प्रचुर प्रसन्नता प्राप्त हुई। सम्मेलन का स्थान जंगल में होने के कारण यह सम्भावना थी कि वहाँ चोरी इत्यादि की घटनाएं अधिक संख्या में हो सकती हैं। परन्तु आश्चर्य कि थोड़ी संख्या में होते हुए भी आर्यवीरों ने ऐसी बुद्धिमता तथा लगन के साथ प्रबन्ध कार्य किया कि एकाध छोटी मोटी घटना को छोड़ कर वहाँ कोई विशेष घटना नहीं होने पाई। इस सेवा यज्ञ में सबसे बड़ी विशेषता की बात यह रही कि अपने व्यय पर बम्बई, काठियावाड़, हैदराबाद, बिहार, उत्तर प्रदेश, पंजाब देहली आदि प्रान्तों से आए आर्य वीरों ने आपस में बड़े ही प्रीति पूर्वक तथा अनुशासन में रह कर भाग लिया।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि सम्मेलन के अवसर पर पधारने वाले समस्त आर्यजनों ने आर्यवीर दल की आवश्यकता भली भाँति अनुभव की होगी। मेरी हार्दिक इच्छा है कि प्रत्येक आर्यसमाज में एक सुदृढ़ आर्यवीर दल हो, और आर्यवीरों की दैनिक साधना के निमित्त एक 'साधना मन्दिर' (व्यायाम शाला) हो।

धुरेन्द्र शास्त्री
प्रधान—सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन, देहली।

आर्य वीरों को धन्यवाद

सप्तम आर्य सम्मेलन मेरठ के शुभ अवसर पर यद्यपि स्वागत समिति ने बाहर से आर्यवीरों को बुलाने की अधिक आवश्यकता अनुभव नहीं की फिर भी मेरी प्रार्थना पर २५० से अधिक जिन आर्यवीरो ने निजी व्यय के साथ सम्मेलन में पधार कर अपनी सेवाएं अर्पित की, उन आर्यवीरो का उत्साह प्रशंसनीय एवं अनुकरणीय था। बम्बई, काठियावाड़, ग्वालियर, भिवानी, रोहतक, पानीपत, देहली, हैदराबाद राज्य, मुजफ्फरनगर, कानपुर, मसानाकलाँ, दीगाला, कलकत्ता, पाली-खानपुर (मेरठ), गाजियाबाद, कौंड्यागंज, पटियाला, जमशेदपुर (बिहार) आदि देश के विविध स्थानों से आकर आर्यवीरों ने जनता की जो सेवा की उससे आर्यवीर दल की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई है। भाई उषर्बुध सहायक प्र० सेनापति, स्वामी सुरेन्द्रानन्द सेनापति हरियाना, मेधातिथि सेनापति उत्तर-प्रदेश, वैंकटराव बम्बई, रामाराव सेनापति हैदराबाद, रामसिंह शिक्षक, हरस्वरूप देहली रुद्रमित्र शास्त्री, रुद्रदेव शास्त्री बाल दिवाकर हंस हकीम नानकचन्द, स्ना० उमेशचन्द्र, स्ना०जयकुमार, मुरारिलाल आगरा, अमीन भाई बम्बई, आदि ने व्यवस्था और नियन्त्रण में जो सहयोग दिया दल उसके लिये उनका आभारी है। नौचन्दी के एकान्त मैदान में सम्मेलन कैम्प होने के कारण चोरी आदि की बहुत सम्भावनायें थीं परन्तु वीरों के कुशल कार्य से कोई दुर्घटना न हो सकी। बम्बई आर्यवीर दल की एम्बुलेन्स द्वारा प्रतिदिन ४०से अधिक केस अटेन्ड किये गये, चिकित्सा सम्बन्धी दल की इस प्रणाली से जनता को काफी लाभ पहुंचा और वह दल के कार्य से प्रभावित हुई। सम्मेलन में स्थानीय मेरठ कालेज आदि के स्वयंसेवकों के मुकाबले दल के वीरो ने जिस संयम और अनुशासन आदि का परिचय दिया वह आर्यत्व के अनुरूप था। कालेज के छात्रों की अशिष्टता ने कई बार व्यवस्था भंग करने में सहयोग दिया परन्तु दल ने सतर्कता से स्थिति को सम्हाले रखा। इस प्रकार सम्मेलन के प्रसंग में एक सप्ताह से अधिक काल तक आर्यवीर दल ने आर्य जनता की सेवा की। दल के इस

[१०वें पृष्ठ का शेष]

केंचुआ (गडुआ)

यह कृमि ५ से १६ इंच तक लम्बा होता है। इसके मुँह में छोटे छोटे दाँत होते हैं यह भी मनुष्य की छोटी अन्तड़ी में होता है, परन्तु कभी कभी अन्तड़ी से आमाशय (मैदे) में भी चला जाता है जो एक प्रायः वमन द्वारा निकलते देखे गये है। यह संख्या में केवल दो तीन ही होते हैं परन्तु किसी-किसी रोगी के अधिक संख्या में भी पाये जाते हैं।

चिकित्सा

अफसन्तीन रूमी, कबीला, वायविडंग, पलासपापड़ा (ढकपन्ना) प्रत्येक एक एक तोला, आड़ू के पत्तों के रस में पीस कर 'झरबेर' जैसी गोली बनावें। प्रातः सायं जल से एक-एक गोली देवें अथवा अनार की कोंपल आड़ू की कोंपल ६, ६ माशे पीस कर पिलावें। अथवा डाक्टरी चिकित्सा निम्न प्रकार करें।

पहले दो दिन तक प्रातः एक औंस कस्टर आइल पिलावें और दूसरे दिन की रात्रि को इसकी केवल एक ही मात्रा दें।

सेन्टोनीन २ ग्रेन
केलोमिल ३ ग्रेन
सोडाबाईकार्ब २० ग्रेन

इन सब को एक जेलेटीन केपशूल में भर कर अथवा मैदा की एक छोटी सी पूरी बना कर उसमें बन्द करके जल से निगलवा दें और तीसरे दिन प्रातःकाल २॥ तोले कैस्टर आइल पिलावें जो भी केंचुए होंगे सब निकल जायेंगे। तीनों दिन केवल दूध ही पिलाये। कृमि निकलने के पश्चात हल्का भोजन दें।

चुरने या सूती कीड़े

यह कृमि बहुत छोटे और पतले होते हैं परन्तु दोनो सिरों पर अधिक पतले होते जाते हैं इनकी लम्बाई १/१२ से १/२ इंच तक होती है। यह अन्तड़ियों में सहस्रों की संख्या में होते हैं जो मल के साथ प्रायः निकलते रहते हैं।

चिकित्सा

अजवाइन-वायविडंग, पलाश के बीज, सोफ सनाय प्रत्येक एक एक तोला लेकर चूर्ण बनायें, तीन चार माशे की मात्रा युवावस्था वालों को उष्ण जल के साथ दें और बालकों को अवस्थानुसार मधु में मिला कर चटायें और नीम के तेल की फुरेरी गुदा में लगायें अथवा डाक्टरी चिकित्सा करें।

मेग सल्फ ४ ड्राम
मेग कार्ब १५ ग्रेन
टिंचर सेना ३० बूंद
सीरप फिग्स १ ड्राम
पानी पीपरमेन्ट १ ड्राम

ऐसी तीन मात्रायें रोज तीन चार दिन तक पिलाने से सब कृमि निकल जाते हैं।

कृमि-विकार बच्चों में अधिक हुआ करते हैं। बच्चों के स्वास्थ्य पर उनका बुरा प्रभाव पड़ता है। इस भयंकर पीड़ा से उन्हें बचाने के लिये उनके भोजनादि पर हमें पूरा नियन्त्रण रखना चाहिये।

कार्य में जिन वीरों ने सक्रिय सहयोग दिया, परामर्श तथा अन्य प्रकार से सहायता पहुंचाई है वे सब धन्यवाद के पात्र हैं। आशा है आयंवीर समय आने पर इसी उत्साह से भविष्य में सदैव भाग लेते रहेंगे।

—ओम्प्रकाश पुरुषार्थी
उ० सेनापति भ० सा० आर्यवीर दल

आर्य समाज तिलहर की स्वर्ण जयन्ती

आर्य समाज तिलहर की स्वर्ण जयन्ती १२ अक्टूबर से २१ अक्टूबर सन १९५१ तक बड़ी धूम-धामसे मनाई गई। प्रथम दिन श्री मदनमोहन सेठ रिटायर्ड जज का जलूस बड़े समारोह पूर्वक सुसज्जित हाथी पर मुख्य मुख्य बाजारों में से निकाला गया. जनता ने हार-फूल तथा मिष्टान्न द्वारा स्थान-स्थान पर आपका स्वागत किया। जलूस धर्मशाला में समाप्त हुआ। जहाँ आपका स्वागताध्यक्षजी ने स्वागत किया और १३५) रु० की थैली तिलहर समाज की ओर से भेंट की गई। आपके तथा प० धर्मपाल विद्यालंकारजी के विद्वत्ता पूर्ण भाषण हुये।

इनके पश्चात् १७ अक्टूबर तक निरन्तर रात्रि में प० बुद्धदेव जी मीरपुरी द्वारा कथा होती रही। राजकुमार रणञ्जयसिंहजी युवराज अमेठी राज्य, माता लक्ष्मी देवीजी तथा प० धर्मपाल विद्यालंकारजी की प्रधानता में शिक्षा सम्मेलन, महिला सम्मेलन तथा आर्य कुमार सम्मेलन हुए। १८ अक्टूबर को नगर कीर्तन निकाला गया और १९ से २१ अक्टूबर तक महोत्सव मनाया गया जिसमें आर्य जगत के सुप्रसिद्ध विद्वान् तथा सन्यासी जैसे श्री मदनमोहनजी सेठ रिटायर्ड जज, प० धर्मपाल विद्यालंकारजी, राजकुमार रणञ्जयसिंहजी, ब्रह्मचारी उषर्बुधजी, श्री ओम्प्रकाशजी पुरुषार्थी, राजकवि प० श्यामजी शर्मा, माता लक्ष्मी देवी जी, प० बुद्धदेवजी मीरपुरी, स्वामी सन्तोषानन्द जी, स्वामी शिवानन्द जी, प० बिहारीलाल जी शास्त्री, पं० ज्ञानेन्द्रजी आर्य मुसाफिर इत्यादि पधारे। जनता की अपार भीड़ ने (जिसमें दूर दूर के यात्री थे) इन विद्वानों के वचनामृत का श्रवण किया।

—वीरपालसिंह आर्य
मन्त्री

— —

उत्सव

—आ० स० राजामन्डी आगरा का वार्षिकोत्सव ४ से ७ नवम्बर तक बड़े उत्साह और धूम-धाम के साथ सम्पन्न हुआ। श्री वाचस्पति शास्त्री, श्री स्वामी

आर्यजगत

ब्रह्मानन्द दण्डी, श्री स्वामी सत्यदेव परिव्राजक तथा अन्य विद्वानों के भाषण हुए। श्री वाचस्पति शास्त्री का भाषण आगरा कालेज में भी कराया गया जिसका उत्तम प्रभाव पड़ा।

—आ० स० पनेरा महराजगंज गोरखपुर का वार्षिकोत्सव १३ से १६ नवम्बर तक होगा, इसी अवसर पर आर्य समाज मन्दिर का शिलान्यास भी होगा।

—आ० स० कॉठ मुरादाबाद का उत्सव २२ से २४ नवम्बर तक होगा।

—आ० स० दीवान हाल देहली का उत्सव २३ से २६ नवम्बर तक होगा एवं २३ को नगरकीर्तन निकलेगा।

१८ अक्टूबर के आर्यमित्र में छपे समाचार का संशोधन

आर्यसमाज अगवालपुर जि० मुरादाबाद के चौ० शेरसिंहजी के सुपुत्र डा० बलवीरसिंहजी होमियोपैथिक के डाक्टर थे। वह अपना इलाज आगरे के मानसिक अस्पताल में करा रहे थे। हार्टफेल हो जाने के कारण ता० १७-९-५१ को उनका देहावसान हो गया। संस्कार वैदिक रीति से कराया गया। श्री मदनमोहन सेठ आदि ने चौ० साहब को समवेदना पत्र भेजे हैं।

सूचनाएं

श्री गणेशप्रसाद शर्मा वानप्रस्थी समाजों में भ्रमण करना चाहते हैं। वह आर्यसमाज निगोहा जि० लखनऊ के अधिकारी रह चुके हैं। उनका विशेष विषय है कि 'प्राकृतिक जीवन" वह अच्छी प्राकृतिक चिकित्साएं करा चुके हैं। वह जिस आर्य समाज में पधारें, वहाँ के अधिकारियों को चाहिये कि उनके रहन सहन का प्रबन्ध कर दें।

—मदनमोहन सेठ प्रधान
आर्यप्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश

प्रचार व्यवस्था

उत्तर प्रदेशीय समाजों को सूचित किया जाता है कि सभा ने निम्न उपदेशकों, प्रचारकों को उत्सवादि के लिये केन्द्र में रखना निश्चित् किया है। शेष उपदेशक प्रचारक मण्डलों में मण्डलाधीश के द्वारा प्रचार-कार्य करेंगे।

उपदेशकों, प्रचारकों से निवेदन है कि अपने-अपने मण्डल में पहुँच कर प्रचार करने का कष्ट करें।

श्री प० सत्यमित्र शास्त्रीजी वेदतीर्थ, महो०, श्री प० महादेव प्रसादजी शास्त्री, महो० श्री श्रवणसिंहजी प्रचारक, श्री मुकन्दरायजी शर्मा प्रचारक, श्री धर्मदत्त आनन्दजी प्रचारक।

—भृगुदत्तजी अधिष्ठाता
उपदेश-विभाग

रसीद चोरी गई

आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के उपदेशक श्री पण्डित रूपनारायण शर्माजी अपने घर जाते समय लखनऊ-कानपुर की ट्रेन में यात्रा कर रहे थे उनका एक ट्रन्क जिसमें पुस्तकें, सभा की रसीद बुक सं० २९८, डायरी, मार्गव्यय फार्म तथा १०) भी रक्खे थे, किसी ने उठा लिया। अतः सभा की उक्त संख्या की रसीदबही जिस किसी के पास हो वह चोरी की समझी जानी चाहिये और उस रसीद पर धन न दिया जावे।

—धर्मपाल विद्यालङ्कार
मन्त्री आ० प्र० स० उत्तर प्रदेश

गुरुकुल समाचार

गुरुकुल वृन्दावन के उपदेशक श्रीयुत रामानन्दजी सिद्धान्तशास्त्री, साहित्यरत्न ने मास फरवरी सन् ५१ से अक्टूबर सन् ५१ शिकोहाबाद, जसराना, एटा, मैनपुरी, फतहपुर, लालगंज, उरई, झांसी, रायपुर, कोंच, फतेहगढ़, बाराबंकी, हरदोली, जसवन्तनगर, फीरोजाबाद, खुर्जा, नगीना, रामपुर, एत्मादपुर, आदि स्थानों में भ्रमण कर गुरुकुल के लिए ६२३ रु० ६ आ० की सहायता प्राप्त की। दानदाताओं को धन्यवाद है। —द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री
मुख्याधिष्ठाता

—बुन्देलखण्ड की समस्त आर्य समाजों के मंत्री महोदयों को सादर सूचित किया जाता है कि मैं आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की आज्ञानुसार आपकी समाज का निरीक्षण दिसम्बर के दूसरे सप्ताह तक करूंगा। कृपया आय व्यय तथा अन्य रजिस्टर ठीक करलें।

—दयानन्द सरस्वती

—जिला अलीगढ़ की समस्त आर्य समाजों को सूचित किया जाता है वह निरीक्षणार्थ अपनी समाज के समस्त कागजातों को ठीक रक्खें तथा प्राप्त व्यय धन भी सुरक्षित रक्खें ताकि निरीक्षण करने में सुविधा रहे।

—नाहरसिंह

आगरा अनाथालय

मुझे विश्वस्त सूत्र से ज्ञात हुआ है कि मैनपुरी और फर्रुखाबाद जिले में एक व्यक्ति अपने को यदुनन्दनलाल तिवारी और रामनारायण कक्कर श्री मद्दयानन्द अनाथालय आगरा के नाम से धन एकत्रित कर रहा है और अपने को इस संस्था का मैनेजर बताता है और श्री मद्दयानन्द अनाथालय आगरा के नाम की जाली रसीद जो आवाज प्रेस एटा में छपी है वह दान दाताओं को देता है अतः मैं मैनपुरी और फर्रुखाबाद जिले के आर्यसमाज के मंत्री महोदयों और आर्य जनता से प्रार्थना करता हूँ कि उपरोक्त व्यक्ति जहाँ कहीं पहुँचे उसको पुलिस द्वारा गिरफ्तार करादें उसका हुलिया निम्न प्रकार है—

रंग सांवला, कद मियाना, दांत बड़े चमकीले, उम्र २८-३० वर्ष, मूछें नदारद, सिरके बाल छोटे, सिर लम्बा, कलकतिया कुर्ता, पम्प शू, एक डंडा सिर के बराबर तक रखता है।

—मोहनलाल आर्य
प्रधान

— —

— —

सिंहावलोकन

त्रावणकोर में ईसाइयत का प्रभाव

त्रावणकोर कोचीन राज्य के ईसाई प्रारम्भिक शिक्षा के बहाने बच्चों पर प्रारम्भ से ही ईसाइयत थोपने लगते हैं। ये स्कूल गिरजा घरों से सम्बद्ध होते हैं जिनमें जाना प्रत्येक विद्यार्थी के लिये लाजिमी होता है। इन स्कूलों में शिक्षित अध्यापिकों की कदर नहीं होती। वहाँ मिशनरी या विशप होना ही अध्यापकों की योग्यता मान ली जाती है। ये अध्यापक विद्यार्थियों के कानों में हिन्दू धर्म व संस्कृति के विरुद्ध जहर उगलते रहते हैं।

अतः बहु सख्यक हिन्दुओं की वर्षों से यह माँग रही है कि सरकार शिक्षा का राष्ट्रिय करण करे ताकि साम्प्रदायिक शिक्षा अनिवार्यतः न दी जा सके। सर सी० पी० रामस्वामी अय्यर की तत्कालीन सरकार ने यह अच्छी तरह समझ कर कि मिशनरी स्कूल इतना शिक्षा की ओर ध्यान नहीं देते जितना कि धर्म-प्रचार की ओर, प्रारम्भिक स्कूलों को सरकारी अधिकार में करने का निश्चय किया। हिन्दुओं द्वारा संचालित स्कूलों के प्रबन्धकों ने इस निश्चय का पूर्ण स्वागत किया। पर मिशनरी स्कूलों ने यह नीति मनाने से साफ इन्कार कर दिया।

इसी समय भारत स्वतन्त्र होने पर त्रावणकोर राज्य में भी कांग्रेस सरकार बनी और प्रधान मन्त्री पट्टन थानू पिल्लई उसी नीति पर कायम रहे। इसी बीच ईसाई वर्ग सरकार से मिशनरी स्कूलों के लिए सरकारी सहायता की माँग करता रहा और जब वह न मिली तो इन्होंने षड्यन्त्र रचकर पिल्लई मंत्री मडल समाप्त करा दिया।

नये मन्त्रिमडल के शिक्षा-मन्त्री श्री गोविन्द मेनन ने ईसाइयों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिये इनकी मांगे स्वीकार कर ली। इन्होंने प्राइवेट प्राइमरी स्कूलों के लिये ४० लाख रुपये वार्षिक स्वीकार किये जिनमें से ३८ लाख मिशनरी स्कूलों को मिलते थे।

इस प्रकार खुल्लम खुल्ला सरकारी रुपये से ईसाई मत प्रचार में मदद दी गयी।

श्री गोविन्द मेनन समझते थे कि इस प्रकार की रियायत करने से वे ईसाई धर्म को अपने पक्ष में कर लेंगे, पर यह न हुआ। ईसाइयों ने सरकार की माध्यमिक शिक्षा सुधार योजना का विरोध किया। विधान सभा में ईसाई एम० एल० ए० लोगों ने इस व्यवस्था का स्वागत किया था पर मिशनरियों ने यह सोचा कि इस योजना से वे पादरियों को अध्यापक न बना सकेंगे, अतः इन्होंने इसका जबरदस्त विरोध किया।

मिशनरियों के विरोध के फलस्वरूप ईसाई धर्मावलम्बी कॉंग्रेसी एम० एल० ए० लोगों ने भी जो पहले योजना स्वीकार कर चुके थे, कह दिया कि हम अपने पादरियों की बात नहीं टाल सकते। जहाँ तक धार्मिक स्कूलों का प्रश्न है हम कॉंग्रेस की बात के उतने कायल नहीं हैं जितना कि ईसाई पादरियों के आदेशों के। इस प्रकार यह योजना ताक में ही रखी है।

विधान सभा के ये ईसाई कॉंग्रेसी होने का दावा करते हैं, पर वे खुले आम हिन्दू संस्कृति की निन्दा करते हैं, वे भारतीय अधिकारियों द्वारा प्रयुक्त बापू के प्रिय शब्द राम-राज्य का भी विरोध करते हैं उनका कहना है कि राम राज्य का अर्थ हिन्दू राज्य है।

कैथोलिक कॉंग्रेस के अध्यक्ष ई० पा० वर्गा, श्रीलने इसका बहुत विरोध किया था कि भूत पूर्व उपप्रधान मन्त्री स० पटेल सोमनाथ के पुनरुद्धार के लिये जी जान से प्रयत्नशील हैं वे यह भी आपत्ति करते हैं कि भारतीय डाक के टिकटों में हिन्दू देवी-देवताओं व पवित्र स्थानों के चित्र क्यों रहते हैं।

यहाँ के स्कूलों में हाल ही में नेहरू जी की 'पुत्री को पत्र' पुस्तक पाठ्यक्रम में रखी गयी थी, पर अनेक ईसाई पादरी अध्यापकों ने यह पुस्तक पढ़ाने से इन्कार कर दिया। क्योंकि उसमें कई स्थानों पर हिन्दू संस्कृति और भारत के गौरव की चर्चा की गई थी।

इस प्रकार ईसाइयों का यह हिन्दू सस्कृति व धर्म के विरुद्ध बराबर विद्रोह बढ़ रहा है। बहु-सख्यक हिन्दुओं के हितों की किंचित परवाह नहीं की जाती। यह भेद भाव तभी दूर होगा जब कि सब कार्य कर्त्ता अधिकारी ईसाई कॉंग्रेसियों की अनीति का भण्डा फोड़ करें। हमारी माँग है कि त्रावनकोर में प्रारम्भिक व माध्यमिक शिक्षा का तुरन्त ही राष्ट्रिय करण किया जाय ताकि प्राइवेट स्कूल की ओट में वहाँ साम्प्रदायिक प्रचार न किया जा सके।

कन्या चाहिये

एक एम० ए० पास अविवाहित नवयुवक के लिये गुरुकुल की स्नातिका, ग्रेजुएट अथवा डाक्टरी का अध्ययन करने वाली १८ से २२ वर्ष तक की स्वस्थ सुन्दर कन्या की आवश्यकता है। किसी प्रकार का दहेज नहीं चाहिये। लड़के के पिता करोड़पति व्यापारी हैं। पत्र व्यवहार निम्न पते पर करें।

रामनरायन लाल, मैनेजर
हीरालाल प्रेस, अलीगढ़।

वर की आवश्यकता

एक अंग्रेजी पढ़े २० से २५ वर्षीय रुपये की ठहरौनी न करने वाले कान्यकुब्ज ब्राह्मण वर की आवश्यकता है। कन्या पाठक कुलोत्पन्न, आयु करीब १७ वर्ष संस्कृत पढ़ी अंग्रेजी एफ० ए० के दूसरे क्लास में पढ़ रही है। गौर वर्ण स्वरूपवती है।

पता पत्र व्यवहार
पाठक ब्रह्मदत्त मास्टर,
कच्ची गढ़ी औरय्या, जिला इटावा

देखने व संग्रह योग्य पुस्तकें और चित्र

सत्यार्थ प्रकाश का उपयोगी विशेष संस्करण

जिसमें अकारादि क्रम से मंत्रादि प्रमाण सूचि, अकारादि-क्रम से विषय शब्दानुक्रमणिका, जिससे हर एक प्रमाण तथा विषय सुगमता से निकाला जा सकता है और सत्यार्थप्रकाश पर होने वाले आक्षेपों के उत्तर भी परिशिष्ट में दिये गये हैं। मूल्य ८५० पृष्ठों की पुस्तक का लागत मात्र २) सजिल्द २॥) पूरे कपड़े की सुन्दर जिल्द के ३) मात्र हैं।

संस्कारविधि-व्याख्या स्वरूप उपयोगी पुस्तक

संस्कार-विधि विमर्श

(व्याख्याकार कविराज श्री अत्रिदेव गुप्ता विद्यालंकार गुरुकुल कांगड़ी)

संस्कारों का आयुर्वेद के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है, अतः वैद्यजी ने इसी दृष्टिकोण से चिकित्सा प्रजनन और प्रजाशास्त्र के आधार पर १६ हो संस्कारों की व्याख्या की है जो कि प्रत्येक गृहस्थ के लिए उपयोगी है। मूल्य ३)

आर्यसमाजका इतिहास—आदि काल से सन् १९४८ के कलकत्ता आर्यसम्मेलन तक का। सरल सुबोध सबके पढ़ने योग्य पुस्तक। मूल्य १।=)

दयानन्द चित्रावली—ऋषि दयानन्द की सचित्र बड़ी साइज की जीवन सहित सुन्दर उपहार योग्य पुस्तक। मूल्य २।)

दयानन्द प्रकाश – श्री स्वामी सत्यानन्दजी रचित ऋषि दयानन्द की सुन्दर व सरल भक्ति रस में लिखी हुई कथा योग्य पुस्तक। मूल्य ४॥)

भारतवर्ष का इतिहास—लेखक पं० भगवद्दत्तजी बी० ए०। आदि काल से गुप्त साम्राज्य तक का खोजपूर्ण इतिहास। मूल्य १५)

अनुरागरत्न—महाकवि प० नाथूरामशंकर शर्मा की कविताओं का अपूर्व संग्रह, सम्पादक श्रीहरिशङ्कर शर्मा पृष्ठ सं० ३२५ मूल्य ७।)

दयानन्द सिद्धान्त भास्कर—ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ, लेख व सिद्धान्तों का अपूर्व संग्रह है, सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रकाशित मू० ७।)

उपनिषद् आर्य-भाष्य—टीकाकार श्री प० आर्यमुनिजी। ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तरिय, आठ उपनिषदों का भाष्य। विस्तृत भूमिका व विषयसूची सहित। पृ० स० ७५० सजिल्द पुस्तक का मूल्य मात्र ६)

चित्र—महर्षि दयानन्द ।=) गुरु विरजानन्द, पं० लेखराम तथा वेदमन्त्रादि के सुन्दर चित्र भी छपे हैं।

आर्यकुमार परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं की तथा सब प्रकार की पुस्तकें मिलने का पता—

गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क, देहली

शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित-जगत् प्रसिद्ध

सर्वोत्तम शुद्ध सुगन्धित कीटाणु नाशक

हवन-सामग्री

हमारी वैदिक संस्कृति में यज्ञ का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है 'अग्निहोत्रम् जुहुयात स्वर्गकाम.' सुख की कामना करने वाले को प्रतिदिन अग्निहोत्र अवश्य करना चाहिये। ऋषियों का कथन है कि वैज्ञानिक रूप से अग्नि होत्र किया जाय तो किसी भी प्रकार के रोग का गृह में प्रवेश नहीं हो सकता, यदि विधि पूर्वक एवं विशुद्ध द्रव्यों से हवन-सामग्री का निर्माण किया गया हो इसलिये आपसे साग्रह निवेदन है कि यदि आप हवन के वास्तविक लाभ को अनुभव करना चाहते हैं तो हमारे द्वारा निर्मित सर्वोत्तम शुद्ध हवन-सामग्री का प्रयोग करें। हवन सामग्री का सुलभ मूल्य प्रति सेर १॥) डेढ़ रुपया है। थोक ग्राहकों व आर्यसमाजों को भरपूर कमीशन दिया जाता है। नमूना मुफ्त मंगा कर देखिये। हमारा पता यह है—

आनन्द आयुर्वेदीय फार्मेसी भोगांव (मैनपुरी)

उत्कृष्ट पुस्तकें

१ उपनिषद् प्रकाश	३॥)
२ दृष्टांतसागर स० भाग १, ३)	
३ दृष्टांतसागर स० भाग २,	२।)
४ वरलूविज्ञान साजल्द	२॥)
५ वेदरहस्य	२)
६ वेदान्त दर्शन(स्वा०दर्शना०)	)
७ सत्यनारायण की कथा	।)
८ आर्यसत्सङ्ग	।=)
९ प्राणायाम विधि	।)
१० धर्मशिक्षा	≡)
११ राष्ट्रीय गान	।=)
१२ कल्याण मार्ग	।)
१३ छान्दोग्य उपनिषद्	२)
१४ चाणक्य नीति	॥।)
१५ मुसाफिर भजनावली	१।)
१६ जनेऊ१॥)ह०सामग्री १॥)सेर	
१७ हवनकुण्ड लोहा१॥)तांबा३)	

इसके अलावा हर प्रकार के पुस्तकों के लिए बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये। कमीशन काफी दिया जाता है। अपना पता और डाकखाना साफ लिखें।

श्यामलाल वासुदेव भारतीय
आर्य पुस्तकालय, बरेली

गुरुकुल चाय

जड़ी बूटियो के योग से बनी देशी चाय। सुख व स्वास्थ्य के लिये परिवार में इनका प्रयोग कीजिये। यह जुकाम, खांसी, नजला ज्वर आदि को दूर करती है तथा पेट साफ रखती है। इससे दूसरी नशीली चायों की आदत न रहेगी। मू० -), नमूना १=) पाव

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरद्वार)

वर चाहिये

एक १७ वर्षीय अग्रवाल आर्य कन्या के लिये जो सुन्दर स्वस्थ गृह कार्य में भी दक्ष है हाई स्कूल व विद्या विनोदनी विदुषी पास है। विशारद की परीक्षा दे रही है २५वर्ष तक का शिक्षित स्वस्थ वा रोजगार वर चाहिये। ववाह वैश्य मात्र से हो सकता है

एक अग्रवाल विधवा आयु २४ साल है एफ० ए० विदुषी विशारद पास है विधुर वर शिक्षित स्वस्थ वा रोजगार चाहिये

प्रधान आर्यसमाज इस्लाम नगर
जिला बदायूं



आर्यमित्र में विज्ञापन देना व्यापार की उन्नति का साधन है।

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

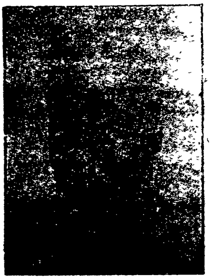
ओ३म्

आर्य-मित्र

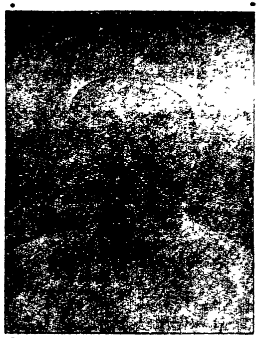
ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र
संचालक-आर्यमित्र-प्रकाशन लि०, लखनऊ
आगरा, २२ नवम्बर १९५१

महामना पंडित मदनमोहन मालवीय



भारत केसरी लाला लाजपतराय



गत सप्ताह देश में उक्त दोनों महान् नेताओं की पुण्य तिथियाँ मनाई गयीं।

महामना मालवीयजी उन विभूतियों में थे जिन्होंने अपना सारा जीवन देश और समाज की सेवा और भलाई में अर्पण कर दिया। जिस समय राजनीति का नाम लेना भी अपराध समझा जाता था और स्वतन्त्रता के लोग स्वप्न भी न देख पाते थे, उस समय मालवीयजी ने जनता को जगाकर उसमें राष्ट्रिय चेतना भरना आरम्भ किया। मालवीयजी जहाँ भारतीय स्वतन्त्रता के सच्चे सन्देश वाहक थे, वहाँ आर्यसंस्कृति के उद्धार के लिये भी आपने महान् प्रयत्न किया। वे हिन्दी, हिन्दू हिन्दुस्तान के सबल और सुदृढ़ सहायक थे। वे इन्हीं के लिये जिये और इन्हीं के लिये प्राणोत्सर्ग किया। काशी में महान् हिन्दूविश्वविद्यालय की स्थापना कर मालवीयजी अपनी कीर्ति को अजर और अमर बना गये। मालवीयजी जितने श्रेष्ठ वक्ता थे उतने ही उत्कृष्ट और प्रभावशाली लेखक भी। उनकी वाणी में बड़ा ओज था। उनका उदात्त चरित्र जनता के हृदय को अपनी ओर आकृष्ट करने में सदैव सफल होता था। वे भारत-भारती के सच्चे सपूत, सेवक, सहायक और संरक्षक थे। मालवीयजी का भौतिक शरीर संसार में नहीं रहा पर उनका यशःशरीर अनन्त काल तक जीवित रहेगा।

भारतकेसरी लाला लाजपतराय राष्ट्र को आर्यसमाज की देन थे। उनका सार्वजनिक जीवन आर्यसमाज की वेदी से प्रारम्भ हुआ। वे देश की महान् शक्ति थे, देश की दासता उनके भावुकता-पूर्ण हृदय में पैने कांटे की तरह चुभती थी। उनकी सिंह गर्जना सुनकर निराशा-निशा से पूर्ण हृदयों में सदाशा-सूर्य की समुज्ज्वल ज्योति जगमगा उठती थी और विरोधियों तथा विपक्षियों के दिल दहल जाते थे। राष्ट्र के इस सेनानी ने स्वातन्त्र्य-संग्राम के लिये देश विदेश में घूम कर जो तप-त्याग किया, वह इतिहास के पृष्ठों पर सदैव स्वर्णाक्षरों में अङ्कित रहेगा। लालाजी आर्यसमाज को सदैव अपनी माता कहा करते थे। जब-जब आर्यसमाज पर कोई आपत्ति आयी तभी तब आपने उसकी रक्षा के लिये अपनी छाती अड़ा दी। आपने अंग्रेजी में 'दी आर्यसमाज' नामक एक पुस्तक भी लिखी। आप 'दयानन्द विद्यालय लाहौर' के संस्थापकों में से थे। लालाजी वैदिक धर्म के प्रबल पोषक तथा सबल समर्थक थे। ऋषि दयानन्द के इस महान् शिष्य के कारण विदेशों में भी भारत-भारती का भाल ऊँचा हुआ। आर्यसमाज को गर्व है कि वह ऐसी विमल विभूति राष्ट्र को समर्पित कर सका।

वार्षिक मूल्य ५) एक प्रति
विदेश में [illegible] तीन आने
सम्पादक हरिशङ्कर शर्मा
वर्ष—५३
अङ्क—[illegible]

गुरुकुल महोत्सव

गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन का वार्षिकोत्सव

गुरुकुल विश्वविद्यालय, वृन्दावन का ४७ वाँ वार्षिक महोत्सव ता० २३ से २६ दिसम्बर तक बड़े समारोह के साथ कुलभूमि में मनाया जायगा। इसमें आर्यजगत् के उच्च कोटि के प्रसिद्ध विद्वान्, व्याख्याता तथा उपदेशक सम्मिलित हो रहे हैं। साथ ही देश के अन्य नेताओं के भी पधारने की पूर्ण आशा है। उत्सव के समय नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश तथा कुल की शिक्षा-दीक्षा प्राप्त कर निकलने वाले स्नातकों का दीक्षान्त संस्कार विशेष रूप से दर्शनीय होंगे। उत्सव पर सम्मिलित होने वाले महानुभावों के ठहरने की समुचित व्यवस्था गुरुकुल की ओर से रहती है जो सज्जन अपने विद्यार्थियों को गुरुकुल में प्रविष्ट कराना चाहें वे गुरुकुल कार्यालय से प्रवेश पत्र व नियम मँगा लें।

द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री
मुख्याधिष्ठाता

आर्यसम्मेलन के अध्यक्ष, स्वागताध्यक्ष और स्वागत मन्त्री को सभा के प्रधान द्वारा

बधाई के पत्र

ओ३म्

पत्र सं० १५४१७—१४।११।५१

कार्यालय
आ० प्र० नि० सभा उत्तरप्रदेश
मीराबाई मार्ग, लखनऊ

प्रिय विनायकरावजी विद्यालंकार,

सप्रेम नमस्ते।

सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन मेरठ की आशातीत सफलता के समाचार से हार्दिक हर्ष हुआ। सम्मेलन की सफलता का श्रेय मेरे मत से मुख्यतः आपको है और इसके लिये मैं आपको हार्दिक बधाई देता हूँ। प्रधान पद से आपका अभिभाषण बड़ा सामयिक था और उसे सबने ही पसन्द किया है।

अनायास अस्वस्थ होजाने से मैं सम्मिलित न हो सका, इसका मुझे खेद है।

भवदीय—
मदनमोहन सेठ
सभाप्रधान

सं० १५५०५—१६।११।५१

१ श्री मती शकुन्तला देवीजी गोयल स्वागताध्यक्ष

सं० १५४१८—१४।११।५१

२ श्री कालीचरणजी आर्य प्रधानमंत्री

नमस्ते।

सप्तम सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन मेरठ की आशातीत सफलता का समाचार सुनकर अत्यन्त हर्ष हुआ। प्रबन्ध की सुव्यवस्था तथा विविध सम्मेलनों के आयोजन इतने सुरुचि पूर्ण थे कि दर्शकों ने भूरि २ प्रशंसा की, इस सर्वतोमुखी सफलता के लिये आपको तथा आपके साथी कार्यकर्त्ताओं को हार्दिक बधाई है।

मुझे खेद है कि अनायास अस्वस्थ हो जाने से मैं उपस्थित न हो सका और सम्मेलन की सफलता देखने से वंचित रहा।

भवदीय—
मदनमोहन सेठ
सभा प्रधान

श्री राजगुरुजी की प्रचार यात्रा

सर्व महासम्मेलन मेरठ के बाद सार्वदेशिक सभा के प्रधान राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री ने देश-भर में प्रचार-यात्रा आरम्भ कर दी है। विगत ६ और ७ नवम्बर को अमृतसर में चार व्याख्यान, ८ को दीनानगर में एक व्याख्यान, ६ को आर्यसमाज पठानकोट में भाषण, ११ को साधु आश्रम हरदुआगंज के उत्सव में, १३ को इटारसी, १४ १५ नवम्बर देवलाली में प्रचारात्मक भाषण और उपदेश देते हुए इस समय बम्बई पहुँच गये हैं। और २२ तारीख तक बम्बई निवास के बाद २५ नवम्बर से ३ दिसम्बर तक कलकत्ता रहेंगे।

श्रीमान् सेठ शूरजी वल्लभदास का स्वर्गवास!

आर्य जगत को यह जानकर अत्यन्त दुःख होगा कि बम्बई के सुप्रसिद्ध आर्य नेता श्रीमान् सेठ शूरजीवल्लभदासजी का ६४ वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। वे आदर्श आर्य पुरुष थे। नित्य प्रति स्वाध्याय सन्ध्या और हवन करते थे। उनका समस्त परिवार एक आदर्श आर्यसमाजी परिवार है जहाँ पर सदा आर्य विद्वान् ठहरा करते और वेदों की चर्चा होती रहती। उनका अतिथि सत्कार आदर्श था इतना बड़ा कारोबार होते हुए भी उनको आर्यसमाज की उन्नति की ओर वेद प्रचार की दिन रात चिन्ता रहती थी और वे स्वयं आर्य समाज के उच्चकोटि के महान् प्रचारक थे। उनके असामयिक स्वर्गवास से आर्यसमाज का स्तम्भ टूट गया। हमारी परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदान करे और उनके सुपुत्र भीष्मप्रताप सिंहजी, विक्रमसिंहजी आदि तथा सुपुत्रियों और उनकी धर्मपत्नीजी को तथा सब कुटुम्बी जनों को धैर्य बँधावे। श्रीमान् सेठ साहब ने अपने जीवन काल में लाखों रुपया दान दिया। ऐसे दानवीर सज्जन के स्वर्गवास से आर्यसमाज को भारी क्षति पहुँची है। परमात्मा हमें बल दे कि हम उनके पद चिन्हों पर चलकर आर्यसमाज की उन्नति में जुट जावें।

पादकरण शारदा

कन्याओं का उपनयन संस्कार



गत २२ अक्टूबर को लखनऊ में आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान श्री मदनमोहन सेठ एम० ए० की पुत्रियों का वैदिक रीति से उपनयन संस्कार हुआ। चित्र में मण्डप का दृश्य है। बायें से दाहिने श्रीमती प्रियम्वदादेवीजी, हरदोई निवासिनी (पुरोहिता)—कुमारी मंजु, कु० पुष्प, कु० कुसुम (जिनका यज्ञोपवीत हुआ) श्रीमती सेठ कपूर बहन और श्रीमती प्रेमवती सेठ (माता)।

आर्य ॐ मित्र

लेख रश्मि दितहृत्तमो लसत् काव्यकोकनद जागरप्रदः।
अज्ञता घन विभावरी हरः, "आर्यमित्र" उदियर्ति सन्मुदे ॥

आगरा मार्गशीर्ष कृष्ण ८ संवत् २००८ वि० गुरुवार, ता० २२ नवम्बर १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५१

रक्तहीन क्रान्ति का अभिनन्दन

प्रजा की सुख शान्ति मंगल कामना के लिये संसार के विचारक समय-समय पर विविध विचारधाराओंका आश्रय लेते रहे हैं। पश्चिम की भौतिक संस्कृति-प्रधान विचार धाराएं हिंसा मूलक प्रवृत्तियां को आधार मान कर आगे बढ़ी हैं। भारत की आदर्श वैदिक संस्कृति इसके सर्वथा विपरीत अहिंसक भावनाओं को सम्मुख रख आगे बढ़ी है। वेद के "मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे" इस मन्त्र में सामाजिक जीवन का आधार मित्र दृष्टि माना गया है। मनु और रामराज्यों की भारतीय परम्पराएं इस प्रकार के उच्च आदर्शों का पालन करती रहीं और इसी लिए हम आज तक उनका स्मरण करते हैं। मध्य काल में बुद्ध के समय हमारे देश में हिंसात्मक भावनाएं सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन को दूषित कर रहीं थी उस समय गौतम ने अपने तप त्याग द्वारा सत्य मार्ग का दिग्दर्शन कराया और इस प्रकार हिंसात्मक भावनाओं पर अहिंसा की विजय स्थापित की। इस युग में पश्चिमीय साम्राज्य शक्तियों के विरुद्ध संघर्ष करने के लिये महात्मा गांधी ने अहिंसा के रक्तहीन मार्ग का अवलम्बन किया और देश को स्वतन्त्रता की देहली पर ला खड़ा किया। पर यह तो राष्ट्र की सुख-समृद्धि की ओर पहला पग था, वास्तविक समस्या तो आन्तरिक थी। बाह्य शक्तियों से अहिंसात्मक उपायों द्वारा विजय प्राप्त कर लेने पर भी अपने आन्तरिक झगड़ों और समस्याओं का अहिंसा और शान्ति से निबटाना बहुत कठिन बात है। पवनार के सन्त श्री विनोबा भावे ने अपनी दिव्य दृष्टि से राष्ट्र की मूल आर्थिक समस्या के समाधान के लिये 'भूदान यज्ञ' की महौषधि का आविष्कार किया है। उनका विचार है कि भारतीय संस्कारों में दान की भावना अभी तक विद्यमान है और यदि इस सद्भावना को विकसित करने के लिये उचित वातावरण तैयार किया जाय तो भारत के भूमिपति अपनी भूमियों गरीब और भूमिहीन किसानों को प्रदान करने में कोई संकोच न करेंगे। तैलंगाना में शान्तिदूत बनकर उन्होंने जो महान् सफलता प्राप्त की उसके विस्तृत परीक्षण के लिये वे उत्तर भारत की यात्रा कर रहे हैं और इस समय दिल्ली में हैं। तैलंगाना यात्रा में उन्हें २०० एकड़ प्रति दिन और उत्तर भारत में ३०० एकड़ प्रति दिन भूमि दान में मिली है। भूमिहीन किसानों के प्रति भूमि स्वामियों का हृदय परिवर्तन करने में उन्हें जो सफलता प्राप्त हुई है, उसने भारत में आने वाली हिंसात्मक क्रान्ति को रक्तहीन क्रान्ति के रूप में परिणित कर दिया है। विनोबाजी के इस महान् उपकार के लिये भारत का प्रत्येक नागरिक उनके प्रति कृतज्ञ रहेगा। उन्होंने अपने इस महान् यज्ञ के लिये इस वैज्ञानिक युग में पग-यात्रा की पद्धति का अनुसरण कर रचनात्मक कार्य के लिये एक नयी दृष्टि दी है। वे यदि चाहें तो तैलंगाना से दिल्ली और दिल्ली से वर्धा के लिये हवाई उड़ान भर सकते हैं पर उनका विचार है इस प्रकार हवाई उड़ानों का कार्य हवा में ही उड़ जाया करता है, जन-हृदय से उसका स्पर्श नहीं होता। प्राचीन समय में हमारे देश में तीर्थ-यात्रा के लिये पग-यात्रा ही साधन था पर उस समय के सन्तों का जनता पर आज के राजनैतिक नेताओं से अधिक प्रभाव था। गौतम बुद्ध, शंकराचार्य, कबीर, नानक, दयानन्द आदि ने अपने समय में जो महान् कार्य पग यात्राओं से सम्पन्न किया था वह आज भी जनता के हृदयों में बसा हुआ है। नौआखाली में गांधीजी ने इसी पद्धति को अपना कर साम्प्रदायिक विद्वेष नष्ट कर भ्रातृ भाव स्थापित किया था। इन सब सफलताओं को दृष्टि में रखते हुए हम विनोबाजी की पग-यात्रा पद्धति का प्रशंसा करते हैं, और भूदान यज्ञ के महान् कार्य क्रम की हार्दिक सफलता चाहते हैं। भारत की आर्थिक दशा का सुधार भूमि व्यवस्था के सुधार से ही हो सकता है। कृषि-प्रधान देश होने के कारण इस समस्या का हल होते ही अधिकांश समस्याएँ भी हल हो जायगी ऐसा हमारा विश्वास है। भारतीय जीवन में यज्ञ दान की भावना का प्रतीक रहा है, अपने को भारतीय भावनाओं का अनुगामी समझने वाले प्रत्येक भूमि स्वामी को अपनी जमीन किसानों को देने का निश्चय कर अपने विश्वास और अपनी आस्था और श्रद्धा का परिचय देना चाहिये। यदि यह कार्य प्रगति पा सका तो 'जमींदारी उन्मूलन' जैसे कार्यों की आवश्यकता ही न रहेगी और आर्थिक सुख-समृद्धि बढेगी। हम विनोबाजी के रक्तहीन क्रान्ति के इस कार्य का प्रशंसा और सफलता की कामना करते हैं।

गणेश स्मृति ग्रन्थ

स्वर्गीय श्री गणेशशंकर विद्यार्थी भारत माता के उन सपूतों में हैं जो सदैव वन्दनीय और स्मरणीय रहेंगे। अमर हुतात्मा विद्यार्थीजी जिस महान् आदर्श और सांस्कृतिक तथा राजनैतिक मिशन के लिये जिये और मरे वह भारतीय राजनीति और साहित्यिक आदर्शों का प्रतीक बन चुका है। विद्यार्थीजी ने अपनी तपस्या और निष्ठा के द्वारा हमें जो कुछ दिया, क्या हम उससे कभी उऋण हो सकेंगे? विद्यार्थीजी के मिशन को जीवित-जाग्रत रखने के लिये आवश्यक है कि उनकी स्मृति में एक स्मृति ग्रन्थ तय्यार किया जाय जो स्थायी साहित्य का अंग बनकर वर्तमान और भावी पीढ़ियों को कर्तव्य और दायित्व की प्रेरणाएं देता रहे। प्रसन्नता का विषय है कि श्री भावरमल्ल शर्मा, श्री पं० बनारसीदास चतुर्वेदी और श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य आदि ने इस स्मृति-ग्रन्थ की योजना को कार्यान्वित करने का कार्यारम्भ कर दिया है और आगामी २२ मार्च तक स्मृति-ग्रन्थ प्रकाशित कर देने का निश्चय किया गया है। स्मृति ग्रन्थ में विद्यार्थीजी का जीवन-चरित और उनके संस्मरण, गणेशजी के निबन्धों, भाषणों और टिप्पणियों का संग्रह और गणेशजी द्वारा प्रोत्साहित देशभक्तों और साहित्यिकों के संस्मरणादि रहेंगे। इस पवित्र श्राद्ध की सम्पन्नता में सबका सक्रिय सहयोग होना चाहिये। इस स्मृति ग्रन्थ के लिये जो लोग उपयोगी सामग्री और संस्मरण तथा विद्यार्थीजी के पत्रों की नकल आदि भेजकर सहयोग देंगे। वे विद्यार्थीजी के मिशन को जगाये रखने में सहयोगी बनेंगे। इस प्रकार की सामग्री 'प्रताप' कार्यालय कानपुर के पते पर भेजी जा सकती है। यह यज्ञ सफलता पूर्वक सम्पन्न हो और नयी पीढ़ी विद्यार्थीजी के गौरवशाली जीवन से परिचित हो सके यही हमारी कामना है।

कन्याओं का उपनयन

यद्यपि स्त्री पुरुष की समानता को स्वीकार करने वाली वैदिक संस्कृति संस्कारों में भी दोनों को समान महत्व प्रदान करती है, तथापि ऋषि दयानन्द के आगमन से पूर्व मध्य युग की अज्ञता और स्वार्थपरता के कारण नारी को अधिकारों से वञ्चित कर दिया गया था। ऋषि ने सामाजिक क्षेत्र के लिये स्त्री पुरुष के भेद को मिटा कर यथायोग्य अधिकारवाद का नारा लगाया और इस प्रकार शताब्दियों पश्चात कन्याओं के संस्कारों का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। ऋषि की प्रेरणा से पुत्रों के संस्कारों पर तो विशेष बल दिया गया परन्तु इस दिशा में कन्याओं के [illegible] पुनः आरम्भ हो गयी है। आर्यपरिवारों में भी पुत्रों के यज्ञोपवीत संस्कार तो होते हैं, पर कन्याओं

के संस्कारों की ओर ध्यान नहीं दिया जाता यह हमारी निर्बलता है जिसे शीघ्रही दूर कर देना चाहिये। आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान मान्यवर श्री मदनमोहन सेठ एम० ए० ने गत मास अपनी पुत्रियों का यज्ञोपवीत संस्कार करा कर इस दिशा में प्रेरणात्मक आदर्श उपस्थित किया है। आर्यपरिवारों में कन्याओं के उपनयनादि संस्कारों की प्रथा प्रचलित करने पर विशेष बल दिया जाना चाहिये। आशा है, आर्यबन्धु अपनी कन्याओं का यज्ञोपवीत संस्कार करा कर समाज में स्त्री-पुरुष की समानता के इस पवित्र और प्रतीक कार्य में अवश्य सहयोग देंगे।

भारत केसरी लाला लाजपतराय

गत १७ नवम्बर को स्वर्गीय लाला लाजपतरायजी का स्मृति दिवस सारे देश में मनाया गया। लालाजी भारतीय राजनैतिक और सामाजिक क्रान्ति के इतिहास-गगन के प्रकाशमान तारे हैं, जो चिरकाल तक अपनी ज्योति से देश के नवयुवकों का सच्चा मार्ग प्रदर्शन करते रहेंगे। अंगरेजी शासन के साथ संघर्ष करते हुए लालाजी ने एक सच्चे वीर की भाँति बड़ी प्रसन्नता से मृत्यु का आलिंगन किया था। आपने ऋषि दयानन्द के सच्चे अनुयायी के रूप में जीवन पर्यन्त अन्याय के विरुद्ध युद्ध किया और जीवन तथा राष्ट्र की उन्नति एवं गौरव-रक्षा के लिये हमें राजनीति से सहयोग करना सिखाया। उनका विचार था कि जो समाज या व्यक्ति राजनीति में रुचि नहीं रखते वे अपनी मातृभूमि के सच्चे पुत्र नहीं हैं। उनका एक ही सन्देश था "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" वे इसी आदर्श की रक्षा और प्रतिष्ठा के लिये विश्व में विचरते रहे। उन्होंने कितने ही संघर्ष किये और अन्त में हमें मातृभूमि पर बलि होने की शिक्षा देते हुए स्वर्ग सिधारे। आज लालाजी को हमारे बीच से गये पर्याप्त समय बीत चुका है, पर उनका आत्मिक संदेश आज भी हमारे लिये प्रेरणा का स्रोत बना हुआ है। जहाँ आर्य समाज को इस बात का गर्व है कि उसने देश को ऐसा अमूल्य रत्न दिया, वहाँ उसका यह दायित्व भी होना चाहिये कि वह लालाजी के राष्ट्रोन्नति सम्बन्धी मिशन को पूरा करे। आज की भारतीय राजनीति का दूषित वातावरण लालाजी की आत्मा को सन्तुष्ट नहीं कर सकता। क्या लालाजी के अनुयायी होने का अभिमान करने वाले हम आर्य बन्धु उनके चरण चिन्हों पर चलकर अपने तप त्याग द्वारा देश की राजनीति की बागडोर सम्हालने के लिये आगे न आयेंगे। यदि हम इस दिशा में सक्रिय कार्य कर सकें तो निश्चय ही लालाजी की आत्मा को सन्तोष होगा और यह देश आगे बढ़ सकेगा। लालाजी की स्मृति का यही वास्तविक सन्देश है। उनका भौतिक शरीर नष्ट हो गया, परन्तु अमर आत्मा अब भी हमारा पथ प्रदर्शन कर रहा है।

स्वर्गीय श्री सेठ शूरजीवल्लभदास

आर्यसमाज का दुर्भाग्य है कि उसके मजे हुए और पुराने कर्मठ कार्यकर्ता, विद्वान् और दानी सभी वर्गों के व्यक्ति कम होते जा रहे हैं। आर्यजगत् में यह समाचार बड़े शोक के साथ सुना जायगा कि बम्बई के सुप्रसिद्ध आर्य दानी सेठ शूरजीवल्लभदास का १४ नवम्बर को स्वल्पकालीन बीमारी के बाद देहावसान हो गया। मृत्यु के समय उनकी आयु ६४ वर्ष थी। वे बड़े उत्साही और कर्मठ कार्यकर्ता थे। १९३१ से १९४२ तक वे कांग्रेस के कार्यकर्ता रहे और कुछ समय बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस के कोषाध्यक्ष भी रहे। वैदिक साहित्य के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'वैदिक सम्पत्ति' का प्रकाशन आपने ही कराया था। पिछले दिनों आसाम भूकम्प पीड़ितों के सहायतार्थ सेठजी ने 'आर्यसमाज रिलीफ कैम्प डिब्रूगढ़' को बम्बई से धन और वस्त्रों की बहुत बड़ी सहायता भेजी थी। इसके अतिरिक्त आर्यसमाज के सभी कार्यों में आप उदार वृत्ति से सहयोग करते रहे। हम आर्यजगत् की ओर से श्री सेठजी की दिवंगत आत्मा की सद्गति के लिये परम प्रभु से प्रार्थना करते और शोकाकुल परिवार के प्रति समवेदना प्रकट करते हैं।

अध्यात्म धारा

पश्चात्ताप ही आत्म शुद्धि है

प्रोफेसर रामचरण महेन्द्र एम० ए०

संसार में सबसे ठोस ज्ञान टक्करों के स्कूल (School of hard Knocks) में होता है। टक्करों के स्कूल का अभिप्राय यह है कि मनुष्य गलती करता है, उसे इस गलती की सजा मिलती है। सजा मिलने से उसे यह अनुभव होता है कि यदि मैं अमुक कार्य करूंगा तो उसका अमुक दुष्परिणाम होगा। प्रत्येक गलती पर सजा का जो प्राकृतिक नियम है, मनुष्य की ज्ञान-वृद्धि का सबसे स्वाभाविक एवं प्राकृतिक मार्ग है। पशु-जगत् को देखिये, किस प्रकार अपनी गलती पर कुटते-पिटते वे निरन्तर टक्करों के स्कूल में शिक्षा प्राप्त करते चलते हैं। अजायब घर में शेर और हाथी जैसे भयंकर हिंसक जीव भी टक्करें खाकर करतब करना सीख जाते हैं।

मानव जगत् में यह नियम कुछ अधिक परिष्कृत दशा में उपलब्ध है। मनुष्य को परमेश्वर ने वह ज्ञान दिया है, जिसके द्वारा वह नीर क्षीर विवेक कर सकता है। उसके मानस जगत् में एक दिव्य शक्ति का अस्तित्व है, वह है—अन्तरात्मा। अन्तरात्मा मनुष्य की वह दैवी शक्ति है, जिसके द्वारा मानव को सत्-असत्, उत्तम निकृष्ट, सन्मार्ग कुमार्ग, और अच्छे-बुरे का ज्ञान होता है। मनुष्य की अन्तरात्मा अच्छे कार्य से सन्तुष्ट रहती है, किन्तु जहाँ मनुष्य कोई अनीतिपूर्ण गन्दा कार्य कर बैठता है, अन्तरात्मा मनुष्य को बुरी तरह धिक्कारती है। अन्दर ही अन्दर मनुष्य अपने दुष्कृत्य पर पश्चात्ताप करता है। "यह मैंने क्या किया? अमुक व्यक्ति की चुगली या निन्दा कर मुझे आखिरकार क्या मिल गया? अमुक को सौदा कम दे कर मुझे क्या लाभ हुआ? झूंठ, फरेब, मिथ्याचार, चोरी से मुझे कौन सा स्थायी लाभ हुआ है? कुछ भी नहीं, धिक्कार है, मुझे। मैं बड़ा पापी हूँ? मैं अच्छे बुरे की पहचान नहीं कर सकता।" इत्यादि विचार मनुष्य के अन्तस्तल में निरन्तर एक चुभन उत्पन्न करते रहते हैं।

पश्चात्ताप करना कुछ बुरी बात नहीं है। निंद्य तो यह है कि मनुष्य पुनः-पुनः एक ही गलती की पुनरावृत्ति करता रहे। यदि मनुष्य को सच्चा पश्चात्ताप होता है तो इसका तात्पर्य यह है कि उसकी आत्मा जाग्रत है। उसमें सत्य के प्रति निष्ठा और विश्वास है। ऐसे व्यक्ति में ऊंचा उठने और आध्यात्मिकता जाग्रत करने के प्रचुर सद्गुण विद्यमान हैं। केवल माया मोह, अशिक्षा, स्वार्थ इत्यादि का अंधकार मात्र छाया हुआ है। खराबी बाहर है, अन्दर में वास्तविक सात्विकता, आत्मतत्व की शक्ति अब भी मौजूद है। गलती पर पश्चात्ताप करने का अर्थ आगे उसे न दोहराने की निशानी समझनी चाहिये। हार्दिक पश्चात्ताप करने वाला व्यक्ति आत्म प्रकाश से देदीप्यमान है, क्योंकि उसमें भविष्य को सुधारने की सदिच्छा वर्तमान है।

पश्चात्ताप एक ऐसी अग्नि है, जो मनुष्य को असत्, मन्दगी अशुचिता से बचाती है। गलत मार्ग पर जाने से रोकती है। यह केवल निषेधात्मक (Negative) तत्व ही नहीं, प्रत्युत पाप के प्रतिकार स्वरूप कुछ करने की प्रेरणा देने वाला तत्व भी है।

पश्चात्ताप करके ही न रुक जाइये प्रत्युत अपनी पवित्र शक्तियों को अपने अन्दर से पूरी शक्ति से कार्य करने दीजिये। पाप का प्रतिकार तब होगा जब आप पुण्य का आश्रय ग्रहण करें।

पश्चात्ताप से मनुष्य की आत्मशुद्धि होती है। सांसारिक कल्मष छूट कर आत्मभाव प्रकट होता है। सत्पथ की ओर मानसिक शक्तियाँ केन्द्रित होती हैं। सच्चा पश्चात्ताप करने वाला महाज्ञानी और महाविद्वान् हो जाता है। पश्चात्ताप एक शुभ स्थिति है।



भूदान-यज्ञ के 'प्रणेता'

जीवन-ज्योति

आचार्य विनोबा भावे

महाराष्ट्र के कोलावा जिले में गागोदा नामक ग्राम के भावे परिवार में श्री नरहर और श्रीमती रखुबाई के घर ११ सितम्बर १८९५ को प्रथम सन्तान के रूप में विनोबा भावे ने जन्म ग्रहण किया। प्रारम्भ में उनका नाम विनायक रखा गया। दस वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने आजीवन ब्रह्मचारी रहकर देश सेवा करने का व्रत ले लिया था। गागोदा में प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद आपको बड़ौदा के हाई स्कूल में प्रविष्ट कराया गया। विनायक ने अपनी स्वाध्याय रुचि के लिये बड़ौदा की लायब्रेरी से बहुत लाभ उठाया, और इस प्रकार छोटी अवस्था में ही धार्मिक वाङ्मय का अच्छा अनुशीलन कर लिया। पिता उच्च शिक्षा के लिये उन्हें योरप भेजना चाहते थे अतः विनोबाजी को फ्रेन्च भी पढ़ाई गयी, परन्तु विनोबाजी का झुकाव संस्कृत की ओर था, अतः उन्होंने उसका 'अध्ययन' भी जारी रक्खा। हाईस्कूल के बाद इण्टर का अध्ययन कर जब वे परीक्षा देने बम्बई जा रहे थे उनकी आत्मा ने उनका मार्ग बदल दिया। इस समय विश्व में प्रथम महा युद्ध हो रहा था और भारत में सशस्त्र क्रान्ति के बीज बोये जा रहे थे। परीक्षार्थी विनायक को सूरत में गाड़ी बदलनी थी बम्बई के लिये गाड़ी उन्होंने बदली भी, किन्तु बम्बई के लिये नहीं बंगाल के लिये। कालेज की परीक्षा में बैठने के कर्तव्य से कहीं अधिक बड़े कर्तव्य की पुकार उन्हें सुनाई दे रही थी। इस मार्ग परिवर्तन के अवसर पर विनायक ने अपने पिता को पत्र लिखा—"मैं बम्बई न जाकर अन्यत्र जा रहा हूँ। मैं चाहे जहाँ जाऊँ, चाहे जो करूं पर इतना विश्वास रखिये मेरे हाथ से कभी कोई अनैतिक बात होने वाली नहीं है।"

बंगाल पहुँच कर उन्होंने क्रान्तिकारियों के विचारों और तरीकों को समझने और ग्रहण करने का प्रयत्न किया पर वे सन्तुष्ट न हुए, उस पद्धति में उनका विश्वास न जमा और वे लौट पड़े। घर नहीं काशी की ओर।

काशी के एक अन्न सत्र में भोजन पा लेते और संस्कृत के अध्ययन में सलग्न रहते। १९१६ में काशी में ही उन्होंने गांधीजी के दर्शन किये और उनका भाषण भी सुना। गांधीजी तो चले गये पर विनोबाजी उनके विचारों का मंथन करते रहे और जो शकाएं उठीं उनके विषय में महात्माजी से जिज्ञासा पूर्ण पत्र व्यवहार आरम्भ कर दिया। गांधीजी इस निष्ठा और प्रतिभा से प्रभावित हुए और विनोबाजी को साबरमती आने का निमन्त्रण दिया। काशी निवास के समय में विनोबाजी ने कई महत्व पूर्ण निबन्ध लिखे थे परन्तु साबरमती के लिये प्रस्थान करते समय उन्होंने अपनी सब रचनाएं गङ्गा की लहरों में अर्पित करदीं।

आत्मानुशासन विनोबाजी की चारित्रिक विशेषता है। बचपन में एक बार अपनी बहन के विवाह के अवसर पर विनोबाजी ने अपने नियमों का पालन करते हुए मिठाई आदि न खाकर सदा की भाँति ज्वार की रोटियां हीं खाईं थीं। इस प्रकार के कठोर संयमी होने के कारण गांधीजी के आश्रम में उन्हें किसी प्रकार का कष्ट अनुभव नहीं हुआ, अपितु उन्होंने आश्रम की प्रत्येक योजना में महत्वपूर्ण भाग लिया।

गांधीजी को जब विनोबा-भावेजी का पूर्व जीवनवृत्त ज्ञात हुआ तब उन्होंने उनके पिता को पत्र लिखा—'तुम्हारा विनोबा मेरे पास है, उसकी अवस्था को देखते हुए उसमें उत्तम चारित्र्य और संतोचित गुणों का असाधारण विकास हुआ है। उसकी जो वर्तमान स्थिति है, उसकी प्राप्ति के लिये स्वयं मुझे भी वर्षों आत्मानुशासन का अभ्यास करना पड़ा था।" मराठी में बा आदर सूचक सम्बोधन के रूप में प्रयुक्त होता है। गांधीजी ने इसी पत्र में सर्वप्रथम विनायक के लिये विनोबा शब्द प्रयुक्त किया था तभी से उनका नाम विनोबा हो गया।

साबरमती आने के बाद भी विनोबाजी ने संस्कृत अध्ययन जारी रखा। कुछ समय के लिये उन्होंने आश्रम से बाहर बाई स्थान में संस्कृत का विशेष अध्ययन किया। बापू विनोबाजी के अध्ययन से बहुत प्रभावित थे और कहा करते थे कि गोरख ने मछन्दर को पराजित कर दिया। एक अवसर पर उन्होने विनोबा जी को लिखा—"मैं नहीं जानता तुम्हारे लिये किन विशेषणों का प्रयोग करूं, तुम्हारे चरित्र की निर्मलता और प्रेम से मैं विभोर हो उठता हूँ तुम्हारी परीक्षा लेने की सामर्थ्य मुझ में नहीं है।"

आज से ११ वर्ष पूर्व देश ने प्रथम बार १९४१ में व्यक्तिगत सत्याग्रह के प्रथम सैनिक के रूप में विनोबाजी का नाम सुना। बापू का यह चुनाव कितना अधिक उचित था, आज सारा देश उसे अनुभव कर रहा है।

विनोबाजी की योग्यता और गुणों को जानने वाले उन्हें सरस्वती के वरद पुत्र और ऋषि जैसे विशेषणों से स्मरण करते हैं। गीता के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा है। बचपन में उनकी माता ने एक बार उनसे कहा था—विन्या, गीता के संस्कृत श्लोक मैं समझ नहीं पाती, कहीं मराठी में गीता मिले तो मुझे ला दे। माता की इसी उत्कट कामना की पूर्ति के रूप में विनोबाजी ने 'गीताई' (गीता माता) की रचना की। तुलसी की 'विनय पत्रिका' भी उन्हें प्रिय और कण्ठस्थ है।

विनोबा कवि, दार्शनिक और बहुमुखी प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्ति हैं। उनका जीवन प्रेम, सत्य और अहिंसा का सच्चा स्वरूप है। उनकी वर्तमान साधना का आदर्श जीवन में साम्य योग की स्थापना करना है।

१५ वर्ष से विनोबा वर्धा से ४ मील दूर पवनार ग्राम के

वन्दनीयो महर्षि दयानन्दः

श्री धर्मदेवो विद्यावाचस्पतिः

निखिल निगमवेत्ता, पाप तापापनेता
अरिनिचय विजेता, सर्वपाखण्ड छेत्ता
अति महित तपस्वी, सत्यवादी मनस्वी
जयति स समदर्शी, वन्दनीयो महर्षिः
विमल चरित युक्तः, पापमुक्तः प्रशस्तः
सकल सुकृत कर्ता, कर्मराशावसक्तः
दलित जन सुधारे, सर्वदा दत्तचित्तः
जयति सकमनीयो, वन्दनीयो महर्षिः
प्रथित धवलकीर्तिः, शुद्ध धर्मस्य मूर्तिः
प्रसृत निगमरीतिः, शत्रुवर्गेऽप्यभीतिः
अनुसृत शुभनीतिः, वेदशास्त्रेष्वधीती
विबुध गणवरेण्यो वन्दनीयो महर्षिः
अधिकतम उदारो धर्म सम्शोधकेषु
श्रुतिविहित विचारो लोक संरक्षकेषु
विदित निगमसारो ब्रह्मचार्यग्रगण्यो
जयति स कमनीयो वन्दनीयो महर्षिः

———

शिक्षा-समस्या

शिक्षा का भारतीयकरण

आचार्य डा० मंगलदेव शास्त्री, डी० फिल्

भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद अब समय आगया है कि हम पाश्चात्य देशों के ही समान अपनी शिक्षा-पद्धति को अपने देश की परम्परा से जोड़कर भारतीय संस्कृति के आदर्शों के आधार पर उसका पुनः संघटन करें। प्राचीन गुरुकुलों के अन्तेवासी छात्रों के समान हमारे छात्रीय जीवन में ब्रह्मचर्य, कष्ट सहिष्णुता, सयम, सादगी, सच्चा भ्रातृभाव, कर्तव्य बुद्धि से प्रेरित अनुशासन हो। छात्रों में अपने और अपने देश के भविष्य को सुन्दर सम्पन्न, समुन्नत और सुखमय बनाने की तीव्र प्रेरणा के साथ अपने देश के प्राचीन इतिहास और परम्परा का परिज्ञान और उचित गौरव भी हो हमारी शिक्षा पद्धति में भारतीय संस्कृति के आधार की उपेक्षा का भाव देश के प्रति अक्षम्य अपराध है और आत्मघात के समान है। यदि पाश्चात्य देशों की शिक्षा पद्धति ईसाइयत प्रधान लोगों में भी अपनी प्राचीन ग्रीक और रोमन संस्कृतियों की परम्परा पर गर्व कर सकती है तब क्या कारण है कि भारतीय शिक्षा-पद्धति का वास्तविक सम्बन्ध उस लम्बी भारतीय परम्परा से क्यों नहीं जोड़ा जाता जिसने संसार को मानवता के उच्च आदर्श प्रदान किये हैं, जिसने सर्व भूत हितरत ऋषि, मुनि, सन्त महात्माओं, राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, शंकर, नानक, कबीर, दयानन्द और गांधी जैसे लोक-कल्याण करने वालों को जन्म दिया है और अन्ततः जिसने अनेकानेक विचार धाराओं को गंगा में के समान समाश्रय दिया है।

भारत में प्रचलित वर्तमान शिक्षा पद्धति विदेश से लाकर लगाये हुए वृक्ष के समान इस देश के लिये एक नई वस्तु है, जिसका भारत की सहस्रों वर्षों की संस्कृति और विचारधारा से कोई सम्बन्ध नहीं है, जिसके प्रकार और आदर्श भी भारतीय नहीं है। इतना जानने और समझने के बाद यह समझने लगना कि राजसत्ता के परिवर्तन मात्र से शिक्षा-पद्धति अपने चोले को बदल देगी और उसके लिये हमें कुछ करने की आवश्यकता नहीं है यह एक भ्रान्त धारणा होगी।

आज की महार्घता में भी विलासिता की सीमा तक पहुँचने वाले जिस बाह्य आडम्बर या शृंगार की भावना हमारे छात्रों के जीवन में प्रवेश पा रहा है वह छात्र-जीवन के लिये कोई शोभा की बात नहीं है। परन्तु इसमें छात्रों का दोष कम और पद्धति का दोष अधिक है। हाई स्टैन्डर्ड के नाम पर फिजूल खर्ची विद्यार्थियों के चरित्र और भविष्य को नष्ट किये डाल रही है। इस समस्या का हल प्राचीन भारतीय 'सुखार्थी वा त्यजेद्विद्या विद्यार्थी वा त्यजेत् सुखम्' के आदर्श द्वारा ही हो सकता है पर इस आदर्श को उपस्थित करने वाले आदर्श अध्यापकगण कहां हैं!

माना कि आज के वातावरण में भारतीय संस्कृति और भारतीय भावनाओं का उल्लेख करना भी कुछ लोगों की दृष्टि में वैसा ही भयंकर अपराध समझा जाता है जैसा कि अंग्रेजों के समय में 'स्वराज्य' और वन्दे मातरम् का कहना था। परन्तु यह अज्ञान या भ्रान्तिमूलक प्रवृत्ति केवल अस्थायी है। भारतीय संस्कृति का ठीक ठीक रूप न समझना ही इस भ्रान्ति का मूल है। थोड़े ही दिनों में वह विरोध स्वयं दूर हो जायगा।

वास्तव में भारतीय संस्कृति का आदर्श कोई ऐसा संकीर्ण या साम्प्रदायिक आदर्श नहीं है जिसका कि कोई भारतीय विरोध कर सके। भारतीय संस्कृति स्वभाव से ही प्रगतिशील और समन्वयात्मक है, उसमें किसी प्रकार की समुन्नति का विरोध नहीं है। उसमें संकीर्ण धार्मिक या साम्प्रदायिक भावनाओं या असहिष्णुता का पूर्व और पश्चिम के विरोध का, दूसरों के शोषण या उन पर आक्रमण का कोई स्थान नहीं है। वह तो सार्वभौम मानव धर्म का ही नामान्तर मात्र है। उसकी नस-नस में आध्यात्मिकता, संयम, मातृशक्ति का सम्मान और मनुष्य ही नहीं प्राणिमात्र के प्रति सहानुभूति की भावना बह रही है। उसमें धर्मान्धता नहीं है, उसे पशुता के बल के स्थान में आत्मिक बल पर या मनुष्य की आन्तरिक उन्नति में विश्वास है। हमारी मांग इन्हीं उच्च आधारों से युक्त शिक्षा-पद्धति की स्थापना करना है। आर्यसमाज इस दिशा में प्रयत्नशील रहा है और रहेगा।

आश्रम में स्वावलम्बन के प्रयोग करते रहे हैं। वे धन का सत्ता का तिरोधान कर चांदी के सिक्के के स्थान में श्रम के सिक्के का चलन देखना चाहते हैं।

बापू के प्रयाण के पश्चात् विनोबाजी उनके सच्चे शिष्य के के रूप में संसार के सामने हैं और गांधीजी की अहिंसक क्रान्ति की मान्यताओं को सफल बना रहे हैं। सर्वोदय समाज की स्थापना के बाद अब वे भूदान-यज्ञ का आन्दोलन कर रहे हैं। उनके इस नये कदम से भारत के दरिद्रनारायणों की जीवन वल्लरियाँ आशान्वित हो उठी हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि भारत की आर्थिक समस्या हल करने का यही सर्वोत्तम उपाय है। विनोबाजी चिरकाल तक हमारे बीच रहें, यही हम सब देश वासियों की कामना है।

क्या आप जानते हैं?

भारतीय मतदाताओं की संख्या १७,५०,०००,०० है इन मतदाताओं के प्रत्यक्ष मत-दान द्वारा ३,६७२ प्रतिनिधियों का चुनाव होगा।

लोक सभा (संसद) के ४८९ सदस्य निर्वाचित होंगे। राज्यों की विधान सभाओं के लिये ३,२८३ सदस्य निर्वाचित होंगे।

(क) श्रेणी के ९ राज्य संसद् के लिये निम्न प्रकार सदस्य चुनेंगे—आसाम १२, विहार ५५, बम्बई ४५, मध्यप्रदेश २९, मद्रास ७५, उड़ीसा २०, पंजाब १८, उत्तर प्रदेश ८६, पश्चिमी बंगाल ३४,

[ख] श्रेणी के ७ राज्य संसद् के लिये निम्नप्रकार सदस्य चुनेंगे मैसूर ११, पटियाला रियासत संघ ५, राजस्थान २०, सौराष्ट्र ६, ट्रावनकोर-कोचीन १२, जम्मू व काश्मीर के ६ प्रतिनिधियों का नाम-निर्देशन राष्ट्रपति द्वारा किया जायगा।

[ग] श्रेणी के राज्य २५ सदस्य चुनेंगे—ये राज्य हैं अजमेर, भोपाल, बिलासपुर, कुर्ग, दिल्ली हिमाचल प्रदेश कच्छ, मणिपुर, त्रिपुरा, विन्ध्यप्रदेश, और अण्डमान नीकोबार द्वीपों के लिये एक सदस्य का नाम राष्ट्रपति निर्दिष्ट करेंगे।

सामयिक समस्याएँ

हमारा मंत्र

श्री प० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०

किसी संस्थाके पास अपने मन्तव्यों के प्रचार के तीन मुख्य साधन होते हैं, एक प्रेस, दूसरा साहित्य और तीसरा मंच। आर्यसमाज का प्रेस तो सदैव दयनीय अवस्था में रहा है। न तो नेताओं ने और न उनके अनुगामियों ने कभी इस ओर ध्यान दिया। साहित्य की भी वही अवस्था है। किसी अन्य संस्था का साहित्य इतना कम न होगा जितना आर्यसमाज का। आज का आर्यसमाजी जादू पर विश्वास रखता है। उसकी धारणा है कि यदि 'वैदिक धर्म की जय, और जो बोले सो अभय' का जोरदार नारा लगाया गया तो हम सब अभय भी हो जायंगे और वैदिक धर्म की जय भी हो जायगी। आर्यसमाज के मंच को देखकर हम कह सकते हैं कि हमारा मंच प्रबल है। हर समाज वर्ष में कम से कम एक बार उत्सव करता रहता है। इनमें भजन और व्याख्यानों की भरमार रहती है। कुछ वैतनिक और कुछ अवैतनिक उपदेशक नित्य भ्रमण करते रहते हैं। इनमें प्रायः सभी प्रभावशाली व्याख्याता होते हैं और थोड़े से तो ऐसा अच्छा बोलते हैं कि इनके प्रवचनों को सुनकर बोलने वाले के मन में ईर्ष्या उत्पन्न हो सकती है। गत मेरठ महासम्मेलन को हम एक प्रकार से वक्तृता-प्रदर्शिनी कह सकते हैं। अनेक युवक और युवतियों ने वक्तृता शक्ति का अच्छा प्रदर्शन किया। हमारे भजनीक भी भजनों के बनाने, संकलन करने तथा गाने में पर्याप्त दक्षता रखते हैं। परन्तु एक बड़ी त्रुटि है जो एक साधारण दर्शक को भी दिखाई पड़ जाती है। विचारों की अनिश्चितता और नीति का सर्वथा अभाव। सिनेमा चित्रों और नाटकों के निर्माता भी एक विशेष योजना को दृष्टि में रख कर ही अपनी रचनायें किया करते हैं। परन्तु आर्यसमाज का उपदेशक केवल बुलबुल है उपदेशक नहीं। वह जनता को हंसा सकता है, रुला सकता है, प्रभावित कर सकता है परन्तु यह नहीं प्रतीत होता कि वह श्रोता गण को किस दिशा में ले जाना चाहता है। जो श्रोतागण केवल चटकीली स्पीच सुनने नहीं आते अपितु कुछ सीखना भी चाहते हैं, उनके लिये बड़ी कठिनाई होती है कि किस मार्ग का अवलम्बन करें।

इसमें भजनीक महाशयों का तो कुछ दोष नहीं होता। प्रायः उनकी शिक्षा का तल बहुत ऊँचा नहीं होता और वे प्रायः व्याख्याता वर्ग के ही प्रवचनों का अनुकरण करते हैं। उन्हीं के वाक्यों को दुहराना, उन्हीं के दिये हुए अंकों, घटनाओं या प्रमाणों को गाना उनका कार्यक्रम होता है। वे इससे अधिक कर ही क्या सकते हैं। परन्तु मैं तो व्याख्यानदाताओं को ही दोषी ठहराता हूँ। साधारण उत्सवों और असाधारण सम्मेलनों में सर्वत्र नीति का अभाव है। प्रबन्ध के विचार से मेरठ का गत महासम्मेलन आदर्श था ऐसा कहना बहुत अत्युक्ति न होगी। आतिथ्य, सजावट, प्रबन्ध सभी प्रशंसनीय थे, परन्तु ऐसा प्रतीत होता था कि जितने मुख्य और प्रभावशाली कार्यकर्ता थे, वे तो हर घड़ी और हर क्षण प्रबन्ध में लगे थे, मंच को स्वतन्त्र 'लाउड स्पीकर' के आधीन छोड़ दिया गया था। 'लाउड स्पीकर' की भक्ति सराहनीय थी। जो कोई जो कुछ चाहे बोल सकता था। और जिस किसी के लिये जो कुछ चाहे कह सकता था। पूर्ण स्वराज्य की प्रतिबन्धता न मस्तिष्कों पर थी न जिह्वा देवी पर। मैं तो उत्सवों में भी यही देखता हूँ। कुछ प्रभावशाली उपदेशकों को तो सुगमता से किसी न किसी वर्तमान राजनैतिक दल या संघ का एजेण्ट कहा जा सकता है। और कभी कभी तो ऐसा प्रतीत होता था, मानो अधिकारियों ने या तो स्पष्ट आदेशों द्वारा या उपदेशकों के कानों में कह दिया है कि बिना प्रसंगों के औचित्य या अनौचित्य को देखे कांग्रेस और वर्तमान सरकार का विरोध करो। 'जवाहरलाल" को बुरा कहना तो एक फैशन हो गई है। मेरठ में जो लोग आर्यसमाज को चुनाव के दलदल में फँसाना नहीं चाहते थे, वे भी इतना कहने से नहीं रुकते थे कि 'चाहे कुछ करो जवाहरलाल को वोट मत देना" ये लोग आर्यसमाज की नीति के मौलिक सिद्धान्तों का प्रचार करते तो भी ठीक था। छठे समुल्लास के उद्धरणों की घोषणा करते तो भी उचित था, परन्तु व्यक्तिगत वोट लेने या देने वालों की समीक्षा तो सुसंगत नहीं कही जा सकती। प्रायः मैंने मौलिक राजनैतिक समस्याओं पर प्रकाश डालते किसी को नहीं सुना। उत्तेजनापूर्ण झूठे, सच्चे या आधे सच्चे उद्धरण ही उपदेश के लिये पर्याप्त समझे जाते हैं। प्रतिनिधि सभाओं के प्रधान और मन्त्री तथा सार्वदेशिक सभा के प्रधान और मन्त्रीजी से मैं यह निवेदन करूंगा कि वे इस महत्त्वपूर्ण बात पर विचार करें। यदि जो कुछ हो रहा है वह उनकी नीति या आदर्शों के अनुकूल हो रहा है तो मैं कुछ नहीं कहता। आर्यसमाज का छकड़ा जिस खाई खंदक में पड़े, पड़े। इंजन तो उधर ही को जायगा जिधर ड्राइवर ले चलेगा और यात्री भी वहीं जायेंगे जहाँ इंजन उनको ले जायगा। परन्तु यदि ऐसा नहीं है तो अवश्य न केवल सभाओं अपितु समाज के अधिकारियों को भी सोचना चाहिये। चुनाव के दिन तो आवेंगे और चले जायगे परन्तु साँप के निकल जाने का इतना भय नहीं जितना उसके रास्ता देख लेने का है। पहिया निकल जाता है परन्तु लीक छोड़ जाता है। यदि बुद्धिमान लोगों की यह धारणा बन गयी कि आर्यसमाज के मंच को हर एक दल के प्रचार के लिये प्रयोग में लाया जा सकता है तो आर्यसमाज चूँ चूँ का मुरब्बा बन जायगा। मैंने पत्रों में पढ़ा कि जन-संघ के प्रसिद्ध नेता श्री डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने ११ नवम्बर को लुधियाने में वक्तृता देते हुए संघ के लोगों को सचेत किया कि वे काश्मीर सरकार के कामों की आलोचना न किया करें इससे भारत की स्थिति बिगड़ने का भय है। क्या आर्यसमाज के किसी नेता से भी यह आशा की जा सकती है कि वह उपदेशकों को चेतावनी देता रहे कि अमुक प्रकार की आलोचनाएँ न की जाया करें। आर्यसमाज साम्प्रदायिक संस्था नहीं है। आर्यसमाज के मंच से उसके उत्तरदायित्वपूर्ण अधिकारी भी ऐसा ही कहते रहते हैं। परन्तु व्यवहार तो सर्वथा विपरीत होता है। यदि एक मुसलमान एक हिन्दू पर अत्याचार करता है तो उसकी कड़ी आलोचना होती है और यदि एक हिन्दू किसी मुसलमान पर अत्याचार करता है तो उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की जाती है। इसको 'यथा योग्य धर्मानुसार' व्यवहार नहीं कह सकते। अंग्रेजी की एक लोकोक्ति है कि राजनैतिक कुत्ते को मारने के लिये कोई झाड़ू पर्याप्त है। परन्तु क्या ये झाडुएँ आर्यसमाज के मंचों पर भी प्रयोग में लायी जानी चाहियें। मैं यह मानता हूँ कि आर्यसमाजियों की व्यक्तिगत भावनाएँ भिन्न भिन्न हो सकती है। किसी कुत्ते को पिटते देखकर उनको मजा आ सकता है। और वह अपनी प्रकृति के अनुसार किसी से किसी समय उचित या अनुचित सहयोग कर सकते है। परन्तु आर्यसमाज को तो व्यक्तिगत निर्बलताओं से ऊँचा उठकर अपने उच्च उद्देश्यों पर भी विचार करना है। मैं अन्य व्यक्तियों और पत्रों से प्रार्थना करूंगा कि वह मेरे निवेदन को स्थानिक प्रान्तिक और सार्वभौम अधिकारियों तक पहुँचा दें।

आदर्श वाक्य

जिस सभा में बैठे हुए सभासदों के सामने अधर्म से धर्म और असत्य से सत्य का हनन होता है उस सभा में सब सभासद मृतक के समान ही होते हैं।

—मनुस्मृति

सुझाव और सम्मतियाँ

हमारी प्रगति कैसे हो ?

आर्यमित्र के ऋष्यङ्क में 'हम आत्म निरीक्षण करें, शीर्षक मैंने एक लेख लिखा था। लेख इसी भाव से लिखा गया था कि आर्यसमाज के कर्णधार इस दिशा में ध्यान दें और नये आधार पर आर्यसमाज को पुनः संघटित करने की दिशा में कुछ प्रगति हो।

ऋषि ने अपने जीवनकाल में जिन रूढ़िवादी और विदेशीय भावनाओं से लोहा लिया था आर्यसमाज को आज भी उन शक्तियों के विरुद्ध संघठित मोर्चा लेना होगा। देश के नव-निर्माण में आज विदेशी और प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ रस्साकशी कर रहीं हैं परन्तु आर्यसमाज मैदान में कहीं नहीं दिखाई देता जब कि नेतृत्व उसके हाथ में होना चाहिये था।

भारत की भारतीयता की रक्षा आर्यसमाज ही कर सकता है। यदि आर्यसमाज मिट गया तो भारत हमारे स्वप्नों का भारत नहीं बनेगा। वह या तो अमेरिका या रूस की छाया बनेगा या इतिहास के मध्य युग की पुनरावृत्ति करके पुनः पराधीन हो जायगा। इसलिये आज आर्यसमाज की सबसे अधिक आवश्यकता है। क्या हमारा वर्तमान संघटन विरोधियों से संघर्ष करने में समर्थ है। इसी प्रश्न पर विचार करके मैं आर्यसमाज को पुनः सघठित करने पर विशेष बल दे रहा हूँ। आर्यसमाज को कार्यकर्ताओं के संघटन के रूप में पुनः जन्म लेना और संघर्ष के लिये मैदान में आना होगा इसके अतिरिक्त उद्धार का कोई उपाय नहीं है।

आर्यसमाज के पास कार्यकर्ता नहीं रहे, जो हैं भी वे योजना के अनुसार काम नहीं करते अथवा यों कहना चाहिये कि कोई योजना ही हमारे पास नहीं है जिसके आधार पर पचास लाख सदस्यों की विशाल सेना आगे बढ़ सके। हमारा जन सम्पर्क समाप्त हो गया है और उसके अभाव में कार्यकर्ता ही नहीं सदस्य भी नहीं मिल रहे हैं। हमें इस अवस्था को-गत्यवरोध को समाप्त करना होगा। इस गत्यवरोध की समाप्ति का मेरी दृष्टि में एक ही उपाय हो सकता है और वह है आर्यसमाज के विधान में संशोधन किया जाय और अखिल भारतीय आधार पर पूरा समय देकर कार्य करने वाले विद्वान् सच्चरित्र कार्यकर्ताओं की समिति बना कर उसके द्वारा नये विधान के आधार पर आर्यसमाज का पुनः सघटन हो, और फिर कार्यकर्ताओं की विशाल सेना समाज के सभी वर्गों में कार्य करने के लिये निकल पड़े। कार्य हमें नये कार्यकर्ता देगा और कार्यकर्ता देंगे राष्ट्र को नया जीवन। मैं आर्य-युवकों की ओर से बड़ी विनम्रता और उमंगों के साथ आर्यसमाज का उक्त रूप में निर्माण करने की प्रार्थना करता हूँ। यदि यह सम्भव हो सका तो युवक समाज का आर्यसमाज को पूर्ण सहयोग प्राप्त होगा और आर्यसमाज आगे बढ़ सकेगा।

स्ना० भूदेव शास्त्री,
शिरोमणि, एम० ए०

राम और कृष्ण सप्ताह

आर्य समाज के वर्तमान रूप को प्रगति देने के लिये आवश्यक है कि समाजों में स्थायी पुरोहितों द्वारा दैनिक सत्संग अनिवार्य हृदय से हों। हमारे मन्दिरों में ६ दिन ताला बन्द रहता है जब कि सनातनियों और मुसलमानों के उपासना-गृह प्रतिदिन खुलते और कार्य करते हैं। अपने सांस्कृतिक और धार्मिक हिन्दू भाइयों से अधिक सम्पर्क बढ़ाने के लिये शिवरात्रि को बोधरात्रि का नाम न देकर शिवबोधोत्सव नाम दिया जाना चाहिये। हम आर्यसमाजी दयानन्द राम और कृष्णादि में समान श्रद्धा रखते हैं परन्तु अभी तक हमारे यहां दयानन्द सप्ताह ही मनाने की प्रथा है, हमें हिन्दुओं में सुधार और उनसे सम्पर्क स्थापित करने के लिये राम नवमी पर राम-सप्ताह और जन्माष्टमी पर कृष्ण सप्ताह आदि भी मनाने चाहिये। इन अवसरों पर रामायण और महाभारत आदि की कथाएँ जनाकर्षण का साधन बन सकती हैं।

—आनन्दी प्रसाद, नगीना

शिल्प शास्त्र

स्वर्गीय श्री प० ज्वालादत्तजी महाराज (जो स्वा० दयानन्दजी के पास वर्षों तक काम करते रहे थे) हमारे गुरु थे। उनको एक हस्तलिखित शिल्पशास्त्र नामक पुस्तक हमने देखने के लिए दी थी। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनका सामान जिस व्यक्ति के पास पहुँचा उससे पता लगाकर उस विद्या के भंडार पुस्तक को प्राप्त करने का जो पुरुष प्रयत्न करेगा, वह पुण्य का भागी होगा। वह ग्रन्थ अमूल्य है। यदि वह मिल जायगा तो देश का बड़ा उपकार होगा। प० ज्वालादत्तजी अजमेर में वर्षों तक रहे थे। यदि परोपकारिणी सभा को इस ग्रन्थ का पता हो तो हमको सूचित करे। हम कृतज्ञ होंगे। पण्डितजी एटा जिले के निवासी थे, इसलिए जिले के समाज भी खोज लगायें।

—जीवन दत्त शर्मा, नरवर
पो० नारोरा जि० बुलन्दशहर

विद्वानों से सहयोग याचना

मैं कला-कौशल से सम्बन्ध रखने वाला एक व्यक्ति हूँ। मेरा खोज (Research) की ओर अधिक रुचि है। मैं इस रुचि और जीवन को वेद की खोज में लगाना चाहता हूँ। मैं अधिक हिन्दी या संस्कृत नहीं पढ़ा। यदि मैं पहले वेदों का अध्ययन करूं और तत्पश्चात् खोज आरम्भ करूं तो इस आयु में कुछ न कर सकूंगा। मेरी यह इच्छा है कि मैं वेद के विद्वानों की विद्वत्ता से लाभ उठाऊँ और उनसे कला-कौशल सम्बन्धी वेद के ५—१० मन्त्र और उनके पूर्ण अर्थ लेकर खोज के कार्य को आरम्भ कर दूं। आर्य विद्वानों से मेरी प्रार्थना है कि २ या ३ मंत्र (अर्थ सहित) जिन में भौतिक पदार्थों के गुण और पृथिवी, सूर्य, वायु, आकाश और कला कौशल का मूल रूप में वर्णन हो, मुझे भेजने की कृपा करें। यदि इसके पश्चात् मुझे कुछ भाग या अंश स्पष्ट कराने की आवश्यकता पड़े तो समय देने की कृपा करें। अनुसन्धान में रुचि रखने वाले व्यक्ति मेरे साथ लिखा पढ़ी कर के इस काम में मेरी सहायता करें। मेरा कुछ ऐसा विश्वास है कि संसार में वेद की महत्ता वेद का गीत अलापने से कदापि नहीं हो सकती। संसार का झुकाव इस समय ईश्वर की ओर न होकर भौतिक पदार्थों की ओर है, इसलिये वेद की महत्ता संसार के सम्मुख भौतिक खोज को रखकर ही स्थापित की जा सकती है। खोज के थोड़ा सफल हो जाने पर हम कालिज के विद्यार्थियों का ध्यान जो इस समय वेदों की ओर न जाकर Y.M.C.A. आदि संस्थाओं की ओर अधिक है अपनी ओर आकृष्ट करने में सफल हो सकेंगे। इससे उन आर्य महानुभावों की इच्छा भी पूर्ण होगी जो आर्यसमाज मन्दिरों को महान् शिक्षा केन्द्रों के रूप में देखना चाहते हैं।

— हरिश्चन्द्र रत्त मैकेनीकल
ट्रेनिङ्ग स्कूल गाजियाबाद

दैनिक पत्र के ग्राहक

आर्य भाई शिक्षित एवं सामाजिक चेतना सम्पन्न होने के कारण दैनिक पत्र क्रय किया करते हैं। यदि दैनिक पत्र का अध्ययन करने वाले पाँचसौ आर्य बन्धु भी एक आर्य विचारों के दैनिक पत्र के लिये एक वर्ष के चन्दे के रूप में २५) के हिसाब से एकत्र कर सकें तो निस्सन्देह बहुत शीघ्र आर्य दैनिक पत्र की योजना मूर्त रूप धारण कर लेगी इस प्रकार का पत्र उनके सर्वथा अनुकूल होने के कारण अधिक रोचक एव पठनीय सामग्री प्रस्तुत कर सकेगा। दैनिक पत्र के आयोजक भी इस बात के लिये वचन बद्ध हों कि ग्राहकों के चन्दे का धन निश्चित संख्या तक ग्राहक न बनने अथवा पत्रारम्भ तक व्यय न किया जायगा। आशा है इस दिशा में प्रयत्न शील व्यक्ति इस सुझाव पर विचार करेंगे।

—स्ना० भक्तदत्त शास्त्री
शिरोमणि एम० ए०

हमारी शिथिलता दूर हो

आर्यसमाज को अधिक गतिशील बनाने के लिये शीघ्र ही उच्चकोटि के आर्य विद्वानों और कर्मकांडी व्यक्तियों के सहयोग से सा०दे० सभा एक आर्य विद्वत्परि-

पद की स्थापना करे जो आर्यसमाज के मस्तिष्क का कार्य करे। वर्तमान सभाएं तो प्रबन्धादि कार्यों से ही मुक्ति नहीं पाती हैं। इसी प्रकार सदाचारी और कर्मकाण्डी आर्य उपदेशकों के निर्माणार्थ शीघ्र ही उपदेशक-विद्यालय की स्थापना की जानी चाहिये। आर्यसमाज की शिथिलता का मुख्य कारण उसमें अवाञ्छनीय तत्वों का समावेश है। अतः शीघ्र ही आर्यसमाज की शुद्धि होनी चाहिये और चरित्रवान, सत्यवादी, आस्तिक भावना युक्त कर्मठ नये सदस्य बनाने चाहिये। और नवयुवकों के लिये आकर्षक कार्यक्रम तय्यार करना चाहिये।

—जगन्नाथ शर्मा, हलद्वानी

यज्ञ और अनावृष्टि

हम आर्यसमाजियों का विचार है कि यज्ञ से बीमारी दूर हो सकती है, पानी बरस सकता है तथा अन्य कामनाएँ पूर्ण हो सकती हैं। आज देश में कई स्थानों में वर्षा के अभाव से फसलें नष्ट होने के समाचार आरहे हैं, सरकार को भी अन्नाभाव के कारण अन्न बाहर से मँगाना पड़ता है। क्या ऐसी अवस्था में हमारा यज्ञ-विज्ञान वृष्टि के अभाव को दूर नहीं कर सकता। मेरा विश्वास है कि अभावग्रस्त क्षेत्र में विद्वान् पहुँच कर यज्ञ कर करावें तो बहुत बड़ा काम हो सकता है। धन और सामग्री की सहायता तो जनता स्वयं करेगी। यदि एक दो स्थानों में सफलता मिली तो देश का ध्यान आर्यसमाज की ओर आकृष्ट हो जायगा देश को इस प्रकार के रचनात्मक कार्यों की अत्यावश्यकता है।

—डा० रा० स० लाल बाराबंकी

वृन्दावन गुरुकुल निधि

आर्यसमाज के कार्य को प्रगति देने के लिये गुरुकुलों की समस्या पर गम्भीरता पूर्वक विचार होना चाहिये। स्वा० भूदेव शास्त्री के इस सुझाव से मैं सहमत हूँ कि आर्य प्र० नि० सभा वृन्दावन गुरुकुल निधि की स्थापना करे। उत्तरप्रदेश के आर्यों की इस आदर्श संस्था की उन्नति के लिये आवश्यक है कि शीघ्र ही संघटित प्रयत्न किया जाय।

—रामनारायण खायरा, मथुरा

सिंहावलोकन

ऋषि सम्बंधी एक अज्ञात घटना

आचार्य श्री हरिदत्त शास्त्री एम० ए०, नवतीर्थ

यद्यपि श्री देवेन्द्र मुखोपाध्याय व श्री० प० घासीरामजी एम० ए० ने ऋषि-चरित्र को सर्वाङ्ग पूर्ण बनाने में पूरी पूरी खोज की है पर फिर भी अनेक घटनाएँ छूट गई प्रतीत होती हैं। मान्यवर श्री प० रामदत्तजी शुक्ल एम० ए०, एल-एल० बी०, ने जो घटना सुनाई उसे सुनकर देखने की प्रबल इच्छा जागरित हो उठी और देखने पर वह बात सच भी पाई। संस्कृत पाठशालाओं के वर्तमान इन्सपैक्टर श्री० प० रामनरेश मिश्र एम० ए०, एल टी, ई० सी० एस० ने भी १० सितम्बर ५१ को उसी बात का अनुमोदन किया, क्योंकि वे उसी भूसी की पाठशाला में पढ़े थे तो और भी सन्देह दूर हो गया।

घटना इस प्रकार है कि संवत् १९१५ में ऋषि दयानन्द के गुणों से लुब्ध होकर सरयूपारीण ब्राह्मण श्री प० गुरुचरण जी उपाध्याय उनके बड़े भक्त हो गये। वे बड़े ही आस्तिक तथा ईश्वर-भक्त थे। उनकी जमींदारी अयोध्या के आस-पास दूर दूर तक थी और अब भी थोड़ी बहुत है। सरयूबाग नाम का स्थान उनकी ही जमींदारी में है, आज कल ई० आई० आर० इसके निकट होकर गुजरती है। आज भी यहाँ घना जगल है। उन दिनों यह कितना घना रहा होगा यह इस से ही अनुमान लगाया जा सकता है। एक दिन ऋषि दयानन्द गुरुचरण उपाध्याय के साथ प्रातः पर्यटन के लिये जा रहे थे कि वे सहसा बोले कि गुरुचरण मेरा 'पैर यहाँ धँसता है' गुरुचरण बोले क्यों महाराज! क्या हो गया? ऋषि ने स्मित करते हुए कहा कि कुछ नहीं, पर यह प्रतीत होता है कि यहां पर एक बड़ा विद्यालय बनना चाहिए। गुरुचरणजी के यहाँ धनकी तब कोई कमी न थी। एक 'ब्राह्मण वैदिक विद्यालय' खोल दिया गया। वहाँ पर एक शिला लेख भी खण्डित अवस्था में है जिसपर लिखा है 'ऋषि दयानन्द प्रेरणया स्थापितो ब्राह्मण विद्यालयः' 'संवत् १९१५। ऋषि ने उसके उद्घाटन पर एक भाषण भी दिया था जिसमें कहा था कि अयोध्या में संस्कृत की शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं है अतः यहाँ पर बड़े पैमाने पर इसका आयोजन होना चाहिए इत्यादि।' उन दिनों इन विद्यालय में १४ विशिष्ट पण्डित थे। ५०० विद्यार्थी थे। चारों वेद तथा छहों शास्त्रों की शिक्षा दी जाती थी। एक प्रेस भी खोला था जिसमें अनेक ग्रन्थ भी छपे थे इस प्रकार यह पाठशाला दस वर्ष तक चली, बाद में पारिवारिक कलह के कारण जायदाद के १३ टुकड़े हो गए जिसमें अयोध्या के राजा ददुआ महाराज का भी हाथ था उन्होंने बहकाकर बटवारा करवाया था, इस प्रकार पाठशाला के टूटने की नौबत आ गई। और वह पाठशाला अकेला पेड़ पाठशाला भूसी (प्रयाग) के नाम से वहाँ स्थापित की गई क्यों कि गुरुचरणजी की वहाँ भी कुछ जमींदारी थी। उनकी एक पाठशाला मिर्जापुर में, तथा तुलसीपुर गोंडा में एक विद्यालय अब भी चलता है गोयनका संस्कृत महा विद्यालय काशी के प्रिन्सिपल कमलाकान्तजी मिश्र इसी भूसी पाठशाला के विद्यार्थी हैं। वहाँ आज कल प० राधाकृष्णजी शास्त्री नामक विद्वान् अध्यापक हैं। जब यह पाठशाला चल रही थी तब इसके देखने के लिए श्री गुरुचरणजी उपाध्याय की माता जिनकी अवस्था १११ वर्ष की थी एक दिन आई, वह पक्की पौराणिक विचारों की थीं, अतः उन्होंने ऋषि से अनुरोध किया कि यहाँ एक कृष्ण का मन्दिर बनवा दिया जाय। ऋषि ने उन्हें मूर्ति की असारता समझाई। जिसका वृद्धा माता पर बड़ा असर पड़ा, और वह वंशीवट विहारी श्रीकृष्ण को भूल गई और महाभारत के वीर ब्रह्मचारी कृष्ण के भक्त बन गईं। तथा ऋषि से उन्होंने शिक्षा करते समय यह अनुरोध किया कि जैसा कृष्ण आपने बतलाया है वैसे ही कृष्ण का एक कल्पित चित्र शिक्षा देने के लिए बनवा लिया जाय तो क्या हानि है?

ऋषि बोले कि लोग उसकी पूजा करने लगेंगे। पर वे बोलीं कि ऐसा न होगा। तब ऋषि ने 'बाल ब्रह्मचारी श्री कृष्ण' की मूर्ति के स्थापन की आज्ञा दे दी तथा उसकी पूजा का निषेध किया। वह 'ब्रह्मचारी कृष्ण' की मूर्ति भारतवर्ष में एक ही है। सब जगह युगल है तो वहाँ 'एकल' ही है। आज तो दशा में परिवर्तन हो गया है, उस मूर्ति की भी पूजा हो निकली है जब मैं वहाँ गया तो मुझसे न रहा गया और मैंने प्रातः ७ बजे पुजारी के इधर-उधर होने पर वह मूर्ति उठाली पुजारी अभी स्नान करके न आया था, मूर्ति सो रही थी मैंने उठाकर देखा तो वह संगमरमर की मूर्ति पूरे एक हाथ की है। ऋषि की दृष्टि में मूर्ति-निर्माण का अर्थ गुण-चिन्तन ही था क्योंकि भगवान् भी भक्तों के वश में हो जाते हैं अतः ऋषि ने गुरुचरण की माता जी के लिए वैसी मूर्ति की आज्ञा दे दी थी। वह मुझे अब १॥ वर्ष पूर्व एक वहीं के वृद्ध ने सुनाया था शायद वह वृद्ध अब चल बसा हो। सरयू बाग की इस पाठशाला का नाम आज कल भी ब्राह्मण वैदिक विद्यालय ही है। यहाँ न्याय, व्याकरण, वेदान्त और ज्योतिष की पढ़ाई होती है। ४ अध्यापक हैं जिनमें प्रधानाध्यापक हैं श्री रामलगनजी पाठक जो पहले गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में भी कुछ दिन पढ़ चुके हैं। आचार्य तक की पढ़ाई होती है, सरकार से ५४०) वार्षिक सहायता मिलती है। गुरुचरणजी के पुत्र श्री श्रीनिवास उपाध्याय आनरेरी मैजिस्ट्रेट एम० ए० एल-एल० बी० इसके व्यवस्थापक हैं जो स्वयं १२००) वार्षिक सहायता देते हैं। तथा ऋषि के इस स्मारक की रक्षा करते रहते हैं। श्री श्रीनिवासजी के पुत्र प्रद्युम्न उपाध्याय व श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय भी पाठशाला का ध्यान रखते हैं।

संस्था-परिचय

टाटा मैमोरियल अस्पताल

श्री डा० रमेशचन्द्र एम० डी०

कैंसर जैसी भयंकर व्याधि मानव जाति के लिये कितनी घातक है इसका प्रमाण हमें रात दिन मिलता रहता है। कुछ दिनों पूर्व तक इसकी कुछ भी चिकित्सा किसी को ज्ञात नहीं थी, यह असाध्य रोग समझा जाता था। परन्तु अब विज्ञान ने इस दिशा में प्रयत्न कर कैंसर का प्रतिरोध सम्भव बना दिया है। यद्यपि भारत वैज्ञानिक क्षेत्र में समुचित साधनों के अभाव वश तीव्र प्रगति नहीं कर सका परन्तु हर्ष का विषय है कि बम्बई में इस रोग का उपचार करने वाली एक संस्था बड़ी तत्परता से कार्य कर रही है।

१९४१ में दानवीर सर दोराब टाटा ने अपने सात्विक दान द्वारा कैंसर की चिकित्सा के लिये बम्बई में टाटा मैमोरियल अस्पताल की स्थापना की थी। विगत दस वर्षों में इस संस्था ने सहस्रों निराश और मृत्यून्मुख रोगियों को नवजीवन प्रदान किया है। इस अस्पताल में प्रतिवर्ष ३५०० रोगियों को कैंसर से मुक्त किया जाता है, रोगियों की इस बड़ी संख्या में से ७५% की चिकित्सा मुफ्त होती है। भारत के सभी भागों, मध्यपूर्व, सुदूर-पूर्व तथा अफ्रीका से भी रोगी चिकित्सा के लिये बम्बई आते हैं।

अस्पताल का निर्माण न्यूयार्क के कैंसर व तत्सम्बन्धी व्याधियों के अस्पताल के ढंग पर किया गया है। इसके सर्व प्रथम चिकित्सक येल यूनीवर्सिटी के डाक्टर जोन स्पाइज और प्राथमिक सर्जन केलीफोर्निया विश्वविद्यालय के डा० रायकोहन और कैंसर विशेषज्ञ डा० जानपुल थे।

संस्था की स्थापना के साथ-साथ संस्था के भारतीय करण का भी ध्यान रक्खा गया। भारतीय चिकित्सकों को कैंसर की चिकित्सा और अनुसंधान में दक्षता प्राप्त करने के लिये विदेशों में भेजा गया और प्रसन्नता की बात है कि इस समय अस्पताल के सभी कर्मचारी भारतीय हैं। इनमें से अधिकांश न्यूयार्क के मैमोरियल हौस्पिटल तथा अन्य प्रमुख चिकित्सा केन्द्रों में प्रशिक्षण प्राप्त किये हुए हैं। इस प्रकार के आठ विशेषज्ञों के अतिरिक्त बहुत से योग्य अवैतनिक चिकित्सक, शल्यचिकित्सक, टैक्निकल कर्मचारी, परिचारिकाएँ और प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ता भी इस अस्पताल में कार्य करते हैं।

कैंसर व्याधि से रक्षा और उपचार-प्रसार की भावना से अस्पताल के कर्मचारी सर्व साधारण को इस रोग से बचने की शिक्षा देते रहते हैं। गत वर्ष संस्था की ओर से अनेक प्रसिद्ध चिकित्सकों के सहयोग के साथ इण्डियन कैंसर सोसायटी की भी स्थापना की गयी है। दूसरे देशों की संस्थाओं की भाँति इस सोसायटी का उद्देश्य भी जनता को यह बतलाना है कि इस रोग के लक्षण क्या क्या होते हैं ताकि समय पर उपचार द्वारा रोगी के जीवन की रक्षा की जा सके। कैंसर के निदान और लक्षणों से अनभिज्ञ होने के कारण कैंसर के पचास प्रतिशत रोगी मौत के मुंह में चले जाते हैं। इस रोग की आवश्यक जानकारी के प्रसार से रोग की रोकथाम में बड़ी सहायता मिलेगी!

भारत सरकार ने संस्था के अनुसंधान विभाग को स्नातकोत्तरीय अनुसंधान-(रिसर्च) कार्य के लिये अखिल भारतीय केन्द्र बनाने का निश्चय किया है। भारत सरकार के इस निश्चय से कैंसर के विरुद्ध संघर्ष करने वाली संस्था के सम्मान की वृद्धि हुई है। अनुसंधान-विभाग का विस्तार करने के लिये भवन निर्माण का कार्य आरम्भ हो गया है। भविष्य में कैंसर के उत्पात की रोक-थाम करने वाली सभी नवीनतम विधियों और साधनों को और भी विकसित किये जाने के लिये संस्था के अधिकारी प्रयत्नशील हैं।

अस्पताल का अमेरिका की विविध मैडीकल संस्थाओं से सम्पर्क स्थापित है परन्तु किसी विदेशी सूत्र से आर्थिक सहायता स्वीकार नहीं की जाती है। इस प्रकार भारतीय करण को प्रधानता देने और मानवता को महा व्याधि से मुक्त बनाने का यथा सम्भव प्रयत्न करने वाली यह संस्था हम भारतीयों के आदर की पात्र है।

साहित्य-सौरभ

अहल्या कैसे तरी!

श्री प० बुद्धदेव विद्यालङ्कार

[इस लेख के लेखक वेद तथा वैदिक साहित्य के प्रकाण्ड और प्रसिद्ध विद्वान् हैं। आपका चिंतन सदैव युक्तियुक्त नवीन भावना और अद्भुत चेतना को लेकर होता है, इस अहल्योद्धार में भी वही सुन्दर और समीचीन शैली स्पष्ट दिखाई दे रही है। —सम्पादक]

पौराणिक काल में जो अनर्थ हुए हैं उनका मूल अलङ्कारों का तत्व न समझना है। जो बात आलङ्कारिक भाषा में कही गई थी, उसे यथार्थ समझ कर चलने से हमारी अधोगति हुई। इस प्रकार के अलङ्कारों में से एक अहल्या की कथा भी है।

कथा अति संक्षेप से इस प्रकार है, अहल्या गौतम की पत्नी थी इन्द्र ने अहल्या का सतीत्व भंग किया, इस पर गौतम ने उसे शाप दिया कि तू 'सहस्र भग होजा और अहल्या को शाप दिया कि तू पत्थर की हो जा। अन्त को बहुत अनुनय-विनय करने पर ऋषि ने शाप का अन्त इस प्रकार किया कि इन्द्र को तो सहस्र भग के स्थान में सहस्राक्ष' कर दिया और अहल्या से कहा कि जब महाराज रामचन्द्र के चरण स्पर्श होंगे तो तू फिर शिला रूप को छोड़कर सजीव हो जायगी। इस कथा को आज तक रामभक्त भक्तिरस में लीन होकर गाते और तन्मय हो जाते हैं, परन्तु उससे लाभ कुछ नहीं होता। इस कथा में जो अलङ्कार है, उसे समझ लें तो अहल्या सदा ही सजीव रहे।

यदि हम थोड़ा सा प्रयत्न इस कथा के शब्दों को समझने के लिये करें तो इसका मर्म समझना कुछ कठिन न होगा। हल शब्द का अर्थ कौन नहीं जानता, सो 'हल्या' उस धरती का नाम है जिसमें बराबर हल चलता है, अर्थात् जो वर्तमान कानूनी भाषा में "जेरे काश्त" कहलाती है। इसके विरुद्ध अ+हल्या वह धरती हुई जिसमें कभी हल नहीं चला। राजा का धर्म है कि ऐसी धरती उस किसान को दे जिसके पास गौतम अर्थात् सब से बढ़िया बैल हों और धर्मात्मा राजा के राज्य में ऐसा ही होता है। परन्तु जब शासक दुराचारी और अधर्मी हो जाते हैं तो वे दुराचार की पोल खुलने के भय से अथवा वोट प्राप्त करने के लिये उस धरती को अपने दुराचारी साथियों में बांट देते हैं। उन्हीं को सहस्र भग' कहा है लोकतन्त्र अर्थात् 'डिमोक्रेसी' में कुत्सित उपायों से झूठा खुशामद करके वोट पाने वाला को 'सहस्र भग' से अधिक उपयुक्त नाम नहीं दिया जा सकता। परन्तु धर्मात्मा शासक 'सहस्र भग' न होकर 'सहस्र चक्षु' होता है, वह अपनी चार रूपी चक्षुओं से ठीक ठीक परीक्षा करके धरती 'गौतम" अर्थात् उत्तम बैल वाले किसान को ही देता है, क्योंकि वही उस धरती को पाने का सच्चा अधिकारी है।

जब महाराज रामचन्द्र वन वास को गये तो उन्होंने बहुत सी ऐसी धरती पड़ी देखी जो कभी उपजाऊ रही होगी, किन्तु अब पत्थर को हो गई है, ऐसी दिखाई देती थी। महाराज ने उस धरती का हाल पूछा, लोगों ने बताया कि किसी दुराचारी राज्यकर्मचारी ने वह भूमि अपने आलसी पिट्ठुओं में बाँट दी थी, तब से यह बंजर पड़ी है। इस में चिरकाल से हल नहीं चला। इसीलिये पत्थर हो गई है। महाराज ने तुरन्त भरत के पास समाचार भेजकर वह धरती सुपरीक्षित चुने हुए किसानों को दिलवादी। उसमें फिर हल चलने लगे, अब वह 'अहल्या' नहीं रह 'सुहल्या' होगई। बस महाराज रामचन्द्रजी सरीखे धर्मात्मा राजाओं के चरण जहाँ पड़ते हैं, वहाँ की अहल्या धरती

आर्य महासम्मेलन के प्रस्ताव

[कुछ प्रस्ताव गताङ्क में प्रकाशित हो चुके हैं शेष निम्नांकित हैं]

धार्मिक व्यवस्था

यद्यपि सार्वदेशिक सभा ने धर्मार्य सभा द्वारा सन्ध्या और हवन की एक समान और प्रामाणिक पद्धति निश्चित की हुई है तथापि आर्यजगत् में विभिन्न पद्धतियाँ व्यवहार में आ रही हैं, यह सम्मेलन आर्यसमाजों और आर्य जनता से अनुरोध करता है कि वह उपर्युक्त पद्धति को व्यवहार में लाए जिससे एक जैसी पद्धति प्रचलित हो सके।

सांस्कृतिक प्रचार

यतः संसार के विभिन्न देशों के महा पुरुषों द्वारा प्रतिपादित एतिहासिक धर्मों-मतों, पथों, सम्प्रदायों और वादों के व्यापक प्रचार होने तथा भौतिक दार्शनिक और वैज्ञानिक सिद्धान्तों के अनवरत प्रचार के होते हुए भी पाश्चात्य संस्कृति एवं सभ्यता उत्तरोत्तर मानव जीवन के उत्कृष्ट दिव्य गुणों के विघातक दानवीय दुर्गुणों को ही सक्रामक रूप से प्रकुपित करने में साधक बनी है और विश्व शान्ति के स्थान में विश्व जिघांसा को ही प्रेरित करती रही है, और यतः मध्य कालीन भारत के सम्प्रदायाचार्यों के संकुचित विचारों के प्रभाव से भारतवासियों में रुढ़िवाद, पारस्परिक भेद भाव और अन्तःकलह को ही प्रोत्साहन मिलता रहा है। अतः इस सम्मेलन का निश्चय है कि सनातन वैदिक संस्कृति को सर्वत्र और सुसंघटित रीति से प्रचारित करने के लिये निम्न योजना व्यवहार में लाई जाय।

१—भारत के ग्रामों, उपनगरों, नगरों और पुरों में सुविधानुसार केन्द्र बनाकर ऐसे सर्वथा योग्य और प्रभावशाली विद्वानों को नियुक्त किया जाये जो अपने अनुकरणीय जीवन, विचार और व्यवहार से सर्वसाधारण जनों के सम्पर्क से उनकी स्थिति से परिचित होकर तदनुरूप उनको परामर्श और सहयोग प्रदान करते रहें समय-समय पर आवश्यकतानुसार केन्द्र से इन कार्यकर्ताओं को यथोचित सहयोग मिलता रहे।

२—भारत स्थित विभिन्न दूतावासों से साक्षात सम्पर्क प्राप्त करके विदेशस्थ भारतीय दूतावासों के तत्वावधान में योग्य भारतीय सांस्कृतिक सन्देश वाहकों को नियुक्त कर उनके द्वारा भारतीय संस्कृति के विरुद्ध आन्दोलन का निराकरण तथा स्वसंस्कृति परिचायक परिपक्व विचारों का मौखिक और लेखबद्ध प्रचार किया जाये इस कार्य को करने के लिये केवल वे ही वयोवृद्ध और ज्ञानवृद्ध अनुभवी विद्वान् नियुक्त किये जाएँ कि जो स्वसांस्कृतिक विचार परम्पराओं के साथ साथ विभिन्न वैदेशिक सांस्कृतियों से भली भाँति परिचित हों और जिनकी प्रचार प्रणाली भी प्रभावोत्पादक हो।

हिन्दी भाषा

यह सम्मेलन निश्चय करता है कि हिन्दी राष्ट्रभाषा घोषित कर दी गई है परन्तु भारत के कतिपय प्रदेश राज्यों ने हिन्दी को अपनाने की ओर निराशाजनक कार्य किया है। कुछ प्रदेश राज्यों ने तो हिन्दी के स्थान में अंग्रेजी को ग्रहण किया है। जिसके कारण वह पहले की तरह सारी सरकारी कार्यशाही और जनता का कार्य चलाने के अयोग्य हो गए हैं। नियम व निग्रह का कार्य शिथिल पड़ गया, जिसके कारण शासक और शोसित दोनों के लिये अतिशय कष्टदायक व भार दृष्टिगोचर हो रहा है। विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम हिन्दी होना चाहिये। सरकारी दफ्तरों में प्रान्तीय भाषा के साथ-साथ हिन्दी को भी प्रारंभ करने का आदेश होना चाहिये। केन्द्रीय सरकार की ओर से प्रदेश राज्यों को राष्ट्रभाषा हिन्दी शीघ्र अपनाने के लिये आदेश दिए जायँ। यह सम्मेलन नर नारियों से प्रेमपूर्वक प्रार्थना करता है कि राष्ट्र की राष्ट्रियता, एकता व एक विचारधारा उत्पन्न करने के लिए हिन्दी को अपनाकर सरकारी व सरकारेतर सारे कार्य हिन्दी में चलाते हुए सच्चे नागरिक बन कर अपने कर्तव्य का पालन करें।

शिक्षा-पद्धति में परिवर्तन

सहस्र वर्ष व्यापिनी राजनैतिक दासता जनित अनेक दोषों से भारत में प्रचलित शिक्षा-पद्धति दूषित हो चुकी है जिसके कुप्रभाव से शिक्षा संस्थाओं का वातावरण सर्वथा अभारतीय एवं विशाक्त बन गया है और उन संस्थाओं में शिक्षित भारतीय नर नारियों के आचार विचार तथा व्यवहारों में अनायास विविध प्रकार के कुत्सित दोषों का समावेश होता जारहा है अतः अब स्वतन्त्र भारत राष्ट्र में भारतीय परम्परा प्रधान शिक्षापद्धतिमयी शिक्षा संस्थाओं की स्थापना अनिवार्य रूप से आवश्यक है। अतः यह सम्मेलन सरकार से अनुरोध करता है कि वह इस प्रकार की शिक्षा संस्थाओं की व्यवस्था करे जिसमें गुरु-शिष्य के प्राचीन काल जैसे घनिष्ठ सम्बन्धों तथा ब्रह्मचर्य मूलक सचरित्र शिक्षा का आधार हो जिससे आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और व्यावहारिक जीवनोपयोगी चरित्र के धनी आर्जव सम्पन्न नागरिक उत्पन्न हो सकें, इसके साथ ही उन संस्थाओं में आर्य प्राचीन साहित्य के पठन-पाठन तथा अनुसन्धान पर अधिक बल दिया जावे। यह सम्मेलन ब्रह्मचर्य विरोधनी सह शिक्षा का भी घोर विरोध करता है।

यह सम्मेलन समस्त आर्य संस्थाओं के संचालकों को आदेश देता है कि वह अपनी संस्थाओं में सह शिक्षा की हानिकारक प्रथा को प्रश्रय न दें और यदि किसी संस्था में सह शिक्षा प्रचलित हो तो उसको तत्काल बन्द कर दें।

गो रक्षा।

(क) यह भारत एक कृषि-प्रधान देश है जिसके ७ लाख ग्रामों में लगभग ९० प्रतिशत जन निवास करते हैं जिनका मुख्य व्यवसाय कृषि अथवा तत्सम्बन्धी श्रम कार्य हैं। यतः निर्धनता एवं निरक्षरता के कारण कृष्यादि कार्यों में आधुनिक वैज्ञानिक, यन्त्रादि उपकरणों का निकट भविष्य में व्यापक प्रयोग सम्भव और सुलभ न होने से गवादि पशु साधनों पर ही अन्नादि जीवनोपयोगी भोज्य सामग्री का प्रचुर उत्पादन एवं वितरण निर्भर है। अतः यह सम्मेलन अनुभव करता है कि वर्तमान देश कालिक परिस्थिति में राज्य की ओर से कानून द्वारा ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि भारत की सर्वांगं समृद्धि के लिए गवादि पशु सम्पत्ति की उन्नति के निमित्त आवश्यक आर्थिक सहायता द्वारा प्रोत्साहन प्रदान किया जाय। और गवादि पशुओं का वध विधि (कानून) द्वारा बन्द कर दिया जाय।

(ख) यह सम्मेलन आर्य जनता तथा आर्य समाजों से भी आग्रह करता है कि व्यक्तिगत तथा सहकारी रूप में घरों में गऊएं रखें और समाज के अधीन यथा सम्भव डेरी खोलें।

(ग) यह सम्मेलन भारत सरकार को प्रेरणा करता है कि वह ऐसे साधन उपलब्ध करे कि जिससे जनता में घर २ गऊ रखने की सुविधा प्राप्त हो। इसके एक उपाय के रूप में यह सम्मेलन यह सुझाव प्रस्तुत करता है कि कानून लगान व मालगुजारी आदि में ऐसी धारा जोड़ दी जाय जिससे प्रत्येक ग्राम व नगर में गोचर भूमि का पर्याप्त मात्रा में छोड़ा जाना अनिवार्य हो जाय।

साहित्य निर्माण एवं प्रकाशन

यतः अब भारत एक सर्वांगं सम्पन्न स्वतंत्र राष्ट्र हो गया है एवं अपनी परम्पराओं साहित्य ग्रन्थों और विश्व जनीन विचारों को साधारण तया संसार के समस्त देशों में प्रचारित करने का अब इसको सुयोग प्राप्त हुआ है अतः यह सम्मेलन अनुभव करता है कि:—

१—समस्त प्रकार के लिखित और मुद्रित प्राचीन ग्रन्थों तदनुकूल एवं प्रतिकूल साहित्य ग्रन्थों का एक विशाल केन्द्रीय पुस्का-

---

गोतम अर्थात् बढ़िया बैलों की कृपा से फिर फलने-फूलने लग जाती है और अपना रूप छोड़कर नाममात्र श्यामला हो जाती है। इसी का नाम है 'अहल्योद्धार' परमात्मा करे हमारे देश में भी 'सहस्राक्ष' का राज्य हो 'सहस्रभगों' का नहीं। यही सच्चा रामराज्य होगा।

—

सभा की सूचनाएँ

निरीक्षक सूचना

१—सभा के निरीक्षक महानुभावों को सूचित किया जाता है कि सभा का वर्ष समाप्त होने में डेढ़ मास शेष है। निरीक्षण कार्य अति न्यून हुआ है। अतः प्रार्थना है कि अपने नियत क्षेत्र के समाजों का शीघ्रातिशीघ्र निरीक्षण कार्य समाप्त करने का कष्ट करें।

२—निरीक्षण कार्य को प्रगति देने के लिये बुलन्दशहर और एटा जिलों की आर्यसमाजों के लिये श्री गुरुदयालुजी वैद्य विष्णुपुरी अलीगढ़ सहायक निरीक्षक नियुक्त किये गये हैं। उनके पहुँचने पर समाजों व संस्थाओं के अधिकारीगण निरीक्षण करावें और सभा का प्राप्तव्य धन व मार्ग व्यय आदि देवें।

उपदेश विभाग

१-निम्न महानुभावों ने उपदेश विभाग द्वारा प्रचारकार्य करना स्वीकार कर लिया है। आशा है समाज अपने अपने उत्सव आदि के लिये उन्हें निमन्त्रित करेंगे।

(१) विद्याभास्कर श्री प० ओमप्रकाश शास्त्रीजी स्नातक गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर 'महोपदेशक'(२) विद्यावारिधि श्री प० प्रभामित्र शास्त्रीजी स्नातक गुरुकुल अयोध्या 'उपदेशक'(३) श्री खजानसिंहजी, प्रचारक,

२—मेरठ कमिश्नरी के लिये श्री रत्नसिंहजी के त्यागपत्र के कारण श्री श्यामलालजी आर्य मेरठ निवासी मंडलाधीश नियुक्त किये गये हैं। आपके परामर्श से से निम्न उपदेशक मेरठ में प्रचारकार्य करेंगे।

(१) श्री प० सच्चिदानन्दजी शास्त्री उपदेशक, (२) श्री प० रामकौशिकजी उपदेशक, और श्री महिपालसिंहजी प्रचारक, श्री खजानसिंहजी प्रचारक जिला सहारनपुर में प्रचार करेंगे।

३—श्री मोहनलालजी आर्य आगरा मण्डलाधीश के परामर्श से आगरा कमिश्नरी में निम्न व्यक्ति कार्य करेंगे।

(१) श्री प० श्रीकृष्णजी उपदेशक, (२) श्री खड्गपालसिंहजी प्रचारक, (३) श्री हेमचन्द्र शर्माजी प्रचारक, (४) ज्ञानदेवजी वानप्रस्थी एटा जिले में कार्य करेंगे।

उपदेशक, प्रचारक अपने मण्डल में यथाशीघ्र पहुँचकर मण्डल पतियों के आदेशानुसार प्रचार करने का कष्ट करें।

धर्मपाल विद्यालङ्कार
मन्त्री सभा व अधिष्ठाता
उपदेशविभाग

लय स्थापित किया जाय कि जिसमें तुलनात्मक धर्म, तुलनात्मक संस्कृति, तुलनात्मक दर्शन विज्ञान, पुरातत्व, इतिहास कला कौशलादि सभी प्रकार की प्रचुर सामग्री अनुसन्धान कार्य करनेवाले विद्वानों के लिए सुलभ हो सके।

२-समस्त प्रकार के आर्ष और उपादेय ग्रन्थों का सुन्दर सम्पादन मुद्रण और प्रकाशन व्यवस्थित रूप से विविध भाषाओं में किया और कराया जाय।

३—महर्षि दयानन्द सरस्वती के समस्त ग्रन्थों के स्वल्प मूल्य में शुद्ध संस्करण भाष्य अनुवाद और निबन्ध प्रकाशित हों।

४ वर्तमान देश कालिक परिस्थितियों के अनुरूप विभिन्न भाषाओं में धार्मिक एवं सांस्कृतिक साहित्य पुस्तकों के प्रकाशन की सुव्यवस्था की जाय।

५ उच्चकोटि की एक ऐसी मासिक पत्रिका प्रकाशित की जाय जिसमें न्यून से न्यून १०० पृष्ठ हों जिसके ५० पृष्ठ संस्कृत लेख युक्त हों शेष ५० पृष्ठों में वही लेख जिस देश में उक्त पत्रिका भेजी जाती हो उस देश की भाषा में हो। इस पत्रिका में मुख्यतया अध्यात्म तत्व, दर्शन, धर्म, संस्कृत, तत्व ज्ञान, भाषा विज्ञान मनोविज्ञान और सदाचार शास्त्रादि उच्चकोटि की लेख सामग्री हो।

आर्यजगत

—आ० स० रसपुरा (फतेहगढ़) श्री ज्ञानचन्दजी उनकी पत्नी और श्री गुलकन्दरायजी की मृत्यु पर शोक समवेदना प्रकट करता है।

—इन्दौर (बुलन्दशहर) में आर्य समाज की स्थापना हुई, अधिकारियों का चुनाव किया गया।

—आ० स० भोईवाड़ा (बम्बई) अपने संस्थापक तथा भूतपूर्व मन्त्री श्री राजरेश्वरसिंहजी की मृत्यु पर शोक-सहानुभूति प्रकट करता है। आपने समाज की बड़ी तन्मयता से सेवा की थी।

—आ० स० और आ० कु० सभा सीपरी बाजार झाँसी अपने परमोत्साही और निर्भीक सदस्य श्री गोविन्दराम गुरुबारा की मृत्यु पर शोक सहानुभूति प्रकट करते हैं।

—अमेठी में विजयादशमी-उत्सव समारोहपूर्वक मनाया गया, अमेठी नरेश महोदय की अध्यक्षता में दरबार हुआ। युवराज रणञ्जय सिंहजी के भाषण का बड़ा प्रभाव पड़ा।

—आर्य प्र० नि० सभा सिन्ध की ओर से विजयादशमी के अवसर पर कल्याण रिफ्यूजी कैम्प में प्रचार किया गया। दस दिन तक रामायण की कथा और प्रो० ताराचन्द गाजरा के भाषण हुए। २१ अक्टूबर को एक सार्वजनिक सभा हुई जिसमें अनेक उपयोगी प्रस्ताव पास हुए।

—नेपाल में विजयादशमी उत्सव बड़े समारोह पूर्वक मनाया गया। आर्यविद्वान् श्री रामदेव शास्त्री ने प्रचार के लिये एक योजना बनाई।

—कानपुर काटन मिल्स के इन्जीनियर श्री विश्वदीनजी ने अपने पुत्र अशोककुमार का मुण्डन संस्कार वैदिक रीति से कराया। सीसामऊ (कानपुर) आर्यसमाज को ५१) दान दिये। श्री स्वामी विशुद्धानन्दजी की कथा हुई।

—नजीबाबाद आर्यसमाज ने ऋषि-निर्वाण-उत्सव समारोह पूर्वक मनाया साप्ताहिक सत्संग में श्री स्वामी शिवानन्दजी का प्रवचन हुआ।

—शमसाबाद (आगरा) आ० स० का वार्षिकोत्सव ९ से ११ अक्टूबर तक हुआ। ब्र० उषर्बुधजी, श्री मोहनलालजी आर्य, ठा० धर्मसिंह सरहदी, प० भगवानदेवजी आदि के व्याख्यान हुए, आर्यवीर दल की स्थापना हुई।

—आ० स० इरादतनगर (आगरा) में १२ तथा १३ अक्टूबर को श्री मोहनलालजी आर्य, ब्र० उषर्बुधजी, प० लालचन्दजी, म० खड्गपालसिंहजी के व्याख्यान तथा भजन हुए। और अधिकारियों का निर्वाचन कराया गया।

—शुद्धि सभा आगरा के मन्त्री बाबू सुन्दरलालजी के पौत्रों का मुण्डन संस्कार १३ नवम्बर (कार्तिक पूर्णिमा) को वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ।

—प० धर्मवीर झण्डाधारी ने गत ५ नवम्बर को दयानन्द कालेज लखनऊ, सिटी आर्यसमाज लखनऊ, तथा आर्य स्त्री समाज गणेशगंज लखनऊ, मधुवन शहीद इन्टर कालेज (आजमगढ़), आर्य समाज गजियापुर तथा आ० स० दुबारी में भी प्रचार किया।

—आ० स० सॉडी (हरदोई) में गत शरत्पूर्णिमा को एक बृहत् यज्ञ हुआ, वैदिक संस्कृति पर भाषण भी हुए। यज्ञ का समस्त व्यय स्थानीय दानवीर सेठ श्री रामचन्द्र चौखुषिया ने किया, और आर्यसमाज के सदस्य भी बने। जनता पर यज्ञ का अच्छा प्रभाव पड़ा।

—श्रद्धानन्द भवन आरा में विजयादशमी उत्सव समारोह पूर्वक मनाया गया। प्रभावशाली भजन तथा भाषण हुए। म० पन्नालालजी गुप्त आर्य की पुत्री का मुण्डन संस्कार हुआ।

—आ० स० फैजाबाद अपने वयोवृद्ध सदस्य श्री गुरुनानकप्रसादजी की पुत्री के देहावसान पर शोक सहानुभूति प्रकट करता है।

—रजौली (गया) आर्य समाज मन्दिर का शिलान्यास १४ अक्टूबर को आर्य प्र० नि० सभा बिहार के प्रधान और सुप्रसिद्ध ह० श्री दुखनरामजी के कर कमलों द्वारा हुआ। इस आयोजन के अध्यक्ष श्री जनकेश्वरजी थे, दोनों महानुभावों ने मन्दिर-निर्माण कोष में क्रमशः १०१) तथा २५१) दान दिये। १०१) डा० त्रिपाठीजी ने दिये।

—आ० कु० सभा बॉदा के तत्वाधान, में स्थानीय आदर्श व्यायामशाला का उत्सव विजयादशमी पर समारोह पूर्वक मनाया गया। सभापति का आसन श्री सेठ हरिकिशनजी ने ग्रहण किया। व्याख्यान और कविता पाठ हुआ।

—गाँधी कालोनी मुजफ्फर नगर में महाशय लेखरामजी आर्य सेवक के प्रयत्न से ९ अक्टूबर को आर्यसमाज की स्थापना हुई। श्री चौ० मुल्कीरामजी ए० डी० एम० ने ओ३म्-पताका फहराई और अवसरोचित एवं महत्वपूर्ण प्रभावशाली भाषण दिया। धन-संग्रहार्थ अपील करने पर ३२३) प्राप्त हुए। श्री मुल्कीराम जी ने ५१) प्रदान किये।

—जिला आर्य उप प्रतिनिधि-सभा फर्रुखाबाद श्री मौलवी महेश प्रसादजी की मृत्यु पर शोक-सहानुभूति प्रकट करती है।

—आ० स० चूहड़पुर (देहरादून) अपने प्रधान श्री म० हरद्वारीलालजी की आकस्मिक मृत्युपर शोक सहानुभूति प्रकट करता है।

—गुरुकुल घासीपुरा (मुजफ्फरनगर) की अन्तरंग सभा अपने कर्मवीर मुख्याधिष्ठाता श्री म० परशुरामजी आर्य की मृत्यु पर शोक सहानुभूति प्रकट करती है।

—जिला आ० उपप्रतिनिधि सभा फर्रुखाबाद श्री ज्ञानचन्दजी आर्य तथा उनकी पत्नी की मृत्यु पर शोक सहानुभूति प्रकट करती है।

—आर्य उप प्रतिनिधि सभा पीलीभीत की ओर से श्री नत्थूसिंह जी मास्टरने गत अगस्त, सितम्बर तथा अक्टूबर मासों में पीलीभीत, बरेली शाहजहाँपुर और नैनीताल जिलों के ४४ ग्रामों में साठ व्याख्यान मैजिक लैटर्न द्वारा दिए प्रचार का उत्तम प्रभाव पड़ा।

—शोक है कि गुरुकुल घासीपुरा के अध्यापक श्री प० लक्ष्मीचन्द्र वर्मन एम० ए० बी० टी०, पी-एच० डी० का २१ अक्टूबर को अचानक देहान्त हो गया। आपकी आयु लगभग ७० वर्ष की थी। आप बड़े ही सुयोग्य, सरल, सात्विक और सफल अध्यापक थे। समस्त गुरुकुल वासियों ने आपके प्रति शोक-सहानुभूति प्रकट की।

—भादों की पूर्णिमा को जवाँ (अलीगढ़) में १७ वाँ मासिकोत्सव मनाया गया, आर्य भ्रमण सभा का ३६ वाँ उत्सव ग्राम पड़को (अलीगढ़) में क्वार की अमावस्या को हुआ। यज्ञ, भजन और शिक्षाप्रद भाषण हुए।

—आ० स० काशीपुर (नैनीताल) का वार्षिकोत्सव २० से २४ अक्टूबर तक समारोहपूर्वं मनाया गया। राजगुरु श्री प० धुरेन्द्र शास्त्री, श्री प० लोकनाथ तर्क वाचस्पति, श्री कुँवर सुखलालजी, स्वामी शिवानन्दजी आदि के व्याख्यान हुए। राजगुरुजी को ५१) की थैली भेंट की गयी।

—आ० स० गंगोह (सहारनपुर) का वार्षिकोत्सव गत ५ से ७ नवम्बर तक बड़े समारोह के साथ मनाया गया। उत्तर प्रदेश और पंजाब के आर्यविद्वानों ने भाषण दिये, जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

—आ० स० नगीना का वार्षिकोत्सव ६ से ९ दिसम्बर तक होना निश्चित हुआ था, अब विशेष कारणों से स्थगित हो गया है।

—आगामी २८ नवम्बर से १३ दिसम्बर तक वेदोक्त यज्ञ प्रचार समिति की ओर से ग्राम भुंगारका जिला व रेलवे स्टेशन नारनौर (पेप्सू) में "विश्व कल्याण महायज्ञ" होगा। इस अवसर पर अनेक सम्मेलन होंगे जिनके अध्यक्ष आर्यसमाज और देश के बड़े-बड़े विद्वान् होंगे। यज्ञ की पूर्णाहुति सम्भवतः राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद करेंगे।

—डा० ज्ञानचन्द, संयोजक

—सर्वोदय गुरुकुल आश्रम बैरगनियाँ (मुजफ्फरपुर) ने आगामी ८ तथा ९ दिसम्बर को बिहार प्रादेशिक गुरुकुल सम्मेलन का आयोजन किया है। सम्मेलन के प्रधान श्री ब्रह्मचारी धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री एम० ए० होंगे।

—आगामी १३ फरवरी से टंकारा में 'ब्रह्म पारायण यज्ञ' होगा. अनेक सम्मेलन होंगे। राजा बहादुर श्री गोविन्दलाल पित्ती की अध्य-

बता में एक यज्ञसमिति का निर्माण हो चुका है, यज्ञ के साथ अनेक विद्वानों का सहयोग रहेगा। —धर्मवीर मण्डल धारी

—सृष्टि सम्वत् और दयानन्दाब्द किस अंग्रेजी मास और किस तारीख से आरम्भ होते हैं ?

—प्रधान आर्यसमाज जलेसर

—मोहान (उन्नाव) में स्थानीय गोरक्षा मण्डल द्वारा गोपाष्टमी उत्सव समारोहपूर्वक मनाया गया। गोरक्षा तथा गो-पालन सम्बन्धी उपदेश तथा भजन हुए।

—सर्वोदय गुरुकुल आश्रम वैरगनियाँ (मुजफ्फरपुर) के मन्त्री महोदय को श्री स्वामी अभेदानन्द जी महाराज के पते की आवश्यकता है।

—आ० स० मन्दिर मूसानगर (कानपुर) की मरम्मत के लिये १०००) की तुरन्त आवश्यकता है। दानी महानुभाव कृपया सहायता प्रदान करें। —मन्त्री

—प्रसिद्ध गायक कुंवर जयपाल सिंह मानव को प्रचारार्थ बुलाने वाले सज्जन और समाज ग्राम सिकन्दरपुर पो० बुढ़ासी (अलीगढ़) के पते पर पत्र व्यवहार करें।

—जो सज्जन या समाज पंजाब के प्रसिद्ध उपदेशक प० विद्याभास्कर शास्त्री को प्रचारार्थ बुलाना चाहें वे आर्यसमाज बिहारीपुर बरेली के पते पर पत्र-व्यवहार करें।

— —

उत्सव

आ० स० गोरिया पो० सवायजपुर (हरदोई) का उत्सव २६ से २८ नवम्बर तक। उपदेशक महानुभाव फतेहगढ़ (फर्रुखाबाद) उतर कर पास ही आ० स० मोहेपुर पहुंचें २६ को प्रातः सवारी का प्रबन्ध रहेगा।

निर्वाचन

—आ० स० सहानपुर (बिजनौर) प्रधान—श्री तेजपालसिंहजी और मन्त्री—श्री प० जगदीशप्रसादजी।

—आ० स० जगनेर प्रधान—श्री श्यामसुन्दरजी और मन्त्री—श्री बाबूलालजी।

—आ० स० गाधी कालोनी मुजफ्फरनगर—प्रधान श्री चन्द्रभानजी और मन्त्री—श्री विश्वेश्वरनाथजी।

साधु आश्रम हरदुआगंज

आश्रम का महोत्सव गत ६, १०, ११ नवम्बर को बड़ी धूम-धाम से मनाया गया। श्री स्वामी सत्यदेवजी परिव्राजक, श्री स्वामी ब्रह्मानन्दजी दण्डी, श्री प० अयोध्याप्रसादजी वैदिक मिशनरी, श्री प० गोपालदत्तजी शास्त्री प्रधान सनातन विद्व-मण्डल बनारस, श्री राजगुरु प० धुरेन्द्रजी शास्त्री प्रधान सार्वदेशिक सभा, श्री प० बुद्धदेवजी विद्यालंकार, त्यागमूर्ति श्री प० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु, श्री स्वामी परमानन्दजी महाराज, श्री ठा० अमरसिंहजी शास्त्रार्थ महारथी आदि विद्वानों के प्रवचन और भाषण तथा श्री आत्मारामजी, श्री जगदीशभूषण जी, श्री कुं० जयपालसिंहजी, श्री ठा० महीपालसिंहजी आदि के प्रभावशाली भजन हुए। आगामी वर्ष के लिये प्रधान श्री बाबू पीतमलालजी एडवोकेट और मन्त्री श्री म० सरदारसिंहजी चुने गये।

—

सम्मन

वास्ते करारदाद उमूर तनकीह तलब
(आर्डर ५ कायदा १ व ५)
नम्बर मुकद्दमा १५१ सन् १९५१ ई०
अदालत सिविलजजी प्रथम कानपुर
जिला कानपुर

फर्म सोहनलाल हस्तीमल वाके नया गंज कानपुर बजरिया लाला सोहन लाल उम्र तखमीनन २८ साल वल्द लाला मोहनलाल कौम वैश्य साकिन नयागंज, शहर कानपुर मकेश्वर पाटनर फर्म मजकूर—मुद्दई

बनाम-श्री भगवानदास वगैरह
.... मुद्दालेहुम

बनाम-श्री भगवानदास उम्र तखमीनन ३२ साल वल्द लाला बाबूलाल साकिन परतापपुरा आगरा मुद्दालेह

हरगाह मुद्दई ने आपके आपके नाम एक नालिश बाबत इस्तकरार व पाने कब्जा १३६ बोरा के दायर की है, लिहाजा आपको हुक्म होता है कि आप बतारीख १८ (अठारह) माह दिसम्बर सन् १९५१ ई० व वक्त १०।। बजे दिन के असालतन या मार्फत वकील के जो मुकदमा के हालात से करार वाकई वाकिफ किया गया हो और कुल उमूरात अहम मुताल्लिका मुकद्दमा का जवाब दे सके या जिसके साथ कोई और शख्स हो कि जो जवाब एमे सवालात का दे सके हाजिर हो और जवाबदिही दावा की करें और आपको लाजिम है कि उसी रोज जुमला दस्तावेजात पेश करें जिन पर आप बताईद अपनी जवाबदिही के इस्तदलाल करना चाहते हों। अपना बयान तहरीरी तारीख ११ (ग्यारह) दिसम्बर सन ५१ को दाखिल करो।

आपको इत्तिला दी जाती है कि अगर बरोज मजकूर आप हाजिर न होंगे तो मुकदमा बगैर हाजिरी आपके मसमूअ और फैसला होगा।

बसब्त मेरे दस्तखत और मुहर अदालत के आज बतारीख १५ माह नवम्बर सन् १९५१ ई० जारी किया गया।

नाम अदालत सिविल जजी प्रथम कानपुर नम्बर मुकद्दमा १५१ सन् १९५१ ई० नाम फरीकैन फर्म सोहनलाल हस्तीमल बनाम श्री भगवानदास वगैरह

आज्ञा से—
राजकिशोर
प्रथम सिविल जज कानपुर

दो नए प्रकाशन

आर्य डायरी (१९५२)

हम प्रतिवर्ष आर्य डायरी प्रकाशित करते हैं जो कि अपनी विशेषताओं के कारण आर्यजगत् में बहुत लोकप्रिय है।

आर्य डायरी (स०१९५२) की कुछ विशेषताएं

१—डायरी के आरम्भ में आर्यजगत् सम्बन्धी आवश्यक जानकारी पर्व, त्यौहार, स्वास्थ्य के नियम और योगासन, नित्यकर्म तथा पच महायज्ञों का वर्णन तथा विधि-नैमित्तिक मत्र पाठ इत्यादि उपयोगी विषयों का वणन है।

२—इस डायरी में विशेष आकर्षण यह है कि इसके प्रत्येक पृष्ठ पर वेदों का चुना एक मत्र अर्थ सहित दिया गया है। इस प्रकार स्वाध्याय के लिए ३६५ वेद उपदेशों का सग्रह भी इसमे मिलेगा।

३—प्रत्येक पृष्ठ पर देशी तथा अ ग्रेजी तिथियों हिन्दी तथा अ ग्रेजी भाषा में।

४—बढ़िया कागज तथा कपड़े की पक्की जिल्द प्रत्येक आर्य स्त्री व पुरुष के पास यह डायरी रहनी चाहिये। इतनी उपयोगी डायरी और कहीं नहीं मिलेगी।

मूल्य एक रुपया प्रति डायरी

इकट्ठी मगाने पर विशेष रियायत

आर्य कैलेन्डर (१९५२)

इस कैलेन्डर की मुख्य विशेषता यही है कि इसमें महर्षि दयानन्दजी का वास्तविक चित्र बड़े साइज में प्रकाशित होरहा है।

मूल्य आठ आना

नोट—बारह कैलेन्डर से कम का आर्डर न भेजा जायगा क्योंकि इससे कम का पैकिंग ठीक न हो सकने के कारण रास्ते में खराब होने का डर है।

आर्य कुमार परिषद्
की
परीक्षाओं की सभी पुस्तकें
हमसे मगाए

सभी प्रकार की आर्य सामाजिक पुस्तकों, वेद, दर्शन, उपनिषद् तथा अन्य साहित्य की जानकारी के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मगाए

प्रकाशक—राजपाल एन्ड सन्स, आर्य पुस्तकालय नई सड़क दिल्ली

गीता भाषा पद्यमय

संस्कृत न जानने वालों के लिये परमोपकारी है। इसकी प्रशंसा गोस्वामी बिन्दुजी, टण्डन जी, सुधांशुजी, झूंसी के ब्रह्मचारीजी, काका कालेलकरजी इत्यादि ने की है। मूल्य सजिल्द १।) हैजा चिकित्सा मू० ।-) पाकेट साइज।

पता—डा० शिवनाथसिंह,
पो० जयनगर (दरभंगा)

श्रीमदभगवदगीता

पुरुषार्थबोधिनी टीका

लेखक प० सातवलेकर। इस १००० पृष्ठों के विशाल ग्रन्थ में (१) अर्जुन के विषाद का कारण, (२) विश्वरूप दर्शन का रहस्य, (३) गीतोपदेश के साथ वेदोपदेश की तुलना और (४) गीतोपदेश को व्यवहार में लाने या अनुष्ठान करने की रीति बताई है। किसी अन्य टीका में ये स्पष्टीकरण नहीं मिलेंगे। गीतोपदेश से राज्य शासन कैसे सफल हो सकता है, यह इसी टीका में पाठक देखेंगे। मूल्य १५), डाक व्यय १॥) मूल्य पेशगी म० आ० द्वारा ११।) भेजिये।

स्वाध्याय-मण्डल, आनन्दाश्रम
किला-पारडी, (जि० सूरत)

आपकी दैनिक आवश्यकता

शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित-जगत् प्रसिद्ध

शुद्ध सुगन्धित हवन-सामग्री

नमूना मुफ्त मंगाकर अवश्य परीक्षा करिये

पता—सुन्दरलाल रामसेवक शर्मा
शुद्ध सुगन्धित हवन सामग्री भण्डार
मु० पो० असौली (फतेहपुर)

घर बैठे देशी विदेशी भाषयें सीखिये

भाषा विज्ञान

थोड़ी हिन्दी जानने वाला भी इस पुस्तक द्वारा आसानी से बगाली, गुजराती, पजाबी, हिंदी, तामिल, तिलंगी, कनाडी, मलयालय, तुर्की, ब्रह्मी, चीनी, जापानी, पश्तो, बिल्लोची, लैटिन भाषायें घर बैठे सीख सकता है। मूल्य ३।) पैकिंग ॥।)

रेडिओ इस पुस्तक द्वारा आप १५) रु० में ऐसा रेडिओ तैयार कर सकते हैं जो बिना बिजली के सुना जा सकता है और हर समय पास रखा जा सकता है मूल्य २॥) पोस्टेज ॥=)

प्रेम विज्ञान मन्दिर, सरायवाला
अलीगढ़

भजनोपदेशक की आवश्यकता

बिहार प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा को सुयोग्य अनुभवी, धर्मनिष्ठ दस भजनोपदेशकों की आवश्यकता है वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा। प्रार्थी आवेदन पत्र के साथ किसी आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान मत्री, किसी प्रसिद्ध महोपदेशक की सम्मति भी भेजे।

वासुदेव शर्मा प्रधान मत्री
बिहार आर्य प्रतिनिधि सभा
पटना ४

आर्य वर की आवश्यकता

आर्य परिवार की एक उच्च कुलीन, गृह कार्य में दक्ष, ग्रेजुएट कन्या के लिये रोजगार पर लगे हुए उच्च शिक्षा प्राप्त आर्य विचारों वाले निरामिषाहारी कुमार वर की आवश्यकता है। जाति बन्धन का कोई विचार नहीं किया जायेगा।

पत्र व्यवहार का पता.—बाक्स न० ७८
C O आर्यमित्र कार्यालय, आगरा।

अग्रवाल वर चाहिये।

मुझे अपनी चौदह वर्ष की आयु की सुशील और शिक्षिता गर्ग गोत्रीय कन्या के लिए एक योग्य अग्रवाल आर्य वर चाहिए।

पता:—वृजलाल बी० एस सी०
गवर्नमेंट कन्ट्रक्टर, आजमगढ़



जादू
के खेल सीखिये
मैजिक कम्पनी लिमिटेड मुरादाबाद।

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

ॐ

आर्य-मित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

श्री देशबन्धु गुप्त का स्वर्गवास

२१ नवम्बर को कलकत्ता में हवाई दुर्घटना के शिकार

दिल्ली में वैदिक रीति से अन्त्येष्टि संस्कार

आर्यजगत्, पत्रकारजगत् और दिल्ली सर्वत्र शोक, नेताओं द्वारा श्रद्धाञ्जलियाँ



अत्यन्त दुख की बात है कि २१ नवम्बर को प्रात काल कलकत्ता क समीप वायुयान में टक्कर और आग लग जाने क कारण प्रसिद्ध आर्य नेता अखिल भारतीय पत्रकार संघ के अध्यक्ष, दिल्ली राजनैतिक जीवन क प्राण दैनिक 'तेज' और न्यूज़ क्रानिकल' के स्वामी तथा संचालक श्री लाला देशबन्धु गुप्त का देहावसान हो गया। कलकत्ता से आपका क्षत विक्षत शव दिल्ली लाया गया और वहाँ जनता ने अपने प्यार तथा आदरणीय नेता क दर्शन किये। प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू और भारत सरकार क अन्य मन्त्रियों तथा संसद-सदस्यों ने श्री देशबन्धु के शव पर पुष्प-मालाए अर्पित कीं। गुप्तजी क गृह पर अन्तिम दर्शन और शोक सन्तप्त परिवार क प्रति समवेदना प्रकट करन क लिय एकत्र अपार भीड़ के साथ अरथी पुष्पमाला सज्जित ट्रक में निगमबोध घाट की ओर रवाना हुई। आर्यविद्वान् वेद मन्त्रों का पाठ कर रह थे, सारा बाजार अपने नेता क शोक म बन्द था। स्थान-स्थान पर जनता ने शव पर पुष्प हार चढ़ाये और फूलों की वर्षा की। इस प्रकार एक मील लम्बे जलूस के साथ निगमबोध घाट पर १२ बजे उनकी अरथी पहुँची। और वहाँ आर्यविद्वानों ने वैदिक विधि से शव का अन्त्येष्टि सस्कार किया।

आर्यजगत् में जैसे ही यह समाचार सुना गया सर्वत्र शोक छा गया, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा देहली और आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश लखनऊ के कार्यालय बन्द कर दिये गये। सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री राजगुरु धुरन्द्र शास्त्री और आ० प्र० नि० स० उत्तर प्रदेश के प्रधान श्री मदनमोहन सेठ ने सभाओं की ओर से श्रीमती देशबन्धु गुप्ता को समवेदना सूचक तार भेजे, इसी प्रकार गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन और कांगड़ी आदि शिक्षा-संस्थाओं मे समाचार मिलते ही विद्यालय, महाविद्यालय बन्द कर सार्वजनिक शोक सभाए की गयीं स्थान-स्थान पर आर्यसमाजों ने शोक-प्रस्ताव पास किये आर्यमित्र कार्यालय भी बन्द रहा।

लाला देशबन्धु गुप्त का जन्म पानीपत (पंजाब) में हुआ, १६१८ में वे इण्टर की शिक्षा क लिये दिल्ली आये। १६२० में महात्मा गान्धी क "कालिज छोड़ दो" आन्दोलन के कारण उन्होंने कालिज छोड़ दिया। वे प्रसिद्ध नेता लाला लाजपतराय, हकीम अजमलखां और डा० अन्सारी के राजनैतिक शिष्य थे, अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द क शुद्धि आन्दोलन में उन्होने सक्रिय भाग लिया। प्रसिद्ध पत्र "तेज' उन्होने स्वामीजी के आशीर्वाद से ही प्रारम्भ किया था। पिछले निर्वाचन से पूर्व व दिल्ल नगर पालिका के २० वर्ष तक सदस्य रहे। १६४६ में वे भारतीय संसद के लिये चुने गये। सभी सत्याग्रह आन्दोलनों में उन्होंने भाग लिया और छह बार जेल गये। प्रेस की स्वाधीनता उ के जीवन की साधना थी। उसके लिये निरन्तर निर्भयतापूर्वक अपने विचारों से संघर्ष करते रहे। मृत्यु से तीन दिन पूर्व दिल्ली नगरवासियों ने उनके सम्मान में पार्टी दी थी और उनकी लोक-सेवा का आदर किया था पर किसे पता था कि यह उनको अन्तिम पार्टी होगी।

दिल्ली अपने इस महान् नेता को खोकर सचमुच अनाथ हो गई। आर्यसमाज का एक सच्चा पथ प्रदर्शक और कर्मठ नेता उठ गया। पत्रकार जगत् का देदीप्यमान नक्षत्र अस्त हो गया। सम्पादकीय स्वतन्त्रता का समर्थक उठ गया। स्व० देशबन्धु का जीवन युग-युगान्तर तक नवयुवकों को कर्मठता और विचार स्वातन्त्र्य की प्रेरणा देता रहेगा।

वार्षिक मूल्य ८) विदेश में १०)
एक प्रति तीन आने
सम्पादक हरेन्द्र शर्मा
वर्ष — [illegible]
अंक — [illegible]

स्व० श्री देशबन्धु गुप्त के प्रति

श्रद्धाञ्जलियाँ

मैं अपने पुराने साथी और आजदी की लड़ाई के एक बहादुर योद्धा लाला देशबन्धु गुप्त की मृत्यु पर हार्दिक समवेदना प्रकट करता हू। मुझे विश्वास नहीं होता कि वे हमारे बीच से चले गये हैं। उनके परिवार और दिल्ली के नागरिकों और उनके प्रेमियों के साथ इस अवसर पर हार्दिक समवेदना प्रकट करता हू।

—प्रधान मन्त्री जवाहर लाल नेहरू

श्री देशबन्धु गुप्त का दुखद मृत्यु के समाचार से बहुत धक्का पहुचा है भारत ने एक प्रमुख पत्रकार तथा जनता का सेवक खो दिया है, उन्होने केवल राष्ट्र क स्वतन्त्रता सग्राम, राष्ट्रि र कार्यवाहियों में ही महत्व पूर्ण भाग अदा नही किया बल्कि यदि वह कुछ वष और जीवित रहते, तो वे निस्सन्देह निकट भविष्य में एक सबसे अधिक जिम्मेदार व्यक्ति प्रमाणित होत।

—एम० एस० अणे, गवनर बिहार

श्री देशबन्धु गुप्त के आकस्मिक निधन से देश और आयसमाज की जो महती क्षति हुई है उसकी पूर्ति अत्यन्त कठिन है। देशबन्धुजी बडे ही शान्त गम्भीर और दूर दर्शी नेता थे। उनकी मृत्यु के कारण सारा आय जगत् विकल और विह्वल है

—सुरेन्द्र शास्त्री प्रधान, सा० दे० आ० प्र० नि० सभा देहली

श्री देशबन्धु गुप्त के एक दुघटना के कारण आकस्मिक देहावसान का दुखद सम्वाद सुनकर घोर दुख हुआ। आय प्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश और मेरी उनके दुखित परिवार के साथ हार्दिक समवेदना है।

—मदन मोहन सेठ प्रधान, आ० प्र० नि सभा उत्तर प्रदेश

मुझे देशबन्धु गुप्त की मृत्यु के समाचार से भारी सदमा पहुचा है, वे एक बहादुर सिपाही एक कुशल राजनीतिज्ञ तथा एक दूरदर्शी नेता थे। उनकी मृत्यु से पजाब का एक बड़ा सहायक छिन गया।

—डा० गोपीचन्द भार्गव

श्री देशबन्धु गुप्त जैसे सच्चे और कर्मठ आर्य व्यक्ति का वियोग हमारे लिये दैवी आपत्ति है। आर्य प्र० नि० सभा पजाब के साथ उनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। यद्यपि वे राजनीति में व्यस्त रहते थे प न्तु आर्य समाज को सदैव स्मरण रखते थे। समय-समय पर आ० प्र० नि० सभा पजाब को वे अपना परामर्श देते रहे। इस दुखद अवसर पर मेरी उनके परिवार के साथ हार्दिक सहानुभूति है

—ठाकुरदत्त शर्मा, प्रधान, पजाब आ० प्र० नि० सभा

अपने परम हितैषी मित्र देशबन्धु गुप्त का इस असामयिक मृत्यु से मुझे बहुत शोक हो रहा है —महावीर त्यागी

अपने एक पुराने तथा सम्मानित मित्र श्री देशबन्धु की अचानक मृत्यु का समाचार सुनकर मेरे हृदय को बहुत सम वेदना हुई है। आय समाज के प्रति उनकी अनेक सेवाएं हैं तथा वह राष्ट्रिय कार्यों में सबसे आगे रहते थे। उन्होने बिना किसी भेद भाव के जितनी वे कर सकते थे सबकी सेवा की। —बख्शी टेकचन्द

लाला देशबन्धु की मृत्यु मे दिल्ली एक तरह से अनाथ हो गयी है। डा० अन्सारी और हकीम अजमल खा के स्वर्गवास और श्री आसफअली के गवर्नर बन जाने के बाद लालाजी ही दिल्ली की रहनुमाई कर रह थ। उनके अभाव की पूर्ति निकट भविष्य में होना सम्भव नहीं है। —डा० युद्धवीर सिंह

मेरे लिये देशबन्धुजी का देहान्त एक निकट मित्र के देहान्त के बराबर है। मुझ ऐसा लगता है कि उनके जाने से एक छोटी रोशनी मेरे समाजिक जीवन में बुझ गयी है एक आदर्श पत्रकार के नाते वे भारत के इतिहास में अमर हो गये। —देवदास गाधी

लाला देशबन्धु के निधन से एक सच्चा देशभक्त पत्रकार तथा स्वतन्त्रता सग्राम का महान् योद्धा उठ गया है।

—डा० मुकर्जी

आर्य समाज और राजनैतिक निर्वाचन

केन्द्रीय तथा राज्यों की धारा सभाओं के लिये देश में जो निर्वाचन होने वाले हैं उनके सम्बन्ध में अपना कर्तव्य निश्चित करने के लिये अनेक सज्जन इस सभा की नीति जानना चाहते हैं उनके तथा सभी आर्य समाज और आर्यों की जानकारी के लिये यह घोषणा की जाती है कि आर्य समाज का सामूहिक रूप से इन निर्वाचनों से कोई सम्बन्ध नहीं है और उन्हे किसी पक्ष के सम्बन्ध में अपनी कोई सम्मति नहीं देनी चाहिये परन्तु व्यक्तिगत स्थिति में प्रत्येक आर्य स्वतन्त्र है कि वह जिसके लिये भी चाहे सम्मति दवे उसके लिये किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं है। उसे अपना वोट देते समय यह देखना चाहिये कि वह जिस उम्मेदवार को अपना वोट दे रहा है उससे आय संस्कृति और आर्य जाति के अधिक की रक्षा हो सकेगी या नहीं।

आय समाजों को यह भी चेतावनी दी जाती है कि आर्य समाज का कोई विषय निर्वाचन प्रौपेगेन्डा में वर्णित न किया जाय।

ज्ञानचन्द

मन्त्री, सार्वदेशिक आयप्रतिनिधि सभा देहली

सभा का आगामी बृहदधिवेशन

उत्तर प्रदेशीय समस्त आर्य समाजों को सूचित किया जाता है कि सभा व समाजों का वर्ष ३१ दिसम्बर को समाप्त हो जायगा। पश्चात् सभा का आगामी वृहदधिवेशन ईस्टर अवकाश में बुलाया जायगा।

सभा के नियम स० १५ भाग (अ) के अनुसार मंत्री महोदयों को सूचित किया जाता है कि यदि कोई आर्य समाज सभा का वार्षिक अधिवेशन (वृहदधिवेशन) अपने यहां निमंत्रित करना चाहे तो स्थानीय आर्य समाज की अन्तरंग में विषय प्रस्तुत करके उसके निश्चय से १२ दिसम्बर १९५१ तक सभा को सूचित करें जिससे सभा की आगामी अन्तरंग में स्थान नियत करने पर विचार किया जा सके।

धर्मपाल विद्यालंकार

मंत्री

आ० प्र० सभा० उत्तरप्रदेश

यज्ञशाला के लिये ५०१ रु० का शुभ दान

आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के उपप्रधान श्रीमान् युवराज कुं० रणञ्जयसिंहजी अमेठी राज ने अपने पूज्य पिता श्रीमान् राजा भगवानबख्शसिंहजी महोदय की राज्याभिषेक हीरक जयन्ती के उपलक्ष में सभा भवन में निर्माण हो रही यज्ञशाला के निमित्त ५०१) रु० प्रदान किये हैं। सभा दानी महोदय की अत्यन्त कृतज्ञ है और उन्हे धन्यवाद देती है।

यज्ञशाला निर्माण कार्य में धन अनुमान से बहुत अधिक लग रहा है। सभा अन्य दानी महोदयों से निवेदन करती है कि इस पुनीत कार्य के लिये आर्थिक सहायता प्रदान करें। जो दानी सज्जन ५०१) अथवा उससे अधिक रुपया प्रदान करेंगे उनके नाम पत्थर पर अङ्कित किये जायेंगे। अतः दानी महोदयों से सभा प्रार्थना करती है कि अपनी सहायता भेजकर उदारता का परिचय देकर कृतार्थ करें।

मदनमोहन सेठ

प्रधान आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश

लाला देशबन्धु गुप्त के दुखद अन्त से मुझे बहुत दुख पहुंचा है। उनकी मृत्यु एक राष्ट्रिय हानि है। संसद ने एक सम्मानित और योग्य संसदीय खो दिया है। —सिक्खा राज्यमन्त्री

आर्यमित्र

लेख रश्मि दितहृत्तमो लसत् काव्यकोकनद आगरप्रदः।
अज्ञता घन विभावरी हरः, "आर्यमित्र" उदियर्ति सन्मुदे ॥

आगरा मार्गशीर्ष शुक्ल १ सम्वत् २००८ वि०, गुरुवार, ता० २९ नवम्बर १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-सम्वत् १९७२९४९०५१

निर्वाचन-साधनों की पवित्रता

स्वतन्त्र भारत में निकट भविष्य में ही आम-निर्वाचन होनेजा रहे हैं। बालिग मताधिकार के रूप में यह निर्वाचन विश्व इतिहास की अभूत पूर्व घटना होगी। वास्तव में भारत ने इतना महत्वपूर्ण निश्चय कर अपनी प्रगतिशीलता का परिचय दिया है। जहां यह महत्वपूर्ण पग है, वहां इस कार्य में अनेकों कठिनाइयां भी हैं, जिनकी गुरुता और गम्भीरता से कोई इन्कार नहीं कर सकता। १७५०००००० मतदाताओं में से कितने मत-दाता शिक्षित और सजग होंगे यह किसी से छिपा नहीं है। इतनी बड़ी विशाल संख्या में अशिक्षित मतदाताओं के द्वारा जो निर्वाचन होगा उसमें मत-दाताओं के पथ-भ्रष्ट होने की बहुत बड़ी सम्भावना है। मत-दाता को प्रत्येक पार्टी अपने अपने सिद्धान्तों से प्रभावित करेगी। ऐसा करने का उन्हें अधिकार भी है, परन्तु हमें आशंका है कि विविध पार्टियों का धुआंधार प्रचार कहीं राष्ट्र के शान्त वातावरण को अशान्त और कलह पूर्ण न बना दे। प्रधान मन्त्री माननीय पं० नेहरू ने निर्वाचन-भाषण देते हुए इस आशंका की ओर सारे देश का ध्यान आकृष्ट किया है। प्रधान मन्त्री की यह आशंका स्वभाविक है। इस भयावह परिस्थिति से बचने और सामना करने के लिये प्रत्येक संघर्षशील पार्टी के नेता और कार्यकर्ताओं को निर्वाचन-साधनों की पवित्रता का ध्यान रखना होगा। यह निश्चित है कि निर्वाचन क्षेत्र में उतरने वाले सभी व्यक्ति और पार्टियां राष्ट्र हित की ही दुहाई दे रही हैं इस लिये उन्हें अपने लक्ष्य और आदर्शों की सिद्धि के लियेभी राष्ट्र का अहित न करने वाले साधनों का ही प्रयोग करना चाहिये। धन-वैभव और धांधली से अपने निर्वाचन को सफल बनाने का जो लोग आज स्वप्न देख रहे हैं, उन्हें समझना चाहिये कि उनका यह विचार देश के गौरव और प्रतिष्ठा के अनुरूप नहीं है। हमारे आम निर्वाचनों के महत्व से प्रभावित अनेकों विदेशी इन निर्वाचनों को देखने के लिये उत्सुक हैं। क्या हम उनके सामने अपने आचरण से अपने गौरव और मर्यादा की रक्षा न करेंगे। साध्य के साथ साधन की पवित्रता हमारी सांस्कृतिक थाती है। हमें प्रत्येक मूल्य पर उसकी रक्षा करनी होगी। साधनों की पवित्रता रखते हुए यदि कोई पार्टी या व्यक्ति हारता है, तो वह भी इस गौरव की रक्षा में सहायक ही होगा। प्रत्येक दशा में हमें निर्वाचन साधनों की पवित्रता सुरक्षित रखनी पड़ेगी। प्रधान मन्त्री महोदय ने राज्य की ओर से सम्पूर्ण निर्वाचन प्रतिद्वन्द्वियों को समान सुविधाएँ प्रदान करने की घोषणा कर एक नया और आदर्श कार्य किया है। इस प्रकार सत्ता-पार्टी को किसी अनुचित लाभ से मुक्त रखने का दायित्व उन्होंने अपने ऊपर ले लिया है। इसी प्रकार यदि अन्य संस्थाएँ भी इस महान् दायित्व को निभा सकीं तो देश का गौरव बढ़ेगा और देश अनेकों भयपूर्ण आशंकाओं से बच उन्नति की ओर नया पग बढ़ा सकेगा। आवश्यकता दृढ़ता और निष्ठा से साध्य के साथ साधन को भी पवित्र रखने की है।

परिव्राजकजी की विचार धारा

सुप्रसिद्ध श्री स्वामी सत्यदेव परिव्राजक का एक विचारपूर्ण लेख इसी अङ्क में अन्यत्र पाठक पढ़ेंगे। इस लेख में श्री स्वामीजी ने अपने दृष्टिकोण से एक नवीन विचारधारा आर्यविद्वानों और आर्य जनता के सामने रक्खी है। स्वामीजी का विचार है कि आर्यसमाज को अब से बहुत पूर्व सामुदायिक रूप से राजनीति में भाग लेना चाहिये था। तब नहीं तो अब आर्यसमाज राजनीति में सम्मिलित हो सकता है। हम समझते हैं इस विषय पर श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी श्री लाला लाजपतरायजी आदि स्वर्गीय आर्य नेता बहुत कुछ विचार कर चुके हैं, अब भी आर्यविचारकों ने काफी सोचा-विचारा है। सबका यही मत है कि यदि सामुदायिक रूप से आर्यसमाज ने राजनीति में प्रवेश किया तो वह हिन्दू महासभा, राष्ट्रिय स्वयंसेवक संघ की तरह एक संकीर्ण और साम्प्रदायिक संस्था बन जायगा। गत मेरठ आर्य महासम्मेलन के अवसर पर भी इस विषय पर लगातार दो दिन के पर्याप्त वाद-विवाद के बाद यही निश्चय हुआ कि आर्यसमाज को सामूहिक रूप से राजनीति में न पड़ना चाहिये। ऐसी दशा में इस समस्या के सम्बन्ध में आर्यसमाज का मत स्पष्ट है। हाँ, आर्यसमाज ने व्यक्तिगत रूप से राजनीति में भाग लेने की जो स्वतन्त्रता प्रत्येक सदस्य को दी हुई है, उसके अनुसार जो आर्यबन्धु राजनीति में सक्रिय भाग लेना चाहें वे आर्यसिद्धान्तों की निकटतम समर्थक भारतीय लोक संघ आदि संस्थाओं अथवा जिनमें चाहें सम्मिलित होकर जनता की सच्ची सेवा कर सकते हैं।

स्वामीजी ने अपने लेख में आर्यसमाज मन्दिरों की पवित्रता के सम्बन्ध में जो बातें लिखी हैं, वे वास्तव में विचारणीय हैं। आर्यसमाज की व्यापकता और महत्ता के लिये उसका नियन्त्रण और नेतृत्व शीघ्र ही पूरा समय देकर काम करने वालों के हाथ में पहुँच जाना चाहिये। जहाँ तक संन्यासियों के हाथ में देने का प्रश्न है वहाँ तक ठीक है परन्तु हमारे पास इतने उच्च कोटि के सन्यासी कितने हैं। हम तो त्याग और कर्मण्यता के साथ आर्यसमाज की सेवा में सलग्न सच्चे गृहस्थ को भी सन्यासी समझते हैं। आर्यसमाज के इतिहास में अनेकों गृहस्थों ने महत्वपूर्ण योग दिया और दे रहे हैं। हाँ, आवश्यकता इस बात की है कि कर्म न करने और व्यर्थ ही आर्यसमाज पर अधिकार रखने वाले व्यक्तियों से आर्यसमाज को मुक्त किया जाय। इसके लिये यदि हमें विधान में भी संशोधन करना पड़े तो उसके लिये हमें सहमत और तत्पर रहना चाहिये।

स्वर्गीय श्री देशबन्धु गुप्त

आर्यसमाज ने राष्ट्रिय राजनीति में सक्रिय भाग लेने वाले जिन व्यक्तियों का निर्माण किया उनमें भी देशबन्धुजी का नाम सदा स्मरणीय रहेगा। एक आदर्श और कर्मठ कार्य कर्ता के रूप में वे सच्चे सार्वजनिक व्यक्ति थे। २१ नवम्बर को कलकत्ता में वायुयान दुर्घटना से उनके निधन का समाचार पढ़कर सारा समाज दुखी और शोक मग्न है। स्व० देशबन्धुजी श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी के अनुयायी और विश्वस्त कार्यकर्त्ता थे। उनका सार्वजनिक जीवन स्वामीजी के शुद्धि-आन्दोलन के साथ विकसित हुआ। उन्होंने स्वामीजी के सहयोग से इस आन्दोलन को सफल बनाने के लिये दैनिक 'तेज' का प्रकाशन किया जिससे आन्दोलन का रूप बहुत व्यापक हो गया। गुप्तजी ने स्वातन्त्र्य संग्राम में भी उत्साह से भाग लिया और अनेकों बार कारावास की यातनाएँ सहीं। दिल्ली के सार्वजनिक जीवन की तो गुप्तजी के बिना कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। दिल्ली म्युनिसिपल कमेटी और दिल्ली की ओर से भारतीय संसद में आपने दिल्ली की जनता का सदैव सत्यता और निर्भीकता के साथ प्रतिनिधित्व किया, स्वतन्त्र भारत के आम निर्वाचनों के बाद दिल्ली में जिस शासन-सभा का निर्माण होगा वह आपके ही परिश्रम का परिणाम है। एक स्वतन्त्र और आदर्श पत्रकार के नाते गुप्तजी की सेवाएँ सदैव सम्माननीय रहेंगी। देशबन्धुजी ने भारतीय संसद में प्रेस बिल का विरोध बड़ी नम्रता से किया और प्रेस की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये उन्हें अपने पूज्य नेताओं तक का विरोध करना पड़ा यह उनके विचार स्वातन्त्र्य का पूर्ण परिचायक है। गुप्तजी अखिल

भारतीय पत्रकार-सम्मेलन के प्रधान की हैसियत से कलकत्ता गये हुए थे परन्तु हमारा और देश का दुर्भाग्य कि वे इस संसार से सदा के लिये विदा हो गये।

श्री देशबन्धु गुप्त अपने राजनैतिक जीवन में अत्यधिक व्यस्त रहते हुए भी आर्यसमाज को कभी नहीं भूलते थे। आर्यसमाज के प्रत्येक प्रमुख आन्दोलन और नीति-निर्धारण कार्यों में उनका महत्व पूर्ण योग होता था। विगत आर्य महासम्मेलन मेरठ में भी आर्यसमाज और राजनीति सम्बन्धी प्रस्ताव पर आपने गम्भीर और उत्तर दायित्व पूर्ण वक्तव्य देते हुए आर्य जनता को वस्तुस्थिति से अवगत कराया, उस समय किसी को स्वप्न में भी यह भय न था कि विधाता हमारे बीच से गुप्तजी को इतनी जल्दी उठा लेगा। आर्यसमाज, देश, पत्रकार जगत् और दिल्ली सभी का दुर्भाग्य है कि सबकी आशाओं का अवलम्ब अब उनके बीच नहीं रहा। श्रीदेशबन्धु जब तक जिये एक कर्मठ और निर्भीक व्यक्ति की भाँति देश के लिये जिये। इस शोक मय अवसर पर सारा देश दुखी है प्रभु उनकी आत्मा को सद्गति दे और हम सबको बल और शक्ति दे कि हम उनके बताये हुए मार्ग पर चल सकें यही हमारी उनके प्रति सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी।

मंच की पवित्रता

प्रत्येक सभा, समाज के अपने आदर्श और उद्देश्य हुआ करते है और उसकी सारी शक्तियों उन्हीं की पूर्ति में सलग्न रहती हैं। आर्यसमाज क स्थापना भी विशेष आदर्शों उद्देश्यो की सिद्धि के लिये हुई है। प्राणि मात्र के उपकार की भावना के मौलिक सिद्धान्तों के प्रचारार्थ ही यह समाज बनाया गया है। राष्ट्रिय, सामाजिक साम्प्रदायिक दीवारें आर्यसमाज के आदर्शों को आवृत नहीं कर सकतीं, यह हमारे आचार्य की स्थापना है। अपने प्रारम्भिक युग में हमने उसका पालन किया पर आज हमारा मच विविध विचार धाराओ के प्रकाशन का विचित्र साधन बन गया है। हमें व्यक्तिगत आलोचनाओं से ऊपर उठकर सैद्धान्तिक विचार-विमर्श का आदश उपस्थित करना चाहिये था पर आज हमारे मच से होने वाले भाषणों को सुन कर साधारण जनता थोड़ी देर के लिये भले ही प्रसन्न हो जाय पर विचार शील व्यक्ति असमञ्जस में पड़ जाते हैं कि किस भाषणकर्ता की बात को सत्य समझें। इस असमञ्जस भावना से आर्यसमाज के प्रति श्रद्धा कम होती जा रही है। आर्यसमाज के नेताओं, वक्ताओं तथा लेखकों को आर्यसमाज के महान् आदर्श को सामने रखकर कार्य करना चाहिये। श्री प० गगा प्रसद उपाध्याय एम० ए० ने गतांक में 'हमारा मच' लेख में और सार्वदेशिक सभा के मन्त्री श्री ज्ञानचन्दजी ने अपनी विज्ञप्ति में इस सम्बन्ध में गम्भीर विचार उपस्थित किये हैं, उन पर मनन किया जाना चाहिये मच की पवित्रता ही संस्था के गौरव की रक्षा कर सकती है। यदि हमारे मच की वर्तमान अवस्था में शीघ्र सुधार न हुआ तो बहुत हानि होगी। आशा है, आर्यसमाज के हितैषी इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करेंगे।

संस्कृत शिक्षा का प्रसार

भारतीय जीवन और भारतीयता की सांस्कृतिक थाती की रक्षाके लिये यह अत्यावश्यक है कि भारत में संस्कृत शिक्षा का पुनः व्यापक प्रसार हो। दरभंगा में संस्कृत अनुसन्धान प्रतिष्ठान का उद्घाटन करते हुए राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने संस्कृत की महत्ता के सम्बन्ध मे जो विचार व्यक्त किये हैं वे हम सबके लिये मनन योग्य हैं। उन्होंने संस्कृत के जिस गौरव और महत्व का प्रतिपादन किया है, उसको ध्यान मे रख प्रत्येक भारतीयता प्रेमी को संस्कृत के पठन-पाठन की ओर अविलम्ब ध्यान देना चाहिये। राज्य को शिक्षा में संस्कृत को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान कर शिक्षा का भारतीय करण करना चाहिये। राज्य के साथ-साथ जनता का भी इस दिशा में बहुत बड़ा कर्तव्य है कि वह अपनी रुचि संस्कृत के प्रति प्रकट करे। हमारा धार्मिक जीवन संस्कृत के बिना अपूर्ण है, परन्तु वर्तमान में वहाँ भी हमने संस्कृत की जो दुर्दशा कर रक्खी है, उसे देख कर किस संस्कृताभिमानी का सिर लज्जा से न झुक जायगा। संस्कृत के उभय पक्षों समुद्धार द्वारा ही हम इस गौरवशाली वाङ्मय की रक्षा कर सकेंगे।

———

अध्यात्म धारा

ज्ञान योग

श्री प्रो० एम० एल० शाण्डिल्य

जीवन की उत्कर्षता के लिये विद्वानों ने कर्मयोग, भक्तियोग और ज्ञानयोग तीन पृथक् पृथक् मार्गों का निरूपण किया है। ये तीनों मार्ग पूर्ण रूप से एक दूसरे में ओत प्रोत हैं। बिना दोनों मार्गों की सहायता के केवल एक मार्ग ही से चलकर उच्चकोटि का जीवन बनना सर्वथा असम्भव है। कर्म भक्ति ज्ञान के त्रिवेणी संगम में ही स्नान करने से मुक्ति मिल सकता है।

आर्यसमाज को हम विशेषतः ज्ञान मार्ग पर चलने वाला ही मानते हैं हालांकि कर्म और भक्ति भी उसमें साथ ही साथ हैं। आर्यसमाज का कर्म ज्ञानमय कर्म है और भक्ति ज्ञानमय भक्ति है। वेदों में इन तीनों की उपयोगिता स्पष्ट है। कर्म-भक्ति युक्त जीवन के सोने को पवित्र करने में ज्ञान-योग सुहागे के समान है। जो भक्ति या कर्म बिना ज्ञान के किये जाते हैं उनमें निकृष्टता, अपवित्रता अधमता, निलज्जता, पशुता और पाखण्डता आने की सदा सम्भावना बनी रहती है। महर्षि दयानन्द ने ज्ञान का दीपक जलाकर कर्म और भक्ति को प्रकाशित कर जीवन के अन्धकार को दूर करने का हमें सच्चा पथ दिखाया है।

गीता में जिस उत्तम, मध्यम, निकृष्ट ज्ञान की व्याख्या सात्विकी, राजसी और तामसी रूपों में की गई है। उसके अनुसार हमें विचारना है कि हम ज्ञान की सबसे नीची सीढ़ी पर ही बैठे हैं अथवा दूसरी और तीसरी सीढ़ी पर पहुँचने का प्रयत्न कर रहे हैं या नहीं। ज्ञान की सर्वोच्च चोटी पर बिना पहुचे मोक्ष मिलना असम्भव है और जन्म-मरण के चक्कर में पड़ा रहना ही पड़ेगा। सच्चा ज्ञानी ही राष्ट्र और संसार का उपकार करने में समर्थ हो सकता है। साधारणतया एक ज्ञानी में इन बातों का होना आवश्यक है।

(१) मानी न होना, (२) दम्भ न करना, (३) अहिंसा, (४) क्षमा, (५) सरलता, (६) गुरु सेवा, (७) शुद्धता, (८) स्थिरता, (९) आत्म सयम, (१०) इन्द्रियों के विषयों में विरक्ति, (११) अहंकार न करना, (१२) जन्म-मृत्यु-जरा व्याधि-दुख और दोषों का विचार करना, (१३) अनासक्ति, (१४) पुत्र-स्त्री-गृह आदि में लिप्त न होना, (१५) प्रिय और अप्रिय के विषय में समभाव धारण करना, (१६) ईश्वर के प्रति अनन्य भाव से अटल भक्ति, (१७) एकांत देश का सेवन, (१८) सस्ती लोकप्रियता से अरुचि, (१९) नित्य अध्यात्म ज्ञान प्राप्त करना, (२०) ज्ञान तत्वों का मनन करना। किस परिमाण में अपने अन्दर ये लक्षण हैं इसका परीक्षण करने से अपनी उन्नति कितनी हुई, इसका निश्चय हो सकता है। इस रीति से आत्म परीक्षण करने से बहुत लाभ हो सकता है।

जीवन के ज्ञान यज्ञ में यज्ञ करने वाला—"आत्मा" है जो शरीर रूपी नगर में है। कुंड—मनुष्य का "हृदय" है। घृत—इन्द्रियजन्य इच्छायें और वासनायें हैं। यज्ञबलि—क्रोध की दी जाती है। अग्नि-समिधा—शुभ संकल्पी विचारधारायें है। भक्ति कर्म ज्ञान से प्रेरित। अवधि—शरीरान्त होने तक जीवन भर यज्ञ करने का समय है। प्रसाद—शरीर को पालन-पोषण के लिये जो कुछ मिलता है। चरणामृत—जल इत्यादि यज्ञ का बचा हुआ, सोमरस (अमृत) है। मृत्यु—मानो अमृत कुंड में पवित्र स्नान है। लाभ—मोक्ष मुक्ति और संसारभर का उपकार। यही ज्ञान योग का सच्चा रहस्य है।

महाकवि शंकरजी ने ज्ञान की प्रशंसा में लिखा है:—

नाना कारण दुःख के, सुख के हेतु अनेक।
साधन है कैवल्य का, केवल एक विवेक॥

———

जीवन-ज्योति

स्व० श्री सेठ शूरजीवल्लभदास



दानवीर, धर्मवीर, कर्मण्य देशभक्ति परायण आर्य प्रवर श्री सेठ शूरजी वल्लभदासजी का जीवन आदर्श जीवन था, साधारण से महान् और आदर्श बनकर उन्होंने जो आदर्श उपस्थित किया वह विद्यमान और भावी पीढियों के लिये चिरकाल तक प्रेरणा का स्रोत बना रहेगा।

कच्छ निवासी श्री सेठ वल्लभदासजी के घर सम्वत् १९४४ श्रावण में पूज्या माता वीरमती ने सुपारी नामक ग्राम में सेठ शूरजी को जन्म दिया। ग्राम की प्रारम्भिक शिक्षा के बाद सम्वत् १९५६ में वे बम्बई चले गये। और गोकुलदास तेजपाल हाईस्कूल में अध्ययन करते रहे। यद्यपि उनका अधिक पढ़ने का विचार था परन्तु कौटुम्बिक तथा आर्थिक परिस्थितियों से बाध्य होकर हाई स्कूल से पहले ही उन्हें विद्यार्थी जीवन त्यागना पड़ा। किशोरावस्था में ही कच्छ प्रान्त के तेरा ग्राम के सुप्रसिद्ध व्यापारी श्री करसनदास पुरुषोत्तम सरवाला की पुत्री श्री जयालक्ष्मी के साथ उनका विवाह सम्पन्न हो गया।

शूरजी के चचेरे भाई श्री माणजी भाई ने शूरजी को जर्मनी की 'लियोपोल्ड केसला' कम्पनी की बम्बई की प्रयोगशाला में रंग का काम सिखलवाया। काम का अभ्यास होते ही शूरजी ने अपना स्वतन्त्र व्यवसाय आरम्भ कर दिया। थोड़े समय बाद श्री माणजी की मृत्यूपरान्त सारा भार आपके ही ऊपर आ पड़ा। १९१४ ई० में प्रथम महा समर में जब जर्मनी का रंग आना बन्द हुआ आपका व्यापार अधिक चमक उठा। १९२१ और २४ में व्यापारी कार्यों के लिये आपने योरप और विशेषकर जर्मनी की यात्राएँ भी कीं।

शूरजी के प्रपितामह श्रीबालजी ऋषि दयानन्द के बड़े भक्त थे। अपनी वंश परम्परा को शूरजी ने बड़ी निष्ठा और आदर के साथ निभाया। बम्बई आर्य समाज के वे आजीवन ट्रस्टी रहे और दस हजार दान दिया इसके अतिरिक्त आर्य समाज के गुरुकुलों और अन्य सामाजिक संस्थाओं से आपका घनिष्ट सम्बन्ध रहा। श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्दजी की आप पर बड़ी कृपा थी, जब कभी वे बम्बई पधारते शूरजी के घर ही ठहरते। आर्य समाज की आर्थिक सहायता करने में वे कभी पीछे नहीं हटे, स्वयं ही हजारों रुपया का दान आर्य संस्थाओं को भेजते रहे। गतवर्ष १९५० में आपने सपरिवार गुरुकुलों की यात्रा की और हजारों रुपया गुरुकुलों को को दान दिया। बम्बई में सार्वजनिक सेवा के लिये आपने धर्मार्थ औषधालय और कालबादेवी औषध भण्डार खोले,

ऋषि के 'सत्यार्थप्रकाश और 'भाष्य भूमिका'आदि ग्रन्थोंका आप सदैव स्वाध्याय किया करते थे। स्वामीजी का जीवन ही सेठजी का प्रेरणा स्रोत था और वे ऋषि से इतने अधिक प्रभावित थे कि अपने बच्चों को आर्ष ग्रन्थों की शिक्षा देने के लिये उन्होंने आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान् प० बालकृष्ण शर्मा को घर रखा और बाद में अन्य विद्वानों द्वारा भी बच्चों को वेद वेदांग की शिक्षा दिलाते रहे। अपने बालकों की भाँति अपनी पुत्रियों के भी यज्ञोपवीत आदि संस्कार कराये और संस्कृत की भी शिक्षा दिलाई। आपकी बड़ी पुत्री श्री लक्ष्मीबाई संस्कृत तथा वैदिक शास्त्रों की विदुषी हैं और धारा प्रवाह संस्कृत में भाषण देती हैं।

सेठजी ने वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार के लिये साहित्य निर्माण में सक्रिय सहयोग दिया। वैदिक सम्पत्ति" 'अक्षर विज्ञान" "मीमांसा दर्शन गुजराती अनुवाद" आदि ग्रन्थों के निर्माण और प्रकाशन में सहयोग द्वारा आपने वैदिक साहित्य की जो अभिवृद्धि की है इसके लिये सम्पूर्ण वैदिक समाज आपका ऋणी रहेगा।

सन् १९२१ में आप गांधीजी के अनुयायी बने और तभी से जीवन पर्यन्त खादी धारण करते रहे। १९३० में जब गांधीजी ने सत्याग्रह आन्दोलन आरम्भ किया तब शूरजी ने उसमें मुख्य भाग लिया। १९३० और १९३२ की पर्दे पीछे की राजनैतिक लड़ाई में सेठजी ने अपनी असाधारण बुद्धि और कार्य पटुता का परिचय दिया। और इस प्रकार बम्बई की तात्कालीन राजनीति बहुत कुछ आप में केन्द्रित रही। आपने आन्दोलन के दिनों 'विदेशी बहिष्कार समिति' की स्थापना की और कारावास की यातनाएँ सहीं, इसी प्रकार स्वदेशी वस्तुओं के प्रचारार्थ १९३३ में झवेरी बाजार के एक भव्य भवन में अपना कार्य बड़ी सजधज के साथ प्रारम्भ कर स्वदेशी बाजार स्थापित किया। इसी भवन में खादी भण्डार भी स्थापित किया जिसका उद्घाटन स्वर्गीय सरदार वल्लभभाई पटेल के करकमलों द्वारा सम्पन्न हुआ था। इस विकट समय में गुप्त रूप से धन और परामर्श आदि देकर सेठजी निरन्तर देश सेवा में संलग्न रहे, बम्बई कांग्रेस के कोषाध्यक्ष भी आप कई वर्ष तक रहे।

शूरजी का जीवन प्रचार की अपेक्षा क्रियात्मक जीवन का समुज्ज्वल उदाहरण है। वे गांधीजी के रचनात्मक कार्यों में पूर्ण विश्वास रखते थे। खादी पहनने के अलावा ग्रामोद्योग संघ के भी आप आजीवन सदस्य रहे, वर्धा के गो-सेवा संघ के भी आप सदस्य थे और स्वयं दस-पन्द्रह गौओं को घर पर रखते थे।

आप भारत के प्राचीन गौरव की वृद्धि के पुनः स्वप्न लिया करते थे। भारत की प्राचीन जहाज रानी की भाँति इस युग में भी भारत जहाज रानी में अग्रणी बन सके इस भावना से सन् १९३७ में शूरजी ने "न्यू धोलेरा स्टीम शिप्स लिमिटेड" की स्थापना की। १५ अगस्त १९४७ के बाद स्वतन्त्र भारत का राष्ट्रिय ध्वज सर्वप्रथम आपकी कम्पनी के ही जहाजों पर फहराया गया था।

भारतीय आयुर्वेद में भी आपकी बहुत श्रद्धा थी और आपने चरक, सुश्रुत आदि का अभ्यास किया था। आयुर्वेदाचार्य यादवजी त्रिकमजी आपके गृह वैद्य हैं। दक्षिण के प्रसिद्ध वैद्य एवं त्यागी स्व० शंकर शास्त्री थिट्टे आपके घर ही रहते और धर्मार्थ औषधालय चलाते थे।

शिक्षा से आपको प्रारम्भ से ही प्रेम रहा। १९१९ में कच्छ माण्डवी में प्रथम लोहाणा कान्फ्रेन्स के आप कोषाध्यक्ष चुने गये। कच्छ में शिक्षा के अभाव को देख उसी कान्फ्रेन्स के अवसर पर ५१ हजार रुपया दान कर आपने "कच्छी लोहाणा शिक्षा समिति" की स्थापना की। इस प्रकार कच्छ में वर्तमान शिक्षा सम्बन्धी प्रगति का सारा श्रेय आपको ही प्राप्त है।

देश के नवयुवकों के शारीरिक विकास की भी आपको चिन्ता रहती थी। बड़ौदा में 'जुम्मादादा व्यायाम मन्दिर" का उद्घाटन आपने ही किया था। उसी समय आपने व्यायामशाला की उन्नति के लिये प्रो० माणिकरावजी को ५ हजार का दान भी दिया था।

आप १९२६ में कच्छी प्रजा परिषद् के अध्यक्ष बनाये गये। कच्छी प्रजा संघटन समिति और कच्छ प्रजा मण्डल पत्रिका द्वारा आप जनता का पथ-प्रदर्शन करते रहे। १९३१में 'कच्छ खेडुत प्रजा संघटन समिति' के अध्यक्ष के रूप से आपने ग्राम-ग्राम घूम कर प्रजा की सेवा की। सम्वत् १९७५ में दुर्भिक्ष के दिनों आपने कम मूल्य पर अन्न की दूकानें खोल कर प्रजा को संकट से बचाया। इसी समय अपने पूर्वजों के तालाब को खुदवाकर मजदूरों की

सहायता की, दुर्भिक्ष-सहायतार्थ बाहर से आने वाले अन्न पर से चुंगी माफ करवाने का श्रेय आपको ही प्राप्त हुआ। भूकम्प, जलप्रलय, दुष्काल आदि के समय सेठजी बिना किसी प्रान्तीय भाव के मानवता के नाते सहायता के लिये तैयार रहते पिछले दिनों 'बंगाल रिलीफ फंड' और 'आसाम भूकम्प पीड़ित सहायता निधि' आदि में आपने मुक्त हस्त से सहायता प्रदान की जो कभी भुलायी नहीं जा सकती।

इतना धन वैभव और समाज सेवा का यश होते हुए भी शूरजी आत्म प्रशंसा से दूर रहना पसन्द करते थे। मित्रों, हितचिन्तकों के अनुरोध पर भी वे पद लेना अधिक पसन्द न करते थे और मूक भाव से जनता की सेवा करना ही उन्हें अधिक पसन्द था। भारतीय भावना का उन्हें सदा ध्यान रहता था। विदेशों की यात्रा में भी आप भारतीय वेश-भूषा पहनते और भारतीय भोजन करते थे। जीवन के अन्तिम २५ वर्षों में आप गो-दुग्ध और फलाहार का ही सेवन करते रहे। इस प्रकार विदेश और देश में आपने सच्चे आर्यजीवन का आदर्श उदाहरण उपस्थित किया।

गत अप्रैल १९५१ में सेठजी को कैंसर का भयंकर रोग हो गया। चिकित्सा के लिये आप अमेरिका गये। चिकित्सा के दिनों में आपने अमेरिका से तार दिया कि योग्य विद्वानों को बुला यज्ञ कराओ, आदेशानुसार यज्ञ कराया गया और उधर आपरेशन सफल हो गया। आपने अमेरिका में ही पारिवारिकों से वानप्रस्थ अथवा सन्यास लेने का विचार प्रकट कर दिया था। यद्यपि पूर्ण स्वस्थ होने तक के लिये आपने इस विचार को स्थगित कर दिया था परन्तु फिर भी आपने बम्बई से बाहर देवलाली में ही रहना प्रारम्भ कर दिया। आवश्यक कार्य होता तभी घर आते और लौट जाते। शूरजी के स्वास्थ्य में पहले तो कुछ सुधार हुआ पर बाद में अधिक अस्वस्थ हो गये और बम्बई आकर चिकित्सा कराते रहे। योग्य चिकित्सकों के संरक्षण में भी उन्हें कुछ लाभ न हो सका और १४ नवम्बर की प्रातः कराल काल ने इस आदर्श व्यक्ति को हम से छीन लिया। मृत्यु से कुछ मिनट पूर्व अपने सम्बन्धियों से आपने 'ईश्वर स्तुति' करने को कहा, स्वयं भी बिस्तर पर पड़े पड़े हाथ से ताल देते रहे और इस प्रकार प्रभु की इच्छा में लीन हो गये।

स्वर्गीय सेठजी ने अपनी मृत्यु से पूर्व ढाई लाख रुपये का दान देकर एक ट्रस्ट की स्थापना की है जिसका उद्देश्य महर्षि दयानन्द के आदर्शों का प्रचार होगा। यह है ऋषि भक्ति का सच्चा स्वरूप।

स्वर्गीय सेठजी अपने पीछे तीन पुत्र, पांच पुत्रियों तथा धर्म पत्नी को छोड़ गये हैं। आशा है योग्य पिता द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चल कर वे अपने पिता की गौरव वृद्धि करेंगे परमात्मा इन्हें शक्ति दे।

सम्पूर्ण आर्यजगत् सेठजी के निधन से दुःखी है और अपने दानवीर धर्मवीर पुरुष की आत्मा की सद्गति के लिये प्रार्थना करता और शोक सतप्त परिवार के साथ शोक समवेदना अनुभव करता है। आर्यसमाज के इतिहास में स्व० सेठ शूरजी वल्लभदास का नाम सदैव गौरव और आदर के साथ स्मरण किया जाता रहेगा।

सुझाव और सम्मतियाँ

हरिजनोद्धार की उपयोगी पद्धति

मेरा अनुभव है कि हरिजनों की उन्नति का काम बड़ा कठिन है। मैं पिछले पन्द्रह वर्षों से हरिजनों में कार्य करता आ रहा हूँ। करीब अठारह महीने हुए, मुझे एक व्यावहारिक योजना सूझी। उसपर अमल करने की कोशिश की और परिणाम बहुत लाभकारी आये।

मैंने कुछ उत्साही हरिजनों को इकट्ठा किया और उन हरिजनों को मैंने इस बात पर राजी किया कि वे अपनी बस्ती का और उसके आस पास का कूड़ा-कचरा इकट्ठा करें और उसका एक ढेर लगायें। शुरू में उन्होंने इस काम के प्रति ज्यादा रुचि नहीं दिखाई। लेकिन उनकी यह उदासीनता शीघ्र ही दूर हो गई और वे काम में दिलचस्पी लेने लगे। छह महीने के बाद जब ढेर काफी बड़ा हो गया। तब उसको नीलाम किया गया और उससे २५० रुपये मिले। उन लोगों को इससे बड़ा आश्चर्य हुआ, और बहुत उत्साह भी मिला। परिणाम यह हुआ कि दूसरे नीलाम में उन्हें पहले की अपेक्षा ज्यादा पैसा मिला। इस समय उनके पास पांचसौ रुपये की निधि है, और वे अगले नीलाम की राह उत्सुकता पूर्वक देख रहे हैं।

इस रकम से उन्होंने हरिजनों के लाभ के लिये एक निधि की स्थापना की है, और अब वे दूसरी जगहों से कर्ज लेने के बजाय उसमें से ही कर्ज लेते हैं। दूसरी जगहों से कर्ज लेने पर बहुत ज्यादा ब्याज देना पड़ता था। यहाँ उन्हें बहुत मामूली ब्याज देना पड़ता है। इस प्रबन्ध से उन्हें बहुत राहत मिली है।

—एम० ए० बाल सुब्रह्मण्यम,
ग्राम मदुक्करी, दक्षिण भारत

आर्य वीरों का आदर्श

देश की सच्ची सेवा नवयुवकों का चरित्र निर्माण करना ही है। इस महान् कार्य के लिये ही आर्यवीर दल की स्थापना हुई है। नवयुवकों में जीवनी शक्ति का संचार करने और उनका उज्ज्वल चरित्र निर्माण करने में दल ने बहुत बड़ा कार्य किया है। देश के तरुण रक्त का उचित पथ-प्रदर्शन करने के लिये आज इस संस्था का अपना विशेष महत्व है। हमारे दल के सैनिकों में उत्साह परिश्रम और अनुशासन जैसे महान् गुणों की प्रधानता होनी चाहिये। हम प्रतिदिन सूर्य में इन गुणों का दर्शन करते हैं। सूर्य उदयकाल में बड़े उत्साह के साथ आगे बढ़ता दीखता है, प्रतिदिन उसका उत्साह एक सा बना रहता है उसका उत्साह कभी भी समाप्त नहीं होता, सूर्य जैसा उत्साह हमारे वीरों में भी आना चाहिये, जब कभी कोई कार्य करना हो सोत्साह करने के लिये उन्हें आगे आना चाहिये। सूर्य उत्साह के साथ परिश्रम का आदर्श भी उपस्थित करता है वह पृथ्वी आदि पर पड़े मल पदार्थों को परिवर्तित कर वायु मण्डल को शुद्ध बनाता और वर्षा के लिये जल संचय कर कठोर परिश्रम करता रहता है। इसी प्रकार आर्य वीरों को उत्साह के साथ समाज के लिये परिश्रम कर समाज को आदर्श बनाना चाहिये। सूर्य में उत्साह और परिश्रम के साथ साथ अनुशासन का महान् गुण भी है। सूर्य ईश्वर के अनुशासन में रह कर युगयुगान्तर से प्राणियों की सेवा करता रहा है। आर्यवीरों को भी अपने बड़ों के अनुशासन में रह कर देश और समाज की सेवा करनी चाहिये। आदर्शजीवन की यही सीढ़ी है। हमारा दल इसी महान् कार्य में सलग्न है।

—बाल दिवाकर हंस

सूर्यादि लोकों में मनुष्य हैं?

स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम समुल्लास में लिखा है कि सूर्यादि लोकों में मनुष्यादि प्रजा निवास करती है। आकृति भेद सम्भव है ऐसा हो, जैसा चीन योरुप और अमेरिका आदि के निवासियों में होता है।

विज्ञान के इस महत्वपूर्ण युग में, जब कि सूर्य अतीव तप्तायमान पदार्थ माना गया है जिसका अनुभव हम भी करते हैं तो ऐसे लोक में पंच भूतों (पृथिवी, जल, पावक आकाश और वायु) विरचित यह मानव शरीर किस प्रकार निवास कर सकता है यह एक विचारणीय प्रश्न है। जल वायु एवं स्थान विचार से आकृति भेद सम्भव है किन्तु मानव शरीर के निमित्त इन पंच तत्वों का होना परमावश्यक है ही।

आगे स्वामीजी ने लिखा है कि वेदादि का प्रकाश वहाँ भी है फिर निश्चित सा है कि मनुष्य के विषय में कोई नई परिभाषा नहीं बन ई जा सकती।

विज्ञान वाद के इस युग में जब कि हमारे सारे प्राचीन दृष्टिकोण एवं सिद्धान्त व्यवहारिक एवं सत्य सिद्ध हो रहे हैं इस विषय में भी क्या हमारे आर्य विद्वान वैज्ञानिक दृष्टि कोण को लक्ष्य में रखते हुए इस सत्यता को प्रमाणित करने का प्रयत्न करेंगे?

—खेतूनसिंह, दोहद पंचमहाल

सामयिक समस्याएँ

आर्य समाज का गत्यवरोध

श्री स्वामी सत्यदेवजी परिव्राजक



सन् १९११ में जब मैं अमरीका मे आया था, तब मैंने आर्य समाज के नेताओं से प्रार्थना की थी कि आर्य समाज को राजनीति में भाग लेना चाहिये। आर्यसमाज की शिक्षा की बदौलत ही मुझे राजनीति से अनुराग हुआ। और इसमें मेरी दिलचस्पी बढ़ी। स्वामी दयानन्दजी की जीवनी पढ़कर ही मुझे स्वतन्त्रता से प्रेम हुआ और देश को आजाद करने की भावना मन में जाग्रत हुई। मैं इस बात को भले प्रकार समझता था कि भारतवर्ष की सब से पहली आवश्यकता राजनैतिक स्वतन्त्रता है, और हमें अपनी सारी शक्ति लगाकर विदेशियों को अपने देश से निकाल देना चाहिये।

लेकिन आर्य समाज के नेता राजनीति से बुरी तरह डरते थे। सरकारी नौकरियों में फंसे होने के कारण और विदेशी शासन पर अपने रोजगार की निर्भरता की वजह से वे स्वतन्त्रता पूर्वक अपने धर्म का प्रचार नहीं कर सकते थे। अँग्रेजी शासक आर्य समाज के आन्दोलन को राजद्रोह की दृष्टि से देखता था, इसलिये आर्य समाजो के अधिकारी प्रचलित राजनीति में सीधा भाग लेना अपनी प्यारी संस्था के लिये अहितकर मानते थे। उनकी अपनी रोटी का सवाल भी उन्हें इस खतरे में पड़ने से रोकता था, इस कारण आर्यसमाज सदा देश की इस महत्वपूर्ण हल चल से पृथक् रहा। जिन लोगों ने आर्य समाज की कृपा से देश भक्ति का का अमृत पान किया और जिनके अन्दर गुलामी के प्रति घृणा उत्पन्न हुई, वे सच्चे जोशीले आर्य समाजी अपनी प्यारी संस्था में उपयुक्त क्षेत्र न पाकर कांग्रेस में शामिल हो गये। इस प्रकार वर्षों तक यह क्रम जारी रहा और आर्य समाज बलिदान की भावना से ओत प्रोत अपने इन ईमानदार सेवकों को निरन्तर गँवाता रहा। वे मस्ताने आर्य कर्मवीर वैदिक धर्म की सेवा तथा आर्य संस्कृति के आधार पर स्वराज्य स्थापित करने की अपेक्षा कांग्रेस के आदर्शों की ओर झुकते गये। परिणाम स्वरूप आर्यसमाज की जड़ें खोखली होती गईं और इसके उत्सव मनोरञ्जन की वस्तु बन गये।

जब तक विदेशी शासन देश में रहा, तब तक आर्यसमाजियों को अपनी भयंकर भूल का दुष्परिणाम पूरी तरह से दृष्टि गोचर नहीं हुआ, क्योंकि देश की प्रजा आर्य समाज के द्वारा किये गये सामाजिक सुधारों को कृतज्ञता पूर्वक स्वीकार करती रही और आर्य संस्थाओं की भले प्रकार आर्थिक सहायता करती रही। किन्तु जब देश को राजनैतिक स्वाधीनता मिली और आर्य समाजियों ने यह देखा कि राष्ट्र के शासक उनकी संस्थाओं के प्रति उदासीनता की भावना रखते हैं और मुसलिम शिक्षा संस्थायें खूब आर्थिक सहायता पा रही हैं तो उनके पेट में असह्य कसक उठी और उन्होंने अनुभव किया कि देश के राजनैतिक आन्दोलन में न पड़ने के कारण उन्हें यह भीषण दण्ड मिला है। इतना ही नहीं, उनके बच्चों की शिक्षा गलत ढंग से होने लगी है। केन्द्रीय सरकार में उनका कोई प्रभाव न होने के कारण उनकी आवाज अरण्य रोदन की तरह हो गई है। अतएव सारे आर्य जगत् में अपनी पिछली भूल के कारण बड़ी बेचैनी फैल गई।

अब करना क्या चाहिये? यही सवाल चारों ओर से पूछा जाने लगा। जो आर्य नेता पिछले पचास वर्षों से आर्यसमाज की नीति को अपने ढंग से चला रहे हैं और जिन्होंने इसकी बदौलत अपने प्रभाव को बढ़ाया है, वे अब भी आर्य समाज को पीछे की ओर घसीट रहे हैं। वे जानते हैं कि उनके नेतृत्व को इस राजनैतिक आन्दोलन से बड़ा धक्का पहुंचेगा। इस कारण वे थोथी दलीलें देकर अपनी संस्था को राजनीति में जाने से रोक रहे हैं। कलकत्ते में जब आर्यसम्मेलन हुआ और प्रस्ताव पास किये गये तो वे भी बाद में रद्दी की टोकरी में पड़े रहे। जब मेरठ में में सार्वदेशिक सम्मेलन हुआ तो वहाँ भी पुराने लीडरों ने सामूहिक तौर पर आर्य समाज को प्रचलित राजनीति में पड़ने से रोक दिया, लेकिन आर्य जगत् उनके इस फैसले को मानने के लिये तैयार नहीं। इस कारण आर्य समाज बिना नेता का समुदाय बन गया है।

हमने इस प्रश्न पर बड़ी गम्भीरता से विचार किया है, और हम यह समझते हैं कि आर्य समाज के विधान में क्रान्तिकारी परिवर्तन करने का समय आ गया है। यदि इसने काल की पुकार को न सुना और वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार नया विधान नहीं बनाया तो आर्यसमाज समाप्त हो जायेगा। आर्य समाजों के मन्दिर-मन्दिर कहलाने योग्य नहीं और न इनके कार्यकर्त्ताओं में अपने धर्म के प्रति श्रद्धा मौजूद है। श्रद्धा तो बिलकुल उठ चुकी है और इनके जलसे मेले-से बन गये हैं।

तो करना क्या चाहिये? हमारी तुच्छ सम्मति में आर्य समाज को सामाजिक सुधारों से अलग कर, अध्यात्मवाद की ओर लाना चाहिये। जो चरित्र संघटन, ब्रह्मज्ञान प्रचार तथा अध्यात्मवाद की समस्यायें हैं—वैदिक धर्म का जो मूलाधार है, उसे अब आर्य गृहस्थों के हाथों से हटाकर उसे संन्यासियों के सुपुर्द करना चाहिये। आर्यसमाज के मन्दिर चर्च का रूप धारण कर शान्ति का केन्द्र बन जाने चाहिये। जहाँ सांसारिक दुखों से पीड़ित नागरिक शान्ति लाभ करें और ध्यानावस्थित होकर सच्चे सुख को प्राप्ति करें। सत्य ज्ञान स्थायी वस्तु है। इसी का प्रचार हमारे मन्दिरों में होना चाहिये। सभी गृहस्थ अपने मन्दिरों के प्रति श्रद्धा भाव रखते हुए देश में राजनैतिक दल बनाएं और सारे देश का पथ प्रदर्शन करें। वे अपनी विद्या सभा बनाकर अपनी संस्थाओं को चलायें, किन्तु अपने मन्दिरों को धर्म-प्रचार और आत्म दर्शन के ही केन्द्र रहने दें। जब इस प्रकार आर्य समाज अमरत्व का मार्ग पकड़ लेगा तो देश की प्रजा उसकी ओर आपही आप खिंचेगी। जितने भी आर्यसभासद हैं, उनमें से जो योग्य और विद्वान् हैं तथा जो पचास वर्षों से ऊपर हैं, उन्हें गृहस्थ त्यागकर अपने मन्दिरों का पुजारी बनना चाहिये, जिससे आर्यसमाज चपरासियों के संकीर्ण प्रभाव से निकल जायें उनका विशुद्ध रूप जगत् के सामने आवे।

जब आर्य समाजी लोग धार्मिक, नागरिक, सामूहिक ढंग से अपने राजनैतिक दल बनायेंगे तो आर्य संस्कृति के प्यारे सभी भारतीय नागरिक आर्यसमाज के राजनैतिक दल में शामिल होकर भारत संघ के शासन को अपने हाथों में लेंगे। तभी इस देश का स्वाभाविक विकास होना प्रारम्भ होगा, तभी सब प्रकार की साम्प्रदायिक अड़चने दूर हो सकेंगी और तभी अल्प संख्यकों की समस्या का हल देश के 'बहु'नों को मिल सकेगा। आज जो शासन कठिनाइयाँ हमें दिखाई देती हैं और शिक्षा के जो महान् प्रश्न देश के चिन्ता शील विद्वानों को सता रहे हैं, तथा जो व्यापार सम्बन्धी रुकावटें हमें मालूम होती हैं, वे सब काफूर होती चली जायेंगी। जब हम देश की प्रजा को राजनैतिक मनोवृति देकर अपने विश्वास में लायेंगे, जब हम प्रजा को विश्वास भाजन बनाकर देश भक्ति का अमृतपान करायेंगे और आर्य संस्कृति को उच्च मानकर सबके भले में अपना

संस्था-परिचय

आर्यवीर दल बम्बई

श्री अमीन भ इ म त्री आ० स० फोट बम्बई

बम्बई में आर्यसमाज के कार्य को गवशाल बनाने के लिये उत्साह अ य नवको ने १९३५ ह न फोट आयसमाज क अन्तर्गत आयवीर दल की स्थपना का। बम्बई जेन मह नगरी में थोड हा मनय म अ य र दल ने याग और लोक मेवा क क्षत्र में अ ननगन क मस्तक ऊ चा किय । पिगत साम्प्रद यक उप द्रवों क दिना में आयव र दल क सनिक ने अप ने न वन को सकट में ड न निन नाहस और णू ता का परिचय दिय उनम बम्बई का प्र यक सम्भ्रान्त व्यक्ति भला भा त परिचित है। आयवीर दल के इन्हीं काया म प्रसन्न हो श्र सठ जमन दा त्रिमजा क ठ री ने अपन पिता श्र खिमजा नामजा कोठ रा क स्मृति म १५ हजार रुपय की एक एम्बुलन्स कार तान वर्ष पूव दल को दान म दा है। बम्बई र ज्य क स्वास्थ्य मन्त्र श्र गि ड र न इन एम्बुलन्स कार का उद्घाटन किया था और तब से ५०) मासिक व्यय क अति रिक्त ५ अ नरेरी डाक्टर २ ड्र च इ उने वाल सहयोगियों और १ ड इवर का व्यय भा न स्हन हा उठत है अस्पताल, और सार्वजनिक स्थानों व सभा भ दि में जव कम प्राथमिक सहायता का आवश्यकता होती है तब क एम्बुलैन्स को सब प्रथम बुलाया जाता है इ स प्रकर एम्बुलेन्स प्रणाली द्वारा सम्पन्न सेवा ने आयसमाज क मिशन को इ न तक प्रभावित करने का सफल साधन बन गया है। बम्बई सर कार ने दल क सेवा भावना से प्रसन्न हो एम्बुलन्स को टैक्स से मुक्त कर दिया है, और फ्री टैली फोन कनैक्शन दिया हुआ है दल के महत्व का इससे अधिक क्या प्रमाण दिया जा सकता है।

दल सेवा कार्य ही नहीं शारी रिक और मनोरजन कार्यों में भी पूर्ण रुचि रखता है। अभी पिगत अगस्त मास में दल की ओर स क व्यायामशाला की स्थापना क गयी है। बम्बई नगर में स्थान भाव होते हुए भी दल ने व्यायामशाला स्थापित कर एक बडे साहस का काम किया है। इस व्यायामशाला का उद्घाटन बम्बई क गृह मन्त्री श्री मुरारजी दसाई क कर कमलो द्वारा सम्पन्न हुआ था। दल ने अपना एक बण्ड भी बनाया है जो सामा जक उत्सवों में मधुर सगीत क द्वारा मानसिक आह्लाद उत्पन्न करता है

आर्यवीर दल क सैनिकों क अपार उत्साह को देखकर निश्चय किया गया कि आर्य महासम्मेलन मेरठ में दल क से नक सेवा कार्य क लिये भेजे जाय। इस निश्चय क अनुसार २३ अक्टूबर का मैं और दलपति श्री प्रो० वेंकट िवजा १४ सैनिको क साथ बम्बई से एम्बुलन्स द्वारा रवाना हुए म ग में नासिक, इन्दौर ब्यावरा गुना, ग्वालियर आगरा, हाथरस मण्डू आ द स्थानों में होते हुए हमारा एम्बुलेन्स २६ ता० का रात्रि में मेरठ पहुची।

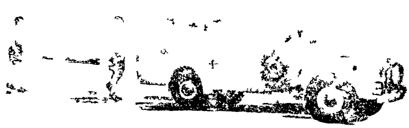
बम्बई से मेरठ तक ८८४ मील की एम्बुलेंस-यात्रा में हम लोगों न स्थान-स्थान पर आय सम्मेलन का सन्देश पहुचाया, जहाँ भी हम लोग पहुँचे वहाँ के आर्य भाइयों ने हमारा बड़ा सम्मान किया। आगरा में श्री प० श्रीराम शर्मा वैदिक, आर्य-मित्र-सम्पादक श्री पं० हरिशंकर शर्मा स्ना० उमेशचन्द्र एम० ए० श्री अमूल्यरत्न प्रभाकर आदि के दर्शन किये और आर्यसमाज की काय शैली के सम्बन्ध में विचार-विनिमय हुआ। हमारा विचार और लोगों क आग्रह होते पर भी ड्यूटी पर पहुचने की दुविधा क कारण हम लोग बच में क ही न रुक सक।

सम्मेलन में हमारे दल क सैनिकों ने सभी महत्वपूर्ण स्थानों पर कार्य किया, निवास स्थानों और पण्डाल क प्रबन्ध और सुरक्षा म विशष सहयोग दिया। नगर क र्तन क दिन हमारा एम्बु ल न सब से पीछे था जिसस किसी को आवश्यकता हो तो शीघ्र सहायता पहुचायी जा। सम्मेलन क दिनों म डा बोसके असिस्टेण्ट श्री शालिवाहन जी ने प्रतिदिन ४० से अधिक व्यक्तियों को सहायता पहुचायी। सम्मेलन में एम्बुलेन्स प्रणाली द्वारा हमारे सेवा कार्य क सबने सराहना की मेरा निश्चित मत है क जिस प्रकार ईसाइयों ने सेंट जान्स एम्बुलैन्स की भारत ही नहीं समस्त भूमण्डल में शाखाए स्थापित कर रक्खी हैं, उसी प्रकार आर्यसमाज एम्बु-लेन्स स्कीम' को भारत का आय समाजें अपनाले तो लोक सेवा की दिशा में आयसमाज बहुत बड़ा कार्य कर सकता है इस प्रकार जहाँ मानवता की सेवा होगी वहाँ आर्यसमाज का नाम और सन्देश भी जन मन स्पर्शी बन जायगा।

बम्बई में आर्य वीर दल जो महान् कार्य कर रहा है यदि देश में आर्य वीर दलों की शाखाएं इस पद्धति का अनुसरण कर सकें तो एक बहुत बड़ा कार्य हो सकेगा।

——





(१) आर्य महासम्मेलन मेरठ में सम्मिलित होने वाला आर्यवीर दल फोट बम्बई का जत्था

(२) आर्यसमाज फोट बम्बई का एम्बुलैन्स कार

भला समझने लगेंगे तो स्वतन्त्रता प्राप्ति का सच्चा उत्साह जनता में उत्पन्न होगा और तभी हम स्वाधीनता के सच्चे आनन्द का प्राप्ति कर गे। भारत वर्ष में आर्य समाज ही एक ऐसी संस्था है जिसके पास जीवन का पूर्ण प्रोग्राम है।

दुर्भाग्य की बात है कि आर्यसमाज जैसी नामधनु संस्था गृहस्थियों के हाथों बुरी तरह पिसी जा रही है अब समय आया है कि हम अपनी भूल को समझें और वैदिक धर्म के चर्चे को गृहस्थियों के चिन्ताओं से मुक्त कर उन्हें सन्यासियों के हाथों में दे दें जिससे आर्य जगत गर्जने के क्षेत्र में पग बढ़ाये और गत्यवरोध दूर हो। किसी देश की राजनीति ही उसका असली जीवन स्रोत होता है जिसमें सब प्रकार की जीवनप्रद धाराये निकल कर चारों ओर बहती हैं। यदि वहीं स्रोत रिश्वत खुसखोरी, अनैतिक व्यापार और बेकारी के कीटाणुओं से भर जाता है तो उस राष्ट्र की सजीवनी शक्ति समाप्त हो जाती है और चारों ओर अवनति के बादल मडराने लगते हैं। इस लिये समय रहते आर्य समाजियों को चेतना चाहिये और अपना संगठन कर देश के दुखों को दूर करना चाहिये

——



साहित्य-सौरभ

गौरवशाली संस्कृत वाङ्मय

राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद

(दरभंगा में 'संस्कृत वाङ्मय अनुसधान प्रतिष्ठान' का उद्घाटन भाषण)

संस्कृत वाङ्मय भारत की ही नहीं सारी मनुष्य जाति की अमूल्य निधि है। उसकी प्राचीनता, उसकी व्यापकता, उसकी विशदता, उसका सौन्दर्य और मधुरता सभी कुछ इसी प्रकार का है जिससे न कवल मानव की आज तक की सस्कृति का सारा इतिहास ज्योतिर्मय हो उठता है वरन मानव का हृदय आनन्द से विभोर हो जाता है। मानव-जाति के सांस्कृतिक विकास का चित्र तो सस्कृत वाङमय की सहायता के बिना बनाया ही नहीं जा सकता। ससार की किसी जाति के पास इतना प्राचीन साहित्य नहीं है जितना हम भारतीयों के पास है। इसी साहित्य के आधार पर प्राचीन विश्व को रेखांकित किया जा सकता है।

ससार का ऐसा कोई देश नहीं जहां किसी न किसी रूप में सस्कृत साहित्य न पहुचा हो-चीन से लेकर आयर तक और स्कैन्डनेविया से लेकर स्वर्णद्वीप माला तक भारतीय वाङमय का प्रभाव फैला, एशिया के चीन, तिब्बत आदि देशो में ही सस्कृत की ज्योति प्रचण्ड हुई हो यह बात नही है मध्य पूर्व और योरप के देशों क सास्कृतिक सामाजिक जीवन पर भी संस्कृत साहित्य का व्यापक प्रभाव पड़ा था। जर्मन विद्वान् विण्टरनिट्ज ने लिखा है "अपनी प्राचीनता विशाल भाग में अपने विस्तार, अपनी विशदता और समृद्धि, कला की उत्कृष्टता और सब से अधिक संस्कृति के इतिहास की दृष्टि से सस्कृत के महान् मूल और प्राचीन वाङमय का अध्ययन रुचिपूर्वक करना चाहिये। यदि हम अपनी सस्कृति के प्रभात को समझना चाहते हे तो हमें भारत की शरण लेना चाहिये। जर्मन और योरप क अन्य साहित्यों पर भारतीय साहित्य का बहुत प्रभाव है। योरपीय वर्णनात्मक साहित्य का बहुत कुछ आधार भारत का कथा साहित्य ही है'।

मानव सस्कृत को समझने जानने और प्राचीन आत्मा को पहचानने के लिये ही नहीं वरन कला के सर्वोत्कृष्ट रूप से आनन्द विभोर होने के लिये भी ससार भर के लिये सस्कृत वाङमय का अध्ययन आवश्यक है। जीवन का ऐसा कोई पहलू नही, मानव अभिव्यक्ति की ऐसी कोई रीति नही, कला का ऐसा कोई रूप नहीं जिसमें सस्कृत वाङमय पूर्णता को न पहुँचा हो। समाज और व्यक्ति, राजा और रक, नागरिक और ग्रामीण, मानव और पशु पक्षी, सभ्य और असभ्य, चेतन और जड आत्मा और परमात्मा सभी के सम्बन्ध मे वर्णन इस वाङमय मे हृदय स्पर्शी और अनूठे ढग से किया गया है। मानव हृदय का ऐसा कोई प्रकोष्ठ नहीं जो उसकी दृष्टि से छिपा रह गया हो या जिसक अन्तर्गत की बात अत्यन्त कौशल से व्यक्त न की गयी हो। प्रकृति का ऐसा कोई स्वरूप नही जिसका सुन्दर और सही चित्र वहाँ मौजूद न हो। समाज का ऐसा कोई पहलू नहीं जिसकी व्याख्या और उसके अन्तर्गत में काम करने वाले आदर्शों, वेदनाओं और व्यसनों का हूबहू चित्र वहां न हो, और मानव जाति के भविष्य और भाग्य से सम्बन्ध रखने वाला ऐसा कोई प्रश्न नहीं जिसका विचारपूर्ण और यथोचित उत्तर वहाँ मौजूद न हो। पशु पक्षियों के जीवन का सूक्ष्म और सही वर्णन और मानव जीवन में इनके महत्व की वैसी व्याख्या और उनके प्रति सद्भावना तो संसार की किसी अन्य जाति के साहित्य में पायी ही नहीं जाती है।

उसमें विद्वानो और वयस्कों के लिये सामग्री है तो जन साधारण और बालकों के लिये भी सामग्री भरी पड़ी है। गन्धर्वों, यक्षों, असुरों और निशाचरों की अद्भुत सृष्टि और चमत्कारिक शक्ति और कृत्यो का वहाँ ऐसा और इतना काफी वर्णन है कि कौतूहल से प्रसन्न होने वाली बालक जाति को अपनी चाहना को पूरा करने की अनन्त सामग्री मिल जाती है। स्मृति में सहज ही घर कर लेने वाली ऐसी उक्तियाँ हैं जिनमें जीवन का ज्ञान भरा है और जिनके सुनने और मन में धार लेने से ही साधारण जन भी ज्ञानवान बन जाते हैं, और ऐसी कथाएँ हैं जिनके सुनने मात्र से ही अपढ़ भी पण्डित बन जाते हैं

इन व्यवहारिक उपयोगिताओं के अतिरिक्त कला की दृष्टि से भी उसमें चमत्कार भरा है जो अन्यत्र शायद ही उपलब्ध हो सके। घट में समुद्र भरने की कहावत यदि कहीं ठीक अर्थों में पूरी हुई है तो सस्कृत वाङमय में ही। अर्थ और शब्द साम्य जितना सस्कृत वाङमय मे मिलता है वह किसी अन्य साहित्य मे नही मिलता। यदि अलकारों की शोभा और शब्द व्यजना का उत्कृष्ट चमत्कार कहीं देखा जा सकता है तो वह भी सस्कृत वाङमय में। विचार की सूक्ष्मता और दर्पण सम चित्रण देखना हो तो वह भी अन्यत्र ऐसा नही मिलेगा जैसा सस्कृत वाङमय मे। थोड़े शब्दो मे यह कहा जा सकता है कि सस्कृत वाङमय ही ऐसा वाङमय है जिसमे शब्दों की सर्वोत्तम व्यञ्जना हुई है। क्या गद्य क्या पद्य, क्या नाटक और क्या गीत काव्य सभी में तो सस्कृत सिद्धहस्त रहे हैं। विण्टरनिट्ज ने एक स्थल पर लिखा है 'भारतीय साहित्य में वह सभी कुछ है जो साहित्य शब्द के व्यापकतम अर्थ में निहित है अर्थात् पद्यात्मक, पारलौकिक और ऐहिक काव्य, महाकाव्य, गीत काव्य, नाटक और नीति काव्य और साथ ही, वर्णनात्मक और वैज्ञानिक गद्य।

ईसा पूर्व १५०० से लेकर ईसा पश्चात् १००० तक सस्कृत वाङमय का कोष अमूल्य ग्रन्थ रत्नों से भरपूर हो चुका था। परा विद्या में उपनिषद् जैसे ग्रन्थ महा काव्यों में रामायण और महाभारत जैसी उच्च कोटि की रचनाएँ, भास कवि के प्रसिद्ध नाटक ईसा से कई शताब्दियों पूर्व हमारे वाङमय के अंग बन चुके थे। इन उच्च कोटि के आदर्श ग्रन्थों के समान हृदय स्पर्शी और रस मय ग्रन्थ ससार के अन्य किसी साहित्य में नहीं है।

सस्कृत साहित्य का अपेक्षाकृत इस उत्कृष्टता का कारण कुछ सीमा तक सस्कृत भाषा की अपनी प्रकृति जन्य विशिष्टता है। उसका व्याकरण और शब्द भण्डार कुछ ऐसा है कि शब्दों की व्यञ्जना इतनी खूबी और इतने अर्थ भरे ढग से हो सकती है जितनी कि ससार की किसी भी अन्य भाषा में चाहे वह प्राचीन हो अथवा अर्वाचीन नहीं हो सकती। समास-पद्धति के कारण घट में सागर भरा जा सकता है जब कि अन्य भाषाओं में यह उस सीमा तक न कभी सम्भव हुआ है और न हो सकता है।

भारत विशाल देश है। उसमें हर प्रकार का जलवायु और अनेक प्रकार के प्राकृतिक दृश्य अनेक जातियों के फूल पौधे, पशु पक्षी, और विभिन्न रूप-रग और रिवाजों वाली जातियाँ पायी जाती हैं। अतः इस सतरंगी पृष्ठ भूमि पर भारत के कलाकार यदि अनेक प्रकार के सुन्दर शब्द चित्र बना सके तो यह कुछ अस्वाभाविक बात नहीं थी।

सारे सस्कृत वाङमय में हमें कोई ट्रेजडी या दुखान्त काव्य या नाटक नहीं मिलता यह

काव्य की अपनी विशेषता है। यह बात नहीं कि काव्य के नायक को हर प्रकार की यातनायें न सहनी पड़ती हों। हाँ इन नायक उनका सफलता की सोपान के रूप में दिखलाया गया है। नल दमयन्ती, हरिश्चन्द्र शैव्या, सत्यवान-सावित्री इत्यादि प्रसिद्ध कथाओं के सभी नायक विपत्ति सागर को पार कर अन्त में सफलता और सुख को प्राप्त कर लेते हैं। इसी विश्वास के कारण हमारा सारा साहित्य क्षणिक वेदनाओं को अमृत्व प्रदान करने वाला शब्द चित्र मात्र न होकर व्यक्ति और जगत् के चिर-कल्याण की भावना में परिणित हो गया है। कला के उद्देश्य के बारे में हमारे साहित्यिकों का यह विचार न था कि वह केवल लेखक या पाठक के मनोरंजन का ही साधन है वरन साथ ही वे यह भी मानते थे कि कला चारों पुरुषार्थों का भी साधन है। इसी धारणा के कारण हमारे महाकाव्यों के सम्बन्ध में यह विश्वास परम्परा से चला आया है कि इनके पठन-पाठन से मनुष्य की मुक्ति हो सकती है। यह कारण है कि सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय में अन्ततोगत्वा धर्म और सत्य की विजय दिखाई गयी है। इस आधारभूत आदर्श के कारण ही संस्कृत वाङमय का महत्व कहीं अधिक बढ़ जाता है। मानव को पशुत्व से देवत्व पद प्राप्त कराना ही कवि की साधना का ध्येय हो सकता है क्योंकि इसी में उसका अपना आध्यात्मिक कल्याण निहित है। इसी कल्याण भावना के आदर्श रूप में संस्कृत वाङमय में नायक नायिका की जीवनधारा की दिशा निर्माण में परमेश्वर और देवगण, प्रकृति और उसकी प्रेरक शक्तियाँ सभी भाग लेती हैं।

अपनी इन विशिष्टताओं के कारण संस्कृत साहित्य अनेक ऐतिहासिक सक्रान्तियों के पश्चात् आज भी अपना मस्तक ऊँचा किये खड़ा है और संसार के महान् साहित्यों में सर्व प्रथम स्थान रखता है। प्राचीन भारत की इस अमूल्य थाती की रक्षा का दायित्व हमारे ही ऊपर है। उसकी रक्षा और अभिवृद्धि की दिशा में हमें महान् कार्य करना है। आशा है भारतीयता से प्रेम करने वाला प्रत्येक व्यक्ति इस कार्य में अपना सक्रिय सहयोग दे पूर्वजों के ज्ञान का प्रकाश और प्रसार करने में सहयोगी बनेगा।

स्वास्थ्य-सुधा

मूली

श्री जयपालसिंह चौहान, वैद्य

भारतीय भोजन में मूल और पत्तियों के जिन शाकों का प्राचीन समय से प्रयोग होता रहा है, उनमें 'मूली' एक बहुत प्रसिद्ध और लाभकारी शाक है। यद्यपि मूली वर्ष के अधिकांश समय में उपलब्ध रहती है तथापि शीत ऋतु में इसकी पैदावार बहुत अधिक होती है। पहाड़ी प्रदेशों की मूली बड़ी उत्तम और स्वादु होती है, मैदानी स्थानों में भी काफी सुलभ और गुणकारक होती है। यद्यपि मूली हमारे भोजन का अङ्ग है फिर भी सर्व साधारण इसके गुणों से विशेष परिचित नहीं हैं।

मूली एक बहु गुणकारी, अनेक रोगों को नष्ट करने की चमत्कारी शक्ति रखने वाली सब्जी है। मूली का नया पत्ता पाचक और हलका होता है, गर्म और कफ पित्त को नष्ट करता है, मूली की जड़ रुचिवर्धक, अग्निदीपक, रक्त बढ़ाने वाली स्वर सुधारक, श्वास रोग नाशक, नेत्र रोग, गलरोग, मूत्ररोग, अर्श, अश्मरी, पाण्डु और पीनस आदि नाशक है।

मूली का शाक—हमारे घरों में प्रायः मूली की भुजिया बनती है, परन्तु उसमें एक त्रुटि रहती है. भुजिया बनाने से पहले मूली को जोश देकर निचोड़ दिया जाता है। इस प्रकार निचोड़े जाने से जितनी पौष्टिक, रोग नाशक शक्ति इसमें होती है, सब निचुड़ जाती है, और भोक्ता के शरीर में कोई लाभांश नहीं पहुंचता। हमारी भोजन प्रणाली में मूली, पालक, शलजम आदि सब्जियों को उबाल कर निचोड़ा जाना बन्द होना चाहिये।

सलाद में उपयोग—शाक के अतिरिक्त कच्ची मूली खाने की भी प्रथा है। सभ्य परिवारों में भोजन के साथ सलाद में अन्य चीजों के साथ मूली भी डाली जाती है। सलाद से पृथक् भी नमक के साथ थोड़ी मूली खाना उत्तम समझा जाता है। टमाटर, अदरक, मूली, नीबू, नमक का सम्मिश्रण बहुत स्वादिष्ट और लाभकर होता है।

मूली का अचार—मूली को कद्दूकश में कसकर नीबू का रस डाल अचार भी बनाया जाता है जो स्वादिष्ट होने के साथ-साथ उदर विकारों की अद्भुत औषधि है।

उदर विकार—मूली उदर सम्बन्धी विकारों के लिये रामबाण का-सा प्रभाव रखती है। मन्दाग्नि, कोष्ठ बद्धता आदि में मूली के सेवन से पाचक पित्त उत्पन्न होता है, और पाचक पित्त द्वारा पाचकाग्नि की वृद्धि स्वाभाविक रूप से होने लगती है, और इस प्रकार पाचन-संस्थान के ठीक होने से स्वास्थ्य-वृद्धि होती है।

पाण्डु रोग—इस व्याधि में मूली का प्रयोग बहुत लाभ कर प्रमाणित हुआ है। मूली के साथ कौड़ी भस्म का प्रयोग और भोजन के रूप में भी मूली ही इस्तेमाल करने से रोगी शीघ्र ही ठीक हो जाता है।

अर्श (बवासीर) बवासीर के रोगियों के लिये मूली बहुत गुणकारी सिद्ध हुई है। बवासीर के कारण रक्त कम बनने, भूख कम लगने, मस्सों में दर्द और गुदा में सूजन आ जाने पर आधी छटांक मूली प्रातः सायं खांड या नमक के साथ लेने से शीघ्र लाभ होता है।

चिनग (मूत्र जलन) और अश्मरी (पथरी), वृक्कशूल (गुर्दे का दर्द) आदि में मूली का शाक तो लाभदायक होता ही है. सहसा मूत्र जलन मूत्रावरोध, दर्द आदि होने पर मूली का एक छटांक रस भी अव्यर्थ औषधि का कार्य करता है। इसके द्वारा पित्त शांत होकर मूत्र ठीक आने लगता है।

वीर्य विकार—मूली के उत्तम गुण वीर्य दोषों को नष्ट कर देते हैं। एक बार एक महात्मा ने कहा था यदि वीर्य विकारों से बचना चाहते हो तो नित्य प्रति प्रातः एक मूली का सेवन करो। मूली के सेवन से वीर्य की गर्मी मन्द होने से शुक्राशय की ऊष्मा शान्त हो जाती है, और वीर्य विकारों की सम्भावना दूर हो जाती है।

विशेषताएं—साधारणतः लोगों का विश्वास है कि मूली सर्दी करती है इसलिये जुकाम और खांसी आदि में मूली का सेवन नहीं करना चाहिये, परन्तु इसके विपरीत मूली के शाक से जुकाम खुल जाता है, और छींक आने लगती है। इसी प्रकार त्रिदोषज श्वास रोग और कण्ठ में भी मूली अपना आश्चर्यजनक लाभ दिखाती है।

मूली का पाचन—मूली में भोजन पचाने की विशेष शक्ति जानकर ही भोजन के अन्त में मूली खाने की प्रथा है। इस विशेषता के होते हुए भी मूली स्वयं देर में पचने वाली वस्तु है। अतः मूली को पचाने के लिये ऊपर से थोड़ा गुड़ खालेना चाहिये, गुड़ मूली को भी पचा देता है।

स्वास्थ्य के लिये शाक हमारे भोजन के अभिन्न अंग बन चुके हैं। कुछ लोगों के विचार से शाक स्वास्थ्य के लिये हितकर पदार्थ नहीं है परन्तु इस मिथ्या सिद्धान्त की ओर ध्यान न देकर हमें भोजन में स्वास्थ्य-वर्धक हरे और खाद्योज युक्त शाकों का अधिकाधिक प्रयोग करना चाहिये।

ग्राम जीवन

उत्तर प्रदेश में कुटीर उद्योग

श्री मुरारिलाल बी० एस-सी०

भारत में ६१.५ लाख व्यक्ति घरेलू उद्योग धन्धों से जीविका उपार्जन कर रहे हैं जब कि बड़े बड़े कारखानों में १५ लाख व्यक्ति ही लगे हुये हैं। उत्तर प्रदेश में घरेलू उद्योगों और बड़े बड़े कारखानों में काम करने वालों की संख्या क्रमशः ५० लाख और २.५ लाख है। अतः देश और राज्य को समृद्धिशाली बनाने के लिए कुटीर उद्योगों को सभी सम्भव तरीकों से प्रोत्साहन मिलने की आवश्यकता है। उत्तर प्रदेश की सरकार कुटीर उद्योगों के विकास के लिए प्रतिवर्ष ८० लाख रुपया खर्च कर रही है जब कि इस मद में बंबई की सरकार ३२ लाख और पश्चिमी बंगाल और मद्रास की सरकार क्रमशः २५ लाख और १६ लाख रुपया खर्च करती है। इस समय उत्तर प्रदेश में सरकार जिन उद्योगों को विकसित करने में लगी है उनमें सूत कातना, कपड़ा बुनना, काढ़ने का काम, गुड़, तेल, हाथ का बना कागज, खद्दर, रेशम, खिलौने, मिट्टी के बर्तन बनाना आदि सम्मिलित हैं। ११५ ऐसे केन्द्र हैं जो उत्पादन के साथ-साथ लोगों को विभिन्न कुटीर उद्योगों की ट्रेनिंग भी देते हैं। इनके अतिरिक्त अच्छे किस्म के कपड़े बनाने वाले ८ केन्द्र तथा खादी के बुनाई और कताई के ऐसे बहुत से केन्द्र हैं जिनमें २५,००० व्यक्तियों को कताई की ट्रेनिंग दी जाती है। एक गुड़ विकास योजना भी आरम्भ की गई है और कृषकों को ऐसे किस्म के नये कोल्हू बनाने में प्रशिक्षित किया जा रहा है जिनसे ईंधन के बचाने में सहायता मिलती है। आजमगढ़ जिले में मऊ नामक स्थान में तथा बस्ती जिले में मगहर में कपड़ा बुनने का काम बड़े पैमाने पर किया जाता है। मऊ में एक रंगाई का केन्द्र भी खोला गया है। मेरठ में कैंची उद्योग, फर्रुखाबाद में छपाई उद्योग, अलीगढ़ में ताला बनाने के धंधे तथा आगरा में जूता बनाने के धंधे को पूर्ण प्रोत्साहन दिया जा रहा है। बनारस स्थित सरकारी बुनाई स्कूल में शीशे की गुरिया बनाने की भी ट्रेनिंग दी जाती है। प्रदेश में ऐसे १०० से अधिक केन्द्र हैं जहां लोग शीशे की गुरिया बनाते हैं। आगरा में खेल के सामान का बनना भी आरम्भ हो गया है और इस धंधे में ६,००० से अधिक व्यक्ति काम करते हैं। कृषकों को तीसी के डंठलों से रेशे निकालनेका काम भी करना चाहिये। अनुसंधान से यह सिद्ध हो गया है कि तीसी के रेशे जूट का काम दे सकते हैं। उत्तर प्रदेश की प्रशिक्षण संस्थाओं में ६० ऐसे स्कूल हैं जहां आधुनिक प्रणाली पर ट्रेनिंग दी जाती है। इन स्कूलों तथा उत्पादन केन्द्रों में ट्रेनिंग प्राप्त विद्यार्थियों को आर्थिक सहायता दी जाती है ताकि वे ग्रामों में रहकर अपनी जीविका कमा सकें और कुटीरोद्योगों को प्रचलित करें। कुटीर उद्योगों में लगे हुये लोगों की सहकारी समितियों को सहकारी बैंकों द्वारा आर्थिक सहायता देने की एक योजना सरकार के विचाराधीन है।

कुटीर उद्योग की समस्या पर विचार करते समय हमें बड़े-बड़े कारखानों और कुटीर एवं छोटे-छोटे उद्योगों के बीच प्रतियोगिता के प्रश्न पर भी गम्भीरता के साथ विचार करना चाहिये। एवं छोटे-छोटे उद्योगों की रक्षा के लिये हमें ऐसे उपाय निकालने चाहिये जिनसे उत्पादन की दोनों व्यवस्थाओं में होड़ के स्थान पर एक दूसरे की कमियों को पूरा करने का काम हो। उत्तर प्रदेश की सरकार ने इस समस्या पर गम्भीर विचार किया है और वह चाहती है कि कुटीर उद्योगों का विकास करने में कोई कसर न की जाय। उसका विचार है कि जब रिहन्द बांध योजना सम्पन्न हो जायगी तब प्रत्येक घर को विद्युत शक्ति प्राप्त हो सकेगी और हमारे घरेलू उद्योगों को और अधिक प्रोत्साहन प्राप्त होगा। किन्तु किसी भी योजना की सफलता के लिए जनता का पूर्ण सहयोग प्राप्त होना अनिवार्य है।

विद्यार्थि-वृत्तम्

श्री रामशङ्कर भट्टाचार्यः शास्त्री, काशी

अथ विद्यार्थि-वृत्तं प्रवेदयिष्यामो यथा पूर्वे आचार्याः प्रवचन्ति (१) स्म। सदैव विद्यार्थिभिः जीवनोपयोगि साधनं गृह्य (२) पुरुषार्थसिद्ध्यर्थं यत्नो विधेयः, न कदापि कुक्षिम्भरिभिः (३) तैः भवितव्यम्। श्रेष्ठतमानां (४) जनानाम् अनुसरणं करणीयम्। यथा वै विद्वांसः करन्ति (५) तथैव तैः अपि अनुष्ठेयम्। न खलु विद्याभ्यासे कदापि विश्रामो (६) विधेयः। प्रच्छनीय (७) च सदैव शास्त्रीयं रहस्यम्। सदाऽहं धार्मिकोऽस्मि आत्मसाक्षात्कारी (८) च भवामीत्येव मनसि वारं वारं चिन्तनीयम्। अनेकेषां (९) विज्ञानानाम् गम्भीरालोचना करणीया। देशोन्नतये समाजसंस्थापनाय च चिन्तया (१०) विशेषतो विद्यार्थिनो जगति शिवतातिम् (११) आनेतुं समर्था इति॥

---

(१) 'प्रवचन्ति' इति प्रयोगो न भवति, अनभिधानात् इत्याधुनिकानां वैयाकरणानामुद्गारः। प्राचीनास्तु नैवं मन्यन्ते। अतएव स्कन्दस्वामिना ऋग्वेदभाष्ये (१।५४।८) 'प्रवचन्ति' इति व्यवहारः कृतः।

(२) गृह्य—आधुनिकानां मते 'गृहीत्वा' इत्येव भवितव्यम्, समासे सत्येव ल्यब्-विधानात्। 'सन्ध्यावधूं गृह्य करेण भानुम्' (जाम्बवती विजय) 'कराभ्यां गृह्य रूपः' (महाभा० शान्ति) इत्यादिवाक्ये समासमकृत्वाऽपि ल्यप् कृतः। आश्वलायनेनापि 'आज्येन शिरः अज्य' इति वाक्ये असमासेऽपि ल्यप् कृतः। मन्ये प्राक्पाणिनेः प्रत्ययं 'समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप्' (७।१।३७) इति नियमस्य शैथिल्यम् आसीत्, अथवा कारणान्तरं मृग्यम्।

(३) पाणिनिः 'फलेग्रहिरात्मम्भरिश्च' (३।२।२६) इत्येव सूत्रयामास। चन्द्राचार्यः 'फलेग्रहात्मम्भरिः कुक्षिम्भरिः' (१।२।१०) इति पपाठ। अतः कुक्षिम्भरि शब्दोऽपि साधुः। केचित् पाणिनीयाः चकारबलेन अपरे च वार्तिकबलेन अस्य साधुत्वं दर्शयन्ति।

(४) श्रेष्ठतमः—इष्ठन्प्रत्ययात् तमप्प्रत्ययोऽनुपयुक्तः इति केचिद् वैयाकरणा वदन्ति। तन्नयुक्तम्—यदा च प्रकर्षवतां पुनः प्रकर्षो विवक्ष्यते, तदा तिङन्तादपि प्रत्ययो भवत्येव' इति जयादित्येनोक्तेः (५।३।५५) महाभारते च प्रयोगोऽपि उपलभ्यते—'अर्धं भार्या मनुष्यस्य भार्या श्रेष्ठतमः सखा'।

(५) करन्ति—आधुनिकास्तु 'कुर्वन्ति' इत्येव वदन्ति। परन्तु भ्वादिगणेऽपि कृधातोः पाठ आसीत् येन करति-करतः-करन्ति-इत्यादयः प्रयोगा बभूवुः—इत्यपि क्षीरस्वामि-दशपाद्यादि ग्रन्थाभ्याम् ज्ञायते। अर्वाचीनैरेतत् विस्मृतम्।

(६) विश्राम शब्दोऽपाणिनीय इति भट्टोजिदीक्षित आह। चन्द्राचार्यस्तु विश्रामस्यैव साधुत्वमाह, ननु पाणिनिदर्शनसिद्धस्य विश्रमस्य। अहो कालमहिमा। कालिदास-भवभूती अपि विश्राम'शब्दं प्रयुञ्जाते।

(७) इदं पदं न पाणिनीय दृष्ट्या साधुस्यात्। कातन्त्र व्याकरणमते तु साध्वेव। [अस्मिन् विषये युक्तानिरूपणा समयान्तरे करिष्यते]

(८) 'धार्मिकः + आत्म···' इति स्थिते पाणिनिमतेन 'धार्मिक आत्म···' इत्येव भवितव्यम्। महाभारते एतादृशेषु स्थलेषु प्रायेण ओकारादेशो दृश्यते, यथा कुरवः आत्महितम्' इति स्थिते 'कुरवोत्महितम्' (शान्तिपर्व)।

(९) भाष्ये पदमिदं नाभ्युपगतम्। योगसूत्रे (२।४) तु इदं प्रयुक्तम्। माधवीयधातुवृत्तौ (इणधातु) अस्य साधुत्वं दर्शितं कथञ्चित्।

(१०) चिन्तधातोः असत्यर्थे कृते 'चिन्ता' इत्येव पदं स्यात् इति आधुनिका वदन्ति। धातुपारायणे तु चिन्तास्थले 'चिन्तया' इत्यपि पदं प्रयुक्तम्। अद्य पदमिदं न प्रयुज्यते।

(११) अस्य पदस्य वैदिकत्वं पाणिनिसम्मतम् परन्तु भागुरिमते (८।८।१८३ भाषावृत्ति) लौकिकमिदम्॥

——

सिंहावलोकन

जरायम पेशा जातियो का कलंक

श्री वीरेन्द्र तार्किक

भारतीय स्वतन्त्रता के चार वर्ष समाप्त हो जाने के पश्चात् भी अभी तक बहुत-सी महत्वपूर्ण सामाजिक प्रवृत्तियाँ ऐसी हैं, जिनकी ओर ध्यान नहीं दिया गया। हमारे देश की जरायम पेशा जातियों की समस्या इसी प्रकार की है। सामाजिक और व्यावहारिक जीवन में इन जातियों के नाम से गालियाँ दी जाती हैं, और अनेक प्रकार के अपमान-जनक व्यवहार किये जाते हैं। मानवता के नाते इन जातियों का इस प्रकार अपमान शीघ्र समाप्त होना चाहिये।

भारत गौरव महाराणा प्रताप के ऐतिहासिक जीवन से इन जातियो का घनिष्ठ सम्बन्ध है। जब महाराणा अपनी सेना को जंगलो में लिये मारे मारे फिरते थे, घास की रोटियाँ खाते हुए हैरान व परेशान थे। उसी समय मेवाड़ के हजारों लाखों क्षत्रियों ने भी अपने अपने वीर नेता की भाँति जगलो में नगी तलवारें उठाकर प्रतिज्ञा की थी कि जब तक अपने देश को स्वाधीन न कर लेगे चारपाई पर न सोएगे, मकानों में न रहेंगे, दीपक न जलाएगे, बरतनों में भोजन न करेंगे इत्यादि। सदियाँ बीत गईं कितने ही राज्य आये और चले गये, भारत के उन वीर क्षत्रियों की प्रतिज्ञा अपूर्ण ही रही, पर वे अपने साहसपूर्ण निश्चय पर अडिग रहे और जगलो में ही निवास करते चले आ रहे हैं। जगलों में रहने के कारण अन्नादि के अभाव में मास-भोजन ग्रहण करने के लिये इन लोगों ने यज्ञोपवीत उतार दिये, परन्तु चोटी निरन्तर धारण किये हुए हैं। "बुभुक्षितः किन्नकरोति पापम्" के अनुसार मासाशन अवश्य किया पर वे अपने लक्ष्य और प्रतिज्ञा से विचलित न हुए।

आर्यसमाज गांधीजी तथा अन्य सबके सच्चे प्रयत्नों से अब देश स्वतन्त्र है और इन क्षत्रियों की प्रतिज्ञा पूरी हो चुकी है। आज राष्ट्र का मुख्य कर्तव्य होना चाहिये कि वह इन जातियों के समुद्धार की ओर विशेष ध्यान दे, और उन्हे जरायम पेशा की अपमान सूचक सज्ञा से मुक्त करे।

इन जातियों का विशेष अध्ययन करने वाले व्यक्तियों का मत है कि बनजारे चौहान जाति के क्षत्रिय हैं। वन की वस्तुओं का व्यापार करने के कारण वे वनजारे कहने लगे। इसी प्रकार कजर सज्ञा काननचर व्यक्तियों के लिये बन गयी और अन्त में काननचर का अपभ्रंश कजर हो गया। इनके बुजुर्ग अपने को शिशोदिया वंशज कहते हैं। इसी प्रकार बेड़िये अपने को बड़गूजर और भातू अपने को भदवारिया ठाकुर कहते हैं। पछाहीं लोहार, टबवरिया, कपरिया, नट इत्यादि अनेक जातियाँ हैं जो उन्हीं क्षत्रियों की वंशज हैं, पर आज अपनी अशिक्षा और निर्धनता के कारण पशुओं से भी बुरा जीवन व्यतीत कर रही हैं। जरायम पेशा जातियों के सुधार के लिये भी शरणार्थियों और हरिजनों की भाँति आर्थिक सहायता, निवास, समानता, शिक्षा-दीक्षा सम्बन्धी कानून शीघ्र बनाये जाने चाहिये। जिन्होंने देश की पराधीनता के विरुद्ध शताब्दियों सघर्ष किया। क्या हम उनके प्रति अपना कर्तव्य पालन करेंगे?

इस समाज सुधार और मानवता के महान् कार्य में आर्यसमाज स्वाधीनता पूर्व से ही योग देता रहा है। लखनऊ में आर्यनगर सैटिलमैण्ट में इसी प्रकार के व्यक्तियों को कारीगर और उनके बच्चों को शिक्षित बनाने का प्रयत्न गत २० वर्षों से हो रहा है। सरकार इस ओर ध्यान दे इसके लिये आर्यसमाज को इस आन्दोलन का नेतृत्व अपने हाथ में ले लेना चाहिये। जरायम पेशा जाति के कलंक और उनके अबोध बच्चों का पालन-पोषण और शिक्षा दीक्षा द्वारा जहाँ हम अपने समाज को उन्नत बनाएगे वहाँ मानवता की भी बहुत बड़ी सेवा कर सकेंगे।

——

—आ० स० निज़ामपुर हरचन्द पुर (सहारनपुर) गु० कु० घासीपुरा के मुख्याधिष्ठाता श्री परशुरामजी के देहावसान पर शोक सहानुभूति प्रकट करता है।

—यू० पी० आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रचारक श्री खड्गपालसिंहजी ने आर्य समाज कोटला (आगरा) में प्रचार किया। आपके उद्योग से आ० स० नगला दियाली का पुनरुद्धार हुआ।

—फतेहगढ़ के श्री अ गोन्द्र नोहन राय का विवाह संस्कार अजमेर की श्रीमती प्रीतिसेन के साथ वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। श्री बालगोविन्द सिंह मन्त्री आर्य समाज भोलेपुर का नामकरण संस्कार भी हुआ।

—श्री हरप्रसादजी निरीक्षक सभा ने आ० स० बस्ती, मुंगेरवा और बस्क बजार का निरीक्षण किया तथा आ० स० शोहरतगढ़ का जीर्णोद्धार कर उसका निर्वाचन कराया।

—आ० स० कायमगंज में ऋषि-निर्वाण दिवस उत्साह पूर्वक मनाया गया, यज्ञ, भजन व्याख्यान हुए।

—आ० स० जमालपुर (मुंगेर) की ओर से श्री स्वामी महेश्वरानन्द सरस्वती ने वागेश्वरी ग्राम में १७ तथा १८ अक्टूबर को यज्ञ कराया।

—आ० स० दुबारी (आजमगढ़) ने ऋषि-निर्वाण उत्सव बड़े उत्साह पूर्वक मनाया प्रभावशाली भजन तथा व्याख्यान हुए। इधर प्रचार की बड़ी आवश्यकता है। श्री स्वामी उद्योगानन्दजी तथा ठा० जगन्नाथसिंहजी छह मास से इस क्षेत्र में प्रचार कार्य कर रहे हैं। नवम्बर के अन्त में एक यज्ञ भी करने का निश्चय किया गया है।

—आ० स० शाह में बाबू मोहनलाल आर्य ने २३ अक्टूबर को भाषण दिया और आर्य समाज की प्रगति से परिचित कराया।

—आर्य उप सभा जिला आगरा की ओर से बटेश्वर के मेले पर कई वर्ष पश्चात् ६ से १३ नवम्बर तक समारोह पूर्वक प्रचार कराया गया। प० लालचन्दजी म० खड्गपालसिंहजी, म० हेमचन्दजी म० यशवन्तसिंहजी के भजन और प० मंगलदेवजी शास्त्री, स्वामी परमानन्दजी दण्डी, बाबू मोहनलालजी आर्य के प्रभावशाली भाषण हुए। जनता पर उत्तम प्रभाव पड़ा।

आर्यजगत

—मऊ छिवो (बाँदा) में सभा के प्रचारक श्री बालकृष्णचन्द्र धनुर्धर के प्रयत्न से प्रचार हुआ और आर्य समाज स्थापना हुई।

—स्वामी नारायण छिरिया (गोंडा) में सभा प्रचारक श्री सर्व गुण प्रसाद ने कार्तिक मेले में वैदिक धर्म प्रचार किया, श्री रामरतन मिश्र ने एक बीघा भूमि आर्य समाज मन्दिर निर्माणार्थ दान की और यज्ञशाला निर्माणार्थ व्यय श्री नन्दकिशोरजी ने देने का वचन दिया।

—आ० स० शमशाबाद (खोर) जनपद फरुखाबाद का उत्सव १७ से १६ नवम्बर तक धूम धाम के साथ मनाया गया। श्री आचार्य देशबन्धु मुसाफल, श्री ओंकार प्रणव, श्री ज्ञानेन्द्र शर्मा, श्री गजराजसिंह श्री हेमलताजी श्री मंगलदेव शास्त्री श्री परमानन्दजी स्वामी श्री जीवलाल और श्री-चम्मनलालजी के भजन व्याख्यान हुए। स्त्री आर्यसमाज की स्थापना हुई। श्री व्रजलाल और श्री-ननकूलाल आदि के उद्योग से उत्सव सफल हुआ।

निर्वाचन

—आ० स० इन्दोर (बुलन्दशहर) प्रधान-श्री राधाकृष्णजी गुप्त और मन्त्री श्री राजेन्द्रप्रकाशजी गहलौत।

—आ० स० इरादतनगर (आगरा) प्रधान महाशय केदारनाथजी आर्य और मन्त्री म० लज्जारामजी आर्य

—आर्यसमाज सिकन्दराबाद (यू० पी०)—प्रधान श्री वेदपालजी वैद्य और मन्त्री श्री छेदालालजी।

—आ० स० शोहरतगढ़ (बस्ती) प्रधान-श्री नत्थूलालजी सेठ और मन्त्री श्री हरनारायणरामजी।

आर्य वीरदल शाहगज (जौनपुर) प्रधान श्री राजारामजी और मन्त्री श्री विश्वेश्वरनाथजी। सेनानायक श्री परमेश्वररामजी।

—आ० स० पौड़ी (गढ़वाल)—प्रधान श्री मोहनसिंहजी और मन्त्री श्री विश्वम्भरदयालजी।

—आ० स० तिरवा—प्रधान डा० सुरेन्द्रनाथ तिवारी और मन्त्री ठा० व्रजभूषणसिंहजी।

—आ० स० दुबारी (आजमगढ़) प्रधान श्री देवनन्दन और मन्त्री ठा० जगन्नाथसिंह आर्य।

—आ० स० मऊ छिवो (बांदा) प्रधान श्री राजकुमार आर्य और मन्त्री श्री बलदेवप्रसाद आर्य।

—आ० कु० सभा देहरादून प्रधान श्री दिलीपसिंहजी और मन्त्री देवेन्द्रनाथजी प्रभाकर।

आर्यसमाज की वेदी की पवित्रता की रक्षा

आर्यसमाज की वेदी की पवित्रता उसके गौरव की रक्षा और आर्यसमाज को अनावश्यक उलझनों से बचाने के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि उसे दलगत राजनैतिक आन्दोलन वा आलोचनाओं का अखाड़ा न बनाया जाय। आवश्यक होने पर आर्यसमाज की वेदी से मुख्यतया विशुद्ध राजनैतिक वैदिक सिद्धांतों और आदर्शों की ही चर्चा और व्याख्या होनी चाहिये। आर्य-समाजों को इस निवेदन पर विशेष ध्यान देते हुए आर्यसमाज की वेदी से होने वाले उपदेशों और व्याख्यानों की बड़े ध्यान से व्यवस्था और निरीक्षण करना चाहिये। उपदेशक महानुभावों का भी यही कर्तव्य है कि वे इस विषय में विशेष सावधानी से काम लें।

यह देखने में आया है कि भारत के किसी-किसी राज्य में राजनैतिक सभाओं पर प्रतिबन्ध लगाए जाते हैं परन्तु आर्यसमाजों की सभाएँ इस प्रकार के प्रतिबन्धों से प्रायः मुक्त रखी जाती हैं। यदि आर्यसमाज की वेदी से राजनैतिक दलगत पक्ष विपक्ष में भाषण हों तो ऐसी सभाओं को प्रतिबन्धों के अधीन आने की आशंका बनी रहेगी। एकआध स्थान पर ऐसा हो भी चुका है। अतः सावधानी रखने की विशेष आवश्यकता है।

ज्ञानचन्द
मन्त्री सार्वदेशिक सभा दिल्ली

गुरुकुल समाचार

गुरुकुल वृन्दावन—

उत्सव की दुकानें

गुरुकुल विश्वविद्यालय, वृन्दावन का वार्षिक महोत्सव ता० २३ से २६ दिसम्बर १६५१ तक मनाया जायगा। बाजार प्रति वर्ष की भाँति ही लगेगा। दूकानों का किराया निम्न प्रकार होगा।

चौराहे की पक्की पुस्तकों की दूकान २२), पिंडाल की ओर पक्की पुस्तकों की दूकान १८), फूस की कच्ची पुस्तकों की दूकान १५), हलवाइयों की चौराहे की दूकान १५), शेष हलवाइयों तथा अन्य दूकानें शिविर की ओर १२) प्रति, जमीन पर अपनी दूकान लगाने वालों से ७), इनके अतिरिक्त ६ रु० प्रति बल्ब बिजली का चार्ज होगा।

जो महानुभाव दुकान लेना चाहें वह अपना किराया यथा सम्भव शीघ्र अगाऊ भेजने का कष्ट करें जिससे कि दूकान सुरक्षित कर दी जावे।

शोक प्रस्ताव—

श्री देशबन्धुजी गुप्त भारतीय संसद तथा अध्यक्ष अखिल भारतीय पत्रकार संघ के विमान दुर्घटना द्वारा आकस्मिक देहावसान के समाचार को जानकर गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन के समस्त कुल वासियों को हार्दिक दुःख हुआ और गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन द्वारा आयोजित एक सार्वजनिक सभा में एकत्र हो दिवंगत आत्मा की सद्गति एवं शोक सन्तप्त परिवार को धैर्य प्रदान करने की परम पिता परमात्मा से प्रार्थना की।

द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री
अधिष्ठाता गुरुकुल वृन्दावन

गुरुकुल कांगड़ी

स्नातक और यू० पी० धारासभा

उत्तरप्रदेश की धारासभा के नियम नं० 5021B/XV11-44/50 के अन्तर्गत गुरुकुल विश्ववि० कांगड़ी के स्नातक अन्य विश्वविद्यालयों के ग्रेजुएट्स की भाँति स्नातक निर्वाचन क्षेत्र के लिये मतदाता हो सकते हैं। जो स्नातक बन्धु मतदाता बनना चाहें वे प्रस्तोता अथवा आचार्य गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी से पत्र व्यवहार करें। —आचार्य प्रियव्रत
गुरुकुल कांगड़ी

आर्यसाहित्य में नये प्रकाशन

सार सूचनाएं

—सभा प्रचारक श्री हेमचन्द्रजी मथुरा के जिले में प्रचारार्थ भेजे गये हैं और प्रचार कर रहे हैं। मथुरा जिलेकी आर्य समाजों के मन्त्रियों से प्रार्थना है कि वे जिस समाज में पहुंचे उनसे प्रचार कराये और सभा का प्राप्तव्य धनादि सहृद प्रदान करें।

—मोहनलाल आर्य
मण्डलाधीश आगरा

—श्री स्वामी अमृतानन्दजी ७ दिसम्बर की शाम को मैनी सभा सुल्तानपुर (नैनीताल) के उत्सव पर पधारने की कृपा करें। मन्त्री

—कुछ समाचार पत्रों में आर्य-समाज द्वारा सचालित श्री हिन्दू अनाथ आश्रम मुहल्ला चन्दवारा लकड़ी घाट (मुजफ्फरपुर) पर पुलिस के छापा मारने के समाचार से जनता मे भ्रम फल गया है। वास्तव मे पुलिस ने इस आश्रम पर न मार कर एक बनावटी 'भारतीय अनाथ आश्रम' नामक गुप्त संस्था पर छापा मारा था और वहाँ से ४ अक्टूबर को सारे जाली कागजातो के साथ २६ देवियों को अपने अधिकार मे लिया और १७ व्यक्ति गिरफ्तार किये। पुलिस ने सरक्षित देवियों को हिन्दू अनाथ आश्रम मे लाकर रक्खा है और इस समय १२३ देवियों व बच्चे आश्रम मे रह रहे हैं। इस आश्रम को जनता और सरकार दोनों का पूर्ण सहयोग प्राप्त है। आशा है जनता भ्रम मे न रहेगी।

—जौहरीमल केजड़ीवाल प्रधान
—कुबेरसिंह व्यवस्थापक

—स्थानीय कन्याओं की शिक्षा के लिये एक कन्या पाठशाला की बहुत आवश्यकता थी। एक दानी सज्जन ने ३०००) की लागत का एक मकान इस कार्य के लिये दान दिया है। इस मकान को पाठशाला के योग्य बनाने के लिये १०००) की आवश्यकता है। आशा है दानी महानुभाव इस पुण्य कार्य में सहयोग देकर यश के भागी बनेगे।

—प्रभु दयाल शुक्ल नवद आश्रम, सरायमीरा फतेगढ़, स्टे० कन्नौज

—बम्बई प्रान्तीय आर्य धर्म परिषद् आगामी २३ से २५ नवम्बर तक होने वाली थी वह आगामी आम निर्वाचनों के कारण स्थगित कर दी गया है। सम्भवतः जनवरी के अन्त में अब उसका अधिवेशन होगा। मन्त्री

—जन साधारण को सूचित किया जाता है कि मैंने अपना नाम हरिश्चन्द्र सेलाना के स्थान पर हरीराम बदल लिया है।

—हरीराम, मन्त्री आर्यसमाज
मुजफ्फराबाद सहारनपुर

—जो आर्यसमाजे मुझे उत्सवों पर बुलाना चाहे वे साधु आश्रम काली नदी पुल हरदुआगज के पते पर पत्र लिखे।

—स्वामी आत्मानन्द
आर्योपदेशक

अग्रवाल वर चाहिये

मुझे अपनी चौदह वर्ष की आयु की सुशील और शिक्षिता गर्ग गोत्रीय कन्या के लिए एक योग्य अग्रवाल आय वर चाहिए।

पता—बृजलाल बी० एम-सी० गवर्नमेंट कन्ट्रक्टर, आनमगढ

आवश्यकता

एक २५ वर्षीय ब्राह्मण नवयुवक के लिये एक विदुषी कुलीन आर्य, सुन्दर सुशील सुशिक्षित, स्वस्थ और गृह कार्य में दक्ष कन्या की आवश्यकता है। जाति पाति का बन्धन नहीं है। मासिक वेतन १०२)रु० है स्वास्थ्य बहुत उत्तम तथा सदाचारी है। हाई स्कूल में स्थायी रूप से संस्कृत अध्यापक हैं। हाई स्कूल, साहित्य रत्न और सिद्धान्त वाच पति उत्तीर्ण हैं। गुरुकुल के स्नातक हैं। शास्त्री और इंटर की परीक्षाये दे रहे हैं। पत्र व्यवहार का पता—

हरिशरण आर्यसमाज नवाबगंज (गोंडा)

विज्ञान-वार्ता

लाउड स्पीकरों द्वारा निद्रा

अनिन्द्र रोग की नयी चिकित्सा के रूप में लाउड स्पीकर का उपयोग सफल सिद्ध हुआ है। बीमार के सिरहाने यह लाउड-स्पीकर एक स्वर में सीधे साधे शब्द कहेगा, इन शब्दों का चुनाव इस प्रकार हुआ है कि सुनते ही तत्काल नींद आने लगती है और स्वप्न भी नहीं आते तथा दो तीन सप्ताह में ही निद्रा नाश का रोग नष्ट हो जाता है।

खाद्य-सामग्री सदैव ताजी रहेगी

अमेरिकन वैज्ञानिकों ने खाद्य पदार्थों की सुरक्षा की दिशा में जो नये प्रयोग किये हैं उनसे खद्य सामग्री दीर्घ काल तक सुरक्षित रह सकेगी। वैज्ञानिकों ने कुछ खाद्य-पदार्थों को इस प्रकार लपेट कर कि उनमें हवा न पहुंचे प्रयोग शाला की आलमारी में रख दिया, और उसमें ३०, ००, ००० बोल्ट विद्युत् परमाणुओं का प्रवेश कराया। ढाई वर्ष के बाद जब उन पदार्थों को देखा गया तब उनमें किसी प्रकार की कोई कमी नहीं आयी थी और वे उसी प्रकार ताजे और स्वादिष्ट थे। इस प्रयोग की सफलता के कारण भविष्य में ५०० ०० ००० पउण्ड खाद्य-सामग्री प्रतिवर्ष सुरक्षित रखी जा सकेगी। इस सफलता के फलस्वरूप रैफ्रीजरेटरों की उपयोगिता शीघ्र ही समाप्त हो जायगी। वैज्ञानिकों का दावा है कि इस पद्धति से १०० वर्ष ही नहीं, अनन्त काल तक खाद्यपदार्थ ताजे बने रहेंगे।

क्या आप जानते हैं राजनैतिक दलों के लिए रिजर्व किए गए चिन्ह

जुए सहित बैलों की जोड़ी इण्डियन नेशनल कांग्रेस, वृक्ष भारतीय सोशलिस्ट पार्टी, झोपड़ा किसान मजदूर प्रजापार्टी, अनाज की बाली और हसिया भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी फावड़ा और बेलचा क्रान्तिकारी समाजवादी दल, मशाल भारतीय क्रान्तिकारी कम्यूनिस्ट पार्टी, खड़ा हुआ शेर अखिल भारतीय फारवर्डब्लाक (मार्क्सवादी दल), मनुष्य का हाथ अखिल भारतीय फारवर्ड ब्लाक (रुइकर दल), घोड़ा और सवार अखिल भारतीय हिन्दू महासभा, उदय होता हुआ सूर्य अखिल भारत राम राज्य परिषद्, हाथी अखिल भारतीय परिगणित जाति संघ, एक तारा भारतीय बोलशेविक पार्टी, अनाज ओसता हुआ किसान कृषिकार लोकपार्टी, दीप अखिल भारतीय जनसंघ, धनुष बाण यू० पी० क्रान्तिकारी सोशलिस्ट पार्टी, बेलगाड़ी यू०पी० प्रजा पार्टी, मुर्गा यू० पी० शोषित संघ।

वर चाहिये

एक १७ वर्षीय अग्रवाल आर्य कन्या के लिये जो सुन्दर स्वस्थ गृह कार्य में भी दक्ष है हाई स्कूल, विद्या विनोदनी विदुषी पास है। विशारद की परीक्षा देरही है २५वर्ष तक का शिक्षित स्वस्थ वा रोजगार वर चाहिये। विवाह वैश्य मात्र से हो सकता है

एक अग्रवाल विधवा आयु २४ साल है एफ० ए० विदुषी विशारद पास है विधुर वर शिक्षित स्वस्थ वा रोजगार चाहिये
प्रधान आर्यसमाज इस्लाम नगर
जिला बदायू

भूल सुधार

पाठक अभ्युदय में तारचन्दी के विज्ञापन के पते में हुक्मचन्द के स्थान पर हुकमसिंह पढ़ें।
—व्यवस्थापक

नोटिस

निस्बत दिखाने वजह के
(आम तौर पर)

ब अदालत सिविल जजी अव्वल मुकाम कानपुर जिला कानपुर मुकदमा दीवानी नम्बर १५१ बाबत सन् १६५१ ई०

फर्म सोहनलाल हुलीमल वाके नयागज कानपुर बजरिये लाला सोहनलाल उम्र तखमीनन २८ साल वल्द लाला मोहनलाल कौम वैश्य, साकिन नयागंज, शहर कानपुर यके अजपार्टनर फर्म मजकूर मुद्दई
बनाम
श्री भगवानदास वगैरह
मुद्दालेहुम
बनाम
श्री भगवानदास उम्र तखमीनन ३२ साल वल्द लाला बाबूलाल साकिन पताबपुरा आगरा
मुद्दालेह

चूंकि मुद्दई ने दरख्वास्त इस अदालत में गुजरानी है कि १३६ बोरा कत्था मुद्दई को दिया जावे लिहाजा आपको इत्तिला दी जाती है कि आप असालतन या मारफत किसी वकील के जो हालात मुकदमा से बखूबी वाकिफ हो बतारीख १८ (अठारह) दिसम्बर सन् १६५१ ई० बवक्त १०।। बजे दिन कब्ल दोपहर इस अदालत में हाजिर होकर दरख्वास्त के खिलाफ वजह दिखावें। अगर ऐसा न करेंगे तो दरख्वास्त मजकूर आपकी गैरहाजिरी में एकतरफा समाअत होगी।

नाम अदालत सिविल जजी प्रथम कानपुर। नम्बर मुकदमा १५१ सन १६५१ ई०। नाम फरीकैन फर्म सोहनलाल हुलीमल बनाम श्री भगवानदास वगैरह

आज बतारीख १५ माह नवम्बर सन १६५१ ई० मेरे दस्तखत और मोहर अदालत से जारी किया गया।

आज्ञा से
राजकिशोर
प्रथम सिविल जज कानपुर

आर्यमित्र प्रकाशन लि० के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित।

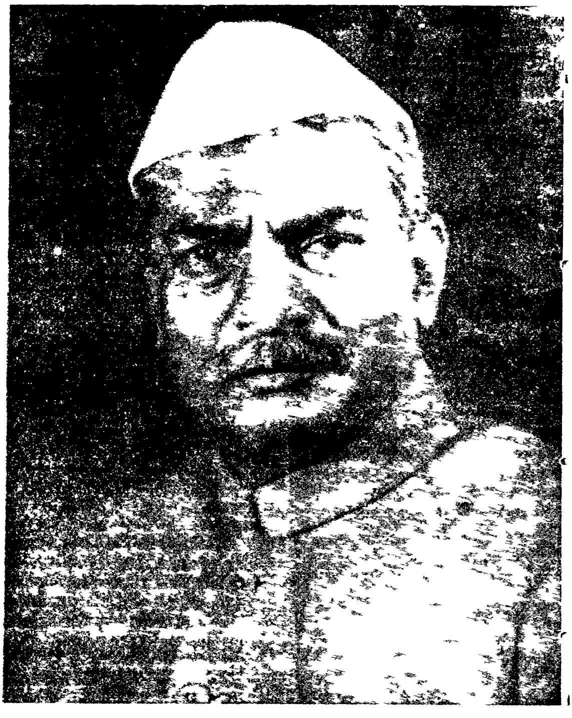
ओ३म्

आर्य-मित्र

ARYA-MITRA, AGRA

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

आगरा ६ दिसम्बर सन १९५१



हे प्रभो, महामति राष्ट्रपति, सुख सम्पन्न शतायु हो,
राजेन्द्र लोक कल्याण-हित, जुग-जुग जियें चिरायु हों।

मंगल कामना

३ दिसम्बर को सारे देश म राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद का ६७ वां वर्ष गांठ मनाया गया। इस शुभ अवसर पर मित्र परिवार राष्ट्रपति के चिरायुष्य के लिये मंगल कामना करता है।

अन्तरंगाधिवेशन की सूचना

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के अन्तरंग सदस्यों को सूचित किया जाता है कि सभा की अन्तरंग सभा का साधारण अधिवेशन गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन में महोत्सव के शुभावसर पर २३ दिसम्बर १६५१ दिन रविवार को मध्यान्होत्तर १२ बजे से होगा। कृपया सर्व सदस्यगण नियत समय पर पधारने की कृपा कर कृतार्थ करें।

—धर्मपाल विद्यालंकार, सभा मन्त्री

सभा का आगामी वृहदधिवेशन

उत्तर प्रदेशीय समस्त आर्य समाजों को सूचित किया जाता है कि सभा व समाजों का वर्ष ३१ दिसम्बर को समाप्त हो जायगा। पश्चात् सभा का आगामी वृहदधिवेशन ईस्टर अवकाश में बुलाया जायगा।

सभा के नियम सं० १५ भाग (अ) के अनुसार मंत्री महोदयों को सूचित किया जाता है कि यदि कोई आर्यसमाज सभा का वार्षिक अधिवेशन (वृहदधिवेशन) अपने यहां निमंत्रित करना चाहे तो स्थानीय आर्य समाज की अन्तरंग में विषय प्रस्तुत करके उसके निश्चय से १२ दिसम्बर १६५१ तक सभा को सूचित करें जिससे सभा की आगामी अन्तरंग में स्थान नियत करने पर विचार किया जा सके।

धर्मपाल विद्यालंकार
मंत्री
आ० प्र० सभा० उत्तरप्रदेश

अलमोड़ा अभियोग

आर्यमित्र के पाठकों को विदित ही है कि आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश ने आर्यसमाज मन्दिर अलमोड़ा के सम्बन्ध में एक दावा अदालत दीवानी में स्वामी कृष्णानन्द तथा अन्य कई व्यक्तियों पर दायर किया है जो डिप्टी कमिश्नर अलमोड़ा की अदालत में दायर किया गया था। अब यह दावा एडीशनल सिविल जज कुमायूं के यहां भेज दिया गया है। सभा ने समाज मन्दिर का मूल्य ६०००) मानकर दावा किया था। अदालत ने मन्दिर का मूल्य पी० डब्ल्यू० डी० से मगवाया था और इंजीनियर ने इसका मूल्य १७०००) बताया है। सभा ने छः सौ रुपये का कोर्ट फीस लगाया था अब लगभग सातसौ रुपये का और देना होगा। अभी १२ नवम्बर को मुकद्दमे की पेशी अलमोड़ा में थी अब २७ फरवरी नियत की गई है।

मुकद्दमा काफी विचार व परामर्श के बाद दायर किया गया है। सम्प्रति अलमोड़ा के एक प्रख्यात, उच्च श्रेणी के सीनियर एडवोकेट सभा की तरफ से कर लिये गये हैं सभा ने मुझे इसकी पैरवी करने का आदेश दिया है अतः मैं लगभग हर पेशी पर अलमोड़ा पहुँच जाता हूँ। रक्षा समिति में सभा के माननीय श्री राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्रीजी और श्री प० रामदत्तजी शुक्ल आदि हैं। जो सहायता समाजें भेजती हैं और भेज रही हैं वह सीधी सभा के कोष में जमा होती हैं और प्रधान सभा की आज्ञा से उसे व्यय किया जाता है। मुकदमे के सब हालात पत्र में नहीं छापे जा सकते हैं। जिन आर्य भाइयों को इसके सम्बन्ध में कोई जानकारी प्राप्त करनी हो वह पत्र द्वारा मुझसे पूछ लें या श्री राजगुरुजी, श्री० प्रधान सभा या श्री० प० रामदत्तजी से पूछ लेवें। व्यय सम्बन्धी विवरण कोष से मालूम हो सकता है।

इस समय तक ६००) कोर्ट फीस स्टाम्प २००) अलमोड़ा के वकील साहब, १००) इंजीनियर का खर्चा, लगभग १००) कागजात में और १००) मार्ग व्ययादि में व्यय हो चुका है। ७००) का कोर्टफीस अब दाखिल करना है। पिछली पेशी पर श्री रामप्रसाद टमटाजी वकील अलमोड़ा ने भी सभा की ओर से वकालत नामा दाखिल किया है आप अलमोड़ा की बार के एक प्रभाव शाली वकील, म्युनिस्पल बोर्ड के वाइस चेयरमैन, और एसेम्बली के सदस्य हैं। और अलमोड़ा के प्रख्यात टमटा परिवार के होनहार युवक हैं। आर्य समाज से प्रेम रखते हैं और सभा की सहायता करने में किसी पारिश्रमिक के इच्छुक नहीं हैं।

—शा नारायण शुक्ल एडवोकेट
संयोजक रक्षा समिति

स्व० श्री शूरजी वल्लभदास द्वारा

शिक्षा के लिये ढाई लाख का उदार दान

रु० १,००,००० स्व० माता वीरमती वल्लभदास के स्मरणार्थ,
रु० १,००,००० स्व० पिता वल्लभदास करमसी के स्मरणार्थ,
रु० ५०,००० स्व० भगनी चन्द्रप्रभा वल्लभदास के स्मरणार्थ।

उपर्युक्त दान द्वारा स्व० श्री शूरजी वल्लभदास ने श्री दयानन्द सरस्वतीजी के सिद्धान्तानुसार वैदिक शिक्षा प्रचार एवम् वेदों के अभ्यासार्थ निम्न लिखित तीन योजनाएं बनाई हैं:—

(१) माता श्री वीरमती वल्लभदास स्मारक ट्रस्ट द्वारा कन्याओं तथा स्त्रियों के लिए शिष्यवृत्ति,

(२) पिता श्री वल्लभदास करमसी स्मारक ट्रस्ट द्वारा विद्यार्थियों के लिये शिष्यवृत्ति,

(३) भगनी श्री चन्द्रप्रभा वल्लभदास स्मारक ट्रस्ट द्वारा विधवा बहनों को शिक्षण एवम् गृह उद्योगार्थ सहायता। इसमें अनाथ बहनों के लिये मासिक सहायता की भी योजना है।

तीनों स्मारक ट्रस्टों के लिये निम्न लिखित नियम निर्धारित किये गये हैं:—

(१) जिसमें प्रथम स्थान स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी के सिद्धान्तों का अनुसरण करती हुई, एवम् वैदिक शिक्षण देती हुई आर्य समाजी गुरुकुल संस्थाओं में अभ्यास करने वालों को मिलेगा।

(२) दूसरा स्थान आर्यसमाजी न होने पर भी स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी के सिद्धान्तों के विरुद्ध शिक्षा प्रचार न करते हों, एवम् वैदिक शिक्षण देने वाले हों—ऐसे गुरुकुल कि जहां केवल साहित्य शिक्षण का ही प्राधान्य न हो अपितु वैदिक शिक्षा ही मुख्य हो, वहाँ अभ्यास करने वालों को मिलेगा।

(३) तीसरा स्थान आर्य समाजी गुरुकुल एवम् शालाएं कि जहाँ वैदिक शिक्षण का प्रबन्ध न होते हुए भी स्वामी श्री दयानन्द सरस्वतीजी के आदर्शों का पालन होता हो, ऐसे स्थानों पर अभ्यास करने वालों को मिलेगा।

(४) चौथा स्थान किसी भी शिक्षण संस्था, शाला, विद्यालय या पाठशाला में अभ्यास करने वालों को दिया जायगा।

उपर्युक्त छात्रवृत्तियों के लिये चुनाव के प्रथम अधिकारी कच्छ लोहाणा, बाद में आर्यसमाजी और तदन्तर हिन्दूमात्र गिने जायगे।

हर एक शिष्यवृत्ति एवम् सहायता प्रथम एक वर्ष के लिये ही दी जायगी। छात्रवृत्ति प्राप्ति करने वाले की योग्यता एवम् अभ्यास देख ट्रस्टी स्वयम् ही शिष्य वृत्ति तथा सहायता के समय को बढ़ा देंगे।

इस ट्रस्ट से लाभ उठाने वाले अधिक समाचार चाहें तो—श्री शूरजी वल्लभदास एण्ड कंपनी, बौम्बे म्युचुअल बिल्डिंग, हर्नबी रोड, बम्बई १ इस पते से विस्तृत विवरण प्राप्त कर सकते हैं।

आर्य ॐ मित्र

लेख रश्मि दितहृत्तमो लसत् काव्यकोकनद जागरप्रदः।
अज्ञता घन विभावरी हरः, "आर्यमित्र" उदियर्ति सन्मुदे ॥

आगरा, मार्गशीर्ष शुक्ल ८ सवत् २००८ वि०, गुरुवार, ता० ६ दिसम्बर १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-सवत् १९७२९४९०५१

हमारी जन-सम्पर्क भावना

आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य परोपकार रहा है। जाति, वर्ग, देश की कृत्रिम मर्यादाओं से ऊपर उठ मानव मात्र और इससे भी अधिक जीव मात्र का उपकार करना हमारे ऋषि का हमारे लिये सन्देश था। हमने ऋषि के सन्देशानुसार प्रारम्भ में जो काय किया, उसने रूढिवाद तथा अन्य संकीर्ण भावनाओं के दुर्ग को भूमसात कर दिया, परन्तु क्या हमारा जन्म विनाश के लिये ही हुआ था। हमें कुछ निर्माण नहीं करना था, या है। क्रान्ति के इस उभयत्ती निदर्शन में निर्माण का कार्य हमारे लिये अछूता पड़ा है। हमने थोड़ी-सी शिक्षा संस्थाएँ और थोड़े-से आश्रम खोल कर अपने पुरोगम की इति श्री समझ ली है और हम उन्हीं के गोरखधन्धे में इतने उलझ गये हैं, कि हमें कुछ और करने की बात सूझती ही नहीं। जिस आर्य समाज का जन्म सामाजिक जीवन में प्रगति और प्रकाश का प्रसार करने के लिये हुआ हो, उसे अपना मार्ग भी न दीखे इससे बड़ा दुर्भाग्य क्या हो सकता है। वास्तव में बात यह है कि हमने जनता जनार्दन की समस्याओं से मुख मोड़ लिया है। जनता के कष्टों से हमें कोई सरोकार नहीं रहा, जनता रोटी, वस्त्र, निवास, आतङ्क, अनाचार, भ्रष्टाचार की छोटी-बड़ी समस्याओं के लिये हमारा सहयोग माँगती है। हम सरकार के अनौचित्य की कड़ी आलोचना करने में तो किसी से पीछे नहीं हैं, पर क्या इन समस्याओं के सुलझाने में हमने कोई सक्रिय सहयोग दिया? तब हमारी आलोचनाएँ निस्सार हैं। हमें आलोचना के साथ रचना में भी सहयोग देना होगा। जिस प्रकार देश के विभिन्न स्थानों में अकाल, भूकम्प, बाढ़ तथा अन्य आपत्तियों के आने पर आर्यसमाज के वीरों की टोलियाँ सेवा के लिये निकलती रही हैं, उसी प्रकार और उससे भी अधिक जोश के साथ देश के प्रत्येक स्थान में अज्ञान, अन्याय और अभाव के विरुद्ध मोर्चा लेने के लिये प्रत्येक आर्यसमाजी अपने को सैनिक समझ कर कार्य करे। भ्रष्टाचार की भयंकर समस्या के समाधान में प्रत्येक आर्यसमाजी दूसरों का निर्भीकता के साथ मुकाबला कर सकता है। क्योंकि हमने भ्रष्टाचार न करने की प्रतिज्ञा ली है, हमारे समाज के जिन साथियों ने इस ओर ध्यान नहीं दिया, उन्हें भी इस सदाचार की शपथ लेकर आगे आना चाहिये। आम चुनावों की निकटता के कारण जनता का सच्चा मार्ग प्रदर्शन करने तथा उसे झूठे प्रलोभनों से बचाने का महान् उत्तरदायित्व भी हमारे ऊपर है। कोई भी बड़े से बड़ा व्यक्ति या दल अपनी शक्ति और चालों से जनता को पथ-भ्रष्ट करना चाहे तो हमें उसके कार्यों और कुचक्रों का निर्भीकता से रहस्योद्घाटन करना होगा। इस प्रकार जनता की कठिनाइयों में उसका सच्चा सहायक और सच्चा मार्ग प्रदर्शक बन कर हमें अपना सम्पर्क बढ़ाना चाहिये। जहाँ हम दूसरों की ओर उंगली उठावें वहाँ हमें अपने दल और कार्यों की पवित्रता के लिये भी सदैव सचेष्ट रहना होगा। इसी पद्धति का अनुसरण कर हम आर्यसमाज की गौरव वृद्धि में सहायक बनेंगे और मानवता की सेवा में सफल प्रयत्न हो सकेंगे।

अंग्रेजी में चिन्तन

भारत की स्वतन्त्रता हमारी शारीरिक मानसिक आत्मिक त्रिविध उन्नतियों का मार्ग प्रशस्त करती है। हमने स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद अपनी शारीरिक (भौतिक) उन्नति की दिशा में ही सारा ध्यान लगाया है और हमारी मानसिक विचार-धारा अभी तक विदेशी बनी हुई है। प्रत्येक देश अपनी स्वतन्त्रता को तब तक अपूर्ण समझता है, जब तक उसकी अपनी कोई ऐसी सबल और सक्षम राष्ट्र भाषा न हो कि सारा देश उसी में चिन्तन करे। भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी बनाये जाने की घोषणा तो अवश्य की जा चुकी है, परन्तु उस दिशा में सक्रिय कार्य बहुत कम हुआ है। इसका कारण वही अंग्रेजी की मानसिक गुलामी है। राज्य के नेता और अधिकारी अंग्रेजी वातावरण में पालन-पोषित होने के कारण अनजाने मानसिक दासता से पीडित है। आचार्य विनोबा भावे ने अपने एक प्रवचन में सरकार की अंग्रेजी चिन्तन की नीति की निन्दा की है, और सम्पूर्ण राज-काज तथा विचार विमर्श राष्ट्र-भाषा हिन्दी में ही करने का आग्रह किया। उन्होंने बताया कि अंग्रेजी में चिन्तन करने का ही परिणाम है कि 'सैक्यूलरिज्म' की अनेकों व्याख्याएँ भारतीय जनता के सामने विविध दृष्टिकोणों के व्यक्ति उपस्थित करते हैं। इस शब्द की पवित्र भावना के स्थान पर इसे राज्य के मौलिक सिद्धान्तों की हीनता का उदाहरण बताया जाता है। यह एक छोटा-सा उदाहरण है, जो अंग्रेजी में चिन्तन के दुष्प्रभाव को व्यक्त करने के लिये पर्याप्त है। इसके अतिरिक्त विगत 'ओलम्पिक' क्रीडाओं में सम्मिलित होने वाले जापानी खिलाड़ियों और अफगानिस्तान के प्रधानमन्त्री आदि विदेशियों ने भारत में अंग्रेजी के प्रभाव को देखकर आश्चर्य प्रकट किया और भारत को स्वकीय भाषा में चिन्तन करने की प्रेरणा की। क्या यह हमारे लिये लज्जा की बात नहीं है कि हमें दूसरे छोटे-छोटे देश आकर शिक्षा दें। यद्यपि राजकार्य में राष्ट्रभाषा के सर्वाङ्गीण प्रयोग में पर्याप्त असुविधाएं है, तथापि कठिनाइयाँ तो दूर करनी ही पड़ेंगी। हमारा ध्यान उस ओर केन्द्रित तो होना ही चाहिये। राज्य के अतिरिक्त जनता का भी इस दिशा में कम उत्तर दायित्व नहीं है। राज्य ने हिन्दी में तारों के प्रचलन की व्यवस्था की, परन्तु हिन्दी प्रेमी सार्वजनिक कार्य कर्ता और संस्थाएं हिन्दी में तार न देकर अंग्रेजी में ही तार देती हैं, क्या इसके लिये भी सरकार को दोष दिया जाना चाहिये। इसी प्रकार व्यक्तिगत जीवन में, पत्र-व्यवहार में, हिसाब किताब में, पत्रों पर पते लिखने में, निमन्त्रण आदि कार्यों में अंग्रेजी को ही प्रधानता दी जाती है। यह सब हम लोगों की मानसिक दासता है। जितना शीघ्र हो सके हमें इस दासता से भी मुक्त होने का प्रयत्न करना चाहिये।

जरायम पेशा जातियों का कलङ्क

विदेशी शासन ने देश में जिन बुराइयों को जन्म दिया उनमें जरायम पेशा जातियों का कलंक भी है। यद्यपि न्याय-बुद्धि के अनुसार समस्त सभ्य संसार इस सिद्धान्त को स्वीकार करता है कि 'कोई भी मनुष्य जन्म से अपराधी उत्पन्न नहीं होता' परन्तु विदेशी राज में जरायम पेशा जाति के व्यक्तियों की सन्तानों को उत्पन्न होते ही अपराधियों की श्रेणी में अंकित कर लिया जाता था, और उनके ऊपर वैसी ही निगरानी रखी जाती थी जैसी चोरों, बदमाशों पर। इस कानून की स्वाभाविक प्रतिक्रिया उन बच्चों को कुमार्ग पर ले जाती थी। होना यह चाहिये था कि इस प्रकार के सभी व्यक्तियों को शिक्षित बनाने के लिये शिक्षा का प्रबन्ध किया जाता और उन्हें सुधारा जाता पर होता इससे उल्टा रहा। यह हर्ष की बात है कि अब राज्य मन्त्री श्री सिधवा ने दिल्ली राज्य के जरायम पेशा जाति कानून को रद्द करने की घोषणा की है। हम इस घोषणा का स्वागत करते हुए चाहते है कि समस्त भारत में इस प्रकार के अमानवीय कानूनों को रद्द करने की तुरन्त घोषणा की जाय और इन दीन-हीन, अभाव ग्रस्त व्यक्तियों के उत्थान की ओर ध्यान दिया जाय। कानूनी रुकावट हटा देने मात्र से किसी प्रकार का मौलिक सुधार नहीं हो सकता,

इन जातियों को उचित मार्ग दिखाना और उसके लिये साधन जुटाना भी राज्य और जनता का कर्तव्य होना चाहिये। आर्यसमाज इस आदर्श कार्य में प्रारम्भ से ही रुचि रखता रहा है। लखनऊ में आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की संरक्षता में आर्यनगर सैटिलमैंट स्थापित है, जहाँ इस प्रकार के व्यक्तियों को शिक्षित बनाने का कार्य लगभग २५ वर्षों से हो रहा है। देश का समाज सुधारक वर्ग इस दिशा में अधिक गम्भीरता पूर्वक विचार करे और सक्रिय भाग ले। तभी समस्या का हल निकल सकता है अन्य प्रकार नहीं।

———

मद्य और अस्त्र-शास्त्रों पर प्रतिबन्ध

भारत के आम निर्वाचन ज्यों ज्यों समीप आ रहे हैं त्यों-त्यों देश की शान्ति रक्षा खतरे में पड़ती जाती है। अभी गुजरात से समाचार मिला है कि दो निर्वाचन-प्रचारकों को प्रचार करते हुए गोली से उड़ा दिया गया। ये लक्षण शुभ नहीं हैं, और संकेत करते हैं कि आगे क्या क्या होगा। उत्तर प्रदेश की सरकार ने निर्वाचन से पूर्व अशान्ति प्रसारक गुण्डों को पकड़ने की घोषणा की है, हम इसका स्वागत करते हैं। परन्तु हम इतना ही पर्याप्त नहीं समझते। हमारी सम्मति में देशको अशान्ति से बचाने के लिये प्रत्येक प्रकार के अस्त्र शस्त्रों पर निर्वाचन काल तक के लिये प्रतिबन्ध लगा देना चाहिये। तभी इस प्रकार की भयंकर दुर्घटनाएं रुक सकेंगी। इसके साथ ही एक मद्य पर भी प्रतिबन्ध लगाया जाना चाहिये। निर्वाचनों में सुरा का प्रबल प्रवाह बुद्धि को विकृत कर अशान्ति का कारण बनता है, और साथ ही निर्वाचकों के लिये उसे एक बुरा आकर्षण भी बनाया जाता है सुनने में आया है कि एक बड़े शहर के चुंगी-चुनावों में सुरा सुन्दरी का व्यापक प्रचार था और इसी के आधार पर बहुत-से चुनाव जीते गये। हम समझते हैं कि निर्वाचन-काल तक के लिये आर्थिक हानि का विचार किये बिना शराब के ठेकों को भी बन्द कर दिया जाय। क्या अहिंसक और मद्यनिषेधक गांधीजी की अनुयायी सरकार शान्ति रक्षा के नाम पर यह उचित पग उठाने का साहस न करेगी।

———

हिन्दी की उपेक्षा—राष्ट्रिय अपमान

संयुक्त राष्ट्र संघ के अधिकारियों ने संघ के पेरिस अधिवेशन की कार्यवाही को हिन्दी में प्रसारित करने के लिये भारत सरकार को एक सुयोग्य हिन्दी 'कमेन्टेटर' भेजने के लिये लिखा था। भारत सरकार के रेडियो विभाग में जब यह समाचार पहुँचा तब वहाँ प्रसन्नता के स्थान पर आश्चर्य और स्तब्धता प्रकट की गयी। कारण यह कि यद्यपि हिन्दी राष्ट्र-भाषा अवश्य है, तथापि रेडियो विभाग के ऊंचे अधिकारियों को हिन्दी से अधिक प्रेम नहीं है। विभाग के मिनिस्टर कन्नड भाषी, डाइरैक्टर जनरल मलयालम विशेषज्ञ, सैक्रेटरी बंगाली के विद्वान्, समाचार विभाग के डाइरेक्टर उर्दू के आलिम-फाजिल और विदेशी विभाग की अधिकारिणी गुजराती विशेषज्ञ पारसी महिला हैं। हिन्दी शाखा में एक दो ऊंचे स्तर के विद्वान् अवश्य हैं, पर उनकी कुछ चलती नहीं। हिन्दी उपेक्षक इस वायु मण्डल ने यू० एन० ओ० के आवेदन पर बहुत सोच-विचार और खोजबीन के बाद लाहौर में आये हुए एक खोसला साहब को चुना जिनको हिन्दी का अक्षर ज्ञान भी अच्छी तरह नहीं होगा। परिणाम स्वरूप उन्होंने पेरिस से जो कमेन्टरी हिन्दी में दी है, उसे सुनकर हंसी तो आती ही है शर्म के साथ सर भी नीचे झुक जाता है। विदेशों में हिन्दी का सम्मान ज्यों ज्यों बढ़ रहा है त्यों त्यों हमारे अपने देश में उसके अपमान और प्रतारण के षडयन्त्र बढ़ते चले जाते हैं। क्या रेडियो-विभाग के मन्त्री महोदय राष्ट्र भाषा गौरव वृद्धि के लिये हिन्दी के किसी उच्च कोटि के विद्वान् को नहीं चुन सकते थे। हमारी दृष्टि में रेडियो-विभाग ने हिन्दी को विदेशों में प्राप्त सम्मान कम करने वाले इस कार्य द्वारा राष्ट्रभाषा का अपमान ही नहीं उसके साथ विश्वासघात भी किया है। क्या यह नीति इसी प्रकार चलती रहेगी?

———

अध्यात्म धारा

कल्याण-पथ

श्री आत्मानन्द

आज मनुष्य अत्यन्त दुखी है। संसार में कितने मनुष्य हैं जो सत्यता पूर्वक कह सकते हैं कि हम पूर्ण रूप से सुखी हैं। हम मानव जो 'सृष्टि के रत्न मुकुट' होने का दावा करते हैं, जब सुखी नहीं हैं, तो यह निष्कर्ष सहज में निकाला जा सकता है कि सृष्टि कर्त्ता की सृष्टि कल्याणमय नहीं है। पर क्या यह निष्कर्ष ठीक है? क्या संसार मिथ्या है? क्या इसमें दुख ही दुख है? क्या इसको छोड़ने में ही कल्याण है। फिर इसको त्याग कर मनुष्य कहाँ जा सकता है? इत्यादि प्रश्न मनुष्य के मस्तिष्क में सहज ही में उत्पन्न होने लगते हैं।

यद्यपि मनुष्यों में हम देखते हैं कि कोई धन की चिन्ता में गल रहा है, तो किसी को सन्तान दुःख है। किसी का पुत्र कुपुत्र है तो किसी की स्त्री उसकी आज्ञा कारिणी नहीं है। किसी को दाने-दाने के लिये तरसना पड़ता है, तो किसी के पास इतना धन है कि उसको चोर, डाकुओं का भय है परन्तु इसके विरुद्ध हम देखते हैं कि पशु पक्षी चैन से अपने दिन व्यतीत करते हैं। जहाँ उनका पेट भर गया, उसके पश्चात् वह वृक्षों पर बैठकर गाना गाते हैं, आकाश में उड़ान करते हैं अथवा जङ्गलों में चौकड़ी भरते हैं। यदि ईश्वर की सृष्टि दुःखमय होती तो यह संसार मनुष्यों से अधिक पशु-पक्षियों के लिये दुखमय होता।

बालकों को देखकर हमको अपने बाल्यकाल की स्मृति होती है। हम सोचते हैं कि हमारा बचपन कितना आनन्दमय था। मित्रों के साथ उठना-बैठना, दिन भर खेलना-कूदना, बड़ों की मार खाने के तुरन्त ही पश्चात् प्रसन्न रहना यह सब सिद्ध करते हैं कि हमारा बचपन बड़ा ही आनन्दमय था यदि सृष्टि अकल्याणकारी होती तो हमारा बचपन इतना आल्हादकारी क्यों होता।

इसी प्रकार अपने इतिहास ग्रन्थों में हम पढ़ते हैं कि ऐसे अनेक महात्मा हो गये हैं जो संसार में रह कर अपना प्रतिदिन का कार्य करते हुए अत्यन्त आनन्द के साथ जीवन-यापन करते थे। वे लोग 'मुक्त' की पदवी प्राप्त कर चुके थे। वे संसारी चिन्ताओं से पूर्णतया विरक्त हो गये थे। यदि संसार अकल्याणकारी होता तो इस संसार में रह कर कोई मनुष्य मोक्ष लाभ कैसे कर सकता था।

वर्तमान काल में भी ऐसे महात्मा हैं जिन्होंने अपने जीवन में पूर्ण आनन्द लाभ प्राप्त कर लिया है। ऐसे महात्मा साधारणतया दृष्टि गोचर नहीं होते क्योंकि इनको पहचानने के लिये पारखी होना चाहिये। पर थोड़ा सा भी इस ओर विचार करने से ज्ञात हो जायगा कि कितने ही मनुष्य आनन्द के मार्ग की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

इन सब बातों को देखते हुए प्रत्येक समझदार व्यक्ति यह मानने को तैयार नहीं होगा कि ईश्वर की सृष्टि उसकी कुछ प्रजा के लिये कल्याणकारी है और कुछ के लिये अकल्याणकारी। मनुष्य तो ईश्वर का प्यारा पुत्र है। उसके लिये तो वह अपनी सृष्टि को कभी दुःखमय बना ही नहीं सकता। ईश्वर आनन्दमय है। भला आनन्दमय भगवान की सृष्टि अकल्याणकारी कैसे हो सकती है? इस प्रकार का विचार मन में आना ही भगवान के अस्तित्व को न मानना है।

पंचदशी में लिखा है।

'अबाधकं साधकं च द्वैतं ईश निर्मितम्'

'श्रेयस की सिद्धि में यही नहीं कि यह ईश्वर की सृष्टि बाधक नहीं, बल्कि यह उसकी साधना करने वाली है' इसी संसार में रह कर मनुष्य पूर्ण सुखी रह सकता है।

वास्तव में ईश्वर की कृति सारे विश्व के प्राणियों के लिये कल्याणकारी है।

———

सामयिक समस्याएँ

मेरठ आर्य महासम्मेलन की प्रेरणा

श्री पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति

मुझे दुःख है कि अस्वस्थ होने के कारण मैं मेरठ के आर्य महा सम्मेलन में उपस्थित न हो सका, परन्तु मेरा ध्यान उसकी ओर लगा रहा; समाचार पत्रों में उसके सम्बन्ध में जो कुछ प्रकाशित हुआ, उसे पढ़ता रहा और सम्मेलन से जो आर्य भाई लौट कर आये उनसे वहाँ के वृत्तांत सुनता रहा। पढ़े और सुने हुये समाचारों से बहुत कुछ विदित हो गया परन्तु जो कुछ सामने आया वह पूरा चित्र नहीं था। चित्र को पूरा करने के लिये मैंने सम्मेलन में स्वीकृत सब प्रस्तावों का साद्यन्त अनुशीलन किया। इस सम्पूर्ण अवगाहन से मेरे चित्त में जो विचार-परम्परा उत्पन्न हुई, उसको प्रकट करने के लिये ही मैं यह लेख लिखने में प्रवृत्त हुआ हूं। मैंने सम्मेलन पर इस दृष्टि से विचार किया है कि उसने आर्य समाज के सामने आये हुये किन-किन प्रश्नों के उत्तर दिये हैं और किन के नहीं दिये? जो उत्तर दिये हैं उनका व्यावहारिक रूप क्या है, और आर्य जनों को उनसे कितनी और कैसी प्रेरणा मिलेगी, इसी विवेचन में, आर्य समाज सम्बन्धी कुछ अन्य प्रसंगागत समस्याओं पर भी थोड़ा बहुत निवेदन करता जाऊँ तो पाठक क्षमा करेंगे।

पहले मैं दो एक प्रसंगागत प्रश्नों को ही लेता हूं, क्योंकि वह प्रश्न सम्मेलन से सीधा सम्बन्ध न रखते हुये भी बहुत मौलिक और महत्वपूर्ण हैं। आर्य समाज के भावी कार्यक्रम के विषय में स्पष्टता से विचार करने से पूर्व इस प्रश्न का उत्तर जान लेना अत्यन्त आवश्यक है कि आर्य समाज के सगठन का उद्देश्य या लक्षण क्या है। आर्य समाज के उपनियमों में उद्देश्य के सम्बन्ध में निम्नलिखित शब्द हैं। "इस समाज के वही उद्देश्य हैं, जो इसके नियमों में वर्णन किये गये हैं"। इसका अभिप्राय यह है कि आर्य समाज के नियम ही आर्य समाज के उद्देश्य हैं। जब हम इस स्थापना का विश्लेषण करते हैं, तो हमारे सामने एक उलझन खड़ी हो जाती है। जिन्हें आर्य समाज के नियम कहा जाता है वे वस्तुतः आर्य समाज के मूल सिद्धान्त या मन्तव्य हैं। आप नियमों को पढ़ कर देखिये, वे शब्द शास्त्र की दृष्टि से नियम नहीं कहला सकते, वे मूल सिद्धान्त हैं।

अब आप इस प्रश्न पर विचार कीजिये कि क्या उन्हें किसी संस्था के उद्देश्य माना जा सकता है। संस्था का उद्देश्य किन्हीं विचारों का प्रचार, या विचारों को कार्यान्वित करने के लिये प्रयत्न करना तो हो सकता है, परन्तु केवल मूल सिद्धान्तों को अपने आप ही उद्देश्य नाम नहीं दिया जा सकता। पहला विचारणीय विषय तो यही है कि क्या हमारे लिखित नियमोपनियमों में कुछ शाब्दिक प्रश्नो को बदलने की आवश्यकता है या नहीं। मेरी सम्मति है कि परिवर्तन का यह रूप होना चाहिये जो हमारे दस नियम कहे जाते हैं, वह दस मूल सिद्धान्त कहे जायें, और उनका शाब्दिक और क्रियात्मक प्रचार आर्य समाज का उद्देश्य माना जाये। इस विचार परम्परा के अनुसार मैं यह मान कर इस विवेचन को प्रारम्भ करता हूं कि आर्य समाज का उद्देश्य अपने मूल सिद्धान्तों का सब उचित उपायों से विश्व भर में प्रचार करना है।

अब हमें यह देखना है कि मेरठ के आर्यसम्मेलन में जो प्रस्ताव स्वीकृत हुये वे उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति में कहाँ तक सहायक हैं, और कि उनसे आर्य जनों को अपने कार्य के प्रति कितना प्रोत्साहन मिलेगा। दूसरे शब्दों में हम इस प्रश्न को इस रूप में रख सकते हैं कि सम्मेलन के प्रस्तावों ने आर्य जनों और आर्य समाजों का मार्ग दर्शन कहाँ तक और कैसा किया है। इस प्रश्न के उत्तर में ही सम्मेलन के निश्चयों का निचोड़ आ जायगा।

सम्मेलन के कुछ प्रस्ताव तो रिवाजी थे। सब से पहला शोक प्रस्ताव था। वह तो रिवाजी था ही, अन्य भी कई प्रस्तावों को रिवाजी ही समझना चाहिये। भारत सरकार से प्रार्थना करने वाले जितने प्रस्ताव हैं, उन्हें मैं रिवाजी ही कहूँगा क्योंकि सरकार के दरबार में उनका उतना भी मूल्यांकन नहीं होगा जितना उस कागज का है जिस पर वे लिखे गये हैं। कारण यह है कि हमारी राष्ट्रिय सरकार पर प्रस्तावों या समाचार पत्रों के लेखों का उतना भी प्रभाव नहीं पड़ता जितना अंग्रेजी सरकार पर पड़ता था। राष्ट्रिय सरकार के नेता स्वयं आन्दोलनकारी रह चुके हैं, इस कारण उन्हें विश्वास हो गया है कि ऐसे आन्दोलनों में कोई सार नहीं होता। सभासम्मेलनों के प्रस्ताव और समाचार पत्रों के लिखे लेखों का मूल्य वह पानी पर आये हुये झाग से अधिक नहीं लगाते। विशेष रूप से से धार्मिक या सांस्कृतिक मामलों में तो हमारी सरकार सर्वथा सुप्त है। यह जानते हुये भी यदि हम सरकार से आशा प्रकट करने वाले प्रस्ताव स्वीकार करते हैं तो उनका रिवाज पूरा करने के अतिरिक्त और क्या उद्देश्य हो सकता है। प्रस्तावों में २, ४, और ६ पूर्ण रूप से अथवा आंशिक रूप से इसी कोटि में आते हैं।

शेष प्रस्तावों पर विचार करें तो हम उन्हें निम्नलिखित शीर्षकों के नीचे ला सकते हैं।

१—आर्य समाज और राजनीति। ५ वाँ तथा ६ ठा प्रस्ताव।

२—भ्रष्टाचार सम्बन्धी। ७ वाँ प्रस्ताव।

३—सांस्कृतिक प्रचार तथा विश्व शांति विषयक प्रस्ताव। २ रा, ८ वाँ तथा १४ वाँ।

४—शिक्षा, हिन्दी तथा साहित्य निर्माण सम्बन्धी। प्रस्ताव संख्या ६, १०, ११ तथा १२।

५—वैधानिक। प्रस्ताव सं० २ तथा १३।

आर्य समाज और राजनीति के सम्बन्ध में जो प्रस्ताव स्वीकार किया गया है, वह नया नहीं है। कलकत्ते के सम्मेलन में वह स्वीकार हो चुका है और उसके पश्चात् कई सम्मेलनों और सभाओं में दुहराया जा चुका है। कई बार दुहराया जा कर भी सम्भवतः वह अनेक आर्य सज्जनों को स्वीकार्य नहीं था, इस कारण उसे फिर से स्वीकार करना पड़ा। मेरा विचार है कि मेरठ का सम्मेलन मूलरूप में राजनीति सम्बन्धी प्रस्ताव पर पुनर्विचार करने के लिये ही किया गया था। यह प्रसन्नता की बात है कि आर्य सम्मेलन ने फिर एक बार निश्चित रूप से घोषणा कर दी है कि; 'आर्य समाज व हैसियत आर्यसमाज प्रचलित राजनीति में तथा चुनाव में भाग न ले' भाषा की दृष्टि से यह प्रस्ताव उतना सुन्दर नहीं जितना कलकत्ता सम्मेलन का था। यह कहना अधिक सार्थक है कि, 'आर्य समाज समूह रूप में या संस्था रूप में प्रचलित' राजनीति तथा चुनाव में भाग न ले' फिर भी भाव प्रायः स्पष्ट है। आशा है, अब बार बार इस प्रश्न को उठाकार आर्यसमाज के धन और शक्ति का व्यर्थ व्यय न किया जायगा।

छठा प्रस्ताव पाँचवे प्रस्ताव का ही परिणाम है। जो आर्य जन प्रचलित राजनीति तथा चुनाव में भाग लेना आवश्यक समझते हैं, उनके मार्ग-प्रदर्शन के लिये १५ आर्य विद्वानों की एक समिति बना दी गई है। यह समिति अब उस विलम्बकाल में चुनाव के बारे में कोई प्रभावयुक्त मार्ग प्रदशन कर सकेगी, यह आशा तो कम है, फिर भी एक समिति बन गई यह पर्याप्त सन्तोष का विषय है।

राजनीति सम्बन्धी प्रस्ताव अत्यावश्यक भी है, और स्पष्ट भी, परन्तु क्योंकि वह निषेधात्मक है, इस कारण वह प्रेरणाप्रद नहीं है। वह आर्य जगत् को एक हानिप्रद रास्ते पर जाने से रोकता है इस समय किस रास्ते से जाना चाहिये यह नहीं बतलाता विधानात्मक प्रस्तावों में से पहला प्रस्ताव भ्रष्टाचार विरोध के सम्बन्ध में है। उस प्रस्ताव में आर्य समाजों को यह आदेश दिया गया है कि वे सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा संचालित भ्रष्टाचार विरोधी

आन्दोलन को प्रबल और संघटित बनाने में पूर्ण सहयोग दे। यह एक क्रियात्मक प्रस्ताव है, परन्तु इसका क्षेत्र बहुत कुछ परिमित रक्खा गया है। यह भारत तक सीमित है, फिर इसके भी सिनेमा आदि विभागों से ही सम्बन्ध रखता है, और उसकी समाप्ति भी सरकार द्वारा प्रतिबन्ध लगाने के प्रबल यत्न पर ही हुई है। यदि इस प्रस्ताव को भी रिवाजी कहें तो अनुचित न होगा, क्योंकि भारतीय राजनीति की प्रचलित प्रथा के अनुसार जिन प्रस्तावों में सरकार से कुछ प्रार्थना की जाये या सरकार से कोई आशा रखी जाये, वह कागजी घुड़ दौड़ से आगे नहीं जाते। सरकार की दीवारें संगीन बनाई गई हैं, इन के अन्दर बाहर की गर्मी-सर्दी का या किसी प्रकार की ध्वनि का प्रवेश सम्भव नहीं। अंग्रेजों के राज्य काल में यह दशा थी, और आज भी यही दशा है। आज वही प्रस्ताव क्रियात्मक समझा जाता है जिसका भरोसा सरकार पर न हो। प्रस्ताव को पढ़ने से यह ध्वनि निकलती है कि हम भ्रष्टाचार को रोकने के लिये भी सरकार का ही सहारा ढूँढ रहे हैं। यह मानसिक दशा चिरकाल की पराधीनता के कारण स्वाभाविक हो गई है, परन्तु इसके बदले बिना हमारा निस्तारा नहीं।

अब मैं सम्मेलन के सांस्कृतिक तथा विश्व-शांति सम्बन्धी प्रस्तावों पर आता हूँ। यह सचमुच खेद की बात है कि ये प्रस्ताव भी सरकार की उपेक्षा न कर सके। प्रस्ताव सरकारी सम्पर्क सम्बन्धी हैं। इसमें विदेशों से सांस्कृतिक सम्पर्क बढ़ाने की चर्चा है। परन्तु उसमें आर्य समाज या आर्य समाजियों का कोई हिस्सा प्रतीत नहीं होता। प्रस्ताव के शब्द निम्नलिखित हैं। "इस सम्मेलन की राय है कि यह समय आ गया है जब कि भारत अपना सांस्कृतिक सम्पर्क अन्य देशों के साथ विशेष कर एशिया खंड के सभी देशों के साथ पुनः स्थापित तथा सुदृढ़ करे। यह सम्मेलन भारत सरकार से भी अनुरोध करता है कि ....."। मन में प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि आर्य समाज इस विषय में क्या करेगा?

आठवाँ प्रस्ताव सांस्कृतिक प्रचार के सम्बन्ध में है। इसे निर्देशक प्रस्ताव कह सकते हैं, क्योंकि यद्यपि उसमें आर्य समाज या सार्वदेशिक सभा का नाम नहीं आया तो भी समझा जा सकता है कि क्योंकि सम्मेलन के सभी प्रस्तावों को कार्यान्वित करना सार्वदेशिक सभा के सुपुर्द किया गया है, यह प्रस्ताव भी सभा को ही कार्यान्वित करना होगा।

१४ वाँ प्रस्ताव घोषणात्मक है, इसमें कोई इतिकर्तव्यता नहीं है, केवल इन लोगों को एक सैद्धांतिक बात बतलाई गई है, जो सम्मेलन के प्रस्तावों को सुनें या पढ़ें।

शिक्षा-सम्बन्धी प्रस्तावों में भी सरकार विद्यमान है। ९ वें प्रस्ताव में कहा गया है कि वह भारतीय परम्परा के विरुद्ध शिक्षा देने वाली संस्थाओं की व्यवस्था करे।

साहित्य-निर्माण सम्बन्धी प्रस्ताव सरकार के स्पर्श से मुक्त है। इसमें एक विशाल केन्द्रीय पुस्तकालय की स्थापना का आदेश दिया गया है, जिस के द्वारा पुस्तकों तथा पत्रिका का प्रकाशन हो और अन्वेषण कार्य भी हो। यह कार्य भी सम्भवतः सार्वदेशिक सभा को ही करना होगा क्योंकि इस के लिये अर्थ और संघटन की व्यवस्था किसी संस्था द्वारा ही हो सकती है।

हिन्दी सम्बन्धी प्रस्ताव में एक ओर केन्द्रीय सरकार से कहा गया है कि वह हिन्दी के विषय में प्रांतीय सरकारों के नाम आदेश जारी करे, और साथ ही नागरिकों से प्रेरणा की गई है कि वे हिन्दी के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करें।

तीसरा और तेरहवाँ प्रस्ताव वैधानिक है। तीसरे प्रस्ताव में व्यवस्था दी गई है कि सम्मेलन के प्रस्तावों को कार्यान्वित करना सार्वदेशिक सभा का कर्तव्य है और तेरहवें प्रस्ताव में आर्य मात्र से अनुरोध किया गया है कि वे सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रचारित सन्ध्या तथा हवन की पद्धति को ही व्यवहार में लावें।

मैंने सम्मेलन के सभी प्रस्तावों का यह संक्षिप्त विश्लेषण इस निमित्त से किया है कि हम उनमें से जहां एक ओर उन मुख्य बातों को ध्यान में ला सकें जिन की ओर हमारा ध्यान सम्मेलन ने आकृष्ट किया है, वहाँ हम यह भी समझ सकें कि आर्य जगत् के लिये मेरठ सम्मेलन की नई देन क्या है। वह कौनसी नई भावना की लहर है जिसे इस सम्मेलन ने आर्य जगत् में जागृत करके वर्तमान शिथिलता को तोड़ने का यत्न किया है। इस विश्लेषण से हम निम्न लिखित परिणाम पर पहुचते हैं।

१—इस सम्मेलन ने आर्य-समाज और राजनीति की जटिल समस्या का अन्तिम फैसला करके एक निरन्तर जागृत रहने वाले झमेले को शान्त कर दिया है।

२—इस सम्मेलन ने बहुत से आवश्यक कार्यों की ओर सरकार का ध्यान आकृष्ट किया है।

३—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को सांस्कृतिक सम्पर्क और साहित्य निर्माण के कार्य को सगठित और सम्पन्न करने की प्रेरणा की गई है।

४—जिसे जनता के लिये सन्देश कहा जा सकता है, वह भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलन से सम्बन्ध रखता है, परन्तु इसका भी केन्द्र सरकार ही बन गई है। क्योंकि सिनेमा और रेडियो का सुधार उसी के हाथ में है। आर्य-जनता का आन्दोलन उस में प्रेरक मात्र होगा।

मेरे लेख का यह अभिप्राय नहीं कि मैं मेरठ सम्मेलन के दोषों का प्रदर्शन करूं वह बहुत शानदार और सफल समारोह था, जिसके लिये उसके संयोजक हार्दिक बधाई के पात्र हैं, परन्तु यह बात असंदिग्ध है कि वह सम्मेलन अपने पीछे कोई विशेष प्रेरणा नहीं छोड़ गया और यह भी असंदिग्ध है कि इस समय आर्य समाज के लिये एक प्रेरणा की अत्यन्त आवश्यकता है। प्रश्न यह है कि उस प्रेरणा ढूंढने का क्या उपाय किया जाय।

—अपूर्व

सुझाव और सम्मतियाँ

भ्रष्टाचार और आर्यसमाज

देश में भ्रष्टाचार इतना व्यापक हो रहा है कि आज तक के इतिहास में कभी नहीं रहा। इतना ही नहीं, किसी भी देश में रहा हो इसका प्रमाण नहीं मिलता। यह घोर नैतिकपतन का द्योतक है, इसके विरुद्ध घोर संग्राम करने के लिये आर्यसमाज को कटिबद्ध होना चाहिये। इसका प्रारम्भ यहीं से हो कि जो भी इसका दोषी हो वह आर्यसमाज से पृथक् हो जावे या आर्यसमाज की सदस्यता से पृथक् कर दिया जाय। यह स्पष्ट घोषणा कर देनी चाहिये, निर्णय आर्यसमाज की न्याय सभा द्वारा हो। यदि एक आर्य पुरुष न तो घूम ले न ब्लैक करे तो समझना चाहिये कि आर्यसमाज सफल है। सदाचार का यह बड़ा भारी मापदण्ड है। यदि यह कार्य आर्यसमाज द्वारा होगा तो आर्यसमाज का गौरव बढ़ेगा। यह अत्यन्त ही त्याग और कष्ट का काम है, पर असम्भव है सो बात नहीं।

—ब्रह्मदत्त जिज्ञासु

ऋषि-ऋण

ऋषि ने आर्यसमाज की स्थापना करते समय यह सोचा था कि मेरे पीछे ये आर्य बन्धु आर्य-समाज को चलाते रहेंगे। उन्होंने दूसरों से आर्यों की विशेषता प्रकट करने का आधार आर्यों के सदाचार को माना था। दूसरे लोगों से हम आचार की महत्ता के कारण बड़े माने जाते थे परन्तु आज हम में और सर्व साधारण में क्या अन्तर रह गया है, ७५ वर्ष के भीतर ही हम ऋषि-ऋण को भुला बैठे हैं, आज का दुखी संसार अपने उद्धार के लिये हमारी ओर टकटकी लगाये देख रहा है परन्तु हम विश्व की आशा कैसे पूर्ण करेंगे। हममें न स्वाध्याय है, न श्रद्धा, न विद्वत्ता और न गम्भीरता। तब हम अपने को संसार का नेता कैसे कह सकते हैं। ऋषि-ऋण से उऋण होने के लिये हमें कठोर संयम और साधना की आवश्यकता है।

—धर्मानन्द, प्रयाग

महिला-मण्डल

शिक्षित बहनों का कर्तव्य

श्री शकुन्तला प्रभाकर

समय-समय पर अनेकों शिक्षित बहनें कहा करती हैं कि हमने शिक्षा प्राप्त करली और हमें अच्छा घर मिल गया हम सुखी हैं हम महिला जागृति के आन्दोलन में क्यों और कैसे सम्मिलित हों। जहाँ तक क्यों का प्रश्न है उसके सम्बन्ध में यही कहा जा सकता है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है यदि प्रत्येक मनुष्य समाज के हित का ध्यान रक्खे और उसके लिये कार्य करे तो वह अपने कर्तव्य का पालन करता है। जो बहनें शिक्षित और सुखी हैं उनको शिक्षा और सुख के लिये भी तो दूसरों ने सहयोग दिया है तब वे क्यों न दूसरों के हित का कारण बनें। इसलिये हमारी शिक्षित बहनों को नारी-समाज की उन्नति के लिये सदैव तत्पर रहना चाहिये। जहाँ तक तरीके का प्रश्न है वह अपनी अपनी सुविधा के अनुसार अपनाया जा सकता है।

जो बहनें अपने अवकाश का समय सेवा कार्य में लगाना चाहें उनके लिये नगर स्वास्थ्य सुधार का कार्य भी उपयोगी कार्य हो सकता है। नागरिक भावना का सच्चा स्वरूप यही है कि हम तो स्वयं स्वच्छ और शुद्ध रहें ही अपने पास पड़ौस को भी साफ सुथरा कर बनावें। हमारे देश में अपना घर साफ करने की तो आदत है पर हमारी सफाई दूसरे के घर को गन्दा तो नहीं करती इस भावना का कोई ध्यान नहीं रक्खा जाता। सामान्यतः अपने घर की सफाई कर कूड़ा बाहर गली में या दूसरों के घरों के सामने फेंक दिया जाता है इस प्रकार यदि किसी बहन का घर अन्दर से साफ भी हो तो स्वास्थ्य पर मुहल्ले के वातावरण एवं वायुमण्डल का प्रभाव तो अवश्य पड़ेगा ही। इसलिये यदि प्रत्येक मुहल्ले में एक उत्साही और जाग्रत बहन मुहल्ले की बहनों को उचित स्थान पर कूड़ा डालने की शिक्षा दे तो कितना कार्य हो सकता है। इसी प्रकार सङ्क्रामक रोगों के प्रसार को रोकने में भी हमारी बहनें बहुत कार्य कर सकती हैं। हमारी अशिक्षित बहनें अपनी अज्ञानता और असावधानी के कारण बच्चों की संक्रामक व्याधियों को छिपाया करती हैं। उन्हें सङ्क्रामक रोगों को न छुपाने और उनका इलाज कराने की प्रेरणा भी बहनें ही कर सकती हैं। हमारी बहुत सी बहनें दया के वशी भूत हो गरीबों को दान दिया करती हैं। दान देना अच्छी बात है परन्तु वह दान यदि समाज में निष्क्रियता हीनभावना आदि के प्रसार में सहायक हो तो उससे समाज को कोई लाभ नहीं हो सकता। इसलिये हमें अपनी बहनों को समझाना चाहिये कि रोज मांगने वाले भंगी बच्चों को भिक्षा देने की अपेक्षा उनके स्कूल आदि की व्यवस्था में सहयोग दें। इसी प्रकार आजकल देश में चुनावों की चर्चा है, स्त्रियों को भी पूर्ण मताधिकार है। शिक्षित बहनें इस राष्ट्रिय जागृति के कार्य में महिलाओं को अपने मतों का उचित उपयोग करने की प्रेरणा कर बहुत सहयोग दे सकती हैं।

देश की उन्नति का दायित्व जितना पुरुषों पर है उतना ही, किन्हीं अंशों में उससे भी अधिक महिलाओं पर है क्योंकि राष्ट्र की भावी पीढ़ी उन्हीं की गोद में पलती और बढ़ती है। अतः हमारी बहनों को न केवल अपनी उन्नति में सन्तुष्ट रहना चाहिये अपितु नागरिक भावना से अपने समाज और अपने वर्ग को अधिक उन्नत बनाने में सदैव सहयोग देना चाहिये।

——

जीवन-ज्योति

स्वर्गीय मौलवी महेशप्रसाद

श्री रामवीर प्रकाश 'अरुणेश'

मौलवी महेश प्रसादजी आर्यसमाज के उन व्यक्तियों में थे जिनका जीवन विद्वत्ता, कर्तव्य परायणता और सत्य निष्ठा के रूप में भावी पीढ़ियों के लिये अनुकरणीय उदाहरण और स्मरणीय बना रहेगा।

मौलवीसाहब का जन्म प्रयाग मण्डलान्तर्गत शृङ्गवेरपुर के कायस्थाना ग्राम में १८८९ ई० में हुआ था मेधावी और जिज्ञासु छात्र होने के कारण उन्होने अपनी शिक्षा के लिये अनेक स्थानों में निवास किया। प्रारम्भिक सामान्य शिक्षा के बाद आपकी रुचि अरबी फारसी की ओर थी। आर्यसमाजी विचारों का होने के कारण आपने १९१६ में आगरा में श्री प० भोजदत्तजी के मुसाफिर विद्यालय में सैद्धान्तिक शिक्षा प्राप्त की। हिन्दी के विश्व विख्यात महा पंडित श्री राहुल सांकृत्यायन इसी विद्यालय में आपके साथ अध्ययन किया करते थे।

अरबी फारसी की अधिक शिक्षा के लिये जब पंजाब यूनिवर्सिटी के ओरटियल कालिज लहौर में आप प्रविष्ट हुए उस समय सबने आश्चर्य प्रकट किया कि यह कैसा हिन्दू लड़का है, जिन परीक्षाओं में यवन लड़के भी (जिनको अरबी फारसी का ज्ञान होता है) बुरी तरह अनुत्तीर्ण होते हैं, उन परीक्षाओं को देने के लिये इसने इलाहबाद से आने का साहस किया है। १९१७ की 'आलिम' परीक्षा में एक भी विद्यार्थी उत्तीर्ण नहीं हुआ था और १९१८ में महेशप्रसादजी को बैठना था। परीक्षा की कठोरता से भयभीत न होकर वे साहस के साथ परीक्षा में सम्मिलित हुए और आशातीत सफलता प्राप्त की और इसी प्रकार अगले वर्ष परीक्षा उत्तीर्ण कर विश्वविद्यालय के इतिहास में सर्व प्रथम आलिम फाजिल दोनों परीक्षाओं को उत्तीर्ण करने का गौरव प्राप्त किया। लाहौर में विद्याध्ययन करते समय स्वामी श्रद्धानन्द, श्री प० लेखराम और महात्मा हंसराज आदि आदर्श एवं कर्मठ नेताओं के निकट सम्पर्क में आने का आपको अवसर मिला, इन महापुरुषों के सहवास ने आपके जीवन को कर्मठ, आदर्श और समाज सेवी बना दिया। आर्य नेता ही आपसे प्रसन्न रहे हों यही बात नहीं मुसलमान गुरुओं की सहानुभूति भी उन्हें प्राप्त थी और वे उन्हें शाही गुम्बद जैसी प्रमुख मस्जिदों में अपने साथ ले जाते और ससम्मान बिठाते थे।

आपकी योग्यता और विद्वत्ता से प्रभावित हो महामना मालवीयजी ने आपको हिन्दू विश्व विद्यालय के अरबी, फारसी विभाग का अध्यक्ष नियुक्त किया और आप आयु पर्यन्त उसी पद पर कार्य करते रहे। पूज्य मालवीयजी आपका बहुत सम्मान करते थे और जब कभी आपको बुलाते बराबर सवारी भेजा करते थे।

मौलवी साहब ने अरबी-फारसी का अध्ययन कर ईरान की यात्रा की तथा वहां के सामाजिक जीवन का वास्तविक परिचय कराया और "मेरी ईरान यात्रा" पुस्तक लिखी जो हिन्दी के यात्रा-साहित्य को आपकी अपूर्व देन है।

मौलवी साहब ने अपनी लेखनी और अनुसन्धान शैली द्वारा आर्य साहित्य के लिये पर्याप्त सामग्री प्रस्तुत की है। ऋषि दयानन्द की भारत यात्रा के स्थानों और तिथियों का मानचित्र बनाना उनकी अपनी सूझ थी। उन्हीं की प्रेरणा पर सार्वदेशिक आ०प्र० नि० सभा ने काशी आदि स्थानों में ऋषि सम्बन्धी संगमरमर के शिलालेख स्थापित किये हैं। प्रान्तीय और सार्वदेशिक आ० प्र० नि० सभाओं के लब्ध प्रतिष्ठ सदस्य और कन्या गुरुकु-

ल महाविद्यालय हथारस के प्रधान के रूप में आपने वर्षों आर्यसमाज के कार्य में सक्रिय सहयोग दिया, बनारस के नगर और विश्वविद्यालय क्षेत्रों में आप आर्यसमाज के स्तम्भ थे।

आपके हृदय में वैदिक आदर्शों के प्रति महान् आस्था थी। आपने अपनो पुत्रियो के यज्ञोपवीत सस्कार कराये और उन्हे कन्या गुरुकुल में शिक्षा दिलवायी। अपनी बड़ी पुत्री कल्याणीदेवी को हिन्दू विश्व विद्यालय में वेदाध्ययन के लिये प्रविष्ट करा आपने विश्व विद्यालय की प्रतिगामी नीति का नग्न-चित्र उपस्थित किया। स्त्री पुरुष की समानताका हामी ऋषि दयानन्द का शिष्य अपनी कन्याओ को वेद न पढ़ा सके यह उन्हे कैसे सह्य हो सकता था, अन्त में उनकी विजय हुई और नारियो के समानाधिकार का द्वार वहां खुल गया। इस प्रकार मौलवी साहब नारी जाति के उपकारक के रूप में सदैव स्मरण किये जायगे।

उनकी विद्वत्ता और प्रतिभा का आर्य समाज में हा सम्मान हुआ हो यह बात नहीं है। वे जीवन काल में बारह मे अधिक विश्व विद्यालयों के परीक्षक रहे और अनेक वार ओरटिंयल कान्फ्रेंस के अरबी-विभाग के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। अरबी-फारसी के विद्वान् होते हुए भी उन्हे हिन्दी से प्रगाढ़ प्रेम था और वे जवन पयन्त हिन्दी-पत्रों में कुछ न कुछ लिखते ही रहे और उनकी यह उत्कट अभिलाषा थी कि विश्व विद्यालय के जीवन से मुक्त होकर अरबी-फारसी साहित्य का लोक वाणी हिन्दी में अनुवाद करने में ही अपना सारा समय और शक्ति लगाऊ पर असमय में ही प्रभु ने हमसे उन्हे छीन लिया।

मौलवी साहब का वह लम्बा, गौरवर्ण छरहरा शरीर, और उस पर सदा भारतीय वेष, मधुरतम व्यवहार, हृदय मे अतिथि सत्कार, मिलन सारिता स्नेह और सरलता के भाव देख कर ऐसा कौन भारतीय होगा जो उन से आत्मीय सम्बन्ध अनुभव न करने लगता। वे संकल्प और दृढ़ता की अडिग चट्टान थे, उनमें स्नेह का सागर और वात्सल्य का स्रोत उमड़ा करता था। ऐसे मानवीय गुणों से युक्त आदर्श मानव आज हमारे बीच नही रहा यह हम सबका दुर्भाग्य है।

इसी वर्ष अगस्त के अन्तिम सप्ताह में दो मास की अस्वस्थता के बाद ६२वर्ष की आयु में वे इस संसार से विदा हो गये। मौलवी साहब आज हमारे बीच नहीं है पर उनकी लगन और आदर्श मानवीय गुणों की उदात्त भावना चिरकाल तक हमारे लिये प्रकाश-स्तम्भ का कार्य करती रहेगी।

——

सिंहावलोकन

लोकप्रिय व्यक्तित्व का रहस्य

श्री पुरुषोत्तमदास मोदी, एम० ए०

व्यक्तित्व स्थायी वस्तु नहीं है, वह आपकी आँखो के रंग या आपके जूते की नाप की तरह एक सा रहने वाला नहीं है; जीवन पर्यन्त इसमें निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। इस व्यक्तित्व को निर्माण करने और रूप देन की शक्ति आप में है।

अब बताइए, आप अपने व्यक्तित्व को अत्यधिक लोकप्रिय बनाने के लिये क्या करेंगे? किन नियमों द्वारा आप अत्यधिक लोकप्रिय बन सकेंगे? यहाँ लोकप्रिय व्यक्तित्व के लिये सात सूत्र बताये जाते हैं :—

अपनी मुस्कराहट का उपयोग—चीन की एक बुद्धियुक्त कहावत है—

"जिसके होठों पर मुस्कराहट न हो उसे दूकान नहीं खोलनी चाहिये"। अभी पिछले दिनों भारतवर्ष के एक प्रसिद्ध औद्योगिक से मिलने का अवसर मिला उसने कहा—"मेरी मुस्कराहट की कीमत लाख रुपये है, इसी के बल पर मैं लाखों का सौदा करता हूं।" अत मुस्कराहट लोकप्रिय व्यक्तित्व का अविभाज्य एवं महत्वपूर्ण अग है। किसी पर अपना मधुर प्रभाव डालने के लिये मुस्कराना एक गुप्त मन्त्र है। मुस्कराहट में इतनी तेजस्विता है कि मार्ग के मिलने वाले प्रत्येक व्यक्ति को इसे बाटते चल सकते हैं, फिर भी यह कोष अक्षय बना रहता है। आंखों के आंसू होठों के मन्द-हास की ओट में ही छिप सकेंगे।

आपकी फीकी हसी या क्षण में बिजलीके करेण्टकी भांति मिट जाने वाली हसी का कोई मूल्य न होगा। क्यों न आपकी मुस्कराहट में वह उन्मुक्त आभा हो जो सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति के स्मृति पटल पर अपने चरण-चिन्ह अङ्कित करती जाय?

अपनी वाणी मधुर बनाइये—यदि आपकी वाणी कठोर, तीखी या कर्कश है तो उसे सुधारिये, नहीं तो लोकप्रिय व्यक्तित्व का सपना अधूरा ही रह जायगा। दूसरों की मधुर एव सुन्दर वाणी सुनने में रस लीजिए और अपनी कठिनाई को समझ कर उसमें सुधार कीजिये।

आपकी रुचि के भिन्न-भिन्न विषय—प्रत्येक द्वार से नई जानकारी, नया ज्ञान और नये अनुभव प्राप्त करने के लिए उत्सुक रहिये। ऐसी पुस्तकें पढ़िये जिनसे आपको प्रेरणा मिले, आपका उत्साह बढ़े। नये-नये विषयों की पुस्तकें पढ़ते रहिये ताकि आप तेजी से बदलती इस दुनिया का प्रत्येक कोना झांक सकें।

अपने फुर्सत के समय में नये तथा पुराने परिचितों से मिलने का अभ्यास बनाये रखिये। दूसरों की कठिनाइयों और परेशानियों में गहरी दिलचस्पी लीजिये। अपनी बातचीत और जिन्दादिली से आप बहुत कुछ उन्हे संतोष और आनन्द प्रदान कर सकते हैं, और यदि आप गम्भीर और धैर्यवान श्रोता बन जायें तो विश्वास मानिये, शीघ्र ही आप बहुत अच्छे वक्ता भी बन जायेंगे।

उत्साह बढ़ाईये—जीवन को साहसिक यात्रा के रूप में देखिये। भयकर वस्तुओं से लड़ने के लिये हर समय तैयार रहिये। जो भी काम हो, मुश्किल से मुश्किल या आसान से आसान, माथे पर बिना शिकन लाये खुशी से उस में लग जाइये। अपने मन में कभी भी यह ख्याल मत आने दीजिये कि लोग आपके विरुद्ध हैं और दृढ़तापूर्वक यह विश्वास बनाये रखिये कि जिंदगी में बहुत ज्यादा आनन्द और सन्तोष है। अतः आशावादी बनिये। जीने की उज्ज्वल एव श्रेष्ठ वस्तुओं में अपना मन लगाइए, निराशा एवं अन्धकार का एक स्वर भी आपकी सांसों में न घुसने पाये। ध्यान रखिये कि आपके प्रभाव से लोग प्रोत्साहित होते हैं, न कि हतोत्साहित।

अपनी आकृति को आकर्षक बनाइये—अपनी चाल ढाल को आकर्षक बनाइए। अपने शरीर में सैनिक की चुस्ती और फुर्ती लाइये। चलने में, बोलने में, बैठने में जरा भी आलस्य या ढीलेपन का सन्देह न होने दीजिये।

ईमानदार और विश्वासपात्र बनिये—जो आप कहें, वही आपका उद्देश्य हो। इतनी लोकप्रियता प्राप्त कीजिये कि लोग आप में विश्वास रख सकें; वे यह न सोचें कि आप जान बूझकर कभी उन का अनिष्ट होने देंगे।

व्यवहार-कुशल बनिये—प्रत्येक व्यक्ति का एक अपना दृष्टिकोण होता है। लोकप्रियता प्राप्त करने के लिए दूसरों के दृष्टिकोणों को देखने और समझने की कोशिश करनी चाहिए। अपने में धीरज रख कर ऊबे होने पर भी अपनी ऊब प्रकट नहीं होने देनी चाहिये।

व्यवहार-कुशल होने के माने यह नहीं हैं कि हर बुरी भली चीज से समझौता करते जायं। किन्तु इतना ध्यान अवश्य रखना चाहिये कि प्रत्येक व्यक्ति अपने को महत्वपूर्ण समझता है और प्रशंसा का भूखा होता है। कोई भी बात यदि चाहे तो बड़े ही मधुर ढंग से कह सकते हैं जिससे सुनने वालों को तनिक भी चोट न लगेगी।

इन नियमों के अनुसार अपने जीवन का निर्माण कीजिए, शीघ्र ही आपका व्यक्तित्व लोकप्रिय हो जायगा। दूसरों पर आपका अमिट प्रभाव पड़ेगा।

——



आचार्या म ता लक्ष्मीदेवी

भारत में स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में जिन सस्थाओ ने महत्व पूर्ण कार्य किया और कर रहीं हैं उनमें 'कन्या गुरुकुल महा विद्यालय सासनी का अपना विशेष स्थान है। इस गुरुकुल की स्थापना ऋषि दयानन्द प्रेरत स्त्री शिक्षा आन्दोलन की सफलता के लिये १९११ ई० में हुइ था। स्वामी दर्शनानन्दजी महाराज ने जहा बालकों की शिक्षा के लिये अनेको गुरुकुल स्थापित किये वहाँ कन्याओ की शिक्षा के लिये हाथरस क सेठ श्री मुरलीधरजी को प्रेरित कर इस गुरुकुल को स्थापित कराया। हाथरस से अलीगढ की ओर जाने वाली सड़क पर सासनी कस्बे से २ मील पहले एकान्त निर्जन स्थान और शान्त वातावरण में ३००बीघ भूमिदान देकर सेठजी ने इस सस्था के विशाल घर का निर्माण कराया। नि शुल्क शिक्षा तथा अन्य समस्त सुविधाओ क होते हुए भी संस्था तब अधिक कार्य न कर सकी अत सस्था बन्द कर दी गयी। और इस प्रकार २० वर्ष तक इसी प्रकार बन्द रहने के बाद १९३० में सस्था का कार्य पुन' प्रारम्भ हुआ।

महिला आन्दोलन की सुप्रसिद्ध काय कर्त्री श्रीमती माता लक्ष्मीदेवीजी ने जब इस स्थान को देखा तभी से उनके हृदय में इस संस्था के उद्धार की लगन लग गयी। पजाब की एक कन्या ब्र० दयावती (जो स्नातिका बन चुकी हैं) को लेकर वे गुरुकुल पहुँच गयीं सस्था के व्यय के लिये उन्होंने प्रारम्भिक व्यय भी अपने घर वालों से मगाया और सस्था को आगे बढ़ाया। श्री

संस्था-परिचय

कन्या गुरुकुल सासनी (हाथरस)

श्री इन्दिरा बी० ए०

महात्मा नारायण स्वामीजी ने इस सस्था का पुनरुद्धाटन किया और आजीवन कुलपति बने रहे।

आज सस्था ने विगत २१ वर्ष के जीवन में दश और स्त्री जाति की जो महान् सेवा की है वह एक अनुकरणीय उदाहरण है। गुरुकुल प्रणाली क अनुसार सारे दश की २०० से अधिक कन्यायें आश्रम में निवास करती हैं। इन महाघता के युग में भी कन्याओं से किसी प्रकार का शिक्षा शुल्क न लेना सस्थ की अपनी विशषता है भोजन व्यवस्था क लिये २५) मात्र लेकर गुरुकुल उनके शारीरिक मानसिक आत्मिक विकास के लिये सभी प्रकार क उन्नति साधनों की व्यवस्था करता है।

गुरुकुल का पाठ्यक्रम १२ वष का है। प्रबन्ध समिति दो वष का पाठ्यक्रम और बढ़ाने का विचार कर रही है। राजकीय पाठ्यक्रम से स्वतन्त्र अपना निजी पाठ्यक्रम पढाते हुए गुरुकुल अपनी सस्कृति और आदर्शों पर अडिग है। स्वतन्त्र भारत में समय समय पर राज्य की ओर से भी थोड़ी बहुत सहायता गुरुकुल को मिली है परन्तु गुरुकुल अपनी उन्नति के लिये सरकार की अपेक्षा जनता पर अधिक निभर है। सस्था का ६०-७० हजार वार्षिक व्यय जनता की उदार सहायता से ही पूर्ण होता है।

गुरुकुल की शिक्षा में जहाँ भारतीयता का पुट है वहाँ कन्याओं को योग्य नागरिक बनाने की ओर भी विशेष ध्यान दिया जाता है। धार्मिक सस्कारों के साथ साथ कन्याए स्वास्थ्य के लिये शारीरिक व्यायाम प्रसाधनों का भी पूर्ण उपयोग करती हैं सगीत की उत्तम शिक्षा का भी प्रयत्न किया जाता है, गृह विज्ञान की दृष्टि से भोजन निवास, वस्त्रकला (सीना, काढ़ना पिरोना बुनना आदि) सभी बातों में उन्हे कुशल बनाने का प्रयत्न किया जाता है। महिलाओं के लिय आयुर्वेद शिक्षा की महती आवश्यकता को दृष्टि में रख गत दो वर्षों से पाठ्यक्रम में आयुर्वेद विषय भी निर्धारित कर दिया गया है और प्रयत्न हो रहा है कि शीघ्र ही उत्तर प्रदश राज्य का 'गृह स्वास्थ्य विशारदा परीक्षा का पाठ्यक्रम प्रचलित कर दिया जाय।

आज दश में शिक्षा के साथ साथ महिलाओं मे विलासिता के साधनों के उपयोग की भावना बढ रही है परन्तु गुरुकुल मे कन्याओं को शुद्ध खादी क वस्त्रों क धारण और बहुत ही सरल जीवन बिताने की शिक्षा दी जाती है, खादी सस्था की प्रमाणित ड्रेस का अग ही बना दी गयी है।

विगत २१ वष के स्वल्प काल में सस्था उत्तर प्रदश ही नहीं सम्पूर्ण भारत में ख्याति प्राप्त कर चुकी है। आसाम, हैदराबाद, मैसूर बम्बई गुजरात आदि दूरस्थ प्रान्तों से आकर भी आर्य कन्याए गुरुकुल में शिक्षा पा रहीं हैं। १०० के लगभग कन्याए स्नातिका परीक्षा उत्तीर्ण कर देश के विविध स्थानों में राष्ट्रिय जागृति और समाज सेवा का काय कर रही हैं।

सस्था का वार्षिकोत्सव प्रति वर्ष दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह मे मनाया जाता है। देश के प्राय सभी सुप्रसिद्ध नेताओं श्री श्रीप्रकाशजी, श्री सम्पूर्णानन्दजी, श्री गोविन्दवल्लभ पन्त आदि तथा आर्य नेताओं, विद्वानों का आशीर्वाद इस सस्था को प्राप्त है।

भारतीय शिक्षा एव भारतीय भावना के समुचित विकास के लिये इस सस्था ने जो आदर्श उपस्थित किया है उस सबका श्रेय सस्था की पुनर्जन्म दात्री स्वनामधन्या माता लक्ष्मीदेवीजी को ही है। उनकी आयु ६० वर्ष से अधिक है परन्तु इस वृद्धावस्था मे भी उनका उत्साह और लगन पूर्ववत् कायम है और अब भी वे आचार्या और मुख्याधिष्ठात्री पदों पर कार्य कर रहीं हैं।

यदि आप चाहते हैं कि आपकी कन्याए आदर्श भारतीय नागरिक बन अपना जीवन आदर्श और सुखी बना सकें तो इस सस्था से लाभ उठावे। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ही भारतीयता की रक्षा एव अभिवृद्धि में समर्थ और सहायक हो सकती है।

——

स्वास्थ्य-सुधा

शरद ऋतु में रसायन सेवन

श्री डा० कुन्दनलाल एम० डी०, क्षय रोग-विशेषज्ञ

प्राचीन काल में शरद ऋतु के प्रारम्भ में वस्ती कर्म और न्यौली क्रिया द्वारा शरीर शुद्धि कर शरीर की पुष्टि के लिये रसायन सेवन करने की प्रथा थी। आज कल भी लोग आयुर्वेदिक पाक, माजून और विदेशी टानिकों का इस ऋतु में सेवन करते हैं परन्तु शरीर शुद्धि की प्रक्रिया की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है। यही कारण है कि इन ओषधियों से उतना लाभ नहीं होता जितना होना चाहिये। और कभी कभी तो इनसे कब्ज होकर स्वास्थ्य को हानि पहुँचती है।

अब शरद ऋतु का आरम्भ है। जो व्यक्ति रसायन सेवन करने की इच्छा करते हैं उनके लिये एक अनुभूत और उपयोगी विधि नीचे दी जाती है उसको अपनाकर इस दिशा में अधिक लाभ उठाया जा सकता है।

१—पहले तीन दिन प्रातः साय ताजे पानी से वस्ती कर्म (एनिमा) करें क्योंकि जब तक आपके कोलन (मलाशय) में पुराना मल चिपटा है और रस शोषक ग्रन्थियां उसमें से रस चूस २ कर रक्त में पहुँचा उसे निबल और दूषित बना रही हैं। आप कितने ही बहु मूल्य पदार्थ खायें सब व्यर्थ होंगे पुराना मल एक बार के वस्ती कर्म से फूलकर नहीं निकल सकता अतः कम से कम तीन दिन दोनों समय वस्ती कर्म करने की आवश्यकता। है भोजन में दो बार एक २ छोटे नीबू का अर्क गरम जल में निचोड़ कर दिन में दो बार पीवें। इसके अतिरिक्त भूख लगने पर संतरा, मुसम्मी अथवा अनार का रस पी कर रह सकें अथवा उपवास कर सकें तो बहुत अच्छा है अन्यथा सेव न सपाती, सीताफल इत्यादि फल भी खावें। अन्न न खाव। नीबू विकार निकालता है अतः यदि जुकाम इत्यादि हो तो घबरावें नहीं और न उसका प्रयोग बंद करें उससे लाभ ही होगा।

२—चौथे दिन प्रातः काल गऊ का धारोष्ण दूध पीवें और दिन में मूँग की खिचड़ी गऊ के मठे के साथ खावें। अथवा हलकी सब्जी और गेहूँ की रोटी खावें। इसी प्रकार ३ दिन और ऐसा ही भोजन इच्छानुसार करें, फल भी खाते रहें।

३—इसके पश्चात् प्रातः काल ५-७ बादाम दस मुनक्का अथवा एक तोला किशमिश के साथ खाकर गाय का धारोष्ण अथवा अधिक से अधिक दो घंटा का रक्खा कच्चा दूध इच्छानुसार पीवें। इसका प्रबन्ध न हो सके तब गाय का दूध गरम करके भी पी सकते हैं पर ध्यान रक्खें अधिक औटाने से उसका सब कैलशियम नष्ट न होने पावे, पाश्चात्य शिक्षा के आधार पर डाक्टरों ने कच्चे दूध के विषय में बहुत भ्रम फैला रक्खा है पर यह याद रखना चाहिये कि दूध गरम करने से उसका बहुत ही आवश्यक भाग कैलशियम नष्ट हो जाता है। अतः यथा सम्भव धारोष्ण दूध पीने का यत्न करना चाहिये। भोजन के समय २-३ हरे आंवले अथवा उनकी चटनी हरे धनिया के साथ खाव। आंवला रसायन पदार्थ है और बहुत पुष्टि कारक है। आधुनिक खोज से सिद्ध हुआ है कि इसमें विटामिन सी बहुत अधिक है। पिछले महा युद्ध में फौज के लोगों को हरे शाक न मिलने से उनके मसूढ़ों को गलाने वाला मास खोरा (Scur vy) रोग बहुत हुआ था। इस युद्ध में सूखे आंवले देने से सेना इस रोग से बची रही। सूखने पर भी आँवले में ऐसा गुण है तब हरे का तो कहना ही क्या है। आयुर्वेद में आंवले को जहाँ श्वास, कास, प्रमेह, बवासीर, उदर रोग, कृमिरोग, विषमज्वर अफरा, खाज, शूल इत्यादि रोगों का नाशक बताया है वहाँ इसे विशेष रूप से पुष्टिकारक और रक्त पित्त नाशक भी लिखा है, साथ ही वह अपने खट्टे रस से वादी, मीठे तथा ठंडे रस से पित्त और रूखे तथा कसैले रस से कफ को नष्ट करता है। आँवले में पाँचों रस होते हैं।

४—मध्याह्न के भोजन के पश्चात् अब आधों भर गऊ का मठा सेंधा नमक और जीरा डालकर पीना भी पुष्टकारक है और रसायन क्रिया के अन्तर्गत है। इसी प्रकार भोजन के पश्चात् एक पका केला खाना पुष्टि देता है। मठा और केला दोनों साथ २ न खावें इनमें से केवल एक ही वस्तु का का सेवन करें जिन पुरुषों को प्रमेह व स्त्रियों को प्रदर हो उनके लिये भोजन के पश्चात् एक केला मधु के साथ अथवा केवल केला खाना बहुत हितकर है।

अन्य स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों का पालन करते हुए जो सज्जन इस रसायन क्रिया को करेंगे उनके शरीर में अपार शक्ति का सञ्चार होगा इसमें कोई भी सन्देह नहीं है और तभी च्यवनप्राश, अमृत भल्लातकी, मकरध्वज आदि रासायनिक औषधियाँ और टानिक स्वास्थ्य वृद्धि में पूर्ण सहायक सिद्ध होंगी।

संस्कृत सरिता—

ईशभक्तिः

श्री रामशङ्कर भट्टाचार्य शास्त्री, काशी

हे अन्तेवासिन्! त्वं किं न वेत्स्यसि (१) यद् भगवतो जगन्नाथस्य त्रियम्बकस्य (२) पूजा नित्यमेव विधेया। त्रीणाम् (३) ऋणानां परिशोधमृते न कदापि मोक्षलाभो भविता। येषां चित्तवृत्तिः निष्पन्द-प्रदीपमिव (४) स्थिरा, तैरेव परमपुरुषार्थः प्राप्यते। अविद्या येषां छात्राणां मेधां वधति (५) ते एव विद्यां परित्यज्य बहिर्मुखा भवन्ति। सदा ज्ञानाभ्यासिभिः जाम्रियावद्भिः (६) विद्यार्थिभिर्भवितव्यम्। एतादृशैरेव छात्रैः तत्त्वं ज्ञायते। एते विद्यार्थिन एव आचार्येण सह पृथकीभूता (७) भवन्ति। द्वयासां (८) विद्यानां परापराख्यानां ज्ञानं करणीयमेव। तदर्थं सर्वैश्च यतव्यम्।

---

(१) वेत्स्यसि :—पाणिनीयमतानुसारेण 'वेत्स्यसि' इति पदं न साधु। काव्यालङ्कारसूत्रवृत्तौ वामनः पदमिदं द्विविकर्णपद-युक्तमिति व्याख्यातवान्, यथा वेत्सि + असि = वेत्स्यसि।

(२) त्रियम्बकस्य :—पदमिदं वैदिकमेव। व्याडिगालवमतेन लोकेऽपि साधु भवितुमर्हति, अतएव कालिदासेन कुमारे प्रयुक्तम् 'त्रियम्बकं संयमिनं ददर्श' (३।४४)।

(३) त्रीणाम् :—प्रचलित व्याख्यानुसारेण पाणिनीयमते 'त्रयाणाम्' इत्येव पदं साधु स्यात्। केषाञ्चिन्मतेन त्रीणामित्यपि पदं साध्वेव, यथोक्तं काशिकायाम् (७।१।५३) 'त्रीणामित्यपि भवति'।

(४) निष्पन्द :—अत्र पाणिनिमतेन षत्वं न भवितुमर्हति। परन्तु निष्पन्दशब्दः महाकवीनां ग्रन्थे दृश्यते, अतएव तस्य साधुत्वमपि अभ्युपेयम्। वामनः काव्यालङ्कारसूत्रवृत्तौ आह 'निष्पन्द इति षत्वं चिन्त्यम्' (५।२।८८)

(५) वधति :—नागेशभट्टस्यमते नास्ति स्वतन्त्रो वधधातुः। अस्ति स धातुरिति अमरटीकायां रायमुकुट आह। अस्मन्मते वधधातुः स्वतन्त्रोऽस्त्येवेत्येव।

(६) जाम्रिया—जागृधातोः कृदन्तप्रत्यये 'जागरा', 'जागरणम्' इति द्वे पदे एव भवतः। धातुपारायणे कृदन्तप्रत्ययेन, जाम्रियापदमपि व्युत्पादितम्। लभ्यते च प्राचीनकोशग्रन्थेषु 'जाम्रिया जागरा अपि'। सर्वैः पाणिनीयव्याख्यातृभिः पदमिदं साधु इति न स्वीकृतम्।

(७) पृथकीभूता :—पाणिनीयमतेन पृथग्भूताः (पृथक् + भूताः) इत्येव स्यात्। हेमचन्द्रकृतेशब्दानुशासन व्याकरणे पृथकीभूतशब्दस्यापि साधुताऽभ्युपगता।

(८) द्वयासाम्—पाणिनीयमते 'द्वयानाम्' इत्येव स्यात्। चान्द्रवर्मीण व्याकरणे द्वयशब्दस्य सर्वनामताऽभ्युपगता, तस्मात् 'द्वयासाम्' इति पदमपि तन्मते साधु स्यात्।

साहित्य-सौरभ

सरल संध्या विधि—लेखक श्री गङ्गाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०, प्रकाशक—आर्य समाज अमरोहा, मूल्य छह आना पृष्ठ संख्या ८०,

इस पुस्तक का प्रकाशन आर्य समाज अमरोहा की स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष्य में किया गया है। वैनिक संध्या विधि के ऊपर अनेकों व्याख्याएं लिखी जा चुकी हैं फिर भी इस पुस्तक में सन्ध्या के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है। पुस्तक के प्रणेता श्री गङ्गाप्रसाद उपाध्याय आर्य समाज के उच्चकोटि के विद्वान् हैं उन्होने अपनी इस सन्ध्या व्याख्या में मन्त्रों के गूढ़ार्थों का प्रकाश तथा उनकी बुद्धि पूर्वक सफल व्याख्या उपस्थित की है। उनकी सरल और बुद्धि युक्त व्याख्या पढ़ने के बाद प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति वैदिक सन्ध्या से अवश्य प्रभावित होगा। मनुष्य जीवन का अपने साथ, इस संसार के साथ समाज तथा परमात्मा के साथ जो अभिन्न सम्बन्ध है उसके सम्बन्ध में विद्वान् लेखक ने गम्भीर चिन्तन उपस्थित किया है। पुस्तक में जीवन के व्यावहारिक उदाहरणों द्वारा सन्ध्या के गहनतम रहस्यों को बड़ी सुन्दरता से प्रकट किया गया है। केवल मन्त्रार्थ वाली छोटी अथवा शास्त्रीय प्रमाणों की भरमार से युक्त बड़ी-बड़ी सन्ध्या पुस्तकों की अपेक्षा यह पुस्तक जीवन में अध्यात्म भावना के विकास के लिये उपयोगी पुस्तक प्रमाणित होगी। आदरणीय उपाध्यायजी की इस रचना से सर्वसामान्य को भी पर्याप्त लाभ होगा। इस सामयिक उपयोगी प्रकाशन के लिये विद्वान् लेखक तथा प्रकाशक समाज के अधिकारी बधाई के पात्र हैं।

स्वास्थ जीवन—लेखक श्री डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए०—डी० लिट् प्रकाशक—आर्य साहित्य मण्डल लिमिटेड अजमेर, मूल्य १।) पृष्ठ संख्या १६८,

जीवन की सफलता के लिये स्वास्थ्य का कितना महत्व है अभी तक हमारी शिक्षा-पद्धति ने इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया और अभी तक हमारी शिक्षा-पद्धति का आदर्श आर्थिक सफलता रहा है फलस्वरूप हमारे छात्र अपनी सम्पूर्ण शारीरिक बौद्धिक मानसिक शक्तियों को परीक्षा की सफलता में केन्द्रित कर देते हैं। इस प्रकार हमारे छात्र थोड़े बहुत बौद्धिक विकास के अतिरिक्त अपना अन्य किसी प्रकार का विकास नहीं कर पाते। आदर्श स्वास्थ्य वही कहा जा सकता है जब मनुष्य की बौद्धिक शारीरिक एवं आत्मिक त्रिविध शक्तियां अपना पूर्ण विकास पा सकें। विद्वान् लेखक को छात्रों के मध्य रहने का अवसर प्राप्त है और उन्होने छात्रों के लिये शिक्षा में जिन उचित आदर्शों का अभाव पाया उन्हे दूर करने के लिये यह पुस्तक लिखी है। पुस्तक में ब्रह्मचर्य, प्राणायाम, व्यायाम, आहार, व्याख्यान कला, जीवन में विजय, उत्तम उपदेश अध्यायों में विभक्त हैं। ब्रह्मचर्य की शिक्षा का हमारे शिक्षालयों में सर्वत्र अभाव है कुछ लोग इसकी शिक्षा देना भी अनुचित समझते हैं। विद्वान् लेखक ने बड़ी सुन्दरता से ब्रह्मचर्य की आवश्यकता वर्णित की है। प्राणायाम और व्यायाम की उपयोगिता बताने के बाद आहार समस्या पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। जीवन के आदर्श विकास के लिये सात्विक आहार का अपना महत्व है 'जैसा खाये अन्न वैसा बने मन' उक्ति को दृष्टि में रख खाद्य पदार्थों के गुण दोषों का विवेचन किया है। व्याख्यान कला के अध्याय में लेखक ने वक्तृत्व शक्ति के महत्व पर प्रकाश डालते हुए छात्र जीवन में उसके विकास की ओर ध्यान आकृष्ट किया। लेखक ने एक योग्य वक्ता के अपने सभी अनुभवों को बड़े ही रोचक ढंग से उपस्थित किया है। और नवयुवकों को आदर्श व्याख्याता बनने की प्रेरणा दी है। 'जीवन में विजय' अध्याय में लेखक ने 'आरोग्य' पत्रिका के प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी उपयोगी लेखों को उद्धृत किया है जो एक उपयोगी संग्रह है। प्राकृतिक चिकित्सा के लिये जिस मानसिक दृढ़ता की आवश्यकता होती है वह यदि किसी के पास हो तो वह जीवन में निश्चय ही विजयी होता है। इस प्रकार इस छोटी सी पुस्तक में स्वस्थ जीवन की आदर्श व्याख्या और उनके निर्माण के तरीके दिये गये हैं। विद्वान् लेखक इस उपयोगी रचना के लिये बधाई के पात्र हैं। छात्रों को ही नहीं सर्व साधारण के लिये भी पुस्तक बड़ी उपयोगी सिद्ध होगी।

सम्राट रघु—अनुवादक श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति प्राप्ति स्थान वाचस्पति पुस्तक भण्डार २६ मल्कागंज रोड, जवाहरनगर देहली मूल्य १।। पृष्ठ ८०।

प्रस्तुत पुस्तक महाकवि कालिदास के रघुवंश महाकाव्य के सात सर्गों का भाषानुवाद है। संस्कृत के इस महाकाव्य का आनन्द हिन्दी के पाठक भी प्राप्त कर सकें इस उद्देश्य से यह अनुवाद किया गया है। यद्यपि रघुवंश की और भी कई टीकाएं हिन्दी में देखने को मिलती हैं परन्तु प्रस्तुत अनुवाद अपना पृथक विशेषता रखता है। श्री इन्द्रजी ने हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक होने के नाते प्रस्तुत काव्यानुवाद में अपनी आदर्श गद्य शैली का निर्वाह किया है। भाषा की रोचकता और भाषा के प्रवाह के कारण पाठक के हृदय में पुस्तक न छोड़ने का मोह बना रहता है। हमें आशा है विद्वान् लेखक इसी शैली से आगे के सर्गों का भी अनुवाद प्रस्तुत कर हिन्दी में महाकवि कालिदास की रचनाओं के अभाव को पूरा करेंगे। इसी प्रकार अन्य संस्कृत काव्यों का भाषानुवाद उपस्थित करने का प्रयत्न किया जाना चाहिये। विद्वान अनुवादक का प्रयत्न प्रशंसनीय और अनुकरणीय है। सामान्य जनता में प्राचीन साहित्य का सन्देश पहुंचाने में इससे बहुत सहायता मिलेगी।

—

भूमियज्ञ

लक्ष्मी सदैव चलती फिरती चपला-सी चमक दिखाती है,
यह धरती अचला होनेसे कब साथ किसीके जाती है?

मनुजात तुम्हीं जैसे हैं जो हतभाग्य तुम्हारे ही भाई,
वे भूमि-भाग से वंचित हैं तो कहो, कौन उत्तरदायी?
प्रभुने यह अवसर दिया तुम्हे, जो वस्तु अधिक तुमने पायी,
देकर वह उनके अर्थ उन्हे तुम बनो समान सदय न्यायी।

ले लो, यह यशकी लूट स्वयं जो टूट सुफल-सी आती है,
यह धरती अचला होनेसे कब साथ किसीके जाती है।

शुभ कार्य सिद्ध करवाने को आचार्य सन्त हों सुलभ जहाँ,
तो इससे बढ़कर भाग्य भला हो सकता है क्या और वहां।
यह तुम्हे खोजता हुआ स्वयं आया है उलटा सुकृत यहां,
तुम चूक गये यह समय कहीं तो यही काल बन जाय न, हां!

रस वंचित होकर प्रतिक्रिया विष ही विशेष बरसाती है,
यह धरती अचला होनेसे कब साथ किसीके जाती है?

—मैथिलीशरण गुप्त

बाल-विनोद

प्रिय बाल साथियो! हम जब पिछली बार आपस में मिले थे हमने प्रति सप्ताह मिलने का विचार किया था पर तुम जानते हो आज कल सारे देश में चुनावों की चहल-पहल है। तुम्हार दादा को भी उनमें रुचि है और हम समझते हैं कि तुम भी उनमें रुचि रखते होगे। खैर चुनाव की बातें फिर होंगी अभी तो देखते जाओ क्य-क्या होता है। हाँ कुछ पहेलियाँ दी जाती हैं उन पर विचार करना और उत्तर दादा को भेजना देखें कौन ठीक-ठीक उत्तर भेजते हैं—

१-अभय करन है नाम उदार
श्याम वरन जाने संसार
विहरत कुञ्जन अविनासी
कृष्ण न होय द्वार का वासी

२-सावन पूस बहुत चलत हैं
माघ पूस थोरी
अमीर खुसरो यो कहै
तू बूझ पहेली मोरी

३-देह रहित मनसिज नहीं,
कन्या सुत नहिं व्यास
भूत नहीं लागै सबै
दुई तै होत निरास
—विजयशङ्कर, आगरा

४-पीरी पोखर पीले अण्डा,
वेग बता नहिं दू गा डण्डा

५-पीरी-पीरी पीपरी
अकास जाका घेसुआ
गदद नीचे आय परी
पकर लै वाको टैटुआ
—व्रजभूषण, आगरा

६-तितर पाव कबूतर सेर
मोर चूगै पौने दो सेर
बीस जनावर बीस ही सेर
यह देखो कुदरत का फेर

बीस जानवरो में कितने किस जाति के हैं और कौन कितना चुगता है।

—सत्यनारायन कुचावन सिटी

कितनी चिड़ियाँ हैं कुछ चिड़ियाँ एक पेड़ पर बैठी हैं और कुछ दूसरे पेड़ पर। एक पेड़ की चिड़ियों ने दूसरे पेड की चिड़ियों से कहा कि यदि तुम्हारा छठा भाग आकर हममें मिल जाय तो हम तुमसे डढ गुनी हो जाय। इस पर दूसरे पेड़ की चिड़ियों ने पहली चिड़ियों से कहा कि यदि तुम्हारा आठवाँ भाग आकर हममें मिल जाय तो हम तुम बराबर-बराबर हो जायँगी। बताओ दोनों पेड़ों पर कितनी-कितनी चिड़ियाँ हैं।

—राधेश्याम, फतेहगढ़

पिछली पहेलियों के उत्तर

हल्की गेंद—९ गेंदों में से किन्हीं ३ गेंदो को अलग रखकर शेष ६ को तराजू में तोलो, यदि वे बराबर हों तो उन्हें अलग रख शेष तीन में से दो को तोलो हल्की गेंद उनमें निकल आयगी अथवा यदि वे भी बराबर हो तो शेष बची गेंद हल्की होगी। इस प्रकार दो बार में ही हल्की गेंद का पता लग जायगा।

किसको क्या मिला—दो बच्चों को ॥ पूड़ी, १५ स्त्रियों को ७॥ पूड़ियाँ ३ पुरुषों को १२ पूड़ियाँ मिलीं।

क्या बुद्धिमानी की—चोर ने दो अमरूद तोड़े। लौटते समय शर्त के अनुसार आधा भाग अर्थात् एक अमरूद चपरासी को देता था और एक ही वापस माग लेता था इस प्रकार वह दो अमरूद लेकर ही बाहर निकला, सबको चकमा दे गया।

मारवाड़ी पहेली—"छ दू बारह रोटियों" का अर्थ है ६+२+१२=२०, अर्थात् २० रोटियाँ थीं बीस व्यक्तियों ने बाँट लीं।

शुद्ध उत्तर भेजने वालों के नाम

सत्यप्रकाश दरियागञ्ज (देहली) आनन्दस्वरूप अगवानपुर (मुरादाबाद) दामोदरप्रसाद सिंह धर्मपुरा (सारन) ओमप्रकाश आर्य दरियागज (देहली) सत्यप्रकाश आर्य बस्ती ओमप्रकाश वर्मा, ब्रह्मदत्त शर्मा, सुरेन्द्रकुमार पाठक बझनेरा मुरसान, आनन्दप्रकाश रायजादा बस्ती, महेशचन्द्र गर्ग वेगम बाग मेरठ, ओमप्रकाश आर्य दुगावा लखनऊ।

—ज्ञानू दादा

—

आर्यजगत

—ग्राम ककुआं (आगरा) में १३, १४ अक्टूबर को श्री सेवाराम भजनोपदेशक ने भाषण दिया और प्रचार किया। बीस आर्य सभासद बनाये और आ० स० की स्थापना की।

—आ० स० आगरा नगर में १८ से २५ नवम्बर तक रात्रि में श्री स्वामी अमृतानन्दजी सरस्वती ने धर्मोपदेश दिये। २५ ता० को श्री लाला पन्नालालजी वानप्रस्थी ने स्वामीजी से संन्यास की दीक्षा ली, उनका नाम स्वामी प्रणवानन्द रक्खा गया। इसी अवसर पर श्री प० जवाहरलालजी ने वानप्रस्थी की दीक्षा ली।

—ओरन और साथी (बांदा) ग्रामों में श्री प० रामचन्द्रजी आर्य गुरुकुल एटा वाले वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार कर रहे हैं १६ से २० नवम्बर तक दोनों ग्रामों के १५ व्यक्तियों का यज्ञोपवीत संस्कार उन्होंने कराया और उन लोगों ने मादक द्रव्यादि छोड़ने की प्रतिज्ञाएं कीं।

—आ० स० नजीबाबाद में श्री प० सच्चिदानन्द शास्त्री उपदेशक-सभा ने प्रचार किया, उन्हीं के प्रयत्न से इसी क्षेत्र को साहनपुर स्टेट में आर्यसमाज स्थापित हुआ।

—आ० स० बरई का उत्सव १६ से १८ नवम्बर तक समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। श्री वाचस्पतिजी शास्त्री, ठा० आत्माराम जी के भाषण हुए। एक बाल विधवा का कुमार वर के साथ विवाह कराया गया।

—आ० स० नकुड़ (सहारनपुर) का उत्सव १४ से १६ नवम्बर तक मनाया गया। श्री स्वा० अभेदानन्दजी, श्री अमरनाथजी वैद्य, श्री सुरेन्द्र शर्मा काव्यतीर्थ, श्री प्रकाशवीर शास्त्री श्री अमरसिंहजी, श्री स्वामी विवेकानन्दजी के सामयिक और ओजस्वी भाषण और ठा० देशराज के सुन्दर भजन हुए। जनता का शंका समाधान किया गया।

—आ० स० पनेवा (गोरखपुर) का उत्सव १३ से १६ नवम्बर तक बड़े उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ। श्री लाला केसररामजी नारग मैनेजर शुगरमिल घुघली ने समाज मन्दिर का शिलान्यास किया। श्री रामधुन प्रसादजी ने पाठशाला और पुस्तकालय के लिये भूमि दान का वचन दिया श्री सुरेन्द्रनाथजी "आधुनिक अर्जुन"ने मोटर रोकने आदि का प्रदर्शन किया। उससे प्रभावित हो जनता ने अपने बच्चों को गुरुकुलों में भेजने का निश्चय किया है। उत्सव में श्री मुन्शी पौहारीशरणजी व म० देवव्रतजी के भाषण भजनों का उत्तम प्रभाव पड़ा।

—आ० स० कांठ (मुरादाबाद) का उत्सव २३ से २५ नवम्बर तक समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ। श्री बुद्धदेवजी विद्यालंकार श्री आचार्य प्रियव्रतजी कांगड़ी, श्री शिवशर्माजी, श्री विहारीलालजी शास्त्री, श्री सेवारामजी, श्री धर्मदत्त आनन्द, श्री ज्ञानेन्द्रजी, श्री शिवनाथसिंहजी के भाषण व भजन हुए। चार कुमारों के यज्ञोपवीत संस्कार हुए। आ० कु० परिषद् के परीक्षोतीर्ण छात्रों को प्रमाणपत्र दिये गये।

—आ० वीर दल मझाना की ओर से मकदूमपुर में गंगास्नान के मेले में प्रचार किया गया। मद्य निषेध, गोचर भूमि आन्दोलन, गोरक्षा, शुद्धि विषयक भाषण हुए। श्री डा० रघुनन्दन प्रसाद गोयल और श्री प० प्रियव्रत शर्मा ने विशेष सहयोग दिया। लगभग १० आदमी, बच्चे गंगा में डूबने से बचाये।

—आ० स० जवां (अलीगढ़) के १८ और १९ वें मासिकोत्सव आश्विन और कार्तिक पूर्णिमाओं को मनाये गये। श्री स्वामीसत्यव्रतजी, श्री सुवर्णसिंहजी, श्री ज्ञानेन्द्रजी श्री कु० रणवन्तसिंहजी, ब्रह्मचारी भीमसेनीजी के प्रभावशाली भजन व व्याख्यान हुए। जनता पर उत्तम प्रभाव पड़ा।

—आ० स० नगौला (अलीगढ़) श्री प० अमरसिंहजी आर्य पथिक ने सामयिक समस्याओं पर जनता को आर्यसमाज का दृष्टिकोण समझाया।

—आ० स० नगौला (अलीगढ़) श्री प० शिवचरन लालजी आर्य नगौला और श्री ठा० मुंशीसिंहजी रईस जवां के असामयिक निधन समाचारों पर शोक सहानुभूति प्रकट करता है।

—ददरी (बलिया) के मेले में १३ से १५ नवम्बर तक श्री प० शिवनारायणजी और श्री प० धर्मवीरजी आर्यझण्डाधारी ने आर्यसमाज का प्रचार किया।

—आ० स० इगलास (अलीगढ़) में श्री स्वामी पूर्णानन्दजी ने पांच दिन तक पुरनोपनिषद् की कथा कही। स्थानीय स्कूलों के विद्यार्थियों के लिये विद्यार्थी जीवन पर उत्तम भाषण हुआ।

—आ० वी० दल लखनऊ की ओर से ९ से १८ नवम्बर तक दल प्रचार सहायता दिवस मनाया गया। १६, १७ नवम्बर को खेल, कविताएं आदि हुईं और पारितोषिक वितरण हुआ। १८ ता० को फौहारा ग्राऊण्ड (वेलीगारद के समीप) दल ने कैम्प फायर किया। श्री देवीप्रसाद नगर नायक श्री दिनेश कुमार अर्थ नायक, श्री राम सिंह और श्री पीताम्बर भाइ ने प्रशंसनीय कार्य किया।

—आ० वी० दल गाजियाबाद में १८ नवम्बर को दल प्रचार सहायता दिवस मनाया गया। श्री बालदिवाकरजी हंस का ओजस्वी और सामयिक भाषण हुआ।

—आ० वी० दल दिल्ली की ओर से १८ नवम्बर को वार्षिक प्रतिज्ञा दिवस मनाया गया, प्रधान पद से भाषण करते हुए श्री ब्र० ऋषबुध जी ने आर्य वीरों के कर्तव्यों पर प्रकाश डाला। १०० से अधिक वीरों ने प्रतिज्ञाएं लीं।

—दयानन्द महाविद्यालय आजमगढ़, आर्य कन्या महाविद्यालय बांकीपुर, दयानन्द हाई स्कूल दानापुर और आर्यसमाज पटना में १९ से २५ नवम्बर तक श्री पं० धर्मवीरजी झण्डाधारी ने सामूहिक यज्ञ विद्यार्थी जीवन के कर्तव्य, मनुष्य जीवन की सफलता आदि विषयों पर भाषण दिये।

—आ० स० चांदपुर (बिजनौर) का उत्सव २२ से २४ नवम्बर तक बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। श्री पं० रामचन्द्र देहलवी जी के भाषणों का उत्तम प्रभाव पड़ा।

—आ० स० हनुमान रोड देहली का उत्सव २० से २८ अक्टूबर तक समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ। श्री म० आनन्द स्वामी, श्री घनश्यामसिंह गुप्त, श्री म० कृष्ण, श्री यशपाल सिद्धान्तालंकार श्री प० रामचन्द्र देहलवी, श्री पं० भगवद्दत्त रिसर्च स्कालर, श्री शिव कुमार शास्त्री के ओजस्वी भाषण तथा श्री अमरनाथ प्रेमी, श्री हरिश्चन्द्र, श्री तेजभान आदि के भजन हुए। कन्याओं का एक वाद-विवाद भी क्या धर्म राजनैतिक संघर्ष का कारण है ? विषयक हुआ।

—आ० स० गोरखपुर का उत्सव १० से १३ नवम्बर तक समारोह

एक बात

श्री रमानाथ अवस्थी

रोज सवेरे रवि आता है
दुनियां को दिन दे जाता है
लेकिन जब तम इसे निगलता
होती जग में किसे विकलता
सुख के साथी तो अनगिन हैं
लेकिन दुख के बहुत कठिन हैं
सौ बातों की एक बात यह

अनगिन फूल नित्य खिलते हैं
हम इनसे हंस-हंस मिलते हैं
लेकिन जब यह मुरझाते हैं
तो हम इन तक कब जाते हैं
जब तक हममें सांस रहेगी
तब तक दुनियां पास रहेगी
सौ बातों की एक बात यह

सुन्दरता पर सब मरते हैं
किन्तु असुन्दर से डरते हैं
जग इन दोनों का उत्तर है
जीवन इन सबके ऊपर है
सबके जीवन में क्रन्दन है
लेकिन अपना-अपना मन है
सौ बातों की एक बात यह

सभा की सूचनाएँ

पूर्वक मनाया गया। श्री सुखदेव-जी गु० कु० कांगड़ी, श्री महादेवप्रसादजी उपदेशक सभा, आचार्या सुदर्शना देवीजी क० गु० कु० हाथरस, श्री सुरेशचन्द्रजी विद्यालंकार आदि के सामयिक एवं ओजस्वी भाषण हुए। श्री बालकृष्ण जौहरी के उद्योग से गोरखपुर कमिश्नरी की बस्ती, आजमगढ़ देवरिया आदि अन्य समाजों के २५ प्रतिनिधियों का सम्मेलन श्री केशवराय नारंग की अध्यक्षता में हुआ। उत्सव का प्रीतिभोज एक विशेष सूझ थी जिसका अच्छा प्रभाव पड़ा।

उत्सव

—आ० स० सिकन्दराराऊ का उत्सव २१ से २३ दिसम्बर तक।

—आ० स० शेरपुर कल्याण (हल्दौर) का उत्सव ८ से १० दिसम्बर तक, श्री स्वामी विवेकानन्दजी (शामली वाले) ७ दिसम्बर तक शेरपुर पहुंचने की कृपा करें।

—आ० स० देवरिया का उत्सव २० से २१ दिसम्बर तक।

—आ० स० बिजनौर का उत्सव ८ से १२ दिसम्बर तक।

निर्वाचन

—आ० स० ककुवा (आगरा) प्रधान श्री ठा० किशनसिंहजी और मन्त्री म० बालमुकुन्दजी वैद्य

—आ० स० सिंगापुर प्रधान श्री रामनाथजी काश्यप और मन्त्री श्री कामताराय

—आ० स० गोयला (मुजफ्फर नगर) प्रधान श्री चौ० हरवंश लालजी और मन्त्री श्री धर्मवीर जी आर्य

—आ० स० जलगांव प्रधान श्री बा० कन्हैया लाल और मन्त्री श्री पं० नर्मदा प्रसाद आर्य

—आ० कु० सभा खतौली (मुजफ्फर नगर) प्रधान श्री बलदेव राज आजाद और मन्त्री श्री कैलाश चन्द्र शर्मा,

शोक

—आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता, भारतीय पत्रकार संघ के अध्यक्ष श्री देशबन्धु गुप्त के निधन पर निम्न स्थानों पर शोक सभाएं और शोक प्रस्ताव पास किये गये आ० स० भोईवाड़ा (परेल), कायमगंज, रुड़की, सरायतरीन (मुरादाबाद), आजमगढ़, जबलपुर (गोरखपुर) गु० कु० वि० विद्यालय कांगड़ी, हाथरस, अमरोहा, आरा, आ० कु० सभा आजमगढ़, राजामण्डी (आगरा), नगर समाज (आगरा), नामनेर (आगरा) हींग की मण्डी (आगरा) जलगाँव, नजीबाबाद, चांदपुर (बिजनौर), बहराइच, दयानन्द विद्यालय आजमगढ़, गु० कु० रायकोट (लुध्याना)।

सार सूचनाएं

—श्री प० बुद्धदेव विद्यालंकार तथा श्री पं० प्रकाशवीर शास्त्री के पतों की आवश्यकता है।

—प्रधान, आर्यसमाज देवरिया आगरा, मथुरा जिलों की समाजों के अधिकारियों की सेवा में सूचनार्थ निवेदन है कि मैं समाजों के निरीक्षण दौरे पर आने वाला हूं। कृपया समाज सम्बन्धी आवश्यक कागजात ठीक रक्खें।

—आ० प्र० नि० सभा के भजनोपदेशक श्री म० खड़गपालसिंहजी अलीगढ़ जिले में प्रचार कर रहे हैं। अलीगढ़ जिले की समाजों के अधिकारी उनसे प्रचार कराने और सभा का प्राप्तव्य दशांश, सूद कोर्ट मार्ग व्यय आदि देने की कृपा करें।

—मोहनलाल आर्य,
मण्डलाधीश तथा निरीक्षक
मण्डी सईद खाँ आगरा

—टंकारा में चतुर्वेद ब्रह्मपारायण विश्वशान्ति महायज्ञ आगामी २३ फरवरी शिवरात्रि से श्री स्वामी ब्रह्मानन्दजी दण्डी एटा वालों की व्यवस्था में होगा।

—धर्मवीर झण्डाधारी

—जिला उपप्रतिनिधि सभा गोरखपुर की आवश्यक बैठक ९ दिसम्बर को आर्यसमाज घुघली में मध्यान्ह ११ बजे से होगी। जिले की समाजों की उपस्थिति प्रार्थनीय है। —भगवती प्रसाद, आ० स० गोरखपुर।

—गतवर्षों की भांति १९५२ में भी आ० स० अलमोड़ा की ओर से उत्तरायणी के अवसर पर बागेश्वर में आर्यसमाज का प्रचार किया जायगा। आ० स० अल्मोड़ा की आर्थिक स्थिति ठीक न चलने के कारण अच्छी नहीं है अतः इस कार्य के लिये धन की आवश्यकता है। आशा है निकट और दूर के सभी आर्य बन्धु इस कार्य के लिये धन की सहायता करेंगे।

— देवनाथ भारद्वाज,
आर्यसमाज अलमोड़ा

उपदेश विभाग की सूचना

१—विदित हो कि श्री भद्रपालजी आर्य 'संगीतरत्न' चंदौली (अलीगढ़) निवासी ने सभा के उपदेश विभाग द्वारा कार्य करना स्वीकार कर लिया है सम्प्रति आप बदायूं में निवास करते हैं। उच्चकोटि के संगीतज्ञ हैं पहले आप पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा में कार्य करते थे। समाजों को चाहिये कि आपकी सेवाओं से लाभ उठाने के लिए अपने २ उत्सव, कथा सत्संग आदि में प्रचारार्थ आमंत्रित करें इस सम्बन्ध में पत्र व्यवहार सभा से करने चाहिये।

२—नवयुवक श्री गजराजसिंहजी प्रसिद्ध प्रचारक श्री ठा० श्रवणसिंहजी के साथ २ कार्य करते हुए एक सफल तथा योग्य प्रचारक बन गये हैं सभा उन्हें प्रचारार्थ नियुक्त करके उत्सव, कथा, ग्राम-प्रचार आदि अवसरों पर भेजने का विचार करती है। जो सज्जन समाज श्री ठाकुरजी के अतिरिक्त केवल श्री गजराजसिंहजी को ही आमंत्रित करना चाहें वे कृपाकर सभा को शीघ्र लिखने का कष्ट करें।

३—श्री जगदीशभूषणजी कवि व संगीताचार्य प्रचारक देहली शाहदरा देहली की नियुक्ति आर्य प्रतिनिधि सभा के उपदेशक विभाग में की गई है। जो आर्य समाजें उन्हें अपने उत्सवों पर बुलाना चाहें वे सभा से सीधा पत्र व्यवहार करें।

४—श्रीमती माता जगधात्री देवी आर्य, आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की तरफ से अवैतनिक रूप से प्रचार कार्य करती हैं जो समाज या महानुभाव बुलाना चाहें वे उनसे "आर्यनगर, एटा" के पते पर पत्र व्यवहार करें।

—धर्मपाल विद्यालंकार,
सभा मंत्री

५—नवम्बर मास समाप्त है। अभी तक अधिकांश उपदेशकों, प्रचारकों ने अपने २ सितम्बर तथा अक्टूबर मास के कार्य विवरण सभा कार्यालय में भेजने का कष्ट नहीं किया है उन्हें चाहिये कि एक सप्ताह के भीतर भेज दें।

—भृगुदत्त तिवारी उपमन्त्री व अधिष्ठाता उपदेश-विभाग
आ० प्र० नि० सभा उत्तर प्रदेश

कन्या गुरुकुल सासनी—

आर्य जनता को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि भारत की प्रसिद्ध स्त्री शिक्षा संस्था कन्या गुरुकुल सासनी का २२वां वार्षिकोत्सव ३०, ३१ दिसम्बर तथा १ जनवरी १९५२ को समारोहपूर्वक मनाया जायगा। आर्य विद्वानों के भाषण, अनेक शिक्षा प्रद सम्मेलनों के अतिरिक्त १ जनवरी को नवस्नातिकाओं का दीक्षान्त संस्कार होगा। इसी अवसर पर नवीन कन्याओं का प्रवेश भी होगा। जो सज्जन कन्याओं को भेजना चाहें प्रवेश फार्म मंगालें।

—लक्ष्मीदेवी आचार्या
मुख्याधिष्ठात्री
कन्या गुरुकुल, सासनी, हाथरस

गुरुकुल अयोध्या—

विगत ६ नवम्बर कुलभूमि में गुरुकुल संस्थापक श्री स्वामी त्यागानन्दजी की वर्षगांठ मनायी गयी। कार्तिक पूर्णिमा के मेले पर जनता में प्रचारार्थ व्याख्यान, भजन उपदेश आदि का प्रबन्ध गुरुकुल की ओर से किया गया। जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा। गुरुकुल उत्तर प्रदेश में शिक्षा का महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है जो सज्जन अपने बालकों को भेजना चाहें कार्यालय से प्रवेश फार्म मगालें। —रघुनन्दन शर्मा,
गुरुकुल अयोध्या

गुरुकुल रायकोट—

श्री स्वामी गंगागिरिजी ने पटियाला, सनौर, गोयड, लुध्याना आदि आर्य समाजों में प्रचार करते हुए समाजों की सहायता से १५०० रुपया धन संग्रह किया है। स्त्री आर्य समाज सावन बाजार लुध्यानाने इस धनमें आधा धन प्रदान किया है। स्वामीजी, समाजों तथा स्त्री आर्य समाजका गुरुकुल धन्यवाद करता है। आशा है इसी उत्साह से गु० कु० को सहायता मिलती रहेगी।

—परमानन्द शास्त्री,
मुख्याधिष्ठाता

क्या आप जानते हैं ?

राज्य उत्तर प्रदेश—

उत्तर प्रदेश में ३६,२०० शिक्षा संस्थायें हैं, जिनमें ३६,००० बालकों की और ३,२०० बालिकाओं के लिये हैं। इनमें ३२,३५, ६०० छात्र पढ़ते हैं, जिनमें २६, ६३,२०० बालक और २,७२,७०० बालिकायें हैं। इन शिक्षा संस्थाओं में २५,००० अध्यापक तथा ६, ५०० अध्यापिकायें पढ़ाती हैं।

राज्य की दो प्रमुख सार्वजनिक परीक्षाओं, यथा हाईस्कूल और इण्टरमीजियेट में इस वर्ष क्रमशः १,०५,००० और ४०, ८०० परीक्षार्थी बैठे। किसी एक परीक्षा में बैठने वाले परीक्षार्थियों की देश में यह सबसे बड़ी संख्या है।

उत्तर देश में सात विश्वविद्यालय हैं, यथा, इलाहाबाद, लखनऊ, काशीहिन्दू, अलीगढ़ मुस्लिम, रुड़की इंजीनियरिंग तथा काशी संस्कृत विश्वविद्यालय। प्रथम पाँच विश्वविद्यलयों में साहित्य, विज्ञान, कला, विधि तथा अन्यान्य अनेकों विषयों की शिक्षा दी जाती है। आगरा विश्वविद्यालय परीक्षक विश्वविद्यालय है। उसके संबद्ध कालेजों में छात्रों की संख्या १० सहस्र है शेष चारों विश्वविद्यलय अध्यापन का कार्य करते हैं, उनमें से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में ६०००, इलाहाबाद और लखनऊ में ५, ५ हजार तथा अलीगढ़ में ३८००० छात्र हैं।

राज्य में ३६ कालेज, ३१ ट्रेनिंग कालेज, ८० ट्रेनिंग स्कूल, ५० सचल दीक्षा-दल, ६०० हायर सेकण्डरी स्कूल, २७०० जूनियर सेकण्डरी स्कूल, ३२६०० प्राइमरी स्कूल, २२०० प्रौढ़-पाठशालाएं, १४४० संस्कृत पाठशालाएं, २०० अरबी मदरसे, ३६ यूरोपियन स्कूल तथा ११ अपंगों के स्कूल हैं।

राज्य सरकार ने भी ११,५५० प्राइमरी स्कूल खोले थे, जिनमें ११ लाख ६५ हजार बच्चे शिक्षा ग्रहण करते थे और जिनमें २८, ४०० अध्यापक थे। इनके लिये सरकार ने ४१५० भवन तैयार कराये थे जिन पर सवा करोड़ रुपया वार्षिक का व्यय किया जाता है। अब इन स्कूलों का संचालन जिला बोर्डों द्वारा होता है, पर व्यय भार सरकार वहन करती है।

उत्तर प्रदेश में पुरुषों के लिये १००० तथा महिलाओं के लिये ४० पुस्तकालय सरकारी हैं। इसके अतिरिक्त पुरुषों के लिये २६०० और महिलाओं के लिये ४३५ सरकारी वाचनालय भी हैं। इन पुस्तकालयों और वाचनालयों का विकास जनप्रिय सरकार द्वारा ही सम्पन्न हुआ है।

सम्पूर्ण देश में शिक्षा पर सर्वाधिक व्यय उत्तर प्रदेश में होता है जहां प्रतिवर्ष १४ करोड़ से अधिक रुपया शिक्षा पर खर्च किया जाता है। इसमें से पौने ७ करोड़ रुपया राज्य सरकार व्यय करती है, ३॥ करोड़ शुल्क से आता है, १ करोड़ जिला बोर्ड तथा ६० लाख म्यूनिसपल बोर्ड व्यय करते हैं। शेष २॥ करोड़ अन्य सूत्रों से प्राप्त होता है।

उत्तर प्रदेश में ५॥ हजार से अधिक पोस्ट आफिस हैं जिनमें ३१७८ स्थायी हैं। राज्य में ६७ टेलीफोन एक्सचेन्ज हैं तथा टेलीफोन कनेक्शनों की संख्या १२, ५६७ है। राज्य में १७७ पब्लिक काल आफिस हैं जहां से कोई भी नियमित शुल्क देकर बात कर सकता है। राज्य में दो रेडियो स्टेशन लखनऊ और इलाहाबाद में हैं। रेडियो रखने वालों की संख्या इस राज्य में दिसम्बर १६५० में ५३,६६४ थी।

आज का अमेरिका—

खेती में ट्रेक्टरों का उपयोग इतना बढ़ता जा रहा है कि आज अमेरिका के ६५ प्रतिशत खेतों में ट्रेक्टरों द्वारा ही खेती की जा रही है। अमेरिका में ट्रेक्टरों की कुल संख्या ४१ लाख से अधिक है, जो रूस के फार्मों में उपयोग में आ रहे ट्रेक्टरों की कुल संख्या से ६ गुनी है।

अमेरिका के बिजली उत्पादन यंत्र १ सेकन्ड में इतनी बिजली पैदा कर सकते हैं जितनी एक औसत अमरीकी परिवार में पाँच वर्षों में खर्च होगी।

अमेरिका में प्राकृतिक गैस का उपयोग पिछले पाँच वर्षों में ७० प्रतिशत अधिक हो गया है।

अमेरिका की औद्योगिक अर्थ—व्यवस्था कच्चे माल के लिये विदेशी साधनों पर अधिकाधिक निर्भर होती जा रही है। आज अमेरिका द्वितीय महायुद्ध की अपेक्षा ६ गुना अधिक क्रूड आयल, तिगुना कच्चा लोहा, ५० प्रतिशत अधिक ताँबा पाँच गुना लकड़ी और लकड़ी का अन्य सामान, २० गुना सीसा, ८ गुना जस्ता, ५ गुना बॉक्साइट और १२ गुना ऐल्युमिनियम विदेशों से मंगा रहा है।

इस तथ्य के बावजूद कि १६३८ में प्रचलित मूल्यों के अनुसार १६५० में डालर का मूल्य ५८ प्रतिशत था। १६३६ की अपेक्षा १६५० में औसत अमेरिकन की क्रय शक्ति में ४५ प्रतिशत वृद्धि हुई है।

अमेरिका में दिन और रात्रि के प्रत्येक घन्टे में अपने अन्तिम स्टेशनों से १००० यात्रीगाड़ियाँ और माल गाड़ियाँ छूटती हैं और उतनी ही वहाँ पहुँचती हैं। साथ ही एक घन्टे में अमेरिकी रेलें ४२० वैगन माल लादती हैं और उतना ही माल गन्तव्य स्टेशन पर उतारती हैं।

आर्यमित्र प्रकाशन लि० लखनऊ के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित

ओ३म्

आर्य्य-मित्र

• ARYA-MITRA , AGRA •

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक मुखपत्र

आगरा १३ दिसम्बर सन् १९५१

श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय



१० दिसम्बर को आपने बर्मा में वैदिकधर्म प्रचार के लिये प्रस्थान किया। हम आपकी सफलता के लिये परम प्रभु परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।

आचार्य श्री रामदेवजी



९ दिसम्बर को आपकी २१वीं निधन तिथि मनायी गयी। आपने अपनी लेखनी और वाणी से जीवन भर आर्यसमाज और वैदिकधर्म की महती सेवा की।

हरिशङ्कर शर्मा

गुरुकुल महोत्सव का निमन्त्रण

गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन का ४७ वां वार्षिकोत्सव

गुरुकुल विश्वविद्यालय, वृन्दावन का ४७ वाँ वार्षिक महोत्सव ता० २३ से २६ दिसम्बर तक बड़े समरोह के साथ कुल भूमि में मनाया जायगा। इसमें आर्यजगत् के उच्च कोटि के प्रसिद्ध विद्वान्, व्याख्याता तथा उपदेशक सम्मिलित हो रहे हैं। साथ ही देश के अन्य नेताओं के भी पधारने की पूर्ण आशा है। उत्सव के समय २५ दिसम्बर को कुल की शिक्षा-दीक्षा प्राप्त कर निकलने वाले स्नातकों का दीक्षान्त संस्कार तथा २६ दिसम्बर को नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश विशेष रूप से दर्शनीय होंगे।

इस महोत्सव में सम्मिलित होने के लिये आपको सादर सप्रेम निमन्त्रण है। कृपया बन्धु बान्धव व इष्ट-मित्रों सहित सपरिवार पधार कर अपनी उपस्थिति से हमें अवश्य अनुगृहीत कीजिये।

यदि किसी कारण वश आप उत्सव में सम्मिलित न हो सकें तो भी अपनी ओर से गुरुकुल के लिये उचित सहायता भेजने व अपने मित्र मंडल से भिजवाने की कृपा अवश्य करें। इस समय गुरुकुल को आपकी शुभ कामना एवं आर्थिक सहायता की विशेष आवश्यकता है।

उत्सव पर सम्मिलित होने वाले महानुभावों के ठहरने की समुचित व्यवस्था गुरुकुल की ओर से रहता है जो सज्जन अपने विद्यार्थियों को गुरुकुल में प्रविष्ट कराना चाहें वे गुरुकुल कार्यालय से प्रवेश पत्र व नियम मँगा लें।

उत्सव का कार्यक्रम

२३ दिसम्बर प्रातः—आर्य ध्वजा समुत्तोलन—श्री मदनमोहनजी सेठ सभा प्रधान द्वारा, मध्यान्ह में संस्कृत सम्मेलन सभापति श्री प० हरिदत्तजी शास्त्री नवतीर्थ, एम० ए०। रात्रि में-विशेष व्याख्यान श्री प० गंगादत्तजी और श्री प० रामचन्द्रजी आर्य पुरोहित।

२४ दिसम्बर—विद्या परिषद्-हिन्दी सम्मेलन सभापति श्री डा० नरेन्द्रदेवजी एम० ए० डी० लिट्, वाद विवाद का विषय—"भारत के लिये साम्यवाद की अपेक्षा गाँधीवाद श्रेयस्कर है" मध्यान्ह में भाषण श्री आचार्य बृहस्पतिजी शास्त्री एम० ए० रात्रि में-व्याख्यान श्री बा० पूर्णचन्द्रजी एडवोकेट और श्री धर्मपालजी विद्यालङ्कार।

२५ दिसम्बर प्रातः—नव स्नातकों का दीक्षान्त समावर्तन संस्कार। मध्याह में-भाषण श्री प० बुद्धदेवजी विद्यालंकार और राजगुरु श्री धुरेन्द्र शास्त्री प्रधान सा० दे० सभा। रात्रि में भाषण -श्री प० रामदत्तजी शुक्ल एम० ए० एडवोकेट और श्री प० विहारीलालजी शास्त्री

२६ दिसम्बर प्रातः—प्रवचन श्री स्वामी अमृतानन्दजी और नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश, मध्यान्ह में-महिला सम्मेलन, कवि सम्मेलन के सभापति श्री पं० हरिशंकर शर्मा, समस्याएं -कंचन कटोरा लिये माँगत भिखारी है, राज है। स्वतन्त्र— आमूं, काश्मीर रात्रि में व्याख्यान श्री स्वामी ब्रह्ममुनिजी महाराज, धन्यवाद, शान्ति पाठ

विनीत
दर्शनाभिलाषी,
द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री सि० शि०
मुख्याधिष्ठाता

सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा की बैठक ३० दिसम्बर १९५१ को देहली में रक्खी गई है। सम्बद्ध महानुभाव कृपया नोट करलेवें।

श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली
ज्ञानचन्द, मन्त्री
सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा

---

१६ दिसम्बर को

गुरुकुल दिवस मनाइये

आर्यसमाज प्राचीन भारतीय शिक्षा-प्रणाली का समर्थक रहा है, उसकी सारी शक्तियां प्राचीन आदर्शों के पुनः संस्थापन में लगनी चाहियें। उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज के शिक्षात्मक दृष्टि कोण के लिये गुरुकुल विश्व विद्यालय वृन्दावन का संचालन किया जा रहा है। यह संस्था उत्तरप्रदेश के आर्यों की एक मात्र केन्द्रीय संस्था है। गुरुकुल की उन्नति और उसके संकटों को दूर करने का सारा दायित्व उत्तरप्रदेश के आर्यों पर ही है। संस्था ने लगभग ५० वर्षों से उत्तर प्रदेश के प्रत्येक क्षेत्र में अपने ब्रह्मचारियों द्वारा भारतीय भावना का प्रसार किया है। यदि हम चाहते हैं कि यह संस्था हमारे प्रान्तीय गौरव को अक्षुण्ण बनाये रख सके तो इसकी ओर हमें पूर्ण रूप से ध्यान देना चाहिये।

आर्य प्रतिनिधि सभा ने उत्तर प्रदेश की समस्त आर्य समाजों पर गुरुकुल सहायता निधि के लिये धन-राशि नियत की हुई है। यदि सब आर्य समाज अपने-अपने भाग को गुरुकुल भेजते रहें तो गुरुकुल का संचालन बहुत सरल हो सकता है और गुरुकुल आदर्श संस्था के रूप में और भी अधिक उन्नति कर सकता है।

गुरुकुल का वार्षिकोत्सव आगामी २३ से २६ दिसम्बर तक कुल भूमि में समारोह पूर्वक मनाया जायगा। इस अवसर पर पधारने और धन संग्रह का निश्चय कर कार्य आरम्भ कर देने के लिये उत्तर प्रदेश के प्रत्येक आर्य समाज में १६ दिसम्बर को गुरुकुल-दिवस मनाया जाना चाहिये।

इस दिन गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली सम्बन्धी विशेष व्याख्यान कराये जायं और गुरुकुल के लिये धन संग्रह किया जाय। लोग उत्सव में सम्मिलित होने का निश्चय करें और जो लोग किन्हीं विशेष कारणों से महोत्सव पर न पहुँच सकें वे अपनी श्रद्धानुरूप आर्थिक सहायता प्रदान कर गुरुकुल-प्रेम का परिचय दें।

गुरुकुल की उन्नति आर्य समाज की उन्नति है। इस बात को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक आर्य को गुरुकुल दिवस बड़े उत्साह पूर्वक मनाना चाहिये।

विनीत—
मदनमोहन सेठ
प्रधान
आ०, प्र,० सभा उत्तर प्रदेश

नारायण स्वामी भवन,
लखनऊ

भ्रमण पुरोगम

श्री प्रधानजी .... मन्त्रीजी

अक्टूबर मास में तिलहर, फर्रुखाबाद और मेरठादि में यद्यपि भ्रमण हुआ तथापि आर्यसम्मेलन के कारण धन संग्रहादि का विशेष कार्य न हो सका।

नवम्बर मास में फर्रुखाबाद के झगड़े के सम्बन्ध में पुनः जाना पड़ा और श्री धर्मपाल विद्यालंकार सभा मन्त्री की उपस्थिति में आर्यसमाज का निर्वाचन हो गया।

अब श्री प्रधानजी व मन्त्रीजी सभा गोरखपुर, बस्ती आदि की ओर दौरा कर रहे हैं। आशा है कि गोरखपुर, बस्ती, देवरिया, आजमगढ़, गोंडा, बहराइच, बाराबंकी की आर्यसमाजों में व आर्यपुरुषों में वैदिक धर्म प्रचार का उत्साह उत्पन्न होगा और वेदप्रचार निधि में अच्छी धन राशि संग्रह होगी।

भृगुदत्त तिवारी,
उपमन्त्री सभा

आर्यमित्र

लोक रश्मि द्वितहृत्तमो लसत् काव्यकोकनद आगरप्रदः।
अज्ञता घन विभावरी हरः, "आर्यमित्र" उदियर्ति सन्मुदे॥

आगरा मार्गशीर्ष शुक्ल १५ सम्वत् २००८ वि०, गुरुवार, ता० १३ दिसम्बर १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-सम्वत् १९७२९४९०५२

हमारा गुरुकुल

आर्यसमाज ने जहाँ भारतीय रूढ़िवाद के दुर्गम दुर्ग को भूमिसात करने के लिये पाखण्ड-खण्डिनी-पताका का आश्रय लिया वहाँ विदेशी शिक्षा-दीक्षा के सांस्कृतिक संग्राम की मोर्चा बन्दी के रूप में गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली के दुर्ग खड़े किये। इन गुरुकुलों की स्थापना के समय आर्य नेताओं के हृदयों में जहाँ प्राचीन भारतीय संस्कृत सभ्यता के पुनरुद्धार की प्रबल भावना थी वहाँ वे इन गुरुकुलों द्वारा मैकाले की विदेशी शिक्षा नीति से देश की रक्षा भी करना चाहते थे। इसी आदर्श प्रेरणा और उदात्त भावना से अनुप्राणित होकर युक्त प्रान्त के आर्यों ने जिस गुरुकुल का संचालन आरम्भ किया, वह है "गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन" इस संस्था के पालन-पोषण का सारा दायित्व उत्तर प्रदेश के आर्य बन्धुओं ने अपने कन्धों पर उठाया और देश में निःशुल्क शिक्षा के महानतम आदर्श को लक्ष्य में रखकर मनुष्य मात्र के लिये इस शिक्षा मन्दिर के द्वार खोल दिये। देश और समाज की सेवा में संलग्न यह संस्था लगभग ५० वर्ष की हो चुकी है। अपने इस थोड़े से जीवन में इस संस्था ने भारत के ही नहीं भारत से बाहर के भी सैकड़ों प्रवासी छात्रों को शिक्षा प्रदान कर भारतीय सभ्यता संस्कृति का सन्देश पहुँचाने का महान् कार्य किया। शिक्षा संसार में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुई है। इस उपयोगी सफलता में गुरुकुल वि० वि० वृन्दावन अपना विशेष महत्वपूर्ण स्थान रखता है। स्वर्गीय श्री महात्मा नारायण स्वामी ने अपनी सम्पूर्ण शक्तियों से इस कुल वृक्ष का सम्पादन किया। स्व० श्री भगवानदीन जी, स्व० श्री पं० घासीराम जी, स्व० श्री हुक्मसिंह जी, श्री पं० गंगाप्रसाद जी रि० चीफजज, स्वर्गीय श्री आत्माराम जी, स्व० श्री महात्मा श्रीरामजी, श्री पं० शिवनारायण जी शुक्ल आदि प्रथम श्रेणी के आर्यसमाजी व्यक्तियों के सहयोग से इस संस्था का विकास हुआ और आज वह विश्वविद्यालय का रूप धारण किये हुए है। कोई संस्था अपने संचालकों और संरक्षकों की लगन, योग्यता और सद्भावना से ही आगे बढ़ सकती है। गुरुकुल ने अपने विगत जीवन में जो उन्नति की और जो सफलताएं उसे प्राप्त हुईं यदि हम उन्हीं पर सन्तोष कर हाथ धर बैठ जायें तो वह गौरव और विकास अधिक दिन नहीं टिक सकेगा। गुरुकुल के स्नातकों को आज देश के विश्वविद्यालय अपने स्नातकों के अधिकार प्रदान करते हैं, सरकार गुरुकुल की उपाधियों को स्वीकार करती जा रही है। इस प्रकार जैसे जैसे गुरुकुल बाह्य जगत् में ख्याति और गौरव की ओर बढ़ रहा है। वैसे ही वैसे गुरुकुल के प्रति हमारे उत्साह और लगन में शैथिल्य आता दिखाई दे रहा है। क्या यह उदासीनता सिद्धान्तों के प्रति हमारी अश्रद्धा की द्योतक नहीं है। यदि हम आर्यजन अपने बालकों को अधिक संख्या में गुरुकुल न भेजें और न धनादि की प्रचुर सहायता दें तो गुरुकुल आगे कैसे बढ़ सकेगा। यदि उद्गम ही सूख जाय तो नदी कैसे बहेगी। यह बात भली भाँति हृदयंगम हो जानी चाहिये। आर्यसमाज का भविष्य गुरुकुलों की उन्नति में ही निहित है। ये गुरुकुल केवल शिक्षा-केन्द्र नहीं अपितु आर्यसमाज की मशीनरी के कल-पुर्जों का निर्माण करने वाले कारखाने भी हैं। आज के आर्यसामाजिक जीवन में गुरुकुलों के शिक्षित-दीक्षित व्यक्तियों का प्राधान्य है। यदि आप चाहते हैं कि यह धारा सूखने न पावे तो आपको इस दिशा में अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिये। आज गुरुकुल प्रणाली का आदर बढ़ रहा है। राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद हमारे गुरुकुलों से प्रभावित हो सारे शिक्षणालयों को गुरुकुल बनाने का परामर्श दे रहे हैं। भारत सरकार के विश्वविद्यालय आयोग की रिपोर्ट ने गुरुकुल-प्रणाली को अपनाने का सुझाव दिया है इस प्रकार गुरुकुल प्रणाली का महत्व बढ़ रहा है। ऐसी अवस्था में कोई कारण नहीं कि हम हतोत्साह और शिथिल प्रयत्न हों। गुरुकुल वृन्दावन का वार्षिकोत्सव आगामी २३ से २६ दिसम्बर तक मनाया जायगा उस अवसर पर पधार कर यथा शक्ति आर्थिक सहायता प्रदान कर और अपने बालकों को प्रविष्ट करा कर आप अपने सहयोग का परिचय दे सकते हैं। उत्तर प्रदेश के आर्य बन्धुओं का अपना विशेष दायित्व है, सभा के प्रधान जी की ओर से १६ दिसम्बर को प्रान्त में गुरुकुल-दिवस मनाने की सूचना निकाली गयी है। इस दिन संस्था के लिये उत्साह पूर्वक धन संग्रह का कार्य किया जाना चाहिये आप सबकी अमूल्य सहायता से ही गुरुकुल उन्नति-पथ पर आगे बढ़ सकेगा और अपनी कमियों को दूर कर आर्यसमाज की कीर्ति को विश्वव्यापी बना सकेगा।

श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय की बर्मा यात्रा

विश्व में वैदिक धर्म प्रचार आर्य समाज के कार्य क्रम का महत्व पूर्ण अंग है। भारत से बाहर भारतीयता का प्रसार और रक्षा का दायित्व आर्यसमाज ने अपने ऊपर लिया है। प्रवासी भारतीयों में वैदिक धर्म का सन्देश पहुँचाने के लिये समय-समय पर आर्य समाज के उपदेशक उपनिवेशों में जाते रहे हैं। अभी पिछले दिनों अफ्रीका में आर्य समाज का सन्देश लेकर श्री गङ्गाप्रसादजी उपाध्याय गये थे। उनकी इस यात्रा का बड़ा अच्छा असर हुआ। आर्य जगत् को यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता होगी कि अब फिर श्री उपाध्यायजी १० दिसम्बर को बर्मा के लिये प्रस्थान कर चुके हैं। श्री उपाध्यायजी लगभग ७० वर्ष की अवस्था में जिस उत्साह और लगन के साथ वैदिकधर्म प्रचार में संलग्न हैं वह अत्याधिक श्लाघ्य एवं अनुकरणीय उदाहरण है। आर्य समाज के युवकों के लिये तो उनका इस प्रकार विदेशों में प्रचारार्थ जाना प्रेरणा का सन्देश दे रहा है। श्री उपाध्यायजी आर्यसमाज के अमूल्य रत्न हैं। आशा है वे अपनी प्रदीप्त प्रभा से बर्मा में अज्ञानान्धकार के आवरण को नष्ट कर वहाँ भारतीय ज्योति का प्रकाश फैला सकेंगे। हम श्री उपाध्याय जी की बर्मा यात्रा की सफलता के लिये शुभ कामना करते हैं

स्वर्गीय श्री सरदार वल्लभभाई पटेल की पुण्य-तिथि

भारतीय स्वाधीनता के वीर नायक स्वतन्त्र भारत के निर्माता श्रद्धास्पद श्री सरदार पटेल ने एक वर्ष पूर्व इस संसार से प्रयाण किया था। श्री सरदार पटेल का नश्वर शरीर हमारे बीच फिर कभी नहीं आ सकता परन्तु उनके कार्य, उनका सफल नेतृत्व, अदम्य साहस और प्रचण्ड राष्ट्र-भक्ति की भावना भारतीय इतिहास में सदैव प्रेरणा का कारण बनी रहेगी। भारत की स्वाधीनता और उसके बाद राष्ट्र को एकता के सूत्र में संग्रथित करने के उनके महत्व पूर्ण कार्यों को कौन भूल सकता है। सरदार के सच्चे अनुयायी होने का गौरव और अभिमान रखने वाले हम भारतीयों का कर्तव्य है कि हम उनके बताये मार्ग पर चलें और उन्होंने राष्ट्र निर्माण का जो अधूरा कार्य छोड़ा है उसे पूर्ण करें। 'राष्ट्र की स्वाधीनता आन्तरिक शान्ति से ही बच सकती है' यह उनका अन्तिम सन्देश था। आज देश में चुनावों के नाम पर जिस साम्प्रदायिकता, बिरादरीबाजी, पूंजीवाद, सामन्तवाद आदि के प्रच्छन्न रूपों में राजनीति वाराङ्गना नृत्य कर रही है उससे देश की आन्तरिक शान्ति भंग होने का बड़ा खतरा है। देश की बेकारी, कुशासन, भ्रष्टाचार, चोर बाजारी तथा अन्य अभाव, अन्याय मूलक प्रवृत्तियों से जनता जनार्दन हार्दिक दुखी है। यदि

हम सरदार का थोड़ा भी आदर करते हैं तो हमें उपर्युक्त दल बन्दियों के विषाक्त वातावरण और अभावों को दूर करने के लिये सच्ची भावना से जुट जाना होगा। यही हमारी अपने स्वर्गीय सरदार के प्रति सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी।

महान् कलाकार अवनीन्द्रनाथ का निधन

भारत का दुर्भाग्य है कि उसकी नेतृत्व पीढ़ी के व्यक्ति शनैः शनैः समाप्त होते जा रहे हैं। अभी हम श्री योगराज अरविन्द जैसे दार्शनिक और श्री सरदार वल्लभ भाई पटेल जैसे दूरदर्शी राजनीतिज्ञ का वियोग भूल भी नहीं पाये हैं परन्तु कालचक्र ने गत ५ दिसम्बर को महान् कलाकार श्री अवनीन्द्रनाथ टगोर को भी हमारे बीच से उठा लिया। इस समय उनकी आयु ८१ वर्ष की थी और किसी प्रकार की पूर्व अस्वस्थता भी न थी, अचानक ही यह वज्रपात हो गया। श्री अवनीन्द्रनाथ टैगोर विश्व कवि स्व० श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर के भ्रातृज थे, टैगोर परिवार में जन्म लेकर इस महान कलाकार ने सदैव अपनी प्रतिभा और कृतियों से विश्व में भारत का मस्तक उन्नत बनाये रखा।

यद्यपि प्रारम्भ में वे इटालियन कलाकार गिलहार्डी के सम्पर्क में आने पर योरपीय शैली से प्रभावित हुए थे तथापि उन्हें भारतीय शैली पर भी गर्व था और बाद में उन्होंने भारतीय शैली को ही अपनाकर अपनी उर्वर कल्पना को विकसित किया। इसी लिए उन्हें हम 'आधुनिक भारतीय कला का जनक' कहते हैं। स्व० विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने उनके सम्बन्ध में लिखा था—"जब मैं सोचता हूँ कि बंगाल में सम्मान का सबसे बड़ा पात्र कौन है तो सब से पहले मेरे दिमाग में अवनीन्द्रनाथ का नाम आता है। उन्होंने देश को आत्महीनता के पाप से बचाया है। उन्होंने भारत को अपमान के गर्त से उठाया है और उसको पुनः उस स्थान पर प्रतिष्ठित किया है जिसका कि वह अधिकारी था"। इस प्रकार के महान् व्यक्तित्व का अवसान देश के लिये कितना दुःखदायी है। अपने इस महान् कलाकार के निधन पर हम हार्दिक शोक प्रकट करते हैं।

विश्व न्यायालय में भारतीय न्यायाधीश

भारत की विदेशों मे जो गौरव गरिमा बढ़ रही है उसे जान कर ऐसा कौनसा भारतीय होगा जिसे हार्दिक आनन्द न होता हो। संयुक्त राष्ट्र-संघ में हमारे प्रतिनिधियों ने जिस योग्यता और न्याय तथा विश्व शान्ति की सच्ची भावना के साथ कार्य किया है उसकी सम्पूर्ण विश्व में प्रशंसा हुई है। भारतीय निष्पक्ष भावना से प्रभावित हो राष्ट्र-संघ ने भारत के राष्ट्र संघ प्रतिनिधि मण्डल के नेता श्री बी० एन० राव को हेग के अन्तर्राष्ट्रिय न्यायालय का न्यायाधीश निर्वाचित किया है। श्री राव को जो सम्मान प्राप्त हुआ है वे उसके सर्वथा योग्य हैं। उन्होंने स्वतन्त्र भारत के प्रतिनिधि के रूप में जिस प्रकाण्ड विधि विशेषज्ञता और न्यायनिष्ठा के साथ भारतीय पक्ष की स्थापनाएं की वह राष्ट्र संघ के इतिहास में अद्वितीय उदाहरण बनी रहेगी। ऐसे योग्य व्यक्ति को विश्व न्यायाधीश बनाने का निर्णय भारत के गौरव को बढ़ाने वाला है। हम इस अवसर पर श्री राव को भारतीय जनता की ओर से इस सफलता के लिये बधाई देते हैं।

स्वर्गीय डा० दुर्गाशंकर नागर

सुप्रसिद्ध भारतीय अध्यात्म चिकित्सक श्री डा० दुर्गाशंकर नागर का २३ नवम्बर को पक्षाघात रोग से देहावसान हो गया। डा० साहब ने मानसिक चिकित्सा पद्धति के प्रचार एवं प्रसार में ही अपना सारा जीवन लगाया। देश में सहस्रों व्यक्तियों को आपने मानसोपचार द्वारा सुखी बनाया भारत ही नहीं विदेशों में भी आपकी चिकित्सा पद्धति की प्रशंसा थी। अपने विचारों के प्रचारार्थ आप "कल्पवृक्ष" मासिक पत्र निकालते रहे जिसने देश विदेश सर्वत्र अध्यात्म भावना-प्रसार में सहायता पहुंचाई है। इस प्रकार आपने एक सच्चे पत्रकार का कर्त्तव्य भी पालन किया। एक आदर्श अध्यात्म वादी; मानसिक चिकित्सक और पत्रकार के रूप में नागर जी का वियोग हम सबके लिये दुःख दाई है। आपने जिस उच्च लक्ष्य को सामने रख कर मानव मात्र की सेवा का आदर्श उपस्थित किया उसे अपना कर ही हम उनका कार्य पूरा कर सकते हैं।

अध्यात्म धारा

दुख की समस्या

श्री आत्मानन्द

मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है। उसने अपनी अलग ही एक सृष्टि बनाली है! उसी अपनी बनाई हुई सृष्टि में वह इतना भूला हुआ है कि उसको ईश्वर की कृति की ओर ध्यान देने का अवकाश ही नहीं है। इसी लिये उसका जीवन सदैव दुखी रहता है।

दुख सुख अपनी आत्मा की सृष्टि है। बृहदारण्यकोपनिषद् में याज्ञवल्क्य ने अपनी स्त्री मैत्रेयी से कहा था, 'हे मैत्रेयि! यह निश्चय है कि पति के प्रयोजन के लिये पति प्रिय नहीं होता, आत्मा के अपने ही प्रयोजन के लिये पति प्रिय होता है, स्त्री के प्रयोजन के लिये स्त्री प्रिया नहीं होती, अपने ही प्रयोजन के लिये स्त्री प्रिय होती है, पुत्रों के प्रयोजन के लिये पुत्र प्रिय नहीं होते, अपने ही प्रयोजन के लिये पुत्र प्रिय होते हैं' परिवार सम्बन्धी मनुष्य के इस सम्बन्ध को पुत्रैषणा नामक मानवी सृष्टि से हम सम्बोधन कर सकते हैं। जब तक उसका मोह इनमें लगा रहेगा, तब तक उसको परमात्मा की सृष्टि में आनन्द नहीं मिल सकता। इसका अर्थ यह नहीं है कि हम अपनी संतान, परिवार और लोगों से कोई संबंध न रक्खें, हमें उनके प्रति अपने कर्त्तव्य का पूर्ण पालन करना चाहिये, पर उन से हमको किसी प्रकार की आशा नहीं रखनी चाहिये और यह समझना चाहिये कि हमने अपना कर्त्तव्य पालन कर दिया अब वे अपना कर्त्तव्य पालन करते हैं या नहीं, उसकी जिम्मेदारी उन पर है। यदि ऐसा भाव मन में हो जाय तो किसी के सुख दुख का हमारे ऊपर प्रभाव न पड़े। इसी प्रकार मनुष्य वित्तैषणा लिप्त हो दुख अनुभव करता है। धन,दौलत पर किसी मनुष्य का अधिकार नहीं है। इस वस्तु के स्वामी तो परमात्मा हैं यदि मनुष्य इसका स्वामी होता तो वह उसको मरने पर अपने साथ ले जाता। पर रावण से लेकर हिटलर तक कोई इस धन-धान्य को अपने साथ नहीं लेजा सका।

यह धन साध्य नहीं, बल्कि शरीर की साधना के लिये है। ईशोपनिषद् में कहा है।

> ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
> तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मागृधः कस्यस्विद् धनम्॥

अर्थात् जो कुछ इस संसार में है वह उस प्रभु की सम्पत्ति है उसी की दी हुई वस्तु का तू भोग कर, और किसी अन्य के धन का तू लालच न कर। तुलसीदासजी ने कहा है:—

> अब सर्वे जो द्रव्य है, उदय अस्त लौं राज।
> जो तुलसी निज मरण है तो आवै केहि काज॥

इसी प्रकार लोकैषणा की प्रवृत्ति भी मनुष्य के दुख का कारण बनती है। गुणवान के गुण तो संसार में फैलेंगे ही। महर्षि दयानन्द अथवा श्री बुद्ध महाराज ने अपने यश विस्तार के विचार से कभी तपस्या और त्याग नहीं किया। परन्तु जहाँ संसार में ख्याति प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न हो जाती है, वहीं मनुष्य पतन के गर्त में गिर जाता है। उसमें अहम् भाव पूर्ण रूप से भर जाता है, वह केवल अपनी प्रशंसा सुन सकता है, दूसरे की आलोचना वह नहीं सुन सकता। इस प्रकार लोगों के मन पर इस लोकैषणा ने बड़ा कठिन जाल डाल रक्खा है वास्तव में—

> द्वे पदे बन्धमोक्षाय निर्ममेति ममेति च।
> ममेति बध्यते जन्तुः निर्ममेति विमुच्यते॥

जो लोग इन तीनों इष्णाओं के वशीभूत हैं उनका आत्मा बैल के समान चक्की में पिसता रहेगा पर उसको शान्ति न मिलेगी, और जब वह इन वस्तुओं में ममता विहीन हो जावेगा, उसी समय से वह कल्याणकारी प्रभु की कल्याणकारी सृष्टि का आनन्द लेने लग जायगा। परन्तु इसके लिये अभ्यास और वैराग्य की आवश्यकता है।

संस्था-परिचय

गुरुकुल विश्व विद्यालय वृन्दावन

श्री स्ना० उमेशचन्द्र शिरोमणि, एम० ए०

गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता



श्री आचार्य द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री
सिद्धान्त शिरोमणि

महर्षि दयानन्द ने भारत में शिक्षा की दुर्गति देखकर जिस गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली का अपने ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर उल्लेख किया, उसी आदर्श शिक्षा प्रणाली को सफल रूप देने के लिये युक्त प्रान्त के आर्य बन्धुओं ने निश्चय किया और अनेकों कठिनाइयों और सकटों के होते भी गुरु-कुल आश्रम की आधार शिला सिकन्दरा बाद (बुलन्द शहर) में रखदी गयी। श्री स्वामी दर्शनानन्दजी महाराज और श्री प० मुरारीलाल शर्मा को ही इसका प्रारम्भिक श्रेय प्राप्त हुआ। थोड़े दिनों स्वतन्त्र रूप से सस्था का संचालन होता रहा, बाद में १९०५ ई० की १ दिसम्बर को सयुक्त प्रान्त की आर्य प्रतिनिधि सभा ने इस संस्था को अपने संरक्षण में ले लिया। दो वर्ष तक सिकन्दराबाद में सभा ने गुरुकुल चलाया परन्तु फिर इसे फर्रुखाबाद में स्थान्तरित करने का निर्णय किया गया और १७ सितम्बर १९०७ ई० को गुरुकुल फर्रुखाबाद चला गया। इस परिवतन के समय फर्रुखाबाद के आर्यों ने बड़े उत्साह और उल्लास के साथ गुरुकुल के लिये सम्यक् सहयोग दिया स्व० श्री बाबू गुलराज गोपालजी, श्री बाबू रामदीनजी, स्व० श्री प० भगवान दीन मिश्र आदि ने गुरुकुल संचालन में महत्व पूर्ण योग दिया। फर्रुखाबाद में ऋषि ने अपने जीवन कालमें जिस संस्कृत पाठशाला की स्थापना की थी, गुरुकुल उसी पाठशाला में रहा और आगे प्रगति करता रहा। इस प्रकार इस गुरुकुल का ऋषि परम्परा से सीधासम्बन्ध स्थापित होगया। इस समय तक गुरुकुल के पास अपना भवन नहीं था। जब श्री कुंवर हुकुमसिंहजी आदि के प्रयत्न से देश भक्त राजा महेन्द्र-प्रतापजी ने वृन्दावन में अपना उद्यान गुरुकुल के लिये भेंट करने का वचन दिया तब सभा ने १६ दिसम्बर १९११ ई० को गुरुकुल फर्रुखाबाद से वृन्दावन में स्थान्तरित कर दिया। श्री राजा साहब ने अपनी १५००० की भूमि के साथ दस हजार रुपये दान की उदार सहायता भी गुरुकुल को प्रदान की। भूमि और धन की इस सहायता के बाद गुरुकुल ने वृन्दावन में शीघ्र ही अत्यधिक उन्नति की। श्री प० भगवानदीनजी के उपरान्त श्री महात्मा नारायण स्वामीजी ने गुरुकुल की उन्नति में महत्वपूर्ण योग दिया। गुरुकुल को वर्तमान विश्वविद्यालय का स्वरूप देने का श्रेय श्रद्धेय श्री स्वामीजी महाराज को ही प्राप्त है।

इस प्रकार आर्य समाज के शिक्षा कार्य क्रम की अंग भूत आपकी चिर परिचित यह संस्था योगिराज श्री कृष्ण की क्रीड़ा-स्थली और दण्डी स्वामी श्री विरजानन्दजी के शिष्य महर्षि दयानन्द की शिक्षास्थली व्रजभूमि वृन्दावन में प्राचीन पद्धति के अनुसार शिक्षा प्रसार का कार्य कर रही है। गुरुकुल यद्यपि उत्तर प्रदेश के वृन्दावन नगर में स्थित है तथापि गुरुकुल ने अपने अल्प जीवन में भारत के प्रत्येक स्थान अर्थात् आसाम, बंगाल, मध्यप्रान्त दक्षिण हैदराबाद, मद्रास, मैसूर, उड़ीसा, इन्दौर आदि के बालकों को प्राचीन भारतीय शिक्षा से दीक्षित किया है। भारत से बाहर फीजी, अफ्रीका डच गायना, ब्रह्मा, थाइलैण्ड आदि सुदूरवर्ती अनेक उपनिवेशों के सैकड़ों प्रवासी विद्यार्थियों ने इस सस्था में शिक्षा प्राप्त की है और कर रहे हैं। इस प्रकार गुरुकुल को भारत ही नहीं भारत से बाहर के भारतीयों की सेवा करने का भी गौरव प्राप्त है।

संस्था का उद्देश्य विद्यार्थियों के जीवन में ब्रह्मचर्य, भारतीयता और आध्यात्मिकता का समावेश कर उन्हे राष्ट्र का उत्तम नागरिक बनाना रहा है। इस सस्था की उपयोगिता और महत्व को देश के सभी श्रेणियों के प्रमुख पुरुषों ने स्वीकार किया है। विश्ववन्द्य महात्मा गांधी और श्री महामना प० मदनमोहन मालवीयजी, नेताजी श्री सुभाष चन्द्र बोस, भारत कोकिला सरोजनी नायडू आदि ने अनेक बार पधार कर गुरुकुल को आशीर्वाद दिया था। प्रधान मन्त्री श्री प० जवाहरलाल नेहरू, श्री गोविन्द वल्लभ पन्त, श्री सम्पूर्णानन्दजी, श्री आचार्य जुगल किशोरजी, उपविदेश मन्त्री श्री डा० केस्कर, श्री लाल बहादुर शास्त्री आदि सभी नेताओं की इस सस्था पर कृपा दृष्टि रही है। और उन्होंने कुल में पधार कर कुलवासियों को अपने दर्शन दिये हैं।

इस संस्था ने न केवल भारतीय महापुरुषों के हृदय में गौरव पूर्ण स्थान प्राप्त किया है। अपितु स्व० श्री दीनबन्धु श्री सी० एफ० एन्ड्रूज, श्री जे० एल० ह (पीकिंग चीन) मिस लीवर मोर, श्री स्टनले जोन्स, श्री ई० एस० फूट (अमरीका) श्री रोनाल्ड निक्सन श्री ए० डब्ल्यू डेविस, श्री डब्ल्यू हूवर (आक्स फोर्ड) श्री आई० मरिस्लोवस्का (पोलैण्ड) आदि अनेक विदेशी विद्वानो ने भी समय समय पर इस संस्था का निरीक्षण कर इसकी मुक्त कण्ठ से प्रशसा की है

गुरुकुल की शिक्षा अपनी अनेक विशेषताएं रखती है। विदेशी राज्य के युग में गुरुकुल ने युवकों में क्रान्तिकारी भावनाएं उत्पन्न कर, राष्ट्रिय जागृति में महत्वपूर्ण योग दिया। अपनी इन राष्ट्रिय प्रवृत्तियों के लिये गुरुकुल विदेशी शासकों की दृष्टि में सदैव खटकता रहा, विदेशी शासकों ने गुरुकुल की स्वतन्त्र प्रवृत्तियों को नियन्त्रित करने के लिये संस्था के संचालकों को संस्था के लिये आर्थिक सहायता के प्रलोभन भी दिये परन्तु कुल गौरव स्व० श्री महात्मा नारायण स्वामीजी आदि ने जनता जनार्दन के आदर्श दान से ही गुरुकुल का सचालन करना उचित समझा और विदेशी शासकों के सामने सिर झुकाना स्वीकार न किया। सस्था के इसी राष्ट्रिय एव सांस्कृतिक स्वाभिमान का परिणाम यह हुआ कि भारत की स्वतन्त्रता के साथ ही राष्ट्रिय सरकार ने गुरुकुल की शिक्षा पद्धति, गुरुकुल के मौलिक सिद्धान्तों और आदर्शों को स्वीकार किया और गुरुकुल के संचालन में राष्ट्रिय कोष से सहायता भी दी। गुरुकुल आज के स्वतन्त्र भारत में भी सरकारी शिक्षा-संस्था के रूप में आगे नहीं बढ़ना चाहता उसके सामने तो स्वतन्त्र शिक्षा-पद्धति और कुछ मौलिक सिद्धान्तों के प्रचार का महत्वपूर्ण कार्य है। यदि राज और जनता दोनों का सहयोग उसे प्राप्त हो सके तो उसे दोनों स्वीकार होंगे परन्तु राज यदि अधिक सहयोग नहीं करता तो भी गुरुकुल जनता की सच्ची सेवा के लिये अपने आदर्शों पर अवश्य चलता रहेगा।

गुरुकुल के आश्रम जीवन के महत्व को कौन नहीं जनता इसी आश्रम में रहने वाले थोड़े ब्रह्मचारियों में से ही अनेको राष्ट्र नायक जन्म लेंगे। राष्ट्र का सच्चा पथ प्रदर्शक बनने के लिये जिस आदर्श तप त्याग और सयम की आवश्यकता है गुरुकुल उसी का निर्माण करता है। विदेशी राज्य से मुक्ति के बाद राष्ट्र को विदेशी सांस्कृतिक दासता से मुक्ति दिलाने का दायित्व गुरुकुल ने अपने ऊपर लिया है, और वह सम्पूर्ण शक्तियो के साथ इस साधना में रत है।

गुरुकुल आश्रम में निवास करने वाले ब्रह्मचारियों से शिक्षा का कोई शुल्क नहीं लिया जाता और बड़े छोटे सबको समान निवास और भोजनादि के द्वारा बन्धु भाव का पाठ सिखाया

आता है। विना किसी जातीय भेद भाव के गुरुकुल के सरस्वती मन्दिर का द्वार मानव मात्र के लिये हर समय खुला रहता है। और इस मन्दिर में बैठकर देश के भावी सरक्षक मातृ भाषा में अपनी मातृभूमि के गौरव शाली वाङ्मय का अध्ययन करते हैं। राष्ट्र भाषा हिन्दी और उच्चतम संस्कृत की शिक्षा के साथ साथ धार्मिक एव सांस्कृतिक दृष्टिकोण से वेद, दर्शन, उपनिषद् तथा अन्य धर्मों के साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन, आयुर्वेद शास्त्र का परिज्ञान और आधुनिक आंग्ल भाषा, अर्थशास्त्र, राजनीति आदि विषयों का ज्ञान कराते हुए गुरुकुल योग्य नागरिकों के रूप में अपने छात्रों का निर्माण कर रहा है।

गुरुकुल का विशाल पुस्तकालय एक अमूल्य ग्रन्थागार है जो उत्तर भारत के बड़े पुस्तकालयों में से एक है। विद्यार्थियों की वक्तृत्व, लेखन एव कवित्व शक्तियों के विकास के लिये विद्यापरिषद् की संस्था गुरुकुल जीवन में अपना महत्व पूर्ण स्थान रखती है। इसी प्रकार शारीरिक विकास के लिये क्रीड़ा परिषद् द्वारा व्यायाम प्रसाधनों का सयोजन किया जाता है। स्वास्थ्य रक्षा के लिये उचित चिकित्सकों द्वारा चिकित्सा की व्यवस्था की जाती है। शिक्षा सम्बन्धी अनुसन्धान कार्य के लिये दस सहस्र रुपये की श्री घर अनुसन्धान निधि स्थापित है, अभी गत वर्ष १५००० रु० की एक दर्शन गद्दी की भी स्थापना हुई है। इसी प्रकार एक आदर्श आयुर्वेदिक प्रयोगशाला चिकित्सा-शास्त्र में भारतीयता को प्रोत्साहन देने वाली सस्था के रूप में कार्य कर रही है। गुरुकुल के सैकड़ों स्नातक देश विदेश में विभिन्न प्रवृत्तियों द्वारा देश, धर्म और संस्कृति के क्षेत्रों में आदर्श कार्य कर रहे हैं। इस प्रकार गुरुकुल आज एक सफल परीक्षण के रूप में संसार के सामने है।

गुरुकुल का वार्षिकोत्सव प्रतिवर्ष दिसम्बर में समारोह पूर्वक मनाया जाता है। नव स्नातकों का दीक्षान्त संस्कार एक आदर्श प्रोग्राम होता है। इस अवसर पर सारा आर्य जगत् अपनी प्रिय सस्था की तीर्थ यात्रा करता है। इस प्रकार महार्घता के इस युग में निःशुल्क शिक्षा प्रदान करने वाला आपका गुरुकुल देश सेवा में संलग्न हैं। गुरुकुल ने जो प्रगति की है, उस सबका श्रेय अन्ततोगत्वा जनता को ही प्राप्त है, पर साथ ही यदि गुरुकुल में कुछ कमियाँ है या वह अधिक प्रगति नहीं कर सका है, इसका दायित्व भी जनता पर ही है। भारतीय भावना और भारतीय आदर्शों के स्वस्थ विकास के लिये गुरुकुल प्रत्येक भारतीय के सहयोग का अधिकारी है। प्रत्येक भारतीय अपने पुत्रों को शिक्षा के लिये भेज, अपने धन की उदार सहायता प्रदान कर तथा अन्य प्रकार के सहयोग से गुरुकुल की समुन्नति में सहायक बन सकता है। इस दिशा में सर्वाधिक दायित्व आर्य भाई बहनों का है क्या वे अपने इस दायित्व को पूरा न करेंगे?

——

विश्व का दसवां आश्चर्य 'भूवलय ग्रंथ'

कर्नाटकवासी श्री एलप्पा शास्त्री दिल्ली मे एक उत्कृष्ट ग्रंथ लाए हैं जो बहुत ही आश्चर्यजनक है। संसार में नौ आश्चर्य माने गए हैं, उन सबसे भिन्न यह रिसर्च दसवां आश्चर्य है। ऐसी चीज को बताना जो कि प्रत्यक्ष है, यह सिर्फ कर्नाटकी या जैन लोगों की चीज नहीं है। यह तो सारे भारत और विश्व की वस्तु है। यह ऐसा ग्रंथ है जो तामिल, संस्कृत, कन्नड़ आदि में नहीं देखा गया है। इस 'भूवलय' ग्रंथ में गणित आयुर्वेद, ज्योतिष, साइंस आदि सभी विषयों का विवरण है। इस ग्रंथ की भाषा से मालूम होता है कि यह दसवीं शताब्दी का है। शास्त्रीजी ने इस ग्रंथ से तीन भाषाए निकाली हैं। यदि आप सीधी लाइन पढ़ें तो कन्नड़ भाषा, ऊपर से नीचे को पहला अक्षर पढ़ें तो प्राकृत और बीच में ऊपर से नीचे को या नीचे से ऊपर को पढ़ें तो संस्कृत भाषा हो जायगी। अभी इस ग्रंथ से ७१५ भाषाओं की खोज होनी शेष है। जैसा कि ग्रंथ में उल्लेख है। इस निधि से भारत का विश्व मे गौरव बढ़ेगा।

प्रान्तीय गुरुकुल

श्री मोहनलाल आर्य, आगरा

गुरुकुल-विश्वविद्यालय वृन्दावन युक्त प्रान्त के आर्यों की एक मात्र ऐसी शिक्षा संस्था है जिस पर वे गर्व कर सकते हैं। गुरुकुल का लगभग पचास वर्ष का इतिहास युक्त प्रान्त के आर्यों की कार्य शक्ति का इतिहास है। ऋषि दयानन्द ने भारत को विदेशी भावनाओं से मुक्त होने का जो साधन बताया उसी के रूप में हमने गुरुकुल की स्थापना की थी। उस समय लोगों में जोश था, उत्साह था और एक नयी दुनिया बनाने की खुमारी थी। हमने जोश, उत्साह और खुमारी में अपने सब कार्यों को गौण समझ आर्यसमाज के प्रोग्राम को आगे बढ़ाना मुख्य ध्येय बनाया। सारे देश में हमारे ही कार्यों और कार्यक्रमो की धूम मची हुई थी। मुझे वे दिन अच्छी तरह याद हैं, जब आगरा में स्व० श्री ठा० माधवसिंहजी, स्व० श्री महात्मा श्रीरामजी, श्री बाबू नौथमलजी आदि उत्साही पुरुष आर्यसमाज के कार्य के लिये हर समय दूसरों के दरवाजो को खटखटा कर उन्हे भी आर्य बना लिया करते थे। उन महानुभावों ने भविष्य के लिये नींव डालदी कि आगरा का आर्यसमाज युक्त प्रान्त और देश की आर्यसामाजिक प्रगतियो के लिये निश्चित धन-राशि दिया करेगा। गुरुकुल वृन्दावन, शुद्धि अन्दोलन, आ० प्र० नि० सभा तथा अन्य कार्यों के लिये आगरा उसी समय से निश्चित राशि संग्रह करके देता रहा है। गत वर्ष जब तक स्व० महात्मा श्रीरामजी जीवित रहे आगरा ने अपनी इस परम्परा को निभाया और गुरुकुल के लिये अधिक नहीं तो १५००) उत्सव पर सहायता अवश्य भेजी और अब भी आगरा अपनी इस परम्परा को कायम रक्खेगा। परन्तु मेरे प्रान्तवासी भाइयो अकेले आगरा के पन्द्रह सौ रुपये से तो गुरुकुल साल भर नहीं चल सकता क्या आप सबका कोई विशेष दायित्व नहीं रहा मैं नहीं समझता, आप में इस प्रकार की शिथिलता क्यों आगयी है। गुरुकुल का उत्तम रूप से सचालन हमारे जीवन की निशानी है, यदि गुरुकुल आर्थिक कठिनाइयों में ही पड़ा सिसकता रहे तो वह निर्माण का कार्य क्या करेगा। अतः यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि यदि आपका गुरुकुल स्वस्थ रहेगा तो आपके प्रान्त का सामाजिक जीवन स्वस्थ रहेगा और प्रगति कर सकेगा। यदि आपने सहायता न की तो आप स्वयं नष्ट होने का कारण बनेंगे। प्रति वर्ष की भांति गुरुकुल का वार्षिकोत्सव २३ से २६ दिसम्बर तक होने जा रहा है। इस अवसर पर प्रत्येक आर्यसमाज को अपनी-अपनी सहायता प्रदान कर गुरुकुल सचालकों का भार हलका करना चाहिये। उत्तरप्रदेश में एक हजार से अधिक समाजें है। देशमें इससे अधिक समाजें किसी प्रान्त में नहीं हैं, यदि एक समाज इस समय कमसे कम सौ रु० की सहायता गुरुकुल के लिये भेज सके तो कार्य कितना सरल हो सकता है। छोटी समाजे यदि कुछ कम दें बड़ी-बड़ी समाजें उसी अनुपात से अधिक दें तो गुरुकुल अर्थ चिन्ता से इस समय मुक्त हो सकता है सारे प्रान्त के लोग तो करें ही मथुरा, आगरा अलीगढ़, एटा, मैनपुरी, बुलन्दशहर मेरठ आदि निकट के जिलों की समाजों को तो और भी अधिक सहायता भेजनी चाहिये। यह ठीक है कि सबको अपनी स्थानीय सस्थाओं का भी प्रबन्ध करना पड़ता है पर केन्द्र को भी तो शक्ति प्रदान करना प्रत्येक आर्य बन्धु का कर्तव्य है।

मैं विनम्र शब्दों में अपने प्रान्तीय भाई बहिनों से प्रार्थना करना चाहता हू कि वे गुरुकुल के प्रति अपने कर्त्तव्य को स्मरण रक्खे और उसे पूर्ण कर गुरुकुल की प्रगति में सहायक बने। दूसरे प्रान्तो की सभाएं अपने सरक्षण में गुरुकुलों का सफल संचालन कर रहीं हैं तब हम पीछे क्यों हैं क्या हम अपने गौरव और दायित्व को समय रहते पहचानेंगे!

सिंहावलोकन

संस्कृति का अध्ययन

श्री निहालकरण सेठी

[गत दो दिसम्बर को आगरा में भारतीय संस्कृति-परिषद् का उद्‌घाटन करते हुए आगरा कालिज के आचार्य श्री सेठ जी ने निम्न विचार प्रकट किये। जीवन में संस्कृति के महत्वपूर्ण स्थान और उसके उदार भावना से स्वस्थ चिन्तन की दिशा में आपके विचार एक नयी प्रेरणा प्रदान करते हैं। —सम्पादक]

यह सच है कि इस देश में सहस्रों वर्षों से जिस एक विशेष प्रकार की संस्कृति का अस्तित्व है उसके प्रति हम सबके मन में आदर है। यह भी सच है कि आज उसी संस्कृति को नष्ट होते देखकर हम लोगों के मन में बड़ा तकलीफ होती है। विशेषकर जब हमें अत्यन्त दीर्घकालीन परतन्त्रता के बाद अब स्वाधीनता प्राप्त हुई है तब यह और भी आवश्यक प्रतीत होता है कि जिन बातों को हम शताब्दियों से महत्वपूर्ण समझते आये हैं और जिनका संसार के सभी विचारकों ने आदर किया है और जिनमें संसार व्यापी संघर्ष को मिटाने की शक्ति है उनको भी फिर से हमारे देश और समाज में उचित स्थान प्राप्त हो और उनके द्वारा यह देश फिर से संसार के सामने अनुकरणीय आदर्श उपस्थित कर सके। ऐसा हुये बिना हमारी स्वाधीनता किसी काम की सिद्ध न होगी। जो पूँजी हमारे पूर्वजों ने हमारे लिये उपार्जित की थी और जिसकी सहायता से समस्त संसार सुखी बन सकता है यदि उस पूँजी की रक्षा हम न कर सके तो इस स्वतन्त्रता से क्या लाभ होगा। यदि अपनी संस्कृति को हम पुनः अपने जीवन में उचित स्थान न दे सके तो राजनैतिक स्वतन्त्रता चाहे हमें मिल गई हो फिर भी मानना पड़ेगा कि हम अभी तक एक दूसरी प्रकार की और भी अधिक गहरी गुलामी में जकड़े हुए हैं।

हमारे अनेक भाई यह भी नहीं जानते कि संस्कृति कहते किसे हैं। उनके मन में यह भ्रम है कि यह भी धर्म का ही दूसरा नाम है। वे समझते हैं कि प्रत्येक धर्म की संस्कृति भी पृथक् है। हिन्दू, मुसलिम और ईसाई धर्म अवश्य भिन्न-भिन्न हैं। उनकी मान्यताओं में, उनकी पूजा अर्चा की विधियों में, उनके मन्दिरों, मसजिदों और गिरजाघरों में स्पष्ट ही भयंकर भेद है, और जिन ब्राह्मणों, महन्तों, मुल्लाओं और पादरियों के हाथ में इन धर्मों की सत्ता है उन्होंने इन भेदों को इतना महत्व दे दिया है कि जनता धोखे में पड़ गई है। इन ऊपरी बातों ही को वे धर्म का वास्तविक रूप समझने लगी है। जिन मूल बातों पर वास्तव में जोर देना चाहिये था उन्हें तो हम प्रायः भूल चुके हैं। इन मूल बातों में जो समानता सब धर्मों में विद्यमान है उसकी ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता। यही कारण है कि आज भिन्न धर्मावलम्बियों के बीच में इतना संघर्ष है, और एक धर्म के अनुयायी दूसरे धर्म वालों के कट्टर शत्रु बने हुए हैं। जो भी हो, धर्मों में कितनी ही भिन्नता क्यों न हो, इस भिन्नता से संस्कृति का कोई सम्बन्ध नहीं है।

यह भ्रम इतना बढ़ गया है कि अब हम लोग हिन्दू संस्कृति का विचार करते हैं तो हमारे मन में जाति भेद और छुआछूत का ध्यान आता है, यज्ञोपवीत, तिलक और सिर पर चोटी का याद आती है, गंगा स्नान और श्राद्ध का स्मरण होता है, पशुओं का बलिदान भी हमारी संस्कृति का मुख्य अंग प्रतीत होने लगता है, जो लोग हिन्दू संस्कृति और मुसलिम संस्कृति की भिन्नता का प्रतिपादन करते हैं उनके मन में इन्हीं बाह्य बातों का ध्यान रहता है।

किन्तु संस्कृति वास्तव में कुछ दूसरी ही चीज है। वह हमारे मन और आत्मा से सम्बन्ध रखती है। वह हमारे जीवन और रहन सहन को विशेष ढाँचे में ढालती है। उसका विषय वे मूल बातें हैं जिन से हमारी बोलचाल का सम्बन्ध है, बड़े और छोटे पति पत्नी, पड़ोसी पड़ोसी और आपस के व्यवहार का सम्बन्ध है गुरुजनों के प्रति आदरभाव का बंधन है, स्त्रियों के सम्मान की रक्षा का सम्बन्ध है, सत्य और अहिंसा का सम्बन्ध है, कविता और संगीत का सम्बन्ध है, चित्रकला, मूर्ति निर्माण और स्थापत्य का सम्बन्ध है समाज के आदर्शों का सम्बन्ध है इन बातों से देश का सम्बन्ध है धर्म का नहीं इन चीजों में भारतवर्ष के सभी निवासियों का सम्बन्ध से एकता है चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान या सिख, बौद्ध हों या जैन। हमारी भाषा कविता, चित्रकला अथवा नगर इमारतों की बनावट आदि बातों का जो भी विकास इस देश में हुआ है उसमें हिन्दुओं का भी हाथ है और मुसलमानों का भी। दोनों के सम्मिलित प्रयत्न इन चीजों में इतने घुल मिल गये हैं कि अब यह कहना कठिन है कि कौन सा भाग हिन्दुओं का है और कौन सा मुसलमानों का।

यह सच है कि धर्म और संस्कृति की एकता के भ्रम में कुछ कालसे हम बहका दिया गया है। भाषा भी हिन्दू तथा मुसलमानों की क्रमशः पृथक् हिन्दी और उर्दू समझी जाने लगी है। मूल में एक होने पर भी भाषा में संस्कृत और फारसी, अरबी के अधिक सम्मिश्रण के द्वारा उसे हिन्दू और मुसलिम रूप दे दिया गया है। यहाँ तक कि पूर्व बंगाल के बंगाली मुसल्मानों को भी अब जबरदस्ती उर्दू भाषा का व्यवहार करने के लिये बाध्य किया जा रहा है, यद्यपि वे पीढ़ियों से बंगला ही बोलते आये हैं। यद्यपि संगीत में अभी इतना भेद नहीं हुआहै और हिन्दू तथा मुसलमान कलाकारों के संगीतको दोनोंही धर्मावलम्बी आदर और अनुकरण करते हैं फिर भी इस भ्रम के कारण अब भारत तथा पाकिस्तान में भिन्न-भिन्न प्रकार के संगीत पर अधिक जोर दिया जा रहा है। पहनावे में भी यही बात देखी जा रही है। गाँव में प्रत्येक प्रान्त में जाकर आप देख सकते हैं कि भाषा, भेष भूषा, आदि में धर्म के हिसाब से कोई भेद भाव नहीं है। कम से कम कुछ वर्षों पहिले तो नहीं था। और जो नैतिक बातें हमारे व्यवहार और आचरणों के मूल में हैं उनमें भी भेद नहीं है। यही बातें संस्कृति का द्योतक हैं। इस पार्थक्य के प्रतिपादन से जो हानि हो रही है वह प्रत्यक्ष है। इस समय यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम इन मूल बातों को ऊपरी और अस्थायी बातों से पृथक् करले, ताकि हमारी मूल एकता प्रगट हो सके। और हम व्यर्थ के संघर्ष से छुट्टी पाकर सुखी और उन्नत जीवन व्यतीत कर सकें।

किन्तु खेद है कि हमारे विद्यालयों में यह बात नहीं सिखाई जाती हमारे शिक्षा क्रम में इन बातों को कोई उचित स्थान प्राप्त ही नहीं है, हमारे नवयुवकों को यह मालूम ही नहीं होने दिया जाता कि इस देशकी संस्कृति क्या है, विपरीत इसके वे यह सीख जाते हैं कि जो कुछ भी संस्कृति यहाँ की समझी जाती है वह शायद आजकल की सभ्यता के युग में हमारे लिये लज्जा का काटा है, जिसे वे पाश्चात्य संस्कृति कहते हैं वह उनकी दृष्टि में बहुत ऊँची है, किन्तु वास्तव में वे यह भी नहीं जानते कि पाश्चात्य देशों की संस्कृति क्या है, वे शायद यही समझते हैं कि कालर और नेकटाई, हैट और सिगरेट, ब्रिज और मद्यपान, क्लब तथा स्त्री पुरुष का सम्मिलित नाच इत्यादि ही पाश्चात्य संस्कृति के अंग हैं, इस विकृति को ही वे संस्कृति मानने लगते हैं पाश्चात्य देशों के स्वतन्त्रता प्रेम और स्वावलम्बन, उनकी स्फूर्ति और समय की पाबन्दी शारीरिक परिश्रम के प्रति सम्मान, शिल्प तथा विज्ञान के लिये कठिन परिश्रम, प्राकृतिक शक्तियों पर विजय प्राप्त करने का साहस आदि अनेक सद्‌गुणों का ओर ध्यान ही नहीं जाता, क्योंकि जिस प्रकार हम अपने देश की महत्व हीन बातों को संस्कृति समझने हैं उसी प्रकार दूसरे देशों में जो बाह्य बातें वहाँ के निम्न

सामयिक समस्याएँ

भाग लेना या देना

श्री भारद्वाज एम० ए०

"मा देवाना मिथुया कर्म भागम्"
अथर्व ४-३९-६

आर्यसमाज की ओर अनेक विचारक अपनी अपनी अभिरुचि के अनुसार 'जाकी रह भावना जसी प्रभु मूरति देखी तिन तसी' गोस्वामी तुलसीदास की इस उक्ति को चरिताथ करते हुये देखते हैं। विचारकों का ऐसा करना स्वाभाविक औचित्य ही है। कुछ लोग कलकत्ता आर्य महासम्मेलन के समय से तो देश कालिक नितान्त परिवर्तित और अनुकूल परिस्थिति की शक्ति राजनीति (पावरपालिटिक्स) से चमत्कृत होकर आर्य समाज के लिये तो अब सामूहिक रूप में राजनीति में भाग लेने को ही अमृतधारा अथवा पेन्सिलीन की भाति जीवनाधार ही अनुभव नही करते हैं, अपितु पूर्ण साहस करके तथा कथित मुमूर्षु आयसमाज के गले क नीचे जैसे तैसे उसे उतारे बिना चैन नहीं लेना चाहते हैं। उन्हीं का कहना है कि कलकत्ता सम्मेलन में भी दो या तीन दिन गरमागरम वाग्युद्ध के उपरान्त १२ सज्जनों की एक समिति एतदर्थ बना दी गई थी, और गत मेरठ महासम्मेलन ने भी दो दिन की लम्बी बहस के बाद एक समिति १५ सज्जनों की बनादी है।

छः दिनात्मक महासम्मेलन तो समाप्त हो गया है। अब उक्त समिति का क्या वैधानिक मूल्य और महत्व है और उसकी रिपोर्ट का क्या प्रभाव आर्यसमाज के वैधानिक संघटन पर पडना सम्भव है, यह विषय तो विधान के पण्डितों के विचार क्षेत्र से संबंध रखता है। सर्व साधारण को तो धैर्य के साथ प्रतीक्षा ही करनी है। समिति क्या २ करेगी, यो भविष्य में प्रकट ही होगा

इस बीच में स्वा० सत्यदेवजी परिव्राजक ने आयसमाज का गत्यवरोध शीर्षक देकर आर्य मित्र में एक विचित्र लेख प्रकाशित किया है। आर्यसमाज के जीवन की चिन्ता करने वाले महानुभाव गम्भीरता से विचार कर स्वामीजी के मतानुसार गत्यवरोध या श्वासावरोध मिटाने के लिये अत्यन्त उत्सुक हो सकते हैं। अपने लेख के आधे से अधिक भाग में आपने पुराने और वर्तमान आर्यसमाज के प्रमुख नेताओं का सन्तजनोचित शिष्ट भाषा में खबर ली है। फिर आर्यसमाज के विधान में क्रान्तिकारी परिवर्तन करने की नेक सलाह दी है। अनेकों सत्यपरामर्शों से आपने आर्यसमाज मन्दिर या यज्ञ भवनों को पवित्र रखने के लिये उनमें आध्यात्मिकता का वातावरण उत्पन्न करने का सुझाव दिया है। अन्त में आप लिखते हैं कि "भारतवर्ष में आर्य समाज ही एक ऐसी सस्था है, जिसके पास जीवन का पूर्ण प्रोग्राम है। बड़े दुर्भाग्य की बात है कि आर्यसमाज जैसी कामधेनु सस्था गृहस्थों के हाथों से बुरी तरह पिसी जा रही है। अब समय आया है कि हम अपनी भूल को समझें और वैदिक धर्म के कार्य को गृहस्थियों की चिन्ताओं से मुक्त कर उसे सन्यासियों के हाथों में देदें जिससे शेष आर्य जगत् राजनैतिक क्षेत्र में पग बढ़ाये और गत्यवरोध दूर हो।"

इच्छा रहते हुये भी हम स्वामीजी के इस उद्धरण की विस्तृत मीमासा उस प्रकार नहीं करना चाहते हैं कि जिस प्रकार उन्होंने उन भूले भटके गृहस्थ आर्य नेताओं की करना उचित समझा है कि जिन्होने आर्य समाज के प्रवर्त्तक ऋषि दयानन्द सरस्वती से साक्षात् या परम्परया दीक्षा लेकर अपने अमूल्य जीवनों की आहुति देकर आर्य-समाज की सेवा की और वैदिक धर्म प्रचार में अपने तन, मन और धनको लगाया। आश्चर्य है कि जो रामबाण ओषधि ऋषि को भी न सूझी, उसी का आविष्कार करके आपने आर्य समाज के गत्यवरोध या श्वासावरोध को दूर करने का सत्परामर्श देने का कष्ट उठाया।

आपकी दृष्टि में यदि आर्य-समाज कामधेनु और एक जीवन के लिये पूर्ण प्रोग्राम युक्त संस्था होतो फिर आप किस लक्ष्यकी पूर्ति के लिये ऋषि प्रवर्तित आर्यसमाज के लिये दश नियम और उनके आधार पर निर्मित उपनियमों में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर उनका कायाकल्प करने की धुन में लगे हुये हैं। हाँ, हो सकता है कि सन्यासियों के अधिकार में आ जाने के उपरान्त प्रस्तावित आर्य-समाज के स्वरूप को भी संन्यासियों की अधिक सुविधा के अनुरूप बनाना आपको आवश्यक अनुभव होता हो। किन्तु इतिहास तो इस बात का स्पष्ट साक्षी है कि मध्यकालीन योरप और भारत दोनों ही भूखण्डों में मन्क्स, नन्स् और भिक्षुओं, तीर्थंकरों तथा संन्यासियों के व्यापक प्रभाव ने क्या २ किया है। स्वनाम धन्य कुमारिल भट्टाचार्य सदृश महान् वैदिकता के उद्धारकों ने ही वेद की परम्पराओं और मर्यादाओं की उस कराल युग मे पाररक्षा की थी। सन्यासी होते हुये भी ऋषि ने कभी भी इस प्रकार का विचित्र स्वप्न तक नहीं देखा था। अस्तुः—

द्राविड़ी प्राणायाम ऊहा को छोड़कर सीधा सा प्रश्न तो यह है कि आर्यसमाज को राजनीति में सामूहिक रूप से भाग लेना चाहिये या नहीं? वस्तुतः भारत के एक स्वतन्त्र राष्ट्र बन जाने के उपरान्त इस प्रकार का प्रश्न ही महत्व हीनसा हो जाता है। क्योंकि जब एक राष्ट्र का प्रत्येक नागरिक ही राज्य शासन तन्त्र का सूत्र सचालक होता है और जिसकी समष्टि में ही राज सत्ता (सावरेनिटी) निहित समझी जाती हैं तो फिर इस प्रकार के प्रश्न का क्या प्रयोजन हो सकता है। किसी भी स्वतन्त्र राष्ट्र में यह तो सम्भव ही नहीं हो सकता है कि राष्ट्र का कोई नागरिक या उनका समूह राष्ट्रिय कार्यों से वहिष्कृत रहे या वञ्चित रक्खा जा सके। विशेष कर आर्यसमाज जैसी कामधेनु और पूर्ण संस्था के लिये तो यह प्रश्न ही नहीं उत्पन्न हो सकता है।

आर्यसमाज जब एक कामधेनु सदृश पूर्ण संस्था है, जब इसका धर्म भी सार्वजनीन है, जब इसकी संस्कृति विश्ववारा और विश्वकर्मा है, जब इसकी आध्यात्मिकता सर्व श्रेष्ठ है और जब इसका वैदिक राजधर्म विश्व हित साधक है तो ससार का उपकार करना ही इसका मुख्य उद्देश्य हो सकता है। और इसी कारण सब की उन्नति में आर्य-समाज अपनी उन्नति समझता है। इसके सर्वथा विपरीत भारत और भारत के बाहर की समस्त मजहबी, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, औद्योगिक और सांस्कृतिक संस्थायें, दल संस्था, पार्टी, समूह इत्यादि किसी न किसी अर्थ में संकुचित स्वार्थ पूर्ण सम्प्रदाय मात्र हैं।

ऐसी परिस्थितियों में यदि सार्व भौम आयसमाज को एक राजनैतिक सम्प्रदाय बनाने की किन्हीं में उत्कट महत्वाकांक्षा उद्बुद्ध हो रही हो तो उसके शमन का एक मात्र उपाय यही हो सकता है कि स्वतन्त्र भारत राष्ट्र अथवा अन्य राष्ट्रों की विश्व समष्टि के कल्याण साधनार्थ आर्यसमाज अपने में से कौन सा भाग (कन्ट्रीब्यूशन) किस रूप में

समाज में दिखाई पड़ती हैं उन्हें ही हम पाश्चात्य संस्कृति समझने लगे हैं।

अतः यह अत्यन्त आवश्यक है कि कोई ऐसी योजना हो और कोइ ऐसी संस्था हो जो हमारे इस अज्ञान को दूर करे, इस भ्रम को मिटावे और हमें प्रत्येक देश की वास्तविक संस्कृति को समझने और अनुभव करने में सहायता दे, तभी एक देश दूसरे देश का आदर कर सकेगा, तभी आपस का वैमनस्य मिटेगा, तभी उन्नति की ओर लेजाने वाली हमारी प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलेगा, तभी संसार व्यापी संघर्ष और सवनाशी युद्धों से मनुष्य समाज को छुटकारा मिल सकेगा, और तभी भिन्न-भिन्न संस्कृतियों के सम्मिलन से मनुष्य सच्ची प्रगति कर सकेगा।

—

शिक्षा समस्या—

गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली

श्री प० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री, सिद्धान्त शिरोमणि

गुरुकुल शिक्षा पद्धति में ही भारत का अभ्युदय निहित है। शिक्षा सम्था ही मानवता संपन्न शक्तिशाली एव आदर्श नागरिक बनाने का महायत्र है। इसमें किसी भी विज्ञ व्यक्ति का मतभेद नहीं हो सकता। हमारे देश में जो शिक्षा पद्धति चल रही है वह वैदेशिक शिक्षा पद्धति है। भारतीय सस्कृति के आदर्शों से इसका कोई सम्पर्क नहीं। १९ वर्ष जो विद्यार्थी इंगलिश साहित्य के अध्ययन में लगाता है उसके मस्तिष्क में तो स्वभाव से ही अंग्रेजों का सस्कृति और उन्हीं के रहन-सहन और आचार व्यवहार तथा उन्हीं के गुण-दोषों का प्रभाव जाग्रत रहेगा। उनके हृदय में भारतीय सस्कृति के प्रभाव का कोई प्रश्न ही नहीं है। वे शरीर से तो भारतीय अवश्य रहते हैं परन्तु मनोवृत्ति उनकी नितान्त इंगलिश ही बन जाती है। भारतीय साहित्य, भारतीय परम्परा को वे निकृष्ट दृष्टि से देखते हैं। जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण स्वतन्त्र भारत के शासन यत्र के पुर्जों में स्पष्टतया झलकता है। वह प्रत्यक्ष एव सर्व विदित है विशेष वर्णन नही चाहता। भारत के शासन सूत्रधारों में बहुत से तो अब भी अपने आपको अंग्रेज ही समझते हैं। अंग्रेजी मनोवृत्ति ही को सर्वात्मना पुष्पित एवं फलित रखना चाहते हैं और रख रहे हैं। गांधीवाद को दकियानूसी और हास्यास्पद समझते हैं, नाम मात्र को गांधीजी का नाम रटते हैं। दिखावे के लिए जनता को भ्रमित करने के लिए, क्या यह मनोवृत्ति भारत को आदर्श राष्ट्र बनायेगी? इस दूषित मनोवृत्ति का मूल कारण क्या है, यह भी कभी आपने सोचा? इसका बीज हमारी वर्तमान अंग्रेजी शिक्षा पद्धति में निहित है। हमारा कदापि यह तात्पर्य नही अंग्रेजी भाषा व साहित्य का बहिष्कार कर दिया जाय किन्तु हमारा तात्पर्य यह है कि यहां शिक्षा में भारतीय धर्म शास्त्र, सस्कृति व सदाचार परम्परा को प्रधानता दी जाय। ताकि युवकों के हृदय में धार्मिक वृत्ति जाग्रत हो, वे तप, सयम, एव पवित्रता का जीवन व्यतीत करने वाले बनें। भौतिक अभ्युदय को साधन समझ, साध्य उनका आध्यात्मिक जीवन हो मानवता एव विश्व बन्धुत्व उनके जीवन के आदर्श हों तभी देश में अनैतिकता, रिश्वतखोरी, छलप्रपंच आदि का लोप हो सकता है। और राष्ट्र तेजस्वी, बलवान एव शक्तिशाली बन सकता है। इस प्रकार की मानवता को बालकों के हृदय में प्रेरित कर उनको सर्व गुण सम्पन्न पूर्ण सुसस्कृत एव सभ्य बनाने वाला यदि कोई महा यत्र है तो वह गुरुकुल संस्था ही है। इसी लिए प्रातःस्मरणीय महर्षि दयानन्द सरस्वतीजी ने गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को पुन: सस्थापित कराया परन्तु दुख की बात है कि हमारे आर्य बन्धु भी जो अपने को ऋषि दयानन्द के भक्त कहलाने में किसी से भी पीछे रहने का तैयार नही, स्वय अपने बालकों को गुरुकुल की पवित्र संस्था में मिथ्या स्वार्थ वश भेजना नहीं चाहते और उनकी आंख बंद करके इन विदेशी भट्टियों के सुपुर्द कर हैं। इसका दुष्परिणाम यह हुआ है आर्य समाजियों की सतानें आज आर्य समाजी नही बनती इससे बढ़कर शोचनीय अवस्था अन्य क्या हो सकती है। आर्य बन्धुओ! कभी आपने इस विनाशकारी स्थिति पर विचार किया है। हम वेदों का डंका संसार भर में बजाना चाहते हैं वैदिक संस्कृति को विश्व की सस्कृति देखना चाहते हैं और ऋषि के आदेशों और उपदेशों को ठुकराते हैं। यह कैसी विषम स्थिति है। हम यह भली भांति समझते हैं कि गुरुकुलों में बहुत कुछ कमी है किन्तु वे कमियां तो हमारी उदासीनता के कारण ही हैं। यदि सब आर्य बन्धु इसकी ओर ध्यान दें और अपने कर्तव्य को समझे तो किसी प्रकार की कमी नही रह सकती। बड़े २ धनीमानी धन से गुरुकुल-कोष को भर दें तो वे शिल्पकला, विज्ञान, राजनीति, अर्थशास्त्र सपादन कला आदि सब ही विषयों के उत्कृष्ट केन्द्र बन सकते हैं। तक्षशिला व नालन्दा विश्व विद्यालयों की छटा इन्हीं गुरुकुल विश्व विद्यालयों में पुन: एकबार दिखाई दे सकती है। शासन का ध्यान भी इस दिशा में आकृष्ट किया जा सकता है। आज हमारी सरकार, रक्षा-विभाग पर बाह्य आक्रमणों को रोकने के लिये तो बहुत बड़ी धन-राशि खर्च करती है परन्तु आन्तरिक सच्ची रक्षा के लिए सच्चे सैनिक, बुद्धि तथा शारीरिक बल से पुष्ट हुए भारतीय सस्कृति से अनुप्राणित रक्षक भावी युवकों को बनाने वाली जो सच्ची यन्त्र शाला है क्या हमारे शासनाधिकारी वर्तमान शिक्षा सस्थाओं को उस गुरुकुल शिक्षा पद्धति में परिवर्तित करने का यत्न करेंगे? आर्य बन्धुओ कम से कम आप तो अपने बच्चों को गुरुकुल शिक्षा दिलाने की प्रतिज्ञा करें और गुरुकुल शिक्षा से लाभ उठावें। यदि आप चाहते हैं कि ऋषि के स्वर्ण स्वप्न भारत में परिणत हों तो गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को अपनावें। इसी में आपका और आपकी भावी सन्तानों का सच्चा कल्याण निहित है।

———

स्वास्थ्य-सुधा

गंजा पन

श्री आनन्दी प्रसाद मिश्र निर्द्वन्द्व

पुरुषों में प्राय: बहुत से लोग गंजे देखे जाते हैं, किन्तु शायद ही कोई गंजी स्त्री देखी जाती हो। इस से जान पडता है कि स्त्रियों में कोई ऐसी विशेषता होती है जिस के कारण उनके सिर के बाल नही गिरते। तब फिर मनुष्यों के सिर के बाल गिरने के कारण क्या हैं? मनुष्य तथा स्त्री की खोपड़ी एक ही सी होती है बाल एक ही प्रकार जमते हैं। उनका पोषण भी एक ही प्रकार होता है। तो भी पुरुषों के बाल गिर जाते हैं और स्त्रियों के नहीं। इसके अनेक कारण बतलाये जाते हैं। उन में से एक कारण बालों को बारबार पानी से धोना और उन्हे गीला ही छोड देना है। पुरुष जितना अधिक अपने बालों को धोते हैं, स्त्रियाँ उतना नहीं, अधिक पानी बालों के लिये हानिकारक है क्यों कि वह बालों के स्वाभाविक तेल को जो बालों का प्रधान पोषक है नष्ट कर देता है। पुरुष छोटे छोटे बाल रखते हैं, उनका धोना आसान है। जब कभी मौका मिला, उन में साबुन भी लगा दिया जाता है। नए फैशन के बाबू लोग बाहर जाने के पहले अपने बालों को सवार लेते हैं। इस समय बालो को पानी से भिगो लिया जाता है। किन्तु सबसे बुरी आदत यह है कि बाल भिगोने के बाद सुखाए नहीं जाते। बाल सुखाने के बदले उन्हें भीगा ही छोड़ देना बाबू लोग अधिक पसन्द करते हैं। स्त्रियाँ अपने बालों को बहुत कम भिगोती हैं और यदि भिगोती भी हैं तो उन्हें अच्छी तरह सुखा लेती हैं।

डॉ० ज्यार्ज टी जेक्सन का कहना है कि बालों का खाद्य एक प्रकार का तलमय पदार्थ है। वह बालो को मुलायम और उनकी जडों को मजबूत करता है। उन्हें चमकीला बनाता, और नष्ट होने से उनकी रक्षा करता है। कभी-कभी बालों का धोना आवश्यक है। इसका कारण यह है कि बालों की जड में मैल जम जाता है, और तेलमय पदार्थ को खोपड़ी से खींचने में बाधक बनता है। उसे यथा सम्भव शीघ्र धो डालना

———

कहाँ, कब, किसको, किस मात्रा में कैसे और किसके द्वारा प्रदान करे। पूर्ण आर्यसमाज से अपूर्ण राष्ट्र, विशेषकर भारत राष्ट्र, भाग की याचना करते हुये प्रतीक्षा करता है। क्या आर्यसमाज या उचित भाग देने में समर्थ होगा?

———

चाहिए पानी से धोने के बाद बालों को अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए, और तब उसमें थोड़ा सा तेल डालना चाहिए। यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि तेल बालों ही में लगा न रह जाय, उन की जड़ (खोपड़ी) में भी पहुँच जाय।

बहुत से लोग यह भूल करते हैं कि बालों को धोने के बाद सुखाते नहीं। यदि बालों को सुखाकर उनमें तेल न लगाया जाय, तो वे शीघ्र ही उड़ने लगते हैं। बाल धोने से जो तेल मय पदार्थ नष्ट हो जाता है, तेल लगाने का तात्पर्य उसी को पूरा करना है।

Dr. Pohl Pincus नाम के जगत् प्रसिद्ध जर्मन वैज्ञानिक भी ऊपर दिए हुए मत के समर्थक हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि मूंछ दाढ़ी के बाल, जो प्रायः नित्य तीन-चार या अधिक बार धोये जाते हैं, क्यों नहीं उड़ते? हमारी खोपड़ी अधिक पतली है। उसके बाद ही कड़ी हड्डी आती है। खोपड़ी पर जो बाल जमते हैं, अन्य प्राकृतिक पदार्थों की भांति उनके लिए भी प्रकाश और हवा बहुत आवश्यक है। पुरुष अपने बालों को प्रायः ढके ही रहते हैं। बहुत से पुरुषों का अभ्यास है कि काम करने के समय भी अपनी टोपी, हैट, पगड़ी आदि को अपने सिर पर रक्खेंगे। गंज में यह प्रवृत्ति भी एक विशेष सीमा तक सहायक कही जा सकती है।

बालों के सौन्दर्य और उन्हें उड़ने से बचाने के लिये प्रत्येक व्यक्ति को सावधानी रखनी चाहिये। बालों का सौन्दर्य भी एक आकर्षक वस्तु है। उपर्युक्त बाह्य विवरण के साथ साथ बालों की आन्तरिक शक्ति के स्रोत ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में भी ध्यान रखना चाहिये। यदि हमारी शक्ति का यह स्रोत सबल और सूक्ष्म बना रहेगा तो बाहर की अनेकों परिस्थितियां एक बार को कुछ न कर सकेंगी परन्तु इस स्रोत के निर्बल और शुष्क होते ही बाहर की कमजोरियां बालों को नष्ट कर देंगी इसमें कोई सन्देह नहीं। यह बात पुरुषों तक ही सीमित हो यह बात नहीं इस शक्ति स्रोत की सबलता और निर्बलता का स्त्रियों पर भी समान रूप से प्रभाव पड़ता है।

इस प्रकार बालों की रक्षा के इस उभय पक्षी विश्लेषण को ध्यान में रख कर हमें अपने बालों की सुरक्षा का ध्यान रखना चाहिये। इसी प्रकार गजेपन की बीमारी से बचा जा सकता है।

——

महिला-मण्डल

नारी

श्री स्ना० कमलाकुमारी 'विद्याविभूषिता'

सु गुणनिधि शुचि पुनीत प्रतिमे!

संसृति के विगत युगचरण आज तुम्हारी पावनता की कहानी कह रहे हैं। मानवता के प्रथम प्रभात में, कर्ण मधुरा श्रुति ऋचाओं में तुम लोमशा और अपाला बन अवतीर्ण हुईं। अभिनव छवि लेकर तुम्हारी वह विमुग्धकारिणी प्रतिभा जागी। चकित विस्मित से जगने यज्ञ की स्निग्ध श्याम श्यामल धूम-शिखाओं में कान्तिमती विद्युत् रेखा सी तुम्हें देखा।

धीरे! माया की मृदु मानस मुग्ध गोद में, जगमगाते विमुग्धतम प्रलोभन भी तुम्हें पथ विचलित न कर सके। अमरता की उपासिके! तुमने इस क्षणभंगुर संसृति को जान लिया, तुम्हारी वह नश्वरता की सुन्दर पहिचान जग कल्याणी वाणी

"असतो मा सद्गमय
तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्मा अमृतं गमय"

के रूप में विश्व में प्रस्फुटित हुई।

अग्नि पथ परिपालिके! जीवन के मध्यान्ह में, जब भारतीय गुरु गौरव गरिमा श्रान्त क्लान्त नष्ट हो रही थी. जब पुरुष की शिथिलांगुलियों से रक्तिम तलवार छूट रही थी तब—

"यदि हार गया तू रण से
अपनी तलवार मुझे दे
मैं रणचण्डी बन जाऊँ
रक्षा का भार मुझे दे"।

के रूप में तुम जागीं और तुम जागीं उस अखण्ड ज्योति के रूप में, जो जीवित शत सहस्राधिका हो, जातवेद की प्रज्वलित ज्वालाओं को भी पराजित कर जौहर की प्रचण्ड ज्वालाओं में भस्मावशेषिनी बन गई।

युगवंद्ये! युग युगान्तरों से तुम्हारी पूजा, देवत्व की प्राण प्रतिष्ठामय हो, वेष्टित और अभिनन्दित होती आई है। सृष्टि के प्रथमावतार ने तुम्हारी अर्चना "यत्र नार्यस्तु" के रूप में नतशीश होकर की।

वत्सले! विश्व की निर्ममताओं से उन्मथित, जन्म से अभिशप्त और जीवन से संतप्त मानव, जब शुष्कता के बोझ से बोझिल और व्यथित हो उठता है, तब-तब तुम्हारी मधुरतम गोद में छिप वेदनाओं को धो डालता है। कभी गौरवमयी दयार्द्र जननी के रूप में, कभी स्नेह की पावनी प्रतिमा भगिनी के रूप में और कभी सुख दुख के प्रतिदानों की भावना से रहित चिर सहचरी के रूप में।

विश्व की आधारशिले! इस संसृति का कण-कण तुम्हारे बिना अपूर्ण है, अधूरा है, चिर वरदानमयी तुम्हारे वरदानों से संसृति मधुरा है, और अभिशापों से शान्ता, अजितों के हृदय जीतने वाले मधुर हासमय तुम्हारे इंगितों पर, साम्राज्य उलट जाते हैं। तुम्हारी बंकिम भृकुटी पर वीर-धीर गंभीर यती भी झुक जाते हैं।

रहस्य निधे! आदिकाल से सुर नर पूजिता, योगियों के योग गर्व को विगलित करने वाली, सृष्टि की एक मात्र शक्ति, विश्व की गरल रूपिणी बर्बरता और शुष्कता का पान करने वाली शिवे? तुम्हारे ही पीड़ित अधरों पर भी मधुर हास रंजित रहता है न? जीवन की जटिल विषमताओं को समता में किसने परिणित किया? तुम्हीं ने न! विश्व के इतिहास की सबसे जटिल पहेली! छलमलमयी! तुम्हारा अन्तर अपार अथाह अनन्त सा, आहों से पूरित पर ओठों पर मुस्कान।

कलामयी! कलावन्त की तूलिका तुम्हारे सघन-घन-श्याम केश पाश में रजनी रानी का रूप तुम्हारे नयनों में मदिरा की मादकता, तुम्हारे करपल्लव में नव किसलय की छाया, और चरण कमलों में कमल दल की लालिमा भर कृतकृत्या होती है। कवि मनीषी, अमर कलाकार ने अपने सर्वोत्कृष्ट चित्र में—उषा के रूप में तुम्हारी लालिमा विहग कुल कलरव में, कण्ठ कल-कल निनादिनी निर्मला सरिताओं में तुम्हारा तरल सरल अन्तर पर साथ ही—हिम आतप में अचलों की निश्चला अटलता श्यामांचल वनराजि के पराग पीत पुष्पों में तुम्हारा ही वासन्ती परिधान और निशा की कृष्णता में तुम्हारी ही केशराशि चित्रित की है।

हे कला की सजीव प्रतिमे! तुम्हारी वंदना है।

पर-पर-विश्व विनाशिके! जब-जब तुम अपने नाशक रूप में आ जाती हो, तब कितने मन मोहक सपने बिगड़ जाते हैं, जब तुम सजला न हो निजला, तड़ित विद्युत् ज्वाला बन जाती हो, तब तुम्हारी नाशकारिणी प्रज्वलिता जलन में ज्वालामय रूप के प्यासे न जाने कितने अबोध परवाने मर मिटते हैं, तब तुम वह भीषण रूप बन जाती हो जो एक स्पर्श में स्पन्दनहीन कर देती हो। तब तुम्हारा विनाशक, भयङ्कर, प्रलयङ्कर नयनों के ज्वलित कुत्सित कण—शत—सहस्राधिक कीड़ों को भस्मावशेष करके ही छोड़ते हैं।

मुग्धे! पर आज तुम भ्रमिता हो, उन्मीलित नयना विपथ गामिनी हो, तुमने अपनी वह दृप्तिमयी आदर्शमयी युग संचित निधि, अपनी विस्मृति की यवनिका में खोदी। तुम भूल गयीं, न जाने किन घड़ियों की मादक कसना में खो गई—आज स्वर्णिम प्रभात वेला की शीतल मन्द सुगन्धमयी मलयानिल ने निशायाम की निद्रा से तुम्हें जगाया, पर तुम अर्धोन्मीलित नयना रह गईं, तुम अर्ध चेतिता चल पड़ीं, अब तुमने जो पथ पकड़ा वह था विनाशकारी। जग की अमरनिधि मातृत्व गौरव गरिमा भुला, तुम क्षण भंगुर रूप का पाथेय ले, इस बीहड़ कंटकाकीर्ण मग में न चल सकोगी।

सुझाव और सम्मतियाँ

जात-पांत कैसे मिटाई जाय

१—बच्चों की पाठ्य पुस्तकों में जात-पांत के विरुद्ध पाठ रक्खे जायँ।

२—विभिन्न जातियां आपस में खान-पान और शादी विवाह करें।

३—समाचार पत्रों और पुस्तकों द्वारा जाति-भेद के विरुद्ध प्रचार किया जाय।

४—जो लोग जात-पाँत तोड़ें समाज उनको विशेष सम्मान प्रदान करे और राज्य सरकारी नौकरियों में उन्हें प्राथमिकता प्रदान करे।

५—जात-पांत तोड़ने का काम करने वाली सभाओं और संघटनों को सरकार आर्थिक एवं नैतिक सहायता दे।

६—सब प्रकार के सरकारी कागजों में से जात-पांत का कालम (खाना) निकाल दिया जाय। किसी से उसकी जाति न पूँछी जाय, जाति पूछना अशिष्टता समझा जाय। समाजवादी, और साम्यवादी लोगों को चाहिये अभी से जात-पांत तोड़कर जनता को अपने आचरण से विश्वास कराएं कि उनका प्रभुत्व हो जाने पर जात-पांत न रहेगी।

७—बात-चीत और पत्र-व्यवहार में किसी मनुष्य के नाम के साथ जाति वाचक ठाकुर, लाला, चौधरी, शर्मा, शुक्ल, तिवारी, वर्मा, गुप्ता, सेठ प्रभृति जन्म जाति सूचक शब्द न लगाकर सबके लिये श्री लिखने की प्रथा का प्रचार किया जाय।

८—जाति सभायें ब्राह्मण सभा, राजपूत सभा, जाट सभा, कायस्थ सभा, वैश्य सभा, प्रभृति जात पांत की सब सभायें कानून विरुद्ध ठहरा कर तोड़ दी जायं।

आर्यसमाज इस दिशा में सर्वाधिक सक्रिय कार्य कर सकता है, ऋषि दयानन्द ने राष्ट्र की उन्नति के लिये जन्मना जातिवाद नाश का पाठ पढ़ाया था पर हम उस पर दृढ़ता से आगे नहीं बढ़ सके हैं क्या आज भी हम अपने उत्तरदायित्व को न समझेंगे।

—सन्तराम बी० ए०

आदर्श की साधना

महर्षि दयानन्द के पवित्र संदेश ने मानव जगत् की वाणी को पवित्र करने के में जो क्रांति की है उसमे भारत की भावी रूपरेखा के निर्माण में महान् शक्ति प्राप्त हुई। वह महर्षि की ही पवित्र वाणी थी जिसने धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक, दासानुदास भारत की कोटि २ जनता की विचार शक्ति एवम् वाणी में वह ओज प्रदान किया कि जिसके आगे सहस्रों वर्षों की मानसिक एवम् शारीरिक दासता का दुर्ग भूमिसात् हो गया। उसी महर्षि की तेजस्वी वाणी से उद्भूत क्रान्ति की एक चिनगारी द्वारा राजनैतिक दासता को मिटाने के लिये अनेक राजनैतिक संस्थाओं ने प्रयत्न किये। उसी की एक चिनगारी को लेकर अनेक समाज सुधारक संस्थाओं एवं महात्माओं ने समाज सुधार का प्रयत्न किया और प्रत्येक मनुष्य को मानवता के अधिकार दिलाने के प्रयत्न किये उसी की एक चिनगारी को लेकर शिक्षा क्षेत्र में शिक्षा प्रेमियों ने अनेक संस्थाओं का जाल बिछा दिया।

राजनैतिक कार्य कर्त्ताओं ने समझ लिया कि हमने देश को राजनैतिक दासता से मुक्त करके स्वतंत्रता प्राप्त करली है। परन्तु अभी भारतीय जनता में जो साम्प्रदायिक एवम् सांस्कृतिक दासता है उसका भी उन्मूलन करना होगा। उस दासता से मोह करना आत्म घात के तुल्य है।

महर्षि द्वारा प्रदीप्त क्रान्ति की महान् अग्नि के प्रकाश में मानव समाज को सब प्रकार की दासताओं से मुक्त करने के लिये हमें आदर्श पर साथ ही कटकाकीर्ण मार्ग का अनुसरण करना होगा। हमें अपनी वाणी, प्राण, चक्षु, श्रोत्र आदि सभी शक्तियों द्वारा स्वयं के एवं राष्ट्र के चरित्र को शुद्ध करने में अग्रसर होना पड़ेगा। महर्षि के सारे संदेश इसी से ओत प्रोत हैं। महर्षि का सारा जीवन मानव जगत् की इन्हीं शुद्धियों के लिये अर्पित हुआ।

यही शुद्धता जीवन एवं उन्नति की शान्ति एवं समृद्धि की जनक है। इस कल्याण पथ पर अग्रसर होने की शक्ति प्रभु हम आर्यों को प्रदान करें।

—डा० वीरसेन, इन्दौर

कन्याओं का यज्ञोपवीत

२२ नवम्बर के आर्यमित्र में 'कन्याओं का उपनयन' टिप्पणी पढ़कर हार्दिक प्रसन्नता हुई। ऋषि की प्रेरणा से संस्कार पद्धति का प्रचलन पुनः आरम्भ अवश्य हुआ पर कन्याओं की आज भी उपेक्षा हो रही है। वस्तुतः में कन्याओं के उपनयन को उनके विवाह के साथ जोड़कर देखा जाता है। आम धारणा यह है कि पता नहीं कन्या का विवाह किस प्रकार के घराने में हो यदि वह आर्य परिवार हुआ तो ठीक नहीं, तो कन्या को जनेऊ उतार देना पड़ेगा। इस दुविधा के कारण कन्याओं को इस संस्कार से वंचित रहना पड़ता है।

राजस्थान बीकानेर में बहुत दिन पहले श्री दयावतीजी ने यज्ञोपवीत ग्रहण किया था बाद में उन्होंने सन्यासाश्रम भी ग्रहण किया और अणचीबाई नाम से लोक-सेवा की, उन्हीं की प्रेरणा से मेरी माताजी ने अपने बड़ों के मना करने पर भी यज्ञोपवीत धारण किया जिसका अच्छा प्रभाव पड़ा। माताजी के साहस के फल स्वरूप कई अन्य बहनों ने भी यज्ञोपवीत धारण किये, माताजी ने मेरा भी यज्ञोपवीत कराया, परन्तु अब उनका भी साहस कम हो गया है और वे मेरी दोनों छोटी बहनों के यज्ञोपवीत संस्कार की बात इस भय से नहीं लातीं कि कहीं श्वसुर-गृह में उन्हें जनेऊ उतारने के लिये बाध्य न होना पड़े। अभी पिछले दिनों आर्यसमाज सुजानगढ़ के उत्सव पर एक ६० वर्षीय महिला ने यज्ञोपवीत ग्रहण किया तब मैंने उनसे पूछा कि आपने अब यज्ञोपवीत संस्कार क्यों कराया उन्होंने कहा कि मेरी इच्छा तो बचपन से ही थी पर आर्य परिवार में सम्बन्ध न होने के कारण पति भय से अबतक न ले सकी अतः अब ले रही हूँ।

उपर्युक्त कथन के साथ मैं प्रत्येक आर्य अभिभावक से प्रार्थना करूंगी कि कन्याओं की इस प्रकार उपेक्षा न कर उनका भी यज्ञोपवीत संस्कार करावें और मैं अपनी आर्य बहनों से बल पूर्वक कहना चाहना चाहती हूं कि जहाँ वे अन्य बातों में पुरुषों से समानता की माँग करती हैं वहाँ उन्हें समानता के प्रतीक इस संस्कार के लिये भी आन्दोलन करना चाहिये।

—शान्ता कुमारी आर्य
सुजानगढ़

स्वाध्याय

आज आर्यसमाजी भाई ऋषि कृत ग्रन्थों का स्वाध्याय नहीं करते, ऋषि के आदर्शों का पालन भी हम छोड़ चुके हैं, इसी लिये निन्दा, स्तुति मान, अपमान, पक्षपात, दलबन्दी आदि दुर्गुण हमारे जीवन में व्याप्त हो गये हैं। आर्यों के जीवन में इन दोषों की शुद्धि हो सके एतदर्थ स्वाध्याय की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलना चाहिये।

—कुँवरबहादुर, कानपुर

युगवंद्ये! आज तुम अंगड़ाई लेकर बंधमुक्त हो चुकी हो, पर स्वप्नाविष्टे? यदि इस विधि से बंधमुक्त के साथ तुम्हारा अंगभंग हो जाये, तुम्हारी पूर्ण-अपूर्णता में परिवर्तित हो जाय तो? अतः तुम बन्धमुक्त बनो पर पूर्ण चेतना युक्त होकर उस गौरवमयी विधात्री के आसन से, जिसमें तुम्हारी गरिमा से गल कर, तुम्हारी लौह शृंखलायें तरला हो बह जावें।

आओ चिर कल्याणि! अब जागो। आज पीड़ित दानव दलिता मानवता की शोषित पीड़ित व्यथित याचना भरी निगाहें तुमसे कुछ मांग रही हैं। जग की नंगी भूखी मानवता झोली फैलाये तुम्हारे द्वार खड़ी है, तुम जागो! जागो अन्नपूर्णा के रूप में सतधर्म मयी सीता सावित्री के रूप में।

हे विश्व विभूति, वरदात्री तुम्हीं श्री हो, तुम्हीं लक्ष्मी, तुम्हीं शक्ति हो, तुम्हीं सरस्वती, जगत्पालिका जगजननी भी तो तुम्हीं हो। हे जगवंद्ये चिर चिर सुप्ते! अब जागो। अपना अनुपम अक्षय अमृत बरसाओ। मंगलमयी! तुम फिर स्वकर्त्तव्य निभाओ अब तो स्वरूप में आओ।

—

वेदान्त रहस्यम्

अथातोब्रह्मजिज्ञासा

श्री स्वामी अमृतानन्द सरस्वती

अथ = विवेक वैराग्यादि साधन चतुष्टयसम्पत्त्यनन्तरम् अतः = अस्मात् हेतोः ब्रह्मज्ञानं साक्षान्निश्रेयस साधनमतः, ब्रह्मजिज्ञासा = वक्ष्यमाण लक्षणस्य ब्रह्मणो (जन्माद्यस्ययतः) इति ज्ञातु—साक्षात्कर्तुमिच्छा भवतीति सूत्रार्थः । आनन्तर्य वचनो ह्यत्रार्थ शब्दः परिगृह्यते नाधिकारार्थः । ब्रह्म जिज्ञासाया ब्रह्मज्ञानेच्छात्मकत्वेनानधिकार्यत्वात् नहि प्रत्यधिकरणमिच्छाधिक्रियते यत तत्समाभिव्याहरतोऽथ शब्दोऽप्यधिकार वचन कल्प्यतः । प्रत्यधिकरणमधिक्रियमाणञ्च ब्रह्म नाथशब्देन सम्बद्धुमर्हति । अप्रधानत्वात् । विशेषणं हि ब्रह्म, विशेष्या च जिज्ञासा, न च विशेषण प्रधानं भवति । न च यथा "ब्रह्मदण्डिनो ब्रह्मोपदेशाय भूमिमण्डले यत्र यत्र प्रचरन्ति' इत्यत्रा प्रधानमपि ब्रह्मदण्डो विवक्ष्यते तथह्यपि ब्रह्म विवक्ष्यते । विवक्षितस्योपपद्यते सम्बन्ध इति युक्तं वच । शास्त्र प्रवृत्ति प्रत्यङ्ग भूतयो सशय प्रयोजनयो सूचनार्थत्वेन जिज्ञासा एव प्रधानतया विवक्षितत्वात्, यदेव च प्रधानतो विवक्ष्यते तदेव क्रियया सम्बध्यते न विवक्षितमपि प्रधानम्, अतो नाधिकारार्थोऽथशब्दः ।

मङ्गलस्य च वाक्यार्थे समन्वया भावात् मङ्गलवचनोऽपि कल्पयितुं न शक्यते । मङ्गलस्याथ वाच्यत्वा प्रसिद्धेरितिभावः नहि मङ्गलमथ शब्दस्य वाच्यक्वचित् प्रसिध्यति । न चा प्रसिद्धार्थ कल्पनं न्याय्यम् । अथ शब्दोऽर्थान्तरे प्रयुक्त एव श्रुत्या मङ्गल प्रयोजनो भवति । न च तस्य वाक्यार्थे समन्वय उपपद्येत । शब्दार्थत्वा भावात् । शब्दार्थोहि वाक्यार्थे समन्वीयते वाच्यो वा स्यात् लक्ष्यो वा, न च कार्यं (प्रयोजनमिति) न वा ज्ञाप्यम् । शब्द व्यवहारे समत्र तथैव दृष्टत्वात् । नहि यथ वाच्यो वा लक्ष्यो वार्थो वाक्यार्थे समन्वीयमानः सर्वत्र शब्द व्यवहारे दरी दृश्यते तथा कार्यं वा ज्ञाप्य वा समन्वीयमानं क्वचिदवलोक्यते ।

न च मङ्गल वाचकत्वेपि "मङ्गलब्रह्मजिज्ञासा" इति वाक्यार्थः सगच्छते । सूत्रस्याथवादत्व प्रसङ्गात् । न च सूत्राणामर्थवादत्व मभ्युपेयते किन्तु न्याय निबन्धनम् । तच्च तस्य मङ्गल वचनत्वेऽनुपपन्नम् । अतो न मङ्गलवचनोऽथशब्दः ।

न च प्रश्नार्थोऽप्युपपद्यते, प्रतिवचना नुपलब्धः । नहि "किं ब्रह्मजिज्ञासा कर्तव्या' इतिप्रश्ने "सा कर्तव्या" इति वचनमुपलभ्यते । न च तदनुपलम्भे तत्कल्पन न्यायविदा युक्तम् । केवला वचन व्यक्तिस्तु न प्रश्न प्रति वचन रूपेतिनाय प्रश्न वचनोऽथशब्दः । न च पूर्व प्रकृतापेक्षोपि युज्यते, पक्षान्तरोपन्यासाभावात् । पूर्वं प्रकृतापेक्षायाः फलत आनन्तर्याव्यतिरेका दतिभाव तथाहि—यत्रहि पक्षा तर मुपन्यस्यते तत्र पूर्व प्रकृतमपेक्ष्याथ शब्द प्रवर्तते । यथा 'किमयमथ शब्द आनन्तर्य वाचकोऽथ अधिकारवचन" इति विमर्श वाक्येऽथशब्दः पूर्वं प्रकृतमथ शब्द मपेक्ष्य प्रवर्तते । न चेह्यस्ति पक्षान्तरोपन्यासः । तस्मान्नासौ पूर्व प्रकृतापक्षोऽप्याश्रयितु युक्तः एतेन तस्य पक्षान्तर वचनत्वमपि प्रत्याख्यात दृष्टव्यम् । प्रकृतानुपलम्भात् ।

सति चा नन्तर्यार्थत्वे यदनन्तरे ब्रह्म जिज्ञासयाभवितव्यं तद वाच्यम् । न च तद् वेदा ध्ययनमिति सम्भवति । साधारणत्वात् । साधारणकारणं हि ब्रह्मजिज्ञासाया वेदा ध्ययन न धर्म जिज्ञासाया इवासाधारणकारणम् । नहि वेदाध्ययने सति यथा नियमेन धर्मजिज्ञासा प्रवर्तते तथा ब्रह्म जिज्ञासानिवर्तते । तादृगसाधारणकारणं त्विह विवक्षितम् यस्मिन्नसति ब्रह्मजिज्ञासा न भवति सति च यस्मिन् भवति भवत्येव । न च तथा वेदाध्ययनम् । नन्विह कर्मबोधानन्तय विशेषः । अयोजकत्वात् धर्म जिज्ञासाया प्रागपि पठित वेदान्तस्य ब्रह्मजिज्ञासोपपत्ते । कर्मावबोधोहि कर्मा नुष्ठान प्रयोजयति न ब्रह्मजिज्ञासाम् । न च धूम धूम निकेतनयोरिव वा कर्म ब्रह्मणो इतिनियतः कश्चित्सम्बन्ध । येन कर्मा वबोधा ब्रह्मजिज्ञासोदियात् । यस्य च यदनन्तरं नास्ति नियमेन सम्भव न तस्य तदानन्तर्यं कथमपि संगच्छते, इत्यलं कर्मावबोधेनेति तत्वम् ।

ज्ञानमेवैक निःश्रेयस साधन मिति निष्प्रत्यूहम् । तथा चोपपन्नः 'यतो ज्ञानमेव साक्षान्निःश्रेयस साधनमतो ब्रह्मजिज्ञासा भवति । इति हेतु वचनोऽतः शब्दः ।'

ब्रह्मणो जिज्ञासा ब्रह्मजिज्ञासा । ब्रह्मण इति कर्मणि षष्ठी । न शेषे । तदपेक्षाया एव प्रथम मुपजायमानत्वात् । यद्धि यद् विना न निरूपयितु शक्यते तस्य तद् गोचरापेक्षा नियमेन प्रथममुप जायते । यथा ज्ञेय गोचरा पेक्षा ज्ञानस्य । नहि ज्ञेयं विना ज्ञानमिवजिज्ञासापि जिज्ञास्य विना कथञ्चित् निरूपयितुं शक्यते जिज्ञास्यम पेक्ष त्वाद् जिज्ञासायाः ।

न च जिज्ञास्य ब्रह्म निरिक्त किञ्चिदन्यत्र श्रूयते । श्रुता नुमानयोश्च श्रुन सम्बन्धो बलीयानिति ब्रह्मैव तस्याः जिज्ञास्य कर्म ।

जिज्ञासेत्यत्र सन् प्रत्यय वाच्याया इच्छायाः ज्ञान कर्म । तस्य ज्ञानस्य ब्रह्म कर्म । तत्र सकर्मक क्रियायाः कर्म ज्ञानेविना ज्ञातु मशक्यत्वादिच्छाया विषय ज्ञान जन्यत्वात् च प्रथमा पेक्षिते कर्मैव षष्ठ्या वाच्य न शेष इति निष्कर्ष. ।

'श्रुत्यनुमानञ्च" श्रुति वाक्यानि विचारयितुं सूत्राणी प्रारभ्यन्ते "तद्विजिज्ञासस्व तद् ब्रह्म' (तै–३ । १) इति प्रत्यक्षमेव ब्रह्मणो जिज्ञासा कर्मत्व दर्शयन्ति ।

खाद्य समस्या का हल

१—पशु धन की वृद्धि और नगरो की जनता को पशु पालन में प्रोत्साहन देने के लिये विशाल चरागाहों का होना बहुत आवश्यक है। २—गोबर का ईंधन के रूप मे प्रयोग कानूनन निषिद्ध किया जाना चाहिये। ईंधन के रूप मे गोबर जलने से ९० प्रतिशत खाद नष्ट हो जाती है। गोबर बचाने की भावना के प्रोत्साहनार्थ नहरो की पटरियो के निकट जो झाड़-झंकाड़ आदि पाये जाते हैं, जनता को उनका प्रयोग करने की छूट देदी जानी चाहिये। ३—सरकार अपनी परती भूमि को निकटस्थ पशुओं के चरने के लिये खुली छोड़ दे, इसी प्रकार रेल की पटरी के पास की भूमि सेना के ठहरने के पड़ावों की भूमि, बड़े बडे सरकारी अहातों की भूमियां पशु पालन के उपयोग मे लाने दी जाय। ४—भारत मे प्रत्येक स्थान पर पशु वध कानून द्वारा वर्जित हो जिससे कृषि साधक पशुओं की रक्षा हो सके और अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन को प्रगति मिले। ५—गन्ने की उपज-भूमि का क्षेत्र कम करके बची भूमि मे अन्न-दाल आदि अधिक आवश्यक पदार्थों के उत्पादन को प्रोत्साहन मिलना चाहिये। अन्न की अधिक उपज करने वाले किसानों से सिंचाई का पैसा अपेक्षा कृत कम लिया जाय। ६—प्रत्येक दस एकड़ भूमि वाले कृषक के पास एक उत्तम नसल की गाय रखना आवश्यक समझा जाय। इस काम के लिये परती भूमियों में सरकारी पशु शालाएं बनाई जाय जहाँ अच्छे सांड रहे, जनता की दूध छोड़ चुकी गाय भैंसे पाला जाय। इस प्रकार के कार्य मे जनता भी पर्याप्त सहयोग देगी।

देश की खाद्य समस्या और पशु समस्या दोनो अभिन्न समस्याएं हैं। इसी दृष्टि मे हमे और हमारी सरकार को विचार करना चाहिये।

—गोकुलचन्द सिंघल
मवाना (मेरठ)

नागरी लिपि की प्राचीनता

मुझे ११८९ विक्रम का लिखी हुई स्वामी नन्ददास रचित अनेकार्थ विख्यात शब्द कोष' नामक पुस्तक अनुसन्धानमें मिली है। इस पुस्तकमें वर्तमान नागरी लिपि से थोड़ा सा भी विकृत रूप नहीं है। इसी प्रकार पंजाब और काश्मीर प्रान्त में प्राप्त १००० विक्रमी से पूर्व के ताड़ पत्रों पर लिखे ग्रन्थों में भी आज कल की ही लिपि है। इन दोनो ग्रन्थों की लिपियों नागरी लिपि के वर्तमान रूप की प्राचीनता का समर्थन करती हैं। जो लोग वर्तमान रूप को १३ वीं १४ वीं विक्रमी का मानते हैं वे भ्रम में हैं।

—दौलतराम शास्त्री
देहरादून

गुरुकुल समाचार

गुरुकुल वृन्दावन

उत्सव की दुकानें

गुरुकुल विश्वविद्यालय, वृन्दावन का वार्षिक महोत्सव ता० २० से २६ दिसम्बर १६५१ तक मनाया जायगा। बाजार प्रति वर्ष की भाँति ही लगेगा। दूकानों का किराया निम्न प्रकार होगा।

चौराहे की पक्की पुस्तकों की दूकान २२), पण्डाल की ओर पक्की पुस्तकों की दूकान १८), फूस की कच्ची पुस्तकों की दूकान १५), हलवाइया की चौराहे की दूकान१५),शेष हलवाइयों का तथा अन्य दूकानें शिविर की ओर १०) प्रति, जमीन पर अपनी दूकान लगाने वालों से ७), इसके अतिरिक्त ६ रु० प्रतिवत्व बिजली का चार्ज होगा।

जो महानुभाव दुकान लेना चाहे वह अपना किराया यथा सम्भव शीघ्र अगाऊ भेजने का कष्ट करें जिससे कि दूकान सुरक्षित कर दी जावे।

द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री
मुख्याधिष्ठाता

कन्या गुरुकुल सासनी

वार्षिकोत्सव

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हाथरस का वार्षिक महोत्सव ता० ३० ३१ दिस० तथा १ जनवरी को बड़े समारोह के साथ मनाया जायगा। इस वर्ष यह महोत्सव नवीन योजनाएं जैसे—शिक्षा विकास, भारतीय संस्कृति प्रचार आदि के लिये विशेष रूप में मनाया जारहा है।

महोत्सव में पधारने के लिये भारत से प्रसिद्ध महात्मा सन्यासी तथा विद्वान् महोपदेशक महोदयों की स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है।

ता० १ जनवरी ५२ को शिक्षा प्राप्त नवीन स्नातिकाओं का दीक्षान्त संस्कार प्रातः ११ बजे होगा। जनता से निवेदन है कि अधिक से अधिक संख्या में उपस्थित हो कर उत्सव को सफल बनावें।

लक्ष्मीदेवी
आचार्या, मुख्याधिष्ठात्री
कन्या गुरुकुल महाविद्यालय

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ

नवीन योजना

गुरुकुल इन्द्र प्रस्थ की सचालक समिति ने गुरुकुल के कार्य क्षेत्र को अधिक व्यापक बनाने के लिये नई योजना बनायी है।

१—मौलिक शिक्षा बेसिक एजुकेशन के जो अग शिक्षा को अधिक उपयोगी और व्यावहारिक बना सकें, उन्हे स्वीकार कर लिया जायगा।

२—गुरुकुल के आश्रम सम्बन्धी तथा अन्य नियमों की पूरी तरह रक्षा करते हुये पाठविधि में ऐसा परिवर्तन किया जायगा कि जिस में आठवा श्रेणी के छात्र यदि चाहे तो दो वर्ष के परिश्रम से मैट्रिक परिक्षा दे सकें।

३, जो छात्र मट्रिकुलेशन की परीक्षा देना चाहेगे उन के लिये हाई स्कूल की शिक्षा का भी प्रबन्ध किया जायगा।

४, विद्यालय के बाहर के ऐसे अविवाहित छात्र भी शिक्षा पा सकेंगे जिनका वाग्दान न हुआ हो उन्हे गुरुकुल नियन्त्रण सम्बन्धी सब नियमो का पालन करना होगा।

५, हाई स्कूल की व्यवस्था में गुरुकुल के आवश्यक नियमों के साथ-साथ यह प्रयत्न किया जायगा कि पब्लिक स्कूल की विशेषताएँ भी सम्मिलित करदी जाय।

गुरुकुल सम्बन्धी यह नई योजना इस अभिप्राय से बनाई गई है कि गुरुकुल के कार्य क्षेत्र को अधिक विस्तृत और उपयोगी बनाया जा सके, दिल्ली की विशेष अवस्थाओं को लक्ष्य में रखते हुये ऐसी किसी व्यवस्था का करना आवश्यक प्रतीत होता था, आशा है भारतीय शिक्षा पद्धति से प्रेम रखने वाले देशवासी गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ की इस योजना का स्वागत करेंगे और उस की सफलता में सहायक होंगे।

इन्द्र विद्यावाचस्पति,
मुख्याधिष्ठाता,

सभा की सूचनाएँ

१

सभा के उपदेशकों से

आर्यप्रतिनिधि सभा की ओर से समाजों के उत्सवों को करने के लिये यद्यपि निरन्तर आदेश सूचनायें दी जा रही हैं तथापि यह देखा जाता है कि देश की विशेष असाधारण व्यवस्था के कारण समाजों में शिथिलता आ रही है और उत्सवों की संख्या कम हो रही है, इसलिये अब उपदेशकों व प्रचारकों का विशेष कर्तव्य यह है कि सभा द्वारा दिये गये प्रोग्राम पर जहा जहा वे जावें वहा, पर अपने आप ... विशेष ... जिन समाजों ने अपने अपने वार्षिकोत्सव नहीं किये हैं उन उन को वार्षिक उत्सव किये जाने की प्रेरणा करें और अपनी रिपोर्ट उचित परामर्श के साथ सभा में दें कि किस प्रकार कम से कम व्यय में उनके मडलो में प्रचार का कार्य सफल हो सकता है, इस समय उपदेशकों को विशेष रूप से यह इसलिये निर्देश देना पड़ा है कि विविध कारणों से वेदप्रचार निधि में न केवल धन ही कम आ रहा है अपितु आर्यसमाज के कार्यकर्त्ताओं का ध्यान अन्य दिशाओं में आकर्षित हो रहा है जिससे आर्यसमाज को बहुत हानि पहुच रही है।

२

निरीक्षण सूचना

आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सदस्या एव महिला प्रचार मडल की मन्त्रिणी श्रीमती प्रियम्बदादेवी जी ने प्रचार कार्य प्रारम्भ कर दिया है और निम्न लिखित स्त्री आर्य समाजों में निरीक्षणार्थ पहुचने का व्यवस्था कर रही हैं। उनके पहुचने पर अधिकारी गण निरीक्षण एव प्रचार आदि का उचित प्रबन्ध करने का कष्ट करें।

सभा के वेद प्रचार कार्य को पुष्ट करने के लिए धन द्वारा सहायता भी प्रदान करें।

नाम समाज सूची

स्त्री आ० स० सीतापुर। लखीमपुर, पूरनपुर, पीलीभीत, गोरखपुर स्त्री समाज हुसैनगंज लखनऊ, स्त्री समाज तिकार, हरदोई, प्रयाग, गणेशगंज लखनऊ तथा गोंडा।

३

नवीन प्रचार व्यवस्था

वैदिक धर्म प्रचार की विशेष रूप से उन्नति करने के लिये सभा की ओर से नवीन नियुक्तियाँ की गई हैं और विद्याभास्कर श्री ओम्प्रकाश जी शास्त्री श्री ... जी शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणि श्री प्रभामित्र जी शास्त्री श्री श्याम सुन्दर जी शास्त्री श्री मगलदेव जी शास्त्री ... श्री ... जी सगीत ... श्री रामचन्द्र जी सगीत विशारद, श्री जगदीश भूषण जी कवि, श्री महेशचन्द्रजी प्रचारक श्री देवव्रत जी प्रचारक. सभा की ओर से वेद प्रचारादि कार्य करेंगे।

सभा के प्रसिद्ध प्रचारक श्री श्रवणसिंह जी, श्री मुकुन्दराम जी शर्मा, श्री धर्मदत्त जी आनन्द, श्री सर्वगुणप्रसाद जी, प्रचारक तथा प्रसिद्ध महोपदेशक श्री सत्यमित्र जी शास्त्री वेदतीर्थ, श्री महादेवप्रसाद जी शास्त्री और विद्याभास्कर श्री सच्चिदानन्दजी शास्त्री पूर्ववत् उत्साह से कार्य कर रहे हैं आर्यसमाजों से निवेदन है कि वे उपदेशको से सीधा पत्र व्यवहार न किया करें और विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि अनुशासनहीन स्वतत्र उपदेशको को न बुलाया करें अन्यथा आयसमाज के वेदप्रचार कार्य को और वेदप्रचार निधि की असहनीय हानि पहुचेगी।

धर्मपाल विद्यालंकार
सभा मन्त्री

४

—मैंने १४ नवम्बर को म० हेमचन्द्रजी शर्मा को मथुरा जिले की समाजों में प्रचारार्थ भेजा था परन्तु उनकी ओर से मुझे अभी तक किसी प्रकार की रिपोर्ट नहीं मिली है उनकी डाक भी मेरे पास पड़ी है ... जहाँ भी हो शीघ्र मेरे पास चले आवें।

मोहनलाल आर्य
मण्डलाधीश आगरा

—आ० स० खुदागपुर (फर्रुखाबाद) का वार्षिकोत्सव २६ नवम्बर को समारोह पूर्वक मनाया गया। श्री रूपनारायण शर्मा, श्री प० सत्यप्रिय शर्मा उपदेशक सभा और श्री श्रवणसिंह जी सभा भजनोपदेशक श्री गजराजसिंहजी आदि के प्रभाव शाली भाषण भजन हुए।

—श्री पं० धर्मवीरजी मण्डाधारी ने पटना आदि नगरो के भ्रमण के बाद कलकत्ता में प्रचार किया। आप सारे देश में टंकारा में आयोजित बृहद्यज्ञ के लिये प्रचार कर रहे हैं।

—आ० स० कौडियागंज में गत अक्टूबर में आर्य वीर दल शिक्षण शिविर लगाया गया। २० आर्यवीरों ने शिक्षा प्राप्त की।

—आ० स० समेरपुर (अलीगढ़) का उत्सव १ से ३ दिसम्बर तक समारोह पूर्वक मनाया गया श्री स्वामी सत्यव्रतजी श्री स्वामी आत्मानन्दजी श्री पं० विश्व बन्धुजी श्री ज्ञानेन्द्रजी आर्य पथिक श्री महेशचन्द्रजी श्री जयपालसिंहजी श्री हेमलताजी आदि के व्याख्यान भजन हुए। श्री हीरानन्दजी का सहयोग प्रशंसनीय रहा।

—आ० स० गोयला (मुजफ्फर नगर) के मन्त्री श्री धर्मवीरजी की कन्या का कर्णवेध संस्कार हुआ। आर्य बन्धुओं को प्रीति भोज दिया गया और एक-एक सन्ध्या-हवन की पुस्तक भेंट की।

—आ० स० सिंगापुर में ऋषि निर्वाण दिवस बड़े समारोह के साथ मनाया गया, दयानन्द ईग्लिश पाठशाला के छात्रों ने गान किया, श्री प्रसन्न कुमार घोष और श्री डा० के० चन्द्रजी श्री रमनाथ कश्यप आदि के ओजस्वी भाषण हुए।

—श्री कवि प० श्याम जी शर्मा आर्य भजनोपदेशक सभा पिनाहट निवासी बिहार प्रान्त में प्रचार कर रहे हैं। गत दिनों गोली, गुमला लोहरदगा, छोटा नागपुर आदि में आपने प्रभाव शाली भाषण दिये झरिया में आपके प्रचार का अच्छा प्रभाव पड़ा, छोटा नागपुर और पदमा रायगढ़ के राजा भी उनके प्रचार से प्रभावित हुए।

आर्यजगत

शोक

—प्रसिद्ध दानी श्री सेठ शूरजी वल्लभ दास के निधन पर निम्न स्थानों की समाजों में शोक सभाएं की गईं। आर्य सभा गढ़वाल, आ० स० भोईवाड़ा परेल (बम्बई) तिलक नगर देहली।

—आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता, भारतीय पत्रकार संघ के अध्यक्ष श्री देशबन्धु गुप्त के निधन पर निम्न समाजों में शोक प्रस्ताव पास हुए आर्य समाज कटरा प्रयाग, कस्बा (पूर्णिया बिहार) रौरा कलां, अलमोड़ा, तिलक नगर देहली, भारत नगर गाजियाबाद, नैनीताल बलरामपुर।

—आ० स० पूना अपने भू० पू० प्रधान श्री गोविन्दराम जी की असामयिक मृत्यु पर शोक समवेदना प्रकट करता है।

—आ० स० तिलक नगर देहली पजाब के प्रसिद्ध आर्य नेता और पजाब केसरी ला० लाजपतराय के छोटे भाई बा० धनपतराय जी के असामयिक निधन पर हार्दिक समवेदना प्रकट करता है।

—आर्यसमाज बिजनौर व गढ़वाल के पूर्व प्रधान लाम्बखेड़ा के श्री चौधरी रघुवशसिंहजी सहायक अधिष्ठाता क० गु० हरद्वार के निधन पर कन्या गुरुकुल हरद्वार का सार्वजनिक सभा शोक समवेदना प्रकट करती है।

—आ० स० चांदपुर (बिजनौर) श्री रा० सा० मक्खनलालजी और श्री चन्द्रकिरणजी के असामयिक निधन पर शोक समवेदना प्रकट करता है।

—आर्य समाज टिटौट बरगांव (बुलन्दशहर) के सुप्रसिद्ध कार्यकर्त्ता श्री म० बिहारीसिंहजी आर्य का १५ नवम्बर १९५१ ई० को ७८ वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। आप कर्मठ कर्मकांडी और प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। आपका सम्पूर्ण जीवन आर्य समाज की सेवा में ही व्यतीत हुआ। आप १९०१ से ही आर्यसमाज की अवैतनिक रूप से सेवा कर रहे थे। अपने सदही शुद्धि आन्दोलनों में भाग लिया और शुद्धि शुदा भाइयों के साथ खान-पान आदि का व्यवहार किया। आप ऋषि दयानन्दजी द्वारा प्रतिपादित संस्कारों को दृढ़ता पूर्वक किये जाने के पक्षपाती थे आपके भजन बहुत ही सुन्दर और प्रभावशाली होते थे। आप कई समाजों के संस्थापक थे आपकी मृत्यु से इस क्षेत्र में आर्यसमाज को बहुत हानि पहुंची है। आ० स० बीरगांव अपने वयोवृद्ध कार्यकर्त्ता की मृत्यु पर हार्दिक शोक समवेदना प्रकट करता।

उत्सव

—आ० स० बीकानेर का वार्षिकोत्सव २४ दिसम्बर से २७ दिसम्बर तक

—आ० स० मुजफ्फर नगर का वार्षिकोत्सव २२ से २५ दिसम्बर तक

आ० स० सहपऊ (मथुरा) का वार्षिकोत्सव १० से १२ जनवरी १९५२ तक

—आ० कु० सभा बाराबंकी का उत्सव २४ से २५ दिसम्बर तक

निर्वाचन

—आ० स० गोयला प्रधान श्री चौ० हरीसिंहजी और मन्त्री लाला धर्मवीरजी

—आ० स० बाजना प्रधान श्री ला० छोटेलालजी और मन्त्री श्री प० श्रीचन्द्रजी

—आ० स० काकेरा श्री गोकुल चन्दजी प्रधान और मन्त्री श्री हेतरामजी आर्य

सारसूचनाएं

—श्री प० वासुदेव शर्मा ग्राम रुड़की दयालपुर (सहारनपुर) निवासी जो अपने सिंगापुर निवास काल में आर्यसमाज के कई वर्ष तक प्रधान रहे और उन्होंने आर्य समाज की बहुत सेवा की परन्तु जब से वे सिंगापुर से भारत चले आये हैं हम लोगों को प्रयत्न करने पर भी उनका कोई समाचार नहीं मिला है, मित्रों का भी कोई उत्तर नहीं मिला है। सहारनपुर जिले के आर्य बन्धुओं से प्रार्थना है यदि वे प० जी के सम्बन्ध में कुछ जानते हों तो शीघ्र ही आर्यमित्र में या सीधे सिंगापुर सूचित कर अनुगृहीत करें।

कामताराम
मन्त्री आर्यसमाज
४२ गोवेज रोड, सिंगापुर

—जो गो प्रेमी सज्जन गोरक्षा प्रचार कार्य में रुचि रखते हैं वे इस सम्बन्ध का उपयोगी साहित्य हमारे यहाँ से बिना मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

संचालक, गोरक्षा प्रचारविभाग
लखनादौन (मध्यप्रदेश)

—गत २ दिसम्बर को आगरा में भारतीय संस्कृति परिषद् का उद्घाटन श्री निहालकरण, सेठी आचार्य आगरा कालिज ने किया। स्वस्तिवाचन और मंगलाचरण के पश्चात् खत्री गर्ल्स कालिज की छात्राओं ने राष्ट्रगान गाया। श्री अमृतलालजी चतुर्वेदी, ऋषीकेश जी चतुर्वेदी के संगीत और श्री हरिशङ्कर शर्मा, श्री बाबू गुलाबरायजी के विशेष भाषण हुए। नगर के प्रसिद्ध विधिवेत्ता एवं संस्कृत के विद्वान् श्री हरिप्रसाद बागची ने सभा की अध्यक्षता की।

—प्रसिद्ध वेद पत्रिका "सविता" का विशेषांक आगामी १४ जनवरी ५१ को प्रकाशित होगा जो सज्जन मगाना चाहें वेद संस्थान अजमेर से मंगा लें—

—व्यवस्थापक

—आ० स० बरबीघा (मुंगेर) का वार्षिकोत्सव २८ से ३१ दिसम्बर तक मनाया जाना था परन्तु विशेष कारणों से स्थगित कर दिया गया है।

—हरगौरीलाल, उपमन्त्री

—अलीगढ़ जिले की जिन आर्यसमाजों में आर्यवीर दल की शाखाएं नहीं है उन्हें शीघ्र ही स्थापित करनी चाहिये। अतरौली में २१ दिसम्बर से एक शिक्षण शिविर लगाया जायगा। इसमें सैनिकों को भेजकर शिक्षित करालें।

—सुलतानसिंह, अलीगढ़

अन्तरंगाधिवेशन का सूचना

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के अन्तरग सदस्यों को सूचित किया जाता है कि सभा की अन्तरग सभा का साधारण अधिवेशन गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन में महोत्सव के शुभवसर पर २३ दिसम्बर १९५१ दिन रविवार को मध्यान्होत्तर १२ बजे से होगा। कृपया सर्व सदस्यगण नियत समय पर पधारने की कृपा कर कृतार्थ करें।

—धर्मपाल विद्यालंकार, सभा-मन्त्री

वर-कन्या की आवश्यकता

एक प्रतिष्ठित आर्य परिवार की १७ वर्षीय कन्या जो सुन्दर सुशील गृहकार्य में निपुण तथा बी० ए० में पढ़ रही है, के लिये योग्य सुशिक्षित सदाचारी, स्वावलम्बी आर्य वर की आवश्यकता है अवस्था (२२ से २४ वर्ष) हो।

तथा

२३ वर्षीय सुयोग्य वर के लिये जो बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय का A० M० S० इस्तीर्ण डाक्टर हैं, और आय ३,००) मासिक से ऊपर है और सब प्रकार से योग्य हैं, के लिये एक विदुषी रूपवती गृहकार्य में दक्ष १६ १७ वर्षीय कन्या की आवश्यकता है, विवाह सम्बन्ध में जाति भेद बाधक नहीं होगा।

पता—डा० सत्यपाल वैद्य शास्त्री
सत्य फार्मेसी
टाउन हाल बरेली (U० P०)

आवश्यकता

उत्तर प्रदेश के पश्चिमी वा पर्वतीय प्रान्तों की निवासिनी गृहस्थ में रहने वाली २५-३० वर्षीय सुशील, स्वस्थ, निस्संतान ब्राह्मणी विधवा सन्तानहीन वशिष्ठ गोत्रीय गौड़ विधुर को चाहिये। खेती, जमीदारी और व्यवसाय की आय ३००) मासिक से अधिक है।

पता—बौक्स नं० २५
आर्यमित्र आगरा

गुरुकुल वृन्दावन आयुर्वैदिक प्रयोगशाला लि०
के

शीत कालीन अमूल्य उपहार

च्यवनप्राश

बल, वीर्य, बुद्धि एव स्फूर्तिदायक, सर्वोत्तम टानिक है, पुरानी खांसी, हृदय की धड़कन एव अशक्ति पर अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ है। मूल्य १ पाव २) आधा सेर ३॥) एक सेर ७)

अमृत भल्लातकी रसायन

अशक्ति, अस्थिपीड़ा, कुष्ठ, बवासीर, आदि अनेक रोगो में उपयोगी रसायन है। स्त्रियों के श्वेत प्रदर पर रामबाण है। स्वस्थ पुरुष इसके सेवन से बल, वीर्य, ओज एव धातु पुष्टता को प्राप्त करते हैं। मूल्य १६) प्रति सेर

पराग रस

प्रमेह, और समस्त वीर्य विकारों की एक मात्र दवा है। स्वप्नदोष जैसे भयङ्कर रोग पर अपना जादू का सा असर दिखाता है। मूल्य ६) तोला

चन्द्र प्रभावटी

यह औषधि शरीर में नया खून पैदा करती है। जिगर की कमजोरी, बवासीर, बहुमूत्र, प्रमेह, स्वप्न दोष, प्रदर आदि रोगो में तुरन्त लाभ करती है। मूल्य १) तोला

भीमसेनी सुरमा

इस अनुभूत सुरमे का निरंतर कुछ काल तक सेवन करने से नेत्रो के समस्त रोग, परवाल, रोहा, धुन्ध, ढलका, कटाव, जलन, खुजली शीघ्र आराम होते है। मूल्य ॥) प्रति शीशी

हमार सोल एजेन्ट—आय बधु, द्वारा श्री मोहनलालजी आय, मण्डी सईद खा आगरा।

हमारे एजेन्ट—१-श्री टी० आर० सिह जी कीर्तिकरवाड़ी, दादर, बम्बई। २-श्री पलकधारीजी चतुर्वेदी. आर्यसमाज बस्ती। ३-श्री रत्नाकरजी शास्त्री, इटावा। ४-श्री विश्वप्रकाश एण्ड ब्रादर्स, शिकोहाबाद। ५-श्री रामगोपाल रामदेवजी बारिसालीगज, गया। ६-श्री मदनलाल महावीरप्रसादजी राया, (मथुरा)।

शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित-जगत् प्रसिद्ध

सर्वोत्तम शुद्ध सुगन्धित कीटाणु नाशक

हवन-सामग्री

हमारी वैदिक सस्कृति में यज्ञ का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है 'अग्निहोत्रम् जुहुयात स्वर्गकामः' सुख की कामना करने वाले को प्रतिदिन अग्निहोत्र अवश्य करना चाहिये। ऋषियो का कथन है कि वैज्ञानिक रूप से अग्नि होत्र किया जाय तो किसी भी प्रकार के रोग का गृह मे प्रवेश नही हो सकता, यदि विधि पूर्वक एव विशुद्ध द्रव्यों से हवन-सामग्री का निर्माण किया गया हो। इसलिये आपसे साग्रह निवेदन है कि यदि आप हवन के वास्तविक लाभ का अनुभव करना चाहते हैं तो हमारे द्वारा निर्मित सर्वोत्तम शुद्ध हवन सामग्री का प्रयोग करें। हवन सामग्री का खुदरा मूल्य प्रति सेर १॥) डेढ़ रुपया है। थोक ग्राहकों व आर्यसमाजो को भरपूर कमीशन दिया जाता है। नमूना मुफ्त मँगा कर देखिये। हमारा पता यह है—

आनन्द आयुर्वेदीय फार्मेसी मोगांव (मैनपुरी)

कैसी भी दाद व खुजली के लिये —

दादमार

— ससार की — सर्वश्रेष्ठ मरहम.

आर्यमित्र

में विज्ञापन देना व्यापार की उन्नति का साधन है।

गुरुकुल चाय

जड़ी बूटियो के योग से बनी देशी चाय। सुख व स्वास्थ्यक लिय परिवार म इसका प्रयोग की जये। यह जुकाम, खांसी, नजला ज्वर आदि को दूर करती है तथा पेट साफ रखती है। इससे दूसरी नशीली चायो के आदत न रहेगी। मू० =) नमूना १=) पाव

गुरुकुल कॉगड़ी फार्मेसी (हरद्वार)

आर्य वर की आवश्यकता

आर्य परिवार की एक उच्च कुलीन गृह कार्य में दक्ष शिक्षित २० वर्ष की आयु वाली कन्या के लिये किसी अच्छी सर्विस अथवा व्यापार में लगे हुये जिनकी शिक्षा मैट्रिक से कम न हो तथा आयु २८। २९ के लगभग हो ऐसे आर्य विचारों वाले निरामिषाहारी कुमार वर की आवश्यकता है। जाति बधन नही है

पत्र व्यवहार का पता:—

बाक्स न० ८३ B० आर्यमित्र कार्यालय, आगरा

श्रीमदभगवदगीता

पुरुषार्थबोधिनी टीका

लेखक प० सातवलेकर। इस १००० पृष्ठों के विशाल ग्रन्थ में (१) अर्जुन के विषाद का कारण, (२) विश्वरूप दर्शन का रहस्य, (३) गीतोपदेश के साथ वेदोपदेश की तुलना और (४) गीतोपदेश को व्यवहार में लाने का अनुष्ठान करने की रीति बताई है। किसी अन्य टीका में ये स्पष्टीकरण नही मिलेंगे। गीतोपदेश से राज्य-शासन कैसे सफल हो सकता है, यह इसी टीका में पाठक देखेंगे। मूल्य १५), डाक-व्यय १॥) मूल्य पेशगी म० आ० द्वारा ११॥) भेजिये।

स्वाध्याय-मण्डल, आनन्दाश्रम किला-पारडी, (जि० सूरत)

गीता भाषा पद्यमय

संस्कृत न जानने वालो के लिये परमोपकारी है। इसकी प्रशसा गोस्वामी विन्दुजी, टण्डन जी, सुधान्शुजी, झूंसी के ब्रह्मचारीजी. काका कालेलकरजी इत्यादि ने की है। मूल्य सजिल्द १) हैजा चिकित्सा मू० ।=) पाकेट साइज।

पता—डा० शिवनाथसिह, पो० जयनगर (दरभंगा)

❀ सफेद बाल काला ❀

खिजाब से नही, हमारे आयुर्वेदिक 'केश कल्याण' सुगन्धित तेल से बालों का रुककर सफेद बाल जड़ से काला हो जाता हैं। यह तेल दिमागी ताकत और आखो की रोशनी को बढ़ाता है। जिन्हे विश्वास न होवे दूना मूल्य वापस की शर्त लिखा लें। मूल्य २) बाल अधिक पक गया हो तो ५) का तेल मगाइये।

धन्वन्तरि औषधालय
पो० शेखपुरा (मुंगेर)

हकीम हरसरूप प्रसाद अग्रवाल अलीगढ़ की

असली मीठी

बालजीवन घुट्टी

बच्चो की हर एक बीमारी को दूर करती कमजोर बच्चो को ताकतवर बनाती, जरासी रोजाना चटादेनेसे बच्चे कभी बीमार नही होगे दाँत आसानी से निकल आवेंगे।

— मू० शी० ।/) दर्जन २॥) डा. व्य. अ. —

सब जगह बिकती है नकली घुट्टियों से बचे नए सौदागर नमूना मुफ्त मगावे।

पता. बालजीवन कार्यालय अलीगढ़ स. सी

आर्य्यजगत

सभा की सूचनाएं

कार्यकर्त्ताओं और सहयोगियों को सूचना

सभास्थ उपदेशकों प्रचारकों, अन्तरंग सभासदों, निरीक्षकों तथा मण्डलाधीशों को विदित हो कि सभा का वर्ष ३१ दिसम्बर ह को समाप्त हो रहा है। कृपा कर अपने-अपने हिसाब, आय व्यय लेखा आदि के साथ साथ जनवरी मास के प्रथम सप्ताह तक जमा खर्च करने के लिए भेजने का कष्ट करें।

सभा का वर्ष

१—आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का वर्ष ३१ दिसम्बर १९५१ को समाप्त हो जायगा। समस्त आर्यसमाजों के संचालकों को सूचित किया जाता है कि सभा के वर्ष के साथ-साथ अपना वर्ष भी समाप्त करने की कृपा करें।

२—सभा के उपनियम १४ के अनुसार वर्ष समाप्ति के पश्चात् १५ दिन के भीतर समस्त आर्यसमाजों को अपनी अन्तरंग सभा द्वारा समस्त आर्य सभासदों की निर्वाचन सूचियाँ तैयार कर लेनी चाहिये।

३—सभा के उपनियम स० १५ के अनुसार दो माह के अन्दर समस्त आर्यसमाजों को अपने साधारण अधिवेशन द्वारा वार्षिक निर्वाचन कर लेने चाहिये।

नोट :—वार्षिक निर्वाचन के लिए आर्यसमाज के नियम सं० ६ भाग (५) के अनुसार १५ दिन का विज्ञापन निकालना आवश्यक है।

४—समाज के वार्षिक निर्वाचन के साथ साथ उत्तर प्रदेश य सभा के लिये प्रतिनिधियों का भी निर्वाचन किया जावे।

५—वार्षिक चित्र छपाये जा रहे हैं। शीघ्र भेजे जायगे।

—भृगुदत्त तिवारी
सभा-उपमन्त्री

गुरुकुल-सहायता निधि आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तरप्रदेश

श्रीमान् मन्त्री जी, आर्यसमाज

महोदय, नमस्ते।

निवेदन है कि गुरुकुल विश्वविद्यालय, वृन्दावन की आर्थिक कठिनाई को दूर करने के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश ने अन्तरंग सभा ता० २६। १२। ४७ के नि० स० ४७ के अनुसार प्रान्त की आर्यसमाजों पर गुरुकुल की नियमित सहायतार्थ वार्षिक धन राशि नियत की है। आप की समाज पर वार्षिक नियत किये गये हैं। इस धन को शीघ्र गुरुकुल भेज कर अनुगृहीत करें, सूचना सभा को भी दें। गुरुकुल के लिये धन संग्रह का कार्य प्रारम्भ कर दें।

नोट—गुरुकुल महोत्सव २३ दिसम्बर से प्रारम्भ होकर २६ दिसम्बर, ५१ को समाप्त होगा। सहायता का धन शीघ्रातिशीघ्र भेजने का कष्ट कीजिये।

भवदीय—

मदनमोहन सेठ, सभा प्रधान

धर्मपाल विद्यालंकार, सभा-मन्त्री

गुरुकुल में दीक्षान्त भाषण

माननीय श्री चरणसिंह कृषि मन्त्री उत्तर प्रदेश गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन उत्सव के अवसर पर पदवी दान समारोह के समय माननीय श्री चरणसिंह कृषि मन्त्री उत्तर प्रदेश दीक्षान्त अभिभाषण देंगे। गुरुकुल प्रेमी अधिकाधिक संख्या में पधार कर महोत्सव सफल बनावें।

—द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री
मुख्याधिष्ठाता

गुरुकुल महोत्सव पर पधारिये

गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन का ४७ वाँ वार्षिक महोत्सव ता० २३, २४, २५ २६ दिसम्बर तदनुसार, सोमवार, मंगलवार, व बुद्धवार को होना निश्चित है। इस अवसर के लिये हम आपको सादर निमन्त्रित करते हैं। गुरुकुलोत्सव पर आपको जहाँ बड़े विद्वान सन्यासी महात्माओं के उत्तमोत्तम व्याख्यानों, उपदेशों, प्रवचनों की अध्यात्म सुधा का पान करने को मिलेगा वहाँ आपको ब्रह्मचारियों के शारीरिक व्यायाम तथा अद्भुत बल प्रयोगों का प्रदर्शन भी देखने को मिलेगा। स्वतंत्र भारत के अभ्युदय एवं समुत्थान का सच्चा मार्ग क्या है इस पर पूर्ण प्रकाश मिलेगा। वैदिक संस्कृति के आधार पर जिस प्रकार राष्ट्र निर्माण होना चाहिए तथा स्वतंत्र भारत के नागरिकों का राष्ट्र के प्रति क्या कर्तव्य होना चाहिए इत्यादि महत्व के प्रश्नों पर विमल ज्ञान प्राप्त होगा।

आज स्वदेशी शासन होने पर भी शासकों के मस्तिष्क पर जो आज भी वही विदेशी मानसिक दासता अंकित है जहाँ हम अन्य तत्वों का भारतीयकरण चाहते हैं वहाँ शिक्षा प्रणाली का भारतीयकरण तो सर्व प्रथम आवश्यक है। वर्तमान शिक्षा लता तो विदेश से लाकर यहाँ पर लगाई हुई है जिसका भारतीय संस्कृति तथा परम्पराओं से कोई सम्बन्ध ही नहीं हम विदेशी लता पर तो विदेशी फूल ही लगेंगे उनमें तो विदेशी ही गन्ध होगी। भारतीय गंध उत्पन्न होने की सम्भावना उनमें कैसे हो सकती है। इसलिए शिक्षा पद्धति के भारतीयकरण की परम आवश्यकता है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली को गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में बदल देना ही इसका भारतीयकरण है। आर्यसमाज का यह आन्दोलन आज प्रथम अपने घर से ही आरम्भ करना होगा। प्रथम अपने बच्चों को गुरुकुल शिक्षा प्रणाली से दीक्षित करने का निश्चय कर उन्हे गुरुकुल मे प्रविष्ट कराइये और अपनी सम्पूर्ण शक्ति गुरुकुलों को सर्वाङ्गपूर्ण बनाने मे लगाइये। प्रतिज्ञा कीजिए कि हम आगे से बच्चों को पढ़ावेंगे तो गुरुकुल मे ही पढ़ावेंगे फिर देखिए कि गुरुकुल किस प्रकार सर्व प्रकार से एक आदर्श शिक्षा संस्था बन सकती है। स्मरण रक्खें आपके आदर्शों और सिद्धान्तों की रक्षा गुरुकुल की समुन्नति में ही निहित है।

"उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्यवरान्निबोधत"

विनीत:—

आचार्य बृहस्पति शास्त्री, वेदशिरोमणि एम० ए०
कुलपति
गुरुकुल विश्वविद्यालय, वृन्दावन।

स्नातक मण्डल

गुरुकुल महोत्सव के सुअवसर पर गुरुकुल स्नातक मण्डल का वार्षिक अधिवेशन २५ दिसम्बर को मध्यान्ह १२ बजे से कुल भूमि में होगा। समस्त स्नातक बन्धुओं की उपस्थिति प्रार्थनीय है। २४ दिसम्बर को मध्यान्ह में स्नातक मंडल की अन्तरंग सभा भी होगी।

—स्नातक रमेशचन्द्र शिरोमणि, एम० ए०
प्रधान मन्त्री
स्नातक मण्डल गुरुकुल विश्वविद्यालय, वृन्दावन

छुट्टी की सूचना

२३ दिसम्बर से २६ दिसम्बर तक आर्यमित्र कार्यालय गुरुकुल वृन्दावन के महोत्सव में रहेगा। वहाँ ग्राहक अपना आगामी वर्ष का रुपया जमा करादें, व विज्ञापनदाता अपने विज्ञापन रिजर्व करालें। २७ दिसम्बर का आर्यमित्र बंद रहेगा। अब आगामी अंक ३ जनवरी सन् १९५२ को निकलेगा। कृपया पाठक व एजेन्ट नोट कर लें।

विनीत—व्यवस्थापक आर्यमित्र, आगरा

आर्य ॐ मित्र

लेख रश्मि दिवहृत्तमो लसत् काव्यकोकनद जागरप्रदः ।
अज्ञता घन विभावरी हरः, "आर्यमित्र" उदियर्ति सन्मुदे ॥

आगरा, पौष कृष्णा ७ संवत् २००८ वि०, गुरुवार, ता० २० दिसम्बर १९५१
दयानन्दाब्द १२७, सृष्टि-संवत् १९७२९४९०५१

श्रद्धानन्द जयन्ती

आज से पच्चीस वर्ष पूर्व २३ दिसम्बर १९२६ को श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्दजी का अपूर्व बलिदान हुआ। आर्यसमाज के इतिहास में अमर हुतात्मा श्रद्धानन्दजी ने एक अभूतपूर्व क्रान्ति की थी। आर्यसमाज का विगत पच्चीस वर्ष का एक एक क्षण उनके अभाव को अनुभव करता रहा है स्वामीजी के बाद से आर्यसमाज नेता विहीन हो आज तक अपना मार्ग खोज रहा है। भारत की सामाजिक राजनैतिक जागृति के अग्रदूत के रूप में स्वामी श्रद्धानन्दजी ने अपना जीवन समर्पण कर जिस भव्य भावना का प्रसार किया था वह भारतीय इतिहास के पृष्ठों में स्वर्णाङ्कित रहेगी। शिक्षा क्षेत्र में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के प्रणेता के रूप में गुरुकुल विश्व विद्यालय कांगड़ी की स्थापना स्वामीजी का सबसे महत्वपूर्ण एवं क्रान्तिकारी कार्य था। उनका लगाया हुआ भारतीय शिक्षा का यह पौधा आज राष्ट्रीय जीवन में अपने शिक्षित शीतल पत्र पुष्पों से सुखद छाया और शान्ति का प्रवर्तक बना हुआ है। स्वामीजी की क्रान्तिकारी आत्मा मानवमात्र के अभ्युत्थान की पवित्र भावना से ओत प्रोत थी, उनका प्रत्येक कार्य गरीबों की सहायता और अन्याय के प्रतिकार के लिये हुआ भारत के प्रत्येक कोने में चाहे वह पंजाब हो या मद्रास जहाँ से भी अकाल, उत्पीडन और अन्याय का समाचार मिला वे अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ वहाँ पहुँचे और माननीय और दैवी अत्याचारों पर विजय कर लौटे। ऋषि दयानन्द के सच्चे अनुयायी के रूप में उन्हें स्वदेश में विदेशी राज्य कभी न भाया और अवसर पड़ने पर छाती खोल कर उन्होंने वृटिश संगीनों से मोर्चा लिया, वे सदा सत्य के समर्थक रहे जहाँ भी उन्हें असत्याचरण और पक्षपात की गन्ध आई चाहे वह कांग्रेस हो या हिन्दू महासभा, साधु मण्डल हो या अन्य कोई संस्था सबको उन्होंने निःसंकोच नमस्कार कर दिया। सामाजिक और राजनैतिक जगत् में क्रान्तिकारी विचारधारा के साथ साथ उन्होंने धार्मिक क्षेत्र में भी व्यापक कार्य किया धर्म का द्वार मानवमात्र के लिये खुला है, धर्म की चर्चा स्वस्थ और पक्षपात रहित होकर की जानी चाहिये, धार्मिक चर्चा में असहिष्णुता नहीं आनी चाहिये, अपने इस उदार दृष्टिकोण के द्वारा उन्होंने भारतीय मतमतान्तरों, इस्लाम और ईसाई सभी धर्मों का गहन पर्यालोडन किया और सबके साथ समान मैत्री के भाव रखते हुए हितभावना से खण्डन मण्डन किया। भारतवर्ष में वे ही प्रथम व्यक्ति थे जिन्हें मुसलमानों की शाही मस्जिद में भाषण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। स्वामीजी ने शुद्धि आन्दोलन का नेतृत्व कर अभारतीय धर्मों में प्रविष्ट भारतीयों को अपना कर हिन्दू जाति में एक नया जीवन डाल दिया। आर्यसमाज की इस विभूति ने आर्यसमाज की उन्नति में महर्षि दयानन्द के पश्चात् जो योग दिया वह कोई न दे सका और न दे रहा है। वास्तविक बात तो यह है कि स्वामीजी के बाद आर्यसमाज में उनकी श्रेणी का कोई व्यक्ति उत्पन्न ही नहीं हुआ। क्या उस महान् व्यक्ति के उपकारों को हम कभी भूल सकते हैं। स्वामीजी का बलिदान हुए पच्चीस वर्ष हो चुके हैं उनका भौतिक शरीर इस संसार में फिर कभी नहीं आ सकता परन्तु उनका आत्मिक संदेश सदैव हमारा पथ प्रदर्शन करता रहेगा। स्वामीजी के शिष्य और अनुयायी होने का गौरव तथा अभिमान रखने वाले हम आर्यों का कर्तव्य है कि अपने नेता की बलिदान जयन्ती के अवसर पर हम चिन्तन करें कि हम इस पुण्यात्मा के कल्याण मार्ग का कहाँ तक अनुमान कर सके हैं और हमें अब क्या करना है। यदि हम स्वामीजी के प्रति थोड़ी भी श्रद्धा और निष्ठा रखते हैं तो हमें आर्यसमाज को प्रगति देने के लिये दृढ़ प्रतिज्ञा लेनी चाहिये। स्वामीजी का बलिदान दिवस हमारी ठण्डी नसों में उष्ण रक्त के प्रवाह का सन्देश लेकर आया है क्या हमारे शिथिल शरीर में क्रान्ति की उष्ण तरंगे हिलोरें न लेंगी? उठो आर्यजनो! उठो स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज का बलिदान दिवस आज हमारे लिये क्रान्ति का दिव्य सन्देश लेकर आया है।

आर्यसमाज का भावी कार्य-क्रम

आर्यमित्र की इन पंक्तियों में आर्यसमाज के भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में हम समय समय पर अपने विचार प्रकट करते रहे हैं और आज भी इस बात की आवश्यकता अनुभव करते हैं कि हमें समय के अनुसार अपना कार्यक्रम बनाकर आगे बढ़ना चाहिये। आज आर्यसमाज की शक्ति रुद्ध हुई पड़ी है, आज हमारी गति प्रगति में न कोई आकर्षण है न कोई व्यावहारिकता, हमारी स्थिति आज उस पानी जैसी है जो अधिक परिमाण में होने पर भी बहाव रुक जाने के कारण गदला हो जाता है। आज हमारी सारी शक्तियाँ अपने आन्तरिक संघर्षों में ही नष्ट हो रही हैं और विश्व में सुख शान्ति के प्रसार का हमारा उच्चतम आदर्श धूमिल हो गया है। क्या हम समय रहते अपनी शक्ति को न पहचानेंगे और अपने प्रारम्भिक काल की उदात्त और अदम्य भावना के साथ आगे कदम उठाने का साहस न करेंगे? हमारे सिद्धान्त और आदर्श अच्छे हैं इतना कहने से ही अब काम नहीं चलेगा हमें शीघ्र ही क्रान्ति का शंख निनाद करना होगा तभी कुछ कार्य हो सकेगा। प्रस्तुत अङ्क में आर्य [illegible] प्रसिद्ध विद्वान् श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति ने आर्य नेताओं का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया है हम उनके विचारों से पूर्ण सहमत हैं और समर्थन करते हैं कि आर्यसमाज के विशाल संगठन की शक्ति का उपयोग करने के लिये शीघ्र ही एक उपयोगी और आकर्षक कार्यक्रम की घोषणा की जानी चाहिये।

कन्या गुरुकुल सासनी

आर्यसमाज ने जहाँ बालकों के लिये भारतीय और संस्कार प्रधान शिक्षा देने वाले गुरुकुल और कालिज खोले वहाँ उसका ध्यान राष्ट्र की मातृशक्ति के आदर्श निर्माण की ओर भी बराबर बना रहा और उसके कार्यकर्ताओं ने स्थान स्थान पर कन्या पाठशालाएं और कई कन्या गुरुकुल स्थापित किये। उत्तर प्रदेश में कन्या गुरुकुल सासनी इसी प्रकार की संस्था है जो गत ४२ वर्ष से महिला समाज के नव निर्माण के कार्य में संलग्न है। भारतीय जीवन के आदर्शों और संस्कारों का कन्याओं में समुचित विकास ही इस संस्था का मुख्य ध्येय रहा है। आगामी ३० ३१ दिसम्बर तथा १ व [illegible] जनवरी ५२ को कन्या गुरुकुल का वार्षिकोत्सव होने जा रहा है। प्रत्येक भारतीयता प्रेमी व्यक्ति के लिये यह संस्था एक आकर्षण रखती है अतः अधिक से अधिक संख्या में गुरुकुल पहुँच कर जनता को उत्सव सफल बनाना चाहिये। कन्याओं को निःशुल्क शिक्षा प्रदान करने वाली यह संस्था जनता की आर्थिक सहायता की भी अधिकारी है। हम इस संस्था की उन्नति चाहते हैं और आशा करते हैं जनता अपनी इस संस्था को अधिकाधिक अपनायेगी।

अध्यात्म धारा

विश्व प्रेम

श्री बाबू पूर्णचन्द्र एडवोकेट

जो व्यक्ति इस संसार में रहने वाले प्रत्येक प्राणी की निष्पक्ष और निस्वार्थ भाव से सब प्रकार की उन्नतियों में सहायक होते हैं वे सम्पूर्ण संसार को धारण करने वाले यज्ञ 'विश्वतोधार यज्ञ' के वास्तविक पुरोहित हैं। उनके परोपकार और उनकी जन मंगल भावना से उनके हृदयों में जिस पवित्र और स्थायी अमृतानन्द का उद्भव एवं विकास होता है उसके सामने संसार की सब वस्तुएं नगण्य हैं। उनकी ये उदात्त भावनाएं उन्हें पृथ्वी और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में अजर अमर बना देती हैं।

आज सम्पूर्ण विश्व छोटे छोटे राष्ट्र खण्डों में विभक्त है, प्रत्येक राष्ट्र खण्ड के निवासी अपने अपने राष्ट्र-निर्माण में संलग्न हैं फलतः आज के विश्व में राष्ट्रवाद का बोल बाला है। प्रत्येक देश अपने देश की उन्नति को लक्ष्य में रख दूसरों से आगे बढ़ने के लिये सप्रयत्न है, इस उन्नति की दौड़ में प्रत्येक को अपना ही ध्यान है दूसरे देश और वहां की जनता पर उसका क्या प्रभाव पड़ेगा इसका किसी को लेश मात्र भी ध्यान नहीं है। आज सम्पूर्ण उन्नतियों का लक्ष्य राष्ट्रवाद है। इस राष्ट्रवाद की आपा धापी में आज विश्व बड़े बड़े राष्ट्रों की विषाक्त दंष्ट्राओं में करुण क्रन्दन कर रहा है, छोटे-छोटे राष्ट्र किसी न किसी बड़े राष्ट्र के पिछलग्गू बन अपना नाम शेष रख रहे हैं, उनका जीवन सूत्र उनके स्वामी बड़े राष्ट्रों द्वारा संचालित है। राष्ट्रवाद की इस प्रबल आंधी ने विश्व मानवता को कलह और विषाद में डाल दिया है।

आज विज्ञान ने भौगोलिक सीमाओं को तार रेडियो, टेलीवीजन, वायुयान आदि अत्युत्तम साधनों द्वारा एक बनाने का प्रयत्न किया है परन्तु यह एकता पार्थिव एकता है, विज्ञान मानसिक एकता उत्पन्न करने में सफल नहीं हो सका, उसके पास हार्दिक विश्व बन्धुत्व की एकता उत्पन्न करने को कोई साधन नहीं है।

वास्तव में आज के विश्व में देश प्रेम की भावना से भी ऊंची विश्वप्रेम की भावना का विकास होना चाहिये। वर्तमान युग में महर्षि दयानन्द ने विश्वप्रेम की स्थापना और विस्तार के लिये 'आर्य समाज' की स्थापना की थी, उन्होंने संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य बताया, इसी प्रकार सत्यार्थप्रकाश के षष्ठ समुल्लास में सम्पूर्ण विश्व को एक सूत्र में बांधने की योजना का उल्लेख भी किया उन्होंने अति प्राचीन व्यवस्था को आज की भाषा में हमारे सामने रखने का प्रयत्न किया है, उन्होंने एक ग्राम से लेकर देश तक और इसी प्रकार सम्पूर्ण विश्व को एक सूत्र में बांधने का उपाय बताया है। ऋषि का यह दृढ़ विश्वास था कि किसी राष्ट्र की उन्नति तब तक अधूरी है जब तक वह अपने पड़ौसी तथा विश्व के अन्य राष्ट्रों की उन्नति में सहायक नहीं बनता, इसीलिये उन्होंने आर्यसमाज को भारत ही नहीं सम्पूर्ण संसार की उन्नति के लिये स्थापित किया।

यदि विश्व मानवता वर्तमान संकटों से पार उतरना चाहती है और उसे अभीष्ट नहीं कि दो भयंकर युद्धों की भांति तीसरा विनाशकारी युद्ध विश्व में हो और सर्वत्र त्राहि त्राहि मच जाय तो विश्व में वैदिक आदर्शों का अधिकाधिक प्रचार होना चाहिये। आर्यसमाज पर इस प्रचार का मुख्य दायित्व है।

वेद ही हमें ऐसा सन्देश देते हैं कि संसार में अनेकता रहते हुए भी वास्तविक एकता सम्भव हो सकती है, सब स्वतन्त्र रहते हुए भी एक सूत्र में बंधे रह सकेंगे। भारतीय मनीषियों ने वेद के रहस्य को हृदयङ्गम कर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का आदर्श उपस्थित किया था आज उसी आदर्श की पुनः स्थापना की आवश्यकता है।

— — — —

चयनिका

[मधुप]

सभ्यता की वाणी

भारत की वाणी सभ्यता की वाणी है, भारत सुदृढ़ता का प्रतीक है। चाहे संयुक्त राष्ट्र संघ में हमारे उचित कार्य के सम्बन्ध में गलत धारणाएं हों परन्तु यह प्रसन्नता का विषय है कि पाश्चात्य देशों के प्रमुख कूटनीतिज्ञ भारतीय विदेश नीति की प्रशंसा करते हैं और उसको सम्मान की दृष्टि से देखते हैं।

—सर्वपल्ली डा० राधाकृष्णन

विश्व की आशा

आज विश्व भारत की ओर देख रहा है। विश्व देख रहा है कि जिस देश ने अहिंसात्मक तरीके से आजादी ली वह अपनी अन्य समस्याएं किस ढंग से हल करता है। वह हमारे काले बाजार की ओर नहीं देखता वह तो विश्व की समस्याओं के समाधान में भारत किस मार्ग का अवलम्बन करता है इस पर उसका अधिक ध्यान है। यदि हमने शान्ति के तरीके से समाज रचना बदल दी तो भारत का सिर बहुत ऊंचा हो जायगा। अगर हम गांधी जी के बताये अहिंसात्मक प्रवाह को फैला सके तो हम सच्चे वश्व विजयी कहलायेंगे।

—श्री आचार्य विनोबा भावे

इतिहास की धारा

आज संसार में जो कुछ हो रहा है वह हजारों लाखों और करोड़ों कल की हरकतों का ही परिणाम है और जो आने वाले कल होंगे वह भी इसी प्रकार हजारों लाखों करोड़ों आज के ही परिणाम होंगे। इसलिये हम आज प्रयत्न भी करें तो भी कल के परिणाम से अपने को बिलकुल नहीं बचा सकते और न आने वाले कल को आज की कार्यवाइयों के परिणाम से बचा सकते हैं। इस अवस्था में भी मनुष्य ने अपने प्रयत्नों और साहस से इतिहास का मार्ग बदलने में सफलता प्राप्त की है। मनुष्य अपने पुरुषार्थ से इतिहास का मार्ग बदलने में उसी प्रकार सफल हुआ जिस प्रकार बहती हुई धारा के सामने चट्टान की रुकावट पड़ जाने से धारा दूसरी ओर रुख करके बहने लगती है। आवश्यकता इस बात की है कि हम साहस दृढ़ता और योग्यता से पुरुषार्थ में संलग्न रहें।

—राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद

सौन्दर्य-भावना

विश्व से सौन्दर्य की वास्तविक अनुभूति पूर्णतया नष्ट होती जा रही है। लोग कृत्रिमता को अधिकाधिक अपनाते जा रहे हैं। जनता में सौन्दर्यानुभूति का यह अभाव इस युग का लक्षण है, अथवा कुछ और परन्तु इतनी बात तो है ही कि लोग अधिकाधिक कृत्रिम होते जा रहे हैं और कभी कभी तो इसमें वह गर्व भी अनुभव करते हैं। इसलिये यह वाञ्छनीय हो गया है कि भूत और वर्तमान की सुन्दर वस्तुओं के संग्रह की भावना बढ़ायी जाय, जिससे लोगों को अपने जीवन में सौन्दर्य के प्रति रुचि तथा उसके मूल्यांकन का कम से कम कोई मापदण्ड मिल सके।

—श्री प० नेहरू

जीवन में सौन्दर्य और कला

रोटी और कपड़े की आवश्यकता पूर्ति हो जाने पर यह आवश्यक है कि हम अपने घरों तथा अपने जीवन में सौन्दर्य और कला को स्थान दें। वर्तमान युग की असाधारण कठिनाइयों के होते हुए भी भारत ने अपनी प्राचीन कला के उच्चस्तर को अब तक बनाये रक्खा है। आज हमें उसे व्यापक तथा और भी अधिक उपयोगी बनाने पर जोर देना होगा। —श्री श्रीप्रकाश

कांग्रेस की विजय

मैं यह नहीं चाहता कि कांग्रेस चुनाव निर्विरोध जीते, जिससे उसके दिमाग फिर जांय, कांग्रेस के अन्दर आज आमूल चूल परिवर्तन और मरम्मत की आवश्यकता है। कांग्रेस उस व्याधि से पीड़ित है जो अक्सर सफलता मिलने के बाद आ जाती है। जो चीज एक व्यक्ति के लिये खतरनाक है वह एक राष्ट्र के लिये भी निश्चय ही खतरनाक है।

—श्री प० जवाहरलाल नेहरू

जीवन-ज्योति

श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द

श्री जनार्दन विद्यालंकार

आर्य समाज ने भारतीय उत्थान के लिये उच्च श्रेणी के जिन व्यक्तियों का निर्माण किया उनमें अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्दजी का नाम सर्व प्रथम स्मरणीय रहेगा। ऋषि दयानन्द के सच्चे अनुयायी के रूप में उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन देश जाति और धर्म की उन्नति के लिये अर्पण कर दिया, उन्होंने भारतीय अभ्युत्थान की प्रत्येक दिशा में सक्रिय एवं महत्व पूर्ण सहयोग दिया और राष्ट्र का सच्चा पथ प्रदर्शन किया। शिक्षा-जगत् में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की पुनः स्थापना, सामाजिक जीवन में अछूतोद्धार, जात-पांत के बन्धन को नष्ट करना विधर्मी बने भाइयों को पुनः अपने में मिलाना और राजनैतिक क्षेत्र में कांग्रेस संस्था के निर्भय और दृढ़ निश्चयी नेता के रूप में अंग्रेजों का विरोध करना उनके जीवन के अनुकरणीय कार्य हैं, आज देश की राजनीति में जो तूफान आया हुआ है ऐसे समय में देश को स्वामीजी जैसे महान्, गम्भीर, दृढ़ निश्चयी नेता की आवश्यकता है। आर्य समाज की वाटिका भी अपने आदरणीय नेता के अभाव में आज सूखती जा रही है, स्वामीजी जैसी ही कोई अजेय शक्ति उसका पुनरुद्धार करने की क्षमता रखती है।

श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्दजी का जन्म सम्वत् १९१३ वि० में जालन्धर (पंजाब) के तलवन ग्राम में हुआ, और नाम मुन्शीराम रक्खा गया। स्वामीजी के पिता श्री नानकचन्दजी यू० पी० के पुलिस विभाग में उच्च कर्मचारी थे, नौकरी के प्रसंग में उन्हें बदायूँ, बनारस बाँदा, मिर्जापुर, बलिया, बरेली आदि स्थानों में कार्य करना पड़ा। सम्वत् १९२३ में यज्ञोपवीत संस्कार के बाद बालक मुन्शीराम की अनियमित पढ़ाई आरम्भ हुई, पिता के स्थान परिवर्तन के साथ-साथ मुन्शीराम के स्कूल भी बदलते रहे, बलिया में उत्तम योग्यता के कारण उन्हें पारितोषक भी मिला। और वहीं उन्होंने कुश्ती लड़ने और गतका लाठी आदि की भी शिक्षा प्राप्त की। सम्वत् १९३३ में बनारस में मैट्रिक उत्तीर्ण कर सन १९३५ में एफ० ए० इलाहाबाद के म्योर सैंट्रिल कालिज से दी, परीक्षा के समय ही अस्वस्थ हो जाने के कारण पूरी परीक्षा न दे सके और बाद मे इस परीक्षा देने का सौभाग्य उन्हें प्राप्त ही न हो सका। इसी बीच सम्वत् १९३४ मे मुन्शीराम जी का विवाह जालन्धर के श्री राय शालिग्रामजी की पुत्री शिव देवी के साथ सम्पन्न हुआ

मुन्शीराम के जीवन में बलिया, मिर्जापुर के अपव्ययी जीवन ने विलासिता और काशी मथुरा के मन्दिरों के पाखण्ड व्यवहार ने नास्तिकता के भाव उत्पन्न कर दिये, इस प्रकार एक उदीयमान युवक का जीवन एक दूसरी ही ओर बहने लगा था। और एक बार तो ईसाइयत की ओर भी वह झुक गया था, परन्तु पिता के आस्तिकतापूर्ण जीवन और शिवदेवी के अनुपम पतिप्रेम ने जीवन प्रवाह को उच्छृंखल होने से बचा लिया। इन्हीं दिनों सम्वत् १९३६ में महर्षि दयानन्द बरेली पधारे, प्रबन्ध व्यवस्था का भार होने के कारण पिता को महर्षि का भाषण सुनने का अवसर मिला और वे अगले दिन इस आशा से कि शायद महर्षि के प्रवचन से नास्तिक पुत्र प्रभावित हो सके, युवक मुन्शीराम को भी साथ ले गये। महर्षि का भाषण १० मिनट सुनते ही युवक प्रभावित हो उठा और उसके जीवन में जादू की तरह परिवर्तन हो गया। और बाद में सत्सग कर युवक ने महर्षि से अपनी शंकाओं का समाधान किया। इस सत्संग ने युवक को नास्तिक से आस्तिक बना दिया। इस घटना का संस्मरण लिखते हुए युवक ने बाद में निम्न शब्द लिखे, "ध्यान परमात्मा के निज नाम 'ओ३म्' पर था, मैं पहले दिन के आल्हाद को नहीं भूल सकता, मेरे नास्तिक होने पर भी मुझे आत्मिक आल्हाद में निमग्न कर देना ऋषि आत्मा का ही काम था।'

पिता अपने पुत्र में आस्तिक भावना का उदय होते देख बहुत प्रसन्न हुए। अब वे अपने पुत्र की सर्विस के लिये प्रयत्नशील थे और उन्होंने उसे तहसीलदार बनवा दिया पर स्वाभिमानी युवक अंग्रेजी दासता के इस पंक में अधिक फंसा न रहा, और बाद में जालन्धर और लाहौर जाकर कानून का अध्ययन आरम्भ कर दिया क्योंकि युवक के हृदय में लाहौर के चीफ कोर्ट का जज बनने की महत्वाकांक्षा समा गयी थी। वकालत पास करने बाद जालन्धर में प्रैक्टिस आरम्भ कर दी और वह खूब चमकी। सांसारिक कार्यों को करते हुए भी युवक के हृदय में ज्ञान की पिपासा निरन्तर बनी रही, लाहौर में एक दिन ब्रह्म समाज के सत्संग में पहुचे और वहाँ से प्राप्त विचार धारा का अध्ययन करने के लिये ब्रह्म समाज का सम्पूर्ण उपलब्ध साहित्य खरीद कर पढ़ डाला। कर्म फल के सम्बन्ध में उन्हें कुछ शंका हुई और ब्रह्म समाज के साहित्य से उनका समाधान न हो सका, सहसा उनका ध्यान महर्षि के सत्यार्थ-प्रकाश की ओर गया। उसी समय आर्य समाज बच्छोवाली गये और सत्यार्थ प्रकाश लाये और सोते समय भूमिका और प्रथम समुल्लास पढ़ डाला। आठवे समुल्लास के पुनर्जन्म के सिद्धान्त ने फैसला कर दिया और मुन्शीरामजी आर्य समाज के सभासद बन गये।

इस पृष्ठ भूमि के बाद मुन्शीरामजी ने आर्य समाज के जीवन में क्रान्ति उत्पन्न कर दी। अनेकों शास्त्रार्थ किये, स्त्रियों की शिक्षा के लिये लाला देवराजजी के साथ जालन्धर कन्या महा विद्यालय, श्री गुरुदत्त विद्यार्थी के साथ डी० ए० वी० कालिज लाहौर और बाद में वैदिक भावना और संस्कृत के लिये गुरुकुल विश्व-विद्यालय कांगड़ी की स्थापना करना उन जैसे नर पुंगव का ही कार्य था।

आर्य समाज के क्रान्तिकारी प्रोग्राम से जब अंग्रेजी शासन परेशान था तब आप ही उसके अधिनायक बने और नाभा पटियाला, धौलपुर, जोधपुर आदि में आर्य समाज को विजयी बनाया। 'आर्य समाज एण्ड इट्स डिट्रैक्टर्स' पुस्तक भी आपने इसी प्रसंग में लिखी। आर्य समाज के केन्द्रीय संघटन के लिये सार्वदेशिक सभा की स्थापना में भी आप अग्रणी रहे और उसके प्रथम प्रधान बने।

श्रद्धाञ्जलियाँ

'स्वामी श्रद्धानन्द जी एक सुधारक थे। वे कर्मवीर थे, वाक्शूर नहीं। उनका जीवित-जाग्रत विश्वास था। इसके लिये उन्होंने अनेक कष्ट उठाये थे। वे वीरता और साहस के मूर्त रूप थे। वे संकट आने पर कभी घबराते नहीं थे, एक वीर सैनिक थे। वीर सैनिक रोग शय्या पर नहीं किन्तु रणाङ्गण में मरना पसन्द करता है। —महात्मा गांधी

"श्रद्धानन्द जी की भारत को देन उनकी सत्य में अगाध श्रद्धा है। सत्य ही जीवन था और जीवन ही सत्य था। उनकी मृत्यु उनके निर्भीक, अनथक प्रयत्नों के अमर चित्रों को आलोकित करती हुई एकप्रकाश-किरण की तरह हमारे सामने आती है'

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

"मैं स्वामी श्रद्धानन्द जी की पवित्र स्मृति में सादर श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूँ और आशा करता हूं कि देश उनके उदाहरण को सामने रख कर उनके आदर्श जीवन से प्रेरणा लेगा।"

श्रद्धानन्द जी का नाम याद करके बहादुरी, हिम्मत और त्याग की तसवीर सामने आ जाती है और इस तसवीर को देखकर कुछ अपनी भी हिम्मत बढ़ जाती है। —जवाहरलाल नेहरू

समय की पुकार

आर्यसमाज का भावी कार्यक्रम

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पत

प्रतिदिन अगणित व्यक्ति उत्पन्न होते और मरते हैं, उनका जीवन स्वरूप होता है और मरने के पश्चात् उन्हें कोई याद भी नहीं करता। शरीरी के रूप में ही या यश के रूप में, उन्हीं की सत्ता स्थिर होती है, जो संसार के लिये कुछ उपयोगी सिद्ध होते हैं। जैसे व्यक्ति वैसेही समष्टि उसी समाज या संस्था का जीवन चिरस्थायी होता है जो मनुष्य जाति की किसी न्यूनता को पूर्ण करे, तथा जो संसार के लिये किसी रूप में उपयुक्त हो। मनुष्यों के लिये जो संस्थायें बनाई जाती हैं, वह यदि उनका हित साधन न कर सकें, तब चाहे वह कितनी ही विशाल और शक्ति सम्पन्न क्यों न हो, क्षीण होकर धीरे-धीरे नष्ट हो जाती हैं।

महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना भी एक विशेष लक्ष्य को सामने रख कर की थी। जिस समय आर्यसमाज रूपी भवन की नींव रखी गई, उस समय देश को उसकी आवश्यकता थी, धार्मिक कुसंस्कारों और सामाजिक कुरीतियों के बोझ से जाति का अंग-अंग दबा हुआ था। आर्यसमाज सुधार-अग्रदूत बन गया। उसने देश की एक आवश्यकता को पूर्ण कर दिया। इसी कारण वह थोड़े ही समय में लोकप्रिय हो गया, और शक्तिशाली बन गया।

तब से अब तक की दशा में कई परिवर्तन हुए। महर्षि दयानन्द तथा उस समय के अन्य सुधारकों ने जागृति की जो ज्योति जगाई थी वह अनुकूल परिस्थितियों की हवा के झोंकों से फैलती गई। साथ ही देश की राजनीति में भी ऐसे बहुत से काम आगये जिन का आर्यसमाज द्वारा प्रचार होता था। महात्मा गांधी के प्रभाव से राजनीति में थोड़ी बहुत आध्यात्मिकता का प्रवेश हो जाने से बहुत सी धार्मिक चर्चा अन्यथा सिद्ध हो गई, और जो कुछ बची थी, वह राजनैतिक आन्दोलन की आंधी में बह गई, या तितर बितर हो गई। इस सारी प्रक्रिया का अन्त १५ अगस्त १६४७ के दिन हुआ जब अंग्रेज भारत से विदा हो गये, और देश में देशवासियों का अपना राज्य स्थापित हो गया।

उसके पश्चात् देश के सामने एक नई परिस्थिति आ गई। आंधी रुक गई, जिससे देश की सब संस्थाओं को अपने बिखरे हुये अंशों को समेटने और भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में विचार करने का अवसर मिल गया। कुछ संस्थाओं ने इस अमूल्य अवसर से लाभ उठाकर नयी भावना और नये ढंग से काम को आरम्भ कर दिया है, और उसमें उन्होंने बहुत सी सफलता भी प्राप्त की है। आर्यसमाज के सामने भी इस समय यह प्रश्न है कि देश की नई राजनैतिक परिस्थिति को दृष्टि में रख कर भावी कार्यक्रम की कैसी योजना बनाई जाये। नई परिस्थिति में जो नई बातें आई हैं, वह निम्नलिखित हैं।

१—विदेशी राज्य के स्थान पर स्वकीय सरकार की स्थापना हो गई है, जिस से राजा और प्रजा का वह शाश्वतिक विरोध जो राजनैतिक आन्दोलन को धर्म के रूप में परिणत कर रहा था, लुप्त हो गया है।

२—वर्तमान राज्य आर्यसमाज के सुधार अथवा प्रचार के कार्य में किसी प्रकार की बाधा नहीं डालता, प्रत्युत समाज की संस्थाओं की सहायता देता है।

३—एक बड़ा परिवर्तन यह आ गया है कि ४ वर्ष के आत्मीय शासन ने देशवासियों को यह अनुभव करा दिया है कि नैतिक दृष्टि से दृढ़ और ऊँचे चरित्र वाले नागरिकों के बिना राज्य का यन्त्र भली प्रकार नहीं चल सकता। सच्चरित्र और सच्चा जीवन रखने वाले लोगों का अभाव जैसा आज खटक रहा है, इससे पूर्व कभी नहीं खटका था।

४—अपनी भाषा, और अपने भावों का प्रचार बढ़ने के कारण भारत वासियों में भारतीय संस्कृति का मान बढ़ गया है,

५—देश के स्वतन्त्र हो जाने से विदेशों में भारतीय प्रचारकों द्वारा भारतीय विचारों का प्रचार सुगम हो गया है। यह स्वयं सिद्ध है कि बाह्य संसार में दास की अपेक्षा स्वतन्त्र उपदेशक का, और दासों की संस्कृति की अपेक्षा स्वतन्त्रों की संस्कृति का अधिक मान होता है।

इन सब परिवर्तनों के कारण देश के वातावरण में ऐसी नई परिस्थित पैदा हो गई है कि प्रत्येक संस्था को चाहे वह राजनैतिक हो या सामाजिक धार्मिक हो या शिक्षा सम्बन्धी, अपनी कार्य नीति के नव निर्माण पर विचार करना ही चाहिये। वस्तुओं के मूल्य बदल गये हैं। उन्हें नापने का मापदण्ड नया हो गया है। कई चीजें जो पहले विष थीं अब अमृत हो गई हैं। दृष्टान्त के लिये स्वतन्त्र शिक्षणालयों को लीजिये, विदेशी राज्य के समय में एक स्वतन्त्र राष्ट्रिय शिक्षणालय के लिये सरकार से ग्रांट लेना बुरा था, परन्तु राष्ट्रिय शिक्षणालयों का यह अभिमत अधिकार हो गया है कि वह राज्य से आर्थिक सहायता प्राप्त करे। परिस्थितियों के परिवर्तन से गुण अवगुण नापने के मानदण्ड के बदलने का यह एक उज्ज्वल दृष्टांत है।

यह एक अत्यन्त गम्भीरता से विचार करने का विषय है कि क्या आर्यसमाज के कार्य क्रम में अवस्थाओं के परिवर्तन से कोई भेद नहीं आना चाहिये औषधि वही उपयुक्त समझी जाती है जो रोगी के रोग का इलाज कर सके, 'तदेव भेषजम् यदारोग्याय कल्पते' अच्छा वैद्य वह है कि जो समय-समय पर रोगी के शरीर की परीक्षा करके यह देखता रहे कि उसके रोग की क्या दशा है, और उसके उपचार में परिवर्तन आना चाहिये। आर्य समाज का लक्ष्य भी मनुष्य समाज के मानसिक तथा आत्मिक रोगों का इलाज करना है। यदि हम चाहते हैं कि आर्य समाज आत्म-चिकित्सा के कार्य को भली प्रकार करता रहे तो आवश्यक है कि समय-समय पर सामाजिक वातावरण की परीक्षा होती रहे, जैसे छः ऋतुओं में या बारह महीनों में एक सा भोजन पथ्य नहीं होता, उसी प्रकार सब समयों में एक ही सा मानसिक भोजन भी हितकर नहीं हो सकता।

इन कारणों से मेरा निवेदन है कि आर्य समाज के विचारकों को मिलकर गम्भीरता से सारी परिस्थिति का पर्यवेक्षण करके उसके आधार पर भावी कार्यक्रम बनाना चाहिये। मैंने इसी उद्देश्य से सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा में उपस्थित किये जाने के लिये निम्नलिखित प्रस्ताव भेजा है

"आर्यसमाज के कार्य में चेतना उत्पन्न करने, उसके भावी कार्यक्रम की निश्चित् योजना बनाने तथा मेरठ आर्य सम्मेलन के प्रस्तावों को कार्यान्वित करने के उपायों पर विचार करने के लिये सार्वदेशिक सभा का एक विशेष अधिवेशन शिवरात्रि के अवसर पर किया जावे"।

आशा है, अन्तरंग सभा इस प्रस्ताव को स्वीकार करके महर्षि बोधोत्सव के अवसर पर आर्यसमाज के जीवन में नई स्फूर्ति उत्पन्न करने का श्रेय प्राप्त करेगी।

——

१२ अप्रैल १६१७ को मुन्शीरामजी ने सन्यास ग्रहण किया और श्रद्धानन्द नाम रक्खा। ७ मार्च १६१६ को स्वामीजी ने राजनीति में प्रवेश किया और ३० मार्च को दिल्ली में घण्टाघर पर गुरखे सिपाहियों की किर्चों के सामने छाती खोलकर खड़े हुए और ४ अप्रैल को शाही मस्जिद के मिम्बर से वेद मन्त्रों के साथ भाषण दिया। अमृतसर कांग्रेस के स्वागताध्यक्ष बनाये गये। भागलपुर में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति भी चुने गये १६२२ में जेल भी गये। स्वामीजी ने सद्धर्म प्रचारक, शुद्धि समाचार आदि पत्रों का सम्पादन किया और अर्जुन व तेज अखबारों को जन्म दिया।

आज से २५ वर्ष पूर्व २३ दिसम्बर १६२६ ई० को स्वामीजी के रुग्ण शरीर पर गोलियाँ चला कर हत्यारे अब्दुल रशीद ने हमारे आदर्श नेता को शहीद बना दिया और वह कल्याण मार्ग का पथिक हमें सच्चा मार्ग दिखा हमसे विदा ले गया।

शहीदों की चिताओं पर
जुड़ेंगे हर बरस मेले।
वतन पर मरने वालों का,
यही बाकी निशां होगा।

——

गुरुकुल वृन्दावन

आर्यसमाज की आशा

श्री प० धर्मपाल विद्यालंकार, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश

गुरुकुल वृन्दावन का उत्सव सिर पर है, कुछ दिन ही शेष रह गये हैं, २३ दिसम्बर से गुरुकुल का वार्षिकोत्सव प्रारम्भ हो जायगा परन्तु अभी आर्य पुरुषों का ध्यान गुरुकुल की ओर उतना आकर्षित नहीं हुआ है जितना कि होना चाहिये।

यह ठीक है कि देश एक राजनैतिक ज्वर से ग्रस्त हो रहा है और आर्यसमाज भी अपने जीवन के एक विकट संक्रान्ति काल में से गुजरता हुआ उन्नति और अवनति की सीमा रेखा पर है, स्वभावतः ही आर्य पुरुषों का ध्यान राजनीति जैसे आकर्षक



श्री प० धर्मपाल विद्यालंकार

विषयों की ओर अधिक आकृष्ट है, यही समय चैतन्य हो जाने का है, क्यों कि ऐसी अवस्थाओं में संस्थाओं के विनाश की आशंका हो जाती है, जैसी अवस्था इस समय है उस को लक्ष्य में रख कर भी बुद्धिमानों से यह आशा करना अनुचित न होगा कि देश का मस्तिष्क स्वस्थ दिशा की ओर प्रगति करें।

विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि कहीं ऐसा न हो कि आर्यसमाज स्वयं अपनी प्रिय संस्था गुरुकुल वृन्दावन की उचित रूप में रक्षा न कर सके और अनजाने में ही हमारी उपेक्षा संस्था की मृत्यु के कारण की ओर अग्रसर हो जाय। देश का वर्तमान नवयुवक जिस शिक्षा प्रणाली द्वारा शिक्षित किया जा रहा है वह सर्वथा ही अभारतीय है अनार्य, योरोपियन देशों की संस्कृति व सभ्यता की अत्यन्त भद्दी नकल है, भारतीय आत्मा से सर्वथा दूर है, उसमें भारत के कल्याण की कल्पना की ही नहीं जा सकती, इस शिक्षा प्रणाली का परिणाम भी अधिकतर योरोपियन देशों के समान ही युवकों को पशुवत् दुर्वासनाओं से पूर्ण और आचार व मर्यादाओं से उच्छृंखल बना विनाश की ओर ले जाना है,

गुरु दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट वैदिक धर्म के प्रचार, आर्य परम्पराओं व आर्य संस्कृति के प्रसार के लिये गुरुकुलों की स्थापना हुई है, गुरुकुल प्रणाली का उद्देश्य देश के भावी आधार नवयुवकों को आर्य एवं भारतीय भावनाओं से सुसंस्कृत करना है।

गुरुकुलों को इसमें बहुत कुछ सफलता भी प्राप्त हुई हमारे प्रान्त की प्रमुख वैदिक धर्म की शिक्षण संस्था गुरुकुल वृन्दावन से उत्कृष्ट श्रेणी के कार्यकर्त्ता व नागरिक देश को प्राप्त हुये हैं।

कुछ समय से आर्य पुरुषों का ध्यान गुरुकुल की ओर से कम हो रहा है, जिससे आर्थिक संकट बढ़ता ही जाता है, यदि हमने इधर ध्यान न दिया तो हम स्वयं ही देश में एक ऐसे विष को प्रविष्ट होने और उसके प्रतिरोध के आवश्यक साधन को नष्ट करने के भागी होंगे अभी समय है प्रत्येक आर्य पुरुष जो इस पुण्य कार्य में दान देना चाहिये प्रान्त की आर्यसमाजों का कर्त्तव्य है कि वे धन-संग्रह कर गुरुकुल वृन्दावन को उत्सव से पूर्व ही भेज दें, थोड़ा २ धन भेजा हुआ भी संग्रह होकर गुरुकुल की उन्नति में बहुत अधिक सहायक सिद्ध होगा।

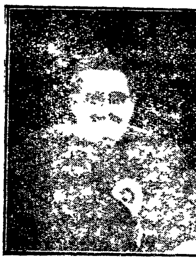
——

संस्था-परिचय

कांगड़ी गुरुकुल

आर्य विश्व विद्यालय की आवश्यकता

श्री मदनमोहन सेठ एम० ए०, प्रधान आ० प्र० सभा, उत्तर प्रदेश



श्री मदनमोहन सेठ

लगभग ४० वर्ष पहले, सन् १९१० या १९११ तक मैं निरन्तर ही गुरुकुल कांगड़ी जाता रहा। उस समय आर्यप्रतिनिधि सभा की भी दो एक अन्तरंग सभाएं गुरुकुल कांगड़ी के महोत्सव पर हुई थीं। श्री प० घासीरामजी मेरठ और श्री बाबू ब्रजनाथजी मुरादाबाद के साथ मैं गुरुकुल जाया करता था। तब मित्रवर प्रो० रामदेवजी के साथ अच्छा समय बीतता था। अब इतने वर्षों बाद जब से कि गुरुकुल कांगड़ी से हरद्वार उठ आया है, मैं प्रथमवार ही श्री प० धर्मपालजी के साथ गत १८ नवम्बर को गुरुकुल पहुंचा। गंगा की नहर से पार होते ही गुरुकुल की भव्यता ने मुझे आकर्षित करना प्रारम्भ कर दिया और जब मैं गुरुकुल के मुख्यद्वार—'श्रद्धानन्द गेट'—से अन्दर प्रविष्ट हुआ तो गुरुकुल का स्वच्छ और मनोहर दृश्य दिखाई देने लगा। आचार्य प्रियव्रतजी, डाक्टर सत्यपालजी और प० दीनदयालु शास्त्री एम० एल० ए० ने गुरुकुल के विभागों का निरीक्षण कराया। सर्व प्रथम हमने गुरुकुल की आयुर्वेद प्रयोगशाला को देखा। मुझे यह आशा न थी कि यह प्रयोगशाला आधुनिक कला और वैज्ञानिक ढंग पर इतनी उन्नत और विशाल होगी। यह प्रयोगशाला अब इतनी ऊँची स्थिति को पहुंच गई है कि सम्भवतः शीघ्र ही उसकी आय से गुरुकुल का वर्तमान व्यय चल सकेगा। प्रयोगशाला का वर्तमान स्थान पर्याप्त न समझ कर उसके लिये तीन लाख रुपये से नहर के पुल के समीप ज्वालापुर की सड़क पर नवीन भवन बनाये जा रहे हैं। पूर्ण हो जाने पर यह प्रयोगशाला निश्चय ही उत्तरीय भारत का प्रधान प्रयोगशाला हो जायगी।

इसके अनन्तर डाक्टर सत्यपालजी अध्यक्ष आयुर्वेद महाविद्यालय ने इस विद्यालय की कार्य प्रणाली का निरीक्षण कराया। जिस समय हम वहाँ पहुंचे उस समय आयुर्वेद के ब्रह्मचारी शल्य-क्रिया भवन में पृथक पृथक तीन शालों का अध्ययन कर रहे थे। उनके साथ ही एक हास्पिटल था जिसमें लगभग ५० आधुनिक ढंग के, "बैड" थे। 'एक्सरे' का भी उत्तम प्रबन्ध है। इसमें जरा भी अत्युक्ति नहीं कि यह आयुर्वेद महाविद्यालय देश के उत्कृष्ट वैद्यक महाविद्यालयों में से है

इसके अनन्तर गुरुकुल के

पुस्तकालय-भवन का निरीक्षण किया, यह पुस्तकालय अपने ढंग का अनूठा और बहुत बड़ा है। व्यवस्था उत्तम है। इसके पश्चात् हमने भव्य वेदमन्दिर, वाटर वर्क्स, गोशाला आदि अन्य विभागों को भी देखा।

आर्यजगत में अनेक गुरुकुल हैं। आर्य जनता की मांग है कि आर्यसमाज की शिक्षा-संस्थाओं की एक आर्य युनिवर्सिटी स्थापित की जाय। पंजाब का डी०ए०वी० कालिज ऐसी स्थिति में था कि उसके आधार पर स्कूलों और कालिजों की एक युनीवर्सिटी बन सकती, परन्तु देश के विभाजन ने इस आशा को तोड़ दिया। गुरुकुल कांगड़ी के समस्त विभागों को देखने से मुझ पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि अब गुरुकुल कांगड़ी सहज में ही युनीवर्सिटी बन सकता है और वहां युनीवर्सिटी के लिये उपयुक्त सभी साधन मौजूद हैं। जब मैं आर्यप्रतिनिधि सभा यू० पी० का मन्त्री था तभी से मेरा ऐसा विचार था कि आर्यसमाज के लिये हितकर और उपयोगी यही बात है कि उसकी अपनी एक युनीवर्सिटी हो और आर्य विद्यालय इस युनीवर्सिटी से सम्बन्धित हों। इस समय अनेक छोटे छोटे विद्यालय अपने आपको युनीवर्सिटी का नाम देकर न केवल युनीवर्सिटी अथवा विश्वविद्यालय शब्द का उपहास करते हैं, अपितु इस प्रकार आर्यसमाज की प्रतिष्ठा को भी हानि पहुँचाते है।

जिस समय आर्यसमाज ने शिक्षा कार्य अपने हाथ में लिया और उसमें अभूतपूर्व प्रगति की ऐसा प्रतीत होता है कि, उस समय प्रान्तीय भावनावश प्रान्त-प्रान्त में गुरुकुल विश्वविद्यालय खुल गये। तीस पैंतीस करोड़ हिन्दुओं का काशी विश्वविद्यालय है और १० करोड़ मुसलमानों की एक युनीवर्सटी अलीगढ़ मुसलिम युनीवर्सिटी है। तब हमारे ही प्रान्त में कुछ प्रभावशाली आर्यों के छोटे छोटे विद्यालय अपने आपको युनीवर्सिटी का नाम दें यह कहां तक उचित है आर्यसमाज के संचालकों और अन्य नेताओं से मेरा नम्र निवेदन है कि वे समय की गति को पहचाने, आर्यसमाज की आवश्यकता का अनुभव करें और प्रान्तीयता की भावना से ऊपर उठ कर ऐसी व्यवस्था करें जिससे एक आर्य युनीवर्सिटी स्थापित की जा सके।

सामयिक समस्याएँ

हमारी नीति

श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०

मैंने कुछ दिन हुए हमारा मत शीर्षक एक लेख लिखा था और आर्य मित्र के योग्य सम्पादकजी ने न केवल उसे प्रकाशित करने की ही कृपा की अपितु उसकी पुष्टि भी की। सार्वदेशिक सभा के मंत्री महोदय ने या तो मेरा लेख पढ़कर या अपने अलग अनुभवों के आधार पर आर्यसमाजों के लिये एक चेतावनी दी है जो समय के सर्वथा अनुकूल है। उत्तर प्रदेश की सभा के अधिकारियों ने इधर कुछ ध्यान नहीं दिया प्रतीत होता है। और संभव है कि भिन्न-भिन्न आर्यसमाजों के अधिकारी उसको भिन्न-भिन्न दृष्टियों से देखेंगे। यह निर्वाचन का युग है। हर एक उम्मेदवार चाहे वह दल की टिकट पर हो चाहे स्वतन्त्र, आर्य समाज की सामूहिक शक्ति से लाभ उठाना चाहता है। उसे यह चिन्ता नहीं कि आर्यसमाज की स्थिर नीति पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा। उम्मेदवार वोटों के लिये सहस्रों रूपों में कार्य करेंगे। उनके लिये उपदेशकों और भजनीकों को किराये पर ले लेना कठिन नहीं है। पिछले निर्वाचनों में जब देश स्वतन्त्र न था और निर्वाचन केवल अर्द्ध-स्वतन्त्र अधिकारों के लिये भी थे कई बार भजनमण्डलियों को इस काम के लिये प्रयुक्त किया गया। और जैसा मैं पहले लिख चुका हूँ आजकल हमारे उत्सवों को तो इस काम का साधक बनाया जा जाता है।

अभी पिछले अङ्क में मैंने श्री स्वामी सत्यदेवजी परिव्राजक का एक लेख पढ़ा है। इसमें उन्होंने मेरठ महासम्मेलन की नीति पर बहुत-आक्षेप किया है। और आर्यसमाज में फैली हुई अशान्ति की ओर भी संकेत किया है। परन्तु आर्य समाज के हित में यह बात स्पष्टतया जान लेनी चाहिये कि वस्तुतः अशान्ति का कारण तो कुछ भड़काने वाले सज्जनों के वक्तव्यों में ही होता है, साधारण जनता बहुत सी बातों पर पूर्ण दृष्टि से विचार नहीं कर सकती। वह राजनीति को समझती भी नहीं और राजनैतिक घटनायें भी पूर्ण रूप से उसके सामने नहीं आतीं। उसके जोश का पारा थोड़े से जलते हुए शब्दों में ही चढ़ाया जा सकता है। मेरठ सम्मेलन पर जो दृश्य दिखाई पड़े उनके मूल-कारण में तो ऐसी ही वक्तृताएं थीं जो आर्यसमाज की नीति को स्थिर किये बिना ही विरोध को बढ़ाने के लिये ही दी गई थीं, यदि प्रत्येक पुरुष नेता बनकर किसी सोसायटी की नीति को अपने हाथ में ले लेता है तो कहना पड़ेगा कि उसकी वक्तृत्व शक्ति उसके समाज के नाश का कारण होगी उन्नति का नहीं।

वर्तमान निर्वाचन से एक बात तो स्पष्ट हो ही जाती है। लगभग १३ दलों के उम्मेदवार खड़े किये गये हैं। ये १३ दल कैसे हो गये? इसके मूल कारण पर विचार कीजिये।

उदाहरण के लिये आप कांग्रेस को ही लीजिये। जो बात कांग्रेस के साथ हुई वह सभी अन्य दलों पर लागू होती है। कांग्रेस अपने सभासदों में से कुछ ही को तो कांग्रेस टिकिट दे सकती थी। सबको नहीं, सीटें कम उम्मेदवार अधिक। और हर एक अपना अधिकार जमाता है। अतः जिसको कांग्रेस ने नहीं चुना वही कांग्रेस से अलग हो गया, या तो उसने दूसरे दल से गठबन्धन किया या स्वतन्त्र खड़ा हो गया और कांग्रेस से सम्बन्ध तोड़ लिया। ऐसा ही अन्य दलों के साथ हुआ। यदि आर्य समाज भी अपने उम्मेदवार खड़ा करता तो सब इच्छुकों की इच्छा को पूर्ण करना कठिन था। कुछ को तो अस्वीकार करना ही पड़ता। इसका नतीजा क्या होता? वही कि अस्वीकृत सज्जन दूसरा घर देखते और समाज से मुंह मोड़ लेते। प्रायः समाजों के निर्वाचनों पर हम देखते हैं कि जब एक पुरुष निर्वाचन में सफल नहीं होता तो वह समाज को छोड़ बैठता है या दूसरा समाज स्थापित कर लेता है। उस समय समाज के मिशन या स्थायी उद्देश्यों की तो किसी को चिन्ता रहती नहीं। ऐसी नीति से समाज कैसे आगे बढ़ सकता है? आर्य समाज में इस संकुचितता की मात्रा अब कुछ बढ़ रही है और अनुशासन शिथिल होता जा रहा है।

श्री परिव्राजकजी ने अब आर्य समाज को परामर्श दिया है कि आर्य समाज को अध्यात्म विद्या का केन्द्र बनाना चाहिये। यह अच्छा परामर्श है। परन्तु इस प्रस्ताव का यथार्थ रूप देखना होगा। स्वामी यह भी ठीक कहते हैं कि यह काम सन्यासियों को करना चाहिये। इस में सन्देह नहीं कि निष्पक्ष और त्याग मूर्ति संन्यासी ही इस काम को ठीक प्रकार कर सकते हैं। परन्तु ऐसे त्यागी कितने हैं?

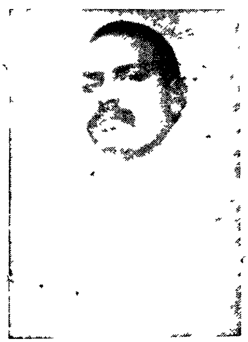
आर्य समाज के कामको देखते हुए सन्यासियों की बहुत कमी है। और जितने कुछ हैं, चाहे वे किसी योग्यता के क्यों न हों उनसे आर्य सिद्धान्तों का बहुत प्रचार हो सकता है। परन्तु कठिनाई है, गीता के उस श्लोक की जिसमें 'पर धर्मो भयावह' बताया गया है। जो संन्यासी बहुत कम पढ़ा है वह भी ग्रामीण लोगों को गायत्री सिखाकर और साधारण सदाचार का उपदेश देकर आर्य समाज के नाम को बहुत कुछ आगे बढ़ा सकते हैं। परन्तु आज हम ऊंची उड़ानें और लम्बी योजनाओं में अपनी शक्ति अधिक लगाते हैं और काम बहुत कम कर पाते हैं। क्या अच्छा होता यदि हम कछुवे की चाल चलते और खरगोश की छलांगें भूल जाते।

गुरुकुल की ओर ?

श्री रामदत्त शुक्ल एम०ए० ऐडवोकेट, प्रणेता गु०कु० विश्ववि० वृन्दावन

सरकार निरपेक्ष भारतीय सार्वजनिक सुसंगठित शिक्षा सम्बन्धी प्रयत्नों में आर्यसमाज द्वारा संस्थापित और संचालित गुरुकुल शिक्षा संस्थाओं का योजना द्वारा भारतीय शिक्षा जगत में जो क्रान्तिकारी कार्य हुआ है उसका विशेष महत्व है। अर्द्ध-शताब्दी पूर्व आर्यसमाज के प्रमुख कार्य कर्त्ताओं ने अपनी परिमित सामर्थ्य, प्रभाव, एवं साधनों के साथ परिस्थिति के सर्वथा विपरीत होने और सरकार की वक्र दृष्टि के रहते हुए भी ब्रह्मचर्य आश्रम प्रणाली के अनुसार जीवन व्यतीत करने वाले बालक बालिकाओं को सर्वथा निःशुल्क विद्या व्रत स्नातक बनाने का शिक्षा देने का सोत्साह प्रयास किया, इस कार्य को आज उपहास या तिरस्कार की दृष्टि से देखना अदूरदर्शी और देश द्रोही का ही साहस हो सकता है। आर्यसमाज द्वारा गुरुकुल शिक्षा संस्थाओं की ब्रह्मचर्य प्रधान पद्धति की सभी प्रकार के बड़े-बड़े लोगों ने एक स्वर से सराहना की है। कुछ लोगों ने इन संस्थाओं के लिये यथाशक्ति सहायता भी समय समय पर प्रदान की है। किन्तु महर्षि दयानन्द सरस्वती, लो० बालगंगाधर तिलक और महात्मा गाँधी के नाम स्मरण मात्र से ही पुलकित होने वालों ने कदाचित् कभी भी गम्भीरता के साथ इस बात पर विचार नहीं किया कि यह तीनों राष्ट्र निर्माता भारतीयता के तत्वों सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य इत्यादि को ही राष्ट्रजीवन का मेरुदण्ड मानते थे। ब्रह्मचर्य के प्रति अनन्य आस्था रखने वाले ऋषियों के पवित्र आर्यवर्त्त देश के नर और नारियों को सन्तति निरोध का उपदेश देने के लिये आज विदेश से स्टोन महाशय बुलाये जाते हैं कि जो ब्रह्मचर्य व्रत पालन के स्थान पर पाशविक प्रवृत्ति परक परामर्श देते हैं, भारतीय पाश्चात्यता का अन्धानुकरण अनायास हमको मानवता के सदाचार पथ से च्युत करके पशुता के गर्त में ढकेलने के लिये प्रवृत्त है।

शरीर से भारतीय किन्तु आदर्शों, संस्कारों, विचारों और व्यवहारों से अभारतीय पाश्चात्य जीवनधारियों से तो इस प्रसंग में कुछ और कहना व्यर्थ ही है। किन्तु जिन भारत निवासी नर नारियों में अब भी भारतीय सांस्कृतिक परम्पराओं के संस्कार विद्यमान हैं, उनसे अनुरोध किया जा सकता है। स्मरण रक्खें, धर्म, संस्कृति, सभ्यता, शिष्टाचार, संस्कृत साहित्य, संस्कृत भाषा, आर्य परम्परा वैदिक राजधर्म, वर्णाश्रमधर्म, आदि भारतीय तत्वों की रक्षा क्या आप इसी प्रकार करना चाहते हैं कि जैसे शीतुकागारों में रक्खी हुई सुरक्षित मछलियों की की जाती है? अथवा



श्री रामदत्त शुक्ल एम० ए०

क्या आपकी यह अभिलाषा है कि आप पूर्ण मानव गुणों से युक्त नागरिक जिस संस्कार तत्व शिक्षा-दीक्षा से सुसम्पन्न होकर विद्या और व्रत स्नातक अर्थात् विद्वान् और चरित्रवान् युवक और युवती बनकर देश, धर्म, राष्ट्र और विश्व के विभिन्न जीवन क्षेत्रों में ऋजुता के साथ सेवा कार्य कर सकें ऐसे मानवों के निर्माण की अविच्छिन्न धारा बहती देखना चाहते हैं? स्मरण रक्खें मानव बुद्धि और समृद्धि का नाम ही देश या राष्ट्र होता है। भौगोलिक सीमाओं से सीमित भूखण्ड, नदी, वन पर्वत, पशु-पक्षी, पुर, नगर और ग्रामों को तो औपचारिक अर्थों में ही देश या राष्ट्र कहा जाता है। कुशिक्षा के परिणाम स्वरूप शिथिलादर चरित्र सम्पत्तिशाली अंग्रेजियत के आनन्द और अन्धभक्त वर्त्तमान सुरसा सदृश सब प्रकार के अभाव मूलक भ्रष्टाचार, अनाचार, विलासिता, अनैतिकता और पशुता को दूर करने में सर्वथा असफल सिद्ध हो रहे हैं। और जिन कारणों से उक्त व्याधियाँ बढ़ती हैं, उनका शमन तो उन्हीं कारणों से कदापि सम्भव नहीं हो सकता है। इस लिये स्वार्थ परायणता का उपचार विश्व जनीन सेवा, भोगवाद का त्यागवाद, विलास प्रियता का संयम, कुसंस्कार का सुसंस्कार, भ्रष्टाचार का सदाचार, अनैतिकता का नैतिकता, वृजिनता का ऋजुता, और अनार्जव का आर्जव आदि से सम्भव है। सुसंगठित आयोजनों, संस्थाओं और उद्योगों को अंकुरित, पल्लवित, पुष्पित और फलित बनाने के अनुष्ठानों को सम्पन्न बनाने में सक्रिय सहयोग और सहायता प्रदान करने के लिये संलग्न हो जाय।

प्रायः भारतीय सांस्कृतिक आयोजनों से परिचय रखने वाले महानुभाव गुरुकुलों और प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा संचालित गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन से परिचित होंगे। गत पचास वर्ष से यह गुरुकुल संस्था अपने सीमित साधनों से ब्रह्मचर्य आश्रम प्रधान शिक्षा पद्धति का प्रसार व्यावहारिक रूप से कर रही है। सादा जीवन उच्च विचार, संयम, सहिष्णुता संस्कृत आर्यभाषा, धर्म, दर्शन, विज्ञान, आयुर्वेद, इतिहास, गणित, भूगोल आदि की समुचित शिक्षा के साथ ही साथ यहाँ उच्चतर स्तर पर अंग्रेजी की भी शिक्षा प्रदान की जाती है।

अपने अनुभव के आधार पर निःसङ्कोच इस बात को स्वीकार करते हुये भी कि गुरुकुलों के कार्यकर्त्ता न तो स्वयं सर्वथा पूर्ण हैं और न उनके समस्त कार्य को ही सर्वथा त्रुटि रहित कहा जा सकता है. हम विश्वास पूर्वक इतना अनुरोध करने का सत्साहस कर सकते हैं कि जहाँ आप महानुभावों ने सर्वथा अभारतीयता प्रधान असंयम मूलक पर मुखापेक्षी विदेशीय शिक्षा संस्थाओं को सुरसा की भाँति वपुष्मती और पीवर बनाने में अब तक अरबों रुपये ही नहीं व्यय कर डाले हैं, अपितु सहस्रों अन्यथा भारतीय संस्कारों से संस्कृत भारतीयों को सर्वथा नहीं तो अधूरा अभारतीय तो अवश्य बनाने का सफल प्रयत्न किया है। अपने इस एक प्रकार के देश द्रोह रूपी विषवृक्ष के वर्त्तमान समय में स्वतन्त्र राष्ट्र कटु स्वाद का आस्वादन करने के लिये सब प्रकार विवश हो रहा है।

शिक्षा विषयक पंकमयी दुरवस्था से विमुक्त होकर स्वतन्त्र भारत राष्ट्र के अनुरूप चरित्र के धनी शक्तिमान् बलवान् तेजस्वी, ओजस्वी, आचरवान्, विनयशील, नयवान् और क्रियावान् मानव सम्पत् युक्त नागरिकों के निर्माणार्थ अपने गुरुकुल विश्वविद्यालय के विकास, विस्तार और प्रभाव की अभिवृद्धि के लिये प्रत्येक भारतीय और विशेषतः प्रत्येक आर्य भाई बहन को यथा शक्ति सहयोग और सहायता प्रदान करते रहना चाहिये। स्मरण रक्खें समय रहते हमने गुरुकुल जैसी संस्था पर ध्यान न दिया तो पछताना पड़ेगा।

——

स्वास्थ्य-सुधा

वृद्धावस्था

श्री आनन्दीप्रसाद मिश्र 'निर्द्वन्द्व'

बहुत से विद्वानों का कथन है कि विज्ञान की सहायता से वृद्धावस्था को रोक कर जीवन की अवधि बहुत कुछ बढ़ाई जा सकती है। इसमें सन्देह नहीं कि आजकल के वैज्ञानिकों को वृद्धावस्था के उन सब कारणों की, जिनके द्वारा शरीर में विभिन्न प्रकार के परिवर्तन मनुष्य को मृत्यु की ओर अग्रसर करते हैं, पहिले की अपेक्षा अधिक जानकारी हो गई है किन्तु डा० मेनार्ड का कथन है कि इस जानकारी से कोई विशेष लाभ नहीं है, मनुष्यों को वृद्ध होना ही पड़ेगा। थोड़े ही दिन हुए डाक्टरों ने कहा था कि हमारे शरीर के भीतर जो बड़ी अंतड़ी हैं, उसके अन्दर टिक्सन नामक पदार्थ जम कर हम लोगों को मृत्यु की ओर अग्रसर करता है। यदि शरीर से यह अङ्ग निकाल कर फेंक दिया जाए, तो वृद्धावस्था रुककर जीवन को बढ़ा सकती है। परन्तु केवल टक्सिन ही हमारे जीवन के विनाश का एक मात्र कारण नही है, इसके और भी अनेक कारण हैं। ऐसी दशा में बड़ी आंत को निकाल डालने से ही बुढ़ापे से पिण्ड छूटने की सम्भावना कदापि सफल नही हो सकती।

प्रकृति का नियम है कि पूर्णता को प्राप्त होते ही क्षय आरम्भ हो जाता। है जब तक पूर्णता नहीं आती, तब तक तो वृद्धि होती रहती है और पूर्णता के आते ही क्षय होने लगता है। चाहे कोई भी जीव हो. जब उसके अंग प्रत्यंग पूर्ण हो जाते हैं. तब उसका क्षय भी आरम्भ हो जाता है। अंगों के पूर्ण होना वंश तथा स्वास्थ्य के अनुसार कभी कम और कभी अधिक मात्रा में मालूम पड़ता है, किन्तु वह अवश्यम्भावी है।

लोगो की धारणा है कि बुढ़ापे के कारण यदि मालूम हो जाएँ, तो उसके दूर करने का उपाय किया जा सकता है। बहुत दिनो से इस सम्बन्ध में भांति भांति के प्रयत्न किये जा रहे हैं किन्तु उनसे कोई भी आशा जनक परिणाम निकलता प्रतीत नहीं होता। यह समस्या न जाने कितने वैज्ञानिकों के मस्तिष्क में चक्कर काट चुकी है। पहले लोगों का विचार था कि वृद्ध के शरीर में यदि किसी युवा का रक्त प्रविष्ट कर दिया जाए, तो उसका शरीर बलवान हो जाता है बहुतों ने इसका प्रयोग भी किया किन्तु किसी ने अपने प्रयत्न में सफलता प्राप्त की हो, ऐसा सुनने में नहीं आया। आजकल एक दूसरी रीति से इस उपाय का अवलम्बन किया जा रहा है। किन्तु इस प्रकार भी रक्त प्रविष्ट करके किसी निर्बल अंग को कोई भी बलवान नहीं बना पाया है।

जीव मात्र का नियम है कि अपने चारों ओर जो वह कुछ सामग्री पाता है, उसे ग्रहण कर लेता है और यथा सम्भव उसे अपने जीवन निर्वाह के लिए उपयुक्त बनाकर अवशिष्ट अंश का परित्याग कर देता है। जीवाणुओं की परीक्षा करके देखा गया है, कि इन परित्यक्त पदार्थों की मात्रा जितनी ही बढ़ जाती है, उतना ही जीवाणु जराग्रस्त एवं दुर्बल होते जाते हैं। किसी नवीन स्थान पर जाते ही वे फिर ताजे होकर चलने फिरने लगते हैं।

डाक्टर मेनार्ड का कथन है कि मानव शरीर की भी ठीक यही दशा है शरीर के सब प्रकार के मल स्वाभाविक मार्ग से निकल जाया करते हैं। अङ्ग की दुर्बलता के लिए जब यह कार्य उचित रीति से नहीं होता, मल जब शरीर के भीतर ही रह जाते हैं, तभी शरीर में गड़बड़ हो जाती है। सबसे पहले शरीर में अंगड़ाई मालूम पड़ती है। इस अवस्था में विश्राम करना और सोना आवश्यक है, छोटी-मोटी शिकायतें केवल इतने से ही दूर हो जाती है।

शरीर में कई प्रकार के ऐसे मल होते हैं जो पूर्ण रूप से नहीं निकल पाते। उनका कुछ अंश शरीर के भीतर ही रह जाता है। अंत में वही शरीर की भिन्न भिन्न अस्थियों में चिपट जाता है। यही वृद्धावस्था का वास्तविक कारण बन जाता है।

इस सिद्धान्त के प्रचारक है लेक्टेक, उनका कथन है कि जरा ग्रस्त प्राणियों की मांस पेशी में इन सब पदार्थों के चिह्न पाये जाते हैं, किन्तु इससे मांस पेशी को कोई अधिक हानि लाभ नहीं है। मल जब धमनियों में चिपट जाता है और शरीर के किसी भी अंग में रक्त दौड़ना बन्द हो जाता है, तभी शरीर को अनिष्ट की सम्भावना होती है। इस दशा में धमनी के दुर्बल होकर फट जाने का अन्देशा रहता है। इस प्रकार के मल जिसके शरीर में भी एकत्र हो जाते हैं, एका एक उसके रुग्ण हो जाने की बड़ी आशंका रहती है। इसी लिए डाक्टर लोग कहते हैं, कि जैसे-जैसे हमारी धमनियाँ वृद्ध होती जाती हैं वैसे ही वैसे हम भी वृद्ध होते जाते हैं। इस कारण को दूर करने के निमित्त आज तक किसी भी उपाय का आविष्कार नहीं किया जा सका।

माइक्रो फंगस नाम के कुछ जीवकोष हैं, जो स्वस्थ जीवकोषों को खा जाते हैं। यह प्रायः सदा ही शरीर में वर्तमान हैं और शरीर की मूल वस्तु है।

शरीर के भीतर जितने विष उत्पन्न होते हैं, उनमें से अधिकांश मूत्राशय की सहायता से बाहर निकल जाते हैं। बहुत अंशों में मूत्राशय की आरोग्यता पर ही शरीर की आरोग्यता निर्भर है। धमनी के समान मूत्राशय भी जैसे जैसे जरा ग्रस्त होता जाता है, वैसे वैसे ही हमारा शरीर जीर्ण होता जाता है।

कुछ डाक्टरों का मत है कि किसी भी जन्तु के मूत्राशय का उसी श्रेणी के अन्य जन्तु के शरीर में उपयोग किया जा सकता है। यदि किसी दुर्घटना के कारण मरे हुए युवक का मूत्राशय किसी वृद्ध के शरीर में लगाया जासके, तो बहुत सम्भव है कि उसका बुढ़ापा दूर हो जाए।

माइक्रो फंगस एवं दूषित मूत्राशय के अतिरिक्त बुढ़ापे के और भी बहुत से कारण हैं। परन्तु कोई भी व्यक्ति अपनी अस्थि, धमनी, यकृत, मस्तिष्क आदि को कहाँ तक बदल सकता है? ऐसी दशा में हम लोगों का वृद्ध होजाना स्वाभाविक ही है। इतना होने पर भी मनुष्य को निराश न हो अपने स्वास्थ्य और मन को अधिकाधिक स्वस्थ रखने का प्रयत्न करते रहना चाहिये।

——

स्वामी श्रद्धानन्दः विजयते तराम्

तपसा ब्रह्मचर्येण धाम्ना लोकातिशायिना।
अप्रधृष्यो मनुष्याणा मादित्य इवयोऽभवत् ॥१॥

विश्वासभूमिरार्याणां भयकृद्भारतद्रुहाम्।
दीनानां गतिहीनानां यः शरण्यो महानभूत् ॥२॥

महावैराग्यवांश्चापि प्रणवे यस्तु रागवान्।
आस्तिकः श्रद्दधानश्च न निराशः कदाप्यभूत्॥३॥

निर्माता नवराष्ट्रस्य रक्षिता चार्य संस्कृतेः।
यस्य नामापि सम्मृत्य महाप्राणो भवेज्जनः।४॥

ऋषिवरं तमाचार्य श्रद्धानंद दृढव्रतम्।
परिव्राज महात्मान प्रणमामः पुनः पुनः ॥५॥

अनुसर्तुं तमेवार्यं यथा च प्रयतेमहि।
तथा दिशतु नो मार्गं भगवाञ्जगदीश्वरः ॥६॥

—जनमेजयः विद्यालङ्कारः, शास्त्री, एम० ए०

सुझाव और सम्मतियाँ

आर्य परिवार-निधि

वैसे तो आर्य समाज ने बहुत सी परोपकारक संस्थाएं स्थापित कर देश की भारी सेवा की है परन्तु हमारे पास कोई ऐसी संस्था नहीं जिसके द्वारा हम आर्य परिवारों को आर्थिक सहायता दे सकें। आर्य समाज की सेवा करने वाले मध्यम श्रेणी के व्यक्ति इतनी अल्प आर्थिक सहायता लेकर कार्य करते हैं कि उनके परिवार का भविष्य सदैव अन्धेरे में बना रहता है ऐसे सेवक अपने बालकों की शिक्षा व्यवस्था भी नहीं कर पाते हैं और उनके बाद उनकी पत्नियां आर्थिक संकट में पड़ जाती हैं। हमारे पास शोक सहानुभूति के सिवाय उनके लिये कुछ भी नहीं होता। इस अवस्था में हम सबका कुछ न कुछ कर्तव्य अवश्य होना चाहिये। यदि आर्यों में परस्पर बन्धु भाव को बढ़ाना और सक्रिय रूप देना अभीष्ट है तो आर्य समाज में 'आर्य परिवार सहायता निधि' की स्थापना की जानी चाहिये। इस निधि को एक बीमा कम्पनी का रूप दिया जाय तो अधिक उत्तम होगा। इसके सदस्यों और उनके परिवारिकों को अकस्मात संकट आने पर बहुत अधिक सहायता प्राप्त हो सकेगी। इस निधि का रूप इस प्रकार हो सकता है। आर्य समाज का प्रत्येक सभासद इस निधि का सदस्य बन सकता है और प्रत्येक सदस्य को ५) प्रवेश शुल्क के पश्चात् १२) वार्षिक छह छह रुपयों के दो विभागों में देना होगा। इस प्रकार प्रत्येक सदस्य का धन उसके नाम जमा होता रहेगा और सदस्य की मृत्यु पर उसके उत्तराधिकारी को जमा हुआ धन एक साथ मिल सकेगा, यह धन तो उसका था ही इसके साथ ही उस निधि के प्रत्येक सदस्य की ओर से एक रुपये के हिसाब से सहायता उसके परिवार को और दी जायगी। इस प्रकार इस निधि के जितने अधिक सदस्य होंगे उतनी ही अच्छी आर्थिक सहायता संकट वाले परिवार को मिल सकेगी। निधि में जमा होने वाले रुपयों का उपयोग व्यापार, मैं साहित्य प्रकाशन तथा अन्य उपयोगी कार्यों में किया जा सकता है।

राजस्थान आ० प्र० नि० सभा के प्रधान श्री पं० जियालालजी अपने प्रान्त में इस निधि की स्थापना पर विचार कर रहे हैं, अन्य प्रान्तों की समाएं तथा सार्वदेशिक सभा भी इस सम्बन्ध में निर्णय करें तो आशा है कि आर्य समाज का कार्य अग्र वर्द्धन में सहायता मिलेगी कार्य कर्ताओं के लिए यह निधि एक उत्तम आश्वासन का कारण बन सकती है। आशा है आर्य जनता और नेता इस सुझाव पर गम्भीरता पूर्वक अवश्य विचार करेंगे।

रामसहाय विद्याभूषण
महोपदेशक, अजमेर

विज्ञान और धर्म का समन्वय

मुसोलिनी ने एक स्थान पर लिखा था क्या विज्ञान हमें उन्नति की ओर ले जा रहा है? विज्ञान हमें कहाँ से कहाँ ले आया है, आज मनुष्य प्रकृति की शक्ति से लोहा ले रहा है और स्वार्थी बन गया है। विज्ञान ने विनाश का ही मार्ग अधिक प्रस्तुत किया है शान्ति और निर्माण का नहीं। आज आवश्यकता है कि विज्ञान धर्म, नैतिकता की मर्यादाओं के पीछे चले यदि हमारी पीढ़ी यह न कर सकी तो मानव जाति का भविष्य अन्धकारमय हो जायगा। विज्ञान के साथ धर्म और संस्कृति का सम्बन्ध ही विश्व को विनाश से बचा सकता है। ऋषि दयानन्द ने वेदों के वैज्ञानिक अर्थों के द्वारा धर्म के साथ विज्ञान का समन्वय किया था हम आर्य धर्म का तो प्रचार करते ही हैं विज्ञान के सम्बन्धमें भी हमें जनतामें प्रचार करना चाहिये और जनता में धर्म और विज्ञान के समन्वय की भावना को बढ़ाना चाहिये।

— प्रो० पृथ्वीपाल
डी० ए० वी० कालिज जालन्धर।

अधिक अन्न उपजाओ

आज सर्वत्र 'अधिक अन्न उपजाओ' का नारा लगाया जा रहा है परन्तु मेरे विचार में तो आज सबसे अधिक आवश्यकता अन्न नहीं 'अधिक अक्ल उपजाओ' की है। जब तक हमारे पास बुद्धि न होगी हम ज्ञानपूर्वक कार्य न करेंगे। जब बुद्धि है ही नहीं तब हम प्रभु से क्या प्रार्थना करें कि 'धियो योनः प्रचोदयात्' आज प्रथम आवश्यकता बुद्धि उत्पन्न करने की है आर्यसमाज बुद्धिवादी संस्था है पर आज उसके पास भी बुद्धि का अभाव हो चला है। हमें हर समय अपने कार्यों और प्रोग्रामों की बुद्धि पूर्वक सब परीक्षा करते रहना चाहिये।

—प्रि० दीवानचन्द

कैलाश-यात्रा

नवभारत टाइम्स १७ अगस्त सन् ५१ में प्रकाशित समाचार "माउंट एवरेस्ट की चढ़ाई शीघ्र होगी" पढ़कर समाचार से हार्दिक दुख हुआ। हम कितने परावलम्बी हैं। लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व महाभारत काल में श्री कृष्ण अर्जुन कैलाश पर्वत पर गये थे और एक रात रह कर ही लौट आए थे। केवल 'शिव' से आग्नेय अस्त्र विधि संचालन क्रिया का सही रूप मालूम करने गये थे। अर्जुन तथा कृष्ण दोनों "आग्नेय अस्त्र" चलाना जानते थे लेकिन उसको परिपक्व करने के लिये ही गये थे। सम्भवतः कोई कमी बेशी और हो। इस घटना से सिद्ध है कि हमारे पूर्वज कैलाश तक आते जाते थे। ऐसी अवस्था में सरकार को पहाड़ी लोगों की सहायता से कैलाश का दुर्गम पथ मालूम कर लेना चाहिये। पहाड़ी लोग जानते हैं कि कौनसा रास्ता सुगम है और कौन सा दुर्गम है। यही नहीं, महाभारत, और पुराण आदि प्राचीन ग्रन्थों को छान कर वह दुर्गम मार्ग भारतियों को ही सुगम बनाना चाहिये। विदेशियों को इस प्रकार बुलाना और इस प्रकार का काम लेना हमारे मस्तक को ही नीचा करता है। उस कैलाश पर्वत को जहां शिव ने तपस्या की थी माउंट एवरेस्ट नाम देना भी भारत का अपमान करना है इस लिये भारतीयों को ही इस ओर सजग रहना चाहिये और कन्दराओं में समाधिस्थ तपस्वियों और पहाड़ निवासियों द्वारा वह मार्ग मालूम करना चाहिये।

—राममोहन चन्दौसी

निर्वाचनों का पथ-प्रदर्शन

आम निर्वाचनों में जनता को सच्चा मार्ग दिखाने के लिये हमें जनता से कहना चाहिये कि निम्न प्रकार के व्यक्तियों को वह अपना मत दें—

१—जो ईश्वर विश्वासी सच्चरित्र त्यागी और विद्वान् हों, २—जो भारतीय संस्कृति और भारतीय परंपरा में विश्वास रखते हों, ३—ब्रह्मचर्य और चरित्र को शिक्षा का माध्यम मानते हों, ४—जिनको भारतीय सामाजिक रीति रिवाजों का ज्ञान और उनमें विश्वास हो, ५—हिन्दी को शीघ्राति शीघ्र राष्ट्र में प्रचलित करने के लिये सप्रयत्न हों, ६—राष्ट्रिय हितों का सर्वाधिक ध्यान रखें किसी भी राष्ट्र के तुष्टीकरण में विश्वास न रखते हों। ७—प्रशासन के कार्यों में मितव्ययता और सादगी के समर्थक हों, ८—जातीयता और प्रान्तीयता के पोषक न हों, ९—विधि निर्माण में (कानून बनाने में) प्राचीन भारतीय सामाजिक परपराओंका सदा ध्यान रख सकें। १०—देश के समस्त सम्प्रदायों के साथ प्रीति पूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य व्यवहारके पक्षपाती हों।

आर्य समाज से प्रभावित और उसके पथ-प्रदर्शन की आशा रखने वाली जनता के लिये यदि सार्वदेशिक आ० प्र० नि० सभा उपर्युक्त प्रकार का अनुरोध पत्र प्रकाशित कर सके तो यह सामयिक और उपयोगी कदम होगा। यदि हम सैद्धान्तिक राजनीति से भी हमें दूर रहना अभीष्ट हो तो हम राष्ट्र सुधार और विश्व शान्ति के स्वप्न कैसे पूरे करेंगे। आशा है आर्य समाज के कर्णधार इस इस दिशा में आवश्यक घोषणा करेंगे।

—सूर्यदेव प्राणाचार्य
गोरखपुर

इदानीन्तु देववाणी समादरणीया

लेखक :—आचार्य श्री प० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणि

सर्वाङ्गपूर्णा पुण्यतमा देववाणी, समधिगतस्वातन्त्र्ये, समुपलब्धस्वराज्ये स्वायत्तीकृते सकलशासनाधिकारे पि भारते यदीय वराकी बृटिशशासनधुरन्धरैरिव भारतीयैः शासनसूत्रधाररपि भवेदेकपदे निराकृता, न्यक्कृता अवहेलिता, दूरेऽपसारिता, राष्ट्रभाषापदवीतो धंचन्द्र दत्वा निष्कासितेति त्रियदिदमरुन्तुद वृत्तम्। अपराध्यत्यत्र नून शासनचक्रमेव। शासनचक्रेण सह भारतीयजना अपि। राष्ट्रभाषा निर्धारणावसरस्तु अस्माकमनवधानतया निर्गत.। किमधुना पश्चात्तापन। सम्प्रति तु भारतीयैः संस्कृतप्रचारार्थमनन्यासाधारणो यत्न आधेय सर्वे सम्भूय च तथा प्रयतितव्यम् यथा न भवेदन्यभाषाभिज्ञो पि कश्चिदसंस्कृतज्ञ शिक्षितपदसम्मानित। अद्य, यद्राष्ट्रविघातक प्रजासु नतिकाध पतन आपण्डितपामर प्राचुर्येण सङ्क्रामकव्याधिवद्भित आचक्रम्यमाणमिवालोक्यतेतत्संस्कृताध्ययनवमुख्यदिजृम्भितमेवेत मन्यामहे। संस्कृताध्येतृणा संस्कृतसाहित्यपरिशीलनपवित्रमतिमता अधिगतधर्ममर्ममूर्धन्याना परिदग्धसकलकल्मषांकुराणां धर्मभीरूणा हृदयेषु न पद लभन्ते अमी विकारा। यदसंस्कृतमानसमुलभान् अन तत्कुसंस्कारसम्भवान् स्तैन्यपैशुन्योत्कोचप्रभृतिमहापातकोत्थान् राष्ट्रविघातकान प्रजासु आमूलचूडमभिव्याप्तान् विकारान् कश्चित्परिमार्ष्टुमलं तर्हि स संस्कृतविद्याभ्यास एव। अस्माकं संस्कृत' समस्त वैदिकवाङ्मयम्, सकलमितिहासजात अखिला सा पूर्वजानामाचारव्यवहारपरम्परा। किं बहुना अस्माकं सर्वस्व संस्कृतसाहित्यमजूषायाम् महाशय धिवदसमत्ववजैः महर्षिभि संरक्षितमस्ति। संस्कृताध्ययनविमुखानाम पश्चिमसंस्कृत्युन्मुखानाम् प्रत्ययसामपि शापनधूवह्प्रमुखानाम् कथ भवो दिय तत्र श्रद्धा। ते पि संस्कृतभाषा मृतभाषति पदेन विभूषयन्ति। मृतेय संस्कृतभाषा, इदानींवत् पुरा पि कदाचित् व्यवहारगता नाभवदिति पाश्चात्यक विदा आकलयन्ति। तानुनुसरन्तो केचनावसरवादिनो भारतीया स्तथैव मृतभाषेय देववाणीति प्रतिध्वनयन्ति। किन्तु सूक्ष्मदृशावलोकनेन विदित भवति। यदिदमाकलन तु तेषा नितरामज्ञानविजृम्भितमेव तच्च संस्कृतभाषेति नामधेयादेव प्रतिपत्तु सुशकम्। भाषणाद्धि भाषा भवति, भाषा अथ च भाषणविधुरा इति विप्रतिषिद्धम न कथमपि सगच्छत। संस्कृतभाषा मृतभाषा व्यपदिशन्तस्तावदनुयोक्तव्या कुशाग्रधियः। मृतभाषापदस्य को वा अर्थ इति। मृता चासौ भाष मृतभाषा, मृतानां वा भाषा मृतभाषति आद्यः पक्षश्चेन्न। नेय भाषा मृता। इदानीमपि सर्वत्र विद्वत्समाजे, विद्यालयानां प्राङ्गणे च श्रवणगोचरीक्रियते भितः सम्भाषमाणा। द्वितीयपक्षश्चेन्नतराम्। न वय मृता येषामिय भाषा। मन्ये ये मृतभाषामिमामुद्गिरन्ति त एव खलु मृताः। हहो यां भाषामधीत्य मानवा अमृता भवन्ति मरणाधमणा। सा भाषा कथमिव मृतभाषेति पदेन व्यवहर्तव्या भवितुमर्हति। अय भो भारतीयाभिजना., आर्यमिश्रा वैदेशिकैवेतालैः बम्भ्राम्यमाणा. शासनधुरीणा परिचिन्वन्तु इदानीमपि आत्मस्वरूपम्, समुद्धरन्तु भारतीयां सम्मुच्छिन्ना संस्कृतिम् पुनरुज्जीवयन्तु गुरुकुलशिक्षापद्धतिम्, परिवर्तयन्तु पाश्चात्यशिक्षासरणि प्राचीनशिक्षाप्रणाल्याम्। प्रसारयन्तु पुन सर्वात्मना संस्कृतधीतिम्। संस्थापयन्तु च ग्रामे ग्रामे नगर-नगरे संस्कृत विद्यालया। धर्मगरिष्ठित शिक्षणं राष्ट्रकल्याणाय कल्पते। अद्यतनी आङ्ग्लशिक्षा पद्धतिः मूलतः मपहृत परिवर्त्तनम्। तदानमेवास्माकं मानसिक पारतन्त्र्यमपगतं भविष्यति। परन्तु राजनैतिकपारतन्त्र्ये बौद्धिक मानसिक च पारतन्त्र्य कदापि अवलोक्यते परितः पम्फुल्यमानम्। न यावद् बौद्धिकपारतन्त्र्यमपहृतिता भविष्यति न तावत् भारतीयसंस्कृति परम्परासु श्रद्धा समुदेष्यति। भारतीयसंस्कृतिषु श्रद्धादरा यत्र जना भारत पुनरुद्धर्तुम् ... तत्र तत्र ताञ्च पुनरुज्जीवयितुं प्रभविष्यन्ति। सन्तोऽपि बहुधा भारत या अन्तर्मना ये अभारतीया न ते कापि राष्ट्रकल्याणे नापि लोककल्याणे च कर्त्तुं प्रभविष्णवो भविष्यन्ति। अतो राष्ट्रकल्याणभिकाङ्क्षिभिर्भारतीयैरियमसर्वात्मना समादरणीया संस्कृताध्ययनाध्यापनपरम्परा। परिरक्षयिष्यति राष्ट्रमिद धर्मगर्भित संस्कृत शिक्षणमेव तत् ध्रुवम्। इदमेवास्ति राष्ट्रस्य प्रखरतरसमस्याया नैतिकपतनलक्षणायाः समाधानमिति, नान्यः पन्था विद्यतेऽयनायेतिशम्।

लोकतन्त्र का पवित्र प्रतीक—
मतदान का बक्स

श्री व्रजभूषण विद्यार्थी

स्वतन्त्रता के बाद होने वाले पहले आम चुनाव में मत-पत्रों की गोपनीयता सुरक्षित रखने में भारत सरकार १,००,००,००० रुपये खर्च करेगी।

सुरक्षित स्थानों में रखे हुए २२, ६६, ४७८ छोटे हल्के इस्पात के बक्सों में मत पत्र डाले जाएंगे। कानून की दृष्टि से इन बक्सों में मत पत्र डालने में कोई भी हस्तक्षेप नहीं कर सकता। न ही इन्हें देख सकता है। प्रत्येक बक्स की कीमत औसतन चार से पांच रुपया तक होगी।

नासिक के सिक्योरिटी प्रिंटिंग प्रेस में भूरे अथवा हरे निशानों वाले ६२ करोड़ मत-पत्र छापे गये हैं। इन पर बड़े पेचीदा डिजायन की छपाई की गई है। और क्रम संख्या दी गई है। बनावटी मत पत्र बना सकना असम्भव कर दिया गया है।

मत-पत्र डालने के बक्स भारत की प्रसिद्ध कम्पनियों द्वारा बनवाये गये हैं और इन बक्सों में स्वयं ताला लग जाने की एक नयी व्यवस्था है। बक्से के ऊपर जो सूराख बनाया गया है वह मत पत्र डालने के लिये पर्याप्त चौड़ा है किन्तु इस ढंग का है कि इसके अन्दर से कोई कागज बाहर नहीं निकल सकता। इसमें एक ऐसा स्थान बनाया गया है जिसमें मतदान क्षेत्र, मतदान केन्द्र, मतदान के कमरे तथा उम्मेदवार की क्रम संख्याओं का कागज लगाया जायगा ताकि प्रत्येक बक्से का अलग अलग पता लगाया जा सके। ऊपर के ढक्कन को एक बार मुहर बन्द करने के बाद बिना मुहर तोड़े किसी प्रकार खोल सकना असम्भव है।

यदि किसी स्थान का बक्सा टूटा हुआ अथवा खुला हुआ पाया जायगा अथवा खो जायगा तो उस स्थान पर दुबारा मत पत्र डलवाये जायगे। बक्सा खोलने अथवा तोड़ने के प्रयत्नों से किसी को कोई भी लाभ नहीं हो सकेगा।

राज्यों की विधान सभा के चुनाव के लिये मत-पत्र डालने के बक्सों का रंग चाकलेट अथवा भूरा होगा और संसद के चुनाव के लिये हरा। उम्मेदवारों की संख्या के बराबर ही प्रत्येक मतदान के कमरे में बक्से रक्खे जायँगे।

चुनाव में भाग लेने वाले उम्मेदवारों ने आसानी से पहचाने जाने वाले निशानों को स्वीकार किया है, उदाहरणतया बैल, हाथी ऊंट, वृक्ष, झोपड़ी, मनुष्य का हाथ, साइकिल, सीढ़ी, नाव, लैम्प इञ्जनादि। प्रत्येक उम्मेदवार का निशान उसके बक्से के अन्दर और बाहर चिपका दिया जायगा। निशान के नीचे उसका नाम भी लिखा होगा। एक भोले भाले ग्रामीण को भी अपने इच्छित उम्मेदवार का बक्सा ढूंढ़ने में कोई कठिनाई न होगी। मत दाता का तो काम यही होगा कि वह अपने इच्छित उम्मेदवार का बक्सा पहचान कर उसमें अपना मत-पत्र डाल दे।

इस पद्धति में गलती होने का बहुत ही कम खतरा रह जाता है, क्योंकि देश के अधिकांश मतदाता पढ़े लिखे नहीं हैं और वे उम्मीदवारों के नाम नहीं पढ़ सकते हैं। इससे एक और लाभ यह है कि मतदान के समय में बचत होती है। मतदाताओं को बक्से में केवल मतदान पत्र ही डालना होता है।

इसबार मतदाता को, बिना किसी की सहायता के अपनी मर्जी से बक्से में मतपत्र डालना होगा। मतदान के समय एक ही मतदाता मतदान केन्द्र में रहेगा नहीं तो मतदान में गोपनीयता नहीं रहेगी। यदि कोई मतदाता अपना मतदान पत्र बक्से के अन्दर डालने की बजाय उसे बक्से के ऊपर ही छोड़ देगा तो उसका मत रद्द हो जायगा।

राज्य सभा और संसद के चुनावों के लिये मतदान एक साथ होगा इसीलिए प्रत्येक मतदान केन्द्र के दो विभाग होंगे, एक राज्य सभा के लिये तथा दूसरा संसद के लिए। इस प्रकार प्रत्येक मतदाता को पहले सभा के चुनाव के लिए भूरा मतदान पत्र दिया जायगा और जब वह अपना मत दे चुकेगा और मतदान के स्थान से बाहर आ जाएगा, तब उसे संसद के चुनाव के लिए हरा मत-पत्र दिया जायगा। यह मतपत्र दूसरे स्थान पर डाला जायगा। प्रत्येक मतदान केन्द्र के लिये लगभग एक हजार मतदाता होंगे और मतदान का समय आठ घण्टे होगा। इसलिए मतदान की गति प्रति मिनट दो या तीन मत होगी।

मतदाता का मत ही अन्त में यह निर्णय करेगा कि देश में किस प्रकार का कानून होना चाहिए, क्योंकि जनता द्वारा चुने गये बहु संख्यक प्रतिनिधि ही केन्द्र तथा राज्यों में सरकार बनायेंगे।

यदि चुनाव निष्पक्ष और स्वतन्त्र नहीं हुए तो लोकतन्त्र कहाँ रहा? स्वतन्त्र चुनावों की पहली आवश्यकता मतदान की गोपनीयता है। केवल मतदाता ही जाने कि उसने अपना मत किसको दिया है। और मतदान के बाद बक्सों के साथ छेड़छाड़ नहीं होनी चाहिए। गोपनीय मत पत्र द्वारा निर्वाचक को पूर्ण स्वतन्त्रता मिलती है। इसीलिये मतदान बक्से को लोकतन्त्र का पवित्र प्रतीक माना जाता है।

—

सिंहावलोकन

आज का चीन

श्री पं० सुन्दरलाल

(चीन से लौटे हुए भारतीय शिष्ट मण्डल के नेता)

चीन में आज जो व्यवस्था है यदि इसी का नाम साम्यवाद है तो वह भारत में भी फैले और समस्त विश्व में फैले। पर बात तो यह है कि जो साम्यवाद चीन में फैला हुआ है वह बहुत कुछ गांधीवाद का ही रूप है। चीन दो वर्ष पूर्व उन्हीं मुसीबतों में फंसा हुआ था जिनमें आज भारत के लोग फंसे हुए हैं। लेकिन चीन की जनता की सरकार ने बहुत कुछ महात्मा गांधी के मार्ग पर चल कर दो साल के अन्दर ही अन्न आदि समस्याओं को हल कर लिया, यहाँ तक कि वह अन्य देशों को भी अन्न भेजने लगा। चीन की सरकार में भ्रष्टता नहीं है।

चीन में जज और वाइस चांसलर आदि बड़े-बड़े पदाधिकारी तक साधारण आदमी की तरह रहते हैं और साधारण आदमियों के साथ मोटर-बसों में बैठकर चलते हैं। चीन के राष्ट्रपति का वेतन भारतीय मुद्रा में ६००) रु० है जो भारत के राष्ट्रपति के वेतन का १६ वाँ अंश है। अर्थात् यदि हमारे राष्ट्रपति का वेतन एक रुपया है तो चीन के राष्ट्रपति का वेतन एक आना ही है। चीन में अन्य बड़े बड़े राज्य-पदाधिकारियों का वेतन साढ़े तीनसौ रुपये और डेढ़सौ रुपये के बीच में ही है। नव चीन में वेतन नोटों के रूप में नहीं बल्कि अन्न के रूप में दिया जाता है। फैक्ट्रियों में मजदूरों और मैनेजर या डायरेक्टर के वेतनों का अनुपात प्रायः ३:८ है। एक बिस्कुट फैक्ट्री में एक महिला मजदूर का वेतन २५० यूनिट प्रति मास था जबकि उसके डायरेक्टर का वेतन केवल ३५० यूनिट था। फैक्ट्री के मजदूर और मैनेजर या एक चपरासी व एक विश्वविद्यालय के वाइस चांसलर में कपड़ों की दृष्टि से कठिनाई से अन्तर देखा जा सकता है।

चीनी अधिकारी अपने मिलों के उत्पादन में और योग देने के उद्देश्य से अपने गृह उद्योगों को प्रोत्साहन व सहायता देते हैं। पेकिंग में एक समूचा बाजार ऐसा है जहां केवल हाथ से बना हुआ कपड़ा ही बेचा जाता है। इस कपड़े में बहुत सा हाथ कता भी होता है। शंघाई में चीनियों ने भारतीय प्रतिनिधि मण्डल के प्रत्येक सदस्य को चीनी गांवों में तैयार किये गये हथकते व हथबुने कपड़े के दो दो टुकड़े उपहार स्वरूप भेंट किये थे।

चीन में म० गांधी और [illegible]

नेहरूजी का बहुत सम्मान है। चीन में साधारण जन ही हकूमत चलाते हैं सबको अपनी जायदाद रखने का अधिकार है, अपने ढंग से पूजा करने की पूरी स्वतन्त्रता है, यहां तक कि चीन की सरकार चीन में उस समय हिन्दुओं के एक मन्दिर की मरम्मत करा रही थी जिस समय हम चीन की यात्रा कर रहे थे। चीन में मत प्रकाशन की पूर्ण स्वतन्त्रता है, समाचार पत्र स्वतन्त्रता पूर्वक सरकार की टीका-टिप्पणी करते हैं। समाचार पत्रों में वहां कोई अश्लील विज्ञापन नहीं छापा जाता, हमें वहाँ कोई नङ्गी तस्वीर दिखाई नहीं दी, वहाँ कोई युवती ओठों को लाल रंग से नहीं रंगती, चीन में जमीदारी प्रथा उठा दी गई है और जिनके पास अतिरिक्त भूमि थी वह उनसे छीनकर उन मजदूरों को देदी गई है जिनके पास भूमि नहीं थी। चीन में भंगी नहीं हैं, वहाँ सब लोग स्वयं यह काम करते हैं, चीन में सूअर भी मल नहीं खाते। चीन मे फौजी खर्च है ही नहीं, वहा प्रत्येक सैनिक प्रतिदिन ७ घंटे खेतों में काम करता है। वहा कोई कम्पनी २० प्रतिशत से अधिक मुनाफा नहीं ले सकती, इतना लाभ कमाने में सरकार भी सहायता करती है। चीन के लोग भारत से मैत्री बनाए रखना और उसे अधिकाधिक गाढ़ी करना चाहते हैं।

चीन में भारत की भांति जनसंख्या वृद्धि की कोई समस्या नहीं है। बल्कि चीन के नेता चाहते है कि भारत की अतिरिक्त जन-संख्या चीन भेज दी जाय और चीन की सरकार उनके पालन-पोषण और अन्य व्ययादि का प्रबन्ध कर देगी।

जो लोग चीन की सरकार को साम्यवादी सरकार कहते हैं, वे भ्रम में हैं, वहाँ एक मिली-जुली सरकार है जिसमें देश की सभी पार्टियो के प्रतिनिधि शामिल हैं।

चीन की सरकार में साम्यवादियों की संख्या सरकार के कुल सदस्यों की केवल एक-तिहाई है। यदि नव चीन साम्यवादी है तो उसका साम्यवाद चीनी साम्यवाद है जो वहा की जनता की परम्पराओं व ज्ञान के अनुकूल है।

नव चीन ने अपनी कानूनी अदालतों की प्रणाली में क्रांतिकारी परिवर्तन किये हैं। वहां अब तीन प्रकार की अदालतें हैं—(१) जन अदालतें जो हमारी जिला अदालतों के समान हैं, (२) प्रांतीय अदालतें जो हमारे उच्च न्यायलयों के समान हैं तथा (३) पेकिंग स्थित उच्चतमन्यायालय जिसकी शाखाए प्रांतो में भी होती हैं। नव चीन ने वकालत की पश्चिमी प्रणाली समाप्त कर दी है। जिस समय नई सरकार पदारूढ़ हुई थी उस समय अकेले शंघाई नगर में १२०० वकील थे, आज वहां एक भी वकील नहीं है। सरकार ने इन १२०० वकीलों में से ५ ईमानदार तथा योग्य व्यक्तियों को छांटा जिन्हे उसने "जन-अधिकार-रक्षक' का नाम दिया। कठिन तथा जटिल मामलों में अदालतें उनकी सहायता लेती हैं। सरकार उन्हे वेतन देती है। आज कोई भी व्यक्ति अपने मुकदमे की पैरवी के लिए चीन में वकील नहीं कर सकता। चीन में मुकदमेबाजी बहुत कम हो गई है। जो मुकदमे अदालतों के सामने आते हैं उनके संबध में न्याय- व्यवस्था पूर्व चीनी सरकार से तथा हमारे देश की अपेक्षा अधिक सस्ती, अविलम्बकारी तथा निश्चित है।

नव चीन की सरकार ने अपनी अपराधियों का सुधार उन्हें दण्ड देने की अपेक्षा ट्रेनिंग, सामाजिक दबाव तथा नैतिक प्रभाव से किया है। जो लोग नव चीन सरकार के विरुद्ध क्योमिताग पक्ष की ओर से लड़े थे उनमें से अधिकांश को क्षमा करके वफादार नागरिक बना लिया गया है।

नवचीन में तीन गुणों—ईमानदारी, सादापन तथा सेवा पर बल दिया जाता है। मेरा विश्वास है कि नवचीन हमारे अपेक्षा महात्मा गांधी के कुछ आदर्शों के अधिक निकट है। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है यदि हम सीखने की इच्छा रखे तो हम अपने देश के विकास तथा अपनी जनता की हालत सुधारने में चीन से बहुत कुछ सीख सकते हैं।

साहित्य-सौरभ

आर्य डायरी—(१९५२) प्रकाशक राजपाल एन्ड सन्स, आर्य पुस्तकालय नई सड़क देहली, मूल्य एक प्रति एक रुपया।

आर्य साहित्य के प्रसिद्ध प्रकाशक राजपाल एन्ड सन्स प्रति वर्ष आर्य पुरुषों के दैनिक व्यवहार के लिये 'आर्य डायरी' प्रकाशित करते हैं, इस वर्ष भी उन्होंने यह आर्य डायरी प्रकाशन की है। इस डायरी में ३६५ दिन तिथि, पक्ष, मास पर्व आदि के आवश्यक उल्लेख के अतिरिक्त अन्य कई उपयोगी विवरण दिये गये हैं। डायरी के आरम्भ में आर्य जगत् सम्बन्धी आवश्यक ज्ञातव्य नित्य कर्म और पञ्च महा यज्ञों का वर्णन, विशेष नैमित्तिक मन्त्रों का पाठ, स्वास्थ्य के नियम व योगासन आदि का वर्णन है। डायरी के प्रत्येक पृष्ठ पर वेद मन्त्र अर्थ सहित दिया गया है जो दैनिक स्वाध्याय का उत्तम साधन है। उपर्युक्त विशेषताओं के साथ बढ़िया कागज और कपड़े की जिल्द वाली यह डायरी प्रत्येक व्यक्ति के लिये और विशेषकर आर्यमात्र के लिये अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी।

वैदिक (दैनन्दिनी)—डायरी सन् १९५२ प्रकाशक—आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब, जालन्धर शहर, मूल्य एक प्रति चौदह आना,

आर्यों के जीवन में प्रतिदिन अपना कार्य क्रम अंकित करने और अन्य उपयोगिताओं के लिये पंजाब आ० प्र० नि० सभा इस डायरी का गत कई वर्षों से प्रकाशन करती रही है। सन् ५२ के लिये प्रकाशित इस डायरी में दिनांक, तिथि, मास, वार्षिक, पर्व, अवकाश, सूची के अतिरिक्त आरम्भ में प्रवचन, उपासना विधि, वैदिक सन्ध्या, यज्ञ, आरती आदि का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। डायरी के प्रत्येक पृष्ठ पर उपयोगी एवं स्मरणीय मन्त्रांश अर्थ सहित दिये गये हैं। इस प्रकार आर्य जीवन के अनेक उपयोगी विवरणों उद्धरणों के कारण यह डायरी जीवन में वैदिक भावना के विकास में अधिक सहायक सिद्ध होगी।

ईश्वर मिलाप—लेखक वीतराग श्री स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज, प्रकाशक—आर्य प्रकाशन मण्डल, देहली, सार्वदेशिक प्रेस पटौदी हाउस दरियागंज देहली नं० ७, पृष्ठ संख्या ४८ मूल्य आठ आना।

प्रस्तुत पुस्तक में आर्य समाज के सुप्रसिद्ध सन्यासी श्री सर्वदानन्दजी महाराज के ईश्वर सम्बन्धी अध्यात्मिक प्रवचन दिये गये हैं। ईश्वर के मुख्य विशेषण ओ३म् के सम्बन्ध में उनके सभी महत्वपूर्ण विचार इस छोटी सी पुस्तक में आ गये हैं, वेद, दर्शन, उपनिषदादि में ओ३म् सम्बन्धी वाक्यांशों को आधार मान स्वामीजी ने बड़े सुन्दर प्रकार और व्यावहारिक भाषा में ईश्वर के साथ जीव के सम्बन्धों की व्याख्या की है। ईश्वरोपासना और उसके प्रकारों पर भी संक्षिप्त प्रवचन दिया गया है। इस प्रकार इस छोटी सी पुस्तक में अध्यात्म धारा की गंगा बह रही है। स्वाध्याय प्रेमियों के लिये पुस्तक बहुत लाभदायक सिद्ध होगी। आकर्षक गेट-अप और अच्छे कागज पर सुन्दर छपाई के लिये प्रकाशक प्रशंसा के पात्र हैं।

स्वाध्याय संग्रह लेखक श्री स्वामी वेदानन्दजी तीर्थ, प्रकाशक तथा प्राप्ति स्थान पूर्वोक्त मूल्य सजिल्द का दो रुपया।

श्री स्वामीजी ने दैनिक स्वाध्याय करते हुए कुछ उपयोगी मन्त्र संग्रह किये और वेद में रुचि रखने वाली जनता के लिये उनका सरल भाषा में भाष्य के साथ संग्रह किया, वही संग्रह प्रस्तुत पुस्तक में है। इस संग्रह में स्वाध्याय की उपयोगिता के अतिरिक्त आर्य जीवन के सिद्धान्तों और आर्य समाज के मन्तव्यों की पुष्टि करने वाले मन्त्रों का भी संकलन और भाष्य किया गया है। उपदेशक और प्रचारक इस ग्रन्थ से बहुत लाभ उठा सकते हैं। हमें आशा है प्रत्येक आर्य के दैनिक स्वाध्याय के लिये यह संग्रह बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। और आकर्षक गेटअप उत्तम कागज पर सुन्दर छपाई के लिये प्रकाशक विशेष प्रशंसा के अधिकारी हैं।

वर की आवश्यकता

मुझे अपनी सुशिक्षित कन्या के लिये एक योग्य वर की आवश्यकता है। जो कि वैदिक सभ्यता के अनुकूल हो और किसी ऊँची श्रेणी में शिक्षा प्राप्त करता हो या रोजगार से लगा हो।

कन्या की आयु १५ साल की है, संस्कृत शिक्षा प्राप्त कर रही है। गृह कार्य तथा कला कौशल में निपुण है। विवाह कायस्थ बारह जाती में हो सकता है।

पता—महाराज बहादुर सक्सेना
फोरेस्ट रेंज आफिसर, (टिकरी रेंज)
पो० मनकापुर, जि० गोंडा

———

आवश्यकता

एक १७ वर्षीय विधवा (कन्यावत) के लिये कान्यकुब्ज वर की आवश्यकता है वर महोदय २५ से ३० वर्ष की आयु के अन्तर्गत हों तथा अच्छी पोस्ट पर हो या अच्छा रोजगार करते हों। उत्तर प्रदेश के वास्तव्यों को विशेषता दी जायगी विवाह इसी वर्ष होगा। दहेज के इच्छुक पत्र व्यवहार का कष्ट न करें। पता:

—आचार्य प० रामनारायण शास्त्री आर्य संस्कृत विद्यालय बिलासपुर, रामपुर उ० प्र०

आर्यमित्र प्रकाशन लि० लखनऊ के लिए, यज्ञदत्त शर्मा द्वारा, निराला प्रेस, आगरा से मुद्रित और प्रकाशित

It might slowly grow to that Federal Council to which we must always look forward as our ultimate ideal

And to a council of this kind would be committed, in the first instance, the discussion of all minor subjects of common interest, and their opinion would be taken and would weigh most materially in the balance before any decision were come to either by this country or by the legislatures of the several Colonies in regard to such matters

There is only one point in reference to this which it is absolutely necessary that we all should bear in mind It may be that the time has come, and if not I believe it will come, when the Colonies will desire to substitute for the slight relationship which at present exists a true partnership, and in that case they will want their share in the management of the Empire which we like to think is as much theirs as it is ours. But, of course, with the privilege of management and of control will also come the obligation and the responsibility There will come some form of contribution towards the expense for objects which we shall have in common. That, I say, is self-evident, but it is to be borne in mind, even in these early stages of the consideration of the subject

Now, gentlemen, in connexion with this subject we have already made a small advance, upon which I congratulate myself, since it was accomplished during my term of office, though it was prepared by my predecessors, and it may have in the future important results. The Judicial

Committee of the Privy Council is the great Judicial Court of Appeal of the Empire. It is the nearest approach, the closest analogy, to the Supreme Court of the United States It is a body of almost universal and world-wide reputation and authority, and it is our desire naturally, in pursuit of the ideas which I am venturing to put before you, to increase its authority, if that be possible, and to give it a more representative character, and with that view we have most gladly secured the appointment as Privy Councillors of distinguished Judges from the courts of Canada, of Australia, and of South Africa, and they now will take their seats on equal terms with the other members of the Judicial Committee. Well, gentlemen, that is a good beginning, but I do not think that you can feel that at present the arrangement is on a permanent footing There are objections to the present system which will present themselves to every mind The Judges who have been chosen have hitherto been Judges who are still in active practice That at the outset raises a considerable difficulty It will be difficult for these Judges, even if it were consistent with our general idea of what is right, to take part in appeals in regard to cases upon which they have already decided. And another difficulty is that by the necessity of their position the greater part of their time will be spent in the colonies from which they come They will only be here for indefinite periods, and as it were on casual occasions. It is impossible to arrange the business of the Privy Council or to delay the suitors to meet their convenience, and the result

of that is that though they would sit as Judges of the Privy Council, it may very often happen that they would not be present or be able to serve precisely on the occasions on which they might be most useful. Now all that could be altered by the Colonies themselves, and this is one of the subjects which I recommend to your attention If these gentlemen were appointed solely and entirely for the purpose of representing the groups of Colonies on the Privy Council, they could reside permanently in this country, and not being themselves actively engaged in judicial work at home, they could sit and assist the Privy Council in all cases in which their respective Colonies were engaged, and I think this would go very far to strengthen the position of the Privy Council, and at the same time to give to all the Colonies a security that justice would be done when they appeal to this great institution May I note in passing a matter of some importance in regard to the proposed Australian Federation Bill? It appears in that Bill to be suggested that if it is passed appeals should only go to the Privy Council upon constitutional questions. I venture most respectfully to urge the reconsideration of that suggestion. Nothing is more desirable in the interests of the Colonies, in the interests of the United Kingdom and of the British Empire, than an uniformity of law, and that uniformity can only be obtained by occasional appeals to the highest tribunal, settling once for all the law for all parts of the Empire, and I confess I think it would be a great loss to the Colonists if they surrendered the opportunity of getting this judicial

decision upon difficult and complicated points of law which from time to time may arise in the local courts.

Defence

I have said that the question to which I first directed your attention—that of closer relations—is greater than all the rest I may say that it covers all the rest, because, of course, if Federation were established, or anything approaching to it, all these other questions to which I am now about to call your attention would be settled by whatever was the representative body of the Federation, and among them, and in the very first rank, must of necessity come the question of Imperial defence. Gentlemen, you have seen something of the military strength of the Empire; you will see on Saturday an astounding representation of its naval strength, by which alone a Colonial Empire can be bound together. You are aware that that representation—great, magnificent, unparalleled as it will be—is nevertheless only a part of the naval forces of the Empire spread in every part of the globe The great Mediterranean fleet is still at its full force; the fleets on the various stations are all up to their normal strength, and the fleet which you will see on Saturday next is merely the Reserve and the Home fleet, ready to go anywhere, at any time, in the interests of the Colonies and of the United Kingdom

This gigantic navy, and the military forces of the United Kingdom, are maintained, as you

know, at heavy cost I think the charge upon the Exchequer is at the present time something like 35 millions sterling per annum, and it constitutes more than one-third of the total income of the country Now, these fleets, and this military armament, are not maintained exclusively, or even mainly, for the benefit of the United Kingdom, or for the defence of home interests, They are still more maintained as a necessity of empire, for the maintenance and protection of Imperial trade and of Imperial interests all over the world, and if you will for a moment consider the history of this country during, say, the present century, or, I would say, during the present reign, you will find that every war, great or small, in which we have been engaged, has had at the bottom a colonial interest, the interest, that is to say, either of a colony, or of a great dependency like India That is absolutely true, and is likely to be true to the end of the chapter. If we had no Empire, there is no doubt whatever that our military and our naval resources would not require to be maintained at anything like their present level.

Now I venture to say that that must necessarily be the case in the future. Look at the condition of the Colonies Assume,—although I am almost ashamed to assume it, even for the purpose of argument,—assume that these Colonies were separated from the mother country What would be the position of the great Dominion of Canada? The Dominion of Canada is bordered for 3,000 miles by a most powerful neighbour, whose potentialities are infinitely greater than her actual resources She comes into conflict in

regard to the most important interests with the rising power of Japan, and even in regard to some of her interests with the great empire of Russia Now, let it not be supposed for a moment that I suggest as probable—I hardly like to think that it is even possible—that there should be a war between Canada, or on behalf of Canada, either with the United States of America, or with any of the other Powers with which she may come into contact; but what I do say is this, that if Canada had not behind her, to-day, and does not continue to have behind her this great military and naval power of Great Britain, she would have to make concessions to her neighbours, and to accept views which might be extremely distasteful to her in order to remain permanently on good terms with them She would not be able to, it would be impossible that she should, herself control all the details of her own destiny, she would be, to a greater or less extent, in spite of the bravery of her population and the patriotism of her people, she would still be, to a great extent, a dependent country

Look at Australia again. I need not dwell on the point at any length, but we find the same thing. The interests of Australia have already, on more than one occasion, threatened to come into conflict with those of two of the greatest military nations of the Continent, and military nations, let me add, who also possess each of them a very large, one of them an enormous, fleet There may be also questions of difficulty arising with Eastern nations, with Japan or even with China, and under those circumstances the

Australasian Colonies are in precisely the same position as the Dominion of Canada. In South Africa, in addition to the ambitions of foreign countries, to which I need not further allude, our Colonies have there domestic rivals who are heavily armed, prepared both for offence and for defence, and again I say, nothing could be more suicidal or more fatal than for any of those great groups of Colonies either to separate themselves in the present stage from the protecting forces of the mother country, or to neglect themselves to take their fair share in those protective resources

What, then, I want to urge upon you is, and in doing so I think I am speaking to those who are already converted, that we have a common interest in this matter, and certainly it has been a great pleasure to us, a great pride to us, that Australia, in the first instance, offered voluntarily a contribution in aid of the British Navy besides taking her full share of her own military defences Now we have to recognize that the Cape Colony has followed in that patriotic course I do not know upon what conditions these gifts may be offered or continued, but, at all events, the spirit in which they have been made is most heartily reciprocated in this country The amount, of course, is at the present time absolutely trifling, but that is not the point We are looking to the Colonies as still children, but rapidly approaching manhood In the lifetime, perhaps, of some of us, we shall see the population doubled, and certainly in the lifetime of our descendants there will be great nations where now there are comparatively sparse populations, and to establish

in the early days this principle of mutual support and of a truly Imperial patriotism, is a great thing of which our Colonial statesmen may well be proud

I shall be very glad to hear the views of the Premiers in regard to this question of any contribution which they think the Colonies would be willing to make in order to establish this principle in regard to the naval defence of the Empire. As regards the military defence of the Empire, I am bound to say that we are still behindhand, although a great deal has been done in recent years. As you know, the Colonial Defence Committee of experts has been sitting, and has accomplished already, with the assistance of the Colonies, a very great improvement in the state of things which existed before, but I cannot say from the information at my disposal that with all the magnificent resources of the Colonies their organization at present is satisfactory. This is more a matter of detail, and I do not propose to dwell upon it now, but I would remind the Premiers assembled that if war breaks out war will be sudden, and there will be no time for preparation then. Therefore it is of the first importance that we, all having a common interest, should have beforehand a scheme of common defence against any possible or at all events any probable enemy, and we ought to have these schemes of defence before us In the case of some of the Colonies schemes have already been prepared; in others no scheme has been prepared or concerted up to the present time, and I believe it is most desirable that that omission should be repaired It is also

most desirable, in Australia especially, and to a lesser extent, although still to an important extent in South Africa, that there should be an uniformity in regard to the military preparations An uniformity of arms is, I need scarcely say, of immense importance, as it gives us interchangeability of weapon, and there are also uniformity of equipment, some central provision for stores, and for the military instruction of the local forces, all of which can be arranged with the assistance of the Colonies, and, I believe, very much to their advantage

Exchange of Military Forces

But I am looking forward to something more than that. The interchangeability in the several groups is a matter of great importance, but how much greater it would be if there were interchangeability between the whole forces of the Empire, between the forces which you have in the several Colonies and the forces of which you have seen some examples at home since you came to these shores That is a matter which also can be arranged, and to which we shall bring at all events the utmost good-will. If you have, as Canada has at Kingston, an important military college, it may be possible for us to offer occasionally to the cadets of that college commissions in the British Army But a still more important matter which has suggested itself to my mind, and which now I desire to commend to your earnest attention, is a proposal which may be described as the interchangeability of military

duties. To put it into plain English it means this that, for instance, a Canadian regiment should come to this country, take up its quarters for a period of time, at least 12 months, with the British army, and form, during the whole time that it is in this country, a part of the British army, and that in return a similar regiment of British troops, or a brigade of artillery or cavalry, should go to Canada and should reside and exercise with the Canadian army, and form a part of that army. The idea is that this should be chiefly for the purpose of drill and instruction, and I cannot doubt that it will be of enormous advantage to the Canadian troops, and to the troops of the Colonies, to measure themselves against the regular army, and to learn the discipline and the manœuvres which are practised on a large scale in this country

But my imagination goes even further. It seems to me possible that, although in the first instance the idea is that such a regiment coming to this country would come solely for that purpose and would not be engaged in military operations, yet if it were their wish to share in the dangers and the glories of the British army and take their part in expeditions in which the British army may be engaged, I see no reason why these colonial troops should not, from time to time, fight side by side with their British colleagues. That, however, is a matter which, like everything else which I am putting before you, is not a recommendation which has any pressure behind it, it is merely a suggestion to be taken up by you voluntarily if it commends itself to your

minds What I have suggested might take place with regard to Canada, I believe might equally take place with regard to such fine forces as those of which we have seen representatives from some of the Colonies of Australia, and might take place also with regard to the South African Colonies

Commercial Relations

I pass on, then, to another question, and that is as to the future commercial relations between this country and her Colonies How far is it possible to make those relations closer and more intimate? I have said that I believe in sentiment as the greatest of all the forces in the general government of the world, but, at the same time, I should like to bring to the reinforcement of sentiment the motives which are derived from material and personal interest. But undoubtedly the fiscal arrangements of the different Colonies differ so much among themselves, and all differ so much from those of the mother country, that it would be a matter of the greatest complication and difficulty to arrive at any conclusion which would unite us commercially in the same sense in which the Zollverein united the Empire of Germany It may be borne in mind that the history of that Zollverein is most interesting and most instructive It commenced entirely as a commercial convention, dealing in the first instance only partially with the trade of the Empire, it was rapidly extended to include the whole trade of the Empire, and it finally made possible and encouraged the ultimate union of the Empire

But this is a matter upon which at the present time, rather than suggest any proposals of my own, I desire to hear the views of the gentlemen present

In the meanwhile, however, I may say that I note a resolution which appears to have been passed unanimously at the meeting of the Premiers in Hobart, in which the desire was expressed for closer commercial arrangements with the Empire, and I think it was suggested that a Commission of Inquiry should be created in order to see in what way practical effect might be given to the aspiration If that be the case, and if it were thought that at the present time you were not prepared to go beyond inquiry, if it were the wish of the other Colonies, of Canada and of the South African Colonies, to join in such an inquiry, her Majesty's Government would be delighted to make arrangements for the purpose, and to accept any suggestions as to the form of the reference and the character and constitution of the Commission, and would very gladly take part in it.

But that brings me to another question connected with commercial relations, and of great importance I refer to the treaties at present existing between the mother country, acting on behalf of the Colonies as well as of herself, and foreign countries The question has been raised at various times in the shape of resolutions or suggestions from the Colonies that certain treaties, notably a treaty with Germany and a treaty with Belgium, should be denounced. It should be borne in mind that that is for us a most important question. Our trade with Germany and

Belgium is larger than our trade with all the Colonies combined. It is possible that if we denounced those treaties Germany and Belgium would endeavour, I do not say whether they would succeed, but they might endeavour to retaliate, and for some time, at any rate, our commercial relations with these two countries might be disturbed Therefore a step of that kind is one which can only be taken after the fullest consideration, and in deference to very strong opinion both in this country and in the Colonies. Now the question is brought to a practical issue, or may be brought to a practical issue, by the recent action of Canada. As all are aware, Canada has offered preferential terms to the mother country, and Germany and Belgium have immediately protested and claimed similar terms under these treaties. Her Majesty's Government desire to know from the Colonies whether, so far as they are concerned, if it be found that the arrangements proposed by Canada are inconsistent with the conditions of those treaties, they desire that those treaties shall be denounced If that be the unanimous wish of the Colonies, after considering the effect of that denunciation upon them as well as upon us, because they also are concerned in the arrangements which are made by these treaties, then all I can say at the present time is that her Majesty's Government will most earnestly consider such a recommendation from the Colonies, and will give to it the favourable regard which such a memorial deserves

But I should add that there is another question which is still more difficult, but about

which I only wish to offer a word of warning to the representatives present. Besides those two treaties which are very special in their terms, and which prevent the preferential arrangement or which appear to prevent the preferential arrangement contemplated by Canada, we have a most favoured nation clause in all our treaties to which most of the Colonies are parties I may explain that, under the terms of the Canadian resolution, if any foreign nation were to offer to Canada beneficial terms as defined in the resolution, Canada would then be bound to give to that country the same preference as is offered to Great Britain Let me suppose, for instance, that it was a minor country like Holland, and assume for the sake of argument that Holland offered these advantages, thereupon Canada would be compelled to give the same terms to Holland that she now offers to the mother country She would then be bound by most favoured nation treaties to give the same terms to practically every important commercial country in the world It would be, I think, a matter of impossibility to denounce those treaties, because that involves the whole trade of the Empire, and in some cases there is no term of denunciation in the treaties

But of course the whole difficulty can be avoided—I only point it out in passing—the whole difficulty can be avoided by any Colony which desires to make the preferential arrangement with the mother country, if that Colony will confine its offer *nominatim* to the mother country and not make it to a foreign country, but if it is offered to a foreign country then, as I say, it will be con-

trolled by the most favoured nation treaties throughout the world.

. . . . .

Alien Immigration

One other question I have to mention, and only one, that is, I wish to direct your attention to certain legislation which is in process of consideration, or which has been passed by some of the Colonies, in regard to the immigration of aliens, and particularly of Asiatics

I have seen these Bills, and they differ in some respects one from the other, but there is no one of them, except perhaps the Bill which comes to us from Natal, to which we can look with satisfaction I wish to say that her Majesty's Government thoroughly appreciate the object and the needs of the Colonies in dealing with this matter We quite sympathise with the determination of the white inhabitants of these Colonies which are in comparatively close proximity to millions and hundreds of millions of Asiatics that there shall not be an influx of people alien in civilization, alien in religion, alien in customs, whose influx, moreover, would most seriously interfere with the legitimate rights of the existing labour population An immigration of that kind must, I quite understand, in the interest of the Colonies, be prevented at all hazards, and we shall not offer any opposition to the proposals intended with that object, but we ask you also to bear in mind the traditions of the Empire, which makes no distinction in favour of, or against race or colour, and to exclude, by

reason of their colour, or by reason of their race, all her Majesty's Indian subjects, or even all Asiatics, would be an act so offensive to those peoples that it would be most painful, I am quite certain, to her Majesty to have to sanction it. Consider what has been brought to your notice during your visit to this country The United Kingdom owns as its brightest and greatest dependency that enormous Empire of India, with 300,000,000 of subjects, who are as loyal to the Crown as you are yourselves, and among them there are hundreds and thousands of men who are every whit as civilized as we are ourselves, who are, if that is anything, better born in the sense that they have older traditions and older families, who are men of wealth, men of cultivation, men of distinguished valour, men who have brought whole armies and placed them at the service of the Queen, and have in time of great difficulty and trouble, such for instance as on the occasion of the Indian Mutiny, saved the Empire by their loyalty I say, you, who have seen all this, cannot be willing to put upon those men a slight which I think is absolutely unnecessary for your purpose, and which would be calculated to provoke ill-feeling, discontent, irritation, and would be most unpalatable to the feelings not only of her Majesty the Queen, but of all her people.

What I venture to think you have to deal with is the character of the immigration It is not because a man is of a different colour from ourselves that he is necessarily an undesirable immigrant, but it is because he is dirty, or he is immoral, or he is a pauper, or he has some other

objection which can be defined in an Act of Parliament, and by which the exclusion can be managed with regard to all those whom you really desire to exclude Well, gentlemen, this is a matter I am sure for friendly consultation between us As I have said, the Colony of Natal has arrived at an arrangement which is absolutely satisfactory to them, I believe, and remember they have, if possible, an even greater interest than you, because they are closer to the immigration which has already begun there on a very large scale, and they have adopted legislation which they believe will give them all that they want, and to which the objection I have taken does not apply, which does not come in conflict with this sentiment which I am sure you share with us, and I hope, therefore, that during your visit it may be possible for us to arrange a form of words, which will avoid hurting the feelings of any of her Majesty's subjects, while at the same time it would amply protect the Australian Colonies against any invasion of the class to which they would justly object Now, gentlemen, I really owe you a humble apology for having detained you so long, but I thought that it might be to your convenience that this recapitulation should be made of some things which might be treated in our discussions, and I have only now to thank you very much for your kindness in listening to me so patiently, and to express a hope that you will be good enough to give me generally and at this stage in our proceedings your ideas as to the course which we should take in regard to our future meetings

4. THE ADMIRALTY MEMORANDUM ON IMPERIAL DEFENCE, PRESENTED TO THE COLONIAL CONFERENCE OF 1902

THE importance which attaches to the command of the sea lies in the control which it gives over sea communications. The weaker sea-power is absolutely unable to carry to success any large military expedition over sea The truth of this is shown by reference to the history of the past

In ancient times the Greek victory of Salamis threatened the Persian communications across the Dardanelles, and doubtless this danger contributed to bring about their retreat into Asia

The failure of the famous Syracusan expedition was due to the defeat of the Athenian fleet, and had its modern counterpart in the failure of Admiral Graves off the entrance to Chesapeake Bay in 1781 In both cases the army had to surrender because its communications were cut The defeat of Nikias dealt a heavy blow to the supremacy of Athens, and may, perhaps, be said to have been one of the principal events which led to her downfall The surrender of Cornwallis, at Yorktown, was the prelude to the independence of the United States

The main cause of the failure of the expedition of Napoleon to Egypt was the defeat of the French fleet at the Nile, which was the first step towards cutting his communications with France, and the subsequent surrender of the French army

On the other hand, the advantages which accrue to the stronger sea-power, after it has won the command of the sea, are equally illustrated by historical example

The fall of Quebec and the conquest of French Canada was mainly due to the fact that our superior sea-power closed the Gulf of St Lawrence to the French and opened it to us. In any similar struggle in the future, this route will be as vital as in the past

The expedition to Egypt under Abercromby, in 1801, the Peninsular War, the expedition to the Crimea, the South African War, just concluded, are all instances of great military enterprises which could only have been carried out by a nation holding the command of the sea.

The command of the sea is determined by the result of great battles at sea, such as Salamis, Actium, Lepanto, those which led up to the defeat of the Armada, and those between the Dutch and English in the 17th century, in which each side concentrated his whole available force for the decisive struggle

To any naval Power the destruction of the fleet of the enemy must always be the great object aimed at. It is immaterial where the great battle is fought, but wherever it may take place the result will be felt throughout the world, because the victor will afterwards be in a position to spread his force with a view to capturing or destroying any detached forces of the enemy, and generally to gather the fruits of victory, in the shape of such outlying positions as the New Hebrides, Fiji, Singapore, Samoa, Cuba, Jamaica, Martinique,

the Philippines, Malta, or Aden, which may be in possession of the enemy, his shipping and commerce, or even to prosecute such oversea campaigns as those in the Peninsula and South Africa.

Stress is laid on the importance of the great battle for supremacy, because the great development of the navies of France, Germany, the United States, and Russia, indicates the possibility that such battles may have to be fought in the future. It is the battle-ships chiefly which will have to be concentrated for the decisive battle, and arrangements with this object must be made during peace.

The geographical conditions and the varied interests of the maritime powers present such complete concentration in modern times as was prac ticable in the past. Thus Russia divides her battle-ships between the Baltic and Pacific; the United States between the Atlantic and Pacific; both Germany and France have concentrated in European waters, where also the greater part of the British battle-ships are massed

Our possible enemies are fully aware of the necessity of concentrating on the decisive points. They will endeavour to prevent this by threatening our detached squadrons and trade in different quarters, and thus obliging us to make further detachments from the main fleets. All these operations will be of secondary importance, but it will be necessary that we should have sufficient power available to carry on a vigorous offensive against the hostile outlying squadrons without unduly weakening the force concentrated for the decisive battle, whether in Europe or elsewhere

The immense importance of the principle of

concentration and the facility with which ships and squadrons can be moved from one part of the world to another—it is more easy to move a fleet from Spithead to the Cape or Halifax than it is to move a large army, with its equipment, from Cape Town to Pretoria—points to the necessity of a single navy under one control, by which alone concerted action between the several parts can be assured

In the foregoing remarks the word *defence* does not appear It is omitted advisedly, because the primary object of the British Navy is not to defend anything, but to attack the fleets of the enemy, and, by defeating them, to afford protection to British Dominions, shipping, and commerce This is the ultimate aim.

To use the word *defence* would be misleading, because the word carries with it the idea of a thing to be defended, which would divert attention to local defence instead of fixing it on the force from which attack is to be expected

The traditional rôle of the British Navy is not to act on the defensive, but to prepare to attack the force which threatens—in other words, to assume the offensive On one occasion England departed from her traditional policy, and, acting on the defensive, kept her ships in harbour unrigged and unmanned, with the result that the Dutch fleet sailed up the Medway and burnt the ships of war at their moorings

The strength and composition of the British Navy, or of any British squadron, depends, therefore, upon the strength and composition of the hostile forces which it is liable to meet

The total estimated National Expenditure for 1902-3, exclusive of war charges, amounts to £129,159,000, of which the Navy Estimates account for £31,255,500, or about one-fourth, which is equal to a contribution of 15*s.* 1*d* per head of the population of the United Kingdom. If this were divided equally per head among the white population of the Empire, the charge per head would amount to 12*s* 0¼*d* For the actual naval expenditure per head in the several parts of the Empire, see Appendix A.

The annual value of British Trade (including Bullion and Specie), which it is the ultimate object of the Navy to protect, amounted, in 1900, to

Trade of United Kingdom with Foreign Countries	£711,838,000
Trade of United Kingdom with British Dominions beyond the Seas .	237,098,000
	£948,936,000
Trade of British Dominions beyond the Seas with Foreign Countries and among themselves	254,342,000
Total Trade of Empire	£1,203,278,000

The figure £254,342,000 has been arrived at by deducting a sum of £72,624,000 from the sum of the total amounts of Trade, of all the Dominions, in order to allow for the duplication of the reciprocal Trade of those Dominions among themselves.

It will be seen that about one-fifth of the Total Trade of the Empire is not directly connected with the United Kingdom.

The question may, with advantage, be further considered with reference to .

1 Atlantic Ocean
2 Eastern Seas and Pacific Ocean.

The British Trade which passes the West Coast of Africa cannot be placed at a less value than £140,000,000 per annum, of which about one-fifth is with South African ports, one-third with Australasia, and one-third with South America South Africa, Australia, and New Zealand are, therefore, each interested in the maintenance of a squadron on the West Coast of Africa sufficiently powerful to protect this Trade.

The Trade of the United Kingdom with the Atlantic Coast of the Continent of North America amounted, in the year 1900, to £218,000,000; of which about £30,000,000 was with Canada

So far as can be estimated, Canada had also about £14,000,000 of sea-borne Atlantic Trade with other British Dominions and Foreign Countries Canada would, therefore, be interested in the success of the British squadrons employed in protecting Trade in every part of the Atlantic. That is to say, Canada is not only interested in the North American Squadron, but also in the strength of the British Fleet as a whole

The cost of maintaining the British squadrons on these stations, exclusive of any interest or sinking fund on the first cost of building, is £802,000 per annum. This is included in the General Naval Vote, which is borne by the United Kingdom aided by annual payments, spontaneously offered, by the Cape of Good Hope of

£30,000 and by Natal of £12,000, in lieu of 12,000 tons of coal.

The magnitude of the Trade in Eastern Waters may be gathered from the following Table, which shows, so far as statistics enable this to be stated, the relative interests in British Trade which passed, necessarily, through those waters during the year 1900, and also how the cost of maintaining the British squadrons in the Eastern Seas and the Pacific, which are ultimately charged with the protection of the whole, is apportioned

Countries	Aggregate of Values of Trade which passed through Eastern Waters.††	Contribution to cost of maintaining Squadrons (See Appendix A. 1*)	Percentage interest in Trade	Percentage contribution to Squadrons *
	£	£	Per cent	Per cent
British Empire other than India, Australia, and New Zealand	325,000,000	1,994,400	55	88 8
India	142,000,000	161,600	24	7 2
Commonwealth of Australia†	105,000,000	75,500	17	3 4
New Zealand	24,000,000	15,500	4	6
Total	††	2,247,000*	100	100

* The total charge of £2,247,000 per annum is exclusive of any Interest or Sinking Fund on the first cost of building

† Includes inter-State Sea-borne Trade

†† The figures in this column represent the sum of the values of the external Trade, of the various parts of the Empire, which passed through Eastern Waters The aggregates thus obtained are, of course, in excess of the actual British Trade in these Waters, on account of the duplication of inter Imperial Trade This duplication, however, is necessary for the present object, which is to show, not the total magnitude of the Trade, but the relative magnitude of the Trade Interest of the various parts of the Empire The column does not admit of being added up for the reason stated

NOTE.—The above Statistics of Trade are not quite complete, as they do not include the Trade of Hong Kong; there being no Statistics of the Trade of that place. This, however, is probably counterbalanced by the inclusion of the whole of the Straits Settlements Trade, which is largely 'Entrepôt Trade.'

Admiralty,
June, 1902
(Revised April, 1903.)

APPENDIX 'A'

BRITISH EMPIRE NAVAL EXPENDITURE

Year.	——	Population	Naval Expenditure	Naval Expenditure per head of Population	Remarks
			£	s d	
1902–3	United Kingdom	41,454,621	31,255,500	15 1	
		1901	1900		
	New South Wales	1,352,509	47,831	0 8½	
	Victoria	1,199,068	59,401	1 0 nearly	
	Queensland	496,596	34,796	1 4¾	
	South Australia	362,604	17,594	0 11⅝	
	Western Australia	182,553	4,732	0 6¼	
	Tasmania	172,475	4,970	0 7 nearly	
	Totals — Australia	3,765,805	169,324	0 10¾	
	New Zealand .	772,719	20,924	0 6½	
30–6–99	Canada	5,312,500	Nil	Nil	
"	Newfoundland	210,000	Nil	Nil	
	Cape of Good Hope (White)	538,000	30,000	1 1⅜	£30,000 paid annually towards expenditure of Imperial Government
1898	Natal	53,688	12,000	4 5¾	£12,000 paid in lieu of 12,000 tons of coal
31–3–99	*India	216,710,483 Europeans 168,000	413,747 (for year 1900)	—	

* Includes £100,000 contribution towards H M Ships on East Indies Station, and £61,600 subsidy to Admiralty for manning and maintaining H M Ships for Naval defence of India

APPENDIX 'A 1.'

Table showing the Annual Cost of Maintenance, exclusive of first cost of building, of the British Squadrons in I.—Atlantic Ocean; II—Eastern Seas and Pacific Ocean:

I.—Atlantic Ocean

North America and West Indian	£330,000
Cape of Good Hope	396,000
South-East Coast of America	76,000
Total	£802,000

II.—Eastern Seas and Pacific

China	£1,430,000
East Indies	303,000
Australia	312,000
Total Eastern Seas	£2,045,000
Pacific	202,000
Total	£2,247,000

5 RIGHT HON. H H ASQUITH'S ADDRESS AT THE FIRST MEETING OF THE IMPERIAL CONFERENCE OF 1911

MR ASQUITH Gentlemen, Colleagues, I offer you, in the name of his Majesty's Government, a most grateful and cordial welcome, and I express at the outset of our proceedings a hope which you will all share, that the deliberations of this, the first Imperial Conference, may conduce, in the language of the prayer which we are accustomed to offer for the High Court of Parliament, to the 'safety, honour and welfare of our Sovereign and his Dominions.'

Four years have passed since some of us who are here to-day took part in the Colonial Conference of 1907. Even in such a relatively short lapse of time notable gaps have been created by the calls of mortality and the accidents of political fortune The name of my lamented predecessor, Sir Henry Campbell Bannerman, who opened the Conference of that year, will always be associated in the history of the Empire with the grant of full self-government to the Transvaal and the Orange River Colonies, with the result that we have with us at this table to-day not (as then) the representatives of separate South African States, but the Prime Minister of the Union of South Africa. And barely a year ago

our beloved and illustrious Sovereign, King Edward VII, to whom in 1907 we owed and gave a whole-hearted allegiance, was suddenly taken from the Empire which he served so faithfully and loved so well, leaving behind him the best inheritance which any Monarch can bequeath to his successors—the memory of great purposes worthily pursued, and the example of a life which was directed and dominated by a tireless sense of duty, and an unquenchable devotion to the peoples committed to his charge.

You will join with me, I am sure, in offering, as our first corporate act, our homage to King George V, and the assurance of our fervent hope, and firm belief, that in his reign the British Crown will continue with untarnished lustre to be the centre and the symbol of our Imperial unity. It is, indeed, a happy coincidence that the time fixed for our deliberations will enable the foremost statesmen of the self-governing Dominions and Colonies to take a personal part in the solemnities, shared in spirit and sympathy by the whole Empire, which will attend the Coronation of the King and Queen

It is natural, and I hope not inopportune, that on such an occasion I should invite you to survey with me, for a few moments, the stage of development which we have now reached in the evolution of that unique political organism which is called the British Empire. I am not going to trouble you with statistics of area, population, production, interchange; interesting and impressive as the figures might be made.

There have been, in the past, Empires which

(like our own) were widespread, populous, rich in material wealth, the prolific breeding ground of art and science and literature But this Empire of ours is distinguished from them all by special and dominating characteristics From the external point of view it is made up of countries which are not geographically conterminous or even contiguous, which present every variety of climate, soil, people, and religion, and, even in those communities which have attained to complete self-government, and which are represented in this room to-day, does not draw its unifying and cohesive force solely from identity of race or of language Yet you have here a political organization which, by its mere existence, rules out the possibility of war between populations numbering something like a third of the human race There is, as there must be among communities so differently situated and circumstanced, a vast variety of constitutional methods, and of social and political institutions and ideals But to speak for a moment for that part of the Empire which is represented here to-day, what is it that we have in common, which amidst every diversity of external and material conditions, makes us and keeps us one? There are two things in the self-governing British Empire which are unique in the history of great political aggregations The first is the reign of Law wherever the King's writ runs, it is the symbol and messenger not of an arbitrary authority, but of rights shared by every citizen, and capable of being asserted and made effective by the tribunals of the land. The second is the combination of local autonomy—

absolute, unfettered, complete—with loyalty to a common head, co-operation, spontaneous and unforced, for common interests and purposes, and, I may add, a common trusteeship, whether it be in India or in the Crown Colonies, or in the Protectorates, or within our own borders, of the interests and fortunes of fellow subjects who have not yet attained, or perhaps in some cases may never attain, to the full stature of self-government.

These general considerations, Gentlemen, familiar as they are to all of you, may not be wholly out of place when we are contemplating in advance the work which is set before this Imperial Conference In the early Victorian era, there were two rough-and-ready solutions for what was regarded, with some impatience, by the British statesmen of that day as the 'Colonial problem' The one was centralization—the government, that is, except in relatively trivial matters, of all the outlying parts of the Empire from an office in Downing Street The other was disintegration—the acquiescence in, perhaps the encouragement of, a process of successive 'hivings off' by which, without the hazards or embitterments of coercion, each community, as it grew to political manhood, would follow the example of the American Colonies, and start an independent and sovereign existence of its own. After 70 years' experience of Imperial evolution, it may be said with confidence that neither of these theories commands the faintest support to-day, either at home or in any part of our self-governing Empire. We were saved from their adoption—some people would say by the favour of Providence—or (to adopt

a more flattering hypothesis) by the political instinct of our race. And just in proportion as centralization was seen to be increasingly absurd, so has disintegration been felt to be increasingly impossible. Whether in this United Kingdom, or in any one of the great communities which you represent, we each of us are and we each of us intend to remain, master in our own household This is, here at home and throughout the Dominions, the life-blood of our polity. It is the *articulus stantis aut cadentis Imperii*

It is none the less true that we are, and intend to remain, units indeed, but units in a greater unity And it is the primary object and governing purpose of these periodical Conferences that we may take free counsel together in the matters which concern us all Let me select one or two illustrations from the agenda which have been suggested for our deliberations here.

There are, first of all, proposals put forward from responsible quarters which aim at some closer form of political union as between the component members of the Empire, and which, with that object, would develop existing, or devise new, machinery, in the shape of an Advisory Council, or in some other form. I need not say that, in advance of the discussions which we are about to have, I pronounce no opinion on this class of proposals. I will only venture the observation that I am sure we shall not lose sight of the value of elasticity and flexibility in our Imperial organization, or of the importance of maintaining to the full, in the case of all of us, the principle of Ministerial responsibility to Parliament. Of a cognate

character are the questions raised as to the future constitution of the Colonial Office, and in particular as to the segregation and concentration of the work appropriate to the Dominions from the other work of the Department. Under this head I trust that his Majesty's Government may be able to put forward suggestions, which will be acceptable in themselves, and prove fruitful in practice. I will refer to one other topic of even greater moment—that of Imperial Defence Two years ago, in pursuance of the first Resolution of the Conference of 1907, we summoned here in London a subsidiary Conference to deal with the subject of Defence, over which I had the honour to preside. The results achieved—particularly in the inauguration of the policy of Dominion Fleets adopted by Canada and Australia—are of a far-reaching character The recent visit of Lord Kitchener to Australia and New Zealand has given a further impetus to the spirit of self-reliance in matters of Defence in those two great Dominions We adopt different systems in the raising and recruiting of our defensive forces in the different parts of the Empire Everywhere and throughout, the object is not aggression, but the maintenance of peace, and the insurance against loss and destruction of the vast social and material interests of which we are trustees. It is in the highest degree desirable that we should take advantage of your presence here to take stock together of the possible risks and dangers to which we are or may be in common exposed; and to weigh carefully the adequacy, and the reciprocal adaptiveness, of the contributions we are respec-

tively making to provide against them. I shall propose that (following the precedent created in 1909) these matters should be discussed in the Committee of Imperial Defence, with the assistance of the advice of its expert members, at meetings at which the Dominions will be represented by their Prime Ministers, and the Ministers directly concerned in naval and military defence At the first of these meetings (which will, of course, like all of them, be of a confidential character) Sir Edward Grey will attend, and will speak to us on the international situation, so far as it affects the Empire as a whole

Gentlemen, I have purposely, in this brief introduction to our proceedings, left out of account a large number—the largest number—of the topics which will be submitted for our consideration There are sitting at this table to-day six Prime Ministers, all holding their commission from the same King, and all deriving their title to its exercise from the voice and vote of a free democracy We are all of us, I suppose, in our own Parliaments party leaders, holding and using power by virtue of the confidence of a party majority But each of us, when he entered this room, left his party prepossessions outside the door. For us to-day, and throughout this Conference, there is, I believe, one spirit and one purpose—to make the Empire, in all its activities, and throughout all its parts, a more complete and effective instrument for the furtherance of our corporate unity and strength along the old, well-trodden, but ever lengthening and widening road, of British liberty

6. IMPERIAL FEDERATION—RT HON SIR JOSEPH WARD'S SPEECH AT THE IMPERIAL CONFERENCE OF 1911

I HAVE endeavoured to impress upon the Conference the enormous changes in the relationship between the self-governing oversea Dominions and the Mother Country, which have been consequent upon the rapid growth and the extension of the Dominions, and in this connexion I also impress the obvious fact that the rapidity of that growth and extension, already seen, will continue at an even accelerated speed in the future.

These changes, I submit, demand a change in the Imperial relationship heretofore existing between the United Kingdom and her self-governing dependencies

The people of these dependencies are not yet citizens of the Empire This full franchise as yet has not been conferred, and the whole question is—Is not the time now ripe for the consideration of conferring it?

The question becomes urgent and emphatic when we remember that at least two of the greatest of these Dominions have in some measure already embarked upon a naval policy of their own—a course to which the Motherland has offered no objection I, as representing New Zealand, of course do not, and could not, offer any

objection, though I am entitled to discuss and criticize the course taken, in order to emphasize the need of some Imperial Council properly accredited to co-ordinate and harmonize these policies of naval defence, and of the still greater question of naval supremacy.

Does the Conference fully appreciate what has happened so quietly, because the relations between the Motherland and Canada have been so harmonious? Canada has, in recent years, grown into a strong nation—no longer in a state of tutelage, sheltering behind the protection of the Motherland. Canada, feeling that she has passed through infancy to full manhood as a nation, has originated and made law a naval scheme for the creation and maintenance of a local navy, a navy not only to be maintained and controlled by the Canadian Government, but a navy which is not to participate in an Imperial war unless Canada herself approves of that war

Under the existing system, the rest of the Empire, consequently, might be at war, and the Canadian Navy withheld from it, and inactive. But I want to impress the fact that the Empire cannot be at war and Canada at peace at the same time Any war to which the statesmen of the United Kingdom commit the Empire involves Canada, as well as New Zealand, and all other portions of the Empire, and from the point of view of international law Canada is as much a part of the Empire as England.

I would ask the Conference to look facts broadly and candidly in the face, and if independent naval policies, such as I have referred to, are to con-

tinue on the part of the oversea Dominions, I express the sincerest conviction of my mind when I say that this does not make for a strong position in connexion with the Imperial ties being maintained, upon which, in my opinion, the whole Empire's material interests now rest

I have explicitly called the scheme I propose to outline an Imperial Parliament of Defence Defence is above all other questions the one in which every part and subject of the Empire is vitally concerned

The President (Mr Asquith) Just a moment The words used in your Resolution are 'An Imperial Council of State', you spoke just now of an Imperial Parliament of Defence I do not find any such phrase in the resolution.

Sir Joseph Ward I do not mind what the name is—an Imperial Council of State or an Imperial Parliament of Defence, or a Defence Council

The President They are practically synonymous, you think?

Sir Joseph Ward Yes Perhaps I ought to use the term Imperial Council of State Defence is above all other questions the one in which every part and subject of the Empire is vitally concerned. It is the great vital topic which can be treated only by a proper Council of State I am going to assume that this is obvious, and I will not occupy the time of the Conference by arguing the matter. But I want to express my firm conviction that the course both Canada and Australia have taken is one which the present relationship between them and the Motherland almost compels them to take.

If Canada were to contribute to the Imperial Navy the very large sum she has provided on her estimates for a building programme, a naval college and annual maintenance, amounting to some millions of pounds sterling—if she were to contribute this or any other great sum yearly to an Imperial Navy, and the question of war or peace arises, she would find herself with no more voice, under the present system, in determining whether the Empire should go to war or not than if she were the smallest dependency of a Foreign Power Consequently, under the existing system and on these assumptions, Canada would not only witness herself being committed to all the perils of warfare, but she would witness the ships and armaments created out of her great contributions devoted, without her consent or approval, without the right to a voice at all to the perils of belligerency.

I have taken Canada merely as an illustration; but under the existing system every other oversea Dominion would be in precisely the same situation.

New Zealand is, at present, content to make an unconditional annual contribution of money to the Imperial Navy. As time proceeds, and as our means increase, we look forward to substantially increasing this aid, but what I desire to impress at this moment is the point that if the whole of the oversea Dominions are to place themselves under tribute to the Imperial Treasury for the creation and maintenance of an Empire Navy, they surely are entitled to some voice—proportioned, it may be, to their size and

contribution—in such a vital question as peace or war

Consequently, it seems to me that the question of an Imperial Council of State, or Defence, more vitally concerns the United Kingdom than it does the oversea Dependencies, Canada, Australia, South Africa, and New Zealand can, and cheerfully will if necessary (of course, I am speaking entirely on behalf of New Zealand), go on under the existing system providing for their own defence in the way which seems best to them, but can the United Kingdom survey such a course with complacency under the growing burdens which the maintenance of her naval supremacy imposes?

In this great concern of Imperial Defence must there not be some kind of partnership between all parts of our Great Empire? I hope it will not be regarded in any way as rudeness for me to say that England, witnessing as she has, and does, the magnificent growth in strength, wealth, and numbers of these oversea Dominions, will not forget that she does not, as in the earliest days of their existence, possess them—they are no longer Crown Colonies. They create with her an Empire, and, allowing for power and numbers, they belong to that Empire just as she does. It is a family group of free nations, England is the first among the free nations, and, consequently, changes during the last three-quarters of a century, in my opinion, demand that the old relation of 'mother to infants' should cease The day for partnership in true Imperial affairs has arrived, and the question which now emerges is—upon

what basis is that partnership to rest? It certainly cannot rest upon the present relationship. No partnership deserves the name which does not give to the partners at least some voice in the most vital of the partnership concerns; and what I am endeavouring to bring out is how is that voice to be heard and how is it to be made effective?

I desire to avoid any minor controversial questions at this time; but I am entitled to express, as I do now, my profound conviction that, if there had existed some true Imperial Council of State in which defence could be dealt with—I attach no importance to the name, whether it is an Imperial Council of State or an Imperial Parliament of Defence, or an Imperial Council—the separate naval policies of the two great Dominions to which I have already referred, would be to-day, if not non-existent, at least more completely harmonized and made integral with the Imperial Navy In other words, had such a council existed, I am satisfied that, for the expenditure these two great countries have committed themselves to, more efficient protection would have been given by means of an Imperial scheme than by those which have been devised

I trust that the members of the Conference will realize—and I want to avoid dogmatism in this matter—that I am expressing my personal opinion, as I have a right to do, and I feel quite sure that the representatives of none of the other Dominions, even those to which I am referring, will take exception to what I believe to be my duty in a matter of this kind. for naturally it is

done in a strictly imperial sense, and without in any way whatever reflecting upon the loyalty of those great countries

I cannot avoid keeping before me the whole time, in connexion with this important question of defence, the difficulties of regulating and controlling it I recognize to the fullest possible extent the all-important question of the protection of the commodities and of the ships that cross the seas between the respective countries; and the more I have thought over this important matter from time to time and since I had the honour of first coming to this Conference, the more I realize the tremendous responsibility devolving upon all portions of the oversea Dominions in connexion with the protection of British ships, British goods and British people travelling over the seas great distances between the respective portions of the Dominions To a very material extent in my opinion, the local protection, however good it may be, for the separate portions of the Dominions concerned is not sufficient, is not adequate, and does not meet the condition of protecting the conveyance of oversea products to anything like the extent that it ought to do.

For these reasons I recognize how difficult it is in a matter of this kind to expect any of the representatives of the oversea Dominions to rediscuss a line of policy which has already been assented to by them My own view of the matter is, that we should have an impartial and effective organization created which would allow all portions of our British Empire to review what is necessary for the self-preservation of themselves

and the protection of all portions of it on sea as well as on land, and, in my opinion, that can only be brought about by some organization created with the good-will, not of the representatives at this Conference alone, but, finally, of the people in the respective countries concerned. I emphasize this because nothing that is suggested by me, or nothing that is carried by this Conference can be put into actual effect (so far as New Zealand is concerned I speak absolutely) without ratification by Parliament, and without, in turn, Parliament recognizing that that ratification has to be endorsed in the ordinary way by the people at the elections which take place from time to time.

Now, in connexion with the arguments that I am placing before the Conference upon this question of an Imperial Council of State, I consider that the different roads that the respective portions of the Dominions have taken regarding what they conceive to be best from their respective standpoints in the matter of naval defence—I would rather call them lines of national divergence—must, in my opinion, diverge more and more as these oversea Dominions develop to their full stature, unless British statesmen will set themselves to promote an Imperial partnership and some system of Imperial representation upon which, to my mind, such true partnership can alone subsist.

If there is any spirit of reluctance on the part of the Motherland, the oversea Dominions—or, at least, New Zealand, for which I speak—will certainly not desire to obtrude themselves with

this or similar proposals, but if we recognize that the hands of the Mother Country are stretched out to us inviting a closer grasp by us, that closer grasp will follow and the deep and genuine spirit of closer union will dissolve the difficulties and rise superior to all the obstacles in the way of an articulate and organized unity What is first wanted is the will; the way, I am satisfied, can be found. If the United Kingdom desires an Imperial partnership and it meets with the concurrence of the oversea Dominions, then I believe it is the proper function of the Conference, with the eminent statesmen of the Motherland here at this table, to join with myself and those who think with me in encouraging and assisting to devise a workable scheme

Mr Asquith in his opening speech spoke eloquently of the development of our Empire along the broad ways of British liberty and in this connexion emphasized the elasticity and flexibility which marked our constitution and our institutions. I recognize as fully, I hope, as he how true those words are A rigid constitution does not suit the genius of our people, but a rigid constitution is one thing and the entire absence of any definite Imperial system is another I recognize that there must be given up by the constituent self-governing parts of the Empire to any central Imperial Council only such power as is absolutely necessary to deal with questions essentially imperial in their nature, questions which cannot be dealt with satisfactorily or at all unless through collective deliberative action, and I would make the framework of the Imperial

Parliament of Defence or Imperial Council of State as elastic as is consistent with efficiency and durability, but I am impressed with the belief that some such framework we must have Mr Asquith rightly preferred to ascribe the majestic development of the Empire rather to the genius of our nation than to the favour of Providence I admit that there is a Divinity that shapes national destinies, but that Divinity can be profoundly assisted by the intelligent thought, foresight, and ingenuity of wise statesmanship, and I believe there never was a time in our history when a more splendid field has opened to that statesmanship than the present.

If we admit that the fate of the oversea Dominions, so far as living under the British Flag is concerned, is dependent upon Britain's supremacy on the seas, then we must admit that the defence of the Pacific (and in connexion with the defence of the Pacific, I include Australia and New Zealand in that term) is as important as the defence of the Atlantic Possessions or of the Motherland itself. I am not mixing up in any sense whatever, in the proposals which I am about to submit to the Conference, anything in connexion with the land forces of the respective portions of the Empire, because I recognize——

Mr Fisher May I interrupt? I understood by the earlier part of your speech that co-operation in every way was involved

Sir Joseph Ward No, uniformity of system in every possible way in connexion with the land forces I believe to be desirable, but I am not suggesting, in connexion with the defence of the

Empire, that there should be any interference by any one portion of it with any other in the matter of the system or of the methods of control of the local land forces

The President: Is that to be excluded from the jurisdiction of the proposed Imperial Council?

Mr. Fisher It must be under those words

Sir Joseph Ward: That, I believe, should be left entirely with the Governments of the respective portions of the Dominions, who should make their land forces efficient in every possible way

The President That would still be a local matter

Sir Joseph Ward · It would still be a local matter, because my belief is that in the event of a war arising, upon the sea particularly, every portion of the British Dominions is concerned for the protection of each of the other portions of the Dominions, and as part and parcel of the scheme of defence in all parts of the British Empire will, I have no doubt, in their respective administrations carry out the requisite conditions for making effective land forces. The protection of the interior of the respective portions of the Dominions is not, from the point of view of co-operation, by any means so important as the all-important question of naval defence of the sea routes of the Empire with its difficulties, in many respects much greater than those of the land defence system. For instance, I take it that the Commonwealth of Australia, or the Dominion of Canada, or the Union of South Africa, or New Zealand itself, will in their respective Governments carry out upon land that scheme which

they believe to be best calculated to support and protect their respective possessions and to support the first line of defence, namely, the Imperial British Navy

In order to make the point clear, in New Zealand we will shortly be able to turn out 80,000 trained men in addition to those men who from time to time form part of the ordinary reserve forces—not in the strict sense of the term a reserve force, but men who, while following their ordinary avocations, have qualified themselves to take part for the purposes of effective land defence We expect to have a mobile land force of fully 80,000 men very shortly, and we hope to have for overseas work a very considerable number, 5,000 to 10,000, trained men, only to go outside of New Zealand voluntarily So that from the point of view of protection of our own country, we ought to be able to make it impossible for a foreign foe, if one should ever attempt it, to land on our shores

That is one of the matters we are able to carry out without the co-operation of any other portion of the British Dominions or of the British Empire. But we are not able to do more than give our support in such a way as we think best in the matter of the Empire Navy; we are only able to do our individual part, and we may at any time under the present system, as I have already said, be drawn into war or certainly the results of the war without consultation, without our people having a voice in it, whether we like it or not We are immediately concerned in the results of any war upon the sea that may take place

between Great Britain and any other country, we are concerned just as much as Great Britain is although our interests are not as great. So, in my opinion, is every other portion of the British Empire, and it is with the object of co-ordination and co-operation and having a voice, even although in a minority, upon an Imperial Council of State, that I have ventured to put forward this resolution. It is with the object of allowing our people in our countries, who recognize their responsibilities and are prepared to accept them under existing conditions, to have some representation upon the Imperial Council. It is from the point of view of our people having no voice at present and there being no representative body appointed which can voice the sentiments of the Government of the day or of the people of New Zealand, that I am urging that it is necessary that we should effect some change as against the present system, which has done very well up to now, but which, with the evolution, with the growth and with the development that is going on in various portions of the British Empire, does not, in my opinion, meet the present position as it should do.

I want to take this opportunity of alluding—and doing it without offence to the people who are in the East—to the policy of New Zealand in connexion with the Asiatic questions I would like to dispel any wrong impression as to the reason why the policy of New Zealand is averse to admitting Asiatics, even including those who belong to a nation in alliance with Great Britain. The basis of the policy of New Zealand is, that

all the rights of citizenship are conferred upon every adult within our shores We are entirely governed by our own people, we have spent millions of money up to date in educating them and to a very large extent at the State expense, to enable them to discharge the duties of citizenship; and why we object to allowing a large number of Asiatics into our country is because, in the first place, we believe them to be entirely unfitted for the duties of our citizenship. As regards one great Eastern nation, we know in our country, and I presume it is within the knowledge of every man here, that the people of these nations are under obligations, enforced by oath, in the event of war arising, to take the side of their parent land even against the country they have made their home

Now in connexion with this all-important matter of an Imperial State Council, I want again to emphasize the fact that, underlying the proposals I am submitting, I place the Defence of the Empire as of the first consequence to all parts of it That is why from the point of view of New Zealand I for one look forward with very great hope to the possibility, without in any way derogating from what any of the representatives of the oversea Dominions in the past have done, of naval co-ordination and co-operation, and of having a larger and more powerful oversea Navy than exists at present, with a view to preventing eventualities in the future; and also with the more important view, perhaps, of making for the peace of the whole world.

In the country I represent, we regard this

Asiatic question as of intense importance. We realize the fact that we are not very far away from these Eastern countries, and we also recognize that there is tremendous room in our countries, unless we are excessively careful, for the introduction of many millions of people whom we would not desire to have within our territory at all. In suggesting for the consideration of this Conference an alteration which I know is difficult to bring about, and which I realize and want to say at once cannot be done in a hurry, I do not believe, myself, that we can have the full benefit of a great Empire naval system under existing conditions I recognize the very powerful condition of the British Navy, but, I believe, out in our own seas (and I say this in the presence of the representative of the Australian Commonwealth) that the system Australia is carrying out is not by any means the strongest one nor the cheapest one, and consequently not the most effective one, that can be established for the benefit of their country

Mr Fisher. Which system do you mean, the new one or the old one?

Sir Joseph Ward I mean the new one, the sea one, I am not dealing at present with the land one, which I believe to be as fine as possible My belief is, that if we could only get rid of the present method of disjointed action, if we could have some recognized system to which we were all agreed, if we could lay down a comprehensive system for the purpose of defence, some of the minor difficulties which stand in the way of the respective countries, and some of the major diffi-

culties also which stand in their way, could be overcome and a much more effective system brought into operation than at the present time exists. I believe, myself, that if we had a system by which the whole of our countries gave a *per capita* contribution towards the cost of naval defence (and again I say I do not refer to land defence at all) we should meet all the local conditions in the different countries by having ships built there, by having naval docks built there, by having everything excepting the armament of ships provided in our respective countries. I believe we could do it far more effectively by giving a *per capita* contribution, and so help to protect our own countries and the oversea routes, which is not being done at present, and which, in my opinion, cannot be done by the present method If we could arrive at a decision to adopt a *per capita* contribution from the respective countries the outcome would be a British Navy so powerful that the world would stand at peace probably for generations to come. Surely it is a matter worthy of the greatest consideration on the part of a conference such as this to bring about, if it is possible to do so, such a consummation ?

Sir Wilfrid Laurier · Will you permit me an interruption here ?

Sir Joseph Ward Certainly

Sir Wilfrid Laurier Would this be in conjunction with your Imperial Council ?

Sir Joseph Ward Yes.

Sir Wilfrid Laurier Are the two things not quite apart, and could you not give contributions to-day without having an Imperial Council ? I

do not see the relevancy of it to the idea you are expounding

Sir Joseph Ward I suggest that the Imperial Council is the only way of providing that the voices of the different countries may be heard through their constitutionally elected representatives The Imperial Council is the only way, I will not say, to go back upon the policy of any of the Dominions, but it is the only way in which, in my opinion, a uniform system of co-ordination and co-operation can be achieved That is my view

Sir Wilfrid Laurier But that is quite independent of the policy of contributions

Sir Joseph Ward I hope to show presently exactly what my proposal is

Mr. Batchelor You would have legislative power?

Sir Joseph Ward It would require legislative power to enable it to carry out its functions

The President That is very important Is it proposed that this Council should have legislative powers?

Sir Joseph Ward I intend to explain presently what I think it should have

The President Mr Batchelor asked the question, and I understood you to say yes.

Sir Joseph Ward Yes, I propose that it should be created by legislation

The President Created by legislation, yes, but to have legislative power is a different thing.

Sir Joseph Ward And that its powers should be defined by legislation.

Mr Fisher I understand you to say that it

would have legislative powers as a constitutional body

Sir Joseph Ward: Perhaps it would be more convenient if you would wait until I explain what it is I suggest should be done

The President. While we are on the point that Sir Wilfrid Laurier put, which I should like you to give us a little further explanation about, the proposition which I understand you are making contemplates, when the Imperial Council is brought into existence, the establishment of a policy of what is called naval contributions on the part of all the different parts of the Empire. That would involve, would it not, the reversal of the new departure, as I might call it, which has taken place, certainly in Australia and Canada, of having separate local navies of their own. You contemplate that as a desirable possibility?

Sir Joseph Ward. I contemplate that the power should be given to the Imperial Council, which would, of course, include representatives from Canada and Australia, of providing uniformity of system as far as the sea defences of the Empire are concerned.

Sir Wilfrid Laurier That would mean that the Council would fix the policy of Canada.

The President It would impose a system It is important that we should have that clearly in our minds.

Mr. Fisher: Would it have the power of coercion by a legislative Act or otherwise?—that is the point.

The President We shall come to that presently

Sir Joseph Ward: I wish to make some further

observations in connexion with the defence of the Empire, and then I propose to show what I believe to be the way in which the different parts of the Empire should proceed in order to establish a system of government in connexion with defence matters that would conduce to the best interests of the whole.

Mr. Pearce May I say this before you proceed? I understand that there is to be a meeting to discuss the question of naval co-operation?

The President. To-morrow

Mr. Pearce I would point out to Sir Joseph Ward, that the remarks which he is now making will call for a reply, certainly from the representatives of Canada and Australia, because he is attacking the principle of a local navy, and in some way he is connecting it with an Imperial Council I understand the interpolation by Sir Wilfrid Laurier was to get an understanding as to whether that was a condition of the Council, and I think we should have some assurance upon that point, otherwise we shall be compelled to defend the policy we are putting forward, and this seems not to be the time to defend it

Sir Joseph Ward I want to say at once that I am here, as I presume the other delegates are, for the purpose of freely discussing all matters affecting the Empire as a whole I do not suppose for a moment that Mr Pearce suggests that I am going to defer my observations upon matters of Imperial consequence to the portion of the world I represent until we get where I recognize secrecy is necessary upon some matters I am fully cognisant of the fact that anything I am

saying here is subject to criticism, perhaps of the most destructive character, from any other representative at this Conference, but that is no reason whatever for its being suggested that I should not address to the Conference any line of argument which I consider necessary

Mr Pearce: I think it necessary, in fairness to us, that we should know if that is put forward by you as a condition of the Council.

Sir Joseph Ward By the time I have finished, I will have endeavoured to make myself as clear as I possibly can, and, of course, I quite recognize that what I am saying calls for a reply from other representatives here I also recognize that, perhaps, the views I entertain may not be in accord with those of any other member of the Conference But you will also realize that, even though he should stand alone, that fact should not deter one from expressing his sincere opinions upon matters which he considers to be of sufficient importance for every member of the Conference to discuss

I must say, Mr Asquith, that I am not attacking—I want to make that quite clear—either the Dominion of Canada or the Commonwealth of Australia Quite the contrary I recognize that the responsibility for the policy of those countries rests entirely with the Governments of the respective countries I am trying, what I admit to be a difficult task, to point out how I believe the whole strength of the naval protection across the seas, irrespective of the sea-coast of all our countries, could be made very much stronger, and how the protection of all parts of the Empire could

be made better by abandoning the present divided system. And my belief is that the only way in which that change could be brought about is by the creation of some authorized Council of Defence or Council of State, with the representatives of Great Britain, Canada, Australia, South Africa, New Zealand, and Newfoundland upon it, and giving them the necessary powers to deal with the question of naval defence, and of naval defence only, and the right to be consulted before they are committed to a war policy which may be necessary in the best interests of the Empire as a whole The overseas Dominions are bound to be a minority of such a council, I recognize, but it is because to-day the people are not consulted, and cannot be consulted under the existing system, that I am putting forward this proposition. I recollect Sir Wilfrid Laurier himself on one occasion stating that Canada would have no voice in a matter of the kind, and that for that reason he took exception to proposals to have but one British Navy I think that is a strong position to take up, and it is one I take up myself

Sir Wilfrid Laurier The point of my observation was that you are advocating the creation of an Imperial Council

Sir Joseph Ward Yes

Sir Wilfrid Laurier You are advocating at the same time contributions I do not see the relevancy of your argument towards the object which you have in view in addressing the Conference as to the Imperial Council Contributions can be given to-day if any of the Dominions choose to do so. You have done it; other parties have

refused to do so Therefore I do not see the relevancy of it, except it also involves that this Imperial Council which you propose would have the power to fix the contribution, to which, for my part, I would very seriously object

Sir Joseph Ward In reply to Sir Wilfrid Laurier, Mr Asquith, the point I want to make clear is this It is quite true that any one of the oversea Dominions to-day may give a contribution, but they may withhold it; and it is quite true that in the event of any portion of the British Empire being drawn into a war, that one portion of the Empire might say, 'I am not going to take part in it,' and they need not give a contribution, although under international law I think they could not avoid having the responsibility of being a belligerent put upon them What I want to bring about is a uniformity of system for the preservation of the whole of our oversea interests

Sir Wilfrid Laurier That is to say, the Imperial Council could compel us

Sir Joseph Ward We should fix a basis upon which a contribution should be levied for sea defence in the general interests of the whole

The President Your suggestion is that the Imperial Council, unless it is to be a mere academic thing, is to have the power of imposing that obligation?

Sir Joseph Ward Quite so.

The President Even on a dissentient Dominion?

Sir Joseph Ward. Mr Asquith, at the present moment if England went to war all the oversea Dominions are directly affected by the results, and

that could happen without the slightest reference to either an assenting or a dissenting Dominion

The President We cannot get a contribution to the Navy without the assent of the Dominion

Sir Joseph Ward But you can involve them in war

The President That is another matter. I am speaking now of the naval contribution. Canada has never given us a naval contribution

Sir Joseph Ward I know that is so

The President And we have never attempted to exact one from her Of course, we know our business better than that I only want to understand, and I think the members of the Conference want to understand, what the length and breadth of the proposal is Is it that, so far as regards what you call the uniform naval system, it should be in the power of this new body to impose *in invitum*, against a particular Dominion, a policy of contribution to which that Dominion would not voluntarily assent ?

General Botha And fix the amount ?

The President And fix the amount

Mr. Fisher By a benevolent revolution, I suppose ?

Sir Joseph Ward As a matter of fact, if the proposal is to establish an ineffective, nominal council which is going to hold out to the eye the prospect of doing something of interest to the Empire as a whole, if we are not to establish something that has got some power to do good to the Empire as a whole, it is far better to drop the whole thing That is my opinion, we have to consider whether the time has not arrived, in the

general interests of Great Britain and the whole of our oversea Possessions, when we should not have some uniformity of system of contribution, or whether it is to be left to the voluntary decision of those oversea countries whose requirements for protection by the British Navy are becoming greater every year If we are not to have some effective system, then, as far as my judgement goes, all the efforts to bring about co-ordination and co-operation are to a very large extent in vain and a drifting apart must inevitably ensue.

I want to say again, and to emphasize it, that I am not foolish enough not to recognize that the proposals I am making are surrounded with very great difficulties. I realize that from the start, but that does not deter one from making them, if he believes something in the direction he is advocating is desirable and that it may, in the future at all events, be brought into operation For that reason my opinion is that there ought to be established an Imperial Council or an Imperial Parliament of Defence, in the interests——

Sir Wilfrid Laurier There is a difference between a council and a parliament. What do you propose, a parliament or a council? I want a proper definition of what you mean, because you have proposed neither so far

Sir Joseph Ward I prefer to call it a Parliament of Defence

Sir Wilfrid Laurier Very well

The President That is a very different proposition to the one in your resolution. Your resolution is 'An Imperial Council of State,'—nothing about defence—'advisory to the Imperial

Government.' It is limited, as I understand the resolution, to giving advice

Sir Wilfrid Laurier When it is started it is to be a parliament, who is going to elect that parliament?

Sir Joseph Ward I will presently explain it.

The President All I say is that that is not the resolution in any of those particulars

Sir Joseph Ward I would point out that the resolution is 'with representatives from all the self-governing parts of the Empire'

Sir Wilfrid Laurier But you say 'Council' Is it a council, or is it a parliament? It is important we should know exactly what is the proposal.

Sir Joseph Ward I prefer to call it a parliament

Sir Wilfrid Laurier Very good, then, now we understand what you mean

Sir Joseph Ward I prefer to call it a parliament, although I admit there is a good deal in the name

Sir Wilfrid Laurier There is everything in the name

Mr Fisher Would it not be as well to amend your resolution on those lines?

Sir Joseph Ward No, I do not propose to amend it, if it is necessary afterwards I should have no objection

Sir Wilfrid Laurier You propose a council in your resolution, but you advocate a parliament

Sir Joseph Ward You can call it a council if you like

The President We want to know what you call it

Sir Joseph Ward: It is a Parliament of Defence that I am suggesting. I have no objection to its being called by any suitable name. I think perhaps at this juncture I will state my proposal—and then later on I will deal with one or two of the matters I was going to refer to just now

I indicated in my opening remarks on Tuesday, that I would ask the Conference to deal with Imperial unity; organized Imperial Defence, equitable distribution of the burdens of defence throughout the Empire, representation of self governing oversea Dominions in an Imperial Parliament of Defence for the purpose of determining peace or war, contributions to Imperial Defence, foreign policy so far as it affects the Empire, International treaties so far as they affect the Empire, and such other Imperial matters as may by agreement be transferred to such Parliament. I suggested that the principles of the scheme should be (1) That Canada, Australia, South Africa, New Zealand, and Newfoundland elect to an Imperial House of Representatives for naval Defence, one representative for each 200,000 of their respective populations, that is (approximately) Canada 37, Australia 25, South Africa 7, New Zealand 6, Newfoundland 2. That is a total of 77.

Mr Malan. You have only taken the European population, then?

Sir Joseph Ward Entirely so, the white population

Mr. Malan: Why?

The President You do not make any allowance for the coloured population?

Sir Joseph Ward I understood that when you were framing the South African Constitution you refused to give the coloured population there the right to vote Speaking generally, you could hardly expect, in connexion with an important proposal such as this, that a departure should be made so different to what has been carried out in South Africa, and, speaking generally, in some other countries too. However, that is a matter that can be discussed perhaps in connexion with the proposals I am dealing with the white population, and the white population only. (2) That the mode of electing the representatives be left in each case to the determination of each of the oversea Dominions.

Mr Batchelor. Sir Joseph, how would the Imperial Government be represented upon that?

Sir Joseph Ward Perhaps if you will allow me to proceed I can explain, I must take these points in their sequence (3) That the United Kingdom elect representatives on the same basis—that is one for every 200,000 of the population, that is, say, 220 members That the total members of this Imperial House of Representatives thus——

The President. What would that add up to?

Sir Joseph Ward. 300. (4) That the term for which they are elected be five years. (5) That the United Kingdom, Canada, Australia, South Africa, New Zealand, and Newfoundland each elect two representatives to be members of an Imperial Council of Defence, thus providing a Council of 12.

Sir Wilfrid Laurier: Out of that representation?

Sir Joseph Ward No, I am dealing with the Senate, which is to be elected for such term and in such manner as each of these divisions of the Empire shall determine

The President With a Council of 12 the United Kingdom would have two?

Sir Joseph Ward Yes

The President. And the Dominions are to have 10?

Sir Joseph Ward That is the same principle as exists in all Federal Governments

The President: You treat them as separate States?

Sir Joseph Ward · Perhaps if you would allow me, I might go on to the functions of this Council (6) That the functions of this Council are to be limited and to be mainly consultative and revisory (7) An executive to consist of not more than 15, of whom not more than one be chosen from the members of the Senate. (8) That there be transferred to this Imperial Parliament of Defence exclusively —(*a*) Those matters common to the whole Empire—that is, all those in which every part of it is alike interested.

Sir Wilfrid Laurier Will that be concerning defence only, or everything?

Sir Joseph Ward: It is to deal with defence in times of peace and war, that is Imperial Defence

Mr Pearce Shipping?

Sir Joseph Ward · No.

Mr Fisher I understood you to call it an Imperial Parliament of Defence, that is one of the difficulties we meet with This is going to deal with general subjects and the difficulty of it

is, that you stated definitely just now that it would be an Imperial Parliament of Defence

Sir Joseph Ward So far as the name is concerned, that is so After you have heard what I suggest, if the name is in any way anomalous to the proposals contained in it, I have not the slightest objection to changing it There is no trouble about the name so far as I am concerned, but I want to try and indicate what I believe would be a good thing if it could be carried out.

Mr Fisher I am very sorry to interrupt you, but the point is this this is a select body from Members of Parliament called specially to deal with defence, I understand, and now you are trenching on to other subjects besides defence

Sir Joseph Ward No.

Mr Fisher I beg your pardon

Sir Joseph Ward (*a*) Only in regard to those matters common to the whole Empire—that is, all those in which every part of it is alike interested I am dealing with naval defence. (*b*) Those matters which can be satisfactorily undertaken only by the Empire as a whole Including —(1) Peace and war treaties and foreign relations generally

Sir Wilfrid Laurier Does that treat with commerce?

The President It is not defence

Sir Joseph Ward It is all bearing on defence

Mr Fisher. I do not understand it in that light.

Sir Joseph Ward I will try to make it as clear as I can

The President It is to have exclusive control

over the Empire as a whole in all questions involving peace or war.

Sir Joseph Ward That is so, with England reigning supreme upon it

The President. The new body is to have that exclusive power of treaties and foreign relations too.

Sir Joseph Ward (1) Peace and war treaties and foreign relations generally (2) Imperial Defence and the providing of the revenues for the foregoing purposes and for the general support of this Imperial proposal

(A) For the first 10 years after the first election of this Parliament, it shall have no power of taxation, but the amount payable by each of the oversea Dominions represented as its proportion of the revenue required for the purposes I have indicated shall be deemed to be a debt due by each Dominion and shall be raised and paid by that Dominion to the Exchequer of the Imperial Parliament of Defence (B) At the expiration of 10 years such amount shall be raised and paid in such manner as the respective Dominions agree to (C) This Imperial Parliament to determine the amount to be contributed by the overseas Dominions for the following purposes (1) Imperial Defence, (2) War. The amount to be contributed by the oversea Dominions estimated *per capita* of population, not to exceed 50 per cent, of the amount (estimated *per capita* of population) contributed by the United Kingdom for these purposes, but for all other purposes the contributions shall be on an equal *per capita* basis. This is dealing entirely with defence, and with the

Imperial relations, and with the relations that are closely allied with defence of those matters which may bring the whole Empire into a war.

Mr Pearce: Would you mind repeating the proportions? I did not catch your figures as to the proportion they should contribute

Mr Fisher. The United Kingdom twice the amount of the oversea Dominions.

Sir Joseph Ward: That is so; the amount to be so contributed for Imperial Defence and War shall, estimated *per capita* of population, not exceed 50 per cent of the amount (estimated *per capita* of population) contributed by the United Kingdom for these purposes, but for all other purposes the contributions shall be on an equal *per capita* basis And the reason for that must be obvious at present the British interests are so very much greater than those of the outlying Possessions that it is only a fair proposition to concede that there should be a difference as between them, and I believe the difference suggested here is not an unfair one

In submitting this matter, I have not interfered —and I do not propose now, except so far as to indicate what is passing through my mind, to interfere—in any way in connexion with the politics of the Homeland I have not done so at any time, and in anything I am stating here I am stating it only from the point of view that I believe that circumstances in the future will call for it as being required to enable the great work of Empire to be carried on successfully What I am indicating here presupposes in the United Kingdom a completed system of local autonomy for the

national divisions of the Kingdom, each, including England, having its own Parliament——

The President What we call Home Rule all round

Sir Joseph Ward Yes. Of course, I am not discussing the pros and cons of it, but what I am suggesting here presupposes that a system of that kind will be brought into being; and, if I may be allowed to say so, in my opinion, as one who is perhaps entitled to express his opinion in connexion with a matter of this kind, it appears to me to be a necessity in connexion with the development that has taken place both in the Old World and in its relationship to the outlying portions of it, and to other important countries, too, that such a system should be brought into being.

Presupposing that that alteration should be made, as an outcome of that alteration, necessarily there would be a tremendous change made in the Old Country in connexion with the present Imperial Parliament. As I have said, what I am suggesting presupposes developments taking place in the old land in that respect.

Sir Wilfrid Laurier You propose a new Parliament to be elected by all the Dominions?

Sir Joseph Ward For defence only

Sir Wilfrid Laurier That can be done without any alteration of the present constitution of the United Kingdom I cannot see the logic of your position. You propose a new Parliament on top of what we have already?

Sir Joseph Ward No. In my opinion, Sir Wilfrid, with all due deference to you, any pro-

posal of this kind presupposes an alteration in the Homeland to a federal system, and in connexion with that federal system there must of necessity be a change in the numbers of the great Houses that represent Great Britain and Ireland at the present time. In other words, if there are created in different portions of the British Isles separate Parliaments for local government, it stands to reason some alteration would take place in the larger ones that exist for the whole of Great Britain at the present time. I believe, in connexion with federation for naval defence purposes of the oversea Dominions, that it is necessary to presuppose an alteration in the United Kingdom itself on some such lines as I have described.

The President I do not want to interrupt you, but for the sake of making it clear as you go along I want to see how we stand We in the United Kingdom will have to consider how it would affect us. You presuppose what is called Home Rule all round here, that is to say, the delegation to local bodies of all local concerns in England, Scotland, Ireland, and Wales

Sir Joseph Ward Yes.

The President Is your new Imperial Parliament of Defence (I merely ask for information), then, to step into the shoes of the old Imperial Parliament?

Sir Joseph Ward Yes, at any rate ultimately

The President It is to exist side by side with it?

Sir Joseph Ward If desired, but I want to develop a true Imperial Parliament.

The President But side by side with it?

Sir Joseph Ward Yes, if you want it for the purposes I have named.

The President · The old Imperial Parliament will still go on, under your scheme, representing the different constituent elements in the United Kingdom?

Sir Joseph Ward. If you had separate Parliaments existing for Scotland, England, Wales and Ireland on their own account, to a very considerable extent you would alter the position of the old Imperial Parliament and it might be merged ultimately, at least, in the new one.

The President We should relieve it of a good deal of business which at present it transacts.

Sir Joseph Ward Besides the point I am making, in presupposing that the United Kingdom establishes Home Rule all round as you call it—I have called it creating separate parliaments for local government—

The President. I use the popular expression.

Sir Joseph Ward I call it creating parliaments for the different nationalities in the Kingdom, and, if you did that, I apprehend you must make a material alteration in the Imperial Parliament consequent on a change of that kind. I am not demanding the taking away of any of the powers of the present Imperial Parliament, although I think it should be merged in the new one for the Empire, or of any of the powers of the overseas Dominions' Parliaments. I am suggesting that in naval defence matters for the Empire as a whole, if the people in New Zealand (I will deal with New Zealand alone) are to take their responsibilities, which they are doing now to some

extent, in connexion with the general defence of the Empire, including the protection of New Zealand, they are entitled to some representation on some body that has got the power of saying when New Zealand should go into war, although we recognize that the British representatives would settle it every time because they would be in the majority We to-day, however, have no voice of any sort or kind, and I am suggesting that some body should be created upon which the people of New Zealand and all the other Dominions could be represented It is possible that the proposals I am making may not fit in with the existing conditions, but I believe they ought to be capable of being put into shape with a view to help all portions of the Empire. I am suggesting an Imperial Parliament of Defence, as I call it, for the purpose of helping to make the defence of the Empire as a whole stronger than it is to-day. I want to make it absolutely invulnerable for all parts of the British Empire

What I am trying to do does presuppose that there is a completed system of local autonomy for the national divisions of the United Kingdom, and then all portions of the Empire would be in a similar position from the point of view of their local Governments as far as the local autonomy is concerned That, this local autonomy fully established, a true Imperial Parliament, which at first could be limited to foreign policies, defence, and peace or war, should be set up, the local governments to have the powers they have now

Mr Brodeur: Except with regard to Naval Defence.

Sir Joseph Ward . Except with regard to Naval Defence, that is so.

Mr. Brodeur As to Naval Defence, you do not want to recognize the local autonomy of the different parts of the Empire ?

Sir Joseph Ward No. In the matter of oversea Naval Defence, my argument is that there is no portion of the British Possessions at the present time—certainly, as far as the United Kingdom is concerned, it applies less to them than to any other portion of the British Possessions—which can deal with the matter of oversea defences effectively without the co-operation and goodwill of all parts of the Empire. What I want to see brought about is some system to enable that to be done. I call it an Imperial Parliament of Defence

Sir Frederick Borden Naval Defence, I think you mean

Sir Joseph Ward Naval Defence, as I have already stated

The President It is not to deal with military matters, I think you told us before.

Mr. Fisher But it is to deal with treaties, I understand

Sir Joseph Ward · Certainly treaties, because they necessarily affect defence

Mr. Fisher That is a very important item

Sir Joseph Ward The question of treaties, as a matter of fact, has a very large bearing on the possibility of troubles affecting all portions of the Empire

Mr Fisher It is as big as the other

Sir Joseph Ward Yes, it is At all events I

am submitting this proposal because I am impressed with the fact that to-day in reality the oversea Dominions are helpless. I have no hesitation in saying in the presence of other representatives here that I am certain they are all prepared to accept their responsibilities in connexion with defence matters, but, as a matter of fact, they are all helpless and they know nothing. I speak for New Zealand, and though we take our part quite willingly we know nothing whatever as to the possibilities of troubles arising that we are bound to be drawn into. But as British countries, with people of various nationalities in them, we have come to a point when a change is necessary if we are to have our people with us in taking our part in connexion with the general defence of the Empire We must have some alteration of the present disjointed so-called system That is what I am trying to arrive at, and what I am hopeful that something may be done in connexion with. I recognize to the full the truth of what Mr James Bryce, the British Ambassador in America, says upon this point of central control as against divided control in distant portions of the Empire. He says that 'The great principle applicable'——

The President What are you quoting from—his book ?

Sir Joseph Ward Yes 'The great principle applicable in every branch and art of government is that the more power that is given to the units which compose an empire, be these units large or small, and the less that is given to a central or imperial authority, so much the fuller will be

the liberty and so much greater the energy of the individuals who compose the people as a whole.' I agree with those sentiments absolutely, and, apart from any of the proposals I make to this Conference, that is the spirit that underlies the proposals I am making, the motive I have endeavoured, however imperfectly, to explain to the members of the Conference.

Now I want just to say one word upon what I believe, if we had a properly constituted authority, our respective Dominions, as far as the people are concerned, would be favourable to, namely, what might be done in the matter of general Naval Defence, without loss of local dignity to any Dominion, without any loss of prestige, and still would, I believe, be of superior advantage to the individual portions of the Empire, especially to the Old World, and would go towards making the peace of the world assured. I spoke of the absence of uniformity of system by which a contribution could be made for naval purposes. I know what is being done in Canada, I know what is being done in Australia, and I recognize the enormous amount the Old Country is doing quite irrespective of all our Dominions in every possible way. I recognize, too, the large share the British taxpayer has taken in contributing towards the general support of the oversea Dominions as far as Naval Defence is concerned, and what they have done so magnificently and cheerfully in the past.

I believe we ought as far as the white people in our respective countries are concerned, to have a uniform system of contribution—and I want to make that clear—for Naval Defence. Upon the

basis of 13 millions of white people (and there are more than that—I am not overstating it) in the British Dominions, if we were to give for Naval Defence 10*s* *per capita* we would provide £6,500,000 a year, and if our annual amount of £6,500,000 was put into the purchase of battleships (I call them Dreadnoughts for the purposes of my argument) at £2,000,000 each, there could be provided for out of the annual contribution three Dreadnoughts per annum But as a matter of practice, I think I ought to say, Mr Asquith, that although it may be done occasionally the building of battleships is not generally provided for out of revenue

The President We do it here, you know.

Sir Joseph Ward Not always

Mr. Fisher Our proposal is always revenue, and no other policy will ever be tolerated

Sir Joseph Ward: I am going to state what my opinion is, because I am of the opinion that at times considerable sums are used other than out of revenue for the purpose of providing armaments

The President · As to the battleships and munitions of war, we have done such things, I agree, but our normal practice is to provide for the construction of ships entirely out of revenue.

Sir Joseph Ward However, for the purposes of my argument, three Dreadnoughts certainly could be provided for yearly out of the annual revenue But supposing, in order to place them in a position of supreme invulnerability and of absolute safety from every point of view, by co-operating with the British Navy, all these

oversea Dominions, instead of waiting for a period of 20 years with a gradual expenditure only of a very considerable sum of money yearly, decided as a matter of policy to borrow at once the necessary money to equip their territories with a practically impregnable naval defence system; this could be done out of the £6,500,000 a year upon the basis I have suggested I conceive that by this means such a position could be simply and efficiently arrived at within five years from now Twenty-five Dreadnoughts at £2,000,000 each would amount to 50 million sterling, and the annual *per capita* contribution would, upon a basis of 6 per cent, including 3 per cent for sinking fund, ensure that every one of them would be paid for in 15 years. In Australia, for instance—I am saying this, as my friend Mr Fisher will recognize, with all respect——

Mr Fisher Yes, I quite admit that

Sir Joseph Ward In Australia, for instance, with all its Eastern possibilities, instead of having a minimized or ineffective fleet to meet the requirements of the great Commonwealth for protective purposes, ample protection would be afforded in a comparatively short period. To build up their own navy will take many years, with an enormous burden, in proportion to its population, in the interval placed on the people of the Commonwealth; but if a proposal of the kind I am suggesting (if any voluntary system which is suggested can be brought about, well and good, but I do not believe it can) were given effect to, what would the position be in Australia, in Canada, in New Zealand, South Africa, and New-

foundland? Why, by making provision for the repayment of those 25 Dreadnoughts if the vessels could be supplied within five years from now, every point of those Possessions would be in a position for defensive purposes absolutely unsurpassed by any other part of the world

Mr Fisher But, Sir Joseph, if you will allow me to interrupt, you would have no fleet at all at the end of fifteen years.

Sir Joseph Ward Why?

Mr Fisher Because it would be scrap iron then, and you would only have paid for it

Sir Joseph Ward · I do not agree with you, Mr Fisher, because I want to point out that if you provide for depreciation at the rate of 3 per cent, which I am suggesting on the establishment of the fleet——

Mr Fisher Fifteen years?

Sir Joseph Ward. Yes, and if any vessel went out altogether at that period you would have replaced her out of sinking funds that had accumulated because you would be providing for depreciation all the time According to your argument, your railways ought to have been scrap iron twenty-five years ago

Mr Fisher No.

Sir Joseph Ward Your Houses of Parliament ought to have been out of existence twenty-five years ago, if that argument is a sound one

Mr Fisher You cannot keep a fighting ship in permanent repair; the Admiralty will tell you that

Sir Joseph Ward As a matter of fact they are kept in repair now Even on the 10*s* *per capita*

basis, I am suggesting the utilization of only half the amount that would be given per annum for the purpose of providing the interest and sinking fund, and warships that would be up-to-date could be built in your own country with great promptitude compared to what is being done now, and this would make for early protective efficiency, without having the uncertainty that an inadequate fleet must create if its building up is extended over a long period of years

Mr. Fisher: I only say that I think it is a faulty calculation

Sir Joseph Ward. In my opinion, where you are providing for the full redemption of debt in a period of years, the argument my friend Mr Fisher is putting forward is not a sound one, because the same principle applies to replacements. If you provide a sinking fund for the complete restoration of anything within a given period, there can be no such thing as it being out of existence at the end of the time, otherwise no railway system would exist after a period of years has passed by They would all disappear

Sir Wilfrid Laurier: Railways are producing revenue and they are therefore replaced all the time; but warships do not produce any revenue

Sir Joseph Ward Railways are built out of capital borrowed and not out of revenue, but out of that revenue there should be a sinking fund established and continual repair on the railways should be effected out of revenue also.

Sir Wilfrid Laurier Yes, out of revenues of the railway There is no possible comparison between the two things

Sir Joseph Ward I do not agree, because the 10*s. per capita* that I suggest takes the place of the ordinary revenue received from any commercial department such as railways. However, I want to place on record my view on this matter, and to say that in my opinion a position of enormous strength, with at least three of the most powerful battleships, could be provided for Australia, that six of them could be provided for Canada for dealing with both the Pacific and Atlantic coasts, that three of them could be provided for South Africa, if South Africa required them, although I know they are in a similar position to New Zealand in the matter of their naval defences, two could be provided for New Zealand and one for Newfoundland, and all the subsidiary vessels that make up fleet units could be provided for all those countries. In addition ten Dreadnoughts could be added promptly to the British Navy, and all this could be done entirely by the oversea Dominions out of the proposal which I am speaking of at the present moment

Mr. Batchelor. That policy could be adopted now, could it not?

Sir Joseph Ward If you could tell me, Mr Batchelor, what machinery there is in existence to enable all of the oversea countries and the Motherland to adopt a uniform policy in the matter of naval defence to make an invulnerable Empire Navy, no suggestion of mine is necessary, because at the present time we do not act together—for instance, Sir Wilfrid Laurier holds a pronounced view in one direction, and I do not hold the same view with him; the Commonwealth of Australia

holds a different view; if it comes to individual attempts to act on the part of the respective countries, then how could we possibly act together?

Sir Wilfrid Laurier We must have a body above us to force us to be good boys and pay our share while the superior body spends it.

Sir Joseph Ward If the people of our respective countries were empowered to elect representatives to a corporate body for the preservation of their interests round their own coasts and the sea routes, if that is called a superior body to the people themselves, then I admit that your argument is right But what I am suggesting is that the same people who create the individual Parliaments should elect their representatives and have a voice in the matter of their protection, and also upon the point of going to war or otherwise, that they should have a voice in the creation of a system which is going to be really of value to them

Sir Wilfrid Laurier. That is a very different position

Sir Joseph Ward That is what I am suggesting, and I know the difficulties surrounding it, I apprehend the difficulties fully, but I suggest this as one way, and, if any other gentleman at this Conference can suggest as good or a better way, I would be only too happy to support it. But at present I say this—with all respect to every portion of the British Dominions—individually, though we are involved when Great Britain has a fight for the supremacy of the seas, we have no voice at all, we are helpless

The President: I should like, if I may, to ask

[illegible]

that is to be worked out practically? Are we to have a debate on the question of whether or not the Empire shall go to war, at which everybody is to speak, with a division, and so on—300 members?

Sir Joseph Ward: I have not suggested anything of that sort.

The President: That is your suggestion—the only suggestion before the Conference.

Sir Joseph Ward: I have not suggested anything of the kind, with all due deference.

The President: Then I do not understand it.

Sir Joseph Ward: I have suggested an executive of fifteen, and if there was an executive of fifteen [illegible]

The President: Is the executive of fifteen to be elected by or responsible to the parliamentary body?

[illegible] the ultimate arbiters?

Sir Joseph Ward: Yes. The fifteen members of the executive, or whatever the number of the [illegible] would be representa- [illegible]

have to-day, that they have no voice, even although I recognize that they would be in a minority under the new system. They have no voice or say at present in connexion with matters in which they are deeply concerned, and I do not suggest a one-sided proposal because I advocate the oversea Dominions contributing 10*s.* *per capita*

The President · What is to be the position of the Imperial Government? Where does it come in? Are they to conduct negotiations with Foreign Powers up to the point when there is a possibility of a rupture, and then is your executive to come in to determine whether or not we are to go to war?

Sir Joseph Ward They would have 220 members from Great Britain.

The President · I am speaking of the executive The British Cabinet, at present, is responsible for the conduct of our relations with foreign countries We carry on, of course with all the secrecy that diplomacy requires, these negotiations in the interests of the Empire as a whole We get to a point, or we might conceivably get to a point, in which it was a question whether or not there should be a rupture between us and a great Foreign Power At present the Cabinet decides that on its own responsibility. Parliament dismisses them if they are not satisfied that they have acted rightly What I want to know from you is—so as to understand the proposition, whether it amounts to this that at that point, the negotiations having been conducted up to that point by the British Cabinet, it is then to hand over the

determination of the question of peace or war to your new executive, responsible to the Parliament of Defence? I do not ask in any hostile spirit; I only want to know if that is the proposal?

Sir Joseph Ward: My answer to that, Mr Asquith, is that the executive suggested in this would be an executive representing in the same proportions the British people as are now represented by the British public in the Imperial Parliament. There would, of course, be a preponderance of British representatives upon that body which would carry on everything you are suggesting with the same secrecy

The President How then would you be better off than now?

Sir Joseph Ward: Because now we have no voice or say.

The President Your voice, as you say, would always be overruled you say it is an essential factor of the arrangement that the British should always be in a vast preponderance

Sir Joseph Ward. That does not get over the fact that none of the British Dominions are represented directly or indirectly at the present time

The President: I wanted to see what the effect would be

Sir Joseph Ward· I think the people of the oversea Dominions are entitled to representation in connexion with such far-reaching matters. I recognize that representation does not mean control—very far from it, if it meant control I should say that your view of the matter was abso-

lutely unanswerable. The control still remains [illegible] putting any view in opposition. I only asked you the question [illegible]

Sir Joseph Ward I know. In matters of naval defence I believe sincerely the whole posi- [illegible] out any difficulty naval construction yards could be pro- [illegible] *capita* [illegible] this means the distant countries might certainly hope to have, not an imaginative local navy that in all human probability would not be able to do what they required in times of stress, but they would [illegible] do what [illegible] present British Navy would make it so powerful as to make the peace of the world absolutely assured. In other words, there would be all the advantages that now accrue, only greater in my opinion, to the local places. The building programme in the Dominions themselves to which they attach importance could be provided, with this material difference, that they would have effective and efficient naval strength at an early period, instead of, to put it mildly, an inadequate and uncertain strength being built up over a long period of years.

I have no hesitation whatever in saying with regard to this important question of the Declara-

tion of London (I [illegible] now, [illegible]

and New Zealand, the Declaration of London, in my opinion, [illegible] consequence [illegible]

[illegible] routes of the world, to keep the routes open so as to enable the requisite food supplies to come to this Old Country [illegible]

The whole matter is a very important one ; the [illegible] for, and I say quite frankly that, even after discussion here, if this should not meet with the [illegible] of the Confer- [illegible] the view that the present position is not right, that an impor- [illegible] I think I am further [illegible] ion that, as the years [illegible] it democracies in the overseas Dominions will not be stopped from [illegible] and [illegible] the troubles that may ensue connected with any war affecting the stability of the British Empire, they are entitled, as a matter of right, not as a matter of appeal, to have some say, even although they be in a minority, upon some properly constituted body that is going to decide the question as to whether there is to be peace or war. My opinion is that they ought to have some representation,

and that it ought to be upon a basis that will meet with the general approval of the people of Great Britain and the oversea Dominions

I will not discuss the matter any further, Mr Asquith, excepting to say that I know that no scheme for bringing about Imperial unity, that no scheme for establishing a system of organized Imperial Defence, that no scheme for the equitable distribution of the burdens of Defence throughout the Empire, and that no scheme for the representation of the self-governing oversea Dominions in an Imperial Council or Parliament of Defence or for the purpose of dealing with the matters I have suggested, can be brought about in a hurry. I recognize that the proposals I have made are far from perfect, but I believe as certainly as that we men are sitting round this Conference table that the future will call for an alteration, in the direction at least of what I am suggesting. The growth of these oversea Dominions on attaining the proportions they will within a limited period of years from now, will be such that with the kindliest feeling, with the deepest ties of affection to the old world, the people who are free, independent, and recognize all the values of British institutions, and who value to the full the tremendous protection they have received as the outcome of the payments of the British taxpayers to the coffers of the British Treasury in the general interests of the people in the Old Land as well as the people in the distant portions of the Empire—I say, notwithstanding all that you will find that the strength of those rising oversea democracies in future will be such that their peoples will call for

representation, they will call for a voice in determining the all-important question of peace or war, how they are to bear their proportions and how they are effectually to help in establishing a system of naval defence that will go for maintaining the solidarity of the Empire as a whole, and in reality will go for bringing about and continuing that which every civilized community desires, the peace of the world.

. . . . .

General Botha's Criticism

Mr. President, I have listened with the greatest interest to the speech which has been delivered by my friend the Prime Minister of New Zealand, and although I highly appreciate the spirit in which he has brought forward his proposal I am sorry to say that I cannot agree with him.

I am sure that every one of us is equally anxious to knit the various parts of the British Empire together as closely as possible, and that any practical scheme to attain this object would receive our most cordial support, and our Imperial Conferences are held with that object

We must not, however, look upon these Conferences as affording in the first place an opportunity for the passing of a number of resolutions which will be carried into effect throughout the Empire—if we do this I am afraid that we shall be disappointed—I look upon these Conferences with very different views I consider that they are of the greatest possible value in periodically

bringing

and enab

interest

tions, and we would all be able to work towards the attainment of one common ideal

These conferences have already been of the greatest value, and I am convinced that they are in ponsible for the greater which we have undoubtedly already attained since they were first organized

These conferences are undoubtedly an impor

posed would bring us nearer to our object

I have asked myself whether this proposal which has been brought forward is a practical one. No one can feel more than I do, that as often as the British Government has to deal with matters

cerned should have an opportunity of being heard and of expressing its views. After the most careful consideration, however, I have come to the conclusion that this object cannot satisfactorily

to be appointed. Who will decide what matters must come before it? What authority is to be

vested in it? To what representative body is such a Council to be responsible? These are only a few of the questions which crop up immediately, and it seems to me that no satisfactory reply can [illegible]

[illegible] vinced that the self-governing powers of the various parts of the Empire must necessarily be encroached upon, and that would be a proposition which I am certain no Parliament in any part of the Empire will entertain for one moment.

If no real authority is to be given to such a Council, I fear very much that it would only become a meddlesome body which will continually endeavour to interfere with the domestic concerns of the various parts of the Empire, and cause nothing but unpleasantness and friction—in fact, the very opposite of what we desire. I [illegible]

[illegible] difficult problem will ultimately be evolved. It may be that the time will arrive when a body will come into existence upon which the various parts [illegible] men elected by [illegible] may be that in years to come these Imperial Conferences which we are holding to-day will be looked upon as a link in the long chain of evolution of such a body. But that day has not arrived yet, and we must not try to force the pace unduly. If our Imperial Conferences are not quite as satisfactory as we might wish them to be, then let us do our best to make them more so [illegible]

But what are we asked to do now? It would

probably mean, I submit, the creation of some body in which would be centralized authority over the whole Empire Now this would in my mind be a step entirely antagonistic to the policy of Great Britain which has been so successful in the past and which has undoubtedly made the Empire what it is to-day. It is the policy of decentralization which has made the Empire—the power granted to its various peoples to govern themselves It is the liberty which these peoples have enjoyed and enjoy under the British Flag which has bound them to the Mother Country That is the strongest tie between the Mother Country and the Dominions, and I am sure that any scheme which does not fully recognize this, could only bring disappointment and disillusionment I fear that the premature creation of such an Imperial Council as is suggested would—rather than bring the different parts of the Empire closer together—tend to make the connexion onerous and unpleasant to the Dominions Let us beware of such a result Decentralization and liberty have done wonders Let us be very careful before we, in the slightest manner, depart from that policy. It is co-operation and always better co-operation between the various parts of the Empire which we want, and that is what we must always strive for.

I have very seriously considered this proposal, but I cannot come to any other conclusion than that the objections against such a scheme are far weightier than any benefits which may arise therefrom, and I regret, therefore, that I shall not be able to record my vote in favour of it

Mr Asquith's Criticism

I should inform the Conference, for I promised to do so, that I received some weeks ago a memorial signed by a very large number of the Members of the Imperial House of Commons—I think something like three hundred belonging to various parties in the State (it was not at all confined to one body),—which was in these terms: 'We the undersigned Members of Parliament, representing various political parties, are of the opinion that the time has arrived to take practical steps to associate the oversea Dominions in a more practical manner with the conduct of Imperial affairs; if possible, by means of an established representative council of an advisory character in touch with public opinion throughout the Empire.' I promised to communicate that resolution to the Conference, and at the same time I informed the gentlemen who were good enough, on behalf of the signatories, to present it to me, that while his Majesty's Government had the strongest sympathy with any practical step for bringing into closer communication the Imperial and overseas Governments, yet when it came to anything in the nature of the setting up of new political or constitutional machinery, a condition precedent must be that the change had the unanimous consent of the Dominions themselves, and the gentlemen who represented the memorialists concurred or appeared to me to concur in that view. At the same time I think it only right and proper that the Conference should be aware that such a memorial was presented. Does it not also show

how much easier a thing it is to express an abstract [illegible] of closer [illegible] aspiration [illegible]

[illegible]

the declaration and maintenance of peace, or the declaration of war and, indeed, all those relations with Foreign Powers, necessarily of the most delicate character, which are now in the hands of [illegible]

from the point of view of the Dominions I cannot do better than repeat in my own words what was said by Sir Wilfrid Laurier. So far as the Dominions are concerned, this new machine could impose upon the Dominions by the voice of a body in which they would be [illegible] (that is part of the case), in a [illegible] a policy of [illegible] which [illegible] probably [illegible] in most [illegible] [illegible] of taxation [illegible]

[illegible] and the history of the British Empire behind us, either from the point of view of the United Kingdom, or from the point of view of our self-governing Dominions, assent [illegible] fatal [illegible] our Empire has been built up and carried on. Therefore, with the highest possible respect, as we [illegible] for the [illegible] with which Sir [illegible] case, and a great deal of sympathy with many of the objects he has in view, I think we must agree that on its merits this proposal is not a practical one, and that, even if it were so, even if it could be shown to be so, the fact that it not only does not receive the unanimous consent of all the representatives [illegible] by them all [illegible] for the purposes of this Conference a fatal and, indeed, an insuperable objection to its adoption.

7. THE NAVAL AGREEMENT OF 1911

1. THE naval services and forces of the Dominions of Canada and Australia will be exclusively under the control of their respective Governments

2. The training and discipline of the naval forces of the Dominions will be generally uniform with the training and discipline of the fleet of the United Kingdom, and, by arrangement, officers and men of the said forces will be interchangeable with those under the control of the British Admiralty

3. The ships of each Dominion naval force will hoist at the stern the white ensign as the symbol of the authority of the Crown, and at the jack-staff the distinctive flag of the Dominion.

4. The Canadian and Australian Governments will have their own naval stations as agreed upon from time to time. The limits of the stations are as described in Schedule (A), Canada, and Schedule (B), Australia.

5 In the event of the Canadian or Australian Government desiring to send ships to a part of the British Empire outside of their own respective stations, they will notify the British Admiralty

6 In the event of the Canadian or Australian Government desiring to send ships to a foreign port, they will obtain the concurrence of the Imperial Government, in order that the necessary

arrangements with the Foreign Office may be made, as in the case of ships of the British fleet, in such time and manner as is usual between the British Admiralty and the Foreign Office.

7. While the ships of the Dominions are at a foreign port a report of their proceedings will be forwarded by the officer in command to the Commander-in-Chief on the station or to the British Admiralty. The officer in command of a Dominion ship so long as he remains in the foreign port will obey any instructions he may receive from the Government of the United Kingdom as to the conduct of any international matters that may arise, the Dominion Government being informed

8 The Commanding Officer of a Dominion ship having to put into a foreign port without previous arrangement on account of stress of weather, damage, or any unforeseen emergency will report his arrival and reason for calling to the Commander-in-Chief of the station or to the Admiralty, and will obey, so long as he remains in the foreign port, any instructions he may receive from the Government of the United Kingdom as to his relations with the authorities, the Dominion Government being informed

9. When a ship of the British Admiralty meets a ship of the Dominions, the senior officer will have the right of command in matters of ceremony or international intercourse, or where united action is agreed upon, but will have no power to direct the movements of ships of the other service unless the ships are ordered to co-operate by mutual arrangement

10. In foreign ports the senior officer will [illegible]

[illegible]

11. When a court martial has to be ordered by a Dominion and a sufficient number of officers are not available in the Dominion service at the time, the British Admiralty, if requested, will make the necessary arrangements to enable a Court to be formed. Provision will be made by order of his Majesty in [illegible] Governments respectively to define the conditions [illegible]

12. The British Admiralty undertakes to lend to the Dominions during the period of development of their services, under conditions to be agreed upon, such flag officers and other officers [illegible]

[illegible] Dominions [illegible] service [illegible] fleet in the Dominion naval forces, or of officers of these forces in the British fleet, will count in all respects for promotion, pay, retirement, &c., as service in their respective forces.

14. In order to determine [illegible] seniority that [illegible] will be shown [illegible] determined by the date of their commissions, [illegible]

and co-operation, that arrangements should be made from time to time between the British Admiralty and the Dominions for the ships of the Dominions to take part in fleet exercises or for any other joint training considered necessary under the Senior Naval Officer. While so employed, the ships will be under the command of that officer, who would not, however, interfere [illegible] of ships of another ser- [illegible] tely necessary [illegible]

16 In time of war, when the naval service of a Dominion, or any part thereof, has been put at the disposal of the Imperial Government by the Dominion authorities, the ships will form an integral part of the British fleet, and will remain under the control of the British Admiralty during the continuance of the war [illegible]

17 [illegible]

Instructions and the Naval Discipline Act, the British Admiralty and Dominion Governments will communicate to each other any changes which they propose to make in those Regulations or that Act [illegible]

June, 1911. [illegible]

[illegible] On the outbreak of war in 1914, the Australian naval forces, consisting of a Dreadnought [illegible] placed un[illegible]

[illegible]

8 THE NAVAL POLICY OF CANADA

Speech of Rt. Hon R L. Borden, in the Canadian House of Commons, December 5, 1912

Right Hon R L Borden (Prime Minister) moved for leave to introduce Bill (No 21) to authorize measures for increasing the effective naval forces of the Empire He said

Mr Speaker, in addressing the House upon so important a subject as that which I propose to discuss, I shall speak in no controversial spirit. If a portion of my remarks may necessarily controvert opinions which have been expressed by hon. gentlemen on either side of the House, let it be understood that I do so, not by way of criticism, but purely for the purpose of giving frankly to the House the reasons which have led the Government to adopt the course which I shall now outline

It is not necessary to dwell upon the increasing power and influence of Canada within the Empire, due to its remarkable growth and expansion, and to the wonderful and rapid development of its resources during the past quarter of a century With this increasing power and influence there has necessarily come by sure and gradual steps a certain development in our relations with the

United Kingdom and the other dominions The evolution of the constitutional relations within the Empire during the past half-century has not been less marked than its material progress. In this constitutional development we are necessarily confronted with the problem of combining co-operation with autonomy It seems most essential that there should be such co-operation in defence and in trade as will give to the whole Empire an effective organization in these matters of vital concern On the other hand, each Dominion must preserve in all important respects the autonomous government which it now possesses. Responsibility for the Empire's defence upon the high seas, in which is to be found the only effective guarantee of its existence, and which has hitherto been assumed by the United Kingdom, has necessarily carried with it responsibility for and control of foreign policy With the enormous increase of naval power which has been undertaken by all great nations in recent years, this tremendous responsibility has cast an almost impossible burden upon the British Islands, which for nearly a thousand years have exercised so profound an influence upon the world's history That burden is so great that the day has come when either the existence of this Empire will be imperilled or the young and mighty Dominions must join with the Mother Land to make secure the common safety and the common heritage of all. When Great Britain no longer assumes sole responsibility for defence upon the high seas, she can no longer undertake to assume sole responsibility for and sole control of foreign policy which

is closely, vitally, and constantly associated with that defence in which the dominions participate. It has been declared in the past, and even during recent years, that responsibility for foreign policy could not be shared by Great Britain with the Dominions. In my humble opinion, adherence to such a position could have but one and that a most disastrous result. During my recent visit to the British Islands, I ventured on many public

[illegible]

control of foreign [illegible]

made was greeted [illegible]

cally than this. It is satisfactory to know that to-day not only his Majesty's ministers but also the leaders of the opposite political party in Great B[illegible]

[illegible]

attention to certain remarks which I addressed to this House just two years ago in replying to inquiries as to the course we would pursue after attaining power. Th[illegible]

[illegible]

defence and grave. If

of the

experts

manent

and wide

dominions

nations of this Empire in the defence of the Empire as a whole, shall it be that we, contributing to that

shall have absolutely

voice whatever in the

not think that such

I do not believe the people of Canada would for one moment submit to

British Isles has at this moment? It does not seem to me that such a condition would make for the in-

been worked out and explained to the people of Canada, to every citizen in this country, then it would

the people

accept and

that policy.

The present Government assumed office on the 10th of October, 1911, and met Parliament on the 17th day of November following It is hardly necessary to point out that there was no opportunity until after the close of the session to visit Great Britain or to consult the Admiralty in any effective way. Shortly after the session closed, I went to England accompanied by some of my colleagues, and for several weeks we had the opportunity from time to time of conferring with the British Government and of consulting with the technical and expert advisers of the Admiralty respecting the whole question of naval defence, and especially the conditions which confront the Empire at present and in the early future I desire to express my warm appreciation of the manner in which we were received by his Majesty's Government, who took us most fully into their confidence on the great questions of foreign policy and of defence, and who accorded to us all relevant information at their disposal. A portion of this necessarily is of a very confidential character, which cannot be made public, but an important part will be communicated to the House in a document which I shall lay on the table this afternoon

In considering the power of the British Empire to maintain that predominance upon the sea which is essential to its safety and to its very existence, it is clear that reference to the other naval forces of the world cannot be excluded Such references and comparisons are frequently made by all the Great Powers, and they do not imply anything unfriendly in intention or in spirit to other nations

Indeed, a most distinct reference to the naval power of Great Britain has been set forth in the preamble to the naval law of one great Empire which in recent years has sprung to the front with amazing rapidity in the development of its naval forces.

I now proceed to submit to the House the information which we have received from his Majesty's Government It is in the form of a memorandum, as follows:

From the Secretary of State for the Colonies to his Royal Highness the Governor-General

DOWNING STREET,
October 25, 1912.

SIR,—I have the honour to transmit to your Royal Highness the accompanying copy of a memorandum relating to the requirements of the naval defence of the Empire

2. This document has been prepared by the Admiralty on the instructions of his Majesty's Government in compliance with the request of Mr Borden, with a view to presentation to the Dominion Parliament if, and when, the Dominion ministers deem it necessary.

I have, &c,
L. HARCOURT.

Prepared by the Board of Admiralty on the General Naval Situation and communicated to the Government of Canada by his Majesty's Government

1 The Prime Minister of the Dominion of Canada has invited his Majesty's Government, through the Board of Admiralty, to prepare a statement of the present and immediately prospective requirements of

the naval defence of the Empire for presentation to the Canadian Parliament if the Dominion Cabinet deem it necessary.

The Lords Commissioners of the Admiralty are prepared to comply and to supplement, in a form which can be made public, the confidential communications and conversations which have passed between the Admiralty and ministers of the Dominion Parliament during the recent visit to the United Kingdom.

The Admiralty set the greatest store by the important material, and still more important moral, assistance which it is within the power of Canada to give to maintaining British naval supremacy on the high seas, but they think it necessary to disclaim any intention, however indirect, of putting pressure upon Canadian public opinion, or of seeking to influence the Dominion Parliament in a decision which clearly belongs solely to Canada.

The Admiralty therefore confine themselves in this statement exclusively to facts, and it is for the Dominion Government and Parliament to draw their own conclusions therefrom.

2. The power of the British Empire to maintain the superiority on the sea which is essential to its security, must obviously be measured from time to time by reference to the other naval forces of the world, and such a comparison does not imply anything unfriendly in intention or in spirit to any other Power or group of Powers. From this point of view the development of the German fleet during the last fifteen years is the most striking feature of the naval situation to-day. That development has been authorized by five successive legislative enactments, viz. the Fleet Laws of 1898, 1900, 1908, and 1912. These laws cover the period up to 1920.

Whereas in 1898 the German fleet consisted of

9 battleships (excluding coast defence vessels),
3 large cruisers,
28 small cruisers,
113 torpedo boats, and
25,000 men.

maintained at an annual cost of £6,000,000, the full fleet of 1920 will consist of

41 battleships,
20 large cruisers,
40 small cruisers,
144 torpedo boats,
72 submarines, and
101,500 men,

estimated to be maintained at an annual cost of £23,000,000. These figures, however, give no real idea of the advance, for the size and cost of ships has risen continually during the period, and, apart from increasing their total numbers, Germany has systematically replaced old and small ships, which counted as units in her earlier fleet, by the most powerful and costly modern vessels. Neither does the money provided by the estimates for the completed law represent the increase in cost properly attributable to the German Navy, for many charges borne on British naval funds are otherwise defrayed in Germany; and the German Navy comprises such a large proportion of new ships that the cost of maintenance and repair is considerably less than in navies which have been longer established.

3. The naval expansion of Germany has not been provoked by British naval increases. The German Government have repeatedly declared that their naval policy has not been influenced by British action, and the following figures speak for themselves:

In 1905 Great Britain was building 4 capital ships and Germany 2.

In 1906 Great Britain reduced to 3 capital ships, and Germany increased to 3.

In 1907 Great Britain built 3 capital ships, and Germany built 3.

In 1908 Great Britain further reduced to 2 capital ships, and Germany further increased to 4.

It was not until the efforts of Great Britain to procure the abatement or retardation of naval rivalry had failed for three successive years that the Admiralty were forced in 1909, upon a general review of the naval

situation, to ask Parliament to take exceptional measures to secure against all possible hazards the safety of the Empire In that year, 8 capital ships were laid down in Great Britain, and 2 others were provided by the Commonwealth of Australia and the Dominion of New Zealand respectively—a total of 10

4 In the spring of the present year the fifth German Navy Law was assented to by the Reichstag The main feature of that law is not the increase in the new construction of capital ships, though that is important but rather the increase in the striking force of ships of all classes which will be immediately available at all seasons of the year

A third squadron of 8 battleships will be created and maintained in full commission as part of the active battle fleet Whereas, according to the unamended law, the active battle fleet consisted of 17 battleships, 4 battle or large armoured cruisers, and 12 small cruisers, it will in the near future consist of 25 battleships, 8 battle or large armoured cruisers, and 18 small cruisers, and whereas at present, owing to the system of recruitment which prevails in Germany, the German fleet is less fully mobile during the winter than during the summer months, it will, through the operation of this law, not only be increased in strength, but rendered much more readily available Ninety-nine torpedo-boat destroyers, instead of 66, will be maintained in full commission out of a total of 144, 72 new submarines will be built within the currency of the new law, and of these it is apparently proposed to maintain 54 with full permanent crews Taking a general view, the effect of the law will be that nearly four-fifths of the entire German Navy will be maintained in full permanent commission, that is to say, instantly and constantly ready for war

So great a change and development in the German fleet involves, of course, important additions to their personnel In 1898 the officers and men of the German Navy amounted to 25,000 To-day that figure has reached 66,000 The new law adds 15,000 officers and men, and makes a total in 1920 of 101,500

The new construction under the law prescribes the building of 3 additional battleships—1 to be begun next year 1 in 1916—and 2 small cruisers, of which the date has not yet been fixed The date of the third battleship has not been fixed It has been presumed to be later than the six years which are in view The cost of these increases in men and in material during the next six years is estimated at £10,500,000 spread over that period above the previous estimates

The facts set forth above were laid before the House of Commons on the 22nd July 1912, by the First Lord of the Admiralty

5 The effect of the new German Navy Law is to produce a remarkable expansion of strength and readiness The number of battleships and large armoured cruisers which will be kept constantly ready and in full commission will be raised by the law from 21, the present figure, to 33—an addition of 12, or an increase of about 57 per cent

The new fleet will, in the beginning include about 20 battleships and large cruisers of the older type, but gradually as new vessels are built the fighting power of the fleet will rise until in the end it will consist completely of modern vessels

The complete organization of the German fleet, as described by the latest law, will be 5 battle squadrons and a fleet flagship, comprising 41 battleships in all, each attended by a battle or armoured cruiser squadron, complete with small cruisers and auxiliaries of all kinds and accompanied by numerous flotillas of destroyers and submarines

This full development will only be realised step by step, but already in 1914 two squadrons will, according to Admiralty information, be entirely composed of what are called Dreadnoughts, and the third will be made up of good ships like the *Deutschlands* and the *Braunschweigs*, together with 5 Dreadnought battle cruisers

This great fleet is not dispersed all over the world for duties of commerce protection or in discharge of colonial responsibilities, nor are its composition and

character adapted to those purposes It is concentrated and kept concentrated in close proximity to the German and British coasts

Attention must be drawn to the explicit declaration of the tactical objects for which the German fleet exists as set forth in the preamble to the naval law of 1900 as follows

In order to protect German trade and commerce under existing conditions, only one thing will suffice, namely, Germany must possess a battle fleet of such a strength that even for the most powerful naval adversary a war would involve such risks as to make that Power's own supremacy doubtful For this purpose it is not absolutely necessary that the German fleet should be as strong as that of the greatest naval Power, for, as a rule, a great naval Power will not be in a position to concentrate all its forces against us'

6 It is now necessary to look forward to the situation in 1915

IN HOME WATERS

In the spring of the year 1915 —

Great Britain will have 25 Dreadnought battleships and 2 'Lord Nelsons'

Germany will have 17 Dreadnought battleships.

Great Britain will have 6 battle cruisers Germany will have 6 battle cruisers

These margins in new ships are sober and moderate They do not err on the side of excess The reason they suffice for the present is that Great Britain possesses a good superiority in battleships and especially armoured cruisers, of the pre-Dreadnought era

The reserve of strength will steadily diminish every year actually, because the ships of which it is composed grow old and relatively, because the new ships are more powerful It will diminish more rapidly if new construction in Germany is increased or acceler

continues, greater exertions will be required by the British Empire

Mediterranean Station

Four battle cruisers and four armoured cruisers will be required to support British interests in the Mediterranean during the years 1913 and 1914. During those years the navies of Austria and Italy will gradually increase in strength, until in 1915 they will each possess a formidable fleet of 4 and 6 Dreadnought battleships respectively, together with strong battleships of the pre-Dreadnought types and other units such as cruisers, torpedo-craft, &c. It is evident therefore that in the year 1915 our squadron of 4 battle cruisers and 4 armoured cruisers will not suffice to fulfil our requirements, and its whole composition must be reconsidered.

Overseas

It has been necessary within the past decade to concentrate the fleet mainly in home waters.

In 1902 there were 160 British vessels on the overseas stations against 76 to-day.

7. Naval supremacy is of two kinds: general and local. General naval supremacy consists in the power to defeat in battle and drive from the seas the strongest hostile navy or combination of hostile navies wherever they may be found. Local superiority consists in the power to send in good time to, or maintain permanently in, some distant theatre, forces adequate to defeat the enemy or hold him in check until the main decision has been obtained in the decisive theatre. It is the general naval supremacy of Great Britain which is the primary safeguard of the security and interests of the great dominions of the Crown, and which for all these years has been the deterrent upon any possible designs prejudicial to or inconsiderate of their policy and safety.

The rapid expansion of Canadian sea borne trade, and the immense value of Canadian cargoes always afloat in British and Canadian bottoms, here require consideration. On the basis of the figures supplied

by the Board of Trade to the Imperial Conference of 1911, the annual value of the overseas trade of the Dominion of Canada in 1909–10 was not less than £72,000,000, and the tonnage of Canadian vessels was 718,000 tons, and these proportions have already increased and are still increasing For the whole of this trade wherever it may be about the distant waters of the world, as well as for the maintenance of her communications, both with Europe and Asia, Canada is dependent, and has always depended, upon the Imperial Navy, without corresponding contribution or cost

Further, at the present time and in the immediate future, Great Britain still has the power, by making special arrangements, and mobilizing a portion of the reserves, to send, without courting disaster at home, an effective fleet of battleships and cruisers to unite with the Royal Australian Navy and the British squadrons in China and the Pacific for the defence of British Columbia, Australia, and New Zealand And these communities are also protected and their interests safeguarded by the power and authority of Great Britain so long as her naval strength is unbroken

8 This power, both specific and general, will be diminished with the growth not only of the German Navy, but by the simultaneous building by many Powers of great modern ships of war

Whereas, in the present year, Great Britain possesses 18 battleships and battle-cruisers of the Dreadnought class against 19 of that class possessed by the other Powers of Europe, and will possess in 1913, 24 to 21, the figures in 1914 will be 31 to 33, and in the year 1915 35 to 51

The existence of a number of navies all comprising ships of high quality must be considered in so far as it affects the possibilities of adverse combinations being suddenly formed Larger margins of superiority at home would, among other things restore a greater freedom to the movements of the British squadrons in every sea, and directly promote the security of the Dominions

Anything which increases our margin in the newest

ships diminishes the strain and augments our security and our chances of being left unmolested

9 Whatever may be the decision of Canada at the present juncture, Great Britain will not in any circumstances fail in her duty to the Overseas Dominions of the Crown

She has before now successfully made head alone and unaided against the most formidable combinations and she has not lost her capacity by a wise policy and strenuous exertions to watch over and preserve the vital interests of the Empire

The Admiralty are assured that his Majesty's Government will not hesitate to ask the House of Commons for whatever provision the circumstances of each year may require But the aid which Canada could give at the present time is not to be measured only in ships or money Any action on the part of Canada to increase the power and mobility of the Imperial Navy, and thus widen the margin of our common safety, would be recognized everywhere as a most significant witness to the united strength of the Empire, and to the renewed resolve of the Overseas Dominions to take their part in maintaining its integrity

10 The Prime Minister of the Dominion having inquired in what form any immediate aid that Canada might give would be most effective, we have no hesitation in answering after a prolonged consideration of all the circumstances that it is desirable that such aid should include the provision of a certain number of the largest and strongest ships of war which science can build or money supply

In this twentieth century of Christianity, in this age which boasts of its civilization, the increasing tendency of the nations to arm themselves against each other is not only regrettable but depressing and alarming May the day soon approach when international differences will be settled by appeal to a tribunal established by

international authority, and so constituted that its decrees will unfailingly command respect and obedience. But, while war is still the supreme arbiter between the nations, we to whose care this vast heritage has been committed must never forget that we are the trustees of its security.

Do Canadians sufficiently realize the disparity between the naval risks of our Empire and those of any other nation? The armies of continental Europe number their men by the million, not by the thousand. They are highly equipped and organized; the whole population have undergone military training, and any one of these countries is absolutely secure against invasion from Great Britain, which could not send an expeditionary force of more than one hundred and fifty thousand men, at the highest estimate. Such a force would be outnumbered twenty to one by any of the great European Powers. The Empire is not a great military Power, and it has based its security in the past, as in the present, almost entirely on the strength of the Navy. A crushing defeat upon the high seas would render the British Islands or any of the Dominions subject to invasion by any great military Power. The loss of such a decisive battle by Great Britain would practically destroy the United Kingdom, shatter the British Empire to its foundation, and change profoundly the destiny of its component parts. The advantages which Great Britain could gain from defeating the naval forces of any other Power would be non-existent except in so far as the result would ensure the safety of the Empire. On the other hand, there are practically no limits to the ambi-

tions which might be indulged in by other Powers if the British Navy were once destroyed or disabled. There is, therefore, grave cause for concern when once the naval supremacy of the Empire seems on the point of being successfully challenged

The great outstanding fact which arrests our attention in considering the existing conditions of naval power is this Twelve years ago the British Navy and the British flag were predominant in every ocean of the world and along the shores of every continent To-day they are predominant nowhere except in the North Sea The paramount duty of ensuring safety in home waters has been fulfilled by withdrawing or reducing squadrons in every part of the world, and by concentrating nearly all the effective naval forces in close proximity to the British Islands In 1902 there were fifty-five British warships on the Mediterranean station, to-day there are nineteen There were fourteen on the North America and West Indies station, to-day there are three There were three on the south-east coast of South Africa, to-day there is one There were sixteen on the Cape of Good Hope station, to-day there are three There were eight on the Pacific station to-day there are two There were forty-two on the China station, to-day there are thirty-one There were twelve on the Australian station, to-day there are eight There were ten on the East Indies station, to-day there are nine Or to sum up, in 1902 there were one hundred and sixty ships on foreign and colonial stations against seventy-six to-day

Do not imagine that this result has been brought about by any reduction in expenditure, for the case is practically the reverse Great Britain's total naval expenditure in 1902 was less than $152,000,000 For the present fiscal year it will exceed $220,000 000 Why, then, has the naval force of the Empire been so enormously reduced throughout the world, while at the same time the expenditure has increased by nearly fifty per cent? For the simple reason that the increasing strength of other navies, and especially of the German Navy, has compelled Great Britain not only to increase her fleet, but to concentrate it in the vicinity of the British Islands, and there has been of course, a substantial increase of strength in home waters In short, the strain of meeting changed conditions has been so heavy and unceasing that, in spite of largely increased expenditure and every possible exertion, the Admiralty have been compelled by pressure of circumstances to withdraw or diminish forces throughout the world which in time of peril safe guarded the security and integrity of the King's dominions and in time of peace were a living and visible symbol of the tie that unites all the subjects of the Crown

It is neither necessary nor desirable in this place to debate or discuss the probability or imminence of war The real test of our action is the existence or non-existence of absolute security We cannot afford to be satisfied with anything less than that, for the risks are too great It should never be forgotten that without war, without the firing of a shot or the striking of a blow,

our naval supremacy may disappear, and with it the sole guarantee of the Empire's continued existence I especially desire to emphasize this consideration, for all history, and especially modern history, conveys to us many grave warnings that the issue of great events may be determined, and often is determined, not by actual war resulting in victory or defeat, but by the mere existence of unmistakable and pronounced naval or military superiority on either side

The fact that trade routes, vital to the Empire's continued existence, are inadequately defended and protected, by reason of necessary concentration in home waters, is exceedingly impressive and even startling Even during the present year the battleships of the British Mediterranean fleet based on Malta have been withdrawn and based on Gibraltar in order that they might become more easily available if necessary for aid in home waters The Atlantic fleet based on Gibraltar has been withdrawn to the vicinity of the British Islands for the same reason Under such conditions the British flag is not predominant in the Mediterranean, and, with every available exertion on the part of the whole Empire, it will be impossible to regain the necessary position of strength in that great highway before 1915 or 1916 Austria-Hungary, with only one hundred and forty miles of sea-coast, and with absolutely no colonial possessions is building in the Mediterranean a formidable fleet of Dreadnoughts which will attain its full strength in about three years, this fleet will be supported by strong battleships of the pre-Dreadnought type, and by cruisers,

torpedo craft, and other necessary auxiliaries. The fleet of Italy in the same theatre will be even more powerful and more formidable

The withdrawal of the British flag and the British Navy from so many parts of the world for the purpose of concentration in home waters has been necessary but unfortunate Our Navy was once dominant everywhere, and the white ensign was the token of naval supremacy in all the seas Is it not time that the former conditions should in some measure be restored? Upon our own coasts, both Atlantic and Pacific, powerful squadrons were maintained twelve years ago To-day the flag is not shown on either seaboard I am assured that the aid which we propose will enable such special arrangements to be consummated that, without courting disaster at home, an effective fleet of battleships and cruisers can be established in the Pacific, and a powerful squadron can periodically visit our Atlantic seaboard, to assert once more the naval strength of the Empire along these coasts I do not forget, however, that it is the general naval supremacy of the Empire which primarily safeguards the Overseas Dominions New Zealand's battleship is ranged in line with the other British battleships in the North Sea because there New Zealand's interests may be best guarded by protecting the very heart of the Empire

In presenting our proposals, it will be borne in mind that we are not undertaking or beginning a system of regular and periodical contributions I agree with the resolution of this House in 1909, that the payment of such contributions would

not be the most satisfactory solution of the question of defence.

Upon the information which I have disclosed to the House, the situation is in my opinion sufficiently grave to demand immediate action. We have asked his Majesty's Government in what form temporary and immediate aid can best be given by Canada at this juncture. The answer has been unhesitating and unequivocal. Let me again quote it:

> We have no hesitation in answering, after a prolonged consideration of all the circumstances, that it is desirable that such aid should include the provision of a certain number of the largest and strongest ships of war which science can build or money supply.

Upon inquiry as to the cost of such a battleship, we are informed by the Admiralty that it is approximately £2,350,000, including armament and first outfit of ordnance stores and ammunition. The total cost of three such battleships, which when launched will be the most powerful in the world, would be approximately $35,000,000, and we ask the people of Canada, through their Parliament, to grant that sum to his Majesty the King of Great Britain and Ireland and of the Overseas Dominions, in order to increase the effective naval forces of the Empire, to safeguard our shores and our seaborne commerce, and to make secure the common heritage of all who owe allegiance to the King.

These ships will be at the disposal of his Majesty the King for the common defence of the Empire. They will be maintained and controlled

as part of the Royal Navy, and we have the assurance that if, at any time in the future, it should be the will of the Canadian people to establish a Canadian unit of the British Navy, these vessels can be recalled by the Canadian Government to form part of that Navy, in which case, of course, they would be maintained by Canada and not by Great Britain In that event, there would necessarily be reasonable notice of such recall, and, indeed, Canada would not desire or suggest the sudden withdrawal of so powerful a contingent from any important theatre in which the naval forces of the Empire might be exposed to severe and sudden attack In the meantime, I am assured that special arrangements will be made to give Canadians the opportunity of serving as officers on these ships

Without intending or desiring to indulge in controversial discussion, I may be permitted to allude to British naval organization Obviously, one could not make a very complete or thorough study of so great an organization in a few weeks, or even a few months, but during recent years, and especially during the past summer, I have had occasion to learn something of its methods, its character, and its efficiency, and good reason to conclude that it is undoubtedly the most thorough and effective in the world There have been proposals, to which I shall no more than allude, that we should build up a great naval organization in Canada. In my humble opinion, nothing of an efficient character could be built up in this country within a quarter or perhaps half a century Even then it would be but a poor and

weak substitute for that splendid organization which the Empire already possesses, which has been evolved and built up through centuries of the most searching experience and of the highest endeavour. Is there really any need that we should undertake the hazardous and costly experiment of building up a naval organization especially restricted to this Dominion, when upon just and self-respecting terms we can take such part as we desire in naval defence through the existing naval organization of the Empire, and in that way fully and effectively avail ourselves of the men and the resources at the command of Canada?

Where shall these ships be built? They will be built under Admiralty supervision in the United Kingdom, for the reason that at present there are no adequate facilities for constructing them in Canada. The plant required for the construction of a Dreadnought battleship is enormous, and it would be impossible at present to maintain shipbuilding in this country on such a scale. In any case, only the hull could be built in Canada, because the machinery, the armour and the guns would necessarily be constructed or manufactured in the United Kingdom. The additional cost of construction in Canada would be about $12,000,000 for the three ships, and it would be impossible to estimate the delay. No one is more eager than myself for the development of shipbuilding industries in Canada, but we cannot, upon any business or economic considerations, begin with the construction of Dreadnoughts, and especially we could not do so when these

ships are urgently required within two or three years at the outside, for rendering aid upon which may depend the Empire's future existence. According to my conception, the effective development of shipbuilding industries in Canada must commence with small beginnings and in a businesslike way.

I have discussed the subject with the Admiralty, and they thoroughly realize that it is not to the Empire's advantage that all shipbuilding facilities should be concentrated in the United Kingdom. I am assured, therefore, that the Admiralty are prepared in the early future to give orders for the construction in Canada of small cruisers, oil-tank vessels, and auxiliary craft of various kinds. The plant required is relatively small as compared with that which is necessary for a Dreadnought battleship, and such an undertaking would have a much more secure and permanent basis from a business standpoint. For the purpose of stimulating so important and necessary an industry, we have expressed our willingness to bear a portion of the increased cost for a time at least. I see no reason why all vessels required in the future for our Government service should not be built in Canada, even at some additional cost. In connexion with the development of shipbuilding, I should not be surprised to see the establishment of a higher class of engineering works, which would produce articles now imported and not presently manufactured in Canada. Therefore, although the sum which we propose to devote for necessary naval aid at this critical juncture is to be expended in Great Britain, yet we believe that

this step will result, under the conditions which I have described, in very marked development of more than one industry in Canada, and that, even from a purely economic and material standpoint, the step has much to commend it.

These ships will constitute an aid brought by the Canadian people to his Majesty the King as a token of their determination to maintain the integrity of the Empire and to assist in repelling any danger which may threaten its security. It is most appropriate that the opportunity should have come when the Crown is represented in Canada by his Royal Highness the Governor-General, who has rendered such valuable and eminent service to the State, and who takes so deep and splendid an interest in all that concerns the welfare and safety of every portion of his Majesty's Dominions. Canada is sending three ships to range themselves in the battle-line of the Empire with those of the Mother Country, of Australia, and of New Zealand. They will be the three most powerful battleships in the world, and they will bear historic names associated with this country. Thus, every Canadian will realize, in seeing or reading of these ships, that they are a gift in which he has participated, and that, by their presence in the battle-line of the Empire, he has freely taken a direct and distinct share in maintaining the Empire's safety.

No modern nation possessing a great seaborne commerce can afford to neglect its interest upon the high seas. Heaven forbid that in this country we should aid or abet any warlike or aggressive tendencies. This Empire will never undertake

any war of aggression, and all the influences of Canada will assuredly be arrayed against any such course; but we know that war has come many times within the past fifty years without warning, like a thunderbolt from a clear sky, and thereby the power, the influence, and the destiny of more than one nation have been profoundly affected. A naval war especially may come with startling suddenness, for these tremendous engines of war are always ready and prepared for battle. The security, indeed the very existence of this Empire, depends on sea power. When we are obliged to abdicate the seas, it may even be without war, but in the face of overwhelming force, the Empire's arteries will no longer pulsate, the blood will cease to flow in its veins, and dissolution will be at hand.

But if we should neglect a duty which I conceive we owe to ourselves, and if irreparable disaster should ensue, what would be our future destiny? Obviously, as an independent nation or as an important part of the great neighbouring republic. What, then, would be our responsibilities, and what the burden upon us for a protection on the high seas much less powerful and less effective than that which we enjoy to-day? Take the case of one nation whose territory, resources, population, and wealth may fairly be compared with those of Canada. The naval estimates of Argentina for four years, from 1909 to 1912 inclusive, amounted to $35,000,000. In addition to this the Parliament of Argentina voted during the same four years for special naval and military purposes more than $40,000,000. No

information is available as to the exact proportion of the last-mentioned sum which was appropriated for naval purposes, but it is understood that the greater portion was for naval construction. It is safe, therefore, to estimate that during the past four years Argentina has expended for naval purposes not less than sixty-five to seventy million dollars. The federal and state expenditure of the United States comprises a total annual outlay for armament of between $250,000,000 and $300,000,000, or at the rate of $2.75 per head. A similar expenditure by Canada would mean an annual outlay of some $20,000,000 or $25,000,000 or between eighty and one hundred million dollars during the same period.

It is apparent, therefore, that the aid which we propose to bring at this juncture is of a moderate and reasonable character. For forty-five years as a confederation we have enjoyed the protection of the British Navy without the cost of a dollar, and I venture to submit my firm conviction that this assistance, freely tendered by the people of Canada through their Parliament, is due to their own self-respect.

So far as official estimates are available the expenditure of Great Britain in naval and military defence for the provinces which now constitute Canada during the nineteenth century, was not less than $100,000,000. Even since the inception of our confederation, and since Canada has attained the status of a great Dominion, the amount so expended by Great Britain for the naval and military defence of Canada vastly exceeds the sum which we are now asking Parliament to

appropriate From 1870 to 1890 the proportionate cost of North Atlantic squadrons which guarded our coasts was from $125,000,000 to $150,000,000 From 1853 to 1903 Great Britain's expenditure on military defence in Canada runs closely up to one hundred million dollars

Has the protection of the flag and the prestige of the Empire meant anything for us during all that period? Hundreds of illustrations are at hand, but let me give just two During a period of disorder in a distant country, a Canadian citizen was unjustifiably attacked and fifty lashes were laid on his back Appeal was made to Great Britain, and with what result? A public apology was made to him, and fifty pounds were paid for every lash In time of dangerous riot and wild terror in a foreign city a Canadian religious community remained unafraid 'Why did you not fear?' they were asked, and unhesitatingly came the answer, 'The Union Jack floated above us'

I have alluded to the difficulty of finding an acceptable basis upon which the great dominions, co-operating with the Mother Country in defence, can receive and assert an adequate voice in the control and moulding of foreign policy We were brought closely in touch with both subjects when we met the British ministers in the Committee of Imperial Defence That committee is peculiarly constituted, but in my judgement is very effective It consists of the Prime Minister of Great Britain and of such persons as he may summon to attend it Practically all the members of the Cabinet from time to time attend its deliberations, and

usually the more important members of the Cabinet are present In addition, the naval and military experts and technical officers of the various departments concerned are in attendance A very large portion of the committee's work is carried on by sub-committees, which are often composed in part of persons who are not members of the general committee itself, and who are selected for their special knowledge of the subjects to be considered and reported upon The amount of work which has thus been performed, during the past five or six years in particular, is astonishing, and I have no doubt that it has contributed largely to the safety of the whole Empire in time of peril The committee is not technically or constitutionally responsible to the House of Commons, and thus it is not supposed to concern itself with policy As so many important members of the Cabinet are summoned to attend the committee, its conclusions are usually accepted by the Cabinet, and thus command the support of a majority of the House of Commons While the committee does not control policy in any way, and could not undertake to do so, as it is not responsible to Parliament, it is necessarily obliged constantly to consider foreign policy and foreign relations, for the obvious reason that defence, and especially naval defence, is inseparably connected with such consideration

I am assured by his Majesty's Government that, pending a final solution of the question of voice and influence, they would welcome the presence in London of a Canadian minister during the whole or a portion of each year Such minis-

ter would be regularly summoned to all meetings of the Committee of Imperial Defence, and would be regarded as one of its permanent members No important step in foreign policy would be undertaken without consultation with such a representative of Canada This seems a very marked advance, both from our standpoint and from that of the United Kingdom It would give to us an opportunity of consultation, and therefore an influence which hitherto we have not possessed The conclusions and declarations of Great Britain in respect to foreign relations could not fail to be strengthened by the knowledge that such consultation and co-operation with the Overseas Dominions had become an accomplished fact

No thoughtful man can fail to realize that very complex and difficult questions confront those who believe that we must find a basis of permanent co-operation in naval defence, and that any such basis must afford to the Overseas Dominions an adequate voice in the moulding and control of foreign policy It would have been idle to expect, and indeed we did not expect, to reach in the few weeks at our disposal during the past summer a final solution of that problem, which is not less interesting than difficult, which touches most closely the future destiny of the Empire, which is fraught with even graver significance for the British Islands than for Canada But I conceive that its solution is not impossible, and, however difficult the task may be, it is not the part of wisdom or of statesmanship to evade it And so we invite the statesmen of Great

Britain to study with us this, the real problem of Imperial existence.

The next ten or twenty years will be pregnant with great results for this Empire, and it is of infinite importance that questions of purely domestic concern, however urgent, shall not prevent any of us from 'rising to the heights of this great argument.' But to-day while the clouds are heavy and we hear the booming of the distant thunder, and see the lightning flashes above the horizon we cannot and we will not wait and deliberate until any impending storm shall have burst upon us in fury and with disaster. Almost unaided, the Mother Land, *not for herself alone*, but for us as well, is sustaining the burden of a vital Imperial duty, and confronting an overmastering necessity of national existence. Bringing the best assistance that we may in the urgency of the moment thus to her aid, in token of our determination to protect and ensure the safety and integrity of this Empire, and of our resolve to defend on sea as well as on land our flag, our honour, and our heritage.

Right Hon. Sir Wilfrid Laurier. Mr. Speaker, I do not rise with any intention of discussing now the very important measure which has been submitted to the House by my right hon. friend. Indeed, under the rules of the House as interpreted by you, sir, there should be no discussion on the first reading of any Bill. With regard to the point of order which you have just stated, I think that my hon. friend is in order in stating that the

details of the Bill should not be discussed until the resolution is brought down The money consideration, important as it is, is not the chief consideration, and I have no fault to find with my hon friend in introducing the Bill before bringing down the resolution[1]

[1] The Bill which finally passed the House of Commons was rejected by the Liberal majority in the Upper House At the outbreak of war, accordingly the Canadian naval forces consisted only of two cruisers, which were at once transferred to the control of the Admiralty

9 IMPERIAL CO-OPERATION IN DEFENCE AND FOREIGN POLICY

Right Hon L Harcourt to the Governor-General of Australia, the Governor-General of the Union of South Africa, and the Governors of New Zealand and Newfoundland

DOWNING STREET
10th December, 1912

SIR,

I am forwarding by post, for the confidential information of your Ministers, a record of the proceedings at the Committee of Imperial Defence on May 30th, 1911 (during the Imperial Conference) and on August 1st, 1912 (during the visit of the Canadian Ministers to London)

This record deals solely with the question of the representation of the Dominions on the Committee of Imperial Defence

[*Omitted to New Zealand* Your Ministers, who were present on the first occasion, will remember that] the matter arose out of a Resolution by Sir Joseph Ward on the Agenda of the Imperial Conference, asking that the High Commissioners of the Dominions should be summoned to the Committee of Imperial Defence when naval and military matters affecting the Oversea Dominions were under consideration The unanimous view

of all those present on May 30th 1911, was that the representation of the Dominions should be not by the High Commissioner but by Ministers who would be responsible to their own colleagues and Parliament, and at the same time it was decided that a Defence Committee should be established in each Dominion which would be kept in close touch with the Committee of Imperial Defence at home The Resolutions ultimately put forward by his Majesty's Government and accepted unanimously by the members of the Imperial Conference at the Committee of Imperial Defence were as follows (1) That one or more representatives, appointed by the respective Governments of the Dominions, should be invited to attend meetings of the Committee of Imperial Defence when questions of naval and military defence affecting the Oversea Dominions are under consideration (2) The proposal that a Defence Committee should be established in each Dominion is accepted in principle The constitution of these Defence Committees is a matter for each Dominion to decide

The Canadian Government having changed in the autumn of 1911, it was necessary, when Mr Borden and his colleagues visited England this summer, to put these proposals before them, as they were of course unaware of the previous proceedings Subject to consultation with his colleagues in Canada, Mr Borden provisionally accepted the resolutions as passed and stated that he saw no difficulty in one of his Ministers, either with or without portfolio, spending some months of every year in London in order to carry out this

intention. Mr Asquith and I had, subsequently, several private conversations with him, at which he expressed the desire that the Canadian and other Dominions Ministers who might be in London as members of the Committee of Imperial Defence should receive, in confidence, knowledge of the policy and proceedings of the Imperial Government in foreign and other affairs. We pointed out to him that the Committee of Imperial Defence is a purely advisory body and is not, and cannot under any circumstances become, a body deciding on policy, which is and must remain the sole prerogative of the Cabinet, subject to the support of the House of Commons But, at the same time, we assured him that any Dominions Minister resident here would at all times have free and full access to the Prime Minister, the Foreign Secretary, and the Colonial Secretary for information on all questions of Imperial policy In a public speech which I made a short time ago I used the following words

There is, on the part of Canadian Ministers and people, a natural and laudable desire for a greater measure of consultation and co-operation with us in the future than they have had in the past This is not intended to, and it need not open up those difficult problems of Imperial Federation which seeming to entail questions of taxation and representation, have made that policy for many years a dead issue But, speaking for myself, I see no obstacle, and certainly no objection, to the Governments of all the Dominions being given at once a larger share in the executive direction in matters of defence and in personal consultation and co-operation with individual British Ministers whose duty it is to frame policy here I should welcome a more continuous representation of

Dominions Ministers, if they wish it, upon the Committee of Imperial Defence; we should all be glad if a member or members of those Cabinets could be annually in London. The door of fellowship and friendship is always open to them and we require no formalities of an Imperial Conference for the continuity of Imperial confidence.

The foregoing accurately represents the views and intentions of his Majesty's Government.

From Mr. Borden's public speech in introducing the Canadian Naval Bill, it appears that he accepts the proposals which we have made.[1] The same offer is, of course, open to all the other self-governing Dominions if and when they wish to adopt it, but the proposal is not one of necessary or strict uniformity, and can be varied in the case of each or any Dominion to suit their wishes or the special circumstances of their case. I should be glad to know, at their convenience, whether your Ministers desire to adopt some such method of more continuous connexion in naval and military affairs with the Committee of Imperial Defence in the United Kingdom.

I have, &c.

L. HARCOURT.

[1] On the death of Lord Strathcona, the Canadian Government sent one of its members, the Hon. Sir George Perley, as acting High Commissioner, to London in order to serve as a link between the Dominion and Imperial Governments. Cf. above, pp. 334–336.

10 RIGHT HON WINSTON CHURCHILL'S SPEECH ON THE CREATION OF AN IMPERIAL SQUADRON

House of Commons March 17 1914

I come now to the central problem of our standard Formerly we have followed the two-Power standard—that is to say, 10 per cent over the two strongest Powers Now that standard has become quite meaningless The two next strongest Powers, if you take the whole world, would be Germany and the United States, and if you left out the United States, as common sense would dictate, the two next strongest Powers would be Germany and France, which is not a very helpful or reasonable standard to adopt As a matter of fact, in 1914-15 we shall be conforming to both these tests, absurd and unreasonable though they be It would not be in the naval interest to base our strength on foundations from which common sense recoils The 60 per cent standard was adopted by the Admiralty in 1908 or 1909, and it was announced publicly by me two years ago That is a building standard of new construction only, and it refers to capital ships only For cruisers we follow a 100 per cent standard and have for many years There are other standards for other classes That 60 per cent standard was described by me as follows

To develop a 60 per cent superiority in vessels of the Dreadnought' type over the German Navy on

the basis of the fleet law before its latest amendment, and to build at the rate of two keels to one for every ship added under that law, either by the last or subsequent amendments

That is the standard we are following, and for which we claim full Parliamentary assent That standard, of course, is not eternal, still less could it be made a binding international instrument It is capable of revision in either one direction or the other I have always carefully guarded myself against any inference that it could be made an absolute standard Let me read to the House what I said on 18th March, 1912

If Germany were to adhere to her existing law we believe that standard would, in the absence of any unexpected development in other countries, continue to be a financial guide for the next four or five years, so far, that is to say, as this capital class of vessel is concerned Further than that it is idle to speculate, This, however, I must say I must not be taken as agreeing that the ratio of sixteen to ten could be regarded as sufficient preponderance for British Naval strength as a whole above that of the next strongest naval Power Even if we possessed an Army two thirds as strong as that of the strongest military Power, we could not agree to that

That was what I said originally on the first occasion this was announced to the public There have been various disputes as to what ships should or should not come into the 60 per cent standard, and I have no doubt the hon Gentleman opposite has a well-filled arsenal of artillery on the subject Some contend that the *Lord Nelsons*, the *New Zealand*, and the *Malaya* should be counted, and others contend that none of these

should count at all, and a flood of sterile controversy and partisan statistics, which sensible people would avoid, have been poured out on both sides on this subject. The editor of the *Economist* arrives at the conclusion that no ships should be built at all this year, while the editor of the *National Review*, in a comparatively lucid interval, announces that nothing less than sixteen 'Dreadnoughts' will save the Board of Admiralty from the traitor's doom. All this should be taken for what it is worth. The Admiralty have no need and no intention to enter into such a controversy. We have not merely stated our standard, but we have declared our programme. Programmes supersede standards, and actual figures are better than percentages. Two years ago I gave the whole series of programmes to the House which we considered necessary. They were 4, 5, 4, 4, 4, 4, as against German construction 2, 3, 2, 2, 2, 2. Parliament approved of the principle of that request. That is what we ask for now—no more, no less. That is the Admiralty interpretation of the 60 per cent. standard. It takes into consideration all the disputable factors and makes all the necessary allowance for older ships declining in value. It has been carefully safeguarded so as not to tie the hands of this country in future, and to provide for the unforeseen. Since then we have had the *New Zealand* made available for home service, the *Malaya* presented to us without conditions, and we have had the talk about the Canadian ships, but our programmes must remain unaltered in spite of these additions.

We have now reached the third of these pro-

grammes, and when we consider that British shipbuilding is necessarily dependent on what other people do, it will be seen that three years is a long way to look ahead, and certainly a long way to look ahead successfully. I should not hesitate to admit that we were wrong if we had changed our mind, or to say that new steps must be taken if new circumstances had arisen, but after a full survey of the whole situation at home and abroad we consider that four ships are enough for the programme of this year, and we ask the House to affirm the proposals I submitted in my first year of responsibility for this Department.

In March 1912, speaking in the name of the Government and the Admiralty, I said:

> The Admiralty are prepared to guarantee absolutely the main security of the country and the Empire day by day for the next two years, and if the House will grant what we ask for the future that prospect may be indefinitely extended.

I feel that some of my hon. friends on this side of the House are justified in asking what has occurred since to make the additional ships necessary. Upon the general question of these ships and their propriety, and the need for Canada in common with the other Dominions of the Crown, to take an effective part in the defence of the Empire, there is nothing more to be said. The Admiralty view was expounded in the Canadian Memorandum of 1912. To that we adhere, and the facts there adduced have been strengthened rather than reduced by the passage of time. They constitute an absolute justification for Canadian action, and

for prompt Canadian action But besides this general case there is a more particular reason In July 1912, four months after my March statement, the Cabinet having made a new and searching examination of the Mediterranean problem, decided that a British battle squadron should be maintained in that sea, and that we could not afford to leave our interests there indefinitely to the care of powerful cruisers, or battle-cruiser squadrons and flotillas The Admiralty were then charged with the duty of forming a battle squadron in the Mediterranean This was foreshadowed to the House in general terms by the Prime Minister I do not propose to enter into the reasons which led the Government, with, I think, the general approval of Parliament, to this conclusion Outside the sphere of pure strategy and belonging to the domain of state policy, the other principal reason was that we should remain the independent guardians of our own important and long-established interests in the Mediterranean, and should not incur any exceptional obligations in any direction The force of such a consideration must be freely admitted Full effect may be given to it by the Admiralty providing the necessary margin of safety in the Mediterranean in the decisive and vital period In accordance with that policy, we propose to place in the Mediterranean by the end of 1915 a battle squadron based on Malta of eight battleships, six at least of which will be Dreadnoughts of the *Lord Nelson* type, and to substitute this force for the four battle cruisers that are now stationed there This will make our force in the Mediterranean by the

end of 1915 consist of eight battleships, four large armoured cruisers, four light cruisers of the *Town* class, and sixteen destroyers of the *Beagle* type, which have already gone out, and are a great increase on the force of the present flotilla. That we consider to be an adequate representation of our strength for all purposes in the Mediterranean during that year.

In order to do this and at the same time to maintain our indispensable margin in home waters it was necessary that the three Canadian ships should be laid down in the June of last year, or that the completion of three of our own ships of the 1913–14 programme should be hastened by beginning them eight or nine months earlier than was originally proposed. The failure of the Canadian Naval Aid Bill, on which we had counted, obliged us to adopt the second expedient, which was duly announced to Parliament and accepted by the House of Commons, and the Committee has since voted £137,000. With the acceleration of those ships, it will be possible, without impairing our necessary strength at home, to form and maintain a battle squadron in the Mediterranean from the latter part of 1915 to the middle of 1916. We now know, however, that owing to the adverse majority in the Canadian Senate, the Canadian Government will be unable to renew the Naval Aid Bill in the present session, and therefore no Canadian ships will be begun this year. In these circumstances it is necessary for us to repeat, though on a smaller scale, the course that was adopted last year, and to begin two ships of the 1914 programme at the earliest possible moment

so as to have them ready in the third quarter of 1916 Orders to this effect will be given as soon as the House has approved of these Estimates The tenders are all ready to send out and the money is taken and included in the Estimates of the year Additional expenditure from this cause may be estimated at about half a million

I shall be asked why two ships are sufficient this year, whereas three were required to be accelerated last year Here is the reason We are in a better position this year than we were last year As the total number of our ships increases within the limits of the 60 per cent standard—I am not going beyond that—so do the numbers available for whole world service Although the proportion remains the same, a larger number can be spared During the past year we have, by the unaided exertion of the British taxpayer, improved our margin available for whole world service by one ship, and that improvement will, under the existing programme within the limit of the 60 per cent standard, be repeated in 1915 If, therefore, in that year any further delay should take place on the part of Canada, the position in the Mediterranean will, as far as we now see, be maintained by the acceleration of only one ship There are however, good prospects that the unfortunate deadlock which has arisen in Canada upon this Navy question will be relieved, and that in one way or another, or by one party or other, or, best of all, by the joint action of both parties, Canada will be able to take some share in her own naval defence and in the common defence of the Empire After all, Canada is a very great and wealthy

community, with interests ever spreading more widely over the surface of the globe She ought to make some provision for her own naval defence If she were annexed to the United States of America she would no doubt contribute taxation to the upkeep of the United States Navy. If she were independent, she would no doubt have to make provision at least equal to that which is made by the most powerful South American States. Her destiny is in her own hands I do not wonder that Canadians of every party feel that it is not in accordance with the dignity and status of the Dominion to depend entirely upon the exertions of the British taxpayers, many of whom are much less well off than the average Canadian.

I have left the most important part of my remarks to the end, and though I have spoken at considerable length it would not be right for me to curtail the observations which I had hoped to address to the House. I now turn to the Pacific, and the aspects of the naval policy connected with the great Dominions there The safety of Australia and New Zealand is secured by the naval power, and the alliance, which is based on the naval power, of Great Britain No European State would, or could, invade or conquer New Zealand or Australia unless the British Navy had been destroyed The same naval power of Great Britain in European waters also protects New Zealand and Australia from any present danger from Japan. While Japan is allied to Great Britain, and while Great Britain possesses a sufficient margin of naval superiority, Japan is safe

from attack by sea from the great fleets of Europe In no other way in the years that lie immediately before us can Japan protect herself from danger of European interference. It would appear that the reasons which have led Japan to contract and renew the alliance will grow stronger with time. The growth of European interests in China and the general development of European navies on a scale greater than Japan can afford to imitate will lead her increasingly to rely on that sure protection which British naval supremacy can so easily afford The obligations of Great Britain to Japan under the alliance are not limited to preventing an armada being dispatched from European waters to alter suddenly the balance of naval strength in the China Sea. We are bound to maintain in these waters a force superior to any other European Power, and consequently any danger to Japan arising from a gradual increase of European squadrons in the Far East is also provided against

The Naval Agreement of 1909 with the Dominions had as its central principle the idea that we should keep in the Pacific and Indian Oceans double the force of the Australian Fleet unit We are doing more than that We are not doing it in the same unit We are keeping the new battle cruisers at home, where alone they will meet their equals, and we have placed on the China station and on the Indian stations the two battleships *Swiftsure* and *Triumph*, and other armoured cruisers, which are quite sufficient for the work they will have to do, and which are not only an equivalent, but are an improvement

upon the mere duplication of the Australian Fleet unit. I mention that, because suggestions have been made that we have not given full effect to the 1909 Agreement. I maintain that, exercising the discretion of the Admiralty as to the class and disposition of the ships, we have given, and are giving, full effect to it The alliance with Japan has now been renewed up to 1921, with the full concurrence of the Overseas Dominions It is not to be expected that even after that date Japan will have less need of that powerful friend at the other end of the world, which will continue to be the first naval Power.

Quite apart from the good sense and moderation for which the Japanese Government have become renowned, and quite apart from the great services mutually rendered, and the advantages derived by both Powers from the alliance, there is a strong continuing bond of interest between them on both sides It is this bond that is the true and effective protection for the safety of Australia and New Zealand, and this bond depends entirely on the maintenance of British naval supremacy. If the British Fleet were defeated in the North Sea, all the dangers which it now wards off from the Australasian Dominions would be let loose. If the victorious European Power desired any territorial expansion or naval stations in the Pacific, there would be no forces which Australia and New Zealand could command which could effectively prevent it. If Japan chose to indulge in ambitions of empire or colonization in the Southern Pacific, she would be no loser so far as the European situation was concerned We

should have lost at a stroke the means both of making our friendship serviceable and our hostility effective. There are no means by which, in the next ten or twelve years, Australia and New Zealand can expect to maintain themselves single-handed. If the power of Great Britain were shattered on the sea, the only course of the five millions of white men in the Pacific would be to seek the protection of the United States. From this point of view the profound wisdom of the policy hitherto adopted by New Zealand can be appreciated.

In giving a splendid ship to strengthen the British Navy at a decisive point, wherever that point may be, according to the best principles of naval strategy, the Dominion of New Zealand have provided in the most effective way alike for their own and for the common security. No greater insight into political and strategical points has ever been shown by a community hitherto unversed in military matters. The situation in the Pacific will be absolutely regulated by the decision in European waters. Two or three Australian and New Zealand Dreadnoughts, if brought into line in the decisive theatre, might turn the scale and make victory not merely certain but complete. The same two or three Dreadnoughts in Australian waters would be useless the day after the defeat of the British Navy in home waters. Their existence would only serve to prolong the agony without altering the course of events. Their effectiveness would have been destroyed by events which had taken place on the other side of the globe, just as surely as if they had been

sunk in the battle The Admiralty are bound to uphold and proclaim broad principles of unity in command, and in strategic conceptions, and of concentration in the decisive theatre, and for the decisive event That is our duty, and we are bound to give that advice in a military and strategic sense. The Dominions are perfectly free The matter rests entirely in their hands, and the Admiralty's responsibility ceases when the facts have been placed plainly before Ministers, and those to whom they are responsible. It is recognized, however, that time will be required before the principles of naval strategy are applied to their fullest extent in the Dominions, and that in the interval arrangements must be made to develop as far as possible their local naval establishments The Dominions want to have their own ships under their own control, cruising in their own waters and based on their own ports. They want to have something they can see, and touch, and take pride in, with feelings of ownership and control. Those feelings, although unrecognized by military truth, are natural They are real facts which will govern events

It is easily understood that the difficulties of enlisting the active co-operation of the Dominions in naval defence by means of ships they rarely see, and which are absorbed in the great fleets of Britain at the other end of the world, are at present insuperable The Admiralty have, therefore, co-operated loyally and to the best of their ability in the development of the Australian fleet unit We regard the effort which the Australian Commonwealth is making as heroic, and we will leave

nothing undone to make it a complete success A thoroughly sound arrangement has been made between the Admiralty and the Government relating to the use of the Commonwealth fleet in war. We realize the importance of creating a naval sentiment in the Dominions, and of creating the reserves of personnel which are so valuable, and the local naval establishments which are essential to the full mobility and employment of the Imperial Fleet It is with the object of combining sound military principles with local aspirations that the design of the Imperial squadron has been conceived The principle in policy of the Imperial squadron may be compared to a number of farmers each of whom has the ordinary instruments of agriculture on his farm, but who combine together to buy a steam plough and steam thresher, of which each, in turn, according to his needs, can have the use There should be developed severally in Canadian, Australasian, and South African waters a naval establishment with docks, defences, and repairing plant, which would enable the Imperial squadron or any division of the British Fleet which might be detached to operate in each theatre for a prolonged period

Side by side with this there should be developed in each of these three theatres, so far as may be necessary, and allowing for local conditions, the local defence flotillas, both destroyers and submarines, for the purpose of both defending their bases and establishments and of operating in conjunction with the Imperial squadron when it arrives Great ships move easily and swiftly about the world, but small craft are, by their

nature, localized, and can only traverse the ocean with difficulty and effort Thirdly, the Dominions should locally maintain the light cruisers necessary, not for fighting battle fleets, but for commerce protection in their own waters, and these cruisers would also combine with the Imperial squadron or detachment of the British Fleet, when it arrives, to make the Fleet complete in all respects In this way a true distinction will be made between the services which are essentially local, and those which are necessarily of general Imperial character The Dominions will be afforded that individual local development which is necessary to arouse and maintain a keen naval interest, and to procure from them the sacrifices necessary for the maintenance or development of that naval power, while at the same time, by sending any capital ships they may have or acquire to the Imperial Squadron, they will create a really strong and effective naval force—not one or two ships isolated on particular stations—which will be able to move rapidly and freely about the world, bringing aid in sufficient strength wherever it may be needed in time of war That is the right policy, which it is my duty to proclaim on an occasion like this, and towards which we believe that future developments will gradually and naturally tend

11 RIGHT HON SIR WILFRID LAURIER'S SPEECH ON CANADA'S PARTICIPATION IN THE WAR WITH GERMANY

HOUSE OF COMMONS OF CANADA,
AUGUST 19, 1914

MR SPEAKER, the observations which I shall have to offer to the House are few and brief In fact, apart from the usual compliments and congratulations to the mover and the seconder of the Address, which, I am glad to say, I have more than usual pleasure in extending to them, I have but one declaration to make

The gravity of the occasion which has called us together makes it incumbent upon us even to disregard the formalities and conventionalities which in ordinary times the rules of the House, written and unwritten, enjoin as a wise safeguard against precipitate action, but which, on such an occasion as this, impede us in dealing with the momentous question before us This session has been called for the purpose of giving the authority of Parliament and the sanction of law to such measures as have already been taken by the Government, and any further measures that may be needed, to ensure the defence of Canada and to give what aid may be in our power to the Mother Country in the stupendous struggle which now

confronts us Speaking for those who sit around me, speaking for the wide constituencies which we represent in this House, I hasten to say that to all these measures we are prepared to give immediate assent If in what has been done or in what remains to be done there may be anything which in our judgement should not be done or should be differently done, we raise no question, we take no exception, we offer no criticism, and we shall offer no criticism so long as there is danger at the front It is our duty, more pressing upon us than all other duties, at once, on this first day of this extraordinary session of the Canadian Parliament, to let Great Britain know, and to let the friends and foes of Great Britain know, that there is in Canada but one mind and one heart and that all Canadians stand behind the Mother Country, conscious and proud that she has engaged in this war, not from any selfish motive for any purpose of aggrandizement, but to maintain untarnished the honour of her name, to fulfil her obligations to her allies, to maintain her treaty obligations, and to save civilization from the unbridled lust of conquest and power

We are British subjects, and to-day we are face to face with the consequences which are involved in that proud fact Long we have enjoyed the benefits of our British citizenship, to-day it is our duty to accept its responsibilities and its sacrifices. We have long said that when Great Britain is at war we are at war, to-day we realize that Great Britain is at war and that Canada is at war also Our territory is liable to attack and to invasion. So far as invasion is concerned,

I do not see that there is any cause for apprehension, for it seems to me obvious that neither Austria nor Germany, our foes in this war, can command any force able to make an attack so far from their base But no one pretends that our maritime cities on the Pacific and the Atlantic are free from the possibility of assault by an audacious corsair, who, descending suddenly upon our shores, might subject us to indignity and insult, and decamp with his booty before punishment could reach him This is not an unfounded dread of danger, this is no mere illusion, it is a real and indeed a proximate danger, since it is a matter of notoriety that both on the Pacific and on the Atlantic there are German cruisers whose mission is to inflict all the injury they can upon our commerce, and even to make a descent upon our cities should they find our harbours unguarded We are aware that the Government has already taken measures, and very appropriately, to guard against this danger We know that one of our battleships on the Pacific has been seeking the enemy to protect our commerce and our cities, and if she has not yet engaged the enemy it is because the enemy has eluded her pursuit

We have had another and more striking evidence that when Great Britain is at war we are at war, in this—that our commerce has been interrupted, and perhaps the expression would not be too strong if I were to say that it has been to some extent dislocated From the day war was declared—nay, from the day the possibility of war was first mooted—our shipping to

Great Britain and to Europe has been interrupted. Ships were lying at the docks fully loaded and ready to put to sea, but unable to do so because of the fact that when England is at war Canadian property on the high seas is liable to capture Our ships therefore had to remain in port so long as precautions had not been taken to clear the way and to ensure their safe passage across the ocean. What measures have been taken in regard to that we have not yet been told, but I have no doubt that we shall have that information in due time

The correspondence brought down yesterday, however, has informed us that the Canadian Government has already taken steps to send a contingent of twenty thousand men or thereabouts to take their place in the firing line. Upon this occasion I owe it to the House and to myself to speak with absolute frankness and candour. This is a subject which has often been an occasion of debate in this House. I have always said, and I repeat it on this occasion, that there is but one mind and one heart in Canada. At other times we may have had different views as to the methods by which we are to serve our country and our Empire More than once I have declared that if England were ever in danger—nay, not only in danger, but if she were ever engaged in such a contest as would put her strength to the test —then it would be the duty of Canada to assist the motherland to the utmost of Canada's ability England to-day is not engaged in an ordinary contest. The war in which she is engaged will in all probability—nay, in absolute certainty—

stagger the world with its magnitude and its horror. But that war is for as noble a cause as ever impelled a nation to risk her all upon the arbitrament of the sword That question is no longer at issue, the judgement of the world has already pronounced upon it I speak not only of those nations which are engaged in this war, but of the neutral nations The testimony of the ablest men of these nations, without dissenting voice, is that to-day the allied nations are fighting for freedom against oppression, for democracy against autocracy, for civilization against reversion to that state of barbarism in which the supreme law is the law of might

It is an additional source of pride to us that England did not seek this war It is a matter of history—one of the noblest pages of the history of England—that she never drew the sword until every means had been exhausted to secure and to keep an honourable peace For a time it was hoped that Sir Edward Grey, who on more than one occasion has saved Europe from such a calamity, would again avert the awful scourge of war Sir, it will go down on a still nobler page of history that England could have averted this war if she had been willing to forgo the position which she has maintained for many centuries as the head of European civilization,—if she had been willing to desert her allies, to sacrifice her obligations, to allow the German Emperor to trample upon heroic Belgium, to infringe upon the rights of isolated France, and to put down his booted heel upon continental Europe At that price England would have secured peace, but

her answer to the German Emperor was · Your proposals are infamous And, rather than accept them, England has entered into this war; and there is not to-day all over the universe a British subject, there is not outside the British Empire a single man, whose admiration for England is not greater by reason of this firm and noble attitude

So to-day England is at war Her fleets are maintaining the freedom of the ocean. Her armies have already crossed the channel towards plains made famous more than once by British valour, this time to maintain the independence of Belgium by taking a place in the fighting line beside the small and heroic Belgian army, and to render assistance to France, whose forces are concentrated in an effort to repel an invader and to maintain and to save intact that which to a proud nation makes life worth living.

I am well aware that the small contingent of some 20,000 men which we are going to send will have to show double courage and double steadiness if they are to give any account of themselves among the millions of men who are now converging towards the frontier of France, where the battle of giants is to be decided But, sir, it is the opinion of the British Government, as disclosed by the correspondence which was brought down to us yesterday, that the assistance of our troops, humble as it may be, will be appreciated, either for its material value or for the greater moral help which will be rendered It will be seen by the world that Canada, a daughter of old England, intends to stand by her in this great

conflict When the call comes our answer goes at once, and it goes in the classical language of the British answer to the call to duty: 'Ready, aye, ready.'

If my words can be heard beyond the walls of this House in the province from which I come, among the men whose blood flows in my own veins, I should like them to remember that in taking their place to-day in the ranks of the Canadian army to fight for the cause of the allied nations, a double honour rests upon them The very cause for which they are called upon to fight is to them doubly sacred

In this country we are not all of the same origin, we are not all of British or of French descent I was struck by the words of the hon member for South Oxford (Mr Donald Sutherland) in reference to our fellow citizens of German origin They are certainly amongst our best citizens This has been acknowledged on more than one occasion. They are proud of the land of their adoption, which to many of them is the land of their birth, and they have shown more than once their devotion to British institutions But, sir, they would not be men if they had not in their hearts a deep feeling of affection for the land of their ancestors, and nobody would blame them for that There is nothing, perhaps, so painful as the situation in which mind and heart are driven in opposite directions But let me tell my fellow-countrymen of German origin that we have no quarrel with the German people We respect and admire as much as they do the proud race from which they have their descent, we

acknowledge all that the world owes to the German people for their contribution to the happiness of mankind by their progress in literature, in art, and in science But perhaps our German fellow-citizens will permit me to say that in the struggle for constitutional freedom, which has been universal in Europe during the last century, the German people have not made the same advance as have some of the other nations of Europe. I am sure that they will agree with me that if the institutions of the land of their ancestors were as free as the institutions of the land of their adoption, this cruel war would never have taken place Nothing can be truer than the words which are reported to have been uttered by a German soldier made a prisoner in Belgium, that this war is not a war of the German people, and if there is a silver lining to this darkest cloud which now overhangs Europe it is that, as a result and consequence of this war, the German people will take the determination to put an end for ever to this personal imperialism, and to make it impossible evermore for one man to throw millions of the human race into all the horrors of modern warfare

We cannot forget that the issue of battle is always uncertain, as has been proven already in the present contest In invading Belgium, some two weeks ago, the German Emperor invoked the memory of his ancestors and called upon the blessing of God. The German Emperor might have remembered that there is a treaty guaranteeing the independence, the integrity, the neutrality of Belgium, and that this treaty was signed in the

last century by the most illustrious of his ancestors, the Emperor William I of Germany. He might have remembered also that there is this precept in the divine book 'Remove not the ancient landmarks which thy fathers have set up.' But the German Emperor threw his legions against this landmark in the fullness of his lust of power, with the full expectation that the very weight of his army would crush every opposition and would secure their passage through Belgium We did not expect, he could not believe, that the Belgians, few in numbers and peaceful in disposition and in occupation, would rise in his way and bar his progress, or, if he harboured such a thought for one moment, his next thought was that if he met such opposition he could brush it aside by a wave of his imperial hand. Sir, he could have remembered that in the sixteenth century the ancestors of the Belgians rose against the despotism of Philip II of Spain, and, through years of blood and fire and miseries and sufferings indescribable, they maintained an unequal contest against Spain—Spain, as powerful in Europe at that time as the German Empire is to-day Sir, if there are men who forget the teachings of their fathers, the Belgians are not of that class, they have proved equal to the teachings of their fathers, they have never surrendered, the blood of the fathers still runs in the veins of the sons, and again to-day, through blood and fire and miseries and sufferings indescribable they hold at bay the armies of the proud Kaiser.

I repeat, sir, that the issue of battle is always uncertain. There may be disappointments, there

may be reverses, but we enter into this fight with full hope as to the ultimate result

> For freedom's battle once begun,
> Bequeathed from bleeding sire to son,
> Tho' often lost, is ever won

Sir, upon this occasion we invoke the blessing of God—not the God of battles, but the God of justice and mercy; and it is with ample confidence in Providence that we appeal to the justice of our cause

Nay, more, already England has won a signal victory, a victory more precious, perhaps, than any that can be achieved by her fleets or by her armies Only a few weeks ago the Irish problem was pending in the scales of destiny The possibility of civil strife in Ireland already rejoiced the eyes of Britain's enemies. But to-day the spectre of civil war has vanished from Ireland, all Irishmen are united, ready to fight for King and country The volunteers of the north and the volunteers of the south, forgetting their past differences, stand shoulder to shoulder ready to shed their blood for the common cause And, sir, may I not say that the hope is not vain that in that baptism of blood may be washed away, and for ever washed away, the distrust of one another which has been the curse of Ireland in ages past

But it is not only in Ireland that you find this union of hearts In the two other united kingdoms the voice of faction has been silenced. Even those who on principle do not believe in war admit that this was a just war and that it had to be fought That union of hearts which

exists in the United Kingdom exists also in Canada, in Australia, in New Zealand Yea, even in South Africa—South Africa, rent by war less than twenty years ago, but now united under the blessing of British institutions, with all, British and Dutch together, standing ready to shed their blood for the common cause Sir, there is in this the inspiration and the hope that from this painful war the British Empire will emerge with a new bond of union, the pride of all its citizens, and a living light to all other nations.

12 RESOLUTIONS OF THE ECONOMIC CONFERENCE OF THE ALLIES HELD AT PARIS, JUNE 14–17, 1916

I

The representatives of the Allied Governments have met at Paris under the presidency of M Clémentel, Minister of Commerce, on June 14, 15, 16, and 17, 1916, for the purpose of fulfilling the mandate given to them by the Paris Conference of March 28, 1916, of giving practical expression to their solidarity of views and interests, and of proposing to their respective Governments the appropriate measures for realizing this solidarity.

II

They declare that, after forcing upon them the military contest in spite of all their efforts to avoid the conflict, the Empires of Central Europe are to-day preparing, in concert with their Allies, for a contest on the economic plane, which will not only survive the re-establishment of peace, but will at that moment attain its full scope and intensity.

III

They cannot therefore conceal from themselves that the agreements which are being prepared for

this purpose between their enemies have the obvious object of establishing the domination of the latter over the production and the markets of the whole world and of imposing on other countries an intolerable yoke

In face of so grave a peril the Representatives of the Allied Governments consider that it has become their duty, on grounds of necessary and legitimate defence, to adopt and realize from now onward all the measures requisite on the one hand to secure for themselves and for the whole of the markets of neutral countries full economic independence and respect for sound commercial practice, and on the other hand to facilitate the organization on a permanent basis of their economic alliance

For this purpose the Representatives of the Allied Governments have decided to submit for the approval of those Governments the following resolutions

A

MEASURES FOR THE WAR PERIOD

I

The laws and regulations prohibiting trading with the enemy shall be brought into accord

For this purpose

A —The Allies will prohibit their own subjects and citizens and all persons residing in their territories from carrying on any trade with

1. The inhabitants of enemy countries whatever their nationality

2 Enemy subjects wherever resident.
3. Persons, firms, and companies whose business is controlled wholly or partially by enemy subjects or is subject to enemy influence and whose names are included in a special list

B.—They will prohibit the importation into their territories of all goods originating in or coming from enemy countries

C.—They will devise means of establishing a system enabling contracts entered into with enemy subjects and injurious to national interests to be cancelled unconditionally.

II

Business undertakings owned or operated by enemy subjects in the territories of the Allies will all be sequestrated or placed under control, measures will be taken for the purpose of winding up some of these undertakings and of realizing their assets, the proceeds of such realization remaining sequestrated or under control

III

In addition to the export prohibitions which are necessitated by the internal situation of each of the Allied countries, the Allies will complete the measures already taken for the restriction of enemy supplies, both in the mother countries and in the Dominions, Colonies, and Protectorates

1. By unifying the lists of contraband and of export prohibition, and particularly by

prohibiting the export of all commodities declared absolute or conditional contraband;

2. By making the grant of licences for export to neutral countries from which export to enemy territories might take place conditional upon the existence in such countries of control organizations approved by the Allies; or, in the absence of such organizations, upon special guarantees such as the limitation of the quantities exported, supervision by Allied consular officers, &c.

B

Transitory Measures for the Period of Commercial, Industrial, Agricultural, and Maritime Reconstruction of the Allied Countries

I

The Allies declare their common determination to ensure the re-establishment of the countries suffering from acts of destruction, spoliation, and unjust requisition, and decide to join in devising means to secure the restoration to those countries, as a prior claim, of their raw materials, industrial and agricultural plant, stock and mercantile fleet, or to assist them to re-equip themselves in these respects.

II

Whereas the war has put an end to all the treaties of commerce between the Allies and the

Enemy Powers, and whereas it is of essential importance that, during the period of economic reconstruction which will follow the cessation of hostilities, the liberty of none of the Allies should be hampered by any claim put forward by the Enemy Powers to most-favoured-nation treatment, the Allies agree that the benefit of this treatment shall not be granted to those Powers during a number of years to be fixed by mutual agreement among themselves

During this number of years the Allies undertake to assure to each other so far as possible compensatory outlets for trade in case consequences detrimental to their commerce result from the application of the undertaking referred to in the preceding paragraph

III

The Allies declare themselves agreed to conserve for the Allied countries, before all others, their natural resources during the whole period of commercial, industrial, agricultural, and maritime reconstruction, and for this purpose they undertake to establish special arrangements to facilitate the interchange of these resources

IV

In order to defend their commerce, their industry, their agriculture, and their navigation against economic aggression resulting from dumping or any other mode of unfair competition, the Allies decide to fix by agreement a period of time during which the commerce of the Enemy Powers

shall be submitted to special treatment and the goods originating in their countries shall be subjected either to prohibitions or to a special régime of an effective character

The Allies will determine by agreement through diplomatic channels the special conditions to be imposed during the above-mentioned period on the ships of the Enemy Powers

V

The Allies will devise the measures to be taken jointly or severally for preventing enemy subjects from exercising, in their territories, certain industries or professions which concern national defence or economic independence

C

PERMANENT MEASURES OF MUTUAL ASSISTANCE AND COLLABORATION AMONG THE ALLIES

I

The Allies decide to take the necessary steps without delay to render themselves independent of the enemy countries in so far as regards the raw materials and manufactured articles essential to the normal development of their economic activities

These steps should be directed to assuring the independence of the Allies not only so far as concerns their sources of supply, but also as regards their financial, commercial, and maritime organization

The Allies will adopt the methods which seem to them most suitable for the carrying out of this resolution, according to the nature of the commodities and having regard to the principles which govern their economic policy

They may, for example, have recourse either to enterprises subsidised, directed, or controlled by the Governments themselves, or to the grant of financial assistance for the encouragement of scientific and technical research and the development of national industries and resources, to customs duties or prohibitions of a temporary or permanent character, or to a combination of these different methods

Whatever may be the methods adopted, the object aimed at by the Allies is to increase production within their territories as a whole to a sufficient extent to enable them to maintain and develop their economic position and independence in relation to enemy countries.

II

In order to permit the interchange of their products, the Allies undertake to adopt measures for facilitating their mutual trade relations both by the establishment of direct and rapid land and sea transport services at low rates, and by the extension and improvement of postal, telegraphic, and other communications.

III

The Allies undertake to convene a meeting of technical delegates to draw up measures for the

assimilation, so far as may be possible, of their laws governing patents, indications of origin, and trade marks

In regard to patents, trade marks, and literary and artistic copyright which have come into existence during the war in enemy countries, the Allies will adopt, so far as possible, an identical procedure, to be applied as soon as hostilities cease

This procedure will be elaborated by the technical delegates of the Allies.

D

Whereas for the purposes of their common defence against the enemy the Allied Powers have agreed to adopt a common economic policy, on the lines laid down in the Resolutions which have been passed, and whereas it is recognized that the effectiveness of this policy depends absolutely upon these Resolutions being put into operation forthwith, the Representatives of the Allied Governments undertake to recommend their respective Governments to take without delay all the measures, whether temporary or permanent, requisite for giving full and complete effect to this policy forthwith, and to communicate to each other the decisions arrived at to attain that object

13 THE IMPERIAL WAR CABINET AND THE IMPERIAL WAR CONFERENCE

SPEECHES AT THE IMPERIAL CONFERENCE, 1917

SIR R BORDEN I should like to make a slight amendment in the terms of the Resolution by substituting for the word 'thereafter' at the end of the first paragraph the words 'as soon as possible after the cessation of hostilities' It would then read in this way 'The Imperial War Conference are of opinion that the readjustment of the constitutional relations of the component parts of the Empire is too important and intricate a subject to be dealt with during the war, and that it should form the subject of a special Imperial Conference to be summoned as soon as possible after the cessation of hostilities. They deem it their duty, however, to place on record their view that any such readjustment, while thoroughly preserving all existing powers of self-government and complete control of domestic affairs, should be based upon a full recognition of the Dominions as autonomous nations of an Imperial Commonwealth, should recognize their right to an adequate voice in foreign policy and in foreign relations, and should provide effective arrangements for continuous

consultation in all important matters of common Imperial concern and for such necessary concerted action founded on consultation as the several Governments may determine'

This subject is one upon which I might speak at great length. Many proposals with regard to the subject have been discussed in the United Kingdom and in all the Dominions of the Empire for many years past in all possible phases. There can be no doubt as to its importance The growth of the Dominions in wealth and population has been very remarkable during the past fifty years, especially during the last twenty-five years Their future growth we hope—and, more than that, we believe—will be even more marked. Foreign policy and foreign relations, with which is intimately connected the question of the common defence of the Empire, have been under the immediate control of the Government of the United Kingdom, responsible to the Parliament of the United Kingdom It would appear from the views of constitutional writers that this condition during the later phases of the growth of the Oversea Dominions has proceeded on a theory of trusteeship which, whatever may be said of it in the past, is certain to prove not only entirely inadequate to the needs of the Empire but incompatible with the aspirations of the people of the Dominions in the future I have spoken of the growth of the Dominions, it is by no means improbable that children now living will see their population surpass that of the United Kingdom It is quite within the range of possibility that a single Dominion might grow to the extent which

I have mentioned. Therefore it seems to me beyond question that the theory of trusteeship to which I have alluded cannot be continued indefinitely in the future

In approaching the subject one is impressed especially with this consideration, that the greatest intellects of the Empire in the past have miscalculated the conditions that would develop in the Dominions, and have failed to foresee the relations of the Empire under the policy of developing full powers of self-government, which was supposed to have the tendency of weakening, if not severing, the ties which unite the Dominions to the Mother Country The policy of complete control in domestic affairs and complete autonomy in all local affairs, instead of weakening the ties which unite the Empire, has very greatly strengthened them It was said by a statesman of the highest capacity after that policy had been embarked upon (that is, the policy of granting to the Dominions complete autonomy) that it was an absolute mistake, that it could only lead to the weakening and severance of relations, and that it would have been a wise policy to preserve in the United Kingdom control of the natural resources of the Dominions, and control over their fiscal policy, that this would have tended to unite the Empire, and regret was expressed that some such policy had not been maintained All of us in the Dominions, and I think the people of the British Isles, realize now that any such policy would have had most unfortunate and, more than that, disastrous results The policy which was supposed to weaken the Empire has

really strengthened it, and I look forward to a development in the future along the line of an increasingly equal status between the Dominions and the Mother Country It seems to me that the attainment of full citizenship, which involves a voice in foreign relations, will proceed along the line to which I have alluded The nations of the Empire are really bound together by the tie of a common allegiance, by like institutions and ideals of democracy, and by like purposes. Such ties will bring the nations of the Empire together more closely upon the line which I have mentioned I say this with a full understanding that it is unwise, having regard to the lessons of the past, for any of us to predict absolutely the developments of the future But, nevertheless, the line of development which has been noticeable during the past twenty or twenty-five years seems to point unmistakably to that conclusion Indeed, the action of the Dominions in this war has made the spirit of nationhood splendidly manifest The fact that one million men in the Dominions have taken up arms for the defence of the Empire's existence and the maintenance of its future influence is so significant a lesson that one would be unwise not to have it constantly in mind I believe that the Dominions fully realize the ideal of an Imperial Commonwealth of United Nations, and one should not forget the importance of the Crown as a tie between the Dominions and the Mother Country. His Majesty King George V is especially associated with the Oversea Dominions, because he is the first Sovereign who, before he ascended the throne, availed himself of the oppor-

tunity to visit all parts of the Empire and to make himself acquainted with the ideals and aspirations of their people And the Queen was recognized throughout the Dominions of the Empire as distinctively a British princess before her marriage to the King.

Now the subject of the future relations of the Empire is not only an important but a very complex one I would not make any conjectures beyond what I have said as to the ultimate solution. It is manifest, I think, that under the present conditions it would be unwise for this Conference to attempt to enter upon that subject I hope that the delegation which will come to the next Conference from the Dominion which I have the honour to represent will be representative of all political parties A subject of the vast importance which is involved in the consideration of future inter-Imperial relations would seem to demand that condition if it is to be approached in a proper spirit, because we all agree, I am sure, that so great a question ought not to be made, either here or in the Dominions, a question of party strife or party controversy if it can possibly be prevented.

There has been a very remarkable advance even since we arrived in the British Islands, it is a development which has greatly impressed me, and it seems to be due to the force of great events rather than to any premeditation or design. The fact that an Imperial War Cabinet as well as a British War Cabinet are sitting in London to-day is in itself of great significance. There may be possibly some guidance in that step for the future

relations which will give to the Overseas Dominions their proper voice in the great matters which I have mentioned However, it would be unwise to attempt to forecast The Resolution which I have proposed does not attempt to do so it merely proposes that a special Imperial Conference shall be summoned as soon as possible after the War; and it does at the same time place on record the view of this Conference that any re-adjustment of relations must, in the first place, preserve all the existing powers of self-government and complete control of domestic affairs, that it must be based on a complete recognition of the Dominions as autonomous nations of an Imperial Commonwealth, and must fully recognize their right to a voice in foreign policy and in foreign relations The willing acceptance of that principle by the Mother Country is an immense stride in advance

I have had the advantage of discussing the terms of the Resolution to some extent with my colleagues round this board, and I have made them all acquainted with the principle which is embodied in the Resolution I hope that it may commend itself to their judgement I hope further that the Conference to be summoned will approach its deliberations and frame its conclusions on the lessons of the past, so that the future structure of the Empire may be erected on the sure and firm foundations of freedom and co-operation, autonomy and unity

Mr Massey I will second that formally, if it is necessary to second it, and in doing so I will say that I agree thoroughly with almost every

opinion that Sir Robert Borden has expressed in moving the Resolution which is now before the Conference, and I agree with him particularly in the opinion which is really expressed in the Motion itself, that at a time like this, when the statesmen of the Empire are engaged in carrying on our share of the most serious war which has ever occupied our attention, and when the subject of the War is occupying nearly the whole of the attention of most of the thinking people of the British Empire, it is impossible to take in hand such an important question as the 'Reorganization of the Empire,' and, as expressed in the Motion, 'the readjustment of the constitutional relations of its component parts' That will have to stand over, so far as this Conference is concerned, until the War comes to an end, and until a more representative Conference can be got together than the present one. Personally, I should like to see a much larger Conference convened for the special purpose which Sir Robert Borden has in view, and I should like to see it representative not only of the Governments of the different Dominions and of the different parts of the Empire, but I should like to see it representative, if it is possible so to arrange it, of the different parties in the different Dominions of the Empire If we are going to raise this question above party—and I think in its importance it is far and away beyond anything in the way of party politics—then we must give the different political parties in the Empire the opportunity of coming together at the Council Board and expressing their opinions and, if their opinions are

thought worthy of being adopted, that opportunity should be given by the other members of the Conference which it is intended to convene When I say the parties, I am not referring to all the parties, because there may be small parties that it might not be necessary to have represented, but I am thinking of the more important parties, such as we understand them in the different countries I know this is not a new idea, and I know that something in this way has been suggested at previous ordinary Imperial Conferences, although, so far as I can recollect, it was not given effect to to any extent, if at all

I thoroughly agree, too, with the point Sir Robert Borden made when he stated that in these matters we have to look forward and we have, in particular, to be guided by the lessons of the War I hope, Mr Long, that point will be borne in mind when the Conference meets, and especially with regard to population I have not the very slightest doubt that Sir Robert Borden was right in saying that there are people now living who will see a larger population in the different Dominions than the population of what is called the United Kingdom to-day, I have no doubt that will be the case. I believe a very important migration will take place when the War comes to an end which in the ordinary course will have its effect upon the different Dominions, and this War itself has directed the attention of people in every part of the United Kingdom to the possibilities of the Dominions I will not argue further on that line because, as a matter of fact, there is another Motion in the Order Paper standing in my own

name which will give a better opportunity for discussing it, but in the main I agree with the opinions expressed by Sir Robert Borden

Then the Prime Minister of Canada also referred to the necessity for considering and maintaining—I will not go to the length of saying completing—the existing autonomy of the different parts of the Empire In any arrangements that may be made in the future for the closer unity of the different portions of the Empire and for drawing them more closely together and keeping them together, I am quite certain it is necessary to make the ties that hold the different parts together as easily carried as it is possible to arrange A great statesman who lived one hundred years ago or thereabouts and whose name frequently comes up in matters of this kind expressed the opinion, looking forward even from his time, that if the different parts of the Empire were to be kept together the bonds to hold them would need to be 'while stronger than steel as light as silk' Whatever bonds may be arranged will have to be arranged in such a way that they will not chafe and not seriously inconvenience British citizens in any part of the Empire.

Sir Robert Borden referred to our fiscal arrangements. Here particularly, and I mention this now with the object of placing my opinion on record, I think it is not desirable for any Imperial organization of the future, whatever form that Imperial organization may take, to interfere with the fiscal arrangements of the different parts of the Empire any more than can possibly be helped. What I mean is that at present the younger

nations of the Empire have the right to impose their own taxation in their own way and to collect their own revenue in their own way, and those rights, particularly, should not be attempted to be interfered with, because I am certain that any such interference would lead to very serious friction and probably put this movement back for perhaps many years to come, and none of us desire to see that Sir Robert Borden referred to the lessons of the past, and I think on an occasion like this there is not one of us who can forget what happened in connexion with the breach between England and what were then the American Colonies a great many years ago I hope that lesson will be borne in mind and that nothing of the sort will ever happen again in the history of the British Empire, but, if it is not to happen, then a crisis such as that which led up to that very serious trouble and to the breach which followed must be avoided

Speaking on this point, of course the question will be asked, 'How is any such organization in the future to find money for carrying on the business of the Empire?' Well, personally I do not think it is a difficult question to answer, because I am confident that for the purpose of carrying on the organization, and for Imperial purposes generally, when the different Dominions, or different parts of the Empire, as the case may be, are asked for their share of the finance, and their share of the capital required, the necessary capital will be found, and will be forthcoming, only, as I said before, each part of the Empire must find it in its own way.

In the case of war and in the case of the possibilities of war we cannot forget that the present arrangement, loose as it has been, has worked very well indeed. Each part of the Empire has found troops, some of them have found ships, in proportion to their wealth and in proportion to their population, and I believe that arrangement may be continued with advantage to the whole of the Empire, and with benefit to the whole of its citizens. I know that numberless opinions have been expressed upon what ought to be done, innumerable pamphlets have been written and innumerable speeches have been delivered, and I am bound to say that all these writings and all these speeches and all these changes of opinion which have taken place during the last dozen years, particularly since the War commenced, have done a very great deal of good, inasmuch as they have set the population of the Empire thinking, and they have impressed people who have never studied the question previously with the potentialities of the Overseas Dominions and with the necessity of taking advantage of the present opportunity to bring the different parts of the Empire more closely together than ever before, and to bind them in such a way that they will not be likely to separate for many centuries to come, and I trust that they will never separate Suggestions have been made at different times that we should at once consider the question of an Imperial Parliament dealing purely with Imperial questions and leaving local matters, or provincial matters (according to the manner of expression), to be dealt with by provincial or local legislatures

elected for the purpose I believe, and I have expressed this opinion previously, publicly and otherwise, that such an arrangement will develop in course of time, but I do think that it would be a mistake at the present juncture to attempt too much. This matter is far too important to attempt to bring it rapidly into operation. I believe that every step that we take as citizens of the Empire in this connexion has to be thought out very carefully before it is taken If not, then we are likely to make mistakes, and the present generation may not see any further advance than has been made up to the present.

A very great deal has been said in favour of an Imperial Parliament, and in theory there is not a very great deal to be said against it, subject to the limitations about which I have already expressed an opinion, that is the limitations particularly with regard to preserving the autonomy of the different parts of the self-governing Dominions of the Empire There are others who think—and I have heard this opinion expressed—that the present arrangement which gives the Dominions a representation in the Cabinet of the Empire is a good one, and it is a good one, I thoroughly agree with that Many people think that should be sufficient for quite a long time to come and that it should be continued, and I will offer my own opinion upon that point presently I think that even this advance is far more important than many of the people in the different parts of the Empire have up to the present realized. I think that when the Dominions were asked to send representatives from their

Legislatures, from their Governments, to the Imperial War Cabinet, it was one of the most important events that had ever taken place in the history of the British Empire, and I am confident that posterity will look upon it from that point of view, and, speaking for myself, I appreciate fully everything which has been done

And just let me say here, in case I forget before I bring my remarks to a close, that I would like to suggest that this Imperial Conference should express an opinion to the effect, or make a recommendation to the effect, that the present arrangement should continue until the Conference, which we are all of opinion should be convened for the purpose mentioned in the Motion, has met, and until the new arrangement, whatever it may be, comes into operation. As an Imperialist I feel somewhat strongly on this point As Imperialists we have gained a very great deal I know that public opinion in Britain and public opinion in the Dominions is in favour of going forward rather than going back, and I express my own personal opinion when I say that it would be a retrograde step if we allowed this Conference to come to an end without expressing our appreciation of what has been done in the way of representation of the Dominions, and expressing our opinions in favour of the present representation continuing until something better has been agreed upon and has come into operation.

Then there is another school, who advance the theory that anything in the way of an Imperial Parliament will not be likely to work so well as something in the way of what is called an Imperial

Council—again, of course, representative of the different Dominions—which would not have the powers that would be possessed by the Imperial Cabinet, but which would meet annually, say, and which would deal with all matters of Imperial importance, and would in its turn make representation to the Parliaments of the different Dominions and to the Parliament of the United Kingdom itself

My own idea is, that if we can make such arrangements as will allow the present representation of the Imperial Cabinet to continue, even when the War comes to an end, if we can also along with that have a representative Imperial Council, then, I think, a very great deal will have been done and a very long step forward will have been taken along the road on which we are so anxious to travel The Imperial Conference, which has been in the habit of meeting every four years, and which in itself I am bound to say was a very important advance, admitted the right of the Dominions to be consulted in connexion with Imperial affairs But something more than that is required at present, and something more than that must result from the position the Dominions have taken up during the present War

Speaking of the present War, I may say I am not one of those who think that the Dominions came into the War simply to assist what we are all pleased and proud to call the Mother Country I do not look at it from that point of view at all We came into the War as Oversea Dominions of the Empire because we are part of the Empire and because the Empire to which we belong was

being attacked, and if we had not come into the War in the way that has happened and which we are all proud of and pleased with—and let me say here not one of us would go back upon it—I have no hesitation in saying that as British citizens and as citizens of no unimportant parts of the world now, and which are likely to be much more important in years to come, we should not have done our duty We are glad to think that as a result of what has taken place, instead of, as many people imagined would be the case, that at the first shock of war the Empire would go to pieces, there is a better spirit throughout the Empire to-day than has ever obtained in past years at any time in its history, and I am glad to include in that the Empire of India, which is represented at this Conference, and which I believe will be represented at any Conferences to consider Imperial affairs that may take place in the future Sir Robert Borden, when speaking, used a term which implies a very great deal It is a term which I have used myself on more than one occasion, and a term with the use of which I thoroughly agree, and that is the term 'United Nations' We are coming together, not, as used to be considered, as the United Kingdom with its dependencies. That is not the position to-day We are coming together as United Nations of the Empire and on equal terms so far as the populations of the different parts of the Empire will allow

I was pleased to hear the reference of Sir Robert Borden to the Monarchy The subject of form of Government is occupying the attention, in view of recent happenings, of liberty-loving people all

over the world. There is no doubt that something in the way of more democratic and more representative forms of government is in the air, it is in the atmosphere, so to speak, and we cannot get away from it; but in case there should be any misapprehension in the minds of people who are interested in this Conference or who may think it worth while to read the proceedings or the records of this Conference in the future, I would just like to say that I, speaking as a British citizen, believe that the British Empire has to-day probably the freest and most progressive form of government that the world has ever seen We do not propose to go back upon that in the very slightest But, following up that point, I would just like to say that, in my opinion, the British Monarchy is the keystone of the Imperial arch I do not need to elaborate that point, but when I express that opinion I think it speaks for itself, and I am quite certain in expressing it I have expressed an opinion with which every member of this Conference will agree

I do not think I need to say any more on the subject except just this, that one of your great British statesmen and poets made the statement that the British Constitution had broadened down from precedent to precedent. Precedents are now following each other in rapid succession. History is being made very rapidly, and I have no doubt as time goes on and if we take advantage of the opportunities that offer—and they are offering now—we shall be able to arrange the Constitution which, as public men representing important parts of the British Empire, we are privileged to deal

with, in a way which will provide for the future possibilities and the future wants of the great Empire to which we belong.

I would like to suggest to the Conference and to Sir Robert Borden that he should include in, or consent to be added to, his motion something on the lines I have already referred to I had drafted a motion, but, as a matter of fact, I had forgotten that this matter was coming up to-day and, therefore, I was not prepared to speak upon it, and perhaps the opinions I have expressed have been somewhat disconnected in consequence, but the one ideal I have in mind, which I am going to suggest to Sir Robert Borden and to the Conference, is that something in this way should be added 'That until such Conference'—that is, the special Conference contemplated—'has met, and arrived at its conclusions, this Imperial War Conference recommends that the present arrangements by which representatives of the Dominions and of India occupy seats in the Imperial Cabinet shall continue'

I second the Resolution, if it is necessary.

CHAIRMAN (MR LONG) This Resolution is proposed by Sir Robert Borden and seconded by Mr Massey Does any other member of the Conference desire to say anything before the motion is put?

GENERAL SMUTS I should like to say a few words, if I may I need hardly point out that this is far and away the most important point on the agenda of our Conference this time The British Empire is the most important and fascinating problem in political and constitutional government which the world has ever seen

Whenever we come to this question of a proper constitution for this Empire we touch on the very gravest and most important issues As a matter of fact we are the only group of nations that has ever successfully existed People talk about a league of nations and international government, but the only successful experiment in international government that has ever been made is the British Empire, founded on principles which appeal to the highest political ideals of mankind. Founded on liberal principles, and principles of freedom and equality, it has continued to exist for a good time now, and our hope is that the basis may be so laid for the future that it may become an instrument for good, not only in the Empire but in the whole world

The subject-matter of this Resolution, as Sir Robert Borden has stated, has been carefully considered, and although, quite properly, a definite decision on the main problem is to be postponed for future action by a more important Conference than this, yet certain principles are affirmed here in this Resolution which are very important and far-reaching The Resolution refers in the first place to the question of the status of the self-governing Dominions That matter has already been referred to both by Sir Robert Borden and by Mr Massey, and I wish to say a few words in reference to the point The Resolution says that any future settlement that is come to must 'be based upon a full recognition of the Dominions as autonomous nations of an Imperial Commonwealth' The whole question of the future status of the Dominions is therefore raised in this Resolu-

tion. So far the British Empire has developed along natural lines The Dominions started as Colonies and as settlements of the Mother Country and of the British Isles They started as Crown Colonies, they developed into self-governing Colonies, and now they have become the present Dominions Other parts of the world have been added to the Empire, until to-day we have really a congeries of nations. These old Colonies and the present Dominions have in course of time increased in importance, increased in population, and in economic importance, and are to-day already playing a part in the world which seems to my mind to make it very necessary that their status should be very seriously considered, and should be improved. Too much, if I may say so, of the old ideas still clings to the new organism which is growing I think that, although in practice there is great freedom, yet in actual theory the status of the Dominions is of a subject character Whatever we may say, and whatever we may think, we are subject Provinces of Great Britain. That is the actual theory of the Constitution, and in many ways which I need not specify to-day that theory still permeates practice to some extent[1] I think that is one of the most important questions —one of the most important matters—that will have to be dealt with when this question of our future constitutional relations on a better and more permanent basis comes to be considered The status of the Dominions as equal nations of the Empire will have to be recognized to a very large extent. The Governments of the Dominions

[1] See *Imperial Unity and the Dominions*, pp 589–592

as equal Governments of the King in the British Commonwealth will have to be considered far more fully than that is done to-day, at any rate in the theory of the Constitution if not in practice That is the most important principle laid down in the second part of this Resolution, that there should be 'a full recognition of the Dominions as autonomous nations.' And, to strengthen the point, the Resolution goes on to affirm that the existing powers of self-government should not be interfered with Of course there is a good deal of feeling of natural and justifiable jealousy in the Dominions as to the rights which they have acquired and which they do not like to be tampered with, and, naturally, I think it is very wise to add this to the Resolution, that their existing powers of self-government should not be tampered with. If that is so it follows that one theory, one proposed solution of our future constitutional relations, is negatived by this Resolution If this Resolution is passed, then one possible solution is negatived, and that is the Federal solution The idea of a future Imperial Parliament and a future Imperial Executive is negatived by implication by the terms of this Resolution The idea on which this Resolution is based is rather that that Empire would develop on the lines upon which it has developed hitherto, that there would be more freedom and more equality in all its constituent parts, that they will continue to legislate for themselves and continue to govern themselves, that whatever executive action has to be taken, even in common concerns, would have to be determined, as the last paragraph says, by 'the

several Governments' of the Empire, and the idea of a Federal solution is therefore negatived, and, I think, very wisely, because it seems to me that the circumstances of the Empire entirely preclude the Federal solution Here we are, as I say, a group of nations spread over the whole world, speaking different languages, belonging to different races with entirely different economic circumstances, and to attempt to run even the common concerns of that group of nations by means of a Central Parliament and a Central Executive is, to my mind, absolutely to court disaster The experiment has been tried in the United States and, it is said, with great success. Well, of course, the experiment in the United States has not lasted very long, and we must see whether it will continue successfully under the stress of the great experience into which America is now entering But I am now informed by those who are very close observers of American government and American institutions that they are certain that the experiment has reached its utmost limits In that case you have a compact country, a compact half continent, where people live together, where they all go through the same mould, and where they are all formed more or less on the same lines, whereas in this Empire you have an entirely different state of affairs The young nations are developing on their own lines; the young nations are growing into Great Powers, and it will be impossible to attempt to govern them in future by one common Legislature and one common Executive

Then if we are to continue as nations and to

grow as nations and govern ourselves as nations the great question arises How are we to keep this Empire together? That is the other important point, I take it, in this Resolution—the point which recognizes that there should be effective arrangements for continuous consultation in all common concerns, especially in concerns which are mentioned there specifically, that is foreign policy, but in all common concerns that there should be effective arrangements for continuous consultation Setting aside the Federal solution as not applicable to this Empire, which is not merely a State but a system of States, half the world in itself—setting aside that solution, the question arises how you are to keep the different parts together, and it can only be done on the basis of freedom and equality which has existed hitherto, only the machinery would have to be arranged on which that system could be worked I think it will not pass the wit of man to devise ways of continuous consultation—not intermittent, not every four years as we have had hitherto, but continuous consultation. Sir Robert Borden has pointed out in that great speech of his at the Parliamentary dinner—one of the finest speeches I have ever listened to, and one of the wisest I have ever listened to—that a practice which has now arisen spontaneously of a double Cabinet may in the future provide the germs of a solution I express no opinion upon that, because very intricate constitutional questions are bound up with that, and it is quite possible to arrange this system of consultation and continuous Conferences even on a different basis and yet to make

it perfectly workable and feasible as a means of keeping the different parts of the Empire together It seems to me that some such machinery will have to be devised and that it will not be difficult to devise it once we come to sit round the table and discuss the matter carefully In that way it will be possible, while leaving full executive action to the various more or less equal Governments of the Empire, while leaving full executive responsibility to them, to see that in all important concerns there is consultation and continuous consultation, that there is an exchange of ideas and that the system, whilst preserving freedom and equality in its parts, will work with a strong sense of unity at the centre.

I think, if this Resolution is passed, sir, we will have taken an immense step forward in the history of the Empire If we pass no other Resolution at this Conference than this one, I am sure that we will have done a good day's work for this Empire. We are emerging out of one era and we are entering upon another where much greater problems will confront us than ever before So far it has been possible for us each to go his own way, meeting once in so many years In future it will be necessary for us to keep much more closely in touch with each other

These are the principles which are affirmed in this Resolution, leaving the actual solution of our constitutional problem to be dealt with hereafter. Those are the principles which are affirmed here, and I heartily endorse them and give my adhesion to this Resolution as it stands here.

SIR EDWARD MORRIS I should like to add my

support to this Resolution I would like to say that, through the courtesy of Sir Robert Borden, I have had an opportunity of carefully studying the nature of the Resolution, and I think it would be wise, probably, at the present time not to go beyond this Resolution Certainly this is not the time to discuss any changes in connection with the relations which exist between the Dominions and the Mother Country, and I think the proposal to postpone the further consideration to another Conference rather a good one

It appears to me that the position before the war was this All the Dominions had complete autonomy, even practically to the question of treaty-making, and if they were not consulted and had no part in the question of defence and in the question of foreign relations, it was because they did not contribute The whole cost of running the Empire from a defence standpoint and from the foreign relations standpoint, and everything in relation to the acquisition of new territories and new States for the Empire, was accomplished out of the Imperial Exchequer But in all other matters the Colonies, as they have been termed, the Dominions, have enjoyed the full benefits and advantages of responsible Government, and that has been year after year broadened out. The question then comes whether these scattered Dominions, these wide-flung possessions, can be brought closer together from a constitutional point of view This Resolution does not call upon us to consider that question We are here now taking part in the proceedings of the Imperial War Cabinet, and we have been invited

here to take part in the discussion of the terms of peace, principally, I take it, in consideration of the part which the Dominions have taken in this war Whether it would be wise to alter this Resolution by Mr Massey's suggestion to continue the present system would require, I think, a good deal of discussion and consideration, because, after all, whilst we are advising in relation to these serious problems in connection with the terms of peace and the carrying on of the war, we have no constitutional power to bind the Parliaments that we represent I do not mean by that to say that the various Parliaments in the various Oversea Dominions would not gladly endorse anything that might be done here It all comes down to the mere question of finding some machinery which in a permanent and responsible form will continue what is now being done by the War Cabinet, if that is desirable.

In the past Conferences, some of which I have had the advantage of taking part in myself, this very question came up about an Imperial Parliament and an Imperial Council, but there were always very grave difficulties in the way of establishing anything of a permanent character, and it seems to me now that this Resolution, whilst, as General Smuts has very wisely pointed out, it affirms, if necessary, the present position of the Dominions as regards their authority and autonomy and control over their own affairs, leaves it open to some future Conference to discuss the possibilities of having some machinery in the nature of consultation to deal with questions of foreign policy and the defence of the Empire.

I was very glad that Sir Robert Borden, in his opening remarks, referred to the position to-day of this country in its relation to the Monarchy, especially in view of the changes which are taking place in other countries Some of us, who live near republican institutions and have had opportunities of studying others, I think will agree that the monarchs in this country, at least the late Queen Victoria and King Edward as well as the present monarch, have made it possible for us, whilst admiring some of the principles in republican institutions, to still continue to believe in the wisdom of monarchical institutions One thing it gives us, at least, and that is an appeal. Every subject has an appeal to the Chief Magistrate of the land, who is not a party-politician and who is not placed in the position he holds by any party or by the funds of any party, but stands as the representative of all, and rarely in this country interferes in any matters except in the interest of the public and as between the public and the legislators For that reason I have very much pleasure in supporting the Resolution as proposed, with the slight amendment which I understand is to be proposed later in relation to the great Government of India

SIR SATYENDRA SINHA Sir, I should like, while supporting this Resolution, to make what I consider to be a merely verbal alteration, because I am certain that it could not be intentionally meant to exclude India, especially after the Resolution which this Conference has already passed I therefore propose that we should add to the Resolution, in the second paragraph, after the

words "upon a full recognition of the Dominions as autonomous nations of an Imperial Commonwealth," the words "and of India as an important portion of the same" The Resolution was drafted, of course, with special reference to the Self-governing Dominions, but, as I said, it could not have been intended to exclude India from participation in the arrangements which are recommended for the purpose of representation in foreign policy and in foreign relations The foreign policy and the foreign relations of the Empire are to a very large extent concerned with India, and, therefore, it is only right that India should be represented in all consultations for the purpose of dealing with such foreign policy and foreign relations As a corollary to that amendment I propose another consequential one, namely, that instead of the words, "should recognize their right to an adequate voice in foreign policy and in foreign relations," in order to make it perfectly clear, we should say, "in order to recognize the right of the Dominions and of India to an adequate voice in foreign policy," and so on It is with some diffidence that I address the Conference and ask for this amendment to be made, but I do so principally on the assurance that it is bound to be acceptable, having regard to the attitude of the Conference already with regard to India[1]

[1] The Conference resolved on April 27 "That the Imperial War Conference, having examined the memorandum on the position of Indians in the Self-governing Dominions presented by the Indian representatives to the Conference, accepts the principle of reciprocity of treatment between India and the Dominions and recommends the memorandum to the favourable consideration of the Governments concerned"

I do not desire to take up the time of the Conference with anything further, except to say that I wish to associate myself, on behalf of India, with the sentiments that Sir Robert Borden expressed with regard to the monarchy India has in a peculiar degree a sense of loyalty to the person and throne of the Monarch in England, and it would, therefore, give the greatest satisfaction to my countrymen that this Conference should unequivocally express its declaration that the monarchical form of government, as it is, is the best suited to the requirements of the Empire.

INDEX

C

I

T